हिन्दी
विश्वकोष

बंगला विश्वकोषके सम्पादक

श्रीनगेन्द्रनाथ वसु प्राच्यविद्यामहार्णव,

सिद्धान्त-वारिधि, शब्दरत्नाकर, एम, आर, ए, एस

तथा हिन्दीके विद्वानों द्वारा सङ्कलित।

चतुर्थ भाग

[कपिश—कुकि]

THE
ENCYCLOPÆDIA INDICA

VOL IV

COMPILED WITH THE HELP OF HINDI EXPERTS

BY

NAGENDRANATH VASU Prâchyavidyâmahârnava,

Siddhânta-vâridhi, Sabda ratnâkara M R A S.,

Compiler of the Bengali Encyclopedia; the late Editor of Bangiya Sahitya Parishad and Khyastha Patrika; author of Castes & Sects of Bengal, Mayurabhanja Archæological Survey Reports and Modern Buddhism; Hony Archæological Secretary Indian Research Society; Member of the Philological Committee, Asiatic Society of Bengal; &c. &c. &c.

Printed by H. C. Mitra, at the Visvakosha Press.

Published by

Nagendranath Vasu and Visvanath Vasu

9 Visvakosha Lane Baghbazar Calcutta.

1922.

हिन्दी
विश्वकोष

(चतुर्थ भाग)

कपिल (सं० त्रि०) कम्-पलच् पारिभाष। कमेः पश्च। उण् १।५५। १ पिङ्गलवर्ण, भूरा, तामड़ा मटमैला। (पु०) २ अग्नि, आग। ३ वर्णविशेष, मटमैला रंग। ४ कुक्कुर, कुत्ता। ५ शिलारस लोबान्। ६ महादेव। ७ विष्णु। ८ सर्पविशेष, एक सांप। ९ दानवविशेष, एक राक्षस। १० बकवृक्ष, एक पेड़। ११ पित्तल पीतल। १२ मूषिकभेद किसी किस्मका चूहा। इसके काटनेसे व्रणकोथ, ज्वर और अङ्गसुप्ति होता है। (सुश्रुत) १३ कुशद्वीपका पर्वतविशेष एक पहाड़। (भागवत ५।२०।१५) १४ सूर्य, आफताब। १५ वितथके पुत्र। १६ वसुदेवके पुत्र। नराचीके गर्भसे यह उत्पन्न हुये थे। १७ मुनिविशेष। इनके पिताका नाम कर्दम और माताका नाम देवहूति रहा। इन्होंने सांख्यदर्शन बनाया है।

सांख्याचार्य कपिल एक अति प्राचीन ऋषि थे। वेदके उपनिषद्भागमें इनका नाम मिलता है*। यह सिद्धपुरुषोंमें सर्वश्रेष्ठ रहे। इसीसे भगवान्ने गीतामें कहा है—

"गन्धर्वाणां चित्ररथः सिद्धानां कपिलो मुनिः।" (गीता १०।२६)

हम गन्धर्वोंमें चित्ररथ और सिद्धोंमें कपिल मुनि हैं।

* "ऋषिं प्रसूतं कपिलं यस्तमग्रे ज्ञानैर्बिभर्ति।" (श्वेताश्वतर ५।२) उत्पन्न कपिल ऋषिको जिन्होंने सर्वप्रथम ज्ञानद्वारा पोषण किया।

भागवतमें लिखा है—कपिल भगवान्‌का पञ्चम अवतार रहे। इन्होंने महायोगी कर्दमके औरस और देवहूतिके गर्भसे जन्म लिया था। इनके जन्मकाल आकाशमें जलपोत मेघसे नानाविध वाद्य बजे गन्धर्व गाने लगे, अप्सरोंने आनन्दगीत आरम्भ किये, पक्षियों द्वारा पुष्प बरसाये गये और दिक्, जल एवं सर्वप्राणीके मन प्रसन्न हुये। स्वयं ब्रह्मा कर्दमके आश्रम आये थे। उन्होंने कर्दमको और देखकर कहा—हे मुने! तुम्हारे यह बालक साक्षात् ईश्वर हैं। यह सिद्धोंके अधीश्वर हो जायेंगे और सांख्याचार्य सर्वत्र पूजित हो जगत्में 'कपिल' नाम पावेंगे। इन्होंने ज्ञानसाधन सांख्यशास्त्र उपदेश करनेको ही यह अवतार लिया है।

कपिलने अपने पिता कर्दम और माता देवहूतिको ज्ञान उपदेश किया था। देवहूतिने स्त्री होते भी पुत्रसे तत्त्वका सुन ज्ञान और मोक्ष पाया।

भागवतमें देवहूतिके उपदेशच्छलसे कपिलप्रोक्त सांख्यमत वर्णित है—

"जो सकल इन्द्रिय प्रकाशात्मक रहते और जिनके द्वारा शब्द स्पर्शादि विषय अनुभव करते सत्त्वमूर्ति भगवान्‌के प्रति उनको स्वाभाविक वृत्तिको ही निष्कामा भागवती भक्ति कहते हैं। यह भक्ति पुरुषके लिये मुक्तिसे श्रेष्ठ है। किन्तु इन्द्रियमें यह

वृत्ति स्वतः नहीं आती, वेदविहित कर्ममें प्रवृत्ति लगनेसे उत्पन्न हो जाती है। ऐसी भक्ति होनेपर क्रमसे मुक्ति भी मिलती है। जो ईश्वरको आत्मवत् प्रिय, पुत्रवत् स्नेहपात्र, सखा-जैसा विश्वासभाजन, गुरुकी भांति उपदेष्टा, बन्धुकी तरह हितकारी और इष्टदेव सदृश पूज्य समझता अर्थात् जो सर्वतोभावसे भगवान्‌का भजन करता, उसका काल कुछ बना नहीं सकता।

"प्रतिलोम वुद्धिविशिष्ट आत्मा ही पुरुष है। वह पुरुष अनादि, निर्गुण और प्रकृतिसे भिन्न है। पुरुष केवल साक्षीस्वरूप होता है। वह स्वयं प्रकाश पाता और यह विश्व उसके साथ मिलजुल प्रकाशित हो जाता है। वही पुरुष अपने निकट विष्णुकी शक्तिरूपा अव्यक्तगुणमयी प्रकृतिको लीलावशतः पहुंचने पर अवज्ञाक्रमसे ग्रहण कर लेता है। प्रकृति अपने गुणसे समानरूप विचित्र प्रजासृष्टि करती है। जिसमें अविशेष अथच विशेषका जो आश्रय प्रधान आता, वही प्रकृति कहाता है। फिर प्रधान त्रिगुण रहता, अतएव अव्यक्त अर्थात् अकार्य ठहरता है। सुतरां वह न तो महत्तत्त्व और न जीवनस्वरूप नित्य अर्थात् जीवको ही प्रकृति है। प्रधानके कार्यस्वरूप चतुर्विंशति पदार्थ हैं। यथा—भूमि, जल, अग्नि, वायु एवं आकाश पञ्च महाभूत, गन्धतन्मात्र, रसतन्मात्र, रूपतन्मात्र, स्पर्शतन्मात्र तथा शब्दतन्मात्र पञ्चतन्मात्र, चक्षु, कर्ण, जिह्वा, घ्राण, त्वक्, वाक्, पाणि, पाद, पायु एवं उपस्थ दश इन्द्रिय, मनः, बुद्धि, अहङ्कार और चित्त चार अन्तरिन्द्रिय। अन्तःकरणके अन्तरिन्द्रिय ठहरते भी वृत्तिभेदसे उक्त चार प्रकारका प्रभेद पड़ जाता है। यह चतुर्विंशति तत्त्व सगुण ब्रह्मके सन्निवेशका स्थान हैं। एतद्भिन्न काल पञ्चविंश तत्त्व है।

"निष्काम धर्म, निर्मल मनः, भक्तियोग, तत्त्वदर्शिज्ञान, प्रबल वैराग्य, तपोयुक्त योग एवं दृढतर आत्मसमाधि द्वारा पुरुषको प्रकृति क्रमशः काष्ठकी भांति जल शेषको तिरोहित हो सकती है। पुरुषकी प्रकृति इसप्रकार एकबार जल जानेसे फिर उभरने नहीं पाती। उस समय पुरुष समझता—इसका भोग भुक्त हो गया। पुरुषको जन्मजन्मान्तरमें अध्यात्मरत हो जब ब्रह्मलोकप्राप्तिके विषयमें भी वैराग्य आता और भगवान्‌के प्रति ऐकान्तिक भक्तिमान् बननेसे आत्मतत्त्व देखाता, तब वह कैवल्यधाममें देहातिरिक्त सदाश्रयस्वरूप परमानन्द पाता है। फिर लिङ्गशरीर नाश हो जानेसे आनन्दलाभ कर पुनर्वार उसको निषटना नहीं पड़ता। आत्मज्ञानके बलसे सकल मिथ्या ज्ञान विनष्ट हो जाता है।"

कपिल मुनिने अपने साङ्ख्यसूत्रमें भी देखाया है—

वस्तुमात्र सत् है अर्थात् किसी वस्तुका उद्भव किंवा विनाश नहीं। वस्तुको आविर्भाव होनेसे हम देख पाते और तिरोभाव होनेसे उसके लिये पछताते हैं। आविर्भावके पूर्व भी वस्तुकी सत्ता स्वीकार करना पड़ती है। ऐसा न मानने पर एकमात्र उपादानसे सकल कार्य उत्पन्न हो सकते हैं। असत्कार्यवादिमतमें उपादान मृत्तिकाके साथ घटके सम्बन्धकी भांति पटका भी सम्बन्ध नहीं लगता। सम्बन्ध न रहते भी जैसे मृत्तिकासे घट बनता, वैसे ही पट भी बन सकता है। किन्तु उत्पत्तिके पूर्व कार्यको सत् स्वीकार करते मृत्तिकासे पटोत्पत्तिको आपत्ति पड़ नहीं सकती। क्योंकि मृत्तिकासे पटका कोई सम्बन्ध नहीं। जिसके साथ जिसका कोई विशिष्ट सम्बन्ध नहीं रहता, उससे वह कैसे उपजता है। घटके साथ उत्पत्तिसे पूर्व भी मृत्तिकाका सम्बन्ध होता है। इसीसे मृत्तिकासे घट बन जाता है। यदि उत्पत्तिसे पूर्व कार्य असत् ठहरे, तो मृत्तिका-रूप सत्कारणके साथ असत् घटरूप कार्यका सम्बन्ध बंध न सके। सुतरां असत्कार्यवादियोंके मतमें घटसंसर्गशून्य मृत्तिकासे घटोत्पत्ति होनेकी भांति असम्बन्ध मृत्तिकासे पटकी उत्पत्ति होनेमें क्या बाधा है? अथवा संसर्ग न रहते मृत्तिकासे पटोत्पत्ति न होनेकी भांति घट भी कैसे बन सकता है। उक्त दोनों विषय सत्कार्यवादके स्थापनकी प्रधानतम युक्ति है।

भायहा भेंसे था सकती है—उत्पत्तिसे पूर्व कार्यको सत्ता स्वीकार करते उत्पत्तिसे पूर्व कार्यका प्रत्यक्ष क्यों नहीं होता। कारण महर्षि कपिलके मतानुसार कार्यमात्र उत्पत्तिके पहले कारणमें अव्यक्त भावसे छिप्रस्थित सर्पकी भांति अवस्थान करता है। छिद्रसे निकलनेके पहले जैसे सर्प देख नहीं पड़ता, वैसे ही कारणसे अभिव्यक्त होनेके पहले कार्य भी दृष्टिमें नहीं पड़ता।

पदार्थों की संख्या ठहरानेसे ही इसका बनाया दर्शनशास्त्र सांख्य कहाता है। सांख्यमें। कपिलके कहे पचीसो पदार्थ यह हैं—१ महत्तत्त्व २ अहङ्कार, ३ मन, ४ शब्दतन्मात्र, ५ स्पर्शतन्मात्र, ६ रूपतन्मात्र, ७ रसतन्मात्र, ८ गन्धतन्मात्र, ९ चक्षुः १० कर्ण, ११ नासिका, १२ जिह्वा, १३ त्वक्, १४ वाक्, १५ पाणि, १६ पाद, १७ पायु, १८ उपस्थ १९ आकाश, २० वायु, २१ तेजः, २२ जल, २३ क्षिति, २४ आत्मा और २५ प्रकृति। कार्यकारिता रहित सत्त्व, रज और तम त्रिगुणको प्रकृति कहते हैं। इस प्रकृतिका प्रथम कार्य बुद्धितत्त्व है। बुद्धितत्त्व ही महत्तत्त्व कहाता है। बुद्धितत्त्वसे अहङ्कार और अहङ्कारसे शब्द प्रभृति तन्मात्र तथा चक्षु प्रभृति इन्द्रियकी उत्पत्ति हुयी है। फिर पञ्चतन्मात्रसे पञ्च महाभूत निकले हैं। अर्थात् शब्दतन्मात्रसे आकाश, स्पर्शसे वायु, रूपसे तेज, रससे जल और गन्धसे पृथिवीकी उत्पत्ति है। आत्मा नित्य सर्वव्याप और निर्विकार है। सुख दुःख प्रभृति कुछ भी उसे स्पर्श नहीं करता। जब अन्तःकरणसे बुद्धितत्त्वका सुख एवं दुःखाकार भाव उठता, तब अन्तःकरणके साथ आत्माका अभेद ज्ञान आनेसे अन्तःकरणका सुख तथा दुःखादि आत्मामें मालूम पड़ता है। जैसे दर्पणमें भ्रम पड़नेसे मनुष्यका स्वच्छ मस्तकादि देखाये देनेकी भांति अभेद ज्ञानसे अन्तःकरणका धर्म सुखदुःखादि आत्मामें झलकता है।

कपिलने तीन प्रमाण माने हैं—प्रत्यक्ष, अनुमान और शब्द। इन्द्रियसे जो ज्ञान आता, उसका करण प्रत्यक्ष प्रमाण कहाता है। घटादि विषयके साथ इन्द्रियका सम्बन्ध आनेसे अन्तःकरणमें विषयाकार परिणाम उत्पन्न होता है। वह परिणाम अत्यन्त निर्मल रहता है। फिर उसमें स्वप्रकाश आत्मा प्रतिबिम्बित होनेसे सकल विषय अनुभव करता है। व्याप्तिज्ञानके लिये ज्ञानको अनुमिति कहते हैं। अनुमितिका करण ही अनुमान प्रमाण है। जो हेतु साध्यका अव्यभिचारी रहता (साध्यशून्य स्थान नहीं होता), उसीमें साध्यके सामान्याधिकरण्य (साध्याधिकरणमें उसी हेतुके अस्तित्व)को व्याप्ति कहते हैं। फिर साधन किये जानेवालेका नाम साध्य है। जैसे 'पर्वतो वह्निमान् धूमात्' अर्थात् 'धूमसे पर्वत वह्निमान् है' स्थानपर पर्वतमें साधन किये जानेसे वह्नि साध्य ठहरता है। जिसके द्वारा साध्यका साधन करते, उसीको हेतु कहते हैं। जैसे धूम है। कारण धूम देखकर ही पर्वतमें वह्निका साधन किया जाता है। वह्निशून्य स्थानमें धूम नहीं रहता। किन्तु वह्निके अधिकरणमें धूमका अस्तित्व होता है। अतएव धूममें वह्निकी व्याप्ति पड़ते कोई विरोध नहीं आता। शब्दसे होनेवाले ज्ञानके करणको ही शब्दप्रमाण कहते हैं। कपिल वेदान्तियोंकी भांति एक जीववादी नहीं। इनके कथनानुसार सबका एक जीवात्मा माननेसे रामको सुख मिलनेपर श्याम भी उसे अनुभव कर सकता है। नैयायिकादिकी भांति सांख्य पण्डित आत्मामें दुःख और सुखका होना नहीं मानते। वह विषयमें ही सुख और दुःख स्वीकार करते हैं। यदि विषयमें सुख एवं दुःख न रहता, तो अभिलषित विषय मिलते ही सुख और अनभिलषित विषयसे दुःख न पड़ता। अभिलषित विषयमें सत्त्वगुणके उद्भवसे सुख और रजोगुणके उद्भवसे दुःख होता है।

कपिलने सांख्यसूत्रमें वेदका प्रामाण्य स्वीकार किया है। किन्तु ईश्वरका अस्तित्व इन्होंने नहीं माना। सांख्यसूत्रके मतसे अस्तित्व माननेपर ईश्वरको जगत्‌का कर्ता कहना पड़ेगा। ऐसा होनेसे विषम सृष्टिकारी ईश्वर मनुष्यकी भांति पक्षपाती ठहरता है। जिसो मतसे ईश्वरके लिये एकको सुखी और दूसरेको दुःखी करना उचित नहीं। क्योंकि

ईश्वर सकलके निकट समान है। अयस्कान्त मणिमें चेतन-सम्बन्ध न रहते भी लौह आकर्षण करनेवाली प्रवृत्तिकी भांति चैतन्यमय ईश्वर अचेतन प्रकृतिकी सृष्टि रचनेमें लग सकता है। कपिलके कथनानुसार अन्तःकरण जब प्रकृतिमें लीन हो जाता, तब पुरुष मुक्ति पाता है। अन्तःकरण बना रहनेसे पुरुषको मुक्ति नहीं मिलती।

कपिलके ही कोपानलमें सगरराजाका वंश ध्वंस हुवा था। कोई सगरनायक कपिलको स्वतन्त्र बताता है।

१७ ब्राह्मण-सम्प्रदायविशेष। यह अपनेको कपिल-वंशोद्भव बताते हैं। सूरत, भड़ौंच और जम्बुसरमें कपिलब्राह्मण रहते हैं।

कपिलक (सं॰ त्रि॰) कप-इलन् स्वार्थे क, रस्य लः। १ कम्पान्वित, कंपनेवाला। २ कपिल, भूरा, तामड़ा। (पु॰) ३ पिङ्गलवर्ण, भूरा रंग।

कपिलक्षेत्र—नर्मदा और महीसागरका मध्यवर्ती उप-कूल। स्कन्दपुराणोक्त रेवाखण्डके मतसे यह अति पुण्यस्थल है। कपिलाश्रम देखो।

कपिलगङ्गिका (सं॰ स्त्री॰) कपिलगङ्गा, काम-रूपकी एक नदी। (कालिकापु॰ ७८।११८) इसका वर्त-मान नाम कपिली है।

कपिलच्छाया (सं॰ स्त्री॰) मृगनाभि, कस्तूरी, मुश्क।

कपिलता (सं॰ स्त्री॰) १ शूकशिम्बी, केवांच। २ भूरापन।

कपिलदेव (सं॰ पु॰) किसी स्मृतिशास्त्रके प्रणेता।

कपिलद्युति (सं॰ पु॰) कपिला रक्ता पिङ्गलवर्णा वा द्युतिरस्य, बहुव्री॰। सूर्य, सूरज।

कपिलद्राक्षा (सं॰ स्त्री॰) कपिला कपिलवर्णा द्राक्षा, कर्मधा॰। कपिलवर्ण बृहद् द्राक्षाविशेष, एक बड़ा और तामड़ा अङ्गूर। इसका संस्कृत पर्याय—मृद्वीका, गोस्तनी, कपिलफला, अमृतरसा, दीर्घफला, मधुवल्ली, मधुफला, मधुली, हरिता, हारहारा, सुफला, रुद्री, हिमोत्तरा, पथिका, हैमवती, शतवीर्या और काश्मरी है। यह मधुर, शीतल, हृद्य तथा मदहर्षद और दाह मूर्छा, ज्वर, श्वास, तृष्णा एवं हृल्लास (वमनवेग) निवारक होती है। (राजनिघण्टु

कपिलदामोदर—संस्कृतके एक प्राचीन कवि।
(सुभाषितावली)

कपिलद्रुम (सं॰ पु॰) कपिलः कपिलवर्णो द्रुमः, मध्यपदलो॰। काष्ठीनाम सुगन्धकाष्ठ, एक सुगन्धदार लकड़ी।

कपिलद्वीप—एक पवित्र तीर्थ। यहां भगवान्‌की अनन्तमूर्ति विराजती है।

कपिलधारा (सं॰ स्त्री॰) कपिलानां धारा दुग्धधारा इव शुभ्रा धारा यस्याः कपिलानां दुग्धधाराभिः सम्भूता निर्मला धारा यस्याः इति वा, आकारस्य ह्रस्वत्वम्। ङ्यापोः संज्ञाछन्दसो बहुलम्। पा ६।३।६३। १ गङ्गा। २ तीर्थ-विशेष। (काशी॰ १२ अ॰) ३ कपिला गायके दुग्धकी धारा।

कपिलफला (सं॰ स्त्री॰) कपिलं फलमस्याः, बहुव्री॰। कपिलद्राक्षा, अङ्गूर।

कपिलमत (सं॰ क्ली॰) कपिलस्य मुनेर्मतम्, ६-तत्। कपिलमुनि या सांख्यदर्शनका मत।

कपिलमुनि (सं॰ पु॰) बङ्गाल प्रान्तके खुलना जिलेका एक ग्राम। यह कपोताक्ष (कबदक) नदीके तटपर अवस्थित है। पूर्वकाल कपिल नामक किसी साधुने यहां कपिलेश्वरी देवमूर्ति स्थापन की थी। उन्हींके नामानुसार यह स्थान कपिलमुनि कहाया। चैत्रमासमें वारुणीके दिन कपिलेश्वरी देवीका महोत्सव होता है। फिर उसी समय मेला भी लगा करता है। वारुणीको यहां कपोताक्ष नदीमें स्नान और देवीदर्शन करनेसे अशेष पुण्य मिलता है। इसके उपलक्षमें नाना स्थानसे तीर्थयात्री आते हैं। जाफर अली नामक किसी मुसलमान पीरकी यहां सुन्दर मसजिद बनी है। यह ग्राम अक्षा॰ २२° ४१′ उ॰ और देशा॰ ८९° २१′ पू॰पर पड़ता है।

कपिलरुद्र—संस्कृतके एक प्राचीन कवि। (सुभाषितावली)

कपिललिङ्ग—लिङ्गविशेष। यह मेघना नदीके पूर्वतट प्रायः दो हजार हाथ दूर नरपालके निकट अवस्थित है। (ब्र॰ ब्रह्मखण्ड १०।३२)

कपिललौह (सं॰ क्ली॰) पित्तल, पीतल।

कपिलवस्तु (सं० स्त्री०) प्राचीन नगरविशेष, एक पुराना शहर। यह शाक्य राजाओंकी राजधानी रहा। शाक्यसिंहने यहीं जन्मग्रहण किया था। बौद्धग्रन्थ पढ़नेसे समझ पड़ता—बुद्धदेवके समय कपिलवस्तुमें विस्तर अट्टालिकाओंका वास रहा। सुन्दर राजप्रासाद मनोहर उद्यान और असंख्य सुरम्य हर्म्य स्थान स्थान पर शोभित थे। फिर यहां नाना देशीय लोग आते जाते रहे। शाक्य देखो।

प्रसिद्ध चीन परिव्राजक फाहियान् और हिउयन सियङ्ग कपिलवस्तु देखने आये थे। उन्होंने क्रमान्वयसे 'किया वी लो वे' और 'कि पि लो फ-सु-ति' नाम पर इस स्थानका उल्लेख किया है।

हिउयन सियङ्गको अर्थनासे समझते—कपिलवस्तु एक क्षुद्रराज्य और परिमाणका कम प्राय ६०० मील (१००० लि) है। उभय परिव्राजकोंके समय कपिलवस्तुको अवस्था नितान्त शोचनीय हो गयी थी। पूर्व जो जो स्थान समृद्धिशाली रहे, वही उनको जनमानवशून्य भग्नाप देख पड़े। यहां तक, कि उस समय शाक्य-राजधानी कपिलवस्तु नगरको पूर्वश्री देखनेमें आती न थी। नगरका प्राचीन इष्टकनिर्मित प्रासाद टूटा फूटा पड़ा रहा। उसीके निकट हीनयान मतावलम्बियोंका एक सङ्घाराम था। सिवा इसके हिन्दुओंके दो मन्दिर भी रहे। प्रासादके मध्यस्थलमें शुद्धोदन राजाकी प्रस्तरमूर्ति थी। उससे थोड़ी दूरपर बुद्धजननी मायादेवीका अन्तःपुर रहा। फिर नगरके इधर उधर अनेक स्तूप देख पड़ते थे।

वर्तमान फैजाबादसे उत्तर एवं गण्डकी नदीके मध्यवर्ती स्थान और दोनों नदीके सङ्गम पर्यन्त चीनपरिव्राजक वर्णित कपिलवस्तु राज्य समझ पड़ता है। फैजाबादसे २५ मील उत्तर पूर्व अवस्थित बस्ती जिलाके अन्तर्गत नगर परगनेका सामील भुइला स्थान ही प्राचीन कपिलवस्तु नगर माना गया है। आजकल अधिवासी उसे 'भुइला ताल' कहते हैं। (Cunningham's Arch. Survey of India, Vol. XII. p. 82 172.)

कपिलशिंशपा (सं० स्त्री०) कपिला शिंशपा, कर्मधा०। शिंशपा वृक्षविशेष, भूरी शीशम। इसका संस्कृत पर्याय—कपिला शीता, सारिणी, कपिलाक्षी, भस्मगर्भा और कुशिंशपा है। राजनिघण्टुके मतसे यह तिक्त एवं शीतवीर्य और वायुनाशक पित्त, ज्वर, वमन तथा हिक्कानाशक है।

कपिलसंहिता (सं० स्त्री०) एक उपपुराण। इसमें उत्कल देशके तीर्थोंका माहात्म्य वर्णित है।

कपिलस्मृति (सं० स्त्री०) कपिलप्रणीता स्मृति, मध्य-पदलो०। सांख्यशास्त्र। वेदके अर्थका अनुभव रहने और मुनिप्रणीत होनेसे सांख्यशास्त्रका प्रामाण्य माना जाता है। "[illegible]" [illegible] (शाङ्करभाष्य)

कपिला (सं० स्त्री०) कपिलो वर्णो ऽस्त्यस्याः कपिल अर्शआदित्वात् अच् टाप्। १ पुण्डरीक नामक दिग्गजकी पत्नी। २ भस्मगर्भ शिंशपावृक्ष, भूरी शीशम। ३ रेणुका नामक गन्धद्रव्य, एक सुगन्धद्रव्य औषध। ४ सुवर्णवर्ण गाय। ५ दक्षकन्या। ६ ब्रह्मकन्या। ७ कामधेनु। ८ शिंशपा शीशम। ९ राजरीति, किसी किस्मका पीतल। १० कामरूपस्थ नदीविशेष। (कालिका० ८१ अ०) ११ मध्यप्रदेशके अन्तर्गत एक नदी। यह नर्मदा नदीसे मिल गयी है।

> "[illegible]
> [illegible]" (रेवाख० १६ अ०)

कपिला और नर्मदा नदीका सङ्गमस्थान ब्रह्मावर्त कहाता है। रेवाखण्डके मतमें यहां स्नानध्यानपूर्वक महेश्वरकी पूजा करनेपर अक्षय स्वर्ग लाभ होता है। १२ तीर्थविशेष। १३ द्राक्षालता। १४ विदर्भ देशका एक ग्राम। (भ० अनुशा० २०१८) १५ निर्विषजलायुका, जोंक। १६ [illegible] सुश्रुतमें [illegible] जानेवाली मछली। १६ कपिलवर्णा भूरी।

कपिलाक्षी (सं० स्त्री०) कपिले कपिलवर्णे अक्षि इव पुष्पं यस्याः। १ मूलोत्पाद किसी किस्मका मकोद हिरन। इसकी आंखें भूरी होती हैं। २ कपिल शिंशपा, भूरी शीशम।

कपिलाचार्य (सं० पु० [illegible]) कपिलनामा आचार्यः, कर्मधा०। १ [illegible] २ विष्णु।

"महर्षिः कपिलाचार्यः [illegible] मेदिनीपतिः।" (विष्णुस०)

कपिलाञ्जन (सं० पु०) कपिलं अञ्जनं यत्र, बहुव्री०। शिव, महादेव।

कपिलातीर्थ (सं० क्ली०) तीर्थविशेष। इस तीर्थमें ब्रह्मचारी [illegible] स्नान और पितृलोक तथा देवताकी अर्चना कर[illegible] सहस्र कपिला गोदानका फल मिलता है। (भारत ३।८३।४५)

कपिलादान (सं० क्ली०) कपिलाया दानम्, ६-तत्। कपिलागोदान। मत्स्यपुराणमें कपिलाके दानका यह मन्त्र लिखा है—

"कपिले सर्वभूतानां पूजनीयासि रोहिणी।

तीर्थदेवमयी यस्मात् अतः शान्तिं प्रयच्छ मे॥"

घण्टा, चामर, किङ्किणी, दिव्य वस्त्र एवं हेमदर्पण भूषित, पयस्विनी, सुशील, तरुण और वत्सयुक्त कपिला देना चाहिये। इस दानसे स्वर्गलाभ होता है।

कपिलाधिका (सं० स्त्री०) तैलपिपीलिका, तिलचटा।

कपिलापुर—दक्षिणापथका एक नगर। (रेवाखण्ड १७६) यह सम्भवतः नर्मदा किनारे अवस्थित है।

कपिलार्जक (सं० पु०) कपिलवर्ण-तुलसीवृक्ष, भूरी तुलसीका पेड़।

कपिलावट (सं० पु०) कपिलया कृतो वटः गतः। तीर्थविशेष। (भारत, वन ८४।१८)

कपिलावर्त—बम्बई प्रान्तके भड़ौंच जिलेमें नर्मदा और कपिला नदीका सङ्गमस्थान। स्कन्दपुराणके रेवाखण्डमें इसका नाम रुद्रावर्त लिखा है।

कपिलाश्व (सं० पु०) कपिलाः कपिलवर्णा अश्वा यस्य, बहुव्री०। १ इन्द्र। २ एक राजा। ३ सूर्यवंशीय कुवलयाश्वके पुत्र।

कपिलासङ्गम कपिला और नर्मदा नदीके सङ्गमका स्थान। यहां स्नान [illegible] अशेष फललाभ होता है। इसके [illegible] तीर्थ हैं। (रेवाखण्ड १२५०) यह बम्बई [illegible] वर्तमान भड़ौंच जिलेके [illegible]

कपि[illegible] [illegible] तीर्थविशेष। (भारत, वन ८४ अ०)

कपिलिका (सं० स्त्री०) कपिला संज्ञायां कन्-टाप् अतइत्वम्। १ शतपदीभेद, किसी किस्मकी कनखजूरई।

"शतपद्यस्तु परुषा कृष्णा चित्रा कपिलिका पीतिका रक्ता श्वेता अग्निप्रभा इत्यष्टौ।" (सुश्रुत) २ पिपीलिकाविशेष, एक चींटी।

कपिली—नदीविशेष, एक दरया। इसका प्राचीन नाम कपिला वा कपिलगङ्गिका है।

कपिलीकृत (सं० त्रि०) अकपिलं कपिलं कृतम्, कपिल अभूत तद्भावे च्वि-कृ-क्त। कपिल बनाया हुवा, जो भूरा किया गया हो।

कपिलेन्द्रदेव—उत्कलके एक राजा। बाल्यकाल यह किसी ब्राह्मणके मवेशी चराते थे। फिर इन्होंने उत्कलराज नेत्रवासुदेवके निकट जा नौकरी की। कार्यदक्षता गुणसे यह नेत्रवासुदेवके अत्यन्त प्रियपात्र बन गये। वासुदेवके मरने पर इन्होंने अपने साहस-बलसे उत्कलका राजसिंहासन पाया था। इनके राजत्वका काल २७ वर्ष (१४५२—१४७९ ई०) रहा।

कपिलेश (सं० क्ली०) कपिलेन प्रतिष्ठापितं ईशं लिङ्गम्, मध्यपदलो०। काशीस्थ शिवलिङ्गविशेष।

"कपिलेशं महालिङ्गं कपिलेन प्रतिष्ठितम्।

तस्य कृपयाऽस्य दर्शनात् किल मानवाः॥" (काशीखण्ड)

कपिलेश्वर—१ एक प्राचीन नगर। २ मन्द्राज प्रान्तवाले गोदावरी जिलेका रामचन्द्रपुर तहसीलका एक ग्राम। यह अक्षा० १६° ४६′ उ० और देशा० ८१° ५७′ २०″ पू० पर अवस्थित है। यहांकी लोकसंख्या पांच हजारसे अधिक है।

कपिलोमफला (सं० स्त्री०) कपीनां लोम इव लोमावृतं फलं यस्याः, बहुव्री०। कपिकच्छु, केवांच।

कपिलोमा (सं० स्त्री०) कपीनां लोम इव लोम-मञ्जरी यस्याः, बहुव्री०। रेणुका नामक गन्ध द्रव्य, एक खुशबूदार चीज।

कपिलोह (सं० क्ली०) कपिवत् पिङ्गलं लोहम्। १ पित्तल, पीतल। २ राजरीति, बढ़िया पीतल।

पित्तल देखो।

कपिल्लक (सं० पु०) कम्पिल्लक, नारङ्गीका चूरन।

कपिशिका (वै० स्त्री०) कपिवर्णा वर्त्तिका पृषोदरा-

दित्वात् कक्षोपः। गजपिप्पली, गजपीपर।

कपिवल्ली देखो।

कपिवक्त्र (सं० पु०) कपेर्वानरस्य वक्त्रमिव वक्त्रं यस्य बहुव्रो०। १ देवर्षि नारद। महाभारतमें नारदके वानरमुख सम्बन्धपर इस प्रकार लिखा,—किसी समय देवर्षि नारद और उनके भागिनेय पर्वत ऋषिने इस लोकमें आ मनुष्योंके साथ एकत्र रहने को विचार किया। फिर दोनों दोनोंको शुभाशुभ यावतीय मनोभाव बता देनेकी प्रतिज्ञाकर सृञ्जय राजाके राज्यमें बस गये। राजाने उभय ऋषिकी परिचर्याके लिये स्वीय कन्याको नियुक्त किया था। कुछ दिन पीछे नारद उस कन्याके प्रति अत्यन्त आसक्त हुये किन्तु लज्जावशतः यह मनोभाव भागिनेय पर्वत से बता न सके। पर्वतको आकार इङ्गित द्वारा उनका मनोभाव अवगत हुआ था। उन्होंने अतिशय क्रुद्ध हो नारदको प्रतिज्ञाभङ्ग करनेपर अभिशाप दिया—'यह राजकन्या तुम्हारी भार्या बनेगी। फिर तुम वानरका मुख धारण कर इस मर्त्यभूमिपर घूमते फिरोगे।' (भारत, शान्ति ३० अ०) (क्ली०) २ वानरका मुख बन्दरका मुंह।

कपिवल्लभ (सं० पु०) आम्रातकवृक्ष, आमड़ेका पेड़।

कपिवल्लिका, कपिवल्ली देखो।

कपिवल्ली (सं० स्त्री०) कपिरिव कपिलोम इव वल्ली, मध्यपदलो०। गजपिप्पली गजपीपर। २ कपित्थ वृक्ष, कैथेका पेड़।

कपिवास (सं० पु०) पारिशाख्यतरुवृक्ष, किसी किस्मके पीपलका पेड़।

कपिविरोचन (सं० क्ली०) मरिच, मिर्च।

कपिविरोधि, कपिविरोचन देखो।

कपिवीज (सं० क्ली०) ध्वजबिम्बीबीज, कैदावका तुख्म।

कपिवृन्त (सं० पु०) पारिशाख्यतरु, किसी किस्मका पीपल।

कपिश (सं० पु०) कपि वर्णविशेष कपिश नाम का अस्त्यस्य, कपि श। "लोमादिपामादिपिच्छादिभ्यः शनेलचः।" पा० ५।२।१००। १ श्यामवर्ण मटमैला रंग। यह कृष्ण एवं पीत उभय वर्ण मिलनेसे बनता है। २ सिह्लक नाम गन्धद्रव्य, लोबान। ३ माध्वीमद्य, महुवेकी शराब।

"कपिशा न सन्नाम् अस्ति विहायन्।" (माघ)

४ शिव। ५ जनपदविशेष एक बस्ती। कपिशा देखो। (त्रि०) ६ कपिशवर्णयुक्त, मटमैला।

कपिशा (सं० स्त्री०) कपिश टाप्। १ सुरा, शराब। २ माधवीलता, चमेली। ३ नदीविशेष एक दरया। रघुराजा इसी नदीको पारकर उत्कल पहुंचे थे। (रघु) इसका वर्तमान नाम कसाई है। यह मेदिनीपुरके दक्षिणांशसे अग्रसर हो बङ्गोप सागरमें जा गिरी है। ४ पिशाचोंकी माता। यह कश्यपकी एक स्त्री रहीं।

कपिशाञ्जन (सं० पु०) कपिशं अञ्जनं कपिशयुक्त वा अञ्जनं यस्य, बहुव्रो०। शिव।

कपिशापुत्र (सं० पु०) कपिशायाः मद्योत्पन्नाया पिशाच्याः पुत्रः, ६-तत्। पिशाच, बैताल।

कपिशायन (सं० पु०) १ देवता। २ मद्यविशेष, किसी किस्मकी शराब। यह कपिश देशमें पहले बनायी जाती है।

कपिशिका, कपिशीका देखो।

कपिशीका (सं० स्त्री०) कपिश स्वार्थे बाहुलकात् ईकन् टाप् च। मद्यविशेष, किसी किस्मकी शराब।

कपिशीर्ष (सं० क्ली०) कपीनां शिर इव शीर्षं प्राकारादेर्ना अग्रप्रदेश, मध्यपदलो०। प्राचीरादिका अग्रभाग, दीवारका सिरा।

कपिशीर्षक (सं० क्ली०) कपीनां शीर्षं इव कायति प्रकाशते, कपिशीर्ष-कै क। १ हिङ्गुल, सिङ्गरफ, ईंगुर। २ प्राचीरादिका अग्रभाग, दीवारका सिरा।

कपिशीर्ष्णी (सं० स्त्री०) वादित्रविशेष, किसी किस्मका बाजा।

कपिष्ठल (सं० पु०) ऋषिविशेष। कपिस्थल देखो।

कपिस्कन्ध (सं० पु०) कपीनां स्कन्ध इव स्कन्धो यस्य, मध्यपदलो०। दानवविशेष। (हरिवं०)

कपिस्तन (सं० क्ली०) कपीनां स्तनं पापापम्, ६ तत्।

१ वानरोंके निवासका स्थान, बन्दरोंके रहनेका मुकाम। २ पञ्जाबका एक प्राचीन जनपद। वर्तमान नाम कैथल है। यहां अञ्जनाका मन्दिर विद्यमान है।

कपिस्वर (सं० वि०) कपीनां स्वर इव स्वरो यस्य, बहुव्री०। वानरकी भांति स्वरविशिष्ट, जो बन्दरकी तरह आवाज़ लगाता हो।

कपिहस्तक (सं० पु०) कपिकच्छु, केवांच।

कपी (हिं० स्त्री०) घिरनी, चरखी, रस्सी लपेटनेका औज़ार।

कपीकच्छु (सं० स्त्री०) कपिकच्छु, संज्ञाया वा दीर्घः। कपिकच्छुलता, केवाच।

कपीज्य (सं० पु०) कपिभिर्वानरैरिज्यते पूज्यते, कपि-यज्-क्यप्। १ रामचन्द्र। २ क्षीरिकावृक्ष, खिरनी। ३ सुग्रीव। ४ हनूमान्।

कपीत (सं० पु०) कपिभिरितः प्राप्तः प्रियत्वेनेति शेषः। श्वेतवृक्षावृक्ष, एक बेल।

कपीतक (सं० पु०) प्लक्षवृक्ष, पाकुर, सहोरा।

कपीतन (सं० पु०) कपीनां ईं लक्ष्मीं तनोति, कपि-ई-तन् पचाद्यच्। १ आम्रातक, आमड़ा। २ गर्दभाण्डवृक्ष, पाकर, सहोरा। ३ शिरीष, सरसों। ४ अश्वत्थ, पीपल। ५ गुवाकवृक्ष, सुपारीका पेड़। ६ बिल्ववृक्ष, बेलका पेड़। ७ गण्डमुण्ड। ८ उदुम्बरवृक्ष, गूलर।

कपीन्द्र (सं० पु०) कपिरिन्द्र इव कपिषु इन्द्रः श्रेष्ठो वा। १ हनूमान्। २ वालि। ३ सुग्रीव। ४ विष्णु।

"शरीरमूर्द्धमदमीतः कपीन्द्रो मूर्द्धिविव.।" (भारत १३।१४९।९९)

५ जाम्बवान्।

कपीवह (सं० स्त्री०) कपिवह दीर्घः। रुको बहे दमोपोः। पा ६।३।१२१। सरोवरविशेष, एक तालाब।

कपीवान् (सं० पु०) वशिष्ठ ऋषिके एक पुत्र। यह चतुर्थ मन्वन्तरके सप्तर्षियोंमें रहे।

कपीवान् (सं० पु०) वशिष्ठ ऋषिके एक पुत्र। (हरिवंश)

कपीश (सं० पु०) कपियोंके राजा, बन्दरोंके मालिक। वालि, सुग्रीव, हनुमान् प्रभृतिको कपीश कहते हैं।

कपीष्ट (सं० पु०) कपीनां इष्टः प्रियः, ६-तत्। १ राजादनीवृक्ष, खिरनी। २ कपित्थवृक्ष, कैथा।

कपुच्छल (वै० क्लीं०) कस्य शिरसः पुच्छमिव लाति, क-पुच्छ-ला-क। १ केशचूड़ा। २ चुरकी अग्रभाग।

"दक्षीव कपुच्छलमर्गे दग. स्पाङ्गाम.।" (शतपथब्राह्मण ८।४।१।१०)

कपुष्टिका (सं० स्त्री०) कस्य शिरसः पुष्टौ पोषणाय कायति, क पुष्टि-कै-क-टाप्, कस्य शिरसः पुष्टौ पोषणाय शितं, क-पुष्टि-कन् टाप् वा। केशकी चूड़ाके संस्कारका कार्य।

"पचातमुगौंगे वर्षं चूड़ाकरण कपुष्टिका.।" (गोभिल)

कपूत (हिं० पु०) कुपुत्र, खराब लड़का, जो पुत्र अपने कुलका धर्म छोड़ असदाचरण करता हो।

कपूती (हिं० स्त्री०) पुत्रका असदाचरण, बुरे लड़केकी हालत।

कपूय (सं० वि०) कुत्सितं पूयते, कु पूय अच् पृषोदरादित्वात् उलोपः। दुर्गन्धि, बदबूदार, खराब।

कपूर (हिं० पु०) कर्पूर, काफ़ूर। यह एक जमा हुवा खुशबूदार मसाला है। कपूर हवा लगनेसे उड़ता और आगकी लपट छू जानेसे जलता है। कर्पूर देखो।

कपूरकचरी (हिं० स्त्री०) गन्धपलाशी, गंधोली। यह एक प्रकारकी लता है। इसकी मूलसे सुगन्ध निकलता है। आसामके पहाड़ी इसके पत्रसे पाटीरा निर्माण करते हैं। गन्धपलाशी देखो।

कपूरकाट (हिं० पु०) धान्यविशेष, किसी किस्मका अगहन धान। यह सूक्ष्म होता है। इसका तण्डुल सुगन्ध और स्वादु है।

कपूरा (हिं० पु०) मेष छाग प्रभृति पशुका अण्डकोष, भेड़ बकरी वगैरह चौपायोंके बैज़ोंका थैला।

कपूरी (हिं० वि०) १ कर्पूरविशिष्ट, काफ़ूरी, जो कपूरसे तैयार किया गया हो। २ कर्पूरवर्णविशिष्ट, काफ़ूरका रङ्ग रखनेवाला, हलका पाला। (पु०) ३ वर्णविशेष, एक रङ्ग। यह कुछ-कुछ पीतवर्ण रहता है। केसर, फिटकरी और हरसिंगारके फूलसे इसे तैयार करते हैं। ४ ताम्बूलविशेष, किसी किस्मका पान। यह अति दीर्घ एवं कटु होता है। इसका प्रान्त भङ्गुर रहता है। इसको बम्बईकी ओर लोग अधिक खाते हैं। सुननेमें आता—कपूरी पान खानेसे

पुरुष नपुंसक हो जाता है। (क्ली०) ३ औषधि-विशेष। इसका पत्र दीर्घ होता है। पत्रके मध्य भागमें एक श्वेत रेखा पड़ी रहती है। मूल कपूरकी भांति सुगन्ध देता है।

कपूय् (वै० पु०) कुत्सित प्रवयति, कु प्रवि क्विप् वैदिकत्वात् निपातेन सिद्धम्। १ कुत्सित, मर्दानगी। (त्रि०) २ कुत्सित प्रकाशक।

कपोत (सं० पु०) कौ वायुः पोत इव गतिरस्य, क-पोतम् बक्र ग०। अमरटीका भरत। १ पक्षी, चिड़िया। २ काष्ठोंकी एक कपोतकी स्थिति। ३ पक्षिविशेष, कुरर। ४ मूषिकाभेद, एक चूहा। ५ कपोतसमूह, कबूतरोंका झुण्ड। ६ पारद, पारा। ७ सज्जिखार, सज्जीखार। ८ पारीशक पलाश पीपल। ९ भूरा रङ्ग। १० सुरमेकी सफेदी। ११ पारावतपक्षी, कुमरी, कबूतर। लाटिन भाषामें कपोतजातिका नाम कोलम्बिडी (Columbidae) है।

इसका संस्कृतपर्याय—रक्तकपोत, पारावत, पारापत, कलरव, प्रिय और मदकूजक है। बन्यकबूतरको वनकपोत, चित्रकण्ठ, कोकदेव, दहन, धूसर, मीवक, धूम्रलोचन, अग्निसहाय और घट गायन कहते हैं।

पृथिवीपर सर्वत्र कपोत देख पड़ता है। किन्तु अष्ट्रेलिया और भारत महासागरके उपकूलवर्ती प्रदेशोंमें इसकी संख्या अधिक है। अमेरिकामें यदिच कपोत होते भी विभिन्न प्रकारका नहीं मिलता। भारतवर्ष एवं मलयद्वीपमें कई इसकी संख्या अधिक आती वैसे ही विभिन्न प्रकारकी भी देखाती है। युरोप और उत्तर एशियामें इसकी संख्या सर्वापेक्षा अल्प है।

प्राणितत्त्ववेत्ताओंने आजतक प्रायः तीन सौसे भी अधिक कपोतश्रेणीका आविष्कार की है। उक्त सकल विभिन्न श्रेणियोंमें अधिकांश अति सुन्दर देख पड़ते हैं। अनेक कपोतोंका गात्र भिन्न भिन्न वर्णमें चित्रित रहनेसे बहुत ही मनोहर मालूम देता है। प्रायः सकल श्रेणियोंका अङ्गसौष्ठव मध्यम, सुगठित और सदृश्य है। कपोतकी अधिकांश श्रेणियां मनुष्यका उपयोगी खाद्य हैं। फिर अनेक स्थलमें यह खाद्य-रूपसे प्रचुर व्यवहृत होती है।

कपोतोंके मध्य दाम्पत्य प्रेम अति सुन्दर है। एक बार जो जोड़ी मिल जाती, वह जीवन रहते कभी टूटने नहीं देखाती। इनके इस अविच्छिन्न प्रेमकी कथा सकल देशोंके काव्यमें विशेष प्रसिद्ध है।

कपोत और कपोती दोनों घर बना लेते, अण्डे देते और बच्चे सेनेमें एक दूसरेको साहाय्य करते हैं। यह किसी स्थानको तोड़ फोड़ अपना घोंसला बना नहीं सकते। वृक्षके ऊपर, पर्वतके गह्वरमें, इष्टकालयकी कार्निसके नीचे या देवालयके मामपर गर्तको निकाल कपोत अपना घोंसला तैयार करता है। एकबार दो श्वेतवर्ण डिम्ब होते हैं। कोई कोई श्रेणी एकमात्र डिम्ब देती है। किन्तु दोसे अधिक किसीके नहीं रहते। कपोत प्रति मास डिम्ब दिया करते हैं। फिर डिम्ब फटनेमें १५ दिन लगते हैं। यह १५ दिन ताप पहुंचानेके हैं। कपोती डिम्बमें प्रथम ३ दिन एकासन दिवारात्र बराबर ताप जमाती, केवल एक बार खानेको उठ जाती है। प्रथम ३ दिन अधिक अंश वह कपोतको ताप पहुंचानेसे रोकती अथवा क्षणमात्र भी डिम्बको आगे नहीं छोड़ती। कपोती जब खानेको जाती, तब ताप पहुंचानेको कपोतको आते पाती है। कपोतको निकट न देख वह अत्यन्त क्षुधातुर होते भी डिम्बको अनावृत छोड़ कैसे उठेगी। कपोत निकट न रहनेसे क्षुधा लगने पर कपोती उसे बुलानेको गम्भीर शब्द करती है। कपोत दूर होते भी उस शब्द सुनते ही घोंसलेमें आ पहुंचता है। प्रथम तीन दिन बीत जानेसे वह डिम्बको छोड़ उठ जाती है। दिनको अधिक अंश कपोत ताप पहुंचाता और रातको कपोतीके कार्य करनेका समय आता है। १५ दिन पीछे डिम्ब फूटनेसे शावक निकलता है। यह शावक चर्माच्छादित मांसपिण्डमात्र रहता है। इसके गात्रमें पालकका कोई चिह्न देख नहीं पड़ता और चक्षुद्वय बन्द रहता है। डिम्ब फूटनेसे कपोती फिर ३ दिन ताप देनेको बैठती है। प्रथम ३ दिनकी भांति इस बार भी वह

आहार तथा निद्रा त्याग करती है। कपोत और कपोती दोनों शावकको खिलाते हैं। प्रथमतः यह जो खाते, उसीको अपने उदरस्थ खाद्यके आधारमें रख और दुग्धवत् तरल पदार्थमें परिणत कर शावकके मुखमें पहुंचाते हैं। कुछ दिन बीतने पर वही पदार्थ अपक्ववत् कर और शेषको अर्धगलित रख खिलाया जाता है। इसी प्रकार वयोवृद्धिके साथ खाद्यकी अवस्था बदल क्रमशः कठिन द्रव्य खिलाना सिखाते हैं।

डिम्ब फूटनेसे ५।६ दिन पीछे पालककी रेखा देख पड़ती है। एक मासके मध्य शावकका सर्वाङ्ग पालकसे आच्छादित हो जाता, किन्तु उसे चुगना नहीं आता। फिर भी इस समय वह पितामाताके साथ उड़ भूमिपर उतरना और घोंसलेपर चढ़ना सीखता है। इतने दिन उसे खिला देना पड़ता है। मास वा दो मासका होनेपर शावक चुगने लगता है।

कपोत-पक्षके शेष भागमें ३।४ बड़े पालक रहते हैं। प्रथम उनसे पक्षमें उड़नेके उपयुक्त १० पालक निकलते हैं। जिस प्रकार सात वत्सरके वयसमें मनुष्यके कच्चे दांत गिर फिर आते, वैसे ही उड़ना आरम्भ करनेवाले कपोतके पक्षस्थित पालक झड़कर पुनः प्रकाश पाते हैं। सर्वाग्र पक्षके उड़नेयोग्य भीतरी पर प्रथमसे आरम्भ हो झड़ा करते हैं। एक जबतक झड़कर भर नहीं जाता, तबतक दूसरेका गिरना असम्भव आता है। इसी प्रकार पञ्चम पालक गिरनेपर कपोतका वयस बदलता है। फिर दशम पालक झड़ जानेसे यह युवावस्थाको प्राप्त होता है।

कपोत फल शस्यादि खा जीवनधारण करता है। यह किसी प्रकारके कीटादि नहीं खाता। किन्तु किसी श्रेणीका कपोत क्षुद्र-क्षुद्र शम्बूक खा जाता है। हिन्दूस्थानका कबूतर 'गुटरगूं' बोलता है। यह हर्षके समय ही शब्द करता, पीड़ित होनेपर मौनी रहता है। कपोत अपनी श्रेणीकी कपोतीको मनोनीत करता, किन्तु गृहपालित मनुष्यके वशीभूत हो जानेसे भिन्न श्रेणीवालीके साथ भी रहता है। कपोतोंमें स्त्रीजाति ही यथेच्छ-व्यवहार चलाती है। अनेक स्थलमें एक कपोतीके लिये दो कपोत लड़ते देखे गये हैं। फिर कपोती नूतन कपोतकी ओर झुक पड़ी है। इसी प्रकार दो दम्पतीके मध्य विवाद बढ़नेपर परस्पर स्त्रीपरिवर्तन हुआ है। सन्ध्याकाल कपोत अति शीघ्र शीघ्र गृहप्रवेश करता, किन्तु अन्यान्य पक्षियोंकी भांति प्रातःकाल ही उसे छोड़ नहीं चलता। सूर्यका किरण कुछ अधिक अच्छा लगता है। इसकी दृष्टिशक्ति और श्रवणशक्ति अति तीक्ष्ण है। कपोतके दोनों पक्ष अति सघन और लघु होते हैं। इसीसे यह बहुत दूर उड़ सकता है।

साधारणतः कपोत देखनेमें अति सुन्दर लगता है। इसका वर्ण और आकार नानाप्रकार है। चञ्चु अधिक दीर्घ नहीं रहता, प्रायः १ इञ्चसे भी अल्प पड़ता है। उसके दोनों भाग सरल एवं ईषत् सङ्कुचित होते हैं। किसी चञ्चुका अग्रभाग अल्प और किसीका अधिक झुक जाता है। ऊपरी चञ्चुके मूलमें ईषत् मांस उभरता है। यह मांस अति कोमल और समान होता है। इसी मांसपर बिलकुल कपालके नीचे दोनों सरल नासाविवर रहते हैं। कपालसे ऊपर मस्तक गोल हो पश्चात् दिक्‌को ढल जाता है। मुखका विवर अत्यन्त क्षुद्र या अति वृहत् नहीं होता। दोनों चक्षु चञ्चुसे विस्तर पश्चात् मस्तकके दोनों पार्श्वपर समसूत्रपातसे अवस्थान करते हैं। पक्ष अधिक दीर्घ होते हैं। किसी-किसी श्रेणीके कपोतका पक्ष लपेट लिया जानेसे शेष प्रान्त सूक्ष्म पड़ता और किसीका ईषत् गोलाकार बनता है। पुच्छके पालक भी इसी प्रकार भिन्न-भिन्न आकार धारण करते हैं। पुच्छमें प्रायः १२से १४ तक पालक रहते हैं। वह अन्यान्य स्थानके पालकसे यथेष्ट दीर्घ होते हैं। फिर किसी-किसी श्रेणीवाले कपोतके पुच्छमें सोलह या दश मात्र पालक होते हैं। साधारणतः इसके पैर घुटनेके ऊपरी भाग पर्यन्त पालकसे आच्छादित रहते हैं। अङ्गुलि नातिदीर्घ होती हैं। पैरमें तीन अङ्गुलि आगे और एक पीछे पाते हैं। पश्चात्की अङ्गुलि

अनुपथगामी प्रकृतिको भांति समसूत्रपातमें अवस्थान करती है। नव हस्तोपरिस्थी पक्षीकी भांति वास रहती है। फिर प्रकृति भी हस्तोपरिस्थी पक्षीकी भांति पवित्र होती है। किसी किसी जेघोंवाले कपोतके समस्त पादपर पालक निकल आते हैं।

हिन्दुस्थानमें कबूतर शौकके लिये पाला जाता है। इसीसे इसका व्यवसाय चला करता है। केवल हिन्दुस्थानमें ही नहीं, पृथिवीके सकल स्थानपर कपोत मनुष्यके आश्रयमें पलता है।

पाश्चात्यमतके अनुसार पालक वा व्यवसायी इसको रंगको आकार, कार्य एवं गुणादि देख विभाग करते हैं। इसकी प्रायः दो जाति हैं— गोला और गिरहबाज। इन दो जातिके कपोत फिर अनेक विभागमें बंटते हैं। गोलावोंमें लक्का, शुकी, मोताकी, कोडियाला, बुग्दादी, लुक्का, चायल्ना, बबरा भूमिया, लोटन प्रभृति प्रधान हैं।

हिन्दुस्थानी लोगोंके घरों और मठोंमें एक प्रकारका गोला खूब अधिकता रूपसे रहा करता है। उसे कहूडी कबूतर कहते हैं। यह नाना वर्णका होता है। इसका मूल्य अति अल्प है।

गिरहबाजोंमें लालकी, मक्का, मोता साबा, चवलक्का, सुर्खा, सादा, लहा, भूरा, मच्छेदार, दोबाज, वगैरह अच्छे समझे जाते हैं।

गोला और दोबाज देखते ही पहचान पड़ता है। गोलेसे गिरहबाजकी चोंच छोटी होती है। फिर गोलेके चक्षुमें सर्वदा श्यामभाव रहता, किन्तु गिरहबाज अपनी आंख घुमाया करता है।

गिरहबाज पैरमें पर आनेसे भवरा और मस्तेपर चोटी बढ़ जानेसे चोटियाला कहलाता है। फिर पैरमें पर और मस्तेपर चोटी दोनों होनेसे इसको भवरा-चोटियाला कहते हैं।

पहले हिन्दुस्थानमें कपोतके अशेष भेद रहे। किन्तु आजकलको नवेलियोंको देख प्राचीन नामोंके निर्णय करनेका कोई उपाय नहीं। प्राचीन कवियोंके काव्यमें प्रमाण आता, कि पुराने समय भी हिन्दुस्थानमें कपोत पाला जाता था। राजा महाराज और सेठ साहूकार इसे अपने ऊपरसे क्रीडादिके लिये रख लेते। उस समय लोग कपोतको बहुत अच्छा समझते और बड़ा आमोद करते थे।

हिन्दुस्थानमें बालक इसे बड़ा खेला करते हैं। कपोत उड़ानेके लिये घरके सर्वोपरि एक आखोर या किसी ऊंचको ऊर्ध्व भागापर बांसो गाड़ना या बांधना पड़ता है। इस बांसोपर एक चौकोन छतरी लगती है। कपोत उड़नेसे इसी छतरी पर आकर बैठता है। छतरीमें कपड़ेका जाल रहता है। इस जालमें एक डोरी लगती, जो भूमिपर लटका करती है। डोरी नीचेसे खींचनेपर छतरीका जाल चारो ओरसे ऊपरको उभर बन्द हो जाता है। जब कोई बाहरी कबूतर भूलसे आ छतरीपर बैठता, तब खिलाड़ी नीचेसे डोरी खींचता है। इससे छतरीका जाल बन्द होते ही कबूतर फंसता है। फिर छतरीको उतारी डोरसे उतार देते और नवागत कपोतको पकड़ लेते हैं। यह अपना स्थान खूब पहचानता है। कलकत्तेसे कबूतर मिर्जापुर और इलाहाबादसे छूटते भी अपने स्थानपर आ पहुंचते हैं। वर्तमान युरोपीय महासमरमें इसने इधरसे उधर पत्र पहुंचानेमें बड़ा साहाय्य किया है। पूर्व समय भी कबूतर हरकारेका काम करते थे। उर्दूके किसी कविने कहा है—

"बाद कबूतर [illegible] के नामे बामीतर पर।
पर [illegible] है पेंचेंमें डोरकर पर।"

काठ या बांसके पिंजरे घरमें इसे रखते, उसको काबुक कहते हैं। इसमें एक एक जोड़ा कबूतर रहनेको इसे बने होते हैं। उन्होंमें खेलाड़ी इसे खिला पिला सन्ध्याको बन्द कर देते हैं। हिन्दुस्थानमें प्रायः कबूतरको चबेना खिलाया जाता है।

हिन्दुस्थानमें इसे गोलना, पक्का, छेपा वा मोच रोग अधिक लगता है। गोलना निकलनेसे कपोतको जलमें भीगने देना न चाहिये। फिर नारयोलका तैल चुपड़नेसे उक्त रोग आरोग्य होता है। मांस बढ़नेपर इसे धोदमें रखते और गहहनका एक बीज खिलाया करते हैं। इसपर भी यदि पोषण चलता है। पक्का शमित करनेके लिये हैजा प्कोता मवा मक्खन खिलाते

आता है। होमियोपाथिके मतका कोई कोई औषध इसके लिये विशेष उपकारी है।

गिरहबाज कबूतर आकाशमें उड़ते या भूमिपर उतरते समय उलट-पुलट गिरह लगाता है। यह इसकी जातिका स्वभावसिद्ध कार्य है। इस कामको गिरहबाजी कहते हैं। कोई कोई कबूतर बड़ी गिरहबाजी करता है। गिरहबाज एकबार उड़नेमें बहुत ऊंचे चढ़ता, इसीसे अनेक समय श्येन (शिकरा) पक्षी द्वारा मारे पड़ता है। फिर कोई कोई एकबारगी ही दोनों ओर गिरह लगा उड़ सकता है। एक प्रकारका गिरहबाज बांसों चढ़ता है। किन्तु इस पक्षी पूरे तौरपर गिरहबाजी कर नहीं सकता, थोड़ा-बहुत घूम फिर सीधे उड़ने लगता है। जो गिरहबाज अति अल्प दूर जा गिरहबाजी करता, उसे गरमाया समझना पड़ता है। गर्म होनेसे अधिक दूर उड़ना असम्भव है।

क्या गोला, क्या गिरहबाज—सब तरहके कबूतरोंको धूप अच्छी लगती और उनके लिये फायदेमन्द भी ठहरती है। विशेषतः गिरहबाज भली भांति धूप न मिलनेसे घबरा जाता है। आतपहीन स्थान इसके लिये विषम अनिष्टकर है। गिरहबाज व्याकुल होनेसे पुच्छके पालक उखड़ने या काटनेपर आराम पाता है। यह दैर्घ्यमें अधिक बड़ा नहीं पड़ता, साधारणतः १२से १५ इञ्च पर्यन्त रहता है। इसको अंगरेजीमें टम्बलर-पिजन (Tumbler-pigeon) कहते हैं।

गोला कबूतर देखनेमें अति सुन्दर लगता है। इसके भिन्न भिन्न परिवारकी आकृतिमें जो विशेष देख पड़ता, वह नीचे लिखा जाता है—

कलगीदार—इस कपोतकी श्रेणीका विशेष लक्षण—मस्तकके पश्चाद्देशसे चञ्चुके पार्श्वकी राह पक्षके ऊपरी भाग पर्यन्त दो स्तर उच्च पालकोंका होना है। इसका एक स्तर वक्ष और अपर स्तर पृष्ठकी ओर झुक पड़ता, मध्यस्थल सीमन्तकी भांति रहता है। जैकोबिन सुर्ख, स्याह, सफेद और जर्द रङ्गका होता है। पृष्ठ, पुच्छ, वक्षःस्थल और मस्तक प्रायः श्वेत रहता, केवल पक्षके वर्णमें ही भेद पड़ता है। फिर ही चिह्न मट्टा लगता, यह ईंटकके रङ्गमें ईषत् पीत मिला ईंटके वर्णसे मिलता है। स्याहका रंग विशेषत काला रहता, जिसमें कुछ कुछ नीलापन झलकता है। दोनों पक्षोंपर ही उक्त वर्ण होता है। फिर कलगीवाले पूर्वोक्त दोनों स्तरोंमें पालकोंकी शिखायें उन्हीं रङ्गों वर्णों की देख पड़ती है। बिलकुल सफेद और कुछ बेजलो लगनेवाले स्याहके रंगका जैकोबिन (कलगीदार) भी कहीं कहीं मिल जाता है। इसका चञ्चु ईषत् क्षुद्र और वक्षके सन्धिका चतुष्पार्श्व अमित होता है। पक्षके शेष बड़े पालक तीन ही रहते हैं। यह अति भीरु होता है। अंगरेजीमें इस श्रेणीको जैकोबाइन और जाक (Jacobine and Jack) कहते हैं।

लक्का—क्षुद्र श्रेणीका कपोत है। लक्केका विशेष चिह्न पुच्छके पालकोंका मयूर-पक्षकी भांति सर्वदा छत्राकार रहना है। ऐसे कबूतरको पूरा लक्का कहते हैं। साधारणतः जिनके पुच्छमें पालक पूर्ण छत्राकार नहीं आते, वह आधे लक्का कहाते हैं। पूरे लक्केका वर्ण समस्त श्वेत होता है। फिर वह अधिक उज्ज्वल सफेद रेशमकी भांति रहते इसको रेशमी लक्का कहते हैं। कोई कोई पूरा लक्का बिलकुल काला भी रहता, जो देखनेमें अधिक मनोहर नहीं लगता। प्रायः लक्का सफेद, काला और [illegible] रङ्गका होता है। जो लक्का देखनेमें नानावर्णविशिष्ट और सुन्दर रहता, उसका नाम नक्शा पड़ता है। पूरा लक्का भूमिपर चुगते समय बहुत अच्छा लगता है। यह बैठ जाते या चलनेको पैर उठाते अपना गलदेश कुछ झुका ऐसे सुन्दर भावसे दिखाता, कि देखते ही हृदयमें आनन्द उमड़ आता है। दो-एक श्रेणीवाले लक्कोंके मस्तकपर चोटी नहीं रहती। किन्तु सबके ही पैरोंमें पर होते हैं। अंगरेजोंमें इसको फैनटेल-पिजन (Fantail pigeon) यानी लमपरा कबूतर कहते हैं।

टेढ़ी—स्याह, सुर्ख, जर्द, गहरा [illegible]को और

काश्मीरी वगैरह तरह तरहके रङ्गोंका होता है। इसके विभिन्न विभागमें चञ्चुके मूलसे चञ्चुके पश्चात् घण्टु (गुद्दी), पृष्ठ एवं पक्षके बाद पुच्छके मूल पर्यन्त एकमात्र वर्ण रहता और निम्न चञ्चुके नीचे गलदेश, वक्षस्थल, पक्षका निम्नभाग तथा पुच्छका पालक श्वेत देख पड़ता है। फिर कपोलद्वयके साथ जघनदेश चक्षुर्द्वयके पश्चिम पर्यन्त पालकसे ढंक जाता है। इस जातिका कपोत बहुत बड़ा होता है। मोराको देखनेमें अति सुन्दर लगता किन्तु गम्भीर भीमकाय और अलसानी रहता है। इन मोराओंका रङ्ग बिलकुल साफ नहीं होता। उसमें चिह्नके वर्णपर ईषत् कृष्णाभ पीतका भाग ही अधिक देख पड़ता है। स्याह मोराओंका वर्ण घोर नीलवर्णयुक्त कृष्ण लगता है। कई मोराओं हरिताभ चित्रित होता है। खाकी मोराकी देखनेमें सुन्दर और स्याहसे मध्यवर्ती रहता है। काश्मीरी काली होने भी पालक, वक्ष, पृष्ठ, पक्ष तथा घण्टु (गुद्दी)का वर्ण श्वेत लगता और बीचमें मिला बूंद बूंद दाग पड़ता है। सबकी मोराओंको वक्ष एवं उदरमें भिन्न वर्णका पक्ष बृहत् पालक रहनेसे गुलदार कहते हैं। गुलदार मोराको देखनेमें अति सुन्दर लगता है।

मुक्खा—प्रधानतः दो श्रेणीका होता है—स्याह और चम्पेदार। यह देखनेमें अति सुन्दर रहता है। इसके विभिन्न विभागमें चञ्चुके ऊपर चञ्चुके उपरिभागसे ग्रीवाके कोण पर्यन्त मस्तक चम्पेदार सफेद लगता और दोनों पक्ष तथा समस्त देहका अन्य वर्ण पड़ता है। यह अति क्षुद्र जातिका कपोत है। फिर मुक्खा जितना ही क्षुद्र रहता, उतना ही उत्तम लगता है। यह भी लक्केका तरह गर्दन हिलाता और घण्टु (गुद्दी) उठाते समय सुन्दर एवं सौष्ठवसम्पन्न देखाता है। स्याह मुक्खोंमें उत्कृष्टता अधिक होती है। इसका भी गलदेश नानावर्णमिश्रित चित्रित रहता है। सिवा स्याहके दूसरे रङ्गके मुक्खोंको भी विशेष मतमें चम्पेदार कहते हैं। धूसर चिह्न सहित वर्णविशिष्ट मुक्खा चतुष्किणकार होता है। इसके पैरमें पर नहीं रहता। किन्तु मस्तकके पर शिखा निकल जाती है। मस्तकका श्वेतवर्ण चञ्चुके नीचे या गल देशमें फैल जानेसे उसको दामी मुक्खा कहते हैं। दामी मुक्खेका मूल्य एवं आदर अधिक रहता और रूप भी ईषत् चित्री लगता है। विलायती मुक्खेके मस्तक तथा पदद्वयमें तीन बड़े पालक और पुच्छका वर्ण काला होता है। शिखा कुछ बड़ मस्तकके सम्मुख झुक जाती है। गात्रका वर्ण श्वेत रहता है। यहां तीन प्रकारका मुक्खा होता है। इन तीनों श्रेणीके कपोतके मस्तकका वर्ण यथाक्रम कृष्ण, पीत और रक्त लगता है। फिर मस्तकका वर्ण, वक्ष एवं पुच्छके बड़े पालकोंमें भी रहता है। अंगरेजोंमें इसे नन पिजन (nun pigeon) नामसे वैरागन कहते हैं।

चौंदना—यह छोटी जेबी होती है। चक्षुके चतुष्पार्श्व और नासिकाके मूलमें चञ्चुके ऊपर ईषत् रक्ताभ कोमल मांसके बड़े बड़े फूल पड़ जाते हैं।

घोड़िया—विशेषतः मस्तकपर शिखा और पादमें पालकका विकास देखाता है। पैरमें पञ्जोंके पास जो पर रहते, वह बहुत बड़े लगते हैं। घोड़ियाका देखनेमें अधिक सौन्दर्य नहीं होता। मोराओंकी तरह यह भी अति उद्धत् एवं भीमकाय रहता किन्तु माधुर्यपूर्ण गम्भीर भावके बदले आपनेमें कुछ भीम दर्शनता रखता है। घोड़ियाओंमें किसी किसी श्रेणीका चक्षु ईषत् रक्ताभ लगता है। इनमें सुर्खोंका संख्या ही अधिक है। फिर सफेद काला घोड़ियाका भी होता है। यह कोटरमें बैठ गुटरगूं शब्द निकाला करता है। उस शब्द करते समय गलदेशका अभ्यन्तरस्थ थाथाकार फूल उठता है। उस थाथाकार या थोकको अंगरेजोंमें क्रप (Crop) और इस श्रेणीके कपोतको क्रपार (Cropper) कहते हैं। पैरके परोंको देख कोई इसे फ्लायाड पिजन (Flay-thighed pigeon) भी कह देते हैं।

लक्का—दो प्रकारका है—स्याह और सफेद। यह अति उद्धत्काय होता है। इसके चञ्चुके नीचे वक्षस्थल पर्यन्त समस्त स्थान ढेंकीकी तरह फूल

उठता है। अंगरेजीमें इसे पोउटर पिजन (Pouter pigeon) कहते हैं।

लोटन—एक प्रकारका क्षुद्रजातीय श्वेतवर्ण गोला है। यह मट्टोमें लोट सकता है। इसीसे इसको लोटन कहा करते हैं। लोटानेके लिये लोटनको दक्षिण हस्तसे ऐसे पकड़ते, जिसमें वृद्धाङ्गुष्ठ द्वारा एक ओर अनामिका तथा कनिष्ठा द्वारा अपर पक्ष दबा रखते हैं। तर्जनी एवं मध्यमा गलदेशके दोनों पार्श्वसे वक्षःस्थलके दोनों पार्श्वपर पहुंच जाती है। फिर दक्षिण एवं वाम लोटनको इसप्रकार हिलाते, जिसमें घाट (गुद्दी)को एकबार दाहने और वायें हिलता पाते हैं। कोई एक मिनट ऐसे ही हिला मट्टोपर छोड़ देनेसे यह लोटा करता है। -४१५ लोट लगाने पर इसे पकड़ उठा देना चाहिये। नतुवा कड़ी मट्टीसे टकरा मत्था फट जाना सम्भव है। इसको अंगरेजीमें स्वतन्त्र नाम न रहते भी टम्बलर (Tumbler) कह सकते हैं। जो एकबारगी ही बहुत लोट सकता, उसे कबूतर बाज बैदम-लोटन कहता है।

चाटव—(बुगचू) के अनेक भेद हैं। इसका चञ्चु अधिक क्षुद्र होता है। गलदेशके पालक वक्षके ऊपर उत्तराभिमुखो हो नहीं रहते, दोनों पार्श्वको झुक बीचमें बालोंकी विरुणीसदृश लगते हैं। इसका समस्त गलदेश भर नहीं जाता, वक्षके ऊर्ध्व देशमें अर्ध अङ्गुलि परिमित स्थान वैसा देखाता है। इस जातिका कपोत सुगठित और दृढ़काय होता है। इसको मस्तक पर शिखा रहनेसे 'टरपेट' कहते हैं।

चावड़ा—वर्णमें कृष्णकी अधिकता लिये धूसर रहता है। चक्षु रक्तकमलकी भांति लाल होते हैं। चञ्चु, क्षुद्र और कृष्णवर्ण लगता है। गलदेश मयूरकी भांति चिक्कण देख पड़ता है। चक्षु में फूल नहीं पाते। चक्षुको आवरणी कृष्णवर्ण रहती है।

बबरा—मस्तकसे गलदेश पर्यन्त कृष्णका आधिक्य लिये धूसर रहता है। फिर पृष्ठ और वक्षस्थल पाटल तथा श्वेत बिन्दुयुक्त होता है।

मूंगिया—रक्त एवं पीतमिश्रित होता है। फिर चक्षु रक्तवर्ण रहता और चक्षुके पार्श्वपर फूल पड़ता है।

टरयायी—देखनेमें खर्वाकार लगता है। इसका चञ्चु क्षुद्र होता है। इस कपोतका गलदेश पर्यन्त मस्तक और पुच्छ एकवर्ण रहता, मध्यस्थल श्वेत पड़ता है। जिसके मध्यस्थलमें गुल निकलता, उसको कबूतरबाज गुल-टरयायी कहता है। यह कृष्ण, रक्त और पीतवर्ण होता है।

बुगदादी—देखनेमें काला होता है। इसका चञ्चु प्रायः डेढ़ इञ्च लम्बा और उसका अग्रभाग टेढ़ा रहता है। बड़े बड़े चक्षुवोंके पार्श्वमें फूल पड़ जाता है। यह एक हस्त पर्यन्त दीर्घ होता है। किसी किसीके कथनानुसार यह कपोत तुर्कोंके बुग़दाद नगरसे इस देशमें आया है।

उलूक-जातीय—प्रवादानुसार उलूक और कपोतके सङ्गमसे उत्पन्न है। यह देखनेमें श्वेत और खर्वाकार होता है। फिर कोई कोई उलूक सदृश भी देख पड़ता है। यह उलूककी भांति बोलता है।

गिरहबाजोंमें नीचे लिखे कबूतर अच्छे होते हैं—

अबलका—देखनेमें सफेद लगता है। चक्षुके पार्श्वपर सरसों-जैसा एक क्षुद्र चिह्न अथवा पक्षपर कलङ्क रहता है। सर्षप-सदृश कृष्ण चिह्नविशिष्ट अबलकोंका अधिक चिह्नयुक्त गावक उत्कृष्ट जातीय समझा जाता है।

जरा—पीताधिक्य रक्तवर्ण देख पड़ता है। पक्षपर रेखा रहती है। फिर चक्षुके मध्य दो गोलाकार दाग़ होते हैं।

काग़जी—सफेद होता है। इसकी चक्षुमें वर्णविशिष्ट कलङ्क रहनेसे मोतीचूर कहते हैं।

स्तनी—ईषत् पिङ्गल रहता और चक्षुमें गोलाकार कलङ्क लगता है। इसमें स्त्रीजातिकी संख्या अति अल्प आती है।

इस परिवारवाले दोबाज़के पक्षमें अनेक पालक श्वेत होते हैं। जिसके पक्षमें केवल एकमात्र पालक श्वेत आता, वह एकबाज कहाता है।

चातकी—देखनेमें सरस धूसरवर्ण होता है। इसका पद मोल रहता है।

चंडूल—खाखा, चोता और मामूको तीन श्रेणीमें विभक्त है। खाखीको पूंछ काली या खाक होती है। गलेमें काले चपटे और पांवमें नील दाग रहते हैं। चोताके सहीमें जितने ही खाक चोंटे पड़ जाते हैं। पांव रङ्गीन रहते है। फिर उसमें दो नील दाग भी होते हैं। खाखा और चोता दोनों देखनेमें बहुत अच्छे लगते हैं। मामूको सफेदेके पङ्ख, गलदेश और पुच्छमें चक्कर रहता है।

रुप—इस कपोतके गलदेश, डर एवं पुच्छमें सफेद और काली चोंट रहती है। फिर किसीके केवल पङ्ख और पदमें भी चक्कर देख पड़ता है।

लक्का—देखनेमें गाढ़ धूसरवर्ण होता है। पङ्खपर दो दो रेखा रहती हैं। यह कपोत काली, चक्कर और कड़ाके हिसाबसे अच्छा बुरा समझा जाता है।

अंगरेज जगतत्ववेत्ताओंके मतसे कपोत और उसका साधारण नाम कोलम्बिडी (Columbidea) है। यह प्रधानतः शस्य वा बीजका भक्षण करते हैं। फिर इन्हें भूमिपर घूम घूम चुगना अच्छा लगता है। इनमें अधिकांशका वर्ण नील रहता है। वर्ण और स्वभावके अनुसार कपोतकी तीन श्रेणी ठहरायी गयी हैं। १म कफोलोमिनी (Lapholaemino) अर्थात् कलगीदार (Crested pigeons) २य पालम्बिनी (Palumbines) अर्थात् वन्य (Wood pigeons) और ३य कोलम्बिनी (Columbinae) अर्थात् पार्वत्य (Rock pigeons) कपोत।

प्रथम श्रेणीको एकमात्र जाति आजकल अष्ट्रेलियामें देख पड़ती है। इस कपोतके मस्तकपर मयूरकी चूड़ाके समान शिखा रहती है। अंगरेजी जगतत्वमें इसकी लाफोलेमस आण्टार्टिकस (Lapholaemus antarticus) अर्थात् दक्षिण मेरु सामरीय शिखा शिखायुक्त कपोत कहते हैं। २य श्रेणीमें एक प्रकार बैंगनी चमक लिये पत्तेकी आभाको रखता कबूतर होता है। यह मध्य भारतके पूर्वी घाटे समुद्रोपकूलपर्यन्त सकल स्थानोंमें मिलता है। आसाम, आराकान और सामने द्वीपमें भी इसकी संख्या अधिक है। हिमालयके मध्यप्रदेशमें इसी जातिका एकप्रकार शिखायुक्त कपोत होता है। इसका रूप अति मनोहर लगता है। दारजिलिङ्गके निकट इस जातिके जो एक प्रकार कपोत रहते, उन्हें नैपाली 'शामपुम्की' कहते हैं। फिर नीलगिरि पर्वतमें इसी जातिके कोमिपाटि एकप्रकार कपोल राजकपोत कहाते हैं। यह देर्घ्यमें पुच्छके पालक समेत प्राय १५ इञ्च पड़ता है। हिन्दुस्तानके जङ्गलो गोले और गिरहबाज इस श्रेणीमें आ सकते हैं। ३य श्रेणीके पार्वत्य कपोत कुमाऊ प्रदेशके ऊपर, उत्तर एशिया और जापानके समस्त युरोपखण्ड पर्यन्त देख पड़ते हैं। इनका वर्ण अधिक नील नहीं रहता, नीलका आधिक्य लिये धूसर लगता है। काश्मीर प्रभृतिमें हिमालय पर एकप्रकार श्वेतवर्ण कपोत होते हैं। यह देखनेमें अतिसुन्दर समझ पड़ते हैं।

इन सकल एवं अन्यान्य जाति वा कपोत भेदके अंगरेजी जगतत्वमें लिखे नामधामपर अतिसूक्ष्म रूपसे ध्यान देना एकप्रकार असम्भव है। कारण उक्त जातीय पक्षी न देख केवल कविको वर्णनाके सहारे और आकृति कल्पना कर लिखना कैसे युक्तिसिद्ध हो सकता है! इसीसे अंगरेजी जगतत्वके अनुसार समस्त जातिके नामधामादि नहीं लिखे।

कपोत अति सुधो प्राणी है। अति सामान्य भक्ष्य और थिपद्से इसको समूल पति हो जाती है। हिन्दुस्तानमें कपोतको लक्ष्मीका वाहन मानते हैं। अनेकको विश्वास रहता—इसे पालनेसे धनसम्पद् बढ़ता, दरिद्रत्व घटता और लक्ष्मीका दर्शन मिलता है। फिर इसके परका वायु मनुष्यके शरीरमें लगनेसे सर्वरोग दूर होता है। इसीसे कितने ही लोग कपोत पालते हैं। अन्य कपोतको घरमें वा बसमें पर कोई नहीं उड़ाता। कलकत्तेमें बहुतसे और हिन्दुस्तानी महाजन अपने अपने व्यवसायके स्थानमें अपना कपोत प्रतिपालन करते हैं।

मनुष्यके पक्षाघात अधाङ्गवायमें राजकपोतका एक अपूर्व गुण आविष्कृत हुआ है। यह लिखामें

पर दूर देशसे लिपि ला सकता है। इसका पच अत्यन्त सबल होता है। आश्चर्यका विषय देखाता—इस श्रेणीके कपोतमें जिसका पच जितना सबल आता, वह उतना ही अधिक जी जाता है। यह स्वभावतः दीर्घकाय और बलिष्ठ रहता, किन्तु देखनेमें अति सुन्दर लगता है। राजकपोत हिन्दुस्थानी कौड़ियालेके अन्तर्गत है। आजकल इसके द्वारा लिपि प्रेरणको बात अधिक सुन नहीं पड़ती। पहले तुर्की राज्यमें उक्त प्रथा बहुत चलती थी। आज भी वहां कहीं कहीं धनियोंके पास दो-एक लिपिवाही कपोत विद्यमान हैं। ११४७ ई०को बुगदादके सम्राट् नूरुद्दीन मुहम्मदने यह प्रथा चलायी थी। फिर १२५८ ई०को बुगदाद नगर मङ्गोलीयोंके हाथ पड़नेसे यह प्रथा रहित हुयी। फ्राङ्को-प्रूसिया युद्धमें भी यह कपोत देख पड़े थे। थोड़े ही दिन हुये कलकत्तेकी बड़ी अदालतमें एक पत्रवाही कपोत आ गया था। अंगरेजीमें इसे कारियर पिजन (Carrier pigeon) अर्थात् चिट्ठी पहुंचानेवाला कबूतर कहते हैं। वर्तमान युरोपीय समरमें इसने कुछ कम काम नहीं किया।

लिपिवाही कपोतको सिखानेमें बहु यत्न, आयास और समय लगता है। शावक परिणत होनेपर एक स्त्री और एक पुरुष निकाल एकत्र रखना और यथेष्ट प्रणय उपजानेको यत्न करना पड़ता है। फिर पत्र लानेके स्थानको इन्हें पिंजड़ेमें डाल भेज देते हैं। इनमें एकको पृथक् कर कहीं ले जानेपर दूसरा भी उड़ उसके पास निश्चय पहुंच जाता है। बहुत पतले और कड़े कागजपर पत्र लिख किसी पचके पालकमें आलपीनसे नत्थी कर देते हैं। आलपीनका सूक्ष्माग्रभाग शरीरको बाहरी ओर रहता है। फिर उड़ा देने पर यह उसी घरमें जा पहुंचता, जिसमें इसका जोड़ा रहता है। वासस्थानके प्रति अत्यन्त ममता बढ़नेसे एकमात्र कपोत पालनेसे भी काम चल सकता है। इसी प्रकार शिचित कपोत जहां संवाद लेना आवश्यक आता, वहां किसीके हाथ सौंप भेज दिया जाता है। पूर्वोक्त रूपसे लिपि लगा देनेपर कपोत प्रायपणसे उड़ प्रतिपालकके गृह आ पहुंचता है। इसको सिखानेमें प्रथमतः घर भूल न जाने और बड़ी दूरसे लौट आनेके लिये पाव कोस दूर ले लाकर छोड़ना पड़ता है। पाव कोस अभ्यस्त होनेपर आधकोस, धीरे-धीरे एक, दो, तीन, चार, पांच कोस पर ले जाकर इसे छोड़ते हैं। पीछे ग्रामान्तर और अवशेषको देशान्तर ले जा इसे सिखाना पड़ता है। यह अति शीघ्र सीखता है। शेषको इतनी चमता पाता, कि यह समुद्र पार भी आता-जाता है। शिचित कपोत एक घण्टेमें २० कोस उड़ सकता है। अधिक दूरसे पत्र मंगानेको इसे उड़ानेके पहले आठ घण्टे अनाहार किसी अन्धकार गृहमें बन्द कर देते हैं। शेषको छोड़ने पर एकबारगी ही अति ऊर्ध्व देशसे उड़ते उड़ते क्षुधाको ज्वालासे प्रभुके निकट आ पहुंचता है। सुननेमें आया, कि समुद्र पार करनेमें कितने ही कपोतोंने पानी पर गिर अपना प्राण गंवाया है। कुहरा पड़ने या पानीकी झड़ लगनेसे यह सहज और स्वल्पायासमें उड़ नहीं सकता। सुतरां ऐसे समय उड़ाने या राहमें ऐसा समय आ जानेसे इसपर अत्यन्त विपद् पड़ती है।

यह प्रथा केवल तुर्कीमें ही न रही, पीछे युरोपके नाना स्थानोंमें चल पड़ी। पहले मिसर, पालेस्ताइन, तुर्की, अरबस्थान और ईरानमें युद्धके समय जय-पराजय, सैन्य आनयन, खाद्य प्रप्राचुर्य प्रभृतिका संवाद इस कपोत द्वारा सहजमें सम्पन्न होता था। इङ्गलैण्डके विलासी धनी लोग भी उस समय इनके द्वारा प्रणयिनी और बन्धुबान्धवके निकट संवादादि भेजते रहे।

अनुमान लगा सकते—रामायण महाभारतादिके समय भी भारतमें पचीके मुखसे संवाद भेजनेकी प्रथा चलती थी। महाभारतमें एक गल्प लिखा है—गृहमें ऋतुमती और कामातुर पत्नी छोड़ चेदि-देशाधिपति महाराज उपरिचर पिताके निर्देशसे मृगयाको गये थे। वहां वृक्षको छायामें श्रान्ति दूर करते-समय पत्नीको स्मरण पर लाते ही उनका रेतः

गिर पड़ा। महाराजने उद्विग्न हो उस रेतको पत्तेके दोनेमें भर और किसी श्येन पक्षीको सौंपकर पत्नीके निकट भेजा था। श्येनने वह दोना मुखमें दबा चेदिराजधानीके अभिमुख जाते जाते किसी दूसरे श्येनसे झगड़ छिन्न किया। उससे यमुनाके जलमें व्यासकी जननी मत्स्यगन्धाका जन्म हुआ। उस उपाख्यानसे समझ पड़ेगा—श्येनपक्षी भी शिक्षित होनेसे चिट्ठिवहनका कार्य कर सकता है। एतद्भिन्न नलदमयन्तीमें 'हंसदूत' की कथा मिलती है। दमयन्तीका पोषित हंस जाकर नलसे उनके रूपका उत्कर्ष कहा गया था। यह उपाख्यान इतने दिन कविकी कल्पना मात्र उपेक्षित होते रहे। किन्तु जब कपोतके इस स्वभावकी बात खुली, तब उक्त पौराणिक उपाख्यानोंके अमूलक होनेकी श्रद्धा घटी।

हम देखते—प्राय: सकल ही देशोंमें लोग कपोतको पवित्र पक्षी समझते हैं। भारतवासी इसे लक्ष्मीका वरयान कहते हैं। फिर काशी नगरमें कपोतेश्वर नामक शिवलिङ्ग और कपोतेश्वरी नाम्नी भवानीकी मूर्ति विद्यमान है। प्राचीन आसिरीया देशके राजा इसकी परम भक्ति करते थे। अरब देशमें [illegible] बीच कपोतको महासम्मान मिलता है। मुसलमानोंके धर्मग्रन्थमें इसे 'स्वर्गदूत' कहा है। मुसलमान् बताते—मुहम्मद जब कुछ जानना चाहते, तब स्वर्गसे कपोत आ उनके कानमें सब बात सुनाते थे। सबके कानोंमें यह बात पहले जाते जाते और मुसलमान् इन्हें कानोंको सुनते समझ कभी नहीं जाते। पहले अंगरेज भी कपोतको होली बर्ड (Holy bird) अर्थात् पवित्र पक्षी समझ आदर करते थे।

हमारे पुराणमें भी लिखते—शिवि राजाकी दान शीलता देखनेको अग्नि कपोत और इन्द्र श्येनका रूप बना उनके निकट उपस्थित हुये। कपोतने श्येनके भयसे भीत हो शिविके क्रोड़में पड़ आश्रय मांगा था। शिविने शरणागतकी रक्षा और श्येनको तुष्ट करनेके लिये अपने देहका समस्त मांस गंवा महायश पाया। इसीसे कपोतका नाम अग्निमूर्ति पड़ा है।

हमारे आयुर्वेद शास्त्रमें इसके मांसका गुणागुण लिखा है। महर्षि चरकके मतसे कपोतका मांस कषाय, मधुर, शीतल और रक्तपित्तनाशक है। हारीत उसे [illegible], बलकर, वातपित्तनाशक, रुचिकर, शुक्रवर्धक, रुचिकर और मानवको हितकर बताते हैं। फिर भावमिश्रने कपोतके मांसको गुरु, स्निग्ध, रक्तपित्त एवं वायुनाशक, संग्राही, शीतल, सबको हितकर और वीर्यवर्धक कहा है। सुश्रुत तथा वाग्भटके मतमें वन्य कपोतका मांस गुरु, कषाय-मधुर, स्वादु और सर्वदोषकर होता है। [illegible]

(स्त्री०) सौवीराञ्जन, सुरमा। २ कपोताञ्जन, भूरा सुरमा।

कपोतक (सं० क्ली०) कपोत इव कपोतवर्णवत् कायति प्रकाशते, कपोत कै-क। १ सौवीराञ्जन, सुरमा। २ कपोताञ्जन, भूरा सुरमा। (पु०) १ क्षुद्रकपोत, छोटा कबूतर। २ हाथ जोड़नेकी एक रीति।

कपोतनिवादी (सं० पु०) अश्वका एक वातव्याधि, घोड़ेको होनेवाली वायुकी एक बीमारी। कठिनताके उठने पर भी जो घोड़ा भूमिपर गिर पड़ता, वह इस रोगसे पीड़ित ठहरता है। कपोतनिवादी होनेपर अश्व दुश्चिकित्स्य होता है। ([illegible])

कपोतकीय (सं० त्रि०) कपोतोऽस्त्यस्य, कपोत-छ कुक् च। नडादीनां कुक् च। पा ४।२।९१। कपोतयुक्त, कबूतरोंसे भरा हुआ।

कपोतकोषा (सं० स्त्री०) कपोतयुक्त देश, कबूतरोंसे भरा हुआ मुल्क।

कपोतपाल (सं० पु०) कपाटपाल द्रव्य, बेंडुआ।

कपोतचरणा (सं० स्त्री०) कपोतस्य चरणवत् आकारो ऽस्त्यस्याः, कपोत-चरण अर्श आदित्वात् अच्-टाप्। १ नलीनामक गन्धद्रव्य, एक खुशबूदार चीज। २ घोरिका, खिरनी।

कपोतपर्णी (सं० स्त्री०) एला, इलायचीका पेड़।

कपोतपाक (सं० पु०) कपोतस्य पाक: शिशु:, ६ तत्। १ कपोतशिशु, कबूतरका बच्चा। २ पार्वत्य जातिभेद, एक पहाड़ी कौम।

कपोतपाद (सं० त्रि०) कपोतस्य पादाविव पादौ यस्य, हस्त्यादित्वात् नान्त्यलोप। 'पादस्य लोपोऽहस्त्यादिभ्यः।' पा

५।४।१४८। कपोतकी भांति पादयुक्त, जो कबूतरकी तरह पैर रखता हो।

कपोतपालिका (सं० स्त्री०) कपोतान् पालयति, कपोत-पाल-णिच्-ण्वुल् स्वार्थे कन्-टाप् अत इत्वम्। पिटक, कावुक, दर्बा, कबूतरखाना, चिड़ियाखाना।

कपोतपाली (सं० स्त्री०) कपोतान् पालयति, कपोत-पाल-णिच्-अण्-ङीप्। कपोतपालिका, कावुक, दर्बा, कबूतरोंकी छतरी।

"पिहितं स्या इविमनविविधै: कपोतपालीषु निकेतनानाम्।" (माघ)

कपोतपुट (सं० क्ली०) औषधपुटभेद, दवाकी एक तह। जो पुट अष्टसंख्यक वनोपलमें खातमें दिया जाता, वही कपोतपुट कहाता है। (भावप्रकाश)

कपोतपुरीष (सं० पु०) पारावतविष्ठा, कबूतरका बीट। यह व्रणदारण होता है।

कपोतराज (सं० पु०) पारावतप्रभु, कबूतरोंका राजा या सरदार।

कपोतरेतस् (सं० पु०) प्रवरमुनि विशेष।

कपोतरोमा (सं० पु०) १ राजा उशीनरके पुत्र। कपोतरूपी अग्निके वरसे इनका जन्म हुवा था। (भारत, वन १९८ अ०) २ यदुवंशीय कुकुर नृपतिके पौत्र। (हरिवंश ३८ अ०)

कपोतलुब्धकीय (सं० क्ली०) कपोतं लुब्धकञ्च अधिकृत्य कृतो ग्रन्थ:, कपोतलुब्धक-छ। महाभारतके अन्तर्गत आख्यायिका विशेष। इसमें कपोत और लुब्धकके गल्पच्छलमें उपदेश दिया है—शत्रुको भी प्राण देकर भी अतिथिसत्कार करना चाहिये।

कपोतवङ्का (सं० स्त्री०) काकमाची, कैवैया।

कपोतवङ्कृता, कपोतवङ्का देखो।

कपोतवङ्घ्रा (सं० स्त्री०) कपोतो वञ्चते प्रतार्यते अनया, कपोत-वञ्च् करणे घञ् कुत्वं टाप् च। ब्राह्मी, एक बूटी। ब्राह्मी देखो।

कपोतवर्ण (सं० वि०) धूसर, चमकीला भूरा, कबूतरका रङ्ग रखनेवाला।

कपोतवर्णा, कपोतवर्णी देखो।

कपोतवर्णी (सं० स्त्री०) कपोतस्य वर्ण इव वर्णो यस्या:, गौरादित्वात् ङीप्। छोटी इलायची।

कपोतवल्ली (सं० स्त्री०) कपोतवर्णा वल्ली, मध्यपदलो०। ब्राह्मी, एक बूटी। युक्तप्रदेशमें यह यमुना किनारे होती है।

कपोतवाण (सं० स्त्री०) कपोतपाद इव यो वाणस्तद्वत् आकारो यस्य। नलिका नामक गन्धद्रव्य, एक खुशबूदार चीज़।

कपोतविष्ठा (सं० स्त्री०) कपोतपुरीष देखो।

कपोतवृत्ति (सं० वि०) कपोतानां येगो वृत्तिरिव वृत्तिर्यस्य बहुव्री०। १ सञ्चयहीन, इकट्ठा न करनेवाला, जो कबूतरकी तरह रोज़ कमाता-खाता हो। (स्त्री०) २ सञ्चयशून्य जीविका, जिस रोज़गारमें कुछ जोड़ न सकें।

कपोतवेगा (सं० स्त्री०) कपोतानां वेग गतिरिव वेग: द्रुत-वृद्धिर्यस्या:, मध्यपदलो०। ब्राह्मीनामक महाक्षुप, एक झाड़।

कपोतव्रत (सं० क्ली०) १ कपोतकी भांति कष्ट पाते भी मौनधारण करनेवाला, जो सताया जाते भी कबूतरकी तरह बोलता न हो। (पु०) २ कपोतका व्रत, कबूतरका अहद। मौनधारणपूर्वक ताड़नादि सहन करना कपोतव्रत कहाता है।

कपोतसार (सं० क्ली०) कपोतवर्ण इव सार: कृष्णवर्णो यस्य, बहुव्री०। स्रोतोऽञ्जन, सुरमा।

कपोतहस्त (सं० क्ली०) उपासनाके समय हाथ जोड़नेकी एक रीति।

कपोतहस्तक, कपोतहस्त देखो।

कपोताचनदी—बङ्गालकी एक नदी। चलित भाषामें इसे कपोतक कहते हैं। नदिया ज़िलेमें चन्द्रपुरके निकट माथाभाङ्गा नदीसे यह निकली है। उत्पत्ति-स्थलसे थोड़ी दूर पूर्वको ओर चल नदिया और यशोरके मध्य यह दक्षिणाभिमुखी हो गयी है। इस स्थानपर यही नदी नदिया, चौबीसपरगना और यशोर ज़िलेकी सीमाकी निर्देश करती है। चौबीसपरगनेके बाबाडूनासे ५ मील पूर्व 'मरीछाय गङ्गा'में कपोताच नदी जा गिरी है। गङ्गामें कलकत्तेसे नौका आया-जाया करती हैं। उक्त गङ्गाके सङ्गमस्थानसे २ मील दक्षिण इससे पूर्वमुख यशोर

ज़िलेका 'चांदखाली' नामक स्थान मिलता है। चांदखालीके सामने अक्षा० २२ ११´ उ० और देशा० ८८ २०´ पू० पर इससे छोटी भद्रा नदी आ मिली है। इन दोनों संयुक्त नदियोंके सङ्गमस्थलसे दक्षिण कहीं इसे पोमाखी, कहीं भाड़, कहीं पांगा, कहीं नामगाद और कहीं समुद्र कहते हैं। सागरके निकटवर्ती स्थानपर इसका नाम मालञ्च है। यह अन्तिमको मालञ्च नामसे ही बङ्गोपसागरमें प्रविष्ट हुयी है।

यशोर जिलेमें इस नदीके तीर सागरदांड़ी नामक एक क्षुद्र ग्राम है। १८२८ ई०को इसी ग्राममें बङ्गालके प्रसिद्ध कवि और मेघनादवध तथा ब्रजाङ्गनादि काव्यके प्रणेता माइकेल मधुसूदनने जन्मग्रहण किया था।

कपोताङ्घ्रि (सं० स्त्री०) कपोतस्य अङ्घ्रिः इव, उपमि०। नलिका नामक गन्धद्रव्य, एक खुशबूदार चीज़।

कपोताञ्जन (सं० क्ली०) कपोतवर्णं अञ्जनम् मध्य पदलो०। स्रोतोञ्जन, सुरमा।

कपोतात्तोपमफल (सं० क्ली०) निम्बभेद किसी किस्मका कागज़ी नीबू।

कपोताभ (सं० पु०) कपोतस्य आभा इव आभा यस्य, मध्यपदलो०। १ कपोतवर्ण, पोला या मैला भूरा रङ्ग। २ भूमिकाविशेष, किसी किस्मका चूहा। इसके काटनेसे दष्टस्थान पर ग्रन्थि, पिड़का और शोथकी उत्पत्ति होती है। फिर उससे वायु पित्त, कफ और रक्त चारो बिगड़ जाते हैं। (सुश्रुत) (त्रि०) ३ कपोतसदृश वर्णविशिष्ट, चमकीला भूरा, जो कबूतरका रङ्ग रखता हो।

कपोतारि (सं० पु०) कपोतानां अरिर्मारकः, ६ तत्। श्येनपक्षी, बाज़ चिड़िया।

कपोतिका (सं० स्त्री०) कपोत स्वार्थे कन् टाप् अत इत्वम्। १ कपोती, कबूतरी। २ वायसमूल किसी किस्मकी मूली।

कपोती (सं० स्त्री०) कपोत-ङीष्। १ कपोतजातिकी स्त्री कबूतरी। २ प्रसिद्ध पक्षिविशेष। ३ पिण्डुकी, फाख़ता। (त्रि०) ४ कपोतयुक्त कबूतर रखनेवाला। ५ कपोतसदृश आकारयुक्त, जो कबूतरको शक्ल रखता हो। ६ कपोतवर्ण, कबूतरका रङ्ग रखनेवाला।

कपोतेश्वरी (सं० स्त्री०) कपोतेश्वर-ङीष्। पार्वती, दुर्गा।

कपोल (सं० पु०) कपि चलन् गल्लः। कपिर्विकल्पिते बहुलम्। उण् १।११। १ गल्लक, गला। २ गण्डस्थल, गाल। यह कम्पसे सिकुड़ता भयसे उमड़ता, क्रोधसे कंपता, हर्षसे खिलता, स्वाभाविक भावसे सम रहता, कष्टसे शुष्क पड़ता और उत्साहसे पूर्ण लगता है।

कपोलकल्पना (सं० स्त्री०) अमूलक कल्पना, झूठ बात।

कपोलकल्पित (सं० त्रि०) असत्य झूठ।

कपोलकवि—संस्कृतके एक प्राचीन कवि।

कपोलकाष (सं० पु०) कपोलानां काष (कषन्ति अनेन इति काष) कर्षणस्थानम्। १ हस्तिगण्डस्थल, हाथीको कनपटी। २ हस्त्यादिका गण्डस्थान, हाथीके अपनी कनपटी रगड़नेका मुक़ाम, पेड़का तना।

"कौलाग्नि सुरचरिता कपोलकाष।" (माघ)

कपोलगेंदुआ (हिं० पु०) गण्डस्थलोपधान, गलतकिया।

कपोलफलक (सं० पु०) कपोलः फलक इव। प्रशस्त गण्डस्थल, चपटा गाल। स्वभावतः कपालास्थिको ही कपोलफलक कहते हैं।

कपोलभित्ति (सं० स्त्री०) कपोलः भित्तिः इव, उपमि०। विस्तृतकपोल लम्बा-चौड़ा गाल।

कपोलराग (सं० पु०) गण्डस्थलकी रक्तता, गालकी चमक।

कपोली (सं० स्त्री०) जानुसमीप घुटनेका अगला हिस्सा।

कपोला (हिं० पु०) वैश्यजातिविशेष, बनियोंकी एक क़ौम।

कप्तान (अं० पु०—Captain) १ सेनानी, सिपहसालार। २ पोताध्यक्ष, जहाज़का सुपरिण्टेण्डेण्ट। ३ नायक, अगुवा।

कप्तानी (हिं० स्त्री०) १ अध्यक्षता, सरदारी। (वि०) अध्यक्षसम्बन्धीय, सरदारसे सरोकार रखनेवाला।

कप्पर (हिं० पु०) कर्पट, कपड़ा।

कप्फा (हिं॰ पु॰) १ अहिफेनस्वेद, अफीमका अर्क। इसमें वस्त्र आर्द्रकर मदक प्रस्तुत करनेको शुष्क करते हैं। २ चालनी, गिरवाला, साफा। यह एक प्रकारका वस्त्र होता है। किसी पात्रके मुखमें लपेट इसपर अफीमको शुष्क करते हैं।

कप्याख्य (सं॰ पु॰) कपिराख्या यस्य, बहुव्री॰। १ वानर, बन्दर। २ सिल्हक, लोबान्।

कप्यास (सं॰ पु॰) कपोनां आसः (आस्यते अनेन इति आसः), ६-तत्। वानरगुद, बन्दरकी पोठके सामनेका हिस्सा।

कफ (सं॰ पु॰) केन जलेन फलति, क-फल-ड। अन्येष्वपि दृश्यते। पा ३।२।१०१। शरीरस्थ धातुविशेष, श्लेष्मा, बलगम। "क" शब्दका अर्थ देह और "फल्" धातुका अर्थ गति है। सुतरां इससे स्पष्ट समझ पड़ता—प्राणियोंके देहमें सर्वत्र गमन करनेवालेको विद्वान् कफ कहता है। यह शरीरस्थ सौम्य (जलीय, स्निग्ध-गुणविशिष्ट) धातु है। हिन्दीमें भी इसे प्रायः कफ ही कहते हैं। इसका संस्कृत पर्याय—क्लेदन, सङ्घात, सौम्यधातु, श्लेष्मा, घन और बली है। कफ देहको धारण करनेसे 'धातु', समस्त देहको दूषित करनेसे 'दोष' और क्लेद द्वारा सर्वशरीरको मलिन करनेसे 'मल' कहलाता है। यह नाम, स्थान और कार्यभेदसे पांच भागमें विभक्त है—

> "हृदयं वापि मामासि क्लेदयत्यवलम्बनम् ।
> रसनः स्नेहनश्चापि श्लेषणः स्थानभेदतः ॥" (सुश्रुत)

१ क्लेदन, २ अवलम्बन, ३ रसन, ४ स्नेहन और ५ श्लेषण कफके पांच नाम हैं।

> "आमाशयेऽथ हृदये कण्ठे शिरसि सन्धिषु ।
> स्थानेषु मनुष्याणां श्लेष्मा तिष्ठत्यनुक्रमात् ॥" (सुखबोध)

१ आमाशय, २ हृदय, ३ कण्ठ, ४ मस्तक, और सन्धिस्थान—शरीरके पांच स्थानोंमें श्लेष्मा प्रधानतः रहता है। क्लेदन नामक श्लेष्माका आमाशय, अवलम्बनका हृदय, रसनका कण्ठ, स्नेहनका मस्तक और श्लेषणका आश्रयस्थल सन्धिस्थान है। सर्वशरीरव्यापी होते भी जब यह अविकृत अवस्थामें रहता, तब केवलमात्र पूर्वोक्त आमाशयादि पञ्चस्थानमें ही ठहरता है। श्लेष्माके जो उल्लिखित पञ्चविध कार्य क्लेदनादि पृथक् पृथक् पड़ते, उन्हें भी हम स्थलपर लिखते हैं—

> "क्लेदनः क्लेदयत्यन्नमामाशयस्थोऽपरानपि ।
> अनुगृह्णाति च श्लेष्मस्थानान्युदककर्मणा ॥
> रसगुणावबोधेन रसनस्थानसम्भवम् ।
> त्रिकसन्धारणानि विदधात्यवलम्बनः ।
> रसनावस्थितम् च रसनो रसबोधनात् ।
> शिरःस्थः स्नेहदानेन मनसो न्द्रियतर्पणः ।
> श्लेषणः सर्वसन्धीनां श्लेषं विदधात्यसौ ॥" (सुश्रुत)

१म—क्लेदन नामक श्लेष्मा अपनी शक्तिसे भुक्त द्रव्यको भिगाता और पित्ताकृति सकल आहारीय वस्तुको गलाता है। फिर यह भिन्न (गला हुवा) अन्न देहके अन्यान्य सकल स्थानोंमें पहुंच हृदयावलम्बन, त्रिक (मेरुदण्डके निम्न एवं उपरिस्थ सन्धिस्थान अर्थात् गुह्यके सन्निकट ग्रीवास्थि तथा घाट), सन्धारण, रसग्रहण एवं इन्द्रियसमूहको शैत्यगुणसे सन्तृप्तिकरण तथा सन्धिसंश्लेषण प्रभृति उदककर्म द्वारा आनुकूल्य पहुंचाता है। २य—वक्षःस्थलस्थित अवलम्बन नामक श्लेष्मा रसके सहयोग स्वीय शक्ति द्वारा हृदयको अवलम्बन और त्रिकदेशको धारण करता है। ३य—रसन नामक रसनास्थ कफ आहारीय वस्तुसमूहके रसका ज्ञान उपजाता है। ४र्थ—स्नेहन नामक श्लेष्मा स्नेहपदार्थ प्रदानपूर्वक समस्त इन्द्रियको तृप्ति लाता है। ५म—श्लेषण नामक कफ सन्धिसमूहका संश्लेष (मेल) विधान करता है। वाभटके मतसे—

> "कफधातोः शेषाणां यत् करोत्यवलम्बनम् ।
> अतोऽवलम्बकः श्लेष्मा यस्त्वामाशयसंस्थितः ।
> क्लेदकः सोऽन्नसङ्घातक्लेदनात् रसबोधनात् ।
> बोधको रसनास्थायी शिरःसंस्थोऽक्षितर्पणात् ।
> तर्पकः सन्धिसंश्लेषात् श्लेषकः सन्धिषु स्थितः ।" (वाभट)

अवलम्बक, क्लेदक, श्लेषक, बोधक एवं तर्पक—पांच नामसे कफ ५ भागमें विभक्त है। अवलम्बक श्लेष्मा पूर्वोक्त अवलम्बन कफोक्त क्रियाशील एवं स्थानगत, क्लेदक श्लेष्मा क्लेदनकी भांति कार्यकारी तथा स्थानगत, श्लेषक पूर्वोक्त श्लेषणके सदृश क्रिया-

विशिष्ट एवं आमगत श्लेष्म रसकी भांति कार्यकारी तथा आमगत और तर्पकश्लेष्मा मस्तुलोक में इसके सदृश क्रियाकारी एवं आमाशयी है।

"[illegible] स्निग्ध पिच्छिल शीत [illegible]।
[illegible]॥" (सुश्रुत)

श्लेष्मा स्नेह, गुरु (भारी), स्निग्ध, पिच्छिल, शीतल, मधुर रसात्मक और बिगड़नेसे लवण रस विशिष्ट होता है।

कफके प्रकोपका कारण और काल—गुरुपाकी, मधुररस विशिष्ट, अत्यन्त स्निग्ध, द्रव (तरल) तथा पिच्छिल पदार्थयुक्त द्रव्य, दुग्ध तथा मधुररस खाने, दिनको सो जाने, और बाल्यकाल, शीतकाल, वसन्तकाल, रात्रिका प्रथमकाल, प्रभात तथा भोजनका अन्त समय आनेसे कफ प्रकुपित होता है। कफ समयमें ही अग्निमान्द्य मधुररस, शीतता, श्वेतत्व, प्रसेक, मल माधुर्य, स्थिरता, अवसन्नता बन्ध, आलस्य, चिर कारिता, कठिनता, शोथ, अरुचि स्निग्धता, तन्द्रा, भ्रान्ति, उपदेह, काश और गुरुता—विंशतिप्रकार लक्षण देख पड़ता है। कफज रोगमें रूक्ष द्रव्य क्षार द्रव्य, कषाय द्रव्य, तिक्त द्रव्य एवं कटु द्रव्यका सेवन, व्यायाम, निष्ठीवन (खखारकर थूकना) धूमपान, उष्ण शिरोविरेचक द्रव्य (नस्यादि)का व्यवहार, वमनकारक द्रव्यका प्रयोग, स्वेद (गर्म जलसे अभिषिक्त वस्त्रखण्ड आदि द्वारा स्वेद प्रदान) उपवास, मैथुन, पादपर्यटन युद्ध, जागरण जलक्रीड़ा और पदादि द्वारा आघात लगाना उपकारी है। ऐसे ही आहार विहार और औषधादिसे प्रकुपित कफ दब जाता है। उक्त रूक्ष द्रव्यादिको कफ संप्रशमनमें कहते हैं।

जलक्रीड़ा (सन्तरण) और शीतल क्रिया द्वारा किस प्रकार कफ प्रशमित होता है—इसके उत्तरमें कहा जाता, कि जलक्रीड़ाजनित शीतलतासे शारीरिक ताप बाहर नहीं जाता। सुतरां चतुर्दिक कर्दम लेपन कर देनेसे जठराग्नि प्रखर पड़ने पर उसके पाकक्रिया सम्पन्न होनेकी भांति शारीरिक अग्नि जलक्रीड़ादिसे प्रबल प्रखर हो कफको सुखाता है। कफ बढ़नेसे अग्निमान्द्य, नासिकादिसे कफस्राव एवं आलस्य आता, देह गुरु तथा श्वेतवर्ण दिखाता, अङ्गादि शीतल एवं शिथिल पड़ जाता और श्वास, काश तथा निद्राका आधिक्य सताता है। फिर कफ घटनेसे भ्रान्ति लगती, हृदयादि श्लेष्माशयकी शून्यता मालूम होती, हृदयकी चञ्चलता बढ़ती और शारीरिक सन्धि समूहकी शिथिलता बढ़ती है। जिस व्यक्तिके शरीरमें कफ अधिक परिमाणसे रहता, वह कफके गुण क्रियादि विशिष्ट हो कफात्मक प्रकृतिको पहुंचता है। ऐसे व्यक्तिको कफप्रकृतिक कहते हैं। श्लेष्म-प्रकृतिका लक्षण—गम्भीर बुद्धि, श्यामवर्ण एवं स्निग्ध केश, क्षमाशीलता, शौर्यवत्ता, मृदुदेह, समविभक्त बलवत्ता और निद्रावस्थामें जलयोगसे जलाशय-दर्शन है। फिर श्लेष्मप्रकृति बिगड़नेसे क्रोध, बन्ध (जड़ता), स्थिरता, गौरव, हाथीकी भांति मन्द गमन, धृति और अक्षोभ लक्षित होता है। (चरक)

सुश्रुतके मतसे श्लेष्मप्रकृतिका लक्षण—नीलवर्ण केश, सौभाग्यवत्ता, मेघ एवं मृदङ्गकी भांति स्वर, निद्रावस्थामें स्वप्नयोगसे प्रफुल्ल पद्म कुमुदादि विविध पुष्प, जलतरङ्गशील हंस चक्रवाकादि जलक्रीड़क पक्षी तथा हरित् मनोहर सरोवरादि जलाशय दर्शन, रक्तान्तनेत्र, सुविभक्तगात्र, क्षमावान्, स्निग्धदेह, सत्त्वगुणयुक्त क्लेशसहिष्णुता और गुरुको मान्यकारिता है।

मानवके शरीरमें दो प्रकारका कफ होता है—साम और निराम। आम (अपक्व)-रस मिश्रित रहनेवाले कफका नाम साम है। फिर अपक्व रस विहीन कफ निराम कहाता है। निराम कफ अविकृत और निर्दोष रहता है। उससे किसीप्रकार अनिष्ट आनेकी सम्भावना नहीं। किन्तु साम कफ विकृत और दूषित है। वह नानाप्रकार अहित उत्पन्न करता है। इसीसे उसके सकल लक्षण लिखे गये हैं—

"[illegible]।
[illegible]॥" (भावप्रकाश)

आलस्य, तन्द्रा, हृदयकी अविशुद्धता (वक्षःस्थलमें कफका आवागमन), दोषकी अप्रवृत्ति (आप न

होना), मुखकी चाक्चिक्ता (सेचापन), उदरमें भारबोध, अरुचि और निद्रालुता—साम कफका लक्षण है।

प्रथम ही प्रकृति प्रत्यय निर्देशक अनुपदिष्ट द्वारा प्रतिपत्र किया—कफ सर्वशरीरमें चलता-फिरता है। फिर वह भी कहा जा चुका—अविकृत अवस्थामें हृदय, कण्ठ, आमाशय मस्तक एवं सन्धिस्थलमें रहता और विकृत होनेपर वह स्वस्थान छोड़ शरीरके सर्व-स्थानमें पहुंच नानाप्रकार रोग उत्पादन करता है। किन्तु यह स्वयं देहमें गमनागमन रहते भी वायुके साहाय्य व्यतीत हृदयादि स्थानगमी अन्यत्र नहीं जा सकता है। यथा—

"[illegible]
[illegible]" ([illegible])

पित्त, कफ, विष्ठामूत्रादि मल और रस रक्तादि धातु समस्त पङ्गुवत् अचल हैं। वह स्वयं शरीरमें कदाच सञ्चरित नहीं सकते। फिर वायुवशके भिन्न स्थानमें पहुंचाये जाते, वहीं सब धातु मेघ दलको भांति अपनी क्रिया दिखाते हैं। अर्थात् कफ बिगड़ने, उभरने या बढ़ने पर वायुद्वारा शरीरके नाना स्थानोंमें पहुंच नानाप्रकार व्याधि उत्पादन करता है। जैसे—वक्षःस्थ फुसफुसमें श्वास तथा कासरोग, मस्तकमें शिरःपीड़ा और नासिकामें वा कफ प्रतिश्याय रोग लगा देता है।

कफ—वमन, उपवास, नेत्राञ्जन, मैथुन, शरीर-मार्जन, उष्ण जलादिसे स्वेद, चिन्ता, जागरण, परिश्रम, अत्यधिक पथपर्यटन, तृष्णाके वेगधारण, गण्डूषधारण, प्रतिमारण (दन्त, जिह्वा एवं मुखमें घर्षण द्रव्यके प्रयोग), शिरोविरेचक नस्य, रुक्षो ष्णादि पानारोपण, धूमपान, शरीराच्छादन, युद्ध, मनोदुःख उत्पादन, रुक्षद्रव्य, उष्णद्रव्य, पुरातन तथा षष्टिक धान्य, शिम्बिक, तृणधान्य, चणक, मुद्ग, कुलत्थ, माष, यव, क्षार, सर्षपतैल, उष्णजल, मरुदेशज मांस, राजसर्षप, वेताग्र, पटोल, कारवेल्ल, वार्ताकी, उदुम्बर, कर्कोटक, मोचा, रसुन, निम्ब, आम मूलक, कटुकी, खदिर, मधु, ताम्बूल, पुरातन मद्य, त्रिकटु, त्रिफला, गोमूत्र, [illegible], [illegible], [illegible], [illegible], [illegible] [illegible], [illegible] [illegible] [illegible] और [illegible] [illegible], [illegible] वा [illegible] कफ [illegible] होता है।

कफ—[illegible], [illegible], [illegible], दिवा-निद्रा, [illegible], [illegible], [illegible], [illegible], [illegible], [illegible], [illegible], [illegible] [illegible], [illegible] वा [illegible], दधि [illegible] [illegible], [illegible], [illegible], [illegible], [illegible], [illegible], [illegible], [illegible], [illegible], [illegible] और [illegible]—[illegible] [illegible], [illegible] वा [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] अर्थात् [illegible] [illegible] [illegible] [illegible], [illegible] [illegible] बढ़ता है।

कफ़ (अ० पु०—[illegible]) १ [illegible], [illegible] [illegible] [illegible]। यह [illegible] [illegible] [illegible] [illegible], [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] है। [illegible] [illegible], [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] है। [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]। [illegible] कफ [illegible] रहता है। २ [illegible], [illegible], [illegible], [illegible]। ३ [illegible], [illegible] [illegible], [illegible]। यह [illegible] होता है। [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] जाता है।

कफ़ (फा० पु०) फेन, झाग।

कफकर (सं० त्रि०) कफं करोति, कफ-कृ-अच्। १ कफवृद्धिकारक, बलगम बढ़ानेवाला। २ श्लेष्मा उत्पादन करनेवाला, जो बलगम लाता हो। यद्यपि प्रकृतिके अनुसार लाजाणी, चौलाकार्णी, शैलक, माष, भद्र, कुम्भवर्णी, मालवर्णी, मिता, मरातरा, [illegible], कर्कोटकलो, तुम्बयाला, पद्मक, प्रतोदरोक, यष्टि, दधि, नलिका, माषली और मधुक—मध्योष्णादि-मधुर मधुर द्रव्य कफकर है।

श्लेष्म एवं कफ शब्द देखो।

कफकूचिका (सं० स्त्री०) कफं कूर्चति विहतं करोति, कफ कूर्च-अच्-टाप् अत इत्वम् च। लाला, लार।

कफकेतु (सं० पु०) कफरोगाधिकारका औषध, बलगमकी एक दवा। टङ्कण, मागधी, शङ्ख एवं

सबभाग बराबर बराबर ले आद्रकके रसमें तीन भावना देनेसे यह रस बनता है। मात्रा गुञ्जामात्र है। (भैषज्यरत्नावली)

कफक्षय (सं॰ पु॰) कफस्य क्षयः, ६-तत्। शरीरस्थ स्वाभाविक कफका नाश, जिससे कुदरती बलगमका बिगाड़।

कफगण्ड (सं॰ पु॰) गलरोग गलेकी एक बीमारी। यह स्थिर, सवर्ण, गुरु, उग्रकण्डू, शीत, महागण्डकाकार, मन्दपाकयुक्त और चिरवृद्धिपाक होता है। फिर इस रोगमें प्रभावसे रोगीका मुख वैरस्य पकड़ता और तालु तथा गला सूखने लगता है। (माधवनिदान)

कफगीर (फा॰ पु॰) चम्मच, करछी कोई। इसका अग्रभाग करतलकी भांति चपटा रहता और दण्ड लम्बा लगता है। कफगीरसे दाल, भात, खिचड़ी, घी वगैरहका मैल उतारते और पूरी कचौरी भी निकालते हैं। हिन्दुस्तानमें इसे प्रायः कलछुल कहते हैं।

कफगुल्म (सं॰ पु॰) श्लेष्म गुल्म, बलगमके बिगाड़से पेटमें पड़नेवाली गिल्टी या गांठ। इसका रूप—स्तिमित्व, शीतज्वर, गात्रसाद, हृल्लास, कास, अरुचि, गौरव, शैत्य और कठिनोन्नतत्व है। (चरक)

कफघ्न (सं॰ त्रि॰) कफं तद्विकारञ्च हन्ति, कफ-हन्-टक्। श्लेष्मनाशक वा कफजनित पीड़ानाशक, बलगम या बलगमकी बीमारी दूर करनेवाला। सुश्रुतोक्त आरग्वधादि, वरुणादि, सालसारादि, लोध्रादि, अर्कादि, सुरसादि, पिप्पल्यादि, एलादि, वचादि, पटोलादि अम्बष्ठादि तथा मुस्तादि गणोक्त और त्रिकटु, त्रिफला, पञ्चमूल एवं दशमूल प्रभृति सकल द्रव्य कफनाशक हैं।

कफनाशक शब्द इस का अपभ्रंश देखो।

कफघ्नी (सं॰ स्त्री॰) कफघ्न-ङीप्। १ गजपीपल, बेंदरेच। २ क्षुपभेद, एक पेड़।

कफज (सं॰ त्रि॰) कफाज्जायते कफ-जन-ड। श्लेष्मासे उत्पन्न, बलगमसे पैदा।

कफज्वर (सं॰ पु॰) कफनिमित्तो ज्वरः, मध्यपदलो॰। श्लेष्मजन्य ज्वर, बलगमसे बुखार। ज्वर देखो।

कफणि (सं॰ पु॰-स्त्री॰) केन सुखेन फणति अनायासेन महतोऽपि विशेषमर्थं प्राप्नोति, क-फण-इन्, केन अनायासेन स्फुरति, क-स्फुर-इन् पृषोदरादित्वात् साधुः। कफोणि, मिरफक, कोहनी, बांहके बीचकी गांठ।

कफणी (सं॰ स्त्री॰) कफणि देखो।

कफद (सं॰ त्रि॰) कफं ददाति, कफ-दा-क। श्लेष्मकारक, बलगम पैदा करनेवाला।

कफन (अ॰ पु॰) शवाच्छादनवस्त्र, मुर्देपर डाला जानेवाला कपड़ा।

कफनखसोट (हिं॰ वि॰) १ शवके आच्छादनका वस्त्र नोच लेनेवाला, जो मुर्देपर डाला जानेवाला कपड़ा फाड़ लेता हो। पहले डोम श्मशानमें मुर्देका कपड़ा उतार आपसमें फाड़ लेते थे। २ कृपण, कंजूस। ३ दरिद्रका धन हरण करनेवाला, जो गरीबका माल छड़ा लेता हो।

कफनखसोटी (हिं॰ स्त्री॰) १ शवाच्छादनवस्त्रकी चोरखाड़ मुर्देपर डाले जानेवाले कपड़ेकी नोच-खसोट। यह डोमोंका कर है। २ वृत्तिविशेष, रुपया कमानेकी एक चाल। अयोग्य रीतिसे दरिद्रका धन हरण करना कफनखसोटी कहाता है। ३ कृपणता, कंजूसी।

कफनचोर (हिं॰ पु॰) १ प्रधान तस्कर, बड़ा चोर। जो गड़े मुर्देको उखाड़ कफन चुराता, वही कफनचोर कहाता है। २ दुष्ट, बदमाश लुच्चा। दुष्ट द्रव्य चोराने और किसीको देखने न पानेवालेका नाम कफनचोर है।

कफनाड़ी (सं॰ स्त्री॰) दन्तमूलगत रोगविशेष, दांतोंकी जड़में होनेवाली एक बीमारी।

कफनाना (हिं॰ क्रि॰) शवको वस्त्रसे आच्छादन करना, मुर्देको कपड़ा ओढ़ाना।

कफनाशन (सं॰ त्रि॰) कफं नाशयति, कफ-नश-णिच् ल्युट्। कफको नाश करनेवाला, जो बलगम मिटाता हो।

कफनी (हिं॰ स्त्री॰) १ शवके कण्ठमें पड़नेवाला वस्त्र, जो कपड़ा मुर्देके गलेमें डाला जाता हो।

२ परिच्छदविशेष, पहननेका एक कपड़ा। इसे साधु धारण करते हैं। कफनी सिलाई नहीं जाता। इसमें शिर निकालनेको एक छिद्र रहता है। इसका दूसरा नाम चोलना है।

कफप्रकृति (सं० स्त्री०) स्थिरचित्तता स्निग्धकेशत्व आदि, दिलका ठहराव और बालोंका चिकनापन वगैरह।

कफप्राय (सं० त्रि०) कफः प्रायः बाहुल्येन यत्र, बहुव्री०। कफबहुल, जो बहुत बलग़म रखता हो।

कफमन्दिर (सं० पु०-क्ली०) मण्डभेद, माड़, झाग।

कफरुहा (सं० स्त्री०) नागरमुस्ता, नागरमोथा।

कफरोग (सं० पु०) कफजन्य रोगमात्र, बलग़मसे पैदा होनेवाली कोई बीमारी।

कफरोहिणी (सं० स्त्री०) कफजन्य गलरोगविशेष, बलग़मसे गलेमें होनेवाली एक बीमारी। गलरोहिणी देखो। यह स्रोतनिरोधन, मन्दपाक, स्थिराङ्कुर और कफसम्भव होती है। (माधवनिदान)

कफल (सं० त्रि०) कफः साध्यत्वेन अस्त्यस्य, कफलच्। कफविशिष्ट, बलग़मी।

कफवर्धक (सं० त्रि०) कफं वर्धयति, कफ-वृध-णिच्-ण्वुल्। श्लेष्माकी वृद्धि करनेवाला, जो बलग़म बढ़ाता हो।

कफवर्धन (सं० पु०) कफं कफजनितं विकारं वा वर्धयति, कफ-वृध-णिच्-ल्यु। १ पिण्डीतगर वृक्ष, किसी किस्मके तगरका पेड़। (त्रि०) २ कफवर्धक, बलग़म बढ़ानेवाला।

कफविरोधि (सं० क्ली०) कफं विशेषेण रुणद्धि, कफ-वि रुध-णिनि। १ मरिच, मिर्च। (त्रि०) २ श्लेष्मरोधक, बलग़म रोकनेवाला।

कफविरोधी (सं० त्रि०) श्लेष्मरोधक, बलग़म रोकनेवाला।

क़फ़स (अ० पु०) १ पिञ्जर, पिंजरा। २ बन्दीगृह, क़ैदख़ाना। ३ कटहरा। ४ सङ्कुचित स्थान, तङ्ग जगह। जिसमें वायु और प्रकाश नहीं रहता, उस स्थानका नाम क़फ़स पड़ता है।

कफसंशमनवर्ग (सं० पु०) कफशान्तिकर द्रव्यगण, बलग़म ठण्डा करनेवाली चीज़ोंका जख़ीरा। कफ देखो।

कफसम्भव (सं० त्रि०) कफात् सम्भवः उत्पत्तिर्यस्य, ५ तत्। कफजात, बलग़मसे निकलनेवाला।

कफस्थान (सं० क्ली०) कफाशय, बलग़मका मुक़ाम। आमाशय, वक्षःस्थल, कण्ठ, शिर और सन्धिको कफस्थान कहते हैं।

कफस्राव (सं० पु०) नेत्रसन्धिगत रोगविशेष, आंखके जोड़में पैदा होनेवाली एक बीमारी। इसमें नेत्रका सन्धि पकता और उससे श्वेत, सान्द्र एवं विच्छिन्न पूय पड़ता है। (माधवनिदान)

कफहर (सं० त्रि०) कफं हरति नाशयति, कफ-हृ-अच्। कफनाशक, बलग़म दूर करनेवाला।

कफहृत् (सं० स्त्री०) कफं हरति, कफ-हृ-क्विप्। श्लेष्मनाशक, बलग़म दूर करनेवाला।

कफातिसार (सं० पु०) कफजन्य अतिसार, बलग़मी दस्त। इसमें प्रथम लङ्घन और पाचन हितकर है। फिर आमातिसारघ्न दीपनगण प्रयोग करना चाहिये। कफातिसारमें मनुष्य शुक्ल, सान्द्र, सकफ, श्लेष्मयुक्त, पूतिगन्ध, शीत और हृष्टरोमा हो जाता है। (माधवनिदान)

कफात्मक (सं० त्रि०) कफ आत्मा यस्य, कफात्मन्-कन्। १ कफमय, बलग़मी। २ कफरूपी, बलग़मकी सूरत रखनेवाला।

कफान्तक (सं० पु०) कफस्य अन्तको नाशकः। बबूरक वृक्ष, बबूलका पेड़।

कफ़ाबन्द (हिं० पु०) कण्ठके पश्चाद्भागको फांस कर किया जानेवाला एक पेंच। कुश्तीमें जब एक पहलवान नीचे आ जाता, तब ऊपरवाला दाहनी ओर बैठ अपना वाम हस्त उसकी कटिमें घुसेड़ दक्षिण हस्त तथा पादसे उसका कण्ठ दबाता और वामहस्तसे लंगोट पकड़ उसे उलटाता है। इसीका नाम कफ़ाबन्द है। फ़ारसीमें 'क़फ़ा' कण्ठके पश्चाद्भागको कहते हैं।

कफारि (सं० पु०) कफस्य अरिः शत्रुः, ६-तत्। १ आर्द्रक, अदरक। २ शुण्ठी, सोंठ।

कफ़ालत (अ० पु०) बन्धकता, ज़मानत। प्रतिभूपत्रको कफ़ालतनामा कहते हैं।

कफाशय (सं० पु०) कफस्थान, बलग़मका मुक़ाम।

पाव, लकड़ीका बड़ा पीपा। ११ राक्षसविशेष। रामायणमें लिखा—दनु नामक किसी दानवको उग्र तपस्या द्वारा तुष्ट करनेपर ब्रह्मासे दीर्घ जीवनका वर मिला था। वरके प्रभावसे अत्यन्त गर्वित हो किसी समय वह इन्द्रसे युद्ध करनेको जा पहुंचा। इन्द्रने वज्राघातसे उसका हस्त और मस्तक शरीरमें घुसेड़ दिया था। किन्तु ब्रह्मवरके कारण उससे भी प्राण-वियोग न हुवा। इसीप्रकार विकृत शरीरमें दिन दिन क्लिष्ट हो दनु बारम्बार इन्द्रसे अनुग्रह प्रार्थना करने लगा। फिर इन्द्रने भी उसके प्रति सदय हो योजन-परिमित हस्तद्वय और वक्षःस्थलके उपरिभागमें एक वदन बना दिया था। दनु उसी मूर्तिसे वन-वन जा और दीर्घबाहु द्वारा वन्यजन्तु खा अवस्थान करने लगा। फिर एकदा पिताकी आज्ञा प्रतिपालन करनेको राम लक्ष्मण और सीताके साथ उसी वनमें जा पहुंचे। इस राक्षसने दीर्घ बाहुद्वारा उन्हें पकड़ लिया था। रामने वीर्यभरमें लघु हस्तसे स्वीय खड्ग द्वारा दनुका प्राण-विनाश किया। रामहस्तसे मरने पर कबन्ध दिव्यमूर्ति धारण कर स्वर्गको चला गया।

महाभारतके मतसे यह राक्षस पहले विश्वावसु नामक गन्धर्व रहा, पीछे किसी ब्राह्मणके अभिशाप वश राक्षसयोनिको प्राप्त हुवा।

कबन्धता (सं॰ स्त्री॰) मस्तकहीनता, कतृत्व, शिर कट जानेकी हालत।

कबन्धी (वै॰ पु॰) १ ऋषिविशेष। 'अथ कबन्धी कात्यायन उपेत्य पप्रच्छ।' (प्रश्नोपनिषद्) (त्रि॰) कं जलं यस्यास्ति, कं-बन्ध इति। जलयुक्त, आबदार।

क़बर, कब्र देखो।

क़बरस्थान, कब्रस्तान देखो।

कबरा (हिं॰ वि॰) कर्बुर, अबलक, सफेद रङ्गपर काले, लाल, पीले या किसी दूसरे रंगके अथवा काले, पीले, लाल या किसी दूसरे रंगपर सफ़ेद धब्बे रखनेवाला।

क़बरिस्थान, कब्रस्तान देखो।

कबरी—जातिविशेष, एक क़ौम। मन्द्राजप्रदेशमें इस जातिके लोग रहते हैं। यह प्रायः १८ शाखामें विभक्त हैं। उनमें वलिगि और तोत्तियार शाखा ही प्रधान है।

पहले कबरी खेतीबारीके लिये ज़मीन् रखते थे। उसी ज़मीन्को अपर निकृष्ट जाति द्वारा जोता-बोवा जो आय मिलता, उससे इनकी जीविकाका काम चलता। आजकल इनमें वह पूर्वप्रथा रहते भी कितने ही लोग स्वयं कृषिकार्य करते हैं। फिर कोई नाव चलाता और कोई बनियेकी दुकान् लगाता है।

तोत्तियार शाखा किसी किसी स्थानमें तोत्तियान वा कम्बलत्तार नामसे भी प्रसिद्ध है। यह परिश्रमी और बड़े उत्साही हैं। कृषिकार्यमें लगा अनेक उच्च काय पर्यन्त इनके द्वारा सम्पन्न होते हैं। मन्द्राज नगरमें तोत्तियार अनेक उत्तम उत्तम कार्य चलाते हैं।

तोत्तियार ८ श्रेणीमें विभक्त हैं। प्रत्येक श्रेणी अपर श्रेणीसे स्वतन्त्र रहती है। प्रायः पांच सौ वर्ष पहले कितने ही तोत्तियारोंने मदुरा ज़िलेमें जाकर उपनिवेश किया था।

यह सकल ही विष्णुके उपासक हैं। विष्णुकी अलौकिक लीला-क्रीडामें यह आन्तरिक विश्वास रखते हैं। किसीके विष्णुकी निन्दा करनेपर इनके प्र णमें बड़ा आघात लगता है। फिर निन्दाकारीको यथोचित शास्ति देनेसे कोई पीछे नहीं हटता। इनमें बहुतसे लोग इन्द्रजाल जानते हैं। इसीसे साधारण इनको भय भक्ति देखाते हैं। सुनते—यह इन्द्रजालके बलसे सांपके काटेका विष उतार सकते हैं। पुरुष मस्तक पर पगड़ी बांधते हैं। स्त्रियां नानाविध अलङ्कार पहनती हैं। उनका वक्षःस्थल कितना ही अनावृत रहता है। किन्तु उससे उन्हें लज्जा नहीं आती।

तोत्तियारोंमें बहुविवाहकी प्रथा प्रचलित है। किन्तु प्रायः सकल ही एकबार विवाह करते हैं। एक पत्नीके मरनेपर अपर पत्नी ग्रहण की जाती है। इनके विवाह वा धर्मकर्ममें ब्राह्मणोंकी आवश्यकता नहीं पड़ती। कोडाङ्गिनायकन नामक इनका एक प्रधान रहता है। वही विवाहादि सम्पन्न करता है। जन्मकुण्डली बनाना भी उसीका काम है।

इनमें प्रधानतः तैलङ्ग होते हैं। यह प्रधानतः तैलङ्ग भाषा ही व्यवहार करते हैं। किन्तु कर्णाट छोड़ अन्य स्थानमें रहनेवालोंकी बात अलग है।

कबा (अ० पु०) परिच्छदविशेष, पहननेका एक कपड़ा। यह जानुपर्यन्त दीर्घ एवं ईषत् शिथिल होता है। इसका अग्रभाग मुक्त और बाहु आवृत रहता है।

कबाड़ (हिं० पु०) १ निष्प्रयोजन वस्तु, बेकाम चीज। २ निरर्थक कार्य, बेहूदा काम।

कबाड़ा (हिं० पु०) निरर्थक व्यापार, झगड़ा झञ्झट।

कबाड़िया, कबाड़ी देखो।

कबाड़ी (हिं० पु०) १ निरर्थक वस्तुविक्रेता, बेकाम चीज़ बेचनेवाला। २ क्षुद्र व्यवसायी, जो अत्यन्त छोटा मोटा रोज़गार करता हो। (वि०) ३ नीच कमीना, खोटा।

कबाब (अ० पु०) मांसभेद किसी किस्मका गोश्त। पहले मांसको सब भांति काटकूट बारीक बनाते, फिर उसमें बेसन, नमक और मसाला मिलाते हैं। अन्तको इसकी गोलियां बना लोहेकी सींकमें खोंसते और बांधि पुटसे खोलनेको आंचपर से करते हैं। इन्हीं सेंकी हुई गोलियोंका नाम कबाब है। इसे प्रायः मुसलमान ही खाते हैं।

कबाबचीनी (हिं० स्त्री०) शीतलचीनी। इसे संस्कृतमें कक्कोल वा कङ्कोल, नेपालीमें तिमुरे, कश्मीरीमें सुगन्धमरिच, मारवाड़ीमें शिमशीमोर, गुजरातीमें तदामरी, दक्षिणीमें दुमको, तामिलमें वाल मिलगु, तेलगुमें तोकमिरियालु, कनारीमें बालमेणसु, मलयमें वालमुलक, ब्रह्मीमें सिनमनकरव, सिंहलीमें वलगुन्दम्मिरिस, अरबीमें कबाबा और फारसीमें किबाबेह कहते हैं। (Piper cubeba)

यह झाड़ी यवद्वीप और सुमात्रा द्वीपमें स्वभावतः उत्पन्न होती है। भारतवर्षमें भी कहीं कहीं इसकी कृषि की जाती है। भारतवासी इसके फलको बाहरसे मंगाते हैं। इसके बीजको राख किसी बड़े काममें नहीं लगते। फल बेरके फलोंसे मिलते हैं। किन्तु उनमें सुखोत्पादन कुछ अधिक रहता है। फलोंकी काली नहीं ऊपरको उठ जाती है। फल गुच्छेमें रहता और गोल मिर्च जैसा दिख पड़ता है। इसे भी कबाबचीनी ही कहते हैं। यह खानेमें मरिचसे मृदु कटु एवं तिक्त लगती है। पहले यवद्वीप-वासी इसे किसी विदेशीके हाथ बेचनेमें हिचकते थे। यह भय रखते—कोई हमारे इस अपूर्व फलको अपने देशमें लाकर लगा न ले। अरबके प्राचीन वैद्योंको विदित था—कबाबचीनी मूत्रग्रन्थिके सामर्थ्यको बरकरार मिलाको बड़ा काम पड़ जाती है। किन्तु लोग इसे साधारण मसाले द्रव्यकी भांति ही व्यवहार करते आये हैं। कबाबचीनी वातुदोषघ्न और प्रमेह-का महौषध है। यह दीपन, पाचन और मूत्रवर्धक होती है। अंग्रेजी वैद्य इसे औषधोंमें अधिक व्यवहार करते हैं। कबाबचीनी कण्ठके स्वरको भी सुधारती है। गाने बजानेवाले इसे प्रायः मुंहमें डाले रहते हैं। कक्कोल देखो।

कबाबी (अ० वि०) १ कबाब बेचनेवाला। २ कबाब खानेवाला।

कबाय (हिं०) कबा देखो।

कबार (हिं० पु०) १ व्यवसाय, कामकाज। २ वृक्ष विशेष, एक पेड़।

कबास (हिं० स्त्री०) कर्बुरिकालता, कहूका रेशा। इसे बटकर रस्सी तैयार की जाती है।

कबाला (अ० पु०) विक्रयभेद एक दस्तावेज़। इसके द्वारा एककी सम्पत्ति दूसरेके अधिकारमें जाती है।

कबाला लिखनेवाले मुहर्रिरको 'कबालानवीस', और जायदाद बेचनेवालेकी ओरसे खरीदनेवालेको दी जानेवाली सनदको 'कबाला-नीलाम' कहते हैं।

कबाहट (हिं०) कबाहत देखो।

कबाहत (अ० स्त्री०) १ अभद्रता, बुराई। २ कठिनता दिक्कत, अड़चन।

कबित्थ (सं० पु०) कपित्थवृक्ष, कैथेका पेड़।

कबिस (सं० त्रि०) कपिश भूरा, तांबड़ा। (पु०) २ कपिश वर्ण भूरा या तांबड़ा रंग।

कबीठ (हिं० पु०) १ कपित्थवृक्ष, कैथेका पेड़। २ कपित्थफल, कैथेका फल।

कबीर (अ० वि०) सुप्रतिष्ठ, बड़ा। बहुत बड़े आदमीको अमीर-कबीर कहते हैं। (हिं० स्त्री०) अश्लील गीत, फोहश गाना। यह होलीमें गायी जाती है। कोई कबीर कहनेसे पहले लोग 'अररर कबीर' पद लगा लिया करते हैं।

कबीर—कबीरपन्थी नामक सम्प्रदायके प्रवर्तक। ठीक कह नहीं सकते—कबीर किसके पुत्र अथवा किस जातिके व्यक्ति रहे। इनकी जाति, सन्तति और उत्पत्तिके विषयमें नाना विवरण मिलते हैं। मुसलमान् इन्हें अपनी जातिके व्यक्ति बताते हैं। किन्तु भक्तमालमें लिखा है—

रामानन्द-शिष्य किसी ब्राह्मणके एक बालविधवा कन्या रही। किसी दिन वह ब्राह्मण कन्या साथ ले गुरुदर्शनको पहुंचे। फिर रामानन्दने उस ब्राह्मण-कन्याकी भक्ति देख सहसा पुत्रवती होनेको आशीर्वाद दिया था। आशीर्वाद भी झूठा न गया, बालविधवा कन्याके एक पुत्र उत्पन्न हुआ। उसी पुत्रका नाम कबीर है। सूतिका होते ही अभागिनी कन्या लोकापवादके भयसे गुप्तभावसे शिशुको स्थानान्तरपर छोड़ आयी थी। फिर किसी जोलाहे और उसकी स्त्रीने दैवात् शिशुको पाकर निज पुत्रकी भांति लालनपालन किया।

कबीरपन्थी भक्तमालके प्रथम अंशको बिलकुल नहीं मानते। उनके मतमें कबीर एकदिन काशीके निकट 'लहर तालाब' नामक सरोवरके पद्मपत्र पर तैरते थे। उसी स्थानसे नूरी जोलाहा अपनी पत्नी नीमाके साथ विवाहनिमन्त्रणमें जाता रहा। नीमा उस शिशुको देख अपने स्वामीके निकट ले आयी। फिर शिशुने उससे पुकार कर कहा—हमें काशी ले चलो। नूरी सद्योजात शिशुकी बात सुन अतिशय विस्मयापन्न हुआ और सोचने लगा—कोई उपदेवता मानवदेह धारणकर आ गया। अन्तको उसने मारके भयसे डर और शिशुको फेंक पलायन किया। किन्तु शिशु उसके पीछे पड़ा था। कोई आध कोस जाकर नूरीने देखा, कि शिशु उसके सम्मुख रहा। उस समय वह भयसे जड़ीभूत हो गया। शिशुने उसका भय निवारणकर कहा था—तुम हमें प्रतिपालन करो और किसी बातसे न डरो। इसीप्रकार शिशुरूपी कबीर जोलाहेके साथ लालित पालित हुये।

कबीरके जीवनका प्रथमांश जैसा कौतुकावह पाया, वैसा ही अवशिष्ट अंश भी देखाता है। भक्ति-माहात्म्य नामक संस्कृत ग्रन्थमें लिखा है—

पूर्वकाल वेदाभ्यासनिरत एक ब्राह्मण रहे। वह स्त्री-पुत्रके लिये शिल्पकार्यसे जीविका चलाते थे। एकदिन सूत लेनेको उन्हें तन्तुवायके भवन जाना पड़ा। वहांसे अपने घर लौटनेपर वह ज्वर रोगसे आक्रान्त हुये और दैवयोगसे उसी ज्वरमें मर गये। मृत्युकालको स्मरण आनेसे ही तन्तुवायके घर उनका जन्म हुआ। तन्तुवायके घर जन्म ले ब्राह्मणने प्रथम वस्त्रादि निर्माण करना सीखा था। किन्तु पूर्वसंस्कार-वशतः उनमें ब्रह्मज्ञान भी उत्पन्न हुआ। वह सर्वदा कहा करते थे—संसार असार और यह जीवन पद्म-पत्रपर जलके समान है! इस काशीधाममें कौन हमारा गुरु होगा? कौन हमें इस संसार-सागरसे बचावेगा? कर्णधार न मिलने पर यह देहतरी कैसे चलेगी?

किसी दिन उन्होंने कितने ही साधुओंके निकट उपस्थित हो अपना मनोभाव प्रकट किया। वैष्णव-साधुओंने उनसे पूछा,—तुम कौन और क्या चाहते हो। उन्होंने कहा—हम जातिके तन्तुवाय और रामानन्दके शिष्य होना चाहते हैं। वैष्णव उपहास कर कहने लगे—तुम म्लेच्छ हो, तुम्हारा गुरु कौन होगा!

फिर तन्तुवायरूपी कबीर भग्नमनोरथ घरको लौटे थे। उनका मन अस्थिर हो गया। उन्होंने फिर साधुओंके निकट जा अपने मनका दुःख देखाया था। किन्तु इस बार भी उनकी मनस्कामना पूर्ण न हुयी। फिर वह अस्थिर चित्तसे वाराणसीमें घूमने लगे। वह जिसको देखते, उसीसे पूछते थे—क्या आप बता सकते, गुरु रामानन्द कहां हैं। इसीप्रकार बहुदिन बीत गये। किसी दिन एक वैष्णवने उनसे दयाकर कहा था—गुरु रामानन्द अमुक स्थानपर रहते हैं।

रात्रि बीतनेपर वह पच्छिद्वार खोल प्रभात गङ्गा स्नानको निकलते हैं। तुम रातको उनके पच्छिद्वारकी सड़कपर जाकर सो रहो। जब वह द्वार खोल बाहर आयेंगे, तब उनके पद तुम्हारे अङ्गमें छू जायेंगे। उस समय उनके मुखसे निकले नामका तुम गुरुमन्त्र समझ ग्रहण कर लेना। सिवा इसके रामानन्दके शिष्य होनेका दूसरा कोई उपाय नहीं।

कबीर वैष्णवकी बातसे आश्वस्त हुये और उस दिनका रात्रि बीतनेसे रामानन्दके द्वारपर बैठ गये। रात्रि शेष होनेपर रामानन्द प्रातःकृत्यादि निपटा और कुम तिलक लगा जैसे ही बाहर निकले, वैसे ही कबीरके अङ्गमें उनके पद छू गये। कबीरने भी महाहर्षमादरसे गुरुके पद चूम लिये थे। रामानन्द अपने अकस्मात्‌में पद लगते देख बोल उठे—राम! राम! तुम कौन! इसप्रकार कबीरका मनोरथ पूरा हुआ। उन्होंने रामानन्दको गुरु कह साष्टाङ्ग प्रणिपात किया।*

उसी दिनसे कबीरने 'राम नामको सार माना था। वह स्नान मुक्ति कुछ न करते, केवल 'राम' नामको ही मुक्तिका सोपान समझते रहे। फिर कबीर तिलक माला धारण कर अपरापर वैष्णवोंकी भांति काशीधाममें रहने लगे।

कबीरका आचार व्यवहार देख वैष्णव बिगड़े थे। एकदिन उन्होंने कबीरको बोलाकर कहा—रे म्लेच्छ यम! तू किस साहससे तिलकमाला धारण करता है! तुमको यह दुर्बुद्धि किसने दी है।

कबीरने शान्तशिष्ट भावसे उत्तर दिया—मैं सत्य कहता हूं, गुरु रामानन्दने मुझे राममन्त्र दिया और इसीसे मैंने ऐसा कार्य किया है।

फिर सबने जाकर रामानन्दसे कबीरकी कथा कही थी। रामानन्दने अत्यन्त क्रुद्ध हो उन्हें बोला भेजा। उन्होंने गुरुके निकट जा कृताञ्जलिपुटसे धीरभावसे कहा—हे नाथ! क्या आप भूल गये? उस दिन रात्रिशेष पर मैं आपके द्वारपर जाकर लेटा था। आपने मेरे अङ्गपर पद रख राम नाम उच्चारण किया। उसी दिन मैंने राममन्त्र ग्रहण किया था। उसी दिनसे मैं नियत राम नाम जपता हूं। प्रभो! इसमें यदि मेरा दोष मान लीजिये तो दयाकर क्षमा कीजिये।

रामानन्दका कबीरका परिचय मिला और उन्होंने क्रोध परित्यागकर हंसते हंसते आशीर्वाद दिया। उसी दिनसे सब लोग कबीरको एक भक्त समझने लगे। यह नहीं—कबीर केवल भक्त ही रहे। उनका हृदय दरिद्रके दुःखसे विकल उठता था। किसी दिन वह एक वस्त्र बेचने जाते रहे। पथमें कोई हद मिल गया। उस समय शीतकाल रहा। दरिद्र ब्राह्मणने शीतार्त हो उनसे वस्त्र मांगा था। कबीरने दरिद्रको दुर्दशा देख अर्द्धाग्रबदन वस्त्र दे डाला। दान किया तो सही किन्तु परक्षणमें उनके मनमें संसारका उपाख्यान निकल पड़ा—हाय! आज मेरे घरमें अन्न नहीं, माता राहमें बैठी मेरे आनेकी आस लगाये होगी; मैं किस तरह कैसे घर वापस जाऊंगा। फिर उन्होंने मन ही मन सोचा—आज दरिद्रको यह वस्त्र दे मुझे जो सुख मिला, वस्त्र बेच कर अर्थ ले उसका होना कहां था, मेरे भाग्यमें जो आये, वही पड़ जायेगा। कबीर घर को लौट आये। आकर उन्होंने सुना था—माता अन्नव्यञ्जन बना बैठे राह देख रही है। कबीरने मातासे पूछा—माता! आज हमारा संसार कैसे चला, आज तो हमारे कोई संस्थान न था। माताने उत्तर दिया—कबीर! यह क्या, तुम्हींने तो आदमी भेज हमारे पास अर्थ पहुंचाया है। कबीर आश्चर्यमें आ गये और आवेग गद्गदस्वरसे माताके कहने लगे—'माता! तुम धन्य हो। साक्षात् भक्तवत्सल भगवान् आकर तुम्हें अर्थ दे गये हैं। माता! दीनदुःखीका धन वितरण करो। इसे अपना क्या प्रयोजन है।

कबीरकी माताने दीन-दरिद्रको धन बांटा था। चारों ओर शब्द हो गया—'कबीर बड़े दाता हैं। जो जाता वही पाता, कोई खाली घूम नहीं जाता।'

यह बदान्यता सुन एक दिन चारों ओरसे चहूनसे

* [illegible] कबीरने रामानन्दको [illegible] की है—
"[illegible]। [illegible]।
[illegible]। [illegible]।"

लोग इनके घर आकर अतिथि हुये। इन्होंने देखा,—'बड़ा ही विभ्राट है। मैं दरिद्र, निर्धन हूं। घरमें अन्नका संस्थान नहीं। कैसे इतने लोगोंकी मनस्तुष्टि की जायेगी।' इनका मन अस्थिर पड़ गया था। यह गृहान्तरमें जा सोचने लगे। उधर भगवान्ने कबीरका रूप बना और अतिथियोंको धनरत्नसे सजा विदा कर दिया। इन्होंने घर आकर यह अपूर्व घटना सुनी। फिर कबीर क्या स्थिर रह सकते थे! आप छोड़ छोड़ यह केवल इष्टदेवको पुकारने लगे।

किसी दिन इन्होंने राजसभामें पहुंच एक अञ्जलि जल भर पूर्वमुख फेंका था। राजा इन्हें पागल समझ हंस पड़े। उस समय इन्होंने निर्भय राजाको सम्बोधन कर कहा था,—राजन्! हंसनेका कोई कारण नहीं। जगन्नाथपुरीमें किसी पूजक ब्राह्मणके पैरपर उष्ण ओदन गिर पड़ा है। मैंने उसीके पैरपर शीतल जल डाला।

कबीरकी बातसे राजाको बड़ा कौतूहल लगा था। इन्होंने जगन्नाथपुरीको दूत भेजा। उसने लौट कबीरकी बात सप्रमाण की थी। फिर राजाने कबीरको एक सिद्धपुरुष ठहरा लिया। साक्षात् करनेको वह स्वयं इनके घर जा पहुंचे। कबीर राजाको अपने क्षुद्र कुटीरमें देख अतिशय आल्हादित हुये और हाथ जोड़ कहने लगे,—'महाराज! आपके आगमनसे यह दास कृतार्थ हुवा। किङ्करको कुछ करनेके लिये आदेश दीजिये।' राजाने इन्हें आलिङ्गन कर कहा,—हे वैष्णव! आप हमारा दोष ग्रहण न कीजिये। हमने वेभ्रमसे आपका उपहास किया है। बतलाइये, क्या करनेसे आप सुखी होंगे। धनरत्न जो चाहिये, हम अभी देनेको प्रस्तुत हैं।

इन्होंने सहास्यमुख उत्तर दिया था,—'राजन्! धनरत्नका क्या प्रयोजन है। जीवन और मरण—उभय समान जाते हैं। मैं मूर्ख हूं। इस तुच्छ जीविकानिर्वाहके लिये धन नहीं चाहता। जो दीन दरिद्र, क्षुधातुर और अर्थके लिये लालायित हैं, अपनी इच्छाके अनुसार उन्हें धन दीजिये। आपको महापुण्य होगा।' राजा हृष्टचित्त निज प्रासादको लौटे थे। उसी दिन इन्होंने राज्यमय घोषणा की—कबीर हमको अति प्रिय हैं।

कुछ दिन पीछे यह तीर्थयात्राको निकले और मथुरा दर्शन कर दिल्ली पहुंचे थे। उस समय दिल्लीमें मुसलमानराज सिकन्दर लोदीका राजत्व रहा। दुष्टोंने जाकर सुलतानसे कह दिया—एक दाम्भिक जोलाहा आकर अनेकोंकी वन्दना करता है। ऐसे व्यक्तिको राजदण्ड मिलना उचित है।

सिकन्दरने कबीरको पकड़नेके लिये आदेश लगाया था। यथासमय राजपुरुषोंने आ इन्हें पकड़ लिया। फिर इन्होंने उनके मुख प्राणदण्ड मिलनेकी बात सुनी। सिकन्दरके समीप पहुंचने पर पारिषदोंने इनसे नमस्कार करनेको कहा था। किन्तु इन्होंने उनकी बातपर कर्णपात न किया और हंसते हंसते सुना दिया—किसको प्रणाम किया जाये, इस संसारमें कोन वन्द्य नहीं।

फिर मुसलमानने अति क्रुद्ध हो और इन्हें शृङ्खलाबद्ध कर यमुनाके अगाध सलिलमें डालनेका आदेश निकाला था। राजपुरुषोंने तत्पश्चात् कबीरको यमुनाके जलमें निक्षेप किया। कालिन्दीके कृष्ण नीरमें इनका देह अदृश्य हो गया। किन्तु परक्षण हो सकलने यमुनाके परपार इन्हें सहास्य मुख घूमते देखा। दुष्ट लोगोंने सुलतानसे जाकर कह दिया—'कबीर ऐन्द्रजालिक हैं। सामान्य इन्द्रजाल-विद्याके प्रभावसे निश्चय उन्हें रक्षा मिली है। इसबार अग्निके मध्य निक्षिप्त कराइये।' दिल्लीश्वरने दुष्टोंकी बातोंमें पड़ राजपुरुष बोला कर इन्हें महानलमें जला डालनेको कहा था। किन्तु कैसा आश्चर्य! ज्वलन्त अनलमें इनका एक केश नष्ट न हुवा।

कबीरकी इस अमानुष घटनासे भी दिल्लीश्वरको चैतन्य आया न था। इन्होंने क्रोधसे उन्मत्त और दुर्जनोंकी बातसे वशीभूत हो हाथीके पैर नीचे इन्हें दबा मार डालनेको आदेश दिया। किन्तु भगवान् जिसपर सदय रहते, हज़ार हाथी भी उसका क्या कर सकते हैं। आज मतवाला हाथी भी इनका सिंहरूप देख भयसे भाग गया।

सिकन्दर कबीरकी भूयसी प्रशंसा करने लगे। इसबार सुलतानका मन भी शुद्ध पड़ा था। उन्होंने इन्हें बोला आदर सम्भाषणसे कहा—साधु! हमारा दोष क्षमा कीजिये। आप महापुरुष हैं। आज आपकी महिमा हम समझ सके हैं।

यह दिल्लीश्वरसे विदाय हो काशीधाम पहुंचे और संसारकी अनित्यता देख आत्मज्ञानके साधनमें यत्नवान् हुये। काशीमें भी चारो ओर इनके विपक्ष घूमते थे। एक दिन कोई दुष्ट कबीरके नामसे काशीवासी समस्त साधुओंको निमन्त्रण दे आया। घटनाक्रमसे उसी दिन यह ग्रामान्तर गये थे, कुटीरमें केवल कुछ शिष्य रहे। निमन्त्रण मिलनेसे काशीके हजार हजार साधु इनके वासस्थान पर उपनीत हुये। सहस्राधिक अतिथियोंको अकस्मात् देख शिष्योंका प्राण सूख गया। सबके सब सोचते थे—इतने लोगोंको खिला पिला कैसे विदा करेंगे। परन्तु जो भक्तवत्सल भगवान् कबीररूपसे भक्त भोज्य का सर्वभण्ड देख पड़े और सहस्रसे साधुओंको भोजन करा चल दिये। प्रत्याय घर लौटे कबीर—साधु कितने परितृप्त हुये थे। यह घरको भीड़ महासमारोह देखकर अत्यन्त विस्मयमें आये। किसी शिष्यको पुकार इन्होंने पूछा था—वत्स! यह क्या व्यापार है, किस लिये इतने लोग आये हैं। शिष्य आश्चर्य हो कहने लगा—आप क्या कह रहे हैं, आपने जिन सहस्राधिक व्यक्तियोंको खिलाया पिलाया, उन्होंने आकर यह महोत्सव मचाया है।

कबीर समझ गये—यह सकल हरिकी लीला है। इन्होंने मनोभाव छिपा शिष्यसे कहा था—वत्स! मैं क्षुधासे अतिशय कातर हो गया हूं, मुझे साधुओंका प्रसाद ला दो।

फिर तो कबीरके नियत अनिष्टकी चेष्टा करते, वह दुर्जन भी महत्त्वके गुणसे वशीभूत होने लगे। जब वह इनके निकट भिन्न भिन्न दोष स्वीकार कर कितने ही क्षमा मांगते, तब साधु कबीर सबको आलिङ्गनकर राम नाम पुकारते थे।

काशीवासी मात्र इनके गुणसे पक्षपाती बन गये। किसी दिन एक रूपवती वेश्याने कबीरके निकट आ कहा था—महात्मन्! मैं नृत्यगीतादि नानाप्रकार उपभोग द्वारा आपको सन्तुष्ट करना चाहती हूं।

रूपयौवनशालिनी और नृत्यगीतादि-निपुणा नर्तकीको देख यह महापुरुष बोल उठे,—मैं सुखभोग और नृत्यगीत नहीं समझता। फिर मैं स्त्री और पुरुष दोमें एक भी नहीं। मुझसे आपकी मनस्कामना कैसे पूर्ण होगी?' नर्तकीने अति आकुतिमिनति भावसे इनसे प्रार्थना की—मैं बड़ी आशासे आयी हूं। मुझे क्या हताश हो लौटना पड़ेगा?

इन्होंने धीर भावसे उत्तर दिया—देखो! मेरे घरमें सब भक्तवत्सल हरि विराजते हैं। वह अति रागी और महाकामी हैं। उनके सामने नाच गा आप अपनी भोगपिपासा मिटा सकती हैं।

नर्तकी बड़ा आनन्दित हुयी—मेरा ऐसा सौभाग्य कि मैं स्वयं भगवान्को नृत्यगीत द्वारा रिझाऊं गी। उसी दिनसे वह वेश्या कबीरके घरमें रह प्रभुके सामने नाचने लगी। इसी प्रकार कुछ दिन बीते थे। मनही मन वेश्या कबीरको चाहती थी। एक दिन कबीर इसलोगोंको सब छोड़ भी गये। किन्तु वेश्याकी आंख न लगती। कबीरके ध्यानकी व्याकुलतासे उसका चित्त अस्थिर हुआ था। वह किसी प्रकार आत्मसंयम कर न सकी और कबीरके सोनेकी जगह मनके आवेगमें आ पहुंची। उसने कबीर चमारवनोंको वहां कबीरके बदले ज्योतिर्मय हरिकी मूर्ति देखी थी।

फिर उसकी कामपिपासा न जाने कहां अन्तर्हित हुयी! आंखसे प्रेमाश्रुकी धारा बही थी। उसके लिये संसार असार समझ पड़ा। वेश्या उसी अमानिशाकी रातको घर छोड़ निविड़ अरण्यकी ओर चली गयी।

इन्होंने फिर उस वेश्याको कहीं न देखा। उसके अलङ्कार वस्त्रादि सकल पड़े थे। कबीरने भावना लगायी—इतने दिनमें सम्भवत वेश्याने सद्गति पायी है। इन्होंने शिष्योंको बोलाकर कहा—मेरे अन्तका समय आ पहुंचा है। वत्स! तुम काशीवासियोंको संवाद दो—मणिकर्णिकाघाट पर सब लोग कबीरसे आकर मिलें।

शिष्योंने चारो ओर गुरुकी आज्ञा घोषणा की थी। दल दल लोग आ-आ पुण्यसलिलाके तटपर समवेत हुये। सकल ही कबीरकी बात सुननेको उत्कण्ठित थे। यह अपने प्रियजनोंको उपस्थित देख मिष्ट भावसे कहने लगे—मैं परपार जाऊंगा। मेरे इह-जीवनकी लीला समाप्त हो गयी है। भाइयो! मैं अन्त्यज म्लेच्छके घरमें जन्म ले कर्मसूत्रसे वैष्णव बना हूं। इस मिथ्या अपवित्र देहको रखनेसे क्या फल मिलेगा। मगरराज्यमें* मेरा मोक्ष होगा।

कबीरकी बात सुन सकल ही हाहाकार करने लगे। इन्होंने मधुर भाषामें देहकी अनित्यता देखा सर्वसाधारणको सान्त्वना दी।

अनन्तर यह सकलको साथ ले मणिकर्णिकाके परपार पहुंचे थे। वहीं जाकर इनका निद्राकर्षण लगा। कबीर भूमिमें लेट गये। शिष्योंने इनके शरीर पर वस्त्राच्छादन किया था। फिर दो घण्टे बीतते भी यह न उठे। इससे सबलका मन अस्थिर हुवा था। शिष्योंमें भी कोई साहस कर इनके अङ्गका आवरण खोल न सका। दो घण्टे अपेक्षा कर सबके मनमें विजातीय भाव उदय हुवा था। सभीने बारम्बार इन्हें जगानेको कहा। फिर अगत्या शिष्योंने गुरुका आवरणवस्त्र खींच लिया। किन्तु वस्त्रके मध्य कबीरका दर्शन मिला न था। सबने वस्त्र और शरासन पड़ा पाया। इसी प्रकार भक्त कबीरने परमपद लाभ किया। (भक्तिमाहात्मा)

* भक्तिमाहात्म्यकी जो पुस्तक मिली, उसमें 'मगर'के स्थानमें 'मरुध' शब्द लिखा है। किन्तु 'मगर' ही युक्तियुक्त समझा जाता है। इसीसे यह पाठ ग्रहण किया गया।

सुना जाता—मृत्यु होनेसे कबीरके शवदेहपर हिन्दुवों और मुसलमानोंमें विवाद उठा था। उसी समय कबीर स्वयं आ यह बात कह कर अन्तर्हित हुये—मेरे शवदेहका आवरण खोलकर देखिये। आवरण खोलनेपर शवके अभावमें सबको कुछ फूल देख पड़े। काशीके राजा वीरसिंहने वही आधे फूल ला जलाये थे। फिर फूलोंका भस्म काशीके 'कबीर चौरा' नामक स्थानमें समाहित किया गया। उधर पठानराज बिजलीखान् आधे फूल गोरखपुरके निकट मगर नामक ग्राममें ले जाकर गड़ाये थे। उन्होंने वहां एक सुन्दर समाधिसद्म भी बनवा दिया। अब 'कबीरचौरा' और 'मगरका समाधिदेव' कबीरपन्थियोंका प्रधान तीर्थस्थान गिना जाता है।

वस्तुतः कौन न मानेगा—कबीर एक महत् व्यक्ति रहे। यह कोई जाति क्यों न हों, इनके निकट हिन्दू-मुसलमान सकल ही समान थे। यह अकुतोभयसे शास्त्र और कुरान्का प्रतिवाद कर गये हैं। कबीर कहते—'हिन्दुवोंके राम और मुसलमानोंके रहीम स्वतन्त्र नहीं, अनुसन्धान करनेसे हृदयमें मिलेंगे। यह विश्व जिसका संसार और आत्मा एवं राम जिनके सन्तान ठहरते, उन्हींको हम पीर समझते हैं।' कबीर जप पूजादि मानते न थे। इसके सम्बन्धमें यह कहा करते—

"मनका फेरत युग गयी गयी न मनका फेर।
करका मनका छोड़ कर मनका मनका फेर॥"

जपके मालाकी गुरिया सरकाते-सरकाते युग बीत गया, किन्तु मनका द्वन्द्व न मिटा। इसीसे कहते—हाथकी गुरिया छोड़ मनकी गुरिया सरकाया कीजिये।

यह जातिभेद भी मानते न थे।* इनके वचनमें मिलता है—

"सबसे हिलिये सबसे मिलिये सबका लीजिये नाम।
हांजी हांजी सबसे कीजिये बसिये अपने गाम॥"

सबके साथी बनो, सबसे मिलो और सबका नाम-ग्रहण करो। फिर सबसे 'हांजी हांजी' भी कहो, किन्तु अपने ही स्थानपर रहो।

कबीर संसारकाण्डको देख दुःखसे कहते थे—

"ब्राह्मन टाह्मन मूरख भये शूद्र पढ़े गीता।
ठग ठगाय बढ़ अच्छा खायें दुःख पावें पढ़ीता॥
साधिको मारे सोटा [illegible] जगत् दिताय।
गोरस गलियनमें फिरे बैठे सुरा बिकाय॥
सतीको ना धोती मिले रण्डी पहरे खासा।
कहे कबीरा देखो भाई दुनियाके तमाशा॥"

जातिकुलकी भांति इनके समयपर भी कबीरपन्थी गड़बड़ डाला करते हैं। उनके कथनानुसार कबीरने संवत् १२०५ को टकसार-शास्त्र प्रकाश किया और

* जाति पांति कुल कापरा यह शोभा दिन चारि।
कहे कबीर सुनहु रामानन्द येहु रहे झकमारि॥
जाति हमारी बानिया कुल करता उर माहि।
कुटुंब हमारे सन्त हो मूरख समझत नाहि॥

संवत् १२०५ को मगहर नगरमें इहलोक छोड़ दिया। ऐसा होनेसे प्राय: ३ शतवर्ष इनका परमायु आता है। यह क्या सम्भव है! किन्तु भक्तिमालाका और कई मुसलमानी इतिहासके ग्रन्थ पढ़नेसे हम समझते—कबीर सिकन्दर लोदीके समसामयिक रहे। १४८८ संवत् सिकन्दरने राज्य पाया था। अतएव सम्भवपर मानते उस समय कबीर विद्यमान रहे।

सिखोंके धर्मग्रन्थ आदिग्रन्थमें कबीरका मत अपने ग्रन्थमें उद्धृत किया है। एतद्भिन्न दादूपन्थियों, साधुओं योगाचार्यियों और शून्यवादियोंके पुस्तकमें भी इनका मत मिलता है। इससे समझ पड़ा—उक्त सम्प्रदायप्रवर्तकोंने इनका मत ले आप अपना धर्म प्रचार किया है। अन्यान्य विवरण कबीरपन्थी शब्दमें देखो।

कबीर उद्-दीन्—ताज उद् दीन इरकीके पुत्र। दिल्ली शाही बादशाह अकबर उद् दीन्के समय यह जीवित रहे। इन्होंने उनके अभिषेकपर एक पुस्तक लिखा था।

कबीरपन्थी—सम्प्रदाय विशेष। इन्होंने महात्मा कबीरका प्रवर्तित धर्ममत अवलम्बन किया है।

कबीरपन्थी समस्त देवताओंको अपेक्षा विष्णुके प्रति अधिक भक्ति देखाते हैं। रामानन्दी प्रभृति वैष्णव सम्प्रदायके साथ यह सद्भाव रखते और आचार व्यवहारमें भी मिलते जुलते हैं। इसीसे कितने ही लोग इन्हें वैष्णव कहते हैं। कबीरपन्थी अपरापर वैष्णवोंकी भांति तिलक लगाते, नासिका पर चन्दन वा गोपीचन्दनकी रेखा बनाते, कण्ठमें तुलसीमाला पहनाते और हाथमें भी जपकी माला घुमाते हैं। किन्तु यह इस तिलकमुद्राको वृथा आड़म्बरमात्र समझते हैं। वास्तविक इनको लिये बनाने मानसोक देवदेवीका पूजन अथवा क्रिया कलापका अनुष्ठान प्रयोजनीय नहीं ठहरता।

कबीरपन्थियोंमें प्रधानत: दो दल होते हैं—गृहस्थ और उदासी। गृहस्थ जाति जातिगत और वर्णगत आचार व्यवहार अवलम्बन करते हैं। फिर कोई निज धर्मको छोड़ हिन्दुओंके उपास्य देवताओंको भी पूजता है। संसारत्यागी उदासी एकमात्र नयनके अधीश्वर केवल कबीरदेवका ही भजन करते हैं। इन्हें गुरुके निकट मन्त्र लेना नहीं पड़ता। यह केवल विरक्त हो आयमर धर्मज्ञान करनेको ही उपासना समझते और अपनी इच्छाके अनुसार वेशभूषा रखते हैं। फिर कोई नग्नप्राय हो कर भी पथ पथ घूमते फिरता है। महाधियोंके मस्तक मस्तक पर टोपी लगाते हैं। उक्त दोनों दल प्राय: १२ शाखामें विभक्त हैं। इन १२ शाखाप्रवर्तकोंके नाम नीचे लिखते हैं,—

(१) श्रुत गोपालदास—सुखनिधानके प्रणेता रहे। इनके शिष्य परम्पराके द्वारकाके अखाड़े, काशीकोके कबीर-चौरे, मगहरके समाधि और जगन्नाथके अखाड़े पर कर्तृत्व रखते हैं।

(२) भग्गोदास—बीजकके रचयिता थे। इनके अनुगामी जिला मुंगेर धनौती नामक स्थानमें रहते हैं।

(३) नारायण दास और (४) चूड़ामणि दास—धर्मदास नामक वणिक्‌के पुत्र तथा गृहस्थ रहे। इसीसे सब लोग इन्हें 'धर्मगुरु'की भांति सम्बोधन करते थे। आजकल चूड़ामणिका वंश समाज नष्ट और नारायणका वंश नष्ट हो गया है।

(५) जीवनदास—सत्नामी सम्प्रदायके प्रवर्तक थे। सत्नामी देखो।

(६) जगूदासकी गद्दी कटकमें है।

(७) कमलको लोग कबीरका पुत्र बताते हैं। किन्तु इस कथापर कोई विशेष प्रमाण नहीं मिलता। यह बम्बईमें रहते थे। इनके मतानुगामी योगाभ्यासी होते हैं।

(८) टकसाली—बरोदावासी थे।

(९) ज्ञानी—सहसरामके निकट मझनी ग्राममें रहते थे।

(१०) साहबदास—कटकनिवासी और मूलपन्थी नामक सम्प्रदायके प्रवर्तक थे। मूलपन्थी देखो।

(११) नित्यानन्द और (१२) कमलानन्द—दाक्षिणात्यवासी थे।

सिवा इनके दान-कबीरी, मंगीस-कबीरी, हंस कबीरी प्रभृति दूसरी शाखा भी विद्यमान हैं।

यह पूर्वोक्त स्थानोंमें वाराणसीके 'कबीरचौरा'को ही सर्वप्रधान तीर्थ समझते हैं।

कबीरपन्थियोंका प्रकृत धर्ममत सहजमें मालूम नहीं पड़ता। किन्तु सम्प्रदायका ग्रन्थ पढ़नेसे अनेक अंशमें माना गया—हिन्दूधर्मसे ही यह मत निकला है। कबीरपन्थी एकमात्र अपने मतको छोड़ अपरापर सकल धर्म दूषित बताते हैं। इनके मतमें कबीर-प्रवर्तित धर्मव्यतीत दूसरे सकल सम्प्रदाय भ्रमपूर्ण हैं।

कबीरपन्थी एक ईश्वरको मानते हैं। वह साकार और सगुण है। उसके पाञ्चभौतिक शरीर और त्रिगुण-विशिष्ट अन्तःकरण विद्यमान है। वह सर्वशक्तिमान् एवं सर्वदोष-विवर्जित रहता और स्वेच्छानुसार सर्वप्रकार आकार बना सकता, किन्तु अपरापर सकल विषयमें मनुष्यसे पार्थक्य नहीं पड़ता। यह अपने सम्प्रदायके साधुवोंको ईश्वरानुरूप बताते, जो परलोकमें उसके समान रह एकत्र परम सुख पाते हैं। ईश्वर आद्यन्तहीन और नित्यस्वरूप है। बीजमें वृक्षके शाखापत्रकी भांति सकल वस्तु व्यक्त होनेसे पूर्व ईश्वरके शरीरमें अव्यक्तभावसे अन्तर्निविष्ट रहते हैं।

फिर इनके कथनानुसार परमपुरुष परमेश्वरने प्रलयान्तको ७२ युग पर्यन्त एकाकी रह विश्व-सृष्टिकी इच्छा की थी। अवशेषको उसकी इच्छाने एक स्त्रीमूर्ति बनायी। उसी स्त्रीका नाम माया है। माया आद्याशक्ति वा प्रकृति कहाती है। परमेश्वरने मायाके साथ सम्भोग किया था। उससे ब्रह्मा, विष्णु और शिवकी उत्पत्ति हुयी। फिर परमपुरुष छिप गये। क्रमशः माया अपने पुत्रोंके निकट पहुंचने लगी। उन्होंने उसका परिचय पूछा था। मायाने उत्तरमें कहा—'मैं निराकार, अगोचर और आदिपुरुषकी सहधारिणी हूं। इस समय तुम्हारी सहचर्याके लिये आयी हूं।' किन्तु ब्रह्मा, विष्णु और शिवने सहसा उसकी बात मानी न थी। विशेषतः विष्णु ऐसे वैसे व्यक्ति न रहे, मायासे कठिन प्रश्न करने लगे। फिर अत्यन्त क्रुद्ध हो माया अपने पुत्रोंको डरानेके लिये दुर्गामूर्तिमें आविर्भूत हुयी। उस भयाभयङ्करी मूर्तिको देख ब्रह्मा, विष्णु एवं महेश्वर बहुत डरे और आत्मविस्मृत हो मायाकी मनोवाञ्छा पूर्ण करते गये। इससे तीन कन्या हुयीं—सरस्वती, लक्ष्मी और उमा। माया ब्रह्मादिके साथ तीनों कन्यावोंका विवाह कर ज्वाला-मुखी प्रदेशमें रहने लगी। उसने उक्त छहों पर विश्व बनाने और नानाविध भ्रमात्मक ज्ञान एवं अमूलक क्रियाकाण्ड चलानेका भार डाला था। ब्रह्मादि सकल मायाके अधीन हैं। इसीसे उनका पूजनादि करनेकी विशेष आवश्यकता नहीं पड़ती। केवल कबीरके स्वरूपज्ञानको लाभ करना ही सर्वधर्मका मूल अभिप्राय है। फिर भी सकल देवता और उपासक उस दुर्लभ ज्ञानको पा नहीं सकते।

सकल जीवोंका आत्मा समान है। वह पापमुक्त होनेसे मनमाना रूप परिग्रह कर सकता है। जीवात्मा जबतक पापसे नहीं छूटता, तबतक नाना योनि घूमता है। उल्कापात होनेसे वह किसी ग्रहके शरीरमें प्रवेश करता है। स्वर्ग और नरक—उभय मायाके कार्य हैं। वास्तविक स्वर्ग और नरक कहीं नहीं होता। पृथिवीका सुख ही स्वर्ग और पृथिवीका दुःख ही नरक है।

कबीरपन्थी संसारके त्यागको ही सत् परामर्श बताते हैं। कारण—संसारमें रहते माया, भय, लोभ प्रभृति द्वारा चित्तकी शुद्धि नहीं होती। सुतरां शान्तिके लाभमें भी नाना विघ्न पड़ते हैं। गुरुकी भक्ति ही प्रधान धर्म है। दोष करने पर गुरु शिष्यको भर्त्सना कर सकता, किन्तु दण्ड देनेका अधिकार नहीं रखता। कबीर देखो।

युक्तप्रदेश और मध्यभारतमें अनेक कबीरपन्थी रहते हैं। इनमें कोई विषयी और कोई धर्मव्रताव-लम्बी है। यह अत्यन्त सत्यप्रिय, उपद्रवशून्य और सुशील होते हैं। इनके उदासीन अपरापर सन्यासियों-की भांति न तो दुरन्तस्वभाव रहते और न भिक्षा मांगते ही फिरते हैं।

काशीधाममें कबीरचौरा नामक स्थानपर अनेक कबीरपन्थी पहुंच वास करते हैं। पूर्व काशीराज बलवन्तसिंहने इनके आहारादिकी वृत्ति बांध दी थी।

उनके पुत्र पैतसिंहने इनको प्र क्षा निरूपण करनेको कामोंके निकट एक मेला लगाया। उसमें प्राय १२००० कबीरपन्थी समाजी पहुंचे थे।

कबीर-बड़ (हिं० पु०) विशाल वटवृक्ष बरगदका बड़ा पेड़। यह भड़ोंचके निकट नर्मदा किनारे अवस्थित है। इसका परीणाह चतुर्दश सहस्र वर्ग परिमित पाता है। कबीरबड़की छायामें सात सहस्र व्यक्ति विश्राम कर सकते हैं।

कबीला (अ० स्त्री०) पत्नी, जोरू।

कबीला (हिं० पु०) वृक्षविशेष एक पेड़। यह वृक्षादि कि अमूल, जड़ोंसे पूरी, कुमायूंके मद्रास तथा कुमायूं और पञ्जाबके कांगड़े जिलेमें उत्पन्न होता है। मध्यप्रदेश, दाक्षिणात्य, काश्मीर तथा नैपालकी तराईमें भी इसका अभाव नहीं। कबीला एक क्षुद्र वृक्ष है। फल फरवरीमें मिलते हैं। कबीला गुच्छ बनता, जो रक्तवर्ण धूलिसे आच्छादित रहता है। इस धूलिसे रेशमको रंगते हैं। पहले एक सेर रेशमको पावसेर सोडा डाल जलमें उबालते हैं। मुलायम पड़नेसे रेशम निकाल लेते हैं। फिर १ पाव कबीला (रक्तवर्ण धूलि), आधछटांक तिलतैल, १ पाव फिटकरी और सोडा जोड़ कड़े जल पावभरमें उबाला जाता है। पीछे रेशम डाल कोई १२ मिनट और उबालना पड़ता है। इससे रेशम नारङ्गीके रंगको हो जाती है। कबीलाके मरहम भी बनता, जो फोड़े फुन्सीपर चढ़ता है। कबीला उष्ण, रेचक और विषघ्न रहता है। इसकी अधिकसे अधिक मात्रा ४ रत्ती है। कमुकबाला, कमला देखो।

कबुलाना (हिं० क्रि०) स्वीकार या कबूल कराना, मुंहसे कहाना।

कबुलि (अ० स्त्री०) जन्तुके देहका पश्चात् भाग, कमरके निचला पिछला हिस्सा।

कबूतर (फा० पु०) कपोत, परेवा। कपोत देखो।

कबूतरका झाड़ (हिं० पु०) एक पितपापड़ा। यह वृक्ष दक्षिण-पश्चिम भारत और सिंहलमें उत्पन्न होता है। फिर दक्षिण कोङ्कण, मलय और पहाड़ियोंमें भी इसका अभाव नहीं। बम्बई प्रान्तमें कहीं कहीं इसे लोग धावामें व्यवहार करते हैं। यह इस तरह पितपापड़ेकी भांति औषधमें डाला जाता है। किन्तु इसका आस्वाद उससे कुछ कटु और अधिक लगता है।

कबूतरका फूल (हिं० पु०) पुष्पविशेष, एक फूल।

कबूतरकी जड़ (हिं० स्त्री०) मूलविशेष, एक जड़ी।

कबूतरबाज (फा० पु०) कपोतपालक, कबूतर पालने या उड़ानेवाला।

कबूतरबाजी (फा० स्त्री०) कपोतपालकका कार्य, कबूतर पालने या उड़ानेका काम।

कबूतरी (फा० स्त्री०) १ कपोतिका, मादा कबूतर। २ बेड़न, गांवकी नाचनेगानेवाली रण्डी।

कबूद (फा० वि०) १ नील, श्याम, आसमानी, नीला। (पु०) २ नीला बंगकोषम, नीलकण्ठी।

कबूदी (फा० वि०) कबूद, श्याम, आसमानी, नीला।

कबूल (अ० पु०) १ स्वीकार, अङ्गीकार। २ सम्मति, रजा, एकमत। ३ पश्चिम पवन, सुबाहिन पहुंच। ४ प्रतिपत्ति, इकरार। ५ ताजक ज्योतिषोक्त योग विशेष।

कबूलना (हिं० क्रि०) स्वीकार करना, कह देना, मानना।

कबूलसूरत (अ० वि०) सुन्दर, खूबसूरत।

कबूलियत (अ० स्त्री०) १ प्रतिपत्ति, मञ्जूरी, इकरार। २ पट्टेदारकी प्रतिमूर्ति, पट्टेकी नकल।

कबूली (फा० स्त्री०) तण्डुल एवं चनक भेदजका पक्व खिचड़ी, चावल और चनेकी दालसे बनी हुयी खिचड़ी।

कब्ज (अ० पु०) १ मलावरोध, कब्जियत, बद्ध, दस्त साफ न आनेकी हालत। २ अधिकार, दखल। ३ नियमविशेष, एक कायदा। यह मुसलमान बादशाहोंके समय चलता रहा। इससे अधिकार पर सैनाकी अपना वेतन कब्जेदारसे लेता और लिया हुआ धन भूमिके करमें मुजरै देता था। अकबरने यह नियम रहित किया, किन्तु उसके नवाबोंने फिर चला दिया। यह दो प्रकारका होता था— ताहवाली और अमानी या वसूली। ताहवालीके

अनुसार सेनानी अपना वेतन पहले ही ज़मीन्दारसे पाता, पीछे भूमिके करसे उतना धन आता या न आता। अमानी या वसूलीके अनुसार सेनानी यथा-शक्ति धन ग्रहण करता था। फिर वह सैकड़े पीछे ५) रु॰ कमीशन भी पाता रहा। ४ आधिपत्यविशेष, एक हुकूमत। इसीके अधिकार पर मुसलमान् बादशाहोंके समय सेनानी अपना वेतन ज़मीन्दारोंसे ग्रहण करता था। बलपूर्वक अधिकार करनेको 'क़ब्ज़-बिल-जब्र' और पूर्ण अधिकारको 'क़ब्ज़ औ-दख़्ल' कहते हैं।

क़ब्ज़ा (अ॰ पु॰) १ मुठि, गिरफ़्त, मुट्ठा, पकड़ा। २ दण्ड, दस्ता, बेंट। ३ द्वारसन्धि, नरमादगी, कड़ा। यह लौह पित्तल प्रभृति धातुसे बनता है। इसमें दो चतुष्कोण खण्ड संयुक्त रहते, जो सूचीपर चल सकते हैं। यह कपाट एवं पेटिकादिमें सन्धिस्थान घुमानेको लगाया जाता है। ४ ग्रहण, दख़्ल। ५ उपरिस्थ बाहु, ऊपरला बाज़ू, भुजदण्ड। ६ मल्लयुद्धका कूटोपायविशेष, गट्टा, पहुंचा, कुश्तीका एक पेंच। कुश्तीमें एक पहलवान्को दूसरेका गट्टा पकड़ते, उसके हाथपर चोट चलाने, झटका लगाने और अपने हाथको छोड़ा लानेका नाम कब्ज़ा है।

क़ब्ज़ादार (फा॰ वि॰) १ अधिकारी। २ क़ब्ज़ा लगा हुआ, जो क़ब्ज़ेसे जुड़ा हो।

क़ब्ज़ियत (अ॰ स्त्री॰) मलावरोध, क़ब्ज़, दस्त साफ न उतरनेकी हालत।

क़ब्ज़ुलवसूल (फा॰ पु॰) पत्रविशेष, एक काग़ज़। इसपर वेतन लेनेवाला अपने हस्ताक्षर करता है।

कब्बल—महिसुर राज्यका एक कोणाकार गिरि। यह मागड़ी तहसीलमें शिम्सा और अर्कवती नदीके मध्य अक्षा॰ १२° ३०´ उ॰ तथा देशा॰ ७७° २२´ पू॰पर अवस्थित है। पहले महिसूरके हिन्दू और मुसलमान् राजा दोषी व्यक्तिको इसी गिरि पर ले जा कर बन्दी बनाते थे। इस स्थानका वायु अस्वास्थ्यकर है। इसीसे अपराधीका जीवन शीघ्र निःशेष हो जाता था।

क़ब्र (अ॰ स्त्री॰) शवस्थान, समाधि, तुरबत, मज़ार।

क़ब्रस्तान (फा॰ पु॰) प्रेतावास, गोरिस्तान, बहुतसी क़ब्रोंकी जगह।

कभी (हिं॰ क्रि॰-वि॰) १ पूर्व, एकदा, पेश्तर, किसी समय। २ क्वचित्, कदाचित्, गाह-गाह, बाज़ औक़ात्। ३ कदापि, कथञ्चित्, किसी तरह।

कभी कभी (हिं॰ क्रि॰ वि॰) कदा कदा, गाहे, जबतब।

कभू, कभी देखो।

कम् (सं॰ अव्य॰) १ जल, पानी। २ मस्तक, मत्था। ३ सुख, आराम। ४ मङ्गल, भलाई। ५ पादपूरणार्थ निरर्थक शब्द।

कम (फा॰ वि॰) १ अल्प, थोड़ा। २ गर्हा, ख़राब। यह शब्द उपरोक्त दोनों अर्थमें क्रियाविशेषणकी भांति भी आता है।

कम-असल (फा॰ वि॰) अकुलीन, वर्णसङ्कर, हरामी, कुसूत, घटियल।

कमक (सं॰ वि॰) कम्-णिङ् भावे अच् स्वार्थे कन्। १ कामुक, ख्वाहिशमन्द, चाहनेवाला। (पु॰) २ गोत्र-प्रवर्तक एक ऋषि।

कम-कम (फा॰ क्रि-वि॰) अल्प-अल्प, थोड़ा थोड़ा।

कमकस (हिं॰ वि॰) अलस, सुस्त, ज़ोरसे काम न करनेवाला।

कमख्वाब (फा॰ पु॰) वस्त्रविशेष, एक कपड़ा। यह गाढ़ एवं स्थूल रहता और कीटसूत्रसे बनता है। फिर इसपर सुवर्ण एवं रजतके सूत्रसे प्रसून भी बना देते हैं। किसी कमख्वाब पर एक ओर और किसी पर दोनों ओर कलाबत्तूके बेलबूटे रहते हैं। यह बहुमूल्य वस्त्र है। इसका खण्ड (थान) चार या साढ़े चार गज़ पड़ता है। काशीमें कमख्वाब बहुत तैयार होता है।

कमखोरा (फा॰ पु॰) पशुरोगविशेष, चौपायोंकी एक बीमारी। यह रोग पशुके मुखमें होता है। इसके प्रभावसे पशु अपना मुख चला नहीं सकते और सूखे रहते हैं।

कमङ्गर (हिं॰ पु॰) १ कार्मुककार, कमानगर, चाप बनानेवाला। २ अस्थियोजयिता, हड्डियां जोड़नेवाला या

कठानेवाला। २ चिड़चिड़ा, सुस्त। (वि०) ३ हरामी, बोमियार।

कमछुरा (हिं० स्त्री०) १ चामुकवाली, कमानगरी, चाप बनानेका काम। २ पक्षियोंकी पकड़नेकी विद्या, पक्षियोंके छोड़ने या बाँधनेका हुनर।

कमचा (हिं० पु०) १ एक छोटी वस्तु, कमानचा, छोटी कमान्। २ बारकाठी, चौखटा, बिनगरी। ३ स्थिति-स्थापकत्वविशिष्ट चिकना पदार्थ, चीढ़की कमानी। इस कमानीसे तरह व्यवहार करते हैं। पतले कमचेमें एक रस्सी बाँध चाक घोटनेको चावल कर लेते, पीछे घुमा देते हैं। ४ कुचित पटका भिजावदार वस्त्र। ५ बन्नावाला, पट्टा बाखरा। ६ पेड़ या झाड़ प्रभृतिकी पतली एवं नमनशील शाखा, बाँस या झाड़की पतली और लचीली छड़। इसके सन्त या बनती है। ७ पेड़का पतला तथा नमनशील भाग, बाँसकी तीली। ८ चाम एवं नमनशील बहि, पतली और लचीली छड़ी। ९ काठादिका चापकाण्ड, कमची या रहका नाजुक टुकड़ा।

कमची (तु० स्त्री०) १ कनिका, बाँसकी छाल। २ यष्टिविशेष, नाजुक छड़ी। ३ काठादिका चाप खण्ड, लकड़ी वर्ग रहका नाजुक टुकड़ा।

कमच्छा (हिं०) कामाख्या देखो।

कमजोर (फा० वि०) निर्बल, नाताकत, कमजर।

कमजोरी (फा० स्त्री०) असामर्थ्य, नातवानी, ढिलाई, मिचर।

कमचा (हि० पु०) स्थितिस्थापकत्वविशिष्ट, चिकना पदार्थविशेष, चोड़की कमानी। कमचा देखो।

कमटा (हिं० पु०) वृक्षविशेष, एक पेड़। यह कण्टकावीर्य एवं सुद्र होता है।

कमटी (हिं०) कमची देखो।

कमठ (सं० पु०-स्त्री०) कम्र पठ। कमिरुठः। उण् ११ २। १ कच्छप, कछुवा। कच्छप देखो। २ विष्णुका द्वितीय अवतार। ३ बम, बाँस। ४ दैत्यविशेष, एक राक्षस। ५ पक्की, चारपुरत, पेड़। ६ काम्बोजराजविशेष, एक राजा। (भारत ४।८४।११) ७ भाण्डविशेष, एक बरतन। 'मथामत' तुम्बी या नारिकेलको खोलकर जो पात्र मुनियोंके लिये बनाया जाता, वही कमठ कहलाता है। ८ मुनिविशेष, एक ऋषि। ९ वादित्रविशेष, एक बाजा। यह एक चर्मावृत प्राचीन वाद्य है।

कमठपति (सं० पु०) कच्छपराज, कछुवोंके राजा।

कमठा (हिं० पु०) १ चाप कमान्। २ एक जैन महात्मा। इन्होंने कम तपस्या करके सकाम निर्जरा पायी थी।

कमठासुरवध (सं० पु०) गणेशपुराणका एक भाग। इसमें कमठ दैत्यके वधकी कथा लिखी है।

कमठी (सं० स्त्री०) कमठ-ङीप्। १ क्षुद्रकच्छप जाति, छोटे-छोटे कछुवोंका गिरोह। २ कच्छपी, कछुयी। ३ मकड़ी, चारपुरत, पेड़।

कमण्डल (हिं०) कमण्डलु देखो।

कमण्डली (हि० वि०) १ कमण्डलुयुक्त, जो कमण्डलु रखता हो। २ पाखण्ड पुर छिपकर, बहुरुपिया। (पु०) ३ ब्रह्मा।

कमण्डलु (सं० पु०-स्त्री०) कम जलम् प्रजापतेर्वा सारं तं ताति रक्षति, क मण्ड ला-कु। कुमकण्डी मिट्टी-हिम बस्व कालम्। च १।७४७४ वर्तिख। १ मृत्तिका, काठ, तुम्बी या नारिकेल द्वारा निर्मित सन्यासियोंका एक पात्र, कमण्डल लोटा। इसका संस्कृत पर्याय— कुण्डीव चार करक है। २ प्लक्षवृक्ष, पाकरका पेड़। ३ अश्वत्थभेद, पारस-पीपल।

कमण्डलुतरु (सं० पु०) प्लक्षवृक्ष, पाकरका पेड़।

कमण्डलुधर (सं० पु०) शिव कमण्डलु धारण करने वाले महादेव।

कमती (हिं० स्त्री०) १ न्यूनता, कमी, घटी। (वि०) २ अल्प कम, थोड़ा, जो बहुत न हो।

कमथु (वै० स्त्री०) स्त्रीविशेष, जैनपुत्री।

"कमद्युं विमदायोहथु र्युवम्।" (ऋक् १।११२।१९)

कमन (सं० त्रि०) कमर्णिचङ भावे ल्युट्। १ कम-नीय, खूबसूरत। २ कामुक, चाहिसमन्द, चाहने वाला। (पु०) ३ अशोकवृक्ष। ४ मदन कामदेव। ५ ब्रह्मा।

कमनचा (हिं० पु०) कमानचा, कमचा, बढ़ईका एक औजार। यह बरमा घुमानेमें काम देता है।

कमनच्छद (सं॰ पु॰) कमनः कमनीयः छदः पक्षो यस्य, बहुव्री॰। कङ्कपक्षी, बगला, बूटीमार।

कमना (हिं॰ क्रि॰) न्यून पड़ना, घटना, उतरना, ढलना, नीचेको चलना।

कमनीय (सं॰ त्रि॰) काम्यते यत्, कम् कर्मणि अनीयर्। १ स्पृहणीय, कामना करने योग्य, चाहने क़ाबिल। २ सुन्दर, ख़ूबसूरत। इसका संस्कृत-पर्याय—चारु, हारि, रुचिर, मनोहर, वल्गु, कान्त, अभिराम, बन्धुर, वाम, रुच्य, सुषम, शोभन, मञ्जु, मञ्जुल, मनोरम, साधु, रम्य, मनोज्ञ, पेशल, हृद्य, सुन्दर, काम्य, कम्र, सौम्य, मधुर और प्रिय है।

कमनीयता (सं॰ स्त्री॰) कमनीयस्य भावः, कमनीय-तल्-टाप्। तस्य भावस्तत्वौ। पा ५।१।११९। १ सौन्दर्य, ख़ूबसूरती। २ कमनीयत्व, मरग़ूबी, दिलचाही।

कमनैत (हिं॰ पु॰) १ धनुर्धर, कमानवरदार, जो कमान रखता हो।

कमनैती (हिं॰ स्त्री॰) धनुर्विद्या, कमानवरदारी, कमान इस्तेमाल करनेका इल्म।

कमन्द (फ़ा॰ स्त्री॰) १ पाश, जाल। २ अस्थिर-ग्रन्थि, सरकफन्दा। ३ रज्जुकी तुलाधिरोहिणी, रस्सीकी तुली हुयी सीढ़ी। इससे तस्कर उच्च भवनों पर चढ़ जाते हैं। ४ पाशबन्ध, जालका फन्दा।

कमन्ध (हिं॰) कबन्ध देखो।

कमन्ध (सं॰ क्लो॰) कं शिरः अन्धं शून्यं यस्य। १ कबन्ध, सरकटा धड़। कमं दीप्तिं जीवनं वा दधाति, कम-धा-ड पृषोदरादित्वात्। २ जल, पानी। हिन्दीमें लड़ायी-झगड़े और सरफन्दको भी कमन्ध कहते हैं।

कमबख़्त (फ़ा॰ वि॰) दैवोपहत, बदनसीब, अभागी।

कमबख़्ती (फ़ा॰ स्त्री॰) मन्दभाग्य, बदनसीबी।

कमयाब (फ़ा॰ वि॰) विरल, अनोब, मुश्किलसे मिलनेवाला।

कमर (सं॰ त्रि॰) कम-अर-चित्। अर्त्तिकमिभ्रमिचमिदेविवासिभ्यश्चित्। उण् ३।१३२। कामुक, ख़्वाहिशमन्द, चाहनेवाला।

कमर (फ़ा॰ स्त्री॰) १ श्रोणी, कटि, सुरव, कूला। कटि देखो। २ मध्य, दरमियान्, बीच। ३ मेखला, मिस्तका, पट्टा। ४ मल्लयुद्धका एक हस्तलाघव, कुश्तीका कोयी पेंच। यह कटिप्रदेशमें चलता है। इसी प्रकार 'कमरको टंगड़ी' भी होती है। एक पहलवान् जब दूसरेकी पीठपर आता और अपना बायां हाथ उसकी कमर पर पहुंचाता, तब नीचेवाला अपना बायां हाथ बगलसे निकाल उसकी कमर पर चढ़ाता और बायीं टांग मड़ा कमरके ज़ोरसे उसको सामने घुमा लाता है।

कमरंग (हिं॰ पु॰) कर्मरङ्ग, कमरख। कमरख देखो।

कमरकटा (हिं॰ पु॰) प्राकार, चर्चोदश, सोनापनाह, कंगूरेदार ऊंची दीवार।

कमरकस (हिं॰ पु॰) पलाशनिर्यास, ढाकको गोंद। इसे चुनिया-गोंद भी कहते हैं। यह रक्तवर्ण एवं भास्वर होता है। इसका आस्वाद कषाय है। कमरकस संग्रहणी और आमल्यासका महौषध है।

कमरकसायी (हिं॰) कमरकुशायी देखो।

कमर-कुशायी (फ़ा॰ स्त्री॰) अपराधीसे लिया जानेवाला एक कर, असामीसे वसूल होनेवाला रुपया। यह प्रथा पूर्वकाल प्रचलित रही। जब कोयी असामी सिपाहीसे सूबपूरीपके लिये अवकाश लेता, तब उसे करस्वरूप कुछ धन देता था। इसीका नाम 'कमर-कुशायी' है। २ मेखलोद्घाटन, कमरबन्दकी खोलायी।

कमरकोट, कमरकटा देखो।

कमरकोठा (हिं॰ पु॰) रथाङ्गका एक भाग, शहतीर लट्ठे या कड़ीका एक हिस्सा। यह भित्तिसे बहिर्वर्ती रहता है।

कमरख (हिं॰ पु॰) कर्मरङ्ग, एक पेड़। (Averrhoa Carambola) इसे बंगलामें कामरांगा, आसामीमें करदयी, गुजरातीमें तमरक, मराठीमें करमर, तामिलमें तमर्त, तेलगुमें करोमोंग, मलयमें तमरत्तक और ब्राह्मोमें ज़ौमसी कहते हैं। कमरखमें अम्लत्व, उष्णत्व, वातहरत्व एवं पित्तजनकत्व रहता, किन्तु पकनेसे मधुराम्लत्व तथा बल-पुष्टि-रुचिकरत्व बढ़ता है। (राजनिघण्टु) यह कटुपाक, अम्ल-पित्तकर और तीक्ष्ण गुणविशिष्ट है। (राजवल्लभ) कमरखका

आम-पक्व खट्टी, अम्ल, वातनाशक, उष्ण एवं पित्तकर रहता, किन्तु पक्व आमिषी मधुर तथा अम्ल लगता और बल, पुष्टि एवं रुचिकी वृद्धि करता है। (वैद्यकनिघण्टु) यह हिम खट्टी, अम्ल और ग्राह तथा वातनाशक है। (भावप्रकाश)

कमरख एक क्षुद्र वृक्ष है। इसकी पत्र एक अङ्गुल प्रशस्त, दो अङ्गुल दीर्घ अथवा ईषत् गोलाकार रहती और सुषिरमें लगती हैं। उ भागोंमें यह १५।२० फीटसे अधिक नहीं बढ़ता। भारतमें कमरखकी कृषि बहुत होती है। फल उसोबमेंसे अति स्वादु लगते हैं। यह उत्तरमें बाहोरतक मिलता है।

कच्चे फलोंका रस रंगनेमें खटाईकी तरह छोड़ा जाता और सम्भवतः खटाईका काम देता है। इसका फल, मूल और पत्र शीतल औषधकी भांति व्यवहृत होता है। सूखा फल ज्वरमें दिया जाता है।

कमरख दो प्रकारका होता है—मीठा और खट्टा। मीठा कमरख ज्वरके लिये उपयोगी है। किन्तु कच्चा खानेसे ज्वर आता और अग्निमान्द्य हो जाता है। खट्टा फल चटनी और तरकारीमें भी पड़ता है।

कमरख वर्षामें फूलता और शीतकालमें पकता है। फल प्रायः ४ इंच लम्बा होता है। ग्रामीण इसे कच्चा भी खाते हैं। इसका स्वाद मधुर, सरस और आह्लादन है। इसको कसौज और थोड़े दारोंको काम मर्दन बनाते हैं। यह मकान घोंमें बहुत अच्छा लगता है। कमरखका गुलकन्द भी उम्दा होता है।

इसका काठ रंगका लाल कड़ा और दानेदार रहता है। हिन्दुस्तानमें इसे मकान और माल-असबाब बनानेमें व्यवहार करते हैं।

कमरखी (हिं वि) १ कमरखाकार कमरख-जैसा, फांकदार। (स्त्री०) २ कमरखाकार रचना, फांकदार कटाव।

कमरखञ्जो (हिं० स्त्री०) पटुका, तलवार।

कमरटूटा (हिं० वि०) १ नतपृष्ठ, कमीदापुश्त कुबड़ा। २ नपुंसक, नामर्द, कमरका ढीला।

कमरतेगा (हिं० पु०) मल्लयुद्धका एक हस्तलाघव, कुश्तीका कोई पेच।

कमरतोड़, कमरतीला देवी।

कमर दिवाल (हिं० पु०) चमरसिवाका चमड़ेका पट्टा। इससे उस्तरे छूरेपर धार रखा जाता है।

कमरपट्टी (हिं० स्त्री०) कटिबन्ध, कमरकी पट्टी। इसे चपरास वगैरहमें कमरके ऊपर लगाते हैं।

कमरपेटा (हिं० पु०) १ व्यायामविशेष, एक कसरत। इसे मल्ल अखाड़ेपर लगाते हैं। यह कमरमें बेंत लपेट और काठो हाथ—दो प्रकार किया जाता है। 'कमरलपेटेकी उठान' भी एक कसरत है। २ मल्लयुद्धका एक हस्तलाघव, कुश्तीका एक पेच। एक पहलवान नीचे आनेसे दूसरा अपनी दाहनी टांग नीचेवालेकी कमरमें डाल अपने बायें पैरको बांध और पिंडलीसे घोंट जाता तथा बायें हाथका पंजा उसके बांये हाथकी कुहनीपर भीतरसे दबाता है। फिर दाहने हाथसे उसका दाहना बाज़ू खींच उसे पकड़ता और उसको आसमान देखाता है।

कमरबन्द (फा० पु०) १ मेखला, तगड़ी, पेटी। २ कटिके चारो ओर लपेटा हुआ वस्त्र, कमरके चारो ओर बंधा जानेवाला कपड़ा। (वि०) ३ बद्ध कटि, तैयार, कमर बांधे हुआ।

कमरबन्दी (फा० स्त्री०) १ युद्धमें लड़ायोको पोशाक। २ युद्ध एवं उद्योगार्थ कमरकी तैयारी।

कमरबस्त (फा० पु०) मल्लयुद्धका एक हस्तलाघव, कुश्तीका कोई पेच। यह अत्यन्त और लड़ाईके काम होता है।

कमरबल्ला (हिं० पु०) काष्ठखण्डविशेष, एक लकड़ी। यह छप्परके पटावमें दोधंभ बांसके नीचे तड़कपर पड़ता है।

कमरबस्ता (फा० वि०) १ बद्ध, उद्यत, तैयार कमर बांधे हुआ। (पु०) २ कमरबल्ला, छपरेमें लगनेवाली एक लकड़ी।

कमरा (पो० पु०—Camera) १ कोठ आगार, कोठरी, कोठा। २ आलोकचित्र यन्त्रविशेष, फोटो तसवीर उतारनेके कामका एक औज़ार। यह सम्पुट सदृश बनता और मुखपर प्रतिबिम्ब लेनेका गोलाकार स्फटिक लगता है। इसको प्रवीक्षण पड़नेसे बड़ा

बढा सकते हैं। उक्त स्फटिक (Lens)के सम्मुख एक निराधार काच (Ground glass) पड़ता है। उसीपर प्रथम केन्द्र (Focus) किया जाता है। पीछे निराधार काच हटा स्खलन (Slide) लगाते हैं। उसीके अन्तर्गत पट्ट होता है। स्खलनका आच्छादन उठानेसे पट्ट खुलता और स्फटिक निकालनेसे प्रतिविम्ब पड़ता है। यह दो प्रकारका होता है—लुसिडा (Lucida) अर्थात् सुप्रभ और अवस्क्यूरा (Obscura) अर्थात् निष्प्रभ। सुप्रभ यन्त्र असाधारण आकारके क्रकचायत वा दर्पण-विन्यास द्वारा प्रतिविम्बपर चित्र प्रदान करता है। उक्त चित्रको यथासुख देखनेके लिये पत्र वा स्थूल पटपर उतार सकते हैं। निष्प्रभ उपकरण द्विगुण कूर्मपृष्ठाकार स्फटिक द्वारा प्राप्त बाह्य द्रव्यकी प्रतिमा काच वा सम्पुटके केन्द्रमें रखे शक्त पृष्ठपर उतारता है। (हिं०) २ कम्बल। ३ कीटविशेष, एक कीड़ा।

कमरिया (हिं० स्त्री०) १ छोटा कम्बल। "सूर श्यामक कारी कमरिया चढ़े न दूजो रङ्ग।" (सूर) २ कटि, कमर। (पु०) हस्तिविशेष, एक हाथी। इसका देह क्षुद्र, शुण्ड दीर्घ और पद स्थूल रहता है। कमरिया अति प्रबल हस्ती है।

कमरी (फ़ा० वि०) १ दुर्बलकटि, कमजोर कमरवाला। यह शब्द प्रायः अश्वके विशेषणमें आता है। (स्त्री०) २ क्षुद्रकञ्चुक, मिरज़यी। ३ कमली, छोटा कम्बल। ४ काष्ठखण्डविशेष, एक लकड़ी। यह साढ़े किष्कुपरिमित दीर्घ रहती और चक्रके शीर्षपर लगती है। (पु०) ५ भग्ननौका, उखड़ा जहाज़। ६ अश्वरोगविशेष, घोड़ेकी एक बीमारी। इसके कारण अश्व अपने पृष्ठपर भार वा आरोहीको अधिक क्षण रख नहीं सकता।

कमरेंगा (हिं० पु०) मिष्टान्नविशेष, एक मिठायी। यह बङ्गालमें बहुत बनता है।

क़मरुद्दीन ख़ान्—एतमाद्-उद्-दौला मुहम्मद आमिन ख़ान् वज़ीरके लड़के। इनका प्रधान नाम मीर मुहम्मद फ़ाज़िल था। १७२४ ई०को निज़ाम-उल्-मुल्क असफ़् शाहके पदत्याग करने पर बादशाह मुहम्मद शाहने 'एतमाद-उद्-दौला नवाब क़मरुद्दीन ख़ान् बहादुर नसरतजङ्ग' उपाधि दे इन्हें स्वयं वज़ीर बनाया। अहमदशाह अबदालीके प्रथम आक्रमण करते ही यह शाहज़ादे अहमदके साथ लड़नेको भेजे गये थे। किन्तु १७४८ ई०को ११ वीं मार्चको सरहिन्दके युद्धपर अपने डेरेमें नमाज़ पढ़ते समय तोपका गोला लगनेसे इनका देहान्त हुवा।

क़मरुद्दीन मीर—एक सुप्रसिद्ध मुसलमान् कवि। इनका उपनाम मिन्नत रहा। यह दिल्लीके अधिवासी थे। वारन हेष्टिंग्सने मुरशिदाबादके नवाबकी सिफ़ारिश पर 'मलिक-उश्-शुअरा' अर्थात् कविराजका उपाधि इन्हें प्रदान किया। यह दक्षिण हैदराबाद निज़ाममे मिलने गये थे। वहां इन्होंने उनकी प्रशंसामें एक 'कसीदा' लिखा, जिसके लिये ५०००) रु० नक़द पुरस्कार मिला। यह १७९३ ई०को कलकत्तेमें उर्दू और फ़ारसीके डेढ लाख शेर छोड़ मरे थे। इनका बनाया 'चमनिस्तान' और 'शकरिस्तान' ग्रन्थ छप गया है।

कमल (सं० पु०-क्ली०) कम-पिङ्, भावे ड्पादित्वात् कलच्, कं जलं अलति अलङ्करोति, कम्-अल्-अच् वा। १ पद्म, कंवल। उत्पल और पद्म देखो। यह श्वेत, नील और रक्त—त्रिविध होता है। कमल शीतल, वर्णकर एवं मधुर, और पित्त, कफ, तृष्णा, दाह, रक्त, विस्फोटक, विष तथा विसर्पहर है। श्वेत शीतल एवं मधुर और कफ तथा पित्तघ्न होता है। किन्तु रक्त एवं नीलमें श्वेत कमलसे अल्प गुण रहता है। (भावप्रकाश)

२ जल, पानी। ३ ताम्र, तांबा। ४ क्लोम, जुहरा, तलखा। ५ औषध, दवा। ६ सारसपक्षी। ७ मृगविशेष, एक हिरन। ८ पाटलवर्ण, एक रंग। ९ आकाश, आसमान्। १० चातकपक्षी, एक चिड़िया। ११ भ्रुवक, एक ताल।

"उक्तो मलयतालेन भ्रुवमध्ये प्लु तेद गुरुः।
समदयापरेपुंलः कमलोऽयं भयानके॥" (सङ्गीतदामोदर)

१२ पद्मकाष्ठ। १३ कुङ्कुम, रोरी। १४ मूत्राशय, मसाना। १५ ब्रह्मा। १६ कमलाका बसाया एक

भ्रमर। १७ छन्दोविशेष। इसमें तीन तीन कुल वर्णके चार पद होते हैं। एकमात्रिक छन्द और छप्पय भी कमल कहलाता है। १८ अधिमांसक, चांचका हिस्सा। १९ गर्भाशयका अग्रभाग, वदन, मुख। २० दीपक रागका द्वितीय पुत्र और कमलावतीका पति। २१ व्यायामविशेष, मोगेका एक सिलाम। इसकी आकृति कमलसे मिलती है। यह मोम बत्ती बनानेके काम आता है। २२ रोगविशेष, एक बीमारी। इससे चक्षु पीले हो जाते हैं। अधुना लोग इसे 'कांवर' कहते हैं। (त्रि०) २३ कामुक, कामिसमन्द, चाहनेवाला। २४ पाटलवर्णयुक्त।

कमल-घण्टा (हिं० पु०) पद्मबीज, कमल गट्टा।

कमलक (सं० क्ली०) कमल स्वार्थे कन्। १ कमल कंवल। २ काश्मीरस्थ नगरविशेष। (राज० ७।१११)

कमलकन्द (सं० पु०) शालूक, कमलकी जड़। यह कटु, तुवर, मधुर, गुरु, मलस्तम्भकर, रुच, शिशिर, रुक्ष, शीतल, दुर्जर एवं पाचक और रक्तपित्त, दाह, तृष्णा, कफ पित्त, वात, गुल्म, काश, कृमि, मुखरोग तथा रक्तदोषनाशक होता है। (वैद्यकनिघण्टु)

कमलकर्णिका (सं० स्त्री०) पद्मबीजकोष, कमल गट्टेको खोल। यह मधुर, तुवर, शीतल कटु तिक्त, मुखशुद्धिकर और रक्तदोष तथा तृषाहर होती है। (वैद्यकनिघण्टु)

कमलकीट (सं० पु०) कमलस्य कीटः। १ कीट विशेष, कोई कीड़ा। २ ग्रामविशेष, कोई गांव।

कमलकेसर (सं० पु०-क्ली०) पद्मकिञ्जल्क कमलका सूत। यह शीतल, ग्राही मधुर, कटु, रुक्ष गर्भ स्थैर्यकर और वृष्य होता है। (वैद्यकनिघण्टु)

कमलक्षारक (सं० पु०) कमलस्य क्षारकः, ६-तत्। पद्मकलिका, कमलकी कली।

कमलकोष (सं० पु०) कमलस्य कोषः, ६ तत्। कमलक्षारक, कमलकी कली।

कमलखण्ड (सं० क्ली०) कमल षण्ड। कमलानां षण्डः। ६ तत्। (भरत) पद्मसमूह कमलोंका मजमा।

कमलगट्टा (हिं० पु०) पद्मबीज, कंवलका तुख्म। यह कमलसे अङ्कुरित होता है। बक्कल कठोर पड़ता है। कमलगट्टा भीतरसे सारभूत दूधके समान रहता है। पद्मबीज देखो।

कमलगर्भ (सं० पु०) पद्मबीज, कंवलका छाता।

कमलगर्भाभ (सं० त्रि०) कमलगर्भस्य आभा इव आभा यस्य, बहुव्री०। पद्मके मध्यभागकी भांति कान्तिविशिष्ट, कंवलके छत्तेकी तरह चमकनेवाला।

कमलगुप्त—संस्कृतके एक प्राचीन कवि। ([illegible])

कमलच्छद (सं० पु०) कमलं कमलस्य छदः पत्रं यस्य, बहुव्री०। १ कङ्कपक्षी बगला, बूटीमार। २ पद्मदल, कंवलका पत्ता।

कमलज (सं० पु०) कमलात् विष्णोर्नाभिकमलात् जायते, कमल जन ड। ब्रह्मा।

कमलदेव—संस्कृतके एक प्राचीन विद्वान्। इनका निवासस्थान चन्द्रपुर रहा। कमलदेव शिवदेवके पिता और गणितप्रदीप-रचयिता धनेश्वर तथा पद्मनाभविधि-रचयिता नारायणके पितामह थे।

कमलदेवी (सं० स्त्री०) काश्मीरराज ललितादित्यकी पत्नी और राजा कुवलयापीडकी माता। (राजतरङ्गिणी ४।१७८)

कमलनयन (सं० त्रि०) कमलसदृश सुन्दर नेत्रयुक्त, जिसके कंवलकी तरह खूबसूरत आंख रहें। (पु०) २ विष्णु। ३ रामचन्द्र। ४ कृष्ण।

कमलनयन—संस्कृतके एक प्राचीन विद्वान्। देवराजने निघण्टुभाष्यमें इनका वचन उद्धृत किया है।

कमलनयनदीक्षित—संस्कृतके एक प्राचीन विद्वान्। अप्पयदीक्षितने इनका उल्लेख किया है।

कमलनाभ (सं० पु०) नाभिमें कमल रखनेवाले विष्णु।

कमलनाल (सं० स्त्री०) मृणाल, कंवलकी डण्डी।

"कमलनाल इव बाहु सुहाए।
मन मोहन [illegible]॥" (तुलसी)

कमलपलाशाक्ष (सं० त्रि०) कमलपत्रवत् अक्षियस्य। कमलपत्रकी भांति चक्षुविशिष्ट, जिसके कंवलकी पत्तीकी जैसी आंख रहे।

कमलबन्ध (सं० पु०) चित्रकाव्यविशेष, किसी

क्लिमको शायरी। इसके अक्षर नियमपूर्वक लिखनेसे कमलका चित्र उतर आता है।

कमलबन्धु (सं० पु०) कमलोंका बन्धु, सूर्य।

कमलवायी (हिं० स्त्री०) रोगविशेष, एक बीमारी। इससे शरीर पीला पड़ जाता है।

कमलभव (सं० पु०) कमलात् भवतीति. कमल-भू-अण्। १ कमलज, ब्रह्मा। २ एक जैन ग्रन्थकार। इन्होंने कर्णाटी भाषामें शान्तिनाथपुराण बनाया है।

कमलभू (सं० पु०) ब्रह्मा।

कमलमूल (सं० क्ली०) कमलकन्द, कंवलकी जड़।

कमलयोनि (सं० पु०) कमलं विष्णुनाभिकमलं योनिरुत्पत्तिस्थान यस्य, बहुव्री०। १ ब्रह्मा। (क्ली०) पद्मकी उत्पत्तिका स्थान, कंवल पैदा होनेकी जगह।

कमलयोनि—संस्कृतके एक प्राचीन विद्वान्। नृसिंहने सूर्यसिद्धान्तवासनाभाष्यमें इनका वचन उद्धृत किया है।

कमललोचन—सङ्गीतचिन्तामणि और सङ्गीतामृतनामक संस्कृत ग्रन्थरचयिता।

कमलवती, कमलदेवी देखो।

कमलवीज (सं० क्ली०) पद्मवीज, कंवलका तुख्म, कमलगट्टा। भावप्रकाशके मतसे यह स्वादु, कषाय एवं तिक्तरस, शीतल, गुरु, विष्टम्भि, शुक्रवर्धक, रुच, बलकारक, संग्राहक, गर्भसंस्थापक और कफ, वायु, पित्त, रक्त तथा दाहनाशक है।

कमलवदन (सं० त्रि०) कमलमिव वदनं यस्य, बहुव्री०। पद्मकी भांति सुखकान्तिविशिष्ट, जो कमल-की तरह खूबसूरत मुंह रखता हो।

कमलवर्धन—एक कम्पनराज। यह काश्मीरराजके प्रबल शत्रु रहे। बालक शूरवर्माके राजा होने पर इन्होंने सुयोग देख काश्मीरराज्य आक्रमण किया। एकाङ्ग और तन्त्रीगणने इनसे हार मानी थी। फिर इनके भयसे काश्मीरराज सिंहासनकी आशा छोड़ गुप्त भावमें भाग खड़े हुये। इन्हें काश्मीरके राजा बननेकी बड़ी आशा थी। किन्तु ब्राह्मणोंने इन्हें किसी प्रकार सिंहासनपर बैठने न दिया और इनके बदले यशस्कर नामक किसी सामान्य व्यक्तिको अभिषिक्त किया। कमलवर्धन ८११ शकको विद्यमान थे।

कमल वसु—बङ्गालके एक विख्यात व्यक्ति। साधारणतः लोग इन्हें 'फिरङ्गी कमलबोस' कहते हैं। किन्तु इस विजातीय उपाधिसे संयुक्त होनेका कारण बहुतसे लोग नहीं जानते।

कमल वसुका असली नाम रामकमल वसु था। १०६७ ई०को इन्होंने गोवरडाँगेके निकटवर्ती गोईपुर नामक ग्राममें जन्म लिया। इनके पिता माणिकचन्द्र वसु चन्दननगरवासी फ्रान्सीसियोंके अधीन तहसीलदार थे। उसी समय गोईपुरमें करास कालरूपी शीतला रोगका प्रादुर्भाव हुआ। अधिवासी प्राणके भयसे स्थानान्तरको भाग रहे थे। माणिकचन्द्र भी और अपने चार पुत्र चन्दन-नगर ले आये। फिर वह जन्मभूमिको लौटे न थे। रामकमल गुरुकी पाठ-शालामें यत्सामान्य बंगला और फारसी पढ़ने लगे।

यह अपने पिताके ज्येष्ठ पुत्र थे। पिताकी अवस्था अच्छी न रहनेसे इन्हें अर्थोपार्जनकी चेष्टा करना पड़ी। २० वर्षके वयःक्रमकाल यह पोर्तगीजोंके सरकारी जहाजी कार्यमें नियुक्त हुये। जहाजी कप्तानोंके साथ संस्रव रहनेसे इन्होंने अल्प दिनमें सामान्य चलित पार्तगीज़ भाषा सीखी थी। किन्तु कोई उन्नति न हुयी। इन्हें कष्टपक्षसे कुछ रुपया ऋण लेना पड़ा था। उसी रुपयेके लिये यह थोड़े दिन कारागृहमें भी रहे। फिर गोपीमोहन ठाकुरके यत्न और साहाय्यसे इन्होंने छुटकारा पाया।

रामकमलने जेलसे लौट अपना रुपया लगा व्यव-साय आरम्भ किया था। इस बार इनका भाग्य फिरा, लिं' गुला प्रभृति प्रधान प्रधान वणिकोंके साथ कारबार चलने लगा। पोर्तगीज वणिकोंके साथ कामकाज कर यह सम्यक् सम्पत्तिशाली बन गये। फिर रामकमल चन्दननगरके जुलाहोंसे एक प्रकारकी छींट तैयार करा अमेरिका भेजने लगे। इससे इन्हें विलक्षण लाभ हुआ था। कहते—प्रत्येक जहाजमें ५०००) रु० मिले। इसीप्रकार इन्होंने दश बार लाभ उठाया था। पोर्तगीजों (फिरङ्गियों)के संस्रवसे बड़े आदमी बननेपर लोग इन्हें 'फिरङ्गी कमल बोस' कहने लगे। वास्तविक यह एक कट्टर हिन्दू थे। रामकमल दोल-दुर्गोत्सवादि

उत्सव पूजा महासमारोहसे सम्पन्न करते। विशेषतः ब्राह्मण पण्डितों पर इनकी विलक्षण भक्ति थी। दीनदरिद्रोंको यह यथेष्ट साहाय्य पहुंचाते। फिर ब्राह्मण पण्डितोंको भी यह कितनी ही जमीन् माफी दे गये हैं। कहते—रामकमलके घरसे कभी अतिथि विमुख फिरते न थे।

६६ वत्सरकी वयसमें ३ पुत्र, अनेक पौत्र एवं चन्दननगरमें भूमिसम्पत्ति और बहुतसा नकद रुपया छोड़ इहसंसारसे रामकमल चल बसे।

सभा समाज करनेके वा अपने भवनमें यह ठहराते थे। सर्वप्रथम उसी भवनमें डेविड हेयरने हिन्दू कालेजकी स्थापना की। फिर राममोहन रायने भी उसी भवनमें प्रथम अपना मत चलाया और उप बाहरसे आकर ब्रह्मज्ञानकी बातें और मिशनरी मेकनीका बोझा उठाया था। कलकत्तेमें आदि ब्राह्मसमाजके निकट ही तीन मंजिला ईंटका कमल वसुका बड़ा प्रसिद्ध भवन विद्यमान है। इनके वंशधरोंसे मल्लिकोंने वह भवन खरीद लिया है। आज भी अनेक इस घरको 'पिरालीके कमल बोसका घर' कहते हैं।

कमलषण्ड (सं० पु०) कमलानां षण्डः समूहः, ६ तत्। पद्मसमूह, कंवलोंका समूह।

कमलसम्भव (सं० पु०) कमलात् सम्भव उत्पत्तिर्यस्य, बहुव्री०। कमलसे उत्पन्न होनेवाले ब्रह्मा।

कमलसिंह—तक्षकवंशीय एक प्राचीन विख्यात नरेश। ११६३ ई०को यह राज्य करते थे। कमलसिंह देवपालो (११९० ई०)के पिता और वीरसिंहके पितामह रहे।

कमला (सं० स्त्री०) कमल-टाप्। १ लक्ष्मी। यह विष्णुकी पत्नी हैं। २ सुन्दरस्त्री, खूबसूरत औरत। ३ निम्बुविशेष, नारङ्गी। इस वृक्षको संस्कृत भाषामें कमला नारङ्ग, नागरङ्ग, सुरङ्ग त्वग्गन्ध, त्वक्सुगन्ध, गन्धाढ्य गन्धपत्र एवं मुखप्रिय; हिन्दीमें नारङ्गी, बंगलामें कमला नींबू, तेलगूमें कुम्तला, पञ्जाबीमें सन्तरा, गुजरातीमें नारङ्गी, बर्मामें नारिङ्गयान मारवाड़ीमें मधुनिम्बा, दक्षिणीमें नारिङ्गी, तामिलमें किचिलि, तैलङ्गमें मधुरनिम्ब, कर्णाटीमें कित्तलेहण्णे, मलयमें माधुरनारका, सिंहलीमें पेदम, अरबीमें नारञ्ज, पारसीमें नारङ्ग, लाटीनमें बलसय और सिंहलीमें दोदङ्ग कहते हैं। (Citrus Aurantium)

इसको अंगरेजी आरेञ्ज, फ्रेंच आरेञ्जर, पोर्तगीज लरंजिरा (Laranjeira de fructo dolce), स्पेनी नारञ्जस, जर्मनीय नारञ्ज अर्मन ओरञ्जेन बौम (Orangen baum) इटलीय अरन्सियो (Arancio) और लाटिन अरङ्गिया (Arangia) है। अंगरेजी 'आरेञ्ज' शब्द अरबी 'नारञ्ज'का अपभ्रंश है। फिर अरबी 'नारञ्ज' संस्कृत 'नारङ्ग' शब्दका रूपान्तर मात्र लगता है।

इस बातपर भी गड़बड़ पड़ता—नारङ्गका नाम कमला क्यों चलता है। किसी किसीके कथनानुसार आसाममें कमला नदी है। उसीके निकट विस्तर उत्पन्न होनेसे इसको कमला कहते हैं। फिर कोई बताता—पहले त्रिपुराकी राजधानी कुमिल्लासे यह नीबू आता था। इसीसे कुमिल्लाके प्राचीन नाम कमलाङ्कसे बदल कमला नाम पड़ गया। किन्तु हमारे विवेचनामें वह दोनों बातें ठीक नहीं। क्योंकि बहुत दिनसे तैलङ्ग देशमें इसे 'कमलापण्डु' कहते आये हैं। फिर कमला नाम भी अनुमानतः ३१२ सौ वर्षका प्राचीन है। कृष्णानन्दने तन्त्रसारमें इसका उल्लेख किया है—

"[illegible]।
[illegible]॥"

इसकी कृषि भारतके अनेक प्रान्तमें होती है। विशेषतः खासिया पहाड़के दक्षिण सुरमा उपत्यका और मध्यप्रदेशके नागपुर जिलेमें यह बहुत लगाते हैं। पूर्व कुछ नारङ्गी नेपाल सिक्किम और शिमला आदिके ही एक स्थानमें भी लगायी जाती है। मध्य देशमें यह बहुत कम होती है। निम्नभूमिमें या तो पक ही नहीं पाता या मोटा पड़ जाता है। भारतवर्षमें जलवायुके अनुसार दिसम्बर और मार्च मासके मध्य फल उतरता है। नागपुरकी नारङ्गी वर्षमें दो बार होती है।

डाक्टर डि कण्डोलने लिखा,—'दो सहस्र वर्ष पूर्व भारतवर्षमें कमला नीबू न था। यदि इसका अस्तित्व रहता, तो संस्कृत भाषामें अवश्य उल्लेख

मिलता और ग्रीक वर्णनामें भी नाम निकलता। नारङ्गी चीनसे भारत आयी है।' किन्तु डाक्टर बोनेविया इसे भारतका ही द्रव्य बताते हैं।

यह चार प्रकारकी होती है—(१) सन्तरा, (२) नारङ्गी, (३) मलता और (४) मन्दारिन।

(१) सन्तरेका छिलका चिकना, पीला और नारङ्गी रहता है। त्वक् पृथक् पड़ती है। इस जातिकी कमला नागपुर, दिल्ली, अलवर, गुड़गांव, लाहोर, मूलतान, पूने, मन्द्राज, कुर्ग, सिलहट, भोटान, नेपाल और सिंहलमें लगायी जाती है। अग्रहायण वा पौष मास इसका फल पकता है।

(२) नारङ्गी सन्तरेसे अधिक उत्पन्न होती है। लगानेसे यह भारतमें सब जगह उपज सकती है। इसका छिलका सन्तरेसे कड़ा और पतला रहता है। फिर त्वक् भी पृथक् नहीं पड़ती। यह माघ मास फल देती और धूप सह लेती है। इसका रस सन्तरेसे फीका निकलता है।

(३) मलता या सुर्ख नारङ्गी कई प्रकारकी होती है। आजकल हिमालय और दारजिलिङ्गमें जो हरी और बड़ी नारङ्गी उपजती, वह इसीकी अवनति मात्र समझ पड़ती है। ब्रह्मदेशमें बिलकुल इसी प्रकारकी एक नारङ्गी मिलती है। पूनेकी छोटी लाल 'मुसेम्बी' जञ्जीबारसे इस देशमें आयी है। लखनऊमें सिपाही विद्रोहसे पहले सुर्ख नारङ्गी बहुत लगायी जाती थी। यह कंकरीली जमीनमें खूब होती है। इस अमृततुल्य स्वादु रहती है। गुजरानवालेकी सुर्ख नारङ्गी अंगरेजोंको बहुत अच्छी लगती और सबसे उम्दा समझ पड़ती है।

(४) मन्दारिन देखनेमें क्षुद्राकार और रक्तवर्ण होती है। यह खानेमें सुस्वादु लगती है। सकल प्रकार कमलाकी अपेक्षा इसके पत्र और फलमें सद्गन्ध अधिक रहता है। प्रधानतः यह पर्वतोंपर उपजती है। भारतवर्षमें प्रकृत मन्दारिन नहीं मिलती, सिंहलमें देख पड़ता है।

पहले युरोपमें कमला उपजती न थी। इसे पोर्तुगीज भारतवर्षसे वहां ले गये हैं।

नारङ्गीका व्यवसाय प्रधानतः दो स्थानोंमें होता है—सिलहट (श्रीहट्ट) और नागपुर। इसके लगानेमें मूलपर आर्द्रता रखना आवश्यक है। किन्तु जल निश्चल होना न चाहिये। श्रीहट्टमें इस बातकी सुविधा है। भूमि ढालू रहनेसे नदीकी लहर आती और वृक्षोंको सींचकर चली जाती है। वहां कमसे कम १००० एकरमें नारङ्गी लगाते हैं। पथिक घण्टे दो घण्टे इस बागमें घूम सकता है। दिसम्बर और जनवरी मास नारङ्गीसे लदे वृक्ष देख हृदय फूल उठता है। ऐसा बाग युरोपमें भी कहीं देख नहीं पड़ता।

कृषि—बीज जनवरी और फरवरी मास प्रायः ६ इञ्च भूमिके सम्पुटमें सघनरूपसे बोया जाता है। उक्त सम्पुट इतने ऊंचे रहते, कि शूकर अपना दांत लगा नहीं सकते। फिर चूहों और गिलहरियोंको दूर रखनेके लिये जाल भी डाल देते हैं। वृष्टि होनेसे बीजाङ्कुर भिन्न किये जाते हैं। किन्तु इस कार्यमें सम्पुट तोड़ मूलसे मृत्तिकाको इस प्रकार झटकते, जिसमें कोई हानि न पड़े। पीछे उन्हें उद्यानके पोषणस्थानमें लगाते हैं। बीजाङ्कुर पोषणस्थानमें जबतक रहते, तबतक उद्यानमें अपने ईप्सित स्थलपर फिर नहीं पहुंचते। किन्तु यह नियम सदोष प्रतीत होता है। कारण पोषणस्थान वर्षमें केवल एकबार अक्तोबर मास निराया जाता है। कलम लगाना किसीको मालूम नहीं। फिर बीज चुननेमें भी अल्प ही चेष्टा करते हैं।

संग्रह एवं विक्रय—प्रत्येक संग्राहकके पास २० फीट ऊंची बांसकी सिढ़ी होती है। उसकी पीठपर एक मोटा जालीदार थैला लटकता, जिसका मुंह बेतके छल्लेसे खुला रहता है। इसी थैलेमें वह नारङ्गी तोड़ तोड़ डालता है। फिर वह उतरनेसे पहले मुरझायी पत्तियां और सूखी डालियां भी गिरा देता है। सिवा इसके नारङ्गीके वृक्षमें दूसरा हाथ नहीं लगाते। लड़के गुलेल लिये कौवे उड़ाया करते हैं। जमीनपर गिरी नारङ्गियां सूअरों और कुत्तोंको खिलायी जाती हैं। इसकी गणना गण्डेके हिसाबसे चलती है। ७५० गण्डे (३०००)का एक सोन होता है। इसकी नारङ्गियां ४) रु० सोन बिकती हैं।

नागपुर और कामठोमें भी नारङ्गीके बहुतसे बाग़ हैं। मध्यप्रदेशमें इसकी कृषि बढ़ रही है। नागपुरका सन्तरा बम्बई अधिक जाता है। युक्तप्रदेशमें नैपाल, दिल्ली और कुछ नागपुरसे भी नारङ्गी आती है।

नारङ्ग—मधुराम्ल, अग्निप्रदीपक और वातनाशक है। फिर दूसरी नारङ्गी अत्यन्त अम्लरस, उष्णवीर्य, दुष्पच, वायुनाशक और सारक होती है। (भावप्रकाश)

राजनिघण्टुके मतसे यह मधुर एवं अम्ल, गुरु, रोचन, बल रुच और वात, आम क्रिमि, शूल तथा श्रमनाशक है।

हकीमोंमें नारङ्गीके छिलके और फूलको गर्म और खुश्क समझते हैं। इसका गूदा तर रहता है। ठण्डकमें पानी आने या बोखार चढ़ जानेसे नारङ्गी खिलाते हैं। इसका अर्क़ जफरे और जफ़रीके दस्तको दूर करता है। फोड़े या कै को रोकनेके लिये इसे बहुत काममें लाते हैं। नारङ्गीका अर्क़ भी निहायत ताक़तवर है। इसके छिलके और फूलसे तेल बनता, जो मालिशमें दवाके तौर पर चलता है।

डाक्टर ऐन्सली लिखते,—'हिन्दू चिकित्सकोंके मतानुसार नारङ्ग रसमोचक ज्वरमें पिपासानिवारक पौष्टिकरीवरर और क्षुधावर्धक है। जोसके समय यह अर्क़ नारङ्गीका शर्बत अंगरेजोंके लिये बहुत उपादेय होता है। इसका छिलका वातनाशक और अजीर्ण रोगके लिये हितकर है।

भारतवर्षीय फार्माकोपियाके मतसे नारङ्गी बल कर और अग्निवर्धक है। अजीर्ण रोग और भावी एवं दुर्बलता पर यह बड़ा उपकार करती है। इसके पत्तोंको चुआनेसे जो जल निकलता, वह आक्षेप हटाने वाला पदपोष एवं मूर्च्छारोगपर प्रयोग करनेमें आक्षेप मिटता है।

मुखपर व्रण होनेसे कोई कोई नारङ्गीका सूखा छिलका पिसकर लगाता है। फिर सूखे हो छिलके को जलमें रगड़ चर्मरोगपर व्यवहार करनेसे लाभ पहुँचता है।

भारतवर्षमें प्रायः वर्षके को नारङ्गी उसाद् मसको भाँति वमाइन होती है। इसका वृक्ष बहुदिन पर्यन्त जीता जागता है। सुननेमें आया—एक एक वृक्ष ३।४ सत वर्षसे नहीं मुरझाया। इसका वृक्ष १० फीट पर्यन्त उच्च विस्तृत होता है। प्रत्येक वृक्षमें ५००से १००० पर्यन्त फल लगते हैं।

नारङ्गका पत्र जलमें चुआनेपर एक प्रकार गन्ध निकलता है। उसका गन्ध अति तीव्र अथच रुचिकर होता है। अंगरेज उसे 'निरोली आयेल' कहते हैं। वह अतर दवाओंमें काम आता है। विलायतवाले सेवेण्डर, साबुन प्रभृति द्रव्योंमें उसे मिलाते हैं।

नारङ्गीके फूलसे जो तैलवत् निर्यास निकलता, उसका अतर अति उत्कृष्ट रहता है।

किसी किसी वैज्ञानिकने देखभाल नारङ्गीके तेलमें कपूर मिलाया है। उस कपूरको 'निरोली काम्फर' कहते हैं।

३ मद्य। "कमला कलजलिका काशी बहुलीपेता।" (ऋग्वेद २८००) ५ मर्तकी विशेष, एक मार्तण्ड-नामिकाको रहती। यह पीछे राजा जयापीड़को पत्नी बनी थी। ६ काश्मीरस्थ पुरीविशेष, काश्मीरका एक शहर। (राजतरङ्गिणी ४।४८२) ७ छन्दोविशेष। इसमें दो नगण और एक सगण रहता अर्थात् ८ लघु वर्णके पीछे एक गुरुवर्ण लगता है।

"विद्युत नरत वसिष्ठ: कमल दल दि निशिवः।
कविनरि बनि विमला किरिप करवि कमला।" (छन्दोमञ्जरी)

८ कामरूपमें प्रवाहित एक नदी। इस नदीके तीरको भूमि अति पवित्र होती है। (यो कालिका १०।११)

९ उत्तर बिहारकी एक नदी। यह नदी नैपाल राज्यमें हिमालयसे निकली है। इसके दक्षिण अधिका बूढ़ी कमला कहते हैं। ब्रह्मखण्डमें इसको तीर भूमको पुण्यजनिका कमला नदी बताया है। इसके तीरपर शिलानाथ ग्राम है। उसी ग्राममें शिलानाथ नामक महादेवको लिङ्गमूर्ति प्रतिष्ठित है।

(ब्र खण्ड १०।११८)

१० विप्रावितराज्यका एक प्राचीन ग्राम। (न खण्ड २८४)

कमला (हिं॰ पु॰) १ कम्बल, कीड़ा, सुंडी। यह रुएंदार कीड़ा है। मनुष्यका देह इसके स्पर्शसे खुजलाने लगता है। २ कृमिविशेष, कीड़ा अट,

एक लम्बा और सफेद कीड़ा। यह अन्न और चीयमाण फलादिमें पड़ता है।

कमलाकर (सं॰ पु॰) कमलानां आकरः उत्पत्तिस्थानम्, ६-तत्। सरोवरविशेष, एक तालाव। जिस सरोवर वा तडागमें अधिक कमल रहते, उसे ही कमलाकर कहते हैं। २ पद्मसमूह, कवंलोंका मजमा। ३ कमलाकरभट्टनिर्मित स्मृतिशास्त्रका एक ग्रन्थ। ४ गोदावरी-तीरवर्ती देवगिरिनिवासी नृसिंहके पुत्र। इन्होंने सिद्धान्ततत्त्वविवेक और जातकतिलक नामक संस्कृत ग्रन्थ बनाया था।

कमलाकर भट्ट—विख्यात स्मृतिग्रंथकार। यह रामकृष्णभट्टके पुत्र, नारायणभट्टके पौत्र और दिनकर भट्टके सहोदर थे। इन महात्माने अनेक स्मृतिशास्त्र बनाये। इनके निम्नलिखित ग्रन्थ प्रधान हैं—१ तत्त्वकमलाकर, २ पूतकमलाकर, ३ तीर्थकमलाकर, ४ संस्कारप्रयोग वा संस्कारपद्धति, ५ कार्तवीर्यार्जुनदीपदानप्रयोग, ६ शान्तिरत्न, ७ शूद्रधर्मतत्त्व, ८ सहस्र चण्ड्यादि विधि, ९ निर्णयसिन्धु, १० विवादताण्डव। इनके ग्रन्थ पढ़नेसे समझ सकते—कमलाकर भट्ट १५३८ शकको विद्यमान रहे।

कमलाकान्त (सं॰ पु॰) १ लक्ष्मीपति विष्णु। २ राम। ३ कृष्ण।

कमलाकान्त भट्टाचार्य—१ बङ्गालके एक दिग्गजपण्डित। यह नवद्वीपाधिपति महाराज कृष्णचन्द्रके समसामयिक रहे। किसी किसी श्लोकमें इनका नाम आया है—"श्रीकान्तकमलाकान्त बलरामश्च शङ्करः।" किन्तु अन्य कोई परिचय नहीं मिलता। कहते—श्रीकान्त, कमलाकान्त, बलराम और शङ्कर चारों पण्डितोंके एकत्र एकपक्ष हो विचारपर बैठनेसे स्वयं सरस्वती भी अपर पक्ष अवलम्बन कर जीत सकती न थीं। महाराज कृष्णचन्द्रने इन्हें स्वीय सभामें रखनेके लिये बड़ी चेष्टा की। किन्तु किसी विशेष कारणसे यह विरक्त हो और राजसभा छोड़ अपने ग्राममें आकर रहने लगे। चौबीस-परगनेके अन्तर्गत 'पुंड़ा' ग्राममें इनका वास था। पण्डितमण्डलीका वास रहनेसे पुंड़ा छोटे नवद्वीपके नामसे विख्यात हुआ। आज भी वहां इनके वंशधर रहते हैं।

२ एक प्रसिद्ध साधक और वर्धमानको राजसभाके पण्डित। १८०९ ई॰को अम्बिकाकालनासे वर्धमान आ इन्होंने तत्कालीन वर्धमानाधिपति तेजश्चन्द्रको रिझाया और सभाके पण्डितका पद पाया था।

कमलाकान्त सात्त्विक, अभिमानशून्य और देवीके परम भक्त रहे। इष्टको निष्ठासे मुग्ध हो तेजश्चन्द्रने इन्हें अपने गुरुपदपर वरण किया और निवासार्थ वर्धमानके निकट कोटालहाट ग्राममें सुन्दर भवन बनवा दिया। उक्त भवनमें कमलाकान्त महासमारोहसे श्रीश्यामापूजा मनाते। इस पूजाके दिन शत्रु मित्र सकल एकत्र हो इन्हें कृतार्थ करते और इनकी भक्तिगाथा सुनते थे।

जैसी पदावलीसे रामप्रसादने देवीको रिझाया और जैसी पदावलीने आजतक बङ्गालियोंके हृदयमें अमृत बहाया, कमलाकान्तने वैसी ही पदावली गा कर किसी समय वर्धमानवासियोंको उन्मत्त बनाया। क्या बालक, क्या युवक, क्या वृद्ध—जो लोग अनुरोध लगाते, उन्हींको यह किसी न किसी ताल-स्वरमें एक श्यामाविषयक पद स्वयं बना, गा एवं सुनाकर रिझाते थे।

यह निर्भीक और सरलचित्त रहे। लोगोंसे सुन पाते,—एक दिन कमलाकान्त रात्रिकालको ओड़गांवके मैदानसे चले जाते थे। हठात् कतिपय दस्युने भीमरवसे उनपर आक्रमण किया। उन्होंने देखा, कि उसवार उनका अन्तिमकाल उपस्थित था। फिर वह निर्भय परमानन्दसे रामप्रसादके स्वरमें श्यामा माताको पुकारने लगे। उक्त गान सुन दस्यु मोहित हुये थे। उन्होंने वैरभाव छोड़ और उनके पदपर लोट क्षमा मांगी। कमलाकान्त उन्हें सन्तुष्ट कर वर्धमान लौट गये।

यह विवेकके स्रोतमें डूब रहते, संसारकी कुछ भी ममता रखते न थे। सुननेमें आया—स्त्रीको जलानेके लिये चिता प्रज्वलित होते कमलाकान्तने नाच नाच श्यामामाताका नाम गाया।

कुमार प्रतापचन्द्र भी इनके शिष्य हो गये थे। कहते—मृत्युकाल महाराज तेजश्चन्द्र स्वयं कमला-

कालतक भ्रमण करते रहे। उन्होंने गयातीर्थ जानेके लिये बहुत अनुनय विनय किया, जिसपर कमला- कान्तने एक पदावली भी रच मत लिखा दिया।

अनन्तर इन्होंने शरीरसंसार छोड़ा था। प्रवादानु- सार कमलाकान्तका मृतदेह भागवतकी व्यवस्था भेदकर गोमतीके स्रोतमें बह गया।

कमलाकान्त विद्यालङ्कार—बङ्गालके एक सुप्रसिद्ध पण्डित। आजकल अंगरेज़ भारत विषयमें ज्ञान लाभ कर और खोदित लिपि, प्राचीन हस्ताक्षर प्रभृति पढ़ को तत्त्व ढूंढ़नेमें लगी, उसके मूल पण्डित कमलाकान्त विद्यालङ्कार ही रहे। १८०० ई०के मध्यभाग यह एसियाटिक सोसाइटीके पण्डितपदपर प्रतिष्ठित थे। फिर उसी समय प्रिन्सेप साहब उक्त सभाके सम्पादक रहे। प्राचीन शिलालेख, ताम्रफलक और हस्ताक्षर प्रभृतिका मर्मोद्धार करना ही पण्डित कमलाकान्तका कार्य था। दिल्ली और इलाहाबादमें दो लौहस्तम्भोंपर प्राचीन अप्रचलित भाषाके कोई विषय खुदित रहा। उसकी अनुलिपि पूर्व ही प्रकाशित हो चुकी थी। किन्तु सर विलियम जोन्स, कोलब्रुक और होरेस-हैमन विल्सन प्रभृति संस्कृतविद् साहब उसका अर्थ लगा या उस जातिके अक्षरोंका किन्तु विषय भी बता न सके। प्रिंसेपको कमलाकान्त उक्त लिपिका मर्मोद्धार करनेपर इच्छान्वित हुये और अक्षर ठहरानेकी चेष्टा करने लगे। फिर देहली, सांची और गिरनार प्रभृति स्थानोंकी खोदितशिलालिपिका सादृश्य पा तथा बङ्गालकी एक देवनागराक्षरोंसे मिला इन्होंने एक एक अक्षर बता दिया। अर्थात् 'द' और 'न' स्थिर हुआ था। उक्त दोनों अक्षर उसी पढ़नेसे काम कितना ही सीधा पड़ गया। तदुपरि 'ा', 'ि' और 'ु' आदिका कमलाकान्तने स्थिर किया था। क्रमशः अन्यान्य वर्णों और शब्दोंका निकाल इन्होंने दोनों लिपिका प्राचीन पाली भाषामें खोदित होना ठहराया। प्राचीन पाली भाषाके उक्त अथवा मूल शोध पण्डित कमलाकान्त विद्या- लङ्कार ही थे।

पीछे इन्होंने उक्त दोनों लिपिका अर्थोद्धार और भाष्य किया। १८३७ ई०को वही अर्थ और भाष्य साधारणमें प्रकाशित हुआ था। विद्वज्जन समाजमें बड़ी धूमधाम पड़ी। भारतेतिहासके तमसाच्छन्न अध्यायपर नूतन आलोक पड़ा था। किन्तु जिनके द्वारा इतना कार्य हुआ, उनको कोई यश न मिला। फल सम्पादक प्रिन्सेप साहबने पाया था। अमेरिका और यूरोपके विद्यानुरागी प्रिन्सेप साहबको धन्य धन्य करने लगे। किन्तु प्रिन्सेप साहब कृतघ्न न थे। वह अपनी प्रबन्धावलीमें कमलाकान्तको ही मर्मोद्भेदक और टीकाकार लिख गये हैं।

इरिनीसे मिली एक कुटिल लिपिको समालोचनाके समय इन्होंने मुग्ध हो बताया—ऐसा सुन्दर भाव और भावय उसमें अन्य किसी लिपिमें आजतक नहीं पाया। कमलाकान्तने ही प्रथम यह बात कही— इसी लिपिसे बङ्गीय वर्णमाला निकली या मिली है। यह दूसरा भी विशेष कार्य कर पुरातत्त्वको आली- अन्तमें समधिक उन्नति देखा गये हैं। दिल्ली और इलाहाबादकी पूर्वोक्त लिपिके अक्षरोंसे संख्याबाचक शब्द प्रतिपादित होता था। नाना संस्कृत ग्रन्थ देख कमलाकान्तने ठहराया—शोल अक्षर लिख संख्याके लिपि पाया है। इस स्थलपर उसके दो एक उदा- हरण देते हैं—"[illegible]" (कान्त)

ङ (चार)का अङ्क पीछे ढालदुम और विसर्गकी आकृति रखता है। कातन्त्र व्याकरणमें कमलाकान्तने उक्त सूत्र देख निर्णय किया—विसर्ग () अर्ध (ः) चारकी अङ्कका लेखक माना गया है। इसी प्रकार पिङ्गलकृत प्राकृत व्याकरणका सूत्र ६ (छह) संख्या- को बतानेवाला ठहरा है।

इसके पूर्व और पर प्रिन्सेप साहब कमलाकान्त पण्डितके साहाय्यपर नाना विषयमें कृतकार्य हुये। वह स्वयं विशेषरूपसे संस्कृत भाषाके अभिज्ञ न रहे। पण्डित कमलाकान्त ही उनके चक्षु बन गये। हम अच्छी तरह समझते—कमलाकान्त यशोलिप्सु न थे। कारण किन्तु आज भी यशोलिप्सा रहते यह भिन्न जात अनेक कार्योंमें एक न एक अपने नामपर बनाते और नाम एवं कीर्ति बढ़ाते। फिर डाक्टर

रवीन्द्रनाथ मित्रकी भांति इनका नाम पृथिवीके सकल स्थानोंमें विघोषित हो जाता।

कमलाकार (सं० पु०) १ एक छन्द। इसमें २७ गुरु एवं ३८ लघु अर्थात् १२५ वर्ण और १५२ मात्रा-का समावेश होता है। (त्रि०) २ कमलका आकार रखनेवाला, जो कमल जैसा हो।

कमलाविशय (सं० पु०) पुष्पस्थानविशेष, एक पवित्र-गाह। इसे कमलवतीने बनवाया था। (राज०)

कमलाच (सं० त्रि०) कमलमिव चचि यस्य, बहुव्री०। १ पद्मकी भांति सुन्दर चक्षुविशिष्ट, जो कमलकी तरह आंखें रखता हो। (पु०) २ पद्म-बीज, कमलगट्टा। यह स्वादु, रूप, पाचन, कटुक, शीतल, तुवर, तिक्त, गुरु, विष्टम्भकारक, गर्भस्थिति-कर, रुच, हृष्य, वातकर, वल्य, ग्राही, वमकहर एवं लेखन और पित्त, रक्त, वमि तथा दाहनाशक है। (देशभिज्ञ्) ३ स्थानविशेष, किसी जगहका नाम।

कमलाग्रजा (सं० स्त्री०) दरिद्रा, दलद्री।

कमलादेवी—१ कादम्बराज शिवचित्तवीरप्रमादिदेवकी पटरानी। दाक्षिणात्यकी शिलालिपि पढ़नेसे समझते—कमलादेवीके पति गोपकपुरी (गोवा)में राजत्व करते थे। यह अपने पतिकी प्रियतमा महिषी रहीं। देवद्विजपर इन्हें बड़ी भक्ति रहती थी। अपनी दानशीलता और परोपकारिताके गुणसे यह श्रेष्ठ रम-णीके मध्य परिगणित रहीं। इन्होंने वेद-वेदाङ्ग-पारदर्शी ब्राह्मणोंको अनेक ग्राम दे डाले। फिर इन्हींके अनुरोधसे ११७४ ई०को कादम्बराजने ब्राह्म-णोंको देगम्ब ग्राम प्रदान किया। कमलादेवी उमा-को पूजती थीं।

इतिहासमें दूसरी कमलादेवीका नाम भी मिलता है। नीचे उनका विवरण लिखा है,—

२ गुजरातके राजा करणरायकी परमासुन्दरी पत्नी। १२९७ ई०को सम्राट् अला-उद्-दीन् खिल-जीने गुजरात जय किया था। उस समय बन्दियोंके साथ कमलादेवी भी दिल्ली पहुंचायी गयीं। कुछ दिन पीछे अला-उद्-दीन्की कुशलता और प्ररोचनासे इन्होंने सम्राट्को गले लगाया था। फिर १३०६ ई०को कमलादेवीके गर्भसे उत्पन्न गुजरातकी राज-कन्या देवलदेवी भी दिल्ली पहुंच गयीं। अला-उद्-दीनके पुत्र खाजखाँ(?) इनपर मुग्ध हुए थे। अतएव देवलदेवी और खाजखाँ [illegible] में विवाह हो गया। कुतुबुद्दीन शाहने सम्राट् हो अपने भ्राता [illegible] अन्धा कर मारा और देवलदेवीको ग्रहण किया था। [illegible] और देवलदेवीका प्रेम उपाख्यान अमीर खुसरोने [illegible] काव्यमें लिख गये हैं। इतिहासवेत्ता मुसलमानोंने कमल-देवीको 'कंवला देवी' कहा है।

कमलानन्दन—[illegible] दिगम्बर [illegible]।

कमलानिवास (सं० पु०) कमलोंका वासस्थान, कमल।

कमलापति (सं० पु०) कमलायाः पतिः, ६-तत्। लक्ष्मीके स्वामी, विष्णु।

कमलायताक्ष (सं० त्रि०) कमलके समान बड़ी आंख रखनेवाला, जिसके नयन कमलके तुल्य बड़े रहें।

कमलायुध (सं० पु०) १ संस्कृतके एक प्राचीन कवि। २ कान्यकुब्जके एक प्राचीन नृपति।

कमलालय (सं० क्ली०) मन्द्राजप्रान्तीय तञ्जोर जिलेके तिरुवारूर नगरका एक पवित्र मंदिर। यहां महादेवकी लिङ्गमूर्ति विद्यमान है।

कमलालया (सं० स्त्री०) कमलं आलयो यस्याः। कमलमें रहनेवाली लक्ष्मी।

कमलाभर्त्ता (सं० पु०) कमलायाः भर्त्ता, ६-तत्। [illegible]। लक्ष्मीके स्वामी विष्णु।

कमलासन (सं० पु०) कमलं आसनं यस्य, बहुव्री०। १ कमलपर बैठनेवाले ब्रह्मा। "[illegible]" (कुमार) (क्ली०) कमलासनं [illegible] दानमिवर्चः। २ कमलोंका दान। ३ पद्मासन। यह दो प्रकार होता है—बद्ध और मुक्त। मुक्तमें वामपद पहले दक्षिण पदके ऊपर चढ़ाया जाता, फिर दक्षिणपद वामपदके ऊपर आता है। मुक्तको दोनों हाथकी हथेली जानुपर खुली रखते हैं।

इसी प्रकार निरदण्डको सीधा कर बैठनेका नाम शुद्ध पद्मासन है। बद्ध पद्मासनमें पहलेके पद्मासनका नियम तो ऐसा ही रहता है। किन्तु वाम हस्तको पीठके पीछे घुमा वाम पदका और दक्षिण हस्तको पीठके पीछे घुमा दक्षिण पदका अङ्गुष्ठ पकड़ते हैं। फिर चिबुक वक्षःस्थलपर जमा और नासाके अग्रभागपर दृष्टि लगा सीधे बैठा जाता है। यह पद्मासन अति उत्तम रहता और इससे वात वगैरह अन्यान्य रोगोंपर साधकके सब रोग हरता है।

कमलासनस्थ (सं० पु०) कमले विष्णोर्नाभिकमले तद्रूपे आसने तिष्ठति, कमल-आसन स्था क। विष्णुके नाभिकमलपर रहनेवाले ब्रह्मा।

कमलाहट्ट (सं० पु०) काश्मीरका एक बाजार। काश्मीरकी रानी कमलावतीने इसे बनाया था। (राजतरङ्गिणी ४।२८)

कमलाकाम (सं० पु०) पद्मका खुलना या मुंदना। अंधकारमें फूलने या बंद होनेकी हालत।

कमलाकर—संस्कृतके एक प्राचीन ग्रन्थकार। यह नृसिंहके पुत्र, रामकृष्णके पौत्र और दिवाकरके प्रपौत्र रहे। इन्होंने अपूर्वमात्रोपपत्ति ज्ञातकतिलक, ज्योत्पत्तिविचार, टिप्पणी, मनोरमाखण्डनखण्डटीका, विवाहपटल, सिद्धान्ततत्त्वविवेक (यह १५०१ ई०को बनारसमें लिखा गया) और सूर्यसिद्धान्तटीका सौर भाष्य नामक ग्रन्थ लिखा है।

कमलाकर देव—आनन्दविलास नामक ग्रन्थके रचयिता।

कमलाकर भट्ट—एक प्राचीन संस्कृत ग्रन्थकार। १६१२ ई०को इन्होंने 'निर्णयसिन्धु' बनाया था। इनके लिखे ग्रन्थ यह हैं—अग्निनिर्णय, आचारदीप या आचारदीपिका, आश्वलायनशाखा आद्यप्रयोग, आह्निकविधि, उत्तरपाद, ऐन्द्रीमहाशान्ति सहित ग्रहशान्तिप्रयोग, कर्मविपाकरत्न, कल्पनाशौच प्रयोग, कात्यायनसूत्र व्याख्या, क्रियापाद, गयाश्राद्ध, गीतगोविन्दमाधवशाखा, गोत्रप्रवर निर्णय या गोत्र प्रवरदर्पण, चतुर्थी षष्ठीविधानपद्धति, जलाशयोत्सर्गविधि, जीर्णोद्धारविधि, तन्त्रवार्तिकटीका, त्रिपिण्ड गर्भदानप्रयोग, तीर्थयात्रा, तुलापद्धति, दिव्यप्रदान विधि, त्रिस्थलीसेतु, दानकमलाकर, दायविभाग, धर्मतत्त्व, नारायणबलिप्रयोग, निर्णयसिन्धु, नीतिकमलाकर, पञ्चपत्र, पञ्चाब्दशदानविधि, पितृभक्तितरङ्गिणी पूर्तकमलाकर, प्रतिष्ठाविधि, प्रवरदर्पण, प्रायश्चित्तरत्न, बह्वृचाह्निक, मन्त्ररत्न मासापाद, मन्त्रकमलाकर, रत्नदानप्रयोग, रथदानविधि, रामकल्पद्रुम, रामकौतुकमहादान लक्षहोमविधि, लिङ्गार्चनप्रतिष्ठाविधि, विशेषदानविधि, विवादताण्डव, विष्णुवन्द्यदानविधि, व्यवहार, व्रतकमलाकर, व्रतार्क, शतचण्डीसहस्रचण्डी प्रयोग, शतमान-दानविधि, शान्तिरत्न या शान्तिकमलाकर, शास्त्रदीपिकालोक, श्राद्धमाला, शिवप्रतिष्ठा, शूद्रधर्मतत्त्व, श्राद्धनिर्णय, श्राद्धसार, श्रावणीप्रयोग, श्वेताश्वदानविधि, षोडशसंस्कार, संस्कारपद्धति, समय कमलाकर, सरस्वतीदानविधि, सर्वमाध्यायनिर्णय, सहस्रचण्ड्यादिप्रयोगपद्धति, सुवर्णपृथ्वीदानविधि, स्नानोपासनप्रयोग, हिरण्यगर्भदानविधि और कमलाकरभट्टीय। मुक्तिसने अनूपसार्थसागर, पुरुषोत्तमने दृष्टान्तदीपिका और रामकृष्णने वाल्मेदरेवतात्मक नामक ग्रन्थमें इनका वचन उद्धृत किया है।

कमलाकरमिश्र—संस्कृतके एक प्राचीन विद्वान्। माधव दत्ताने सुबन्धुने इनका उल्लेख किया है।

कमलिनी (सं० स्त्री०) कमलानि सन्ति अत्र, कमल इनि। इष्टादिभ्यश्च। पा ५।२।८८। १ पद्मिनी, कंवल का पेड़। यह शीतल गुरु, मधुर, लवण, कफ, पित्त, रक्त तथा कफ और वात पर विरुद्धकर होती है। कमलिनीका कंद शीत, तुवर, मधुर, तिक्त, पाकमें अति कटु, गुरु, पाचक, वातघ्न और कफ पर पित्तनाशक है। (वैद्यकनिघण्टु) २ पद्माकर कमलोंका खजाना। जिस सरोवर या ह्रदमें बहुतसे कमल रहते, उसे भी कमलिनी कहते हैं। ३ गङ्गा।

"[illegible]" (काशीखण्ड २९।)

कमली (सं० पु०) ब्रह्मा।

कमली (हिं० स्त्री०) छोटा कम्बल कमरी।

कमलेक्षण (सं० त्रि०) कमलमिव ईक्षण यस्य, बहुव्री०। पद्म जैसे, अंचलकी तरह खूबसूरत आंखें रखनेवाला।

कमलेश (सं॰ पु॰) कमलापति ईश विष्णु।

कमलोत्तरा (सं॰ स्त्री॰) एक मोटा। ([illegible]) [illegible] 'कमलो-त्तर' [illegible] है।

कमली (हिं॰ पु॰) [illegible], ऊँट, मांचिया।

[illegible] (सं॰ स्त्री॰) [illegible] कमला- [illegible]। [illegible]।

कमवाना (हिं॰ क्रि॰) १ लाभ उठवाना, दिलवाना। २ [illegible], साफ, करवाना। ३ मुण्डन करवाना, [illegible]। ४ संस्कार करवाना, सुधरवाना।

कमसमझी (हिं॰ स्त्री॰) मन्दमतिता, नासमझी, बेवकूफी।

कमसरियट (अं॰ पु॰ Commissariat) सेनाका एक विभाग, फौजका कोई महकमा। यह सेनाको रसदादि सामग्री पहुंचाता है।

कमसिन (फ़ा॰ वि॰) अल्पवयस्क, जो उम्रमें छोटा हो।

कमसिनी (फ़ा॰ स्त्री॰) शैशव, लड़कपन।

कमहा (हिं॰ वि॰) कार्यकारी, कामकाजी।

कमहिम्मत (फ़ा॰ वि॰) भीरुहृदय, डरपोक।

कमहिम्मती (फ़ा॰ स्त्री॰) भीरुता, बुज़दिली, [illegible]।

कमा (फ़ा॰ स्त्री॰) कम-विश, भारी [illegible]। [illegible]।

कमाई, [illegible]।

कमाऊ, [illegible]।

कमाची (हिं॰ स्त्री॰) १ [illegible]। २ कमा-[illegible]।

कमाण्डर (अं॰ पु॰ Commander) सेनानायक, सरदार, [illegible]। यह पद [illegible] है।

कमाण्डर इन चीफ़ (अं॰ पु॰ Commander-in-chief) प्रधान सेनापति, [illegible] लाट।

कमान (फ़ा॰ स्त्री॰) १ कार्मुक, धनुष, चाप, कमठा। २ इन्द्रधनुष, [illegible]। ३ इन्द्र-धनुः, इन्द्रायुध, कौस-कुज़ा। ४ लोहनाड़ी, अस्त्रभेद, तोप, तुवफ़, बन्दूक्। ५ व्यायामविशेष, एक कसरत। इसमें मालखम्भपर कसरत करनेवाला कमानकी तरह टेढ़ा पड़ जाता है। ६ यन्त्रविशेष, एक औज़ार। इससे पात्थरपर बुना जाता है। ७ यन्त्रभेद, कोयी औज़ार। इससे दो पदार्थों के मध्यका अन्तर निर्धा-रित होता है। (वि॰) ८ आनमनीय, नमनशील, लचीला। ९ वक्र, टेढ़ा, झुका हुवा।

कमान (फ़ि॰ स्त्री॰) १ आदेश, हुक्म। २ अधिकार, इख़्तियार। यह अंगरेज़ीके कमाण्ड (Command) शब्दका अपभ्रंश है।

कमान-अफ़सर (हिं॰ पु॰) आज्ञापक पुरुष, हुक्म देनेवाला सरदार। यह अंगरेज़ीके कमाण्डिङ्ग आफ़िसर (Commanding officer) शब्दका अप-भ्रंश है।

कमानगर (फ़ा॰ पु॰) १ कार्मुककार, कमान बनानेवाला। २ अस्थि योजयिता, हड्डी जोड़नेवाला।

कमानगरी (फ़ा॰ स्त्री॰) १ कार्मुक विधान, कमान बनानेका काम। २ अस्थियोजना, हड्डीकी जोड़ायी।

कमानचा (फ़ा॰ पु॰) १ क्षुद्र कार्मुक, छोटी कमान, कमठा। २ सारङ्गी, चौतारा, किंगरी। ३ सार-ल्योहका स्थितिस्थापकत्वविशिष्ट पदार्थ, लोहेकी कमानी। ४ खण्डमण्डलाकार पटल, मेहराबदार छत। ५ विविक्त भवन, पोशीदा कमरा।

कमानदार (फ़ा॰ वि॰) १ खण्डमण्डलाकार, मेह-राबदार। (पु॰) २ धनुर्धर, कमान लिये हुवा।

कमाण्डर (हिं॰ पु॰) आज्ञापक, सेनापति, सर-दार, सरगिरोह।

कमाना (हिं॰ क्रि॰) १ उपार्जन करना, घर भरना। २ परिश्रम करना, मरना मिटना। ३ अभ्यास बढ़ाना, मश्क़पर लाना। ४ परिष्कार करना, मसालेसे भरना। ५ मलमूत्र उठाना, झाड़ू लगाना। ६ भूमि प्रस्तुत करना, कूरसे भूमि भरना। ७ पौरुषमें निर्वाह करना, दिनानेसे पेट भरना। ८ धनोपार्जन करना, रुपयेको पैदासे पड़ना। ९ गुर बताना, नाम कमाना। १० न्यून बनाना, घटाना।

कमानिया (हिं॰ पु॰) धानुष्क, कमानदार।

कमानी (फा॰ स्त्री॰) १ स्थिति-स्थापकत्व-विशिष्ट पदार्थ, लोहेकी लचीली चीज। जैसे—तौलनेके दण्ड पात्र या आवर्तन, भारतीय पर्यंक पिण्ड, अंकुश घड़ीरखका समवाय। यह द्रव्य नाना प्रकार यन्त्र विषयक कार्यमें लगता है। कमानीमें जब चाबी या पट्ट चावें, घड़ीको नियमपर चावे, गुरुत्व या अन्य शक्ति लगावे और सहज जमाती है। यन्त्र कामयोंमें इसके जो प्रधान भेद चलते, उन्हें नीचे लिखते हैं—१ स पिंड (पेचदार) २ व्यावर्तित (अर्थोकी या बालकमानी), ३ विलोम (मरगोल) ४ पत्राकार (पेचदार), ५ अर्धाण्डाकृति (निस्फ बेजावी), ६ प्रधान (बड़ी), ७ आटोप (हिंडलार)। यह चीज या पिण्डसे बनती है। भारतीय पर्यंक (रबरकी) तथा पायल (दबावी) कमानी अर्धाण्डाकार रहती और चलनशील (चलते) द्रव्यपर लगती है। यह बड़ी या पहा बसाती, झटका बचाती, तौल ठहराती और जमा जमाती है। इसलिये इस जाते भी कमानी अपने आप ऊपर उठ आती है।

२ वस्त्र एवं नमनशील चौड़ाईवाला, लोहेकी झुकी हुयी लचकदार तोली। यह चाबी और चामें अमे-रकमें लगती है। ३ शिल्पविशेष, एक पेटी। यह चर्ममय होती है। इस कमानीके भीतर लोहमय एवं नमनशील पट्ट रहता है। फिर उसमें मांसपर उपाधान लगा देते हैं। जिस रोगीका अन्त्र उतरता, वह कटिमें कमानी कसता है। इससे अन्त्र उतरने नहीं पाता। ४ धनुषाकार काष्ठविशेष, झुकी हुयी कोई लकड़ी। इसके दोनों प्रान्त एक लोहसूत्र या डुम्बसेसे बंधे रहते हैं। ५ व्यायामयन्त्रविशेष बांसकी एक पहा। यह धनुष रहती और इसे मुगदरके बदलेमें लगती है। ६ लोहमाड़ोंके तासमका विशेष स्थितिस्थापकत्व विशिष्ट पदार्थ वस्तुके ताखेको दूसरो कमानी।

कमानीदार (फा॰ वि॰) स्थितिस्थापकत्वविशिष्ट पदार्थयुक्त, जो कमानी रखता हो।

कमायच (हिं॰ स्त्री॰) कमानचा, सारङ्गीका गज।

कमाई (हिं॰ स्त्री॰) १ उपार्जित, अर्जित, उप-लब्ध, आमदनी। २ लाभ, फायदा। ३ उद्यम, कामकाज।

कमाल (अ॰ पु॰) १ सिद्धि, तकमील, पूर्णता। २ आश्चर्य, ताज्जुब, अचम्भा। ३ कौशल होशियारी। ४ अनुपम कारीगरी। ५ कबीरके पुत्र। यह भी एक पहुँचे साधु थे। कबीरकी बात काट डालना इनका काम रहा। (वि॰) ६ सिद्ध, पूरा। ७ अत्यन्त, बहुत ज्यादा।

कमाऊ (हिं॰ वि॰) उपार्जन करनेवाला, जो पैदा करता हो।

कमासुत (हिं॰ वि॰) अर्थोपार्जन करनेवाला जो रुपया कमाता हो।

कमिता (सं॰ पु॰) कम-णिच् भावे तृच्। कामुक, मस्त, चाहनेवाला।

कमिश्नर (अं॰ पु॰—Commissioner) १ निर्दिष्ट मुख्तारकार। २ अधिकारी, अमीन। माल और पुलिसके बड़े अफसरको भी कमिश्नर कहते हैं।

कमी (फा॰ स्त्री॰) १ न्यूनता, कोताही, घाटा। २ अप्राप्ति कमयाबी नहीं। ३ हानि, नुकसान। ४ ह्रास, तखफीफ उतार। ५ अपचय गमन, जाना। ६ उपशम तखफीफ, नरमी।

कमीज (हिं॰ स्त्री॰) कुर्ता, अचोदकन, पहननेका एक कपड़ा। यह एक प्रकारका कुर्ता है। इसमें कली और चौबगला नहीं लगाते। पीठ पर जुवा पड़ता है। फिर हाथमें कफ और गलेमें कालर भी रहता है। भारतवासी अंगरेजोंसे कमीज पहनना सीखा है। अरबीमें इसे कमीस कहते हैं।

कमीनगाह (फा॰ स्त्री॰) निभृत स्थान, घातकी जगह।

कमीना (फा॰ वि॰) अधम, अल्प, कम असल, रजील पाजी, ओछा।

कमीनापन (हिं॰ पु॰) अधमता कम असली, ओछापन।

कमीनी घास (हिं॰ स्त्री॰) करविशेष, किसी किस्मको लगान। यह कर गांवमें खेती न करनेवाले लोग जमीन्दारको देते हैं।

कमीला, कमेला देखो।

कमीशन (अं० स्त्री० = Commission) १ आचरण, इरतिकाब, करतब। २ समर्पण, सुपुर्दगी। ३ अधिकार, इख़्तियार। ४ आदेश, हुक्म। ५ परार्थविक्रय, दलाली। ६ नियुक्तजन, जमात, जथा।

क़मीस (अ० स्त्री०) कमीज़, किसी किस्मका कुरता।

कमुकन्दर (हिं० पु०) धनु भञ्जनकारी रामचन्द्र।

कमुवा (हिं० पु०) नौदण्डका मुष्टि, नाव चलानेके डांडका कब्जा।

कमून (अ० पु०) जीरक, जीरा।

कमूनी (फ़ा० वि०) १ जीरका-सम्बन्धीय, जीरेसे ताल्लुक रखनेवाला। जीरकके अवलेहको 'जवारिश कमूनी' कहते हैं। (स्त्री०) २ औषधविशेष, एक दवा। इसमें जीरा बहुत पड़ता है।

कमूल, कमलाई देखो।

कमेटी (अं० स्त्री० = Committee) कार्यसम्पादिका सभा, पञ्चायत।

कमेड़ी (हिं० स्त्री०) क़ुमरी, कपोतिका।

कमेरा (हिं० पु०) कर्मकर, मजदूर, नौकर। प्रधानतः खेतीके काम करनेवाले नौकरको 'कमेरा' कहते हैं।

कमेला (हिं० पु०) १ शूना, वध्यस्थान, क़त्लगाह। २ कमीला, एक पौदा।

कमेहरा (हिं० पु०) संस्थानविशेष, एक सांचा। यह मट्टीका होता है। इसमें कसकुटको चूड़ियां ढाली जाती हैं।

कमोटन (हिं० स्त्री०) कुमुदिनी, कोकाबेली।

कमोटपुष्प (सं० क्ली०) जलपुष्पविशेष, पानीमें होनेवाला एक फूल।

कमोदिक (हिं० पु०) १ कमोदराग गानेवाला। २ गायक, गवैया।

कमोदिन (हिं० स्त्री०) कुमुदिनी, कोकाबेली।

कमोना—युक्तप्रदेशके बुलन्दशहर जिलेका एक ग्राम। यह काली नदीके दक्षिण तटसे थोड़ी दूर अवस्थित है। यहां एक सुप्रसिद्ध दुर्ग विद्यमान है।

कमोरा (हिं० पु०) १ मृत्पात्रविशेष, मट्टीका एक बरतन। इसका मुख प्रशस्त रहता है। इसमें दुग्ध दूहते और रखते हैं। यह दही जमानेके काम भी आता है। २ घट, घड़ा।

कमोरी (हिं० स्त्री०) क्षुद्र मृत्पात्रविशेष, मट्टीका एक छोटा बरतन। इसका मुख प्रशस्त रहता है। यह दुग्ध दूहने तथा रखने और दही जमानेके काम आती है।

कम्प (सं० पु०) कपि भावे घञ् इदित्वात् नुम्। १ स्फुरण, लरजिश, थरथराहट, कंपकपी। इसका संस्कृत पर्याय—वेपथु, वेपन, वेप और कम्पन है। २ उच्चारणविशेष, एक तलफ़्फ़ुज़। यह स्वरितका एक संस्कार है। स्वरितके आगे उदात्त स्वर आनेसे इस स्फुरणकी आवश्यकता पड़ती है। ३ वेपथु, बुखारकी कंपकपी। ४ अनुभावविशेष। यह शृङ्गाररसका सात्विक अनुभाव है। इसमें शीत, कोप, भय प्रभृतिसे अकस्मात् शरीर कांपने लगता है। ५ कंगनी, उभरा हुवा दीवारका किनारा। यह मन्दिरों और स्तम्भोंके नीचे रहती है।

कम्प (अं० पु० = Camp) १ शिविर, डेरा, खेमा। २ सैन्यनिवास, पड़ाव, छावनी। ३ सेना, फौज, लशकर।

कम्पज्वर (सं० पु०) कम्पयुक्तो ज्वरः, मध्यपदलो०। शीतज्वर, विषम, तपलरज़ा, जूड़ी। यह ज्वर वायुसे उत्पन्न होता है। ज्वर देखो।

कम्पति (सं० पु०) समुद्र, बहर।

कम्पन (सं० त्रि०) कपि-युच् इदित्वात् नुम्। १ कम्पयुक्त, कांपनेवाला, जिसको कंपकपी लगी हो या जो कांपता हो। इसका संस्कृत पर्याय—चलन, कम्प्र, चल, लोल, चलाचल, चञ्चल, तरल, पारिप्लव, परिप्लव, चपल और चटुल है। २ कम्पकारक, कंपानेवाला। (पु०-क्ली०) ३ कम्प, कंपकपी। ४ शीतऋतु, जाड़ेका मौसम। ५ एक राजा।

"काम्बोजराजः कमठः कम्पनश्च महाबल'।
सततः कम्पयामास यवमानेक एव यः॥" (महाभारत २।४।१९)

६ अस्त्रविशेष, एक हथियार। ७ सन्निपातजन्य ज्वरविशेष, एक बुखार। भावमिश्रने कफोल्वण सन्निपात ज्वरको ही कम्पन कहा है,—

"[illegible] मिद्रा [illegible]।
[illegible]
[illegible] सर्वदा।
[illegible]" (भावप्रकाश)

कफोल्बण सन्निपातमें शरीरमें जड़ता आती, कण्ठ मद्‌मद् पड़ जाता, रात्रिको निद्रा अधिक सताती, आंख चुंधाती और मुखमें मिठास देख पड़ती है। मुनि लोगोंने इसी ज्वरका नाम कम्पन रखा है। ८ काश्मीर निकटवर्ती एक नगर। ९ पक्षिविशेष, एक चिड़िया। १० कंपाने वाला, हिलाने डुलानेवाला शासन।

कम्पना (सं॰ स्त्री॰) कम्पन टाप्। १ नदीविशेष, एक दरिया। २ सेना, फौज।

कम्पनीय (सं॰ त्रि॰) कम्पन ठञ्। कम्पनशील हिलनेवाला, जो हिल डुल सकता हो।

कम्पमान (सं॰ त्रि॰) कम्प शानच्। हिलनेवाला, कम्पयुक्त, जो कांपता हो।

कम्पयत् (सं॰ त्रि॰) कंपानेवाला, जो हिलाता डुलाता हो।

कम्पलक्ष्मा (सं॰ पु॰) कम्पः लक्ष्म लक्षण यस्य, बहुव्री॰। वायु, हवा।

कम्पवायु (सं॰ पु॰) कम्प कम्पकर वायु। वात रोगविशेष, वायुकी एक बीमारी। इसमें सब शरीर कांपने लगता है। कम्पवात देखो।

कम्पा (सं॰ स्त्री॰) कपि भावे अ टाप्। कम्पन कंपकंपी।

कम्पाक (सं॰ पु॰) कम्पया चलनेन आयाति प्रकाशते, कम्प के अ। वायु, हवा।

कम्पान्वित (सं॰ त्रि॰) कम्पयुक्त कांपनेवाला, जो थरथराता हो।

कम्पित (सं॰ क्ली॰) कपि भावे क्त। १ कम्पन, कंपकंपी। (त्रि॰) २ कम्पयुक्त कांपनेवाला। ३ कंपाया या हिलाया डुलाया गया हो।

कम्पिल (सं॰ पु॰) कम्प इलच्। १ रोचनी, सफेद नौसादर। इसका संस्कृत पर्याय—कम्पिल्ल, कम्पिलक, कम्पील, कर्कश, रक्ताङ्ग, रेची, रेचनक, रञ्जक और रक्तचूर्णक है। राजनिघण्टुके मतसे यह विरेचक, कटु, उष्ण एवं लघु और व्रण, कफ, कास तथा जन्तुविनाशक है। फिर सुश्रुत इसके तेलको तिक्त, कटु, कषायरस एवं व्रणशोधक और अधोगत दोष, कृमि, कफ, कुष्ठ तथा वायुनाशक बताते हैं। २ युक्तप्रदेशके फर्रुखाबाद जिलेकी कायमगञ्ज तहसीलका एक ग्राम। महाभारतमें इसका नाम काम्पिल्य लिखा है। काम्पिल्य देखो।

कम्पिला (सं॰ स्त्री॰) धृतकुमारी घीकुवार।

कम्पिल्ल (सं॰ पु॰) कम्प-इल्ल। श्वेतविड्‌, सफेद नौसादर।

कम्पिल्लक (सं॰ पु॰) कम्पिल्ल स्वार्थे कन्। श्वेत विड्‌, सफेद नौसादर।

कम्पिल्लमालक (सं॰ पु॰) वृक्षभेद किसी किस्मकी मौलसिरी।

कम्पिल्य, कम्पिल देखो।

कम्पी (सं॰ त्रि॰) कम्पो अस्त्यस्य कम्प इनि। १ कम्पयुक्त कांपनेवाला। २ कंपानेवाला जो कंपाता हो। "[illegible]
[illegible]।" (शिशु ११)

कम्प्र (सं॰ त्रि॰) कपि चिप् कम्पि रन्। १ चञ्चल लोल, चलायमान जो हिलाया डुलाया जा सकता हो। २ ककारके साथ उच्चारित होनेवाला, जो मात्राकी बिना हिला कर बोला जाता हो।

कम्र (सं॰ त्रि॰) कम्पि र। [illegible] ३।२।१६७। कम्पान्वित कांपनेवाला।
"[illegible]।" (नैषध १।११)

कम्बा (सं॰ स्त्री॰) कम्ब स्त्रियां टाप्। याचना, मांग।

कम्बन—दाक्षिणात्यके प्रसिद्ध तामिल कवि। मन्द्राज प्रान्तीय तिरुवलूर जिलेके तिरुवेण्णैनल्लूर नामक ग्राममें इन्होंने जन्म लिया था। यह महान् गुरुभक्त रहे। इन्होंने बारह वर्षके वयससे वाल्मीकि रामायणका तामिल भाषामें अनुवाद आरम्भ किया और पचास वर्षके वयःक्रममें पूरे उतार दिया। वासाविप नरसिंहाय नाम कविताके गुरुसे मुग्ध हो इनको आश्रय करते थे। फिर राजेन्द्र-चोलने इन्हें अपनी

सभामें बोला राजकविका उपाधि दिया। यह ८०७ शकको विद्यमान रहे। इनका बनाया तामिल रामायण 'कम्बनपादन', 'काञ्चिवरम् विस्तामन्', 'चोल-कुर्वङ्ग' (करिकाल चोलका इतिहास) और 'कम्बन अगराधि' नामक तामिल अभिधान दाक्षिणात्यमें प्रसिद्ध है। इन्होंने मदुरा नगरमें ६० वर्षके वयःक्रम-काल इहलोक छोड़ा था। (Wilson's Mackienzie Collection.)

कोई कोई इनका नाम कम्बर और जन्मस्थान तञ्जोर जिलेका कम्ब नाडू नामक ग्राम बताता है। इन्होंने रामायणका अपना तामिल अनुवाद राजेन्द्र चोलके समयमें आरम्भ कर कुलोत्तुङ्ग चोलके राज्य-काल पूरे उतारा था। (Caldwell's Dravidian Grammar, p. 134.)

कम्बम्—मन्द्राजप्रान्तके कर्णाल जिलेका एक नगर।

कम्बर (सं० पु०) कम्ब-अरन्। विविधवर्ण, चित्र-वर्ण, गूनागून् रंग। (त्रि०) २ नानाविध वर्ण-विशिष्ट, रंग-ब-रंग।

कम्बर—सिन्धुप्रदेशकी एक तहसील। यह अक्षा० २७° २८´ एवं २७° ५८´ ३०´´ उ० और देशा० ६७° ३५´ ४५´´ तथा ६८° १०´ पू०के मध्य अवस्थित है। भूमिका परिमाण ८७७ वर्गमील पड़ता है। यहां प्रायः एक लक्ष मनुष्य रहते हैं। इसका अपर नाम शहादतपुर है। शिकारपुर जिलेसे यहां तहसील उठ आयी है। इसके प्रधान नगरका नाम भी कम्बर ही है। वह अक्षा० ७३° ३५´ उ० और देशा० ६८° २´ ४५´´ पू०पर अवस्थित है। १८४४ ई०को बलूचियोंने उक्त नगर लूटा था। फिर दूसरे ही वर्ष अग्निप्रयोगसे कम्बर एककाल ध्वंस हो गया।

कम्बल (सं० पु०-क्ली०) कम्ब वृषादित्वत् कलच्। १ मेषादिके लोमसे निर्मित एक वस्त्र, भेड़ वग़ैरहके बालसे बना एक कपड़ा। इसका संस्कृत पर्याय—रल्लक, वेशक, रोमयोनि, रेणुका और प्रावार है। इस देशमें कितने ही कम्बल व्यवहार करते हैं। पूर्व कम्बल कवचका कार्य देता था। किसी किसीके कथनानुसार कम्बलको रुयी भरा पहननेसे बन्दूककी गोली तक शरीरमें घुस नहीं सकती। २ सर्पविशेष, कोई सांप। ३ गो प्रभृतिके गलका रोम, मवेशियोंकी गर्दनका बाल। ४ उत्तरीय, ऊनी चादर। ५ मृग-विशेष, एक हिरन। ६ नागद्वय, सांपका जोड़ा। इसमें एक पाताल और एक वरुण देवके सभास्थलमें रहता है। ७ कृमिविशेष, एक कीड़ा। ८ तीर्थविशेष।

"प्रयागं सुप्रतिष्ठानं कम्बलाश्वतरौ तथा।
तीर्थं भोगवती चैव वेदिरेषा प्रजापतेः॥" (भारत, वन ८५ अ०)

९ जल,पानी। १० लोणिकाशाक, लोनिया। ११ सास्ना।

कम्बलक (सं० पु०) कम्बल स्वार्थे कन्। कम्बल, ऊनी कपड़ा, ऊनी पोशाक।

कम्बलकारक (सं० पु०) कम्बलं करोति, कम्बल-कृ-ण्वुल्। कम्बलनिर्माता, ऊनी कपड़ा-बनानेवाला।

कम्बलधारक (सं० पु०) कम्बल-धृ-ण्वुल्। कम्बल-धारी, ऊनी कपड़ा ओढ़नेवाला।

कम्बलधावक (सं० पु०) कम्बल परिष्कार करनेवाला, जो ऊनी कपड़ा धोता हो।

कम्बलबर्हिष (सं० पु०) १ अन्धकराजके एक पुत्र। (भागवत ९।२४।११)

कम्बलवान् (सं० त्रि०) कम्बलो ऽस्यास्ति, कम्बल-मतुप् मस्य वः। १ कम्बलविशिष्ट, ऊनी कपड़ा रखनेवाला। २ प्रशस्त गलकम्बलविशिष्ट, गर्दनपर खूब बाल रखनेवाला।

कम्बलवाह्य (सं० पु०) रथविशेष, एक गाड़ी। इस पर मोटा कम्बल ढका रहता है। इस गाड़ीमें बैल ही जुतते हैं।

कम्बलवाह्यक, कम्बलवाह्य देखो।

कम्बलहार (सं० पु०) कम्बलं हरति, कम्बल-हृ-अण्। १ कम्बलहारक, ऊनी कपड़ा चोरानेवाला। २ ऋषिविशेष।

कम्बलार्ण (सं० क्ली०) कम्बलरूपं ऋणम्, कम्बल-ऋण वृद्धिः। प्रवत्सतरकम्बलवसनार्णदशानामृणे। पा ६।१।८९। (वार्तिक) कम्बलरूप ऋण, ऊनी कपड़ेका क़र्ज़।

कम्बलिका (सं० स्त्री०) कम्बल-ई-स्वार्थे कन् ह्रस्वः टाप् च। १ क्षुद्र कम्बल, कमली। २ कम्बल-मृगकी स्त्री।

कम्बलिवाह्यक (सं० क्ली०) कम्बलैः वाह्यं वहनीयम्, कम्बल इनि, कम्बलिभिः वैवाह्यते, कम्बलिन्-वह कर्मणि यत् स्वार्थे क प्रत्ययो वा कन्। गोगाड़ी, बैलगाड़ी। इसका संस्कृत पर्याय—कम्बी और गान्त्री है।

कम्बली (सं० पु०) कम्बलः गलकम्बलः अस्यास्ति इत्यर्थे, कम्बल इनि। १ वृष बैल। (त्रि०) २ कम्बलाच्छादित, कम्बल ओढ़े हुआ।

कम्बलीय (सं० त्रि०) कम्बलाय हितम्, कम्बल छ। मेषलोमयुक्त, कम्बल बनाने लायक।

कम्बार (सं० क्ली०) कम्बल यत्। कम्बल च तत्। अर्धप्रस्थपरिमित कम्बल तौलना।

कम्बलायी (सं० पु०) मत्स्यविशेष, किसी किस्मकी मछली।

कम्बि (सं० स्त्री०) कम्बु बाहुलकात् इन्। १ दर्वी, करछी, चम्मच। २ वंशदल, बांसकी खपाच। ३ वंशाङ्कुर, बांसकी कोपल।

कम्बिका (सं० स्त्री०) वाद्यविशेष, एक बाजा।

कम्बु (सं० पु०) कम उन् बुगागमः। १ शङ्ख घोंघा, कौड़ी। २ वलय, हाथकी चूड़ी। ३ शम्बूक, घोंघा। ४ हस्ती, हाथी। ५ चित्रवर्ण, कई तरहका रंग। ६ ग्रीवादेश, गर्दन। ७ नलक नली, हड्डी। ८ गाज-मेद एक साप।

कम्बुक (सं० पु०) कम्बु स्वार्थे कन्। १ शङ्ख, शङ्ख। २ नीचपुरुष, कमीना आदमी।

कम्बुकण्ठी (सं० स्त्री०) कम्बुरिव कण्ठो यस्याः, बहु ङीप्। शङ्खकी भांति कण्ठमें तीन चिह्न रखने वाली स्त्री, जिस औरतके गलेमें शङ्खकी तरह तीन दाग रहें।

कम्बुकुसुमा (सं० स्त्री०) शङ्खपुष्पी, सफेदी।

कम्बुका (सं० स्त्री०) प्रसारण्यादिक एक पौधा। पेड़। अश्वगन्धा देखो।

कम्बुकाष्ठा (सं० स्त्री०) कम्बु चित्रवर्ण काष्ठं यस्याः, बहुव्री०। अश्वगन्धाका पेड़।

कम्बुग्रीव (सं० त्रि०) कम्बुरिव रेखात्रययुक्ता ग्रीवा यस्य। शङ्खकी भांति रेखात्रयविशिष्ट गलदेशयुक्त, जिसके गलेमें शङ्खकी तरह तीन धारी रहें। "कम्बुग्रीवो महाहनुः।" (रामा० १।१।१०)

कम्बुग्रीवा (सं० स्त्री०) कम्बुरिव रेखात्रययुक्ता ग्रीवा, उपमि०। शङ्खकी भांति रेखात्रययुक्त ग्रीवा, शङ्खकी तरह तीन धार रखनेवाली गर्दन।

कम्बुपुष्पी (सं० स्त्री०) कम्बुवत् शुभ्रं पुष्पं यस्याः, बहुव्री०। शङ्खपुष्पी, सफेदी।

कम्बुमालिनी (सं० स्त्री०) कम्बुतुल्य पुष्पाणां माला समूहः अस्त्यस्याः। शङ्खपुष्पी, सफेदी।

कम्र (सं० त्रि०) कम्र र निपातनात् साधु। "नमिकम्पिस्म्यजसकमहिंसदीपो रः।" (पा० ३।२।१६७) १ कमनीय, खूबसूरत, शोभायमान। (पु०) २ तस्कर, चोर। ३ वलय, चूड़ी। (स्त्री०) ४ मद्य।

कम्रक (सं० पु०) कम्र स्वार्थे कन्। १ कम्र, मद्य। (वै०) २ वल्कल, छालकी छूमी।

कम्र पूत (सं० पु०) मद्य परमोदय।

कम्बी—जातिविशेष, एक कौम। कम्बोज इस जातिके लोग पञ्जाब और मुलतानप्रदेशके निकटवर्ती स्थलमें रहते हैं। पूर्वको कम्बो सिन्धुनद छोड़ काबुलके उत्तर प्रदेशमें वास करते थे। संस्कृत भाषामें इन्होंको 'काम्बोज' और इनके पूर्ववासस्थानको 'कम्बोज' कहते हैं। उस समय यह लोग भारतीय क्षत्रिय रहे। किन्तु मुसलमान शासनकाल इनमें कितनों ही को मुसलमान बना डाला। मुगल इनसे बड़ी घृणा रखते थे। फ़ारसीमें कहते हैं,—

"बीकम कम्बो दोयम अफ़गान सीयम बदजात कश्मीरी।"

कम्बोज (सं० पु०) कम्ब बोज। १ शङ्खविशेष, किसी किस्मका खरमोहरा या घोंघा। २ हस्तिविशेष एक हाथी। ३ देशविशेष, एक मुल्क। यह अफ़गानिस्थानका एक भाग है। इसको अवस्थिति काफ़िरस्तानके निकट मानी जाती है। किन्तु शक्तिसङ्गम तन्त्रमें लिखा है,—

"पाञ्चालदेशमारभ्य म्लेच्छात् दक्षिणपूर्वतः।
काम्बोजदेशो देवेशि वाजिराजिपरायणः॥"

पञ्चालसे तथा म्लेच्छ देशके दक्षिणपूर्व पर्यन्त कम्बोज लिया जाता है। वहां बिढ़या घोड़ा उत्पन्न होते हैं।

किन्तु कोई कोई खम्भातको काम्बोज कहता है। रघुवंश देखते—महाराज रघुने पारसीकों, सिन्धुनदतीरवासियों और हूणोंको हरा काम्बोजदेशीय राजावोंको जीता था। काम्बोजोंने उनके निकट अवनत हो उत्कृष्ट अश्व और राशीकृत सुवर्ण उपढौकन-स्वरूप प्रदान किया। फिर रघु अश्वके साहाय्यसे गौरीगुरु पर्वतपर चढ गये।* (रघुवंश ४थ सर्ग)

रघुवंशकी उक्त वर्णनासे समझ पड़ा—काम्बोज देश सिन्धुनदके उत्तर और गौरीगुरु† पर्वतके निकट रहा। मार्कण्डेयपुराणमें गौरग्रीव और महाभारतमें सुवास्तु नदीके साथ गौरीनदीका उल्लेख मिलता है। यह सुवास्तु और गौरीनदी वर्तमान पञ्जाबके उत्तरस्थ स्वात प्रदेशके उत्तर अवस्थित है।

सुतरां रघुवंशका मत मानते वर्तमान सिन्धु और लन्दई नदीके उत्तरांशमें पूर्वकाल काम्बोज नामक जनपद रहा। पहले काम्बोजवासी संस्कृत भाषा बोलते थे। (निरुक्त २।२) कम्बो देखो।

(त्रि०) ४ कम्बोजदेशवासी, खम्भातका रहनेवाला। कम्बोज (कम्बोडिया)—जनपदविशेष, एक मुल्क। यह अक्षा० ८° ४७´ से १५° उ० पर्यन्त विस्तृत है। इसके उत्तर लेयस देश, पूर्व कोचिन-चीन, दक्षिण श्यामोपसागर एवं चीनसागर और पश्चिम श्यामदेश पड़ता है।

पहले स्वाधीन रहते समय कम्बोज राज्य बहुदूर पर्यन्त विस्तृत रहा। धर्मप्राण भारतीय राजा इस दूरदेश पर राजत्व करते थे। उनका कीर्तिकलाप, धर्मानुराग, देवद्विजभक्तिभाव और असाधारण शौर्य-वीर्यका गौरव बहुशतवर्ष गत होते भी आज कम्बोजके नगर, कानन, पर्वतगह्वर, शिलाफलक तथा प्रकाण्ड प्रकाण्ड देवमन्दिरादिके भग्नावशेषपर देदीप्यमान है। इस देशके प्राचीन भारतीय राजावोंका इतिहास इतने दिन खनिगर्भमें मणिकी भांति छिपा था। किन्तु अन्तको फरासीसी पण्डितोंने अपनी गभीर गवेषणाके प्रभावसे उसे साधारणके समक्ष खोल दिया। भारतीयोंके लिये यह न्यून गौरवका विषय नहीं। दीन दरिद्र धर्मभीरु भारतीय अपने प्राचीन राजावों द्वारा सुदूरवर्ती कम्बोज राज्यमें स्थापित अतुलनीय कीर्तिको अब समझ सकते हैं। जिसे हम भारतवर्षमें भी ढूंढ नहीं पाते, उसीके अनेक उदाहरण इस सामान्य देशमें देखाते हैं।

पुरातत्त्व—वर्तमान कम्बोजके बकु, बकाङ्ग, कोहि, प्रे, बमनम, फनम, चिसोर पर्वत, बोस्बङ्ग जिले (आजकल यह श्याम राज्यके अन्तर्गत है), फिमनक, केदिचर और अङ्कचमनिक नामक स्थानसे प्राचीन कर्णाटी अक्षरके अनेक संस्कृत शिलालेख मिले हैं। उक्त शिलालेख पढ़नेसे समझ पड़ा—पूर्वकालको कम्बोज राज्य पश्चिम श्यामदेशसे पूर्व अनामके दक्षिणांश पर्यन्त विस्तृत रहा। इसके प्राचीन अधिवासी 'कम्बूज' वा 'काम्बोज' कहाते थे। उक्त काम्बोज वर्तमान कम्बोज राज्यके आदिम अधिवासी न रहे। प्रवाद है—

"तक्षशिलासे अनतिदूर रोमविषयपर एक धर्मनिष्ठ विचक्षण नृपति राजत्व करते थे। उनके पुत्र युवराज 'फ्रबङ्ग' किसी गर्हित कामके लिये राज्यसे निर्वासित हुये। उन्हीं राजकुमारने नाना स्थान घूमफिर इस कम्बोज राज्यमें आ उपनिवेश स्थापन कर दिया।"

* "विनीताध्वश्रमास्तस्य सिन्धुतीर विचेष्टनैः।
तत्र हूणावरोधानां भर्तृषु व्यक्तविक्रमम्।
काम्बोजाः समरे सोढुं तस्य वीर्यमनीश्वराः।
गजालानपरिक्लिष्टैरक्षोटैः सार्धमानताः।
तेषां सदश्वभूयिष्ठास्तुङ्गा द्रविणराशयः।
उपदा विविशुः शश्वन्नोत्सेकाः कोशलेश्वरम्।
ततो गौरीगुरुं शैलमारुरोहाश्वसाधनः।" (रघु ४र्थ सर्ग)

† मल्लिनाथने 'गौरीगुरु'का अर्थ हिमालय लगाया है। किन्तु इस श्लोकपर गौरीगुरु एक स्वतन्त्र पर्वत समझ पड़ता है। पाश्चात्य प्राचीन भौगोलिक टलेमिने 'गौरिया' (Goryaia) नामक एक जनपदका उल्लेख किया है। (Ptolemy, BK VII ch I.) इसी जनपदके मध्य गौरीनदी प्रवाहित है। यह नदी वर्तमान काबुल नदीमें आ गिरी है। फिर इसे महभूरिता और महाभारतने भी गौरीनदी ही लिखा है। इसकी चारो ओर पर्वतमाला खड़ी है। कालिदासने इसी पर्वतमालाको गौरीगुरु कहा है। विशेषतः इस पर्वतसे ही गौरीनदी निकली है। इस पार्वतीय प्रदेशको ही टलेमिने 'गौरिया' बताया है।

उक्त प्रकार प्रकृत होनेसे मानना पड़ेगा—कि राजकुमार पञ्जाब और काबुलके उत्तरस्थ कम्बोज नामक प्राचीन जनपदसे इस देशमें आये थे। वास्तविक कम्बोजके वर्तमान काम्बोजोंके साथ काश्मीरियों और कम्बोजोंका बहुत कुछ सौसादृश्य लक्षित होता है। फिर यहांके प्राचीन देवमन्दिरादिके निर्माणकी प्रणाली भी काश्मीरके मन्दिरोंसे मिलती है। सुतरां स्वीकार करना पड़ा—इस कम्बोज राज्यका नाम भारतीय प्रसिद्ध सिन्धु नदके उत्तर अवस्थित 'कम्बोज'से हुआ है।

समझ न पाये—किस समय इस देशमें वह राजकुमार आये थे। किसी किसीके अनुमानसे काश्मीर राज तुङ्गिनके राजत्वकाल (१९८ ई०) भारतके पश्चिम प्रदेशमें नानारूप उपद्रव पड़े। सम्भवतः उसी समय इस देशमें भारतीय उपनिवेश स्थापित हुआ होगा। किन्तु निश्चय कह नहीं सकते—यह विषय कल्पनात्मक है।

स्थानीय शिलालिपिमें 'किरात' जातिका नाम मिलता है। सम्भवतः वही इस देशके आदिम अधिवासी हैं। विष्णु, कूर्म, वामन, गरुड़, ब्रह्माण्ड प्रभृति पुराणोंके अनुसार भी भारतवर्षके पूर्वसीमान्तवासी किरात कहाते हैं।

कम्बोज और आनाम (चम्पा) देश ब्रह्माण्डपुराणोक्त अङ्गद्वीप ही समझ पड़ता है। उक्त द्वीपके विवरणमें लिखा है,—

"अङ्गद्वीपे गिरिवर नानाकुञ्जरकाननम्।
[illegible]
[illegible]
[illegible]
स च चन्द्रगिरिर्नाम [illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]"

(ब्रह्माण्ड [illegible])

युरोपीय ऐतिहासिकोंने कहा—७१६ ई०को चौम्पति (सिंह) चोयाङ्गगोने दक्षिणमें 'चम्पा' नामक एक सामरिक शिबिर संस्थापन किया था। उसीके अनुसार समस्त देशका नाम चम्पा वा आनाम हुआ। किन्तु हमारे विवेचनामें 'चम्पा' 'चम्पा' शब्दका अपभ्रंश है। भारतवर्षमें जैसे अङ्ग-राज्यकी राजधानी चम्पा कहाती, वैसे ही चम्पा देशकी राजधानी भी चम्पा नामसे पुकारी जाती है। इसलिये पूर्वकाल (शिलालिपिके अनुसार) उक्त चम्पा देशको चम्पा राज्य भी कह देते थे। वर्तमान कम्बोजके जिस स्थानसे सर्वप्राचीन संस्कृत शिलालेख मिलता, उसका नाम 'अङ्ग-चमनिक' हुआ है। यह नाम भी 'अङ्ग-चम्पिक' वा 'अङ्गचम्पा' शब्दका अपभ्रंश समझ पड़ता है। इन सभी प्रमाणोंसे उक्त स्थानको एक स्वतन्त्र अङ्गदेश वा अङ्गद्वीप मान सकते हैं। कम्बोज और चम्पाका मध्यवर्ती पर्वत ही सम्भवतः ब्रह्माण्डपुराणोक्त चन्द्रगिरि है। चम्पा शब्दमें चम्पा विवरण देखो।

इतिहास—कम्बोजके भारतीय राजाओंका इतिहास अन्धकाराच्छन्न है। आज भी समस्त शिलालेख अथवा स्थानीय प्राचीन पुस्तकादि आविष्कृत नहीं हुये, जिनके द्वारा और अन्धकारमें ऐतिहासिक तत्त्व निकाला जा सके।

अद्यापि कम्बोजसे मिलनेवाले सर्वप्राचीन शिलालेखका समय ५२६ शक है। किन्तु उसमें किसी राजाका नाम नहीं। शिलालेखोंसे जिन राजाओंके नाम निकले, उनमें 'भववर्मा' नृपति ही सर्वप्रथम ठहरे हैं। भववर्माके पीछे शिलालेखोंमें निम्नलिखित राजाओंके नाम मिलते हैं,—

राजाका नाम	समय
भववर्मा	५३८ शक
महेन्द्रवर्मा, ईशानवर्मा	
जयवर्मा	५८६ ५९८ „
भववर्मा	५९८ „
पृथिवीवर्मा	
इन्द्रवर्मा (पृथिवीवर्माके पुत्र)	७९९ शक
यशोवर्मा (इन्द्रवर्माके पुत्र)	८११ „
हर्षवर्मा (यशोवर्माके ज्येष्ठपुत्र)	
ईशानवर्मा २य, (यशोवर्माके २य पुत्र)	८२१ „

राजाका नाम		समय
जयवर्मा (इन्द्रवर्माके २य पुत्र)		८५० शक
हर्षवर्मा २य, (जयवर्माके कनिष्ठ भ्राता)		८६४ ,,
राजेन्द्रवर्मा (हर्षवर्माके ज्येष्ठभ्राता)		८६६ ,,
जयवर्मा (राजेन्द्रवर्माके पुत्र)		८९० ,,
उदयादित्यवर्मा १म	...	९२७ ,,
जयवीरवर्मा	...	९२४ ,,
सूर्यवर्मा	...	९२९-९५० ,,
उदयादित्यवर्मा २य,	...	९५१ ,,
हर्षवर्मा ३य, (उदयके कनिष्ठभ्राता)		
उदयाकर वर्मा	...	९८८ ,,
जयवर्मा	...	
धरणीधर वर्मा	...	१०३१ ,,
सूर्यवर्मा	...	१०३४ ,,
जयवर्मा (परम वैष्णव)	...	११०८ ,,

उपरोक्त राजावोंमें पृथिवीचन्द्रके पुत्र हर्षवर्माने वक्षु नामक स्थानपर ८०० शकको पृथिवीचन्द्रेश्वर नामसे एक वृहत् शिवमन्दिर प्रतिष्ठा किया था। इनके मरने पर पुत्र यशोवर्मा भी शिवमन्दिर प्रतिष्ठा कर पिताके अनुवर्ती बने। यशोवर्माके भ्राता जयवर्माके समयसे यहां बौद्धधर्म घुसा था। उससे पहले कम्बोजमें कहीं बौद्ध न रहे। किन्तु प्रचारित होते भी उस समय किसी भारतीय राजाने बौद्धधर्म ग्रहण न किया। जयवर्मा परम वैष्णव रहे। सम्भवत: ११०० शकको उन्होंने स्थानीय अङ्गोरवटका देवमन्दिर प्रतिष्ठा किया। उक्त जयवर्माके पीछे शिलालेखमें किसी दूसरे भारतीय राजाका नाम आजतक नहीं मिला। किन्तु अनुसन्धान हो रहा है। कौन कह सकता—कहांतक फल मिलेगा।

चीनका इतिहास पढ़नेसे समझ पड़ा—ई०के ६४ शताब्द कम्बोजराजने चीनराजके निकट अपना दूत भेजा था।

सम्भवत: ई०के द्वादश शताब्दसे इस राज्यमें बौद्धधर्म बढ़ने लगा। कारण उसी समयसे फिर भारतीय राजावोंका नाम सुननेमें न आया। किन्तु कम्बोजके बौद्धोंका इतिहास भी गाढ़ तिमिराच्छन्न है। मालूम पड़ता—श्यामदेशीय बौद्ध राजावोंके प्रबल होनेसे कम्बोज उनके अधीन हुवा।

ई०के सप्तदश शताब्द फरासीसी वाणिज्यके अभिप्रायसे कम्बोजमें घुसे थे। १७८७ ई०को आनामके राजा गियालङ्गने फरासीसके अधिपति षोडश लुयीसे सन्धि स्थापन की। उसके अनुसार फरासीसी युद्धकाल आनामके राजाको साहाय्य पहुंचाते थे। उन्होंके साहाय्यसे गियालङ्गने उस समय टनकिङ्ग और कम्बोज अधिकार किया। १८२१ ई०को आनामके राजा मर गये। फिर १८४१ ई०को उनके पौत्र तियेनफ्री राजा हुये। उन्होंने कयी फरासीसी और स्पेनी खृष्टान धर्मप्रचारकोंको मार डालनेका आदेश दिया था। उससे समस्त फरासीसी और स्पेनी बिगड़ उठे। १८४७ ई०को कपतान रिगल डि·गिनोलो १७८७ ई०का सन्धिपत्र निष्पत्ति करनेको ससैन्य भेजे गये। किन्तु आनामके राजाने फरासीसका आदेश सुना न था। फिर फरासीसी सेनापतिने युद्ध घोषणा की। अनेक वार युद्ध चलते भी आनामके राजा फरासीसियोंसे न दबे। किन्तु आनाममें गड़बड़ देख १८५९ ई०को कम्बोजके ईसाइयोंने मिलजुल विद्रोह लगाया था। नौसेनापति गिनोली उन्हें साहाय्य करनेको सैगन नदीकी राह कम्बोजमें घुस पड़े। फिर फरासीसी जो छोड़ सके थे। उनके पुनः पुनः आक्रमण मारनेपर कम्बोजराज डोल उठे। १८६२ ई०को २६ वीं मयीको आनामराजने सन्धि करनेको कम्बोजकी राजधानी सैगन नगर दूत भेजा था। १५ वीं जूनको सन्धिपत्र स्वाक्षरित हुवा। फरासीसियोंने अपने युद्धका व्ययादि और पूर्व सन्धिपत्रके अनुसार प्राप्य अर्थ ले लिया। पीछे खृष्टान-धर्मप्रचारकोंको अबाध धर्मप्रचार करनेको क्षमता मिली।

उस समय कम्बोज आनाम और श्यामके अधीन करद राज्य-भुक्त रहा। एक राजप्रतिनिधि द्वारा यह शासित होता था। फरासीसी कम्बोजराज्यमें पहुंचे और मिकङ्ग नदी तीरवर्ती प्रदेशकी उर्वरता एवं शस्यशालिता देख विमोहित हुये। उन्होंने उक्त स्थान हस्तगत करना चाहा था। अन्यतम नौसेना-

स्थायी भावसे वाङ्कोयार नगरमें राजप्रतिनिधिके निकट भेजे गये। राजप्रतिनिधिने फरासीसियोंका मनोभाव समझ आनामराजका मतामत लेनेको समय मांगा था। किन्तु फरासीसी दूतने उनकी बात न सुनी। फिर उस समय कम्बोजके राजप्रतिनिधिको फरासीसियोंके विपक्ष क्षोभ प्रकाश करनेकी क्षमता कहां थी। सुतरां बाध्य हो उन्हें सन्धि करना पड़ी। इस सन्धिके अनुसार समग्र पथकी वाणिज्य चलानेकी पूर्ण क्षमता मिली थी। कम्बोजमें फरासीसी मालका जो महसूल देना पड़ता, वह छूट गया और कम्बोजके उत्पन्न द्रव्यादि पर जो कर लगता, वह भी न रहा। फरासीसियोंको कम्बोजके नाना स्थानोंमें अपना एक एक प्रतिनिधि (रसीडण्ट) रखनेका आदेश मिला था। फिर उन्होंने उदङ्ग नामक नगरमें अपनी आवश्यकताके अनुसार मकान्, कारखाना और गुदाम बनानेकी भूमि पायी। उसी सन्धिपत्रमें यह भी ठहर गया था—फरासीसियोंकी अनुमतिके व्यतीत दूसरा कोई वैदेशिक प्रतिनिधि उदङ्ग नगरमें रह न सकेगा।

यद्यपि कम्बोजपति एक सामान्य राजप्रतिनिधि ही रहे, तोहि फरासीसियोंके साहाय्यसे राजाका उपाधि पा गये, किन्तु पूर्वप्रथाके अनुसार श्यामराजको कर देते रहे।

१८६५ ई०को मिकङ्ग और सैङ्गा नदीकी मध्यवर्ती अवाय भूमिके दैगोय दल भी राजविद्रोही बने थे। फिर वह फरासीसियोंपर अत्याचार चलाने और उनके वाणिज्यके द्रव्यादिको लूट मचाने लगे। उसी समय कम्बोजके किसी सामन्तने विद्रोहियोंके मिल कम्बोजराज नरोत्तमके विरुद्ध अस्त्रधारण किया था। उधर फरासीसियोंने भी कम्बोजराजसे मिल विद्रोहि शक्ति दबानेको यथासाध्य चेष्टा लगायी। किन्तु सहजमें किसीने अपना मानी न थी। उस युद्धमें दो तीन फरासीसी सेनापति मर गये।

१८६६ ई०को १६वीं अगस्तको विद्रोही सामन्तने अपने दलबलके साथ प्रबल वेगसे राजधानी पर आक्रमण मारा था। उस समय राजपरिवार पर दारुण विपद् पड़ी। फरासीसियोंको प्रायः दो सौ रक्षकने उदङ्ग नगरमें ठहर शत्रुओंको यथासाध्य रोक रखा थीं। किन्तु १०वीं दिसम्बर आ पहुंची। वह कम्बोजके इतिहासका एक भयङ्कर दिन थी। राजविद्रोही कम्बोजजन भी अपनी जातीयता बचानेको अकुतोभयसे जो होड़ फरासीसी और कम्बोजराजकी सेनासे लड़ने लगे। प्रायः सहस्र काम्बोज जन्मभूमिके नामपर रणमें मारे गये। फिर उस युद्धमें फरासीसी और कम्बोजराजको सेनाके भी अनेक प्रधान प्रधान सैनिक पुरुषोंने प्राणत्याग किया था। अन्तको बहु धन, अनेक कष्ट और विस्तर सैन्यक्षयके पीछे विद्रोहियोंके हाथसे कम्बोजकी राजधानी उदङ्ग नगर रक्षित हुआ।

इस बार कम्बोजपति फरासीसियोंके साहाय्यसे स्वाधीन राजा बने थे। कम्बोजराज नरोत्तमने अपने नामसे राजधानी स्थापन की। फरासीसियोंको भी मिकङ्गनदीके कूलपर उपनिवेश बसानेकी क्षमता मिली।

आजकल कम्बोजका प्रधान नगर पेनम और पिङ्ग बन्दर है।

प्राचीन कीर्ति—प्रथम ही लिख चुके—कम्बोजराज्यमें प्राचीन भारतीय राजाओंने कीर्तिस्तम्भ स्थापन किये थे। बहु वत्सर व्यतीत होते भी उनका चिह्न आजतक बना है। कम्बोजके गहन वन और मानवके अगम्य स्थानमें उस असाधारण कीर्तिका राशि परिलक्षित होता है। अल्पदिन हुए फरासीसी प्रत्नतत्त्वविदोंके यत्नसे बड़े पुराकीर्तिसमूह जगत्के समक्ष खुल गया है। जितना आविष्कृत हो सका, नीचे उसका संक्षिप्त विवरण दिया है—

कम्बोजके नाना स्थानोंमें अनेक पुराकीर्ति आविष्कृत हुयी हैं। यह स्थानभेदसे तीन भागमें विभक्त हैं। १म अङ्कोरवट, २य बङ्ग एव कोलि और तृतीय कम्बोजका दक्षिण तथा मध्यम अंश है।

अङ्कोरवट—श्यामवासियोंके निकट 'नगरवट' अर्थात् नगर मन्दिर नामसे परिचित है। यह महामन्दिर अङ्कोर नगरसे प्रायः दो कोस दक्षिण पड़ता है।

इसका ऐसा वृहत् मन्दिर अति अल्प ही देख पड़ता है। मन्दिरका आयतन कोयी आध कोस होगा। इसका परिवेष्टक प्राचीर १०८०×११०० फीट पड़ता, जो चारो ओर २०० फीट विस्तृत खात द्वारा घिरता है। खातके ऊपर मन्दिर जानेके लिये सुदृढ़ सुरम्य स्तम्भ परिशोभित सेतु बंधा है। सेतुके आगे गोपुर है। उसके मध्यसे मन्दिरके बहिर्प्राङ्गणको जाना पड़ता है।

नैऋतकोणसे मन्दिरमें घुसनेपर वाम दिक् अपूर्व दृश्य नयनगोचर होता है। यहां भीष्मकी शरशय्या बनी है। मध्यस्थलमें कुरुपितामह भीष्म शरशय्यापर शायित हैं। उनकी दोनों ओर मुकुट एवं किरीट शोभित कुरु तथा पाण्डवपक्षीय वीर खड़े और गज एवं रथपर तेजःपुञ्ज महारथी चढ़े हैं। पितामह भीष्मसे अनतिदूर गजके ऊपर राजा दुर्योधन म्लान-वदन अपेक्षा कर रहे हैं। शत शत वर्ष गत होते भी इन मूर्तियोंमें कोयी वैलक्षण्य नहीं पड़ा। यह प्रस्तर-खोदित सकल मूर्ति दूरसे देखनेपर जीवन्त बोध होती हैं।

मन्दिरके मध्य पश्चिमोत्तर रामायणका दृश्य है। राक्षस और वानर घोरतर युद्ध कर रहे हैं। विकट मूर्तिधारी राक्षसवीर रथपर बैठ बाण बरसाते हैं। मध्यस्थलमें राम हनूमान् पर चढ़ रावणके प्रति बाण निक्षेप करते हैं। उनके दोनों पार्श्व लक्ष्मण और विभीषण दण्डायमान हैं। सिंहयोजित रथपर रावण रामके शरपीड़नसे जर्जरित हो बैठा है।

उत्तर-पश्चिम भागमें देवासुरके समरका दृश्य है। विविध मूर्तिधारी मुकुटशोभित देव अश्वयोजित रथपर चढ़ बाण फेंकते हैं। विकट मूर्तिधारी असुर भी जो तोड़ लड़ रहे हैं। यहां की मूर्तियोंमें सूर्य और चन्द्रदेवकी ज्योतिर्मय मूर्ति अति सुन्दर है। देव स्व स्व वाहनपर आरूढ़ हैं।

उत्तरपूर्व स्थ—यहां भी देवासुरका युद्ध है। चतुरानन, पञ्चानन, षडानन और गरुड़ोपरि शङ्ख-चक्र-गदा-पद्मधारी विष्णु असुरदलन करते हैं। बहु मुख एवं बहु हस्तविशिष्ट देव अश्व, गज, सिंह या गेंडेपर चढ़ धनुर्बाण लिये युद्धमें व्यापृत हैं। युद्धस्थलसे दूर जटाजूटविलम्बित महादेवकी मूर्ति है। निम्नमें योगी पुष्पकरसे उनकी अर्चना कर रहे हैं।

उत्तरभागमें ईषत् पूर्व दूसरा मञ्च है। यहांका शिल्पनैपुण्य और स्थापत्य कार्यादि अभीतक शेष नहीं हुवा। सकल ही मानो असम्पूर्ण पड़ा है। यहां भी पौराणिक दृश्य है। विष्णु गरुड़ोपरि आरोहण कर किसी गजारोही असुरको मार रहे हैं। दूसरी भी अनेक देवासुरमूर्ति असम्पूर्ण अवस्थामें पड़ी हैं।

पूर्वदक्षिण भागमें समुद्रके मन्थनका दृश्य है। क्या शिल्पकार्य, क्या चित्रकाय, क्या स्थापत्यविद्या—सर्व विषयमें इस मञ्चने पराकाष्ठा पायी है। बोध होता—समुद्रके मन्थनका ऐसा जीवन्त दृश्य दूसरे स्थानपर कहीं नहीं। मध्यस्थलमें कूर्मके ऊपर मन्दराचल स्थापित है। उसके ऊपर विष्णु बैठे हैं। मन्दर वासुकी द्वारा वेष्टित है। नागराजके मुखकी ओर प्रायः एक शत विकटाकार दैत्य और पुच्छभागमें एक शत देवमूर्ति हैं। दैत्य खर्व, बलिष्ठ, शिरस्त्राण एवं कवचावृत, कर्णोंमें कुण्डल पहने और लम्बी दाढ़ी रखे हैं। देवोंके मस्तकपर मुकुट, कण्ठमें हार, हस्तमें वलय, दो-दो अङ्गद और यज्ञसूत्र शोभित है। यह दोनों भी मूर्ति एक भावसे खड़ी हैं।

जहां समुद्र मथा जाता, उसके उपरिभागका दृश्य अति चमत्कार देखाता है। मानो शत शत स्वर्ग-विद्याधरी और अप्सरा आकाशके पथमें नृत्य करती हैं। फिर अधोभागमें सागरका दृश्य है। नाना प्रकार सामुद्रिक जीवजन्तु मत्स्यादि इस कल्पित समुद्रमें खेलते फिरते हैं। स्वच्छ सलिलमें कैसे धीरे धीरे स्रोत चल रहा है!

दक्षिणपूर्व भागमें दूसरा मञ्च है। यहां यमालयका दृश्य विद्यमान है। पापका निग्रह और पुण्यका पुरस्कार देख पड़ता है। स्वर्ग एवं नरक और सुख तथा दुःखका दृश्य प्रदर्शित हुवा है। नरक यन्त्रणाकी ३६ मूर्तियां खोदी गयी हैं। प्रत्येक मूर्तिके नीचे खोदित लिपिमें लिखते—इस प्रकार पाप कमानेपर मनुष्य ऐसे ही नरकभोग करते हैं।

उक्त मञ्चको छोड़ थोड़ी दूर पश्चिम जमीनपर दूसरा सुरम्य मञ्च मिलता है। यहां कम्बोजके राजाओं और उनके परिवारवालोंकी मूर्ति खुदी है। इस कारुकार्यका पारिपाट्य देख चमत्कृत होना पड़ता है। ऐसा महत्त्वका दृश्य कम्बोजमें दूसरे स्थानपर नहीं देख पड़ता है। कहीं योग्योचित अलं-कार आभरणादिसे राजमहिषी विविध अलङ्कारसे विभूषित हो एक रथपर बैठी समारोहके साथ कोंचमें चली जा रही है। ऊपर चित्रविचित्र छत्रातप दोदुल्यमान है। फिर उन्हींके पश्चात् दिव्यरूपधारिणी मनोमोहिनी राजकन्या नरवाहित रथपर चढ़ मानो किसी स्थानको गमन करती है। उनके साथ सखी पुष्पचन्दनादि उपहार देती है। दास और दासी दोनों निकटवर्ती फलमासे वृक्षसे फल लाकर छोटे छोटे बच्चोंको बांटते हैं। राजकन्याओंके पार्श्वपर सब परिचारिकायें कोयी चामर डोलाती कोई मस्तकपर छाता लगाती और कोयी सुस्वादु फल लिये अपनी स्वामिनी-को देखाती है। उसीसे अदूर निर्जन उपवनका दृश्य है। गिरिमालाके मध्य तरुराजी खड़ी है। तरुके तलपर मृगका चित्र देख रहा है। फिर तरुकी शाखापर नानाविध पक्षी बैठे हैं।

मञ्चके उपरिभागमें अवस्थित राजपुरुष, नर्तक और वाद्यकर दण्डायमान हैं। इनकी वेशभूषा भी राजसभाके लिये उपयोगी है। सम्मुख ही राजसभा है। कुण्डलधारी जटाजूट विलम्बित ब्राह्मण गम्भीर भावसे समासीन हैं। राजा और राजकुमार यथोचित वेशभूषा बना यथायोग्य आसनपर उपविष्ट हैं। अप्सरा। बैठ राजसभाको उज्ज्वल कर रही हैं। उक्त दृश्य देखनेसे जान पड़ता—प्राचीन भारतीय राजसभा किस भावसे लगती थी। परम वैष्णव जयवर्मा अङ्कोरवटको उक्त भावोंकी स्थापन कर गये हैं।

अङ्कोरवट नामक मन्दिरसे दक्षिणपूर्व साढ़े पांच कोस दूर दूसरे भी तीन पवित्र स्थान विद्यमान हैं। उनके नाम बकङ्ग बकु और लोलि हैं।

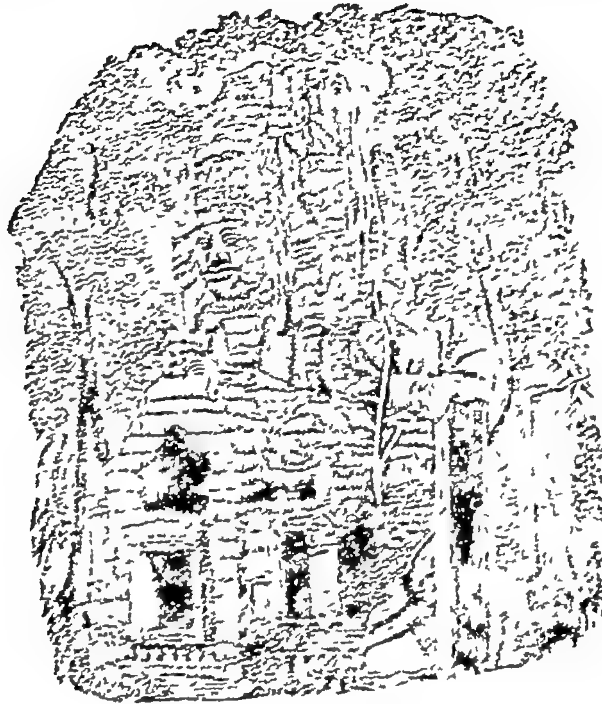
बकङ्गका मन्दिर अति प्राचीन है। वह देखनेमें त्रिभागाकार और सात तलमें विभक्त है। प्रत्येक तलमें निर्गम विद्यमान है। ऊपर ही ऊपर स्थापित हो अन्तको १८ हाथ ऊंचे शिखरने मन्दिररूप धारण किया है। प्रत्येक मण्डपमें सिंहो है। उसमें जो सिंहमूर्ति खोदित रही, वह आजकल प्राय देख नहीं पड़ती। निर्गमके प्रत्येक कोणमें भग्नमूर्ति विद्यमान है। मन्दिरको चारो ओर इष्टकनिर्मित छह छह आठ मन्दिर हैं। स्थानीय लोगोंके कथनानु-सार वर्तमान प्रधान मन्दिरकी शोभा बढ़ी गयी है। आठो मन्दिरके तोरण प्राचीरमें संस्कृत भाषाके ८१० पङ्क्ति लिपि खुदी है। इससे मन्दिरके निर्माताका कुछ परिचय मिलता है। कम्बोजके राजा इन्द्रवर्माने हरगौरीपूजाके लिये उक्त मन्दिर बनवाया था।

बकु नामक स्थानमें पास ही पास छह शिवमन्दिर बने हैं। प्रत्येक प्रवेशद्वारके प्राचीरपर बकङ्गके मन्दिरकी भांति संस्कृत भाषामें लिपि खोदित है। बकङ्गके मन्दिरमें केवल संस्कृत भाषाकी लिपि मिलती, किन्तु बकुके मन्दिरमें संस्कृत एवं कम्बोज प्रचलित अन्य भाषाकी लिपि भी मिली है। शिलालेखके अनुसार परमेश्वर और इन्द्रेश्वर नामपर उक्त शैव मन्दिर उत्सर्ग किये गये हैं। बकुमें तीन मणिमन्दिर हैं। मन्दिरका कारुकार्य अति सुन्दर है।

बकुसे कोई चार कोस उत्तर चलने पर लोलि नामक स्थान मिलता है। यहां इष्टकनिर्मित चार देवमन्दिर हैं। स्थान स्थानपर भग्न स्तम्भ पड़े हैं। उन्हें देखते ही समझ पड़ता—यहां कोई वृहत् देवालय रहा। आजकल मण्डप और भित्तिका सामान्य ही अवशेष मात्र पड़ा है। प्रत्येक मन्दिरमें सामयिक अनुशासनलिपि खोदित है। उसको पढ़नेसे समझ पाते—कम्बोजराज यशोवर्माने ८१५ शकको शिव एवं भवानीके सेवार्थ उक्त मन्दिर बनवाये थे। वह अपने उत्तराधिकारियोंको देवसेवामें विशेष मनोयोग करनेके लिये पुनः पुनः आदेश दे गये हैं।

ऊपर जिनकी संक्षिप्त विवरण दिये, उनको छोड़ दूसरे भी अनेक मन्दिर बने हैं। उनमें बेयोन नगरका ब्रह्ममन्दिर ही सर्वप्रधान है। शिल्पशास्त्रविद्

पण्डितोंके मतमें अङ्गोरवटके मन्दिरसे कम्बोजके ब्रह्म-मन्दिर सर्वप्रकार श्रेष्ठ हैं। क्या शिल्पनैपुण्य, क्या कारुकार्य और क्या स्थापत्यकर्म—सबमें ब्रह्ममन्दिरके निर्माता अपना अपना प्राधान्य देखा गये हैं। विशेषतः समस्त भारतमें जो ढूंढे नहीं मिलता, वही चतुर्मुख ब्रह्माका मन्दिर कम्बोजमें देख पड़ता है।



ब्रह्ममन्दिर।

उक्त ब्रह्ममन्दिर देखनेसे मनमें कयी बातें उठती हैं। हमारे आराध्य वेदके शिरोभाग उपनिषद् ग्रन्थमें सर्वप्रथम ब्रह्माकी उपासना देख पड़ती है। ब्रह्मा भारतीयोंके सर्वप्रथम उपास्य देवता हैं। उपनिषद्में निराकार परब्रह्म और पुराणमें चतुर्मुख ब्रह्मा ही कहे गये हैं। पुराणमें अनेक ब्रह्मतीर्थोंके नाम भी मिलते हैं। किन्तु देखने या सुननेमें नहीं आया—भारतवर्षमें किसने कहां ब्रह्माका मन्दिर बनाया है। फिर इस प्रश्नका उत्तर देना भी कठिन है—कम्बोजके भारतीयोंने कहांसे ब्रह्ममन्दिरका तत्त्व पाया। समझ पड़ता—जब भारतके उत्तरस्थ कम्बोजदेशवासी काम्बोज जन्मभूमि छोड़ इस सुदूर प्रदेशमें आते, तब उसी आदिकम्बोज देशमें ब्रह्मोपासनाके साथ ब्रह्ममन्दिर भी बनाते थे। कयी शत वर्ष गुजरने और विधर्मियोंका पुनः पुनः आक्रमण पड़नेसे उसका चिह्नमात्र विलुप्त हो गया। नहीं समझते—भविष्यत्के गर्भमें क्या निहित है। सम्भवतः हिमालयके दुर्गम तुषारवेष्टित गह्वरसे ब्रह्ममन्दिरका गूढ़ तत्त्व निकला जागा।

किसी किसी पाश्चात्य पण्डितके कथनानुसार पहले मध्य एशियामें ब्रह्ममन्दिर रहा। प्राचीन काम्बोजोंने वहां था उसीके अनुसार ब्रह्मालय बनाया। भगवान् जानें—यह बात कहांतक सत्य है।

कम्बोजके ब्रह्ममन्दिरोंका यही विशेषत्व पाते—प्रत्येक चूड़ापर चतुर्मुख शोभा देखाते हैं। फिर एक बृहत् मन्दिर अङ्गोरवटके समकक्ष हो सकता है। अति क्षुद्रका भी आयतन और गठन सामान्य नहीं। पूर्व पृष्ठमें किसी क्षुद्र ब्रह्ममन्दिरका चित्र खींचा है। किन्तु चित्र उतारकर देखाया जा न सका—मन्दिरका अभ्यन्तर किस प्रणाली और कैसे कौशलसे बना है।

भारतीय शिल्पियोंने भली भांति अपनी अपनी दक्ष-
ताका परिचय दिया है।

बड़े मन्दिरके निकट ही दूसरे भी कयी छोटे छोटे ब्रह्ममन्दिर देख पड़ते हैं।

ईसोल नगरसे पूर्व प्राय कोस दूर अतल ता प्रुम नामक एक प्रकाण्ड मेंदीका उच्च मन्दिर है। उसका संस्कृत नाम ब्रह्मपत्तन ठहरता है। उक्त मन्दिर चतुरस्र है। प्रति दिक प्राय ३०० फीट मिलता है। पूर्वोक्त मन्दिरका वहिरङ्ग जितना मनमोहिकर रहा, आजकल 'उसका आभास भी नहीं' कहनेसे क्या बिगड़ा! सम्प्रति मन्दिरके चारो ओर वन बढ़ गया है। भित्ति तोड़ फोड़ महीरुह मस्तक उठाये खड़े हैं। इधर उधर टूट फूट जानेसे मन्दिर अब कौतुकका नाना स्थान बना है। पूर्वको यहां ब्रह्म रूपका प्रतिष्ठा प्राय प्रत्यक्ष हो जाती। आजकल वहां शिवाभागमें भी भूताण अपना उच्च स्तर सुनाते हैं। भारतीयोंके भारतीयत्व लोप होते होते ऐसी शोचनीय अवस्था आयी है। केवल मन्दिरमें ही नहीं— कम्बोजके क्रोमि नामक पर्वतसे भी अनेक ब्रह्ममूर्ति निकली हैं। स्थानोंमें चित्रविचित्र अनेक देख पड़ने की भांति उक्त पर्वतमें चतुर्मुख ब्रह्ममूर्ति मिलती है।

कम्बोजराज भी ब्रह्मापर आतिशय भक्ति और श्रद्धा रखते थे। स्थानीय प्राचीन लोगोंके कथनानुसार एक राजाने किसी नागराजकी कन्यासे विवाह किया। उसपर नागराजके कुष्ठरोगसे वह व्याधिग्रस्त हो गये। शेषको उन्होंने नागद्वारमें एक ब्रह्ममूर्ति स्थापन की। उससे उनका रोग छूटा था। नागराज नगर छोड़कर भागे। वह ब्रह्ममूर्ति आज भी नागद्वारमें विद्यमान है। एक फरासीसी-परिव्राजक १८८६ ई०को यहां आये थे। उन्होंने देखकर इसको पद्मासन बुद्धदेवकी मूर्ति बताया है। किन्तु उन्हींका भ्रम मानना पड़ेगा। अथवा चीन परिव्राजक लोगोंके रीत्यनुसार जो देख पाये, उसे बौद्धधर्म संक्रान्त ही बताते थे।

कम्बोजके नाना स्थानोंमें बौद्धोंके देखने योग्य द्रव्य भी विद्यमान हैं। कहीं वृहत् पाषाणमें खोदित ध्यानी बुद्ध, कहीं प्रसेक बुद्ध और कहीं बुद्धनिर्वाणका पाषाणचित्र ढूका है। आज भी अनुसन्धान हो रहा है। कम्बोजका पुरातत्त्व जाननेके लिये फरासीसी पण्डित तत्पर हैं। भविष्यत्में नूतन नूतन विषय आविष्कृत होना सम्भव है।

जलवायु—कम्बोजका जलवायु मध्यदेशसे मिलता है। ज्येष्ठसे भाद्रमासतक वर्षाका समय रहता और उत्तर पूर्व वायु बहता है। दक्षिण-पश्चिम वायु बहनेसे भूमि सूखती है। यहां तापमान (उष्णमापक) यन्त्रमें १०१ डिग्रीसे अधिक कभी उत्ताप नहीं होता। फिर अधिक शीत पड़नेसे पारा ६० डिग्री-तक उतर जाता है। देशीय और युरोपीय—दोनोंके लिये यह स्थान अतिमनोरम और स्वास्थ्यकर है। कम्बोजदेश समतल लगता है। नदीके तटकी भूमि अतिशय उर्वरा पाती और अपनी हयकी मात्रा भर जाती है।

उत्पन्न द्रव्य—कम्बोजमें धान, पान, सुपारी, चन्दन काठ और रेशम्दोनोंकी उत्पत्ति अधिक होती है। सीसे, रांगा और हस्तिदन्त भी अधिक मिलता है। ई०के नवम शताब्दी ही अरब कारबारी यहां आते थे। उन्होंने लिखा,—"अगरका सर्वोत्कृष्ट अवलक कम्बोजमें मिलता है। फिर यहां प्रस्तुत जो वह सुविमोपर सर्वत्र भेजा जाता है।"

जीवजन्तु—हाथी, महिष, मृग और गोमेषादि वनमें देख पड़ते हैं।

भाषा—कम्बोजमें ख्मेर और श्यामकी भाषा प्रचलित है। किन्तु आजकल कम्बोज प्रधानतः ख्मेरकी भाषामें बात करते हैं। यही कम्बोजकी आदिमभाषा समझी जाती है।

कम्बोज देखना चाहें तो विस्तृत देखनेको निम्नलिखित ग्रन्थ पढ़ना चाहिये—

Henri Mouhot's Travels in Indo-China, Combodia, and Laos.

Die Volker der Oestlichen Asien von Dr A. Bastian.

J Garnier's Voyage d' Exploration en Indo-China.

A bel Remusat's Nouveaux Melanges Asiatiques—Croizier's.

L, Art Khmer; Legends Indo-Chinoises relatives aux monuments de pierre de' Pancien Combodge Aymonier's.

Notice sur le Combodge, Geographie du Combodge.

Journal Asiatique 1882-83-84, Journal of the Indo-China Society of Paris 1877-78, Journal of the Anthropological Society of Bombay, Vol. I. P. 503-532.

कम्बातायी (सं॰ पु॰) प्रश्नचिह्न, किसी॰ किसमकी चीज।

कम्भ (सं॰ वि॰) कं जलं सुखं वा अस्यास्ति, कम-भ। कंशम्भ्यां बभयुस्तितुतयसः। पा ५।२।१३८। १ जलयुक्त, पानीसे भरा हुवा। २ सुखी, खुश, जिसे आराम रहे।

कम्भारी (सं॰ स्त्री॰) कं जलं बिभर्ति धारयति, कम्-भृ-अण्-ङीप् ङीष् वा। गाम्भारी वृक्ष, गंभारि। गम्भारी देखो।

कम्भु (सं॰ क्लो॰) कं जलं तत्तुल्यं शैत्यं बिभर्ति, कम्-भृ-डु। उशीर, खस।

कम्मल (हिं॰ पु॰) कम्बल देखो।

कम्मा (हिं॰ पु॰) ताडपत्रपर लिखित लेख, जो मज़मून ताड़के पत्तेपर लिखा हो।

कम्र (सं॰ वि॰) कामयति, कम्-र। नमिकम्पिस्म्यजसकम-हिंसदीपो रः। पा ३।२।१६७। १ कामुक, मैथुनेच्छायुक्त, चाहनेवाला। २ कमनीय, मनोहर, खूबसूरत, चाहने लायक।

कम्रा (सं॰ स्त्री॰) कम्र-टाप्। १ कमनीया, मनोरमा, दिलको लोभानेवाली। २ कामुकी, चाहनेवाली। ३ गङ्गा।

"कमनीयकम्रा कथा यदि मुकन्दं गा।" (यादोयन्द ४।१६२)

कय (वै॰ वि॰) किम् पृषोदरादित्वात् वेदे कयादेशः। १ क्या, कौन। (पु॰) को वायु इव याति गच्छति अथवा कं जलमिव याति, क-या-ड। २ वयः, वयःक्रम, उम्र। ३ दैत्यविशेष। इसका दूसरा नाम कामार था। इसने वालखिल्यसे वेदकी एक संहिता पढ़ी। (भागवत)

कयपूती (हिं॰ स्त्री॰) वृक्षविशेष, एक पेड़। यह सततहरित है। इसका उत्पत्तिस्थान सुमात्रा, यवद्वीप प्रभृति पूर्वीय द्वीपपुञ्ज है। कयपूतीके पत्रसे तैल निकालते हैं। उक्त तैल कपूरकी भांति पस्थायी, अति परिष्कार और आस्वादमें तीक्ष्ण होता है। कयपूतीके तैलको अङ्गमें पीड़ा उठनेसे लगाते हैं।

कयस्था (सं॰ स्त्री॰) को वायु इव याति गच्छति, किंवा कं जलमिव याति, क-या-ड-स्था-क-टाप्। घानो इदुपर्ण्हे कः। पा ३।२।३। अजाद्यतष्टाप्। पा ४।१।४। १ काकोली, एक दवा। २ हरीतकी, हड़। ३ सूक्ष्मैला, छोटी इलायची।

कया, काया देखो।

कया (वै॰ अव्य॰) किस रीतिसे, किस तौरपर।

कयादु (वै॰ वि॰) शरीरको व्यय करनेवाला, जो निजको खपाता हो।

कयाधू (सं॰ स्त्री॰) जम्भासुरकी कन्या। यह हिरण्यकशिपुकी स्त्री और प्रह्लादकी माता रही। हिरण्यकशिपुके औरस और कयाधूके गर्भसे संह्लाद, अनुह्लाद, प्रह्लाद तथा ह्लाद—चार पुत्रने जन्म लिया।

क़याम (अ॰ पु॰) १ स्थिति, ठहराव। २ जीवन, ज़िन्दगी। ३ स्थिरता, पोढ़ाई। ४ प्रार्थना करते समय खड़े होनेकी हालत। शान्तिरक्षाको 'क़याम-अमन' और स्थिर रहनेवालेको 'क़याम-पिज़ीर' कहते हैं।

क़यामत (अ॰ स्त्री॰) १ प्रलय, आख़िरी दिन। ईसायी, मुसलमान और यहूदी प्रलयके अन्तिम दिवसको कयामत कहते हैं। इसी दिन यावतीय मृत व्यक्ति मृत्युकी गहरी निद्रासे उठते और ईश्वरके सम्मुख अपने-अपने कर्मका शुभाशुभ फल पानेको पहुंचते हैं। २ विपद्, मुसीबत। ३ सन्ताप, दुःख, रोवापीटी। ४ उत्पात, बखेड़ा, खलबली।

कयारी (हिं॰ स्त्री॰) शुष्कतृण, सूखी घास।

क़यास (अ॰ पु॰) १ विचार, ख़याल, राय। २ अनुमान, अन्दाज़।

क़यासन् (अ॰ क्रि॰-वि) अनुमानतः, अन्दाज़न्, अटकलसे।

कषायी (सं० त्रि०) १ मालव, कषायी। २ काषाय-लिप्त, कसैला, चटपटा। ३ धातुवर्जित, हृषायित, पवसरी। वर्जित विषयको 'अमर कषायी' और कार्मणिक प्रमाणको 'प्रभूत कषायी' कहते हैं।

कयाह (सं० पु०) पहताम्र बहुम वर्ण अश्व जो घोड़ा शके कुंदके जैसे रंगका हो।

कर्म—एक राजा। इन्होंने मोक्षपालासी नामक मठ और कर्मविहार नामक विहार बनवाया था। (राज०)

कर (सं० पु०) कीर्यते विक्षिप्यते अनेन वा करोति वा करके अप्। १ हस्त, हाथ। २ शुण्डा-दण्ड, हाथीकी सूंड। ३ किरण, रश्मि। ४ वर्षा-पत्र, ओला। ५ प्रत्यय। ६ विषय, काम। ७ कर्ता, करनेवाला। ८ एक कारक। यह पूर्वको उपपद लगनेसे लगता और इससे कर्ता आदि समझ पड़ता है, जैसे—सुखकर इत्यादि। ९ शुल्क, महसूल। १० चौबीस अङ्गुलको नाप। ११ बाहुमध्य, एक झाड़। कामरूपमें इसे तपरडू कहते हैं। १२ राजस्व, मालगुजारी, टिकस। यह नृपतिका प्राप्य अंश होता है। इसका संस्कृत पर्याय—भागधेय, बलि, कर और प्रत्याय है।

> "क्रयविक्रयमध्वानं भक्तञ्च सपरिव्ययम्।
> योगक्षेमञ्च संप्रेक्ष्य वणिजो दापयेत् करान्॥
> यथा फलेन युज्येत राजा कर्ता च कर्मणाम्।
> तथावेक्ष्य नृपो राष्ट्रे कल्पयेत् सततं करान्॥" (मनु)

नृपतिको आय विक्रय प्रभृतिका लाभालाभ देख कर संग्रह करना चाहिये। राजा ऐसी विवेचनासे कर लगावें जिससे कर्मकर्ता और वह दोनों फलका भाग पावें।

> "यथाल्पाल्पमदन्त्याद्यं वार्योकोवत्सषट्पदाः।
> तथाल्पाल्पो ग्रहीतव्यो राष्ट्राद्राज्ञाब्दिकः करः॥"

राजाको पशु एवं सुवर्णादिके पचास और भूमि सम्बन्धीय अन्नके तथा ऋतुकर्मोंको विवेचनासे छः आठ वा बारह भागमें एक भाग लेना चाहिये।

> "आददीत च षड्भागं द्रुमांसमधुसर्पिषाम्।
> गन्धौषधिरसानाञ्च पुष्पमूलफलस्य च॥
> पत्रशाकतृणानाञ्च चर्मणां वैदलस्य च।
> मृन्मयानाञ्च भाण्डानां सर्वस्याश्ममयस्य च॥"

द्रुम, मांस, मधु, घृत, गन्धद्रव्य, रस, पुष्प, मूल, फल, पत्र, शाक, तृण, चर्म, पिटक, मृत्पात्र और प्रस्तरपात्र प्रभृतिका षष्ठांश राजाको प्राप्य है।

> "म्रियमाणो ह्याददीत न राजा श्रोत्रियात् करम्।
> न च क्षुधास्य संसीदेच्छ्रोत्रियो विषये वसन्॥" (मनु ७ अ०)

अत्यन्त धनहीन होते भी राजाको श्रोत्रियका धन ग्रहण करना उचित नहीं। किन्तु आवश्यकीय होनेसे श्रोत्रियको राजकर देना पड़ता है।

निम्नलिखित वस्तुएं देख भाल वणिक्से विक्रय द्रव्यका मूल्य निर्धारण करना चाहिये,—

अमुक वस्तु क्रय करनेमें क्या मूल्य लगा है, अमुक वस्तु बेचनेसे कितना लाभ होगा, अमुक वस्तु रक्षा करने अथवा चौरादिसे निरापद रखनेमें वणिक्को क्या व्यय पड़ा है, अब इसे बेचनेसे कितना लाभ मिलेगा। राजा केवल अपने राज्यकी रक्षा करनेमें हुये व्यय वा परिश्रमादिको देख एकदेशदर्शी रूपसे कर निर्धारण नहीं करते। उन्हें उक्त वणिक प्रभृतिका समस्त कार्य पर्यालोचनाकर कर लगाना होता है। जोंक एवं भ्रमरके रक्त पान और तथा मधु भक्षण करनेकी भांति राजाको भी वणिक्का मूलधन उच्छेद न कर कर लेना उचित है। यदि धर्मज्ञान-हारी राजा द्वारा श्रोत्रियको क्षुधासे अवसन्न होना पड़ता, तो उसका राज्य अचिरात् महीमें मिलता है। अतएव राजा शास्त्र एवं ज्ञानानुष्ठानमें महत् हो अथवा वह कार्य करें जिसे लोग धर्मविरुद्ध न कहें और जिससे श्रोत्रिय चौरादिके भयसे निरुद्वेग रह सकें। राजकर्तृक सुरक्षित श्रोत्रिय जो धर्मानुष्ठान करते हैं, वह नृपतिका आयु एवं धन और राष्ट्रका वैभव बढ़ाते हैं। (मनु)

करइत (हिं० पु०) कृमिविशेष, एक कीड़ा। यह प्रायः एक अङ्गुलिपरिमित दीर्घ रहता और मट्टीमें पड़ा करता है।

करई (हिं० स्त्री०) १ पात्रविशेष, एक बरतन। यह पात्र जल रखनेके काम आता है। करईमें माखी

भी लगती है। २ पक्षिविशेष, एक चिड़िया। यह क्षुद्र रहती और गोधूमके कोमल तरु चञ्चुसे काट काट भक्षण करती है।

करंगा (हिं॰ पु॰) धान्यविशेष, किसी क़िस्मका धान। यह सान्द्र और ईषत् कृष्णवर्ण तुषविशिष्ट रहता है। आश्विन मास इसके पाकोन्मुख होनेका समय है।

करंगी (स्त्री॰) करगा देखो।

करंजा (हिं॰ पु॰) १ कंजा। २ वृक्षविशेष, एक पेड़। ३ कोई आतिशबाज़ी। (वि॰) ४ धूसरवर्ण नेत्रविशिष्ट, जो भूरी आंख रखता हो।

करंजुवा (हिं॰ पु॰) १ कंजा। २ करंज, एक पेड़। ३ कोई आतिशबाज़ी। ४ अङ्कुरविशेष, एक कोपल। इसे बमोई भी कहते हैं। यह वंश, इक्षु प्रभृति जातीय वृक्षोंमें फूटता है। करंजुवा जिस वृक्षमें निकलता, उसको नाश करता है। ५ यवरोग-विशेष, जौके पौदेकी एक बीमारी। यह कृषिकी हानि पहुंचाता है। ६ वर्णविशेष, एक रंग। यह खाकी होता है। माजू, कसीस, फिटकिरी और नासपाल मिला इस रंगको बनाते हैं। (वि॰) ७ धूसरवर्ण नेत्रविशिष्ट, भूरी आंख रखनेवाला। ८ धूसर, खाकी।

करंड (हिं॰ पु॰) प्रस्तरविशेष, एक पत्थर। इसे कुरन्द भी कहते हैं। करंड अस्त्रशस्त्र पैनानेके काम आता है।

करंडी (हिं॰ स्त्री॰) अंडी, कच्चे रेशमकी चादर।

करंधी (हिं॰ स्त्री॰) यन्त्रविशेष, एक औज़ार। यह १ हस्त दीर्घ, ६ अङ्गुलि प्रशस्त और ३ अङ्गुलि सान्द्र होती है। चमार इसपर जूता सीते हैं।

करक (सं॰ पु॰-क्ली॰) किरति विक्षिपति जल-मस्मात् करोति जलमत्र वा, कृ वा कृ-वुन्। कृञादिभ्यः संज्ञायां वुन्। उण् ५।३५। १ करङ्क, कमण्डलु, करवा। २ दाड़िम्बवृक्ष, अनारका पेड़। ३ कारक्षवृक्ष, करौंदेका पेड़। ४ पलाशवृक्ष, टेसूका पेड़, ढाक। ५ कर-वीरवृक्ष, कनेर। ६ वकुलवृक्ष, मौलसिरी। ७ कोवि-दार, कचनार। ८ कुसुम्भवृक्ष, कुसुमका पेड़। ९ नारि-केलका अस्थि, नारियलका खोपड़ा। १० गोमयच्छत्र, गोबरपर उगनेवाला छाता। ११ करङ्क, ठठरी। १२ पक्षिविशेष, एक चिड़िया। १३ राजस्व, माल-गुज़ारी, टिकस। १४ दाड़िम्बफल, अनार। १५ करका, ओला, पत्थर।

करक (हिं॰ स्त्री॰) १ पीड़ाविशेष, एक दर्द। जो वेदना रह रहके उठती, उसको संज्ञा 'करक' पड़ती है। २ मूत्ररोगविशेष, पेशाबकी एक बीमारी। इसमें पेशाब साफ नहीं उतरता, और बीच बीच दर्द उठता है। ३ चिह्नविशेष, एक निशान्। यह किसी वस्तुके आघात, संघर्षण वा भारसे शरीरपर पड़ती है।

करकङ्कणन्याय (सं॰ पु॰) न्यायविशेष, एक क़ायदा। कर शब्द कहनेसे जैसे कङ्कणादि अलङ्कारयुक्त कर समझा जाता, वैसेही इससे न्यायसूचक दृष्टान्तका भावार्थ आता है।

करकच (सं॰ पु॰) १ सामुद्रिक लवणविशेष, समुद्रके पानीसे निकाला जानेवाला एक नमक। करकच देखो। २ नख, नाखून। ३ ज्योतिषोक्त संज्ञाविशेष। शनिकी षष्ठी, शुक्रकी सप्तमी, बृहस्पतिकी अष्टमी, बुधकी नवमी, मङ्गलकी दशमी, चन्द्रकी एका-दशी और रविवारकी द्वादशी तिथिको करकच कहते हैं।

"शनिभार्गवजीवज्ञकुजसोमार्कवासरे।
षष्ठादितिथय सप्त क्रमात् करकचाः स्मृताः॥" (ज्योतिस्तत्त्व)

करकच्छपिका (सं॰ स्त्री॰) कच्छपस्तदाकृतिरस्ति अस्या मुद्रायाः, ठन्। कूर्ममुद्रा। मुद्रा देखो। तान्त्रिक अर्चनाकाल मत्स्यकूर्मादि अनेक प्रकार मुद्रा बनाते हैं। उनमें कूर्म अर्थात् कच्छपाकार व्यवहृत होनेवाली मुद्राको ही करकच्छपिका वा कूर्ममुद्रा कहते हैं।

करकञ्ज (सं॰ क्ली॰) करपद्म, हाथका कमल।

करकट (सं॰ पु॰) भरद्वाज पक्षी, एक चिड़िया।

करकट (हिं॰ पु॰) असार, मल, कूड़ा, झाड़न।

करकटिया (हिं॰ स्त्री॰) कर्करेट, एक चिड़िया। यह एक प्रकारका सारस है। इसका उदर एवं अधोभाग कृष्णवर्ण रहता है। मस्तकपर शिखा होती है। फिर कण्ठ भी श्याम ही रहता है। शरीरका

पवमिह पत्र चकर देख पड़ता है। पुष्प-पत्र विकसित-परिमित दोर्घा और पत्र होता है।

करकण्टक (सं० पु०) नखकी कण्टक नख। नख

करकना (हिं० क्रि०) १ अकस्मात् भङ्ग होना, तड़के टूट जाना, चटचटाना, फूटना, फटना। २ पीड़ा होना दर्द उठना। ३ घावमें रह रहकर पीड़ा उठना, कानोंमें मसरा दर्द पड़ना, चमकना, चटकना, छलकना।

करकनाथ (हिं० पु०) कण्ठश्वेत पक्षिविशेष, एक चिड़िया। इसके पक्षि पर्यन्त श्यामवर्ण होते हैं।

करकपालिका (सं० स्त्री०) करक करकमण्डलु रूप पालिका। चर्मपात्रविशेष मशक। यह पानी भरनेके काम आती है।

करकमल (सं० क्ली०) कर कमलमिव, उपमि०। कमलकी भांति सुन्दर हस्त, कमलकी तरह कोमल सुन्दर हाथ।

करकर (हिं० पु०) १ कर्कर, एक नमक। यह समुद्रके जलसे निकलता है। (वि०) २ कठोर, गड़नेवाला।

करकरा (हिं० पु०) २ कर्कट, करकटिया। कलकलिया पक्षी। (वि०) २ कठोर, खुरखुरा, गड़नेवाला।

करकराहट (हिं० स्त्री०) कठोरता, कड़ाई, खुरखुराहट। २ पीड़ा, दर्द।

करकलस (सं० पु०) कर कलस इव उपमि०। जलादि ग्रहणके लिये हस्त करका मिलान, अञ्जलि, पानी लेने एक मिलेको दोनों कायका मिलाव।

करकलित (सं० त्रि०) करेण कलितः हस्त। हाथ द्वारा ग्रहण करने योग्य।

करकमालि (सं० पु०) रमालेषु पीड़ा, व्यथा।

करकम (हिं० वि०) कर्कश, कड़ा।

करका (सं० स्त्री०) करोति पयसि करोति यस्मात् दिवम् किरति क्षिपति वर्षे वा, अच तत्-टाप्, चिपकादित्वात् नित्वम्। १ वर्षोपल, ओला, पत्थर। इसका संस्कृत पर्याय—वर्षोपल, मेघोपल, मेघोद्भव, घनकफ, मेघास्थि, वार्ष, घन, वारिद, वारिज, धाराङ्कुर और वाताङ्कर है। २ करकी, कटोरा।

करकाम्बु (सं० क्ली०) करका मेघमिव पवित्र जल, मधमूदलो०। करकाकी भांति शुभ्रवर्ण वस्तु रखनेवाला।

करकाचतुर्थी (सं० स्त्री०) कार्तिक कृष्णपक्षकी चतुर्थी, करवा चौथ। इस तिथिको भारतीय स्त्रियां व्रत रखती हैं। रात्रिको चन्द्रोदय होनेसे करवाकी टोंटीसे अर्घ प्रदानकर वह खाती पीती हैं। इस पूजामें कच्चे चावलके आटेका चोंगा भिगा रख लगता, जिसे अन्त और पिसो कहता है। प्रथानुसार करकाचतुर्थीको ही करवेकी टोंटीसे नाड़ा निकलता है। वैष्णवों इसी तिथिको दीपमालिकाके करवेका मुहूर्त करते थे।

करकाम्भ (सं० क्लि०) करकाका आवर्त, जल-द। वर्षोपल वर्षा। [illegible] करकाजात, ओलेसे निकला हुवा।

करकाम्बु (सं० क्ली०) करकाका जलम्, ६ तत्। अदिव्य जलभेद, ओलेका पानी। दिव्य वायु पथ विक्षेपसे संयोगमें संहत आकाशसे पाषाणखण्डकी भांति पतित कठोर पदार्थसे निकले जलको करका जल या दिव्यजल कहते हैं। यह जल निर्मल, गुरु स्थिर, पवित्र शीतल, पित्तनाशक और कफ-पित्त-वायुवर्धक है। (सुश्रुत)

करकाम्बु (सं० क्ली०) करकाजल, ओलेका पानी।

करकाम्भ (सं० पु०-क्ली०) करकावत् पयो विद्यते अस्य, बहुव्री०। १ नारिकेलवृक्ष, नारियलका पेड़। २ करकाजल, ओलेका पानी।

करकायु (सं० पु०) शतधन्वके एक पुत्र।

करकासार (सं० पु०) करकाका आसार, ६ तत्। विजलीके आकाशसे पत्थरोंका गिरना।

करकिसलय (सं० क्ली०-पु०) कर किसलयमिव। करपल्लव, पल्लवकी भांति सुन्दर हस्त जो नाम पत्तेकी तरह नरम हो।

करकुड्मल (सं० क्ली०) कर कुड्मलमिव, मुकुलित हस्त, हाथकी कली।

करकुण (सं० स्त्री०) कोरक, कौरा।

करकोष (सं० पु०) करात् निर्मितः कोषः, मध्य-

पद्मौ०। करकमल, अञ्जलि, पानी लेनेको दोनों हाथ मिला अंगुलीका बनाव।

करकोष्ठी (सं० स्त्री०) करस्थिता कोष्ठी। करस्थिता रेखा, हाथकी रेखा।

करखा (हिं० पु०) १ युद्धसङ्गीत, लड़ाईका गाना। २ छन्दोविशेष। करखेमें प्रत्येक पाद ३७ मात्रा रखता और अन्तको यगण पड़ता है। ३ उत्कर्ष, उत्तेजना, लागडांट। ४ कलङ्क, कालिख।

करगता (हिं० पु०) सुवर्ण रौप्य वा सूत्रकी मेखला, सोने चांदी सूत वगैरहकी करधनी।

करगह (हिं० पु०) १ निम्नस्थानविशेष, एक नीची जगह। यह तन्तुवायकी कर्मशालामें होता है। जुलाहे पैर लटका करगहपर बैठते और वस्त्र बुनते हैं। २ यन्त्रविशेष, एक औज़ार। इससे तन्तुवाय वस्त्र प्रस्तुत करते हैं। ३ तन्तुवायकर्मशाला, जुलाहोंका कारखाना।

करगहना (हिं० पु०) प्रस्तर वा काष्ठखण्डविशेष, एक पत्थर या लकड़ी। इसे भरेठा भी कहते हैं। करगहना द्वार निर्माण करते समय चौखटपर जोड़ाई करनेके लिये रखा जाता है।

करगही (हिं० स्त्री०) धान्यविशेष, एक धान। यह अग्रहायण मास कटती और एक प्रकारका मोटा जड़हन धान ठहरती है।

करगी (हिं० स्त्री०) मार्जनीविशेष, एक खुरचनी। इससे कर्मशालामें परिष्कार की हुयी शर्करा बटोरी जाती है।

करग्रह (सं० पु०) करो गृह्यते यत्र, आधारे अप्। १ विवाह, शादी, परनावा। २ हस्तधारण, हाथकी पकड़। ३ प्रजासे प्राप्य राजस्वका ग्रहण, भदा मालगुज़ारी, टिकस वसूल करनेका काम।

करग्रहण (सं० क्ली०) करस्य ग्रहणं यत्र, बहुव्री०। करग्रह देखो।

करग्रहारम्भ (सं० पु०) करग्रहस्य आरम्भ प्रकृति-पुष्प्लेभ्यो यत्र। वार्षिक करके ग्रहणारम्भका दिन, सलाना मालगुज़ारी वसूल करनेका आग़ाज़। इसे पुण्याह और पुण्य भी कहते हैं। अश्लेषा, आर्द्रा, ज्येष्ठा, मूला, पूर्वफल्गुनी, पूर्वाषाढ़ा, पूर्वभाद्रपद, मघा, भरणी एवं कृत्तिका भिन्न अन्य नक्षत्र, मिथुन, सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक, तथा मीनलग्न और रवि, सोम, बुध, वृहस्पति एवं शुक्रवारको करग्रह आरम्भ करना चाहिये।

"सौम्योग्रवर्जीतरभेषु लग्ने मीनोदये मातृदिने शुभाहे।
कुर्यादनुज्ञानि समीहितानि करग्रहारम्भमपि प्रजानाम्: ॥"

ऐसेही समय भारतीय जमीन्दार देवतादिकी अर्चना-कर नया खाता बनाते और अपने अपने साध्यानुसार ब्राह्मण तथा आत्मीय वन्धु प्रभृतिको खिलाते हैं।

करग्राम (सं० पु०) गोण्डवन प्रदेशस्थ नगरविशेष। यह नगर गोंड जातिकी राजधानी रहा। उक्त प्रदेशके अन्तर्गत रत्नपुरसे ६४ कोस उत्तर करग्राम अवस्थित है।

करग्राह (सं० पु०) करं गृह्णाति यः, ग्रह-ण। विभाषा ग्रहः। पा ३।१।१४३। १ राजा, बादशाह। २ राजस्व आदायकारी, गुमाश्ता, मालगुज़ारी या टिकस वसूल करनेवाला। ३ साधारणतः हस्तग्रहणकारीमात्र, जो हाथ पकड़ता हो।

करग्राहक (सं० पु०) करं गृह्णाति, ग्रह ण्वुल्। ण्वुल् तृचौ। पा ३।१।१३३। १ पति, मालिक, मालगुज़ारी पानेवाला। २ राजस्व आदायकारी, मालगुज़ारी वसूल करनेवाला, गुमाश्ता। ३ हस्तग्रहणकारी, हाथ पकड़नेवाला।

करग्राही (सं० पु०) करं गृह्णाति, ग्रह ण्युन्। णिनिणि ण्युन्। पा ३।१।१३४। करग्राह। करग्राह देखो।

करघर्षण (सं० पु०) कराभ्यां घृष्यते ऽसौ, घृष कर्मणि ल्युट्। १ दधिमन्थनदण्ड, मथानी। इसका संस्कृत पर्याय—वैशाख, दधिचार और तक्राट है। (क्ली०) २ हस्तघर्षण, हाथोंका मलना।

करघर्षी (सं० पु०) कराभ्यां करयो वा घर्षणं विद्यते यस्य यत्र वा, कर-घर्ष-इनि। क्षुद्र मन्थनदण्ड, छोटी मथानी।

करघा (हिं० पु०) वस्त्र प्रस्तुत करनेका एक यन्त्र, कपड़े बुननेकी एक चरखी। करगह देखो।

करघाट (सं० पु०) विषवृक्षविशेष, एक जहरीला पेड़। इसके वल्कल और निर्यासमें विष रहता है। (सुश्रुत)

करह (सं० पु०) करम मस्तकमें रह रव। १ मस्तक, माथा। २ कपाल खोपड़ा। ३ नारिकेलादि, नारियलका खोपड़ा। ४ कमण्डलु। ५ शरीरास्थि, किसकी हड्डी। ६ पात्रविशेष एक बरतन। ७ भिक्षा पाने भीख मांगनेका बरतन। १० वस्तुविशेष किसी किसमको चष।

करहयावन (सं० स्त्री०) तापी नदीके तटस्थ एक तीर्थ। (तापीखण्ड ११९)

करहमालि (स० पु०) करह इति नाम्ना ख्यातिः, करह नाम रस्। रसविशेष एक रस। यह मधुर, शीतल, सचिक्कण मृदु, पित्तघ्न, दाहघ्न, कफ और तिक्तोपसर्जन होता है। (वैद्यनिघण्टु)

करहीभूत (स० त्रि०) कपालमात्रमें स्थित, कपाली बना हुआ।

करहट (स० स्त्री०) विपनि, हाट, बाजार या मेला।

करहुलि—मन्द्राजप्रान्तीय चेङ्गलपट जिलेके अन्तर्गत मधुरान्तक तहसीलका एक नगर। यह अक्षा० १२° ३१' उ० एवं देशा० ७९° ३६' ३०" पू०पर मन्द्राजसे ३३ कोस दूर हाइरोड किनारे अवस्थित है। यहांका जलवायु अधिक अच्छा नहीं। १७८१से १७८१ ई० तक करहुलिमें थाना रहा। इसका दुर्ग विख्यात है। दुर्गका आयतन १६०० गज है। चारो ओर प्रशस्त खेत बना है। दुर्गका प्राकार टूट गया है। उसीके पत्थरसे स्थानीय पूर्तकार्य होता है। अंगरेजों और फरासीसियोंके युद्धकाल इस दुर्गमें फौज रहती थी। १७५५ ई०को दुर्ग अंगरेजोंके अधिकारमें रहा, किन्तु १७५७ ई०को फरासीसियोंने ले लिया। फिर अंगरेजोंने दुर्ग अधिकार करनेकी बड़ी चेष्टा लगायी थी। अधिक सैन्यक्षय होते भी वह दुर्ग उद्धार कर न सके। १७५८ ई०को [illegible] बड़े जोरसे आक्रमण मारा था। तब तबसे आज तक दुर्गपर अंगरेजोंका अधिकार बना है।

करवग (हिं० पु०) वाद्यविशेष, एक बाजा। यह एक प्रकारका छोटा ढक है। [illegible] या कागजो मामेसाथ ड्यपर ताल बजाते हैं।

करमिमाला (हिं० पु०) वृक्षविशेष, एक पेड़। (Bridelia lanceaefolia) यह बङ्गालमें उपजता और बहुत बड़ा लगता है।

करहुबी—चेदिदेश। करहुली देखो।

करहच्छद (सं० पु०) कर इव पाणिरिवाग्रे छदो यस्य। माकोटद्रुम, सहोरेका पेड़। सहोर देखो।

करहच्छदा (स० स्त्री०) करविस्तारवत् लोहितवर्ण पुष्प यस्याः। १ सिन्दूरपुष्पी, सिंदुरिया। २ माकन्द, [illegible] पेड़।

करहा (हिं० पु०) १ खखाका, बड़ी करहो। २ पक्षिविशेष, एक पहाड़ी चिड़िया। यह हिमालय, काश्मीर, नेपाल प्रभृति प्रदेशोंमें जलके निकट रहता है। करहा शीतकालको पर्वतसे समतल भूमिपर या जलके निकट उतरता है। इसमें स्वतन्त्र और विचारण करना नहीं अच्छा लगता है। करहेके समसमय साथे साथे अलग चाहते रहते हैं। यह अपनी पादसे [illegible] खड़ा कर सकता है। लोग करहेका आखेट खेलते हैं। किन्तु इसका मांस अच्छा नहीं होता।

करहाट (हिं० स्त्री०) कमलनाल, भसींड़, मुरार।

करहिया (हिं० स्त्री०) पक्षिविशेष, एक चिड़िया। करहा देखो।

करही (हिं० स्त्री०) खखाका, ककड़ी।

करहुल, करही देखो।

करहुली, करही देखो।

करहुला (हिं० स्त्री०) १ खखाका, ककड़ी। २ खखाका विशेष, एक बड़ी ककड़ी। इसे मरुभूमि अकेला भूमिमें और पहाड़ोंमें झाड़की तरह ऐसा जानमें ही व्यवहार करते हैं। करहुलीमें एक बड़ी आकृति बना रहता है।

करज (स० पु०-स्त्री०) करे जायते, कर जन ड। १ व्याघ्रनख नामक गन्धद्रव्य, एक खुशबूदार चीज। २ करञ्जद्रुम, करौंदेका पेड़। ३ नख, नाखून।

"[illegible]" (रघु [illegible])

४ करजातद्रव्यमात्र, हाथसे पैदा होनेवाली चीज। (त्रि०) ५ हस्तजात, हाथसे पैदा।

करणि—मारवाड़का एक विभाग। इसकी भूमिका परिमाण ३३२ वर्गमील है। लोकसंख्या प्रायः [illegible]

हज़ार निकलेगी। इसी विभागके मध्य पूर्वसे पश्चिम वरदनदी प्रवाहित है।

करजाख्य (सं० पु०-क्ली०) करजस्य नखस्येव आख्या यस्य। नखी नामक गन्धद्रव्य, एक खुशबूदार चीज़।

करञ्जोड़ि (सं० पु०) करं जोड़यति, जड़ वस्मे इन्। १ हस्तञ्जोडि महाकन्दशाक, हाताजोड़ी। २ काष्ठपाषाणभेद।

करञ्जोड़िकन्द (सं० पु०) करञ्जोड़ि नामक कन्द-वृक्ष, हाताजोडी डलेका पौदा। यह रसबन्धकृत् और वश्यकृत् होता है। (राजनिघण्टु)

करञ्ज (सं० पु०) कं सुखं शिरोसुखं वा रञ्जयति, करञ्ज-णिच्-अण्। १ स्वनामख्यात वृक्षविशेष, करौंदा। वैद्यकमतसे यह चार प्रकारका होता है,—

१ नक्तमाल, पूतिक, चिरविल्वक, पूतिपर्ण, वृद्धफल, रोचन, करज, करञ्जक, चिरिविल्व वा उदकीर्य।

२ प्रकीर्य, पूतिकरज, पूतिक, कलिकारक, पूतिकरञ्ज, सकण्टक, सुमना, रजनीपुष्प, प्रकीर्ण, कलिमालक, कलहनाशक, कैडर्य, कलिमाल और पूतिकरज।

३ षड्ग्रन्था, महाकरञ्ज, विषघ्नी, हस्तिचारिणी, रासायिनी, काकघ्नी, मदहस्तिनी, हस्तिकरञ्जक, काकमाण्डी वा मधुमती।

४ करमर्दक, कृष्णपाकफल, अविग्न, सुषेण, कृष्णपाक, पाकफल, कृष्णफल, पाककृष्णफल, कृष्णफलपाक, पाककृष्ण, फलकृष्ण, पाकफलकृष्ण, वनालय, वनालक, कराम्लक, वील, वग, आविग्न, करमर्दी, वनेक्षुद्रा, कराम्ल, करमर्द वा पापिमर्द।

१ नक्तमालको हिन्दीमें करंज या किरमाल, महाराष्ट्रीमें करञ्ज, पञ्जाबीमें सुकचन, तामिलमें पुङ्गम्, तैलङ्गीमें कणुग या कग्गीरा, सिंहलीमें मोगुल करन्द, कर्णाटीमें कोङ्गय और ब्राह्मीमें खु-वीन कहते हैं। इसका अंगरेज़ी वैज्ञानिक नाम पोङ्गेमिया ग्लाबरा (Pongamia glabra) है।

यह एक सीधा वृक्ष है। मध्य एवं पूर्व हिमालयसे सिंहल तथा मलाक्का पर्यन्त भारतवर्षमें सब जगह करञ्ज मिलता है। वृक्ष प्रायः ४०।५० फीट ऊंचा होता है। छोटे नागपुरमें इसके काठका भस्म रंगमें पड़ता है।

वैद्यकमतसे यह कटु, उष्णवीर्य, रक्तपित्तजनक, कृमिनाशक और ईषत् पित्तवर्धक है। फिर करञ्ज चक्षुरोग, वातव्याधि, कुष्ठ, कण्डू, क्षत, चर्मरोग और विसूचिकाको दूर करता है। यह खाने और लगाने—दोनों कामोंमें चलता है। ५ विन्दुकी मात्रा होती है। युरोपीय चिकित्सकोंके मतमें इसकी पत्ती पीस क्षतरोगपर लगानेसे विशेष उपकार होता है। डाक्टर ऐन्सलीके कथनानुसार करञ्जके तन्तुमय मूलका रस क्षतस्थान-परिष्कारक और नलीके घावका मुख बन्द करनेवाला है। फिर डाक्टर गिवसन इसके तेलको सर्वप्रकार चर्मरोगके पक्षमें विशेष उपकारक समझते हैं। तेल निकालनेके लिये इसका बीज अग्रहायण माघ संग्रहकर घानीमें पेरना पड़ता है। एक मन बीजसे कोई साढे छह सेर तेल निकलता और ५५° उत्तापमें जम सकता है। दक्षिणदेशमें इसे जलाया करते हैं। छोटे नागपुरमें लोग इसके फल खाते हैं। पत्तियोंका अच्छा चारा बनता, जिसके खानेसे गायोंका दुग्ध बढ़ता है। इसका काठ स्वल्प कठोर, श्वेत, प्रदर्शनसे पीत पड़ जानेवाला, दुर्भेद्य, तन्तुमय, अविरल, समकणविशिष्ट, अनायास कार्यमें न आनेवाला, अस्थिर और अनायास कृमिसे आक्रान्त होनेवाला है। किन्तु जलमें रख मसाला लगानेसे वह सुधर जाता है। निम्न बङ्गालमें करञ्जका काठ तेलके कारखाने बनाने और आग जलानेमें लगता है। किन्तु दक्षिण भारतमें उससे रथके स्थूल चक्र बनते हैं।

२ प्रकीर्यको हिन्दीमें कटकरञ्ज, महाराष्ट्रीमें सागरगोटा, दक्षिणीमें गच्छ, तामिलमें कलिचिमरम् वा गच्छचेत्तु और सिन्धीमें किरमत कहते हैं। इसका अंगरेज़ी वैज्ञानिक नाम गौलनडिनिया बोण्डुसेना (Guilandina Bonduc.) है।

यह समग्र भारत प्रधानतः बङ्गाल, ब्रह्मदेश और दाक्षिणात्यमें होता है। इसमें कण्टक रहते और हरिद्वर्ण पुष्प लगते हैं।

वैद्यकमतसे यह कटु, तिक्त, उष्णवीर्य, विषरोगहर, वातश्लेष्मनाशक और अर्श, चर्मरोग तथा व्रणरोगमें उपकारक है। इसका पत्र व्यवहार करनेसे योनि-ज्वर दूर हट जाता है।

कटकरञ्जके बीजको अंगरेज बण्डकनट (Bonduc nut) कहते हैं। यह देखनेमें गोलाकार, अतिशय कठिन और स्वादमें अत्यन्त तिक्त होता है। परीक्षा करनेपर इससे तेल, मण्ड, शर्करा और निर्यास निकलती है। भारतमें बजारो इसका बीज बिकता है। सविराम ज्वरपर इसे प्रयोग करनेसे अच्छा उपकार होता है। करञ्जके बीजका तेल संयोग और पक्षाघातके लिये हितकर है। इसको लगानेसे शरीरकी कान्ति बढ़ती, त्वक् मृदु पड़ती और कुष्ठमी मिटती है।

कटकरञ्जके पत्रसे भी तेल निकाला जाता है। बीजके बड़े छिलकेसे चूड़ी, हार और माला बनानेकी गुरियां बनाते हैं। कटकरञ्जकी माला बाल देशमें पिरोकर पहनने पर अन्तःसत्ता स्त्री गर्भपातसे बचती है। बालक बीजसे गोली खेलते हैं।

करञ्ज (सं० पु०) १ करञ्ज करौंदा। यह वृक्ष छ प्रकारका होता है। पहलेको चिरबिल्व, नक्तमाल, दूसरेको प्रकीर्य, पूतिकरञ्ज, पूतिक, कलिकारक, तीसरेको षड्ग्रन्थि, चौथेको मर्कटी, पांचवेंको अङ्गारवल्ली और छठेको करमर्द, अग्निरुहा करञ्जक तथा करमर्दक कहते हैं। करञ्ज कटु, तीक्ष्ण तथा वीर्योष्ण, और योनिदोष, कुष्ठ, उदावर्त, गुल्म, अर्श, व्रण, कृमि एवं कफघ्न है। इसका पत्र कफ, वात, अर्श, कृमि एवं शोथहर और भेदन, पाककटु, वीर्योष्ण, पित्तल तथा लघु होता है। फल कफ, वात, मेह, अर्श, कृमि और कुष्ठ रोग मिटाता है। फिर घृतपूर्ण करञ्ज भी ऐसे ही गुण रखता है। (भावप्रकाश) इसका पुष्प उष्णवीर्य और पित्त, वात तथा कफघ्न है। घृतपूर्ण करञ्जका अङ्कुर अग्निदीपन, रुच एवं पाकमें कटु, पाचन और कफ, वात, अर्श, कुष्ठ, कृमि विष तथा शोथहर होता है। किसी किसीने करञ्जके भेदमें महाकरञ्ज, घृतकरञ्ज, पूतिकरञ्ज, गुच्छकरञ्ज, करञ्जिकादिका नाम लिया है। (अनेक प्रकार देखो।) २ भृङ्गराज, भंगरा। ३ करञ्जफल।

करञ्जतैल (सं० क्ली०) करञ्जका तेल। यह तीक्ष्ण, उष्ण एवं मेह, वात, कुष्ठ, कण्डू तथा शिरके नानाविध चर्मरोग दूर करता है। (राजनिघण्टु)

करञ्जद्वय (सं० क्ली०) करञ्जयुग्म, दोनों करौंदे। इनमें एक चिरबिल्व और दूसरा लताकण्टकिकरञ्ज होता है।

करञ्जनगर—१ बरार प्रान्तके अमरावती जिलेका एक प्राचीन नगर। यह अक्षा० २०° २८´ उ० और देशा० ७७° ३२´ पू०पर अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः ११ सहस्र है। करञ्ज नामक किसी ऋषिके नामपर इसका नाम भी करञ्जनगर पड़ा है। प्रवादानुसार करञ्ज ऋषिने कठोर रोगसे आक्रान्त हो महामायाकी आराधना की थी। देवीने उनपर सन्तुष्ट हो यहां एक सरोवर बना दिया। करञ्ज उस सरोवरमें नहा रोगमुक्त हुये। उसी समयसे यह स्थान पुण्यतीर्थ समझा जाता है। विष्णुपुराणमें करञ्जतीर्थका नाम विद्यमान है। यहां मोचमोचित महादेव प्रतिष्ठित हैं। (विष्णुपुर ८१०) आज भी अनेक प्राचीन मन्दिर देख पड़ते हैं। उनके निर्माणकी प्रणाली प्रशंसनीय है। करञ्जनगरमें वाणिज्य व्यवसायके लिये अनेक वणिक् रहते हैं।

२ मध्यप्रदेशके वरधा जिलेका एक नगर। यह वरधा नगरसे ३० कोसपर अवस्थित है। चारो ओर शिविमाला खड़ी है। प्राय १०० वर्ष पूर्व नवाब मुरव्वत खांने इसे बसाया था। यहां रुई और अफीम उत्पन्न होता है।

करञ्जपत्र (स० पु०) करञ्जपत्रवत् पत्रं यस्य। कपित्थ वृक्ष, कैथेका पेड़।

करञ्जफलक (सं० पु०) करञ्जफल स्वार्थे कन्। ... कपित्थवृक्ष, कैथेका पेड़।

करञ्जयुग्म, करञ्जद्वय देखो।

करञ्जभेद (सं० पु०) करमर्द देखो।

करञ्जह (वै० त्रि०) करञ्जनाशक, करौंदेको मिटानेवाला।

करञ्जाद्यघृत (सं॰ क्लो॰) करौंदे वगैरह चीजोंसे बना हुवा घी। करञ्ज, निम्ब, अर्जुन, शाल, जम्बु एवं वटकी त्वक् ४ शरावक, तथा इन्हीं द्रव्योंका कल्क १ शरावक, घृत ४ शरावक और ४ शरावक जल डाल डाल सबको एक बरतनमें पकाते हैं। फिर १६ शरावक शेष रहनेसे यह घृत बनता है। करञ्जाद्यघृत दाहपाक और स्रुतिरागयुक्त उपदंशके दोषको दूर करता है। (चक्रपाणिदत्त)

करञ्जिका (सं॰ स्त्री॰) १ कंटीला करौंदा। यह पाकमें कटु, तुवर, ग्राहक, उष्णवीर्य एवं तिक्त और मेह, कुष्ठ, अर्श, व्रण, वात तथा कृमिनाशक है। इसका पुष्प वीर्यमें उष्ण, तिक्त और वात तथा कफहर होता है। (वैद्यकनिघण्टु) २ नक्तमालफल, बड़ाकरौंदा।

करञ्जी (सं॰ स्त्री॰) १ महाकरञ्ज, बड़ा करौंदा। यह स्तम्भन, तिक्त, तुवर, कटुपाक एवं वीर्योष्ण और पित्त, अर्श, वमि, कृमि, कुष्ठ तथा प्रमेहघ्न है। (भावप्रकाश) २ करञ्जवल्ली, करौंदेकी बेल।

करट (सं॰ पु॰) कं कुत्सितं वा रटति रवं करोति, क-रट्-अच्। पचादिभ्यो ल्युणिन्यचः। पा ३।१।१३४। १ काक, कौवा। २ हस्तिगण्ड, हाथीकी कनपटी।

"कद हि भिन्नकरटं पद्मिनं वनगोचरम्।
छन्त्याय महामात्रं बहिः मूत्रं स्मृतम्॥" (भारत)

३ कुसुम्भवृक्ष, कुसुमका पेड़। ४ घृण्य जीवनधारी, खराब आदमी, बुरा पेशा करनेवाला। ५ एकादशाह श्राद्ध। ६ दुर्दुरुढ़, कट्टरनास्तिक। ७ वाद्यभेद, एक बाजा।

करटक (सं॰ पु॰) करट स्वार्थे कन्। १ चौरशास्त्र प्रवर्तक कर्णीके पुत्र। २ हितोपदेश वर्णित एक शृगाल। करट देखो।

करटा (सं॰ स्त्री॰) करट-टाप्। १ दुःखदोह्य गाय, मुश्किलसे लगनेवाली गाय। २ हस्तिगण्डस्थल, हाथीकी कनपटी।

करटिनी (सं॰ स्त्री॰) हस्तिनी, हथिनी।

करटी (सं॰ पु॰) करटो विद्यतेऽस्य, प्राशस्त्ये इन्। हस्ती, हाथी।

करटु (सं॰ पु॰) क-अटु। कर्करेटु पक्षी, स्याही सारस। इसकी गर्दन काली होती है। कानोंके पर आगे बढ़ दो सुन्दर सफेद गुच्छे बना देते हैं। यह एशिया और अफ्रीकाके कयी भागोंमें पाया जाता है।

करड़ करड़ (हिं॰ पु॰) १ शब्दविशेष, एक आवाज़। जब कोयी चीज़ बार-बार टूटती फूटती या चटखती, तब यह आवाज़ निकलती है। प्रायः दन्तसे कठिन वस्तु भङ्ग करते जो शब्द पुनः पुनः आता, वही करड़-करड़ कहाता है। (क्रि॰ वि॰) २ शब्दके साथ तोड़फोड़।

करण (सं॰ क्लो॰) क्रियते अनेन, कृ-ल्युट्। १ व्याकरणोक्त कारकविशेष। क्रियानिष्पत्तिके कारणसमूहमें कारणान्तरका व्यवधान न पड़ते जो वस्तु क्रियाकी निष्पत्तिका कारण माना जाता, वही करणकारक कहाता है। इसके द्वारा कर्ता क्रियाको सिद्ध करता है। जैसे—रामने रावणको बाणसे मार डाला। यहां हस्तादि मारनेका निष्पन्न कारक ठहरते भी संयोगके प्राधान्यसे बाण ही करणकारक होता है। हिन्दीमें इस कारकका चिह्न 'से' है।

"क्रियायाः परिनिष्पत्तिर्यद्व्यापारादनन्तरम्।
विवक्ष्यते यदा यत्र तत् करणमुदाहृतम्॥" (हरिकारिका)

२ चक्षुरादि इन्द्रिय। ३ देह, जिस्म। ४ क्रिया, काम। ५ स्थान, जगह। ६ हेतु, सबब। ७ हस्तलेप, हाथकी लिपायी-पोतायी। ८ नृत्यका प्रकार, नाचका तर्ज़। ९ गीतविशेष, एक गाना। १० क्रियाभेद, एक काम। ११ संवेष्टन, वेठाव। १२ ज्योतिषके गणितकी एक क्रिया। बव, बालव, कौलव, तैतिल, गर, वणिज, विष्टि, शकुनि, चतुष्पद, किन्तुघ्न और नाग—ग्यारह करण होते हैं। इनके अधिष्ठातृ-देवता यथाक्रम यह हैं—इन्द्र, कमलज, मित्र, अर्यमा, भू, श्री, यम, कलि, वृष, फणी और मारुत। ववादि सात करण शुक्लप्रतिपद्के शेषार्धसे कृष्णचतुर्दशीके प्रथमार्ध और अवशिष्ट चार कृष्णचतुर्दशीके शेषार्धसे शुक्लप्रतिपद्के प्रथमार्ध तक रहते हैं। १३ विष्णु।

१४ जातिविशेष, एक कौम। ब्रह्मवैवर्तपुराणमें लिखते—वैश्यके औरस तथा शूद्राके गर्भसे करण

लिखते हैं। (ब्रह्मवैवर्त्त) यह भारतवर्षकी नाना जातियोंमें रहती है। इनका आचार व्यवहार ब्राह्मणोंसे मिलता-जुलता है। १५ कायस्थ जातिको एक श्रेणी। बङ्गदेश। दाक्षिणात्यमें कहीं कहीं करणिक नाम भी प्रसिद्ध है। १६ स्मृतिशास्त्रके मतसे एक व्रात्यक्षत्रिय जाति।

"झल्लो मल्लश्च राजन्याद् व्रात्याल्लिच्छिविरेव च।
नटश्च करणश्चैव खसो द्रविड एव च॥" (मनु १०।२२)

१७ आसाम अञ्चलमें पतित एक जाति। आसाम-के पूर्वीय पार्वतीय प्रदेश एवं ब्रह्म और श्याम देशमें यह लोग रहते हैं। सभ्य जातीके करण देखनेमें एक प्रकार नहीं लगते। देशभेदसे आकारमें भी वैलक्षण्य आ गया है। यह बलवान्, साहसी और भीमकाय होते हैं। सुन्दर गोरा रङ्गमें करण स्त्रीपुरुष दूरसे मनोहर देख पड़ते हैं। असभ्य होते भी करण अति सरल, सत्यवादी और निरीह हैं। दुरभिसन्धि किसीको अच्छा नहीं लगता। सब लोग शान्तिप्रिय होते हैं। किन्तु किसीके अनिष्ट करने या दोषी ठहरनेसे इनका वीर्यवह्नि समुत्थित होता है। ५।० अङ्गरेजी बन्दूकोंसे एक करणके सम्मुख पड़ते हैं। बलवान् होते भी यह लड़ने भिड़नेसे अलग रहते हैं। किन्तु इनसे करण अवश नहीं ठहरते। यह जहां वास करते, वहां अपनी अपरिसीम परिश्रम और यत्नसे भूमिको प्रचुर शस्यशालिनी बना रखते हैं। फिर भी इन्हें एककाल निर्दोष कह नहीं सकते। कारण यह नशा अधिक पीते हैं। करण मद्यके लिये लालायित रहते और इसी पानीयपर सर्वको भी तुच्छ समझते हैं।

यह लिखना-पढ़ना कुछ नहीं जानते और न किसी धर्मशास्त्रको ही मानते हैं। मूर्खताका कारण पूछने पर इनके मुखसे सुननेमें आया, किसी समय ईश्वरने सविधर्मपर अपना आदिम और धर्मशास्त्र लिख मनुष्योंको बुलाया था। मनुष्योंमें सब लोग ईश्वरका आदिम और धर्मशास्त्र ग्रहण करनेको पहुंचे, किन्तु समय न मिलनेसे केवल करण जा न सके, सुतरां चिरकालको धर्मशास्त्रहीन हो गये।

१८ कर्मेन्द्रिय और ज्ञानेन्द्रिय। (क्ली०) १९ योनियोंका आसन। २० व्रतादि। २१ शेय-पत्र, सापिण्ड्यादि।

करणक (सं० त्रि०) १ दाता, दे। पूर्ववर्ती किसी शब्दके साथ बहुव्रीहि समास न रहते इसका प्रयोग असम्भव है।

करणत्राण (सं० क्ली०) करणं चक्षुरादिभिः त्रायते त्रा-क्विप्। मस्तक, सर, माथा।

करणता (सं० स्त्री०) साधनता, तायेद, जरिया।

करणनियम (सं० पु०) इन्द्रियनिग्रह, वशकी रोक।

करणनायक (सं० पु०) करणं नाययति, करण-नय-ण्वुल्। करणपोषक वस्तिको जाहिर करनेवाला।

करणपाल—युक्तप्रदेशके बुलन्दशहर जिलेका एक नगर। यह बुलन्दशहरसे १० कोस दक्षिणपूर्व अनूप नगरको तहसीलमें गङ्गाके दक्षिण तीर अवस्थित है। प्रायः समस्त अधिवासी हिन्दू और जमींदार ठेल राजपूत हैं। दशहरेको यहां एक मेला लगता है। इतना बड़ा मेला बुलन्दशहर जिलेमें दूसरा नहीं होता। शीतलाका एक अतिप्राचीन मन्दिर विद्यमान है। प्रति सोमवारको उस मन्दिरमें स्त्रियां उपस्थित हो पूजा चढ़ाया करती हैं। दिल्लीसे करणपाल तक सड़क गयी है।

करणविन्यास (सं० पु०) उच्चारणका नियम, तलफ़्फ़ुज़ करनेका तरीक़ा।

करणव्यापारभेद (सं० पु०) इन्द्रियका पार्थक्य, इनका फर्क़।

करणा (सं० स्त्री०) वाद्ययन्त्रविशेष, एक बाजा। यह वृहत् और वक्रिम यन्त्र है। भारतवर्ष और पारस्यमें इसे व्यवहार करते हैं। ध्वनि कर्णभेदी है। इसका दैर्घ्य ११ फीट होता है।

करणाधिप (सं० पु०) करणानां अधिपः, ६ तत्। १ जीव आत्मा। २ इन्द्रियाधिष्ठात्र देवता। कर्णके दिक्, त्वक्के वायु, नेत्रके अर्क, रसनाके प्रचेता, नासिकाके अश्विनीकुमारद्वय, वाक्के वह्नि, पाणिके इन्द्र, पादके उपेन्द्र, पायुके मित्र, उपस्थके प्रजापति,

मनके चन्द्र, बुद्धिके चतुर्मुख, अहङ्कारके रुद्र और मनके अधिप अच्युत हैं। ३ ग्रामादिके स्वामी।

करणिक (सं० पु०) करणव्यवहारज्ञ कायस्थ।

करणी (सं० स्त्री०) क्रियते क्रियाविशेषोऽत्र, कृ-करणे ल्युट्-ङीप्। १ गणितशास्त्रोक्त क्रियाविशेष। अति सूक्ष्मरूपसे जिस राशिका मूल निकाल नहीं सकते, उसे करणी कहते हैं। (Surds) २ करणकी स्त्री।

करणीय (सं० त्रि०) क्रियते यत् यत्र वा, कर्मणि आधारे च कृ-अनीयर्। कृत्यल्युटो बहुलम्। पा ३।३।११३। कार्य, करने लायक।

करणीसुता (सं० स्त्री०) पोष्यपुत्रीरूपसे ग्रहण की जानेवाली सुता, जो लड़की पालनेके लिये बेटीकी तरह रखी जाती हो।

करण्ड (सं० पु०) क्रियते, कृ कर्मणि अण्डन्। अण्डन् कृसृभृवृञः। उण् १।१२८। १ मधुकोष, शहदका छत्ता। २ असि, तलवार। ३ कारण्डव पक्षी, एक हंस। ४ दलाढक, हजारा चमेली। ५ वंशादि-रचित पुष्पपात्रविशेष, फूलकी डाली या पेटारी। ६ कालखण्ड, यकृत्। ८ शैवालविशेष, किसी किस्मका सेवार। हिन्दीमें करण्ड चाकू, हथियार वगैरह टेनेके कुरण्ड पत्थरको कहते हैं।

करण्डक (सं० पु०) वंशादिरचित पुष्पपात्रविशेष, बांसकी डलिया या पेटारी।

करण्डकनिवाप (सं० पु०) बौद्धग्रन्थोक्त एक पुण्य-स्थान। यह राजगृहके समीप अवस्थित है।

करण्डफल (सं० पु०) कपित्थवृक्ष, कैथेका पेड़।

करण्डफलक, करण्डफल देखो।

करण्डा (सं० स्त्री०) करण्ड-टाप्। १ पुष्पभाण्ड, फूल रखनेकी पेटारी। २ यकृत्।

करण्डिक (सं० पु०) करण्डः विद्यते यस्य, करण्ड-इकन्। करण्डवत् चर्ममय थली रखनेवाला जीव, जिस जानवरके मुर्देकी तरह चमड़ेकी थैली रहे।

करण्डी (सं० पु०) करण्डवत् आकारोऽस्ति अस्य, इनि। १ मत्स्यविशेष, एक मछली। २ पुष्पपात्र-विशेष, फूलकी पेटारी। हिन्दीमें करण्डी अण्डी यानी कच्चे रेशमसे बनी चादरको कहते हैं।

करण्य (सं० पु०) करण-भव यत्। करणिक, कायस्थजाति।

करतब (हिं० पु०) १ कर्तव्य, फ़र्ज़, काम। २ कला, हुनर। ३ जादू। ४ चालाकी।

करतबिया (हिं० वि०) करतब करनेवाला।

करतबी, करतबिया देखो।

करतरी (हिं०) कर्तरी देखो।

करतल (सं० पु०) करस्य तलः, ६-तत्। १ हस्त-तल, हथेली। २ डगण, चार मात्राका एक गण। इसमें प्रथम दो मात्रा लघु और अन्तको एक मात्र दीर्घ आती है। ३ एक प्रकारका छप्पय।

करतलगत (सं० वि०) हथेलीमें पहुंचा हुआ, जो हाथ आ गया हो।

करतलधृत (सं० त्रि०) हथेलीमें रखा हुआ, जो हाथमें पकड़कर रखा गया हो।

करतलस्थ (सं० त्रि०) हथेलीमें रखा हुआ।

करतली (हिं० स्त्री०) १ गाड़ीवानके बैठनेकी जगह। २ हथेली। ३ ताली।

करतव्य (हिं०) कर्तव्य देखो।

करता (हिं० पु०) १ कर्ता, करनेवाला। कर्ता देखो। २ वृत्तविशेष, एक छंद। इसमें एक नगण, एक लघु और एक गुरु—सब पांच अक्षर आते हैं। ३ गोलीका टप्पा।

करतार (हिं० पु०) १ कर्तार, विधाता। २ करताल।

करतारी (हिं० स्त्री०) ताली, हथेलियोंकी आवाज़। २ वाद्यविशेष, एक बाजा।

करताल (सं० क्ली०) कराभ्यां दीयमानस्तालो यत्र, बहुव्री०। १ झञ्झक, एक बाजा। यह यन्त्र कांस्य धातुसे बनता है। २ शब्दविशेष, एक आवाज़। यह दोनों हथेलियां बजानेसे निकलता है। ३ मंजीरा, झांझ।

करतालक (सं० क्ली०) करताल स्वार्थे कन्। करताल देखो।

करतालध्वनि (सं० पु०) करतालस्य ध्वनिः, ६-तत्। करतालका वाद्य; मंजीरा वगैरह बाजा।

करताली (सं० स्त्री०) करताल गौरादित्वात् ङीष्। १ वाद्यविशेष, एक बाजा। २ करतलद्वयके

अभिघातसे उत्पादित शब्द, हथियारोंके बजानेकी आवाज।

करती (हिं० स्त्री०) मृतवत्सका चर्म, मरे बछड़ेका चमड़ा। इसमें भूसा भर खोम बछड़ा जैसा बना देते और उसे दिखा गायको लगा लेते हैं।

करतू (हिं० स्त्री०) काष्ठखण्डविशेष लकड़ीका एक टुकड़ा। यह ऊख पेरनेवाले बैलोंकी रस्सीके सिरेपर बंधती और हाथमें रहती है। करतूसे ही कहारे ढेंकी पानीमें डुबायी और ऊपर उठायी जाती है।

करतूत (हिं० स्त्री०) १ करतब, काम, करनी। २ कला, हुनर, करतब। ३ कुकर्म, बुरा काम।

करतूति, करतूत देखो।

करत्रक (सं० क्ली०) श्वेतखेलक, सपेद खेकड़ा।

करतोय (सं० क्ली०) दर्भोदक, चोटीका पानी।

करतोया (सं० स्त्री०) करात् च्युतं तोयं पार्वती-परिणयकालीन हरकरात् पतितं तोयं यत्र विवाहे यस्य, पृषोदरादित्वात्। समासमात नदीविशेष, एक दरया। गौरीके विवाह समय शिवके पाणिग्रहण करते यह नदी निकली थी। करतोया अतिशय पवित्र है। वर्षाकाल सकल नदीका जल प्रायः अशुचि रहता है। किन्तु इस नदीका जल किसी समय नहीं बिगड़ता। यह तीर्थस्थलीके मध्य अन्यतम है। इस तीर्थमें पहुंच त्रिरात्र उपवास करनेसे अश्वमेध यज्ञका फल मिलता है। (भारत ३।८५)

पूर्वकालको करतोया बङ्ग और कामरूपके मध्य सीमा निर्देशक रही। कामरूप देखो। किन्तु आजकल इसकी गति सम्पूर्ण बदल गयी है। पहले यह रङ्गपुरमें पश्चिमसे बहती थी। सम्प्रति जलपाइगुड़ी जिलेके उत्तर पश्चिम बैकुण्ठपुरके जङ्गलसे निकल बराबर दक्षिणको जाती और रङ्गपुरसे आगे बगुड़ा जिलेसे दक्षिण पबनासिया नदीके साथ मिल जाती है। इसी कारणसे करतोयाकी गतिमें बड़ा गड़बड़ पड़ता है। 'निर्णय करना सहज नहीं—नाना शाखा आदि और हो जाती गयी हैं। विशेषतः गत सदीके मध्यमें तिस्ता नदी इस अवस्थामें मिल जानेसे निर्दिष्ट गतिको छोड़ चली, उससे प्राचीन करतोयाकी पूर्वगति निर्णय करनेमें बड़ी असुविधा पड़ी है।

उस स्थानसे यह भारी नद ब्रह्मपुत्रके नाम वाले की नदीसे मिल गया है। अधिक लोग इस ब्रह्मपुत्रको ही प्राचीन करतोया नदी कहते हैं। फिर किसीके मतमें महानन्दा और तिस्ताकी मध्यवर्ती 'करतो' प्राचीन करतोयाकी निम्नगति और बगुड़ा जिलेकी यमुना मध्यगति है।

आजकल अत्यन्त क्षुद्र आकार बनाते भी पौराणिक समय करतोया महाशोणसलिलरूपसे बहती जाती थी।

करथर (हिं० पु०) पर्वतविशेष, एक पहाड़। यह सिन्धुनदके उस पार सिन्धुप्रदेश और बलूचिस्तानके मध्य अवस्थित है।

करद (सं० त्रि०) करं ददाति, कर दा-क। १ राजस्व प्रदानकारी, खिराज देनेवाला। २ परित्राणार्थ हस्त प्रदानकारी, मददके लिये हाथ देनेवाला।

करदक्ष (सं० त्रि०) हस्तदक्ष, निपुण, दस्तकार, कारीगर।

करदम (हिं० पु०) कर्दम देखो।

करदल, करदला देखो।

करदला (हिं० पु०) वृक्षविशेष, एक पौधा। इस क्षुद्र वृक्षको त्वक् चिकन एवं पीताभ होती है। उसके अन्तमें कटु पत्रके गुच्छ लगते हैं। शरद बीतने पर पत्र निकलनेसे पूर्व पीतवर्ण पुष्प आते और उसके मध्य दो दो बीज पड़ जाते हैं। माघ एवं फाल्गुन मास इसके विकसित होनेका समय है। करदला हिमालय पर पांच हजार फीट ऊंचे लगता है। बीज खाद्य रूपसे व्यवहृत होते हैं।

करदा (हिं० पु०) १ गर्द, कूड़ा, करकट। यह [illegible] बीजोंमें मिले कूड़ेका नाम है। इसके परिवर्तनमें दिया जानेवाला द्रव्य या मूल्य भी 'करदा' ही कहाता है। वस्तुतः यह गर्द शब्दका अपभ्रंश है। २ बट्टा, बदलावा। ३ कटौती।

करदायी (सं० त्रि०) कर ददाति, कर दा णिनि। [illegible]। भा ७।११। राजस्वदानकारी, खिराज देनेवाला।

करदीकृत (सं॰ त्रि॰) अकरदं करदं क्रियते येन, च्वि। कर देनेको बाध्य किया हुवा, जो खिराज अदा करनेको मजबूर बनाया गया हो।

करदौना (हिं॰ पु॰) दौना।

करद्रुम (सं॰ पु॰) किरति विक्षिपति समन्तात् शाखाः, कृ-अच्, करश्चासौ द्रुमश्चेति, नित्य-समा॰। कारस्करवृक्ष, कुचिला।

करद्विष् (सं॰ पु॰) करं द्वेष्टि, कर-द्विष-क्विप्। १ गोत्रभेद। २ वेदशाखाभेद।

करधनी (हिं॰ स्त्री॰) १ किङ्किणी, कमरका एक गहना। यह स्वर्ण वा रौप्यमय होती है। बालकोंकी करधनीमें घुंघरू लगाते हैं। फिर स्त्रियोंके पहनने-की करधनी सादी ही रहती है। २ कटिमें धारण किया जानेवाला एक सूत्र, कमरमें पहननेका लडदार सूत। (पु॰) ३ धान्यविशेष, किसी किस्मका धान। इसकी भूसी काली होती है। किन्तु चावल रक्ताभ निकलता है।

करधर (हिं॰ पु॰) १ खाद्यविशेष, महुवेकी रोटी। इसे महुवरी भी कहते हैं। २ मेघ, बादल।

करधृत (सं॰ त्रि॰) हस्तद्वारा धारण किया हुवा, जो हाथसे पकड़ लिया गया हो।

करन (हिं॰ पु॰) ओषधिविशेष, नुरिस्क, एक जड़ी-बूटी। यह खानेमें अम्लमधुर होता है। इसे चटनी आदिमें व्यवहार करते हैं। करनका सेवन करनेसे दस्त साफ उतरता है। यह रेचक भी है।

करनधार (हिं॰) कर्णधार देखो।

करनफूल (हिं॰ पु॰) अलङ्कारविशेष, एक गहना। यह स्वर्ण वा रौप्यमय होता है। स्त्रियां इसे कर्णमें धारण करती हैं। करनफूल पुष्पाकार बनता है। इसे पहननेको कानकी लौ छेदायी और बारीक-बारीक सींकोंके कई टुकड़े डाल डाल बढ़ायी जाती है। यह दो प्रकारका होता है—साधारण एवं जड़ाऊ। करनफूलमें स्त्रियां झूमके भी लटका लिया करती हैं।

करनबेध (हिं॰) कर्णवेध देखो।

करना (हिं॰ पु॰) १ वृक्षविशेष, एक पौदा। इसके पत्र केतकको भांति दीर्घ एवं कण्टकरहित रहते हैं। पुष्प श्वेतवर्ण आते हैं। सौरभ किञ्चित् मिष्ट लगता है। इस वृक्षको कर्ण और सुदर्शन भी कहते हैं। २ निम्बुक विशेष, एक नीबू। यह बिजौरेकी भांती दीर्घ होता है। अपर नाम पहाड़ी नीबू है। ३ कार्य, काम। (क्रि॰) ४ समाप्तिपर लाना, भुगताना, निपटाना। ५ पकाना, बनाना। ६ भेजना, पहुंचाना। ७ प्रणय लगाना, मुहब्बत बढ़ाना। ८ व्यवसाय चलाना, काम लगाना। ९ सवारी लाना, भाड़ा ठहराना। १० बुझाना, उठाना। ११ रूप बदलना। १२ उठाना। १३ रंगना। १४ मारना। १५ मजा लेना।

यह क्रिया सर्वप्रधान है। इससे सब क्रियावोंका अर्थ निकल सकता है। फिर किसी संज्ञाके पीछे लगा देनेसे यह उस संज्ञाके अर्थको क्रिया बना देती है।

करनाई (हिं॰ स्त्री॰) करनाय, तुरही।

करनाटक (हिं॰) कर्णाटक देखो।

करनाटकी (हिं॰ पु॰) १ कर्णाटक, करनाटकका वाशिन्दा। २ नट, कला खेलनेवाला। ३ बाजीगर, इन्द्रजाल देखानेवाला।

करनाल (हिं॰ पु॰) १ करनाय, नरसिंहा। २ बड़ा ढोल। यह गाड़ीपर लद कर चलता है। ३ किसी किस्मकी तोप।

करनाल—१ पञ्जावप्रान्तका एक जिला। यह अक्षा॰ २९° ९′ एवं ३०° ११′ उ॰ और देशा॰ ७६° १२′ तथा ७७° १५′ ३०″ पू॰के मध्य अवस्थित है। इसके उत्तर अम्बाला जिला तथा पटियाला राज्य, पश्चिम पटियाला एवं झींद, दक्षिण दिल्ली तथा रोहतक जिला और पूर्व यमुना नदी पड़ती है। करनाल जिलेमें तीन तहसीलें हैं—पानीपत, करनाल और कैथल। भूमिका परिमाण २३९६ वर्गमील पाता है। लोक-संख्या प्रायः सवा छह लाख है। भूमि दो प्रकारकी है—बांगर और खादर। ऊंचे मैदानको 'बांगर' और नीची जगहको 'खादर' कहते हैं। यमुना, घाघरा, सरस्वती, बड़ा नदी, चौतङ्ग और नायी नदी प्रधान नदी हैं। खेत सींचनेको कयी नहरें भी निकली हैं। झील और दलदल बहुत देख पड़ते हैं। पञ्जाबके दूसरे

जिलोंकी अपेक्षा इस ज़िलेमें कुछ अधिक है। धातुमें नमक और नौसादर होता है। केवल तहसीलमें नौसादर बनाया जाता है। करनाल शिकारके लिये प्रसिद्ध है। हरिण, नीलगाय और दूसरे मृग बहुतायतसे मिलते हैं। नहरोंके निकट अनेक प्रकारके पक्षी विद्यमान हैं। यमुना, दृषद्वती और पासके तालाबमें मछलियां भरी पड़ी हैं।

इतिहास—करनाल नगरको कर्णने बसाया था। कुरु क्षेत्रका अधिक अंश इसी ज़िलेमें आ गया है। पानीपतके मैदानमें तीन बार घोर युद्ध हुआ। १५२६ ई०को बाबरने इब्राहीम लोदीको हराया था। फिर १५५६ ई०में अकबरने हिमूको यहांसे मार भगाया। १७६१ ई०को ७वीं जनवरीको अहमदशाह दुर्रानीने मराठोंको नीचा देखा दिल्लीका सिंहासन पाया। १७३९ ई०में नादिरशाहने मुहम्मदशाहको फ्रौजको परास्त किया था। १७६७ ई०को सिख देवसिंहने कैथलका जिला लूट लिया। फिर जींदके राजाने करनालका निकटस्थ देश अधिकार किया था, किन्तु मराठोंने १७८५ ई०में उनसे छीन जाज टोमसको दे दिया। राजा गुरदित सिंहने टोमसको हटा यहां अधिकार जमाया और १८०५ ई०तक अपना राज्य चलाया। अन्तको अंगरेजोंने उसे उनसे छीन अपने राज्यमें मिला लिया। १८४१ ई०को केवल अंगरेजोंके हाथ लगा था। १८६० को जागियर जिलोंसे छूटा। यमुनाके तट किनारे रेलवे लगी है। करनालमें कारखाने और व्यवसायकी कोयी कमी नहीं। यहां गेहूं बहुत होता है। खरीफमें चावल, रुई, ज्वार, ज्वार और दाल भी होते हैं। ईख खूब बोये जाते हैं। चार डालमेंकी चाल भी चल पड़ी है।

अम्बाला, दिल्ली और हिसारको करनालसे अनाज तथा कच्चा माल भेजा जाता है। ग्रामको गुड़की मण्डी है। बाहरसे विलायती कपड़ा, नमक, धन और बेलवन आता है। रुई कपड़ा बुननेमें लगती है। रेशम और गूदको मदीसे चमड़ों रखनेका नौसादर तैयार होता है। करनालमें कम्बल, जूते तथा सोनेके नकाशीदार बरतन और पानीपतमें चमड़ेके कुप्पे बनते हैं। पाश्चात्य योद करनालकी बोध दिल्लीके अन्तादि तक जाती है। नदी और नहरमें नाव चलती है।

करनालमें डिपटी कमिश्नर, असिष्टण्ट-कमिश्नर और तहसीलदार प्रबन्धकर्ता हैं। पुलिसके १० थाने बने हैं। करनालमें एक जेल है। यहां पशुओंकी चोरी अधिक होती है। सांभरके, बबूलो और ताम्रू और समझे जाते हैं। करनालमें विद्या बढ़ रही है। पानीपतमें अरबीका बड़ा मदरसा है। लोग हिन्दी बोला करते हैं।

प्राय करनालमें २८ इंच वृष्टि होती है। किन्तु कहीं कहीं १८ इंचसे भी कम पानी पड़ता है। नहर किनारे ज्वर, अंतड़ी और उदरव्याधिका प्रकोप रहता है। समय समय पर शीतला और विसूचिका भी फूट पड़ती है। इस जिलेमें ६ दातव्य औषधालय प्रतिष्ठित हैं।

२ करनाल जिलेकी तहसील। क्षेत्रफल ८१२ वर्गमील है। लोकसंख्या सवा दो लाखसे अधिक लगती है। ० फौजदारी और ६ दीवानी आदालतें हैं।

३ करनाल जिलेका प्रधान नगर। यह अक्षा० २९ ४१´ १०´´ उ० और देशा० ७६° १´ ३५´´ पू०पर अवस्थित है। करनाल अत्यन्त प्राचीन नगर है। स्थानीय दुर्गमें बहुत दिन तक अंगरेजोंकी छावनी रही। सन् १८४१ ई०को फिर अंगरेजोंने यह दुर्ग छोड़ दिया था। १८३० ई०को काबुलके अमीर दोस्त मुहम्मद यहां कई महीनेतक बन्दी रहे।

करनाल उच्चभूमि पर बसा है। नीचे यमुनाकी नहर बहती है। नगरके चारो ओर १२ फीट ऊंचा प्राचीर खड़ा है। लोकसंख्या प्राय २५ हज़ार है। नहर और दलदलके कारण ज्वरका प्रकोप रहनेसे बस्ती कुछ उजड़ गयी है। सड़कें पक्की होने भी तङ्ग हैं।

करनाल—बम्बई प्रान्तके थाना जिलेका एक दुर्ग तथा पर्वत। यह अक्षा० १८ ४५´ उ० और देशा० ७३ १०´ पू०पर वेणगांवे नदीसे कुछ मील पश्चिम अवस्थित है। इसमें एक उच्च और एक निम्न दुर्ग विद्यमान है। उच्च दुर्गपर १२१ फीटका एक [illegible] बना

है। लोग उसे पाण्डुका मठ कहते और चढ़नेसे डर रहते हैं। उत्तर कोङ्कण पर आक्रमण करनेको पहले यहां मुसलमानोंकी सेना सन्निवेशित थी। १५४० ई०को अहमदनगरके सिपाहियोंने इसे अधिकार किया। फिर पोर्तगीजोंने करनाल लिया, किन्तु कई हजार रुपया पानेपर छोड़ दिया। १६७० ई०को शिवाजीने मुगलोंको निकाल इसे छीना था। शिवाजीके मरनेपर औरंगजेबके सेनापतियोंने इसे फिर ले १७३५ ई०तक अपने अधिकारमें रखा। अन्तको १८१८ ई०को यह अंगरेजोंके हाथ आया।

करनिहित (सं० त्रि०) हाथमें रखा हुआ।

करनी (हिं० स्त्री०) १ कर्म, करतूत। २ अन्त्येष्टि-क्रिया, मरनेपर किया जानेवाला कामकाज। ३ कन्नी, एक औजार। यह लोहेकी होती है। राजमिस्त्री इससे मकान बनानेमें ईंटपर गारा लगा दूसरी ईंट रखते हैं।

करनूल—मन्द्राज प्रान्तका एक जिला। यह अक्षा० १४° ५४´ एवं १६° १४´ उ० और देशा० ७७° ४६´ तथा ७९° १५´ पू०के मध्य अवस्थित है। इसके उत्तर तुङ्गभद्रा तथा कृष्णानदी, दक्षिण कड़प्पा एवं बल्लारी जिला, पूर्व नेल्लूर तथा कृष्णा और पश्चिम बल्लारी जिला है। क्षेत्रफल ७५८८ वर्गमील निकलता है। लोकसंख्या ७ लाखसे ऊपर है। वङ्गनपल्लीका क्षुद्रराज्य इसी जिलेमें पड़ता है।

करनूलके केन्द्रस्थानसे नल्लमलय और यल्लमलय दो पर्वतमाला दक्षिण तथा उत्तर समानान्तर गयी हैं। नल्लमलय प्रायः ७० मील लम्बा और कहीं कहीं २५ मीलतक चौड़ा है। विरमकोंड, गुन्दलब्रह्मेश्वरम् और दुर्गपूर्कोंड ३००० फीटसे ऊंची चोटियां हैं। इस पर्वतकी पांच अधित्यकामें गुन्दलब्रह्मेश्वरम्की उपत्यका प्रधान है। ऊपर चढ़नेको दो पगडण्डियां लगी हैं। पूर्वीय विभाग कामबममें पर्वत अधिक है। इस अधित्यकाकी पूर्वसीमापर वेलीकोंड पर्वतमाला खड़ी है। नल्लमलयके समानान्तर अनेक क्षुद्र पर्वतमाला हैं। देशीय नृपतियोंने घाटियोंमें दाम बांध भूमि सींचनेको सरोवर बनाये थे। कुन्दलकम्म नदीके दामसे सुप्रसिद्ध कमबम सरोवर भरा है। यह प्रायः १५ वर्गमील परिमित है। ६००० एकर भूमि इससे सींची जाती है। दक्षिण विभागमें सगिलेरु और उत्तर विभागमें गुन्दलकम्म नदी बहती है।

कमबम अधित्यकामें नन्द्योकानम् तथा मन्तराल मढटमार्ग द्वारा मध्य विभागमें पहुंचते हैं। यह अधित्यका अतिशय प्रगल्भ और समान है। काली मट्टीमें रूयी बहुत होती है। उत्तरको भवनाशी और दक्षिणको कुन्देरु नदी प्रवाहित है। ग्रीष्म ऋतुमें यह प्रान्त शुष्क पड़ जाता है। किन्तु पर्वतके पार्श्व पर हरेभरे जङ्गल तथा बाग मिलते और नाले एवं झरने बहते हैं। ठीक इसी अधित्यकाके नीचे मन्द्राज-इरिगेशन-कम्पनीकी नहर लगी है। कुछ दिन हुये, पर्वतके पार्श्वाङ्गमें भूतत्त्वज्ञोंने पत्थरके यन्त्र पाये थे। कहते—उक्त यन्त्रोंसे वह लोग कार्य करते, जो अधित्यकावोंके पानीमें डूबते भी विद्यमान रहे।

पश्चिम विभाग दूसरे विभागोंसे विभिन्न देख पड़ता है। इसके पर्वत वृक्षरहित हैं। दक्षिणसे उत्तरको हिन्दरी नदी बहती और करनूलके निकट तुङ्गभद्रामें गिरती है। १८६० ई०को सङ्केसलमें तुङ्ग-भद्राका बांध भूमि सींचने और नाव खींचनेके लिये नहर निकालनेको पड़ा था। बाढ़ टूटनेपर रेतमें बढ़िया तरबूज होता है। सङ्गमेश्वरमें कृष्णा और भवनाशी दोनो मिल गयी हैं। इसी सङ्गमके नीचे चक्रतीर्थम् विद्यमान है।

कुन्देरु अधित्यकामें चूर्णखण्डको शिला भरी है। यह मकान् बनानेका अच्छा मसाला है। करनूलका चूर्णखण्ड (Lithograph) छिवोमें लगता है। इस जिलेमें हीरक, लौह, सिन्दूर और ताम्रकी खनि विद्यमान हैं। नल्लमलय और यल्लमलयसे अनेक उष्णप्रपात भी निकलते हैं।

नल्लमलयका प्रायः २००० वर्गमील परिमित वन सुप्रसिद्ध है। इसमें हजारों रुपयेकी बढ़िया लकड़ी होती है। पश्चिमके वन सघन और पूर्वके वन विरल हैं। उत्तरके जङ्गलोंमें गोचर-भूमि बहुत है। परमलयके पर्वत वृक्षरहित हैं। किन्तु अवसर्पिणी

भूमिपर अनेक प्रकार गुल्म देख पड़ते हैं। इनमें बहु पूगफल, मधु, मधूच्छिष्ट (मोम) चिंचा (इमली), लाखा और बंगतफुलको उत्पत्ति अधिक है।

नल्लमलय पर्वतपर व्याघ्र अधिक हैं। किन्तु वह मनुष्यपर प्रायः टूटा करते हैं। चीते, भेड़िये, लायमें, लोमड़ियां और गीदड़ दूसरे हिंस्र जीव हैं। भालू कहीं देख नहीं पड़ता। पर्वतपर चितम्रग और अनेक प्रकारके हरिण चरते फिरते हैं। उत्तर नल्लमलयमें सबरी भैंसा मिलता है। खेद और सूअर भी जङ्गलमें बहुत हैं। नानाप्रकार पक्षी रहा करते हैं। यहां मछली मारनेका व्यवसाय नहीं चलता। अजगर सांप भरे पड़े हैं। व्याघ्र एवं मृग चर्म और हरिणश्टङ्ग कुछ कुछ मिलता है।

इस जिलेमें तैलङ्गी बहुत रहते हैं। तैलगु भाषा चलती है। किन्तु अधिवासियोंमें बहुतसे लोग कनाड़ी बोली बोलते हैं। नल्लमलय पर असभ्यजातिके चेंचु विख्यात हैं। कृषिकार्य इन्हें अच्छा नहीं लगता। पर्वतमें उत्सवके समय यह यात्रियोंसे कर लिया करते हैं। करनूलके प्रधान नगर यह हैं,—करनूल, नन्दियाल, कम्बम, गुडूर, महोपेरा और पेवली।

यहां ज्वार, हाम, रुई, तिल और नीलकी कृषि अधिक होती है। चना और धानको खेत सींच बढ़ाते हैं। गेहूं और चन कमतीको बोया जाता है। तम्बाकू मिर्च, केले और अमरीठकी आमकी निकट लगाते हैं। लोगोंका प्रधान खाद्य ज्वार है। यह प्रधानतः दो प्रकारकी होती है—पीली और सफेद। पीली ज्वार जून मास खाद या काली भूमिमें बो दी जाती है। किन्तु सफेद ज्वार सितम्बर या अक्तोबर मास खेतमें पड़ती और फरवरी तथा मार्च मास कटती है। नल्लमलयको कितनी ही कृषिभूमि अब खेती बोयी न जानेसे जङ्गल बन गयी है। यहां अनेक कड़प्पा तक १८८ मील लम्बी नहर लगी है। करनूल जिलेमें इसकी लम्बाई १३० मील है। यह ६० गज चौड़ी और ८ फीट गहरी बहती है।

करनूलमें कपड़े बुननेका काम अधिक होता है। नल्लमलय पर्वतके नीचे लोहा भी मिलता है। नल्लमलयसे हीरा निकालते हैं। पत्थर काटनेमें बहुतसे आदमी लगे रहते हैं। नील और गुड़ भी तैयार होता है। अनेक नगरों और ग्रामोंमें साप्ताहिक हाट लगती हैं। यहांसे अनाज बाहर भेजा नहीं जाता और पूर्वतटसे नमक आता है। किन्तु करनूलमें शोरेका नमक बहुत बनता है। रुई, नील, तम्बाकू चमड़ा और रुईसे कपड़े तथा कम्बलका चालान होता है। बाहरसे आनेवाली द्रव्योंमें विलायती वस्त्र, सुपारी, नारियल और सूखा मसाला प्रधान है। करनूलमें कोई ६०० मील सड़क बनी है।

करनूल वरङ्गलके प्राचीन तैलङ्ग राज्यका विभाग है। उक्त राज्यके अधःपतनसे यह सम्भवतः स्वतन्त्र हो गया था। ईश्वर राय राजा रहे। उनके पुत्र नरसिंह रायको विजयनगरके महाराजने जीत लिया था। फिर वह उक्त विभाग राज्यके राजा बन गये। विजयनगराधिप अच्युतदेवरायके समय करनूलका दुर्ग निर्मित हुआ। फिर यह प्रान्त रामराजाको जागीरमें मिला था। १५६५ ई०को तालिकोट युद्धमें बीजापुर, गोलकुण्डा तथा अहमदनगरके नवाबोंने विजयनगरके राजाको हराया और करनूलको बीजापुरके एक प्रान्तमें लगाया। पहले सूबेदार अब्दुल वहाब रहे। उन्होंने मन्दिरोंको मसजिद बना डाला।

१६८६ ई०को औरङ्गजेबने बीजापुर जीत पठान खिज्र खाँको सैनिक-सेवाके पुरस्कारमें दिया था। उनके पुत्र दाऊद खाँने उन्हें मार डाला। दाऊद खाँके मरनेपर उनके भाई इब्राहीम खाँ और अलिफ खाँने मिलकर राज्य चलाया। उक्त दोनों भाइयोंका उत्तराधिकार अलिफ खाँके पुत्र इब्राहीम खाँको मिला था। उन्होंने दुर्ग बनाया और उसका बल बढ़ाया। फिर उनके पुत्र और पौत्रने राज्य किया था। पौत्रका नाम हिम्मत खाँ रहा। कर्णाटकको चढ़ाई पर निजाम नजीरजङ्गको ओरसे कड़प्पा और सावनूरके नवाबोंके साथ हिम्मत खाँ भी गये थे। वहां कड़प्पाके नवाबने धोकेसे नजीर जङ्गको मारा। निजामके मतोंसे दक्षिणके-सूबेदार

बने। किन्तु पठान-नवाब उनसे असन्तुष्ट रहे। रायचोटीमें हिम्मत खान् बहादुरने उन्हें मार डाला। उत्तेजित सैनिकोंने हिम्मत खान्‌के भी टुकड़े उड़ाये थे। फिर नज़ीरजङ्गके दूसरे भतीजे मसायत खान् सूबेदार हुये। १७५२ ई॰को हैदराबाद लौटते उन्होंने आक्रमण मार करनूल अधिकार किया था, किन्तु कुछ रुपया ले हिम्मतखान्‌के भाई मुनव्वर खान्‌को सौंप दिया। थोड़े ही दिन बाद हैदर अलीने करनूल आक्रमण कर दो लाख (गडवाल) रुपया पाया था।

१८०० ई॰को यह ज़िला कड़प्पा और बल्लारीके साथ अंगरेज़ोंको दिया गया। उस समयसे नवाब अलिफ् खान् एक लाख (गडवाल) रुपया प्रतिवर्ष सरकारको पहुंचाते रहे। १८१५ ई॰को अलिफ खान्‌के मरने पर उनके भाई मुज़फ्फर जङ्गने सिंहासन और दुर्ग अधिकार किया। अलिफ् खान्‌के ज्येष्ठपुत्र मुनव्वर खान्‌ने अंगरेज़ोंसे साहाय्य मांगा था। फिर बल्लारीसे करनैल मरियट फौज लेकर पहुंचे। मुज़फ्फर खान् करनूलसे निकाले और मुनव्वर खान् मसनद पर बैठाले गये थे। १८२३ ई॰को मुनव्वर खान् मरे। उनके भाई मुज़फ्फर करनूल सिंहासनारूढ़ होने आ रहे थे। किन्तु उन्होंने बल्लारीके निकट अपनी पत्नीको मार डाला। इसीसे वह बल्लारीके क़िलेमें क़ैद हुये और १८७८ ई॰को मर गये।

१८३८ ई॰को समाचार मिला—करनूलके नवाब गवरनमेण्टके विरुद्ध युद्धको तैयारी करनेमें लगे हैं। अन्वेषण करने पर मालूम हुवा—दुर्ग तथा प्रासादमें अस्त्रशस्त्र और गोली बारूदका ढेर किया गया है। फिर अंगरेज़ोंने तीव्र युद्धके पीछे दुर्ग और नगर अधिकार किया। नवाब हिन्द्री नदीके वामतट पर जोरापुर ग्रामको भागे थे। अन्तको उन्होंने आत्मसमर्पण किया। वह त्रिचनापलीके किलेमें बन्दी रहे। वहां उनके एक भृत्यने उन्हें मार डाला। उनका राज्य ज़ब्त् हुवा और उनके वंशजोंको पेनशन मिला। १८५८ ई॰को करनूल ज़िला बनाया गया।

यहां शिक्षाका सुप्रचार नहीं। जलवायु स्वास्थ्यकर है। पश्चिम और उत्तर-पूर्वमें अधिक वायु आता है। जूनसे सितम्बर मासतक वृष्टि होती है। नल्लमलय पर्वतके नीचे ज्वरका प्रकोप रहता है। मैदानमें गोचरभूमि नहीं। पशु पर्वत पर चरते हैं। किन्तु ग्रीष्म ऋतुमें पर्वतकी घास जल जानेसे पशु भूखों मरते हैं। करनूल, कमबम और नन्दियालमें दातव्य औषधालय विद्यमान हैं।

२ करनूल ज़िलेके रमलकोट परगनेका प्रधान नगर। यह अक्षा॰ १५° ४८′ ५८″ उ॰ और देशा॰ ७८° ५′ २८″ पू॰पर अवस्थित है। लोकसंख्या २० सहस्रसे अधिक आती है। यह करनूल ज़िलेका हेड क्वार्टर है। हिन्द्री और तुङ्गभद्रा नदीके सङ्गम पर बसती पड़ी है। भूमि पार्वत्य है। स्थानीय दुर्ग गोपाल राजने बनाया था। १८६५ ई॰को इसका सामान उतारा गया। आवरणपटके गिराये जाते भी चार वप्र (बुर्ज) और तीन द्वार विद्यमान हैं। इसमें नवाबका प्रासाद था। १८०१ ई॰तक दुर्गमें सेना रही। किसी समय करनूलमें विसूचिका अधिक देख पड़ती थी। किन्तु म्युनिसपलिटीने कितना ही धन व्यय कर इसका स्वास्थ्य सुधारा है। फिर भी नहर निकलनेसे ज्वरका वेग बहुत बढ़ जाता है। १८७७-७८ ई॰को दुर्भिक्ष पड़नेसे करनूल पर बड़ी विपद् आयी थी। रेलका गूटी ष्टेशन ३० कोस दूर है। इसमें आधे हिन्दू और आधे मुसलमान रहते हैं।

करनैल (अ॰ पु॰ = Colonel) सैन्यदलाध्यक्ष, फौजका अफसर। यह ब्रिगेडियर-जनरलके नीचे रहता है।

करन्धम (सं॰ पु॰) करं धमति अग्निसंयोगं करोति, कर-ध्मा-खश् मुम् च। [illegible] पा ३।२।२९। सुवर्चा॰, इक्ष्वाकुवंशीय खनीनेत्र नामक राजाके पुत्र। सत्ययुगके समय मनु-वंशमें खनीनेत्र राजाने जन्म लिया था। यह अतिशय उद्धत रहे। उन्होंने स्वीय भ्राता और प्रजावर्गको निरन्तर सताया। उद्धतप्रकृतिवशतः प्रजाको रक्षा वह स्वीय पूर्वपुरुषोषित यश पा न सके थे। परिशेषमें दिग्विजयी नृपा

होते भी प्रजाने उन्हें सिंहासनसे उतार जङ्गलको भगाया और उनके पुत्र सुवर्चाको राजा बनाया।

सुवर्चा पिताकी विरुद्ध क्रियासे रहनेसे राज्यच्युत और निर्वासित होते देख सतत संयत चित्तसे प्रजाके हितसाधनमें लगे थे। प्रजा भी उनको ब्रह्मनिष्ठ, सत्यव्रत, शुचि, शमदमादि गुणभूषित, मनस्वी और धार्मिक पा अत्यन्त अनुरक्त हुयी। कालक्रम सदा धर्म निरत सुवर्चाकी धनहीन होनेसे सामन्त सताने लगे।

इन वर्मोका सुपतिने कोष एवं वाहनादि विहीन हो सामन्तगणके भयसे अपने अनुरक्त भृत्योंके साथ बाहुरीको बनाया था। धनहीन होते भी नियत धर्म परायण रहनेसे उत्पीड़क सामन्त उन्हें मिटा न सके। अवशेषमें जब राजाको सामन्तगणने मिल हृत समझ सताया, तब इन्होंने अपना कर अमलमें बनाया था। उसपर अग्निसे इनका भीमपराक्रम सैन्यसमूह निकल आया। फिर बलीयान् नृपतिने अपूर्वरूप आविर्भूत सैन्यसमूहसे परिवृत हो कोप सीमाके अन्तर्गत नृपतिगणको नीचा देखाया था। कोप कर अग्निमें बजानेपर उस दिनसे सुवर्चाका नाम 'करन्धम' पड़ गया।

करम्भक (सं० त्रि०) करं धमति शीघ्रं, कर धे-खश् मुम्। हस्तवेष्टक, हाथ बजाने या बाजनेवाला।

करम्भवलमयोत्सान्त (सं० अव्य०) हस्तहत वाघोसके अन्तपर, हाथपर रखे हुये मालके सिरे।

करम्यास (सं० पु०) करे करावयवे न्यासः, ७-तत्। तन्त्रोक्त न्यासविशेष। तन्त्रोक्त मन्त्र उच्चारणपूर्वक अङ्गुष्ठ प्रभृति अङ्गुलिसमूहके तल और पृष्ठदेशपर जो न्यास किया जाता, वही करन्यास कहाता है।

करपत्र (सं० पु०) करो पत्रवत् यस्य, बहुव्री०। जोमगोदक क्रीड़ा।

करपत्रक (सं० पु०) करः पत्रमिव। पत्रकरा, आरा-जैसा हाथ।

करपत्रा (सं० स्त्री०) करार्थं रामपत्रं पत्राम्, मध्यपदलो०। रामलक्ष्मे लिये दिया जानेवाला विशेष वस्तु जो पोख निवारणके लिये दो जाती हो।

करपत्र (सं० स्त्री०) करमपमम्म्य पतति, कर-पत पुन्। शमीमध्युपत्रुद्भितिक्रियाप्रभ्रुः॥ ३।१।१८। १ क्रकच, करौत। यह पुस्तकमें कथित विंशति शस्त्रोंका अन्यतम भेद है। इससे छेदन और भेदन कर्म होता है। २ जलके समय अन्यत्र इधर उधर कटाव, जहाँसे जल पानीको अपनी इधर उधर हाथसे झकोल-नेका काम।

करपत्रक (सं० स्त्री०) क्रकच, करौत।

करपत्रवान् (सं० पु०) करपत्रवत् पत्र यस्य तत् अस्यास्ति, करपत्र मतुप्, मस्य वः। तत्कालादिविधिमतुप्। वा ५।२।९८ तालवृक्ष ताड़का पेड़।

करपत्रिका (सं० स्त्री०) करौ पत्र इवमिव यस्याः, कर पत्र कप-टाप् अत इत्वम्। १ जलक्रीड़ा पानीका खेल। २ तिलपर्णी।

करपर (हिं० पु०) १ कर्पर खोपड़ा। (त्रि०) २ कृपण, कञ्जूस।

करपरी (हिं० स्त्री०) बरी, मुंगोरी-मिथौरी।

करपर्ण (सं० पु०) करवत् पर्ण यस्य। १ भिण्डा वृक्ष, भिण्डीका पेड़। २ रक्त एरण्ड, लाल रेड़। एरण्ड देखो।

करपरी (हिं०) करपरी देखो।

करपल्लव (सं० पु०) करः पल्लववत्। १ अङ्गुलि, उंगली। २ हस्त, हाथ। ३ अङ्गुलिके सहेतसे भाव गोपनपूर्वक करनेकी क्रिया, उंगलियोंके इशारेसे बात करनेका हुनर।

"अक्षिपत क्चलल क्रम इत्तर। तर वर्ग मीत महार।
न हरिल वचर गुरजीन क्रम। राम वर्ने दकलनी क्रम॥"

हाथसे अङ्गिका पर्व दबानेपर अकारादि स्वर, मध्यम दबानेपर ककारादि, दस देखानेपर चकारादि, टङ्कार जतानेपर टकारादि, तर बतानेपर तकारादि, पंचत दबानेपर पकारादि, योधन देखानेपर यकारादि और गहार सुझानेपर शकारादि वर्णका बोध होता है। फिर पकादिक्रमसे अङ्गुलि देखानेपर अक्षर और गुरुकी दबानेपर मात्रा ठहराती है।

करपल्लवी (स० स्त्री०) हस्तके सहेतसे बातगोपनकथन, हाथके इशारेकी बातचीत। करपल्लव देखो।

करपा (हिं० पु०) डांट, डेरना। धनाजके बाल दार डण्ठलको करपा कहते हैं।

करपात्र (सं० क्ली०) करः पात्रवत् यत्र। १ जल-क्रीड़ा, पानीका खेल। २ हस्तरूप पात्र, बरतनका काम देनेवाला हाथ। योगी अपने करका पात्र और उदरकी झोली रखते हैं।

करपात्रिका (सं० स्त्री०) करपात्र देखो।

करपान (हिं० पु०) रोगविशेष, एक बीमारी। यह एकप्रकारका चर्मरोग है। इसमें प्रायशोणित शरीरपर रक्तवर्ण दाने उभरते हैं।

करपाल (सं० पु०) करं पालयति, कर-पाल-अण्। कर्मण्यण्। पा ३।२।१। खड्ग, तलवार। इसमें एक ही ओर धार रहती है।

करपालिका (सं० स्त्री०) करं पालयति, कर पाल ण्वुल्-टाप्। ण्वुल् तृचौ। पा ३।१।१३३। १ क्षुद्र खड्ग यष्टि, हाथकी छोटी छड़ी। २ छुरा। ३ मुद्गर।

करपाली (सं० स्त्री०) करं पालयति, कर पाल णिनि-ङीप्। नन्दिग्रहिपचादिभ्यो ल्युणिन्यचः। पा ३।१।१३४। १ क्षुद्रहस्तयष्टि, हाथकी छोटी छड़ी। २ छुरा। ३ मुद्गर।

करपीड़न (सं० क्ली०) करस्य अधुरस्य पीडनं वरेण यत्र, बहुव्री०। विवाह, पाणिग्रहण।

करपुट (सं० पु०) करयोः पुटः, ६-तत्। प्राञ्जलि, अंजुली।

करपृष्ठ (सं० क्ली०) हस्तका पश्चाद् भाग, हाथका पिछला हिस्सा।

करप्रचेय (सं० त्रि०) १ हस्तद्वारा चयन किया जानेवाला, जो हाथसे पकड़ा जाता हो। २ करद्वारा इकट्ठा किया जानेवाला, जो टिकससे लिया जाता हो।

करप्रद (सं० त्रि०) कर प्रददाति, कर-प्र-दा-क। आतोऽनुपसर्गे। पा ३।२।३। १ करदाता, महसूल या टिकस देनेवाला। २ हस्तप्रदान करनेवाला, जो हाथ लगाता हो।

करप्राप्त (सं० त्रि०) हस्तगत, पाया हुआ, जो हाथमें आ गया हो।

करफु (बौद्धशब्द) कोयी विशेष उच्च संख्या, बहुत बड़ी अदद।

करफूल (हिं० पु०) दोना।

करबस (हिं० स्त्री०) गोम, गुच्छा। यह एक प्रकारकी टोकरी जैसा रहता और मकवर कहाती है।

करबलावली (सं० स्त्री०) दारुहल्दी, कर्णगुग्गुल।

करबला (अ० स्त्री०) १ अरब देशकी एक रमणीय भूमि। यह अत्यन्त निर्जन स्थान है। मुसलमानोंके हुसैनका यहीं वध हुआ था। २ ताजिये गाड़नेकी जगह। मुहर्रमका मेला मुहर्रमके १०वें दिन होता है। ३ निर्जन स्थान, पानी न मिलनेकी जगह।

करबस (हिं० पु०) कलाबत्, किसी किस्मका धातु। यह दरवाजों वगैरेमें अलंकारके लिये लगाया जाता है। सिन्ध देशमें इसका व्यवहार अधिक है।

करवाल (सं० पु०) करस्य वालः शूल इव। १ नख, नाखून। करं वालयति चलति, हिलाना, देना अण्। २ खड्ग, तलवार। इसका संस्कृत पर्याय असि, खड्ग, कौक्षेयक, दुरासद, विशसन, श्रीगर्भ, विजय, धर्मपाल या धर्मपाल, निस्त्रिंश, चन्द्रहास, रिष्टिक, मण्डलाग्र, करपाल, तरवार और रिष्टि है। प्रदेश भेदानुसार इसके दूसरे भी कयी नाम मिलते हैं।

अति पूर्वकाल अर्थात् वैदिक युगसे भारतवर्षीय और करवाल व्यवहार करते आये हैं। वैशम्पायनोक्त धनुर्वेद, शारङ्गधरसंहिता, मौशल्य, वृद्धहारीत, शुक्रनीतिसार प्रभृति प्राचीन संस्कृत ग्रन्थोंमें करवाल या खड्गका विवरण यथेष्ट मिलता है।

शारङ्गधरसंहिताके मतमें खड्ग निर्माण करनेको दो प्रकारका लौह उपयुक्त है—शस्त्र और खड्ग। फिर शार्ङ्गधरपद्धति ग्रन्थमें प्रधान खड्गलौह १० प्रकारका कहा है। यथा—१ रोहिणी २ नहिच्छेदक, ३ मयूरकण्ठ, ४ शतप्लवन, ५ सौपर्णक्य, ६ गन्धक, ७ पन्दिवस, ८ श्वेतानमास्तान, ९ नीलपिण्ड और १० तितिराङ्ग।

१ रोहिणी छोटे कड़े वेर्णो, अत्यन्त कठिन और अल्प नीलवर्ण लौह है। इससे घाव आनेपर बड़ा वेदना बढ़ती है।

२ जो लौह मयूरके कण्ठकी भांति वर्णविशिष्ट देखाता, वही मयूरकण्ठ कहाता है।

३ नागबैमरदके मुखकी आभा-इन्द्रनीलका भीड़ मयूरपक्ष है।

४ सुवर्णबिन्दु सर्वोसे भिन्न होती है। यह अधिक मूल्यवान् है।

५ मौक्तिक दृष्टि दोनों पार्श्व चमकीला रखती है। मध्यमें सर्परेखा पड़ जाती है। फिर आघात लगनेपर संघात भाग एकसमें निकल आता है।

६ सर्पकको तोड़नेसे ऊपरी भागमें कुछ कण्ठल-की भांति सूक्ष्म छिद्र देख पड़ता है। इसका अपर नाम कुलोलबन्ध है।

७ मणिबन्धके अंगोंमें गांठ रहती है। यह भीड़ मूल्यवान् और दुर्लभ है।

८ जिसके मध्यमें अविच्छिन्न सूत्र रहता और दूर्वाकी भांति वह देख पड़ता, उसको विद्वान् मेघाचमत्कार कहता है।

९ नीलकरोके भागमें निकला सुनहला भीड़ लोह पिच्छ पड़ता है।

१० तितिराङ्कका वर्ण तितिर पक्षीसे मिलता है। यह बहुमूल्य और दुर्लभ भीड़ है। इसकी परवाह बनता है।

भोजादेवके मतमें मिरज़ भीड़ तीन प्रकारका होता है—पीड़िमो, पाथर और वन। इनको पाडमर् सामलीव (मीनाक्ष) कहते हैं।

मानसार पण्डित १५ प्रकार कषपुराणमें भरवालका उल्लेख मिलता है। यथा—१ आदरङ्ग, २ नागबाद ३ पुष्पक, ४ मचक, ५ तितलीवन्ध, ६ कुटीरक ७ कज्जलाभ ८ कार्यगिरि, ९ वनगिरि, १० भारित-भीड़, ११ इन्द्रनीलक, १२ वामनाभ, १३ मणिक, १४ बहुपक्ष और १५ मलबन्ध।

१ यहाँ सोमनाथजी नागराजका नाम कुलनाथ है। यह सर्पकी भांति चमकता और अल्प बल्कित सूत्र रहता है। नागफणको शाहीलोधली कहते हैं।

२ नकुलापर अर्धचन्द्र कपिलको आभा देख पड़ती है। इसके ऊपर अर्धभी सर्पादि भी रहते हैं।

३ अपने शरीरमें भालाकार छोटी छोटी कणकी रज़मीला सरलाव कहलाता है।

४ महाकाडमका अन्तर्भाग अति कठिन होता है। भूमिपर कोई चिह्न देख नहीं पड़ता। किन्तु मध्य एवं पार्श्व भाग अत्यन्त तीक्ष्ण पड़ता है।

५ तितलीवन्धको भूमिपर तितलीपक्षकी भांति चिह्न रहते हैं।

६ कुटीरकका चिह्न सूक्ष्म रक्तपद्माकार अथवा चम्पक होता है। इसकी द्वारा ज्योत भांगी पर भीड़ चमकता है।

७ कज्जलाभको चार धारी रहती है। सबभाग कज्जलकी भांति होता है। फिर वर्णोंमें कस्तूरी चिह्न देख पड़ते हैं।

८ कार्यगिरिके मध्यमें अर्धबिन्दु और श्याम चिह्न रहते हैं।

९ वनगिरि पत्थर भीड़से बनता है। भूमि-तला-भागकी आभा रौप्यकी भांति चमका करती है।

१० भारितभीड़ निर्मित मध्यमें रौप्यचिह्नयुक्त और अल्प नीलवर्ण रहनेवाला नाम मिरज़ था भारितभीड़ है। यह दुर्लभ और अति मूल्यवान् होता है।

११ जिस तोलदार पत्थरके मध्यमें दोनोंके एक जैसा चिह्न रहता, उसे विद्वान् इन्द्रनीलक कहता है।

१२ वामनाभ अति कठिन और चिह्नरहित होता है।

१३ मणिकमें नीलमणिकी भांति आभा और प्रत्येक कोणकी भांति रेखा रहती है।

१४ बहुपक्षको सतहमें दर्पणकी भांति प्रतिबिम्ब देख पड़ता है।

१५ मलबन्धका पट अति मसृण-चमकीला और रेखाविशिष्ट होता है। चार अति तीक्ष्ण आते हैं। सूर्यकी धूप आती है। इस अधिक पाषाणादि दूर होता है।

देशभेदसे हरतालका गुणागुण अलग होता है। प्राचीन शास्त्रोंमें मतके, पट्टा, वर्तुर, वर्पिण, विरोध, मध्यमपान पैदी, वट्याम नील और काश्मरमें जो भीड़ मिलता, वही उसके निर्माणमें व्यवहृत पड़ता है।

खटी और खट्टेर देशजात करवाल अत्यन्त सुदृश्य आता है। कपिश देशका खड्ग गुरुभार रहता और अल्पायाससे ही शरीर छेदन करता है। बङ्गदेशका करवाल अति तीक्ष्ण होता है। इससे छेद भेद करनेमें देर नहीं लगती। शूर्पारक देशीय खड्ग अतिशय कठिन लगता है। विदेहका करवाल अच्छा तेजस्वी और प्रभावशाली है। मध्यमग्रामका खड्ग लघु और अति तीक्ष्ण रहता है। चेदिदेशका करवाल हलका और तीक्ष्ण लगता, किन्तु सारहीन ठहरता है। सहग्रामका खड्ग अति तीक्ष्ण और बहुत हलका होता है। चीनदेशीय करवाल तीक्ष्ण और अधिक निर्मल निकलता है। कालञ्जरके निकट जो खड्ग बनता, वह दीर्घकाल स्थायी, तीक्ष्ण और सुलक्षणयुक्त रहता है।

करवालको अष्टाङ्ग भी कहते हैं। कारण इसकी परीक्षा ८ प्रकार करना पड़ती है—१ अङ्ग, २ रूप, ३ जाति, ४ नेत्र, ५ अरिष्ट, ६ भूमि, ७ ध्वनि और ८ परिमाण।

१ प्रस्तुत होनेपर खड्गके शरीरमें जो नाना प्रकार चिह्न रहते, उन्हींको अङ्ग कहते हैं। अङ्ग प्रायः १०० प्रकार हो सकते हैं।

२ करवालका रङ्ग ही रूप कहाता है। प्रधानतः रूप चार प्रकार होता है—नीलरूप, कृष्णरूप, पिङ्गल रूप और धूम्ररूप। सिवा इसके मिश्ररूप भी देखनेमें आता है।

३ खड्गकी जाति चारप्रकार है—ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र। फिर जातिसङ्कर भी हुवा करता है। सर्व विषयमें श्रेष्ठ गिना जानेवाला करवाल ब्राह्मण है। इसके द्वारा अल्प क्षत आते भी सर्वाङ्ग दुखता और शोथ उठता है। मूर्छा, पिपासा, दाह और ज्वरका वेग बढ़नेसे शीघ्र प्राण निकल जाता है। हर, आंवला और बहेड़ा—तीनों द्रव्य कूट पीस एक दिन लगा कर रखते भी यह मलिन नहीं पड़ता, वरं अधिक परिष्कार निकलता है। हिमालय और कुशद्वीपमें कभी कभी ब्राह्मण करवाल मिल जाता है।

घनवर्ण, तीक्ष्णधार, कर्कशध्वनियुक्त और आघातसह खड्गको क्षत्रिय कहते हैं। यह संस्कार न करते भी बहु दिन परिष्कार रहता और शाण यन्त्रपर चढ़ते बहु अग्निकणा निकाला करता है। इससे क्षत होनेसे तृष्णा, दाह, मलमूत्ररोध, ज्वर, तथा मूर्छा रोग बढ़ता और किसी समय मृत्यु पर्यन्त आ पड़ता है।

वैश्य जातीय करवाल नील तथा कृष्णवर्ण होता है। संस्कार करनेसे यह अति उज्ज्वल निकलता है। किन्तु इसमें तीक्ष्णता शाण पर चढ़ानेसे ही आती है।

जो खड्ग देखनेमें मैलवर्ण लगता, मोटी धार रखता, मृदुध्वनि करता और आघातपर चटते भी तीक्ष्ण नहीं पड़ता, उसे विद्वान् शूद्र कहता है।

बहु जातिके लक्षण रखनेवाला करवाल जातिसङ्कर कहाता है।

४ भिन्न भिन्न चिह्नका नाम नेत्र है। खड्गवेत्ताओंके मतमें नेत्रचिह्न तीससे अधिक नहीं होते। यथा—चक्र, वज्र, गदा, शङ्ख, डमरु, धनुः, अङ्कुश, छत्र, पताका, वीणा, मत्स्य, शिव, ध्वज, अर्धचन्द्र, कमल, शूल, व्याघ्रनेत्र, सिंह, सिंहासन, गज, हंस, मयूर, पुत्तिका, जिह्वा, दण्ड, खड्ग, चामर, शिखा, पुष्पमाला और सर्पाकार चिह्न।

५ करवालके अमङ्गलजनक चिह्नका ही नाम अरिष्ट है। यह ३० प्रकार होता है। यथा—छिद्र, रेखा, भिन्न, काकपद, मेकशिर, विडालपद, इन्दुर, शर्करा, नीला, मशक, भ्रमरपद, सूची, विन्दु, कपोतक, निम्नविविन्दु, खर्पर, शकल, शूकर, कुशपत्र, जाल, कराल, कङ्कपत्र, खर्जुर, शृङ्ग, गोपुच्छ, लम्बा, लाङ्गल और बडिश। अरिष्ट लक्षणाक्रान्त खड्ग धारण करनेवालेपर नाना विपद् पड़ती है।

६ खड्गकी भूमि दो प्रकारके अर्थोंमें व्यवहृत होती है—प्रथम चेत्र वा काया और द्वितीय जन्मस्थान। करवालकी भलायी बुरायी देखनेको जन्मस्थानका विषय समझ लेना चाहिये। इसका जन्मस्थान (भूमि) द्विविध रहता है—दिव्य और भौम। स्वर्गमें जो लौह उपजता, उसका नाम दिव्य पड़ता है। फिर भारतवर्षमें उत्पन्न होनेवाला लौह भौम है।

युक्तिकल्पतरु नामक संस्कृत ग्रन्थमें लिखा—पुराकालको प्रथमतः देवासुर युद्धमें खड्ग मिलता था। तदनुरूप करवाल किसी किसी स्थानमें रखे हैं। उनमें स्व कधार, अति लघु निर्मल, सुन्दरनील वर्णिष्ठ होन, दुर्भेद्य उत्तम ध्वनियुक्त संस्कार न करते भी निर्मल रहनेवाले और दृढ़ताके दो धारा न छूटनेवाले दिव्य हैं। दिव्य खड्गका आघात पानीमें दाह और अन्यपात उत्पन्न होता है। मन्त्रपूत कल्याणि औषधि भी करवालको भी दिव्य कर सकते हैं।

चीन खड्गका उत्तम देखनेको प्रथम चीनतत्त्व समझ लेना उचित है। चीनरबो। यह दो प्रकारका होता है—अक्षत और विलम्बा। एक प्राचीन किंवदन्तीके अनुसार पूर्वकालको देवादिदेवने विषपान किया था। वह चीन जिस समय बिन्दु बिन्दु नाना देशोंमें गिर पड़ा। वहीं विषबिन्दुके कालायस (इस्पात) बन विषलता कहाया है। देवगणने अमृत-सम्मीलित अमृत पान किया था। वह चीन पर्वत का बिन्दु जहां गिरा, वहीं एक चीन बना। यह लोहको ही अमृतलता कहते हैं। यह चीन चारा वसी, मगध सिंहल, नेपाल, अङ्गदेश, सुराष्ट्र प्रभृति स्थानमें उत्पन्न होता है। लोह, कलिङ्ग, मद्र, पाञ्चाल, भवद्भान्त और वङ्ग प्रभृति विविध रूप चीन मिलता है। इस चीनका खड्ग जो उत्कृष्ट बनता है।

७ ध्वनि अर्थात् मन्द सुनकर करवालकी भलाबुराई पहचानी जाती है। ध्वनि प्रधानत दो प्रकार होता है—घोर और मार। शंख, कांस्य, ढक्का और भेरीका ध्वनि घोर कहाता है। घोर-ध्वनियुक्त खड्गको उत्तम समझते हैं। काक, बोधा, खर और प्रस्तरोत्थित ध्वनि मार होता है। मारध्वनियुक्त करवाल बुरा ठहरता है।

८ खड्गका मान उत्तम और अधम भेदसे त्रिविध है। विमान एवं अङ्गमारको उत्तम और स्वल्प तथा मारवान्को अधम कहते हैं। फिर उसमें उत्तम, मध्यम और अधम तीन भेद पड़ते हैं। नानाकी भांति जितनी मुष्टि दीर्घ उतनी ही अङ्गुलिके चतुर्थ भाग विस्तृत और पलपरिमित करवाल उत्तम होता है। मध्यम खड्ग जितनी मुष्टि दीर्घ रहता, विस्तृतिमें उसकी अर्ध अङ्गुलिके तीन भागमें एक भाग और परिमाणमें अर्ध पल पड़ता है। अधम करवाल जितनी मुष्टि दीर्घ उतनी ही अङ्गुलिके चार भागमें एक भाग विस्तृत और उसमें अर्ध वा पौणेक पल परिमित होता है।

पूर्वकालको राजा बड़े यत्नसे असिचालना सीखते थे। वैशम्पायनीय धनुर्वेदमें ३२ प्रकारकी असिचालन-क्रियाका नाम मिलता है। यथा—भ्रान्त, उद्भ्रान्त, आविद्ध, आप्लुत, विप्लुत, सृत, सम्पात, समुदीर्ण, निग्रह, प्रग्रह, पदावकर्षण, सन्धान, मस्तकभ्रामण, भुजभ्रामण, पाश, पाद, विबन्ध, भूमि उद्भ्रमण, गति, प्रत्यागति, आक्षेप, पातन, उत्थापन, च्युति, लघुता, सौष्ठव, शोभा, स्थैर्य, दृढ़मुष्टिता, तिर्यक्-प्रचार और ऊर्ध्वप्रचार।

करवालिका (सं॰ स्त्री॰) एक शस्त्रविशेष, एक छोटी तलवार।

करवी (हिं॰ स्त्री॰) पशुखाद्यविशेष, कड़िया, चरी, चौपायोंका एक खाना। ज्वार वा मकयीके हरे भरे पेड़ 'करवी' कहाते हैं। ये मवेशीके पुष्टि पर बारीक काट काट गाय भैंस प्रभृति पशुको खिलायी जाती है।

करवीला (हिं॰ वि॰) करवीवाला, जो करवीसे भरा हो।

करखुर (वि॰) कर्कश।

करखूब (हिं॰ पु॰) चम वा सुवरन्, एक रकी वा तमगा। यह मयूरके पर्याय (चीन)में अलगमक रखनेको डाल दिया जाता है।

करभ[1] (सं॰ पु॰) १ मणिबन्धसे कनिष्ठ अङ्गुलि पर्यन्त हस्तका बहिर्भाग, करपृष्ठ, हाथोंके छंगलियोंको जड़तक बाहरका हिस्सा। २ करिशुण्ड, हाथीकी सूंड। ३ उष्ट्रशिशु, ऊंटका बच्चा। ४ ऊंट, उष्ट्र। ५ उष्ट्रशावक ऊंट वा किसी दूसरे जानवरका बच्चा। ६ नखी नामक गन्धद्रव्य, एक खुशबूदार चीज़। ७ दुर्वाभेद। ८ एक दोहा। उसमें १६ गुरु और ११ लघु लगते हैं।

करभक (सं॰ पु॰) अनुकम्पित करभ करभकः।

करभ-कन्। संज्ञायाम्। पा ५।३।७५। १ प्रियतम हस्तिशावक वा उष्ट्रशावक। २ करभ। करभ देखो।

करभकाण्डिका (सं० स्त्री०) करभस्य प्रियं काण्डं यस्याः, बहुव्री०। करभकाण्ड-कप्-टाप् इत्वम्। उष्ट्रकाण्डी, ऊंटकटारेका पेड़।

करभञ्जक (सं० त्रि०) करं भनक्ति, कर-भन्ज-ण्वुल्। घञ्, कर्त्तरि। पा ३।३।१२१। १ करभङ्गकारी, हाथ तोड़नेवाला। (पु०) २ प्राचीन जनपदविशेष, एक पुरानी बसती। (महाभा० भीष्म ९।४८)

करभञ्जिका (सं० स्त्री०) करभञ्ज-टाप् इत्वम्। १ करभङ्गकारिणी, हाथ तोड़नेवाली। २ महाकरञ्ज, बड़ा करौंदा। ३ वनाकरञ्ज, वनका करौंदा।

करभञ्जन (सं० त्रि०) करं भनक्ति, भन्ज-ल्युट्। करभङ्गकारी, हाथ तोड़नेवाला।

करभण्डिका, करभञ्जिका देखो।

करभप्रिय (सं० पु०) क्षुद्र पीलुवृक्ष, छोटे पीलूका पेड़।

करभप्रिया (सं० स्त्री०) करभस्य उष्ट्रस्य करिशावकस्य वा प्रिया, ६-तत्। १ क्षुद्र दुरालभा, छोटा जवासा। २ दुरालभा, जवासा। ३ उष्ट्र वा करिशावकादिकी स्त्री, छोटी हथिनी या ऊंटनी।

करभवल्लभ (सं० पु०) करभस्य वल्लभः, ६-तत्। १ उष्ट्रप्रिय पीलुवृक्ष, छोटा पीलू। २ कपित्थ वृक्ष, कैथा।

करभवारुणी (सं० स्त्री०) उष्ट्रकण्टकगुल्मोत्थित वारुणी, ऊंटकटारेकी शराब।

करभादनिका, करभादनी देखो।

करभादनी (सं० स्त्री०) करभेन उष्ट्रेन अद्यते, करभ-अद कर्मणि ल्युट्-ङीप्, क्षुद्र दुरालभा, छोटा जवासा।

करभी (सं० पु०) करभः हस्तस्य अवयवभेदस्तद्वत् आकारो हस्ति शुण्डे यस्य अथवा करो हस्त इव भाति, कर-भा-ड; करभः शुण्डादण्डोऽस्ति यस्य, बहुव्री०। १ हस्ती, हाथी। (स्त्री०) करभस्य स्त्री, करभ-ङीप्। जातेरस्त्रीविषयादयोपधात्। पा ४।१।६३। २ स्त्रीकरभ, हथिनी या ऊंटनी। ३ छमसेमरझारी, छोटी मेढासींगी। ४ श्वेतापराजिता, एक बूटी।

करभीय (सं० त्रि०) करभ-छञ्। हस्ती या उष्ट्रसम्बन्धीय, हाथी या ऊंटके मुताल्लिक।

करभीर (सं० पु०) करभिनं करिणं ईरयति प्रेरयति अन्यमुखम्, करभ ईर-अण्। सिंह, शेर।

करभू (सं० स्त्री०) करात् भवति, कर भू-क्विप्। नख, नाखून।

करभूषण (सं० क्ली०) करो भूष्यते अनेन, कर-भूष ल्युट्। १ कङ्कण, चूड़ी। २ हस्तालङ्कार मात्र, हाथका कोई गहना।

करभोरु (सं० स्त्री०) करभ-वत् ऊरुर्यस्याः ऊङ्। प्रशस्त ऊरुविशिष्टा स्त्री, चौड़ी जांघवाली औरत।

करम (हिं० पु०) १ कर्म, काम। २ भाग्य, किस्मत। ३ वृक्षविशेष, एक पेड़। यह अत्यन्त घन वृक्ष है। करम शीतल भूमिमें उत्पन्न होता है। इसकी त्वक् श्वेतवर्ण एवं मसृण निकलती और आध इञ्च मोटी पड़ती है। काष्ठ पीतवर्ण तथा दृढ़ रहता है। करम मकान् तैज और असबाबो बनानेमें लगता है। (अ० पु०) ४ कृपा, मेहरबानी। ५ नियामविशेष, एक गोट। यह अरब और अफ्रीकामें होता है।

करमई (हिं० स्त्री०) वृक्षविशेष, एक पेड़। यह कचनारसे मिलती और दाक्षिणात्यमें उपजती है। मद्रास, आसाम और मध्यदेशमें भी करमई होती है। इसके खट्टे फल पकाने और शाक बनानेमें काम आते हैं।

करमकल्ला (हिं० पु०) गांठ गोभी, पत्तोंका एक फूल। इसमें अनेक पत्र एकत्र हो पुष्पाकार बन जाते हैं। यह शाकमें व्यवहृत होता है। शीतकालकी गोभी उठ जानेपर करमकल्ला आता है। चैत्र मास इसके पत्र फूट पड़ते हैं। बीचके डण्ठलमें सर्षपकी भांति बीज और पत्र निकलते हैं। इसकी फलीमें छोटे छोटे बीज रहते हैं। पहले इसको तरकारी उच्च वर्णके लोग खाते न थे। किन्तु अब लोग बहुत कम परहेज करते हैं।

करमङ्गल—बारह-महलके मध्यका एक प्राचीन ग्राम। आजकल यहां जङ्गल हो गया है। किन्तु इससे थोड़ी दूर पर्वतपर देवमन्दिर और राजप्रासादि बने हैं। करमङ्गल राजकोटसे २१ कोस दक्षिणपूर्व अवस्थित है।

करमचन्द (हिं० पु०) कर्म, काम, भाग्य, किस्मत।

करमट (स० पु०) करं हस्तिशुण्डं मटति प्रति-मामयति, कर मट अच् अण्। १ गुवाकवृक्ष, सुपारीका पेड़।

करमहा (हिं० वि०) अपथ, अपथ्य।

करमठ (हिं०) कर्मठ देखो।

करमण्डल—भारतवर्षके दक्षिण पूर्वका उपकूल। इस नामकी उत्पत्तिपर कुछ मतभेद चलता है। किसी किसीके कथनानुसार पुलिकटके निकटस्थ प्राचीन 'करमण्डल' ग्रामसे यह नाम निकला है। पूर्वको करमण्डलमें पोर्तगीजोंका अड्डा जमता और पल-तियोंका वास रहता था। फिर कोई कहता— तामिल 'चोलमण्डल'को पोर्तगीजोंने बिगाड़ 'कर-मण्डल' नाम बनाया है। शेषोक्त मत युक्तियुक्त है। तामिल चोलमण्डलको संस्कृतमें चोलमण्डल कहते हैं। प्राचीन चोल राजाओंके समयसे यह नाम मिलता है। चोल देखो। प्राचीन यवनभौगोलिक टलेमिने इस स्थानका नाम सोरेतै (Soretai) लिखा है। (Ptolemy, Geog Bk. VII. ch. I)

करमध (स० स्त्री०) कर्व, २ तीतीका वमन।

करमरिया (हिं० स्त्री०) ग्लानि, वमन, चैन। समुद्र में वायु मन्द पड़नेसे तरङ्गका वेग बढ़ना करमरिया कहाता है। यह शब्द पोर्तगीज भाषासे लिया गया है।

करमरी (स० पु०) किरति विक्षिपति इत्याकारोम् अच्, स पचिकरके अच् मट आगम, तत मट मट अप् इति पक्ष, बाहुलकात् इनि अथवा करं क्षिपति, कर स इनि। बन्दी, कैदी।

करमर्द (स० पु०) कर मर्दाति, कर मर्द अच्। करमर्दक वृक्ष, करौंदेका पेड़। भावप्रकाशमें इसके अपक्व फलको अम्ल गुरु, तृष्णानाशक, उष्ण एवं रुचिकर और पित्त रक्त तथा कफ-वृद्धिकारक कहा है। पक्व करमर्द मधुर, रुचिकारक एवं लघु और पित्तवातनाशक है। करन्द देखो।

करमर्दक (स० पु०) करं मर्दाति, कर मर्द-ण्वुल् वा करमर्द स्वार्थे कन्। १ करमर्द, करौंदा। २ [illegible] एक देश।

करमर्दका (स० स्त्री०) करमर्द देखो।

करमर्दी—एक नदी या दरया। यह नदी नर्मदासे मिल गयी है। इसका सङ्गमस्थान पुण्यतीर्थ माना जाता है। उक्त स्थानपर करमर्देश्वर-शिवलिङ्ग प्रति-ष्ठित है। स्कन्दपुराणीय रेवाखण्डके मतानुसार कर-मर्दी सङ्गममें नहा करमर्देश्वरका दर्शन करनेसे पुन-र्जन्म नहीं होता।

करमर्दिका (स० स्त्री०) करौंदी। यह पर्वतक-द्राक्षासे सदृश होती है। (भावप्रकाश)

करमर्दी (स० पु०-स्त्री०) कर्त मर्दाति, मर्द णिनि। १ करमर्दवृक्ष, करौंदा। २ करञ्जवृक्ष, करौंज।

करमवीथि—हारमहके अन्तर्गत ग्रामविशेष इरमहका एक गांव। हारमहराजाके मन्त्री करमगोविन्दने इसे बसाया था। (क्षिति० वंशाव० १०११-८१)

करमसेक (हिं० पु०) १ पकायतो हुआ। २ अन्न भूतसे बना हुआ पराठा। यह बड़ी सुरुचिसे खानेमें आता है।

करमा (हिं०) कर्मा देखो।

करमा बाई—एक पुण्यात्मा भक्तिमती ब्राह्मणकन्या। दाक्षिणात्य प्रदेशके किसी ग्राममें इनका जन्म हुआ था। पिताका नाम परशुराम पण्डित रहा। वह स्थानीय राजाके पुरोहित थे। राजा और राजपुरो-हित—दोनों परमवैष्णव रहे। उस समय धर्मशास्त्रका मूल अर्थ समझनेको स्त्रियां भी विद्या पढ़ती थीं। करमा बाई प्रेमवश ही विद्यावती बन गयीं। विद्याशिक्षाके साथ-साथ इन्हें वैष्णवधर्मपर भी अधिक भक्ति बढ़ी। पण्डित परशुरामने बाल्यकाल करमा बाईको उपयुक्त पात्र सौंपा था। सम्पूर्ण यौवना रहते भी पिताके अनुरोधसे इन्होंने विवाह कर लिया। किन्तु स्वामीको परमेश्वर एवं विषयी देख यह श्रीकृष्ण या परमात्मामें करनेसे अन्यमनस्क हुयीं। इनसे सकल कार्योंमें सांसारिकको विघ्न पड़ जाता। फिर करमा बाई सर्वदा निर्जन स्थानमें बैठ इष्टदेवके पादपद्मकी चिन्ता करती, पागलकी भांति कभी हंसती कभी रो उठती और कभी 'हा नाथ!' पुकारकर चिल्लाने लगती थीं। कुछ काल पीछे पुनर्वार इन्हें स्वामीके घर पहुं

पानेको विशेष यत्न हुआ। कृष्णके प्रेमरसका आस्वाद पानेसे करमा बाईकी संसार विषयक् कुछ ममता थी। सुतरां स्वामीके गृह जानेको अत्यन्त अनिष्टकर समझ यह सर्वदा रोती रहीं। अन्तको किसीसे कुछ न कह इन्होंने चुपके चुपके वृन्दावन जाना स्थिर किया। रात्रिकालको यह अपनी कोठरीसे बाहर निकलीं। घरके सकल द्वार बन्द थे। बाहर जानेको कोई राह न देख करमा बाई मनके आवेगमें अटारीसे नीचे कूद पड़ीं। किन्तु यह कभी घरसे बाहर निकलती न थीं। इन्हें क्या मालूम—कहां वृन्दावन और कहां पथ रहा। फिर भी इन्होंने कङ्गालकी तरह अकेले ऊर्ध्वश्वाससे वृन्दावनके उद्देश्य यात्रा आरम्भ की।

प्रभात होनेपर परशुराम पण्डित गृहमें कन्याको न देख अत्यन्त व्यस्त हुये और राजाके निकट पहुंच सकल कथा कहने लगे। राजाने उन्हें आश्वास दे चारो ओर करमा बाईको ढूंढनेके लिये आदमी भेजे थे। इन्होंने राहमें जाते जाते पीछे घूमकर देखा—मुझे ढूंढनेको लोग आते हैं। इससे यह अत्यन्त व्यतिव्यस्त हुयीं। चारो ओर खुला मैदान् था। छिपनेको कहीं उपयुक्त स्थान न मिला। सम्मुख उष्ट्रका केवल एक मृतदेह पड़ा रहा। शृगाली और कुक्कुरोंने उसका मांसादि प्रायः खा डाला था। भीषण दुर्गन्ध उठता, निकट पहुंचना दुःसाध्य रहा। भक्तिमती करमा उसी उष्ट्रदेहके उदरमें छिप गयीं। उद्देश्य भी सिद्ध हुआ। अन्वेषणकारी उनको दूसरी दिक् चल दिये। अनाहार केवल कृष्णचिन्ता करते इन्होंने इस भयसे तीन दिन उसी उष्ट्रदेहमें काटे थे—फिर कोई कहीं आ न पहुंचे। तीन दिन पीछे वहांसे बाहर आ और नदीमें नहा करमा बाईने शरीरको निर्मल किया। इसीप्रकार पथमें बहु क्लेश उठा यह वृन्दावन पहुंची थीं। पवित्र वृन्दावनके दर्शनसे बहु दिनका अभिलाष पूर्ण हुआ और मन एवं प्राण आनन्दसे फूल उठा। फिर यह ब्रह्मकुण्डके तीर वनमें कृष्णदर्शन पानेको ध्यानयोगसे बैठ गयीं।

उधर परशुराम पण्डित कन्याके विरहसे अत्यन्त घबरा देशदेशान्तर घूमते घूमते वृन्दावन पहुंचे थे। उन्हें बहु वन और बहु स्थान ढूंढते भी कन्याका कोई सन्धान न मिला। अन्तको वह एक दिन किसी विशाल वृक्षकी उच्च शाखापर चढ चारो ओर देखने लगे। देखते देखते उन्होंने हठात् ब्रह्मकुण्डके तीर निविड वनमें करमा बाईको बैठे पाया। वह घबराकर वृक्षसे उतरे और साथियोंको ले कन्याके निकट पहुंचे। किन्तु उन्होंने अपनी कन्या विभिन्न पायी थी। संसारकी मलिनता करमा बाईके देहमें न रही। समुदाय शरीरमें तपःप्रभा चमकती थी। मुखमण्डल एक आश्चर्य ज्योतिसे पवित्र रहा। फिर यह बाह्यज्ञान न रख ध्यानमें मग्न थीं। चक्षुद्वयसे प्रेमाश्रुकी धारा बहते रही। कन्याकी ऐसी अवस्था देख परशुरामका हृदय फटने लगा। फिर वह करमा बाईको कन्या समझ न सके। अन्तको अत्यन्त घबरा परशुरामने इन्हें साष्टाङ्ग प्रणिपात किया।

बहुक्षण पीछे इन्होंने चक्षु खोले थे। सम्मुख पिताको देख करमाबाईने नीरव प्रणाम किया। फिर यह नीरव ही बैठ रहीं, मानो पिताको कहीं देखा नहीं। पण्डित परशुरामने विनयपूर्वक इनसे लौटनेको कहा और घरमें बैठ कृष्णचिन्तामें लगनेको अनुरोध किया। किन्तु यह किसीप्रकार उसपर स्वीकृत न हुयीं। इन्होंने पिताको उक्त आशा छोड़ने पर अनुरोध किया और सर्वदा कृष्ण-कृष्ण रटनेको उपदेश दिया। कृष्णनाम लेनेको उपदेश देते समय यह प्रेमसे मूर्छित हुयीं एवं पुनर्वार अपने आप मानो चेत उठीं।

परशुराम पण्डित कन्याकी ऐसी असाधारण भक्तिसे चौंक पड़े थे। वारंवार अनुरोध करते भी वह इन्हें वापस ला न सके। अन्ततः परशुराम रोते-पीटते घर लौट आये और राजाको जाकर सब हाल सुनाये। राजा भी विशेष भगवत् प्रेमिक रहे। वह करमा बाईको देखने वृन्दावन पहुंचे थे। वहां साक्षात्कार होनेपर राजाने इनकी अनिच्छा रहते भी एक कुटीर बनवा दिया। इस कुटीरका ध्वंसावशेष आज भी वृन्दावनमें विद्यमान है। किसी करमा

माईका पुरीमें भी एक मन्दिर खड़ा है। इस मन्दिरमें जगन्नाथजीको खिचड़ीका भोग लगता है।

करमाल (हिं० पु०) कर्म, नसीब। यह शब्द बैसवाड़ेमें पड़ता है।

करमाल (सं० पु०) करिणः तदाकृतिवत् माला समूहो यस्य। १ धूम धूआँ। २ मेघ बादल।

करमाला (सं० स्त्री०) कर करांगुलि-पर्व माला इव जपसंख्या हेतुत्वात्। करपर्वरूप माला, हाथ उंगलियोंके पोरकी जपनी। अनामिकाके मध्यसे कनिष्ठादि क्रम पर तर्जनीके मूलपर्व पर्यन्त क्रमशः दश बार जप करनेको करमाला कहते हैं। इसमें मध्यमाका मूल और मध्य पर्व छूट जाता है।

"करस्य जपमालाया ...।
...करमाला प्रकीर्तिता॥" (तन्त्रसार)

करमाली (सं० पु०) सूर्य, आफताब।

करमी (हिं० वि०) कर्मकारी काम करनेवाला।

करमुंहा (हिं० वि०) १ कृष्णवर्ण मुखविशिष्ट काला बदन रखनेवाला। २ कलङ्कयुक्त, बदनाम।

करमुक्ता (सं० स्त्री०) करेण मुक्तीता क्षिपति प्रति मुक्ता, कर मुच् क्त। (सिद्धा० ५।४।१०२) १ प्रक्षेपास्त्र, बरछा। (त्रि०) २ करमुक्त, हाथसे छूटा हुआ। ३ निष्कर, लाखिराज।

करमुहां, करमुंहा देखो।

करमूल (सं० क्ली०) मणिबन्ध कलाई।

करमूली (हिं० स्त्री०) वृक्षविशेष, एक पेड़। यह एक पार्वत्य वृक्ष है। कूमायूं और गढ़वालमें इसे अधिक देखते हैं। काष्ठ कठोर तथा श्याम धूसरवर्ण होता है, यह गृह एवं कृषिसम्बन्धी निर्माणमें लगती है। करमूलीसे छोटे छोटे पात्र भी बनते हैं।

करमैल (हिं० पु०) काष्ठखण्डविशेष, पत्थर खूंदनेकी बांस। यह करगहमें ऊपर बंधता है। करमैलकी लकड़ियां पैरसे दबाने पर सूत पकड़ता उतरता है।

करमैती करम बाई देखो।

करमोट (हिं० पु०) धान्यविशेष, एक धान। यह मार्गशीर्ष मासमें कटता है।

करमोदा (सं० स्त्री०) नदीविशेष, एक दरया।
(लिङ्ग, मार्क और ब्रह्माण्ड)

करम्भ (सं० त्रि०) क्रियते, कृ-घञम्। ... कर्म्भ। १ मिश्रित, मिलावटी। (स्त्री०) २ मिश्रण, मिलावट। (पु०) ३ दधिमिश्रित शक्तु, दही मिला सत्तू।

करम्भक, करम्भ देखो।

करम्भित (सं० त्रि०) करम्भमिश्रणं जातोऽस्य करम्भ-इतच्। १ मिश्रित मिला हुआ। २ खचित, जड़ा हुआ।
"... करम्भित ...।" (...)

करम्भी (सं० स्त्री०) ... भाक, एक सब्जी।
करम्भी देखो।

करम्भ (सं० पु०) केन जलेन रम्भते एकत्रीक्रियते ... क-रम्भ घञ्। ... (पा० ६।१।११) १ दधि-मिश्रित सत्तू, दहीदार सत्तू। २ दम्भ पचमाल, पोला, बहुरी। ३ मथित पिष्ट मथ, दरा हुआ दाना। ४ मिश्रअन्न, मिलावटी चू। ५ प्रियङ्गु वृक्ष। ६ शतमूली, सतावर। ७ महानिके पुत्र और देवरातके पिता। ८ एकके भ्राता। ९ शकुनार निर्यासविष, एक जहर। १० पुष्पविशेष एक फूल।

करम्भक (सं० स्त्री०) करम्भ स्वार्थे कन्। १ दधिमिश्रित सत्तू, दहीदार सत्तू। इसका अपर नाम कर्द्दार है। "... करम्भकम्।" (... ११८) २ देशविशेषकी एक दरख्त। ३ मथित पिष्ट यव, दरा हुआ दाना।

करम्भा (सं० स्त्री०) केन जलेन वायुना रम्भते मिश्यते विशीर्यते वा, क रम्भ घञ्-टाप्। १ शतावरी। २ प्रियङ्गु वृक्ष। ३ इन्दीवरा। ४ कलिङ्ग देशीय ... एक रमणी। पुरुवंशीय अक्रोधन नृपतिसे इनके विवाह किया था। करम्भाके ही गर्भसे देवातिथिका जन्म हुआ। (भारत, आदि ९५।२२)

करम्भाद (सं० त्रि०) करम्भ भक्षण करनेवाले। यह पूषाका एक उपाधि है।

करम्भि (सं० पु०) यदुवंशीय एक राजा। इनके पिताका नाम शकुनि और पुत्रका नाम देवरात था।

करर (हिं० पु०) १ विषकृमिविशेष, कोई जहरीला कीड़ा। इसका शरीर अस्थिविशिष्ट होता है। २ अश्वविशेष, किसी रंगका एक घोड़ा। ३ वृक्षविशेष, एक पेड़। इसे जङ्गली कुसुम कहते हैं। यह भारतके उत्तर-पश्चिम पञ्जाब प्रभृति देशमें अधिक उत्पन्न होता है। पोलीका तेल इसीके बीजसे निकलता है। अफ़रीदी अपना मोमजामा उक्त तेलसे प्रस्तुत करते हैं। कररमें पुष्प बहुत आते हैं। काष्ठ मृदु रहता है। शाखा एवं पत्र पशुका खाद्य है।

कररना, कर्राना देखो।

करराना (हिं० स्त्री०) धनुःके आकर्षणका शब्द, कमान् चढ़ानेकी आवाज़।

करराना (हिं० क्रि०) १ मरराना, चरराना, टूट फूट जाना। २ कठोर शब्द कहना, कड़े पड़ना।

करंरी (सं० स्त्री०) करिदन्तमूल, हाथीके दांतकी जड़।

कररो (हिं० स्त्री०) गन्धशटी, वनतुलसी।

कररुद्ध (सं० त्रि०) करे कारागारे हस्तेन वा रुद्धः। १ कारागारमें आबद्ध, कैद खानेमें पड़ा हुवा। २ हस्त द्वारा आबद्ध, हाथसे रुका हुवा।

कररुह (सं० पु०) करात् रोहति उत्पद्यते, कर-रुह-क। इगुपधा। पा ३।१।१३५। १ नख, नाख़ून। २ अङ्गुलि, उंगली। ३ कृपाण, तलवार। ४ नखी नामक गन्धद्रव्य, एक खुशबूदार चीज। ५ अगर्वादि धूप।

कररेखा (सं० स्त्री०) करस्य रेखा, हाथकी लकीर। सामुद्रिकके मतानुसार यह शुभाशुभ फल देती है।

कररेचक रत (सं० क्ली०) नृत्यमुद्राविशेष, नाचमें हाथका एक घुमाव। यह अत्यन्त कठिन होता है। इसमें दोनों कर कटिपर रख स्वस्तिकके सहारे मस्तक पर्यन्त पहुंचाते और मण्डलाकार बनाते हैं। पुनर्वार एक कर नितम्ब पर लाया और अपर कर चक्रकी भांति घुमाया जाता है। इसी प्रकार दोनों कर झूला करते हैं। इसके पीछे लपेट लगा और फेला दोनों कर स्कन्धके निकट घुमाना पड़ते हैं।

करर्द्धि (सं० स्त्री०) करस्य ऋद्धिः। १ करसम्पत्, हाथकी दौलत। २ करताली, हथेलियोंकी आवाज़। ३ करताल, एक बाजा।

करल (सं० पु०) कपित्थ वृक्ष, कैथेका पेड़।

करल (हिं० पु०) कटाह, कड़ाह।

करला (हिं० पु०) अङ्कुर, किला।

करली (स्त्री०) करला देखो।

करलुआ (हिं० पु०) लताविशेष, एक बेल। यह कण्टकाकीर्ण होता है। पुष्प श्वेत एवं पाटल निकलते हैं। भारतवर्षमें करलुआ सर्वत्र मिलता है। फरवरीसे मयी तक पुष्प आते और अगस्त सितम्बरको फल लग जाते हैं। पुष्पोंका अचार बनता है। शाखा-पत्र खानेमें हाथीको बहुत अच्छे लगते हैं।

करवंठ (हिं० स्त्री०) लताविशेष, एक बेल। यह युक्त प्रदेश, बङ्गाल, दाक्षिणात्य और सिंहलमें होती है। पत्र ४।५ इञ्च दीर्घ और पुष्प पीतवर्ण लगते हैं। करवंठकी कोमल शाखासे छाजन छाते या टोरी बनाते हैं।

करवट (हिं० स्त्री०) १ करवर्त, दक्षिण वा वाम पार्श्व लेटनेकी स्थिति। (पु०) २ करपत्र, करवत, आरा।

करवत (हिं० पु०) करपत्र, आरा।

करवर (हिं० स्त्री०) विपद्, आफ़त, औचट।

करवरना (हिं० क्रि०) कलरव करना, चहकना।

करवल (हिं० स्त्री०) कांस्यमिश्रित रौप्य, जस्तामिली चांदी। करवल रुपयमें दो आने कांस्य धातु रखती है।

करवा (हिं० पु०) १ पात्रविशेष, एक लोटा-जैसा बरतन। यह मट्टीसे टोंटीदार बनाया जाता है। २ कोनिया, घोड़िया। यह लाइसे बनती और जहाज़में लगती है। ३ मत्स्यविशेष, एक मछली। यह पञ्जाब, बङ्गाल और दक्षिणमें मिलती है।

करवा-गौर (हिं० स्त्री०) कार्तिक कृष्णचतुर्थी, कार्तिक महीनेके अंधेरे पाखकी चौथ। भारतवर्षमें इस दिन सौभाग्यवती स्त्रियां गौरीका व्रत रहती हैं। सायंकाल मट्टीके करवेसे चन्द्रमाको अर्घ्य दिया जाता है। पक्वान्नयुक्त करवेका दान भी होता है।

करवाचौथ, करवागौर देखो।

करवाना (हिं० स्त्री०) कराना, काममें लगाना।

करवार (सं० पु०) करं वृणोति वारयति आक्रमणकारिभ्यो वा, कर-वृ-अण्। कर्मण्यण्। पा ३।२।१। कृपाण, तलवार।

कारंज—बरारके [illegible] एक नगर। यह अक्षा० २० १०´ उ० और देशा० ७७ ११´ पू०पर [illegible] दक्षिणपूर्व अवस्थित है। १८६१ ई०को [illegible] किन्तु टीपू सुलतानके समय [illegible] हुआ। [illegible] है। [illegible] है।

कारकर (सं० पु०) [illegible] १ [illegible]। २ [illegible]। ३ [illegible]।

कारगर (हि० पु०) १ [illegible], २ [illegible]।

कारगिरा (सं० स्त्री०) [illegible] छोटी गदा।

कारिम [illegible]—[illegible] एक [illegible]।

कारी (सं० स्त्री०) [illegible] १ [illegible] एक बूटी। २ [illegible]। ३ [illegible] पुष्प एक [illegible]। [illegible] देखो।

कारवी (सं० स्त्री०) [illegible] करी। [illegible] देखो।

कारवीर (सं० पु०) [illegible] १ [illegible]। २ [illegible]। ३ [illegible], एक [illegible]। [illegible] है। [illegible] [illegible] है।

[illegible]

हे पुत्र! [illegible] है। [illegible] है। [illegible] है। [illegible] है।

[illegible] है। [illegible] देखो।

१ [illegible], [illegible]। २ [illegible]। ([illegible])

[illegible]—[illegible] है। [illegible] है।

[illegible] है। [illegible] है। [illegible] है।

कषाय, कटु और उष्णवीर्य होता है। व्रण, चक्षुरोग, कुष्ठ, क्षत, कृमि और कण्डु प्रभृति रोगपर इसका मूल लगाया जाता है। करवीरका मूल विषाक्त है। (बम्बम्, मायब्याम, गाईया) हकीमी किताबोंमें इसका नाम खरजहरा लिखा है। यह प्रदाह और स्फोटक निवारक होता है। यह लगानेमें ही आता, खानेमें क्या आदमी क्या जानवर सबके लिये जहरका काम कर जाता है। मीर मुहम्मद हुसेन नामक मुसलमान् हकीमने कहा,—कि कनेरका मूल अपर सकल स्थलमें विषमय पड़ते भी सर्पके काटनेपर विषनिवारक ठहरा है। कोड़ामकोड़ा मारनेको इसका मूल प्रयोगमें आता है।

स्त्रियां अनेक समय करवीरका मूल खा आत्महत्या करती हैं। इसीसे दक्षिणदेशमें स्त्रियोंके मध्य विवाद उपस्थित होनेपर कहा जाता है—कनेरके पास जावो। डाक्टर डाइमकके कथनानुसार करवीरके मूलमें तीव्र हृद्विष होता है। इसका ·०००१६ ग्रेन मात्र एक मेंढकको खिलाया गया था। १४ मिनट पीछे ही उसकी हृद्गति रुक गयी। इसका मूल खानेसे दिलका चलना और पसीनेका निकलना बन्द हो जाता है।

करवीपुष्प हिन्दू देवताओंको अति प्रिय है। फिर इसका पत्र एवं वल्कल सुखा बाटकर लगानेसे सर्वप्रकार चर्मरोगको उपकार पहुंचाता है।

करवीरक (सं॰ क्ली॰) करवीरवत् कायति प्रकाशते, कै-क वा करं वीरयति,वीर विक्रान्तौ ण्वुल्। १ अर्जुन वृक्ष। २ करवीर, कनेर। ३ खड्ग, तलवार। ४ करवीर मूलरूप विष, जहरीली कनेरकी जड़।

करवीरकन्दसंज्ञ (सं॰ पु॰) करवीर कन्द इति संज्ञा यस्य। तैलकन्द।

करवीरका (सं॰ स्त्री॰) मनः-शिला।

करवीरणी (सं॰ स्त्री॰) पुष्पवृक्ष विशेष, एक फूलदार पेड़। कोङ्कण देशमें इसे 'ककर-खिरनी' कहते हैं। यह ग्रीष्म ऋतुमें होती है। पुष्प रक्त लगते हैं। करवीरणी तिक्त, उष्ण एवं कटु रहती और कफ, वात, विष, आध्मानवात, छर्दि, ऊर्ध्व श्वास तथा कृमिको दूर करती है। (वैद्यकनिघण्टु)

करवीरतैल, करवीराद्यतैल देखो।

करवीरपुर (सं॰ क्ली॰) करवीर देखो।

करवीरभुजा (सं॰ स्त्री॰) करवीरभुजः शाखा इव भुजः शाखा यस्याः, बहुव्री॰। आढ़की वृक्ष, अड़हरका पेड़।

करवीरभूषा (सं॰ स्त्री॰) करवीरस्य भूषेव भूषा यस्याः। आढकी, अड़हर।

करवीराक्ष (सं॰ पु॰) खर राक्षसका सेनापति।

करवीराद्यतैल (सं॰ क्ली॰) करवीरं आद्यं प्रधानं यत्र, बहुव्री॰। तैल विशेष, कनेरका तैल। श्वेतकरवीरके मूलका रस, गोमूत्र, चित्रक और विडङ्ग डाल यथाविधि तैल पकानेसे यह औषध प्रस्तुत होता है। इसमें तिलतैल ४ शरावक, करवीरादिकल्क १ शरावक और जल १६ शरावक पड़ता है। करवीराद्य तैल कुष्ठरोग और भगन्दरको दूर करता है।

श्वेत करवीरका मूल और विष समभाग कटुतैल गोमूत्र एवं तैलमें यथाविधि पाक करनेसे श्वेत करवीराद्यतैल प्रस्तुत होता है। इसके लगानेसे चर्मदल, सिध्म, पामा, विस्फोट प्रभृति रोग मिटते हैं।

रक्त करवीर, जाती, पीतयाक्त एवं मल्लिकाका पुष्प समभाग और सबके बराबर तैल यथाविधि डालकर पकानेसे जो तैल बनता, वह नासारोगको दूर करता है।

करवीरानुजा (सं॰ स्त्री॰) आढकी, अड़हर।

करीवीरिका (सं॰ स्त्री॰) मनः-शिला।

करवीरी (सं॰ स्त्री॰) किरति विक्षिपति दानवराक्षसादीन्, कृ अच् करः वीरः पुत्रो ऽस्याः। १ अदिति। २ पुत्रवती, जिस औरतके बहादुर लड़का रहे। ३ श्रेष्ठगवी, अच्छी गाय।

करवीर्य (सं॰ पु॰) करवीरपुरे भवः, करवीर-यत्। १ धन्वन्तरिके प्रति आयुर्वेद प्रश्नकर्ता ऋषि विशेष, एक पुराने हकीम। २ बाहुबल, हाथका जोर।

करवील (हिं॰ पु॰) करील, करीर, कचड़ा।

करवैया (हिं॰ वि॰) कर्ता, करनेवाला।

करवोटी (हिं॰ स्त्री॰) पक्षिविशेष, एक चिड़िया। इसे करचोटिया भी कहते हैं।

करशाखा (सं० स्त्री०) करस्य शाखा इव। १ अङ्गुली। इसका संस्कृत पर्याय मयूख, अंशु, त्विष, विष, अर्चि रश्मि,धीति, भानु, त्विष, मयूखा, अर्चि हरित् भमार, भानि, मनानि, गोभ गोचम, पृष्णि, भाषा अभीशु, दीधिति और गभस्ति है। (वैदिकनिघ० १४)

करशीकर (सं० पुं०) करात् कलिमुखात् निःसृत शीकरः करस्य शीकरो वा। १ हस्तिमुखनिःसृत जलकणा हाथीकी सूंडसे फेंका हुआ पानी। इसका अपर संस्कृत नाम वमथु है।

"उद्यानमदि मदगन्धस्य कर शिशिरः करशीकरैः।" (रघु)

२ वमन, कै छांट।

करशुद्धि (सं० स्त्री०) करस्य शुद्धि, ६-तत्। हस्तकी मल दूर की सफाई। कद्रू मन्त्र एवं गन्धपुष्प द्वारा हस्तशोधन करते हैं। "गन्धपुष्पाभिमन्त्रित करशुद्धि करम्।" (तन्त्रसार) पूजादि कार्यमें जपादि न्यासके पीछे भी करशुद्धि आती है।

करशू (हिं० पुं०) वृक्षविशेष, एक पेड़। यह हिमालय पर सर्वदा हरित्‌वर्ण बना रहता है। अफगानिस्तानसे भूटानतक करशू पाया जाता है। काठ सुदृढ़ होता है। पत्ता (चौपतो) अति उत्तम निकलता है। यह पशुखाद्य है। चीनाशुकका कीट करशूपर प्रति पालित होता है।

करशूक (सं० पुं०) करस्य शूक इव शूकं यस्य। शूकाम शूक इव वा। नख नाखून।

करशोष (सं० पुं०) हस्तशोष, हाथोंकी सूजन।

करश्मा (फा० पुं०) आश्चर्य कर्म अनोखा काम जादू करामात।

करष (हिं०) कर्ष देखो।

करषक (हिं०) कर्षक देखो।

करषना, करखना देखो।

करस (वै० स्त्री) क्रियते यत् तत्-असुन्। कर्म काम।

"यो दूरेषु मरुतस्य पिता दिवा नव चिदु करांसि।"

(ऋक् ३।१८।१०)

करस (हिं० पुं०) कपड़ेका चूर। यह पानी मुलतानोंसे काम आता है।

करसना (हिं० क्रि०) १ आकर्षण करना, खींचना, घसीटना। २ ख्यापना, सुराना। ३ एकत्र करना, समेटना।

करसनी (हिं० स्त्री०) लताविशेष एक बेल। यह उत्तर भारतमें उत्पन्न होती है। यह ४।६ हाथ दीर्घ और दूसरवर्ण रोमसे आच्छादित रहता है। इसकी और मार्च मास पुष्प आते हैं। यह पत्तेके रंगसे बेमनी आभी तेयार होती है। मूल एवं पत्र औषधमें पड़ता है। करसनीका अपर नाम बीर है।

करसमा (हिं०) करश्मा देखो।

करसम्भार (सं० स्त्री०) रोमसञ्चरण, चामर सम्बन्ध।

करसा, करष देखो।

करसाइस करसायर देखो।

करसाद (सं० पुं०) करस्य साद अवसन्नता, कर सद भावे घञ्। १ हस्तदौर्बल्य, हाथकी कमजोरी। २ किरणकी अवसन्नता, सूर्यादिका क्षीणत्व।

करसान (हिं० पुं०) कृषाण, किसान।

करसायर, करसायल देखो।

करसायल (सं०,पुं०) कृष्णसार, काला हिरन।

"जाके कुलकी धीर है जो तुं धीर।

करसायलके दांतकी है उ पतावन जीत।"

करसी (हिं० स्त्री०) १ करष कण्डेका चूरचार। २ उपला, उपरी।

करसूत्र (सं० स्त्री०) करे स्थितं सूत्रम् ७-तत्। १ हाथका सूत्र सूत, हाथका बारीक सूत। २ विवाहादिकालीन मङ्गलार्थ हस्तबद्ध सूत्र, रक्षिका, कंगन।

करस्थाली (स० पुं०) कर स्थालीव यस्य। महादेव। जैसे थाली (डांडी) में पाक पड़ता, वैसे ही प्रलय काल महाकालरूप महादेवके हाथ समुदाय भूत मरता है।

"करस्थ करस्थाली का कंबली भगवान्।" (भारत अनु १०८)

करस्व (वै० पुं०) करं याति करोति कालणामनेका संस्वात्, क अप या क। कर्मकर कार्य काम करने वाला आदि।

"इन्द्र क्वा करस्व हविर्गे स्तुति।" (ऋक् १।१६१)

करस्वगान (सं० स्त्री०) गुप्तापरत करस्वविशेष, गानका एक ढंग। इसमें गीता कम्पकर उठानी आती

है। फिर नर्तक पृथिवी पर पड़ता और कुक्कुटासन बना उभय हस्त उलटा करता है।

करस्ना (हिं) करछा देखो।

करस्वन (सं॰ पु॰) हस्तध्वनि, हाथकी आवाज, ताल।

करह (हिं॰ पु॰) १ करभ, ऊंट। २ पुष्पकलिका, फूलकी कली।

करहंस, करहच्च, करहच्छ, करहन्स (हिं॰) करछा देखो।

करहकटक (हिं॰ पु॰) गढ़करङ्ग, मालवेके सूबेकी एक सरकार। यह अकबरके समय बनी थी।

करहञ्चा (सं॰ स्त्री॰) समाचर छन्दोविशेष, सात हरफकी एक बहर।

करहनी (हिं॰ पु॰) धान्य विशेष, एक अगहनी धान। यह अग्रहायण मास कटता है। इसका तण्डुल बहुदिन पर्यन्त चलता है।

करहा (हिं॰ पु॰) श्वेतशिरीष वृक्ष, सफेद सरिसका पेड़।

करहाई (हिं॰ स्त्री॰) लताविशेष, एक बेल।

करहाट (सं॰ पु॰) करेण विकिरणेन हाट्यते दीप्यते, कर-हट-णिच्-अण्। १ पद्मादिका मूल, कंवलकी जड़। इसे मुरार और भसोड़ भी कहते हैं। २ मदनवृक्ष, मैनफल। ३ महापिण्डीतरु, बड़ी खजूरका पेड़। ४ अककरा। ५ देशविशेष, एक मुल्क।

करहाटक (सं॰ पु॰-क्ली॰) करहाट इव स्वार्थे कन्। अथवा करं हटयति, कर-हट-णिच्-ण्वुल्। १ मदन वृक्ष, मैनफल। २ कमलकन्द, मुरार। ३ कमलपत्रान्तर्गत छत्र, कमलका भीतरी छाता। यह प्रथम पीतवर्ण रहता, किन्तु बढ़नेसे हरिद्वर्ण निकलता है। ४ जनपदविशेष, एक बस्ती। (भारत, सभा॰) आजकल इसे कराढ कहते हैं। कराढ देखो। ५ स्वर्णका हस्तालङ्कार, हाथमें पहननेको सोनेका गहना।

करही (हिं॰ स्त्री॰) बालका बचा हुवा दाना। जो दाना कूटने पीटनेपर भी बालमें लगा रह जाता, वही करही कहाता है।

करा (हिं॰) कला देखो।

कराइत (हिं॰ पु॰) छायासर्पविशेष, एक काला सांप। यह अत्यन्त विषमय होता है।

कराइन (हिं॰ स्त्री॰) छप्परके ऊपरकी घास।

कराई (हिं॰ स्त्री॰) द्विदलत्वक्, दालका छिलका।

करांकुल (हिं॰) कलाकुर देखो।

करांत (हिं॰ पु॰) करपत्र, करौत, आरा।

करांती (हिं॰ पु॰) करपत्र चलानेवाला, आराकश, जो आरेसे लकड़ी चीरता हो।

करागार (सं॰ पु॰) करस्य आगारः। राजस्वके आयका स्थान, खिराज आनेकी जगह।

कराग्र (सं॰ पु॰) करिपुष्कर, हाथीकी सूंड़का सिरा।

कराग्रपल्लव (सं॰ पु॰) अङ्गुलि, उंगली।

कराघात (सं॰ पु॰) करेण आघातः, ६-तत्। १ हस्ताघात, हाथकी मार। ठूंसे, घूंसे, थप्पड़ वगैरहको कराघात कहते हैं। २ हस्ताङ्गुलि, अंगूठा।

कराङ्गण (सं॰ क्ली॰) करस्य अङ्गनम्, ६-तत्। १ राजस्व आदायका स्थान, महसूल पहनेकी जगह। २ हाट, बाजार।

कराङ्गुलि (सं॰ पु॰) करस्य अङ्गुलिः, ६-तत्। हस्ताङ्गुलि, हाथकी उंगली।

कराची—भारतके सर्वपश्चिम प्रदेशस्थ सिन्धुदेशका एक जिला और नगर। इसके उत्तर शिकारपुर, पूर्व हैदराबाद जिला तथा सिन्धु नद, पश्चिम सागर एवं बलूचिस्तान और दक्षिण कोरी नदी तथा सागर है। कराची जिले और बलूचिस्तानके बीच बहुत दूर तक हाब नदी सीमास्वरूप प्रवाहित है। यह जिला उत्तर-दक्षिण प्रायः २०० मील दीर्घ और पूर्व-पश्चिम ११० मील विस्तृत है। परिमाणफल १४११५ वर्गमील है। कराची शहर जिलेका सदर मुकाम है। सिन्धु नदके मुहानेसे बलूचिस्तानकी पूर्व सीमा पर्यन्त कराचीका भूमिभाग सकल स्थल पर समान उच्च नहीं आता। पश्चिमांशमें कोहिस्तान नामक उपविभागके मध्य कितना ही पार्वत्य प्रदेश पड़ता है। बलूचिस्तानके पूर्वांशस्थित हाला पर्वतसे कुछ पर्वतशिखर निकले हैं। इस पार्वत्य प्रदेशके मध्य मध्य उर्वर उपत्यका आ गयी है। भूमिभाग साधारणतः दक्षिणपूर्वमुख नीचा है। उपकूल भागमें बहु संख्यक क्षुद्र सागरशाखाने प्रवेश किया है। देशके

-अनन्तरमें नदी किनारे बबूलका वन अधिक है। सिन्धु नद ही स्थानीय प्रधान नदी है। किन्तु शाख नदीसे इस जिलेके पश्चिमांश स्थलमें जल आता है। करांचीमें सिन्धु नद प्रायः १२५ मील विस्तृत है। दक्षिणांशको सिन्धु बहु शाखामें विभक्त हो सागरसे जा मिला है। इस शाखाकी गति अत्यन्त परिवर्तनशील है। पहले होता और हाजिमार शाखा बहुत विस्तृत थी। जहाज स्वच्छन्द आते-जाते थे। किन्तु १८१० ई०से हाजिमार नदीका जल भिन्न पथको पकड़ बहता है। प्राचीन स्रोत क्रमशः बन्द हो गया। बागाना नामक शाखाके तीर करांची जिलेका पुराना लाड़ बन्दर अवस्थित था। यह स्थान बहु दिन पर्यन्त कलहोरा राजवंशका प्रधान बन्दर रहा। फिर यहां सुविधे जहाज भी ठहरते थे। किन्तु आजकल इस स्थानसे नदी प्रायः १० मील हट गयी है। अब इसी मरी शाखा ही सिन्धुका प्रधान मुख मानी जाती है। १८४५ ई० को यह शाखा अति दूर रही। कोरी भीका भी अति बड़ेसे पानी जाती थी। इस जिलेके बीच, ऊपरी भाग सेहवानमें 'मंचर' नामक एक हद् ह्रद भरा है। इतना बड़ा ह्रद सिन्धु प्रदेशमें दूसरे स्थानपर देख नहीं पड़ता। करांची नगरसे ४८ मील उत्तर पार्वत्य प्रदेशमें 'पीरमांगो' नामक स्थानपर कितने ही उष्ण प्रस्रवण विद्यमान हैं। इस स्थानकी प्राकृतिक शोभा अति सुन्दर है। भ्रमणकारी प्रायः इस स्थानकी शोभा देखने आया करते हैं। यहां एक दलदल भी है। इस दलदलमें असंख्य कुम्भीर रहते हैं। अरण्य जन्तुमें चीता, बाघ, भेड़िया, शृगाल, उल्कामुखी, जम्बुक, हरिण और वन्यमेष प्रधान हैं। पक्षियोंमें जलपक्षियोंकी संख्या अधिक पाती है। कोहिस्तानमें नाना जातीय सरीसृप देख पड़ते हैं।

करांची जिलेमें मुसलमानोंकी ही संख्या सर्वापेक्षा अधिक है। फिर हिन्दुओं और दूसरे लोगोंकी गणना आती है। हिन्दुओंमें ब्राह्मण, राजपूत और लोहाने अधिक देख पड़ते हैं। अन्यान्य जातिमें जैन, ईसाई, यहूदी और बौद्ध हैं। यह जिला करांची, सेहवान, कोटड़ी और शाहबन्दर नामक चार उपविभागमें विभक्त है। करांची, कोटड़ी, सेहवान, तुलक, जट्टू, ठाठा, किटी बन्दर, मखन्द, और मीरपुर बतोरा नगर प्रधान समझा जाता है। करांची, किटी और सिरगन्दा (श्रीमण्ड) तीन बन्दर हैं।

स्थानीय लोगोंके कथनानुसार ठाठा नगरसे ग्रीक सम्राट् अलक्षेन्द्र (सिकन्दर)-के सेनापति निआर्क जल पारकर सागरको गये थे। सेहवान नगरमें किसी अति प्राचीन दुर्गका भग्नावशेष विद्यमान है। अनेक लोग कहते कि उस दुर्गके निर्माता भी अलक्षेन्द्र ही रहे। करांची जिलेका अति अल्प स्थान ही बोया जाता है। वृष्टि, कूप और निर्झरके जल पर ही उपजाऊ बनता है। गल्लेमें ज्वार बाजरा, यव और रतुवी उपज है। कोटड़ी और शाहबन्दरके निकटवर्ती स्थानमें चावल, गेहूं, सन, मकई, रुई तथा तम्बाकू होते हैं। कोहिस्तानके पार्वत्य देशमें किसी प्रकारका शस्य नहीं होता। यहांके लोग प्रायः यायावर हैं। पशुपालनसे ही जीवन धारण करते हैं। यहां तीन फसलें होती हैं। एक ज्येष्ठ-आषाढ़में बोये और कार्तिक अग्रहायणमें काटे जाते हैं। दूसरी कार्तिक-अग्रहायणमें पड़ती और वैशाख ज्येष्ठ कटती है। तीसरीको फाल्गुन-चैत्रमें डाल आषाढ़ श्रावण मास काट लेते हैं। करांची जिलेका प्रधान पण्य द्रव्य रुई, गेहूं और सन है।

शाहबन्दरके निकट योमण्ड खाड़ीमें अधिक लवण निकलता है। अंगरेज सरकारने १८४० ई०को स्थानीय सपत्रसर देख कहा था 'इस लवणसे प्रमाणित ३० वत्सर समस्त पृथिवीका निर्वाह हो सकता है।' किन्तु लवणके शुल्कका परिमाण द्विगुण रहनेसे कोई व्यवसाय चला नहीं सकता। समुद्रमें मत्स्य पकड़नेका काम भी होता है। मुहाने मुसलमान यह व्यवसाय करते हैं। ठाठा नगरी लुंगी नामक शीतवस्त्र और सुवर्ण नगर कामोंके लिये विख्यात है। करांची जिलेके पश्चिमांश नगर हिन्दुके रतिहासके विविध मन्दिर हैं। सि० देखो।

करांची नगरमें सिन्धु प्रदेशका सैनावास स्थापित

है। इसी नगरसे बिलकुल दक्षिण कराची उपसागर है। उपसागरके एक पार्श्वपर मानोरा अन्तरीप पड़ता है। मानोरा अन्तरीप और क्लिफटन नामक स्वास्थ्यनिवासके बीच कराची उपसागर प्रायः साढ़े तीन मील विस्तृत है। किन्तु प्रवेशका मुख चौंवेके पर्वत (क्षुद्र क्षुद्र पार्वत्य द्वीप) और कियामारी नामक द्वीपसे रुका है। मानोरा अन्तरीपमें एक आलोकस्तम्भ है। इस आलोकस्तम्भके पश्चात् एक क्षुद्र दुर्ग भी खड़ा है।

१७२५ ई०को जहां हाव नदी सागरसे मिली, वहां खड़क नामक एक नगरी रही। उस समय खड़कका व्यवसाय वाणिज्य बहुत विस्तृत था। क्रमशः काल आनेपर खड़क बन्दरके प्रवेशका पथ बालूसे रुक गया। फिर थोड़ी दूर दक्षिण वर्तमान कराची नगरके स्थानपर 'कलाचीकूण' नामक दूसरा क्षुद्र नगर रहा। इसी स्थानसे कराचीकी चारो ओर व्यवसाय वाणिज्यका लेनदेन बढ़ा। क्रमशः यहां दुर्ग बना था। फिर मसकट नगरसे तोप मंगा दुर्गकी रक्षा की गयी। अन्तको शाहबन्दरका व्यवसाय बिलकुल बन्द हो जानेसे यह स्थान सन्निहित हुवा। लोगोंके विश्वासानुसार उक्त कलाची नामसे ही 'कराची' शब्द निकला है।

करांचीन (सं० पु०) खञ्जन, खड़रैचा।

कराट (सं० क्ली०) कराय विक्षेपाय अटति, अट-अच्। थप्पड़, तमाचा।

करणग्राम काशी जिलेका एक ग्राम।

(भवि० ब्रह्मख० ११।४४)

कराड़ (हिं० पु०) १ क्रय करनेवाला, महाजन, जो माल खरीदता हो। २ वणिक् जातिविशेष। यह वनिये पञ्जाबमें उत्तरपश्चिम रहते हैं। महाजनी इनका धन्धा है। ३ नदीके ऊपरका हिस्सा, टीला। सम्यक् उच्च नदीतटको कराड कहते हैं।

कराड—१ बम्बईप्रान्तके सतारा जिलेका एक विभाग। इसकी भूमिका परिमाण ३८५ वर्ग मील है। महाभारतमें मञ्जयन्ती नगरीके साथ 'करहाटक' नामसे इस स्थानका उल्लेख आया है।

"नगरीं सञ्जयन्तीञ्च पाषण्डं करहाटकम्।
दूतैरेव वशे चक्रे करञ्चैनानदापयत्॥" (सभा ३१।७०)

दाक्षिणात्यवाले वनवासी प्रभृति प्राचीन स्थानके किसी किसी शिलाफलकमें भी कराटका नाम करहाटक लिखा है। स्कन्दपुराणके सह्याद्रिखण्डमें यह भूभाग काराष्ट्र नामसे उक्त है। सह्याद्रिखण्डके मतसे काराष्ट्र कोयनासङ्गमके दक्षिण और वेदवती नदीके उत्तर सब मिलाकर १० योजन पड़ता है।

"वेदवत्याश्चोत्तरे तु कोयनासङ्गदक्षिणे।
काराष्ट्रनाम देशश्च दुष्टदेशः प्रकीर्तितः॥" (उत्तरार्ध ३।३)

यहां अधिकांश हिन्दू रहते हैं। उनमें कराड़ ब्राह्मणोंकी ही संख्या अधिक है। कराड़-ब्राह्मण देखो।

२ कराड विभागका प्रधान नगर। यह कृष्णा एवं कोयना नदीके सङ्गम स्थान, अक्षा० १७° १८' उ० तथा देशा० ७४° १३' ३०" पू० पर अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः ११ सहस्र है। उसमें ८ हजार हिन्दू निकलते हैं। सब-जजकी अदालत, डाकघर, औषधालय प्रभृति विद्यमान है।

कराढ-ब्राह्मण (काराष्ट्र ब्राह्मण) महाराष्ट्र ब्राह्मणोंकी एक श्रेणी। जन्मभूमिके अनुसार यह ब्राह्मण भी कराड कहाते हैं। स्कन्दपुराणमें इन्हें अतिनिन्दित और दुष्ट लिखा है—

"काराष्ट्रो नाम देशश्च दुष्टदेशः प्रकीर्तितः॥३
सर्वे लोकाश्च कठिना दुर्जना पापकर्मिणः।
तद्देशजाश्च विप्रास्तु काराष्ट्रा इति नामतः॥४
पापकर्मरता नष्टा अभिचाररतास्तथा।
खरस्य अस्थियोगेन रेतः चित्ते विभावकम्॥५
तेन तेषां समुत्पत्तिर्ज्ञाता वै पापकर्मिणाम्।
तद्देशे मातृकादेवी महादुष्टा कुरूपिणी॥६
तस्याः पूजा प्रकर्तव्या ब्राह्मणो दीयते बलिः।
ते दक्षिणास्तथा नष्टा ब्रह्महत्यां करोति च॥७
न ज्ञाता येन सा देव्या कुलं तस्य क्षयं भवेत्।
एवं पुरा तया देव्या वरो दत्तो द्विजाय किल॥८
तेषां संसर्गमात्रेण सचैलं स्नानमाचरेत्।
तेषां देशान्तरे यातुं प्राप्तो योजनमध्यम्॥९
केवलं विषमाप्नोति पातकं ह्यतिदुस्तरम्।" (सह्याद्रिखण्ड ३।१२ अ०)

कराढ़ ब्राह्मण सकल ही शाक्त होते हैं। लोग कहते—पहले इनमें प्रति वर्ष देवी शक्तिके उद्देश एक

ब्रह्मपिशाच-बलि चढ़ानेकी प्रथा रही। १८१८ ई० से यह प्रथा एक बार उठ गयी है। इनका आचार व्यवहार अनेक अंशमें अपर महाराष्ट्रोंसे मिलता है। सुप्रसिद्ध महाराष्ट्र कवि मोरोपन्त कराड़ ब्राह्मण थे। इनमें भिन्न गोत्र और अनेक घर देख पड़ते हैं। यथा—

गोत्र	घर
काश्यप गोत्र	७२
अत्रिगोत्र	७१
भरद्वाजगोत्र	७०
जमदग्निगोत्र	७१
वसिष्ठगोत्र	८०
कौशिकगोत्र	३०
नैध्रुवगोत्र	२३
गौतमगोत्र	१९
गार्ग्य गोत्र	१६
मुद्गलगोत्र	८
विश्वामित्रगोत्र	१
बादरायणगोत्र	१
कौण्डिन्यगोत्र	१
उपमन्युगोत्र	१
आङ्गिरसगोत्र	१
लोहिताक्षगोत्र	१
वत्सगोत्र	६
माण्डव्यगोत्र	६
कुत्सगोत्र	३
वाधूलगोत्र	२
मार्कण्डगोत्र	२
पार्थिवगोत्र	२

मराठा देखो।

कर्णाटक प्रदेशमें कराड़ ब्राह्मण मिलते हैं। यह चित्पावनोंसे मिलते जुलते हैं। इनमें कुछ अधिक आशा रहता है। स्त्रियोंकी आंख भूरी या मोटी नहीं होती। विजयदुर्गा, आर्यदुर्गा और महालक्ष्मी इनकी कुलदेवता हैं। महिसूर राज्यके महाराजके गुरु माने जाते हैं। यह शक्तादि और अन्यान्य दूसरे ब्राह्मणोंकी भांति अध्ययन किया करते करते हैं। आजकल विद्यालयोंमें पढ़ते हैं। कराड़ बड़े सभ्य, अतिथिसेवी और आचारवान् होते हैं। इनमें कोई व्यवसायी, कोई ज्योतिषी और कोई भिक्षुक हैं। ऋग्वेद इनका प्रधान वेद है।

करात (हिं० पु०) कीराट, ४ जौकी तौल। इससे सोने, रौप्य या जवाहर तौलते हैं।

कराना (हिं० क्रि०) कार्यमें लगाना, करवाना।

करामत (अ० स्त्री०) १ आश्चर्यता, शक्तिमत्ता, अजूबी। २ अद्भुत आचरण।

करामतदारी (फा० स्त्री०) अलौकिकभाव, सिद्धिदारी।

कराबा (अ० पु०) काचपात्र विशेष, शीशेका एक बरतन। इसका आकार बड़ा और मुख छोटा रहता है।

करामर्द (सं० पु०) करं पा कम्पं मृद्नाति कर-मृद-अण्। करमर्दक, करौंदेका पेड़।

करामात (अ० स्त्री०) आश्चर्यव्यापार, सिद्धि, करिश्मा, अलौकिकी। यह शब्द 'करामत' का बहुवचन है। करामात दिखानेवालेको करामाती (सिद्ध) कहते हैं।

करामृद (सं० पु०) कीटैर्वि विकिरते अम्ल रसात् मृ कर्मणि अप्-अच्। अम्लफलक वृक्ष, करौंदेका पेड़।

करामृत, करामृद देखो।

करामर्दक (सं० पु०) करं कोमलं अम्ल रसात्, कर-मृद अप्। करमर्दक वृक्ष, करौंदेका पेड़।

करायजा (हिं० पु०) १ कुटज कोरैया। २ इन्द्रयव।

करायल (हिं० पु०) १ कलौंजी, मंगरैला। २ तेल या घृतसे किया हुआ बेसवार, तेल या घी-में पकाया हुआ मूंग या उड़दकी दालका भोज। पाक तर कारीके भोजको भी करायल कह दिया करते हैं।

करायिका (सं० स्त्री०) करायिव आचरति करायत कायते करतलध्वानात्, कर कायि-क्त टाप्। (अमरटीकायां भरत) १ बकाकारपक्षी छोटा बगला। २ पक्षिभेद, एक चिड़िया।

करार (हिं० पु०) १ नदीका ऊंचा तट, दरयाका

ऊंचा किनारा। यह पानीके काटसे निकल आता है। २ ठौर ठीक।

करार (अ० पु०) १ स्थैर्य, मज़बूती। २ धैर्य, धीरज। ३ सुख, आराम। ४ प्रतिज्ञा, कौल।

करारना (हिं० क्रि०) कां कां करना, श्रुतिकटु शब्द निकालना। यह क्रिया काकपक्षीका बोलना बताती है।

करारवीर—काशीका एक ग्राम। यह काशीसे ४ योजन दूर वायुकोणमें अवस्थित है। यवनपुर यहांसे बहुत नज़दीक पड़ता है। करारवीरमें एक प्राचीन दुर्ग विद्यमान है। (भवि० ब्रह्मखण्ड १०।१०१)

करारा (हिं० पु०) १ नदीका उच्च तट, दरयाका ऊंचा किनारा। २ टीला, ढूह। ३ करट, कौवा। ४ मिष्टान्न विशेष, एक मिठाई। (वि०) ५ कठोर, कड़ा। ६ सुदृढ़, मज़बूत, दिलका कड़ा। ७ कड़ा सेंका हुवा, मुरमुरा। ८ तीक्ष्ण, तेज़। ९ उत्तम, अच्छा। १० बड़ा, भारी। ११ बलवान्, ताकतवर।

करारापन (हिं० पु०) कठोरभाव, कड़ाई।

करारी (हिं० पु०) इकरार करनेवाला, जो वचन दे चुका हो। २ उपासक सम्प्रदायविशेष। यह काली, चामुण्डा प्रभृति देवीकी भयङ्कर मूर्ति पूजते हैं। भारतके नाना स्थानमें जो मल्लाकादि द्वारा अपना मांस छेद भिक्षा मांगते फिरते हैं, उन्हींको बहुतसे लोग करारी कहते हैं।

करारोट (सं० पु०) करे आरोटते भाति, कर-आ-रुट-अच्। अङ्गुरीयक, अंगूठी, हाथका छल्ला।

करार्पित (सं० वि०) हस्तसे अर्पण किया हुवा, जो हाथमें दिया गया हो।

कराल (सं० क्लो०) कराय चक्षुरोगादिविक्षेपाय अलति शक्नोति, कर-अल्-अच्। १ पर्णास, काली तुलसी। २ घृतादि भ्रष्ट वेसवार, करायल। (पु०) करं आलाति गृह्णाति अथवा भयप्रदर्शनाय अलति पर्याप्नोति, कर-आ-ला-क। ३ सर्जरसयुक्त तैल। ४ दन्तरोग भेद, दांतकी एक बीमारी। कुपित वायु दन्तका आश्रय पकड़ क्रम क्रम सब दांतोंको विकृत और भयानक भावसे उठा देता है। इसीको कराल रोग कहते हैं। यह असाध्य होता है। (माधवनिदान)

५ कस्तूरमृग, एक हिरन। ६ दैत्यविशेष, एक राक्षस। ७ गन्धर्वविशेष। ८ मत्स्यविशेष, एक मछली। ९ कृष्णार्जक, काला बबूल। (वि०) १० तुङ्ग, ऊंचा। दन्तुर, ऊंचे दांतवाला। ११ भयानक, डरावना। १२ प्रशस्त, खुला हुवा।

करालक, कराल देखो।

करालकर (सं० वि०) १ बलवान् हस्तविशिष्ट, ताकतवर हाथ रखनेवाला। २ बलवान् शुण्डयुक्त, ज़ोरदार सूंड़ रखनेवाला।

करालकर्णिक (सं० पु०) कुन्दपुष्पवृक्ष, कुन्दके फूलका पेड़।

करालकेशर (सं० पु०) करालः केशरो यस्य। सिंह, शेर।

करालत्रिपुटा (सं० स्त्री०) करालानि त्रीणि पुटानि यस्याः। लङ्का नामक शिम्बी धान्य, किसी किस्मका अनाज।

करालदंष्ट्र (सं० वि०) भयङ्करदंष्ट्राविशिष्ट, खूंख्वार दाढ़ रखनेवाला।

करालदंष्ट्रा (सं० स्त्री०) करालाः दंष्ट्रा यस्याः। १ काली। २ भयानकदन्तविशिष्टा स्त्री, खौफ़नाक दांतवाली औरत।

करालमञ्च (सं० पु०) सङ्गीततालविशेष, गानेका एक ताल। इसमें तीन खाली और दो भरे ताल लगते हैं। मृदङ्गमें करालमञ्च इस प्रकार बोलता है—धा केटे खन्ता केटेताग गदिघेने नागदेत धा।

करालम्ब (सं० स्त्री०) करं आलम्बते गरणार्थं गृह्णाति, लम्ब-अच्। १ करग्रहणकारी, हाथ पकड़नेवाला। (पु०) २ हस्त द्वारा साहाय्य प्रदान, हाथकी पकड़।

कराललोचन (सं० वि०) कराले लोचने यस्य। भयानक चक्षुविशिष्ट, डरावनी आखोंवाला।

करालवदना (सं० स्त्री०) करालं वदनं यस्याः। १ काली। २ भयङ्करमुखी स्त्री।

कराला (सं० स्त्री०) कराल-टाप्। १ शारिवा, अनन्तमूल। २ विडङ्ग।

करालाङ्ग (सं० क्लो०) विडङ्ग।

करालानन (सं० वि०) करालं आननं यस्य। भयङ्कर मुखविशिष्ट, डरावनी सूरतवाला।

करालाक्ष (स० त्रि०) दन्तुरवदन, जिसका दाँत बाहर निकला हो।

करालिक (सं० पु०) करालां करसङ्घमस्यास्ति करालिकं पचेर्विग्रह कराल कप् पत्वम्। १ वृक्ष पेड़। २ करवाल, तलवार।

करालिका (स० स्त्री०) दुर्गा देवी।

करालित (सं० त्रि०) कराल इतच्। भयङ्कर करा हुआ। २ भयङ्कर किया हुआ, जो बीभत्स बना दिया गया हो। ३ बढ़ाया हुआ।

करालो (स० स्त्री०) कराल-ङीप्। १ अग्निकी सात जिह्वाके अन्तर्गत जिह्वाविशेष, आगकी सात जीभोंमें एक जीभ।

"काली कराली च मनोजवा च सुलोहिता या च सुधूम्रवर्णा।
स्फुलिङ्गिनी विश्वरुची च देवी लेलायमाना इति सप्त जिह्वाः॥"
(मुण्डकोपनिषद्)

(पु०) २ मत्स्यावीकानित घोड़ा, जिसका पिछला भाग ऊँचा हो। जिसके मुँहमें या ऊपर एक बड़ा दाँत निकल आता, वह घोड़ा करालो कहाता है। (जयदत्त)

कराव (हिं० पु०) कर्म, कामकाज। यह शब्द प्रायः विवाहादि कर्मके लिये व्यवहृत होता है।

करावा, करवा देखो।

करास्फोट (स० पु०) करेण आस्फोटः मध्यलो० कर्म०। १ वक्षःस्थलपर एक हाथ लहकर उसके ऊपर अन्य हस्त द्वारा ताड़न, ताबड़तोड़। २ करताल, हाथ की मार।

कराह (स० पु०) १ वेदनासूचक स्वर, तकलीफ की आवाज। शरीरमें पीड़ा होनेसे मनुष्य कराहता है। २ कड़ाह, लोहेकी बड़ी कड़ाही।

कराहना (हिं० क्रि०) पीड़ित स्वरसे बोलना, कांखना, हाय हाय करना।

कराहा (हिं० पु०) कड़ाह, बड़ी कड़ाही।

कराही (हिं० स्त्री०) कड़ाही।

करि (हिं० पु०) करी, हाथी।

करिक (सं० पु०) करो शिलेलोऽस्ति यस्य, कन्। विट्खदिर, एक पेड़।

करिकणवल्ली (स० स्त्री०) करिकर्णः गजपिप्पलं वल्ली। चविका लता।

करिकणा (स० स्त्री०) गजपिप्पली, बड़ी पीपल।

करिकणावल्ली (स० स्त्री०) करिकणायाव वल्ली। चविका वृक्ष, चव्यका पेड़।

करिकर (सं० पु०) करिणः करः, ६ तत्। हस्ति-शुण्ड, हाथीकी सूंड़।

करिकर्णपलाश (स० पु०) हस्तिकर्णपलाश, बड़ा ढाक।

करिकाच (स० पु०) विकाल, चव्यका तनवोल।

करिका (स० स्त्री०) करो विलेखनमस्ति यस्याः, धर्माद्दित्वादच्। १ खरोंच, कटैया। २ नख-क्षत, नाखूनका दाग या जख़म।

करिकाल—कर्णाटकका एक नगर। यह अक्षा० १० ११´ उ० और देशा० ७० ११´ पू०पर तिरवाडोड़ नगरसे ४ कोस दक्षिण अवस्थित है। करिकाल अति प्राचीन नगर है। १०४० से १०८६ई० तक चालुक्योंके कर्णाटक अमरके समय यह नगर तहस किया गया था। यहां चंगरोंवोंसे करालोसो लड़ मरे। करिकाल नदी कावेरी नदीको शाखा है। इसको चारो ओर अपर्याप्त धान उत्पन्न होता है। अनेक यहांसे बाहर भेजते हैं।

करिकालचोल—एक विख्यात चोलराज। यह परा क्रम चोलके ज्येष्ठ पुत्र रहे। इन्होंने पाण्ड्यराज नीलगाङ्गको युद्धमें हराया था। फिर करिकाल चोलने कावेरीके बहावमें तञ्जोर जिला बचानेको एक बांध बनवाया। ८०० शकमें यह विद्यमान थे।

करिकुम्भ (स० क्ली०) करिणः कुम्भः ६-तत्। १ गजकुम्भ, हाथीके मस्तकको दहे जैसो जगह। २ गजचर्म।

करिकुम्भक (सं० पु०) नागकेसरचूर्ण।

करिकुसुम (सं० पु०) करो नागकेसरस्तद्वत् कुसुमं। १ नागकेसरवृक्ष। २ नागकेसरचूर्ण।

करिकृष्णा (सं० स्त्री०) गजपिप्पली, बड़ी पीपल।

करिकेसर (स० क्ली०) नागकेसर।

करिखई (हिं० स्त्री०) १ श्यामता, कालिख। २ कलङ्क, बदनामी।

करिखा (हिं० पु०) १ नीचता, कालिख। २ कलङ्क, बदनामी।

करिगर्जित (सं० क्लो०) करिण: गर्जितं गर्जनम्, भावे क्त। बृंहित, हाथीका चिङ्घार।

करिगह, करगह देखो।

करिङ्ग—मन्द्राज प्रान्तके राजमहेन्द्री जिलेका एक बन्दर। यह समुद्रके तटपर राजमहेन्द्री नगरसे १५ कोस दक्षिण-पूर्व अवस्थित है। नाना स्थानोंसे यहां जहाज़ आ लगा करते हैं। वाणिज्य-व्यवसाय भी खूब होता है। पहले यह नगर अधिक समृद्धि-शाली रहा। किन्तु अब वह बात देख नहीं पड़ती। १७८४ ई०को समुद्रसे तरङ्ग आनेपर करिङ्ग डूब गया था। उससे बहुत लोग मरे और मकान् गिर पड़े। इसके पार्श्वस्थ समुद्रको करिङ्गसागर कहते हैं। 'करिङ्ग' कलिङ्ग शब्दका अप-भ्रंश है। कलिङ्ग देखो।

करिचर्म (सं० क्लो०) गजचर्म, हाथीका चमड़ा।

करिज (सं० पु०) करिणो जायते, करि-जन-ड। पद्माल्लाली। पा ३।२।९८। गजशावक, हाथीका बच्चा।

करिजा (सं० स्त्री०) गजमुक्ता।

करिणी (सं० स्त्री०) करिन् स्त्रियां ङीप्। १ हस्तिनी, हथिनी। २ देवताविशेष, एक देवी। ३ वैश्यके औरस और शूद्राके गर्भसे उत्पन्न होनेवाली कन्या।

करिणीसहाय (सं० पु०) गज, हथिनीका जोड़ा हाथी।

करिदन्त (सं० पु०) गजदन्त, हाथीका दांत।

करिदन्ताभ (सं० क्लो०) मूलक, मूली।

करिदमन (सं० पु०) नागदमन, नागदौना।

करिदारक (सं० पु०) करिणं दारयति, करि-दृ-ण्वुल्। सिंह, शेर।

करिनासिका (सं० स्त्री०) करिण: नासिका। १ गज-नासिका, हाथीकी नाक। २ यन्त्रविशेष, एक बाजा।

करिनी (हिं०) करिणी देखो।

करिप (सं० पु०) करिणं पाति रक्षति, करि-पा-क। हस्तिपालक, महावत।

करिपत्र (सं० क्लो०) तालीशपत्र।

करिपत्रक, करिपत्र देखो।

करिपथ (सं० पु०) करिण: पथ, ६-तत्। १ गजके गमनयोग्य पथ, हाथीके चलने लायक राह। २ देव-पथ, हाथीकी राह। ३ जनपदविशेष, एक बसती।

करिपिप्पली (सं० स्त्री०) करिसंज्ञका पिप्पली, मध्य-पदलो०। गजपिप्पली, बड़ी पीपल।

करिपोत (सं० पु०) करिणं बध्नाति यत्र, बन्ध आधारे घञ्। १ हस्तिबन्धनस्तम्भ, हाथी बांधनेका खूंटा। (क्लो०) भावे घञ्। भावे। पा ३।३।१८। २ गजबन्धन, हाथीका बंधाव।

करिवर (सं० पु०) करिणां वर:। श्रेष्ठ गज, बढ़िया हाथी।

करिबू (हिं० पु०) हरिणविशेष, एक बारहसिङ्गा। यह अमेरिकाके उत्तरीय भ्रुवप्रदेशमें पाया जाता है। इससे लोगोंका बड़ा काम निकलता है। मांस खानेमें आता है। चर्म वस्त्ररूपसे व्यवहृत होता है। फिर उसका तम्बू और जूता भी बनता है। अस्थिसे छुरी प्रस्तुत करते हैं।

करिभ (सं० क्लो०) करीव भाति, भा-क। अश्वत्थ वृक्ष, पीपलका पेड़।

करिमकर (सं० पु०) काल्पनिक राक्षस, झूठा देव।

करिमाचल (सं० पु०) करिण' जन्तु' माचं आर्थ्य' लाति विस्तारयति, करि माच ला क। सिंह, शेर।

करिमुख (सं० पु०) करिणो मुखमिव मुखं यस्य। १ गणेश। ब्रह्मवैवर्तके गणेशखण्डमें लिखते—पार्वती-नन्दन गणेशके जन्म लेनेपर सकल देव सुन्दरमूर्ति देखने पहुंचे थे। भगवतीने क्रमश: सकल देवको आ लौटते देखा। किन्तु उस देवमण्डलीमें शनिको न देख उन्होंने अपने प्राण-प्यारे सुन्दर पुत्रको आकर देखनेके लिये उनसे वारंवार अनुरोध किया था। शनि इस भयसे गणपतिको देखने न गये—मेरी दृष्टिसे समुदय भस्म हो जाता है। अन्तत: भगवतीके आदे-शसे उन्हें जाना पड़ा। शनिने आकर भगवतीसे कहा था—मैं जिसे देख पाता, वही भस्म हो जाता है। वारंवार ऐसा कहनेपर भी भगवतीने उनसे गणेशको देखनेके लिये आग्रह प्रकाश किया। उस समय शनिने निरुपाय हो गणेशको देखनेके लिये अपने मुखवस्त्रका एक प्रान्त खोला था। उनकी दृष्टि

प्रथम गणपतिके मस्तकपर पड़ी। उससे मस्तक जल गया था। मस्तक विनष्ट होते देख शक्तिने अपनी गोद पर सिर धरदा जाता। पार्वती भी शिशुपुत्रको मस्तकहीन देख शोकसे कातर भयीं। उसी समय देववाणी हुई थी, 'उत्तरको ओर सिर किये एक हाथी सोता है। उसीका मुण्ड गणपतिका मस्तक बनेगा।' देवगणने अनुसन्धानको निकल दिया था—इन्द्रका उसी ऐरावत उसी प्रकार सोता है। उस समय अगत्या देवताओंने उसी करिका मुण्ड काट गणपतिके देहमें जोड़ दिया। इसी प्रकार गणपतिका करिमुख बना था। २ गजमुख, हाथीका मुंह।

करिया (हिं० पु०) १ कर्ण, पतवार। २ कर्णधार, मल्लाह, नाव चलानेवाला। ३ सर्प, काला सांप। ४ इक्षुरोगविशेष ऊखकी एक बीमारी। इससे रस सूखने लगता और पौदा काला पड़ता है।' (वि०) ५ कृष्णवर्ण, काला।

करियाई (हिं० स्त्री०) १ कालता, कारी कालापन। २ कालिख।

करियाद (सं० स्त्री०) जलहस्ती, दरयायी घोड़ा। यह एक दूध पीनेवाला जन्तु है। अफ्रीकाकी नदियोंमें करियाद मिल जाता है। इसका सिर मोटा और वर्गाकार होता है। मुंह बहुत बड़ा रहता है। चक्षु एवं कर्ण क्षुद्र और शरीर मोटा तथा भारी लगता है। पैर छोटे रहते हैं। पैरमें चार चार उंगलियां होती हैं। पूछ छोटी पड़ती है। पेटमें दो स्तन लगते हैं। चामपर बाल नहीं जमते। यह प्रायः नदियोंके बीच जगह रहता है। लम्बाई १० फीट होती है। पानीमें इसका दौड़ना बहुत अच्छा लगता है। किन्तु भूमिपर चालचाल धीमा यह अपना जीवन चलाता है। करियाद अनेक प्रकारका होता है।

करियारी (हिं० स्त्री०) १ कलिहारी, कलियारी, एक क्षुप। २ लगाम।

करिर (द० पु० स्त्री०) किरति विक्षिपति, कृ संज्ञायां इरच्। १ अंकुर, बांसका किल्ला। २ मरुगुल्म, एक झाड़। ३ घट, घड़ा।

करिरत (सं० क्ली०) करिणो रतमिव रतम्, मध्यपद लो०। १ कामशास्त्रोक्त एक प्रकार रति।

"[illegible]
[illegible]।" ([illegible])

२ गजका रमण, हाथीका भोग।

करिरा (सं० स्त्री०) हस्तिदन्तका मूल, हाथीके दांतकी जड़।

करिरी, करिर देखो।

करिप (सं० त्रि०) करिणं पाति हिनस्ति, करि-पा क। करिको मार डालनेवाला, जो हाथीको मौतके मुंहमें पहुंचाता हो।

करिवर, करिवर देखो।

करिवैजयन्ती (सं० स्त्री०) गजपताका, हाथीका निशान या झण्डा।

करिशावक (सं० पु०) करिणो शावकः। करि-शिशु, हाथीका बच्चा। पांच या दस वर्षतकके बच्चेको शावक कहते हैं। इसका संस्कृत पर्याय—कलभ, करभ, करिपोत, करिक, विक्क और विक है।

करिषण्ड (सं० क्ली०) करिणां षण्डम्। गजषण्ड, हाथियोंका झुण्ड।

करिष्ठ (सं० त्रि०) अतिशयेन कर्ता, इष्ठन्। अत्यन्त बहुकाम करनेवाला।

"[illegible] करिष्ठ।" ([illegible])

करिष्णु (सं० पु०) कृ इष्णुच्। करणशील, करने वाला।

करिष्यत् (सं० त्रि०) करनेको इच्छुक, करनेवाला।

करिष्यमाण (सं० त्रि०) करनेको प्रस्तुत, जो करने जाता हो।

करिसुत (सं० पु०) करिणः सुतः, ६-तत्। करि-शावक हाथीका बच्चा।

करिसुन्दरिका (सं० स्त्री०) करीव सुन्दरी, करि सुन्दरी संज्ञायां कन् टाप् अत इत्वम्। १ नागयष्टि। २ एक हाथ लम्बा करनेका मानविशेष, कपड़ा नापनेको एक गज। (जटाधर)

करिस्कम्भ (सं० क्ली०) करिणां समूहः, करिन् स्कम्भच्। १ गजसमूह, हाथियोंका झुण्ड। करि-

स्कन्धम्, ६-तत्। २ गजका स्कन्ध, हाथीका कन्धा। (त्रि०) करि स्कन्धमिव स्कन्धं यस्य। ३ करिकी भांति स्कन्धविशिष्ट, हाथीकी तरह कन्धा रखनेवाला।

करिहस्ताचार (सं० पु०) नृत्यभेद, किसी किस्मका नाच। यह एक टेगी भूमिचार है। इसमें हंस-स्थानक बना उभय पद तिर्यक् रखते और भूमिपर मर्दन करते हैं।

करिहां (हिं० स्त्री०) करिहांव देखो।

करिहांव (हिं० पु०) कटि, कमर। २ कोल्हूका मध्य भाग। यह गढ़ारीदार होता है। इसीमें कनेठा और मुजेला चक्कर खाया करता है।

करिहारी (हिं० स्त्री०) कलियारी, करियारी।

करी (सं० पु०) करः शुण्डः अस्ति अस्य, कर-इनि। १ हस्ती, हाथी। २ अष्ट संख्या, आठकी अदद।

करी (हिं० स्त्री०) १ कड़ी, धरन, काठका लम्बा और पतला शहतीर। यह छत पाटनेमें लगती है। २ कलिका, कली। ३ छन्दोविशेष, चौपैया। इसमें १५ मात्रा लगती हैं।

करीति (सं० पु०) महाभारतोक्त जनपदविशेष, एक बसती। (भारत, भीष्म)

करीना (हिं० पु०) १ छेनी, टांकी। इससे पत्थर गढ़ा जाता है। २ मसाला, कैराना।

क़रीना (अ० पु०) १ नियम, तरीका। २ प्रथा, चाल। ३ क्रम, सिलसिला। ४ व्यवहार, कायदा। ५ नैचेका एक हिस्सा। यह वस्त्रसे आच्छादित रहता है। करीना फरशीके मुंहपर जमकर बैठता है।

करीन्द्र (सं० पु०) करिणां इन्द्रः, ६-तत्। १ करि-श्रेष्ठ, बढ़िया हाथी। २ ऐरावत, इन्द्रका हाथी।

क़रीब (अ० क्रि० वि०) १ निकट, नज़दीक, पास। २ प्रायः, लगभग।

करीम (अ० पु०) १ ईश्वर। (वि०) २ करुणा-मय, मेहरबान्।

करीमखान्—१ एक पठान-दलपति। यह ई० अष्टा-दश शताब्दके शेषभाग चौतूके मित्र ग्वालियरका राज्य लूटने लगे। अन्तको सेंधियाने इन्हें पकड़ लिया था। किन्तु इन्होंने बहुतसा रुपया ले इन्हें छोड़ दिया। छूटनेपर यह अधिक प्रबल पड़े थे। देशके लोग करीमका नाम सुनते ही कांपने लगते। अनेक घटनों यह फिर इन्दौरमें पकड़े गये। कुछ दिन पीछे छूटनेपर इन्होंने अंगरेजोंके विरुद्ध अस्त्र उठाये थे। १८१८ ई०को करनेल आदमने इनके विपक्ष सैन्य भेजा। इन्होंने उस समय यशो-वन्त रायका आश्रय लेना चाहा था। किन्तु १५ वीं फरवरीको इन्हें बाध्य हो मालकोमके निकट बगला मानना पड़ो। करीमखानको जीविका निर्वा-हके लिये गोरखपुर जिलेमें बुरहियाबार मिला था। इनके सन्तान १८५७ ई०के विद्रोह पर्यन्त उक्त स्थानका आय उपभोग करते रहे।

२ ईरानी जन्द जातिके एक सरदार। इन्होंने जन्दों और माफियोंकी फौज जुटा पारस्यसे अफगा-नोंको भगाया था। १७५८ से १७७८ ई०तक करीम खाने ईरानमें निष्कण्टक राज्य किया। १७७८ ई०को २री मार्चको ८० वत्सरके वयसपर यह मर गये।

करीममाट (हिं० पु०) वन्यतृणविशेष, एक जङ्गली घास। यह पशुका खाद्य है।

करीर (सं० पु०-क्ली०) किरति क्षिपति आव-रणान्, कॄ-ईरन्। कॄगॄशॄपॄकुटिभिदिछिदिभ्यश्च ईरन्। उण् ४।३०। १ वंशाङ्कुर, बांसका कल्ला। यह कटु, तिक्त, अम्ल, कषाय, लघु, शीतल, रुचिकर और पित्त, रक्त, दाह तथा कृच्छ्रघ्न होता है। इसका पर्व निर्गुण है। (राजनिघण्टु) २ घट, घड़ा। ३ चतुरमास, कोई ऋतुवा।

"क्लिन्नं तैलम करीरेण सं लिप्य क्षिपति पचेत्त गन्धिता।" (सुश्रुत)

४ मरुभूमिजात उष्ट्रप्रिय कण्टकद्रुम विशेष, करील, कचड़ा। इसे हिन्दुस्तान तथा बङ्गालमें जंटकटारा, अरब एवं बम्बईमें कबर, सीरियामें कबार, तुरुष्कमें कबरिन, और पारस्यमें कबर या कुरक कहते हैं। (Capparis aphylla) संस्कृत पर्याय—क्रकर, ग्रन्थिल, क्रकच, निष्पत्रिका, करिर, गूढ़पत्र, करक और तीक्ष्णकण्टक है। यह वृक्ष भारतवर्षमें सचराचर उत्पन्न होता है। फल व्यवहारमें आया करता है। यह कटु, तिक्त, स्वेदजनक, उष्ण और

भेदक है। अर्श, कफ, वायु, आम, विषम शोथ और व्रणको करीर नाश करता है। यह बगालेमें पकता है। मात्रा २ माशे है। (वाग्भट)

सखबैन उल्-अदविया नामक ग्रन्थके मतानुसार इसके मूलको त्वक् पाचनीय है। यह वायुघ्न, कटु, परिष्कारक और पक्षाघात तथा सकल प्रकार वातरोगके लिये उपकारक है। इसका अर्क कानमें डालनेसे कीड़ा मर जाता है।

डिमकी साहब दूषित व्रणका इसे मर्हम बताते हैं।

यह घना और डालदार झाड़ है। प्रधानतः अंचलीके जंगलमें करीर उपजता है। अरब, दक्षिण (मिस्र) और नूबियामें भी यह पाया जाता है। वसन्त ऋतुमें आदिमें फूल और अक्षेत्र मास फल आते हैं। फल खाया जाता है। करीरका अचार भी लोग बना लेते हैं। इसमें पत्र नहीं लगते। डण्ठल हरा और पत्र-शून्य होता है। काठ हलका पीला रहता और घुना रहनेसे भूरा निकल पड़ता है। इसमें चमक, कड़ाई और लचीलापन अच्छी होती है। परिमाण प्रत्येक घन-फुटमें कोई ,२१ सेर बैठता है। इससे लोग छोटी कड़ियां, आरी और नावकी कोनियां तैयार करते हैं। यह दीमकों बचने और दिनोंके धोमुहोंमें भी लगता है। करीलकी लकड़ी बड़ती रहने और दीमक न लगनेसे मूल्यवान् समझी जाती है। यह जंगलोंमें भी अच्छी रहती है। डालें वटी भी मशालकी तरह जला करती हैं।

कवितामें भी करीलका अधिक उल्लेख है। भारतो इसपर भ्रमरकी जाति देख झुकती और बताती है। पत्र न आनेपर कवि इसीके पहलको बुरा बताते, वसन्तपर कोई दोष नहीं लगाते।

करीरक (सं॰ क्ली॰) करीर एव स्वार्थे कन्। १ बंसा डुर बांसका अंखुवा। २ युद्ध, लड़ाई।

करीरकुण (सं॰ पु॰) करीरस्य पाकः, करीर कुणच्। तत्र पक्वपूर्वे स्थिताधिकरीषिकृत् कुणपाश्रयी। पा ५।२।२४।

१ करीरपाक, करीलको तरकारी। २ करीरफल पाक, करीलके पकनेका समय।

करीरप्रस्थ (सं॰ पु॰) नगरविशेष, एक शहर। कारीरिप्रस्थ भी एक पाठ है।

करीरफल (सं॰ क्ली॰) करीरबीज, करीलका तुख्म।

करीरा (सं॰ स्त्री॰) करीर टाप्। १ चीरिका झींगुर। २ हस्तिदन्तमूल, हाथीके दांतकी जड़। ३ मनःशिला।

करीरिका (सं॰ स्त्री॰) करीरमिव आकृतिरस्याः, करीर ठन् टाप् च। १ हस्तिदन्तमूल, हाथीके दांतकी जड़। २ झिल्ली, झींगुर।

करीरी (सं॰ स्त्री॰) किरति, कृ-ईरन् गौरादित्वात् ङीष्। १ हस्तिदन्तमूल, हाथीके दांतकी जड़। २ चीरिका, झींगुर।

करील (हिं॰ पु॰) वृक्षविशेष, एक पेड़। करीर देखो।

करीष (सं॰ पु॰-क्ली॰) कीर्यते विक्षिप्यते, कृ ईषन्। कृतृभ्यामीषन्। उण् ४।२६। १ शुष्कगोमय, सूखा गोबर। २ पशुका पुरीषमात्र, गोबर। ३ वनमय गोमय, जङ्गली गोबर, बिनुवां कण्डा। इसका अग्नि अति उत्तम होता है। ४ पर्वतविशेष, एक पहाड़।

करीषक (सं॰ पु॰) करीष एव स्वार्थे कन्। १ करीष। करीष देखो। २ जनपदविशेष, एक मुल्क। (भारत, भीष्म)

करीषगन्धि (सं॰ त्रि॰) करीषस्य गन्ध इव गन्धो यस्य। शुष्क गोमयकी भांति गन्धयुक्त, सूखे गोबरकी तरह महकनेवाला।

करीषङ्कष (सं॰ त्रि॰) गोमय झाड़नेवाला, जो गोबर उठाता हो।

करीषङ्कषा (सं॰ स्त्री॰) करीषं कषति हिनस्ति, करीष कष-खच् मुम्। सर्वकूलाभ्रकरीषेषु कषः। पा ३।२।४२। वायु, हवा।

करीषाग्नि (सं॰ पु॰) करीषस्थितो ऽग्निः। शुष्क-गोमयवह्नि, सूखे गोबरकी आग।

करीषिणी (सं॰ स्त्री॰) करीषिन् स्त्रियां ङीप्। गोमयाधिष्ठात्री लक्ष्मी देवी।

"गन्धद्वारां दुराधर्षां नित्यपुष्टां करीषिणीम्" (श्रीसूक्त)

करीषी (सं० पु०) करीषः विद्यते यत्र, करीष-इनि। करीषयुक्त देश, सूखे गोबरका मुल्क।

करखी (हिं० क्रि० वि०) तिर्यक् दृष्टि द्वारा, तिरछी नज़रसे।

करुण (सं० पु०) करोति मनः आनुकूल्याय, कृ-उनन्। इदारिभ्य उन्न्। उण् ३।५३। १ स्वनामख्यात निम्बूक वृक्ष, किसी किस्मके नीबूका पेड। (Citrus decumana) इसे हिन्दीमें महानीबू, चकोतरा, बातावी नीबू या सदाफल, बंगलामें बतोर या बातापी नीबू, सिन्धमें विजोरा, गुजरातीमें ओबकोतरू, मराठीमें पपनस, मारवाडीमें चप्पा, तामिलमें बोम्बलिमस, तेलगुमें पाद-पन्डू, कनाडीमें सकोतराचव, मलयमें बोम्बेलिमरुङ्ग, महिसुरीमें पूमपलिमूस, ब्रह्ममें अङ्कतोनिस और सिंहली-में जमबूल कहते हैं। यह मलयद्वीपपुञ्ज, फ्रेण्डली और फिजीमें स्वभावतः उत्पन्न होता है। करुण जवद्वीपसे भारतमें आया है। उष्णप्रधान देशमें अधिकांश इसे लगाते हैं। भारत तथा ब्रह्ममें यह अधिक होता है। किन्तु दाक्षिणात्य तथा वङ्गदेशकी अपेक्षा आर्यावर्तमें यह कम मिलता है। बताविया से आने कारण ही इसे बतावी कहते हैं। इसका फल बहुत बड़ा रहता और तौलनेपर कभी कभी पांचसे दश सेरतक निकलता है। यह देखनेमें गोलाकार होता है। त्वक् चिकनी और पीली देख पड़ती है। गूदा सफेद या गुलाबी लगता है। गोंद किसी काम नहीं आता। यह वृक्ष सदा फला करता है। बम्बईके बाजारमें जो करुण दिसम्बर या जनवरी मास आता, वह सबसे अच्छा कहा जाता है।

राजवल्लभने इसके फलको कफ, वायु, आम तथा क्लेदोनाशक और पित्त-प्रकोपक बताया है।

२ शृङ्गारादि अष्टरसके अन्तर्गत तृतीय रस। साहित्यदर्पण इसका लक्षणादि इस प्रकार लिखता—बन्धुबान्धवादिके वियोगसे करुण रस उठता है। इसका कपोतवर्ण होता है। अधिष्ठात्री देवता यम हैं। करुणरसका स्थायिभाव शोक, आलम्बन-भाव शोच्य जन (जिसका वियोग पड गया हो) और उसके दाहादि-की अवस्था ही उद्दीपनभाव है। इसका अनुभाव देवनिन्दा, भूतलपर पतन, क्रन्दन, विवर्णता, ऊर्ध्व-श्वास, निर्वातस्थ प्रदीपकी भांति निर्जीववत् निश्वासकी रोक और प्रलाप है। करुण रसका व्यभिचार भाव वैराग्य, जड़ता और चिन्ता प्रभृति है। देवनिन्दाका उदाहरण नीचे देते हैं,—

> "विपिने क्व जटानिबन्धनं तव चेदं क्व मनोहरं वपुः।
> अनयोर्घटना विधेः स्फुटं ननु खड्गेन शिरीषकर्तनम्॥"
>
> (माधवीकर्णधृत राघवविलास)

सङ्गीतशास्त्रमें यह रागरागिनी करुणरसमें गेय है,—भैरव, भैरवी, रामकली, खट्, गान्धार, जोगिया, विभास, कुकुभ, देवकरी, असैया, विलावल, सिंदूरा, सिन्धु, मुलतानी, पूर्वी, टोड़ी, गौरी, केदारा, ईमन कल्याण, जयजयन्ती, हमीर, भूपाली, कान्हड़ा, खम्माच, झंझोटी, विहाग, वागेश्वरी, सूरत, गड़रा, मोहिनी, मालकोष, बहाली, मलार और ललित।

३ दया, मेहरबानी, दूसरेका दुःख दूर करनेकी इच्छा। ४ करुणाका विषय, मेहरबानीकी बात। "अनुरोदितीव करुणेन पत्रिणां विरुतेन॥" (माघ) ५ बुद्धदेव, किसी बुद्धदेवका नाम। ६ परमेश्वर। ७ प्राणियोंके अभयजनक परिव्राजक। ८ तीर्थविशेष। (कालिकापुराण) ९ फलितवृक्ष, मेवादार पेड़। १० मल्लिका वृक्ष, चमेली। ११ असुरविशेष। (त्रि०) १२ दयायुक्त, मेहरबान्। १३ शोकार्त, रञ्जीदा। (अ०) १४ शोकसे रो रो कर। (क्ली०) १५ पावन कर्म, पकीज़ा काम।

करुणध्वनि (पु० सं०) करुणासूचकः ध्वनिः। दुःख या शोकमें मानव मुखसे निर्गत शब्द, अफसोसकी आवाज।

करुणमल्ली (सं० स्त्री०) करुणा करुणयोग्या मल्ली। नवमल्लिका, मोतिया। (Jasminum sambac) इसे हिन्दीमें मोतिया, बेला, बनमल्लिका या मोगरा, बंगलामें मल्लिक, पञ्जाबीमें चम्ब, मराठीमें मोगरी, मारवाडीमें मोगरा, गुजरातीमें मोगरी, तामिलमें मल्लिप्पू, तेलगुमें बोडु मल्ले, कनाडीमें मल्लिगे, मलयमें

फूल सुख, ब्रह्मीमें मछि, सिंहलीमें पिचिमल, अरबीमें समन और फारसीमें गुले सुपेद कहते हैं।

करुणमल्ली एक सुगन्धिलता है। भारत, ब्रह्मदेश और सिंहलमें सर्वत्र २००० फीट ऊंचे स्थानमें उत्पन्न होती है। दोनों मौसमोंके उष्णप्रधान देशमें इसे लगाया करते हैं।

इसका पुष्प अति सुगन्धि होता है। भारतवर्षमें करुणमल्लीका तैल अधिक व्यवहारमें आता है। पुष्पको कांटकर तैलपर लगानेसे सुगन्ध बहुत उतरता है। नासूरपर पत्तोंका पुलटिस चढ़ता है। पत्ता-दर्में यह पागलपन, आंखकी कमजोरी और कुत्तेकी बीमारीपर चलती है।

पूर्वीय देशोंमें सुगन्धके कारण इसके पुष्पका बड़ा आदर है। अरबी, फारसी और संस्कृतके कवि प्राय इसका उल्लेख किया करते हैं।

करुणविप्रलम्भ (सं० पु०) करुणयुक्त विप्रलम्भ। शृङ्गार रसका एक भेद। नायक नायिकाके मध्य एकके परलोक जाने पर पुनर्वार मिलनकी आशासे जीवित व्यक्ति जिस प्रकार कष्टसे जीवन बिताता, उसे करुणविप्रलम्भ कहता है। जैसे—कादम्बरीके पुण्डरीक और महाश्वेता वृत्तान्तमें पुनः और पुण्डरीकके नाम विषयपर करुण रस ही पड़ता है। किन्तु देववाणी सुननेपर पुण्डरीककी मिलनीको आशा शृङ्गाररसका उद्दीपक है।

करुणवेदित्व (सं० क्ली०) करुणं दयां वेत्ति जानाति विद विदि णिनि भावे त्व। दयालुका धर्म, मेहरबानका धर्म।

करुणवेदी (सं० त्रि०) करुणं दयां वेत्ति परदुःखं अनुभवति, विद णिनि। दयावान् मेहरबान्।

करुणा (सं० स्त्री०) करोति चित्तं परदुःखहरणाय, कृ उनन् टाप। १ अपरके दुःखविनाशकी इच्छा, दया तरस। इसका संस्कृत पर्याय—कारुण्य घृणा, कृपा, दया अनुकम्पा, अनुक्रोश और शूक है। २ शोक, रंज, अफसोस। ३ रागका एक नाम। "सुरभ्य करुण कान्हा सुर्छना बनावहीं।" (कबीर १०७८) ४ सुतरम सुखिकी वनिता कन्या। ५ करुणवृक्ष।

करुणाकर (सं० त्रि०) करुणाया आकारः, ६ तत्। अत्यन्त दयालु, निहायत मेहरबान्। (पु०) २ पद्म-नाभके पिता।

करुणात्मक (सं० त्रि०) करुण करुणारस आत्मा यस्य बहुव्री०। करुणरसविशिष्ट, रहमदिल, अफसोससे भरा हुआ।

करुणात्मा (सं० पु०) करुणा दयाई आत्मा यस्य, बहुव्री०। दयावान्, मेहरबान्।

करुणादृष्टि (सं० स्त्री०) १ दयाकी दृष्टि, मेहरबानी। २ दृष्टि विशेष, एक नजर। यह शृङ्गारकी एक दृष्टि है। इसमें ऊपरसे पलक दबायी और आंसू गिरा गालकी ओरपर नज़र डाली जाती है।

करुणानिदान (सं० त्रि०) करुणा निदीयते निक्षिप्य दीयते येन, करुणा-नि-दा-ल्युट्। दयालु, मेहरबानी करनेवाला।

करुणानिधान करुणानिधि देखो।

करुणानिधि (सं० त्रि०) करुणा निधीयतेऽत्र, करुणा-नि-धा-कि। '[illegible]' भा ११।८।२१। दयावान्, मेहरबान्।

करुणान्वित (सं० त्रि०) करुणया अन्वितः, ३ तत्। करुणायुक्त, मेहरबान्।

करुणापर, करुणान्वित देखो।

करुणामय (सं० त्रि०) करुणा प्राचुर्येण अस्त्यस्य, करुणा मयट्। दयामय मेहरबान्।

करुणामल्ली, करुणमल्ली देखो।

करुणायुत (सं० त्रि०) करुणया युतः, ३ तत्। दयावान् मेहरबान्।

करुणारम्भ (सं० त्रि०) करुण करुणरस आरम्भो यस्य, बहुव्री०। १ करुणरससे आरम्भ कर लिखित, अफसोससे शुरू कर लिखा हुआ। (पु०) २ करुण-रसका आरम्भ, अफसोसका आगाज।

करुणार्द्र (सं० पु०) करुणया आर्द्रः, ३ तत्। अत्यन्त दयालु रहमदिल।

करुणार्द्रचित्त (सं० पु०) करुणया आर्द्रं चित्तं यस्य बहुव्री०। दयालुहृदय, रहमदिल।

करुणावान् (सं० त्रि०) मेहरबान्, रहमके लायक।

करुणाविप्रलम्भ, करुणविप्रलम्भ देखो।

करुणावृत्ति, करुणार्द्र देखो।

करुणावेदिता (सं० स्त्री०) करुणवेदित्व देखो।

करुणासागर (सं० पु०) करुणायां सागर इव, उपमि०। दयाका समुद्रस्वरूप, निहायत मेहरवान्।

करुणी (सं० पु०) करुणा अस्त्यस्य, करुणा-इनि। सुखादिभ्यश्च। पा ५।२।१३१। १ करुणायुक्त, दयावान्, मेहरवान्। २ शोकार्त, पुर-अफसोस। (स्त्री०) ग्रीष्मपुष्पी, गरमीमें फूलनेवाला एक पेड़। इसे कोङ्कणमें ककरखिंडली कहते हैं। करुणीका संस्कृत पर्याय—ग्रीष्मपुष्पी, रक्तपुष्पी, चारिणी, राजप्रिया, राजपुष्पी, सूक्ष्मा और ब्रह्मचारिणी है। यह कटु, तिक्त, उष्ण और कफ, वायु, आध्मान (पेट फूलना), विषवमन तथा ऊर्ध्वश्वासनाशक होती है। (राजनिघण्टु)

करुत्याम (सं० पु०) तुर्वसुवंशीय दुष्मन्त राजाके एक पुत्र। (हरिवंश ३२ अ०)

करुना (हिं०) करुणा देखो।

करुन्धक (सं० पु०) सूरके पुत्र और वसुदेवके भ्राता।

करुन्धम (सं० पु०) तुर्वसुवंशीय वैसाणुके एक पुत्र। (हरिवंश ३२ अ०)

करुम (वै० पु०) अथर्ववेदोक्त पिशाच विशेष।

> "ये शालाः परिनृत्यन्ति साय गर्दभनादिनः।
> कुसूला ये च कुक्षिलाः ककुभाः करुमाः स्रिमाः।
> तानोषधे त्वं गन्धेन विषूचीनान् विनाशय॥" (अथर्व ८।६।१०)

करुर (हिं०) कटु देखो।

करुवा (हिं०) कटु देखो।

करुवा (हिं० पु०) वृक्षविशेष, एक पेड़। यह दारचीनीसे मिलता जुलता है। दाक्षिणात्यके उत्तर कनाड़ेमें कडुवा उत्पन्न होता है। इसके सुगन्धि वल्कल तथा पत्रका तैल शिरःपीड़ादि रोगपर व्यवहार किया जाता है। फल दारचीनीकी अपेक्षा वृहत् आता और काली दारचीनी कहाता है।

करुवायी (हिं० स्त्री०) कटुता, तीखापन।

करुवार (हिं० पु०) १ नौदण्डविशेष, नावका एक डांड़। पतेका बांस अधिक लम्बा लगता है। वैतवारकी नाव इसीसे चलायी जाती है। २ लोहेका एक वस्त्र। इसके नोकदार किनारे मुंड़े रहते हैं। इससे काठ या पत्थर जोड़ा जाता है।

करू (हिं०) कटु देखो।

करू (सं० स्त्री०) कृ-ऊ। १ कर्तन, काट-छांट। २ क्षत, कटा हुवा।

करूकर (वै० क्ली०) ग्रीवा तथा कशेरुकाका ग्रन्थि, गर्दन और रीढ़का जोड़।

करूलती (वै० वि०) नष्टदन्त, दंतटूटा।

करूला (हिं० पु०) १ कङ्कणविशेष, हाथका कड़ा। २ स्वर्णविशेष, एक सोना। इसमें तोले पीछे ४ रत्ती चांदी रहती है। ३ कुल्ला।

करूष (सं० पु०) कृ-ऊषन्। जनपदविशेष, एक मुल्क। दन्तवक्र इस देशके अधिपति थे। (भारत, सभा ६ अ०) वर्तमान शाहाबाद जिलेका ही नाम करूष है। रामायणने इसका अवस्थान गङ्गातट पर लिखा है। पहले करूषमें वन अधिक था। ताड़का राक्षसी यहीं बसते रही।

करूषक (सं० पु०) १ वैवस्वत मनुके पुत्र। २ फलविशेष, फालसा।

करूषज (सं० पु०) करूषदेशे जायते, करूष-जन-ड। दन्तवक्र।

> "ताविहाय पुरुषोत्तौ शिशुपालकरूषजौ।" (भारत, आदि)

करूषाधिपति (सं० पु०) करूषस्य तन्नामकजनपदस्य अधिपतिः, ६-तत्। १ करूष देशके राजा। २ दन्तवक्र।

करेंसी (अं० स्त्री० = Currency) १ प्रचार, रिवाज, चलन। २ प्रचलित मुद्रा, सिक्का, चलता रुपया, सरकारी नोट।

करेजा (हिं० पु०) यकृत्, कलेजा, दिल।

करेजी (हिं० स्त्री०) पशुकी यकृत्का मांस, जानवरके कलेजेका गोश्त। चट्टानोंको तहमें जो सोंधी पपड़ी रहती, उसे जनता 'पत्थरकी करेजी' कहती है।

करेट (सं० पु०) करे कराङ्गुलिषु, अटति उत्पद्यते, करे-अट्-अच् अलुक्समा०। नख, नाखून।

करेटव्या (सं० पु०) करे अटं अटनं व्ययति, करे-

घट् भो च टाप् पद्दवूलमा०। करिकट् पक्षी, करीब चिड़िया। इसका सिर गठियेकी चकोर दवा है।

करेट (सं० पु०) के करि वायौ वा रेठति, क रेट कु। १ पक्षिविशेष, किसी क्रियाका कारण। इसका संस्कृत पर्याय—कर्करेटु, करटु और कर्कराटुक है।

करेटुक, करेटु देखो।

करेटुक (सं० पु०) १ करेटु पक्षी, एक सारस। २ कबंद, बैकड़ा।

करेणु (सं० पु०-स्त्री०) क एणु। उणादि। १ गज, हाथी। २ हस्तिनी, हथिनी। वैद्यक मतसे हस्तिनीका दुग्ध किंचित् कषाययुक्त, मधुररस, गुरु, स्निग्ध, स्थैर्यकर, शीतल, चक्षुको हितकर और बलकारक होता है। ३ कर्णिकार वृक्ष, कनेरका पेड़। ४ गन्धौषधिविशेष, एक बूटी। ५ उशीर सदृशाकार कन्दविशेष, एक दूबिया घास। इसके कन्दमें दूध बहुत होता है। आकार ... मिलता है। इसमें हस्तिकर्णपलाश जैसे दो पत्र निकलते हैं। गुणमें यह सोमरसके तुल्य है। (सुश्रुत)

करेणुक (सं० स्त्री०) कर्णिकारका विषमय फल।

करेणुका (सं० स्त्री०) करेणु स्वार्थे कन् टाप्। हस्तिनी, हथिनी।

करेणुपाल (सं० पु०) करेणु पालयति रक्षति, करेणु पाल णिच् अच्। हस्तिनी-पालक, हथिनीका महावत।

करेणुभू (सं० पु०) करेणो करेणुविषये भवति हस्ति शास्त्रप्रवर्तनाय प्रभवति, करेणु-भू क्विप्। १ पालकाप्य नामक मुनि। यही हस्तिशास्त्रके प्रवर्तक थे। (स्त्रि०) २ हस्तिनीसे उत्पन्न, हथिनीसे पैदा।

करेणुमती (सं० स्त्री०) नकुलकी पत्नी। यह चेदि राजकी कन्या थीं। (भारत, आदि ९५ अ०)

करेणुराज (सं० पु०) हस्तिराज या बलवान् हाथी, बड़ा या ताकतवर हाथी।

करेणुसुत (सं० पु०) १ पालकाप्य मुनि। २ गज-शावक हाथीका बच्चा।

करेणू (सं० पु० स्त्री०) कृ-एणू। १ गज, हाथी। २ हस्तिनी, हथिनी।

करेता (हिं० पु०) करेला, करियारा।

करेमर (सं० पु०) १ तुरुष्क नामक गन्ध द्रव्य, शिलारस लोबान। २ मूषिक, चूहा।

करेम्बुक (सं० पु०) करेषु हस्तिशुण्डासु अम्बुरिव भाति शोभते, कर अम्बु भा क। सुगन्ध, गन्धतृण, जोंककी तरह चमचमानेवाली घास। गन्धतृण देखो।

करेयाल (हिं० स्त्री०) छायानिम्ब, काली या मोठी नीम।

करेर (हिं० स्त्री०) वृक्षविशेष, एक कमड़ा। यह रेशमसे बनती और काली तथा पतली रहती है। पहाड़ियोंमें इसे अंगूर (Grape) कहते हैं।

करेमू (हिं० पु०) कलम्बु, एक घास। यह जलमें उत्पन्न होता है। जल पर करेमू फैल पड़ता है। इसका डंठल पोला और पतला रहता है। डंठलकी गांठसे दो पत्तोंसे पत्र फूटते हैं। लोग डंठलको साग रूपसे व्यवहारमें लाते हैं। करेमूका साग भी बनता है। यह अफीमके विषका महौषध है। इसका रस निकालकर पिलानेसे अफीम उतर जाती है। कलम्बी देखो।

करेर (हिं० वि०) कठोर, कड़ा।

करेला (हिं० पु०) लताविशेष एक बेल। इसमें कण्टक रहते और पांच निम्बुके पत्रसे मिलते हैं। चैत्र वैशाख मास यह फूलता है। इसके पटोलवत् फलमें रोम अधिक होते हैं। करेला अति कटु लगता है। इसका साग बनता है। लोगोंके विश्वासानुसार आर्द्रा नक्षत्रके प्रथम दिवस करेला भक्षण करनेसे मच्छर पर्यन्त पीड़ा नहीं होती। इसका पत्र क्षतस्थान पर प्रयोग किया जाता है।

करेल (हिं० पु०) १ मुद्गरविशेष। यह एक प्रकार मुद्गर है। इसे समय करसे घुमाते हैं। परिमाणमें करेल दो मुद्गरसे कम नहीं पड़ता। पादरेश गोला आर दोनोंसे इसे भूमिपर रख नहीं सकते। २ करेल भांजनेकी कसरत।

करेलनी (हिं० स्त्री०) एक ककड़ी। इसके डण्ठलको एकत्र कर ढेर लगाया जाता है।

करेला (हिं० पु०) १ कारवेल, एक बेल। यह

लता क्षुद्र होती है। इसके पत्र नोकदार और पांच भागमें विभक्त रहते हैं। फल लम्बा तथा गुल्ली-जैसा आता और अपनी त्वक् पर छोटा-बड़ा दाना लाता है। करेलेकी तरकारी बहुत अच्छी होती है। यह कच्चे आमका कुचला और मसाला भर तैलमें पकाया जाता है। भली भांति भूंजा करेला कई दिन तक नहीं बिगड़ता। इसका छोलन भी तैलमें तलकर खाते हैं। करेलेका अचार बाजारमें बिका करता है। इसे ग्रीष्म और वर्षा ऋतुमें बोते हैं। ग्रीष्म ऋतुका करेला फाल्गुन मास क्यारियोंमें लगाया जाता है। इसकी लता भूमि पर फैल पड़ती और तीन-चार मास चलती है। फल पोला निकलता और कलौंजी बनानेमें लगता है। वर्षा ऋतुका करेला किसी पेड़ या लकड़ीके ठाट पर चढ़ाया जाता है। यह कई वर्ष तक फूला फला करता है। फल सूक्ष्म एवं भरा रहता है। जङ्गली करेलेका नाम करेली है।

इसका अङ्गरेजी वैज्ञानिक नाम मोमोर्डिका चारनशिया (Momordica Charantia) है। इसे बंगलामें करला, उड़ियामें करेन, आसामीमें काकरल, पञ्जाबीमें करिला, सिन्धीमें करेली, मराठीमें कारला, मारवाड़ीमें कारली, गुजरातीमें करेलु, तामिलमें पावक्काचेटि, तैलङ्गुमें तेल्लकाकर, कनाड़ीमें कागलकाइ, मलयमें कय्पक्क, ब्रह्मीमें केह्निनगाबिन, सिंहलीमें करविल और अरबीमें क़िसाउल्बरी कहते हैं। यह समग्र भारतमें लगाया और मलय, चीन तथा अफरीकामें भी पाया जाता है। करेला नाना प्रकारका होता है। इसे फरवरी-मार्च मास उत्तम भूमिमें बोना चाहिये। क्यारियों और उनमें बोये जानेवाले बीजोंके बीच दो-दो फीटका अन्तर रहता है। पहले इसे प्रति सप्ताह दो बार सींचते हैं। लता फैल पड़ने पर सप्ताहमें एक ही बार पानी देना पड़ता है। १८७७-७८ ई०को दुर्भिक्षके समय खानदेश जिलेके लोगोंने करेलेकी पत्तियां चबा जीवन धारण किया था।

२ हारकी गुटिका। यह दीर्घ रहता और मालामें बड़ी गुटिका या कोरदार मुद्राके मध्य पड़ता है। ३ अग्निक्रीडाविशेष, एक आतशबाज़ी। कारेल देखो।

करेली (हिं० स्त्री०) क्षुद्र कारवेल्ल, छोटा करेला। इसका फल अतिक्षुद्र और कटु होता है।

करेवर (सं० पु०) कीर्यते क्षिप्यते पापाय: कविभिरिति यावत् करस्तस्मिन् म्रियते उत्पद्यते, करे वृ-अच्। सिल्हक, लोबान्।

करेत (हिं० पु०) सर्पविशेष, एक सांप। यह काला और ज़हरीला होता है।

करैल (हिं० स्त्री०) १ मृत्तिकाविशेष, कबिला मट्टा। यह काली होती है। ग्रीष्म ऋतुमें तड़ागका जल सूखने पर करैल निकलती है। यह अपनी कठोरताके लिये प्रसिद्ध है। इसकी दीवार बहुत मजबूत बनती है। पानीमें घोलनेसे करैल लसलसाने लगती है। यह शिर मलनेके भी काम आती है। कुम्हार इसे चाक पर चढ़ा खिलौने वगैरह तैयार करते हैं। २ भूमिविशेष, एक ज़मीन्। इसकी मिट्टी काली और चिकनी रहती है। यह भूमि मालव देशमें अधिक देख पड़ती है। (पु०) ३ करीर, बांसका अंखुआ।

करैला (हिं० पु०) कारवेल्ल, करेला।

करैली (हिं० स्त्री०) क्षुद्र कारवेल्ल, छोटा करेला।

करैलो (हिं० स्त्री०) कबिला मट्टी।

करोट (सं० पु०) के मस्तके रोटते दीप्यते, क-रुट्-अच्। शिरास्थि, मत्थेकी हड्डी, खोपड़ा। (Cranium)

करोट (हिं० स्त्री०) करवट, दाहने या बायें हाथके बल लेटनेकी हालत।

करोटक (सं० पु०) सर्पविशेष, एक सांप।

करोटन (अं० पु० = Croton) वृक्ष जातिविशेष, पौदेकी एक किस्म। यह गुल्मवत् (झाड़दार) होता है। त्वक् आर्द्र और रस कटु दुग्धवत् निकलता है। किसी किसी करोटनमें कण्टक भी रहते हैं। यह वृक्ष अनेक प्रकारके देखे जाते हैं। प्रत्येक करोटनमें मञ्जरी आती है। फलमें बीज रहते हैं। एरण्डादि इसी श्रेणीके वृक्ष हैं। करोटनका तैल और भस्म औषधमें व्यवहृत होता है।

करोटि (सं० स्त्री०) क-रुट् इन्। शिरोस्थि, खोपड़ी। कपाल देखो।

करोटिका, करोटि देखो।

करोटी (सं० स्त्री०) करोटि गौरादित्वात् ङीष्। शिरोस्थि, खोपड़ी।

करोड़ (हिं० वि०) एक कोटी एक सौ लाख, सौ लाख, १०००००००।

करोड़मुख (हिं० वि०) मिथ्यावादी, झूठा, डींगिया, गपोड़शंख।

करोड़पती (हिं० वि०) कोटि कोटि रुपयेका मालिक, करोड़ों रुपये रखनेवाला।

करोड़ी (हिं० पु०) तहसीलदार, खजांची, रोकड़िया।

करोत (हिं० पु०) करपत्र आरा।

करोत्कर (सं० पु०) करका उत्कर समूह। १ कर समूह किरणोंका ढेर। २ सुधाकर, भारी महसूल।

करोत्पल (सं० स्त्री०) करपद्म कंवल-जैसा हाथ।

करोदक (सं० स्त्री०) हस्तस्थित जल, हाथमें रखा या पड़ा हुआ पानी।

करोदना, करौना देखो।

करोद्देश (सं० पु०) हस्तप्रदेश, हाथका जरीा।

करोध (हिं०) क्रोध देखो।

करोना (हिं० क्रि०) किसी पैनी चीजसे रगड़ना, खुरचना।

करोनी (हिं० स्त्री०) १ खुरचन करोचन। यह दूध या दहिका जो पात्रमें चिपका रहनेसे खुर चकर उतारा जाता, वही करोनी कहाता है। प्रवादानुसार करोनी या करोचन खानेसे बालकोंकी बुद्धि मन्द पड़ जाती है। इसीसे स्त्रियां प्रायः अपने बालकोंको करोचन नहीं खिलातीं। २ अस्त्रविशेष, एक औज़ार। यह पितल या लोहेसे बनती और एक दूध या दहिके पात्रमें चिपके हुये अंशको खुरचनेमें चलती है।

करोर (हिं० वि०) कोटि, करोड़।

करोला (हिं० पु०) १ पात्रविशेष गडुवा। २ महुक, रोक।

करौआ (हिं० वि०) कृष्ण, श्याम, सांवला।

करौंछी (हिं० स्त्री०) १ कृष्णजीरक, काला जीरा।

करौट (हिं० स्त्री०) करवट, दाहने या बायें हाथकी तरफ लेटनेकी हालत। बायीं करौट लेटनेसे खाना जल्द हजम होता है।

करौंदा (हिं० पु०) १ करमर्दवृक्ष, एक कंटीला झाड़। इसके पत्र क्षुद्र रहते और निम्बके पत्रसे मिलते हैं। पुष्प यूथिकाकी भांति श्वेत एवं सुगन्धि लगते और देखनेमें बहुत सुन्दर लगते हैं। वर्षा ऋतुमें फल आते और फल होनेसे पकने तथा अचार बनानेके काममें आते-जाते। करौंदेसे लाखा मिल सकती और उसको रङ्गमें डालते हैं। लाखा लोहमेंसे लाल प्राप्त होता है। दाक्षिणात्यमें करौंदेसे लाहसे लेमनजौली और मुरब्बा बनाते जाते हैं। करम देखो।

२ गुल्मविशेष, एक झाड़। यह कण्टकाकीर्ण रहता और वनमें उपजता है। फल क्षुद्र एवं मिष्ट होता है। ३ कर्णरोगविशेष, कानकी एक बीमारी। कर्णके निकट जो गिलटी निकल आती, वही करौंदा कहलाती है।

करौंदिया (हिं० वि०) कृष्ण रक्तवर्णविशिष्ट, करौंदेका रङ्ग रखनेवाला। (पु०) २ वर्णविशेष, एक रङ्ग। यह वर्ण रक्त रहता, किन्तु उसमें नीलत्वका कुछ भाग झलकता है। यह बनानेको रङ्गकी तरह एक भाग मजीठका जल, चार कदम अम्बर और आठ भाग नील मिलानेसे तैयार होता है।

करौत (हिं० पु०) १ करपत्र, आरा। (स्त्री०) २ रखेली औरत।

करौता (हिं० पु०) १ करोत, आरा। २ करैल, काबिस मट्टी। ३ कराबा, बड़ी शीशी। (स्त्री०) ३ रखेली औरत।

करौती (हिं० स्त्री०) १ क्षुद्र करपत्र आरी। २ कराबा, कांचकी शीशी। ३ शीशेकी मट्टी।

करौना (हिं० पु०) अस्त्रविशेष, एक औज़ार। यह एक छेनी या खुरपा है। कसेरे इससे पात्रों पर नक्काशी बनाते हैं।

करौला (हिं० पु०) शिकारका आदमी, जो पशुक शिकारको हांका लगा उठाता हो।

करौली (हिं० स्त्री०) खड्ग, तलवार। यह सीधी रहती और भोंकनेमें चलती है।

करौली—१ राजपूतानेका एक देशीय राज्य। यह अक्षा० २६° ३´ एवं २६° ४८´ उ० और देशा० ७६° ३५´ तथा ७७° २६´ पू०के मध्य अवस्थित है। यहां भरतपुर और करौली एजेन्सीका तत्त्वावधान चलता है। इसके उत्तर एवं उत्तरपूर्व भरतपुर तथा धवलपुर, दक्षिणपश्चिम जयपुर और दक्षिण-पूर्व चम्बल नदी है। चम्बल नदी ही इसे ग्वालियरसे पृथक् करती है। भूमिका परिमाण १२०८ वर्गमील और लोकसंख्या प्रायः १५ लाख है।

करौली राज्य उच्च, निम्न और पर्वतमय है। उत्तर और गिरिमाला सीमाके प्राचीररूपसे मस्तक उठाये खड़ी है। गिरिका शृङ्ग: उच्चतामें १४०० फीटसे अधिक नहीं। यहां चम्बल नदी ही प्रधान है। इस नदीसे पांच शाखा निकल करौलीमें बही हैं। नाम पञ्चनद है। पञ्चनद उत्तरमुखी हो बाणगङ्गासे मिल गया है। करौली नगरके दक्षिण-[illegible] कालिसर और जिरीते नामसे दो क्षुद्र नदी बहती हैं। इन दोनों नदीमें वर्षाकाल भिन्न अपर समय अतिसामान्य जल रहता है। यहां पर्वतोंके कुण्डोंका जल उष्णप्रधान और अस्वास्थ्यकर है।

पर्वतमें प्रधानतः दो प्रकारका प्रस्तर है—एक विन्ध्य और अपर मणिप्रस्तर। जहां मणिप्रस्तर रहता, उसीको चारो ओर अधिक परिमाणसे विन्ध्य भी देख पड़ता है। स्थानीय चूनेका पत्थर नीलाभ, कपिल अथवा हरिद्वर्णविशिष्ट होता है। बढ़िया बिल्लौरी पत्थर भी पाया जाता है। ताजमहलका प्रायः अनेकांश करौलीके पत्थरसे ही बना है। यहांका एक पत्थर अनेक स्थानमें चूनेके लिये फूंका जाता है। करौलीके अधिकांश ग्राम प्रस्तरनिर्मित हैं। यहांसे उत्तरपूर्व पर्वतपर लौह-खनि निकली है।

जीवजन्तु—चम्बल नदीके निकट वनमें सिंह, भल्लुक, हरिण, साभर, और नीलगाय बहुत हैं। नगरके पास शशक, उद्बिड़ाल, चक्रवाक, कुक्कुट, एवं जलाशयादिमें वक, हंस, कारण्डव प्रभृति नाना प्रकार पक्षी देख पड़ते हैं। मत्स्यादि भी बहुत हैं। करौलीके पश्चिमांशमें विस्तर सर्प, कुम्भीर प्रभृति सरीसृप रहते हैं।

उद्भिज्ज—करौलीका उच्च गिरिमालामें बड़ा कोयी वृक्ष नहीं। चम्बलनदीके ऊर्ध्वभागमें धातकी, पलाश, खदिर, कार्पास, शाल, गर्जन, और निम्बवृक्ष होता है। यहां कृषिमें यव, गेहूं, चना, तम्बाकू, धान्य, ज्वार, बाजरा, इक्षु और सनकी उत्पत्ति है। स्थानीय जलाशय, कुण्ड और चम्बल नदीके तटमें कृषिकार्य चलता है।

वाणिज्य—यहां वस्त्र, लवण, इक्षु, तुला, महिष एवं वृष मंगाया और धान्य, कार्पास तथा छाग बाहर भेजा जाता है।

जलवायु—स्थानीय जलवायु अधिक मन्द नहीं। ज्वर, अतिसार और वातरोग लग जाता है। किन्तु दूसरी बीमारी इस राज्यमें नहीं होती।

इतिहास—मुकजीकी कारिकाके अनुसार करौलीके प्रथम राजा धर्मपाल थे। नीचे उक्त कारिका दी जाती है—

मुकजीकी कारिका।	वयानभाटका विवरण।	समय।
धर्मपाल		
सिंहपाल		
जगपाल		
नरपालदेव		
संग्रामपाल		
कुण्ठपाल		
भीमपाल		
पोचपाल		
विरामपाल		
ज्येष्ठपाल		
विजयपाल	विजयपाल	१०३० ई०।
तिहुनपाल	तिहुनपाल	१०६० ,,
धर्मपाल	क्षितिपाल	१०९० ,,
कुमार (कुंवर) पाल	धर्मपाल	११२० ,,
अजयपाल	कुंवरपाल	११५० ,,
हरिपाल	अजयपाल	११८० ,,
सोहपाल	हरिपाल	११९६ ,,
अनङ्गपाल	सोहनपाल	१२१० ,,

नृपतियोंकी तालिका।	संवत्
हरीपाल	१५५१ ,,
रामपाल	१५६१ ,,
विनोदपाल	१५७६ ,,
दिनपाल	१६०८ ,,
गजपाल	१६११ ,,
मुकुन्दपाल	१६१८ ,,
अर्जुनपाल (१म)	१६४७ ,,
विक्रमसिंहपाल	१६६६ ,,
अभयचन्दपाल	१६९८ ,,
	१७० ,
चन्द्रसेनपाल	१७१२ ,,
भारतीचंद	१७४७ ,,
गोपालदास	१७६६ ,,
द्वारकादास	१७७८ ,,
	१७८ ,,
मुकुन्द	१७९८ ,,
जगमनपाल	१८१७ ,,
धर्मपाल (१म)	१८१६ ,,
रतनपाल	१८२८ ,,
कुंवरपाल	१८३० ,,
धर्मपाल (२य)	१८४८ ,,
गोपालसिंह	१८०१ ,,
तुरसमपाल	१८१४ ,,
मानकपाल (३य)	१८२८ ,,
हरबक्सपाल	१८६० ,,
प्रतापपाल	१८९१ ,,
नरसिंहपाल	१९०६ ,,
मदनपाल (२य)	१९११ ,,
लक्ष्मणपाल	१९२६ ,,
अर्जुनपाल	१९३२ ,,

करौलीके राजा अर्जुनपाल अपनेको कृष्णके वंशधर और यदुवंशीय बताते थे। पहले यह वंश वृन्दावनके निकट मथुराजीमें वास करता था। किसी समय बयानेमें भी इनका राजत्व रहा। १०१९ ई०को मुसलमानोंने वह स्थान अधिकार किया था। उस समयसे इस वंशने करौलीमें आ अपना राज्य जमाया। १४५४ ई०को मालवपति महमूद खिलजीने करौली आक्रमण किया था। अकबर बादशाहने मालव आपसे पीछे इस राज्यको दिल्लीमें मिला लिया। मुगलोंके गौरवका रवि जब डूब गया, तब महाराष्ट्रोंने इस स्थानको अधिकार कर २५०००) रु० वार्षिक कर लगा दिया। १८१७ ई०को सन्धिमें करौलीका उपभोग अंगरेजोंको सौंपा था। अंगरेजोंने करौलीके राजासे यह बन्दोबस्त बांधा—विपद् पड़नेसे करौलीके राजा सैन्यसंघ द्वारा अंगरेजोंको यथासाध्य साहाय्य देंगे। फिर करौलीका राज्य अंगरेजोंके आश्रित हुआ।

१८५२ ई०को महाराज नरसिंहने दत्तक छोड़ा था। उनके मृत्युके दिन न रहनेसे करौलीको अंगरेजी राज्यमें मिलानेकी बात चली। किन्तु अनेक कष्ट आने पीछे राजाके आत्मीय मदनपालको राज्यका सिंहासन सौंपा गया। मदनपालने १८५७ ई०को सिपाहीके समय छोड़के विद्रोहियोंके विपक्ष सैन्य भेज अंगरेजोंको अधिक साहाय्य दिया था। इसीसे अंगरेजोंने उनको जि, सी, एस, आईके उपाधिसे विभूषित किया। इसी कालसे १७ तोपोंकी सलामी भी हो गयी थी। १८६९ ई०को मदनपालका मृत्यु होनेपर दो राजाओंके पीछे १८७५ ई०में अर्जुनपालको करौलीका सिंहासन मिला।

करौली राज्यके महसूलसे कितना ही कर दिया जाता है। यहां रीतिके अनुसार पुलिस नहीं। राजाके सिपाही ही पुलिसका काम करते हैं। करौली-में २६० सवार, १७०० पैदल, १२ गोलन्दाज और ४० तोपें हैं। सिपाही निम्नलिखित १२ दुर्गमें रहते हैं—करौली नगर, ऊंटगढ़, मन्दरैल, नारौली, सपोतरा, दौलतपुर, बाढ़ी, जमूरा, निम्दा, खुदा, उन्द और बोदार। करौलीकी टकसाल अलग है। उसमें चांदीका रुपया बनता है।

२ करौली राज्यका प्रधान नगर। यह अक्षा० २६° ३०´ उ० और देशा० ७७° १´ पू०पर मथुराके ३१ कोस दूर अवस्थित है। किसी किसीके मतानुसार यदुनन्दनके प्रतिष्ठित कल्याणजीके मन्दिरसे ही इस नगरका नाम करौली पड़ा। १३४८ ई०को अर्जुनदेवने यह नगर बसाया था। किसी समय

बढ़ते भी पार्वतीय मीना जातिके उत्पातसे इसकी समृद्धि मिट गयी। १५०६ ई०को राजा गोपाल-दासके शासनकाल इस नगरने पूर्वश्री पायी थी। उसी समय यहां बहु सुरम्य हर्म्य बने। नगर प्रायः एक कोस है। इसकी चारो ओर सिलौरी पत्थरका प्राचीर खड़ा है। नगरमें घुसनेको ६ सिंहद्वार और ११ गुप्तद्वार हैं। कारीतोके मध्य गोपालदासके समयका एक सुवृहत् राजप्रासाद बना है। प्रासादको चारो ओर पत्युच्च प्राचीर है। सिंहद्वार दो हैं। प्रासादके मध्य राजमहल और दीवान-खास नामक गृह देखने योग्य है। इन दोनों गृहोंका चित्र विचित्र कारुकार्य और शिल्प-नैपुण्य देखनेसे निर्माणकारियोंकी यथेष्ट प्रशंसा करना पड़ती है। यहां शिकारगम्ब, शिकारमहल और आममहल नामक तीन मनोरम उद्यान बने हैं।

कर्क (सं० पु०) क-क। इदाधातोर्विकविमाः कः। उण् ३।४०। १ श्वेत अश्व, सफ़ेद घोड़ा। २ कुलीर, केकड़ा। इसका शरीर वल्कलसदृश शल्कास्थिसे आच्छादित रहता है। पाद दश होते हैं। उनमें अगला जोड़ा चुङ्गल बन जाता है। ३ दर्पण, आयीना। ४ घट, घड़ा। ५ कर्कट राशि। पुनर्वसुके अन्तिम चरण, पुष्या और अश्लेषा नक्षत्रपर यह राशि रहता है। ६ अग्नि, आग। ७ तिल। ८ सौन्दर्य, खूबसूरती। ९ कण्टक, काटा। १० कर्कटशृङ्ग, ककड़ासींगी। ११ कङ्कर, किसी क़िस्मका पत्थर। १२ बदरी वृक्ष, बेरका पेड़, बेरी। १३ बिल्ववृक्ष, बेलका पेड़। १४ गन्धक। १५ काक, कौवा। १६ कङ्कपक्षी, एक चिड़िया। १७ मानभेद, एक तौल। १८ वृक्ष-विशेष, एक पेड़। १९ कात्यायनश्रौतसूत्रके एक भाष्यकार। (वि०) २० शुभ्रवर्ण, सफ़ेद। २१ श्रेष्ठ, बड़ा। २२ उत्तम, अच्छा।

कर्क—राष्ट्रकूटाधिपति गोविन्दराजके पुत्र। खोदित शिलालेखके अनुसार यही प्रथम कर्क रहे। इनके दो पुत्र थे—इन्द्रराज और कृष्णराज। कर्कके मरने-पर राष्ट्रकूटराज्य दो भागमें बंट गया। ६८५ ई०को कर्क राज्य करते थे। राष्ट्रकूट देखो।

राष्ट्रकूट-वंशीय २य कर्क—गुजरातराज ३य इन्द्रके पुत्र रहे। उनका अपर नाम सुवर्णवर्ष था। वह गुजरातमें राजत्व चलाते थे। २य ध्रुवराज उनके पुत्र रहे। बरदा और अपर स्थानके ताम्रशासन और शिलालेखमें उनका समय ७३४ और ७४९ शक निर्दिष्ट है। उक्त उभय राष्ट्रकूटराज प्रबल पराक्रान्त थे। इस वंशमें एक ३य कर्क भी रहे। उनका अपर नाम अमोघवर्ष वा वल्लभनरेन्द्र था। पिता ४र्थ कृष्णराज रहे। समय ९७२-७३ ई० बताया जाता है।

कर्क उपाध्याय—कात्यायनश्रौतसूत्र और पारस्कर-गृह्य-सूत्रके भाष्यकार। सायणाचार्यसे पहले यह विद्य-मान रहे। सायणने अपने वेदभाष्यमें कर्कका मत उद्धृत किया है।

कर्कखण्ड (सं० पु०) कर्कः खण्डः भूमिभागो यत्र, बहुव्री०। जनपदविशेष, एक मुल्क। (भारत, वन २११-७८)

कर्कचिर्भिटिका, कर्कचिर्भिटी देखो।

कर्कचिर्भिटी (सं० स्त्री०) कर्कवर्णा शुक्ला चिर्भिटी, मध्यपदलो०। १ चिर्भिटी, छोटी ककड़ी। २ कर्कटी भेद, किसी क़िस्मकी ककड़ी।

कर्कट (सं० पु०) कर्क-अटन्। १ वृक्षविशेष, एक पेड़। इसका संस्कृत पर्याय—कर्क, क्षुद्रधात्री, क्षुद्रामलक और कर्कफल है। फल छोटे आंवलेके बराबर होता है। यह रुच्य, कषाय, अतिदीपन, कफपित्तकर, ग्राही, चक्षुष्य, लघु और शीतल है। (राजनिघण्टु) २ जलजन्तुविशेष, केकड़ा। इसका संस्कृत पर्याय—कर्कटक, कुलीर, कुलीरक, संदंशक, पङ्कवास और तिर्यक्गामी है। इसको बंगलामें काकड़ा, मराठीमें दरजाका केकड़ा, तामिलमें कड्ल-नांडु, तेलगुमें समुद्रपु, मलयमें कपितिङ्ग, फारसी-में पञ्चपा, अरबीमें खिरचिङ्ग, लाटिनमें कानसर (Cancer) और अंगरेज़ीमें क्राब (Crab) कहते हैं। युरोपीय प्राणितत्वविदोंने कर्कट जातिको दृढ़ा-वरणविशिष्ट दशपादी जीवश्रेणी (Crustaceans of the order Decapoda)के मध्य माना है।

इसके वक्षःस्थलमिःसृत पांच जोड़े प्रत्यङ्ग होते हैं। इसीसे फारसीमें इसे 'पञ्चपा' अर्थात् पञ्चपद-

विभिन्न कहा है। मध्यदेशमें मर्मोक पार्श्वमें आधि-न्निम वेष्टित है।

कर्कट पृथिवीके नाना स्थानमें रहता है। फिर यह कयी प्रकारका है। समुद्रमें रहनेवाला कर्कट स्वभावतः बहुत बड़ा होता है। किन्तु जो नदीमें वास करता, वह सामुद्रिक कर्कटकी अपेक्षा क्षुद्र पड़ता है। फिर जलाशयमें रहनेवाला नदीके कर्कटसे भी छोटा निकलता है। सकल प्रकार कर्कटका पृष्ठावरण देखनेमें समान नहीं लगता। देश भेद और जलवायुके अवस्थाभेदसे नाना स्थानपर कयी आकारका कर्कट होता है। यह अण्डज जीव है। प्रथमावस्था पर आद्यवस्थामें कर्कट अति क्षुद्र डिम्बाकार रहता है। क्रमशः पानीसे डिम्ब फटनेपर यह निकल पड़ता है। उस अवस्थामें इसको किसी प्रकारका कीड़ा समझनेसे भ्रम उत्पन्न होता है। यह डिम्बसे निकलते ही जलमें तैरने लगता है। उस समय इसको अनेक विपद् झेलना पड़ता है। जलचर जीव अपना आहार समझ कयी जात कर्कट पकड़कर खा जाते हैं। यह जितना ही बढ़ता, उतना ही इसका रूप भी बदलता है। प्रथमावस्थासे पांच प्रकार रूप बदलनेपर प्रकृत कर्कट रूप देख पड़ता है।

यह समुद्रके अतल सलिल, उसके तट अथवा सलिल निकटस्थ पर्वतके गर्तमें रहता है। फिर उस जलमें भी कर्कट गर्त बना वास करता जहां समुद्र अथवा नदीका जल समय-समय पहुंचता है। दो एक जातिको छोड़ समस्त प्रकार कर्कट पद द्वारा तैर नहीं सकता, पर जलपर घूमा करता है।

इसके बराबर झगड़ालू और शुल्कड़ जलचर जीव दूसरा नहीं होता। बहुत कर्कट एकत्र होते ही युद्ध लग पड़ता है। बलवान् विजय पाता और अति-दीन मारा जाता है। शीतकालको यह गभीर जलमें रहता, फिर ग्रीष्म समागमपर तटके निकट आ पहुंचता है। दक्षिणका सकल प्रकार कर्कट मानवजातिके खाने लायक होता है। राजनिघण्टुके मतसे यह मलमूत्रपरिष्कारक, सन्धानकारी (भग्नस्थानको जोड़ लगानेवाला) और वातपित्तनाशक है। कृष्ण-कर्कट अर्थात् काला केकड़ा बलकारक, ईषत् उष्ण और वातनाशक होता है।

२ कटफली, करकरा, एक चिड़िया। ३ पद्ममूल, कमलकी मोटी जड़। ४ तुम्बी, लौकी। ५ मेषादि द्वादश राशिमें चतुर्थ राशि। यह राशि पुनर्वसु नक्षत्रके शेष पादसे पुष्या और अश्लेषा नक्षत्र तक रहता है। इसकी देवता कर्कटाकृति है। उसका पृष्ठदेश उन्नत होता है। यह श्वेतवर्ण, जलप्रकृति, स्निग्ध, जलचर, विप्रवर्ण, उत्तर दिक्पाल, बहुकीटक और बहु सन्तानशाली है। कर्कट राशिमें जन्म लेनेसे मनुष्य कपटचित्त, बहुभाषी, मन्मथाकुल, धनशाली और मत्सरी निकलता है। फिर जन्मकालीन चन्द्र इस राशिमें रहनेसे मानव सुखशीलादि बहु कला मित्र, निर्मलहृदि, क्षम, सुगन्धप्रिय, जलकेलिप्रिय, धनवान्, बुद्धिमान् और दाता होता है। जो कर्कट लग्नमें जन्म ग्रहण करता, वह भोगी सर्वजनप्रिय, मिष्टान्नपानभोगी और बान्धवप्रिय रहता है।

७ सर्पविशेष, एक सांप। ८ कलश, घड़ा। ९ कीटक, कीड़। १० कण्टक, कांटा। ११ रोगविशेष, एक बीमारी (Cancer)। यह अर्बुदजात रोग असाध्य होता है। १२ तुलादण्डका आद्यन्त भाग तराजूको डण्डीका टेढ़ा सिरा। इसीमें पलड़ेको रस्सी बंधती है। १३ मच्छलको चोंगा, दाय रेंका निकल ऊपर। १४ पारसपीपल वा सेमरका पेड़। १५ बिल्ववृक्ष, बेलका पेड़। १६ कर्कटशृङ्गी, ककड़ासींगी। १७ सन्दंश। १८ हस्तबन्धविशेष, नाचको एक क्रिया। इसमें हस्तद्वयको अङ्गुलि बाह्य एवं अभ्यन्तर रूपसे मिला चढ़ाये जाते हैं। यह आकर्षणके भावको बताता है।

कर्कटक (सं॰ पु॰ स्त्री॰) कर्कट एव स्वार्थे कन्। १ कर्कट, केकड़ा। २ कर्कटराशि। ३ वृक्षविशेष, एक पेड़। ४ वाग्भट मत नासिका अस्थिभङ्गविशेष, हड्डी टूटनेकी बीमारी। ५ विषविशेष, एक ज़हर। यह कन्दोत्पादिक स्थावरकन्द विषमें अन्यतम है। ६ औज़ार, चीमटा। यह केकड़ेके पञ्जेकी भांति

टेढ़ा रहता है। ७ इक्षुमेद, किसी किस्मकी ऊख। ८ इक्षु, ऊख। ९ काष्ठामलक, जङ्गली आंवला। १० सन्निपातज्वर विशेष, एक बुखार। यह मध्यहीन-प्रवृद्ध वातादिसे उत्पन्न होता है। इससे व्यथा, वेपथु, तृष्णा, दाह, गौरव, अग्निमान्द्य प्रभृति रोग लग जाते हैं। फिर अन्तर्दाह और वाक्यनिरोध भी हुआ करता है। (भावप्रकाश) ११ कर्कटशृङ्ग, ककड़ासींगी।

कर्कटकरज्जु (सं॰ पु॰) रज्जुविशेष, एक रस्सी। इसमें केकड़ेके पञ्जे-जैसी एक कील लगी रहती है।

कर्कटकास्थि (सं॰ क्लो॰) कुलीरकास्थि, केकड़ेकी खोल।

कर्कटकी (सं॰ स्त्री॰) १ कर्कटशृङ्गी, ककड़ासींगी। २ कर्कटस्त्री, मादा केकड़ा।

कर्कटक्रान्ति (सं॰ स्त्री॰) निरक्षरेखासे साढ़े तेरह कोस उत्तरस्थित अक्ष-रेखा, सरत-सरतान् (Tropic of cancer)।

कर्कटचरण (सं॰ पु॰) कुलीरकपाद, केकड़ेका पैर।

कर्कटच्छदा (सं॰ स्त्री॰) १ पीतघोषा, पीले फूलकी तरोयी।

कर्कटवल्ली (सं॰ स्त्री॰) १ गजपिप्पली, बड़ी पीपल। २ शुकशिम्बी, खजोहरा। ३ अपामार्ग, लटजीरा।

कर्कटशृङ्गिका (सं॰ स्त्री॰) कर्कटतुल्यं शृङ्गमस्याः, कर्कटशृङ्ग स्वार्थे कन्-टाप् इत्वम्। कर्कटशृङ्गी, ककड़ासींगी।

कर्कटशृङ्गी (सं॰ स्त्री॰) कर्कटस्य शृङ्गमिव शृङ्गमग्रभागो यस्याः, बहुव्री॰। स्वनामख्यात कर्कटदंष्ट्राकार औषधि, ककड़ासींगी। इसे नेपालीमें रनीवलयी और पञ्जाबीमें अरखर कहते हैं। (Rhus succedanea) यह वृक्ष कोयी ३० फीट ऊंचा होता है। हिमालयपर काश्मीरसे सिकिम और भूटानतक कर्कटशृङ्गी मिलती है। यह खसिया-पहाड़ और जापानमें भी पायी जाती है। जापानमें इसकी छालको खोदकर रस निकालते हैं। इस रससे रङ्ग (वार्निश) तैयार होता है। फिर फलको कुचल कर एक दूसरे फलके साथ उबालते और मोम निकालते हैं। इस बनती हैं। कभी कभी यह 'जापानी मोम'के नामसे विलायत भी बिकनेको भेजा जाता है। इसका दुग्ध अति तीक्ष्ण होता है। फल एक आकारके बीज हैं। काश्मीरमें इसे क्षयरोगपर प्रयोग करते हैं।

भल्लुक कर्कटशृङ्गीका वल्कल खाता है। काष्ठ श्वेत, प्रभायुक्त तथा मृदु रहता, किन्तु अभ्यन्तरमें कुछ कृष्ण निकलता है। इसका संस्कृत पर्याय—कर्कटाख्या, महाघोषा, शृङ्गी, कुलीरशृङ्गी, चक्राङ्गी, कुलिङ्गी, कासनाशिनी, घोषा, वनमूर्धजा, चक्रा, शिखरी, कर्कटाह्वा, कर्कटी, विषाणिका कौलीरा, चन्द्रास्पदा और वालाह्वा है। यह कषाय एवं तिक्त रस, उष्णवीर्य और कफ, वायु, क्षय, ज्वर, ऊर्ध्व वायु, तृष्णा, कास, हिक्का, अरुचि तथा वमिनाशक होती है। (राजनि॰)

कर्कटा (सं॰ स्त्री॰) १ कर्कटशृङ्गी, ककड़ासींगी। २ खेखसा। यह एक लता है। इसमें कारवेल्ल सदृश क्षुद्र फल आते हैं। कर्कटाके फलका शाक बनाया जाता है।

कर्कटाक्ष (सं॰ पु॰) कर्कट इव अक्षि ग्रन्थिभेदोऽस्य, बहुव्री॰। कर्कटिकालता, ककड़ीकी बेल।

कर्कटाख्य, कर्कटाक्ष देखो।

कर्कटाख्या (सं॰ स्त्री॰) कर्कटस्य आख्या एव आख्या यस्याः, बहुव्री॰। १ कर्कटशृङ्गी, ककड़ासींगी। २ कर्कटिका, ककड़ी।

कर्कटाङ्गी (सं॰ स्त्री॰) कर्कटस्य अङ्गं शृङ्गमिव शृङ्गमग्रभागमस्याः, कर्कटाङ्ग-टाप्। कर्कटाख्या देखो।

कर्कटादिलेह (सं॰ पु॰) लेहविशेष, एक चटनी। कर्कटशृङ्गी, अतिविषा (अतीस), शुण्ठी, धातकी (धायके फूल), बिल्व, वालक (बाला), मुस्त तथा कोलमज्जा (बेरकी गुठलीकी मींगी) बराबर बराबर कूटपीस और छानकर मधुके साथ बालकको चटानेसे ज्वर अतीसार एवं ग्रहणीरोग दूर हो जाता है। (रसरत्नाकर)

कर्कटास्थि (सं॰ क्लो॰) कर्कटस्य अस्थि, ६-तत्। कुलीरका अस्थि, केकड़ेकी खोल।

कर्कटाह्व (सं॰ पु॰) कर्कटमाह्वयते स्पर्धते कण्टकमयत्वात्, कर्कट-आ-ह्वे-क। विल्ववृक्ष, बेलका पेड़।

कर्कटाख्या (सं॰ स्त्री॰) कर्कटाख्य टाप्। कर्कटशृङ्गी, काकड़ासींगी।

कर्कटि (सं॰ स्त्री॰) कर्कं कठति प्राप्नोति, कर्क-कठ्-इन् शकन्ध्वादित्वात् पररूप। कर्कटी, ककड़ी।

कर्कटिका (सं॰ स्त्री॰) कर्कटी स्वार्थे कन् टाप् प्रत्यय। कर्कटी, ककड़ी।

कर्कटिकेय (सं॰ क्ली॰) सामवेदका एक साम। खानेके पीछे इस सामका प्रायश्चित करना पड़ता है।

"उपवास्य भवेदन्त्यं स्नात्वा तथा निवेदयेत्।
चितानि कर्कटिकेयं [illegible]॥" ([illegible])

कर्कटिनी (सं॰ स्त्री॰) कर्कटवत् आकारोऽस्त्यस्याः, कर्कट इन् ङीप्। राजघरिका राजघण्टी।

कर्कटी (सं॰ स्त्री॰) कर्कं कण्टकं कटति गच्छति, कर्क-कट् इन्-ङीप् शकन्ध्वादित्वात् पररूप वा कर्कं कटति, कर-कट इन् ङीप्। १ शाल्मलीवृक्ष सेमरका पेड़। २ सर्पविशेष, एक सांप। ३ देवदालीलता, एक बेल। ४ कर्कटशृङ्गी, काकड़ासींगी। ५ [illegible] कूट। ६ कोटिका वृक्ष, एक पेड़। ७ बदरी, बेरी। ८ कोमल बीजक। ९ घट गगरी। १० तरोई। ११ कर्कटलताविशेष, ककड़ी। (Cucumis Utilissimus) इसका संस्कृत पर्याय—बहुफला कर्कोटिका, पीनसा, मूत्रफला, त्रपुसा, हस्तिपर्णी, लोमशकाण्डा, मूत्रला, बहुकन्दा, कर्कटाख्य, [illegible], त्रिपुटी, लाकुली, एर्वारु और त्रपुषी है।

इसे पश्चिमोत्तर प्रदेश, बङ्गाल और पञ्जाबमें बोते हैं। फल मोटा या लम्बा होता है। यह कच्ची पक्की खायी जाती है। कच्ची ककड़ी छीलकर नमक और काली मिर्चके साथ खानेसे बहुत अच्छी लगती है। कोई कोई इसकी तरकारी भी बना डालते हैं।

कर्कटीका फल १।२ फीट लम्बा होता है। इसे कच्चियोंपर मुलायम रुई जैसे रहती है। पहले यह पीली नहीं लगती, किन्तु पकनेसे नारंगी पड़ती है। कर्कटी ग्रीष्म ऋतुका फल है। दुआबदेशमें दूसरे समय यह हो नहीं सकती। इसके लिये भूमि सूखी, ढीली और अच्छी रहना चाहिये। खाद डालकर खेतमें क्यारी बनावे और तीन चार बीज १ फीटके अन्तर लगाते हैं। दश दिनमें खेत सींचना पड़ता है।

ककड़ीके बीजका छिलका मोटा होता है। यह खाने और दवाओंमें लगता है।

भावप्रकाशके मतसे कर्कटी मधुर, शीतल, रुच, मलरोधक, गुरु, रुचिकर और पित्तनाशक है। पक्की कर्कटी उष्ण, अग्नि एवं पित्त बढ़ाती और मूत्ररोध बढ़ाती है। तिक्त कर्कटी रक्तपित्तनाशक और कफदोषकारक होती है। इसका पाक इस प्रकार बनता है—परिपुष्ट कर्कटीको छीलकर तथा बीज निकाल खोआभर खण्ड खण्ड काटते हैं। फिर तप्त तेलमें तलकर [illegible], दुग्ध और शर्कराके साथ यह पकाते हैं। अन्तमें सूक्ष्म एलाका चूर्ण सुवासित कर देना पड़ता है। यह पाक खानेमें अति स्वादु और शास्त्रके लिये बलदायक है।

कर्कटीबीज (सं॰ क्ली॰) कर्कटीके फलका बीज, ककड़ीका बीज। इसे औषधमें डालते हैं।

कर्कटु (सं॰ पु॰) कर्कट कु। करेटुपक्षी, एक चिड़िया।

कर्कड़ (सं॰ पु॰) खटिका, खड़िया मट्टी।

कर्कंद—पञ्जाबका ग्रामविशेष। [illegible]

कर्कन्धु, कर्कन्धु देखो।

कर्कन्धु (सं॰ पु॰ स्त्री॰) कर्कं कण्टकं दधाति कर्क-धा-कु मुम्। बदरवृक्ष, झड़बेरीका पेड़। (Zizyphus jujuba) यह समस्त भारत, सिंहल, ब्रह्मा, मध्यदेश अफगानिस्तान, अफ्रिका, मलय उपद्वीप चीन और अष्ट्रेलियामें होता है। भारतवर्ष इसका आदि उत्पत्तिस्थान है। यहींसे कर्कन्धु अन्य देशोंमें फैला है। कहते—पहले साधुसन्त [illegible] में इसीका फल या बीजमात्रसे निर्वाह करते थे।

इसका वल्कल और फल चमड़ा रंगनेमें लगता है। ब्रह्मदेशमें लाक्षाके साथ रेशम भी रंगा जाता है। प्रसिद्ध फलको पथिक खाया करते हैं। कभी कभी फलको कूट पीस रोटी भी बना लेते हैं। पत्र पशुका खाद्य है। तसरके कीड़े भी इसके पत्रपर पलते हैं।

भावप्रकाशके मतसे यह फल, कषाय तथा ईषत्

मधुररस, स्निग्ध, तिक्त, गुरु और वातपित्तनाशक है। शुष्क कर्कन्धु भेदक, अग्निकारक, लघु और उष्ण, क्लान्ति तथा रक्तनाशक होता है।

कहीं कहीं कर्कन्धु शब्द क्लीवलिङ्ग भी कहा गया है। २ कर्कन्धुफल, झड़बेरी।

कर्कन्धुक (सं० क्लीं०) बदरी फल, छोटा बेर। यह मधुर, स्निग्ध, गुरु और पित्तानिल तथा वातपित्तहर होता है। (मदनपाल)

कर्कन्धुकी (सं० स्त्री०) १ बदरीभेद, किसी किस्मकी बेरी। २ क्षुद्रबदरवृक्ष, झड़बेरी।

कर्कन्धुकुण (सं० पु०) कर्कन्धूनां पाकः, कर्कन्धु-कुणच्। कर्कन्धुके पाकका समय, बेर पकनेका मौसम।

कर्कन्धुमती (सं० स्त्री०) कर्कन्धुरस्त्यत्र भूमौ इति शेषः, कर्कन्धु-मतुप्-ङीप्। कर्कन्धुयुक्त भूमि, झड़-बेरीकी जमीन्।

कर्कन्धुरोहित (सं० स्त्री०) कर्कन्धुफलसदृश रक्त-वर्ण, झड़बेरीके बेरकी तरह सुर्खासुर्ख।

कर्कन्धू (सं० पु० स्त्री०) कर्कं कण्टकं दधाति, कर्क-धा-कु ततो निपातनात् सिद्धम्। कर्कन्धुवृक्ष, झड़-बेरीका पेड़। कर्कन्धु देखो।

कर्कफल (सं० क्लीं०) कर्कस्य कर्कटस्य फलम्, ६-तत्। १ कर्कटफल, ककोड़ा। २ क्षुद्र आम-लकी, छोटा आंवला।

कर्कर (सं० पु० क्लीं०) कर्क-रा-क। १ चूर्ण खण्ड, चूनेका कङ्कड़। २ कङ्कर, काकर। ३ दर्पण, आयीना। ४ सर्पविशेष, एक सांप। (भारत ११३५।१६) ५ मुद्गर, हथौड़ा। ६ अस्थि, हड्डी। ७ तरुण पशु, नया जानवर। ८ चर्मखण्ड विशेष, चमड़ेका तसमा। (त्रि०) कर्क-अरन्। ९ कठोर, कड़ा। १० दृढ़, मजबूत।

कर्करट (सं० पु०) पक्षिविशेष, एक चिड़िया।

कर्कराक्ष (सं० त्रि०) कर्करं कर्कशं अक्षि यस्य, बहुव्री०। १ कर्कश चक्षु, कड़ी आंखवाला। (पु०) २ खञ्जनपक्षी, ममोला, भांपो, धोबन।

कर्कराङ्ग (सं० पु०) कर्कटतुल्यं अङ्गं यस्य, बहुव्री०। कालकण्ठ, खञ्जन, धोबन।

कर्कराटु (सं० पु०) कर्कं हासं रटति प्रकाशयति, कर्क-रट-कु कुञ् वा। १ कटाक्ष, तिरछी नजर। २ कर्करेटु पक्षी, एक चिड़िया।

कर्कराटुक (सं० पु०) कर्कं कर्कशं रटति रौति, कर्क-रट-उकञ् स्वार्थे कन्। १ कर्करेटु पक्षी, एक चिड़िया। इसकी बोली बहुत कड़ी होती है। २ कटाक्ष, तिरछी नजर।

कर्करान्धक, कर्करान्धुक देखो।

कर्करान्धुक (सं० पु०) कर्करः कठोर अन्धुः स्वार्थे कन्, कर्मधा०। अन्धकूप, अंधयारा कुवां। इसका मुख तृणादिसे आच्छादित हो छिप जाता है।

कर्करात्र (सं० पु०) कर्करः सन् अलति प्राप्नोति, कर्कर अल् अच्। चूर्णकुन्तल, जुल्फ, छल्ला, घूंगर।

कर्करि (वै० स्त्री०) वाद्यविशेष, किसी किस्मका बाजा।

कर्करिका (सं० स्त्री०) चमत्कार, आंखकी खुजली या किरकिराहट। कर्करी देखो।

कर्करी (सं० स्त्री०) कर्क हासवत् निर्मलं सलिलं राति, कर्क-रा-क गौरादित्वात् ङीप्। १ सनाल जलपात्र, गडुआ। इसका संस्कृत पर्याय—आलु, गलन्तिका, अलु और भारु है। २ तण्डुलधावनपात्र, चावल धोनेका बरतन। ३ गलन्तिका, झज्झर। ४ भाण्डविशेष, एक बरतन। ५ दर्पण, आयीना। (वै०) ८ वाद्यविशेष, एक बाजा।

कर्करीका (सं० स्त्री०) कर्करी स्वार्थे कन् न ह्रस्वः। क्षुद्र सनाल जलपात्र, छोटा गड़ुवा।

कर्करेट (सं० क्लीं०) काक कर्केति शब्दं रेटते यत्र, कर्क-रेट-घञ्। नखरवत् सङ्कुचित हस्त, पञ्जेकी तरह सिकोड़ा हुआ हाथ। हस्तकी यह स्थिति किसीका कण्ठ पकड़ते समय होती है।

कर्करेटु (सं० पु०) काक कर्केति शब्दं रेटते भाषते रौति वा, मृगय्वादित्वात् साधुः। करेटु पक्षी, कर-करा, करकटिया। यह एक प्रकारका सारस है।

कर्कश (सं० पु०) कर्कों हसोऽस्त्यस्य, कर्क-श। १ काम्पिल्लवृक्ष, कमीलेका पेड़। २ कासमर्द, कसौंदी। ३ पटोल, परवल। ४ इक्षुभेद, एक ऊख।

१ गुड़त्वक्, दालचीनी। ६ खड्ग, तलवार। (त्रि०) ७ प्रमत्त, दुराचार। ८ निर्दय, बेरहम। ९ क्रूर, पाजी। १० दुर्बोध, समझमें मुश्किलसे आनेवाला, कड़ा। ११ साहसिक, साहसी। १२ चापलो, विश्वास। १३ कठोर, सख्त।

कर्कशच्छद (सं० पु०) कर्कशः छदः पत्रमस्य, बहुव्री०। १ पटोल, परवल। २ पाटलवृक्ष, सुलताम चम्पा। ३ शाखोट वृक्ष सहोरेका पेड़। ४ शाकवृक्ष, सागौनका पेड़। ५ कण्टककुष्माण्ड काला कुम्हड़ा।

कर्कशच्छदा (सं० स्त्री०) कर्कशः छदः पत्रमस्य यस्याः, कर्कशच्छद टाप्। १ घोषा, तरोयी। २ दन्ती वृक्ष, हंदाल। बोलचालमें इसे ककरी कहते हैं।

कर्कशता (स्त्री०) कर्कशत्व देखो।

कर्कशत्व (सं० क्ली०) कर्कशस्य भावः, कर्कश त्व। कर्कशता, कड़ापन, सख्ती। कर्कश देखो।

कर्कशदल (सं० पु०) कर्कशं दलं पत्रमस्य, बहुव्री०। १ पटोल, परवल। २ सहोरेका पेड़।

कर्कशदला (सं० स्त्री०) कर्कशं दलं यस्याः, कर्कश दल-टाप्। १ दन्तिका, हंदाल। २ घोषातकी, तरोयी।

कर्कशवाक्य (सं० क्ली०) कर्कशं तत् वाक्यञ्चेति, कर्मधा०। १ निठुर वचन, कड़ी बात। २ नीरस वाक्य, रूखा बोल।

कर्कशा (सं० स्त्री०) कर्कश-टाप्। १ व्यभिचारिणी स्त्री छिनाल औरत। २ वृश्चिकाली वृक्ष, बिछुआ। ३ क्षुद्रचिञ्चड़ी छोटी भिड़ाभींगी। ४ वनबदर, झड़बेरी।

कर्कशिका (सं० स्त्री०) कर्कश-कन् टाप् अत इत्वम्। वनकोली, झड़बेरी।

कर्कसार (सं० क्ली०) कर्कं कर्कशं सारो यस्य, बहुव्री०। दधिसक्तु, दहीका सत्तू।

कर्काक (सं० पु०) कर्कटिका, ककड़ी।

कर्कारु (सं० पु०) कर्कं शापवत् शौक्ल्यं आरुच्छति प्राप्नोति, कर्क ऋ उण्। १ कुष्माण्डभेद, कुम्हड़ा, पेठा। भावप्रकाशके मतसे यह शीतल, गुरु, मल बद्धकारक, धारक और कफ तथा वायुनाशक है। २ कलिङ्गलता, तरौंदा, तरबूज। ३ अतिपक्वकुष्माण्ड, बहुत मोटा कुम्हड़ा, कुम्हड़ी। (स्त्री०) ४ कुष्माण्डकी लता, कुम्हड़ेकी बेल।

कर्कारुक (सं० पु०) कर्कं शापं शितवारित्वात् आरुच्छति जनयति, कर्क ऋ उकञ्। १ कालिन्दवृक्ष, तरौंदेका पेड़। सुश्रुतके मतसे इसका फल गुरु, विष्टम्भी, शीतल, स्वादु, कफकारक, मलमूत्र परिष्कारक, वातघ्न और मधुररस वाला है। २ कुष्माण्ड, कुम्हड़ा।

कर्कारु (सं० स्त्री०) कुष्माण्डीलता कुम्हड़ेकी बेल।

कर्कि (सं० पु०) कर्क इन्। १ कर्कट राशि, कुर्क सरतान्। २ औरङ्गाबादका पूर्व नाम।

कर्की (सं० स्त्री०) कर्क अच्-ङीष्। १ ककड़ी ककड़ी। (पु०) कर्क-इन्। २ कर्कट राशि, कुर्क सरतान्।

कर्कोटक (सं० पु०) नगरविशेष, एक पुरातन शहर।

कर्केतन (सं० पु०-क्ली०) कर्कं शापादौ तनोति, कर्क तन-अच् अलुक् समा०। रत्नविशेष, एक जवाहर। इसे हिन्दीमें तथा फारसीमें जमुरद, हिब्रूमें हारपिस, यीकमें वेरस्र, लाटिनमें स्मरगडस (Smaragdus) पोर्तगोजमें अमरगड, रूसीमें इजमरद, फोलन्दाजमें स्मरगद् वा एसमरड्, डिनेमार एवं स्विसमें समरद, रोमकमें समरल्दो, पोर्तगोजमें ऐसमरल्द, स्पानिश तथा फरासीसीमें वेरिल (Beril) और अंगरेजीमें बेरिल या क्रिसोबेरिल (Beryl or Chrysoberyl) कहते हैं।

गरुड़पुराणमें लिखा है—वासुकि छर्दित दैत्यपतिके सकल नख उठा चतुर्दिक् वनमें पर कर्केतन नामक पुण्यतम रत्न पृथिवीसे उत्पन्न हुआ। स्निग्ध, विशुद्ध, वर्ण समन्वय, परिमाणमें गुरु, विचित्र और त्रासमलादि दोषवर्जित कर्केतन अति उत्कृष्ट होता है। रक्तकी भांति लोहित, चन्द्रकी तरह पाण्डुर मधुकी भांति ईषत् पीत, ताम्रकी तरह अरुण रक्त पीत, और अग्निकी भांति उज्ज्वल, नील तथा श्वेत कर्केतन पापनाशक है। संस्कारकी दोषसे यह पवित्र ज्योतिर्मय नहीं होता। कर्केतन स्वर्णपर जड़ बाजू वा कड़ेमें पहननेसे अति सुन्दर चमकता है। इसकी

आयु, वंश तथा सुख बढ़ता और रोग एवं कलिदोष छूट पड़ता है। निर्दोष कर्केतन पहननेवाला सर्वत्र पूजित, अनेक धनशाली, बहुबान्धव, दीप्तिमान् और नित्यहृष्ट रहता है। यह मणि जितना उज्ज्वल तथा गुरु मिलता, उतना ही मूल्य भी अधिक लगता है। (७५ अ०)

कर्केतन भारतवर्ष, सिंहल, उत्तर-अमेरिका, मिसर, रूसके यूराल पर्वतस्थ तजोवाजनदीगर्भ, ब्रेजिल, मोरविया और पेगुमें होता है।

दक्षिण भारतमें कोयम्बातुरसे २० कोस ईशान कोण पर कर्केतनकी खानि है। यह नाना स्थानपर मरकत, इन्द्रनील प्रभृतिके साथ देख पड़ता है।

यह हरित्, नील प्रभृति नानावर्णविशिष्ट होता है। उत्कृष्ट कर्केतन अल्प हरित् वा दूर्वा तृणके वर्ण सदृश रहता है। इसमें औज्ज्वल्य भी अधिक देख पड़ता है। आपेक्षिक गुरुत्व ३·६से ३·८ पर्यन्त लगता है। इससे स्फटिक काटते हैं। फिर कर्केतनको काटने छाटनेमें इन्द्रनील और माणिक्य आवश्यक है। इसको रगड़नेसे वैद्युतिक ज्योतिः निकलता, जो गुणके अनुसार कयी घण्टे रह सकता है। अर्धस्वच्छ कर्केतन विडालाक्षी (लसुनिया) नामसे बाजारमें बिकता है।

अति उज्ज्वल स्वच्छ कर्केतनका मूल्य अधिक है। यह १०००)से ३०००) रु० तक आता है।

कर्केतर, कर्केतन देखो।

कर्कन्धुकी (सं० स्त्री०) भूबदरी, झाड़बेर।

कर्कोट (सं० पु०) कर्क-ओट। नागराजविशेष, सांपोंका एक राजा। "अनन्तो वासुकिः पद्मो महापद्मो ऽपि तक्षकः। कर्कोटः कुलिकः शङ्ख इत्यष्टौ नागनायकाः॥" (त्रिकाण्डशेष)

कर्कोटक (सं० पु०) कर्कं कण्टकमयत्वात् कठोरं अटति प्राप्नोति तद्वत् कायति प्रकाशते, कर्क-अट्-अच्-कन् पृषोदरादित्वात् ओकारादेशः। १ बिल्व वृक्ष, बेलका पेड़। कद्रुपुत्र नागराज। ३ इक्षु, ऊख। ४ फलशाकलताविशेष, ककोड़ा, खेखसा। इसका फल स्थावर विषके अन्तर्गत है। फलविष देखो। ५ महाभारत तथा पुराणोक्त जनपदविशेष। (मार्कण्डेयपु० ५८।५८, महाभा० भीष्म, बृहत्संहिता १४।१९) इसका वर्तमान नाम कारा है। यह जयपुर राज्यमें पड़ता है।

कर्कोटकविष (सं० क्लो०) कर्कोटकाख्य विष, ककोड़ेका जहर।

कर्कोटका, कर्कोटकी देखो।

कर्कोटकी (सं० स्त्री०) कर्कोटक गौरादित्वात् ङीष्। १ पीतघोषा, बनतरोयी। इसका संस्कृत पर्याय—कटुफला, महाजालिनी, धामार्गव और राजकोषातकी है। धामार्गव देखो। २ कोषातकी, तरोयी। ३ फलशाकविशेष, गोल कुम्हड़ा। यह मूत्राघात, प्रमेह, अरोचक, कृच्छ्र, अश्मरी तथा तृष्णाहर, पुष्टिकर, हृद्य, स्वादु और बल्य होती है। (राजनिघण्टु)

कर्कोटकीफल (सं० क्लो०) १ घोषाफल, तरोयी। २ वृत्तकुष्माण्ड, गोलकुम्हड़ा। ३ झिङ्गाफल, ककोड़ा।

कर्कोटपत्र (सं० क्लो०) कर्कोटपत्र, ककोड़ेका पत्ता। यह वमनमें घोंटकर पिलानेसे रोगीका हितसाधन करता है।

कर्कोटमूल (सं० क्लो०) कर्कोटकमूल, ककोड़ेकी जड़।

कर्कोटवापी (सं० स्त्री०) कर्कोटनाम नागेन कृता वापी, मध्यपदलो०। काशीस्थ तीर्थविशेष।

"कर्कोटवाप्यां स्नानादि नरोभि कुलस्नुतनम्।" (काशीखण्ड)

कर्कोटिका (सं० स्त्री०) कर्कोट स्वार्थे कन्-टाप् अत इत्वम्। १ कुष्माण्डी लता, पेठेकी बेल। २ कर्कोटक, ककोड़ा।

कर्कोटिकाकन्दरज (सं० क्लो०) कर्कोटमूलचूर्ण, ककोड़ेकी जड़का चूरन। कण्डुरोगमें यह सूंघा जाता है।

कर्कोटी (सं० स्त्री०) १ कर्कोटिका, ककोड़ा। २ देवताड़ वृक्ष।

कर्कोल (सं० क्लो०) कक्कोल, शीतलचीनी।

कर्चरिका (सं० स्त्री०) कं सुखं यथा तथा चर्यते उपयुज्यते, क-चर-कन् पृषोदरादित्वात् साधुः। पिष्टकविशेष, कचौरी, दालपूरी। यह उड़दकी पीसी दाल गेहूंके आटेमें भर और घीमें तलकर बनायी जाती है।

कर्चूरी (सं० स्त्री०) कं जलं चुर्यते अत्र, क-चुर-ङीष् पृषोदरादित्वात् साधुः। कर्चरिका देखो।

कर्ची (हिं० स्त्री०) पक्षिविशेष, एक चिड़िया।

कर्चूर (सं० क्ली०) १ सुवर्ण, सोना। २ हरिताल विशेष, किसी किस्मका हरताल।

कर्पूर (सं० पु० क्ली०) कर्प-ऊर, पृषोदरादित्वात् साधु। १ कर्पूर, हरताल। २ स्वर्ण, सोना। ३ चन्द्रके नाम अविग् द्रव्य, कपूर। यह कटु, तिक्त, कफ शुक्र परिष्कारक और लघु, कास तथा मलमूत्रनाशक है। (राजनिघण्टु) चरकके मतमें मुख कर्पूरको रुचि कारक अग्निवर्धक, सुगन्धि, लघु एवं वायुनाशक और ग्राह्य, शिरा तथा अर्शरोगके लिये हितकर कहा है। ४ आमहरिद्रा आमाहलदी। ५ शठी, कचूरकी अदरक।

कर्चूरक (सं० पु०) कर्चूर कर्चमिव कायति प्रका शते, कर्चूर कै क। कचूर देखो।

कर्ज (अ० पु०) ऋण, उधार।

कर्जदार (फा० वि०) ऋणी, देनदार, उधार लेनेवाला।

कर्जा, कर्ज देखो।

कर्जी (हिं० वि०) ऋणग्रस्त, कर्जदार, जो उधार ले चुका हो।

कर्ण (सं० पु०) कीर्यते क्षिप्यते वायुना शब्दो यत्र, कॄ-न नित् कर्णति आकर्णति अनेन, कर्ण करणे अप् वा। पुरुषादिकृत्वाक्षिपत्ती नित्। उण् ३।१०। १ श्रवणेन्द्रिय, श्रोत्र, कान। इसका संस्कृत पर्याय—शब्दग्रह, श्रोत्र, श्रुति, श्रवण, श्रव, श्रोत्र और उपश्रव है। श्रवणेन्द्रियके बाह्याभ्यन्तर समुदाय अवयवके लिये 'कर्ण' शब्द व्यवहृत होता है। किन्तु प्रकृतमें आकाशस्थानमें जो कर्णेन्द्रियका कार्य चलता है। दूसरी उसी आकाशको 'श्रवणेन्द्रिय' कहते हैं। इस इन्द्रियकी अधिष्ठाता देवता दिक् है। शब्द कर्णका विषय ठहरता है।

आजकलके शारीरतत्त्वविद् पण्डित मनुष्य और यावतीय स्तन्यपायी जीवका कर्ण तीन भागमें विभक्त करते हैं—१ बहिःकर्ण, २ ढक्का (Tympanum) और कर्णा भ्यन्तरका विवर (Labyrinth)। फिर बहिःकर्णके दो अंश होते हैं—कर्णशष्कुली (Auricle) और कर्ण प्रणाली या कर्ण बहिर्द्वार (Auditory canal or external meatus)।

कर्णशष्कुली उपास्थिके संगठनके अनुसार उच्च और निम्नगामी है। इसके गभीर एवं प्रशस्त मध्यस्थानको कर्णखाली (Concha) और निम्नतम दोलायमान अंशको कर्णपाली (Lobe) कहते हैं। कर्णपालीमें गोल छिद्र भी बने रहते हैं। भारतमें कर्णभेदके समय कर्णपाली छेदी जाती है। बहिःकर्णमें एक उपास्थि होता है। उसमें कई छिद्र रहते हैं। उन्हीं छिद्र सूत्राकार तारो शिराओंमें पूर जाते हैं। कर्ण शष्कुलीके एक भागसे अपर भागको कई पेशियां पहुंची हैं। पेशियां कुल तीन हैं। वह मार्जित शिरस्त्वक् (Scalp)से कर्णमें लगी हैं। मनुष्यके लिये पेशियां अधिक आवश्यक नहीं। किन्तु स्तन्यपायी जीवके पक्षमें पेशियां अवश्य रहना चाहिये।

कर्णप्रणाली प्राय एक इंच परिसर होती है। वह कर्णखालीसे अभ्यन्तरको गयी है। उसके उभय पार्श्वकी अपेक्षा मध्य भाग अधिक छोटा रहता है। इसीसे कर्णके अभ्यन्तर कोई चीज घुस जाने पर निकालनेमें कष्ट पड़ता है। अधोभाग ऊपरी भागकी अपेक्षा प्रशस्त रहने कारण कर्णप्रणालीके शिरके मध्य भागको किसी तिर्यग्रेखापर अवस्थित है। कर्ण प्रणाली अस्थिमय और उपास्थियुक्त है। अस्थिमय भागके मध्य झिल्लीसे लिपटा सूक्ष्म अंश होता है। किसी किसी प्राणीके वह स्वतन्त्र भावसे पैदा अस्थिकी भांति रहता है।

कर्णरन्ध्रके बहिर्भागमें मुखाभिमुखी भागका नाम कर्णपटल (Tragus)। कर्णके रन्ध्रमें लोमदार ग्रन्थि रहता है। इसी ग्रन्थिके कारण कीट या मच्छरादि कर्णमें प्रवेश कर नहीं सकता।

कर्णके बहिर्द्वार और विवरके मध्यवर्ती गह्वर को मध्यकर्ण या ढक्का (Tympanum) कहते हैं। यह स्थान वायुपूर्ण है। वायु गलकोषकी गह्वरवाम नली होकर ढक्कामें घुसता है। ढक्काकी झिल्ली और कर्णविवरके साथ उसका अस्थिग्रन्थि संयुक्त है।

ढक्काका गह्वर देखनेमें अप्रमाण और मोटी मोटी सूक्ष्म कोमलता उपपर्शुके अन्वित है। यह उपपर्शु

गलकोषसे निकल यूष्ट्रेकियान नली द्वारा कर्णमण्डलमें पहुंची है।

ढक्कामें तीन क्षुद्रास्थि होते हैं। वह अपने आकारानुसार मुद्गरास्थि (Malleus), पताकास्थि (Incus) और पादधारण्यस्थि कहाते हैं। ढक्काकी झिल्ली उक्त गह्वरके बहिः-प्राचीर रूपसे सङ्गठित है। वह डिम्बाकृति देख पड़ती है। उसी झिल्लीके ऊपरी और अधोदिक्‌के बीचोंबीच क्षुद्र ग्रन्थियोंका प्रथम अस्थि मुद्गरकी मुठियाके आकार संलिप्त है। उसीको मुद्गरास्थि कहते हैं।

ढक्का गह्वरमें कर्णाभ्यन्तरके साथ संस्रव रखनेको दो गवाक्ष हैं। वह कोमल झिल्लीसे आवद्ध रहते हैं। उनमें एकको डिम्बाकार (Fenestra ovalis) और अपरको गोल गवाक्ष (Fenestra rotunda) कहते हैं। प्रथम कर्णविवरके प्रवेशद्वारका प्रदर्शक है। वह अपनी झिल्लीके जरिये क्षुद्र ग्रन्थियोंके अन्तरास्थि (पादधारण्यस्थि) से दृढ़ रूपमें संयुक्त है। द्वितीय गवाक्ष कर्णविवरके शम्बुकाकार गह्वर (Cochlea)की ओर अवस्थित है।

ढक्केके मुद्गरास्थिसे एकाधिक पेशी लिप्त हैं। उनमें एक करोटीवाले कीलकास्थिके मल्लावत् स्थानसे उत्पन्न हुयी है। इसका वैज्ञानिक अंगरेजी नाम लाक्साटोर टिमपनी (Laxator tympani) है। फिर दूसरी शङ्खास्थिके प्रस्तरवत् कठिन स्थानसे निकली है। उसे वैज्ञानिक अंगरेजीमें टेनसोर टिम्पनी (Tensor tympani) कहते हैं। शेषोक्त पेशी मुद्गरास्थिकी मूठसे सन्निविष्ट है। शारीरतत्वविद्‌में अनेकको प्रथम ग्रन्थियोंके अस्तित्व पर सन्देह है। उनको समझमें उसे—पेशी नहीं—बन्धनी कह सकते हैं।

ध्वजके आकारका अस्थि पताकास्थि कहाता है। किन्तु यह बात देख नहीं पड़ती। वह पेषणदन्तकी तरह रहता है। क्षुद्र अग्र पीछे चल ढक्कागह्वरके पश्चाद्‌भागमें चुचुकाकार कोष (Mastoid cells) पर झुका और दृहद्‌ अंग अधोगामी हो अन्तको पादधारणी-अस्थिके मत्थे पर गोलाकार तथा समाम पड़ा है।

पादधारणी-अस्थि अश्वारोहीके पद रखनेको रकाव-जैसा होता है। वह मस्तक, ग्रीवा, दो शाखा और भूमि रखता है। उसके कोणाकार उच्चांगसे एक सूक्ष्म पेशी (Stapedius) निकल डिम्बाकार गवाक्षके पश्चाद्‌भागमें ग्रीवादेशपर सन्निवेशित है। ग्रीवादेशका पश्चाद्‌भाग खींचनेसे वह कर्णविवरके द्वारको सिकोड़ती है।

पहले लिखा—यूष्ट्रेकियान नलीसे ढक्काका गह्वर खुला है। यूष्ट्रेकियान एक शारीरविद्‌ रहे। उन्होंने पहले उक्त नलीको आविष्कार किया था। इससे उसको भी यूष्ट्रेकियान कहते हैं। वह प्रायः डेढ़ इञ्च लम्बी है। अल्प भाग अस्थिमय और अधिकांश उपास्थियुक्त होता है। उक्त नलीके मध्यसे वायु चल ढक्काके ऊपर और बीच पहुंचता है। उसी पथसे गह्वरस्थ सञ्चित श्लेष्मादि भी निकलता है।

कर्णाभ्यन्तरस्थ विवर श्रवणेन्द्रियका मूल अंग है। यहां कर्णेन्द्रिय वायुके स्पन्दजनक सब पड़े हैं। यह तीन अंगमें विभक्त है—विवरद्वार (Vestibule), अर्धगोलाकार नलीसमूह (Semi-circular canals) और शम्बुकाकार गह्वर (Cochlea)। उक्त तीनों गर्ताकार कर्णाभ्यन्तरस्थ विवरको तरह निपट शङ्खास्थिके प्रस्तरवत् अति कठिनांशमें अवस्थित हैं। ढक्काके गोल तथा डिम्बाकार गवाक्षसे उनका बाहरी और कर्णाभ्यन्तरको श्रोत्रनलीसे भीतरी सम्बन्ध है। श्रोत्रनली ही करोटीके गह्वरसे कर्णविवर तक श्रोत्र सम्बन्धीय स्नायु (Auditory nerve) को वहन करती है।

उपरोक्त गर्तके चारो पार्श्व अस्थिमय कर्णाभ्यन्तरस्थ विवर (Osseous labyrinth) है। उसमें फिर झिल्लीका कर्णाभ्यन्तरस्थ विवर (Membranous labyrinth) झलकता है।

विवरद्वार कर्णाभ्यन्तरके मध्यगह्वररूपसे अवस्थित है। उसी स्थानसे अर्धगोलाकार नलीसमूह और शम्बुकाकार गह्वर निकलता है। उक्त द्वार उच्चतामें इञ्चका पञ्चम भाग पड़ता है। उसके बहिर्गात्रमें पांच छिद्र होते हैं। उन्हीं छिद्रसे अर्धगोलाकार नलीसकल निकला है। पश्चात् दिक्‌को

शम्बुकाकार गह्वर है। उसके बहिर्गात्रमें डिम्बाकार गवाक्ष और अभ्यन्तरमें छोटे छोटे गोलाकार छिद्र रहते हैं। उनसे होकर सन्निकृष्ट स्नायुका शब्दजनक सूत्र सकल भीतरको सरकता है।

उक्त गोलाकार नली तीन हैं। उनके उभय पार्श्वमें छोटे-बड़े द्वार होते हैं।

शम्बुकाकार गह्वर देखनेमें शम्बुक जैसा लगता है। यह कर्णविवरका अग्रवर्ती है।

अस्थिमय कोमल विवरद्वार और अर्धगोलाकार नलीके सकल कोमल अंश 'कानका चक्कर' (Membraneus labyrinth) कहलाता है। अस्थिमय चक्कर झिल्लीके चक्करसे आकार प्रकारमें मिलता है। फिर भी उभयके आयतनमें अन्तर है। दोनों चक्करोंमें पेरिलिम्फ (Perilymph) नामक एक तरल पदार्थ रहता है। झिल्लीके चक्करमें एण्डोलिम्फ (Andolymph) नामक एक दूसरा तरल पदार्थ भी है। फिर उसके किसी किसी स्थान विशेषतः विवरद्वारवाले स्नायुके प्रान्तभागमें क्या मनुष्य क्या निकृष्ट पशुके चूर्ण जैसा एक पदार्थ देख पड़ता है। मानव स्तन्य पायी जन्तु, पक्षी और सरीसृपके मध्य चूना मिली एक बुकनी (Otoconia) रहती है।

विवरके द्वारांशमें दो थैले होते हैं। ऊपरवाला किंचित् दीर्घ और डिम्बाकार है। अंगरेजीमें उसे युट्रिकलस या कामनसिनस (Utriculus or com monsinus) कहते हैं। अपर थैलेसे अपेक्षा किंचित् क्षुद्र और गोलाकार है। वह नीचे रहता है। उसका नाम कोषाणु (Sacculus) है।

स्तन्यपायी मत्स्य प्रत्येक कर्णमें एक एक शङ्खाकार अस्थि होती है। अस्थि दो रहते जिन्हें [illegible] कहते हैं। फिर कर्णमें २ पेशी, १० शिरा और ६ धमनी हैं। इन छह धमनियोंमें २ वायुवाहिनी, २ शब्दवाहिनी और २ शब्दधारिणी होती हैं। चरकने कर्णको आन्तरीक्ष पदार्थ माना है।

"[illegible]"

(चरक शारीरस्थान [illegible])

शरीरका छिद्रसमूह, शब्द एवं सूक्ष्म स्रोतसकल, शब्द और कर्ण आन्तरिक्ष पदार्थ है।

कर्णके अवयव हमने एक एक कर लिख दिये हैं। अब देखना चाहिये—कर्णसे कैसे सुनते और कर्णके शब्द कैसे बनते हैं।

युरोपीय वैज्ञानिकोंके मध्य किसी किसीके मतानुसार शब्द कर्णभीतर होनेसे पूर्व प्रथम वायुद्वारा कर्णशष्कुलीमें पहुंचता है। उसी अब वायुके प्रभावसे उसके तरल पदार्थका आवर्तिक कम्पन होने लगता है। शब्द सञ्चालित होते ही वायु द्वारा ढक्काकी झिल्ली हिलती है। वायुसे शब्द जितने बार इधर उधर चलता, ढक्केकी झिल्लीका भी उतने ही बार स्पन्दन उठता है। फिर क्षुद्रास्थि विलकुल पतालास्थि और डिम्बाकार गवाक्षकी झिल्लीको लगा देता है। तत्पश्चात् ढक्काको [illegible] झिल्लीका वितान कांपता है। ढक्काके गह्वरमें वायु दो प्रकार काम सम्पादन करता है। प्रथमतः वह गवाक्षकी झिल्लीके बहिर्भागमें रीतानुसार ताप पहुंचाता है। उससे झिल्लीकी स्थितिस्थापकता नहीं बिगड़ती। द्वितीयतः ढक्काके गह्वरमें वायु सुखसे क्षुद्रास्थिमालाका चलने लगती है। शब्दविज्ञानके अनुसार वायुसंचारसे क्षुद्रास्थिमें शब्द उठता है।

कर्णाभ्यन्तरस्थ विवरमें तीन प्रकार शब्द पहुंचता है—प्रथमतः अस्थियोंसे, द्वितीयतः ढक्काके गह्वरके वायु और तृतीयतः मस्तकास्थिके मध्यसे।

कर्णके भीतरी विवरद्वारको ही श्रवणेन्द्रियका मूलयन्त्र कहते हैं। अस्थ्यादिके कर्णमें अपरांश न रहते भी कुछ अंश तो होता ही है।

[illegible] जन्तुमें कर्णके मध्यभागपर एक विवरद्वार देख पड़ता है। वहां चूनाका बुकनी मिलनेसे शब्दको विशेष सुविधा मिलती है। उनके पास पहुंचते ही शब्द झनझनाने लगता है। उक्त शब्द विवरद्वारकी झिल्ली और अर्धगोलाकार नलीके प्रसारित अंश (Ampullæ) तथा स्नायुमें सञ्चारित होता है।

अर्धगोलाकार नलीसमूहकी दैर्घ्य, विस्तृति और उच्चता सूक्ष्म है। उसीसे शब्दकी गति समझ

पड़ती है। शब्द बन्द हो जाने भी उसका भाव एककाल कर्णसे नहीं निकलता। बाल देखो।

२ नौकादण्ड, नावका डांड़। ३ सुवर्णालि वृक्ष। ४ चार बाहु और तीन हाथ कोटिका चेत्र। (त्रि०) ५ कुटिल, टेढ़ा। ६ दीर्घकर्ण, लम्बे कानवाला। (हृषयजुः ३।४।१०)

कर्ण—युधिष्ठिरके अग्रज। भोजराजकी दुहिता कुन्ती अविवाहितावस्थासे पितृगृहपर अतिथिसेवामें लगी रहती थीं। एकदा दुर्वासा ऋषि उनके अतिथि बने। उन्होंने अतियत्नसे उनकी सुश्रूषा उठायी थी। मुनिने उससे परितुष्ट हो कुन्तीको एक मन्त्र देकर कहा—इस मन्त्रसे कोई देवता बोलानेपर आ तुमसे सहवास करेगा। कुन्तीने आश्चर्य प्रभावशाली मन्त्र पा कौतूहलवश सूर्यदेवको बोलाया था। सूर्यने उसी क्षण उपस्थित हो उनसे सहवास किया। सहवास मात्रसे कवचकुण्डलधारी सूर्यसम तेजस्वी एक नवकुमार निकल पड़े। कुन्ती लोकलज्जाके भयसे उन्हें अश्वनदीके जलमें बहा आयीं। कुमार कर्ण स्रोतमें बहते जाते थे। उसी समय अधिरथ नामक किसी सूतने उन्हें देख लिया। अधिरथ अपुत्रक थे। उन्होंने ऐसा सुन्दर शिशु देख नदीसे उठाया और परमानन्दसे निज पत्नी राधाके हाथ पुत्रनिर्विशेषसे खिलाया पिलाया। कवचकुण्डलरूप वसु (धन) देख उन्होंने कर्णका नाम 'वसुषेण' रख दिया।

कर्णने प्रथम द्रोणके निकट अस्त्र शिक्षा पायी थी। धनुर्वेदशिक्षाके समय अर्जुनसे उन्हें ईर्षा उत्पन्न हुयी। किसी दिन रङ्गभूमिमें द्रोणाचार्यने शिष्योंकी परीक्षा ली थी। उसमें अलौकिक कार्य देखानेपर उन्होंने अर्जुनकी बड़ी प्रशंसा की। वह कर्णसे सही न गयी। रङ्गस्थलमें सर्वसमक्ष उपस्थित हो अर्जुनको ललकार उन्होंने कहा था—'अर्जुन! तुम्हारा यह कौशल हम भी सबको देखा सकते हैं। तुम्हें कोई आश्चर्य मानना न चाहिये।' फिर कर्णने सर्वसमक्ष अर्जुनकी भांति अलौकिकी धनुर्विद्याका परिचय दिया। उस समय दुर्योधन उनकी कार्यप्रणाली देख मोहित हुये थे। उन्होंने बन्धुत्व स्थापन कर मान बढ़ानेके लिये कर्णको अङ्गराज्य दे डाला।

कर्ण सर्वदा दुर्योधनके निकट ही रहते थे। उनके मिलनेसे दुर्योधनका पाण्डवभय किंमता सा छूट गया।

एक दिन कर्णने द्रोणाचार्यसे कहा था,—'गुरो! अनुग्रहकर हमें ब्रह्मास्त्र दे दीजिये। आपसे हमको आशानुरूप प्राय: सकल अस्त्र मिले हैं। केवल ब्रह्मास्त्र बाकी है। उसको दे हमारी मनस्कामना पूर्ण करना चाहिये।' द्रोण समझते थे, कि कर्ण अर्जुनसे बड़ा द्वेष रखते हैं। इसीसे उन्होंने कहा,—'जो नित्य शुद्ध व्रताचारी ब्राह्मण अथवा तपःस्वाध्यायनिरत क्षत्रिय रहता, वही व्यक्ति ब्रह्मास्त्रके उपयुक्त ठहरता है। तुम्हें ब्रह्मास्त्र मिल नहीं सकता।'

फिर कर्ण ब्रह्मास्त्रके हेतु महेन्द्र पर्वतपर पहुंचे। वहां अपनेको ब्राह्मण बना उन्होंने परशुरामसे नानाविध अस्त्रशिक्षा पायी। फिर कर्ण परशुरामके अतिप्रिय पात्र बन गये। किसी दिन वह समुद्रतीर सा शरक्रीडा करते थे। घटनाक्रम उनके शरप्रहारसे किसी ब्राह्मणका होमधेनु पञ्चत्वप्राप्त हुवा। कर्णने ब्राह्मणके पैरों पड़ अनेक अनुनय विनय करते अपने अनजान दोषके लिये क्षमा मांगी। ब्राह्मणने क्रोधमें उन्हें अभिशाप दिया—कि 'जिसके लिये इतनी स्पर्द्धा (हरानेके लिये सर्वदा चेष्टा) किया करते, उसीके हाथ तुम मारे जावोगे।' कर्ण क्षुण्णमन आश्रमको लौट आये। कुछ दिन रहते रहते उन्होंने परशुरामसे ब्रह्मास्त्र प्राप्त किया।

एक दिन परशुराम कर्णकी जरूपर मस्तक रख सोते थे। उसी समय अलर्क जातीय अष्टपाद कीट आकर कर्णके ऊरुदेशको एक दिक् भेद अपर पार निकल गया। कर्ण गुरुकी निद्रा टूटनेके भय वह असह्य यन्त्रणा सहते रहे। किन्तु उस दारुण दंशनसे ऊरु विदीर्ण होते रुधिरका स्रोत बह चला। गात्रमें रक्त लगाते ही परशुराम जागे। उनके आंख खोलते ही कीट मर गया। फिर परशुरामने कर्णसे कहा,—'वत्स! तुमने इस कीटका असह्य दंशन

सह सका ? ब्राह्मण कभी इस प्रकार सह नहीं सकता। अतएव ठीक सच सच कहो, तुम कौन हो।'

कर्णने अवनत हो विनीत भावसे उत्तर दिया,— 'गुरो! मुझे क्षमा करो। मैंने मिथ्या कह आपके निकट बड़ा ही अपराध किया है। मैं ब्राह्मण नहीं, सामान्य सूतपुत्र हूं। सूतकन्या राधा मेरी माता होती है। मेरा नाम कर्ण है।' उस समय परशुरामने क्रुद्ध हो कहा था,—'देखो कर्ण! तुमने ब्रह्मास्त्र सीखनेको इससे प्रतारणा की है। इसलिये युद्ध काल उस अस्त्रका स्मरण तुम्हें न रहेगा। अब ठीक हमारे सामनेसे चल दो।'

कर्ण हस्तिनाको लौट आये। कुछ दिन पीछे वह दुर्योधनके साथ कलिङ्ग गये। वहां कलिङ्गराज चित्राङ्गदकी कन्याका स्वयम्बर था। स्वयम्वरसभामें दुर्योधनने अपने पौरुषके साहाय्यसे राजकन्याको हरण किया। उस समय कर्णके साथ जरासन्धका घोर युद्ध हुआ था। उसी युद्धमें जरासन्धने कौशल दर्शनसे सन्तुष्ट हो कर्णको मालिनी नगरी सौंप दी। अनन्तर कर्णका विवाह हुआ। पत्नीका नाम पद्मावती था।

कर्ण पाण्डवोंको मार डालनेके लिये सर्वदा दुर्योधनको कुपरामर्श दिया करते, किन्तु कृतकार्य हो न सकते थे। भीष्म कर्णके आचरणसे असन्तुष्ट हो कभी कभी निन्दा कर उठते। वह कर्णको असह्य होती थी। उन्होंने भीष्मवाक्यको सुनकर पीछे एक दिन दुर्योधनसे कहा,—'मित्र! हमारी एक बात आपको सुनना पड़ेगी। भीष्म सर्वदा हम लोगोंकी निन्दा और अर्जुनकी प्रशंसा किया करते हैं। विशेषतः आपके सामने वह हमारी अवज्ञा करते हैं। अब हमें अनुमति दीजिये। हम अकेले ही समस्त पृथिवी जीत लें।'

दुर्योधनकी अनुमतिसे कर्ण दिग्विजय करने निकले थे। वह द्रुपद, भगदत्त एवं अङ्ग, कलिङ्ग, मण्डिक, मिथिला, मगध कर्कखण्ड, अवन्तीपुर, अहि-च्छत्र, वत्स, केरल, मृत्तिकावती, मोहन, त्रिपुर, कोशल, रुक्मी, चेदि, अवन्ति, काम्बोज, मद्रक रोहि-तक आग्नेय, मालव, शशक, आटविक प्रभृति नाना द्वीपीय राजगण और अपरापर सभ्य तथा असभ्य जातिको जीत अति अल्पकालमें ही हस्तिना लौट आये। दुर्योधनके पक्षपातियोंने कर्णको धन्य धन्य धन्य-वाद दिया था। फिर दुर्योधनने वैष्णव यज्ञका अनु-ष्ठान किया। उस समय कर्णने उनसे कहा था,— 'आजसे मुंहमांगी चीज़ हम याचकको देंगे। यही हमारी प्रतिज्ञा है। जब तक हम अर्जुनको मार न सकेंगे, तब तक इसी व्रतको पालन करेंगे।'

वृषकेतु नामक उनके एक पुत्रने जन्म लिया। एक दिन श्रीकृष्णने दानपरीक्षा करनेको वृद्ध ब्राह्मण-के वेश कर्णसे साक्षात् कर कहा—'हम तुम्हारे वृषकेतु पुत्रका मांस खाना चाहते हैं।' कर्णने वही किया था। उनकी स्त्रीने वृषकेतुका मांस रांध उनके सम्मुख खानेको रख दिया। कृष्णने कर्णके आचरणसे अत्यन्त सन्तुष्ट हो मृतसञ्जीवनी विद्याके प्रभावसे वृषकेतुको फिर जिलाया। इसी अलौकिक दानके लिये 'दाताकर्ण' नाम पड़ गया।

एक दिन निद्रावस्थामें कर्णने स्वप्न देखा,—सूर्य सामने खड़े कह रहे हैं—'कर्ण! इन्द्र पाण्डवोंके हितसाधनको ब्राह्मणके वेश तुमसे कवच और कुण्डल मांगने आयेंगे। अतएव उनको कवच कुण्डल देनेसे सावधान!' किन्तु उन्होंने स्वप्नमें उत्तर दिया,— 'प्राण जाते भी हम अपनी प्रतिज्ञा न छोड़ेंगे।' फिर सूर्यने उनसे कवचकुण्डलके बदले इन्द्रकी शक्ति ले लेनेको अनुरोध किया। प्रभात होते इन्द्रने ब्राह्मणके वेश आ कर्णसे कवच कुण्डल मांगे थे। कर्णने कहा 'देवराज! हम आपको पहचानते हैं। आप कवच कुण्डल लीजिये, किन्तु अपनी अव्यर्थ शक्ति हमें दीजिये।' इन्द्र इस पर सम्मत हुये। अन्तको जाते समय इन्द्र बोल उठे—'कर्ण! इस शक्तिसे हम शत शत शत्रु मार डालते थे। किन्तु आपके हाथसे छूटने पर एक शत्रुको मार यह हमारे पास चली आवेगी।'

इधर पाण्डवोंका अज्ञातवास पूरा हुआ। उन्होंने पाञ्चालराज पुरोहितको सन्धिके लिये धृतराष्ट्रके निकट भेजा था। भीष्म पाण्डवोंका कुशल संवाद सुन कर्णसे

लगे,—'पाण्डव परम धार्मिक हैं। इसीसे युद्धमें आत्मीय कुटुम्बको न मिटा उन्होंने सन्धिका प्रस्ताव उठाया है। वास्तविक अर्जुनकी भांति दूसरा योद्धा पृथिवी पर देख नहीं पड़ता। कौरव पक्षमें उनके सम्मुख जानेवाला कौन वीर है!' यह बात कर्ण सह न सके। उन्होंने भीष्मकी बड़ी निन्दा उड़ायी। अन्तको कर्ण और शकुनिके परामर्शसे सन्धि रह गयी।

कुरुक्षेत्रके महासमरमें प्रथम भीष्म कौरव-सेनापति बने थे। उन्होंने अपनी सेनाका सुप्रबन्ध बांध दुर्योधनसे कहा,—'देखो। कर्ण नीच जाति और क्षुद्र प्रकृति है। वह परशुरामके निकट अभिशप्त हुवा और कवचकुण्डल खो चुका है। ऐसे सामान्य व्यक्तिको अर्धरथी ही विवेचना करना उचित है।' यह बात सुन कर्णका सर्वाङ्ग जल उठा। उसी समय उन्होंने प्रतिज्ञा की,—'जितने दिन भीष्म जीवित रहेंगे, उतने दिन हम कभी युद्धमें अस्त्रधारण न करेंगे।' यही कहकर उन्होंने रणक्षेत्र छोड़ा था।

दश दिन युद्ध होने पीछे कुरुपितामह भीष्म शर-शय्यापर सो गये। कर्णने एक दिन रात्रिकालको उनसे मिल कहा था,—'आप सर्वदा जिसकी निन्दा करते रहे, मैं वही कर्ण हूं।' भीष्मने इन्हें देख रक्षकोंको हटाया, पीछे सस्नेह यह कहते कर्णको गले लगाया,—'हमने नारद और व्यासके मुख तुमको कुन्तीका पुत्र सुना है। पाण्डवगणसे द्वेष रखने पर ही हम तुम्हें कुछ कड़ी बात बोल देते थे। वास्तविक तुम्हारी तरह दाता और ब्रह्मनिष्ठापर दूसरा देख नहीं पड़ता था। तुमसे हमारा पूर्व भाव दूर हो गया है। अब तुम हमारी मानो, तो अपने सहोदर पाण्डवोंकी ओरसे युद्ध ठानो।'

तेजस्वी कर्णने उत्तर दिया,—'आपके कहनेसे अब मेरे कुन्तीपुत्र होनेमें कोई सन्देह नहीं। किन्तु पितामह! इतने दिन मैं दुर्योधनके ऐश्वर्यसे ही प्रतिपालित हुवा हूं। फिर उनको मैंने एक बार आश्वास भी दिया था। अब मैं कैसे उन्हीं प्रिय बन्धु दुर्योधनसे लड़ूं। प्राण जाना अच्छा है। मैं अपनी प्रतिज्ञा न तोड़ूंगा।' भीष्मने कहा,—'तो स्वर्गकाम होकर लड़ो। कूट युद्धसे अलग रहो।'

भीष्मके पीछे द्रोणाचार्य कौरवोंके सेनापति हुये। कर्णने उनके अधीन अनेक बार युद्ध किया था। उसी समय उन्होंने बालक अभिमन्युको कूट युद्धमें मारनेका परामर्श उठाया और इस कार्यमें यथेष्ट साहाय्य पहुंचाया।

कर्ण एकाघ्नी शक्ति द्वारा अर्जुनको मारना चाहते थे। किन्तु उनके मनकी आशा मनमें ही रह गयी। भीमनन्दन घटोत्कच कुरुसैन्यके दमनमें दौड़ कर्णके सामने आये थे। उन्होंने अपने बचानेके लिये एकाघ्नी शक्ति छोड़ घटोत्कचको मार डाला। द्रोणके निहत होने पर कर्ण कुरुसैन्यके सेनापति बने। शल्य सारथी रहे। यथा समय महावीर कर्ण ससैन्य समरक्षेत्रमें उतर पड़े। उनकी युद्धनीति और वीरता देख पाण्डवपक्षमें हाहाकार उठा। किन्तु कर्णसे सारथी शल्य विमुख थे। कर्ण अर्जुनके मारनेको जितना आस्फालन लगाते, शल्य उतना ही प्रतिवाद कर अर्जुनको प्रशंसा सुनाते और उनकी निन्दा करते थे। किन्तु कर्णने निज बाहुबलसे ५० प्रभद्रक, २५ पाञ्चाल, भानुदेव, चित्रसेन, सेनाबिन्दु, तपन, शूरसेन चेदि और अपरापर व्यक्तिके असंख्य सैन्यको मार गिराया। फिर उन्होंने अर्जुन व्यतीत युधिष्ठिरादि पाण्डवको भी हराया। कर्णने कुन्तीके निकट अर्जुनको छोड़ अपर किसी पाण्डवके न मारनेकी प्रतिज्ञा की थी। इसीसे युधिष्ठिरादि पाण्डव हार कर भी जीते रहे।

अन्तको अर्जुनके साथ कर्णका घोरतर युद्ध हुवा। उस युद्धमें त्रैलोक्यके शोभास्पद यह अन्तिम शय्यापर सो गये। (महाभारत)

कर्णका प्रथम नाम वसुषेण रहा। पालक पिता सूतने उनका यही नाम रखा था। पीछे पृथक् पृथक् कार्यके अनुसार कर्ण, वैकर्तन, अर्कनन्दन, अङ्गराज, अङ्गेश्वर, चम्पेश, चम्पाधिप, अङ्गाधिप और घटोत्कचान्तक प्रभृति नाम हुवा। प्रतिपालक पिता तथा पालिका माताके परिचयानुसार कर्णको लोग सूतपुत्र,

रायेव, राधापुत्र प्रभृति भी कहते थे। २ धृतराष्ट्रके एक पुत्र। (भारत, आदि ११७६)

कर्ण—मेवाड़के एक राणा। यह राजपूत वीरकेसरी प्रतापसिंहके पौत्र और राणा अमरसिंहके ज्येष्ठपुत्र थे। पितामहके समय पिताके साथ अपनी जन्मभूमिको बचानेके लिये इन्होंने अनेक बार मुगल सम्राट्‌से युद्ध किया।

इनके समय मेवाड़ बहुत बिगड़ा था। पुनः पुनः लड़नेपर मेवाड़का राजकोष शून्य हुआ और मेवाड़के प्रधान प्रधान वीरका प्राण गया। ऐसी अवस्थामें राजपूत-वीर कितने दिन मुगलवाहिनीके विरुद्ध अस्त्र चला सकते थे! अन्तको राजकोष शून्य होनेसे कर्ण राणा अमर कुछ अर्थदण्ड करनेपर बाध्य हुये। १६१३ ई०को यह जहांगीरके पुत्र खुर्रम (शाहजहान्)-से हार गये। फिर मेवाड़के राणा अमरको मुगल सम्राट्‌से लड़ना पड़ा था। सन्धि होनेपर कर्ण खुर्रमके साथ अजमेर जा जहांगीर बादशाहसे मिले। बादशाहने यथेष्ट आदर अभ्यर्थनाके साथ इन्हें अपने दक्षिण पार्श्व बैठनेको आसन दिया। उस समय प्रति दिन बादशाह कर्णसे मिलते और बहुमूल्य अलङ्कार तथा विविध द्रव्य-सामग्री दे सम्मानवर्धन करते थे। जहांगीर अपने जीवनमें लिख गये हैं—

'मातृभूमिकी प्रथाके अनुसार कर्ण कुशलके द्रव्यसामग्री अपने अधिकारमें लाना जानते न थे। यह अतिशय लाजुक और अतिशय कमभाषी रहे। फिर इनसे बहुत मिलने जुलनेकी इच्छा भी यह रखते न थे। अपने प्रति विश्वास बढ़ानेके लिये हम इनको आत्मभावसे आश्वास दिया करते। हम एक दिन इन्हें गुजरातके निकट ले गये। अहदियोंने इन्हें हाथी, अश्व, खड्ग प्रभृति नाना प्रकार पारितोषिक दिया था।'

आन्तरिक जहांगीर कर्णसे मित्रताकी तरह व्यवहार करते न थे। वह सर्वदा कर्णका सम्भ्रम बढ़ानेकी चेष्टा रखते। १६२१ ई०में मेवाड़के अन्तिम स्वाधीन राजा महाराणा अमरसिंहने ज्येष्ठपुत्र कर्णको सिंहासन दे डाला।

कर्णके राजा बननेपर मेवाड़में शान्तिका राज्य बना था। मुगलोंके आक्रमणसे मेवाड़के भग्न और नष्ट दुर्गोंका इन्होंने पुनः संस्कार कराया। राजधानीके चतुःपार्श्वस्थ प्राकार परिखा द्वारा घेरे गये। पीछोलाका जलरोधक बांध भी बढ़ा था। १६२८ ई० (१६८४ संवत्)को ज्येष्ठपुत्र जगत्सिंहके हाथ राज्यभार सौंप इन्होंने परलोक गमन किया।

२ आर्यावर्तके एक सम्राट्। यह कर्णदेव नामसे प्रसिद्ध थे। कर्णदेव देखो।

कर्णक (सं० पु०) कर्णयति विभिन्न शाखाये, कर्ण-ण्वुल्। १ वृक्ष प्रभृतिका शाखापल्लवादि, पेड़ वगैरहको फोड़कर निकलनेवाला पत्ता वगैरह। २ मत्स्यविशेष, एक मछली। ३ सन्निपातविशेष। इस रोगमें दोषवशसे कर्णमूलपर शोथ उठता और तीव्र ज्वर चढ़ता है। फिर कण्ठग्रह, बधिरता, श्वास, प्रलाप, प्रस्वेद, मोह और दाहका आक्रम भी देख पड़ता है। ४ हस्तादिका एक रोग, पेड़ वगैरहकी एक बीमारी। ५ कर्णधार, माझी। (वै०) ६ नौकाके पार्श्वका कटेव, नाव या जहाजका बगली कमार। ७ तन्तु, विस्तार, सूत, फैलाव। ८ प्रसारित पद, फैले हुये पैर। (त्रि०) ९ निष्कण, भीख मांगनेवाला।

कर्णकवान् (सं० त्रि०) कर्णकविशिष्ट, जिसमें बगली शाखें रहें।

कर्णकटु (सं० त्रि०) अप्रिय, कानमें खटकनेवाला, जो सुननेमें बुरा लगता हो।

कर्णकण्डू (सं० पु० स्त्री०) कर्णस्य कण्डू जातो या कण्डू। कर्णस्रोतोगत रोगविशेष, कानकी खुजली। कफयुक्त मारुत यह रोग लगा देता है। (भावप्रकाश) कफनाशक चिकित्सा ही कर्णकण्डूका प्रधान औषध है।

कर्णकण्डू (सं० स्त्री०) कर्णकण्डु देखो।

कर्णक सन्निपात, कर्णक देखो।

कर्णकिट्ट (सं० क्ली०) कर्णमल, कानका मैल।

कर्णकीटा (सं० स्त्री०) कर्णं गता कर्णगा कीटः, कर्णकीट टाप् मध्यपदलो०। १ कर्णजलौका, कनसलाई। २ शतपदी, कनखजूरा, कनखजूरा। (Julus cornifex)

कर्णकोटी (सं० स्त्री०) कर्णे स्थिता कर्णस्य भेदिका कीटी, क्षुद्रार्थे ङीप् मध्यपदलो०। कर्णजलौका, कनसलायी। इसका संस्कृत पर्याय—कर्णजलौका, शतपदी, चित्राङ्गी, पृथिका और कर्णन्दुन्दुभि है।

कर्णकुब्ज (सं० क्ली०) नगरविशेष, एक शहर। यह वर्तमान गुजरात प्रदेशके जूनागढ़का पौराणिक नाम है। कर्णकुब्ज देखो।

कर्णकुहर (सं० क्ली०) कर्णगतं कुहरम्, मध्यपदलो०। कर्णगत छिद्र, कानका छेद।

कर्णकूपकश्वसेक (सं० पु०) जीवविशेष, किसी किस्मका जानवर। यह जलके मध्य अधोगण्ड द्वारा श्वास ग्रहण करता है। शामुकादि इसी श्रेणीके जीव हैं।

कर्णकृमि (सं० पु०) कर्णगतः सन् कर्णभेदकः कृमिः, मध्यपदलो०। शतपदी, कनखजूरा।

कर्णक्ष्वेड (सं० पु०) कर्णस्य कर्णे जातो वा क्ष्वेडः। कर्णरोगविशेष, कानकी एक बीमारी। पित्तादिसे युक्त वायु कानमें वेणुघोषके समान शब्द किया करता है। इसीको कर्णक्ष्वेड कहते हैं। (भावप्रकाश०) कर्णके मध्य सर्षपतैल डालनेसे यह रोग विनष्ट होता है।

कर्णखरिक (सं० पु०) वैश्य जाति, बनियोंकी एक कौम। वैश्य देखो।

कर्णग (सं० पु०) कर्णे गच्छति, कर्ण-गम-ड। १ शब्द, आवाज़। (त्रि०) २ कर्णस्थित, कानमें पड़ा हुवा। ३ आकर्ण, कानतक फैला हुवा।

कर्णगढ़—विहारप्रान्तके भागलपुर जिलेकी एक पार्वत्य भूमि। यह अक्षा० २५° १४′ ४५″ उ० और देशा० ८६° ५८′ ३०″ पूर्व पर अवस्थित है।

टेशावनी और भविष्य-ब्रह्मखण्डमें इसका नाम कर्णदुर्ग लिखा है। 'पहले यहां ब्राह्मणभूमिकी राजधानी थी। संवत् १६७८ को कर्णदुर्गमें सभासिंह राजत्व करते थे। उन्हें राजा कीर्तिचन्द्रने मार डाला। सभासिंहके पीछे हेमन्तसिंहने यहां राजत्व किया। इसी कर्णगढ़से आधकोस पूर्व शिलावती नदी बहती है। उससे सवा कोस पश्चिम विशालाची नाम्नी महामायाका मन्दिर है।'

(विक्रमसागरीय त देशावलीविवृति)

कर्णगढ़का शिवमन्दिर विख्यात है। सब मिलाकर चार मठ बने हैं। एकमें वृहदाकार शिवलिङ्ग है। यह शिवमन्दिर प्रायः ५१६ शत वर्षका प्राचीन है। सकल अधिवासी शैव न रहते भी कार्तिक-संक्रान्तिके दिवस बड़े समारोहसे शिवकी पूजा होती है। प्रवादानुसार इस स्थान पर कुन्तीपुत्र कर्णका राजत्व था। उन्होंने एक दुर्ग निर्माण कराया, जिसके अनुसार यह कर्णदुर्ग वा कर्णगढ़ कहाया। प्राचीन अट्टालिकाका भग्नावशेष नाना स्थान पर पड़ा है।

पहले यहां पहाड़ी बड़ा उत्पात उठाते थे। इसीसे १९८० ई०को भागलपुर जिलेके तहसीलदार क्लेवलेण्ड साहबने यहां एक दल देशीय सैन्य स्थापन किया।

कर्णगूथ (सं० क्ली०) कर्णस्य कर्णजातं वा गूथम्। कर्णमल, कानका मैल।

कर्णगूथक (सं० पु०) कर्णगूथ संज्ञायां कन्। कर्णरोगविशेष, कानकी एक बीमारी। कर्णकुहरमें पित्तके सन्तापसे श्लेष्मा सूखनेपर यह रोग उठता है। (सुश्रुत) तैल वा स्वेदप्रयोगसे ढीला कर शलाका द्वारा कर्णका मल निकाल डालना चाहिये। (चक्रदत्त)

कर्णगृहीत (सं० त्रि०) कर्णे गृहीतः, ७-तत्। १ श्रुत, सुना हुवा। २ कर्णकर्षक धूत, जो अपने कान पकड़ा चुका हो।

कर्णगोचर (सं० त्रि०) कर्णस्य गोचरः विषयीभूतः, ६-तत्। कर्णके विषयीभूत, सुन पड़नेवाला, जो कानमें आ सकता हो।

कर्णग्राम—१ भागीरथीतीरवर्ती वङ्गका एक ग्राम।

(भविष्य ब्रह्मखण्ड ७।३१)

कर्णग्राह (सं० पु०) कर्णमरित्रं गृह्णाति, कर्णग्रह-अण्। कर्णधार, मल्लाह, मांझी।

कर्णग्राहवत् (सं० त्रि०) कर्णधारयुक्त, जिसमें मांझी रहें।

कर्णच्छिद्र (सं० क्ली०) कर्णस्य छिद्रम्, ६-तत्। कर्णरन्ध्र, कानका छेद।

कर्णजप (सं० पु०) गुप्तसंवाददाता, मुखबिर, भेदिया।

कर्णजलूका, (सं० स्त्री०) कर्णस्य कर्णे वा जलूका इव उपमि०। कर्णकीड़ा, कनखजूरा।

कर्णजलौका (सं० स्त्री०) कर्णे जलौकेव। कर्णकीटी, कनखजायी।

कर्णजाप (सं० पु०) गुप्तसंवाद, कानाफूसी।

कर्णजाड्य (सं० क्ली०) कर्णोंमें रोग, कानकी एक बीमारी। प्रकुपित दोष श्लेष्म, पित्त, प्राण और मदनमें मज्जे काम देते हैं। उनसे कान मन्द और रोगी बधिर पड़ जाता है। (सुश्रुत)

कर्णजाह (सं० क्ली०) कर्णस्य मूलम्, कर्ण जाहच्। कर्णमूल कानकी जड़।

कर्णजित् (सं० पु०) कर्णं जितवान्, कर्ण जि क्विप्। अर्जुन। इन्होंने कर्णको जीता था।

कर्णजीरक (सं० क्ली०) क्षुद्र जीरक, छोटा जीरा।

कर्णज्योति (सं० स्त्री०) कर्णस्फोटा, कानकी भुम्भी।

कर्णत (सं० अव्य०) कर्णसे पृथक्, कानसे दूर।

कर्णताल (सं० पु०) कर्णे ताल: ताड़ना, ७तत्। कर्णताड़ना, कानकी फटकार।

कर्णतीर्थ (सं० क्ली०) तीर्थविशेष। (हरिवंश)

कर्णदर्पण (सं० पु०) कर्णे दर्पण इव उपमि०। ताडङ्क नामक कर्णभूषणविशेष, कानमें पहननेकी एक बाली।

कर्णदुन्दुभि (सं० स्त्री०) कर्णे कर्णाभ्यन्तरे दुन्दुभिरिव तत्तुल्य ध्वनिजनकत्वात्। शतपदी, कनखजूरा।

कर्णदेव—चेदिराजवंशके एक अद्वितीय महावीर और दिग्विजयी राजा। यह कलचुरि राजा गाङ्गेयदेवके पुत्र और उत्तराधिकारी थे। हूण राजकुमारी आवल्लदेवीसे इन्होंने विवाह किया। इन्होंने कर्णावती नगर बसाया, और पाण्ड्य, मुरल, कुङ्ग, वङ्ग, कलिङ्ग कीर और हूणके राजाओंको वशीभूत किया था।

कर्णदेवके पिता गाङ्गेयदेवने ही देवपालसे पश्चिम कन्नौजतक राज्य किया। उन्होंके समय इन्होंने प्रथम मगधपर आक्रमण मारा था। किन्तु दीपङ्कर अतीशके यत्नसे सन्धि हो गयी। १०४० ई०को प्रयागके अक्षयवट मूलपर गाङ्गेयदेवने प्राण छोड़ा था। (Memoirs, A. S. B. Vol III. Vol. p. 11)

उसके पीछे ही कर्णदेव सुविस्तृत चेदिराज्य पा कर दिग्विजयको उत्साहसे निकल पड़े। इन्होंने गुजरातसे बङ्गालतक समस्त देश जीता। कर्णदेवकी सभामें गङ्गाधर कविका बड़ा आदर था। फिर चोड़ कुङ्ग हूण, गौड़ गुर्जर और कीरके राजा इनको शान्तितोषमें रहते थे। नागपुर प्रशस्तिके अनुसार किसी देशके अन्य राजाओंसे मिलाकर मालवा और कर्णने अपने अधीन बनाया था, उसे मालवके उदयादित्यने छोड़ाया। कृष्णमिश्रके प्रबोधचन्द्रोदय और अन्य शिलालेखमें लिखा है—"चन्देल कीर्तिवर्माके सेनापति गोपालने कर्णको पराजय किया था। हेमचन्द्रके वचनानुसार यह अनहिलवाड़के १म भीमदेवसे हार गये। फिर विल्हणने भी विक्रमाङ्कदेवचरितमें पश्चिमीय चालुक्य १म सोमदेवसे इनके हारनेकी बात लिखी है।

कर्णदेव (सं० पु०) एक प्रसिद्ध चालुक्यराज। यह अनहिलवाड़ाधिपति भीमदेवके पुत्र थे। राज्यकाल संवत् ११२०-११५० रहा। इनके पुत्रका नाम जयसिंह सिद्धराज था। इसी वंशमें दूसरे कर्णदेव भी हुये। यह सारङ्गदेवके पुत्र थे। इन्होंने संवत् १३५३से १३६० तक गुजरातके अनहिलवाड़में राजत्व किया।

कर्णदेवता (सं० पु०) श्रोत्रेन्द्रियके अधिष्ठित वायु।

कर्णधार (सं० पु०) कर्णमरित्रं धारयति, कर्ण धृ अण् आत्वात् अच् वा। १ नाविक मल्लाह। (त्रि०) २ दुःखादि निवारक, तकलीफ वगैरह मिटानेवाला।

"[illegible]।
[illegible]" ([illegible])

कर्णधारता (सं० स्त्री०) नाविकका काम मल्लाही।

कर्णधारिणी (सं० स्त्री०) कर्णं अन्यभोगपिपासया निपुणं धारति, कर्ण-धृ णिनि-ङीप्। हस्तिनी, हथिनी। इसके कान दूसरे जीवको पकड़ने बड़े होते हैं।

कर्णनाद (सं० पु०) कर्णस्रोतोगत रोग कानकी एक बीमारी। जब वायु नीचेके मार्गसे हट जाता, तब कर्णमें पहुंच भेरी, मृदङ्ग और शङ्खवत् नाद लगाता है। (माधवनिदान, सुश्रुत) सर्षपतैल अथवा अपामार्ग क्षार और बकरेके साथ सिद्धतैल पका

कानमें डालनेसे कर्णनादरोग आरोग्य होता है। (चक्रदत्त)

कर्णनासा (सं० स्त्री०) श्रोत्रेन्द्रिय तथा घ्राणेन्द्रिय, कान और नाक।

कर्णन्दु (सं० स्त्री०) स्त्रीके कानकी बाली, तरौना, पात।

कर्णपत्रक (सं० पु०) कर्णं पत्रमिव कायति शोभते, कर्ण-पत्र-कै-क। कर्णपाली, बाहरी कानका हिस्सा।

कर्णपथ (सं० पु०) कर्णं एव पन्थाः, अच्। कर्ण-च्छिद्र, कानका छेद। कर्णकुहर ही शब्दके प्रवेशका पथ है।

कर्णपर (सं० पु०) कर्णान्तद्वार, कानका भीतर।

कर्णपरम्परा (सं० स्त्री०) कर्णानां परम्परा, ६-तत्। श्रोत्रेन्द्रियको प्राचीन प्रथा, कानको पुरानी चाल। एकसे दूसरे और दूसरेसे तीसरे कानमें क्रमशः विषयको विस्तृति होनेका नाम कर्णपरम्परा है।

कर्णपराक्रम (सं० पु०) अपभ्रंशयोग्य विविध छन्दो युक्त काव्यविशेष, किसी किस्मकी शायरी।

कर्णपर्व (सं० स्त्री०) महाभारतका अष्टम पर्व। इस पर्वमें कर्णके सेनापतित्व ग्रहण करनेके पीछे होनेवाली सकल घटना वर्णित है। कर्ण देखो।

कर्णपाक (सं० पु०) कर्णरोगविशेष, कानकी एक बीमारी। क्षत, अभिघात, पिड़का वा वातादि तीन दोष कुपित होनेपर रक्त अथवा पीतवर्ण स्राव निकलता और कर्णका मध्य अतिशय उष्ण पड़ जलने लगता है। इसीको कर्णपाक रोग कहते हैं। (सुश्रुत) मालती-पत्रका रस अथवा मधुके साथ गोमूत्र कर्णमें डालनेसे कर्णपाकरोग विनष्ट होता है। फिर हरिताल तथा गोमूत्र मिला अथवा जामुन और आमके नूतन पत्र एवं कपित्थ तथा कार्पासके बीज समभाग कूट पीस और रस निकाल कानमें भरनेसे भी कर्ण-पाक मिट जाता है। (चक्रदत्त)

कर्णपालि (सं० स्त्री०) कर्णं पालयति शोभयति, कर्ण-पाल-इन्। कर्णलतिका, बिनागोश, कानकी लौ। (Lobe)

कर्णपाली (सं० स्त्री०) कर्णं पालयति शोभयति, कर्णपाल-अच्-ङीप्। १ कर्णलतिका, कानकी लो। २ कर्णभूषणविशेष, कानकी बाली। ३ कर्णपालीगत रोग, कानकी लौमें होनेवाली एक बीमारी। यह पञ्चविध होती है—परिपोट, उत्पात, उन्मन्थ, दुःख-वर्धन और परिलेही। (सुश्रुत)

कर्णपाश (सं० पु०) सुन्दर कर्ण, खूबसूरत कान।

कर्णपिशाची (सं० स्त्री०) कर्णस्वरूपं पिनष्टि, कर्ण पिट् आवयति नाशयति स्वरूपदर्शनेन, कर्ण-पिष्-क्षिप्-आ-चि-विच्-अच्-ङीप्। देवीविशेष, एक शक्ति। इसका ध्यान है—

> "रक्ता रक्तविलोचना त्रिनयना खर्वा च लम्बोदरी,
> बन्धूकारुणजिह्विका वराभयाभीयुक्कराढ्या शुभा।
> ऊर्ध्वास्यैर्जटिला कपालविलसत् पाणिद्वया चञ्चला,
> सर्वाङ्गा भवतु कृताभिमतदा देवी पिशाची शुभा॥"

रक्तवर्ण, रक्तचक्षु, त्रिनयना, खर्वाकृति, लम्बोदरी, बन्धूकपुष्पवत् रक्तजिह्वा, वर तथा अभयदानसे उभयकर व्यापृता, ऊर्ध्वमुखी, धूम्रवर्णा, जटामालिनी, अपर हस्त द्वयमें नरमुण्डधृता, चञ्चला, शवहृदय-वासिनी और सर्वाङ्गा पिशाचिकीको नमस्कार है।

निशाकाल वा अर्धरात्रको उक्त ध्यान लगा पूजा करना चाहिये। दग्ध मत्स्यका बलि निम्नलिखित मन्त्र पढ़कर चढ़ाया जाता है—"ओं कर्णपिशाचि दग्धमीन-बलिं गृह्ण गृह्ण मम सिद्धिं कुरु कुरु स्वाहा।"

पूजाके दिन प्रातःकाल कुछ जप कर मध्याह्नको एकबार निरामिष खाना चाहिये। प्रातःकालको ही बराबर रातको भी जप करना पड़ता है। ताम्बूलादि भिन्न रातको अन्य भोजन नहीं पाते। जपका दशमांश तर्पण करना चाहिये। निम्नलिखित मन्त्र एक लक्ष पुरश्चरण कर दशमांश होम होता है—

"ओं कर्णपिशाचीं तर्पयामि ह्रीं स्वाहा।"

अभावमें दशभाग तर्पण कर वर मांगना चाहिये। यन्त्रपर चन्दनसे मूलबीज बना इष्टदेवताकी पूजा करना पड़ती है। आकाशमें हुङ्कारादिकी भांति शब्द उठने और दीर्घ अग्निशिखा झलकने पर साधकका कार्य सिद्ध होता है।

कर्णपुट (सं० स्त्री०) कर्णस्य पुटम्, ६-तत्। कर्ण-च्छिद्र, कानका छेद।

कर्णपुत्रिका (सं॰ स्त्री॰) कर्णशष्कुली, कानकी साल।

कर्णपुर (सं॰ क्लो॰) कर्णस्य पुरम्, ६ तत्। कर्णको राजधानी चम्पानगरी। आजकल इसे भागलपुर कहते हैं।

कर्णपुरी (सं॰ स्त्री॰) कर्णस्य पुरी, ६ तत्। चम्पा नगरी, भागलपुर।

कर्णपुष्प (सं॰ पु॰) कर्णवत् कर्णाकारं कर्णभूषण योग्य पुष्प वा यस्य। १ मोरटलता एक बेल। २ नीलझिण्टी, काली भांटी।

कर्णपूर (स॰ स्त्री॰) कर्णस्य पू पुरम्, ६ तत्। कर्णके राज्यकी पुरी, भागलपुर। इसका संस्कृत पर्याय—चम्पा मालिनी और लोमपादपू है।

कर्णपूर (स॰ पु॰) कर्णं पूरयति अलङ्करोति, कर्ण-पूर अच्। १ शिरीषवृक्ष, सिरिसका पेड़। २ नील पद्म, काला कंवल। ३ अशोकवृक्ष। ४ कर्णभूषण, करनफूल। ५ कर्णमल। यह कस्तूरादि खाते रहते और जानवरोंको पीड़ा करते हैं। ६ नन्दीवृक्ष एक पौधा।

कर्णपूरक (स॰ पु॰) कर्णं पूरयति भूषयति, कर्ण-पुर ण्वुल्, कर्णपूर स्वार्थे कन् वा। १ कदम्बवृक्ष, कदम्बका पेड़। २ अशोकवृक्ष। ३ तिलक, तिल।

कर्णपूरण (स॰ स्त्री॰) कर्णस्य पूरणम्, ६ तत्। तैला-दिसे कर्णका पूरण, तेल वगैरहसे कानका भराव। कर्णरोगादिकी मात्राके नियमको भली भांति कर्ण भरना चाहिये। नित्य कर्णपूरणसे मनुष्य न तो ऊंचा सुनता और न बहरा पड़ता है। स्नानसे भोजनसे पहले और तैलादिसे सूर्यास्तके पीछे कर्णको भरना चाहिये। (सुश्रुत) २ कर्णपूरणद्रव्य कानमें डालनेकी चीज।

कर्णप्रणाद (स॰ पु॰) कर्णे वातादिपिहितकर्णे प्रणाद शब्दविशेष, ७-तत्। कर्णप्रणादनामक रोगविशेष।

कर्णनाद देखो।

कर्णप्रतिनाह (स॰ पु॰) कर्णे जातः प्रतिनाह रोगविशेषः, मध्यपदलो॰। कर्णरोगविशेष कानकी एक बीमारी। कर्णका मल पिघल नाक और मुंह तक जा पहुंचनेसे कर्णप्रतिनाह रोग समझा जाता है। इस रोगसे मस्तकके आधे भागमें पीड़ा हुआ करती है। (भावप्रकाश) कर्णप्रतिनाह रोगमें स्वेद और स्नेह लगाकर नस्यादि लेना चाहिये। (सुश्रुत)

कर्णप्रतीनाह (सं॰ पु॰) कर्णरोगविशेष कानकी एक बीमारी। कर्णप्रतिनाह देखो।

कर्णप्रयाग—युक्त प्रदेशके गढ़वाल जिलेका एक ग्राम। यह पिण्डार तथा अलकानन्दा नदीके सङ्गमस्थान (अक्षा॰ ३०° १६´ उ॰ और देशा॰ ७९° १३´ ३०˝ पू॰) पर अवस्थित है। कर्णप्रयाग अतिपूर्वसे एक महातीर्थ माना जाता है। यहां मनुष्यके सङ्गममें नहानेसे अशेष पुण्य मिलता है। हिमालयको जाते समय यात्री इस तीर्थका दर्शन करते हैं। यहां हिमाचलनन्दिनी उमाका मन्दिर है। स्थानीय पण्डाओंके कथनानुसार भग-वान् शङ्कराचार्यने यह देवीमन्दिर बनाया था। पहले यहां पिण्डार नदीके लिये रस्सीका झूला रहा। किन्तु अब लोहेका सेतु बन गया है।

कर्णप्रयागके एक मन्दिरमें कर्णकी प्रतिमूर्ति है। किसी किसीके मतानुसार कर्णके नामपर ही इसे कर्णप्रयाग कहते हैं। यह समुद्रतलसे २२६० फीट ऊंचा है।

कर्णप्रान्त (स॰ पु॰) कर्णस्य प्रान्तः सीमादेशः, ६ तत्। कर्णकी शेष सीमा, कानका छोर।

कर्णप्राय (सं॰ पु॰) देशविशेष, एक मुल्क। यह देश नैऋत दिक्में अवस्थित है। (वृहत् १४।१८)

कर्णप्रावरण—जनपदविशेष, एक मुल्क। महाभारतमें यह जनपद दक्षिणदेशीय कालमुख, कोलगिरि, निषाद प्रभृतिके साथ कहा है। (सभा ३१ अ)

देशावलीके मतसे कर्णप्रावरण मालव देशके पश्चिम पड़ता है। मत्स्यपुराणमें एक अपर कर्णप्रावरणका नाम है। उसी जनपदसे पावनी नदी प्रवाहित है। (मत्स्य ११७।१८) वह सम्भवतः हिमा-लयसे उत्तर लगता है।

कर्णप्रावरण आर्य्य अधिवासियोंका भी बोधक है। पाश्चात्य मेगास्थिनिसने भारतवृत्तमें कर्णप्रावरणोंको एनिटोकोईटे (Enotokoitoi) लिखा है।

कर्णफल (स॰ पु॰) कर्णं फलमिव यस्य। मत्स्य विशेष, एक मछली। (Ophiocephalus kurrawey) राजवल्लभके मतसे यह अशोष और बलकर है।

कर्णफुली—चट्टग्रामको एक नदी। यह अक्षा॰ २२

५५´ उ० और देशा० ८२° ४४´ पू० पर अवस्थित है। कर्णफुली जयन्ताद्रिसे निकल दक्षिणमुख बङ्गोपसागरमें जा गिरी है। इसके दक्षिण कूलपर चट्टग्राम नगर और बन्दर है। प्रधान शाखा चार हैं—कासालङ्ग, चिङ्गड़ी, कपताई और रङ्खियाङ्ग।

कर्णफुलीके उत्पत्तिस्थान पर नीलकण्ठ नामक शिवलिङ्ग प्रतिष्ठित है। इस नदीमें नहानेसे पुण्य होता है। (भविष्य ब्रह्मखण्ड १३।८)

कर्णवन्धनाकृति (सं० स्त्री०) कर्णवेधके अनन्तर कर्णके बन्धनकी आकृति। यह पञ्चदश विध होती है—१ नेमिसन्धानक, २ उत्पलभेद्यक, ३ वल्लूरक, ४ आसङ्गिम, ५ गण्डकर्ण, ६ आहार्य, ७ निर्वेधिम, ८ व्यायोजिम, ९ कपाटसन्धिक, १० अर्धकपाटसन्धिक, ११ संक्षिप्त, १२ हीनकर्ण, १३ वल्लीकर्ण, १४ यष्टिकर्ण और १५ काकौष्टक।

कर्णभूषण (सं० क्ली०) कर्णं भूषयति, कर्ण-भूष ल्यु। १ कर्णालङ्कार, कानका जेवर। २ अशोकवृक्ष। ३ नागकेशर।

कर्णभूषा (सं० स्त्री०) कर्णं भूषयति, कर्ण-भूष-अच्-टाप्। कर्णभूषण, कानका जेवर।

कर्णमङ्गुर (सं० पु०) मत्स्यभेद, एक मछली। (Silurus unitus)

कर्णमल (सं० क्ली०) कर्णस्य मलम्, ६-तत्। कर्ण-गूथ, खूंट, कानका मैल।

कर्णमुकुर (सं० पु०) कर्णे मुकुरः दर्पण इव, उपमि०। कर्णालङ्कार विशेष, कानका बाला।

कर्णमुख (सं० त्रि०) कर्णके अधीनस्थ, कर्णके पीछे रहनेवाले।

कर्णमूल (सं० क्ली०) कर्णस्य मूलम्, ६-तत्। कर्णका मूलदेश, कानकी जड़। २ कर्णरोगविशेष, कानकी एक बीमारी। इसमें कानकी जड़ सूजती है।

कर्णमूलीय (सं० त्रि०) कर्णमूल-ढञ्। कर्णमूल सम्बन्धीय, कानकी जड़के मुताल्लिक़।

कर्णमृदङ्ग (सं० पु०) कानकी भीतरी झिल्ली। यह अस्थि-पर चढ़ा रहता है। इसी पर जब कम्पित वायुका आघात लगता, तब जीवको शब्दका ज्ञान उपजता है।

कर्णमोचक (सं० पु०) कर्णस्फोटा, कानकी लौ।

कर्णमोटा (सं० स्त्री०) बबूरवृक्ष, बबूलका पेड़।

कर्णमोटि, कर्णमोटी देखो।

कर्णमोटी (सं० स्त्री०) कर्णं कर्णोपलक्षितं रोगविशेषं मोटयति नाशयति, कर्ण-मुट्-इन् ङीप्। चामुण्डा देवी।

कर्णमोरट (सं० पु०) कर्णस्फोटा, एक बेल।

कर्णयुग्मप्रकोर्ण (सं० क्ली०) नृत्यका अङ्गविशेष, नाचकी एक चाल। इसमें हस्तद्वयको घुमा पार्श्वके सम्मुख लाते हैं।

कर्णयोनि (सं० त्रि०) कर्णः योनिः स्थानमस्य, बहुव्री०। १ कर्णग्राह्य, कानमें पड़ने लायक। २ कर्णसे उत्पन्न, कानसे पैदा।

कर्णरन्ध्र (सं० पु०) कर्णस्य रन्ध्रः, ६-तत्। कर्ण-गत छिद्र, कानका छेद।

कर्णराज—गुजरातके अनहिलवाडवाले एक राजा। यह भीमराजके एक पुत्र थे। १०७२ ई०को भीमके स्वर्गारोहण करनेसे इनपर राज्यका भार पड़ा। शासन-नीतिके गुणसे राज्यके सामन्त और पार्श्ववर्ती राजा कर्णराजके वशीभूत हुये। इन्होंने रूपमें विमुग्ध हो कदम्बराज जयकेशीकी कन्या मयानल्लदेवीसे विवाह किया। प्रथम पुत्र न होनेसे इन्होंने लक्ष्मीदेवीका ध्यान लगाया था। फिर लक्ष्मीके वरसे मयानल्लदेवी पुत्रवती हुयीं (१०८३ ई०)। वृद्धावस्थामें इन्होंने अपने पुत्र जयसिंहको राज्य सौंप वानप्रस्थ अवलम्बन किया।

कर्णरोग (सं० पु०) कर्णस्य कर्णजातो रोगः। कर्ण-व्याधि, कानकी बीमारी। यह २८ प्रकारका होता है—कर्णशूल, कर्णनाद, बाधिर्य, कर्णक्ष्वेड, कर्णस्राव, कर्णकण्डु, कर्णगूथ, कर्णप्रतीनाह, जन्तुकर्ण, कर्ण-पाक, पूतिकर्ण, ४ प्रकार अर्श, ७ प्रकार अर्बुद, ४ प्रकार शोथ और २ प्रकार विद्रधि। (वैद्यक निघण्टु)

कर्णरोगप्रतिषेध (सं० पु०) कर्णरोगाणां प्रतिषेधः शमनोपाया यत्र, बहुव्री०। १ कर्णरोगचिकित्सा, कानकी बीमारीका इलाज। २ सुश्रुतसंहिताका एक अध्याय।

कर्णरोगविज्ञान (सं० स्त्री०) कर्णगत व्याधिका निदान, कानमें होनेवाली बीमारीकी जांच।

कर्णक (सं॰ त्रि॰) कर्णे कर्णप्रतिच्छाय कर्ण-वत्। प्रशस्त श्रवणशक्तिविशिष्ट, अच्छी तरह सुन सकनेवाला, जिसके कान रहें।

कर्णकुम्भस्तम्भ (सं॰ पु॰) स्तम्भविशिष्टभेद, खम्भेके रचनेकी एक कायदा। मूलमें स्तम्भको सरल बना और उठा कर्णके निकट लानेसे यह स्थिति हो जाती है।

कर्णलता (सं॰ स्त्री॰) कर्णस्य लता इव, उपमि॰। कर्णपाली, कानकी लौ।

कर्णलतिका (सं॰ स्त्री॰) कर्णस्य लता इव, कर्ण-लता स्वार्थे कन् टाप् अत इत्वम्। कर्णपाली, कानकी लौ। (Lobe of the ear)

कर्णवंश (सं॰ पु॰) कर्णे कर्णलतिकायां वंशो यस्य, बहुव्री॰। मच, बांसका ऊंचा ठाठ।

कर्णवत् (सं॰ त्रि॰) कर्ण प्रशस्तोऽस्त्यस्य, कर्ण-मतुप् मस्य वः। १ दीर्घकर्णविशिष्ट, बड़े कानवाला। २ कर्णयुक्त, कानवाला। ३ कोनवाला या कोणक विशिष्ट जिसके या कोनवाला। ४ अरित्रयुक्त, जिसके पतवार रहे।

कर्णवर्जित (सं॰ पु॰) कर्णेन श्रवणेन्द्रियेण वर्जित कीन्द। १ सर्प, सांप। इसके पृथक कर्णेन्द्रिय नहीं होता। (त्रि॰) २ कर्णहीन, कनकटा। ३ बधिर, बहरा।

कर्णवम (सं॰ पु॰) मत्स्यविशेष, एक मछली। यह गुरु, शीत, स्वच्छ और मलवान् होता है। मांस दीपन, पाचन, पथ्य, हृद्य और बलपुष्टिकर है।

कर्णवालिस—भारतके एक भूतपूर्व गवर्नर जनरल। १७३८ ई॰की ३१वीं दिसम्बरको इन्होंने जन्म लिया। नाम चार्लस कर्णवालिस था। यही कर्णवालिस प्रदेशके द्वितीय अर्ल और प्रथम मार्क्विस बने। पिताके रहते कर्णवालिस लार्ड ब्राउ कहाते थे। १७६२ ई॰को इनके पिता मरे। पितृपदके अधिकारी होनेपर यह हाउसअफलार्ड्सके विशेष प्रियपात्र हुये। शासनके कार्यमें इन्हें सर्वतोमुखी क्षमता और स्वाधीन मत प्रकाश करनेकी शक्ति थी। जब अमेरिका वासियोंने स्वाधीनताके लिये युद्ध किया, तब इन्होंने अति उत्साह तथा विशेष कौशलके साथ ब्रूकलैं, वर्जिनिया, कामडेन, ग्वालफर्ड, कमकटें प्रभृति स्थानको जीत लिया। किन्तु इनके सहयोगी और इनके ही नासमझ नमरके युद्धमें फरासीसी और अमेरिका वालो द्वारा एक बार आक्रान्त होनेपर चार मास शत्रुके हाथ अस्त्र इन्हें आत्मसमर्पण करना पड़ा। (१७८१ ई॰) इन्होंके पराजयसे अंगरेज ठोके हुये। १७८२ ई॰को अंगरेजोंने सन्धि कर कर्णवालिसको छोड़ाया था। राजाके प्रियपात्र रहनेसे पराजय पाने भी यह विशेष तिरस्कृत न हुये।

१७८६ ई॰को लार्ड कर्णवालिस भारतके गवर्नर जनरल बनाये गये और उसी वर्ष सितम्बर माह कलकत्ते आ पहुंचे। यह शान्तस्वभाव, गम्भीर बुद्धि, सुविचारक्षम लोकप्रिय महान् हृदय और लोकहितैषी थे। इनके आते समय भारतमें युद्ध विग्रह आदि कुछ न रहा। किन्तु वारन हेष्टिंग्सके शासन कालकी दुर्नीतिसे देश भरा पड़ा था। अत्याचार व्यभिचारसे आपामर साधारण घबरा गये और अने-कानेक देशी राजा विध्वस्त हुये। सुतरां ऐसी अवस्थामें लार्ड कर्णवालिस आ और लोक समाजके गुणके गाना हितकर कार्य कर भारतीय प्रजाके विशेष प्रिय बने। उस समय बड़े बड़े अंगरेज कर्मचारी तथा सैनिक इस देशके लोगोंसे वाणिज्य व्यवसाय चलाते और राजाओंके निकट उपढौकन पाते थे। सैनिक नानाविध उपायसे पुरस्कार ले लेते। शान्तिरक्षाके लिये कितना ही ऐश्वर्य रखा जाता था। लार्ड कर्णवालिसने यह सकल प्रथा उठायी। इन्होंने सैनिक और अन्य सिविल कर्मचारियोंके लिये वेतनका प्रबन्ध बांधा था।

लखनऊके नवाबसे जो सन्धि हुयी, उसमें अनेक अनीति और पक्षपात देख पड़ते रहे। इन्होंने पुनर्वार उस विषयको विवेचना चलायी और यह बात ठहरायी—सीमान्त प्रदेशमें सैन्यव्ययके लिये नवाब प्रतिवर्ष ७४ लाखके बदले ५० लाख ही रुपये देंगे। फिर उनसे दूसरे विषयपर लिया जानेवाला सब रुपया बन्द कर दिया गया। नवाबको अपने राज्यमें स्वाधीन भावसे शासनकार्य चलानेकी क्षमता मिली।

पहले हैदराबाद राज्यमें निजामसे गुण्टूर सर

कारके अंगरेजोंके अधीन रहनेकी बात ठहरी थी। बहुत दिन तक अधिकार न पाने पर १७८८ ई०को इन्होंने कपतान कनवयेको दूतस्वरूप भेज दिया। किन्तु निज़ामने कुछ न सुना। लार्ड कर्णवालिसने अन्तको युद्धका भय देखा सैन्य प्रेरण किया। निज़ामने शान्त भावसे वश्यता मानी और टीपू सुलतानके ग्राससे कितना ही राज्य छोड़ा लेनेकी अंगरेज़ोंसे सहायता मांगी। फिर उन्होंने टीपूको डरानेके लिये एक कुरान भेज कहलाया था—'प्रभूत विक्रम अंगरेज़ोंसे विवाद आवश्यक नहीं जंचता। एक धर्मावलम्बी रहते हम दोनोंके विवाद मिटानेको दूसरेकी मध्यस्थता मानना क्या अच्छा है।' टीपूने उत्तर दिया, 'यदि आप अपनी कन्यासे हमारा विवाह कर दें, तो हम भी आपकी बात मान लें।' निज़ाम इस पर बहुत बिगड़े थे। फिर उभयका युद्ध रुक न सका। मसलीपट्टनकी सन्धिके अनुसार अंगरेज़ निज़ाम पक्षमें टीपूसे लड़नेपर स्वीकृत हुये। टीपूके साथ विवादका दूसरा भी कारण था। मङ्गलूरके सन्धिपत्रानुसार त्रिवाङ्कोड़ अंगरेज़ोंका रक्षित राज्य निर्दिष्ट हुआ। त्रिवाङ्कोड़के राजाने ओलन्दाजोंसे कङ्गानूर और आयकोटा नामक दो नगर खरीदे। टीपूने यह क्रय न माना और कोचिनराजका पक्ष ले त्रिवाङ्कोड़से युद्ध ठाना था। लार्ड कर्णवालिसने त्रिवाङ्कोड़के साहाय्यार्थ परिकर बांधा।

युद्ध होने लगा। १७८९ ई०को जनरल आवरने उपकूलस्थ काननका एक प्रदेश अधिकार किया। प्रथम महिसुरयुद्ध इतनेसे बन्द हो गया। द्वितीय बार (१७९१ ई०) लार्ड कर्णवालिस स्वयं सेनापति बन लड़ने चले। इस युद्धमें टीपू हारे थे। किन्तु इन्हें भी खाद्यके अभावसे सम्पूर्ण जय न मिला और ससैन्य पीछे लौटना पड़ा। अन्तको मराठोंके साहाय्यसे फिर युद्ध चला। टीपूने बाध्य हो सन्धि कर ली।

महिसुरमें कृतकार्य हो इन्होंने शासनविधिके संस्कारपर मन लगाया। उस समय कर लेनेका प्रबन्ध बहुत विशृङ्खल था। अकबरने पैमायश करा भूमिका जो कर ठहराया, वही बराबर चला आया। कर लेनेवाले कार्य वंशानुक्रम चला नाना प्रकार अत्याचार देखाते थे। लार्ड कर्णवालिस इन सब विषयोंका अनुसन्धान लेने लगे। अन्तको तालुकदारोंसे इन्होंने एक नियम किया था। यह दशमाला बन्दोबस्त कहाता है। किन्तु इस नियममें भी असुविधा देख लार्ड कर्णवालिसने जमीन्दारोंको चिरकालके लिये भूस्वामित्व दिया और गवरनमेण्टके साथ करका प्रबन्ध किया। यही चिरस्थायी बन्दोबस्त कहाता है। १७९३ ई०को २२वीं मार्चको यह बन्दोबस्त हुवा था।

पहले विचारक और तहसीलदार या कलेक्टरका काम एक ही व्यक्ति करता था। इन्होंने इन दोनों कार्यपर दो स्वतन्त्र व्यक्ति रखनेकी व्यवस्था बांधी। लार्ड कर्णवालिसने ही ज़िले ज़िले दीवानी अदालत खोली थी। फिर दीवानी अदालतकी अपील सुननेको दूसरी चार अदालतें बनीं। अपीली अदालतोंके विचार जांचनेका भार कलकत्तेकी सदर दीवानी अदालतपर आया। फिर निज़ामतकी अदालतके आइनकानून भी बहुत कुछ बदल गये।

१७९३ ई०के अक्तोबर मास यह स्वदेशको चले थे। इनके पीछे दश-साला और चिरस्थायी बन्दोबस्तको प्रथा स्थिर करनेवाले सर जान शोरने भारतके शासनका भार उठाया।

देशमें जाकर लार्ड कर्णवालिसने महासम्मान और मार्क्विस उपाधि पाया था। १७९८ ई०को यह आयर्लेण्डके शासनकर्ता बने। वहां भी लार्ड कर्णवालिस शान्त भावसे विद्रोहादि मिटाने पर लोकप्रिय हो गये। १८०१ ई०को राजदूत बन यह फ्रान्स (फरासीस) पहुंचे थे। इन्हींकी मध्यस्थतासे एमिन्सकी सन्धि स्थापित हुयी।

१८०५ ई०को यह फिर भारतके राजप्रतिनिधि बने थे। यहां अगस्त मास पहुंचते ही लार्ड कर्णवालिस एक दल सैन्यके अधिनायक हो पश्चिमोत्तर प्रदेशको चले और अक्तोबर मास गाज़ीपुर पीड़ित पड़े। उसी मासकी ५वीं तारीखको इनका मृत्यु हुवा। गाज़ीपुरमें लार्ड कर्णवालिसकी कब्र बनी है।

कर्णविट् (सं॰ स्त्री॰) कर्णस्य कर्ण जाता या विट्। कर्णमल, कानका मैल।

"वराहमवनम् ... कर्णविद्।
... (मनु)

कर्णविट्क (सं० त्रि०) कर्णविट्‌विशिष्ट, जिसके खूंट रहे।

कर्णविद्रधि (सं० पु०) कर्णस्रोतोगत स्फोटक, कानका भीतरी फोड़ा। यह दोषज और आगन्तुज—द्विविध होता है।

कर्णविधि (सं० पु०) कर्णच्छेदनादि, कानमें छेद करने इत्यादिका तरीका।

कर्णविवर (सं० क्ली०) कर्णच्छिद्र, कानका छेद।

कर्णवेध (सं० पु०) कर्णयोः, कर्णस्य वा वेधः, ६-तत्। संस्कारविशेष, कनछेदन। इसमें शास्त्रोक्त विधानके अनुसार कान छेदना पड़ते हैं। जन्मके मासमें ६ठे, ७वें, ८वें १२वें या १६वें महीनेमें बुध, वृहस्पति, शुक्र वा सोमवार, द्वितीया, तृतीया, पञ्चमी षष्ठी, सप्तमी, दशमी अथवा त्रयोदशीको ब्राह्मण तथा वैश्यका रौप्य, क्षत्रियका स्वर्ण और शूद्रका लौहशलाका द्वारा कर्णवेध किया जाता है। जन्ममास चैत्र एवं पौष, युग्मवत्सर, हरिके शयनकाल, दूषित लग्न, जन्मपक्ष, जन्मनक्षत्र दिवसके पूर्व भाग और रात्रिकालमें कर्णवेध करना न चाहिये। (ज्योतिष) उत्तरायण सूर्यका समय कर्णवेधके लिये अच्छा है। दक्षिणायनमें यह संस्कार करना न चाहिये। (गर्ग) एक पिताके दो पुत्रका कर्णवेध संस्कार न होते पुनरपि पुत्रोत्पत्तिकी सम्भावना आनेसे दोनोंमें एक कर्णवाटिका कर्णवेध कर्तव्य है। ऐसे समय ज्योतिषका विचार आवश्यक नहीं। कारण कर्णवेधरहित तीन पुत्र हो जानेसे 'कर्णपरद्ध' दोष लगता, जो अतीव कुत्सित ठहरता है। (ज्योतिस्तत्त्व) ब्राह्मणको कर्णमें अङ्गुष्ठके यव प्रमाण प्रशस्त छिद्र रखना चाहिये।

"... कर्णौ न ... यदि।
... ॥" (शिवधर्म)

कर्णमें अङ्गुष्ठके यव प्रमाण छिद्र न रहने कोई भी श्राद्धका अधिकारी हो सकता है। उसके आगमनसे श्राद्ध असुरका भाग्य बन जाता है।

"कर्णरन्ध्रे रवेश्छाया न विशेदग्रजन्मनः।
तं दृष्ट्वा विलयं यान्ति पुण्यौघाश्च पुरातनाः॥" (देवलस्मृति)

जिस ब्राह्मणके कर्णरन्ध्रमें सूर्यका किरण नहीं घुसता, उसका देखनेसे प्राचीन पुण्यशील व्यक्ति भी नरक पहुंचता है। कर्णपार्थिव देवी।

कर्णवेधनिका (सं० स्त्री०) विध्यति अनया, कर्ण विध करणे ल्युट् स्वार्थे कन् टाप् अत इत्वम्। १ हस्तिकर्ण विधनास्त्र, हाथीके कान छेदनेका औजार। २ कर्णवेधनास्त्र, कान छिदनेका औजार।

कर्णवेधनी (सं० स्त्री०) विध्यति अनया कर्ण विध करणे ल्युट् ङीप्। कर्णवेधकी सूची, कान छेद करनेकी सूई।

कर्णवेष्ट (सं० पु०) कर्णौ वेष्टयति, कर्ण वेष्ट अच्। १ कुण्डल, बाली, पात। २ द्वापर युगके एक राजा। (भारत, आदि ६७ अ०)

कर्णवेष्टक (सं० स्त्री०) कर्णौ वेष्टयति, कर्ण वेष्ट ण्वुल्। १ कुण्डल बाला। २ शिरस्त्राणका प्रान्त, टोपीका दामन। इससे कान ढंके जाते हैं।

कर्णवेष्टकीय (सं० त्रि०) कर्णवेष्टक ढञ्। कर्णवेष्टक सम्बन्धीय बाली वा टोपीके दामनसे सरोकार रखनेवाला।

कर्णवेष्टन (सं० क्ली०) कर्णौ वेष्ट्यते अनेन कर्ण वेष्ट-ल्युट्। १ कुण्डल बाला। २ शिरस्त्राणका प्रान्त टोपीका दामन। ३ कर्णका वेष्टन, कान लपेटनेका काम।

कर्णव्यध (सं० पु०) कर्णवेध, कनछेदन।

कर्णव्यधविधि (सं० पु०) कर्णव्यधस्य कर्णवेधस्य विधिः, ६ तत्। १ कर्णवेधका नियम, कनछेदनका तरीका। २ रक्षाभूषणको बालकके कर्णवेधका सुश्रुतोक्त नियम। छठे या सातवें मास प्रशस्त तिथि करण मुहूर्त तथा नक्षत्रयुक्त दिवस मङ्गल कार्य एवं स्वस्तिवाचन कर धात्रीके गोदमें बालकको बैठाना और विविध क्रीड़ाद्रव्य द्वारा सान्त्वना दिखाना चाहिये। फिर भिषक् वामहस्त द्वारा खींचकर पकड़ और सूर्य किरणमें देखकर छिद्र मिलाकर दक्षिण हस्त सूक्ष्म सूचीसे सरल भाव पर कान छेदता है। पुत्रका दक्षिण और कन्याका वाम कर्ण छेदा जाता है। वेधके बाद

उसमें रुयीकी वत्ती बनाकर डलाना और अपक्व तैल लगाना चाहिये। अधिक रुधिर गिरने या वेदना बढ़नेसे अन्य स्थानका वेध समझते हैं। यथारीति कर्णवेध होनेसे किसीप्रकार उपद्रव उठनेकी आशङ्का नहीं आती। किन्तु अज्ञ भिषक् द्वारा कोयी दूसरी शिरा छिद जानेसे विविध उपद्रव उठते हैं। कालिका शिरा विद्ध होनेसे ज्वर, दाह, शोथ और दुःख बढ़ता है। फिर मर्मरिका वेधसे वेदना, ज्वर एवं ग्रन्थि और लोहितिका वेधसे मन्यास्तम्भ, अपतानक, शिरोग्रह और कर्णशूलरोग लगता है।

कष्टकर जिह्मा, प्रशस्त सूचीके वेध, गाढ़तर वर्ती प्रवेश अथवा दोषके प्रकोपसे वेदना तथा शोथ होने पर यष्टिमधु, एरण्डमूल, मञ्जिष्ठा, यव एवं तिल बांट और मधु घृत डाल प्रलेप चढ़ाते हैं। इस प्रलेपसे अच्छा हो जानेपर फिर पूर्वोक्त नियमसे कर्णवेध करना पड़ता है। छिद्र बढ़ानेको तीन दिन पीछे क्रमशः स्थूलवर्ती डाल तैलसे सेंक देना चाहिये। (सुश्रुत)

कर्णशष्कुली (सं० स्त्री०) कर्णयोः कर्णस्य वा शष्कुली इव, उपमि०। १ कर्णगोलक, कानका परदा। (Auricle or external ear)

कर्णशिरीष (सं० पु०) कर्णगतः शिरीषः, मध्यपद-लो०। कर्णपर अलङ्कारवत् धारण किया हुवा शिरीष पुष्प, जो सिरिसका फूल कानपर जेवरकी तरह रखा हो। प्रवादानुसार कानमें फूल खोंसना न चाहिये।

कर्णशूल (सं० पु०) कर्णस्य शूलः शूलवत् यन्त्रणा-प्रदो रोगः। कर्णस्रोतोगत रोगविशेष, कानका दर्द। दूषित कफ, पित्त एवं रक्तसे पथ रुकते वायु कर्णमें चारो ओर चलता और अत्यन्त वेदना उत्पन्न करता है। इसी पीड़ाका नाम कर्णशूल है। कर्णशूल कष्ट-साध्य होता है। कपित्थ, निम्बुक एवं आर्द्रकका रस अथवा शुण्ठो, मधु, सैन्धव तथा तैल वा रसुन, आर्द्रक, शोभाञ्जना, रक्त शोभाञ्जनाके मूल और कदलीका रस किञ्चित् उष्ण कर कानमें डालनेसे कर्णशूल निवारित होता है। केवल समुद्रफेनको भी कूटपीस कानमें भरा करते हैं। गोमूत्र, हस्तिमूत्र, उष्ट्रमूत्र अथवा गर्दभमूत्र उष्णकर कर्णपूरण करनेसे कर्णशूल मिट जाता है। अर्कपत्रके पुटमें जला सेहुण्डपत्रका उष्ण रस कर्णमें डालनेसे उक्त रोग आरोग्य होता है। फिर घी लगा अर्कका पक्वपत्र अग्नि वा रौद्रमें तपाने और हाथसे दबा कानमें रस टपकानेसे भी कर्णशूल घटता है। (चक्रदत्त)

कर्णशूली (सं० त्रि०) कर्णशूलो ऽस्यास्ति, कर्णशूल-इन्। कर्णशूलविशिष्ट, जिसके कानमें दर्द रहे।

कर्णशेखर (सं० पु०) शालवृक्ष, सालका पेड़।

कर्णशोथ (सं० पु०) कर्णस्रोतोगत रोगविशेष, कानको सूजन। इस रोगसे कर्णमें अर्बुद और अर्श उत्पन्न होते हैं। (माधवनिदान) फिर कर्णशोथसे कान बहने और रोगी बहरा पड़ने लगता है। (भावप्र)

कर्णशोथक, कर्णशोथ देखो।

कर्णशोभन (सं० त्रि०) कर्णं शोभयति, कर्ण-शुभ-णिच्-ल्युट्। कर्णभूषण, कानका गहना।

कर्णश्रव (सं० त्रि०) कर्णेन श्रवः श्रवणयोग्यः शब्दो यत्र, कर्ण-श्रु-अच्, बहुव्री०। श्रवणके योग्य, सुन पड़ने लायक।

"कर्णश्रवे ऽनिले रात्रौ दिवापांशुसमूहने।" (मनु)

कर्णसंस्राव (सं० पु०) कर्णस्य कर्णयो वा संस्रावः पूयशोणितादेः निस्रावणं यत्र रोगे, बहुव्री०। कर्ण-स्रोतोगत रोगविशेष, कानकी एक बीमारी। मस्तकमें कोई आघात लगने, जलमें डूब पड़ने अथवा आभ्य-न्तरिक कोई विद्रधि पकनेसे वायुके कर्णद्वार द्वारा पूय बहानेपर कर्णसंस्रावरोग समझा जाता है। (माधवनिदान)

जामुन, सेमर, कंगई, मौलसिरी और बेरीकी छालका चूर्ण केथेके रसमें मिला शहदके साथ कानमें डालनेसे कर्णसंस्राव रोग अच्छा हो जाता है। अथवा पुटपाकसे सिद्ध हाथीकी विठाका रस निकालते और तैल तथा सैन्धव मिला कर्णसंस्राव रोकनेको कानमें डालते हैं। (चक्रदत्त)

कर्णसमीप (सं० पु०) गण्डदेश, कनपटी, गुलगुली।

कर्णसुवर्ण—भारतवर्षका एक प्राचीन जनपद। प्रसिद्ध चीनपरिव्राजक युएन-चुयङ्गने 'किए-लो-न-सु-फ-ल-न' नामसे जिस जनपदका वृत्तान्त लिपिबद्ध किया, पाश्चात्य

पुरातत्त्वविदोंने इसीका नाम 'कर्णसुवर्ण' रख दिया है। उक्त चीन-परिव्राजकके वर्णनानुसार—यह जनपद देर्घ्यमें प्रायः १४०० या १५०० लि (२६७ कोससे अधिक) है। इसकी राजधानी कोयी २० लि (३ कोस) घूमती है। यहां बहुत लोग रहते हैं। सभी सम्पन्न गृह और सम्पत्तिशाली हैं। निम्नभूमि उर्वरा है। नियमित कृषिकार्य चलता है। नानाविध मनोहर और उपादेय कुसुमभूषणसे यह जनपद अलङ्कृत है। जलवायु मनोरम है। अधिवासी विद्योत्साही देख पड़ते हैं। (इस समय) यहां दश संघाराम बने जिनमें २००० बौद्ध यति बसे हैं। सभी सम्मतीय होनयानमतावलम्बी हैं। नगरके पार्श्व रक्तविटि (लो तो पेइ चि) नामक एक संघाराम खड़ा है। इसका प्रासादेश सुविस्तृत और प्राकार अति उच्च है। पहले यहां कोयी बौद्ध न था। राजाके प्रदेशमें एक श्रमण आये। उनकी ज्ञानमत्ते कथासे मुग्ध हो राजाने बौद्ध धर्म ग्रहण किया। उसी समयसे यहां बौद्ध धर्मका आदर बढ़ गया। इसी संघारामके अनतिदूर अशोक राजाने एक स्तूप बनाया था।

यह कर्णसुवर्ण जनपद कहां था? इसके वर्तमान स्थान पर गड़बड़ पड़ता है। किसी-किसीके मतानुसार मुर्शिदाबादसे ६ कोस उत्तर 'कुरुडोनका-गढ़' नामक प्राचीन नगर कर्णसुवर्ण हो सकता है। (J. As. Soc. Bengal Vol. XXII. 281ff J. R. As. (n. s.) Vol. VI. 248 Ind. Ant. Vol. VII. 197) फिर कोयी भागलपुरके निकटस्थ कर्णगढ़को कर्णसुवर्ण समझता है। (Beal's Record, Vol. II p. 20) वस्तुतः कर्णसुवर्णका प्रकृत स्थान आज भी ठीक नहीं ठहरा। किन्तु चीन परिव्राजककी वर्णना देखते यह जनपद ताम्रलिप्तसे ७०० लि (प्रायः ५० कोससे अधिक) उत्तर पश्चिम अवस्थित है। वर्तमान राढ़ और मयूरभञ्ज पूर्व कर्णसुवर्ण राज्यका अंश था।

कर्णसू (सं॰ स्त्री॰) कर्ण-सू क्विप्। कर्णकी जननी कुन्ती।

कर्णसूची (सं॰ स्त्री॰) कर्णवेधार्थं सूची, मध्यपद-लो॰। कर्णवेध करनेकी सूयी, कान छिदनेकी सलाई।

कर्णस्फुटी (सं॰ स्त्री॰) कीटविशेष, एक कीड़ा।

कर्णस्फोटा (सं॰ स्त्री॰) कर्णस्य स्फोटेव स्फोटा विदारणं यस्याः। लताविशेष, एक बेल। इसका संस्कृत पर्याय—श्रुतिस्फोटा, त्रिपुटा, छिन्नपत्रका, चित्रपर्णी कोपलता चन्द्रिका, और अर्धचन्द्रिका है। राजनिघण्टुके मतसे यह कटु, तिक्त, शीतल और सर्व प्रकार विषदोष, ग्रहदोष, भूतादिबाधा तथा पीड़ा नाशक होती है।

कर्णस्राव (सं॰ पु॰) कर्णस्य कर्णयोर्वा स्रावः पूयादि निःसरणम् ६ तत्। कर्णरोगविशेष, कान या कानोंसे पीब वगैरह बहनेकी बीमारी। कर्णस्राव देखो।

कर्णस्रोतोभव (सं॰ पु॰) कर्णस्रोतसो विष्णुकर्ण-विवरात् भवति, कर्णस्रोतस्-भू अच्। १ मधु नामक असुर। २ कैटभ नामक असुर। कैटभ देखो।

कर्णहीन (सं॰ पु॰) १ सर्प, सांप। सांपके कान नहीं होते। (भारत॰ अनु ८८ अ) (त्रि॰) २ बधिर, बहरा, जिसे सुन न पड़े।

कर्णाकर्णि (सं॰ अव्य॰) कर्णे कर्णे गृहीत्वा प्रवृत्तं कथनम्, व्यतिहारे इच् पूर्वस्य दीर्घश्च। कर्णसे कर्ण पर्यन्त, कानों कान, कानाफूसीसे।

"कर्णाकर्णि हि यस्य [illegible]।" ([illegible])

कर्णास्य (सं॰ पु॰) श्वेतभिण्टी सफेद झाड़।

कर्णाञ्जलि (सं॰ पु॰) कर्णे अञ्जलिरिव, उपमि॰। कर्णरन्ध्र को, कानका छेद। अञ्जलिके द्रव्यग्रहणकी भांति यह शब्दग्रहणकी योग्यता रखता है। इसीसे अञ्जलिके नाम उपमा दी गयी है।

कर्णाट (सं॰ पु॰) दाक्षिणात्यका एक प्राचीन जनपद। शक्तिसङ्गमतन्त्रमें लिखा—

"रामनाथं समारभ्य श्रीरङ्गान्तं शिवेश्वरि।
कर्णाटदेशो देवेशि साम्राज्यभोगदायकः॥"

रामनाथसे लेकर श्रीरङ्गको सीमा तक साम्राज्य भोगदायक कर्णाटदेश है।

रामनाथका वर्तमान नाम रामनाद है। वह भारतके दक्षिण समुद्रके निकट अवस्थित है। श्रीरङ्ग त्रिचिरापल्लीके निकट कावेरी और कोलरुण नदीके मध्य पड़ता है। ऐसा जाने शक्तिसङ्गमतन्त्रके मतानुसार

भारतका सर्वदक्षिण अंश रामेश्वरसे कावेरी नदी पर्यन्त कर्णाट देश ठहरता है। किन्तु महाभारत, मार्कण्डेयपुराण और बृहत्संहितामें कर्णाट अवन्ति, दशपुर, महाराष्ट्र तथा चित्रकूटके साथ उक्त है। यथा

"अवन्तयो दाशपुराश्चैवा कपिनो जनः।
महाराष्ट्राः सकर्णाटा गोनर्दाश्चित्रकूटकाः॥" (मार्कण्डेयपु० ५८अ०)
"कर्णाटमहाटविचित्रकूटः।" (बृहत्संहिता १४।१३)

शक्तिसङ्गमतन्त्रमें भी एक स्थानपर कहा है—

"मातःस्तोयं राजेन्द्र कोल्लापुरनिवासिनी।
तावद्दै महाराष्ट्रः कर्णाटस्वामिगोचरः॥"

यहां महाराष्ट्रके निकट कर्णाटस्वामीका उल्लेख मिलता है।

एतद्भिन्न कर्णाटके राजावोंके खोदित शिला-लेखमें पढ़ते, कि वह वर्तमान महिसुरके उत्तरांशसे विजयपुर पर्यन्त समुदाय भूभागमें राजत्व रखते थे। सम्भवतः इसी भूखण्डको महाभारत, मार्कण्डेयपुराण और बृहत्संहितामें कर्णाट कहा है। आजकल कितने ही लोग कनाड़ा और कर्णाटिक प्रदेशको कर्णाट समझते हैं। किन्तु यह उनका भ्रम है। हम जिसे कर्णाटिक कहते, उसमें कोई प्राचीन कर्णाटराज रहते न थे। मुसलमानोंके आनेसे महिसुरका दक्षिण अंश कर्णाटिक कहाया है। कर्णाटिक देखो। श्रीमद्भागवतमें दक्षिण कर्णाटका नाम है। वह स्थान कोङ्क, वेङ्कट और कूटक नामक जनपदके साथ उक्त है। (भागवत ५।६।८) वर्तमान कर्णाटिकका कावेरीकूलस्थ स्थान उक्त दक्षिणकर्णाट हो सकता है।

कनाड़ा कर्णाट शब्दका ही अपभ्रंश है। किन्तु कनाड़ा प्राचीन कर्णाट राज्यके भीतर नहीं पड़ता। मुसलमानोंके महिसुरके दक्षिणांशको कर्णाटिक कहनेकी तरह अंगरेजोंने भी गोवाके दक्षिणस्थित समुद्र-कूलवर्ती विस्तीर्ण भूभागका नाम कानाड़ा रख लिया। प्राचीन काल समुद्रकुलवर्ती उक्त विस्तीर्ण भूभाग सह्याद्रिखण्डके अन्तर्भुक्त था। कानाड़ा देखो।

कर्णाटप्रदेशमें चालुक्य, चेर, गङ्ग, पल्लव और कलचुरि वंशने राजत्व किया। चालुक्य प्रभृति प्रत्येक शब्द देखो। ई० दशम शताब्दको कर्णाटका दक्षिणांश चोल राजावोंके हाथ लगा। उस समय उत्तर अंशमें कलचुरी वंश राजत्व रखता था।

बल्लालदेव महिसुरके तोन्नरमें जाकर रहे। उस समय वह और उनके वंशधर विजयनगरके कलचुरी राजाको कर देते थे। कलचुरीके अधःपतनसे बल्लाल-वंशका अभ्युदय हुआ। १३३६ ई०को बल्लालवंशने प्रबल हो तुङ्गभद्राके दक्षिण कर्णाट प्रदेश अधिकार किया। १५६५ ई० पर्यन्त उसका प्रभाव अक्षुण्ण रहा। मुसलमानोंसे हार वह प्रथम पेन्नाकोंडा, फिर चन्द्रगिरिमें जाकर बसे। उनकी एक शाखा आन-गुण्डीमें भी थी। उसी समय कर्णाटिक नाम निकला। प्राचीन कर्णाटसे कर्णाटिकको स्वतन्त्र देखानेके लिये एकको 'कर्णाटपयान-घाट' अर्थात् कर्णाटकी निम्न भूमि और उसके उत्तर पार्वतीय स्थानको 'कर्णाट बालाघाट' कहते थे।

मुसलमानोंने विजयनगरके हिन्दू राजा भगा कर्णाटको दो भागमें बांट लिया—कर्णाटिक हैदरा-बाद या गोलकुण्डा और कर्णाटिक बीजापुर। फिर उभय विभाग पयानघाट और बालाघाट दो विभागमें विभक्त हुये।

व्युत्पत्ति—भारतके संस्कृतज्ञ पण्डित कर्णाट शब्दको कर्ण-अट्-अच् सम्बन्धादि व्युत्पत्ति लगाते हैं। किन्तु शब्दशास्त्रविद् पण्डितोंके कथनानुसार द्राविडी कर्णाडु (कर् कृष्ण+नाडु स्थान) अर्थात् कृष्णप्रदेश वा कृष्णकार्पासोत्पादक क्षेत्रसे कर्णाट बना है। मार्कण्डेय-पुराण, महाभारत और वराहमिहिरकी बृहत्संहिता पढ़नेसे कर्णाट नाम बहु प्राचीन मालूम पड़ता है।

कर्णाट शब्द स्थानवाचक होते भी बहु दिनसे स्वतन्त्र जाति और भाषाका बोधक है।

कर्णाट—द्राविड़ ब्राह्मणोंकी एक श्रेणी। भारतके उत्तरांशमें पञ्चगौड़ कहनेसे जैसे कान्यकुब्ज, सारस्वत, गौड़, मैथिल तथा उत्कल, वैसेही दाक्षिणात्यमें द्राविड शब्दसे महाराष्ट्र, तैलङ्ग, द्राविड, कर्णाट और गुर्जर ब्राह्मण समझ पड़ते हैं।

द्राविड ब्राह्मणोंकी ४र्थ श्रेणी कर्णाट है। यह

अपर द्राविड़ोंसे मिलकर आभिजात्य और मर्यादामें कुछ हीन हैं। अपर श्रेणीके ब्राह्मण इन्हें अपनी कन्या नहीं देते। किन्तु खाना पीना एक ही मिल-चलता है।

कनाड़ा वा कर्णाटक प्रदेशमें यह रहते हैं। कना-ड़ेके सकल अधिवासी प्राय शिष्यवत् हैं। सम्मान प्रदानकी बात छोड़ कर समय समय इनको भिक्षा उठाया करते हैं। फिर भी किसी कर्णाटकी उनके घर अतिथि होनेपर आदर अभ्यर्थनाकी परिसीमा नहीं रहती। यह कायमन वाक्यसे सेवा उठा उसको परितृप्त करते हैं।

कर्णाट इस प्रान्तके ब्राह्मणोंकी भांति यजमान द्वारा परिपोषित न होनेसे जीविकानिर्वाहके लिये खेत कर्से कोई नानाप्रकार कार्य चलाते हैं। किसी किसीको पेटकी जलनसे खेती भी करना पड़ती है।

यह लोग अथवा यजुर्वेदी होते हैं। इनको प्रधा-नतः आठ शाखा हैं—१ हैग २ हाल, ३ कोटिसरो, ४ बर्गीनार, ५ अन्ध्राव, ६ कर्णाटक, ७ महिसुर-कर्णा-टक और ८ मोरनाद (मोनाथ)। वासस्थानानुसार कर्णाट ब्राह्मणोंके भिन्न भिन्न नाम मिलते हैं—

गोत्र	उपाधि	कुल
कश्यप	[illegible]	मल्लिपुर।
गौतम	[illegible]	[illegible]पुर।
भरद्वाज	पुत्तिनाद	कड़ेरी।
वसिष्ठ	[illegible]	श्रीरङ्गपत्तन।
विश्वामित्र	[illegible]	[illegible]।
[illegible]	दुर्गिनाद	[illegible]।
अत्रि	[illegible]	[illegible]।
[illegible]	[illegible]	[illegible]।
[illegible]	[illegible]	[illegible]।
[illegible]	[illegible]	[illegible]।
[illegible]	[illegible]	[illegible]।
[illegible]	[illegible]	[illegible]।
[illegible]	[illegible]	[illegible]।
गौतम	दुर्गिनाद	[illegible]।
[illegible]	दुर्गिनाद	[illegible]।

सिवा इसके कुछ अन्यगोत्र प्रभृति दूसरे भी कई घर हैं।

कर्णाट ब्राह्मण उत्तर एवं दक्षिण कनाड़ा, तुलुव, मलबार, कोचिन और महिसुरमें रहते हैं। इनकी संख्या १० लाखसे अधिक है। यह देहके गठनकी सुश्री और आकृतिसे उत्तरापथके ब्राह्मणोंकी भांति लगते हैं।

कर्णाट (सं॰ पु॰) रागविशेष। यह मेघरागका द्वितीय पुत्र है। इसको रात्रिके प्रथम प्रहर गाते हैं। कर्णाटको स्त्री कर्णाटी, खम्भावती, महावाटी मल्लिका और गोंडली हैं।

कर्णाटक—१ द्राविड़भाषाकी एक भाषा। यह प्रधा-नतः तीन भागमें विभक्त है—तेलगु (तैलङ्ग) तामिल (द्राविड़ी) और कर्णाटक (कर्णाटी)। तेलगु उत्तर, तामिल दक्षिण और कर्णाटक भाषा मन्द्राजके अधि-भागसे पश्चिमोपकूल पर्यन्त समस्त प्रदेशमें प्रचलित है। यही तीन द्राविड़भाषाकी प्रधान भाषा हैं। इनमें कनाड़ा, दक्षिण महाराष्ट्र, महिसुर, निजाम राज्यके पश्चिमांश और बिदरमें कर्णाटक भाषाका अधिक चलन है। नीलगिरिमें रहनेवाले बड़गजाति भी प्रायः प्राचीन कर्णाटी भाषा ही बोलती है। प्राचीन कर्णाटीको आजकल 'हलकनड़' कहते हैं। महाराष्ट्र और महिसुरमें जो खोदित शिलाफलक मिले, उनमें अनेक प्राचीन कर्णाटी अक्षरसे लिखे हैं।

मन्द्राज वा बम्बई प्रेसिडेन्सीके सिविलियन और अन्यान्य गवर्नमेण्ट कर्मचारीको यह प्रचल देशीय भाषा सीखना पड़ती है। इनको शिक्षा देनेको प्रबन्ध बांधते समय कर्णाटी भाषाके सम्बन्धमें अनेक ग्रन्थ संग्रह किये और लिखे गये। इसीसे ई॰ [illegible] शताब्दको [illegible] 'शब्दमणिदर्पण' नामक एक धातु सम्बन्धीय पुस्तक बनाया, जो इस भाषका मूलव्याकरण कहाता है।

कर्णाटी भाषा संस्कृतादिकी भांति बाम दिकसे दक्षिणको लिखी जाती है। इसके शब्द लिखनेमें जिस जिस वर्ण वा युक्ताक्षरका प्रयोजन पड़ता, वह पास ही पास बनता है। दो शब्दों वा पदोंके मध्य पार्थक्य भेद जाननेको न तो कोई अवकाश और न वाक्य वा वाक्यांशके पीछे किसी चिह्नका व्यवहार है। कर्णाटी वर्णमालामें सब ५१ अक्षर होते हैं। इनमें १६ स्वर,

२ अर्धस्वर और १८ व्यञ्जन हैं। किन्तु विशुद्ध कर्णाटीके ४० ही वर्ण रहते हैं। बाकी ८ वर्ण संस्कृत शब्दोंका उच्चारण निकालनेको बने हैं। संस्कृतादि भाषाकी भांति कर्णाटीमें भी यथेष्ट भिन्नरूप युक्ताचर विद्यमान हैं।

इसके समुदय शब्द पांच श्रेणीमें विभक्त हैं—१म मूल कर्णाटी, २य कर्णाटी प्रत्ययादि युक्त संस्कृत, ३य संस्कृत-परिवर्तित, ४र्थ अपभ्रंश एवं अपभाषा और ५म अन्यान्य भाषाके शब्द। फिर कर्णाटी भाषामें विशेष्य शब्दके चार भाग हैं—वस्तुवाचक, विशिष्ट, क्रियावाचक और यौगिक। इसमें देवता तथा मनुष्यको पुंलिङ्ग, देवी और मानवीको स्त्रीलिङ्ग और समस्त पशुपची कीटपतङ्गादि एवं अचेतन उद्भिद् पदार्थको क्लीवलिङ्ग माना है। वचन दो ही हैं—एकवचन और बहुवचन। सर्वनामको ८ भागमें बांटा है—व्यक्तिवाचक, पूरणवाचक, अनिश्चयात्मक, संख्यावाचक, स्थानवाचक, समयपरिमाणवाचक और प्रश्नसूचक। क्रिया सकर्मक और द्विकर्मक होती है। काल आठ प्रकारका है। द्वितीय पुरुषके अनुज्ञा-कालका रूप ही धातुका मूलरूप रहता है।

इसमें उपसर्गादि अव्यय, क्रियाविशेषण, समुच्चयादि अव्यय और विस्मयादि अव्यय भी होते हैं। किन्तु भाषामें जो विशेषत्व रहता, उसको लिखकर देखानेका कोई उपाय नहीं ठहरता। शून्यके योगसे दशगुणोत्तर संख्या समझी जाती है।

कर्णाटी भाषाके सम्बन्धमें विशेष विवरण समझनेको Dr. Mc Kerrell's Grammar of the Carnataka language और Caldwell's Dravidian Grammar देखना आवश्यक है।

२ नेपालका एक राजवंश। पार्वतीय वंशावली पढ़नेसे समझ पड़ा, कि कर्णाटक राजवोंने नेपाली संवत् ८से २२८ (८८० से ११०८ ई०) तक २१८ वर्ष राजत्व किया था। निम्नलिखित नेपालाधिप कर्णाटकोंका नाम मिलता है—

नाम	राज्यकाल
१ नान्यदेव	५० वर्ष।
२ गङ्गदेव (नान्यपुत्र)	४१ वर्ष।
३ नरसिंहदेव (गङ्गके पुत्र)	३१ ,,
४ शक्तिदेव (नरसिंहदेवके पुत्र)	३९ ,,
५ रामसिंहदेव (शक्तिके पुत्र)	५८ ,,
६ हरिदेव।	मिथिला देखो।

कर्णाटकदेश, कर्णाट देखो।

कर्णाटक भट्ट—एक प्राचीन संस्कृत कवि। (सुभाषितावली)

कर्णाटक भाषा (सं० स्त्री०) कर्णाटदेशकी भाषा।

कर्णाटदेव—संस्कृतके एक प्राचीन कवि। (सूक्तिकर्णामृत)

कर्णाटदेश, कर्णाट देखो।

कर्णाटशिखर (सं० क्ली०) महाराष्ट्र प्रदेशस्थ चित्रकूटादि पर्वतका चूडादेश।

कर्णाटिक—मन्द्राजप्रान्तका एक प्रदेश। कुमारी अन्तरीपसे उत्तर सरकार-पर्यन्त पूर्वघाट और करमण्डल उपकूल अर्थात् समस्त तामिल प्रदेशका भ्रमक्रमसे युरोपीयोंने यह नाम रखा है। कर्णाटिक कहनेसे कर्णाट सम्बन्धीयका बोध होता है। किन्तु उक्त विस्तीर्ण भूखण्ड प्राचीन कर्णाट राज्यके अन्तर्गत न रहा। कर्णाट देखो। बर इसके उत्तराश त्रिचनापल्ली और कावेरी नदीका उपकूलस्थ भूमिखण्ड किसी समय दक्षिण कर्णाट कहाता था। आजकल अंगरेज जिसे कर्णाटिक बताते, वर्तमान आर्काट (अरुकोट्टु), मदुरा और तञ्जोर राज्य उसीके अन्तर्गत आते हैं।

पलासी-युद्धके समय कर्णाटिकमें अंगरेज़ कई बार लड़े थे। इसीसे दाक्षिणात्यमें अंगरेजोंके प्रभुत्वकी भित्ति दृढ़ पड़ गयी। नीचे उक्त युद्धका विवरण देते हैं—

जिस समय क्लाइव कलकत्तेके अगरेज़ोंकी विपद् सुन एडमिरल वाटसनके साथ बङ्गालकी ओर बढ़े, उसी समय (अप्रेल १७५७ ई०) कप्तान कालियड नामक मन्द्राजके एक अंगरेज़-सेनानी वाकी राजस्व लेनेको मदुरापर चढ़े। कप्तान कालियड त्रिचनापल्लीके शासनकर्ता थे। उनके मदुरा जीतनेको त्रिचनापल्ली छोड़ते ही अगरेजोंके तदानीन्तन शत्रु फरासीसियोंने त्रिचनापल्ली आक्रमण करनेको एक दल सैन्य भेज दिया। फरासीसी सैन्यने त्रिचनापल्ली पहुंच अंगरेजोंका दुर्ग अधिकार किया था। कप्तान कालियाड यह संवाद सुनते ही त्रिचनापल्लीकी ओर लौट पड़े।

मदुराके युद्धमें उनका पराजय हुआ। किन्तु उन्होंने त्रिचनापल्लो पहुंच कर हो फरासीसी सैन्यको भगा दिया। फरासीसी सैन्याध्यक्षने बार बार त्रिचनापल्ली अंगरेजोंको सौंपी। इसी बीच वन्दीवास नामक स्थानके शासनकर्ताने अंगरेजोंको राजस्व देना अस्वीकार किया। कर्नल आलडार कून उनके विरुद्ध बढ़े और नगर घेर पड़े थे। किन्तु फरासीसी बन्दी भावके शासनकर्ताका पक्ष ले अंगरेजोंसे लड़नेको अग्रसर हुये, जिससे कप्तान आलडार कून अपना अवरोध उठा चलते बने। फिर मराठोंने अर्काटके नवाबसे आ राजस्वको चौथका बाकी ६ लाख रुपया मांगा था। किन्तु नवाब उस समय इतना रुपया कहां पाते। वह नाना अनुनय विनय करने लगे। अन्तको महाराष्ट्रीय साढ़े चार लाख रुपयेमें समस्त स्वत्व मिटानेपर सम्मत हुये। इस समय पठान नवाब दाक्षिणात्यके सूबेदार और मराठा-नायक मुरारी रावको अधीनता स्वीकार मानते न थे। सुतरां उन्होंने अंगरेजोंसे कहला भेजा—हम मराठोंके विरुद्ध आपको साहाय्य देनेपर प्रस्तुत हैं। किन्तु अंगरेज उनसे वैसी सन्धि स्थापन कर न सके। कारण उस समय महाराष्ट्र अंगरेजोंसे सद्य व्यवहार रखते थे। इसी प्रकार एक मास बीतनेपर दूसरे मास (जून १७५७ ई०) कप्तान कालियडने फिर मदुरापर चढ़नेको उद्योग लगाया। युद्धमें अंगरेजोंकी विस्तर क्षति हुयी और प्रथम आक्रमणसे कोई बात न बनी। किन्तु कालियडको अनेक क्षति उठा भी युद्धसे शान्त न हुये और इन्हीं अमस्त्रको नगरमें घुस पड़े। फिर उन्होंने शासनकर्तासे (१७०००) रु० बाकी राजस्व पाया था। इसके पीछे भी अंगरेज मदुरा राज्यके अन्य स्थल युद्ध आक्रमण करते रहे। किन्तु किसी पक्षपर जय पराजय स्थिर न हुआ।

इसी समय फिर युरोपमें अंगरेज-फरासीसी लड़ पड़े। फरासीसियोंने काउण्ट डि लाली नामक एक जन विख्यात सैनिकको सेनाका नायक बना एक दल नौ-सेनाके साथ भारत भेजा। लालीके साथ निजका भी एक उत्तम आईरिश सैन्य था। १७५८ ई०के अप्रेल मास वह अपनी अपनी साथ ही भारत आ पहुंचे। उन्होंने आते ही अंगरेजोंका सेण्ट डेविड दुर्ग आक्रमण किया था। एडमिरल पिकाकको अधीनस्थ अंगरेज सेनाने उन्हें रोकनेको किया किन्तु उसका कोई फल न हुआ। लालीने दुर्ग अधिकार कर मन्द्राजपर चढ़ना चाहा था। किन्तु आवश्यक अर्थ न मिलनेसे वह सङ्कल्प कैसेका वैसा हो बना रहा। फिर अर्थ संग्रहके लिये उन्होंने तञ्जोरराज प्रदत्त ५६ लाख रुपयेका तमस्सुक भुनानेको दौड़ धूप लगायी, किन्तु उसमें भी कोई सिद्धि न पायी। तञ्जोरके राजाने अंगरेजोंको मध्यस्थमें पड़ रुपया देनेपर तथा विलम्ब डाला था। इसी अवकाशमें अंगरेजोंको भी सेना आ पहुंची। लालीने आज तक सेण्ट डेविड दुर्गका अवरोध छोड़ा था। लालीने तिरिश्चुरका एक प्राचीन हिन्दू मन्दिर तोड़ पूजक ब्राह्मणोंको तोपसे उड़ा दिया। इसी समय फरासीसी सेनानी बुसी निजाम राज्यमें महा-समादरसे रहते थे। लालीने उन्हें बुला भेजा। बुसीके लालीके निकट पहुंचते ही उत्तर सरकारके फरासीसी अधिकारमें गड़बड़ पड़ा था। विजयनगरके राजा आनन्दराजने फरासीसी अधिकार आक्रमण किया। किन्तु भविष्यत्‌में फरासीसी आक्रमणसे राज्यरक्षाकी चिन्तापर वह घबरा उठे। अन्तको अन्य उपाय न देख उन्होंने बङ्गालसे क्लाइवका साहाय्य मांगा था। इस डरसे आपसमें सन्धि ठहरा उत्तर सरकारसे फरासीसियोंको भगानेके लिये कर्नल फोर्डको १ हजार सिपाही, ५०० गोरे और ६ तोपोंके साथ राजमहेन्द्रीको भेजा। राहमें फरासीसी सेनानी कनफ्लान्सने उनसे सैन्यके साथ उन्हें हरा सब तोपें छीन लीं। किन्तु फोर्ड उससे कुण्ठित न हो कनफ्लान्सके लौटते ही पीछे दौड़ पड़े। राजमहेन्द्री जा उन्होंने वहां किसीको पाया न था। सुतरां वह ससैन्य मछलीपत्तनकी ओर बढ़े। बीचमें अनेक स्थल पर आनन्दराजने बाधा डालनेको चेष्टा लगायी थी। किन्तु अन्तको (छठी मार्च १७५८ ई०) फोर्ड अपनी इसके साथ मछलीपत्तन पहुंच गये। कनफ्लान्सने निजामसे साहाय्य मांगा। निजामने भी साहाय्य देना स्वीकार किया। इधर फोर्डने

गोरे सिपाही बाकी वेतन और मछलीपत्तनकी लूटका अंश न पानेसे बिगड पड़े। किन्तु निज़ामकी फौज टग कोस दूर रह जाते सुन वह निरस्त हुये। फोर्ड मछलीपत्तन दुर्ग अधिकार कर बैठे। निज़ाम फरासीसी फौज आनेकी राह देखते थे। फरासीसी रणतरी कूलपर आयी। किन्तु फौज उतरनेकी खबर किसीने न पायी। निज़ामने फरासीसियोंसे चिढ अपना स्वार्थ बनानेको अंगरेजोंके साथ सन्धि कर ली। इससे अंगरेजोंको चिरकाल चार लाख रुपये आयके उपयुक्त भूसम्पत्ति सह मछलीपत्तन नगर मिलने, भविष्यत्में कृष्णा नदीके उत्तर फरासीसियोंकी कोई कोठी न रहने या चलने और सूबेदारको अपने काममें कोयी फरासीसी न रखनेकी बात ठहरी।

लाली सेण्ट डेविडका अवरोध छोड चल दिये। अंगरेजोंके आडमिरल पोकोक और फरासीसियोंके काउण्ट डि आसि करमण्डल उपकूलमें स्वस्व नौसेनाके साथ उपस्थित थे। पोकोकने अपनी ओरसे दो बार आसिको आक्रमण किया। आसि डर कर पुंदिचेरी भाग गये। फिर वहां लालीसे फटकारे जानेपर उन्हें मरिच शहरकी राह लेना पडी। लालीका बल इससे घटा था। किन्तु कर्णाटिकके नवाब चाद साहबका मृत्यु हुवा। फरासीसी उनके ज्येष्ठपुत्र राजा साहबको कर्णाटिकका नवाब मान गद्दीपर बैठानेकी चेष्टामें लगे। लाली इससे व्यस्त हुये। मुहम्मद अली आर्कोटके शासनकर्ता थे। उन्हें हस्तगत करनेको लालीने प्रतारणापूर्वक कहा—१००००) रु० में हम आर्कोट लेनेको सम्मत हैं। मुहम्मद अली उसीमें मान गये। लालीने छलसे घुस नगर दखल किया। आर्कोट लेने पीछे वह चिङ्गलिपट दुर्ग पानेके आयोजनमें लगे। किन्तु अंगरेज मन्द्राजके निकट फरासीसी राज्य कहा होने देते थे। उन्होंने चिङ्गलिपट दुर्ग सैन्यादि भेज सुरक्षित किया। लालीने मन्द्राज अधिकार कर सकनेको यथेष्ट धन न पाया। फिर भी वह साहसपूर्वक सिर्फ ८४ हज़ार रुपयेके सहारे दिसम्बर मास मन्द्राज घेरनेको आगे बढे। मन्द्राज यह आक्रमण सहनेको प्रस्तुत था। किन्तु सैन्यसंख्या अधिक न रही। ८ सप्ताह फरासीसी सेनाका अवरोध चला। १७५९ ई०की १५वीं फरवरीको मन्द्राज जाता जाता देखा गया। किन्तु उसी समय अंगरेजोंकी नौसेना आ पहुंची। फरासीसी भी खाद्यादिके अभावसे आर्कोटको लौट पडे।

अङ्गरेजोंको समुद्रपथसे खाद्य और सैन्यका साहाय्य मिलता था। किन्तु फरासीसी पुंदिचेरीसे कोई साहाय्य न पानेपर बिलकुल बैठ रहे। १०वीं सितम्बरको फरासीसी नौ-सेनाके कुछ अंशको त्रिनकमलीके निकट आते ही अङ्गरेज सेनानी पोकोकने छत्रभङ्ग किया। फिर फरासीसी नौ-सेनाका एक दल काउण्ट आसिके अधीन चार लाख रुपयेके रत्नादि और सैन्यादि ले पहुंचा, किन्तु भारतवर्षमें उतरनेका आदेश न पाते अन्यत्र चला गया। इसी बीच बन्दीवास अङ्गरेज़ोंने आक्रमण किया और १७६० ई०को कुटने फरासीसियोंसे छेन लिया। फरासीसी यहींसे हारने लगे। बन्दीवासके युद्धमें बुसि बन्दी बने थे। कुटने फिर आर्कोट जीत अन्य स्थान अधिकार किये। फरासीसी कुछ भी बिगाड न सके। मार्च मासके मध्य उपकूल पर कालिकट और पुंदिचेरीको छोड फरासीसीयोंका दूसरा कोयी अधिकार न रहा। लाली अर्थ वा सैन्यसाहाय्य न पा महा व्यतिव्यस्त हुये और अन्तको महिसुरके हैदर अलीसे मदद मागने लगे। हैदर अली स्वीकृत हुये, किन्तु हठात् किसी कारण वश शीघ्र स्वराज्यको ससैन्य चल दिये। सुतरां फरासीसियोंका कोयी उपकार न उठा। इधर मेजर मनसनने फरासिसियोंको सम्पूर्ण रूप हराया था। किन्तु लालीने हठात् ४थी सितम्बरको अङ्गरेजोंका शिविर आक्रमणकर मनसनको गुरुतर रूपसे आहत किया, किन्तु कुटसे सम्पूर्ण पराजित होना पडा। कुटने फिर पुन्दिचेरीको घेरा था। क्रमशः दुर्गमें खाद्यका अभाव आया। दो दिनसे अधिक खाद्य न चलते देख लालीने दुर्ग छोड मन्द्राजके राजा साहबके निकट आश्रय पकडा।

इसी प्रकार फरासीसी प्रादुर्भाव भारतसे उठा था। कर्णाटिकके मध्यका केवल तियागर और गिञ्जि नामक

स्थान पराशोगियोंके अधिकारमें रह गया। कुछ दिन पीछे अङ्गरेजोंके पक्ष भी कर्णाटक हुआ।

कर्णाटिका (सं॰ स्त्री॰) कर्णाटी स्वार्थे कन् टाप् अत इत्वम्। कर्णाटी देखो।

कर्णाटी (सं॰ स्त्री॰) कर्णाट ङीप्। १ कोई रागिणी। यह मालव राग वा कर्णाटकी स्त्री है। इसके गानेका समय रात्रिके द्वितीय प्रहरकी द्वितीय घटिका है। २ हंसपदीलता, एक बेल। ३ कर्णाटदेशकी स्त्री। ४ अनुप्रास विशेष। शब्दालङ्कारमें कवर्गका अनुप्रास कर्णाटी कहाता है। ५ कर्णाटकी भाषा।

कर्णार्द्ध (सं॰ क्लो॰) कर्णं तिर्यक्पाशाकारमाम् इव अस्य। पक्षविशेष, किसी किस्मका मकान्। वह तिर्यक् कानकी भांति पाषाणादि फेंककर बनाया जाता है।

"तिर्यक्दूर्वे अधिवस्त्रात् कर्णार्द्धमिति च।" (मानस ...)

कर्णार्दम (सं॰ पु॰) कर्णालङ्कार विशेष, कानका एक गहना।

कर्णानुज (सं॰ पु॰) कर्णस्य अनुजः, कर्ण-अनु जन् ड। कर्णके छोटे भाई युधिष्ठिर।

कर्णान्तिक (स॰ त्रि॰) कर्णसमीपस्थ, कानके पास पहननेवाला।

कर्णान्दु (सं॰ स्त्री॰) कर्णस्य आन्दुरिव। १ कर्ण पाली, कानकी लौ। २ शरिभाषिका, बाली।

कर्णान्दू (सं॰ स्त्री॰) कर्णान्दु-ऊङ्। १ कर्णपाली, कानकी लौ। २ कुरकी, बाली।

कर्णाभरण (सं॰ क्ली॰) कर्णस्य कर्णे वा आभर णम्। कर्णालङ्कार कानका गहना।

कर्णाभरणक (स॰ पु॰) कर्णाभरणमिव पुष्पे कायति शब्दायते, कर्णाभरण कै-क। आरग्वध वृक्ष, अमलतासका पेड़।

कर्णारा (सं॰ स्त्री॰) कर्णं अर्यते विध्यते अनया, कर्ण ऋ अच् टाप्। कर्णवेधनी, कान छिदनेकी सलायी।

कर्णारि (सं॰ पु॰) कर्णस्य अरिः ६ तत्। १ कर्णके शत्रु अर्जुन। २ अर्जुनवृक्ष। ३ नदीसर्जवृक्ष, एक पेड़।

कर्णार्थ (सं॰ क्ली॰) कर्णस्य कर्णयोर्वा अर्घं। श्रुति-योग्यविषयमें कर्णका अर्घ, कानकी सफाई।

कर्णार्बुद (सं॰ पु॰) कर्णस्रोतोगत रोग विशेष, कानका फोड़ा या मस्सा।

कर्णार्श, कर्णार्बुद देखो।

कर्णालङ्कार (सं॰ पु॰) कर्णं अलंक्रियते येन, कर्ण-अलं-कृ करणे घञ्। कर्णभूषण, कानका गहना।

कर्णालङ्कृति (स॰ स्त्री॰) कर्णयोरलङ्कृतिरलङ्करणम्, ६ तत्। १ कर्णभूषण, कानका गहना। २ कर्णशोभा, कानकी सजावट।

कर्णालङ्क्रिया (सं॰ स्त्री॰) कर्णयोरलङ्क्रिया अलङ्करणम् ६-तत्। कर्णशोभा, कानकी सजावट।

कर्णास्फाल (सं॰ पु॰) कर्णयोरास्फालः आस्फालनम्। हस्तिप्रभृतिका कर्णसञ्चालन, हाथी वगैरह का कानको फटकार।

कर्णि (सं॰ पु॰) कर्ण इन्। १ शर विशेष, किसी किस्मका तीर। भावे इन्। २ भेदकार्य, छेदाई।

कर्णिक (सं॰ पु॰) १ गणिकारिका कोई पेड़। २ पद्मकोष, कमलकी कोष। ३ सन्निपातज्वरविशेष, एक बुखार। इसमें दोषत्रयसे तीव्र ज्वर आता और कर्णके मूलपर शोथ चढ़ जाता है। फिर कण्ठ रुकता, कानसे सुन नहीं पड़ता, श्वास चढ़ता, प्रलाप बढ़ता, प्रस्वेद चलता, मोह लगता और देह जल उठता है। (भावप्रकाश)

कर्णिका (सं॰ स्त्री॰) कर्ण ठन् टाप्। कर्णस्याप्य लङ्कृतिः। पा ५।२।६६। १ कर्णभूषण विशेष, कानका एक जेवर। इसका संस्कृत पर्याय—तालपत्र, ताड़ङ्क और दन्तपत्र है। २ करिकराग्रमध्यमाङ्गुल्याकृति हाथीकी सूंड़के अगले सिरेकी उंगलीसी चीज। ३ पद्म बीजकोष कमलका छत्ता। ४ हस्तकी मध्यम अङ्गुलि, हाथकी बीचकी उंगली। ५ कस्तुरिकादिन्नटीय कण्ठक। ६ लेखनी, कलम। ७ अग्निमन्थवृक्ष। ८ धनवृक्षी, मेढ़ाशींगी। ९ अप्सरो विशेष, एक परी। "मेनका सहजन्या च कर्णिका पुञ्जिकस्थला।" (भारत, आदि १२३।६१) १० सेवती, सफेद गुलाब। इसका संस्कृत पर्याय—शतपत्री, तरुणी, चारुकेशरा, महाकुमारी गन्धाढ्या, लघुपुष्पा और अतिमञ्जुला है। भावप्रकाशके मतसे यह आह्लादकर, शीतल सेवाती कफ-वात-पित्त-घ्न, ...

त्रिदोष तथा रक्तनाशक, वर्णकर, तिक्त, कटु और परिपाककारक होती है। ११ योनिरोगविशेष, औरतोंके पेशाबकी जगह होनेवाली एक बीमारी। इससे योनिपर कर्णिकाकार मांसग्रन्थि पड़ जाता है। प्रसवसे पूर्व अनुपयुक्त समय जोरमें कांखनेपर गर्भके द्वारा वायु रुक श्लेष्मा तथा रक्तमें मिलता, जिससे यह रोग लगता है। (चरक)

इस रोगमें सर्वप्रकार कफनाशक औषध व्यवस्थेय है। कुष्ठ, पिप्पली, अर्कवृक्षकी कोमल शाखा अर्थात् अग्रभाग और सैन्धव लवण छागके मूत्रमें पीस वत्ती बनाने और योनिमें प्रविष्टकर लगानेसे कर्णिकारोग निवारित होता है। (चक्रदत्त)

१२ दारुणपीडा, दर्द-शदीद।

कर्णिकाचल (सं० पु०) कर्णिकायां स्थितः अचलः। सुमेरु पर्वत। "यथा भाध्यामवस्थित पर्वत सौवर्ण कुलगिरिराजो मेरुर्द्वीपायामसमुन्नाह कर्णिकाभूत. कुवलयकमलस्य।" (भागवत ५।१६।७)

कर्णिकाद्रि (सं० पु०) कर्णिकायां स्थितःअद्रिः। सुमेरुपर्वत।

कर्णिकापर्वत, कर्णिकाचल देखो।

कर्णिकार (सं० पु०-क्लो०) कर्णि भेदनं करोति, कर्णि-कृ-अण्। १ वृक्षविशेष, कनियार, कनकचम्पा। इसका संस्कृत पर्याय—द्रुमोत्पल, परिव्याध और द्रुमोत्पल है। २ कर्णिकारपुष्प, कनकचम्पाका फूल। "वर्णप्रकर्षे सति कर्णिकारम्।" (कुमारस०) ३ आरग्वध विशेष, छोटा अमलतास। इसका संस्कृत पर्याय—राजतरु, प्रग्रह, कृतमालक, सुफल, चक्र, परिव्याध, व्याधिरिपु, पित्तवीजक और लघ्वारग्वध है। यह एक विशाल वृक्ष है। फल दीर्घ और आरग्वध सदृश होता है। इसका गूदा जुलाबमें लगता है। राजनिघण्टुके मतानुसार कर्णिकार सारक, तिक्त, कटु, उष्ण और कफ, शूल, उदरकृमि, मेह, व्रण तथा गुल्मनाशक है।

कर्णिकारक, कर्णिकार देखो।

कर्णिकारप्रिय (सं० पु०) शिव। शिवको कर्णिकार अत्यन्त प्रिय है।

कर्णिकारिका (सं० स्त्री०) हरिद्राद्रुम, हल्दीका पेड।

कर्णिकी (सं० पु०) कर्णिका शुण्डाग्राकृतिः अस्यास्ति, कर्णिका इनि। हस्ती, सूंडकी उंगली रखनेवाला हाथी।

कर्णिन (सं० त्रि०) विस्तृतकर्ण, बड़े कानोंवाला।

कर्णिनी (सं० स्त्री०) योनिरोगविशेष, औरतोंके पेशाबकी जगह होनेवाली एक बीमारी। (Disease of the uterus or Polypus uteri)। कर्णिका देखो।

कर्णिल (सं० त्रि०) कर्णौ प्राशस्त्येन अस्यास्ति, कर्ण-इलच्। तुन्दादिभ्य इलच्। ५।२।११७। दीर्घकर्ण, बड़े कानोंवाला।

कर्णिशर (सं० पु०) शरविशेष, किसी किस्मका तीर।

कर्णी (सं० पु०) कर्णो पक्षो अस्त्यस्य, कर्ण-इनि। १ सप्तवर्ष पर्वतके मध्य पर्वत विशेष, एक पहाड।

"हिमवान् हेमकूटश्च निषधो मेरुरेव च।
चैत्र कर्णी च शृङ्गी च सप्तैते वर्षपर्वताः॥" (तारानाथ)

२ बाणविशेष, किसी किस्मका तीर।

"करोति कर्णिनो यश्च यश्च शरान् शूरः।
प्रयाति से विशतये नरके भार छारके॥" (विष्णुपु० २।६।१८)
'कर्णिनो बाणविशेषान्।' (श्रीधर)

३ आरग्वधवृक्ष, अमलतासका पेड। ४ गणिकारिका, कोई पेड। ५ कर्णपार्श्व, कनपटी। ६ कर्णधार, मांझी, मल्लाह। (त्रि०) ७ प्रशस्तकर्ण, बड़े कानोंवाला। ८ कर्णयुक्त, जिसके कान रहे। ९ कानमें कोई चीज रखे हुआ। १० टोली लटकती चीज़वाला, दामनदार। ११ ग्रन्थियुक्त, गंठीला। १२ पतवारवाला।

कर्णी (सं० स्त्री०) कर्ण-ङीष्। १ बाणविशेष, किसी किस्मका तीर। २ मूलदेवकी माता। मूलदेव देखो।

कर्णीमान् (सं० पु०) कर्णी बाणविशेषाकारः फलो ऽस्त्यस्य, कर्णिन्-मतुप् संज्ञायां दीर्घः। आरग्वध, अमलतास।

कर्णीरथ (सं० पु०) कर्णः सामीप्यात् स्कन्धः अस्यास्ति वाहनत्वेन, कर्ण-इनि; कर्णी चासौ रथश्चेति दीर्घश्च, कर्मधा०। १ क्रीडारथ, खेलनेकी गाड़ी। २ मनुष्यके वहन करने योग्य रथ, आदमीके चला सकने लायक गाडी। ३ स्त्रीवहनार्थं वस्त्राच्छादित यान विशेष, परदेदार डोली। इसका संस्कृत पर्याय—प्रवहण, डयन, प्रहरण और डयन है।

कर्णीवान्, कर्णीमान् देखो।

कर्णीसुत (सं० पु०) कर्ण्याः सुतः, ६ तत्। मूलदेव, चोर शास्त्रकार।

कर्णेजुरजुरा (सं० स्त्री०) कर्णे जुरजुरा शब्दकारकत्वम्, निपातनात् सिद्धम्। [illegible]। शुभ मन्त्रणा, कानाफूसी।

कर्णेजप (सं० त्रि०) कर्णे जपति परकार्यं यथातथा पशुचित्तं प्रबोधयति कर्णे जपित्वा पराधकार्यं वदति वा, [illegible]। १ गोपनमें कथित विषय पर परामर्शदाता, छिपकर कानमें सलाह देनेवाला। २ परके अनिष्ट विषयका सलाहदाता, चुगलखोर। इसका संस्कृत पर्याय—सूचक पिशुन, दुर्जन और खल है। इसमें कर्णेजप एवं सूचक दूसरेका अपकार बताता और पिशुन, दुर्जन तथा खल परस्पर भेद लगाता है।

कर्णेजपमन्त्र (सं० पु०) विषनाशक मन्त्रविशेष, जहर उतारनेका एक मन्त्र। वह मन्त्र यह है—

"ओं हर हर [illegible] हर हर हर हर [illegible] कर्णिके कर्णिके कर्णिके।" ([illegible])

इस मन्त्रको बार बार पढ़ [illegible] सातवीं बार फूँकनेपर विष उतर जाता है।

कर्णेटिरटिरा (सं० स्त्री०) शुभपरामर्श, कानफूसी।

कर्णेन्दु (सं० पु०) कर्णयोः कर्णे वा इन्दुरिव, उपमि०। अर्धचन्द्राकार कर्णालङ्कारविशेष, कानका एक गहना।

कर्णेन्द्रिय (सं० पु०) श्रोत्रेन्द्रिय, कानका [illegible]।

कर्णोत्पल (सं० स्त्री०) कर्णस्थितमुत्पलम् मध्य पदलो०। कर्णस्थित पद्म, कानका भूषण। २ एक प्राचीन कवि।

कर्णोपकर्णिका (सं० स्त्री०) कर्णादुपकर्णौ [illegible], कर्णोपकर्णं ठञ् टाप् अत इत्वम्। १ कानाफूसी करनेवाली स्त्री।

कर्णोर्ण (सं० स्त्री०) कर्णरोम, कानका बाल। (पु०) कर्णे कर्णाविव लोम यस्य, बहुव्री०। २ मृग विशेष, एक हिरन।

"[illegible]" ([illegible])

कर्णोषा (सं० स्त्री०) कर्णीष देखो।

कर्त्य (सं० त्रि०) कर्ते भवः, कर्ते यत्। [illegible]। १ कर्तमें उत्पन्न, कानसे पैदा। २ कर्तने योग्य, काटनेके लायक। कर्तं छिनत्ति यत्। ३ भेदने योग्य, छेदने काबिल।

कर्त (सं० पु०) कृत भावे घञ्। १ भेद, काट।

"[illegible]" ([illegible]) "[illegible]" ([illegible])

(वै०) २ गर्त, गढ़ा। (त्रि०) कर्तयति भिनत्ति, कर्त-अच्। ३ भेदक, तोड़ने फोड़ने या चीरने फाड़नेवाला।

कर्तन (सं० क्ली०) कृत् भावे ल्युट्। १ छेदन, काट छांट। २ कताई, सूत कातनेका काम। ३ विभिन्न करनेका काम। करणे ल्युट्। ४ काटनेका अस्त्र, तराशनेका औज़ार। कर्तरि ल्यु। ५ छेदकारक काटनेवाला।

कर्तनी (सं० स्त्री०) कर्तन-ङीप्। १ कृपाणी, कटारी। २ श्मश्रुकर्तनोपयुक्त अस्त्र बाल काटने लायक औज़ार। छुरे, कैंची वगैरहको कर्तनी कहते हैं।

कर्तब, कर्तव देखो।

कर्तरि (सं० स्त्री०) कृत् इन्। काटनेका अस्त्र तराशनेका औज़ार। कर्तरी देखो।

कर्तरिफलित (सं० स्त्री०) नृत्यभेद, किसी किस्मका नाच। यह एक उत्प्लुत करण है। इसमें [illegible] करण [illegible] उछलता है।

कर्तरिका (सं० स्त्री०) कर्तरी स्वार्थे कन् टाप् ह्रस्वश्च। कर्तरी देखो।

कर्तरिरोचिकी (सं० स्त्री०) नृत्योत्प्लुतकरण विशेष किसी किस्मका नाच। इसमें पहले करण स्वस्तिक लगाते, फिर उसी [illegible] समय उछलकर तिरछे पड़ जाते हैं।

कर्तरी (सं० स्त्री०) कृन्तति कृत-अर ङीप्, यद्वा कर्तं राति, कर्त रा-क। १ कृपाणी, छुरी, सोनेके पत्तर काटनेका एक औज़ार। २ श्मश्रुकर्तनोपयुक्त अस्त्र बाल काटने लायक औज़ार, छुरा कैंची वगैरह। ३ छुद्र तरवार, कटारी। ४ वाद्यविशेष एक बाजा। ५ योगविशेष। ज्योतिषशास्त्रमें लिखा—चन्द्र अथवा

लग्न क्रूर अर्थात् प्रथम, तृतीय, पञ्चम, सप्तम, नवम और एकादश राशिके मध्य आनेसे कर्त्तरी योग होता है। यह योग कन्याको मार डालता है।

कर्त्तरीय (सं० पु०) वृक्षविशेष, एक पेड़। इस वृक्षका वल्कल, सार और निर्यास विषमय होता है। २ त्वक्-सार-निर्यास-विषभेद, छाल हीर और दूधका जहर।

"अश्वमारककर्त्तरीयसीरीयककरघाटकरम्भनन्दनवराटकानि सप्त त्वक्-सारनिर्यासविषाणि।" (सुश्रुत)

कर्त्तरीयुग (सं० क्ली०) सिन्धुवारद्वय, संभालूका जोड़ा।

कर्त्तव्य (सं० त्रि०) कर्तुं योग्यम्, कृ योग्यार्थे तव्यः। १ करनेके उपयुक्त, किये जाने लायक।

"हीनसेवा न कर्त्तव्या कर्त्तव्यो महदाश्रयः।" (हितोपदेश)

२ लगाया जानेवाला। ३ फेरा जानेवाला। ४ दिया जानेवाला। (क्ली०) ५ कार्य, फर्ज, करने लायक काम। ६ छेद्य, काटने लायक चीज।

कर्त्तव्यता (सं० स्त्री०) कर्त्तव्यस्य भावः, कर्त्तव्य-तल्-टाप्। १ विधेयता, वजूब, जरूरत। २ औचित्य, मौजूनियत, दुरुस्ती। ३ उपयुक्त उपाय, माकूल तदबीर।

कर्त्तव्यविमूढ़ (सं० त्रि०) अपना कर्त्तव्य न देखने-वाला, जिसे अपना फर्ज न सूझ पड़े।

कर्त्तव्याकर्त्तव्य (सं० क्ली०) करने एवं न करने योग्य कार्य, भला-बुरा काम।

कर्त्ता (सं० पु०) करोति सृजति सम्पादयति वा, कृ-तृच्। ण्वुल्तृचौ। पा ३।१।१३३। १ ब्रह्मा। २ कर्मसम्पा-दक, काम बनानेवाला। यह कर्त्ता चार प्रकारका होता है—१ हेतुकर्त्ता, २ प्रयोजककर्त्ता, ३ अनुमन्ता-कर्त्ता और ४ ग्रहीताकर्त्ता।

न्यायमतानुसार क्रियाकृति जिसमें समवाय सम्बन्ध से रहती उसीको विद्वन्मण्डली कर्त्ता कहती है। वेदान्तपरिभाषामें उपादानविषयक अपरोक्षज्ञान-चिकीर्षा तथा कृतिमानको कर्त्ता माना है। फिर मामतीके मतानुसार इतर कारक द्वारा प्रेरित न होते सकल कारकका प्रयोजक (प्रेरक) कर्त्ता है।

गुणके अनुसार कर्त्ता त्रिविध होता है—सात्विक, राजस और तामस। मुक्तसङ्ग, निरहङ्कारी, धैर्यशाली, उत्साही और सिद्धि तथा असिद्धिमें निर्विकार रहने-वाला पुरुष सात्विक कर्त्ता है। रागी, कर्मफला-काङ्क्षी, लुब्ध, हिंस्र, अशुचि और हर्षशोकादियुक्त पुरुष राजस कर्त्ता कहाता है। फिर आत्मज्ञानके नाममें निश्चेष्ट, शठ, प्रतारक, अलस, विषभोजी, दीर्घसूत्री और स्तब्धप्रकृति पुरुषको तामस कर्त्ता कहते हैं।

३ प्रभु, मालिक। ४ अध्यक्ष, अफसर। ५ महादेव।

"कौषद्दा कौषट्न् कर्त्ता विश्वबाहुर्महीधरः।" (भारत १३।१४९।४०)

६ व्याकरणका एक कारक, फायल। क्रियाके करनेवालेको कर्त्ता कहते हैं। यह हिन्दी भाषा तथा संस्कृतादिमें सर्व प्रथम कारक माना गया है। इसका चिह्न 'ने' है। जैसे—रामने रावणको मारा। यहां मारनेकी क्रिया रामद्वारा सम्पादित हुयी। इसीसे राम कर्त्ता कारक ठहरा और उसमें 'ने' चिह्न लगा। किन्तु अकर्मक क्रिया रहते कर्त्तामें कोई चिह्न लगाया नहीं जाता। जैसे—रावण मर गया। अंगरेजीमें इसे नमिनेटिव केस (Nominative case) कहते हैं।

कर्त्ताभजा (कर्त्ताभजनी)—बङ्गालका एक उपासक सम्प्रदाय। इस सम्प्रदायके लोगोंकी व्याख्याके अनुसार वही कर्त्ताभजनो हो सकता, जो कर्त्ता अर्थात् परमेश्वर-का पूर्ण रूपसे भजन करता है। कर्त्ताभजनी सम्प्रदायके प्रवर्त्तक, प्रथम मतप्रतिष्ठाता और प्रचारक औलिया-चांद थे। इस सम्प्रदायवाले उनको एकवाक्यसे ईश्वरका अवतार मानते हैं। प्रवादानुसार माधवेन्द्रपुरी नामक एक बालक गोपीनाथ-विग्रहके श्रीमन्दिरमें एक दिन अतिथि हुये। उन्होंने वैकालिक जलपानका क्षीर पीना चाहा था। भक्तवत्सल गोपीनाथने भोगके थालसे एक कटोरा क्षीर चोरा रखा और पीछे पुजकोंसे उन्हें देनेको कहा। इसी घटनाके पीछे शचीनन्दन श्रीचैतन्य-देव गोपीनाथके मन्दिरसे अप्रकट हो अलक्ष्य सन्यासीके वेश आनोरपुरी परगनेके घोला-दुबलो नामक स्थानमें पहुंच कुछ समय तक प्रच्छन्न भावसे रहे। पीछे यह उलाग्राम गये और महादेव-तंबोलीको भेंटमें बालक वेश देख पड़े। महादेवके कोई सन्तान न था। उन्होंने उक्त अज्ञातकुलशील बालकको पा पुत्रनिर्विशेषसे पालन किया। बारह वत्सरकाल औलिया चांद महादेव

तंबोलीके घर रहे। इससे उनकी थोड़ कुछ दिन किसी गन्धवणिक्‌के पास भी बच रहे थे। फिर औलिया-चांद एक भूस्वामीके भवन डेढ़ वर्ष ठहरे। वहांसे चलने पर बङ्गालके पूर्वांशमें कोई कोई स्थान कुछ दिन घूम फिर २० वत्सर वयःक्रमके समय बेजड़ा नामक ग्राममें रह जा रहे। उस ग्राममें २२ शिष्य उनके अनुचर बने। फिर औलिया चांद वासदेवके निकट घोषपाड़े नामक स्थानमें बहुत दिन टिके और १६६१ शाकको अचानक मर गये। आठ प्रधान शिष्योंने उनकी कन्था उसी स्थान पर लाके रेबकी घोषपाड़े ग्राममें ले जाकर समाहित किया।

कहते—मराठोंके हाथोंसे किसी जेन्यासने औलिया-चांदको बेमार पकड़ा था। किन्तु वह सि बेबोंके निकट चन्द्रहाटी घाटसे अपने कमण्डलुमें गङ्गाको डाल अबमूल्य पहिले गङ्गामें पार कर गये। उनके कमण्डलुका माहात्म्य आज भी घोषपाड़ेमें पालोंके घर रखा है। कर्ताभजनी विश्वास करते, कि उस जलसे लोग सकल अभिलाष और मोक्ष पाते हैं।

औलिया-चांदके २२ शिष्योंमें रामशरणपाल एक सद्गोप जातीय व्यक्ति थे। उन्होंने इस मतको फैलाया है। औलियाचांद अतिदीर्घकाय और आजानु लम्बित बाहु रहे। यह आजन्म वा तपस्वी बनकर अपना जीवन बिताते थे। उन्होंने अन्धको नयन, पङ्गुको चरण, अपुत्रको पुत्र, दरिद्रको धन तथा मृतको जीवन दे अपने मतावलम्बियोंको विमोहित किया और बहुतसे लोगोंको अनुयायी बना लिया। उनके प्रसादसे रामशरण भी अलौकिक शक्तिसम्पन्न हुये।

रामशरणके मरनेपर उनके पुत्र रामदुलालने इस मतकी बड़ी उन्नति की। वह फारसी खूब पढ़े थे। उन्होंने सब लोगोंके समझने योग्य सात-आठ सौ गीत सामान्य भाषामें बनाये। उनमें कोई प्राचीन हिन्दू मतानुगत, कोई मुसलमान सूफी सम्प्रदाय सिद्ध और कोई गौरचन्द्रिकाका अभिप्रेत है। कर्ताभजनी रामदुलालके उस गीतोंको खास धर्म मानते हैं। प्रति रविवारको प्रातः और सायंकाल वो समाज लगाते उसमें लोग वही गीत गाते हैं।

रामदुलालके समय अनेक धनी, मानी और ज्ञानी व्यक्तियोंने यह मत अवलम्बन किया था। १८३१ ई०के चैत्र मासकी कृष्ण एकादशीको उन्होंने इस लोकसे प्रस्थान किया।

पीछे रामदुलालकी पत्नी सरस्वतीने 'कर्तामा' और 'सती मा' के नाम गद्दी पर बैठ इस सम्प्रदायकी श्रीवृद्धि की।

कर्ता-भजनी सम्प्रदायके दीक्षामन्त्रका मूलसूत्र 'गुरु सत्य' है। पहले उसको पहले सिखाया जाता है। फिर निम्नलिखित मन्त्र तीन बार सुनाते हैं—

"कर्ता औलिया महाप्रभु। हम तुम्हारे और तुम हमारे हो। तुम्हारे ही सुखसे हम चलते हैं। हम तुमसे तिलार्ध भी अलग नहीं। हम तुम्हारे ही साथ हैं। दोहाई महाप्रभु!"

कर्ता भजनियोंके मतमें परस्त्रीगमन, परद्रव्यहरण, परहत्याचरण, मिथ्याकथन, वृथालाप और प्रलाप-भाषण निषेध औलिया-चांदकी आज्ञा है। इसमें जातिविचार नहीं होता। मनुष्य मनुष्यका शिष्य और पूज्य है। दूसरे देवदेवीकी उपासना आवश्यक नहीं।

कर्ताभजनियोंके कथनानुसार सचिनीका दूसरा सर्वप्रकार धर्म समस्त अनुमान और जीव धर्म सब प्रधान है। ज्ञानसाधन द्वारा मनुष्य अपने इष्टदेवको प्रत्यक्ष कर सकता है। किन्तु प्रत्यक्षकरण क्रिया सबसे नहीं बनती। घोषपाड़ेमें सतीमाकी गद्दी है। फाल्गुनकी पूर्णिमाको दोलका मेला लगता है। फिर रथयात्रा प्रभृति दूसरे भी महोत्सव होते हैं।

कर्तार (हिं० पु०) १ कर्ता, करनेवाला। यह संस्कृत 'कर्तृ' शब्दकी प्रथमा विभक्तिका बहुवचन है। किन्तु हिन्दीमें एकवचनकी ही भांति आता है। २ विधाता, परमेश्वर, दुनियाको बनानेवाला।

कर्तित (सं० त्रि०) कर्त क्त-इट्। कर्तन किया हुआ, कटा, कता जो काटा गया हो।

कर्तिष्यत् (सं० त्रि०) कर्तन करनेकी इच्छा रखनेवाला जो काटना चाहता हो।

कर्तिमान, कर्तिमत् देखो।

कर्तुकाम (सं० त्रि०) कर्तुं काम' अभिलाषो यस्य, बहुव्री०। करनेका इच्छुक, जो करना चाहता हो।

कर्तृ, कर्ता देखो।

कर्तृक (सं॰ वि॰) प्रतिहस्त, प्रतिनिधि, कारगुज़ार, करनेवाला।

कर्तृका (सं॰ स्त्री॰) कृन्तति छिनत्ति, कृत्-तृच्-स्वार्थे कन्-टाप्। क्षुद्रखड्ग, कटारी।

"कर्तृकां विनिधाय करान्तरं काकराम्।" (कलाप, उणादि)

कर्तृत्व (सं॰ क्ली॰) कर्तृभावः, कर्तृ-त्व। कर्ताका धर्म, कारगुज़ारी, करनेवालेकी माफ़िक़ नियम।

"न कर्तृत्वं न कर्माणि लोकस्य सृजति प्रभुः।" (गीता ५।१४)

कर्तृपुर (सं॰ क्ली॰) नगरविशेष, एक शहर। यह भारतके उत्तरपूर्व प्रान्तमें अवस्थित है। समुद्रगुप्तने यह स्थान जय किया था। समुद्रगुप्त देखो।

कर्तृवाचक, कर्तृवाच्य देखो।

कर्तृवाची, कर्तृवाच्य देखो।

कर्तृवाच्य (सं॰ पु॰) कर्ता वाच्यो यत्र, बहुव्री॰। क्रियापद द्वारा कर्ताको लक्षित करनेवाला वाक्य, जिस शुमलेमें फ़ेलसे फ़ायलको समझ सकें। (Active voice) इसमें कर्ता प्रधान रहता और कर्ममें 'को' चिह्न लगता है जैसे—रामने रावणको मारा। प्रत्येक क्रियाका प्रकृत रूप कर्तृवाच्य ही होता है। जैसे—लिखना, पढ़ना, लड़ना, हंसना, खेलना, कूदना। किन्तु कर्मवाच्यमें प्रधान क्रिया भूतकालमें आती और उसमें 'जाना' क्रिया पीछे जोड़ दी जाती है। जैसे—लिखा या पढ़ा जाना। फिर कर्तृवाच्यसे कर्मवाच्य बनानेमें कर्मको कर्ता और कर्ताको करण ठहराते हैं। जैसे—'रामने रावणको मारा' कर्तृवाच्यका 'रावण रामसे मारा गया' कर्मवाच्य हुआ।

कर्तृवाच्यक्रिया (सं॰ स्त्री॰) कर्तृवाच्य देखो।

कर्तृस्थ (सं॰ वि॰) कर्तरि कर्तृसम्पादनयोग्ये तिष्ठति, कर्तृ-स्था-ड। कर्तृस्थानीय, कर्ताका प्रतिनिधि, करनेवालेकी जगह रहनेवाला।

कर्तृस्थक्रियक (सं॰ वि॰) कर्तामें अपने कार्यको लगानेवाला, जो अपना काम फ़ायलसे रखता हो।

कर्तृस्थभावक (सं॰ वि॰) कर्तामें अपना भाव रखनेवाला।

कर्त्रिका (सं॰ स्त्री॰) क्षुद्रखड्ग, कटारी, शिकारीकी छुरी।

कर्त्रिका, कर्त्तिका देखो।

कर्त्री (सं॰ स्त्री॰) कतरनी, कैंची।

कर्त्य (सं॰ त्रि॰) कर्तन किया जानेवाला, जो कटनेवाला हो।

कर्त्री (सं॰ स्त्री॰) करोति या, कृ-तृच्-ङीप्। १ कार्य-सम्पादन-कारिणी, काम बनानेवाली। २ प्रभुपत्नी, मालिककी बीवी।

कर्त्व (सं॰ क्ली॰) कृ-त्वन्। [illegible] घृत, घी।

कर्द (सं॰ पु॰) कर्द-अच्। कर्दम, कीचड़।

कर्दद—पञ्जाबके कांगड़ा ज़िलेका अन्तवर्ती एक ग्राम। यह भागनदीके वामकूलपर अवस्थित है। कर्ददमें अच्छे अच्छे मकान बने हैं।

कर्दट (सं॰ पु॰) कर्द कर्दमं अटति कारणत्वेन प्राप्नोति, कर्द-अट्-अच्। १ पङ्क, कीचड़। २ करहाट, कंवलकी जड़। ३ मृणाल, कंवलकी डण्डी। ४ जलज-उत्पाद, पनिहा घास। (वि॰) ५ पङ्कार, कीचड़में चलनेवाला।

कर्दन (सं॰ क्ली॰) कर्दन, कर्द भावे ल्युट्। कुक्षि शब्द, पेटकी आवाज़, गुड़गुड़ाहट।

कर्दम (सं॰ पु॰-क्ली॰) कर्द-अम। [illegible] १ पङ्क, कीचड़, चहला। इसका संस्कृत पर्याय—निषद्वर, जम्बाल, पङ्क और शाद है। राजवल्लभके मतसे कर्दम शीतल, दाह और विषरोग, वेदना, दाह तथा शोषनाशक होता है। २ स्वायम्भुव मन्वन्तरके प्रजापति विशेष। इनके पिताका नाम कीर्तिमान् और पुत्रका नाम अनङ्ग था। (भारत, शान्ति) यह ब्रह्माकी छायासे उत्पन्न हुये। फिर इन्होंने सरस्वतीतीर विन्दुसरतीर्थमें दश सहस्र वत्सर तपस्या की। स्वायम्भुवमनुकी कन्या देवहूति इनकी पत्नी थीं। पुत्रका नाम कपिलदेव रहा। इनके कलादि नव कन्या भी थीं। कपिल और कला देखो। ३ पाप, गुनाह। ४ छाया, परछाहीं। "वेदेषु कर्दम [illegible]" (महाभा॰ [illegible]) ५ नागविशेष, एक सांप। "कर्दम [illegible]" (भारत १।३५।१८) ६ मृत्तिका, मट्टी। ७ मल, कूड़ा। ८ प्रजापति पुलहके एक पुत्र।

८ मलपात। ९ मांस, गोश्त। १० अयोदयविष कन्दविशेष एक विष। कन्दविष देखो। ११ एक कर्दमाख्य शिरारोग, पांवकी एक बीमारी। कर्दम देखो। (त्रि०) १२ कर्दमयुक्त कीचड़से भरा हुआ।

कर्दम—१ विन्ध्यराज्यके अन्तर्गत एक ग्राम। २ कानपुर प्रदेशके मध्यका एक ग्राम। (म भारत०)

कर्दमक (सं० पु०) कर्दमे कायति प्रकाशते, कर्दम कै क। १ शाल्यविशेष, एक धनाज। शालि देखो। २ पङ्क, कीचड़। ३ राजिमत् सर्पविशेष एक सांप। सर्प देखो। ४ पङ्क, धनाज।

कर्दमराज (सं० पु०) काश्मीरके एक राजा। इनके पिताका नाम चित्र या चेमगुप्त था। (राजत०)

कर्दमविसर्प (सं० पु०) विसर्परोगभेद, किसी किस्मका फोड़ा। माधवनिदानके मतमें यह कफपित्त ज्वरमें स्तम्भ, निद्रा, तन्द्रा, शिरोव्यथा, अङ्गावसाद, विक्षेप, प्रलाप, अरोचक भ्रम, मूर्छा, अग्निहानि, अस्थि भेद, पिपासेन्द्रियका गौरव बढ़ाता और पीत, लोहित, पाण्डु र, स्निग्ध असित, मलिन, शोथवान्, गुरु तथा गम्भीरपाक देखाता है। अग्रगण्यो विसर्पको कर्दम कहते हैं।

कर्दमाटक (सं० पु०) कर्दमो मलादि अस्मिन् निक्षिप्यते यत्र, कर्दमस्य मलादेः पाटो निक्षेपोऽत्र इति वा। विष्ठादि फेंकनेका स्थान, मूत्रोत्सर्ग करनेकी जगह।

कर्दमित (सं० त्रि०) कर्दम इतच्। कर्दमरूपमें परिणत, कीचड़ बना हुआ, मैला।

कर्दमिनी (सं० स्त्री०) कर्दमाः सन्ति देशः, कर्दम इनि ङीप्। प्रचुर कर्दमयुक्त देश, कीचड़का मुल्क।

कर्दमिल (सं० स्त्री०) कर्दम इलच्। [illegible] [illegible]। जनपदविशेष, एक मुल्क।

"[illegible]।" (भारत, वन)

कर्दमी—(सं० स्त्री०) सुरराज, गन्धराजका पेड़।

कर्नफूली, कर्णफुली देखो।

कर्नेल, कर्नैल देखो।

कर्नैता (हिं० पु०) अश्वविशेष किसी रंगका घोड़ा।

कर्पट (सं० पु०) कीर्यते क्षिप्यते, कॄ विच्, कर् चासौ पटश्चेति। १ जीर्णवस्त्र, पुराना कपड़ा, चिथड़ा, गूदड़, लत्ता। इसका संस्कृत पर्याय—नक्तक और लक्तक है। २ पर्वतविशेष, एक पहाड़। यह कालि-मण्डलके पूर्व और मलकूटके दक्षिण अवस्थित है। यहां अमन रहती है। (शक्तिसङ्गम तं०) ३ मलिन वस्त्र, मैला कपड़ा। ४ वस्त्रखण्ड, कपड़ेका टुकड़ा। ५ कषाय रक्तवस्त्र, भूरा लाल कपड़ा।

कर्पटक, कर्पट देखो।

कर्पटधारी (सं० पु०) कर्पटं धरति, कर्पट धृ णिनि। मलिन जीर्णवस्त्रखण्डधारी भिक्षुक, फटापुराना कपड़ा पहननेवाला फकीर।

कर्पटिक (सं० त्रि०) कर्पटा इत्थस्य, कर्पट-ठन्। कर्पटधारी, फटापुराना कपड़ा पहननेवाला।

कर्पटिनी (सं० स्त्री०) कर्पटिन्-ङीप्। कर्पटधारिणी, फटापुराना कपड़ा पहननेवाली।

कर्पटी (सं० त्रि०) कर्पटो ऽस्त्यस्य, कर्पट इनि। कर्पटधारी, फटा पुराना कपड़ा पहननेवाला।

कर्पण (सं० पु०) कृप-ल्युट्। शौर्यास्त्रविशेष भाला।

"[illegible]।"

(रामायण)

कर्पर (सं० पु०) कृप् बाहुलकात् अरन् सत्वाभावः। १ कपाल, खोपड़ा। २ अस्त्रभेद एक हथियार। ३ कटाह, कड़ाह। ४ उदुम्बरभेद गूलरका पेड़। ५ कच्छपके पृष्ठका आवरण, कछुवेकी खपड़ी। ६ खर्पर, खपड़ा। ७ ज्वालातप्तखपाल गर्म पत्थर। ८ कपोत नाम। ९ शर्करा, चीनी।

कर्परांश (सं० पु०) कर्परस्य अंश ६ तत्। भग्न कपालखण्ड मट्टीके खपड़ेका टुकड़ा।

कर्पराल (सं० पु०) कर्पर इव अलति पर्याप्नोति, कर्पर अल् अच्। अक्षोटवृक्ष, अखरोटका पेड़। यह पहाड़ी चीज़ है।

कर्पराशी (सं० पु०) कर्परे अश्नाति, कर्पर अश-णिनि। मदुकभैरव।

"[illegible]।" (मदुकभ)

कर्परिका (सं० स्त्री०) कर्परी स्वार्थे कन् टाप् ह्रस्वः। कर्परी देखो।

कर्परिकातुत्थ (सं॰ क्ली॰) कर्परिकेव तुत्थम्। १ तुत्थ-विशेष, एक तूतिया।

कर्परी (सं॰ स्त्री॰) कृप् बाहुलकात् अरट् लत्वाभावः ङीप्। काष्ठोद्भव तुत्थ, खुपरिया, दारुहल्दीके काढ़ेका तूतिया। इसका संस्कृत पर्याय—दार्विका और तुत्थाञ्जन है।

कर्पास (सं॰ पु॰-क्ली॰) कृ-पास। कृणः पासः। उण् ४।१०४। कर्पास वृक्ष, कपासका पौदा। कार्पास देखो।

कर्पासक, कार्पास देखो।

कर्पासफल (सं॰ क्ली॰) कर्पासस्य फलम् ६-तत्। कार्पासवीज, विनौला, कपासका बीज। यह स्तन्य-वर्धक, वृष्य, स्निग्ध, गुरु और कफकारक है। (भावप्रकाश)

कर्पासी (सं॰ स्त्री॰) कर्पासजातित्वात् गौरादित्वात् वा ङीप्। कर्पास वृक्ष, कपासका पेड़। इसका संस्कृत पर्याय—कार्पासी, तुण्डिकेरी और समुद्रान्ता है। भावमिश्रने इसे लघु, ईषत् उष्णवीर्य, मधुररस और वायुनाशक कहा है। कर्पासीका पत्र वायु-नाशक, रक्त तथा मूत्रवर्धक और कर्णपीडक्षा, कर्णनाद और पूयस्राव शान्तिकारक है।

कर्पूर (सं॰ पु॰-क्ली॰) कृप्-ऊर। खर्जिपिञ्जादिभ्य ऊरोलचौ। उण् ४।९०। सुगन्धित द्रव्यविशेष, एक खुशबूदार चीज़। इसे फारसीमें काफूर, हिन्दीमें कपूर, तामिलमें करपूरम, सिंहलीमें कपूर और अंगरेजी भाषामें काम्फर (Camphor) कहते हैं। इसका संस्कृत पर्याय—घनसार, चन्द्रसंज्ञ, सिताभ्र, हिमवालुका, हिमकर, शीतप्रभ, सिताभ, घनसारक, सितकर, शीत, शशाङ्क, शीला, शीतांशु, शाम्भव, शुभ्रांशु, स्फटिकाभ, कारमिहिका, ताराभ्र, चन्द्रार्क, चन्द्र, लोकतुषार, गौर, कुमुद, इन्दु, हिमाह्वय, चन्द्रभस्म, वेधक और रेणुसारक है। कपूर त्रयोदश प्रकार होता है,—पोतास, भीमसेन, सितकर, शङ्करवास, पांशु, पिञ्ज, अब्दसार, हिमवालुक, जुतिका, तुषार, हिम, शीतल और पत्रिकाख्य। भावप्रकाशके मतसे यह शीतल, वृष्य, चक्षुःहितकर, लेखन, लघु, सुगन्धि, मधुर, तिक्त रस, और कफ, पित्त, विषदोष, दाह, तृष्णा, मुख-विरसता, मेदः तथा दुर्गन्धनाशक है। चीना कपूर कफनाशक, तिक्तरस और कुष्ठ, कण्डु तथा वमि-निवारक होता है।

यह उद्भिज्जात, दृढीभूत, गन्धयुक्त और चञ्चल उद्वायुगुणविशिष्ट (उड़ जानेवाला) एक श्वेत पदार्थ है। रसायनशास्त्रज्ञ इसे उद्भिद्के उद्वायुगुणयुक्त तैलकी द्वितीय अवस्था बताते हैं। नानाप्रकार उद्भिद्से ही कपूर मिलता है।

कपूरका इतिहास—इस बात पर बड़ा गड़बड़ पड़ा—किस समयसे कपूर मानव जातिके व्यवहारमें लगा और गुणागुण निर्णय हो सका। युरोपीय पण्डितोंके निर्णयानुसार ई॰ षष्ठ शताब्दसे प्राचीन ग्रन्थोंमें इसका उल्लेख मिलता है। इद्रमौतके किन्दा राजवंशीय अमरू केश नामक किसी राजपुत्रने षष्ठ शताब्द अरबीमें एक कविता लिखी थी। उसमें कपूरका उल्लेख आया है।

किन्तु हमारी समझमें उससे बहु पूर्व भारत-वासियोंको इसका सन्धान लगा था। सुश्रुत, चरक, वाभट, हारीत प्रभृति प्राचीन आयुर्वेदप्रचारक कपूरका नाम और गुणागुण पर्यन्त लिख गये हैं।

इशाक-इब्‌न्-आमन् नामक किसी अरबी चिकित्सक और इब्‌न् खुर्दद्‌बा नामक एक अरबी भौगोलिकने ई॰ षष्ठ शताब्दको लिखा था—'मलय प्रायोद्वीपसे कपूर बाहर भेजा जाता है।' फिर ई॰ त्रयोदश शताब्दको प्रसिद्ध भ्रमणकारी मार्कपोलोने लिखा,—'फनसूर नामक स्थानमें सर्वोत्कृष्ट कपूर उत्पन्न होता है।' फनसूर स्थान सुमात्रा द्वीपके मध्य है। आजकल, वहांका कपूर 'बरस' कहाता है। पहले युरोपमें इसे कोई जानता न था। चीनसे यह युरोपमें पहुंचा। इसी प्रकार १५६३ ई॰से युरोपीयोंको इसका सन्धान मिला।

प्राचीन काल भारतवर्षके लोग कपूरको पक्व और अपक्व दो भागमें बांटते थे।

डाक्टर उदयचन्द्रके कथनानुसार पक्व कपूर (Cinnamonum Camphora) किसी चीनदेशीय वृक्षके काष्ठसे निकलता और रौद्रके तापमें पकता है। अपक्व कपूरकी उत्पत्ति बोरनियो द्वीपके एक वृक्ष-

नस्य (Dryobalanops aromatica)से है। यही कर्पूर सर्वोत्कृष्ट होता है। हिन्दीमें इसे 'भीमसेनी कर्पूर' कहते हैं। दाक्षिणात्यमें चार प्रकारका कर्पूर चलता है—चीनी, सूरती, बीमा और बटाई।

युरोपीय डाक्टरोंने स्थान और गुणभेदसे इसे चार श्रेणियोंमें विभक्त किया है—प्रथम फारमोसा या चीन जापानका कपूर है। फारमोसा द्वीप और चीनके मध्य राज्यमें 'काम्फर लरेल' (Cinnamomum Camphora) नामक एक वृक्ष होता है। भारतमें खदिर वृक्षसे जैसे खैर निकलता, वैसे ही उक्त वृक्ष काठके टुकड़े निर्यासके साथ भापसे उड़कर कर्पूर उतरता है। फिर उसका सार ले लिया जाता है। उक्त वृक्षका कर्पूरमात्र चीनमें कपूर कहाता है। पहले विलायत और भारतमें यह कपूर बहुत बिकता था। किन्तु अब इसकी आमदनी कम पड़ गयी।

जापानमें उक्त वृक्ष अधिक उत्पन्न होता है। समुद्रका तीरस्थ वायु इसके लिये अति उपकारी है। सत्सुमा और टोसा जिलेमें कपूरका काम चलता है।

द्वितीयको भीमसेनी कपूर कहते हैं। इसका मलय नाम 'बरस' है। सुमात्रा द्वीपके बरस नामक स्थानमें प्राय सदृश एक वृक्ष (Dryobalanops aromatica) होता है। इसके काष्ठमें कालसे समान एक प्रकार पदार्थ जम जाता है। खदिरमें खैर और चन्दनमें अगुरुकी तरह काष्ठके अभ्यन्तर तथा वृक्षके हृदयमें भीमसेनी कपूर देख पड़ता है। उक्त वृक्ष जितना बड़ा लगता कपूर भी उतना ही अधिक निकलता है। किन्तु लोग उसे बहुत बढ़ने नहीं देते। कर्पूरके लोभसे गतमत वृक्ष काट डालते हैं। ७।८ वर्षका वृक्ष न होनेसे कपूर कम मिलता है।

ओलन्दाज-अधिकृत सुमात्रा द्वीपके उत्तर-पश्चिम उपकूल पधार बारोसे बरस और सिङ्केल नामक नगर पर्यन्त समुदाय स्थान बोरनिओ द्वीपके लबुआन और सेबुयानद्वीपमें कपूरका वृक्ष होता है।

तृतीयका नाम नगैका कपूर है। अंगरेज इसे ब्लूमिया काम्फर (Blumea Camphor) कहते हैं। चीन देशके कान्टन नगरमें यह कपूर बनता है। इसका वृक्ष बहुत बड़ा होता है। इस जातिका वृक्ष हिमालयके पूर्वांचल, खसिया गिरि आसाम, पेगू, ब्रह्म और चीनके दक्षिणांशमें उपजता है। किन्तु ब्रह्मदेशमें ही इसकी अधिक उत्पत्ति है। ब्रह्मदेशीय कर्पूरवृक्षके विषयमें किसीने कहा है—यदि सब वृक्षोंसे कपूर निकलने पाये तो पृथिवीके सर्वांशका अर्थ बन जाये।

डाक्टर डायमकको बम्बई अञ्चलमें उक्त जातीय एक प्रकार कर्पूरोत्पादक वृक्ष मिला था। बम्बईवासी कपु (खुबसी) मिठाईको इसे व्यवहार करते हैं।

चतुर्थको सुगन्धि द्रव्यमें पड़नेवाला कपूर कहते हैं। यह नाना जातीय वृक्षसे उत्पन्न होता है। इसे तम्बाकूका पत्ता, किंवा अधिक परिमाणमें थिमस (Thymus) तेलका सार ठण्डा निकालते या पाचुली वृक्षसे बनाते हैं। शेषोक्त वृक्षसे निकलनेवाला कपूर अनेक स्थानमें 'पाचुली कपूर' कहाता है। नारङ्गीसे जो कपूर बनता उसका अंगरेजीमें नेरोली काम्फर (Neroli Camphor) नाम पड़ता है। बङ्गालमें भी एक वृक्ष (Nimnophila gratioloides)से कपूर निकलता है। भारतवर्षमें लाखों रुपयेका कपूर आता जाता है।

देशीय वैद्य इसे कामोद्दीपक और मुसलमान कामशक्तिह्रासकारक बताते हैं। हिन्दू और मुसलमान दोनोंके मतानुसार अण्डकोष प्रदाह अवस्थामें अण्ड पर कपूर लगानेसे विशेष फल मिलता है।

आशुरोग अधिक बढ़नेपर कपूर और हिङ्गु चार चार ग्रेन गोली बनाकर २।३ घण्टे पीछे खिलानेसे बड़ा उपकार होता है। इसीके साथ छातीपर तारपीनका तेल मलना चाहिये। पुरातन वातरोगमें १ ग्रेन कपूर १ ग्रेन अफीमके साथ सोते समय खिलानेसे पसीना निकलता और व्यथाका ह्रास लगता है। कपूर और हिङ्गु एकत्र खिलानेसे हृद्रोग दूर होता है।

बालबालाश लड़कोंको खांसी आनेपर एक वस्त्रमें कपूर जमा और तथा रात्रिकाल वक्षपर रखनेसे बड़ा काम पड़ जाता है।

स्वप्रदोष और शुक्रक्षय प्रभृति रोगमें रात्रिकाल सोते समय ३ ग्रेन कपूरके साथ पाव ग्रेन अफीम

देनेसे रोगका प्रतिकार पड़ता है। मेहादि रोगमें लिङ्गोच्छ्रास घटते उक्त औषधके साथ अफीम अधिक देनेऔर लिङ्गपर कर्पूरका लिनिमेण्ट लगा लेनेसे आशु फल मिलता है।

स्त्रियोंके जरायुमें इसी प्रकार नाना रोगके कारण प्रदाह उठने पर अवस्थानुसार ४।६ ग्रेनकी मात्रामें कपूरकी एक एक गोली बना दिनको २।३ बार खिलानेसे विशेष उपकार होता है। किन्तु ऐसे स्थलमें रोगिणीका अन्त्र खाली रखना पड़ेगा।

प्रसवकाल पीड़ा उठते कपूर और कालोमेल पांच-पांच ग्रेन मधु डाल दो गोली बनाते और एक खिलाते हैं। इससे बड़ा लाभ पहुंचता है। कोई एक घण्टे पीछे जुलाब भी देना पड़ता है।

पीनस रोगमें कपूरका वाष्प बड़ा उपकार करता है। फिर स्नायुशूलमें ३।४ ग्रेन कपूर आध ग्रेन वेलो-डोनाके साथ लगानेसे अधिक लाभ होता है।

हैजे में कभी कपूर उपकारी और कभी अनुपकारी है। गर्भवतीको अधिक मात्रामें कर्पूर खिलानेसे गर्भस्राव होता है।

वस्त्रादिमें कपूर डाल रखनेसे कीड़ा नहीं लगता। भारतवर्षमें यह पूज्य द्रव्य समझा जाता है। प्रत्येक देवदेवीकी आरती इससे हुवा करती है। फिर सुगन्धके लिये पञ्चामृत और पक्वान्नमें भी यह पड़ता है।

कर्पूर—संस्कृतके एक प्राचीन विद्वान् ग्रन्थकार। यह गजमल्लके पिता और मेघदूत-टीकाकार कल्याणमल्लके पितामह थे।

कर्पूरक (सं० पु०) कर्पूर इव कायति प्रकाशते, कर्पूर-कै-क। १ कर्वूरक, कच्ची हल्दी। २ कर्चूरक, कचूर।

कर्पूर कवि—संस्कृतके एक प्राचीन कवि। भोजप्रबन्धमें इनका उल्लेख है।

कर्पूरखण्ड (सं० पु०) कर्पूरस्य खण्डः, ६-तत्। कर्पूरका खण्ड, कपूरका डला।

कर्पूरगौर (सं० त्रि०) कर्पूरवत् गौरः शुभ्रः। कर्पूरकी भांति शुभ्रवर्ण, कपूरकी तरह गोरा।

कर्पूरगौरी (सं० स्त्री०) एक रागिणी। इसमें ज्योतिः, खम्बावती, जयतश्री, टङ्क और वराटीके स्वर लगते हैं।

कर्पूरतिलक (सं० पु०) कर्पूर इव शुक्लं तिलकं ललाटचिह्नं यस्य, बहुव्री०। हस्तिविशेष, एक हाथी।

कर्पूरतुलसी (सं० स्त्री०) कर्पूरगन्धिका तुलसी, कपूरकी तरह महकनेवाली तुलसी।

कर्पूरतैल (सं० क्ली०) कर्पूरस्य तैलमिव स्नेहः। कर्पूरस्नेह, कपूरका तेल। इसका संस्कृत पर्याय—हिमतैल और सुधांशुतैल है। यह कटु, उष्ण, दन्त-दार्ढ्यकर और वात, कफ, पित्त तथा पामहर होता है। (राजनिघण्टु)

कर्पूरनालिका (सं० स्त्री०) पक्वान्नविशेष, एक मिठाई। मोवन मिली मैदाकी एक लम्बी नली बना लवङ्ग, मरिच, कर्पूर और शर्करा भरते हैं। फिर मुख बन्द कर घृतमें भूननेसे कर्पूरनालिका बनती है। यह शरीरवर्धक, बलकारक, सुमिष्ट, गुरु, पित्त तथा वायुनाशक, रुचिजनक और दीप्ताग्नि मानवके लिये अत्यन्त लाभदायक है। (भावप्रकाश) हिन्दीमें इसे कपूरकी गोझिया कह सकते हैं।

कर्पूरमणि (सं० पु०) कर्पूरवर्णो मणिः। पाषाण-भेद, कपूरकी तरह एक सफेद पत्थर। यह तिक्त, कटु, उष्ण और व्रण तथा त्वक् एवं वातदोषनाशक होता है। (राजनिघण्टु)

कर्पूररस (सं० पु०) १ अतिसाराधिकारका रसविशेष, दस्तकी एक दवा। यह हिङ्गुल, अहिफेन, मुस्तक, इन्द्रयव, जातीफल और कर्पूर यत्नसे घोटनेपर बनता है। दो गुञ्जापरिमित वटिका जलसे खायी जाती है। (भैषज्यरत्नावली) २ रसकर्पूर, रसकपूर। इसमें प्रथम सामान्य रूपसे पारद शोधा जाता है। शुद्ध पारदके परिमित गैरिक, पुष्टिका, स्फटिका, सैन्धव, वल्मीक, क्षारलवण और भाण्डरञ्जक मृत्तिका एक प्रहर घोंटते हैं। फिर उक्त चूर्णके साथ शुद्ध पारद एक हांडीमें रख ऊपर दूसरी हांडी लगा मट्टीसे द्वार बन्द करना पड़ता है। क्रमशः तीन बार मट्टीका लेप सूखनेपर हांडी अग्निमें फूंकी जाती है। चार दिन बराबर आंच देने पीछे पांचवें दिन हांडी अङ्गार पर रहती है। अन्तको अति सावधानतासे ऊपरकी हांडी खोलते हैं। उसमें कर्पूरकी भांति जो पारद लग जाता, वही

कर्पूररस वा रसकर्पूर कहलाता है। कुङ्कुम, चन्दन, कस्तूरी तथा कुङ्कुमयुक्त रसकर्पूर सेवन करनेसे पित्त रोग हटता और अग्नि एवं बलवीर्य बढ़ता है। (भावप्र)

कर्पूररस (सं० क्ली०) सरोवर विशेष, एक तालाब।

कर्पूरहरिद्रा (सं० स्त्री०) आमामख्यात द्रव्य, आमा हलदी। यह शीतल, वातल, मधुर, तिक्त और पित्त तथा सर्वकण्डूघ्न होती है।

कर्पूरा (सं० स्त्री०) कर्पूर टाप्। शठी, आमा हलदी।

कर्पूरादितैल (सं० क्ली०) तैलविशेष, एक तेल। कपूर, मजातक, मधुचूर्ण, यवक्षार तथा मनःशिला चार चार तोले लेकर भली भांति पका १० तोले हरिताल मिलानेसे यह बनता है। इसके प्रयोगसे सकल योनिरोग आरोग्य होते हैं।

कर्पूराश्मा (सं० पु०) उपरत्नविशेष, एक कीमती पत्थर। २ स्फटिक, बिल्लौरी पत्थर।

कर्पूरिल (सं० त्रि०) कर्पूरी इत्यादि, कर्पूर काशा-दित्वात् इल। ... कर्पूर-युक्त, कापूरी, कपूरी।

कर्बर (सं० पु०) कोर्णे जिवति, कु-जिव् ... एक पक्षत्य र, कोर्णमाण एक प्रतिबिम्बो यस, बहुव्री। दर्पण, आयीना।

कर्ब (सं० पु०) मूषिक, चूहा।

कर्बर (सं० पु० क्ली०) १ पुण्डरीक, चीता। २ स्वर्ण, सोना। ३ कुस्तुरहस्य चतुरैका घोड़ा। ४ व्याघ्र, बाघ।

कर्बरी (सं० स्त्री०) १ नवमीकी मादा गीदड़। २ व्याघ्री, बाघिन।

कर्बु (सं० त्रि०) मिश्रितवर्ण, कबरा, दागदार।

कर्बुदार (सं० पु०) कर्बुरिव कर्बु सन् वा दोषार्थं सर्व वा दारयति, कर्बु-द्र णिच् अच्। १ कोविदारवृक्ष, कचनारका पेड़। २ श्वेतकाञ्चन, सफेद कचनार। यह ग्राही और रक्तपित्तमें हितकर है। (राजनिघण्टु) ३ नीलझिण्टी, तेंदू। इससे आवनूस निकलता है।

कर्बुदारक (सं० पु०) कर्बुदारवत् कायति, कर्बुदार कै-क यद्वा कर्बुरिव श्लेष्मार्थं दारयति, कर्बु द्र णिच् ण्वुल्। श्लेष्मान्तक वृक्ष लसोड़ेका पेड़।

कर्बुर (सं० पु० क्ली०) कर्बति गर्वति अस्मात् अर्बन् वा, कर्ब दर्पे उरच्। (उण् १।४१) १ वर्ण विशिष्ट। २ कुस्तुरहस्य, चतुरैका घोड़ा। ३ गन्धशटी, कचूर। ४ आमहरिद्रा, कच्ची हलदी। ५ जल, पानी। ६ राक्षस। ७ पाप, गुनाह। ८ महीजात निष्पाव धान्य, अगहन धान। ९ स्वर्ण, सोना। १० हरिताल, हरताल। (त्रि०) ११ नानावर्ण, कबरा।

कर्बुरक (सं० पु०) १ आमहरिद्रा कच्ची हलदी। २ गन्धशटी, कचूर। ३ निष्पावधान्य, अगहन धान।

कर्बुरफल (सं० पु०) कर्बुर चित्रवर्ण फलं यस्य, बहुव्री०। साकुरुण्डक, एक पेड़।

कर्बुरा (सं० स्त्री०) कर्बुर टाप्। १ कृष्णतुलसी। २ बबरी। ३ जटिल जलाकुका पेड़, एक बबरीकी जींव। ४ पाटलावृक्ष, पाढ़रीका पेड़।

कर्बुरित (सं० त्रि०) कर्बुरो इव जातः, कर्बुर-इतच्। चित्रित, चितकबरा।

कर्बुरी (सं० स्त्री०) कर्बुर गौरादित्वात् ङीष्। दुर्गा।

कर्बूर (सं० पु०-क्ली०) कर्बति सर्वं प्राप्नोति यस्मात्, कर्ब-ऊरच्। १ स्वर्ण, सोना। २ हरिताल। ३ शठी, कचूर। ४ राक्षस। ५ हरिद्रा, कच्ची हलदी। ६ नाना-वर्ण, चितकबरा रंग।

कर्बूरक (सं० पु०) कर्बूर स्वार्थे कन्। १ हरिद्राक्षुप। २ आम्र हरिद्रा, कच्ची हलदी। ३ कर्पूरहरिद्रा, आमाहलदी।

कर्बूरित (सं० त्रि०) कर्बूरोऽस्य जातः, कर्बूर इतच्। नानावर्णविशिष्ट, चितकबरा।

कर्म (सं० पु० क्ली०) कृ कर्मणि मनिन् सर्वधातुभ्यः। कार्य काम। जो किया जाता वह कर्म कहलाता है। वैयाकरण पण्डित कहते हैं,—

"स्वक्रियानाश्रयत्वे सति स्वक्रियाजन्यफलशालित्वं कर्मत्वम्।"

जो क्रियाका आश्रय न होते भी क्रियाजन्य फल विशिष्ट रहता, उसे क्रियाका कर्म ठहराते हैं। जैसे— वह भोजन बनाता है। यहां कर्तृसमवेत पाकक्रियाका अनाश्रय भोजन पाकजन्य विक्लित्ति रूप फलविशिष्ट होता है। इसीसे वह भोजन कर्म कहलाने लगता है। यह कर्म तीन प्रकारका है—निर्वर्त्य विकार्य और प्राप्य। जो अविद्यमान वस्तु उत्पत्ति

द्वारा प्रकाश पाता, वह निर्वर्त्य कहाता है। जैसे—वह चटाई बनाता है। यहां चटाई पहले न रही, पीछे उत्पत्ति द्वारा आत्मलाभकर प्रकाशित हुयी। सुतरां चटाईको निर्वर्त्य कर्म कहते हैं। जो वस्तु पहले सत् रहते पीछे अवस्थान्तर पाता, वह विकार्य कहाता है। जैसे—वह चावल सिझाता है। यहां चावल पहले सत् रहा, पीछे केवलमात्र अवस्थान्तरको प्राप्त हुआ। इसलिये चावल विकार्य कर्म समझा गया। फिर विकार्य कर्म द्विविध है—प्रकृति-नाश-सम्भूत और गुणान्तरोत्पत्ति द्वारा नामान्तरविशिष्ट। जैसे—वह काठको भस्म करता है। यहां काठ जलने पर भस्म बननेसे प्रकृतिनाशसम्भूत कर्मका उदाहरण ठहरा। 'सुवर्णको कुण्डल बनाता है' स्थलमें सुवर्णसे गुणान्तरविशिष्ट कुण्डलकी उत्पत्ति हुयी और गुणान्तरोत्पत्तिसे सुवर्णको ही कुण्डल संज्ञा पड़ी। इसीसे यह गुणान्तरोत्पत्ति द्वारा नामान्तर-विशिष्ट कर्मका उदाहरण है। फिर निर्वर्त्य और विकार्य भिन्न कर्म प्राप्य है। जैसे—वह सूर्यको देखता है।

मीमांसक दो प्रकारका कर्म बताते हैं—अर्थकर्म और गुणकर्म। जिस कर्मसे किसी प्रकारका अदृष्ट उठता, उसे विद्वान् अर्थकर्म कहता है। जैसे अग्निहोत्र याग। यह यज्ञ करनेसे याज्ञिकके आत्मामें स्वर्गजनक अदृष्ट जगता और उसी अदृष्टसे पीछे यज्ञकर्ताको स्वर्ग मिलता है। फिर जिस कर्मसे वस्तु संस्कृत बनता, उसका नाम गुणकर्म पड़ता है। जैसे वह व्रीहि प्रोक्षण करता है। यहां प्रोक्षणसे व्रीहि संस्कृत होता है। इसीसे प्रोक्षण गुणकर्म है।

अर्थकर्म नित्य, नैमित्तिक और काम्य भेदसे तीन प्रकार है। जिसको न करनेसे पाप पड़ता, वह नित्य कर्म ठहरता है। अग्निहोत्रादि यज्ञ न करनेसे ब्राह्मणको पाप लगता है। इसीसे अग्निहोत्र प्रभृति ब्राह्मणका नित्यकर्म है। किसी निमित्तके उपलक्ष्य किया जानेवाला कर्म नैमित्तिक कहाता है। गोवधादि पापक्षयार्थ प्रायश्चित्त गोवधादि निमित्तके उपलक्ष्य किया जाता है। इसीसे यह नैमित्तिक कर्मके मध्य परिगणित है। नित्य तथा नैमित्तिक कम न करनेसे पाप लगने और करनेसे कोई फल न मिलनेका मत कोई कोई पण्डित मानते हैं। किन्तु वास्तविक उक्त विषय अमूलक है। कारण नित्य और नैमित्तिक कर्मसे पापक्षय होनेका मत स्मृतिमें कहा है,—

"नित्यनैमित्तिकैरेव कुर्वाणो दुरितक्षयम्।" (मीमांसा परिभाषा)

फलकी कामनासे किया जानेवाला कर्म काम्य कहाता है। जैसे—कारीरि याग। यह वृष्टि कामना-शील पुरुष द्वारा अनुष्ठित होता है। इसीसे इसको काम्य कहते हैं। काम्य कर्म तीन प्रकारका होता है—ऐहिक फलक, आमुष्मिक फलक और ऐहिकामुष्मिक-फलक। जिस कर्मसे इहलोकमें फल मिलता, उसका नाम ऐहिक पड़ता है। इहलोकमें वृष्टिरूप फल देने कारण कारीरियाग ऐहिकफलक है। पर-लोकमें फलोत्पादक कर्म आमुष्मिकफलक होता है। अग्निहोत्रादि याग इहकाल किसीको स्वर्गप्रदान नहीं करता। उसका फल परकालको ही मिलता है। सुतरां अग्निहोत्रयाग आमुष्मिकफलक है। इह-काल और परकाल फलप्रद कर्म ऐहिकामुष्मिक-फलक होता है।

बोधायनाचार्य ज्ञानसहकारसे इस कर्मको मुक्तिका कारण बताते हैं। किन्तु अद्वैतवादी शङ्कराचार्यका दूसरा मत है। उनके कथनानुसार ब्रह्म भिन्न सकल विषय मिथ्या है। जब चित्तक्षेत्रमें एकमात्र ब्रह्म सत्य होनेका ज्ञान उठता, तब ज्ञानी पुरुष कर्म तथा तत्साधनको मिथ्या समझता और परब्रह्मसे पृथक् अपना अस्तित्व भी स्वीकार नहीं करता। सुतरां कर्मकर्ता और साधनके मिथ्यात्व प्रयुक्त ज्ञानके समय कर्म रहनेकी सम्भावना कैसी। इसीसे ज्ञान-सहकारसे कर्म मुक्तिका कारण हो नहीं सकता। केवल मात्र ज्ञान ही मुक्तिका कारण है। फलाकाङ्क्षा परित्यागपूर्वक कर्म करनेसे चित्त परिशुद्ध होकर अद्वितीय ब्रह्मके तत्त्वज्ञानको क्षमता पाती है। फिर विशुद्ध चित्तमें कूटस्थ ब्रह्मका प्रतिबिम्ब पड़नेसे मुक्ति मिल जाती है।

जैन-मतसे कर्म दो प्रकारका होता है—घाति और अघाति। मुक्तिके लिये विघ्नकर कर्म घाति कहाता

है। फिर घाति कर्म चार प्रकारका है—ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय, मोहनीय और आन्तराय। तत्त्वज्ञान द्वारा मुक्ति न मिलनेका नाम ज्ञानावरणीय कर्म है। आर्हत दर्शन पढ़नेसे मुक्ति न होनेका नाम दर्शनावरणीय कर्म कहाता है। नानामें मुक्तिके परस्पर विरुद्ध अनेक पथ प्रदर्शित हुये हैं। किन्तु उनमें मुक्तिके प्रकृत कारणका अनवधारण मोहनीय कर्म है। मोक्षके पथमें प्रवृत्तिका विघ्न डालनेवाला कर्म आन्तराय कहाता है। फिर अघाति कर्म भी चार प्रकारका है—वेदनीय, नामिक, गोत्रिक और आयुष्क। ईश्वरतत्त्वको अपना ज्ञातव्य माननेवाला अभिमान वेदनीय कर्म है। अमुक नामविशिष्ट होनेका अभिमान नामिक कर्म कहाता है। अमुक वंशमें जन्म ग्रहण करनेका अभिमान गोत्रिक कर्म है। फिर शरीररक्षाके लिये किया जानेवाला कर्म आयुष्क माना गया है। उक्त चारो प्रकारका कर्म मुक्तिके लिये विघ्नकारी न रहनेसे अघाति कहाता है।

नैयायिक क्रियाको कर्म बताते और उसके पांच विभाग लगाते हैं। यथा—उत्क्षेपण, अवक्षेपण, आकुञ्चन, प्रसारण और गमन। जिस क्रिया द्वारा कोयी चीज उठायी जाती, वह उत्क्षेपण कहाती है। अधोदेशको किसी वस्तुका संयोग करानेवाली क्रिया अवक्षेपण है। जिस क्रिया द्वारा प्रसारित वस्तु कुञ्चित पड़ती, उसे विद्वन्मण्डली आकुञ्चन कहती है। कुञ्चित वस्तुको प्रसारित करनेवाली क्रिया प्रसारण है। गमनक्रिया द्वारा एक स्थानसे अन्य स्थान पहुंचते हैं। फिर गमन पांच प्रकारका होता है—भ्रमण, रेचन, स्यन्दन, ऊर्ध्वज्वलन और तिर्यग्गमन। यथा—

"उत्क्षेपणमवक्षेपणमाकुञ्चनकं तथा।
प्रसारणञ्च गमनं कर्माण्येतानि पञ्च च॥
भ्रमणं रेचनं स्यन्दनोर्ध्वज्वलनमेव च।
तिर्यग्गमनमप्यत्र गमनादेव लभ्यते॥" (भाषापरिच्छेद)

पूर्वमीमांसक ज्ञान अपेक्षा कर्मका प्राधान्य स्वीकार करते, किन्तु वेदान्तिक कहते—'कर्मसे ज्ञान श्रेष्ठ है। कारण ज्ञान न होनेसे मुक्ति कैसे मिल सकती है।'

उक्त मतवैषम्य मिटानेको महायोगीश्वर श्रीकृष्णने भगवद्गीतामें अतिचमत्कार मनोज्ञ मत दिखाया और दुर्ज्ञेय कर्मतत्त्व अति मनोहर तथा विस्तारित रूपसे सुबोधगम्य बना बताया है।

गीताके तृतीयाध्यायसे षष्ठाध्याय तक, तथा त्रयोदशाध्यायमें कर्मसम्बन्धीय अनेक विषय और अष्टादशाध्यायमें कर्मसङ्क्रान्त कोई न कोई महत् प्रसङ्ग मिलता है। किन्तु तृतीय अध्याय केवल कर्मात्मक है। इसीसे उसको कर्मयोगाध्याय कहते हैं। योगशास्त्रके मतसे शारीरिक व्यापारका नाम कर्म है। कर्मका अभाव अकर्म कहाता है। फिर कर्म शास्त्रविहित और अकर्म शास्त्रनिषिद्ध होता है। किन्तु इससे कर्मसे अकर्म और अकर्मसे कर्म भी बन सकता है। कर्मका विभाग नाना प्रकार है। वैषयिक विविध सुखाभिलाष तथा स्वर्गादि पुण्यफलप्राप्तिकी कामनासे किया जानेवाला कर्म काम्य कहाता है। वैषयिक वासना न रख अर्थज्ञान परित्यागपूर्वक सर्वव्यापक ईश्वरको एक मात्र उसीके ज्ञानसे अनन्यचित्त उसकी भक्तिमें उसीके मोक्षार्थ जो कर्म करते, उसे निष्काम कहते हैं। फिर चित्तशुद्धिके लिये निर्धारित कर्म नित्यकर्म है। शरीर, वाक्, मन प्रभृतिका स्वतंत्र पञ्चविध कारण शरीर, कर्ता (अर्थात् चित्त एवं अहङ्कार), चक्षु, कर्ण, इन्द्रियादि, प्राणादिके विविध वायुका व्यापार और चक्षुकर्णादिका अनुकूलकारी सूर्यवायु इत्यादि है। ईश्वरको जो अनादि दुर्ज्ञेय मायाकी सत्ता रहती है। सत्त्व, रजः और तमः त्रिविध गुण मायासे निकला है। इन्द्रियादिमें ऐसा कोई तत्त्व नहीं, जो त्रिगुणसे मुक्त हो। इतरां सभी त्रिगुणके प्रादुर्भावभेदसे भिन्न भिन्न कर्म करते और कर्मके सात्त्विक, राजसिक तथा तामसिक त्रिविध विभाग बनते हैं। विहित कर्मसे विहित विहित फल और पाप पुण्यादिका नियन्ता ईश्वर नहीं। प्राकृतिक अलङ्घनीय नियमसे वह हुआ करता है। धर्मभाव अर्थात् कर्तृत्वाभिमानशून्य, आत्मीयके प्रति स्नेह तथा शत्रुके प्रति द्वेषवर्जित और फलाकाङ्क्षा-रहित हो जो नित्य कर्म किया जाता, वह सात्त्विक कहाता है। फलाकाङ्क्षा और अहङ्कारसे अतिशय आयासमें होनेवाला कर्म राजसिक है। अपनी भविष्यत् शुभाशुभके

चित्त व्यक्तिको किसी क्रियाकलापका प्रयोजन नहीं लगता। किन्तु कर्मकी सिद्धि चाहनेवालेको उसका प्रयोजन बना रहता है। फिर इतर पुरुष भी उसके कार्यका अनुगामी होता है। इससे सिद्ध पुरुष जनहितार्थ तद्वत् कर्म कर सकता है। सिद्धिके सर्वोच्च सोपान पर चढ़ने अर्थात् ईश्वरके तत्त्वमें मति निविष्ट रखनेको कर्मयज्ञसम्बन्धी सब निष्काम साधन करना आवश्यक है। इसी प्रकार कर्ममें प्रवृत्तिके लिये निम्नवर्ती लोगोंको सकाम कर्म भी करना चाहिये। किन्तु निम्न श्रेणीके लोगोंको सतत आचार्य उपदेश देनेके लिये तत्त्वज्ञानकी पिपासाका प्रयोजन पड़ता है। कर्मके मुख्य उद्देश्य ईश्वरज्ञान और ईश्वरभक्तिको चित्तशुद्धिको मूल बीज कर्मउपासना ही जीवनयात्रा निर्वाह करना हुआ है।

ईश्वरमें सर्व कर्म समर्पण करने अर्थात् यज्ञ, तपस्या, दान तथा अन्यान्य अनुष्ठानोंसे उन्हींका स्मरण, उन्हींकी महिमाका कीर्तन और उन्हींकी विभूतिका दर्शन रखनेसे मोक्षलाभ होता है। ईश्वरका विश्वरूप और उन्हींकी सौम्यमूर्ति देखना चाहिये। फिर प्राणी कर्मनिष्ठ अहंभावको छोड़ सोऽहंभाव पकड़ता है। किन्तु ऐसी पराकाष्ठा साधकको मिलना दुर्लभ है। इसलिये केवलमात्र ईश्वरपरायण हो अपने सात्त्विक बुद्धि जोड़ना पड़ती है। फिर उसमें ज्ञात कार्य न होते भी कोई क्षति नहीं आती। यह कर्म जितना बढ़ता, उतना ही कल्याणकर रहता है। दैव विश्व अविच्छिन्नकर दुःख और सिद्धि न मिलते भी दुःख नहीं होता! क्योंकि इसप्रकार कर्मसमर्पण द्वारा ईश्वरमय मनमें अधिक दुःखको स्थान नहीं रहता। फिर अनिर्वचनीय आनन्द मिलने लगता है। इस अवस्थामें योगभ्रष्ट हो जाने अर्थात् चरम सिद्धि न पाने किंवा परिमाण कार्यके बल अरण्य तक कर्मके साधनमें अधिक सामर्थ्य आता है। कोई अनेक जन्मान्तर और कोई पूर्वार्जित कर्मके बल शीघ्र सिद्ध हो जाता है। इन यज्ञादि यावतीय कर्मोंसे ईश्वर परायणतास्वरूप ज्ञान ही श्रेष्ठ है। ज्ञानयज्ञका प्रधान फल ऐहिक भाव नाश होना है। उससे सर्वभूतके प्रति समदृष्टि और सौहार्द्य परिलक्षित है। सुतरां जो सर्वभूतके हितमें रत रहता, शत्रु मित्र पर समान प्रीति तथा दया रखता और अपने इष्टानिष्ट मूल सर्वकर्म ईश्वरको समर्पण करता, उसीको विद्वान् परम योगी कहता है।

इस जगत्में भला बुरा कर्म कौन नहीं समझता। किन्तु लोग ऐहिक स्वार्थसिद्धिके लिये अनुचित कर्म किया करते हैं। ऐसे अवसरमें आवश्यक है—कोई महापुरुष शुभ कर्मका लाभ और अशुभ कर्मका दोष दिखाता रहे। भारतवर्ष कर्मक्षेत्र है। यहां कभी किसी अवस्थामें बुरा कर्म करना न चाहिये।

कर्मकर (सं॰ त्रि॰) कर्म करोति मूल्येन, कर्मन्-कृ-ट। कर्मणि भृतौ। पा ३।२।२२। १ वेतन पर कार्य करनेवाला, नौकर, मजदूर। इसका संस्कृत पर्याय—भृतक, भृतिभुक्, वैतनिक, वेतनोपजीवी, भरण्यभुक् और कर्मण्यभुक् है। २ कर्मकारक, काम करनेवाला।

“[illegible]। एते कर्मकरा भवन्तु।”
([illegible])

(पु॰) कर्म हिंसां करोति कृ हेत्वादौ ट। ३ यम।

कर्मकरी (सं॰ स्त्री॰) कर्मन् कृ ट, ङीप्। १ दासी, बांदी। २ मूर्वालता मरोड़की बेल। ३ बिम्बिका लता एक बेल।

कर्मकर्ता (सं॰ पु॰) कर्मणः कर्ता सम्पादकः, ६-तत्। १ कार्यकारक, काम करनेवाला। कर्मके कर्ता। २ व्याकरणोक्त वाच्य विशेष (Passive voice)। इसमें कर्तृकी विवक्षासे कर्म ही कर्ता होता है।

“क्रियमाणन्तु यत् कर्म स्वयमेव प्रसिध्यति।
सुकरैः स्वैर्गुणैः कर्तुः कर्मकर्तेति तद्विदुः॥” (व्याकरणकारिका)

कर्ताका कार्य अपने निज गुणसे स्वतः सम्पन्न होने पर कर्मकर्ता कहाता है। किन्तु ऐसे अवसर पर हिन्दीमें कर्ताका प्रकृत चिह्न 'ने' लगने नहीं लगता।

कर्मकर्तृता (सं॰ स्त्री॰) कर्मका कर्तृत्व, अपनेको कारगुजारी। जैसे—रोटी बनती है। यहां रोटी अपने आप बन नहीं सकती। उसका बनानेवाला कोई अवश्य रहता है। इसलिये रोटी कर्म ठहरते भी कर्तृत्वको भास होती है।

कर्मकाण्ड (सं॰ क्ली॰) कर्मका कर्तव्यताप्रतिपादक

काण्डम्, मध्यपदलो०। १ कर्मका कर्तव्यता-प्रतिपादक वेदांश। कर्म देखो। २ धर्मसम्बन्धीय कर्म यज्ञादि।

कर्मकाण्डी (सं० पु०) १ यज्ञादि कर्म विधिवत् करनेवाला, जो कर्म वा कर्तव्यताप्रतिपादक वेदांश पढ़ा हो।

कर्मकार (सं० त्रि०) कर्म करोति भृतिं विना इति शेषः। १ वेतन व्यतिरेक कार्यकारक, बेगार, जो बिना उजरत काम करता हो। २ कार्यकारक, काम बनानेवाला। (पु०) ३ वृष, बैल। ४ जातिविशेष, लोहार। लोहार देखो। यह विश्वकर्माके औरस और शूद्राके गर्भमें उत्पन्न हुवा है।

"उरिदापि कटाहेष चाक्रान्मवशीकय।
नहि स्वकृते विजानाति कर्मकारं भवारणम्॥" (उद्भट)

कर्मकारक (सं० त्रि०) कर्म-कृ-ण्वुल्। १ कार्यकारक, काम करनेवाला। (पु०) व्याकरणोक्त कारक विशेष। कर्म देखो।

कर्मकारी (सं० त्रि०) कर्म करोति, कर्म-कृ णिनि। कर्मकारक, काम करनेवाला।

"तां विदित्वा सुचरितैर्गूढैस्तत्कर्मकारिभिः।" (मनु ९।२६१)

कर्मकार्मुक (सं० पु०-क्लो०) सुदृढ चाप, बढ़िया कमान।

कर्मकीलक (सं० पु०) कर्मणा कीलक इव वस्त्रक्षालनादिना गृहस्थानां मानरक्षाकपाटकीलकस्वरूपः। रजक, धोबी।

कर्मकुशल (सं० त्रि०) कर्मणि कुशलः, ७-तत्। कर्ममें निपुण, काममें होशियार।

कर्मकृत् (सं० त्रि०) कर्म करोति, कर्मन्-कृ-क्विप्। कर्मकारक, काम करनेवाला।

"कर्मापि त्रिविधं ज्ञेयमशुभं शुभमेव च।
अशुभं दासकर्मोक्तं शुभं कर्मकृतां स्मृतम्॥" (मिताक्षरा)

कर्मकृतवान् (सं० पु०) धर्मसम्बन्धीय कृत्य करानेवाला।

कर्मकृत्य (दे० स्त्री०) व्यवसाय, उत्साह, फुरती।

कर्मक्षम (सं० त्रि०) कर्मणि क्षमः समर्थः, ७-तत्। कर्म करनेको समर्थ, काम कर सकनेवाला।

"कामकर्मक्षमं देहं कामो धर्म इवाश्रितः।" (रघु)

°क्षेत्र (सं० क्ली०) कर्मणां क्रियानुष्ठानानां क्षेत्रम्, ६-तत्। १ कर्म करनेकी भूमि, काम बनानेकी जगह। २ भारतवर्ष। इस स्थानपर कर्म करनेसे फलानुसार अन्यान्य वर्षमें जन्म मिलता है।

"अतापि भारतमेव वर्षं कर्मक्षेत्रम्। अन्यान्यष्टवर्षाणि स्वर्गिणां पुण्यशेषोपभोगस्थानानि भौमस्वर्गपदानि व्यपदिशन्ति।" (भागवत ५।१७।११)

कथित वर्षसमूहके मध्य भारतवर्ष ही कर्मक्षेत्र है। अन्यान्य आठ वर्ष स्वर्गवासियोंके अवशिष्ट पुण्यभोगका स्थान होते हैं। इसीसे उनको भौमस्वर्ग कहते हैं।

कर्मग्रन्थि (सं० पु०) कर्मणां ग्रन्थिर्बन्धनमस्मात्, बहुव्री०। अज्ञानजन्य वासनारूप दोष। यही वासना सकाम प्रवृत्ति और बन्धनका हेतु है।

कर्मघात (सं० पु०) कर्मका विनाश, काम छोड़ बैठनेकी हालत।

कर्मचण्डाल (सं० पु०) कर्मणा चण्डाल इव। १ असूयक, हिंसक, मारकाट करनेवाला। २ पिशुन, खल, चुगलखोर। ३ कृतघ्न, एहसान-फरामोश। ४ अत्यन्त क्रोधी, निहायत गुस्सावर।

"असूयकः पिशुनश्च कृतघ्नो दीर्घरोषकः।
चत्वारः कर्मचाण्डाला जन्मतश्चापि पञ्चमः॥" (वशिष्ठ)

५ राहु।

"उत्तिष्ठ गम्यतां रोहो त्यज्यतां चन्द्रमण्डलम्।
कर्मचाण्डाल योगीन्द्र मम पादद्वयं कुरु॥" (पदस्तुति ग्रान-मन्त्र)

कर्मचन्द्र (सं० पु०) १ मालव देशके एक राजा। हिन्दीमें कर्मचन्द्र भाग्यको कहते हैं।

कर्मचारी (सं० त्रि०) कर्मणि चरति, कर्म-चर्-णिनि। वेतन पर कार्य करनेवाला, जो तनखाह पर काम करता हो।

कर्मचित् (सं० त्रि०) कर्म-चि भूते क्विप्। १ कृतकाम, किया हुवा काम। (वै०) २ कर्म द्वारा सञ्चित, कामसे बना हुवा।

"कर्मभ्यात् कर्मचितस्ते कर्मणा चीयसे। कर्मणा चीयन्ते।"
(शतपथब्रा० १०।३।१।८)

कर्मचित (वै० त्रि०) कर्मणा चितः, कर्म-चि-क्त। कर्मनिष्पाद्य, कर्म द्वारा सम्पादन किया जानेवाला।

"तद्यथेह कर्मचितो लोकः क्षीयते एवमेवामुत्र पुण्यचितः।" (वेदपरि०)

कर्मचेष्टा (सं० स्त्री०) कर्मणि चेष्टा, ७-तत्। क्रियाके अनुष्ठानका उद्योग, कामको कोशिश।

"कामकाला कर्मचेष्टा रक्षारण्या सदैव हि।
इति..... कर्मचेष्टा ..... क्रिया सदैव।" (मनु)

कर्मचोदना (स० स्त्री०) कर्मणि कार्यकरणे चोदना विधि। १ कर्मविषयमें प्रेरणात्मक विधि। कर्म चोदयति प्रवर्तयति इनका,ल टाप्। २ कर्ममें प्रवृत्तिका हेतु।

"ज्ञानं ज्ञेयं परिज्ञाता त्रिविधा कर्मचोदना।" (गीता)

३ कर्मविधि।

"........ त्रिविधैर्कर्मचोदना .... कर्मविधि ......" (............)

कर्मज (सं० पु०) कर्मणः कर्मजन्यादृष्टाज्जायते, कर्म-जन-ड। १ कर्मफलजन्य रोगादि। यह रोग शास्त्रानुसार निर्दिष्ट औषधप्रयोगसे भी नहीं दबता। केवल कर्मके क्षयसे ही इसकी शान्ति होती है। २ जन्मपरिग्रह। कायिक, वाचिक और मानसिक कर्मविशेषके फलसे योनिविशेषमें जन्म लेना पड़ता है। ३ पापपुण्यादि। ४ क्रियाजन्य संयोगविभागादि। ५ वैमनस्य संस्कार। "पूर्वाणि तु वैरः .... वैमनस्य च ...." (मार्कण्डे) ६ वटवृक्ष। कर्मणो जातः नित्य-नैमित्तिकसमावयात् क्रमशो मलिनीभवमानह्रतिनिर्गत इत्यर्थ। ७ कलियुग। (त्रि०) ८ क्रियाजात, कामसे बना हुआ।

"यथा ... वैराः कर्मजं ......।" (मनु १२।१०)

कर्मजगुण (स० पु०) कर्मणो जातो यो गुणः, कर्मधा०। क्रियाजन्य संयोग, विभाग और वेग गुण।

"......... कर्मजः ......।" (भाषापरि०)

कर्मजित् (सं० पु०) १ जरासन्धवंशीय मगधके एक नृपति। २ कन्नौजके कोई राजा। इन्होंने ७८ से १६१ ई० तक राजत्व किया।

कर्मज्ञ (सं० त्रि०) कर्म जानाति, कर्मन्-ज्ञा क। कर्मकाण्ड हिताहित और समय देख कर्म विशेष करनेका ज्ञान रखनेवाला।

कर्मठ (सं० त्रि०) कर्मणि घटते, कर्मन् अठच्। कर्मणि घटिता। पा ५।२।३५। १ कर्मकुशल कामकाजमें होशियार।

"........ कर्मठः कर्मठ........।" (भाग ....)

कर्मणा (सं० अव्य०) कर्मसे, क्रिया द्वारा, कामके साथ।

कर्मणिवाच्य (सं० पु०) व्याकरणोक्त वाच्यविशेष। इस वाच्यमें कर्मकर्ता बन जाता है। फिर वचन और पुरुष भी कर्मपदका ही निर्दिष्ट होता है।

कर्मण्य (स० त्रि०) कर्मणि साधु कर्मन् यत्। १ कर्मयोग्य काम कर सकनेवाला। २ कर्म विशेषमें पारदर्शक, जिसे कामकी किसे बूझ रही। ३ कर्म-कुशल, काम करनेमें होशियार।

कर्मण्यता (स० स्त्री०) कर्मण्यस्य भाव। कर्म कुशलता, तत्परता, मुस्तैदी।

कर्मण्यभुज् (सं०त्रि०) कर्मण्यं वेतनं भुङ्क्ते, कर्मण्य-भुज क्विप्। वेतनोपजीवी, नौकर।

कर्मण्या (स० स्त्री०) कर्मणा सम्पाद्यते, कर्मन् यत्-टाप्। १ वेतन, तनखाह। २ मूल्य, कीमत।

कर्मत (सं० अव्य०) कार्यानुसार, कामके मुताबिक।

कर्मत्याग (सं० पु०) कर्मणः त्यागः, ६ तत्। १ वेतनिक कर्मका त्याग, नौकरीका इस्तेफा। २ सांसारिक कर्मका त्याग, दुनयावी काम छोड़ बैठनेकी हालत।

कर्मता (सं० स्त्री०) कर्मको स्थिति, कर्म करनेकी हालत।

कर्मदक्ष (सं० त्रि०) कर्मणि दक्षः, ७-तत्। कर्ममें पटु, काम करनेमें होशियार।

कर्मदुष्ट (सं० त्रि०) कर्मणा दुष्टः, ३ तत्। १ कर्म विशेषसे पतित, किसी कामसे गिरा हुआ। २ पापी, गुनाहगार।

कर्मदेव (सं० पु०) कर्मणा देवः प्राप्तदेवभावः। देव-विशेष। अष्टवसु, एकादश रुद्र, द्वादश आदित्य, इन्द्र और प्रजापति—तेंतीस कर्मदेव हैं। अग्निहोत्रादि वैदिक कर्मके करनेसे इन्हें देवलोक मिला है। इनमें इन्द्र प्रभु और बृहस्पति आचार्य हैं। देवयोनिमें जन्म लेनेवालोंको आजानदेव कहते हैं।

कर्मदेवी (स० स्त्री०) मेवाड़के राजा समरसिंहकी पत्नी। इनके पुत्रका नाम राहुप था। कर्मदेवि व देवी।

कर्मदेवता (सं० स्त्री०) कर्मदेव, यज्ञादि कर्मसे बने हुये देव।

कर्मदोष (सं० पु०) कर्मैव दोषः कर्मजनितदोषो वा।

१ दुष्ट कर्म, पापजनक हिंसादि, गुनाह, इल्लावका काम। २ कर्मजन्य पापादि, कामका इलाव। ३ कर्म विषयक दोष, गलती, भूल। ४ कर्मके मूल कारणस्वरूप मिथ्याज्ञानकी वासनाका दोष, बुरा चालचलन।

कर्मधारय (सं० पु०) व्याकरणोक्त समानाधिकरण पदघटित समास विशेष। समानाधिकरणस्तत्पुरुषः कर्मधारयः। पा १।२।४२। इसमें विशेषण और विशेष्यका समान अधिकरण होता है। जैसे—रक्तलता। हिन्दीमें यह समास नहीं लगता, क्योंकि विशेषण और विशेष्य अलग रहता है। फिर संस्कृतकी भांति विशेषणमें विभक्ति भी लगायी नहीं जाती।

कर्मध्वंश (सं०पु०) कर्मणो ध्वंशः, ६-तत्। कर्मघाति, मजदूरी कामके फायदेका नुकसान, नाउम्मेदी।

कर्मना (हिं०) कर्मदा देखो।

कर्मनाम (सं० क्ली०) क्रियासे बना हुवा नाम, इस्मफायल।

कर्मनाशा (सं० स्त्री०) कर्म नाशयति, कर्मन् नश-णिच्-अण्-टाप्। एक प्रसिद्ध नदी। यह (अक्षा० २४° ३८' ३०" उ० तथा देशा० ८३° ४१' ३०" पू०) विहार प्रदेशस्थ शाहाबाद ज़िलेके कैमोर पर्वतसे निकली है। इसने उत्तरपश्चिम मुख पहुंच दरिहार ग्रामके निकट शाहाबाद और मिर्जापुर ज़िले दोनों ओर रख विहार एवं युक्तप्रदेशको स्वतन्त्र कर दिया है। फिर चौसा ग्रामके निकट यह गङ्गा नदीसे जा मिली है। इसकी दो शाखा हैं—धर्मावती और दुर्गावती। पर्वत पर जहां कर्मनाशा बहती, वहां नदीगर्भकी भूमि प्रस्तरमय पड़ती है। किन्तु मृत्तिका मिलनेसे नदीगर्भ कर्दमयुक्त और गभीर रहता है। माघ फाल्गुन मास यह नदी सूख जाती है। किन्तु वर्षाकाल इसके वेगका कोयी ठिकाना नहीं। उस समय अल्प जलमें भी उतरना कठिन पड़ता है। द्रव्य सामग्रीसे भरी बड़ी नौका अनायास इस पर चला करती हैं। मिर्जापुर ज़िलेके छानपाथर नामक स्थानमें यह नदी १०० फीट नीचे गिरती है। अधिक दृष्टिके समय उक्त जलप्रपात अतिसुन्दर देख पड़ता है। अनेक लोगोंके कथनानुसार इस नदीको छूनेसे महापाप लगता है। कारण रावणके प्रस्रावसे इसकी उत्पत्ति है। रैयकाम देखो। किसी किसीके मतानुसार सूर्यवंशीय त्रिशङ्कु राजाने ब्रह्महत्याका पाप किया था। वह अपना पाप छोड़ाने पृथिवीकी यावतीय पुण्यतोया नदीका जल लाये और उसमें नहा ब्रह्महत्याके पापसे छूट पाये। आजकल जो कर्मनाशा बहती, उसको विदग्धमण्डली त्रिशङ्कु-राजाका गात्रधौत अपवित्र जल कहती है। फिर कोई उस समयमें अपवित्र बताता, जिस समय युक्त-प्रदेशका निष्ठावान् प्राचीन ब्राह्मण इसको पार कर कीकट अथवा वङ्गदेश जाता न था। किन्तु नदीकूलके अधिवासी कर्मनाशाको अपवित्र नहीं समझते और जलसे सायंसन्ध्याकार्य किया करते हैं। भविष्य ब्रह्म-खण्डके लेखानुसार गङ्गा और कर्मनाशाके सङ्गममें नहानेसे अशेष पुण्य मिलता है—

"भागीरथ्या यत्र तत्र कर्मनाशा नदी द्विज।
मज्जति पुण्यार्थं प्राप्ता सौकतारपर्यन्तवै॥" (३८।४०)

उक्त ब्रह्मखण्डमें ही लिखा, कि कर्मनाशाके कूल पर ताड़का राक्षसीका वन था।

कर्मनिबन्ध (सं० पु०) कर्मका आवश्यक फल, कामका ज़रूरी नतीजा।

कर्मनिर्हार (सं० पु०) असत्कर्म वा फलका दूरीकरण, बुरे काम या उसके नतीजेका हटाव।

कर्मनिष्ठ (सं० वि०) कर्मणि निष्ठा यस्य, बहुव्री०। यागादि कर्मासक्त, नित्य नैमित्तिक कर्म करनेवाला।

"ज्ञाननिष्ठा द्विजाः केचित् तपोनिष्ठास्तथापरे।
तपःस्वाध्यायनिष्ठाश्च कर्मनिष्ठास्तथा परे॥" (मनु)

कर्मनिष्ठा (सं० स्त्री०) कर्मणि निष्ठा आसक्तिः, ७-तत्। कर्ममें आसक्ति, काममें लगे रहनेकी हालत।

कर्मन्द—भिक्षुसूत्रकार एक ऋषि।

कर्मन्दी (सं० पु०) कर्मन्देन भिक्षुसूत्रकारकेन ऋषि-विशेषण प्रोक्तं भिक्षुसूत्रमधीते, कर्मन्द-इनि। कर्मन्द-कृशाश्वादिनिः। पा ४।३।१११। भिक्षु, सन्यासी।

कर्मन्यास (सं० पु०) कर्मणां विहितकर्मणां विधिना न्यासः त्यागः। १ कर्मत्याग, सन्यास। २ कर्मफल-त्याग, कामके नतीजेको छोड़ देनेकी हालत।

कर्मपञ्चम (सं० पु०) एक रागिणी। यह षाडव, हिन्दोल बसन्त और देशकारके योगसे बनती है।

कर्मपञ्चमी (सं० स्त्री०) कर्मपञ्चम देखो।

कर्मपथ (सं० पु०) कर्मणां पन्थाः, कर्मन् पथिन् अच्। कर्मपद्धति, कामकी राह। यह दशप्रकार है। इसके परित्यागका उपदेश दिया गया है,—

"कायिकं त्रिविधं कर्म वाचा चापि चतुर्विधम्।
मनसा त्रिविधं चैव दशकर्मपथांस्त्यजेत्॥
प्राणातिपातं स्तैन्यं च परदारमथापि वा।
त्रीणि पापानि कायेन सर्वतः परिवर्जयेत्॥
असत्प्रलापं पारुष्यं पैशुन्यमनृतं तथा।
चत्वारि वाचा राजेन्द्र न जल्पेन्नानुचिन्तयेत्॥
अनभिध्या परस्वेषु सर्वसत्त्वेषु सौहृदम्।
कर्मणां फलमस्तीति त्रिविधं मनसा चरेत्॥" (महाभारत)

त्रिविध कायिक चतुर्विध वाचिक और त्रिविध मानसिक—दश कर्मपथ परित्याग करना चाहिये। प्राणनाश, चौर्य और परदारगमन तीन प्रकारके कायिक कर्म सर्वतोभावसे छोड़ने योग्य हैं। असत्, कर्कश, निष्ठुर और मिथ्यावाक्य यह चार प्रकारके वाक्य बोलना अच्छा नहीं। परसम्पत्तिसे निस्पृह रह, सर्व जीव पर सौहार्द रख और कर्मके फलमें विश्वासकर चलना उचित है।

कर्मपद्धति (सं० स्त्री०) कर्मणां पद्धतिः, ६-तत्। कर्मकी प्रणाली, काम करनेका कायदा।

कर्मपाक (सं० पु०) कर्मणः धर्माधर्मरूपस्य पाकः परिणामः, ६ तत्। धर्माधर्मका सुखदुःखादि रूप परिणाम, भलायी बुराईसे आराम और तकलीफ मिलनेका नतीजा। कर्मविपाक देखो।

कर्मपुरुष (सं० पु०) जीव, जानवर।

कर्मप्रधानक्रिया (सं० स्त्री०) क्रियाविशेष, एक फेल। इसमें कर्म ही प्रधान रहता और कर्ताके समान पड़ता है। फिर क्रियाका लिङ्ग और वचन भी उसी कर्ता बने कर्मके अनुसार लगता है।

कर्मप्रधान वाक्य (सं० स्त्री०) वाक्यविशेष, एक जुमला। इसमें कर्म कर्ताके स्थानपर रहता है।

कर्मप्रवचनीय (सं० पु०) कर्मप्रोक्तवान्, कर्मन् प्रवच अनीयर्। कर्मप्रवचनीयाः। १।४।८३। पाणिनि-व्याकरणोक्त संज्ञाविशेष।

कर्मफल (सं० क्ली०) कर्मण भोगजात शुभाशुभरूपम् फलं परिणाम। १ शुभाशुभ कर्मका सुखदुःख भोगरूप परिणाम, भले बुरे कामसे आराम और तकलीफ मिलनेका नतीजा। २ सुख, आराम। ३ दुःख, तकलीफ। ४ कमराङ्ग फल, कमरख।

कर्मफलोदय (सं० पु०) कर्मके परिणामका विकाश, कामके नतीजेका उठान।

कर्मबन्ध (सं० पु०) कर्मणा बन्धः शरीरसम्बन्धः, ३-तत्। १ कर्मसे पहलेके परजन्मका बन्धन, कामकी गांठ। इसीसे जीव सुखदुःख भोगता है। (त्रि०) कर्मबन्धं बन्धनकारणं यस्य, बहुव्री०। २ कर्मके बन्धनका कारण रखनेवाला, जो कामकी गांठ रखता हो।

कर्मबन्धन (सं० क्ली०) कर्मणा बन्धनं कर्म एव बन्धनं वा। १ कर्मसे उत्पन्न, कामसे पैदा होनेकी हालत। २ कर्मका बन्धन, कामकी गांठ।

कर्मभू (सं० स्त्री०) कर्मणः कर्मणि उचिता वा भूः, ६ वा ७-तत्। १ कृष्ट भूमि, जोती हुयी ज़मीन। २ भारतवर्ष।

"अत्रापि भारतं श्रेष्ठं जम्बूद्वीपे महामुने।
यतो हि कर्मभूरेषा ह्यतोऽन्या भोगभूमयः॥"

कर्मभूमि (सं० स्त्री०) कर्मणः पुण्यजनक यज्ञादि रूपक्रियायाः भूमिः, ६-तत्। १ आर्यावर्त, विन्ध्याचल और हिमालयकी बीचका देश।

"आर्यावर्त्तः पुण्यभूमि [illegible]।
[illegible] कर्मभूमयः [illegible]॥" (हेमचन्द्र)

जैनकी बोल भारत, ऐरावत और विदेह कर्मभूमि हैं। बाकी वर्ष भोगभूमि कहाते हैं।

२ भारतवर्ष, हिन्दुस्थान।

"उत्तरं यत् समुद्रस्य हिमाद्रेश्चैव दक्षिणम्।
वर्षं तद् भारतं नाम भारती यत्र सन्ततिः॥
नवयोजनसाहस्रो विस्तारोऽस्य महामुने।
कर्मभूमिरियं स्वर्गमपवर्गं च गच्छताम्॥" (विष्णु २।३।२)

समुद्रसे उत्तर और हिमाद्रिसे दक्षिण पड़नेवाले

वर्षका नाम भारत है। यहां भारती सन्तति होती है। विस्तार नौ हज़ार योजन है। इसीको कर्म-भूमि कहते हैं। यहां पुण्यकर्म करनेसे स्वर्ग अप-वर्ग मिलता है।

कर्मभोग (सं० पु०) कर्मणः कर्मजन्य सुखदुःखादे-र्भोगः, ६-तत्। कर्मफलानुसार सुखदुःखादिका भोग, कामके नतीजेसे आराम तकलीफ़ मिलनेकी हालत।

कर्ममन्त्री (सं० पु०) कर्म मन्त्रयति, कर्मन्-मन्त्र-णिच्-णिनि। कर्मके सम्बन्धमें मन्त्रणादाता, कामकी सलाह देनेवाला।

कर्ममय (सं० त्रि०) कर्मसे बना हुवा, कामसे निकलनेवाला।

कर्ममार्ग (सं० पु०) १ कर्मका नियम, कामका तरीक़। २ भित्ति प्रभृति तोडनेको दस्यु द्वारा व्यवहार किया जानेवाला एक शब्द, दीवार वगैरहमें सेंध लगनेकी एक हथ्यारका लफ़्ज़।

कर्ममीमांसा (सं० स्त्री०) कर्मणि मीमांसा। कर्म सम्बन्धमें निश्चयकारक शास्त्रविशेष। मीमांसा देखो।

कर्ममूल (सं० क्ली०) कर्मणो मूलमिव मूलमस्य यद्वा कर्मणि यज्ञादि क्रियाजन्य सत्कर्मार्थं मूलं यस्य। १ कुश। २ शरहण।

कर्मयुग (सं० क्ली०) क्षणाति हिनस्ति अन्योऽन्यं यत्र, क्ष-मनिन्; कर्म हिंसाप्रधानं युगम्, कर्मधारय। हिंसाप्रधान कलियुग।

कर्मयोग (सं० पु०) कर्मसु योगस्तत् कौशलम्, ७-तत्। १ चित्तशुद्धिजनक वैदिक कर्म।

"धर्मैव क्रियायोगो ज्ञानयोगस्य साधक.।
कर्मयोग विना ज्ञान कस्यचित्रैव दृश्यते॥" (मलमासतत्त्व)

कर्मयोगको ही क्रियायोग कहते हैं। विना इसके किसीको ज्ञान प्राप्त नहीं होता। कर्म देखो। २ परिश्रम, मेहनत। ३ यज्ञादिसे सम्बन्ध।

कर्मयोगी (सं० पु०) कर्मयोगो ऽस्यास्ति, कर्म-योग-इनि। कर्मयोगमें रत, ईश्वरकी प्राप्तिके अभिलाष यज्ञ ध्यानादि वैदिक कर्म करनेवाला।

कर्मयोनि (सं० पु०) कर्मणो योनिः आदिकारणम्, ६-तत्। कर्मका मूलकारण, कामका असली सबब।

कर्मर (सं० पु०) कर्म हिंसां राति, कर्मन्-रा-क। कर्मरङ्ग, कमरख।

कर्मरक (सं० पु०) कर्मर स्वार्थे कन्। कर्मरङ्ग, कमरख।

कर्मरङ्ग (सं० पु० क्ली०) कर्मणि हिंसायै रज्यते रोगादिजनकत्वादिति भावः, कर्मन्-रञ्ज घञ्। स्वनामख्यात वृक्ष, कमरखका पेड। (Averrhoa carambola) इसका संस्कृत पर्याय—शिराल, दृढदन्त, वृजाकर, कर्मार, कर्मरक, पीतफल, कर्मर, मुद्गरक, मुद्गर, धाराफल और कर्मारक है। मराठीमें इसे करमल, तामिलमें तमर्तमृखरम्, तैलगुमें तमर्तचेतु, मलयमें वलिङ्गविङ्ग मलिस, ब्रह्मीमें जुगया और पोर्तुगीज़ भाषामें करम्बोल कहते हैं।

कर्मरङ्ग अम्ल, उष्ण, वायुनाशक, तीक्ष्ण, कटुपाकी और कफपित्तकारक होता है। इसका पक्वफल मधुर, अम्लरस और बल, पुष्टि तथा रुचिकारक है। (राजनि०)

भावप्रकाशके मतसे यह शीतल, मलवर्द्धकारक और कफ एवं वायुनाशक होता है।

कर्मरङ्ग दो प्रकारका होता है—मिष्ट और अम्ल। किन्तु पक्व अम्ल फल ही लोगोंको अच्छा लगता है। कारण खानेमें यह अधिक मुखरोचक है। वृक्ष १४से ३६ फीट तक बढता है। युरोपीयोंके मतानु-सार यह प्रथम भारत-महासागरके मलक्का द्वीपमें उत्पन्न होता था। वहांसे कर्मरङ्ग सिंहल गया और सिंहलसे भारत आ पहुंचा। किन्तु हमारी विवेचनामें यह बात ठीक नहीं। बहु प्राचीन कालसे कर्मरङ्ग भारतमें उपजता, जिसका प्रमाण रामा-यणमें मिलता है। आजकल भारतमें प्रायः सर्वत्र यह वृक्ष होता है।

कर्मराष्ट्र—दाक्षिणात्यका एक प्राचीन उपविभाग। (Ind. Ant. VII. 189.)

कर्मरी (सं० स्त्री०) कर्म भैषज्योपयोगक्रिया राति ददाति, कर्म-र-क गौरादित्वात् ङीष्। वंशलोचना।

कर्मरेख (सं० पु०) कर्मकी रेखा, मत्थेका लिखा, होनहार।

कर्मर्ष (सं० पु०) अथर्ववेदी एक प्राचीन ऋषि।

कर्मवचन (सं० स्त्री०) कर्मवाच्य, बौद्धमतानुयायी क्रियाकाण्ड।

कर्मवज्र (सं० पु०) कर्म जीतादयनुष्ठानं वज्रमिव यस्य, बहुव्री०। शूद्र। शूद्रका जीतादि अनुष्ठान वज्रकी भांति कठोर लगता है।

कर्मवत् (सं० त्रि०) कर्म अस्यास्ति कर्म-मतुप् मस्य व। कर्मविशिष्ट, कामकाजी।

कर्मवश (सं० त्रि०) कर्मणो वशः, ६ तत्। १ कर्मके अधीन, कामका मारा। (पु०) पूर्वजन्मके कर्मका अवश्यम्भावी फल, कामका बुरा नतीजा। यह शब्द हिन्दीमें क्रियाविशेषणकी भांति भी आता है। किन्तु उस अवस्थामें करणकारकका चिह्न 'से' छिपा रहता है।

कर्मवशिता (सं० स्त्री०) कर्मवशिनो भावः कर्म वशिन् तल् टाप्। कर्माधीनता भाव, काममें दबे रहनेकी हालत। यह बोधिसत्त्वका एक गुण है।

कर्मवशी (सं० पु) कर्मणो वशः वश्यता अस्यास्ति, कर्म वश-इनि। कर्माधीन कामका मारा।

कर्मवश्यता (सं० स्त्री०) कर्मणो वश्यता अधीनता ६-तत्। कर्मकी अधीनता कामका दबाव।

कर्मवाचकक्रिया, कर्मवाच्यक्रिया देखो।

कर्मवाटी (सं० स्त्री०) कर्मणां याज्ञीय तिथि निमित्तीभूतक्रियाणां चन्द्रकलाक्रियाणां वा वाटीव। तिथि, चान्द्र मासका तीसवां विभाग।

कर्मवाद (सं० पु०) मीमांसाशास्त्र। इसमें कर्मकी ही प्रधानता बोधित हुयी है।

कर्मवादी (सं० पु०) मीमांसक, कर्मको प्रधान स्वीकार करनेवाला।

कर्मवान्, कर्मवत् देखो।

कर्मविघ्न (सं० पु०) कर्मका अन्तराय, कामकी रुकावट या चक्र।

कर्मविधि (सं० पु०) कर्मणो विधिः नियमः, ६ तत्। कर्मका नियम, कामका कायदा।

कर्मविपर्यय (सं० पु०) १ कार्यका व्यतिक्रम, कामका खिचखिचा। २ कर्मका व्यतिक्रम कामका उलट फेर।

कर्मविपाक (सं० पु०) कर्मणां धर्माधर्ममूलकानां विपाकः परिणामः, ६ तत्। शुभाशुभ कर्मका फल मिले हुए कामका नतीजा। श्रुति, स्मृति, पुराणमें दीर्घजीवितादिका उपकरण वा सुख प्रभृति शुभकर्मका और रोग तथा नरकादि अशुभ कर्मका फलभोग है। हमारे शास्त्रमें लिखते पापकर्मके न्यूनाधिक अनुसार प्रथम नरक भोग कर पीछे पापयोनि विशेषमें उत्पत्ति होती है। गरुड़पुराणमें कैसे पापसे कैसी योनिमें जन्म लेनेकी बात लिखी है—पतित व्यक्तिका दानग्रहण करनेसे नरकान्त पर गाधे कृमि, उपाध्यायको मारने-पीटनेसे कुक्कुर गुरु-पत्नी वा गुरुद्रव्यके लोभसे गर्दभ, माता प्रभृति अन्य गुरुजनको आक्रमण करनेसे सारिका, माता पिताको वचनसे कष्ट देनेसे कच्छप, प्रभुदत्त आहार छोड़ अन्य द्रव्य खानेसे वानर, गच्छित धन मारनेसे कृमि, किसीके गुणमें दोष लगानेसे राक्षस, विश्वासघात करनेसे मत्स्य, धन धान्य प्रभृति द्रव्य चोरानेसे इन्दुर, परस्त्रीगमनसे व्याघ्र वृक प्रभृति, भ्रातृभार्याहरणसे कोकिल, गुरु प्रभृतिके पत्नी हरणसे शूकर, यज्ञदानविवाह प्रभृतिमें विघ्न डालनेसे कृमि, देवता पितृलोक एवं ब्राह्मणको न दे भोजन करनेसे काक, ज्येष्ठ भ्राताकी अवमानना करनेसे क्रौञ्च, शूद्र हो ब्राह्मणी गमन करनेसे कृमि, ब्राह्मणी-गर्भसे पुत्र निकालनेसे काष्ठमध्यस्थ कीट, कृतघ्नतासे कृमिकीट पतङ्ग वा वृश्चिक, आयुधहीन व्यक्तिको मारनेसे खर, स्त्री तथा शिशुवध करनेसे कृमि, किसीका भोज्यवस्तु चोरानेसे मक्षिका, अन्नहरण करनेसे बिडाल, तिल हरणसे मूषिक, घृत हरणसे नकुल, मद्गुर मत्स्य हरणसे काक, मधु हरणसे मशक, पिष्टक हरणसे पिपीलिका, जल हरणसे वायस, काष्ठ हरणसे हारीत वा कपोत, स्वर्णभाण्ड चोरानेसे कृमि, वस्त्रादि हरणसे क्रौञ्च, अग्निहरणसे बक, वर्णक एवं शाक पत्रादि चोरानेसे मयूर, रक्तवस्त्र हरणसे चकोर, सुगन्धि वस्तु चोरानेसे छुछुन्दर, अंशु हरणसे शशक, मयूरका पुच्छ चोरानेसे षण्ढ, काष्ठहरणसे काष्ठकीट, फल चोरानेसे चातक और अपहरण करनेसे रौरवादि नरक भोग कर वृक्ष गुल्म लता इत्यादि रूपमें जन्म लेना पड़ता है। गो सुवर्णादि हरणसे भी ऐसा ही फल मिलता है। फिर मनुष्य विद्या चोरानेसे बहुनरक भोग पीछे मूक और रत्नमूल्य अग्निमें आहुति डालनेसे मन्दाग्नि हो जन्म लेता है। (गरुड़० २२५ अ०)

पापकार्य विशेषसे इहजन्म वा परजन्ममें रोगविशेष भी भोगना पड़ता है। शातातप ऋषिने जिस पापसे जिस रोगका विधान किया, नीचे वह लिख दिया है। पापसे जो रोग लगता, उसका प्रायश्चित्त करना पड़ता है। प्रायश्चित्त न करनेसे वही रोग परजन्ममें भी मनुष्यको कष्ट देता है। महापातकसे सात, उपपातकसे पांच और पापसे तीन जन्म तक रोग पीछा नहीं छोड़ता। महापातक, उपपातक और पातकके प्रायश्चित्तका भी न्यूनाधिक्य रहता है। महापातकमें पूर्ण, उपपातकमें अर्ध और पातकमें पादांश प्रायश्चित्त करना पड़ता है। फिर अतिपातकमें दानादि साधारण विधान द्वारा मुक्त हो सकते हैं।

पाप	रोग	प्रायश्चित्त
छागहत्या	अधिकाङ्ग	विधियुक्त छागदान।
अश्वहत्या	वक्रमुख	शतपल चन्दन दान।
मेषहत्या	पाण्डुरोग	ब्राह्मणको एक पल कस्तूरी दान।
उष्ट्रहत्या	विकृतस्वर	कर्पूर एक पलदान।
काकहत्या,	कर्णहीनता	कृष्णवर्ण गोदान।
खरहत्या	कर्कशलोम	तीन मुद्रा परिमित स्वर्णप्रकृति दान।
हस्तिहत्या	सर्वकार्यमें असिद्धि	मन्दिर बना गणेशमूर्ति प्रतिष्ठा अथवा कुलत्थ शाक तथा पिष्टक द्वारा गणसमूहका शान्ति विधान और एक लक्ष गणेशमन्त्र जप।
तरक्षुहत्या	केकराक्षि	गुड़मयी धेनुका दान।
गोहत्या	कुष्ठ	पञ्च पल्लव संयुक्त, पञ्चवर्ण विशिष्ट, रक्तचन्दनलिप्त, रक्तपुष्प एवं रक्तवस्त्र आच्छादित एक रक्तकुम्भ दक्षिण दिक् स्थापित कर, तिलचूर्णपूर्ण ताम्रपात्र उसपर रख उसमें १०८ माषा परिमित स्वर्णकी यममूर्ति बना पुरुषसूक्त मन्त्रसे पूजा और उसके आगे पापकी शान्ति प्रार्थना करना चाहिये। इसके पीछे सामवेदी ब्राह्मण कलस सामपारायण करेंगे। फिर दश भाग सर्षप द्वारा पाप मार्जनका अभिषेचन होता है। यमको निम्नलिखित मन्त्र द्वारा यममूर्ति विसर्जन कर मन्त्रिसहकारसे आचार्यको निवेदन करना चाहिये,— "यमोऽपि महिषारूढो दण्डपाणिर्भयानकः। दक्षिणाशा पतिर्देवो मम पापं व्यपोहतु॥"
महिषहत्या	कृष्णगुल्म	१०८ माषा स्वर्णकी प्रकृतिका दान।
मार्जारहत्या	हस्ततल पीतवर्ण	१०८ माषा परिमित स्वर्णके बने पारावतका दान।
बकहत्या	दीर्घनासिका	शुक्लवर्ण गोदान।
शुकशारिकाहत्या	स्खलितवाक्य	ब्राह्मणको दक्षिणा सहित कोई शास्त्रग्रन्थ दान।
शूकरहत्या	दन्तुर	दक्षिणा सहित घृतकुम्भदान।
शृगालहत्या	पदशून्यता	एकपल परिमित स्वर्ण अश्वदान।
हरिणहत्या	खञ्ज	एकपल परिमित स्वर्ण अश्वदान।
पितृहत्या	चेतनानाश	२० प्राजापत्य बना एक पलपरिमित स्वर्णकी नौका पर ताम्रपात्रमें रौप्यमय कुम्भ रख १०८ माषा परिमित स्वर्णका विष्णुविग्रह गढ़ पट्टवस्त्र पहना यथा विधि पूजा करना चाहिये। पीछे यह समस्त द्रव्य ब्राह्मणको देते हैं।
मातृहत्या	अन्ध	पितृहत्याका जो प्रायश्चित्त इसमें भी करना पड़ता है।
भ्रातृहत्या	मूक	चान्द्रायण व्रत कर 'सरस्वति जगन्मातः शब्दब्रह्माधिदेवते। दुष्कर्मकरणात् पापात् पाहि मां परमेश्वरि॥' मन्त्र पढ़ पल परिमित स्वर्ण सह ब्राह्मणको पुस्तक दे।
स्त्रीहत्या	अतीसार	१० अश्वत्थ वृक्ष रोपण, शर्करा तथा धेनुदान और शत ब्राह्मणभोजन।
बालकहत्या	मृतवत्सा	ब्राह्मणको विवाहदान, हरिवंश श्रवण, महारुद्रका जप, अयुत संख्यक दूर्वा आहुति दे दक्षिणासह १०८ माषा परिमित ११ खण्ड स्वर्ण अथवा ११ पल स्वर्ण ११ ब्राह्मणको देना चाहिये। फिर अन्यान्य ब्राह्मणको भी दक्षिणा दान करना कर्तव्य है। अवशेषमें आचार्य वरुणदैवतमन्त्र द्वारा

पाप	रोग	प्रायश्चित्त
		स्त्रियोंको दान करना है। यथाशक्ति ब्राह्मणोंको [illegible] प्रदान करे।
राजहत्या	क्षयरोग	गौ, भूमि, स्वर्ण, तिलपात्र, अन्न, वस्त्र, इनमेंसे [illegible] और तिलोंका दान।
ब्रह्महत्या	पाण्डुरोग	चाँदी और [illegible] एक [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] विधिपूर्वक [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]। [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] पूजा, [illegible], [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] चाहिये। [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] है।
[illegible]	[illegible]	[illegible] ब्राह्मण [illegible] [illegible]।
[illegible]	[illegible]	१ ब्राह्मण [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]।
[illegible]	[illegible] और [illegible]	[illegible] ब्राह्मण [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] और [illegible] [illegible]।
[illegible]	[illegible]	[illegible]।
[illegible]		
[illegible]	[illegible]	[illegible]।
[illegible]	[illegible], [illegible], और [illegible]	[illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] दान।
[illegible]	[illegible]	[illegible] [illegible] [illegible] [illegible] करना चाहिये।
[illegible]	[illegible]	[illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] ब्राह्मणको दान।
[illegible]		
[illegible]	[illegible]	[illegible] [illegible] [illegible] १ [illegible] [illegible] चाहिये।
[illegible]	[illegible]	[illegible] [illegible] दान।
[illegible]	[illegible]	[illegible] [illegible]।
[illegible]		
[illegible]	[illegible]	[illegible] [illegible] [illegible] [illegible] है।
[illegible]	[illegible]	[illegible] और [illegible] [illegible] करना चाहिये।
[illegible]	[illegible]	[illegible] [illegible] [illegible]

पाप	रोग	प्रायश्चित्त
[illegible]	[illegible]	[illegible] [illegible] [illegible] दान।
[illegible]	[illegible]	[illegible] [illegible] [illegible] [illegible] और [illegible] पूजा करे।
[illegible]	[illegible]	[illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]।
[illegible]	[illegible]	[illegible]।
[illegible] [illegible]	[illegible]	[illegible] [illegible] [illegible] [illegible]।
[illegible]	[illegible]	[illegible] [illegible] [illegible] दान करना चाहिये।
[illegible] [illegible]	[illegible]	[illegible] [illegible] १ [illegible] (११२ [illegible]) [illegible] दान।
[illegible]	[illegible]	[illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible], [illegible] [illegible], [illegible] [illegible] [illegible] और [illegible] [illegible] करना चाहिये।
[illegible] और [illegible] [illegible]	[illegible]	[illegible] [illegible] [illegible] [illegible] और १ [illegible] [illegible] १ [illegible] दान।
[illegible]	[illegible]	[illegible] [illegible] [illegible] [illegible] और [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]। [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]—"[illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]।"
[illegible] [illegible]	[illegible]	[illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]।
[illegible] [illegible]	[illegible]	[illegible] [illegible] (११८ [illegible]) [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] दान करना चाहिये।
[illegible] [illegible]	[illegible]	[illegible] [illegible] [illegible] दान
[illegible] [illegible]	[illegible]	१ [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] करना चाहिये [illegible] [illegible] [illegible] और [illegible] करे।
[illegible] [illegible]	[illegible]	[illegible] [illegible] [illegible] और [illegible] दान।
[illegible] [illegible]	[illegible]	[illegible] [illegible] और [illegible] [illegible] करना चाहिये।

पाप	रोग	प्रायश्चित्त
कांस्यहरण	पुण्डरीक	ब्राह्मणको अलङ्कृत कर शतपल कांस्य देना उचित है।
गुरुपत्नीगमन	मूत्रकृच्छ्र	नील मालायुक्त एवं नीलवस्त्राच्छादित घट पश्चिम ओर रख उस पर ताम्रपात्रमें छह निष्क स्वर्णनिर्मित वरुणमूर्ति पुरुषसूक्तसे पूजना चाहिये। फिर सामवेदी ब्राह्मणको उसी समय सामवेद पढ़ना उचित है। पीछे १० निष्क परिमित स्वर्णपुत्तलिका 'निष्पापोऽहं' कहके ब्राह्मणको और उक्त वरुणमूर्ति आचार्यको प्रदान करना चाहिये। वरुणमूर्ति देते समय यह मन्त्र पढ़ना पड़ता है,—"यादसामधिपो देवो विश्वेषामधिपो वरः। स सारलोकर्यधारो वरुणः पावनो ऽस्तु मे॥"
चण्डालीगमन	क्षीणशुक्रता	मातृगामीकी भांति प्रायश्चित्त करना चाहिये।
तपस्विनीप्रसङ्ग	प्रमेह	एक मास रुद्रका जप और यथाशक्ति स्वर्णदान।
तपस्विनीधर्षण	अश्मरी	मधु, धेनु और स्वर्णसह शत द्रोणपरिमित तिलदान।
ताम्बूलहरण	श्वेतोष्ठता	दक्षिणा सह उत्तम प्रवालद्वय देना चाहिये।
ताम्रहरण	औदुम्बर कुष्ठ	प्राजापत्य व्रत और शतपल परिमित ताम्रदान।
तैलहरण	कण्डु प्रभृति	उपवासी रह ब्राह्मणको दो लोटे तैलदान करे।
मधु (शीशा) हरण	नेत्ररोग	उपवास रख यथाविधि ब्राह्मणको घृत और धेनु देना चाहिये।
दधिहरण	मत्तता	ब्राह्मणको दधि और धेनुदान।
काष्ठहरण	हस्तस्वेद	ब्राह्मणको दो पल कुङ्कुम दान।
दीक्षिता स्त्रीगमन	दुष्टरक्तजन्य नेत्ररोग	दो प्राजापत्य करना चाहिये।
दुग्धहरण	बहुमूत्र	ब्राह्मणको यथाविधि दुग्ध धेनुदान।
देवस्वहरण	विविध ज्वर	ज्वरमें रुद्र, महाज्वरमें महारुद्र, रौद्रज्वरमें अतिरौद्र और वैष्णवज्वरमें महारुद्र तथा अतिरौद्रका जप करे।
नानाविध द्रव्यहरण	ग्रहणी	यथाशक्ति अन्न, वस्त्र और स्वर्णदान।
पक्वान्न हरण	जिह्वारोग	लक्ष बार गायत्री जप और तिल द्वारा उसका दशांश हवन।
पट्टसूत्रहरण	लोमशून्यता	धेनुदान।
पशुयोनिगमन	मूत्राघात	दो तिलपात्र दान।
पितृष्वसागमन	दक्षिणभागमें व्रण	यथाशक्ति छागदान।
पुत्रवधूगमन	कृष्णकुष्ठ	कन्यागमनके प्रायश्चित्तसे आधा प्रायश्चित्त और घृतयुक्त तिलद्वारा दशांश होम करना चाहिये।
फलहरण	अङ्गुलिव्रण	ब्राह्मणको अयुतसंख्यक नानाविध फलदान।
भ्रातृजायागमन	गुल्म और कुष्ठ	कन्यागमनके प्रायश्चित्तसे आधा प्रायश्चित्त और घृतयुक्त तिलसे दशांश होम कर्तव्य है।
मधुहरण	नेत्ररोग	उपवासी रह मधु और धेनुदान करना चाहिये।
मातुलानीगमन	कुब्जता	अश्वगर्भ दान।
मातृगमन	लिङ्गहीनता	उत्तर दिक् कृष्णमालायुक्त कुम्भ वस्त्रावृत रख उसके ऊपर कांस्यपात्रमें छह निष्क परिमित स्वर्णनिर्मित नरवाहन कुबेरकी मूर्ति स्थापनकर पुरुषसूक्तसे यज्ञ करे। अथर्ववेदवित् ब्राह्मण उसी समय अथर्ववेदोक्त कार्य करता रहे। अन्तको विंशति निष्क परिमित स्वर्णकी पुतली ब्राह्मणको 'निष्पापोऽहं' कहकर और उक्त कुबेरमूर्ति ब्राह्मणको दे डाले। कुबेरकी मूर्ति देते समय यह मन्त्र पढ़ना चाहिये,—'निधीनामधिपो देव शङ्करस्य प्रियः सखा। सौम्याधिपतिः श्रीमान् मम पापं व्यपोहतु॥"
मातृष्वसागमन	सर्वाङ्गव्रण	दास दान और अगम्यागमनका प्रायश्चित्त करे।
मृतभार्यागमन	मृतभार्या	एक ब्राह्मणको विवाह दे।
रक्तवस्त्र और प्रवालहरण	वातरक्त	मणि और वस्त्रसह महिषी दान।
लौहहरण	चित्तिताङ्ग	एकदिन उपवास रख शतपल लौह दान करे।

पाप	रोग	प्रायश्चित्त	पाप	जन्म	प्रायश्चित्त
मद्यहरण	क्षय	शिव प्रतिष्ठित सुवर्णनिर्मित मत्स्यमूर्ति और १ तोला सोना दें।	पुस्तकहरण	अन्धत्व	शिव प्रतिष्ठित सुवर्णनिर्मित मत्स्य सहित पुस्तक दान और सुवर्णमयी मूर्ति सहित दान।
पितापुत्रहरण	मूकता	ब्राह्मणको दक्षिणा सह पाठ सहित पुस्तक दान।	कपिलाहरण	कार्पासि वा कपालवासी	यही व्रत करना चाहिये।
ब्राह्मणका रत्नहरण	नयनरोग	महारुद्रजपादि, ब्राह्मणको आठ रत्न दान और सहस्रोंका दान निर्दिष्ट प्रायश्चित्त।	निद्रा	निद्रालु कार्पास कपालवासी वृष	कुष्माण्ड विधान दान।
			ब्राह्मणस्त्री	स्त्रीकामी	कन्या दान सहित दान।
ब्राह्मणका सर्व हरण	कुष्ठता	तीन चान्द्रायण कर दो धेनु देना चाहिये।	ब्राह्मणका सर्वस्व हरण	चाण्डालगर्भवासी	८ कृच्छ्रत्रय आचरण।
			पवित्र धनहरण	कृष्ण ब्राह्मणी	आठ प्रति उसकी मूर्ति प्रायश्चित्त।
धान्य हरण	तीन दोष	ब्राह्मणको दो धान्यसहित दान।	राजद्रव्य	राजगामी	पर शिव प्रतिष्ठित सुवर्णनिर्मित हरिवंश।
गोहरण	वातरोग	उपवास एक गोदान दक्षिणा सहित करे।			
इक्षुरस हरण	वातरोग	सब उपवास यज्ञ भी करें।	वस्त्र	चोरजन्म	में दान।
औषधि चोरण	अतिसार	अतिथि दान।	कार्पास वस्त्र हरण	पवित्र कुष्ठ-वासी जन्म	कार्पास उसकी तरह प्रायश्चित्त।
मधुमति हरण	मधुमेह	दो ब्राह्मण करे।	अन्नहरण	अन्धमूक जन्म	
सुवर्णहरण	राजयक्ष्मा	पूर्वोक्त सौभाग्य तथा सौभाग्य कामनासहित उपवास एक उसकी बाद कार्पासमय पूजित प्रतिष्ठित सुवर्णनिर्मित ब्राह्मण मूर्ति कलश कर पूजनपूर्वक दान करें। एक तीन कृच्छ्र, चान्द्र: एवं दान तीनों देवी अनुसार करना चाहिये। इसकी मन्त्र "विष्णवाय" जप कर ब्राह्मणको सुवर्ण निर्मित गज पुतली और आचार्यको गजलक्ष्मी है। इसीका मन्त्र यह है—"देवतावर्गी देवी सर्वो निमित्तित:। अतएव: पुण्डरीक सर्व सम निवृत्ति:॥"			
			तण्डुल	तिरी जन्म	तीन धान्य सहित दान।
			तिलहर	श्वान जन्म	हवन।
			अश्वहरण	पक्षिजन्म	सवत्सा सहित गाय दान।
			रथसवारी तथा	रासभ जन्म	सुवर्ण पुरुष दान।
			गोदान तथा	कपालवासी	सुवर्ण सुवर्ण दान।
			वीरहरण	व्याघ्र योनी	ब्राह्मण को सब दान।
			वित्त	सर्पविषधर	सब लक्ष्मी और सुवर्णदान।
			तिलपिष्टक	कृमि	सहस्र हवन।
			आम्रहरण	वनचर वा वानर जन्म	
	जन्म				
					ब्राह्मणभोजन।
			अन्न	तोता जन्म	उपवास कर पारायण।
वनस्पति ? हरण	शवपाप?	निवारण।	पुष्प	भ्रमर	तीन निष्क परिमित सुवर्णमय दान।
वस्त्र हरण	चर्मरोग	शैलदानादि।	देव ब्राह्मण वस्त्र	कालिन्दी हंसादि	
पलादि	?	सहस्रादि सुवर्णदान।		भारीक	व्रतपूर्वक यज्ञ दान।
कुम्भदान	तिलहरिणी	तीन पुष्प भूमिदान।	सिंदूर	चन्द्रगामी	सुवर्णकी हंसदान।
कुम्भीपाक	आपादरोग	अपराजिता दिव्यता दान।		पतान्त	तीन निष्क परिमित सुवर्णदान।
लवण हरण और निम्बपत्र	अन्धिरी	ब्राह्मणको तीन माता दान।		चातकप्रायस	सुवर्णनिर्मित चातक दान।
				तिर्यग्यान दीव	१ ब्राह्मणभोजन।
तडागिका वा वैदूर्यक	उदरी	दक्षिणा सह अतिथि दान।		पाकाग्नि	शिव में पूजन।
				हिंसीव	८ कृच्छ्र आचरण करना चाहिये।

भगतिका साधारण प्रायश्चित—फल एवं सप्त धान्यपर पञ्चपल्लव तथा सर्वौषधिसंयुक्त कृष्णवस्त्र आच्छादित अकालमृत्यु कलस रख उसके ऊपर निष्कपरिमित स्वर्णनिर्मित महिषारूढ चतुर्भुज दण्डहस्त और स्वर्ण-कुण्डलधारी प्रेतरूपी पुरुष स्थापनकर पूजना चाहिये। प्रत्यह पुरुषसूक्त तथा दुग्धसे कलसमें तर्पण और षड्रुद्र नाम जप करे। यमसूक्त द्वारा यमपूजा प्रभृति, आत्मविशुद्धिके लिये गायत्रीजप और ग्रह-शान्तिपूर्वक दशांश तिलहोमकर ब्राह्मणको तिलो-दक दान करते हैं।

"इमं तिलमय पिण्डं मधुसर्पिःसमन्वितम्।
ददामि तस्मै प्रेताय यः पीडां कुरुते मम॥"

उक्त मन्त्र द्वारा मधु तथा शर्करामिश्रित कृष्ण तिल-पिण्ड प्रेतरूपको दे यजमान प्रेतके उद्देश तिलपात्र-संयुक्त द्वादश कृष्ण कलस और विष्णुके उद्देश एक कलस प्रदान करे। आचार्य वरायुधधारी वरुण-दैवतका मन्त्र पढ और कलसमें जल लेकर दम्पतीको अभिषेक करें। यजमान उन्हें दक्षिणा दे और नारायण-बलि कर ले। नारायणबलि देखो।

उक्त प्रायश्चित्त द्वारा प्रेत प्रेतत्वसे छूट पुत्र-पौत्रादिको आरोग्य सम्पद देता है।

प्रायश्चित्तके दहपका अनुष्ठान—४, ५, ८ वा १० संख्यक ब्राह्मण बैठा उनके आज्ञानुसार प्रायश्चित्तका उप-क्रम लगाना पडता है। इसके पीछे विष्णुकी पूजा एवं कामनाके अनुसार सङ्कल्पकर ब्राह्मणोंको यथा-शक्ति धेनु,वस्त्र,अलङ्कार तथा दक्षिणा दे साष्टाङ्गप्रणाम-पूर्वक प्रायश्चित्त समापनकर ब्राह्मणको पूजे और अन्तको ब्राह्मण खिला बन्धुगणके साथ स्वयं भोजन करे।

दानका साधारण विधि——केवलमात्र गोदानका विधान रहते सुशीला सवत्सा दुग्धवती गाभी, वृषदानमें शुक्लवस्त्र तथा काञ्चन सह वृष, भूमिदानमें दश निवर्तन परिमित भूमि, स्वर्णदानमें शतनिष्क अथवा पञ्चाशत् निष्क स्वर्ण, अश्वदानमें उपकरणसह सुशील अश्व, महिषदानमें स्वर्णायुधयुक्त महिषी, गजमहा-दानमें सुवर्ण फल सहित गज, देवताके अर्चनमें लक्ष मन्त्र द्वारा पुष्पदान ब्राह्मण-भोजनमें सहस्र ब्राह्मणोंको मिष्टान्न दान, रुद्रजपमें लक्षसंख्यक पुष्पद्वारा शिव-पूजा चढा एकादश रुद्र नामका जप, हवन, गुग्गुल सह तद्दशांश होम तथा वरुण मन्त्रसे अभिषेक, धान्यदानमें ७६८ मन धान्य और वस्त्रदानमें कर्पूर-मिश्रित पट्टवस्त्रद्वय देना पड़ता है।

विविध पुराणके मतसे भी निम्नोक्त रोग निम्नोक्त पापसे उत्पन्न होता है,—

१ क्लीवता—निरपराधिनी पतिव्रता युवती स्त्रीको छोडने, किसीका अण्डकोष छेदने अथवा ऋतुस्नाता स्त्रीसे सहवास न करनेपर मनुष्य नपुंसक हो जन्म लेता है।

२ अल्प वयसमें ही सन्तान नाश—तृष्णार्त जीवके जलपानमें बाधा डालनेवालेका सन्तान अल्पायुः होता है।

३ दरिद्रता—जो व्यक्ति प्रभूत धनवान् होते भी धर्मनिन्दक रहता और देवता, अग्नि, ब्राह्मण तथा दरिद्रको कुछ दान नहीं करता,वह मृत्युके पीछे विविध नरक यन्त्रणा भोग अतिदरिद्र बन जन्म लेता और जीर्ण-वस्त्र पहन निरतिशय क्लेशसे जीवन बिता देता है।

४ वियोग—दुष्ट, दुराचार, दुष्टबुद्धि और स्नेह-भेदकारी व्यक्ति परजन्ममें वियोग यन्त्रणा उठाता है।

५ नेत्ररोग—गृहस्थका दीप चोराने, सती पर-नारीके प्रति सकाम दृष्टि लगाने अथवा दूसरेका सम्भोग देख ललचानेसे काना या अन्धा होकर जन्म लेना पड़ता है।

६ कुब्जता—देवता प्रतिमा, ब्राह्मण, गुरु, श्रेष्ठ व्यक्ति, ब्रह्मचारी और तपस्वीको देख अभिवादन न करनेसे मृत्युके पीछे श्मशान वृक्ष बन बहुकाल विताने पर कुब्ज रूप जन्म होता है।

७ खञ्ज और छिन्नपादता—जूता या खडाऊ चोरानेसे बहुविध नरकयन्त्रणाके पीछे खञ्ज वा छिन्न-पाद होकर मनुष्य जन्मग्रहण करता है।

८ छिन्नहस्तता और छिन्नपादता—पिता, माता, गुरु वा वृद्धको ताड़ना देनेसे विविध यमयन्त्रणा भोग छिन्नहस्त वा छिन्नपद होकर जन्म लेते हैं।

९ छिन्न नासिकता—श्रुतिस्मृतिकी कथामें विघ्न

शास्त्र या देवनिन्दा करनेसे मृत्युके पीछे नैर्ऋत एवं पश्चिम दिक्स्थित पिङ्गला नामक नगरमें पिशाचोंके पास बहुकाल रह मनुष्य छिन्न भाषिक होकर जन्म ग्रहण करता है।

१० श्वित्रवर्णता—मिथ्या अपवाद द्वारा किसीको सतानेसे श्वित्रवर्ण होना पड़ता है।

११ खञ्जपदहीनता—उभय सेनाके द्वारा संग्राम समयमें जीव जन्तुको छोड़ भागनेसे मृत्युके पीछे कुम्भक नरक भोग मनुष्य खञ्जपद हीन होकर जन्म लेता है।

१२ पक्षाघात—धन लेकर निरस्त्र शत्रुको मारनेसे बहुकाल पशुयोनि पानेपर मनुष्य जन्ममें पक्षाघात रोग लगता है।

१३ वैधव्य—जो स्त्री यौवनके गर्व मोह अनुमत पतिको विरूप बता दिवसमें निन्दा करती, रात्रिको उसकी शय्या नहीं छूती और पतिकी आज्ञाके अनन्त वह रहती, वह परजन्ममें वैधव्य यन्त्रणा सहती है।

१४ वन्ध्यता—पिपासार्त्त वत्सके जलपानमें बाधा लगाने, हविष्यान्नशून्य व्रत उठाने, मित्रपक्षादि देवताको निवेदन न कर खाने और किसीको अपनका उपयोगी देख उखाड़नेसे वन्ध्यता आती है।

१५ गर्भस्राव—जो स्त्री विश्वास्य उपपति वा अन्य नारीका सन्तान दुष्ट औषध वा दुष्ट मन्त्रादिसे मार डालती, वह नरकान्तमें मनुष्ययोनि वा किसी अन्य सुखप्रद ऐश्वर्यशालिनी होते भी गर्भस्रावकी पीड़ा उठाती है।

१६ मृतभार्यता—ज्येष्ठ भ्राता अविवाहित रहते कनिष्ठ विवाह करनेपर मृतभार्य होता है। अष्टमी तिथिको तैल छूनेसे भी स्त्री भी मर जाती है।

१७ बहुपुत्रता और अपुत्रता—मायके सुपथ भोज्य वस्तु और दूर देखने पर मृत्युके पीछे तीन मन्वन्तर काल निर्जन मरुभूमिमें रह परजन्मको बहुपुत्रक वा अपुत्रक होना पड़ता है।

१८ दौर्भाग्य—व्रतोक्त तिथिको तैल छूनेसे दौर्भाग्य आता है।

१९ सापत्न्य—जो स्त्री मिथ्यावाक्य प्रयोग द्वारा विवाद बढ़ाती और परस्पर जोड़ वैमनस्य लगाती, वह परजन्ममें सपत्नीसे सतायी जाती है।

२० कास्यन्तर—अपवित्र अन्न घृत प्रभृति मिष्टान्नको देनेसे कास्यन्तरमें जन्म होता है।

२१ मूकता—किसी नृत्यगीतादिकारीको हँसनेसे परजन्ममें मूकता आती है।

२२ गद्गदभाषा—किसीमाके जो व्यक्ति विवाद बढ़ाता अथवा मूर्खताके गुरुको निन्दा उड़ाता, वह मृत्युके पीछे बहुविध यन्त्रणा उठा परजन्ममें गद्गद भाषी बन जाता है।

२३ कुष्ठरोग—पितृनिन्दा, गुरुनिन्दा एवं देवनिन्दाकारी, मिथ्यावादी और अभक्ष्यभक्षक व्यक्ति नरकान्तमें जन्म ले कुष्ठरोगाक्रान्त होता है।

२४ कर्णरोग—अपभ्रंश अज्ञापना पापवाक्य सुननेसे परजन्ममें कर्णरोग लगता है।

२५ दुर्गन्धगात्रता—सुगन्धि द्रव्य चोरानेसे मनुष्य मूक तथा विडालक नरक भोग परजन्ममें दुर्गन्धगात्र होता है।

२६ दारिद्र्य और विरूपता—दानकार्यमें विघ्न डालनेसे परजन्म दरिद्र और विरूप बनना पड़ता है।

२७ श्लीपदपादिता—अपव चोरानेसे मृत्युके पीछे वायाग्नि नामक नरकको यन्त्रणा उठा परजन्ममें हस्तपर श्वेतकुष्ठ रखते हैं।

२८ दाहज्वर—अग्नि द्वारा घर, ग्राम, वन प्रभृति जलानेसे प्रायान्तको रौरव नरक भोग परजन्ममें मनुष्य दाहज्वरका कष्ट उठाता है।

२९ अग्निमान्द्य—ब्राह्मणके पाकपात्र भिन्न डालनेसे अक्षय नामक नरक भोग परजन्ममें अग्निमान्द्य रोगग्रस्त होते हैं।

३० अजीर्ण—पाक बना पाकाग्नि जलसे बुझाने पर अजीर्ण रोग लगता है।

३१ अतीसार—यज्ञाग्नि बिगाड़ने और दान लिया या चोरीसे दूसरेका धन मार डालनेसे नरकान्तमें तीन वत्सर मत्स्ययोनि हो मनुष्ययोनिमें अतीसार रोगका दुःख उठाना पड़ता है।

३२ पथरी—जो अज्ञानमें दान, भोजन, वस्त्रादि

समस्त परित्याग कर केवलमात्र अर्थ जोड़ता, जो गो तथा भूमि दबा बैठता, जो निठुर पड़ता और जो सरल एवं सच्चरित युवती भार्याको छोड़ता, वह व्यक्ति नरकान्तमें ग्रहणीरोगग्रस्त हो जन्म लेता तथा पशु द्रव्य धन प्रभृतिसे मुंह मोड़ता है।

३३ पाण्डु—परभार्या वा नीच जातिकी स्त्रीसे सङ्गत होनेपर बहुकाल पर्यन्त विविध यमदण्ड झेल मनुष्य-जन्ममें पाण्डुरोगग्रस्त और क्षीणचेता रहते हैं।

३४ कामला—अन्नादि चोरानेसे जीवनान्तमें विविध नरकभोग अष्टादशवर्ष पर्यन्त काककङ्क प्रभृति तिर्यक् योनि पाते और मनुष्यजन्ममें कामला रोगका कष्ट उठाते हैं।

३५ कास—कर्मभेदके अनुसार पांचो प्रकारका कास उत्पन्न होता है। १ अतिकठोर मिथ्यावाक्यसे किसीको सतानेपर पित्तप्रबल कासरोग लगता है। २ ब्राह्मण-का स्थान विनाश करनेसे वातजन्य कास आता है। ३ जलाशय ध्वंस करनेसे श्लेष्मजन्य कास उठता है। ४ ब्रह्मा, विष्णु और शिवको विभिन्न माननेसे सन्निपात-जन्य कास होता है। ५ यज्ञको छोड़ पशु मार कर खानेसे सर्वदोषजन्य कासरोगका क्लेश उठाना पड़ता है।

३६ श्वासकास—यह रोग भी कर्मविशेषसे महा, ऊर्ध्व, छिन्न, तमक और क्षुद्र भेदमें पांच प्रकारसे होता है। १ यज्ञ व्यतीत श्वासरोधपूर्वक पशुको मार मांस खानेसे महाश्वास चलता है। २ पुराणकथाके समय दूसरी बात छेड़नेसे ऊर्ध्वश्वास उठता है। ३ निषिद्ध दान लेनेसे छिन्नश्वास आता है। ४ शास्त्रार्थ में वृथा दोष लगानेसे तमकश्वास बढ़ता है। ५ पाक-कालको विघ्न डालनेसे क्षुद्रश्वासरोग होता है।

३७ यक्ष्मा—विप्रहत्या, गच्छितधनहरण, वृत्ति-च्छेद, प्रजापीड़न तथा गुरुद्रोह करनेसे जीवनान्तमें विविध दुःसह यन्त्रणा उठा कुछ कालतक कृमियोनिमें रहना और मनुष्य जन्म मिलनेपर यक्ष्मारोगका दुःख सहना पड़ता है।

३८ रक्तपित्त—अत्यन्त दुर्व्यवहार, परद्रव्य अभि-लाष, परभार्या कामना और पितृव्यवधू गमन करनेसे रक्तपित्त रोगाक्रान्त होते हैं।

३९ गुल्म—एकाकी मिष्ट वस्तु भोजन तथा नीच-जातीय स्त्री-गमन करनेसे जीवनान्तमें कृमिपूयपूर्ण काकोल नामक नरकभोग मनुष्य ४ वत्सर पिपी-लिकायोनिमें रहता और मानवयोनिमें गुल्मरोगका क्लेश सहता है।

४० शूल—निरपराध किसीको शूल मारने अथवा शूलसम कष्टदायक वाक्य कह डालने और दम्पतीमें स्नेहभेद निकालनेसे ४ मन्वन्तर यमयन्त्रणा उठानेपर पक्षियोनिमें वियोगका दुःख होता है। फिर मनुष्य जन्ममें शूलरोग लग जाता है।

४१ अर्शोरोग—साध्वी ऋतुस्नाता स्त्रीसे सहवास न रखने और आत्महत्या, भ्रूणहत्या वा गोहत्या करने पर ३५१८००००० वत्सर नरक भोग मनुष्यजन्ममें अर्शोरोग होता है।

४२ भगन्दर—आचार्यकी भार्याके साथ गमन अथवा स्त्री, बालक तथा वृद्धका धन हरण करनेसे नरकान्त-में फिर जन्म ले मनुष्य भगन्दररोगका दुःख उठाता है।

४३ छर्दि—गोके मुखसे कोयी वस्तु खींच फेंक देनेपर परजन्ममें वायुजन्य छर्दिरोग होता है। फिर पितृलोकको तर्पण न कर स्वयं जल पीनेसे पित्तजन्य छर्दिरोग लगता है।

४४ हिक्का—किसी योगीकी तपस्या बिगाड़नेसे हिक्कारोग होता है।

४५ अरोचक—पिता, माता और अतिथिको अन्न न दे स्वयं खा लेनेसे परजन्मपर हीन जातिमें उत्पन्न हो अरोचक रोगका कष्ट उठाते हैं।

४६ स्वरभङ्ग—गानकी समाप्ति न आते गायकको बाधा पहुंचानेसे जन्मान्तरमें स्वरभङ्ग रोगग्रस्त होना पड़ता है।

४७ अतितृष्णा—तृषित गोसमूहके जलपानमें बाधा डालने अथवा जल निकालनेसे असंख्यकाल मरु-भूमिपर कीटयोनि रह मनुष्यजन्म पा कर अति-तृष्णा लगती है।

४८ विस्फोट—चण्डालके जलाशयमें नहाने और जल पी जानेसे नरकान्तको विस्फोट रोग होता है।

४९ भ्रम और मूर्छा—जो कुटिल व्यक्ति सभास्थल-

पर लोगोंको भ्रान्तिमें डाल अन्य प्रकार कथा कहने लगता, वही मरणान्तको भ्रम वा मूर्छा रोगाक्रान्त हो जन्म लेना पड़ता है।

३० हृद्रोग—लोभ वा द्वेषसे किसीको सताने या मर्मान्तिक वेदना पहुंचाने पर परजन्ममें हृद्रोग उठता है।

३१ आमवात—यज्ञकी दक्षिणा अथवा उत्सर्ग किया हुआ वस्तु ब्राह्मणको न देने और अधर्माचरणसे धन कमा जोड़ रखने पर जन्मान्तरमें आमवात सताता है।

३२ सर्वाङ्गवातव्याधि—सुरा पीकर उन्माद् हो सहवासके लिये जो वध करने अथवा परस्त्रीका वध होनेसे मरणान्तको तिर्यक्‌योनि घूम मनुष्यजन्ममें सर्वाङ्गगत वातरोग लगता है।

३३ गुल्मरोग—ब्राह्मणका शठ होना होने अथवा यज्ञकाल उपस्थित दक्षिणादि न देनेसे भेद उचित होकर गुल्म अर्थात् कोष्ठ रोग उठता है।

३४ अम्लपित्त—लोभसे मिश्रित द्रव्य खानेपर जीवनान्तको काक कुक्कुर और खर योनि पाकर परजन्ममें मनुष्य देह धारण करना और अम्लपित्त रोग भुगतना पड़ता है।

३५ शोथोदर—लोभ, मोह वा द्वेषसे अधर्माचरण करनेपर मरणान्तमें जन्म ले मनुष्य शोथोदरी होता है।

३६ जलोदर—ब्रह्मा, विष्णु और महेश्वरको भिन्न समझनेसे जन्मान्तरमें जलोदर रोग लगता है।

३७ शोथ—बिना अपराध मेष प्रभृतिसे किसीको मारनेपर जन्मान्तरमें शोथरोग उठता है।

३८ मूत्रकृच्छ्र—विश्वासगमन वा अभ्यागम करनेसे मरणान्तमें जन्म ले मूत्रकृच्छ्र रोग भोग करते हैं।

३९ मूत्राघात—दम्पतीके मैथुनमें विघ्न डालनेसे जन्मान्तरको मूत्राघात रोग होता है।

४० अश्मरी—अभीष्ट वा क्रोधसे ऋतुकाला स्त्रीके पास न जानेपर जन्म ले पीछे पूयशोणितपूर्ण नरक भोग परजन्मको अश्मरी रोग दौड़ता है।

४१ मेह—कर्मानुसार विंशति प्रकार मेह होता है। १ शूकरयोनिमें मैथुन करनेसे उदक मेह चलता है। २ मातृगमनसे मधुमेहको उत्पत्ति है। ३ रजकीसे गमनसे क्षार मेह हो जाता है। ४ सतीत्वहरणसे सान्द्रमेह पड़ता है। ५ रोगिणीगमनसे माञ्जिष्ठमेह पड़ता है। ६ मित्रस्त्रीके गमनसे शुक्रमेह बहता है। ७ चतुष्पदगमनसे सिकतामेह आने लगता है। ८ सर्वहरणसे क्षीरमेह निकलता है। ९ सुरापानसे सितमेह उठता है। १० ऋतुमतीगमनसे कालमेह होता है। ११ रजस्वलागमनसे रक्तमेह बहता है। १२ नीचजातीय स्त्रीगमनसे मद्यमेह आता है। १३ विधवागमनसे इक्षुमेह उठता है। १४ ब्राह्मणीगमनसे हस्तिमेह उभरता है। १५ अजातयोनिगमनसे हारिद्रमेह भड़कता है। पितृ माता, भगिनी, कन्या, अक्षतयोनि, भ्रातृजाया, मातुलानी, गुरुपत्नी, राजपत्नी, मित्रपत्नी प्रभृति अन्यान्य कुटुम्बिनीसे गमन से जीवनान्तको अनन्त कोटिकाल नरक प्रभृति बहुविध यमयन्त्रणा उठा पांच वत्सर शूकरयोनि, दश वत्सर कुक्कुरयोनि, तीन मास पिपीलिकायोनि तथा एक वत्सर वृश्चिकयोनिमें उत्पन्न हो भोगना लेना और सर्वमेव मनुष्य बन अशीतिप्रकार मेहरोग भुगतना पड़ता है।

४२ पुंस्त्वनाश—धर्मपत्नीको छोड़ अन्य स्त्रीके साथ सम्भोग करनेसे पुंस्त्व नष्ट होता है।

४३ कुष्ठादि—कुत्तोंके साथ मिलकर सर्वदा वनमें व्याधकी भांति पशुआदि मार घूमनेसे मरणान्तको पुनर्जन्म पानेपर कुष्ठादिरोग लगता है।

४४ उन्माद—वेदज्ञ पितामाता तथा ब्राह्मण प्रभृति अभ्यागतोंको तृप्तिके न पूजने अथवा निन्दा करने, किंवा ब्राह्मण गुरु प्रभृतिके प्रति दुर्व्यवहार रखने और उनको अलिप्तकारी कोई द्रव्य देनेसे जन्मान्तरमें उन्माद आता है।

४५ अपस्मार—कोप बढ़ने, उपकारीके निकट अकृतज्ञ बनने, अधम मानवके साथ ब्राह्मणका आचरण रखने अथवा रज्जु द्वारा गोमुख बांधनेसे नरकान्तमें व्याघ्र, व्याल और शूकरयोनि भोग मनुष्य होनेपर अपस्मार रोग भुगतना पड़ता है।

४६ अक्षिशूलादि—वापी तिलपिष्ट, लोहचर्म, तिलबिल्व, मत्स्य, मांस, पायस, मधु, तैल, लवण एवं मद्य-राग पीने किंवा अन्य अधर्माचरण पूर्वक मैथुन

करने अथवा परस्त्री तथा गो प्रभृति पर रेतः डालने, ब्राह्मण वा राजाका द्रव्य चोराने और आश्रित व्यक्ति वा विवाहिता पत्नीको छोड़नेसे हस्ती, व्याघ्र, सिंह, नखी, वा दस्युके हाथ मृत्यु होता है। मरने पीछे बहुकाल क्लेशजनक योनि घूम मनुष्यजन्ममें अक्षि शूलादि रोग लग जाता है।

६७ मूत्रकृमि—बिना मन्त्र अग्निमें घृत डालनेसे नरकान्तको मनुष्य जन्म ले मूत्रकृमि रोगसे आक्रान्त होते हैं।

६८ विद्रधि—फल अपहरण करनेसे नरकान्तमें वानरजन्म मिलता है। फिर मनुष्यजन्ममें विद्रधि रोग उठता है।

६९ अपची और वातग्रन्थि—विशाल वृक्ष, पर्वत, नदीतीर, वल्मीकाग्र, गोष्ठस्थल, गोगृह वा देवालयमें, मूत्रत्याग और निष्ठीवनादि निक्षेप करनेसे बहुविध नरक यन्त्रणा उठा परजन्मको अपची तथा ग्रन्थिरोग भोगते हैं।

७० शिरोरोग—तीर्थस्थानमें विहित कार्यादि और गुरु ब्राह्मण प्रभृतिको देख प्रणाम न करनेसे नरकान्तपर दश वत्सर मत्स्ययोनि तथा तीन वर्ष मेषयोनि भोग मनुष्य जन्म मिलते शिरोरोगाक्रान्त होना पड़ता है।

७१ नेत्रहीनता—परस्त्रीके प्रति कुटिल दृष्टि डालने अथवा गुरु वा ब्राह्मणके चक्षुमें आघात मारनेसे प्राणान्तको विविध नरकयन्त्रणा उठा जन्मान्तरमें नेत्रहीन रहते हैं।

७२ रात्र्यन्धता—कामबुद्धिसे परस्त्रीके प्रति दृष्टि डालने, नग्न स्त्रीको देखने किंवा गोहिंसा तथा विप्र हिंसा दर्शन करनेसे रात्र्यन्ध, दृष्टिक्षीणता, दिवान्धता और अर्बुददृष्टिरोग लगता है।

७३ दृष्टिक्षीणता—उदय, अस्त और मध्य समय सूर्यके प्रति दृष्टि चलाने अथवा अशुचि अवस्थामें सूर्य, चन्द्र, नक्षत्र, ब्राह्मण, अग्नि एवं गोको और देखनेसे परजन्मका दृष्टिक्षीणतारोग होता है।

७४ विषमाक्षिता और विरूपाक्षिता—पुत्रीके प्रति जार दृष्टि लगानेसे मनुष्य परजन्ममें विरूपाक्षी होता है। पुरुष परस्त्री और स्त्री परपुरुषको कुटिल भावसे देखनेपर परजन्ममें विषमाक्षिरोग लगता है।

७५ गलगण्ड और गण्डमाला—गुरुपत्नीका कण्ठ देखनेसे नरकान्तमें गलगण्ड वा गण्डमाला रोग उठता है।

७६ नासारोग—कामाविष्ट चित्तसे ब्राह्मणकर्म परित्यागपूर्वक सुगन्धि कुसुमादि ब्राह्मण देवता प्रभृतिको न दे स्वयं आघ्राण करनेपर परजन्ममें नासारोग होता है।

७७ दुग्धहीनता—अपर बालकके लिये दुग्ध लाते भी जो स्त्री उसको नहीं देती, वह प्राणान्तमें ४ वत्सर सर्पिणी और ४ वर्ष कच्छपी रह पीछे मनुष्यजन्म लेनेपर दुग्धहीन निकलती है।

७८ स्तनविस्फोट—अन्य पुरुषको जो स्त्री स्वीय स्तन देखाती, वह नरकान्तको पुनर्जन्म ले स्तनविस्फोट रोगसे दुःख पाती है।

७९ वेश्यात्व—स्वामीके मरनेपर जो स्त्री परपुरुषसे दृष्टि लगाती, प्राणान्तको वह तप्त लौहमय पुरुष आलिङ्गन प्रभृति यमयन्त्रणा उठा परजन्ममें वेश्या बन जाती है।

८० बाधिर्य—धर्मचिन्तासे मुख फेर पितामाता, ब्राह्मण और तीर्थ प्रभृतिकी निन्दा उड़ानेसे परजन्ममें बाधिर्य रोग लगता अर्थात् कुछ सुन नहीं पड़ता।

८१ श्लेष्मरोग—नित्य क्रियासे बहिर्भूत हो भोजन करने पर प्राणान्तको काष्ठोपजीवी और वायस जन्म ले परजन्ममें श्लेष्मरोगाक्रान्त होते हैं।

८२ हस्तशूल—सन्ध्यादिविहीन ब्राह्मण जीवनान्तको एक वत्सरकाल कङ्क और पारावतयोनि भोग मनुष्यजन्म होने पर हस्तशूल रोगकी वेदना उठाता है।

८३ योनिरोग—जो स्त्री रमणकाल पतिको सन्तोष नहीं पहुंचाती अथवा अन्यका भोज्य वस्तु चोराती, वह १४ वत्सर उष्ट्रयोनि भोग मनुष्य जन्ममें योनिरोगका दुःख पाती है।

८४ प्रदर—क्षुधार्त पतिको न खिला जो स्त्री आगे खाती, किंवा वृथा पशुहत्या लगाती अथवा भोज्य वस्तु चोराती, प्राणान्तको वह मद्यपानोक्त नरक भोग दश

अक्सर वायस्कोटिकि और शुक्रकीटाणुसे इस मनुष्यजन्ममें ही प्रदर रोगको अवस्था उठाती है। (मानवीय कर्मविपाक)

कर्मविशेष (सं० पु०) कर्मणो विशेषः पार्थक्यात् पार्थक्यम्, ६ तत्। साधारण कार्यसे विभिन्न कार्य, मामूली कामसे निराला काम।

कर्मबीज (सं० क्लो०) कर्मणो बीजं मूलकारणम्, ६ तत्। कर्मका मूल कारण कामका पहलो सबब।

कर्मव्यतिहार (सं० पु०) कर्मणां व्यतिहारः ६ तत्। परस्पर एक जातीय कार्य करनेको स्थिति, जिस हालतमें एक ही तरहका काम साथ-साथ करें।

कर्मशाला (सं० स्त्री०) कर्मणः शिल्पादेः शाला, ६-तत्। शिल्पादि कार्यका घर, कारखाना।

कर्मशील (सं० त्रि०) कर्मशीलं कर्मकरणस्वभावो यस्य, बहुव्री० कर्मशीलयति वा। १ कर्म करनेके ही स्वभाववाला जो नतीजेकी ओर न देख सिर्फ काम करता हो। २ उद्योगी कोशिश करनेवाला।

कर्मशुचि (सं० त्रि०) कर्मसु शुचिः ७ तत्। पवित्र कर्मा, साफ काम करनेवाला।

कर्मशुद्ध (सं० स्त्री०) कर्मसु शुद्ध, ७-तत्। पवित्र कर्मा, साफ काम करनेवाला।

कर्मशूर (सं० त्रि०) कर्मणि शूरः, दक्षः। १ कार्य कारक, मेहनती हुस्तेदीसे साथ काम करनेवाला। २ कार्यदक्ष होशियार, कारीगर।

कर्मशौच (सं० स्त्री०) कर्मसु शौचं दोषहीनता। कर्म विषयमें निर्दोषता, कामकी सफाई।

कर्मश्रेष्ठ (सं० पु०) १ पुलहके पुत्रविशेष। इनकी माताका नाम गति था। (भागवत ४।१।३९)

कर्मस (सं० स्त्री०) कर्म शुभकर्म स्यति नाशयति, कर्म सो क निपातनात् पत्वम्। अशुभ पाप, गुनाह।

कर्मस (सं० पु०) पुलहके एक पुत्र। इनकी माताका नाम क्षमा था।

कर्मसङ्ग (सं० पु०) कर्मणि सङ्ग आसक्तिः, कर्मन् सञ्ज-घञ्। कर्ममें आसक्ति, काममें जी लगानेकी आदत।

कर्मसंग्रह (सं० पु०) कर्मणः संग्रहः, ६-तत्। कर्म समुदाय, कामका हुजूम।

कर्मसचिव (सं०पु०) कर्मसु सचिवः सहायः। कार्यमें साहाय्य देनेवाला, जो काममें मदद पहुंचाता हो।

कर्मसंन्यास (सं० पु०) कर्मणः फलस्य वा संन्यासस्त्यागः, ६ तत्। १ कर्मत्याग काम छोड़ बैठनेकी आदत। २ कर्मफलत्याग, कामका नतीजा न देखनेकी आदत।

कर्मसंन्यासिक (सं० पु०) कर्मणां संन्यासोऽस्त्यस्य, कर्मन् संन्यास ठन्। तत्त्वज्ञानयुक्त भिक्षुक, दुनयावी काम न करनेवाला फकीर।

कर्मसंन्यासी (सं० पु०) कर्मसंन्यासोऽस्त्यस्य, कर्मन् संन्यास इनि। १ यथा-विधान कर्मत्यागी भिक्षुक, कायदेसे दुनयावी काम छोड़नेवाला फकीर। २ कर्म-फलत्यागी, कामका नतीजा न देखनेवाला।

कर्मसमाप्ति (सं० स्त्री०) कर्मणः समाप्तिः परि समाप्तिः। १ कर्मका शेष, कामका आखीर। २ मुक्ति, छुटकारा।

कर्मसम्भव (सं० त्रि०) कर्मणः सम्भव उत्पत्तिर्यस्य, बहुव्रो०। १ कर्मजात, कामसे निकला हुवा। (पु०) २ कर्मकी उत्पत्ति, कामका निकास।

कर्मसाक्षी (सं० पु०) कर्मणां साक्षी प्रत्यक्षकारी, ६ तत्। १ कर्मको प्रत्यक्ष करनेवाला सूर्य, आफताब। २ चन्द्र, चांद। ३ यम। ४ काल। ५ पृथिवी, जमीन। ६ जल पानी। ७ वह्नि, आग। ८ वायु, हवा। ९ आकाश, आसमान।

"सूर्यः सोमो यमः कालो महाभूतानि पञ्च च।
एते शुभाशुभस्येह कर्मणो नव साक्षिणः॥" (हित मित्रलाभ)

सूर्य, सोम, यम, काल और पञ्च महाभूत शुभाशुभ कर्मके साक्षी हैं।

कर्मसाधक (सं० त्रि०) कर्म साधयति निष्पादयति, कर्म साध-णिच् ण्वुल्। कार्यनिष्पादक, काम बनानेवाला।

कर्मसाधन (सं० क्लो०) कर्मणः साधनं सम्पादनम्, ६ तत्। १ कार्यको सिद्धि, कामकी तकमील। २ यज्ञादिके लिये आवश्यक द्रव्य, जिसे मजहबी कामकी जरूरी चीज।

कर्मसिद्धि (सं० स्त्री०) कर्मणः सिद्धिः, ६ तत्। कर्मके इष्ट या अभिष्ट फलकी प्राप्ति कामयाबी।

कर्मसूत्र (सं० क्लो०) कर्म एव सूत्रम्। कर्मरूप सूत्र, कामका सिलसिला।

कर्मस्थ (सं० त्रि०) कर्मणि तिष्ठति, कर्मन्-स्था क। कर्ममें नियुक्त, काममें रहनेवाला।

कर्मस्वक्रियक (सं० त्रि०) विषयमें अपने कर्मको रखनेवाला (धातु), जो (मसदर) अपना काम मुद्देमें रखता हो।

कर्मस्वभावक (सं० त्रि०) अपना भाव कर्ममें रखनेवाला (धातु), जिस (मसदर) को हालत मुद्देमें रहे।

कर्मस्थान (सं० क्लो०) कर्मणः स्थानम्, ६-तत्। १ कर्मक्षेत्र, कारखाना, कामकी जगह। २ ज्योतिषशास्त्रोक्त लग्न अवधि दशमस्थान।

कर्महीन (सं० त्रि०) १ शुभकर्म न करनेवाला, जो अच्छा काम करता न हो। २ मन्दभाग्य, कमबख्त, अभागा।

कर्महेतु (सं० त्रि०) कर्मसे उत्पन्न, कामसे निकलनेवाला।

कर्मा—१ भक्तिमती पतिपुत्रहीना कोई ब्राह्मणकन्या। करमाबाई देखो।

२ युक्तप्रदेशके इलाहाबाद जिलेकी करछाना तहसीलका एक नगर। यह प्रयागसे ६ कोस दक्षिण अवस्थित है। यहां मङ्गल तथा शुक्रवारको बाजार लगता, जिसमें पशुादि, शस्य, तुला और धातुका पात्र प्रभृति बिकता है।

कर्माक्षम (सं० त्रि०) कर्मसु अक्षमः असमर्थः, ७-तत्। कार्य करनेमें असमर्थ, निकम्मा, काम न कर सकनेवाला।

कर्माङ्ग (सं० क्लो०) कर्मणो अङ्गम्, ६-तत्। विहित यज्ञादि कर्मका अङ्ग, कामका हिस्सा।

कर्माजीव (सं० पु०) कर्मणा आजीवः जीवनम्, ३-तत्। शिल्पादि कार्यसे जीवनयापन, कामके सहारे जिन्दगीका बसर।

कर्मात्मा (सं० पु०) कर्मणा आत्मा आत्मभावो यस्य, बहुव्री०। १ प्राणी, जानवर।

"तस्मिन् स्वपति तु सुस्थे कर्मात्मानः शरीरिणः।" (मनु)

(त्रि०) कर्मणि आत्मा मनो यस्य। २ कर्मासक्तचित्त, काममें दिलको लगानेवाला।

कर्मादान (सं० पु०) जैनशास्त्रानुसार व्यापारविशेष। यह १५ प्रकारका होता है—१ इङ्गालाकर्म, २ वनकर्म, ३ साकटकर्म, ४ भाडीकर्म, ५ स्फोटिककर्म, ६ दन्तकुवाणिज्य, ७ लाक्षाकुवाणिज्य, ८ रसकुवाणिज्य, ९ केशकुवाणिज्य, १० विषकुवाणिज्य, ११ यन्त्रपीडन, १२ निर्लाञ्छन, १३ दावाग्निदानकर्म १४ शोषणकर्म और १५ असती पालन। श्रावकको कर्मादान करना न चाहिये।

कर्मादि (सं० पु०) कर्मणः आदिः, ६ तत्। कार्यका आरम्भकाल, कामका आगाज।

कर्माधिकार (सं० पु०) कर्मका स्वत्व, कामका हक्।

कर्माधिकारी (सं० पु०) कर्मणि अधिकारोऽस्त्यस्य, कर्मन्-अधिकार-इनि। कर्मका अधिकार रखनेवाला, जिसे कामका इख्तियार रहे।

कर्माध्यक्ष (सं० पु०) कर्मसु अध्यक्षः, ७-तत्। कार्यका अध्यक्ष, जो काम करनेवालेका काम जांचता हो।

कर्मानुबन्ध (सं० पु०) कर्मणः अनुबन्धः संयोगः लेशो वा, ६-तत्। कर्मका संयोग, कामका लगाव।

कर्मानुबन्धी (सं० त्रि०) कर्मका संयोग रखनेवाला, काममें लगा हुवा।

कर्मानुरूप (सं० त्रि०) कर्मणः अनुरूपः, ६-तत्। १ कर्मसदृश, कामसे मिलताजुलता। २ कर्मोपयोगी, कामके लिये अच्छा।

कर्मानुरूपतः (सं० अव्य०) कर्मके अनुसार, कामके मुताबिक।

कर्मानुष्ठान (सं० क्लो०) कर्मणः अनुष्ठानम् ६-तत्। कर्मका अनुष्ठान, कामका इनसिराम।

कर्मानुसार (सं० पु०) कर्म अनुसरति, कर्मन्-अनु-सृ-घञ्। कर्मका फल, कामका मिलाव।

कर्मानुसारतः (सं० अव्य०) कर्मके फलसे, कामके मिलावमें।

कर्मान्त (सं० पु०) कर्मणः जीवकृत सुकृत-दुष्कृतक्रियायाः यद्वा कर्मणः कृषिकार्यस्य तत् फलस्य धान्यादिसंग्रहरूपक्रियायाः अन्तो यत्र, बहुव्री०। १ कर्मस्थान, कामकी जगह। २ कर्मका अन्त,

कामका अञ्जाम। २ कार्यप्रबन्ध, कामका इन्तिज़ाम। ३ कृष्टभूमि, जोता हुआ खेत।

"अहन्यहन्यवेक्षेत कर्मान्तान् वाहनानि।" (मनु ८।४१९)

कर्मान्तर (सं० क्ली०) कर्मणः अन्तरं तस्मादन्य अन्यार्थः, ६ तत्। १ कार्यान्तर, दूसरा काम। २ यज्ञादि कर्म कार्यके मध्यका अवकाश, कामके बीचकी छुट्टी। ३ प्रायश्चित्त, कफ्फारा।

कर्मान्तिक (सं० पु०) कर्म अन्तिके समीपे यस्य, बहुव्री०। १ कर्मकारक, कामकाजी। (त्रि०) २ अन्तिम कारिन्दा।

कर्मार (सं० पु०) कर्म लौहनिर्माणादि कार्यं अच्छति प्राप्नोति, कर्मन् ऋ अण्। १ कर्मकार, लोहार।

"कर्मारस्य निषादस्य रङ्गावतारकस्य च।" (मनु ४।२१५)

२ बंश, बांस। ३ कर्मरङ्ग कमरख।

कर्मार—काठियावाड़के झालावाड़ विभागका एक क्षुद्र राज्य। इसकी भूमिका परिमाण ३ मील मात्र है। यहां एक सामन्त रहते हैं। वर्षमें ७११) रु० राज्यका आय है। इसमें २११) रु० अंगरेज सरकार और कोई १०) रु० जूनागढ़के नवाबको राजस्व देना पड़ता है।

कर्मारक (सं० पु०) कर्मार स्वार्थे कन्। १ कर्मार, लोहार। २ कर्मरङ्ग वृक्ष, कमरख। (त्रि०) ३ कर्मप्राप्त, काम पाये हुआ।

कर्मारम्भ (सं० पु०) कर्मका आरम्भ, कामका आग़ाज़।

कर्मार्ह (सं० पु०) कर्म अर्हति, कर्मन् अर्ह अच्। १ मनुष्य, आदमी। (त्रि०) २ कर्मके योग्य, काम कर सकनेवाला।

कर्माला—१ बम्बईप्रान्तके शोलापुर जिलेका एक उपविभाग। यह अक्षा० १७° ५०' तथा १८° ३२' उ० और देशा० ७४° ४१' एवं ७५° ११' पूर्वके मध्य अवस्थित है। भूमिका परिमाण ७७४ वर्ग मील आता है।

इस उपविभागमें कोई ११२ ग्राम और ८१०० घर होंगे। पश्चिमको भीमा और पूर्वको सीना नदी प्रवाहित है। कर्मालाका अर्ध भाग उर्वर एवं उपजाऊ और अपरार्ध रखड़ तथा रेतीला है।

यहां एक दीवानी और दो फौजदारी अदालतें हैं। पुलिसके तीन थाने लगते हैं। नानाप्रकार शस्य, माष, शण सर्षप और अपरापर द्रव्य उत्पन्न होता है। सोमारीमें प्रति वर्ष मेला लगता है।

२ कर्माला उपविभागका प्रधान नगर। यह अक्षा० १८° २४' उ० और देशा० ७५° १४' ३०" पू० पर अवस्थित है। शोलापुरसे कर्माला ६८ मील उत्तर पश्चिम पड़ता है। नगरका क्षेत्रफल १५८ एकर है।

पहले कर्मालामें निम्बालकर मराठोंका आधिपत्य था। उन्होंने एक सुन्दर दुर्ग बनाया। आजकल उसमें अंगरेज कर्मचारियोंका कार्यालय खुला है। दुर्ग प्रायः चौथाई कोसमें विस्तृत है। उसमें १०० घर बने हैं। किसी समय यहां बड़ा वाणिज्य व्यवसाय था। पूना अहमदनगर शोलापुर, बारसी प्रभृति स्थानसे अनेक द्रव्यसामग्रियां आती-जाती थीं। किन्तु आजकल वह बात नहीं रही। फिर भी पशु, अन्न तैल, वस्त्रादिका बड़ा बाज़ार लगता है। कपड़ा बुननेके कई करघे चलते हैं। कार्तिक मेला ३ दिन रहता है। यहां विद्यालय, औषधालय, डाकघर और पाठागार विद्यमान है।

कर्मोविधायक (सं० त्रि०) कर्मणः अविधायकः, ६ तत्। कार्यको विधान करनेवाला, जो काम बताता हो।

कर्मामय (सं० पु०) कर्माणामामयः, ६ तत्। कर्मके धर्माधर्मका गुण, कामको भलाई बुराईका असर।

कर्मिक (सं० त्रि०) कर्म अस्त्यस्य, कर्म-ठन्। कर्मविशिष्ट, कामकाजी।

कर्मिष्ठ (सं० त्रि०) अतिशयेन कर्मी कर्मिन्-इष्ठन्। इले लुक्। अतिशय कार्यकारक, काममें लगा रहनेवाला।

कर्मिष्ठता (सं० स्त्री०) कर्मिष्ठस्य भावः, कर्मिष्ठ तल्-टाप्। अतिशय कार्यकारिता, काममें लगी रहनेकी हालत।

कर्मी (सं० पु०) कर्म अस्त्यस्य, कर्मन् इनि। १ कर्मविशिष्ट, कामकाजी। २ फलकी आकाङ्क्षासे यज्ञादि कार्य करनेवाला।

कर्मीर (सं० त्रि०) कर्म-ईरन्। चित्रित, चितकबरा।

कर्मीरक (सं० पु०) शाखोट वृक्ष, सहोरेका पेड़।

कर्मेन्द्रिय (सं० क्ली०) कर्मणां सम्पादनाय कर्मार्थं वा इन्द्रियम्, मध्यपदलो०। वाक्यादि कर्म सम्पादक पञ्चेन्द्रिय, काम करनेवाला रुक्त। वाक्, हस्त, पद, गुह्य और उपस्थ पांच कर्मेन्द्रिय होते हैं। यथाक्रम इनका कार्य उच्चारण, आदानादि, गमनादि, उत्सर्ग और आनन्द है। फिर अधिष्ठातृदेवता वह्नि, इन्द्र, उपेन्द्र, मित्र और ब्रह्मा हैं। इन्द्रिय देखो।

कर्मोदार (सं० पु०) उदार कर्म, इज्जतका काम।

कर्मोद्युक्त (सं०त्रि०) कर्मणि उद्युक्तः, ७-तत्। कर्मका उद्योग लगानेवाला, जो खूब काम करता हो।

कर्मोद्योग (सं० पु०) कर्मका उद्योग, कामकी कोशिश।

कर्रा (हिं० पु०) १ तन्तुवायके सूत्रप्रसारणका कार्य, जुलाहोंके सूतको फैला ताननेका काम। (वि०) २ कठोर, कड़ा। ३ कठिन, सख्त।

कर्राना (हिं० क्रि०) कठोर पड़ना, सख्त बनना।

कर्री (हिं० स्त्री०) १ वृक्षविशेष, एक पौदा। यह देहरादून तथा अवधके वन और दक्षिणात्यमें होता है। इसका पत्र अति दीर्घ रहता और मार्च मास झड़ता है। फल जून मास पका करता है। कर्रीके पत्ते पशुको खिलाये जाते हैं।

कर्ष (सं० पु०) किरति विक्षिपति चित्तं विषयेषु, कॄ-व। कॄगॄशॄदॄभ्यो वः। उण् १।१५५। १ काम, ख्वाहिश, प्यार। २ इन्दुर, चूहा।

कर्वट (सं० पु०-क्ली०) कर्व-अटन्। दो शत ग्रामके मध्यका सुन्दर स्थान, दो सौ गावके बीचकी अच्छी जगह। २ शतग्रामवासियोंके क्रयविक्रयका स्थान, जिस शहरमें सौ गांवके लोग आकर लेनदेन करें। ३ चारो ओर समग्राम, चौकोर गांव। ४ चतुर्दिक् समान गृहस्थान विशेष, चौकोर बराबर घरकी जगह। ५ नगर मात्र, कोई शहर।

कर्वट—बङ्गालके दक्षिणका एक प्राचीन जनपद। मार्कण्डेयपुराणमें इसका नाम कर्वटाशन लिखा है।

"ताम्रलिप्तञ्च राजानं कर्वटाधिपतिं तथा।
सुह्मानामधिपश्चैव ये च सागरवासिनः॥" (भारत २।३०।२२)

कर्वटक (सं० पु० क्ली०) कर्वट स्वार्थे कन्। १ कर्वट, मण्डी, शहर। २ पर्वतका उत्सङ्ग, पहाड़का उतार।

कर्वटी (सं० स्त्री०) कर्वट-ङीष्। नटीविशेष, एक टरया। (संगीत)

कर्वर (सं० क्ली०) कृ वरच् वा कृ विक्षेपे ष्वरच्। कॄगॄशॄदॄभ्यो ष्वरच्। उण् ३।१३२। १ व्याघ्र, बाघ। २ राक्षस। ३ पाप। ४ कर्म, काम। ५ औषधविशेष, एक दवा।

कर्वरी (सं० स्त्री०) कर्वर-ङीष्। १ उमा, पार्वती। २ व्याघ्री, बाघन। ३ छिन्नपर्वी, एक घास। ४ राक्षसी।

कर्वायत नगर—मन्द्राजके उत्तर अर्कट (अर्काट) जिलेकी एक बड़ी ज़मीन्दारी। यह अक्षा० १३° ४′ तथा १३° ३६′ ३०″ उ० और द्राघि० ७८° १७′ एवं ७८° ५३′ पू०के मध्य अवस्थित है। भूमिका परिमाण ६८० वर्गमील लगता है। लोकसंख्या प्रायः तीन लाख है। इसके उत्तर चन्द्रगिरि, पूर्व कालहस्ती तथा चेङ्गलपट, दक्षिण वालाजापेट और पश्चिम चित्तूर पड़ता है। कर्वायत नगरमें पार्वत्य भूमि अधिक है। मन्द्राजरेलवे यहां चलती है। नगरी पर्वतसे काठ काटकर मन्द्राज भेजते हैं। सौमें साठ भाग भूमि कृषिके योग्य नहीं। शेषके अर्धांशमें धान चलता है। नील बहुत होता है। कृषक परिश्रमी और बुद्धिमान् हैं। पुत्तूर और तिरुत्तनीमें सब-मजिष्ट्रेट रहते हैं। पटनिर्माण प्रधान शिल्पकर्म है। इस स्थानको किसी किसीने बम्मराज कहा है। प्रथम कर्णाटिक-युद्धके समय बम्मराज नामक एक पलिगार राजत्व करते थे। कर्वायत नगरका पेशकश वा स्थायी कर प्रायः २००७३५) रु० है।

इस भूभागके प्रधान नगरको भी कर्वायत नगर ही कहते हैं। यह पुत्तूरसे ७ मील पश्चिम अवस्थित है। कर्वायतनगर पहले ८ फीट उच्च प्राचीरसे सुरक्षित था। दक्षिण और पश्चिम एक-एक तोरणद्वार रहा। आजकल वह बात नहीं, केवल भग्नावशेष पड़ा है।

कर्वुदार (सं०पु०) कर्ष दारयति, कर्व-उण्-दॄ-अण्। कोविदार वृक्ष, कचनारका पेड़।

कर्वुर (सं० पु०) कर्वति हिनस्ति, कर्द-उरच।

१ श्वेतवर्ण, सफेद रंग। २ राक्षस, आदमखोर। ३ चित्रवर्ण चितकबरा रंग। ४ शटी, कचूर।

कर्बूर (सं० पु०) कर्ब ऊरच्। १ राक्षस, आदमखोर। २ शठी, कचूर।

कर्वट—भारतके दक्षिणपश्चिमका एक जैनशास्त्रोक्त जनपद। (हेमचन्द्र ११००)

कर्शन (सं० स्त्री) कृश ल्युट्। कामरूप दुर्गा बलानीका नाम।

कर्षक (वै० पु) राक्षस, पिशाच, प्रेत, बेताल।

कर्षित (सं० त्रि०) कृष णिच् क्त। आकर्षित, खींच लाया हुआ।

कर्ष्य (सं० पु०) कृष-यत्। कर्चूर, कचूर।

कर्ष (सं० पु० स्त्री०) कृष भावे कर्मणि वा घञ्। १ षोडश माषा परिमाण, १६० रत्तीका एक तोला। २ तोलकद्वयात्मक परिमाणविशेष, दो तोलेका एक तोल। ३ दशमाषाका एक तोल। ४ अन्य दशमाषक तोलादिमान ८० रत्तीका एक तोल। ५ विभीतकवृक्ष, बहेड़ेका पेड़। ६ सुवर्ण, सोना। ७ आकर्षण, खिंचाव। ८ कर्षण, जोताई। ९ कर्षरेखा, खाड़ा, खींच। १० विलेखन, खरोंट।

कर्षक (स० त्रि०) कर्षति भूमिम् कृष-ण्वुल्। १ कृषिजीवी, किसान। इसका संस्कृत पर्याय क्षेत्राजीव कृषिक कृषीवल और कार्षक है। २ आकर्षणकारी, खींचनेवाला। ३ सुन्दर, खूबसूरत। (पु०) ४ मय स्वान्तमपि मिक्षुनातीव।

कर्षण (स० क्ली) कृष भावे ल्युट्। १ कृषिकार्य, जोताई। लाङ्गल प्रभृति द्वारा भूमिकर्षणको ठेठ हिन्दीमें खेती कहते हैं। २ आकर्षण खिंचाव, खरोंट। ३ शोषण, सुखाव। ४ पीड़न, दबाव।

"कर्षण कन्दु भवतः शीतस्ते कर्षिता यथा।
तथा राज्ञो प्रकृतः शीतस्ते राष्ट्रकर्षणात्॥" (मनु० १२०)

शरीरकर्षणसे प्राणियोंके प्राणकी भांति राष्ट्र कर्षणसे राजाके प्राण क्षीण होते हैं। ५ मसलन, बढ़ाव फैलाव।

कर्षणि (सं० स्त्री०) कृष अनि। १ असती, छिनाल। २ असनीवृक्ष, असनेका पेड़।

कर्षफली (सं०स्त्री०) कर्षस्य गौरादित्वात् ङीष्। १ क्षीरिणी वृक्ष, खिरनीका पौधा। २ अलतक्ता, सफेद वच।

कर्षणीय (स० त्रि०) कर्षण छ। १ कर्षणके योग्य, खींचने लायक। २ कर्षण किया जानेवाला, जिसे खींचना पड़े।

कर्षणीया (सं० स्त्री०) कामरूपका मीत्र।

कर्षफल (सं०पु) कर्ष कर्षमात्र फलं यस्य, बहुव्री०। १ विभीतक वृक्ष, बहेड़ेका पेड़। इसका संस्कृत पर्याय—विभीतक, अक्ष, कलिद्रुम भूतवास और कलियुगालय है। नील देखो।

२ महातक वृक्ष, भिलावेंका पेड़।

कर्षफला (सं० स्त्री०) कर्षफल टाप्। आमलक वृक्ष, आंवलेका पेड़। आमली देखो।

कर्षवत् (स० त्रि०) १ आकर्षण करते हुआ, जो खींच रहा हो। २ भीख सीखनेवाला, जो परीक्षा बना रहा हो। ३ पीड़न करनेवाला, जो सता रहा हो।

कर्षापण (सं० पु०) कर्षेण आपण्यते क्रीयते, कर्ष आ-पण घञ्। कर्षपरिमित मूल्यसे क्रय किया जानेवाला द्रव्य।

कर्षार्ध (सं० स्त्री०) कर्षस्य अर्धम् ६ तत्। तोलक परिमाण, तोला।

कर्षिका (सं० स्त्री०) कामबीज।

कर्षिणी (स० स्त्री०) कृष-णिनि ङीप्। १ क्षीरिणी वृक्ष खिरनीका पेड़। २ वल्गा, लगामका दहाना। इसका संस्कृत पर्याय—खलीन, कलीय और कविका है। ३ मनोवाञ्छित दिवको परीक्षा करनेवाली।

"अश्वकल्पाश्चमकर्षी ... विवश।" (रा० १०११)

कर्षित (स० त्रि०) कृष णिच्-क्त। १ आकर्षित, खींचा हुआ। २ जोता हुआ। ३ पीड़ित, सताया हुआ।

कर्षी (सं० त्रि०) कृष णिनि। १ आकर्षण खींचने वाला। २ जोतनेवाला। ३ मनोहर, दिलकश।

कर्षु (स० पु०) १ करीषाग्नि, कण्डेकी आग। २ कोविका, एक नदी।

कर्षू (सं० पु०) कृष-ऊ। ...

वद् शब्द। १ कृषि, खेती। २ जीविका, रोज़गार। ३ करीषाग्नि, सूखे गोबरकी आग। (स्त्री०) ४ कृत्रिम क्षुद्र जलाशय, छोटा बनाया हुवा तालाव। ५ नदीमात्र, दरया। ६ इष्टिखात, पक्का गड्ढा। इसमें यज्ञीय अग्नि स्थापन करते हैं। ७ नश्वर।

कर्पूखेद (सं० पु०) स्वेदविशेष, किसी किस्मका पसेव। स्थानको देख एक गड्ढा खोद लेते और उसे दीप्त अधूम अङ्गारसे पूर देते हैं। फिर उस पर पलंग बिछाकर सोनेसे पसीना आता और शरीर हलका पड़ जाता है। (सुश्रुत)

कर्हि (सं० अव्य०) किम्-र्हिल् कादेशः। अनद्यतने र्हिलन्यतरस्याम्। पा ५।३।२१। किस समय, कब।

कर्हिचित् (सं० अव्य०) कर्हि च चित्, द्वन्द्व। किसी समय, कभी न कभी।

कल (सं० पु०-क्ली०) कड़ति माद्यति अनेन, कड़-घञ् डलयोरैकत्वम्। हलश्च। पा ३।३।१२१। १ शुक्र, वीर्य। २ शालवृक्ष, सालका पेड़। ३ बदरीगुल्म, बेरका झाड़। ४ मधुरास्फुट ध्वनि, मीठी और समझ न पड़नेवाली आवाज़। ५ चार मात्राका अवकाश। (त्रि०) ६ अजीर्ण, कच्चा। ७ अव्यक्त, समझ न पड़नेवाला। ८ मधुर वा निम्नस्वरयुक्त, मीठी या नीची आवाज़वाला। ९ दुर्बल, कमज़ोर।

कल (हिं० स्त्री०) १ कल्यता, सेहत, आराम। २ सुख, चैन। ३ सन्तोष, तसल्ली। ४ आगामी दिवस, आनेवाला दिन। ५ गत दिवस, गया हुवा दिन। ६ भविष्यत् काल, आयिन्दा वक्त। ७ पार्श्व, पहलू, ओर। ८ अङ्ग, पुरज़ा। ९ कला, ढङ्ग। १० यन्त्र, औज़ार। ११ बन्दूकका घोड़ा। (वि०) १२ काला, स्याह। यह शब्द विशेष्यके पहले यौगिक रूपसे आता है। यथा—कलमुंहा।

कलइया (हिं०स्त्री०) १ कलाबाज़ी, कलैया। २ करतौ, काट कूट, तोड़मरोड़।

कलई (अ० स्त्री०) १ रङ्ग, रांगा। २ रङ्गलेपन, रांगेकी पोत। यह बरतनपर कसाव न लगनेको चढ़ायी जाती है। ३ वर्णक, रंग, वारनिश। ४ आवरण, चमक, दिखाव। ५ चूर्णखण्ड, चूना।

कलईगर (फ़ा० पु०) रङ्गलेपन चढ़ानेवाला, जो कलई करता हो।

कलईदार (फ़ा० वि०) रङ्गलेपनविशिष्ट, कलई किया हुवा।

कलक (सं० पु०) कलति, कल्-अच् स्वार्थे कन्। १ शकुलमत्स्य, एक मछली। २ वेतसवृक्ष, वेंतका पेड़, किलक।

कलक (अ० पु०) १ दुःख, रञ्ज, सोच। २ व्याकुलता, घबराहट।

कलक (हिं० पु०) कल्क, चूरन। कल्क देखो।

कलकण्ठ (सं० पु०) कलमधुरः कण्ठो यस्य। १ कोकिल, कोयल। २ हंस। ३ पारावत, कबूतर। ४ शुकपक्षी, तोता। ५ कलध्वनि, मीठी आवाज़। (त्रि०) ६ कलध्वनिकारी, मीठी आवाज़ निकालनेवाला।

कलकत्ता—भारतका सर्वप्रधान नगर। यह अक्षा० २२° २४´ उ० और देशा० ८८° २४´ पू०में भागीरथी नदीके पूर्व तट पर अवस्थित है। इसकी भूमिका परिमाण २०२६७ एकर और लोकसंख्या प्रायः १० लाख है। पहले यह भारतकी राजधानी रहा। किन्तु १९१२ ई०के दिसम्बर मास राजधानी दिल्ली चली गयी।

इतिहास—१५९६ ई०को सम्राट् अकबरके प्रधान सचिव अबुलफज़लके बनाये आईन-इ-अकबरी ग्रन्थमें कलकत्तेका प्रथम ऐतिहासिक उल्लेख मिलता है। इससे पूर्व अन्य किसी ऐतिहासिक अथवा सामायिक ग्रन्थमें कलकत्तेका नाम नहीं आया। अकबरके राजस्व-सचिव टोडरमलको बनायी तालिका बङ्गदेशको कई भागों या सरकारोंमें बांटती है। कलकत्ता सातगांव सरकारमें रहा, कलकत्ते, बारबाकपुर और बकुया तीनों महालोंसे २३४०५) रु० राजस्वस्वरूप बादशाही कोषमें जमा होता था।

आईन इ-अकबरी बननेके पीछे और बङ्गदेशसे युरोपीयोंका संस्रव लगनेसे पहले किसी मुसलमान-इतिहास-लेखकके विरचित पुस्तकमें कलकत्ता शब्द देख नहीं पड़ता। किन्तु बङ्गकवि कविकङ्कण मुकुन्द-

राम चक्रवर्तीके चण्डीमङ्गलमें कलकत्तेका उल्लेख है। सम्भवत: १४६६ शाकको सम्राट् अकबरके सिंहासना-रूढ़ होनेसे बारह वर्ष पहले यह ग्रन्थ बना था। वणिक धनपति और उनके पुत्र श्रीमन्त सौदागरके समुद्रयात्राको कलकत्ते पहुंचनेकी कथा है। अतएव अकबरसे भी अधिक पूर्व कलकत्ता वर्तमान था। किन्तु नाममें कुछ गड़बड़ पड़ता है। आईन इ अकबरीमें कलकत्ता महालके ग्रामोंका नाम नहीं। फिर उसी समयके संस्कृत ग्रन्थकारोंने कलकत्तेको किलकिला लिखा है। मगधाधिप वैद्यराजकी सभाके पण्डित कविरामने 'दिग्विजयप्रकाश' नामक पुस्तकमें किल-किलाका विवरण दिया है। उनके मतसे भी किल-किलामें अनेक ग्राम बसते थे। नीचे कविरामका विवरण उद्धृत है,—

पश्चिम सरस्वती और पूर्व यमुना नदीके मध्य २१ योजन परिमित किलकिला भूमि है। यह दो भागमें विभक्त है। दामगङ्गा नदीके पश्चिम गङ्गाके निकट माहेश्वरी देवी विराजती हैं। यहां उपवास करनेपर कुष्ठादि दारुण रोग देवीकी कृपासे आरोग्य होते हैं। माहेश और खड़दह (खड़दा) ग्रामके मध्य दीर्घगङ्गा (बूढ़ी गङ्गा) के निकट कुब्जपाल नामक राजा रहते थे। किसी किसीके कथनानुसार गङ्गा नदी किनारे अन्यदेश समूहके मध्य श्रेष्ठतम वार्ताभूमि है। यहां कदली, पत्रिपर्णी, पूगफल (सुपारी) प्रभृति द्रव्य उत्पन्न होते हैं। पीठमालातन्त्रके मतसे भागीरथी-तीर सती देवीके शरीरसे वामपदकी अङ्गुलि गिर पड़ी थी। काली देवीके प्रसादसे किलकिलावासी धन-धान्यवान् रहते हैं। अनेक प्रकार ग्रामादि उपवनोंसे लोग यहि आकर देश बसा करते हैं। यहां अनेक वर्णके लोग नियत रूपसे बसते हैं। किलकिला अत्यन्त श्रेष्ठ है। लोग नानाप्रकार वस्तुका व्यय लगाते हैं। स्थानीय देशवासियोंके मतसे समुद्र मथते समय कूर्मपृष्ठस्थित सुन्दर पर्वतके भारसे अवश्य देवोंके लोचनको अनन्त देवने निश्वास छोड़ा था। उसी निश्वासका झकोर जहां तक पहुंचा, वहां तक किलकिला देश हुआ। सती देवीके उक्त महास्थान कुब्जपाल और देव-पालका नाम भागीरथीके पश्चिम तीर चला था। कुब्जपालके दो पुत्र रहे—हरिपाल और अजिपाल। ज्येष्ठ हरिपालने सिङ्गुरके पश्चिम अपने नामपर हरिपालपुर एक महाग्राम स्थापन किया। फिर वहां ब्राह्मण, तन्तुवाय और [illegible] बसा वह राजा बने। अजिपाल माहेश्वरी देवीके निकट चन्द्रद्वीप (चांदरा) और कसुरद्वीप (कसुरद)के मध्य जाकर बसे। अजिपालके तीन पुत्र थे—छत्रध्वज, विमाच्छ और महाबल श्रीधिप्रज। यह किलकिलाके पश्चिम सीमान्तर मध्य-ग्रामके मध्य राजा हो शैव जातिको पालने लगे। छत्र-ध्वजके पुत्र महाबल गिरिवि ठुगन्धि नामक ग्राममें रहते थे। विमाच्छ पूर्वपारको जाय राजाके मन्त्री हुये। उनके वंशधर अङ्गलमें वास करते थे। यशोरराज प्रतापादित्य भागीरथीके उभय पार्श्वस्थ देश समूहके राजा रहे। राजा श्रीधिप्रजने चान्दोलमें नाना स्थानसे कायस्थ योद्धा राजस्व चलाया। आज यह भागी नदीतीर श्रीधिप्रजके वंशोद्भव कायस्थ राजा हैं। त्रिवपुर और वासुच (बाली) ग्रामके मध्य तथा माहेश्वरके निकट घोषामपुरमें ब्राह्मण रहते हैं। हुगलीके निकट वंशवाटी (बांसबेड़िया) प्रभृति ग्राम हैं। यहां बकापि नदी दामोदरसे निकल गङ्गामें जा गिरी है। चम्पानि ग्राममें शेखर राजाका राजत्व है। ग्रामकन्द गङ्गा और यमुना नदीके मध्य पाटलिग्राम कायस्थ अधिवा-सियोंके अधीन है। गोविन्दपुरादि ग्राम, मड़्पलिक, कालो देवीके निकटस्थ नगराकदाह (सियालदा) और दक्षिणमें भी कायस्थोंका शासन चलता है। सब मिलाकर १००० ग्राम किलकिलामें बसते हैं। विप्रप्रारतम्भके प्रथम पटलमें किलकिलास्थ शिव लिङ्गका विषय निरूपित है। उसी तन्त्रके मतसे किलकिला देशान्तर्गत नवद्वीप नगरके ब्राह्मणवंशमें नवीनचन्द्र (चैतन्यदेव) और पाडमद नामक ब्राह्मणपण्डितके घर नित्यानन्द जन्म लेंगे।'*

* "पश्चिमे सरस्वतीतीरात् पूर्वे कालिन्दिका तथा।
एकविंशतियोजनं च किली किलाभिधं स्मृतम् ॥ १११

होनेकी आशङ्का पर सूबेदारीको चारो ओर सैन्य संग्रह करने लगे। यह सैन्यदल फौजदारके अधीन रहनेको हुगली भेजा गया। इधर सन्धिकी बात चलती ही थी। किन्तु १६८६ ई०की २८ वीं अक्तोबरको हुगलीके बाजारमें अंगरेज़ पक्षीय कई सैनिकोंसे नवाबके कुछ सैनिक लड़ पड़े। इसमें तीन अंगरेज मरे थे। फिर एक क्षुद्र युद्ध होने लगा। कई घण्टे लड़ने पीछे नवाबके सिपाही विशृङ्खलता वश अंगरेजोंसे हारे। सर्व प्रथम अङ्गरेज़ इसी युद्धमें नवावसे लड़े थे। फिर अङ्गरेज़ोंने हुगली नगर आक्रमण किया। जहाजी बेड़ेके अध्यक्ष आडमिरल निकलसन जहाजसे नगरपर गोले मारने लगे। इससे हुगलीके कोई ५०० घर गिरे थे। अंगरेज़ोंने नगर लूटनेको आग्रह प्रकाश किया, किन्तु जब-चारनकने रोक दिया। अन्तको लूटने न देने कारण डाइरेक्टरोंने जब-चारनकका तिरस्कार किया था। उन्होंने कहा- यदि अङ्गरेजोंको आप नगर लूटने देते, तो नवाबके सिपाही और देशी लोग हमारा प्रभाव समझ लेते।*

अङ्गरेज़ जीतकर युद्धसे हट गये। फौजदारने डर कर सन्धिका प्रस्ताव उठाया था। सन्धि होनेपर स्थिर हुवा,—जब तक सम्राट्के निकटसे नया फरमान् न निकलेगा, तब तक पहली सनदके अनुसार अङ्गरेजोंका वाणिज्य चलेगा और नवाबको क्षतिपूरणके लिये ४६ लाख रुपया देना पड़ेगा। सन्धि करने पीछे मुसलमान भीतर ही भीतर युद्धका आयोजन लगाने लगे। नवाबने ढाका, मालदह, पटना और कासिम-बाजारकी कोठियां लूट अङ्गरेजोंको बन्दी बनाया था। फिर १६८६ ई०के दिसम्बर मास नवाबने सैन्य छुटा हुगलीको भेज दिया।

अङ्गरेजोंने यह सैन्य संग्रह देख परामर्श किया— हुगलीमें रह इस प्रकार नित्य उत्पीडित और क्षति-ग्रस्त होनेसे बड़ी कोठी उठा लेना युक्तिसङ्गत है। अन्तको हुगलीसे कई कोस दक्षिण गङ्गाके पूर्व पार सूतानूटी जाना ठहर गया। यह स्थान अनेक कारणसे सुविधाजनक देख पड़ा। उस समय गङ्गाके पश्चिम-तीर चन्दननगरमें फरासीसी और चुंचुडामें ओलन्दाज कोठी चला समुद्रके नैकट्य वश अपना वाणिज्यव्यवसाय बढ़ाये थे। इसीसे अङ्गरेजोंने भी सोचा,—गङ्गाके दक्षिण किसी स्थल पर वाणिज्यकी प्रधान कोठी बना समुद्रसे आने-जानेकी सुविधा लगनेपर हमारा वाणिज्य भी अधिक चलेगा। वाणिज्यका केन्द्र होते भी सागरसे दूर पड़ने पर हुगली विदेशीय वाणिज्यके लिये विशेष लाभदायक न थी। नवाबी अत्याचार, वाणिज्यतरीके गमनागमनकी विशेष असुविधा और मराठोंके आक्रमणसे मुक्त रहनेके लिये अङ्गरेजोंने एकबारगी ही गङ्गाका पश्चिम कूल छोड़ना चाहा।†

सूतानूटी स्थानको अङ्गरेज़ बहुत पहलेसे जानते थे। बङ्गोपसागरसे हुगली आतेजाते समय गङ्गाके उभय कूलस्थ सकल स्थान अङ्गरेजोंने खूब देखे-सुने। हुगली छोड़नेका परामर्श स्थिर होते स्थानानुसन्धानके समय उन्हें वाणिज्यकी बड़ी कोठी चलानेको सूतानुटी सबसे बढ़कर स्थान समझ पड़ा।

प्रथमत: हुगलीके फौजदारसे सर्वदा मनुष्पेत न रहनेकी बात थी। द्वितीय भागीरथीका गर्भ दिन दिन मृत्तिकासे पूरते जाता था। उससे कुछ समय पीछे हुगलीके नीचे जहाज़ लग न सकते। सूतानुटीमें वह आशङ्का बिलकुल न थी। तृतीय फरासीसियोंसे अङ्गरेजोंकी शत्रुता बढ़ी। चन्दननगरसे बड़ी बड़ी वाणिज्यतरी हुगली ले जानेमें विषम भय था। चुंचुडा और चन्दननगरसे दक्षिण पड़ते सूतानुटीमें उस भयकी सम्भावना न रही। चतुर्थ समुद्र निकट था। पञ्चम गङ्गा नदीके पूर्व पार रहते सूतानुटीमें मराठोंके उपद्रवका भय न लगा। षष्ठ जहाजमें ही पण्य द्रव्य चढ़ाया उतारा जा सकता था। सप्तम—गङ्गाको आ न सकनेवाले जहाज़ बङ्गोपसागरमें ही लङ्गर डाल

* Vide (a) Stewart's History of Bengal, (b) Broom's History of the Rise and Progress of the Bengal Army and (c) Cook's Monthly Mail and Indian Advertiser, Vol. I, or VIII.

† Vide "Some Observations and Remarks on a late publication entitled Travels in Europe, Asia and Africa" by J Price

रहनेसे वाणिज्य वस्तु कोयी असुविधा देख न पड़ी। अष्टम—यहां पूर्ववङ्गकी अन्यान्य नदीयोंकी भांति अन्य चोर प्रबल नहीं। नवम—सुतानुटीके निकट अनेक बड़ जहाजोंके थाम थे। सुतरां व्यवसाय और अन्य कार्यकी सुविधा रही। दशम—सुतानुटीमें उस समय तन्तुवाय बहुत बसते थे। वह कपड़ा बुनने और सूत प्रस्तुत करनेमें विशेष पारदर्शी रहे। सुतरां उन्हें कोठीके अधीन रख अच्छा व्यवसाय चला सकने भी विशेष लाभ उठानेको पाया गो।

१६८६ ई०को २० वीं दिसम्बरको जब चारनकने हुगली छोड़ी। वह अपने समस्त वाणिज्य द्रव्य और यावतीय कर्मचारी ले सुतानुटी पहुंचे। जिस स्थान पर जब चारनक प्रथम उतरे, उसको सुतानुटी कहते थे।* उस समय सुतानुटीमें सूता सूत और कपड़ाका बाज़ार लगता था। बाज़ारके पासमें ही अङ्गरेजोंके उतरनेका घाट रहा। कम्पनीके अमुद्रित पत्रादिमें एक मानचित्र है। उसमें सुतानुटीका स्थान निर्दिष्ट है। सम्भवत सुतानुटी वर्तमान पाथोरीघाटाके उत्तर अम्मातके और रमतके घाटके निकट थी। फिर भी सुतानुटी घाटका यथार्थ अवस्थान आजकल नगरके पूर्णग्रासमें पड़ गया है। प्रवादके अनुसार सुतानुटीका घाट और हाट वर्तमान बड़े बाज़ारके सेठ बसाकोंके घरके बगल था।† उस समय सुतानुटी और उसके दक्षिणवर्ती कलकत्ते तथा गोविन्दपुर ग्राममें जनका वास रहा।

जब-चारनक सुतानुटीमें* पहुंच घाटके कुछ दक्षिण एक वृहत् निम्ब वृक्षके नीचे झोंपड़े बांध रहने लगे। उस निम्ब वृक्षके नामसे ही वर्तमान 'नीमतला' नाम निकला है। १८८३ ई०को आनन्दमयीके मन्दिर निकट अश्वत्थ वृक्षसे गिरनेवाला प्राचीन निम्बवृक्ष जब-चारनकके समयका नहीं। कारण उस समय नीमतलेकी भूमि गङ्गाके गर्भमें डूबी थी।

१६९० ई०के फरवरी मास जब-चारनकको संवाद मिला,—'नवाब शायस्ताखांके सेनापति अब्दुस समदखान् बहु सहस्र अश्वारोही सैन्य ले हुगली पहुंचे हैं। वहांसे अङ्गरेज़ोंको निकाल देना ही उनका उद्देश्य है।' इससे उन्हें सुतानुटीमें भी रहना सुविधाजनक देख न पड़ा। कारण वहांमें नवाबसे लड़ने योग्य व्यवस्था न था। फिर उस प्रकार अरक्षित

* Vid. Map attached to the Selections from Unpublished Records of Government.

† श्री ह [illegible] बाबू—[illegible] पूर्व [illegible] अधिवासीया [illegible] ([illegible], अधिवासी और [illegible]) [illegible] [illegible]। [illegible] किन्तु [illegible] [illegible] नहीं है। [illegible] 'गोविन्द' और 'गोविन्दपुर' [illegible] [illegible] पूरी है। [illegible] [illegible] [illegible] और [illegible] है।) [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]।

सुतानुटीके दक्षिण गोविन्दपुर नामसे आकार थे। [illegible] मतानुसार पुर्तगीजोंके साथ वाणिज्य करनेके लोभसे ही वह गोविन्दपुरमें रहते थे। किन्तु यह बात ठीक समझ नहीं पड़ती। कारण वाणिज्यके लिये उन्हें केवल हुगली या उसके निकटवर्ती स्थानको जाना था। इतनी दूर आना आवश्यक न रहा। फिर सेठके वंशधर अपने आदिपुरुष मुकुन्दरामसे १७वें पुरुष, [illegible] १८वें पुरुष और अन्य [illegible] १६वें पुरुष बतलाते हैं। [illegible] [illegible],—[illegible] ([illegible]) [illegible] [illegible]। उस समय भी [illegible] वाणिज्य [illegible] था। [illegible] [illegible] विशेष कारण [illegible] और [illegible] गोविन्दपुर [illegible]। [illegible] [illegible] नहीं मिलता। [illegible] [illegible] गोविन्दपुर आना [illegible] है।

*इसके शब्दार्थका कोई निश्चित प्रमाण नहीं मिलता—[illegible] नाम सुतानुटीको किसने किसने [illegible] था। [illegible] [illegible] साहबने १६९९ ई० की एक [illegible] छपाया। उसमें सुतानुटी स्थान पर "चित्तानुटी" (Chittanuttee) नाम पड़ा है। फिर [illegible] 'दक्षिण [illegible]' [illegible] [illegible] पुरानी [illegible]। उसमें [illegible] १६९८ ई० की ११ वीं दिसम्बरको लिखी गई थी। [illegible] [illegible]—[illegible] १६९८ ई०में [illegible] सुतानुटी [illegible] रहा। [illegible]—१७०४ ई० के 'दक्षिण [illegible] और [illegible] [illegible]' सुतानुटीका नाम नहीं आ सका है।

स्थान भी तक न गुहके [illegible] न ठहरा। इसलिये यह सहज सुतानुटी छोड़ [illegible] मुहानेकी निकलनेकी ओर चल पड़े। बादमें उन्होंने गङ्गाके पश्चिम कूल पर सुतानुटीसे ५ कोस दक्षिण 'टाना' नामक स्थानका दुर्ग अधिकार किया। फिर वह [illegible] दक्षिणकी ओर गये, उनने वहां [illegible] मुसलमानोंके मकान और उसके [illegible] भस्म कर डाले। उन्होंने [illegible] मुसलमानोंका [illegible] माल [illegible] वहां भी उसी प्रकारके माल [illegible] गये। फिर हिजली पहुँचकर ४० [illegible] जमा [illegible]।

इस समय हिजली एक टापूकी भाँति था। पश्चिम दिक् एक [illegible] था। दूसरी दिशाको [illegible] निकले नौकाओंको छोड़ दूसरा कोई राह न रहा। फिर हिजलीमें कोई रहता भी न था। [illegible] और [illegible] ज्याद भी थे। [illegible] अत्याचार रोकनेको ही अङ्गरेजोंने यह स्थान मनोनीत किया।

नवाब-[illegible]ने हिजलीमें बहुत सेना भेज [illegible] और पानी और तोपोंका [illegible] था। यह सब अङ्गरेज गङ्गाके ऊपर [illegible] गृहोंमें बैठे। किन्तु इसका फल उलटा हुआ। हिजलीमें एक बिन्दु भी पानीपीनेको अधिकार कम मिलता न था। दूसरे दक्षिण पवनसे समस्त अङ्गरेज सैन्य पीड़ित हुआ और जलाभावसे अधिकांश मृत्युके मुख पड़े। जो लोग बचे, वह जोरसे ऐसे डरे कि जीवनकी आस छोड़ चले। इस घटनाके प्रसङ्ग नवाब शायस्ता-खाने उसी समय सन्धिका प्रस्ताव बढ़ाया। चारनकने झटपट सन्धि जोड़ी थी। सन्धिसे अङ्गरेजोंकी सब कोठियां वापस मिलीं। सन्धिसे ४० कोस ऊपर गङ्गाके पश्चिम कूल 'उलूबेड़िया'में एक और [illegible] बनानेका अनुमति हुयी थी। अङ्गरेजोंका वाणिज्य बिना शुल्क चलने लगा। केवल मुसलमानोंको छीनी नौकायें लौटाना पड़ीं। नवाबके हठात् सन्धि करनेका कारण था। हुगलीमें जहाजी बेड़ा लेकर आनेवाले आडमिरल निकोलसनको इङ्गलैण्डसे मुसलमानोंकी समस्त नौकायें अधिकार करनेका आदेश मिला था। नवाबने यह संवाद सुन शीघ्र सन्धि ठहरा ली।

फिर सब चारनक [illegible] घर बनाने लगे। [illegible] और अङ्गरेजोंने [illegible] सुतानुटी ले लिया। [illegible] समयसे अङ्गरेजों और मुगलोंमें युद्ध हुआ। दूसरी [illegible] फिर अङ्गरेजोंकी कोठियोंका नाश हुआ। उन्होंने आदेश दिया था,—'एक अङ्गरेज [illegible] [illegible] अङ्गरेजोंका [illegible]

फिर निकोलसनकी [illegible] जहाज़ोंमें [illegible] १४ तोपें और २०० अङ्गरेज सिपाहियोंके साथ [illegible]। [illegible] था—[illegible] अङ्गरेजोंका वाणिज्य बढ़ाना, अथवा [illegible] अङ्गरेज सिपाहियों और [illegible] [illegible] पर आक्रमण करना।

१६८६ ई० में [illegible] सुतानुटी आये। इधर भारतमें दो [illegible] अङ्गरेजोंको नवाबके निकट [illegible] कर दिया था,—यदि नवाब [illegible] सुनें, तो आप लोग सुतानुटी और निकटवर्ती भूमि [illegible] अनुमति [illegible]। [illegible] अत्याचारका [illegible] हुआ। यह [illegible]। उन्होंने [illegible] मत न [illegible] [illegible]। फिर सब [illegible] और [illegible] दिये। [illegible] शासनकर्ताने सन्धि करना चाहा। किन्तु उन्होंने किसी बात पर कर्णपात न किया। शासनकर्ताने बालेश्वरकी कोठीके दो अङ्गरेजोंको [illegible] बन्दी किया था। उस समय नवाबके निकट [illegible] दूसरी कोठियोंके दो [illegible] और [illegible] दो बन्दियोंको छोड़ बाकी सब अङ्गरेज

किदके कर्मचारियोंने रखी। उक्त ६ कोसोंके भागको आमदा रखने भी दिल्ली सेन्य मानमान बढ़ा बालेश्वर आक्रमण किया। बालेश्वर आक्रमणके दिन ही डाकियाने दूतने आकर संवाद दिया—नवाबको फौज अङ्गरेजोंके अधीन भारतमाल अधिकार करेगी। फिर अङ्गरेज डीलीको सम्भावना देख उक्त प्रस्तावसे सम्मत हुये। १६८८ ई०को १३ वीं दिसम्बरको वह बालेश्वर छोड़ अङ्गरेजको ओर चले थे। अङ्गरेज सुरक्षित देख आराकानके राजाको उद्गत कर उन्होंने कार्यभारको चेष्टा लगायी। किन्तु राजाके उत्तर देनेमें विलम्ब हुआ। इसपर फिरसे अङ्गरेज आक्रमण करनेको ठहराये। उन्होंने पूर्वोक्त छूटे कोम बङ्गालमें जा छोड़ अन्य सबको मन्द्राज पहुंचाने लिये १६ वीं फरवरीको आज्ञा दी।

औरङ्गजेबने इस संवादसे बिगड़ देशसे अङ्गरेजोंको निकालनेका आदेश दिया था। फिर नाना अत्याचार हुये। आवस्ता-खाने इस बयसमें आकर आकर भाग छोड़ा। अब्दसदों-खानके पुत्र इब्राहीम खान् नवाब बने। वह बड़े दयालु थे। उन्होंने नवाब होते हो सब बन्दी अङ्गरेजोंको छोड़ दिया और सम्राट्का आदेश मंगा बङ्गदेशमें अङ्गरेज आनेके लिये चारनकको पत्र लिखा।

१६९० ई०को २४वीं अगस्तको अङ्गरेज सूतानुटीमें आकर स्थायी रूपसे रहने लगे। बादशाही कोषमें वार्षिक ३०००) रु० जमा दे पूर्वको भांति बङ्गालके नाना स्थानोंमें कोठी बनाने और व्यवसाय वाणिज्य चलानेको (१६९१ ई० हिजरी १००२) का चारनकने नवाब इब्राहीम खान्से सम्राट्का दिया आदेश पाया। अङ्गरेजोंको सूतानुटीमें उपनिवेश स्थापन करनेकी अनुमति मिलने भी दुर्गको बनानेकी आज्ञा न हुयी।* फिर १६९३ ई०को १०वीं जनवरीको चारनक मर गये। डिरेक्टरोंने आज्ञा दी थी,—चारनकके जीवनकाल पर्यन्त बङ्गालमें मन्द्राजसे स्वतन्त्र व्यवसाय कार्य चलेगा किन्तु उनके मरनेपर फिर फोर्ट सेण्ट जार्ज (मन्द्राज)के अधीन रहेगा।*

चारनकके मरनेपर बङ्गाल पुनर्वार मन्द्राजके अधीन हुआ और उनका पद एलिस साहबको मिला। किन्तु एलिस अमितव्ययीमात्र और सुपरवाइजर सर जी० गोल्डसबरको सन्तुष्ट करन सके। इसलिये उनके पद पर आयरकी कोठीके अध्यक्ष चार्ल्स आयर नियुक्त हुये।

१६९६ ई०को डिरेक्टरोंकी आज्ञानुसार सूतानुटी बङ्गालके प्रधान एजेन्सीका कार्यस्थान ठहराया गया। उस वर्ष सूतानुटीमें ५०००) रु० राजस्व जमा था।

१६९६ ई०में एक घटना वश युरोपीय वणिकोंको विशेष सुविधा हुयी। शोभासिंह नामक वर्धमानके किसी तालुकदारने उस स्थानके राजाको मार उड़ीसेके पठान सरदार रहीम खांके सहायतासे सूबेदारके विपक्षमें विद्रोहका अनल भड़काया था। यह राजद्रोह दबानेको वर्धमानके फौजदार नूरुल्ला पर भार पड़ा। किन्तु वह भीरुता वश हुगलीके किलेमें भाग गये। विद्रोहियोंने सुविधा देख हुगलीपर अधिकार किया। शोभासिंहने बङ्गालके अधीश्वर बननेका भी बड़ा उद्योग लगाया था। इसी सुयोगमें अङ्गरेज, ओलन्दाज, फरासीसी प्रभृति युरोपीय वणिकोंको अपने उपनिवेशमें सुरक्षित रखनेके लिये नवाबको अनुमति मिली। अतएव कलकत्तेमें अङ्गरेजोंका दुर्ग बनने लगा। अङ्गरेजोंके तत्कालीन राजा विलियमके नामसे दुर्ग खड़ा किया गया।†

उपरोक्त घटनाके पश्चात् औरङ्गजेब बङ्गालके सूबेदार इब्राहीम खान्पर असन्तुष्ट हुये। उन्होंने उनके लड़के आजिम-उस-शानको बङ्गालका सूबेदार बनाकर भेजा था। १६९८ ई०को अङ्गरेज वणिकोंने सुहृत् तथा विविध उपढौकनादि प्रदानपूर्वक मोल बड़ा आजिम-उस-शानसे सूतानुटी, कलकत्ता और गोविन्दपुर तीन ग्राम क्रय किये।

* Broome's History of the Rise and Progress of the Bengal Army Vol. I, p. 24.

* Vide Bruce's Annals of the East India Coy Vol. III, p 143-4

† Vide Historical and Topographical Sketch of Calcutta, by James Rainey

उक्त तीनों ग्राम क्रय करनेका विशेष कारण रहा। उस समय अङ्गरेज सूतानुटीमें अपना वाणिज्य स्थान जमानेको आयोजन लगाते, किन्तु उपयोगी भूमि पाते न थे। जमीन्दारको महसूल दे बहु विस्तृत व्यवसाय फैलानेमें असुविधा पड़ी। फिर नवाबकी आज्ञा न होनेसे भूमि कैसे खरीदी जाती! इसलिये अङ्गरेज लोभी अजीम-उस-शानको अर्थसे मिला कार्योद्धारकी चेष्टामें लगे। उस समय अजीम वर्धमानमें थे। जमीन्दारोंने भी अङ्गरेजोंकी भांति बिना शुल्क वाणिज्य चलानेकी आशासे उनके पास दूत भेजा। अङ्गरेजोंने उसीका प्रतिवाद, भूमिक्रय और क्षतिपूरणादिका प्रबन्ध करको मिष्टर वेल्स नामक एक विचक्षण कर्मचारी रवाना किया।

१६९८ ई०के जनवरी मास वेल्स अजीमके शिविरमें पहुंचे और जुलाई मासके मध्य ही नानाविध व्यय दे अपना कार्य बना सके। अनुमतिपत्र उसी समय सूतानुटी भेजा गया। किन्तु सूतानुटी, कलकत्ते और गोविन्दपुरके* जमीन्दार उसमें दीवान्‌की सही न देख विक्रयसे असम्मत हुये। अन्तको १७०० ई०के जनवरी मास अङ्गरेज दीवान्‌से अनुमतिपत्र ले आये। फिर जमीन्दार कोई आपत्ति उठा न सके।

बियारली साहबके लेखानुसार इस तीनों ग्रामोंकी विस्तृति नदी (भागीरथी) किनारे तीन मील लम्बी और एक मील चौड़ी होगी।* किन्तु बोल्टने कहा—'यह समस्त स्थान दैर्घ्य प्रस्थमें डेढ़ मीलसे अधिक नहीं।'† इसका वार्षिक कर ११८४) रु० बङ्गालके नवाबको देना पड़ता था। किन्तु नवाब अजीम-उस्-शानने उसे अपने प्राप्यमें लगा लिया।‡ फिर क्रयसम्बन्धीय सनद पानेपर सूतानुटीके प्रधान वणिक प्रतिनिधिने लन्दननगरके कोर्ट-अव-डाइरेक्टरको समाचार दिया। उन्होंने प्रत्युत्तरमें कलकत्तेको प्रेसिडेन्सी बना प्रबन्ध बांधा,—प्रेसिडेण्टको २००)रु०मासिक वेतन और १००) मासिक भत्ता मिलेगा। उनके अधीन एक सभा रहेगी। सभामें चार सभ्य बैठेंगे। परामर्श आदि दे वह प्रेसिडेण्टकी साहाय्य करेंगे। सभ्योंमें प्रथम हिसाब करनेवाला (Accountant), द्वितीय गुदामका रक्षक (Warehouse keeper), तृतीय सामुद्रिक कोषाध्यक्ष (Marine purser) और चतुर्थ राजस्व-ग्राहक (Receiver of Revenues) होगा।

आयार साहबके विलायत जाने पर बियार्ड साहब कोठीके प्रधान हुये। १६९९ ई०को जब बङ्गाल एक विभिन्न प्रेसिडेन्सी बना, तब जोहन बियार्ड साहबको ही प्रेसिडेण्टका पद मिला था। किन्तु अल्प दिनमें ही सर चार्लस आयार विलायतसे प्रेसिडेण्ट हो वापस आ गये। उस समय बियार्ड साहबको हिसाब करनेवालेके द्वितीय पद पर जाना पड़ा। फिर हालसी वाणिज्यद्रव्यादि (गुदाम)के रक्षक, हवाइट सामुद्रिक कोषाध्यक्ष और राफसेलडन राजस्व-ग्राहक थे। किन्तु आयार साहबके कार्यग्रहण न करनेसे बियार्ड साहब ही प्रेसिडेण्ट बने रहे।§

* सूतानुटीसे दक्षिण कलकत्ता और कलकत्तेसे दक्षिण गोविन्दपुर ही ग्राम गङ्गातीर रहे। आइन-इ-अकबरीमें जहां सातगांव सरकारमें कलकत्ता महाल मिलता, वहां सूतानुटी या गोविन्दपुरका नाम देख नहीं पड़ता। किन्तु कलकत्तेके साथ एक बन्धनीमें बारिकपुर और बकुया नामक दूसरे दो महालोंका उल्लेख आया है। यह निरूपित नहीं—बारिकपुर और बकुया क्या सूतानुटी या गोविन्दपुरके ही परिवर्तित नाम हैं। पहले आमन्दाज मार्शम्याइन साहबके मानचित्रकी बात कही जा चुकी है। उसमें गोविन्दपुरके स्थान पर गोकर्णपुर लिखा है। सिवा आइन-इ-अकबरीके दूसरा प्राचीन ग्रन्थ भविष्य ब्रह्मखण्ड है। उस ब्रह्मखण्डमें गोविन्दपुरका नाम देख पड़ता है—

"तामलिप्तप्रदेशे च अर्गभीमा विराजते।
गोविन्दपुरप्रान्ते च काली सुरधुनीतटे॥"

इसमें सन्देह नहीं—यह गोविन्दपुर आलोच्यीके गोविन्दपुर है।

एतद्व्यतीत करनल युसक यनार्थ और स्पाय (१६६५ ई०) 'हकविन पाइन्ट् तथा प्राचीन … यात्रियोंका मानचित्र' नामक पुस्तकमें सूतानुटीके पार्श्वपर गोविन्दपुर नाम मिलता है।

* Vide Report on the Census of the Town of Calcutta taken on the 2nd April 1876, by Beverly, C. S.

† Vide Bolt's Consideration on Indian Affairs, 2 ed. 1772 I 60

‡ Vide Orme, Vol II p. 17.

§ History of the Rise and Progress of the Bengal Army, by Arthur Broome, 1. 31.

इसके पहले जो उक्त पत्र आदि कम्पनीके कोर्ट अव डिरेक्टरोंको अवगत कराया किया गया, उस पर 'सुतानुटी' नाम पड़ा था।* फिर 'प्रेसिडेन्सी अव फोर्ट विलियम' लिखने लगी। शेषोक्त नाम यद्यपि चल रहा है। किन्तु यह निर्णय करना कठिन है— सुतानुटी, कलकत्ता और गोविन्दपुर तीनों ग्राम कलकत्ता नामसे कब परिचित हुये। किसी किसीके मतमें ई० १७ वें शताब्दको कलकत्ता नाम निकला था। किन्तु यह मत भ्रमात्मक है। क्योंकि १७०१ ई०को जो विलायती अङ्गरेज वणिक्‌समितिको (अर्थात् इङ्गलिश कम्पनी और ईष्ट इण्डिया कम्पनी)के सम्मिलित होनेको सनद मिली, उस पर सुतानुटी लिखो गयो। कलकत्तेका नाम कहीं नहीं मिलता। फिर भी उपरोक्त तीनों ग्राम इसी प्रकार अभिवेष्टित हुये। [टालीगाबी (तत्कालीन गोविन्दपुरको नाली या आदिगङ्गा)से आरम्भ कर मर्ते माल किले तक गोविन्दपुर रहा। यह ग्राम कुछ बड़े महाजनोंका वसतिस्थान था। मध्यभाग वनसे परिपूर्ण रहा।

उत्तर चितपुरका नाला, (मराठा खात), पश्चिम भागीरथी, दक्षिण वर्तमान टकसाल तथा बड़ा बाज़ार और पूर्व कार्नवालिस्‌ष्ट्रीट एवं सरक्यूलर रोडका थोड़ा पश्चिमांश सुतानुटी नामसे प्रसिद्ध था।† गोविन्दपुर और सुतानुटीके मध्यवर्ती स्थानको कल कत्ता कहते थे। ठीक ठीक निर्णय किया नहीं जाता, भागीरथीके तीरसे पूर्व किस स्थान तक कलकत्ता विस्तृत था। बड़ा बाज़ार, चंपरिया मिर्ज़ा, चौक चाषिम बहम्म काडस प्रभृति स्थान किसी कल कत्तेमें रहे। फलतः उन तीनों ग्राम और कई सामान्य पल्लियां मिल कर यह "सौधमयी नगरी" (City of Palaces) बनी है।

१७०२ ई०को जान बियार्ड साहबने "सम्मिलित पूर्वभारत वणिक्‌समिति" (United Company of Merchants trading in the East India)को अङ्गरेज सभाके सभापति हुये। फोर्ट विलियम प्रेसिडेन्सी रक्षाकेका कार्यसमूह चलानेको उनके अधीन आठ कमिशनर रखे गये। इस विलायती वणिक् समितिके सम्मिलनसे उन दोनों कम्पनियोंके कर्म चारियोंका विवाद न घटा।

इङ्गलैण्डके राजाने सम्राट् औरङ्गजेबके निकट सर विलियम नियासको दूतस्वरूप भेजा था, किन्तु उनका कार्य निष्फल हुआ। सम्राट्‌ने अपने राज्यके मध्य समस्त युरोपीयोंका बन्दी बनानेको आज्ञा निकाली थी। पटना और राजमहलका अङ्गरेज उपनिवेश लूटा गया। फिर कलकत्तेको लूटनेके लिये भी मुगलोंने फौजदारसे अङ्गरेजोंको भय देखाया था। किन्तु बियार्ड साहबने कलकत्तेका उत्तमरूपसे सुरक्षित कर फौजदारके भयप्रदर्शनको उपेक्षा की। फौजदारने भी अवस्थाको समझ कुछ विशेष पकड़ धकड़ न की।

१७०५ ई०को प्रेसिडेण्ट बियार्ड साहब मर गये। उनके पदपर दोनों कम्पनियोंका हिसाब साफ करनेको इविड और बेनसन साहब नियुक्त हुये। उस समय बहुत थोड़े लोगोंके साथ १२० युरोपीय सिपाही फोर्ट विलियमको रक्षा करते थे। कलकत्तेकी अवस्था दिन दिन सुधरनेपर विविध व्यवसाय वाणिज्य चलानेको चारों ओरसे लोग आकर रहने लगे। महानगरी कलकत्तेका इसी प्रकार प्रथम पत्तन बना।

औरङ्गजेबकी सनदसे ठहरा था—वार्षिक ३०००) रु० देनेपर अङ्गरेजोंका सर्वप्रकार शुल्कसे अव्याहति मिलेगी। किन्तु नवाब मुरशिद कुलीखाने अन्यान्य व्यवसायियोंकी भांति अङ्गरेजोंसे भी सैकड़े पीछे २॥) रु० शुल्क लेनेकी आज्ञा दी। कलकत्तेके तत्कालीन गवरनर हेजिस साहबने अङ्गरेजोंके प्रति दया व्यवहारके प्रति दिलानेकी आशासे दूत भेजनेके लिये १७१२ ई०को कोर्ट-अव डिरेक्टर्सकी अनुमति ली। उक्त दौत्य कार्यको जोहन-सर्मन तथा एडवर्ड स्टिफेनसन नामक दो अभिज्ञ कोठीवाल थोड़ा सरहद आर्मानियन खोजा और डाक्टर

* Historical Notices concerning Calcutta in the days of Job Charnock (in Indian and Colonial Magazine)

† च अनुदैके समीप सिर्फ दो कलकत्ते, दि अनुसार, पुराणातीत, सिद्धेश्वरी आदि नये कलकत्ता नाम प्रसिद्ध सीमाके भीतर है।

थी। उन्होंने लिखा,—'नदी किनारे दक्षिण गोविन्दपुर और उत्तर बराहनगरसे कम्पनीके उपनिवेशका एक सीमाचिह्न रहा। इन दोनों चिह्नोंका व्यवधान तीन कोस होगा। भूमिकी और चौड़ाई या कोई चिह्न तक सीमा थी।' अतएव निश्चय कर नहीं सकते— उस समय कलकत्तेकी प्रकृत सीमा क्या रही।

१७४२ ई०को भास्कर पण्डितके परिचालनाधीन मराठे बरगीयोंने मेदिनीपुर तथा वर्धमानकी राह राह मवलतक नगर एवं पल्लीग्राम समस्त लूटने लगे। फिर उन्होंने कलकत्तेके सन्निकट भागीरथीके अपर पार थाना किया और लूटकी धूम उठी। उस समय मारवाड़ियोंके पश्चिमपारवाले अधिवासियोंने कलकत्तेमें आ आश्रय लिया था। मराठोंके आक्रमणसे रक्षा करनेको अङ्गरेजोंने पूर्व पार रहते भी कलकत्तेको चारो ओर घेरनेको एक गहरी खाई खोदनेके लिये नवाब अलीवर्दी खांसे अनुमति मंगायी। सुतानुटीके उत्तर अंशसे गोविन्दपुरके दक्षिण अंश पर्यन्त खाई खोदनेकी बात थी। इस मार्गमें ७ कोस (तीन कोस) भूमि पड़ी। किन्तु अलीवर्दीके अध्यवसायमें मराठे कलकत्तेसे १० कोस दूर ही रहे। इस लिये खाई खोदना रुक गया। इस खाईको "मराठा खात" (Mahratta Ditch) कहते हैं। श्यामबाजारके निकट दमदमें आज भी इस खात (खाई)का चिह्न मिलता है। अर्मी साहबके मतानुसार अधिवासियोंके ही अनुरोध और व्ययसे यह खाई खोदी गयी।*

हलवेल साहबका कहना है—१७५२ ई०को भी सिमुलिया मलङ्गा, मिर्ज़ापुर (कलकत्तेके एक महल्ले) और हुगलकुड़ियामें कुल १०५० बीघे भूमि थी। ये चारो स्थान उपनिवेशकी सीमामें न रहते कम्पनीने खरीदनेकी विशेष चेष्टा लगायी, किन्तु अधिवासियोंकी किसी प्रकार सम्मति न पायी।† दूसरा यह कई स्थान कलकत्तेकी सीमाके बाहर थे। किन्तु बनियापोखर, पटलडांगा, टांगरा और अन्य मिलाकर ९८८ बीघे भूमि कलकत्तेके अधीन परिगत रही। दो वर्ष पीछे अर्थात् १७५८ ई०को क्लाइव साहबने कम्पनीके लिये रसिक मल्लिक और नवाब मल्लिकसे २२८६) रु० मूल्यमें सिमुलिया खरीद की।*

१७५६ ई०को सिराजुद्दौलाने कलकत्ता आक्रमण और अधिकार किया था। उस समय उनके आदेशसे (मातामहके लिये) इसका नाम 'अलीनगर' रखा गया। फिर अन्धकूपहत्या हुयी। दूसरे वर्ष ही क्लाइव और वाटसनने कलकत्ता ले लिया। (क्लाइव, अन्धकूप और वाटसन शब्द देखो।) १७५७ ई०को ९वीं फरवरीको सिराजुद्दौलासे सन्धि बनी। सन्धिमें ठहर गया,—"कम्पनीको सनदके लिखे सब ग्रामोंका अधिकार देना पड़ेगा और बेदखलमें जमीन्दारोंको कोई वाधा न रहेगा।"

पलासी युद्धके पीछे नवाब मीरजाफर नये सूबेदार हुये। उन्होंने लिखी सन्धि द्वारा अङ्गरेजोंको कलकत्तेका मौरूसी जमीन्दार बना दिया।†

(पलासी और मीरजाफर देखो।)

उस सन्धि द्वारा सम्बन्धित ग्रामको छोड़ मीरजाफरने कम्पनीको कलकत्तेकी सीमाके बाहर ११०० गज परिमित भूमि सौंपी थी। फिर उन्होंने कलकत्तेसे दक्षिण कुलपी तक कम्पनीकी जमीन्दारी ठहरायी। मीरजाफरकी आज्ञा थी—इस अंशके समस्त अमलदारे कम्पनीके अधीन रहेंगे और दूसरे जमीन्दारोंकी भांति मालगुजारी भी राजस्व देंगे।‡

दूसरे वर्ष १७५९ ई०के दिसम्बर मास सम्राट्से तालुक या जागीरके तौर पर कलकत्ता कम्पनीके हाथ आया। अर्थात् अङ्गरेज वणिकोंने अपनी कोठी सुरक्षित रखनेका अधिकार पाया। अन्दरकी देखभाल भी उन्होंके अधीन रहनेसे मीरजाफरने ८८५१) रु० लिया कर कम्पनीको कलकत्ता,

* Orme's History of India, Vol II, p 15.

† Holwell's Indian Tracts, 2nd ed. 1764 p. 140

* Selections from the Unpublished Records of the Government, p. 56.

† Bolt's Indian Affairs p. 81.

‡ Rise, Progress and State of the English Government in Bengal, by Harry Verelst, 1772. App. p. 164

पाइकाम, सानपुर तथा अमीराबाद चार परगनोंके बीच २० मौज़े और दो बाज़ार दे डाले। फौजदारीका काम भी अङ्गरेज़ ही करते थे। मौज़ोंके नाम यह हैं,—१ गोविन्दपुर, २ मिर्ज़ापुर, ३ चौरङ्गी, ४ धइन्द, ५ डिहीकोलन्द, ६ वेलेडांगा, ७ मानघाटी ८ सियालदह, ९ बाहरविर्जी, १० किसपुर पाड़ा, ११ बाहर चौरामपुर, १२ सूतानुटी, १३ हुगलकुड़िया, १४ शिमला, १५ मारुन्द, १६ आडिङ्गी, १७, डिही कलकत्ता, १८ दक्षिण पाइकपाड़ा, १९ चौरामपुर और २० मरहट्टा खाईके मध्यवर्ती गणेशपुर। दोनों बाज़ार—१ सूतानुटी बाज़ार और २ गोविन्दपुर बाज़ार थे।

उपरोक्त ग्रामसे कई मराठा-खातकी सीमामें और कई उससे १२०० हाथके बीच रहे। किन्तु उस समय लोग साधारण बातचीतमें मराठा-खातको ही कलकत्तेकी सीमा ठहराते थे। फिर भी कम्पनीके २४ परगना लेते समय मराठा-खातसे बाहर पड़नेवाले उक्त स्थान कलकत्तेकी ही सीमामें रहे। उक्त सकल स्थान और दूसरी कितनी ही भूमिको कलकत्ते तथा २४ परगनेसे विभिन्न रख डिही पञ्चान्नग्राम बनाया गया। आजकल जो ग्राम कलकत्ते शहरके मह्हले उसमें जाते,वही पहले डिही पञ्चान्नग्राम कहाते थे। १८५७ ई०को २१वें आईनके अनुसार पञ्चान्नग्रामकी समस्त भूमि कलकत्तेमें लगा ली गयी। फिर उसका अति सामान्य अंश छूटा था * इसके समझनेका कोई उपाय नहीं—किस समय कलकत्ते और पञ्चान्नग्रामके मध्य सीमा निर्धारित हुयी। किन्तु प्रश्न उठनेपर १७९४ ई०की १० वीं सितम्बरको गवरनर जनरलने व्यवस्थापक-सभासे एक आईन† निकाल घोषणापत्र द्वारा कलकत्तेकी सीमा ठहरायी थी। संक्षेपमें उसका मर्म नीचे उद्धृत है,—

उत्तर सीमा—भागीरथीके पश्चिम तीर बागबाज़ारवाले खालके मुखसे पुराने पावड़ेके मिल बाज़ार हो कर दमदमे जानेकी राह पोल (श्यामबाज़ार पोल)के पाददेश पर्यन्त। पूर्व सीमा—मराठा खातके पश्चिम किनारे अथवा उसके पार्श्वस्थ मार्गके पूर्व किनारे होकर हालसी-बगानके उत्तरकोणसे उक्त खातके दक्षिण किनारेके पूर्वमुख, वहासे खातके उत्तर किनारे पश्चिम मुख, उक्त स्थानसे खातके पश्चिम एवं बैठकखाना राहके पूर्व किनारे दक्षिण और मराठा खातकी शेष सीमा होकर राजा रामलोचन बाज़ारके कोने अथवा नारायण चाटुर्यी सड़ककी ठीक विपरीत और बेलेघाटाको सड़क जाने तक। फिर मिर्ज़ापुरके बीच बैठकखाना सड़कके पूर्व किनारे होकर और पोर्तुगीज़ोंके गोरस्तानकी पूर्वदिक् छोड़ बैठकखानेके प्राचीन सुविख्यात वृक्ष तक, अर्थात बहूबाज़ार,ररोड और बैठकखाना बाज़ारकी विपरीत और सड़कके दोनों पार्श्व बैठकखाना राहके पूर्व किनारेसे गोपोबाबूके बाज़ार और वहांसे सीधे चल उक्त राहकी पश्चिम मोड़ तक। वहां डिही चौरामपुर पूर्व तथा दक्षिण पूर्व छोड़ कुछ दूर आगे बढ़ने पर पूर्व सीमा शेष हुयी है। कलकत्ते शहरके प्रोटेष्टाण्टोंका तत्कालीन गोरस्तान, चौरङ्गी और डिही बिर्जी इसी सीमाके अन्तर्भूत थी। दक्षिण सीमा—उक्त स्थानसे वाम दिक् घूम डिही बिर्जीके अन्तर्गत बनियापोखर या एंग्लियापोखर सीमारेखाके मध्य छोड़ पश्चिमाभिमुख चौरङ्गीके बड़े मार्गसे विपरीतदिक् रसापागला सड़कसे लेकर पुलिस थाने और साधारण अस्पतालके मध्य मामूली सड़कको दक्षिण और थोड़ी दूर चल पुनर्वार पश्चिममुख साधारण अस्पताल, पागलागारद तथा डिही भवानीपुरके अस्पतालका गोरस्तान छोड़ अलीपुरके पाददेश पर्यन्त। यहासे अलीपुर पुलके दक्षिण होकर टाली नाले (आदिगङ्गा)की उच्च जलरेखाके चिह्न तक। फिर क्रमान्वयसे आगे बढ़ खिदिरपुरके पुल होकर बेदनजा डक छोड़ आदिगङ्गाके मुख तक (जहां भागीरथीसे आदिगङ्गा मिली है)। उक्त स्थानसे ठीक सामने चल नदीके अपर वा पश्चिम पार मेजर किडवाले बागके दक्षिणपूर्वकोण (उक्त बाग और शिवपुरको छोड़) पर

---

* Census Report of Calcutta, 1876 by Mr. Beverly.

† 159th Section Cap. 52 of the Act passed in the 33 year of His Majesty's reign

…चिम सीमा-का अन्त है। पश्चिम सीमा—बीचोंबीच
…गसे उमाकर भागीरथीके पश्चिम तीर जिन सब
…ामें किन्तु हो क्रमशः रामकृष्णपुर, हावड़ा और
…सलकियाघाट और चितपुरवाले पुलके निकट (नदीके
…श्चिम तीर) पूर्वोक्त कापरपुरमें बारमेल रावर्टसनकी
…गकी उत्तर कोण होकर मिल गयी है।

पूर्वकथित विधि (Act 56)के अनुसार स्थानीय
…वरनमेण्ट सीमा बदलनेको सक्षम थी। किन्तु कल
…त्तेकी सीमामें फिर कुछ हेरफेर न हुआ। किन्तु
…ालूम नहीं—किस समय कलकत्ते और पञ्चान्नग्राम
…मयकी सीमा ठहरायी गयी। १७९४ ई०को घोषणा
…ा निकलनेसे इस सीमाके सम्बन्धमें कुछ गड़बड़
…ड़ा। क्योंकि उसमें पूर्व सीमाके लिये लिखा था—
…जहां तक मराठा खात देख पड़ता, वहीं कलकत्तेकी
…सीमाका अन्त मिलता है।* किन्तु न तो यह खात
…सम्पूर्ण खोदा गया और न महराठाखातका पहचाने
…चिन्ह रहता और निकल देख पड़ा। यद्यपि भागी
…सरकुलर रोड (उस समय इसको बैठकखाना रोड
…कहते थे) और सरकुलर रोडसे आदिगङ्गाके दक्षिण
…तक सीमा लगी है। यह समझ नहीं सकते १७९४
ई०को कहां तक पूर्वकथित सीमा रही। १७९० ई०को
…कलकत्तेका जो मानचित्र बना, उसकी नापमें सम्भवतः
…भ्रम था। अथवा कलकत्तेकी सीमा उस समय सम्पूर्ण
…निश्चय थी। उस मानचित्रमें एकड़ेमेंकी भूमिका
…परिमाण अबकी नापसे बिलकुल भारी लगा है। फिर
१८४८ ई०को 'फीवर हास्पिटल कमिटी'के समय
…जस्टिसेसमें डाक्टर निकोलसन साहबने कहा था,—
६० वत्सर पूर्व साधारण तथा सामरिक अस्पतालकी
…साथ सीच दक्षिण एक स्तम्भ स्थापित था। उसमें
…लिखा रहा—यहां फोर्ट विलियमका एसप्लेनेड शेष
हुआ है।† अतएव यह निर्णय करना अतीव दुष्कर
है—किस समय कलकत्तेकी क्या सीमा थी।

* Selections from the Calcutta Gazette, Vol. II by W S Seton Karr, C S p 129.

† Census Report of Calcutta, 1876, by H, Beverly Esqr C, S p, 34

आदिगङ्गा और भागीरथीके सङ्गमके मुख पर एक
सेतु है। वह मारक्विस अव हेस्टिंग्सके शासन
काल साधारण चन्देसे बना था। इसीसे उसका नाम
'हेस्टिंग्स ब्रिज' पड़ा। खिदिरपुरसे इस सेतु पार
कर कुलीबाजार जाना पड़ता है। यहां गवरनमेण्टकी
कमसरियटके गुदाम हैं। १७७५ ई०को ५ वीं अगस्त
को ब्राह्मण वंशके महाराज नन्दकुमारने यहीं फांसी
पायी थी। नन्दकुमार देखो।

वर्तमान अलीपुरके सेतुके थोड़ी दूर दो तरु रहे।
क्योंकि नीचे वारेन हेस्टिंग्स और सर फिलिप फ्रान्
सिस्का द्वन्द्वयुद्ध हुआ। अलीपुरके सामरिक अस्पताल
से उत्तरके सदर दीवानी या अपीलकी अदालत लगती
थी। पीछे अदालतके जिस स्थानपर उठ जानेसे उस भवनमें
सामरिक अस्पताल (Military Hospital) हो गया।
भवनके पूर्व नगरके सामने आगरा नारद और साधा-
रण चिकित्सालय (General Hospital) रहा।
प्रेसीडेन्सी सर्जन आदिके किसी अन्यका काम था। पीछे
१८७६ ई०को गवरनमेण्टने उसी स्थान पर साधारण
चिकित्सालय स्थापन किया।

उक्त चिकित्सालयसे कुछ पूर्वदिक् आगेपर चौरङ्गी
नामक मार्ग है। यह चितपुरसे कालीघाट तक विस्तृत
है। पहले यात्री चितपुरमें चित्रेश्वरीका दर्शन कर
कालीघाट जाते थे। चौरङ्गीके पश्चिम किलेका मैदान
और पूर्व सम्भ्रान्त अङ्गरेजोंके रहनेका स्थान है। पूर्व-
कालको यह स्थान और मैदान निविड़ वनसे आच्छन्न
था। व्याघ्र वराह भालू प्रभृति हिंस्रक जन्तु उसमें
भरे रहे। वनके मध्य दुर्दान्त डाकुओंका अड्डा था।
अस्त्रशस्त्र न लेकर इस पथमें चलना कठिन रहा।
किसी किसीके कथनानुसार उस समय यहां गोरख
नाथके एक शिष्य वास करते थे। उनका नाम चौरङ्गी
हठयोगी रहा। इसीसे लोग इस राहको चौरङ्गी कहते
हैं। परन्तु चौरङ्गी नाम अधिक दिनका प्राचीन समझ
नहीं पड़ता। १७५८-५९ ई०का नवाब मीरजाफरने
कुछ मौजोंकी एक सनद दी थी। उसमें इस पथमें सबसे
पहले चौरङ्गी मौजेका नाम लिया गया। उस समय
यह स्थान कुछ परगने कलकत्ते और कुछ परगने पाइ

कानमें लगता था। १७५७ ई०को यहां वन परिष्कार होने लगा। चौरङ्गीकी वर्तमान समस्त सौधमाला आधुनिक है। तत्सामयिक आपजान साहबका मानचित्र देखतेही समझ सकते—१७८४ ई०को यहां कुल २४ मकान् थे। उस समय यहां (वर्तमान मिडलटन रो नामक गलीके 'लोरेटो हाउस' नामक मकानमें) सर इलाइजा इम्पो रहे। उनके मकानके निकट पुष्करिणी (झील) थी। यह झील पूरते समय साङ्घातिक विशूचिका रोगका सूत्रपात हुवा। इसीसे वर्तमान 'मिडलटन रो' नामक मार्ग कुछ दिन 'कालरा ष्ट्रीट' या विशूचिकामार्ग (हैजेकी राह) कहा गया। यह समस्त स्थान इम्पोके उद्यानमें रहे।

कलकत्ता नामकी उत्पत्ति।

कलकत्ते नामके सम्बन्ध पर लोग अनेक कथा कहा करते हैं। उनमें दो एक बात हम सुनाते हैं।

१ प्रवाद है—सर्व प्रथम एक अङ्गरेज यहां आये थे। उन्होंने किसी दूसरेको न देख एक क्षपकसे इस स्थानका नाम पूछा। वह अङ्गरेजी बोली समझ न सका। उसने अपने मनमें सोचा—साहबने मेरे धान्यके विषयमें प्रश्न किया। इसीसे वह कह उठा—'कल काटा' अर्थात् कल धान्य काटा था। बस साहबने इस स्थानका नाम 'क्याल क्याटा' ठहरा लिया।

२ लङ्ग साहबके कथनानुसार सम्भवतः मराठा खात अर्थात् 'खाल काटा'से कलकत्ता नाम निकला है।

३ किसी किसी विचक्षण अङ्गरेजके मतमें 'कलिचूण'से कलकत्ता नामकी उत्पत्ति है।

४ कोई कालीघाट शब्दको कलकत्ते नामका आदिरूप बताता है।

ऊपर लिखी सब बातें हमारी विवेचनामें युक्तियुक्त वा प्रामाणिक मानी जा नहीं सकतीं।

अङ्गरेजोंके आगमन और मराठा-खातके खननसे पहले कलकत्ता विद्यमान था। क्योंकि यह बात अबुल फजलके आईन-इ-अकबरी ग्रन्थमें देख पड़ती है। सुतरां 'काल काटा' प्रवाद और खाल काटा'से कलकत्ता नाम बनाना अत्यन्त उष्ण मस्तिष्ककी कथा है।

कालीघाट शब्दसे भी कलकत्ता नाम नहीं निकला। क्योंकि भारतीय नाना स्थानके प्राचीन तथा आधुनिक जनपद नगरादिका नाम मनोयोगपूर्वक देखनेसे समझा जा सकता—कालीके स्थानमें 'कल' और घाटके स्थानमें 'कत्ता'की तरह अपभ्रंश वा नाम परिवर्तन कभी नहीं पड़ता। विशेषतः कालीघाटके स्थानमें कलकत्ता बनना शब्द शास्त्रके नियमसे सम्पूर्ण वहिर्भूत है। भारतमें जिस स्थानके नामसे पहले 'काली' शब्द आता, वह भारतवासियों क्या मुसलमानोंके द्वारा भी विभिन्न बोला नहीं जाता। सुतरां यह अयौक्तिक सिद्धान्त एककाल ही छोड़ना उचित जंचता, कि कालीघाट नामसे 'कलकत्ता' बनता है। कालीघाट देखो।

इस नगरको देहाती बङ्गाली 'कोल्काता' और हिन्दुस्थानी 'कलकत्ता' कहते हैं। बंगला भाषामें 'कलिकाता' लिखते भी 'कोल्किाता' बोला जाता है। हमारे एक विश्वस्त बन्धुने 'कोल्का हाता' या 'कोलिका हाता' नामसे 'कलकत्ता'की उत्पत्ति मानी है। उनके अनुमानानुसार प्राचीन कालको कोल अथवा कोलि जातिके लोग यहां नदी किनारे रहते थे। सम्भवतः उन्हींके वास करनेसे कोल्काता या कोलिकाता नाम पड़ा गया। संस्कृत, प्राकृत, पालि और द्राविड़ भाषामें 'कोल' शब्दका अर्थ शूकर मिलता है। फिर सुन्दरवनमें परिणत रहते समय कलकत्ता भी विस्तर शूकरोंसे भरा था। अनुमानमें उसी समयसे इस स्थानका नाम 'कोल्काता' चला है। अकबरके समय (सम्भवतः उसके भी पूर्व) कलकत्ता महालके प्रान्तवर्ती नीच लोग शूकर पकड़नेका व्यवसाय करते थे। वराहनगर* इस व्यवसायका प्रधान स्थल था। ओलन्दाजों और फरासीसियोंकी ईष्ट इण्डिया कम्पनीका इतिहास पढ़नेसे अनेक स्थलमें इस बातका प्रमाण मिलता है। फिर भी निःसन्देह कहा जा नहीं सकता—शूकर अथवा

---

* वराहनगर नाम आधुनिक नहीं। प्राचीन ओलन्दाजों तथा फरासीसियोंके पुस्तक और अकबर बादशाहके समसामयिक कवि माधवाचार्यके चण्डीग्रन्थमें वराहनगरका उल्लेख विद्यमान है।

चीन जातिके नामसे कलकत्ता शब्द निकलता है। इसलिये यह विवेचना करना चाहिये—कैसे कलकत्ता नाम पड़ा था।

आजकल यहांके कलिकाता और हिन्दुस्थानी कलकत्ता कहा करते हैं। किन्तु आजतक इस बात पर बड़ा सन्देह है—अकबरके समयमें एवं अङ्ग रेजोंके आनेसे पहले इन स्थानको क्या प्रकृतरूप कलिकाता अथवा कलकत्ता कहते थे? हम पूर्व बतला चुके—आईन इ अकबरीमें 'कलकत्ते महाल' और कविकङ्कणके मुद्रित चण्डीपत्रमें 'कलिकाता' नामका उल्लेख मिला है। किन्तु दूसरा विषम विभ्राट् यह उपस्थित हुआ—एसियाटिक सोसाइटीके प्रथम प्रकाशित आईन-इ अकबरी ग्रन्थमें सातगांव सर कारके बीच कलकत्ता महालके उल्लेखमें नीचे 'कलता', कतूना' 'तकना' आदि पाठान्तर पड़ा है। फिर मुद्रित पुस्तकमें रहते भी कविकङ्कण-रचित ,चण्डीमङ्गलकी कई प्राचीन पोथियोंमें 'कलिकाता' नाम नहीं मिलता। सिवा इसके अकबरके समसामयिक कवि माधवाचार्यके रचे ग्रन्थमें कनपति एवं श्रीमन्तकी समुद्रयात्राके वर्णनकाल बराहनगर, चितपुर, कालीघाट प्रभृति आजकल स्थानोंका उल्लेख आया है। किन्तु कलकत्ता नाम उसमें भी देख नहीं पड़ता। ईष्ट इण्डिया कम्पनीके कागजात ढूंढ़नेसे सर्व प्रथम १६८८ ई०को १६वीं अगस्तको कलकत्ता (Calcutta) नामका उल्लेख मिलता है। इसलिये बड़ा सन्देह उपस्थित हुआ है—ई० १६ वें शताब्दके पूर्व कलिकाता' या 'कलकत्ता' नाम वर्तमान था या नहीं। कारण भौगोलिक वाण्डिब्रुकके मानचित्रमें प्राचीन कलकत्ता ग्रामके उभय पार्श्वस्थ सिङ्गालुटी (वा सुतालुटी) और गोवर्धनपुर (वा गोविन्दपुर)का उल्लेख पड़ा है। किन्तु कलकत्तेका नाम कहीं नहीं। फिरभी दूसरे स्थान पर वाण्डिब्रुकने किसी कल कत्ता (Calcuta) ग्रामकी बात लिखी है। कतिपय यूरोपीय इस स्थानको 'चोलपाली' अनुमान करते हैं। कम्पनीके समय किसी अतिप्राचीन समुद्र यात्रीके मानचित्रमें 'कलकत्ता'के स्थान पर कलकत्ता (Calcutta) लिखा देख पड़ता है। फिर टामस फिचिन नामक किसी भौगोलिकने कलकत्ता (Calcutta) की जगह 'कलकला' (Oulcula) नाम व्यवहार किया है। इससे कलकत्ताको 'चोलपाली' मानते भी आनुषङ्गिक प्रमाणसे समझ पड़ता—किसी समय कलकत्तेको कोई कोई 'कलकला' भी कहता था। वास्तविक १६८८ ई०से पहले किसी ग्रन्थादिमें स्पष्टतः कलकत्तेका उल्लेख नहीं आया। फिर १६६६ ई०के भौगोलिक मानचित्रमें सुतालुटी और गोविन्दपुरका नाम लिखते भी कलकत्ता लिखा है। वां एक स्थान पर उसमें कलकला' नाम लिखा है। इससे अनुमान किया जा सकता कि कलकत्तेका प्राचीन नाम 'कलकला' था।

राजा राधाकान्तदेवने अपने पितामहको शब्द-कल्पद्रुममें एक बंगला अभिधान बनाये थे। उन्होंने अपनी मुद्रित अभिधानोंके सूचीपत्रमें 'कलिकाता' स्थान पर 'किलकिला' नाम दिया है। इससे समझ पड़ता, कि राजा राधाकान्तको कलकत्तेका अपर नाम किल किला अवश्य अवगत था। राजा प्रतापादित्यके सम सामयिक कविरामने अपने बनाये दिग्विजयप्रकाशमें 'किलकिला भूमिका विवरण लिखा है। उसे हम पहले ही यथास्थान वर्णन कर चुके हैं। इसमें सन्देह नहीं, कि उक्त भूमि ही आईन इ-अकबरीका 'महाल कलकत्ता'* रही। यह अवसर क्षेप हो सकता, कि उसी किलकिलाको बिगाड़ कर भौगोलिक लोगों-ने 'कलकत्ता' लिखा था। कविरामके दिग्विजय प्रकाशमें एक स्थान पर किलकिलाका वर्णन मिलता है। उससे किलकिला भूमिके अन्तर्गत किलकिला नामक ग्राम भी समझ सकते हैं,—

"किलकिला [illegible] ।
[illegible] ॥"

(किलकिला विवरण ६९० श्लो०)

उक्त किलकिला प्राचीन कलकत्ता ग्राम ही मालूम

---

* इस श्लोकका अक्षर कलकत्ता ही नहीं बनता। कारण [illegible] ईष्ट इण्डिया कम्पनीके [illegible] कलकत्ता [illegible] नाम [illegible] था।

होता है। सम्भवतः किलकिला ही कलकत्तेका अति प्राचीन नाम है। किलकिलाके अपभ्रंशसे ही आईन-इ-अकबरी प्रभृति ग्रन्थमें कल्कता, कलता, कल्ना, कल्कत्ता, कलकत्ता, कलिकता आदि शब्दकी उत्पत्ति है। मालूम पड़ता, कि भाषासे लिखे भिन्न भिन्न आईन इ-अकबरी ग्रन्थमें पाठान्तर चलता है। सुतरां किलाकिला शब्द भाषान्तरसे लिखते कल्कता, कल्कता, कलकत्ता हो सकता है।

गोविन्दपुर नामकी उत्पत्ति।

कलकत्तेके भूतपूर्व कलक्टर हॉलवेल साहबके मतमें गोविन्दराम मित्रके नामसे गोविन्दपुर बना है। फिर बड़े बाजारके सेठ बसाकोंके कथनानुसार यहां उनके इष्टदेव गोविन्दजीका मन्दिर था। उसीसे इस स्थानका नाम गोविन्दपुर पड़ गया। यह दोनों मत विशेष युक्तिसङ्गत मालूम नहीं होते। प्रथमतः गोविन्दराम मित्रके बहुत पहले गोविन्दपुर नाम विद्यमान था। द्वितीयतः यदि गोविन्दजीके नामसे गोविन्दपुर निकलता, तो सकल प्राचीन ग्रन्थोंमें गोविन्द-पुरके साथ गोविन्दजीका उल्लेख अवश्य मिलता। कविराम विरचित दिग्विजयप्रकाश नामक ग्रन्थमें गोविन्दपुरके नामकरण सम्बन्ध पर जो विवरण मिला, उसे नीचे लिखा है,—

"इदानीं दत्तभाङ्गं च चरभूमी कथा शृणु।
कालीदेव्याः सन्निधौ च गङ्गायां प्राच्ये तटे ॥ १०५२
गोविन्ददत्तो राजा च चतुर्दिक्सहस्रकम्।
सिन्धुसङ्ग महातीर्थयात्रार्थं समागतः ॥ १०५३
गोविन्दकन्मुपाल्ये तीर्थात् प्रत्यागत गतम्।
कालीदेवी स्वप्नमध्ये नौकायामुवाच ह ॥ १०५४
अकर्णपीडुरीं याहि राजन् मत्वाज्ञ हि समाहतः।
भादर रसा पृथिव्यादि देवदिक्षा वनादिकम् ॥ १०५५
पुरं...... ......महती मम निकटम्।
नाम्यथा च, नृपाल ते कल्याणं न भवेदपि ॥ १०५६
कालीदेव्या वचो श्रुत्वा स राजा गङ्गातटान्तरे।
वसतिं सुमहतीं रम्य चकार हि मुदान्वितः ॥ १०५७
पारीन्द्र ग्रामात् सर्वांश्च द्रविणानि महीपतिः।
आनयित्वा च वसतिं कृतवान् सुरसरित्तटे ॥ १०५८
तास्तश्च स्थितवन्तः देव्याः पृष्ठे च वर्तते।
महादैवेन तत् पूर्वे.........॥ १०५९
ममा तस्मिंश्च भूमौ च खनित्वा शिलायां निधिं।
काञ्चनं पुरिकायाम्न्या देवासुरैरपि ॥ १०६०
दृष्टि द्रविणानि प्राप्य गोविन्दभूपतिः।
चतुःषष्टिबलिर्दत्वा पूजनं कृतवान् ॥ १०६१
गोत्रतः वित्ततश्च तेजस्वी हि भूमिप।
अभूत गोविन्ददत्तो वर्धिष्णु प्रवरो महान् ॥ १०६२
भागीरथीपूर्वतटे पुरीवर्धनहेतवे।
ब्राह्मणान् द्विजान् नीत्वा चकार वास्तुकर्म ॥"१०६३

हे नृपश्रेष्ठ! अब चरभूमिकी कथा सुनिये। काली देवीके निकट गङ्गाके पूर्व तट पर ४४०० कल्पाब्दको सिन्धुसङ्गम (गङ्गासागर) तीर्थ यात्रा करने गोविन्द-दत्त राजा आये थे। वह सकुशल तीर्थसे लौट पड़े। फिर स्वप्नके छलसे काली देवीने उन्हें नौकामें ही आदेश दिया,—"हे राजन्! मेरी आज्ञासे तुम अकर्णपुरीको चलो और बादररसा पृथिवीमें हथा-दिक काट मेरे निकट एक बड़ी पुरी स्थापन करो। नहीं तो तुम्हारा अमङ्गल होगा।" काली देवीकी बात मान राजाने गङ्गातटके अन्तर पर बड़ी बसती बनायी। पारीन्द्र ग्रामसे सब धनरत्न संग सुरसरित्‌के तटपर लोग बसाये गये। देवीके पृष्ठ पर दो वृक्ष रखे थे। उनके आदेशसे वृक्षोंके नीचे खोदने पर मृत्तिकाके अभ्यन्तरमें काञ्चनका ढेर देख पड़ा, जो देवों और असुरोंको भी अलभ्य था। भूरि भूरि द्रव्य पानेसे प्रसन्न हो गोविन्द भूपने चतुःषष्टि बलि द्वारा पूजन किया। गोत्र, वित्त और तेज बढ़नेसे गोविन्ददत्त महान् वर्षिष्ठ प्रवर भूमिप बन गये। फिर उन्होंने पुरीके वर्धन हेतु भागीरथीके पूर्व तट पर ब्राह्मणोंको बोलाकर वास्तुयाग किया।'

कविरामको उक्त वर्णनासे समझ पड़ा, कि राजा गोविन्ददत्तसे इस स्थानका नाम 'गोविन्दपुर' चला था।

सूतानुटी।

पहले सूतानुटीके सम्बन्धमें बहुत सी बातें कह चुके हैं। यहां अङ्गरेजोंके आनेसे पहले तन्तुवाय (जुलाहे) सूतका गोला (नुटी या लुटी) बना (उस समयकी सूतानुटीके) बाजारमें (वर्तमान हटखोलेके पास) वेचते थे। इसी बाजारका नाम सूतानुटीका हाट रहा। बाजारके सामनेही सूतानुटी घाट था। यहां

अङ्गरेज़ वणिक् उतर तन्तुवायोंसे सूत (या सूतकी नुटी अर्थात् मोठी) क्रय करते रहे। इसी बाजारके पार्श्वमें दूसरा बड़ा बाजार था। मालूम पड़ता,—युरोपीय वणिकोंने सूतानुटीहाटके निकटवर्ती समुदाय स्थानका नाम सूतानुटी रखा है। कारण अङ्गरेजोंके अथवा अपरापर युरोपीयोंके आगमनसे पहले किसी देशीय ग्रन्थमें 'सूतानुटी' नाम नहीं मिलता। अङ्गरेजोंके अधिकार आनेसे १७५८ ई० पर्यन्त यह स्थान ईष्ट इण्डिया कम्पनीके अधिकारमें रहा फिर उसी वर्षकी १८वीं जनवरीको [illegible] परिवर्तनमें महाराज नवकृष्णके हाथ लगा। ईष्ट इण्डिया कम्पनीने महाराज नवकृष्णको जो पत्र (सनद) दिया, उसमें इन कई स्थानोंका नाम लिखा है,—१ सदाम सूतानुटी (११९० बीघा), २ हाट सूतानुटी ३ बाजार सूतानुटी, ४ सूता बाजार, ५ चार्लस बाज़ार, ६ बागबाज़ार (१०० बीघा) और ७ कुमारटुलिया (२८०) बीघा। इसके लिये महाराज नवकृष्णको प्रतिवर्ष ११९७ रु० और कुछ आने मालगुजारी लगता था।* आज भी शोभाबाज़ारके राजवंशेय उक्त स्थानोंको ताल्लुकदारोंका स्वत्व भोग करते हैं।

शिक्षा—कलकत्तेमें ४ सरकारी (गवरनमेण्ट), ६ मिशनरी और लोगोंके चन्देसे स्थापित ५ देशीय कालेज (विद्यालय) विद्यमान हैं। डाक्टरी (चिकित्सा-विद्या) सिखानेका मेडिकल कालेज, कारमाइकेल कालेज तथा काम्बेल मेडिकल स्कूल और शिल्पविद्याके लिये आर्ट स्कूल या शिल्पविद्यालय (Government School of Art) खुला है। बिना इसके १०० अपर विद्यालय चलते हैं। इनमें १९६ बालकों और १३५ विद्यालय बालिकाओंके लिये हैं। फिर ८६ में बालकोंको अङ्गरेज़ी तथा ७२ में बंगला और १२० विद्यालयोंमें बालिकाओंको बंगला पढ़ाई जाती है। पुरुषों और स्त्रियोंको शिक्षकता सिखानेके लिये ३ नार्मल स्कूल भी विद्यमान हैं। इतर हिन्दुस्तानी बालक श्रीविशुद्धानन्द सरस्वती विद्यालयमें संस्कृत, हिन्दी और अङ्गरेज़ी पढ़ते हैं।

अस्पताल—कलकत्तामें ८ बड़े अस्पताल खुले हैं, मेडिकल कालेज अस्पताल, मेयो अस्पताल, काम्बेल अस्पताल, [illegible] पुलिस अस्पताल, बेलगछिया अस्पताल और स्त्रियोंका डफरिन तथा ईडन अस्पताल। हरीसनरोडपर मारवाड़ियोंका [illegible] बागला अस्पताल विद्यमान है।

धर्मसमाज—कलकत्तेमें नाना जातियोंके रहनेसे अनेक धर्मसमाज देख पड़ते हैं। हिन्दुओं, मुसलमानों और ईसाइयोंके धर्मसमाज छोड़ ६६ गिरजा और ३ ब्राह्मसमाज भी हैं। कार्नवालिस स्ट्रीटपर आर्यसमाज लगता है।

जल—बङ्गालके अपर स्थानोंकी भांति यहां पुष्करिणी (तालाब)का जल किसीको पीना नहीं पड़ता। म्युनिसिपालिटीका जल सर्वत्र पहुंच जाता है। यह जल पलता नामक स्थानसे आता और कारखानेमें अच्छी तरह शोधित हो नलसे चारो ओर जाता है। आजकल प्रायः प्रत्येक घरमें कमसे कम जलकी एक एक कल लगी है। फिर साधारणको सुभीतेके लिये रास्तेकी मोड़पर भी बड़ी कल चढ़ी की गयी है। मोड़ मोड़ जलाधार बने हैं। पहले हिन्दुस्तानी लोग कलकत्तेमें आकर बीमार पड़ जाते थे। किन्तु कलका पानी पीनेका नियमसे अब वह बात नहीं रही। अनेक समभाव पुरुषों और विधवा स्त्रियोंके व्यवहारमें अपवित्र जानेसे कलका जल कम आता है। इसलिये उन्हें भागीरथीका जल अधिकतर पीना पड़ता है। किन्तु भागीरथीका जल समुद्रको लहर आनेसे खार लगता और साधारणतः स्वास्थ्यके लिये ठीक नहीं पड़ता। प्रातःकालसे सायंकाल पर्यन्त भागीरथीके तट पर स्नान करनेवालोंकी भीड़ रहती है।

रेल और स्टीमर—इस समय रेलसे कलकत्तेको

---

* कलकत्ता, [illegible] और [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] ... पड़ सकते हैं।

बड़ी बड़ी राहों और छोटीमोटी गलियोंमें बिजली तथा गैसकी रोशनी होती है। इसलिये दिनकी भांति रातको चलने फिरनेमें कोई कष्ट नहीं पड़ता। फिर बिजलीसे ट्राम, आटा पीसनेकी चक्की और छापेकी कल भी चलती है। घर घर बिजलीके पङ्खे लगी हैं।

ड्रेन—कुछ दिन पहले कलकत्तेकी राहोंके इधर उधर गन्दा नाला था। किन्तु अब यह बात नहीं रही। प्रायः सर्वत्र भूमिके भीतर ड्रेन चलता है। सब जगहका मैला उसमें गिर धापेके बिल पहुंचा करता है। कलकत्तेके रहनेवालोंको नालेका दुर्गन्ध भोगना नहीं पड़ता।

बन्दर और व्यवसाय—कलकत्ता बन्दर भागीरथी किनारे ५ कोस विस्तृत है। १८७० ई०से पोर्ट कमिश्नरोंका तत्त्वावधान चलता है। १८७१ ई०को २२ लाख रुपये खर्चकर कलकत्तेसे हावड़े तक वर्तमान बड़ा पुल बना था। पोर्टकमिश्नर ही इसकी देख भाल रखते हैं। फिर पोर्ट कमिश्नरोंका प्रधानकार्य भागीरथी किनारे जहाज, नाव तथा माल रखनेको जेटी एवं गुदाम बनाना, नदी पर रोशनी कराना और नौकादिका अनिष्ट बचाना है। कलकत्तेका वाणिज्य जहाज और रेलसे नाना देशोंके साथ होता है। प्रति वर्ष करोड़ों रुपयेका माल आया जाया करता है। मारवाड़ियोंने इसमें पड़ अपनी अच्छी उन्नति देखायी है। यहां पाट (सन)का बड़ा कारबार है।

कलकत्तेमें अजायब घर, चिड़ियाखाना, बोटानिकल गार्डन और सेठ दुलीचन्द तथा राय बदरीदास बहादुरका उद्यान देखने योग्य है। सन्ध्याको एडन गार्डन (लेडी बाग)में बैण्ड बाजा बजता है।

कलकना (हिं० क्रि०) १ चीत्कार करना, चिल्लाना। २ दुःख करना, रञ्ज मानना।

कलकफल (सं० पु०) दाड़िमवृक्ष, अनारका पेड़।

कलकल (सं० पु०) कलादपि कलः, कलशब्दे घञ्, कलः प्रकारः, प्रकारार्थे द्वित्वं वा। १ कोलाहल, शोर, हल्ला। २ सर्जनिर्यास, लोबान, धूना। ३ शिव। ४ जलप्रपातध्वनि, झरनेकी आवाज। ५ विवाद, बकबक, झगड़ा।

कलकल (हिं स्त्री०) कष्ट, गुलगी, फरफाहट।

कलकलवान् (सं०त्रि०) कलकलो इस्यास्ति, कल-कल-मतुप् मस्य वः। कलकलविशिष्ट, बकबक लगानेवाला।

कलकली (हिं० स्त्री०) क्रोध, गुस्सा।

कलकानि (हिं० स्त्री०) कोलाहल, शोर, हल्ला।

कलकि, कलकी (हिं०) कल्कि देखो।

कलकीट (सं० पु०) कलप्रधानः कीटः, मध्यपदलो०। सङ्गीतका ग्रामविशेष, गानेका एक ग्राम।

कलकुणिका (सं० स्त्री०) कलं कूणयति उच्चारयति, कल-कूण णिच् ण्वुल् टाप् अत इत्वम्। मधुरध्वनिकारिणी, मीठी आवाज निकालनेवाली। २ विलासिनी, फूहिड़ा, छिनाल।

कलकूणिका, कलकुणिका देखो।

कलकूट (सं० पु०) क्षत्रिय जाति विशेष तथा उसके रहनेका देश।

कलकूणिका, कलकुणिका देखो।

कलक्टर (अं० पु० = Collector) १ संग्राहक, जमा करनेवाला, बटोरू। २ करग्राहक, उगाहनेवाला, जो तहसील करता हो। ३ ज़िलेदार, ज़िलेका बड़ा हाकिम। यह मालगुज़ारी वसूल कराता और मालके मुकद्दमे भी निबटाता है।

कलक्टरी (हिं० स्त्री०) १ ज़िलेदारी, कलक्टरका ओहदा। २ मालके मुकद्दमेकी अदालत। (वि०) ३ कलक्टर-सम्बन्धीय, कलक्टरके मुताल्लिक़।

कलगट (हिं० पु०) तबर, कुल्हाड़ा।

कलगा (हिं० पु०) क्षुपविशेष, एक पेड़। इसे मुर्गकेश और जटाधारी भी कहते हैं। कलगेका फूल मुर्गेकी चोटी-जैसा लाल और चपटा लगता है। मरसेसे यह मिलता है। वर्षा ऋतु इसकी उत्पत्तिका समय है। आश्विन या कार्तिक मास कलगा फूलता है।

कलगी (तु० स्त्री०) १ बहुमूल्य पालक, कीमती पर। यह राजाओंकी पगड़ीमें लगती है। कभी कभी इसमें मोती भी पिरो देते हैं। शुतुरमुर्ग प्रभृति इतः चिड़ियोंके

कुमकुम पत्तोंकी भी कलमी होती है। २ शिरोभूषण-विशेष, मस्तकका एक गहना। यह मुक्ता और सुवर्णसे प्रस्तुत होती है। ३ पक्षियोंकी एक शिखा, चिड़ियोंकी ऊँची चोटी। ४ प्रासादशिखर, ऊँची इमारतकी चोटी। ५ किसी गीतको लावनी। इसको गानेवाला कलगीबाज़ कहलाता है।

कलघण्टिका (सं० स्त्री०) स्वर्णकारिका, कासी देश।

कलघोष (सं० पु०) कलो मधुरो घोषो ध्वनिर्यस्य, बहुव्री०। कोकिल, कोयल।

कलङ्क (सं० पु०) कल् शब्दे अङ्कयति, कल-क्विप् कर्मधा०। १ चिह्न, निशान्, धब्बा। २ अपवाद, बदनामी। ३ दोष, ऐब। ४ लौहमल, लोहेका मोर्चा। ५ मोड़, मोर। ६ मत्स्यभेद, एक मछली।

कलङ्ककर (सं०त्रि०) कलङ्कं करोति जनयति, कलङ्क-कृ-ट। १ कलङ्कजनक बदनामी लानेवाला। २ चिह्न लगानेवाला, जो निशान् डालता हो।

कलङ्ककला (सं० स्त्री०) चन्द्रको कायामें रहनेवाली रेखा, चांदका धब्बा चिह्न।

कलङ्कधर (सं० पु०) चन्द्र, चांद।

कलङ्कमय (सं० त्रि०) १ चिह्नित धब्बेदार। २ अपवाद विशिष्ट, बदनाम।

कलङ्कष (सं० पु०) करेण कषति हिनस्ति, कष-कष अच्-मुम्। सिंह, पञ्जेसे मारनेवाला शेर।

कलङ्कषा (सं० स्त्री०) कलङ्कष टाप्। करताल, हथेलियोंकी आवाज़।

कलङ्कहृद् (सं० पु०) कलङ्कं हरति नाशयति, कलङ्क-हृ-क्विप्। कलङ्क मिटानेवाले शिव।

कलङ्काङ्क (सं० पु०) चन्द्रका अङ्कित चिह्न, चांदका काला धब्बा।

कलङ्कित (सं० त्रि०) कलङ्को जात:, कलङ्क-इतच्। १ चिह्नयुक्त, धब्बेदार। २ कलङ्कविशिष्ट, बदनाम।

कलङ्की (सं० त्रि०) कलङ्को अस्त्यस्य, कलङ्क इनि। १ कलङ्कित बदनाम। २ चिह्नयुक्त, धब्बेदार। ३ लौहमलयुक्त, ज़ङ्ग लगा हुआ। (पु०) ४ चन्द्र, चांद।

कलङ्की (हिं०) कल्कि देखो।

कलङ्कुर (सं०पु०) कं जलं कलयति ग्रसति भ्रामयति इत्यर्थ:, क कलि किप उरच्। आवर्त, गिरदाब, पानीका भँवर।

कलङ्गड़ा (हिं० पु०) १ कलिङ्ग कसौंदा, तरबूज। २ सङ्गीत भेद एक गाना।

कलङ्गा (हिं० पु०) १ वस्त्रविशेष, कोड़ीको एक छींट। इसके ठठेरे बाल पर मढ़ाये जाते हैं। २ टोपियोंका एक ठप्पा। इसमें चाहरक पाक पड़ती है। ३ क्षुप-विशेष, एक पौदा। कलगा देखो।

कलङ्गी (हिं०) कलगी देखो।

कलचिड़ी (हिं० स्त्री०) पक्षिविशेष एक चिड़िया। इसका उदर कृष्णवर्ण पृष्ठ धूसर और चञ्चु लोहित होता है। यह मधुर ध्वनिसे बोलती है।

कलचुरि—भारतवर्षका एक प्राचीन राजवंश। चेदि, डाहलमण्डल और कर्णाटमें किसी समय कलचुरियोंने प्रबल प्रतापसे राजत्व किया था। कर्णाट और चेदि देखो। भारतवर्षके नाना स्थानोंमें इनके खोदित शिलालेख और ताम्रशासन मिलते हैं।

शिलालेखों और ताम्रशासनोंमें कालचुरी या कलचुरी नाम मिलता है। किसी किसी प्रत्नतत्त्वविद्के मतानुसार इस वंशके राजा शिलाशासनोंमें 'कलत्सुरि वा 'कलचूर्य' नामसे भी अभिहित हुये हैं।

गुप्तराजाओंके पूर्वप्रताप खोने और हीनबल तथा क्षीणायत्त होनेपर कलचुरि क्रमशः जोत अपना आधिपत्य फैलाने लगे। ६०० ई०को नर्मदातटस्थ डाहलमण्डल जीत पहले इन्होंने छत्तीसगढ़ और पीछे कर्णाट राज्य क्रमान्वयसे अधिकार करनेको उद्योग किया।

उस समय कलचुरि वंशीय भोजादरोंके तौरपर छुद्र छुद्र राज्य बना राजत्व रखते थे। इनमें कोई करद राजा, कोई सामन्त और कोई मण्डलेश्वर बना। किन्तु चेदि (वर्तमान बुंदेलखण्ड और बघेलखण्ड)के राजाओंने राजचक्रवर्ती उपाधि लिया और पार्श्ववर्ती तथा अपरापर नरेशोंको अपने वश किया।

कन्नौजका चालुक्य वंश प्रबल पड़नेपर पश्चिम पथमें कलचुरि राजाओंका पूर्वतेज घट गया। ई० छठ

शताब्दको (५६७-६१० ई०) चालुक्यराज मङ्गलीशने किसी किसी कलचुरि राजाको हरा करद बनाया था।

फिर भी डाहल और कर्णाटके उत्तरांशमें इस वंशके राजावोंने ई० द्वादश शताब्द पर्यन्त निर्विवाद राजत्व चलाया। चालुक्यराज देखो।

इस वंशने प्राय: नौ सौ वर्षकाल उत्तर त्रिपुर वा चेदि, पश्चिम भेलसा (विदिशा), पूर्व छत्तीसगढ़ और दक्षिण गोदावरीतट पर्यन्त विस्तीर्ण भूमिखण्ड उपभोग किया।

यह सब शैव वा शक्तिके सेवक थे। चेदिवाले कलचुरिराज कर्णदेवके अनुशासनमें सुवर्ण वृषभध्वज और चतुर्हस्तपरिशोभिता हस्तिपरिवृता कमलाकी मूर्ति अङ्कित है। इनके पुत्र गाङ्गेयदेवकी स्वर्णमुद्रामें भी चतुर्हस्ता पार्वतीमूर्ति मिलती है।

देशावली नामक संस्कृतग्रन्थमें 'करचुलि' राजपूतोंका नाम लिखा है,—

"कोशलस्य दक्षिणस्य रेवोत्तरतः परम्।
करचुलि, परिहारो चान्ये सान्ध्वी तपोधनः॥
बाघेलो वयसो भूपः कछुवा राजपुत्रकः।
राठोरो रघुवंशस्य शाखास्तत्पदुर्जयः॥
विरोधः प्रबलो दुष्टे राक्षसाः परिकीर्तिताः।" (देशावली विवरण)

यह करचुलि राजपूत किसी समय बघेलखण्ड (प्राचीन चेदिराज्य)में रहे। रेवासे ५ कोस उत्तरपूर्व अनेक सम्भ्रान्त राजपूत वास करते और अपनेको 'करचुलि राजपूत' कहते हैं। यह बताते,—"हम हैहय वंशीय सहस्रार्जुनके वंशधर हैं। हमारे पूर्व पुरुष रायपुर-रतनपुरसे आकर इस अञ्चलमें बसे थे।"

करचुलि वा कारचुलि राजपूत ही सम्भवत: प्राचीन शिलालिपिवर्णित कलचुरि वा कालचुरि होंगे। प्रत्नतत्त्वविद् फ्लीटने इन्हीं कलचुरिवंशीयोंको आर्जुनायन माना है। (Fleets' Inscriptionum Indicarum, Vol. III. p. 10) किन्तु इस स्थल पर हम फ्लीट साहबका मत कैसे युक्तिसङ्गत कह सकते हैं। कार्तवीर्यार्जुनके वंशधर हैहय नामसे परिचित हैं। वह किसी पुराण वा प्राचीन ग्रन्थमें आर्जुनायन लिखे नहीं गये। किसी किसी पुराण, बृहत्संहिता तथा पाणिनिके अश्वादिगणमें आर्जुनायन शब्द एक जनपद और उसी जनपदवासीके लिये आया है। वराहमिहिरने उक्त जनपदको भारतके उत्तरपश्चिम अञ्चलमें अवस्थित अपरापर जनपदोंके साथ उल्लेख किया है। उनका मत माननेसे आर्जुनायन पाणिनि-गणोक्त अश्व (अश्वक) जनपदके निकट पड़ता है। आर्यावर्त तथा आर्जुनायन देखो। वर्तमान जलालाबाद जाते समय उक्त स्थानको लोग 'अर्जुन' कहा करते हैं। प्राचीन कालको उसी प्रदेश और तज्जनपदवासीका नाम आर्जुनायन था। कलचुरिवंश समुद्रगुप्तके अनुशासन-स्तम्भका वर्णित आर्जुनायन हो नहीं सकता।

पूर्वकालको कलचुरिराज एक स्वतन्त्र संवत् व्यवहार करते थे। इनके अनुशासन तथा खोदित-शिलाफलकमें उक्त संवत् व्यवहृत हुवा है।

कलचुरि संवत्का आरम्भकाल निर्णय करना सुकठिन है। प्रत्नतत्त्वविद् कनिङ्गहामके मतमें कलचुरिराजकर्तृक कालञ्जर अधिकारके समयसे उक्त संवत् चला है। वह २४९-५० ई०को उसका आरम्भकाल बताते हैं। फिर अध्यापक किलहोर्नके मतानुसार २४८-४९को उक्त संवत् चलाया गया। (Cunningham's Indian Eras, p. 60; Archæological Survey of India, Vol. IX. p. 9; Academy, December 1887, p. 391; R. Sewell's Sketch of the Dynasties of Southern India, p. 286.)

कलछा (हिं० पु०) बृहदाकार चमस, बड़ा चम्मच।

कलछी (हिं० स्त्री०) क्षुद्रचमस, छोटा चम्मच।

कलछुल (हिं० स्त्री०) खुञाका, करछी। यह लोहे या पीतलकी होती है। लम्बी डण्डीके सिरे पर हथेली जैसा एक चौड़ा हिस्सा लगा रहता है। यह तरकारी टालने या पूरी कचौरी निकालनेमें काम आती है।

कलछुला (हिं० पु०) १ बृहदाकार चमस विशेष, बड़ी कलछुल। २ चबैना भूननेकी एक छड़। यह लोहेका होता है। इसके सिरेपर एक कटोरा लगा देते हैं। भड़भूंजे चबैना या बहुरी भूनते समय भाड़से

माल भात इसमें भरकर निकालते और थालियोंमें डालते हैं।

कलछुली (हिं० स्त्री०) लोहे या पीतलका पात्रविशेष, लोहे या पीतलका एक बरतन। कलछुल देखो।

कलज (सं० पु०) कुक्कुट, मुरगा।

कलजात (सं० पु०) कलमस्यास्ति, कलमी धान।

कलजिभा (हिं० वि०) १ कृष्णवर्ण जिह्वाविशिष्ट, काली जीभवाला। २ अनिष्ट विषयका वक्ता, जिसकी कही हुई बुरी बात झूठ न ठहरे।

कलजीहा (हिं० वि०) १ कलजिभा। कलजिभा देखो। (पु०) हस्तिविशेष, काली जीभका हाथी। यह दूषित होता है।

कलझँवा (हिं० वि०) श्यामवर्ण, सांवला।

कलञ्ज (सं० पु०) कं वायुपति, क-अञ्ज-अच्। १ विषाक्त शस्त्र या अस्त्रसे मारा हुआ जानवर या परिन्द। २ ताम्रकूट, तम्बाकू। ३ परिमाणविशेष, एक तौल। यह १० पलका होता है। ४ चित्रकता, चीतेका पेड़। (स्त्री०) ५ विषाक्त अस्त्रसे मारे हुये जानवर या परिन्दका गोश्त।

कलञ्जभक्षणविचार (सं० स्त्री०) पूर्वमीमांसाका न्यायविशेष, एक मसला। इसमें 'कलञ्ज न खाना चाहिये' प्रभृति वाक्य अवलम्बन किये जाते हैं।

कलट (सं० क्ली०) कं वायुं लटति प्राप्नोति, क-लट-अच्। तृणादि निर्मित गृहाच्छादन, छप्पर। इसका संस्कृत नामान्तर कुटक है।

कलटोरा (हिं० पु०) कपोतविशेष, एक कबूतर। इसका समस्त शरीर श्वेत और मस्तक कृष्णवर्ण होता है।

कलडर कलन्दर देखो।

कलण्डर (अं० पु० = Calendar) पत्रिका, तकवीम, पत्रा।

कलत (सं० त्रि०) खल्वाट, गंजा, जिसके सरपर बाल न रहें।

कलता (सं० स्त्री०) कलस्य भावः, कल-तल्-टाप्। अव्यक्त मधुरता, गुनगुनाहट, समझमें न आनेवाली आवाज़की मिठास।

कलतूलिका (सं० स्त्री०) कं सुखं विषयसेवन जातं प्रजाति कलं कामं तूलयति पूरयति, कल-तूल-ण्वुल्-टाप् अत इत्वम्। १ स्वेच्छाचारिणी, ख्वाहिश रखनेवाली। २ कामुकी, छिनाल। इसका संस्कृत पर्याय—कामिनी और कलिका है।

कलत्र (सं० क्ली०) गड् सेचने अत्रन् गकारस्य ककारः। उणा० ३।१०६। १ स्त्री, औरत। २ भार्या, बीबी। ३ नितम्ब, चूतड़। ४ भग। ५ दुर्गस्थान, किला।

कलत्रवान् (सं० पु०) कलत्रमस्यास्ति, कलत्र मतुप् मस्य वः। सस्त्रीक, जोड़वाला।

कलत्री (सं० पु०) कलत्रमस्त्यस्य, कलत्र इनि। कलत्रवान् देखो।

कलदार (हिं० वि०) १ यन्त्रविशिष्ट, पेंचदार। (पु०) २ अंगरेजी रुपया।

कलदुमा (हिं० वि०) १ कृष्णवर्णपुच्छविशिष्ट, काली पूंछ वाला। (पु०) २ कपोतविशेष, एक कबूतर। इसका पुच्छ कृष्णवर्ण होता है।

कलधूत (सं० क्ली०) कलेन मलेन धूतं त्यक्तम्, धू-क्त। १ रौप्य, चांदी। (त्रि०) कलेन अव्यक्त-मधुरध्वनिना धूतं मनोरमम्। २ अव्यक्त मधुरस्वर युक्त, समझमें न पड़नेवाली मीठी आवाज़से भरा हुआ।

कलधौत (सं० क्ली०) कलेन मलेन धौतं त्यक्तम्। १ स्वर्ण, सोना। २ रौप्य, चांदी।

"[illegible]" (माघ)

३ अव्यक्त मधुर ध्वनि, मीठी मीठी बोली।

कलध्वनि (सं० पु०) कलः अव्यक्तमधुरः ध्वनिर्यस्य, बहुव्री०। १ कपोत, कबूतर। २ कोकिल, कोयल। ३ मयूर, मोर। ४ अव्यक्त मधुर स्वर, मीठी मीठी बोली।

"[illegible]" (भक्तिनिर्णय)

कलन (सं० क्ली०) कल्यते शब्द्यते ज्ञायते वा, कल-ल्युट्। १ चिह्न, धब्बा। २ दोष, ऐब। कलनं शुक्र-शोणिताभ्यां प्रथमोऽर्थ निगद्यते। ३ गर्भमें मिलित शुक्रशोणितका प्रथम विकार, रहममें गिरे मनी और खूनकी पहली बनावट। कलल देखो। ४ गर्भवेष्टन,

चमसका लिपटाव। ५ एकमासिक गर्भ, एक महीनेका चमस।

"कललं त्वे करात्रे च पञ्चरात्रे च बुद्बुदम्।
दशाहेन तु कर्कन्धूः पेश्यण्डं वा ततः परम्॥" (भागवत ३।३१।२)

६ ग्रहण, लेवायी। ७ ग्रास, कौर। ८ ज्ञान, समझ, पहचान।

"लोकानामन्तकृत् कालः कालोऽन्यः कलनात्मकः।" (सूर्यसिद्धान्त)
'कलनात्मकः ज्ञानविषयस्वरूपः ज्ञातुं शक्य इत्यर्थः।' (रङ्गनाथ)

(पु०) कं जलं लाति, क-ला-क; कलः सन् नमति, कल-नम-ड। ९ वेतस, बेंत।

कलना (सं० स्त्री०) कल भावे युच्-टाप्। १ वशीभूतता, ताबेदारी।

"करारं यतये ऽहं कवलितवतः कालकलना।" (आनन्दलहरी)

२ जल्पना, कहासुनी, कलकल। ३ अवमोचन।

"पिच्छावचूड़ा कलनामिवोरः।" (माघ)

कलनाद (सं० पु०) कलो नादोऽस्य, बहुव्री०। १ कलहंस। २ कलध्वनि, मीठी मीठी बोली। (त्रि०) ३ कलध्वनियुक्त, गानेवाला।

कलन्तक (सं० पु०) पक्षिविशेष, किसी किस्मकी चिड़िया।

कलन्दक (सं० पु०) १ गोत्रप्रवरमुनिविशेष, किसी ऋषिका नाम। २ कलन्तक, एक चिड़िया।

कलन्दर (सं० पु०) कलं शास्त्रविहितं वाक्यं शिष्टाचारं वा दृणाति, कल-दृ-खच्-मुम्। वर्णसङ्करजाति विशेष, एक दोगली कौम। लेट पुरुषके औरस और तीवर स्त्रीके गर्भसे कलन्दर निकले हैं।

क़लन्दर (अ० पु०) मुसलमान साधुविशेष, किसी किस्मका फ़कीर। यह संसारसे विरक्त रहते हैं। २ मदारी। यह भालू और बान्दर नचाते हैं।

कालन्दर देखो।

कलन्दर, कलन्धर देखो।

कलन्दरा (अ० पु०) १ वस्त्रविशेष, एक कपड़ा। यह रुयी, रेशम और टसरसे बनता है। २ कांटा, खूंटी। यह खीमेमें कपड़ा या रेशम लपेट कोई चीज़ टांगनेके लिये लगाया जाता है।

कलन्दरी (हिं० स्त्री०) कलन्दर लगा हुवा खीमा, खूंटीदार छोलदारी।

कलन्दिका (सं०स्त्री०) कलं कामं सर्वाभीष्टं ददाति, कल-दा-क संज्ञायां कन्-टाप् अत इत्वम् पृषोदरादित्वात् मुम् च। सर्वविद्या, इल्म, सब काम निकालने वाली समझ।

कलन्धु (सं० पु०) कलायाः मात्राया बन्धुरिव, शकन्ध्वादित्वात्लोपः। घोलीशाक, एक सब्जी।

कलप (हिं० पु०) १ कलफ़, कपड़े पर चढ़ाया जानेवाल एक लेप। २ खिज़ाब, बाल काले करनेका रोग़न। ३ कल्प। कल्प देखो।

कलपत्तर (हिं० पु०) वृक्षविशेष, एक पेड़। यह शिमले और लौंसरमें अधिक उपजता है। इसका काष्ठ श्वेतवर्ण तथा सुदृढ़ रहता और गृहनिर्माण एवं कृषिके यन्त्रादिमें लगता है।

कलपना (हिं० क्रि०) १ दुःख करना, विलपना, रह रहके रोना। २ कलप चढ़ाना, इसतिरी लगाना। ३ कल्पना करना, अन्दाज़ लगाना।

कलपना (हिं०) कल्पना देखो।

कलपनी (हिं०) कल्पना देखो।

कलपाना (हिं०क्रि०) दुःख देखाना, तरसाना, रुलाना।

कलपून (हिं० पु०) वृक्षविशेष, एक पेड़। यह वृक्ष उत्तर एवं पूर्व बङ्गालमें उपजता और सतत हरित रहता है। काष्ठ रक्तवर्ण तथा सुदृढ़ निकलता, बहुमूल्य पड़ता और गृहके निर्माण कार्यमें लगता है।

कलपोटिया (हिं० स्त्री०) पक्षिविशेष, एक चिड़िया। इसका पोटा कृष्णवर्ण होता है।

कलप्पा (हिं० पु०) द्रव्यविशेष, एक चीज़। यह कठोर तथा श्वेत वर्ण रहता और कभी कभी नारिकेलके अभ्यन्तरमें मिलता है। चीना लोग इसे बहुमूल्य समझते और 'नारियलका मोती' कहते हैं।

कलफ (हिं० पु०) तण्डुल वा आरारोटका तरल लेप, चावल या आरारोटकी पतली लेयी। इसे माड़ी भी कहते हैं। यह वस्त्रका आस्तरण कठिन तथा समान बनानेमें लगता है। २ मुखका कृष्णवर्ण चिह्न, झांई, चेहरेका कालापन।

कलपा (हिं० स्त्री०) देशीय दारचीनीकी छाल या छाल। यह मलयमें उत्पन्न होती है। चीनकी दार-चीनीकी कलम बनानेके लिये इसे मिला देते हैं।

कलफ (हिं० पु०) एक रंग। यह टेसूके फूल उबाल कर बनाया जाता है। फिर इसमें कत्था, चोब और चूना डाल अगरई रंग तैयार करते हैं।

कलबल (हिं० पु०) १ उद्योगउपाय, जोड़-तोड़, दांवपेंच। (स्त्री०) २ कोलाहल, हल्ला-गुल्ला। (वि०) ३ अस्पष्ट, साफ समझ न पड़नेवाला।

कलबीर (हिं० पु०) वृक्षविशेष, एक पेड़। यह हिमालय पर उत्पन्न होता है। इसका मूल रेशम पर पीत वर्ण चढ़ानेमें लगता है। कलबीर आमके पेड़से मिलता-जुलता रहता है।

कलबूत (हिं० पु०) १ कलबुद, कालबुद, सांचा। २ जूता सीनेका ढांचा। यह काठमय होता है। ३ चौगोशिया या पठनेशिया टोपी बनानेका ढांचा। यह मट्टी, लकड़ी या टीनका होता है। इसे गोलम्बर और कालिब भी कहते हैं।

कलभ (सं० पु०) कलेन मदेन दुष्टेन, भाति कल भा-क यद्वा कल-अभच्। कृशृशलिकलिगर्दिभ्योऽभच्। उण् ३।१२२। १ पञ्चवर्षपर्यन्त करिशावक पांचवर्ष तक हाथीका बच्चा। इसका संस्कृत पर्याय—करिशावक, कलभ और दुर्दान्त है। २ करि मात्र हाथी। "हस्त कलभ कलभ विकसितः।" (माघ) ३ उष्ट्र, ऊंट। ४ धुस्तूरवृक्ष, धतूरेका पेड़।

कलभवल्लभ (सं० पु०) कलभस्य करिशावकस्य वल्लभः प्रियः, ६ तत्। पीलुवृक्ष, पीलूका पेड़। इसे हाथीका बच्चा बड़ी रुचिसे खाता है।

कलभवल्लभा (सं० स्त्री०) पिकी, कोकिला।

कलभाषण (सं० क्ली०) बालालाप, बच्चोंकी आधी बोली या बातचीत।

कलभी (सं० स्त्री०) कं वातं लभ्यतया लभते, क-लभ-अच् गौरादित्वात् ङीष्। चञ्चुक्षुप, चेंचका पौदा।

कलमेरव (सं० पु०) कलो मेरवः, कर्मधा०। १ मधुर अव्यक्त शब्द, समझ न पड़नेवाली बोलचाल आवाज़। "कलरवैर्मधुरैः कलमेरवः।" (माघ) २ ताप्ती और नर्मदा नदीके मध्यवर्ती पर्वतका एक प्राचीन बन्दर या नाका।

कलम (सं० पु०) कलयति अवति जनपति, कल-अम। कलिकर्दिभ्यः। उण् ३।८४। १ लेखनी, लिखनेका औज़ार। इसका संस्कृत पर्याय—लेखनी, वर्णतूली और अक्षरतूलिका है। २ शालिधान्य विशेष, किसी चावलका नाम। राजवल्लभके मतसे यह कषायरस, चक्षुके लिये हितकर और रक्त दोष तथा त्रिदोषनाशक होता है। आयुर्वेदमें इसे महातण्डुल कहते हैं। ३ वाद्ययन्त्रविशेष, एक बाजा। आकारमें लेखनीसे मिलनेके कारण ही यह कलम कहलाता है। ईरान, अफगानिस्तान और तूरान प्रभृति देशमें इसका नाम कलम ही चलता है। यह तुरुही कलमकी भांति वर्तित और अपर सुषिर वाद्य यंत्रोंकी भांति व्यवहृत रहता है। दैर्घ्य अर्द्धहस्त प्रायः लगता है। नालमें छह छेद होते हैं। कलम नरकट बांसका बनाया जाता है। फूंकनेसे अपर बाजाओंकी भांति एक कोमल नाद चलता है।

कलम (अ० पु० स्त्री०) १ लेखनी, लिखनेका एक औज़ार। यह सरकण्डेको गढ़ काट कर बनायी जाती है। अंगरेजी कलम लकड़ीके हत्थेमें लोहेकी नोक लगानेसे तैयार होती है। २ वृक्षकी एक शाखा, पेड़की कोई डाल। यह काट कर दूसरी जगह लगायी या दूसरे पेड़में मिलायी जाती है। ३ कलमी पौदा। ४ धान्यविशेष, जड़हन। इसे पहले किसी खेतमें बो देते, फिर उखाड़ कर दूसरी जगह लगा देते हैं। ५ कनपटीके बाल। यह बनानेमें छोड़ दिये जाते हैं। ६ बालविशेष, जिसे सिक्ख बांधते। इसमें बाल छिड़ रखते हैं। ७ वस्त्रविशेष, बालोंकी कूची। यह चित्र बनाने या रंग चढ़ानेके काम आती है। ८ काचखण्डविशेष, शीशेका एक टुकड़ा। यह लम्बी रहती और झाड़में लगती है। ९ शोरे भी पारद वगैरहका जमा हुआ लम्बा टुकड़ा। यह रवादार होता है। १० कुल्हाड़ी। ११ [illegible] यन्त्रविशेष, बारीक नक्काशी करनेका एक औज़ार। इसे जौहरी या संगतराश व्यवहार करते हैं। १२ पत्थर

खोदनेका यन्त्रविशेष, हरफ़ खोदनेका एक औज़ार। इससे सुन्दर बनती है। ११ काटने, खोदने और नक़्क़ाशी करनेका यन्त्रमात्र या कोई औज़ार।

कलमक, कलमक्क देखो।

कलमकार (फ़ा॰ पु॰) १ चित्रकार, मुसव्वर। यह क़लमसे तसवीरमें रंग भरता है। २ लेखनीसे कारुकार्य करनेवाला, जो क़लमसे कोयी दस्तकारी करता हो। ३ वस्त्रविशेष, एक बाफ़ता कपड़ा। इसमें तरह तरहके बेल बूटे रहते हैं।

कलमकारी (फ़ा॰ स्त्री॰) लेखनीका कारुकार्य, कलमकी कारीगरी।

कलमकीली (हिं॰ स्त्री॰) मल्लयुद्धकौशलविशेष, कुश्तीका एक पेंच। इसमें खेलाड़ी अपने दाहने हाथका पञ्जा दूसरेके बायें पञ्जेसे फंसाता और अपना दाहना हाथ खींच उसका बायां हाथ अपनी गरदन पर लाता है। फिर खेलाड़ी अपनी दाहनी कोहिनी उसकी बायीं कलाई पर पहुंचा और नीचेको दबा उसे चित मारता है।

कलमक्क (फ़ा॰ पु॰) किसी क़िस्मका अङ्गूर। यह बलूचिस्तानमें अधिक उत्पन्न होता है।

कलमख (हिं॰) कल्मष देखो।

क़लमतराश (फ़ा॰ पु॰) १ क़लम बनानेका चाकू, तेज़ छुरी। २ अरहरकी खूंटी। यह कहारों और हाथीवानोंकी बोली है।

क़लमदान (फ़ा॰ पु॰) सम्पुटविशेष, क़लम वग़ैरह रखनेका एक छोटा सन्दूक़। यह पतला और लम्बा होता है। इसमें क़लम, दवात, चाकू वग़ैरह रखनेकी खाने बने रहते हैं।

कलमना (हिं॰ क्रि॰) कलम काटना, टुकड़े उड़ाना।

कलमरिया (पोर्त॰ स्त्री॰) वायुके प्रवाहका प्रतिबन्ध, हवाका रुकाव।

कलमलना (हिं॰ क्रि॰) सङ्कुचित स्थानमें अङ्ग इतस्ततः हिलाना डुलाना, कुलबुलाना।

कलमलाना, कलमलना देखो।

कलमा (सं॰ स्त्री॰) शालिधान्य, एक धान।

कलमा (अ॰ पु॰) १ वाक्य, जुमला। २ मुसल-मानोंके धर्मका मूलमन्त्र।

कलमास (हिं॰) कल्माष देखो।

कलमी (हिं॰) कलम्बी देखो।

क़लमी (फ़ा॰ वि॰) १ लिखित, लिखा हुवा। २ कलमसे पैदा, जो डाल काट कर लगानेसे उपजा हो। ३ कलम या रवा रखनेवाला।

क़लमी शोरा (हिं॰ पु॰) रवेदार शोरा। क़लमी शोरा भिगो देने और मैल उतार लेनेपर जमाकर बनाया जाता है। यह मामूली शोरेसे अच्छा रहता है।

कलमुहां (हिं॰ वि॰) काले मुंहवाला। २ कलङ्कित, बदनाम।

कलमोत्तम (सं॰ पु॰) कलमेभ्यः कलमेषु वा उत्तमः। सुगन्धशालि, एक खुशबूदार धान।

कलमोत्तमा (सं॰ स्त्री॰) कलमोत्तम देखो।

कलम्ब (सं॰ पु॰) कल्यते क्षिप्यते शत्रुं प्रति, कल-अम्बच्। १ शर, तीर। २ शाकनालिका, सागका डण्ठल। ३ कदम्ब वृक्ष, क़दमका पेड़। ४ सर्षप, सरसों। ५ धाराकदम्ब, हलदू।

कलम्ब (Colombo) सिंहलका एक जनाकीर्ण नगर। यह आजकल सिंहलकी राजधानी है। सिंहलवासियोंके प्राचीन पुस्तकमें इसका नाम 'कूलम्'-(समुद्रतट) लिखा है। १५०५ ई॰को पहले यहां पोर्तगीज आये थे। फिर १७९६ ई॰को अङ्गरेजोंने इसे अधिकार किया। कलम्बमें माहार उपसागरके निकट हिन्दुवोंके बहुतसे देवमन्दिर बने हैं।

कलम्बक (सं॰) कलम्ब देखो।

कलम्बकुलक (सं॰ क्ली॰) एक तीर्थ। (ब्रह्मवैवर्त्त)

कलम्बशालि (सं॰ पु॰) शालिधान्यविशेष, जड़हन।

कलम्बिक (सं॰ पु॰) पक्षिविशेष, एक चिड़िया।

कलम्बिका (सं॰ स्त्री॰) कलम्ब टाप् अत इत्वम्। १ कलम्बीशाक, करेमू। कलम्बीव कायते प्रकाशते, कलम्बी-कै-क-टाप् इत्वञ्च पृषोदरादित्वात् ह्रस्वः। २ ग्रीवापश्चान्नाड़ी, गरदनकी पिछली रग। इसका अपर संस्कृत नाम मन्या है।

कलम्बियन (अं॰ पु॰) मुद्रणयन्त्रविशेष, छापेकी

एक वस्त्र। इसमें दो कुहर लगते हैं—एक ऊपर और एक नीचे। ऊपरसे कुहर पक्षी (चिड़िया) के आकारका रहता है। इसमें कमानी नहीं चढ़ती। कर्णाभरणको हिन्दीमें चिड़ियाकल कहते हैं।

कलम्बी (सं॰ स्त्री॰) के कर्मे कलते, कमि संज्ञामें अच्-ङीष्। १ जलज लताविशेष कलमी साग। इसका संस्कृत पर्याय—कलम्बी, कलम्बू और कलम्बिका है। (Convolvulus repens) राजनिघण्टुमें इसे मधुर एवं कषाय, गुरु और स्तन्यदुग्ध शुक्र तथा कफकारक कहा है। २ उपोदकीलता, पोय।

कलम्बु (सं॰ स्त्री॰) के कर्मे लम्बते, क-लम्ब-उण्। कलम्बीशाक, करेमू।

कलम्बिका, कलम्बी देखो।

कलम्बुट (सं॰ क्ली॰) के कर्मे लम्बते भासते, क-लम्ब-उटन्। १ कैवर्तमोल, ताजे दूधका घी। २ नवनीत, मक्खन।

कलम्बू (सं॰ स्त्री॰) के कर्मे लम्बते, लम्ब बाहुलकात् ऊङ्। कलम्बीशाक, करेमू।

कलयष्ट (सं॰ पु॰) उदरस्थ भूना।

कलरव (सं॰ पु॰) कल मधुरास्फुट रव अनियंत्रण, बहुव्री॰। १ कपोत कबूतर। "कोकिलाकलीयकि बिकीर्णित कलरव वर्णित" (गजान्तरी १८१) २ कोकिल, कोयल। ३ वनकपोत, जङ्गली कबूतर। ४ कलध्वनि, मीठी आवाज।

कलरिन (हिं॰ स्त्री॰) कढ़ीका बनानेवाली स्त्री, जो पीतल ओक बनाती हो। इसे कलहरिन भी कहते हैं।

कलल (सं॰ पु॰-क्ली॰) कलते चैतन्य हीन अव इत्यादिभ्य कलच्। १ जरायु, गर्भवेष्टनचर्म, इसकी पेटकी झिल्ली। २ शुक्र और शोणितका प्रथम विकार। गर्भके प्रथम मास कलल उठता है। ऋतु स्नाता स्त्रीके कामसे मैथुन आचरण करनेसे गर्भ रह जाता है। किन्तु उस गर्भमें अधिक प्रकृति पैदा साफ नहीं होता। इसीसे कललमात्र निकल पड़ता है। (सुश्रुत)

कलवन (सं॰ पु॰) कलमिव आचरति, कल अच् ल। १ राज, धूम्र। २ गर्भ, समल।

कलवयोड़ (सं॰ पु॰) कललमय उदर उत्पत्ति स्थानात्, ६ तत्। गायकुष्क, गायका पेड़।

कलवरिया (हिं॰ स्त्री॰) मद्यपानागार, कलवारकी दुकान।

कलवार (हिं॰ पु॰) जातिविशेष, एक कौम। यह हिन्दुस्तान और बिहारके बनियोंसे उत्पन्न है। कलवार शराबका व्यवसाय करते हैं। कोई कोई समझता, कि पहिले बनानेवाले 'खेरवार' नामक अन्य जातिसे कलवार शब्द निकला है। फिर कोई 'कल वाला' शब्दसे कलवार नामकी उत्पत्ति बताता है। किन्तु इन बातोंमें कोई समीचीन मालूम नहीं पड़ती।

इस जातिके लोग प्रधानतः कई श्रेणियोंमें विभक्त हैं,—बनौधिया, बियाहुतिया या भोजपुरी, देशवार, जैसवार, अयोध्यावासी, खालसा और खरिदहा। सिवा इसके कलवारोंमें बहुतसे मुसलमान भी हैं। उन्हें 'रांकी' या 'कलाल' कहते हैं। बनौधिये मुसलमान कलालोंको रायबरेलीके रहनेवाले बताते हैं।

इस जातिमें विधवाविवाह प्रचलित है। बियाहुतियोंके कथनानुसार पहले विधवाविवाह प्रचलित न था, किन्तु पीछे होने लगा। फिर वह इस जातिकी उत्पत्तिके सम्बन्धमें कहते—आदि पुरुषसे सब कलवार निकले हैं। आदि पुरुषके दो पत्नी रहीं। 'बियाही' और 'सगाई'। बियाही पत्नीके गर्भजात सन्तान बियाहुत और सगाई पत्नीके गर्भजात सन्तान अन्यान्य नामसे परिचित हैं। बियाहुत मद्यका व्यवसाय मद्यपान और अपने हाथसे मोदीखाना वा उसमका "अपकश्रेय" नहीं करते। यह केवल ताड़ीका काम चलाते हैं। खरिदहा अपनी श्रेणीका नामकरण गाजीपुर जिलाके किसी ग्रामपर ठहराते हैं। उन्हें बियाहुतोंकी भांति निकृष्ट मोदीखान और उसमके अपकश्रेणसे अलग रहते भी मद्यपान वा मद्य व्यव सायमें कोई आपत्ति नहीं। दूसरे कलवार अयोध्यावालोंको आरम्भवंश पुकारते हैं। किसी कलवारके 'जेथिया' नामकी एक उपपत्नी रही। उसीके गर्भजात सन्तानसे जैसवार निकले हैं। किन्तु जैसवारोंके कथनानु सार 'जैसपुर' नामक ग्रामसे इस श्रेणीका नामकरण

हुवा है। इसी प्रकार पूर्वोक्त कई निषिद्ध विषयोंके तारतम्यसे अन्यान्य श्रेणियोंका विभाग कल्पना किया जाता है। बियाहुत और खरिदहा अपने वंश, मातामहकी गोष्ठी, पितृमातामहको गोष्ठी वा पितामहके मातामहकी गोष्ठीमें विवाह नहीं करते। यही चाल जेसवारोंमें भी देख पड़ती है।

बियाहुत तथा खरिदहा ५से १४, जेसवार ५से १०, और बनौधिये ७से १४ वत्सर तक कन्याको विवाह देते हैं। किन्तु कन्याको अपेक्षा वरका वयस कयी वत्सर अधिक रहना आवश्यक है। पुरुषका विवाह सब श्रेणियोंमें दसे १४ वर्ष तक हो जाता है। विवाहमें हिन्दुस्थानी वनियोंकी रीति रहती है। "सिन्दूरदान"के पीछे विवाह सम्पूर्ण होता है।

विवाहसे पहले 'घर देखो' 'वर देखो' और 'पानबांटी' तीन कुलाचार हैं। केवल बनौधियोंमें यह तीनों आचार देख नहीं पड़ते। वरके पिताको मर्यादाकी रक्षाके लिये कुछ नक़द रुपया देना पड़ता है। इस प्रथाको 'तिलक' कहते हैं। २१) रु०से अधिक तिलक नहीं चढ़ता। कलवार एकसे चार तक विवाह कर सकते हैं। प्रथमा पत्नीके वन्ध्या होने पर ही ऐसा पत्न्यन्तर पड़ता है। सभी श्रेणियोंमें विधवाविवाह चलता है। व्यभिचारिणी होनेसे यह पत्नीको छोड़ देते हैं।

धर्म—प्रायः कलवार वैष्णव होते हैं। फिर भी अन्यान्य ग्रामदेवतावोंकी पूजा किया करते हैं। बियाहुत और खरिदहा श्रावण शुक्लके दो सोमवारोंको गोखानामक देवतापर चावल और दूध चढ़ाते हैं। फिर उसी समय (श्रावण शुक्ल) बुध तथा वृहस्पतिवारके दिन 'काली' एवं 'बन्दी'को छागल तथा मिष्टान्न और मङ्गल वारके दिन 'गौरेया' देवताको स्तन्यपायी शूकर शावक एवं मद्य उत्सर्ग किया जाता है। श्रावण शुक्ल शनिवारके दिन जेसवार 'पांचपीर' पर और भाद्र कृष्ण एकादशी तथा माघ शुक्ला एकादशी एवं त्रयोदशीको बनौधिये 'ब्रह्मदेव' पर पिष्टक एवं मिष्टान्न चढ़ाते हैं। उक्त सकल निवेदित द्रव्य कलवार स्वयं भोजन करते हैं। केवल उत्सर्गित स्तन्यपायी शूकरशावक खाया नहीं—मृत्तिकामें गाड़ा जाता है। पांचपीरोंका प्रसाद मुसलमानोंको भी बांट देते हैं।

पूजादि और पौरोहित्यादिका कार्य एक श्रेणीके ब्राह्मण करते हैं। बनौधियोंके पुरोहित कनौजिये ब्राह्मणोंकी भांति सम्मानार्ह हैं। कलवार शवको जलाते हैं। त्रयोदश दिन श्राद्ध होता है। बनौधिये ७म वर्षसे न्यून मृत सन्तानका शव गाड़ देते हैं।

जीविका और अवस्था—शराब बनानेका व्यवसाय ही इनकी मूल जीविका है। बनौधियों, देशवारों और खालसावोंको छोड़ अन्यान्य श्रेणीके कलवार दूसरा व्यवसाय भी चलाते हैं। अधिकांश कृषिकार्य किया करते हैं। वाणिज्यादि चलानेवाले लोगोंको ही कलवारोंमें सम्भ्रम मिलता है। छोटे-नागपुरमें भक्त श्रेणीके कलवार व्यवसाय करनेसे समधिक सम्भ्रान्त हैं। किन्तु उनमें विलासिता देख नहीं पड़ती। सामान्य मजदूरोंकी भांति वह भी खाते पीते हैं।

यह अनाचरणीय हैं। ब्राह्मणादि कलवारोंका स्पृष्ट जल व्यवहार नहीं करते। आजकल अधिक लोग खेतीवारीमें लगे रहते हैं। कारण गवरनमेण्टने इनका जातिगत व्यवसाय अपने हाथमें ले लिया है।

सर्वापेक्षा चम्पारन और मुजफ्फ़रपुर ज़िलेमें कलवार अधिक रहते हैं।

कलविङ्क (सं० पु०) कलं मधुरास्फुटं वङ्कते रौति, कल-वकि-अच् पृषोदरादित्वात् अत इत्वम्। १ चटकपक्षी, गौरवा। इसका संस्कृत पर्याय—कुलिङ्ग और कालकण्टक है। भावप्रकाशने कलविङ्कको शीतल, स्निग्ध, स्वादु, शुक्र एवं कफकारक और सन्निपात नाशक कहा है। गृहचटक अतिशय शुक्रकारक है। २ कलिङ्गक वृक्ष, कलौंदेका पेड़। ३ कलङ्क, धब्बा। ४ श्वेतचामर, सफ़ेद चंवर। ५ त्वष्टाके पुत्र विश्वरूपका एक मस्तक। भागवतमें लिखा है,—

किसी समय इन्द्रने ऐश्वर्यके मदमें मत्त हो सुराचार्य वृहस्पतिकी अवमानना की थी। इससे वृहस्पति अन्तर्हित हुये। फिर असुरोंने देवतावोंको बहुत सताया। ब्रह्माने त्वष्टपुत्र विश्वरूपको पौरोहित्यमें

कमा पहुर संग्राममें कलविङ्के लिये उपदेश दिया। देवगण भी तदनुसार उन्हें पुरोहित बना कार्य सम्पादन करने लगे। किन्तु विश्वरूप पितामह पक्षके प्रति स्वाभाविक स्नेहवश छिपकर असुरोंको यज्ञभाग दे देते थे। समय इन्द्रको यह बात मालूम हुयी। उन्होंने क्रोधमें विश्वरूपके मस्तक काट डाले। उनके तीन मस्तक थे,—कपिञ्जल, कलविङ्क और तित्तिर। जिस मुखसे वह सुरापान करते, उसे कलविङ्क कहते थे। (६।९ अ) ६ तीर्थविशेष। ७ पारावत, कबूतर। ८ ग्रामचटक, गांवका गौरवा। ९ वनचटक, जङ्गली गौरवा।

कलविङ्कविनोद (सं० पु०) कुश्तीका एक दांव। पेचका एक ढंग। इसमें मस्तकपर दोनों हाथ ले जाकर घुमाये जाते हैं। फिर उन्हें गलेको पर जमाकर नीचे ऊपर चलाते हैं।

कलश (सं० पु०) वर्ण माहुराकाशमन्द मवति वा पूरणसमये प्राप्नोति कल-शी गतौ ड। जलाधार विशेष, घड़ा। इसका संस्कृत पर्याय—घट, कुट, निप, कलस, कलशि, कलसी, कलसि, कलशी, कुम्भ और करीर है। तन्त्रसारोक्त कलशमें दीक्षा-प्रकरणमें कलशका परिमाण इस प्रकार लिखा है,—"कलश व्यासमें ५० अङ्गुलि और उच्चतामें सोलह अङ्गुलि रहना चाहिये। मुख आठ अङ्गुलि होता है। फिर १६ अङ्गुलि विस्तार और उच्चताविशिष्ट कलशको कुम्भ कहते हैं। वह सोलह या बारह अङ्गुलिसे कम रहना चाहिये।" २ द्रोणपरिमाण, ८ सेरकी तौल।

कलशदिर् (वै० पु०) कलशस्य दोर्दरणम्, कलश-दृ णिच् क्विप्। यात्रिक कलश विदारण, पूजाके घटको तोड़ फोड़।

कलशपोतक (सं० पु०) सर्पविशेष, किसी नागका नाम।

"कलशपोतकश्च माषः कल्माषीकश्च।" (भारत, आदि ३५ अ०)

कलशि (सं० स्त्री०) कर्म शरीरमात्रिणं श्यति नाशयति, कल-शो-इनि। १ पृश्निपर्णी, पिठवन। कल-शृ डि। २ घट, घड़ा।

"[illegible]" (माघ)

कलशी (सं० स्त्री०) कलशि-ङीष्। १ जलपात्रविशेष, गगरी। २ पृश्निपर्णी, पिठवन। ३ तीर्थविशेष।

कलशीकण्ठ (सं० त्रि०) कलश्याः कण्ठ इव कण्ठः यस्य, बहुव्री०। १ कलशीके कण्ठकी भांति कण्ठयुक्त, सुराहीदार गरदनवाला। (पु०) २ ऋषिविशेष।

कलशीपदी (सं० स्त्री०) कलशीकी भांति पद रखनेवाली, जिसके घड़े-जैसा पैर रहे।

कलशीमुख (सं० पु०) वाद्ययन्त्रविशेष, एक बाजा। इसका मुख कलशीकी भांति होता है।

कलशीसुत (सं० पु०) कलश्याः सुत इव कलशीत उत्पन्नत्वात्। अगस्त्य मुनि। वसिष्ठ ऋषि।

कलशोदर (सं० पु०) कलश इव उदरमस्य, बहुव्री०। १ दानवविशेष। (हरिवंश ३३ अ०) (त्रि०) कलशकी भांति उदरविशिष्ट, जिसके घड़े-जैसा पेट रहे।

कलस (सं० पु०) केन जलेन लसति शोभते क-लस्-अच्। १ कलश, घड़ा। २ द्रोण परिमाण ८ सेरकी तौल। ३ कुम्भ। कालिकापुराणमें लिखा है—क्षीरसमुद्रको देवासुरके सागर मथते समय विश्वकर्माने देवोंकी कलाओं जो घट पृथक् पृथक् बनाये थे। इसीसे घटका नाम कलस पड़ा। निर्णयसिन्धुमें भी कहा है,—

"कलां कलां गृहीत्वा तु देवानां विश्वकर्मणा।
निर्मितोऽयं सुरैर्यस्मात् कलशस्तेन कथ्यते॥"

४ ग्रामविशेष, एक गांव। (राजतरङ्ग) ५ मन्दिरका शिखरमण्डल, इमारतकी चोटीका कंगूरा। ६ काश्मीरके एक राजा। इनका अपर नाम रणादित्य था। यह तुञ्जके पुत्र रहे। ९८५ शकके श्रावण मास तुञ्जने इन्हें राजा बनाया। राजा होते ही यह पिताको कुटिल दृष्टिसे देखने लगे। फिर इन्होंने उन पर बड़ा अत्याचार किया था। किन्तु मन्त्री उस अत्याचार सह न सके। अन्ततः प्रधान मन्त्री यत्न करके पिताको सिंहासन पर बैठाया। फिर कलस पिताके अधीन रहने लगे। अच्छ बम्मट इनके सहचर थे। समय उनकी सहवाससे चरित्र इतना बिगड़ा, कि इन्होंने अपनी भगिनी और तनयाका सतीत्व नष्ट किया। इस राजा इनके पापकर्मसे अत्यन्त व्यथित

हुये और समस्त धनरत्न बांट राज्य छोड़ कर चल दिये। फिर यह पिताको मारनेकी खोजमें लगे थे। किन्तु अपनी माताके कातर वाक्यसे इन्होंने उक्त दुरभिसन्धि छोड़ी। तुक्कने मनके दुःखसे आत्मघात किया। यह भी कुछ दिन अपनी लीला देखा मर गये। इनके पीछे उत्कर्ष काश्मीरके राजा हुये।

(राजतरङ्गिणी, ७म तरङ्ग)

कलसचेव—कर्णाटकके अन्तर्गत एक पवित्र तीर्थ स्थान।

(स्कन्दपुराणीय कलसचेवमाहात्म्य)

कलसरी (हिं० स्त्री०) १ पक्षिविशेष, एक चिड़िया। इसका शिर कृष्णवर्ण रहता है। २ मल्लयुद्धकौशल विशेष, कुश्तीका एक पेंच। इसमें खिलाड़ी अपनी जोड़को नीचे दबा मुखकी ओर बैठ जाता और अपना दाहना हाथ उसकी बांहमें डाल पीठ पर लाता है। फिर उसके दूसरे हाथकी कलाई पकड़ बांयी ओर ज़ोर लगाना और उलटाना पड़ता है।

कलसा (हिं०) कलस देखो।

कलसि (सं० पु०) केन जलेन लसति, क-लस्-इन्। १ पृश्निपर्णी, पिठवन। २ जलपात्रविशेष, गगरी।

कलसिरी (हिं० स्त्री०) विवाद करनेवाली स्त्री, झगड़ालू औरत। कलसरी देखो।

कलसी (सं० स्त्री०) कलस-ङीप्। १ कलस, घड़ा। २ पृश्निपर्णी, पिठवन। ३ शिखर, कंगूरा।

कलसीक (सं०क्ली०) कलसी स्वार्थे कन्। कलस, घड़ा।

"अवलम्बित कर्णशष्कुली कलसीकं रचयन्नवोचत।" (नैषध २.८)

कलसीसुत (सं० पु०) कलस्यां जातः सुतः, मध्यपदलो०। कलसीसे उत्पन्न होनेवाले अगस्त्य मुनि।

कलसोदधि (सं० पु०) कलस इव उदधिः-मन्थनाधारत्वात्। समुद्र। मन्थनका आधार होनेसे समुद्रकी उपमा कलससे दी गयी है।

कलसोदरी (सं० स्त्री०) कलस इव उदरं यस्याः, बहुव्री०। कलसकी भांति उदर रखनेवाली स्त्री, जिस औरतके घड़ेकी तरह पेट रहे।

कलस्वन (सं० त्रि०) मनोहर शब्द करनेवाला, जो दिलकश आवाज़ लगाता हो।

कलस्वर (सं० पु०) कलश्चासौ स्वरश्चेति, कर्मधा०। कलरव, मधुर अव्यक्त शब्द, गानेकी मीठी और बारीक आवाज़।

कलह (सं० पु०-क्ली०) कलं कामं हन्ति अत्र, कल-हन् अधिकरणे ड। १ विवाद, झगड़ा। इसका संस्कृत पर्याय—युद्ध, आयोधन, जन्य, प्रधन, प्रविदारण, मृध, आस्कन्दन, संख्या, समीक, साम्परायिक, समर, अनीक, रण, विग्रह, सम्प्रहार, अभिसम्पात, कलि, संस्फोट, संयुग, अभ्यामर्द, समाघात, संग्राम, अभ्यागम, आहव, समुदाय, संयत्, समिति, आजि, समित्, युध, अमीक, साम्परायक, संस्फेट और युत् है। २ पथ, राह। ३ खड्गकोष, तलवारका स्थान। ४ प्रतारण, झिड़की। ५ छल, धोका। ६ मुण्डी।

कलहंस (सं० पु०) कलेन मधुरास्फुटध्वनिना विशिष्टो हंसः, मध्यपदलो०। १ कादम्ब, एक हंस। इसका संस्कृत पर्याय—कादम्ब, कलनाद और मरालक है। २ राजहंस। "कुन्दावदाताः कलहंसमालाः प्रतीयिरे श्रोत्रसुखैर्निनादैः।" (भट्टि) ३ पीतवर्ण हंस, पीला हंस। ४ जलकुक्कुट, मुर्गाबी। ५ राजश्रेष्ठ, बड़ा राजा। ६ परमात्मा। ७ ब्रह्म। ८ ब्राह्मण। ९ एक रागिणी। यह मधु, शङ्करविजय और आभीरीके योगसे निकलता है। १० छन्दोविशेष। यह अतिजगतीके अन्तर्भूत और त्रयोदश अक्षरविशिष्ट होता है। इस छन्दमें १म, २य, ४र्थ, ६ष्ठ, ७म, ८म, १०म एवं ११श अक्षर लघु और ३य, ५म, ९म, १२श तथा १३श अक्षर गुरु लगता है।

उदाहरण नीचे देखिये—

"यमुना विहार कुतुकी कलहंसी व्रजकामिनी कमलिनी कृतकेलिः।
जनचित्तहारिकलकण्ठनिनादः प्रमदं तनोतु तव नन्दतनूजः॥"

(छन्दोमञ्जरी)

कोई कोई इसको 'सिंहनाद' भी कहता है।

कलहंसक (सं० क्ली०) अरोचकाधिकारका कवल मात्र, भोजन अच्छा न लगने पर दवाके पानीका कुल्ला।

कलहकार (सं० त्रि०) कलहं करोति, कलह-कृ-खल्। विवादकारी, झगड़ालू।

"इन्द्र कलहकारोऽसौ शब्दकारः पपात खम्।" (भट्टि)

कलहकारक, कलहकार देखो।

कलहकारी (सं० त्रि०) कलह क णिनि। विवाद कारक, झगड़ालू।

कलहकारी (सं० स्त्री०) विवादपरायणा स्त्री।

कलहनाशन (सं० पु०) कलहं नाशयति कलह नश-णिच् ल्यु। १ कुटज वृक्ष। २ पूति करञ्ज, करञ्ज। ३ कलह मिटानेवाला, जो झगड़ा मिटाता हो।

कलहनी (हिं०) कलहिनी देखो।

कलहन्तरिता (हिं०) कलहान्तरिता देखो।

कलहप्रिय (सं० पु०) कलह प्रियो यस्य, बहुव्री०। १ नारद। नारदको कलह बहुत अच्छा लगता है। (त्रि०) २ विवादप्रिय, झगड़ेसे खुश रहनेवाला।

कलहप्रिया (सं० स्त्री०) कलहस्य कलहे वा प्रिया, ६ वा ७ तत्। शारिका, मैना।

कलहर—मध्यप्रदेशवासी एक वणिक जाति। कलहर अधिकांश दुकानदार हैं। मध्यप्रदेशमें इनकी संख्या अधिक देख पड़ती है। अकेले बैतगढ़ा प्रदेशमें ही ३ हजारसे अधिक कलहर रहते हैं। यह जाति प्रधानतः तीन भागोंमें विभक्त है—सिहोरा, परदेशी और जैन कलहर। सिहोरे पहले बुन्देलखण्डमें रहते थे। फिर वहींसे आकर यह मध्यप्रदेशमें बसे। पहले सिहोरे अपनेको अमर बनिया कहते थे।

परदेशी ही मध्यप्रदेशके आदि कलहर हैं। यह कहते हैं—हम भारतके उत्तरांशसे आकर मध्य प्रदेशमें बसे हैं। जैन कलहर धर्मावलम्बन और वर्णसङ्कर होनेसे दूसरे कलहरोंसे छोटे समझे जाते हैं।

कलहांकुरा (सं० स्त्री०) शारिका मैना।

कलहान्तरिता (सं०स्त्री०) कलहात् अन्तरिता पश्चात् परितापमाप्ता इति शेष। नायिका विशेष एक औरत। इसका लक्षण यह है—

> "चाटुकारमपि प्राणनाथं रोषादपास्य या।
> पश्चात्तापमवाप्नोति कलहान्तरिता तु सा।" (साहित्यदर्पण)

जो नायिका प्रथम चाटुकारी नायकको रोषसे छोड़ पीछे पछताती, वह कलहान्तरिता कहाती है। उदाहरण यथा—

> "नो चाटुश्रवणं कृतं न च दृशा हारान्तिके वीक्षितः
> कान्तस्य प्रियहेतवो निजसखीवाचोऽपि दूरीकृताः।
> पादान्ते विनिपत्य तत्क्षणमसौ गच्छन् मया मूढया
> पाणिभ्यामवरुध्य हन्त सहसा कण्ठे कथं नार्पितः।" (साहित्यदर्पण)
> 'आरती नाथ बृथा करि' यास को हार हरी न समीप निहारी।
> लाजी सखी न सखीनकी बातु अंग लगी नहिं यस न आरी॥
> एक भीख सों हरि बारी लसी आस गयो निज धाम सिधारी।
> जाने न होत भुजन सों पीछे कलमली हरणा कर लावो॥ १॥

आन्ति, सन्ताप सम्मोह, निश्वास, ज्वर और प्रलापादि कलहान्तरिताकी क्रिया है। (रसमञ्जरी)

कलहापहृत (सं० त्रि०) कलहेन अपहृतम्। विवादसे अपहृत झगड़ेसे लिया हुआ।

कलहंस (सं० पु०) हंसविशेष एक हंसी। मधुर एवं अस्फुट ध्वनियुक्त हंसको कलहंस कहते हैं।

कलहिनी (सं० स्त्री०) १ गणिकी पत्नी। २ विवाद करनेवाली स्त्री, झगड़ालू औरत।

कलही (सं० त्रि०) कलह इनि। कलहयुक्त झगड़ालू।

कलहु—अफगानी सवथ संख्याविशेष विश्वकी खास बड़ी अवर। इसका प्रधान नाम 'करन' है।

कला (सं० स्त्री०) कलयति कवितो वर्ण अधिगोति कल अच टाप्। १ मूलधनवृद्धि, सूद, व्याज। २ शिल्पादि, कारीगरी करनेका ढङ्ग। ३ अंश, हिस्सा। ४ तीस काष्ठा परिमित समय। ५ उभय धातुके मिश्रणस्थानका अवकाश, दो धातुओंके मिलनेकी जगहका खोखा। इसीके द्वारा रस रक्तादि धातु प्रवाह हो सकते हैं। ६ ओखा रङ्ग। ७ नौका, नाव। ८ कपट, फरेब। ९ राशिके अंशका एक भाग। राशिका ३० वां अंश भाग और अंशका ६० वां खण्ड कला कहलाता है।

> "लिप्ताकला षष्टि भाग स्यात् भाग्य कला कथ्यते।
> त्रिंशद्भागा राशिरिति यवनैरभिधीयते॥" (वृहत्संहिता)

१० चन्द्रका षोडश भाग। इनका नाम अमृता, मानदा, पूषा, तुष्टि, पुष्टि, रति, धृति, शशिनी, चन्द्रिका कान्ति, ज्योत्स्ना, श्री, प्रीतिरङ्गदा, पूर्णा, पूर्णामृता और अवहा है। चन्द्रके यह कलायें अग्नि प्रभृति देव क्रम क्रम पीते हैं। इसीसे दिन दिन घटने पर अमावस्या होती है। अग्निके प्रथम सूर्यके द्वितीय, विश्वेदेवके तृतीय वरुणके चतुर्थ, वषट्कारके पञ्चम,

इन्द्रके षष्ठ, देवर्षिके सप्तम, अजैकपादके अष्टम, यमके नवम, वायुके दशम, उमाके एकादश, पितृलोकके द्वादश, कुबेरके त्रयोदश, पशुपतिके चतुर्दश और प्रजापतिके पञ्चदश कला पीने पर षोडश कला जलमें घुस कर ओषधिके शरीरपर पहुंचती है। गो सकलके जल तथा ओषधि प्रविष्ट कला पीने पर अमृत स्वरूप घीर होकर निकलती है। इस घोरजात घृतको मन्त्रपूत बना अग्निमें आहुति देनेसे चन्द्र फिर दिन दिन आप्यायित होते हैं।

११ सूर्यका द्वादश भाग। इनका नाम तपिनी, तापिनी, धूम्रा, मरीचि, ज्वालिनी, रुचि, सुषुम्ना, भोगदा, विश्वा, बोधिनी, धारिणी और क्षमा है।

१२ अग्नि-मण्डलका दशम भाग। इन्हें धूम्रा, अर्चि, उष्मा, ज्वलिनी, ज्वालिनी, विस्फुलिङ्गिनी, सुश्री, सुरूपा, कपिला और हव्यकव्यवहा कहते हैं।

१३ चतुःषष्टि (६४) कला। शिवतन्त्रमें इन सकल कलाओंका नाम मिलता है, यथा—गीतवाद्य, नृत्य, नाट्य, चित्र, भूषण, निर्माण, तण्डुल तथा कुसुमादिसे पूजाके उपहारकी सज्जा, पुष्पशय्या, दन्तवसन-अङ्गराग, मणिभूमिकाका कर्म, शय्यारचना, उदकवाद्य, चित्रायोग, माल्यग्रन्थन, चूड़ानिर्माण, वेशभूषाकरण, कर्णपत्रभङ्ग, गन्धलेपन, भूषणयोजना, इन्द्रजाल, कौमारयोग, हस्तलाघव, विविध शाकयूपादि भक्ष्य प्रस्तुतकरण, पानकरस-रागासवादि, योजना, सूचीवापकर्म, सूत्रक्रीडा, प्रहेलिका, प्रतिमाला, दुर्व्वचक योग, पुस्तक पाठ, नाटिका एवं आख्यायिका दर्शन, काव्य समस्यापूरण, पट्टिकावेत्रवाणविकल्प, तर्ककर्म, तक्षण, वास्तुविद्या, रौप्यरत्नादि परीक्षा, धातुवाद, मणिरागज्ञान, आकरज्ञान, वृक्षायुर्वेद योग, मेष कुक्कुट एवं लावक युद्धविधि, शुकशारिका प्रलापन, उत्सादन, केशमार्जन कौशल, अक्षर मुष्टिका कथन, म्लेच्छित कविकल्प, देशभाषाज्ञान, पुष्पशकटिका निमित्तज्ञान, यन्त्रमातृका, धारणमातृका, सम्पाठ्य, मानसी काव्य क्रिया, क्रियाविकल्प, छलितक योग, अभिधान-कोष-छन्दोज्ञान, वस्त्रगोपन, द्यूतविशेष, आकर्षण क्रीडा, बालक्रीडनक, वैनायिकी विद्याज्ञान, वैजयिकी विद्याज्ञान और वैतालिकी विद्याज्ञान। किसी किसी पुस्तकमें सूचीवाप कर्म तथा सूत्र क्रीडाको एक पद बना वीणाडमरुक वाद्य अधिक सन्निवेश और वैतालिकीके स्थान पर वैयासिकी पाठ देख पड़ता है। १४ जिह्वा, जीभ।

"कलां पराङ्मुखीं कृत्वा त्रिपथे परियोजयेत्।" (हठयोगदीपिका)

१५ शिव। १६ लेश। १७ अल्प समय। १८ विभूति। १९ सामर्थ्य, ताक़त। २० संख्या, शुमार। २१ शौर्यादि गुण, बहादुरी वग़ैरह सिफ़त। २२ कलन। २३ त्रिमीयणकी ज्येष्ठा कन्या। यह मरीचिकी पत्नी थीं। २४ जीव देहस्थ षोडशकला। इन्हें प्राण, श्रद्धा, व्योम, वायु, जल, पृथिवी, इन्द्रिय, मन, अन्न, वीर्य, तपः, मन्त्र, कर्म, लोक और नाम कहते हैं। २५ मात्रायुक्त एक लघु वर्ण।

"यद् विषमेऽष्टौ समे कलास्ताश्च समे स्युर्नो निरन्तराः।
न समात् पराश्रिता कला वैतालीयेऽन्ते रलौ गुरुः॥" (वृत्तरत्नाकर)

२६ ठाट, बनाव। २७ कदली, केला। पहले भारतमें केलाकी नाव बना जलपथसे आते-जाते थे। बड़े बड़े केलेके वृक्ष काट बांससे बंधने पर यह नाव बनती है।

कलाई (हिं० स्त्री०) १ कलाची, पहुंचा। हथेलीके ऊपरी जोड़को कलाई कहते हैं। पुरुषके रक्षा बांधने और स्त्रीके चूड़ी पहनानेका स्थान कलाई ही है। कवितामें यह शब्द प्रायः आता है। २ व्यायामविशेष, एक कसरत। इसे दो मनुष्य मिलकर करते हैं। एक दूसरेकी कलाई बलपूर्वक पकड़ता और दूसरा अपनी कलाई घुमा उंगलियोंके सहारे उसकी कलाईपर चढ़ाया करता है। ३ कलायी, पूला। ४ पूजा। यह पार्वत्य प्रदेशमें फसल आने पर होती है। फसल कटनेसे पहले दश-बारह बालका पूला बांधकर कुल देवताको अर्पण करते हैं। ५ कुकरी, सूतकी लच्छी। ६ कलावा। यह हाथीके कण्ठमें बंधती है। पालक इसीमें पद डाल हाथीको हांकते हैं। ७ अलान, अंदुई। ८ माष, उड़द।

कलाकन्द—अतिजगती नामक छन्दका एक भेद।

कलाकन्द (फा॰ पु॰) मिष्टान्न विशेष, किसी किस्मकी बरफी। यह खोया और मिश्री मिलाकर बनाया जाता है।

कलाकर (हिं॰ पु॰) वृक्षविशेष, एक पेड़। (Unona longiflora) यह पत्तोंकी भांति देखनेमें अति सुन्दर लगता है। इसे देवदारी भी कहते हैं। कलाकर भारतवर्ष और ब्रह्मदेशमें उत्पन्न होता है। किन्तु मन्द्राजमें इसको अधिक ... है। दाक्षिणात्यमें अशोक न होनेसे लोग कलाकरको ही अशोक कहा करते हैं।

कलाकुल (सं॰ क्ली॰) विष, ज़हर।

कलाकुशल (सं॰ त्रि॰) कलासु गीतादि चतुःषष्टि कलाविषये कुशलः निपुणः, ७-तत्। गीतादि चौंसठ कलामें निपुण, हुनरमन्द, नाचने गानेमें होशियार।

कलाकूट, कलाकुल देखो।

कलाकेलि (सं॰ पु॰) कलाभिः केलिः विलासो कलासु केलिर्यस्य बहुव्री॰। १ कन्दर्प, कामदेव। (त्रि॰) २ विलासी, मौजी।

कलाकौशल (सं॰ क्ली॰) कलाका चातुर्य, हुनरकी सफाई।

कलाक्षेत्र—कामरूपका एक प्राचीन तीर्थ। (योगिनीतन्त्र)

कलाङ्कुर (सं॰ पु॰) १ सारसपक्षी। २ चौरशास्त्र प्रवर्तक कर्णीसुत। ३ कंसासुर।

कलाङ्कुश (सं॰ पु॰) वस्त्रविशेष, एक हथियार।

कलाङ्गुलि (सं॰ पु॰) माहि धान्यविशेष, किसी किस्मका धान।

कलाचिक (सं॰ पु॰) दर्वी, चमच।

कलाचिका (सं॰ स्त्री॰) कलां अचति गच्छति प्राप्नोति वा, कला अच्-अच् कार्ये अच् टाप् अत इत्वम्। १ प्रकोष्ठ, कलाई। कूर्पर (कुहनी) से मणिबन्ध (पहुंचे) पर्यन्त हस्तभागको कलाचिका वा प्रकोष्ठ कहते हैं। २ अग्रके बाहुका पश्चिम भाग, कोहेसे कुहनीका अगला हिस्सा।

कलाची (सं॰ स्त्री॰) कला अच अच्-ङीप्। कलाचिका देखो।

कलाजङ्ग (हिं॰ पु॰) मल्लयुद्धका कौशल विशेष, कुश्तीका एक पेंच। इसमें पहलवानके हाथमें जब दूसरा पहलवान् दक्षिण पद पाशमें बढ़ाता, तब वह अपना वाम हस्त नीचेसे उसके दक्षिण हस्त पर जमाता है। फिर पहलवान् वाम जानु भूमि पर जमा दक्षिण हस्तसे उसकी दक्षिण जङ्घा पकड़ता और फिरसे उसके दक्षिण पार्श्वसे निकाल वाम हस्तसे उसका दक्षिण हस्त चौंकमें लगाता है। अन्तको दक्षिण हस्तसे विपक्षकी जङ्घा उठा वाम दिक् उसे गिराते हैं। कलाजङ्गसे पेंच कट जाते हैं।

कलाजाजी (सं॰ स्त्री॰) कलाके जायते, कला-जन ड टाप्। कलौंजी, मंगरैला।

कलाटव (सं॰ पु॰) गरुड़जाति, एक बाज।

कलाटीन (सं॰ पु॰) खञ्जन पक्षी, सफेद खड़रैचा।

कलाद (सं॰ पु॰) कलां स्वर्णरजत स्वर्णादीनां अंशं आदत्ते गृह्णाति, कला आ दा क। स्वर्णकार, सोनार।

कलादक (सं॰ पु॰) कलां स्वर्णरजत स्वर्णादीनां अंशं अत्ति भोजयति, कला-अद-ण्वुल्। स्वर्णकार, सोनार।

कलादगी—१ बम्बई प्रदेशके दक्षिण विभागका एक जिला। यह अक्षा॰ १५ ५०´ से १६ ४०´ उ॰ और देशा॰ ७५ ११´ से ७६ ११´ पू॰ तक अवस्थित है। क्षेत्रफल ५७५७ वर्ग मील लगता है। कलादगीके उत्तरांशमें भीमा नदी बीजापुरके पासहीसे निकल गयी है। इसके शोलापुर जिला और अक्कलकोट राज्य बीजापुरसे सलग्न पड़ा है। दक्षिणको मालप्रभा नदी, पूर्व एवं दक्षिणपूर्व निजामका राज्य और पश्चिम सुधोलराज्य जामखण्डी तथा आठ है।

यह स्थान प्राचीन दण्डकारण्यके अन्तर्गत है। कलादगीके निर्जन अरण्यमें वर्तमान हिन्दुओंके देवमन्दिरोंकी बहुत सी चोजें हैं। अपूर्व प्रस्तरखचित चौरादिक इधर उधर पड़े हैं। किन्तु इन सबके निर्माताको समझनेका कोई उपाय नहीं। कलादगी जिलेमें ऐहोली, बादामी, बागलकोट, भूवक्र, पट्टदकल, हिपर्गी और महाकूट प्रधान है। उक्त सकल स्थानोंको लोग पुण्य तीर्थ समझते हैं। देवों, ऋषियों और सिद्धोंको लीलाके प्रभावसे माहात्म्य सूचित हुआ है।

कलाबाजी देखो।

ठीक जमाना कठिन है—जब मन चाट कर बसती

डाली गयी थी। फिर भी प्रमाण मिला, कि सुदूर विगतकाल पर कलादगीमें नगर स्थापित हुवा। ई०के २रे शताब्दमें टलेमिने यहांकी बादामी, कलकेरी और इन्दी नामक नगरोका उल्लेख किया है। इन तीनोंमें बादामी वा वातापीपुरी नामक स्थान ही अतिप्राचीन है। पल्लव राजावोंने दुर्भेद्य दुर्ग बना निरापद प्रबल प्रतापसे राजत्व रखा था। ई०के ६ठे शताब्दमें चालुक्य राजा १म पुलिकेशीने पल्लवोंको हटा बादामी अधिकार किया। पुलिकेशीके पीछे ७६० ई० तक चालुक्योंका राज्य चला। फिर राष्ट्रकूट राजा हुये। ९७३ ई०में राष्ट्रकूटवंश गिर जानेसे कलचुरि और हयशाल वल्लाल वंशकी ठहरी। उन्होंने ११९० ई० तक राज्य किया। अनन्तर कलादगीमें देवगिरिके यादवोंका शासन लगा। उस समय देवगिरि (वर्तमान दौलताबाद) नगरमें यादव राजावोंकी राजधानी रही। १२९४ ई०को अलाउद्दीन्‌ने देवगिरिपर आक्रमण किया। यादववंशीय रामचन्द्र देवगिरिके राजा थे। उन्होंने मुसलमानोंके आक्रमणसे घबरा दिल्लीके अधीश्वरकी अधीनता मानी। ई०के १५वें शताब्द युसफ आदिल शाहने दक्षिणापथमें एक स्वाधीन राज्य जमाया। बीजापुर उसकी राजधानी बन गया। बिजापुर देखो।

पहले कलादगीके अनेक बौद्धस्तूप चीन-परिव्राजक यूअन्‌ चुयाङ्गने आकर देखे थे। उन्होंने इस राज्यकी ६०,०० लि (कोई साढ़े चार सौ कोस) विस्तृत लिखा है।

इस ज़िलेमें भीमा, कृष्णा, घोन, घाटप्रभा और मालप्रभा नदी प्रवाहित है। सिवा इनके और भी कितनी ही क्षुद्र स्रोतस्वती विद्यमान हैं। धोनका जल बहुत खारी, किन्तु दूसरी नदियोंका मीठा है।

कलादगीमें लोहा, स्लेट (तख़्तीका पत्थर), कालापत्थर, चूना, लाल बिल्लौर प्रभृति खनिज द्रव्य उत्पन्न होते हैं।

कृषिमें ज्वार, बाजरा, गेहूं और कपासकी उपज अधिक है। फिर अण्डे, अलसी, तिल और कुसुमकी भी कोई कमी नहीं। वसन्तके आगममें कुसुमका सुनहला फूल खिल जाता है।

वनमें व्याघ्र, शूकर, वृक (भेड़िये), शृगाल और हरिण रहते हैं।

जलवायु अत्यन्त मन्द नहीं। फिर भी यथाकालको वृष्टि बन्द रहनेसे अच्छा शस्य कम उपजता, जिससे दुर्भिक्ष पड़ता है। १३९६ ई०से १४०६ ई० तक बहुवर्षव्यापी दुर्भिक्ष लगा था। उसमें कलादगी एककाल ही उत्सन्न हुवा। दूसरे भी कई दुर्भिक्ष पड़े। १७९१ ई०में अन्नके अभावसे सैकड़ों नरनारियोंने प्राण छोड़ा। इस अकालको लोग कङ्कालरूपी महामारी कहते हैं। वास्तविक अकालमें मरे असंख्य स्त्रीपुरुषोंका कङ्काल भूगर्भ खोदते समय आज भी मिलता है।

कलाधर (सं० पु०) कलाः धरति, कला-धृ-अच्। १ चन्द्र, चांद। २ चतुःषष्टिकलाभिज्ञ व्यक्ति, चौंसठ कला जाननेवाला। ३ शिव। ४ छन्दोविशेष। यह दण्डकका भेद है। इसके प्रत्येक चरणमें १५ गुरु और १५ लघुके पीछे एक गुरु लगता है।

कलाधिक (सं० पु०) कुक्कुट, मुरगा।

कलानक (सं० पु०) शिवके एक अनुचर।

कलानाथ (सं० पु०) १ चन्द्र, चांद। २ गन्धर्वविशेष। इन्होंने सोमेश्वरसे सङ्गीत सीखा था।

कलानिधि (सं० पु०) कलाः निधीयन्ते ऽस्मिन्, कला-नि-धा-कि। १ चन्द्र, चांद। २ चतुःषष्टि कलाभिज्ञ व्यक्ति, हुनरमन्द।

कलानुनादी (सं० पु०) कलं अनुनदति, कल-अनु-नद-णिनि। १ शब्द निकालते निकालते गमनकारी, बोलते बोलते चलनेवाला। २ भ्रमर, भौंरा। ३ कलविङ्क, गौरवा। ४ चटक, चिड़ा। ५ कपिञ्जल, एक चिड़िया। ६ चातक, पपीहा।

कलान्तर (सं० क्ली०) अन्या कला अंशः, सुप्सुपेति समासः। १ लाभवृद्धि, सूद,व्याज। २ चन्द्रकी अन्यकला।

"पुपोष लावण्यमयान् विशेषान् ज्योत्स्नान्तराणीव कलान्तराणि।"

(कुमार १।२५)

कलान्यास (सं० पु०) कलानां न्यासः, ६-तत्। तन्त्रोक्त न्यासविशेष। शिष्यके शरीरपर कलान्यास करना चाहिये। पादतलसे जानुतक 'ओं निवृत्त्यै नमः',

जानुसे नाभितक 'ओं प्रतिष्ठायै नमः' नाभिसे वक्ष देश तक 'ओं विद्यायै नमः', वक्षसे ललाट तक 'ओं शान्त्यै नमः' और ललाटसे ब्रह्मरन्ध्र तक 'ओं शान्त्यतीतायै नमः' मन्त्र द्वारा न्यास कर पुनर्वार उक्त सकल मन्त्र द्वारा ब्रह्मरन्ध्रसे यथाक्रम पदतल तक लौट आते हैं।

कलापक (हिं०) कलापक देखो।

कलाप (सं० पुं०) कलां मात्रां आप्नोति, कला-आप अच्, कला आप्यते अनेन कला-आप्-घञ्-वा। [illegible]। १ समूह ढेर। २ मयूरपुच्छ, मोरकी पूंछ। ३ मेखला, चन्द्रहार। ४ अलङ्कार, जेवर।

"[illegible]" (कुमार)

५ तूण, तरकश। ६ चन्द्र, चांद। ७ चतुर होशियार आदमी। ८ व्याकरण विशेष। कलाप व्याकरणका अपर नाम कुमार और कातन्त्र है। कलापचन्द्र नामक ग्रन्थमें इस व्याकरणकी उत्पत्तिके सम्बन्ध पर लिखा है—

राजा शालिवाहन किसी महिषीके साथ जलक्रीड़ा करते थे। उनके वेगसे रानीने रतिके रसमें बहु कुछ मूर्ख राजाको कहा,—'मोदकं देहि देव' अर्थात् हे देव! हमपर पानी मत डालो। मूर्खता वश राजाने उक्त अवघटित पद न समझ रानीको एक मोदक (लड्डू) दिया था। इससे बुद्धिमती रानीने यह कर निन्दा उठायी—मेरे पति होते भी राजा मूर्ख हैं। शालिवाहनने भार्याकी यह बात शर्ववर्मा गुरुसे कही थी। फिर शर्ववर्माने उनको शिक्षाके लिये कातन्त्र (कलाप-व्याकरण) बनाया। कातन्त्र वा कलापकी रचनाके सम्बन्धमें एक किम्वदन्ती है।

शर्ववर्माने शालिवाहनको व्युत्पन्न बनानेके लिये प्रतिश्रुत हो कुमारकी आराधना लगायी थी। भगवान् कार्तिकेय आराधनासे प्रीत हो अपने व्याकरण ज्ञानके आविर्भावको 'सिद्धो वर्णसमाम्नाय' प्रथमाद्यरूप सूत्र उन्हें प्रदान किया। कुमारसे व्याकरणका प्रथम सूत्र मिलने पर इसका दूसरा नाम 'कुमारव्याकरण' पड़ गया।

दूसरी किम्वदन्ती यह है,—शर्ववर्माने शालिवाहनकी निकट प्रतिज्ञा कर कुमारकी आराधना उठायी थी। कुमार मयूर पर चढ़ उनके समक्ष आविर्भूत हुये। शर्ववर्माने मयूरके कलापदेश पर 'सिद्धो वर्णसमाम्नायः' सूत्र लिखा देखा था। यह देखते ही उनके मनमें व्याकरणका पूर्ण ज्ञान आ गया।

शर्ववर्माने उक्त सूत्रको प्रथम रख कातन्त्र व्याकरण बनाया है। मयूरके कलापमें प्रथम सूत्र लिखा रहनेसे इस व्याकरणका नाम कलाप पड़ा।

कलाप टीकाकारोंके मतानुसार शर्ववर्माने ईषत् तन्त्र अर्थात् अल्पसूत्रमें यह व्याकरण प्रणयन किया था। इसीसे इसका नाम कातन्त्र हुआ।*

भारतमें कलाप नाम प्रसिद्ध है। वैयाकरण पाणिनिसे भी इसीको बड़ा मानते हैं। वास्तविक केवल कलाप व्याकरणको आद्योपान्त मन लगाकर पढ़नेसे विद्यार्थी पण्डित हो सकता है।

शर्ववर्माने कलापमें तीन अंशोंके सूत्र बनाये हैं— सन्धि चतुष्टय और आख्यात। उन्होंने कृत्सूत्र प्रणयन नहीं किये।

दुर्गसिंहने कलापकी वृत्ति बनायी थी। उनकी वृत्ति न रहनेसे कलापव्याकरण सुगम और व्याकरणके लिये सुबोधगम्य नहीं होता। दुर्गसिंहने अपनी वृत्तिमें असाधारण पाण्डित्यका परिचय दिया है। वास्तविक उसका देख चमत्कृत होना पड़ता है।

दुर्गसिंह देखो।

कलाप व्याकरणकी अनेक टीकायें भारतमें प्रचलित हैं। उनमें श्रीपति-रचित कलापवृत्तिटीका, त्रिलोचनकृत पञ्जिका, कविराजकृत कलापवृत्ति टीका, हरिरामकृत व्याख्यासार, रघुनाथशिरोमणि रचित व्याख्या, कातन्त्रचन्द्रिका और चतुर्वृत्ति प्रसिद्ध हैं।

---

* (१) "[illegible]" (त्रिलोचनकृत कातन्त्रपञ्जिका)
(२) "ईषत्तन्त्रं कातन्त्रम्। [illegible]।" (हरिराम कृत कातन्त्रचन्द्रिका)

९ ग्रामविशेष, एक गांव। (भारत ६।९।५८) १० अस्त्रविशेष, एक हथियार। (भारत ६।५।१८) ११ वाण, तीर। १२ वेणु, गाय। १३ व्यापार, काम।

"इन्द्रदत्तस्यास्य कलापयते।" (साहित्यदर्पण)

कलापक (सं० पु०-क्ली०) कलाप संज्ञायां कन्। १ हस्तीका गलबन्ध, हाथीका गेलावां। स्वार्थे-कन्। २ कलाप। कलाप देखो।

यस्मिन् काले मयूराः कलापिनो भवन्ति मकलापि तस्मिन् काले देयं ऋणम्, कलापिन्-वुन्। ३ ऋणविशेष। ४ कविताविशेष, किसी किस्मकी शायरी। चार प्रकारकी कविता एकत्र मिल जानेसे कलापक कहाता है,—

"छन्दोबद्धपदं पद्यं तेनैकेन च मुक्तकम्।
द्वाभ्यान्तु युग्मकं सन्दानितकं त्रिभिरिष्यते।
कलापकं चतुर्भिश्च पञ्चभिः कुलकं मतम्।" (साहित्यद० ६।३१८)

सन्दानितकका नामान्तर विशेषक है। किसी किसी ग्रन्थमें 'त्रिभिः श्लोकैर्विशेषकम्' पाठ मिलता है।

कलापग्राम (सं० पु०) कलापनामको ग्रामः, मध्यपदलो०। ग्रामविशेष, एक गांव। महाभारतमें लिखा—कलापग्राम हिमालयके उत्तर बसा है।

"हिमवन्तमतिक्रम्य कलापग्राममाविशत्।" (भविष्य ब्रह्मखण्ड ११।११)

कलापच्छन्द (सं० पु०) मुक्ताका एक आभूषण, मोतियोंका एक गहना। इसमें मोतियोंकी चौबीस लड़ियां लगती हैं।

कलापटी (हिं० स्त्री०) नौकाकी पटरियोंमें शण प्रभृतिका प्रवेशनकार्य, जहाजकी पटरियोंमें सन् वगैरहका ठूंसा जाना। यह शब्द पोर्तगीज 'कलफेटर'का अपभ्रंश है।

कलापद्वीप (सं० पु०) कलापः तन्नामको ग्रामः द्वीप इव, उपमितस०। कलापग्राम, एक पुराना बसती। कलापद्वीपमें सोमवंशीय देवर्षि और सूर्यवंशीय सुदर्शन—दो ऋषि तपस्या करते हैं। कलियुगके अन्तमें यही दोनों ऋषि चन्द्र और सूर्यवंश पुनः चलावेंगे। (भागवत)

कलापशिरा (सं० पु०) एक मुनि।

कलापा (सं० स्त्री०) चन्द्रहारके तीन कारणका ग्राम।

कलापानुसारी (सं० पु०) कलापव्याकरणका मतानुयायी।

कलापिनी (सं० स्त्री०) कलापसन्त्यस्याम्, कलाप-इनि-ङीप्। १ रात्रि, रात। २ नागरमुस्ता, नागरमोथा। ३ मयूरी, मोरनी।

कलापी (सं० पु०) कलापोऽस्त्यस्य, कलाप इनि। १ प्लक्ष वृक्ष, पीपलका पेड़। २ मयूर, मोर। ३ कोकिल, कोयल। ४ तूण वाणादिधारी, तरकश तीर वगैरह रखनेवाला। ५ कलाप व्याकरणाध्यायी। ६ वैशम्पायनके एक छात्र। ७ मयूरके पक्ष फैलाकर नाचनेका समय।

कलापूर (सं० पु०-क्ली०) वाद्ययन्त्रविशेष, एक बाजा।

कलापूर्ण (सं० पु०) कलाभिः पूर्णः, ३-तत्। १ चन्द्र, चांद। २ चतुःषष्टि कलाभिज्ञ, हुनरमन्द। ३ अंगभावसे परिपूर्ण, एक छिन्नसे भरा हुवा।

कलाबतून (तु० पु०) १ स्वर्ण वा रौप्यमय सूत्र, सोने या चांदीका तार। यह रेशमपर चढ़ाकर लपेटा जाता है। २ कलाबतूनका फीता। यह रूपरेसे पतला रहता और कपड़ेके किनारे पर टंकता है।

कलाबतूनी (तु० वि०) स्वर्ण रौप्य प्रभृतिके सूत्रसे निर्मित, कलाबतूनसे तैयार किया हुवा।

कलाबत्तू (हिं०) कलाबतून देखो।

कलावान् (हिं० वि०) नटक्रिया कारक, कला खानेवाला, जो सफाईसे उछलता कूदता हो।

कलावाली (हिं० स्त्री०) १ नटविद्या, उछलने कूदनेका हुनर, ढेकली। २ नृत्यादि, नाच वगैरह।

कलावोन (हिं० पु०) वृक्षविशेष एक पेड़। यह चीहट, चट्टग्राम और ब्रह्मदेशमें उपजता है। ऊंचाई ४०।५० फीट रहती है। फलका बीज मुंगरा चावल या कलौंजी कहाता है। इसका तेल चर्मरोग पर चलता है।

कलाभृत् (सं० पु०) कलां बिभर्ति, कला-भृ क्विप् तुगागमश्च। १ चन्द्र, चांद। २ गीतादि कलाभिज्ञ, हुनरमन्द।

कलाम (अ० पु०) १ वाक्य, जुमला। २ कथन, बात। ३ प्रतिज्ञा, वादा। ४ वक्तव्य, एतराज।

कलामक (सं० पु०) कलाम कनि पृषोदरादित्वात् साधु। कलमधान्य, जड़हन।

कलामोचा (हिं० पु०) धान्यविशेष किसी किस्मका धान। यह प्रधानतः बङ्गालमें होता है।

कलाम्बि कलम्बिका देखो।

कलाम्बिका (सं० स्त्री०) कला अर्थं विकायवी प्रयुञ्जति अस्याम्, कला पि-अी क-टाप् पृषोदरादित्वात् साधु। १ अवदान, कर्ज देनेको फायदा। २ हरि कौड़िका, सूदखोरी।

कलाय (सं० पु०) कलां अयते कला अय अच्। शिम्बीधान्यविशेष, मटर। (Pisum sativum) इसका संस्कृत पर्याय—सतीलक हरेणु खण्डिक, त्रिपुट, अतिवर्तुल, सुखवचक, यामन शीतक, कण्ठी, सतील हरेणुक, सतीन और सतीलक है। भाव प्रकाशके मतसे यह मधुररस पाकमें मधुर, रूक्ष और वायुवर्धक होता है।

कलायका शाक ईषत् कषाययुक्त मधुररस रुक्ष भेदक और वायुप्रकोपक है। (राजनिघण्टु)

कलायक (सं० पु०) कलमधान्य जड़हन। यह किञ्चित् कषाय मधुर, गन्धप्राप्तिप्रमत्त, पथ्य, ईषत् वातल पित्तघ्न और मूत्रवर्धकरूप होता है। (भावप्रकाश)

कलायका (सं० स्त्री०) १ मटरकी मटरिया। २ गन्धदूर्वा पानीपर होनेवाली एक दूब।

कलायखञ्ज (सं० पु०) वातरोगभेद, पांवकी एक बीमारी। इस रोगसे मनुष्य गमनारम्भमें खञ्जकी भांति लड़खड़ाने लगता है। कारण उसकी सन्धिका बन्धन ढीला पड़ जाता है। (सुश्रुत) खञ्ज और पङ्गुकी भांति इसकी भी चिकित्सा करना चाहिये। कलायखञ्ज रोगमें तिल खानेसे बड़ा उपकार होता है।

कलायपञ्ज कलायखञ्ज देखो।

कलायन (सं० पु०) कलानां नृत्यगीतादीनां अयनं प्राप्तिर्यस्य बहुव्री०। नर्तक तलवारकी धारपर नाचनेवाला।

कलायमाष (सं० स्त्री०) माषविशेष, मटरका साग। यह भेदक, लघु और त्रिदोषको जीतनेवाला है। (भावप्रकाश)

कलायसूप (सं० पु०) कलायकृत सूप, मटरकी बीच या रसा। यह लघु, ग्राही सुशीतल रूक्ष और पित्त, कफोत्पन्न तथा कफनाशक होता है। (वैद्यकनिघण्टु)

कलाया (सं० स्त्री०) कलाय टाप्। १ गन्धदूर्वा पानीपर होनेवाली एक दूब। गण्डदूर्वा देखो। २ मोता दूर्वा, सफेद दूब। ३ कण्टकयुक्त बाबा चना।

कलार (हिं० पु०) कलवार, कलवार।

कलाहला (सं० स्त्री०) अर्धसंकेतकी डग पोशा बैरका।

कलाल (हिं० पु०) कलवाल शराब बेचनेवाला कलवार।

कलालाप (सं० पु०) कलं मधुरास्फुटं आलपति, कल आ-लप्-अच्। १ भ्रमर, गूंजनेवाला भौंरा। कर्मधा०। २ मधुर आलाप, मीठी बोली। (त्रि०) ३ मधुर आलापकारी, मधुर बोलनेवाला।

कलावती (सं० स्त्री०) कला सङ्गीताद्या सन्ति अस्याम्, कला मतुप् ङीप् मस्य व बहुव्री०। १ तुम्बुरु नामक गन्धर्वकी वीणा। २ द्रुमिल राजाकी पत्नी। ३ राधिकाकी माता। ४ अप्सरोविशेष, कोई परी। ५ गङ्गा। "ऊर्मिला कलावती।" (काशी २९ अ०) ६ दीक्षाविशेष। तन्त्रसारमें इसका नियम लिखा है—शिष्यको उपवासी रह नित्यक्रिया समापनपूर्वक प्रथम अधिवासनके साथ सङ्कल्प करना चाहिये। गुरु आचमन कर द्वारदेशमें सामान्य अर्घ्यदानपूर्वक द्वारको पूजे। फिर उन्हें दक्षिणपद आगे बढ़ा द्वारको बाम शाखा छू और दक्षिण पद सिकोड़ मण्डपमें प्रवेश करना चाहिये। वहां गुरु नैऋत दिक्में वास्तुपुरुष और ब्रह्माको पूजते हैं। इसके पीछे उन्हें दिव्य अन्तरि आकाशको और देख दिव्य विघ्न अस्त्र मन्त्र पढ़ कर द्वारा अन्तरीक्ष विघ्न और वाम पार्ष्णिके आघात द्वारा भौम विघ्न हटाना पड़ता है। तदुपरान्त हृष्ट अस्त्रमन्त्रसे अभिमन्त्रित कर गुरु बैठते हैं। फिर गुरुको आसनशुद्धि स्वस्तिवाचन, शिरोरक्षण एव गन्ध पद्धति द्वारा मण्डपशोधन करना और इष्टिका पूजा द्रव्य वाम सुवासित जलपूर्ण कुम्भ तथा दक्षिणदेशको जल प्रक्षालनकी विधि एव पात्र रखना पड़ता है। इसके पीछे सर्वदिक खुलता प्रदीप जला गुरु

ध्यानपूर्वक वाम और गुरु, परमगुरु एवं परापर, दक्षिण गणेश और मध्यमें इष्टदेवताको वह प्रणाम करते हैं। अस्त्रमन्त्र एवं गन्धपुष्प द्वारा दोनों हाथ संशोधन करने पीछे उन्हें ऊर्ध्व दिक् तीन तालि और दशदिक् तुडिसे बांधना चाहिये। फिर गुरु वह्नि, वीज तथा जलसे वह्निके प्राकारको सींच भूतशुद्धि करते हैं। इसके पीछे मातृकान्यास, प्राणायाम, पीठन्यास, ऋष्यादिन्यास और मन्त्रन्यास होता है। फिर गुरुको मुद्रा देखा ध्यान, मानसपूजा और अर्घ्य-स्थापन करना चाहिये। इसके पीछे अर्घ्यपात्रसे किञ्चित् जल प्रोक्षणीपात्रमें डाल उसी जलसे आत्मा और पूजाके उपकरणको गुरु तीन बार सींचते हैं। पीठमन्त्रसे शरीरमें धर्मादिकी पूजा की जाती है। फिर हृत्पद्मके पूर्व आदि केशरोंमें पीठशक्ति पूज मध्यमें पीठपूजा होती है। हृदयमें मूल देवताको पूजा नैवेद्य व्यतीत केवल गन्धादि द्वारा करते हैं। इसके पीछे मस्तक, हृदय, मूलाधार, पद प्रभृति सब अङ्गोंमें मूलमन्त्रसे पाच पुष्पाञ्जलियां दे यथाशक्ति मन्त्र जप समापन करना चाहिये।

यह समस्त कार्य प्रोक्षणीपात्रके जलसे सम्पादित होता है। फिर प्रोक्षणीका जल बदल बहिःपूजा आरम्भ करते हैं। प्रथम शारदोक्त सर्वतोभद्रमण्डलके आदिका अन्यतम मण्डल विधान कर घट रखना चाहिये। मण्डलकी पूजाके पीछे कर्णिका धान्य पूर्ण कर तण्डुल फैलाते हैं। फिर तण्डुलोंपर कुश विस्तार-पूर्वक आतपतण्डुल संयुक्त कुशासन विन्यास किया जाता है। इसके पीछे मण्डलमें पीठोक्त देवता और प्रादक्षिण्यके वह्निकी दशकलाको विन्यास कर पूजना पड़ता है। फिर अस्त्र मन्त्रसे प्रक्षालन, चन्दन, अगुरु एवं कर्पूरसे धूपदान और त्रिगुण सूत्रसे वेष्टन कर स्वर्ण आदिसे रचित कुम्भको पूजते हैं। इसके पीछे कुम्भमें विष्टर, आतपतण्डुल एवं नवरत्न डाल और प्रणव उच्चारणपूर्वक कुम्भ तथा पीठका एकत्व पीठ-स्थापन करना पड़ता है। फिर कुम्भकी चारो दिक् घेर सूर्यकी द्वादश कलाका स्थापनपूर्वक पूजते हैं।

इसके पीछे आत्माके भेदसे मातृकामन्त्र प्रतिलोम भावमें जप, देवता बुद्धि पर वटादि वृक्ष किंवा पञ्चाम्र वल्कलके कषाय, तीर्थजल अथवा सुवासित कषाय द्वारा कुम्भ भरना चाहिये। चन्द्रकी अमृत आदि षोडशकलाको प्रादक्षिण्यसे जलमें चिन्ता तथा मन्त्र द्वारा पूजा कर और एक शङ्ख वटादि वृक्षके कषाय प्रभृतिसे भर अष्ट गन्धद्रव्यसे विलोडित करते हैं। उसमें आवाहनपूर्वक सकल कलाओंकी पूजा होती है। प्रथम अग्निकी दश कला पूजी जाती हैं। प्रति-लोम भावसे मूल मन्त्रका जप और मनही मन मन्त्र-देवताका ध्यान करते हैं। फिर प्राणप्रतिष्ठापूर्वक प्रत्येकको पूजना पड़ता है। इसके पीछे सूर्यकी तपिनी आदि द्वादश और चन्द्रकी अमृत आदि षोडश कलाको आवाहन कर पृथक् पृथक् पूजते हैं। परि-शेषको पचास कलाकी पूजा करना पड़ती है। सृष्टि आदि कवर्ग एवं चवर्ग दश, जरादि टवर्ग तथा तवर्ग दश, तीक्ष्णादि पवर्ग एवं यवर्ग दश, पीतादि षवर्ग पञ्च और निवृत्यादि अवर्ग षोड़श कलाओंकी पूजना चाहिये। समर्थ होनेसे प्रत्येकको आवाहन कर पाद्य आदिसे पूजा करना उचित है। फिर कलामय शङ्खका साथ कुम्भमें डालते हैं। कुम्भका मुख अश्वत्थ, पनस एवं आम्रपल्लव इन्द्रवल्लीसे लपेट कल्पवृक्ष बुद्धिसे आच्छादन करना चाहिये। फिर कल्पवृक्षफल बुद्धिसे उक्त मुखपर फल, आतप और चसक रखना पड़ता है। इसके पीछे निर्मल पट्टवस्त्रद्वयसे कुम्भको वेष्टन और मूल मन्त्रसे कुम्भकी मूर्ति कल्पन कर यथोक्तरूप देवताके ध्यानपूर्वक आवाहनादि सहकारसे पूजा करते हैं। देवताके अङ्गमें अङ्गन्यास, धेनु एवं परमी-करणमुद्रा प्रदर्शन, प्राणप्रतिष्ठा और षोड़शोपचार पूजा समापन होनेपर १००८ वा १०८ बार मन्त्र जपा जाता है।

फिर मन्त्रके दश संस्कार समापन कर गुरुको शिष्यके नेत्रद्वय मन्त्र और वस्त्रसे बांधना चाहिये। पुष्प द्वारा उसकी अञ्जलि भर स्वयं मन्त्र पाठपूर्वक देवताकी प्रीतिके लिये गुरु कलसमें उक्त पुष्पाञ्जलि चढ़ाते हैं। इसके पीछे नेत्रका बन्धन खोल शिष्यको कुशासनपर बैठाना चाहिये। स्वकृत पूजाके क्रमानु-

बार मूलमन्त्रादि आदि विन्यासकर शिष्यके देहपर मन्त्रोंका न्यास करना पड़ता है। कुम्भस्थ देवताको पञ्चोप-चारसे पुनर्वार पूज समहूत शिष्यको पञ्च आसनपर बैठाते हैं। कुम्भके कलशस्वरूप सकल पल्लव शिष्यके मस्तकपर रख मन ही मन मातृका अपपूर्वक अभिषेक व विनोद अभिषेकके समय कुम्भका जल शिष्यके शरीरपर सेचन करना चाहिये। शिष्य अभिषिक्त जलसे आचमन ले वस्त्रादि परिवर्तनपूर्वक गुरुके समीप उपवेशन करता है। फिर गुरु शिष्यसंक्रान्त और आत्मदेवताको एक समान गन्धादि द्वारा पूजते हैं।

इसके पीछे सबसे शिष्यको शिक्षा बांध शिष्यके शरीरमें कलान्यास और मस्तकपर हाथ रख १०८ बार मन्त्र जप कर 'मैं अमुक मन्त्र तुम्हें सुनाता हूं' कहते हुये शिष्यके हाथपर जलदान करना पड़ता है। शिष्यको भी 'ददस्व' कहकर जल लेना चाहिये। फिर गुरु ऋष्यादियुक्त मन्त्र दिखातेके दक्षिण कर्णमें तीन बार तथा वाम कर्णमें एकबार और जो मा गुरुके वाम कर्णमें तीन बार एक दक्षिण कर्णमें एक बार सुनाते हैं। मन्त्रग्रहण पीछे शिष्यको गुरुके चरणपर गिर जाना और गुरुको उसे मन्त्र द्वारा उठाना चाहिये। शिष्य उठकर उक्त मन्त्र १०८ बार जपता और कुम्भ, तिल एक जल दे गुरुको यथाशक्ति दक्षिणा तथा दीक्षाके उपकरणो समस्त सामग्री प्रदान करता है। अन्यान्य ब्राह्मणोंको भी यथाशक्ति दान दे परितुष्ट करना पड़ता है। गुरु मन्त्रदानके पीछे अपनी शक्तिकी रक्षाके लिये १००८ वा १०८ बार मन्त्र जपते हैं। अन्तमें ब्राह्मणोंको मिष्टान्न आदि खिला शिष्य भोजन करता है। कारण दीक्षाके दिन गुरु और शिष्य दोनोंको उपवास विहित है।

कलावन्त (हि॰) कलावत् देखो।

कलावा (हि॰ पु॰) १ सूत्रविशेष, सूतका एक लच्छा। यह टेकुवीमें लिपटा रहता है। २ माङ्गलिक, रालीका लच्छा। इसका सूत्र रक्तपीत रहता है। इसे मङ्गल कार्यमें हस्त तथा कलश प्रभृति पर लपेट देते हैं। ३ हाथीके गरदनका एक सूत्र। इसमें कभी कहें रहती है। महावत कलावेमें अपना पैर डाल हाथीको चलाता है। ४ हस्तिकण्ठ, हाथीको गरदन।

कलावान् (सं॰ पु॰) कला: सन्त्यस्य, कला मतुप् मस्य व। १ सङ्गीतविद्यावित्, कलावत। २ चन्द्र, चांद। ३ नट, कलाबाजी करनेवाला। (त्रि॰) ४ कलाविशिष्ट, गुणसम्पन्न।

कलाविक (सं॰ पु॰) कलं अविकायति विशिष्ट रौति, कल-आ-वि कै क। कलाविकं, मुरगा।

कलाविकल (सं॰ पु॰) कलया कामाविष्टेन विकल अवयव:, ३-तत्। चटक, चिड़ा। चटक देखो।

कलाविचित्रका (सं॰ स्त्री॰) एक तन्त्रमात्रा।

कलाम (सं॰ पु॰) वाद्यविशेष, एक बाजा। यह अतिप्राचीन समयमें बजाया और समझेसे मढ़ाया जाता था।

कलासतिका (सं॰ स्त्री॰) एक तन्त्रमात्रा।

कलासी (हिं॰ स्त्री॰) देखाविशेष एक सतर। दो तख तीके जोड़को बढ़ईको कलासी कहते हैं।

कलाहक (सं॰ पु॰) कलं आहन्ति कल-आ-हन्-ड संज्ञायां कन्। काहल नामक वाद्ययन्त्र, एक बाजा।

कलि (सं॰ पु॰) कलते कलिरावपत्नेन कलेः, १ विभीतक वृक्ष, बहेड़ेका पेड़। नलराजाके निर्वासन-को किसी समय कलिने विभीतक वृक्षका अवलम्बन लिया था, इसीसे उसका नाम कलि पड़ गया। (कलाप॰ ४०७) कलयति कर्षते। २ शूर, वीर, बहादुर। कलन्त कर्णमाला मावन्ते। ३ विवाद, झगड़ा। ४ युद्ध, लड़ाई। कलयति पापेन अङ्कयति। ५ युग-विशेष, एक ज़माना। चतुर्थ युगको कलि कहते हैं। कल्किपुराणमें कलियुगकी उत्पत्ति-कथा इस प्रकार-से लिखी है,—

प्रलयके अन्तमें लोकपितामह ब्रह्माने पृष्ठदेशसे पापमय मलिन घोर अधर्मको सृष्टि की थी। अधर्मने अपनी मार्जारलोचना मिथ्या नाम्नी पत्नीके गर्भसे 'दम्भ' नामक पुत्र उत्पादन किया। फिर दम्भने माया नाम्नी अपनी भगिनीके गर्भसे 'लोभ' नामक पुत्र और निकृति' नाम्नी कन्याको निकाला था। इन्हीं भ्राता भगिनीसे क्रोधने जन्म लिया। क्रोधके औरस

और उसकी भगिनीके गर्भसे कलि उत्पन्न हुआ। उसका रूप तैलसंयुक्त अञ्जनकी भांति कृष्णवर्ण, मुख कराल, जिह्वा लोल, उदर काककी तरह और सर्वाङ्गमें पूतिगन्ध था। ऐसी ही भयानक मूर्तिके साथ वाम हस्त द्वारा उपस्थ धारण किये कलिने जन्म लिया और जन्म लेते ही स्त्री, मद्य, द्यूत, सुवर्ण प्रभृतिमें आसक्त हो गया। कलिके औरस और उसकी भगिनी दुरुक्तिके गर्भसे 'भय' नामक पुत्र तथा 'मृत्यु' नाम्नी कन्याकी उत्पत्ति हुयी। (कल्कि १ अ०)

कलियुगका लक्षण—जिस समय सर्वदा मिथ्या, तन्द्रा, निद्रा, हिंसा, विषादन, शोक, मोह, हीनता प्रभृतिका प्रभाव रहेगा, उसीका नाम कलिकाल पड़ेगा।

इस युगमें मनुष्य कामी और कटुभाषी होंगे। सकल जनपद दस्युपीड़ित रहेंगे। चारो वेद पाषण्डसे दूषित बन जायेंगे। राजा प्रजापीड़न करेंगे। ब्राह्मण शिश्न और उदरपरायण बनेंगे। ब्राह्मणबालक व्रतशून्य और अशुचि निकलेंगे। भिक्षु परिवारपोषक देख पड़ेंगे। तपस्वी ग्राममें टिकेंगे। न्यायी अर्थलोलुप ठहरेंगे। फिर मनुष्यमात्र क्षुद्रकाय, अधिक भोजनशील और चौर्य माया प्रभृतिमें समधिक साहसी होंगे।

कलिकालमें भृत्य प्रभुको और तपस्वी व्रतको त्याग करेंगे। शूद्र तपोवेशके उपजीवी बन प्रतिग्रह लेंगे। सब मनुष्य उद्विग्न, अनलङ्कार एवं पिशाचतुल्य हो अस्नात अवस्थामें भोजन करते भी अग्नि, देवता, अतिथि प्रभृतिको पूजेंगे। पिण्डोदक क्रिया लोप हो जावेगी। सकल ही स्त्रीरत और शूद्रसम बनेंगे। स्त्रियां अल्पभाग्य, अधिक सन्तानवती और स्वपतिकी अवज्ञाकारिणी निकलेंगी। कोयी विष्णुकी पूजा न करेगा। किन्तु कलिकालमें एक भलाई रहेगी, कि कृष्णनाम कीर्तन करनेसे ही मानवको मुक्ति मिलेगी। (गरुड़पु० ११० अ०)

उज्ज्ञासतन्त्रमें भी कलियुगका लक्षण कहा है,— इस युगमें वैदिकी शिक्षा, पौराणिकी शिक्षा और पापपुण्यकी वेदसम्भव परीक्षा लोप हो जायेगी। स्थान स्थान पर गङ्गा छिन्नभिन्न देख पड़ेगी। राजा म्लेच्छजातीय और धनलोलुप बनेंगे। स्त्रियां अतिशय दुर्दान्त, कर्कश, कलहरत और पतिनिन्दक निकलेंगी। पृथिवी अल्प शस्य उत्पादन करेगी। मेघ अधिक न बरसेंगे। वृक्षोंमें स्वल्प फल लगेंगे। भ्राता, आत्मीय, अमात्य प्रभृति सामान्य मात्र धनके लिये परस्पर लड़ेंगे। मद्य पीने और मांस खानेमें कोई न हिचकेगा। सबकी निन्दा होगी। पापियोंको दण्ड न मिलेगा।

माघी पूर्णिमाको शुक्रवारके दिन कलियुगकी उत्पत्ति हुयी थी। इसका आयुःकाल चार लाख बत्तीस हजार (४३२०००) वत्सर है। आर्यभटके मतमें कलियुग १५७७९१७५० दिन रहता है।

श्रीमद्भागवतमें वर्णित है,—कलिमें मनुष्योंका ५० वर्ष परमायु होगा। कलिके दोषसे देहियोंका देह क्षीण पड़ जायेगा। वर्णाश्रमाचार लोगोंका धर्मपथ बिगड़ेगा। धार्मिक पाषण्डप्राय बनेंगे। राजा दस्युप्राय निकलेंगे। मनुष्य चौर्य, मिथ्या, वृथाहिंसा आदि नाना वृत्तियां पकड़ेंगे। ब्राह्मण आदिवर्ण शूद्रप्राय ठहरेंगे। गो छागलप्राय रहेंगी। बन्धु योनप्राय होंगे। मेघ विद्युत्प्राय देख पड़ेंगे। ओषधिका गुण घटेगा। पर्वत नीचेको झुकेंगे। गृह शून्यप्राय और धर्मरहित बनेंगे। लोग दुःसहचेष्टित देख पड़ेंगे। फिर धर्मके परित्राणको सत्वगुणसे भगवान् कल्कि अवतीर्ण होंगे। आप (परीक्षित)के जन्मसे महानन्दके राज्याभिषेक पर्यन्त ११५० वर्ष बीतेंगे। सप्त नक्षत्रात्मक सप्तर्षि मण्डलके मध्य उदयके समय दो नक्षत्ररूप ऋषि आकाशमें प्रथम उदित होते देख पड़ते हैं। उन दोनोंके बीच समदेशपर अवस्थित अश्विनी आदि नक्षत्र रातको रहते हैं। उनमें एक एकसे मिल सप्तर्षि मनुष्य परिमाणके सो सो वत्सर अवस्थिति करते हैं। वह सकल ऋषि अब आप (परीक्षित)के समयमें मघाको पकड़े हुये हैं। सप्तर्षिमण्डलके मघानक्षत्रमें घूमनेसे कलिकी प्रवृत्तिके १२०० वर्ष बीतेंगे। फिर सन्ध्या अतिक्रान्त होगी। जिस समयसे सप्तर्षिमण्डल मघा छोड़ पूर्वाषाढ़ाको चलेगा, उस समय अर्थात् नन्दाभिषेक तक कलि अतिशय बढ़ेगा। जिस दिन कृष्णका वैकुण्ठ जाना हुआ, उसी दिनसे कलियुग लगा

है। इस परिमाणके प्रथम चरण बीते चतुर्थ कलि बीतनेपर पुनर्वार सत्ययुग आरम्भ होगा।

([illegible])

इस युगमें धर्म एक पाद और अधर्म तीन पाद है। मनुष्यके आयुका परिमाण १०८ वत्सर और देहका प्रमाण अपनी अपनी हाथसे साढ़े तीन हाथ पड़ता है। अवतार बौद्ध हैं। युगके शेषका दशम अवतार कल्कि उत्पन्न हो पापियोंका विनाश साधन करेंगे। ब्राह्मण निरन्नि अधमतापन्न और मोक्षपदवी अनियत बन जायेगी। कलियुगका विशेष धर्म दान है। मनुसंहितामें लिखा है,—

“तपः परं कृतयुगे त्रेतायां ज्ञानमुच्यते।
द्वापरे यज्ञमेवाहुर्दानमेकं कलौ युगे॥” (मनुसंहिता)

सत्ययुगमें तपस्या, त्रेतायुगमें ज्ञान, द्वापरमें यज्ञ और कलियुगमें दानमात्र विशेष धर्म है।

“तपः परं कृतयुगे त्रेतायां ज्ञानमुत्तमम्।
द्वापरे यज्ञमित्याहुर्दानमेव कलौ युगे॥” (महाभारत)

सत्ययुगमें तपस्या, त्रेतायुगमें ज्ञान, द्वापरमें यज्ञ और कलियुगमें दान, दया तथा दम विशेष धर्म है।

“[illegible]
[illegible]” ([illegible])

सत्ययुगमें वैदिक कर्म, त्रेतामें ज्ञान, द्वापरमें यज्ञ और कलिमें दान, दया तथा दम विशेष धर्म है।

इसी प्रकार विष्णुपुराण अग्निपुराण प्रभृतिमें भी एकवाक्यसे दानका विषय अनुमोदित है।

कलियुगकी संहिताके विषय सम्बन्धमें पराशरमें लिखा है,—

“कृते तु मानवो धर्मस्त्रेतायां गौतमः स्मृतः।
द्वापरे शङ्खलिखितौ कलौ पाराशरः स्मृतः॥”

सत्ययुगमें मनुसंहिता, त्रेतामें गौतम, द्वापरमें शङ्ख तथा लिखित और कलियुगमें पराशरकी संहिता धर्मशास्त्र है।

कलिके दोषका शान्ति को विष्णुपुराण, उपचारदोष, महाभारत और शिवपुराणमें शिवपूजाका उपदेश दिया है। फिर स्कन्दपुराणमें एकमात्र महेश ही कलियुगके देवता कहे गये हैं।

“ब्रह्मा कृतयुगे देवस्त्रेतायां भगवान् रविः।
द्वापरे भगवान् विष्णुः कलौ देवो महेश्वरः॥” (कूर्मपुराण)

सत्ययुगमें ब्रह्मा, त्रेतामें सूर्य, द्वापरमें विष्णु और कलिमें महेश्वर देवता है।

अन्यान्य ग्रन्थोंमें कालिका और गोपालको कलिका जाग्रत देव माना है—

“[illegible]”

काशीखण्ड महाभारत प्रभृति कलियुगमें मुक्तिका उपाय है,—

“[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]” ([illegible])

कलियुगमें नारायणकीर्तनके छोड़ जीवोंका सर्व पापनाशक प्रायश्चित्त दूसरा नहीं। जो ब्राह्मण इस युगमें आकर सर्वदा [illegible] रहता, वह कलिमें पापसे छूट परम पद पा सकता है। महाभारतमें इस सम्बन्धमें लिखा है—

“[illegible]
द्वापरे तु कुरुक्षेत्रं कलौ गङ्गैव केवलम्॥” ([illegible])

सत्ययुगमें बहुतसे तीर्थ, त्रेतामें पुष्कर, द्वापरमें कुरुक्षेत्र और कलियुगमें एकमात्र गङ्गा ही को तीर्थ समझना चाहिये।

“गीता गङ्गा तथा [illegible]
[illegible]” (महाभारत)

गीता, गङ्गा, विष्णु, कपिला, अश्वत्थ वृक्ष (पीपलका पेड़) और हरिवासरकी सेवा को छोड़ कलियुगमें अन्य धर्मकार्य नहीं होता।

हरिनामकीर्तनके माहात्म्य सम्बन्धपर कहा है,—

“[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]” ([illegible])

जो दिन रात जगद्गुरु वासुदेवका कीर्तन करता,

हे नरश्रेष्ठ! उसे कलि किसी प्रकार की बाधा नहीं पहुंचाता। सर्वदा सकल स्थानों पर चक्रपाणिका नाम लेना चाहिये। इसमें अशौचकी विवेचना आवश्यक नहीं। क्योंकि नामकीर्तन ही पवित्रकारक है। ज्ञान वा अज्ञानवश हरिनामकीर्तन करनेसे पुरुषके सकल पाप अग्निसे काष्ठराशिको भांति जल जाते हैं।

"गोविन्दनाम्ना यः कश्चिन्नरो भवति भूतले।
कीर्तनादेव तस्यापि पापं याति सहस्रधा॥" (स्कन्दपुराण)

गोविन्द नामयुक्त किसी मनुष्यको पुकारनेसे भी सहस्र पाप विनष्ट होते हैं। महानिर्वाणतन्त्रमें लिखते हैं,—

"मध्याऽमेध्यविचाराणां न शुद्धिः श्रौतकर्मणा।
न संहिताद्यैः स्मृतिभिरिष्टसिद्धिर्नृणां भवेत्॥ ६॥
विना ह्यागममार्गेण कलौ नास्ति गतिः प्रिये॥ ७॥
श्रुतिस्मृतिपुराणानि मयैवोक्तं पुरा शिवे।
आगमोक्तविधानेन कलौ देवान् यजेत सुधीः॥ ८॥" (२य उल्लास)

पवित्रापवित्र विचारहीन ब्राह्मण आदि वर्णोंकी शुद्धि वेदोक्त कर्म द्वारा न होगी। पुराण, संहिता और स्मृतिसेभी मनुष्य अपनी इष्टसिद्धि न पावेंगे। कलिकालमें आगमोक्त विधानसे देवताओंकी पूजा करना चाहिये।

"पशुभावः कलौ नास्ति दिव्यभावोऽपि दुर्लभः।
वीरसाधनकर्माणि प्रत्यक्षाणि कलौ युगे॥ १८॥
कुलाचारं विना देवि कलौ सिद्धिर्न जायते॥" (४ र्थ उल्लास)

कलियुगमें पशुभाव नहीं होता। फिर देवभाव भी दुर्लभ हैं। इस युगमें वीरसाधन प्रत्यक्ष फलदायक है। हे देवि! कलियुगमें कुलाचारको छोड़ दूसरे उपायसे सिद्धि मिल नहीं सकती।

महानिर्वाणतन्त्रमें यह भी लिखा है,—जो इन्द्रियोंको जीत कुलाचारका अनुष्ठान करेगा, जो दयाशील रहेगा, जो गुरुकी सेवामें तत्पर, पितामाताके प्रति भक्तिमान्, अपनी पत्नीमें अनुरक्त, सत्यव्रत, सत्यनिष्ठ एवं सत्यधर्मपरायण हो 'कुलसाधन' कोही सत्य समझेगा, जो हिंसा, मात्सर्य, दम्भ तथा द्वेष न रखेगा और जो कुलाचारके अनुसार स्नान, दान, तपस्या, तीर्थदर्शन, व्रत, तर्पण, गर्भाधान, पितृश्राद्ध प्रभृति करेगा, उसको कलि पीड़ा पहुंचा न सकेगा। कलिके दोषमें एक प्रधान गुण यह निकलता, कि कौलिकोंके सङ्कल्प मात्रसे श्रेय फल मिलता है। कलिका तारक ब्रह्मनाम है—

"हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे।
हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे॥"

बृहन्नारदीयमें निम्नोक्त सकल कार्य कलिके लिये निषिद्ध कहे हैं,—समुद्रकी यात्रा, कमण्डलुका धारण, असवर्ण कन्याका विवाह, देवरसे पुत्रका उत्पादन, मधुपर्कसे पशुका वध, श्राद्धमें मांसका दान, वानप्रस्थाश्रम, अक्षता होते भी दत्तकन्याका पुनर्वार दान, दीर्घ काल पर्यन्त ब्रह्मचर्य, नरमेध, अश्वमेध, महाप्रस्थानगमन, गोमेध यज्ञ, आततायी रहते भी ब्राह्मणकी हिंसा, सुराग्रहण, अग्निहोत्रकी हवनीमें भी लेहलोढ़ाका ग्रहण, (चाटचूट) वृत्त एवं स्वाध्याय सापेक्ष अशौच, सद्यशौच, मरणके अन्तमें प्रायश्चित्तका विधान, संसर्गका दोष लगते भी चौर्य प्रभृति दोषोंमें मुक्तिलाभ, दत्तक तथा औरसको छोड़ अन्य पुत्रका ग्रहण, गुरु एवं स्त्रीका परित्याग, दूसरेके लिये आत्मत्याग, उच्छिष्टका वर्जन, दास गोपाल आदिके अन्नका भोजन, गृहस्थके लिये अतिदूर तीर्थकी सेवा, गुरुस्त्री में शिष्यकी गुरुवत् वृत्ति, द्विजातियोंकी आपद्वृत्ति, अश्वस्तनिकता, ब्राह्मणका प्रवास, मुखसे अग्निधमन, (आग सुलगाना) बलात्कारादि दोषदुष्ट स्त्रीका ग्रहण, सर्वजातिसे यतिका भिक्षाग्रहण, ब्राह्मणादिके लिये शूद्रादिका पाक, पर्वतके उच्च स्थानसे गिर अथवा अग्निमें पड़ प्राणका त्याग प्रभृति।

युधिष्ठिर, हरिश्चन्द्र, मुनिचन्द्र, तेजःशेखर, विक्रमादित्य, विक्रमसेन, लाउसेन, बल्लालसेन, देवपाल, भूपाल एवं महीपाल-कई कलियुगके प्रधान राजा और युधिष्ठिर, विक्रमादित्य, शालिवाहन, विजय, नागार्जुन तथा बलि छह राजचक्रवर्ती शककारक हैं*। शक देखो।

६ देवगन्धर्वविशेष। कश्यपके औरस और दक्ष

---

*"युधिष्ठिरो विक्रमशालिवाहनौ धराधिनाथो विजयाभिनन्दनः।
इमेऽनु नागार्जुनमेदिनीपतिर्बलिः क्रमात् षट् शककारकाः कलौ॥"
(ज्योतिर्विदाभरण)

कश्यपके गर्भसे इन्होंने जन्म लिया था। ७ एक अति प्राचीन ऋषि। इनका नाम ऋक्संहितामें मिलता है। ८ बहेड़ेका पेड़। ९ शिव। १० वैष्णवोंका एक तिलक। इसकी आकृति पुष्पकी कलिकाकी भांति रहती है। फिर आदि तथा अन्त सूक्ष्म और मध्य स्थूल होता है। अति सुन्दर देख पड़नेसे इसे 'रसकलि' कहते हैं।

(स्त्री०) ११ कलिका, फूलकी कली।

कलिक (सं० पु०) कलो मन्दमधुरो ध्वनिरस्त्यस्य, अच मत्वर्थे ठन्। १ क्रौञ्चपक्षी, कराकुल या कूज-कुकड़ी चिड़िया। २ गंधद्रव्यभेद, चीनमें होनेवाला एक चावल।

कलिकर्म (सं० क्ली०) युद्ध, लड़ाई।

कलिका (सं० स्त्री०) कलिरेव स्वार्थे कन्—टाप्। १ कली, गुञ्चा। इसका संस्कृत पर्याय—पुष्पकोरक, कलि और कली है।

"कुसुमकलिकाकलिता कलिकावली।
कन्ये वसन्तर्वे किं मलयानिलाकुलः।" (कलिकामर्दन)

२ वीणाका मूलदेश वीन या सितारकी अड़का सिरा। ३ रचनाविशेष, एक बनाव। तालवादि पदसमूहका नाम कला है। कलाबद्ध रचनासे जो रस रचनाको कलिका कहते हैं। कलिका छह प्रकारकी होती है,—चण्डवृत्त, द्विमादि गणवृत्त, त्रिभङ्गीवृत्त, मत्त, मिश्र और केवल। चण्डवृत्तमें दण्डकाकार संयुक्त वर्ण रहते हैं। मट, त्रिट, चिचिट, त्रित्रित एवं ऋादि संयुक्त वर्ण ह्रस्व तथा दीर्घ भेदसे भिन्न हुआ करते हैं। ह्रस्व तथा मधुर संयोगसे मद्गर, अङ्कुश और विकरकी उत्पत्ति है। त्रिट संयोगसे रूप कपर और सर्प वर्ण निकलते हैं। चिचिटके संयोगसे मत्त कल्लोल और सिद्धि बनते हैं। त्रित्रित संयोगसे पद्म कलाप और कमल उठा करते हैं। फिर ऋादि संयोगसे मद्य, गुड़, जल और मध्य पाये जाते हैं। कोई कोई गर्वादि शब्दको भी ऋादि संयुक्त बताता है। दीर्घ संयोगसे तुङ्ग, भङ्ग आपात, वाम, हेम और सारङ्ग नाम होते हैं। चण्डवृत्तमें आदसे चतुष्पदि पर्यन्त बनानेका नियम है। इसमें न्यूनाधिक कर नहीं सकते। चण्डवृत्त दो प्रकारका होता है—नद्य और विविध। फिर नद्य बीस प्रकारका है। अर्चित, वीरभद्र, समय, अच्युत, उत्पल, तुरङ्ग योगुपरति-मातङ्गखेलित और तिलक। जो प्रकारकी और अन्य भेदका नाम प्रायः देखनेमें नहीं आता। विविध पांच प्रकारका होता है—पद्म, कुन्द, चम्पक, मधुक और बकुल। फिर पद्म छह प्रकारका है—पद्मोत्कर, सितकञ्ज, पाण्डुत्पल, इन्दीवर, अरुणाम्भोज और कल्हार। बकुल दो प्रकारका होता है—भासुर और भङ्गुर। इसी भांति चण्डवृत्त बीस प्रकार बनता है। द्विमादिगणवृत्त पांच प्रकारका है—कोटक, गुच्छ, कन्दुक, कुसुम और गन्ध। त्रिभङ्गी दग्ध दण्डक और विदग्ध भेदसे दो प्रकारका होता है। मिश्रकलिका अन्यसम्पृक्ता और सर्वविभक्तिका भेदसे दो प्रकार है। केवला भी दो प्रकारकी है—अक्षरमयी और सर्वलघ्वी। ४ छन्दोविशेष।

"[illegible] यदि च यदि चरणं। [illegible] यदि च पुनः चरणं [illegible] कलिका सा।" (छन्दोमञ्जरी)

प्रथम, द्वितीय एवं चतुर्थ एकरूप समपादान्त और तृतीय चरण अधिकल रखनेसे कलिका छन्द बनता है।

५ कला, चन्द्रकी ज्योतिका अंश।

"[illegible] कलिका [illegible] च कः।" (विदग्धविशेषमणि)

६ हरिद्राकी, विनुपा। ७ मदपुष्प, सरकोंका। ८ कुलटोलिका, कालो भाड़ी। ९ पुष्पविशेष, एक फूल। १० वाद्यविशेष, एक बाजा। इस पर चर्म चढ़ता था। ११ चन्द्रावली, मनरेखा।

कलिकाता (सं० स्त्री०) कलकत्ता देवी।

कलिकापूर्व (सं० क्ली०) कलिकाया पूर्वम् अपूर्वम्। कर्मविशेष, एक काम। यह कर्म पूर्वजन्मके कर्मसे कोई सम्बन्ध नहीं रखता और भावी फल उत्पादन करता है। जैसे दर्श और पौर्णमास याग का अङ्ग आग्नेयादि यागसे अपूर्व होता है। इसे परम भी कहते हैं।

"[illegible] अपूर्वम्।" (भू.मि)

कलिकार (सं० पु०) कलिं कलहं करोति, कलि-

कृ-अण्। १ धूम्याट पक्षी, एक चिड़िया। इसकी पूंछ कांटे-जैसी होती है। २ पीतमस्तकपक्षी, पीले सरकी चिड़िया। कलिं स्वकण्टकैरनिष्टं करोति। ३ पूतिकरञ्ज, करील। ४ जलपिप्पली, पनिहा पीपल। ५ नारद।

कलिकारक (सं० पु०) कलिं स्वकण्टकैरनिष्टं करोति, कलि-कृ-णिच्-ण्वुल्। १ पूतिकरञ्ज, करील। २ लटा करञ्ज। कलिं कलहं करोति। ३ नारद। (त्रि०) ४ कलहकारक, झगड़ालू।

कलिकारिका, कलिकारी देखो।

कलिकारी (सं० स्त्री०) कलिं गर्भपातायनिष्टं करोति, कलि-कृ-अण्-ङीप्। लाङ्गली वृक्ष, कलिहारीका पेड़। इसका संस्कृत पर्याय—लाङ्गली, हलिनी, गर्भपातनी, दीप्ता, विशल्या, अग्निमुखी, नक्ता, इन्द्रपुष्पिका, विद्युज्ज्वाला, अग्निजिह्वा, व्रणहृत्, पुष्पसौरभा, स्वर्णपुष्पा और वह्निशिखा है। राजनिघण्टुके मतसे यह कटु, उष्ण, कफ तथा वायुनाशक, गर्भस्थ शल्य अर्थात् मृतगर्भनिष्क्रामक और सारक होती है।

कलिकाल (सं० पु०) कलिरेव कालः। कलियुग। कलि देखो।

कलिङ्ग (सं० पु०-क्ली०) कलि-गम ड। १ इन्द्रयव। २ पूतिकरञ्ज, करील। के मस्तके लिङ्गं चिह्नमस्या। ३ धूम्याट। ४ कुटज वृक्ष। ५ शिरीषवृक्ष, सिरिसका पेड़। ६ अश्वत्थवृक्ष, पीपरका पेड़। ७ जल पदार्थ। ८ कोई अति प्राचीन राजा। दीर्घतमाके औरस और बलिकी पत्नी सुदेष्णाके गर्भसे इन्होंने जन्म लिया था। ९ भारतवर्षका एक जनपद। देखना चाहिये—यह जनपद कहां है।

महाभारतमें लिखा, युधिष्ठिरने गङ्गासागरसङ्गम पर पहुंच पञ्चशत नदीमें स्नान किया था। फिर वह भाइयोंके साथ समुद्रतीरसे कलिङ्गदेशमें जा उतरे। उस समय लोमशने कहा—महाराज! इसी समस्त प्रदेशका नाम कलिङ्ग है। यहां स्रोतस्वती वैतरणी बहती है। भगवान् धर्मने देवगणका आश्रय ले यज्ञानुष्ठान किया था। यज्ञके समय भगवान् रुद्रके पशुको पकड़ कर अपना बताने पर देवगणने कहा—हे भगवन्! परस्व ग्रहण करना बड़ा अन्याय है। आपको धर्मसाधन यज्ञका भाग समस्त आत्मसात् करना न चाहिये। फिर सब उनकी स्तुति करने लगे। याग द्वारा अपना सम्मान बढ़ने पर रुद्र पशुको छोड़ देवयान पर चढ़े और स्वस्थानको चल दिये। इस विषयमें एक किम्वदन्ती है। देवगणने भयसे भीत हो सर्वोत्कृष्ट रसपूर्ण एक भाग रुद्रका दिया था। हे युधिष्ठिर! यह गाथा कीर्तनपूर्वक इस स्थानमें स्नान करनेसे स्वर्गका पथ प्रत्यक्ष होता है। फिर पाण्डवोंने द्रौपदीके साथ वैतरणीमें उतर पितृगणका तर्पण किया। इसके पीछे युधिष्ठिर कृतस्वस्त्ययन हो सागरके निकट पहुंचे और लोमशका आदेश प्रतिपालन पूर्वक महेन्द्र पर्वत पर रात भर ठहरे।*

---

* "स सागरं समासाद्य गङ्गायाः सङ्गमे नृप।
नदीशतानां पञ्चानां मध्ये चक्रे समाप्लवम्॥
ततः समुद्रतीरेण जगाम वसुधाधिपः।
भ्रातृभिः सहितो वीरः कलिङ्गान् प्रति भारत॥
लोमश उवाच।
एते कलिङ्गाः कौन्तेय यत्र वैतरणी नदी।
यत्रायजत धर्मोऽपि देवाञ्छरणमेत्य वै॥
ऋषिभिः समुपायुक्तं यज्ञियं गिरिशोभितम्।
उत्तरं तीरमेतद्धि सततं द्विजसेवितम्॥
समानं देवयानेन पथा स्वर्गमुपेयुषः।
अत्र वै ऋषयोऽन्ये च पुरा क्रतुभिरीजिरे॥
अत्रैव रुद्रो राजेन्द्र पशुमादत्तवान् मखे।
पशुमादाय राजेन्द्र भागोऽयमिति चाब्रवीत्॥
हृते पशौ तदा देवास्तमूचुर्भरतर्षभ।
मा परस्वमभिद्रोग्धा मा धर्मान् सकलान् नशीः॥
ततः कल्याणरूपाभिर्वाग्भिस्ते रुद्रमस्तुवन्।
इष्ट्या चैनं तर्पयित्वा मानयाञ्चक्रिरे तदा॥
ततः स पशुमुत्सृज्य देवयानेन जग्मिवान्।
तत्रानुवंशो रुद्रस्य तन्निबोध युधिष्ठिर॥
अयातयामं सर्वेभ्यो भागेभ्यो भागमुत्तमम्।
देवाः सङ्कल्पयामासुर्भयाद्रुद्रस्य शाश्वतम्॥
ततो वैतरणीं सर्वे पाण्डवा द्रौपदी तथा।
अवतीर्य महाभागास्तर्पयाञ्चक्रिरे पितॄन्॥
ततः कृतस्वस्त्ययनो महात्मा युधिष्ठिरः सागरमभ्यगच्छत्।
कृत्वा च तत् शासनमस्य सर्वं महेन्द्रमासाद्य निशामुवास॥"
(महाभारत, वनपर्व, ११४ अ०)

कालिदासने कहा है,—

“स तीर्त्वा कपिशां सैन्यैर्बद्धद्विरदसेतुभिः।
उत्कलादर्शितपथः कलिङ्गाभिमुखो ययौ॥” (रघुवंश)

रघु हाथियोंका सेतु बांध कपिशा नदी उतरे और उत्कलदेशवासी राजाओंके साहाय्यसे पथको देख कलिङ्गकी ओर चल पड़े।

महाभारतके मतमें—

“[illegible] पूर्णभागात् [illegible] स्थिते।
कलिङ्गदेशः [illegible]॥
कलिङ्गदेशमारभ्य [illegible] स्थिते।
[illegible] कलिङ्ग [illegible]॥”

जगन्नाथके पूर्व भागसे कृष्णानदीके तीर तक कलिङ्ग देश है। इस स्थानके लोग वाममार्गपरायण होते हैं। फिर कलिङ्गदेशके दक्षिण १८ योजन पर्यन्त कालिङ्ग कहाता है।

कविरामने अपने दिग्विजयप्रकाशमें बताया है,—

“गौड़देशात् पूर्वे च कलिङ्गो विश्रुतो भुवि।
[illegible] सोमवंश [illegible] स्थितम्॥” (१०१)

गौड़ देशके उत्तर प्रसिद्ध कलिङ्ग देश है। वहां लोकप्रसिद्ध सोमवंशीय राज्य करते हैं।

यह हमारे देशका प्राचीन मत हुआ। अब देखना चाहिये—प्राचीन ग्रीक और रोमक ऐतिहासिकोंने कलिङ्गके सम्बन्धमें क्या कहा है। प्लिनिने तीन कलिङ्गों का उल्लेख किया है,—१ कलिङ्गी, २ मोदोगलिङ्गम् और ३ महाकलिङ्गी। इनमें कलिङ्गी मण्डि एवं मलिके बीच और मालियास पर्वतके निकट अवस्थित है। (Pliny, Hist. Nat. VI. 21)

अब लोग पूछ सकते—मण्डि और मलि किसे कहते हैं। फिर मालियास पर्वत भी कहां है। मण्डि लोग आजकल मुण्डा कहाते और छोटे नागपुरके दक्षिण अंशमें पाये जाते हैं। (Campbell's Ethnology of India, pp. 150-1) इनसे अनति दूर उड़ीसेके पार्वत्यप्रदेशमें कन्ध नामक असभ्य रहते हैं। यही असभ्य प्लिनिवर्णित मलि मालूम होते हैं। यह अपनेको कभी कभी मलाह वा माल भी कहा करते हैं।

मालियास पर्वत हमारा पुराणोक्त "माल्यवान्" है। प्लिनि दूसरे स्थानमें लिखते, कि मालियाम् पर्वत पर मोनेदे और शबरो रहते थे। इसका भूरि भूरि प्रमाण मिला—अति पूर्व कालसे उड़ीसेके पार्वतीय प्रदेशमें शबर लोगोंका वास रहा। पुराणकी वर्णनाके अनुसार नीलाचलके निकट ही शबरागार था। वहां शङ्ख-चक्र गदाधर विष्णुकी मूर्ति विराजमान थी।

“नीलाचलं [illegible]।
[illegible]॥
[illegible]।
[illegible]॥
[illegible]।
[illegible]।
[illegible]॥” (स्कन्दपुराण)

अतएव प्लिनि-वर्णित ‘शबरो’ पुराणवर्णित शबर से भिन्न दूसरे नहीं ठहरते। आजकल उड़ीसेके अन्तर्गत पालनहरा राज्यके मध्यवर्ती एक उच्चगिरि शृङ्गको माल्य (माल्यगिरि) कहते हैं। सम्भवतः पूर्वकालमें उस राज्यकी समस्त गिरिमालाका नाम माल्यगिरि रहा। यही गिरिमाला ‘मालियास’ नामसे प्लिनि द्वारा वर्णित हुयी है। इसे पुराणोक्त माल्यगिरि माननेमें कोई दोष नहीं लगता। सुतरां समझ पड़ा कि प्लिनिने उड़ीसेके पश्चिमांशको कलिङ्ग अनुमान किया था।

दूसरा मोदोगलिङ्गम् है। हमारे प्रत्नतत्त्वविद् राजेन्द्रलालने इसे मध्य कलिङ्ग लिखा है। फिर विख्यात फरासीसी पण्डित सेण्टमार्टिन इस स्थानके सम्बन्धमें बताते कि मनुस्मृतिमें मेद नामक एक प्रकारके असभ्य लोगोंका नाम आते हैं। वह आन्ध्रोंके साथ वर्णित हुये हैं * प्लिनिने उन्हें गङ्गाके उपद्वीपका वासी बताया है। मलिङ्ग सम्भवतः कलिङ्ग शब्दका रूपान्तर मात्र है। अङ्गाके 'क' लोपसे रहने वाले मदगलिङ्ग कहाते थे। हमारी समझमें उक्त दोनों मत ठीक मालूम नहीं पड़ते। तेलगु भाषामें मोदोगलिङ्ग शब्द मिलता है। तलङ्गियोंके उच्चार

* मनुस्मृतिमें मेद वैदेहिक जातिसम्भूत मेद और अन्ध्र नामसे वर्णित हुये हैं। (मनु १०। ३६) मेद नाम आता है।

सारानुसार यह शब्द 'मुदुगलिङ्ग' कहा जाता है। तैलगु भाषामें मुदुका अर्थ तीन है। सुतरां 'मोदोगलिङ्ग' वा 'मुदुकलिङ्गका' संस्कृत नाम त्रिकलिङ्ग मानना युक्तिसङ्गत है।

(Caldwell's Dravidian grammar, Intro. p. 32.)

त्रिकलिङ्ग * जनपदका नाम दक्षिण देशके ५म, ८म एवं १०म शताब्दके शिलालेखों और ताम्रशासनोंमें मिलता है। टलेमिने इसे त्रिगलिपटन या त्रिलिङ्गन लिखा है। (Ptolemy's Geog. Bk. vii. ch, 23) दक्षिणापथके तामिल शिलालेखोंमें यह 'तैलिङ्ग' नामसे कलिङ्गदेशके साथ उक्त हुवा है। (Archaeological Survey of Southern India, Vol. IV. p. 61.) स्कन्दपुराणमें 'तिलिङ्ग' नामक जनपदका उल्लेख विद्यमान है,—

"महेन्द्रनामदेशे च लक्ष्मैकश्च पादकम्।
तिलङ्गदेशे च तथा लक्ष मोक्षः सपादकः॥" (कुमारिकाखण्ड ३९ अ॰)

शक्तिसङ्गमतन्त्रमें यही "तैलङ्ग" नामसे वर्णित है,-

"श्रीशैलन्तु समारभ्य चोलेशान् मध्यभागतः।
तैलङ्गदेशो देवेशि ध्यानाध्ययनतत्परः॥"

त्रिकलिङ्ग वा तैलङ्गका वर्तमान नाम तेलिङ्ग या तेलिङ्गन है। यह जनपद मन्द्राजके उत्तर पलिकट नामक स्थानसे लेकर उत्तर गञ्जाम और पश्चिममें त्रिपति, वेमारि, करनूल, विदर तथा चन्दा तक विस्तृत है। यहां तैलङ्ग (तिलङ्गी) या तैलगु-भाषी हिन्दू रहते हैं।

तीसरा मक्कोकलिङ्गी संस्कृत मघकलिङ्गका रूपान्तर है। प्राचीन भारतवासी वर्तमान आराकान प्रदेशको मघद्वीप और उसके अधिवासियोंको मघ कहते थे। किसी किसीने मघद्वीपवासियोंको ही प्लिनि-कथित मक्कोकलिङ्गी माना है।

ई॰के ७म शताब्द चीनपरिव्राजक युयेनचुयङ्ग कलिङ्ग देशमें आये थे। उन्होंने लिखा है—कोङ्ग-उ-तो से सौ कोससे अपेक्षा अधिक (१४०० या १५०० लि) चलने पर हम कलिङ्ग (कि-लिङ्ग किय) देशमें पहुंचे। (Si-yu ki, BK. x.)

अब देखना चाहिये—कोङ्गउतो देश कहां है। कनिङ्हाम साहबके मतमें उसीका नाम गञ्जाम है। (Cunningham's Ancient Geography of India p. 513.) विख्यात चीन भाषाविद् स्तानिसला जुलें ने 'कोङ्ग-उ-तो' शब्दका संस्कृत नाम 'कोनयोध' स्थिर किया है।* किन्तु हमारी विवेचनामें, 'कोन्-योध' नहीं, कोङ्गोद होना अधिक सङ्गत है। सामान्य भूखण्डके अधिपति रहते भी कोङ्गोदराजका प्रताप कुछ कम न था। कोङ्गोदराज्यकी भूमि अत्यन्त उर्वरा है। प्रचुर परिमाणसे धान्य उत्पन्न होता है। युयेनचुयाङ्गके मतमें कोङ्गोदसे १०० कोस चलने पर कलिङ्गदेश मिलता है। ऐसा होते गञ्जाम प्रदेश ही कलिङ्गदेश ठहरता है। फिर भी चीन परिव्राजकने गञ्जामसे कलिङ्गका आरम्भ होना माना है। यही बात हमें भी अधिक युक्तिसङ्गत समझ पड़ती है। इसमें महाकवि कालिदासकी वर्णनासे सम्पूर्ण सामञ्जस्य आता है। चीनपरिव्राजकने कलिङ्गदेशकी भूमिका परिमाण प्रायः २५० कोस (५००० लि) लिखा है। अकबरके राजत्वकालमें कलिङ्ग दण्डपत् उड़ीसेके अन्तर्गत एक सरकार था। उस समय यह स्थान २७ महलोंमें विभक्त था।

(आईन-अकबरी)

इस प्राचीन विषयको छोड़ दीजिये। अब नवीन प्रत्नतत्त्वविदों का मत देखना आवश्यक है। कोलब्रुक साहबके मतमें गोदावरी नदीके तटका प्रदेश कलिङ्ग कहलाता था।†

कनिङ्हामके कथनानुसार युयेनचुयङ्गके समयमें कलिङ्गराज्य गञ्जामके दक्षिणपश्चिम १४००से१५००लि अर्थात् २३३ से २५० मील दूर अवस्थित था। उस

* किसी किसी प्रत्नतत्त्वविद्के मतमें त्रिकलिङ्ग कहनेसे तीन कलिङ्ग समझ पड़ते हैं अर्थात् कलिङ्ग, मध्यकलिङ्ग और उत्कलिङ्ग। उत्कलिङ्गसे ही अपभ्रंशमें उत्कल नाम निकला है। (Indian Antiquary, V. 53.) किन्तु यह मत सङ्गत नहीं जंचता। कारण महाभारत, हरिवंश आदिमें उत्कल शब्द आया है। फिर किसी प्राचीन ग्रन्थमें उत्कलिङ्ग नाम देख नहीं पड़ता।

* Julien's 'Hiowen Jhsang', III. 91.

† Colebrooke's. Essays, Vol. II. p. 179.

समय इसका क्षेत्रफल प्राय ८३१ मील रहा। चतु-सीमा ठीक न होते भी यह राज्य पश्चिममें अम्बु और दक्षिणमें अन्ध्र राज्यसे मिला था। प्रान्तकी सीमा दक्षिणपश्चिम गोदावरी और उत्तरपश्चिमको इन्द्रावती नदीकी शाखा अतिक्रम करके आगे न रही। यह विस्तीर्ण भूमिखण्ड महेन्द्रपर्वत द्वारा समाच्छन्न था। शिलालिपिविद् हुल्ट्जके मतमें कलिङ्ग गोदावरी और महानदीके मध्य पड़ता है।*

हमारे मतसे महाभारत और हरिवंशके समय कलिङ्गराज्य वर्तमान वैतरणी नदीके तटदेशसे लेकर दक्षिणमें गोदावरी नदी तक विस्तृत था।† मेदिनीपुर, उड़ीसा, गञ्जाम और सरकार कलिङ्ग राज्यमें ही रहा। उत्कलराजके बढ़ जाने पर उड़ीसा कलिङ्गसे निकल पड़ा। उत्कल देखो। फिर केवल गञ्जाम और सरकार कलिङ्गमें रह गया। ई०के १०म तथा ११श शताब्दमें चालुक्य राजाओंके प्रबल प्रतापसे कलिङ्गराज्य उत्तरको उत्कल और दक्षिणको चोलमण्डल तक फैला था। उस समय तैलङ्ग प्रदेश कलिङ्गराज्यके अन्तर्भुक्त रहा। मुसलमानोंके पहले कलिङ्गराज्यकी भूमिका परिमाण बहुत घट गया। उत्कल और तैलङ्ग स्वतन्त्र हुआ। महेन्द्रपर्वतके उपरिस्थित सामान्य भूभागको लोग कलिङ्ग कहने लगे। वस्तुतः उस समय कलिङ्ग नामकी शोभाको हानि आयी थी। आजकलके वर्तमान मानचित्रमें भी कलिङ्ग राज्यका कोई उल्लेख नहीं। केवल समुद्रतटस्थ कलिङ्गपत्तन और गोदावरीके मुहानेका कलिङ्गनगर आदि कलिङ्ग राज्यके चिह्नमात्रका परिचय दिलाता है।

महाभारत आदिमें कलिङ्गके दो प्रधान नगरोंका उल्लेख है— मणिपुर और राजपुर। बौद्धशास्त्रमें कलिङ्गके दन्तपुर और कुम्भवती नामक दो प्राचीन नगरोंका नाम मिलता है। फिर जैनियोंके हरिवंशमें काञ्चननगर लिखा है। प्राचीन शिलालेखोंमें कलिङ्ग-नगर, पिष्टपुर, वेङ्गीपुर प्रभृति कई दूसरे भी प्राचीन नगर देख पड़ते हैं।

यह निर्णय करना कठिन समझा, किस समय कलिङ्ग जनपद संस्थापित हुआ। महाभारतके मतमें दीर्घतमाके पुत्र कलिङ्गने अपने नामपर यह जनपद बसाया था—

"अङ्गो वङ्गः कलिङ्गश्च पुण्ड्रः सुह्मश्च ते सुताः।
तेषां देशाः समाख्याताः स्वनामकथिता भुवि।
कलिङ्गविषयश्चैव कलिङ्गस्य च स स्मृतः।" (महाभारत, आदि, १०४ अ०)

महाभारतको देखते कलिङ्गराज्यका स्थापनकाल वैदिक समझता है। दीर्घतमा देखो।

वास्तविक यह जनपद अति प्राचीन है। वैदिक ग्रन्थोंमें न सही—रामायणादिमें इसका उल्लेख मिलता है।*

(रामायण किष्किन्धा, ४१ स)

पूर्वकालमें यहांके क्षत्रिय विक्रम अभिमानी थे। कुरुक्षेत्रमें युद्धके समय कलिङ्गराज महावीर श्रुतायु दुर्योधनकी ओर पाण्डवोंसे लड़े। भीमके हाथसे वह और उनके पुत्र शक्रदेव तथा केतुमान् मारे गये। (भीष्मपर्व)

दाठावंश, महावंश प्रभृति प्राचीन बौद्ध ग्रन्थमें लिखा, कि बुद्धका निर्वाण होने पर कलिङ्गके तत्कालीन राजाने बुद्धका दन्त ही लाकर अपने राज्यमें रखा था। उन्होंने जहां वह दन्त रखा, वहां दन्तपुर नामक नगर बस गया। दन्तपुर देखो।

कलिङ्गक (सं० पु० क्लो०) कलिङ्ग इव कायति, कलिङ्ग-कै-क। कलिङ्ग के क इति वा। १ इन्द्रयव। २ प्लक्षवृक्ष, पाकरका पेड़। ३ कुटजवृक्ष, कुटजीका पेड़। ४ शिरीषवृक्ष, शिरिसका पेड़। ५ पूतिकरञ्ज करौंज। ६ पक्षिविशेष, एक चिड़िया। ७ तरम्बुज, तरबूज, कलौंदा। यह मधुर, शीतल गुरु

---

* E. Hultzsch's South Indian Inscriptions p. 63.

† हरिवंशमें लिखा है—"कलिङ्ग वनिताख्यानं ...।"
(१४१ अ ३१ श्लो)

इस कथनसे तम्रलिप्त (वर्तमान तमलुक) तक कलिङ्ग उस समयके लोगोंके अधिकारमें समझ पड़ता है। इन्होंने भी महाभारतसे मिलाकर कलिङ्ग राज्य बताया है। Indian Antiquary Vol. XIII p. 263.

* रामायणमें एक दूसरे कलिङ्गका नाम है। यह भीमकी और पर्णाशाके मध्य कही जाती रहा। (रामायण, अयोध्या, ७१ स)

वल्य, पित्तदाहघ्न, सन्तर्पण और वीर्यकर होता है। (राजनिघण्टु) ८ चातक, पपीहा। ९ विभीतक वृक्ष, बहेड़ेका पेड़।

कलिङ्गज (सं० पु०) इन्द्रयव।

कलिङ्गड़ा (हिं० पु०) कलिङ्ग, एक राग। यह दीपक रागका पञ्चम पुत्र है। रात्रिके चतुर्थ प्रहर इस रागको गाते हैं। कलिङ्गड़ेमें सातो स्वर लगते हैं। इसका स्वरपाठ इस प्रकार चलता है—म ग ऋ स स ऋ ग म प ध नि सा।

कलिङ्गड़ी (सं० स्त्री०) दुर्गा।

कलिङ्गद्रु (सं० पु०) कुटजवृक्ष, कुटकीका पेड़।

कलिङ्गयव (सं० पु०) इन्द्रयव।

कलिङ्गबीज (सं० क्ली०) इन्द्रयव।

कलिङ्गशुण्ठी (सं० स्त्री०) कलिङ्गदेशकी शुण्ठी, एक सोंठ। यह तिक्त, बलकर, अग्निदीपन, अजीर्णहर और बालकातिसारघ्न होती है। फिर यवक्षार मिलाकर खिलानेसे कलिङ्गशुण्ठी गर्भिणीकी वान्ति दूर कर देती है। (अत्रिसंहिता)

कलिङ्गा (सं० स्त्री०) काय सुखाय लिङ्गमस्याः, कलिङ्ग-टाप् बहुव्री०। १ नारी। २ त्रिवृता, तेवरी। ३ कर्कटशृङ्गी, ककड़ासींगी। ४ सुन्दर स्त्री, खूबसूरत औरत। ५ भोजराजकी पत्नी। यह दुष्मन्तकी माता थीं। (हरिवंश पुराण ३८। १८)

कलिङ्गादिकषाय (सं० पु०) कलिङ्ग, पटोलपत्र और कटुरोहिणीका पाचन। यह पित्तज्वरको दूर करता है। (चक्रदत्त)

कलिङ्गाद्यगुडिका (सं० स्त्री०) ज्वरातिसार रोगका एक औषध, बोखारके दस्तोंकी एक दवा। कलिङ्ग (इन्द्रयव), बिल्व, जम्बू, आम्र, कपित्थ, रसाञ्जन, लाक्षा, हरिद्रा, ह्रीवेर, कट्फल, शुकनासिका (शोणाकत्वक्), लोध्र, मोचरस, शङ्ख, धातकी और वटशुङ्गक (बरगदकी गो) बराबर बराबर तण्डुलोदकसे रगड़ बटी बनाते और छायामें सुखाते हैं। तण्डुलोदक अष्टगुण जलमें चावल धोनेसे होता है। इस गुड़िकाके सेवनसे ज्वरातिसार, शूल, अतिसार और रक्तदोष निवारित होता है। (परिभाषाप्रदीप)

कलिङ्गिका (सं० स्त्री०) कलिङ्गगङ्गा, कामरूपकी एक नदी। (कालिकापुराण)

कलिञ्ज (सं० पु०) कं वायुं लञ्जति तिरस्करोति रोधनेन इति शेषः, क-लजि-अण् निपातनात् साधुः। १ कट, चटाई। इसका अपर संस्कृत नाम किलिञ्ज है। २ कुलिञ्जन, कुलींजन।

कलिञ्जम (सं० पु०) वृक्षविशेष, एक पेड़।

कलित (सं० त्रि०) कल-क्त। १ विदित, जाहिर। २ प्राप्त, मिला हुवा। ३ भेदित, अलग किया हुवा। ४ गणित, गिना हुवा। ५ उपार्जित, कमाया हुवा। ६ अनुगत, दबाया हुवा। ७ आश्रित, सहारा पकड़े हुवा। ८ विचारित, समझा हुवा। ९ बद्ध, बंधा हुवा। १० उक्त, कहा हुवा। ११ गृहीत, लिया हुवा। १२ धृत, पकड़ा हुवा।

"करकलितकपालः कुण्डली दण्डपाणिः।" (भैरवध्यान)

(क्ली०) भावे क्त। १३ ज्ञान, समझ।

कलितरु (सं० पु०) विभीतक वृक्ष, बहेड़ेका पेड़।

कलिद्रु, कलिद्रुम देखो।

कलिद्रुम (सं० पु०) कलिना आश्रितो द्रुमः, मध्यपदलो०। १ सरल देवदारु, सीधा देवदार। २ भल्लातक वृक्ष, भेलावेंका पेड़। ३ विभीतक वृक्ष, बहेड़ेका पेड़।

कलिनाथ (सं०पु०) कलेः कलिरेव वा नाथः। १ कलियुगके प्रभु, कल्कि। २ मुनिविशेष। इन्होंने एक गन्धर्ववेद प्रणयन किया था।

कलिन्द (सं० पु०) कलिं ददाति द्यति वा, कलि-दा दो वा खच्-मुम्। १ सूर्य, सूरज। २ विभीतक वृक्ष, बहेड़ेका पेड़। ३ पर्वत विशेष, एक पहाड़। इसी पर्वतसे यमुना नदी निकली है। (रामायण, किष्किन्ध्या ४० अ०)

कलिन्दक (सं० पु०) १ कर्कारु, पेठा, विलायती कुम्हड़ा। २ तरम्बुज, तरबूज, कलींदा।

कलिन्दकन्या (सं० स्त्री०) कलिन्दस्य पर्वत विशेषस्य कन्या इव। यमुना नदी।

"कलिन्दकन्या मथुरां गतापि गङ्गोर्मिसंसक्त जलेव भाति।" (रघुवंश)

कलिन्दजा, कलिन्दशैलजा देखो।

कलिन्दनन्दिनी (सं०स्त्री०) कलिन्दं नन्दयति, कलिन्द-

नद विशेष-द्वीप। यमुना नदी।

कलिन्दगेहजा (सं० स्त्री०) कलिन्दस्य गेहात् जायते कलिन्द गेह जन-ड टाप्। यमुना नदी।

कलिन्दगेहजाता, कलिन्देजा देखो।

कलिन्दिका (सं०स्त्री०) कलिं द्यति नाशयति, कलि दो पक्-तुम् स्वार्थे कन् टाप् पत इत्वम्। सर्वविद्या, विज्ञप्ति।

कलिन्दी (हिं) कालिन्दी देखो।

कलिपुर (सं०क्ली०) १ पद्मराग मणिकी एक पुरातन खनि, माणिकको एक पुरानी खान। २ पद्मराग मणि भेद विशेष किस्मका माणिक। इसे लोग मध्यम समझते थे।

कलिप्रद (सं० पु०) मद्यपानका स्थान, शराबखाना।

कलिप्रिय (सं० पु०) कलिः कलह प्रियो यस्य, बहुव्री०। १ कलहप्रिय नारद मुनि। "कलिप्रिय विशिवर्त्मः।" (त्रि०) २ वानर, बन्दर। ३ किसी तरहका बहेड़ेका पेड़। (त्रि०) ४ दुष्टप्रकृति, बदमिजाज, झगड़ालू।

कलिफल (सं० क्ली०) बिभीतक फल, बहेड़ा।

कलिम (सं० पु०) शिरीष वृक्ष, सिरिसका पेड़।

कलिमल (सं० क्ली०) पाप, गुनाह।

कलिमार, कलिमारक देखो।

कलिमारक (सं० पु०) कलिना प्रदेशस्य कलहेन मारयति, कलि मृ णिच-ण्वुल्। १ पूतिकरञ्ज करौज। २ कण्टकस्तन् करञ्ज, कंटीला करौंदा।

कलिमाल, कलिमालक देखो।

कलिमालक (सं० पु०) कलीनां पापानां माला यस्य कलि-माला क। पूतिकरञ्ज करौज।

कलिमाल्य (सं० पु०) कलीनां माल्यं यस्य बहुव्री०। पूतिकरञ्ज करौज।

कलिया (फा० पु०) हलपका मांस, जोमें भुना हुआ गोश्त। इसमें मसालेदार शोरबा रहता है।

कलियाना (हिं० क्रि०) १ कली आना, गुच्छा फूटना। २ पत्र आना, नयी पर निकलना।

कलियारी (हिं० स्त्री०) कलिहारी, एक पहाड़ीका पौदा। इसका हिन्दी पर्याय—करियारी, कलिहारी, लांगुली और कुलहारी है। इसे बंगलामें ईशलाङ्गला, पञ्जाबीमें सिरिवा समभो, मराठीमें सुलिम, दक्षिणीमें कालका बछनाग, मराठीमें करियानाग, मार वाड़ीमें इन्दर्ह, तामिलमें कलैप्पै कलिगइ, तैलगूमें कलप्पागड्डा मलयमें मेनतोणी, ब्राह्मीमें सिमडोन और सिंहलीमें नियङ्गल कहते हैं। (Gloriosa superba)

यह एक विषाक्त ओषधि है। करियारी अपने पत्तोंकी नोकके सहारे ऊपरको चढ़ती है। भारत, ब्रह्म और सिंहलके वनमें यह सामान्यतः उत्पन्न होती है। वर्षा ऋतुके समय इसमें सुन्दर और बड़े पुष्प आता है। पत्र पतले और नोकदार होते हैं। मूल पञ्चिविशिष्ट रहता है। पुष्प झड़ने पर मिर्च-जैसा फल लगता है। फल इसके पत्तमेत बोज होता है। इसका मूल विषाक्त है।

करियारीको बहुत भारतीय वैद्य और यूनानी हकीम औषधमें व्यवहार करते हैं। बिच्छू और कनखजूरेके काटने पर इसका पुलटिस चढ़ता है।

कलिहुग (सं० क्ली०) कलिरेव हुगम्। चतुर्थ युग। कलि देखो।

कलियुगाद्या (सं० स्त्री०) कलियुगस्य आद्या आद्य तिथिः ६ तत्। माघी पूर्णिमा माघकी पूरनमासी। इसी तिथिको कलियुग लगा था।

कलियुगालय, कलियुग देखो।

कलियुगालयन कलियुग देखो।

कलियुगी (सं०त्रि०) १ कलियुगमें उत्पन्न होनेवाला। २ पापी, बुरा।

कलिल (सं० त्रि०) कलयति मिश्रयति, कलि इलच्। कलिलमनिशिवविशिवविशेष। २ मिश्रित, मिला हुआ। ३ गहन, घना। ३ व्याप्त भरा हुआ। (क्ली०) ४ समूह ढेर।

"यदा ते मोहकलिलं बुद्धिर्व्यतितरिष्यति।" (गीता २।५२)

कलिवर्ज्य (सं० त्रि०) कलियुगमें न करने योग्य, जिसे वर्तमान युगमें बचाना पड़े। अश्वमेधादि यज्ञ, देवरादिसे नियोग, सन्यास मांस पिण्डदान प्रभृति काम पत्र युगमें वर्जित रहते भी कलिमें वर्ज्य है।

कलिवल्लभ—वासुनराज युवका एक नाम।

कलिविक्रम—दक्षिणापथके एक प्राचीन चालुक्य राजा। इनका अपर नाम त्रिभुवनमल्ल वा विक्रमादित्य (४र्थ) था। यह आहवमल्लके पुत्र रहे। इनके राजत्वका काल संवत् ९९७—१०४८ था।

कलिविष्णुवर्धन—पूर्व चालुक्यराज विजयादित्य नरेन्द्र मृगराजके पुत्र। इन्होंने डेढ़ वर्ष राजत्व किया।

कलिवृक्ष (सं० पु०) कलेराश्रयरूपो वृक्षः, मध्यपद-लो०। विभीतक वृक्ष, बहेड़ेका पेड़।

कलिसंश्रय (सं० पु०) कलेः संश्रयः आवेशः, ६-तत्। १ शरीरमें कलिका प्रवेश, पापमें पड़नेकी हालत। २ कलिकी आकृति, गुनाहकी सूरत।

कलिहारी (सं० स्त्री०) कलिं हरति, कलि हृ-अण्-ङीप्। लाङ्गली, करियारी। करियारी देखो।

कली (सं० स्त्री०) कलि-ङीप्। कलिका, गुञ्चा।

कली (हिं० स्त्री०) १ अक्षतयोनि कन्या, बाकरा। २ पक्षीका नया पर। ३ वस्त्रविशेष, एक कपड़ा। यह तिकोनी कटती और अंगरखे, कुरते, पायजामे वग़ैरहमें लगती है। ४ हुक्केके नीचेका हिस्सा। इसमें गडगडा लगता और पानी रहता है। ५ वैष्णवों का एक तिलक। ६ कुलई, पत्थर या सीपका फूंका हुआ टुकड़ा। इसीसे चूना बनता है।

कलौंदा (हिं० पु०) तरम्बुज, तरबूज।

कलील (अ० वि०) अल्प, थोड़ा, कम।

कलीसिया (हिं० स्त्री०) ईसायियों या यहूदियोंकी धर्ममण्डली। यह यूनानी 'इकलीसिया' शब्द का अपभ्रंश है।

कलु (सं० पु०) गरुड़शालि, किसी किस्मका धान।

कलु—आसामके गारो पर्वतकी एक नदी। यह तुरा नामक स्थानसे निकल ब्रह्मपुत्र नदमें जा गिरी है।

कलुक (सं० पु०) वाद्यविशेष, एक बाजा।

कलुका (सं० स्त्री०) १ शष्कुली, शराबखाना। २ उल्का, उत्पात, शहाव-साकिब, टूटता तारा।

कलुख (हिं०) कलुष देखो।

कलुखाई (हिं०) कलुषता देखो।

कलुखी (हिं०) कलुषी देखो।

[illegible] (हिं० पु०) देवताविशेष। इनको दोहाई सावरी मन्त्रमें लगती है। यह जादू टोनेके प्रधान देव हैं।

कलुष (सं० क्ली०) कं सुखं लुषति हिनस्ति, क-लुष्-अण् काल-उपच् वा। पृषोदरादित्वात् साधुः। उण् ४।७१। १ पाप, गुनाह। २ मलिनता, मैलापन। "विगत-कलुषमम्भः श्यानपङ्का धरित्री।" (ऋतुसंहार) (पु०) कस्य जलस्य लुषः हिंसकः आविलत्वकारकः, क-लुष-क। ३ महिष, भैंसा। ४ मण्डलिसर्प। ५ क्रोध, गुस्सा। (त्रि०) ६ बद्ध, बंधा हुवा, जो बहता न हो। ७ निन्दित, बदनाम, ख़राब। ८ कषायित, कसैला। ९ दुःखित, अफसुर्दा। १० क्षुब्ध, घबराया हुवा। ११ असमर्थ, नाताक़त।

"आरावबोधकलुषा दयितेव रात्रौ।" (रघु ५।६४)

कलुषता (सं० स्त्री०) १ मलिनता, मलापन। २ अन्ध-कार, अंधेरा। ३ क्षुब्धता, घबराहट।

कलुषमञ्जरी (सं० स्त्री०) लिङ्गिनी, मजीठ।

कलुषयोनि (सं० त्रि०) वर्णसङ्कर, हरामज़ादा, दोग़ला।

कलुषित (सं० त्रि०) कलुषमस्य सञ्जातः, कलुष-इतच्। १ पापयुक्त, गुनाहगार। २ दूषित, खराब। ३ मलिन, मैला। ४ कषायित, कसैला। ५ बद्ध, बंधा हुवा। ६ दुःखित, रञ्जीदा। ७ क्षुब्ध, घबराया हुवा। ८ असमर्थ, नाताक़त।

कलुषी (सं० त्रि०) कलुषमस्यास्ति, कलुष-इनि। १ पापी, गुनाह करनेवाला। २ मलिन, मैला रहने-वाला।

कलूटा (हिं० वि०) अत्यन्त कृष्णवर्ण, निहायत काला।

कलूना (हिं० पु०) स्थूल धान्य विशेष, एक मोटा धान। यह पञ्जाबमें होता है।

कलूतर (सं० पु०) देशविशेष, एक मुल्क।

कलेऊ (हिं० पु०) १ भोजन विशेष, एक खाना। यह लघु रहता और प्रातःकाल जलपानके समय चलता है। २ विवाह होते समय वरका एक भोजन। यह पाणिग्रहण होनेके तीसरे और चौथे दिन सन्ध्या समय किया जाता है। विवाहमें प्रथम दिवस पाणि-ग्रहण होता है। दूसरे दिन रात को कच्ची रसोयी खाने वरपक्षीय लोग जाते हैं। तीसरे और चौथे

दिन तीसरे पहर कोयी पांच बजे कन्यापक्षीय जन सागे (जहां वरपक्षीय ठहरते हैं) में बरात खोलने जाते हैं। जब बरात खोल जाता, तब कन्यापक्षीय सबको वरको भोजन करनेके लिये बोलाते हैं। इसीका नाम कच्चा है। कहीं कहीं सिवा मगर और पूरीके दूसरे चीज नहीं खिलाते। वरके साथ यह भोज भी कलेवा कहा जाता है।

कलेई (हिं॰ पु॰) १ वर्णविशेष, एक रंग। यह हिराकसीस, हर्रे, कपास और मजीठ वा पतङ्गके योगसे बनता है। इसका अपर नाम जुगोटिया रंग है। (वि॰) २ जुगोटिया।

कलेजा (हिं॰ पु॰) १ वक्षःस्थलान्तर्गत अवयव विशेष, छातीका एक भीतरी हिस्सा। हृद् देखो। २ वक्षःस्थल, छाती। ३ साहस, हिम्मत।

कलेटा (हिं॰ पु॰) पशुविशेष, एक बकरा। इसको ऊनसे कम्बल बनते हैं।

कलेवर (सं॰ क्ली॰) कले शुक्रे वरं श्रेष्ठम्, दिशोत्व हलदन्तात् सप्तम्या अलुक् समा॰। शरीर, जिस्म, चोला।

कलेस (हिं॰) क्लेश देखो।

कलैया (हिं॰ स्त्री॰) १ कला, उलट पुलट। २ ताड़ना, उत्पीड़न, मारपीट।

कलोंदड़ा (हिं॰ पु॰) सर्पविशेष, अजगरकी भांति एक बड़ा सांप। यह बङ्गालमें होता है।

कलोद्भव (सं॰ पु॰) कलमशालि जड़हन।

कलोपनता (सं॰ स्त्री॰) मूर्च्छनाविशेष, एक रागका।

'मध्यमे स्यात् सौवीरी हरिणाश्वा तथा क्रमात्।
स्यात् कलोपनता शुद्धमध्या मार्गी च पौरवी॥
हृष्यका चास्यां मीना मूर्च्छना मता इमाः' (सङ्गीतदर्पण)

मध्यम ग्रामको सात मूर्च्छना होती हैं,—सौवीरी, हारिणाश्वा, कलोपनता, शुद्धमध्या, मार्गी पौरवी और हृष्यका। कलोपनता मध्यम ग्रामको तृतीय मूर्च्छनाका नाम है।

कलोर (हिं॰ वि॰) बेब्याही, जो ब्याही न हो। यह शब्द गायके लिये आता है।

कलोल (हिं॰) कल्लोल देखो।

कलोलना (हिं॰ क्रि॰) कलोल करना, खेलना-कूदना।

कलौंस (हिं॰ वि॰) १ कृष्णवर्ण विशिष्ट कालापन लिये हुये। (पु॰) २ कृष्णवर्ण कालापन। ३ कलङ्क, धब्बा।

कलौंजी (हिं॰ स्त्री॰) १ कृष्णजीरक, काला जीरा। इसे बङ्गलामें मुगरैला, काश्मीरीमें तुख्म गन्दन, अफ़गानोंमें सियाह दाना, मराठीमें काळेंजिरे, तामिलमें करुञ्जीरगम्, तैलगुमें नल्ल जिलकर, कनाड़ीमें कारो जिरगे, मलयमें करुन चीरकम, ब्रह्मोमें समोनने, सिंहलीमें कलुदुरु, अरबीमें कमूनअसवद और फारसीमें सियाहदाना कहते हैं। (higella sativa) किन्तु काले जीरेसे कलौंजी भिन्न वस्तु है।

यह दक्षिण यूरोपमें स्वभावतः उत्पन्न होती है। दक्षिण भारत और नेपालको तराईमें इसे खेतके किनारे मार्ग पौषमें वा बीच माघमें बोते हैं। बालुकामय भूमि कलौंजीके लिये अच्छी रहती है। वृक्ष डेढ़ या दो हाथ ऊंचा होता है। पुष्प झड़ जानेसे कोषो तीन पङ्क्ति परिमित फली निकलती है। उसमें कृष्णवर्ण बीज भरे रहते हैं। उसका आस्वाद सकटु, तीक्ष्ण और सुगन्धि होता है। लोग कलौंजीको तर-कारीमें डाल कर खाते हैं। इससे दो प्रकारका तैल निकलता है—एक कृष्णवर्ण सुगन्धि एवं वायु परि-माणशील और दूसरा स्वच्छ तथा परक्लेश उद्भव। प्रथमोक्त तैलसे सुन्दर नीलवर्ण प्रतिबिम्ब पड़ता है। कलौंजी सुगन्धित, वायुनाशक अग्निदीपन और पाचक होती है। यह अग्निमान्द्य अरुचि, ज्वर और पक्षघात प्रभृति रोगोंमें औषधकी भांति व्यवहार की जाती है। कलौंजीके सेवनसे दुग्ध भी अधिक उतरता है। मुसल-मान हकीमोंके मतानुसार कलौंजी उत्तेजक छाय तापकारक, पचिपाकशील शोषक, और मूत्रवर्धक है। कलौंजी बहुमूल्य ऊनी कपड़ेमें रखने कीड़ा नहीं लगता।

२ एक तरकारी। यह करेले परवल, भिण्डी, बैंगन आदिको खोखले और भीतर नमक, मिर्च, खटाई, धनिया प्रभृति द्रव्य भर कर बनायी जाती है। इसे भरवा भी कहते हैं।

कलौंसी (हिं॰ स्त्री॰) कृष्णत्व, सुरमा, सावल।

कल्क (सं॰पु॰) कल्‌ क। शृगालादिभ्यश्चित्‌: कः। उण्‌ ३।४०।
१ शिलापिष्ट द्रव्य, पत्थर पर पीसी हुयी चीज। शुष्क या जलमिश्रित द्रव्यमात्र पत्थर पर पीसनेसे कल्क कहाता है। इसका संस्कृत पर्याय—पिष्ट, विशेष, आवाय और प्रलेप है। हिन्दीमें इसे चूरन और बुकनी या बुकनू कहते हैं। एक प्रहरसे अधिक काल रखने पर कल्क द्रव्यका वीर्य घट जाता है। २ जलपिष्ट द्रव्य, पानीमें पीसी हुयी चीज। ३ मद्यादिपेषित द्रव्य, शराब वगैरहसे पीसी हुयी चीज। इसमें प्रथम द्रव्य एक अंश और मधु, घृत या तैल द्विगुण पड़ता है। फिर चिनी या गुड़ द्विगुण और द्रव चतुर्गुण डालते हैं। (परिभाषा प्रदीप) ३ घृत तैलादिका शेष, घी तेल वगैरहका बचा हुवा हिस्सा। ४ दम्भ, घमण्ड। ५ विभीतकवृक्ष, बहेड़ेका पेड़। ६ विष्ठा, मैला। ७ किट्ट, ८ पाप, गुनाह। ९ द्रव्यमात्रका चूर्ण, किसी चीजकी बुकनी। १० कर्णमल, कानका मैल। तुरुष्क नामक गन्ध द्रव्य, लोबान। ११ प्रतारणा, फटकार। १२ अवलेह, चटनी। १३ करिदन्त हाथी दांत। (त्रि॰) कल्यति पापं आचरति। १४ पापात्मा, पापी गुनाहगार।

कल्कन (सं॰ क्ली॰) कल्कं शाठ्यं करोति, कल्क-णिच्‌ भावे ल्युट्‌। १ शठाचरण, फरेब, धोकेबाजी। २ विवाद, झगड़ा।

कल्कि (सं॰ पु॰) कल्कं पापं हन्यतया अस्ति अस्य, इन्‌। भगवान्‌ नारायणके दश अवतारोंमें दशम वा शेष अवतार। भूमण्डलमें कलिका चारो पाद या पूर्ण अधिकार आने अर्थात्‌ समुदय मानवोंके एक वर्ण हो जाने और विष्णुका नाम भुलानेसे भगवान्‌ कल्कि नामसे अवतीर्ण होंगे। वह कलिको निपीड़ित कर पृथिवीसे भगायेंगे; म्लेच्छकुलको मिटा सद्धर्म चलायेंगे।
(महाभारत, भागवत, विष्णु, गरुड़, मार्कण्डेय इत्यादि)

सत्य, त्रेता, द्वापर और कलि—चार युगोंको पृथिवी पर अधिकार मिला करता है। इन्हीं चारो युगोंके समष्टि कालको 'दिव्ययुग' कहते हैं। ७१ दिव्ययुगोंमें एक मन्वन्तर होता है। आजकल ७म मनु वैवस्वतका अधिकार चलता है। वैवस्वत अधिकारके ७१ दिव्ययुगोंमें अष्टाविंशति दिव्ययुगका वर्तमान कलियुग है। इससे पहले स्वायम्भुव, स्वारोचिष, उत्तम, तामस, रैवत और चाक्षुष नामक छह मन्वन्तर बीत चुके हैं। इन मन्वन्तरोंमें इकहत्तर इकहत्तरके हिसाबसे ४२६ दिव्य युग हुये। प्रत्येक दिव्ययुगमें एक एक कलियुग मिलता है। वर्तमान वैवस्वत मनुके २७ दिव्य युग और इसीके साथ २७ कलियुग भी हैं। वर्तमान श्वेतवाराहकल्पमें कुल ४५३ कलियुग बीते हैं। प्रत्येक कलिको शेष अवस्थामें नारायणके कल्किमूर्ति परिग्रह करते ४५३ बार कल्किलीला हुयी है। फिर वर्तमान कलियुगके अन्तमें भी एक बार कल्कि अवतार होंगे। प्रत्येक मन्वन्तरमें नारायणके अवतारादि समान होते हैं यह किसीसे पुराणसे स्पष्ट समझ नहीं सकते। सुतरां कौन निश्चय कर सकता है कि विगत मन्वन्तरों या कलियुगोंमें कल्कि अवतार हुआ था या नहीं। भगवान्‌के कल्कि लीलाके सम्बन्धमें कल्किपुराणकारने लिखा है,—

कल्किका शेषपाद आते ही स्वाध्याय, स्वधा, स्वाहा, वषट्‌ एवं ओंकार अन्तर्हित हुआ, सुतरां देवों का आहारादि भी रुक गया। उस समय वह सन्तप्त हुये और दीना, क्षीणा, तथा मलिना धात्री को आगे कर अत्यन्त उदास मनसे ब्रह्मलोक जा पहुंचे। विधाता उस ब्रह्मलोकमें उपनीत होते उन्होंने सनक, सनन्द, सनातनादि एवं सिद्धगण द्वारा स्तूयमान लोक पितामह ब्रह्माको सुखोपविष्ट देख अवनत मस्तक प्रणामपूर्वक अवस्थान किया था। पितामहने उनसे सादर बैठनेको कह कुशल पूछा। फिर देवोंने कलिके दोषसे जो धर्मनाश हुआ, वह सब यथायथ बता दिया। ब्रह्माने देवोंको अवस्था देख आश्वास प्रदानपूर्वक कहा था,—चलिये, विष्णुको रिझावुझा तुम्हारा अभीष्ट सिद्ध करेंगे। ब्रह्मा देवोंके समभिव्याहारसे विष्णुके निकट गये। विष्णुको स्तव आदिसे सन्तुष्टकर उन्होंने देवोंकी प्रार्थना बतायी थी। नारायण विधिके मुखसे कलिको विवरण सुन कहने लगे—विभो! हम आपके अभिप्रायानुसार शम्भलग्राममें विष्णुयशाके औरस और सुमतिके गर्भसे जन्म लेंगे। हमारे तीन ज्येष्ठ भ्राता

होगी। हम उन्हीं तीनों भाइयोंके साथ कलि पर जय करेंगे। हमारी प्रियतमा लक्ष्मी पद्मा नाम पर सिंहल देशमें बृहद्रथकी पत्नी कौमुदीके गर्भसे जन्मग्रहण करेंगी। देवगण! तुम भी भूमण्डलमें अपने अपने अंशसे अवतार लो। हम तुम्हारे साहाय्यसे देवापि और मरु नामक दो राजाओंको पृथिवीके राज्य पर बैठा सत्ययुग तथा धर्म चलावेंगे। विष्णुकी यह बात सुन ब्रह्मा देवोंके साथ लौट पड़े।

देवोंको विदाकर भगवान्‌ने शम्भलग्राममें विष्णुयशाके औरस और सुमतिके गर्भसे जन्म लिया। इससे पहले कवि, प्राज्ञ और सुमन्त्रक नामसे विष्णुयशाके तीन पुत्र हो चुके थे। वैशाख मासकी शुक्ला द्वादशीके दिन भगवान्‌ने अवतार लिया। इस बार भी वह कृष्णावतारकी भांति भूमिष्ठ होते ही चतुर्भुज देख पड़े। महाषष्ठी धात्री बनी थीं। अम्बाने नाभिच्छेदन किया। भागीरथीने गर्भका क्लेद मिटाया था। सावित्रीने देवोंसे नहलाया धुलाया था। पृथिवीने देवोंसे दूध पिलाया था। षोडशमातृकाने आशीर्वाद दिया। ब्रह्मा भगवान्‌को चतुर्भुज मूर्तिमें अवतीर्ण होते देख बहुत घबरा गये। उन्होंने पवनको सूतिकागृहमें भेजा था। पवनने जाकर भगवान्‌के कानमें कहा—प्रभो! आपकी चतुर्भुज मूर्तिका दर्शनलाभ देवताओंको भी दुर्लभ है, अतः इस मूर्तिको छिपा मनुष्यमूर्ति धारण कीजिये। भगवान् पवनके मुखसे ब्रह्माका अभिप्राय समझ उसी क्षण द्विभुज मानव शिशु बन गये। विष्णुयशा एकाएक पुत्रका रूपान्तर देख विस्मित हुये। किन्तु विष्णुकी मायामें मोहित हो उन्होंने पूर्वतर रूपको भ्रम ठहरा लिया।

भगवान्‌के जन्म लेनेसे शम्भलग्रामका पापताप अन्तर्हित हुआ था। अधिवासी महोत्सवानुष्ठान करने लगे। पुत्रका क्रमशः प्राशन शेष विष्णुयशाने वेदविद् ब्राह्मण बुला नामकरणका आयोजन उठाया था। नामकरणके दिन परशुराम, कृपाचार्य, अश्वत्थामा और व्यासदेव भिक्षुकका रूप बना शिशुरूपी हरिको देखने गये। विष्णुयशाने अदृष्टपूर्व सूर्यसम तेजस्वी चारो अतिथियोंको रोमाञ्चितकलेवर हो संवर्धना की। उनके बैठने पर शिशुक्रोड़स्थ बालकको देखते ही उन्होंने समझ लिया, कि भगवान्‌ने कलिकुलविनाशके लिये यह रूप परिग्रह किया था। वह बालकका 'कल्कि' नाम ठहरा और जातकर्म तथा नामकरणादि संस्कार करा प्रसन्न मन बिदा हुये। फिर गर्ग, भर्ग, विशाल प्रभृति नामोंसे देवता कल्किकी ज्ञातिमें अवतार लेने लगे।

उस समय शम्भलग्रामके निकटस्थ प्रदेशमें विशाखयूप नामक नरपति राज्य करते थे। वह ब्राह्मणोंके प्रतिपालक रहे। कुछ काल पीछे कल्किका वयस उपनयनके योग्य होने पर विष्णुयशाने कहा,—वत्स! हम तुम्हारा यज्ञसूत्ररूप प्रधान संस्कार सम्पन्न करेंगे, फिर तुम्हें चतुर्वेद पढ़ना पड़ेगा। कल्किने यह बात सुन पूछा, वेद, सावित्री, यज्ञसूत्र, ब्राह्मण, दशविध संस्कार, विष्णुपूजा प्रभृतिका अर्थ क्या था। फिर वह प्रश्न करने लगे—जो ब्राह्मण सत्पथ पर चल हरिके प्रिय बनते और त्रिलोकका अभीष्ट तथा निखिल सुखका उद्धार साधन करते, वह कहां मिलते हैं। विष्णुयशाने इस प्रश्नके उत्तरमें कलिके अनाचारकी कथा सुनायी। पिताके मुखसे कलिका संवाद पाकर कल्कि मानो कांप उठे। उनके मनमें कलिके निग्रहका अभिलाष उत्पन्न हुआ था। पीछे यथानियम उपनयन शेष होनेपर वह गुरुकुलमें रहनेको चल दिये।

उस समय परशुराम महेन्द्र पर्वतपर वास करते थे। उन्होंने कल्किको आते देख आश्रममें लाकर अपना परिचय दिया। और फिर वह कहने लगे, 'हम तुम्हें पढ़ायेंगे। भृगुवंशमें जमदग्निके औरससे हमारा जन्म है। वेदवेदाङ्गके तत्त्व और धनुर्विद्यामें हम पारदर्शी हैं। हमने समुदय पृथिवी निःक्षत्रियकर ब्राह्मणोंको दक्षिणा दी है। आजकल तपश्चर्याके लिये इसी महेन्द्रपर्वत पर रहते हैं। तुम हमें गुरु समझो और अभिलषित शास्त्र अभ्यास करो। कल्कि परशुरामकी बात सुन पुलकित हुये और प्रणाम कर उनके निकट रहे। उन्होंने चतु-

षष्टि कला शास्त्रवेद और धनुर्वेद पढ दक्षिणा देना चाहा था। परशुरामने दक्षिणा की बात सुन कर कहा,—ब्राह्मणकुमार! भगवान् ब्रह्माने विष्णुसे कलिनिग्रहके निमित्त प्रार्थना की थी। विष्णुने वही प्रार्थना पूर्ण करने का अवतार लिया है। तुम वही पूर्णब्रह्मरूपी हरि हो। तुमने हमसे विद्या पढ़ी है। आगे तुम शिवसे अस्त्र तथा सर्वज्ञ शुक पक्षी और सिंहलदेशकी राजकन्या पद्मानाम्नी लक्ष्मी पावोगे। फिर तुम्हारे हाथसे धर्महीन नृपतियोंका विनाश, कलिका निग्रह और स्वधर्मका संस्थापन किया जायेगा। तुम अन्तमें मरु और देवापिको पृथिवीके राज्यपर अभिषिक्त कर गोलोक पहुंचोगे। तुम्हारे इस साधुकार्य्यके अनुष्ठानसे हम परम प्रसन्न होंगे। यही हमारी दक्षिणा है।' कल्किने गुरुदेवसे आज्ञा ले विल्वोदकेश्वर नामक शिवमन्दिरमें पहुंच महादेवकी पूजा और स्तुति की। स्तवसे तुष्ट हो देवादिदेव पार्वतीके साथ आविर्भूत हुये और वर देकर कहने लगे,—'तुमने जो स्तव बनाकर पढ़ा, वही सब पढ़ने वालेका सर्वाभीष्ट सिद्ध होगा। यह द्रुतगामी बहुरूपी गरुड़के अंशसे सम्भूत अश्व और यह सर्वज्ञ शुक तुम्हें देते हैं। आजसे मानव तुम्हें सर्वविध शास्त्रमें निपुण, वेदपारदर्शी और सर्वभूतविजयी समझेंगे। यह महाप्रभाशाली रत्नखचित मुष्टिविशिष्ट कराल करवाल ग्रहण करो। इसीसे पृथिवीका भार हरण करना पड़ेगा।' यह कह कर महादेव अन्तर्हित हुये। कल्कि भी हर पार्वतीको प्रणाम कर शिवदत्त वस्तु उठा अश्व पर चढ़े और अपने घरको लौट आये। विष्णुयशा पुत्रके मुखसे अवगत हो इधर उधर उस समस्त कथाकी आलोचना करने लगे। क्रमशः राजा विशाखयूपको खबर लगी। विशाखयूप सुनते ही समझ गये, कि यथार्थ विष्णु अवतीर्ण हुये थे। कारण जिस समय कल्किने जन्म लिया, उसी समयसे उनकी राजधानी माहिष्मती नगरीमें याग, दान, तपस्या और व्रतका अनुष्ठान होने लगा। ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य आदि अपना दुराचरण छोड़ते थे। इससे



कल्कि अवतार।

विशाखयूप भी स्वयं धर्माचरण अवलम्बन पूर्वक विशुद्ध हृदयसे प्रजापालन करने लगे। कल्किने उपयुक्त समय देख खड्ग तथा धनुर्बाण लिया और अश्वपर चढ़ माहिष्मतीपुरकी ओर गमन किया। उनके दो भ्राता और गर्ग भर्गादि ज्ञातिगण भी पीछे पीछे चले। विशाखयूप कल्किकी आते सुन आगे बढ़े थे। उन्होंने पुरद्वार पर पहुंच देवतापरिवृत उच्चैःश्रवारोही इन्द्रकी भांति स्वजनवेष्टित कल्किको दण्डायमान देखा। विशाखयूपने अवनत हो कल्किको प्रणाम किया था। कल्किने भी प्रसन्न दृष्टिसे उनकी ओर देख दिया। भगवान्‌की कृपादृष्टि प्राप्तकर विशाखयूप उसी दिनसे पुण्यात्मा वैष्णव बन गये।

कल्कि राजाके साथ रहने लगे। फिर उन्होंने संक्षेपमें आश्रमधर्मका निर्देश इस तरह कहा था,—'हमारे अंशवाले कलिके पापसे भ्रष्टाचार बने, किन्तु अब हमसे आ मिले हैं। तुम राजसूय और अश्वमेध यज्ञ कर हमारी उपासना उठावो। हमीं परमलोक और हमीं सनातन धर्म हैं। काल, स्वभाव और संस्कार हमारा अनुगामी है। हम चन्द्रवंशीय देवापि तथा सूर्य्यवंशीय मरुको धर्मराज्य पर संस्थापित और सत्य युग प्रवर्तित कर गोलोक चले जायेंगे। विशाखयूपने यह बात सुन कल्किसे वैष्णव धर्मका प्रसङ्ग पूछा।

कल्किने कलिकुलविनाशके लिये विशाखयूपको सभामें सृष्टिसे आरम्भ कर विराट्मूर्त्ति, ब्रह्मा, माया, देवदानव-मानव स्थावर जङ्गम आदिको उत्पत्ति, वेदमाहात्म्य, ब्राह्मणमहिमा, धर्ममें अवतारको आवश्यकता प्रभृति सब बातें बतायी थीं। तत्पश्चात् विशाखयूपके स्थानान्तर जाते शिवदत्त शुक इतस्ततः विचरण कर कल्किके निकट जा पहुंचे। कल्किने शुकसे कहा—शुक ! कहो, तुम किस देशसे क्या आहार कर आये हो, तुम्हारा मङ्गल तो है? शुकने उत्तर दिया—देव ! सागरके मध्य सिंहल नामक एक द्वीप है। वहांके नृपति बृहद्रथ कहाते हैं। कौमुदी नाम्नी उनकी पत्नीके गर्भसे एक कन्या हुयी है। उसका नाम पद्मावती त्रिलोक दुर्लभा है। उनका चरित्र अतीव रमणीय है। रूपसे मन्मथ भी पागल बन जाता है। पद्मावतीने हर पार्वतीकी उपासनाकर वर पाया है, कोई मनुष्य राजपुत्र पद्मावतीके उपयुक्त नहीं। इस जगत्में जो मानव या देव असुर नाग गन्धर्व प्रभृति पद्माको कामभावसे निरीक्षण वा अभिलाष करेगा, वह तत्क्षण स्वीय पुरुषत्वके वयसानुरूप स्त्रीत्व भावको पहुंचेगा। रमानाथ नारायण ही उनके स्वामी हैं। पद्मा महादेवसे यह वर लाभ कर परम हृष्ट हो इतने दिनसे नारायणकी राह देख रही है। सम्प्रति उनके पिता स्वयम्बरका आयोजन कराया है। नृपतिका उद्देश है, स्वयम्बरकी सभामें श्रीकृष्णने जैसे रुक्मिणीको ग्रहण किया, वैसे ही नारायण पद्माको भी ग्रहण करेंगे। फिर स्वयम्बरकी सभामें जो समस्त नृपति पहुंचे, वह पद्माको कामभावसे देखते ही तत्क्षण अपने अनुरूप विपुलनितम्बा, स्तनयुगधारिणी और सुमध्यमा रमणी बन गये। जिसने जैसी रमणीको चाहा उसने वैसा ही रूप पाया था। वह शास्त्रविद्याध्ययन भी निपुणतासे देखने लगे। फिर नृपति लोग प्रसन्नतासे पद्माकी सहचरियोंमें मिल गये। मैं विवाह देखनेको एक निकटस्थ वृक्षपर बैठा था। किन्तु यह व्यापार देख मैं अत्यन्त दुःखित हुआ। पद्मा भी रोने लगीं। मैंने उनका विलाप सुना है। वह श्रीहरिकी चिन्तामें अतिकातर हैं। मैं अधिक अपेक्षा कर न सकनेपर पद्मावतीको उसी अवस्थामें छोड़ तुम्हें संवाद देने आया हूं।

कल्किने शुकको पद्मावती रूपसीको जैसी अवस्था बताते देख आश्वास दिलानेके लिये यथोपयुक्त उपदेश प्रदान पूर्वक फिर सिंहल भेजा था। शुक सिंहल पहुंच गये और पद्मावतीको आश्वास देने लगे। उनके मुखसे शिवोक्त विष्णुपूजाकी पद्धति, भगवान्‌के देहकी वर्णना और श्रीचरणसे केश पर्यन्त प्रति अङ्गका ध्यान सुन शुकने संवाद दिया, कि वसुधाके भारहार शम्भलग्राममें विष्णुने कल्कि अवतार लिया है। पद्माने कल्किका संवाद सुन शुकको रत्नालङ्कारसे सजाया भगवान्‌को बुला लानेके लिये दूत बनाया और कह सुनाया,—देखो, जो कहना है, कहोगे। तुमसे अविदित कुछ भी नहीं है। अब दूसरी कौन बात कह सकती हूं। यदि अपने मनुष्यजन्ममें श्रीप्राप्ति की आशासे सिंहल भले न आयें, किन्तु आप श्रीचरणमें हमारा प्रणाम अवश्य पहुंचावें। कल्किसे कह दीजियेगा, कि पद्माके अदृष्ट दोषसे शिवका वर अभिशाप बन गया। शुक उनसे विदा हो कल्किके निकट पहुंचे। कल्कि पद्माकी कथा सुन शिवदत्त अश्वपर चढ़े और शुकको साथ ले तन्मयचित्तसे त्वरित-पद सिंहलकी ओर चल पड़े। कल्कि यथाकाल राजधानी कारुमती नगरमें पहुंचे थे। नगरके प्रान्त-भागमें मनोहर सरोवर देख उन्होंने शुकसे कहा,— "इस स्थानपर स्नान करना पड़ेगा।" शुक उनका उद्देश देख पद्मावतीके अभिमुखको चल दिये। कल्किने सरोवरके तीर पर अवस्थान किया। शुकने जाकर पद्मावतीको भगवान्‌के आगमनका संवाद दिया था। पद्मावती सुनते ही सरोवरस्नानके छलसे सखियों सह कल्किके दर्शनको चल पड़ी हुयीं। उनके आनेका समाचार पा पथविथियोंमें जो समस्त पुरुष रहे वह भयसे भागने लगे। उनकी कामिनियां शुभकार्यका अनुष्ठान करतीं, जिसमें पतिलोग स्त्रीत्वको न पहुंचें। पद्मावती सहचारियोंके साथ सरोवरके सोपानपर जा उतरीं। उस समय भगवान्

कल्कि कदम्बतरुके मूलदेशपर सोते थे। पद्मावती यथाकाल स्नान समापन कर उसी तरुके मूलपर आ पहुंचीं और कल्किका रूपलावण्य देख मोहित हुयीं। उन्होंने शुकसे महापुरुषकी निद्रा न भङ्ग करने और उनके लग कर स्त्रीत्व प्राप्त होनेसे डर लगनेकी कहा था। वैसा होते उनकी क्या दशा होती! महादेवका वर पद्माके लिये शाप था। कल्कि मन ही मन उनका अभिप्राय समझ जाग उठे। उन्होंने मधुर प्रेमसम्भाषणसे पद्मावतीको मनाया था। पद्मावती कल्किदेवके मधुर वचन सुन तथा पुरुषत्व पसत रहते देख सातिशय आनन्दित हुयीं और लज्जा नम्रमुखमें प्रेम-गद्गद स्वरसे भगवान् कल्किको स्तव द्वारा रिझा घर लौट पड़ीं। उन्होंने पिताके घरमें भगवान् कल्किदेवके आगमनकी वार्ता कही थी। वृहद्रथने नगरमें श्रीहरिको पदार्पण करते सुन नानाविध नृत्य, गीत, वाद्यादिका आयोजन उठाया। फिर वह पात्रों, मित्रों, परिजनों और ब्राह्मणों आदिके साथ कल्किदेवको लेने चल दिये। पुरोहित पूजाका उपकरण उठा पीछे रहे। राजाने सरोवरके तीर कल्किको देख स्तवपूजादि द्वारा रिझाया था। पुरीमें आनेपर कल्किका पद्मावतीके साथ विवाह हुवा। स्त्रीत्व प्राप्त राजा कल्किका स्तव करने लगे और प्रसन्न होने पर उनके आदेशानुसार रेवा नदीमें नहा अपना अपना पुरुष देह पा गये। फिर उन्होंने दश अवतारोंका नामोल्लेख और भगवान् कल्किका स्तव कर स्वस्व देशको प्रस्थानका उपक्रम लगाया। पुरुषोत्तम कल्किने उस समय उन्हें वर्णाश्रमधर्म, वैदिक अनुशासनादि और प्रवृत्तिमार्ग तथा निवृत्तिमार्गका पथिकोचित कार्य बताया था। नृपति वह बातें सुन पुलकित हुये और पूछने लगे,—'देव! किस कारणसे स्त्री और पुरुष भेदमें सृष्टि पड़ती है। सुख, दुःख और जरा कहांसे है? किसके आदेश और किस उद्देशसे यह विहित है? आज तक इन सकल विषयोंका यथार्थतत्त्व विवेचित नहीं हुवा। फिर इनसे जो विषय भिन्न पड़ता, वह समझ पर नहीं चढ़ता। तुम अनुग्रह कर हमसे कहो।' कल्किदेवने यह प्रश्न सुन अगस्त्य मुनिको स्मरण किया। वे वहां पहुंचे थे। कल्किने राजावोंका प्रश्न बता उत्तर देने को कहा। मुनिवर अगस्त्यने अपने पूर्व जन्मका वृत्तान्त सुना राजावोंके सकल प्रश्नोंका उत्तर दिया। राजा फिर अपने अपने घर लौट गये। राजावोंके स्वराज्यको जाते भगवान् कल्किने भी अपने राज्य को प्रत्यागमन करनेका सङ्कल्प किया। देवराज इन्द्रने भगवान्‌का अभिप्राय समझ विश्वकर्मासे शम्भलग्राममें उनके लिये स्वस्ति प्रभृति नानाविध भवन बनवाये थे। यथाकाल पद्मावतीको साथ ले धूमधामसे कल्कि शम्भलग्रामको ओर चल दिये।

वह सब लोग शम्भल ग्राम पहुंचे थे। कल्कि और पद्मावतीने जाकर जनक-जननीको प्रणाम किया। फिर वह बन्धुवोंके समभिव्याहारसे नगरमें गये और विश्वकर्माके बनाये भवनमें रहने लगे। उसी समय कल्किके भ्राता कविके स्वपत्नी कामकलाके गर्भसे वृहत्कीर्ति तथा वृहद्बाहु, प्राज्ञने अपनी पत्नी सन्नतिके गर्भसे यज्ञ एवं विज्ञ और सुमन्त्रकने शालिनीके गर्भसे शासन तथा वेगवान् नामक पुत्र उत्पादन किये।

कुछ दिन बीतने पर विष्णुयशाने अश्वमेधयज्ञ करना चाहा था। कल्कि पिताकी इच्छा देख धनरत्न संग्रह करनेकी दिग्विजयके लिये चले गये।

कल्कि स्वजनोंको लेकर ससैन्य प्रथमत: कीकट देशमें जा उतरे। कीकटदेशमें उस समय सब एकाकार रहा। स्त्री, धन वा अन्न आदि लेनेमें कोयी अपना पराया देखता न था। वहां जिन नामक एक राजा रहे। वह कल्किका आते सुन दो अक्षौहिणी सैन्य लेकर लड़ने चले।

प्रथम युद्धमें जिन राजकी बौद्धसेना हारकर भागी थी। फिर कल्कि और जिन दोनों लड़ने लगे। कल्कि शराघातसे मूर्छित हुये थे। जिन राजाने अचेतन कल्किका देह उठा ले जाना चाहा। किन्तु वह विश्वम्भर देह उठाये उठा न था। उसी बीच विशाखयूपने निकटस्थ हो गदाघातसे जिनको हटाया और कल्किको लाकर अपने स्व-

-पर बैठाया। रथपर चढ़ते ही कल्कि भाग पड़े। फिर वह सुवर्ण मध्य जिनके सम्मुख पड़ गये थे। मध्य मुखमें धरा कल्किने उन्हें काठ तोड़ तोड़ मार डाला। जिनके भ्राता सुयोदन भ्रातृघातीसे प्रतिशोध लेने गये थे। किन्तु कल्किके ज्येष्ठभ्राता कविने उनसे लड़ने लगे। सुयोदन और कविमें बड़ी गदायें चलीं। सुयोदनने कविको किसी प्रकार हराकर रणभूमिपर माया देवीका स्मरण किया। माया देवी सिंहध्वज रथपर चढ़ सेनाके पुरोभागमें आ खड़ी हुईं। मायाके आते ही कल्किका सैन्य अचलस्तब्ध बना था। बौद्धसेना सवप्रथिके साथ आगे बढ़ी। किन्तु कारण रणभूमिपर कल्कि स्वयं मायाके सम्मुख आ पहुंचे थे। माया देखते ही विष्णुके शरीरमें समा गयीं। मायाको न देख बौद्ध छिन्न घबराये थे। अन्तको युद्ध होने लगा। क्रमश: सुयोदन, कालाख, जरीपरोमा प्रभृति बौद्धनायक खेत रहे। अनेक लोग भागे थे। फिर बौद्धस्त्रियां लड़ने पहुंचीं। कल्किने उन्हें अनेकानेक प्रकाशित समझा बूझके निवृत्त होनेको कहा। रमणियोंने उनकी बात न सुन पतिके शोकमें अस्त्र छोड़े थे। किन्तु अस्त्रोंने वस्तुके प्रति न चल मूर्ति परिग्रह पूर्वक उनसे कह दिया—जिन भगवान्‌की शक्तिसे आयतसे हम मनर्थोंको ध्वंस करते, वह यही भगवान् हरि देख पड़ते हैं। भगवान्‌ने प्रह्लादके लिये जिस समय नृसिंह मूर्ति बनायी थी उस समय भी हरिके गात्रमें आघात मारने को हमारी कुछ चलने न पायी। अब हम क्या कर सकेंगे। बौद्धकामिनियां यह बात सुन विस्मित हुयीं। और अनेकोंकी हरिके शरण गयीं। कल्किने उन्हें भक्तियोगका उपदेश दिया था। फिर उन्होंने भी क्रमश: मुक्ति पायी।

कल्किने कीकटके चक्रतीर्थको जा सदल यथा-विहित विधानके अनुसार स्नान आदि किया था। एक दिन वहां भगवान्‌के वाल्यखिल्य नामक मुनियोंने विनय वदन आकर कहा—कुम्भकर्णके निकुम्भ नामक एक पुत्र रहा। उसकी कुथोदरी नाम्नी एक कन्या है। कालकञ्ज नामक किसी राक्षससे विवाह हुआ। उसके विकञ्ज नामक एक सन्तान विद्यमान है। आजकल कुथोदरी हिमालय पर्वतपर मस्तक रखा और निषध पर्वतपर दोनों पैर फैला सो गयी है। हिमालयकी एक उपत्यकामें बैठ विकञ्ज स्तन्यपान करता है। उसी राक्षसीके निश्वास पवनसे प्रतिहत और विपन्न हो हम आपके शरण आये हैं। आपके बिना कौन चिरकाल राक्षसी-भीतिसे उबारता है। इस बारसे आप कृपापूर्वक हमारा दुःख मिटा दीजिये।

कल्कि मुनियोंकी बात सुन हिमालयकी उपत्यका पर पहुंचे थे। उन्होंने वहां एक दुग्धमयी नदी अति खरस्रोतसे बहते देखी। पूछने पर खबर लगी, कि वह कुथोदरीके एक स्तनकी दुग्धधारा रही। विकञ्ज एकही स्तन पीता था। उससे अपर स्तनकी दुग्ध धारा नदी बनकर बह चली। मलयाद्रिका शोक अपर स्तन बदलनेसे वह नदी सूख जाती और दूसरे ओर नदीकी दुग्धधारा बहने लगती थी। फिर कल्कि कुथोदरीके शोषण आचारको खिंचावमें पड़े और उसके अभिमुखको चल गये। उन्होंने जाकर देखा, कि राक्षसीका कर्ण पर्वतगह्वरके समान सिंहोंका आलय और लोमकूप कुञ्जवनादि सब हस्तियोंके सुखसे रहने को निकेतन बना था। कल्किने राक्षसीको देख शर छोड़ा। राक्षसी शरविद्ध होते गम्भीर गर्जन करने लगी। वह शब्द सुन कल्किकी सेना मूर्छित हुयी। फिर राक्षसीके श्वास लेते ही हस्ती, अश्व, रथ और पदातिके साथ कल्कि नासापथमें जाने लगे। उसने निकट आकर सबको खा डाला।

भगवान् कल्कि ससैन्य राक्षसीके उदरमें पहुंचे थे। उससे जगत्‌र्भार हट गया। फिर वह राक्षसीका उदर बाणाग्नि जला और करवालसे उड़ा बाहर निकले। सैन्य लोग भी योनिरन्ध्र कर्ण नासारन्ध्र प्रभृति स्थानोंसे निकल पड़े। कुथोदरी पञ्चत्वको पहुंची। विकञ्ज जननीको मरते देख निरायुध हाथ से कल्किसेना मारने लगा। कल्किने पञ्चवर्षीय भीषण राक्षस शिशुको ब्रह्म अस्त्रसे यमालय भेज दिया।

दूसरे दिन सर्वत्र ऋषि मुनि महात्मा स्तव पढ़ते पढ़ते कल्किको देखने गये। उनमें अत्रि, अङ्गिरा,

वशिष्ठ, गालव, भृगु, पाराशर, नारद, दुर्वासा, देवल, वयल, अश्वत्थामा, परशुराम, कृपाचार्य, त्रित, वेद-प्रमिति महर्षि रहे। उनके साथ मरु और देवापि नामक दो राजर्षिभी आये थे। कल्कि के परिचय पूछने पर मरुने कहा,—'सूर्यवंशोभूत अग्निवर्णका पौत्र और शास्त्रका पुत्र हूं। व्यासदेवके मुखसे कल्कि अवतारकी कथा सुन दर्शन करनेको यहां चला पाया। देवापिने अपनेको चन्द्रवंशीय प्रतीपकरका पुत्र बताया। वह शान्तनुको राज्य सौंप कलापग्राममें तपस्या करते थे; व्यासके मुखसे कल्किका संवाद सुन देखनेको पहुंच गये।

उनका परिचय पाकर भगवान् कल्किको पूर्वकथा स्मरण पड़ी। उभयको आश्वास दे उन्होंने कहा,—'मरु! प्रजापीड़क तथा प्राणिहिंसक म्लेच्छोंको मार तुम्हें अयोध्याके और पुक्कादिका उच्छेद साधन कर देवापिको हस्तिनापुरके सिंहासनपर बैठावेंगे। तुम अस्त्र शस्त्र ज्ञातविद्य हो। अब योद्धृवेशमें रथपर चढ़ हमारे साथ चलो। मरु! तुम विशाखयूपकी सुन्दरी रुचिराङ्गी कन्याको पत्नी बनावो और देवापि तुम भी रुचिराश्व नृपतिकी कन्या शान्ताको विवाह कर लावो।' कल्किके यह बात कहते ही आकाशसे अस्त्र-शस्त्र सज्जित दो रथ उतर पड़े। उससे सबको विस्मय लगा था। कल्किने कहा,—"तुम दोनों लोकपालनार्थ सूर्य, चन्द्र, इन्द्र, यम और कुवेरके अंशसे धराधामपर अवतीर्ण हुये हो। तुम्हारे ही लिये इन्द्रके आदेशसे विश्वकर्माने यह रथ बनाये हैं। तुम इनपर चढ़कर हमारे पीछे पीछे चलो।' उनकी इस बातपर पुष्पवृष्टि होने लगी।

उसी समय सनक सदृश एक तेजःपुञ्ज ब्रह्मचारी जा पहुंचे। कल्किने पाद्यादि द्वारा उनको पूजा कर परिचय पूछा। ब्रह्मचारीने कहा,—'कमलापते! मैं आपका आदेशवह सत्ययुग हूं। आपका आविर्भाव और प्रभाव देखानेको यहां आ पहुंचा हूं।' सत्ययुग यह कह कल्किका स्तव करने लगे। फिर वह उनके अनुगामी बने थे। महर्षियोंने अपने अपने स्थानको प्रस्थान किया।

उसके पीछे कल्कि विशासन राज्यपर पर चढ़े। विशाखयूप, देवापि और मरु उनके पीछे थे। धर्म भी उसी समय वृद्ध ब्राह्मणवेशमें कल्किके निकट अपना परिचय पा उनको आश्वास दिया था। कीकट बौद्धोंके विदलित होनेकी बात सुन धर्म आल्हादित हुये और सिद्धाश्रम अपने परिजनोंको छोड़ कल्किके पीछे चल दिये।

कल्कि खश, काम्बोज, शबर, बर्बर प्रभृतिको दबानेके लिये कलिकी पुरीके अभिमुख हुये।

कलिकी पुरी अत्यन्त भीषण थी। उसे देखते ही लोग कांपने लगते। सर्वदा भूत, सारमेय, काक, उलूक और शृगाल वहां देख पड़ते थे। गोमांसका पूतिगन्ध सर्वत्र परिपूर्ण रहा। कामिनियां द्यूत, विवाद प्रभृति विषयोंमें अनुरक्त थीं। फिर वही वहां कर्वी रहीं। अन्य प्रभुकी बात चलती न थी।

कलिने कल्किदेवको लड़ने आते सुन स्वीय परिजन बुला लिये। फिर वह पेचकाख्य रथपर चढ़ विशासन नगरके बाहर जाकर लड़नेको प्रस्तुत हुये। कल्किने ससैन्य रणक्षेत्र पहुंच धर्मसे कलि, ऋतसे दम्भ, प्रसादसे लोभ, अभयसे क्रोध, सुखसे भय, हर्षसे व्याधि, प्रश्रयसे ग्लानि और स्मृतिसे जराको लड़ाया था। अन्यान्य प्रतिद्वन्द्वियोंमें भी उन्होंने युद्ध घोषणा करायी। क्रमक्रम विषम युद्ध उठा था। आकाशमें देवता देखने गये। मरु राजा खशों काम्बोजों, देवापि चीनावों बर्बरों और विशाखयूप पुलिन्दो चण्डालोंसे लड़ने लगे। कलिके काक और विकाक नामक दो दानव सेनापति थे। वह वृकासुरके पौत्र और शकुनिके पुत्र रहे। दोनो देखनेमें एक रूप थे। ब्रह्मासे वर पा वह देवतावोंसे अजेय रहे। उन दोनों वीरोंके गदाहस्त रणमें कतरनेसे मृत्यु भी डर कर भागते थे। कल्किदेव स्वयं काक और विकाकके प्रतिद्वन्द्वी बने। युद्धमें अस्त्रोंकी झाड़ा झड़ी और वीरोंकी कड़ाकड़ीसे पृथिवी थरथराने लगी। अवशेषको कलिके अनुचर पराजित हो नाना देशोंमें चले गये। कलि स्वयं हारने पर स्त्रीसामिक भवनमें घुसा था। पेचकाख्यरथ चर-

हुआ। धर्मसार कृत यज्ञादि भी सब देवापि तथा विशाखयूपसे मारे गये।

कोक और विकोकसे कल्किदेव लड़े। मधुकैट-भका सुत मान मारता था। कल्कि उनके अस्त्राघातसे अत्यन्त पीड़ित हुये। उन्होंने क्रुद्ध हो विकोकका सिर काट डाला। किन्तु कोकके मृतदेहको ओर देखने ही वह भी उठा और फिर दोनों भाइयोंका कोप कल्किपर टूट पड़ा। कल्किने कई बार दोनोंका सिर काटा था। किन्तु एकके देखते ही दूसरा जीवित हुआ। पीछे कल्किने अपने अश्वको उनपर छोड़ दिया। कामगामी अश्वके खुरप्रहारसे दानव बार बार मूर्छित होने लगे। फिर भी उन्हें मरते न देख कल्कि चिन्तामें पड़ गये। ब्रह्माने उस समय रथमें पहुंच कर कहा,—'विभो! यह दानव अवध्य हैं। हमने इन्हें एकको मरते दूसरेके देखनेसे फिर जी उठनेका वरदान दिया था। सुतरां आप वह उपाय करें जिससे दोनों साथ ही मरें।' कल्किने उस रणस्थ समय ब्रह्माकी बातसे डाला और दोनोंके एक साथ वज्रमुष्टि मारा था। दोनों सिरोंके मस्तक भी पञ्चत्वको पहुंच गये और एक दूसरेका मृतदेह देख न सके। देवता और मनुष्य सब उनके मरनेसे परम प्रीत हुये। सिद्धचारणादि कल्किकी सराहने लगे। कल्किपुरमें उन्होंने रण जीता था।

कल्कि उसके पीछे भल्लाटनगरको शय्याकर्णोंसे लड़ने चले। भल्लाटनगरके राजा शशिध्वज अति कृष्णपरायण और योगियोंमें अग्रगण्य थे। भगवान् कल्किको लड़ने आते सुन उनको प्रीति और भक्ति सहकारसे सैन्य सजाकर प्रस्तुत हुये। उनकी विष्णुपरायणा सुशान्ता पत्नीने स्वामीको जगत्पतिसे युद्धोद्यत देख कहा था —'नाथ! भगवान्के कोमल शरीरपर आप कैसे अस्त्र छोड़ेंगे।' उन्होंने उत्तर दिया,—'प्रिये! रणस्थलमें गुरु शिष्यको और उपास्य उपासकको निष्काम मार सकता है। तुममें यदि करेंगे, तो देहके तेरे राजा बनेंगे रहेंगे। और साथ ही कल्किको चोटमें चोम हमारी ममता करेंगे। नहीं तो तुममें मरनेसे स्वर्गवास होना तो निश्चित ही है। सुतरां हमें दोनों ओर लाभ ही लाभ दिख पड़ता है। वह ईश्वर और हम सेवक हैं। कल्कि हमसे जो सेवा कराना चाहेंगे, उसके लिये ही हमें अप्रस्तुत न पायेंगे। सुतरां प्रभु जब हमसे लड़ने आये हैं, तब हमने भी अपने अस्त्रशस्त्र उठाये हैं। उनकी इच्छाके अनुसार हम कार्य करनेको बाध्य हैं।' रानीने यह सुनकर उत्तर दिया—'हरिके सेवक कभी कामनाविष्ट नहीं होते। सुतरां स्वर्ग वा मोक्षकी कामनासे आपका लड़ना असम्भव है। फिर आप जब कोई कामना नहीं रखते तब वह भी क्या दे सकते हैं। सुतरां हमें आप दोनोंका यह युद्धोद्यम मोहकी लीलामात्र मालूम पड़ता है।' इसी प्रकार कथोपकथनके पीछे शशिध्वज हरिनाम स्मरण और हरिध्यान कर हरिसे लड़ने चले। शय्याकर्ण लोग अस्त्र उठा उनके साथ हुये। राजकुमार सूर्यकेतु भी परम वैष्णव और अस्त्रविदोंमें श्रेष्ठ थे। युद्ध आरम्भ हुआ। विशाखयूपसे शशिध्वज, मरुसे सूर्यकेतु और देवापिसे बृहत्केतु लड़ने लगे। कल्किसैन्य विध्वस्त हुआ था। सूर्यके युद्धमें मूर्छित होते ही सारथि मरुको ले भागा। बृहत्केतु देवापिसे हार गये। उनके क्रोड़में निश्चेष्ट होने लगी। परन्तु इतनेमें ही सूर्यकेतु सहायताके लिये पहुंचे और उन्होंने मुष्टिके आघातसे गिरा देवापिसे भुजबन्धनसे अपने भ्राताको छोड़ा लिया। शशिध्वज विशाखयूपको हरा कल्किके सम्मुख हुये।

शशिध्वजने कल्किसे कहा,—'पुण्डरीकाक्ष! आइये और हमारे हृदयपर प्रहार कीजिये नहीं तो हमारे अस्त्रसे हमारे अस्त्रवार हृदयमें छिप जायेंगे। यदि आप हमें शत्रु समझें, तो निर्विवाद प्रहार करें, जिससे हम अनायास शिव अथवा विष्णुलोकको चले।'

कल्कि यह बात सुन मनको मन सन्तुष्ट हुये और ऊपरसे शशिध्वज पर बाण वर्षण करने लगे। दोनोंमें महायुद्ध हुआ। दोनों दिव्य अस्त्र चलाते थे। पीछे कल्किके मुष्ट्याघातसे शशिध्वज मुहूर्त मात्र अचेतन्य रहे। फिर उन्होंने भी उठकर कल्किको मुष्टि मारा था। कल्कि उस आघातसे छिन्नमूल कदलीकी भांति अचेतन हो गिर पड़े। धर्म एवं

सत्ययुगके साथ कल्किको उठानेके लिये शशिध्वज निकट पहुंचे थे। वह धर्म तथा सत्ययुगको अपने दोनों कक्षोंमें दवा और कल्किको वक्षस्थलसे लगा अपनी पुरी चले गये। उनने घरमें पहुंच रानीको सखियोंके साथ हरिगुण गाते पाया था। राजा उनसे कहने लगे,—'प्रिये! भगवान् कल्कि मूर्च्छाछलसे हमारे वक्षस्थलमें लग तुम्हारी भक्ति देखने आये हैं। फिर हमारे दोनों कक्षोंमें धर्म और सत्ययुग हैं। इन की यथोचित अर्चना कीजिये।' सुशान्ता सबको प्रणामकर और हरिप्रेमसे विह्वल बन नाचने गाने लगीं। स्तवसे तुष्ट हो कल्किने सुप्तोत्थितकी भांति ईषत् लज्जितमुखसे सुशान्ताका परिचय पूछा। उन्होंने अपनेको दासी बताया था। धर्म और सत्ययुग सुशान्ताकी हरिभक्ति सराहने लगे। कल्कीने कहा यथार्थ तुम्होंने हमको जीत लिया। शेषको उन्होंने शशिध्वजकी कन्या रमाका पाणिग्रहण किया। फिर कल्किके सहचर राजावोंने शशिध्वजसे उस अपूर्व भक्तिकी कथा पूछी। उन्होंने परिचय देकर जिस प्रकार हरिभक्ति पायी, उसी प्रकार सब बात खोलकर बतायी थी।

उसके पीछे कथाप्रसङ्गमें शशिध्वजने भक्ति एवं वासनातत्त्व देखा दिया और द्विविद तथा जाम्बवान्की भांति मरणकी प्रार्थना की। राजावोंने उन दोनों वानरोंका वृत्तान्त सुनना चाहा था। राजाने सब बताकर कहा,—'हमीं कृष्णावतारमें सत्यभामाके पिता सत्राजित् थे।' इसके बाद कल्कि श्वशुर शशिध्वजको सान्त्वना दे चल दिये और ससैन्य काञ्चनपुरी पहुंच गये। वह पुरी गिरिदुर्गसे वेष्टित और सर्पजालसे रक्षित थी। कल्कि विविध बाणों द्वारा विषास्त्र हटा पुरीमें घुसे। पुरीके मध्य सुन्दर प्रासाद हरिचन्दन वृक्षसे वेष्टित और मणिकाञ्चनसे अलङ्कृत थे। किन्तु मनुष्योंका कोई सम्पर्क न रहा। केवल नागकन्या चारो ओर घूमती फिरती थीं। कल्कि पुरीमें घुसते हिचकिचाने लगे। उसी समय देववाणी हुयी,—'आप अकेले ही प्रवेश कीजिये। इस पुरीमें एक विषकन्या है। उसके देखते आपको छोड़ सब मर जावेंगे।' फिर वह केवल शुकको पकड़ और अश्वपर चढ़ काञ्चनपुरीमें खड्गहस्त घुसे थे। विषकन्या एक स्थानपर देख पड़ी। कन्याने कहा,—'मेरे तुल्य हतभागिनी विषनेत्रा कामिनी दूसरी नहीं। आप कौन हैं?' कल्किने उससे विषनेत्रा होनेका कारण पूछा। उसने उत्तर दिया मैं गन्धर्वराज चित्रग्रीवकी भार्या सुलोचना हूं। एक दिन मैं पतिके साथ गन्धमादन कुञ्जवनमें रसालाप करती थी। उसी समय नद्य मुनिका कदर्य कलेवर देख मुझे बड़ी हंसी आयी। मुनिने क्रोधवश विषनेत्रा होनेका अभिशाप दिया था। आज आपके दर्शनसे मेरे शापका अन्त हुआ। अब मैं स्वामीके पास जाती हूं।'

विषकन्या स्वर्गको चली गयी। कल्किने उक्त पुरीके अधीश्वर अमर्षको राज्यपर अभिषिक्त किया। फिर उन्होंने मरुको अयोध्या, सूर्यकेतुको मथुरा, देवापिको वारणावत, अरिस्थल, वृकस्थल, कामन्दक एवं हस्तिना, कविप्रभृति भाइयोंको शैल्य, पौण्ड् आदि, ज्ञातिवर्गको कीकट प्रभृति और विशाखयूपको कोड़ तथा कलाप राज्य दिया था। फिर सब शम्भल लौट गये। पृथिवीपर धर्म और सत्ययुगका अधिकार प्रवर्तित हुवा।

कुछ दिन बीतने पर विष्णुयशाने यज्ञ करनेको पुत्रसे कहा था। कल्किने उनके आदेशसे राजसूय, वाजपेय और अश्वमेधयज्ञ सम्पन्न किया। कृप, राम, वशिष्ठ, व्यास, धौम्य, अकृतव्रण, अश्वत्थामा, मधुच्छन्दा और मन्दपाल प्रभृति महर्षि उन सकल यज्ञोंमें उपस्थित थे। कल्किने यज्ञान्तमें गङ्गायमुनाके सङ्गमस्थलपर ब्राह्मणोंको खिलाया पिलाया। पीछे सब लोग शम्भल लौट गये।

समय पाकर परशुराम कल्किके भवन पहुंचे। उसी बीच कल्किके पद्मावती-गर्भजात जय और विजय दो पुत्र हुये थे। रमाके कोयी बालक न रहा। उन्होंने परशुरामको देख अपना अभिलाष कहा। परशुरामने रमासे रुक्मिणीव्रत कराया था। व्रतके प्रभावसे रमाने मेघमाल और बलाहक नामक दो पुत्र पाये। कल्कि पत्नीपुत्रके साथ महासुखसे दिन बिताते थे। फिर ब्रह्मादि देवतावोंने उनसे स्वर्ग जानेको अनुरोध किया। कल्किने पुत्र तथा प्रजावर्गको कहा अपने

स्वर्गगमनका संवाद सुनाया था। वह सब शोकार्त्त हुये। कल्कि रामा और दोनों पत्नियोंके साथ हिमालय प्रदेशमें गङ्गा किनारे पहुंचे थे। वहां उन्होंने अपने आपको स्मरण किया। फिर चतुर्भुज मूर्तिमें परिवर्तित हो वह गोलोक गये। पद्मा और रमाने अनलमें देह छोड़ पतिलोक पाया था। पृथिवी पर सत्ययुगका प्रभाव अक्षुण्ण रहा। देवापि और मरु राज्य शासन करने लगे। कल्किपुराण देखो।

भागवतमें कल्कि भगवान्‌का भवोष्यत् अवतार कहा है। (भागवत १।३।२१—२२)

जैनियोंमें भी कल्कि अवतारकी कथा सुन पड़ती है। वह कहते हैं—महावीरके निर्वाण पानेके पीछे प्रति सहस्र वर्ष कल्कि होता है और वह जैनधर्मके विरुद्ध मत स्थापन करते हैं। (जैन हरिवंश)

कल्किपुराण—एक अतिरिक्त उपपुराण। यह अष्टादश उपपुराणोंसे बाहर है। इसमें तीन अंश लगे हैं। प्रथम एवं द्वितीयमें सात सात और तृतीयांशमें इक्कीस सब पैंतीस अध्याय हैं। इनमें क्रमान्वयसे शुकमार्कण्डेयका संवाद, कलिके वंशका कीर्तन, कलिका विवरण, पृथिवी तथा देवगणका ब्रह्मलोकको गमन, ब्रह्मवाक्यानुसार शम्भलके ब्राह्मण विष्णुयशाके घरमें सुमतिके गर्भसे विष्णु एवं उनके अंशभूत तीन ज्येष्ठ सहोदरके जन्मका विवरण, कल्कि विष्णुयशाका संवाद, कल्किका उपनयन परशुरामसे कल्किका साक्षात्, उनसे वेदाध्ययन, दक्षिणाभिक्षा, कल्किका शिवाराधन, हरपार्वतीके समक्ष कल्किका शिवस्तव पाठ, शिवसे अश्व, शुक, खड्ग अस्त्रादि एवं वरका लाभ, शम्भलको प्रत्यागमन, अग्रजसे वरका कीर्तन नरपति विशाखयूपको उनसे कल्किका संक्षेपसे धर्माधर्मवर्णन शुकका आगमन, शुककल्किसंवाद सिंहलका वर्णन, पद्माका चरित, शिवसे पद्माका वर लाभ, पद्माके स्वयम्बरका आयोजन स्वयम्बरको सभामें आगत राजाओंका स्त्रीभाव पद्माका विषाद, शुकको दूतरूपसे प्रेरण, शुकपद्मा-संवाद, पद्माका विष्णु पूजन, पदादिसे केशान्त पर्यन्त विष्णुके प्रत्येक अङ्गका वर्णन तथा ध्यान, शुकको अलङ्कार दान, शुकका प्रत्यागमन, पद्माके वर्णन, कल्कि एवं शुकका सिंहलगमन, कारुमतीके सरोवरमें पद्माका अभिसार, पद्माका अन्त कौतूहल, कल्कि तथा पद्माका मिलन, बृहद्रथका संवर्धन, कल्कि-पद्मा विवाह, कल्किके दर्शनसे स्त्रीत्व प्राप्त राजाओंका पुरुषलाभ एवं कल्किस्तव, वर्णाश्रम धर्मपर कल्किका उपदेश, राजाओंका प्रश्न अनन्त मुनिका आगमन, अनन्तका पूर्व वृत्तान्त कथन, शिव-का स्तव सिताके ध्यानपर अनन्तका मायादर्शन और वैराग्यावलम्बन, अनन्तका मोक्ष राजाओंका प्रत्यागमन, कल्कि पद्माका शम्भलको प्रस्थान, विश्वकर्माका विधान, ज्ञातिवर्गका वंशवर्णन विष्णुयशाका यज्ञाभिलाष, कल्किका अग्रजोंके साथ दिग्विजयको गमन, जिनराजका वध, बौद्धोंका निधन, मायाका अन्तर्धान, बौद्ध रमणियोंका युद्धोद्योग, अस्त्र देवतादि का आविर्भाव, ज्ञानसे योगका कथन, मुनियोंका आगमन कुथोदरीका वृत्तान्त, अद्भुत कुथोदरीका वध, हरिद्वारको कल्किका गमन, मुनियोंका साक्षात्, मरु एवं देवापिका मिलन, उनके परिचय सूत्रसे सूर्यवंश तथा चन्द्रवंशका कीर्तन, मरुका रामचरितकथन, मरु एवं देवापिके साथ कल्किको युद्धार्थगमन, धर्म तथा सत्ययुगका मिलन, कोक विकोकका विनाश, भल्लाटमें गमन, शय्याकर्णोंका युद्ध, सुशान्ताकी शशिध्वजका विष्णुभक्तिकीर्तन, रण क्षेत्रमें शशिध्वज कर्तृक कल्किसैन्य एवं सत्ययुगका पराजय, उनको उठा शशिध्वजका अपनी पुरीमें प्रवेश, सुशान्ता कर्तृक स्तव, कल्किके साथ रमाका विवाह, शशिध्वजके पूर्वजन्मका विवरण, द्विविद एवं जाम्बवान्‌का वर्णन, अमलत्वोपाख्यान, शशिध्वजका मोक्ष, विषकन्याका मोचन, राजाओंको राज्यदान, पुत्रादिका अभिषेक, मायास्तव, शम्भलमें यज्ञादिका अनुष्ठान, नारदसे विष्णुयशाका भक्तिलाभ, धर्म एवं सत्ययुगका अधिकार, रुक्मिणीव्रत, कल्किका विहार, पुत्रपौत्रादिका वर्णन ब्रह्मकल्कि संवाद, विष्णुका वैकुण्ठगमन, पद्मा-रमाका शेष, शुकदेवका प्रस्थान, मुनिप्रोक्त गङ्गास्तव, पुराणका विवरण और पुराणके श्रवणका फल लिखा है।

कल्किपुराणको लोग द्वैपायन प्रणीत बताते हैं। किन्तु कोई कोई इस बातको नहीं मानते। कारण वेदव्यासप्रणीत सकल पुराण और उपपुराण नामक अन्यान्य ग्रन्थोंमें इसका नाम नहीं मिलता। एतद्भिन्न कल्किपुराणके मध्यही तृतीयांशके एकविंश अध्यायमें एक स्थलपर लिखा है,—'सकल पुराणाभिज्ञ लोमहर्षणनन्दन सूत वेदव्यासके शिष्य थे। हम उन्हें प्रणाम करते हैं।' यदि यह पुराण वेदव्यासरचित रहता, तो उनकी लेखनीसे स्वशिष्यके प्रति प्रणामज्ञापक श्लोक लिखा देख न पड़ता। फिर कल्किपुराणमें वेदव्यासकी रचना होनेका प्रमाण कहा है? प्रथम अंशके शौनकादि ऋषियोंके प्रश्नानुसार इस पुराणकी व्याख्याका अनुक्रम लगाया है। पुराणोत्पत्ति निरूपण करते समय उन्होंने कहा, 'पुराकालको नारदके पूछनेपर ब्रह्माने यह उपाख्यान सुनाया था। नारदने व्यासदेवके निकट व्याख्या की। फिर वेदव्यासने स्वपुत्र ब्रह्मरात (शुकदेव?)को यह विवरण बताया था। ब्रह्मरातने अभिमन्युके पुत्र विष्णुरात (परीक्षित?)की सभामें यह कथा कीर्तन की, किन्तु कथा शेष न हुयी। विष्णुरात स्वर्गको चले गये। मार्कण्डेय आदि महर्षियोंने शुकदेवसे अनुरोधकर शेष पर्यन्त कथा सुनी थी। उनके मुखसे सुना हुआ विषय हम विवृत करेंगे। इसमें अष्टादश सहस्र श्लोक विद्यमान हैं।' किन्तु तृतीयांशके शेष अध्यायमें ग्रन्थके उपसंहारकालमें उग्रश्रवाके मुखसे ही भिन्नरूप वर्णना मिलती है,—'निरतिशय पापी लोग भी इस पुराणके प्रभावसे अभीष्ट लाभ कर सकते हैं। इस कल्किपुराणके छह सहस्र एकशत श्लोकोंमें सकल शास्त्रोंका अर्थ और तत्त्व संगृहीत हुआ है। प्रलयावसानमें श्रीहरिके मुखसे यह कल्किपुराण निकला है। इस पुराणसे चतुर्वर्ग मिलते हैं। भगवान् वेदव्यासने ब्राह्मणजन्म परिग्रह किया था। उन्होंने ही धरातलपर अवतीर्ण हो परम विस्मयकर भगवान् कल्किके प्रभावकी यह वर्णना सुनायी है।' पूर्वोद्धृत दोनो अंश देख श्लोक संख्याके सम्बन्धपर भी विभिन्न रूप कथन मिलता है।

कल्किपुराणमें पुराणोपपुराण-वर्णित सकल विषयोंकी बहुल वर्णना नहीं। लेखक इस सम्बन्धमें जो कथायें लिखते, उनको देखते ही समझा जा सकता है कि यह सकल अंश केवल पुराणके तत्त्वकी रक्षा करनेके लिये ही ग्रन्थमें लगाये गये हैं। रघुवंश, नैषध, कुमार प्रभृति महाकाव्योंमें जैसे किसी एक व्यक्ति या विषयकी वर्णना चलती है, इसमें भी वैसे ही एक मात्र कल्किचरितकी कथा मिलती है। कल्किपुराणमें शृङ्गार, शान्ति एवं वीररस विशेष दिखाया, अन्यान्य रसोंका भाव अविस्पष्ट रूपसे झलकाया और पुराणादिकी भांति पुनरुक्तिदोष वा अनर्थक अव्यय शब्दोंका प्रयोग नहीं लगाया है। इन सकल कारणोंसे इसको एक सुन्दर महाकाव्य कहना अधिक युक्तिसङ्गत है। इसकी रचनाप्रणाली पुराणोंकी भांति रसहीन नहीं। कल्किपुराणकी भाषाकी भी प्राचीन कहनेमें सन्देह है।

इसमें कलियुगके शेष पादकी वर्णना लिखी है। उसके अनुसार कलिप्रभावसे समस्त पृथिवी एकवर्ण होनेपर भगवान् कल्कि रूपसे जन्म ले कलिको हटावेंगे और सत्ययुग चलावेंगे। सूक्ष्म भावसे मनोयोग पूर्वक विचार कर देखनेसे कल्किके समय पृथिवीकी वर्णित अवस्था शेषपादकी नहीं—प्रथमपादकी घटना समझ पड़ती है। कल्किके साथ मायावादी बौद्धोंका युद्ध जिस अंशमें लिखते हैं, वह अंश निविष्ट चित्तसे पढ़नेपर सहजमें ही समझ सकते हैं कि यह वर्णना भारतमें बौद्ध धर्म वर्द्धन समयकी ठहरती है। यही बात कल्कि शब्दमें उद्धृत श्लोकसे भी प्रतिपन्न होती है। अनुमानसे कल्किपुराणकार उस समयके मालूम पड़ते, जिस समय बौद्ध धर्मकी प्रबलता घटनेसे ब्राह्मणधर्मके तत्त्व कुछ कुछ ऊपर उठते थे। उस समय उनकी आंखोंमें भारतकी जो दुर्दशा समायी, उन्होंने वही लिख कल्किके शेषपादकी अवस्था बतायी।

कल्किपुराणमें जिन स्थानों (माहिष्मती, शम्भल, कीकट, सिंहल, पाण्ड्य, सौह्म, सुराष्ट्र, पुलिन्द, मगध, मध्यकर्णाट, अन्ध्र, ओड्र, कलिङ्ग, अङ्ग, वङ्ग, काञ्च, कचापक, द्वारका, मथुरा, वारणावत, अरिस्थल, वृकस्थल, माकन्द, हस्तिनापुरी, चोल, बर्बर, कर्वट,

मन्द्राद, काञ्चनपुरी प्रभृतिके नाम लिखे हैं, उनमें अधिकांश प्राचीन पौराणिक देश पड़ते हैं।

कल्किपुराणवालेने मरु और देवापिको पाण्डवोंसे अधस्तन चतुर्थ पुरुष मान लिया जाता था है। अन्यान्य पुराणोंकी कथा देखते युधिष्ठिरादिने कलिके प्रारम्भमें ६५३ वर्ष राजत्व किया था। सुतरां उनसे अधस्तन चतुर्थ पुरुष कैसे बहु परवर्ती कलिके शेष पादमें आ सकते हैं। मरु और देवापिमें भी छात पुरुषोंका पार्थक्य पड़ता है। फिर कल्कि अवतारसे पीछे सत्ययुगका आरम्भ लिखा है। यदि कल्किदेवने देवापि और मरुको पृथिवीका राज्य सौंप सत्ययुगका प्रारम्भ किया ऐसा स्वीकार करें तो वे सत्ययुगके प्रथम राजा ठहरते हैं। किन्तु अन्य किसी पुराणमें यह कथा नहीं मिलती। कल्कि देखो।

इतिहासको छोड़ पुराणकथाकी भांति यथार्थ समझ और भक्तिके साथ विश्वास करें तो इसका वर्णित विषय भविष्यत्‌में होनेकी बात है। किन्तु कल्कि पुराणकी वर्णना पढ़नेसे वैसा मालूम नहीं पड़ता। इसमें जो कुछ लिखा है, उससे अतीत कालकी घटनाका ही भान होता है।

* उपकथा जयिने पूर्वमेघर कहा था,—'शुकदेवकी अनुमति क्रमसे हमने इस पुराणमें सकल भविष्य घटना सुनी थी। इस स्थल पर हम उसी प्रकार भागवतमें कीर्तन करते हैं। उपयगकी जो सुनते भविष्यत् कालकी केवल एक बात मिलती है। दूसरे स्थलपर कहीं कुछ दिखलाई नहीं पड़ता। भविष्यत् कालकी बतायी कोई भी यह कथा वैसी मालूम नहीं पड़ती। किन्तु महाभारत भागवत, विष्णुपुराण नारसिंह पुराण प्रभृतिमें कल्कि अवतारकी जो कथा लिखी, उसमें सर्वत्र भविष्यत्‌काल योजना किया गया है। सुतरां समझ सकते हैं कि उक्त कालको कल्कि अवतार होनेमें कोई सन्देह नहिं। फिर भी कल्किपुराणमें संक्षेपसे अनेक गम्भीर भावमयी अनुकथाओंकी आलोचना लगी है। पाठ करनेसे आनन्द आता है। इन्हीं कारणोंसे कल्किपुराणको 'अनुभागवत' कहते हैं। इसमें जो तर्क ऊपर दिखाये, यह हमें सुनाये हैं। भगवान्‌की लीला अपार है। कौन कह सकता है भविष्यत्‌में क्या होगा? दूसरे त्रिकालदर्शी महर्षिका मनोभावन समझना भी कुछ सहज नहीं। ऐसी अवस्थामें कल्किपुराणका वर्णित विषय भविष्यत्कालकी मान लेना ही अच्छा है।

कल्कफल (सं॰ पु॰) कल्कस्य विभीतकस्य फलमिव फलं यस्य, मध्यपदलो॰। दाड़िमवृक्ष, अनारका पेड़। दाड़िम देखो।

कल्करोग (सं॰ पु॰) पक्षिकारोग, खाज रोग।

कल्किधर्म कल्कि शब्द देखो।

कल्किप्रादुर्भाव (सं॰ पु॰) कल्केः दशमावतारस्य प्रादुर्भावः उत्पत्तिः ६तत्। कल्कि अवतारकी उत्पत्ति।

कल्कि राज—एक प्राचीन राजा। गुप्त राजवंशके पीछे इन्द्रपुरमें इन्होंने ४१ वर्ष राजत्व किया। (जैन हरिवंश) इनके आत्मज राजा अजितञ्जय थे। (जैन उत्तर पुराण)

कल्किवृक्ष (सं॰पु॰) विभीतक वृक्ष, बहेड़ेका पेड़।

कल्की (सं॰ पु॰) कल्कः पापं नाशकतया अस्त्यस्य, कल्क इनि। १ कल्कि अवतार। (त्रि॰) २ पापी, मलीन, गुनाहगार, मैला।

कल्प (सं॰ पु॰) कल्प्यते विधीयते अनेन, कृप कर्मणि घञ्। १ विधि, तरीका।

"एष वै प्रथमः कल्पः प्रदाने हव्यकव्ययोः।" (मनु ३। १४७)

कल्पते यत्र भावा वा अनु रूप चित्र। २ प्रलय, क़यामत। एकचतुर्युग चतुर्दश मनु द्वारा प्रलय काल निर्णीत होता है।

"[illegible]
[illegible]" (सूर्यसिद्धान्त)

कल्पते अधिकारिणे समर्थो भवति अत्र। ३ ब्रह्माका दिन। देवताओंके दो सहस्र युगोंमें ब्रह्माका एक दिन (कल्प) और तीस कल्पोंमें एक मास होता है। उनके संक्षेप नाम—श्वेतवाराह नीललोहित, वाम देव गाथान्तर, रौरव, प्राण, बृहत्कल्प कन्दर्प, सद्य, ईशान ध्यान, सारस्वत, उदान, गरुड़, कौर्म, (ब्रह्माकी पौर्णमासी), नारसिंह, समाधि, आग्नेय, विष्णुज सौर, सोम भावन, सुप्तमाली, वैकुण्ठ आर्चिष, वल्ली

कल्प, वैराज, गौरीकल्प, महेश्वर और पितृकल्प (ब्रह्माकी अमावस्या) हैं। इसी प्रकार बारह मासमें ब्रह्माका एक वत्सर बीतता है। उनका आयुकाल शत वत्सर है। अभी ब्रह्माके पचास वर्ष अतीत हुये हैं। एक पञ्चाशतवर्षीय श्वेतवाराहकल्प चल रहा हैं। चैत्र मासकी शुक्ल प्रतिपद्से प्रथम कल्प लगा है,

"चैत्र मासि जगत् ब्रह्मा ससर्ज प्रथमेऽहनि।
शुक्लपक्षे समग्रन्तु तदा सूर्योदये सति।
प्रवर्त्तयामास तदा कालस्य गणनामपि॥" (ब्राह्मपुराण)

चैत्रमासके शुक्ल पक्षीय प्रथम दिनको सूर्योदय होने पर ब्रह्माने समग्र जगत् बनाया और उसी समयसे कालकी गणनाको चलाया है।*

एकसप्तति (७१) महायुगोंमें एक मन्वन्तर पड़ता है। सत्ययुगके परिमाणसे मन्वन्तरकी सन्धि निकलती है। प्रत्येक मन्वन्तर बीतने पर जलप्लावन होता है। फिर प्रत्येक कल्पमें सन्धिके साथ चतुर्दश (१४) मन्वन्तर रहते अर्थात् सन्धिवाले चतुर्दश मन्वन्तरोंको ही एक कल्प कहते हैं। एक सत्ययुगके परिमाण पर ऐसे ही कल्पादिमें पञ्चदश (१५) सन्धियां मानी जाती हैं।

	देवमान	सौरमान।
आदिसन्धि	४८००	१७२८०•८
एकसप्तति महायुग	८५२०००	३०६७२००००
एकसन्धि	४८०३०	१७२८००
एक मन्वन्तर	८५६८००	७०८४४८०००
चतुर्दश मन्वन्तर	११९९५२००	४३१८२७२०००
कल्प	१२००००००	४३२००००००००

सहस्र (१०००) महायुगोंमें एक कल्प होता है। प्रति कल्पके अवसानमें सर्वभूतोंका विनाश अर्थात् प्रलय पड़ता है। एक कल्पमें ब्रह्माका एकदिन ठहरता और उनकी रात्रिका परिमाण भी वैसा ही लगता है। पूर्वकथित अहोरात्रोंकी सङ्ख्यासे एकशत (१००) वत्सरकाल ब्रह्माका आयु है। आज तक ब्रह्माकी आयुका अर्द्धकाल (५० वत्सर) बीता है। वर्तमान कल्पके आरम्भमें ब्रह्माके अवशिष्ट आयु (५० वत्सर) का प्रथम दिवस देखना पड़ेगा। वर्तमान कल्पमें भी छह मन्वन्तरोंके साथ सात सन्धियां अतीत हुई हैं। आज कल वैवस्वत नामक, सप्तम मनुका काल चलता है। फिर वैवस्वत मनुके भी सप्तविंशति (२७) युग चुके हैं। इस अष्टाविंश (२८ वें) युगके सत्य, त्रेता और द्वापरकाल गल गया, कलियुग लगा है।

(सूर्य सिद्धान्त, मध्याधिकार २१-२३)

४ विकल्प। ५ न्याय। ६ कल्पवृक्ष। ८ शास्त्रविशेष। इस शास्त्रमें षडङ्गवेदके अन्तर्गत यागक्रियादिका उपदेश दिया गया है। ८ व्याकरणका एक प्रत्यय। ईषत् ऊन अर्थमें यह प्रत्यय पड़ता है।

"ते परस्परमासन्ना देवकल्पा महर्षयः।" (भारत १।१२६।५)

९ सङ्कल्प, इरादा। १० पक्ष। ११ अभिप्राय, मतलब। १२ वेदका एक विधि।

कल्पक (सं० पु०) कल्पयति क्षौरकर्मादिना वेशं रचयति, क्लृप्-णिच्-ण्वुल्। १ नापित, नायी।

---

* प्राणादि स्थूल कालका नाम मूर्तकाल, त्रुट्यादि परमाणु सदृश सूक्ष्मकालका नाम अमूर्तकाल है। सुस्थ शरीरमें निश्वास प्रश्वास लेनेमें जो काल लगता, उसे विद्वान् प्राण कहते हैं। अर्थात् दश गुरु अक्षरोंके उच्चारणका काल प्राण है। यह अंगरेजी ४ सेकण्डोंको बराबर पड़ता है। ऐसेही ६ प्राणोंमें १ विनाड़ी और ६० विनाड़ियोंमें १ नाड़ी (दण्ड) होती है। ६० दण्डोंका १ नाक्षत्र अहोरात्र और ३० नाक्षत्र अहोरात्रोंका १ नाक्षत्र मास माना है। एक सूर्योदयसे दूसरे सूर्योदय तक १ सावन अहोरात्र और ३० सावन अहोरात्रोंमें १ सावन मास पड़ता है। एक तिथिसे दूसरी तिथि तक चान्द्र अहोरात्र रहता है। ३० चान्द्र अहोरात्रोंका एक चान्द्रमास ठहरता है। सूर्यके एक राशिसे संक्रमणसे दूसरे राशि संक्रमण पर्यन्त सौरमास चलता है। इसी प्रकार द्वादश मासोंमें एक वर्ष बीतता है। एक सौर वत्सरमें देवताओंका एक अहोरात्र होता है। देवताओंके दिनमें असुरोंकी रात्रि और देवताओंकी रात्रिमें असुरोंका दिन है। ऐसे ही ३६० अहोरात्रोंमें देवताओं और असुरोंका एक एक वत्सर लगता है। देवताओंके १२००० वत्सरोंमें एक महायुग (चतुर्युग) आता है। महायुगमें ४३२०००० सौर वत्सर बीतते हैं। सन्ध्या (प्रतियुगकी आदिसन्धि) एवं सन्ध्यांशका (प्रति युगकी अन्त सन्धि) के साथ चार युग आते और धर्मपादकी व्यवस्था अर्थात् सत्ययुगमें चार पाद, त्रेतायुगमें तीनपाद, द्वापरमें दो पाद तथा कलिमें एक पादके अनुसार युगका परिमाण ठहराते हैं। महायुगके वत्सरोंको दश भाग और लब्ध भागफलको चार गुण करनेसे जो काल आता, वही सत्ययुगका परिमाण कहता है। फिर उक्त लब्ध भागफलके त्रिगुणसे त्रेता, द्विगुणसे द्वापर और एकगुणसे कलियुगका काल मिलता है। प्रति युगका आदि एवं अन्त षष्ठांश ही सन्ध्या तथा सन्ध्यांश है।

२ कर्चूर, कचूर। कल्पयति अध्ययनादिक्रमानुक्रमाय रचयति। ३ ग्रन्थकर्ता किताब बनानेवाला। ४ संस्कार, रस्म। (त्रि०) ५ रचक, बनानेवाला। ६ आरोपक, लगानेवाला।

कल्पकतरु, कल्पतरु देखो।

कल्पकार (सं० पु०) कल्प कल्पसूत्रं करोति, कल्प-कृ-अण्। १ कल्पसूत्रकारक आश्वलायनादि। कल्प वेशं करोति। २ नापित, नाई। (त्रि०) ३ वेश कारक, रूप बनानेवाला। ४ छेदक, छेदनेवाला।

कल्पकारक (सं० पु०) कल्प-कृ-ण्वुल्। कल्पकार देखो।

कल्पक्षय (सं० पु०) कल्पस्य क्षये क्षयो यत्र, बहुव्री०। प्रलय, कयामत, संसारका नाश।

"कल्पक्षये पुनर्देवं तु [illegible]।" ([illegible])

कल्पगा (सं० स्त्री०) गङ्गा नदी।

कल्पतरु (सं० पु०) कल्पश्चासौ तरुश्चेति कर्मधा० अथवा कल्पस्य तरु राशौ' गिरः कल्पादिवत् ६ तत्। १ देवलोकका वृक्षविशेष। बिहिश्तका एक पेड़। -यह वृक्ष मांगनेसे सकलपदार्थ देता है।

"[illegible]" ([illegible] १।१।१)

२ स्मृतिग्रन्थविशेष। ३ शारीरकसूत्रभाष्यपर भामती टीकाकी एक व्याख्या। ४ उदारपुरुष, सखी, सब मांगी चीज़ देनेवाला। ५ मधुकाश्व, सुपारीका पेड़। ६ रसविशेष, एक कुश्ता। रस (पारद), गन्ध (गन्धक) विष (वत्सनाभ) और ताम्रको समभाग घोंट अदरख पांच दिन तक पांच बार मोरो चनाकी भावना लगती है। धत्तूरके बीजोंके रसमें सात दिन घोंट लेने और फिर आदूके रसको तीन भावना देनेसे यह औषध प्रस्तुत होता है। इसकी वटी सर्षप समान बना छायामें सुखाते हैं। जीर्णज्वर और विषमज्वरमें ११ वटी खिलायी जाती है। इसके सेवन समय रोगीको आद्रकको पिप्पलीका चूर्ण तक पिलाना, शर्करा तथा दधि खिलाना और नहलाना चाहिये। (भैषज्यरत्नावली)

कल्पद्रु (सं० पु०) कल्पश्चासौ द्रुश्चेति, कर्मधा०। १ कल्पतरु, स्वर्गका एक पेड़। २ उदारपुरुष दाता, छोटे अमलतासका पेड़। ४ भीमप्रणीत एक शब्दकोष।

कल्पद्रुम (सं० पु०) कल्पश्चासौ द्रुमश्चेति, कर्मधा०। १ कल्पतरु। २ छोटा अमलतास। ३ स्मृतिग्रन्थ विशेष। ४ तन्त्रग्रन्थ विशेष।

कल्पन (सं० क्ली०) क्लृप भावे ल्युट्। १ छेदन, काट छांट। २ रचना, बनाव। ३ विधान ठहराव। ४ आरोप लगाव। ५ अप्रकृत विषयका उद्भावन अन्दाज़।

कल्पना (सं० स्त्री०) क्लृप-णिच् भावे युच्-टाप्। १ हस्तिसज्जा, सवारीके लिये हाथीकी सजावट। २ अनुमान, अन्दाज़। ३ रचना, बनावट। ४ अर्थापत्तिरूप प्रमाण विशेष एक सबूत। इसमें होनेवाली बातोंका ख्याल रहता है। ६ नूतन विषयका उद्भावन, नयी बातका निकास। काव्य, उपन्यास और चित्र आदि कल्पनासे ही बनते हैं।

कल्पनाकान्त (सं० त्रि०) कल्पनाया' काल इव कालो यस्य, बहुव्री०। बहुरूपकी भांति भाव दिखानेवाले, मन सूईकी तरह अन्दर बिंध जानेवाला। यह शब्द अग्निके पदार्थका विशेषण है।

कल्पनाथ (हिं० पु०) वृक्षविशेष, एक पेड़। (Justicia paniculata)

कल्पनाशक्ति (सं० स्त्री०) कल्पनायाः नवोद्भावनस्य शक्तिः, ६ तत्। नूतन विषयके उद्भावनकी शक्ति, नयी बात निकालनेकी ताकत।

कल्पनी (सं० स्त्री०) कल्पयति छेदयति कृन्तति अनया, ल्युट् करणे ङीप्। कतरनी, कैंची।

कल्पनीय (सं० त्रि०) कल्पनाय हितम्, कल्पन छ। १ कल्पनाके उपयोगी, अन्दाज़के लायक। २ छेद्य, काटने का चीज। ३ विधानके उपयुक्त, ठहरानेके लायक। ४ आरोपणके उपयोगी, लगाने का चीज।

कल्पपादप (सं० पु०) कल्पयति सर्वकाम सम्पादयति कल्पः, कल्पश्चासौ पादपश्चेति, कर्मधा०। १ कल्पतरु, स्वर्गका एक पेड़। "[illegible]।" ([illegible] १।१८) २ विभीतकवृक्ष, बहेड़ेका पेड़।

कल्पपादपदान (सं० क्लो०) कल्पपादपस्य सुवर्ण-निर्मितपादपाकृतेर्दानम्। महादानविशेष, सोनेके पेड़का बड़ा दान। बल्लालसेन विरचित दानसागर नामक ग्रन्थमें कल्पपादप दानका विधान इसप्रकार वर्णित है,—

"कल्पपादपदान देनेकी इच्छा रखनेसे यजमानको तुलापुरुष दानकी भांति पुण्याह वचन तथा लोकेशका आवाहन कराना और ऋत्विक्, मण्डप, सम्भार, भूषण एवं आच्छादन जुटाना पड़ता है। शक्तिके अनुसार तीनसे एक सहस्रपल पर्यन्त स्वर्णके अर्धांशका नाना फलयुक्त और पांच शाखाविशिष्ट वृक्ष बनाते हैं। वह नाना वस्त्र और अलङ्कारसे सजाया जाता है। फिर १ प्रस्थ गुड़पर शुक्लवस्त्रके दो टुकड़े काल तल-देशमें ब्रह्मा, विष्णु, शिव एवं सूर्यकी प्रतिमा लगाते और स्वर्णके अपर अर्धांशसे १ दूसरा वृक्ष तथा ४ मूर्ति बनाते हैं। सन्तान वृक्षके नीचे रति और कन्दर्पकी मूर्ति गुड़में रखना पड़ती है। यह वृक्ष १ प्रस्थ पूर्व, घृतपर लक्ष्मी सह मन्दार वृक्ष दक्षिण, क्षीरकपर सावित्री सह पारिभद्र वृक्ष पश्चिम और तिलपर सुरभिसह हरिचन्दन वृक्ष उत्तरको रहता है। प्रत्येक वृक्षको शुक्ल वस्त्रके दो दो टुकड़ोंसे आच्छादन करते हैं। फिर प्रत्येक वृक्षके पार्श्वपर दो दोके हिसाब ८ पूर्ण कलस रखे जाते हैं। कलसपर इक्षु दण्ड और फलादि लगा कोषेय वस्त्र ओढ़ाना पड़ता है। पूर्ण कलसके पार्श्व देशमें पादुका, उपनात्, छत्र, चामर, आसन, भाजन और दीप रखते हैं। फिर मन्त्र विशेषसे तीन बार प्रदक्षिण करते दो तीन पुष्पाञ्जलि देनेपर शास्त्रोक्त विधानसे कल्पपादप दान होता है। दानके अन्तमें अधिक दान करनेपर विघ्नित न हो सकल प्रकार शठता देखानेसे दूर रहना चाहिये। इस महादानसे अश्वमेध यज्ञका फल मिलता, सर्वपाप कटता और शतकल्प स्वर्गमें रह यजमान राजाधिराज हो जन्म ग्रहण करता है। फिर नारायणबलयुक्त, नारायण-परायण और नारायणकथा मग्न रहनेसे वह नारायणलोक पाता है।

कल्पपाल (सं० पु०) कल्यं सुराविधानकल्पं पालयति, कल्य-पाल-णिच्-अण्। १ शौण्डिक, कलवार, शराब बनानेवाला।

कल्पभव (सं० पु०) देवता विशेष। जैन मतानुसार वह वैमानिक होते हैं। जैन मतानुसार वे सोलह हैं—सौधर्म, ऐशान, सनत्कुमार, माहेन्द्र, ब्रह्म, ब्रह्मोत्तर, लान्तव, कापिष्ठ, शुक्र, महाशुक्र, शतार, सहस्रार, आनत, प्राणत, आरण, अच्युत। श्वेताम्बर जैनके मतसे कल्पभव बारह हैं,—अच्युत, आनत, आरण, ईशान, कालान्तक, प्राणत, ब्रह्मा, माहेन्द्र, शुक्र, सनत्कुमार, सहस्रार और सौधर्म। जैन बताते—तीर्थङ्करोंके जन्मादि संस्कारोंमें कल्पभव आते हैं।

कल्पमहीरुह (सं० पु०) कल्पश्चासौ महीरुहश्चेति, कर्मधा०। कल्पवृक्ष, एक पेड़।

कल्पलता (सं० स्त्री०) कल्पवृक्ष।

कल्पलतादान (सं० क्लो०) कल्पलतायाः यथाविध सुवर्ण-निर्मिताया लताया दानम्, ६-तत्। महादानविशेष। दानसागरमें इस दानका विधि निम्नोक्त रूपसे लिखा है।—

शक्तिके अनुसार पांचसे हजार पल पर्यन्त परिमित स्वर्णको दश लतायें बनावे और उनमें फल, पुष्प, ग्रह, पक्षी, विद्याधर, किन्नर, मिथुन, सिद्ध तथा मुक्ताहार लगावे। फिर नानाविध विचित्र वस्त्रोंसे उन्हें आच्छादन करे। लतावोंके निम्नदेशमें रखनेके लिये ब्रह्मादि दश प्रतिमायें बनाना पड़ती है। लतारोपणके लिये लवण, गुड़, हरिद्रा, तण्डुल, घृत, क्षीर, शर्करा, तिल एवं नवनीत और पार्श्वमें स्थण्डिलके लिये दश धेनु, दश कुम्भ तथा दश जोड़ा वस्त्र संग्रह करना चाहिये। व्रतके पूर्व दिन हविष्य भोजन, निवेदन, सङ्कल्पवाक्य प्रभृति किये जाते हैं। दूसरे दिन गुरु, पुरोहित, यजमान और जापक उपवासी रहते हैं। पुरोहित प्रधान वेदीमें लिखित चक्रपर पूर्वादि आठ दिशावोंमें आठ और लतामण्डपमें दो लतायें रखते हैं। दोनोंके निम्नदेशमें लवणसे हंसारूढा ब्राह्मी और अनन्तशक्तिकी मूर्ति स्थापित होती है। आठ दिशावोंकी दूसरी आठ लतावोंके नीचे पूर्वदिक्से यथाक्रम आरम्भ कर गुड़ पर स्वर्णासन कुलिशायुधहस्ता माहेन्द्री, हरिद्रा पर

मध्यस्थ भागाकृत पात्रमें तण्डुल पर सदाशिव मणिपात्रका आस्या, इसपर पादपयाथि नराकृत मेघपती, और पर नागपाशरूपा सर्पका वासुकी, शर्करा पर कमासना लक्ष्मीको, तिल पर सौम्या और नवनीत पर गुरुरत्ना इयापना मारेमको मूर्ति स्थापि बैठती है। प्रत्येक मूर्ति मुकुटयुक्त, श्वेत देहमें पुष्पविशिष्ट और प्रत्यक्षदर्शा चाहिये। लताओंके पार्श्वमें दश धेनु, दश पूर्ण कुम्भ और दश बोझा वस्त्र रखते हैं। फिर मङ्गल गीत गाते बाजा बजाते और वन्दियों द्वारा शान्तिपाठ सुनाये जाते हैं। उसी समय कुम्भ निकटस्थ चार कुम्भोदकसे यजमानको स्नान कराना चाहिये। स्नानके अन्तमें यजमान शुक्लवस्त्र, अलङ्कार और माल्यादि पहनते हैं। फिर लतासमूहका तीन बार प्रदक्षिण करते करते मन्त्रपाठपूर्वक तोन पुष्पाञ्जलियां देना पड़ती है। यथाविध कल्पलतादान कर दक्षिणा बांटी जाती है। अन्तको दरिद्र अनाथ प्रभृतिका सन्तोषसाधन और ब्राह्मणादिका भोजनकार्य सम्पादन करना चाहिये।

कल्पलतिका (सं॰ स्त्री॰) कल्पवृक्ष।

कल्पवर्ष (स॰ पु॰) उपदेननन्दाता देवकके पुत्र।
(भागवत ९।२४।५१)

कल्पवल्ली (स॰ स्त्री॰) कल्पलता, लता।

कल्पवायु (सं॰ पु॰) प्रलयकालमें प्रवाहित होनेवाला वायु, कयामतके वक्त चलनेवाली हवा।

कल्पवास (सं॰ पु॰) वासविशेष, एक रहायश। माघ मासमें गङ्गातट पर संयमके साथ रहनेको कल्पवास कहते हैं।

कल्पविटपी, कल्पतरु देखो।

कल्पविधि (स॰ पु॰) व्यवहारिक आज्ञा पालन कर्मका एक नियम।

कल्पवृक्ष (सं॰ पु॰) कल्पतरु, तुबा। यह समुद्रसे मन्थनसमय निकला था। इन्द्रके नन्दनवनमें कल्पवृक्ष बना रहता है। चौदह रत्नोंमें यह भी एक रत्न है। कोई कोई गोरख इमलीको भी कल्पवृक्ष कहते हैं। २ विभीतक वृक्ष, बहेड़ेका पेड़।

कल्पशाखी, कल्पतरु देखो।

कल्पसूत्र (सं॰ क्लो॰) कल्पस्य वैदिककर्मानुष्ठानस्य प्रतिपादकं सूत्रम्। वैदिक कर्मविधायक ग्रन्थ। यह ग्रन्थ आश्वलायन आपस्तम्ब प्रभृतिने बनाये हैं।
[illegible] और सूत्र देखो।

"[illegible]
[illegible]" (रामायण [illegible])

२ जैनियोंका एक धर्मग्रन्थ। भद्रबाहुस्वामीने इस ग्रन्थका प्रचार किया था। जैन देखो।

कल्पहिंसा (स॰ स्त्री॰) जैन मतानुसार हिंसाविशेष, पञ्चसूना, चूल्हा जलने, सिलपर मसाला पिसने, झाड़ू लगने, ओखलीमें मूसर चलने और घड़ेमें पानी भर रखनेसे जीवोंका मारा जाना।

कल्पा (सं॰ स्त्री॰) श्वेतजातीय सफेद अमलिका पेड़। २ मधु मदार।

कल्पातीत (सं॰ पु॰) कल्पं कल्पकालं अतीतो यस्य कल्पं अहि अतीत अतिक्रान्तो येन वा, बहुब्री॰। कल्पकालकी अपेक्षा अधिक दिन रहनेवाले देवता विशेष, जो क़यामतसे भी ज्यादा दिन जी सकता हो। कभी न मरनेवाले देवताको कल्पातीत कहते हैं। जैन मतानुसार वैमानिक देव दो तरहके होते हैं कल्पोपपन्न और कल्पातीत। सौधर्मसे लेकर अच्युत स्वर्गपटल पर्यन्तके विमानोंमें होनाधिक विभूतिके अनुसार इन्द्र प्रतीन्द्र आदि की कल्पना है इस लिये वे तो कल्पोपपन्न कहलाते हैं और जहां यह कल्पना नहीं है सब समान विभूतिके धारक होनेसे अपनेको इन्द्र (अहमिन्द्र) समझते हैं उनको कल्पातीत कहते हैं। यह सब मिलाकर चौदह होते हैं। इनमें नौ ग्रैवेयक और पांच अनुत्तर हैं।

कल्पादि (सं॰ पु॰) कल्पस्य आदिः आदि: प्रथम कालः, ६-तत्। सृष्टिका आरम्भकाल, दुनियाकी उत्पत्ति।

कल्पानुपद (स॰ पु॰) सामवेदके अन्तर्गत एक ग्रन्थ।

कल्पान्त (सं॰ पु॰) कल्पस्य अन्तो यत्र, बहुब्री॰। १ प्रलय, क़यामत। २ ब्रह्माके दिनका अन्त।

"[illegible]" (रामायण [illegible])

कल्पान्तर (सं त्रि॰) कल्पादन्तरम् ६-तत्। अपर कल्प, दुनियाकी दूसरी पैदायश।

कल्पान्तस्थायी (सं० त्रि०) कल्पान्तपर्यन्तं तिष्ठति, कल्पान्त-स्था-णिनि। प्रलयकाल पर्यन्त वर्तमान रहनेवाला, जो क़यामत तक टिक सकता हो।

कल्पिक (सं० त्रि०) उपयुक्त, काबिल।

कल्पित (सं० पु०) कल्प्यते सज्जीक्रियते असौ, कल्प-णिच् कर्मणि क्त। १ सज्जितहस्ती, लड़ाईकेलिये सजा हुवा हाथी। (त्रि०) २ रचित, बनाया हुवा।

"ब्रह्मादि स्तम्बपर्यन्तं मायया कल्पितं जगत्।" (महानिर्वाण)

३ उद्भावित, फ़र्ज़ी, माना हुवा। ४ सम्पादित, ठीक किया हुवा। ५ सज्जित, सजा हुवा। ६ दत्त, दिया हुवा। ७ आरोपित, लगाया हुवा। ८ अवधारित, सोचा हुवा। ९ कृत्रिम विषय सत्यकी भांति स्थिरीकृत, गुलतकी तरह ठहराया हुवा।

कल्पितार्घ, कल्पितार्घ्य देखो।

कल्पितार्घ्य (सं० त्रि०) कल्पितं दत्तं अर्घ्यं यस्मै। अर्घ्य दिया हुवा, जो अर्घ पा चुका हो।

कल्पितोपमा (सं० स्त्री०) अभूतोपमा, अन्दाज़ी मिसाल। इसमें प्रकृत उपमान न मिलनेसे कल्पना लगती है।

कल्पी (सं० त्रि०) कल्पयति, क्लृप-णिच्-णिनि। १ रचनाकारक, बनानेवाला। २ आरोपक, लगानेवाला। ३ वेशकारक, सुधारनेवाला। (पु०) ४ नापित, नाई।

कल्प्य (सं० त्रि०) क्लृप-णिच्-यत्। १ रचनीय, बनाने लायक़। २ आरोग्य, अच्छा हो सकनेवाला। ३ अनुष्ठेय, किया जानेवाला। ४ विधेय, मानने लायक़।

कल्म (सं० क्ली०) रलयोरैक्यात्। कर्म, काम।

कल्मलि (सं० पु०) कलयति अपगमयति मलम्, पृषोदरादित्वात् साधुः। तेजः, रोशनी।

कल्मलीक (सं० क्ली०) कल्मलि देखो।

कल्मलीक (सं० पु०) कल्मलीकमस्यास्ति, कल्मलीक इनि। १ रुद्र। (त्रि०) २ तेजोयुक्त, चमकदार।

कल्मष (सं० क्ली०) कर्म शुभकर्म स्यति नाशयति, पृषोदरादित्वात् साधुः। १ पाप, गुनाह। २ हस्तिपुच्छ, हाथीकी पूंछ। ३ मलिनता, मैलापन।

४ हर्षिको। (पु०) ५ नरक विशेष, एक दोज़ख़। ६ मास विशेष, एक महीना। जिस मास अमा नक्षत्रको मङ्गलवार या शनिवार आता, वह कल्मष कहाता और मनोदुःख देखाता है। (दीपिका) (त्रि०) ७ मलिन, गन्दा, मैला।

कल्मषध्वंसकारी (सं० त्रि०) १ पाप वा तिमिरनाशक, गुनाह या अंधेरेको दूर करनेवाला। २ पापकर्मसे बचानेवाला, जो जुर्म करने न देता हो।

कल्माष (सं० पु०) कलयति, कल्-क्विप्, माषयति, स्वभासा अभिभवति, अन्यवर्णान्, माष-णिच्-अच्; कल् चासौ माषश्चेति, कर्मधा०। १ चित्रवर्ण, चितकबरा रंग। २ कृष्णवर्ण, सांवला रंग। ३ राक्षस, आदमख़ोर। ४ गन्धशालि, खुशबूदार चावल। ५ सर्पविशेष, एक सांप। ६ अग्निविशेष, एक आग। ७ सूर्यके एक अनुचर। ८ पूर्व जन्मके शाक्यमुनि। (त्रि०) ९ चित्रवर्ण विशिष्ट, चितकबरा। १० कृष्णबिन्दुयुक्त, काले धब्बेवाला।

कल्माषकण्ठ (सं० पु०) कल्माषः कृष्णवर्णः कण्ठो यस्य, बहुव्री०। नीलकण्ठ, शिव।

कल्माषग्रीव (सं० त्रि०) कल्माषा कृष्णवर्णा ग्रीवा यस्य, बहुव्री०। १ कृष्णवर्ण ग्रीवावाला, जिसके काली गर्दन रहे। (पु०) कल्माषा ग्रीवा सामीप्यात् कण्ठो यस्य। २ महादेव।

कल्माषता (सं० स्त्री०) कल्माषस्य भावः, कल्माष तल्। १ चित्रवर्णता, चितकबरापन। २ कृष्णपाण्डुरवर्णता, कालापन, स्याही।

"राघवं मासमात्र पादे कल्माषतां गतः।" (भागवत ९।९।२१)

कल्माषपाद (सं०पु०) कल्माषौ कृष्णवर्णौ पादौ यस्य, बहुव्री०। सौदास राजा। यह नलसखा राजा ऋतुपर्णके वंशीय थे। किसी समय सौदासने मृगयाको निकल एक राक्षस मारा था। उसका भ्राता वैर निर्यातन उपायके अनुसन्धानको भागासे राजाके घर आ पाचक वेशसे रहने लगा। एक दिन राजगुरु वशिष्ठ भोजन करने पहुंचे। उसने नरमांस खानेको रखा। वशिष्ठने वह मांस देख राजाका दुर्व्यवहार समझ लिया और अभिशाप दिया,—सौदास तुम

रावण होगी। बिना अपराध अभिशाप पा राजाने भी गुरुको प्रतिशाप देनेके लिये जल उठाया। किन्तु राजमहिषी मदयन्तीने तुरन्त उपस्थित हो राजाको रोका। राजाने वह जल अपनेही पैर पर डाला था। इससे दोनों पर काले पड़ गये और लोग उन्हें कल्माषपाद कहने लगे। (भागवत ९।९ अ)

कल्मषाङ्घ्रि कल्माषपाद देखो।

कल्माषाङ्घ्रिक (सं० पु०) कल्माषो कल्माषवर्णः अङ्घ्रिः यस्य, कल्माषाङ्घ्रि-कन्। कल्माषपाद देखो।

कल्माषी (सं० स्त्री०) कल्माष ङीप्। १ चितकबरी स्त्री गायों या भैंसकी जाति। २ कृष्णवर्णा यमुना, कालिन्दी नदी। "कल्माषीमेत्य [illegible] नदीं।" (भारत, वन ५४ अ)

कल्मेश्वर—मध्यप्रदेशके नागपुर जिलेका एक नगर। यह नागपुर शहरसे ७ कोस पश्चिम पड़ता है। यहां कुनबीकी जमींदारी है। इस नगरके मध्य एक दुर्ग भी रहता है। दिल्लीके किसी हिन्दू मनसबदारने आकर यह दुर्ग बनाया था। कल्मेश्वरमें धान्य, तेल और देशीय कपड़ेका व्यवसाय चलता है। यहांकी जमीन्में अफीम, ऊख और तमाकू होती है।

कल्य (सं० क्ली०) कलयति आमयत्वेन, कल कर्मणि यत्। १ प्रात काल सवेरा, भोर। कलयति मिष्टतां सम्पादयति कल-यक्। २ मधु, शहद। ३ सुरा, शराब। ४ कल्याणवाक्य, मुबारकबादी, बधाई। ५ सभाका हल्ला, [illegible]। ६ शुभ समाचार, अच्छी खबर। (त्रि०) ७ सज्ज, प्रस्तुत, तैयार। ८ नीरोग जो बीमार न हो। ९ वाक्‌श्रुतिरहित, गूंगा और बहरा, जो कह सुन न सकता हो। १० दक्ष होशियार, चालाक। ११ मांगलिक, शुभकार। १२ शिक्षाप्रद, नसीहत, उपदेश।

कल्यजग्धि (सं० स्त्री०) कल्ये प्रातः जग्धि भोजनम्, ७-तत्। १ प्रातःकालका भोजन, सवेरेका नाश्ता। २ प्रातःकालका भोज्य, सवेरेके खानेकी चीज।

कल्यता (सं० स्त्री०) कल्यस्य नीरोगस्य भावः, कल्य-तल्। आरोग्य आराम, बीमारीसे छुटकारा।

कल्यद्रुम (सं० पु०) विभीतक वृक्ष, बहेड़ेका पेड़।

कल्यपाल (सं० पु०) कल्यं मधु मद्यं पालयति, कल्य-पाल-अण्। शौण्डिक, कलवार, शराब टपकानेवाला।

कल्यपालक (सं० पु०) कल्यं पालयति, कल्य ण्वुल्। कल्यपाल देखो।

कल्यवर्त (सं० पु०) कल्ये प्रातः वर्तते भोज्यत्वेन कल्य-वृत-अच्। १ प्रातराश, सवेरेका नाश्ता। २ लघुभोजन, हलका खाना। (क्ली०) ३ तुच्छ वस्तु मामूली चीज।

कल्या (सं० स्त्री०) कलयति मादयति, कल-णिच्-यत्-टाप्। १ मद्य शराब। २ हरीतकी, हड़। ३ कल्याणवाक्य मुबारकबादी।

कल्याड (सं० पु०) पर्पटद्रुम हमन पापड़ेका पेड़।

कल्याण (सं० पु०-क्ली०) कल्ये प्रातः अण्यते शब्द्यते, कल्य-अण् घञ्। [illegible] १ मङ्गल, भलाई। इसका संस्कृत पर्याय—श्व, श्रेयस्, शिव, भद्र, शुभ, मङ्गल, भविक भव्य, कुशल, क्षेम और शस्त है। २ स्वर्ग। ३ रागविशेष। इस रागमें ष, नि, सा ऋ, ग, म और ध क्रमसे स्वर लगाये जाते हैं। दश दण्ड रात्रि बीतनेसे यह राग गाया जाता है। इसके ठाटपर रागमाली, कल्याण पितरो ऐरावत और कोकिल कल्याण प्रभृति रागिनियां चलती हैं। कल्याणके पुत्र हिमाल, बसन्त कोर, अड़ाना, कवि हरा, सुमिन्द और गुणसागर हैं। ४ राजविशेष, एक राजा। वह 'महत्तो कल्याण' नामसे ख्यात थे। ५ 'शीतमञ्जरी' नामक पुस्तकके प्रणेता। (त्रि०) ६ कल्याणयुक्त, भला।

कल्याण—बम्बई प्रान्तके थाना जिलेका एक उपविभाग और नगर। इस उपविभागका परिमाणफल २७८ वर्ग मील है। कल्याणके उत्तर उल्हास तथा भातसा नदी पूर्व शाहपुर एवं मुरबाड दक्षिण करजत तथा पनवेल और पश्चिम पारसिक पर्वतमाला है। उत्पन्न द्रव्योंमें धान्य माष और सर्षपादि प्रधान हैं। अन्न उत्पन्न होता है। कल्याण प्रायः त्रिकोणाकार है। पश्चिमांशमें प्रायः समतल भूमि पायी है। फिर पूर्व और दक्षिणमें पर्वतमालाका पंचमभूर परिव्याप्त है। यहां वैशाख-ज्येष्ठ मासमें पूर्वदिक्‌से वायु चलता

है। स्थान बहुत ही अस्वास्थ्यकर है। शीतकालमें ज्वरका कुछ प्रादुर्भाव बढ़ते भी अच्छा रहता है। एक दीवानी अदालत और एक थाना है। फौजदारोकी दो कचेहरियां लगती हैं। कल्याण नगर इस प्रदेशका प्रधान स्थान है। यह अक्षा० १८° १४″ उ० और देशा० ७३° १०′ पू० पर अवस्थित है। नगरमें बन्दर विद्यमान है। चावल छांटनेका काम बहुत होता है। मुसलमानोंके अधिकार समय कल्याणमें ११ मसजिदें बनी थीं। चतुर्दिक् प्राचीरसे वेष्टित नगरमें प्रवेश करनेकेलिये चार द्वार थे।

कल्याण अतिप्राचीन है। नाना स्थानोंके ई० प्रथम, पञ्चम तथा षष्ठ शताब्दके खोदित शिलालेखों में भी इसका नाम मिलता है। पेरिप्लासके मतसे ई० द्वितीय शताब्दको दाक्षिणात्यमें कल्याण नामक एक प्रधान राज्य था। कसमस इण्डिकोप्लुटेसकी वर्णनासे समझ पड़ता है,कि ई० षष्ठ शताब्दमें भारतकी वाणिज्यप्रधान पांच नगरियोंमें कल्याण एकतम और वस्त्र पित्तल प्रभृतिका विस्तृत व्यवसाय केन्द्र रहा। ई० चतुर्दश शताब्दको मुसलमानोंने दिल्लीका सदरखाना बना इसका नाम इसलामाबाद रखा। पोर्तगीजोंने १५३६ ई०को कल्याणपर अधिकार किया था। किन्तु उन्होंने इसकी रक्षा रखनेका कोई प्रबन्ध न बांधा। फिर १५७० ई०को वह इसका उपकण्ठ लूट यथेष्ट धन रत्न ले गये। पीछे यह प्रदेश अहमद नगर राज्यमें लगा। १६३६ ई०को बीजापुरके राजाने प्रबल हो इसे अधिकारमें किया। १६४८ ई०को शिवाजीके सेनापति आवाजी सोमदेवने कल्याणपर आक्रमण कर शासनकर्ताको बन्दी बनाया। १६६० ई०को मुसलमानोंने इसे शिवाजीके हाथसे छुड़ाया, किन्तु १६६२ ई०को फिर गंवाया। १६७८ ई०को शिवाजीने अंगरेजोंको यहां कोठी बनानेका आदेश दिया था। १७८० ई०को मराठोंका साहाय्य न मिलनेसे अंगरेजोंने यह प्रदेश अधिकार किया। उसी समयसे कल्याण अंगरेजोंके अधीन है।

प्राचीन इतिहास—इसका जो प्राचीन इतिहास मिला, अधिकांश कर्णाटकके खोदित लेखोंसे निकला है। कर्नेल मेकेञ्जी साहबने संस्कृतपुस्तकोंका संक्षिप्त इतिहास लिपिबद्ध किया है। उसमें 'महाराज वमराज वंशावली' लगी है। वह तिरुपती पर्वतके निकटवर्ती नारायणपुर वा नारायणवरम् नामक स्थानके अधिपतियों या प्राचीन कर्वेती नगरके मह राजवंशीय राजाओंका वंशविवरण कीर्तन करती है। तोन्दमान चक्रवर्तीके एक वंशीय धनञ्जय चोल थे। उन्हीं चोलराजपुत्रसे उक्त वंशकी उत्पत्ति है। धनञ्जयके वंशमें नारायणराज नामक किसी व्यक्तिने जन्म लिया। उन्हीं नारायणराजने नारायणवरम् वा कल्याणपत्तन स्थापित किया था। कल्याण पत्तन प्राचीन कल्याण वा आधुनिक नारायणवरम् नदीपर अवस्थित है।

कर्णाटिक खोदित शिलालेखोंसे जो प्रमाण मिले उन्हें देख समझ सके हैं—एक समय गोदावरी और कृष्णानदीके अन्तर्गत भूभागमें चालुक्य राजा अतिशय प्रबल पराक्रान्त पड़े थे। उस समय कोङ्कण, कल्याण, वनवासी प्रभृति राज्योंपर उनका अधिकार फैला था। कल्याण बहुत समृद्धिशाली और विख्यात था। चालुक्य राजा शिलालेखोंमें अपना कल्याण वा कल्याणपुरके 'चालुक्य राजा' कहकर परिचय दे गये हैं। कोङ्कणप्रदेशमें चित्रराज नामक एक महामण्डलेश्वर नृपति (८४६ शक) थे। उनकी प्रदत्त दानके सम्बन्धमें मतामत देते समय अध्यापक लासेनने कहा है,—'इसकी लिखी शिलाहार जाति काफिरिस्तानकी उत्तरस्थ काफिर जातीय "शिलार" जातिको छोड़ अन्य जाति हो नहीं सकती।' किन्तु दाक्षिणात्यमें एक शिलात् जाति थी। वह लोग पहले मान्यखेटीय राष्ट्रकूटोंके पीछे कल्याणवाले चालुक्योंके अधीन हुये। उस समय शिलाहारोंके ही शासनमें कोङ्कण प्रदेश, बेलगांव और सतारेका मध्यवर्ती समुदय स्थान था। शिलारोंके पराजयके बाद उक्त सकल प्रदेश कल्याणके अधीन हुवा।

दाक्षिणात्यके चालुक्य राजाओंमें कलिविक्रम विक्रमादित्य त्रिभुवनमल्लदेवकी महिमाका एक काव्य है। विह्लण नामक कविने उसे बनाया था। काव्यका नाम 'विक्रमाङ्कचरित' है। उसके मतसे विक्रमा-

इसका राजत्व काल शक ८८७—१०३८ ठहरता है। विक्रमके पिता २य आहवमल्ल कल्याणनगरीके प्रतिष्ठाता थे। (Ind Ant. Vol. I. p. 209) कल्याणप्रदेश विक्रमादित्य महाराजको अतिप्रिय रहा। वह नाना स्थानोंसे युद्ध जीत यहीं आकर ठहरते थे।

कल्याण उपाध्याय—वादतत्त्व नामक संस्कृत ग्रन्थके प्रणेता। यह महीधरके पुत्र और रामदासके पौत्र थे। अहिच्छत्र नगर इनका वासस्थान रहा। इन्होंने १४३३ शकको माघपूर्णिमाको रविवारके दिन अपना वादतत्त्व समाप्त किया था।

कल्याणक (स० क्ली०) कल्याण स्वार्थे कन्। १ कल्याण मङ्गल। (पु०) २ पर्पटक, दवनपापड़ा। (त्रि०) ३ कल्याणयुक्त, भला, अच्छा।

कल्याणकगुड़ (सं० पु०) चक्रपाणिका वैद्यकोक्त औषधविशेष इन्होंको बीमारोंमें दो आमलकी एक द्रव्य। आमलकीका रस २ सेर और इक्षु गुड़ ६ सेर एकत्र पाक करे। पाक प्राय समाप्त होने पर पिप्पली मूल, जीरक चव्य, मरिच, पिप्पली गजपिप्पली, हपुषा, अजमोदा, विड़ङ्ग, सैन्धव, हरीतकी, आमलकी, विभीतक यमानी, पाठा, त्रिकटु एवं धान्यकका चूर्ण आठ-आठ तोले, त्रिवृत्चूर्ण १ सेर और तैल १ सेर डाल अवलेह बना लेते हैं। यह अवलेह आठ तोले खानेको और तेजपत्रका चूर्ण मिला कर खानेसे ग्रहणी, श्वास, कास, अरुचि शोथ, मन्दाग्नि, पुरुषत्वहानि और वन्ध्यादोष निवारित होता है। इसे त्रिवृत् तैलमें तलकर देना चाहिये। (चक्रदत्त)

कल्याणकघृत (सं० क्ली०) वैद्यकोक्त घृत औषध विशेष, दवाका एक घी। त्रिफला, विशाला, मञ्जिष्ठा दाड़िमत्वक्, उत्पल प्रियङ्गु, एला, एलवालुक रक्तचन्दन देवदारु, बेणामूल, कुठ, हरिद्रा, शालपर्णी, चक्रकुम्भा, अनन्तमूल, श्यामा, रेणुका, त्रिवृत्, दन्ती, वचा तालीशपत्र और मालती मूल प्रत्येकका कल्क दो-दो तोले घृत १२ पल तथा जल १६ शरावक एकत्र पाक करनेसे यह घृत बनता है। इसके सेवनसे विषमज्वर, श्वास, गुल्म, उन्माद, शिरोरोग, अपस्मार रक्तोदोष अग्निमान्द्य, अपस्मार, मूत्रहीनता, वन्ध्यादोष वायुरोग और शुक्रमार्ग का दोषसमूह छूट पाण्डु हो जाते हैं। (वाभट) इसी घृतको द्विगुण जल और चतुर्गुण दुग्ध डाल कर पकानेसे क्षीरकल्याण कहते हैं। (चक्रदत्त) फिर वातरोग पर महत्कल्याणक घृत बनता है। यथा घृत ४ शरावक शतमूलीका रस १६ शरावक, दुग्ध १६ शरावक और जीरक, वचा मञ्जिष्ठा, अश्वगन्धा, हरिद्रा, काकोली, क्षीरकाकोली, यष्टिमधु मेदा, महामेदा, ऋद्धि वृद्धि तथा देवदारुका कल्क आठ आठ तोले एकत्र पाककरनेसे महत्कल्याणकघृत प्रस्तुत होता है। (रत्नाकर)

कल्याणकर (सं० त्रि०) माङ्गलिक, भलाई करनेवाला।

कल्याणकामोद (सं० पु०) मिश्ररागविशेष, एक मिलावटी राग। ईमन और कामोद मिलनेसे यह बनता है। इसे प्रथम प्रहरमें गाते हैं।

कल्याणकार, कल्याणकारक देखो।

कल्याणकारक (सं० त्रि०) कल्याणप्रद भलाई करनेवाला।

कल्याणकृत् (सं० त्रि०) कल्याण कृ क्विप्। १ कल्याणकारक भलाई करनेवाला। २ शास्त्रविहित कार्यकारक, भला काम करनेवाला।

कल्याणकोट—सिन्धुप्रदेशवाले ठाठानगरके पार्श्वका एक प्राचीन गिरिदुर्ग। आजकल इसे तुगलकाबाद कहते हैं।

कल्याणगुड़, कल्याणकगुड़ देखो।

कल्याणघृत, कल्याणकघृत देखो।

कल्याणचन्द्र (सं० पु०) एक ज्योतिःशास्त्रकार। यह ई० १२ वें शताब्दमें विद्यमान थे।

कल्याणचार (सं० त्रि०) १ शुभमार्गे अवलम्बन करनेवाला, जो अच्छी राह चलता हो। २ भाग्यशाली, किस्मती।

कल्याणधर्मा कल्याणधर्मी देखो।

कल्याणधर्मी, (सं० त्रि०) कल्याणो मङ्गलमयो धर्मो अस्य कल्याण-धर्म इनि। मङ्गलकर धर्मविशिष्ट, नेक अच्छा।

कल्याणनट (सं० पु०) मिश्ररागविशेष, एक मिलावटी राग। यह कल्याण और नटके संयोगसे बनता है।

कल्याणपञ्चमीक (सं० पु०) मास पक्षविशेष, महीनेका एक पाख। जिस पक्षकी पञ्चमी कल्याणकारक रहती, उसकी संज्ञा कल्याणपञ्चमीक पड़ती है।

कल्याणपुर—१ युक्तप्रदेशके फतेहपुर जिलेकी एक तहसील। यह गङ्गा और यमुना नदीके बीच अवस्थित है। इसमें २१८ ग्राम लगते हैं। भूमिका परिमाण २८७ वर्ग मील है।

२ काश्मीरका एक प्राचीन नगर। ६६७ शकमें कल्याणदेवीने यह नगर बसाया था।

३ दाक्षिणात्यके कल्याण प्रदेशका प्राचीन राजधानी। चालुक्य राजाओंके शिलालेखोंमें यह स्थान प्रसिद्ध है। कल्याण देखो।

४ युक्तप्रदेशके कानपुर जिलेका एक ग्राम। यह कानपुर शहरसे कोई ६ मील पश्चिम पड़ता है। यहां पुलिसका थाना और बम्बई-बरोदा-मध्यभारत तथा राजपूतना-मालवा-रेलवेका ष्टेशन विद्यमान है। फिर बिठूर (ब्रह्मावर्त)से कानपुरको सूबेदार साहबकी रेल भी उक्त ष्टेशनसे जाती है। थानेके पास एक पक्का तलाव और महादेव तथा देवीका मन्दिर है।

कल्याणभार्य (सं० पु०) पुरुषविशेष, एक मर्द। स्त्रीके मरने पर फिर विवाह होनेकी बात उठनेसे पुरुषको 'कल्याणभार्य' कहते हैं।

कल्याणमल—युक्तप्रदेशके प्रान्त हरदोई जिलेका एक परगना। इसका प्राचीन नाम थौसिया है। प्रवादानुसार रामचन्द्र रावणको मार लङ्कासे लौटते समय यहां रथसे उतरे थे। फिर उन्होंने रावणवधजनित पापक्षालनके लिये 'हत्याहरण' नामक पवित्र कुण्डमें स्नान किया। पांचसौ वर्ष पहले यह स्थान ठठेरोंके अधिकारमें था। पीछे वैश्यवार राजपूत कुलोद्भव राजकुमारने ठठेरोंको भगा ८४ ग्रामों पर राजत्व चलाया। उन्होंने रथौसिया नगरमें एक दुर्ग बनाया था। उसका भग्नावशेष आजभी देख पड़ता है। नागमल नामक किसी नायकने प्रभुको मार (किसीके मतसे बलप्रयोग पूर्वक) यह स्थान छीन लिया। आजभी नागमलवंशीय शकरवार राजपूत ६२ ग्रामका उपभोग करते हैं।

इस परगनेका परिमाण ६१ वर्गमील है। उसमें ३१ वर्गमील पर कृषि कार्य होता है। यहांकी भूमि बहुत अच्छी नहीं। हत्याहरणकुण्डके निकट प्रति वर्ष भाद्रमासमें मेला लगता है। उसमें न्यूनाधिक पन्द्रह हजार आदमी इकट्ठा होते हैं। इस परगनेमें कल्याण नामक ग्राम ही प्रधान है।

कल्याणमल्ल (सं० पु०) १ अनङ्गरङ्ग नामक ग्रन्थके प्रणेता। २ गजमल्लके पुत्र। इन्होंने मेघदूतकी मालती नाम्नी टीका बनायी थी।

कल्याणमित्र (सं० क्ली०) कल्याणस्य धर्मस्य मित्रमिव। १ महर्षि सुतपाके पुत्र। इनका नाम लेनेसे नष्ट द्रव्य मिलता और वज्रका भय भगता है। (ब्रह्मवैवर्तपुराण)

२ धर्मका सङ्गी, नेक सलाह देनेवाला।

कल्याणयोग (सं० पु०) कल्याणकरो योगः, मध्यपदलो०। ज्योतिःशास्त्रोक्त यात्राका एक योग। वृहस्पति केन्द्रस्थान (लग्नसे १म, ४र्थ, ७म और १०म) और सूर्य त्रिकोण (५म और ८म) अथवा १०म वा ११श स्थानमें रहनेसे यह योग आता है। इस योगमें यात्रा करनेसे मङ्गल हुवा करता है।

कल्याणलेह (सं० पु०) अवलेहविशेष, एक चटनी। हरिद्रा, वचा, कुष्ठ, पिप्पली, शुण्ठी, जीरक, अजमोदा (यमानी), यष्टी मधु, मधुकपुष्प और सैन्धवको समभाग बारीक चूर्ण प्रत्यह २१ दिन घीमें सानकर चाटनेसे वातव्याधि, हिक्का और श्वासरोग आरोग्य होता है। (चक्रदत्त)

कल्याणवचन (सं० क्ली०) कल्याणं मङ्गलमयं वचनम्, कर्मधा०। मङ्गल वाक्य, भली बात।

कल्याणवर्मा (सं० पु०) १ कोई प्रसिद्ध ज्योतिर्विद्। इन्होंने सारावली नामक एक ज्योतिष बनाया था। २ काश्मीरवाले राजा बृहस्पतिके एक मातुल (मामा)। इन्होंने बृहस्पतिकी शैशवावस्थामें कुछ दिन भ्रातृगणोंके साथ राजकार्य चलाया था। फिर कल्याणवर्माने 'कल्याणस्वामी केशव' नामक विष्णुकी एक मूर्ति प्रतिष्ठित की। (राजतरङ्गिणी ४।६९९)

कल्याणवाचन (सं॰ क्ली॰) कल्याणस्य वाचनं उच्चारणम् ६ तत्। शास्त्रविहित कर्मसमूहके प्रथम ब्राह्मणसे पढ़ाया जानेवाला एक मन्त्र। यजमानको शास्त्रविहित कर्म आरम्भ करते समय 'ॐ भोः कर्मणोऽस्मिन् कर्मणि कल्याणं भवन्तोऽधिब्रुवन्तु' मन्त्रसे प्रार्थना करना चाहिये। इस पर ब्राह्मण 'ॐ कल्याणम्' मन्त्र तीन बार पढ़ता है। फिर उसे निम्नलिखित मन्त्रसे कल्याण वाचन करना पड़ता है,—

"[illegible]।
[illegible]"

कल्याणवादी (सं॰ त्रि॰) कल्याणं वदति, कल्याण-वद-णिनि। कल्याणवक्ता, भलाईकी बात कहनेवाला।

कल्याणविनोद, कल्याणचन्द्र देखो।

कल्याणबीज (सं॰ पु॰) कल्याणं बीजं यस्य, बहुव्री॰। १ मसूरक्षुप, मसूरको दालका पेड़। मसूर देखो। (६ तत्) २ मङ्गलका कारण भलाईका सबब।

कल्याणवर्मा (सं॰ पु॰) वराहमिहिरकृत बृहत्संहिताके एक टीकाकार।

कल्याणसिंह—बीकानेरके एक राजा। यह राजा जैतसिंहके पुत्र थे। १६०१ संवत्में कल्याणसिंह राज्याभिषिक्त हुये। २० वर्ष उन्होंने राजत्व किया था।

कल्याणसुन्दररस (सं॰ क्ली॰) रसकल्पका एक रस। ८ तोले जारित अभ्रकी भस्मको, सुवर्ण रजत, सतमूली, रसु विलायत, अग्निमन्थ, वासा वासक, कण्टकारी, कोषाक, पारदादि तथा [illegible] ११ पल रसमें पृथक् मर्दन कर शुष्क समान बड़ी बनाके यह औषध प्रस्तुत होता है।

कल्याणाचार (सं॰ पु॰) कल्याणकरः आचारः, मध्य पदलो॰। १ मङ्गलकर आचरण, भला चाल चलन। (त्रि॰) २ मङ्गलकरआचार करनेवाला, जो अच्छी चाल चलता हो।

कल्याणाचारी (सं॰ त्रि॰) कल्याणाचारं अस्त्यस्य, कल्याणाचार-इनि। मङ्गलमय आचारयुक्त, अच्छी चाल चलनेवाला।

कल्याणाभिजनन (सं॰ क्ली॰) कल्याणस्य अभिजननम्, कर्मधा॰। १ मङ्गलकर जन्म नेक पैदायश। (त्रि॰) २ मङ्गलकर जन्म लेनेवाला, जो अच्छे वक्त पैदा हुआ हो।

कल्याणालय (सं॰ त्रि॰) कल्याणस्य आलय, ६-तत्। १ मङ्गलका आलय, नेकीका ठिकाना। (पु॰) २ परमेश्वर।

कल्याणास्पद (सं॰ त्रि॰) कल्याणस्य आस्पदः, ६-तत्। १ मङ्गलका पात्र भलाईका घर। (पु॰) २ परमेश्वर।

कल्याणिका (सं॰ स्त्री॰) कल्याण संज्ञायां कन् टाप् अत इत्वम्। मनःशिला। मनःशिला देखो।

कल्याणिनी (सं॰ स्त्री॰) कल्याणं अस्त्यस्याः, कल्याण-इनि ङीप्। १ बला। बला देखो। २ कल्याणविशिष्टा स्त्री, अच्छी औरत।

कल्याणी (सं॰ त्रि॰) कल्याणमस्यास्ति, कल्याण इनि। कल्याणयुक्त नेक, भला।

कल्याणी (सं॰ स्त्री॰) कल्याण ङीप्। १ माषपर्णी। २ गाभी, गाय। "[illegible] कल्याणी [illegible]" ([illegible]) ३ रासवृक्ष, रासका पेड़। ४ सर्ज वृक्ष, धूनेका पेड़। ५ प्रयागकी एक प्रसिद्ध देवी।

कल्याणोचित (सं॰ त्रि॰) कल्याण उचित। कल्याणके योग्य, मङ्गलमय, नेक भलाई करनेवाला।

कल्याण्यादि (सं॰ पु॰) पाणिनि-व्याकरणका एक गण। कल्याण्यादीनामिनङ्। पा ४।१।१२६। इसमें कल्याणी, सुभगा, दुर्भगा, बन्धकी, अनुदृष्टि, अनुसृष्टि, जरती, बलीवर्दी, ज्येष्ठा, कनिष्ठा मध्यमा और परस्त्री शब्द अन्तर्भूत है। इन् शब्दके अन्तमें ठक् प्रत्ययके स्थानीय इनङ् आदेश होता है।

कल्यान (हिं॰) कल्याण देखो।

कल्यापाल, कल्यपाल देखो।

कल्यापालक, कल्यपाल देखो।

कल्युष (सं॰ स्त्री॰) मणिबन्ध कलाई।

कल्ल (सं॰ त्रि॰) कलति शब्दं न गृह्णाति, कल्ल अच्। बधिर, बहरा, जिसे कानसे सुन न पड़े।

कल्लट (सं॰ पु॰) स्पन्दकारिका और स्पन्दसूत्र विवरण नामक ग्रन्थके प्रणेता। काश्मीर इनका जन्मस्थान था। पाश्चात्य पण्डित इन्हें ई॰ ९वीं शताब्दीके व्यक्ति मानते हैं। किन्तु हमारे विवेचनामें कल्लट

ई० ८वें शताब्दमें विद्यमान रहे। कारण उस समय काश्मीरमें कल्लट नामक एक शैव राजा राज्य करते थे। सम्भवतः स्पन्दसर्वस्वकारने उक्त राजाके नामसे ही अपना ग्रन्थ निकाला होगा। स्पन्दसूत्रके वार्तिककार भास्करभट्टके मतानुसार वसुगुप्तने कल्लटको शिवसूत्र बताया था। फिर इन्होंने स्पन्दसूत्रको कारिकाके साथ उसे जनसमाजमें प्रचार किया। कल्लटने स्पन्दसूत्रकी एक वृत्ति भी बनायी थी। सैवदर्शन देखो।

कल्लत्व (सं० क्लो०) कल्लस्य भावः, कल्ल-त्व। १ स्वरभेद, आवाज़का फ़र्क़। २ वाधिर्य, बहरापन, सुन न पड़नेकी हालत।

कल्लन—दक्षिणापथकी एक असभ्य कृष्णवर्ण जाति। तामिल, तैलगु (तिलङ्गी) प्रभृति भाषाके अनुसार 'कल्लन'का एक अर्थ चोर या डाकू है। सम्भवतः पूर्वकालमें छिपकर माल मारने डाका डालनेसे यह नाम निकला होगा। मदुराराज्यमें इस जातिका वास है। किसी समय कल्लन लोग कल्लानोंसे कुछ स्थान छीन स्वाधीन भावमें रहते थे। अंगरेजोंके आनेसे पहले यह जाति मदुरा और निकटस्थ राज्यमें बड़ा उत्पात उठाती थी। १८०१ ई०को मदुरा अंगरेजोंके अधिकारमें आयी। फिर इन लोगोंका वह प्रभाव और दौरात्म्य घटने लगा। फिर भी उद्धत स्वभाव, अतुल साहस और शरीरका तेज आज भी वैसा ही बना है।

कल्लन जातिके विवाहकी पद्धति अति चमत्कारक है। एक रमणी अनायास दो-से दश तक पति ग्रहण कर सकती है। किन्तु एक एक जोड़े पति रखना पड़ता है; जोड़ा फूटनेसे काम बिगड़ता है। इनके सन्तान अपनेको छह, आठ या दश लोगोंके नहीं—आठ और दो, छह और दो या चार और दोके पुत्र बताते हैं। अनेक पिता रहते भी कोई गड़बड़ नहीं होती। कारण सन्तान सबके समस्नेह पाते हैं। फिर सबको इन्हें पालना पड़ता है।

कल्लन अपने पुत्रोंको शैशवकालसे ही चौर्यवृत्ति सिखाते हैं। इस कार्यमें जो जितना परिपक्व पड़ता, उसे स्वजातिके निकट उतना ही आदर और सम्मान मिलता है। यह शिवकी पूजा करते हैं। किसीके मरनेपर शव जलाया या भूमिमें गड़ाया जाता है।

कल्लमूक (सं० वि०) वधिर एवं मूक, जो कह सुन न सकता हो।

कल्लर (हिं० पु०) १ कल्ल, खारी मट्टी। २ रेह, नोना। ३ अनुर्वरा भूमि, ऊसर।

कल्ला (हिं० पु०) १ अङ्कुर, किल्ला। २ कुल्हर, कुर्आं, गड्ढा। यह भीट पर पान सींचनेको खोदा जाता है। ३ कपोलके अभ्यन्तरका अंश, जबड़ा। ४ विवाद, झगड़ा। ५ शरीरका स्थान विशेष, जिस्मका एक हिस्सा। जबड़ेके नीचे गलेतक कल्ला रहता है।

कल्लांच ((हिं० वि०) १ दुष्ट, लुच्चा। २ दरिद्र, कङ्गाल। यह तुर्कीके 'कल्लाच' शब्दका रूपान्तर मात्र है।

कल्लातोड़ (हिं० वि०) प्रबल, ज़ोरावर, जो बराबरी कर सकता हो।

कल्लादराज़ (फा० वि०) कर्कशवादी, मुंहज़ोर, कड़ी बात कहनेवाला।

कल्लादराज़ी (फा० स्त्री०) कठोर वचन, मुंहज़ोरी, कड़ी बात।

कल्लाना (हि० क्रि०) खुजलाने अथवा जलजानेसे चर्ममें असह्य पीड़ा होना, चमड़ा जलना।

कल्लि (सं० अव्य०) आगामी दिवसको, कल।

कल्लिनाथ (सं० पु०) एक प्रसिद्ध सङ्गीतशास्त्ररचयिता।

कल्लू (हिं० पु०) कृष्णवर्णविशिष्ट, काले रंगवाला। यह शब्द प्रायः काले आदमियों या कुत्तोंका नाम होता है।

कल्लोल (सं० पु०) कल्ल वाहुलकात् ओलच्। १ महा तरङ्ग, बड़ा लहर। २ हर्ष, ख़ुशी। ३ शत्रु, दुश्मन। (वि०) ४ शत्रुता रखनेवाला, जो दुश्मनी मानता है।

कल्लोलित (सं० वि०) कल्लोलोऽस्य संजातः, कल्लोल-इतच्। तरङ्गयुक्त, लहर लेनेवाला।

कल्लोलिनी (सं० स्त्री०) कल्लोलोऽस्त्यस्याः, कल्लोल-इनि-ङीप्। नदी, दरया।

कल्लोलिनीवल्लभ (सं० पु०) कल्लोलिनीका नदीका वल्लभ पति। समुद्र, सागर।

कल्ल (सं० पु०) द्वारप्रान्त विशेष, दरवाजेका एक किनारा। वास्तु वा भवन निर्माणविद्याके अनुसार यह तीक्ष्णाग्र रहता है।

कल्ह (त्रि०) कल्हि देखो।

कल्हक (त्रि० स्त्री) पक्षिविशेष, एक चिड़िया। यह कपोतके समान होती है। इसका वर्ण रक्तकी भांति लोहित होता है। फिर कण्ठ कृष्णवर्ण, चक्षु श्वेत और पद रक्तवर्ण रहते हैं।

कल्हण (सं० पु०) राजतरङ्गिणी नामक प्रसिद्ध संस्कृत इतिहासके रचयिता। यह काश्मीरराजके प्रधान राजमन्त्री चम्पक प्रभुके पुत्र रहे। राजतरङ्गिणीसे समझते हैं कि कल्हण ४२२४ कलिवर्ष वा लौकिक २४ अब्द और १०७० शक (११४८ ई०)को जीवित थे।* इनकी राजतरङ्गिणी भारतवासियोंके आदरकी बड़ी वस्तु और भारतीय पुरातत्त्वविदोंका अमूल्य धन है। पहले साधारण विश्वास करते, कि भारतवासी अपने प्राचीन इतिहास लिखनेको आवश्यक न समझते थे। कल्हणने यह अपवाद मिटा दिया है। इन्होंने महाराज युधिष्ठिरके समकालीन गोनन्दसे आरम्भकर अपने समसामयिक सिंहदेवके राज्यकाल पर्यन्त काश्मीरका इतिहास लिखा। इनकी राजतरङ्गिणी पढ़नेसे काश्मीरके प्राचीन राजाओंकी वंशावली, चरित्र जीवनी, राज्यकालकी स्थिरता और काश्मीर तथा उसके निकटस्थ जनपदकी अवस्था समझ पड़ती है। राजतरङ्गिणीकी रचना-प्रणाली भी अधिक कवित्व और शब्दलालित्यसे पूर्ण है।

कल्हर कह्लार देखो।

कल्हरना (हिं० क्रि०) १ ईषत् तेल वा घृतमें भूनना, थोड़े घी या तेलसे कड़ाहीमें सिंकना। २ दुःखसे चढ़ने न पाना, पड़े पड़े चिल्लाना।

कल्हार (सं० स्त्री०) कुमुद कमोदिनी, कोकाबेली।

कल्हराना (हिं० क्रि०) ईषत् घृत वा तेलमें तलना, थोड़े घी या तेलमें गर्म कड़ाहीमें किसी चीजको उलटना पुलटना।

कल्होरा—सिन्धु प्रदेशकी एक मुसलमान जाति। यह लोग अपनेको अब्बासका वंशधर बताते हैं।

कवक (सं० पु० क्ली०) कवते आच्छादयति विस्तारयति वा कव अच्, संज्ञायां कन्। १ छत्राक, कुकुर मुत्ता। यह अखाद्य समझा जाता है। 'लशुनं गृञ्जनञ्चैव पलाण्डुं कवकानि च।' (मनु) लहसुन, गाजर, प्याज और कुकुरमुत्ता खाना न चाहिये। २ कवल ग्रास, लुकमा कौर।

कवच (सं० पु० क्ली०) कु अच्। "अपवीतस्त्वमसंदिग्धं मन्दं" उण् ५।२। अथवा कं देहं वञ्चति विपक्षा आदि वञ्चयिता रक्षति, क वञ्च अच्; कं वातं वञ्चति वा। १ सन्नाह, जिरह। इसका संस्कृत पर्याय—तनुत्र वर्म, दंशन उरच्छद, कङ्कटक जगर, जागर अजगर कटक, योग, सन्नाह और कवच है।

स्वर्ण, रौप्य, ताम्र और लौह कई धातुसे कवच बनता है। इसको छोड़ काठ, चर्म और वस्त्र द्वारा भी कवच प्रस्तुत होता है। इन द्रव्योंमें उत्तरोत्तर द्रव्यसे बना कवच अधिक सुखयुक्त है। ऋग्वेद पढ़नेसे समझ पड़ता है, कि वैदिक कालमें स्वर्णनिर्मित कवच ही बनता था। शरीरका आवरण, बहु दृढ़ और दुर्भेद्य कवच साधारण होता है। किन्तु अतिशय भार वा सूक्ष्म और सहजभेद्य कवच निकृष्ट है। कवचको श्वेत पीत रक्त और कृष्ण कई प्रकार रंगते हैं। आजकल युद्धमें प्रायः कवच पहना नहीं जाता। फिर भी गत युरोपीय युद्धमें इसकी उपयोगिता प्रदर्शित हुयी थी।

२ शरीररक्षाके लिये देवताका एक मन्त्र। इसके मन्त्रविशेषसे इष्ट देवताकी पूजा कर कवच पढ़ते हैं। फिर भूर्जपत्र पर कवचको लिख और स्वर्ण रौप्य वा ताम्रसे मढ़ कण्ठ अथवा दक्षिण बाहुमें धारण करते हैं। तान्त्रिक मन्त्र 'हुं' (हुङ्कार)को भी कवच कहते हैं।

---

* "लौकिकेऽब्दे चतुर्विंशे शककालस्य साम्प्रतम्।
सप्तत्याभ्यधिकं यातं सहस्रं परिवत्सराः।" (राजतरङ्गिणी १।५२)

१ पर्पटक, दमन पापड़ा। ३ मर्दमाणक्क, पाक-

रका पेड़। ५ त्वक्, दारचीनी। ६ भूर्जपत्र, भोजपत्र। ७ नन्दीवृक्ष, बेलिया पीपर। ८ डिण्डिमवाद्य, डङ्का, नकारा। ९ प्राचीन जातिभेद। कौच देखो।

कवचपत्र (सं० क्ली०) कवचस्येवनसाधनं पत्रमिव पत्रं वल्कलं यस्य, बहुव्री०। भूर्जपत्र, भोजपत्र।

कवचपाश (वै० पु०) कवच व वर्मबन्ध, जिरह बांधनेका पट्टा। (मद्गल हिता)

कवचहर (सं०पु०) कवचं हरति येन वयसा, कवच-हृ-अच्। १ कवच हरणका उद्यम करनेके उपयुक्त वयस्क बालक, लड़का, बच्चा। (त्रि०) २ कवचधारी, जिरह पहननेवाला। ३ कवचका यन्त्र धारण करनेवाला, जो तावीज़ पहने हो। ४ कूर्पासकधारी, मिरज़ाई पहने हुवा।

कवचित (संज्ञे त्रि०) कवचं सञ्जातमस्य, कवच-इतच्। कवचयुक्त, ज़िरह पहने हुवा।

कवची (सं० त्रि०) कवचं अस्त्यस्य, कवच-इनि। १ वर्मयुक्त, जिरह पहने हुवा। (पु०) २ धृतराष्ट्रके एक पुत्र। (महाभारत १।११०।११) शिव, महादेव।

कवचीयन्त्र (सं० क्ली०) औषधके पाकार्थ यन्त्रविशेष, दवा पकानेका एक बासन। किसी दृढ़ काचकूपी (शीशी)का यह बनता है। कूपी न तो अतिह्रस्व और अतिदीर्घ रहना चाहिये। पहले इसे कई-मात्र (भोगे) वस्त्रसे अच्छीतरह लपेट पीछे मृद् मृत्तिकाका लेप चढ़ाते हैं। फिर धूममें कूपी सुखायी जाती है। अन्तको इसमें औषध रख मुख बन्द कर देते हैं। इसी प्रकार कठिन और दृढ़ अग्निमें पक सकनेवाली कूपीका नाम कवचीयन्त्र है। (वैद्यक)

कवटी (सं० स्त्री०) कौति शब्दायते, कु-अटन् ङीप्। कवाट, किवाड़ी।

कवड (सं० पु०) केन जलेन वलते चलति, क-वल-अच् लडयोरैक्यम्। १ ग्रास, लुकमा, कौर। २ गण्डूष, कुल्ला।

कवडग्रह (सं० पु०) कर्ष, २ तोलेकी तौल।

कवती (सं० स्त्री०) कशब्द अस्त्यस्य, क-मतुप-ङीप् मस्य वः। 'कयानश्चित्र' इत्यादि ऋक्-विशेष, जो प्रत्येक 'क' से शुरू हो।

कवत्न (वै० त्रि०) १ स्वार्थपर, मतलबी। २ मन्द-कर्म, बुरा काम करनेवाला।

"पृणन्ति न देवान्, कवत्नवः।" (ऋक् ७।३२।९)

कवन (सं० क्ली०) कौति शब्दायते, कु-ल्युट्। १ जल, पानी। (पु०) २ मनुके एक पुत्र।

कवन (हिं०) कौन देखो।

कवन्तक (सं० पु०) व्यक्तिविशेष, किसी आदमीका नाम। पाणिनिने इनका उल्लेख किया है।

कवन्ध कबन्ध देखो।

कवपथ (सं० पु०) कु पथ, कोः कवादेशः। पथि च छन्दसि। पा ६।३।१०८। मन्दपथ, बुरा रास्ता।

कवयि, कवयी देखो।

कवयी (सं० स्त्री०) कात् जलात् वयते गच्छति, क-वय-इन् ङीप्। मत्स्यविशेष, कुम्भा मछली। इसका संस्कृत पर्याय—कविकापुच्छ और चक्रपृष्ठी है। (Coius coioius) अन्यान्य मत्स्यकी अपेक्षा यह जलशून्य स्थानमें अधिक क्षण जी सकती है। इसके तालवृक्षपर चढ़नेका प्रवाद सुन पड़ता है। वस्तुतः यह कण्टकमय कण्ठके सहारे उच्चस्थान पर पहुंच जाती है। फिर भूमिपर भी कवयी बहुत दूर तक चला करती है। बङ्गालके यशोर और फरिदपुर ज़िलेमें यह वृहदाकार देख पड़ती है। वैद्यक मतसे कवयी मधुर, स्निग्ध, कषाय, रुच्य, बल्य, ईषत्-पित्तकर और वातघ्न होती है।

कवर (सं० पु०-स्त्री०) के मस्तके वरं शोभमानत्वात् श्रेष्ठम्। १ केशपाश, जुल्फ़। २ कबरी, वनतुलसी। कु-अरम्। कौतन्। उण्। ४।१३१। ३ पाठक, व्याख्यान दाता। ४ लवण, नमक। ५ अम्ल, खटाई। (त्रि०) ६ सम्पृक्त, गुच्छेदार। ७ खचित, जड़ाऊ। ८ चित्रवर्ण, चितकबरा।

"दृष्टे बलिर्ष्टिकम्पादमलामधम्पात्।
व्याकीर्ण मलहवर्ग कवरीं तरक्षा. पू" (माघ ४।१९)

कवर (हिं०) कौर देखो।

कवर (अं० पु०=Cover) १ आच्छादन, पोशिश, गिलाफ़। २ कोष, ढकना। ३ लिफ़ाफ़ा, चिट्ठी। ४ पट्ठा, दफ़्ती।

कबरकी (स॰ स्त्री॰) कबरं केशपाशं किरति विकिरति यद्वा कबर-कृ-ङीप्। कारागारवासको, जो कैदमें पड़ी हुए औरत। अपने केशपाशको बांध न सकनेसे कारागारमें पड़ी स्त्री कबरकी कहाती है।

कबरना चौरना देखो।

कबरपुच्छी (स॰ स्त्री॰) कबरं चित्रवर्णं पुच्छं यस्याः, बहुव्री॰। १ मयूरी, मोरनी। २ विचित्रपुच्छविशिष्टा चितकबरी पुच्छवाली (चिड़िया वगैरह)

कबरा कबरी देखो।

कबरी (स॰ स्त्री॰) क शिरः वृणोति आच्छादयति, क-वृ-अच् ङीप् अथवा कु-चरन् ङीप्। १ केशविन्यास जूड़ा। इसका संस्कृत पर्याय—केशवेश, कबर और केशपक्ष है। २ बर्बरा, बबई। ३ बनतुलसी। ४ कर्पूरक वृक्ष, कपूरका पेड़। ५ राज करवीर, लाल कनेर। ६ ममरसिका। ७ चित्रपत्री, सौंफकी पत्ती।

कबरीक (स॰ पु॰) सुगन्ध पत्रक विशेष, एक पेड़। इसकी पत्ती खुशबूदार होती है।

कबरीकना (स॰ स्त्री॰) ममरसिका।

कबरीकूटक (सं॰ पु॰) कबरी, बबई।

कबरीभर, कबरीभार देखो।

कबरीभार (स॰ पु॰) कबर्याः भारः आधिक्यम् ६-तत्। १ खूब कबरे, बड़ो जूड़ा। २ कबरीका भारत, जूड़ेका बोझ।

कबरीभृत् (स॰ त्रि॰) कबरीं बिभर्ति कबरी-भृ-क्विप्। कबरीधारी, जूड़ेवाला।

कवर्ग (स॰ पु॰) ककारादि पञ्च वर्णसमूह कसे ङ तक पांच अक्षर। क ख ग घ और ङ पांचो अक्षरोंका नाम कवर्ग है; यह कण्ठ स्थानसे उच्चारित होता है।

कवर्गीय (स॰ त्रि॰) कवर्गात् भवः, कवर्ग-छ। कवर्गसे उत्पन्न जो क, ख, ग घ और ङ अक्षरसे निकला हो।

कवर्धा—मध्यप्रदेशके बिलासपुर जिलेका एक क्षुद्र राज्य। यह अक्षा॰ २१ ३१ से २२ २८´ उ॰ और देशा॰ ८१ १ से ८१ ३०´ पू॰ तक अवस्थित है। क्षेत्रफल ८८० वर्ग मील लगता है। कोई ३५८ ग्राम इस राज्यके अन्तर्गत है।

राज्यके पश्चिम भागमें विन्ध्यगिरिश्रेणी है। राज्यमें यह स्थान उत्कृष्ट समझा जाता है। यहां रुई, धान और गेहूं की उपज अच्छी है। जङ्गलमें शाल, महुवा और कई तरहका पेड़ पाते हैं।

राज्यका प्रधान नगर कवर्धा। अक्षा॰ २२ १´ उ॰ और देशा॰ ८१ १५´ पू॰ पर बसा है। कार्पास और अनाजका व्यवसाय भी प्रधान है। कबीरपन्थी सम्प्रदायके प्रधान यहां रहते हैं।

कवल (स॰ पु॰) केन जलेन बलते चलति क-वल-अच्। १ ग्रास कौर।

"अश्नन् कवलमात्रमपि ..." (रामायण २।३१।८)

२ गण्डूष अञ्जल, कुल्ली। जलका उतना मात्रा जितना कि मुखमें रह जाता है। गण्डूष देखो। ३ चिविल्लिवृक्ष एक मछली।

कवल (हिं॰ पु॰) १ कौर, किनारा। २ पक्षिविशेष, एक चिड़िया। ३ अश्व विशेष, किसी किस्मका घोड़ा। ४ कविता कौल।

कवलग्रह (स॰ पु॰) कर्षपरिमाण कोई एक तोलेकी तौल। २ कवलका ग्रहण, कुल्ली देनेका काम। यह चार प्रकारका होता है—स्नेही, प्रसादी, शोधी और रोपण। वातमें स्निग्धोष्ण द्रव्यके स्नेही पित्तमें स्वादु शीत द्रव्यसे प्रसादी कफमें कटु-अम्ल-लवण-रस उष्ण द्रव्यसे शोधी और व्रणमें कषाय तिक्त मधुर-कटु उष्ण द्रव्यसे रोपण ग्रहण किया जाता है। (सुश्रु॰) कवलग्रह करनेसे भोजन अच्छा लगता मुख चलता और भ्रम, तोष अरुचि तथा दन्तशालका दोष मिटता है। (वैद्यकनिघण्टु)

कवलग्राह (स॰ पु॰) कवलस्य ग्राहः, ६-तत्। १ कवलयोग्य परिमाण विशेष कुल्लीके लायक एक माप।

कवलिका (स॰ स्त्री॰) व्रणबन्धनार्थं उदुम्बरादिपत्रजात पृथुक बांधनेके लिये गूलर वगैरहकी छाल।

कवलित (स॰ त्रि॰) कवलं करोति, कवल-णिच्

कर्मणि क्त। १ भुक्त, खाया हुवा। २ ग्रस्त, निगला हुवा। ३ अधिकृत, किया हुवा।

कवली (सं॰ स्त्री॰) वदरी वृक्ष, वेरी।

कवलीकृत (सं॰ त्रि॰) अकवलं कवलं कृतम्, कवल-च्वि-कृ-क्त। कवलित, कौर बनाकर खाया हुवा।

कवष् (वै॰ त्रि॰) कु-असुन् छान्दसत्वात् षत्वम्। छिद्रयुक्त, जिसमें छेद रहे।

कवष (वै॰ त्रि॰) कु-अषच्। १ सच्छिद्र (कपाटादि) छेददार (किवाड़ा वगैरह)। (पु॰) २ प्राचीन ऋषि-विशेष। इनके पिताका नाम इलूष था। माता दासी रहीं। ऋक्संहिताके दशम मण्डलमें इनके बनाये मन्त्र विद्यमान हैं। एक समय सारस्वत प्रदेशमें कतिपय ऋषि यज्ञ करते थे। इन्होंने उनकी पंक्तिमें बैठ भोजन करना चाहा। किन्तु उन्होंने इन्हें दासीका पुत्र बता निकाला था। इससे यह क्रुद्ध हो वहांसे चल दिये। फिर इन्होंने तपस्या कर अनेक मन्त्र बनाये थे। उक्त मन्त्रोंको सुन देवगण प्रसन्न हुये। इससे ऋषि प्रार्थना करने लगे और यह उनकी पंक्तिमें लिये गये। (ऐतरेयब्राह्मण) ३ धर्मशास्त्रके रचयिता।

कवस (सं॰पु॰) कु-असु। सन्नाह, जिरह। २ कण्टक गुल्म, कंटीला झाड़।

कवाग्नि (सं॰ पु॰) कु अल्पो अग्निः, कोः कवादेशः। अल्प अग्नि, थोड़ी आग।

कवाट (सं॰ क्ली॰) कलं शब्दं अटति, कु भावे अप्-अट् अच्; कं वातं वटति वारयति वा, क वट्-अण् कपाट, शब्द करने या वायुको रोक रखनेवाला किवाड़।

"मोक्षद्वारकवाटपाटनकरी काशीपुराधीश्वरी।" (अन्नदास्तव)

कवाटक (सं॰ क्ली॰) कवाट स्वार्थे कन्। कवाट, किवाड़।

कवाटघ्न (सं॰ पु॰) कवाटं हन्ति शक्त्या, कवाट-हन्-टक्। शक्तौ हस्तिकवाटयोः। पा ३।२।५४। तस्कर विशेष, किवाड़तोड़ डालनेवाला डाकू।

कवाटचक्र, कवाटवक्र देखो।

कवाटवक्र (सं॰ क्ली॰) कवाटं वक्रं यस्मात्, ५-तत्। स्वनामख्यात वृक्ष, एक पेड़।

कवाटी (सं॰ स्त्री॰) कवाट अल्पार्थे ङीप्। क्षुद्र कपाट, किवाड़ी।

कवाम (अ॰ पु॰) १ पक्कगाढ रस विशेष, पकाकर शहद-जैसा बनाया हुवा रस, किमाम। २ शीरा, चाशनी।

क़वायद (अ॰ पु॰) १ व्यवस्थायें, तरीके। २ व्याकरणके नियम। ३ लड़ाईकी तालीमके तरीके। सेनामें योद्धाओंकी श्रेणियां अग्रभाग एवं पश्चाद् भागमें नियमानुसार लगायी जाती है। सेनाध्यक्ष शिक्षाके शब्द उच्चारण करते हैं। साङ्केतिक वाद्य प्रभृति भी बजते हैं। इस पर सैनिक अपना कार्य करने लगते है। उनके अग्रगमन, पश्चात्वलन, मुद्रापरिवर्तन, शस्त्र सज्जीकरण, उत्तोलन, प्रहार, आक्रमण, रक्षा, शयन और उपवेशन आदिका नाम क़वायद है।

यह शब्द 'क़ायदे'का बहुवचन है। हिन्दीमें इसे स्त्रीलिङ्ग भी मानते हैं।

कवार (सं॰ पु॰ क्ली॰) कं जलं आश्रयत्वेन वृणोति, क-वृ-अण्। १ पद्म, कंवल। २ पक्षिविशेष, एक चिड़िया। इसका चञ्चु अतिदीर्घ होता है।

कवारि (सं॰ पु॰) कुत्सितो ऽरिः, कोः कवादेशः। कुत्सित शत्रु, पाजी दुश्मन।

कवासख (सं॰ त्रि॰) कुत्सितस्य सखा, कुसखा-टच्, कोः कवादेशः। कुत्सित सहायविशिष्ट, खुदगर्ज़।

कवि (सं॰ पु॰) कवते श्लोकान् ग्रथते वर्णयति वा, कव्-इन्। १ कविताशान प्रभृति रचयिता, शायर, छन्द बनानेवाला। २ वाल्मीकि। ३ शुक्र। ४ पण्डित। ५ ऋषिविशेष। यह भृगुके पुत्र और शुक्राचार्यके पिता थे। ६ सूर्य, सूरज। ७ कल्कि देवके ज्येष्ठ भ्राता। ८ ब्रह्मा। ९ चाक्षुषमनु और वैराज प्रजापतिकी कन्याके एक पुत्र।

"कन्यायां भरतश्रेष्ठ वैराजस्य प्रजापतेः।
ऊरु' पूरु' शतद्युम्नस्तपस्वी सत्यवाक् कवि.॥" (हरिवंश २ अ॰)

(त्रि॰) १० क्रान्तदर्शी, औलिया। ११ मेधावी, अक़्लमन्द। (सं॰ स्त्री॰) कु-अच्-इ। अव १॰। उप ४।१३८। १२ खलीन, लगाम।

कवि-यवद्वीपकी प्राचीन भाषा। ब्रह्म, श्याम,-

तेगू प्रभृतिमें जैसे पालि भाषा और प्रौढ़भाषाओंके शिला लिपियोंमें खोदित देख पड़ते, वैसेही भारतमें न रहती भी बालि आदि द्वीपोंके शिलालिपियों और धर्मपुस्तकों में यह लिखा करती है। यवद्वीपमें कवि शब्दका अर्थ रचना या आख्यायिका बनाते हैं। सम्भवतः प्राचीनकालको इस भाषामें रचना और आख्यायिका बननेसे ही 'कवि' नाम पड़ा है। फिर कितनों ही के अनुमानमें संस्कृत काव्य शब्दसे 'कवि' की उत्पत्ति है।

किसी किसी भाषातत्त्वविद्‌के मतमें यह यवद्वीपको देशीय भाषा नहीं, किसी समयमें भिन्न देशसे आकर यहां चली होगी। वस्तुतः भारतीय दक्षिण देशकी भाषाओंमें इसकी अनेक मेल देख पड़ते हैं। किन्तु यवद्वीपको यवानीभाषासे यह अधिक मिलती है। इसलिये कवि भाषा भिन्न देशीय समझी जा नहीं सकती। पुरानी हिन्दीसे जैसे नयी हिन्दी कम मिलती, वैसे ही प्राचीन कविभाषासे भी नवीन यवानी पृथक् लगती है। फिर प्राचीन हिन्दीके व्यवहारानुसार जिस प्रकार अनेक अप्रचलित शब्द सहजमें लोगोंकी समझ नहीं पड़ते, उसी प्रकार कवि भाषाके अनेक शब्द वर्तमान यवद्वीपके प्रधान प्रधान पण्डितोंको छोड़ साधारणके लिये कठिन ठहरते हैं। यवद्वीपका प्राचीन इतिहास जाननेको कवि भाषा सीखना चाहिये। यवद्वीपमें मुसलमानोंके आनेसे पहले बौद्धों और हिन्दुओंका राज्य था। उसका विवरण इस भाषाके लिखित प्राचीन शिलालिपियोंमें मिलता है। धर्म और जातिके कर्मयत्न अतीत रामायण, महाभारत, ब्रह्माण्डपुराण प्रभृति प्राचीन संस्कृत पुस्तक कविभाषामें अनुवादित हुयी हैं। इस भाषाका लिखित 'ब्रातयुद' अर्थात् भारतयुद्ध नामक ग्रन्थ अति प्रधान है। इस ग्रन्थको दया नामक मदियोय राजा जयबयके आदेशसे आम्पुसदा नामक किसी व्यक्तिने बनाया था। जयबयको कुरुसेनापति अश्वको कथा बहुत अच्छी लगती थी। उन्हीं की प्रसन्नताके लिये कुरुपाण्डवका युद्ध एकमाल कर ११९८ शकमें "ब्रातयुद" (भारतयुद्ध) लिखा गया।

कविक (स० स्त्री०) कवि स्वार्थे कन्। १ कवीन, लगाम। २ कवि शायर।

कविक (हिं० पु०) वृक्षविशेष, एक पेड़। यह प्रायः प्राचीनोंमें उपजता है। फल गोल और सरस होते हैं। आज कल यह वङ्गदेश, दक्षिणभारत और ब्रह्मदेशमें भी लगाया जाता है। कविकका अपर नाम मकड़ा आमरूल है।

कविकङ्कण (मुकुन्दराम चक्रवर्ती)—बङ्गालके एक प्रसिद्ध और प्रधान प्राचीन कवि, चण्डीमङ्गलप्रणेता।

कविकण्ठहार (स० पु०) कवीनां कण्ठहार इव आदरणीय इत्यर्थः। १ कवियोंका उपाधि विशेष, शायरोंका एक खिताब। २ सुप्रसिद्ध अलङ्कार ग्रन्थ।

कविकर्णपूर प्रसिद्ध वैष्णव ग्रन्थकार। यह काञ्चनपल्ली (कांचड़ापाड़ा) ग्रामवासी परम वैष्णव शिवानन्द सेनके पुत्र थे। इनका प्रकृत नाम परमानन्द रहा। इन्होंने संस्कृत भाषामें चैतन्यचरित महाकाव्य आनन्दचम्पू और चैतन्यचन्द्रोदय नाटक प्रणयन किया। चैतन्य देखो।

कविका (सं० स्त्री०) कवि स्वार्थे कन् टाप्। १ कवीन, लगाम। २ कविका पुष्प वृक्ष, एक फूलदार पेड़। ३ मत्स्यविशेष, एक मछली। केवी देखो।

कविक्रतु (वै० त्रि०) ज्ञानवान् समझदार।

कविचन्द्र, १ कविकर्णपूरके पुत्र और कविकण्ठकके पिता। यह एक प्रसिद्ध पण्डित थे। इनके बनाये काव्य चन्द्रिका, धातुचन्द्रिका, रत्नावली, रामचन्द्रचम्पू, शान्तिचन्द्रिका, सारमञ्जरी और रूपावली नामक ग्रन्थ विद्यमान हैं। २ बङ्गालकी भाषा रामायण भागवतादि रचयिता एक प्राचीन कवि।

कविच्छद (स० त्रि०) कवि शब्द छद् आच्छादन बहुव्री०। पण्डित समझदार।

कविज्येष्ठ (सं० पु०) सब कवियोंसे बड़े वाल्मीकि।

कविजुष (स० पु०) पक्षिविशेष, एक चिड़िया।

कवितम (स० त्रि०) अयमेषामतिशयेन कविः, कवि तमप्। अतिशय ज्ञानवान्, निहायत समझदार।

कवितर (स० त्रि०) अपेक्षाकृत बुद्धिमान्, ज्यादा समझदार।

कविता (सं० स्त्री०) कवेर्भावः, कवि-तल्-टाप्। काव्य, शायरी, सुखनगोई।

कवितायी (हिं०) कविता देखो।

कवितावेदी (सं० त्रि०) कवितां वेत्ति, कविता-विद्-णिनि। कविताज्ञ, शायरी समझनेवाला, जो कवितायी जानता हो।

कविद्र (सं० त्रि०) ज्ञानवान्, अक्लमन्द।

कवित्त (हिं० पु०) छन्दोविशेष। यह दण्डकके अन्तर्गत है। इसमें चार पाद और प्रत्येक पादमें इकतीस-इकतीस अक्षर लगाते हैं। यह मनहरन और घनाक्षरी भी कहाता है। कवित्तका अन्तिम वर्ण गुरु रहता, अन्य वर्णोंकेलिये गुरु लघुका कोई नियम नहीं चलता। उदाहरण नीचे लिखा है,—

"तालन पै ताल पै तमालन पै मालन पै, वृन्दावन वीथिन बिहार बंशीवट पै। कहै पदमाकर अखण्ड रासमण्डल पै, मण्डित उमण्ड महा कालिंदीके तट पै॥ छत पर छान पर छज्जन अटान पर ललित लतान पर लाड़िलीकी लट पै। आयी भल छायी यह शरद जोन्हाई जेहि पायी छवि आज ही कन्हाईके मुकट पै॥" (पद्माकर)

कवित्थ (सं० पु०) कपित्थ वृक्ष, कैथका पेड़।

कवित्व (सं० क्ली०) कवेर्भावः, कवि-त्व। १ कविता रचनाकी शक्ति, शायरी करनेका माद्दा। २ ज्ञान, समझदारी।

कवित्वन (वै० क्ली०) १ स्तुति, तारीफ़। २ ज्ञान, समझ।

कविनासा (हिं०) कर्मनाशा देखो।

कविपुत्र (सं० पु०) कवेः भृगुपुत्रस्य पुत्रः, ६-तत्। १ शुक्राचार्य। २ भार्गव ऋषि।

"भृगोः पुत्रः कविर्विद्वान्।" (महाभारत, आदि ६६ अ०)

कविप्रशस्त (वै० त्रि०) कवियों द्वारा अत्यन्त प्रशंसित, शायरोंसे बड़ा नाम पाये हुवा।

कविभूषण (सं० पु०) कवीनां भूषणमिव। १ उपाधि-विशेष, एक खिताब। २ कविचन्द्रके पुत्र।

कविय (सं० क्ली०) कं सुखं भजति, क-भज-क, भोजस्थाने वि आदेशः। खलीन, लगाम।

कविरञ्जन, वङ्गालके एक विख्यात शाक्त कवि। रामप्रसाद देखो।

कविरथ (सं० पु०) एक राजा। इनके पिताका नाम चित्ररथ था।

कविराज (सं० पु०) कवीनां राजा श्रेष्ठः, कवि-राजन्-टच्। १ कविश्रेष्ठ, बड़ा शायर। २ भाट, कवित्त कहनेवाली एक जाति। ३ वङ्गदेशीय वैद्योंका उपाधि।

कविराज, एक कवि। इन्होंने 'राघवपाण्डवीय' काव्य बनाया था। पाश्चात्य मतसे यह ई० १०म शताब्दमें विद्यमान रहे।

कविराजी (हिं० स्त्री०) १ वङ्गदेशीय वैद्यक चिकित्सा, हकीमी। (त्रि०) २ कविराजसम्बन्धीय, हकीमके मुताल्लिक।

कविराजी, एक उपासक सम्प्रदाय। रूप कविराजने यह सम्प्रदाय चलाया था। गुरुने रूपसे शङ्खधारिणी रम-णीके हाथका भोजन ग्रहण करनेको रोका था। इसीसे उन्होंने एक दिन शङ्खधारिणी गुरुपत्नीके हाथसे भोजन न किया। गुरुने यह सुनकर उनकी तीन कण्ठियोंमें दो कण्ठियो छीन ली। फिर रूप बची हुयी एक कण्ठी लेकर भागे थे। उन्हींसेमें अनेक वैष्णव उनके मतानुयायी हुये। इसीसे लोग इस सम्प्रदायवालों को कविराजी कहते हैं। कविराजी अन्य वैष्णवोंके घरमें न तो विवाह और न किसी दूसरेका बनाया भोजन करते हैं। यह प्रायः सभी सदाचारी होते हैं। कोई कोई कविराजियोंको ही 'अष्टदायक' कहते हैं।

कविराम, दिग्विजयप्रकाश नामक संस्कृत ग्रन्थके रचयिता। कह नहीं सकते, यह किस राजाकी सभाके पण्डित थे। इनका ग्रन्थ पढ़नेसे समझते, कि कविराम यशोरवाले राजा प्रतापादित्यके समसामयिक रहे। कविरामके दिग्विजयप्रकाशमें भारतवर्षका तत्-कालीन भूवृत्तान्त और प्रवाद लिखा है।

२ विहारमें डोम जातिके चाईको भी कविराम कहते हैं।

कविरामायण (सं० पु०) कविना कवितया कविषु काव्येषु वा रामः अयनं आश्रयो यस्य, बहुव्री०। कवितासे रामका आश्रय रखनेवाले वाल्मीकि मुनि।

कविराय (हिं० पु०) कविराज, भाट।

कविल (सं० त्रि०) कु कव वा वर्णने इलच्। १ स्तोता, तारीफ़ करनेवाला। २ शब्दकारक, आवाज़ देनेवाला।

कविलास (हिं० पु०) १ कैलास, महादेवके रहनेका पहाड़। २ स्वर्ग, बिहिश्त।

कविलासिका (सं० स्त्री०) कं सुखं विलासयति प्रकाशयति, क-वि-लस णिच्-ण्वुल् टाप् अत इत्वम्। वीणाविशेष, किसी किस्मका तम्बूर।

कविवर (सं० त्रि०) कविषु वर: श्रेष्ठ:। कविश्रेष्ठ, शायरोंमें बड़ा।

कविवल्लभ (सं० पु०) काव्यादर्श या कालनिर्णय नामक एक तिथिग्रन्थके रचयिता। इनका अपर नाम साहित्यधुरिका। विशेषकर आचार्योंमें इन्हें शिक्षा दी थी।

कविवृध् (वै० त्रि०) कवियोंको बढ़ानेवाला।

कविवेदी (सं० त्रि०) कविं कवित्वं वेत्ति, कवि-विद्-णिनि। १ काव्यवेत्ता, शायरी समझनेवाला। २ कवि, शायर।

कविशस्त (सं० त्रि०) कविषु शस्त: प्रशस्त:, ७-तत्। कवियोंमें विख्यात, शायरोंमें मशहूर।

कविशेखर (सं० पु०) १ कादम्बरीकथासार नामक संस्कृत ग्रन्थके प्रणेता। २ सङ्गीत तालविशेष।

कवी (सं० स्त्री०) कवि-ङीष्। कवीय, लगाम।

कवीठ (हिं० पु०) कपीठ, कैथा।

कवीन्द्र आचार्य (सरस्वती) कविचन्द्रोदय और पद चन्द्रिका नामक संस्कृत ग्रन्थके रचयिता।

कवीन्द्रनारायण (शर्मा) पद्यामृतचन्द्रिका और शिवका माहात्म्य नामक संस्कृत ग्रन्थके रचयिता। इन्होंने उक्त दोनों ग्रन्थ रुद्रनारायण चक्रानुवर्तीके समयमें बनाये थे।

कवीय (सं० स्त्री०) कवि स्वार्थे छ। कवीन, लगाम।

कवीयस् (सं० त्रि०) कविरिव आचरति, कविं स्त्रीतारं इच्छति वा, कवीय मत। १ कविसदृश, शायरके बराबर। २ अपनी प्रशंसा इच्छुक, जो अपनी तारीफ़ चाहता हो।

कवीयान् (सं० त्रि०) अयमनयोरतिशयेन कवि, कवि ईयसुन्। [illegible] उभय कवियोंमें श्रेष्ठ दोनों शायरोंमें बड़ा।

कवुक, ज्योतिषका एक योग।

कवेरा (हिं० पु०) ग्रामीण, देहाती, गंवार।

कवेल (सं० क्ली०) कं जलं विशति प्राप्नोति, क-विश अच्। १ उत्पल, नीला कमल।

कवेला (हिं० पु०) चुम्बकका गोलक, पत्थरकी कील। यह दिग्दर्शनयन्त्र (कुतुबनुमा) की सूई बनाती है। २ काकशावक, कौवेका बच्चा।

कवोड्वक, कपोतक देखो।

कवोष्ण (सं० क्ली०) कुत्सितं ईषत् उष्णम् कदंशा० कोः कवादेशः। ईषत् उष्णस्पर्श, थोड़ी गर्मी। (त्रि०) २ ईषत् उष्णस्पर्शयुक्त, कुछ गर्म।

> "[illegible]
> [illegible]" (रघु ११८०)

कव्य (वै० त्रि०) कवि यत्। ([illegible]) १ स्तवकारी, तारीफ़ करनेवाला। (अव्य) (पु०) २ पितृलोक विशेष।

> "[illegible]" (ऋक्संहिता १।१०।१)

३ चतुर्थ मन्वन्तरके सप्तर्षियोंमें एक ऋषि।

(क्ली०) कूयते दीयते पितृभ्य: यत् अवाहितम् पु० अच् यत्। [illegible] पितृलोक निमित्त उद्देश्यसे दिया जानेवाला अन्न।

कव्य पदार्थ श्रोत्रिय ब्राह्मणको दान न करनेसे निष्फल हो जाता है। मनुसंहितामें लिखते हैं कि जितना ब्राह्मणको कव्य खिलानेसे अनेक पुण्य फल मिलते हैं। किन्तु अमन्त्रज्ञ बहु ब्राह्मणोंको भोजन करानेसे भी वह काम नहीं निकलता। मूर्ख-अमन्त्रज्ञ ब्राह्मण जितने ग्रास लेता, पितृलोकके मुखमें उतने ही उत्तप्त लोहेके गोले छोड़ देता है। अतएव प्रथम ही परीक्षाके साथ ज्ञाननिष्ठ ब्राह्मणको कव्य भोजन कराना चाहिये। वेदतत्त्वविद् ब्राह्मणोंमें ज्ञाननिष्ठ तपोनिष्ठ, तपःस्वाध्यायनिष्ठ और कर्मनिष्ठ भेदसे चार श्रेणियां होती हैं। हव्यके भोजनमें चारो श्रेणियोंका विधान है। किन्तु कव्यके भोजनमें एक मात्र ज्ञाननिष्ठ ब्राह्मणको ही अधिकार है।

> "ज्ञाननिष्ठा द्विजाः केचित् तपोनिष्ठास्तथापरे।
> तपःस्वाध्यायनिष्ठाश्च कर्मनिष्ठास्तथापरे।

"यावन्तो ग्रसते पिण्डान् हव्यकव्येष्वमन्त्रवित्।
तावतो ग्रसते प्रेत्य दीप्तशूलर्ष्ट्ययोगुडान्॥"

आमन्त्रितेषु कव्यानि प्रतिष्ठाप्यानि यत्नतः।
दद्यानि तु यथान्याय सर्वे ब्लेव चतुर्थवि॥" (मनु १ अ०)

ऐसे ब्राह्मणका अभाव होनेसे मातामह, मातुल, भागिनेय, श्वशुर, गुरु, दौहित्र, जामाता, बन्धु पुरोहित वा यजमानको कव्य दे देना चाहिये। मनुके मतसे वेदज्ञ रहते भी निम्नोक्त ब्राह्मणको कव्य खिलाना निषिद्ध है,—चिकित्सक, देवल, कन्याविक्रेता, दुकानदार, चौर्यादि दोषोंसे पतित, क्लीव, नास्तिक, जटाधारी, दुर्बल, प्रतारक, राजासे प्रेष्य, कुनख, श्यावदन्त, गुरुके प्रतिरोधा, अग्नित्यागी, राजयक्ष्मी, पशुपालक, ब्रह्मद्वेषी अभिनेता, शूद्रापोपति, विधवाके गर्भजात, काने, वेतन ग्रहणपूर्वक अध्यापना करनेवाले, शूद्रके शिष्य, दुष्टवादी, माता पिता एवं गुरुके अकारणपरित्यागी, गृहदाहक, विषदाता, कुण्डान्नभोजी, सोमविक्रेता, समुद्रयायी, अविवाहित, अग्रजके वर्तमान रहते विवाहकारी, जारज, बन्दी, तैलिक, कूटकारक, पितासे विवादकारी, मद्यप, पापरोगी, दाम्भिक, रसविक्रेता, धनु तथा शरनिर्माता, दिधिषूपति, मित्रद्रोही, द्यूतवृत्ति, पुत्राचार्य, अपस्माररोगी, गण्डमालारोगी, श्वित्ररोगी, खल, उन्मत्त, अन्ध, वेदनिन्दक, ज्योतिषी, व्यवसायी, पक्षिपोषक, युद्धशास्त्रके आचार्य, स्थपति, दूत, वृक्षारोपक कुक्कुरसे क्रीडाशील, श्येनपक्षिजीवी, कन्यादूषक, हिंस्र, शूद्रवृत्ति, गणयागकारी, आचारहीन, कृषिजीवी, श्लीपदरोगी, और सज्जननिन्दित।

कव्यता (वै० स्त्री०) १ स्तुति, तारीफ। २ ज्ञान, समझ।

कव्यवाड, कव्यवाह देखो।

कव्यवाल (सं० पु०) कव्यं वल्यते दीयते यस्मै, कव्य-वल-घञ्। १ पितृगणविशेष।

"कव्यवालो ऽनलः सोमो यमश्चैवार्यमा तथा।
अग्निष्वात्ता बर्हिषदः सोमपा पितृदेवताः॥" (ब्रह्माण्डपुराण)

२ अग्नि, आग। अग्निमुखमें ही पितृगणके उद्देशसे दान किया जाता है।

कव्यवाह् (सं० पु०) कव्यं वहति, कव्य-वह-ण्वि। अग्नि, आग। इसमें पितृगणके उद्देशसे कव्य डाला जाता है।

कव्यवाह (सं० पु०) कव्यं वहति प्रापयति पितृनिति शेषः, कव्य वह-अण्। अग्नि, पितरोंको कव्य पहुंचानेवाली आग।

कव्यवाहन (वै० पु०) कव्यं वहति, कव्य-वह-ल्युट्। कव्यपुरीषपुरीष्येषु ञ्युट्। पा ३। २। ६५। १ अग्नि, पितरोंको कव्य पहुंचानेवाली आग।

"अग्नये कव्यवाहनाय स्वाहा।" (शुक्लयजुः २। २९)

यजुर्वेदके मतमें अग्नि तीन प्रकारका होता है,—हव्यवाहन, कव्यवाहन और सहरक्षा। देवगणका हव्यवाहन, पितृगणका कव्यवाहन और असुरगणका अग्नि सहरक्षा कहाता है। (तैत्तिरीयसंहिता २। ५। ८। ६।)

कश (सं० पु०) कशति शब्दायते ताडयति वा, कश-अच्। १ अश्वादिताडिनी, चाबुक, कोडा। यह चर्म, वस्त्र, वेत्र प्रभृति द्वारा प्रस्तुत होता है।

"स राजा तं कशेन भ्रताडयत्।" (महाभारत ३।२८६ अ)

२ क्षुद्र पशुविशेष, एक छोटा जानवर।

कश (फा० स्त्री०) १ आकर्षण, खींच। २ दम, फूंक।

कशकु (सं० पु०) गवेधुक, कसो, एक पौदा।

कशकोल (फा० पु०) कपाल, खप्पर। इन्हें भिक्षुक अपने हाथमें रखते हैं।

कशमकश (फा० स्त्री०) १ आकर्षण, खींचखांच। २ समारोह, रेलपेल। ३ असमञ्जस, आगा पीछा।

कशम् (सं० क्ली०) कशति नीचं गच्छति, कश-असुन्। जल, नीचे रहनेवाला पानी।

कशा (सं० स्त्री०) कश टाप्। १ अश्वादिताडिनी, चाबुक, कोड़ा। "अताडयत् कशया कोपात् तदा राजसवन्मुनिम्।" (भारत १।१००।१०) २ मांसरोहिणी, एक खुशबूदार पेड। ३ रज्जु, रस्सी।

कसाई—१ नदी विशेष, एक दरया। यह बङ्गालके मेदिनीपुर जिलेमें प्रवाहित है। पहले लिखे लोग इसे कंशवती कहते हैं। किन्तु कालिदासने अपने रघुवंशमें कपिशानदीके नामसे इसका परिचय दिया है।

कसाईफुलिया—पश्चिम बङ्गालकी एक बागदी जाति। यह कसाई नदीमें नौका चलाते और मत्स्य मार खाते हैं। चौदह प्रकारके बागदियोंमें कसाईफुलिया अपनेको श्रेष्ठ बताते हैं।

कशाघात (सं॰ पु॰) कशेन कशया वा आघातः, ३-तत्। कशाका आघात, चाबुककी मार।

कशात्रय (सं॰ क्ली॰) कशानां कशाघातानां त्रयम्, बहुव्री॰। तीन प्रकारका कशाघात, तीन तरहकी चाबुककी मार। यह मृदु मध्य और निठुर होता है। अश्वोंको साधारण दण्ड देते समय मृदु आघात लगाते हैं। किन्तु उपवेशन शिक्षा, स्खलन, दुष्ट चेष्टा, अश्विनी (घोड़ी) देखनेका औत्सुक्य, गर्वित क्रोध या रव (घोड़ेकी हिनहिनाहट), त्रास, दुरवस्थान, विमार्ग गमन, भय, शिक्षात्याग, चित्तभ्रम प्रभृति अपराधोंमें मध्य और निठुर आघात देना पड़ता है। अपराध विशेषमें आघातका स्थान भी पृथक् है। त्रास एवं भयमें स्कन्धदेश, शिक्षात्याग तथा चित्तविभ्रममें जघन, गर्वित क्रोधादि एवं अश्विनी देखनेके औत्सुक्यमें बाहु तथा स्कन्धदेश, उपवेशन एवं शिक्षामें कटिदेश, दुर्व्यवहार तथा विमार्ग गमनमें मुख, स्खलन एवं दुष्ट ज्ञानमें जघन और कुण्ड प्रकृतिमें सर्वस्थानपर कशा मारते हैं।

कशारि (सं॰ स्त्री॰) यमकी एक बेटी। यह यम भवनमें उत्तर दिक् रहती है।

कशार्ह (स॰ त्रि॰) कशां अर्हति, कशा अर्ह अच्। कशा चाबुक खानेके लायक। कशार्ह देखो।

कशावत् (सं॰ त्रि॰) कशा लिये हुआ, जो चाबुक रखता हो।

कशिक (स॰ पु॰) कशति हिनस्ति सर्पम्, कश शब्दकरणात् ठन्। नकुल, सांपको मार डालनेवाला नेवला।

कशिकपाद (सं॰ त्रि॰) कशिकस्य पादाविव पादौ यस्य, बहुव्री॰। हस्त्यादित्वात् अन्त्यलोपः। पाणिनि ५।४।१३८। नकुलकी भांति पद विशिष्ट (जन्तु), नेवलेकी तरह पैरवाला (जानवर)।

कशिका (सं॰ स्त्री॰) चमकशा, चमड़ेका चाबुक।

कशिपु (स॰ पु॰) कशति दुःखं कशति वा, कश-पु। मृगादित्वात् निपातनात् साधुः। अन्न, अनाज। २ आच्छादन, कपड़ा। ३ शय्या, पलंग। ४ भक्त, भात।

"कथा शिली हि कशिपुः कस्वै?" (भागवत २।२।५)

५ आसन विशेष, एक बैठक।

कशिपूपबर्हण (वै॰ क्ली॰) उपाधान सह, तकियेका बिछावन।

कशिश (फा॰ स्त्री॰) आकर्षण, खींच।

कशीका (वै॰ स्त्री॰) कश शब्दकरणात् ईकन् टाप्। प्रसूता नकुली, ब्याई हुई नेवली।

कशोदया (भा॰ पु॰) मल्लयुद्धका कुश्तीका एक पेंच। इसमें खेलाड़ी अपनी जोड़की गर्दनपर हाथ रख बाम पदसे उसका दक्षिण पद अपनी ओर खींच लेता और उसे दक्षिण करके पकड़ गिरा देता है।

कशीदा (फा॰ पु॰) सूचिकर्म विशेष, कढ़ाव। इसमें वस्त्रपर सूती तथा सुत्रसे नानाप्रकार कृत्रिम पत्रपुष्प बनाते हैं।

कशेरक (सं॰ पु॰) एक यक्ष। (भारत २।१० अ॰)

कशेरु (सं॰ पु-स्त्री॰) के ईषत् शीर्यते, क-शॄ-उ एरुहादेशश्च। उणादिसूत्र। उ १।८। १ पृष्ठास्थि, रीढ़, पीठकी बड़ी हड्डी। कं जलं शार्यति वा शृणाति। २ जलाशयजात तृणविशेष, कसेरू। इसका संस्कृत पर्याय—कशेरुक, कसेरु, कसेरुक और कशेरुक है। हिन्दीमें कसेरू, बंगलामें केसुर, मराठीमें कचेर, पञ्जाबीमें दिला और कैसूरु (तिलङ्गी)में शब्द कहे जाते हैं। (Scirpus dubius)

कशेरु एक प्रकारकी घास है। यह समस्त भारतमें सरोवरों और नदियोंके किनारे उत्पन्न होता है। इसका कन्दिल मूल आलिमय (श्वेतसार) पदार्थ रखता और ऊपरसे श्यामल देख पड़ता है। यह संकोचनशील है। अतिसार और विसूचिका रोगमें देशीय वैद्य इसे औषधकी भांति व्यवहार करते हैं। यह रोग न लगनेके लिये भी खाया जाता है।

शीतकालमें कशेरु खोद कर खाया करते हैं। इसके ऊपरका छिलका छील डाला जाता है। कोई कोई कशेरुको उबालकर भी खाता है। बङ्गालमें यह देवताओं पर चढ़ता है। कशेरु खानेमें मधुर और शीतल है। यह दो प्रकारका होता है—राज कशेरुक और चिचोड़। बड़े कशेरुको राजकशेरुक

और मुक्ताकृति बहुको विशेष कहते हैं। दोनों प्रकारका कशेरु शीत, मधुर, तुवर (कषाय), गुरु, पित्तशोणित दाहघ्न और आंखकी बीमारी दूर करनेवाला होता है। (भावप्रकाश)

मिर्जापुरका कशेरु बहुत बड़ा निकलता है। कहीं कहीं इसे ठण्डाईमें भी घोंट कर पीते हैं।

३ भारतवर्षका एक विभाग।

"भारतस्यास्य वर्षस्य नवभेदान्निशामय।
इन्द्रद्वीपः कशेरुश्च ताम्रवर्णो गभस्तिमान्।
नागद्वीपस्तथा सौम्यो गान्धर्वस्त्व वारुणः॥" (विष्णुपुराण)

कशेरुक, कशेरु देखो।

कशेरुका (सं० स्त्री०) कशेरुक-टाप्। १ पृष्ठास्थि, रीढ़, पीठकी बड़ी हड्डी। २ कशेरु, कसेरु।

कशेरुमान् (सं० पु०) यवनराजविशेष, एक राजा।

"इन्द्रद्युम्नो हतः क्रोधाद् यवनश्च कशेरुमान्।" (हरिवंश १६ अ०)

३ भारतवर्षका एक खण्ड।

कशेरुह् (सं० स्त्री०) कशेरु, कसेरु।

कशेरु (सं० स्त्री०) क-शृ-उ एरुङ् चान्तादेशः। १ तृणकन्दविशेष, कसेरु। २ विश्वकर्माकी चतुर्दशी कन्या। नरकासुरने हस्तिरूपसे इन्हें हरण किया था। (हरिवंश, १२१ अ०)

कश्यक, कशेरु देखो।

कशेरुका, कशेरु देखो।

कशोक (सं० त्रि०) कश ताड़ने बाहुलकात् ओक। १ हिंसक, मार डालनेवाला। (पु०) २ राक्षसादि, शैतान वगैरह।

कश्चन (सं० अव्य०) किम्-चन इति मुग्धबोधः। कोई, एक न एक यह अनिर्दिष्टवाचक है। पाणिनिने इसे पृथक् शब्द माना है।

कश्चित् (सं० अव्य०) किम्-चित् इति मुग्धबोधः। कोई, एक न एक। यह अनिर्दिष्टवाचक है। पाणिनिके मतमें 'कश्चित्' शब्द पृथक् ठहरता है।

"कश्चित् कान्ताविरहगुरुणा स्वाधिकारप्रमत्तः।" (मेघदूत)

कश्ती, किश्ती देखो।

कश्मल (सं० क्ली०) कश-कल-मुट्। उणादिकौ मुग्धबोधे मल्लपुदः सूत्र उण् १। १०८। १ मूर्छा, गश, एकाएक बेहोश हो जानेकी हालत। २ मोह, कमजोरी। ३ पाप, गुनाह। (त्रि०) ४ मलिन, गन्दा। ५ दुराचार, बदकाम। ६ पापी, गुनाहगार।

काश्मश (वै० क्ली०) वेदे पृषोदरादित्वात् लस्य शः। कश्मल देखो।

कश्मीर (सं०पु०) कश-ईरन् मुडागमश्च। उणादि ४। ११। काश्मीर जनपद। काश्मीर देखो।

कश्मीरज (सं० क्ली०) कश्मीरे जायते, कश्मीर-जन-ड। कुङ्कुमविशेष, जाफरान्, केसर। कुङ्कुम देखो।

कश्मीरजन्म (सं० क्ली०) कश्मीरे जन्म यस्य, बहुव्री०। कुङ्कुम, केसर।

कश्मीरी (हिं० वि०) १ कश्मीरसम्बन्धीय, कश्मीरके मुताल्लिक। (स्त्री०) २ कश्मीर देशकी भाषा या बोली। ३ लेह विशेष, एक चटनी। आर्द्रकको छील क्षुद्र क्षुद्र खण्ड करते हैं। फिर उनमें पीस कर मरिच, कङ्कोल, कश्मीरज (केसर), एला, जावित्री, लौंग और जीरक पीसकर मिलाना पड़ता है। अन्तको लवण, सिरका और शर्करा डालनेसे कश्मीरी-चटनी तैयार हो जाती है। (पु०) ४ कश्मीर देशका अधिवासी यानी रहनेवाला। ५ कश्मीरका अश्व यानी घोड़ा।

कश्य (सं० पु०-क्ली०) कशां अर्हति, कशा-य। दण्डादिभ्यो यः। पा ५। १। ६६। १ अश्व, घोड़ा। २ अश्वका मध्यदेश, घोड़ेका पुट्ठा। ३ मद्य, शराब। (त्रि०) कशाघातके योग्य, कोड़ा खाने लायक।

कश्यप (सं० पु०) कश्यं सोमरसादिजनितं मद्यं पिबति, कश्य-पा-क। १ कोई ऋषि। ब्रह्माके मानसपुत्र मरीचिके औरस और कलाके गर्भसे इनका जन्म हुवा था। मार्कण्डेयपुराणके मतानुसार कश्य अर्थात् सोमरसके मद्यसे इनकी उत्पत्ति है, उसीसे कश्यप नाम पड़ गया।

"ब्रह्मणस्तनयो योऽभूत् मरीचिरिति विश्रुतः।
कश्यपस्तस्य पुत्रोऽभूत् कश्यपानात् स कश्यपः॥"
(मार्कण्डेयपुराण १०८। ३)

शुक्ल यजुर्वेद प्रभृति वैदिक संहितावोंके मतमें हिरण्यगर्भ ब्रह्मसे कश्यपने जन्म लिया था।

"कश्यपः पश्यको भवति यत् सर्वं परिपश्यतीति सौक्ष्म्यात्।"

(तैत्तिरीयारण्यक १।८।८)

कश्यप एक प्रजापति थे। साम, यजु: और अथर्वसंहितामें इन्हें इन्द्र चन्द्र प्रभृति देवोंमें एक माना है। ([illegible])

कात्यायनने अपनी वेदानुक्रमणिकामें लिखा है कि कश्यप ऋक्संहिताके कई सूक्तोंके ऋषि थे। श्रीमद्भागवतमें देखते हैं कि कश्यप ऋषिने दक्षकी १७ कन्याओंसे विवाह किया। उनके गर्भसे १७ जातियां उत्पन्न हुईं,—१ अदितिसे देव, २ दितिसे दैत्य, ३ दनुसे दानव ४ काष्ठासे अश्वादि, ५ अरिष्टासे गन्धर्व, ६ सुरसासे राक्षस, ७ इलासे वृक्ष, ८ मुनिसे अप्सरायें, ९ क्रोधवशासे सर्प, १० ताम्रासे श्येन गृध्र प्रभृति, ११ सुरभिसे गोमहिषादि, १२ सरमासे श्वापद, १३ तिमिसे जलजन्तु १४ विनतासे गरुड़, अर्क अरुण, १५ कद्रूसे नाग, १६ पतङ्गीसे पतङ्ग और १७ यामिनिसे शलभ। किन्तु महाभारत और अन्यान्य पुराण प्रभृतिमें कश्यपकी तेरह भार्यायें लिखी हैं। मार्कण्डेयपुराणके मतसे उनके नाम थे,—१ अदिति, २ दिति, ३ दनु, ४ विनता, ५ खसा, ६ कद्रु, ७ मुनि, ८ क्रोधा, ९ अरिष्टा १० इरा, ११ ताम्रा १२ इला और १३ प्रधा।

(मार्कण्डेयपुराण १०४ अ)

पश्यतीति पश्यः, सर्वज्ञः पश्य एव पश्यकः आद्यन्तवर्णविपर्ययात् सिध्यति यद्वा कश्यं मद्यं पानं अविद्या मित्यर्थं पिबति नाशयति अथवा कश्यं विज्ञानमयं पाति रक्षति आप्नोति देवः। २ परब्रह्म।

"[illegible]" ([illegible])

३ कच्छप, कछुवा। ४ मृगविशेष एक हिरन। ५ मत्स्यविशेष, एक मछली। (त्रि०) ६ श्यावदन्त, बड़दन्ता।

कश्यपनन्दन (सं० पु०) कश्यपस्य नन्दनः पुत्र, ६-तत्। १ कश्यपके पुत्र गरुड़। २ देव, असुर आदि।

कश्यपपुर (सं० क्ली०) कश्यपस्य पुरम् ६ तत्। वर्तमान काश्मीरका यह नाम रहा था। कश्यपपुरको ही हिरोदोतसने 'कस्पतुरस्' और टलेमिने 'कस्पीरा' लिखा है।

कश्यपसंहिता (सं० स्त्री०) कश्यपस्य संहिता, ६-तत्। कश्यपप्रणीत एक धर्मशास्त्र।

कश्यपस्मृति, कश्यपसंहिता देखो।

कष (सं० पु०) कषति कषं अनेन वा, कष अप् यद्वा- कष घ निपातनात् साधु। गोचरसञ्चरव्रजव्यजापणनिगमाश्च। पा ३।३।११९। १ कष्टिप्रस्तर, कसौटी। इसपर सोने आदि घिसकर जांचते हैं। इसका संस्कृत पर्याय— शाण और निकष है। २ घर्षण, घिसाव। (त्रि०) घर्षण करनेवाला, जो घिसता या रगड़ता हो।

कषण (सं० त्रि०) कषति हिनस्ति, कष कर्मणि ल्युट्। १ अपक्व, कच्चा। (पु०) कषति अनेन। २ कष्टिप्रस्तर, कसौटी। (क्ली०) भावे ल्युट्। ३ कषण घिसावट, रगड़।

"[illegible]" ([illegible])

कषपाषाण (सं० पु०) कषस्य पाषाण इति, कर्मधा०। कष्टिप्रस्तर, कसौटी।

कषा (सं० स्त्री०) कषति ताडयति अनया कष बाहुलकात् करणे अप् टाप्। कशा चाबुक।

कषाघात (सं० पु०) कषाया आघात चाबुककी मार, कोड़े।

कषाकु (सं० पु०) कष—आकु। १ सूर्य, आफताब। २ अग्नि, आतिश, आग।

कषापुत्र (सं० पु०) निकषात्मज, एक राक्षस।

कषाय (सं० पु० क्ली०) कषति कण्ठम्, कष—आय। १ रसविशेष, कसैलापन। इसका संस्कृत पर्याय—तुवर, कषर और तूवर है। सुश्रुतके मतानुसार आस्वादनसे मुखको सुखाने, जिह्वाको ठहराने, कण्ठको बद्ध करने और हृदयको कुछ पीड़ा पहुंचानेवाला रस कषाय कहाता है। पृथिवी वायुगुणबहुल होनेसे यह उपजता है। पृथ्वी आदि कार्मोंसे इसका आधार मिलता है। कषाय रस संग्राहक व्रणरोपक, स्तम्भन, शोधन, लेखन, शोषक, पीडाकारक क्लेद नाशक और वायुवर्धक है। इसके अतिरिक्त अपथ्य सेवनसे पीड़ा, मुखशोष, हृदयाध्मान, वाक्यग्रह (वात

करते रुक जानेकी हालत) मन्यास्तम्भ (गला जकड़ जानेकी हालत), गात्रस्फुरण, स्रोतअवरोध, श्यावत्व (धूरापन), शुक्रनाश, आकुञ्चन, आक्षेपण प्रभृति वायुविकार बढ़ते हैं।

२ क्वाथ, पाचन, जोशांदा, औटी, काढ़ा। इसका अपर संस्कृत नाम निर्यूह है। इसके पांच भेद है—स्वरस, कल्क, क्वथित, शृत और फाण्ट। स्वरस, कल्क, क्वथित, शृत और फाण्ट देखो।

३ निर्यास, गोंद। ४ विलेपन, लुपलाव।

"कषायितौ लोध्रकषायरूक्षे गोरोचनाक्षेपनितान्तगौरे।" (कुमारसम्भव)

५ अङ्गराग, उबटन। ६ श्योनाकवृक्ष, सोनापान। ७ कपित्थवृक्ष, कैथेका पेड़। ८ महासर्जवृक्ष, धूनेका बड़ा पेड़। ९ मण्डलिसर्प, एक सांप। १० राग, आसक्ति, लगाव। ११ कलियुग, बुरा जमाना। निर्विकल्प समाधिका एक विघ्न। बाह्य विषयसे हट अखण्ड वस्तु ग्रहणमें लगते भी जो राग आदि संस्कार उठ मनको स्तब्ध और अखण्ड वस्तु ग्रहणसे पृथक् रखते, उन्हें कषाय कहते हैं। १३ लोहितवर्ण, लालरंग। (त्रि०) १४ कषायरसविशिष्ट, कसैला। १५ सुरभि, खुशबूदार।

"प्रत्यूषेषु स्फुटितकमलामोदमैत्रीकषायः" (मेघदूत)

१६ लोहित, सुर्ख, लाल। १७ रक्तपीत मिश्रित, लाल-पीला। १८ अपटु, नावाकिफ। १९ सुश्राव्य, अच्छीतरह सुन पड़नेवाला, जो कानमें खटकता न हो। २० रञ्जित, रंगदार। २१ आसक्त, संसारलिप्त, फंसा हुआ। जैनशास्त्रमें लिखा है,—

"कषं संसारकान्तारमयं ते यान्ति ये जनाः।
ते कषायाः क्रोधमानमायालोभाः इति श्रुतः॥" (लोकप्रकाश ३।४०८)

जैनशास्त्रमें 'कषाय'के ऊपर बहुत विचार किया है। क्रोध, मान, माया, लोभका नाम ही कषाय है। इसके उत्तरोत्तर भेदोंका बड़ी ही सूक्ष्मताके साथ दिग्दर्शन कराया गया है। गोम्मटसार (जीवकांड)में कषाय शब्दकी दो तरहसे निरुक्ति लिखी है। जैसे—

सुहदुक्खसुबहुसस्सं कम्मक्खेत्तं कसेदि जीवस्स।
संसारदूरमेरं तेण कसाओत्ति णं वेंति॥ २८१॥

अर्थात् जीवके सुख दुःख आदि अनेक प्रकारके धान्यको उत्पन्न करनेवाले, तथा जिसकी संसाररूपी मर्यादा अत्यन्त दूर है ऐसे कर्मरूपी क्षेत्र (खेत)का जो कर्षण करता है उसे कषाय कहते हैं। दूसरी प्रकार कष् धातुसे भी इसकी व्युत्पत्ति बतलाते हैं—

सम्मत्तदेससयलचरित्तजहक्खादचरणपरिणामे।
घादंति वा कषाया चउसोलअसंखलोगमिदा॥ २८२॥

जीवके सम्यक्त्व, देशसंयम, सकलसंयम और यथाख्यात चारित्ररूपी शुद्ध परिणामोंको जो कषे—न होने दे उसको कषाय कहते हैं। इसके अनन्तानुबन्धी, अप्रत्याख्यान, प्रत्याख्यान और सञ्ज्वलन ये चार भेद है इन चारमें प्रत्येकके क्रोध, मान, माया, लोभ ये चार चार भेद है इसतरह सोलह हो जाते है। फिर इनके भी उत्तरोत्तर असंख्याते भेद है। कषाय की विशेष व्याख्या करने लिये जैन धर्ममें अनेक शास्त्र है। सबसे बड़ा कषायप्राभृत है। गोम्मटसारमें भी इसका अनेक व्याख्यान है।

कषायकृत् (सं० पु०) कषायं कषायरागं करोति, कषाय-कृ-क्विप् तुगागमः। १ रक्तलोध्र, लाललोध। इसकी छाल रंगनेमें लगती है। (त्रि०) २ कषायप्रस्तुतकारी, काढ़ा बनानेवाला।

कषायचित्र (सं० त्रि०) लोहितवर्ण द्वारा रञ्जित, लालसुर्ख रंगसे बनाया हुआ।

कषायजल (सं० क्ली०) जलविशेष, एक पानी। प्लक्ष (पाकर), अश्वत्थ (पीपर) और वटके सिद्ध जलको कषायजल कहते हैं।

कषायता (सं० स्त्री०) कषायस्य भावः, कषाय-तल्-टाप्। कषायका धर्म, कसैलापन।

कषायदन्त (सं० पु०) मूषिक विशेष, किसी किस्मका चूहा। इसका शुक्र जहां गिरता, वहां शोथ, कोथ आदि उठता है। (सुश्रुत)

कषायदशन, कषायदन्त देखो।

कषायनित्य (सं० त्रि०) नित्य अतिमात्र कषायरससेवी, रोज़ हदसे ज़्यादा कसैली चीज़ खानेवाला।

कषायपाक (सं० पु०) द्रव्य विशेषके क्वाथकी प्रस्तुत प्रणाली, किसी चीज़के जोशांदा बनानेका तरीका।

जिन कषाय कार्योंमें उसका परिमाण नहीं दिखाते, उनमें प्रायः द्रव्य रखनेसे चार गुण और गुरु द्रव्य रखनेसे सोलह गुण जलसे सिद्ध कर चतुर्थांश अवशिष्ट रखते हैं।

कषायपाद (स॰ पु॰) कषाय पादे यस्य, बहुव्री॰ वत्सम्। मध्यमे। सप्तस्वर मात्र जाति।

कषाय प्राभृत—एक जैन ग्रन्थ। इसमें जीवको संसार में भ्रमण करानेवाले कषायों का वर्णन है।

कषायफल (स॰ स्त्री॰) पूगफल, सुपारी।

कषाय मार्गणा—जैन शास्त्रमें संसारी जीवोंको विविध अवस्था बतलानेके लिये १४ मार्गणा किये हैं। उनमें से एक मार्गणा।

कषाययावनाल (स॰ पु॰) कषायः रसवर्णे यावनालः कर्मधा॰। तुवर यावनाल धान्य, कषेलो जुवार।

कषाययोनि (स॰ स्त्री॰) कषायाभिकरण, कषेलेपनको उत्पादक। यह पांच प्रकारकी होती है—मधुर कषाय, कटुकषाय तिक्तकषाय और कषायकषाय। (चरक)

कषायरस (स॰ पु॰) रसविशेष, एक स्वाद। कषाय देखो।

कषायवर्ग (स॰ पु॰) कषायाणां कषायरसयुक्तद्रव्याणां वर्गः समूहः, ६ तत्। कषायरस द्रव्यसमूह, कषेली चीजोंका समूह। त्रिफला, शल्लकी, जम्बू आम्र बकुल तिन्दुकफल, न्यग्रोध आदि अम्बष्ठादि, प्रियङ्गु आदि, लोध्रादि, शालसारादि, कतकमाक पाषाण भेदक, वनस्पतिफल, कुरबक कोविदारक जीवन्ती, चिल्ली पलङ्की, सुनिषण्ण आदि, नीवारकादि और मुद्ग आदि द्रव्य कषायवर्गमें पड़ते हैं। (सुश्रुत)

कषायवासिक (स॰ पु॰) सुश्रुतोक्त कीट विशेष, एक जहरीला कीड़ा। यह कीट सौम्य होनेसे श्लेष्म प्रकोपक है। इसका मूत्र विषाक्त निकलता है।

कषायवृक्ष (स॰ पु॰) वटामलकादि कषायरसक फलवृक्ष, बरगद आंवला वगैरह कषेले फलोंका पेड़।

कषायस्कन्ध (स॰ पु॰) प्रियङ्गु आदि कषाय द्रव्यात्मक काथादिक विशेष एक कषेली दवा।

कषाया (स॰ स्त्री॰) कष आय टाप्। १ क्षुद्र दुरालभा, छोटा जवासा। (Small sort of Hedysarum) इसका संस्कृत पर्याय—यास, यवासा दुस्पर्श, धन्वयास, दुरालभा, समुद्रान्ता, रोदिनी, गान्धारी, कच्छुरा, धनन्ता, हरविग्रहा और दुरभिग्रहा है। भावप्रकाशके मतमें यह मधुर तिक्त एवं कषायरस, सारक, शीतल, लघु और कफ, मेद, मत्तता, भ्रम, पित्त, रक्त, कुष्ठ, कास, तृष्णा, विसर्प वातरक्त, वमि तथा ज्वरनाशक है। (भावप्रकाश)

कषायान्वित (स॰ त्रि॰) कषाय रसविशिष्ट, कषेला।

कषायित (स॰ त्रि॰) कषाय रक्तपीतादिवर्णं सञ्जातो ऽस्य, कषाय इतच्। १ रङ्गादि वर्णयुक्त, लाल रंगा हुआ। "...........।" (कुमारसम्भव ५।११)

कषायी (स॰ पु॰) कषायो विद्यते ऽस्य, कषाय-इनि। १ शालवृक्ष। २ खर्जूरवृक्ष, खुजूरका पेड़। ३ कर्जूरी वृक्ष, खजूरका पेड़। ४ सर्ज्जवृक्ष,धूनेकापेड़। ५ शाकवृक्ष, सागौनका पेड़। ६ क्षुद्रपनस, छोटा कटहल। (त्रि॰) ७ कषायविशिष्ट, गौंददार। ८ कषायान्वित, कषेला। ९ संसारासक्त, दुनियाकी बातोंमें फंसा हुआ।

कषायीकृत (स॰ त्रि॰) अकषायः कषायः कृतः, कषाय च्वि-कृ-क्त। कषायवर्णं हुआ जो सुर्ख किया गया हो।

कषायीकृतलोचन (स॰ त्रि॰) कषायवर्णं चक्षु बनाये हुआ, जो आंखें लाल कर चुका हो।

कषायीभूत (स॰ त्रि॰) अकषायः कषायो भूतः, कषाय-च्वि-भू-क्त। रक्त वर्ण बना हुआ जो लाल पड़ गया हो।

कषि (स॰ त्रि॰) कषति हिनस्ति, कष इ। कषिकषिदिभ्य...। उण् ४।११८। हिंसक, नुकसान पहुंचानेवाला।

कषिका (स॰ स्त्री॰ पक्षिजाति, कोई चिड़िया।

कषित (स॰ त्रि॰) कष क्त। परीक्षित, कसा हुआ, जो जोड़ जा चुका हो।

कषीका (स॰ स्त्री॰) कषति, कष-ईकन् टाप्। कषिदूषिभ्यामीकन्। उण् ४।१६। १ पक्षि जाति, चिड़िया। कषककाला। २ ....।

कपेरुका (सं॰ स्त्री॰) कप-एरक्—ठ संज्ञायां कन्‌ टाप्। १ पृष्ठास्थि, रीढ़। २ कशेरु, कसेरु।

कप्कप (वे॰पु॰) कप इति अव्यक्तं शब्दमुच्चार्य्य कपति, कप-कप्-अच्। विषधर कृमिविशेष, एक ज़हरीला कीड़ा।

"येषामाम. कक्कपाम एजत्का शिवविनुका।
दृष्टश्च हन्यतां कृमिरुतादृष्टश्च हन्यताम्॥" (अथर्ववेद ३।३१।७)

कष्ट (सं॰ त्रि॰) कष्यते ऽसौ, कषं कर्मणि क्त नेट्। कृच्छ्रगहनयो. कषः। पा ७।२।२२। १ पीड़ायुक्त, पुरदर्द, दुखनेवाला। २ गहन, मुश्किल। ३ पीड़ाकारक, तकलीफ़ देनेवाला। ४ कष्टसाध्य, बहुत ख़राब। ५ कुत्सित, बुरा। (क्ली॰) कष भावे क्त। ६ पीड़ा-मात्र, कोई दर्द या बीमारी। इसका संस्कृत पर्याय—पीड़ा, बाधा, व्यथा, दुःख, अमानस्य, प्रसूतिज, कृच्छ्र, कलाकल, अर्ति, आर्त्ति, पीड़न, बाधन, आमानस्य, विबाधन, विहेठन, विघ्नक, पीड़ित, क्लाथ और अगम है। अर्थप्रतीति व्यवहित (अलग) होनेसे कष्ट वा क्लिष्टता दोष कहलाता है,—

" क्लिष्टत्वमर्थप्रतीतेर्व्यवहितत्वम्।" (साहित्यदर्पण ७ प॰)

इसका उदाहरण 'क्षीरोदजावसतिजन्मभुवः प्रसन्नाः' वाक्यमें मिलता है। उक्त वाक्य 'जल प्रसन्न है' अर्थमें प्रयोग किया गया है। किन्तु सहजमें उसके समझनेका कोई उपाय देख नहीं पड़ता। क्षीरोदजा लक्ष्मी, उनकी वसति पद्म और पद्मका जन्म-स्थान जल है। अतएव यहां पर क्लिष्टत्व वा कष्टदोष लगता है।

(अव्य) ७ हन्त! हाय!

कष्टकर (सं॰त्रि॰) कष्टं करोति, कष्ट-कृ-ट। १ पीड़ा-जनक, दर्द पैदा करनेवाला। २ दुःखजनक, तकलीफ़ देनेवाला।

कष्टकल्पना (सं॰ स्त्री॰) कष्टेन कल्पना, ३-तत्। कठोर अनुमान, कड़ी अन्दाज़। जिसे ठीक स्थिर करनेमें कष्ट पड़ता और जो सहजमें कल्पनापर नहीं चढ़ता, उसे विद्वान् कष्टकल्पना कहता है।

कष्टकल्पित (सं॰ त्रि॰) कष्टेन कल्पितं रचितम्। कष्टसे बना हुवा, जो मुश्किलसे ठीक किया गया हो।

कष्टकारक (सं॰ त्रि॰) कष्टकार स्वार्थे कन्, कष्ट-कृ-ण्वुल् वा कष्टस्य कारकः, ६-तत्। दुःखका कारण बननेवाला, जो तकलीफ़का सबब ठहरता हो। (पु॰) २ संसार, दुनिया।

कष्टजीवी (सं॰ त्रि॰) कष्टेन जीवति, कष्ट-जीव-इनि। १ कष्टसे जीविका निर्वाह करनेवाला, जो मुश्किलसे काम चलता हो। २ अनेक भोग कर बचनेवाला, जो मुश्किलसे बचा हो। ३ पक्षिजाति, चिड़िया।

कष्टतपस् (सं॰ पु॰) कष्टं कष्टकरं तपो यस्य, बहुव्री॰। कठिन तपस्या करनेवाला, जो इसतिफ़गारके मुताबिक अमल करता हो।

कष्टतर (सं॰ त्रि॰) अधिक पीड़ायुक्त, ज़्यादा तक-लीफ़ देनेवाला।

कष्टद (सं॰ त्रि॰) कष्टं ददाति कष्ट-दा-क। कष्ट-दायक, तकलीफ़ पहुंचानेवाला।

कष्टरिपु (सं॰त्रि॰) कष्टः कष्टसाध्यो रिपुः, कर्मधा॰। कष्टसे पराजय किया जानेवाला शत्रु, जो दुश्मन मुश्किलसे हारता हो।

" प्राज्ञं कुलीनं शूरञ्च दक्ष दातारमेव च।
कृतज्ञं धृतिमन्तञ्च कष्टमाहुररिं बुध.॥" (मनुसंहिता)

विद्वान्, कुलीन, वीर, दक्ष, दाता, कृतज्ञ और धैर्यशाली शत्रुको पण्डित कष्टरिपु कहते हैं।

कष्टलभ्य (सं॰ त्रि॰) कष्टेन लभ्यम्, ३-तत्। कष्टसे मिलनेवाला, जो मुश्किलसे हाथ आता हो।

कष्टश्रित (सं॰ त्रि॰) कष्टं श्रितं आश्रितं येन, बहुव्री॰। १ कष्टपानेवाला, जो तकलीफ़में हो। २ कठोर व्रत-कारक, कड़े इसतिफ़गारको अमलमें लानेवाला।

कष्टश्रोत्रिय—वङ्गदेशके श्रोत्रिय ब्राह्मणोंका एक विभाग। श्रोत्रिय देखो।

कष्टसह (सं॰ त्रि॰) कष्टं सहते, कष्ट-सह-अच्। कष्टसहिष्णु, तकलीफ़ उठा सकनेवाला।

कष्टसाध्य (सं॰ त्रि॰) कष्टेन साध्यम्, ३-तत्। १ कष्टसे आरोग्य होनेवाला, जो मुश्किलसे अच्छा हो। २ कष्टसे पराजय किया जानेवाला, जो मुश्किलसे हारता हो।

कष्टस्थान (सं॰ क्ली॰) कष्टं कष्टकरं स्थानम्, कर्मधा॰।

दुःखमय स्थान, खराब जगह, तकलीफ देनेवाला मुकाम।

कष्टकरण पर्वत—विहार प्रान्तके मुंगेर जिलेका एक पहाड़।

कष्टहारी (सं० स्त्री०) कीकटदेशकी एक नदी। (भविष्य ब्रह्मख० ११७) २ मगधदेशमें देवीवर्षके निकट प्रतिष्ठित देवीकी एक मूर्ति। (वैवस्वत ...) यह मूर्ति इसी निकट वर्तमान थी।

कष्टागत ((सं० त्रि०) कष्टसे आया हुआ, जो मुश्किलसे पहुंचा हो।

कष्टि (सं० स्त्री०) कष भावे क्ति। १ परीक्षा, जांच, आजमायी। अधिकरणे क्ति। २ स्वर्णमणि, कसौटी, कसनेका पत्थर। ३ पीड़ा दर्द, बीमारी।

कष्टी (हिं० स्त्री०) प्रसवका कष्ट उठानेवाली।

कष्टीर (सं० क्ली०) रङ्ग रांगा।

कस (सं० पु०) कषति निकषति स्वर्णादिकम् कष-अच्। १ स्वर्णमणि कसौटी सोना चांदी कसनेका पत्थर।

कस (हिं० पु०) १ चाकूका स्थितिस्थापकत्व, तलवार की लचक। इससे तलवारकी तेजी पहचानी जाती है। २ शक्ति, ताकत। बस, काबू। कुश्तीका एक पेंच, यह 'कसकी गोदी' कहलाता है। ४ अवरोध, रोक। ५ कषाय अर्क। ६ सार, निचोड़। (स्त्री०) ७ बन्धन रज्जु कसनेकी रस्सी। (क्रि० वि०) ८ किस प्रकार, कैसे। कसई, कसी देखो।

कसक (हिं० स्त्री०) १ पीड़ा विशेष, एक दर्द। २ कोई आघात लगे और अच्छा हो जानेसे पर धीरे धीरे उठा करती है। ३ मनकी चमक। ४ पुरातन वैर, पुरानी दुश्मनी। ५ सहानुभूति, हमदर्दी। ६ अभिलाष, हौसला।

कसकना (हिं० क्रि०) १ पीड़ा करना, दुखना, चमकना, रह रहके दर्द उठना। २ अप्रिय लगना, बुरा मालूम पड़ना।

कसका (सं० स्त्री०) कासमर्द, कसौंदी।

कसकुट (हिं० पु०) मिश्रधातु विशेष, एक मिलावटी पदार्थ। इसमें तांबा और जस्ता बराबर बराबर पड़ता है। कसकुटसे लोटे, कटोरे, थालकोरे प्रभृति बरतन बनते हैं। किन्तु इसके थालमें अम्ल द्रव्य रखनेसे बिगड़कर विषाक्त हो जाता है। कसकुटका दूसरा नाम भरत है।

कसगर (हिं० पु०) जाति विशेष कासागर कौम। यह मुसलमान होते हैं। इनका काम मट्टीके छोटे छोटे बरतन बनाना है।

कसन (सं० पु०) कसति हिनस्ति, कस ल्यु। कास खांसी। २ वेदना विशेष, एक दर्द।

कसन (हिं० स्त्री०) १ बन्धन, बंधाई, कसाई। २ बन्धनकी रीति कसनेका तरीका। ३ बन्धनरज्जु, कसनेकी रस्सी। पेटी, तङ्ग, पट्टी।

कसनई (हिं० स्त्री०) पक्षि विशेष, एक चिड़िया। इसका पक्ष कृष्णवर्ण, वक्षःस्थल एवं पृष्ठदेश पाटल और चञ्चु रक्तवर्ण होता है।

कसनमर्दन (सं० पु०) कासमर्दक्षुप, कसौंदीका पेड़।

कसना (सं० स्त्री०) कष्टसाध्य लूता विशेष, एक कष्ट देनेवाली मकड़ी। लूता देखो।

कसना (हिं० क्रि०) १ बन्धन करते समय रज्जु आदि दृढ़तापूर्वक खींचना, जोरसे तानना, जकड़ना। २ शिकञ्जमें लगाना, दबाना। ३ बन्धन करना, बैठना, ठिकाने पहुंचाना। ५ सज्जित करना, (गाड़ी घोड़ा) सजाना। ६ भरना, ठूसना। ७ खिंचना, तनना। ८ तङ्ग पड़ना, कड़ा रहना। ९ दबना, घुटना। १० प्रस्तुत वा तैयार होना। ११ भर आना। १२ सिसकना रमकना। १३ परीक्षा करना, परखना। १४ औटना गढ़ियाना। १५ तपाना गलना। १६ परिष्कार करना तलना। १७ कष्ट देना, तकलीफ पहुंचाना। (पु०) १८ बन्धन, बंधना। १९ मिलाप, जोड़। २० कृमि विशेष एक कष्ट देनेवाला कीड़ा।

कसनि (हिं० स्त्री०) बन्धन, बंधाई, जोड़।

कसनी (हिं० स्त्री०) १ रज्जु, रस्सी। २ मिलाप, जोड़। ३ कञ्चुकी, चोली। ४ स्वर्णमणि, कसौटी। ५ परीक्षा जांच। ६ कसौड़ी। ७ आवरणवस्त्र, बसानका गलाफ।

कसनोत्पाटन (सं० पु०) कसनं कासरोगं उत्पाटयति, कसन-उत्-पट-णिच्-ल्यु ट्। वासक वृक्ष, अडूसेका पेड़।

कसयत (हिं० पु०) १ अम्बुप्रसाद-भेद, काला कुट। २ अम्बुप्रसाद वृक्ष, कुटका पेड़।

कसब (अ० पु०) १ वाणिज्य, तिजारत, कामकाज। २ परिश्रम, मेहनत। ३ व्यवसाय, पेशा। ४ व्यभिचार, छिनाला।

कसबल (हिं० पु०) १ पराक्रम, ज़ोर, ताक़त। २ साहस, हिम्मत।

कसबा (अ० पु०) महाग्राम, बड़ा गांव। यह शहरसे छोटा और गांवसे बड़ा होता है।

कसबाती (हिं० वि०) महाग्राम सम्बन्धीय, बड़े गांववाला।

कसबिन (हिं० स्त्री०) १ वेश्या, रण्डी, देश्याती पतुरिया। २ व्यभिचारिणी, छिनाल।

कसबी, कसबिन देखो।

क़सम (अ० स्त्री०) शपथ, किरिया, सौगन्द।

कसमसाना (हिं० क्रि०) १ हिलना डुलना, चमकना, आराम न मिलना। २ ऊब उठना, घबरा जाना। ३ हिचकना, हिम्मत न पड़ना।

कसमसाहट (हिं० स्त्री०) उकताया, घबराहट।

कसमसी (हिं० स्त्री०) कसमसाहट, कुलबुलाहट।

कसर (सं० स्त्री०) १ त्रुटि, कमी। २ बैर, दुश्मनी। हानि, नुकसान, घटी। ४ दोष, ऐब।

कसर (हिं० पु०) वृक्षविशेष, कुसुमका पौदा।

कसरत (अ० स्त्री०) १ व्यायाम, मेहनत। २ अधिकता, बहुतायत, बढ़ती।

कसरती (हिं० वि०) परिश्रमी, मेहनती, कसरत करनेवाला।

कसरवानी, बिहारके बनियोंकी एक शाखा। कसरवानी बनिये ८६ श्रेणियोंमें विभक्त हैं। उनमें प्रधान प्रधान यह हैं,—सगौला, बगौला, कयौतिया, भारकहैला, चालाबिया, चौसवार, मालहाटिया, लौंगझराझरी, सोनघडा, पेकदाढ़ी, सोनाच, तारसो और तिलसिया।

यह अपनी अपनी श्रेणी या पांच पीढ़ीके सम्बन्धमें विवाह करते हैं। इनमें बाल्यविवाह प्रचलित है। पुरुष बहु विवाह भी कर सकते हैं। विधवाविवाहमें यह कोई दोष नहीं देखते। कसरवानी प्रायः वैष्णव होते हैं। विष्णु व्यतीत ग्रामदेवता 'बन्नी' और 'सूखा शम्भूनाथ'को भी पूजा की जाती है। अधिकांश दुकानदारोंका काम चलाते हैं। कुछ लोग खेतोंमें भी लगे हैं। तेली या मुसलमान्के हाथ यह कभी गाय नहीं बेचते।

कसरहट्टा (हिं० पु०) हट्टविशेष, कसेरोंका बाजार। इसमें पात्र बना और बिका करते हैं।

कसर्णीर (वै० पु०) सर्पविशेष, एक सांप।
(अथर्वसंहिता १०।४।५)

कसली (हिं० स्त्री०) खनित्र भेद, किसी किस्मका फावड़ा। यह क्षुद्र और सूक्ष्माग्रविशिष्ट होती है।

कसवाना (हिं० स्त्री०) कसाना, कसनेका काम दूसरेसे कराना।

कसवार (हिं० पु०) इक्षुभेद, किसी किस्मकी ऊख। यह प्रायः डेढ़ इच सान्द्र (मोटा) होता है। त्वक् धूसरवर्ण और कठोर निकलती है। सारभागमें रस भरा रहता और तन्तु कम पड़ता है।

कसहंड (हिं० पु०) कांस्यपात्रका छिन्न भिन्न अंश, कांसेके टूटेफूटे बरतनोंका हिस्सा।

कसहंडा (हिं० पु०) कांस्य या पित्तल पात्रभेद, कांसे या पीतलका एक बरतन। यह प्रगल्भ होता है। उत्सवादिके समय कसहंडेमें पानी भरकर रखा जाता है।

कसहंडी (हिं० स्त्री०) कसहंडा देखो।

कसा (सं० स्त्री०) कसति ताड़यति, कस-अच्-टाप्। अश्वादि ताड़िनी, चाबुक, कोड़ा।

कसाई (हिं० पु०) १ घातक, मारनेवाला। २ गोघातक, कस्साब, बूचड़। (वि०) ३ निर्दय, बेदर्द।

कसाना (हिं० क्रि०) १ कषायरसविशिष्ट होना, कसैलापन आना, बिगड़ जाना। २ कषायित लगना, कसैला मालूम पड़ना। ३ कसवाना, सजवाना।

कसाम्बु (सं० क्ली०) पितृलोकको अर्घ्यदानके समय दिया जानेवाला जल।

कसार (हिं॰ पु॰) खाद्यविशेष, पंजीरी। घीमें भुना और चीनी मिला आटा कसार कहलाता है।

कसाला (हिं॰ पु॰) १ क्लेश, तकलीफ। २ परिश्रम, मेहनत। ३ वस्त्रभेद, एक चटायी। इससे स्वर्णकार अलङ्कारादि परिष्कार करते हैं।

कसाव (हिं॰ पु॰) १ कषायता, कसैलापन। २ आकर्षण, खिंचाव।

कसावट (हिं॰ स्त्री॰) आकर्षण खींचतान।

कसावड़ा (हिं॰ पु॰) घातक, कसाई।

कसिपु (सं॰ पु॰) कसति गच्छति दुःखम् निपातनात् सिद्धम्। अन्न, खाद्य भात।

कसिया (हिं॰ स्त्री॰) पक्षिविशेष, एक चिड़िया। यह भूसरवर्ण होती और राजपूताने तथा पञ्जाबको छोड़ भारतवर्षमें सर्वत्र मिलती है। इसका कुलाय (घोंसला) झाड़ीको कम ऊंचा पर बनता है। अण्डे पीताभ होते हैं।

कसियाना (हिं॰ क्रि॰) कषायित हो जाना, कसाना। खट्टी चीज़ तांबे या पीतलके बरतनमें रखनेसे कसाने लगती है।

कसी (हिं॰ स्त्री॰) १ रज्जु भेद, एक रस्सी। इससे भूमि नापी जाती है। इसमें प्रायः दो पद (यथा ३८ इञ्च) पड़ता है। २ इसका अपभ्रंश, फाल। ३ यवीतुल्य तृण, एक पौधा।

प्राचीन कालको इसका नाम वैदिक ग्रन्थमें मिलता था। कभी कृषिका एक द्रव्य रही। वर्तमानमें इसकी कृषि मन्द हो गयी है। फिर भी मध्य प्रदेश सिक्किम आसाम और ब्रह्मदेशके जङ्गली लोग कभी लगाते हैं। यह भारत, ब्रह्म, मलय, चीन, जापान प्रभृति देशोंमें वन्य अवस्था पर पायी जाती है। कसी कई प्रकार की होती है। दो भेद प्रधान हैं, श्वेतवर्ण और कृष्णवर्ण। वर्षा ऋतु इसको उत्पत्तिका समय है। मूलसे कई बार शाखायें फूटती हैं। फल गोल सुदीर्घ और एक ओर तीक्ष्णाग्र रहते हैं। त्वक कठिन और चिकन होती है। श्वेत मालको रोटी बनती है। फल भून कर चावलकी मक्कीकी भांति खाते भी हैं। फिर अपक्व चावलके टुकड़े भातमें भी पड़ते हैं। यह खाद्यकर और सुस्वादु होती है। जापान आदि देशोंमें कसीसे मद्य प्रस्तुत किया जाता है। लोग इसको औषधमें डालते हैं। दानोंकी माला बनती है। नेपालके पास लोग कसीके बीज टोकरोंकी झालरोंमें टांकते हैं।

कसियाड़ी, बङ्गाल प्रान्तके मेदिनीपुर जिलेकी तमलुक तहसीलका एक ग्राम। यह अक्षा॰ २२° ०´ २१´´ उ॰ और देशा॰ ८७° १५´ २०´´ पू॰ पर अवस्थित है। कसियाड़ी वाणिज्यप्रधान स्थान है। यहां तसरकी कृषि होती है। तसरके व्यवसायसे ही कसियाड़ी विख्यात है।

कसीदा (हिं॰) कसीदा देखो।

कसीदा (अ॰ पु॰) कविताविशेष किसी विषयकी शायरी। यह उर्दू या फारसीमें बनाया जाता है। इसमें व्यक्तिविशेषकी स्तुति या निन्दा रहती है। कसीदेमें कमसे कम १० पंक्तियां पड़ती हैं।

कसीर (हिं॰) कशीर देखो।

कसुन (हिं॰ पु॰) अश्वभेद, हथिमानी घोड़ा। इसकी आंखें कच्ची होती हैं।

कसूमर (हिं॰ पु॰) कुसुम्भ कुसुम।

कसूर (अ॰ पु॰) अपराध, खता, चूक।

कसूरमन्द (फा॰ वि॰) अपराधी, खतावार।

कसूरवार कसूरमन्द देखो।

कसेरहट्टा (हिं॰ पु॰) कसेरोंका बाजार, कसरहट्टा।

कसेरा (हिं॰ पु॰) युक्तप्रदेश और बिहारके बनियोंकी एक जाति। यह कांसे और फूल धातुके बरतन बनाकर बेचती है।

कसेरु (पु॰ स्त्री॰) कशेरु देखो।

कसेरुका (सं॰ स्त्री॰) कशेरु देखो।

कसेल (हिं॰) कसैल देखो।

कसैया (हिं॰ पु॰) १ मजबूत बांधनेवाला, जो कस देता है। २ परीक्षक जांचनेवाला। ३ गोघातक कसाई।

कसैला (हिं॰ वि॰) कषायरस विशिष्ट, कसाववाला, जो जीभको ऐंठता या सिकोड़ता है। कषाय द्रव्य वस्तमें पाक करनेसे कसा वर्ण बनता है।

कसूर, पञ्जाब प्रान्तके लाहोर जिलेकी अपनी तहसील और प्रधान नगर। यह अक्षा० ३१° ६´ ४६´´ उ० और देशा० ७४° ७० ´ ३१´´ पू० पर अवस्थित है। लाहोर नगरसे कसूर ३४ मील दक्षिणपूर्व फीरोजपुरको सड़क पर पड़ता है। पहले सिन्धु नदके पूर्वसे पठान लोग आकर यहां बसे थे। १७६३ और १७७० ई० को सिखोंने आक्रमण मार कुछ दिनके लिये पठानोंको दबाया, किन्तु १७९४ ई० को उन्होंने फिर अपना पूर्वाधिकार पाया। अन्तपर १८०७ ई० में नवाब कुतब-उद्-दीन खान्को रणजित्सिंहने हरा कसूर लाहोरसे मिला दिया। यहां थोड़ेका साजसामान बनता है। किसी डिपटी कमिशनरको प्रतिष्ठित शिल्पशालामें नमदे और कालीन तैयार होते हैं। सिन्धु, पञ्जाब, दिल्ली रेलवेकी रायविन्द-फीरोजपुर शाखा इसे लाहोर और फीरोजपुरसे मिलाती है। अतिरिक्त असिष्टण्ट कमिश्नरकी कचहरी, तहसीली, पुलिसका थाना, पाठागार, औषधालय और डाक बंगला विद्यमान है। देशीय द्रव्यके व्यवसायका कसूर केन्द्रस्थल है। बड़ी सड़कें पक्की बनी हैं। पानी निकलनेका बड़ा सुभीता है। लोगोंके कथनानुसार मर्यादा पुरुषोत्तमके पुत्र कुशने कसूर बसाया था।

कसेरा (हिं० पु०) कांस्यकार, कांसेकी चीजें बनाने और बेचनेवाला। यह एक वणिक् जाति है। संस्कृत पर्याय कंसकार, कंसवणिक् और कांस्यकार है। इस जातिकी उत्पत्तिके सम्बन्धमें मतका भेद लक्षित होता है। ब्रह्मवैवर्तपुराणके ब्रह्मखण्डमें लिखा है,—

किसी समय विश्वकर्मा स्वर्गकी वेश्या घृताचीको देख कामके शरसे पीड़ित हुये। उस समय घृताची कामदेवके निकट जाती थीं। विश्वकर्माने अपना अभिलाष उनको बता कर कहा, 'हे सुन्दरी! हमने कामदेवसे कामशास्त्र पढ़ा है। हमारी इच्छा पूर्ण कीजिये। हम आपको विविध अलङ्कार देंगे।' घृताची बोल उठीं, 'देवो! आप कामदेवसे कामशास्त्र सीखनेकी बात कहते हैं। इस समय हम उन्हीं कामदेवके चित्तरञ्जनको जा रही हैं। आज हम तुम्हारे गुरु कामदेवकी पत्नीके स्थानमें हैं। ऐसे स्थल पर हमारी कामना करनेसे आपको गुरुपत्नीके गमनका महापातक लगेगा। इस किसी प्रकार आज आपके प्रस्तावमें सम्मत हो नहीं सकतीं।' विश्वकर्माने घृताचीकी बातसे अत्यन्त चिढ़ शाप दिया था, 'तूने मेरा मनोरथ पूर्ण न किया। अब मेरे अमोघ शापके प्रभावसे मर्त्यलोकमें शूद्राके गर्भसे तुझे जन्म लेना पड़ेगा।' फिर घृताचीने भी विश्वकर्माको शापित किया 'तू भी मेरे शापसे स्वर्ग छोड़ नरलोकमें जाकर उत्पन्न होगा।' घृताची कालक्रमसे शूद्राके गर्भसे जन्म ले मदनगोपको पत्नी बनीं। उधर विश्वकर्मा किसी ब्राह्मणके घर उत्पन्न हुये। घटनावश मदनगोपकी स्त्रीसे ब्राह्मणरूपी विश्वकर्माने सहवास किया था। उससे नौ पुत्रोंने जन्म लिया। उन्हीं नौ पुत्रोंसे मालाकार, कर्मकार, कंसकार (कसेरा) प्रभृति नौ जातियां चली हैं। मालाकार, कर्मकार शङ्खकार, तन्तुवाय, कुम्भकार, और कंसकार (कसेरा) छह जातियां प्रधान हैं।* बृहद्धर्मपुराणके मतसे ब्राह्मणके औरस और वैश्याके गर्भसे अम्बष्ठ, गन्धवणिक्, शङ्खकार और कांसकार (कसेरा) जाति निकली है।†

भार्गवराम विरचित जातिमालामें लिखा है,

"गान्धिकः शाङ्खिकश्चैव कांसिको मणिकारकः।
सुवर्णवणिकश्चैव पञ्चैते वणिजः स्मृताः॥"

वणिक् अर्थात् बनिया जाति पांच प्रकारकी है—गन्धवणिक, शङ्खवणिक, कंसवणिक (कसेरा) मणिकार और सुवर्णवणिक।' गन्धवणिकके औरस तथा शङ्खवणिक्की कन्याके गर्भसे ताम्र और कांस्य उपजीवी कंसवणिक (कसेरा) जाति उत्पन्न हुयी है।

भार्गवरामके मतानुसार पितामक्रम पर अवर

---

* "विश्वकर्मा च शूद्रायां वीर्याधानं चकार सः।
ततो बभूवुः पुत्राश्च नवैते शिल्पकारिणः॥
मालाकार-कर्मकार-शङ्खकार-कुविन्दकाः।
कुम्भकारः कंसकारः षडेते शिल्पिनां वराः॥"
(ब्रह्मवैवर्तपुराण, ब्रह्मखण्ड, १०।१९-२०)

† "वैश्यायां ब्राह्मणाज्जातः अम्बष्ठो गान्धिको वणिक्।
कंसकारशङ्खकारौ ब्राह्मणात् संबभूवतुः॥" (बृहद्धर्मपुराण)

जातियोंके संस्रवमें कंसवणिक (कसेरे)से निम्न लिखित जातियां निकली हैं—

"मालिकात् मणिबन्धायां मणिकारस्य सम्भवः।
कांस्यकारात् मणिकायां तुरुष्क कोडिवो भवेत् ॥
मणिकायां कांस्यकारात् कांस्यकस्य च सम्भवः।
शौण्डिकात् कांस्यकार्यां तैलिकस्य निबोधत ॥" (जातिमाला)

मद्गुवणिकके औरस एवं अंगवणिककी कन्याके गर्भसे मणिकार, कंसवणिकके औरस तथा मणिकारकी कन्याके गर्भसे सुवर्णवणिक, सुवर्णवणिककी कन्याके गर्भ एवं शांखकारके औरससे गोपाल और गोपालके औरस तथा कंसवणिककी कन्याके गर्भसे तेली तंतोली हुये हैं।

किन्तु कसेरे अपनेको प्रकृत वैश्यजाति बतलाते हैं। वास्तविक क्षत्रियों और वणिकोंमें इनका सम्मान कुछ कम नहीं। यह यज्ञोपवीत व्यवहार करते हैं। युक्तप्रदेशके कसेरोंमें सात शाखायें हैं, १ पुरबिया, २ पछैयां, ३ गोरखपुरी ४ तए ५ शांवरा, ६ मगिया और ७ गोलर।

इन शाखाओंमें परस्पर आदान प्रदान और आहार व्यवहार प्रचलित नहीं। मिर्जापुरमें कसेरे अधिक देख पड़ते हैं। वहां यह जातिके पात्र प्रस्तुत कर दूर देशान्तरको बिकनेके लिये भेजते हैं।

बिहार प्रदेशके कसेरे हिन्दुस्थानी कसेरोंकी भांति पदमर्यादा पा न सकते भी ठठेरे प्रभृति दूसरे बनियोंसे कुल और शीलमें श्रेष्ठ हैं। ठठेरे इन्हींके बनाये द्रव्य पर खोदाई करते हैं। ठठेरा देखो।

बिहारके कसेरोंमें अनेक गोत्र चलते हैं—कभी खिया कसेया, चौधरी, चौधरा, हरिहरका, कचक मछोखिया मडुआ, मधीखिया, मोकरिया सुतरिया और सुघट। यह अपने गोत्रमें विवाह कर नहीं सकते। फिर कन्याका विवाह बाल्यकालमें ही करना पड़ता है। कभी कभी कन्याका वयस कुछ अधिक हो जाता और ऋतुमती बननेके पीछे उसे पतिका मुख दिखाता है। ऐसी कन्या ऋतवन्ध्या, मृतगर्भा अथवा वन्ध्या होने पर पुरुष अनन्य पत्नीको ग्रहण कर सकता है। विधवायें मनमें आनेसे 'सगाई' प्रथाके अनुसार अपना विवाह गभीर रात्रिको अन्धकार पक्षमें होता है। उसमें केवल विधवायें ही जातीं, सधवायें अपवित्र समझ देखने नहीं पातीं। पुरुष सिन्दूर चढ़ा विधवाको अपने पत्नीत्वमें ग्रहण करता है। भोज आमोद प्रमोद और शाक्तके धर्मकर्मका प्रभाव रहता है। समाजमें इन्हें सत्शूद्र कहते हैं। ब्राह्मण इनके हाथका पानी पी सकते हैं।

युक्तप्रदेशके कसेरोंमें पद कर और गोत्र प्रचलित है—पद—गुप्त, प्रसाद, दास दो, साव नन्दन, दे इत्यादि। कर—कसवानी मुरम्मदाबादी, मोता मेमी।

गोत्र—यह ऋषि शाण्डिल्य वसगार्गि, कपिलेय, इति ऋषि।

विवाहादि कार्यपर इन्हें विपुल धनमें गिरना पड़ता है। सब घरोंको निमन्त्रण देना आवश्यक है। भोजका बड़ा आयोजन होता है। इसीसे ग़रीब कसेरे एक ही साथ ७-८ कन्याओंका विवाह कर डालते हैं। यहांके कसेरोंमें विधवाविवाह नहीं चलता। और भाद्रमासके १० वें दिन विश्वकर्माकी पूजा होती है। उस दिवसको कोई कसेरा यन्त्रादि नहीं छूता।

बम्बईके कसेरे अपनेको जातिवाले वंशीय क्षत्रिय सेनापतिके औरस और क्षत्रियाओंके गर्भसे उत्पन्न बताते हैं। शूद्रोंकी अपेक्षा यह कुल, शील और मानमें बहुत श्रेष्ठ हैं।

कसैलापन (हिं॰ पु॰) कषायरस कसापन।

कसैली (हिं॰ स्त्री॰) पूगफल, सुपारी।

कसोरा (हिं॰ पु॰) कटोरा, प्याला।

कसौंजा (हिं॰ पु॰) कासमर्द भेद, एक पौधा। यह वर्षा ऋतुमें उपजता और तीन चार हाथ ऊंचे उठता है। पत्ता एक धुरिए (सींके)में परस्पर सम्मुखीन आते और प्रायः तथा तीखाप दिखाते हैं। शीतकाल इसके फूलनेका समय है। फल कई छाल अङ्गुलि दीर्घ एवं चमड़े होते हैं। बीज एक दिन् तीखाप रहते हैं। इसका कर्षोका सतत हरित हय है। पत्र और पुष्प इस्तेमाल होते हैं। यह कटु, उष्ण और कफ, वात तथा वायु नाशक है। लोग इसका साग भी बनाते

है। रक्तवर्ण कसौंजिके पत्र और बीज अर्शोरोगमें औषधकी भांति व्यवहृत होते हैं।

कसौंजी (हिं॰ स्त्री॰) कसौंदा देखो।

कसौंदा, कसौंदा देखो।

कसौंदी (हिं॰ स्त्री॰) कसौंदा देखो।

कसौटी (हिं॰ स्त्री॰) स्वर्णमणि, चांदीसोना कसनेका पत्थर। यह काली होती है। शालग्राम कसौटीके बनते हैं। लोग इसके खरल भी तैयार करते हैं। २ परीक्षा, जांच।

कसौली—पञ्जाबके शिमला जिलेका एक सैन्यवास (छावनी) और निरामय स्थान। यह एक पर्वतके शिखर (अक्षा॰ ३०° ५३´ १३´´ उ॰ तथा देशा॰ ७६°०´ ५२´´ पू॰)पर अवस्थित है। कालिकाकी उपत्यका नीचे देख पड़ती है। कसानी अम्बालेसे ४५ मील उत्तर और शिमलेसे ३२ मील दक्षिण-पश्चिम लगती है। १८४४-४५ ई॰को देशीय राज्य बीजासे भूमि ले यहां छावनी डाली गयी थी। उस समयसे बराबर कसौलीमें अंगरेज सिपाही रहते हैं। पर्वत समुद्रतलसे ६३२२ फीट ऊंचा है। इससे दक्षिणपश्चिम समभूमि और उत्तर हिमालयका दृश्य अत्यन्त मनोहर लगता है। यहां कुक्कुट और शृगाल आदिके विषकी चिकित्सा होती है।

कस्कादि (सं॰पु॰) पाणिनि व्याकरणोक्त गण विशेष। इसमें विसर्गस्थानपर नित्य 'स' होता है। कस्कादिके शब्द यह हैं,—कस्क, कौतस्कुत, भ्रातुष्पुत्र, शुनस्कर्ण, सद्यस्काल, सद्यस्क्री, साद्यस्क, कांस्कान्, सर्पिष्कुण्डिका, धनुष्कपाल, बर्हिष्पल, यजुष्पात्र, अयस्कान्त, तमस्काण्ड, अयस्काण्ड, मेदस्पिण्ड, भास्कर, अहस्कर और आकृतिगण। (पा॰ ८।३।४८)

कस्तम्भी (वै॰ स्त्री॰) कं शिरोऽग्रभागं स्तभ्नाति, क-स्तम्भ-अण्-ङीप्। शकटका अधः पतन रोकनेको एक अवष्टम्भ, गाड़ीके बांसकी थूनी।

कस्तरी (हिं॰ स्त्री॰) दुग्धपात्रभेद, एक बरतन। इसमें दूध पकाकर रखा जाता है। मुख विस्तृत रहता है। फारसीमें इसे 'कसा' और साधारण हिन्दीमें 'दूधहंडी' कहते हैं।

कस्तीर (सं॰ क्ली॰) पिच्चट, रांगा। इसका संस्कृत पर्याय—पुत्रपिच्चट, मृदङ्ग, वङ्ग, रङ्ग, त्रपुः, स्वर्णज, नागजीवन, गुरुपत्र, चक्र, तमर, नागज, आलीनक और सिंहल है। रङ्ग देखो।

कस्तीर्य (सं॰ क्ली॰) रङ्ग, रांगा।

कस्तुरिका (सं॰ त्रि॰) कस्तूरी स्वार्थे कन्-टाप्-पृषोदरादित्वात् साधुः। कस्तूरिका मृग, एक हिरन। इसकी तोंदीसे कस्तूरी निकलती है। कस्तूरिकामृग देखो। २ कस्तूरी, मुश्क।

कस्तूरमल्लिका, कस्तूरीमल्लिका देखो।

कस्तूरा (हिं॰ पु॰) १ कस्तूरी, मुश्क। २ सन्धिभेद, एक जोड़। यह जहाजी तख्तोंमें पड़ता है। ३ शुक्तिभेद, एक सीप। इसमें मोती रहता है। ४ पक्षिविशेष, एक चिड़िया। यह धूसरवर्ण होता है। पद तथा चञ्चुका वर्ण पीत लगता और उदर श्वेताभ रहता है। कस्तूरा पार्वत्य प्रदेशमें काश्मीरसे आसाम तक मिलता है। इसकी बोली सुननेमें अच्छी लगती है। ५ द्रव्य विशेष, एक चीज़। इसे पोर्टब्लेयरके पर्वतोंकी शिलाओंसे खुरच-खुरच निकालते हैं। कस्तूरा अत्यन्त मूल्यवान् होता है। इसे दुग्धके साथ २ रत्ती सेवन करते हैं। लोग इसे अबाबील पक्षीके मुखका फेन समझते हैं।

कस्तूरिक (सं॰ पु॰) करवीर वृक्ष, कनेरका पेड़।

कस्तूरिका (सं॰ स्त्री॰) कस्तूरी स्वार्थे कन्-टाप् पृषोदरादित्वात् ह्रस्वः। कस्तूरी, मुश्क।

कस्तरिकाण्डज, कस्तूरीकाण्डज देखो।

कस्तूरिकामृग (सं॰ पु॰) एक प्रकार हरिण, मुश्की हिरन। तलपेटके निकट नाभिमें कस्तूरी सञ्चित रहने और शरीरसे कस्तूरिका गन्ध निकलनेसे ही इसको कस्तूरिकामृग कहते हैं। संस्कृत पर्याय—कस्तूरीमृग, गन्धवाह और गन्धमृग है। भारतवर्षमें अति पूर्वकालसे यह मृग परिचित और समादृत है। प्राचीन शास्त्रकारोंने पांच प्रकारके मृग कहे हैं। कस्तूरिका मृग 'पार्थिवमृग'के अन्तर्गत है।

"पृथिव्यप्वायुगगनाद्यो वौऽधिकास्तु पञ्चधा।
मियन न कर्मभेदाघ्नु समस्ता मृगजातयः॥

है मक्षिका· पौरस्तरीन्द्रदेवस्ते खर्वा देव समन्वात् ग्रहितः ॥"

(युक्तिकल्पतरु)

मृगजाति एक प्रकार नहीं। पार्थिवमृग जलमृग वायुमृग, गन्धमृग और तेजोमृग पांच भेद विद्यमान है। जिस मृगका शरीर एवं सर्व पीत तथा गन्ध विशिष्ट देखाता, वह पार्थिव गन्धमृग कहाता है। गन्धर्वी। इसी गन्धमृगका अपर नाम कस्तूरिकामृग है। कस्तूरिकामृग रोमन्थक (जुगाल करनेवाले) चतुष्पद पशुओंमें परिगणित है। यह साधारण हरिणोंकी भांति नहीं होता। दूसरे हरिणोंके बड़े बड़े सींग रहते हैं। किन्तु इसके वह देख नहीं पड़ते। फिर भी अति हावभाव बिलकुल हरिणोंकी ही भांति है। इसीसे यह विभिन्न जातीय हरिण कहाता है। हरिणोंकी भांति चक्षुके मूलमें इसके अश्रुग्रन्थि नहीं होते। इसको डाढ़ ऊपरी ओठसे गालके दोनों पार्श्वोंमें इसके दो गजदन्त दो-तीन अङ्गुलि बाहर निकल आते हैं। कोमलपर्ण चरनेसे वंशपुष्पके पत्तोंकी भांति कठिन लगते हैं। कस्तूरी पानेके लिये इसका इतना आदर है। कस्तूरी नामक सुगन्धि द्रव्य बहु दिनसे भारतवर्षमें प्रचलित है।

"कस्तूरिकामदीयन्ते दृष्टिदेह ।" (अमर)

पहले भारतवर्षमें तीन जगह तीन प्रकारका कस्तूरिकामृग मिलता था। स्थानभेदसे कस्तूरीका भी तारतम्य रहा। काश्मीरपण्डित नरहरिने निर्मित निघण्टुराज नामक ग्रन्थमें लिखा है,—

"कपिला पिङ्गला कृष्णा कस्तूरी त्रिविधा क्रमात् ।
नैपाली काश्मीरी कामरूपी च जायते ॥
कामरूपोद्भवा श्रेष्ठा नैपाली मध्यमा भवेत् ।
काश्मीरदेशसम्भवा कस्तूरी ह्यधमा स्मृता ॥"

नेपाल, काश्मीर तथा कामरूप तीन प्रदेशोंमें कपिला, पिङ्गला एवं कृष्ण तीन प्रकारकी कस्तूरी उत्पन्न होती है। कामरूपकी सर्वोत्कृष्ट एवं कृष्णवर्ण, नेपालकी मध्यम तथा नीलवर्ण और काश्मीरकी कस्तूरी अधम एवं कपिलवर्ण रहती है। उक्त प्रमाण द्वारा समझ पड़ता—पूर्वकालमें कामरूप नेपाल और काश्मीरमें भिन्नप्रकारका कस्तूरीमृग रहता था। अधिक टीकाकार मल्लिनाथके मतमें हिमालय प्रदेश ही इस जातीय मृगका प्रधान वासस्थान है,—

"स्थलानि कस्तूरी मृगनाभि गन्धि देवदारुविराजितम् ।
हैम हिमालयेषु यत्र यत्र कस्तूरी मृगीति स्मृता ॥"

(कुमारसम्भवकी ऊपर मल्लिनाथकृत टीका १।५४)

यह मृग ग्रीष्मकालमें समुद्रसे ८००० फोट ऊंचे स्थान पर साइबेरियां मध्य एशिया एवं हिमालय प्रदेशमें ऊपरमें और जाड़ामें देख पड़ता है। सकल स्थानोंकी अपेक्षा तिब्बत देशीय कस्तूरिकामृग अधिक आदरणीय है। इसे तिब्बतमें 'ला' एवं 'शव', काश्मीरमें 'रौस', कुमायनमें 'बेना' हिन्दुस्थानमें 'कस्तूरा', महाराष्ट्रमें 'पिसोरी' और ईरानमें 'सुमुक' कहते हैं। इसका अंगरेजी वैज्ञानिक नाम मस्कस् मस्चिफिरस (Moschus moschiferus) है।

यह ढाई फीटसे अधिक बड़ा नहीं होता। वर्ण कृष्णवर्ण रहता है। बीच-बीच लाल और पीले दाग पड़ जाते हैं। गलदेश पीताभ लगता है। पुच्छ (दुम) कोई एक इञ्च दीर्घ देखाता है। स्त्रीपुरुष दोनोंके पुच्छ पर दो लम्बे पर्यन्त लोम और पेटके निम्न भागमें प्रायः रहता है। बढ़नेपर पुरुषका लोम या पतन पड़ जाता है। पश्चात् पुरुषके केवल नाभिसे ही कस्तूरी निकलती है।



कस्तूरिका मृग।

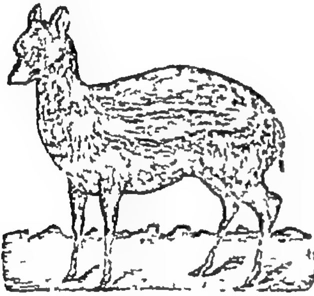
यह अति भीरु, निरीह, शान्तस्वभाव और निर्जनप्रिय है। निविड़ अरण्य और मानवके अगम्य उपत्यका प्रदेशमें इसकी विचरणकी भूमि रहती है। शिकारी बड़े कष्टसे धर पकड़ कर सकते हैं। किसी प्रकार

पकड़ सकते; वह इसका नाभि काट लेते और अधिक मूल्य पर व्यवसायियोंके हाथ बेच देते हैं।

कस्तूरिकामृगका नाभि (musk-bag) कबूतरके छोटे अण्डेकी भांति होता है। आकार सुपारीसे मिलता है। प्रसिद्ध भ्रमणकारी टाभार्णिआरने ७६७२ नाभि संग्रह किये थे।

यह पर्वतजात सामान्य तृण खा जीवन धारण करता है। चारो पैर अत्यन्त सूक्ष्म होते हैं। दूरसे जङ्घादिका भेद समझ नहीं पड़ता। इसीसे लोग कहते, कि कस्तूरिकामृगके घुटने नहीं रहते।

भारत महासागरीय द्वीपोंमें इसकी भांति दूसरे भी कितने ही क्षुद्र पशु हैं। किन्तु उनके नाभिसे कस्तूरी नहीं निकलती। सुमात्रा तथा यवद्वीपमें उक्त क्षुद्र अर्धहस्तपरिमित हिरणको कहीं 'सेम्रोटन' और कहीं 'नेपू' कहते हैं। अंगरेजी वैज्ञानिक नाम ट्रागुलस् जवनिकस् (Tragulas Javanicus) है।



कस्तूरी मृगसदृश हरिण।

यह यवद्वीप-वासियोंको अत्यन्त प्रिय लगता और पालनेसे बहुत हिलता है।

कस्तूरी (सं० स्त्री०) कसति गन्धो ऽस्याः, कस्-ऊर तुट् ङीप् पृषोदरादित्वात् साधुः। सुगन्धि द्रव्यविशेष, मुश्क, एक खुशबूदार चीज़। कस्तूरिका मृग देखो। इसका संस्कृत पर्याय—मृगनाभि, मृगमद, मृग, मृगी, नाभि, मद, वातामोद, योजनगन्धिका, मदनी, गन्धकेलिका, वेधमुख्या, मार्जारी, सुभगा, बहुगन्धदा, सहस्रवेधी, श्यामा, कामान्धा, मृगाण्डजा, कुरङ्गनाभि, ललिता, श्यामला, मोदिनी, कस्तूरिका, कस्तुरिका, नाभी, लता, योजनगन्धा, मार्ग, गन्धबोधिका, कालाक्षी, धूपसवाहो, मिश्या और गन्धपिशाचिका है। कस्तूरीमृगके नाभि (एक छोटी थैलीके आकारमें) रहता है। उसीमें कस्तूरी उत्पन्न होती है। इसीसे लोग इसे मृगनाभि (नाफा) कहते हैं। अरबी और फारसी मुश्क, बंगला, तामिल तथा तेलगु कस्तुर, यव एवं मलयमें दिदेश, सिंहली मता, ब्रह्मो टो, चीना गिहियङ्ग, रूसी मुसकस, इटालीय मुषचिनो, जर्मन बिसम्, पोर्तगीज़ अल मिस्कार, पोलन्दाज मस्क, डेनमार्की दिसमेर, फरासीसी मस्क और अंगरेजी नाम मास्क हैं। मृगनाभि कुछ उग्र होती है। आस्वाद कटु लगता है। मुखमें कस्तूरी डालनेसे विपुल सद्गन्ध निकलता है।

प्राचीन संस्कृत ग्रन्थोंमें भूरि भूरि प्रमाण मिलता कि भारतवर्षमें बहु पूर्वकालसे मृगनाभिका आदर है। प्राचीन वैद्यक मतसे कामरूप, नेपाल और काश्मीर तीन देशोंमें कस्तूरी उत्पन्न होती है। कामरूपकी कस्तूरी सर्वोत्कृष्ट और कृष्णवर्ण रहती है। फिर नेपालकी मध्यम एवं नीलवर्ण और काश्मीरकी कस्तूरी अधम तथा कपिलवर्ण ठहरती है। यह पांच श्रेणियोंमें विभक्त है—खरिका, तिलका, कुलत्था, पिण्डा और नायिका। (भावप्रकाश) राजवल्लभके मतसे कस्तूरी सुगन्धि, तिक्त, चक्षुके लिये हितकर, और मुखरोग, किलास, कफ, दौर्गन्ध्य, वन्यदोष, अलक्ष्मी, मल, रक्तपित्त तथा छर्दिनाशक है। दूसरे भावप्रकाशमें इसे कटु, क्षार, उष्ण, शुक्रजनक, गुरु और शीत तथा शोषनाशक भी कहा है।

पहले युरोपके लोग कस्तूरीका विषय समझते न थे। ई० ८म शताब्दको अरबो इसे युरोप ले गये। अरबी और ईरानी कस्तूरीको मुश्क कहते हैं। इसी 'मुश्क'से लाटिन मुसकस (Muschus) और अंगरेजी मास्क (Musk) शब्द निकला है।

युरोपीय चिकित्सकोंके मतसे यह उत्तेजक और आक्षेपजनक है। श्वासकाश (१०से १५ ग्रेन), कास (१ ग्रेन दिनको ३।४ बार), मृगीरोग, ताण्डवरोग, धनुष्टङ्कार, स्त्रियोंके प्रसवकालीन आक्षेप, हिष्टिरिया, मोहकर एवं तान्त्रिक ज्वर (Pneumonia), फुसफुसके प्रदाह (२४-३० ग्रेन) और वातरोगमें कस्तूरी विशेष

उपकारी है। बालकोंके धातुरोगमें अधिक धातुक्षय होनेसे १।२ ग्रेन कस्तूरी पिचकारीसे लगानेमें फल मिलता है।

आजकल तीन प्रकारकी कस्तूरी प्रचलित है—निपाली, रूसी और चीना। निपाली सर्वोत्कृष्ट, चीना मध्यम और रूसी अधम होती है। इस देशीय मृगकी कस्तूरी उत्कृष्ट नहीं रहती। व्यवसायी इस देशीय मृगके नाभिमें जमा देते हैं। इसमें इस देशीय कस्तूरीका गन्ध बहुत कुछ बदल जाता है।

मृगनाभि अधिक मूल्यमें बिकती है। प्रत्येक नाभिका मूल्य १५ या १७ रु० है। इसीसे व्यवसायी मांस और रक्त मिला और कृत्रिम चर्म सीप लगा दिये बेचते हैं। किन्तु इनके नाभिकी परीक्षा बहुत सीधी है। कृत्रिम मृगनाभि अग्निमें डालनेसे दुर्गन्ध उठता है। किन्तु असल कस्तूरीमें यह बात नहीं होती है।

कस्तूरिया (हिं० पु०) १ कस्तूरीमृग। (वि०) २ कस्तूरी मिश्रित, सुगन्धी। ३ कस्तूरी सदृश वर्ण विशिष्ट जो मुश्क रंग रखता हो।

कस्तूरिल, कस्तूरील देखो।

कस्तूरीकाण्डज (सं० पु०) मृगनाभि, मुश्क।

कस्तूरीतिलक (सं० क्ली०) कस्तूर्याङ्कितम् ६ तत्। कस्तूरीका तिलक, मुश्कका टीका।

"कस्तूरीतिलकं ललाटफलके" (विल्वल)

कस्तूरीभैरवरस (सं० पु०) रसविशेष एक दवा। हिङ्गुल, विष, टङ्क (सोहागा) जातीकोषफल (जाय फल), मरिच पिप्पली और कस्तूरी बराबर बराबर जलमें घोंटनेसे यह औषध प्रस्तुत होता है। मात्राका परिमाण २ रत्ती है। इसके सेवनसे सोमाङ्ग सन्निपात दूर होता है। (भैषज्यरत्ना०) वृहत् कस्तूरीभैरव रस बनानेकी विधि यह है—कस्तूरी, कर्पूर, ताम्र, जातकी, गुडुचिमूली, रौप्य, स्वर्ण, मुक्ता, प्रवाल, लौह, पाठा, विड़ङ्ग, मुस्तक गुण्ठी, बाला हरिताल अभ्र और आमलकी समभाग अर्कपत्रके रसमें घोटनेसे यह रस प्रस्तुत होता है। इसे १ रत्ती आर्द्रक रसमें सेवन करनेसे विषमज्वर छूटता है। (रसरत्नाकर)

कस्तूरीमल्लिका (सं० स्त्री०) कस्तूरी गन्धयुक्त मल्लिका मध्यप्रदेशी०। १ मृगनाभि, हिरनका नाफा। २ मल्लिका पुष्पभेद, किसी किस्मकी चमेली। यह मृगमदवासा होती है। कस्तूरीमल्लिका दो प्रकारकी मिलती है—एक लता सदृश और दूसरी गुल्मके समान। दोनोंमें अम्लफल आते हैं। पुष्प और फलके बीजमें कस्तूरीगन्ध रहता है। केश सजनेके मसालोंमें इसका बीज डाला जाता है।

कस्तूरीमृग, कस्तूरिकामृग देखो।

कस्तूरीमोदक (सं० पु०) मोदकभेद, किसी किस्मका लड्डू। कस्तूरी, त्रिकटु, कण्टकारी, दोनो जीरक, त्रिफला, पलकदलोचन, कर्पूर जयन्तिजा तथा कोकिलाक्षका बीज समभाग और सबके बराबर शर्करा डाल मर्दनके इस चूर्णको मन्द मन्द अग्निमें आलोड़ित, दुग्ध एवं कुष्माण्डरसमें पाक करे। मोदक अक्षपरिमित बनता है। इस मोदकको खानेसे प्रमेह रोग आरोग्य होता है। (भैषज्यरत्ना)

कस्तूरीवल्लिका (सं० स्त्री०) कस्तूरीगन्धयुक्ता वल्लिका, मध्यप्रदेशी०। लताकस्तूरी, एक खुशबूदार बेल। भावप्रकाशके मतमें यह मधुर एवं तिक्त रस, शीतल, लघु, चक्षुके लिये हितकर, भेदक और कफघ्न, वस्ति रोग, मुखरोग तथा श्लेष्मनाशक होती है।

कस्तूरीहरिण, कस्तूरिकामृग देखो।

कस्द (अ० पु०) प्रतिज्ञा, सङ्कल्प, इरादा।

कस्मल (सं० क्ली०) कस बन मुट, निपातनात् अस्य सत्वम्। १ कश्मल, घबराहट। २ मोह, गुम।

कस्मात् (सं० अव्य०) किस कारणसे, किसलिये, क्यों।

कस्य (हि० स्त्री०) सुरा शराब।

कस्वर (सं० त्रि०) कस् वरच्। १ गमनशील, चलता हुआ जानु। २ हिंसक अपकार।

कस्सरी (हिं० स्त्री०) आकर्षण, खींचतान। यह शब्द लहर खींचने या तानने के अर्थमें आता है।

कस्सा (हिं० पु०) बबूरत्वक, बबूलकी छाल। इससे रंगनेके लिये चमड़ा भिगाया जाता है। २ मद्यभेद, सुरा, एक शराब। यह बबूरकी छालसे प्रस्तुत होता है।

कस्सावना (हिं० स्त्री०) दुबिया मटर, मोठिया।

कस्साब (अ० पु०) गोघातक, कसाई।

कस्सी (हिं० स्त्री०) १ खनित्रभेद, एक फावड़ा। यह छोटी रहती और मालियोंके काममें लगती है। २ मानविशेष, एक नाप। यह दो पद परिमित रहती और भूमि नापनेमें चलती है।

कह (हिं० प्र०) १ को। (क्रि० वि०) २ कहां।

कहकहा (अ० पु०) अट्टहास, ठट्ठा, खिलखिलाहट।

क़हक़हा दीवार (फ़ा० स्त्री०) १ प्राचीर विशेष, एक ऊंची दीवार। चीनके राजा शीहवाङ्गतीने चीनके उत्तर ई०से पूर्व ३य शताब्दके अन्तमें फुकिन, कुआङ्गतुङ्ग और कुआंसी नामक मोङ्गलोंका आक्रमण निवारण करनेके लिये इसे बनाया था। यह १५०० मील दीर्घ, २० से २५ फीट तक उच्च और इतनी ही प्रशस्त है। सौ-सौ गजके अन्तर पर वप्र (बुर्ज) विद्यमान हैं। चीन देखो। २ कठिन अवरोध, बड़ी रोक।

कहगिल (हिं० स्त्री०) गारा, फेनिया, घास मिली हुयी गीली मट्टी। यह शब्द फारसी भाषाके काह (घास) और गिल (मट्टी)का समाहार है।

क़हत (अ० पु०) दुर्भिक्ष, अकाल, अनाजकी कमी।

कहतरी (हिं० स्त्री०) कसरी, लहर उठायी।

कहता (हिं० पु०) कथनकार, कहनेवाला।

कहनूत (हिं० स्त्री०) प्रसिद्ध वार्ता, मशहूर बात।

कहन (हिं० पु० स्त्री०) १ कथन, बोलचाल। २ वचन, बात। ३ लोकोक्ति, मसल, कहतूत। ४ कविता, शायरी। ५ भाषण भाव, बोलनेका तौर।

कहना (हिं० क्रि०) १ बोलना, बताना, समझना। २ प्रकाटित करना, खोलना। ३ संवाद सुनाना, खबर पहुंचाना। ४ बोलाना, नाम लेना। ५ सिखाना पढ़ाना, बहकाना-सुनाना। ६ चर्चा लेना, धोका देना। ७ अयोग्य बोलना, कह बैठना। ८ कविता बनाना, शायरी सुनाना। (पु०) ९ अनुरोध, तरगीब, समझाव।

कहनावत (हिं० स्त्री०) १ किंवदन्ती, मसल, कहावत। २ कथन, कहासुना।

क़हर (अ० पु०) १ आपद्, आफ्त, अनहोनी। (हिं०) २ भयङ्कर, खौफ्नाक।

कहराना, कहरना देखो।

कहय (सं० पु०) कस्य सूर्यस्य हयः अश्वः। सूर्यका अश्व या घोड़ा। सूर्यके सातों अश्वोंका वर्ण हरित है।

कहरवा (हिं० पु०) १ सङ्गीततालविशेष, गाने-बजानेका एक ठहराव। इसमें पांच मात्रायें लगती हैं,—चार पूरी और दो आधी। आघात चार पड़ते हैं। चाल है—धागे टेते नागधिन धा। २ गीतविशेष, दादरा। यह नाचगानेके पीछे होता है। ३ नृत्यभेद, एक नाच। यह सवेरे मिलजुलकर किया जाता है। ४ कहार, पानी भरनेवाला।

कहरुवा (फ़ा० पु०) १ निर्यासभेद, एक गोंद। यह ब्रह्मदेशकी खनियोंसे निकलता है। वर्ण पीत है। इसे औषधोंमें व्यवहार करते हैं। चीनमें कहरुवा गला मालकी गुटिका और मुहनाल बनाते हैं। इस रंग भी चढ़ता है। वस्त्र प्रभृति पर रगड़ निकट रखनेसे यह तृणादिको यह चुम्बक भांति आकर्षण करता हैं। २ सर्जवृक्ष, धूनेका पेड़। इसीके गोंदको धूप या राल कहते हैं। यह सततहरित् वृक्ष है। पश्चिमघाटके पर्वतोंमें इसकी अधिक उत्पत्ति है। दूसरा नाम सफेद डामर है। तारपीनके तेलमें इसे घोल रंग चढ़ाते हैं। कहरुवेकी मालाभी उत्तम होती है। उत्तर-भारतमें स्त्रियां इसे तेलमें उबाल गोंद बना लेती और उसी गोंदसे चिपका मस्तक पर टिकली देती है। कषाय प्रभृति प्रस्तुत करनेमें भी यह कहीं कहीं व्यवहृत होता है।

कहरुवा, कहरवा देखो।

कहल (हिं० पु०-स्त्री०) १ ऊष्मा, गरमी, उमस। २ ताप, बुखार, तकलीफ़।

कहलना (हिं० क्रि०) व्याकुल होना, घबराना।

कहलवाना (हिं० क्रि०) १ कहाना, कहनेका काम दूसरेसे कराना। २ कहलवाना, घबरवाना।

कहलाना (हिं० क्रि०) १ कहाना, कहनेका काम दूसरेसे कराना। २ नाम पाना, कहा जाना। ३ दहलाना। ४ संवाद पहुंचाना, संदेसा देना।

क़हवा (अ० पु०) एक पेड़का बीज, काफी (Coffee)। अंगरेजी वैज्ञानिक नाम कफिया अरेबिका (Coffea arabica) है। इसे बंगलामें काफि, गुजरातीमें

काफि, मराठीमें कफ्फी, मारवाड़ीमें काफि, तामिलमें कपिकोत्तै, तेलगुमें कपिवित्तुल, मलयमें कोपि, कनाड़ीमें कापिबीज, फारसीमें बुन, अरबीमें काफिकि और सिंहलीमें का'पकोत्ता कहते हैं।

अधिकांश ग्रन्थकार कहवेको अबिसीनिया, सोदान और गीनिया तथा मोज़ाम्बिकके पूर्व समुद्रतटका उपज मानते हैं। अरबमें किसीने इसे उत्पन्न होते नहीं देखा।

कहवा एक क्षुद्र वृक्ष है। इसमें शाखायें बहुत होती हैं। यह १५ से २० फीट तक बढ़ता है। पत्रकाण्ड शोताम और पुष्प श्वेतवर्ण रहता है। फल पकनेपर लाल पड़ जाता और छोटे मटरकी भांति देखाता है। फलमें दो बीज परस्पर चिपटे रहते हैं। यही बीज निकालनेसे भुन कटवाते और बाजारमें बेचे जाते हैं। बीजोंको भूनने और पीसनेसे दुकानका कहवा तैयार होता है।

दाक्षिणात्यकी इसकी कृषि अधिक है। कहवे और कपासको एक ही प्रकारकी भूमिमें लगाते हैं। इसे पानी बराबर मिलना चाहिये। उष्ण प्रदेशमें यह बहुत पनपता है। निविड़ मेघ ठीक नहीं पड़ता और प्रबल वायु लगनेसे पुष्प झड़ता जिसमें थोड़ा कहवा निकलता है। विविध उष्णता और शीत रहनेसे छाया आवश्यक आती और प्रबल वायु चलनेसे वृक्षोंको आड़ लगायी जाती है। निम्नप्रदेशको भूमिमें उपयुक्त आर्द्रता न रहनेसे अच्छी उपज कम होती है।

ई० १५वें शताब्दको शेष महायुगीन इसी अदन ले गये थे। यमनसे यह मक्के काहरो दामास्कस अलेप्पो और कुस्तुनतुनियासे पहुंचा। उससे पहले १५५४ ई०को कुस्तुनतुनियामें दो कहवेका दुकान खुली थी। १६०२ ई०का अलेप्पोमें रावलोफ नामक यूरोपीयका इसका नाम सुन पड़ा।

मुसलमानोंमें कहवा अधिक बड़ा आदर बढ़ा। मसजिदोंसे भी अधिक लोग कहवेकी दुकानोंमें देख पड़ते थे। इससे मोलवियोंने बिगड़ इसका पर बड़ा महसूल बांधा। ग्रेट ब्रटेनमें यह १६५२ ई०को पहुंचा। किन्तु १६७५ ई०का २य चार्लसने इसको दुकानें बन्द करा दीं। उनका कहना था—कहवेकी दुकानों पर बदमाश इकट्ठा होते हैं।

ई० १७वीं शताब्दके अन्त कहवेकी कृषि बढ़ी। भारत, सिंहल, यवद्वीप, अमेरिका और ब्रेज़िलमें यह लगाया जाने लगा। १६८० ई०से पहले यह अरबमें ही होता था। आजकल कोष्टा, रिका गाटेमाला, मेक्सिको,वेनेजुयेला, गियाना पेरु बोलिविया, कूबा, पोर्टो रिको और पश्चिम भारतीय द्वीपपुञ्जमें भी कहवा उपजता है। कहते दो शताब्द पूर्व मक्केसे बाबा बूदन कहवेके ७ बीज महिसूर लाये थे।

इसको भूमि उत्तम और आर्द्र रहना चाहिये। यह रक्तवर्ण एवं कृष्णवर्ण भूमिमें अधिक पनपता है। प्रबल वायु लगनेसे इसे बड़ी हानि पहुंचती है। भूमि ढालू रहना चाहिये। सींचनेकी सुविधा पड़ना अच्छा है। भूमिको १८से २४ इञ्च तक गहरे जोत घास फूस निकाल डालते हैं। एकर पीछे ५०से ८०मन तक खाद पड़ती है। पानी निकलनेको राह क्यारियों रखी जाती है। बीजोंको ६ कतारोंमें बोना चाहिये। प्रत्येक कतार ८ इञ्च पृथक् और २ इञ्च गम्भीर रहती है। बीज एक एक इञ्च दूर डाले जाते हैं। सवेरे और सन्ध्याकाल सिंचायी होती है। बीज उत्तम रहनेसे पचास भी अच्छी निकलती है। दो चार पत्तियां निकलनेसे वृक्षोंको खाद दूसरी जगह लगाते हैं। अब अरार रहनेसे जड़ें सड़ जाती हैं। एक एकर भूमिमें १०१०से अधिक वृक्ष न रहना चाहिये। गोबरकी खाद अच्छी जाती है डालियां बढ़नेसे चाकूसे छोटी काट देते हैं। ६ फीटसे अधिक इसका बढ़ना खराब है। इससे साथ दूसरी चीज़ लगा नहीं सकते। इसको कृषिका समय मई या जून मास है। दूसरे वर्ष मार्च मासमें पुष्प आते और अक्तूबर मास अथवा आठमीका प्रारम्भ लगाती हैं। फल नवम्बरसे जनवरी तक पका करते हैं। एक पलको शीघ्र तोड़ लेना और रक्षक फल गिरा देना चाहिये।

साधारणतः ईयोब लोग फलोंको धूपमें सुखा ओखलीमें कूट पछोड़ कर बीज निकालते हैं। किन्तु यह रीति अधिक आमदनी उद्य नहीं पाती। अमरिकन

लोग कलमें छाल बीजोंका गूदा छोड़ाते हैं। कलका नाम डिस्क-पलपर (disc pulpar) है। इसमें गूदेसे बीज छूट अलग जा पड़ता है। फिर बीजको हौज़में डाल १२ घण्टे धोते हैं। धुलहुवा बीज धूपमें सुखाया जाता है। सूखनेको भूमिपर मोटी चटायी बिछा देते हैं। सूखते समय कहवेको लौटते रहना चाहिये।

भारतवर्षमें जितना अधिक और उत्तम कहवा उपजता, उतना किसी दूसरे अंगरेजी अधिकारमें देख नहीं पड़ता। किन्तु इसमें अनेक रोग लग जाते हैं। यथा,—पत्तियोंका पीला और काला पड़ना, पत्तियों, फूलों और फलोंका चिपचिपा उठना और कीड़ा लगना। टिड्डियां भी इसको बड़ी हानि पहुंचाती हैं। कहवेकी पत्तियां भी उबाल कर पीनेसे अच्छी लगती हैं। गूदेमें चीनी रहती है। अरबमें लोग गूदेका अर्क तैयार करते हैं। कहवेमें तेल भी होता है।

यह उत्तेजक है। इसके सेवनसे थकावट दूर हो जाती हैं। शिरःपीड़ाका यह उत्तम औषध है। कासश्वास रोगमें भी इससे लाभ होता है। विशूचिका और ग्रहणीरोग इसके सेवनसे दब जाता है। कहवा ज्वर पर भी चलता है। पीनेसे मूत्रकृच्छ्र और वात-रक्त रोग नहीं लगता।

कहवाना (हिं० क्रि०) कहलाना, कहाना।

कहवैया (हिं० वि०) कथनकार, कहनेवाला।

कहा (हिं० पु०) १ कथना, बातचीत। (क्रि०वि०) २ कैसे, किस प्रकार। (सर्व०) ३ क्या। (वि०) ४ कौन। ५ कथित।

कहां (हिं० क्रि० वि०) १ कुत्र, किस जगह। (पु०) २ शब्दविशेष, एक आवाज़। सद्योजात शिशुके शब्द करने या रोकनेको 'कहां कहां' कहते हैं।

कहाना (हिं० क्रि०) कहलाना, कहा जाना।

कहानी (हिं० स्त्री०) १ कथा, क़िस्सा। २ मिथ्या वचन, झूठी बात।

कहार (हिं० पु०) जातिविशेष, एक क़ौम। यह लोग पानी भरते और डोली लेकर चलते समय अनेक प्रकारके साङ्केतिक शब्द व्यवहार करते हैं। बेहारमें कहार लोग जरासन्धका वंशीय कहलाता है।

कहारा (हिं० पु०) टोकरा, दौरी, झौवा।

कहाल (हिं० पु०) वाद्यविशेष, एक बाजा।

कहावत (हिं० स्त्री०) १ लोकोक्ति, मसल, चलती बात। २ कथित विषय, कही हुयी बात।

कहासुना (हिं० पु०) अनुचित वचन, गैरवाजिब बात, भूल चूक।

कहासुनी (हिं० स्त्री०) वादविवाद, लगाई झगड़ा।

कहाह (सं० पु०) १ महिष, भैंसा। २ कटाह, कड़ाह।

कहिक (सं० पु०) कहोड-ठक्। एक ऋषि।

कहिया (हिं० क्रि० वि०) १ किस समय, कब। (पु०) २ यन्त्रविशेष, एक औज़ार। कलईगर इससे रांग रख जोड़ लगाते हैं। यह एक प्रकारका लौह दण्ड है। इसमें मुष्टि रहता है। एक किनारा काक-चञ्चुकी भांति कुटिल होता है।

कहीं (हिं० क्रि० वि०) १ किसी स्थान पर, दूसरी जगह। २ नहीं। इस अर्थमें यह प्रश्न रूपसे आता है। ३ यदि, अगर। ४ अतिशय बहुत, बहुत।

कहुं, कहो देखो।

कहूं, कहो देखो।

कहूय (सं० पु०) कः सूर्यः ह्वयो यस्य, ह्वे-क्यप् बहुव्री०। सूर्यको आह्वान करनेवाले एक ऋषि।

कहोड (सं० पु०) एक ऋषि। यह उद्दालकके शिष्य और अष्टावक्रके पिता थे।

कह्लक, कल्हार देखो।

कह्लण (सं० पु०) कल्हण, राजतरङ्गिणीके प्रणेता। कल्हण देखो।

कह्लार (सं० क्ली०) कस्य जलस्य हार इव के जले ह्लादते वा, क-ह्लाद पचाद्यच् पृषोदरादित्वात् साधुः। १ श्वेत उत्पल, बघनख, कोकाबेली। (Nymphæa edulis) यह भारतके नाना स्थानोंपर जलमें उत्पन्न होता है। कल्हार शीतल, ग्राही, विष्टम्भी, गुरु और रूक्ष है। (भावप्रकाश) २ ईषत् श्वेत रक्तकमल, कुछ सफेदी लिये लाल कंवल। ३ कमलसाधारण, कोई कंवल।

कल्हाराद्यघृत (सं० क्ली०) घृतविशेष, एक घी।

कसेरू, शालूक, पद्म कुमुद और मधुयष्टिकाको जलमें पकाने तथा दूधके साथ कल्क मिलानेसे यह प्रस्तुत होता है। इसके व्यवहारसे वातजीय हृद्रोग आरोग्य होते हैं। (रत्नाकर)

कंह (सं॰ पु॰) के जले हयति क शब्दस्य कर्मणि था, क ह्वे क। बक, बगला।

कां (सं॰ अव्य॰) १ वायसका शब्द, कौवेकी आवाज़। (क्रि॰) [illegible] ८।१।१०। २ शब्द, पुकार।

कां (हिं॰ प्रत्य॰) १ सम्बन्धीय, का। यह षष्ठीका चिह्न है। इसे अधिकारी अविकृत, आधार आधेय, कार्य कारण, [illegible] प्रभृति अनेक भाव दिखानेको दो शब्दोंके बीच लगाते हैं। कोकिलामें 'का' का रूप बदलकर 'कौं' हो जाता है। (सर्व॰) २ क्या।

"का कहौं कर जोरी तुमसे।
[illegible]" (तुलसी)

कांई (हिं॰ स्त्री॰) तृण विशेष, एक घास। यह जल तथा शीतल स्थान पर उपजती और सूक्ष्म लगती है। इसका वर्ण और आकार विभिन्न होता है। शिला और भूमिपर पड़नेवाली काई सूक्ष्म सूत्रवत् हरिद्वर्ण रहती है। किन्तु जलपर फैलनेवालीमें गोलाकार सूक्ष्म पत्र और पुष्प आते हैं। वस्तुत यह एक प्रकारका मल है। काई उपज कर तरल पदार्थों पर आ जाती है। २ मण्ड, फेन, मांड। ३ मल, मैल। ४ अयोमल, मोरचा।

कांक (हिं॰ स्त्री॰) १ दर्वीविशेष, कांसी एक छोटी छड़ी। यह पाटेमें बरछेके सिरेपर लगायी जाती है। (सर्व॰) २ कोई। ३ कुछ। (क्रि॰ वि॰) ४ कभी। (पु॰) ५ काक, कौवा।

कांइयां (हिं॰ वि॰) धूर्त, चालाक, अपने मतलबका पक्का।

कांई (हिं॰ अव्य॰) १ क्यों, किस लिये। (सर्व॰) २ किसे, किसको। ३ क्या।

कांक (हिं॰ पु॰) सस्यविशेष, एक अनाज। इसे कंगनी भी कहते हैं।

कांकड़ा (हिं॰ पु॰) कार्पासबीज, बिनौला।

कांकर (हिं॰ पु॰) कर्कर, कंकड़।

कांकरी (हिं॰ स्त्री॰) क्षुद्र कर्कट, छोटा कंकड़, कंकरी।

कांकां (हिं॰ पु॰) वायसका शब्द, कौवेकी बोली।

कांकुन, कांकुनी, कंगनी देखो।

कांख (हिं॰) कक्ष देखो।

कांखना (हिं॰ क्रि॰) १ पीड़ित अवस्थामें दुःखसूचक शब्द उच्चारण करना, कराहना। २ मूत्रपुरीषोत्सर्गार्थ उदरके वायुको पीड़न करना, कांखकर ज़ोर देना।

कांखाकोली (हिं॰ स्त्री॰) वस्त्रपरिधानभेद दुपट्टा रखनेका एक तरीक़ा। इसमें दुपट्टा बायें कंधे और पीठ पर होता और दाहिने बगलके नीचे पड़ जाता, फिर बायें कन्धे पर आ चढ़ता है।

कांखो (हिं॰) कांखी देखो।

कांगड़ा (हिं॰ पु॰) बहुपक्षी, एक चिड़िया। यह धूसरवर्ण होता है। इसका वक्षःस्थल श्वेत, मध्यस्थल रक्त और पिच्छाका वर्ण कृष्ण रहता है।

कांगड़ा—पञ्जाब प्रान्तका एक ज़िला। यह अक्षा॰ [illegible] २०´ से ३२ उ॰ और देशा॰ ७५ ३८´ से ७८ ३५´ पू॰ तक अवस्थित है। भूमिका परिमाण ८०६८ वर्ग मील है। इसमें प्रायः साढ़ेसात लाख आदमी रहते हैं।

कांगड़ा सर्वत्र प्रमुख गिरिमालासे परिवेष्टित है। सकल गिरि समुद्रकी समतलकी अपेक्षा ८२०४ १६९८६ फीट पर्यन्त उच्च हैं। धवलाधारगिरि कांगड़ेके उत्तर सीमारूपसे खड़ा है। उसीके आगे बड़ा बङ्गाहल मिलता, पड़ता है। गिरिमालासे परिवेष्टित और समाकीर्ण रहते भी इसमें स्थान स्थान पर ग्राम तथा कृषिक्षेत्र विद्यमान है।

उत्तर सीमापर हिमालय पर्वत कांगड़ेका तिब्बतके लद्दाख जनपद और चीन साम्राज्यकी सीमासे पृथक् किया है। दक्षिण पूर्वको बघाट, मण्डी, बिलासपुर प्रभृति पार्वतीय राज्य हैं। दक्षिणपश्चिम होशियारपुर ज़िला तथा उत्तरपश्चिम भागको नदी गुरुदासपुर और चम्बा राज्यको बांटती है। कांगड़ा ज़िलेमें ५ तहसीलें हैं—कुलू, कांगड़ा, हमीरपुर, देरा और नूरपुर। कांगड़ा तहसील मध्यस्थलमें लगती है।

धवलाधार गिरिने कांगड़ा प्रान्तको दो भागोंमें

बांटा है। उत्तरार्धको बड़ा बङ्गाहल और दक्षिणार्धको छोटा बङ्गाहल कहते हैं। बड़े बङ्गाहलमें कूलूके मध्य स्थलपर बड़ा बङ्गाहल पहाड़ है। यह दैर्घ्यमें पन्द्रह मील और उच्चतामें १७००० हजार फीट पड़ता है। इसमें एक सामान्य ग्राम है। उसमें कोई ८००० कुनैत रहते हैं। एक वर्ष दारुण तुषारपातसे लोगोंके बहुतसे घर बह गये। इसी गिरिका प्रत्युच्च शृङ्ग फोड़ इरावती नदी निकली है।

छोटे बङ्गाहलके बीचमें १००० फीट ऊंचा एक गिरिशृङ्ग है। उसने इस स्थानको दो भागोंमें बांटा है। निम्नांगमें १८।२० ग्राम विद्यमान हैं। सकल ग्रामोंमें केवल कुनैत और दागी रहते हैं।

बङ्गाहल तालुकके कुछ अंशका नाम बीर बङ्गाहल है। इस स्थानका प्राकृतिक सौन्दर्य मनोहर है।

कांगड़ा जिलेके बीच तीन गिरि श्रेणियां समभावसे निकली हैं। इन्हीं गिरिश्रेणियोंसे विपाशा, चन्द्रभागा, स्पिति और इरावती नदी निकली हैं।

पुरातत्त्व और इतिहास—भारत और पुराणादिमें कुलिन्द और कुलूत नामक पार्वतीय जातिका नाम लिखा है। वही यहांके प्राचीन अधिवासी थे। उस समय कांगड़ा कुछ कुलूत और कुछ कुलिन्द (कुनिन्द) जनपदमें रहा। आजकल कुलूत तथा कुलिन्द जातिको कुलू और कुनैत कहते हैं। कुलूत और कुलिन्द देखो।

कुलूत और कुलिन्द लोगोंको हरा राजपूतोंने यह स्थान अधिकार किया। उन्होंने यह पार्वतीय भूभाग विभागकर बहुकाल राजत्व चलाया। वह अपनेको कुरुपाण्डवके समकालीन जालन्धरका कतोच राजवंश बताते थे। मुसलमानोंके आक्रमणसे उकता कतोच-राजकुमारोंने कांगड़ेको गिरिदुर्गमें आश्रय लिया। उनका विपुल राज्य क्षुद्र क्षुद्र अंशोंमें बंट गया। उस समयभी यहांके नगरकोटवाले भारतीय देवमन्दिर विशेष प्रसिद्ध थे। ऐसा ऐश्वर्य पञ्जावके किसी दूसरे देवमन्दिरोंमें न रहा। भारतीय लोगोंने देवमूर्तिको बड़ी श्रद्धा भक्ति करते थे। १००८ ई०को महमूद गजनवीने कांगड़ेके मन्दिरोंकी बड़ाई सुनी। उनका लोभ और विद्वेष बढ़ गया। वह पेशावरके चेवाभिमुख ससैन्य आये थे। भारतीय राजावोंने बाधा देनेको यथासाध्य चेष्टा लगायी, किन्तु कोई बात बन न पायी। महमूदने कांगड़ेका दुर्ग अधिकार कर देवमूर्तियोंके साथ स्वर्ण, रौप्य, मणिमाणिक्य प्रभृति बहुमूल्य धन लूटा था। कोई ३५ वर्ष पीछे राजपूतोंने कांगड़ेका दुर्ग छीन फिर राजपूतोंने बड़े समारोहसे देवमूर्ति प्रतिष्ठा किया था।

कुछ दिन कोई गड़बड़ न पड़ा। १३६० ई०को फीरोजशाह तुगलक कांगड़ेकी ओर लड़ने आये। कांगड़ेके राजावोंने उनकी वश्यता माननेसे अपना राज्य तो पाया, किन्तु पवित्र देवमूर्तियोंको गंवाया था। मुसलमानोंने देवमूर्तियां लूट मक्के भेज दी।

१५५६ ई०को अकबर बादशाहने कांगड़ेका दुर्ग अधिकार किया। उसी समयसे यह पार्वतीय भूभाग दिल्लीके साम्राज्यमें मिल गया, केवल दुर्गम मरुमय स्थान देशी सरदारोंके हाथ रहा। राजपूतोंने दो बार विद्रोही हो कांगड़ा दुर्गके उद्धारको चेष्टा लगायी थी। जहांगीर दोनों बार (१६१५ और १६२८ ई०) कतोच राजकुमारोंको शासन करने आये थे। अन्तको बैल-सरदार कर देनेपर सम्मत हुये।

जहांगीरने प्राकृतिक सौन्दर्यसे मोहित हो यहां रहनेके लिये ग्रीष्मभवन बनानेको आदेश किया था। आज भी कांगड़ेके गर्गरी ग्राममें उक्त ग्रीष्मभवनका चिह्न देख पड़ता है।

दिल्लीके मुसलमान बादशाह कांगड़ेके सरदारोंकी उपेक्षा करते न थे। सब लोग विशेष सम्मानार्ह रहे। पदके अनुसार मर्यादा मिलती थी। १६४६ ई०को नूरपुरके राजा जगत्चन्द्र शाहजहान्के आदेशसे १४००० सैन्यका अधिनेतृपद पाया। उन्होंने उसी सैन्यके साहाय्यसे बलख और बदख्शान्के ओजबेकोंको हराया था।

१६६१ ई०को औरंगजेबके राजत्वकाल जगत्चन्द्रके पौत्र मान्धाता कुछ दिनके लिये सुदूरवर्ती बामियान और गोरबन्दके शासनकर्ता बने। २० वर्ष पीछे उन्होंने दो हजारी मनसबदारका पद पाया था।

१७५८ ई०को कांगड़ेके राजा घमण्डचन्द जालन्धर

और हरावती तथा शतद्रु नदीके मध्यवर्ती प्रदेशमें शासनकर्ता बनाये गये।

दिल्लीके बादशाहोंका पूर्व पराक्रम विलुप्त होनेसे राज्यमें एक प्रकारकी अराजकता आई थी। उसी समय प्रायः १७५२ ई०को राजपूत सरदार स्वाधीन हो कांगड़ेका अधिकांश उपभोग करने लगे। केवल मध्य दुर्ग अहमद शाह दुर्रानीके आयत्तमें रहा। १७७४ ई०को जयसिंह नामक किसी सिख सरदारने कौशल क्रमसे कांगड़ेका दुर्ग अधिकार किया किन्तु १७८५ ई०को कांगड़ेका राजपूत-सरदार संसारचन्द्रको छोड़ दिया। इतने दिन पीछे कांगड़ेका दुर्ग फिर कटोच राजवंशके हस्तगत हुआ। कटोचराज संसारचन्द्र अपने पूर्वपुरुषोंकी भांति स्वाधीन भावसे राजत्व चलाने लगे। पार्वतीय प्रदेशस्थ नाना स्थानोंके सरदारोंने उन्हें कर दिया। सिख्‌विजयके निकटके समय सब सरदार केवल ही संसारचन्द्रके अनुगत बने थे। वर्षमें एक एक बार प्रत्येक सरदार राजदर्शनको आने पर बाध्य रहा। संसारचन्द्रने २० वर्ष प्रबल प्रतापसे राजत्व चलाया। कहलूर और चम्बेमें सब कटोच राजाओंके वश थे। १८०५ ई०को संसारचन्द्र और बिलासपुरके राजाने शतद्रु और घर्घरा नदी मध्यवर्ती प्रदेशके गोरखा-सरदारोंसे साहाय्य मांगा था। गोरखा शतद्रु नदी पार आये। वह महलमोरी नामक स्थानमें (१८०६ ई०) कटोच-राजपूतों पर टूट पड़े। बाद बलके प्रभावसे राजपूतोंने हार पीठ दिखायी। गोरखा सरदार कांगड़े राज्यमें घुस दारुण अत्याचार मचाने लगे। कांगड़ा रक्तके स्रोतमें डूबा था। नगर, ग्राम, उपवन, सुन्दर राजप्रासाद प्रभृति सब उजड़ गये। उस समय कांगड़ा राज्य श्मशान और मरुभूमिके समान था। कटोच राजकुमारोंने प्राण छोड़ गिरिकी गुहामें आश्रय पाया। ऐसा लोमहर्षण-काण्ड क्या कोई कभी भूल सकता है। कांगड़ेमें प्रत्येक ग्राम एवं प्रत्येक नगरमें लोगोंके हृदय पर वह भीषण अत्याचार खटकता है।

तीन वत्सर अत्याचार देखने पीछे संसारचन्द्रने महाराज रणजित सिंहसे साहाय्य मांगा। १८०९ ई०को रणजित सिंहने गोरखाओंके विरुद्ध युद्धकी घोषणा चलायी थी। भीषण समर आरम्भ हुआ। बड़े कष्टमें रणजित्‌को जय मिला। गोरखा शतद्रु उतर गये। प्रथम उन्होंने समस्त कांगड़ा राज्य संसार-चन्द्रको छोड़ दिया, केवल कांगड़ेका दुर्ग और ६६ ग्रामोंका कर सैन्यव्ययके निर्वाहको अपने हाथ रख लिया। फिर रणजित् धीरे धीरे पहाड़ी सरदारोंके अधीनस्थ स्थान अपने अधिकारमें मिलाने लगे। १८२४ ई०को संसारचन्द्र मरे। उनके पुत्र अनिरुद्धचन्द्र राजा बने थे। अनिरुद्धचन्द्रने केवल चार वर्ष राजत्व किया। रणजित् सिंहने अपने मन्त्री ध्यानसिंहके पुत्रसे अनिरुद्धकी भगिनीका विवाह ठहराया। कटोच राजकुमारने इससे अपनेको अपमानित होते देख राज्य छोड़ा और हरिद्वारको भाग गये। उसी समय समस्त कांगड़ा महाराज रणजित्सिंहके राज्यमें मिल गया। १८४६ ई०को प्रथम सिख युद्ध हारने पर अंगरेजोंने कांगड़ा अधिकार किया। १८४८ ई०को मूलतानी विद्रोहके पीछे यहांके पहाड़ी सरदारोंने विद्रोह बढ़ानेकी चेष्टा चलायी थी, किन्तु कुछ सिद्धि न पायी। फिर सिपाही विद्रोहके समय सूचना मिली कि कांगड़ेमें सामान्य विद्रोहकी आग भड़की है। उस समय कई विद्रोही सरदारोंको फांसी दी गयी थी तब फिर कांगड़ेमें कोई अशान्ति न फैली।

इस जिलेके प्रधान नगरका भी नाम कांगड़ा है। यह अक्षा० ३२ ५´ ११´´ उ० और देशा० ७६ १६´ ३६´´ पू० पर अवस्थित है। पहले यह नगर नगरकोट नामसे विख्यात था। कांगड़ा बाणगङ्गा और मिमाला नदीद्वयके निकट पड़ता है। इस नगरमें एक अतिप्राचीन दुर्ग है। भवानी और भवानी पतिका पूर्वनिर्मित मन्दिर सुन्दर है। कांगड़ेमें बरतन और लोहेका काम अच्छा बनता है।

कांगड़ेके लोग स्वस्थ बलवान परम और स्वाधीनचेता हैं। राजपूत अधिक देख पड़ते हैं।

यहां चिकित्सकोंका एक दल रहता, जो नक-कटोंको अच्छा कर सकता है। अकबर बादशाहके दीन एक चिकित्सक थे। उन्होंने नाक बनानेकी

चिकित्सा निकाली। अकबर बादशाहने गुणकौशलसे सन्तुष्ट हो उन्हें कांगड़ेका कुछ स्थान जागीर दिया था।

इस जिलेमें स्वर्ण, रौप्य, लौह, ताम्र, रसाञ्जन, हीरक, मर्मर प्रभृति नानाप्रकार बहु मूल्य द्रव्य उत्पन्न होते हैं।

उद्भिज्ज और पण्यद्रव्यमें यव, गेहूं, चना, शण, कार्पास, इक्षु, तमाखू, चाय, मधु, लवण, और धान्य प्रधान है।

कांगड़ी (हिं० स्त्री०) सन्तप्त क्षुद्र पात्र विशेष, एक छोटी अंगीठी। काश्मीरके अधिवासी शीतसे परित्राण पानेको इसे कण्ठमें बांध वक्षःस्थलपर लटका लेते हैं। यह अङ्ग रके काष्ठसे प्रस्तुत होती है। कांगड़ीके भीतर मृत्तिका चढ़ा देते हैं।

कांगरू, कंगारू देखो।

कांग्रेस (अं० स्त्री०=Congress) सभा, परिषद्, मुल्कोंका प्रदेशोंका जलसा। इसमें विभिन्न प्रदेशोंके प्रतिनिधि एकत्र हो राजनीतिक विषयोंपर अपना अपना मन्तव्य प्रकाश करते हैं। संयुक्त अमेरिकाकी राजसभा भी कांग्रेस ही कहाती है। भारतमें प्रति वर्ष जातीय कांग्रेस (National Congress) होती है।

कांच (हिं० स्त्री०) १ लांग, धोतीका एक छोर। यह दोनों टांगोंके बीचसे निकाल कमरपर खोंसी जाती है। २ गुदावर्त, गुदाका भीतरी भाग। कभी कभी जोरसे कांखनेपर यह बाहर निकल आती है।

(पु०) ३ मिश्र धातुविशेष, एक मिलावटी धात। यह बालुका और क्षारको अग्निमें गलानेसे प्रस्तुत होता है। इसमें कङ्कण, पात्र, दर्पण प्रभृति अनेक द्रव्य बनते हैं। काच देखो।

कांचरी (हिं० स्त्री०) कञ्चुलिका, सांपकी केंचुल।

कांचली, कांचरी देखो।

कांचा, कच्चा देखो।

कांचू (हिं० पु०) १ कञ्चुलिका, केंचुल। (वि०) २ कांचका रोगी, जिसके कांच निकल पड़े।

कांछना, काछना देखो।

कांछा (हिं० पु०) १ कांच, कमरमें पीछे खोंसा जानेवाला धोतीका किनारा। २ लंगोटा, चिट। (स्त्री०) ३ आकांक्षा, ख्वाहिश।

कांजी (हिं० स्त्री०) १ काञ्जिक, एक रस। यह खट्टी रहती और कई प्रकारसे बनती है। इसमें अचार और बड़ा भी भिगोया जाता है। कांजी बनानेके चार विधि नीचे लिखते हैं—

१ चावलका मांड किसी मृत्पात्रमें दो-तीन दिन रख लवणादि डालनेसे यह तैयार होती है।

२ राई पीसकर पानीमें घोल दी जाती है। फिर लवङ्ग, जीरक, शुण्ठी प्रभृति पीसकर मिला उसको मृत्पात्रमें रख छोड़ते हैं। खट्टी होनेसे पहले बड़ा और अचार भी डाल दिया जाता है।

३ दहीका पानी राई और नमक मिलकर रखनेसे उठनेपर कांजी कहाता है।

४ शर्करा और निम्बूकका रस अथवा सिरका मिलाकर पकाया और किमाम बनाया जाता है।

मट्ठे, दही या फटे दूधके पानीको भी कांजी कहते हैं। काञ्जिक देखो। २ कारागारका गृहविशेष, कैदखानेकी एक कोठरी। इसमें कैदियोंको मांड पिलाया जाता है।

कांजीवरम् (हिं०) काञ्चीपुर देखो।

कांजी हाउस (अं० पु०=Kine-house) पशुशाला विशेष, मवेशीखाना। इसमें कृषि आदिको क्षतिग्रस्त करनेवाले पशु सरकार रखती है। फिर प्रभु दण्ड स्वरूप कुछ पैसा रुपया दे उन्हें छोड़ता है। जिनकी कृषिको हानि पहुंचाते, वह पशुओंको पकड़ कांजी-हाउसमें हांक आते हैं।

कांट (हिं०) कण्टक देखो।

कांटा (हिं० पु०) १ कण्टक, खार। यह तीक्ष्णाग्र अङ्कुर होता है। कतिपय वृक्षोंकी शाखाओंपर सूचीकी भांति कांटा निकलता और पुष्ट होनेपर कठिन पड़ता है। २ पदकण्टक, पैरका खार। यह मोर, मुरगे, तीतर वगैरह नर चिड़ियोंके पैरमें निकलता है। लड़ाईमें उक्त पक्षी इसीसे प्रहार करते हैं। कांटेका दूसरा नाम खांग है। ३ गलरोग विशेष, गलेकी एक बीमारी। यह पक्षियोंके गलदेशमें उत्पन्न होता

है। इससे मछुवा मछली मार लाते हैं। यावत् पक्षियोंका कांटा निकाल डालते हैं। ३ शुकरोगविशेष मुंहकी एक बीमारी। इससे मुखमें तोष्णाय और पिड़कायें पड़ जाती हैं। ५ जोड़जोड़, चोड़ेकी जोड़। ६ कंटिया, मछली मारनेकी चीज़। मीठा चारा अथवा इसको पानीमें डाल देते हैं। चोंचसे खा जाने पर यह मछलीके मुखमें फटकता और निकाले नहीं निकलता। फिर शिकारी काढ़ीसे लगी मोटे डोरीको हाथोंसे पकड़े खींच मछलीको ऊपर खींच लेता है। ७ यन्त्रविशेष, एक आकार। यह लोहेकी मुड़ी हुयी कीलोंका एक गुच्छा है। इससे कुयेंमें गिरे लोटे गगरे बड़े रह निकाले जाते हैं। ८ तीक्ष्णाग्र वस्तुमात्र, कोई नुकीली चीज़। ९ पक्षावयव विशेष, मुर्गेका एक हथियार। यह लोहेकी एक टेढ़ी चीज़ है। पहले इसमें तागा डाल मुर्गेका काम बनाते हैं। १० तोलसाधनभेद, लोहेकी एक सुयी। यह तुलादण्डके मध्यदेशपर लगती है। इससे तराज़ूके दोनों पलड़ोंकी बराबरी मालूम होती है। ११ चीज़ तुलानेका, सोनेकी एक तराज़ू। इसकी डांड़ीमें कांटा लगा रहता है। १२ नासाभूषणविशेष, कील, लौंग नाकका एक गहना। १३ खाद्य ग्रहणीय यन्त्रविशेष, खानेका एक आकार, इससे उठा उठा अंगरेज़ रोटी खाते, रख खाते हैं। १४ काष्ठयन्त्रविशेष, पेंसाकी, पांचा। इससे लकड़ तख़्तादि बटोरते हैं। १५ सूचिविशेष, सुआ। १६ घड़ीका सुई, घड़ीकी सुई। १७ गणितमें गुणनफलकी यथार्थपरीक्षा करनेकी जांच। इसमें दो रेखायें आरपार बनायी जाती हैं। फिर गुण्यमें अङ्क एकत्र संयुक्त कर ९से भाग लगाते हैं। शेष अङ्क एक रेखाके किसी सीमापर रखते हैं। इसी प्रकार गुणकमें भी अङ्क जोड़ और नौसे तोड़कर शेष अङ्क रेखाके दूसरे प्रान्त पर रखा जाता है। यह संयुक्त समय अङ्क गुणन और ९से विभाजनकर शेष अङ्कको दूसरी रेखाके एक प्रान्त पर लगाते हैं। फिर गुणनफलके अङ्क जोड़ने और ९से तोड़ने पर यदि शेष अङ्क पूर्वोक्त अङ्कसे मिल जाता, तो गुणनफल ठीक समझा जाता है। १८ गणितसम्बन्धीय यथार्थ परीक्षाकी क्रिया, हिसाब जांचनेकी तरकीब। १९ मत्स्यविशेष, किसी किस्मकी मछली। इसमें पकड़ जाल भिड़कर नहीं पकड़ती, दूर होती काट छांट करती है। २० पत्तुवंता भूमिविशेष, एक ऊसर। यह यमुना किनारे मिलता है। कांटेमें कोयी चीज़ उत्पन्न नहीं होती। २१ किसी किस्मका बेलबूटा। यह दरीमें नोकदार निकाला जाता है। २२ पक्षिजोड़ा विशेष, एक पातयवाली। २३ मछलीका कांटा। २४ दुःखदायी पुरुष, तकलीफ़ देनेवाला आदमी।

कांटादार (हिं० वि०) कण्टकान्वित, कंटीला।

कांटी (हिं० स्त्री०) १ क्षुद्र कीलक, छोटी कील। २ तुलातुलाभेद, एक छोटी तराज़ू। इसकी दण्डपर सुयी लगती है। कसेरादि कांटीसे काम लेते हैं। ३ कंटिया, पकड़ी। ४ यन्त्रविशेष, एक औज़ार। यह किनारे पर लोहेकी अंकुड़ी लगी एक लकड़ी है। इससे पर्दे पकड़े जाते हैं। ५ पैड़ी केड़ियोंके पैरमें काटे जानेवाली लोहेकी कड़ी। ६ किसी किस्मकी घास। यह सूखि जाने पीछे सिरोंमें चिपटी रहती है। २ बांसकी एक चोड़ी, छप्पर बनानेका खेल।

कांटिहार बांटनेवाली।

कांठा (हिं० पु०) १ कण्ठ, गला। २ चिह्न विशेष एक निशान। यह शुकपक्षीके गलप्रान्त पर कण्ठ आकार पड़ जाता है। ३ उपकण्ठ किनारा। ४ पार्श्व, समुख। ५ काष्ठयन्त्रविशेष, एक लकड़ी। यह एक हिस्से लम्बी और पतली होती है। इस पर तन्तुवाय बाना बुननेको पैर चढ़ाते हैं। बादलेका ताना काठेसे ही बुना जाता है।

कांढ़ना (हिं०क्रि०) १ आक्रम करना, रौंद डालना। २ झूलना, मुरना। ३ मारना-पीटना, लतियाना।

कांड़ली (हिं० स्त्री०) कांड़, झुकवा, कोनी।

कांड़ा (हिं० पु०) १ दन्तरोग विशेष, पिड़ोंकी एक बीमारी। इससे दांतोंके जड़में कीटादि लग जाते हैं। २ कांठकीट, लकड़ोंका कीड़ा। ३ दन्तकीट, दांतोंमें लगनेवाला कीड़ा।

कांड़ी (हिं० स्त्री०) १ उदूखलगर्त, धानकूटनेका गढ़ा। इसमें डालकर मूसलसे धान कूटा जाता है। २ मिर्मिनू

गड़ा हुवा काष्ठ वा प्रस्तरखण्ड, ज़मीनमें गड़ा हुवा लकड़ी या पत्थरका टुकड़ा। इसमें अन्न कूटनेको गर्त रहता है। ३ हस्तिरोगविशेष, हाथीकी एक बीमारी। इससे पैरके तलवेमें एक बड़ा व्रण पड़ जाता और हाथी चलने फिरनेमें बड़ा कष्ट पाता है। व्रणमें क्षुद्र क्षुद्र क्रमि होते हैं। ४ काष्ठदण्डभेद, लकड़ीका दण्डा। इससे गुरुभार द्रव्योंको चढ़ाते, उतारते और हटाते हैं। ५ लङ्गड़की डांडी। यह मुड़े हुये अंकुड़ों पर रहती है। ६ वंश वा काष्ठखण्ड विशेष, बांस या लकड़ीका एक लट्ठा। यह पतला तथा सीधा रहता और मकानके छप्परोंमें लगता है। इससे दूसरे काम भी निकलते है। ४ काण्ड, लट्ठा। ५ रहठा, अरहरको सुखी लकड़ी। ६ दियासलाई। ७ मत्स्यसमूह, मछलियोंको टोली।

कांधरि (हिं०) कन्धा देखो।

कांदना (हिं० क्रि०) रोदन करना, चीख़ मारना, फूट फूट रोना।

कांदव (हिं० पु०) कर्दम, कीचड़।

कांदा (हिं० पु०) १ कन्दली, एक पौदा। यह प्याजकी भांति ग्रन्थिविशिष्ट होता है। पत्तक प्याजसे कुछ प्रशस्त रहते हैं। कांदा सरोवरोंके निकट उपजता है। वर्षाका जल मिलनेसे पत्र निकलते हैं। पुष्प श्वेतवर्ण रहते हैं। उन पर रक्तवर्ण पांच छह खड़ी रेखायें पड़ जाती हैं। रेखावोंके प्रान्त भागपर अर्धचन्द्राकार पीतवर्ण चिन्ह होते हैं। कांदेके डलेसे माड़ी बनती है। इसका अपर नाम कंदरी वा कंदली है। २ प्याज।

कांदू (हिं० पु०) कंदोयी, बनियोंकी एक जाति। यह हलवाईका काम करते हैं।

कांदो, कांदव देखो।

कांध (हिं० पु०) १ स्कन्ध, कन्धा। २ कोल्हूका एक हिस्सा। यह पतला रहता और जाठमें मुण्डीके ऊपर पड़ता है।

कांधना (हिं० क्रि०) १ कन्धे या शिर पर रखना, उठाना। २ नाधना, मचाना। ३ स्वीकार करना, मानना। ४ भार सहन करना, बोझ उठाना।

कांधर (हिं० पु०) कृष्ण, कान्हा।

कांधा (हिं०पु०) १ स्कन्ध, कान्धा। २ कृष्ण, कान्हा।

कांधी (हिं० स्त्री०) स्कन्ध, कांध।

कांप (हिं० स्त्री०) १ तीली, पतली छड़। यह बांस या किसी दूसरी चीज़की रहती और लचानेसे झुक पड़ती है। २ कनकौवेकी पतली तीली। यह कमानकी तरह झुका कर कनकौवेके ऊपरी हिस्सेपर लगायी जाती है। कनकौवा कम्पियानेसे इसमें कन्ना बंधता है। ३ शूकरका कांटा या खांग। ४ हस्तिदन्त, हाथीदांत। ५ कर्णालङ्कार विशेष, कानका एक ज़ेवर, यह सादी और जड़ाऊ दो तरहकी होती है। कांप सोनेकी रहती और पत्रकके आकारमें बनती है। स्त्रियां एक साथ पांच पांच सात सात कांपे अपने कानोंमें डाल लेती हैं। यह धक्का लगनेसे हिल उठती हैं। ६ करनफूल। ७ कलईका चूना। ८ कंपकंपी।

कांपना (हिं० क्रि०) कम्पित होना, थरथराना। २ भय करना, डरना।

कांपिल्ल (हिं०) काम्पिल्य देखो।

कांयकांय (हिं०स्त्री०) काकका शब्द, कौवेकी बोली।

कांव कांव (पु०) कांय कांय देखो।

कांवर (हिं० स्त्री०) १ बहंगी, बांसका मोटा फट्टा। इसके दोनों किनारे द्रव्यादि रखनेको छींके लगा देते हैं। २ यात्रियोंके गङ्गाजल ले जानेका यन्त्र। यह एक ढण्डा होता है। किनारों पर बांसकी दो टोकरियां बांध दी जाती हैं।

कांवरा (हिं० वि०) उद्विग्न, घबराया हुवा।

कांवरि, कांवर देखो।

कांवरिया (हिं० पु०) कांवर ले जानेवाला।

कांवरू (हिं०पु०) १ कामरूप। कामरूप देखो। २ कामल रोग, एक बीमारी।

कांवारथी (हिं० पु०) एक तीर्थयात्री। यह अपनी कामनाके लिये कांवर ले तीर्थयात्रा करता है।

कांश्य (वै० पु०) कंसे भवः, कंस बाहुलकात् इञ्, वेदे पृषोदरादित्वात् सस्य शत्वम्। कांस्य, कांसेका प्याला। कांस्यनील, कांस्यनीत देखो।

कांस (हिं०) काश देखो।

कांस (सं० त्रि०) कंसो देशभेदो ऽभिजनो ऽस्य, कंस अण्। तिन्दतक्षशिलादिभ्योऽभिजने। पा ४।३।९३। कंसादि हित भोजदेशीय, कंस देशमें पैदा होनेवाले।

कांसपात्र (सं० क्ली०) आढ़क परिमाण, ३०८६ माशेकी तौल।

कांसा (हिं० पु०) १ कांस्य, कसकुट, भरत। यह तांबे और जस्तेसे मिलकर बनता है। २ कासा, भीख मांगनेका खप्पर।

कांसागर (हिं०) कसगर देखो।

कांसिका (सं० स्त्री०) सुवर्णी, सोठ धनाक।

कांसी (सं० स्त्री०) १ सौराष्ट्रमृत्तिका। २ कांस्यधातु।

कांसी (हिं० स्त्री०) १ धान्यरोगविशेष, धानके पौदेकी एक बीमारी। २ कांस्य कांसा। ३ कनिष्ठा, सबसे छोटी औरत। ४ कामनीय काशी। कांसीय कांस्य देखो।

कांसुला (हिं० पु०) यन्त्रविशेष एक औज़ार कंसुला। यह कांसे धातुका एक चतुष्कोण खण्ड होता है। इसकी चारो ओर गोलाकार गर्त बनाये जाते हैं। सुनार कंसुले पर रौप्य या स्वर्णके पत्र रख कटोरी घुण्डी तैयार करते हैं।

कांस्टेबिल (अं० पु०—Constable) दफादार, राजपुरुष, गुरैत, चौकीदार, पुलिसका सिपाही। पुलिसके सिपाहियोंका जमादार 'हेड कांस्टेबिल' और अन्य रोज़का चौकीदार 'स्पेशल कांस्टेबिल' कहलाता है।

कांस्य (सं० क्ली०) कंसाय पानपात्राय हितं कंसीयं तस्य विकारः, कंसीय यञ् यलोपः। कंसीयपरशव्ययोर्यञञौ लुक् च। पा ४।३।१६८। कंसमेव स्वार्थे यञ् वा। १ पानपात्र कटोरा, प्याला। २ ताम्र और रङ्गका उपधातु, कांसा कसकुट तांबे और जस्तेको मिला कर बनाया हुआ एक उपधातु। इसका संस्कृत पर्यायकंस, कंसास्थि, ताम्रार्ध, घोराट्टक, घोष, कांसीय वह्निलोहक, दीप्तिलोह, घोरपुष्प, दीप्तिकांस और कांस्य है। राजनिघण्टुके मतसे यह तिक्त उष्ण रूक्ष कषाय, लघु अग्निदीपक पाचक, स्रोतःसमूह तथा चक्षुके लिये हितकारक रुचिकारक और वायु एवं कफरोगनाशक होता है। राजवल्लभने इसे चक्षुष्य, विषद सेचन मारक और पित्तनाशक भी कहा है। कुष्ठरोगके मतमें यह देहको हलका और आयु बढ़ाता है। इसका शोधन मारण प्रभृति ताम्रकी भांति किया जाता है। किसी किसीमें इसके शोधन और मारणका विधि स्वतन्त्र भी माना है। शोधनके लिये कांसेके पतले पतले पत्र अग्निमें खूब तपाते और तीन तीन बार तेल, तक्र, कांजिक, गोमूत्र तथा कुलत्थमें बुझाते जाते हैं। मारणमें कांसेके शुद्ध पत्रोंपर पर्वकोरके समभाग पीस माढ़ सेवन चढ़ाते और मूषापुटमें रखें एक गजपुटमें पकाते हैं। (नपुंसक) १ वाद्य विशेष झांझियाल। २ मानविशेष, एक तौल। (त्रि०) १ ताम्ररङ्ग उपधातुसे सम्बन्ध रखनेवाला, भरतिका।

कांस्यक (सं० क्ली०) कांस्य देखो।

कांस्यकार (सं पु०) कांस्यं तत् पात्रं करोति, कांस्य-कृ-अण्। कांसकार, कसेरा। कसेरा देखो।

कांस्यज (सं त्रि०) कांस्याज्जायते, कांस्य जन-ड। कांस्य धातु द्वारा प्रस्तुत कांसेका बना हुआ।

कांस्यताल (सं० पु०) कांस्येन निर्मितः तालः, मध्यपदलो०। १ करताल। २ मंजीरा।

कांस्यदोहनी (सं० स्त्री०) कटोरी, कांसेकी दुहनी।

कांस्यनील (सं० पु०) कांस्येन कृतः नीलः, मध्यपदलो०। नीलतुत्थ, तूतिया, नीलाथोथा। इसका संस्कृत पर्याय मूषातुत्थ हेमतार और वितुन्नक है।

कांस्यमालिन (सं० क्ली०) ताम्र और रङ्गका उपधातु, कांसा।

कांस्यमय (सं० त्रि०) कांस्यसे बना या भरा हुआ, जो कांसेसे बना या भरा हो।

कांस्यमल (सं० क्ली०) ताम्रकिट, ज़ंगार, तांबेका कसाव।

कांस्यमाक्षिक (सं० क्ली०) धातु द्रव्यविशेष, किसी किस्मका माक्षिक।

कांस्याभ (सं० त्रि०) कांस्यसदृश आभाविशिष्ट, कांसेकी तरह चमकनेवाला।

कांस्याद्रु कांसाद्रु देखो।

काक (हिं० पु०) १ वृक्ष विशेषको वाह्यत्वक् पपारा, कागकी छाल। यह मृदु रहता और दबानेसे कुछ

यह दुष्ट दरिद्रोंके लिये अति अनिष्टकर है। कभी कभी कौवा फूसके छप्पर या झोपडेमें खाद्यादि छिपा रखता है। आवश्यक स्थान न पाते यह अधिकांश तृणादि खींच घर तक उलट देता है।

यह करचोटियेसे बहुत घबराता है। उसे देखते ही काक स्थान छोड़ भागता है। वह भी इसके पीछे पड़ जाता है।

भारतवासियोंके नवान्न पर्वपर काकका बड़ा आदर होता है। प्रत्येक गृहस्थ 'नवान्न' ले घरकी छतपर चढ़ता और इसको आने बोलाया करता है। किन्तु उस दिन काकका आना कठिन पड़ता है। क्योंकि यह सर्वत्र भोज्य मिलनेसे तृप्त रहता है।

२ (क) गङ्गापारी कौवा—'करवस्' जातिमें सबसे बड़ा होता है। भारतवर्षके उत्तराञ्चलमें यह अधिक देख पड़ता है। इसीसे हिन्दूस्थानी इसे 'गङ्गापारी' कौवा कहते हैं। सिन्धु, राजपूताना प्रभृति कई देशोंमें यह ग्रीष्मकालको नहीं रहता। शरत्‌के प्रथम यह आता और वसन्तके पश्चात् ही अफगानस्तान, काश्मीर प्रभृति शीतप्रधान देशोंको चला जाता है। हिमालय प्रदेशमें १४००० फीट ऊंचे यह मिलता, दूसरे पार्वत्य प्रदेशमें देख नहीं पड़ता। बङ्गाल, युक्त प्रदेश और पञ्जाबमें भी यह होता है। गात्र गाढ़ नील आभायुक्त चिक्कण कृष्णवर्ण रहता है। गलदेशके पालक दीर्घ और विरल होते हैं। ऊपरी ओंठ (टोंट)-का अग्रभाग कुछ वक्र लगता है। ऊर्ध्व चञ्चुकी उच्चता अधिक पड़ती है। पक्ष १५ इञ्च और देह २५से २७ इञ्चतक दीर्घ होता है। चञ्चुके उभय पार्श्वोंमें गड्ढा रहता है। चञ्चु और पदद्वय घोर कृष्ण वर्ण होता है। ऊर्ध्व चञ्चुका अग्रभाग कुछ वक्र रहता है। इसे बङ्गाली 'डोम काग' अंगरेज 'रावेन' (Raven), स्काच 'कर्बी' स्वीडनवासी 'क्रप', दिनमार 'रौन', जर्मन 'कोलक्राड', फरासीसी 'करवो', इटालीय 'क्रवो', रोमक 'करवस्', स्पेनीय,'एल कुइववों', पश्चिम भारतीय द्वीपवासी 'कष कष गिउ', और एसक्‌इमोने 'तुलुआक' कहते हैं। वैदेशिक शाकुनशास्त्रमें इसको करवस् कोराक्स (Corvus Corax) लिखते हैं।

हिमालय और युरोपमें रहनेवाला डोमकाक अधिक भीरु होता है। यह कभी लोकालयमें जाना नहीं चाहता। किन्तु भारतके अन्यान्य स्थानोंका डोम-काक देशी कौवेको भांति निर्भीक रहता और घरोंमें इच्छानुसार आया जाया करता है। यह अति द्वन्द्वप्रिय है। डोमकाक लड़ते लड़ते इतना उन्मत्त पड़ता, कि दोमें एक न एक अवश्य मरता है। सिन्धु-प्रदेशमें प्रति वर्ष शरत्‌कालको जब इनका दल आता, तब अनेकोंको मृत्यु घर दबाता है। इससे लोग अनुमान लगाते कि डोम काक स्वभावसुलभ द्वन्द्व-प्रियताके कारण ही मर जाते हैं। सिन्धुप्रदेशवाले जातिगत कण्ठस्वरसे भिन्न घण्टेके ध्वनिकी भांति एक प्रकार शब्द निकाल सकते हैं। युक्तप्रदेशमें यह घास फूससे मैदान या जङ्गलके जङ्गलमें बड़े बड़े वृक्षोंकी शिखाओंपर घोंसले बनाते हैं। इसके चार-पांच अण्डे होते हैं। प्रायः पौष माससे फाल्गुन तक यह अण्डे देते हैं। अण्डे हरित् आभायुक्त तरल नील वर्ण होते हैं। उनपर काले मटमैले, बैंगनी और लाल रङ्गके धब्बे पड़ जाते हैं।

(ख) भूटानका डोमकाक—हिमालयके ऊर्ध्व-तम प्रदेश, काश्मीर, कुमायूं राज्य और तिब्बतमें एक प्रकारका २८ इञ्च दीर्घ काक होता है। इसका पक्ष १८ इञ्च बढ़ता है। ऊर्ध्व चञ्चुके मूलको उच्चता अधिक रहती और पूंछ भी दीर्घ लगती है। अन्यान्य अवयव साधारण देशीय काककी भांति होते हैं। दो चार वैदेशिक शाकुनशास्त्रविद् इसे एक स्वतन्त्र जाति मान 'करवस् टिबेटेनास्' (Corvus Tibetanus) नामसे अभिधान करते हैं। किन्तु आकारकी सामान्य दीर्घता छोड़ इसमें कोई अन्य विभिन्नता देख नहीं पड़ती। इसीसे बहुतसे लोग तिब्बती कौवेको देशीयोंमें गिनते हैं।

युरोपीय शाकुनशास्त्रविद् कहते कि डोमकाक (Raven) मनुष्योंके कण्ठस्वरका अतिसुन्दर अनुकरण कर सकते हैं।

(ग) पाटलचूड़ (गुलाबी चोटीवाला) काक—मरुप्रदेशमें होता है। इसका कपाल और मस्तक

पाटलाभ (गुलाबी) पिङ्गलवर्ण रहता है। ग्रीवेके चंचमें बैंगनी रंगकी विकचता झलकती है। ऊपरी स्तरके पालक विकच एवं कृष्णवर्ण और निम्न स्थानीय पाटलाभ पिङ्गलवर्ण रहते हैं। पिङ्गलवर्ण पालकोंका प्रान्तभाग श्याम होता है। चञ्चका पुट काला पड़ता है। दोनों पद भी काले ही रहते हैं। दैर्घ्य २२ इञ्च है। सिन्धुप्रदेशके शाहबाबाद और नारनोलके मरुप्रदेशमें ग्रीष्मकालमें भी यह देख पड़ता है। अन्यान्य द्रोमकाक (C corax)से इसके आकारका कम मिल समता है। दूसरा पार्थक्य मरुदेशके पालकोंकी कुछ आकृति और देहके परिमाणकी लघुता है। इसका वैज्ञानिक नाम 'करभस अम्ब्रिनस' (C Umbrinus) अर्थात् पाटलचूड़ काक है। यह भारतके गुप्तप्रदेशसे मिसर और एशियाके पश्चिम तथा दक्षिणस्थ देश तक समस्त स्थानोंमें मिलता है।

१ कौड़ियाला कौआको उत्तर भारतीय 'डोम' या 'डाम कौआ' दक्षिणमें 'पेरी कोवा' तेलगू 'काकी' तामिल 'काका', सिंहली 'कवडो', भूटानी 'उलक' और अधिक अंगरेज 'रावेन' (Raven) कहते हैं। किन्तु शकुनतत्त्वज्ञ अंगरेज पण्डितोंने इसका नाम 'इण्डियन कर्बी' (Indian Corby) रखा है। इसकी देशोंके कई भेद हैं। उनमें कुछ नीचे लिखते हैं।

(क) गलित मांसभुक्—भारतीय कौड़ियाले कौवेके ऊपरी पर चिकने और खूब काले होते हैं। किन्तु नीचेवाले अधिक उज्ज्वल नहीं रहते। पुच्छके पालकोंका संस्थान ईषत् गोलाकार लगता है। चञ्चु विशेष दीर्घ रहता और प्राय पुच्छके अन्ततक विस्तृत रहता है। चञ्चुका पुट भारत बैठता है। ऊर्ध्व चञ्चुका अग्रभाग उच्च और अधोभाग वक्र होता है। गलदेश (घाड़) और चञ्चुप्रान्तस्थ पालकोंमें विच्छिन्नता कम झलकती है। इस स्थानके पालक इस्पात पाशीकी भांति लगते हैं। उनमें चूटी (कांटि) देख नहीं पड़ती। अच्छ पद और पद्मनिका वर्ण काला होता है। यह १८ इञ्च दीर्घ रहता है। पक्षका ग्यारहसे चौदह पुच्छका बाल, पैरकी पट्टीका दीर्घ अधिक और वक्षका दैर्घ्य ढाई इञ्च है।

इसको अपरकी शकुनशास्त्रने 'करभस माक्रोरिंकस' (C macrorhynchus) अथवा 'करभस कल्मिनाटस्' (C culminatus) लिखते हैं। यह भारत वर्षके वनों पर्वतों कोलाहलमें प्रभृति सकल स्थानोंमें रहते हैं। पूर्व उपद्वीप और भारतीय द्वीपस्थ स्थानोंमें भी इनकी कोई कमी नहीं। ग्रामकाककी भांति अवश्य न रहते भी अन्यान्य जातीयोंकी अपेक्षा यह संख्यामें अधिक दिखते हैं। कोलाकयकी अपेक्षा इन्हें वन अथवा पर्वतमें रहना अच्छा लगता है। यह प्रधानतः मृत जन्तुका मांसादि खाते हैं। इसीसे अंगरेज इन्हें 'कर्बी' या 'कैरियन' अर्थात् गलितमांसभुक् (सड़ा मांस खानेवाले) कहते हैं। यह भी अण्डे देते समय किसी दुर्गम वनमें निरुपद्रव वृक्षपर घोंसला बनाते हैं। घोंसला सूखी घास पत्ते और बालसे कोमल तथा उष्ण कर लिया जाता है। एक बारमें तीन-चार अण्डे होते हैं। अण्डा हलका हरा रहता और उस पर भूरा भूरा दाग पड़ता है। वैशाखसे श्रावण मासके मध्य तक अण्डे देनेका समय है। इनके भी घोंसलोंमें कोयल अपने अण्डे रख देती है। यह बड़े अनिष्टकारी हैं। छोटे छोटे मुरगी कबूतरके बच्चे और चिड़े पकड़ ले जाते हैं। बकरीका छोटा बच्चा भी इनके चञ्चु पुटाघातसे अक्सुखमें पड़ता है। दूसरे पक्षियोंका घोंसला या अण्डा तोड़ते देख इनको 'राजकाक' कहते सुना है। अधिक अंगरेज इन्हें 'जङ्गल क्रो' (Jungle crow) कहते हैं।

(ख) युरोपीय कारियनक्रो (Carrian crow) बिलकुल भारतीय गलित मांसभुकको भांति होता है। केवल उसके गलेका वर्ण और छाया और कपोल (गाल)का पालक चटु नहीं रहता। सर्वशरीर चिकना लगता है। पुच्छका पालक आठ, पक्ष बारह चौदह और अच्छ तीन इञ्च पड़ता। केवल भारत और काश्मीरमें यह काक देख पड़ता है। इस जातीय पक्षीका आदि वासस्थान साइबेरियाके पूर्वांशमें इनकोनदीसे प्रशान्त महासागर पर्यन्त है। उस स्थानसे दक्षिण काश्मीर और पश्चिम इङ्गलैण्ड पर्यन्त समस्त देशमें यह रहते हैं। इन्हें अंग

रेजी शाकुनशास्त्रमें 'करवस् कोरोन' (C. Corune) कहते हैं।

(ग) काश्मीरमें दूसरी तरहका एक काक होता है। यह परिमाणमें गलित मांसभुक्से छोटा लगता है। गात्रका वर्ण अन्धकारकी भांति काला रहता है। यह अतिद्रुत उड़ सकता है। चोंचमें इसका विषम विषाद है। यह भी गलित मांस खाता है। काश्मीर, शिमला, और दुगसायी उपत्यकामें इसे देखते हैं। यह पार्वतीय काक (पहाड़ी कौवा) नामसे विख्यात है। अंगरेजी शाकुनशास्त्रमें इसे डांक काक और ग्राम्य काक मध्यवर्ती काक 'करवस् इण्टरमेडियस्' (C. intermedius) कहते हैं।

(घ) सूक्ष्मचञ्चु—गात्र नीलमिश्रित कृष्णवर्ण होता है। मस्तक, स्कन्ध, पृष्ठ, उदर और चञ्चुका वर्ण अपेक्षाकृत तरल रहता है। कपाल गाढ़ कृष्णवर्ण लगता है। इसका दैर्घ्य १८ इञ्च है। पक्ष साढ़े बारह, पुच्छ सात, चञ्चुपुट ढाई इञ्च दीर्घ बैठता है। किन्तु चञ्चुपुट पौन इञ्चसे ज्यादा मोटा नहीं होता। अंगरेजी शाकुनशास्त्रमें इसका नाम 'करवस टेनुइरोसट्रिस्' रखा है।

एतद्भिन्न चीनदेशीय 'करवस् पेकटोरालिस' (C. pectoralis) और यवद्वीप 'करवस एङ्का' (C. enca) भी डांककाक जातीय हैं। यवद्वीपका 'करवस एङ्का' सूक्ष्मचञ्चु काकसे मिलता, किन्तु क्षुद्रकाय रहता है। चीन देशीय 'पेकटोरालिस' भारतीय डांककाकको जातीय होता है।

ब्रह्मदेशीय ग्राम्यकाक—इसका कपाल, मस्तक, चिबुक और कण्ठ चिक्कण काला होता है। स्कन्ध (घाड) और वक्षःपार्श्व तरल पिङ्गलवर्ण रहता है। कर्णावरक और निम्न देशके पालक पिङ्गलाभ मिश्रित कृष्णवर्ण देख पड़ते हैं। पक्ष, पुच्छ और अवशिष्ट पालक चिक्कण कृष्णवर्ण लगते हैं। इसके कृष्णवर्ण पालकोंसे मयूरकण्ठकी भांति नील और हरिद्वर्ण-मिश्रित आभा निकलती है। स्वभाव बिलकुल भारतीय ग्राम्यकाकसे मिलता है। समस्त ब्रह्मदेशसे दक्षिण मरगुई और पश्चिम आसामसे मणिपुरके पूर्वाञ्चल तक यह रहता, अन्यत्र देख नहीं पड़ता। इसका ब्रह्म देशीय नाम 'किगियान' है। वैदेशिक शाकुनशास्त्रमें 'करवस् इनसोलेन्स' (C. insolens) लिखते हैं।

५ धोटियाला कौवा—इसके मस्तकपर काका-तुवाकी भांति चोटी रहती है। मस्तक, स्कन्ध, गलदेश, वक्षःस्थलका ऊर्ध्वभाग, पक्ष, पुच्छ और चञ्चु चिक्कण देखते हैं। अवशिष्ट पालक शङ्खकी धातु जैसे धूसर होते हैं। ऊपरी पालक कृष्णवर्ण और श्वेतिमाभि पाटल लगते हैं। पैर, चञ्चु और अंगुलीका रंग काला रहता है। दैर्घ्य १८ इञ्च है। पुच्छ साढ़े सात, पक्ष साढ़े बारह, पदकी गांठें दो और चञ्चुका दैर्घ्य दो इञ्च है। साधारण अंगरेजोंमें इसे 'हुडेड क्रो' (Hooded Crow) कहते हैं। अंगरेजी शाकुनशास्त्रका नाम 'करवस् कारनिक्स' (C. Cornix) है। इनकी मांस अच्छियां होती हैं। जातिका प्रभेद स्पष्ट देख पड़ता है। एक दूसरेको सहजमें ही पहचान सकते हैं। यथा धोटियाला कौवा (True Corvus Cornix) आटलाण्टिक महासागरके उपकूलसे पश्चिम युरोप पर्यन्त मिलता है। कृष्णवर्ण पक्षको छोड़ इसके दूसरे पालक पांशु धूसर होते हैं। एक जातीय 'करवस कैपेलेनास' (C Capellanus) पारस्य उपसागरके उपकूल और मिसोपोटेमिया प्रदेशमें रहता है। इसके पर सफेद और कलस आने होते हैं। आकार प्रकारादिकी बात पहले ही बता चुके हैं। शीत कालमें यह पञ्जाबके उत्तरपश्चिम प्रान्त, हजारा प्रदेश और गिलगिट प्रान्तमें देख पड़ता है। इसका खाना आदि मांसभुक् काककी भांति होता है। किन्तु यह शस्य मिलनेकी आशामें इसे दल बांध मैदानमें घूमना पड़ता है। भारतवर्षमें न तो यह घोंसला बनाता और न अण्डे ही देता है। साइबेरियामें धोटियाला गलित मांसभुकोंके साथ सहवासादि रख सन्तान उत्पादन करता है। यह अपासङ्ग काक इस देशमें देख नहीं पड़ता।

६ काश्मीर प्रदेश, पश्चिम एशिया और युरोपमें एक प्रकारका कोड़ियाला कौवा होता है। अंगरेजी शाकुनशास्त्रके मतसे यह भिन्न श्रेणीभुक्त है। इसके

सब अवयवोंका वर्ण काला रहता है। मस्तक, स्कन्ध, और निम्न देशके पालकोंमें नीलवर्णकी चिकनता तथा पाटलकी आभा झलकती है। परिमाण दण्डकाकसे मिलता है। इतरविषय सामान्य है। अंगरेजीमें इसे 'रुक' (Rook) कहते हैं। शाकुन शास्त्रका वैज्ञानिक नाम 'करवस् फ्रुगिलेगस' (C Frugilegus) है। पांच मास होतेही इसके शावककी नासाका लोम (Nasal bristles) गिर जाता है। फिर दो मास पीछे मुखके सम्मुख भाग अर्थात् चञ्चुके मूलमें बिलकुल पालक नहीं रहते। यह भारतवर्षमें कहीं रहता या सन्तानोत्पादन करता है। इसे मौसमोंको देखते हैं। यह झुण्डमें मिले हरहरे मैदानमें घूमता और नदीकूल तथा जलाशयमें कीड़ादि ढूंढ़ता है।

७। काश्मीरमें भी एक क्षुद्राकार दण्डकाक होता है। इसे क्षुद्रकाय दण्डकाक कहते हैं। मस्तक तथा कपाल चिक्कण कृष्णवर्ण और स्कन्ध गाढ़ धूसरवर्ण रहता है। मस्तकका पार्श्व एवं ग्रीवादेश तरल धूसर वर्ण होता है। प्रायः पाये गलदेशमें सफेद धारियां पड़ जाती हैं। उदरका पालक और पुच्छ चिक्कण नीलाभ कृष्णवर्ण लगता है। परका कलम भूरा होता है। गलदेशका निम्नभाग कृष्णवर्ण रहता है। अन्यान्य पालक भी स्लेटकी भांति धूसरमिश्रित देख पड़ते हैं। दीर्घता १३ इंच है। पुच्छ साढ़े पांच इंच और पैरकी खूंटी डेढ़ और चोंच डेढ़ इंच है। अंगरेजीमें इसे 'जाक डा' (Jackdaw) कहते हैं। शाकुनशास्त्रके अनुसार वैज्ञानिक नाम 'करवस मोनेडुला' (C monedula) है। भारतके मध्य काश्मीर और उत्तर पञ्जाबमें यह देख पड़ता है। शीतकालमें पञ्जाबका मरुदेश पर्वतके निकट भी इसे पाते हैं। काश्मीरमें यह पुरातन अट्टालिकाओं और दरोंदर खोखला समा रहता है। इसका अण्डा ४से ६ इंचतक दीर्घ होता है।

८ श्वेतकाक—काककी भांति अविकल आकारका एक पक्षी है। इसका समस्त मस्तक काकातुआकी भांति सफेद रहता है। पदद्वय, चञ्चु एवं पक्ष एवं चञ्चुका आकार भी काकातुवेसे मिलता है। इसे सफेद कौवा कहते हैं।

काकके सम्बन्धमें कई प्रवाद सुन पड़ते हैं। उनमें कुछ नीचे लिखे जाते हैं,—

(१) कौवे दो आंखसे देख नहीं सकते। कारण एक दिन राम और सीता कामद वनमें घूमते थे। इन्द्रके पुत्र जयन्त सीताका रूप देख मोहित हुये और काक रूपसे उनका वक्षोदेशमें चोंच दे गये। नखाघात लगते सीताके स्तनसे रक्त गिरा था। रामने यह देख वाण छोड़ा। वह काकके चक्षुमें जाकर लगा था। उसी दिनसे कौवोंकी एक आंख फूटी है।

(२) किसी गृहस्थके मकानपर बैठ एक काकके दूसरेका माल बांट खिलानेसे या मस्तकोत्क्षिप्त पालक डालनेसे सद्यःपुत्रप्रसाविता वधू वा कन्याके देख पानेसे उसी मासमें ऋतुस्नान पीछे उस वधू वा कन्या गर्भिणी हो जाती है।

(३) काकका पालक छूनेसे पूर्वजन्म विनष्ट होता है। बहुतसे लोग इसी विश्वास पर पर छूकर सचैल नहा डालते हैं।

(४) काक बिना मारनेसे दूसरे समय नहीं मरता।

(५) काक जब सवेरे उठ बोलता और उड़ता किन्तु आहार ग्रहण नहीं करता, तब प्रभु उद्देशसे जलमेपर मरण रहता है।

(६) पक्षियोंमें काक चाण्डालजातीय है। वह मलका ढेर परिष्कार करता है।

(७) काकका मांस तिक्त रहता और किसी पशु पक्षीके खानेमें नहीं लगता। स्वार्थपरताकी तुलनामें कहा जाता है काक सबका मांस खाता, किन्तु उसका मांस किसी काम नहीं आता। काकचरित्र देखो।

मदनपालके मतसे इसका मांस लघु, अग्निदीपक, रुच, वलकारक, आयु एवं चक्षुके लिये हितकर और क्षत तथा क्षयरोगनाशक है।

५ एक कर्षका चतुर्थांश। ६ कीटविशेष, एक डांसू। ७ तिलकविशेष। ८ शिरोऽवचालन। (त्रि०) ९ कुत्सित भावसे गमनकारी, खराब तौर पर चलनेवाला। १० अतिक्षुद्र, बड़ा बदमाश।

काककङ्गु (सं॰ स्त्री॰) काकप्रिया कङ्गुः मध्यलो॰। धान्यविशेष, चीना। 'चीनकस्तु काककङ्गुः' (हेम ४।२४४)

काककण्टक (सं॰ पु॰) जलचर पक्षिविशेष, पानीकी एक चिड़िया।

काककर्कटी (सं॰ स्त्री॰) खर्जूरी वृक्ष, खजूरका पेड़।

काककला (सं॰ स्त्री॰) काकस्य कला अवयव इव अवयवो यस्याः, मध्यपदलो॰। काकजङ्घावृक्ष, एक पेड़।

काककुड्मल (सं॰ क्ली॰) नीलपद्म, आसमानी कंवल।

काककुष्ठ (सं॰ क्ली॰) कङ्कुष्ठ, दवामें पड़नेवाली एक मट्टी।

काककूर्ममृगाखु (सं॰ पु॰) कौवा कछुवा, हिरन और चूहा।*

काकघ्नी (सं॰स्त्री॰) काकं हन्ति, काक-हन्-ट ङीप्। महाकरञ्जवृक्ष, बड़े करौंदेका पेड़।

काकचरित्र (सं॰ क्ली॰) काकस्य चरित्रं वर्णितं यत्र, बहुव्री॰। शाकुनशास्त्रका अंशविशेष, इल्मशिगूनीका एक हिस्सा। इसमें यही उपदेश लिखते काकके शब्द विशेष चेष्टादिसे कैसे लाभालाभ मालूम कर सकते हैं। वसन्त राजप्रणीत शाकुन शास्त्रमें कहा है—

काक पांच श्रेणियोंमें बांटा है,—ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र और अन्त्यज। वर्ण, स्वर और स्वभावसे यह भेद पहचान लेते हैं। जो परिमाणमें बृहत् कृष्णवर्ण, दीर्घ, विशाल मस्तकयुक्त और गम्भीरस्वर रहते, उन्हें विप्रजाति कहते हैं। मिश्रवर्ण, पिङ्गल अथवा नील चक्षु, तीक्ष्णरव और अतिशय बलवान् काक क्षत्रियजाति हैं। पाण्डु वा नीलवर्ण, श्वेत अथवा नीलचक्षु और शब्द अल्परुद्ध वैश्यजाति होते हैं। भस्मकी भांति वर्णविशिष्ट, कृशशरीर, अधिकांश ककार शब्द युक्त, और चञ्चल स्वभाव शूद्रजाति माने गये हैं। रूक्ष, अथवा सूक्ष्म मुख, दीप्तिविशिष्ट स्कन्धदेश, शब्द एवं बुद्धिवृत्ति स्थिर और अल्प आग्रहवाले अन्त्यज कहाते हैं। द्रोण नामक कृष्णवर्ण विप्रकाक श्रेष्ठ होता है। अभावमें जिनका कण्ठदेश श्यामवर्ण लगता, उनका लक्षणादि देखना पड़ता है। अद्भुत दर्शन होनेसे श्वेतकाक ग्राह्य नहीं ठहरता। विप्रकाक प्रश्न करने पर परिष्कार उत्तर देता है। क्षत्रियकाक विप्रकाककी अपेक्षा अल्प रहता है। वैश्यकाक अधिवेशन और शूद्रकाक पूजार्चन पानेसे बोलता है। किन्तु अन्त्यज काक सर्वदा समस्त प्रश्न लगाया करता है। इन पांचों काकोंके शब्दसे उसी समय, तीन दिन, सप्ताह वा एक पक्षमें फल अवश्य मिल जाता है।

शान्त और प्रदीप्त भावमें बोलना शुभप्रद है। किन्तु रौद्र स्वरविशिष्ट शब्द प्रशस्त नहीं होता। मधुर स्वर ही सर्वत्र अच्छा है। प्रदीप्त भाव अथच परुषस्वरमें बोलनेपर कार्य बनकर भी बिगड़ जाता है। किन्तु प्रदीप्त अथच शान्तभावसे शब्द करते सिद्धि मिलती है। यदि काक शान्त एवं प्रदीप्त भावसे एक बार बाहर बोल भीतर आता और फिर वैसा ही शब्द सुनाता, तो समस्त विघ्न विनष्ट हो कार्य बन जाता है। प्रथम दीप्त और पश्चात् शान्त शब्द निकालनेसे कार्य बिगड़कर बनता है।

सूर्योदयके समय पूर्वदिक् किसी निर्दोष स्थानमें सम्मुख बैठकर काकके बोलनेसे चिन्तित कार्य निकलता और स्त्रीरत्नादि मिलते हैं। अग्निकोणमें बैठ शब्द करनेसे शत्रुनाश, भयनाश और स्त्रीलाभ होता है। दक्षिण दिक्में परुष स्वरसे शब्द करनेपर अति दुःख, रोग वा मृत्यु आता, किन्तु मधुरस्वर रहते कार्य बन जाता और स्त्रीलाभ देखाता है। नैर्ऋत और सहसा बोल उठनेपर क्रूर कार्य लग जाता, दूत आता और मनुष्य मध्यम सिद्धि पाता है। पश्चिम दिक्में शब्द करनेसे वृष्टि पड़ती, राजपुरुषमें अवायी ठहरती और स्त्रीसे लड़ायी चलती है। वायुकोणमें बोलनेसे वाञ्छित वस्त्र, अन्न एवं यान मिलता, किन्तु पहला आजीवन बिगड़ता, अतिथि आ पहुंचता और अपनेको स्वदेशसे विदेश जाना पड़ता है। उत्तरदिक्में शब्द करनेपर दुःख, सर्पका भय, दारिद्र्य, धनका नाश और प्रियव्यक्तिलाभ होता है। ईशान दिक्में बोलनेसे अन्त्यज आते, रोगके कारण उठते देखाते प्रिय वस्तु मिल जाते और पीड़ाका आधिक्यमें रहते मृत्यु पाते हैं। ब्रह्मदेश अर्थात् ऊर्ध्व दिक्को मधुर स्वरसे शब्द करने पर वाञ्छित अर्थ, प्रचुर अनुग्रह और धन मिलता है।

प्रथम प्रहरके समय पूर्व दिक्को काक बोलनेसे चिन्तित कार्य बनता, अभीष्ट व्यक्ति आ पहुंचता और विमल विषय मिला करता है। अग्निकोणमें अर्थके शब्द करनेसे स्त्रीलाभ और धननाश होता है। दक्षिण दिक्को प्रातःकाल बोलनेसे स्त्री सुख और प्रियभक्ष्य पाती है। नैर्ऋत दिक्में पक्षी पत्थर टेर लगानेसे प्रियपक्षो, मिष्टान्न सामग्री और चिन्तित विषयको सिद्धि मिलती है। पश्चिम ओर पुकारनेसे पूज्य जन आते और मेघ बरसने लग जाते हैं। वायुकोणमें बोलने धन, राजप्रसाद और पथिक देख पड़ता है। उत्तर कोणको टेर उठानेपर भय और, शोक दुःख अथवा धन नाशका संवाद मिलता है। ईशानकोणमें शब्द आने पर प्रिय व्यक्तिके साथ आलाप, अग्निका नाश, और बहुतसे लोगोंका साथ होता है। ब्रह्मदेशमें बोलनेसे सुख एवं कामभोग, सम्मान, सम्पद् धन और सिद्धि पाते हैं।

द्वितीय प्रहर पूर्वदिक्में काकका शब्द सुननेसे कोई पथिक आता, चोरका भय देखता और व्याकुलता तथा अनिद्य व्याधिका रोग बढ़ जाता है। अग्निकोणमें बोलना प्रियव्यक्तिके आगमनसंवाद और स्त्रीलाभका सूचक है। दक्षिणके शब्दसे आगी पड़ता, अतिशय भय बढ़ता और प्रिय व्यक्ति आ पहुंचता है। नैर्ऋतमें दो पहरको काक बोलनेसे प्राणभय, स्त्री एवं भोज्यलाभ और यावतीय रोगका नाश होता है। पश्चिममें पुकारनेसे स्त्री मिलती, सम्पद् बढ़ती और कुवृष्टि पड़ती है। वायुकोणमें बोलनेसे अन्न तथा और वस्त्र, दूतका आगमन, और स्त्री मांस तथा धनलाभ होता है। उत्तरको रम्य रव निकालनेसे आगत एवं दुष्ट व्यक्ति आता और अर्थलाभ देखाता किन्तु अरम्य स्वर रहने चोरभय बढ़ जाता है। ईशानमें रव मानके बोलने पर चोर तथा अग्निका भय समाता और विरह वाक्य सुनाता, किन्तु मधुर लगने पर गुरुआगमन एवं अर्थलाभ देखाता है। ब्रह्मदेशमें दिनके द्वितीय प्रहर सुशब्दसे राजप्रसाद तथा मिष्टान्न मिलता, किन्तु कुशब्दसे चोरभय लगता है।

तृतीय प्रहरको पूर्वदिक्में काकके रूक्ष शब्द निकालने सम्पद् बढ़ती तथा चोरभीति आ पड़ती, किन्तु रम्य ध्वनि रटनेसे राजाकी प्रभायी ठहरती और अर्थप्राप्ति एवं कार्यसिद्धि लगती है। इसी प्रकार अग्निकोणमें विरस शब्दसे अग्निभय, कलह अशुभ संवाद तथा यात्राकी विफलता और विशुद्ध स्वरसे जयादि संवाद पाते हैं। दक्षिण दिक् बोलनेसे शोक भी रोग लगता, आप्त व्यक्ति आ पहुंचता और क्षुद्र कार्य बनता है। नैर्ऋत दिक्को शब्द करनेसे मित्रागम मिष्टान्न लाभ, धननाश, गृहागमन, प्रभृति विरुद्ध संवाद सुनाते और यात्रामें कार्यनाश होता है। पश्चिमको टेर लगानेसे भक्षण मिलता, दूर पथ चलना पड़ता, सुहृद् व्यक्ति आ पहुंचता, अभीष्ट जयादिका संवाद आता, स्त्रीलाभ ठहरता और यात्रामें कार्य बनता है। वायुकोणमें बोलनेसे दुर्दिनवार्ता, अपहृत वस्तुका लाभ, सन्तोषकर संवाद उत्तम स्त्रीलाभ और यात्रा होता है। उत्तर दिक् शब्द कर उठनेपर कार्य बनता, अर्थ मिलता, भोज्यहरिका शुभ संवाद सुन पड़ता और गमन तथा बन्धुसमागम रहता है। ईशान दिक्में सुशब्दसे भोज्य एवं जय मिलता, किन्तु कुशब्दसे हानि तथा कलह उठाना पड़ता है। ब्रह्मदिक्को बोलनेसे तिक्तरस एवं ताम्बूलयुक्त भोज्यलाभ होता है।

चतुर्थ प्रहर—पूर्व दिक्को काक बोलनेसे अर्थलाभ राजपूजा अभय, सम्पद्वृद्धि और रोग तथा अग्निकोणमें शब्द आनेपर भय, रोग कलह और मित्रागम दक्षिण दिक् पुकारनेसे तस्कर तथा शत्रुका भय बढ़ता, गिरजन आ पहुंचता और रोग एवं भक्ष्य देख पड़ता है। नैर्ऋतकी टेरसे अतिवृष्टि, अभीष्टसिद्धि और पथमें चोरके साथ युद्ध होता है। पश्चिममें पुकारनेसे ब्राह्मणका आगमन, अर्थलाभ, स्त्री एवं जयलाभ अर्थात्, यात्रामें मनोरथ पूरण और राजप्रसाद होता है। वायुकोणमें बोलनेसे प्रियपक्षोंका आगमन, असाधक मध्य प्रवास और प्रवास प्रत्यागमन है। उत्तरको शब्द कर उठने पर पथिक आता, ताम्बूल पाया जाता शुभ संवाद सुनाता वेश्यावेश्म मिलते देखाता, अश्वादि पर आरोहण लगता और विरस यात्रासे रोगी प्राण गंवाता है। ईशान दिक्को शब्द सुन पड़ते

स्वर्णका संवाद आता और रोग नष्ट हो जाता है। अग्न्यादिक्में बोलनेसे मध्यम वार्ता और मध्यम सिद्धि होती है।

दिक् और प्रहरादिके अनुसार सकल शुभाशुभ विमिश्रभावमें कहा है। इसमें दीप्तशब्दको अशुभ और शान्त शब्दको शुभकर समझना चाहिये। दूसरे दीप्तदिक्का रव शान्त दिक्को प्रसारित होनेसे अधिक फलप्रद है। दीप्तदिक्को बैठ उसी ओर देखते देखते बोलना अच्छा नहीं होता। दीप्त दिक्में रह प्रदीप्त दिक्को देखते देखते शब्द करना भी दुष्ट है। दीप्त दिक्में बैठ प्रशान्त दिक्को घूम बोलनेसे तुच्छ और दुष्टफल मिलता है। शाखा पर रह शान्त-दिक्को देखते देखते रूक्ष शब्द निकालनेसे अल्प अनिष्ट होता है। शान्त दिक्को दृष्टि डालते डालते शान्त स्वरसे बोलना अल्प अभीष्टप्रद है। शान्त दिक्में रह दीप्त दिक् देखते देखते शब्द करना शीघ्र अभीष्टप्रद होता है। इसी प्रकार मनुष्योंको काकोंका आकार, प्रकार, भाव और रव विभाग कर दिवारात्रमें चारो प्रहरोंका शुभाशुभ देखना चाहिये।

काल और स्थान विशेषमें काकका गृह निर्माण देखकर भी शुभाशुभ निरूपित होता है।

वैशाख मासको निरुपद्रव वृक्षमें गृहनिर्माण करनेसे देशका मङ्गल और कुत्सित, शुष्क वा कण्टक-युक्त वृक्षमें घोंसला लगानेसे दुर्भिक्ष होता है। प्रशस्त वृक्षकी पूर्व शाखा पर घर बांधते पानी बरसता, शकुन-प्रसाद मिलता, नीरोग रहता और विषय हाथ लगता है। अग्निकोणकी शाखासे वृष्टि, भय, कलह वा पाप, दुर्भिक्ष एवं शत्रु द्वारा देश नाश और पशुओंको पीड़ा है। दक्षिण शाखासे अल्प वृष्टिपात, अन्ननाश और शत्रु विरोध होता है। नैऋत शाखा पर घोंसला लगानेसे वर्षाकालको अल्प जल बरसता, मनुष्यको रोग शत्रु तथा और भय रहता, दुर्भिक्ष पड़ता और युद्ध चलता है। पश्चिम शाखासे वृष्टि, नीरोग, मङ्गल, सुभिक्ष, सम्पद और आनन्द है। वायु-कोणस्थ शाखापर घोंसला रहनेसे अत्यन्त वायु आता, मेघ अल्प जल बरसता, मूषिकोंका उपद्रव बढ़ जाता, शस्य नसाता और दोनों ओर महाविरोध देखाता है। उत्तर शाखा पर सोनेसे वर्षाकालको परिमित वृष्टि, मङ्गल, सुभिक्ष, सुख, नीरोग, सम्पद्-वृद्धि और समृद्धि है। ईशानदिक्स्थ शाखापर रहनेसे अल्प जल बर-सता, शत्रु बढ़ता, प्रजावर्गका उत्सर्ग पड़ता, बान्धव कलह लगाने लगता और जनसमूह मर्यादाशून्य बनता है। वृक्षके अग्रभागमें अति वृष्टि, मध्यदेशमें मध्यमरूप वृष्टि और निम्न देशमें रहनेसे अनावृष्टि होती है। भूमिमें कोण बनानेसे अवृष्टि और रोगादि भयकी वृद्धि है। शुष्क वृक्षपर बसनेसे विग्रह और अन्ननाश है। प्राचीरके रन्ध्रमें काक रहनेसे प्रभूत भय लगता है। निम्नप्रदेश, तरुकोटर, वाल्मीक-रन्ध्र और लतामें सो जानेसे पीड़ा, अवृष्टि और देशके नियमको शून्यता रहती है।

अण्डप्रसवके अनुसार शुभाशुभका निर्णय—एकको वारुण, दोको अग्नि, तीनको वायु और चार अण्डे देनेको ऐन्द्र कहते हैं। वारुणसे पृथिवीमें शस्य बहुत बढ़ता, अग्निसे मन्द वर्षण पड़ता तथा रोपित बीजमें अङ्कुर नहीं उठता, वायुसे शस्य उत्पन्न होते भी सूखते सूखते शलभ प्रभृति कीटोंका भक्षण-बनता और ऐन्द्र अण्ड प्रसव करनेसे मङ्गल, सुभिक्ष, सुख और कार्य निकलता है।

काकके शब्द चेष्टादिसे यात्राकालीन शुभाशुभका निर्णय—काकों-को दधि और अन्नयुक्त पूजा चढ़ा यात्राके समय प्रवासी निम्नोक्त मन्त्रपाठपूर्वक नमस्कार करते हैं,—

"गृहाण बलिं पक्षिषु मन्त्रपूतं त्वं प्राणिषु प्राणिषु वर्यलक्षम्।
शुभे न च स्त्रौं भजसे नमोऽस्तु तुभ्यं खगेन्द्राय सकलप्रभाय॥"

नमस्कारके पीछे अपना कार्य सोच सिद्धिकी कामनासे काक दर्शन करना पड़ता है। उस समय यदि यह वामदिक्से मधुर शब्द कर दक्षिण ओर चला आता, तो सर्वार्थ सिद्ध हो जाता और प्रत्यागमन देखाता है। फिर वाम दिक्से घूम लौट आने पर भी अभीष्ट कार्य बनता, मङ्गल लगता और शीघ्र प्रत्यागमन पड़ता है। वामदिक्में अनुलोम लगाते अर्थात् ऊपरसे नीचे आते समय मधुर रव निकालने पर प्रयोजन सिद्ध होता है। वाम और दक्षिण उभय

दिक् उक्त प्रकारसे ही शब्द करने पर कुछ कार्य बनते और कुछ बिगड़ते भी हैं। गृहदेशको मधुर स्वरसे बोलते बोलते पक्ष कंपनेपर मङ्गल होता है। शब्द करते करते आगे आगे, पक्ष कंपकर स्वयं देखाने अथवा पद द्वारा मस्तक खुजलानेसे अभीष्ट सिद्ध होता है। हाथी बांधनेके खूंटे पर बैठ कर काकके बोलनेसे हाथी मिलता और हाथीपर राजत्व भी चलता है। अश्वके बन्धन स्तम्भ पर बैठकर पुकारनेसे वाहन एवं भूमिका लाभ होता है। अश्वसे विजय, कूपसे नष्टवस्तु एवं अथवा लाभ नदीतीरसे कार्य सिद्धि पूर्ण घटसे धनलाभ प्रासादसे धान्य राशि और हर्म्यपृष्ठ एवं शस्यवनपूर्ण भूमिपर अवस्थित हो बोलनेसे धनलाभ है। फिर कुम्भ शब्द निकालनेसे भी धन मिल जाता है। गृहदेश वा मध्युकको गोमय अथवा घटादि द्रव्य पर बैठ कर विष्ठायुक्त बोलनेसे अभिलषित भोजन पान लाभ होता है। फिर मुखमें अन्नादि, विष्ठा, फल, मूल, पुष्प वा भक्ष्य देख पड़ते भी मिष्टान्न भोजन पाते हैं। नागी-विरस पूर्ण घट पर चढ़ कर पुकारनेसे स्त्री एवं धन लाभ है। शय्यापर बैठ कर बोलनेसे सुजन समागम होता है। ग्राममें गोपुच्छ, छत्र, दूर्वा वा गोमय पर पक्ष रगड़ते अथवा अन्नको आहार प्रदान करते देखनेसे विविध भोज्य मिलता है। धान्य यव, दधि वा घृत देख काक उठनेसे धन पाते हैं। मुखमें हरिद्वर्ण द्रव्य ले सम्मुख आनेसे लाभ रहता है। मनोरम शाद्वल, पत्र, पुष्प, फल तथा छायायुक्त द्रुमपर शब्द करनेसे कार्यसिद्धि होती है। इससे विपरीत देशमें प्रमाण्य भावसे शब्द करने पर क्लेश गढ़ता है। धान्यादि राशिपर रव लगानेसे धनलाभ है। गोपृष्ठ पर बैठकर बोलनेसे गो एवं स्त्रीको पाते हैं। महिषके पृष्ठपर शब्द करनेसे मङ्गल होने लगता है। इसी प्रकार गर्दभके पृष्ठसे ग्राम भय तथा वध, शूकरके पृष्ठसे वध, धन पङ्कयुक्त शूकरसे धन लाभ, महिषके पृष्ठमें मदोन्मत्त करके शरीरसे कष्ट, शुष्कलतासे कार्यक्षति और काष्ठ पर अवस्थित हो शब्द करनेसे कलह है। दक्षिण दिक्में बोल चलते, सम्मुखसे आ पड़ते अथवा पश्चात् दिक् शब्द सुनाते सुनाते विपरीत भावमें गमन करते रक्तपात होता है। वाम और दक्षिण क्रमसे उभय दिक् शब्द करनेपर अनर्थ रहता है। वाम दिक्के विपरीत भावसे आनेपर विघ्न पड़ता है। पश्चात् दिक्से बोलते दक्षिण ओर गमन करनेपर रक्तपात होता है। जलादि से प्रदक्षिण लगानेपर सर्पभय रहता है। गोपुच्छ और वल्मीक पर बैठ बोलनेसे सर्पदर्शन होता है। अङ्गार चिता और अस्थिपर अवस्थानकर शब्द निकालनेसे मृत्यु आती है। चर चोंच कर बोलनेसे हानि और पीड़ा है। गृहदेशको निठुर शब्द करनेसे मृत्यु होती है। शून्यमुख फैलाये रहनेसे अमङ्गल लगता है। पराङ्मुख होते रक्तपात वा बन्धन होता है। परस्पर लड़नेसे वध है। पराङ्मुख हो शुष्क द्रुम पर रहनेसे रोग लगता है। तिक्त द्रुम पर अवस्थान करनेसे कलह और कार्यनाश होता है। कण्टक युक्त द्रुम पर पक्ष रख कर्कश शब्द करने पर कष्ट पाते हैं। भग्न शाखापर रहनेसे वध है। लता वेष्टित स्थान पर अवस्थित होते बन्धन पड़ता है। मध्यच्छन्न रम्य द्रुमपर बैठते सहज कार्य सिद्धि है। शाल्मल द्रुमपर रहनेसे रक्तपात होता है। विष्ठा आवर्जना, मृत्तिका, तृण, काष्ठ, धूप और भस्मादि पर बैठनेसे काम बिगड़ जाता है। काकके मुखमें लता, रज्जु केश, शुष्क काष्ठ, चर्म, अस्थि जीर्णवस्त्र पल्लव, अङ्गार तथा रक्तोपल आदि देखनेसे दुःखमय पाप समागम, धन एवं आत्मयमें मनस्ताप, रोग बन्धन, वध और सर्वस्वापहरण प्रभृति होता है। गृहके ऊपर उठा अवनत पक्षसे कर्कश शब्द निकालनेसे मृत्यु आती है। एक पैर सिकोड़ और सूर्यकी ओर मुख मोड़ तीक्ष्ण स्वरसे बोलने अथवा काष्ठादि फोड़नेपर युद्धादिमें अनर्थ रहता है। वधूके मुखदेश अथवा शब्द करने पर मृत्यु होती है। एक पैरसे बैठते बन्धन है। मस्तक पर विष्ठा वा गोमय डाल देनेसे बाताबारी बन्धनमें पड़ता है। अग्नि फेंकनेसे भय होता है। ऊर्ध्व दिक् बोलनेसे भीतोप लगता

है। मनुष्य, पशु वा पक्षीके मस्तक पर बैठ शब्द निकालनेसे मृत्यु आती है। गलीमें वा बाजारमें घूमते घूमते काक आकर शरीरपर आघात होता है। दक्षिण वा दूसरा काक [illegible] अमङ्गल है। मनुष्य वा पशुके मस्तक और शरीर दोनों पर बैठनेसे मृत्युभय होता है। बैलके मस्तकपर [illegible] है। सोते समय [illegible] घरमें प्रवेश करनेपर गृह सूना होता है और पत्नी, जाति नष्ट होती है। [illegible] पर यह मनुष्य, [illegible] और [illegible] अथवा [illegible] दक्षिण पर बैठ शब्द करनेसे मृत्यु [illegible] है। [illegible] दिक् और [illegible] अनुसार भी [illegible] काक शब्दका फलित शुभाशुभ देखते हैं।

[illegible]—[illegible] काक पश्चिम बोलनेसे [illegible] होता है। [illegible] काकोंके शब्द करनेसे [illegible] है। वाम और दक्षिण दिक् [illegible] आगमें भय लगता है। [illegible] शब्द करनेसे [illegible] विनाश होता है। [illegible] पर चोट करनेसे [illegible] पड़ते हैं। [illegible] भूमिको [illegible] होती है। इस प्रकार [illegible] और [illegible] [illegible] अर्थात् [illegible] और [illegible] होनेसे [illegible] बढ़ता और [illegible] भय पड़ता है। [illegible] शब्द करनेसे और [illegible] अथवा कोई [illegible] है। [illegible] पर [illegible] भय लगता अथवा स्वस्थानमें रहते प्रवासमें भी तीन दिनके मध्य विविध दुःख उठाना पड़ता है। भूमिपर [illegible] भूमि मिलती है। जलमें रहते शब्द करनेसे [illegible] पड़ता है। प्रस्तर पर बोलनेसे [illegible] नष्ट होता है। (स्वस्थानमें रहते या प्रवासको चलते भी मनुष्यको इस शब्दका प्रभाव अनुभव करना पड़ता है) हाड़ोंमें रुधिर लिप्त शब्द करनेसे शिघ्र मरता है। पद हिलाते हिलाते फिर फिरानेसे [illegible] अमङ्गल है। [illegible]

[illegible] होता है। [illegible] करके [illegible] द्वारा [illegible] है। [illegible] और [illegible] है।

[illegible] और [illegible] होता है। [illegible] प्रोत्साहन करता है। [illegible] और [illegible] होता है। [illegible] और [illegible] है। [illegible] और [illegible] है। [illegible] मिलता है। [illegible] होता है। [illegible] और [illegible] है। [illegible] होनेसे [illegible] पर [illegible] और [illegible] है। [illegible] दर्शनसे उद्वेग, विवेद, भय, [illegible], [illegible], [illegible], [illegible], [illegible] होता है। इस दुःख शान्तिके लिये [illegible], [illegible] [illegible] दिलाना, [illegible], भूमि पर [illegible] [illegible] और [illegible] चाहिये। [illegible] दिन [illegible] है। [illegible] शान्तिविधान और [illegible] करते हैं। यह [illegible] मिलता वही [illegible] दुर्भिक्ष, [illegible], चोर, [illegible] भय और [illegible] पहुंचता है। इसकी शान्तिके लिये राजाको शान्तिक और पौष्टिक कर्म कर ब्राह्मणोंको [illegible], गो, भूमि तथा धन देना और [illegible] गुरुका मान न लेना चाहिये।

[illegible]—'[illegible]' से [illegible], '[illegible]'

से अभिलषित भोजन एवं काम काम 'क क' से अर्थ प्राप्ति, 'क क' से अर्थलाभ, 'केके' से सुन्दरी स्त्रीप्राप्ति, 'का का' से यात्रासिद्धि, 'क्रौ क्रौ' से शुभलाभ और 'कुकु' शब्दसे प्रिय सङ्गम है। 'क्रा क्रू' 'क्रां' एवं 'क्रा क्रां' सुखागम और 'का का कौ कौ कु कू' तथा 'कौ कुकुकु' शत्रु लाता, 'कीं कीं' रसादि बढ़ाता, 'कव कव' अग्नि जलाता, 'को को' तथा 'को को' कष्ठ बढ़ाता, 'कों' सर्वदा विपत्ति देखाता, 'क' मित्र मिलाता 'काका' हानि पहुंचाता, 'ह क' दुःख जताता 'के के', 'का कुटि' ए 'किं किरि' परतोष बनाता, 'का का का' मंगल दूरका समाचार सुनाता, 'कां' वाहन दलाता और 'कु कु कु' शब्द सर्प दिखाता है। प्रान्त, दीन और अशान्तदीन काक दीर्घ 'का' बोलनेसे कार्य नाशक है। 'कव कव' से भोजन मिलता और 'कति कति' से रसेन्द्रियपाक दुःख दूर रहता है। (कव करके बोलनेपर किसीकी व्याधि जाता है) 'कटकट' से मृत्यु, कपकप' से कलह 'कुरु कुरु' से प्रिय व्यक्तिका आगमन और 'कट कट' से भय एवं दधि भोजन मिलता है। इसी प्रकार कई प्रदीप्त और शान्त स्वरोंसे शुभाशुभ देख पड़ता है।

यदि अर्थात् अभीष्ट आहारादि पानेसे काक निम्न को क्रिया बदलता है। प्राचीन ऋषियोंने काकबलि प्रदानका जो नियम रखा, उसे हमने नीचे लिखा है,—

दक्षिणको छोड़ पश्चात्य और अट्टादि घौरी दशकी आकर्षसे बहु काकोंके बसने रहनेके अवसर निकट दिनमें बहु न कर यदि पिण्डके लिये निमन्त्रण देना पड़ता है। दूसरे दिन प्रातःकाल उस दूरका निम्न देश झाड़ पोंछ गोमयसे लीपते हैं। फिर वहां वेदी बना ब्रह्मा, विष्णु सूर्य रुद्र, अग्नि वैवस्वत, राक्षस, वरुण, वायु, कुबेर, शम्भु और अष्ट लोकपालकी पूजा की जाती है। पूजाके समय प्रणव और नमः शब्द युक्त पृथक् पृथक् नाम लेते हैं। अर्घ, आसन, आलेपन, पुष्प, धूप, नैवेद्य, दीप ताम्बूल और दक्षिणा पूजाका उपकरण है। पूजान्तपर तन्न-मिर्दिष्ट काकोंको मन्त्रपाठपूर्वक आह्वान कर दधि पिण्ड युक्त बलि निम्नलिखित मन्त्र पढ़के पढ़के देना चाहिये,—

"इन्द्र यमाय वरुणाय वायवे कुबेरवरुण यमी प्रसादं मे काका।"

उक्त समस्त कार्यके अन्तको बलिसे घट निमन्त्रण देशमें निमन्त्रण मानके पड़े जो काकोंको विशेष चेष्टासे शुभाशुभ देखते हैं। पूर्वदिक्से खाना आरम्भ करते सुख और धन बढ़ता है। अग्निकोणसे भोजन आरम्भ होते काम लगती है। दक्षिण दिक्से खाते अर्थ नाश है। नैऋतसे कार्य हानि होती है। पश्चिमसे अभीष्ट सिद्धि है। वायु दिक्से अच्छ जल बरसता है। उत्तरसे सुख, आरोग्य और लाभ सिद्धि है। फिर ईशान दिक्-से काकोंके बलि खाते अभीष्ट मिल जाता है। चारों ओरसे बलि बिलकुल बिखर होनेपर शत्रु और अधम दोनों पक्षकी सम्भावना है। भोजन न करनेसे भयकी आशङ्का उठती है।

चौरोहक, उपवन, चतुष्पथ, नदीतीर एवं देवालय प्रभृति स्थानों पर मूलदिन (चौदस) तथा अष्टमी तिथिको सर्वसिद्ध भोजन का अवसर है। एतद्भिन्न दूसरे प्रकार भी पिण्डदानकी व्यवस्था है। नारदादिने तीन पिण्ड देनेकी बात कही है।

शुभ दिनके चतुर्थ प्रहरके समय पूर्वोक्त स्थान पर पिण्डत्रय खानेके लिये काकोंको उपयुक्त निमन्त्रण देते हैं। दूसरे दिन प्रातःकाल भूमि लेप पोंछ पूर्वकथित मन्त्र द्वारा ब्रह्मा विष्णु, महेश्वर, वरुण, लोकपाल और काककी यथाक्रम दध्योदन, आज्यातण्डुल, पुष्प धूप प्रभृतिसे पूजते हैं। फिर पूर्वादि दिक्के अनुसार प्रथम पिण्डमें स्वर्ण, द्वितीयमें रौप्य और तृतीयमें सीसा तथा अपविद्ध द्रव्यसे बलि प्रदानके उपयुक्त पिण्ड बनाना चाहिये। बलि भोजन करनेके लिये निम्नोक्त मन्त्रसे काक बोलाये जाते हैं —

"क लिलि किलि किलि काकवर्णकाय स्वाहा।
कं काकी किलाय काकवर्णकाय स्वाहा।"

काकके सुवर्णयुक्त पिण्ड भोजन करनेसे उत्तम कार्य होता है। फिर रौप्य युक्त खानेसे मध्यम और सीसयुक्त लेनेसे अधम समझते हैं।

विवाह, वाणिज्य, विवाद, वृष्टि, मङ्गल, धन, कृषि, भोग, रोग संग्राम, सेवा, राजकार्य और देशके

सम्बन्धमें शुभाशुभ देखनेको उक्त प्रकारसे बलिप्रदान कर समझते हैं,—

काकके शिशुको ले अनुकूल चेष्टा लगाने और दक्षिण पर तथा ग्रीवा उठा बोलते बोलते मनोज्ञ स्थान वा मनोज्ञ वृक्ष पर जानेसे शुभ और अभीष्टकी सिद्धि होती है। इसके विपरीत चेष्टामें उलटा फल मिलता है। प्रधान शिशुको लेकर शान्तदिक् चलनेसे पूर्ण लाभ होता है। किन्तु पिण्डके साथ प्रदीप्त-दिक्को प्रस्थान करनेसे कार्य प्रथम बनते भी पीछे बिलकुल बिगड जाते हैं। द्वितीय पिण्ड उठा शान्त दिक्को जानेसे शुभ रहता और कार्यका फल विलम्बमें मिलता है। जघन्य पिण्डके साथ प्रदीप्त दिक्को चलनेसे कार्य भी जघन्य होता है।

पिण्डाष्टक दानकी व्यवस्था—शुभदिनमें सायंकाल बलि भोजनके लिये काकोंको निमन्त्रण देना चाहिये। दूसरे दिन प्रातःकाल समस्त उपकरणके साथ किसी निर्जन देशस्थ तरुके तलपर पहुंच भूमिको मृत्तिका गोमय प्रभृतिसे परिष्कृत और पञ्च गव्यसे परिशुद्ध करते हैं। फिर सौम्य उपहार दे कुलदेवताको पूज घृत एवं दधिमिश्रित आठ पिण्ड पूर्वादि क्रमसे आठो दिक् इन्द्र, वह्नि, यम, नैऋत, विष्णु, ब्रह्मा, कुवेर, महेश्वर और काकको देते हैं। प्रत्येकका नाम ले प्रणव एवं नमः शब्दयुक्त मन्त्र, तथा अर्घ्य, आसन, आलेपन, पुष्प, धूप, नैवेद्य, दीप, आतप और दक्षिणादिसे पूजा करते हैं। पूजाका मन्त्र नीचे लिखा है,—

"ॐ नमः भगवते गरुडाय त्रैलोक्य पक्षिराजाय स्वाहा।
त्रैलोक्यसदृशं पिण्डं यज्ञस्थ्रसमन्वितं।
मयादत्त निशिाय वायसाय सी गृह्यताम्॥"

पिण्डदानके पीछे वहांसे खिसक किसी निभृत स्थानमें खडे हो काकचेष्टा देखना चाहिये। प्रथम पिण्ड लेनेसे कार्य सिद्ध होता है। द्वितीयसे उद्वेग शोक, यात्राकी विफलता, हानि वा कलह, तृतीयसे रोग, आपद्, भय एवं मृत्यु, चतुर्थसे युद्धमें जय, पञ्चम मङ्गलमें अभीष्टसिद्धि, षष्ठसे प्रवास तथा विफलता, सप्तमसे असिद्धि और अष्टम पिण्ड ग्रहण करनेसे सन्ताप, शोक एवं यात्राकी विफलता है। यदि काक पिण्डको बिलकुल नहीं खाता अथवा वस्तुनखसे फेंक जाता, तो सर्वकार्यमें असफल आता या गहरा युद्ध देखाता है।

काकचिञ्चा (सं॰ स्त्री॰) काकवर्णं चिञ्चा प्रान्तभागः फले यस्याः, पृषोदरादित्वात् साधुः। १ गुञ्जा, घुंघची। गुञ्जा देखो। २ रक्तगुञ्जा, लाल घुंघची।

काकचिञ्चि, काकचिञ्चा देखो।

काकचिञ्चिक (सं॰ क्ली॰) काकचिञ्चावृक्ष, घुंघचीका पेड।

काकचिञ्ची (सं॰ स्त्री॰) काकचिञ्चि-ङीप्। गुञ्जा, घुंघची।

काकच्छद (सं॰ पु॰) काकस्य छदः पक्षः इव छदो यस्य, बहुव्री॰। १ खञ्जनपक्षी, खडरैचा। २ चापपक्षी, नीलकण्ठ। ३ कौवेका पर।

काकच्छदि (सं॰ पु॰) काकच्छद बाहुलकात् इञ्। काकच्छद देखो।

काकच्छर्दि, काकच्छद देखो।

काकजंघा (सं॰ स्त्री॰) काकस्य जंघेव जंघा आकृतिर्यस्याः, बहुव्री॰। १ स्वनामख्यातवृक्ष, एक पेड। इसका संस्कृत पर्याय—काकाङ्गी, काकाह्वी, काकनासिका, कपोतल, ध्वाङ्क्षजंघा, काकाङ्घ्रि, सुलोमशा, पारावतपदी, दासी और नदीकान्ता है। राजनिघण्टुके मतसे यह तिक्त, उष्ण और व्रण, कफ, वधिरता, अजीर्ण, जीर्णज्वर तथा विषमज्वरनाशक होती है। भावप्रकाशके कथनानुसार काकजंघा ज्वर, कण्डू, विषमज्वर और कृमिको दूर करती है।

पुष्यानक्षत्रमें इसका मूल उखाड रक्त सूत्रसे गले या हाथमें बांधनेसे एक दिनके अन्तरसे आनेवाला ज्वर (एकातरा) छूट जाता है।

कोई कोई इसे मसी या चकसेनी भी कहते हैं। काकजंघाका नाम तैलगुमें सुरपदि (टिविकि चेलमा) है। अंगरेजी उद्भिद शास्त्रमें ल्याहिरटा (Leea hirta) लिखते हैं। यह ४।५ हाथ बढ़ता है। काण्ड-सन्धिका मध्यभाग काकजंघाकी भांति उन्नत रहता है। इसी स्थानसे पत्र निकलते हैं। काकजंघाके

पत्र प्रायः हाथ दीर्घ और ३ अङ्गुलि प्रशस्त होते हैं। उनका अग्रभाग सूक्ष्म तथा बहु शिरायुक्त कोमल और किञ्चित् परस्पर लगता है। फल गुच्छेदार होता है। उसका ऊपरी वर्तुल प्रदेश कुछ निम्न पड़ता है। काकजंघाकी पुरानी मोटी गांठमें एक कीड़ा भी रहता है। यह बच्चोंकी पसली चलनेसे औषध [illegible] भांति व्यवहार किया जाता है।

भारतमें नाना स्थानोंपर काकजंघा उत्पन्न होती है। विशेषतः मद्रदेशीय यशोर अञ्चलके नदीकूलवर्ती वनमें यह बहुत देख पड़ती है।

२ गुञ्जा घुंघची। ३ लज्जावती लता, लजौनी।

काकजम्बु (सं० स्त्री०) काकप्रिया जम्बु। १ भूमि जम्बुक, छोटी जामनका पेड़। (Ardisia humilis) इसे बंगलामें बनजाम, आसाममें बोलो, उड़ियामें कुदना, तैलङ्गमें कोदमयारु काकी नारेदु, नागपुरीमें [illegible], महिसूरमें [illegible], बर्मीमें [illegible] और सिंहलमें [illegible] कहते हैं।

यह एक छोटी झाड़ी है। भारतमें काकजम्बु प्रायः सर्वत्र पायी जाती है। किन्तु उत्तर भारत और सिंधमें यह नहीं होती। इसके फलोंके रक्त वर्ण रससे अच्छा पीला रंग निकलता है। काठ धूसरवर्ण एवं ईषत् कठिन आता और जलाया जाता है। वैद्यक निघण्टुके मतसे यह कषाय, अम्ल, गुरु, पाकमें मधुर, वीर्य पुष्टिवर्धक और दाह, श्रम तथा अतीसारनाशक है।

२ नागरङ्गवृक्ष, नारङ्गीका पेड़।

काकजम्बू (सं० स्त्री०) काकैः भक्ष्यते अस्याः फलानि, ... काका प्रिया जम्बू इति, मध्यपदलो०। जलजात जम्बु विशेष, पानीमें पैदा होनेवाली एक जामुन। इसका संस्कृत पर्याय—काकफला, नादेयी, काकवल्लभा, भृङ्गेष्टा, काकनीला, धाङ्क्षजम्बु और जलप्रिया है। काकजम्बु देखो।

काकजात (सं० पु०) काकेन जातः प्रतिपालित वर्धित इत्यर्थः। १ काकपुष्ट, कोकिल कौवेसे पलनेवाला पक्षी कोयल। (त्रि०) २ काकसे उत्पन्न, कौवेसे पैदा।

काकजानुका (सं० स्त्री०) काकजंघा, मसी, मसवेनी।

काकड़ा (हिं० पु०) १ वृक्षविशेष, एक पेड़। यह सुलेमान और हिमालय पर्वत पर होता है। कुमायूंमें इसे पवित्र देखते हैं। गोलकांडमें इसकी पत्र झड़ते हैं। काठ पीताभ धूसरवर्ण होता है। इससे चिरट (कुरसी) मेज (मेज), पलंग (पर्यङ्क) प्रभृति बनाते हैं। पत्र पशुओंको खिलाये जाते हैं। काकड़ेके कांटे 'काकड़ाशींगी' कहलाते हैं। कर्कटशृङ्गी देखो।

काकड़ाशींगी (हिं० स्त्री०) कर्कटशृङ्गी, एक पीला गोंद। यह काकड़े पेड़में लगता है। काकड़ा देखो। इससे दूसरी चीजोंपर रंग चढ़ाते और चमड़ा सिझाते हैं। कीड़ वृक्षमें मिला देनेसे काकड़ाशींगी चाली पड़ जाते हैं। इसका आस्वाद कषाय है। कर्कटशृङ्गी देखो।

काकडुम्बुर (सं० पु०) काकोडुम्बुर, काला गूलर। यह छोटा होता है।

काकण (सं० क्ली०) कु ईषत् कणति निमीलति, कु कण अच्, कोः कादेश। १ गुञ्जा, घुंघची। काकण मिव आकृतिरस्यास्ति कृष्णरक्तपिडिकत्वात्। २ कुष्ठ विशेष, काले और लाल धब्बेवाला कुष्ठ या कोढ़। (Leprosy with black and red spots)

गुञ्जाकी भांति वर्णविशिष्ट, अपाक (न पकनेवाले) और वेदनायुक्त कुष्ठको 'काकण' कहते हैं। यह कुष्ठ त्रिदोषसे उत्पन्न होता है। सुतरां इसमें त्रिदोषके लक्षण देख पड़ते हैं। काकण असाध्य कुष्ठ है।

काकणक (सं० क्ली०) काकण स्वार्थे कन्। काकण कुष्ठ, घुंघची-जैसा कोढ़।

काकणघ्नवटी (सं० स्त्री०) कुष्ठघ्न औषध, जुजाम या कोढ़की एक दवा। कौचमल, चित, चित्रकका मूल, कटभा, त्रिफला, त्रिकटु और त्रिमद (विडङ्ग, मुस्त तथा चित्रक) समभाग ही पीस डालते हैं। फिर इस चूर्णको पथ्या (हड़), निम्ब, विडङ्ग, आसन और अमृता (गुर्च)के क्वाथकी भावना दे गोलियां बना लेते हैं। भावनाके लिये यथायोग्य क्वाथ बनाते हैं। एक मास यह औषध खानेसे काकणकुष्ठ अच्छा हो जाता है। (रसरत्नाकर)

काकणन्तिका (सं० स्त्री०) कु ईषत् कणन्ती निमी-

न्ती, काकणन्ती-कन्-टाप्, कोः कदादेशः। १ गुञ्जा, लाल घुंघची। २ रक्तकम्बल वृक्ष, लाल बबोलिका पेड़।

काकणन्ती (सं० स्त्री०) कु-कण-शतृ ङीप्।

काकणन्तिका देखो।

काकणान्तक (सं० पु०) सिन्दूर।

काकणी (सं० स्त्री०) काकण-ङीप्। १ गुञ्जा, घुंघची। २ कुष्ठविशेष, किसी क़िस्मका सुज़ाम।

काकण देखो।

काकण्डा (सं० स्त्री०) काकनासा, सफेद छोटी घुंघची।

काकतन्द्रा (सं० स्त्री०) काकस्य तन्द्रेव तन्द्रा मध्यपदलो०। १ काककी तन्द्राकी भांति अति सतर्क भावमें तन्द्रा, कौवेकी काहिली-जैसी निद्रायत होशियारीमें सुस्ती। २ काककी तन्द्रा, कौवेकी काहिली।

काकता (सं० स्त्री०) काकस्य भावः, काक-तल्-टाप् १ काकका धर्म, कौवेका फ़र्ज़। २ काकका स्वभाव, कौवेकी आदत, कौवापन।

काकतालीय (सं० क्ली०) काकतालमधिकृत्य उपदिष्टम्, काक-ताल-छ। समासाच्च तद्विषयात्। पा ५।३।१०६। न्याय विशेष, एक मस्लिक़। सुपक्व ताल अपने आप गिरते समय यदि काक वृक्षपर आकर बैठ जाता, तो कहा जाता कि काक ही ताल गिराता है। इसी प्रकार कोई काम स्वतः सिद्ध होते यदि किसीका हाथ लगता, तो वह उसीका किया ठहरता है। ऐसी ही घटनामें काकतालीय न्याय होता है।

"तदिदं काकतालीयं दैवमाद्यदि तथा।" (रामायण ३।३१।१०)

(वि०) २ आकस्मिक, दैवायत्त, नागहानी, इत्तिफ़ाक़ी। (अव्य०) ३ अकस्मात्, इत्तिफ़ाक़से, अचानक।

काकतालीय न्याय, काकतालीय देखो।

काकतालीयवत् (सं० अव्य०) अकस्मात्, इत्तिफ़ाक़से अचानक।

काकतालुकी (सं० त्रि०) काकवत् तालुरस्यास्ति, काक-तालुक-इनि। इन्द्रोपतापगर्ह्यात् प्राणिस्थादिनि। पा ५।२।१२८। काककी भांति तालुविशिष्ट, कौवेकी तरह तालू रखनेवाला, खराब, बुरा।

काकतिक्तिका, काकतिक्ता देखो।

काकतिक्ता (सं० स्त्री०) काकमांसवत् तिक्ता, मध्यपदलो०। १ लताकरञ्ज, बेलदार करौंदा। २ काकजंघा, मसी, चकसेनी। ३ श्वेत गुञ्जा, सफ़ेद घुंघची।

काकतिन्दु, काकतिन्दुक देखो।

काकतिन्दुक (सं०पु०) कं जलं अकति, क-अक-अण्; काकश्चासौ तिन्दुकश्चेति, कर्मधा० यद्वा काकवर्णस्तिन्दुकः काकप्रियो वा तिन्दुकः, मध्यपदलो०। तिन्दुकविशेष, किसी क़िस्मका आबनूस। (Diospyros tomentosa)

इसे भारतके विभिन्न प्रदेशोंमें मन्दुर्गी, गिमाई इलिन्द, पेड़ा इलिन्द, तोगरिके, धौंलपे, उलिन्द या उलिमेरा कहते हैं। यह मध्य आकारका वृक्ष है। काकतिन्दुक दाक्षिणात्यमें उड़ीसे तक मिलता है। सूरत और नासिकमें यह अधिक देख पड़ता है। इसे गोदावरी वनका झाड़ कहते हैं। बालाघाट पर्वत और मन्द्राजमें भी यह पाया जाता है। इसका फल गोल बड़े मटरकी भांति होता है। पकनेपर लोग इसे खाते हैं। यह अति सुरस निकलता है। काठ कठिन, स्थायी और सुन्दर वर्णविशिष्ट रहता है। यह अनेक कार्योंके लिये उपयोगी है।

काकतिन्दुकका संस्कृत पर्याय—काकेन्दु, कुलक, काकपीलुक, काकपीलु, काकाण्ड, काकस्फूर्ज, काकाह्व और काकबीजक है। राजनिघण्टुके मतसे यह गुरु, कषाय, अम्ल, वातविकारघ्न और मधुर होता है। इसका पक्व फल मधुर, किञ्चित् कफकारक और वह्नि तथा पित्तनाशक है।

काकतीयरुद्र (सं० पु०) नागपुरके एक प्राचीन राजा।

काकतुण्ड (सं० पु०) काकतुण्डस्य इव वर्णो ऽस्त्यस्य, काकतुण्ड-अच्। १ कृष्ण अगुरु, काला अगर। २ जलपक्षिविशेष, पानीकी एक चिड़िया। ३ ग्रीवोर्ध्वगत काकतुण्डाकार सन्धि, जिस्म का एक जोड़। यह हनुद्वय (दोनों जबड़ों) की सन्धि है।

काकतुण्डफला (सं० स्त्री०) काकतुण्डमिव फलमस्याः बहुव्री०। काकनासिका, सफ़ेद घुंघची।

काकतुण्डा, काकतुण्डिका देखो।

काकतुण्डिका (सं० स्त्री०) काकतुण्डस्येव वर्णः

पर्वाणि यस्याः, काकतुण्ड-ठन् टाप्। १ श्वेतगुञ्जा, सफेद घुंघची। २ महाश्वेतकाकमाची, बहुत सफेद बेबेया। काकचिञ्चा, घुंघची।

काकतुण्डी (सं॰ स्त्री॰) काकं ईषत् तुण्डं तुण्डवत् नासयति, गौरादि॰ ङीप्। राजपित्तल, किस्मकी पीतल। काकतुण्डस्येव आकृतिर्यस्याः। २ जलाकरपाल लता, कौवाठोंठी। इसका संस्कृत पर्याय—काकादनी, काकपीलु, काकशिम्बी, रक्तला, माहारसनी, वक्रमला, दुर्मोचा, वायसादनी, काकनखी, कामकी, काकदन्तिका और वायसदन्ती है। राजनि-घण्टुके मतसे यह कटु, उष्ण, तिक्त, रुक्ष, रसायन, वातश्लेष्मनाशक, रुचिकारक और पलित स्तम्भक (बालोंकी सफेदी रोकनेवाली) होती है। ३ गुञ्जा, घुंघची। ४ बहुरस काकमाची, छोटी काक बेबेया।

काकतुल्य (सं॰ त्रि॰) काकस्य तुल्यम् ६ तत्। कौवेके समान, कौवेके बराबर, काकाभ।

काकतीय (काकत्य)—दक्षिणापथका एक प्राचीन राजवंश। इस वंशवाले प्रथम कल्याणके चालुक्य राजाओंद्वारा शासित रहे। पाश्चात्य पुरातत्त्वविदोंके मतमें ई॰ एकादश शताब्दके शेष भागमें इस वंशका अभ्युदय हुआ।

इस राजवंशमें जिन जिन राजाओंके नाम मिलते, उनमें काकतिप्रलय प्रधान हैं। कहीं कहीं ऐसी बातें सुन पड़ती हैं कि प्रलय राजाकी पटरानी काकती देवीकी पूजा करती थीं। राजाभी पत्नीके पीछे पड़ काकती देवीके उपासक बने। इसीसे उन्होंने अपना नाम काकतिप्रलय रख लिया। घटनाक्रमसे राजाने एक शिवलिङ्ग पाया। असलमें वह पारस पत्थर था। उस पत्थरके गुणसे राजाको विस्तर धन मिला। पत्थर बहुत भारी था। किसीमें उसको हिलानेका सामर्थ्य न था। इसीसे प्रलयराजको अनमकोण्ड छोड़ ९८० शक (१०५८ ई॰)में उस शिवलिङ्ग मिलनेके स्थान पर नया नगर बसाना पड़ा। प्रथम काकति प्रलय चालुक्य राजाओंके अधःपतनसे स्वाधीन हुए। पुत्रजन्म होने पर दैवज्ञोंने राजासे कहा था, यह पितृघाती होगा। दैवज्ञोंकी बातसे वह पुत्रको वनमें छोड़ आये। किसी व्यक्तिने आकर उसे पुत्रकी भांति पाला पोसा। कदाचित् शीशेपर वह पारसलिङ्गका रक्षक बना। घटनाक्रमसे किसी रातको प्रलयराज मन्दिरमें देवदर्शन करने गये। साथमें नौकर चाकर कोई न था। राजकुमार राजाको गुप्तभावसे जाते देख सोचने लगे, सम्भवतः चोर आता है। फिर उनसे रहा न गया। उन्होंने तलवार आघात जमाया था। प्रलयराज धरा पर गिर पड़े। अन्तमें उन्हें मालूम हुआ कि वह उसी पुत्रका काम था, जिसको मार छोड़के निर्वाण अपनी रक्षाके लिये वनमें छोड़ा। उन्होंने ऐसी घटना ठीक नहीं मिलती। पुत्रका क्या दोष था। पुत्रके हाथ उन्हें मरना रहा। अन्तिम काल पर राजाने पुत्रको अपना राज्य दे डाला।

काकतिप्रलयके पुत्रका नाम रुद्रदेव था। उन्होंने पितृहत्यारूप महापातकके प्रायश्चित्तमें सहस्र शिव-मन्दिर बनवाये। उनके बाहुबलसे कटक और कल्याणके राजाने वश्यता मानी थी। किन्तु कनिष्ठभ्राता महादेवने विद्रोही हो युद्धमें उनको हराया और राज सिंहासन पाया। रुद्रदेव मारे गये। कुछ दिन पीछे महादेवगिरिके राजासे लड़ने चले और युद्धमें कट मरे। उनके पीछे रुद्रदेवके ज्येष्ठपुत्र गणपतिदेव राजा हुए। उन्होंने देवगिरिके रामराजासे युद्धमें पितृव्यके बदलेका बदला लिया था। राम राजाको कर देना पड़ा। उन्होंने अपनी कन्या प्रदान कर गणपति देवका आनुगत्य माना था। गणपतिदेवने पक्षिमारोंके मठसे मलनाद, नेलूर प्रभृति प्रदेश अधिकार किये। वह बड़े जैनविरोधी थे। उन्होंने तोड़ फोड़ अनेक जैनमन्दिरोंके स्थान पर शिवलिङ्ग लगवा दिये। फिर गणपतिदेवने अनेक नगर पत्तन बसाये। राजधानीका नाम 'एकशिलानगर' रखा गया और चारो ओर प्राचीर बना। उनके राजत्व कालमें अनेक तेलगु कवियोंने जन्म लिया था। मन्त्री योगराजके यत्नसे नियोगी ब्राह्मण मामूली मोहरिर बनाये गये। वैदिक ब्राह्मणोंने इस नियमका घोर प्रतिवाद किया था। किन्तु राजमन्त्रीका आदेश कोई टाल न सका।

गणपतिदेवके कोई पुत्र न था। उनकी एक मात्र कन्या उमाकदेवीसे राज महेन्द्रीके राजकुमार चालुक्यतिलक वीरभद्रका विवाह हुआ। मृत्युसमय गणपतिके दौहित्रका भी जन्म न था। सुतरां उनकी पत्नी रुद्रयादेवीने अभिषिक्त हो २८ वर्ष राजत्व रखा। फिर वयोप्राप्त होने पर उमाकदेवीके पुत्र प्रतापरुद्र-देवको मातामह गणपतिदेवका सिंहासन मिल गया। प्रतापरुद्रदेव ही वरङ्गलके अन्तिम स्वाधीन थे। उन्होंने गोदावरीसे सेतुबन्ध-रामेश्वर पर्यन्त अप्रतिहत प्रभावसे राजत्व चलाया। सुननेमें आता है कि उनके प्रबल प्रतापसे घबरा कटकके राजाने दिल्लीमें बादशाहसे साहाय्य मांगा था। मुसलमानोंका इतिहास पढने-पर समझ पड़ता है कि १३२३ई०को प्रतापरुद्र उनसे पराजित हुए और पकड़ कर दिल्ली भेजे गये। कुछ दिन पीछे प्रतापरुद्र स्वाधीनता लाभ कर वरङ्गलको लौटे थे। किन्तु फिर वह अधिक दिन इहलोकमें न रहे। मरनेपर उनके पुत्र वीरभद्र राजा बने। उनके समय मुसलमानोंके आक्रमणसे वरङ्गल राजधानी भस्मीभूत हुई। वीरभद्रने वरङ्गल छोड कोण्डवीड नामक स्थानमें एक नूतन नगर बसाया था। उसी समय वरङ्गलके काकत्य (काकतेय) राजवंशका राजत्व जाता रहा। कोण्डवीड देखो।

काकदन्त (सं० पु०) काकस्य दन्तः। काकका दन्त, कौवेका दांत। कौवेके दांत नहीं होते। इसीसे असम्भव विषयको काकदन्त कहते हैं। अश्वविषाण, कूर्मलोम, और वन्ध्यापुत्रकी भांति यह भी निरर्थक वाक्य है।

काकदन्तकि (सं० पु०) प्राचीन क्षत्रियजातिविशेष।

काकदन्तकीय (सं० पु०) काकदन्तकि क्षत्रियोंके एक राजा।

काकदन्तगवेषण (सं० पु०) काकस्य दन्ताः सन्ति न वा इति संशये तत्र वर्णभेदस्य संख्याविशेषस्य च गवेषणमिव अनर्थकः प्रयत्नो यत्र। अकारण अन्वेषणबोधक न्याय-विशेष, बेफायदा खोजमें पड़नेका एक लौकिक न्याय।

काकके दन्त रहने या न रहनेका सन्देह, निश्चित होनेसे पहले वर्ण और संख्या पर बात बढ़ाना अनर्थक है। यह न्याय अनर्थक वितण्डाके स्थल पर लगता है।

काकदन्तिका (सं० स्त्री०) १ काकादनी लता, सफेद या लाल घुंघची। २ दन्तीवृक्ष, दांतोका पेड़। ३ रक्त-काकमाची, लालकेवैया

काकद्रुम (सं० पु०) वृक्ष विशेष, एक पेड़। (Dalbergia rimosa) श्रीहट्ट (सिलहट)में इसे काकद्रुम कहते हैं। यह झाड़दार पेड है। काकद्रुम पूर्व हिमालयके उष्ण प्रदेशमें ४००० फीट ऊंचा होता है। खसिया पर्वत, श्रीहट्ट और आसाममें इसे अधिक देखते हैं। यमुनासे पश्चिम सिवालिक प्रान्त और हिमालयके बहिर्भागमें भी यह पाया जाता है। मङ्गलोर (बङ्गलोर)में इसकी कृषि होती है।

काकध्वज (सं० पु०) काकं ईषज्जलं वाष्पं ध्वज इव यस्य। वाडवाग्नि, समुद्रका भीतरकी आग। वाडवाग्नि देखो। २ और्व ऋषि।

काकनन्ती (सं०स्त्री०) कु ईषत् कनन्ती निमीलन्ती, ण्वोः कादेशः। काकणन्तिका, घुंघची।

काकनासा (सं० पु०) काकस्य नास इव नाम यस्य, मध्यपदलो०। वकवृक्ष, अगस्तिका पेड़। काश्मीर्य देखो

काकनाशा काकनासा देखो।

काकनास (सं० पु०) काकस्य नासाया वर्ण इव फलं यस्य। विकण्टक वृक्ष, गोखुरीका पेड़।

काकनाशा (सं० स्त्री०) काकस्य नाशा इव फलमस्याः। १ महाश्वेत काकमाची, कौवाटोंटी। (Solanum indicum) यह मधुर, शीतल, पित्तघ्न, रसायन, दार्ढ्य-कर और विशेषतः पलितघ्न होता है। (राजनिघण्ट्) भावप्रकाशमें इसे कषाय, उष्ण, रस एवं पाकमें कटु, कफघ्न, वान्तिकर, तिक्त और शोथ, अर्श, श्वित्र तथा कुष्ठनाशक कहा है।

काकनासिका (सं० स्त्री०) काकनासा स्वार्थे कन् टाप् अत इत्वम्। १ रक्तत्रिवृत्, लाल निसोत। २ काकजंघा, चकसेनी।

काकनिद्रा (सं० स्त्री०) काकस्य निद्रा इव निद्रा, मध्यपदलो०। काककी निद्रा-जैसी अतिसतर्क निद्रा, कौवेकी तरह होशियारीके साथ सोना।

काकनासा (सं॰ स्त्री॰) काक इव नासा। काकजम्बुवृक्ष, बड़को जामनका पेड़।

काकन्ती (सं॰ स्त्री॰) कृष्णगौञ्जी, काली गैम।

काकन्दक (सं॰ त्रि॰) काकन्दी देशे भवः, काकन्दी वुञ्। धूमादिभ्यश्च। पा ४।२।१२७। काकन्दी देश वासी, काकन्दी मुल्कका रहनेवाला।

काकन्दि (सं॰ पु॰) क्षत्रिय जातिविशेष।

काकन्दी (सं॰ स्त्री॰) काकन्दि ङीप्। १ देशविशेष, कोई मुल्क। २ स्त्रिया, रमणी।

काकन्दीय (सं॰ त्रि॰) काकन्दी-छ। काकन्दी देश वासी, काकन्दी मुल्कका रहनेवाला। २ काकन्दि क्षत्रियोंका राजा।

काकपक्ष (सं॰ पु॰) काकस्य पक्ष इव आकारो यस्य, काक पक्ष-अच्। १ मस्तकके उभय पार्श्व केशरचना, सिरको दोनों ओर बालोंका बनाव। इसका संस्कृत पर्याय—शिखण्डक और शिखण्डि है। पूर्व समयमें बालकोंके मस्तक पर ऐसी ही केश रचनाका व्यवहार था,—

"कौशिकेन स किल क्षितीश्वरो राममध्वरविघातशान्तये।
काकपक्षधरमेत्य याचितस्तेजसां हि न वयः समीक्ष्यते॥" (रघु ११।१)

२ कर्णके उभय पार्श्व केशरचनाविशेष, कानोंको दोनों ओर बालोंका बनाव, पट्टा, जुल्फ।

"काकपक्ष सिर सोहत नीके।
गुच्छा बिच बिच कुसुमकलीके॥" (तुलसी)

काकपक्षक (सं॰ त्रि॰) काकपक्षेव शिरस्स्वार विशिष्ट युक्तः, ५-तत्। १ शिखण्डकयुक्त जुल्फोंवाला। २ कानोंके पास पट्टे रखाये हुआ।

काकपद (सं॰ पु॰) काकस्य पद इव आकारो यस्य, काक पद-अच्। १ रतिबन्ध विशेष।

"कभी तो काकपदकी निपुण निज बनी बन्।
कभीन् ककर्षे कभी कम काकपदी बन्॥" (रतिमञ्जरी)

(क्ली॰) काकस्य पदं पदपरिमाणम्। २ काकके पदकी भाँति परिमाण, कौवेके पैरकी तरह नाप। भूतिमापमें इसी परिमाणके शिला रखनेकी व्यवस्था है। ३ कपालके शिरपर्यन्त कुष्ठान। काकपदवत् आकृतिरस्त्यस्य। ४ चिह्न विशेष, एक निशान। (४ प्रा॰) पुस्तकमें लिखित विषयकी अपेक्षा काम काम पर कुछ अधिक भी लिखा देना पड़ता है। ऐसे स्थलपर यह चिह्न लगता है। इस चिह्नके नीचे ऊपर जो लिखते उसी उक्त विषयमें हो संलग्न समझते हैं। काकपद छूटे हुये विषयको पूरा करनेमें व्यवहृत होता है।

काकपर्णी (सं॰ स्त्री॰) काक इव कृष्णपर्णं यस्याः, काकपर्ण-ङीष्। मुद्गपर्णी, मोठ। मुद्गपर्णी देखो।

काकपीलु (सं॰ पु॰) काकप्रियः पीलुः। १ काक-तिन्दुक, कुचिला। २ काकादनीलता, घोंघाटोंटो। ३ श्वेतगुञ्जा, सफेद घुंघची। ४ रक्त गुंजा, लाल घुंघची।

काकपीलुक (सं॰ पु॰) काकपीलु संज्ञायां कन्। काकपीलु देखो।

काकपुच्छ (सं॰ पु॰) काकस्य पुच्छ इव पुच्छो यस्य, मध्यपदलो॰। कोकिल, कोयल।

काकपुष्ट (सं॰ पु॰) काकेन पुष्टः ३-तत्। कोकिल, कोयल। कोकिल अपने अण्डेको पोस नहीं सकती। इसीसे वह काकके घोंसलेमें जा उसके अण्डे फेंक अपने अण्डे रख आती है। काक उन्हें अपने अण्डे समझ सेया करता है। अण्डे फूटने पीछे भी जबतक सम्पूर्ण रोवां पर नहीं आते, तबतक कोकिलके शावक सुख किसके पर्यन्तमें जाते हैं। अतएव काक भी उनका पालन करता रहता है। काककर्तृक प्रतिपालित होनेसे ही कोकिल 'काकपुष्ट' कहाता है।

काकपुष्प (सं॰ क्ली॰) काकवत् कृष्णं पुष्पं यस्य, बहुव्री॰। १ ग्रन्थिपर्ण, एक खुशबूदार चीज़। २ सुगन्धतृण, खुशबूदार घास।

काकपेय (सं॰ त्रि॰) काकैरनतकन्धरैः पेयम्, काक पा यत्। नदी काकपेया। पा २।१।३३। काकके पान करने योग्य, जिसे कौवा पी सके।

काकप्राचा (सं॰ स्त्री॰) १ काकनासा, कौआठोंठी। २ महाश्वेतकाकमाची, बड़ी सफेद मकोय।

काकफल (सं॰ पु॰) काकप्रियं फलमस्य, मध्यपदलो॰। १ निम्बवृक्ष, नीमका पेड़। निम्ब देखो। २ काकजम्बु, कठजामन।

काकफला (सं० स्त्री०) काकप्रियं फलमस्याः, मध्यपदलो०। काकजम्बु, जङ्गली जामन।

काकवन्ध्या (सं० स्त्री०) काकीव वन्ध्या, पुंवद्भावः। एकमात्रप्रसवा भार्या, एक ही बच्चा पैदा करनेवाली औरत। काकी केवल एक बार प्रसव करती है, इसीसे जो स्त्री एक ही प्रसवसे वन्ध्या हो जाती, वह काकवन्ध्या कहाती है।

काकवलि (सं० पु०) काकेभ्यो देयो वलिरन्नादिकम् मध्यपदलो०। काकको दिया जानेवाला अन्नादि। प्रथम काकको पाद्यादि दे निम्नोक्त मन्त्रसे पूजते हैं,—

"ॐ यमद्वारावस्थित-नानादिग्देशीयवायसेभ्यो नमः।"

फिर इस मन्त्रसे प्रार्थना की जाती है।

"ॐ काक त्वं यमदूतोऽसि गृहाण वलिमुत्तमं।
यमलोकगतं प्रेतं त्वमाप्यायितुमर्हसि॥"

इस प्रार्थना पर पिण्डदान वा मन्त्रपाठ करना पड़ता है—

"(ॐ) काकाय काकपुरुषाय वायसाय महात्मने।
अन्नदिदं प्रयच्छामि कथ्यतां धर्मराजनि॥"

आह्निकतत्त्वमें पिण्डदानका दूसरा मन्त्र कहा है,—

"ऐन्द्रावारुणवायव्याः सौम्या वै नैर्ऋतास्तथा।
वायसः प्रतिगृह्णन्तु भूमौ दत्तं मयार्पितम्॥
ॐ काकेभ्यो नमः।"

उक्त मन्त्रसे दान पिण्डपर जल छिडकना पड़ता है।

काकभण्डी (सं० स्त्री०) श्वेतगुञ्जा, सफेद घुंघची।

काकभाण्डी (सं० स्त्री०) काकस्य ईषज्जलस्य सुखस्रावरूपस्य भाण्डी क्षुद्रभाण्डमिव, उपमि०। १ महाकरञ्ज, बड़ा करौंदा। २ लघु रक्तमाचिका, छोटी लाल कौवाटोंटी।

काकभीरु (सं० पु०) काकात् भीरुर्भयशीलः, ५-तत्। पेचक, कौवेसे डरनेवाला उल्लू। पेचक देखो।

काकभुशुण्डि (सं० पु०) एक ब्राह्मण। यह रामके सच्चे भक्त रहे। लोमशके शापसे इन्हें काक होना पड़ा था। काकभुशुण्डिने रामकी कथा गरुड़से कही है।

काकमद्गु (सं० पु०) काक इव कृष्णो मद्गुर्जलचर पक्षिविशेषः। दात्यूह, पानीकी मुरगी या कुकड़ी।
"ध्रुवं हत्वा तु दुर्बुद्धिः काकमद्गुः प्रजायते॥" (भारत, १३।१११।१२१)

काकमर्द (सं० पु०) काकं मृद्नाति, काक-मृद्-अण्। महाकाललता। किसी किस्मकी कडवी शाखी। यह कौवेको मार डालता है।

काकमर्दक, काकमर्द देखो।

काकमांस (सं० क्ली०) वायसमांस, कौवेका गोश्त।

काकमाचिका (सं० स्त्री०) काकमाची स्वार्थे कन्-टाप् ह्रस्वः। काकमाची देखो।

काकमाची (सं० स्त्री०) काकान् मचते, मचि-अण्-ङीष् पृषोदरादित्वात् नलोपः। स्वनामख्यात पत्रशाक विशेष, एक छोटा पेड। इसका संस्कृत पर्याय—वायसी, ध्वाङ्क्षमाची, वायसाह्वा, सर्वतिक्ता, बहुफला, कटुफला, रसायनी, गुच्छफला, काकमाता, स्वादुपाका, सुन्दरी, तिक्तिका और बहुतिक्ता है।

हिन्दीमें काकमाचीको केवैया या मकोय, बंगलामें कासते या मखुनी, मराठीमें कमुनी या घाटी और तामिलमें मनीकक्की कहते हैं। (Solanum nigram)

यह शाकप्रधान क्षुद्र वृक्ष है। भारत और सिंहलमें ७००० फीट ऊंचे इसे सर्वत्र पाते हैं।

भारतके अनेक विभागोंमें इसके पत्र और मृदु अङ्कुर पालककी भांति उबालकर खाये जाते हैं। सुपक्व गुटिकायें बालकोंके खानेमें आतीं और कोई असर नहीं देखातीं।

राजनिघण्टु तथा राजवल्लभके मतमें यह कटु, तिक्त, उष्ण, हृद्य, रसायन, रोचक, भेदक, और कफ, शूल, अर्शोरोग, शोथ, कुष्ठ एवं कण्डूनाशक है। भावप्रकाशमें इसे ज्वर, मेह, नेत्ररोग, हिक्का, वमि और हृद्रोग मिटानेवाली भी कहा है। यकृत् बढ़नेपर डेढ़ पाव काकमाचीके रस प्रयोगसे विशेष उपकार होता है। शोथरोगमें भी इसके पत्रका क्वाथ अथवा रस दिनमें तीनवार एक-एक ड्राम पिलाया जा सकता है।

काकमाची श्वेत रक्त भेदसे दो प्रकारकी होती है। श्वेतको श्वेता तथा महाश्वेता और रक्तको लघुरक्त काकमाची कहते हैं। श्वेत काकमाची मधुर, रसायन, शीत, कषाय, कटु, तिक्त, उष्ण, अग्निप्रद, तनुदार्ढ्यकर और कफ, शोथ, अर्श, पलित, पित्त,-

तथा मेदकुष्ठनाशक है। भावप्रकाशके मतसे काकमाची तुवर, उष्ण, रसायन, कटु, तिक्त, रुचिकर, और वात, कुष्ठ, पाण्डु, प्रमेह, श्वास, छर्दि, कृमि, ज्वर एवं अग्नि नष्ट होती है। पक्व काकमाची शीतल, वात एवं कफ-कर, गुरु, रसायन और पित्त तथा त्रिदोषनाशक है।

काकमाचीतैल (सं० क्ली०) स्वनामख्यात पक्वतैलका तैल बनानेका भेद। मनःशिला, काकमाचीके बीज, सिन्दूर तथा गन्धकके साथ चार पल कटुतैल काकमाचीके रसमें पकाते हैं। इस तैलको १ माष (१ माशे) कानमें डालनेसे पर्वतिका (कानकी सूजन) अच्छी हो जाती है। (रसरत्नाकर)

काकमाता (सं० स्त्री०) काकस्य मातेव पोषिका तत् फलप्रियत्वात्। काकमाचीका क्षुप, मकोयका पौधा।

काकमुख (सं० त्रि०) काकस्य मुखमिव मुखं यस्य, बहुव्री०। काकवत् मुखविशिष्ट, जो कौवेकी तरह मुख रखता हो। (पु०) २ पुराणोक्त जातिविशेष। यह जनपद महानदीके उपकूलमें रहते थे।

काकमुद्गा (सं० स्त्री०) काकेन ईषत्पक्वेन मुद्गं गच्छति काक मुद् गम ड टाप्। मुद्गपर्णी मोट। मुद्गपर्णी देखो।

काकमृग (सं० पु०) वायस एवं हरिण, कौवा और हिरन।

काकमोर (दे० पु०) वृक्षविशेष, किसी पेड़का नाम।

काकयव (सं० पु०) काकवत् निर्गुणो यव। शस्यहीन धान्य, खोखला धान। इसमें चावल नहीं होता।

"[illegible]" (महाभारत)

काकयाम (सं० स्त्री०) [illegible] शाखानाम वृक्षविशेष, एक पेड़।

काकर—बम्बई प्रान्तके शिकारपुर जिलेकी एक तहसील। यह अक्षा० २६° २८' उ० और देशा० ६७° [illegible]' पू० पर अवस्थित है। भूमिका परिमाण ६८८ वर्ग मील है। इसमें ११ थाने और फौजदारोंकी ४ अदालतें हैं। मालगुजारीमें गवरनमेण्टको १८६५१०) रु० मिलता है। लोकसंख्या प्रायः पचास हजार है।

काकरव (सं० पु०) भीरुपुरुष, डरपोक आदमी। जो व्यक्ति काकवत् भयभीत हो कोलाहल करता है उसको काकरव कहते हैं।

काकराला (ककराला)—युक्तप्रदेशके बुदाऊं जिलेकी दातागञ्ज तहसीलका एक नगर। यह बुदाऊं नगरसे दस कोस दूर है। यहां भारतीयोंके देव-मन्दिर और मुसलमानोंकी मसजिदें विद्यमान हैं। सिपाही विद्रोहके समय बलवाइयोंने ककराला बसाया था। १८५८ ई०के अप्रैल मासमें अंगरेज सेना नायक जनरल पेनी विद्रोहियोंका शासन करने आये। किन्तु कुछ मुसलमानों (गाजियों)ने उन्हें मार डाला। आखिर उनके अंगरक्षकसमूहने विद्रोहियोंको सम्पूर्ण रूपसे हराया था। लोकसंख्या प्रायः दस हजार है। भारतीयोंसे मुसलमान अधिक मिलते हैं।

ककरासींगी (हिं०) कर्कटशृङ्गी देखो।

काकरिपु (सं० पु०) उलूक, कौवेका शत्रु, उल्लू।

काकरी (हिं०) ककड़ी देखो।

काकरुह, काकरुहा देखो।

काकरुत, (सं० क्ली०) काकस्य रुतम् ६ तत्। काकरव, कौवेकी बोली। काकध्वनि देखो।

काकरुहा (सं० स्त्री०) काके वृक्षे रोहति मूलशून्य-तया वृक्षाद्यवलम्बनेन जायते काक-रुह-क टाप् यद्वा काकपुरीषात् रोहति उत्पद्यते वृक्षोपरि स्वयं। वन्दाक, बांदा, बेलकी तरह चढ़ने वाली जड़ न रखनेसे पेड़ वगैरहके सहारे उगने या कौवेके मैलेसे निकलनेवाली बेल।

काकरूक (सं० त्रि०) कु कुत्सितं करोति, कु-कृ उक को कादेश। १ स्त्रीवशीभूत, औरतका ताबेदार। २ नग्न, नङ्गा। ३ भीरु, डरपोक। ४ निःस्व, गरीब। (पु०) ५ दम्भ, धोखा। काकेन कूयते, काक-कू कर्मणि क्विप् संज्ञायां कन् तस्य ८। पेचक, कौवेसे मारा जानेवाला उल्लू।

काकरेजा (हिं० पु०) १ वस्त्रविशेष, एक कपड़ा। यह काकरेजी होता है। २ वर्णभेद, एक रंग। यह काकरेजी रहता है।

काकरेजी (फा० पु०) १ वर्णभेद, कोकची, एक रंग। यह लाल काला होता है। कपड़ेको पहले रंगमें बोर लोहारकी कारीके रंगमें पर काकरेजी निकलता है। (वि०) २ वर्णविशेष युक्त, कोकची, काकरेजा।

काकल (सं० क्लो०) ईषत् कलो यस्मात्, कोः कादेशः। १ कण्ठमणि, गलेका जौहर। (पुं०) का इत्येवं कलो यस्य बहुव्री०। २ द्रोणकाक, जङ्गली, पहाड़ी या काला कौवा। यह 'का का' करता है।

काकलक (सं० पु०) काकल-कप्। १ कण्ठमणि, गलेका जौहर। २ कण्ठका उन्नत देश, सास लेनेवाली नली (हलक़ूम, नरकसी) का सिरा। ३ षष्टिक धान्यविशेष, साठीधान।

काकलि (सं० स्त्री०) कल-इन् कलिः, कुईषत् कलिः कोः कादेशः। १ सूक्ष्म मधुरास्फुटध्वनि, समझमें न आनेवाली बारीक मीठी आवाज़।

"देवी काकलिगीतस्य तद्वीणा निनदस्य च।" (कथासरित्सागर)

२ अप्सरो विशेष, एक परी।

काकली (सं० स्त्री०) काकलि ङीप्। १ सूक्ष्म मधुर अस्फुट ध्वनि, समझ न पड़नेवाली बारीक मीठी आवाज़। "क्रीडत्कोकिलकाकलीकलकलैरुद्गीर्णकर्णज्वरा।" (उत्तरचरित, १ अ०)

२ यन्त्रविशेष, एक बाजा। इसका स्वर नीचा रहता है। काकली बजानेसे मालूम पड़ता है कि कौन निद्रामें अचेतन रहता और कौन जगता है। हिन्दीमें सेंधकी खवरी, साठी धान और घुंघचीकोभी काकली कहते हैं। २ रत्नविशेष, एक जवाहर।

काकलीक (सं० पु०-क्ली०) अस्फुट मधुरध्वनि, मीठी मीठी आवाज़।

काकलीद्राक्षा (सं० स्त्री०) काकलीव सूक्ष्मा द्राक्षा, मध्यपदलो०। द्राक्षाविशेष, किशमिश। इसका संस्कृत पर्याय—जम्बुका, फलोत्तमा, लघुद्राक्षा निर्वीजा, सुवृत्ता और रसाधिका है। राजनिघण्टुके मतमें काकलीद्राक्षा मधुर, अम्ल, रसाल, रुचिकारक, शीतल, श्वास तथा कासनाशक और जनसमूहको प्रिया है। किशमिश देखो।

काकलीनिषाद (सं० पु०) विकृत स्वर विशेष, एक आवाज़। यह कुमुद्वती श्रुतिसे चलता है। काकली निषादमें चार श्रुति गाते हैं।

काकलीरव (सं० पु०) काकली मधुरास्फुटो रवो यस्य, बहुव्री०। १ कोकिल, मीठी मीठी आवाज़ लगानेवाली कोयल। कर्मधा०। २ सूक्ष्म और मधुर अस्फुट ध्वनि, मीठी मीठी आवाज़।

काकवत् (सं० अव्य०) काककी भांति, कौवेकी तरह।

काकवर्ण (सं० पु०) सुनिकवंशीय एक राजा। यह शिशुनागके पुत्र थे। (विष्णुपुराण ४। २४। २)

काकवर्तक (सं० पु०) वायस तथा वर्तक, कौवा और बटेर।

काकवर्मा (सं० पु०) नेपालके एक सोमवंशीय राजा। इनके पिताका नाम मनाघ था।

काकवल्लभा (सं० स्त्री०) काकस्य वल्लभा प्रिया। काकजम्बु, कौवेको अच्छी लगनेवाला वनजामुन।

काकवल्लरी (सं० स्त्री०) काकप्रिया वल्लरी, मध्यपदलो०। १ स्वर्णवल्ली, एक सुनहली बेल। २ पीतकाञ्चन, पीले फूलका कचनार।

काकविष्ठा (सं० स्त्री०) काकमल, कौवेका मैला।

काकवृन्ता (सं० स्त्री०) रक्त कुलत्थक, लाल कुरथी।

काकव्याघ्रगोमायु (सं० पु०) वायस, व्याघ्र तथा शृगाल, कौवा, बाघ और गीदड़।

काकशब्द (सं० पु०) काकरव, कौवेकी बोली।

काकशालि (सं० पु०) कृष्ण शालिधान्य, किसी किस्मका धान।

काकशिम्बी (सं० स्त्री०) काकप्रिया शिम्बी, मध्यपदलो०। १ काकतुण्डी, कौवा ठोंठी। २ रक्तगुञ्जा, लाल घुंघची।

काकशीर्ष (सं० पु०) काकः शीर्षे अग्रेऽस्य, बहुव्री०। वकवृक्ष, अगस्तका पेड़।

काकसादी (सं० पु०) १ अशुभलक्षणाश्व, ऐबी घोड़ा। २ आग्नेय।

काकसेन (हिं० पु०) कार्यनिरीक्षक विशेष, जहाज़के मज़दूरोंकी निगरानी करनेवाला एक जमादार। यह अंगरेजीके 'काक्सवेन' शब्दका अपभ्रंश है।

काकस्त्री (सं० स्त्री०) काकस्य स्त्रीव नामसादृश्यात्। वकपुष्पवृक्ष, अगस्तके फूलका पेड़।

काकस्फूर्ज (सं० पु०) काक-स्फूर्ज-घञ्। काकतिन्दुक वृक्ष, एक पेड़। काकतिन्दुक देखो।

काकस्वर (सं० पु०) काकस्य इव स्वरो यस्य, बहुव्री०।

काकवत् स्वर निकालनेवाला, जो कोयेको तरह बोलता हो। ६ तत्। ७ काकरव, कोयेको बोली।

काका (स० स्त्री०) काकवत् आकारोऽस्त्यस्य काक-अच्-टाप्। १ काकनासा कौआठोंटी। २ काकोली द्रुम एक पेड़। ३ काकजङ्घा मसी। ४ रक्तिका-लता, घुघची। ५ मलपूरक, मिर्चैकोंका पेड़। ६ काकमाची, कवैया। ७ काकोदुम्बरिका कठूमर।

काका (हिं० पु०) पिताका भ्राता, बापका भाई, चाचा।

काकाकोवा (हिं० पु०) शुकविशेष काकातुवा बड़ा तोता।

काकाचि (सं० स्त्री०) काकस्य अक्षि इव अत्र, ६ तत्। काकका चक्षु कोयेको आंख।

काकाक्षिगोलकन्याय (स० पु०) काकस्य अक्षि गोलकमिव न्याय, उपमि०। न्यायविशेष, एक मसला। कोवका एक मात्र चक्षु जैसे उभय अक्षिके गोलकका कार्य चलाता है, वैसे ही एकमें दो विषयोंका सम्बन्ध रहनेसे 'काकाक्षिगोलकन्याय' कहलाता है।

काकाङ्गा (स० स्त्री०) काकस्य अङ्गं इव आकारो यस्याः, बहुव्री०। १ काकजंघा, मसीनो। २ काक माचा, कौआठोंटी।

काकाण्डी, काकजा देखो।

काकाण्डो (सं० स्त्री०) काकं अण्डति आप्नोति, काक-अण्ड-अच्-ङीष्। काकपीलुक, मसी, कोयेको आंख-जैसा पेड़।

काकाण्ड (सं० पु०) काकस्य अण्ड इव वर्ण यस्य, बहुव्री०। १ महानिम्ब, बड़ो नीम। २ काकतिन्दुक द्रुम, एक पेड़। ६ तत्। ३ काकका अण्डा, कौवेका अण्डा।

काकाण्डक (सं० पु०) काकस्य अण्डः, काकोऽण्ड आर्त्तेऽस्य पुरुषाः, ६ तत्। १ काकका अण्डा, कौवेका अण्डा। "यस्मिन् सरित्सिलतलद्मः काकाण्डकविनश्यति।" (भारत, वन) २ क्षुद्राभेद, किसी किस्मका मटर।

काकाण्डा (स० स्त्री०) काकस्य अण्डवत् श्वेतमस्याः, बहुव्री०। १ शिंवाशिम्बी बोडको फली। २ महा ज्योतिष्मती लता, रतनजोत। ३ लूता विशेष। लूता देखो।

काकाण्डातिबिक—बङ्गालमें मेदिनीपुरको ब्राह्मणभूमिका एक ग्राम। यहां 'काकाण्डातिबिक' नामक एक जाग्रत देवता विद्यमान हैं।

काकाण्डो काकाण्डा देखो।

काकाण्डोला (स० स्त्री०) काकाण्डं बोरति गम् माहुल्यं बोज प्राप्नोति काक तत अच् टाप् एक नलम्। शिंवाशिम्बी, शिमको फली। २ घटमो, इन्द्र इन् कनकन, कनघटिया।

काकातुवा (हिं० पु०) पक्षिविशेष, एक चिड़िया। वर्तमान प्राणतत्त्वविदोंके मतमें यह शुक जातीय पक्षी है। सिर्फ भेद यही है कि काकातुवा तोतेसे आकारमें बड़ा पाया जाता है। मस्तकपर खूब चिकने पत्तको भांति शिखा रहती है। पुच्छ बहुत बड़ा होता है। अंगरेजोंमें इसे 'कोकातू' (Cockatoo) कहते हैं। प्राणिशास्त्रमें यह पक्षीवंश 'काकातिना' (Cacatoua) माना गया है। काकातुवा शब्द अंगरेजी 'काकातू'का अपभ्रंश है।

प्रकृत काकातुवेका शावक (पर) ग्रेतवर्ण होता है। किन्तु किसी किसीका ग्रेतवर्ण शावक अरुण रक्त वर्ण वा अपर वर्ण मिश्रित रहता है। भारतवर्षके दक्षिणाञ्चल और अष्ट्रेलिया दीपमें दो प्रकारका काला काकातुवा मिलता है। अंगरेजी प्राणिशास्त्रमें एकको 'कैलिप्टोरिङ्कस' (Calyptorhynchus) और दूसरेको 'माइक्रोग्लोसस' (Microglossus) कहते हैं। शेषोक्त काला काकातुवा खूब बड़ा होता है। न्यूगिनोमें यह पाया जाता है। इसकी जिह्वा कफ वेष्टित रहती है। उससे सुगमतया यह खाद्य द्रव्यादि चख सकता है।

भारत महासागरके दीपपुञ्ज और अष्ट्रेलियामें इसकी संख्या सबसे अधिक है। काकातुवा फल, मूल बीज और भेदक कीटादि खा अपनी जीविका चलाता है। यह पालनेसे बहुत हिल जाता और सिखानेसे तोतेकी तरह बातचीत करता है। काकातुवा अपनी चोटी इतस्ततः चला सकता है। इसका शब्द मधुर नहीं होता।

काकाद्नक (सं० पु०) काकाद्नी देखो।

काकादनी (सं॰ स्त्री॰) काकैरद्यते भुज्यते ऽसौ, काक-अद् कर्मणि ल्युट् ङीप्। १ रक्तगुञ्जा, लाल घुंघची। २ श्वेतगुञ्जा, सफेद घुंघची। ३ रक्त काकमाची, लाल मकोय। ४ काकतिन्दुका, कौवा ठींठी। ५ कण्टकपालीलता। इसका संस्कृत पर्याय— हिंस्रा, गृध्रनखी, तुण्डी, काला, अहिंस्रा, कटुका, पाणि, कापाल और कुलिक है। सुश्रुतमें संक्षेपतः इसे कफशमनी कहा है।

काकानन्ती (सं॰ स्त्री॰) रक्तगुञ्जा, घुंघची।

काकाम्ल (सं॰ पु॰) समष्ठीलक्षुप, ककंवा।

काकायु (सं॰ पु॰) काकस्य आयुर्यस्मात्, बहुव्री॰। स्वर्णवल्लीलता, एक सुनहली बेल।

काकार (सं॰ त्रि॰) कं जलं आकिरति, क-आ-कृ अण्। जल स्रावकार, पानी फैलानेवाला।

काकारि (सं॰ पु॰) काकःअरिर्यस्य, बहुव्री॰। पेचक, कौवेका दुश्मन उल्लू।

काकाल (सं॰ पु॰) का इति शब्दं कलति रौति, का-कल्-अण्। १ द्रोणकाक, पहाड़ी कौवा। २ वत्स नाभविष, बच्छनाग, एक जहरीली चीज़।

काकावलि (सं॰ स्त्री॰) काकानां अवलिः श्रेणी, ६-तत्। श्रेणीबद्ध बहुसंख्यक काक, कौवेका झुण्ड।

काकाह्वा (सं॰ स्त्री॰) महाश्वेत काकमाची, सफेद मकोय।

काकाङ्गा (सं॰ स्त्री॰) काकमाची, मकोय।

काकिणा—बङ्गालके रङ्गपुर ज़िलेका एक गण्डग्राम। यह त्रिस्रोता नदीके वामकूलपर अवस्थित है। इस अञ्चलके विप्र लोग 'काकिणा' शब्दको 'काञ्चन'का अपभ्रंश मानते हैं। यह ग्राम अधिक प्राचीन नहीं। फिर भी एक प्रधान जमीन्दार यहां रहते हैं। बाज़ार लगा करता हैं। ऊख, तमाखू और सन बाहर बिकनेको भेजते हैं।

काकिणिका (सं॰ स्त्री॰) काकिणी स्वार्थे कन् ह्रस्वश्च। पणका चतुर्थांश, पांच गण्डा कौड़ी।

काकिणी (सं॰ स्त्री॰) ककते गणनाकाले चञ्चली भवति, काक-णिनि-ङीप् पृषोदरादित्वात् नस्य णः। १ पणका चतुर्थांश, पांच गण्डा कौड़ी। २ एक-वराटिका, एक कौड़ी। ३ मानदण्ड, नापकी छड़। ४ रक्तिका, घुंघची। माषाका चतुर्थांश, माषेका चौथा हिस्सा।

काकिणीक (सं॰ त्रि॰) एक काकिणीके मूल्यवाला, जो कीमतमें पांच गण्डे कोड़ियोंके बराबर हो।

काकिनी (सं॰ स्त्री॰) काकिणी, पांच गण्डा कौड़ी।

"ईश्वरा भूरिदानेन यल्लभन्ते फलं किल।
दरिद्रस्तच्च काकिण्यां प्राप्नुयादिति न श्रुतिः॥" (पञ्चतन्त्र)

काकिल (सं॰ पु॰) कु-ईषत् किरति, कु-कृ क कोः कादेशः रस्य लत्वम्। कण्ठमणि, गलेका जवाहिर।

काकी (सं॰ स्त्री॰) काकस्य स्त्री। १ वायसी, मादा कौवा। २ श्वेतकाकमाची, सफेद मकोय। ३ काकोली, एक बूटी। ४ कश्यपकी एक कन्या। इन्होंने ताम्राके गर्भसे जन्म लिया। काकीहीसे सब काक उत्पन्न हुये हैं। ५ चाची।

काकी (हिं॰ स्त्री॰) पितृव्यकी पत्नी, बापके भायीकी औरत, चाची, चची।

काकीय (सं॰ त्रि॰) काकस्य इदम्, काक-ढञ्। काकसम्बन्धीय, कौवेके मुताबिक।

काकु (सं॰ स्त्री॰) काक-उण्। १ शोकभयादि द्वारा स्वरका विकार, खौफ़ गुस्से तकलीफ वगैरहमें आवाज़को तबदीली। २ विरुद्ध अर्थबोधक स्वर विशेष, उलटा मतलब जाहिर करनेवाली आवाज़।

"भिन्नकण्ठध्वनिर्धीरैः काकुरित्यभिधीयते।" (साहित्यदर्पण २।२१)

३ दैन्योक्ति, गिड़गिड़ाहट। ५ जिह्वा, जीभ। ६ उल्लाप, ज़ोरकी बात।

काकुत्स्थ (सं॰ पु॰) ककुत्स्थस्य नृपतेरपत्यं पुमान्, ककुत्स्थ-अण्। १ ककुत्स्थ राजाका वंशज। इस शब्दसे अनेनस, अज, दशरथ, राम और लक्ष्मणका बोध होता है। २ पुरञ्जय राजा। स्वार्थे अण्। ३ ककुत्स्थ नृपति।

काकुत्स्थवर्मा—पलाशिका और वनवासीके एक प्राचीन कदम्ब राजा। इनके पुत्रका नाम शान्तिवर्मा था।

कदम्ब देखो।

काकुद् (स्त्री॰) काकुद देखो।

काकुद (सं॰ क्ली॰) काकुं ददाति, काकु-दा-क। तालु, काम, तालू।

काकुदी (स॰पु॰) ककुदावर्तमें महादोषान्वित अश्व, एक ऐबी घोड़ा। इसके तालूमें बड़ा दोष होता है।

काकुद्र (स॰ त्रि॰) कद्रूजाता। ([illegible] ७०।१)

काकुन (हिं॰ स्त्री॰) एक अनाज। यह चिड़ियोंको बहुत खिलायी जाती है।

काकुभ् (स्त्री॰) ककुभ देखो।

काकुभ (सं॰ त्रि॰) ककुभ इदम्, ककुभ अण्। १ ककुभ छन्दोऽर्पित गायत्रादि। २ दिक् सम्बन्धीय। ३ ककुभ वंशजात।

काकुभवार्तेन (स॰पु॰) एक प्रमाथ। यह ककुभसे आरम्भ हो हस्तीपर जाकर पूरा होता है।

काकुम (सं॰पु॰) ककुम्भसिद्ध, किसी किस्मका मेवका। यह तातार देशके मोदक पंचोंमें होता है। इसका वर्ण अति श्वेत वर्ण, मधु तथा अम्ल रहता और कोष्ठोंमें लगता है।

काकुरत (स॰ स्त्री॰) विहग शब्द, चिड़ियोंकी आवाज़।

काकुल (फ़ा॰ स्त्री॰) केशपाश, ज़ुल्फ़, कानोंके नीचे लटकनेवाले बड़े बड़े बाल।

काकुलोचन (स॰पु॰) चतुर्विध विशिमय मृग, सांद (कुकर)में रहनेवाला चार तरहका हिरन।

काकुवाद (सं॰पु॰) काका दैन्यपरीत वादम्, ६ तत्। दीन स्वरसे उक्ति, गिड़गिड़ा कर कही हुई बात।

काकूक्ति (स॰ स्त्री॰) काकुवाद देखो।

काकूपुर—(काकपुर) युक्तप्रदेशके कानपुर ज़िलेका एक प्राचीन नगर। यह कानपुर नगरसे १० कोस उत्तर पश्चिम पड़ता है। बौद्ध राजाओंके समय काकूपुर अपने प्रदेशका प्रधान नगर कहाता था। किसी किसी प्रत्नतत्त्वविद्के मतसे यही काकूपुर चीन देशके बौद्ध ग्रन्थोंमें 'काशुर' नामसे लिखा गया है। काकपुर और बिठूरके बीच 'पञ्चक्रोशी उत्पलारण्य' नामक पवित्र स्थान विद्यमान है। आजकल वहां 'कमपुर' नामक दुर्गका भग्नावशेष पड़ा है। यह दुर्ग कोई ८१० वर्ष पहले चन्देल राजा जयपालने बनवाया था। काकूपुरमें चौरेश्वर महादेव और पञ्चबालाके नामसे दो बड़े मन्दिर खड़े हैं। प्रतिवर्ष देवताके उत्सव उपलक्ष्यमें मेला लगता है।

काकेक्षि, काकेक्षु देखो।

काकेक्षु (स॰पु॰) काकैः ईप्सितः यस्य ताडश इक्षु। १ इक्षुगन्ध तृण, ऊखकी तरह लम्बी एक खुशबूदार घास। २ कासमर्द, कसौंदा। ३ काशतृण, कांस। ४ कोकिलाक्षक्षुप, तालमखानेका झाड़।

काकेन्दु (स॰पु॰) काकस्य इन्दुरिव आह्लादकत्वात्, ६-तत्। कुचिल वृक्ष आबनूस, तेंदू। २ काकतिन्दुक, कुचिला।

काकेन्दुक, काकेन्दु देखो।

काकेन्दुकी, काकेन्दु देखो।

काकेष्ट (स॰पु॰) काकस्य इष्टः, ६-तत्। निम्बवृक्ष, नीमका पेड़। निम्ब देखो।

काकेष्टा (स॰ स्त्री॰) १ ऐलुका मिर्च। २ काकमाची, मकोय।

काकोचित (सं॰पु॰) कु ईषत् कोची सङ्कोची। कु-काच चिनि कार्ये अच् वा काकेभ्यः। मत्स्यविशेष, किसी किस्मकी मछली।

काकोची (स॰ स्त्री॰) काकोच-ङीष्। काकोचित देखो।

काकोडुम्बर (स॰पु॰) काकप्रियः उडुम्बरः, मध्य-पदलो॰। काकोडुम्बरिका देखो।

काकोडुम्बरिका (सं॰ स्त्री॰) काकोडुम्बर स्वार्थे कन्-टाप् अत इत्वम्। वनजातवृक्ष, कठगूलर। इसका संस्कृत पर्याय—फल्गुवता, मलयी, राजिका, क्षुद्र-दुम्बरिका फल्गुवाटिका, फल्गुनी, काकोडुम्बर, घन-वाटिका, मलपत्ता, हृडली, अजाक्षी चित्रभेषजा, और आशुफला है। इसे बंगलामें काकडुमुर, हिन्दीमें कठगूलर, पञ्जाबीमें देगर, मराठीमें घिकू, मारवाड़ीमें ढरवल, गुजरातीमें जहुको अञ्जीर, तैलङ्गमें बरमन और अरबीमें तिनि-बरी कहते हैं। (Ficus Hispidia)

यह एक झंझोला पेड़ या झाड़ है। काकोडु-म्बरिका देशावधि पूर्व बाह्य हिमालय, बङ्गाल, मध्य एवं दक्षिण भारत, ब्रह्मदेश और आन्दामानद्वीपपुञ्जमें होता है। मलक्का, सिंहल, चीन और अष्ट्रेलियामें भी यह मिलता है।

काकोडुम्बरिकाकी छालका खूब पटसिका बौचमें व्यवहार किया जाता है। फल छोटा होता है जिसपर

सफेद रुयां उठता है। यह एक प्रकारका खाद्य है। पत्तियां काटकर पशुओंको खिलाई जाती हैं। काष्ठसे कोई बडा काम नहीं निकलता। यह प्राचीर फाडकर उठ आती और भवनको मिट्टीमें मिला देती है।

राजनिघण्टुके मतसे काकोडुम्बरिका कषायरस, शीतल, व्रणनाशक, गर्भरक्षाके लिये हितकारक और स्तन्यदुग्धवर्धक है। एतद्व्यतीत भावप्रकाशमें इसे कफ, पित्त, श्वित्र, कुष्ठ, चर्म, पाण्डु और कामलानाशक कहा है।

काकोदर (सं० पु०) कु कुत्सितं अकति, कु-अक्-अच् कः कादेशः, काकं वक्रगमनकारि उदरं यस्य वा, बहुव्री०। सर्प, साप।

काकोडुम्बरिका, काकोडुम्बरिका देखो।

काकोडुम्बरिकाफल (सं० क्ली०) अञ्जीर, कठगूलर।

काकनालक (सं० पु०) प्रवजातीय पक्षी, जोड़ेके साथ रहनेवाला परिन्द।

काकोर—युक्तप्रदेशके लखनऊ जिलेका एक नगर। यह अक्षा० २६° ५१´ ५५˝ उ० और देशा० ८०° ४८´ ४५˝ पू० पर अवस्थित है। काकोर नगर अति प्राचीन समझा जाता है। पहले यहां भारजातिके लोग रहते थे। आजकल लखनऊके वकीलों और मुख्तारोंको काकोरमें रहना बहुत अच्छा लगता है। यहां बहुतसे मुसलमान पीरोंके गोरस्थान मौजूद है। काकोरका बाज़ार सप्ताहमें दो बार लगता है।

काकोल (सं० पु०-क्ली०) कु कुत्सितं तीव्रतरं यथा स्यात्तथा कलति पीडयति, कु-कुल-घञ् कोः कादेशः। १ कृष्णवर्णस्थावर विषभेद, पेडमें पैदा होनेवाला काले रंगका एक ज़हर। इसका संस्कृत पर्याय—उग्रतेजः, कृष्णच्छवि, महाविष, गरल, क्ष्वेड, वत्सनाभ, प्रदीपन, शौक्लिकेय, ब्रह्मपुत्र और विष है। २ द्रोणकाक, पहाड़ कौवा। ३ सर्प, सांप। ४ वन्य शूकर, जङ्गली सुवर। ५ कुम्भकार, कुम्हार। ६ काकल नामक ओषधि विशेष, एक बूट। (क्ली०) काकैन उल्लायते भक्ष्यते अत्र, पृषोदरादित्वात् साधुः। ७ नरक विशेष, एक दोज़ख। इसमें कौवे पापीको नोच नोच खाते हैं।

[illegible] (सं०स्त्री०) काकोल-ङीप्। १ कन्दविशेष, एक दवा। यह क्षीरकाकोलीके भांति लगती और कुछ अधिक कृष्णवर्ण होती है। इसका संस्कृत पर्याय—मधुरा, काकी, कालिका, वायसोली, वरा, ध्वाङ्क्षिका, वरा, शुक्ला, धीरा, मेदुरा, ध्वाङ्क्षम, स्वादुमांसी, वयःस्था, जीवनी, शुक्लक्षीरा, पयस्विनी, पयस्या और शतपाकु है। राजनिघण्टोके मतसे काकाली—मधुर रस, शीतल, कफ एवं शुक्रवर्धक और क्षयरोग, पित्त, वातव्याधि, रक्तदोष, दाह तथा ज्वरनाशक होती है। यह नेपाल वा मरङ्गमे आती है। २ क्षीरकाकोली। ३ कलघृत, एक पकाया हुवा घी। कलघृत देखो।

काकोलीद्वय (सं० क्ली०) काकोलीका जोड़ा, दोनो काकोली। काकोली और क्षीरकाकोलीको काकलीद्वय कहते हैं।

काकोलूकिका (सं० स्त्री०) काकोलूक-वुन्-टाप्। द्वन्द्व न् वैरमैथुनिकयोः। पा ४। ३। १२५। काक और पेचककी स्वाभाविक शत्रुता, कौवे और उल्लूकजाती दुश्मनी।

काकोल्यादि (सं०पु०) तन्नामकौषधद्रव्यगण, काकोली वगैरह, जडी बूटियोंका लखीरा। इसमें काकोली, क्षीरकाकोली, जीवक, ऋषभक, मुद्गपर्णी, माषपर्णी, मेदा, महामेदा, गुलञ्च, कर्कटश्रृङ्गी, वंशलोचन, चीरी, पद्मक, प्रपौण्डरीक, ऋद्धि, वृद्धि, मृद्विका, जीवन्ती और मधुका काकोल्यादि द्रव्य है। इसका गुण रक्तपित्त तथा वायुनाशक और शुक्र, आयुः, स्तन्य एवं श्लेष्मवर्धक हैं। (सुश्रुत) कर्ण वंधकी आकृति विशेष।

काकोष्ट, काकोष्ठक देखो।

काकोष्ठक (सं० पु०) काकस्य ओष्ठ इव कायति प्रकाशते, काक-उष्ठ-कै-क। मांस शून्य सूक्ष्म अग्रभाग और रक्तविशिष्ट कर्ण पाली। निर्मांससंक्षिप्ताग्रास्पर शोणितपालिः काकोष्ठपालिरिति (सुश्रुत १६ अ)

काकोष्ठक, काकोष्ठक देखो।

काक्ष (सं० पु०) कुत्सितं अक्षं यत्र, कोः कादेशः। का पथ्यक्षयोः। पा ६। ३। १०४। १ कटाक्ष, नज़ारा, तिरछी नज़र। कर्मधा०। २ कुत्सितचक्षु, बुरी आंख।

काक्षतव (सं० क्ली०) कक्षतुका फल।

काक्षपेलि (सं० पु०) अभिषतारीका नामान्तर।

काक्षी (सं० स्त्री०) कक्षे कक्षे भवः कक्ष अण्-ङीप्।

अमरटीका १।२।११। १ सौराष्ट्रमृत्तिका, एक खुशबूदार मट्टी। २ अड़हर, तोर।

काक्षीरी (सं० स्त्री०) वंशलोचना भेद, किसी किस्मका वंशलोचन।

काक्षीव (सं० पु०) १ शिग्रु, सहजन, शोभा-शिग्रु वीर पादप। शोभाञ्जनके एक पेड़। २ गौतम ऋषिके एक पुत्र। यह औशीनरी नामकी शूद्राणीके गर्भसे उत्पन्न हुये।

"शूद्रायां गौतमो यत्र महात्मा संशितव्रतः।
औशीनर्यामजनयत् काक्षीवादीन् सुतान् मुनिः॥" (भारत, सभा)

काक्षीवक काक्षीव देखो।

काक्षीवत् काक्षीवत देखो।

काक्षीवत (सं० पु०) कक्षीवतो गोत्रापत्यं पुमान् कक्षीवत् अण्। १ कक्षीवत् ऋषिके सन्तान।

काक्षीवती (सं० स्त्री०) काक्षीवत ङीप्। ऋषिपत्नी भद्रा थीं। इनका नाम भद्रा था।

काक्षीवान् (सं० पु०) १ दीर्घतमा ऋषिके शूद्रागर्भ जात एक पुत्र। २ चण्डकौशिकके पिता गौतम। ३ कोई राजा। (भारत, आदि १ अ)

काग काक देखो।

कागज (पारसीक शब्द) "कागज" क्या चीज है,—यह किसीको भी समझानेकी जरूरत नहीं। पृथिवीमें ऐसे देश बहुत ही कम हैं, जहां कागज नहीं। भिन्न भिन्न देशोंमें इसके नाम भी भिन्न भिन्न हैं। जैसे,—

उत्तर भारत और पारस्यमें —	कागज।
अरबमें —	कर्तास्।
तामिलमें —	करक।
स्पेनमें	पेपिर।
फ्रांस और जर्मनीमें	पेपियार।
इटाली और प्राचीन लाटिनमें	कार्ट या कार्टो।
पर्तुगीज और चीनमें	पेपेल।
रूसियामें	बुमागा।
इंगलैंडमें	पेपर।

अप्राचीन तान्त्रिक संस्कृत ग्रंथोंमें 'कागद' नाम भी मिलता है। आजकल भी भागरा उड़िया आदि प्रान्तोंमें 'कागद' नाम प्रचलित है।

अब सब देशोंमें, प्रधानतः लिखनेके कार्यमें कागज का व्यवहार होता है। यह कागज भी आजकल प्रधानतः नाना प्रकारके वाष्पीय यन्त्रोंकी सहायतासे यूरोप, अमेरिका और एसियामें बनते हैं, किन्तु अब भी एसियाके दक्षिण और पूर्व प्रदेशसमूहमें हाथोंसे अधिक परिमाणमें कागज तैयार होता है। यह कागज दुर्मूल्य है और विविध विविध कार्योंमें व्यवहृत होते हैं। भारतवर्षमें विशेषतः जैनियोंके प्राचीन (हस्तलिखित) ग्रन्थ इसी कागजमें लिखे जाते थे, और अब भी लिखे जाते हैं। भारत पूर्व-उपद्वीप, चीन, जापान, पारस्य आदि देशोंमें जो ऐसे हाथके बने हुए कागजका अधिक आदर पाया जाता है।

भारतवर्षमें बंगाल, बिहार, सुदाम, नेपाल अहमदाबाद, सूरत, कारवाड़, कोल्हापुर, औरंगाबाद और दौलताबादमें ऐसा (हाथसे बनाया हुआ) कागज अधिक प्रस्तुत होता है। औरंगाबादका कागज सबसे उत्कृष्ट गिना जाता है। देशीय रजवाड़ोंमें इसी कागजका अधिक आदर है। यह कागज सब कागजों की अपेक्षा मसृण, चिक्कण और सुदृढ़ होता है। इसके बाद दौलताबादके "बहादुरखानि" और "आवागरि" कागज समधिक आदरणीय होते हैं। इन कागजोंमें बनाते वक्त इसके मध्य पर स्वर्णका सूक्ष्म पात मिला देते हैं, फिर कागज बननेपर उसमें (कागजके) सर्वत्र वह स्वर्णका सूक्ष्मांश फैल जाता है; जिससे देखनेमें अति चमत्कार शोभा देता है—इस कागजका नाम "आफशानि कागज" है। देशीय राजगण इस कागज (आफशानि) पर राजकीय कार्यादि करते हैं। इन हाथसे बने हुए कागजों पर दलील सनद आदि लिखे जाते हैं।

जिसके ऊपर लिखा जाता है, उसे संस्कृतमें "पत्र" कहते हैं। हिन्दी भाषामें (प्रचलित भाषामें) 'पत्ते' या "पत्ते" कहनेसे जो अर्थ ज्ञात होता है संस्कृतमें "पत्र" शब्दका यथार्थ अर्थ वही है। किस दिन अथवा पत्र और लिखनप्रणालीकी उत्पत्ति हुई, इस विषयमें एक कौतूहलजनक होने पर भी

समूलक प्रमाण रघुनन्दनके 'ज्योतिस्तत्त्व' में देखनेमें आया है,—

"षाण्मासिके तु समये भ्रान्तिः संजायते यतः।
धात्राक्षराणि सृष्टानि पत्रारूढान्यतः पुरा॥"

अर्थात् छह मास बीतने पर भ्रम उपस्थित होनेसे देव विधाताने पूर्व कालमें अक्षरकी सृष्टि की और वे पत्र पर लिखे गये। छह मासके बाद अधिकांश बातोंमें ही भूल हो जाती है, यह ठीक है।

जगत्की उन्नतिका इतिहास पर्यालोचना करने पर समझ सकते हैं कि, पहिले ही कागजके ऊपर स्याही और कलमसे लिखने की प्रथा प्रचलित नहीं हुई। कागज आविष्कृत होनेसे पहिले किस पर लिखा जाता था, किससे कागज हुआ, पहिले किस देशमें कागजकी सृष्टि हुई और कौन कौनसी द्रव्यसे कैसे अब कागज बनता है, यह यथाक्रमसे वर्णन किया जाता है।

१। कागज बननेसे पहिले कौन कौन सामग्री लेख्यरूपसे व्यवहृत होती थी? यह बतलाते हैं।

(क) पत्थर और काठ--सबसे पहिले काठ और पत्थर ही नित्यरूपसे व्यवहृत होता था। अति प्राचीन कालमें काठ और पत्थर पर अक्षरादि खोद कर रक्षितव्य विषय लिखे जाते थे। काल्डीया प्रदेशमें प्राचीन समाधिस्तम्भके और मिसर देशके पिरामिडके ऊपर खोदित अस्पष्ट अक्षरमाला ही इसका प्राचीनतम निदर्शन है।

(ख) इष्टक—काल्डीयगण इष्टक (ईंट) के ऊपर अपना ज्योतिषिक पर्यवेक्षणादिका फलाफल उत्कीर्ण कर रखते थे। इस प्रकारकी लिपि विशिष्ट इष्टक अब किसी किसी यूरोपीय अजायबघरमें संरक्षित हैं।

(ग) सीसा—प्राचीन कालमें सीसेके ऊपर दलील आदि खोद कर रखनेकी प्रथा थी। कहा जाता है कि, हिसियड की "ग्रन्थावली और उनका समय" नामक पुस्तक एक बड़ी सीसेकी टेबिल पर खोदी गई थी और बहुत दिनोंतक मिसियके मन्दिरमें रक्षित थी। सीसेकी पत्ती, हतौड़ासे पीटकर पतली कर नित्यरूपमें व्यवहृत होती थी। रोमनगरमें ऐसे सीसा पर खुदी हुई एक पुस्तक मिली है। इसका आकार ४ इञ्च लम्बा और ३ इञ्च चौड़ा है। यह प्राचीन मिसरीय इजिप्ट अक्षरोंमें लिखित है।

(घ) मोमफलक—रोमनगरमें साधारण प्रस्तर आदिका फलाफल इस समय मोमके आदिमें खोदा जाता था। प्राचीन रोमीय ऐंग्लिकन गृहस्थगण मोमकी स्लाब (समवार ट्याब्लेट) में अपना "इच्छापत्र" (Wills) लिख रखते थे। १२ पाटीका कानून (Laws of 12 tables) विलास पर खोदी गई थी। रोमक सम्राट् थियोडोसियसके राजत्वकालमें जब अग्नि-दाहसे राजधानी जल गई थी, तब करीब ३००० (तीन हजार) मोमफलक नष्ट हो गई थी; इन सब पाटोंमें बहुत प्रयोजनीय कानून (नियम) और दलीलादि भस्मीभूत हो गये। मिसरके प्राचीन मठमें डा० बुकाननको ६ (छै) धातुफलक मिले थे। ये धातु निर्मित थे। ६ धातुफलकोंमें करीब ११ पृष्ठ थे। यह त्रिकोणाकार अक्षरमें लिखित थे। कोर्णीलके यहूदियोंके पास और भी ऐसे कई एक धातुफलक हैं।

(ङ) काठ—रोमनके कानून काठके ऊपर खोदित है;—इस काठमय कानून पुस्तक का नाम "अक्सोनस्"(Axones) है। उनमेंसे कितने ही कानून पत्थर पर भी खुदे हुए हैं। इस प्रस्तर-लिपिका नाम ग्रीक भाषामें "किरबिस्" (Kyrbies) है। ग्रीसके समयसे पहिले की तालिका-पुस्तक भी (ग्रीकका) काठ पर खोदी जाती थीं। बकस वृक्षके पेडका काठ और हाथीके दांत ही इन सब कार्योंमें अधिक व्यवहृत होते थे। तब इन सब काठोंके ऊपर मोम लगा कर सीक (सोना, चांदी, पीतल, लोहा वा तामेकी बनी सलाई) को गढ़ा गढ़ा कर लिखनेकी प्रणाली प्रचलित थी। इन सब लिखे हुए काठके टुकड़ोंको बांध कर रखनेसे जो पुस्तकें बनती थीं, उनको "कडेक्स" (codex) अर्थात् पोथी कहते थे। इन काठोंके ऊपर कभी कभी खड़ियामिट्टी से भी लिखा जाता था। बंगाल और उत्तर-पश्चिम प्रदेशोंमें

अब भी छोटे छोटे दूकानदारोंकी दुकान पर ऐसी वस्तु देखनेमें आती है। ये लोग ४—६ इञ्चके ६ काठके टुकड़े एकत्र रस्सीमें पिरो लेते हैं; और उस रस्सीके छोरमें एक कौड़ीको बाँध रखते हैं। उन टुकड़ों पर मोम और काजल मिला कर लगा देते हैं। खरीद बिक्री करते करते यदि उधार देनेका या और कोई हिसाब आ पड़ता है, तो वे उन टुकड़ों पर कड़ी चोंचसे लिख लेते हैं। बंगाल प्रांतको छोड़कर प्रायः सारे हिन्दुस्तानमें विशेषतः मारवाड़ और गुजरातमें काठकी पट्टियों (१ फुट+१०") पर खड़ियामिट्टी घोल कर सरपत्ते (बेंटा) की कलमसे लिखा करते हैं। यह बेंटा उन प्रान्तोंमें घासकी तरह अपने आपही उपजता है। सिलेट और पेन्सलका उन प्रान्तोंमें बहुत ही कम प्रचार है, यहाँके महाजनोंमें भी ऐसी "पाटी" काममें लायी जाती है। पहिले जमानेमें ऐसे काठके टुकड़ों पर लिखे लिख कर रस्सीसे बाँध कर, गांठके ऊपर मुहर लगा देते थे। बर्लिनके पुस्तकालयमें २ फुट ४१ इञ्च काठके तख्तापर ऐसा लिखा हुआ मौजूद है। चीनमें भी काठके तख्ते लिखनेके काममें आते हैं।

(च) पत्ता—प्राचीन कालमें अधिकांश जातियां पेड़ोंके पत्तोंको लिप्यरूपसे व्यवहारमें लाती थीं। आसीरियाके मिसरदेशियोंमें सबसे पहिले ताड़पत्र पर लिखना होता था। सिराक्यूजके जज लोग 'अलपाइन' वृक्षके पत्ते पर निर्वासन-दण्डके अपराधियोंके नाम लिखते थे। भारतवर्षमें, सिंहलमें और ब्रह्मदेशमें ताड़पत्रका अधिक व्यवहार होता है। ब्रह्मदेशमें उत्तम पुस्तकें हाथीके दांतकी पत्तियों पर लिखी जाती थीं। हाथीके दांतकी पत्तियां पहिले काला रंगमें रंगी जाती थीं और फिर उसपर सोनेकी या चांदीकी स्याहीसे अक्षर लिखे जाते थे। उड़िया और सिंहलीय लोग "तालिपत" वृक्षके पत्ते व्यवहार करते हैं यह पत्ते बहुत चौड़े और पतले होते हैं। इनके ऊपर अक्षरोंका आकार करनेके लिये उन पर लोहेकी सीकसे लिख कर फिर उस पर कोयलेका चूरा घिस कर पोंछ देते थे। अब भी सिंहलमें तालिपत और भारतमें 'ताड़-पत्र' का बहुत कुछ व्यवहार किया जाता है। दक्षिण (मसलीपटम आदि)में ताड़पत्र पर ग्रन्थ लिखनेका बहुतही प्रचार था और अब भी है। मैसूरके मूड़बद्री नगरमें "जयधवल महाधवल" नामक ताड़पत्र पर लिखे हुए दिगम्बर जैनियोंके महान् ग्रन्थ अब भी मौजूद हैं। आराके जैनसिद्धान्त भवनमें भी बहुतसे ग्रन्थ ताड़-पत्रोंमें लिखे हुए मौजूद हैं। नैपालमें महामहोपाध्याय हरप्रसाद शास्त्रीजीने जितने हस्तलिखित ग्रन्थ देखे हैं, उनमेंसे ईसवीके १८ शतककी पोथी सबसे प्राचीन गिनी जाती है। परंतु दक्षिणके उपर्युक्त ग्रन्थों (जयधवल महाधवल) परसे निश्चय किया जाता है कि, भारतमें ताड़-पत्रों पर लिखनेकी प्रथा बहुत दिनोंसे चली आती है।

(छ) वृक्षवल्कल—पेड़ोंकी छाल भी किसी समय पश्चिमीय सर्वत्र लिखनेके काममें लाई जाती थी। पहिले लाटिनियन पेड़ोंकी भीतरी छालको "लेबर" (Leber) कहते थे और उसको लिखनेके काममें लाते थे। इसी 'लेबर'से ही अब 'लेबर' शब्दसे पुस्तकका ज्ञान होता है। ब्रह्मदेशमें बांस की चपच पर पवित्र पुस्तकें लिखी जाती थीं। सुमात्राद्वीपमें बुवाजाति अब भी एक तरहके पेड़की भीतरी छाल पर लिखा करती है। ये लोग इस छालको लम्बी लंबी और चौपूरी पटी करके रखते हैं। रजन या टार्पिन-तैलके रस जातीय एक प्रकारके द्रवके रसमें रङ्गरस मिला कर स्याही बनाते हैं। साधारणतः व्यवहारके लिए ये लोग बांसकी गांठमें लगी हुई पोल (पर्विकाण्ड) पर भी लिखा करते हैं। बोडलियन लाइब्रेरीमें मेक्सिकोके देशीय अक्षर सांकेतिक अक्षरोंमें लिखी हुई एक पुस्तक है उसके अक्षर-समूह भी वल्कलके ऊपर लिखे हैं। भारतके मलबार उपकूल वासी अब भी प्रायः वल्कलके ऊपर लिखा करते हैं।

(ज) रेशमीवस्त्र—ग्रिनि कहते हैं कि, रेशमी कपड़ेके ऊपर लिखना पहिले प्राचीन व्यक्तियोंमें प्रचलित था। इस रेशमी वस्त्र पर लिखित पुस्तकका दिये मजिस्ट्रेट लोगोंके नाम और साधारणको

दलील आदि लिखो जाती थीं। मिसरके लोग भी ऐसी पुस्तकों पर रक्षितव्य विषय लिख रखते थे।

(झ) पशुचर्म—एक समयमें कहीं कहीं लोग पशुओंके चमड़े पर भी लिखा करते थे। जोन जाति पुस्तकको "डेफ्टेरी" (Defteræ) वा चर्म (?) कहती थी। "बिब्लस" (Biblos) पेड़ जब दुष्प्राप्य हो उठा तब लोग बकरी और भेड़ोंकी छाल पर लिखते रहे। ईखोके ५म शतकमें 'कनष्टांटिनोपल'में जो भीषण अग्निकांड हुआ था, तब एक जातिके सर्पके पेट का चमड़ा जल गया था। उसी सर्प-चर्म पर ग्रीकका महाकाव्य "इलियाड" और "वडेसि" सोनेके अक्षरोंमें लिखा गया था। यह हिंसक लिखन प्रणाली अब कहीं भी नहीं रही।

(ञ) पार्चमेंट और विलाम्—बकरी और भेड़ की छालको रीति अनुसार ऐसा बना लिया करते हैं; जिसमें "छापा" हो सके। ऐसे बने हुए चमड़ेका नाम 'पार्चमेंट' है। सूक्ष्म और अच्छा पार्चमेंट विलाम् कहलाता है। विलाम् चमड़ेसे नहीं बनता; अकाल-प्रसूत या दुग्धपायी गोवत्सके चर्मसे बनता है। पहिले यहूदी लोग इस पर कानूनादि लिखा करते थे। पारसी लोग इस पर स्वदेशप्रचलित गल्प वा इतिहास लिखते थे। दलीलादि लिखनेमें यह अब भी व्यवहृत होता है। ड्रेसडेन लाइब्रेरीमें हुमायचीके चमड़े पर लिखी हुई एक मेक्सिको-पञ्जिका और भियेना-लाइब्रेरीमें एक पुस्तक है।

(ट) बना हुआ चमड़ा (लोम छील कर, पीट कर साफ किया चमड़ा; जो आजकल भारतमें भी खूब व्यवहार किया जाता है।)—ऐसे चमड़े पर आरबी लोग अधिक लिखते थे।

२। कागजकी उत्पत्ति—पहिले ही एकदम अंशुमान पदार्थके 'मण्ड'से कागज बनानेकी प्रणाली उद्भावित नहीं हुई। पहिले तृण और वृक्षादिका अंशविशेषसे कागजवत् एक प्रकारका पदार्थ बनता था। इसमें विदेशीय ऐतिहासिकोंके मतसे "पेपिरस" (Pepirus Antiquorum) वा बाईवेलके मतसे "बुलरस" (Bulrush) नामक तृणके जड़से बने हुए कागज सबसे प्राचीन हैं। इससे जो कागज बनता था, उसको "पेपिरस पेपर" और संक्षेपमें "पेपिरि" कहते थे। नैस साहब कृत Exodus नामक ग्रंथमें देखा जाता है कि, ईखो १४०० वर्ष पहिले भी पेपिरिका बहुत प्रचार था; और ईखोके ३०० वर्ष बाद भी इस पेपिरिके व्यवहारका उल्लेख मिलता है।

यह तृण शरकी भांति जलाशय-भूमि पर उत्पन्न होता है। मिसरदेशमें, सिरियामें और सिसिलिद्वीपमें यह तृण उत्पन्न होते हैं। सिरीयामें इसको 'बेभिर' (Babeer), ग्रीकमें 'बिबलोस' (Biblos) और उद्भिद्शास्त्रमें पाश्चात्य मनीषिगण 'साइपेरस सिरिया-कास' (Cyperus Syriacus) कहते हैं। यह करीब ८ फुटसे लेकर १२ फुट तक लंबा होता है। इसके पत्ते शरके पत्ता सरीखे नहीं होते, बंगाल प्रांतके "झाउ" वृक्षके पत्तेकी भांति इस तृणके अग्रभागमें ८ पत्ते होते हैं। इसके सर्वाङ्गमें पत्ते नहीं होते और न शरकी भांति इसमें गांठे ही होतीं हैं। इसका वर्ण सवुज होता है, पर जो अंश कीचमें रहता है, वह सफेद होता है। इस सफेद अंशकी छाल बहुत ही पतली होती है; और १८।२० वरी भी होती हैं। इन वरियोंकी सावधानीसे खोल कर चौड़ाईकी ओर जोड़ देनेसे ही कागज बन जाता था। उन छालोंके जोड़नेके लिए उस समय सिरीय वा अन्य कोई वैसी ही वस्तु काममें लाई जाती थी। 'पेपिरस्' घासकी जड़ मनुष्यके हाथके समान मोटी होती है, अतः जितनी मोटाई उसकी होती है, उतनी ही कागज की भी चौड़ाई होती है। यह छाल जितने भीतरकी होगी उतनी ही पतली होगी, इसलिए तब मोटा पतला सब तरहका 'पेपिरि' बनता था। जो 'पेपिरि' सबसे अधिक पतला होता था, उसको ग्रीक लोग 'हेरिटिका' कहते थे, कारण कि—इस तरहका 'पेपिरि' सिर्फ मिसरीय याजकगण ही व्यवहारमें लाते थे, अन्य साधारण वा विदेशीय वणिक् इसे खरीद नहीं सकते थे। मिसरीय याजकगण इस पर धर्मकथा लिख कर विक्रय करते थे। इस समयमें केवल मिसरीय लोग ही 'पेपिरि' बना जानते थे, अतः ग्रीक

लोग ऐसा सुन्दर 'पेपिरि' नहीं बना सकते थे। रोमकगण भी इसी लिए 'हिरेटिका पेपिरि' नहीं पाते थे; परन्तु पीछेसे इन लोगोंने वैसा बना लिया था। रोमकसम्राट् अगस्टसके समयमें रोमकगण मिसर देशके याजकोंके लिखे हुए 'हिरेटिका' खरीद लाते थे और एक प्रकार की औषधिसे उसके अक्षर मिटा कर अपने व्यवहारमें लाया करते थे, वह औषध भी रोमवासियोंने बनाई थी। इस कागजका नाम, रोमवासियोंने अपने सम्राटके नामानुसार; "अगस्टस" कायम रखा। उससे गौण दर्जेके 'पेपिरि'का नाम, उनकी रानीके नामानुसार, 'लेभियाना' पड़ा। पीछेसे जब इन लोगोंको 'पेपिरि' बनाना आ गया, तब उन्होंने भिन्न भिन्न 'एम्फिथियेटिका' 'फेनियाना' 'सेम्योटिका' 'कर्णिया' आदि नामके भिन्न भिन्न दामोंके पेपिरि बनाने लगे थे। प्लिनिके इतिहास पढ़नेसे समझ पड़ता है कि ग्रीस वा रोमके सर्वसाधारणका विश्वास था कि पेपिरि बनानेके लिए, मिसर देशीय नील नदके पानीकी आवश्यकता भी समझी जाती है क्योंकि नीलनदके पानीमें आश्चर्यजनक एक प्रकारका गोंदसा मिला हुआ है उससे पेपिर जोड़नेमें अधिक सहायता मिलती है। पेपिरिको काट एक टेबिल पर समान भावसे रखा कर उस पर नीलनदके पानीके छींटे दे कर, कुछ देर तक घाममें सुखा लेनेसे ही पेपिरि बनता था, परन्तु यह ठीक नहीं था। पेपिरिके डाण्ठको भिगोनेसे ही, उसमें एक प्रकारका गोंदसा निकलता था और उसे घाममें सुखा लेने ही वह खूब कर जुड़ जाता था।

इसके बाद कैसे किस शक्तिसे अन्यान्य पदार्थोंको 'मण्ड' बनाके कागज बनानेकी तरकीब निकाली गई, यह जाननेका उपाय नहीं है। हां, कोई कोई लोगोंका अनुमान है कि जैसे बर्रैया भौंरा और भीमरुल आदि इतने देशोंमें बहुत कुछ कागजसे हैं और वह छत्ता आदिसे ही उत्पन्न होते हैं। उक्त बर्रैया आदि जिस प्रकार अपांग विशेषको तरह बनाकर थोड़ा थोड़ा मुंहमें लेकर बड़े बड़े छत्ते बना लेते हैं, इसी प्रकार भी शायद कागज बनाया जाता था। अंग्रेज ऐतिहासिकोंने स्थिर किया है कि, करीब ईसवी सन् ८५में चीनके लोगोंने ही अन्यान्य पदार्थोंसे सबसे पहिले कागज बनाया था।

पाण्डुलिपिके समयमें चीनवासी बांसकी भीतरी छालके ऊपर तीक्ष्ण लेखनी द्वारा लिखा करते थे। फिर इन लोगोंने बांसकी ही छाल, रुई, रेशम और अन्यान्य द्रव्योंको कूटके 'मंड' बनाके कागज बनाना सोचा था। ईसवीय छोटि नामक चीनसम्राट्के राजत्वकालमें कई एक द्रव्योंकी छाल, मछली पकड़नेके पुराने जालके टुकड़े, सन, और रेशम एकसाथ उबाल कर 'मण्ड' बनाते थे और इसी मंडसे ही कागज बनता था। कागज बनानेके लिए पहिले जो कुछ यन्त्र आदि बनाये गये थे, अब उन्हींको उन्नति करके उन्हीं यन्त्रोंसे उत्तमोत्तम कागज बनाये जाते हैं। अब चीनदेशमें नानाप्रकारके कागज बनते हैं। इस देशमें कौ-चि नामक घास या वृक्ष इतना अधिक उत्पन्न होता है कि, ये लोग उसीसे अपना काम करते हैं।

जो कुछ भी हो अनेक यूरोपीय ऐतिहासिक कागज की उत्पत्तिमें चीनको ही प्रथम उपाधि दें या और किसीको', परन्तु ग्रीक इतिहाससे यथार्थ बात जानी जा सकती है। पञ्जाब विजयी ग्रीकसम्राट् अलेक्-जन्दरके सेनापति निअरकुस् लिख गये हैं कि, उस समय उन्होंने भारतवर्षमें उत्तम, नरम चिकने और मजबूत एक तरहके 'रुईके' वस्तुके ऊपर [illegible] किताब लिखनेका बहुत प्रचार देखा है। यह शायद तुलात वा तुलाट अथवा तुलट कागजको भांतिका होगा। माकिदन-राजने खृष्ट-जन्मसे ३२६ वर्ष पहिले भारतपर आक्रमण किया था इसलिए उससे बहुत पहिलेसे भारतमें तुलाटके भांतिका कागजका प्रचार था,—यह निश्चित बात है। बहुतोंकी धारणा है कि विलायती कागज या आधुनिक मिलोंके कागज पर इस्तरी फेर देनेसे ही तुलट कागज बन जाता है; पर वास्तवमें ऐसा नहीं है। पहिले मालदह मिलोंमें यह तुलट कागज बहुत ही ज्यादा बनता था। देश विदेशोंमें भी इसका बहुत कुछ आदर होता था। इसीलिए आज

पार्लियामेंट (Rump poarliament)के हाथमें आया तब यह चिह्न उठा दिया गया था ; पर आज तक भी उसका और पार्लियामेंटकी रोकड़ वही आदिका नाम "फुलिस्कोप" ही है।

बहुतसे विलायती कागज नीले रंगके होते हैं। इसप्रकार कागज रंगे जानेकी पहिले एक आकस्मिक घटना घट चुकी है। मि० बुरेन्स नामक एक कागज व्यवसायी १७९० खृष्टाब्दमें अपनी स्त्रीके साथ एकदिन अपने कारखानेमें गया। कारखानेका कार्यादि देखते हुए ये दोनो घूम रहे थे, अचानक ही स्त्रीके हाथसे एक नील रंगकी पुड़िया कागजके 'मंड'के ऊपर गिर पड़ी ; जिससे वह रंग उसी समय 'मंड'में भिद गया फिर उस 'मंड'से जो कागज बना वह नील रंगका बना। इस कागजका खूब आदर हुआ। बुरेन्सकी स्त्रीने भी नीले रंगकी पाटि (Cake) बेचकर यथेष्ट लाभ उठाया।

ईस्वीसन् १६९५में स्काटलैंडमें कागज बनाना शुरु हुआ। एडिनबरा नगरमें इसके लिए सभा हुई थी। इस सभामें जो कुछ नियमादि स्थिर किये गए थे, वे आज तक भी बृटिश मिउजियममें विद्यमान हैं। उस समय सबसे ज्यादा सूक्ष्म (पतले) कागज स्पेन देशीय एक प्रकारके घास (Eapart Alfa, Lygeum Sparteum) से बनता था।

इसी तरह खृष्टीय ११वीं शताब्दीके अन्तके समयसे लेकर १९वीं शताब्दीके पूर्वार्द्धकालके मध्यमें यूरोपीय कागज बननेके लिए जो चीजें व्यवहारमें लाई गई हैं और प्रत्येक चीज सबसे पहिले किस किस सालमें किस किसने व्यवहार की है, इसकी एक तालिका नीचे लिखी जाती है ,—

द्रव्य	ईस्वीसन्	सबसे पहिले व्यवहार करनेवाले
रुई, सन, रेशम, पशम	१६८२	ब्लाडन (Bladen)
चमड़ा	१७९०	हूपर (Hooper)
धानका पूला	८००	कूप्स (Koops)
कांटेके पेड़	८००	कूप्स (Koops)
लकड़ी	१८०१	कूप्स (Koops)
पेड़की छाल	१८००	कूप्स (Koops)
सूखी घास	१८००	कूप्स (Koops)
पशुविष्टा	१८०५	जोन्स् (Gones)
शैवाल (पोखरकी काई)	१८२४	नीसबिट् (Nesbitt)
'रप'तृण	१८१५	डिला-गर्दे Dela-Gorde
बाल, रोम	१८३३	विलियमस् (wiliams)
घृतकुमारी, केलेके पेड़का खोपटा	१८३८	वेरि (Birry)
मूंगकी डांठरा	१८३८	डि'हरकोर्ट D'Harcourt
ईखकी छोई	१८३८	वेरि (Birry)
पेड़के पत्ते, पेड़की जड़	१८३८	वेलमैन (Balmane)
जौकी भुसी और डंठल, मटरका डंठल	१८३८	डि'हारकोर्ट (D'Harcourt)
'गटापर्चा'	१८४६	हैनक (Honoak)
पट-सन	१८४६	केलभार्ट (Calvart)
नारियलकी जटा	१८५२	निउटन (Neuton)
भुसी, 'करात'का गुड़	१८५२	विल्किन्सन् (Wilkinson)
तमाखूका डंठल	१८५२	ऐडकक् (Adocock)
तृणादि	१८५२	ष्टिफ (Stift)
नारियलकी खोल	१८५४	डियापर (Diaper)
बादामके छुकल	१८५४	कुपलैंड (oupland)
जलज तृण	१८५५	आरचर (Archer)

इनके सिवा और भी नाना प्रकारकी वस्तुओंसे कागज बन सकता है , पर सब चीजोंसे कागज बनानेसे व्यापार चल सकता है, ऐसा नहीं। इस विषयमें चीनवासियोंने सबसे अधिक संख्यामें भिन्न भिन्न उपादानोंमेंसे कागज बनाया था और बनाते है। चीनराज्यके प्रत्येक विभागमें, प्रत्येक जिलेमें भिन्न भिन्न उपादानोंसे कागज बनते हैं। पहिले कह चुके हैं कि, चीनवासी हो-सि नामक कागजसे व्यवहार करते हैं। पि-सूजि नामक कागज तूँतियाके पेड़की

कामसे बनता है, यह कागज़ चीनमें चायकी लिंट (Lint) वा पत्तीके काममें आता है, पटे कलेकी जगह भी यह कागज़ काममें आता है। कियांसिमि पियाइ सिन् नामका एक तरहका कागज़ होता है। इस कागज़से पुड़िया बांधी जाती है। होयासिन् नामके कागज़में सिर्फ दवाईयोंकी पुड़िया बांधी जाती है। कियांसि प्रदेशमें होयांपियाम् नामक कागज़से ही सि कागज़की भांति कारबार किया जाता है। ता वे और वं सि नामके कागज़ हिसाबकी बही खातोंके लिए बनता है। म पियेन और लियेनसि नामके सुन्दर और पतले कागज़ लिखन मुद्रणादि करनेके लिए तथा चित्रादि बैठानेके लिए और कोर लियेनसि नामके पीले रंगके पतले कागज़ औषधालयोंमें औषधियोंकी पुड़िया बांधनेके काममें आता था। लियेन नामके चिकने कागज़ पर पत्रादि लिखे जाते हैं। इनके सिवा और भी एक प्रकारका रंगीला कागज़ बहुत सस्ते दामोंमें बिकता है इसके कुछ कागज़ों पर ७ और कुछ पर ८ लाल रंगकी रेखाएं (लकीरें) रहती हैं।

ये सब कागज़ भिन्न भिन्न उपादानोंसे बनता है। फो कियेन प्रदेशमें खूब कच्चे बांस से चि कियां प्रदेशमें धानके पुआलसे, और कियां नान प्रदेशमें पटो पुरानी रेशमसे कागज़ बनता है। इनमेंसे रेशमका कागज़ कीमती आदरणीय और देखनेमें खूबसूरत होता है। कागज़ ख़राब न होने पाये इसके लिए ये लोग उस पर फिटकरीका एक पदार्थ लगाते थे। यह देखनेमें मोमकी 'पटपटी' की भांतिका होता है। महलोंके बांसोंको खूब अच्छी तरह धोकर उनके रेशोंको नष्ट करके उन्हें नियमानुसार फिटकिरीके साथ मिला कर रख देते हैं, जिससे दोनों गलकर नरम हो जाते हैं फिर ओमटीमें एक कागज़ उठा कर उसमें डुबा कर कागज़ों वा पानीसे सामने रख, कर उन्हें सुखा लेते हैं। ये लोग और भी एक भांतिका बड़ा कागज़ बनाते हैं, वह आधा इंच मोटा होता है। यह कागज़ सहजमें आग लगनेसे भी जल नहीं सकता। ये लोग "भारत" नामका एक प्रकारका कागज़ (India paper) बनाते हैं उस पर अति सूक्ष्म चित्र अंकित होता है और बहुत ही बढ़िया छपाई होती है। चीनमें शीशा या कांचमें छेद हो जाने पर, उसमें तेलका कागज़ ठूंस कर उस पर टायराकी कर दी जाती है। पहिले जिन जिन कड़े कागज़ोंका उल्लेख किया है, उनमें से कोई शीशा या लकड़ीके पात्रमें चिपका लगाते हैं, और दूकानदार लोग इससे चीज़-वस्तु बांधनेके लिये ठोंगा बना लेते हैं। चीनमें जिस प्रति कागज़का इतना प्रचार है कि वह लिखा नहीं जा सकता। इसके सुलभ वाणिज्य चीनमें और दूसरा नहीं है। कोरियावासियोंको रूई, सूती, वर्ष, सन, कच्चे बांस, रेशम इत्यादि जो कुछ मिलता है उन्हींमें से ये लोग कागज़ बनाया करते हैं। इनके कागज़ों पर मोम लगाया जाता है इसीसे ये देखनेमें खूब चिकने होते हैं। कागज़ पर मोम लगानेसे पहिले, उनको पत्थरसे घिस लिया जाता है। कोरियामें विदेशीय कागज़ बहुत कम टिकते हैं। देशीय कागज़ ऐसे नियमसे बनाया जाता है कि अकस्मात् नष्ट न होनेसे वह जल्दी नष्ट नहीं होता। इस लिये बही लिखने पढ़नेके काममें, देशीय कागज़ ही व्यवहार किये जाते हैं। विदेशी कागज़ पर विशेष लगानेसे वह ज्यादा दिन तक नहीं ठहरता।

जापानवाले खूब अच्छे बांससे कागज़ बनाते हैं। खूब कच्चे बांसोंको पहिले पानीमें डाल देते हैं जब बांसोंमें अच्छी तरह पानी भिद जाता है, तब उनको ओर कर चूनेके पानीमें डाल देते हैं। इससे यह कोयलेकी तरह नरम हो जाता है, फिर कूटा जाता है। कूटने पर यह 'मंड' बन जाता है तब पानीमें उबाला जाता है। इस प्रकार उबाले जाने पर ढांचेमें डाल कर आवश्यकतानुसार पतले और मोटे कागज़ बनाये जाते हैं। इस कागज़से लिखने और पुड़िया बांधनेके सिवा और भी एक काम लिया जाता है। १८७४ ईस्वीमें १८ वर्ष समय 'मिट्टीमें' इस कागज़को कूट कर मिला दिया जाता है। चीनका कागज़ खूब पतले और साफ होते हैं। चीन वासियोंने ईस्वी सन् १०वीं इस कागज़को सबसे पहिले

बनाया था। कोई कोई कहते हैं कि, इससे भी पहिले चीनमें बांसके कागजका प्रचार था। चीनमें एक एक प्रदेशमें एक एक चीजसे प्रधानतः कागज बनाया जाता है। कहीं सनसे, कहीं कच्चे बांससे, कहीं तूंतछालसे, कहीं धानके पुआलसे और कहीं गेहूंके पुआलसे प्रधानतः बहुत कागज बनाये जाते हैं। रेशमकी 'गुटी' से पार्चमेंटकी भांतिका एक तरहका कागज होता है, इसको चीन लोग लो-श्रोयेन-ही कहते हैं। यह अत्यन्त कोमल होता है; और इस पर खुदाई करके लिखा जा सकता है। एक प्रदेशमें 'को-चा' वा 'चा' नामक एक प्रकारके वृक्षसे यथेष्ट कागज उत्पन्न होता है। ये लोग उस समयका सा कागज अब भी बनाया करते हैं। चीनवासी चीन या इस देशी तूंत-छा (Bronssonetia papyrifera pepermulderry) के कागज बनानेमें पहिले डालियोंके १-१ हाथ लम्बे टुकड़े कर उन्हें खारे पानीमें उबाल लेते हैं। इस प्रकार उबाल लेनेसे भीतरी छाल पृथक हो जाती है। फिर उस छालको पृथक करके वाममें सुखा लेते हैं। इस तरह जब पर्याप्त रूपसे छाल एकत्र हो जाती है, तब उसे ३—४ दिन तक पानीमें डाल कर नरम बनाते हैं। और बचे हुए अंशसे बाहर निकाली हुई छालको फेंक देते हैं। सबसे पीछे बाहर निकली हुई छालका फेंक कर; जो कुछ बाकी बचती है, उसको उबालते हैं। जब तक यह उबाली जाती है; तब तक एक बटनेसे उसे घोंटा करते हैं। फिर नाना प्रकारके यंत्रोंकी सहायतासे इसे 'मंड' (लूंड) बना लेते हैं; और कूट कर इसे धो लेते हैं। फिर इसमें भातका माड़ मिला कर सांचेमें ढाल कर इसका कागज बनाते हैं। बांसके कागजसे इसमें अधिक यत्न करना पड़ता है। फिर इनको रखते समय, प्रत्येक कागज पर एक एक तिनका रख कर रखते हैं। बादमें फिर एक एक ताव घाममें सुखाया जाता है। यह कागज खूब नरम और पतले होते हैं, इसमें दोनों तरफ नहीं लिखा जा सकता। ये लोग कभी कभी इसके दो ताव गिरिंचसे एक साथ जोड़ लेते हैं। ऐसा जोड़ देते हैं कि, कोई समझ नहीं सकता कि, यह एक है या दो।

जापानमें ऐसे कागज बनाते समय, ये लोग (जापानी) छालको खारेपानीमें न उबाल कर छाई (खाप)के पानीमें पावके मुंहको ढक कर उबालते हैं। जब डालीके दोनों किनारेकी छाल पाथरके करीब गल जाती है; तब उसे उतार लेते हैं, और ठंडा होनेपर उसके बकल छुड़ाकर ३-४ घंटे पानीमें डाल रखते हैं। इसी समय ये लोग ऊपरकी कालो छालको छुरीसे छील देते हैं। फिर मोटी छाल और पतली छालको अलग अलग कर लेते हैं। इसके बाद फिर इन बकलोंको उबालते हैं, और एक लकड़ीसे घोंटा करते हैं। इस प्रकार जब यह 'मंड' (लूंड) बन जाता है। तब इसमें भातका मंड तथा अन्यान्य वस्तुएं मिला कर; चटाई पर ढाल कर कागज बनाया जाता है। और बने हुए कागजोंको सम्भाल कर रखते समय प्रत्येक कागजके नीचे एक एक तृण रख देते हैं; फिर इसपर वजनदार चीज रख कर उसका पानी निकाल देते हैं। इसको घाममें सुखा लेनेसे ही कागज बन जाता है। इसके अंशुओंके अनुसार यह कागज फाड़ा जाता है। इसको घरी करके रखनेसे इस घरीका दाग नहीं होता; और यूरूपीय कागजसे यह खूब मजबूत भी होता है। बाजारमें जो चीनके पंखे बिकते हैं, वे इसी कागजके बने हुए हैं। इस कागजके द्वारा घरकी भीत भी बनाई जाती है पुड़िया बंधनेके काममें भी यह लगता है। यहांके बहुतसे लोग रुमालकी जगह इस कागजको काममें लाते हैं वास्तवमें यह कागज होता ही ऐसा है कि; इसको देखते ही कपड़ेका भ्रम हो जाता है। कारण, यह कपड़ेकी भांति कोमल और सर्वत्र एकसा होता है तथा इसमें भांज भी नहीं पड़ती वहांके लोग इस कागज पर लाखका काम करके टोपी बनाते हैं और तौलियां, टेबिलका आस्तरण, पहिरनेकी फतूही आदि भी बनाते हैं।

जापानमें प्रधानतः "मोरस पेपिरिफेरा सेटाइभा (Morus Papyrifera Sativa) वा 'कागजके पेड़-

जो छालोंसे कागज बनता है जापानवासी इसको "कादजी" कहते हैं, इसमें भातका मांड "ओरेनि" (Oren) मिलाकर खूबसूरत और मजबूत बनाते हैं और भी एक प्रकारके इसी जातीय वृक्षके छालसे कागज बनाते हैं, इस ने पौधे वृक्षको वहां "कादज" या "कादजिरा" कहते हैं। इस कागजमें खूब चमक आ जाती है। यह "कादजिरा" इतना मजबूत होता है कि इससे रस्सा न बनायी जाती है सिरिया प्रदेशके सिरिमान नगरमें एक तरहका कागज बनता है जो बिलकुल रेशमसा जान पड़ता है। हालमें ईकर देखनेमें भी इसमें रेशमका भ्रम होता है। बहुतोंका अनुमान है कि जापानी "कामज" शब्दसे ईरानियोंने कागज शब्द बनाया है।

समरकंदमें सबसे ज्यादा पतला रेशमी कागज बनता है। चीनके कागजसे भी इसका अधिक आदर होता है। सबसे पहिले चीनवासियोंने ही रेशमसे कागज बनाया था वहांसे भारतवर्षमें भारतसे पारस्य में पारस्यसे आरबमें आरबसे ग्रीसमें और ग्रीससे प्राचीन रोमक राज्यमें रेशमी कागज बनानेकी परिपाटी चली है।

भारतवर्षमें केवल नेपालमें ही बांससे कागज बनता है। नेपालवासी बांसोंको काटकर काठकी ओखलीमें कूट कूट कर 'मंड' बनाते हैं फिर पानीमें धो कर साफ करके नाना उपायोंसे इसे रेशमके ऊपर डाल कर सुखा लेते हैं। इसका पत्थरको कठिनाईसे घिस घिस कर बराबर करते हैं। यह कागज बहुत कड़ा होता है; और टेढ़ा नहीं फटता, सीधा ही फटता है। यह कागज "फिल्टार" (Filter) करनेके लिए सबसे अच्छा है, क्योंकि यह पानीमें भीग जानेसे मुरझाता नहीं; और न जल्दी नष्ट ही होता है। "नेपाली कागज" नामका भी एक तरहका कागज होता है। यह महादेव का-फूल (Daphne cannabina) नामक वृक्षके वल्कलसे बनाया जाता है। ईस्वी सन् १८५१ की प्रदर्शिनीमें इसी वल्कलसे बना हुआ एक बड़ा कागज दिखाया गया था, दर्शकोंने इसे देख कर बड़ा आश्चर्य किया था। इसको बनानेकी तरकीब जापानकी तूत-छालके कागज जैसी ही है, सिर्फ फरक इतना ही है कि, वे लोग छालोंको उबाल कर सिर्फ भीतरी छालको ही उपालते हैं। यह कागज कभी कभी बड़ी थैले जिस कर भी बराबर किया जाता है। यद्यपि यह कागज 'नेपाली कागज' कहलाता है, पर वास्तवमें यह नेपालमें नहीं बनता। भोट राज्यमें और हिमालय प्रदेशमें ही इस वृक्षके बहुतसे जंगल हैं, और वहीं पर यह कागज बनता है। भुटिया लोग इस वृक्षकी लकड़ी लगाया करते हैं। १८२८ ईस्वीसे पहिले इस काठके ईंटके आकारके कुछ टुकड़े इङ्गलैंडमें परीक्षार्थ भेजे गये थे। वहां इसके द्वारा छालोंसे जैसा कागज बना उसके सम्बन्धमें एक मुद्रकका कहना है कि, इस कागज पर जैसी सुन्दर सूक्ष्म छपाई हो सकती है वैसी किसी अंग्रेजी कागज पर नहीं हो सकती। यह चीन देशीय 'इण्डिया पेपर'के समान सुपरिचित होता था। नेपालमें ऐसे कागज पर लिखी हुई कुछ प्राचीन पोथियां मौजूद हैं, सुनते हैं वे बहुत ही प्राचीन हैं। इन पोथियोंको देख कर बहुतसे अनुमान करते हैं कि, चीन देशसे प्राय ७००वर्ष पहिलेसे भुटिया लोगोंमें यह कागज बनाया होता है। "महादेव का फूल" छोटा कंटक-वृक्ष मात्र है देखनेमें बहुतसा विलायती करेमकी भांतिका होता है। यह दो वर्ष तक होता है, और जाड़ेमें इसके पत्ते नहीं झरते। इसका फल पियाज़ रङ्गका है। यह वृक्ष कई तरहका होता है, पर सबसे कागज बनता है। कुछ वृक्षोंके फूल सफेद होते हैं और कुछका रंग थोड़ा मटीला और बैंगनी रंग मिला हुआ सफेद सा होता है। बहुतोंका विश्वास है कि हिमालयके नीचेके लोग नेपाली कागजमें हड़ताल मिलाते हैं, पर यह बिलकुल गलत है, क्योंकि नेपालमें ऐसा विष कोई बेच नहीं सकता, और विषाकर बेचने पर भी उसे विशेष दंड दिया जाता है। "महादेवका फूल"का वृक्ष भी थोड़ा विषैला होता है, पर कागज बन जाने पर उसमें विष नहीं रहता क्योंकि देखा गया है कि इसमें भी कीड़े लगते हैं। यह धूपमें पर कड़ा कड़ा हो जाता है; इसी चीजों

प्रकारके वृक्ष एकत्रित किये जाते हैं; जो कि "पामेट" (Palmeta) नामसे प्रसिद्ध है। ये वृक्ष आठ-दश फुट लंबे होते हैं; और इससे भी कागज बन सकते हैं।

आज कल बिनौले (कपासके बीज) की भुसीसे कागज बनते हैं। बहुतोंका कहना है कि, इसका कागज बहुत अच्छा होता है। पहिले स्पेन देशीय एस्पार्टोके सम्बन्धमें जो कहा है, उनमें "मेरोकोया टेनासिसामर" (Merochoa Tenaeissamr) और "लिगेयाम् स्पार्टम्" (Lygeum Spartum) जातीय घास ही अच्छी होती है, यह घास भूमध्यसागरके किनारे पर ही अधिक होती है।

भारतवर्षके बाबूला वृक्षकी भीतरकी छालसे भी बहुत अच्छे कागज बन सकते हैं।

प्रूसिया राज्यमें "पीरो" नामके वृक्षसे कागज बनता है।

कागज पर रंग चढ़ाना।—इङ्गलैंडमें सबसे पहिले जैसा रंगीन कागज चला था, उसका उल्लेख पहिले कर चुके हैं। पहिलेसे साधारणतः कागजका रंग सफेद होता आया है; और उसके ऊपर काली स्याही से लिखनेकी रीति चली आई है। कागज बननेसे पहिले जब चमड़े पर लिखा जाता था, तब भैंस वगैरहके चमड़े पर पीला, नीला आदि रंग चढ़ा कर उस पर सुनहरी या रुपैरी हिलसे लिखा जाता था। रोमकगण हाथीके दांतकी पत्तियों पर सब रंगकी मोम लगाते थे। बहुत जगह सिन्दूरसे लिखनेका खूब प्रचार था। ग्रीकके राज वंशमें प्रायः सब ही लिखा-पढ़ी लालरंगसे होती थी। भारतवर्षमें चन्दन, लालरंग और सिन्दूरसे मन्त्रादि लिखनेकी प्रथा बहुत प्राचीन समयसे चली आई है।

बंगालमें और भारतके अन्यान्य स्थानोंमें बालकोंको पहिले पहल "सिलम खड़ी" नामक एक प्रकारके नरम पत्थरके टुकड़ेसे जमीन पर लिखना सिखाया जाता है; फिर क्रमशः ताड़पत्र पर, केलेके पत्ते पर; और आखिरमें कागज पर लिखते हैं। इससे भारतकी लेख्य वस्तुका क्रमविकास स्पष्ट झलक जाता है। भारतवर्षमें प्राचीन कालमें जितनी लेख्य वस्तुएं थीं, उनमेंसे ताड-पत्र, केलेके पत्ते, बट-पत्र, तेरेट-पत्र, भूर्ज-पत्र, तूलात् वा तूलट-कागज, पत्थर और धातु-फलक आदि ही प्रधान हैं। अब भी ताड़-पत्रका व्यवहार है। मन्त्रादिका 'गंडा' बांधनेके लिए अब भी भूर्ज पत्र काममें आता है। केलेके पत्ते भी अब तक गावोंकी पाठशालाओंमें लिखनेके काममें लाये जाते हैं। केलेका पत्ता जल्दी सूख कर नष्ट हो जाता है, इसी लिए इस पर कोई रक्षितव्य विषय नहीं लिखा जाता। इस विषयकी बंगालमें एक कहावत है कि,— "लिखे दिलाम कलार पाते, भेसे बेडाग् पथे पथे"— अर्थात्, केलेके पत्ते पर लिखा दिया है; इस लिए लिखना न लिखना बराबर है। तेरेठपत्र पर लिखित पोथियां अब भी यथे मिलती हैं। यह ताड़-पत्रकी भांतिका ही होता है; पर उससे कुछ पतला और चौड़ाईमें बडा होता है। यह ताड़-पत्रकी अपेक्षा अधिक स्थायी होता है। बट वृक्षके पत्तेका अब बिलकुल व्यवहार नहीं है। धातुफलक और पत्थर पर अब सिद्ध मन्दिरादिमें शिल्पलिपि खोदी जाती है। तांबेकी चद्दर पर जैनियोंका सिद्ध-यन्त्र भी खोदा जाता है। यन्त्र परम पूज्य होता है; और जैन विवाह पद्धतिसे जो विवाह होता है, उसमें इस यन्त्रकी स्थापना करके पूजा की जाती है। यह यन्त्र प्रायः करके सब ही दि० जैन मन्दिरोंमें प्रतिमाके पास विराजमान रहता है और इसमें सिद्ध भगवान (अष्ट कर्मोंसे मुक्त) की स्थापना करके अष्ट द्रव्यसे पूजा की जाती है। तान्त्रिक उपासक लोग तांबे, सोने और चांदीमें खोदित देवताओंके यन्त्र मन्त्रादिकी पूजा आदि करते हैं। तूलात् वा तूलट कागजका भी यथेष्ट प्रचार है। पहिले इस कागज पर गोंद, इमलीके चियाकी चूर; और हडताल लगा कर घोंट कर रंग चढाया जाता था, कोई भातका माड़ भी लगाता था। इससे न तो कीड़े लगते थे और न कागज स्याही सोखता था। जिस कागजमें माड़ लगता था, उस पर संस्कृतकी पुस्तक नहीं लिखी जाती थीं।

मुसलमानोंके जमानेमें भारतमें कई तरहके

कागज़ बनते थे, जिनमेंसे (१) सर्वसाधारणके काग़ज़, (२) अमीर उमरावोंके कागज़ और (३) छुटे हुये कागज़ ही प्रधान हैं। छुटा हुआ कागज़ भी तीन तरहका था।

१ सफेद।—सिर्फ कुड़िया गुठियासे घिस कर चिकना किया हुआ।

२रा अरफ़शान—सुनहला और रुपहला, अर्थात् हाशियाके "अफ़शानी" कागज़की भांतिका।

३रा टिकलीदार—जिसमें छोटी छोटी सुनहली और रुपहली टिकली लगी रहती है। यह मर्यादाके अनुसार भिन्न भिन्न रूपसे व्यवहृत होता था।

यह कागज़ चौड़ाईकी तरफ लम्बा होता था। इन कागज़ों पर विषय लिखे जानेके बाद, फिर इनको मोड़कर ऊपरसे एक वैसे ही कागज़का टुकड़ा लपेट दिया जाता था। ऐसे कागज़के टुकड़ेका नाम "कमरबन्द" था। फिर मखमलकी थैलीमें रखकर, उसे मखमलके या ज़रीके फीते बांध कर रख दिया करते थे।

काश्मीरमें एक तरहका पुराना ऐसा कागज़ देखा जाता है। यह कागज़ देखनेमें सफेद न होनेपर भी ऐसा चिकना कागज़ भारतमें बहुत कम ही है। सुना गया है कि, ऐसा कागज़ काश्मीरमें बहुत दिन पहिलेसे बनता आया है।

आज तक परीक्षा करके जिन जिन वस्तुओंसे कागज़ बनाया गया उनके नाम नीचे लिखे जाते हैं —

इससे पहिले मिलों में सनकी (परित्यक्त) रद्दीसे कागज़ बनाया जाता था, परन्तु आज कल मिलोंमें सन की जड़ से डोरे बनाये जाते हैं, इस लिये उसका मूल्य बढ़ गया है। इसी कारण सन की जड़से आज कल कागज़ नहीं बनाये जाते।

साबुई या बबुई घास ही कागज़की मिलों में कागज़ बनानेके लिये अधिक काम में लाई जाती है।

कई लाख या सात लाख मन के करीब यह उत्पन्न होती है। यह घास १।ऽ या १॥ऽ मन मिलती है।

'मज और मूंजसे भी कागज़ बनाया जा सकता है, परन्तु इससे किफायत नहीं हो सकती। क्योंकि यह घास अधिक पैदा नहीं होती; और इसका मूल्य भी अधिक होता है।

कहीं कहीं बांस से भी कागज़ बनाया जाता है। इस देश में बांस द्वारा कागज़ बनाने का काम अभी तक स्थापित नहीं हुई है। आसाम और ब्रह्म देश के जंगलों में यथेष्ट बांस उत्पन्न होते हैं। बांसों की कटाई, रेलका किराया, मज़दूरोंकी मज़दूरी आदि जोड़ कर हिसाब लगाने पर १ऽ या १।ऽ मन से कम नहीं पड़ेगा। जर्मनी में किन्तु काम के पूलों से कागज़ बनाया जाता है।

हाल ही में कृषि तत्वविद् श्रीयुत निवारणचन्द्र, चौधरी ने गवेषणा पूर्वक यह मन्तव्य प्रकाशित किया है कि, 'सन,-कटी' से कागज़ बन सकता है। क्योंकि रासायनिक परीक्षा करके देखा है कि 'सन कटी से सैकड़ा पीछे ६० भाग कागज़ तैयार करनेके सूत होते हैं। उनके परीक्षा फल से जाना गया है कि—

सनकटी से	सैकड़ा पीछे	६० भाग	सूत
बांस से	"	४१	" "
सबुई बाबुई घाससे	"	३८	" "
मज से	"	६०	" "
काम के पूला से	"	३३	" "

सनकटी आजकल सिर्फ जलाने के काम में आती और गांवों में कम कीमत में मिलती है। ऽ या ।ऽ आने मन इसका भाव है। श्रीयुत निवारणचन्द्र ने हिसाब करके दिखाया है कि बंगाल बिहार, उड़ीसा प्रदेश की सनकटियों से १साल में साढे पांच करोड़ मन कागज़के सूत बन सकते हैं। भारतवर्ष के लिये सिर्फ ३३, पचीस लाख मन कागज़-सूतकी ज़रूरत है। बाकी के सूत या बने हुए कागज़ विदेशों में भेजने से देश को आर्थिक लाभ और गरीबों का कल्याण हो सकता है।

कागज़ात (अ० पु०) पत्रादि बहुतसे कागज़। यह शब्द कागज़ का बहुवचन है।

कागज़ी (अ० वि०) १ पत्रक सम्बन्धीय कागज़के मुताबिक। २ पत्रकनिर्मित, कागज़से बना हुआ। ३ सूक्ष्म त्वक् विशिष्ट बहुत पतले छिल्केवाला। (पु०) ४

पत्रक विक्रेता, कागज फरोखत करने वाला। ५ श्वेत वर्ण कपोत, सफेद कबूतर। सूक्ष्मजलौकाको 'कागजी जोंक' और सूक्ष्मत्वक् विशिष्ट निम्बुक को 'कागजी नीबू' कहते हैं। कागजी बादामका भी छिल्का बहुत पतला होता है। हिन्दी में जिस वस्तुके पहले 'कागजी' शब्द लगता, वह अति उत्तम रहता है।

कागद (हिं॰ पु॰) पत्रक, कागज।

काग भुसुण्ड, काक भुसुण्डि (हिं॰) काकभुशुण्डि देखो।

कागर (हिं॰ पु॰) १ पत्रक, कागज। २ पक्ष, पर।

कागरी (हिं॰ वि॰) तुच्छ, हकीर, श्रोछा।

कागल—बम्बई प्रदेशके कोल्हापुर राज्यका एक क्षुद्र राज्य। यह अक्षा॰ १६° ३८' उ॰ और देशा॰ ७४° २०' ३०" पू॰ पर अवस्थित है। इसकी भूमि का परिमाण १२८ वर्ग मील है। प्रति वर्ष २०००) रु॰ कर लगता है। वर्तमान सामन्त राजाके पूर्व पुरुष सखाराम राव सेंधिया के एक कर्मचारी थे। १८०० ई॰ को उन्हें कोल्हापुर राज्यके निकट कागलकी सनद मिली। राजा साहब ८ तोपोंकी सलामी पाते हैं। इस राज्यके नगर का नाम भी कागल ही है। दूधगङ्गा और वेदगङ्गा दो नदी हैं।

कागान—पञ्जाब प्रदेशके हजारा जिलेको एक उपत्यका। दक्षिणांश-व्यतीत इसके तीनों ओर काश्मीर राज्य लगा है। भूमि का परिमाण ८०० वर्गमील और दैर्घ्य ६० मील तथा प्रस्थ १५ मील है। कागानके शृङ्ग प्रायः १७०००फीट ऊंचे पड़ते हैं। यह हिमालयके अन्तर्निविष्ट है। इसमें २२घरराय है। वनमें अच्छी अच्छी लकड़ी होती है। मनुष्य अधिक नहीं। कहीं कहीं दो चार घरों में लोग रहते हैं। कागान नामक ग्राम अक्षा॰ ३४°४६' ४५" उ॰ और देशान्तर ७५° ३४' १५" पर अवस्थित है।

कागावासी (हिं॰ स्त्री॰) प्रातःकाल पी जानेवाली विजया, कौवे बोलनेके समय छनने वाली भाग।

कागारि (सं॰ पु॰) कागस्य अरिः कागः अरिर्वा यस्य। पेचक, उल्लू।

कागारोल (हिं॰ पु॰) काकरव, कौवोंका शोर, हुल्लड़।

कागिया (हिं॰ स्त्री॰) मेषी विशेष, एक तरहकी भेड़। यह तिब्बत में होती है। इसका सिर बड़ा और पर छोटा रहता है। मांसका आस्वाद सुप्रसिद्ध है। कागिया मांसके लिये ही पाली और मारी जाती है (पु॰) २ कृमिविशेष, एक कीड़ा। यह बाजरेको बिगाड़ता है।

कागौर (हिं॰ पु॰) काकबलि, कौवेको दिया जानेवाला कौर। इसे श्राद्धादि के समय कव्यसे निकाल कर काकको खिलाते हैं। काकबलि देखो।

काग्नि (सं॰पु॰) ईषत् अग्निः। अल्प अग्नि, थोड़ी आग।

काङ्कायन (सं॰पु॰) एक मुनि। इन्होंने चरकसंहिता प्रणेता अग्निवेश ऋषि के साथ भरद्वाज-पुनर्वसु, से आयुर्वेद पढ़ा था। चरकसंहिता देखनेसे इनकी बनाई संहिता का भी पता लगता है। किन्तु वह देखने में नहीं आती।

काङ्कायनमोदक, (सं॰पु॰) मोदक विशेष, किसी किस्म का लड्डू। यह हरीतकी ५ पल, जीरक १ पल, मरिच १ पल, पिप्पली १ पल, पिप्पलीमूल २ पल, चविका १ पल, चित्रकमूल ४ पल, शुण्ठी ५ पल, यवक्षार २ पल, भल्लातक ८ पल तथा शुडकन्द १६ पल (खाड) और उक्त सर्व चूर्ण से द्विगुण गुड़ डालने से बनता है। इसके सेवन से अर्शोरोग अच्छा हो जाता है।

काङ्क्षणीय (सं॰वि॰) इच्छा के योग्य, चाहने लायक।

काङ्क्षा (सं॰ स्त्री॰) काङ्क्षि-अटाप्। आकांक्षा, इच्छा।

काङ्क्षित (सं॰वि॰) काङ्क्षि-क्त। १ अभिलषित, चाहा जानेवाला। (क्ली॰) २ इच्छा, ख़ाहिश।

काँक्षिता, (सं॰स्त्री) अभिलाष, चाह।

काङ्क्षी (सं॰ त्रि॰) काङ्क्षतीति, काङ्क्षि-णिनि। अभिलाषी, चाहनेवाला।

काङ्गोर (सं॰ पु॰) कङ्कपक्षी, एक चिड़िया।

काङ्गयम,—मन्द्राज प्रान्तके कोयम्बतूर जिले का एक ग्राम।

यह धारापुर तहसीलके अन्तर्गत अक्षा॰ ११°१' उ॰ और देशा॰ ७७°३६' पू॰ पर अवस्थित है। प्राचीन नाम कोङ्गु है। सम्भवतः पूर्व कालको दाक्षिणात्यके कोङ्गु राजा यहां राजत्व रखते होंगे।

काङ्गा (सं॰ स्त्री॰) कुत्सितं अंगं यस्याः, काङ्ग टाप् बहुव्री॰। वचा, वच।

काङ्गक (सं॰ क्ली॰) शहिक धान्यविशेष किसी किस्मका धान। यह रस एवं पाकमें मधुर, वातपित्तशमन और शान्तिप्रद गुण होता है। (वसुव)

काच (सं॰ क्ली॰) कच्यते बध्यते अनेन कच बन्ध न करणम्। १ मोम। २ काच या अपरा। ३ काचलवण। (पु॰) ४ शिक्य। ५ मणि विशेष। ६ नेत्र रोगविशेष मोतियाबिंद लिङ्गनाश और मोतिका ये दो इसके नामान्तर हैं। तिमिर रोगकी अन्तिम अवस्था में जब केवल चन्द्र, सूर्य, नक्षत्र विद्युत् और उज्ज्वल रत्न आदि ही दिखाई देते हैं उसी अवस्थाका नाम 'काच' या लिङ्गनाश रोग है।

शङ्खनाभि, बहेड़ाकी मींगी, हरीतकी मनःशिला पीपल, मिरच, कुठ, और वच,—इन सब चीजोंका समान रीतिसे एकत्र करके बकरी के दूधके साथ पीसना चाहिये। फिर मटर की बराबर गोलियां बना कर उन्हें सुखा लेना चाहिये। इसके बाद इन गोलियों को पानी में घिस कर आंखों में लगाना चाहिये। इस अञ्जन से काच, तिमिर पटलरोग, मांसवृद्धि अर्बुद और रात्र्यन्ध आदि रोग नष्ट हो जाते हैं। ७ समुद्र शुक्ल का नामान्तर। ८ मृत्तिका विशेष। इसका दूसरा संस्कृत नाम क्षार है। राजवल्लभ के मत से इसका गुण—भारत, उष्णवीर्य और चक्षुमलद्वारा दृष्टि प्रसन्नता कारक है।

काच मनुष्यका अच्छ वस्तु है। यूरोपकी सर्व प्रधान व्यवहार्य वस्तु यही है। हमारे देशमें जिस प्रकार कांसे पीतल, पत्थर आदि के बर्तन व्यवहार में आते हैं उसीप्रकार इन (कांच) के बरतन यूरोपमें व्यवहृत होते हैं। इसी लिए इसदेश को अपेक्षा यूरोप में काच अधिक तैयार होता है और इस शिल्प की उन्नति भी खूब हुई। यूरोप में काच इतना अधिक तैयार होता है कि उनके देश का अभाव पूरा कर विदेशोंमें वाणिज्यके लिये भी भेजा जाता है। भारतमें भी यूरोप से काच आता है। कांचके बोतल, शीशी, कांच की चादर, पोत, कृत्रिम मोती, तरह तरहके बर्तन भाड़, लालटेन, फानूस और नाना प्रकार की शिकौरी चीजें, चूड़ी, नाना खाने आदि अलङ्कार बनते हैं और नाना देशोंमें भेजे जाते हैं। यूरोपकी कांच की चीजें हमारे अकेले भारतमें ही प्रत्येक वर्ष में ११—१४ लाख रुपये की आती हैं; जिसमें १० लाख के तो मोती आदि आते हैं।

बालुकिण और क्षार से कांच बनता है। भारत में इन दोनों चीजों का अभाव नहीं है। साधारण बालू में ही यथेष्ठ बालुकिण प्राप्त हो सकता है, और क्षार नाना तरहकी वस्तुओं से संग्रह किया जा सकता है। अच्छा कांच बनाने के लिये बालुकिण की जगह चूल्हे की बनी हुई मिट्टी (Fire-clay)का चूर काममें लाया जा सकता है भारतमें उसका भी अभाव नहीं है। इतनी सुविधा होने पर भी भारत में आज तक कांचके व्यापार की उन्नति न हुई। यहां आज कल जैसा काच बनता है उससे एक तो चूड़ियां और दूसरी कच्चा रंगों की कच्ची शीशियां या कुप्पियों के सिवा और कुछ भी नहीं बनाया जा सकता। इस देश के कांच बनाने वाले क्षार अधिक काम में लाते हैं, इसी लिये कांच अच्छा या साफ नहीं बनता। कभी कभी ये लोग क्षार इतना अधिक डाल देते हैं कि कांच तक घुल पतला हो जाता है। इसके बाद जैसी भट्ठी में कांच गलाया जाता है, वह भी ठीक काम के काबिल नहीं। कारण उसमें आवश्यकतानुसार उत्ताप नहीं पैदा होता और जो कुछ होता भी है, वह बराबर एकसां नहीं रहता। क्योंकि इस देश की भट्ठी में अग्नि प्रज्वलित रखनेके लिए धौंकनी से हवा दी जाती है। इसीलिए धौंकनी की हवा के अनुसार आग का तेज हमेशा घटता बढ़ता रहता है। फिर ऐसी हवासे गले हुए कांच में कुछ अंश पतला और कुछ अंश गाढा हो जाता है इसलिए साफ भी नहीं होता। देशी कांचमें विशुद्ध बालूके बदले मामूली मिट्टी काममें लाई जाती है। इससे काच अच्छा नहीं बनता। क्योंकि इसमें ज्यादा तर कच्चे अंगारकी क्षार (crude carbonate of कुछ अहिफ क्षार (potash) से बना ... भाग चूना, १०—३० भाग कुछ

बहुत थोड़ा कोबाल्टिक, फेल्स्पार और लोहा आदि रहता है। परन्तु यूरोप में कांच की बोतलों के लिये जो चीजें काममें लाई जाती हैं, उनमें सैकड़ा पीछे ५८ भाग वालू, गन्धक चार, (Sulphate of soda) २८ भाग, चूना ११ भाग और उद्भिज्जक्षार १०भाग रहता है। गन्धक चार से सैकड़ा पीछे ४५ भाग चार रहता है। और काच मण्ड में सैकड़ा पीछे २८ भागमें १३ भाग मात्र यह चार रहता है; किन्तु सज्जीमिट्टी से जो क्षार चार मिलता है, उसमें ३०—४० भाग चार रहता है, इसी लिए भारतके कांच में और यूरोप के कांचमें चार-परिमाण करीब २३ और १३ भाग हो जाता है।

इस देश में कांच पर रंग चढ़ाने के लिए लोहा, तांबा और सम्बलचार (arsenic) काम में आते हैं। पञ्जावमें काच बनानेके कारखाने हैं। वहां जिस वालू से कांच बनता है, वह स्वभावत: कांच सरीखी चिकनी और चार विशिष्ट होती है। उस देश में इस वालू को रेह कहते हैं। यह जिस जमीन में रहती है, वह जमीन खेती के काम में नहीं आती। बहुत जगह यह हवासे अपने आप जम कर कांच सरीखी हो जाती है। इस जमी हुई वालूका रंग विलायती शिशियों की तरह कुछ नीलापन को लिए हुए रहता है। इससे बहुत उत्तम सफेद वर्ण का कांच बनता है।

फीरोजाबाद (जिला-आगरा) में भी आज कल काच के कारखाने बहुत हैं। इन में चूड़ियां बहुत बनती हैं।

चीन में भारत की अपेक्षा काच के कारखाने अधिक समुन्नत हैं।

कांच के भिन्न भिन्न भाषाओं में नाम लिखे जाते हैं। कांच को अरबी में खियज, फारसी में—भिट्टे, हिन्दी बंगला में 'कांच'। इटालीमें 'भेट्रो, लाटिनमें—भेट्राम, रुसियामें—'टेक्लो', स्पेनमें—'भिद्रो', तामिल में 'कन्नाडि', तैलङ्गमें 'आद्दामु' और उर्दू में 'शीशा' कहते हैं।

रसायन-तत्त्वके मतानुसार कांचमें निम्नलिखित चीजें रहती हैं—

वालुकिन (Silica), उद्भिज्जचार (Potash= Pearl ash और wood ash), सोडा (Soda, Sulphate of soda, carbonate of soda) वेराइटा (Baryta) ष्ट्रन्सिया (Strontia), चूना (Lime) और फिटकिरी (Alumina)।

अस्थिजचार (bone-ash) से एक प्रकारका कांच बनता है; जिसे अंग्रेज लोग बोन ग्लास (boneglass) कहते हैं।

कांच का आपेक्षिक वजन करीब २ं ७३२ है। जर्मनोंके बने हुए लैंगलोंमें लगाने के कांचोंमें चिकनी वालू १०० भाग, उद्भिज्ज चार ५० भाग, खड़ियामिट्टी २५ या ३० भाग, और शोरा २ भाग रहता है।

फरासीयोंके (परकलाके दर्पणके) कांचका आपेक्षिक वजन २ं ४८८ है। इसका रंग कुछ नीलापन को लिए हुए होता है। मिसरीके दर्पणका कांच कुछ पीले रंग का होता है।

बोहिमिया का काच स्वच्छतामें सबसे अच्छा होता है। इसका आपेक्षिक वजन २ं ३९६ है।

विलायती "क्राउन" कांच बोहिमियाके कांचकी तुलना करता है। इसका आपेक्षिक वजन २ं ४८७ है

स्फटिक कांच (crystal glass) का आपेक्षिक वजन २ं८ से ३ं २५५ तक होता है। इसमें सीसेका कुछ अंश रहता है। इसका विशेष कोई वर्ण नहीं। इसमें १०० भाग वालू, ३० या ४० भाग उद्भिज्जचार, ६० या ७० भाग सिनियाम, ४ भाग सुहागा, ३ भाग शोरा, १५ भाग सम्बल चाराम्ल इत्यादि हैं। लण्डनके क्राउन ग्लाससे वैज्ञानिक यंत्रादि बनते हैं।

टीवास कांच (Flint glass) सबसे परिशुद्ध चीजों से बनता है। इसमें १०० भाग वालू, ५० भाग उद्भिज्ज चार, १०० भाग सिनियाम और वाकी स्फटिक की भांति की कोई वस्तु रहती है। चुनिया-काच (Ruby glass) एक प्रकार खूबसूरत स्वर्ण प्रभामय कांच है। यह परिमाण करके बनाया जाता है और बनते समय इसके "मण्ड" में स्वर्णद्रावक मिला दिया जाता है। यह कांच जब बनता है, तब इसमें कोई भी रंग नहीं रहता। बाद में फारेनहीटके

काचसम्भव (सं० क्लो०) काचः सम्भवः उत्पत्तिस्थानमस्य, बहुव्री०। काचलवण, कालानमक।

काचसौवर्चल (सं० क्लो०) काचस्थानिकं सौवर्चलम्, मध्यपदलोपी कर्मधा०। काचलवण, कालानमक।

काचस्थाली (सं०स्त्री०) काचस्य स्थालीव, उपमितसमा०। १ पाटलावृक्ष, पाडरीका पेड़। इसका संस्कृत पर्याय पाटलि, पाटला, अमोघा, मधुदूती, फलेरुहा, कृष्ण-वृन्ता, कुवेराक्षी, कालस्थाली और ताम्रपुष्पी है। भावप्रकाशके मतसे यह कषाय एवं तिक्तरस, ईषदुष्ण-वीर्य्य और वायु, पित्त, श्लेष्मा, अरुचि, श्वास, शोथ, रक्तवमि, हिक्का तथा तृष्णा नाशक होती है। इसका पुष्प कषाय, मधुररस, शीतवीर्य्य, हृदयग्राही, कण्ठ-शोधक और कफ, रक्तदोष, पित्त तथा अतिसारघ्न है। फल हिक्का और रक्तपित्तको दूर करता है। २ काचपात्र।

काचा, (सं० स्त्री०) १ काच-मणि, बिल्लौरी पत्थर। २ अश्वके दन्तकी शुभ्र रेखा, घोड़ेके दांतकी सफेद लकीर। यह पन्द्रहसे सत्रह वर्षकी अवस्था तक घोड़ेके दांतोंमें सरसोंकी तरह पड़ जाती है।

काचाक्ष, (सं० पु०) काच इव अक्षि यस्य, बहुव्री०। १ वृहद्बक, बड़ा बगला। २ पद्मकन्द, कमलकी जड़।

काचाह्वा, (सं० स्त्री०) हरिद्रा, हलदी।

काचिघ, (सं० पु०) कचते दीप्यते, बाहुलकात् इन्; काचिं- कान्तिं हन्ति गच्छति, काचि-हन्-ड-पृषोदरा-दित्वात् हस्य घः। १ काञ्चन, सोना। २ मूषिक, चूहा। ३ शिम्बी-धान्यविशेष, एक धान।

काचिच्चिक (सं० पु०) काकचिञ्चा, घुंघची।

काचित्—(सं० अव्य०) कोई भी अनिर्दिष्ट-स्त्री।

काचित (सं०त्रि०) कच्यते बध्यते असौ, कच-णिच-क्त। शिक्यारोपित, शिकहरमें रखा हुआ।

काचिम, (सं० पु०) कच-णिच-इमन्। देवकुलोद्भव वृक्ष, पाक पेड़।

काचिलिन्दि, काचिचिक देखो।

काचुया—बङ्गालके खुलना जिलेका एक गांव। यह भैरव और मधुमती नदीके सङ्गम स्थानपर वाघेरहाट से पास पूर्व अवस्थित है। यहां पुलिसका थाना और बड़ाबाजार मौजूद है। १८८२ ई०को हेसकेल साहेबने यह बाजार लगाया था। ग्रामके मध्य एक नाला निकला, जिससे यह दो भागमें बंट गया है। आने जानेके लिए पुल बंधा है। यहां दधू (सुदर्री) बहुत होती है।

काचूक (सं०पु०) काच बाहुलकात् उकञ्। १ कुक्कुट, मुरगा। २ चक्रवाक, चकवा।

काच्छ (सं० त्रि०) कच्छस्यायमीय, नदीके किनारेका।

काच्छप (सं० त्रि०) कच्छपस्यायमीय, कछुयेका।

काच्छिम (सं० त्रि०) परिष्कार, साफ।

काछ (हिं०पु०) १ ऊरुका उपरि भाग, जांघका ऊपरी हिस्सा। २ काछा, लांग। ३ रूपका भराव।

काछना (हिं० क्रि०) १ खोंसना, लगाना। २ शृंगार करना, बनाना।

काछनी, (हिं०स्त्री०) एक प्रकार की धोती। यह कस और ऊपर चढ़ा कर पहनी जाती है। २ परिधेय वस्त्र-विशेष, जांघियेके उपर पहना जानेवाला कपड़ा। यह घांघरेकी तरह रहती और चुन्नट पड़ती है। रामलीला और कृष्ण लीलामें पुरुषमात्र प्रायः काछनी पहनते हैं।

कांछा (हिं० पु०) लांग, उठी धोती।

काछी—युक्त प्रान्तकी एक कृषक जाति। यह लोग प्रायः खेत जोतते—बोते और भाजी तरकारी बाजारमें बेचते हैं। युक्त प्रान्तके काछी ७ श्रेणियोंमें विभक्त हैं—कनौजिया, हरदिया, सिंगोरिया, जौन-पुरिया, मगहिया, जरैठा और कछवाह। इन ७ श्रेणियोंमें परस्पर आदान-प्रदान और पान भोजनादि प्रचलित नहीं। सातो श्रेणियोंमें कनौजिये सर्वापेक्षा सम्मानार्ह और कछवाह सबसे छोटे समझे जाते हैं। किन्तु कछवाह कहते कि वही सर्वापेक्षा सम्मानार्ह और कनौजिये सबसे छोटे होते हैं। कनौजसे काशी तक कनौजिये, पूर्व अवधमें हरदिये, अवधके दक्षिण-पश्चिमांशमें सिंगोरिये, बनोधेमें जौनपुरिये, मगहिये और जरैठे बिहारमें तथा कछवाह व्रज एवं जयपुरादि स्थानोंमें मिलते हैं। इन सात श्रेणियोंको छोड़ काछियोंमें दूसरी भी ३ श्रेणी चलती हैं,—धाकर,

गुणहीन और सघन। यह विहारमें अधिकांश देख पड़ती है।

ललितपुरके काछियोंमें पूर्वोक्त ७ या १० श्रेणी नहीं पाती। वह बड़ाह, सखोरिया हरदिया और अम्बर—चार श्रेणियोंमें बंटे हैं।

झांसीके काछी अपनेको कछवाह बताते हैं। वह कछवाह राजपूतोंसे उत्पत्ति और उनके पूर्वपुरुष नरवर प्रदेशसे इस अञ्चलमें आये थे।

काछी जातिकी श्रेणीके नाम अनुधावन करनेसे समझ पड़ता—यह अपनी वासभूमिके अनुसार भिन्न भिन्न श्रेणीमें बंटे हैं कनौजिया—कनौज या कान्यकुब्ज, हरदिया—हरदिवागञ्ज, सिंगौरिया—सिंगौर (इलाहाबादसे २६ मील उत्तर गङ्गाके पश्चिमकूल पर अवस्थित है। यह रामायणोक्त निषादराज्य की "शृङ्गवेर पुरी" है), जौनपुरिया—जौनपुर, मगहिया मगध, कछवाह—कच्छ और सुकसेन सङ्किसा (रामायणोक्त "साङ्काश्य"। काली नदीके तीर मैनपुरी और फरुखाबादके बीच आज भी इसका ध्वंसावशेष विद्यमान है) से निकला है।

अनेक स्थानोंमें इन्हें कोरी और मुराई भी कहते हैं। यह कृषिकर्ममें अति पटु होते और अति परिष्कार परिच्छन्न रूपसे उत्तमोत्तम शस्यादि उत्पादन कर सकते हैं।

आगरा अञ्चलमें कछवाह काछियोंकी ही संख्या अधिक है। दाक्षिणात्यमें यह जाति कनिष्ठ है। यह कुरमी जातिकी उच्च श्रेणीमें गण्य है। बम्बई प्रदेशमें यह फलमूल और तरकारी बेचते तो हैं किन्तु साधारण लोगोंके सिवा नहीं। देशसेवाके लिये यह मठे पर चोलीको बेचती फिरती हैं। दाक्षिणात्यमें इनकी बीच केवल मात्र २ श्रेणियोंका भेद है—बदेला और मरवरी।

राजपूतानेके जोधपुर प्रदेशमें भी काछी जाति अधिक देख पड़ती है।

काज (हिं॰पु॰) १ कार्य्य, काम। २ व्यवसाय, रोजगार। ३ प्रयोजन, मतलब। ४ विवाह, शादी। ५ छिद्रविशेष, बटन लगानेका छेद।

काजर (हिं॰ पु॰) कज्जल, आंखमें लगानेकी दीपकके धुयेंकी कालिख। इसको बत्ती या वर्ति पर पार लेते हैं।

काजर—मुसलमानोंकी एक जाति। पारस्य का वर्त्तमान राजवंश इसी जातिका है। जिस समय सुफवी वंशीय प्रथम सम्राट् शाह इस्माइलने शिया मतको पारस्यके राजकीय मतरूपमें चलाया उस समय ७ तुर्की जातियां उनकी पृष्ठपोषक थीं। काजर उन्हीं सात जातियोंमें एक है। किसी समय प्राचीन हिरकेनिया (वर्त्तमान मजन्दरान) राज्यमें काजरोंने महा प्रतिष्ठा पायी थी। १५०० ई॰से पहले इस जातिकी बात सुन नहीं पड़ती। उस समयके एक हस्तलिखित ग्रन्थमें "पिरिको काजर" नामक किसी जातिका उल्लेख है। जिससे पहले किसी भी साहित्य में "काजर" जातिका नाम नहीं पाया। अस्त्राबाद और मजन्दरान प्रदेशमें यह अधिक संख्यक रहते हैं। राजपूतोंकी भांति यह केवल तुफङ्गधारी होते हैं। इसी जातिके आगा मुहम्मद खां १७९४ ई॰ को प्रथम सम्राट् हुये और अस्त्राबादके निकट रहे। (वह एक सामान्य सैनिकके पुत्र थे और किसी समय नादिर शाहको सभासे निकाले गये थे) नादिरके एक भतीजेने इन्हें बाल्यकालमें खोजा बना डाला था। वह बोली और पराक्रम भिन्न थे। इनके पीछे इनके भ्रातुष्पुत्र फतेह अली—(१७९८ ई॰) सम्राट् बने। इन्हींके समयमें रुस और पारस्यका युद्ध हुआ। कर्नेल मेकडोनल्डके मतसे तैमूर बादशाह ८०१ हिजरीको काजर यहां ले गये थे। इनमें कोयुनलु और यालोमावास दो श्रेणी और प्रत्येक श्रेणीमें अंश भेद है। जियादोगलु नामक काजर जातीय एक अंश इसी आरमीनियाके गाजी प्रदेशमें जा कर रहा है। अफशानके वंशीय १म तमास शाहके समय यह मार्च प्रदेश पहुंचे थे। किन्तु बुखारियाके खां शाहके अधीन उजबाक वंशीयोंने उन्हें निकाला और अधिक सर्वकोंको समूल विनष्ट कर डाला।

काजरी (हिं॰ स्त्री॰) एक गाय। इसकी आंखके किनारे काला काला घेरा रहता है।

काजल (सं॰ क्ली॰) कुत्सितं जलम्, कोः कादेशः। कुत्सित जल, खराब पानी।

काजल (हिं॰) कज्जल देखो।

काजलबास—एक मुसलमान जाति। यह शिया सम्प्रदाय भुक्त हैं। ईरानका तबरीज, शीराज, मशीद और किरमान नगर इनकी जन्मभूमि है। यह अश्वपालन, मेषपालन और कृषिकार्य्यसे अपनी जीविका चलाते हैं। काजलबास विलक्षण साहसी, दुर्द्दान्त और युद्धप्रिय होते हैं। यह पारस्यशेर नादिर शाहको विपुल वाहिनीमें भरती किये गये थे। नादिर शाहका बध होने पर इन्होंने अहमद शाहसे मिल काबुल जीता। अहमद शाह जब मर गये, तब यह काबुलके निकटवर्त्ती चान्दोल ग्राममें रहने लगे। इनकी संख्या कोयी डेढ़ लाख है। यह सुन्नीसम्प्रदाय वाले दुरानी सरदारोंके घोर शत्रु हैं। अफगान सरदार काजलबासोंसे डरा करते हैं।

काजाक (कज्जाक) मध्य एशियाकी घूमनेवाली एक जाति। युरोपमें इन्हें कोसाक कहते हैं। यह मध्य एशियाके उत्तर विभागस्थ मरु प्रदेशमें प्रधानतः रहते हैं। तुर्कोंकी तरह इनमें नानाविध श्रेणी, शाखा और वंशविभाग हैं। युरोपमें यह बृहत्, मध्य और क्षुद्रदलमें विभक्त हैं। किन्तु ऐसा विभाग मध्य एशियामें नहीं होता। भ्रमणप्रियता और युद्धप्रियताके लिये अति दूरवासी भिन्न भिन्न श्रेणियोंके लोग आ मिलते हैं। एम्बा नदी, आराल ह्रद और बलकाश तथा आलाती ह्रदके तीर यह अधिक संख्यक देख पड़ते हैं। किन्तु इतने दूरवर्ती होते भी सर्वदा सकल प्रदेशोंमें घूमते रहनेसे इनमें भाषाका विशेष पार्थक्य नहीं पड़ता।

ट्रानसाकसियाना प्रदेशमें तोकेल या तियोकेल सुलतान नामक किसी व्यक्तिके अधीन इन्होंने प्रथम अभ्युत्थान किया था। १५३४ ई॰को (८४१ हिजरी) जकसरतेश नदीके तीर यह बहुत दुर्दान्त बन गये। सुलतान तोकेलने मास्को नगरको रूस-सम्राट् फेडोवके निकट अनेक बार दूत भेजा था।

यह युद्धप्रिय लोग विश्वास रखते कि "यद तदाई" (देवशक्ति सम्पन्न प्रस्तरखण्ड) पत्थर रोग छोड़ाता, युद्धमें जय दिलाता और भूत भगाता है।

१६ वें शताब्दको तातार सेनादलके मध्य मध्य मार्गमें रह कज्जाक ही लड़ते थे। रूस उस समय क्षुद्र क्षुद्र राज्योंमें विभक्त था। इन्होंने उसी समय सुविधा देख प्रायः समस्त रूस-राज्यको विध्वंस्त कर डाला और अट्राकानतक अधिकार किया। अन्तको प्रचण्ड वीर इवान (Ivan the terrible) ने इन्हें रूसी-सीमासे बाहर भगा दिया। यह परास्त हो समरकन्द, बोखारा और खोवाको चले आये। यहां भी यह दुर्दमनीय हो गये। फिर रूसका अधिकार यहांतक आ जानेसे इन्होंने नाम मात्र रूसकी अधीनता स्वीकार की। काजन प्रदेशमें लक्षाधिक कज्जाक रहते हैं।

इनमें भिन्न श्रेणीको भिन्न मसजिद, भिन्न कबर और डेरा डालनेकी जगह रहती है। इनमें अनेक धनी वणिक् और अनेक सम्भ्रान्त विद्वान् भी हैं। रूसका कोई कानून यह नहीं मानते। भाषा और आचार व्यवहारमें यह तुरुक जातिसे विशेष पृथक् नहीं होते। इनकी स्त्रियों और शिशुओंके गात्रका वर्ण युरोपीयोंसे मिलता, केवल सूर्यके उत्तापसे अपेक्षाकृत काला पड़ जाता है। इनका मस्तक दीर्घ, पगड़ी कोणाकार, चक्षु बादाम जैसे तथा औज्ज्वल्य-विशिष्ट, हनु उच्च, नाक चपटी, प्रशस्त ललाट, ओष्ठ बृहत् और मूछ थोड़ी होती है। इनके मतमें कालू नयाजकोंकी स्त्रियां ही सुन्दरी हैं। यह ग्रीष्मकालमें कलपक नामक पगड़ी और शीतकालमें तुमक नामक टोपी पहनते हैं। इन्हें सामुद्रिक शास्त्र, फलित ज्योतिष और भूतादिके आह्वान प्रभृतिपर विश्वास है। उक्त शास्त्रोंकी बहुत आलोचना हुवा करती है।

१८१२ से १८१६ ई॰ तक इनमेंसे कितने ही उपयुक्त लोगोंको लेकर रूस-सम्राट्ने ८॰ सेनादल प्रस्तुत किये थे।

युरोपीय कज्जाक देखनेमें सुपुरुष, आतिथेय और सम्भ्रान्त हैं। विवाहित स्त्रियां मस्तकपर एक रात्रि कालोचित रेशमी टोपी लगातीं और अपने गात्रमें एक रुमाल बांध लेती हैं।

काज़ी—मुसलमान समाजका विचारपति। जहां मुसलमानोंका राजत्व रहता, वहीं काज़ीसमाज नीति, धर्मनीति, फ़ौजदारी और दीवानी विधिके अनुसार विचार करता है। भारतका राज्य मुसलमान राजाओंके अधीन रहते समय काज़ी लोग विचारक पदपर अभिषिक्त थे। हिन्दुस्तानमें भी अनेक काज़ी विचार करते रहे। लोगोंके कथनानुसार उनमें पक्षपात और स्वेच्छाचारिताका कुछ आधिक्य था। आजकल अंगरेजाधिकृत भारतसाम्राज्यके मध्य काज़ी मुसलमानोंके विवाह कालमें उपस्थित हो विवाहके बन्धनको दृढ़ किया करते हैं। किन्तु तुर्किस्तान, अरब और ईरानमें यह आजकल भी विचारक हैं। वहां देशभेदसे इनकी मर्यादाका कुछ तारतम्य रहता है। तुर्किस्तानमें विचारककी पूर्ण क्षमता रहते भी यह मुफ़्तीके अधीन होते हैं। तुर्किस्तानके खलीफ़ा हारून् अल रशीदके समयसे काज़ियोंके हाथमें विचारका भार अर्पित हुआ है। सर्वप्रथम काज़ीका नाम अबू यूसुफ़ था। अन्य देशोंकी अपेक्षा अरब राज्यके काज़ियोंकी क्षमता अधिक है। यदि प्रजा किसी कारण देशके अधिपति पर अभियोग लगाती, तो प्रबल पराक्रान्त मस्कटके अधिपतिको उपस्थिति भी काज़ीके समक्ष अनिवार्य आती है। ईरानके प्रत्येक नगरमें काज़ी रहते हैं। फिर प्रत्येक शेख उल-इसलामके अधीन होता है।

काज़ी अज़ीम खां—एक मुसलमान चिकित्सक। यह अमराव भी थे। १५५१ ई० को आगरा नगरमें यमुनाके तीर इन्होंने एक सुन्दर उद्यान बनवाया था। उस उद्यानका पूर्व सौन्दर्य अब देख नहीं पड़ता, अधिकांश बिगड़ गया है। जो बचा है, उसे आज भी "हकीमका बाग़" कहते हैं।

काज़ी अहमद—एक विख्यात ऐतिहासिक। इनका पूरा नाम काज़ी अहमद बिन मुहम्मद अब्दुल्‌गफ़ारी था। इन्होंने नुसख-ए जहान-आरा नामक एक इतिहास लिखा। उस ग्रन्थमें मुसलमान-राज्यके आरम्भसे ९७१ हिजरी तक सैकड़ों घटनाओंकी लिपी है। काज़ी अहमद पदव्रजमें (पैदल) ईरानसे मक्का दर्शन करने गये थे। वहांसे लौटने पर सिन्धु प्रदेशके देवाल नामक ग्राममें इनकी मृत्यु हुयी। (१५६० ई०)

काजू (हिं० पु०) वृक्षविशेष एक पेड़। इसे बङ्गालमें हिजली बादाम, बम्बईमें काजूकलिया, तामिलमें मुन्दिरी, तलङ्गमें जिदीमामिदी, कनाड़ेमें गेम्बु मलयमें परनकिमाव कुरु और अङ्गरेजीमें केशोनट कहते हैं। (Anacardium occidentale)

यह वृक्ष २०से ४० फीटतक ऊंचा होता है। काजू दक्षिण अमेरिकासे भारतवर्षमें आया है। आजकल यह भारत, चट्टग्राम, टनासेरिम तथा आण्डामान द्वीपपुञ्जके समुद्रतटके वन और दक्षिण भारतमें बहुत होता है। 'काजू' दक्षिण अमेरिकाके 'अकाजाऊ' शब्दका अपभ्रंश है।

इसकी छालसे पीला या लाल गोंद निकलता, जो पानीमें कम घुलता है। कीड़े इससे भागते हैं।

छालको गोदनेसे एक प्रकारका रस बहने लगता है। इससे चिह्न डालनेकी अच्छी रोशनाई बनती है। देशी कारीगर काजूका रस लगा कर काठको जोड़ते हैं।

छाल रंगनेके काममें लग सकती है। आण्डामानवाले काजूके छीलको छालका तेल मछली पकड़नेके जाल रंगनेमें व्यवहार करते हैं। भीलमें इसे 'होल' कहते हैं। वहां यह नावों और जालोंमें रालकी भांति लगता है। काजूका तेल दो प्रकार निकलता है—गुठलीके छिलके और मींगीसे। मींगीका तेल कुछ पीला, मुलायम, ताकतवर और बादामके तेलकी तरह होता है। जैतूनका तेल इसकी बराबरी कर नहीं सकता। किन्तु भारतवर्षमें मींगी बहुत खायी जाती है। गुठलीके छिलकेका तेल काला, कड़वा और फफोले डालनेवाला है। लकड़ीमें इसे चुपड़ देनेसे दीमक नहीं लगती।

औषधमें काजूका तेल कोढ़, नासूर, गुमड़ी और बाईपर लगता है। मींगी खानेसे रक्त सुधरता और पेटकी पीड़ाका प्रकोप दबता है। गुठलीके छिलकेका तेल लगानेसे पैरका फटना बन्द हो जाता है।

भूनकर खानेसे इसकी मींगी बहुत अच्छी लगती है।

कानूकी लकड़ी लाल, कुछ कुछ कड़ी और दाने-दार होती है। ब्रह्मदेशवासी इसे सन्दूक तथा नाव बनानेमें लगाते हैं।

कानूत (सं॰ पु॰) क्षुपविशेष, एक झाड़। महाराष्ट्र देशमें इसे 'जासी' कहते हैं। यह मधुर, उष्ण, लघु, धातुवृद्धिकर और वात, कफ, गुल्मोदर, ज्वर, कृमि, व्रण, अग्निमान्द्य, कुष्ठ, श्वेतकुष्ठ, संग्रहणी और अर्शो-नाशक होता है।

काजूभोजू (हिं॰ वि॰) देखाऊ, कार्य्यमें न आनेवाला।

काचल (सं॰ क्ली॰) काचलवण, सोंचर नोन।

काञ्चन (सं॰ पु॰ क्ली॰) काञ्चते दीप्यते, कचि-ल्यु। १ स्वर्ण, सोना। २ पुन्नागपुष्प, सुलतानी चम्पा। ३ पद्मकेशर, कंवलकी धल। ४ धन, दौलत। ५ नागकेशरका पुष्प। ६ दीप्ति, चमक। ७ बन्धन, बंधाव। ८ उडुम्बर, गूलर। ९ धुस्तूर, धतूरा। १० सम्पत्ति, जायदाद। ११ पुरूरवा वंशीय भीमके एक पुत्र।

"भीमनु विजयस्याथ काञ्चनो होत्रकस्तथा।" (भागवत ९।१५।१)

१२ पञ्चम बुद्ध। १३ नारायणके एक पुत्र। १४ धनञ्जय-विजय नामक ग्रन्थके प्रणेता। १५ वृक्ष-विशेष, कचनारका पेड़। इसका पुष्प पीत, रक्त और श्वेत भेदसे त्रिविध है। रक्त पुष्पका संस्कृत पर्याय—रक्तपुष्प, कोविदार, युग्मपत्र एवं कुद्दाल और श्वेतका पर्याय—काञ्चनाल, कर्बुदार तथा पाकारि है। भाव-प्रकाशके मतसे यह शीतल, ग्राही, कषाय, श्लेष्मपित्त, कृमि, कुष्ठ, गुदभ्रंश तथा गण्डमाला रोगनाशक होता है। १६ हरिताल।

काञ्चनक (सं॰ क्ली॰) काञ्चन सञ्ज्ञायां कन्। १ हरिताल। २ धान्यविशेष, एक धान। ३ काञ्चन वृक्ष, कचनार।

काञ्चनकदली (सं॰ स्त्री॰) काञ्चनवर्णा कदली, मध्य-पदलोपी कर्मधा॰। १ चम्पा केला। २ कदली-विशेष, एक केला।

काञ्चनकन्दर (सं॰ पु॰) काञ्चनस्य कन्दरः, ६-तत्। स्वर्णकी खनि, सोनेकी खान।

काञ्चनकारिणी (सं॰ स्त्री॰) काञ्चनं बहुमूलेन बन्धनं करोति, काञ्चन-कृ-णिनि-ङीप्। शतमूली, सतावर।

काञ्चनक्षीरी (सं॰ स्त्री॰) काञ्चनमिव क्षीरमस्याः, बहुव्री॰। १ स्वर्णक्षीरिणी क्षुप, एक प्रकारकी खिरनी। २ क्षीरिणी, खिरनी। ३ यवतिक्ता, एक बूटी। इसका दुग्ध पीत और पत्र वृहत् होता है। ४ कङ्कुष्ठ, किसी किस्मकी गेरु।

काञ्चनगिरि (सं॰ पु॰) काञ्चनमयो गिरिः। १ सुमेरु पर्वत। २ स्वर्णनिर्मित कृत्रिम पर्वत, सोनेका बनाया हुवा पहाड़। यह दान करनेके लिये बनता है।

काञ्चनगुडिका (सं॰ स्त्री॰) औषध विशेष, एक दवा। त्रिफला प्रत्येक एक एक तोलेके हिसाबसे ३ तोला, त्रिकटु प्रत्येक दो दो तोलेके हिसाबसे ६ तोला, रक्तकाञ्चन (लाल कचनार) की छाल १२ तोला और सबके बराबर गुग्गुलडाल गोली बनानेसे यह औषध प्रस्तुत होता है। इसके सेवनसे गण्डमाला और गलगण्ड रोग दब जाता है। (रसरत्नाकर)

काञ्चनगैरिक (सं॰ क्ली॰) सुवर्णगैरिक धातु, सोना मिट्टी।

कांचनचक्र (सं॰ क्ली॰) बौद्धशास्त्रके मतसे पृथिवीका मध्यभाग (दिव्यावदान १९।८।८)

काञ्चनचय (सं॰ क्ली॰) काञ्चनस्य चयः राशिः, ६तत्। स्वर्णराशि, सोनेका ढेर।

काञ्चनजङ्घा—पूर्व हिमालयका एक अत्युच्च शृङ्ग। यह सिकिम और नेपालकी प्रान्तीय सीमामें अक्षा॰ २७° ४२′ ५″ और देशा॰ ८८° ११′ २६″ पू॰ पर अवस्थित है। धवलगिरिको छोड़ इतना बड़ा शृङ्ग जगत्‌में दूसरा नहीं। यह २८१७६ फीट ऊंचा है। यह शृङ्ग गोस्वामीस्थानसे ६५ कोस पूर्व रहते मानो नेपालको पूर्व सीमाको बचाता है। यह निरवच्छिन्न तुषारावृत रहता है। सूर्योदयकाल दूरसे ठीक काञ्चनकी भांति देख पड़ते यह शृङ्ग 'काञ्चनजङ्घा', 'काञ्चनजिह्व', 'काञ्चनशृङ्ग' और किसी किसी संस्कृत पुस्तकमें 'काञ्चनाद्रि' नामसे अभिहित है।

काञ्चनपत्रिका (सं॰ स्त्री॰) कृष्णमुषली, कालीमूसर।

काञ्चनपक्षी—बङ्गाल प्रान्तके चौबीस परगनेका एक

नवद्वीप ग्राम (कुमना)। यह कलकत्तेसे १८ कोस उत्तर अवस्थित है। यहां पूर्वकाल देवीका एक मन्दिर था है। पहले इस ग्राममें बहुसंख्यक पण्डित और विद्यार्थी निवास करते थे। यहां जगन्नाथका श्रीमन्दिर भोगमन्दिर तथा दोलमन्दिर बना और गिरिधरलालके निर्वाहको कृष्णवाटी नामक गांव लगा है। चैतन्य चन्द्रोदय नाटकके रचयिता पुरोगोस्वामीकी यह जन्मभूमि है। यहां रथयात्रा बड़े समारोहसे होती थी।

काञ्चनपुर (सं० स्त्री०) कलिङ्ग राज्यका एक नगर। (दशकुमार ७।३११)

काञ्चनपुष्पक (सं० क्ली०) काञ्चनमिव पीतं पुष्पं यस्य, काञ्चनपुष्प-कप्। आहुल्य-क्षुप, तगर। आहुल्य देखो।

काञ्चनपुष्पिका (सं० स्त्री०) पीतयाली, पीली चमेली।

काञ्चनपुष्पी (सं० स्त्री०) काञ्चनमिव पुष्पं यस्याः, ङीप्। गणिकारिका, अरणी।

काञ्चनप्रभ (सं० पु०) १ ऐलवंशीय एक राजा। (त्रि०) २ स्वर्णकी भांति प्रभाविशिष्ट, सोनेकी तरह चमकनेवाला।

काञ्चनभू (सं० स्त्री०) काञ्चनस्य भूः, मध्यपदलोपी कर्मधा०। १ स्वर्णमय स्थान, सोनेकी जगह। २ स्वर्णरेणु सोनेका बुरादा।

काञ्चनभूषा (सं० स्त्री०) स्वर्णगैरिक, सोनामाखी।

काञ्चनमय (सं० त्रि०) काञ्चनस्य विकारः, काञ्चन मयट्। मयट् वैतयोर्भाषायामभक्ष्याच्छादनयोः। पा ४।३।१४३। स्वर्णनिर्मित, सोनेका बना हुआ।

काञ्चनमाक्षिक (सं० पु०) स्वर्णमाक्षिक सोनामाखी।

काञ्चनमाला (सं० स्त्री०) १ अशोक राजाके पुत्र कुणालकी पत्नी। २ स्वर्णमेखी, सोनेका हार। ३ काञ्चनद्रव्यकी चोली, वाणासुरकी कन्या।

काञ्चनमोहनरस (सं० पु०) रसविशेष, एक दवा। रससिन्दूर, ताम्रभस्म एवं स्वर्णभस्म समभाग धर्म (मदार) तथा वज्री (थूहर) के दुग्धमें दिन भर घोटनेसे यह रस प्रस्तुत होता है। मात्रा एक रत्तीकी बनती है। काञ्चनमोहन रसके सेवनसे गुल्म रोग आरोग्य होता है। (रसरत्नाकर)

काञ्चनरस (सं० स्त्री०) हरितालविशेष, किसी किस्मकी हरताल। हरिताल देखो।

काञ्चनवप्र (सं० पु०) काञ्चनमयो वप्रः, मध्यपदलोपी कर्मधा०। १ स्वर्णनिर्मित प्राचीर, सोनेकी दीवार। २ सुमेरु पर्वतका सानुदेश।

काञ्चनवर्मा (सं० पु०) एक प्राचीन राजा। हिरण्यवर्मा देखो।

काञ्चनरोची (सं० पु०) अभ्यय राजाके पुत्र। (भागवत, नवम १०—२१)

काञ्चनसन्धि (सं० पु०) काञ्चनवत् दुर्भेद्य सन्धि। दृढ़ सन्धि मजबूत सुलह।

काञ्चनसन्निभ (सं० त्रि०) स्वर्णवत् सुन्दर, सोनेकी तरह चमकीला।

काञ्चनस्तूप (सं० पु०) काञ्चन नामक हिरण्यकाम्य लाञ्छित स्तूप, एक स्तम्भ। वह स्तम्भोंके ऊपर सोनेका चमकदार कर बनाया जाता है।

काञ्चना (सं० स्त्री०) महीशूरकी राजधानी। इसका अपर नाम स्वर्णभूमि है।

काञ्चनाक्ष (सं० पु०) एक दानव। (हरिवंश ११ अ०)

काञ्चनाक्षी (सं० स्त्री०) सरस्वती नदी।

काञ्चनाङ्ग (सं० त्रि०) काञ्चनवत् सुन्दरं अङ्गं यस्य, बहुव्री०। १ स्वर्णवत् सुन्दर अङ्गविशिष्ट, सोनेकी तरह चमकीले जिस्मवाला। (स्त्री०) २ स्वर्णनिर्मित अवयव सोनेका बना हुआ बदन।

काञ्चनाभिधानसन्धि (सं० पु०) काञ्चनसन्धि, दोनों तर्फ बराबर शर्तों पर होनेवाली सुलह।

काञ्चनाभ्ररस (सं० पु०) रसविशेष, एक दवा। रस सिन्दूर, मुक्ताभस्म और स्वर्ण, प्रवाल हरीतकी, रौप्य, वत्सनाभि और मनःशिला दो दो तोले वजनमें घोटनेसे यह रस प्रस्तुत होता है। इसे बिन्दुमात्र अनुपानके अनुसार सेवन करनेसे सर्वोपद्रवसंयुक्त नानारोग दब जाते हैं। क्षय, काम और श्लेष्मपित्त पर यह बड़ा गुण देखाता है। (रसेन्द्रसारसंग्रह) वृहत् काञ्चनाभ्र रस बनानेका विधि यह है—स्वर्णभस्म रससिन्दूर, मुक्ताभस्म, लौहभस्म, अभ्रभस्म, प्रवालभस्म वैक्रान्तभस्म, रौप्य, ताम्र, वङ्ग, कस्तूरी, लवङ्ग, जाति

कोष और एलवालुक दो दो तोले घृतकुमारी तथा केशराजके रस एवं अजाक्षीरमें तीन तीन दिन घोंटते हैं। मात्रा चार रत्ती है। यह रस भी अनुपानके अनुसार सर्वरोग दूर करता है।

काञ्चनार (सं० पु०) काञ्चनं तद्वर्णं ऋच्छति पुष्पैः काञ्चन-ऋ-अण्। रक्तकाञ्चनवृक्ष, लाल कचनार। यह कषाय, संग्राही, व्रणरोपण, दीपन और कफ, वात तथा मूत्रकृच्छ्र नाशक होता है। (राज निघण्टु) २ श्वेतकाञ्चन वृक्ष, सफेद कचनार।

काचनारक (सं० पु०) कांचनार स्वार्थे कन्। काचनार देखो।

काञ्चनारगुग्गुलु (सं० पु०) औषध विशेष, एक दवा। कचनारकी छालका चूर्ण ५ पल, शुण्ठी, पीपल एवं मरिचका चूर्ण एक-एक पल, हरीतकी, आमलकी तथा विभीतकका चूर्ण चार-चार तोला, वरुणकी छालका चूर्ण २ तोला, गुड़त्वक्, पत्रक (तेजपात) एवं एलाका चूर्ण एक एक तोला और सब चूर्णके बराबर गुग्गुलु डाल एकत्र मर्दन करनेसे यह औषध प्रस्तुत होता है। इसके सेवनसे गण्डमाला, गलगण्ड और अर्बुदादि रोग नष्ट होता है। मात्रा आध तोले तक है। (भावप्रकाश)

काञ्चनाल (सं० पु०) काञ्चनं काचनवर्णं अलति, काञ्चन-अल्-अण्। १ श्वेतकाचन वृक्ष, सफेद कचनारका पेड। २ आरग्वध वृक्ष, अमिलतास।

कांचनाह्वय (सं० पु०) कांचनं स्वर्णं आह्वयते स्पर्धते स्वभासा इति शेषः कांचन-आ-ह्वे-क। १ नागकेशर वृक्ष। २ पद्मकेशर।

कांचनिका (सं० स्त्री०) गणिकारी पुष्पवृक्ष, अरनी।

कांचनी (सं० स्त्री०) कच्यते दीप्यते अनया, काचि-ल्युट्-ङीप्। १ हरिद्रा, हलदी। २ गोरोचना। ३ स्वर्णचीरी, खिरनी। हिन्दीमें 'काचनी' नर्तकी और गायिकाको कहते हैं।

कांचनी—गोस्वामी सम्प्रदायविशेष। यह लोग नृत्य गीत द्वारा जीविका निर्वाह करते और गैरिक वस्त्र पहनते हैं। आचार-व्यवहार साधारण गोसाइयोंसे मिलता है। आवश्यक आनेसे यह विवाह कर सकते हैं। मरने पर इनके शवको समाधि देते या नदीके जलमें बहाते हैं।

कांचनीय (सं० त्रि०) स्वर्णजात, सोनेका बना हुवा।

कांचनीया (सं० स्त्री०) १ हरिताल। २ गोरोचना।

कांचि (सं० स्त्री०) काचि-इन्। १ रसना, करधनी। २ दाक्षिणात्यके द्राविड राज्यकी राजधानी। कांचीपुर देखो।

कांचिक (सं० क्ली०) कांचि संज्ञायां कन्। कांजिक, काजी।

कांची (सं० स्त्री०) कांचि-ङीष्। १ रसना, करधनी। इसका संस्कृत पर्याय—मेखला, सप्तकी, रसना, सारसन, कांचि, कक्षा, कक्ष्या, ससका, सारशन, रसन और बंधन है। इन पर्यायोंमें किसी किसीके मतानुसार विभिन्नता रहती है। एक लड़वाली यष्टिको कांची कहते हैं। फिर आठ लड़वाली मेखला, सोलह लड़वाली रसना और पचीस लड़वाली करधनी कलाप कहलाती है। २ द्राविड राज्यका राजधानी। ३ गुञ्जा, घुंघची।

कांचीनगर (सं० क्ली०) कांचीपुर देखो।

कांचीपद (सं० क्ली०) काञ्च्याः पदं स्थानम्, ६ तत्। जघनदेश, नितम्ब, करधनी बांधने की जगह।

कांचीपुर—मन्द्राज प्रांतस्थ चेंगलपट जिलेके कांचीपुरम् तालुकका एक प्रसिद्ध नगर। यह अक्षा० १२° ४९' ४५" उ० और देशान्तर ७९° ४५' पू०पर अवस्थित है। भूपरिमाण ५८५८ एकर है। यहां न्यायालय, कारागार, चिकित्सालय और विद्यालय विद्यमान है।

पुरातत्त्व—कांचीपुर अति प्राचीन नगर है। महाभारतमें उल्लेख मिलता है,

"पल्लवान् पह्लवान् पुण्ड्रान् प्रयत्नाद्‌द्रविडाङ्कजान्।
गजतयाथजत् कांचीम् नगरायेव पार्थतः॥" (महाभारत, आदि, १७८,१४)

अनेक महात्माओंके मतसे महाभारतमें कांची नामका उल्लेख रहते भी केवल उसी प्रमाण पर निर्भर कर इसको महाभारतका समकालीन अति प्राचीन नगर कह नहीं सकते। तामिल भाषाके "कांचीपुर स्थलपुराण"में लिखा कि प्रसिद्ध चोलराज कुलोत्तुङ्गने कांचीपुर नगर स्थापन किया था। तत्-

पुत्र पहले तोण्डीरके समय इसकी विशेष उन्नति हुई। पाश्चात्य पुराविद् फार्गुसनने उक्त मत समर्थनकर लिखा है,—'पहले यह स्थान न गरके परिगत था। उस समय वहां असभ्य कुरुम्बर रहते थे। ई०११वें या १२वें शताब्द अदण्डी चक्रवर्तीने यह नगर स्थापन किया। (Fergusson's History of Indian and Eastern Architecture.)

उक्त उभय मत समीचीन नहीं समझ पड़ते। वास्तविक यह कांचीपुर अति प्राचीन नगर है। प्राचीन शिलालिपि और प्राचीन संस्कृत पुस्तक पढ़नेसे पता यह उपलब्धि आती, कि चोल राजाओंके अभ्युदयसे बहुत पहले कांचीपुरमें दक्षिणापथके प्रबल पराक्रान्त भूपतियों की राजधानी स्थापित हुई थी। आज कल यह जैसा वृहद् नगर है पूर्वकालको वैसा न था। उस समय कांचीपुर एक विस्तीर्ण जनपदमें विभक्त था। स्कन्दपुराणके कुमारिकाखण्डमें लिखा है—

"[illegible] काञ्चीपुरं महीतिलम्।" (१०अ)

महाभारतके समय कांचीपुर सम्भवतः कलिङ्गके क्षत्रिय राजाओंके अधीन था। उस समय भी यह स्थान द्राविड़ राज्यके अन्तर्गत न हुआ था। यही बात महाभारतमें द्राविड़ और कांचीके स्वतन्त्र उल्लेखसे अनुमित होती है। फिर दक्षिणापथके पाण्ड्य राजाओंने इसे अधिकार किया।

पाण्ड्य राजाओंके पीछे यो कांचीपुर पल्लव राजाओंके हाथ लगा। किसी समय पल्लव राजाओंने द्राविड़ और दक्षिणापथका अधिकांश जीत इसी कांचीपुरमें राजधानी स्थापित की थी। बौद्ध और जैन धर्म प्रबल पड़ते भी तत्कालीन कांचीपुरके पल्लवराज हिन्दू धर्मावलम्बी रहे। खृष्टीय ४र्थ और ५म शताब्दकी शिलालिपि उक्त विषयका साक्ष्य देती है। उक्त शिला लिपि पढ़नेसे समझ पड़ता, कि उस समय और उस से पहले कांचीपुरमें जैन धर्म भी विशेष प्रबल था। तत्कालीन पल्लव राजाओंने वेदज्ञ ब्राह्मणोंका अनुशासन द्वारा जो ग्राम दिये उन सकल ग्रामोंमें ब्राह्मणोंके अध्यषित पूर्व जैनोंके अधिकार रहे। सम्भवतः हिन्दू राजाओंने जैनोंको निकाल उन ग्रामोंमें ब्राह्मणोंको रखा था। (Indian Antiquary, VIII. 281)

कोई अनुमान खृष्टीय १म शताब्दको कामाक्षि या कांचीपुरमें रहते थे। पाण्ड्य राजाओंके समय यहां जैनधर्म प्रबल हो गया था और जैन राजाओंने अधिकांश बौद्ध अधिवासियोंको भगा दिया। (Wilson's Mackenzie Collection, p. 40-41)

शिलालिपिके अनुसार शिवस्कन्द ही कांचीपुरके प्रथम पल्लवराज थे, जो खृष्टीय ४र्थ शताब्दको राजत्व कर गये। वह वैष्णव थे। अनेक लोग अनुमान करते, कि उन्हींके समय विष्णुकांचीके वरदराजस्वामी आविर्भूत हुये थे।

खृष्टीय ६ष्ठ शताब्दको पुलिकेशी (२य) ने एक बार पल्लवराज पर आक्रमण किया। १०० शकमें खोदित पुलिकेशीकी शिलालिपि पढ़नेसे समझते कि पल्लवराज उनसे हार कांचीपुरके प्राकारमें छिप रहे थे।

"[illegible] काञ्चीपुर।
[illegible] [illegible]॥"

([illegible] खोदित ऐहोल शिलालिपि।)

खृष्टीय ७म शताब्दको चीन परिव्राजक हुएन-सुयाङ्ग कांचीपुर (कि-अन-चि पु-लो) आये थे। उस समय यह द्राविड़ राज्यकी राजधानी था। विस्तृति प्रायः ३० कोस रही। बौद्ध निर्ग्रन्थ और हिन्दू तीन दल प्रबल थे। १०० बौद्ध सङ्घाराम और ८० देवमन्दिर रहे। कांचीपुर धर्मपाल बोधिसत्वका जन्मस्थान है। इसीसे बौद्ध इस स्थानको पुण्यभूमि समझते और नाना देशोंसे बौद्ध यात्री यहां आ पहुंचते थे।

अनेक लोगोंके अनुमानसे चीन-परिव्राजकके आगमनकाल यहां बौद्धराज राजत्व करते थे। किन्तु यह बात ठीक नहीं। खृष्टीय ७म शताब्दकी शिलालिपि पढ़नेसे समझ पड़ता कि उस समय भी कांचीपुरमें वैष्णव धर्मावलम्बी पल्लव राजाओंका राजत्व था।

पूर्वतन पल्लव राजाओंके वैष्णव होते भी खृष्टीय ८म शताब्दको शिलालिपिमें कांचीपुराधिप नरसिंह वर्माने अपनेको शव या महेश्वरोपासक लिखा है। सम्भवतः उसी समय यहां शैवधर्म प्रबल हुआ था।

खृष्टीय ६म शताब्दको चोलराज कुलोत्तुङ्गने* कांचीपुर अधिकार किया। तत्पुत्र अदण्डी चक्रवर्त्तीके समय काचीपुर तोण्डीरमण्डलकी राजधानी हुवा।

खृष्टीय १०म और ११श शताब्दके मध्य चालुक्य राजावोंने कांचीपुर लेनेको चेष्टा की थी। विह्लण कवि विरचित विक्रमाङ्कचरित पुस्तक पढ़नेसे समझ पड़ता कि चालुक्यराज आहवमल्लने (१०४०-६९ई०) चोलराजधानी कांचीको आक्रमण किया। यह युद्धमें जय पाते भी चोल राजावोंको स्ववशमें ला न सके। उनके आदेश-क्रमसे तत्पुत्र, विक्रमादित्य चालुक्य कई वार कांचीपर चढ़े।

(विह्लणकृत विक्रमाङ्कचरित ३।४१, ६६,२२-२८)

मालूम पड़ता कि उसी समय कांचीका कोई कोई अंश पल्लव राजवोंके भी अधिकारमें था। कारण शिल्पलिपि और विह्लणका ग्रन्थ पढ़नेसे समझ पड़ता कि विक्रमादित्यके पुत्र विनयादित्यसे कांचीके त्रैराज्य पल्लवकी विपुलवाहिनी आक्रान्त और पर्यदस्त हुयी।

१०७४ शकको एक शिल्पलिपिमें खोदित है कि उस समय (खृष्टीय १२श शताब्द) काकत्यराज रुद्रदेव कांचीपुर शासन करते थे। (Ind. Antiquary, XI. 19.)

१५श शताब्दके मध्यकाल उत्कलके केशरीवंशीय एक राजाने कांचीपुर लूटा था। फिर १४७७ ई०को वहमानी वंशीय मुसलमानराज मुहम्मदने कांचीपुर जीत अपना अधिकार जमाया। इसी प्रकार यह कुछ काल वहमानियोंके शासनाधीन रहा। उसके पीछे विजयनगरके राजा नरसिंह रायने वहमानियोंके हाथसे इसे छोड़ाया। उन्होंने वीरवसन्त रायको कांचीपुरमें शासनकर्त्ताके पद पर बैठाया। नरसिंह रायके पुत्र कृष्णदेव राय १५०८ ई० को राज्याभिषिक्त हुये थे। वह १५१५ ई०को यहां आये। उन्होंने कांचीपुरके विख्यात शतस्तम्भ और कई शिवमन्दिरका संस्कार कराया था। १४३८ शकके खोदित अनुशासन-पत्र पढ़नेसे समझते कि कृष्णदेव रायने कांचीपुरके प्रसिद्ध वरदराज स्वामीके मन्दिर व्ययको ११ सौ रुपये आयके विशरा, तिरुप्य, कटाह, उपंथगाल और गोविन्दवदी प्रभृति अनेक ग्राम प्रदान किये।

१६४४ ई० को विजयनगर यवन-कवलित होने पर कांचीपुर गोलकुण्डावाले मुसलमान राजाके हाथ लगा। कुछ दिन पीछे यह अरकाटमें शामिल हुवा। १७५१ ई०को लार्ड क्लाइवने फरासीसियोंके हाथसे कांचीपुर अधिकार किया था। किन्तु उसी वर्ष राजा साहबको छोड़ देना पड़ा। १७५७ ई०को फरासीसियोंने यह ग्राम आक्रमण कर आग लगायी थी। दूसरे वर्ष अंगरेजी सैन्य कांचीपुर छोड़ मन्द्राजमें फरासीसियों पर चढ़ा। किन्तु फिर लौटकर फरासीसियोंके अवरोधसे इसे उद्धार किया। कांचीपुरसे अदर पुल्लर स्थानपर अंगरेजी और मुसलमानोंमें एक घोरतर युद्ध हुवा था। उसमें हैदरअलीने (१७६० ई०) जनरल वेलीके सैन्यव्यूहका भेद किया।

कांचीपुर एक प्राचीन महातीर्थ है। भारतवर्षकी जो सात पुण्यनगरी दर्शन करनेसे जीव अनायास सिद्धि पा सकता, उनमें इसका भी नाम मिलता है,—

"अयोध्या मथुरा माया काशी काञ्ची अवन्तिका।
पुरी द्वारावती चैव सप्तैता सिद्धिदायिका॥"

तोडलतन्त्रके मतसे यही तीर्थ विश्वरूप महादेवका कटिदेश है,—

"नाभिमूले महेशानि अयोध्यापुरी च स्थिता।
काञ्चीपीठं कटीदेशे योन्द्र पृष्ठदेशके॥"

(तोडलतन्त्र, ६म पटल)

केवल तीर्थ ही नहीं, काची महापीठस्थान है। कुलचूड़ामणितन्त्रके मतसे यहां, कंकालेश्वरी देवी विराजती हैं,—

"काञ्च्यां कम ककालीम्लाद[illegible]"

([illegible])

कांचीपुर नगर दो भागमें [illegible]—[illegible] कांची और [illegible] [illegible] [illegible] और [illegible] [illegible] है [illegible]

---

* फार्गुसन प्रभृति पाश्चात्य पुराविदोंके मतसे खृष्टीय ११श वा १२श शताब्दके मध्य कुलोत्तुङ्ग चोलराजका राजत्वकाल रहा। किन्तु दक्षिणापथके प्रसिद्ध वृहदीश्वरमाहात्म्य नामक पुस्तक देखते खृष्टीय ६म शताब्दको वह यहां राजत्व करते थे।

दोनों स्थानोंके दर्शनीय वस्तुओंके मध्य शिवकाञ्चीस्थित 'एकाम्रनाथ' नामक महादेवका आदिलिङ्ग भगवती कामाक्षी देवीकी मूर्ति, भगवान् शङ्कराचार्यकी प्रतिमा एवं समाधिस्थल तथा कम्पानदी तीर्थ और विष्णुकाञ्चीस्थित 'श्रीवरदराजस्वामी' नामक भगवान् विष्णुकी मूर्ति, उक्त मूर्ति, हिमवतीधारा तीर्थ रविनीर, सोमतीर्थ, मङ्गलतीर्थ बुधतीर्थ बृहस्पतितीर्थ शुक्रतीर्थ एवं शनितीर्थ प्रभृति प्रधान हैं। इसके अतिरिक्त काञ्चीके निकट केदारेश्वर और वासुकारण्य दो पुण्यस्थान भी हैं। (उक्त तीर्थों का विवरण शिवकाञ्चीमाहात्म्य कामाक्षीविलास, केदारेश्वर माहात्म्य प्रभृति संस्कृत ग्रन्थोंमें देखना चाहिये।)

द्रविड़ देशीय व्यक्तियोंके मतसे शिवकाञ्ची वाराणसी तुल्य है। इस स्थानकी उत्पत्ति विषय पर ब्रह्मपुराणमें लिखा, कि महादेवने पार्वतीसे पुण्य तीर्थोंकी बात करते करते कहा था,—"वाराणसी रामेश्वर, श्रीशैल आदि पुण्यक्षेत्रोंसे काञ्चीपुर उत्कृष्ट है। यहां जो लोग रहते वा दर्शन करते वा इसका विवरण सुनते अथवा इसका विषय मनमें रखते एवं आन्दोलन करते और जो पशु पक्षी यहां बसते, वह भी मुक्ति लाभ करते हैं। इस नगरके मध्यस्थलमें समस्त शास्त्रकी आत्माके स्वरूपमें हम और अपने लिङ्गरूप एकाम्रनाथ नामसे अभिहित हो हम रहा करते हैं। इस काञ्चीपुरमें वास करने पर सर्वपापसे मुक्त हो जाते हैं। काञ्चीपुर चारों ओर ५ कोस विस्तृत है। इसके मध्य पूर्व पश्चिम एवं उत्तर दक्षिण दोनों ओर हम सर्वदा विराजमान रहेंगे। फिर प्रलयके समय हम इसको अपने त्रिशूल पर रखेंगे। अतएव इसका कभी विनाश नहीं। इसका हमारी ही आकृति समझना चाहिए।"

आर्यावर्तके लोग जैसे जीवनके शेष भागमें काशी जा रहते तथा काशीमें मर परमेश्वर शिवका प्राप्तिका विश्वास रखते वैसे ही दाक्षिणात्यवासि भी काञ्चीमें रहने और काञ्चीमें मरनेसे अपनी मुक्ति समझते हैं।

दाक्षिणात्यके नाना स्थानोंमें महादेवकी पांच भौतिक मूर्ति हैं। काञ्चीपुरका "एकाम्रनाथ लिङ्ग" उनमें क्षितिमूर्ति होनेसे दो मृत्तिकासे गठित है। सुतरां अन्यान्य देवालयकी भांति यहां जलाभिषेक नहीं होता।

एकाम्रनाथका मन्दिर दाक्षिणात्यमें अति विख्यात और देखनेमें भी अति सुन्दर तथा पुरातन है। यह मन्दिर किसी समय एकबारगी हो न बना था। इसकी वृद्धि क्रम क्रम हुई है। इस मन्दिरकी दीवारें परस्पर परस्पर समान्तराल नहीं बनीं और वह भी परस्पर समकोण नहीं। अनेक लोगोंके अनुमानमें इसका मूल स्थान चोल राजाओंने बनवाया था, फिर विजय नगरके राजा कृष्णरायने गोपुर निर्माण कराया। इस मन्दिरके प्राङ्गणमें एक पुरातन आम्रवृक्ष है। उसका वयस ३१४ सौ वत्सर होगा। द्रविड़के लोग इस आम्रवृक्षको अनादि और सर्वमाङ्गल्य मानते हैं। इसकी चार शाखाओंमें पृथक् २ मिष्ट, कटु तिक्त और अम्ल चार प्रकारके आम्र होते हैं। वह लोग इस विषयका साक्ष्य दिया करते हैं। देश-वासियोंके कथनानुसार पहले इस आम्रवृक्षसे प्रत्यह एक पका आम गिरता, जिसका भोग एकाम्रनाथको लगता था। अनेक लोगोंके कथनानुसार इसीसे लिङ्गका नाम 'एकाम्रनाथ' पड़ा है। किन्तु प्राचीन ग्रन्थमें प्रमाण नहीं मिलता।

कामाक्षी देवीकी उत्पत्ति सम्बन्ध पर ब्रह्मपुराणमें लिखा है—किसी समय पार्वती देवीने कौतुकच्छलसे पीछेसे जा महादेवके चक्षु मूंद लिये थे। इसीसे त्रिजगत् अन्धकारमय हो गया। क्योंकि सूर्यचन्द्र अग्निरूपी त्र्यम्बकके उन चक्षुसे प्रकाश किस प्रकार होता? इससे भगवतीको पाप लगा। उसी पापके प्रायश्चित्तको महादेवके आदेशसे उन्हें मर्त्यमें आना पड़ा। एकाम्रनाथके मन्दिरप्राङ्गणस्थित कम्पा-नदी नामक तीर्थमें कामाक्षी देवीरूपसे घोर तपस्या करनेपर महादेवने उन्हें फिर ग्रहण किया। तदवधि कामाक्षीमूर्ति उक्त मन्दिरमें प्रतिष्ठित है। फाल्गुन मासके पंचदश दिन बराबर एकाम्रनाथका वार्षिक महोत्सव होता है। उसके दशम दिवस रात्रिको

कामाक्षी देवीकी भोगमूर्तिके* साथ एकाम्रनाथकी भोगमूर्ति मिलायी जाती है।

कामाक्षी देवीका मन्दिर कुछ छोटा है। इसीके प्राङ्गणमें भगवान् शङ्कराचार्यका समाधि है। इसी समाधि पर उनकी प्रस्तरमयी मूर्ति प्रतिष्ठित है।

शिवकाञ्चीमें अनेक शिवलिङ्ग हैं। इनके सम्बन्धमें एक प्रवाद है—किसी समय एकाम्रनाथने एक मुष्टि वालुका छोड़ी थी। उससे वालुकाके जितने कण गिरे, वह प्रत्येक शिवलिङ्ग बन गये।

एकाम्रनाथकी पूजाको १४००) रु० आयके कई ग्राम लगे हैं। ८०५) रु० नकद कचहरीसे आता है।

इस मन्दिरमें प्रत्यह वेदपाठ और वेदगान होता है। उत्सवके समय भोगमूर्तिको रत्नालङ्कारसे सजा वाहक ब्राह्मण अपने स्कन्ध पर ले जाते हैं। पीछे दूसरे ब्राह्मण वेद गाते चलते हैं। फाल्गुन मास रथोत्सव होता है। उस समय विस्तर यात्री आते हैं।

यह देवालय कर्णाटक युद्धके समय सेनावास या अस्पतालकी भांति व्यवहृत होता था। द्वार पर उसी युद्धके एक गोलेका चिन्ह आज भी देख पड़ता है।

उक्त शिवमन्दिरसे २ कोस दूर विष्णुकाञ्ची है। यहीं वरदराज स्वामीका प्रसिद्ध मन्दिर बना है। स्कन्दपुराणमें वरदराज स्वामीके उत्पत्ति-सम्बन्ध पर इस प्रकार लिखा है,—"किसी समय ब्रह्माने अश्वमेध यज्ञ किया था। कांचीपुरमें यज्ञस्थल निरूपित हुवा। यज्ञभूमिका उत्तर द्वार नारायण, पश्चिम द्वार विरञ्चि-पुर, दक्षिण द्वार चिह्नलिपट और पूर्व द्वार महाबली पुर था। सरस्वती देवीने ब्रह्माके यज्ञकी बात न सुनी। नारदने ब्रह्मलोक जा उसको सवाद दिया था। उनको इससे बड़ा क्रोध हुवा कि ब्रह्माने उनसे न कह यज्ञ करना आरम्भ किया। वह यज्ञस्थल बहानेको नदी बन गयीं। ब्रह्माने यह सुन विष्णुसे साहाय्य मांगा था। विष्णुके आकर गति रोकने पर सरस्वती अन्तःसलिला होकर बहने लगीं। विष्णु फिर नग्न रूपसे एदोर्थोरो नामक स्थान पर नदीके सामने जा पड़े। तब सरस्वती देवीने लज्जासे अधोमुखी हो अपना पूर्व सङ्कल्प परित्याग किया था। इधर यथासमय यज्ञीय अश्वमांसको आहुति दी गयी। भगवान् विष्णु, वही हुत मांस खाने खाते यज्ञीय अग्निसे आविर्भूत हुये। विष्णुके दर्शनसे ब्रह्माको मनस्कामना सिद्ध हुयी। समागत ऋषियों और ऋत्विकोंने विष्णुसे उसी स्थान पर रहनेका प्रार्थना की थी। नारायण उनकी प्रार्थनासे सन्तुष्ट हो कांचीपुरमें श्रीवरदराज स्वामीके नामसे रहने लगे।

सुननेमें आया कि ११श शताब्दको कांचीपुरके शासन-कर्ता गंजागोपाल रायने विष्णुमन्दिर प्रतिष्ठा किया था। पहले वह अपुत्रक रहे। वरदराजको कृपासे उनके पुत्रसन्तान हुवा। इसीसे उन्होंने एक शिवमन्दिर तोड़वा उसीकी ईंटोंसे एक बृहत् विष्णु-मन्दिर निर्माण कराया और उसमें वरदराज स्वामीको जा बिठाया। इसी विष्णुमन्दिरसे यह स्थान विष्णु-कांची कहाता है।

विष्णुमन्दिरके देवीभवनके एक स्तम्भपर १०३२ शकको एक शिल्पलिपिमें लिखा कि—नोचनतन्त्रजी-मल्ल नामक कोई व्यक्ति उदेय्यर पलैयमसे वरदराजको मूर्ति विष्णुकांची ले गया था। विष्णुमन्दिरके द्वितीय प्रकोष्ठमें कृष्णराय निर्मित प्रसिद्ध शतस्तम्भ-मण्डप विद्यमान है। एक पत्थरको काटकर यह मण्डप बनाया गया है। इसके निकट दूसरे भी कई मण्डप हैं। उनमें वाहनमण्डप और कल्याण-मण्डप ही श्रेष्ठ है। इस मन्दिरकी देवसेवाके लिये २०००) रु० आयका एक ग्राम लगा है। फिर मन्द्राज गवरनमेण्ट भी ८८६१) रु० वार्षिक देती है। यह मन्दिर अतिसमृद्धिशाली है। इसकी केवल मणिमुक्ताका मूल्य ही लाख रुपयेसे अधिक होगा। लार्ड क्लाइवने ३६६१) रु० मूल्यका एक कण्ठाभरण चढ़ाया था। वैशाख मास १० दिन बराबर इसका महोत्सव हुवा करता है। उस समय यहां प्रायः पचास हजार यात्री आते हैं।

कांचीपुरी (सं० स्त्री०) काञ्चीपुर देखो।

---

* दाक्षिणात्यके प्रायः प्रत्येक देवालयको दो मूर्ति होती हैं। मूलमूर्ति मन्दिरमें प्रतिष्ठित रहती है और भोगमूर्ति उत्सवादिमें नगरयात्राको निकलती है। भोगमूर्ति ही अश्वारोहिमें सजायी जाती है।

काञ्जीप्रस्थ (सं॰ क्ली॰) काञ्जीक देखो।

काञ्जिक (सं॰ क्ली॰) कु कुत्सिता अञ्जिका प्रकाशो यस्य, कु अञ्च ण्वुल् टाप् यत इत्वं कोः कादेशः। काञ्जिक, कांजी। धान्यके माण्ड सड़ानेसे जब खट्टा पड़ जाता, तब वही माण्ड 'काञ्जिक' कहाता है। इसका संस्कृत पर्याय—आरनाल, सौवीर, कुल्माष, धान्याम्ल, अवन्तिसोम, धान्याम्ल कुञ्जल, कुल्माष, कुल्माषाभिषुत, काञ्चीक काञ्जिका, कञ्जिक, काञ्जी, मद्यवारि, धान्यमूल, धान्ययोनि, तुषाम्बु धान्याम्ल, महारस, तुषोदक, शुक्त, चुक्र, चाकुल, उन्नाह रक्षोघ्न, कुल्मोलक सुवीराम्ल, वीर, अभिषव और धान्यसारक है।

राजवल्लभके मतसे यह भेदक, तीक्ष्ण उष्ण कफ़शीतल, श्रम एवं क्लान्तिनाशक, अग्निवर्धक और पित्त, रुचि तथा वस्तिशूलविकारक है। फिर राजनिघण्टु देखते इसे शरीरपर मलनेसे वायु, श्लेष पित्त, ज्वर, दाह मूर्च्छा शूल, आध्मान और विबन्ध रोग विनष्ट होता है।

काञ्जिकवटक (सं॰ पु॰) काञ्जिद्रव्य विशेष कांजी बड़ा। मट्टीका एक नूतन पात्र कटु तैल द्वारा निर्लेप करके भरते हैं। फिर उसमें राई सरसों, जीरा, लवण, हींग और हलदीके चूर्ण साथ कुछ बड़े भिगो तीन दिन तक मुख बांध रख छोड़ते हैं। वही बड़े जब खट्टे पड़ जाते तब 'काञ्जिकवटक' कहाते हैं। यह रुचि एवं बलकारक और शूल, अजीर्ण, दाह तथा वातनाशक है।

काञ्जिकषट्पलघृत (सं॰ क्ली॰) घृत विशेष, एक घी। घृत ४ शराव काञ्जिक १६ शराव और पिप्पली, पिपरामूल, चविक, चव्य तथा सैन्धवलवणका कल्क एक एक पल एकत्र पकानेसे यह औषध प्रस्तुत होता है। काञ्जिकषट्पलघृत आमवातमें हितकर है। (चक्रदत्त)

काञ्जिका (सं॰ स्त्री॰) कुत्सिता अञ्जिका यस्या, टाप्। १ लघुब्राह्मी। २ पलाशी लता। ३ काञ्जिक, कांजी।

काञ्जितैल (सं॰ क्ली॰) काञ्जिक विशेष, एक कांजी। इसे मलनेसे वात बढ़ता, दाह उठता, मात शिथिल पड़ता और श्रम पकने लगता है। किन्तु पानीमें कोई दोष नहीं। (राजनिघण्टु)

काञ्जिवनिका (सं॰ स्त्री॰) क्षुपदन्ती क्षुप, काली दांती।

काञ्जी (सं॰ स्त्री॰) कं जलं अञ्चति, क अञ्च अण् ङीप्। १ महाद्रोणपुष्पी एक गुल्मदार पेड़। २ काञ्जिक, कांजी। ३ मार्गी एक ओषधि।

काञ्जीक (सं॰ क्ली॰) काञ्जिक, कांजी।

काट (सं॰ पु॰) कं जलं अटति यत्र, क अट अच्। १ कूप, कुवां। २ विषमपथ, ओंची-नीची राह।

काट (हिं॰ पु॰-स्त्री॰) १ छेदन, कटाई। २ कर्तन, तराश। ३ आघात स्थान, कटी हुयी जगह। ४ पीड़ा, दर्द। ५ छल, धोका। ६ मल्लयुद्धका कौशल विशेष, पेंचपर काटनेवाला पेंच। ७ कार्ड, चिट्ठी लिखनेका एक कागज। ८ तालके चेहरेमें तुरपका रंग। इससे दूसरे सब रंग कट जाते हैं। ९ मल, कीट।

काटकी (हिं॰ स्त्री॰) यष्टिविशेष, एक छड़ी। इससे मदारी तमाशा दिखाते और बकरे, बन्दर तथा भालू नचाते हैं।

काटन (हिं॰ स्त्री॰) खण्डविशेष, एक टुकड़ा। यह निरर्थक होनेसे छोड़ दिया जाता है।

काटना (हिं॰ क्रि॰) १ कर्तन करना तीक्ष्ण वस्तुसे खण्ड उतारना, टुकड़े उड़ाना। २ रगड़ना, पीसना। ३ असंभव आघात लगाना, चमका उड़ाना। ४ छांटना, छोलना। ५ मिटाना, छाड़ाना। ६ व्यतीत करना बिता देना। ७ गमन करना चलना। ८ धर्मसे धन उपार्जन करना, चालोंसे रुपया कमाना। ९ रद्द करना, छेकना। १० प्रस्तुत करना बनाना। ११ निकालना, ले जाना। १२ खींचना, तैयार करना। १३ बांटना, भाग लगाना। १४ तराश लेना। १५ उपायोंसे फिट्टना। १६ उठाना भोगना। १७ दांत मारना, डस लेना। १८ लगाना, फाड़ना। १९ पार करना। २० खाना, दिख पड़ना। २१ मारना, उड़ाना। २२ अधिक करना, शासित होने न देना। २३ चोराना। २४ भंग करना, तोड़ना। २५ खड़न न होना, सह न जाना। २६ झाड़ना, साफ करना।

काटवेम (सं० पु०) कालिदास-प्रणीत शकुन्तला नाटकके एक टीकाकार।

काटव्य (सं० क्लो०) कटोर्भावः, कटु-ष्यञ्। १ कटुता, कड़वापन, कड़वाहो। २ कार्कश्य, करकसपन।

काटाखाल—दक्षिण कछारवाली धवलेश्वरी नदीकी एक शाखा। कहते बहुत पहले कछारके किसी राजाने इस नदीसे नहर निकाल बराक नदीमें जा मिलाई थी। फिर उन्होंने सङ्गम स्थानपर एक बांध बंधाया। आज-कल बारहो मास इसमें जल रहता और स्रोत बहता है।

काटाल—बङ्गालके मालदह ज़िलेका एक कंटीला जङ्गल। यह भूभाग पूर्व और उत्तरपूर्वांशमें विस्तृत है। उत्तरपूर्व और दक्षिणपूर्वको काटाल महानदीको चर-भूमिसे दीनाजपुरकी सीमातक चला गया है। इसका प्रकृत गठन अति अद्भुत है। बड़ा वृक्ष वा गहन वन कहीं देख नहीं पड़ता। केवल कंटीली झाड़ियां चारो ओर लगी हैं। पहले यहां बहुत लोग रहते थे। पुष्क-रिणी और अट्टालिका भग्नावशेष आज भी इसकी प्राचीन समृद्धिका आदर देता है। प्रसिद्ध पाण्डुया नगर इसी वनमें बना था। काटालमें कई खाड़ी और नदियां हैं। यहां केवल असभ्य लोग रहते हैं। उनमें अनेक शिकार करते और मछली खा अपना पेट भरते हैं। कुछ कुछ सन्याल अब आ और घर बना बसते लगे हैं।

काटुक (सं० क्लो०) कटुकस्य भावः, कटुक-अण्। कटुता, कड़ुवाहट।

काटू (हिं० पु०) १ कर्तन करनेवाला, जो काटता हो। २ भयानक, खौफनाक, काट खानेवाला।

काटोया—बङ्गाल प्रान्तके वर्धमान ज़िलेका एक नगर। यह भागीरथीके पश्चिम तीर अक्षा० २३° ३७´ ६० और देशा० ८८° १०´ पू० पर अवस्थित है। यहां केशव भारतीने चैतन्यदेवको संन्यासकी दीक्षा दी थी। गौराङ्ग देवका मन्दिर अभी बना है। मुसलमान नवाबोंके समय यह नगर बहुत बढ़ा। १७४२ ई० को महाराष्ट्र राज-मंत्री भास्करपंथ बङ्गविजयके लिये थोड़े दिन यहीं आकर ठहरे थे। १७३२ ई०को कासिमअली ने उनसे युद्ध किया। अधिवासियोंमें तन्तुवाय (जुलाहे) वर्धिष्ठ हैं। पीतल और कांसेका व्यवसाय बहुत होता है।

काट्य (सं० वि०) काटे विषममार्गे कूपे वा भवः, काट-यत्। १ विषममार्गजात, बेढब राहमें निकला हुवा। २ कूपजात, कूएंमें पैदा। (पु०) ३ रुद्र विशेष।

काठ (सं० पु०) काठ्यते तड्यते, काठ-घञ्। १ पाषाण, पत्थर। (वि०) काठस्य इदम्, कठ-अण्। २ कठसम्बन्धीय, कठका लिखा हुवा।

काठ (हिं०पु०) १ काठ, लकड़ी। २ ईंधन, जलानेकी लकड़ी। ३ शहतीर, तख्ता। ४ बेड़ी, कलन्दरा।

काठक (सं० क्लो०) कठानां धर्म आम्नायः समूहो वा कठ-वुञ्। १ कठ शाखाध्यायीका धर्म। २ कठ शाखाध्यायीका शास्त्र। ३ कठ शाखाध्यायीका समूह।

काठड़ा (हिं० पु०) कठौता, काठकी बड़ी परात।

काठबनिया—बिहारके वणिकोंकी एक श्रेणी। इनमें अधिकांश वैष्णव होते हैं। मैथिल ब्राह्मण इनका पौरो-हित्य करते हैं। हिन्दू शास्त्रोक्त देवदेवियोंके अतिरिक्त यह लोग वासुकिनाथ और सत्यनारायण नामक ग्राम्य देवताको पूजते हैं। अपर वणिकोंके मध्य कन्या और वर उभय पक्षमें सप्तपुरुषका सम्बन्ध रहते भी पिण्ड पड़ते विवाह रुक जाता है। किन्तु इनमें वैसा कोई बाधा नहीं लगती। यह बाल्यकालमें कन्याका विवाह करते और एक पत्नी रखते अपर पत्नी ला सकते हैं। इनमें विधवाविवाह प्रचलित है। फिर भी विधवा पूर्वपतिके कनिष्ठ सहोदर अथवा सम्पर्कीय कनिष्ठ भ्रातासे विवाह करनेका नियम नहीं। कोई गुरुतर अपराध प्रमाणित होने स्वामी पञ्चायतकी अनुमतिसे पत्नी परित्याग कर सकता है। इस प्रकार परित्यक्त स्त्रियोंका फिर विवाह नहीं होता। यह शवदाह करते और अशौचान्त ३१ दिन व्यापक नियम रखते हैं। सामान्य व्यवसाय और छापकार्य्य इनकी उपजीविका है।

काठवेल (सं० स्त्री०) लताविशेष, एक बेल। यह भारतके युक्त प्रान्त, अफ़गानिस्तान और फारसमें उपजती है। इसका फल इन्द्रायणकी भांति कटु होता है। बीजसे तेल निकालते हैं। कहीं कहीं काठ-

देश ओषकमें रुद्रायणकी अमावसी दान दी जाती है। इसका अपर नाम 'कारित' है।

काठमाण्डू—आधीन नेपाल राज्यकी राजधानी। वाग मती और विष्णुमती नदीके संगम स्थानपर नागार्जुन गिरि अवस्थित है। इसी गिरिके पाददेशसे प्राय कोस दूर उपत्यकाके पश्चिमांशमें काठमाण्डू नगर है। इसका प्राचीन नाम 'मञ्जुपत्तन' है। देशीय लोगोंके विश्वासानुसार पूर्वकालका मञ्जुश्री नामक किसी पुरुषने यह नगर स्थापन किया था। राजधानीकी भूमि चतुरस्र वा त्रिकोण अथवा अन्य अवहित कोई नियमित आकार विशिष्ट नहीं। हिन्दू इसका आकार देवीके खड्गकी भांति बताते हैं। फिर बौद्ध निवासी इसके आकारको मञ्जुश्री नामक नगरस्थापयिताकी तलवारसे मिलाते हैं। इन कथित खड्गका मुष्टि नगर की दक्षिण ओर वाग्मती तथा विष्णुमतीका संगमस्थल और नगरकी उत्तर ओर 'तिक्वानि' नामक उपकण्ठ स्थान इसका सूक्ष्म अग्रभाग है। मञ्जुश्रीकी तलवारकी मूठमें जैसे एक कपड़ा वस्त्राकार वेष्टित रहता, उस तिक्वानि जनपद भी वैसे ही देख पड़ता है।

प्रवाद अथवा प्राय ७२३ ई०को काठमाण्डू गुण कामदेव द्वारा प्रतिष्ठित हुआ था। नगर उत्तर दक्षिणको डेढ़ मील दीर्घ, कोई आध कोस चौड़ा। इसे काठमाण्डू बहुत दिनसे नहीं कहते। १५९६ ई०को राजा लक्ष्मीनरसिंह मल्लने नगरके मध्य संन्यासियोंके लिये एक काष्ठमय वृहत् मन्दिर वा काष्ठमण्डप निर्माण कराया। यह मन्दिर आज भी बना और इसी कार्यमें लगा है। इसी काष्ठमण्डपसे 'काठमाण्डू' नाम निकला है। पहले यह नगर प्राचीर वेष्टित था। प्राचीरके गात्रमें बीच बीच सुन्दर तोरण रहे। आजकल स्थान स्थान पर प्राचीरका भग्नावशेष मात्र मिलता, किन्तु अधिकांश स्थलमें कोई चिह्नतक देख नहीं पड़ता। ३२ तोरण विद्यमान रहते भी कपाटका अभाव है।

काठमाण्डू बड़े बड़े ३२ पल्लियों या टोलोंमें विभक्त है। उनमें आसन, इन्द्रचौक, काठमाण्डू टोला, वसन्तटोला और राजभवनका निकटवर्ती स्थान ही अधिक प्रसिद्ध है।

नगरके मध्यभागमें दरबार या राजभवन अवस्थित है। यह देखनेमें अधिक सुन्दर न होते भी बहुत बड़ा है। इसका कोई कोई अंश बहुत प्राचीन ब्रह्मदेशीय मन्दिरादिके आकारका बना है। इस प्रासादके मोटे मोटे खम्भोंपर चित्र देखनेमें बहुत अच्छे लगते हैं। प्रासादके सम्मुख दरबार बने २० वर्ष हुए। राजभवनका आकार कुछ कुछ चतुरस्र और उत्तर ओर नगरस्तूपकी उत्पन्न है। इस ओर अवस्थ 'तलिजू' नामक मन्दिर अवस्थित है। दक्षिण ओर पीछ भागमें सम्प्रति 'वसन्तपुर' नामक अट्टालिका और नूतन शीत समागृह (दरबार) है। पूर्वमें उद्यान और अस्त्रशाला विद्यमान है। पश्चिममें प्रधान तोरण द्वार है। इसके सम्मुख नगरका प्रधान पथ निकला है। उसके वाममें हिन्दुओंके अनेक मन्दिर हैं। समागृहके उत्तर पश्चिम 'कोट' वा सुरक्षितस्थानादिका अस्त्रागार है। इसी स्थानसे १८४६ ई०को भीषण नरहत्याका आदेश निकला था। राजभवनके पश्चिम अपरकी अदालत और सम्मुख अनेक सुन्दर देव मन्दिर हैं। इन मन्दिरोंमें अनेक अति उच्च और बहुतल विशिष्ट हैं। मन्दिरोंका खम्भोंमें काष्ठ चित्र और स्वर्णादि वर्णके मुलम्मेका काम बहुत अच्छा है। अनेकोंके समस्त छतों पर पीतल या तांबेका मुलम्मा चढ़ा है। मन्दिरोंके कारनिसमें बहुतसी घण्टियां लटकती हैं। कुछ वायुके हवा चलने पर सब घण्टियां टन टन बजने अति मधुर शब्द होने लगता है। इन मन्दिरोंमें कोईके द्वारोंपर पत्थरके सिंहादिकी मूर्ति उभय ओर स्थापित हैं।

अनेक सरदारोंने आजकल शहरमें सुन्दर सुन्दर अट्टालिका बनवा शोभा बढ़ायी है।

इस नगरमें एक प्रकार दूसरे मन्दिर भी देख पड़ते, जो स्तम्भपर गुम्बज रख बने हैं। इस श्रेणीके मन्दिर विशेष कारुकार्य न रहते भी देखनेमें बहुत परिष्कार और परिच्छन्न हैं। पूर्वोक्त तलिजू मन्दिर देखनेमें ब्रह्मदेशीय मन्दिरसे मिलता और

मन्दिरोंमें सर्वापेक्षा उच्च लगता है। लोगोंके कथनानुसार १५४९ ई० को राजा महेन्द्रमल्लने यह मन्दिर बनवाया था। अनेक मन्दिरोंके सम्मुख उनके प्रतिष्ठाता प्राचीन राजावोंकी प्रस्तरमूर्ति स्थापित है। यह मूर्तियां प्रायः मन्दिरकी ओर घुटने लचा हाथ जोड़े बैठी हैं। उनके मस्तक पर राजसम्मानसूचक धातुनिर्मित सर्पफणा परिशोभित है। फणापर एक क्षुद्र पक्षी बैठा है। राजभवनसे कुछ दूर एक मन्दिरमें एक बड़ा घण्टा लगा और दूसरे दो मन्दिरोंमें एक एक बड़ा दमामा रखा है। समस्त मन्दिरोंमें नानाविध हिन्दू देवदेवीकी मूर्ति विद्यमान हैं।

राजभवनसे २०० गज दूर अर्ध-युरोपीय प्रणालीसे निर्मित 'कोट' नामक अट्टालिका है। जहां यह स्थान बना, वहीं सार जङ्गबहादुरको (१८४६ ई०) अभ्युदयमूलक भीषण नरहत्या हुयी। राज्यके समस्त सम्भ्रान्त और क्षमताशाली लोग उस समय मर मिटे थे।

यहां कई क्षुद्र मन्दिर हैं। वह एक ही प्रस्तर-खण्डसे निर्मित है। उनकी देवमूर्ति एक इच्च प्राय दीर्घ हैं। अनेक मन्दिरोंमें मोर, हंस, छाग और महिषादिका बलिदान होता है।

नगरके पथादि अप्रशस्त और अपरिष्कार हैं। प्रत्येक पथके किनारे नाबदान होता, जो कभी परिष्कार नहीं किया जाता। नगरका मैला जमीनमें खाद डालनेके लिये खर्च होता है। गृह प्रायः चतुरस्र, अभ्यन्तर चक्राकार और पथका द्वार अप्रशस्त रहता है। बीचमें चौड़ा चबूतरा बनाते हैं।

उत्तरपूर्वके सिंहद्वार होकर नगरसे निकले पर दक्षिण ओर 'रानीपोखरी' नामक वृहत् दीर्घिका मिलती है। इसके चारो ओर प्राचीर वेष्टित है। दीर्घिकाके मध्यस्थलमें एक मन्दिर है। इसके पश्चिम होकर इष्टकानिर्मित सेतु द्वारा मन्दिरमें प्रवेश करना पड़ता है। मन्दिरके दक्षिण एक वृहत् प्रस्तरके हस्ती-पृष्ठ पर राजा प्रतापमल्लकी मूर्ति स्थापित है। यही राजा उक्त मन्दिर और दीर्घिकाके निर्माता थे। कुछ दक्षिण ओर आगे बढ़कर बकाइन (Cape lilac) वृक्षकी कतारके बीचसे एक राह नगरसे मैदानमें जा मिली है। पहले इस मैदानमें जङ्गबहादुरकी तलवार लिये मूर्ति ३० फीट ऊंचे स्तम्भ पर रखी थी। पीछेको वह बाघमती नदीके तीर एक प्रासादमें स्थानान्तरित हुयी। इस मैदानको पश्चिम ओर प्राचीन सेनापति भीमसेन थापाका 'दर्बरा' नामक २५० फीट ऊंचा प्रस्तर स्तम्भ है। इस स्तम्भकी गठनप्रणाली अति सुन्दर है। इन सेनापतिका दूसरा भी वृहदाकार स्तम्भ था, जो १८३३ ई० के भूमिकम्पमें भूमिसात् हो गया। यह स्तम्भ १८५६ ई० को वज्राघातसे टूटा था। १८६८ ई०को इसकी अच्छी मरम्मत हुयी। इसके अभ्यन्तरमें एक गोलाकार सीढ़ी है। इस स्तम्भपर चढ़नेसे नगरकी शोभा अच्छी तरह देख पड़ती थी।

इससे कुछ दक्षिण पुरातन अस्त्रागार है। मैदानके पूर्व पुराना तोपखाना है। यहां बारूद तोप वगैरह तैयार करते हैं। आजकल नगरसे दक्षिण ४ मील दूर नुक्कू नामक नदीके तीर एक कारखाना खुला है। वहां तोपें बनायी जाती हैं।

इस पथमें पूर्वमुख घूम एक मील चलने पर ठाटपटली नामक स्थान मिलता है। यहां बाघमती तीर अवस्थित जङ्गबहादुरका महल है। इस महलके सामने बाघमतीका मनोहर सेतु उतरते पत्तन नामक स्थान आता है।

काठमाण्डूके रेसीडेण्टका स्थान नगरको उत्तर ओर एक मील दूर है। जगह अच्छी है। लोगोंके कथनानुसार भूतोंका उपद्रव रहनेसे रसीडण्टके वासके लिये यह स्थान मनोनीत हुवा है।

मन्त्री रणदीप सिंह नगरके उत्तर पूर्व पार्श्व एक वृहत् प्रासादमें रहते थे। काठमाण्डूमें १२००० पदातिसैन्य है। पुरानी चालकी २५० बन्दूकें रहती हैं। काठमाण्डू किसी विशेष व्यवसायके लिये प्रसिद्ध नहीं।

काठशाठी (सं० पु०) कठशाठेन प्रोक्तं अधीयते, कठशाठ-णिनि। कठशाठ-कथित शास्त्राध्यायी।

काठिन (सं०क्ली०) कठिनस्य भावः, कठिन-अण्। १ दृढ़ता, कड़ापन। (पु०) २ खर्जूरवृक्ष, खजूरका पेड़।

काठिन्य (सं॰ क्लो॰) कठिनस्य भावः, कठिन-ष्यञ्। १ कठिनता, कड़ापन। २ निठुरता, बेरहमी।

'[illegible]'

([illegible])

काठिन्यफल (सं॰ पु॰) काठिन्य फले यस्य, बहुव्री॰। कपित्थवृक्ष, कैथेका पेड़।

काठियावाड़ (सौराष्ट्र) बम्बई प्रान्तका एक प्रायो द्वीप। यह अक्षा॰ २०° ४१´ एवं २२° ८´ उ॰ और देशा॰ ६८° ५६´ तथा ७२° २०´ पू॰ के मध्य अवस्थित है। काठियावाड़ गुजरातका पश्चिमांश है। यह प्रायो द्वीप २२० मील लम्बा और १६५ मील चौड़ा है। क्षेत्रफल कोई २३४४५ वर्गमील होगा। लोकसंख्या २५ लाखसे अधिक है। इसमें १०४५ वर्गमील भूमिपर गायकवाड़ राज्य करते, ११८८ वर्गमील अहमदाबाद जिलेके अधीन पड़ते, २० वर्गमील पोर्तगीज राज्यमें लगते और २०८८२ वर्गमील पर अन्यान्य देशी राजा अपना प्रभुत्व रखते हैं। इन राजाओंके राज्यकी एक एजेन्सी १८२२ ई॰में बनी। काठियावाड़ एजेन्सी ४ प्रान्तमें विभक्त है—झालावाड़, हालार सोरठ और गोहिलवाड़। इस एजेन्सीके अधीन राज्य १८६३ ई॰ से ७ श्रेणियोंमें विभक्त हैं। प्रथमके ८, द्वितीयके ६ तृतीयके ८, चतुर्थके ८, पंचमके १६, षष्ठ के ३० और सप्तम श्रेणीके ५ राज्य हैं।

काठियावाड़ प्रायोद्वीप वर्गाकार है। यह अरब सागरमें कच्छ और गुजरात समुद्र तटके मध्य विद्यमान है। इसमें आकार प्रकारसे समझ पड़ता कि पहले यह अग्निउद्गीरण करनेवाले द्वीपोंका एक समूह था। उत्तरीय तटपर रनका दलदल और पूर्वका अवदात्र भूमि है। ई॰ ११वें और १४वें शताब्दको काठियोंने कच्छसे आ यहां आश्रय लिया और १५ वें शताब्दको इसे अधिकार किया।

अनन्त निम्नदेशोंके बीच झालावाड़के पश्चिम ढांगा और मांडव तथा हालारके कुछ क्षुद्र पर्वतोंको छोड़ इस देशका उत्तरीय विभाग चपटा है। किन्तु दक्षिणमें गोपसे और अनन्त बराबर गिरनार तक चला गया है

भादर प्रधान नदी है। यह मांडव पर्वतसे निकल नवड़ामें नवी बन्दरके समीप समुद्रमें जा मिली है। इसकी धाराका परिमाण ११० मील है। नदीके दोनों ओर खेती होती है। दूसरी नदी आजी, माछू, मोगाव और शतरंजी हैं। शतरंजीका बन्ध हम सुप्रसिद्ध है।

ईसकाल भावनगर, सुन्दरी, नवलियाखी और जोधेरा बनफाड़ अच्छे घात हैं।

जाफराबादके उत्तर पूर्व कोणपर बेडी बन्दर है। पिराम और, शाल, [illegible] बेडन और चांक प्रधान द्वीपोंमें गण्य हैं। नव और मेडस छोटे छोटे झील हैं। दक्षिण-पश्चिम कोणपर पोरबन्दर नामक नगर है। पोरबन्दरका पत्थर अच्छा जाता है। काठ बहुमूल्य नहीं। माणिक और अगामी प्रचुर बहुत है। पहले काठियावाड़में सिंह अधिक देख पड़ते थे किन्तु अब गोर वनके अतिरिक्त दूसरे स्थानमें नहीं मिलते। काठियावाड़का जलवायु प्रायस्वास्थ्यकारक और साधारण है। दक्षिण भागमें तप्त वायु अधिक चलता है। काठियावाड़में पित्तप्रकोपसे ज्वर आ जाता है। जूनागढ़ और राजकोटमें वृष्टि अधिक होती है।

पूर्वतन समय काठियावाड़में ब्राह्मणोंने अपना प्रभाव बहुत बढ़ाया था। जूनागढ़ और गिरनारके बीच अशोककी शिलालिपि (२६५ २३१ पूर्व खृष्टाब्द) मिलती है। ष्ट्राबोने सारओसटोस (Saraostos) अथवा सौराष्ट्रका ही लिखा है। ऐसा लोगोंने सौदीय राजाओंने खृष्टपूर्वाब्द १८०—१४४को काठियावाड़ जीता था। पेरिप्लसकारके कथित भी ई॰ १म तथा २य शताब्दको इसमें परिचित थे। किन्तु उन्होंने जिन स्थानोंके नाम लिखे उनके निशानोंके चिह्न न समझ पड़े हैं।

काठियावाड़का प्राचीन इतिहास बहुत कम मिलता है अथवा क्षत्रपगण मयूर यूनानी और यवन इसपर अधिकृत रहे। फिर गुप्तोंने सेनापतियों द्वारा यहां थोड़े दिन राज्य किया। सेनापतियोंने राजा हो अपने राजाओंको वलभी नगरमें (भावनगर से १८ मील दूर) रखा था। गुप्त साम्राज्यका पतन होनेसे वलभी राजाओंने अपना अधिकार क्रमशः तक बढ़ाया और ४७० तथा ५२० ई॰ को काठियावाड़में

बाजरा और गेहूं अधिक होता है। जिसको और काठियावाड़के पूर्वीय समुद्र तटकी भूमिमें खाद डालना नहीं पड़ता। कपास और मूंग बहुत होती है। सींचनेके लिये कई तालाब बनाये गये हैं।

काठियावाड़में घोड़े बहुत अच्छे होते हैं। गीरकी गाय भैंसें बड़ी दूध देनेवाली हैं। भेड़ोंका ऊन, रुई और अनाज बाहर भेजा जाता है।

गीरमें १५०० वर्गमीलका जंगल है। जोनागढ़ और पोरबन्दरमें जंगलके लिये भूमि निर्धारित की गई है। भावनगर, मोरवी, गोंडाल और नवानगरमें बहुत बढ़ा है। भावनगरमें होशाई और आमके बाग बनाये गये हैं।

काठियावाड़में पत्थर अच्छा होता है। प्रधान धातु लोहा है। पहले बरडा और बलमालियामें लोहा गलाया जाता था। पोरबन्दरके निकट जो पत्थर निकलता, वह मकान बनानेके लिये बम्बईमें बहुत बिकता है। नवानगरके पास कच्छकी खाड़ीसे अच्छा मोती निकलता है। कुछ मोती बेरावे और चांचके पास जूनागढ़ और भावनगरमें भी मिलते हैं। भानरोल और घोघमें कुछ लाल मूंगा होता है।

काठियावाड़का देश धनी है। रुईका कपड़ा चीनी और गुड़ बाहरसे मंगाते हैं। सड़कें भी कई बना दी गयी हैं। १८६१ ई०को यहां कोई सड़क न थी।

१८८० ई०को देशी राज्योंके व्ययसे यहां रेल चली। बम्बई बड़ोदा मध्यभारत रेलवेकी कम्पनी १८८२ ई०को पहले पहल काठियावाड़में रेल ले गयी थी।

१८१४-१५ ई०को यहां बड़े बड़े टाकी टूट निकल पड़े थे। उन्होंने फसलको बड़ी हानि पहुंचायी। १८९९-१९०२ ई०को काठियावाड़में घोर दुर्भिक्ष पड़ा था।

१८२२ ई०से बम्बई गवरनमेण्टके अधीन पोलिटिकल एजण्ट काठियावाड़ शासन करते थे। १९०२ ई०को उन्हें गवरनरके एजण्टका पद मिला। यहां सैकड़ों अदालत लगते हैं।

काठी (हिं० स्त्री०) १ पर्याणविशेष, एक तरहका जीन। इसमें काठ लगता है। २ डीलडौल, ढांचा। ३ दियासलायी। ४ काठका म्यान। (वि०) ५ काठियावाड़ सम्बन्धीय।

काठू (हिं० पु०) धान्यविशेष एक पौदा। यह कूटूसे मिलता है। हिमालयके पश्चिम शीत स्थानमें इसकी कृषि की जाती है। काठूका साग भी बनता है।

काठेरणि (स० पु०) एक ऋषि।

काठेरणीय (स० त्रि०) काठेरणेरिदम् काठेरणि छ। काठेरणि ऋषि सम्बन्धीय।

काठों (हिं० पु०) धान्यविशेष, किसी किस्मका धान। यह पञ्जाबमें उपजता है।

काठोदुम्बर (स० पु०) काष्ठडुम्बरिका, कठगूलर।

काड (अ० पु०—Cod) मत्स्यविशेष, एक मछली। यह उत्तर-समुद्रमें रहता और न्यूफाउण्डलैण्डके किनारे अधिक मिलता है। अमेरिकाके युक्तराज्यमें अटलाण्टिक महासागरके तीर भी एक प्रकारका काड होता है। यह मत्स्य तीन वर्षमें बढ़ कर पूरा निकलता है। इसका दैर्घ्य ६ फीट और परिमाण ६ से ८ सेर तक रहता है। काडका मांस बलकारक है। इसकी कलेजीका तेल (Cod liver oil) निर्बल मनुष्योंको पिलाते हैं।

काढ़ना (हि० क्रि०) १ खींचना, निकालना। २ प्रकाश करना, दिखाना। ३ चित्रकारी करना, बेलबूटा बनाना। ४ ऋण जैसा ग्रहण करना। ५ पकाना, उतारना, छानना।

काढ़ा (हि० पु०) क्वाथ औषधोंका उबालो हुयी दवा।

काण (स० पु०) कणति एक चक्षुर्निमीलति, कण अच्। १ काक, कौवा। (त्रि०) २ एक चक्षुविहीन, काना, जिसके एक ही आंख रहे।

काणकपोत (स० पु०) कपोतभेद, एक कबूतर। यह कषाय, स्वादुलवण और गुरु होता है। (सुश्रुत)

काणत्व (स० क्ली०) काण होनेका भाव, कानापन।

काणभाग (सं० पु०) त्रिभाग, चार हिस्सेमें तीन हिस्सा।

काष्ठमूर्ति (स० पु०) विद्याधरयों एक यक्ष। यह कुवेरके एक अनुचर रहे। नाम सुमतीक था। स्वर्ग-

गिरा नामक किसी राक्षसके साथ इनका बन्धुत्व रहा। कुवेरने उसका साथ छोड़नेको कहा। किन्तु यह बन्धुत्वके अनुरोधसे उसका साथ छोड़ न सके। इसीसे कुवेरके अभिशाप वश इन्हें पिशाच योनिमें उत्पन्न हो काणभूति नामसे विन्ध्याटवी पर कुछ दिन रहना पड़ा। फिर दीर्घजङ्घा नामक अपने भ्राताकी चेष्टा पर पुष्पदन्तके मुखसे इन्होंने महादेव कथित हृहत् कथा सुनी और माल्यवान्‌के निकट उसे प्रकाश करने पर पिशाचयोनिसे मुक्ति मिली। (कथासरित्-सागर)

काणा (सं० स्त्री०) १ काकोली, एक जड़ी बूटी। २ काकिनी, घुंघची। ३ पिप्पली, पीपल।

काणाद (सं० त्रि०) कणादस्य इदम्, कणाद-अण्। १ कणादप्रणीत (शास्त्र)। इसे वैशेषिक वा औलूक्य कहते हैं। कणाद देखो।

२ कणाद-सम्बन्धीय।

काणादामोदर—बङ्गाल प्रान्तके हुगली जिलेकी एक नदी। पहले यह दामोदर नदीकी एक शाखा थी। किन्तु आजकल इसने दामोदरको छोड़ दिया है। इसीका निम्नांश काणसोना कहलाता है।

काणानदी—बङ्गालके हुगली जिलेकी एक नदी। पहले यह दामोदरका प्रधान भाग थी। किन्तु अब क्षुद्रस्रोत व्यतीत और कुछ भी नहीं। वर्धमानके दक्षिण सलीमाबादके पास वर्तमान दामोदरसे यह पृथक् हुई, फिर दक्षिणाभिमुख जा विया नदीसे मिली और कुन्ती नदीके नामसे नईसरायके निकट भागीरथीमें गिरी है। इसी नदीमें दामोदरका जल आ पहुंचता है।

काणुक (सं० त्रि०) कण इसौ उकञ्। १ कान्त कमनीय, चाहने लायक। २ आक्रान्त, दबाया हुआ। ३ पूर्ण, भरापूरा। काणूक देखो।

काणूक (सं० पु०) काणति शब्दायते, कण उकण् मण्डनिम्यामूकोकणी। उण्‌ ४। ३९।

१ वायस, कौवा। २ कुक्कुट, मुरगा। ३ हंसभेद। ४ करट, एक पक्षी।

काणेय (सं० पु०) काणायाः अपत्यं पुमान्, काणा ढक्। १ एक चक्षुहीनाका पुत्र कानी औरतका लड़का। २ काकशावक, कौवेका बच्चा। (त्रि०) २ काण, काना।

काणेयविध (सं० क्लो०) काणेयाना विषयो देशः, काणेय-विधल्। भौरिक्याद्यैषु कार्यादिभ्यो विधल् भक्तलौ। पा ४। २। ५४।

काणेयोंका विषय वा देश।

काणेर (सं० पु०) काणायाः अपत्य पुमान्, काणा ढ्रक्। क्षुद्राभ्यो वा। पा। ४।१।१३१।

१ एकनेत्र स्त्रीका पुत्र, कानीका लड़का। २ काकशावक, कौवेका बच्चा। (त्रि०) ३ काण, काना।

काणेली (सं० स्त्री०) १ अविवाहिता कन्या, बेव्याही लड़की। २ व्यभिचारिणी, छिनाल।

काणेलीमातृ (सं० पु०) काणेलीमाता यस्य, बहुव्री०। १ अविवाहिता स्त्रीके गर्भसे उत्पन्न पुत्र, बेव्याही औरतका लड़का। २ व्यभिचारिणीका पुत्र, छिनालका लड़का।

काण्टकमर्दनिक (सं० त्रि०) कण्टकमर्दनेन निर्वृत्तम्, कण्टकमर्दन-ठक्। निर्वृत्तेऽक्षद्यूतादिभ्यः। पा ४।४।१९।

कण्टक वा शत्रु मर्दन द्वारा सम्पादित, जो कांटों या दुश्मनोंके कुचलनेसे हासिल हो।

काण्टकार (सं० त्रि०) कण्टकारस्य अवयवो विकारो वा, कण्टकार-अञ्। प्राणिरजतादिभ्योऽञ्। पा ४।३।१५४।

कण्टकारके काठसे निर्मित, जो किसी कंटीले पेड़की लकड़ीसे बना हो।

काण्ठेविद्धि (सं० पु०) कण्ठेविद्धस्य ऋषेः अपत्यं पुमान्, कण्ठेविद्ध-इञ्। कण्ठेविद्ध नामक ऋषिके पुत्र।

काण्ड (सं० पु० क्लो०) कण्-ड दीर्घश्च। १ दण्ड, छड़। २ नाल, डाल। ३ वाण, तीर। ४ शरद्रुम, रमसर। ५ अश्व, घोड़ा। ६ कई एक जातीय वस्तुका एकत्र समावेश, ढेर। ७ परिच्छेद, बाब। ८ अवसर, मौका। ९ प्रस्ताव। १० जल, पानी। ११ तृणादिका गुच्छ, घासका गुच्छा। १२ तरुप्रकाण्ड, पेड़का तना। १३ निर्जनस्थान, सूनी जगह। १४ श्लाघा, चापलूसी। १५ व्यापार, काम। १६ पर्व। १७ हस्त, वोडी। १८ अक्षोट वृक्ष, एक पेड़। १९ एक सन्धिके निकटसे अन्य सन्धि पर्यन्त दीर्घ अस्थि, लम्बी हड्डी। २० विभाग, महकमा। २१ गुप्तस्थान, पोशीदा जगह।

काण्डक (सं० पु०) वालुककर्कटी, एक ककड़ी।

काण्डकटुक (सं॰ पु॰) काण्डे कटुकः, ७-तत्। कारवेल्ल, करेला। कारवेल्ल देखो।

काण्डकण्टक (सं॰ पु॰) १ अपामार्ग क्षुप, लटजीरेका पेड़। २ श्वेतापामार्ग, सफेद लटजीरा।

काण्डकण्डक काण्डकण्टक देखो।

काण्डकण्डुक, काण्डकण्टक देखो।

काण्डका (सं॰ स्त्री॰) १ कराल्लिपुङ्खा, किसी किस्मका घास। २ वार्त्ताकीकण्टकी, एक ककड़ी। ३ मकाय, कोको।

काण्डकाण्डक (सं॰ पु॰) काण्डस्य शरकाण्ड, काण्डमिव काण्डं यस्य, काण्डकाण्ड कप्। १ काश-तृण। २ बल्वज तृण, बेरका पेड़।

काण्डकार (सं॰ स्त्री॰) काण्डं स्कन्धं किरति दीर्घतया उत्क्षिपति, काण्ड कॄ अच्। १ गुवाक, सुपारी। (पु॰) काण्डं शरं करोति। २ शरनिर्माता, तीर बनानेवाला।

काण्डकीर, काण्डकार देखो।

काण्डकीलक (सं॰ पु॰) काण्डे स्कन्धे कीलमिव यस्य काण्डकील कप्। लोध्रद्रुम, लोधका पेड़।

काण्डकुष्ठ (सं॰ पु॰) एक ऋषि।

काण्डखेट (सं॰ त्रि॰) अधम, खराब।

काण्डगुड़, काण्डगुण्ड देखो।

काण्डगुण्ड (सं॰ पु॰) काण्डेन गुण्डेन गुण्डयति वेष्टयति भूमिम् काण्डगुण्डि अच्। १ गुण्डतृण, एक पेड़। २ किवाराहक एक घास।

काण्डगोचर (सं॰ पु॰) काण्डस्य बाणस्य गोचर इव गोचरो यस्य, मध्यपदलोपी कर्मधा॰। नाराच नामक एक लौहमय बाण, लोहेका तीर।

काण्डपद (सं॰ पु॰) काण्डस्य विषयस्य प्रकरणस्य वा पदं ज्ञानम्। काण्डज्ञान, उपस्थित प्रकरण या विषयमात्रके अर्थका बोध।

काण्डपदरहित (सं॰ त्रि॰) काण्डपदेन रहितः, ३ तत्। काण्डज्ञानशून्य, जो कोई भी बात समझता न हो।

काण्डचारी (सं॰ पु॰) काण्डे तरुशाखायां चरति, काण्ड-चर-णिनि। वृक्षकी शाखापर विचरण करनेवाला पक्षी, जो चिड़िया पेड़की डाल पर घूमती हो।

काण्डचित्रा (सं॰ स्त्री॰) सर्पजातिभेद, किसी किस्मका सांप।

काण्डज्ञान (सं॰ क्ली॰) काण्डस्य प्रकरणस्य विषयस्य वा ज्ञानम्, ६ तत्। १ विषयज्ञान, बातकी समझ। २ प्रकरणबोध, सिलसिलेका इल्म। ३ साधारण ज्ञान, मामूली समझ।

काण्डणी (सं॰ स्त्री॰) काण्डेन स्तम्भेन नीयते, काण्ड-नी-क्विप्-ङीप् स्त्रियाम्। सूक्ष्मपर्णी लता, एक बेल।

काण्डतिक्त (सं॰ पु॰) काण्डे स्कन्धे तिक्तः, ७-तत्। किराततिक्त चिरायता।

काण्डतिक्तक (सं॰ पु॰) काण्डतिक्त स्वार्थे कन्। चिरायता।

काण्डधार (सं॰ पु॰) काण्डं धारयति यत्र, काण्ड धृ णिच् अच्। १ देशविशेष एक मुल्क। (त्रि॰) स अभिजनोऽस्य, काण्डधार अण्।

पा ४।३।९१।

२ काण्डधार देशवासी काण्डधार मुल्कका रहनेवाला।

काण्डनी (सं॰ स्त्री॰) १ रामदूती, एक बेल। २ नागवल्लीलता पानकी बेल।

काण्डनील (सं॰ पु॰) काण्डे स्कन्धे नीलः कीटवत्त्वात्। नील नीम।

काण्डपट (सं॰ पु॰) काण्डे काष्ठादिनिर्मितस्तम्भे सिक्त पटः, मध्यपदलोपी कर्मधा॰। यवनिका, परदा।

काण्डपटक, काण्डपट देखो।

काण्डपतित (सं॰ पु॰) नागराजविशेष, सांपोंके एक राजा।

काण्डपात (सं॰ पु॰) बाणका पतन या गमन, तीरका गिराव या उड़ान।

काण्डपुङ्खा (सं॰ स्त्री॰) काण्डस्य बाणस्य पुङ्ख इव पुङ्खो यस्याः। शरपुङ्खा सरफोंका।

काण्डपुष्प (सं॰ क्ली॰) काण्डात् स्कन्धात् जातं पुष्पं यस्य, बहुव्री॰। द्रोणपुष्प, गोमा।

काण्डपृष्ठ (सं॰ पु॰) काण्डं बाणः पृष्ठे यस्य, बहुव्री॰। १ शस्त्राजीव, व्याध, शिकारी। २ वेश्यापति। (क्ली॰)

काण्डं शरस्कन्ध इव स्थूलं पृष्ठं यस्य। ३ स्थूलपृष्ठधनुः, मोटी पीठवाली कमान। ४ महावीर कर्णका धनु।

कांडभग्न (सं० क्ली०) काण्डे अस्थिखण्डे भग्नम्, ७ तत्। अस्थिभङ्गविशेष, हड्डियोंका टुटाव। यह बारह प्रकारका होता है।

कांडभङ्ग (सं० पु०) अस्थिभङ्ग, हड्डीकी टूट।

कांडमध्या (सं० स्त्री०) काण्डवल्ली, एक बेल।

काण्डमय (सं० त्रि०) बेंतका बना हुवा।

काण्डरुहा (सं० स्त्री०) काण्डात् छिन्नस्कन्धात् रोहति, काण्ड-रुह-क-टाप्। कटुकी, कुटकी।

काण्डर्षि (सं० पु०) काण्डस्य वेदविभागस्य ऋषिः यद्वा कांडेषु, एकजातीयक्रियादिसमवायेषु ऋषि विचारकः। किसी वेदकाण्डके अध्यापक एक मुनि। पूर्व मीमांसाशास्त्रके प्रणयनसे क्रियाकांडके विचारक जैमिनि, उत्तर मीमांसारूप वेदान्तशास्त्रके प्रणयनसे ज्ञानकाण्डके विचारक वेदव्यास और भक्तिशास्त्रके प्रणयनसे भक्तिकाण्डके विचारक शांडिल्य ऋषि 'काण्डर्षि' कहाते हैं।

कांडलाव (सं० त्रि०) काण्डं लुनाति, काण्ड-लू-अण्। वृक्षस्कन्धका छेदनकारक, पेडकी डाल काटनेवाला।

कांडवल्ली (सं० स्त्री०) कारवेल्लीलता, छोटे करेलेकी बेल। यह दो प्रकारकी होती है—त्रिधारा और चतुर्धारा। यह कटु, तिक्त उष्ण, सर, पित्तल और कफ, गुल्म, लूता, दुष्टव्रण, प्लीहोदर, अग्निमान्द्य, शूल, वात तथा मलस्तम्भ नाशक है। त्रिधारा सर, लघु, अग्निदीपन, रुच, उष्ण, मधुर और वात, कृमि, अर्श तथा कफनाशक होती है। चतुर्धारा अति उष्ण और भूतोपद्रव, शूल, आध्मान, वात, तिमिर, वातरक्त और अपस्मार नाशक है। (वैद्यकनिघण्टु)

काण्डवान् (सं० पु०) काण्डः शरः प्रहरणतया अस्त्यस्य, कांड-मतुप् मस्य वः। कांडीर, तीरन्दाज।

काण्डवारिणी (सं० स्त्री०) काण्डान् संग्रामापतितान् बाणान् वारयति स्मरणादेव इति शेषः, काण्ड-वृ-णिच्-णिनि-ङीप्। दुर्गा।

"महामत्तपटारोपर्यघुर्मे मरवारिणाम्।
स्मरणादपर्वे बाणान् येन सा काण्डवारिणी। (देवीपुराण ४५ अ०)

काण्डवीणा (सं० स्त्री०) काण्ड इव स्थूला वीणा, मध्यपदलोपी कर्मधा०। चंडालवीणा, बेंतोंका बना एक बाजा।

काण्डशाखा (सं० स्त्री०) १ महिषवल्ली, एक बेल। २ सोमवल्ली, एक लता।

काण्डसन्धि (सं० पु०) काण्डस्य स्कन्धस्य सन्धिः मिलनस्थानम्, ६-तत्। ग्रन्थि, गांठ।

काण्डस्पृष्ट (सं० त्रि०) स्पृष्टं गृहीतं काण्डं येन, निष्ठान्तत्वात् परनिपातः। शस्त्राजीव, हथियारके सहारे अपना काम चलानेवाला।

कांडहिता (सं० स्त्री०) लोध्रवृक्ष, लोधका पेड।

कांडहीन (सं० क्ली०) कांडेन स्कन्धेन हीनम्, ३ तत्। १ भद्रमुस्ता, एक प्रकारका मोथा। (पु०) २ लोध्र, लोध।

कांडा (सं० स्त्री०) मुषली, मूसर।

कांडानुक्रम (सं० पु०) कांडस्य अनुक्रमः। तैत्तिरीय संहिताके कांडसमूहका सूचीपत्र।

कांडानुक्रमणिका (सं० स्त्री०) कांडस्य अनुक्रमणिका। तैत्तिरीय संहिताका सूचीपत्र।

कांडानुक्रमणी (सं० स्त्री०) कांडस्य अनुक्रमणी अनुक्रमणम्। तैत्तिरीय संहिताका सूचीपत्र।

कांडारोपण (सं० क्ली०) एक माङ्गल्य क्रिया। देवमूर्तिके चारो ओर चार कांड (तीर) काट कर लगानेसे यह क्रिया सम्पन्न होती है।

कांडाल, काण्डोल देखो।

कांडिक (सं० पु०) काण्डिका देखो

कांडिका (सं० स्त्री०) कांडः गुच्छः बाहुल्येन अस्त्यास्ति, कांड-ठन्-टाप्। १ लङ्का नामक धान्यविशेष, एक अनाज। २ अलाबु, लौकी। ३ पलाशीलता, एक बेल।

कांडिनी (सं० स्त्री०) हरित मुंडीलता, एक बेल।

कांडी (सं० त्रि०) कांडः गुल्मः प्राशस्त्येन अस्त्यस्य, कांड इनि। प्रशस्त गुल्मयुक्त।

काण्डी—सिंहलकी मध्यवर्ती काण्डी नामक अधित्यकाका प्रधान नगर। यह अक्षा० ७° १७´ उ० और देशा० ८०° ४८´ पू० पर अवस्थित है।

कांगड़ेका प्राचीन नाम गोवर्धनपुर है। पूर्व-कालको सिंहपति राजा यहाँ राजत्व करते थे। १८११ ई० को सपदा महा मसीरा नामक स्थानमें राज विक्रमराव सिंहके साथ अंगरेजोंका एक युद्ध हुआ। उस युद्धमें सिंहपति राजा पराजित और बन्दी हुये। फिर अंगरेजोंने कांगड़ेपर अधिकार किया था। तबसे कांगड़ा अंगरेजोंके अधिकारमें है।

यहां कांगड़ जातिका वास है। यह पहाड़पर रहते हैं। सब बलवान् परिश्रमी और साहसी हैं। अधिकांश प्राय: भोट धर्मावलम्बी हैं। फिर भी अंगरेजोंके आने पीछे किसी किसीने ईसाई धर्म अवलम्बन किया है। पहले इनमें बहुविवाह अधिक प्रचलित था। १०० आदमी एक स्त्रीका पाणिग्रहण कर सकते थे। सन्तान उन आदमियोंमें ज्येष्ठको ही पिता सम्बोधन करती थी। पुरुष अपनी मनोमत वह स्त्री ग्रहण कर सकता था। ऐसा प्राय: पुरुषके प्रति स्त्रीका अनुराग होनेसे होता था। स्त्री यदि पतिको ले अपने पितृगृहमें रहे तो अपर भ्राताकी भांति पितृसम्पत्ति पर अधिकार मिले। किन्तु पतिको अपने पूर्व विषयका आश्रय छोड़ आना पड़ता है। फिर यदि स्त्री जाकर स्वामीके घरमें रहे, तो उसका पितृसम्पत्ति पर कोई अधिकार नहीं; किन्तु पतिपर उसका सर्वस्व चलता है। १८२६ ई० से अंगरेज गवर्नमेण्ट कांगड़ जातिकी कुप्रथा उठानेको चेष्टित हुयी है। आजभी स्त्रीपुरुष मत होनेसे परस्पर विवाह बन्धन छेदन कर सकते हैं। किन्तु यदि विवाह-भङ्गके ८ मास मध्य स्त्रीके पुत्रादि हो, तो पूर्व पति उस पुत्रको लेता और उसका भरण पोषण करता है। निरव देखो।

कायडोर (सं०पु०) काष्ठं प्राप्य अप्राप्य, अाट ईरन्।
काष्ठकाशीपरीरनो। कथ४।१११।

१ अश्वमाग, कठघोड़ा। २ काठका जाला, कोड़ेको देव। इसका संस्कृत पर्याय—कीटकटक नामा -दीपिन, घट, अपडाह कोमली, काष्ठको और कुट्टाकिका है। राजनिघण्टुके मतसे यह कटु तिक्त, उष्ण, कारण और दुष्टव्रण, कृमि, पित्त, गुल्म, उदर, प्लीहा शूल तथा मन्दाग्नि विनाशक होता है।

कांटीरा (सं०स्त्री०) कांडीर टाप्। १ मञ्जिष्ठा, मजीठ। २ कारवेल्लक, करेला। ३ अश्वगन्धा, एक बेल।

कांडीरी (सं० स्त्री०) कांडीर ङीप्। काकोड़ देखो।

कांडेक्षु (सं० पु०) कांडे इक्षुरिव। १ श्वेत इक्षु अधिक जल। भावप्रकाशके मतसे यह वातरकोपन होता है। २ कृष्ण इक्षु काली ऊख। ३ कासतृणभेद एक लम्बी घास। ४ कोकिलाक्षक्षुप, तालमखानेका पेड़।

कांडेरी (सं० स्त्री०) कांडं आधारत्वे पुष्प ईर्ते प्राप्नोति, कांड-ईर-अण् ङीष्। नागदन्ती वृक्ष। नागदन्ती देखो।

कांडेक्षा (सं० स्त्री०) कांडे रोहति, कांड-रुह क-टाप्। कटुकी, कुटकी।

कांडोल (सं० पु०) कंडाल स्वार्थे अण्। १ बांसका टोकरा। २ छड़, खाट।

कारव (सं० पु०) करावस्य अपत्यं पुमान्, कराव अण्। १ कराव ऋषिके पुत्र। २ करावगोत्रके लोग। ३ यजुर्वेदकी एक शाखा। ४ करावकृत सामवेद। (त्रि०) ५ करावसम्बन्धीय।

कारावकी (सं० स्त्री०) करावेन दृष्टं साम, कराव इञ्। करावकृत सामविशेष।

कारावशाखी (सं० पु०) वेदकी करावशाखाका अनुयायी।

कारावायन (सं० पु०) कराव गोत्र फक्। १ कराव वंशीय वैदोक्त प्राचीन ऋषि। २ भोज और ययातुलके रचयिता एक ऋषि। ३ करावंशीय राजा। किसी समय यह वंश भारतवर्षमें राजत्व करता था। ब्रह्म यह, विष्णु, मत्स्य तथा भागवत पुराणके मतसे— करावंशीय सुशर्मणि वसुदेवने शुङ्गवंशीय शेष भूपति देवभूमिको मार राज्य ग्रहण किया।

ब्रह्माण्डपुराणमें कहा है,—

"कर्णिको वसुदेवस्तु माधव्यं व्यसनिनं परम्।
देवभूमिं समुत्साद्य शुङ्गेषु भविता नृप:॥
भविष्यति समा राजा नव काराव्यायनो नृप:।
भूमिमित्र सुतस्तस्य चतुर्दश भविष्यति॥
भविता नारद समा सदाकाराव्यायनो नृप:।
सुशर्मा तत् सुतश्चैव भविष्यति समा दश॥

> चत्वारः शुङ्गभृत्यास्ते नृपाः काण्वायना द्विजाः।
> भाव्याः प्रणतसामन्ताश्चत्वारिंशच्च पञ्च च॥
> तेषां पर्यायकाले तु नृपोऽन्ध्रोऽपि भविष्यति।
> काण्वायन मथोद्धृत्य सुशर्माणं प्रसह्य तम्॥"

मत्स्यपुराणमें भी लिखा है,—

> "अमात्यो वसुदेवस्तु प्रसह्य ह्यवनीं नृप,॥ २१
> देवभूमिमथोत्साद्य शौङ्गस्तु भविता नृपः।
> भविष्यति समा राजा नव काण्वायनो नृप॥ २२
> भूमिमित्र सुतस्तस्य चतुर्दश भविष्यति।
> नारायणः सुतस्तस्य भविता द्वादशैव तु॥ २३
> सुशर्मा तत् सुतश्चापि भविष्यति दशैव तु।
> इत्येते शुङ्गभृत्यास्तु स्मृताः काण्वायना नृपाः॥ २४
> चत्वारिंशत्पञ्च चैव भोक्ष्यन्तीमां वसुन्धराम्।
> एते प्रणत सामन्ता भविष्या धार्मिकाश्च ये।
> तेषां पर्यायकाले तु भूमिरान्ध्रान् गमिष्यति॥" २५
>
> (मत्स्यपुराण २७२ अ०)

उक्त ब्रह्माण्ड और मत्स्यपुराणके वचनानुसार समझते कि वसुदेव प्रथम शुङ्गराज देवभूमि * के अमात्य थे। पीछे उन्होंने अपने प्रभुको मार राज्य लिया। उनके वंशीय राजा 'शुङ्गभृत्य' नामसे भी प्रसिद्ध हुये। ब्रह्माण्ड, मत्स्य और विष्णुपुराणके मतसे काण्वायन राजावोंका राजत्वकाल सब मिलाकर ४५ वर्ष था। उसमें वसुदेवने ८, वसुदेवके पुत्र भूमिमित्र वा भूतिमित्रने १४, भूमिमित्रके पुत्र नारायणने १२ और नारायणके पुत्र सुशर्माने १० वर्ष मात्र राज्यशासन किया। किन्तु श्रीमद्भागवतका देखते काण्ववंशीय राजावोंका राज्य ३४५ वर्ष चला था। यथा,—

> "शुङ्गं हत्वा देवभूतिं कण्वोऽमात्यस्तु कामिनम्।
> स्वयं करिष्यते राज्यं वसुदेवो महामतिः॥ १८
> तस्य पुत्रस्तु भूमित्रस्तस्य नारायण सुत।
> काण्वायना इमे भूमिं चत्वारिंशच्च पञ्च च॥
> शतानि त्रीणि भोक्ष्यन्ति वर्षाणाञ्च कलौ युगे॥" १९
>
> (भागवत, १२ स्क० १ अ०)

पाश्चात्य पुराविदोंने काण्वायन राजावोंका शासनकाल इस प्रकार स्थिर किया है,—

वसुदेव ··· ···	खृष्टपूर्वाब्द	७१ से ६१
भूमिमित्र ··· ···	„	६१ से ५३
नारायण ··· ···	„	५३ से ४१
सुशर्मा ··· ···	„	४१ से ३१

(R. Sewells Dynaties of Southern India, p.7)

सुशर्माको मार उनके किसी अन्ध्रजातीय भृत्यने राज्य लिया था।†

काण्वीपुत्र (सं० पु०) कण्वस्य अपत्यं पुमान् काण्व्यः स्त्रियां ङीप् यलोपः काण्वी ; काण्व्याः पुत्रः ६-तत्। कण्ववंशीय एक ऋषि।

काण्वीय (सं० त्रि०) काण्वस्य इदम्, काण्व-छ। कण्ववंशीयोंसे सम्बन्ध रखनेवाला।

काण्व्य (सं० पु०) कण्वस्य अपत्यं पुमान्, कण्व-यञ्। १ कण्वपुत्र। २ कण्ववंशीय। ३ कण्व सम्बन्धीय।

काण्व्यायन (सं० पु०) काण्व्य-फक्।

यञिञोश्च। पा ४।१।१०१।

कण्ववंशीय।

कात् (सं० अव्य०) कुत्सितं अतति अनेन, कु-अत क्विप् कोः का-देशः। तिरस्कार, फटकार।

"यन्मन्येऽथं मत्तेन गुरुः सदसि कात्कृत"। (भागवत ६। ७। ९)

कात (हिं० पु०) १ अस्त्रविशेष, एक कैंची। इससे भेड़ोंके बाल कतरे जाते हैं। २ मुरगीका कांटा।

कातना (हिं० क्रि०) कार्पाससे सूत्र प्रस्तुत करना, रूईसे सूत बनाना। कातनेका यंत्र रहंटा कहाता है।

कातन्त्र (सं० क्ली०) कु ईषत् तन्त्रं अस्य, कोः कादेशः। कलाप व्याकरण। शर्म्मवर्मा इसके सङ्कलनकर्ता थे। वृहत् कथासारमें इस व्याकरणके सङ्कलन सम्बन्धपर लिखा है,—एक समय कार्त्तिकेयने शर्म्मवर्माके प्रति अनुग्रह कर दर्शन दिया। कुमारकी कृपासे शर्म्मवर्माके मुखमें सरस्वतीका आविर्भाव हो गया। फिर कार्त्तिकेयने उनसे मुखसे 'सिद्धोवर्णसमाम्नायः' सूत्र उच्चारण

* भागवत और विष्णुपुराणके मतसे 'देवभूति' नाम था।

† उस अन्ध्रभृत्यका नाम ब्रह्माण्डपुराणके मतसे 'सिन्धुक' था। किन्तु मत्स्यपुराणमें 'शिशुक', विष्णुपुराणमें 'शिप्रक' और भागवतमें 'वृषल' लिखा है।

किया था। शर्मवर्मा भी उनसे ही उसका परवर्ती सूत्र पढ़ने लगे। कार्तिकेयने इनके समान हो शर्मवर्माको उस व्याकरणप्रवचन करनेके लिए आदेश दिया और 'कातन्त्र' तथा 'कलाप' नाम निर्देश किया। कलाप देखो। त्रिलोचनदासने 'कातन्त्रपञ्जिका' नामकी एक टीका बनाई है।

कातर (सं० पु०) क ईषत् तरति, क-तॄ-अच्। १ मत्स्यविशेष एक मछली। यह मधुर,गुरु और त्रिदोषघ्न होता है। राजनिघण्ट। २ एक ऋषि। (त्रि०) ३ व्याकुल घबराया हुआ। ४ भीत, डरा हुआ। ५ विवश, लाचार। ६ चञ्चल, डांवांडोल।

कातर (हिं० पु०) १ जबड़ा। (स्त्री०) २ कोल्हूका तख्ता। यह कोल्हूको जाठमें लगता और चारों ओर चला करता है। कोल्हू पेरनेवाला इसी पर बैठ कर बैल हांकता है।

कातरता (सं० स्त्री०) कातरस्य भावः, कातर तल्। १ व्याकुलता, घबराहट। २ भीरुता, डरपोकपन।

कातराचार (सं० पु०) गुल्मका एक उपसर्ग नामको एक बात।

कातरायण (सं० पु०) कातरस्य ऋषेरपत्यं पुमान्, कातर-फक्। कातर ऋषिके पुत्रादि।

कातरोक्ति (सं० स्त्री०) कातरस्य उक्ति, ६-तत्। कातर व्यक्तिका वाक्य, डरपोककी बात।

कातर्य (सं० स्त्री०) कातरस्य भावः, कातर ष्यञ्। कातरता, डरपोकपन।

कातल (सं० पु०) कातर एव रस्य लः। १ मत्स्यविशेष, एक मछली। २ एक ऋषि।

कातलायन (सं० पु०) कातलस्य ऋषेरपत्यं पुमान्, कातल-फक्। १ कातल ऋषिके पुत्रादि। २ मत्स्य विशेषका बच्चा।

काता (हिं० पु०) १ चाकू, छुरा। इससे बांस काटते या छीलते हैं। २ सूत, डोरा।

कातावारी (हिं० स्त्री०) जहाजकी एक डांडी। यह पतली रहती और जहाजमें पेंदेसे ऊपर लगती है। इसी पर तख्ते जड़ते हैं।

काति (सं० स्त्री०) १ स्तव, तारीफ। (त्रि०) २ अभिलाषी, वाञ्छायमन्द।

कातिक (हिं०) कार्तिक देखो।

कातिकी (हिं० स्त्री०) कार्तिक मासकी पूर्णिमा, कार्तिक सुदी पूरनमासी, कतकी। कार्तिकी देखो।

कातिब (अ० पु०) लिपिकार, लिखनेवाला।

कातिल (अ० पु०) हन्ता, मार डालनेवाला।

काती (हिं० स्त्री०) १ कैंची, कतरनी। २ चाकू छुरी। ३ छोटी तलवार।

कातीय (सं० त्रि०) कात्यायनस्य इदम्, कात्यायन-छ यक्तो वा लुक्। १ कात्यायन सम्बन्धीय। (पु०) २ कात्यायनके छात्र।

कातु (सं० पु०) कं जलं पतति छात्रेण गच्छति, क-पत-डुन्। कूप, कुआं।

कात्तृण (सं० क्ली०) कु कुत्सितं तृणं वा कत्तृ 'कावौ'। १ रोहिषतृण, एक खुशबूदार घास।

कातोदी (सं० स्त्री०) कोदवघूष, एक पदार्थ। मन, साथ चावलके पिट्ठे कलित सूप 'कातोदी' कहाती है।

कात्कृत (सं० त्रि०) अपमानित, तिरस्कृत किया हुआ।

कात्त्रेय (सं० त्रि०) कत्त्रे रिदम्, कत्त्रि ढञ्। पक्षाग्निभ्यो ढञ्। पा ४।२।९१।

कत्त्रि-सम्बन्धीय, तीन छोटे गांवोंसे सम्बन्ध रखनेवाला।

कात्यस्य (सं० पु०) कत-यञ्च् कार्ये ष्यञ्। ऋषि विशेष। (सिद्धा०४४६)

कात्य (सं० पु०) कतस्य ऋषेर्गोत्रापत्यम्, कत-यञ्। कात्यायन ऋषि।

कात्यायन (सं० पु०) कतस्य गोत्रापत्यम्, कत यञ् फक्। १ अति प्राचीन ऋषिविशेष। यजुर्वेदीय तैत्तिरीय आरण्यक (१३।७।२४), शांखायन आरण्यक (८।१०) आश्वलायन श्रौतसूत्र (१२।१३।१५) रामायण एवं पाणिनिकी अष्टाध्यायी (४।१।१८)में भी इनका नाम मिलता है। यह कात्यायन गोत्र प्रवर्तक समझ पड़ते हैं। कात्यका गणपाठ, १०।८।१६ देखो।

२ धर्मशास्त्रकारक एक मुनि। धर्मशास्त्रके पाठसे

कई कात्यायनोंका परिचय पाते हैं। उनमें विश्वामित्र-वंशीय, गोभिलपुत्र और सोमदत्तके पुत्र वररुचि कात्यायन ही प्रधान हैं। १म विश्वामित्र-वंशीय कात्यायन मुनिने 'कात्यायनश्रौतसूत्र', 'कातायन-गृह्यसूत्र', और 'प्रतिहारसूत्र' बनाया था। कात्यायन श्रौतसूत्रको कोई कोई 'कातीयश्रौतसूत्र' कहता है।

कात्यायन श्रौतसूत्रके १म अध्यायकी १म कण्डिकामें यह विषय लिखित हैं,—वेदवेदाङ्गाध्यायी सपत्नीक द्विज और रथकारका अग्निस्थापनादि कार्यमें अधिकार; अङ्गहीन, क्लीव, पतित और शूद्रका अधिकार, निषाद एवं सूत्रधरका गावेधुक नामक चरुमें अधिकार, व्रतलङ्घनकारियोंका गर्दभयज्ञ नामक प्रायश्चित्तमें अधिकार, गावेधुक चरु तथा व्रतलङ्घनकारियोंके प्रायश्चित्तरूप गर्दभयज्ञकी लौकिकाग्निमें कर्तव्यता, गर्दभयज्ञमें कपालपर घृतदान न कर भूमि हो पर घृतदानका विधि, अग्निमें शुद्धिकारक होम न कर जलमें करनेका विधान, अन्यान्य आधारका अग्निमें हो करनेका विधि, गर्दभके शिश्नदेशसे प्राशित्रप्रदान; यज्ञसमूह, विहार-विषय, गार्हपत्य, आहवनीय और दक्षिणाग्निमें कर्तव्य वैदिक कर्म, आवसथ्य अर्थात्—गृहसम्बन्धीय लौकिक अग्निमें स्मृतिविहित कर्तव्य और मांसपाकके निषेधको व्यवस्था। २य कण्डिकामें देवतागणके उद्देशसे द्रव्यत्यागरूप याग, यागलक्षण, अमावस्या और पौर्णमासी आदि शब्दका अर्थबोधक एक त्याग, उसका प्राधान्य, इस प्रकरणपठित अन्वाधानसे ब्राह्मणोंकी दक्षिणा पर्यन्त कर्मसमूहकी अङ्गता, इसीप्रकार प्रयाज तथा पूर्वाधार प्रभृति होमविधि, उसका अङ्गसमूह, होममें दण्डायमान हो वषट्कार-प्रदान, यजति शब्दका अर्थ, उपविष्ट हो स्वाहाकार प्रदान, जुहोति शब्दका अर्थ, समुदाय कर्ममें ब्राह्मणका पौरहित्यविधि, क्षत्रियवैश्यगणके अवशिष्ट हविर्भोजनमें निषेधके लिये पौरहित्यमें निषेध, फललाभमें अभिलाषी होते काम्यकर्मकी अवश्य कर्तव्यता, अग्निहोत्रादि नित्यकर्मकी अवश्यकर्तव्यता, न करनेपर उसके दोषका विधान, दीक्षित व्यक्तिका सत्यवाक्य, भूमिशयनमें शयन तथा ब्रह्मचर्यादि नियमको अवश्य-कर्तव्यता, इच्छानुसार अनुष्ठान न करते गृहदाह एवं धनहानि प्रभृति कारणसे प्रायश्चित्तको अवश्य-कर्तव्यता, यथाशक्ति नित्य कर्मसमूहका प्रतिपालन, काम्य कर्मका सर्वाङ्गरूपसे प्रतिपालन और कामना रहते भी काम्यकर्मका अनुष्ठान न करते जब वैदिक अङ्गसमुदाय सम्पन्न करनेकी सामर्थ्य हो; तभी करनेका विधि। ३य कण्डिकामें—ऋक्, यजुः, साम और प्रैष भेदसे चार प्रकार मन्त्र, ऋक् प्रभृतिका लक्षण, यजुके जिस परिमित पद उच्चारण करते पदसमूहकी आकाङ्क्षा शून्य हो, कर्मकालमें उसी परिमित वाक्यका प्रयोगविधि, जहां पठित पदसमूह द्वारा यजुः आकाङ्क्षा शून्य न हो, वहीं यथायोग्य पद अध्याहार कर अथवा पूर्व पठितपद संयुक्त कर आकाङ्क्षाशून्य करनेका विधान, कर्मके आरम्भमें मन्त्र-प्रयोगविधि, यजुर्वेदीय मन्त्रसमूह ऐसे स्वरमें जिसमें अन्य सुन न सके और ऋग्वेद एवं प्रैष मन्त्र उच्चैःस्वरसे प्रयोग करनेका नियम, बर्हिःशब्दका कुशजाति-मात्र अर्थ, साग्निक ब्राह्मणकी होमगृहादि और वसुधारा होम प्रभृतिमें संख्याका कोई नियम न रहते जिस परिमित संख्यामें कार्यसिद्धि हो वही ग्रहण करनेका विधि, इध्मवर्हिर्बन्धनके लिये संनहन और विषम संख्या तृणमुष्टिका वह नियम, (संनहनमें भेद, यथा—

१ उत्तरदिक्को वहिर्भागमें अग्रभाग स्थापनपूर्वक वरमाकी भांति दृढ रूपसे बन्धनकर बाहर मूलदेशमें ग्रन्थि गोपनकर रखना चाहिये। इसको प्रागग्रसंनहन कहते हैं। २ पूर्वदिक्को वहिर्भागमें अग्रभाग स्थापनपूर्वक पहलेकी भांति बन्धनकर मूलदेशमें ग्रन्थि छिपानेसे उदगग्र संनहन होता है।) १८ या २१ हाथके पलाश काठखण्डको इध्म कहते हैं। किन्तु पलाशके अभावमें वैकङ्कत, वैंकके अभावमें गणिकारी, गणिकारीके अभावसे वंश, वंशके अभावमें यज्ञडुमुर और यज्ञडुमुरके अभावमें खदिर काष्ठ ग्रहण करनेका विधि, तीन इध्मकाष्ठ द्वारा परिधिपरिमाणकी व्यवस्था, अग्निसन्दीपनमन्त्रकी वृद्धिके अनुसार इध्मकाष्ठकी

हविका नियम रहते भी पितृहविष कार्यमें अग्नि सन्दीपनमन्त्रका क्रम आदि इध्माहके क्रम विधिका अभाव, अग्निचयनके लिये पूर्वोक्त इध्म बाहकी मध्या अपेक्षा अधिकप्रमाण रखनेकी आवश्यकता, १ आपस्तम्बमें १८ हाथ परिमित पूर्वोक्त बाह द्वारा इध्म करनेकी विधि और यह इध्म तीन प्रकार सन्नहन नामक बन्धनविशेष द्वारा बांधनेकी प्रणाली, अमावस्या और पौर्णमासीको वेदकरण, सुनीत 'याज्' शब्दका अभिविधि तथा प्रतिज्ञा अर्थ, सर्वविध कर्ममें अनुरक्त होते भी मार्ग दर्शके अनुसार आहवनीय तथा दक्षिणाग्निमें उद्धारकी आवश्यकता, किन्तु अन्य कार्यके लिये उद्धार होने पीछे दूसरे आगन्तुक कार्यके लिये उद्धारकी अनावश्यकता, (क्योंकि जिस कार्यके लिये उद्धार किया जाता, वह समाप्त होते अग्नि फिर लौकिकत्वको प्राप्त होता है। इसीसे दर्श प्रभृति कार्यमें उद्धृत अग्निसे अग्निहोत्र होम सम्पादित होता है। किन्तु लौकिक हो जानेसे फिर इस अग्निमें आहवनादि कार्य कर नहीं सकते।) जहां पौर्णमासादि कार्यमें इयत् तंत्रोक्त बहुविध यज्ञका नियम होता, वहां प्रतियज्ञमें इयत् पृथक् अग्नि उद्धार कर सम्पादन करनेका नियम, खदिरकाष्ठनिर्मित द्रुम्बादि कहीं अनुक्त होते भी वहां उसकी कर्तव्यता सुग काष्ठ स्रुक्, स्रुव प्रभृति होम साधन द्रव्यका बनाना, यज्ञकार्यमें सबके आगे जानेको प्रणीत और उत्तर अप्रणीत पद्धविधान और उत्तर वेदिकाकार्यमें आसादन एवं उसके अन्तरालका प्रतिनियम। इसी अधिकारमें—विहित द्रव्यका अभाव होनेसे काम्यकर्मके आरम्भका निषेध, नित्यकार्य समूहमें प्रधान द्रव्यका अभाव होते भी प्रतिनिधि द्रव्यसे उसके अनुष्ठानका विधि, काम्यकार्यमें समुदाय अङ्ग संग्रहीत होनेसे कार्य आरम्भ करनेका विधि फिर भी आरम्भके पीछे किसी प्रधान द्रव्यका अभाव होनेसे प्रतिनिधि द्रव्य द्वारा उसका समापन एवं असमाप्त कार्यके त्यागका निषेध, नित्यकार्य आरम्भके अगले या पीछे प्रतिनिधि द्रव्यका आयोजन करते, किन्तु काम्यकार्यकी अवश्यकर्तव्यता न रहते प्रतिनिधि द्रव्य द्वारा आरम्भ किया नहीं जाता; इतना ही उभयका भेदकथन एवं ज्योतिष्टोम दीक्षित व्यक्ति शरीर धारणार्थ पय:पान प्रभृति व्रतमें भी प्रतिनिधि विधान है। इस प्रतिनिधिमें अनेक विशेष नियम निर्दिष्ट है। द्रव्यके अभावमें तत्सदृश अन्य द्रव्यकी कल्पना की जाती है। दैवात् वह द्रव्य भी नष्ट होनेसे उसकी भांति अन्य प्रतिनिधि न मिलते प्रधान द्रव्यजातीय द्रव्य द्वारा प्रतिनिधि कल्पना करना चाहिये। जैसे व्रीहिके अभावमें नीवार द्वारा कार्य आरम्भ करते दैवात् जो नीवार नष्ट हो गया, तो नीवार जातीय अन्य द्रव्यकी कल्पना न कर व्रीहिकी ही कल्पना करना पड़ेगी। इसी प्रकार जहां स्वल्प व्रीहिका अभाव होगा, वहां उसका प्रतिनिधि शुद्ध व्रीहि माना जायेगा। किन्तु कभी नीवारकी कल्पना कर नहीं सकते। फिर जहां पुंवत्सयुक्त गौके दुग्ध द्वारा विधान है वहां उसके न मिलनेसे स्त्रीवत्सयुक्त गौका दुग्ध प्रदान करना चाहिये। किन्तु पुंवत्सयुक्त भैंसी प्रभृतिका दुग्ध प्रदान करनेसे काम न चलेगा। इसी प्रकार समुदाय द्रव्यका प्रतिनिधि विवेचना करना उचित है। इस अधिकारमें श्रुतिपाठ, मन्त्रपाठ एवं अर्थसिद्धि क्रमानुसार पदार्थके अनुष्ठानका क्रम है। जहां पाठक्रम और अर्थसिद्धिक्रम उभयका विरोध आयेगा, वहां पाठक्रम उपेक्षा कर अर्थसिद्धि क्रम किया जायेगा और जहां श्रुतिपाठ तथा मन्त्रपाठ उभयका विरोध दिखायेगा, वहां श्रुतिपाठक्रम छोड़ मन्त्रपाठसे कार्य चलाया जायेगा। फिर बहु प्रधान द्रव्यका एकत्र प्रयोग विधान रहते किसी प्रकारके क्रम विभागकी व्यवस्था न कर समुदयके प्रयोग करनेका नियम है। छठे अधिकारमें अवत्तहवि* नष्ट होनेसे अन्यहवि द्वारा कार्यसम्पादन, अन्तरादि देवता, मन्त्र एवं प्रयाज अनुयाज† प्रभृति क्रियासमूहके प्रतिनिधिका निषेध, इष्टार्थ अवघात प्रभृति क्रियासमूहके प्रतिनिधिका विधान, किसी विहित वस्तुके

---

* आहुति डालनेके लिये गृहीत हविको अवत्तहवि कहते हैं।

† यज्ञके पहले-पीछेको प्रयाज और अनुयाज कहते हैं।

उद्दिष्ट होते भी निषिद्ध वस्तुके प्रतिनिधित्वका निषेध, त्याग तथा वपन प्रभृति एवं संस्कार कर्ममें यजमानके प्रतिनिधित्वका अभाव, किन्तु पात्रग्रहण, हविर्दर्शन, अग्निस्थापन, व्यूहन और वेदवन्धनादि गुणकर्ममें यजमानके प्रतिनिधित्वका विधि, पत्नीके अभावमें भी हविर्दर्शन, अन्वारम्भ और उपाञ्जन * प्रभृति गुणकर्ममें प्रतिनिधिकल्पना, यजमानकर्मके साथ सम्बन्धवशत: प्रतिनिधिरूपसे कल्पित व्यक्तिके भी दीक्षादि यजमानधर्मका सम्पादनविधि, ब्राह्मणका ही यज्ञाधिकार, क्षत्रियवैश्यका अनधिकार, ब्राह्मण होते भी एक कल्प ब्राह्मणका अधिकार, किन्तु विभिन्न कल्पका नहीं, क्षत्रिय तथा वैश्यका गृहपतित्व अधिकार रहते भी यज्ञमें अधिकार नहीं। सहस्र वत्सर साध्य यज्ञ मनुष्यसाध्य है। क्योंकि यहां संवत्सर शब्दका सहस्र दिन मात्र लक्षणविधि है। ८म कण्डिकामें जहां एकही फलकी कामनासे एक वाक्य द्वारा बहुसंख्यक प्रधान कार्यका विधान है, वहां समुदाय कार्यका एकत्र प्रयोग होता है। देश, काल, फल और कर्मादि समान रहते प्रधान कार्य-समूहका आद्य उपयोगी आघार, प्रयाज और आज्य भाग पृथक् पृथक् न कर एकत्र करनेका नियम है। किन्तु देश, काल वा तन्त्रभेद पड़नेसे एकत्र कर्तव्य नहीं। एक द्रव्यमें अनेक कर्मका विधान रहनेसे प्रत्येक क्रियामें मन्त्रपाठ न कर केवल एक बार ही करनेका विधि है। किन्तु हविर्ग्रहण, कुशच्छेद, कुशस्तरण और आज्यग्रहण कार्यमें प्रत्येक बार मन्त्र पढ़ना पड़ता है। आज्यग्रहण कार्यमें तीन बार मन्त्र पढ़ते और अवशिष्ट बार मौनी रहते हैं। दीक्षित व्यक्तिके अनेक दुःस्वप्नदर्शनमें एकबारमात्र मन्त्रपाठ विधि है। एक नदीके अनेक प्रवाह उत्तीर्ण होनेसे एक बार मन्त्र पढ़ते हैं। अनेक वृष्टिधाराका संयोग होते भी वर्षणकालमें एक ही बार मन्त्र पढ़ा जाता है। एक ही समय अनेक अमङ्गल दर्शनसे एकबार मात्र सूर्योपस्थापन करते हैं। विश्रामपूर्वक पुनः पुनः गमन करते समय अमेध्य दर्शन करनेसे एकबार मात्र मन्त्रपाठ होता है। एक रात्रिके मध्य बारंबार निद्रादि कालको अमङ्गल देखनेसे बारंबार मन्त्र पढ़ना पड़ेगा। ऐसे समय एकबार मन्त्र पढ़नेसे काम नहीं चलता। अप्रधानकालीन अङ्ग एकबार मात्र होता है, उसका प्रतिधान बदलना नहीं पड़ता। आधानादि कार्यमें केवल यजमान ही नहीं, समुदाय पुरुष कर्त्ता है। फिर भी देवताके उद्देशसे द्रव्यत्याग प्रभृति आत्मकर्मसमूह यजमानको ही करना और पुरुषयोगि मन्त्रसमूह जपना चाहिये। वपन अभ्यञ्जनादि संस्कार यजमानका ही है। किसी किसी स्थलमें यह संस्कार पुरोहितका भी होता है। इन सकल कार्योंको छोड़ अन्य कार्य विशेष विधान रहते यजमानको ही करना पड़ेगा। जैसे—यजमान वसुधारा होम करेगा और पात्र सकल ग्रहण करेगा। तद्भिन्न कार्य पुरोहित प्रभृतिका है। जैसे अध्वर्युका आध्वर्यव कार्य, होताका होत्रकार्य और उद्गाताका औद्गात्र कार्य। समुदाय कार्य यज्ञोपवीतधारीको करना पड़ता है। फिर समस्त कार्य पूर्वदिक् वा उत्तरदिक्स्थ कर सम्पादन करनेका नियम है। परिस्तरण एवं पर्युक्षणादि कार्य प्रदक्षिण क्रमसे और पितृकार्य अपसव्य क्रमसे अर्थात् दक्षिणसे क्रमानुसार वाम ओरको करनेका नियम है। देवकार्यमें जहां पुनरावृत्ति करते, पैत्र कार्यमें वहां एकही बार निवटते हैं। पैत्रकर्ममें दक्षिणदिक् प्रशस्त है। देवकर्ममें जो पूर्वदिक्को स्थापन करना पड़ता, पैत्रकर्ममें वह समुदाय दक्षिणदिक्को स्थापन करना उचित रहता है। प्रधान द्रव्य विनष्ट होनेसे निकटस्थ अङ्गसमूहके साथ उसकी पुनरावृत्ति करना चाहिये। ९म काण्डिकामें विकल्प विधिस्थल पर एकही द्रव्यद्वारा कार्य सम्पादन करना उचित है। अदृष्ट बहु विषय विहित रहते समूदायको ग्रहण करना चाहिये। यज्ञकालमें मन्त्रसमूह एक श्रुति स्वरसे प्रयोग करते हैं, संहितास्वर वा ब्राह्मणस्वरसे प्रयोग कर्तव्य नहीं। किन्तु सुब्रह्मण्य, साम, जप, न्युङ्ख और यजमान मन्त्र एक श्रुतिसे प्रयोग न कर संहितासे मिलते स्वरमें ही प्रयोग करना चाहिये।

* गौणचादि द्वारा लेपन।

स्थानमें विहित हविरासादनका विकल्प कर्तव्य है, किन्तु समुच्चय नहीं। पशुके साधनकार्यमें अवदानादि कार्यका समुच्चय करना पड़ता है। सर्वत्र गार्हपत्य तथा आहवनीय कार्यमें प्रदक्षिण कर अपसव्य एवं अपसव्य कर प्रदक्षिण करते हैं। विहारको उत्तरदिक् समुदाय कार्य किया जाता है। सुतरां ब्रह्म और यजमानका आसन विहारके दक्षिणदिक् कर्तव्य है। आसनद्वयके मध्य प्रथमतः यजमान एक आसन पर वेदिके मध्य पदका अग्रभाग संस्थापन कर बैठे, फिर ब्रह्मको बैठना चाहिये। व्यक्तिविशेषका आदेश न रहते अध्वर्युको यजुर्विहित कर्म सम्पादन करना कर्तव्य है, आदेश रहनेसे अन्य किया जाता है। हविष्पात्रस्थ द्रव्यसमूह जैसे पर पर संसक्त होता, प्रदान कालमें वैसे ही वह समस्त द्रव्य पूर्व पूर्व देना चाहिये। प्रतापनादि अग्निसाध्य संस्कार गार्हपत्य अग्निमें सम्पादन करते हैं। समुदाय कार्यमें जो हवि प्रदान गार्हपत्य वा आहवनीयमें कर्तव्य है। संस्कार शून्य घृतमात्रको आज्य शब्दका अर्थ समझना चाहिये। घृत शब्दसे अभ्यवहृत किया जाता है। द्रव्यविशेष कथित न रहनेसे सर्वत्र ही घृतद्वारा होम कर्तव्य है किन्तु विशेष द्रव्यका विधान होनेसे उसी द्रव्य द्वारा होम करते हैं। चात्वालसे * बर्हिःका पुरीष ग्रहण करना चाहिये। पृथक् आदेश न रहते आहवनीय यज्ञमें ही समुदाय याग कर्तव्य है। किन्तु आदेशको विभिन्नता आने आदेशानुसार याग करना पड़ता है। ऐसा आदेश न होते एक बार मात्र पठित द्रव्य द्वारा होम करते हैं। आदेश रहनेसे आदेशानुसार किया जाता है। ८म कण्डिकामें—समस्त स्थल पर व्रीहि वा यव हविरूप कल्पना करते हैं। उभयके विधानस्थल पर विकल्पानुसार कहीं पहले यव पीछे व्रीहि और कहीं पहले व्रीहि पीछे यव देना चाहिये। किन्तु आपस्तम्बके मतसे सर्वदा केवल व्रीहि ग्राह्य है। द्विविध अवदानका विधान रहनेसे प्रथम बार पुरोडाश चरुसे मध्यदेशसे यवमात्रमें एक अङ्गुष्ठ परिमित ग्रहण है। द्वितीय बार हविके पूर्वभागसे ऐसे ही नियममें ग्रहण करना पड़ता है। जमदग्नि प्रभृति पञ्चसमूहमें तीन बार हवि ग्रहण कर्तव्य है। उसमें प्रथम बार मध्यदेशसे द्वितीय बार पूर्वभागसे और तृतीय बार पश्चाद्भागसे लेते हैं। जहां आज्यभाग पत्नीसंयाज, उपांशुयाज और अग्निहोत्रादि होममें चार बार ग्रहणकी विधि है, वहां जमदग्नि प्रभृतिका पांच बार ग्रहण किया जाता है। दधि दुग्धका भी अवदान स्रुव द्वारा अङ्गुष्ठपर्व परिमित ग्रहण करना पड़ता है। पुरोडाशादि हविके अवदानसे प्रथम आज्य एक बार ले अन्य हवि ग्रहण करना चाहिये। शेष बार फिर आज्य लिया जाता है। स्विष्टकृत् होममें हविर्मध्यके प्रधान अवदानकी अपेक्षा एक बार बढ़ा देते हैं। उपस्तारका कार्य एक बार करते हैं। उपरि देशमें अभिघारण दो बार कर्तव्य है। अवदेय और अवदान हविका प्रत्यभिघारण करना पड़ता है। एक कपाल पुरोडाश सर्वस्थानमें आहुति देना चाहिये। "अग्नये जुष्टोऽसि" की भांति आदिसे चतुर्थी विभक्त्यन्त देवतापद द्वारा अनुवचन करना पड़ता है। आश्रावणके पीछे जहां मैत्रावरुणका अनुसन्धान करते वहां भी चतुर्थी विभक्त्यन्त देवतापद रखते हैं। किन्तु आश्रावणके पीछे जहां मैत्रावरुणका अनुसन्धान नहीं करना पड़ता, वहां द्वितीयान्त देवता पद प्रयोग करना चाहिये। प्रैषसम्बन्धी अनुवचनस्थलमें द्रव्यके उत्तर षष्ठी होती है। किन्तु दो प्रैषोंका सम्बन्ध रहनेसे षष्ठी नहीं लगती। जहां ऐसे प्रयोगका विधान रहता कि नाम ग्रहणपूर्वक इन्हें यजन करो, वहां इन्हें पदके परिवर्तमें उन्हीं उन्हीं नामोंका प्रयोग करना चाहिये। वषट्कारके साथ आहुतिप्रदानस्थल पर बैठोंके दक्षिण भागमें उत्तर पूर्व वा ईशान मुख उपस्थित हो वषट्कारके पीछे वा वषट्कारके साथ आहुति देते हैं। इन समस्त स्थलोंपर घृतमिश्रित हवि देना पड़ता है। उसका नियम है—प्रथम घृताहुति, मध्यमें हविकी आहुति और पीछे फिर घृतकी आहुति प्रदान करना चाहिये। अथवा घृत और हवि एकत्र ही प्रदान करना पड़ता है। १०म कण्डिकामें

* चात्वाल—यज्ञस्थलमें मिट्टी खोद कर बनाया हुआ गर्त।

—'आग्नेयो अष्टकपालो भवति' इत्यादि स्थल पर लट् विभक्ति विधिलिङ्ग बोधक समझी जायेगी। कर्तव्य कर्मके उपकरणका द्रव्यसमूह प्रथम कल्पना कर कर्मदेशस्थानमें स्थापित करना चाहिये। सर्वत्र ही उत्तर दिक्को सोम और पूर्व दिक्को ग्रीवाविन्यासयुक्त चर्मका आस्तरण प्रदान करते हैं। हविःसमूहके मध्य जो सकल द्रव्य पश्चात् पठित है, वह देश कालके अनुसार पश्चात् ही प्रदान करना पड़ता है। ग्रहणादि कार्य पूर्वपठित रहनेसे पूर्व और परपठित रहनेसे पर ही ग्रहण करते हैं। ऐसे ही अधिश्रयणादि कार्य पूर्वपठित रहनेसे दक्षिण दिक् और परपठित रहनेसे उत्तर दिक् स्थापन करना चाहिये। स्थाली, स्रुव और घृत दक्षिण हस्तसे गृहीत होने पर वाम हस्त द्वारा वेदका उपग्रहण किया जाता है। किन्तु उपभृत् प्रभृति द्वितीय द्रव्यका ग्रहणविधि रहनेसे वेदका उपग्रहण नहीं करते। घृत व्यतीत अन्य द्रव्य द्वारा याग करते स्फ्यका उपग्रहण करना चाहिये। वेद वज्रादि द्वितीय द्रव्य न रहते कुश द्वारा उपग्रहण करना पड़ता है। स्रुक् ग्रहण करते समय स्रुक् और जुहू उभय हस्त द्वारा ले उपभृत्के उपरि देशमें स्थापन करते हैं। इसके स्थापनकालमें परस्पर स्पर्शसे शब्द निकलना उचित नहीं। विश्वजित् न्यायके अनुसार सकल स्थल पर फलस्वरूप स्वर्ग कल्पित होता है। एक ही कार्यमें वेदविहित वैकल्पिक अङ्गसमूहके मध्य अधिकाङ्ग अनुष्ठित होनेसे फल भी अधिक मिलता है। इसी प्रकार षड दक्षिणापक्षकी अपेक्षा द्वादश और चतुर्विंशति दक्षिणापक्षका फल अधिक है। यजमान सम्बन्धी दान, अन्वारम्भ, वरण और व्रतप्रमाण ग्रहण करते हैं। अर्थात् दानविधि, सत्यवाक्य तथा अधःशयनादि व्रत यजमानका कर्तव्य है और अग्नि, खुर, वेदि गृह प्रभृतिका परिमाण यजमानके हस्तानुसार ही स्थिर करना पड़ता है। प्रोक्षित यूप, छिन्न कुश, अवहत व्रीहि, पिष्ट तण्डुल, दोहनकृत दुग्ध और दग्ध इष्टकादिसे विहित सकल कार्य सम्पादन करना चाहिये। रौद्रमन्त्र, रक्षोदैवतमन्त्र, असुरदैवतमन्त्र और शैवमन्त्र उच्चारण कर उक्त देवतासम्बन्धीय कार्य सम्पादनपूर्वक आत्मस्पर्श तथा हस्त द्वारा जलस्पर्श करते हैं।

उक्त समस्त कार्यका उपयोगी विधान प्रथमाध्यायमें कथित है।

द्वितीय अध्यायमें ८ कण्डिका है। उसकी १म कण्डिकामें यह वृत्तान्त वर्णित है,—पौर्णमास यज्ञकाल, उसमें अग्निका अन्वाधान, अध्वर्यु और यजमानका अधिकार, उसके विधानकी प्रणाली, दीक्षाके प्रसङ्गमें दीक्षित धर्मसमुदाय, दिवामैथुन और मांसपरिवर्जन, शिखा पर्यन्त केशपरित्याग, व्रतकालानुसार सपत्नीक यजमानको मद्य मांस लवण वर्जित् हविष्यान्न हविके साथ भोजनका विधि, सत्य वाक्यप्रयोग, रात्रिकालका पूर्वविहित विहारस्थानमें अग्निहोत्र होम, सायंकालको भोजनकी इच्छा होनेसे होमके पीछे अधिक रात्रि न चढ़ते ही नीवार प्रभृति वन्य ओषधिके अन्न और वन्य वृक्षके फलका भोजन, आहवनीय गृह और गार्हपत्य गृहमें शय्या व्यतीत अधःशयनविधि, ब्रह्मचर्य आचरणविधान, (यह नियम सपत्नीक यजमानका ही समझना पड़ेगा) पौर्णमासको अन्वाधानादि कार्य समापन होनेसे दो दिन या एक दिनमें कार्यभेदका विधि (यह प्रातःकाल ही सम्पादन करना पड़ता है।)। २य कण्डिकामें अग्नि होत्रके पीछे ब्रह्मवरण विधि और उसका प्रकार है। ३य कण्डिकामें ब्रह्मसदनसे आत्मस्पर्श पर्यन्त कर्मसमूहके अनुष्ठान, प्रकार और मन्त्रादिका कीर्तन है।

३य अध्यायमें ८ कण्डिका है। उसमें होत्रसदनसे पौर्णमास समाप्ति पर्यन्त कर्तव्य कार्यसमूहका अनुष्ठानप्रकार और मन्त्रादि वर्णित है।

४र्थ अध्यायमें १५ कण्डिका है। उसकी १म, २य और ३य काण्डिकामें दर्शयोगके पूर्वपिण्ड तथा पितृयज्ञके अनुष्ठानका प्रकार और मन्त्रादिका कथन है। द्रव्य देवतायुक्त अख्यातप्रत्ययान्त कर्म शब्द और वेदबोधित याग शब्दका अर्थ है। समुदाय यज्ञ और अग्नीषोमीय पशुमें दर्शपौर्णमास यागधर्मका अतिदेश है। वैश्वदेव, वरुणप्रघास, साकमेध और शुनासीर नामक चतुःपर्वमय चातुर्मास्यके प्रथम वैश्वदेव-

पर्वमें दर्शपौर्ण मासका कथन है। अपर तीन पर्वमें त्रिविध वह्नि प्रस्तरादि औपदेशिक धर्मविधान है। चातुर्मास्य वरुणप्रघासादि पर्वत्रयमें वैश्वदेव पर्व धर्मका विधान है। किन्तु साकमेधादिमें ऐसा विधान नहीं। सौमिक स्थानको अपेक्षा वारुण प्राकाशिक स्थानमें धर्म हुआ करता है। ऐसा सन्देह उपस्थित होनेसे कि कहां करेंगे सौमिकाग्नि ही ऐसा चाहिये। दर्श और पौर्णमासमें आग्नेयादि छह प्रधान याग हैं। एक देवतायुक्त वैकृत कर्मसमुदायमें आग्नेय धर्मका विधान है। अनेक देवतायुक्त कर्ममें अग्नीषोमीय धर्मविधि है। द्रव्य सामान्यमें धर्मप्रवृत्ति है। देवता द्रव्यके उपादान प्रकृतिको साम्य अपकामें धर्मप्रवृत्ति है। द्रव्य देवता उभयका साम्य विरोध रहने द्रव्यकी प्रधानतामें कम होता है, किन्तु देवताके सामान्यमें नहीं। सोममें दुग्धका धर्म होता है किन्तु दधिका नहीं। इसी लिये चातुर्मास्य प्रभृतिमें परिवापित मात्रा द्वारा पवित्र बन्धनके पीछे कुश दूर्वोमूल और दोहन चतुष्टय प्राप्त होता है। पयमें दधिका धर्म नहीं, दुग्धका धर्म होता है। द्रव्य समूहमें नाना प्रतिका धर्म रहता है। प्राकृत स्थानयुक्त द्रव्यका जो स्थानीय धर्मके साथ विरोध पड़ता, स्थानप्राप्त द्रव्यमें वह विरोध लग नहीं सकता। जिस विकृतिसे प्राकृत द्रव्य देवतास्थानमें अन्य द्रव्य देवतादिविहित होता, उस स्थानमें प्राकृत मन्त्रका ऊह नहीं आता। विकृतिमें वचनविशेषसे प्राकृत धर्म नहीं होता। अर्थलोप और प्रयोजनलोपसे प्राकृत धर्म नहीं आते। विकृतिमें विरोध हेतु प्राकृत धर्मसमूहकी प्रवृत्ति नहीं पड़ती। प्रवृत्तिसे जो पदार्थरूपमें विहित है, पदार्थकी अप्रवृत्तिसे विकृतिसे उसकी अप्रवृत्ति होती है। जहां पदार्थ जात द्रव्य कहीं कर्मान्तरप्रापणके लिये विहित हुआ है उसमें दूसरेका अभाव रहने भी पदार्थजात द्रव्यका सद्भाव होता है। समुदाय द्रव्यका सर्व समयविधि है। ४र्थ कण्डिकामें प्रजा, पशु, अन्न और अर्थ कामादिका काम्यदाक्षायण यज्ञ, संज्ञ एवं पौर्णमासके देव तथा द्रव्यभेद वर्णनपूर्वक उनका विधान है। ५म कण्डिकामें उपांशु यज्ञका अर्थकथन और उसमें द्रव्यदेवतादिका वर्णन है। ६ष्ठ कण्डिकामें व्रीहि और यवका पाकस्थानमें आग्रयण नामक कर्म कर्तव्य है। शरत् वसन्त प्रभृति काल, द्रव्यदेवतादिका मन्त्रविधान और उसका प्रकार है। दर्शपौर्णमास यज्ञके पीछे अग्न्याधानादिका यथाप्रवृत्ति कार्यविधि है किन्तु इस यज्ञके पूर्व विहित नहीं। दर्शपौर्णमासका उत्सर्ग होनेपर अग्नि-होत्रमें आहुतिका विधि एवं आग्रयण विधानप्रकार है। दीक्षितका विशेष विधि है। संवत्सर एवं उपसदादि यज्ञमें आग्रयणविशेष कहा है। संवत्सर और सत्री प्रभृतिमें द्रव्यविशेषका विधान है। श्यामाक आग्रयण का विधानप्रकार है। ७म कण्डिकामें अग्नि, आग्नेय कर्म, काल, देवता और संख्या विधान प्रकारादि कथित है। ८म, ९म और १०म कण्डिकामें आधानके पशु कर्मसमूहका विधान एवं मंत्रादिकथन है। ११श कण्डिकामें पुनर्बार आधानके अनाम प्रभृति निमित्त कथन है। उसका विधानप्रकार है। १२श कण्डिकामें वैश्वसमाज अग्निहोत्रके आख्यका उपस्थानप्रकार है। १३श १४श और १५श कण्डिकामें अग्निहोत्रके काल, द्रव्य देवता, विधान तथा मन्त्रादि कामनाभेदानुसार अपना अदृष्ट अग्निमें होमकी कर्तव्यता है। कामनाभेदसे होममें द्रव्यभेदका विधि है। ऐसे ऐसे द्रव्यसमूहद्वारा प्रत्यह संवत्सर होम करने पर तदनुसार कामनासिद्धि होनेकी बात है। अग्निहोत्र होम एवं संबन्धि यज्ञमें गार्हपत्य आगारके दक्षिण द्वारसे प्रवेश का विधि है। सर्वदा यजमानको स्वयं ही होम करना उचित है वा कार्यवशात् यजमान अपना होवे यजमान-नियुक्त अध्वर्यु भी कर सकता है। किन्तु दर्श और पौर्णमासोंमें सर्वदा स्वयं होम करना चाहिये। प्रवासमें और सूतकादि अशौचमें विशेष नियम है।

५म अध्यायमें ११ कण्डिका हैं। उनके मध्य १म और २य कण्डिकामें चातुर्मास्य * यज्ञान्तर्गत वैश्वदेव यागका पर्वकाल एवं उसके द्रव्य और देवताप्रयोगादिका वर्णन है। ३य ४र्थ और ५म कण्डिकामें वरुण प्रघासका रूप और उसका पर्वकाल, द्रव्य, देवता एवं

* वैश्वदेव, वरुणप्रघास, साकमेध और शुनासीरीय यज्ञचतुष्टय-का नाम चातुर्मास्य याग है। यह यज्ञचतुष्टय चार चार मासमें करते हैं।

मन्त्रविधानादि है। ६ष्ठ कण्डिकामें साकमेधका रूप और उसके पर्वकाल, द्रव्य, देवता तथा मन्त्रादिका विधान है। ७म कण्डिकामें द्विहविष्क कौड़िनीयमें इष्टिका कालविधान एवं तदीय द्रव्य, देवता और मन्त्रादिका कथन है। ८म एवं ९म कण्डिकामें पित्रेष्टिके काल, द्रव्य, देवता और मन्त्रादिका कथन है। १०म कण्डिकामें त्रैयम्बक होमका कालविधान और द्रव्य, देवता एवं मन्त्रादिका नियम है। ११श कण्डिकामें चातुर्मास्य यज्ञान्तर्गत पर्वविशेषात्मक सुनासीरीयके काल, द्रव्य, देवता और मन्त्रादिका कथन है। सूतकादिमें भी चातुर्मास्यका पुनर्वार आरम्भ है। चातुर्मास्य त्रिविध है—ऐष्टिक, पाशुक और सौमिक। इस त्रिविध चातुर्मास्यके द्रव्य, देवता और मन्त्रका विधानादि है। १२श एवं १३श कण्डिकामें मित्रविन्देष्टि और उसके द्रव्य, देवता तथा मंत्रका विधान है।

६ष्ठ अध्यायमें १० कण्डिका हैं। उनमें निरूढ़, पशुबन्धयाग और उसके काल, द्रव्य, देवता तथा मत्रका विधानादि कथित है।

७म अध्यायमें ९ कण्डिका है। उनमें ज्योतिष्टोम यज्ञके काल, द्रव्य, देवता और मंत्रादिका विधान है। फिर ज्योतिष्टोमके पूर्वानुष्ठेय सोमयज्ञके भी द्रव्य देवतादिका विधान है।

८म अध्यायमें ९ कण्डिका हैं। उसकी १म एवं २य कण्डिकामें आतिथ्यकर्म, उसके द्रव्य, देवता औरमंत्रादिका विधान है। ३य कण्डिकामें औपवसथ्यके काल, द्रव्य, देवता और मंत्रादिका विधान है। ४र्थ, ५म, ६ष्ठ, ७म, ८म और ९म कण्डिकामें ऐसा ही विधानादि कथित है।

९म अध्यायमें १४ कण्डिका है। १म कण्डिकामें सौत्यकर्म और उसके काल, द्रव्य, देवता एवं मंत्रका विधानादि है। अपर कण्डिकाओंमें प्रातःसवनका द्रव्य, देवता और मंत्रविधानादि कथित है।

१०म अध्यायमें ९ कण्डिका हैं। उसकी समुदाय कण्डिकाओंमें प्रायः अध्याय शेष पर्यन्त मध्यन्दिन सवन और तृतीय सवनके द्रव्य, देवता और मंत्रका विधान है। अध्याय शेषमें ज्योतिष्टोम यागमें सोमोत्तर कर्तव्य अत्यग्निष्टोम, उकथ्य, षोडश, वाजपेय, अतिरात्र, आप्तयाम और ज्योतिष्टोम यागमें सोमोत्तर कर्तव्य, सोमका ज्योतिष्टोमविधान और उसमें आध्वर्यव-विधान प्रकार है।

११श अध्यायमें १ही कण्डिका है। उसमें ज्योतिष्टोमका अङ्ग ब्रह्मविधान है।

१२श अध्यायमें ६ कण्डिका हैं। उनमें द्वादशाह यज्ञका विधान है। एकादशाह प्रभृति यज्ञमें ज्योतिष्टोम धर्मका अतिदेश है। किसीके कथनानुसार उसमें अग्निष्टुत धर्मका अतिदेश वर्णित है। सत्ररूप और अहीनरूप भेदसे द्वादशाह दो प्रकारका है। इन उभय रूपोंका निदर्शन है। आद्यन्तमें अतिरात्र रहनेसे सत्र और केवल अन्तमें अतिरात्र रहनेसे अहीन होता है। सत्रयागमें यजमान सह षोडश ऋत्विक्‌का कर्तृत्व रहनेसे सकलका यजमानत्व है। सुतरां सकलको फलप्राप्तिका अधिकार होनेसे इस कार्यमें दक्षिणाका अभाव है। षोड़श ऋत्विक्‌में यजमानत्वका अतिदेश रहनेसे सप्तदश व्यक्तिका दीक्षादि यजमान धर्मनिर्देश है। गृहपतिका अन्वारम्भविधि है। यज्ञसम्पादनके लिये पात्रग्रहणादि कार्यमें एकमात्र जनका ही कर्तृत्व है। तत्कर्तृक सम्पादित होनेपर सकलका सम्पादित होता है। गार्हपत्य और आहवनीय अङ्गारप्रासन है। अध्याय-समाप्ति पर्यन्त तदीय द्रव्य, देवता, मंत्र, दीक्षा और कालका विधानादि निरूपित हुवा है।

१३श अध्यायमें ८ कण्डिका हैं। उसकी प्रथम कण्डिकामें गवामयन यज्ञका प्रकार और उसमें द्वादशाह यज्ञधर्मका अतिदेश है। २य, ३य और ४र्थ कण्डिकामें द्वादशाह धर्मके द्रव्य, देवता और मंत्रका विधानादि वर्णित है।

१४श अध्यायमें ३ कण्डिका हैं। उनमें ज्योतिष्टोम संस्थाभेद, वाजपेय यज्ञके काल, द्रव्य, देवता और मंत्रका विधानादि कथित है।

१५श अध्यायमें १० कण्डिका है। समुदाय कण्डिकामें राजसूय यज्ञ, उसमें क्षत्रिय जातिका

अधिकार, वाजपेय यज्ञ करने पर राजसूयकी अनावश्यकता और राजसूयके द्रव्य, देवता एवं मंत्रका विधानादि वर्णित है।

१६श अध्यायमें ८ कण्डिका हैं। उनमें १म कण्डिकामें अग्निचित्य सामविशेषविहित अग्नि विधानका प्रकार है। चयनकर्त्ता विधिपूर्वक अग्निको होमाहुति करते हैं। उसमें इच्छानुसार अधिकार है। फिर भी वैश्वमात्र महाव्रत नामक षोड़शाख्य सोमयागमें अग्निचित्य चयनका नियम है। अन्यत्र इच्छानुसार विकल्प है। २य ३य और ४र्थ कण्डिकामें उखा (यज्ञादिका पात्रविशेष) निर्माण प्रकार है। ५म कण्डिकामें अग्निचयनप्रकार एवं उसमें देवता और मंत्रादिका विधान है। ६ठ कण्डिकामें पञ्च अग्निविधियोंका चयनप्रकार है। ७म कण्डिकामें तत्सम्बन्धीय प्रायश्चित्त होमविधान है। ८म कण्डिकामें पूर्वोक्त अग्निचयनका प्रकार भेद एवं उसके काल, द्रव्य, देवता और मंत्रादिका कथन है।

१७श अध्यायमें १२ कण्डिका हैं। समुदाय कण्डिकामें प्रायश्चित्तान्त कर्मके परवर्ती कर्तव्यका विधान और उसका भेद, द्रव्य, देवता तथा मंत्रादि वर्णित है।

१८श अध्यायमें ६ कण्डिका हैं। उनमें शत-रुद्रीय होम उसके अङ्गकर्म द्रव्य देवता और मंत्रादिका विधान है। ६ष्ठ कण्डिकामें चितमात्रमें अग्निचयनकारी पुरुषका नियम वर्णित है।

१९श अध्यायमें ७ कण्डिका हैं। उनमें सौत्रामणि यागका विधान है। इस यज्ञमें अनभिषिक्त ब्राह्मणका अधिकार है। सोमयज्ञकारी ब्राह्मणोंको सोमयज्ञके पीछे इसको करना पड़ता है। सोमातिपूत अर्थात् मुख, नासिका, कर्ण गुह्य प्रभृति छिद्र द्वारा पीत सोम निकालनेवाले और सोमवामी अर्थात् पीत सोम मुखसे वमन करनेवालेका इस यज्ञमें अधिकार है। राज्यच्युत अथवा बहिष्कृत राजाका पुनर्बार राज्य प्राप्तिके लिये इसमें अधिकार है। पशुके अभावमें धन पानेकी कामनासे वैश्यको भी इसमें अधिकार है। चार रात्रमें इस यज्ञके सम्पादनका विधि है। इस यज्ञको अङ्गरूप सुराप्रस्तुतप्रणाली और इस यज्ञका द्रव्य, देवता तथा मंत्रादि वर्णित है।

२०श अध्यायमें ८ कण्डिका हैं। समस्त कण्डिकाओंमें अश्वमेध यज्ञका विधान है। इसमें अभिषिक्त क्षत्रिय राजाका ही एकमात्र अधिकार है। ब्राह्मण और वैश्यका अनधिकार है। तीन रात्रमें इसका सम्पादन नियम है। इस यज्ञके अङ्गके समुदाय अश्वमेधविधिको कथा और यज्ञका काल, द्रव्य, देवता तथा मंत्रादि वर्णित है।

२१श अध्यायमें ८ कण्डिका हैं। उनमें १म कण्डिकामें नरमेधयज्ञका विधि है। सर्वश्रेष्ठ उत्कर्षकामी पुरुषका अधिकार है। पांच रात्रमें इसका सम्पादनविधि है। इसमें एकविंशति दीक्षा-नियम है। ब्राह्मण और क्षत्रियको अधिकार है। वैश्यको अनधिकार है। इस यज्ञके द्रव्य, देवता और मंत्रादिका विधान विहित है। २य कण्डिकामें सर्वविषय अभिलाषी व्यक्तिके सर्वमेधयज्ञका विधान है। दश रात्रमें इसका सम्पादनविधि है। ३य और ४र्थ कण्डिकामें मनुष्य, अश्व, गो, मेष और छाग पञ्च पशुका वधविधि है। प्रोषित वा मृत पिताका संवत्सर अतीत होनेसे पितृमेधयज्ञका विधान और उसके श्मशानादि काल, द्रव्य देवता तथा मंत्रका भी विधान वर्णित है।

२२श अध्यायमें ११ कण्डिका हैं। उनको प्रथम कण्डिकामें यजुर्वेदीय आधानादि पितृमेध पर्यन्त कर्मविधि और सामवेदीय एकाहसाध्य यागविधि वर्णित है। इस सम्बन्धको कई परिभाषा भी दिये हैं। यथा—विधिसर्वस्व वर्णित न रहनेसे यज्ञ अग्निष्टोमसंस्थ हुआ करता है। धेनुमात्रदक्षिणा देय भूर्णोमक एकाह और ज्योतिर्मिक एकाहमें कोई संस्था कहा न जानेसे उभय अग्निष्टोमसंस्थ होते हैं। गो और आयु नामक एकाह उक्थ्य संस्थ हैं। अभिजित् और विश्वजित् अग्निष्टोमसंस्थ हैं। ज्योतिष्टुमके विभागयोग्य द्रव्य एवं भूमि और

दास व्यतीत पदार्थको सर्वस्वपदार्थ कहते हैं। किसी किसीके मतानुसार धारण भ्रमणादिके लिये भूमि और शुश्रूषाके लिये दास आवश्यक है; इस उभय द्रव्योंको छोड़ सुवर्णादि अन्य समुदाय द्रव्य सर्वस्व है। पुरुषमेध यज्ञमें गर्भदासके दानका विधान और भूमिके एकदेशपरित्यागमें धारणको सम्भावना है, इसलिये अपने मतमें भी उभय द्रव्य व्यतीत अन्य समुदाय सर्वस्व होता है। किन्तु अवभृथ-स्नानविहित वत्सच्छवि और दासाका उपयोगी द्रव्यसमूह सर्वस्वके मध्य परिगणित नहीं। वस्तुतः सहस्र अपेक्षा अधिकसंख्यक द्रव्य ही सर्वस्व कहाता और वही दक्षिणा माना जाता है। विश्वजित् यज्ञमें द्वादशरात्रि प्रभृति नियमकी विभिन्नता है। अभि-जित् सम्पन्न होनेपर विश्वजित्का अनुष्ठान किया जाता है अथवा अभिजित् और विश्वजित्का एकदा अनुष्ठान कर्तव्य है। किन्तु एक ही समय उभय कार्य्य करने पर देवयजनस्थानका विशेष नियम है, उसमें षोड़श ऋत्विक्का कार्य बाहुल्यप्रयुक्त अन्यतम ऋत्विक् द्वारा अन्यत्र सम्पादन करना पड़ता है। किन्तु बहिर्वेदिक कर्मसमूह उभयका एक रूप है। केवल अन्तर्वेदिक कर्ममें ही उभयकी विभिन्नता पड़ती है। उभय कार्य एक ही समय करते भी अभिजित्का एक एक अङ्ग सम्पादन कर विश्वजित्का एक एक अङ्ग सम्पादन करते हैं। सर्वजित् नामक एकाह महाव्रत नामक सामसमाप्त है। इस यज्ञमें संवत्सरदीक्षा, व्रताहका काल और तीन या छह उपसद् विहित हैं। अर्थात् संवत्सर दीक्षाके पीछे सप्तम दिवस स्नान करना और उसके अनन्तर सप्ताह अतीत होने पर यज्ञानुष्ठान कर तीन या छह उपसद् करना चाहिये। यह यज्ञ भी अग्निष्टोमसंस्थ है। उक्त समस्त विषय १म कण्डिकामें कथित हैं।

२य कण्डिकामें सर्वजित् यज्ञकी दक्षिणाका भेद और उसका विधानादि है। इस यज्ञकी उक्थ्य-संस्थता है। कथित अभिजित् प्रभृतिका नामान्तर है। यथा—अभिजित्का नाम ज्योतिः, विश्वजित्का नाम विश्वज्योतिः और सर्वजित्का नाम सर्वज्योतिः है। इस समुदायकी दक्षिणाका भेद विधानादि है। चतुर्थ उक्थ्यसंस्थका त्रिवृत्सम्मित नाम है। साद्यस्क्र नामक छह यज्ञका विधान है। उसका प्रदर्शन उत्तरोत्तर किया है। यथा—प्रथम साद्यस्क्रमें स्वर्गकाम, पशुकाम एवं ब्राह्मण्य-विशिष्ट पुरुषोंका अधिकार है। द्वितीय साद्यस्क्रमें दीर्घव्याधिग्रस्त एवं प्रतिष्ठा और अन्नाभिलाषियोंका अधिकार है। अनुक्री नामक तृतीय साद्यस्क्रमें कर्महीन और कर्म-निवृत्तिप्रार्थियोंका अधिकार है। विश्वजित्शिल्प नामक चतुर्थ साद्यस्क्रमें दक्षिणाभेद, सर्वस्व प्रतिनिधि-दक्षिणा विधान और सर्वस्व प्रतिनिधि द्रव्यसमूहका वर्णन है। यथा—धेनु, हय, क्षीर, धान्य, पशादि परिमाणोपयोगी स्वर्ण तथा रौप्य, दास, दासी, मिथुन उपकरणके साथ महानस, अश्वादि यानारोहण और गृहशय्या। अतएव सर्वस्व पद द्वारा इस समस्तका ही ग्रहण कर्तव्य है। श्येन नामक पञ्चम साद्यस्क्रमें वैरनिर्यातनकामका अधिकार, उसकी दक्षिणा, अनुष्ठान, मन्त्र और देवतादि कथन है। फिर एकत्रिक नामक षष्ठ साद्यस्क्रका विधान है। दीक्षा अपेक्षा सद्यः क्रियमाणताके लिये इनकी साद्यस्क्रसंज्ञा है। व्रात्यस्तोम नामक चतुर्विध एकाहयागका विधान है। तीन पुरुष पर्यन्त पतित सावित्रीकको व्रात्य कहते हैं। इस दोषकी शान्तिके लिये इनका अनुष्ठान और लौकिक अग्निमें इनका होमविधि है। इनके मध्य प्रथम व्रात्यस्तोममें नृत्यगीतकारी व्रात्यका अधिकार है। द्वितीय-ऋक्तत्संस्थमें निन्दित व्यक्तिका अधिकार है। तृतीयमें कनिष्ठका अधिकार है। इसमें गृहपति बना कार्य सम्पादन करना पड़ता है। चतुर्थमें अल्पसन्ततिस्थविर ज्येष्ठका अधिकार है। अर्थात् ऐसे ज्येष्ठको गृहपति बना यह कार्य सम्पादन करना पड़ता है। इस सकल कार्योंका दीक्षा-विधानादि और व्रात्यस्तोम सम्पादनकारियोंके व्यवहारका विधि है। परिशेषको ब्रह्मवर्चस, वीर्य, अन्न एवं प्रतिष्ठादि अभिलाषी और स्वीय पवित्रता-प्रार्थी व्यक्तिके अग्निष्टोमसंस्थ अग्निष्टुत् नामक एकाहयागकी कर्तव्यता है।

५म कण्डिकामें अग्निष्टुत्के द्रव्य, देवता और मंत्रविधानादिका वर्णन है। त्रिवृत्स्तोम नामक अग्निष्टोमसंस्थ चतुर्विंश यज्ञका विधान है। उसके मध्य अनिरुक्त प्रातःसवन प्रथम है। उसका नाम इषु यज्ञ है। अर्थादि अभिकामी किंवा ग्रामादि अभिकामीका उसमें अधिकार है। उसके द्रव्य, देवता और मंत्रका विधानादि है। बृहस्पतिसव द्वितीय है। राजाके साथ ब्राह्मणका (अर्थात् अग्रणी होनेवाले ब्राह्मणका) उसमें अधिकार है। तृतीयका नाम इषु है। यह श्येनकी भांति किया जाता है। किन्तु भेद इतना ही है कि यह सब पशुदेय नहीं होता। मारणकामनासे इसका अनुष्ठान करना पड़ता है।

६ष्ठ कण्डिकामें सर्वस्वार नामक चतुर्थ एकाह यज्ञ है। जीवनाभिकामी और मरणकामनाकारी उभयका इसमें अधिकार है। विधान इसकी दक्षिणा है। इस यज्ञके द्रव्य, देवता और मंत्रका विधानादि है। ऋत्विक् अपोनप्त्रीय नामक त्रिविध यज्ञका विधान है। उनमें प्रथमका नाम अर्कस्तोम है। द्वादशाहिक छन्दोमत्रयके मध्य तदनन्तर उत्तम दिन इस प्रकार कर द्वितीय और तृतीय ऋत्विक् अपोनप्त्रीय सम्पादन करना पड़ता है। वायस्तोम चतुर्विंश है। छान्दोग्यमें इसका विशेष विधि लिखा है। परिमितको त्रिवृत्, पञ्चदश, सप्तदश, एकविंश त्रिणव और त्रयस्त्रिंश नामक छह प्रकार दशस्तोम किस प्रकार विधान कथित है।

७म कण्डिकामें उनके विधानप्रकार मंत्र, देवता प्रभृतिका कथन है। अग्न्याधेय, पुनराधेय, अग्निहोम, दर्शपौर्णमास, दाक्षायण और आग्रयण नामक प्रतिकर्ममें सोमयुक्त कर यज्ञ और उनका विधानादि कथित है। इस कण्डिकामें ऋतपेयस्तोमक पांच यज्ञका विधान है। उनमें ग्रामाभिकामी क्षत्रियका उपहव्य नामक अनिरुक्त यज्ञविधान और मिथ्याभिशप्त क्षत्रियका भी इस यज्ञमें अधिकारविधि है। उसकी दक्षिणाका विधानादि है। दुर्गाभिकामी क्षत्रियका ऋतपेय एवं उसका विधानप्रकार और दक्षिणा तथा मंत्रादिका विषय कथित है। ८म कण्डिकामें अग्र काम और वैश्यकामका वैश्यस्तोम है। उसका विधानादि है। तदनन्तर तीव्रसुत् नामक यज्ञ है। तीव्रसुत्में सोमका अतिदेश रहते भी विशेष विधान है। इसमें सोमाभिपूत अराज्यमान राजाका एवं दीर्घव्याधिग्रस्त, ग्राम, प्रजा और पशुकामना कारीका अधिकार है तथा उसका विधानादि कथित है। १०म कण्डिकामें राज्यप्रार्थी क्षत्रियका राट् नामक यज्ञ है। उसका विधानादि कहा है। इस यज्ञको अग्निष्टोमसंस्थता है। प्रथमकी भांति ऐन्द्रवायवको बतलाता है। अन्नादि कामी क्षत्रियका विराट् नामक यज्ञ है। ऐन्द्रवायवकी भांति आग्नेयमें आग्नेय पशुसंयुक्त कर इसको भी सं करता है। पुत्रार्थीका उपहव नामक एकाह है। उसका विधानादि कहा है। तदनन्तर पुनस्स्तोम नामक एकाह है। उसमें प्रतिग्रह दोषयुक्त आर्त्तोंका अधिकार है। उसका दक्षिणादि है। पशुकाम क्षत्रियका चतुष्टोम नामक और उद्भिद्बलभिद् नामक एकाहद्वय है। दर्श-पौर्णमासकी भांति मिलित उभयको पशुकामकता है। चतुर्थ और उसका विधानादि है। उद्भिद्यज्ञके पीछे उसी दिनसे अर्धमास एक मास अथवा संवत्सर पर्यन्त प्रवाह रूप यज्ञका अनुष्ठानविधि है। उसका विधानादि है। पूजाभिकामी क्षत्रियके अपचिति नामक दो यज्ञोंका विधान है। उनमें राजा वा क्षत्रियका अधिकार है। उनका विधानादि है। उभय यज्ञके मध्य प्रथम यज्ञका नाम अयोति और द्वितीय यज्ञका नाम ज्योति है। यह उभय यज्ञ भी सर्वजित्की भांति होमयुक्त है। इनका दक्षिणादि विधि है। आयु और गोसव नामक दो यज्ञोंका विधान है। उनके मध्य अग्निष्टोमसंस्थ प्रथममें राजाका अधिकार है और उसका दक्षिणाभेद विधि है। तदनन्तर गोसवमें पशुत्व भी दक्षिणा और ब्रह्मका पशु जातिका उसमें अधिकार है। उसका विधानादि है। मरुत्स्तोम नामक यज्ञविधि है। इसमें एकदिन [illegible]
[illegible]
[illegible]

नामक यज्ञविधि है। पुत्रार्थी और पशुप्रार्थी व्यक्तिका उसमें अधिकार है। गोकुल दक्षिणा है। उसमें दो भ्राता वा दो सखाका अधिकार है, समूहका अधिकार नहीं। राजकर्तव्य उक्थ्यसंस्थ इन्द्रस्तोमका विधान है। पुरोहित प्रार्थीका इन्द्राग्नीस्तोम नामक यज्ञविधि है। सायुज्य अभिलाषी राजा और पुरोहितका इसमें अधिकार है। उभयका एकत्र वा पृथक् भावसे अधिकार है। ऐसे अधिकारका भेद विधि है। पशुकाम व्यक्तिके अग्निष्टोमसंस्थ विधान नामक यज्ञद्वयका विधान है। उसमें अभिचारकाम वा पशुकामका अधिकार है। पशुकाम व्यक्तिका वत्स तथा दुग्धयुक्त बृहत् गो और अभिचार कामका तीक्ष्ण गो दक्षिणा विधि है। अभिचारकामके संदंश और वज्र नामक दो यज्ञोंका विधान है। इन्द्रसोम-भावसे उभय यज्ञोंकी कर्तव्यता है। उभयके मध्य वज्रका षोडशिसंस्थ रूपभेद-कथन है। संदंश द्वारा राजाका अभिचार करना चाहिये, देशका नहीं और वज्र द्वारा देशका अभिचार करना चाहिये, राजाका नहीं। उक्त रूपसे विधान कथित है। मतान्तरमें उभयका विपरीत भावसे विधान है। अभिचार द्वारा राजादिका उपशम वा मारण सम्पादन कर ज्योतिष्टोम यज्ञद्वारा आत्मशुद्धिका विधान है। इसी प्रकार सामवेदविहित एकाह निर्दिष्ट है।

२३श अध्यायमें ५ कण्डिका हैं। उसकी १म कण्डिकामें अहीन नामक यज्ञसमूहका द्वादश उपसद् एवं एकमासमें उसका समापनविधि है। सुत्योपसद्का विशेष उपदेश है। दीक्षाके भेदका विधि है। यथा सौत्यदिन और उपसद्समूहके दिन गिन दीक्षानियम है। दो रात्रिसे द्वादश दिन पर्यन्त सम्पादन योग्य याग अहीन कहाता है। अन्यके मतमें पाठ हेतु अतिरात्रकी भी अहीनसंज्ञता है। दशरात्रादिमें दशरात्रादिकी प्रवृत्तिकी गौणता कहते हैं। द्वादश-दिन कर्तव्य दशरात्रका द्वादशादिमें कर्तव्यता है। द्विरात्रि प्रभृतिमें सहस्र दक्षिणा है। चार रात्रि प्रभृतिमें अधिक दक्षिणादान पर प्रत्यह समभागसे दानविधि है। परिशेषकी अवशिष्ट समुदायका दान है। त्रयोदश अतिरात्रका विधान है। यथा—षोडशिग्रहरहित चार प्रथम अतिरात्र हैं। उनके मध्य प्रजातिकामका नव सप्तदश नामक प्रथम अतिरात्र है। ज्येष्ठ भ्रातृविशिष्ट स्त्रीके ज्येष्ठपुत्रका कर्तव्य विषुवत् नामक द्वितीय अतिरात्र है। जिसके भ्रातृव्य रहता, उसका गो नामक तृतीय अतिरात्र है। स्वर्गकाम वा आरोग्यकाम व्यक्तिका आयुः नामक चतुर्थ अतिरात्र है। धनाभिलाषीका ज्योतिष्टोम नामक पञ्चम अतिरात्र है। पशुकामका विश्वजित् नामक षष्ठ अतिरात्र है। ब्रह्मतेजः-प्रार्थीका त्रिवृत् नामक सप्तम अतिरात्र है। वीर्यकाम व्यक्तिका पञ्चदश नामक अष्टम अतिरात्र है। अन्नादि-अभिलाषी व्यक्तिका सप्तदश नामक नवम अतिरात्र है। प्रतिष्ठाकाम व्यक्तिका एकविंश नामक दशम अतिरात्र है। ग्रामपशुका ध्वंस होनेसे पुनर्वार उसकी प्राप्तिके लिये आप्तोर्याम नामक एकादश अतिरात्र है। भ्रातृव्यवान्का अभिजित् नामक द्वादश अतिरात्र है। ऐश्वर्यप्रार्थीका सर्वस्तोम नामक त्रयोदश अतिरात्र है। इसी प्रकार त्रयोदश प्रकार अतिरात्रका विषय कहा है।

२य कण्डिकामें दो सूत्रोंमें तीन अहीनका विधि है। उनके मध्य द्वितीय और तृतीय अहीनके षोडशिग्रहरहित दो अतिरात्र हैं। तीन अहीनके आङ्गिरस, चैत्ररथ और कापिवन तीन नाम कहे हैं। द्वितीय द्विरात्रिके उक्थ्य पूर्वमारुप अन्यका मतभेद है। पार्ष्टिक अग्निष्टोमके स्थानमें उक्थ्यनिर्देश है। संस्थभेदमात्र ही उसका धर्म है। पुण्ययोग्य होते भी जो पुण्यहीनकी भांति रहता, उसीका आङ्गिरसमें अधिकार है। पुत्रार्थी व्यक्तिका चैत्ररथमें अधिकार है। स्वर्गकाम वा पशुकाम व्यक्तिका कापिवनमें अधिकार है। त्रिसूत्रीके गर्ग, वेद, छन्दोम, अन्तर्वसु और पराक नामक पांच अहीन यज्ञोंका विधान है। उनके मध्य वेद त्रिरात्रिसाध्य एवं त्रिवृत्स्तोमयुक्त अपर समुदाय अतिरात्रसाध्य है। इस पञ्चभेद यज्ञमें संस्थभेदका कथन है। इस समुदायमें राज्य-कामका अधिकार है। फिर अन्तर्वसुमें पशुकामका

चार पदार्थमें सर्वकामका अधिकार है। उक्त मात्र भेदका कथन है। अग्निष्टुतोर, वामदम्भ, अभिष्ट संसर्प और विश्वामित्र नामक चार चार दिनसाध्य यज्ञका विधान है। उनके मध्य वामदम्भ यज्ञमें पुष्टिकाम नरशिका अधिकार है। उसमें त्रि मति दीक्षा एव इन चार यज्ञमें पुरोडाशविशिष्ट उपसद्का विधान कथित है। २य कण्डिकामें उसके विधानका प्रकारादि है। ३य कण्डिकामें पञ्चदिन साध्य तीन अहीनका विधान है। उनके मध्य प्रथम अहीनका नाम देवपचार है। द्वितीयका नाम पञ्चशारदीय है। इन उभय अहीनके विधानादिका कथन है। तृतीय पञ्चाहका व्रतवत् नाम कथन है। इस त्रिविध पञ्चाह यज्ञमें ज्योतिर्मे, महाव्रत और गौरायु नामक तीन एकाह यज्ञका विधि है। सर्वजित्की भांति इसमें दीक्षानियम और उसका विधानादि निर्दिष्ट है। ४र्थ कण्डिकामें छह दिन साध्य तीन अहीनका विधि है। तीन अहीनके ऋतुपङ्क्ति, एकपावत्क और त्रिककुब तीन नाम कहे हैं। इस त्रिविध यज्ञमें स्तोमविधानादि है। सप्ताहसाध्य सात अहीनका विधान है। उनके मध्य चारका उत्तम महाव्रत है। इन चारके मध्य तृतीयमें पशुकामका अधिकार है। पञ्चम अहीनका नाम इन्द्रसप्ताह है। इस पञ्चम सप्ताहमें द्वितीय पञ्चाहके आरम्भपर छह एकाह एव सुत्याह समुदायका विधान है। इस सप्ताह समुदायके अन्तिम सप्ताहमें ज्योतिः, गौः, आयुः, अभिजित् और सर्वजित् छह महाव्रतकी कर्तव्यता है। इसी प्रकार समुदाय दिनसाध्य यज्ञमें महाव्रतका विधान है। उत्तम सर्वस्तोमका विधान है। उसके शेष दिनको ज्योतिः, गौः, आयुः, अभिजित्, विश्वजित् और सर्वजित् महाव्रतविशिष्ट सर्वस्तोम अतिरात्र है। जनक सप्तरात्र नामक एक सप्ताह है। उसका विधानादि है। उत्तम सप्तम सप्ताहमें बृहद्रथन्तर सामयुक्त पृष्ठका विधान है। इस समुदायकी पृष्ठस्तोम संज्ञा है। इसी प्रकार अष्ट सप्ताह अहीनका विधान कहा है। उसके पीछे उसका विधानादि है। अष्टरात्र अहीनमें पाठित षडहके पीछे महाव्रत कर्तव्य है। नवरात्रमें त्रिककुप्, ज्योतिः, गौः, और आयुः नामक महाव्रतका विधान है। उसका प्रकारान्तर है। उसका विधानादि है। चार दशरात्रका विधि है। प्रतिष्ठाकामनाकारी यजमानका त्रिककुप् नामक प्रथम दशरात्र है। अभिचारकारीका कौसुरुबिन्द नामक द्वितीय दशरात्र है। पुरुंधरात्र नामक तृतीय दशरात्र है। पशुकाम यजमानका छन्दोम नामक चतुर्थ दशरात्र है। उसका विधानादि है। पौण्डरीक नामक एकादशरात्र एव उसका विधानादि कथित है।

२४श अध्यायमें ७ कण्डिका है। उसकी १म कण्डिकामें द्वादशरात्रसे एक दिन बढ़ा चत्वारिंशत् रात्र पर्यन्त यज्ञविधि है। उसमें जिस क्रमसे जो दिन उपदिष्ट है, वह दिन उसी प्रकार समझना पड़ती है। आवापिकसमूहका अन्यक्रम और ओपदेशिक समूहका उपदेशक्रम लिया जाता है। उपदिष्ट दिन व्यतिरिक्त अन्यदिन समूहका आवाप क्रम कथन है। यथा—यज्ञ अपूर्ण होनेसे दशरात्र आवाप रहता है। वह पहले नहीं, पीछे होता है। छह पार्ष्ठिक अह और चार छन्दोम अह मिलाकर दशरात्र आता है। अथवा पृष्ठ्य षडह, तीन छन्दोम और अविवाक्यके समुदायका नाम दशरात्र है। यह दशरात्र समुदाय दिनके अन्तमें मानना पड़ेगा। दशरात्रके पीछे एकाह विषयमें प्रकृतिविहित समुदायसे महाव्रत होता है। यज्ञ संख्यापूरणके लिये दशरात्र पीछे एकाह व्यतीत महाव्रत पड़ता है। महाव्रत व्यतीत अन्य कार्यसमूह आवापके पीछे और दशरात्रके पहले करते हैं। जहां षडह व्यतीत यज्ञसंख्यापूरण नहीं होता, वहां षडह पूरणके लिये अभिप्लवका व्यवहार चलता है। अभिप्लवके पहले पञ्चाह समुदाय भी पञ्चाह व्यतीत संख्यापूरण न पड़नेसे अनुष्ठित होता है। त्र्यह व्यतीत संख्या-पूरण न होनेसे त्र्यह विषयमें ज्योतिः, गौः और आयुका विधान है। उक्त तीनोंको त्रिककुप कहते हैं। चतुरह व्यतीत यज्ञसंख्या पूरण न होनेसे चतुरह विषयमें ज्योतिः प्रभृति तीन और महाव्रतका अनुष्ठान

कर पूरण कर्तव्य है। इसके व्यतीत संख्यापूरण न होनेसे द्वाह विषयमें गौः और आयुः पूरण हुआ करता है। यज्ञके आरम्भमें अतिरात्र कर्तव्य है। प्रायणीय और उदयनीयके मध्य आवापस्थान करना पड़ता है। जो आवाप करनेका विधि है, उसके अतिरात्रद्वय मध्य करणका विधान है। आवापसमूहके समवाय द्वारा जहां यज्ञ पूरण होता, वहां जो जो अनुष्ठान अल्प आता वही प्रथम किया जाता है। दो त्रयोदशरात्र यज्ञका विधि है। इसमें पृष्ठ सम्पादित होनेसे सर्वस्तोमनामक अतिरात्रका विधान है। अर्थात् समुदाय यज्ञमें द्वादशाह धर्मका विधान है। सुतरां इसमें भी द्वादशरात्र समूह सम्पादन और सर्वस्तोम अतिरात्रका अनुष्ठान करना चाहिये। ऐसा करनेसे त्रयोदशरात्रका पूरण होता है। इसका क्रम है। यथा—प्रथम दिन प्रायणीय अतिरात्र होता है। द्वितीय दिनसे छह दिन पर्यन्त पृष्ठ षडह करते हैं। अष्टमदिन सर्वस्तोम अतिरात्र होता है। नवम दिनसे चार दिन तक चार छन्दोम चलते हैं। त्रयोदश दिन उदयनीय अतिरात्र किया जाता है। द्वितीय त्रयोदशरात्रमें दशरात्रके पीछे महाव्रत करना पड़ता है। इसी प्रकार भेद कथित है। तन्तार्थ तृतीय त्रयोदशरात्रके गवामयनकी भांति सन्तरण-प्रकार है। चतुर्दशरात्रमें तीन यज्ञका विधान है। उनके विधानका प्रकारादि है। उनके मध्य शेष चतुर्दशरात्रमें विवाहोदकतल्पसंशयित गणका अधिकार है। पञ्चदशरात्रको चार यज्ञोंका विधान है। उनका विधान प्रकारादि एवं सप्तदशरात्रमें, अष्टादशरात्रमें, एकोनविंशरात्रमें और विंशतिरात्रमें इसी प्रकार आवापनपूरण कथित है। २य कण्डिकामें षोडशरात्र प्रभृति चारमें आवाप प्रकार है। उसके मध्य षोडशरात्रको प्रायणीयके पीछे पञ्चाह है। अष्टादशरात्रमें प्रायणीयके पीछे षडह है। एकोनविंशरात्रमें प्रायणीयके पीछे षडह एवं दशरात्रके पीछे व्रत है। इसी प्रकार आवाप उक्तिके द्वारा विधान प्रकार है। एकविंशतिरात्रमें दो अतिरात्र हैं। उनमें आवाप प्रकार और उसका विधानादि है। अन्नादिकाम व्यक्तिके द्वाविंशति रात्रका विधान है। उसके विधानका प्रकारादि है। प्रतिष्ठाकामके त्रयोविंशतिरात्रका विधान है। प्रजाकाम और पशुकाम व्यक्तिके चतुर्विंशतिरात्रका विधान है। यह द्विविध है। उनमें प्रथमका विधानादि और द्वितीयका संसद नाम तथा उसका विधानादि कथित है। अन्नादिकामके पञ्चविंशतिरात्रका विधि है। प्रतिष्ठाकामके षड्विंशतिरात्रका विधान है। धनकामके सप्तविंशतिरात्रका विधि है। प्रजाकाम तथा पशुकामके अष्टाविंशतिरात्र एवं द्वाविंशत्रात्रका विधि है। इस समुदायका क्रमशः विधान है। एकोनविंशत्रात्र, विंशत्रात्र, एकविंशत्रात्र एवं द्वाविंशत्रात्रका विधानादि है। त्रयस्त्रिंशत्रात्रका विविध भेद है। उसके विधानका प्रकार है। चतुस्त्रिंशत्रात्रावधि चत्वारिंशत्रात्रि पर्यन्त सप्तयज्ञका आवापक्रमानुसार पूरणविधि है। उसका विशेष नियम है। यथा—अन्नादिकामके चतुस्त्रिंशत्रात्र, प्रतिष्ठाकामके षट्त्रिंशत्रात्र, ऐश्वर्यकामके सप्तत्रिंशत्रात्र, प्रजाकाम एवं पशुकामके अष्टात्रिंशत्रात्र और चत्वारिंशत्रात्र यज्ञका विधान है। एकोनपञ्चाशत् रात्रमध्य सप्त यज्ञका विधान है। उनके मध्य प्रथमका नाम विधृति है। उसका विधानादि है। द्वितीयका नाम यमातिरात्र है। उसका विधानादि है। तृतीयका नाम पञ्चनाभ्यञ्जनीय है। विद्वानोंके मध्य अपनी ख्यातिके आकाङ्क्षियोंका इसमें अधिकार है। इसका विधानादि है। चतुर्थका नाम संवत्सरमित है। उसका विधानादि है। ३य कण्डिकामें इसके माहात्म्यकी प्रसङ्गाधीन पुत्रार्थियोंके कर्तव्य एकषष्टि-रात्रका विधान है। सविताके उद्देशसे पञ्चम ककुभका विधि है। उसका विधानादि है। उसमें पुत्रार्थीका अधिकार है। षष्ठ और सप्तमका सामान्य विधान है। शतरात्रका विधानादि और इस विधानमें विकल्प-विवरण कथित है। ४र्थ कण्डिकामें सवन सन्तन्य प्रभृति होमका विधानादि है। संवत्सर प्रभृति यज्ञमें गवामयन धर्मका अतिदेश है। आदित्यगणके अयन नामक यज्ञका विधानादि है। आदित्यगणके अयनकी भांति आङ्गिरसोंका अयनविधि है। उसका

विशेष नियम है। दृतिवातवात्के अयन नामक यज्ञका विधानादि है। कुण्डपायियोंके अयन नामक यज्ञका सावविधानादि है। इस यज्ञमें सुक्का खान-समूह पर होम और उपगान प्रभृतिका विशेष विधि है। सर्पसत्र नामक यज्ञका भेद विधानादि और उसमें गवामयन कर्मका अतिदेश कथित है। इस कण्डिकामें तापश्चित नामक यज्ञका विधानादि है। महातापश्चित यज्ञका विधानादि है। क्षुद्रक तापश्चित यज्ञका विधानादि है। त्रिसंवत्सर यज्ञका विधानादि है। महाव्रत नामक यज्ञका विधानादि है। द्वादश वत्सरसाध्य प्रजापतिसत्र नामक यज्ञका विधानादि है। षट्त्रिंशत् वत्सरसाध्य शाक्तानामयन नामक यज्ञका विधानादि है। शतवत्सरसाध्य साध्यानामयन नामक यज्ञका विधानादि है। सहस्रवत्सरसाध्य विश्वसृजामयन नामक यज्ञका विधानादि है। (मीमांसाके अनुसार यह सब वत्सर दिनसाध्य समझना चाहिये) सारस्वत यज्ञसमूहका विधानादि है। यात्सत्र नामक यज्ञविधि है। शतसंख्यक प्रथममर्मिको बकतरी और एक हय सहस्र संख्या पूरणको इस यज्ञमें वनमें छोड़नेका विधि है। सारस्वत यज्ञका दीक्षाकाल और देशादि विधान है। (यथा—चैत्र शुक्ल सप्तमी तिथिको सरस्वती विनशन नामक स्थानमें दीक्षा कर्तव्य है। सरस्वती नाम्नी जो नदी बहती है उसका पूर्व और पश्चिम भाग मनुष्यका देख पड़ता है। किन्तु मध्यभाग भूमिमें निमग्न रहनेसे किसीके दृष्टिगोचर नहीं होता। इसी स्थानको सरस्वती विनशन कहते हैं। इसमें दीक्षा विधानादिका प्रकार है।) १८ कण्डिकामें उसका अङ्ग विधानादि है। सरस्वती और दृषद्वतीके सङ्गमस्थलपर उसका विधानादि है। प्रयक्षणय नामक सरस्वतीके उत्पत्तिस्थानपर अग्न्येकामाय नामक यज्ञका विधि है। इस यज्ञमें कारपच नामक एक देशमें यजमानका अवभृथस्नानविधि है। यज्ञशेषमें अदर्शनीयकी कर्तव्यता है। दृषद्वतीवायुग्य तीन सारस्वत यज्ञका विधान है। पूर्वोक्त सकल यज्ञ पूर्ण न होते यजपति या सहदाय भी मर जानेसे वह यज्ञ समापनका विधि है। सकल पूर्ण होते भी यह यज्ञ समापन करना पड़ता है। यज्ञपतिका मृत्यु होनेसे आयु नामक अतिरात्र यज्ञकर और द्रव्यसमूह नष्ट होनेसे विश्वजित् नामक यज्ञकर समापन करनेका विभिन्न विधि है। उभय घटनाओंमें ज्योतिष्टोम द्वारा समापनरूप अन्य मतका कथन है। इसी प्रकार प्रथम सारस्वत कहा है। द्वितीय सारस्वत दृतिवात-वात्के अयनकी भांति कर्तव्य है। उसका विधानादि है। उसमें तिथिको अयनादिका भी विशेष विधान है। मकरायणपथका विशेष विधानादि है। तृतीय सारस्वतमें विश्वजित् और अभिजित् विधानादि है। उसमें कलिङ्ग् अथवा आचार्यके दार्षदत नामक यज्ञकी कर्तव्यता है। इस यज्ञमें एक वत्सके लिये वनमें भी सकल परित्याग करना चाहिये। द्वितीय वत्सर उसे निर्जन स्थानमें रखा करनेका विधि है। इसी पर्व सरस्वती तीर मैत्रावरुण नामक जो सकल प्राचीन ग्राम हैं, उनमें अग्न्याधानका आरम्भविधि और कुरुक्षेत्रमें परीणत् नामक स्थलपर अग्न्यारम्भ विधि है। उसके पीछे तृतीय वत्सर परीणत् नामक स्थानपर ही दर्शपौर्णमासान्त यागकी कर्तव्यता है। दृषद्वती तीरमें या यमुनामें अवभृथ स्नान और उसी स्थान पर मन्त्रपाठका विशेष विधान कहा है। उस कण्डिकामें चैत्र या वैशाखमासको यज्ञपतिमोको तुरायण नामक सारस्वत यज्ञकी कर्तव्यता है। उसको दीक्षाका विधानादि है। यह यज्ञ एक वत्सरसाध्य है। इसमें वर्ष पर्यन्त कर्तव्यका उपदेश है। दार्ष-दतकी भांति अनियत अवभृथस्नानविधि है। भरत-द्वादशाह प्रभृति द्वादशाह भेद कथन है। उसका विधानादि और उसविंसमूहमें गवामयनका विकल्प विधान विहित है।

२५श अध्यायमें १४ कण्डिका है। उनमें अङ्ग वैगुण्य दोषके उपशमको प्रायश्चित्तका विधान है। (प्रायश्चित्त शब्दका अर्थ है। यथा—अपूर्वक प्राय धातुके उत्तर क्त प्रत्यय लगानेसे प्राय पद निष्पन्न होता है। उसका अर्थ विधि अतिक्रमके लिये दोष है। चित धातुके उत्तर भावमें क्त प्रत्यय लगानेसे

चित्त पद निष्पन्न होता है। धातुसमूहका विविध अर्थ विहित रहनेसे उसका अर्थ सन्धान है। प्रायका अर्थात् विधि अतिक्रमके लिये दोषका चित्त अर्थात् सन्धान अर्थ आता है। इस वाक्यमें पाणिनि व्याकरणोक्त 'प्रायस्य चिति चित्तयोः' एवं 'पारस्कार प्रभृति' सूत्र द्वारा मध्यमें 'सुट्' आदेशपूर्वक यह पद निष्पन्न हुवा है। सर्वकार्यके अन्तमें अथवा निमित्तकालमें प्रायश्चित्तकी कर्तव्यता है।) प्रायश्चित्त विशेषका आदेश न रहनेसे सर्वत्र महाव्याहृति होमरूप प्रायश्चित्तका विधि है। विशेष आदेश अनुसार ही प्रायश्चित्त करना पड़ता है। यथा—"प्रणीताः स्वाहा अभिमृशेत्" यजुः श्रुतिद्वारा प्रणीताभिमर्षणरूप प्रायश्चित्त विहित होनेसे यही कर्तव्य है।) ऋग्वेदोक्त हौत्रिक कर्म उपघात होनेसे गार्हपत्य अग्निमें 'भूः' स्वाहा बोल अग्निदैवत होम करना चाहिये। इसमें कर्ताका विशेष आदेश न रहनेसे ब्रह्मको ही करना उचित है। ब्रह्मवरणके पूर्व निमित्त उपस्थित होनेसे ब्रह्मवरणके पूर्व ही व्याहृतिहोमका अन्य अपर ब्रह्मवरण कर उसके द्वारा कराते हैं। जिस अग्निहोत्रादिमें ब्रह्मवरणका विधि न हो, वह स्वयं कर्तव्य है। कालाहुति द्वारा सोममें इसका समुच्चय करना पडता है। यजुर्वेदोक्त कर्मका उपघात होनेसे "भुवः स्वाहा" कह होम करते हैं। वह भी पूर्वकी भांति ब्रह्मका ही कर्तव्य है। सोमके आग्नीध्रीय अग्निमें "भुवः स्वाहा" कह होम करना पड़ता है। इतनी ही पूर्वके साथ इसकी विभिन्नता है। इसका देवता वायु है। सामवेद विहित कर्मका उपघात होनेसे आहवनीय अग्निमें "स्वः स्वाहा" कह होम करना चाहिये। इसका देवता सूर्य है। सर्ववेदोक्त कर्मका उपघात होनेसे तीन वार पृथक् पृथक् "भूर्भुवः स्वः स्वाहा" वाक्य द्वारा एवं एक वार समुदाय मिलित वाक्य द्वारा चार वार होम करते हैं। "अयाश्चाग्ने" इत्यादि पञ्च ऋक् द्वारा प्रत्येक ऋक् पर आहवनीय अग्निमें पञ्च आहुतिरूप सर्वप्रायश्चित्त नामक होम करना चाहिये। स्मृतिविहित अज्ञात कर्ममें पृथक् और मिलित भावसे चार महाव्याहृति होम करते हैं। (जैसे—यज्ञोपवीतधारी व्यक्ति शिखा बांध पवित्र दक्षिण हस्त द्वारा कर्म करता है। इस नियमस्थलमें यज्ञोपवीतधारणादि स्मृतिविहित कर्म है। इसमें किसी प्रकार उपघात होनेसे व्यस्त और मिलित चार महाव्याहृति होमरूप प्रायश्चित्त कर्तव्य है।) उसके पीछे यजुर्वेदोक्त सर्वप्रायश्चित्त नामक पूर्वोक्त पञ्च ऋक्वेदीय आहुतिरूप प्रायश्चित्त समुदाय ज्ञात वा अज्ञात कारणसे करनेका विधि है। (किन्तु इसमें सम्प्रदाय भेद है। यथा—गार्हपत्यमें भूः, दक्षिणाग्निमें भुवः, आहवनीय अग्निमें स्वः, एवं सर्वप्रायश्चित्त नामक पञ्च आहुतिरूप प्रायश्चित्त होममें भूर्भुवः स्वः कहा है।) उसके पीछे कर्मविशेषके अनुसार प्रायश्चित्तविधान कहा है। इस अध्यायकी ७म कण्डिकामें ८म सूत्र पर्यन्त उक्त समस्त विषय वर्णित है। उसके आगे ८म सूत्रसे कर्मसमाप्तिके पूर्व यजमानका मृत्यु होनेसे कर्मसमाप्ति उसी समय हो जाती है। एक ऐसा पक्ष है। दूसरे पक्षमें ऋत्विक् प्रभृति अवशिष्ट भाग समाप्त करते हैं। उसमें कर्मसमाप्ति पर्यन्त उत्तर क्रियाविशेषका विधान विहित है। ८म कण्डिकामें उपकृत पशुके पलायन प्रभृति पर प्रायश्चित्तके भेदका कथन है। उसके आगे अन्त्ययागपद्धति है। ८म कण्डिकामें अस्थिके सञ्चयका प्रकार आदि है। १०म कण्डिकामें यज्ञविशेष करनेके लिये उद्यम करनेके पीछे वह किया न जानेसे विश्वजित् नामक अतिरात्र यज्ञ करनेका विधि है। यज्ञ आदिके लिये दीक्षा धारनेसे यदि दैवात् वा किसी मनुष्यके लिये वह दीक्षा अर्धक्षत रहे वा स्वामीका यज्ञ समापन न करे और इस प्रकार बुद्धि उपस्थिति हो जाये, तो सोमयुक्त साधारण धान्य घृतादि सर्वस्व दक्षिणाके साथ विश्वजित् नामक अतिरात्र यज्ञ करना चाहिये। अध्वर्यु प्रभृतिका दैवात् स्व स्व कार्य किया न जानेसे अदक्षिणाभावमें ही कर्म समापन कर पुनर्वार अन्यको वरणपूर्वक याग आरम्भ करनेका विधि है। उसमें दिनके भेदका विशेष नियम है। दीक्षित व्यक्तिकी पत्नी यदि रजस्वला हो, तो दीक्षारूप शङ्कुनिधान कर रक्तस्राव पर्यन्त वालुकामें अवस्थान-

करना चाहिये। सुत्या वर्त्तमान रहते सिकतामें उपवेशन करते हैं। प्रातःकाल और सायंकाल वेदीके निकट सिकता पर बैठते हैं। चतुर्थ दिवस गोमूत्रमिश्रित जल द्वारा स्मृतिविहित स्नान कर यथा परिधानपूर्वक सान्निपातिक कार्य करना चाहिये। आरादुपकारक कर्म कर्त्तव्य नहीं। (दीक्षणीय भूमि उत्क्षेपन प्रभृति कार्यको आरादुपकारक कार्य कहते हैं।) यदि प्रसूता होनेसे दश रात्रिके पीछे स्नान करना चाहिये। मतान्तरमें गर्भिणीको दीक्षाका निषेध है। किन्तु "यज्ञक्रिया गर्भी" श्रुतिके अनुसार गर्भवतीको भी दीक्षामें अधिकार है। कात्यायनका यही मत है। दीक्षित व्यक्तिके दुःस्वप्नादि दर्शन प्रभृतिमें प्रायश्चित्तका विशेष विधि है। अमध्ये प्राण और अपान सम्बन्धमें प्रायश्चित्तका विधान है। सोमके ऊपर मेघ बरसनेसे अभ्यात्मक नियमपूर्वक उसमें प्रायश्चित्तका विधि है। अमध्ये दीक्षाविषयमें और द्रोणकलशके दोषविषयमें प्रायश्चित्तका विधान है। अग्निभेदनमें होमभेद प्रायश्चित्त है। ११श कण्डिकामें सोमका अपहरण होनेसे अथवा रक्तिमा युक्त दुग्ध और दध सोमकार्यमें निक्षेप कर अभिषव करनेका विधि है। अद्भुतकालीन बाहिर भ्रम लताकी भाँति अङ्कुरित होनेसे वे फाल्गुन कहाता है। ये फाल्गुन एक प्रकार (सोम सदृश पूतिका नामक एक लता), श्वेत वर्ण दूर्वा, अथवा रक्तिमायुक्त दूर्वा, हरितवर्ण कुश अथवा अपक्व कुश—इनके द्रव्यमें पूर्व पूर्व द्रव्यका अभाव आनेसे पर पर द्रव्य प्रतिनिधान कर अभिषव करनेका नियम है। उसमें गोदान प्रायश्चित्त कर उक्त द्रव्य द्वारा यज्ञ समापन कर्त्तव्य है। अवभृथ पीछे पुनर्वार उसमें यज्ञविधि है। सोमकलशके भेदानुसार सामपाठके प्रायश्चित्तका विधान है। अभिषव कर्ममें प्रकृति परिमित सोमरस प्राप्त होनेसे चमसादि द्वारा कहीं कहीं अन्य पूर्ण कर द्रोणकलशकी पूर्णता सम्पादन करना पड़ता है। सोम पीछे मिलने पर जो द्रव्य मिल गयी, उसे जो का पुनर्वार यज्ञ करनेका विधि है। उसमें गोदान प्रायश्चित्त करनेका नियम है। १२श कण्डिकामें सोमका आधिक्य होनेसे साम प्रभृति वचनविशेषके अनुसार प्रायश्चित्तके भेदका विधान है। दीक्षित व्यक्तिके रोग आनेसे द्रोणकलशमें वा यष्टिपिप्पली प्रभृति वपन किया जाये, उसके मध्य जो द्रव्य देनेकी इच्छा हो उसी लेकर चिकित्सकको उसकी चिकित्सा करना चाहिये, किन्तु तद्व्यतीत अन्य द्रव्यद्वारा चिकित्सा विधेय नहीं। उसका विधानादि है। ज्वरयुक्त व्यक्तिके लिये भी पूर्वोक्त देशमें अवस्थानकाल पर्यन्त होमको शान्तिका विधान है, अन्यत्र नहीं। प्रातःसवनमें उसके मन्त्रविशेष द्वारा अभिषेकका प्रकार है। सवनके पीछे दीक्षित व्यक्तिको समुदाय ऋत्विक् अपने करते हैं। उसमें यजमानके मन्त्रवेद द्वारा स्पर्शका विधि है। दीक्षित व्यक्तिका मृत्यु होनेसे उसको जलाने पीछे उसका अस्थिसमूह कृष्ण-चर्मके वर्ममें बाँध मृत व्यक्तिके पत्नीको स्रोत कर्म और पतिका कर्म सम्पादन करना चाहिये। पत्नीका मृत्यु होनेसे उसके भैदेके ज्ञातादि दीक्षित हो यज्ञ समापन करते हैं। इसी प्रकार मतान्तर मिलता है। किन्तु किसीके मतमें मृत्यु होनेसे यज्ञका भी समापन होता है। अन्य अवसर उसमें प्रायश्चित्तका विधानादि है। १३श कण्डिकामें उपासनरके दिन यजमानका मृत्यु होनेसे विशेष प्रायश्चित्तका विधान है। यज्ञकी दीक्षाके मध्य ही मृत्यु होनेसे उक्त होमादि कार्यके लिये दीक्षित व्यक्तिको कर्मफल होता है। किन्तु मतान्तरमें कहा है—दीक्षित व्यक्तिके भ्राता प्रभृतिको ही प्रकृत यज्ञफल मिलता है। सजीव अग्निमें सजीव द्रव्य द्वारा शान्तिक भेदेसे पुत्रादिक्रमके सान्निपत्यादि यज्ञ अनुष्ठित होनेसे भैदेसेको ही फलप्राप्ति होती है। किन्तु प्रकृत यज्ञफल यजमान पाता है। उसमें उपदोषी व्यक्तिको नववेदनके दिनसे द्वादश दिन पर्यन्त सान्निपातिक करना चाहिये। यदि मेदेको अहिताग्नि न हो, तो यज्ञकारी व्यक्तिको ही अग्निमें कार्य करना पड़ता है। उसमें वैश्वानरनिर्वाप नामक प्रायश्चित्तका विधान है। १४श कण्डिकामें एक राजाके अधीन दो यजमान यदि पर्वत वा नदी प्रभृतिके व्यवधानशून्य समान देशमें यज्ञ करे, तो

उसमें सोमसंभव होता है। फिर यदि परस्पर विरोधी दो यजमान इसी प्रकार एक स्थानपर यज्ञके लिये सोमका अभिषव करें, तो मिलित भावमें कार्य करनेके लिये उसका संभव कहते हैं। उसमें समुदाय कर्म सत्वर सम्पादन करना उचित है। देशकाल भिन्न होनेसे, पर्वतादिका व्यवधान रहनेसे और परस्पर अविरोधी होनेसे वह संभव नहीं होता। इसी प्रकार भेदका कथन है। संभवविषयमें अपनी भांति मृत्यु-कामनाकारी होत्रादिकर्तृक कर्तव्य कर्मविशेषका विधान है। यथा—होताके मृत्युकामनाकारी होता, अध्वर्युके मृत्युप्रार्थी अध्वर्यु और यजमानके मरणाकाङ्क्षी यजमानको वही कर्म सम्पादन करना चाहिये। यह यज्ञ परस्पर द्वेष रहनेसे ऐसे देशमें अनुष्ठित होता जहां रथपर बैठ एक दिनमें जा सकें। परस्पर द्वेष न रहने अथवा उक्त नियमकी अपेक्षा देशका दूरत्व पड़नेसे अनुष्ठान असम्भव है। पूर्वोक्त होता प्रभृतिके मध्य एक जनमात्र कर्मका अनुष्ठान करनेसे अथवा एक जन मरनेसे स्व स्व यज्ञमध्यवर्ती अध्वर्यु प्रभृति अवशिष्ट कर्म सम्पादन करेंगे। उसमें अन्य वरणकी अपेक्षा करना नहीं पड़ती। सोमादि जल जानेसे प्रतिनिधि द्रव्य द्वारा कर्म समापन करना चाहिये। पश्च गोदान कर यह यज्ञ समापन करनेका विधि है। द्वादश रात्रिके पूर्व यह दोष आनेसे पुनर्वार यज्ञारम्भ और परिशेषको पश्च गोदान दक्षिणामात्र प्रायश्चित्त करना चाहिये। इसी प्रकार मतान्तरका विधान है। ब्रह्माका ही विहित कर्ममें अधिकार रहने और विशेष आदेश न मिलनेसे समुदाय प्रायश्चित्त होममें ब्रह्माका अधिकार है और ब्रह्मशून्य अग्निहोत्रादि कार्यमें यजमानके ही अधिकारका विधि कहा है।

२६श अध्यायमें ६ कण्डिका हैं। इन समस्त कण्डिकाओंमें प्रवर्ग्यका उपयोगी महावीरसम्भरण कर्म प्रतिपादित है। (यथा—मृत्पिण्ड, वल्मीक-लोष्ट्र, शूकरकर्तृक उत्पाटित मृत्तिका, पूतिका नामक लताविशेष और गवेधुक नामक जलसन्निहित महारण्यजात शुक्लफलविशेष—समस्त द्रव्य सञ्चय-पूर्वक पूर्वदिक् वा उत्तरदिक् रख कृष्णमृगचर्म और कुद्दालको उत्तरदिक् रखना चाहिये।) उक्त समस्तके ग्रहण और विधानका मन्त्रकथन है। इसमें कुम्भकारकर्तृक भाण्डादि निर्माणको उपयोगी एवं अति चिक्कण मृत्तिका ग्रहण करना पड़ती है। ऐसी मृत्तिका कृष्णमृगचर्मको उत्तरदिक् रखना चाहिये। उसकी दक्षिणदिक् वल्मीकलोष्ट्र रखते हैं। सम-चतुष्कोण भूस्थानकी पूर्वदिक्में द्वार और सात बार भूसंस्कार कर उसके ऊपर बालुका आच्छादनपूर्वक उसमें पञ्च अरत्नि अर्थात् प्रायः पांच हाथ परिमित मृगचर्म डाल उसके ऊपर उपकरणसमूह रख देना चाहिये। उत्खनन, जलद्वारा अभिषिञ्चन और संस्कार द्वारा संसर्गविषयमें मन्त्रसमूहका कथन है। उसके अनन्तर अध्वर्युका गवेधुक और छागदुग्ध पृथक् भावसे रख वल्मीकलोष्ट्रादिके साथ मृत्पिण्ड मिलाना चाहिये। उसके पीछे महावीर कर्तव्य है। उसका स्वरूप है। (यथा—परिमाणमें एक प्रादेश अर्थात् अर्ध हस्त और मध्यदेश उलूखलकी भांति सङ्कुचित रहता है। उपरिभागमें तीन अङ्गुलिपरिमित स्थानके अनन्तर ही यह सङ्कुचित मेखला लगाना पड़ती है।) महावीर निष्पन्न होनेसे "मखस्य शिरः" मन्त्र पाठ-पूर्वक उसके सर्गका विधि है। किसीके मतमें इस मन्त्र द्वारा उसका ग्रहण है। इसी प्रकार अपर दो महावीरका विधान है। अभिमर्शनके पीछे समुदायको भूमिमें निहत करनेका विधि है। स्रुक्के मुखकी भांति आकृतिविशिष्ट, रौहिण कपाल एवं वक्ष्यमाण पुरोडाशकपालकी भांति गोलाकार दोहनपात्रद्वय भूमिमें स्थापनकर अवशिष्ट मृत्तिका प्रायश्चित्तके लिये निहत करना चाहिये। "मखाय त्वेति" मन्त्र पाठ-पूर्वक गवेधुकसमूह चूर्णकर अश्वपुरीष द्वारा प्रदीप्त दक्षिणाग्निसे "अश्वस्य त्वेति" मन्त्र पाठपूर्वक इस मृत्तिकामें धूपदान करते हैं। उखाकी भांति प्रदाहन आदिका विधि है। चतुष्कोण अवट बना उसमें श्रपण अर्थात् पाकसाधन काष्ठादि बिछा उसके ऊपर तीन महावीर वक्रभावसे रखने पड़ेंगे। पीछे उसके ऊपर पुनर्वार इस काष्ठका आच्छादन डाल दक्षिणाग्नि द्वारा जलाना चाहिये। दग्ध होने पर फिर

बाद सब घासमुष्टिसे दोहना पड़ेगा। २य कण्डिकामें महावीरके निधान पीछे प्रवर्ग्यके आवरणका विधान है। गार्हपत्यके पूर्व भागमें मृत्पिण्डस्थापन लेकर उस पर पात्रसमूहके स्थापनका विधि है। प्रोक्षणी संस्कृत और स्थापित कर यज्ञको प्रसूताका स्मरण है। होतादिका प्रेरण है। यज्ञके पूर्वद्वारसे स्रुवा और मयूख निकाल करके दक्षिणदिक् जहां बैठ होता निघात स्रुवा और मयूख दिया रखे, वहीं उसके निधान करनेका विधि है। गार्हपत्य और आहवनीयमें उत्तरदिक् अङ्गारनिवाप है। दक्षिणदिक् मिलितसम्भारके उत्कर अङ्गारनिवापको कर्तव्यता है। आहवनीयको पूर्वदिक् समाहारमन्त्रो आहरण कर दक्षिणदिक् प्रास्तरण होता है। उत्तरदिक् राजासन्दी और कृष्णाजिन आस्तरण कर उसमें महावीर निधान अथवा उसके द्वारा आच्छादन करना चाहिये। अध्वर्यु वा अन्य कोई स्रुवादि निष्क्रमण करेगा। पीछे विहित सिकताके मध्य महावीरका प्रवेशन कहा है। ३य कण्डिकामें प्रस्तोताका प्रेरण है। प्रस्तोमिएका आच्छादन है। आज्यसंस्कारके बाद खरतप्त करना सिकताके मध्य स्थापनका विधि है। उस समय शुष्क आज्यमें संस्कृत तृणपूर्ण महावीरका निधान है। महावीरके ऊपर प्रादेशमात्र मन्त्रका पाठ है। दक्षिणदिक् यजमानके स्थान पाथिका निधान है। उत्तरदिक् प्रादेशका निधान है। महावीरको चतुर्दिक् अभ्यास कर परिश्रयणका विधि और महावीरके आच्छादनका विधि कथित है। ४र्थ कण्डिकामें आच्छादनके समय प्रस्तोताका प्रैष है। महावीरको चतुर्दिक् कृष्णाजिन निर्मित व्यजन द्वारा व्यजन करनेका विधि है। व्यजनके समय वाम और दक्षिणभावसे तीन बार प्रदक्षिणका विधान है। ठीक प्रदीप्त होनेसे उसमें सौ तोलेके घृत डाल महावीरके पोंछनेका विधि है। उसी समय प्रतिप्रस्थाताके प्रवर्तनका विधि है। आग्नीध्र पर उसके स्थापनका नियम है। प्रस्तोताका प्रैष है। यजमानके साथ ऋत्विकोंका परिक्रमण है। प्रस्तोता व्यतीत अपर पञ्च ऋत्विकोंके उपस्थानका विधि है। प्रस्तोताके साथ सभी छन्दोगोंके परिक्रमणका विधि

है। पत्नीके शिरका आच्छादन और उसके द्वारा महावीरमोक्षणविधि है। परिश्रितको रौहिण आहुति का विषय कथित है। ५म कण्डिकामें धर्मधुक् बन्धनके लिये रज्जु और वत्सके पद बन्धनको सन्दान ग्रहणपूर्वक गार्हपत्यमें जा मन्त्र पढ़ उसका नाम उच्चारणपूर्वक उसे खड़ेसे तीन बार उसके आह्वानका विधि है। प्रस्तोताका प्रैष है। मन्त्रपाठके अनु-सार समागत गौको उस रज्जु द्वारा स्तम्भमें बांध और सन्दान द्वारा उसके पद बन्धन कर "घर्माय दोग्धेति" मन्त्र पढ़ वत्सको स्तनपानसे विरत करना चाहिये। विहित मन्त्रपाठपूर्वक पिन्वन नामक पात्र-विशेषमें उसके दोहनका विधि है। स्तनाभ्यञ्जनका विधि है। ऐसे ही मयूखमें छाग बांध प्रतिप्रस्थाता उसको दोहन करेगा। प्रतिप्रस्थाताके प्रैषका विधि है। गोके निकटसे अध्वर्युके उत्थानका नियम है। पर्यावर्तनके ग्रहणका विधि है। पर्यावर्तन द्वारा महावीर ग्रहण कर उसे उत्क्षिप्त कर पुनर्वार उसे ग्रहण करनेका नियम है। दुग्धरूप धर्मके निम्न देशमें उपयमनीका स्थापन है। उपयमनी द्वारा धृत महावीर पर छागदुग्ध सेचन कर निर्वापित करने और गोदुग्ध आनयन करनेका विधि है। ६ष्ठ कण्डिकामें आहवनीयमें वा वातनाम जपका विधि है। उपयमनीमें पतित दुग्ध वा घृतका सिञ्चनविधि है। उसके पीछे प्रस्तोताके प्रैषका विधि है। वषट्कारके साथ मन्त्रपाठपूर्वक होमका विधि है। तीन बार महावीर उत्कम्पन करनेका नियम है। वषट्कारानुवषट्कार मन्त्रपाठ-पूर्वक पुनर्वार होमका विधि है। हुतावशिष्ट द्रव्यका भक्षानुमन्त्रण है। यजमानकर्तृक धर्मका अनुमन्त्रण है। अतिसर्गके लिये पात्रमें उच्छ्रित धर्मके शेषसमूहका अनुमन्त्रण है। ईशानदिक्‌को गमन कर सिकताके मध्य अध्वर्यु कर्तृक महावीरके निधानका विधि है। निधानके समय मध्य प्रवर्ग्य द्वारा आहुति दानपूर्वक प्रथम परिधिमें बिखरा हुआ गवधसमूह निधान करनेका विधि है। ऐसे ही तीन बार आहुति दे अवशिष्ट प्रवर्ग्य दक्षिणदिक् हृदयमें प्रवेश करा देना चाहिये। अद्भुत प्रथम प्रवर्ग्य महावीरस्थ घृतादि द्वारा

लिप्त कर प्रतिप्रस्थाताको देते हैं। उसके पीछे द्वितीय रौहिणके होमका विधि है। मध्यम परिधिमें निहत पश्च विकङ्कत शकल आहवनीयमें आहुति देना चाहिये। उपयमनीस्थ धर्मोच्य अग्निहोत्रके विधानानुसार आहुति दे समुदाय ऋत्विक् प्रभृति भक्षण करते हैं। खरमें उच्छिष्ट धौत कर उपयमनीको निधान करना पड़ता है। इसी समय उपयित पश्च शकल आहवनीयमें प्रहार किये जाते हैं। उसके पीछे धेनुको तृण जल देनेका विधि है। समुदाय पात्रसमूह आसन्द्या करनेका विधि है। खर, स्थूणा, मयूख, कृष्णाजिन, अभ्रि, उपशय और आसन्दीके एक बार आसादन और प्रोक्षणका विधि कथित है। ७म कण्डिकामें उपसदके पीछे प्रवर्ग्य उत्सादनका प्रकार है। अवभृथकी भांति अध्वर्युकर्तृक सामगानके लिये प्रस्तोताका प्रेषण है। अवभृथकी भांति देशगति और निधन है। सामगानके पीछे सकलके उत्सादन देशमें अर्थात् महावीरादि पात्रके त्यागदेशमें गमनका विधि है। उस स्थानमें यज्ञ अग्निचितिशून्य होनेसे सकलके उत्तर वेदिमें गमनका विधि है। किन्तु यज्ञ अग्निचितियुक्त रहनेसे परिष्यन्दमें जाना पड़ता है। उक्त उत्सादन देश वा उत्तर वेदि परिषेक कर उत्तर कार्यकी कर्तव्यता है। अध्वर्युको उत्तर वेदिमें प्रथम महावीर और सर्वदिक्में अपर दो महावीर निधन करना चाहिये। वहीं उपशया अर्थात् महावीरादिकी निर्माणावशेष मृत्तिका स्थापन करना पड़ती है। महावीरादिकी चारो ओर परीशासद्वय निधान करते हैं। नीचे और बाह्य देशमें रौहिणी एवं हरणी नामक स्रुक्द्वय निधान करना चाहिये। रौहिणीकी उत्तरदिक् अग्नि तथा दक्षिणदिक् आसन्दी और अभ्रिकी उत्तरदिक् धवित्र अर्थात् कृष्णाजिन निर्मित व्यजन समूहमें निधान करते हैं। उसके पीछे परिधि, उपयमनी, रज्जु, सन्दान, वेद, पिन्वन, स्थूणा, मयूख, रौहिण, कपाल, भृष्टि, स्रुव, मुञ्जकुट, खर, उच्छिष्ट खर प्रभृति निधानका विधि है। दुग्ध द्वारा महावीरादि सब पात्रके गर्तपूरणका विधि है। पत्नीके साथ सकलके चात्वाल मार्जनका विधि है। उसके पीछे ब्रह्म प्रभृतिको याज्ञिक द्रव्यसमूहके प्रदानका विधि है। महावीर भङ्ग होनेसे यथाकाल प्रायश्चित्त करनेका विधान है। इस प्रायश्चित्तका प्रकारादि है। प्रवर्ग्यके चरणका विधि है। उसमें पूर्णाहुति होमका प्रकार है। सम्प्रियमाण महावीर भग्न होनेसे उसके प्रायश्चित्तका नियम है। प्रवर्ग्यके अधिकारीका निर्देश है। हुतशेष द्रव्यके भक्षणका विधि है। प्रवर्ग्य-चरणके आद्यन्तमें शान्तिकाध्यायके पाठका विधि है। इन दोनों अध्यायोंके मध्य १म अध्याय द्वारपिधान पीछे और २य अध्याय आसन्द्यामें,पात्र निधानके पीछे पढ़ना पड़ता है।

कात्यायनसूत्रमें उक्त समस्त विषय अति विस्तृत भावसे वर्णित है।

निम्नलिखित व्यक्तिने कात्यायनश्रौतसूत्रका भाष्य बनाया है,—

१ अनन्त, २ कर्क, ३ कल्याणोपाध्याय, ४ गङ्गाधर, ५ गदाधर, ६ गर्ग, ७ पितृभूति, ८ भर्तृयज्ञ, ९ महादेव, १० मिश्राग्निहोत्री, ११ श्रीधर, १२ हरिहर। याज्ञिकदेवने श्रौतसूत्रपद्धति और पद्मनाभने कात्यायनसूत्रपद्धति नामसे स्वतन्त्र पद्धति रचना की है।

२ गोभिलके पुत्र कात्यायन। इन्होंने गृह्यसंग्रह और छन्दोपरिशिष्ट या कर्मप्रदीप रचना किया है। किसी किसीके अनुमानमें श्रौतसूत्रकार कात्यायन और स्मृतिप्रणेता कात्यायन उभय अभिन्न व्यक्ति थे। किन्तु उभयकी रचनाप्रणाली देख वैसा बोध नहीं होता।

हरिवंशमें विश्वामित्रवंशीय कतिके पुत्र कात्यायनोंका * नाम मिलता है। फिर इसी विश्वामित्र वंशमें

* "विश्वामित्रस्य च सुता देवरातादयः स्मृताः।
विख्यातास्त्रिषु लोकेषु तेषां नामानि मे शृणु॥
देवश्रवाः कतिश्चैव यस्मात् कात्यायनाः स्मृताः।
शालावत्यो हिरण्याक्षो रेणोर्जज्ञेऽथ रेणुमान्॥
साङ्कृतिर्गालवश्चैव मुद्गलश्चेति विश्रुताः।
मधुच्छन्दो जयश्चैव देवलश्च तथाष्टकः॥
कच्छपो हारितश्चैव विश्वामित्रस्य ते सुताः।
तेषां ख्यातानि गोत्राणि कौशिकानां महात्मनाम्॥
पाणिनो बभ्रवश्चैव ध्यानजप्यास्तथैव च।
देवला येषवश्चैव याज्ञवल्क्याघमर्षणाः॥
औदुम्बरा ह्यभिष्णातास्तारकायनचुञ्चुलाः।" (हरिवंश २७ अ०)

वेदशाखाप्रवर्तक आहुति, गालव, मुद्गल, मधुच्छन्दा, देवल, अष्टक, कच्छप, हारित, पाणिनि, बभ्रु, ध्यानजप्य, देवरात, शालङ्कायन, बाष्कल, लेहु, याज्ञवल्क्य, अघमर्षण, औदुम्बर, नारायण प्रभृति आविर्भूत हुये। उनमें याज्ञवल्क्यने शुक्लयजु अर्थात् वाजसनेयी शाखा का प्रचार किया। श्रौतसूत्रकार कात्यायन उक्त वाजसनेयी शाखाके अनुवर्तक थे। इसी कारण समझते हैं कि विश्वामित्रवंशीय (याज्ञवल्क्यके अनुवर्ती) कात्यायन ऋषि ही कात्यायनश्रौतसूत्रके रचयिता थे।

स्मृतिकार कात्यायन गोभिलके पुत्र थे। * कात्यायनके कर्मप्रदीप नामक स्मृति ग्रन्थमें निम्न लिखित प्रधान विषय आया है—

यज्ञोपवीत, आचमन, मातृगण, आभ्युदयिकश्राद्ध, ज्येष्ठभ्राताओंका क्रम परिवेदनदोष, उसका प्रतिप्रसव अग्निक्रिया, अन्वाधान, चरुविधि, पश्वाचार, स्रुवादिलक्षण, सायंप्रातर्होमकाल, होमनियतकर्ता, स्नानादिक्रिया, सन्ध्योपासना, तर्पण, पञ्चयज्ञप्रकरण, हविर्भागादिभाव, श्राद्धकालादि, अमावास्या श्राद्धकाल, श्राद्धभोजन, अर्घ्य विधि, दर्शपौर्णमासहोमका आदि, प्रवासियोंका पूर्वक्रम औपासनकर्म, दाम्पत्य अविभक्त द्रव्यादि, प्रेतकार्य, शौचोपपादन अर्थ दाहादि, अशौचमें कर्तव्यादि, पौरुषश्राद्धादि, होमोपविधि एवं गो अश्वप्रभृति दान, नरकप्रकार, सन्यास नाम एवं विधि, अमावास्यादिसंज्ञा और श्राद्ध विधि।

अग्न्याधानमें आहुतियोंका दशविध उद्धार और शान्तिकर्मादि किया है।

8 कात्यायन वररुचि। अनेक लोग इन्हींको पाणिनिसूत्रका वार्तिककार बताते हैं। सोमदेव भट्टविरचित कथासरित्सागरमें लिखा है,—“पुष्पदन्त नामक महादेवके एक अनुचरने गौरीके शापवश अभिशाप हो मर्त्यलोक आ वत्सराजकी कौशाम्बी नगरीमें सोमदत्त नामक ब्राह्मणके औरससे जन्म ग्रहण किया था। यही कात्यायन वररुचिके नामसे विख्यात हुये। उनके जन्मकाल आकाशवाणी सुन पड़ी थी, 'यह बालक श्रुतिधर होगा और वर्ष पण्डितके निकट समस्त विद्या लाभ करेगा। व्याकरण शास्त्रमें इसकी असाधारण व्युत्पत्ति होगी और वर अर्थात् श्रेष्ठ विषयमें रुचि रहनेसे वररुचि * नाम पड़ेगा।' थोड़ेदिनके बाद वह असीम बुद्धि और श्रीमतिसम्पन्न हो गये। एक दिन उन्होंने किसी नाटकका अभिनय देख माताके निकट वही नाटक समस्त आद्योपान्त आवृत्ति किया और उपनयनके पूर्व व्याडिके मुखसे प्रातिशाख्य सुन उसे समस्त कण्ठस्थ कर लिया था। कात्यायनने वर्षपण्डितको सर्वथा विपक्ष ग्रहण कर नाना शास्त्रमें पाण्डित्य लाभ किया, यहां तक कि उन्होंने व्याकरणिक तर्कमें पाणिनिको भी हरा दिया। अन्तमें महादेवके अनुग्रहसे पाणिनिने जय पाया। कात्यायनने महादेवको कोपशान्तिके निमित्त पाणिनि-व्याकरण पढ़ उसको सम्पूर्ण और संशोधित किया था। अन्तिमको वह मगधराज योगानन्दके मन्त्रिपदपर नियुक्त हुए।

हेमचन्द्र, मेदिनी और त्रिकाण्डशेष अभिधानमें कात्यायनका एक नाम वररुचि † लिखा है।

अन्यान्य बौद्धसूत्रके मतमें भी वार्तिककार कात्यायन वररुचि और प्राकृतप्रकाश नामक

---

* “[illegible] ।
[illegible]” (कर्मप्रदीप १।१)

यहां टीकाकारने गोभिलको [illegible] किया जाता है। [illegible] है। यथा—

“[illegible] ।
[illegible] ।
[illegible] ।
[illegible]”

(कर्मप्रदीप १।[illegible])

* “तस्य श्रुतिधरो भावी [illegible] ।
[illegible] ।
[illegible] ।
[illegible] ।”

(सोमदेवकृत कथासरित्सागर)

† हेमचन्द्र अभिधानचिन्तामणि ३।५१६, मेदिनी नान्त १०८ और त्रिकाण्डशेष २।७।२२।

व्याकरणकार वररुचि दोनो एक ही व्यक्ति थे। सम्भवतः उन्होंने इण्डिया हाउसके पुस्तकालयकी सर्वानुक्रमणीमें "अत्र शौणकादिमतसंगृहीतुर्वररुचेरनुक्रमणिका" वचन पढ़ उक्त मत प्रकाशित किया है। वास्तवमें कात्यायन वररुचि एवं प्राकृतप्रकाश नामक प्राकृत व्याकरणके रचयिता दोनो एक व्यक्ति नहीं थे। प्राकृतप्रकाशकार वररुचि वासवदत्ताप्रणेता सुबन्धुके मातुल थे। पुराविदोंके मतमें यह वररुचि हर्षविक्रमादित्यके समसामयिक अर्थात् खृष्टीय ६ष्ठ शताब्दके लोग रहे। (Hall's Vasavadatta, preface, p. 6.) किन्तु इसमें कोई सन्देह नहीं कि पाणिनिके वार्तिककार उसके बहुशत वर्ष पूर्व विद्यमान थे। सोमदेवने व्याडि, पाणिनि और कात्यायन तीनोंको समसामयिक लिखा है। किन्तु युक्तिपूर्वक पाणिनिसूत्र और कात्यायनका वार्तिक देखनेसे उभय व्यक्तिको समसामयिक मान नहीं सकते।

एक तो, पाणिनिके समय जिस प्रकार शब्दशास्त्रका नियम प्रचलित था, वह वार्तिकरचनाके समय अनेक अप्रचलित हो गया। जैसे, "अड्डतरादिभ्यः पञ्चभ्यः। (पा ७।१।२५) अर्थात् डतर और डतम प्रत्ययान्त एवं अन्य, अन्यतर तथा अन्यतम पांच सर्वनाम शब्दोंके उत्तर क्लीवलिङ्गमें प्रथमा और द्वितीयाके एकवचनमें 'अदड्' होगा। यथा—कतरत् कतमत् इत्यादि। फिर पाणिनिने दूसरा विशेष विधि बढ़ाया— "नेतराच्छन्दसि।" (पा ७।१।२६)

अर्थात् वेदमें इतर शब्दके क्लीवलिङ्गपर प्रथमा और द्वितीयाके एकवचनमें अदड् न होगा, 'इतरद्' पदके परिवर्तनमें "इतरम्" लगेगा।

कात्यायनने इस विशेष विधिके वार्तिकमें उक्त सूत्रका संशोधनकर लिखा है,—

"इतराच्छन्दसि प्रतिषेधे एकतरात् सर्वत्र।" (वार्तिक)

इसी वार्तिकका पक्ष समर्थन कर काशिकाकारने कहा है,—

"एकतराच्छन्दसि भाषायाञ्च सर्वत्र प्रतिषेध इष्यते।"

अर्थात् क्या वैदिकप्रक्रिया और क्या साधारण व्यवहार्य भाषामें सर्वत्र "एकतरम्" पद व्यवहार होगा।

एतद्भिन्न पा० ८।४।१५ सूत्रमें भी कात्यायनने प्रतिषेध किया है।

दूसरे, पाणिनिके समय कोई कोई शब्द जैसा अर्थप्रकाशक था, कात्यायनके समय वैसा न रहा। जैसे—

"आश्चर्यमनित्ये।" (पा ६।१।१४७)

यहां पाणिनिने आश्चर्य शब्दका अर्थ अनित्य ग्रहण किया है। किन्तु कात्यायनने "अद्भुत इति वक्तव्यम्।" अर्थात् आश्चर्य शब्दका अर्थ अद्भुत माना है। इसी प्रकार ४।२।१२९, ७।३।६९ प्रभृति कई स्थलमें पाणिनि और कात्यायनके अर्थकी विभिन्नता लक्षित होती है।

तीसरे, पाणिनिके समय अधिकांश शब्द * और शब्दार्थ जैसा प्रचलित था, कात्यायनके समय वैसा न रहा। यथा—

पाणिनिधृत शब्द	अर्थ
उपस्तान (१।३।२५)	आध्यक्षेपण
उपसंवाद (३।४।८)	पणबन्ध, शपथकरण।
उपाजेकृ, अन्वाजेकृ (१।४।७३)	बलाधान।
ऋषि (४।४।९६)	वेद।
कणेहन (१।४।६६)	श्रद्धाप्रतिघात।
निवचनेकृ (१।४।७६)	मौन।
प्रत्यवसान (१।४।५२)	भोजन।
मनोहन (१।४।६६)	श्रद्धाप्रतिघात।
स्वकरण (१।३।५६)	स्वीकार, विवाह।
होत्रा (५।१।१३५)	ऋत्विक्।

कथित युक्ति और प्रयोगके अनुसार (कथासरित्सागरमें उल्लिखित होते भी) पाणिनि और कात्यायनको समसामयिक कैसे मान सकते हैं? इस पक्षमें कोई संशय नहीं कि कात्यायनके बहुपूर्व पाणिनि आविर्भूत हुये थे। वार्तिक आद्योपान्त मनोनिवेशपूर्वक पढ़नेसे समझ सकते हैं कि पाणिनि व्याकरण अति प्राचीन ग्रन्थ है। कात्यायनके समय उपयुक्त हस्ति

---

* कथित शब्दोंसे हो एक किसी किसी रूपमें शब्दनिर्णयार्थ उद्धृत होते भी भट्टिकाव्य व्यतीत दूसरे प्राचीन लौकिक काव्य ग्रन्थादिमें कोई देख नहीं पड़ता। शब्दप्रयोगके नानारूप दिखानेके लिये ही केवल भट्टिकाव्यमें उद्धृत हुए हैं।

अथवा वार्त्तिकके अभावमें अनेक लोग नहीं समझ न सकते थे। सुतरां उक्त महाग्रन्थके लुप्त होनेका उपक्रम लगा। कात्यायनने उक्त सूत्रग्रन्थके उद्धार करनेके लिये अतीव परिश्रम, असाधारण पाण्डित्य और अभिज्ञताके प्रभावसे अपना वार्त्तिकपाठ प्रणयन किया था। महाभाष्यमें पतञ्जलिने भी लिखा है—

"पुराकल्प एतदासीत्। संस्कारोत्तरकालं ब्राह्मणा व्याकरणं स्माधीयते। तेभ्यस्तत्र स्थानकरणनादानुप्रदानज्ञेभ्यो वैदिकाः शब्दा उपदिश्यन्ते। तदद्यत्वे न तथा।

वेदमधीत्य त्वरिता वक्तारो भवन्ति। वेदान्नो वैदिकाः शब्दाः सिद्धा लोकाच्च लौकिकाः। अनर्थकं व्याकरणमिति। तेभ्य एवं विप्रतिपन्नबुद्धिभ्योऽध्येतृभ्यः सुहृद् भूत्वा आचार्य इदं शास्त्रमन्वाचष्टे। इमानि प्रयोजनान्यध्येयं व्याकरणमिति।" (महाभाष्य १।१।१ आह्निक)

अर्थात् पहिले उपनयन होनेके पीछे ब्राह्मण वेद पढ़ते थे। वह उसके अनुसार व्याकरणका पाठ और वैदिक शब्दका उपदेश लाभ करते थे। किन्तु आज कल वैसा नहीं होता। लोग वेद पढ़ कर ही वक्ता बन बैठते और कहते कि वेदसे वैदिक शब्द तथा लौकिक व्यवहारसे लौकिक शब्द मिलते हैं इससे व्याकरण पाठ आवश्यक नहीं समझते। आचार्य कात्यायनने इन्हीं सकल विप्रतिपन्नबुद्धि अध्ययनकारियोंके बन्धु हो व्याकरण सिखानेके लिये नाना प्रयोजनोंको बतलाते हुये (पाणिनिके अनुवर्ती बन) अपना वार्त्तिक शास्त्र प्रकाश किया था।

किसी किसी देशके मतानुसार कात्यायनने विशेष भावसे पाणिनिकी समालोचना और पाणिनिका दोष दिखानेके लिये ही वार्त्तिकको रचना की है। किन्तु समग्र वार्त्तिक और महाभाष्य पढ़नेवाले कहा करते हैं—कात्यायन पाणिनिके उद्धारकर्ता थे। वास्तविक नागोजीभट्टने "वार्त्तिक" शब्दको विवृतिमें लिखा है,—

"वार्त्तिकमिति। उक्तानुक्तदुरुक्तचिन्ताकरत्वं वार्त्तिकत्वम्"।

वार्त्तिक वही है, जिसमें सकल अनुक्त और दुरुक्त विषय आलोचित हो। पाणिनिके सूत्रमें जो बात नहीं कही अथवा जो बात अस्फुट भावसे उक्त हुयी और समझ न पड़ी, उसे ही बोधगम्य बनाना वार्त्तिकका काम है। ऐसे ही लिख चुके हैं—एक ऐसा समय आया था, जब पाणिनिका व्याकरण साधारण लोगोंसे समझ न पाया था। आर्षग्रन्थ लुप्त होनेका उपक्रम आ पहुंचा था। पाणिनिके अनेक सूत्रोंमें आर्षपद्धति और आर्ष शब्द पड़े, जिन्हें कात्यायनके समय लोगोंमें अप्रचलित निकालें अथवा शब्द शास्त्रको रीतिसे विरुद्ध समझा। उसी समय कात्यायनने साधारण लोगोंको समझानेके लिये आवश्यक विवेचना कर पाणिनिसूत्रका वार्त्तिक बनाया। कात्यायनने अपने वार्त्तिकके प्रारम्भमें ही लिखा है,—

"सिद्धे शब्दार्थसम्बन्धे। लोकतोऽर्थप्रयुक्ते शब्दप्रयोगे शास्त्रेण धर्मनियमो यथा लौकिकवैदिकेषु। ... शब्दे न सम्बन्धे न च शब्दे नैतदी ... इति चेन्न ... एवं लोके ... न वैदिकशब्दा ... उक्तवन्तो ... प्रतिपादयन्ति ... ...।"

शब्दके साथ शब्दगत अथवा सम्बन्ध लोकमें प्रसिद्ध है। इस लोकप्रसिद्ध अर्थका प्रयोग होते भी शास्त्र द्वारा शब्दके वेदविहित धर्मके नियमानुसार अर्थ निर्णीत होता है। शब्द और अपशब्द उभय द्वारा समान अर्थ ही समझ पड़ता है। फिर भी ऐसा नियम है कि शब्द द्वारा अर्थप्रकाश करना चाहिये।

ज्ञानपूर्वक शब्दप्रयोग करनेसे धर्म होता है। पाणिनि प्रभृति आचार्यने सूत्रको रचना निवर्तित नहीं किया। (अर्थात् आचार्योंने ज्ञानके प्रभाव अथवा शास्त्रके बल जो सूत्र उद्भावन किये, वह ईश्वरादिष्ट वेदशास्त्रकी भांति अनवद्य नहीं। सुतरां साधारण लोगोंकी समझमें न आनेसे उन्हें भ्रान्त कैसे कह सकते हैं।)

शक्तिसमवाय और अनुव्याख्यानके लिये अर्थका उपदेश दिया गया है। शास्त्रमें प्रवृत्तिके निमित्त अर्थके पीछे दूसरा अर्थावगमका शक्तिसमवाय कहते हैं।

कात्यायनका वार्त्तिक पढ़नेसे समझ सकते हैं—(१) उन्होंने अधिकांश स्थानोंमें पाणिनिसूत्रके अनुवर्ती बन यथाविधि अर्थप्रकाश किया है। (२) किसी किसी स्थल पर नाना तर्कवितर्क और समालोचना निकाल पाणिनिसूत्रके खण्डनमें अधिक चेष्टा की है। (३) किसी

किसी स्थल पर सूत्र परिवर्तन किया है। (४) फिर स्थलविशेष पर पाणिनिके सूत्रका दोष देखा उसका प्रतिषेध किया है। (५) अनेक स्थल पर परिशिष्ट लगा दिया है।

पतञ्जलिने अपने महाभाष्यमें वार्तिकपाठ उद्धृत कर उसका भाष्य बनाया है।

पाणिनि और पतञ्जलि देखो।

इन्हीं कात्यायनने वेदको सर्वानुक्रमणी और प्रातिशाख्यको प्रणयन किया है। प्रातिशाख्य और सर्वानुक्रमणी देखो।

यह पतञ्जलिके बहुत पूर्ववर्ती और पाणिनिके परवर्ती थे।

५ एक बौद्ध आचार्य। इन्होंने अभिधर्मज्ञानप्रस्थान नामक बौद्धशास्त्र रचना किया है। नेपाली बौद्धग्रन्थके पाठसे समझते हैं कि यह बुद्धनिर्वाणके ४०० वर्ष पीछे प्रादुर्भूत हुये।

६ जैनोंके एक प्रधान और प्राचीन स्थविर।

कात्यायनवीणा (सं० स्त्री०) कात्यायनेन आविष्कृता वीणा, मध्यपदलो०। कात्यायन-सृष्ट शततन्त्री वीणा।

कात्यायनी (सं० स्त्री०) कात्यायन-ङीप्। १ दुर्गा। महिषासुर द्वारा अत्यन्त उत्पीड़ित हो उसके विनाशसाधनको ब्रह्मा, विष्णु और महेश्वरने अपने अपने देहसे यह मूर्ति बनायी थी। महर्षि कात्यायनके सर्वप्रथम इनकी अर्चना करनेसे हो यह कात्यायनी कहायीं। इन्होंने आश्विनकी कृष्णचतुर्दशीको जन्म लिया और शुक्लसप्तमी, अष्टमी तथा नवमी—तीन दिन कात्यायन ऋषिकी पूजा ग्रहण कर दशमीको महिषासुर मारा था। २ कषायवस्त्रपरिधाना प्रौढवयस्का विधवा, गेरुए कपडे पहने हुयी अधेड वेवा औरत। ३ कषाय वस्त्र, गेरुआ कपडा। ४ कात्यायन ऋषिकी पत्नी। ५ याज्ञवल्क्यकी द्वितीय पत्नी।

कात्यायनीतन्त्र (सं० क्लो०) तन्त्रविशेष। इसमें शिवने कात्यायनीपूजाके मन्त्रादि कहे हैं।

कात्यायनीपुत्र (सं० पु०) कात्यायन्याः पुत्रः, ६-तत्। १ कार्तिकेय। २ एक प्रसिद्ध बौद्धाचार्य। यह बुद्धके चार सौ वर्ष पीछे आविर्भूत हुये।

कात्यायनीय (सं० त्रि०) १ कात्यायन-प्रणीत, कात्यायनका बनाया हुवा। (पु०) २ कात्यायनके छात्र।

कात्यायनीव्रत (सं० क्लो०) कात्यायन्याः व्रतम्, ६-तत्। कात्यायनी देवीके उद्देश्यसे किया जानेवाला एक व्रत। वृन्दावनमें गोपियां श्रीकृष्णको स्वामीरूपसे पानेके लिये उषाकाल यमुनामें नहा और बालुकाकी प्रतिमूर्ति बना भगवती कात्यायनीकी पूजा करती थीं।

काथक (सं० पु०) कथकस्य अपत्यं पुमान् कथकअण्। १ कथकके पुत्र। (त्रि०) २ कथकवंशीय। ३ कथक सम्बन्धीय।

काथक्य (सं० पु०) कथकस्य गोत्रापत्यम् कथक-यञ्। कथक ऋषिवंशीय पुत्र।

काथक्यायन (सं० पु०) कथकस्य गोत्रापत्यम् कथकयञ्-फक्। कथक-वंशीय पुत्र।

काथञ्चित्क (सं० त्रि०) कथञ्चित् ठक्।

विनयादिभ्यष्ठक्। (पा ५। ४। ३४)

किसी प्रकार सम्पादन किया हुवा, जो मुश्किलसे बना हो।

काथरी (हिं० स्त्री०) कन्था, कथरी।

काथिक (सं० त्रि०) कथायां साधुः, कथा-ठक्। कथादिभ्यष्ठक्। पा ४। ४। १०२। १ कथारचनाके विषयमें सुनिपुण, अच्छी अच्छी कहानी बनानेवाला। २ कथासम्बन्धीय, कहानीसे सरोकार रखनेवाला।

कादम्ब (सं० पु० क्लो०) कदम्बे समूहे भवः, कदम्बअण्। १ कलहंस। इसका मांस शीतल, भेदक, शुक्रकारक और वायु, रक्त तथा पित्तनाशक है। (राजवल्लभ) कदम्ब-स्वार्थे अण्। २ कदम्ब-वृक्ष, कदमका पेड़। ३ कदम्ब पुष्प, कदमका फूल। ४ इक्षु, ऊख। ५ वाण, तीर। ६ दाक्षिणात्यका एक प्राचीन राजवंश कदम्ब देखो। ८ पुष्पविषविशेष, एक जहरीला फूल। (त्रि०) ८ कदम्ब-सम्बन्धीय।

कादम्बक (सं० पु०) कदम्बस्वार्थे कन्। वाण, तीर।

कादम्बकर (सं० पु०) कदम्बवृक्ष, कदमका पेड़।

कादम्बर (सं० पु० क्लो०) कादम्बं कदम्बोद्भवं रसं

जाति मद्यजाति, कादम्ब क न वा वयं र'। १ कदम्बपुष्पोत्थ मद्य, कदमके फूलकी शराब। २ शीधु मद्य, पक्व शराब। यह मधुर और पित्त एवं श्लेष्म तथा मदक होता है। (राजनिघण्टु) ३ दधिसार, दहीकी मलाई। ४ मधुजात सुरादि जबकी बना हुआ गुड़ वगैरह। ५ बलराम।

कादम्बरी (सं॰ स्त्री॰) कु ईषदर्थे नीलवर्ण अम्बरं यस्य सो' बलदेव:, कादम्बरो बलराम' तस्य प्रिया, कादम्बर अण्-ङीप्। १ मद्य शराब। २ कोकिला, कोयल। ३ सरस्वती। ४ सारिकापक्षिणी, दुरयी। ५ कदम्बपुष्पोत्थ मद्य, कदमके फूलकी शराब। ६ अनुष्णक कदम्बके तरुकोटरका वृष्टिजल पड़े हुये कदमकी खोहमें पड़ा बरसातका पानी। ७ बाणभट्ट विरचित कथाकी नायिका। यह हंस नामक गन्धर्व राज और चन्द्रकिरणसे उत्पन्न अप्सरोकुलजात गौरीकी कन्या थी। [illegible] देखो।

कादम्बरीबीज (सं॰ क्ली॰) कादम्बर्या बीजम्, ६ तत्। सुराबीज, खमीर।

कादम्बर्य (सं॰ पु॰) कादम्बर्यै हितम्, कादम्बरी यत्। १ धाराकदम्ब। २ कदम्बवृक्ष, कदमका पेड़। (क्ली॰) ३ मद्य, शराब।

कादम्बा (सं॰ स्त्री॰) कादम्ब इव आचरति, कादम्ब क्विप् अच्-टाप्। कदम्बपुष्पोलता एक बेल। इसमें कदमकी भांति पुष्प आते हैं।

कादम्बिक (सं॰ त्रि॰) मोदकद्रव्यकारक, खानेकी चीज बनानेवाला।

कादम्बिनी (सं॰ स्त्री॰) कादम्बा: कलहंसा: सन्ति अस्याम्, कादम्ब-इनि-ङीप्। मेघमाला, घटा।

कादर (त्रि॰) कातर देखो।

कादर—भागलपुर और सन्थालपरगनेकी एक जाति। दाक्षिणात्यके अनमलय पर्वत और कोयम्बतूर जिलेमें भी "कादर" नामक एक जाति रहती है। अनेक लोग अनुमानसे इन दोनों जातियोंको एक ही श्रेणीका समझते हैं।

कादर कृषि और मजदूरीकर प्रधानतः जीविका चलाते हैं। अनेक लोग मजदूरी भी कर खाते हैं। किसीके मतमें कादर मुसहर्या जातिसे निकले हैं। इनमें दो श्रेणी विभाग हैं—कादर और मैया। मैया नामक एक स्वतंत्र जाति भी है। कादर मैयोंसे कोई सम्बन्ध नहीं रखते।

कादरोंमें अनेक गोत्र होते हैं। सजात गोत्रोंमें परस्पर आदान प्रदान नहीं होता। इनमें बाड़े, कारिख, दर्वे, हजारी कम्पती, कापड़ी, मन्दर, मांझी, मरैया मरीक, मिर्दाह, मैया, राउत और रिखियासन आदि गोत्र हैं। बाड़े गोत्रवाले मिर्दाह, कम्पती और राउत गोत्रको छोड़ दूसरे किसी गोत्रमें विवाह नहीं करते। कम्पती केवल कारिख कापड़ी, मरीक, दर्वे, मांझी और बाड़े गोत्रसे विवाह सम्बन्ध जोड़ते हैं। मरीक गोत्र कारिख, कापड़ी, मांझी, मन्दर और मैया गोत्रोंमें विवाह करता है। फिर मिर्दाहोंका दर्वे, मांझी, कम्पती, और बाड़े गोत्रवालोंमें और मैयोंका केवल मरीकों, हजारियों कम्पतियों और बाड़ियोंमें विवाह चलता है। यह मातुलकन्या या पितृष्वसृकन्यासे विवाह नहीं करते। मातृपर्यायमें ३ और पुरुष तथा पितृपर्यायमें ४ पुरुष छोड़ विवाह होता है।

इनमें बालिका और वयस्का दोनों कन्याओंका विवाह होता है। फिर भी बालिकाकालमें विवाह होना प्रशस्त समझा जाता है। छोटे हिन्दुओंकी भांतिसे विवाह होता है। सिन्दूरदान ही विवाहका प्रधान कार्य है। ग्रामका नापित इनका पौरोहित्य करता है। स्त्रीके सन्तान न होनेसे यह दूसरा विवाह करते हैं। विधवा सगाईकी प्रथाके अनुसार निषिद्धगोत्र और गुरुजनादिको छोड़ विवाह कर सकती है। स्त्रीको स्वामीके कर्तृक परित्यक्त होनेपर सगाईकी प्रथाके अनुसार पुनर्विवाह करनेका अधिकार है। सगाईवाला विवाह करते समय अन्तःपुरसे पीछे दूसरी जगहमें और ग्राम विवाह करके बाहर घर होता है।

यह शवको जला और उसका भस्म उठा करके दूसरे दिन समाहित करते हैं। मृतोदय दिनको घरके छतपर बलि दिया जाता है। फिर मरनेके दिनसे एक मास पीछे इसी प्रकार बलि देते हैं। इनमें वार्षिक श्राद्धादि नहीं होता।

हिन्दुवोंमें यह बहुत छोटे समझे जाते हैं। डोमों और हाड़ियोंको छोड़ दूसरी कोई जाति इनका छुवा पानी नहीं पीती। कादर मुर्दो और कहारोंका अन्न खा लेते हैं, किन्तु वह लोग इनका अन्न ग्रहण नहीं करते। यह लोग गोमांस, शूकरमांस, मुरगा तथा चूहा खाते और मद्यादि भी पी जाते हैं। कभी कभी कांते और कुल्हाड़ीकी पूजा होती है।

कादर हिन्दू होते भी अपर असभ्य जातियोंकी भांति कुसंस्काराच्छन्न हैं। इनमें कितने ही लोग विश्वास करते कि कुछ विशेष शक्तिसम्पन्न अपदेवता उनको चारोओर रहते हैं। उन देवताओंमें अनेक इनके पूर्वपुरुषोंके आत्मा होते हैं। दूसरे लोगोंके विश्वासानुसार अपदेवता कहीं नहीं, फिर भी नदी पर्वतादिसे शक्ति उद्भूत होती है। उसकी कोई मूर्ति वा प्रतिमा मानी नहीं जाती। कहीं थोड़ीसी रंगी मृत्तिका और कहीं एक खण्ड सिन्दूरलेपित प्रस्तर खण्डमात्र भगवान्‌के उद्देशसे मार्गके मध्य प्रतिष्ठित रहता है। उक्त सकल प्रतिष्ठित देवतावोंमें कारुदानो, हर्दियादानो, सिमरादानो, पहाड़दानो, मोहन, दूया, लिन्नू, परदोना इत्यादि प्रधान हैं। इनके मतमें लोग समझ नहीं सकते उक्त अपदेवता कौन कौन शक्ति रखते हैं। कादरोंके कथनानुसार उक्त सकल अपदेवतावोंकी पूजामें अवहेला करनेसे देशमें नाना अमङ्गल होते हैं। पूजाके समय यह लोग शूकरशावक, छागल, कबूतर, और मुरगा काट कर चढ़ाते हैं। शस्यकी शिखा और घृतादिका उत्सर्ग किया जाता है। इनके देवता जहां स्थापित रहते, उन कुञ्जोंको सरना कहते हैं। नापित ही इनके पुरोहित हैं। उपासक पूजाका द्रव्य खाते हैं। यह अपनेको हिन्दू बताते और परमेश्वर महादेव, विष्णु प्रभृति नामोंपर विश्वास लाते हैं।

दाक्षिणात्यके कादर पर्वत विभागमें वास करते हैं। वह पुलियार और मालय आवसार जातिपर प्रभुत्व चलाते हैं। कभी कभी तोप और युद्ध सज्जादि वहन करते भी दासादिके कार्य्यसे अलग रहते हैं। पहले-दार कहनेसे बुरा मानते हैं। वह बड़े विश्वासी, सत्य-वादी और वाध्य होते हैं। कुञ्चित केशोंका बंधाव रहता है। वनसे हरिद्रा, अदरक, मधु, मोम इलायची, रीठा, माजूफल इत्यादि संग्रह कर चावल और तम्बाकूके साथ बदलते हैं। वह अंगरेजी जंगलसे जो चीज लाते, उसका महसूल नहीं चुकाते। कोचिन-राजके अधिकृत वनभागसे इलायची संग्रह करनेके लिये केवल वार्षिक १००) रु० राजस्व देते हैं। कादर वनमें पथ प्रदर्शकका कार्य्य करते हैं, किन्तु कभी बोझ नहीं ढोते।

कादलेय (सं० त्रि०) कदलेन निर्वृत्तम्, कदल-ढञ्। कदल निर्मित, केलेका बना हुवा।

कादा (हिं० पु०) जहाजकी एक पटरी। यह शहतीरों और कड़ियोंके नीचे लगती है।

कादाचित्क (सं० त्रि०) कदाचित् भवम्, कदाचित्-ठञ्। समय पर होनेवाला, जो कभी कभी हो।

कादाचित्कता (सं० स्त्री०) कादाचित्कस्य भावः, कादाचित्क-तल्-टाप्। कदाचित् उत्पत्ति।

कादिपुर—अवध प्रदेशके सुलतानपुर जिलेकी एक तहसील। यह अक्षा० २५° ५८´ ३०´´ से २६° २३´ उ० और देशा० ८२° ८´ से ८२° ४४´ पू० तक अवस्थित है। इसके उत्तर अकबरपुर तहसील, पूर्व आज़मगढ़ जिला, दक्षिण पत्ती तहसील और पश्चिम सुलतानपुर तहसील है। भूमिका परिमाण ४३८ वर्गमील है। यहां सुलतानपुर और जौनपुरकी सड़क आ मिली है। राजकुमार जमिन्दार हैं। ब्राह्मण बहुत रहते हैं। तहसीलको छोड़ थाना और स्कूल भी है। एक देहाती डंक खुला है। बाज़ार बहुत छोटा है। भूमि समान-गुणविशिष्ट है। नाले चारो ओर लगे हैं। बड़ी नदी पर पुल बंधा है।

कादियान—बोरनिओ द्वीपवासी एक अनार्य जाति। आजकल इस जातिने मुसलमान धर्म ग्रहण कर लिया है। कादियान ही—बोरनिओ द्वीपके आदिम अधिवासी हैं। यह सरल और शान्तिप्रिय हैं। इनकी स्त्रियां अधिक सुखी होती हैं।

कादिर—१ शेख अब्दुल कादिरका उपनाम। आलम-गीरके पुत्र शाहज़ादे मुहम्मद अकबरने इन्हें अपना

मुँगी बनाया था। इन्होंने एक दीवान् लिखा है। २ कबीर खाँका उपनाम। यह पानीपतके निवासी रहे। आलमगीर और उनके टोली उत्तराधिकारी इन्हें बहुत चाहते थे। १७११ ई०में इनकी मृत्यु हुई। इन्होंने एक दीवान बनाया है। ३ बदाऊँवासी अब्दुल कादिरका उपनाम। इन्हें लोग कादिरी भी कहते थे।

कादिर (सं० क्ली०) खदिरसार।

कादिर अली—एक मुसलमान पीर। प्रायः सन् ६२७ हिजरीको लोदीवंशमें इन्होंने जन्मग्रहण किया था। उसके पीछे कुतब-उद्-दीनके राज्यकालमें यह अजमेर गये। वहाँ सैयद हुसैन मशेदीकी कन्यासे उनका विवाह हुआ। ६२८ ई० को यह मर गये। १०२७ हिजरीमें जहाँगीर बादशाहने इनकी कब्रके पास एक सुन्दर मसजिद बनवायी थी। इनके मरनेके नगरमें भी एक मसजिद है। भोपालके मुसलमान कादिर अलीकी बड़ी भक्ति करते हैं। ११ वीं जमाद-उल्-अव्वल इनकी उर्सका दिन है।

कादिरगाव—गुलबर्गाके पास जिलेका एक गाँव। यहाँ जंगलके बीच एक प्राचीन दुर्गका ध्वंसावशेष विद्यमान है। कादिरगाँवमें अरबी भाषाको एक शिलालिपि मिली थी। उसमें लिखा है,—यहाँ सन् ११०८ हिजरीको आलमगीरके राज्यकालमें मुजात खाँकी दरगाह बनी थी।

कादिरशाह—मालवके एक बादशाह। सम्राट् हुमायूँने मालवा अधिकार कर अपने अफसरोंके हाथ छोड़ दिया था। किन्तु उनके आगरे वापिस जाते ही पूर्वतन खिलजी राज्यके एक पदाधिकारी मल्लू खाँने चारों ओर मालवेके सब लोगोंके विरुद्ध अफसरोंसे लड़ नर्मदा और भेलसा नगरके बीचका समस्त देश अधिकृत किया तथा अपना उपाधि कादिरशाह रख लिया। इन्होंने १५४२ ई० तक राज्य चलाया था। पीछे शेरशाहने मालव अधिकार किया और इनको कालपी एक छोटे प्रजा खाँका राज्य सौंप दिया।

कादिरी—१ गाजनवीके अँग्रेज़ मुख्य मार्क्युईस दारा शिकोहका उपनाम। २ बदाऊँके अब्दुल कादिरका उपनाम। (अ० स्त्री०) ३ चोली।

कादीकाटी—बङ्गालके चौबीसपरगनेका एक नगर। यह अक्षा० २२° २८´ १०´´ उ० और देशा० ८८° २८´ ३८´´ पू० पर अवस्थित है। साधारण लोग इसे कोदिटो कहते हैं। यहाँ प्रायः ३००० आदमी रहते हैं। विद्यालय और डाकघरको छोड़ कादीकाटीमें अनेक सम्भ्रान्त लोगोंके घर भी बने हैं।

काद्रवेय (सं० पु०) कद्रोरपत्यं पुमान् कद्रु-ढक्। स्त्र्यादिभ्यः। पा ४।१।१२२। १ कद्रुके पुत्र। शेष, अनन्त, वासुकि, तक्षक, भुजङ्गम और कुलिक 'काद्रवेय' कहाते हैं।*

२ अर्बुद। ३ सर्पवीर।

कान (हिं० पु०) १ कर्ण, गोश। कर्ण देखो। २ श्रवण शक्ति, सुननेकी ताकत। ३ कना, लकड़ीका एक टुकड़ा। इसे तराजूके पासे बूंद भी बांधा करनेको बांधते हैं। ४ कर्णालङ्कार विशेष, एक गहना। इसे कानमें पहनते हैं। ५ मद्य बोतल। ६ कनेव, चारपाईका टेढ़ापन। ७ पल्ला। ८ रंजकदानी, पियाली। (स्त्री०) कानि देखो।

कानक (सं० क्ली०) कनकं जयपालस्य फलं तस्य अस्त्यस्य, कनक-अण्। १ जेपालबीज, जायफल। राजवल्लभके मतानुसार यह तीक्ष्ण उष्णवीर्य सारक और उत् क्लेदकारक है। २ धुस्तूरबीज, धतूरेका बीज। (त्रि०) ३ कनक सम्बन्धीय, सोनेका बना हुआ।

कानकचूर्ण (सं० क्ली०) औषधविशेष, एक दवा। कणधूम, यवक्षार, त्रिकटु, पाठा, रसाञ्जन, पथ्य, त्रिफला जारित लौह और चित्रक बराबर बराबर कूटपीस कर कानकचूर्ण यह बनता है। इसे मधुके साथ सुखसे रखनेसे सुखरोग आरोग्य होते हैं। (चक्रदत्त)

कानगी (हिं० पु०) वृक्षविशेष एक पेड़। यह दक्षिण देशमें होता है। इसका तेल पीला रहता और दवा बनाने तथा जलानेमें लगता है। यह आसपास मिलता है।

---

* "शेषोऽनन्तो वासुकिश्च तक्षकश्च भुजङ्गमः।
कुलिकः कुलिकश्चैव काद्रवेयाः प्रकीर्तिताः॥"
(महाभारत १।३५।५)

कानड़गौड़ (सं० पु०) कानडा और गौड़से उत्पन्न एक राग।

कानडनट (सं० पु०) कानड़ा और नटके संयोगसे निकला एक राग।

कानड़ा (सं० स्त्री०) एक रागिणी। इसका स्वरग्राम नि सा ऋ ग म प ध है। ११से १५ दण्ड रात्रि चढ़ते यह गायी जाती है। भिन्न भिन्न राग-रागिणीसे मिलने पर १८ प्रकारके मिश्रकानडाकी उत्पत्ति होती है,—१ दरबारी कानड़ा, २ नायकी कानड़ा, ३ सुद्रा कानड़ा ४ काथिकी कानडा, ५ वागेश्री कानड़ा, ६ नट कानडा, ७ काफी कानड़ा, ८ कोलाहल कानडा, ९ मङ्गल कानड़ा, १० श्याम कानडा, ११ टङ्क कानडा, १२ नागध्वनि कानडा, १३ अड़ाना, १४ शाहाना, १५ सूहा कानड़ा, १६ सुघर कानडा, १७ हुसेनी कानड़ा और १८ मियाँकी जयजयन्ती।

कानडा (हिं० वि०) १ काण, काना। २ चम्मो रानीका घर। यह सात समुन्दर खेलमें होता है।

कानद (सं० पु०) धीमरणके पुत्र।

कानन (सं० क्ली०) कं जलं अननं जीवनं अस्य, बहुव्री० यद्वा कानयति दीपयति, कन-णिच्-ल्युट्। १ वन, जंगल। कस्य ब्रह्मणः आननम्। २ ब्रह्माका मुख। ३ गृह, घर।

कानचन्द्र—टिकारीके एक विख्यात राजा।

(देशावली ५५। २। २)

काननाग्नि (सं० पु०) काननाज्जातोऽग्निः, मध्यपदलो०। दावानल, जंगलमें लगनेवाली आग।

काननारि (सं० पु०) काननस्य अरिरिव, उपमित समा०। शमीवृक्ष, छुमतिया पेड़। इसकी मध्यस्थित शाखा रगड़नेसे अग्नि प्रज्वलित हो कभी कभी समग्र वन जला डालता है। इसीसे इसको 'काननारि' (जङ्गलका दुश्मन) कहते हैं।

काननौका (सं० पु०) काननं ओकः स्थानमस्य, बहुव्री०। १ वनवासी, जङ्गलमें रहनेवाला। २ कपि, बन्दर। ३ वानर, बन्दर।

कानपुर—युक्तप्रदेशका एक जिला और नगर। यह जिला अक्षा० २५° २६' से २६° ५८' उ० और देशा० ७९° ३१' से ८०° ३४' पू० तक अवस्थित है। कानपुर इलाहाबाद विभागके पश्चिमांशमें पड़ता है। इसके उत्तरपूर्व गङ्गानदी, पश्चिम फरुखाबाद तथा इटावा, दक्षिणपश्चिम यमुना और पूर्व फतेहपुर है। इस जिलेका सदर मुकाम कानपुर नगर है।

कानपुर जिला गङ्गा-यमुनाके अन्तर्गत सुविख्यात दोआब प्रदेशका मध्यवर्ती है। इस जिलेमें गङ्गा और यमुनाको छोड़ दूसरी भी अनेक क्षुद्र क्षुद्र नदी है। साधारणतः भूमिका भाग दक्षिण-पश्चिमके अभिमुख ढालू पड़ता है। चार प्रधान क्षुद्र नदियोंसे कानपुर जिला चार प्रधान भागोंमें विभक्त है। गङ्गाकी उपनदी ईशानने उत्तर दिक् एक खण्ड त्रिकोणाकार भूमिको बाँट दिया है। मध्यमें पाण्डु (पांडव) और रिन्द दो नदियोंसे दूसरे दो विभाग बने हैं। फिर अवशिष्ट भूखण्डके मध्य यमुनाकी उपनदी सेंगुर वर्तमान है। इन सकल नदियोंका तोड़ फोड बहुत अधिक विस्तृत और गम्भीर है। कानपुर जिलाके मध्य गङ्गा यमुनामें वर्षाके समय बडी बडी नौका आ-जा सकती हैं, किन्तु अन्य समय क्षुद्र क्षुद्र नौका व्यतीत बडी नौकावोंका चलना कठिन है। क्षुद्र क्षुद्र नदी ग्रीष्मकालमें प्रायः सूख जाती हैं। १८५७ई० तक कानपुर नगरके नीचे आने-जानेको गङ्गापर नावका पुल बंधा था। फिर अवध-रुहेलखण्ड रेलपथके लिये गङ्गापर पक्का पुल बना। आजकल बी० एन० डबल्यू० आर० ने भी अपना दूसरा पक्का पुल बनवा लिया है।

कानपुर जिलेकी भूमि स्वभावतः शुष्क है, किन्तु अब गङ्गासे नहर निकलनेके कारण अधिक उर्वरा और शस्यशालिनी बन गई है। इस नहरकी शाखाप्रशाखा-से छोड़ समस्त जिलेमें जल पहुंचानेका प्रबन्ध बंधा है। इस जिलेमें कई झील हैं। सिकन्दरा परगनेमें सोना झील है; यह सिकन्दरेसे भोगिनीपुर तक चली गई है। सोना झील यमुनासे दो मील दूर है। यमुना आजकल जहां जैसे जितनी झुक झुक कर बही है, यह झील भी ठीक उसके समानान्तर भावमें वैसे ही घूम घूम कर चली है। इसीसे कोई कोई सोना झील-को यमुना नदीका प्राचीन गर्भ समझते हैं। किन्तु

आज भी इस सम्बन्धमें कोई प्रमाण या प्रतिवाद नहीं मिलता। इसी प्रकार रसूलाबाद और शिवराजपुरमें २१ मील विस्तृत स्रोत है। उसे भी लोग प्राचीन नदी का भग्न मानते हैं। इस जिलेमें जंगल न होनेसे भी स्थान स्थान पर भूमि पड़ी है। पतित भूमिमें ढिंढ़ाक (ढाक) वृक्ष ही अधिक विद्यमान है। कानपुर जिलेमें चीता, बाघ, नीलगाय, हरिण, लोमड़ी, शृगाल, शूकर इत्यादिको छोड़ अन्य कोई वन्य जन्तु देख नहीं पड़ता।

इस जिलेमें मुसलमानके सब जातियोंके हिन्दू प्रायः वंशीके मुसलमान और यूरोपीय रहते हैं। ग्रामका सामाजिक बन्धन भारतवर्षके अन्यान्य स्थानोंकी भांति है। जमींदार ही प्रधान अध्यक्ष हैं। प्रधानतः ब्राह्मण और राजपूत ही जमींदार होते हैं; उनके नीचे स्वत्व अधिकारियोंके अधिकार अलग हैं। यह जमींदारोंकी जमीन वंशानुक्रमसे मौरूसी तौरपर जोतते हैं। फिर बनियां और दुकानदार हैं। इसी प्रकार दूसरे किसान, नाई, लोहार, कुम्हार इत्यादि रहते हैं।

कानपुर जिलेमें खेती बारीका विशेष प्रभेद देख नहीं पड़ता। दोआबके अन्यान्य स्थानोंमें जैसी प्रणालीसे कृषिकार्य चलता, यहां भी वैसे ही हुआ करता है। कानपुरमें दो बड़ी फसलें होती हैं। शरत्कालमें होनेवाली फसलको खरीफ और वसन्त कालमें होनेवाली फसलको रबी कहते हैं। ज्येष्ठकी प्रथम वृष्टिमें खरीफ बोते हैं। इस फसलमें धान, मकई, बाजरा, ज्वार, कपास, नील इत्यादि होता है। इसका अधिकांश आश्विन मासमें पक जाता है। धान शीघ्र शीघ्र पकनेसे भाद्रमें भी काट लेते हैं, किन्तु कपास फाल्गुन व्यतीत हुए बिना तैयार नहीं होती। रबी आश्विनमें बोई और चैत्र वैशाखमें काटी जाती है। इस जिलेका प्रधान खाद्य गेहूं है। आज कल कानपुरमें कपास बहुत बोते हैं। कारण इससे लाभ बहुत होता है। यहां खेतीहर लोग एक प्रकार स्वच्छन्द अवस्थामें वास करते हैं। किन्तु चमार, काछी, कुरमी प्रभृति कृषक श्रेणी बहुत दरिद्र हैं। इसीसे कानपुरकी दरिद्रता

अति प्रसिद्ध है। उत्तरांशमें ज्वार तथा गेहूं और दक्षिणांशमें बाजरा अधिक उपजता है। बिठूर, रसूलाबाद और शिवराजपुरके दक्षिणांशमें धान्य होता है। शिवराजपुरके उत्तरांशमें नील ही प्रधान है। समस्त खेत गङ्गाकी नहर, कूप, पुष्करिणी, नदी, झील इत्यादिसे सींच आबाद किये जाते हैं। कानपुरमें अनावृष्टिका भय अधिक रहता है, सुतरां दुर्भिक्ष भी अधिक ठहरता है। प्रधानतः इस जिलेके पश्चिमांशमें दुर्भिक्षके भयसे लोग घबराया करते हैं। कानपुरमें कई दुर्भिक्ष पड़े और उनसे लाखों लोग भीख मांग-कर मरे हैं।

कानपुरसे गल्ला, कपास और नीलका बीज बाहर भेजते हैं। यहां जो नील उपजता, उससे केवल बीज ही उपयोगी होता है, वह बीज बिहार प्रदेशमें अधिक बिकता है। कानपुर नगरमें घोड़ेका साज, जूता, पोर्टमाण्टो इत्यादि चमड़ेका द्रव्यादि यथेष्ट और उत्कृष्ट रूपसे प्रस्तुत होता है। चमड़ेके कई कार-खाने खुले हैं।

कानपुरके पुतलीघरोंमें रूईका कपड़ा भी बनता है। बहुतसे तम्बू और डेरे तैयार किये जाते हैं। कानपुरके पुराने किलेमें गवरनमेण्टने अपना चमड़ेका कारखाना खोल रखा है। उसमें सेनाका व्यवहार्य द्रव्यादि बनता है। सरकारसे आटेकी कल भी है। इसमें सेनाके लिये आटा सत्तू इत्यादि तैयार करते हैं। रेलपथ, नदी, नहर, पक्की और कच्ची सड़क प्रभृति नानाविध पथ यथेष्ट हैं। भारतवर्षका प्रधान मार्ग ग्राण्ड ट्राङ्करोड गङ्गाके समान्तराल इस जिलेमें प्रायः ६८ मील विस्तृत है।

यहां एक कलेक्टर मजिष्ट्रेट, दो ज्वाइण्ट मजि-ष्ट्रेट, एक असिष्टण्ट और दो डिपटी मजिष्ट्रेट रहते हैं। समस्त प्रकारसे राजस्वका पूरा परिमाण १८०२८६७ रु० है। पुलिस, टेलीग्राफ, विद्यालय इत्यादि सुविधाके अनुसार विद्यमान हैं।

कानपुर जिलेमें चार प्रधान नगर हैं। उनके प्रत्येकमें ५ हजारसे अधिक लोग रहते हैं। प्रधान नगर कानपुरमें कोई ८०१७० बिठूरमें ७१०१

बिल्हौरमें ५१४२ और अकबरपुरमें ८३४८ लोगोंका वास है।

कानपुर नगर गङ्गानदीके दक्षिण कूल पर अवस्थित है। प्रयागके त्रिवेणीसङ्गमसे १३० मील ऊपर यह नगर पड़ता है। युक्तप्रदेशमें कानपुर चतुर्थ नगर है। समुद्रपृष्ठसे यह ५०० फीट ऊपर है। यहां सेनानिवास (छावनी), अदालत, ष्टेशन इत्यादि विद्यमान हैं। सेनानिवास और अदालत गङ्गा किनारे है। पूर्वांशमें देशीय अश्वारोही सेनानिवास और कवायद परेडकी जमीन है। कवायद परेडकी जमीनसे पश्चिम युरोपीय पदातिकी बारीक और सेण्टजान गिरजा है। इसके मध्य गङ्गा किनारे मेमोरियल गिरजा है (यह १८५७ ई०की सिपाही-विद्रोहके स्मरणार्थ बना था)। नगरके उत्तरांशमें साधारण कवायदपरेडकी जमीन है इसके सम्मुख गङ्गातीर म्युनिसिपल गार्डन है। इस उद्यानमें एक कूप था। आज कल उसी कूप पर एक स्तम्भ बनाया और उसकी चारों ओर प्राचीरका घेरा लगाया गया है। इस स्तम्भ पर एक स्वर्गविद्याधरीकी मूर्ति है। स्तम्भके गात्रमें अंगरेजीसे लिखा है,—"विठूरके विद्रोही नाना धुन्धुपन्यके दलने १८५७ ई०की १५वीं जुलाईको इसी स्थानके निकट अनेक युरोपियों विशेषतः युरोपीय स्त्रियों और शिशुओंको अन्यायरूपसे मार इस कूपमें डाल दिया था।" इस उद्यानकी रक्षाके लिये गवरनमेण्टका वार्षिक ५०००) रु० खर्च होता है। उक्त विद्रोहमें जो निहत हुये, वह इसी उद्यानके दक्षिण और पश्चिमांशमें गड़े हैं।

कानपुर नगर प्राचीन नहीं। इस लिये यहां दर्शनीय अट्टालिका, प्रासाद और मन्दिरादि कम हैं। १७६४ ई० को बकसर और १७६५ ई०को कोडेके युद्धमें शुजा-उद्-दौला (अवधके नवाबवजीर) पराजित होनेपर यह नगर बना। नवाब अंगरेजोंसे सन्धि कर फतेहगढ़ और कानपुरमें सैन्य रखने पर स्वीकृत हुये थे। १७७८ ई०को वर्तमान स्थान नवाधिकृत स्थानकी प्रान्तसीमाके सेनानिवासका निरूपित होनेसे इस नगरकी नीव पड़ी। १८०१ ई०को अंगरेजोंने अवधके नवाबसे इसकी चारो ओरका स्थान पाया था। उस समयसे कानपुर एक जिला और प्रधान नगर गिना जाता है। १८५७ ई०के सिपाही विद्रोहको छोड़ दूसरी कोई ऐतिहासिक घटना यहां नहीं हुई।

मुसलमानोंके अधीन यह जिला अनेक परगनोंमें विभक्त था। उस समय कानपुर इलाहाबाद और आगरेसे लगता था। ११९४ ई० को साहब उद्-दीन गोरीने दोआब अधिकार किया, उसीके साथ कानपुर भी उनके हाथ लगा। औरंगजेबके समय यहां दो एक सामान्य मसजिदें बनी थीं। मुगल सम्राटोंकी दुर्दशाके समय १७३६ ई०को यह अंश महाराष्ट्रोंके अधिकारमें गया। अवधके नवाबसे सन्धि होने पीछे अंगरेजी सेनाने प्रथमतः बेलगांव (बिल्वग्राम) और फिर कानपुरमें आ अवस्थान किया।

सिपाहीविद्रोहके समय कई दिन तक समस्त जिलेमें विद्रोहानल जला था। मेरठमें विद्रोह आरम्भ होने पीछे ही नानासाहबको कानपुरके धनागारकी रक्षाका भार सौंपा गया। जूनमासके प्रथम यहां चारो ओर किले और गड्ढे बना समस्त यूरोपीय बैठे थे। ६ठीं जूनको कानपुरका देशीय द्वितीय अश्वारोही दल तथा प्रथम पदातिदलने विगड़ जेल तोड़ा, धनागार लूटा और आफिस घरादिको गिरा डाला। उसके पीछे विद्रोही दिल्लीके अभिमुख चले गये। उसी समय ५३ एवं ५४ संख्यक सैन्यदल विद्रोही हुवा। नानासाहबने विद्रोहियोंसे मिल उनके साहाय्यसे यूरोपियोंके आवास आक्रमणपूर्वक तीन सप्ताह अवरोध किये थे। बैलीगारदमें अंगरेज (केवल सात सौ या एक हजार ही लोग हांगे) धूपमें खड़े हो लड़ने लगे। विद्रोहियोंका आक्रमण तीनबार वृथा हुवा था। शेषको अधिकांश अंगरेज मारे गये। विद्रोही उन्हें परास्त कर उन्मत्त भावसे स्त्रियां और शिशुओंको भी मारने लगे। २६वीं जूनको नानासाहबने हतावशिष्ट अंगरेजोंकी रक्षा करनेमें प्रतिश्रुत हो सबको लेकर कानपुरके सतीचौराघाटमें नौका पर बैठाया था। नौका इलाहाबादको खुलनेके पहले तीरस्थ विद्रोही सिपाही गोली चला आरोहियोंको गिराने लगे। दो नौकाओंने भागनेकी चेष्टा की थी। किन्तु सिपाहियोंने

दोनों किनारेसे गोली चला सबको भुना दिया। यद्यपि कई लोग कूद कांद मिकराजपुर ग्राम गये थे। सिपाहियोंने वहांसे भी ४ आदमी छोड़ सबको पकड़ मार डाला। नौकामें जितनी स्त्रियां और शिशु थे, सब सवादाकी कोठीमें आबद्ध किये गये। पीछे जब कानपुरके वहिर्देशमें हावलककी तोपका प्रथम शब्द सुना, तब सिपाहियोंने उन सकल स्त्रियों और शिशुओंको टुकड़े टुकड़े कर डाला था। प्राय: दो सौ प्राणी विनष्ट हुये होंगे; जहां यह व्यापार हुआ, वहां मेमोरियल कूप और स्तम्भ बना है।

१६ वीं जुलाईको हावलकने पाण्डु नदीके तीर और अहरमें हरा दिया था। उसके दूसरे ही दिन कानपुर अधिकृत हो गया।

२८वीं नवम्बरको ग्वालियर और अवधके विद्रोहियोंने आपसमें मिल कानपुर आक्रमणपूर्वक नगर अधिकार किया था। दूसरे दिन सर्कालिन काम्बेलने आ फिर आक्रमण किया और ६ठी दिसम्बरको विद्रोहियोंको नगरसे भगा उनका तोप इत्यादि सब छीन लिया। अनन्तर होपग्राण्टने शिवराजपुर, रसूलाबाद और डेरापुर उद्धार किया था। १८५८ ई०के मई मास कालपी उद्धार होनेसे कानपुरमें शान्ति स्थापित हुई।

कानफरेन्स (अं० स्त्री० Conference) १ समाज, मजलिस। २ मन्त्रणा सभा।

कानर्तव (सं० क्लि०) कनक-धूप। कनक नामक व्यक्ति द्वारा निर्मित, कनकका बनाया हुआ।

कानस्टेबिल (अं० पु० Constable) दफादार, चौकीदार, पुलिसका सिपाही। पुलिसके जमादारको 'हेड कानस्टेबिल' कहते हैं।

काना (हिं० वि०) १ काण, एक आंखवाला। २ कृमि कीटादि द्वारा विदारित, कीड़ा लगा हुआ। ३ वक्र, टेढ़ा, जो बराबर न हो। (पु०) ४ आकारकी मात्रा (ा)। यह व्यञ्जनवर्णमें लगता है।

कानाकानी (हिं० स्त्री०) फुसफास, कानाफूसी।

कानाटोटी (हिं० स्त्री०) तृणविशेष, एक घास।

कानाड़ा—दाक्षिणात्यके पश्चिम उपकूलका एक प्रदेश। इसके उत्तर बम्बई प्रान्तका बेलगांव जिला, दक्षिण मन्द्राज प्रदेशका मलबार जिला, पूर्व बम्बई प्रान्तका धारवाड़ जिला महिसुर राज्य एवं कुर्ग, पश्चिम अरब सागर तथा भारत महासागर और उत्तरपश्चिम कोण गोया प्रदेश है। प्रेसिडेन्सी विभागके समय कानाड़ा दो भागमें बांटा गया था। उससे उत्तरीय बम्बई प्रेसिडेन्सी और दक्षिणीय मन्द्राज प्रेसिडेन्सीके विभागमें पड़ा।

उत्तर कानाड़ा अक्षा० १३ ५५´ एवं १५ ३२´ उ० और देशा० ७४ ९´ तथा ७५ ५´ के मध्य अवस्थित है। उसका प्रधान नगर और बन्दर कारवार है। उत्तर कानाड़ाके मध्य पश्चिमघाट पर्वतका सह्याद्रिखण्ड उत्तरदक्षिण विस्तृत है। उसकी उच्चता २५०० से ३००० फीट तक है। सह्याद्रि उभय पार्श्व भूमिको एक दिक् उच्च और अपर दिक् निम्न है। उच्च भूभागका नाम बालाघाट है। परिमाण प्राय ३००० वर्गमील है। अनेक क्षुद्र और बृहत् नदियोंका सुगमाय रहनेसे उपकूल भागकी रेखा बहुत छिन्न भिन्न हो गई है। (नदीका मुखप्रशस्त होनेसे) समुद्रकी खाड़ी देशके मध्य दूरतक विस्तृत है। उपकूलके उत्तरपश्चिम कोण कारवार अन्तरीप है। समुद्रतीरकी भूमि प्राय: बालुकामय है, बीच बीच पहाड़ भी है। आगे नारियलके पेड़से भरा जंगल और उसके आगे समस्त शस्यक्षेत्र है। उक्त निम्नभूमिका विस्तार कहीं १५ मीलसे अधिक नहीं। फिर कहीं कहीं वह १ही मील पड़ता है। उच्च भूभागके पार्श्व प्राय: ३००।४०० फीट उच्च पर्वत है। पर्वतमालाके मध्य हजार फीट ऊंचे शृंगवाले कई शिखर भी खड़े हैं। शिखरोंमें बीच बीच उत्तम वर्धित आम्रवृक्ष और उद्यानशोभित अट्टालिका है। बालाघाटकी उपत्यका क्रमोन्नत १५०० फीट तक ऊंची है। नदीतीरवर्ती कुछ स्थानोंको छोड़ सब जंगलसे भरी और घिरी है। नदीके तीर सामान्य ग्राम और क्षुद्र जनपद वर्तमान हैं।

सह्याद्रिके उभय पार्श्व नदी है। उनसे कुछ पश्चिम मुख अरब-सागर और कुछ पूर्व मुख महोप-

सागरमें जा गिरी हैं। पूर्वांशकी नदीमें तुङ्गभद्राकी उपनदी वर्धा उल्लेखयोग्य है। पश्चिमांशकी नदीमें उत्तर कालीनदी, बीचों बीच गङ्गावली एवं तद्रि और दक्षिण गिरावती प्रसिद्ध हैं। गिरावतीका जलराशि होनावाड़ नगरके ३५ मील ऊपर ४२५ फीट उच्च पर्वतसे भीषणवेगमें गिरता है। वही विख्यात गारसप्पा प्रपात है। पर्वतमें अधिकांश ग्रेनाइट पत्थर है। फिर अनेकोंके मूलदेशमें लेटिराइट है। करवर और होनावाड़के निकट पार्वत्य प्रदेशसे लेटिराइट प्रस्तर संगृहीत हो गृहादिके निर्माणमें लगता है। उक्त प्रदेशके स्थान स्थान पर लौहखनि है। कुमपतासे १८ मील दूर जान उपत्यकामें चूनेका पत्थर मिलता है।

उत्तर कानाड़ाके वनविभागमें सकल प्रकार वृक्ष उत्पन्न होते हैं। उनमें सागवन, पियासाल प्रभृति अधिक देख पड़ते है। वहां गवरनमेंटके वनविभागसे लकड़ी कटती है। कृषकोंको वनसे बिना व्यय जलानेके लिये काठ, खादके लिये पत्ता और गृह-निर्माणके लिये बांस, खूंटा वगैरह मिल जाता है। पहले उत्तर कानाड़ेकी लकड़ी गुजरात और बम्बई जाकर बिकती थी। आजकल उसे रेलवेको करवर ले जाते हैं।

दक्षिण कानाड़ा अक्षा० १२° ७´ एव १३° ५८´ उ० और देशा० ७४° ३४´ तथा ७५° ४५´ पू०के मध्य अवस्थित है। वह मन्द्राज प्रेसिडेन्सीमें लगता है। प्रधान नगर मङ्गलूर (मंगरोल या बंगलोर) है।

उक्त प्रदेशका प्राकृतिक दृश्य अति सुन्दर है। नदी अनेक होनेसे क्षेत्र शस्यपूर्ण रहता है। वन नाना वृक्षादिसे भरा है। नारियलके बाग वगैरह काफी हैं।

उसके उपकूलभागमें (विस्तारमें ५ से १५ मील तक) उत्तर दक्षिण सब जगह लोग रहते हैं। आबादी कुछ घनी है। भूभाग लेटराइट प्रस्तरसे पूर्ण और समुद्रपृष्ठ पर ४०७ से ६०० फीट तक उच्च है। उसके आगे ही पश्चिमघाटकी क्षुद्र शिखरमाला है। जमालाबादका पर्वत (बेलतंगड़ीके निकट) और गदभकर्ण पर्वत सर्वापेक्षा विख्यात है। उक्त प्रदेशमें पश्चिम घाट १००० से ६००० फीट तक ऊंचा है। पूर्वांशमें उसीको एक प्रकारको सीमा मान सकते हैं। उसमें अनेक गिरिवर्त्म हैं। उनमें सम्पजी, अगुम्बी, चरमादी, हैदरगढ़ी या हुसैनगढ़ी, मंजराबाद तथा कन्नूर प्रभृति कुर्ग और महिसुरके मध्य अवस्थित है। मंगलोरसे उक्त गिरिपथ तक शकटगमनोपयोगी मार्ग है।

दक्षिण-कानाड़ेकी कोई नदी १०० मीलसे अधिक विस्तृत नहीं। फिर सब नदियां पश्चिम घाटसे निकली है। उनके मध्य ग्रीष्मकालको भी अनेकोंमें नौका गमन कर सकती है। नदियोंमें नेत्रवती, गुरपुर, गङ्गोली और चन्द्रगिरि वा पयस्त्रनी ही प्रधान है। कारकल नामक स्थानमें एक क्षुद्र और सुन्दर ह्रद है। फिर कुण्डपुरमें निर्मल जलका अपेक्षाकृत वृहत् ह्रद भरा है।

वहां मृत्तिकाके सुन्दर द्र ादि बनते है। बहुतसे लोग कलमें उस मृत्तिकासे गमे और ईंट तैयार करते हैं। फिर वहां चीनी मट्टीकी भांति एक प्रकारकी श्वेतवर्ण उज्ज्वल मसृण मृत्तिका भी मिलती है। मिजार नामक स्थानमें स्वर्ण, सुब्रह्मराय एवं केम्फल नामक स्थानमें दाड़िम-बीजाकार क्षुद्र पुष्पक-मणि और उदिपी तथा उप्पारंगड़ी तालुक़के मध्य लौहकी खनि है। लोहा निकालनेका कोई प्रबन्ध नहीं।

दक्षिण कानाडेकी अधिकांश भूमि अधिवासियोंके अधिकारमें है। गवरनमेण्टके अधीन केवल पश्चिम-घाटकी निकटवर्ती वनभूमिका कुछ अंश है। उक्त वनमें नाना प्रकार काष्ठ, वंश, एला, वन्य आरारोट, खदिर, दालचीनी, (छाल और तेल), गोंद, राल और तरह तरहका रंग उपजता है। मधु, मोम और अन्यान्य द्रव्यादि पहाडी लोग (मलयकुदी) संग्रह करते हैं। वहांसे प्रतिवर्ष प्रायः डेढ़ लाखका चन्दनतेल बनकर बाहर जाता है। महिसुरसे चन्दन काष्ठ आता है। किन्तु उसका तेल केवल दक्षिण कानाडामें ही बनाया जाता है।

असलमें तो कानाड़ा नामका कोई स्वतंत्र देश

नहीं है। पहले उसकी चतुःसीमा बता चुके हैं। उसके दक्षिणके जिलेके भी अंशका नाम मलयालम् (मलय) है। फिर मध्यांश तुलुव और उत्तरका कुछ अंश कर्णाट कहाता है। अनेकोंके कथनानुसार कानाड़ा कर्णाट देशका नामान्तर है। किन्तु यह बात ठीक नहीं। कर्णाट देखो।

दक्षिण कानाड़ेके कदीरो पयस्विनीका उत्तर पर्यन्त भूभाग प्राचीन केरल राज्यके अन्तर्गत है। कहा जाता है कि परशुरामके क्षत्रियविनाशके पीछे पाण्ड्य राजाओंने इस स्थान पर अधिकार किया था। ११२२ ई० तक पाण्ड्यराज प्रबल रहे। फिर ११६८ ई०को यह विजय नगरराजके अधिकारमें गया। १५६५ ई०को तालिकोटके युद्धमें विजयनगरराजका पराक्रम खर्व हुआ और बदनूरके सरदारने स्वाधीनता पा बदनूर राज्य स्थापन किया। उन्होंने कानाड़ेके उत्तर भागस्थ काननसे मोदेश्वर पर्यन्त अधिकार किया था। पीछे केरलक राजके साथ ईष्ट इण्डिया कम्पनीका बन्दोबस्त हुआ। उस समय उक्त प्रदेश मलराज्य कानाड़ाके नामसे लिखा जाता था। कानाड़ाका उत्तरांश तुलुव प्रदेशके अन्तर्गत रहा। १६१से ७१७ ई० तक यह कदम्ब राजाओंके अधिकारमें था। कदम्ब देखो।

फिर ७१७से १३३६ ई० तक कानाड़ेका उत्तरांश बल्लालवंशके अधीन रहा। बल्लाल देखो।

१७६३ ई०को हैदरअलीने बदनूरके अधिकार बाद कानाड़ेके मध्य मङ्गलोर बन्दर लेनेके पीछे मलबार और समस्त जिला अधिकार किया। दो वर्ष पीछे अंगरेज सैन्यने नगर और मङ्गलोर छुड़ाया था। किन्तु अल्प दिन पीछे ही टीपू सुलतानने पुनरधिकार किया। उसके पीछे १७८३ ई०को टीपूके अंगरेजोंका दक्षिण कानाड़ेमें संग्राम हुआ। अवशेष १७९९ ई० को यह सम्पूर्ण रूपसे अंगरेजोंके अधिकारमें पहुंच गया।

१८३४ ई०को कुर्गराजके राज्यच्युतिके समय अमर और सुलिय प्रदेशके लोगोंने उक्त प्रदेश अंगरेज राज्यभुक्त करनेकी प्रार्थना की थी। १८३७ ई०को इङ्गरेज उनके प्रस्ताव पर स्वीकृत हुए। अमर सुलिय जिला दक्षिण कानाड़ाके पुत्तुर विभागसे मिलाया गया। उसी वर्ष कल्याणप्पा सुब्राय नामक किसी सरदारने कुर्गराजके पतनसे अंगरेजोंके विरुद्ध अस्त्र धारण किया। पुत्तुरसे मङ्गलोर पर्यन्त विद्रोह फैला था। उसके पीछे विद्रोही शासित होने पर कानाड़ा प्रदेश दो भागोंमें बंट बम्बई और मन्द्राज प्रेसिडेन्सीमें मिल गया। दक्षिण कानाड़ाका प्रधान नगर मङ्गलोर, कुन्दापुर और उदीपी है। उसमें प्रधानतः हिन्दू, पोर्तगीज, फरासीसी, अरब और अन्यान्य लोग रहते हैं। हिन्दुओंमें ब्राह्मणोंकी संख्या अधिक है। वह सारस्वत और कोङ्कणी नामक दो समाजोंमें विभक्त हैं। कृषिकोंसे बहुत ब्राह्मण मिलते कहाते हैं।

इस देशके अरब मोपला कहाते हैं। अन्यान्य लोगोंमें सबकुडिराज प्रधान हैं। वह जिस प्रजाके अधिकारमें रहते, उसे 'कुमारी प्रजा' कहते हैं।

उत्तर कानाड़ाके मध्य हिन्दुओंमें हवारोंके अब सायी हाविक ब्राह्मण ही विख्यात हैं। मुसलमानोंमें नायत अरब वणिकोंके प्रतिनिधि कहाते हैं। किन्तु वह अल्प संख्यक मिलते हैं। अपरोंमें प्राचीन पोर्तगीजोंको क्रीत दासियोंके गर्भजात मुसलमान कोंदो नामसे ख्यात हैं। उनको आकृति इस समय भी बहुत कुछ काफिरोंसे मिलती है।

कानाफूसी (हिं० स्त्री०) गुप्तकथन, कोरेसे कही जानेवाली बात।

कानाबाती (हिं० स्त्री०) १ गुप्तकथन, कानाफूसी। २ बालक बहलानेका एक कार्य। बालकके कानमें कानाबाती कानाबाती कू' कहते 'कू' शब्द जोरसे बोलते हैं। इससे बालक चौंकने लगता है।

कानाबीन् (हिं० पु०) वस्त्रविशेष, एक कपड़ा। यह चौखियोंसे मिलता-जुलता रहता है।

कानि (हिं०स्त्री०) १ मर्यादा, इज्जत। २ शिक्षा, सीख।

कानिद (हिं० पु०) बांसकी कमची। इससे पतावरी समय ढीला पत्ता दबाया जाता है।

कानिष्ठिक (सं० क्ली०) कनिष्ठिका इव, कनिष्ठिका अण्। [illegible] कनिष्ठिका सदृश।

कानिष्ठिनेय (सं० पु०) कनिष्ठाया अपत्यं पुमान्, कनिष्ठा-ढक्-इनङ्, आदेशश्च। कल्याण्यादीनामिनङ्। पा ४।१।१२६। कनिष्ठाका पुत्र।

कानी (हिं० स्त्री०) १ एक चक्षुवाली स्त्री, जिस औरतके एक ही आंख रहे। २ कनिष्ठा, सबसे छोटी हाथकी उंगली।

कानीत (सं० पु०) कनीतस्य अपत्यं पुमान्। कनीत नामक ऋषिके पुत्र, पृथुश्रवा।

कानीन (सं० पु०) कन्यायाः जातः, कन्या-अण् कनीन आदेशश्च। कन्यायाः कनीनच। पा ४।१।११६।

१ अविवाहिता कन्याका पुत्र, वेब्याही लड़कीका लड़का। २ कर्ण राजा। ३ व्यासदेव। ४ अग्निवेश्य। ५ लोध्रवृक्ष, लोध। (त्रि०) ६ चक्षुके लिये हितकर, आंखकी पुतलीको फायदा पहुंचानेवाला औषध।

कानीयस (सं० त्रि०) कनीयसः इदम्। कनिष्ठ-सम्बन्धीय, उमरमें कम।

कानून (अ० पु०) व्यवस्था, आईन, मुल्कमें अमन-चैन रखनेका कायदा।

कानूनगो (फ़ा० पु०) राजस्व विभागका एक कर्म-चारी, कोई माली अफसर। यह पटवारियोंके कागज़ देखता भालता है। कानूनगो दो प्रकारका है— गिरदावर और रजिष्ट्रार। गिरदावर घूम घूम पट-वारियोंका काम देखा करता है। रजिष्ट्रारके दफ्तरमें पटवारियोंके पुराने कागज़ पहुंचाये जाते हैं।

कानूनगोई (अ०स्त्री०) कानूनगोका काम या ओहदा। मुसलमानोंके राजत्वकालमें जो राजकर्मचारी भूसम्पत्तिके ज्ञातव्य विषय नवाबके निकट पहुंचाते, वही यह पद पाते थे। आईन-अकबरी पढ़नेसे समझ पड़ता है कि उस समय प्रत्येक सरकारमें एक कानूनगो और उसके अधीन प्रत्येक महल्लमें एक पटवारी रहता था। चतुःसीमा, विभाग, विक्रय और हस्तान्तरकरण प्रभृति भूसम्पत्ति-सम्बन्धीय कोई कार्य आवश्यक आनेसे पहले कानूनगोसे कहना या उसके आदेश से कार्य करना पड़ता था। भूमिसम्पर्कीय किसी विषयपर तर्क उठनेसे कानूनगो मीमांसा कर देता था।

कानूनदां (फा० पु०) १ व्यवस्था समझनेवाला, जो कानून जानता हो। २ व्यवस्था झाड़नेवाला, जो कानून छांटता हो।

कानूनिया (हिं०) कानूनदां देखो।

कानूनी (अ० वि०) १ व्यवस्था जाननेवाला, जो कानून समझता हो। २ व्यवस्था-सम्बन्धीय, कानूनके मुताबिक। ३ नियमानुक्रम, कायदेके मुताबिक। ४ हठी, हुज्जती।

कानूम—पञ्जाबके कुणावर उपविभागका प्रधान नगर। यह समुद्रतलसे ८६०० फीट ऊंचे पर्वत पर अक्षा० ३१° ४′ उ० और देशा० ७८° ३०′ पू० में अवस्थित है। यहां एक प्रसिद्ध बौद्ध मठ है। उसमें भोटदेशीय विस्तर बौद्धग्रन्थ संरक्षित हैं। कानूम लाबकवाले प्रधान लामाके अधीन है। कम्बलका व्यवसाय अधिक चलता है।

कान्त (सं० पु० क्ली०) कनते दीप्यते, कन कर्तरि क्त। १ कुङ्कुम, रोरी। २ कान्तलौह, एक लोहा। ३ चोकण्ण। ४ चन्द्र, चांद। ५ स्वामी, खाविन्द। ६ चन्द्रकान्त, सूर्यकान्त और अयस्कान्त मणि, आतशी शीशा वगैरह। ७ नन्दीवृक्ष, एक पेड़। ८ वसन्त ऋतु, मौसम बहार। ९ विष्णु। १० शिव। ११ कार्तिकेय। १२ कामदेव। १३ चक्रवाक, चकवा। १४ वर्षा, बरसात। १५ हिज्जलवृक्ष, एक पेड़। १६ प्रियतम, प्यारा। (त्रि) १७ मनोरम, खूबसूरत। १८ अभि-लषित, चाहा हुआ।

कान्त—युक्त प्रदेशके शाहजहांपुर जिलेका एक शहर-ग्राम (कसबा)। यह शाहजहांपुर शहरसे साढ़े चार कोस दक्षिण जलालाबादकी राह किनारे अक्षा० २७° ४८′ २०″ उ० और देशा०७९° ४९′ ४५″ पू० पर अवस्थित है।

यह नगर अति प्राचीन है। शाहजहांपुर बसनेसे पहले कान्त अत्यन्त समृद्धिशाली था। प्राचीन अट्टा-लिका और दुर्गादिके ध्वंसावशिष्ट स्तूप प्रभृति देखनेसे इसका कितना ही पूर्व परिचय मिलता है। आजकल यहां पुलिसका थाना, डाकखाना और सराय मौजूद है। यह जनपद महाभारतोक्त 'कान्ति' (भीष्म ९।४०) और पाश्चात्य भौगोलिक टलेमि-वर्णित 'किण्ड्रिया' समझ पड़ता है।

कान्तता (सं॰ स्त्री॰) कान्तस्य भाव: कान्त तल टाप्। १ सौन्दर्य, खूबसूरती। २ कामित्व, ख्वाहिन्दी।

कान्तत्व (सं॰ क्ली॰) कान्तस्य भाव:, कान्त-त्व। १ मनोहारिता, खूबसूरती। २ कामित्व, ख्वाहिन्दी।

कान्तनगर—बङ्गाल प्रदेशके दीनाजपुर जिलेका एक ग्रामग्राम (कसबा)। यह वीरगञ्ज थानेमें लगता है। दीनाजपुर शहरसे कान्तनगर ६ कोस दूर है।

दुर्गादिके ध्वंसावशेषसे स्पष्ट समझ पड़ता कि उक्त स्थान किसी समय विशेष सम्वृद्धिशाली था। प्राचीन लोगोंके विश्वासानुसार स्तूपाकार ध्वंसावशेष विराटराजका दुर्ग रहा। यह उक्त दुर्गमें वास भी करते थे। पाण्डव अज्ञातवासके समय यहां आये थे।*

कान्तनगरको चारो ओर पड़े हुए विस्तीर्ण भूभाग-का नाम उत्तर-गोग्रह है। प्रवादानुसार कान्तनगरको ढापा नदीके पूर्वतीर और करार्द नदीके पश्चिम तीर विराटराजका गोधन चरता था। उक्त गोचारण-भूमि किसी समय अद्भुत प्राकारसे वेष्टित थी। आज-कल अब लतादिसे उक्त प्राकार स्थान ढक गया है, इसीसे उस प्राचीन प्राकारका चिह्न पर्यन्त पा नहीं सकते।

कान्त मन्दिर।

कान्तनगरका कान्त-मन्दिर अति प्रसिद्ध है। ऐसा सुन्दर और विचित्र मन्दिर बङ्गदेशमें दूसरा नहीं। राजा प्राणनाथ दिल्लीसे कान्त नामक विष्णुविग्रह लाये थे। उक्त कान्तविग्रह प्रतिष्ठा करनेके लिये ही सुप्रसिद्ध कान्तमन्दिर बना। १७०४ ई॰को इस मन्दिरका निर्माण कार्य लगा और कोई १७२२ ई॰को यह महत् कार्य सुसम्पन्न हुआ था। राजा प्राणनाथने इस मन्दिरके निर्माणार्थ लाखों रुपये खर्च किये। यह मन्दिर बङ्गाल देशके स्थपति और शिल्पी लोगोंका गौरवप्रकाशक है।

* यहांके अधिवासी कहा करते हैं कि दीनाजपुरका अधिकांश स्थान ही प्राचीन मत्स्यदेश है। किन्तु महाभारतादि पढ़नेपर किसी प्रकार उक्त बातसे मत्स्यदेशका अवस्थान निर्णय हो नहीं सकता। मत्स्यदेश वा विराटराज्य द्रष्टव्य है।

कान्तनगरका यह पवित्र देवमन्दिर देखनेसे समझ पड़ता है, कि अंगरेजोंके आनेसे पहले बङ्गालके दीन शिल्पियोंने स्थापत्य और शिल्पविद्यामें कितना उन्नतिलाभ किया था। यह नवरत्न मन्दिर है। मन्दिरकी चूड़ाके विष्णुचक्रसे पाददेश पर्यन्त सुगठित सुचित्रित और कारुकार्य-सुशोभित है। इस मन्दिरमें बिलकुल पत्थरका लगाव नहीं, भित्तिसे चूड़ा पर्यन्त समस्त इष्टक-निर्मित है। मन्दिरके गात्रमें इष्टक खोद बहुसंख्यक देवदेवी मूर्ति-गठित हैं। देवदेवीकी मूर्ति देखनेसे यह भी समझ सकते हैं कि प्रायः दो सौ वर्ष पूर्व बङ्गाल देशमें रीति, पद्धति और वस्त्रादि कैसे प्रचलित थे। हम कह सकते हैं कि ऐसा इष्टकनिर्मित एवं इष्टकखोदित कारुकार्य्यविशिष्ट मन्दिर दूसरा कहीं नहीं है।

कान्तनगरसे थोड़ी दूर सनका नामक स्थान है। प्रवादानुसार विख्यात वणिक् चांदसौदागरने वहां मट्टीका एक किला बनवाया था।

कान्तपक्षी (सं॰पु॰) कान्तस्य कार्तिकेयस्य पक्षी, ६-तत,-यद्वा कान्तः मनोहरः पक्षो ऽस्यास्ति, कान्त-पक्ष-इनि। मयूर, मोर।

कान्तपाषाण (सं॰ पु॰) चुम्बक नामक प्रस्तर, मक्नेटिक् स्टोन। यह शीत, लेखन (खुजली पैदा करनेवाला) और विषदोष, मेद, पाण्डु, क्षय, कण्डु, मोह तथा मूर्च्छानाशक है। (वैद्यकनिघण्टु) इसके शोधनका विधि यह है—कान्तपाषाणको पीस महिषी-दुग्ध तथा गव्य घृतमें पकाते हैं। पका कर यह लवण क्षार और गोमाञ्जनमें डाला जाता है। फिर दोला यन्त्रमें मधिषीक्षीरादिसे दो बार पकाते हैं। अन्तको अम्लरससे रौद्रमें एक दिन भावना दी जाती है। (रसेन्द्रसारसंग्रह)

कान्तपुष्प (सं॰ पु॰) कान्तानि मनोरमाणि पुष्पाण्यस्य, बहुव्री॰। कोविदारवृक्ष, लाल कचनार।

कान्तवाबू—कासिमबाजार राजपरिवारके प्रतिष्ठाता। इनका प्रकृत नाम कृष्णकान्त नन्दी था। जातिके यह तेली थे। प्रथम कान्तवाबू सामान्य मोदीका व्यवसाय करते थे। इसीसे अनेक लोग इन्हें 'कान्तमोदी' कहते हैं। वारन हेष्टिङ्गसके कासिमबाजारमें ईष्टइण्डिया कम्पनीके अधीन कर्म करते समय सिराज-उद्-दौलाने वहांके अंगरेजोंको पकड़ वध करनेका आदेश निकाला था। उसी घोर संकटके समय इन्होंने वारेनहेष्टिङ्गसको अपनी दुकानमें निरापद स्थान पर बैठा मरनेसे बचाया। फिर हेष्टिङ्गस गवरनर जनरल होकर आये। किन्तु वह कान्त बाबूका महा उपकार भूले न थे। प्रथमतः उन्होंने इन्हें अपना दीवान बनाया। कुछ दिन पीछे कान्त बाबूने कम्पनीसे गाज़ीपुर और आज़मगढ जिलेके अन्तर्गत (दूहा विहार) परगना जागीर पाया। इनके पुत्र लोकनाथको भी राजा बहादुरका उपाधि मिला था। ११८५ई॰के पौषमासमें कान्तबाबूका मृत्यु हुआ। यह हेष्टिङ्गसका दाहना हाथ थे। कान्तबाबूके द्वारा ही उनका सब काम चलता था। प्रयोजन होनेसे यह उनको रुपये उधार लाकर देते थे। हेष्टिङ्गसके साथ ही साथ कान्तबाबू रहते थे। एक बार हेष्टिङ्गसने इनके लिये काशीकी राजमाताको भी डांटा डपटा था।

(कान्तबाबूके चरित्र सम्बन्धमें Beveridge's The Trial of Nandakumar, p 234-45, 367-401 देखो।)

कान्तलक (सं॰ पु॰) कान्तं लकयते आस्वादयते, कान्त-लक वर्ण्य कः। १ नन्दीवृक्ष, एक पेड। २ तुन्नवृक्ष, तुनका पेड़।

कान्तलोह (सं॰ क्ली॰) कान्तं लोह कर्मधारय, कमनीयं लोहम्। १ अयस्कान्त, ईस्पात। २ लोह विशेष, एक लोहा। कान्तलोह उसीको कहते, जिसके पात्रमें जल रख कर तैलविन्दु डालनेसे तैल इतस्ततः न चले, जिसके स्पर्शसे हिङ्गु स्वीय गन्ध परित्याग करे, नीमका क्वाथ भी जिसमें मधुर आस्वाद दे, जिसमें दुग्ध पकानेसे बालुकाराशिकी भांति जमे और जिसके पात्रमें चना भिगानेसे कृष्णवर्ण देख पड़े। इस लोहसे वैद्यशास्त्रोक्त अनेक औषध प्रस्तुत होते हैं। औषध प्रयोग करनेके लिये जारण मारण प्रभृति कई कार्य आवश्यक हैं। लौहभस्म देखो।

इसके निरुत्थीकरणसम्बन्ध पर रसेन्द्रसारसंग्रहमें ऐसा उपदेश लिखा है,—"शुद्ध पारद १ भाग, गन्धक २ भाग, और उभयके समपरिमाण लौहचूर्ण एकत्र

कृतकुमारीके रसमें दो पहर घोंट तामके पात्रमें छोटी छोटी गोली बना रखना चाहिये। फिर यह गोलियां दो पहर परूषपत्र द्वारा आच्छादित रखनेसे शुष्क हो जायेंगी। उस समय इन्हें ताम्रपात्रमें सप्त तीन दिन तक रख चूर्ण कर लेते हैं। यह चूर्ण कपड़ेसे छान उसमें तालमेंसे उतरा जायेगा।

कान्तकोर (सं॰ स्त्री॰) कान्तं मनोहरं कोरम्, कर्मधा॰। कान्तकोर, ईसपात। कान्तलौह देखो।

कान्ता (सं॰ स्त्री॰) काम्यते असौ, कम णिङ्-क्त-टाप्। १ पत्नी, बीबी। २ सुन्दर स्त्री, खूबसूरत औरत। ३ प्रियङ्गु, एक खुशबूदार बेल। ४ स्थूलैला, बड़ी इलायची। ५ रेणुका, दारू। ६ नागरमुस्ता नागर मोथा। ७ किञ्चिपुष्प वृक्ष, एक खुशबूदार पेड़। ८ श्वेत दूर्वा, सफेद दूब। ९ वाराहीकन्द, एक दवा। १० आरामशीतला, एक बेल। ११ मूषिकपर्णी, एक बूटी।

कान्ताई—बिहार प्रान्तके मुजफ्फरपुर जिलेका एक ग्राम। यह मुजफ्फरपुरसे ३ कोस दूर अक्षा॰ २६ १५´ उ॰ और देशा॰ ८५ २०´ १०˝ पू॰ पर अवस्थित है। यहां नीलका व्यवसाय अधिक होता है।

कान्ताङ्घ्रिदोहद (सं॰ पु॰) कान्तायाः अङ्घ्रिः चरण एव दोहदः पुष्पोद्गमो यस्य, बहुव्री॰। अशोक वृक्ष।

कान्ताचरणदोहद, अशोक देखो।

कान्तायस (सं॰ क्ली॰) कान्त अय, आयसम् स्वार्थे अच्। कान्तं आयसम्, कर्मधा॰। १ चुम्बक लौह, अह-सिकमातीस। २ कान्तलौह, एक तरहका लोहा।

कान्तार (सं॰ पु॰ क्ली॰) कस्य सुखस्य अन्तं अन्तकृति अन्तकृति कान्तं मनोज्ञं अन्तकृति वा, कान्त ऋ-अण्। १ वन, जङ्गल। २ पथविशेष, किसी किस्मका रास्ता। ३ कोविदार वृक्ष, कचनारका पेड़। ४ वंश, बांस। ५ महावन, बड़ा जङ्गल। ६ दुर्गम पथ, मुश्किल राह। ७ गर्त, गड्ढा। ८ छिद्र, छेद। ९ दुर्भिक्ष, अकाल। १० भारद्वाज, अमलतासका पेड़। ११ चोप वर्तिम रोग, छोटी बीमारी। १२ आवारण इक्षु, ऊख। १३ इक्षुविशेष, कतौरा। भावप्रकाशके मतसे यह गुरु, मारक और शरीरकी स्थूलता, श्रम तथा श्लेष्मा-वृद्धिकारक है।

कान्तारक (सं॰ पु॰) कान्तार स्वार्थे कन्। इक्षु विशेष, कतौरा।

कान्तारग (सं॰ त्रि॰) कान्तारं गच्छति, कान्तार-गम-ड। जङ्गल गमन करनेवाला, जो जङ्गलको जाता हो।

कान्तारपथ (सं॰ पु॰) कान्तारावृतः पन्थाः, मध्य-पदलो॰। वनमार्ग, जङ्गली राह।

कान्तारपथिक (सं॰ त्रि॰) कान्तारपथेन आहृतम्, कान्तार पथ-ठञ्। [illegible] ॥ १ वनपथद्वारा आहृत, जङ्गली राहसे आया हुआ। २ वनपथसे गमन-कारी, जङ्गली राह जानेवाला।

कान्तारवासिनी (सं॰ स्त्री॰) कान्तारे वासोऽस्त्यस्याः, कान्तार-वास इनि-ङीप्। १ दुर्गा। २ वनवासिनी, जङ्गलमें रहनेवाली औरत।

कान्तारि (सं॰ पु॰) कान्तारी देखो।

कान्तारिका, कान्तारी देखो।

कान्तारी (सं॰ स्त्री॰) कान्तार-ङीप्। १ मक्षिका विशेष, एक प्रकारकी मक्खी। मधुमक्षिका देखो। २ इक्षुविशेष, कतौरा।

कान्तारेक्षु (सं॰ पु॰) इक्षुविशेष, कतौरा।

कान्तालक (सं॰ पु॰) नन्दीवृक्ष, एक पेड़।

कान्ति (सं॰ स्त्री॰) कम् भावे क्तिन्। १ दीप्ति, चमक। २ शोभा, खूबसूरती। इसका संस्कृत पर्याय—शोभा, द्युति, दीप्ति, छवि, आभा, भासा, भा और अभिख्या है। ३ स्त्री शोभा, औरतकी खूबसूरती।

"[illegible]।
[illegible]" । (कुमारसम्भव १)

रूप तथा यौवनके लालित्य और अलङ्कारादिसे होनेवाली सौन्दर्यकी शोभा कहते हैं। यही शोभा काम पैदा किंवा बढ़नेसे 'कान्ति' कहाती है। ४ इच्छा, ख्वाहिश। ५ कामपत्नि विशेष। ६ दुर्गा। ७ लक्ष्मी। ८ चन्द्रकी एक कला। ९ चन्द्रकी एक स्त्री। १० वाराही कन्द, एक दवा। ११ महाशर्मवृक्ष, धौवनका पेड़।

कान्तिक (सं॰ क्लो॰) कान्त्या कान्ति आख्यया कार्यात् आख्यते, कान्ति-कै-क। कान्तलौह, एक लोहा।

कान्तिकर (सं॰ क्लो॰) कान्तिं करोति, कान्तिकृ-ट। कान्तिवर्धक, खूबसूरती बढ़ानेवाला।

कान्तिद (सं॰ क्लो॰) कान्तिं द्यति नाशयति कान्ति-दो-क। १ पित्त, सफरा, जर्द-श्राव। २ घृत, घी। (त्रि॰) कांतिं ददाति, कांति-दा-क। २ शोभावर्धक, खूबसूरती बढानेवाला।

कांतिदा (सं॰स्त्री॰) कांतिद-टाप्। सोमराजी, बकुची।

कांतिदायक (सं॰क्लो॰) कांतिं ददाति, कांति-दा-खुल्। १ कालीयक, चन्दनवृक्ष। (त्रि॰) २ शोभादायक, रौनकबख्श।

कान्तिनगरी (सं॰ स्त्री॰) काञ्चीनगरी, काञ्जीवरम्।

कान्तिपुर (सं॰ क्लो॰) १ नेपालके अन्तर्गत एक नगर। आजकल नेपालकी राजधानी काठ-मांडू है। पहले उसीको कान्तिपुर कहते थे। नेपालके राजाओंकी वंशावली देखनेसे मालूम होता है कि, राजा लक्ष्मीनरसिंह मल्लने नेपाली-संवत् ७१५ (१५९५ ई॰)को गोरक्षनाथकी पूजाके लिये एक वृहत् काष्ठमण्डप बनाया था। तदनन्तर कान्तिपुरका नाम काठमांडू पड़ गया। स्कन्दपुराणके कुमारिका-खण्डमें लिखा है, कि कान्तिपुरमें नव लक्ष ग्राम थे। २ ग्वालियर राज्यका एक नगर। उसका वर्तमान नाम कोटवार है। अश्विन् नदीके तीर वह अवस्थित है। प्रभासखण्डके मतसे वहां जनप्रिय नामक देव विराजते हैं।

कान्तिभृत् (सं॰ त्रि॰) कान्तिं बिभर्ति, कान्ति-भृ-क्विप्। १ कान्तिविशिष्ट, रौनकदार। (पु॰) २ चन्द्र, चांद।

कान्तिमती—काञ्चीपुरके चोल राजा सोमेश्वरकी कन्या और पांड्यराज उग्रपांड्यकी पट्टमहिषी।

कांतिमत्ता (सं॰ स्त्री॰) कांतिमतो भावः, कांतिमत्-तल्-टाप्। कांतिविशिष्टता, रौनकदारी।

कांतिमान् (सं॰ पु॰) कांतिः प्रशस्त्येन अस्त्यस्य, कांति-मतुप्। १ चन्द्र, चांद। २ कामदेव। (त्रि॰) ३ कांतियुक्त, रौनकदार।

कांतिवृक्ष (सं॰ पु॰) महासर्जवृक्ष, लोबानका पेड़।

कांतिहर (सं॰ त्रि॰) कांतिं हरति नाशयति, कांति-हृ-ख। कांतिनाशक, रौनक घटानेवाला।

कांतीनगरी (सं॰ स्त्री॰) कान्तिपुर देखो।

कांतीत्पाड़ा (सं॰ स्त्री॰) छन्दोविशेष। इसमें बारह बारह मात्राके चार चरण होते हैं।

कांतोली (सं॰ स्त्री॰) कुष्माण्डकी सुरा, कुम्हड़ेकी शराब।

कान्यक (सं॰ त्रि॰) वर्णु नदसमीपस्थकन्यात् जातः, कन्या-वुक्। वर्णौवुक्। पा ४।२।१०३। वर्णु नद समीपस्थ कन्याजात, वर्णुनदीके पासको एक जगहका।

कांयक्य (सं॰ पु॰) कान्यकस्य ऋषेः गोत्रापत्यम्, कन्यक-यञ्। कन्यक ऋषिके वंशीय।

कान्यक्यायन (सं॰ पु॰) कन्यकस्य ऋषेः गोत्रापत्यम् कन्यक-यञ्-फक्। कन्यक ऋषिके वंशीय।

कान्यिक (सं॰ त्रि॰) कन्यायां जातः, कन्या-ठक्। कन्यायाष्ठक्। ४।२।१०२। कन्याजात, कथरीमें पैदा हुवा।

कान्द (सं॰ त्रि॰) कन्दस्य इदम्, कन्द-अण्। १ कन्द-सम्बन्धीय, डलेके मुताल्लिक। २ कन्दजात, डलेसे पैदा। (क्लो॰) ३ पक्वान्नविशेष, एक मिठाई।

कान्दर्प (सं॰ पु॰) कन्दर्पस्य अपत्यं पुमान्, कन्दर्प-अण्। १ कन्दर्पके पुत्र, अनिरुद्ध। (त्रि॰) २ कन्दर्प-सम्बन्धीय।

कान्दर्पिक (सं॰ क्लो॰) कन्दर्पाय कन्दर्पवृद्धये प्रयोजनमस्य, कन्दर्प-ठक्। वाजीकरण, ताकत बढ़ानेवाली चीज़।

कान्दव (सं॰ क्लो॰) कन्दौ संस्कृतं भक्ष्यम्, कन्दु-अण्। पिष्टकादि भोज्य वस्तु, रोटी पूरीकी तरह कड़ाही या तवे पर भूनी या सेकी हुई खानेकी चीज़।

कांदविक (सं॰ त्रि॰) कांदवं पण्यं अस्य, कांदव-ठक्। तदस्य पण्यम्। पा ४।४।५१। १ पिष्टकविक्रेता, पूरी मिठाई बेचनेवाला। (पु॰) २ हलवाई, कंदोई।

कांदाविष (सं॰ क्लो॰) कांदविष छादत्वात् दीर्घः। विषभेद, किसी तरहका ज़हर।

कान्दाहार (कंधार) १ अफगानस्थानका एक प्रदेश। हण्टर प्रभृति पाश्चात्य पण्डितोंके मतसे, खन्धार

अलेकसन्दर या सिकन्दर शब्दका अपभ्रंश है। मकदूनियाके प्रसिद्ध वीर अलेकसन्दर (सिकन्दर)ने अपने नामसे यहां एक नगर स्थापित किया था। उन्हींके नामानुसार उक्त नगरका भी नामकरण हुआ। किन्तु यह बात समीचीन नहीं जान पड़ती। ऋग्वेद (१।१२६।७) एवं अथर्ववेद (५।२२।१४)में गन्धारि और ऐतरेयब्राह्मण (७।३४) शतपथब्राह्मण (८।१।४।१०), छान्दोग्योपनिषत् (६।१४।१), अथर्व परिशिष्ट (५६) रामायण (७।११३।११), महाभारत, हरिवंश तथा पाणिनिसूत्रमें गन्धार वा गान्धार जनपदका उल्लेख है। महाभारत, विष्णुपुराण और वराहमिहिरकी बृहत्संहिताके अनुसार यह जनपद सिन्धुनदके पश्चिम अवस्थित जान पड़ता है।

बृहत्संहितामें लिखा है—

"वर्णेरथैव दैत्यस्य गन्धारविलमीर्षिका।" (बृह् ११।१८)

इस गान्धार देशीय मेघोंकी भांति कौसपूर्ण और पूर्णाभावा है। आज भी अफगानस्थानमें कौसम मेघ देख पड़ता है। एतद्व्यतीत बृहत्संहितामें *गान्धारदेशीय कुभा नदीका उल्लेख है। जिस समय* अलेकसन्दरका गमन उस अञ्चलमें हुआ, उस समयके यूनानियोंने उक्त नदीका नाम 'कोफेन' और 'कोफेस' लिखा है। आजकल उसे काबुल कहते हैं।

उक्त प्रमाण द्वारा समझ सकते हैं कि अलेकसन्दरके आनेसे बहुपूर्व संस्कृत भाषामें गान्धार कहानेवाले राज्यका ही अपभ्रंश कान्दाहार है। कान्दाहार प्रदेश आजकल पूर्वकालकी भांति विस्तीर्ण नहीं है। फिर भी चीनपरिव्राजक फाहियान, सुङ्गयुन और यूयनचुयाङ्ग प्रभृतिके समय यह जनपद वर्तमान पेशावर और काबुल तक विस्तृत न था। गान्धार देखो।

वर्तमान कान्दाहार प्रदेश खिलात-इ-गिलजाईसे ५ कोस दक्षिणसे लेकर उत्तरमें हजारा प्रदेश, दक्षिणमें बलूचिस्तानकी सीमान्त और पश्चिममें हेलमन्द तक विस्तृत है।

इस प्रदेशमें आरगन्दाब, गुलकी, अरगेस्तान और मागनी नामक कई गिरिमालायें हैं। फिर हेलमन्द, तरनक, अरगन्दाब, दोरी अरगसान और कदनाई नदी प्रवाहित है।

प्रधान नगर—कान्दाहार, फरा, खिलात-इ-गिलजाई और गिरिश्क है। यहां करीब चार लाख आदमी रहते हैं। उनमें अधिकांश दुर्रानी जाति है। पारसी और गिलजाई जातिकी भी कमी नहीं। आय प्रायः ११ लाख रुपये है।

२ अफगानस्थानके अन्तर्गत कान्दाहार प्रदेशका प्रधान नगर। यह अक्षा० ३१° ३० उ० और देशा० ६५° ४०´ पू० पर अरगन्दाब तथा तरनक नदीके मध्य काबुलसे १८० कोस दक्षिणपूर्व अवस्थित है।

वर्तमान कन्धार नगर बहुत अधिक दिनका निर्मित नहीं है। आधुनिक नगर अरगन्दाब नदीके वाम दिक् पर अवस्थित है। किन्तु यह बिलकुल तीरवर्ती नहीं। नदी और नगरके मध्य एक पर्वत श्रेणी है। उस पर्वतमालाके मध्य एक स्थानमें विच्छेद रहनेसे नदीतीरके साथ नगरका संयोग हो गया है। प्राचीन कान्दाहार नगर वर्तमान नगरसे ३ कोस पश्चिम पेलकिनाथ पर्वतके मूल पर अवस्थित था। उसकी तीनों ओर समतल क्षेत्र और चौथी ओर उक्त दुरारोह पर्वत था। इसीसे लोग उसे अजेय समझते थे। किन्तु नादिर शाहने बहुत दिन अवरोधके पीछे नगर अधिकार कर उसे विध्वंस कर दिया। फिर प्राचीन नगरसे दक्षिणपूर्व दो कोस दूर चतुर्दिक् पर्वत समाच्छन्न परिष्कृत समतल भूमि पर दूसरा नगर निर्मित हुआ और उसका नाम नादिराबाद रखा गया। किन्तु अहमदशाह अबदालीने नादिराबादको भी गिरा कर १७५१ ई०में वर्तमान कान्दाहार नगर स्थापन किया था। प्राचीन कान्दाहारका बहुविस्तृत ध्वंसावशेष देख कर विस्मित होना पड़ता है।

प्राचीन कालावधि कान्दाहार नगर विख्यात वाणिज्यकेन्द्र गिना जाता था। उस नगरमें हिरात, गोर, सीस्तान (पारस्य), काबुल और भारतवर्षसे अनेक बड़ी बड़ी राहें आई हैं। फिर उक्त पथसे चालानी पण्य यहांके बाजारमें पहुंचता और बिकता है। यह पहले अलेकसन्दरके और पीछे उनके सेनापति

शिलिउकस्के अधीन रहा। उस समयका इतिहास विशेष नहीं मिलता। उसके पीछे पारद और सासान वंशीयोंने उसे अपने अधीन किया। किन्तु उनके समयका भी विवरण विदित नहीं। फिर हिजरी सन्‌की प्रथमावस्थामें मुसलमान धर्मप्रचारक मुहम्मदके वंशधर वहां आये। ८६५ ई० को याकूब बिन-लिस नामक 'साफोरी' वंशके प्रतिष्ठाताने उस पर अधिकार किया। सासानवंशीयोंने उनके हाथसे उसे छीन लिया। फिर गजनवी वंशीयोंने सासानोंको कान्दाहारसे भगाया था। पीछे गोरी वंशीयोंने गजनवियोंको खदेड़ वहां अपना अधिकार जमाया। उनके अनन्तर कान्दाहार सेलजुकीयोंके हाथ लगा। अवशेषमें ११५३ ई० को तुर्कोंने कान्दाहार पहुंच नगर अधिकार किया था। फिर कई वर्ष पीछे वह गयास्-उद्दीन मुहम्मद गोरीके हस्तगत हुवा। १२१० ई० को खोरिजमके सुलतान अलाउद्दीन मुहम्मदने वह स्थान अधिकार किया था। १२२२ ई० को उनके पुत्र जहान्‌गीर खान्‌ने उन्हें वहांसे निकाल भगाया। फिर मलिक कुर्तवंशीयोंके हाथ जहान्‌गीर खान्‌के उत्तराधिकारी दूरीभूत हुये। कुछ दिन पीछे मलिक कुर्तीय स्थानीय सरदारोंसे हार और नगर छोड़ भाग गये। अवशेषमें १३८९ ई० को तैमूरलङ्गने सरदारोंके हाथसे कान्दाहार छीना था। १४६८ ई० तक वहां तैमूरके वंशीयोंका अधिकार रहा। फिर अबू सैयदके मरनेसे कान्दाहार और कतिपय पार्श्व-वर्ती स्थान स्वाधीन हो गये। १५१२ ई० को भारतके मुगल राज्यस्थापयिता बाबरने शाहबेग नामक स्वाधीन राजाको हरा उसे भारतके राज्यमें मिला लिया। कुछ दिन पीछे पारसिकों (ईरानियों) ने वह स्थान अधिकार किया। इसी प्रकार एक बार पारस्य (ईरान) और दूसरी बार भारतकी अधीनता स्वीकार करते करते कान्दाहारकी राजलक्ष्मी कुछ दिन अस्थिर रही। अवशेषमें १६२० ई० को फिर ईरानियोंने उसे अधिकार किया था। १५३७ ई० को नादिरशाहने दश लाख फौजके साथ १८ मास अवरोध कर कान्दाहार जीता। १८३४ ई० को शाहशुजा कान्दाहार पर चढ़े, किन्तु परास्त हो लौट पड़े। फिर सादोजाइयोंने उसे जीतनेकी चेष्टा की थी। १८३९ ई० को शाहशुजा फिर अंगरेजोंका साहाय्य ले कान्दाहारमें घुसे। उन्होंने सिन्धु नदीके तीरवर्ती सैन्यसाहाय्यसे २०वीं अपरेलको उसे जीता और नगरमध्यस्थ अहमदशाहके समाधिमन्दिरमें ८वीं मईको राजपद पर अभिषेक पाया। उसके पीछे उनका सैन्यदल समुदाय अफगानस्थान अधिकार करनेके लिये काबुल और गजनीकी ओर अग्रसर हुआ। सैन्यका कुछ अंश कान्दाहारमें शुजाके पास रह गया था। उसी समय दुरानियोंने विद्रोही हो सादोजाई जातीय अकबर खान् और सफदरजङ्गके अधीन कान्दाहार आक्रमण किया। अवशेषमें १८४२ ई० को नाना युद्धविग्रहादिके पीछे सफदर जङ्गने उसे जीता था। किन्तु अति अल्प दिन पीछे ही कोहनदिल खान्‌ने उन्हें वहांसे भगा दिया। कोहनदिल अति अत्याचारी था। १८५५ ई० को कोहनदिल खान्‌की मृत्यु हुई। उनके पुत्र मुहम्मद सादिक्‌ने पितृत्यक्त सम्पत्तिको लूट लिया और पितृव्य रहीमदिल खान् पर अत्याचार किया, इसीसे रहीमदिल खान्‌ने अफगानस्थानके अमीर दोस्तमुहम्मदको साहाय्य भेजनेको लिखा था। दोस्त-मुहम्मद खान्‌ने जा नगर अधिकार किया और अपने पुत्र गुलाम हैदरको शासनकर्ताके पद पर रख दिया। गुलाम हैदरके पीछे शेर अली प्रथम कान्दाहारके शासनकर्ता रहे, फिर वह काबुल चले गये। उन्होंने अपने भ्राता अमीन खान्‌को काबुलसे शासनकर्ता बना वहां भेजा था। अमीन खान्‌ने शेर अलीके विरुद्ध अस्त्र धारण किये और १५६५ ई० को काज-बाजके युद्धमें मारे गये। अमीनके कनिष्ठ मुहम्मद शरीफने एक बार वृथा चेष्टा की, आखिर ज्येष्ठकी अधीनता स्वीकार की। अजीम खान् नामक शेर अलीके वैपित्रेय भ्राताने विद्रोही बन १८६७ ई० को खिलाति-ए-घिलजाई नामक स्थानमें शेर अलीको हरा दिया। उसके पीछे शेर अलीके पुत्र याकूब खान्‌ने पितृराज्य उद्धार किया।

उसी समय अफगानस्तानके शाह सुजाउल्मुल्कका मनोमालिन्य बढ़नेके कारण १८७८ ई०को ब्रोटाके सर डोनाल्ड ष्टुयार्टने अंगरेज सैन्य ले अफगानस्तान राज्यमें प्रवेश किया। शेख-अहमद-दोन नामक सेनापतिने तख्तीपुल नामक स्थानमें उन्हें रोका था। किन्तु वह हार गये। १८७९ ई० को कान्दाहार अंगरेजोंके अधीन हुआ।

शेर अलीके मरने पीछे याकूब खान्‌ने गण्डमक नामक स्थानमें अंगरेजोंसे सन्धि की थी। उससे युद्धादि बन्द हो गया। सन्धिके अनुसार कान्दाहार छोड़ पिशिनमें जानेके लिये अंगरेजोंका आदेश मिला। उसी बीचमें सर लुई केभाग्नारी काबुलके दरबारमें सदल निहत हुये। सुतरां अंगरेजोंने फिर कान्दाहार अधिकार किया और कान्दाहारको रखाके लिये शिराली-ए-विलायत नामक खान की भी किया। १८८० ई०को बम्बईसे मेजर जेनरल प्रिमरोजके अधीनमें सर सर डुयाट सैन्य छोड़े थे। सरदार शेर अली खान्‌ अंगरेजोंके अधीन कान्दाहारके वाली नियुक्त हुये। सरदार मुहम्मद अयूब खान्‌ने उनसे बिगड़ युद्धोद्यम की थी। अंगरेज सेनाको वाराने उसमें साथ लाओ। किन्तु उनका सैन्यदल एकबारगी ही मारा गया। अयूब खान्‌ कान्दाहारका पथ मुक्त पा अग्रसर हुये। उसी बीच अब्दुर रहमान खान्‌ अंगरेज गवर्णमेण्टके साथ प्रबन्ध कर अमीर बन बैठे। उससे पहले सर रावर्टस कान्दाहारके उद्धारको नूतन सैन्य ले आगे बढ़े थे।

सर रावर्टसके पहुंचने पर काबाबालो खाटान और गण्डी मूला-साहबदाद नामक स्थानमें अयूबके साथ भीषण युद्ध हुआ। युद्धमें अयूबका सर्वस्व गया था। उनका सैन्य, शिविर, तोप, बन्दूक बारूद, सब सामान्‌ कुशमनके हाथ लगा। अप्रेलमें १८८१ ई० को अपरेल मास कान्दाहार प्रदेशमें शान्ति स्थापन कर सर रावर्टस लौट आये। फिर अमीर अब्दुर रहमानने मुहम्मद अक्रम खान्‌ नामक किसी दोड़मवर्दीय बाबकको सरदार शमस-उद दोन खान्‌के अधीन कान्दाहारका शासनकर्ता नियुक्त किया।

अयूब खान्‌ हिरातमें भाग कर रहे थे। वहां वह जमशेदी जातिके अधिपति कौश बहादुरको मार सर्व अधिनेता बने और अमीरके विरुद्ध अग्रसर हुये। उन्होंने शाहा कुरेज नामक स्थानमें अमीरके सैन्यको हरा कर कान्दाहार दखल किया था। फिर अमीरने सर्व सैन्यके साथ आगे बढ़ थोरे थोरे अयूबको रसद और तोप छीन ली। अयूब फिर हिरातको भागे। किन्तु सरदार अब्दुल कुद्दुस खान्‌ने उसी बीच हिरात अधिकार कर लिया था। इस लिये अयूबको पारस्य राजके शरणागत हो वास करना पड़ा।

इसके बाद अमीरने गुलाम हैदर खान्‌के अधीन ७००० शिक्षित सैन्य भेज कान्दाहारकी रक्षा की। १८८१ ई०को सरदार नूर मुहम्मद खान्‌ शासन कार्यमें नियुक्त हुये।

कान्दाहार नगर देखनेमें आयताकार और साढ़े तीन मील विस्तृत है। उसके चारो ओर उपरीय ओर गड़े हैं। गड्ढ (गढ़ा) २४ फीट गंभीर है। उपरीय ओर मतके पीछे रौद्रदग्ध मृन्मय प्राचीर है। उसमें दरार या प्रस्तर नहीं लगा। उसे रौद्रमें सुखा पत्थरकी तरह कड़ा बना दिया है। वह पश्चिम दिक्‌में १८६० गज, पूर्वमें १८१० गज, दक्षिणमें १३३५ गज और उत्तरमें ११६० गज लम्बा है। नगरमें ६ फाटक हैं। पूर्वको हारदुरानी तथा काबुल द्वार दक्षिणको शिकारपुर द्वार पश्चिमको हैरात एवं तोपखाना द्वार और उत्तरको ईदगाह द्वार है। इन्हीं द्वारोंसे नगरको ६ बड़ी राहें गयी हैं। मध्यस्थलमें शिकारपुर द्वार और काबुल द्वारको राह जहां मिली है, वहां चारसू मसजिद खड़ी है। उसके गुम्बजका व्यास ५० गज है। राहें ४० गज चौड़ी हैं। मसजिदके उत्तर किला है। उसीके निकट तोपखानेका मैदान है। मैदानके पश्चिम अहमदशाह दुरानीकी कबर है। वह अति उच्च अट्टालिका है। नगरके प्रत्येक द्वार और प्रत्येक मार्गसे उसका गुम्बज देख पड़ता है। उसको चारो ओर अहमदशाहके वंशधरोंको दूसरी भी छोटी छोटी १२ कबरें हैं।

कान्दाहारका वाणिज्य विशेषतः ईरानियोंके

हाथमें है। कान्दाहारमें रेशम और उसके कपड़े बहुत बनते हैं। लाखकी खेती भी अधिक होती है। मेवाकी कोई कमी नहीं। शुष्क फल यहांका प्रधान खाद्य है।

कान्दाहारी वेगम—बादशाह शाहजहान्‌की प्रथमा महिषी। वह पारस्यराज इस्माइल शाह (१म) के वंशोद्भव सुलतान मिर्जाशफीकी कन्या थीं। सम्राट् अकबरने पारस्यराज शाह अब्बासको कान्दाहारका शासनभार सौंपा था। किन्तु उन्होंने वह कार्य सुलतान हुसेन मिर्जाके हस्त अर्पण किया। हुसेन मिर्जाके मरने पर उनके पुत्र मुजफ्फर हुसेनका कान्दाहारका शासनभार मिला था। वह १५८२ ई० को तीन भ्राता साथ ले अकबरकी सभामें पहुंचे। अकबरने उनकी अभ्यर्थना कर पांच हजारीका पद और सम्भल नामक स्थान जागीर दी थी। कान्दाहारी वेगम उनकी भगिनी थीं। १६१० ई० को उन सुन्दरी रमणीके साथ युवराज खुरम (शाहजहान्) का विवाह हुआ। आगरेके कंधारीबाग नामक उद्यानमें कान्दाहारी वेगमको समाधि दिया गया। उसका समाधिमन्दिर अति सुन्दर है। आजकल वह भरतपुरराजके अधिकारमें है।

कांदि—बङ्गाल प्रान्तके मुर्शिदाबाद जिलेका उपविभाग। उसका परिमाणफल ३८८ वर्ग मील है। उसमें कांदि, भरतपुर और खड़गांव तीन थाने लगते हैं। वीरभूमसे मयूराची नदी जाकर जहां मुर्शिदाबाद जिलेमें घुसी है वहीं कांदि नगरी बसी है। पायकपाड़ेके राजाओंका वहां आदिवास है। उक्त राजवंशके आदिपुरुष गङ्गा-गोविन्द सिंहने कान्दिमें हो जन्म लिया था। उन्होंने २० लाख रुपये लगा अपनी माताका श्राद्ध किया और अभ्यागतोंको ब्राह्मण वाहकोंको डाक बैठा हाथों हाथ जगन्नाथसे ताजा प्रसाद मगा खिला दिया।

कान्दिग्भूत (सं० त्रि०) कां दिशं गच्छामि, इत्याकुलीभूतः, कान्दिश्-भूत। १ पलायित, ढूंढे राह न पानेवाला, भगोड़ा। २ भीत, डरा हुवा।

"स कथयित् मयात्कात् विहतो शास्त्रपदा।
कान्दिग्भूतो जोविताथीं प्रदुद्राबोत्तरां दिशम्।" (भारत, शान्ति, १६६ अ०)

कान्दिशीक (सं० पु०) 'कां दिशं यामि' इत्येवं वादिनो अर्थे ठक् प्रत्ययेन पृषोदरादित्वात् सिद्धं। यद्वा कदि वैक्लव्ये भावे इन्, कन्दि वैक्लव्यं; शीक सेचने भावे घञ्, शीकः अश्रुपातः; कन्दिश्च शीकश्च तौ विद्यते अस्य कदिशीक-अण्। भय देखकर पलायनकारी, डरसे भगनेवाला।

कान्टू (काण्डु) बङ्गाल और बिहार प्रान्तवासी एक जाति। कहीं कहीं उसे भड़भूजा, भुरजी आदि भी कहते हैं। शस्यकण्डन हो इस जातिकी प्रधान उपजीविका थी।

कान्यकुब्ज (सं० क्लो०) कन्याः कुब्जाः यत्र, कन्यकुब्ज स्वार्थे अण्। १ देशविशेष, एकमुल्क। हिन्दीमें इसे कनौज कहते हैं। संस्कृत पर्याय—महोदय, कन्याकुब्ज गाधिपुर, कौश और कुशस्थल है। रामायणमें लिखा है कि राजर्षि कुशनाभके औरस और घृताची अप्सराके गर्भसे १०० कन्याओंने जन्म लिया था। उनका रूप-यौवन देख वायुदेव कामातुर हुये। किन्तु विना पिताकी आज्ञाके कन्याने उनसे सहवास करना स्वीकार न किया। इसपर वायुदेवने उन्हें शाप दे कुबड़ी बना दिया। पिताने प्रसन्न हो अपनी कन्याओंका विवाह कम्पिल्ल नगरके राजा ब्रह्मदत्तसे किया था। उनके स्पर्शसे कन्याओंकी कुब्जता मिट गई। २ ब्राह्मण-जातिविशेष। कनौजिया देखो।

कान्यकुब्जी। (सं० स्त्री०) कान्यकुब्ज-ङीप्। कान्यकुब्ज देशकी स्त्री।

कान्यजा (सं० स्त्री०) कात् जलात् अन्यस्मिन् जायते क-अन्य-जन्-ड-टाप्। नलीनामक गन्धद्रव्य, एक खुशबूदार चीज।

कान्ह (हि० पु०) श्रीकृष्ण।

कान्हड़ा— कानड़ा देखो।

कान्हड़ो (हि०) कर्णाटी देखो।

कान्हम (हि० पु०) कृष्णवर्ण भूमि, काली मिट्टी की जमीन। यह भड़ौंचको ओर होती है। इसमें कपास बहुत उपजती और पनपती है।

कान्हमी (हि० स्त्री०) कर्पासविशेष, एक कपास। यह भड़ौंचकी ओर कान्हम भूमिमें उपजती है।

कानर (हिं० पु०) १ कोल्हू । २ कोल्हूको एक लकड़ी। यह जातरके छोरपर लगता और ठेका मैका रखता है। इसके दोनों प्रान्त निकल पड़ते हैं। कानर कोल्हूकी कमरके पास चारों ओर घूमा करता है।

कानरा—कानरा देखो।

काप—बङ्गालके वारेन्द्र ब्राह्मणोंकी एक कुल-कथो।

कापटव (सं० पु०) कापटोर्योऽपत्यम् कापटु अण्। कापट ऋषिके गोत्र। (स्त्री०) कुत्सित पटुः तस्य भाव,, कापटु भावे अण्। २ निन्दित पाटुता, बुरी चालाकी।

कापटव्यक, कापटव देखो।

कापटिक (सं० पु०) कपटेन चरति कपट ठञ्। १ छात्र, विद्यार्थी। २ परमका मर्मज्ञ दूसरेका भेद जाननेवाला। ३ प्रतारक, धोकेबाज।

कापट्य (सं० स्त्री०) कपटस्य भाव' कार्यञ्च, कपट ष्यञ्। १ कपटता चालाकी। २ प्रतारका धोकेका काम।

कापड़ी (हिं०पु०) जातिविशेष, एक कौम। गुजरातमें कपड़े बेचनेवालोंको कापड़ी कहते हैं।

कापथ (सं० पु० क्ली०) कुत्सितः पन्था' कु पथिन्-अच् कोः कादेशः। पाणिनि ६।३।१०४

१ कुत्सित पथ बुराव राह। इसका संस्कृत पर्याय—व्यध्व, दुरध्व विपथ कदध्वा, कुपथ, असत् पथ और कुत्सितवर्त्म है। २ उशीर, खस। ३ एक दानव।

कापर (हिं० पु०) वस्त्र, कपड़ा।

कापरगादि—बङ्गाल प्रान्तके सिंहभूम जिलेकी एक गिरिमाला। इसका शृङ्ग समुद्रतलसे १९८८ फीट ऊंचा है। यह गिरिमाला दक्षिणपूर्वाभिमुख चल मयूरभञ्जकी उत्तर सीमाके मैदानमें पर्वतसे जा मिली है। इसके उत्तर पत्थरमें तांबा निकलता है। पहले कुछ स्थानीय लोग यहीं तांबा तैयार करते थे। किन्तु अधिक व्यय लगनेसे १८६८ ई० को उन्होंने यह कार्य छोड़ दिया।

कापरप्लेट (अ० पु०—Copper plate.) ताम्रपट, तांबेकी चद्दर। यह मुद्रण यन्त्रालयमें काम आता है। इस पर अक्षर खोदे जाते हैं। अक्षरों पर स्याही लगा मोम जानेसे खुदे अक्षरोंके सिवा दूसरा स्थान स्वच्छ निकल जाता है। इसी प्रकार कापरप्लेट प्रेसपर चढ़ा कागज छापा जाता है। चित्र आदि छापनेको विलायती काम लेते हैं। जिस प्रेसमें कापर प्लेट छपता है, उसका नाम 'कापरप्लेट प्रेस' पड़ता है।

कापा (वै० स्त्री०) कं सुखं आप्यते अनया, क-आप अङ्-टाप्। अग्नियोंका प्रातःकालीन स्तुतिपाठ।

"कापायैते अरुषेव कावाः।" (ऋक् १।११३।२)

'कापा' स्तोत्रक्षण अग्नियोंकाली वाङ्। (सायण)

कापाटिक (स० स्त्री०) कपाटिका एव कापाटिक स्वार्थे अण्। छुद्र कपाट, छोटा किवाड़ा।

कापाल (स० पु०-क्ली) कपालमेव कपाल स्वार्थे अण्। १ अष्टादश कुष्ठान्तर्गत वातिककुष्ठ, एक कोढ़। (कुष्ठ देखो।) २ कपालकता, वातविकार। ३ कपालका अस्थि खोपड़ीकी हड्डी। ४ ककड़ीभेद एक ककड़ी। ५ किसी शैव सम्प्रदायका अनुयायी। ६ अस्त्रविशेष, एक हथियार। ७ सन्धिभेद, एक सुलह। इसमें विपक्षी तुल्य बल माने हैं। (त्रि०) ८ कपाल सम्बन्धीय, सरके मुतालिक।

कापाला (स० स्त्री०) रक्तकिवन्धिका, लाल फूलोंका एक पेड़।

कापालि (स० पु० स्त्री०) कर्कटिका, ककड़ीटोडी।

कापालिक (सं० पु०) कपालेन नरकपालेन चरति, कपाल ठञ्। १ जातिविशेष, एक कौम। यह पश्चिममें मिलती है। २ वामाचारी, एक तान्त्रिक साधु। यह शैवसम्प्रदायके होते हैं। मांस खाना और मद्य पीना इन्हें अनुचित नहीं मालूम पड़ता। कापालिक नरके हाथमें मनुष्यका कपाल रखते और भैरव वा शांकको बलि अर्पण करते हैं। ३ कुष्ठरोग विशेष एक तरहका कोढ़। कपालकुष्ठ देखो।

कापालिका (सं० स्त्री०) वाद्यविशेष, एक बाजा। पहले यह मुखसे बजायी जाती थी।

कापाली (स० स्त्री०) कापाल ङीप्। १ विडङ्ग। २ कर्कटकाशी, ककड़ीटोडी।

कापाली (सं० पु०) कपालं धार्यत्वेन अस्तास्य, कपाल इनि। १ शिव। २ वासुदेवके एक पुत्र। ३ एक जाति। पूर्ववङ्गमें एक प्रकारके जुलाहे रहते हैं। किसीके मतमें लोहारके औरस और तेलीकी कन्याके गर्भसे वह उत्पन्न हुये हैं। फिर कोई मछुवेके औरस और ब्राह्मणीके गर्भसे कापालियोंका जन्म बताता है। वह अपने पूर्वपुरुषोंको युक्तप्रदेशसे आये कहते हैं। दूसरा प्रवाद यों है—"आदिशूरके समय कापाली शूद्र समझे जाते थे। कान्यकुब्ज देशसे पांच ब्राह्मण और कायस्थ आये। आदिशूरने कापालियोंसे उनके पैर धोनेको कहा। किन्तु कापालियोंने उनका आदेश माना न था। इसीसे गौड़राजने उन्हें समाजको नीच श्रेणीमें गिन लिया।"

उनमें अधिकांश वैष्णव हैं। विवाह शास्त्रानुसार होता है। प्रथम स्त्री वन्ध्या होनेसे द्वितीय स्त्री ग्रहण कर सकते हैं। आत्मीयकी मृत्यु होने पर ३० दिन अशौचके पीछे ३१ वें दिन श्राद्ध किया जाता है।

कापिक (सं० पु०) कपिरेव ठक्। अङ्गुल्यादिभ्यष्ठक्। पा ५।३।१०८। १ कपि, वानर। (त्रि०) २ कपिवत् आचरण करनेवाला, जो बन्दरकी तरह पेश आता या देखा जाता हो।

कापिकेचण (सं० पु०) कोकिलाच क्षुप, ताल मखानेका पेड़।

कापिञ्जल (सं० पु०) कपिञ्जलस्य अपत्यं पुमान्, कपिञ्जल-अण्। कपिञ्जलके पुत्र।

कापिञ्जलादि (सं० पु०) कपिञ्जलान् तन्मांसानि अत्ति, कपिञ्जल-अद्-अण्-इञ्। चातक तथा तित्तिर पक्षीका मांसभक्षक, जो पपीहे और तीतरका गोश्त खाता हो।

कापिञ्जलाद्य (सं० पु०) कापिञ्जलादेरपत्यं पुमान्, कापिञ्जलादि-ण्य। कुर्वादिभ्यो ण्य। पा ४।१।१५१। कापिञ्जलादिका पुत्र, पपीहे और तीतरके गोश्त खानेवालेका बेटा।

कापित्थ (सं० क्लो०) कपित्थस्य विकारः, कपित्थ-अञ्। अनुदात्तादेय। पा ४।३।१४०। १ कपित्थ द्वारा निर्मित वस्तु, कैथेकी चीज। २ कपित्थफल, कैथा।

कापित्थक (सं० क्लो०) देशविशेष, एक मुल्क। (वृहत् संहिता) वर्तमान उत्तर भारतके सङ्किश नामक नगरकी चारो ओरका स्थान 'कापित्थक' कहाता है।

सङ्किश और साङ्काश्य देखो।

कापिल (सं० पु०) कपिलेन प्रोक्तं शास्त्रं वेत्ति अधीते वा, कपिल-अण्। १ सांख्यशास्त्रवेत्ता। कपिलमधिकृत्य कृतो ग्रन्थः। २ कपिल मुनिके मतानुसार लिखित एक उपपुराण। ३ पिङ्गलवर्ण, भूरा रंग। ४ कपिलवर्णाके पुत्र। (त्रि०) ५ कपिल-सम्बन्धीय। ६ पिङ्गल, भूरा।

कापिलिक (सं० पु०) कपिलिकाया अपत्यं पुमान्, कपिलिका-अण्। कपिलवर्णाके पुत्र।

कापिलेय (सं० पु०) कपिलाया अपत्यं पुमान्, कपिला-ढक्। कपिल मुनिके एक शिष्य। कपिला नाम्नी किसी ब्राह्मणीका स्तनपान करनेसे वह 'कापिलेय' कहाये हैं। (भारत, शान्ति, ११८ अ०)

कापिल्य (सं० त्रि०) कपिलेन निर्वृत्तम्, कपिल-ण्य। कपिलनिर्मित, कपिलका बनाया हुवा।

कापिवन (सं० क्लो०) दो दिनमें होनेवाला एक अहीन यज्ञ।

"आङ्गिरस चैवरथ कापिवनाः।" (कात्यायन, २३।४।३)

कापिश (सं० क्लो०) कपिशा माधवी तत्पुष्पात् जातम्, कपिशा-अण्। १ द्राक्षामद्यविशेष, माधवीके फूलोंकी शराब। २ मद्यमात्र, कोई शराब।

कापिशायन (सं० क्लो०) कापिश्या जातम्, कापिशी-ष्फक्। कापिश्या ष्फक्। पा ४।२।९९। १ मद्य, शराब। २ मधु, शहद। ३ देवता। ४ कापिशी जनपदमें रहनेवाला। (त्रि०) ५ द्राक्षानिर्मित, दाखका बना हुवा।

कापिशायनी (सं० स्त्री०) द्राक्षा, दाख।

कापिशी (सं० स्त्री०) प्राचीन जनपदविशेष, एक पुरानी बसती। पाणिनिने अपने सूत्रमें उसका उल्लेख किया है। (४।२।९९) हिउवेनसियाङ्गने उस जनपदका नाम 'कि अ-पि-शि' लिखा है। उक्त चीन परिव्राजकके समय भी कापिशी जनपद क्षत्रिय राजाके अधीन रहा। उस समय यहां निर्ग्रन्थ, पाशुपत, कापालिक,

देखोपावन चौर बहुत कौद वास करते थे। उसका विस्तार ३००० लि (करीब ३३३ कोस) था। (Beal's Buddhist Record I, 54-58 देखो)

पाश्चात्य प्राचीन भौगोलिक टलेमिमें उसका नाम 'कपिसा', प्लिनिमें 'कपिसिन्' और सलिनासमें 'कपसा' लिखा है।

कनिंहाम साहबके मतसे उक्त प्राचीन जनपद काफरस्तान कोरबन्द और पञ्चशिर पर्यन्त विस्तृत था। चीन परिब्राजकको वर्णनासे समझ पड़ता कि वर्तमान वन्नु (पाणिनि-कथित वर्ण) जनपदका प्रदेश पर्यन्त कापिशो पर्यन्त राजाका अधिकार रहा।

प्लिनिने उसको राजधानी 'कपिसा' बतायो है। उसका वर्तमान नाम कुसान अथवा कोपियान है।

कापिशेय (सं॰ पु॰) कपिशायां भवम् कुमारम्, कपिशा ढक्। पिशाच, भोताल्।

कापिस्थल (स॰ पु॰) कपिस्थलस्य स्वम्, कपिस्थल-अण्। १ प्राचीन जनपद विशेष, एक पुरानी बस्ती। कठर् संहितामें यह 'कापिस्थल' नामसे उक्त है। फिर प्राचीन ग्रीक भौगोलिक परिचयमें उसे 'काम्बिस्थली' लिखा है। वह पञ्चालके अन्तर्गत कुरुक्षेत्रका मध्यवर्ती है। वर्तमान नाम कयथल है। यहां पञ्चनामन्दिर प्रसिद्ध है। २ गोत्रभेद।

(कात्रे नामर १।४।११)

कापिष्ठलि (स॰ पु॰) कपिष्ठलस्य गोत्रापत्यम्, कपिष्ठल-इञ्। कपिष्ठल ऋषिके वंशीय।

कापी (स॰ स्त्री॰) १ नदी विशेष, कोई दरिया। २ ओषधिविशेष एक तरहको चीरत।

कापी (अ॰ स्त्री॰=Copy) १ प्रतिलिपि, नकल। वह शब्द अंगरेजी Copyका अपभ्रंश है। (वि॰) २ कहारी, विरमी।

कापी राइट (अ॰ पु॰=Copy right) मुद्रणस्वामित्व, एक तरमीम या सुरक्षितो। उक्त स्वत्व राजविधिके अनुसार ग्रन्थकार या प्रकाशकको मिलता है। बिना अनुमति लिये दूसरा व्यक्ति किसी ग्रन्थकार या प्रकाशकको कोई पुस्तक छपा नहीं सकता।

कापु—मन्द्राज प्रान्तको एक जाति। इसी जाति विशेषमें कापलु, रेड्डो या नायडू भी कहते हैं। मैसूर, कदपा, करनूल और समस्त तेलङ्ग देशमें कापु लोग रहते हैं। उनको उपजीविका प्रधानतः कृषिकार्य होती है। किन्तु कोई कोई व्यवसाय भी चलाते हैं। दक्ष चतुर, कामठी और कार्यक्षम होते हैं। कापु जाति १३ शाखाओंमें विभक्त है। १ धार, २ कानिटे ३ चलकुटो ४ देशरि, ५ मेराला, ६ पग्गा, ७ पाकानाटी ८ पेदाकांति ९ पत्ते, १० मोटाटि, ११ रजु १२ वेराव और १३ रैकाला कापलु।

कापुरुष (स॰ पु॰) कु पुरुषः कोः कादेशः। निन्दित पुरुष। मा॰ ६।११। ६। निन्दित पुरुष, खराब आदमी।

कापुरुषता (सं॰ स्त्री॰) कापुरुषस्य भावः, कापुरुष तल्। १ निन्दित पुरुषका कार्य, खराब आदमीका काम। २ भीरुता निकम्मापन।

कापुरुषत्व (सं॰ क्ली॰) कापुरुष त्व (मन नामलम्मी। पा॰ ११११८) निन्दित पुरुषका कार्य। कापुरुषता देखो।

कापुरुष्य (सं॰ क्ली॰) कापुरुषस्य भावः, कापुरुष-ष्यञ्। कापुरुषता, निकम्मापन।

कापेय (सं॰ त्रि॰) कपिभाँव कार्यम्वा, कपि ढक्। १ कपिसम्बन्धीय बन्दरके मुताल्लिक। २ अङ्गिरा ऋषिके वंशमें उत्पन्न। (पु॰) ३ शौनक ऋषि। (क्ली॰) ४ वानर जाति, बन्दरोंको कौम। ५ वानरके कार्य, बन्दरको चाल।

कापोत (सं॰पु॰क्ली॰) कपोतानां समूहः, कपोत अण्। १ कपोतसमूह, कबूतरोंका झुण्ड। २ सौवीराञ्जन, सुरमा। ३ सर्जिक्षार, सज्जीखार। ४ वल्मीक मधुप, काला ममख। ५ कपोत वर्ण, भूरारङ्ग (त्रि॰) ६ कपोत-सम्बन्धीय, कबूतरके मुताल्लिक। ७ कपोत वर्णविशिष्ट, भूरा।

कापोतक (सं॰ त्रि॰) कपोताः सन्ति अस्याम् कपोत क वुञ् च तत अथ पण् कम्म बुञ्। कपोतविशिष्ट देशजात, कबूतरोंसे भरे मुल्कका रहनेवाला।

कापोतपाक्य (सं॰ पु॰) कपोतानां पाका शिशवः, तस्य समूहः, कापोतपाक ष्य। कपोतके शिशु कबूतरोंके बच्चोंका समूह। २ कापोतपाकोंका राजा।

कापोतपक्षक (सं॰ पु॰) कपोतपक्ष, एक बूटी।

कापोताञ्जन (सं० क्ली०) कपोतं तत् अञ्जनञ्चेति, कर्मधा०। सौवीराञ्जन, सुरमा।

कापोति (सं० त्रि०) कपोतस्य इदम्, कपोत-इञ्। कपोत सम्बन्धीय, कबूतरके मुताल्लिक।

काप्य (सं० पु०) कपेर्गोत्रापत्यम् कपि-यञ्। १ कपि ऋषिके वंशीय, आङ्गिरस। २ वानर वंशीय, बन्दरसे पैदा होनेवाला। (क्ली०) ३ पाप, गुनाह।

काप्यकर (सं० पु०) कुत्सितं आप्यं काप्यं पापं करोति, काप्य-कृ-ट। १ स्वकृत पाप प्रकाश करनेवाला, जो अपना किया हुआ गुनाह कह डालता हो। (त्रि०) २ पापकारक, गुनाहगार।

काप्यकार (सं० पु०) काप्यं करोति, काप्य-कृ-अण्। १ पाप करके प्रकाश करनेवाला, जो गुनाह करके कह डालता हो। २ पापकी स्वीकृति, गुनाहको तसलीम। ३ पापकारक, गुनाहगार।

काप्यायनी (सं० स्त्री०) कपेर्गोत्रापत्यम्, कपि-यञ्, फक्-ङीप्। कपिवंशीया, कपिके वंशकी औरत।

काफरी (हिं० स्त्री०) किसी किस्मका मिर्चा। इसका आकार चपटा गोल और वर्ण पीत होता है।

काफल (सं० पु०) कुत्सितं फलं यस्य, कोः कादेशः। कटफल वृक्ष, कायफल।

काफ़िया (अ०पु०) अनुप्रास, तुक। अनुप्रास जोड़नेको काफ़ियाबन्दी कहते हैं।

काफिर (फा० वि०) १ मूर्तिपूजक, बुतपरस्त। २ नास्तिक, ईश्वरको न माननेवाला। ३ निर्दय, बेरहम। ४ दुष्ट, पाजी। ५ काफिरस्तानका रहनेवाला। (पु०) ६ अफरीका का एक मुल्क।

काफिर—एक जाति। अफरीकाके दक्षिणस्थ काफेरिया नामक स्थानके अधिवासी ही काफिर हैं। किन्तु सूदानके दक्षिणपश्चिमवर्ती समुदाय अफरीकावासी भी उसी नामसे पुकारे जाते हैं। आजकल अधिकांश स्थानोंमें वह देख पड़ते हैं।

भारतवर्षमें भी काफिर हैं। उन्हें साधारणतः हबशी कहते हैं। यह स्थिर कर नहीं सकते काफिर किस समय कैसे इस देशमें आ पहुंचे थे फिर भी अनुमान आता, जिस समय अरबके साथ भारतका वाणिज्य रहा, उसी समय अरबोंके साथ काफिरोंका यहां आगमन हुवा। अफगानों, मुगलों और तुर्कोंके साथ भी अनेक आये हैं। काफिर यहां आ और क्रमशः विशेष प्रश्रय पा शेषको किसी किसी स्थानमें राजा तक हो गये हैं।

आजकल उत्तर कनाड़ेके दाक्षिणी जिलेके पार्वत्य प्रदेशमें काफिरोंका वास अधिक है। बम्बई उपकूलके जंजीरा नामक स्थानमें 'हबशी' या "सीदी" जातीय राजा हैं। यह राजवंश अबसीनियाके काफिरोंसे उत्पन्न है। खृष्टीय १८श शताब्द पर्यन्त अबसीनियाके काफिर भारत-उपकूलमें जलदस्युका व्यवसाय उठा निकटवर्ती सागरमें घूमा करते थे। खृष्टीय १५श और १६श शताब्दको विजयपुरमें आदिल शाही तथा निजामशाही वंश राजत्व करता था। उसके अधीन काफिर पुररक्षी सैन्यश्रेणीमें नियुक्त रहे। सिन्धु प्रदेशमें तालपुरके अमीर एक दल काफिरोंका सैन्य रखते हैं। कर्णाटकके नवाबके पास भी काफिर दास रहते हैं। कर्णाट कैलास और सेकरान नामक स्थानमें बहुत काफिर हैं। फिर निजाम राज्यमें निजामके नियमित सैन्यके मध्य उनकी संख्या कुछ अधिक है। भारतके अन्य प्रदेशोंमें भी मुसलमानोंके साथ काफिर फैल पड़े। पहले मुसलमान नवाबोंके अधीन वह पुररक्षी सैन्यदलमें नियुक्त रहते थे। नगरादिकी शांति रक्षा उनके हाथमें थी। उनकी रमणियां भी नवाबोंके अन्तःपुरमें दासी थीं नवाबोंके अनुकरणसे हिन्दू जमीन्दार और राजा पुररक्षाको काफिर नियुक्त करते थे बोध होता कि काफिरोंको बड़े विश्वासी, प्रभुभक्त और बलिष्ट समझ कर ही उस कार्यका भार दिया जाता था।

पूर्व-भारतीय द्वीपपुञ्ज और दक्षिण एशियाके अन्यान्य स्थानोंमें भी काफिरोंका वास है। काफिर वहांके उपनिवेशी नहीं वह स्थान उनकी आदिम वासभूमि है उक्त स्थान अफरीकाके काफिरोंकी वासभूमिके साथ समसूत्र नहीं रहनेसे उन दोनोंके मध्य देशगत पार्थक्य भी अन्य और व्यवस्था देख नहीं पड़ती। इसीसे दोनों स्थानोंके लोग काफिर माने जाते हैं।

टॉलेमिके पुस्तकपाठसे समझ पड़ता कि उन्हें उनका विवरण ज्ञात था। उनके "अरिया सिरसोनेसस" 'याबाडस इन्सुला' और "इथियोपिस इन्डुसियो अर्थि"में सुमात्रा, यवद्वीप एवं नव गिनीकी पपुआ जातिका विवरण मरा है। कई लोग रामायणोक्त राक्षस जाति अनुमान करते हैं।

प्राचीनकाल भारतवर्षके दाक्षिणात्यमें वाणिज्य करनेको निकले वणिकोंके साथ अफरीकाके पूर्व उपकूलके लोग अरब और अफरीका उभय स्थानोंके यहां आते थे। पाश्चात्य ऐतिहासिकोंके मतमें ऐसा व्यवसायवाणिज्य प्राय तीन हजार वर्ष रहा। उस समय यही नहीं कि उक्त उभय देशोंके लोग केवल अब ही पोतारोहण द्वारा इस देशमें आते और क्रय विक्रय कर स्वदेश चले जाते थे, किन्तु अनेक अधिकरूपसे इस देशमें रहने भी लगते थे। उक्त हबश जाती, अधिक सिंहलमें "मुकरजाति" और दाक्षिणात्यमें "सोदका" वा "कब्बाई" नामसे ख्यात हुए। किसी किसीके कथनानुसार दाक्षिणात्यमें आर्योंका अधिकार विस्तृत होनेसे पहले ही काफिर रहते थे। उक्त मत समर्थनके लिये बताते हैं—,

"दाक्षिणात्यके अधिवासियोंसे आर्यजातिका जितना पार्थक्य आजकल देख पड़ता है, उतना भारतमें किसी दूसरे स्थानपर नहीं मिलता। फिर दाक्षिणात्यकी सकल भाषा संस्कृतसे सम्पूर्ण भिन्न है। दाक्षिणात्यके अधिवासियोंमें कितने लोगका आकृतिगत सौसादृश्य अधिकांश ईरानियोंकी भांति, कितने लोगका अर्मनीय ईरानियोंकी भांति, कितने लोगका अष्ट्रेलियोंकी भांति और कितने लोगका मलय पपुओंकी भांति है। फिर नियन्त्रे लोके लोगोंमें अधिकांशकी आकृति अफरीकावासियोंसे मिलती है। उक्त लोगोंके मतानुसार विन्ध्य एवं घाटपर्वतके पूर्व प्रान्तवर्ती असभ्यजातिकी आकृति अधिकतर उत्तर भारतीय आर्यजातिकी आकृतिसे सौसादृश्य रखती है। किन्तु घाटपर्वतके पश्चिमाञ्चलवासी मलय द्वीपका पापुन जातिकी भांति होती है। पापुन जातियोंके साथ अफरीकावासियोंका अधिक सादृश्य है।

पूर्व भारतीय द्वीपावलीमें प्रधानतः चार जातिका वास है—(१) विशुद्ध मलय जाति, (२) मलय उपद्वीपवासी पर्वताकार काफिर वा सेमांजाति, (३) फिलिपाइन द्वीपकी खर्वाकार काफिर जाति और (४) नवगिनीकी उच्चकाय काफिर वा पपुया जाति। एतद्भिन्न नवगिनी और मलयद्वीपके मध्यवर्ती कई द्वीपोंमें उनको मध्यवर्ती एक जातिके लोग देख पड़ते हैं। उन्हें मध्यमको काफिर जाति कह सकते हैं। फिलिपिन्स और उत्तर द्वीपके पूर्व जो सकल द्वीप हैं, उनके अधिवासी साधारणतः अष्ट्रेलियावासियोंकी भांति होते हैं। उक्त सादृश्य देख अनेक लोग अनुमान करते हैं कि एसियाके दक्षिणांशके साथ पूर्व भारतीय द्वीपपुञ्जके पश्चिमभागका योग अति प्राचीन कालमें संलग्न थे और कालक्रममें प्राकृतिक परिवर्तनसे विच्छिन्न हो गये।*

अफरीकामें जितने काफिर रहते हैं, अनुमानतः उनकी संख्या दो करोड़से अधिक नहीं। इस पूरे लेखमें काफिरियावासी काफिर और हटेण्टट भी रख लिये गये हैं।

कोचिनचायनसे पूर्वकूल, भारतोपसागरके तीर और मलय उपद्वीपमें काफिरोंकी संख्या अधिकसे अधिक ५० लाख होगी। किन्तु महोपसागरके आन्दामान द्वीपसे पूर्व दिक्‌को द्वीपावलीमें भिन्न भिन्न जातीय लोगोंको साधारणतः काफिर कहते हैं, उनके मध्यमें न्यूनकल्पसे १२ आकारगत भेदा-विभाग है। इन १२ भेदोंमें पार्थक्यको देख ज्ञात होता है—उनमें कितने ही साढ़े तीन हाथ वा चार हाथ तक और कितने ही साढ़े चार हाथ तक लम्बे निकलते हैं।

---

* यह अनुमान केवल जातीय आकृतिगत सौसादृश्य पर निर्भर नहीं करता। सुमात्रा, बोर्नियो, यव, आदि बड़े द्वीपकी [illegible] एसियाके [illegible] और [illegible] ११ । १०० हाथसे अधिक गहरा नहीं। किन्तु फिलिपिन्स द्वीपके पूर्वोक्त [illegible] और [illegible] । [illegible] भी स्वतन्त्र है। [illegible] दक्षिणांशके [illegible] और [illegible] एक समय [illegible] सम्पूर्ण भिन्न देख पड़ता है।

उनके मध्यमें अपेक्षाकृत कई विख्यात श्रेणियोंकी बात कहते हैं।

आन्दामान द्वीपके मीनकपी काफिर—मालूम पड़ता है कि मनुष्य श्रेणीमें उनकी अपेक्षा असभ्य जाति दूसरी कम मिलेगी। उनके वासस्थानकी स्थिरता नहीं, परिधेय वस्त्रादि नहीं और उन्हें यह भी ज्ञान नहीं जीविकाके लिये किस प्रकार कार्य करना पड़ेगा। मीनकपी लोगोंके साथ मिलना तो चाहते हैं, किन्तु अनिष्टप्रिय होते हैं। नरमांस नहीं खाते भी वह शूकरमांस, मत्स्य प्रभृति भक्षण करते हैं। मीनकपी जङ्गली फल एवं मूल तोड़कर और झील तथा पुष्करिणीसे मत्स्य पकड़कर खा जाते हैं। वह धनुर्वाण ले वन वन और पुष्करिणी पुष्करिणी घूमते फिरते हैं। बांसकी खपाचसे मछली पकड़नेका कांटा वह लोग बना लेते हैं। वह वस्त्र नहीं रखते और नङ्गे रहनेमें कोई लज्जा नहीं करते। मीनकपी क्षुद्रकाय होते हैं। उनका मस्तक छोटा और तालु चपटा रहता है। वह अपना सर्वाङ्ग कांचसे खरोंच खरोंचकर शरीरकी शोभा सम्पादन करते हैं। बाहुमूल तथा कण्ठमूलसे मणिबन्ध एवं कटिदेश पर्यन्त अङ्गको चारो ओर गोलाकार खरोंचके दागोंसे मीनकपी अति विश्री और भयानक लगते हैं। किन्तु वह उसीको अपनी प्रधान शोभा समझते हैं। किसी विषय पर सन्तोष प्रकट करते समय मीनकपी दक्षिण हस्तमें तालुके निम्न भागपर धीरे धीरे दन्ताघात कर वाम स्कन्धेपर एक थप्पड़ लगाते हैं। सईस घोड़ेका बदन मलते वक्त जैसे ठपक देते हैं, वैसे ही शब्द निकाल वह चुम्मा लेते हैं। परस्पर कथोपकथन करते समय मीनकपी ऐसा गड़बड़ उच्चारण करते हैं, मानो चूं चूं कर ही मनोभाव प्रकाश करते हों। किन्तु वास्तवमें यह बात ठीक नहीं। उड़ियोंकी भांति उनकी उच्चारण-प्रणाली अति द्रुत और अस्पष्ट होती है। उनको नाचना बहुत अच्छा लगता है। नाचते समय वह दोनों हाथ मस्तककी ओर उठा सङ्गीतके ताल ताल पर कूदते फांदते हैं। फिर नृत्यमें कभी मीनकपी मस्तक घुमाते और कभी समस्त शरीर सम्मुखकी ओर झुका लाते हैं। इसी प्रकार मीनकपी सङ्गीत और नृत्यके ताल ताल पर नानारूप अङ्गभङ्गी किया करते हैं।

सेमां, विला—आन्दामान द्वीपके पूर्व मलय उपद्वीपके अन्तर्गत केडा, पेराक, पाहाङ्ग और त्रिङ्गानु प्रदेशमें जो काफिर रहते हैं, उन्हें मलयके लोग "सेमां" तथा "विला" कहते हैं। उनका वर्ण कृष्ण, केश कर्णमहृण और गठनादि अफरीकावासियोंकी भांति खर्वाकार होता है। पूर्णवयस्क पुरुषकी उच्चता तीन हाथसे अधिक नहीं बैठती। उनके भी निर्दिष्ट वासस्थान और कृषिकार्यका अभाव है। उनमें अधिकांश घूम घूम कर वनका उत्पन्नादि संग्रह करते हैं और उसे ही मलयजातीयोंके निकट व्यवहार्य द्रव्यादिसे बदलते हैं। वह शिकार मारते और शिकारमें पाये पशु पक्षी वा उसका चर्म पालकादि विनिमय कर खाद्यादि लाते हैं।

क्रियान नदीकी उपनदी इजानके तीरवर्ती स्थानमें "सेमां बुकित्" नामक श्रेणीके काफिर रहते हैं। वह पूर्णवयसमें सवा तीन हाथ होते हैं। उनका मस्तक क्षुद्र, मस्तकका सम्मुखभाग कुछ कोणाकार उच्च, और पश्चाद्भाग वर्तुलाकार तथा मध्यांगकी अपेक्षा अप्रशस्त होता है। मलयजातीयोंसे सेमां बुकितोंका मुखमण्डल साधारणतः अप्रशस्त, भ्रूदेश उच्च, नयनकोटर अति गम्भीर, नासिका नीची और छोटी एवं नासिकाका अग्रभाग सूक्ष्म तथा उठा हुआ होता है। आंखका परदा पीला, पलक घन दीर्घ-कुञ्चित, हनुदेश एवं मुखावयव प्रशस्त और होंठ मोटा तथा छोटा रहता है। भ्रू तथा नासिकाके अग्रभाग और छिद्रकी उच्चता समान होती है। उनका उदर बृहत् रहते भी शरीर अपेक्षाकृत क्षीण लगता है। वह वानरकी भांति उदरको घटा बढ़ा सकते हैं। गात्रका चर्म साधारणतः कोमल और चिक्कण होता है।

त्रिङ्गानुको सोमाङ्ग नामक [illegible] काफिरोंकी भांति कुछ तरलवर्ण हैं। वह लोग [illegible] बुकितोंकी भांति मसृण और कृष्णवर्ण नहीं होते। उनके बाल उनसे नहीं मिलते, टेढ़े टेढ़े और घटा [illegible] भांति ऊंचे रहते हैं। [illegible] घना मोटा मूंछ रहता है। मस्तकका बनावट [illegible] काफिरोंकी

भांति नहीं होती, अधिकतर पापुआवोंसे मिलती है। उनका स्वर परिष्कार तथा कोमल लगता, किन्तु बहुनादक रहता है। वह कपाल और कपोलमें गोदना गोदाते हैं। दक्षिण अर्थ छिदा कर बड़ा छेद रखते हैं और सम्मुखभागमें बालोंका एक कोनाकार गुच्छा छोड़ समस्त मस्तक मुण्डन करते हैं। पैराकके नदीमुखवर्ती येमाङ्ग "सेमातिङ्ग पाय" कहाते हैं। वह समुद्रतीरसे पर्वतके ऊपर तक सकल स्थानमें रहते हैं। किन्तु दुर्गम वन और पार्वत्य स्थान भिन्न अन्यत्र उपकूलभाग वा नदीतीरको नहीं जाते। फिर "अणि" अंकोके लोग पार्वत्य प्रदेशसे नीचे उतरना कम जानते हैं। बिहार और पैराककी सेमाङ्गोंकी भाषामें दो मलयीय कोमल शब्द छोड़ अन्य कोई बड़ी बाधा या समानता नहीं। जिन सकल स्थानोंमें येमाङ्ग लोग रहते हैं, उनमें मलयजातीय नहीं मिलते।

पापुआ अंकोंके काफिर—फ्लोरिस, सुम्बव वा चन्दन, अदेनारा, सबर, लमबठा वतान ओम्बे, वावेटर, रत्ती, सर्वेत्ति, तम्बर, तिमर, तिमरलाउत, आराउ, नव कालिडोनिया, नव आयर्लैण्ड, आडमिरल्टी, पलिनेसिया, फिजी, मालद्वीप, नवगिनी, पोपो, वाहन्दा, किसीय, अम्बवना, खाबन्ती प्रभृति पूर्वीय द्वीपा-वलीमें वास करते हैं। जिन सकल द्वीपोंमें उस जातिके काफिर रहते हैं उन्हें मलयके लोग "तानापापुआ" (पापुआ जातिके वासस्थान) कहते हैं। बाल घूंघर वाले होनेसे ही उनका नाम "पापुआ" पड़ा है। क्योंकि मलय भाषामें टेढ़े बालोंको "पुआ पुआ" कहते हैं। पुआ-पुआ शब्दसे पापुआ शब्द निकला है। उनकी आकृति बिलकुल काफिरोंसे मिलती है। नासिका प्रशस्त होती है। ओंठ मोटा और बड़ा रहता है। कपाल दबा हुआ होता है। रङ्ग मटमैला लगता है। अधिगासभाका अनुष्ठान अपेक्ष जाता है। वह दक्षिणपूर्व एशियाके अन्यान्य काफिरोंसे पूर्णगठित और बलिष्ठ हैं। पापुआ लोग उद्यमी, अध्यवसायी और परिश्रमी होते हैं। उन सब गुणोंसे किसी समय उनको सभ्यदेशमें दासकी भांति चालान देते थे और लोग भी आपरसमझाके ले लेते थे। उनकी मानसिक शक्ति मलयजातिकी अपेक्षा हीन न रहते भी बहुत चञ्चल होती है। इसीसे वह स्वाधीन भावमें रह नहीं सकते। मलयजातिके साथ विवादमें इसी कारण पापुआ हार जाते हैं।

वह नवगिनी तथा उसके निकटवर्ती द्वीपमें समुद्रके उपकूलपर वास और अन्यान्य स्थलोंमें पार्वत्य प्रदेशपर अवस्थान करते हैं। बहुतसे द्वीपोंमें तो उनको संख्या बिलकुल घट गयी है। सिराम और गिलोलो द्वीपमें वह कभी कभी मुश्किलसे देख पड़ते हैं। बहुतोंका अनुमान है कि, काल पाकर पापुआ पृथिवीसे उठ जावेंगे, क्योंकि शिकारके भूखे अपेक्षा उन सभ्य जातीय लोग उनको अधिक मारते हैं। किन्तु यह भ्रम है। कारण जहां जहां आजकल युरोपीय सभ्यता पैठती, वहां वहां उन्हें परस्पर दिन दिन मिलजुल कर रहनेकी शिक्षा मिलती जाती है। सिराम और गिलोलो द्वीपमें रहनेवाले अत्याचारसे उत्पीड़ित हो अतिशय भीरु बन गये हैं। वह किसी अन्य जातिके साथ एक दम हो बैठते उठते नहीं। अपरिचित वा भिन्न जातिके लोगोंको देख जंगलमें भाग छिप जाते हैं। मारसल नामक द्वीपमें उस जातिको छोड़ अन्य कोई जाति नहीं रहती। केवल उपकूल भागमें एक प्रकारकी मिश्र वा सङ्करजाति देख पड़ती है। उसकी भी आकृति प्रकृति उनसे बहुत कुछ मिलती है। उक्त सङ्करजाति नाविकतामें विशेष पारदर्शी होती है। वह युरोपीयोंसे सदय व्यवहार करती है। मारीकनमें पापुआ जातिके लोग देख पड़ते हैं। किन्तु उसके निकटवर्ती सेलु द्वीपमें वह बिलकुल नहीं पाये जाते। यह भी जाननेमें नहीं आता किसी समय वहां पापुआवोंका वास था। नवगिनि, कि, अरु, मारसल आश्यन्ति प्रभृति द्वीपोंमें उस जातिके लोग रहते हैं और वहीं अंकोंकी किनो हाथ तक विस्तृत है। उनके बाल काले और बहुत टेढ़े होते हैं। पूर्णवयस्कोंके मस्तकपर उसी प्रकारसे बाल खूब बढ़ कर टोपीकी भांति बन जाते हैं। उन्हें देखते ही बाल अच्छे भी लगते हैं। उनकी

दाढ़ीके बाल भी वैसे ही टेढ़े होते हैं। दोनों हाथ, पैर और छातीमें भी कुछ वैसे ही बाल रहते हैं। उच्चतामें वह मलय जातिकी अपेक्षा दीर्घ, प्रायः युरोपीयोंकी भांति होते हैं। पदद्वय दीर्घ रहते हैं। मुखमण्डल दीर्घाकार, कपाल चपटा, नासाछिद्र प्रशस्त, मुखविवर बड़ा और ओष्ठ मोटा तथा भारी होता है। वह कामकाज और बातचीतमें बड़े दृढ़प्रतिज्ञ होते हैं। वह लोग चिल्ला कर और खूब जोरसे हंस हंस कर तथा उछल कूद कर आनन्द प्रकाश करते हैं। वह गृह, द्वार, नौका और तैजस आदिकी खोद कर चित्र बनाते हैं। अपनी अपनी शिशुसन्तान पर पापुया बहुत क्रुद्ध रहते हैं। वह श्रेणी कभी सामाजिक बन्धनमें पड़ रह न सकेगी। अमभक्षमें ऐसा आता कि काम पाकर युरोपीय सभ्यता फैलनेसे उस युद्धप्रिय जातिका लोप होगा। वह बड़े विश्वासी होते हैं।

हृहत्काय पापुया आकृतिमें श्रेष्ठ और बलादिमें विख्यात हैं। उनका विस्तृत स्कन्ध और गभीर वक्षस्थल प्रीतिकर देख पड़ता है। काफिर जातिका साधारण दोष पदद्वयकी क्षीणता और अपूर्णता है। पापुयाओंमें भी उसका अभाव नहीं। स्वाधीन पापुया जाति बड़ी प्रतिहिंसापरायण और उद्धतस्वभाव है। नवगिनिके उत्तरपूर्व प्रान्तमें वह रहते हैं। पापुया अपने देशमें अन्य किसी जातिको निरापद बसने नहीं देते। निहायत परेशान करके भी भगा न सकनेसे अपना स्थान छोड़ अभ्यन्तरभागमें पार्वत्य प्रदेश पर वह चले जाते हैं। पापुया गोदना नहीं गोदाते। किन्तु वक्ष, वक्ष और पृष्ठ पर एक प्रकारके प्रलेपसे चमड़ेको उभार वह कहां कहां आवला बना लेना अच्छा समझते हैं। कभी कभी यत्न कर पापुया उसे एक अंगुल तक ऊंचा उठा देते हैं।

फ्लोरिस और नवगिनि प्रभृति द्वीपोंमें काफिर ही बसते हैं। नवगिनिके पापुया भिन्न भिन्न श्रेणीके साथ परस्पर युद्धमें लिप्त रहते हैं। इस युद्धमें विपक्ष पक्षका मस्तक काट न सकनेसे कोई पक्ष निरस्त नहीं होता। नवगिनिके काफिर एक काष्ठमयी प्रतिमाको उपासना करते हैं। उस देवताका नाम "कारवर" है। प्रतिमा १८ इञ्च उच्च रहती है। प्रत्येक घटनाको वह उस देवताके निकट प्रकाश करते हैं। उनकी विधवायें स्वामीके गृहमें रहती हैं। अन्यान्य स्थानोंके काफिरोंकी अपेक्षा नवगिनिके पापुया सभ्य हैं। किन्तु अधिकांश अति सामान्य पर्णकुटीरमें रहते हैं और शिकार या स्वभावजात फलमूलसे जीविका निर्वाह करते हैं। उपकूलभागके पापुया अपेक्षाकृत सभ्य हैं। वह ऊंचे स्तम्भोंपर स्वर्गोंकी भांति बड़े घर बांध रहते हैं।

डोरी द्वीपमें पापुयाओंको "माइफोर" कहते हैं। वह साढे तीन हाथ दीर्घ होते हैं। जातिसुलभ कुञ्चित केशोंको माइफोर स्त्रियोंकी भांति बढ़ाकर रखते हैं। इन बालोंके कारण वह अधिक भयानक लगते हैं। पुरुष शिरमें एक कंघी खोंस रखते हैं, किन्तु स्त्रियां वैसा नहीं करतीं। उनको दाढ़ीके लोम कुञ्चित, कपाल उच्च एवं अप्रशस्त, चक्षुद्वय बड़े, वर्ण काला, नाक चपटी और ओष्ठ मोटे होते हैं। किन्तु दांत बिलकुल मोतीकी भांति रहते हैं। पुरुष वहिर्वास की भांति एक प्रकारका छोटा कपड़ा पहनते हैं। वह कपड़ा "मार" नामक वृक्षकी छालसे बनता है। उनकी स्त्रियां नीले रंगके सूतका वस्त्र परिधान करती हैं। वह घुटनेके नीचे नहीं पहुंचता। उभयवादिन वह गोदना गोदाते हैं। वह गोदना अधिक दिन नहीं रहता। गोदना गुदाते समय मछलीके कांटेसे जहां गोदना बनाना चाहते हैं, वहां रक्त निकाल कर भूसा लगा देते हैं। वह समुद्रगमनमें अतिशय पारदर्शी होते हैं। नौकाके चालन, सन्तरण और समुद्रमें डुबकी मार समुद्रके गर्भपर कर्मादि करनेमें उनकी बराबर निपुण और कोई नहीं होता। वह वृक्षकी पेड़ी खोद अपनी नौका प्रस्तुत करते हैं। मकई, धान और मिलनेसे शूकर मांस भी खा जाते हैं। वह चौर्य-वृत्तिको सर्वापेक्षा दुष्ट और दृष्य अपराध समझते हैं। माइफोर लाम्पट्य-दोषवर्जित हैं। विवाह एक ही बार होता है।

अरु द्वीपमें स्थान स्थान पर परिष्कार जलपूर्ण दलदल और दुर्गम जंगल है। वहांके लोग मलय

और पश्चिमीय काफिरोंकी मध्यवर्ती जाति है। अङ्गरेजोंके साथ ही उनकी आकृति प्रकृति और व्यवहारका सादृश्य अधिक है। पुरुष कांच तक तुमको घुनी चढ़ाई या कपड़ा पहनते हैं और दुपट्टा व्यवहार करते हैं। वह क्रोधनस्वभाव नहीं होते। किन्तु गुरुयों वा स्त्रियोंके तिरस्कृत होने पर अकस्मात् बिगड़ उठते हैं। स्त्रियां तुमको घुनी चढ़ाईका एक वस्त्र सम्मुख और एक वस्त्र पश्चात् दिक् लटका लेती हैं। उनमें कितने ही मुसलमान और कितने ही ईसाई हैं। ओलन्दाजोंने अम्बयना द्वीपमें ईसाई धर्म प्रचार कर देशके प्रायः प्रधान प्रधान लोगोंको ईसाई बना डाला है। उस द्वीपके पापुया अपने अपने मृतको शालुपत्र और वस्त्रादि द्वारा सजाते हैं। उन्होंके मर जानेसे वह दम्भ उत्सव करते हैं।

कि द्वीपके काफिर मुसलमान होते भी शूकरमांस खाते हैं। उनकी स्त्रियोंमें भी अवरोधप्रथा नहीं। बालक बालिका बड़ी आमोदप्रिय होती है और पूर्णवयस्क भी प्रायः सकल विषयमें गड़बड़ करते हैं। इस द्वीपमें दो जातिके लोगोंका वास है। उनमें पापुया नारिकेलका तेल गोंद और काठका गमला बनाते हैं। उनकी बनाई बड़ी बड़ी नावोंमें २० से ३० टन तक बोझ लाद सकते हैं। उनमें किसी प्रकारकी मुद्राका चलन नहीं। समस्त क्रय विक्रय विनिमयसे सम्पन्न होता है। वह पीठकी खाल या छालका कपड़ा पहनते हैं। वहांकी दूसरी जाति साम्दाद्वीपके मुसलमानोंकी है। वह वहांसे भगाये जाने पर यहां आकर बसे हैं। वह सूतका कपड़ा पहनते हैं। वह मलयजातीय मालूम होते हैं। किन्तु आजकल उस जातिको सन्तानपरम्पराके परस्पर संमिश्रणसे एक स्वतन्त्र मध्यवर्ती जाति बन गयी है।

वैगेव द्वीप मलक्काद्वीपपुञ्जके मध्य सर्वापेक्षा बृहत् है। वहां मिसोल्म द्वीपवासी अधिवासियोंके साथ पापुयाओंका अति निकट सादृश्य है। उनमें पुरुषका पूर्ण गठन होता है। किन्तु देह खर्व रहता है। स्त्रियोंकी आकृति मलयजातिकी अपेक्षा अधिक कर है। उस द्वीपके अधिवासी पापुया "कालफारो" नामसे ख्यात हैं। वह मस्तकके बाम दिक् बाल बांधते हैं। बालोंके मध्य एक अंगुल मोटा सूजा रखते हैं। सूजाका अग्रभाग और पार्श्वदेश लाल रंगा रहता है। वह प्रायः नग्न और अलङ्कारवर्जित होते हैं। केवल पुरुष छाल या रूपकी बाजो बल्का और पोत या छोटे छोटे एक पत्थरकी माला पहनते हैं। स्त्रियां बाल नहीं बांधतीं। किन्तु उस समस्त अलङ्कार वह भी परिधान करती है। वह अपेक्षाकृत दीर्घच्छन्द होते हैं।

सिलिबिस द्वीपके काफिर मलय द्वीपवासी और काफिर जातिकी मध्यवर्ती श्रेणी समझ पड़ते हैं। वह मलय जातिकी भांति सभ्य होते हैं। उनका नाम "तुरि" है।

फिलिपाइन द्वीपमें अण्डमनकी भांति बालवाले काफिरोंकी संख्या अधिक है। अन्यदेशवासियोंकी अपेक्षा उनके गात्रका वर्ण कुछ तरल लक्ष्य रहता है। स्पेनीय उन्हें "क्षुद्रकाय काफिर" कहते हैं। क्योंकि तीन हाथसे अधिक दीर्घ नहीं होते। उनका जातिगत नाम "एटा" या "आएटा" है। उस द्वीपपुञ्जके पालावन्, निग्रोस समर, लेयटो मसबैत बोहल और सेबू द्वीपके मध्य उस जातिके लोग देख पड़ते हैं। अन्यान्य द्वीपोंमें विशुद्ध एटा श्रेणीके काफिर नहीं मिलते। लुजुनद्वीपमें एक भी एटा श्रेणीका काफिर कहां है।

निनि द्वीपके पापुयाओंकी नाक चपटी होती है। होंठ मोटा, चक्षु कोटरगत और रङ्ग बादामी रहता है। पण्डितोंके अनुमानमें नग्रिटिको पापुया जाति और मलय जातिके मिश्रणसे वह जाति उत्पन्न हुई है। उनके बाल भी पापुयाओंके नहीं मिलते। अङ्गे-निया नवकालिडनिया, फिजि प्रभृति द्वीपोंमें जो सकल पापुया काफिर देख पड़ते, वह पलिनेशिय पापुया काफिरोंके संमिश्रणसे उत्पन्न वा मध्यवर्ती जाति ठहरते हैं।

फिजी द्वीपके पापुया जो पापुया श्रेणीके काफिरोंकी पूर्णमूर्ति हैं। वह कथावार्तामें नम्र और व्यवहारमें भद्र होते हैं। किन्तु नरमांस, नर

कासिडोनिया और फिजीके पापुआ नरमांसभुक् है। फिजीद्वीपके पापुआ अफरीकाके हटेण्टटोंकी भांति चूड़ाकार केश बांधते हैं, मानोंकी भांति करोटी (खोपड़ी) अप्रशस्त होती है। नवगिनिके पापुआ धार्मिकता, गुरुजनभक्ति और आतिथेयताके लिये विख्यात हैं। प्रायः सकल स्थानोंमें काफिर स्त्रियोंके मध्य व्यभिचारदोष देख नहीं पड़ता।

काफिरस्थान—भारतवर्षकी उत्तरपश्चिम सीमा और हिन्दूकुश पर्वतके मध्यका एक प्रदेश। इसकी पश्चिम सीमा अफगानस्तानकी अलीसाङ्ग नदी है। पूर्वसीमा कुनार नदी हो सकती है। उस स्थानके अधिवासी काफिर या सियाहपोश कहलाते हैं। १८८३ ई०से पहिले कोई अंगरेज इस प्रदेशमें प्रवेश न कर सका था। सुतरां उसके पहले उसका जो विवरण सुनते, उसपर प्रकृत पक्षमें आस्था कैसे ला सकते हैं। प्राचीन अंगरेज ऐतिहासिकोंने इस स्थानके सम्बन्धमें जो कुछ लिखा, उसका अधिकांश पार्श्ववर्ती मुसलमानोंसे संग्रह किया था। किन्तु अब सुनते समझते कि मुसलमान इस प्रदेशमें सहज ही घुस नहीं सकते या घुसना पसन्द नहीं करते। कारण काफिरोंसे उनकी चिर शत्रुता है। कोई काफिर यदि अपने जीवनमें किसी उपायसे एक भी मुसलमानको मार नहीं सकता, तो वह स्वजाति, स्वधर्मी और स्ववंशमें अपदार्थ एवं हेय रहता है। सुतरां इधर उधर मुसलमानोंसे उस प्रदेश या उस जातिका विवरण ठीक ठीक कैसे मिला होगा।

वहां सियाहपोश नामक एक जाति रहती है। कोई कोई सियाहपोश जातिके सम्बन्धमें कहता कि वह पारस्यकी गबर जातिकी भांति आचार-व्यवहार-विशिष्ट किसी अरबी जातिसे उत्पन्न है। कोई उसे अलेकसन्दरके ग्रीक सैन्यकी औरसोत्पन्न बताते हैं। फिर किसीके अनुमानमें मुसलमानोंका मत फैलनेसे पहले भारतवर्षसे जो लोग पर्वतादिमें रहनेको समतल प्रदेशसे निकाले गये, सियाहपोश उन्हींकी एक शाखा है।

काफिरोंकी भाषाके साथ अरबी, फारसी या तुर्की भाषाका बिन्दुमात्र भी सादृश्य नहीं। हां, संस्कृतके साथ इसकी अधिक घनिष्ठता आती है। इसी कारण आधुनिक ऐतिहासिक अरबों या अफगानोंकी भांति इन्हें बिलकुल स्वतन्त्र जाति नहीं मानते। यह भारतीय जातिके ही अन्तर्गत हैं। केवल देशभेदसे काफिर स्वतन्त्र हो गये हैं।

१८८३ ई०के पूर्व यहांका जो विवरण मिला, उससे समझ पड़ा कि इस देशमें कमार, गम्बीर, देमरूज, करसम, दगुरस, अमीमास, वग्निस, वैगल प्रभृति जनपद विद्यमान हैं। १८८३ ई०को मिस्टर डब्ल्यु मकनैयार नामक अंगरेज ही सम्भवतः सर्वप्रथम इस प्रदेशमें जा सके थे। उन्होंने यहांकी लोकसंख्या अनुमानसे ६ लाख स्थिर की। प्रति ग्राममें १००से ६०० तक लोग रहते हैं।

इनके दैनिक आचार व्यवहार और आकृति प्रकृतिके सम्बन्धमें नानारूप विभिन्न मत मिलते हैं। किसी किसीके कथनानुसार सियाहपोश देखनेमें वलिष्ठ, दृढगठित एवं साहसी रहते भी स्वभावमें सम्पूर्ण विपरीत अर्थात् अलस, विलासी तथा सर्वदा मद्यपायी होते हैं। अफगानस्तानमें अनेक पकड़े काफिर बसते हैं। उनका शरीर दृढ़ समझ पड़ता है। इनमें युरोपीय गठनके लोग ही अधिक हैं। कृष्णाक्षों और विडालाक्षोंकी भी कोई कमी नहीं। उन्हें आसन बांधकर बैठना कठिन लगता है। काफिर कुरसी पर ही सुविधासे बैठ सकते हैं। उनकी स्त्रियां रूपवती और बुद्धिमती होती हैं। वर्ण रक्तोज्ज्वल श्वेत है। अनेकोंके कथनानुसार अतिरिक्त मद्यपान करनेसे वह रक्तवर्ण हो गये हैं। यदि इनसे पूछा जाय इन्हें कैसा आहार अच्छा लगता है, तो वह शीघ्र कह उठेंगे—प्रतिदिन एक मटका शराब चाहिये। एक मटकेमें प्रायः पंद्रह सेर शराब आती है।

मनैयारका विवरण पढ़नेसे समझते कि काफिरस्थानके लोग सुपुरुष, साहसी और कृषिजीवी हैं। उनकी स्त्रियां बागका काम करती हैं। नृत्यगीतमें वह बहुत अनुरक्त रहते हैं। प्रायः प्रति सन्ध्या नृत्यगीतादिमें बीतती है। उनमें भ्रातकलह वा गृहविग्रह-

अधिक रक्तपात नहीं होता। मुसलमानोंसे इनका सर्पनकुल सम्बन्ध है। एक दूसरेको देखते ही युद्ध छिड़ जाता है। चमरेलोंके साथ इनका कोई विवाद नहीं। इनमें दासत्वप्रथा और दासव्यवसाय विद्यमान है। किन्तु समझ पड़ता है कि यह शीघ्र ही छूट जायगा। यह प्रायः बहु विवाह नहीं करते। स्त्रीको व्यभिचार दोषमें सामान्य दण्ड मिलता है, किन्तु पुरुषको बहुतसा गोमेषादि जुर्माना देना पड़ता है। यह शवको सन्दूकमें बन्द कर रख छोड़ते हैं। एक मात्र अद्वितीय देवता "इम्र" (अथवा इन्द्र) पूज्य है। इम्रूका मन्दिर होता है। उस मन्दिरमें पवित्र प्रस्तरमूर्ति स्थापित रहती है। पुरोहित आकर पूजा करते हैं। वह वंशानुधारी है। गोमेषादि ही इनका मूल्यवान् वस्तु है। जो जितने अधिक रखता है, वही धनी ठहरता है। इनमें १८ लोग सरदार हैं।

यह लोग परस्पर अपना उठा बन्धुताके सूत्रमें बंध जाते हैं। किसीके साथ सुलह सन्धि टूटनेसे पहले एक तीर भेजा जाता है। यह बड़े अतिथि भक्त हैं। यदि कोई अतिथि इनके घर आता, तो कार्यकर्ता उसकी परिचर्या उठाता है। फिर यदि कोई दूसरा उस अतिथिको उठा अपने घर ले जाता तो उभयके मध्य विषम विवाद देखनेमें आता है। यहां तक कि रक्तपात होने लगता है। स्त्रियोंके यथेच्छा भ्रमणमें कुछ बाधा नहीं, अवगुण्ठन नहीं। किन्तु उन पुरुषोंके साथ पानभोजन करने कम पाती हैं। प्रति ग्राममें स्त्रियोंके प्रसवको स्वतन्त्र भवन रहते हैं। इनके आपसमें विवाद होनेसे पीछे मिटते समय विवादियोंके मध्य एक आदमी दूसरेका स्तन और दूसरा स्तन चूमनेवालेका मस्तक चुम्बन करता है। इसी प्रकार विवाद मिट जाता है। काफिर अपनी सन्तानको विक्रय नहीं करते। किन्तु काममें पड़नेसे प्रतिवासीके सन्तानको चोरीसे बेच देते हैं। किसी किसीके कथनानुसार यह व्यापार आजकलसे मन्द गया है। इनोंके विवादकी सरदार विचारार्थ पालक-मालिकोंपर भार बता देते हैं। किसी मुसलमान जाति पर युद्ध यात्रा करते समय जितने दिन तक आयोजन उपवासादि निर्धारित नहीं होता, उतने दिन कोई पुरुष अपने घर जाने नहीं पाता। दिवारात्रि सभ्यावस्थामें रहना और वहीं पानभोजन प्रभृति करना पड़ता है। जिस स्थानमें आक्रमण करना ठहराते, जिनके समय सब नहीं पहुंच सके वो ही तीन तीन आदमी झाड़ियोंमें छिप जाते हैं। फिर जैसे ही निकटसे मुसलमान निकलते वैसे ही उनपर टूट मारने लगते हैं। प्रति दिन सन्ध्याकाल उस उस कार्यका विवरण बता आमोद प्रमोद करते हैं। मुसलमान भी ऐसे ही काफिरस्थानमें कुछ बालक बालिका चुरा लाते हैं।

यह चक्कीमें गेहूं, जव प्रभृतिका और आटेकी रोटी बनाते हैं। रोटीको लोहकटाह (तवे) पर सेंक खाया करते हैं। यह अल्पपाचित पशुका भी मांस खाते हैं। काफिर एक ही वारमें गला काट पशुवध्या करते हैं। यदि दो वार मारनेका प्रयोजन आता, तो वह मांस अपवित्र समझ छोड़ दिया जाता है। फिर काफिर नारिजातिके मध्य पालिया भेड़ोंको बोका उसे दे देते हैं।

यह अंगूरसे शराब बनाते हैं। अंगूरके वर्णभेदसे मद्यका वर्ण दो प्रकार होता है। बालक वर्षमें सकल समय मद्य पीने नहीं पाते। मुगल-सम्राट् बाबरने लिखा है कि काफिर अपने गलेमें मद्यपूर्ण "किश" नामक चमड़ेकी कुप्पी लटका रखते हैं। उन्होंने यह भी कहा कि वह जलके बदले मद्य पान करते हैं।

इनका प्राधान्य न मिलनेसे काफिरस्थानमें घुसने को कोई भी साहस कर सकता है।

काफिरस्थान देखनेमें अतिसुन्दर देश है। यह निबिड़ उपत्यकामें प्रकृतिका रम्य उपवन समझ पड़ता है। प्रान्त भागमें महावन है। काफिरस्थान प्रधानतः तीन उपत्यकाओंमें विभक्त है। इन्हीं तीन उपत्यकाओंसे वहांकी तीन प्रधान जातियोंका नाम धरा हुआ है—रामगल, वेगल और वासगल। इनमें वेगल सबसे पराक्रान्त और उसकी उपत्यका भी सबसे वृहत् है। काफिर या सियाहपोश इनका जातीय नाम नहीं। पार्श्ववर्ती मुसलमान इन्हें इस नामसे अभिहित करते हैं। मुसलमान धर्मपर

विश्वास न करनेसे ही यह काफिर कहाते हैं। फिर अधिक संख्यावाले वेगर्लाका कृष्ण वर्ण छागचर्मका परिच्छद पहनने से ही सियाहपोश नाम है। इसीसे सबके सब सियाहपोश नामसे पुकारे जाते हैं। रामगल वा वासगल काले चमडेका परिच्छद नहीं पहनते। वह उसके बदले सूतके कपड़ेकी पोशाक बनाते हैं। उक्त तीनों जातियोंकी भाषा स्वतन्त्र है।

यह भूत प्रेतमें विश्वास रखते हैं। काफिरोंके मतानुसार जो कुछ दुःख कष्ट मिलता, वह सब भूत प्रेतादिके कारण ही पड़ता है। इनके पानका मद्य सद्यप्रस्तुत-प्रणालीके नियमानुसार नहीं बनता। वह खालिस अंगूरका ताजा रस होता है।

परस्पर युद्ध विग्रहादिके पीछे पराजित लोगोंकी स्त्रियां बन्दी बन दासीकी भांति बिकती हैं। स्त्रियोंमें लज्जा, शीलता वा धर्मभाव नहीं देखते। इनके समाजमें उसे विशेष दोष कब गिनते हैं। कारण पूर्व ही लिख चुके कि ऐसे दोषमें उभय पक्ष कैसी सामान्य शान्ति रखते हैं।

यह अंगरेज अफगान या तुर्क किसीके अधीन नहीं सम्पूर्ण स्वाधीन हैं। सिन्धु और अकसस नदीके मध्य समस्त गिरिवर्त्ममें इनका अक्षुण्ण प्रताप है। हिमालय पर्वतके शेष प्रान्तसे अकसस नदीके तीरवर्ती बदख्शान पार्वत्य प्रदेश पर्यन्त और हिन्दूकुश पर्वत-मालामें यह अधिकार रखते हैं। काबुल नदीके उत्पत्ति स्थलपर पड़नेवाले सकल गिरिवर्त्म भी इन्हींके अधीन हैं।

यह देखनेमें सुपुरुष होते भी दीर्घच्छन्द नहीं। इनमें दूसरी जो क्षुद्र क्षुद्र जाति हैं, उनमें दारानरी जाति अपनेको तानक मतावलम्बी और अति प्राचीन बताती है। लम्पाक (लमघान) नामक स्थानकी भाषाके साथ इनकी भाषा और अफगानोंके आकारके साथ इनके आकारका सौसादृश्य है।

सेवया (शिवा?) नामक स्थानके वामपार्श्वमें कुगुनी नामक एक जाति है। इसके लोग अपेक्षाकृत संख्यामें अधिक हैं। विशुद्ध काफिर इन्हें "निम्चा" अर्थात् वर्णसंकर कहते हैं। क्योंकि यह काफिर और अफगान उभय जातिकी कन्याका पाणिग्रहण और काफिरस्थानमें निर्भय प्रवेश करते हैं। यह प्रधानतः पथप्रदर्शकका काम चलाते हैं। कुन्द पर्वतमें ही इनका अधिक वास है। कुगुनी अफगानोंकी अपेक्षा क्षुद्रकाय होते हैं। इनकी आकृति भी अपेक्षाकृत कोमलतापूर्ण रहती है। यह मुसलमान धर्मावलम्बी हैं। किन्तु इनमें स्त्रियोंके अवरोधकी प्रथा नहीं।

इस प्रदेशकी अरत उपत्यका ७३०० फीट दीर्घ है। उम्बलिक-इयालिक नामक गिरिपथका दृश्य परम रमणीय है। कुन्द पर्वतके शिखरपर एक क्षुद्र ह्रद है। प्रवादानुसार इसी ह्रदके तीर नूहकी नौकाका भग्नावशेष प्रस्तरीभूत हो गया था, फिर निम्न उपत्यकामें उसीसे नूहके पिताका समाधिमन्दिर बना है।

काफिला (अ० पु०) यात्रियोंका समूह, मुसाफिरोंका झुण्ड। काफिलाके लोग तीर्थ या व्यापार करने मिल-जुलके निकलते हैं।

काफी (अ० वि०) १ पर्याप्त, पूरा, कम न ज्यादा, नपा हुवा। (पु०) २ रागविशेष। इसमें कोमल गान्धार लगता है। काफीके कई भेद हैं,—काफी कान्हडा, काफी टोड़ी, काफी होली इत्यादि। यह राग प्रायः वसन्त ऋतुमें गाया जाता है।

काफी—(हिं० स्त्री०) कहवा, बुन।

काफी—(अं० = Coffee) कहवा, एक प्रकारका रक्तवर्ण क्षुद्र फल। इसे तोड़, भून कर और बुकनी बना चायकी भांति दूधके साथ बहुतसे लोग प्रत्यह पान करते हैं। इसके भिन्न भिन्न नाम यह हैं,—

हिन्दी … … …	बुन, कहवा, काफी।
बङ्गला … … …	कापि, काफि, फावा।
गुजराती … … … …	बुन्द, क्फ़ो।
बम्बैया … … …	कव, बुन, काफी।
दक्षिणी … … …	बुन्द, तखेम-क़ेवे।
महाराष्ट्री … … … …	कान, बन्द।
तामिल … … … …	कापि कोटाइ।
तेलङ्गी … … … …	कापि भित्तुलु।
कर्णाटी … … … …	बोन्द बोज।
अरबी … … … …	बुन, कहवा।

फारसी — कहवा।
तामील — कापउत।
सिंहली — कोपि-पत्ता।
अंगरेजी — काफी (Coffea)
फरासीसी — काफि (Café)
जर्मनी — कफ्फी (Kaffee)
वैज्ञानिक — काफिया एराबिका (Coffea Arabica)

इसका पेड़ १५ से २० फीट तक ऊंचा होता है। इसमें बहु संख्यक शाखा प्रशाखा रहती हैं किन्तु वह अधिक नहीं बढ़तीं। इसके पेड़की छाल अजना पेड़की छालकी भांति कुछ श्वेत वर्ण होती है। नारङ्गीके आकारका सफेद फूल निकलता है। फूल छूट बहुत फलकी भांति आते हैं और पककर लाल हो जाते हैं। प्रति फलमें केवल दो बीज होते हैं। बीज निकाल कर फल फेंक देते हैं। फिर सूखे बीजोंको भून कर और बुकनी बना लेनेसे पीनेका कहवा प्रस्तुत होता है।

पर्णकाके अनुमानमें इसके अरबी "कहवा" नामसे प्रथमतः मद्य समझा जाता था। किन्तु आजकल उससे काफीका बोध होता है। फिर किसीके अनुमानसे वह शब्द अबीसीनिया (अफरीका)के अन्तर्गत काफा प्रदेशके नामसे बिगड़कर बना है। इसके हिब्रू नाम "बुन" से वृक्ष तथा फल और "कहवा" नामसे काफीकी बुकनीका बोध होता है।

इस फलका आदिनिवास अफरीकाके अन्तर्गत अबीसीनिया, सूदान, गिनी और मोजाम्बिक प्रदेशका उपकूल है। उक्त उभय स्थानोंमें यह वृक्ष अपने आप वनमें उपजता है। अरबदेशमें यह इस प्रकार नहीं होता। फिर भी कह नहीं सकते कि अरबके दुर्गम मध्यप्रदेशमें यह है या नहीं।

काफीके अनेक श्रेणी विभाग हैं। उनसे भारत वर्षमें ७ प्रकारकी काफी मिलती है।

१ अरबी काफी। (Coffea Arabica) भारतके नाना स्थानोंमें इस काफीकी यथेष्ट कृषि होती है।

२ बङ्गालकी काफी। (Coffea Bengalensis) कुमायूंसे सिक्किम तक, पूर्वबंग, बहार, आसाम श्रीहट्ट चट्टग्राम और तेनासरिम प्रदेशमें यह उपजती है। इसका फल ईषत् आयताकार होता है। चट्टग्राममें इसे "बरोया" फल कहते हैं।

३ सुगन्धि काफी। (Coffea Fragrans) यह श्रीहट्ट और तेनासरिम प्रदेशमें मिलती है। फल उक्त दोनों जातिकी भांति होता है।

४ आसामी काफी। (Coffea Jenkinsii) आसामकी खसिया पर्वतमें उपजती है। फल ईषत् डिम्बाकार लगता है।

५ खसिया काफी। (Coffea Khasiana) खसिया और जयन्ती पहाड़ों पर होती है। इसके फल किञ्चित् चौड़ाई लिए मोटे पड़ते हैं। बीज टेढ़े पैरकी भांति होते हैं।

६ त्रिवाङ्कुरकी काफी (Coffea Travancorensis) त्रिवाङ्कुरमें होती है। फल लम्बाईमें छोटा और चौड़ाईमें बड़ा रहता है।

७ महावारी काफी। (Coffea Wightiana) दाक्षिणात्यके पश्चिमांशमें उपजती है। इस फलका आकार त्रिवाङ्कुरके फलकी भांति होता, किन्तु एक तरफ बहुत दबका रहता है।

प्रथम दोको छोड़ कर दूसरी सकल श्रेणियोंकी काफी कम उत्पन्न होती है। दाक्षिणात्यके लोग ही अधिक काफी बोते हैं और उधर ही इसकी खेती अधिक की जाती है। दाक्षिणात्यमें आजकल इतनी काफी उपजती है कि विदेशमें भी बाहर बिकती है।

१२ उत्तर और १५ दक्षिण अक्षांशके बीचमें काफी भली भांति उपजती है। फिर १६ उत्तर और १० दक्षिण अक्षांशके मध्यम प्रदेशमें इसकी उत्पत्ति साधारण है। कपासकी खेती जैसी ज़मीनमें की जाती है वैसी ही जमीन इसकी खेतीके लिये भी आवश्यक होती है। इसकी झाड़ी देखनेमें अति मनोहर आती है। इसीसे अनेक लोग इसे उद्यानकी शोभाके लिये लगाते हैं। जहां फारेनहीटके तापमानमें ६०° से ८० पर्यन्त उष्णता मिलती है, वहीं यह उपजती है। मासमें एकबार वृष्टि होना और वर्षमें १५ इञ्चसे अधिक जल न पड़ना, इसकी उत्तम उत्पत्तिका

सहायक है। काफीकी कृषिमें बड़ा यत्न करना पड़ता है। अतिशय मेघ चढ़ना या अतिवेगसे वायु चलना, इसके लिए अशुभ है। जोरसे हवा चलने पर काफीके फूल झड़ जाते हैं और फल नहीं लगते, सुतरां कृषक प्रायः आधे शस्यकी क्षति उठाता है। अत्यन्त ग्रीष्म होनेसे वृक्षके लिये छाया आवश्यक है। समुद्रके उपकूलमें काफी अच्छी नहीं होती। अफरीकाके अन्तर्गत अवसीनियाके साथ समसूत्रपातसे भारतमें पड़नेवाले स्थानोंमें यह भली भांति उपजती है। विशेषतः नीलगिरि उपत्यकामें काफीकी उत्पत्ति अच्छी है।

अवसीनियामें इसके फलको "बुन" कहते हैं। प्राचीनकालमें मिसर और सिरीयामें यह नाम प्रचलित था। उस समय सिरीयाके रहनेवाले इसके बीजको केवे (Cave) कहते थे और पका कर खाते थे। अरबी ग्रन्थादिकी आलोचनाके अनुसार शेख शहाबुद्दीन अभानी नामक किसी व्यक्तिने अफरीकाके उपकूलमें काफीका व्यापार देख कर सर्व प्रथम अदनबन्दरमें एक दुकान खोली थी। १४७० ई०को वह मर गये। सुतरां १५वीं शताब्दीके मध्यभागमें काफी अरबमें पहिले आई। १५७१ ई०को यह यमन, मक्का, कायरो, दामास्कस, अलेपो और कुनस्तुनियामें फैली थी। १५५४ ई०को कुनस्तुनतुनियामें सर्वप्रथम काफीका एक पानागार स्थापित हुआ। १५७३ ई०को अलेपो शहरमें रनडल्फ नामक किसी युरोपीयनने इसका प्रथम परिचय पाया। फिर कह नहीं सकते कि भारतमें काफी कैसे आयी। अनेकोंके कथनानुसार बाबा बूदन नामक एक मुसल-मान सन्यासी मक्केसे लौटते समय ७ बीज लेकर महिसुर पहुंचे थे। दक्षिण भारतमें उनका मतपर बड़ा विश्वास करते हैं। इसीसे उसका समस्त अमूलक होना ध्यानमें नहीं आता। १५७६ से १५९०ई० तक लिनसोटेन (Jan Huygen van Linschoten) नामक एक ओलन्दाज इस देशमें घूमनेको आये थे। वह अपने भ्रमणवृत्तान्तमें मलवार उपकूलके समस्त उत्पन्न द्रव्योंकी वर्णना कर गये हैं। किन्तु उसमें काफीका नाम नहीं मिलता। उनके समसामयिक लेखकोंके पुस्तकमें मिसरियोंके बुन फलका क्वाथ खानेकी बात देखते हैं। इससे अनुमान होता है कि भारतवर्षमें आते समय लिनसोटेनने काफीकी बात नहीं सुनी। डाक्टर ओयालिचने विलायतमें "हाउस-अव कामन्स"के समक्ष साक्ष्य देते समय कहा था —"कलकत्तेके कम्पनी बाग़में जो काफी होती है, उसको छोड़ हमने दूसरी कोई काफी नहीं पी।" उसके पीछे मिलनेवाला विवरण भी १९वीं शताब्दीका विवरण है। सिंहलमें पोर्तगीजोंके दौरात्म्यसे पहले अरबोंने इसे प्रथम प्रचार किया था।

पूर्व भारतीय द्वीपपुञ्जोंमें १६९० ई० के अन्तमें गवर्णर वान हुरनने (Van Hoorne) अरब वणिकोंसे बीज संग्रह कर यवद्वीपके बटेविया नगरमें लगाये थे। उनसे जो पेड़ उगे उनका एक पौदा इङ्गलैण्ड पहुंचाया गया। फिर इङ्गलैण्डके वृक्षोंका एक पौदा १७१८ई०को सुरिनाम नामक स्थानमें आया था। इसके दश वर्ष पीछे अमष्टरडमके काफीबागसे एक पौदा १४वें लुईको उपढौकन दिया गया, फिर उसका पौदा पश्चिम भारतीय द्वीपपुञ्जमें रोपित हुआ। इससे नूतन महाद्वीपमें काफीकी खेती फैल पड़ी। अमेरिका और यूरोपकी काफी-कृषिका मूल यवद्वीप है। किन्तु आजकल अमेरिकाकी भांति पृथिवीके दूसरे स्थानमें कहीं काफी नहीं उपजती। अकेले ब्रेजिलमें ही पांच करोड़ तीन लाख पौदोंसे यत्नके साथ फल संग्रह किया जाता है। फिर कोष्टारिका, गोयाटिमाला, वेनजुइला, गोयाना, पेरू, बलिविया, जामेका, किउवा, पोर्टोरिका, अन्यान्य पश्चिम भारतीय द्वीप, अष्ट्रेलियाके मध्य क्विन्सलैण्ड, पूर्वभारतीय द्वीपावलीके मध्य सुमात्रा, बोरनियो, मलयउपद्वीप, श्यामदेश, सिंगा-पुर प्रभृति प्रणाली मध्यगत द्वीपविभाग और फिजी द्वीपमें इसकी खेती होती है। ब्रेजिल और यवद्वीपकी भांति आबाद ज़मीन् दूसरी जगह नहीं। उसके पीछे भारतवर्ष और सिंहलद्वीपकी आबाद ज़मीन् उल्लेख योग्य है।

अरब देशमें इस प्रथाके फैलनेसे मुसलमान धर्म-याजक काफीपानके विरुद्ध उठे थे। कारण मसजिद और

इंगलैण्डकी अपेक्षा काफी पानागारमें लोगोंकी आसक्ति अत्युच्च बढ़ गई थी। पानासक्ति घटानेके लिये इस पर बहुत शुल्क स्थापित हुआ। पेटनहटेनमें चायकी पहली दुकान खुलनेसे पहिले (१६५० ई०) काफी पानागार बना था (१६५२ ई०)। डि, एडवार्डस नामक एक तुर्कस्तानका अंगरेज वणिक् काफी पीनेमें इतना अभ्यस्त हो गया कि देश जाते समय उसे प्यास्कोया रासी नामक एक ग्रीक नौकर अवश्य काफी बना देनेके लिये अपने साथ रखना पड़ा। उसके बन्धुओंको भी क्रमशः काफीपानका अभ्यास पड़ गया। अवशेषमें बन्धुबान्धवोंका भिड़ उपद्रव न सह सकनेके कारण उसने रोसीको करनहिलके सेण्टमाइकेलके आगे नामक स्थानमें प्रकाश्य रूपसे काफीका पानागार खुलवा दिया। क्रमशः व्यवहार बढ़नेसे पानागारोंकी संख्या भी बढ़ी। २य चार्लसने (१६७५ ई०) पानागारोंमें लोगोंकी भीड़ देख इसका व्यवहार घटानेको राजादेश विधिबद्ध किया था। फ्रांसमें १६४० ई०को काफीका व्यवहार चला और १६६८ ई०को पारिस नगरमें प्रथम पानागार खुला। उसके बाद युरोपमें सर्वत्र इसका व्यवहार बहुत बढ़ा गया था। अमेरिकामें १८४० ई०को चायका व्यवसाय और व्यवहार अधिकतर बढ़ जानेसे काफीका आदर घटा। ब्रह्मदेशमें काफीकी खेती होती है, पर लोगका अभाव है। दिन दिन इसके पीनेकी चाह बढ़ रही है।

भारतके दाक्षिणात्यमें काफीकी खेती खूब होती है। १८८३।८४।८५ ई०को तीन वर्ष दाक्षिणात्यमें प्राय १८६५०० एकर भूमिपर काफी बोई गई थी। उसमें महिसुरको ८२१०० एकर भूमिमें ७११०००० पाउण्ड, मन्द्राजकी ५११०० एकर भूमिमें १११६०००० पाउण्ड कुर्गकी ३८०० एकर भूमिमें ८२००००० पाउण्ड और कोचीनकी २२०० एकर भूमिमें ८१००००० पाउण्ड काफी उत्पन्न हुई।

इसके सम्बन्धमें बाबाबूदनकी बात लिख चुके हैं— भारतवर्षमें सबसे प्रथम काफी कैसे आई थी। महिसुरमें प्रवाद है कि दो शताब्दी हुयी मक्कासे लौटते समय वह कई एक फल और ७ बीज लाये थे। महिसुरमें वह जिस पर्वत शिखरपर रहते थे, आज कल लोग उनके नामानुसार उसको "बाबा बूदनगिरि" कहते हैं। उस शिखर पर उन्होंने अपनी कुटीरके बगलमें उन्हीं ७ बीजोंसे वृक्ष उगाये थे। क्रमशः उस पर्वतमें काफीके अनेक वृक्ष हो गये। फिर ६०।७० वर्ष बीतने पर दूसरे भी निकटवर्ती कई स्थानोंमें इसकी खेती बढ़ी। किन्तु आज प्रायः ४० वर्षसे अंगरेजोंकी इस ओर दृष्टि पड़नेसे काफीकी खेती अच्छी भांति की जाती है। मि० क्यानन नामक किसी अंगरेजने सर्वप्रथम बाबा बूदनगिरिके दक्षिण एक ऊंची जमीन पर काफी बोयी थी।

अंगरेजाधिकृत देशोंके मध्य भारतवर्षमें ही सर्वापेक्षा उत्तम सुगन्धि काफी बहुपरिमाणसे उत्पन्न होती है। काफीको पत्ती उपयुक्त नियमसे बना देनेपर चायकी भांति काममें लायी या चायमें मिलायी जा सकती है। सुमात्रामें काहवा नामक स्थानके लोग काफीकी पत्ती चायकी भांति बना प्रतिदिन पान करते हैं। चायकी भांति इसमें भी स्फूर्तिकर आह्लादजनक गुण होता है।

काफीके फलके छिलकेमें एक प्रकारका तेल रहता है। किन्तु इस तेलके निकालनेकी प्रथा अभी तक कल्पित नहीं हुई।

अमेरिकामें काफीका अर्क उत्तेजक और बलकारक औषधकी भांति काममें आता है। किन्तु इङ्गलैण्डमें इसका चलन नहीं। सुरासार शरीरमें जैसा कार्य उत्पादन करता, यह भी वैसा ही प्रभाव रखता है। काफी चायकी अपेक्षा धारक है। यह कोष्ठबद्ध नहीं करती। फिर भी अधिक परिमाणमें काफी पीनेसे दस्त साफ उतरता है।

डाक्टर ब्यारमें फरासीसी सैनिकोंके मध्य रोगोंकी दौड़ दौड़ देखके पीछे दो अउन्स काफी पिला बीच बीचमें क्लारेट या शराबको मद्य सेवन कराते थे। इससे अधिक उपकार होता है। काफी पीनेसे फरासीसियोंमें मूत्रकोषकी पथरी रोगका आधिक्य घट गया है। तुर्कस्तानमें काफी पीनेसे वातकी पीड़ा नहीं रहती है। तुर्क प्रचुर काफी पीते हैं। यही उनका

प्रियतम पानीय है। सविराम ज्वरमें कुनैनकी भांति कच्ची काफी खिलाते हैं। किन्तु इससे उतना फल नहीं होता। भुनी काफोसे गलित जीवशरीर वा वृक्षादिका दुर्गन्ध दूर हो जाता और दूषित वायुकी संक्रामकताका दोष नहीं आता है। मन्द्राज और गञ्जामके अस्पतालमें प्रत्यह काफोकी बुकनी जला वायुका दूषित अंश नष्ट करते हैं। अरबोंके कथनानुसार काफीमें कामेच्छानिवारक गुण है। घरके आंगन या खुले मैदानमें काफी जलानेसे हवा साफ होती है। उक्त मत अनेक विज्ञ चिकित्सकोंका अनुमोदित है। इससे अफीमका विष भी नष्ट होता है।

लाइवेरियाकी काफो (Liberian Coffee) अफरीकाके पश्चिम उपकूल पर लाइवेरिया, अङ्गोला, गोलङ्गो, अलटो प्रभृति स्थानोंमें उत्पन्न होती है। इसका वृक्ष अरबीके काफी वृक्षसे दृढ़ और फल तथा पत्र दीर्घ रहता है। जिस समय काफी वृक्षका सिंहलमें अनुसन्धान हुआ, उस समय इस श्रेणीकी काफीका वृत्तान्त युरोपीयोंने प्रथम जाना। इस श्रेणीकी काफीमें शायद अधिक कीड़ा नहीं लगता।

लिखकर काफीकी खेतीका उपाय बताना कठिन है। कारण अपनी आंखों इसकी खेती या बाग़ न देखनेसे कैसे समझ सकते हैं। अरबी काफीके वृक्षमें नानारूप पीड़ा उठ खड़ी होती है। आबहवा और खेती बारीके दोषसे ही अधिकांश पीड़ा उपजती है। खेतीके दोषमें कंकड़से पौदा टूट जाता है। पत्तीमें पीली धूल निकल आती है। फिर पत्ती काली पड़ और सिकुड़ जाती है। काफीमें कीड़ा और मक्खी लगनेका डर रहता है। इसको छोड़ टिड्डी, चूहा, गिलहरी, गीदड़ वगैरह भी इसे बहुत बिगाड़ते है। शृगालोंके अत्याचारसे जो फल गिर जाते वह संग्रह किये जानेपर "शृगाल काफी" (गीदड़ काफी) कहाते हैं।

काफ़ी—१ मिर्जा अला उद्-दौलाका उपनाम। बादशाह अकबरके समय इनकी समृद्धि रही। २ मुरादाबादके एक मुसलमान कवि। इनका यथोचित नाम किफायत अली था। इन्होंने 'बहार खुल्द' नामक ग्रन्थ लिखा।

काफ़ूर (अ० पु०) कर्पूर, कपूर। कर्पूर देखो।

काफ़ूर मलिक—दिल्लीवाले बादशाह अला उद्-दीन खिलजीके एक प्रिय कञ्चुकी। इन्हें बादशाहने अपना वज़ीर बनाया था। बादशाहके मरने पर इन्होंने एक व्यक्ति ग्वालियर, उनके पुत्र खि़ज़िर ख़ान् और शादी ख़ान्की आंखें निकालने भेजा था। दारुण रूपसे यह कर्म सम्पन्न किया गया। फिर काफूर मलिकने बादशाहके कनिष्ठ पुत्र शहाबुद्-दीन्को सिंहासन पर बैठाया और स्वयं राज्यका कार्य चलाया था। किन्तु १३१७ ई०के जनवरी मास सम्राट्के मरने पर इनका वध हुआ। अलाउद्-दीन्के तीसरे लड़के पीछे सिंहासन पर बैठ गये।

काफ़ूरी (अ० वि०) १ कर्पूरजात, कपूरसे बना हुआ। २ कर्पूरवर्ण विशिष्ट, कपूरका रङ्ग रखनेवाला। (पु०) ३ वर्णविशेष, कपूरी रङ्ग। इसमें हरित् आभा रहती है (कपूरके दीपककी 'काफ़ूरी शमा' कहते हैं।

काब (अ० स्त्री०) पात्र विशेष, चीना मट्टीकी बड़ी रकाबी।

काब—पारस्य उपसागरके किनारे रहनेवाली एक अरब जाति। उत्तरमें सास्तरसे रामहरमुज और पूर्वमें बेबेहनसे हिन्दियन तक यह जाति बसती है। इसकी राजधानी मुहमेरा है। काब लोगोंकी वासभूमिके मध्य बहु शाखाविशिष्ट ताब नदी बहती है। अरबी भौगोलिक इस नदीको दोरक कहते हैं। ई० के १८वें शताब्द काबोंने कई अंगरेजी जहाज आक्रमण किये थे। उसी सूत्रमें इनसे युद्ध चल पड़ा। फिर अलीरज़ा पाशाने मुहमेरा नगर अधिकार किया। १८५७ ई०से पारस्य युद्धके बाद उक्त नगर भारत गवरनमेण्टके अधीन हुवा।

काबर (सं० पु०) कुत्सितो बन्धः कोः कादेशः पृषोदरादित्वात् सिद्धम्। कुत्सित बन्ध, बुरा फन्दा।

काबर (हि० वि०) १ कर्बुर, कबरा। (पु०) भूमिविशेष, दोमट, रेत मिली हुई ज़मीन्। ३ पक्षिविशेष, एक जङ्गली मैना।

काबचा (हिं॰ पु॰) मीरकू, कबाबका रखा या कचीर। यह शब्द अंगरेजीके 'केबिल' (Cable)का अपभ्रंश है। ठेवरी करनेवाले बड़े पेंच या बालटूको भी 'काबचा' कहते हैं।

काबा—१ एक जाति। इस जातिके लोग भारतके पश्चिम गुजरातके उत्तरखण्ड अबसागरके उपकूल पर महाराष्ट्र राज्यमें रहते थे। आज कल इनकी बात अधिक सुन नहीं पड़ती।

२ मुसलमानोंका एक परिच्छद। यह अचकनकी भांति रहता, केवल बगलबन्द पर अर्धांश कटता है। इसके भीतर सूतका कपड़ा पहनते हैं। उस कपड़े पर मखमलमें ज़रीका या कोई दूसरा काम रहता है। कांधेसे कटि पर्यन्त यह ठीक पड़ता है। काबेका व्यवहार पहले बहुत था, किन्तु अब घट गया है।

३ समचतुष्कोण आकृति, बराबर चौकोर घर।

४ मुसलमानोंका एक पवित्र घर। यह अरब देशके मक्का नगरमें प्रायः चतुष्कोण एक भवन है। इसे मुसलमान एक पवित्र तीर्थ मानते हैं। यह उत्तर पश्चिमसे दक्षिण पूर्व तक [illegible] हाथ लम्बा, २९ हाथ चौड़ा और ३० हाथ ऊंचा है। पूर्व दिक्‌को इसका द्वार है। द्वारके निकट रौप्यासन पर कृष्ण वर्णका एक प्रस्तर रखा है। यात्री मक्का पहुंचते ही हस्तमुख प्रक्षालन वा वज़ू आदि कर मसजिदमें जाते हैं। पहले कृष्णवर्णका प्रस्तर चूम पीछे काबाको चारो ओर प्रदक्षिण करना पड़ता है। काबाको दक्षिण रख तीन बार जल्द जल्द और चार बार धीरे धीरे प्रदक्षिण कर काबाको बाम ओर रखके परिक्रमण शेष करते हैं। काबाके निकट एक प्रस्तर पर इब्राहीमका पदचिह्न है। प्रदक्षिणके पीछे यात्री इसी प्रस्तरके निकट जा नमाज़ पढ़ते हैं। उसके पीछे कृष्ण प्रस्तरको फिर चूम बाहर आते हैं। अरबी परिवारवर्गके मध्य मुसलमानको उत्पन्न होनेसे ४० दिन पीछे काबेमें ले जानेकी प्रथा है। वहां कावर उस पर मन्त्रादि पढ़े जाते हैं। उसके पीछे लड़केको घर जाने पर नापित आकर गण्डदेशमें छुरेसे कानके लोलसे मुखके कोण पर्यन्त समान्तरालमें तीन दाग बना देता है।

अति प्राचीन कालसे काबा अरबोंका तीर्थस्थान गिना जाता है। कथनानुसार आदमके समय एक प्रस्तरमूर्ति स्वर्गसे गिरी थी। क्रमशः इसमें ३६० मूर्ति प्रतिष्ठित हुयीं। मुहम्मदके धर्मप्रचारसे इसका गौरव कितना ही बिगड़ गया। भारतमें यवनोंके समयके बंगीय बरलाटकने नवाबोंमें इस काबेमें चढ़नेके लिये एक स्वर्णसोपान प्रदान किया था। १६२७ई॰को काबेका गौरव फिर प्रतिष्ठित हुआ।

काबारक—एक जाति। फारसके पूर्व और पश्चिम छुटे लोग रहते हैं। कबारक उन्हींके वंशधर हैं।

काबालबर्बरा (सं॰ स्त्री॰) कबाब चीनी।

काबालचेल—एक जाति। काश्मीर प्रान्तमें बन्नूके निकट वजीरी लोग रहते हैं। बड़े लड़ाके और वजीरियोंमें काबालचेल गिने जाते हैं। इनको तीन श्रेणी हैं,—सिफाली, पिपाली और विपाली। इनमें हजारों बलवान् योद्धा पाये जाते हैं। १८६० और १८६१ई॰को इन्होंने भारतके प्रान्तभागमें अंगरेजोंका अधिकार रहते भी ३० बार लूट मार की थी। अंगरेजोंने इन्हें कई बार मारा और घेरा है।

काबिज (अ॰ वि॰) अधिकारप्राप्त, कब्ज़ा रखने वाला।

काबिल (अ॰ वि॰) १ योग्य, लायक। २ विद्वान्, समझदार।

काबिल खान् (कबलाई खान) एक विख्यात मुगल सम्राट्। यह चङ्गेज खान्के प्रपौत्र और तातार राज मङ्गूके भ्राता थे। १२५९ई॰को ४र्थ मालिकत्व प्राप्त हुआ। यही चीन राज्यमें युएन वंशके प्रतिष्ठाता थे। १२६०ई॰को यह अर्धसभ्य एक वन मार्ग से चीन राज्यमें हुये। फिर इन्होंने तातारोंको हरा उत्तर चीनपर अधिकार किया था। १२७९ई॰को इन्होंने सङ्ग वंश निर्मूल कर दक्षिण चीन जीता था। इसी समय यह उत्तरमें उत्तर महासागरसे दक्षिणमें मलक्का प्रणाली और पूर्वमें कोरियासे पश्चिममें एशिया माइनर पर्यन्त समुदय भूखण्डके एकाधिपति थे। दूसरे मुगल सम्राटोंकी भांति यह अत्याचारी और प्रजापीड़क न थे। सुशासनके गुणसे चीनवासी आज इनकी प्रशंसा करते थे। १२९४ई॰को इन्होंने इहलोक छोड़ दिया।

काबिलीयत (अ० स्त्री०) १ योग्यता, लियाकत, पहुंच। २ विद्वत्ता, समझदारी।

काबिस (हिं० पु०) कपिशवर्ण, एक रंग। इसमें मट्टीके कच्चे बरतन रङ्ग कर आवा लगानेसे खाम निकल आते और चमकीले दिखाते हैं। काबिस बनानेमें सोंठ, मट्टी, रेह, आमको छाल और बबूल तथा बांसकी पत्ती घोल कर डालते हैं। २ मृत्तिकाविशेष, एक मिट्टी। यह रक्तवर्ण होता है। जल मिलानेसे इसमें लस आ जाती है।

काबी (हिं० स्त्री०) मल्लयुद्धका एक हस्तलाघव, कुश्तीका कोई पेंच। इसमें एक पहलवान् दूसरेके पीछे जा एक हाथसे उसके जांघियेका पिछौटा पकड़ लेता और दूसरे हाथसे पैर खींच कर पटक देता है।

काबुक (फा० स्त्री०) कबूतरोंका दरबा।

काबुल—१ अफगानस्थानका एक जिला। इसके पश्चिम कोहबावा, उत्तर हिन्दूकुश पर्वत, उत्तर पूर्व पञ्चशरा नदी, पूर्व सुलेमान पर्वतश्रेणी, दक्षिण सफेदकोह तथा गजनी और पश्चिम हजारा प्रदेश है।

काबुलका अधिकांशस्थल पर्वतसे परिपूर्ण है। इसकी अनेक उपत्यका उर्वरा हैं। इन उपत्यकाओंमें बड़े बड़े वृक्ष होते हैं। उनके कड़ी और बरगे बनते हैं। कोहिस्थान और कुरममें अच्छा अच्छा काष्ठ उपजता है। काबुलके नानास्थानोंमें मेवेके बाग हैं। कोहदामन और इस्तालीफ उपत्यकामें बाग बहुत हैं। बाग देखनेमें अति मनोरम हैं। लोगर और बीरबन्द नामक प्रदेशमें पशुचारणका स्थान है। यहां पश्वादिका आहार भी अधिक मिलता है। यहां गेहूं और यव यथेष्ट उत्पन्न होता है। किन्तु उसे केवल दरिद्र लोग व्यवहार करते हैं। सब सम्पन्न लोग मांस अधिक खाते हैं। गजनीसे नानाविध शस्य यहां आता है। उत्तर बदख्शान्, जलालाबाद, लामघन और कुनारसे चावलको आमदनी होती है। इस जिलेमें स्थान स्थान पर शस्यादि अधिक उपजता है। रामयान और हजारेसे घी आता है। यहां द्रव्यादिका महर्घ्य नहीं। ग्रीष्मके समय लोग अधिकांश खीमेमें रहते हैं। प्रस्तर और इष्टकनिर्मित घर भी हैं। घरोंकी छत भारतवर्षकी भांति समतल होती है। गो और मेष ही यहां धन गिना जाता है। उत्तरमें तुर्कस्थान और दक्षिणमें भारतवर्षके साथ वाणिज्य होता है। तुर्कस्थानके अञ्चलका ही वाणिज्य अधिक चलता है। ग्राम छोटे बड़े नाना प्रकारके हैं। एक एक ग्राममें सौ-डेढ़ सौ घरोंकी बसती है। ग्रामके भीतर बीच बीच छोटे किले बने हैं। जल अनेक स्थानोंमें मिलता है। उपत्यकामें प्रायः बैलगाड़ी चलती है। बहिर्वाणिज्यमें उष्ट्र, अश्व और अश्वतर व्यवहृत होते हैं। तुर्कस्थानमें रूसियोंने शुल्क बढ़ाया था, इस लिये वहांका वाणिज्य कुछ घट गया। पहले भारतसे कपड़ा और चाय भेजते थे। किन्तु यह काम भी बन्द हो गया। इससे उसके शुल्कको आमदनीमें घटी आई है।

काबुलके प्रादेशिक शासनकर्ताको हाकिम कहते हैं। १८८२ ई०को अमीर शेर अली खान्‌के भ्राता सरदार अहमद खान् यहांके हाकिम थे। काबुलका आय प्रायः अठारह लाख रुपया है। अफगानस्थानके अन्यान्य प्रदेशकी अपेक्षा काबुलकी सैन्य-संख्या कुछ अधिक है। यहांकी राहें भी खराब नहीं। इसका बहुत प्रमाण मिलता है कि पहले काबुलमें हिन्दू राजाओंका अधिकार था।

२ उक्त काबुल जिलेका प्रधान नगर। यह अक्षा० ३४° ३´ उ० एवं देशा० ६९° १८´ पू० में काबुल और नगर नामक दो नदीके सङ्गमस्थल पर अवस्थित है। काबुल गजनीसे ८८, खिलात ए गिलजाईसे २२९ और पेशावरसे १८५ मील दूर है। लोकसंख्या डेढ़ लाखसे कम है। यहां तापमानयन्त्र ३०° डिगरी उतरता और १०५° डिगरी चढ़ता है।

कोह ताकृतशाह और कोह खोजासफर नामक दो गिरिश्रेणी मिलनेसे कोणकी भांति बननेवाला स्थान ही समतल है। उसी स्थानपर काबुल नगर अवस्थित है। यह चारोदिक् डेढ़ कोससे अधिक न निकलेगा। प्रधान दुर्ग बालाहिसार नगरके दक्षिण पूर्व भागमें खड़ा है। पहले काबुलको चारो ओर इष्टकका प्राचीर था। किन्तु आजकल

स्थान स्थान पर उसका भग्नावशेष देख पड़ता है। नगरका अधिकांश स्थान इष्टकादिकाष्ठ परिपूर्ण है। कहीं १००० वर्षसे अधिक नहीं। नगरमें आने जानेके लिये पहले आठ फाटक थे। आजकल काबुली और दरदार नामक दो ही फाटक देख पड़ते हैं। शहरमें घर अधिकांश कच्ची ईंट और मट्टीके बने हैं। नगर कई महल्लोंमें विभक्त है। फिर महल्ले कूचोंमें बटे हैं। कूचे प्राचीरसे वेष्टित हैं। युद्ध विग्रहके समय प्राचीरोंको मरम्मत होती है। उस समय एक एक कूचा दुर्गकी भांति देख पड़ता है। प्रवेशके लिये कूचेमें सिर्फ एक फाटक रहता है। ऐसे आभ्यन्तरिक व्यवहारको कूचाबन्दी कहते हैं। भीतरकी राहें अत्यन्त सङ्कीर्ण हैं। नगरमें अनेक बाज़ार हैं। उनमें दो प्रधान हैं। वह दोनों प्रायः समान्तरालमें अवस्थित हैं। एकका नाम शोरबाज़ार और दूसरेका नाम काबुली बाज़ार है। नगरको दक्षिण ओर शोरबाज़ारमें चहार-चाता नामक एक इमारत है। यह देखनेमें बहुत सुन्दर है। बाज़ारमें यह देखने लायक चीज़ है। इसके ऊपर चित्र विचित्र बने हैं। अली मरदान खांने यह इमारत बनवायी थी। नगरके बाहर बाबर और तैमूर शाहका समाधिस्थान है। वह दोनों चीज़ें भी देखने लायक हैं। काबुलके शासनकर्ता खुद अमीर हैं। पहले बालाहिसारमें ही राजभवन था। आजकल अमीर नगरके मध्य अन्य स्थानमें रहते हैं। नगरमें एक विद्यालय है। विदेशी पथिकों या व्यवसायियोंके रहनेको यहां १०।१२ सराय हैं। इन्हें कारवान्-सराय कहते हैं। साधारण लोगोंके नहानेको स्नानागार है। इन्हें हम्माम कहते हैं। हम्माममें गर्म पानी रहता है। ग्रीष्मके समय चारों ओरसे पथिक आते हैं। क्रयविक्रय अधिकांश दलालोंके द्वारा सम्पन्न होता है। नगरमें स्थान स्थान पर कूप हैं। किन्तु उनका जल कुछ भारी होता है। नदीका जल बहुत अच्छा है।

नगरमें जानेके लिये कई पुल हैं। उनमें किश्तीका पुल प्रधान है। कई नामे चोहटर नामका पुल बना है। यहां पुल भी बड़े हैं। अनेक स्थानों पर नदीमें जल कम रहनेसे सेतुकी आवश्यकता नहीं पड़ती।

तैमूर शाहने काबुलमें अफगानिस्तानकी राजधानी स्थापित की थी। उस समय तक सादुजाई वंशीय राजा ही काबुलमें रहते थे। सादुजाई वंशका पतन होने पर यह नगर दोस्तमुहम्मदके हाथ लगा। अंग्रेजोंके राज करते समय काबुलमें बहुत युद्धविग्रह हुआ। अफगानिस्तान देखो।

१८३९ ई० को ७वीं अगस्तके दिन अंगरेजोंने ससैन्य शाहशुजाको काबुल भेजा था। अंगरेजोंका सेनादल दो वर्ष वहां रहा। फिर १८४१ई० को २री नवम्बरके दिन काबुलके सिपाहियोंने विद्रोही हो अमीर शाहशुजाको मार डाला। दोस्त मुहम्मदके पुत्र अकबरखांने फिर अंगरेजोंसे सन्धि करना चाहा था। सन्धि होनेकी बात इस मर्म पर चली थी कि अंगरेजोंको काबुल छोड़ना पड़ेगा। सर विलियम माकनाटन सन्धिकी बात चीत करने गये थे। किन्तु वह विश्वासघातसे मारे गये। उनके साथ ट्रेवर, मेकेन्जी और लारेन्स साहब थे। विद्रोही सिपाहियोंने ट्रेवरको भी मार डाला। दूसरे साहब बांध लिये गये। पीछे स्थिर हुआ कि अंगरेजोंको रुपया पैसा सब देना और उन्हें सिर्फ ६ तोपें ले लौटना पड़ेगा। १८४२ई०को ६ठीं जनवरीको अंगरेजी सेना लौटने लगी। ४५०० सिपाही और १२००० नौकर सपूत ठण्डी बरफको तोड़ते आगे जाते थे। इस दलके मध्य सिर्फ डाक्टर ब्राइडन सशरीर जलालाबाद पहुंचे। बन्दी हुये ८५ लोग भी अफगानोंमें आ गये। १८४२ई० को १५वीं सितम्बरको अंगरेजी सेना ले जेनरल पोलकने काबुल पहुंच बालाहिसार दखल किया था। १२वीं अक्तोबर तक अंगरेज नगर पर अधिकार किये रहे। माकनाटन साहबकी हत्याके पीछे उनका देह बाज़ारमें लटकाया गया था। इसीके बदलेमें अंगरेजोंने चहार-चाता बाज़ार तोपोंसे उड़ा दिया।

१८७९ई०के मई मास गन्दामकमें याकूब खांके साथ अंगरेजोंकी सन्धि हुई। उसमें काबुलमें अंग

रेलोंके एक रसीडरट रहनेकी बात ठहरी। सर लूइस रसीडरट बन काबुल गये। उस समय भी अफगान बिलकुल शान्त न थे। ३री सितम्बरके दिन ही सर लूइस ससैन्य छलपूर्वक मारे गये। उस समय कुरम उपत्यकामें सर फ्रेडरिक राबर्ट अंगरेजी सेना लिये अपेक्षा करते थे। अंगरेज गवरनमेंएटने उन्हें काबुल जानेकी अनुमति दी। राबर्टने ससैन्य प्रस्थान किया था। रास्तेमें नाना विघ्न बाधाओंका अतिक्रम करना पड़ा। ८वीं अक्तोबरको उन्होंने काबुल पर अधिकार किया था। अंगरेज सैन्यने बालाहिसार, किला और राजभवनका अधिकांश तोड़ डाला। अमीर याकूब खान्ने पदत्याग किया। अंगरेज काबुल अधिकार किये रहे। अफगानोंने सोचा था कि अंगरेज लौट जावेंगे। किन्तु उन्हें बैठा देख सब लोग असन्तुष्ट हो गये। थोड़े दिन पीछे अफगानोंने काबुल और बालाहिसार दखल किया। २३वीं सितम्बरको शेरपुरमें एक युद्ध हुआ। उसमें अंगरेज ही जीते थे। किन्तु उन्हें शेरपुरमें अवरुद्ध हो रहना पड़ा। २३वीं दिसम्बरको वहां ५० हजार अफगान सेनाने पहुंच अंगरेजों पर आक्रमण किया था। किन्तु वह पराजित हुई। दूसरे दिन अधिकतर अंगरेज-सेना पहुंच गई। काबुल फिर अंगरेजोंके हस्तगत हुआ। उसके पीछे ३ मास तक कोई उपद्रव न उठा। २२वीं जुलाईको अवदुररहमान काबुलके अमीर मनोनीत हुये। अगस्त मासमें अंगरेज सेना लौट आई। अमीर अवदुररहमानके शासनसे शान्ति स्थापित हुई। १८८१ई०को याकूब खान्ने आक्रमण किया था। किन्तु यह पराजित हो हिरातकी राह पारस्यकी ओर चले गये। उसी वर्ष अमीरने एक बार काबुल छोड़ दिया था। फिर वार्दक और कोहिस्थानके लोग विद्रोही हुये। किन्तु धीरे धीरे शांति हो गई। १८८४ई० को रुस-सैन्य मार्व पर अधिकार कर अफगानस्थानकी सीमामें जा पहुंची थी। अंगरेजोंने रुस और अफगानस्थानकी सीमा स्थिर करनेके लिये ४० कर्मचारी और ४०० सिपाही भेज दिये। १८८५ ई०को भारतके गवरनर जेनरल लार्ड डफरिनने रावलपिण्डीमें एक दरबार किया था। अमीर उसमें निमन्त्रित हुए। मार्च मासके शेषमें अमीर अवदुर रहमान वहां आए थे। एकपक्ष तक रह वह वापस गए।

आजसे कोई तीन वर्ष पहिले भूतपूर्व अमीरको सोतेमें किसीने मार डाला था। उनके पीछे कनिष्ठ पुत्र अमान उल्ला खान्को काबुलका राजपद प्राप्त हुवा, किन्तु उन्होंने अंगरेजोंके विरुद्ध युद्ध घोषणा की। कितनी ही खून खराबीके पीछे युद्ध बन्द हुवा। फिर अफगानोंका एक दूतदल सन्धि करने भारत आया, भारतसे भी अंगरेजोंका दूत-दल काबुल सन्धिकी बातचीत करने गया। गत २८वीं फरवरीको काबुल और रूससे भी एक सन्धि हुयी है। कहते हैं उस सन्धिके अनुसार अमीरने रूसी बोलशेविकोंको भारत पर आक्रमण करनेके लिये अफगानस्तानको राह सेना ले जानेका अधिकार दे दिया है। काबुलकी समस्या आजकल बहुत टेढ़ी पड़ गयी है।

२ अफगानस्तानकी एक नदी। इसी नदीके तीर काबुल नगरी है। ऋग्वेदमें यह नदी कुभा नामसे कही गयी है। कुभा देखो।

काबुली (हिं० स्त्री०) कुभासम्बन्धीय, काबुलके मुताल्लिक्।

काबुली बबूल (हिं० पु०) वृक्ष विशेष, एक तरहका बबूल। यह भारतमें प्रायः सर्वत्र मिलता और सरोकी तरह सीधा चलता है। इसे राम बबूल भी कहते हैं।

काबुली मस्तगी (फा० स्त्री०) निर्यास विशेष, एक गोंद। यह रूमी मस्तगीसे मिलती और उसकी जगह काममें आती भी है। वृक्ष बम्बई प्रान्त और उत्तर भारतमें होता है। इसे 'बम्बईकी मस्तगी' भी कहते हैं।

काबू (तु० पु०) १ पकड़, पञ्जा, पहुंच। २ अधिकार, इख्तियार।

काम (सं० क्ली०) कामाय हितम्, कम्-अण्। १ शुक्र, वीर्य। २ यथेष्ट, वाजिब बात। ३ वाञ्छा, ख्वाहिश। ४ स्वीकारवाक्य, इक़रारिया जुमला। ५ अनुमति, सलाह। (पु०) काम्यते असौ घञ्।

कामकला - (सं० स्त्री०) कामस्य कला प्रिया, ६-तत्। १ कामदेवकी पत्नी रति। २ चन्द्रकी षोडश कला। ३ तन्त्रोक्त विद्याविशेष। पुण्यानन्द-प्रणीत कामकलाविलास नामक तन्त्रग्रन्थमें इनका विषय वर्णित है। तन्त्रशास्त्र स्वभावतः गुह्य रहनेसे अर्थ स्पष्ट समझ नहीं पड़ता। इस लिये कामकलाविद्याके मूलश्लोक को उद्धृत किये जाते हैं,—

"सकलभुवनोदयस्थितिलयमयलीलाविनोदनोद्युक्तः,
अन्तर्लीनविमर्शः पातु महेशः प्रकाशमात्रतनुः ॥
सा जयति शक्तिराद्या निजसुखमयनित्यनिरुपमाकारा।
भाविचराचरबीजं शिवरूपविमर्शनिर्मलादर्शः ॥
स्फुटशिवशक्तिसमागमबीजाङ्कुररूपिणी परा शक्तिः।
अणुतररूपानुत्तरविमर्शलिपिलक्ष्यविग्रहा भाति ॥
परशिवरविकरनिकरे प्रतिफलति विमर्शदर्पणे विशदे।
प्रतिरुचिरुचिरे कुड्ये चित्तमये निविशते महाबिन्दुः ॥
चित्तमयोऽहंकारः सुव्यक्तादर्शसमरसाकारः।
शिवशक्तिमिथुनपिण्डः कवलीकृतभुवनमण्डलो जयति ॥
सितशोणबिन्दुयुगलं विविक्तशिवशक्ति संकुचत्प्रसरम्।
वागर्थसृष्टिहेतु परस्परानुप्रविष्टविस्पष्टम् ॥
बिन्दुरहङ्कारात्मा रविरेतन्मिथुनसमरसाकारः।
कामः कमनीयतया कला च दहनेन्दुविग्रहौ बिन्दू ॥
इति कामकलाविद्या देवीचक्रक्रमात्मिका सेयम्।
विदिता येन स मुक्तो भवति महात्रिपुरसुन्दरीरूपः ॥
स्फुटिताद्रविबिन्दोर्नादप्रादुरो रवोऽव्यक्तः।
तस्मात् गगनसमीरणदहनोदकभूमिवर्णसम्भूतिः ॥
अथ वियदादपि बिन्दोर्गगनानिलवह्निवारिभूमिगतिः।
एतत् पञ्चकमिश्रविसर्गादिदमाद्यकाराद्यन्तम् ॥
बिन्दुद्वितयं यस्मै दविहीनं परस्परं तस्य।
विद्यादेवतयोरपि न भेदलेशोऽस्ति वेद्यवेदकयोः ॥
वागर्थौ नित्ययुतौ परस्परं शक्तिशिवमयावेतौ।
सृष्टिस्थितिलयभेदौ त्रिधा विभक्तौ त्रिबीजरूपेण ॥
माता मानं मेयं बिन्दुत्रयभिन्नबीजरूपाणि।
धामत्रयपीठत्रयशक्तित्रयभेदभावितान्यपि च ॥
तेषु क्रमेण लिङ्गत्रितयं तद्वच्च मातृकात्रितयम्।
इत्थं त्रितयपुरी या तुरीयपीठादिभेदिनी विद्या ॥
शब्दस्पर्शौ रूपं रसगन्धौ चेति भूतसूक्ष्माणि।
व्यापकमाद्यं व्याप्यं पूर्वमेवं क्रमेण पञ्चदश ॥
पञ्चदशाक्षररूपा नित्या देवा हि मौलिकाभिमता।
नित्याः शब्दादिगुणप्रभेदभिन्ना तथागता व्याप्ताः ॥
नित्याक्लिन्नाद्यास्तिथयः शिवशक्तिसमरसाकाराः।
दिवसनिशामध्यान्ता, ग्रीष्मान्तेऽपि तदुभयोरूपाः ॥
मध्यगबिन्दुत्रयसमष्टिभेदैर्विभाविताकारा।
षट्त्रिंशत् तत्त्वात्मा तत्त्वातीता च केवला विद्या ॥
विद्यापि मातृकात्मा सूक्ष्मा सा त्रिपुरसुन्दरी देवी।
विद्या चक्रयोरस्यामभेदमामनन्त्यार्याः ॥
या कामेश्वररूपा परा महेशी विभाविता सैव।
स्पष्टा पश्यन्त्यादिविभागरूपात्मा चक्रतां याता ॥
चक्रस्यापि महेश्या न भेदलेशो विभाव्यते विबुधैः।
अनयोः सूक्ष्माकारा परैव सा स्थूलसूक्ष्मयोश्च भिदा ॥
मध्यं चक्रस्य स्यात् परामयं बिन्दुतत्त्वमेवेदम्।
एतच्च न तत्र यदा त्रिकोणरूपेण परिणतं चक्रम् ॥
पश्यन्त्यादि त्रितयं निदानं त्रिकोणरूपं च।
वामा ज्येष्ठा रौद्री चाम्बिका चतुष्टयात्मभूताः स्युः ॥
इच्छा ज्ञान-क्रिया-शान्तास्ता स्युस्त्रिवर्गरूपाः।
स्थूलाव्यक्ततदंशयमिदमेवादमाख्यमस्मी ॥
एवं कामकलाख्या त्रिबिन्दुनादत्रयदहनवर्णमयी।
सेयं त्रिकोणरूपं याता त्रिगुणस्वरूपिणी माता ॥
एका परा तदन्या वामादिव्यष्टिमातृकाष्टात्मा।
तेन नवात्मा जाता माता सा मध्यमाभिधानाख्याम् ॥
द्विविधा हि मध्यमा सा सूक्ष्मस्थूलाकृति स्थिता सूक्ष्मा।
नवनादमयी स्थूला नववर्गात्मा च भूतलिप्यात्मा ॥
माया कारणमन्या कार्यं तन्मयोर्यत्नतो ऐतौ।
सैवेयं नहि भेदस्तस्मां हेतु हेतुमदभीष्टम् ॥
अ च ट त प वर्गमय तद्वसुकोणं मध्यकोणविस्तारम्।
नवकोणं मध्यं चेत्यपि सिद्धोपदेशिभिर्दृश्यम् ॥
तच्छायात्रितयमिदं दशारचक्रद्वयात्मना विततम्।
क च ट त वर्ग चतुष्टयविलसनविस्पष्टकोणविस्तारम् ॥
एतच्चक्रचतुष्टयमाद्यमेतत् दशार-परिणामः।
हादिस्वरनवक चतुर्दशवर्णमयं चतुर्दशारमिदम् ॥
परया पश्यन्त्यापि च मध्यमया स्यूतवर्गविस्फुरा।
एताभिरेकपञ्चाशदक्षराभा च वैखरी जाता ॥
कादिभिरष्टभिरुपचितमष्टदलाख्य वैखरीवर्गैः।
स्वरगतषोडशदलमिदमष्टदलाम्भोरुहं च सञ्चिन्त्यम् ॥
बिन्दुत्रयमयतेजस्त्रितयविकारात्मकानि वृत्तानि।
भूबिम्बत्रयमेतत् पश्यन्त्यादि विभागविश्रान्तिः ॥
क्रमश पदविन्यासः क्रमोदयेन कथ्यते देहा।
आवरणं गुरुपंक्तित्रयमिदमध्यापदाद्यक्षरम् ॥
सेयं परा महेशी चक्राकारेण परिणमेत सदा।
तद्देहावयवात्मा परिणतिरावरणदेवताः सर्वाः ॥
आसीना बिन्दुमये चक्रे सा त्रिपुरसुन्दरी देवी।
कामेश्वराङ्कनिलया कलया चन्द्रस्य कल्पितोत्तंसा ॥

यमाद् [illegible] ।
[illegible] ॥
[illegible] त्रिपुरसुन्दरी [illegible] ।
[illegible] ॥
[illegible] ।
[illegible] ॥
[illegible] ।
[illegible] ॥
[illegible] ।
[illegible]
[illegible] ।
[illegible] ॥
[illegible] ।
[illegible] ॥
[illegible] ।
[illegible] ॥
[illegible] ।
[illegible] ॥
[illegible] ।
[illegible] ॥
[illegible] ।
[illegible] ॥
[illegible] ।
[illegible] ॥
[illegible] ।
[illegible] ॥
[illegible] ।
[illegible] ॥
[illegible] ।
[illegible] ॥
[illegible] ।
[illegible] ॥"

भावार्थ—आदिसृष्टिका कारण शिव और शक्ति दो बिन्दुस्वरूप हैं। इन दोनों बिन्दुओंमें शिवरूप बिन्दु श्वेतवर्ण और शक्तिरूप बिन्दु रक्तवर्ण है। शिव बिन्दुसे जब शक्तिबिन्दु मिलता, तब उसमय बिन्दुके संयोगका काम नाम पड़ता है। दोनों बिन्दु नाना कला और नाद रखते हैं। इन शिवशक्ति बिन्दुसे ही अतीत अक्षर, बहुदाय भाषा एवं पञ्च भूतादि यावतीय पदार्थोंकी सृष्टि होती है। अकार अक्षरसे शिव और हकार अक्षरसे शक्तिका बोध है। इसीलिये शिवबिन्दु शक्तिबिन्दु और नाद तीनोंके संमिश्रणसे "अहं"कारकी उत्पत्ति हुआ करती है। इसीको कामकला कहते और इसी शक्तिका नाम त्रिपुरसुन्दरी रखते हैं। इन तीनों बिन्दु एक त्रिकोण चक्रके मध्यस्थित हैं। सुतरां त्रिपुरासुन्दरी उसी चक्रके मध्य अवस्थान करती हैं। फिर उसके चौकसमूहमें सिद्धिप्रदा योगिनियोंका अधिष्ठान है। इन त्रिपुरासुन्दरीका आवाहनकी भांति चक्र वर्ण है। मस्तकमें चन्द्रकला है। चन्द्र, सूर्य और अग्नि चक्रत्रय हैं। पाश, अङ्कुश, इक्षु, धनु और पञ्चशर चक्रमें प्रतिष्ठित हैं। षोडशदलमें पञ्चभूत, अहङ्कार और पञ्चतन्मात्र गुप्ततर योगिनीसमूह हैं। फिर मध्यमें पञ्चभूत, दश इन्द्रिय मन और षोडश विकार अवस्थित हैं।

यह कामकलाविद्या अवगत हो सकनेसे त्रिपुरासुन्दरीका मिलता है। किन्तु गुरुके उपदेश व्यतीत केवल ग्रन्थपाठसे इसमें कभी ज्ञानलाभ नहीं होता। इसके ३६ मूलतत्त्व हैं। यथा—

१ शिव २ शक्ति, ३ सदाशिव ४ ईश्वर, ५ शुद्ध विद्या, ६ माया, ७ कला, ८ विद्या ९ राग १० काल, ११ नियति, १२ पुरुष, १३ प्रकृति, १४ अहङ्कार, १५ बुद्धि, १६ मन, १७ श्रोत्र, १८ त्वक् १९ नेत्र, २० जिह्वा, २१ घ्राण, २२ वाक्, २३ पाणि, २४ पादु, २५ उपस्थ, २६ शब्द, २७ स्पर्श, २८ रूप, २९ रस, ३० गन्ध, ३१ आकाश, ३२ वायु, ३३ तेजः, ३४ अप्, ३५ पृथिवी इत्यादि।

कामकलाधरस (सं० पु०) वाजीकरणौषध, ताकतकी एक दवा। पारदभस्म और स्वर्णकी भस्म एवं मुक्ताको रस और सुवर्ण तथा कदलीकन्दके द्रवमें घोंटते हैं। पारदभस्म एवं स्वर्णको धीमी धीमी आंचमें पका फिर उक्त द्रवोंसे मर्दन करना चाहिये। इसी प्रकार बारबार घोंटते और पकाते आठ पुट लगाते हैं। माषकोलास निर्याससे साथ चार माषा सेवन करनेसे यह कामोत्तेजन बढ़ाता है। (रसप्रकार)

कामकलापटी (सं० स्त्री०) वीर्यवर्धक, एक दवा।

भल्लातकका मूल, त्रिफला, गुडूची, मरिच हरिद्रा, सप्तच्छदा, सुरामांसी एवं कुष्ठ दो दो तोले, त्रिवृत्, मुस्तक, कृष्णलवण, तालक, तथा टंकण चार चार तोले और शोधित गुग्गुलु चौंतीस तोले एकत्र चोमें घोंटनेसे यह बनती है। चार माषा इसको सेवन करनेसे वातरक्त रोग आरोग्य होता है। (रसरत्नाकर)

कामकलाविलास (सं० पु०) कामकलायाः विलासः सम्यक् विवरणं यत्र, बहुव्रो०। एक तन्त्रशास्त्र। इसमें कामकला विद्याका विषय विशेष रूपसे वर्णित है। इसके प्रणेता पुण्यानन्द और टीकाकार नटनानन्द थे। [कामकला देखो]

कामकाज (हिं० पु०) कर्मकार्य, कारबार, दौड़धूप।

कामकाजी (हिं० पु०) व्यवसायी, कारबारी।

कामकाति (सं० त्रि०) कामपरा कातिः शब्दो यस्य, काम-कै शब्दे क्तिन् बहुव्रो०। काम शब्दयुक्त, अपनी ख्वाहिस जाहिर करनेवाला।

कामकान्ता (सं० स्त्री०) राजनेपाली, नेपालकी मनःशिला।

कामकाम (सं० त्रि०) कामं कामयते, काम्-कम्-णिच्-अण्। अभीष्टप्रार्थी, ख्वाहिश को हुयी चीज मांगनेवाला।

कामकामी (सं० त्रि०) कामं कामयते, कम्-णिच्-णिनि। अभीष्टप्रार्थी, मुराद मांगनेवाला।

"आपूर्यमाणमचलप्रतिष्ठं समुद्रमापः प्रविशन्ति यद्वत्।
तद्वत् कामाः यं प्रविशन्ति सर्वे स शान्तिमाप्नोति न कामकामी॥"
(भगवद्गीता)

कामकार (सं० त्रि०) कामं करोति, काम-कृ-अण्। १ काम्यकार्यका निष्पादक, ख्वाहिसके मुताबिक चलनेवाला। (पु०) २ फलाभिसन्धि, ख्वाहिशकी चाल।

कामकाली (सं० स्त्री०) जलपक्षिविशेष, एक दरयायी चिड़िया।

कामकूट (सं० पु०) काम एव कूटं प्रधानं यस्य, बहुव्रो०। १ वेश्याप्रिय, रण्डीबाज। २ वेश्याविभ्रम, रण्डीबाजी। ३ कामराज नामक स्त्रीविद्याका एक मन्त्र। यह तीन प्रकारका होता है,—कामकूट, कामकेलि और कामक्रीडा। यथा १म कामकूट,—

"विदवह्निसतः पश्चात् कलो सकुलि शक्ति च।
मायाक्षरेण संयुक्तं नादबिन्दुकलान्वितम्।
प्रथमं कामराजस्य कूटं परमदुर्लभम्॥" (डमरुकतन्त्रम्)

२य कामकूट,—

"विवरिष्ययुतं कामो हंसः शक्रस्तत परम्।
महामाया ततः पश्चात् स्वप्रमतीति कथ्यते॥" (डमरुकतन्त्रम्)

३य कामकूट,—

"मदन शिवबीजञ्च वायुबीजं ससंदरम्।
इन्द्रबीज ततः पश्चात् महामायां समुद्धरेत्॥ (डमरुकतन्त्रम्)

कामकृत् (सं० त्रि०) कामेन करोति, काम-कृ-क्विप्। १ यथेच्छकारक, मर्जीके मुवाफिक चलनेवाला। २ अभीष्ट सम्पादक, अपनी मुराद पूरी करनेवाला। (पु०) ३ विष्णु।

"कामहा कामकृत् कान्तः कामः कामप्रदः प्रभुः।" (विष्णुसहस्रनाम)

कामकेलि (सं० त्रि०) कामे तद्धेतुकरतौ केलिर्यस्य, बहुव्रो०। १ लम्पट, ऐयाश, छिनरा। (पु०) काम-निमित्ता केलिः, मध्यपदलो०। २ सुरत, छिनाला।

कामक्रीड़ा (सं० स्त्री०) कामेन क्रीडा, ३-तत्। १ सुरत, ऐयाशी। २ पञ्चदशाक्षरी एक छन्द।

"मः पञ्च स्युर्दर्या सा कामक्रीडा संज्ञा ज्ञेया।" (वृत्तरत्नाकरटीका)

जिस छन्दमें पांच मगण अर्थात् पन्द्रहो वर्ण गुरु रहते, उसे 'कामक्रीड़ा' कहते हैं।

कामखड्गदला (सं० स्त्री०) कामं कमनीयं खड्गमिव दलं पत्रं यस्याः, बहुव्रो०। सुवर्णकेतकी, पीला केवडा।

कामग (सं० त्रि०) कामेन वाञ्छया इच्छया यथेच्छं देशं गच्छति, काम-गम-ड। १ इच्छानुसार चलनेवाला, जो अपनी खुशीसे आता-जाता हो। २ लम्पट, रण्डीबाज, छिनरा। (पु०) ३ कन्दर्प, कामदेव।

कामगति (सं० त्रि०) कामं यथेच्छं गतिर्यस्य, बहुव्रो०। १ इच्छानुसार चलनेवाला, जो मर्जीके मुताबिक आता-जाता हो। २ यथेच्छ देशको गमनकारक, मनमानी जगहको जानेवाला। ३ लम्पट, रण्डीबाज।

कामगम (सं० त्रि०) कामं यथेच्छं गच्छति, काम-गम-अच्। कामगति देखो।

कामगा (सं० स्त्री०) कामेन अनुरागेण गच्छति, काम-गम-ड-टाप्। १ कोकिला, कोयल। २ यथेच्छ-पुरुषगामिनी, छिनाल।

"[illegible]।
[illegible]॥" (कामन्दक)

कामगामी (सं० त्रि०) कामं यथेच्छं योनिविचारं अकृत्वैव गच्छति गम्यते, काम-गम णिनि। १ योनिविचारशून्य हो यथेच्छ स्त्रीसे गमन करनेवाला, रण्डीबाज़, छिनरा। २ कामचारी, ख़ाहिशके मुताबिक़ चलनेवाला।

कामगार (फा० पु०) राज्यप्रबन्धकर्ता, कामदार।

कामगिरि (सं० पु०) कामप्रधानो गिरिः, मध्यपदलो०। १ कामरूपका एक पर्वत। (कालिकापुराण) २ दाक्षिणात्यका एक पर्वत।

"[illegible]।" ([illegible])

कामगुण (सं० पु०) कामस्य गुणः, मध्यपदलो०। १ अनुराग, मुहब्बत। २ विषय, ऐश। ३ भोग, मज़ा।

कामङ्गामी (सं० त्रि०) कामं यथेच्छं गच्छति, कामम्-गम णिनि। कामगामी देखो।

कामचर (सं० त्रि०) कामेन चरति, काम-चर ट। स्वेच्छाचारी, मर्ज़ीके मुताबिक़ सब जगह घूमनेवाला।

"[illegible]।" ([illegible])

कामचरण (सं० क्ली०) कामं यथेच्छं चरणं विचरणम्, कर्मधा०। यथेच्छभावसे विचरण, मनमानी चलफिर।

कामचरत्व (सं० क्ली०) कामचरस्य भावः, कामचर-त्व। कामचरका कार्य, मनमानी चलफिर।

कामचलाऊ (हि० वि०) किसी न किसी प्रकार कार्य निभाव देनेवाला, जो काम चला देता हो।

कामचार (सं० त्रि०) कामेन स्वेच्छया चरति, काम-चर-अण्। १ यथेच्छभावसे विचरणकारक, मर्ज़ीके मुताबिक़ घूमने फिरनेवाला। २ यथेच्छभावसे कार्य करनेवाला, जो मर्ज़ीके मुताबिक़ सभीको चलाता हो।

कामचारिणी (सं० स्त्री०) सुगन्ध लताविशेष, एक खुशबूदार बेल।

कामचारी (सं० त्रि०) १ कामेन स्वेच्छया चरति, काम-चर णिनि। कामुक, ऐयाश, छिनरा। २ यथेच्छचारी, मर्ज़ीके मुताबिक़ चलनेवाला। (पु०) ३ गरुड़। ४ कलविङ्क, एक चिड़िया।

कामज (सं० त्रि०) कामात् जायते, काम जन-ड। १ अभिलाषजात, ख़ाहिशसे पैदा। कामज व्यसन दस प्रकारका होता है,—

"मृगयाक्षो दिवास्वप्नः परिवादः स्त्रियो मदः।
तौर्यत्रिकं वृथाट्या च कामजो दशको गणः॥" (मनुसंहिता)

मृगया (शिकार), द्यूतक्रीड़ा, दिवानिद्रा, परनिन्दा, स्त्रीसम्भोग, मद्यपान, नृत्य, गीत, वाद्य और वृथापर्यटन दश कामज व्यसन हैं। इनमें मद्यपान, द्यूतक्रीड़ा, स्त्रीसम्भोग और मृगया चार उत्तरोत्तर अधिक कष्टदायक होते हैं। कामज व्यसनमें आसक्त होने पर अर्थ और धर्मकामसे वञ्चित रहना पड़ता है। इसलिये इनको सर्वदा छोड़ना चाहिये। २ कामजात सुरतसे पैदा। (पु०) ३ कामदेवके पुत्र, अनिरुद्ध।

कामज्वर (सं० पु०) कामजातो ज्वरः इति, कर्मधा०। कामजन्य ज्वर, एक बोखार। कामरिपुके आविर्भावसे यह ज्वर आता है। वैद्यशास्त्रके मतसे इसका लक्षण,—

"कामाच्चित्तविभ्रंशस्तन्द्रालस्यमभोजनम्।" (माधवनिदान)

मनकी विकलता, तन्द्रा, आलस्य और अभोजन है। माधवकारके मतानुसार आश्वासवाक्य, अभीष्ट वस्तुके लाभ, वायुके उपशमकारक कार्य और हर्ष उठनेसे यह ज्वर छूट जाता है। क्रोधसे भी इस ज्वरका उपशम होता है।

कामजननी (सं० स्त्री०) नागवल्ली, पानकी बेल।

कामजानि (सं० पु०) कामस्य जनिरुत्पत्तिः यस्मात्, बहुव्री०। १ कोकिल, कोयल। (त्रि०) २ सुगन्धि, खुशबूदार।

कामजा (सं० स्त्री०) तृणविशेष, एक घास। यह कर्णाटक देशमें प्रसिद्ध है। इसका बीज भी 'कामजा' कहाता है। वैद्यकनिघण्टु इसे मधुर, लघु, काम रुचिकर, अग्निवृद्धिकर और रुच्य बताता है। राजनिघण्टुके मतसे इसके बीजमें भी यही गुण होता है।

कामजाल (सं० पु०) कामं जनयति, काम-जन-णिच्-अच् निपातनात् न वृद्धि। अथवा कामं कन्दर्पभावं आनयति, काम-आ-नी-ड। कोकिल, कोयल।

कामजित् (सं० पु०) कामं जयति, काम-जि क्विप्। १ महादेव। २ कार्तिकेय। ३ जिनदेव।

कामज्येष्ठ (सं० त्रि०) कामको बड़ा समझनेवाला, जो ख़ाहिशका पाबन्द हो।

है। इसको "बाघद्वार" कहते हैं। इस तोरणके शिखरदेशमें एक व्याघ्रमूर्ति थी। नगरके उत्तरांशमें घरला नदीके प्राचीन स्थानके मुखसे पश्चिम प्रायः एक मील दूर "होकोद्वार" नामक तोरण है। कामरूप जिलेमें कई असभ्य लोगोंके नाम सुन पड़ते हैं। उनमें होको भी एक असभ्य जाति होगी। इसीसे होको नामक किसी असभ्य जातिके नामानुसार सम्भवतः तोरणका नाम भी रक्खा गया है। यह सकल तोरण इष्टकनिर्मित थे। इनके निकट नानाविध रक्षणोपयोगी उपाय थे। आज भी उन सबका भग्नावशेष पड़ा है। होकोद्वारके वहिर्देशमें राहके वामपार्श्व और शिङ्गीमारीके पूर्व एक क्षुद्र दुर्ग है। यह प्रायः एक वर्गमील जमीन् पर बना है। इस दुर्गका "पात्रका गढ़" कहते हैं। कारण इसमें पात्र अर्थात् प्रधान मन्त्री रहते थे। इसकी गठनप्रणाली और व्यवस्थादि नगर-दुर्गकी भांति अधिक उत्कृष्ट नहीं। फिर भी यह इस प्रकार निर्मित हुवा है, कि नगरदुर्गसे ही इसकी रक्षाका कार्य अनायास चल सकता है। इस दुर्गसे कुछ उत्तर एक चेत्रके मध्य राजाका स्नानागार था। इसकी चारो ओर आजकल तम्बाकूकी खेती होती है। चेत्रके एक स्थानको आज भी "शीतलवास" कहते हैं। किन्तु यहां किसी प्रकारकी अट्टालिकाका चिह्न नहीं। यहां गमलेकी भांति पत्थरका एक पात्र विद्यमान है। वह ग्रानाइट पत्थर खोदकर बनाया गया है। इसका किनारा ६ इंच मोटा है। मुखका विस्तार साढ़े ६॥ फीट और गभीरता साढ़े तीन फीट है। इसके अभ्यन्तरमें पत्थरकी एक शिड्डी जैसी बनी है सम्भवतः उसीके सहारे इसमें उतरते थे। पत्थरके बाहर इस प्रकार चढ़नेका कोई उपाय नहीं। इसीसे अनुमान होता है कि पत्थर भूमिमें गड़ा था। फिर इसका किनारा स्नानभूमिके मध्यभागसे समपृष्ठ था। इस स्नानागारका चेत्र देखनेसे स्पष्ट समझते है कि स्नानागार और शीतलवास दोनों एक सुन्दर छायाशीतल मनोरम उद्यानके मध्य थे। कालक्रमसे उद्यानके वृक्षादि विनष्ट हो गये हैं। अथवा कृषिकार्यके लिये सकल वृक्षादि काट भूभाग बनाया गया है।

नगरके मध्य प्रधान स्थान दुर्ग और राजप्रासाद है। यह प्रायः नगरके मध्यस्थलमें अवस्थित है। इसको चारो ओर ६० फीट विस्तृत एक खाई है। दुर्ग पूर्वपश्चिम १८६० फीट और उत्तर-दक्षिण १८८० फीट विस्तृत है। खाईके बाहर दुर्गका सुरचा और खाईके भीतर इष्टक-प्राचीर है। उत्तर और दक्षिण दिक् खाईके तीरसे यह प्राचीर लगा है। फिर पूर्व-पश्चिम प्राचीरकी बगलमें चौड़ा ढालू पोश्ता है। दुर्गके सुरचोंके बाहर दक्षिणपूर्व कोणमें कई क्षुद्र पुष्करिणी और एक वृहत् तडाग है। अपर तीनों ओर दुर्गके मध्यविस्तारमें प्रायः २०० गज भूमि मट्टीके सुरचेसे वेष्टित है। यह वेष्टितस्थान तीन भागोंमें विभक्त है। सम्भवतः यह स्थान राजान्तःपुर रहा। इसके बाहर कई क्षुद्र पुष्करिणी हैं। किन्तु निकटमें अट्टालिकाका कोई चिह्न नहीं मिलता। दुर्गके अभ्यन्तरमें इष्टक-प्राचीरके मध्य उत्तरांशपर वृहत् स्तूप है। यह ३० फीट उच्च है। इसका शिखरदेश ३६० फीट विस्तृत और चतुष्कोणाकार है। इस स्तूपके दक्षिण-पश्चिम कोणमें एक क्षुद्र अथच गभीर पुष्करिणी है। इसीसे स्तूपका यह अंश आज भी नहीं बिगड़ा। इसका चारो ओर इष्टककी टट्टी थी। किन्तु आजकल पुष्करिणीके तीरको छोड़ दूसरी किसी तरफ नहीं है। इसके निकट दूसरी भी कई क्षुद्र पुष्करिणी हैं। इनको देखते ही जान पड़ता है कि दुर्गकी रक्षा करनेको पुष्करिणी खोदी गयीं थीं। फिर उसी मृत्तिकाकी राशिसे यह स्तूप निर्मित हुवा। इस स्तूपका अभ्यन्तर इष्टकगठित नहीं, केवल बालू और मिट्टीसे भरा है। इस स्तूपके ऊपर उत्तर एवं दक्षिणभागमें ईंटोंसे बंधे १० फीट चौड़े दो कूप हैं। दोनों कूपोंका तलदेश तक बंधा है। स्तूपके ऊपर पूर्व-पश्चिम दो स्थान हैं। देखनेसे सहजमें ही समझ सकते है कि पहले वहां अट्टालिका थी। पूर्वको तरफ इसी ढेरपर वेदीकी भांति क्षुद्र चतुष्कोणाकार एक स्थान है। अनेकोंके अनुमानमें यहां कामतेश्वरीका प्राचीन मन्दिर था। यह अनुमान बहुत कुछ सत्य है। इस वेदीके पश्चिम दूसरा भी भग्नावशेष है। लोगोंके कथनानुसार वहां

राजभवन था। किन्तु यह अनुमान है। ऐसे क्षुद्र स्थानमें राजभवन बन नहीं सकता। सम्भवतः यह देवीका [illegible] था। भीतके कोठेमें जिसी यद्यपि ईंटें संयोजित हुयी थीं। वह अति सुगठित रहीं। किन्तु यहां जो ईंटें आज भी इधर उधर पड़ी हैं, वह भारतवर्षकी साधारण ईंटोंसे कुछ विलक्षण नहीं। ढेरकी दक्षिण दिक् मध्यस्थलसे एक इष्टक-प्राचीर दुर्गप्राचीर तक उत्तर दक्षिण विस्तृत है। इस प्राचीरके पूर्व ओर बड़े इष्टकस्तूप हैं। सम्भवतः इस स्थान कामोंमें दरबार लगता और सरकारी काम चलता था। इसी ओर ढेरके पूर्वभागमें उसीके बराबर दीर्घ एक दीर्घिका है। कथनानुसार राजा इस दीर्घिकामें बड़े कुम्भीर पालकर रखते थे। इस दीर्घिकाके उत्तर पूर्व कोणमें दूसरा क्षुद्र ढेर है। इस ढेरकी चारों ओर दीर्घिकासे एक नहर निकाल घुमा दी गयी है। इस क्षुद्र ढेरमें भी बहुत ईंटें पड़ी हैं। इससे यहां देवमन्दिर होनेका अनुमान करते हैं। कुम्भीर दीर्घिकासे बिलकुल पूर्व दूसरा एक ढेर है। लोगोंके कथनानुसार इस पर अस्त्रागार था। बड़े ढेरके पश्चिम दक्षिण ओर मध्य प्राचीरके पश्चिम जो स्थल पड़ता है, वह प्राचीरके पूर्वभागकी अपेक्षा छोटा लगता है। सम्भवतः यहां राजाका भवन रहा। इसीसे बिलकुल उत्तर अन्तःपुर था। अन्तःपुरके पूर्व किनारे बड़ा ढेर है। पश्चिम ओर मिट्टीका सुरङ्ग है। दक्षिण ओर उत्तरमें ईंटका प्राचीर है। इसके मध्य स्थलमें एक स्तूप है। अनुमानसे यह स्तूप अन्तःपुरका कोई देवालय था। इस स्तूपके निकट दो पुष्करिणी हैं। सम्भवतः यही दोनों स्त्रियोंके व्यवहारार्थ पत्थरसे बंधी थीं। बड़े ढेरके दक्षिण पश्चिम कोणकी पुष्करिणीके तीर पर दूसरे मन्दिरका भग्नावशेष है। अन्तःपुरके निकट इन दोनों पुष्करिणियोंसे और पूर्वोक्त बड़े ढेर पर (जिस स्थानमें कामतेश्वरीके मन्दिर रहनेका अनुमान किया गया था, वहां भी) प्रस्तरादिके भग्नावशेष मिलते हैं। यहां ८ फीट लम्बा १८ इञ्च व्यासविशिष्ट धूसरवर्णके ग्रानाइट पत्थरसे स्तम्भका एक खण्ड पड़ा है। इसका अवयव अठ-पहलू और मूलदेश चौकोर है। लोगोंके कथनानुसार यह स्तम्भका अंश नहीं, नीलाम्बर नामक नृपतिके [illegible] अवशेषमात्र है। प्रवादानुसार इस दुर्गको विश्वकर्मा और नगरके बहिर्देशका [illegible] नगराधिष्ठात्री कामेश्वरी देवीने अपने हाथ बनाया था। पूर्वदिक्में बरहाके तीर कामेश्वरी-निर्मित सुरङ्ग नहीं। कथनानुसार इसके निर्माण-समय राजाको देवीके आदेशसे एकादिक्रमसे चार दिन उपवास रखना था। किन्तु तीन दिन बीत जाने पर राजा फिर भूखा सह न सके और चतुर्थ दिन आहार करने लगे। उस समय देवीने भी तीन ही ओरका सुरङ्ग बांधा था। इस लिये चौथी ओरका सुरङ्ग बंध न सका। बरहाके तीरसे बाजहाट तक एक प्रशस्त पथ है। राजप्रासादके भग्नावशेषसे एक मील दूर शिङ्गीमारी नदीकी वर्तमान खाड़ी है। इसके निकट दूसरी भी एक खाड़ी है। उसके ऊपर बाजहाटके अप्रयुक्त कुछ दूर ईंटका शिवराबहार पुल है। इसी पुल पर होकर इस बरहा बाजहाटकी राह है। बाजहाटके निकट एक पत्थरमय स्थान है। लोग उसे गोरीपट कहते हैं। इसका शिवलिङ्ग टूट गया है। बृहदाकार शिवलिङ्ग पर मन्दिर था। आजकल उसका चिह्नमात्र मिलता है। निकट ही एक पुष्करिणी है। वह पूर्वपश्चिम ९०० फीट दीर्घ और उत्तर-दक्षिण ९०० फीट विस्तीर्ण है। दोनों ओर दो घाट बने हैं। निकट ही कई जगहें मूर्तिविशिष्ट बृहदाकार प्रस्तर हैं। उनके एकमें अर्धनारीश्वरमूर्ति और दूसरेमें विष्णु-लक्ष्मीकी मूर्ति खुदी है।

भाषाकी पुस्तकों पढ़नेसे समझते हैं कि ई० १५श शताब्दके प्रथम भाग कामरूपमें नीलध्वज नामक एक राजा थे। उनके सम्बन्धमें कई प्रवाद हैं—भगुहा किसीके ब्राह्मणका एक गोरक्षक रहा। वह गोरक्षक बड़ा दुष्ट था, दूसरेका अनिष्ट करना उसे अच्छा लगता था। प्रतिदिन दूसरेके खेतमें गो आदि छोड़ वह आप सोया करता था। प्रजाको ऐसी हानि देख सबने ब्राह्मणसे उसके ग्वालके दुर्व्यवहारकी बात कही। ब्राह्मणने एक दिन स्वयं उस विषयका

अनुभव करनेका मौक़ा न था। देखा कि उनका गोरक्षक एक पेड़के नीचे पड़ा सोता है और एक सर्प फण फैला उसके मुखको धूप रोक रहा है। ब्राह्मण यह देख डर गया और झटपट भागने लगा। वहीं समय सर्प मनुष्य आते देख भाग गया। ब्राह्मणने ध्यान कर देखा कि उसके पदतलमें अङ्कुश ध्वज, त्रिशूल, ऊर्ध्वरेखा प्रभृति राजलक्षण है। यह देख ब्राह्मण उसे लेकर घर ले गया और शिक्षा प्रदानकर मनुष्य करनेको निश्चय किया। अतःएव एक दिन ब्राह्मणने उसको बुलाकर प्रतिज्ञा करायी—किसी दिन राजा होने पर वह उनको मन्त्री बनायेगा। कामरूपके कामरूपराज धर्मपालके महामात्य [illegible] दुर्बल पड़ गये। फिर वही गोपालक उनको मार स्वयं नीलध्वज नामसे राजा हुआ और अपने राज्यका "ब्राह्मणराज्य" नाम रख प्रतिपालक ब्राह्मणको मन्त्री बनाया। दूसरे प्रवादके अनुसार किसी ब्राह्मणके घर एक दासी थी। उसीके गर्भसे एक पुत्रसन्तान हुआ। ब्राह्मणने उसे गोरक्षामें नियुक्त किया। कामरूपमें इस तरहसे वही गोरक्षक नीलध्वज हुआ। फिर कोई कहता है कि गोरक्षक असुर (अथवा [illegible]) था। अन्ततः राजा नीलध्वजने मिथिलासे ब्राह्मण और कायस्थ ले जाकर कामरूपमें बसाये थे। फिर "कामतापुर"* नामसे उन्होंने एक नगर भी बसाया। नीलध्वजने इस नगरमें राजधानी स्थापन कर "कामेश्वर" उपाधि ग्रहणपूर्वक अपनेको "[illegible]" नामसे प्रचारित किया था।

नीलध्वजके पीछे उनके पुत्र चक्रध्वज और चक्रध्वजके पीछे उनके पुत्र नीलाम्बर राजा हुये। नीलाम्बरने भी घोड़ाघाटके गढ़ और अनेक कीर्तिको स्थापन किया। एकबार नीलाम्बरराजके मन्त्रिपुत्र राजरानी पर आसक्त हुये। राजाने उन्हें मार और उसका मांस पका मन्त्रीको खिलाया था। मन्त्रीने यह जानने पर [illegible] दुःखकष्ट देनेका और राज्य विध्वंस करनेका [illegible]। [illegible] राज्यभक्ति परित्याग पूर्वक गौड़के बादशाहको आक्रमणार्थ बुला लिया। फिर [illegible] हुसेन शाह [illegible] राजधानी [illegible]। [illegible] बड़ी सेना ले कामतापुरका घेरा डाला। और कुछ दिनों भी कामतेश्वर पराजित न हुये। [illegible] बैठ गये। अवरोध १२ वर्ष चलता रहा। मुसलमानोंने इस दीर्घकालके मध्य नगरके बाहरमें अनेक बाग बगीचा आदि लगाकर बहुत अट्टालिका और पुष्करिणी तक बना ली थीं। अन्तिममें उन्होंने कौशल अवलम्बन किया था। राजाको यह सम्वाद भेजा गया—मुसलमान अवरोध छोड़ चले जायेंगे, किन्तु जानेसे पहले मुसलमानोंकी रमणियां रानीसे साक्षात् करना चाहती हैं। नीलाम्बर इस प्रस्ताव पर सम्मत हुये। किन्तु मुसलमानोंने डोलियोंमें स्त्रियोंके बदले सशस्त्र योद्धा बैठा दिये। इन्होंने भीतर पहुंच नगर अधिकार किया और राजाको बांध लिया। किंवदन्तीके अनुसार उसी राजा गौड़को [illegible] और किसीके कथनानुसार वह मार डाले गये। फिर कोई कहता है कि राजा भाग कहीं चले गये। अन्ततः नगर मुसलमानोंने अधिकार किया। १४[illegible] शकको कामतापुरमें मुसलमानोंका अधिकार हुआ था। आज यहां नगर भग्नस्तूप मात्रमें परिणत है, जिसे ४०० वर्ष पूर्व एकबार मुसलमानोंका [illegible] ध्वंस नष्ट किया। [illegible] है।

"[illegible]" नामक [illegible] ग्रन्थमें लिखा है,—कामतापुरमें दुर्लभनारायण नामक एक राजा थे। उनके साथ गौड़राज धर्मनारायणका एक भीषण युद्ध हुआ। दुर्लभनारायणको कोई कोई कामरूपके राजा धर्मपालका और कोई [illegible]का वंशीय बताते हैं। अन्ततः युद्धमें अनेक लोग मारे गये। फिर दोनों राजाओंने रातको स्वप्न देख दूसरे दिन मध्यस्थ-स्थापन-पूर्वक सन्धि कर ली।

* नीलध्वजने सम्भवतः [illegible] ई० के मध्य कामतापुर स्थापन किया था। किन्तु किसी किसीके अनुमानमें कामतापुर नामक एक बड़ा नगर पहले ही था। नीलध्वजने उसी नगरका विस्तार बढ़ाया और दुर्गादि बनवा [illegible] राजधानी बदल दी। [illegible] ई० में भी इस नगरका नामोल्लेख मिलता है।

उसके पीछे गौड़ेश्वरने कामरूपको अपना देय राजा दुर्लभनारायणके पास सात ब्राह्मण और सात कायस्थ भेजे थे। उन्हीं चौदह मनुष्योंमें प्रधान १२ आदमियोंको राजा दुर्लभनारायणने "बारभूँया" आख्या दी। अपरापर देखो। बारभूँया ही सम्भवतः गौड़ेश्वरके सेनापति थे। दुर्लभनारायणने उनके साहाय्यसे भोट राज्यका विद्रोह दबाया था। कालक्रममें कामरूपके मध्य कोचजातिकी संख्या और प्रभाव बढ़नेसे राजा दुर्लभ नारायण कुछ कोमल हो गये। फिर आदि भूयाँओंके मरनेसे वह अधिक उत्पीड़ित हुये। कुछ दिन पीछे कोचोंके मध्य हाजो नामक किसी सरदारको प्राधान्य मिला। वह क्रमश: अपना अधिकार बढ़ाने लगा। और अवशेषमें घोड़ाघाटको छोड़ आसाम प्रदेशका राजा बन बैठा। इसके हीरा और जीरा दो कन्या भिन्न अन्य कोई सन्तान न थी। दोनों कन्याओंके अविवाहितावस्थामें अति अल्प दिनके आगे पीछे दो सन्तान हुये। जीराके सन्तानका नाम शिशु और हीराके सन्तानका नाम विशु था। हाजोराजकुमारी कन्याओंके पुत्र होनेसे बड़े चिन्तान्वित हुये। उसी समय देवताको सुन पड़ी थी—यह दोनों पुत्र देवदेव महादेवके औरससे उत्पन्न हुये हैं। किसी किसीके कथनानुसार हरिया नामक किसी मेच जातीय सरदारसे हीराका विवाह हुआ था, किन्तु उसके औरससे सन्तान नहीं। अन्तको यह दोनों सन्तान विशेष पराक्रमी हुये। इन्होंने अपना नाम "विश्वसिंह" और "शिवसिंह" रखा तथा अपनेको शिववंशीय एवं अपने पीछे कोचोंको "राजवंशीय" बता प्रचार किया। क्रमश विश्वसिंह नाना देश (गुरुओंके मतमें १४२०से ३० शकके मध्य) कामतापुर अधिकार कर राजा हुये और श्रीहट्टसे वैदिक ब्राह्मण ला "कामरूपी ब्राह्मण" आख्या दे अपने राज्यमें बसा दिये। इन्होंने वीरवर बहुत समय लुप्तप्राय कामाख्यापीठका उद्धार किया था।

कामतापुर कितने दिनका है? गुरुओंके मतसे राजा नीलध्वज कामतापुरके स्थापयिता नहीं, संस्कार कर्ता और राजधानीकर्ता मात्र थे। उनके अनुसार राजा नीलध्वजने १३५०—९० शकको (१४२८—६८ ई०) यहां राजधानी स्थापित की। उस अब्दको छोड़ते १४२० शकमें (१४९८ ई०) हुसेन शाहने कामतापुर अधिकार किया था। १२ वर्ष अवरोधके पीछे नगर अधिकृत हुआ। सुतरां १४०८ शकको (१४८६ ई०) हुसेन शाहने प्रथम नगर पर आक्रमण किया। उस समय नीलध्वजके पौत्र नीलाम्बर कामतापुरके सिंहासन पर अधिष्ठित थे। सुतरां नीलध्वजके समयसे नीलाम्बरके राज्यकाल समाप्तिके मध्य प्राय: १३०। १६० वर्ष व्यतीत हुये। फिर नीलध्वजवंशीय राजाओंने प्रत्येक न्यूनाधिक ५५ वर्ष राजत्व किया। पूर्व-भारतके इतिहास-लेखक मिष्टर मण्टगोमारी मार्टिन साहबने इस सम्बन्धमें जो कालसंख्या निर्देश की है, उसके साथ इसका मेल नहीं। उनके कथनानुसार १४९५ ई०को (१४१८ शक) हुसेन शाहने और १५२१ ई० को (१४४३ शक) अव्यवहित परवर्ती गौड़राज नसरत शाहने राज्यारोहण किया था। सुतरां हुसेन शाहका राजत्वकाल २० वर्ष रहता है। २० वर्षसे नगरावरोधके १२ वर्ष (मार्टिन साहब इसे नहीं मानते। वह इस बातको अतिरंजित समझ छोड़ देना चाहते हैं। फिर वह स्वयं भी अवरोधकालकी कोई संख्या नहीं बताते।) निकाल डालने पर १५ वर्ष बचते हैं। फिर विश्वसिंहके कामतापुरका अधिकारकाल गुरुओंके मतमें १४२० और १४३० शकके (१४९८ और १५०८ ई०) मध्य था। मिष्टर मार्टिनने विश्वसिंहके कामतापुर अधिकार की कोई बात नहीं लिखी। उक्त कालसंख्याके अनुसार हुसेन शाहने अपने राज्यारोहणके कालसे (मार्टिनके मतमें १४९५ई० या १४१८ शक) प्राय ७० वर्ष पीछे (गुरुओंके मतमें १४०८ शक या १४८० ई०) कामतापुर पर आक्रमण किया था। किन्तु मार्टिनके मतसे उनके राजत्वकालका परिमाण केवल २० वर्ष था। फिर गुरुओंके मतसे कामतापुरका आक्रमण-काल १४०८ शक या १४८६ ई० रहा। किन्तु मार्टिनके मतसे उस समय (१४९९+१२) १५११ ई० (१४३३ शक) था उससे दो-चार वर्ष पूर्व था। कारण गुरुओंके मतसे विश्वसिंहने कामतापुरका

अधिकारकाल विवेचना करनेसे समझ पड़ता है कि कुछ दिन कामतापुरमें मुसलमानोंका अधिकार रहा।

कामतापुर नामका कारण क्या है? बुरुञ्जीके मतसे नीलध्वज इसके स्थापयिता नहीं। किन्तु उनके द्वारा संस्कृत होनेसे इसका प्राचीन नाम मौजूद रहा। क्योंकि बुरुञ्जी पढ़नेसे १२२० शकमें भी इसका नाम मिलता है। किन्तु इसके मूल स्थापयिताका नाम बुरुञ्जीमें नहीं लिखा है। इस नगरमें शिङ्गीमारीके तीरवर्ती गोसाईंनीमारी नामक स्थानपर कामतेश्वरी देवी हैं। अनेकोंके मतानुसार इन्हीं देवीके नाम पर नगरका नामकरण हुवा है। कामतापुरके दुर्गमें भग्नावशेषके विवरणस्थल पर कामतेश्वरी देवीका उल्लेख किया गया है। दुर्गमें उत्तरांशके वृहत् स्तूप पर इनके प्राचीन मन्दिरका भग्नावशेष है। इन देवीके सम्बन्धमें एक प्रवाद है,—"प्राग्ज्योतिष्याधिपति भगदत्तको शिवके वरसे एक कवच मिला था। महाभारतके युद्धमें भगदत्तके मरने पर यह कवच हस्तिनापुरमें ही रहा। शेषको उक्त नीलध्वजके पुत्र चक्रध्वजने एक दिन स्वप्नमें देख और स्वप्ननिर्दिष्ट उपायसे कवच आहरण कर दुर्गके मध्य मन्दिर निर्माण पूर्वक स्थापन किया। उन्हें स्वप्नमें ही कवचकी पूजा-पद्धति और अधिष्ठात्री देवीकी मूर्ति अवगत हुयी थी। उन्होंने उसीके अनुसार देवीकी प्रतिमा बनवा उसके मध्य कवच रख दिया। पहले इसके निकट वह्नि होता था। अवशेषको मुसलमानोंके हाथ देवीकी प्रतिमा विनष्ट होने पर कवच एक पुष्करिणीमें छिप गया। उसके पीछे विश्वसिंह-वंशीय विहारके चतुर्थ राजा प्राणनारायणके अधिकारकालमें भूना नामक एक धीवरने उस स्थान पर एक पुष्करिणीमें मत्स्य पकड़नेको जाल डाला, जहां शिङ्गीमारी नदीने नगरमें प्रवेश किया है। किन्तु वह जाल इतना भारी समझ पड़ा कि किसी प्रकार उठ न सका। अवशेषको धीवरने राजाके निकट सम्वाद भेजा। राजा प्राणनारायण कवचका व्यापार जानते और उसके लिये उत्सुक भी थे। उक्त सम्वाद सुन वह उल्लसित हुये। उन्होंने ब्राह्मणोंसे परामर्श कर हाथी पर चढ़ा एक ब्राह्मण भेजा था। ब्राह्मणको वहां जाने पर छूवको लगानेसे जालमें कवच मिल गया। उन्होंने हस्तस्थित एक रेशमी थैलीमें डाल उसे हाथीकी पीठ पर रखा और हाथीको उसकी इच्छाके अनुसार चलने दिया। हाथी शिङ्गीमारीके तीरसे जाने लगा। अवशेषको जहां नदीने प्राचीन नगरकी सीमाको छोड़ा है, उसीके निकट गोसाईंनीमारी नामक स्थान पर वह खड़ा हो गया; फिर किसी प्रकार वहांसे न हटा। ब्राह्मणोंने स्थिर किया कि देवी वहांसे जाना चाहती न थीं। इसीसे राजाने वहां मन्दिर बनवा दिया। प्रथमतः विश्वसिंहके आनीत वैदिक ब्राह्मणोंमें एक पूजक नियुक्त हुवा था। किन्तु देवीने स्वप्नमें मैथिली ब्राह्मणोंके मध्य पूजक नियुक्त करनेकी आदेश दिया। कारण वही पहले देवीकी पूजा करते थे। इसी प्रकार एक मैथिली ब्राह्मण पूजक बनाये गये। कुछ दिन बीतने पर उन्होंने राजासे कहा—'देवीके आदेशसे हमें प्रत्यह रात्रिको मन्दिरमें चक्षु बांधकर जाना पड़ता है। हम वहां तबला बजाते हैं। देवी एक सुन्दरीके वेशमें नग्न होकर ताल ताल पर नाचती हैं। किन्तु देवीके निषेधसे हमने उन्हें कभी इस प्रकार आंखसे नहीं देखा।' यह बात सुन राजाको कौतूहल उत्पन्न हुवा। वह उसी रात्रिको मन्दिर जा दरवाजेकी सांससे झांकने लगे। देवी अन्तर्यामिनी हैं। उन्होंने राजाको देखते ही नृत्य बन्द कर शाप दिया,—अतःपर यदि वर्तमान नारायणवंशीय कोई राजा किसी दिन या रातको मन्दिरकी सीमामें आयेगा, तो उसी समय वह मर जायेगा। उस दिनसे आज तक उनके वंशीय मन्दिरकी सीमाके मध्य प्रवेश नहीं करते। किन्तु सेवाका प्रबन्ध लगा दिया जाता है। यह मन्दिर आज भी बना है। मन्दिर इष्टकनिर्मित है। गठनप्रणाली मुसलमानी चालकी है। मन्दिरकी चारो ओर पुष्पोद्यान है। प्रतिमा नूतन है। निर्मित प्रतिमाके गर्भमें उक्त कवच रखा है। मन्दिरके मध्य एक प्रस्तरफलक पर वासुदेवकी मूर्ति उत्कीर्ण है। कथनानुसार यह प्रस्तरखण्ड प्राचीन नगरके भग्नावशेषसे मिलता है। प्रवादानुसार अर्घ पाने पर पूजक

यात्रियोंको प्रतिमाके गर्भसे कवच निकाल कर दिखा देते हैं। किन्तु यह कार्य बहुत छिप कर किया जाता है।

कामतापुरके ध्वंसावशेषमें पाजकल कृष्णाचार्य भानुबक्षा आवास बना है।

यारेन भवकारोंमें भी कामतापुरका उल्लेख है। मार्टिन साहब मालदहसे हस्तलिखित एक प्राचीन पुस्तक लाये थे। उसमें वंशदेशका विवरण लिखा है। उसके लेखानुसार मसरत शाहके अव्यवहित पूर्ववर्ती पुरेन शाहने कामतापुरेश्वर चरणनारायणको मार उनका राज्य लीला। चरणनारायण सदा चम्पोमान् राजके पौत्र और माणिक्यचन्द्रराजके पुत्र थे।

कामताल (सं॰ पु॰) कामं तालयति प्रतिष्ठापयति, काम तल् णिच्-अच्। कोकिल, कोयल।

कामतिथि (सं॰ स्त्री॰) कामस्य पूजार्थं प्रशस्ता तिथिः, मध्यपदलो॰। त्रयोदशी तिथि। इसी तिथिको कामदेवकी पूजा करते हैं।

कामद (सं॰ त्रि॰) कामं अभिलाषं ददाति, काम दा-क। १ कामदाता, मुराद पूरी करनेवाला। (पु॰) कामं ग्रति भक्तेभ्यस्तेन अवखण्डयति काम रैतस्मात् नाशयति वा, काम दो-क। २ कार्तिकेय।

कामदगिरि (सं॰ पु॰) चित्रकूट पर्वत। चित्रकूट देखो।

कामदमणि (सं॰ पु॰) चिन्तामणि।

कामदमिनी (सं॰ स्त्री॰) कामस्य दमः उपशम अस्त्यस्याः, काम दम-इनि। कामरिपुको वशीभूत करनेवाली स्त्री, जो औरत अपनी ख्वाहिश दबा चुकी हो।

कामदर्शन (सं॰ त्रि॰) कामं मनोज्ञं दर्शनं यस्य, बहुव्री॰। सुन्दर, खूबसूरत।

कामदहन (सं॰ पु॰) शिव।

कामदा (सं॰ स्त्री॰) काम अभीष्टं ददाति, काम दा क-टाप्। १ कामधेनु। २ नागवल्ली लता, पान। ३ कपोतकी, कर। ४ एक देवी। महिरावण इन्हें पूजता था। ५ छन्दो विशेष। इसमें दश अक्षर रहते और क्रमानुसार रगण यगण तथा जगण लगते हैं।

कामदानी (हिं॰ स्त्री॰) १ कृत्रिम पुष्पादि, बेलबूटा। यह बादलेके तार या सलमेसितारेसे बनती है। २ कामदानीका एक कपड़ा। इसपर सलमेसितारेके बूटे निकाले जाते हैं।

कामदार (हिं॰ पु॰) १ राज्यप्रबन्धकारी, रियासतका इन्तिज़ाम करनेवाला। राजपूताने और मालवेके राज्योंमें कामदार रहते हैं। (वि॰) कलाबत्तूके बेल बूटोंवाला।

कामदीपकरस (सं॰ पु॰) वाजीकरणका एक औषध वाजीकरणकी औषध रस। श्वेतपुनर्नवाका मूल, शोध रस पारा और गन्धक बराबर माशकीको लाक्षाके रसमें मिलाकर गोली बांधनेसे यह प्रस्तुत होता है। इसका नाम कामाग्निसन्दीपन है। एक गोली दो पल दूधके साथ खानेसे बहुत बलवीर्य बढ़ता है। (रसरत्नाकर)

कामदुघ (सं॰ त्रि॰) कामं दोग्धि, काम-दुह क घत्व च। अभीष्टसम्पादक मुराद पूरी करनेवाला।

कामदुघा (सं॰ स्त्री॰) काम-दुह टाप्। कामधेनु।

कामधेनु देखो।

कामदुह (सं॰ त्रि॰) काम-दुह क्विप्। अभीष्टप्रद ख्वाहिश पूरी करनेवाला।

कामदुहा, कामदुघा देखो।

कामदूता (सं॰ स्त्री॰) नागदन्तिका।

कामदूति, कामदूती देखो।

कामदूतिका (सं॰ स्त्री॰) कामस्य दूतिका इव उद्दीपकत्वात्। नागदन्ती, हाथीसुंड।

कामदूती (सं॰ स्त्री॰) कामस्य दूतीव, उपमित समा॰। १ नागदन्तिका। २ पाटलावृक्ष, पाढ़लका पेड़। ३ कोकिला, कोयल।

कामदेव (सं॰ पु॰) काम एव देवः। १ कन्दर्प। इसका संस्कृत नामान्तर—मदन, मन्मथ, मार, प्रद्युम्न, मीनकेतन, कन्दर्प, दर्पक, अनङ्ग, पञ्चशर, स्मर, शम्बरारि, मनसिज, कुसुमेषु अनन्यज, पुष्पधन्वा रतिपति मकरध्वज आत्मभू, झषध्वज और विश्वकेतु है। शास्त्रकार कामदेवके पचास भेद बताते हैं,—१ काम, २ कामद ३ कान्त, ४ कान्तिमान् ५ कामग, ६ कामचर, ७ कामी, ८ कामुक ९ कामवर्धन,

१० राम, ११ रम, १२ रमण, १३ रतिनाथ, १४ रतिप्रिय, १५ रात्रिनाथ, १६ रमाकान्त, १७ रममाण, १८ निशाचर, १९ नन्दक, २० नन्दन, २१ नन्दी, २२ नन्दयिता, २३ पञ्चवाण, २४ रतिसख, २५ पुष्पधन्वा, २६ महाधनु, २७ भ्रामक, २८ भ्रमण, २९ भ्रममाण, ३० भ्रम, ३१ भ्रान्त, ३२ भ्रामक, ३३ भृङ्ग, ३४ भ्रान्तचार, ३५ भ्रमावह, ३६ मोहन, ३७ मोहक, ३८ मोह, ३९ मोहवर्धन, ४० मदन, ४१ मन्मथ, ४२ मातङ्ग, ४३ भृङ्गनायक, ४४ गायन, ४५ गीतिज, ४६ नर्तक, ४७ खेलक, ४८ उन्मत्तोन्मत्तक, ४९ विलास और ५० लोभवर्धन।

निम्नलिखित कई स्थान कन्दर्पके माने गये हैं,—

"पादे गुल्फे तथोरौ च भगे नाभौ कुचे हृदि।
कक्षे कण्ठे च ओष्ठे च गण्डे नेत्रे श्रुतावपि॥
ललाटे शीर्षकेशेषु कामस्थानं तिथिक्रमात्।
दक्षे पुंसां स्त्रिया वामे शुक्लकृष्णे विपर्ययः॥
पादाङ्गुष्ठे प्रतिपदि द्वितीयायाञ्च गुल्फके।
ऊरुदेशे तृतीयायां चतुर्थ्यां भगदेशतः॥
नाभिस्थाने च पञ्चम्यां षष्ठ्यान्तु कुचमण्डले।
सप्तम्यां हृदये चैव अष्टम्यां कक्षदेशतः॥
नवम्यां कण्ठदेशे च दशम्यां ओष्ठदेशतः।
एकादश्यां गण्डदेशे द्वादश्यां नयने तथा॥
श्रवणे च त्रयोदश्यां चतुर्दश्यां ललाटके।
पौर्णमास्यां शिखायाञ्च ज्ञातव्यञ्च इति क्रमात्॥"

(शारदीपिका)

पदद्वय, गुल्फद्वय, ऊरुद्वय, भग, नाभि, कुचद्वय, हृदय, कक्ष, कण्ठ, ओष्ठ, गण्ड, चक्षु, कर्ण, ललाट, मस्तक और केशमें तिथिके अनुसार कामदेवका अधिष्ठान होता है। शुक्लपक्षमें पुरुषके दक्षिण अङ्ग एवं स्त्रीके वाम अङ्ग और कृष्णपक्षमें पुरुषके वाम अङ्ग तथा स्त्रीके दक्षिण अङ्गके क्रमानुसार उक्त स्थान समूहका विपर्यय पड़ता है। प्रतिपद् तिथिको पदके अङ्गुष्ठ, द्वितीयाको गुल्फ, तृतीयाको ऊरुदेश, चतुर्थीको भग, पञ्चमीको नाभि, षष्ठीको कुचमण्डल, सप्तमीको हृदय, अष्टमीको कक्ष, नवमीको कण्ठ, दशमीको ओष्ठ, एकादशीको गण्ड, द्वादशीको चक्षु, त्रयोदशीको कर्ण, चतुर्दशीको ललाट और पूर्णिमाको मस्तकमें कामदेव रहता हैं।

कामदेवको ध्येयमूर्ति इस प्रकार कही है,—

"कामदेवस्तु कर्तव्यः शङ्खपद्मविभूषणः।
चापबाणकरश्चैव मदाकुञ्चितलोचनः॥
रतिः प्रीतिस्तथा शक्तिर्भार्या चोज्ज्वला तथा।
चतस्रस्तस्य कर्तव्याः पत्न्यो रूपमनोहराः॥
चत्वारश्च करास्तस्य कार्या भार्यास्तनोदमाः।
केतुश्च मकरः कार्यः पञ्चबाणमुखो महान्॥"

(हेमाद्रिधृत विष्णुधर्मोत्तर)

कामदेव शङ्ख, पद्म, धनुः और वाण धारण करते हैं। मदके कारण चक्षु ईषत् कुञ्चित है। केतु मकर है। पञ्च बाण हैं। रति, प्रीति, शक्ति और उज्ज्वला नाम्नी चार स्त्री हैं।

वेदमें कामको उत्पत्तिके सम्बन्धमें कहा है,—

"कामो जज्ञे प्रथमो नैनं देवा आपुः।" (ऋक् १०।१२९।४)

सर्वप्रथम मनके ऊपर कामका आविर्भाव आता है। सुतरां उसीसे पहले उत्पत्तिका कारण निकला है।

कालिकापुराणमें भी लिखा है,—

ब्रह्माने दक्ष प्रभृति मानस पुत्रोंकी सृष्टि की थी। उसी समय सन्ध्या नाम्नी एक रूपवती कन्याभी उत्पन्न हुयी। उस मनोरम कन्याको देख ब्रह्माके हृदयमें चिन्ता उठी—'यह जगत्‌का कौन कार्य करेगी।' इसीसे परम रमणीय मूर्ति कामदेवका जन्म हुवा। ब्रह्माने उन्हें जगत्‌के नरनारीसमूहको मुग्ध करनेके लिये आदेश दे पुष्पधनुः और पुष्पशर प्रदान किया। कामदेवने यह देखना चाहा कि उस पुष्पवाण द्वारा कार्य सिद्धि होगी या नहीं। इसीसे उन्होंने परीक्षाके लिये समीपस्थ ब्रह्मा, दक्षादि ऋषि और सन्ध्या पर वाणाघात किया। उससे सकल कामपीड़ित हो गये। उसी समय महादेव वहां जा पहुंचे। उन्होंने कन्याके प्रति ब्रह्माका कामभाव देख उपहास किया था। ब्रह्माने उस उपहाससे अत्यन्त लज्जित हो कामका वेग रोका। फिर उन्होंने कामको अत्यन्त क्रुद्ध हो अभिशाप दिया था—तू हरके कोपानलसे जल जावेगा। कामदेवने अकारण इस प्रकार अभिशप्त हो ब्रह्मासे अनुग्रहकी प्रार्थना की। उस समय ब्रह्माने भी कामदेवका वैसा अपराध न देख यह कह कर आश्वस्त

दिया कि वह फिर शरीर पावेगा और दक्षकी देह-जात रति नामकी सुन्दरी रमणीको कामदेवकी पत्नी बना दिया। (कालिकापुराण १४)

इधर सन्ध्या यह सोच अत्यन्त दुःखित हुयीं कि पिता तथा भ्राता उन्हें चाहते थे और अपना दूषित देह छोड़नेको तपस्या करने लगीं। कठोर तपस्यासे प्रीत हो भगवान्‌ने उनसे वर मांगनेको कहा। सन्ध्याने प्रथमतः अन्य कोई वर न मांग यही चाहा था कि प्राणी उपजते ही सकाम न हों। भगवान्‌ने उनकी इस प्रार्थनाके अनुसार शैशव, कौमार, यौवन एवं वार्धक्य चार भागमें वयःक्रम बांट तृतीय भाग अर्थात् यौवनको कामोत्पत्तिके कालरूपमें निर्देश किया और कौमारका शेष समय भी उसीके भीतर बना दिया। (कालिकापुराण १८ अ) इसीसे प्राणियोंके उत्पन्न होते ही कामभाव प्रकाशित नहीं होता।

देव तारकासुरके उत्पीड़नसे अत्यन्त व्यतिव्यस्त हुये थे। उसी समय इन्द्रके आदेशसे कामदेवको शिवका ध्यान भङ्ग करने जाना और कुछ दिनके लिये अङ्गहीन होना पड़ा। शिवपुराणमें इसकी आख्या-यिका इस प्रकार वर्णित है—"महादेवकी सतीने दक्षके यज्ञमें देह छोड़ा था। उसके पीछे महादेव कठोर जितेन्द्रियता अवलम्बनपूर्वक महायोगमें निमग्न हुये। उसी समय तारकासुरने देवगणके प्रति अत्यन्त उत्पीड़न आरम्भ किया। देव व्यतिव्यस्त हो उससे बचावका उपाय सोचने लगे। इन्द्रादि देवगणने स्वयं कोई उपाय निश्चय न कर सकने पर ब्रह्मासे परामर्श मांगा था। ब्रह्माने उनसे कहा—'महादेवके वीर्य व्यतीत तारकासुरका निधन न होगा। महेश्वरी सती हिमालयके घरमें पुनर्जन्म ले महादेव-की शुश्रूषाको सर्वदा उनके निकट रहती हैं। इस समय महादेवका योग तोड़ उनको पार्वतीके प्रति अभिलाषी कर सकने पर महादेवके औरससे महावीर कुमार जन्मग्रहण कर तारकासुरका निधनसाधन करेंगे। देवगणने उसी परामर्शके अनुसार कामदेवको महादेवका ध्यान छुड़ाने पर नियुक्त किया था। आज्ञा पाते ही कामदेव रति एवं वसन्तके साथ अभियान पूर्वक महादेवका योग तोड़ने पहुंचे और पुष्पधनुः पर पुष्पबाण चढ़ा महादेवको लक्ष्यकर फेंकने लगे। महादेवने कन्दर्पबाणसे आहत होते ही क्रोधके साथ उन पर अपनी दृष्टि डाली थी। फिर महादेवके ललाटसे प्रदीप्त अग्निशिखाने निकल कन्दर्पमूर्तिको बिलकुल जला दिया।" दूसरे जन्ममें कामदेव ही श्रीकृष्णके पुत्र प्रद्युम्नरूपसे आविर्भूत हुये। हरिवंशमें कामदेवके जन्मका विवरण इस प्रकार वर्णित है—"श्रीकृष्णके औरस और रुक्मिणीके गर्भसे प्रद्युम्नका जन्म हुआ था। जन्मके पीछे सातवीं रातको शम्बरासुरने मायाके बल उन्हें सूतिकागृहसे हरण कर अपनी पत्नी मायावतीको दे दिया। मायावतीके कोई शिशु न था। वह प्रद्युम्नको पा कर अत्यन्त आह्लादित हुयीं। फिर शिशुके अङ्गप्रत्यङ्ग आदि विविध रूपसे लक्ष्य कर मायावतीने समझा कि यही शिशु उनका प्रियतम स्वामी कन्दर्प था। उनको यह भी स्मरण आया कि हरके कोपानलसे जलनेके पीछे देवगणने देहसे ही उन्हें पुनर्वार पतिको प्राप्तिका विषय बतला दिया था। सुतरां वह मातृवत् शिशुका पालन न कर सकीं। क्योंकि कामोके भाव उसे होता था। फिर रसायन आदिके प्रयोगसे सत्वर वर्धित कर मायावती उससे मिल गयीं। प्रद्युम्न भी केवल अपने शम्बरासुरको मार पत्नीके साथ पितृपुर लौट आये। कहनेको शम्बरासुरकी पत्नी होते भी वस्तुतः मायावती उसकी पत्नी न रहीं। कन्दर्पकी पत्नी रति पुनर्वार पतिप्राप्तिकी कामनासे देवगणके आदेशानुसार मायारूपसे शम्बरासुरकी पत्नी बन कर रहती थीं।" (हरिवंश १६१ अ)

महाभारत और विष्णुपुराणमें कामदेव धर्मके पुत्र माने गये हैं,—

"श्रद्धा कामं चला दर्पं नियमं धृतिरात्मजम्।
सन्तोषं तथा तुष्टिर्वै पुष्टिर्लोभं ...॥
मेधा श्रुतं क्रिया दण्डं नयं विनयमेव च।
बोधं बुद्धिस्तथा लज्जा विनयं वपुरात्मजम्॥
व्यवसायं प्रजज्ञे वै क्षेमं शान्तिरसूयत।
सुखं सिद्धिर्यशः कीर्तिरित्येते धर्मसूनवः॥"

(हरिवंश, [illegible]११।२४)

वैदिक धर्मपत्नियोंके गर्भ श्रद्धाने काम, चलाने दर्प,

धृतिने नियम, तुष्टिने सन्तोष, पुष्टिने लोभ, मेधाने स्मृत, क्रियाने दण्ड, नय एवं विनय, वपुने व्यवसाय, शान्तिने क्षम, सिद्धिने सुख और कीर्तिने यशः नामक पुत्र प्रसव किया। यह सभी धर्मके पुत्र कहलाते हैं।

भागवतके मतसे कामदेव ब्रह्माके पुत्र हैं,—

"हृदि कामो भ्रुवः क्रोधो लोभश्चाधरदच्छदात्।"

ब्रह्माके हृदयसे काम, भ्रूद्वयसे क्रोध और अधरोष्ठसे लोभकी उत्पत्ति हुयी है।

भागवतके ही अन्यस्थलमें फिर कामदेवको सङ्कल्पका पुत्र कहा है,—

"सङ्कल्पायाश्च सङ्कल्पः कामः सङ्कल्पजः स्मृतः।" (भागवत ६।६।१०)

ब्रह्माकी कन्या सङ्कल्पाके पुत्र सङ्कल्प हैं। सङ्कल्पसे ही कामकी उत्पत्ति हुयी है।

यजुर्वेदमें भी कामका उल्लेख मिलता है। उसमें कामको ही दाता और ग्रहीता माना है,—

"कोऽदात् कस्मा अदात् कामोऽदात् कामायादात्।
कामो दाता कामः प्रतिग्रहीता कामैतत्ते॥" (शुक्लयजु ७।४८)

यह प्रश्न होने पर कि—किसने दान किया और किसको दान दिया है, उत्तर होगा कि कामने दान किया और कामको ही दान दिया है। क्योंकि काम ही दाता और काम ही प्रतिग्रहीता है। अतएव हे काम! यह द्रव्य तुम्हारा ही है।

२ गोपकपुरीके एक राजा कदम्बराज। इनकी महिषीका नाम कमलादेवी था। यह विख्यात वीर थे। इन्होंने बाहुके बल मलय, कोङ्कण और सह्याद्रि जीता था। शिलालेखके अनुसार कामदेवने ११८१ ई० से १२०४ ई० तक राजत्व किया। ३ भट्टनारायणके पुत्र। भट्टनारायण देखो। ४ परमेश्वर। ५ महादेव। ६ कोई कवि। ७ कोई राजा। इनकी राजधानी जयन्तीपुरमें थी। यह "राघवपाण्डवीय" प्रणेता कविराज नामक कविके प्रतिपालक थे। ८ प्रायश्चित्त-पद्धति नामक स्मृतिग्रन्थके प्रणेता।

९ "मतृकुल्यमुक्तावली" प्रणेता रघुनाथके प्रतिपालक।

१० "चतुर्वर्गचिन्तामणि" प्रणेता हेमाद्रिके पिता। इनके पिताका नाम वासुदेव और पितामहका नाम वामन था।

११ कोई प्राचीन ज्योतिर्वित्।

१२ "कर्मप्रदीपिका" "पारस्करपद्धति" "पारस्करगृह्यपरिशिष्टपद्धति" प्रभृति ग्रंथ बनानेवाले। इनके पिताका नाम गोपाल था।

कामदेव कविवल्लभ—चण्डीके एक प्राचीन टीकाकार।

कामदेवघृत (सं० क्लो०) घृतविशेष, एक घी। अश्वगन्धा १०० पल, गोक्षुर ५० पल और शतावरी, भूमिकुष्माण्ड, शालपर्णी, बला, गुलेचीन, अश्वत्थकी शुङ्गा, पद्मबीज, पुनर्नवा, गाम्भारीफल तथा माषबीज प्रत्येक दश दश पल २५६ शरावक जलमें पका कर ६४ शरावक जल शेष रहनेसे उतार कर छान लेना चाहिये। फिर पुण्ड्रकेक्षुरस १६ शरावक, दुग्ध १६ शरावक, और जीवक, ऋषभक, मेदा, महामेदा, काकोली, क्षीरकाकोली, जीवन्ती, मधुक, ऋद्धि, वृद्धि, द्राक्षा, पद्मकाष्ठ, कुठ, पिप्पली रक्तचन्दन, वालक, नागकेशर, शुकशिम्बीबीज, नीलोत्पल, श्यामा तथा अनन्तमूलका कल्क दो-दो तोला एवं शर्करा २ पल उक्त क्वाथमें डाल यह घृत यथारीति पकाते और बनाते हैं। इसको व्यवहार करनेसे रक्तपित्त, क्षत, कामला, वातरक्त, हलीमक, पाण्डु, विवर्णता, स्वरभेद, मूत्रकृच्छ्र, पार्श्वदाह और पार्श्वशूल आदि रोग निवारित होते हैं (चक्रदत्त)

कामदेव मीमांसक (दीक्षित)—'प्रायश्चित्तपद्धतिके प्रणेता।

कामदोही (सं० त्रि०) कामं दोग्धि, काम-दुह-णिनि। अभीष्टप्रद, मुराद पूरी करनेवाला।

कामधर (सं० पु०) काम इति संज्ञां धरति धारयति वा, काम-धृ-अच्। कामरूपदेशीय मत्स्यध्वज नामक पर्वतस्थित सरोवरविशेष, एक तालाब। यह सरोवर एक तीर्थ माना गया है। इसमें स्नान और जलपान करने पर समुदाय पापसे छूट मुक्ति पाते और शिवलोक जाते हैं। (कालिकापुराण)

कामधरण (सं० क्लो०) अभिलाषप्राप्ति, मुरादका उसूल।

कामधेनु (सं०स्त्री०) कामप्रतिपादिका धेनुः,

अष्टपदस्तोपो मर्मदा०। गो विशेष, एक गाय। इस गायसे इच्छानुसार जो वस्तु मांगते, वही पाते हैं।

अग्निपुराणमें कामधेनुका दान महापुण्य माना गया है। दानविधि पर भी उसमें इस प्रकार लिखा है—'कार्तिक मासको शुक्ल पञ्चदशीको उपवास कर चार दिन तक अक्षोंके साथ नारायणको पूजा करना पड़ती है। फिर पञ्चम दिन प्रातःकाल स्नानकर शुक्ल वस्त्र, शुक्ल माल्य और शुक्ल अनुलेपन धारण करते हैं। दानको भूमिको गवके चर्म, तिलके भस्म और स्वर्ण आदिसे यथा सम्भव कामधेनु बनाई जाती है। धेनुके शृङ्ग और खुर स्वर्णसे मढ़ा समस्त गात्रमें शुक्ल वस्त्र लपेट देते हैं। अनन्तर यथाविधि मन्त्रादिसे गायको पूज नारायणके उद्देश दान होता है।'

२ दानके लिये स्वर्णनिर्मित धेनुविशेष, देनेको सोनेकी गाय।

दान-सागरमें स्वर्णनिर्मित कामधेनुके दानका विधि लिखा है,—'शक्तिके अनुसार तीन पलसे अधिक सहस्रपल तक स्वर्ण द्वारा उसको कामधेनु बना उसे विभूषित करना चाहिये। सहस्र पल उत्तम, पांच सौ पल मध्यम और ढाई सौ पल सुवर्ण अधम विधि है। असमर्थ व्यक्तिके लिये तीन पलसे अधिक सुवर्णका भी विधान है। तुलादानवत् कथित समयके मध्य किसी दिन दानका काल निर्दिष्ट कर उससे पूर्व दिन गुरु, पुरोहित, यजमान और याजक चारो लोग हविष्य-भोजनादि कर नियम पूर्व संयम कर रहते हैं। दूसरे दिन यजमानको लोकेशादिकी आराधना, मधुपर्कका दान और ब्राह्मणोंकी अनुमतिका ग्रहण करना चाहिये। उसी दिन गुरु, पुरोहित और याजकका उपवास करना पड़ता है। उसके परदिन अग्निस्थापनादि कार्य समापनपूर्वक पुरोहित प्रधान वेदीके मध्यस्थलमें विहित चर्म पर कृष्णचर्म एवं गुड़द्रोण यथास्थान स्थापन कर उसके ऊपर कौषेय वस्त्रद्वारा आच्छादित सुवर्णकी धेनुको खड़ा करते हैं। धेनुके पार्श्वदेशमें आठ पूर्ण कुम्भ, अठारह प्रकार धान्य, नानाविध फल, इक्षु, इक्षुदण्ड, कांस्यपात्र, पट्टवस्त्र, ताम्रनिर्मित दोहनपात्र, प्रदीप, आतपत्र तथा पादुकाद्वय और धेनुके सम्मुखभागमें मधु रादि कर रत्न, हरिद्रा, पुष्प आदि विविध पूजा द्रव्य और चन्दन, माल्य एवं चामर रखते हैं। फिर मङ्गलगीत वाद्य तथा स्तुतिपाठके साथ यज्ञकुण्डके समीपस्थ चार कुम्भोंके जल द्वारा यजमानको स्नान कराया जाता है। स्नानके अन्तमें यजमान शुक्ल वस्त्र परिधान कर शुक्ल माल्य एवं विविध अलङ्कारधारणपूर्वक कुशहस्तसे पुष्पाञ्जलि दे कामधेनुको प्रदक्षिणपूर्वक पूज गुरुको प्रदान करता है। परिशेषमें गुरु पुरोहित और याजकको दक्षिणा तथा अतिथि ब्राह्मणोंको अर्थ दे दानका व्रत समापन करना पड़ता है।'

३ स्वर्गधेनु सुरभिकी एक दौहित्री धेनु। इसकी उत्पत्तिका विवरण इस प्रकार लिखा है—'गोसमूह की आदिप्रसूति सुरभि दक्षकी कन्या थीं। प्रजापति कश्यपके औरससे उनके गर्भसे रोहिणीका जन्म हुआ। रोहिणीसे भी तपोनिधि शूरसेन नामक वसुके औरससे सर्वलक्षणसम्पन्ना कामधेनुको प्रसव किया था। कामधेनुका वर्ण श्वेत है। चतुर्वेद चतुष्पदस्वरूप है। चारो स्तनोंसे धर्म, अर्थ काम और मोक्ष निकलता करते हैं। ब्रह्माके वाहन हंसने कामधेनुके गर्भसे जो जन्म लिया था। योगमें कामधेनुको वासवको अधिकतर बढ़ो। इसीसे कोई वासुक वैताल उनको देख कामातुर हुआ और स्वयं हंसको मूर्ति बना उनके साथ भोग किया। इस संगमसे उससे एक विकाल काय हंस निकला था। उसने अपनी तपस्यासे इस महादेवका वाहनत्व लाभ किया।'

(कालिकापुराण ८१ अ०)

४ कामधेनुकी कन्यका नन्दिनी[ना]मक नामकी वशिष्ठकी एक धेनु। कामधेनुके लिये ही वशिष्ठके साथ विश्वामित्रका भयंकर विवाद उठा था। उसी विवादसे अन्तमें विश्वामित्रने क्षत्रिय जाति होते भी ब्रह्मर्षि बननेका लिये उद्योग किया। रामायणमें लिखा है,—'किसी समय राजा विश्वामित्रने बहु सैन्य एवं अमात्य परिवार प्रभृतिके साथ वशिष्ठ ऋषिके निकट आतिथ्य ग्रहण किया था। वशिष्ठने कामधेनुसे अन्नस उत्तमोत्तम प्रचुर द्रव्यादि ले उनका सत्कार उठाया।

विश्वामित्र राजा होते भी उक्त समस्त द्रव्य देख चमत्कृत हुये। उन्होंने देखा कि कामधेनुसे वैसा असाधारण ऐश्वर्य भोग किया जा सकता था। इसीसे विश्वामित्रने शत सहस्र दुग्धवती गायोंके बदले वशिष्ठसे कामधेनु मांगी। किन्तु वशिष्ठने धेनु देना स्वीकार न किया। उस समय विश्वामित्रने हरण करनेके लिये सैन्यको आदेश दिया था। सैन्यने कामधेनुको खोल ले जानेका उद्योग किया। नन्दिनी यह सोच कर अत्यन्त दुःखित हुयीं कि वशिष्ठने उनको छोड़ दिया था। फिर वह अपने बलसे बहु सैन्यको मार वशिष्ठके निकट आ पहुंचीं। उन्होंने वशिष्ठसे पूछा था,—'आपने क्या हमें परित्याग किया है? नतुवा विश्वामित्रके सिपाही हमें क्यों लिये जाते हैं?' वशिष्ठने उत्तर दिया, 'नहीं हमने तुम्हें परित्याग नहीं किया है। तथा फिर हम कभी तुम्हें परित्याग न करेंगे। अतएव तुम शत शत महावीर सैन्य सृष्टि कर विश्वामित्रको पराजित करो।' वशिष्ठकी आज्ञा पाते ही नन्दिनीने योनिदेशसे यवन, पुरीषसे शक और रोमकूपसे म्लेच्छ, हारीत तथा किरात सैन्य निकाले थे। उन्होंने विश्वामित्रको समुदाय सैन्यका विनाश कर पराजित किया। विश्वामित्रके पुत्र इससे बहुत क्रुद्ध हुये और (एकबारगी ही सौ पुत्र) वशिष्ठके ऊपर झपट पड़े। वशिष्ठने क्रोधके साथ एक ही हुङ्कारसे उनको जला डाला। इस अपमानके पीछे विश्वामित्रने राजशक्तिकी अपेक्षा तपस्याकी शक्तिको बड़ा माना था। वह राजकार्य छोड़ कठोर तपस्यामें लग गये। उसी तपस्याके फलसे उन्होंने ब्रह्मर्षिकी भांति क्षमताशाली बन ब्रह्मर्षि नाम पाया था।'

(रामायण, बालका, ५१ स०)

कामधेनुतन्त्र (सं० क्ली०) कामधेनुरिव सर्वाभीष्टप्रदं तन्त्रम्। शिवप्रोक्त एक तन्त्र।

कामधेन्वी—रामात वा निमात सम्प्रदायभुक्त वैष्णव। इनमें अधिकांश भिक्षुक रहते हैं। कामधेनु नामक भिक्षायन्त्र व्यवहार करनेसे ही कामधेन्वी नाम पड़ा। कामधेनुयन्त्र वेंगीकी भांति होता है। उसकी दोनों ओर दो खुंते लगे रहते हैं। एक ओरका तखुता गायके आकारका होता है। दूसरी ओरके तखुतेमें हनूमानकी मूर्ति रहती है। यह लोग सवेरे और शाम दोनों समय उक्त यन्त्रकी पूजा तथा आरती करते हैं। कामधेन्वी कामधेनुयन्त्र कन्धे पर रख भिक्षा मांगने निकलते हैं। यह किसीके द्वार पर खड़े नहीं रहते, 'धनुषधारी राम धनुषधारी राम, कहते राह राह घूमा करते हैं। गृही यह नाम सुन इच्छानुसार कामधेनुपात्रमें भिक्षा डाल देते हैं।

कामध्वंसी (सं० पु०) कामं कन्दर्पं ध्वंसयति, काम-ध्वन्स्-णिच्-णिनि। कामको ध्वंस करनेवाले शिव।

कामध्वज (सं० पु०) मत्स्य, मछली। कामदेवकी पताका मछली है।

कामन (सं० वि०) कामयतीति, कम-णिङ्-युच्। १ कामुक, चाहनेवाला। (क्ली०) भावे युच्। २ अभिलाष, ख्वाहिश।

कामना (सं० स्त्री०) कामन-टाप्। १ इच्छा, ख्वाहिश। २ वन्दाक, वांदा।

कामनाशक (सं० पु०) कामं कन्दर्पं नाशयति, काम-नश्-णिच्-ण्वुल्। १ महादेव। (त्रि०) २ कामशक्तिनाशक।

कामनीड़ा (सं० स्त्री) कस्तूरिका, मुश्क।

कामनीयक (सं० क्ली०) कमनीयस्य भावः, कमनीय-वुञ्। रमणीयता, खूबसूरती।

कामन्दकि (सं० पु०) कमन्दकस्य अपत्यं पुमान्, कमन्दक-इञ्। एक नीतिशास्त्र-प्रणेता। इनके बनाये ग्रन्थका नाम कामन्दकीय नीतिशास्त्र है। वह १८ अध्यायमें विभक्त और महाभारतकी भांति प्राचीनकाल-रचित है। बहुत पहले उक्त नीतिशास्त्र वालि प्रभृति द्वीपमें नीति बना था। वहां महाभारतकी भांति वह कविभाषामें अनुवादित भी हुवा। उसके यवद्वीप पहुंचनेका समय निर्धारित नहीं। कोई अनुमान करता, कि महाभारतके ही समकाल वह भी पहुंचा होगा। महाभारत देखो। उसकी चार टीका मिलती हैं। एक टीकाका नाम उपाध्याय-निरपेक्ष है। बाकी तीनमें एक जयराम, दूसरी आत्माराम और तीसरी वरदाराजकी बनायी है।

कामन्दकीय (सं० क्लो०) कामन्दकीरिदम् कामन्दकि छ। १ कामन्दकि-प्रणीत एक नीतिग्रन्थ।

कामभमो (सं० पु०) कामं यथेष्टं वसति, काम वस णिनि बाहुलकात् वमादेश निपातनात् सुमि साधु। कोमलकार, कमेरा।

कामपति (सं० स्त्री०) कामः पतिर्यस्याः, विकल्प त्वात् न ङीप्। १ रति, कामदेवको स्त्री (पु०) २ चन्द्रवंशीय पृथुकुलजात एक राजपुत्र। इन्होंने पुत्रेष्टि याग किया था (हरिवंश १।२।१२)

कामपत्नी (सं० स्त्री०) कामस्य पत्नी, ६-तत्। रति, कामदेवकी स्त्री।

कामपर्णिका, कामपर्णी देखो।

कामपर्णी (सं० स्त्री०) आखुकर्णप, एक पेड़।

कामपाल (सं० पु०) कामान् पालयति, काम पाल अण्। १ बलदेव। २ विष्णु।

"कामदः कामपालश्च कामी कान्तः कृतागमः" (विष्णुसहस्रनाम)

३ महादेव। ४ चन्द्रवंशीय इन्दुमलम राजाके पुत्र। इनके पुत्रका नाम कपिल था। (हरिवंश ३।२५।२१)

५ एकवीरा देवीमत गौतम कुलज अजयपालवंशके एक राजा। (हरिवंश ३।८।२१(७) ६ कुमारिकाखण्ड चम्पयाज कुलज दशरथके पुत्र। इनके पुत्रका नाम वृहसेन था। (हरिवंश ३।८।२००) ७ महाराजपूत, एक क्षत्रिय जाति।

कामपीठ (सं० पु०—क्लो०) कूपादिके उपरिभागका स्थान, कुवेंके ऊपर बनी चूनी जगह।

कामपीड़ित (सं० त्रि०) कामेन कन्दर्पपीड़या पीड़ितः, ३ तत्। कामेच्छुक मदनको व्याकुल रहनेवाला।

कामपूर (सं० त्रि०) कामं अभीष्टं पूरयति, काम पूर णिच्-अण्। १ अभीष्टप्रद मुराद पूरी करनेवाला। २ परमेश्वर।

कामप्र (सं० त्रि०) कामं पिपर्ति काम पृ क। अभीष्टप्रद, ख्वाहिश पूरी करनेवाला।

कामप्रद (सं० त्रि०) कामं कामवस्तूनि प्रददाति, काम प्र-दा क। १ रतिबन्धविशेष, एक कोका।

"भी स्त्री कामस्य नारी विपूर्ण स्थौ कणी दशा।
तम्नकेन् ताड़ा कैफा कर्म कामदी कि कथा" (रतिमञ्जरी)

कामानां सर्वपुरुषार्थानां प्रदः, ६ तत्। २ विष्णु। (त्रि०) ३ अभीष्टप्रद, मुराद पूरी करनेवाला।

कामप्रवेदन (सं० क्लो०) कामस्य अभिलाषस्य प्रवेदनं आविष्करणम्, ६ तत्। अभिलाष प्रकाश, ख्वाहिशका इज़हार।

कामप्रश्न (सं० पु०) कामं यथेष्टं प्रश्न। यथेच्छ प्रश्न, मनमाना सवाल।

कामप्रस्थ (सं० पु० क्लो०) कामस्य कामगिरेः प्रस्थः, (भारतीयस ४।२।६७७) चादित्यं उदाहृतः, ६-तत्। १ कामगिरिका सानुदेश, काम पहाड़की ऊंची हमवार ज़मीन। २ एक नगर।

कामप्रस्थीय (सं० त्रि०) कामप्रस्थे भवः, कामप्रस्थ-छ। कामगिरिके सानुदेशमें उत्पन्न, काम पहाड़की ऊंची हमवार ज़मीनका पैदा।

कामप्रि (सं० त्रि०) कामं पिपर्ति, काम पृ कि। अभीष्टपूरक ख्वाहिश पूरी करनेवाला।

कामप्रियकरी (सं० स्त्री०) पञ्चगन्धा, पचगांव।

कामबख्श (सं० पु०) कामं यथेष्टं वत्समस्य, बहुव्री०। महाराजाख्य, एक क्षत्रिय जाति।

कामबख्श—बादशाह आलमगीरके कनिष्ठ पुत्र। वह माइवारे बड़े अभिमानी और निर्दय रहे। इनके पिताने इन्हें दक्षिणका राज्य सौंपा था। किन्तु इन्होंने ज्येष्ठ भ्राता बहादुर शाहका संरक्षण स्वीकार न किया और अपने नामका सिक्का चला दिया। इसीसे वह एक बड़ी सेना ले इनसे लड़ने चले। हैदराबादके निकट युद्ध हुआ था। युद्धमें वह हार गये। चार दुपये आहत होनेपर १७०८ ई० के फरवरी या मार्च मास इनका प्राण छूटा था। इनकी माताका नाम उदयपुरी-महल रहा। १६६० ई० को २५वीं पर वरोको कामबख्श माहबादेने जन्म लिया था।

कामम् (सं० अव्य०) कम-णिङ् अमु। १ यथेष्ट, मनोके मुताबिक। २ अनुमतिमें, मञ्जूरीके काम। ३ स्वल्पमें, थोड़ेमें। ४ पश्चात्, बहुत पश्चात्। ५ माना, चुना। ६ निःसन्देह, बेशक।

काममञ्जरी (सं० स्त्री०) दण्डिप्रणीत दशकुमार-चरितकी एक गणिका।

काममय (सं॰ त्रि॰) कामस्य विकारः, काम-मयट्। मयड्वैतयोर्भाषायां अभक्ष्याच्छादनयोः। पा ४।३।१४३। कामविकार, ख्वाहिशसे भरा हुवा।

काममर्दन (सं॰ पु॰) कामं कन्दर्पं मर्दयति नाशयति, काम-मृद्-ल्यु। कामको मर्दन करनेवाले महादेव।

काममलोलुप (सं॰ पु॰) सद्वैद्य, अच्छा हकीम।

काममलोलुभ, काममलोलुप देखो।

काममह (सं॰ पु॰) कामस्य मह उत्सवो यत्र, बहुव्री॰। कामदेवके उद्देश उत्सवका दिन। चैत्री पूर्णिमा इस उत्सवका निर्दिष्ट समय है।

काममालिका (सं॰ स्त्री॰) मद्यविशेष, एक शराब।

काममाली (सं॰ पु॰) गणेश।

काममुद्रा (सं॰ स्त्री॰) तन्त्रशास्त्रोक्त एक मुद्रा।

काममूढ़ (सं॰ त्रि॰) कामेन मूढः, ३-तत्। कामकी पीडासे हित और अहितकी विवेचना न रखनेवाला, जो शहवतके जोरसे अन्धा बन गया हो।

काममूत (वै॰ त्रि॰) कामेन मूतः मूर्च्छितः, काम-मव-क्त छान्दसत्वात् इट् अभावः ऊट्च। १ काममूर्छित, शहवतसे गश खाये हुवा। २ अत्यन्त कामपीडित, शहवतके जोरसे बड़ी तकलीफ़ पाये हुवा।

काममोदी (सं॰ स्त्री॰) कस्तूरी, मुश्क।

काममोहित (सं॰ त्रि॰) कामेन कामजरत्या मोहितः, ३-तत्। १ कामकी पीडासे हित और अहितका ज्ञान न रखनेवाला, शहवतके जोरसे अन्धा बना हुवा। २ सुरतासक्त, शहवत-परस्त।

"मा निषाद प्रतिष्ठां त्वमगमः शाश्वतीः समाः।
यत् क्रौञ्चमिथुनादेकमवधीः काममोहितम्॥" (रामायण)

कामयमान (सं॰ त्रि॰) काम-णिङ्-शानच्। कामुक, ख्वाहिशमन्द।

कामयान (सं॰ त्रि॰) काम-णिङ्-शानच् मुगभावः आगमशास्त्रस्य अनित्यत्वात्। कामुक, ख्वाहिशमन्द।

कामायाना (सं॰ स्त्री॰) गर्भिणी, हामिला, जिसके पेटमें लड़का रहे।

कामयाब (फ़ा॰ वि॰) सफल, नतीजा पाये हुवा।

कामयाबी (फ़ा॰ स्त्री॰) सफलता, मकसदवरी, बालबाला।

कामयिता (सं॰ त्रि॰) कामयते, काम-णिच्-तृच्। कामुक, चाहनेवाला।

कामरस (सं॰ पु॰) कामः कामजरत्यादिरिव रसः। सुरतादि, शहवत वगैरह।

कामरसिक (सं॰ त्रि॰) कामे कामजरत्यादौ रसिकः सुनिपुणः, ७-तत्। सुरतादि विषयमें सुनिपुण, शहवतपरस्त।

कामराज—१ कालिकाभक्त कौण्डिन्य मुनिकुलोद्भव श्रीधरराजके पुत्र। इनके पुत्र मातुल थे। (सह्याद्रिखण्ड २।११।११) २ कैवल्य-दीपिका-प्रणेता हेमाद्रिके प्रतिपालक। ३ गोपालचम्पू-प्रणेता जीवराजके पितामह। इनके पुत्र अर्थात् जीवराजके पिताका नाम व्रजराज था। फिर इनके पिताको श्यामराज कहते थे।

कामराज दीक्षित—काव्येन्दुप्रकाश, शृङ्गारकलिकाकाव्य प्रभृतिके प्रणेता।

कामरान् मिर्ज़ा—बादशाह बाबर शाहके २य पुत्र और बादशाह हुमायूंके भ्राता। १५३० ई॰ को सिंहासनारूढ़ होने पर हुमायूंने इन्हें काबुल, कन्दहार, गज़नी और पञ्जाबका राज्य सौंपा था। किन्तु १५५१ ई॰ को काबुलमें हुमायूंने इनकी आंखें नश्तरसे छेदवा कर निकलवा लीं। कारण इन्होंने राज्यका प्रबन्ध बिगाड़ बड़ा गड़बड़ किया था। आंखोंमें नीबूका रस और नमक पड़ते समय इन्होंने कहा—'हे परमेश्वर! मैंने इस संसारमें जो पाप कमाया, उसका यथेष्ट फल पाया है। अब परलोकमें मेरे ऊपर कृपादृष्टि रखिये।' अन्तमें इन्हें मक्के जानेकी आज्ञा मिली थी। वहां यह तीन वर्ष रहे और १५५६ ई॰ को अपनी मौत मरे। इनके तीन कन्या और अबुल क़ासिम मिर्ज़ा नामक एक पुत्र चार सन्तान रहे। १५६५ ई॰ को अकबरकी आज्ञासे अबुल क़ासिम मिर्ज़ा ग्वालियरके किलेमें कैद किये और मारे गये।

कामरिपु (सं॰ पु॰) १ शरीरस्थ छह रिपुके मध्य प्रथम रिपु। अभिलाष और स्त्रीसम्भोगादि इसका कार्य है। २ शिव।

कामरी (हिं॰ स्त्री॰) कम्बल, कमरी।

कामरवि (सं॰ स्त्री॰) अस्त्रविशेष, एक हथियार। विश्वामित्रने इसे रामचन्द्रको यज्ञके पश्च विघ्न करनेके लिये दिया था।

कामरु (हिं॰) कामरूप देखो।

कामरूप (सं॰ त्रि॰) कामं मनोज्ञं रूपं यस्य, बहुव्री॰ १ मनोज्ञ रूपविशिष्ट, खूबसूरत। २ इच्छानुसार विविध रूपधारी, मर्जीके मुताबिक तरह तरहकी सूरत बनानेवाला।

"कामगाः कामरूपे कामवीर्या विहङ्गमाः।" (रामायण)

कामरूप—वर्तमान आसाम प्रदेशका एक विस्तृत जिला। यह अक्षा॰ २५° ४३´ से २६° ५१´ उ॰ और देशा॰ ९०° ३०´ से ९२° ११´ पू॰के मध्य ब्रह्मपुत्रके उभय पार पर अवस्थित है। इसके उत्तर भूटान, पूर्व दरङ्ग एवं नौगांव जिला, दक्षिण खसिया पहाड़ और पश्चिम ग्वालपाड़ा जिला है। कामरूपका सदर गौहाटी है।

इस जिलेका प्राकृतिक दृश्य अति मनोहर है। भूमि बहुत उर्वरा है। ब्रह्मपुत्रके तीरका स्थान नीचा रहनेसे वर्षाकालमें डूब जाता है। यहां धान्य और सर्षप अपर्याप्त उत्पन्न होता है। सर, वंश प्रभृति स्वभावतः अधिक निकलता है। ब्रह्मपुत्रके तीरसे आगे उत्तर भूटान और दक्षिण खसिया पहाड़ तक भूमि क्रमशः उच्च एवं समतल है। ब्रह्मपुत्रके दक्षिण इस जिलेमें बहुतसे छोटे छोटे पहाड़ हैं। उनमें एक एक दो हजारसे तीन हजार फीट तक ऊंचा है। इन पर्वतोंके पार्श्वदेशमें चायके बाग हैं।

ब्रह्मपुत्र ही कामरूपकी प्रधान नदी है। बहुतसी नदी और उपनदी ब्रह्मपुत्रमें गिरी हैं। उनमें उत्तर दिक्‌से मानस, चाउलखोया तथा बरनदी और दक्षिण दिक्‌से कुलसी नदी आयी है।

ब्रह्मपुत्रके मध्य कई क्षुद्र क्षुद्र द्वीप हैं, इनकी संख्या नहीं।—ब्रह्मपुत्रमें रेत पड़नेसे जितने क्षुद्र द्वीप बनते और बिगड़ते हैं।

कामरूपके पर्वतोंसे कई क्षुद्र नदी निकली हैं। ग्रीष्मकाल प्रायः उनमें जल नहीं रहता। फिर भी वह भीतर भीतर बहा करती हैं।

यहां नाला या नहर नहीं। किन्तु जलको रखनेके लिये बीच बीच सामान्य बांध मौजूद हैं।

इस भूभागमें प्रायः ११०० वर्गमील जंगल है। इस जङ्गलसे भी गवरनमेण्टको अधिक आय होती है। इसमें कुलसी नदीके तीरका वनविभाग प्रधान है। जिस जिस वनसे रुपया आता, उसमें बड़द्वार, डिमरुआ, पन्तान, मयरापुर और बरनदी नामक वन उल्लेखयोग्य दिखाता है।

इनमें शाल, सीशम, तुन, सुम, नाहर प्रभृति वृक्ष अधिक उपजते हैं। उनसे खूब कीमती लकड़ियां कटती और तख़्ते बनते हैं। कछाड़, कछारी, मारी, मिकिर और गारो प्रभृति असभ्य लोग जंगली लाख, मोम, मधु, गोंद वगैरह एकत्र कर अपनी जीविका चलाते हैं। उत्तरांशमें भूटान पहाड़के पास मोनारपका बड़ा मैदान है। यहां नानाविध वृक्ष उपजते हैं।*

जीवजन्तुमें हाथी, गैंडा, नानाजातीय व्याघ्र, महिष, हरिण, वन्य शूकर, नाना प्रकार सर्प और नानाप्रकार पक्षी देख पड़ते हैं। मत्स्य भी यहां नाना प्रकार होते हैं। उनमें रोह चितलो और पबो नामक मत्स्य ही अधिक है।†

---

* इसकी शीतोष्णतादि वन इत्यादिका वर्णन लिखा है। यथा,—
"[illegible] वनानि च।
[illegible] च।
[illegible] —
[illegible] च।
[illegible]।
[illegible]।
[illegible]।
[illegible]।
[illegible]।
[illegible] च।
[illegible]।
[illegible] —
[illegible]।"
† "[illegible]।

पुरातत्त्वको देखते कामरूप अति प्राचीन जनपद है। महाभारतके समय यह स्थान किरातपति भगदत्तके अधीन था। उस समय लोग ऋषि परशुरामका लौहित्यतीर्थ मानते थे।

पुराण और तन्त्रमें कामरूप महापीठस्थान माना गया है। गरुडपुराणमें लिखा है,—

"कामरूपं महातीर्थं कामाख्या तत्र तिष्ठति।" (गरुडपुराण, ८१।११)

राधातन्त्रके २०वें पटलमें कहा है,—

"कामरूप महेशानि ब्रह्मणो मुखमुच्यते।"

हे भगवति! यह कामरूप ब्रह्माका मुख माना जाता है।

स्कन्दपुराणका प्रभासखण्ड (७८ अ०) देखते इस स्थानमें शुभङ्कर लिङ्ग विद्यमान है।

नीलतन्त्र और बृहन्नीलतन्त्रके मतसे इस महातीर्थमें योगनिद्रा सर्वदा विराजती हैं।

पूर्वकालको कामरूपका आयतन इस समयकी अपेक्षा अधिक विस्तृत था। कुमारिकाखण्डमें लिखा है,—

"कामरूपे च यामाया नवलक्षा प्रकीर्तिता।" (१० अ०)

वर्तमान आसाम, कोचविहार, जलपाईगोड़ी और रङ्गपुर कामरूपके अन्तर्गत था। योगिनीतन्त्रमें प्राचीन कामरूपकी चतुःसीमा इस प्रकार वर्णित है,—

"करतोयां समाश्रित्य यावद्दिक्करवासिनी।
उत्तरस्यां कञ्जगिरिः करतोयान्तु पश्चिमे॥
तीर्थश्रेष्ठा दिक्षुनदी पूर्वस्यां गिरिकन्यके।
दक्षिणे ब्रह्मपुत्रस्य लाक्षायाः सङ्गमावधि॥
कामरूप इति ख्यातः सर्वशास्त्रेषु निश्चितः॥"

"त्रिंशत् योजनविस्तीर्णं दीर्घेण शतयोजनम्।
कामरूपं विजानीहि त्रिकोणाकारमुत्तमम्॥
ईशाने चैव केदारो वायव्यां गजशासनः।
दक्षिणे सङ्गमे देवी लाक्षायाः ब्रह्मरेतसः॥
त्रिकोणमेव जानीहि सुरासुरप्रपूजितम्।"

करतोयासे दिक्करवासिनी तक कामरूप विस्तृत है। इसकी उत्तरसीमामें कञ्जगिरि, पश्चिम करतोया नदी, पूर्वसीमामें तीर्थश्रेष्ठ दिक्षु नदी और दक्षिण ब्रह्मपुत्र नद तथा लाक्षा नदीका सङ्गमस्थल है। यह सीमा निर्देश समुदाय शास्त्रका अनुमोदित है। यह सुरासुर-पूजित कामरूप त्रिकोणाकार है। इसका दैर्घ्य एक शत योजन और विस्तार तीस योजन है। कामरूपके ईशानकोणमें केदार, वायुकोणमें गजशासन और दक्षिणमें ब्रह्मरेता तथा लाक्षाका सङ्गमस्थल है।

कालिकापुराणमें भी लिखा है,—

"करतोया सत्यगङ्गा पूर्वभागावधिश्रिता।
यावल्ललितकान्तास्ति तावद्देशः स पुर् सदा॥"
(कालिकापुराण, ३८।१११ अ०)

करतोया नामक सत्यगङ्गासे पूर्वदिक् ललितकान्ता पर्यन्त यह पुर विस्तृत है। (ललितकान्ता दिक्करवासिनीके निकट है।)

बुरञ्जीके मतसे भी कामरूपकी उत्तर सीमा कञ्जगिरि वा भूटानका पार्वत्य प्रदेश है। इसके पूर्व महाचीन वा चीन-साम्राज्य, दक्षिण लाक्षा नदी (यह नदी ब्रह्मपुत्रसे पृथक् हो बङ्गदेशके सीमारूपसे प्रवाहित है।) और पश्चिम करतोया नदी है।*

येन यान्यपयोध्यानि गव्य देवि पयोमतम्।
मार्ग माक्ष तथा छागं आलम माणकं तथा।
माहिष वर्द्धीणसश्च चौर दधिघृतसत.।
पक्षिणाश्च प्रवक्ष्यामि ये प्रयोज्या मम प्रिये।
सारिकश्च मयूरश्च मारक्कं वर्तकस्तथा।
कपिलश्चैव चाषश्च काककुक्कुटको शिर।
वन्यकुक्कुटकश्चैव ग्रथारिश्च कपोतक.।
विहङ्गः कुलिकश्चैव रक्तपुच्छश्च टिट्टिभः।
क्षणमत्स्याशनश्चैव पक्षीणाश्च विशिष्यते।
चित्रमत्स्य रोहितश्च महामत्स्यश्च राजिवम्।"
(योगिनीतन्त्र, १।८ पटल)

* रङ्गपुरवासी लोगोंके विश्वासानुसार देवीगंजके निम्नभागमें प्राचीन तिस्ता (त्रिस्रोता) नदीमें पायराज नामकी एक छोटी नदी मिली है। यही करतोया नदीका पुराना गर्भ है। फिर पायराज भी कामरूपके अन्तर्गत मानी गयी है। (Martin's Eastern India, Vol. III, p. 361-68.) करतोया देखो।

इधर वर्तमान आसाम प्रदेशके पूर्वप्रान्तमें सदियाके निकट कामरूपपुत्र नामकी एक नदी बहती है। उसे भी कामरूपकी पूर्वसीमा बतानेवाली कहना पड़ेगा। (Journey from Upper Assam towards Hookhoom etc. by W. Griffith; see Selection of papers regarding the Hill Tracts between Assam and Burma, p. 126.)

योगिनीतन्त्रके मतसे विस्तृत कामरूप राज्य नवयोनि पीठमें विभक्त है,—

"[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]"

फिर योगिनीतन्त्रमें श्रीमात्पीठ श्रीपीठ, रत्नपीठ और कामपीठ इत्यादिका नाम मिलता है।

सिवा इसके योगिनीतन्त्रमें दूसरे भी कई छोटे छोटे पीठों और उपपीठोंका उल्लेख है —

"[illegible]

[illegible]"

(योगिनीतन्त्र, ५१ पटल)

हे देवि ! त्रेतायुगके पूर्ववर्ती सत्ययुगमें [illegible] नामक पुण्यपीठका प्रादुर्भाव हुआ था। उसके

पीछे द्वापर युगमें सामशैल और कलियुगमें कलिपाप-विनाशक कामाख्य पर्वत देख पड़ा। हे महेश्वरि! प्रत्येक वर्षमें तुम्हारे पीठ, उपपीठ, तीन महाक्षेत्र और तीन महारण्य विराजित हैं। फिर प्रत्येक पीठमें महादेव, चतुर्भुज विष्णु, गङ्गा और पार्वतीका अधिष्ठान है। प्रत्येक पीठ और प्रत्येक क्षेत्रमें एक एक पुण्यारण्य अवस्थित है।

'कलिकालमें गृहसे दूरवर्ती स्थान मात्र पर तीर्थ-बुद्धि रहती है। किन्तु जहां भावनाकी सिद्धि पाती, वही भूमि तीर्थ मानी जाती है। प्रत्येक पीठमें धर्म और आचार पृथक् पृथक् है। देशभेदके अनुसार कुलका आचार भी पृथक् होता है। इसलिये प्रत्येक पीठका पूजन और मन्त्र स्वतन्त्र है। हे पार्वति! मर्त्यभूमिमें तीरपीठ, दाक्षिणात्य देशमें भद्रपीठ, पाश्चात्य देशमें जालन्धर और पूर्व दिक्‌में पूर्वपीठ है।

'ईशान और पूर्वभागमें कामरूप है। इसके वायुकोणमें जालन्धर, उत्तरमें कोलवापुर, महेन्द्रके किञ्चित् उत्तर ईशानदिक्‌में विहार और पूर्वमें श्रीहट्ट है। हे देवेश्वरि! अतःपर उपपीठका विवरण श्रवण करो। ओड्रपीठ ६८ योजन विस्तृत है। शकटाकार पीठ चतुष्कोण, चार द्वारयुक्त और वायुबिम्ब चिन्हित है। सिन्धुभद्रक पीठमें दो कोटि तीर्थ है। फिर उक्त स्थानमें सोमेश्वरलिङ्ग अवस्थित है। विरज नामक क्षेत्र और एकाम्रक्षेत्रमें कामधेनु तथा चक्रेश्वर शिवका अवस्थान है। भास्कर नामक महाक्षेत्रमें मातङ्ग महादेव, पवित्र कुशस्थली, दन्तकवन और सुमन्तवन है। इस क्षेत्रके पूर्व शिवयूप, पश्चिम वेतु-कारण्य, उत्तर गयाशिरः और दक्षिण चन्द्रभागा तथा ओड्रपीठ है। हे वरानने! इसका दैर्घ्य शत योजन और विस्तार तीस योजन है। जहां योनिमुद्रारूपिणी कामेश्वरी देवी, भूगोलपीठ, गोलोकेश्वर, धर्मपीठ, महापीठ, कामेश्वर शिव, अविमुक्त एवं हंसप्रपतन क्षेत्र, ब्रह्मयूप, श्वेतवट, कुरुक्षेत्र, मायाख्ना नदी, पवित्र अयोध्यारण्य, धर्मारण्य, क्षमात्मक नामक महारण्य तथा पातालशङ्करका अवस्थान है और जिसके पूर्व गण्डकी नदी, पश्चिम विष्णुयूप, दक्षिण वृषभलिङ्ग एवं उत्तर कदलीवन है, उसीका मध्यवर्ती धनुषाकार पीठ पद्म तथा रक्तवर्ण है। यह पीठ त्रिकोणाकार है। इसका दैर्घ्य १०८ योजन और विस्तार ८८ योजन है। इस पीठस्थलमें भी महादेवका क्षेत्र है। यह क्षेत्र-त्रय और माधवारण्य, महादेवारण्य एवं भर्गारण्य अरण्यत्रय वर्तमान है। इस पीठके उत्तर ब्रह्मक्षेत्र, दक्षिण समुद्र, पूर्व उदयकूट और पश्चिम श्रीपर्वत है। इसीके मध्यवर्ती पीठका नाम पुण्यपीठ है। कामरूपके मध्यस्थलमें षट्‌कोण, नवव्यूह और त्रिमण्डलयुक्त पवित्रतम एकवेदी है। फिर यहां दश पर्यंत अव-स्थित हैं। मध्यपीठ नामक महापीठस्थलमें कामेश्वर महादेव और चम्पावती नदी हैं। कन्याश्रम नामक महाक्षेत्रमें रुद्रदेवका पदद्वय है। एकाम्रक्षेत्रमें नागाङ्क-शङ्कर हैं। मानसक्षेत्रमें विश्वेश्वर, नाटकारण्य और चम्पकारण्यका अवस्थान है। गौतमके दक्षिण भागमें पिच्छिला और महावन है।

प्राचीन कामरूप प्रदेशके समस्त उत्तरांशका नाम सौमार है। योगिनीतन्त्रमें इस प्रकार चतुःसीमा निर्दिष्ट है,—

"पूर्वे स्वर्णनदीं यावत् करतोया च पश्चिमे।
दक्षिणे मन्दशैलश्च उत्तरे विहगाचलः॥
प्रकारे चैव आमानं योजनानां च पञ्चकम्।
चतुरस्रश्च विस्तीर्णः पञ्चाशच्च तथा दश॥
अष्टकोणश्च सौमार यत्र दिक्करवासिनी।
तस्मिन् वसति सा देवी ग्रामात् ग्रामाद्बोऽपि वा॥
तेऽपि देवा समादेन स्थितिं गच्छन्ति नान्यथा।
अष्टोश्यो नवं पीठं सौमाराख्यं तु कथ्यते॥
यसन्यञ्च मध्ये यत्र दिक्करवासिनी।
दिक्करस्थे च वायव्ये सौमपीठं सुदुर्लभम्॥
यत्र कामेश्वरी देवी योनिमुद्रास्वरूपिणी।
पारिजातं महाचैव स्वादिरस्तु शङ्करः॥
कोपे यस्य पुरं चैव तदा चामरकण्टकम्।
आरण्यमाश्विनश्चैव गौतमारण्यकं शिवम्॥"

'सौमारकी चतुःसीमामें पूर्व स्वर्णनदी (वर्तमान स्वर्णश्री), पश्चिम करतोया, दक्षिण मन्दशैल और उत्तर विहगाचल है।

'अष्टकोण सौमार और दिक्करवासिनीके स्थलमें

महादेवी अवस्थान करती हैं। फिर उक्त चक्रमें देवीके अनुपदमें पीठादि भी अवस्थित हैं। अतःपर नवपीठका विषय कथित है। दिक्करवासिनीमें भजय नामक प्रत्यक्ष पीठ और दिक्करके वायुकोणमें कुबर्म नीलपीठ है। इसी स्थान पर योनिमुद्राकृतिको कामेश्वरी देवीका अवस्थान है। चारित्र्यपर्वतको अवस्थितिके स्थानका नाम महापीठ पारिजात और अपर पीठका नाम श्रीपीठपुर अमरकण्टक, वाराह, चाम्पिल, गौतमारण्य और विश्वामारण्य है।"

सौमारके अन्तर्निहितका नाम सौमारपीठ है। यह आसामके उत्तर पूर्व भागमें अवस्थित है। इसकी चतुःसीमा इस प्रकार निर्धारित है—

"करतोया दिक्करवासिन्या मध्ये पीठं त्रिपिण्डकम्।
पूर्वे श्रीदिक्करवासिन्या पश्चिमे करतोया नदी।
दक्षिणे ब्रह्मपुत्रस्य उत्तरे ललिताचलः।
रत्नसम्भवं पीठं भुक्तिमुक्तिप्रदायकम्।
सौमाराख्यं महापीठं महत्पुण्यं त्रिपिण्डकम्।
सर्वतीर्थमयं स्थानं सर्वकामफलप्रदम्॥" (योगिनीतन्त्र, ५।१)

है लिये। इस लिखनाके अनुसार चतुःसीमाका निर्देश अवश्य करो। इसके पूर्व श्रीदिक्करवासिनी, पश्चिम करतोया, दक्षिण ब्रह्मपुत्र और उत्तर मानससरोवर है। इसीके मध्यस्थलमें भुक्तिमुक्तिप्रद पद्मकोष और त्रिमण्डल सौमार नामक महापीठ है। इस पीठका परिमाण एकसौ योजन व्याप्त है। इसको भजम भवताल भी कहते हैं।

आसामका पुरवृत्तके मतानुसार भैरवीसे दिक्करई नदी तक सौमारपीठ है।

श्रीपीठकी चतुःसीमा इस प्रकार है—

"वाराही प्रथमं पीठं द्वितीयं श्रीपीठकम्।
कुमारं चैव प्रथमं द्वितीयं नन्दनाख्यकम्।
तृतीयं माधवीयं च आवहं प्रथमं वनम्।
मिश्राख्यं द्वितीयं च तृतीयं त्रिपुरं वनम्।
कोटिकोटिवृक्षैर्व्याप्तं कोटिकोटिमठान्वितम्।
ब्रह्मतीर्थं पूर्वे च पश्चिमे धनदा नदी।
स्वाहाख्या दक्षिणे चैव उत्तरे कुवरकाननम्।
तन्मध्ये देवि श्रीपीठं नाम यत्नतः॥"

(योगिनीतन्त्र, ११ पटल)

प्रथम पीठका नाम वाराही और द्वितीयका नाम श्रीपीठ है। प्रथम क्षेत्रको कुमार क्षेत्र द्वितीयको नन्दन और तृतीयको माधवी क्षेत्र कहते हैं। प्रथम वन आवह द्वितीय मिश्रारण्य और तृतीय त्रिपुरवन कहलाता है। यह वन कोटि कोटि वृक्षयुक्त और कोटि कोटि मठाधिष्ठित है। पूर्व सीमापर ब्रह्मतीर्थ, पश्चिम धनदा नदी, दक्षिण स्वाहा और उत्तर कुवरका वन है। इसीके मध्यस्थानमें श्रीपीठ अवस्थित है।

रत्नपीठका वर्तमान नाम कोचबिहार है। सम्भवतः कामेश्वरी देवीके यहां रहनेसे रत्नपीठ नाम पड़ा है। आसामके पुरवृत्तके मतमें स्वर्णकोषी नदीसे करतोया नदी तक रत्नपीठ है। योगिनीतन्त्रमें लिखा है,—

"रत्नपीठे तु सर्वत्र कीर्तिता देव सर्वदा।"

आसामके पुरवृत्तके मतमें करतोया और स्वर्णकोषी नदीका मध्यवर्ती स्थान कामपीठ है। किन्तु योगिनीतन्त्रमें कामपीठका अपर नाम योगिनीपीठ लिखा है। योगिनीपीठका वर्तमान नाम कामाख्या है। कामगिरिके ऊपर अवस्थित होनेसे इस पीठका नाम कामपीठ पड़ा होगा। यथा—

"योनिपीठे कामगिरौ कामाख्या यत्र देवता।" (उत्पत्तितन्त्र, पीठमाला)
कामाख्या देवी।

कामाख्याके कुछ दूर योगिनीतन्त्रोक्त उग्रपीठ और ब्रह्मपीठ है। यथा,—

"ब्रह्मपुत्रस्य पीठं च ब्रह्मपर्वतसंयुतम्।
तत् पीठं शिविरं पीठं पूर्व भाग महेश्वरि।
ब्रह्मोत्पन्नपाण्डु देवीयोनिप्रकाशकम्।
तस्मिन्नीपर्वते वामे पीठं सर्वप्रदायकम्।
सिद्धिदात्री भवत्येव देवता भुवनेश्वरी।
निवसेच्च तत्र नामी मन्त्रैश्च दिग्वासिनी॥"

(योगिनीतन्त्र १।११)

पुरवृत्तमें स्वर्णपीठ नामक एक पीठका उल्लेख है। किन्तु कालिकापुराण और योगिनीतन्त्रमें स्वर्णपीठका नाम नहीं मिलता। कालिदासने अपने रघुवंशमें इसीको "हेमपीठ" लिखा है—

"अथोदः कामरूपाणामत्याखण्डलविक्रमम्।
भेजे भिन्नकटैर्नागैरन्यानुपरुरोध यैः॥ ८३
कामरूपेश्वरस्तस्य हेमपीठाधिदेवताम्।
रत्नपुष्पोपहारेण छायामानर्च पादयोः॥ ८४ (रघुवंश ४र्थ सर्ग)

फिर कामरूपेश्वर अन्य भूपालोंके आक्रमणसे भय-प्रतिष्ठ अभिवगण्ड सब हाथी ले कर दुर्द्धर्षविजयी रघुके शरणापन्न हुये और सुवर्णपीठके अधिदेवता स्वरूप उनके चरणकमल पर रत्नरूप पुष्पोपहार प्रदान किये।

आसामकी बुरञ्जीके मतमें रूपिका वा रूपही नदीसे भैरवी वा भरली नदी तक स्वर्णपीठ है।

कालिकापुराणके मतानुसार कामदेवको महादेवके क्रोधानलसे भस्मीभूत होनेके पीछे इसी स्थानमें महादेवकी कृपासे स्वरूप प्राप्त हुवा था। इसीसे इसका नाम कामरूप पड़ गया। (कालिकापुराण, ५ अ०) पहले ब्रह्माने यहीं रह नक्षत्रोंकी सृष्टि की थी। इसीसे कामरूपका प्राचीन नाम प्राग्ज्योतिष है।

"अत्रैव हि स्थितो ब्रह्मा प्राङ्नक्षत्रं ससर्ज ह।
ततः प्राग्ज्योतिषाख्येयं पुरी शक्रपुरी समा॥"
(कालिकापुराण, ३८ अ०)

कामरूप अति प्राचीन तीर्थ है, यह पहले ही लिख चुके हैं। कालिकापुराणमें कामरूपतीर्थका विवरण इस प्रकार लिखा है,—

'पूर्वकालको महापीठ कामरूपकी नदीमें नहा, जल पी और तथाकार देवता पूज अनेक लोग स्वर्ग जाते थे। फिर किसीने निर्वाणमुक्ति और किसीने शिवत्वको प्राप्त किया। पार्वतीके भयसे यमराज इन लोगोंमें किसीको न तो स्वर्ग जानेसे रोक सके और न अपने घर ले जा सके। प्रथमतः उन्होंने कई बार यमदूतोंको भेजा। किन्तु शिवके दूतोंने यमदूतोंको लोगोंके निकट जाने न दिया। सुतरां यमराजका कर्तव्यकार्य एक प्रकार बन्द हो गया। उन्होंने फिर विधाताके निकट पहुंच कर कहा,—हे विधाता! मनुष्य कामरूपमें नहा, जल पी और देवता आदि पूज मृत्युके पीछे कामाख्यादेवी वा शिवके पार्श्वचर हो जाते हैं। वहां अपना अधिकार न रहनेसे हम उन्हें किसी प्रकार बाधा नहीं पहुंचा सकते। इसीसे हमारा काम बन्द हो गया है। अब इस सम्बन्धमें किसी उचित उपायका अवलम्बन बहुत आवश्यक है। पितामह ब्रह्मा यह कथा सुन यमको साथ ले विष्णुके निकट पहुंचे और उनको उक्त समस्त कथा विष्णुसे कहने लगे। विष्णु भी सब बातें सुन यम और ब्रह्मा दोनोंको साथ ले शिवके निकट उपस्थित हुये। महादेवने सत्कारपूर्वक अभ्यर्थना कर उनसे आनेका कारण पूछा था। विष्णुने कहा,—कामरूप समस्त देवता, सकल तीर्थ और सकल क्षेत्र द्वारा परिवृत है। इसकी अपेक्षा उत्कृष्ट स्थान दूसरा कोई नहीं। सुतरां इस पीठमें मरनेसे सबको स्वर्ग वा आपका पार्श्वचरत्व मिलता है। फिर वहांके लोगों पर यमराजका कोई अधिकार नहीं रहता। यमका भय छूट जानेसे उक्त पीठका नियम भी बिगड़ सकता है। इसलिये कोई ऐसा उपाय करना चाहिये, जिसमें यमका अधिकार पूर्ववत् अक्षुण्ण रहे।

'महादेवने विष्णुवाक्य पालन करने पर स्वीकृत हो उन्हें विदा किया। फिर महादेव अपने गणोंके साथ कामरूपमें आ पहुंचे। कामरूपमें आते ही उन्होंने देवी उग्रतारा और अपने गणोंसे कहा,—'सत्वर यहांसे सब लोगोंको भगा दो।'

'शिवकी आज्ञा पाते ही महादेवी उग्रतारा और गणसमूहने समुदाय लोगोंको भगाना आरम्भ किया। क्रमशः उन्होंने कामरूपके अन्यान्य लोगोंको दूरीभूत कर वशिष्ठको निकालनेकी चेष्टा की थी। इससे वशिष्ठने बहुत क्रुद्ध हो उग्रताराको अभिशाप दिया,—'हे वामे! हम मुनि हैं। फिर भी तुम हमें भगानेके लिये चेष्टा कर रहे हो। इसलिये तुम मातृगणके साथ वाम अर्थात् वेदविरुद्ध भावसे पूजित होगो। तुम्हारे प्रमथगण मदमत्त चित्तसे म्लेच्छकी भांति घूमते फिरते हैं। इसलिये वह म्लेच्छरूपसे इस कामरूपमें वास करेंगे। हम शम-दम-गुणविशिष्ट, वेदपारग और तपोनिरत मुनि हैं। फिर भी महादेवने विवेचनाशून्य हो म्लेच्छकी भांति हमें भगानेको कहा है। इसलिये वह भी म्लेच्छकी भांति भस्म और अस्थि धारण कर इस कामरूपमें रहेंगे। फिर यह कामरूप-क्षेत्र अद्यावधि म्लेच्छपरिवृत होगा। जबतक स्वयं विष्णु यहां न आयेंगे, तब तक इसमें यही भाव दिखायेंगे। कामरूपके माहात्म्यप्रकाशक सकल तन्त्र विरल हो जायेंगे। फिर भी जो पण्डित विरलप्रचार

कामरूपतत्त्व समझेंगे, उन्हें यथाकाल सम्पूर्ण फल मिलेगी।

'यह अभिप्राय दे वशिष्ठके अन्तर्हित होते ही कामरूपमें समयमय म्लेच्छ बन गये। उग्रतारा वामा हुयीं। महादेव भी म्लेच्छवत् फिरने लगे। कामरूप माहात्म्य प्रकाशक समस्त तन्त्र विरलप्रचार हुये। सुतरां अचिरकालके मध्य कामरूप वेदसम्बन्धहीन और चतुर्वर्गशून्य बन गया। फिर कामरूपपीठमें विष्णुका आगमन हुआ। इससे कामरूपका शाप छूट गया। फिर वह सम्पूर्ण फल देने लगा। किन्तु देवता और मनुष्य पूर्ववत् उसका माहात्म्य समझ न सके। उसी समय ब्रह्माने एक कुण्ड और नदी छिपानेके लिये शान्तनुपत्नी अमोघाके गर्भसे एक जलमय पुत्र उत्पादन किया था। उस पुत्रने परशुराम* द्वारा अवनि भावमें अवतारित हो समुदाय कामरूपको जलमें डुबा दिया। सुतरां अन्यान्य तीर्थ गुप्त हो गये।

'जो अन्य किसी तीर्थका विषय न समझ केवल ब्रह्मपुत्रका ही माहात्म्य जानते और उसमें नहाते हैं वह केवल मात्र ब्रह्मपुत्रके स्नानसे ही सकल फल पाते हैं। फिर जो ब्रह्मपुत्रमें समस्त तीर्थोंका गुप्त भाव समझ कर नहाते हैं वे ब्राम समस्त तीर्थोंके स्नानका फललाभ करते,हैं। (कालिकापुराण ८१ अ)

उक्त विवरणके पाठक समझते हैं कि किसी समय कामरूपमें बहुत तीर्थ थे। आधुनिक यात्री भी कामरूपके नानास्थानोंमें पर्यटन करनेसे देखते हैं कि कामरूपके अनेक तीर्थ और अनेक पवित्र स्थान ब्रह्मपुत्रके गर्भमें रहे हैं। ब्रह्मपुत्र कामरूपके प्राचीन कीर्तिके साथ ही हिन्दुओंकी अनेक प्राचीन कीर्तियां भी खा गया है। योगिनीतन्त्रमें लिखा है,—

"देवीक्षेत्रं कामरूपं विद्यते न तत्समम्।
अन्यत्र विरला देवी कामरूपे गृहे गृहे॥"

कामरूप देवीक्षेत्र है। ऐसा स्थान दूसरा देख नहीं पड़ता। अन्यत्र देवीका दर्शनलाभ सुकठिन है। किन्तु कामरूपमें घर घर देवी विराजती है।

योगिनीतन्त्रके पाठसे भी कामरूप तीर्थका ऐसा ही परिचय मिलता है,—'महापीठ कामरूप अति गुह्य तीर्थ है। यहां महादेव पार्वतीके साथ नियत अवस्थान करते हैं। इस पीठमें शत नदी और कोटि लिङ्ग अवस्थित हैं। वायुकूटके पश्चिम सीमा पर चतुर्हस्त परिमित वायुरूपी अन्दका अवस्थान है। वायुगिरिके पूर्व ओर चन्द्रकूट शैल, मध्यभागमें भीदन्त और चन्द्रशैलके मध्यस्थलमें इन्द्रशैलके कुछ दक्षिण एवं चन्द्रशैलके कुछ उत्तर चन्द्रकुण्ड नामक सरोवर है। इस सरोवरके दक्षिणपश्चिमभागमें चार धनु परिमित मानसतीर्थ है। मानसके दक्षिणदिक् २८ धनु परिमित पञ्चतीर्थ है। उसके दक्षिण भागमें दस धनु परिमित अघमोचन नामक सरोवर है। भस्माचल पर्वतके दक्षिण और पश्चिमकोणांशमें अमृ-तान्ता नामक सरोवर भरा है। चन्द्रशैलसे गिरने वाले निर्झरको वाक्यो और इन्द्रशैलसे निकलनेवाले निर्झरको सरस्वती कहते हैं। वर्षाकाल अमृतान्ता तीर्थमें दोनों निर्झर मिल जाते हैं। इस लिये वह प्रयागतीर्थके तुल्य माना जाता है।

'इन तीर्थोंमें स्नान, दान और पूजादि काम करनेसे विविध पुण्यफल मिलता है। विशेषतः प्रयागतीर्थके तुल्य माना जानेसे अमृतान्ता तीर्थमें मस्तक मुण्डनादि कार्यका भी विधान है। इससे इहलोकमें यावतीय सुखसम्भोग और परलोकमें स्वर्गलाभ होता है।

(योगिनीतन्त्र २। ९ पटल)

'अमृतातीर्थके किञ्चित् पश्चिम चार आठ धनु परिमित स्थानमें सिद्धकुण्ड है। इस तीर्थके पश्चिम सर्पके निकट ६१ धनु-परिमित स्थानमें ब्रह्मघट तीर्थ है। इन्द्रकूटके उत्तर ८० धनु-परिमित रामशैल है। यहां भी एक कुण्ड विद्यमान है। रामतीर्थके ८ धनु दूरवर्ती पूर्वदिग्भागमें सीतातीर्थ है। सीतातीर्थके दक्षिण १० धनुपरिमित विजयतीर्थ है। यहां विजय नामक शिवलिङ्ग अवस्थित है। इसीके निकट योगतीर्थ है। यहां योगीश नामक शिवलिङ्ग अवि

---

* परशुराम [illegible] कुठार [illegible] है कि परशुरामने अपने कुठारसे इस स्थानमें ब्रह्मपुत्रका अवतारण किया था। अर्थात् उस स्थानका नाम "कुठारघाट" है। वह एक पवित्र तीर्थ है। [illegible] कुठारघाटके निकट [illegible] अवस्थित है।

ष्ठित है। उसके निकट २२ धनु परिमित मुक्ति-तीर्थ है। मुक्तितीर्थसे बहुत दूर हृतकुण्ड है। इन्द्रशैलके दक्षिण १२ धनु परिमित सूर्यतीर्थ है। यहां सूर्यदेव अदृश्य मूर्तिमें अवस्थान करते हैं। रामक्षेत्रके मध्य दो दुर्गकूप और एक ब्रह्मयूप देखते हैं। इन्द्रकूटमें मणिनाथ नामक महादेव अवस्थित हैं। सोमतीर्थकी शेष सीमा पर ५ धनुपरिमित नागतीर्थ है। चन्द्रशैलके उत्तर ६४ धनुपरिमित एक पर्वत अवस्थित है, उसके जलाशयका नाम गयाकुण्ड और तीरकी भूमिका नाम क्षेत्र है। पूर्वमें लौहित्य और उत्तरमें ब्रह्मयोनि पर्यन्त विस्तृत २२ धनुपरिमित स्थानको गयाशीर्ष वा गयातीर्थ कहते हैं।

'इन समुदाय तीर्थोंमें स्नान, दान, पूजा एवं प्रदक्षिण और गयातीर्थमें श्राद्धादि कार्य करनेसे अक्षय पुण्य मिलता है।' (योगिनीतन्त्र, २।४र्थ पटल)

'सोमशैलकी ईशानदिक् मणिशैल है। मणि-शैलके किञ्चित पूर्वांश ईशानकोणमें ७ धनु दूर वाराणसी नामक कुण्ड है। इस कुण्डका दैर्घ्य २२ धनु है। इसकी दक्षिण दिक् ५ धनु दूर २२ धनुपरिमित मणिकर्णिका नामक कुण्ड है। मणिशैलकी ईशान कोणमें मङ्गला नदी है। फिर दक्षिण दिक् कामेश्वरी, पश्चिम हयग्रीव, उत्तर कमललिङ्ग और पूर्व विरजा है। इस चतुःसीमाके मध्यस्थलमें तीन कोस परिमित स्थानका नाम मणिपीठ है। मानशैलके वायुकोणमें वराहपर्वत है। उसके पूर्व-दक्षिण भागमें नर-नारायण सरोवर है। इसके वायुकोणमें ८ धनुदूर वैनायक तीर्थ और १०० धनुपरिमित दीर्घ प्रभासतीर्थ है। प्रभासतीर्थके वायुकोणमें विन्दुसरः है। नाटका-चलके पूर्वभागमें मातङ्ग नामक पर्वत और अग्नि कोणमें हयाचल है। इस तीर्थको शिवका अन्तर्गृह कहते हैं। हयाचलके पूर्व और ईशानदिक्भागमें भस्माचल है। इसकी उत्तर ओर उर्वशी नामक तीर्थ है। उर्वशी तीर्थके पूर्व ओर सूर्यतीर्थ है। उससे ५ धनु दूरवर्ती पूर्व दिक्में कामाख्या सरोवर है। मदन तीर्थकी दक्षिण ओर गङ्गासरोवर तीर्थ है। गङ्गातीर्थसे ८ धनु दूरवर्ती दक्षिण दिक्में आगस्त्यतीर्थ है। इस आगस्त्य तीर्थके किञ्चित् पश्चिमांशमें अग्निकोण पर २१ धनुपरिमित स्थानमें वासव नाम क तीर्थ है। इसकी पश्चिम ओर अनतिदूरवर्ती ७ धनुपरिमित स्थानमें रम्भातीर्थ है। उसकी ३० धनुपरिमित दूरवर्ती पश्चिम दिक्में रुक्मिणी कुण्ड है। इस कुण्डके वायु-कोणमें ८ धनुपरिमित स्थान पर पितृतीर्थ है। उक्त भस्मशैलके अग्निकोणमें ८ धनु दूर पिशाचमोचन तीर्थ है। यहां कपर्दीश्वर नामक शिवलिङ्ग अवस्थित है। भस्मकूटके वायुकोणमें कपालमोचन तीर्थ है। यहां कपालेश्वर नामक शिवलिङ्ग अधिष्ठित है। कपालमोचनसे ५ धनु दूरवर्ती उत्तरको कपिला-तीर्थ है। इस स्थानमें वृषभध्वज नामक शिवलिङ्गका अवस्थान है। इस शिवलिङ्गके पश्चिमभागमें २२ धनु परिमित मातङ्गक्षेत्र है। मन्दर पर्वतकी ईशान ओर १६ धनु-परिमित चक्रतीर्थ है। चक्रतीर्थके पश्चिम नन्दन पर्वत है। इसका परिमाण ६२ धनु है। यहां बुद्धरूपी जनार्दनदेव अवस्थित हैं। मन्दर शैलके उत्तरांशमें ईशान कोणपर विरजातीर्थ है। गजशैलके दक्षिण-पश्चिम भागमें शौभलिङ्ग है। चक्रतीर्थके अग्निकोणमें २ धनु परिमित स्थान पर शौभलिङ्गतीर्थ है। इसीके निकट शुक्राचार्य-स्थापित शुक्रेश्वर नामक शिवलिङ्ग अधिष्ठित है।

'इन तीर्थोंमें स्नान, दान, पूजा, प्रदक्षिण और स्नान विशेषके समय श्राद्धादि करनेसे विशेष पुण्यलाभ होता है।' (योगिनीतन्त्र २।५म पटल)

'लौहित्यसे दक्षिण दिक् जाते वायुकोण पर कोल-पर्वत है। कोलपर्वतकी पश्चिम ओर पाण्डुनाथ है। उनके वायुकोणमें ब्रह्मकुण्ड नामक १२ धनु विस्तृत सरोवर है। इस सरोवरसे अनतिदूर दक्षिण दिक् धन्वन्तर कुल पर्यन्त विस्तृत विष्णुकुण्ड है। विष्णु-कुण्डके दक्षिणांशमें नैऋतकोणपर ११ धनुपरिमित शिवकुण्ड है। इसीके निकटवर्ती स्थानमें पाण्डुशैल है। पाण्डुशैलके ५ धनुदूरवर्ती नैऋतकोणमें चश्चल-विच्छिन्न धर्मक्षेत्र है। फिर इसी शैलसे ५ धनु दूरवर्ती पूर्वदिक्में स्वच्छाद्रति शिला है। यह

शिला उसी नामसे परिचित होती है। इसके अनतिदूर दक्षिणदिक्‌में ८ धनुपरिमित गोपपीठ है। इसी स्थान पर अश्वत्थके मूलमें विष्णुकी पाषाण मूर्ति विराजित है। ब्रह्मकुण्डके निकट श्रीकुण्ड नामक २ धनुपरिमित सरोवर है। उसकी पूर्व ओर २२ धनु दूरवर्ती स्थानमें अमृत नामक तीर्थ है। उसके दक्षिणदिग्भागमें मनोहर पर्वतके ऊपर ५ धनु परिमित कम्पेश्वरकी मूर्ति विराजित है। इस मूर्तिकी पूर्व ओर ८ धनुपरिमित पुष्करतीर्थ है। पुष्करकी नैर्ऋत ओर विदिक् वामभागमें १८ धनु परिमित बदरिकाश्रमतीर्थ है। यहां विमाण्डक नामक शिवलिङ्ग प्रतिष्ठित है। पुष्करके पूर्वभागमें कुमार नामक सरोवर है। यहां स्थाणु नामक महादेव हैं। उक्त कम्पेश्वरके नामानुसार ६२ धनुपरिमित स्थानमें एक वन है। वह कम्पवनके नामसे प्रसिद्ध है। गोलकूटको पूर्व ओर दुर्गाकूपसे १ धनु दूर आम्रातकेश्वर नामक महादेव हैं। आम्रातकेश्वरको दक्षिण ओर ८ धनु दूरवर्ती स्थानमें कृष्णवर्ण मत्स्याकार गजदेवकी मूर्ति है। उसको पूर्व ओर १ धनु दूर त्रिविक्रमकी मूर्ति विराजती है। इस मूर्तिसे १ धनु दूरवर्ती स्थानमें ३० हस्तपरिमित सौभाग्य सरोवर है। यह कामाख्या देवीका क्रीडा सरोवर कहाता है। इसीको ईशान ओर लोहित्य सरोवर, अग्निकुण्ड ओर वामनसरोवर है। सौभाग्य सरोवरसे ६ हस्त दूरवर्ती नैर्ऋत दिक्‌में महागौर है। इसके पश्चिमभागमें अगस्त्यकुण्ड है। इस कुण्डको पूर्व ओर कृष्णगिरिको पश्चिम ओर वराहतीर्थ है। इसके अग्निकोणमें कमठ नामक शिवकी मूर्ति अधिष्ठित है। अगस्त्यकुण्डको पश्चिम ओर धनि नदी है। उसमें पश्चिम वरुणा नदी बहती है।

'यह सकल स्थान श्रेष्ठ तीर्थ गिने जाते हैं। यहां यथाविधान पूजादि कार्य करनेसे अनन्त पुण्य होता है। (कालिका॰ ८१ अध्याय)

मानसतीर्थ नाम्नी महानदीकी उत्तर ओर २ धनु दूरवर्ती स्थानमें प्रेतशिला है। वासुदेवसे १८ धनु दूर पश्चिम ओर पञ्चकोण उत्तरतीर्थ है। आदि लिङ्गके दक्षिण चतुष्कोण शिवमूर्तिका नाम दक्षिण मानस है। कामनाथसे ७ धनु दूर पश्चिम ओर शोणेश्वरी देवी है। कामेश्वरदेवको उत्तर ओर १२ हस्त दूरवर्ती स्थानमें कामसरोवर है। कमलदेवको दक्षिण ओर ८ धनु दूरवर्ती स्थानमें कोटीश्वरी देवी है। गोकर्ण देवीसे २ धनु दूरवर्ती स्थानमें तीन धारा है। उनमें मध्यधारा सरस्वती, दक्षिण धारा वरुणा ओर उत्तर धारा यमुना कहाती है। त्रिधाराके सङ्गमस्थल पर आकाशगङ्गा है। उसकी उत्तर ओर अनतिदूर पद्मवर्ण वासुदेवकी मूर्ति है। कामेश्वरके पश्चाद्भागमें सिद्धेश्वरकी मूर्ति है। उसके निकटवर्ती स्थानमें कामारूढ़ है। सिद्धेश्वरके निकटवर्ती स्थानमें विन्ध्येश्वरी शिला है। उसको पूर्व उत्तर ओर १०० धनु दूर आकाशगङ्गाका चिह्न मिलता है। इसके दक्षिणभागमें गुरुदीर्घिका शिला है। यह शिला ललिताकान्ता कहाती है। इस स्थानमें नन्दिरूपी अश्वत्थ ओर उसके मूलदेशमें कूर्माकृति शिला है। इसके अनतिदूर व्यासतीर्थ ओर व्यासेश्वर-देवका अवस्थान है। व्यासतीर्थसे १० धनु दूर पूर्व ओर दक्षिणकालीकी देवीमूर्ति है। इसीको पूर्व ओर अनतिदूर ८ हस्त परिमित भुवनेश्वरकी मूर्ति है। उसके वायुकोण पर अवस्थानमें गदाधरकी मूर्ति है। गदाधरको अनतिदूरस्थ उच्चतम ग्रैवशिलाका नाम कलीय है। उसको पश्चिम ओर सदाशिव मूर्ति है। सदाशिवके निकटवर्ती स्थानमें जो गोविन्द पर्वतस्थित गोविन्दकी मूर्ति है। उसको पूर्व ओर ६ धनु परिमित रक्तवर्ण शिलाका नाम गवेशा है। उस शिलाक्षेत्रमें प्रकटा नाम्नी महानदी है। निम्ना उसको उत्तर ओर ६ धनु दूरवर्ती स्थानमें मदनाख्या है। गोवर्द्धनमें गोकुल नामक तीर्थ है। मानसाचलमें वृषध्वज नामक शिवकी मूर्ति ओर हंसतीर्थ सरोवर है। पाण्डुकूटसे निकलनेवाली धाराका नाम नर्मदा नदी है। शिव ओर विष्णुमूर्तिके मध्यवर्ती स्थानसे जो धारा चली, वह महानदी कहाती है। निम्न ओर उन उभयकी मध्यवर्ती धारा सङ्गमा नामसे विख्यात है। शिवका पश्चात् सौमारपथसे निःसृत

धाराको सरस्वती कहते हैं। मतङ्ग पर्वतकी धारा भी नर्मदा नामसे पुकारी जाती है। कामकुण्डकी धाराका नाम कामगङ्गा है। कामाख्याकी धारा गङ्गा कहाती है। नीलकुण्डकी धाराको उर्वशी कहते हैं। व्यासकुण्डकी धारा सुभद्रा नामसे अभिहित है। ब्रह्मशैलकी धाराका नाम चन्द्रभागा है। सोमकुण्डकी धारा उर्वशी नामसे प्रसिद्ध है। यमशैलकी धाराको वैतरणी और भण्डीशकी धाराको गोदावरी कहते हैं। धर्मारण्यके मध्य रामह्रद नामक तीर्थ है। उससे ३० धनु दूर उत्तर ओर कोटिलिङ्ग है। इसी लिङ्गके सम्मुख भागमें ब्रह्मयोनि है।

'वराह और कामके मध्यवर्ती स्थानमें अपुनर्भव चैत्र तथा अपुनर्भव नामक ८ धनुपरिमित सरोवर है। उसके उत्तर तीर भद्रकाश्य पर्वत है। इसी पर्वतमें पीतविस्ता और शोणच्युति शिला है। उसके ५ धनु दूरवर्ती स्थानमें अववीथी नामक क्षेत्र है। अपुनर्भवकी पूर्व ओर ८ धनु दूर ७ धनु विस्तृत वाराणसीकुण्ड है। उसकी पूर्व दिक् ५ धनु दीर्घ मार्कण्डेय ह्रद है। ह्रदके उत्तर तीर मार्कण्डेश्वर शिव हैं। गोकर्णसे अनतिदूर ब्रह्मसर: नामक कुण्ड है। उसकी पश्चिम दिक् शैलरूपी वराहदेव हैं। गोकर्णकी ईशान दिक् ३ धनु दूरवर्ती स्थान पर मदन पर्वत है। वहां केदार नामक महादेवकी मूर्ति विराजित है। केदारकी पश्चिम दिक् ब्रह्मवटवृक्ष है। केदारकी उत्तर दिक् ३ धनु दूरवर्ती पौष्पक नगरमें कमलाक्ष महादेव हैं। ब्रह्मवट नामक कल्पवृक्षसे ३ धनु दूर दक्षिणदिक्को छत्रकोर पर्वत है। इसीके मध्य देशमें मन्दार नामक उन्नत गिरि है। छत्रकोरकी पूर्व ओर मधुरिपुनामक विष्णुकी मूर्ति है। इसी पर्वतकी उत्तर दिक् २० धन दूर कपिलाश्रम है। वहां कपिलेश्वर देवता हैं। कपिलाश्रमकी पूर्व दिक् ११ धनु दूर पिशाचमोचन तीर्थ है। यहां कालभैरव देवता हैं। व्याघ्रेश्वरदेवकी ईशान दिक् १० धनुदूर कृत्तिवासेश्वर हैं। मदन पर्वतकी ईशान दिक् ३ धनु दूर वाणेश्वर, सप्तपातालभेदक और वल्लहत लिङ्ग हैं। वाणेश्वरके वायुकोणमें गरुड़लिङ्ग है। उसकी पश्चिम दिक् विष्णुका मन्दिर है। मणिकूटकी उत्तर दिक् वल्लभा नदी है। मणिकूटकी पूर्व दिक् अनतिदूर विष्णुका पुष्करतीर्थ है।

'यथाविधान इन तीर्थोंमें स्नान, दान, पूजा, प्रदक्षिण आदि कार्य करनेसे अक्षय पुण्य लाभ होता है।'

(योगिनीतन्त्र २। ७—८ पटल)

कालिकापुराण और योगिनीतन्त्रके पाठसे कामरूपके प्राचीन भूवृत्तान्तका बहुत परिचय मिलता है।

कालिकापुराणके मतानुसार कामरूपमें निम्नलिखित पर्वत विद्यमान हैं,—

१ चन्द्रगिरि, २ सुरस, ३ नील, ४ कृत्तिवासा, ५ सुतीक्ष्ण, ६ विभ्राट्, ७ शुभाचल, ८ धवल, ९ गन्धमादन, १० गोप्रान्त, ११ मणिकूट, १२ मदन, १३ दर्पण, १४ रोहण, १५ अग्निमान्, १६ कंसकर, १७ वायुकूट, १८ दुर्गाशैल, १९ चन्द्रकूट, २० आनन्द वा भस्माचल, २१ मत्स्यध्वज, २२ काम, २३ सुकान्तक, २४ रत्नकूट, २५ पाण्डुनाथ, २६ चित्रवह, २७ ब्रह्मगिरि, २८ कर्कट, २९ वराह, ३० अर्वाक्, ३१ कज्जल, ३२ दुर्जयगिरि, ३३ क्षोभक, ३४ सन्ध्याचल, ३५ भगवान्, ३६ शृङ्गाट, ३७ नाटक, ३८ हेम, ३९ भद्रकाश, ४० नन्दन। इनको छोड़ योगिनीतन्त्रमें निम्नलिखित पर्वत भी कहे हैं,—४१ मन्दशैल, ४२ विहगाचल, ४३, सर्पाचल, ४४ ब्रह्मयूप, ४५ विन्ध्याचल, ४६ मानशैल, ४७ शिवयूप, ४८ इन्द्रशैल, ४९ श्रीशैल, ५० मतङ्ग, ५१ हास्याचल, ५२ कोलपर्वत, ५३ हस्तिकर्ण, ५४ विकर्णक, ५५ अमाचल, ५६ द्युमन्त, ५७ कनक, ५८ नीललोहित, ५९ गन्धर्व, ६० पिशाच, ६१ आदित्य, ६२ भल्लातक, ६३ धनद, ६४ महेन्द्र, ६५ जनक, ६६ मल, ६७ मण्डल, ६८ यम, ६९ गोविन्द, ७० विल्वश्री, ७१ भण्डीश, ७२ छत्रक, ७३ परिपात्र, ७४ पूर्णशैल इत्यादि।

कालिकापुराणमें कामरूपकी निम्नलिखित नदियोंका नाम मिलता है,—

१ सुवर्णमानस, २ जटोद्भवा, ३ त्रिस्रोता, ४ सितप्रभा, ५ नवतोया, ६ योगदा, ७ महानदी, ८ बहु:

रोधा, ८ करतोया, १० भ्रमद्दा, ११ नन्दिका, १२ विधिका, १३ मतानन्दा, १४ सुभद्रा १५ भैरव भद्रा, १६ देवभद्रा, १७ मद्रा, १८ सुवर्ण, १९ मानसा, २० भैरवी २१ वर्णाशा २२ कुसुममालिनी, २३ चोटोदा २४ लोधा, २५ शिवाकाष्ठी वा नन्दिका, २६ चित्र चित्रोत्ता २७ दवदेविका २८ महारिका, २९ दिक्-रिका ३० सर्वमवा, ३१ सुवर्णश्री, ३२ कामा, ३३ सोमासना, ३४ हयोदका, ३५ श्वेतगंगा, ३६ काम नवा ३७ सीता, ३८ सुभद्रा, ३९ धाम्यती, ४० कनिष्ठिका, ४१ हव्यमान, ४२ कपिलवक्रिका, ४३ दमनिका ४४ दुधा ४५ कान्ता, ४६ नदिता, ४७ संध्या, ४८ दीपवती, ४९ घागर नद।

एतद्भिन्न योगिनीतन्त्रमें दूसरी भी कई नदियोंका नाम लिखा है— ५० चम्पावती, ५१ मानस, ५२ विचिद्रका, ५३ कर्कटे, ५४ कौरिका, ५५ ललता, ५६ पनाख्या, ५७ महला, ५८ नवका, ५९ कपिका ६० सरस्वती ६१ काञ्चनी, ६२ दिहु इत्यादि।

सुवर्णमानस, जटोद्भवा और चित्रोत्ता तीनों नदियां अपपार्वगुड़ो जिलेमें प्रवाहित हैं। सुवर्णमानसका वर्तमान नाम कर्णचोमी है। यहांके लोगोंमें काननोवो कहते हैं। यह नदी भोटानके पर्वतसे निकल ब्रह्मपुत्रमें जा मिली है। जटोद्भवा नदी भोटानके पर्वत पर उत्पन्न हो जटोदा नामसे जलपार्वगुड़ी जिले और कोचविहार राज्यके मध्य हो कर ब्रह्मपुत्रमें गिरी है। चित्रोत्ताका वर्तमान नाम तिस्ता है। इसके प्राचीन मार्गमें बहुत परिवर्तन हुआ है। आजकल यह सिकिमके पहाड़से निकल जलपार्वगुड़ी और रङ्गपुर जिलेके मध्य हो कर ब्रह्मपुत्रमें जा मिली है। इस नदीके धलतिपुर और गङ्गाके मध्य जलपार्वगुड़ी नगरसे प्रायः ८ कोस दूर जल्पीश नामक गुह्यपीठ है। कालिकापुराणमें कहा है,—

> "स्वयं कामस्य कामस्मै त्रिपुरान्तक।
> कामनी शिवस्तूपं जल्पीशाख्य अहत नम्॥"

कामरूपके वायुकोणमें महादेवने जल्पीश नामक अपना अद्भुत लिङ्ग दिखाया है।

> "जल्पेश्वरदीर्घ लिङ्गमद्भुतमिद।
> आइरश्च च सर्वं च दूर्वैश्वरणम्॥
> एव पुजयन् दीक्षी शर्वैव्रत्य अवायन।
> स्वयम्भुवा नदी यति ग्रहरगणार्द् यति॥"
> (कालिकापुराण ७७ अ)

यह जल्पीश नामक महादेव वाराणसीस्थ और कुन्दतुल्य श्रेष्ठ हैं। इन्हें नवपुरुषकी भांति पूजना चाहिये। जल्पीशका विषय लिखे पढ़ो गरुड़ मानस हो जाता, वह शिवलोक पाता है।

कालिकापुराणके मतमें नन्दीने महादेवको आरा-धना कर यहीं सशरीर मानवत्व पाया था।

जल्पीशदेवका मन्दिर प्रथम जल्पेश्वर नामक किसी राजाने बनवाया था। मुसलमानोंने प्राचीन मन्दिर तोड़ डाला। उसके पीछे कोचविहारके प्राण नारायणने (कोई २२१ वर्ष हुये) वर्तमान मन्दिर निर्माण कराया। आज वह मन्दिर पहिलेकासा सुन्दर नहीं रहा, खोल चकलामें पड़ा है। न मालूम कब यह भूमिसात् हो जायेगा। पहिले यहां बहुतसे यात्री आते थे। किन्तु अब वह समय नहीं है।

जल्पीशपीठसे धलतिपुर तलमा नदीके पास प्राचीन पृथुराजके नगरका ध्वंसावशेष पड़ा है। किसी समय यहां पृथुराजका राजभवन, दुर्गपरिखादि था। आज भी उसका निदर्शन देख पड़ता है। यह प्राचीन स्थान प्रत्नतत्त्वानुसन्धायियोंके देखने योग्य है।

इसके निकट कई छुद्र छुद्र नदी हैं। वही कालिकापुराणमें लिखी गई चित्रभा और नवताया समझ पड़ती हैं।

इससे थोड़ी दूर पाटग्राम नामक स्थानमें पाटेश्वरी देवीका प्रसिद्ध मन्दिर है। कोई कोई पाटेश्वरी देवीको ही कालिकापुराणमें उल्लिखित दिक्करी मानता है।

भैरवी नदीका वर्तमान नाम भरली है। यह पताकाद्रिके देशसे निकल ब्रह्मपुत्रमें पतित हुयी है।

वर्णाशा वर्तमान कामरूप जिलेमें उत्पन्न हो योगीघोपके निकट ब्रह्मपुत्रमें मिली है।

दवदेविका कामरूपमें प्रवाहित दुदुगुड़ो नदी है।

दिक्करिकाका वर्तमान नाम दिकराई है। यह नदी अका पहाड़से निकल दरङ्ग जिलेके मध्य हो कर ब्रह्मपुत्रमें जा गिरी है।

स्वर्णवहा वा सुवर्णश्री नदीका वर्तमान नाम सुवर्णसिरी या सोवनसिरी है। यह नदी लखीमपुर जिलेसे प्रवाहित हो ब्रह्मपुत्रमें मिली है। कामा लखीमपुर जिलेकी वर्तमान कारानदी है। यह भी ब्रह्मपुत्रमें मिल गयी है।

सोमासनोका वर्तमान नाम सिंसी है। यह लखीमपुर जिलेमें प्रवाहित है।

श्वेतगङ्गा वर्तमान सदियाके निकट प्रवाहित दिकराइ नदी है। इसीके निकट दिक्करवासिनीका प्राचीन मन्दिर है।

दिव्य यमुनाको आजकल केवल यमुना कहते हैं। यह नदी नागापहाड़से निकली है।

दमनिका उक्त यमुना नदीके पूर्व प्रवाहित है। आजकल यह दिमोना नामसे प्रसिद्ध है।

कलिङ्गिका नौगांव जिलेकी कलङ्ग नदी है। यह ब्रह्मपुत्रमें पतित हुयी है।

कपिलगङ्गिका वा कपिलाको आजकल कपिली कहते हैं। यह जयन्ती पहाड़से निकल ब्रह्मपुत्रमें गिरी है।

वृहगङ्गा दरङ्ग जिलेकी वडगङ्ग नदी है।

दीपवती दरङ्ग जिलेकी दीपोता नदी है।

दिक्षुनदीका वर्तमान नाम दीखू है। यह शिवसागरके निकट ब्रह्मपुत्रमें मिली है। योगिनीतन्त्रके मतमें यही नदी प्राचीन कामरूपकी पूर्व सीमा थी।

चम्पावती ग्वालपाड़े जिलेमें प्रवाहित वर्तमान चम्पामती नदी है। इसके दक्षिणांशका नाम गदाधर है।

मानसा ग्वालपाड़े जिलेकी मानहा नदी है।

पिच्छिला दरङ्ग जिलेकी पिछला नदी है। यह विश्वनाथके निकट ब्रह्मपुत्रमें गिरी है।

हीरिका नदीका वर्तमान नाम डिलिक है। यह शिवसागर जिलेसे वह लखीमपुर जिलेके मध्य हो कर ब्रह्मपुत्रमें मिली है।

धनदा आजकल धनेश्वरी कहाती है। यह नागा पहाड़से निकल ब्रह्मपुत्रमें पतित हुयी है। यही श्रीपीठकी पश्चिम सीमा है।

इतिहास

आसामकी बुरञ्जीमें लिखा है कि—महीरङ्ग नामक एक दानव कामरूपके अति प्राचीन राजा थे। इस बातका कोई विशेष विवरण नहीं मिलता—यह दानव कौन थे और कैसे या किस तरह उनके शासनमें कामरूप आया।

महीरङ्गवंशके पीछे नरकासुर कामरूपके राजपद पर प्रतिष्ठित हुये। कालिकापुराणके ३६वें से लेकर ४०वें अध्याय तक यह सम्यक् रूपसे विवृत है—नरकासुर कौन थे और कैसे कामरूपके राजपद पर बैठे। (उनके विशेष विवरणमें लिखा कि भगवान् विष्णुकी कृपासे उन्हें कामरूपका राजत्व मिला।) नरकासुरकी कीर्ति अद्यापि कामरूपमें देख पड़ती है। नरकासुर और कामाख्याके सम्पर्कमें निम्नलिखित कई किंवदन्ती प्रचलित है,—

नरकासुरने किसी समय स्वीय आसुरिक दर्पमें उन्मत्त हो भगवती कामाख्यासे विवाह करनेका प्रस्ताव उठाया था। उस समय भगवती कामाख्याका मन्दिरादि बना न था। अति सामान्य भावसे अरण्यके मध्य पीठस्थानमात्र था। नरकका प्रस्ताव सुन भगवतीने कहा,—'यदि आप एक रातमें हमारा मन्दिर, मार्ग, पुष्करिणी इत्यादि समस्त निर्माण कर सकें तो हम आपकी पति बना सकती हैं। नरकने उसी समय विश्वकर्माको बुला उनके साहाय्यसे रात्रि-समाप्त होनेसे पहिले ही प्रायः समस्त कार्य सम्पन्न करा दिया। भगवतीने देखा,—'महाविपद् आ पड़ी। अब हमें असुरकी भार्या बनना पड़ेगा।' इस प्रकार चिन्ताकर उन्होंने एक मायारूपी कुक्कुट बनाया। नरकके कार्यसमाप्त होनेसे कुछ पहिले ही वह अपना प्रातःकालीन ध्वनि सुनाने लगा। कुक्कुटध्वनि होते ही भगवतीने नरकसे कहा,—'कार्यशेष होनेसे पहले ही कुक्कुट बोलने लगा। रात्रि बीत गई। प्रभात हुआ। हम आपको वरण करने पर प्रस्तुत नहीं हो सकती।' भगवतीके वाक्यसे क्रोधान्ध हो नरकने उस कुक्कुटको मार डाला था। कुक्कुटके मारे जानेका स्थान आजकल भी "कुक्कुराकाटाचकी" नामसे प्रसिद्ध

है। उसके पहिले नरकासुरके ही उस समय भगवती कामाख्याका मन्दिर बनवाया था।

रामायणके समय कामरूप (प्राग्ज्योतिषपुर)के शासनकर्ता नरकासुर थे। सीताकी ढूंढ़नेके लिये सुग्रीवने वानरादि सब देशों और दिशाओंमें भेजे थे। एक वानर कामरूपमें भी था पहुँचा। वानरराज सुग्रीवने उस समय कामरूपका ऐसा परिचय दिया था—

"[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]"

(किष्किन्धाकाण्ड ४२ सर्ग)

वर्तमान गौहाटीमें नरककी राजधानी थी।* गौहाटीके पश्चिम दक्षिण भागमें गोनावतीके निकट नरकासुर नामक क्षुद्र पर्वत भी है।

नरकासुरके पीछे भगवान् श्रीकृष्णने उसके पुत्र भगदत्तको कामरूपके सिंहासन पर बैठाया था। पूर्वदिक् चीनदेश और दक्षिण समुद्र पर्यन्त भगदत्तने [illegible] विस्तार किया। महाभारतके सभापर्वमें अर्जुनके दिग्विजय पर भगदत्तका विषय इस प्रकार लिखित है—

"स किरातैश्च चीनैश्च वृतः प्राग्ज्योतिषोऽभवत्।
अन्यैश्च बहुभिर्योधैः सागरानूपवासिभिः॥"

उन्होंने किरात, चीन और समुद्रतीरवर्ती राजाओंसे परिवृत हो अर्जुनके साथ युद्ध किया था।

कुरुक्षेत्रमें युद्धके समय भी भगदत्तने चीन और किरातकी सेनासे दुर्योधनको साहाय्य दिया था। [illegible] कालमें नरकको भौम, कामरूपेश्वरको [illegible] अधिप और कामरूपके अन्तर्गत देशोंको भौमदेश लिखा गया है। प्राचीन कामरूपदेशका भी किसी किसी ग्रन्थमें सौमारपीठ नाम मिलता है। इसका कारण कामरूप तीर्थविवरणके प्रारम्भमें दे दिया है।

---

* गौहाटीका ही प्राचीन नाम प्राग्ज्योतिषपुर था।
"प्राग्ज्योतिषपुरं [illegible]"
([illegible], [illegible])

योगिनीतन्त्रमें कामरूपके राज्यविस्तार पर इस प्रकार भविष्यवाणी लिखी है—

"[illegible]"

ग्रामवर्त्ती कामाख्या देवी सहायस्वरूप होंगे। शिष्ट विस्तारपूर्वक योगिनियोंके साथ पर्वतके शिखर पर चढ़ कर उनका शोणित पान करेंगे। कुमार (कोच) इस युद्धमें तीन दश दिन वास कर म्लेच्छको छोड़ जायेंगे। इसके पीछे कामरूपपीठमें ब्राह्मण राजा होंगे। राज्यमें सब प्रजादिको पूजा और जप प्रभृति कार्यमें लगा देंगे। इसी प्रकार वह तीन वर्ष राज्यशासन करेंगे। फिर ब्राह्मणराजा योनिमण्डलके निकटवर्ती स्थानमें वासस्थान ठहरा क्रम क्रमसे पञ्चनदको राजा बन बैठेंगे। इस राजाकी पत्नी श्यामवर्णा होगी। पति और पत्नी दोनों सर्वदा पार्वतीकी आराधनामें रत रह यथाकाल सचित नामक एक पुत्र लाभ करेंगे। इस पुत्रके जन्मसे बारह दिन पर्यन्त कर्णाचल पर्वतसे कामरूपिका आविर्भाव होगा। उससे कामरूपवासी सब धनी बन जायेंगे। फिर इसी समय कलिक शक्तिका अधिकार छूटेगा।

१६श शताब्दके प्रारम्भमें कोचविहार राजवंशके मूलपुरुष विश्वमोघ विश्वसिंहने पराक्रमता बढ़ायी थी। कोचसम्भूत हाजो नामक किसी व्यक्तिके हीरा और जीरा नामको दो परमसुन्दरी कन्या रहीं। कामरूप पराजय होते समय कोच निकटवर्ती अन्यान्य इतर लोगोंको वशीभूत कर कुछ पराक्रान्त बन गये थे। पराक्रममें कोचोंके मध्य हाजो अग्रणी रहे। प्रवादानुसार महादेवके औरससे हीराके गर्भमें शिशु या शिवसिंहने और जीराके गर्भमें शिशु या शिव सिंहने जन्म लिया था।* बुकानन हैमिल्टनके। ई० १६वें शताब्दके प्रारम्भ पर जो विश्वसिंहने कोचविहारमें राजत्व किया। विश्वसिंहने मुसलमानोंके द्वारा विध्वस्त कामतापुर राज्य छुड़ा लिया था। आधुनिक पुरावृत्तके मतमें उन्होंने १४२०,१० शक (१४९८-१५०८ ई०)के मध्य कामरूप अधिकार किया। उसके पहले कामरूपमें थोड़े दिन मुसलमानोंका राजत्व रहा।

हुसेनशाहके पुत्र शासनकर्ता थे। किन्तु उस समय कोचोंका बड़ा उत्पात रहनेसे हुसेनशाहके पुत्र नसरत शाह कामरूप छोड़ने पर बाध्य हुये। विश्वसिंहने उसी सुयोगमें पराजित मुसलमानोंका भग्न राज्य अधिकार किया था। उन्होंने अति पराक्रमके साथ १५२८ ई० तक राजत्व चलाया। उन्हींके राजत्वकालमें लुप्त कामाख्यापीठका उद्धारसाधन किया गया था। फिर कामाख्याके अनुवर्ती अनेक पीठस्थान आविष्कृत भी हुये। कोचविहारके प्रकृतपक्षमें राजा होते भी कामरूप उस समय विश्वसिंहके आयत्ताधीन था। कामरूपकी सीमा कोचविहार तक पहुंची हुई थी। विश्वसिंहके समय अहोमोंने ब्रह्मनिवास पर आक्रमण किया। विश्वसिंहने सैन्य भेज आक्रमण हटाया था। किन्तु उनके सैन्यदलके उक्त स्थान छोड़ने को फिर अहोमोंने उत्पात उठाया। सुतरां विश्वसिंहने बाध्य हो उनसे सन्धि की थी। उसी समय राङ्गनदी कामरूप और विहार राज्यकी पूर्वसीमा माना गया।

विश्वसिंहने जिमवया प्रभृति स्थानोंके सबल जमतावाले विख्यात लोगोंको वशीभूत कर लिया था। फिर उन्होंने कपास तांबे, रांगे, सीसे, रूप, सोने चांदी, लाख, मिट्टी, नमक वगैरह पर कर लगा राज्यका आय बढ़ाया। उन्हींके समय माड़ान वाले सर्वदा उपद्रव उठाया करते थे। उस समय भोटानमें देवराज राजा थे। विश्वसिंहने उनके साथ सन्धि की। राज्यके सीमान्त प्रदेशमें शान्ति रखनेके लिये विश्वसिंहके सिपाही नियुक्त थे।

विश्वसिंहके १८ सन्तान रहे। उनमें नरनारायण सर्वज्येष्ठ थे। उनको ही सिंहासन मिला। उनके परवर्ती कनिष्ठ भ्राता शिवाराय वा शुक्लध्वज राज्यके दीवान या सेनापति बने। नरनारायणने महादेवीके भ्राता रामरायकी कन्या कमलप्रिया आदिसे विवाह किया था। किसी किसीके कथनानुसार शुक्लध्वजको

* [illegible] हाजो [illegible] ... [illegible] लिखा [illegible] है। [illegible]

* [illegible] कहते हैं। [illegible]

कमलप्रियासे विवाह हुवा। विवाहके स्थानको आज भी "रामरायकी कोठी" कहते हैं। ग्वालपाडा जिलेके मुक्षा परगनेमें उक्त स्थान विद्यमान है। वहां मेला भी लगता है। कमलनारायण नामक किसी दूसरे कुमारने भी भाटान और आसामके मध्य ब्रह्मपुत्रके उत्तर किनारे एक बांध बांधा था। उस बांधका नाम "गोसाईं कमलकी आलि" है। लखीमपुर और जलपाईगुडीके मध्य अनेक स्थलोंमें उसके चिह्न आज भी वर्तमान हैं। उस समय सजन वा सुजन ग्राममें पण्डित रामखान् भूंया नामक एक राजा थे। उन्होंने चुपके चुपके विद्रोहकी आग सुलगायी। किन्तु अन्तको भय देख उन्हें भागना पड़ा।

आसामकी बुरञ्जी और अन्यान्य इतिहासके मतानुसार विश्वसिंहके बडे पुत्र नरनारायण और छोटे शुक्लध्वज वा चिलाराय थे। किन्तु रामसरस्वती पण्डित-प्रणीत ग्रन्थमें लिखा है,—

विश्वसिंहके यशोसिंह नामक एक पुत्र थे। यशोसिंह अल्प वयसमें लोकान्तर प्राप्त हुये। उनकी कन्याके गर्भसे (ठीक नहीं किसके औरससे) अपुत्रक विश्वसिंह राजाके परम सुन्दर रूपवान् एक दौहित्रका जन्म हुवा। पण्डितोंने उसका नाम नारायण रख दिया।

उक्त नारायण और उनके भ्राता शुक्लध्वज (चिलाराय)का नाम कामरूपमें सविशेष प्रसिद्ध है। महाराज नरनारायण अधिक क्षमताशाली थे। उन्होंने विदेशियोंके हाथसे सम्पूर्णरूप उद्धार कर कामरूपकी बहुत उन्नति की। महाराज नरनारायणका दूसरा नाम मल्लदेव वा मल्लनारायण था। उनके समय पुरुषोत्तम विद्यावागीशने संस्कृत रत्नमाला व्याकरण बनाया।* वह आजकल आसाममें प्रचलित है।

हिन्दूधर्मविद्वेषी विख्यात कालापहाड़ † १५६४ या १५६६ ई०को भगवती कामाख्या देवीका मन्दिर तोडने गया था। कोचविहारमें उस समय महाराज नरनारायण राजा थे। कालापहाडके पराक्रमसे सम्भवतः हो उन्होंने सन्धि की। कालापहाड भगवतीका मन्दिर तोड और पीठस्थानवर्ती सुन्दर सुन्दर अन्यान्य प्रतिमूर्ति बिगाड़ स्वदेशको लौट गया। महाराजने अपने भ्राताके साथ भगवतीके मन्दिरादिका पुनः संस्कार किया। कमसे कम बारह वर्षमें उक्त जीर्ण संस्कारका कार्य सुसम्पन्न हुवा था। कामाख्या मन्दिरकी वर्तमान (चलन्ता) मूर्ति (जो साधारणतः सरकायी जाती है) महाराज नरनारायणकी बनायी है। वर्तमान मन्दिरके मध्यभागमें ही महाराज नरनारायण और उनके भ्राता शुक्लध्वजकी प्रस्तर खोदित सुन्दर दो प्रतिमूर्तियां अद्यापि वर्तमान हैं।

महाराज नरनारायण और शुक्लध्वज महामायाके परम भक्त थे। भगवती भी उन पर यथेष्ट अनुग्रह रखती थीं। महाराज कोचविहारसे विप्र ब्राह्मण ले जाकर भगवतीको पूजा आदि निर्वाह करते थे। केन्दुकलाई नामक कामाख्याके एक पुजारी ब्राह्मण, महाराज नरनारायण और शुक्लध्वजके सम्बन्ध पर कामरूपमें अद्यापि निम्नलिखित जनप्रवाद प्रचलित है—सन्ध्याको केन्दुकलाईके आरति करते समय भगवती सुख हो घण्टा वाद्यके ताल ताल पर नृत्य करती थीं। महाराज नरनारायणने यह सुन केन्दुकलाईसे भगवतीको चैतन्य मूर्ति देखनेका उपाय पूछा। उन्होंने कहा कि घण्टा बजते समय सन्ध्याको किसी रन्ध्रसे देखने पर उन्हें भगवतीकी चैतन्य मूर्तिका दर्शन होगा। महाराजने उक्त परामर्शके अनुसार एक दिन जाकर भगवतीको देखा था। दैवात् भगवतीको यह बात मालूम हो गयी। उन्होंने केन्दुकलाईका सिर काट महाराज नरनारायणको शाप दिया,—'भविष्यत्में तुम और तुम्हारे वंशका कोई भी हमारा दर्शन कर न सकेगा। मन्दिरकी ओर देखनेसे शिरश्छेद होगा।' उक्त शापके भयसे आज भी कोचविहार, बिजनी, दरङ्ग इत्यादि शिववंशी राजपरिवार कामाख्याके मन्दिरकी ओर प्रायः जाते

* "श्रीमल्लदेवस्य गुणैकसिन्धोर्महीमहेन्द्रस्य यथा निदेशम्।
यस्मात् प्रयोगोत्तमरत्नमाला वितन्यते श्रीपुरुषोत्तमेन॥" (रत्नमाला)
आधुनिक बुरञ्जीके मतमें १४८० शकको रत्नमाला बनी थी।

† कामरूप अञ्चलमें कालापाहाड़को "पोराकुठार" "पोराकुठार" और "कालाकुठार" भी कहते हैं।

-वाहि मांस नहीं उठाता। किसी कार्यवश कामाख्या की ओर गमन करते समय कपड़ेसे मुंह छिपा लेते हैं।

मृत्युके पीछे विश्वसिंहका राज्य नरनारायण और शुक्लध्वज दोनों पुत्रोंके मध्य बंटा था। नरनारायणको सङ्कोषोंके पश्चिम ओर और शुक्लध्वजको उसके पूर्व ओरका समस्त राज्य मिला। शुक्लध्वजके वंशमें ही ब्रह्मपुत्रके उभय तीरका भूभाग पड़ा। सुतरां कामरूपमें भी इन्होंका अधिकार था।

शुक्लध्वजके पीछे उनके पुत्र रघुदेवनारायण राजा हुवे। उनके दो पुत्रोंमें ज्येष्ठ परीक्षित् थे। कनिष्ठ का नाम ज्ञात नहीं। उन्हें जागीरकी भांति दरङ्ग प्रदेश मिला था। उनके वंशधर आज भी आसामी राजाओंके अधीन उक्त प्रदेश अधिकार करते हैं। परीक्षित्ने समय राज्यके अधीश्वर हो गिलाभाङ्ग नामक स्थानमें प्रासाद बनाया। वहां राजप्रासादका भग्नावशेष आज भी देख पड़ता है। प्रासादके निकट ही १८ कुण्ड भी बने हैं। उनको रक्षाके लिये ७०० वेदपारग ब्राह्मण उपस्थित रहते थे। फिर उस नगरमें ही ब्राह्मणोंका आवास था। परीक्षित्के ही समयमें ढाकेके मुसलमान शासनकर्ताने मुगलसम्राट्के प्रतिनिधित्वमें राजस्व मांगा था। फिर उन्होंने सताना भी शुरू किया। परीक्षित्ने भीत हो मन्त्रियोंसे परामर्श किया था। फिर वह सम्राट्के पास आगरे गये। वहां सम्राट्ने उन्हें दरबारमें सादर ग्रहण किया। ढाकेके नवाब पर आदेश हुआ कि परीक्षित् जितना रुपया राजस्वमें दें उतना ही वह ले ले, कोई दिरुक्ति न करे। राजाने लौट कर मरन भयसे नवाबको दो करोड़ रुपये देने कहा। उनके मन्त्रीने यह सुन मुसलमानोंके चक्रान्त अर्थ लोभकी बात बतायी। इससे वह महाभीत हो गये। शीघ्र परामर्श करने पर स्थिर हुआ कि एक बार वह फिर सम्राट्के दरबारमें जा भ्रम संशोधन कर आते। उसी समय मन्त्री भी साथ हो गये। किन्तु दुर्भाग्यवशसे जाते समय पटनेमें (किसीके मतानुसार राजमहलमें) राजा परीक्षित् मर गये। इसी सुयोगमें नवाबकी फौजने प्रतिश्रुत अर्थके लोभसे राज्य पर अधिकार कर लिया। परीक्षित्के मन्त्री अनेक कष्टसे सम्राट्के दरबारमें पहुंचे थे। उन्होंने जा कर समस्त विवरण निवेदन किया। सम्राट्ने उन्हें कानूनगोके पद पर नियुक्त कर दिया था। उस समय यह राज्य चार सरकारोंमें बंट गया—ब्रह्मपुत्रके उत्तर उत्तरकूल या ढेंकेरी सरकार, दक्षिण दक्षिणकूल, पश्चिम बङ्गाल सरकार और गौहाटीके साथ कामरूप सरकार। परीक्षित्का भ्रातराज्य दरङ्ग उन्हींके वंशमें रहा। परीक्षित्के पुत्र चन्द्रनारायणने एक बड़ी जमींदारी भी पायी थी। वह जमींदारी आज भी उनके वंशीय भोगते हैं। प्राचीन मन्त्री (नये कानूनगो)का भी उनके लिये बहुतसी जमींदारी मिली। यह घटना प्रायः १६०२ ई०में हुयी थी। एक मुसलमान फौजदार नियुक्त हो रांगामाटी नामक स्थानमें रहने लगे। फिर राजा मानसिंहके बङ्गाल बिहारके नवाब होते समय इस देशकी विशेष उन्नति हुयी। औरङ्गजेबके समय मीरजुमला सैन्यदल ले आसाम जय करने आये थे। उनके पीछे कामरूपराज्यके उक्त अंशके कामरूप, उत्तरकूल और दक्षिणकूल सरकारका कुछ भाग आसामपति राजाओंके अधिकारमें चला गया। इस घटनाके ७० वर्ष पीछे रांगामाटीकी फौजदारी उठ घोड़ाघाटमें स्थापित हुयी।

मीरजुमलाके आक्रमणके पीछे आसामके राजाओंने दिल्लीश्वरसे सन्धि किया था। फिर वह नाममात्र फौजदारकी अधीनता मान राजत्व करने लगे।

नरनारायण और शुक्लध्वज उभयके मध्य राज्य-विभागकी बात पहले लिख चुके हैं। किन्तु शुक्लध्वजके जीवित कालमें राज्यविभाग हुवा न था। शुक्लध्वजके मरनेके पीछे नारायण अपुत्रक थे। इसीसे उन्होंने शुक्लध्वजके पुत्र रघुदेव नारायणको पोष्यपुत्र भाव ग्रहण किया। उसके कुछ दिन पीछे उनके एक पुत्र हुवा। रघुदेवको उनसे भविष्यत्में राज्यप्राप्तिकी आशा न रही। इससे वह भीतर ही भीतर विद्रोहाचरणमें प्रवृत्त हुवे। अन्तमें

नारायणको सब बात मालूम हो गयी। फिर रघुदेव भाग कर पूर्वांञ्चलके शत्रुओंसे मिले और उनका सैन्य ले ज्येष्ठभ्राताके राज्य आक्रमणार्थ आ पहुंचे। नारायण भी स्वराज्य रक्षणार्थ ससैन्य अग्रसर हुये। स्वर्णकोषी नदीके पूर्व पार रघुदेव और पश्चिम पार नारायणकी छावनी पडी थी। नारायण स्वयं अश्वारोही सैन्य ले आगे बढ़े। रघुदेव भीत हो ससैन्य भागे थे। नारायणने आक्षेप कर कहा,—"दुःख है कि हम राज्य देनेके लिये ही आये थे। किन्तु वह बात न हुयी। इस लिये यह नदी ही अब दोनों राज्य सीमा रहेगी।" आधुनिक आसामको बुरञ्जीके मतमें उक्त घटना १५०४ शकको हुयी थी। रघुदेवके राज्यकी सीमा पश्चिम स्वर्णकोषी एवं पूर्व दिकराई और नारायणके राज्यकी सीमा पूर्व स्वर्णकोषी पश्चिम करतोया थी। रघुदेवने ग्वालपाडे जिलेके खीयार परगनेमें आधुनिक गौरीपुर नगरसे १० मील दूर गदाधरनदीके तीर नगर स्थापन किया था।

शुक्लध्वजके जीते समय कामाख्याका मन्दिर फिरसे बना था। मन्दिर समाप्त होनेमें १० वर्ष लगे। किसी पश्चिमी हिन्दुस्थानीने उसे बनाया था। मन्दिरके पूर्व द्वारके सम्मुख उक्त केन्दुकलाई पुरोहितके छिन्न मुण्डकी प्रतिमूर्ति वर्तमान है। शुक्लध्वजके जीवित कालमें नरनारायण एक बार शनिग्रस्त हुये थे। ज्योतिषियोंने गणना कर उक्त कथा कह दी। फिर नरनारायणने शुक्लध्वजको राज्यका प्रतिनिधि बना तीर्थयात्रा की थी। प्रायः एक वर्ष पीछे वह लौटे। उक्त भ्रमणके समय आसामराज्यके श्वेतहस्ती पर उनको लोभ बढा। शुक्लध्वजको यह खबर लग गयी। वह भ्राताकी तृप्तिके लिये आसामराजको युद्धमें परास्त कर हाथी ले आये थे। अनेकोंके कथनानुसार उक्त घटनासे ही उनका नाम "शुक्लध्वज" हुवा।

आधुनिक बुरञ्जीके मतमें १५०६ शकको नरनारायण मरे थे। फिर उनके पुत्र लक्ष्मीनारायणको राज्य मिला। स्वर्णकोषीसे महानन्दा और सरकार घोडाघाट तथा भोटानके दक्षिणस्थ पार्वत्य प्रदेश तक समस्त भूभाग उनके राज्यके अन्तर्भूत था। उक्त राज्य पश्चिमोत्तरसे दक्षिणपूर्व तक ८० मील दीर्घ और पूर्वोत्तरसे दक्षिणपश्चिम तक ६० मील विस्तृत रहा। उत्तर पश्चिममें कछटा सीमान्त प्रदेश गिरसिंह (उक्त जीरा और जीराके मध्य जीराके पुत्र) के सन्तानोंको दिया गया। लक्ष्मीनारायण अपने राज्यको पहलेसे ही "विहार" कहते थे। कारण शिव हीरा और जीराके साथ विहार करते थे। किन्तु मध्यदेशके वर्तमान विहार (पटना) प्रदेशसे स्वतंत्रता दिखानेके लिये "कोचविहार" नाम रक्खा गया।

आईन-अकबरीके अनुसार लक्ष्मीनारायणने अकबरकी वश्यता मानी था। उनके समय राज्यकी सीमा उत्तरमें तिब्बत, दक्षिणमें घोडाघाट, पश्चिममें त्रिहुत और पूर्वमें ब्रह्मपुत्र थी। भूमिका परिमाणफल दैर्घ्यमें प्रायः २०० कोस रहा। उनके ४००० अश्वारोही सैन्य, २ लाख पदाति, ७०० हस्ती और १००० जहाज थे। फिर आईन-अकबरीमें लक्ष्मीनारायणके पिताका नाम शुक्लगोस्वामी लिखा है। शुक्लगोस्वामी नहीं, उनके कनिष्ठ भ्राता बालगोस्वामी राजा थे। उन्होंने विवाह न किया था। इससे उनके सन्तान कोई न था। बालगोस्वामी अति सुविज्ञ राजा थे। उन्होंने अपने भ्रातुष्पुत्र पाटकुमारको राज्याधिकारी ठहराया। शुक्लगोस्वामीने दूसरा विवाह किया था। उसीसे लक्ष्मीनारायणका जन्म हुआ। पाटकुमार विद्रोही बने थे। उसी समय मानसिंह बङ्गालेके नवाब रहे। लक्ष्मीनारायणने मानसिंहसे सम्राट्के निकट परिचित होनेका प्रार्थना की। किन्तु मानसिंहने वह बात न सुना। मानसिंहने उनकी एक कन्याका पाणिग्रहण किया था। बालगोस्वामीने १५७८ ई० को एक बार बङ्गालके नवाबकी अधीनता मान दरबारमें ५४ हाथियोंके साथ विस्तर उपढौकन दिया। लक्ष्मीनारायण १५८६ ई०में राजत्व करते थे।

तारीख-जहांगीरीके अनुसार लक्ष्मीनारायणने १६१८ ई०को गुजरातकी राजसभामें ५०० अशरफी नज़र भेजी थीं।

बादशाहनामेको देखते जहांगीरके समय परीक्षित्

नारायण कोचराजके प्रदेशमें और लक्ष्मीनारायण कोचविहारमें राजत्व करते थे। पादशाहनामामें लक्ष्मीनारायणको परीचित्‌के पितामहका सहोदर बतलाया है। जहांगीरके राजत्वके ८म वर्षे सुसङ्गके राजा रघुनाथने परीचित्‌के विरुद्ध दरबारमें अभियोग लगाया कि उन्होंने उनके परिवारवर्गका अवरोध किया था। शेख अला-उद्-दीन फतिहपुरी इसलाम खान् उस समय बङ्गालके नवाब रहे। उन्होंने मकरम खान्‌को कोचराजको जीतने भेजा था। लक्ष्मीनारायणने मुसलमानोंके पक्ष पर साथ दिया। युद्धमें पराजित हो परीचित्‌ने आत्मसमर्पण किया था। फिर उनके भ्राता बलदेवने अहोमराज स्वर्गदेवका आश्रय लिया। उसके पीछे परीचित् सम्राट्‌के आदेशानुसार दिल्ली भेजे गये और मकरम खान् हाजोके शासनकर्ता नियुक्त हुये।

बलदेव आसामराजको सहायतासे हाजोके उद्धारार्थ यत्न करने लगे। अहोमराज कोच अधीनता स्वीकार करा उनका साहाय्य करने पर प्रतिश्रुत हुये। मकरमखान् उसी समय शासनकर्तृत्वसे हटे थे। उनके स्थान पर कोई नूतन शासनकर्ता आनेवाला था। इसी अवसरमें सुयोग देख बलदेवने दरङ्ग अधिकार किया। उस समय इस देशमें बङ्गालके नवाबकी ओरसे हाजो घेराकी रक्षा करनेको जागीरदार पायक रहते थे। कासिम खान्‌ने बङ्गालके नवाब रहते समय बहुत दिन तक पायिकोंकी आमदनी न पायी थी। उन्होंने हाजो घेराके सरदारोंको उपस्थित होनेका आदेश किया। उपस्थित होने पर नवाबने उन्हें बन्दी बनाया। इसमें सन्तोष और सवरामने भाग कर आसामराज स्वर्गदेवका आश्रय लिया था। फिर इसलाम खान् नवाब हुये। उस समय पाण्डुके अन्यतम जागीरदार शत्रुजित् बलदेवसे मिल गये। उन्होंने उनको हाजोके शासनकर्ताके विरुद्ध युद्ध करनेके लिये गोपनमें परामर्श दिया था। बलदेव कोचों और आसामियोंका सैन्य ले युद्ध करनेको उपस्थित हुये। १६३६ ई०को इसलाम खान्‌ने यह बात सुनी। उन्होंने कई मनसबदारोंको १००० सवार, १००० बन्दूकवाले पैदल, १० घराब नामक नौका, २०० कोसा* नौका और बहुसंख्यक असबाब नौकायें साथ भेजा था। श्रीघाट और पाण्डुके निकट महायुद्ध हुआ। उभय पक्षमें मारने और घायल होने भी युद्ध चलता रहा। इसलाम खान्‌ने फिर विपुल सैन्य भेज दिया। किन्तु उसी समय फिर आसामोंने पथ रोकका यत्न किया था। इससे मुसलमानोंकी सेनाकी रसद बन्द हो गयी। इसलामखान्‌ने संवाद सुन रसद भेजी। किन्तु उसके पहुंचनेमें विलम्ब लगा था। उसी समय बलदेव ससैन्य श्रीघाट और पाण्डु छोड़ हाजोके अभिमुख चले गये। फिर उन्होंने राज्य अवरोध कर रसद पहुंचनेकी राह रोकी थी। हाजोके शासनकर्ता अबद् उस्-सलामको फौज स्थताके (वही प्रधान सेनापति बन हाजोके आये थे) साथ विपक्ष शिविरमें सन्धिका प्रस्ताव करनेके लिये जाना पड़ा। किन्तु वह सहज बांध कर आसाम भेजे गये। उनके भ्राता सैयदने बलपूर्वक शत्रुशिविरसे निकलनेकी चेष्टा की थी। किन्तु विफल होने पर वह सहज मारे गये। उसके पीछे और कोई सेनापति हुये। इसी बीचमें ब्रह्मपुत्रके उत्तरकूल राजा चन्द्रनारायण पर मुसलमानोंने आक्रमण किया। चन्द्रनारायण भीत हो हरिचपुरके परगने खामारोंको भागे थे। खामारोंके जमींदार चन्द्रनारायणके भयसे मुसलमानोंसे जा मिले। मुसलमान उसके पीछे शत्रुजित्‌के अनुसन्धान करनेको सुसङ्ग पहुंचे थे।

शत्रुजित् राय भूषणाके जमींदार (राजा) मुकुन्दरायके पुत्र थे। सम्राट् जहांगीरके समय शेख अला-उद्-दीन बङ्गालके शासनकर्ता रहे। उस समय उन्होंने मुकुन्दरायके हो अधीन एक दल सैन्य भेज एक बार हाजोप्रदेश पर अधिकार किया था। मुकुन्दराय युद्धमें जीतने पर पाण्डु और गौहाटीके जागीरदार बने। उसी सुयोगसे आसामियोंके साथ

* इस समय उच्चाकार नौका स्वच्छन्दसे युद्धमें अधिक व्यवहृत होती थी। कोसा नौकामें एक मस्तूल लगता है। फिर उसमें चार चप्पू रहते हैं। उस नौकामें कालवके बीच बड़ी बड़ी दूसरी नौका (बड़ी नौकाके डांडे चलाने न पानेसे मात्र) खींच ली जाती है।

उनका सौहार्द स्थापित हुआ। फिर उन्होंने भूषणोंके जमीन्दारको भांति आसाम और कामरूपप्रदेशके अनेक प्रधान व्यक्तियोंके साथ बन्धुता बढ़ाई। शेख अल्ला-उद्-दीनके पीछे होनेवाले सब नवावोंने उन्हें दरबारमें जानेके लिये कई वार आदेश किया था। किन्तु न तो वह कभी उपस्थित हुये न नियमित पेशकश ही भेजी। नवाब इसलाम खान्ने देखा कि मुकुन्दरायका दरबारमें पहुंचना कभी सम्भव न था। इसलिये उन्होंने उनके पुत्र शत्रुजित्को बुला भेजा। शत्रुजित् गये। उन्होंने दरबारमें यथारीति नवाबकी वश्यता दिखलाई थी। उस समय नवाब हाजोके विरुद्धमें सैन्य भेज रहे थे। उन्होंने शत्रुजित्को भी उसी सैन्यके साथ भेज दिया। किन्तु शत्रुजित् आसामराज एवं राजा बलदेवसे बन्धुता मान चुपके चुपके गूढ़ संवाद और दूसरे जमींदारोंको उनसे मिलनेके लिये उत्साह देने लगे। अन्तमें नवाबको सेनाने धुबड़ी पहुंचतेही शत्रुजित्को बांध लिया और जहांगीरनगर भेज दिया। वहां विचार होने पर शत्रुजित्को प्राणदण्ड मिला था।

अबद-उस् सलामके विनष्ट होने पर कोचों और आसामियोंकी सेना १२००० पदाति तथा बहुसंख्यक कोसा नौका ले:वनाश नदीकी राह ब्रह्मपुत्रके तीर योगीघोपा (योगीगुहा) नामक पर्वत पर पहुंच गयी। उक्त पर्वतके नीचे ही ब्रह्मपुत्रका वनाश-सङ्गम है। आसामी वहां एक सुदृढ़ दुर्ग बना नवाबके सैन्यकी प्रतीक्षा करने लगे। फिर उक्त दुर्गके बिलकुल सामने ब्रह्मपुत्रके दूसरे तटपर भी हीरापुर नामक स्थानमें वैसाही एक और दूसरा दुर्ग बना था। योगीगुहाके दुर्गमें ३००० और हीरापुरके दुर्गमें अवशिष्ट ८००० सैन्य रहा। नवाबका सैन्य धुबड़ी छोड़ खानपुर नदीकी राह ब्रह्मपुत्र पार हुआ। फिर वह जङ्गल काट और मार्ग बना योगीगुहाकी ओर बढ़ा था। नवाब-सैन्यके प्रधान सेनापति और सेनानीके अधीन २००० पथरकलावाले सिपाही थे। क्रमशः राहमें दोनों दल सम्मुखीन हुये। आसामी प्रथम आक्रमणसे ६ कोस हटे थे। दूसरे दिन नवाबके सैन्यने योगीगुहाके दुर्ग पर आक्रमण किया। फिर ठीक उसी समय जमान् खान् दक्षिणकूलके चन्द्रनारायणको ध्वंस कर ससैन्य आ मिले। इसीसे बलदेव नूतन और वर्धित सैन्यका वेग सह न सके। वह ससैन्य दुर्ग छोड़ भागे थे। दुर्ग अधिकार कर नवाबका सैन्य चन्दनकोटको चला गया। राहमें बड़नगरके जमीन्दार उत्तमनारायणका पत्रवाहक एक पत्र ले कर पहुंचा। उसमें लिखा था,—"बलदेवने सुहृद् सैन्यदलके साथ बड़नगर पर आक्रमण किया है। किन्तु उत्तमनारायण उन्हें बाधा न पहुंचा सकने केकारण नवाबके सैन्यमें मिलनेको आशासे खुण्टाघाट गये हैं।" मुहम्मद जमान् खान्ने कुछ सैन्य ले उसी समय बलदेवके विरुद्ध बड़नगरकी यात्रा की। राहमें उत्तमनारायण मिल गये। नवाबके सैन्यका अवशिष्ट अंश चन्दनकोट पहुंचा था। नवाब जमान् खान्ने पोमारी नदी पार हो बलदेवके एक क्षुद्र दुर्ग पर अधिकार किया। फिर वह अग्रसर होने लगे। बलदेवने देखा कि जमान् खान् प्रायः आ पहुंचे थे। उसी समय उन्होंने बड़नगर छोड़ चवी नामक स्थानको गमन किया। वहां बलदेव पर्वतके किनारे किनारे कई एक दुर्ग बना कर बैठ गये। जमान् खान्ने भी इसीसे लौट विष्णुपुरके जंगलमें स्कन्धावार स्थापन किया था। फिर उन्होंने वर्षा अतीत होनेपर बलदेव पर आक्रमण करना ठहरा लिया। उसी समय बलदेवने विष्णुपुरसे डेढ़ कोस दूर कालापानी नदीके तीरपर रहनेवाले विपक्षियोंका रक्षिदल छिन्न भिन्न कर डाला। पाण्डु और श्रीघाटसे उसी समय उनका भी नूतन सैन्य आ पहुंचा था। उन्होंने बीचबीचमें रातका आक्रमण मार नवाबके सैन्यको व्यतिव्यस्त कर दिया। वर्षा बीत गयी। आसाम-राजके जामाता बलदेवसे आ मिले थे। उसके पीछे १६१७ई० की ११ वीं अगस्तकी रातके समय बलदेवने विपक्षियोंके दो क्षुद्र दुर्ग अधिकार कर लिये। किन्तु दूसरे दिन सबेरे जमान् खान्ने हठात् कितने ही सैन्यके साथ बलदेव पर आक्रमण मारा था। उनके कुछ सिपाही बलदेवसे सामने लड़ते रहे। फिर अवशिष्ट सैन्यके साथ उन्होंने बलदेवके रक्षित स्थानोंपर

आक्रमण किया। उस समय उनमें वैसा सैन्य न था। इसीसे वह एक एक कर विपक्षोंके हाथ आ गये। अनेक सेनापति मरे थे। फिर बहु सैन्य भी नष्ट हुआ। कितनी ही बन्दूकें तोपें और दूसरे हथियारोंकी हानि हुयी थी। किन्तु बलदेवको सम्पूर्ण पराजित होते न देख नवाबका सैन्य उसी दिन रातको विपक्ष पुरुषके हाथमें भाग गया। उसके पीछे नवम्बर मासमें चन्दनकोटसे नूतन सैन्यने आ तीन तरफसे बलदेव पर आक्रमण किया था। उस समय बलदेव या आसाम राजका सैन्य प्रस्तुत न था। इसीसे विपक्षके भीषण आक्रमणमें बलदेवका अल्पसंख्यक सैन्य ठहर न सका। वह भीड़ही रण छोड़ भागा था। बलदेवने अर्थ हरङ्गकी राह पकड़ी। आसामराजके आमात्य बन्दी बन गये। कृतावसिंह सैन्यदल बोकाट और पाण्डुकी ओर भागा। वहां आसामराज ससैन्य रसद वगैरह लिये उपस्थित थे। नवाबका सैन्य एक बार उन पर आक्रमण करने गया। अजय पवन, बोकाट और पाण्डुमें भीषण युद्ध हुआ। आसामराज पराजय हो स्वराज्य लौट गये। कोचहाजो प्रदेश मुसलमानोंके अधिकारमें हो गया। आसामप्रान्तमें बड़ नदी और ब्रह्मपुत्रके मध्य भागको पूर्ण अधिकार कर मुसलमान शान्त हुये। उधर एक दल सैन्यने दरङ्ग आ बलदेवको भगाया था। बलदेवने अभयपको आसाममें शुभ सिङ्गी नामक स्थानमें आश्रय लिया। पश्चिम अञ्चलमें दो पुत्रोंके साथ उन्होंने वहीं अवस्थान किया। इसी युद्धमें कामरूप सम्पूर्ण मुसलमानोंके अधीन हो गया।

उपरि-उक्त घटना बादशाह नामेमें भी लिखी है। किन्तु बुरञ्जी या मिस्टर मार्टिनके ग्रन्थमें बलदेवका नाम नहीं मिलता। परीक्षित् नारायणके चन्द्र नारायण* पुत्रकी बात भी किसी ग्रन्थमें देख नहीं पड़ती।

भरनारायणके पीछे होनेवाले सब राजाओंका विषय कोचबिहारके इतिहासमें लिखा जायेगा।

[illegible]

* किसी ग्रन्थकारके मतसे राजा चन्द्रनारायण परीक्षित्के पुत्र हैं।

आसामकी बुरञ्जीको देखते यज्ञध्वजके पुत्र रघुदेवने राजा हो नगर संस्कार और हयग्रीव-माधव का मन्दिर निर्माण कराया। उनके पिताने आसामके अहोम राजाओंको युद्धमें परास्त कर अपने अधीन रखा था। किन्तु रघुदेव वह कर न सके। उन्होंने आसामके अहोमराजको मङ्गलदेवी नाम्नी निज कन्या दे निरापद राज्य किया। आधुनिक बुरञ्जीके मतमें १५११ शकको रघुदेव राजा हुये थे। रघुदेवने गदाधर तीर जो नगर बनाया उसका वर्तित नाम विजयपुर या गिलाविजय है। (यहां मिला सैकड़ा या विषम इसका बल अधिक था।)

रघुदेवके पुत्र परीक्षित्-नारायणके जो सनद दिल्लीके बादशाहके पाससे कानूनगो हो कर पाये थे उसका नाम कमीन्द्र कहता था। रांगामाटीके वर्तमान जमीन्दार उसी कमीन्द्र कहलानेके वंशधर हैं।

ढाकामें परीक्षित्की मृत्यु हुयी। उनका राज्य मुसलमानोंके हाथ पड़ने भी मानसनदीके पश्चिमके अर्धभागके पूर्व पर्यन्त उनके पुत्र विजितनारायणके अधीन रहा। वह मुसलमानोंके नीचे करद राजा बने थे। इसी प्रकार मानसनदीके पूर्वके दिकराई तक परीक्षित्के भ्राता बलितनारायण भी करद राजा हुये। बिजनीके राजा विजितनारायण और दरङ्गके राजा बलितनारायणके सन्तान हैं। सम्भवतः विजितनारायणने ही विजितनगर या बिजनी स्थापन किया था। पहले वह मुसलमानोंको करमें अर्थ देते थे। फिर कर स्वरूप हाथी देनेका नियम हुआ। शेषको अंगरेजोंके अधीन अर्थ देनेका नियम पुनः बंध गया है।

मुसलमानोंके अधिकारसे कामरूप समस्त परिवर्तित हो गया। देशका आचार व्यवहार, भूमिका प्रबन्ध और राज्यप्रणाली यवन देशकी भांति होने लगे।

बलितनारायण जिस भागके राजा हुये, कामता पुरका राजवंश मिटनेसे वह स्थान उनके दिनों तक एक प्रकार पराधीन बन गया था। पीछे अहोमवंशादि संघावोंने वह देश जितना हो हस्तगत किया। किन्तु यह बात भी अधिक दिन न चली। मुसलमान राज्य जीत कर लूटमार करते थे। फलतः उनके समय

देशमें शान्ति स्थापित होना दूरकी बात थी, अधिक अशान्ति बढ़ गयी। भोट और कछारके अधिवासी दोनों ही उक्त प्रान्तमें सदा उपद्रव मचाते थे। फिर भी बलितनारायण दरङ्ग नगरमें राजधानी बना देशके शासन पर मनोयोगी हुये। किन्तु आसामराजका उपद्रव न घटा। पीछे उनकी भ्रातुष्पुत्रीका विवाह होनेसे आसामराजके साथ उनकी मित्रता हो गयी।* स्वर्गनारायणने नूतन पत्नीके नाम पर नगरकी स्थापना और एक नदीका नामकरण किया। बलितनारायण-की धर्मशीलता तथा सद्व्यवहारसे प्रीत हो उन्होंने उन्हें 'धर्मनारायण' उपाधि दिया और उनके कनिष्ठ भ्राता गजनारायणको बेलतलाका राजा बनाया। बेल-तलाके राजा उक्त गजनारायणके वंशधर हैं। आधुनिक बुरञ्जीके मतमें १५३८ शकको बलितनारायणने स्वर्ग-लाभ किया और उनके पुत्र महेन्द्रनारायणको सिंहासन मिला। महेन्द्रनारायणने ब्राह्मणोंको बहुतसी निष्कर भूमि दी थी। उन्होंने १८ वर्ष निरापद यथेष्ट शान्तिसे राजत्व कर १५४३ शकको परलोक गमन किया। फिर उनके पुत्र चन्द्रनारायण राजा हुये। चन्द्रनारायण-का राज्यकाल १७ वर्ष रहा। पीछे तत्पुत्र सूर्य-नारायण राजा बने। आधुनिक बुरञ्जीके मतमें उनके समय १६८२ ई०को मन्सूर खान् नामक किसी मुसलमान सेनापतिने उक्त देश पर आक्रमण किया था। उस युद्धमें सूर्यनारायण बांध कर दिल्ली भेजे गये। राहमें सूर्यनारायण किसी प्रकार भाग आये। किन्तु वह लज्जासे फिर सिंहासन पर न बैठे। सूर्यनारायणकी बस्ती होते समय उनके भ्राता इन्द्रनारायण पांच वर्षके थे। मन्त्रियोंने मिल कर उन्हें राजा बनाया। किन्तु मन्त्रियोंमें परस्पर विवाद उठनेसे आसामके अहोमराजने कामरूप पर्यन्त अधिकार कर लिया था। फिर भी बलितनारायणका वंश बिलकुल मिटा न था। उनके वंशीय दरङ्गके सिंहासन पर प्रतिष्ठित रहे। फिर इन्द्रनारायणके पीछे आदित्यनारायणने सिंहासनाधिरोहण किया। उनके समय राज्यकी सीमा उत्तरमें गोसाईं-कमलकी आलि, दक्षिणमें ब्रह्मपुत्र, पूर्वमें भनगिरी और पश्चिममें बड़नदी निरूपित हुयी। उसीके मध्य कियदंश भाग कर आदित्यके भ्राता मधुनारायण राजा बने। आदित्यके मरने पर ध्वजनारायणको सिंहासन मिला। उनके समय दरङ्ग राज्य सम्पूर्णरूपसे अहोमके अधीन हो गया। सूर्यनारायणके वीरनारायण नामक एक पुत्र थे। (आधुनिक बुरञ्जी मतमें १७४४ शक।) उन्होंने ध्वजनारायणको मार राज्य लिया। किन्तु वह तीन वर्ष ही राज्य कर डिमरुयाकी ओर भाग गये। उनके पीछे महतनारायण बड़े पराक्रमी हुये। वह दोनों भाई एकत्र राजा बने थे। उनके पीछे (१७८८ई०) कीर्तिनारायणके पुत्रने राज्य पाया। उनके समय दरङ्गके राजाओंका पराक्रम बिलकुल खर्व हो गया।

बलितनारायणके समयसे इन्द्रनारायणके समय पर्यन्त वही कामरूप पर शासन करते रहे। मध्य मध्य मुसलमानोंके आक्रमणमें भी उक्त वंशका ही प्राधान्य था। इन्द्रनारायणके समय कामरूपमें अहोमका अधिकार हुवा। किन्तु ध्वजनारायणके समयमें ही कामरूपकी स्वाधीनता मिटी थी। उनके पीछे कीर्तिनारायणके पुत्रके समयसे दरङ्ग राज्यका नाम उठ गया।

बिजनीके राजवंशका इतिहास आलोचना करनेसे समझते हैं कि महाराज विश्वसिंहके दो पुत्र रहे। ज्येष्ठ नरनारायण भूप करतोया तथा विहारके मध्य और कनिष्ठ शुक्लध्वज भूप विहारसे दिकराई तक राज्य करते थे। शुक्लध्वजके पुत्र रघुदेवनारायण रहे। रघुदेवके तीन पुत्र थे। उनमें ज्येष्ठ परीक्षित्-नारायण बिजनीके, मध्यम बलितनारायण दरङ्गके और कनिष्ठ गजनारायण बेलतलाके राजा हुये। ज्येष्ठ परीक्षित्नारायणको दिल्लीके सम्राट्ने खिलअत दी थी। देशको दिल्लीसे लौटते समय उन्होंने राह

---

* यह भी कहा गया है कि परीक्षित्नारायणने आसामराजके आक्रमणसे अव्याहति पानेके लिये स्वर्गनारायणको महादेवी नामी कन्या प्रदान की थी। इससे समझ पड़ता है कि परीक्षित्नारायणके राजत्वकालमें भी बलितनारायण उक्त प्रदेश पर शासन करते थे। पीछे भ्राताके मरने पर उन्होंने स्वाधीन हो मुसलमान शासनकर्तासे निज राज्य पृथक् कर लिया।

पर राजमहलमें स्वर्गलाभ किया। उनके साथ जो मन्त्री या दीवान् थे, वह कामरूपके आगमनमें हुये। परीक्षितके चन्द्रनारायण नामक एक पुत्र थे। उन्हींके वंशमें बिजनीके राजाओंकी उत्पत्ति है।

बख़्तियारके चढ़ायीको मिनहाजुद्दीनने तबक़ात-इ-नासिरी नामक अपने इतिहासमें लिखा है —"लखना-वतीके अधिकारके कई वर्ष पीछे (सम्भवत ६०१ हिजरीको) बख़्तियार तिब्बत और तुर्किस्तान जीतनेको अग्रसर हुये। तिब्बत और लखनावतीके मध्यवर्ती भूभागमें उस समय कोच, मेच तथा तिहारू (वर्तमान थारू) नामक तीन प्रधान जातिका वास था। कोचों और मेचोंका एक सरदार (तबक़ात-इ-नासिरीमें इस सरदारका नाम मेचोंका "अली" लिखा है) बख़्तियारके हाथ गया। फिर उसने मुसलमान धर्मग्रहण किया था। वही अग्रसर होकर बख़्तियारको ससैन्य बर्धनकोटकी राह पार्वत्य प्रदेशकी ओर ले गया। उस स्थानसे वह दश दिनमें पार्वत्य प्रदेशके कितने कोसके भी पश्चिम मैदानवाले प्रस्तर-सेतुके निकट पहुंचे थे। उस सेतुकी रक्षाके लिये बख़्तियार एक दल सैन्य छोड़ आगे बढ़े। सेतु पार होने पर कामरूपके राजाने किसी विश्वासी व्यक्तिको भेज कहला भेजा कि उस समय तिब्बत पर आक्रमण करना युक्तिसङ्गत न था। उस समय लौट कर अधिक सैन्य संग्रह करना उचित था। फिर उन्होंने भी स्वीकार किया कि आगामी वर्ष वह अपना सैन्यदल ले उस देश जीतनेका प्रयास उठावेंगे। बख़्तियारने किन्तु उक्त प्रस्ताव ग्राह्य न किया। उसके पीछे वह १६ वें दिन तिब्बत पहुंचे। वहां युद्धादिके पीछे अपने सैन्यमें कुछ गड़बड़ हो जानेसे लौटनेको बाध्य हुये। उनके लौटनेका मार्ग कामरूप और तिर्हुतके मध्य तीस गिरिपथ'का एकतम था। फिर १६ दिन लगातार अविश्रान्त चल उक्त सेतुके निकट आने पर उन्हें उसके दो मेहराब टूटे मिले। सेतु रक्षाके लिये नियुक्त सेनादलमें दो नायकोंके मध्य विवाद बढ़ा था। इन्होंने वह सुस्थान छोड़ चलते बने। फिर कामरूपके हिन्दुओंने उसे तोड़ा था। पार जानेका उपाय न देख बख़्तियारने ससैन्य एक देवमन्दिरमें आश्रय लिया। फिर उन्होंने बेड़ा बांध कर पार होनेके लिये काठादिके संग्रह करनेकी चेष्टा की। कामरूपके राय उक्त संवाद सुन ससैन्य चढ़ा गये। उन्होंने मन्दिरको चारो ओर तीक्ष्णमुख बंशदण्ड गाड़ और उनमें भरीबन्दी कर मुसलमानोंके सैन्यका निर्गमपथ रोकना चाहा। बख़्-तियारका सैन्य विपद् देख एक ओर तोड़ कर निकला और बिलकुल नदीतीर पहुंचा था। कामरूपका सैन्य पीछे लगा। फिर सबोंने प्राणभयसे घोड़ेके साथ नदीमें कूद कर पार जानेकी चेष्टा की। किन्तु नदीके मध्यस्थलमें पहुंच प्राय सब डूब मरे। केवल बख़्तियार और कुछ थोड़े लोग अति कष्टसे प्राण बचा दूसरे पार आये। उक्त कोच सरदार बचाने आ कर उन्हें उठाया और दीनाजपुरके देवकोटमें पहुंचाया।" ब्लाकमानने एशियाटिक सोसाइटीकी पत्रिकामें ४० खण्डके २८१ पृष्ठ पर कामरूप राज्यमें शिलाको नामक सेतुका वर्णना इस प्रकार लिखा है —"यह सेतु पश्चिम कामरूपमें गोहाटी पहुंचनेको एक पुरानी ऊंची राहके बीच पड़ा है। सम्भवत इसी सेतुसे बख़्तियार खिलजी (मतान्तरसे बख़्तियारके पुत्र मुहम्मद खिलजी) तातारके अश्वारोहियोंके गौहाटीमें हुये थे। कारण यह गोहाटीके उत्तर-पश्चिम प्रान्तको सिरिमालाके अति निकट अवस्थित है। इस पर्वत पर आज भी नगरप्राचीरके मार्ग और प्रस्तरखोदितोंमें मन्दिरोंके भग्नावशेषादि देख पड़ते हैं। किन्तु इसके विश्वास करनेका यथेष्ट कारण मिलता है कि यह महम्मद-इ-बख़्तियार खिलजीके तिब्बत अथवा सिकन्दरीयोंका इतना प्रकार सेतु हो नहीं सकता।

उसके पीछे गौड़के नवाब गयास-उद्दीन (१२११-२७ ई०) कामरूप जीतने गये। कामरूपसे सदिया नामक स्थान पर्यन्त उन्होंने जय किया और कर लिया था। किन्तु सदियाको पूर्वओर पहुंच वह पराभूत हुये। १२५७-५८ ई०को गौड़के सेनापति मलिक युज़बकने कामरूप पर आक्रमण किया था। उन्होंने वहां एक मसजिद बनवायी। किन्तु वह युद्धमें जयलाभ न कर सके। वर्षाके देश जलमें डूब जाने पर उनकी यथेष्ट सैन्यहानि हुयी। अन्तको वह मारा

दुरवस्थामें पड कर गौड़ लौटे। फिर १२५८ ई०को गौडके नवाब तुगलक खान् स्वयं कामरूप पर चढे थे। कामरूपराजने उन्हें बांध कर मार डाला। यह निरूपित करना दुःसाध्य है, उस समय कामरूपमें कौन राजा थे। कामरूप जिलेमें "वेदरगड" नामक एक पुरातन गढ है। प्रवादानुसार १२०४ से १२५८ ई० बीचमें कोई मुसलमान-सेनापति कामरूप पर आक्रमण करने गये थे। उनके हाथसे देशकी रक्षा करनेके लिये फेंगुवा नामक राजाने वह गढ बनवाया। परन्तु उसके पहले वैद्यदेवने उक्त गढ़ स्थापित किया था। फेंगुवाके पीछे फिर मुसलमान वहां न पहुंचे। एक बार राजा नीलाम्बरके समय गौड़के नवाब हुसेनशाहने (१४९८-१५०६ ई०) १२ वत्सर अवरोध करनेके पीछे कामरूप पर अधिकार किया था। हुसेन शाह कामतापुर जीत कर स्वीयपुत्र नसरत शाहको प्रतिनिधि बना बङ्गालको लौटे। नसरत शाह कोचविहार-राजवंशके आदि-पुरुष विश्वसिंहसे हारकर भागे थे। फिर कामरूपके सौमारखण्ड (वर्तमान आसाम)में चहुंमुङ्ग वा स्वर्ग-नारायण राजा हुये। (१४९७-१५३९ ई०) उस समय तुरबक नामक किसी पठान-सेनापतिने काम-रूपके अन्तर्गत उजाई देश पर आक्रमण किया। आसाममें कलियाबर नामक स्थान पर युद्ध हुवा। युद्धमें तुरबक जीते थे। किन्तु स्वर्गनारायणके प्रधान मन्त्री कन्‌चेंगने उनके विरुद्ध युद्धयात्रा की। वह तुरबकको पराजित कर करतोयाके अपर पार भगा गये थे।* फिर विश्वसिंहके पुत्र नरनारायणके समय कालयवनने कामरूपमें गौहाटी तक पहुंच कर अनेक देवालय नष्ट किये। परीक्षितनारायणके मरने पर ढाकाके नवाबने कामरूपके अन्तर्गत हाजोप्रदेश (परीक्षितका राज्य) ले लिया था। मुसलमान सेनापति मकरम खान् रांगा-माटीमें रह उक्त प्रदेश पर शासन करने लगे। फिर बडटेनोलच्चो नामक कोई व्यक्ति रांगामाटी गया था। उसके पीछे सैयद अबू बकर नामक एक व्यक्ति आसाम जीतने गये। तेजपुरके निकट भरलीमें युद्ध हुवा। युद्धमें अबूबकर मारे गये। उस समय कामरूपका अधिकांश अहोम राजाके, कुछ अंश रांगामाटीवाले मुसलमान शासनकर्ताके और कुछ अंश राजा दरंगके अधीन था। कुछ दिन पीछे मिर्जाबाद नामक रांगा-माटीके किसी शासनकर्ताने अहोम राजावोंके हाथसे गौहाटी निकाल लेनेका यत्न किया। किन्तु वह बन न पड़ा। शेषको उनके परवर्ती बहरामबेग उसमें कृत-कार्य हुये। फिर क्रमशः मिर्जा रमन खान्, अबदुल-इसलाम शाह, इसलाम खान्, शेख बहराम खान्, शेख ममस्तो खान्, मकदूम इसलाम और महो-उद्-दीन रांगामाटीके शासनकर्ता बने। उसी बीच मोमाई-तामूलो बडबड़ुवा नामक किसी आसामी सेनापतिने एक बार अत्यल्प दिनके लिये गौहाटीको उद्धार किया था। किन्तु वह फिर छोड़नेको बाध्य हुये। फिर मिर्जा जैन-उल-आबदीन, इसफन्दर खान्, नवाब नूर-उल ला अनवर खान्, मिर्जा हुसेन खान्, जारो मियान्, सैयद हुसेन, सैयद कुतुब, नाखुदा, प्रभृति कई लोगोंने कुल २६ वर्ष कामरूप पर शासन किया। उक्त शासन-कर्तावोंमें कोई हाजो, कोई रांगामाटी, और कोई गौहाटीमें रहता था। शेषको उस समय समस्त कामरूप जिला एक प्रकार मुसलमानोंके अधीन था। बिजनीका राज्य और ग्वालपाडा जिला भी मुसल-मानोंके ही हाथ था। केवल दरङ्ग-राज स्वाधीन रहे। किन्तु वह भी मुसलमानोंका प्रभुत्व मानते थे। १६५४ ई०को जयध्वज सिंह वा चुतामला रङ्गपुरमें अहोम-सिंहासन पर बैठे। उनके किसी सेनापतिने गौहाटी अधिकार किया। १६६२ ई०को मीर जुमला कोचविहार जीतने गये। गौहाटीके पूर्व उजाई गड़गाव तक उनका अधिकार हुवा। फिर मीर जुमला स्वयं पीड़ित हुये। उनके सैन्यमें भी

* इससे पहले इस प्रबन्धके किसी स्थल पर कामतापुरके विवरणमें नसरत शाहके हाथसे विश्वसिंह द्वारा कामतापुर वा कामरूपराज्यके उद्धार होनेकी बात लिखी जा चुकी है। फिर यहां देखते हैं कि अहोम राजा स्वर्गनारायणके मन्त्री कनचेङ्ग करतोया तक तुरबकके पीछे लगे थे। यथार्थमें पर तुरबक नामक किसी पठान सेनापतिके कामरूप जीतनेकी बात भारतवर्ष या बङ्गालके दूसरे इतिहासोंमें नहीं मिलती। यह विषय पर्यालोचना करनेसे समझ पड़ता है कि तुरबकके कामरूप आक्रमणकी कथा प्रवादमात्र है। क्योंकि विश्वसिंहके कोचविहार और कामतापुरमें रहते तुरबकके अनुसरणको कनचेङ्ग क्यों चलते?

विद्रोह होनेकी सूचना मिली थी। इसीसे वह राजा जयध्वजसे सन्धि कर लौट गये। मकरम खान् अधिकृत प्रदेशमें शासनकर्ता रहे। उनके पीछे मसौद खान् और सैयदफीरोज खान् उस प्रदेशके शासनकर्ता हुये। अहोमराज चक्रध्वज सिंहके निकट राजस्व वसूल करनेके लिये उनका दूत गया था। उन्होंने उसे अपमान कर निकाल दिया और गौहाटी पर्यन्त स्थान अधिकार किया। दिल्लीपतिने क्रुद्ध हो १६६८ ई० के समय राजा रामसिंहको भेजा था। रामसिंहने जा गौहाटी पर अधिकार किया। फिर वह उत्तरके अभिमुख अग्रसर हुये। उस समय कामरूपके सीमान्तस्थानमें बड़फूकन उपाधिधारी कोई शासनकर्ता रहते थे। १६६० ई०का अर्जुननारायणने इस पदकी सृष्टि की थी। वह सीमान्तस्थानमें रह अहोम राज्यका विदेशीय आक्रमण रोकते थे। राजा चक्रध्वजके समय लाचित बड़फूकन रहे। वह उक्त मोमाई तामूली फूकनके पुत्र थे। लाचित बड़फूकनने राजा रामसिंहको कहला भेजा कि १६६२ ई०को मीरजुमला रणमें हार अहोमराजसे सन्धि कर गये थे। इस समय अहोमराज न तो दिल्ली सम्राट्के अधीनस्थ रहे और न उन्हें राजस्व देनेको प्रस्तुत थे। लाचित बड़फूकनका सदर्प वाक्य सुन मुसलमानोंका सैन्य युद्धको अग्रसर हुआ। १६६८ ई० को औरङ्गजेबकी सेनाके साथ कामरूपके शासनकर्ता लाचित बड़फूकनका घोरतर संग्राम शराईघाट नामक स्थानमें पड़ा। उस संग्राममें मुसलमानसैन्य पराभूत हो भागा। अहोम सैन्यने मानसा नदी तक उसका पीछा किया। उसी समयसे मानसा नदी अहोमराज्यकी पश्चिम सीमा मानी गयी। अहोमराजने नदीतीर पर हाबोराम नामक स्थानमें एकदल सैन्य रखा था। १६०१ शकमें अर्थात् १६७९ ई० को दिल्लीसे फिर सैन्य आया। उस समय अहोम शासनकर्ता लालुक सोला बड़फूकन थे। उन्होंने कलियाबर पर्यन्त देश मुसलमानोंको दे सन्धि की। उसके पीछे १६०८ शकको अन्दिको बड़फूकनने निरुपद्रव गौहाटीका उद्धार किया।

फिर दूसरे वर्ष मंसूर खान् नामके एक नवाब युद्ध करने गये थे। गौहाटीके निकट अमेश्वरके तट कोसिमें भयानक युद्ध हुआ। उस युद्धमें परास्त हो मुसलमान रांगामाटी, ढाको गोवाड़ी और कामरूपकी सीमा तक छोड़ कर भागने पर बाध्य हुये। कामरूप सम्पूर्णरूपसे अहोमराजके अधिकारमें पड़ गया। फिर दिल्लीके बादशाह हीनबल हुये। बङ्गालमें अंगरेजों ओलन्दाजों फरासीसियों, पोर्तगीजों प्रभृति सुदूर युरोपवासियोंका उपद्रव बढ़ा था। इसीसे नवाबोंको भी कामरूपकी बात सोचनेका समय या अवकाश न मिला। अहोमराज निरुपद्रव कामरूप भोगने लगे। शेषा बड़फूकनसे अधिवासमें कामरूप राज्यका नाश किया था। उस अधिवासको अहोम राजने अधिकार किया। इसीसे कामरूप राज्यका नाम लोप हो गया और वह आसामका अन्तर्गत प्रदेश बना।

आसाम देशके राजवंशका अहोम नाम है। अनेकोंके अनुमानमें यह श्यान वंशके लोग हैं। यह आसामकी पूर्ववर्ती पर्वतमाला अतिक्रम कर ई० त्रयोदश शताब्दीके प्रारम्भमें ब्रह्म और श्यामदेशके सीमान्तपीठ राजत्व करने पहुंचे थे। फिर आसामका राज्य स्थापित हुआ। दूसरा समकक्ष न माना जानेसे उक्त राजाका नाम 'असम' पड़ा था। कामरूपके म के स्थानमें ह लग जानेसे लोग अहम या अहोम कहने लगे। अब उसका परिवर्तित नाम आसाम है। पूर्वकाल अहोम लोग हिन्दू न थे। वह चोमदेव नामक देवताको पूजते रहे। राजत्व स्थापनके कुछ काल पीछे उन्होंने हिन्दूधर्म ग्रहण किया और अपनेको आदिके राजा इन्द्रका वंशोद्भव बता दिया। अबसे ही निश्चय हुआ है कि कोविदोंके मतसे यह इन्द्र बंगालमें "सोमार" नामसे अभिहित है।

११५१ शकाब्द (१२२९ ई०)को सुकाफा नामक कोई प्रतापशाली व्यक्ति ससैन्य पूर्वदिकसे अग्रसर हुये थे। फिर उन्होंने आदिम निवासी चुटियाओं और कछारियोंको जीत आसामके पूर्वभागमें राज्य स्थापन किया। पीछे उनके बारह पुरुष क्रमसे राजा

हुये। उन्होंने अपने राज्यविस्तार और किसी किसी आदिम निवासी जातिके साथ युद्ध करनेको छोड दूसरा कोई योग्य कार्य न किया। फिर १४१८ शकको चुहुंगमुंग राजा या हिन्दू बने और स्वर्ग-नारायण नामसे ख्यात हुये। वह भी कोई कीर्ति छोड न गये। पीछे उनके पुत्र और पौत्र राजा हुये। उन्होंने भी लिखने योग्य कोई कार्य न किया। फिर १५३३ शकको चुचेंगफाने राज्य पाया था। हिन्दू मतसे उनका नाम बुद्धिस्वर्गनारायण वा प्रताप सिंह रखा गया। उन्होंने उक्त देशमें दुर्गोत्सव और स्वर्ण एवं रौप्यकी मुद्राका प्रचार किया। उन्हींके शासनकाल १५४८ शकको कामरूपके शासनकर्ताके आसाम आक्रमण करने पर युद्ध हुवा। उसमें सैयद मारे गये। गौहाटी आसामराजके हाथ लगी। उन्होंने बहुत मार्ग और घाट बनवा आसामकी उन्नति की थी। देवमन्दिर और ब्राह्मणके प्रति-पालनार्थ भूमि देनेकी गौरव उन्हींके समय वृद्धि हुयी। मरने पर उनके जेष्ठ और फिर कनिष्ठपुत्र सिंहासन पर बैठे। किन्तु वह दोनों अत्यन्त उपद्रवी थे। इसीसे मन्त्रियोंने उन्हें राज्यच्युत किया। उसके पीछे चुतमला या जयध्वज राजा हुये। वह पराक्रमी राजा रहे। उन्होंने आसामकी बहुत उन्नति की। १५७७ ई० को मीरजुमला और मजम खान् दोनोंने आसाम पर आक्रमण किया। आसामराज परास्त हो सन्धि करने पर बाध्य हुये। उनके मरने पर चुयंगरुंग या चक्रध्वज सिंहको राज्य मिला। उन्होंने सन्धिके अनुसार कर न दिया और बादशाहके दूतका अपमान किया। इस कारण बादशाह औरंगजेबकी आज्ञासे राजा रामसिंह आसाम पर चढ़े थे। किन्तु वह युद्धमें हार भागनेको बाध्य हुये। इसलिये कामरूप फिर आसामराजके हाथ लगा। राजधानी ऊपरी आसाममें थी। वहांसे दूरस्थ कामरूपका शासन-कार्य अच्छी तरह चलना कठिन था। उसीसे राजाने गौहाटीमें एक बड़फूकन अर्थात् अपना प्रतिनिधि नियुक्त किया। उनके मन्त्रणागारका चिह्न अद्यापि वर्तमान है। पीछे उनके भ्राता चुन्यतफा या उदयादित्य राजा हुये। उनके मरने पर तद्भ्राता चुकलमफा या रामध्वज सिंहने सिंहासनारोहण किया। उनके पीछे होनेवाले चार राजावोंने हिन्दू-धर्म या हिन्दू नाम रखा न था। उनमें शेष राजा चुतयफा १६०१ शकको कामरूप प्रदेश मुसलमानोंके हाथ समर्पण करनेको बाध्य हुये। उनके मरने पर चुलिक्फा या लराराजाको राज्य मिला। मन्त्रियोंने उन्हें सिंहासनसे हटा चामुण्डरीयवंशीय चुपातफा या गदाधर सिंहका अभिषेक किया था। वह हिन्दू न थे। हिन्दू और हिन्दूधर्म दोनोंसे उन्हें बडी घृणा रही। ब्राह्मणोंसे उनका विजातीय विद्वेष था। फिर उन्होंने अनेक ब्राह्मणोंको नगरसे निकाल भी दिया था। वह बलवान् और बृहत्काय पुरुष थे। मद्य-मांस विना रहना उनके लिये असम्भव था। भेक और गोमांस उनका प्रधान खाद्य रहा। वह कहते थे कि हिन्दूधर्म ही अहोम वंशके पतनका कारण होगा। वह हिन्दूधर्म मानते न थे। इसीकारण उन्होंने कोई हिन्दू देवमन्दिरकी प्रतिष्ठा न की। किन्तु गौहाटीके निकट ब्रह्मपुत्रमध्यस्थित भस्माचल पर्वत पर उमानन्द-शिवका मन्दिर उन्हींके राजत्वकालमें प्रतिष्ठित हुवा। वह अद्यापि वर्तमान है। उनके राजत्वकाल १६०५ शकको मुसलमानोंने फिर आसाम पर आक्रमण किया था। किन्तु युद्धमें हार कर वह आसाम छोडने पर बाध्य हुये। आसामराजने गौहाटीमें राजधानी स्थापन कर एक बडफूकन भेजा था। उनके मरने पर जेष्ठपुत्र चुचंगफा या रुद्रनाथ सिंह राजा हुये। उनके पिता जैसे हिन्दू और हिन्दूधर्म-विद्वेषी रहे, वह तैसे ही हिन्दूधर्मपरायण और ब्राह्मणभक्त बने। उन्होंने अनेक ब्राह्मणोंको भूमि दी और देव-मन्दिरोंकी स्थापना की। उन्हीके आदेशानुसार शिव-सागरके अन्तर्गत लामडाग नदी पर बना बृहत् और सुदृढ प्रस्तरमय सेतु अद्यापि विद्यमान है। उस पर अनेक हस्ती, अश्व और मनुष्य गमनागमन करते हैं। तद्भिन्न उनके स्थापित अनेक देवमन्दिर भी वर्तमान हैं। उन्होंने बङ्गालसे गायक और वाद्यकर ले जाकर अपने देशमें बंगला गीत-वाद्यका प्रचलन बढ़ाया था।

वह गङ्गा नदीको निज अधिकारान्तर्गत करनेके अभि-प्रायसे बङ्गदेश पर चढ़नेको ससैन्य युद्धयात्रापूर्वक गोवालपाड़ेमें उपस्थित हुये। किन्तु दुर्भाग्यक्रम वहां उनको रोग लग गया। फिर कालके कराल कवलमें पड़नेसे उनका अभिप्राय सिद्ध न हुआ। उनके पुत्र सुतनफा वा शिवनाथ सिंहको सिंहासनका अधिकार मिला था। आसामके समस्त देवोत्तर ब्रह्मोत्तर वा अन्यप्रकार निष्कर भूमिमें अधिकांश उन्होंका प्रदत्त है। उनको पट्टमहिषी फूलेश्वरी वा प्रमथेश्वरीके आदेशानुसार गौरीसागर नामक वृहत् पुष्करिणी बनी और उसके पार एक शिवमन्दिरको स्थापना हुयी। उनके मरने पर महाराजने उनकी भगिनी द्रौपदी वा अम्बिकाको विवाह कर पट्टमहिषी बनाया था। उन्होंने अपनी भार्याके आदेशसे शिवसागर जिलेकी दिखु नदीके उत्तर पार जिलिदरिक घाटकी बोंधै भूमिमें शिवसागर नामकी एक पुष्करिणी खोदा उसके तीर शिव, दुर्गा तथा विष्णुके तीन वृहत् मन्दिरोंकी प्रतिष्ठा की और देवसेवाके लिये बहुत सी भूमि दी। वह तीनों मन्दिर और पुष्करिणी आज भी विद्यमान हैं। उसी पुष्करिणीके नामानुसार उस देशका नाम शिवसागर पड़ा है। फिर उसीके तीर वर्तमान समुदाय राजकार्यालय और अंगरेज राजकर्मचारियोंके निवासस्थल स्थापित हैं। राजा शिवनाथ सिंहके मरने पर उनके भ्राता प्रमत्त सिंह वा सुनेनफाने सिंहासन अधिकार किया। शिवसागर जिलेके अन्तर्गत दिखु नदीके दक्षिण पार रंगघर (रङ्गमाला) नामकी विस्तृत अट्टालिका उन्होंकी बनायी है। उन्होंने हस्ती, व्याघ्र, महिष प्रभृति पशुओंका युद्ध देखनेके लिये उसे बनाया था। उनके पीछे उनके भ्राता सुरम्फा वा राजेश्वर सिंह सिंहासनाधिरूढ़ हुये। उन्होंने तदानीन्तन राजप्रासादके परिवर्तमें शिवसागरको दिखु नदीके उत्तर पार "मड़मांव" नामक वृहत् और विस्तृत भवन बनाया था। कुछ समय वहां रहनेके बाद वह असन्तुष्ट हुये। फिर उस नदीके अपर पार रंगघरके पास उन्होंने अति वृहत् और प्रशस्त राजप्रासाद बनवाया। उसका नाम रंगपुर रख गया। उसके निकट शिवसागरकी भांति वृहत् "जयसागर" नामकी पुष्करिणी उन्होंकी प्रतिष्ठित है। फिर तीरस्थ शिवमन्दिर भी उन्होंने स्थापित किये थे। उनके पीछे उनके भ्राता सुन्येयोफा वा लक्ष्मीनाथ सिंह अभिषिक्त हुये। उन्होंने भी कतिपय देवमन्दिर स्थापित किये थे। उनमें कामरूपके अन्तर्गत मणिपर्वत पर अश्वक्रान्तका देवालय प्रधान है। उनके मरने पर उनके ज्येष्ठपुत्र सुहितपांगफा वा गौरीनाथ सिंह सिंहासनाधिष्ठित हुये। उनके राजत्वकालमें प्रधान घटना हिन्दुधर्मके निकटस्थ हिन्दूधर्ममें दीक्षित मटक, मोआमरीया वा मरान नामक आदिम निवासी जातियोंकी विद्रोहिता है। वह दो बार विद्रोही हुये। प्रथम बार तो राजाने उन्हें दमन किया, किन्तु दूसरी बार दबा न सकनेसे भागना पड़ा। उन्होंने कलकत्ते दूत भेज अंगरेज गवरन-मेण्टसे साहाय्य मांगा था। उससे लार्ड कारन वालिसके आदेशानुसार कप्तान वेल्श और लेफ्टिनेण्ट मिथेगार कितने ही देशीय सैन्यके साथ आसाम पहुंचे। उन्होंने विद्रोह दबा देशमें शान्तिकी स्थापना किया था। राजाके मरने पर विद्रोहियोंने अतीव निष्ठुर भावसे सर्वस्व निरपराध प्रजाको मार डाला। उसीसे उन्हें मरान कहते हैं। विद्रोह-शान्तिके पीछे गौरी नाथने रंगपुर नगर छोड़ शिवसागरके अन्तर्गत जोड़ हाट नामक स्थानमें नगर स्थापन किया। उसी स्थान पर वह कालग्रासमें पतित हुये। उनके पीछे बाम तृतीय वंशके कमलेश्वर सिंहने राज्य पाया था। यहां यह बता देना भी उचित है कि हिन्दू धर्ममें दीक्षित होनेके समयसे अहोम राजा अपरापर अहोमोंकी भांति अपनी सन्तानोंका हिन्दू नाम रखते थे। फिर उनमें राजा होनेकाले अभिषेकके समय अहोम भाषानुयायी कोई कार्य कर अहोम नाम ग्रहण करते थे। किन्तु उस कार्य अतीव व्ययसाध्य था। इसी कारण कमलेश्वर उसको कर न सके। उनके अहोम नाम न पानेका यही कारण है। उनके पीछे न तो किसी राजाने उस कार्य किया और न उसको अहोम नाम ही मिला। क्योंकि अधिनायकसे बहुतसे

लोगोंको ले जा कर सैनिक कार्यमें लगाया और पथरकलेको चलाया। उनके परलोक पहुंचने पीछे भ्राता चन्द्रकान्त सिंह राजा हुये। उनके राजत्वकालमें मन्त्रियोंमें विरोध उठा था। फिर गौहाटीके राजप्रतिनिधि बड़फूकन ब्रह्मराज्यमें पहुंचे और कितने ही सैन्यके साथ लौट पड़े। उन्होंने राजधानीमें उपस्थित हो विपक्षियोंको दमनपूर्वक राजाको स्वायत्त किया और अपने ऊपर राज्यके शासनका भार लिया। ब्रह्मदेशीय सैन्य पीछे लौट गया।

उक्त सैन्यको स्वदेशयात्राके पीछे बड़फूकनके किसी किसी विपक्षने राजमाताको प्रणोदित किया और उन्होंने उनका शिर काट लिया। उनके मरनेके बाद उनके विपक्ष प्रधान राजमन्त्री रुचिनाथ बूढ़ागोसाईं ने अपरापर प्रधान राजपुरुषोंसे मिल चन्द्रकान्त सिंहको राज्यसे हटा पुरन्दर सिंहको अभिषेक किया था। उसके पीछे ब्रह्मदेशीय सैन्य आसाम पर चढ़ा। युद्धमें परास्त हो पुरन्दर सिंह भागे थे। ब्रह्मदेशीयोंने फिर चन्द्रकान्त सिंहको राज्य दे प्रस्थान किया। अनन्तर ब्रह्मदेशीय राजाने चन्द्रकान्त सिंहके निकट बन्धुताके भावसे कितने ही सैन्यके साथ एक दूत भेजा था। किन्तु मन्त्रियोंने उनका अभिप्राय न समझ अवरोध किया। उससे ब्रह्मदेशियोंने अपमानित और क्रुद्ध हो युद्धकी घोषणा की। आसामियोंका सैन्य युद्धमें परास्त हुवा। राजाने फिर पलायन किया था। उसके पीछे ब्रह्मदेशसे अधिक सैन्य भेजा गया। उसने आसामवासियोंको अत्यन्त सताया। धन और प्राणकी विशेष हानि हुयी थी। बहु कष्टके पीछे आसामका सौभाग्योदय हुवा। अंगरेज गवरनमेण्टने दुर्दान्त और निदारुण ब्रह्मवासियोंको निकाल कर आसाम अधिकार किया था। १८२५ ई०को २रो फरवरीको आसामकी दुःख रात्रिका अस्त हुवा। प्रजा असह्य यातनासे छूटी थी। ६००वर्ष राज्य भोग कर अहोमवंश सिंहासन च्युत हुवा।

अहोम वंशके राजावोंकी तालिका नीचे दी जाती है;—

नाम	राज्यभोगकाल
१ चुकाफा	१२२८—१२६८ ई०
२ उनके पुत्र चुतेउफा	१२६८—१२८१ ,,
३ ,, चुबिनफा	१२८१—१२९३ ,,
४ ,, चुखांगफा	१२९३—१३३२ ,,
५ ,, चुखरांगफा	१३३२—१३६४ ,,
६ उनके भ्राता चुतुफा	१३६४—१३७६ ,,
अराजक	१३७६—१३८० ,,
७ त्याओखामती चुतुफाके भ्राता	१३८०—१३८९ ,,
अराजक	१३८९—१३९७ ,,
८ चुडांगफा, त्याओखामतीके पुत्र	१३९७—१४०७ ,,
९ उनके पुत्र चुजांगफा	१४०७—१४२२ ,,
१० ,, चुफाकफा	१४२२—१४३९ ,,
११ ,, चुसेनफा	१४३९—१४८८ ,,
१२ ,, चुहेनफा	१४८८—१४९३ ,,
१३ ,, चुपिम्फा	१४९३—१४९७ ,,
१४ ,, चुहुंगमुंग वा स्वर्गनारायण	१४९७—१५३९ ,,
१५ ,, चुक्लेनमुंग या गड़गायां राजा	१५३९—१५५२ ,,
१६ ,, चुखामफा या खोड़ा राजा	१५५२—१६०३ ,,
१७ ,, चुसेंगफा या बुढ़ा स्वर्ग नारायण वा प्रतापसिंह	१६०३—१६४१ ,,
१८ ,, चुरामफा वा भगा राजा	१६४१—१६४४ ,,
१९ ,, चुत्यिंगफा वा नडिया राजा	१६४४—१६४८ ,,
२० ,, चुतामला वा जयध्वज सिंह भगानिया राजा	१६४८—१६६३ ,,
२१ ,, चारिंगिया वंशके चुपंगमुंग वा चक्रध्वजसिंह	१६६३—१६७० ,,
२२ उनके भ्राता चुन्यातफा वा उदयादित्य	१६७०—१६७२ ,,

नाम	राज्यभोगकाल	
२३ उनके भ्राता सुक्लाम्फा वा रामध्वज	१६७२—१६७४	,,
२४ चारिंगरीया वंशके सुहुङ्ग राजा	१६७४ (१ मास १५ दिन)	,,
२५ तुङ्गखुंगिया वंशके गोबर राजा	१६७५ (२० दिन)	,,
२६ दिहिंगिया वंशके सुजिन्फा	१६७५—१६७७	,,
२७ तुङ्गखुंगिया वंशके सुदैफा	१६७७—१६७९	,,
२८ चारिंगरीया वंशके सुलिक्फा वा लरा राजा	१६७९—१६८१	,,
२९ चारिंगरीया वंशके गदापाणि वा गदाधर सिंह वा सुपातफा	१६८१—१६९६	,,
३० उनके पुत्र लाई वा सुखरुंगफा वा रुद्रसिंह	१६९६—१७१४	,,
३१ सुतानफा वा शिवसिंह	१७१४—१७४४	,,
३२ उनके भ्राता सुनेनफा वा प्रमत्तसिंह	१७४४—१७५१	,,
३३ ,, सुरामफा वा राजेश्वरसिंह	१७५१—१७६९	,,
३४ ,, सुन्येओफा वा लक्ष्मीसिंह	१७६९—१७८०	,,
३५ ,, सुहितपांगफा वा गौरीनाथ सिंह	१७८०—१७९५	,,
३६ सुक्लिंगफा वा कमलेश्वर सिंह	१७९५—१८१०	,,
३७ उनके भ्राता चन्द्रकान्तसिंह	१८१०—१८१८	,,
३८ ,, पुरन्दर सिंह	१८१८—१८१९	,,
पुनः चन्द्रकान्त सिंह	१८१९—१८२१	,,
३९ तुङ्गखुंगिया वंशके योगेश्वर सिंह	१८२१—१८२४	,,

१८२६ ई०को कामरूपमें अंगरेजोंका अधिकार हुआ।

अहोमोंकी आजकल अतीव दैन्यावस्था है। इन्होंने निज धर्मके साथ भाषा भी छोड़ दी है, वे सम्पूर्ण भावसे हिन्दू बन गये हैं। आगे देवमन्दिरों और राजप्रासादोंका विवरण दिया गया है। उनमें प्रायः सब वर्तमान हैं, किन्तु उनकी अवस्था अति शोचनीय है। उनका अधिकांश शिवसागर जिलेमें है। शिवपुर और नौगांव जिला स्थान कुछ कम है। कामरूप जिलेमें आसामवासी राजाओंके स्थापित अनेक देवमन्दिर देख पड़ते हैं। किन्तु कामाख्याका मन्दिर आसामके राजाओंने बनाया न था। जिस समय कामरूप कोचबिहारके अन्तर्गत था, उसी समय कोचबिहारके राजा नरनारायणने उसे निर्माण किया। आसामके राजाओंने पुराने मन्दिरको केवल सुधराया था। कामाख्या देखो।

आसामके राजाओंकी राजधानी शिवसागर जिलेमें रही। इसीसे कामरूप दूसरे किसी स्थानमें राजभवन नहीं है।

उक्त समयके पीछे कामरूपकी कोई विशेष उल्लेख योग्य घटना नहीं मिलती। केवल ई० अष्टादश शताब्दके शेषभागमें कामरूपके रहनेवाले हरदत्त और वीरदत्त नामक दो भाइयोंने अहोम राजाओंके विरुद्ध विद्रोहभाव अवलम्बन किया। हरदत्तके पद्मकुमारी नाम्नी एक परम रूपवती कन्या थी। प्रधानतः पद्मकुमारी ही हरदत्त और वीरदत्तके द्रोहका प्रधान कारण थी। अहोम राजाके प्रतिनिधि कलिया-भोमोरा बड़ फुकनके साथ हरदत्त वीरदत्तका युद्ध हुआ। युद्धमें हरदत्त हार गये। कलिया भोमोरा बड़ फुकनके किसी कुसिदाम नामक सेनापतिने पद्मकुमारीका अपहरण किया। प्रवादानुसार पद्मकुमारीके वक्ष और पदमें पद्मका चिह्न था। पद्मचिह्न ही उसके पद्मकुमारी नामका मूलकारण रहा। अद्यापि कामरूपमें ग्राम्य संगीत द्वारा हरदत्तका द्रोह और पद्मकुमारीका विवरण गाया जाता है।

राजा रुद्रसिंह अनेक महोपाध्याय कृष्णराम न्यायवागीश नामक किसी महापण्डितके निकट दीक्षित हुये। महापण्डितमें बहुत भक्तोचित ममता थी। उन्होंने आयुम्बर कामाख्य पर्वत लोग, उन्हें देनेका हुकम

विश्वास और भक्ति करते थे। रुद्रसिंहके पुत्र शिवसिंहने भी सपरिवार उनसे मन्त्र लिया। शिवसिंह स्वर्गदेव सपरिवार भट्टाचार्य महाशयके उपास्य देवीमन्त्रमें दीक्षित हुये। किसी समय शिवसिंहको छत्रभङ्ग दोष लगा था। ज्योतिषी पण्डितों और मन्त्रियोंने परामर्श किया। फिर वह शिवसिंहकी प्रथमा पत्नी रानी फूलेश्वरीको सिंहासन पर बैठा कर राजकार्य चलाने लगे। उसी प्रकार शिवसिंहके दीर्घ राजत्वमें उनकी चार महिषी-फूलेश्वरी, प्रमत्तेश्वरी, द्रौपदी, वा अम्बिका और अनादेवी या सर्वेश्वरीने बारी बारी सिंहासनाधिरोहण किया। फूलेश्वरी देवीके प्रति विशेष भक्तिमती थीं। एक वर्ष दुर्गोत्सवके समय उन्होंने मोयामरियाके महन्त और अन्यान्य स्थानके कई महन्त निमन्त्रण दे कर बुलाये थे। फिर उन्होंने भगवतीका प्रसादित सिन्दूर, रक्तचन्दन और बलिका रक्तादि छिड़क उन्हें लाञ्छित किया। दूसरोंकी अपेक्षा मोयामारीवाले महन्तके हृदय पर उक्त व्यवहारसे दारुण आघात लगा था। उन्होंने सब शिष्योंको बुलाकर कहा,—"इसका प्रतिशोध लेना आवश्यक है। उसके लिये प्राणपणसे चेष्टा करनी पड़ेगी।" कालक्रमसे वह भी सिद्ध हो गया। १७५१ ई०को राजेश्वर राजा बने। उनकी अन्तिम दशामें मोयामारीके महन्तने शिष्योंको एकत्र कर शिवसिंह राजाके पत्नीकृत अपमानका प्रतिशोध लेनेके लिये सबसे साहाय्य मांगा। शिष्य भी गुरुके अपमानका बदला लेनेको प्रतिज्ञाबद्ध हुये। उसके पीछे लक्ष्मीसिंहको राज्य मिला। राजा रुद्रसिंहके अन्तिम समयमें उन्होंने जन्म लिया था। आकृतिगत सौसादृश्य न रहनेसे राजा रुद्रसिंह उन्हें अपना पुत्र न मानते थे। उसीसे राज्यके अन्यान्य प्रधान लोगोंसे भी उनका वैसा आदर न रहा। फिर राजाके कुलगुरु पर्वतिया गोसाईं भी उन्हें दीक्षा देने पर असम्मत हुये। लक्ष्मीसिंहने स्वीय विद्यागुरु रमानन्द भट्टाचार्य नामक किसी अध्यापकको दीक्षागुरु बना लिया। बाल्यकालमें उन्होंसे राजाने शिवकी पूजा सीखी थी। फिर उन्होंने दीक्षा भी शिवमन्त्रकी ही ली। राजगुरु होनेसे रमानन्दने बहुत ख्याति पायी थी। फिर वह पर्बतिया गोसाईं नामसे आख्यात हुये। उनकी वैसी पदमर्यादासे अन्यान्य महन्त बहुत चिढ़े थे। विशेषतः मोयामारीके महन्त कटु वचन प्रयोग करनेसे राजाके विरागभाजन हो गये। उसी वर्ष आश्विन मासमें स्वर्गदेव नौका पर भ्रमणार्थ बाहर निकले थे। साथ ही स्वतन्त्र नौकामें बड़बड़ुवा रहे। मोयामारीके महन्तने साक्षात् कर क्षमा मांगी थी। किन्तु बड़बड़ुवाने महन्तको यथेष्ट विद्रूप किया। महन्तने उससे अपना अतिशय अपमान समझा था। उनके मनमें पूर्व अपमान भी दूना भड़क उठा। उन्होंने बुना कर भीतर ही भीतर शिष्योंको दलबद्ध किया। फिर महन्तने रुद्रसिंह स्वर्गदेवके किसी ताड़ित राजवंशीयको दलपति होनेके लिये बुलाया था। नाहरखोरा और राघमरान दो व्यक्ति सेनापति बने। विद्रोहमें योग देनेवाले छुरा, कुल्हाड़ा, कमान, कांता, बरछा प्रभृति अस्त्रोंसे सज्जित थे। प्रायः नौ हजार आदमी अग्रहायणके प्रथम ही रङ्गपुरकी ओर चल खड़े हुये। प्रवादानुसार महन्तने अन्यायसे लक्ष्मीसिंहको राजा बनानेके लिये उक्त युद्धयात्रा की थी।

मोयामरियाके लोगोंका उक्त उद्योग देख भूपाई बड़ गोसाईं, बूढ़े गोसाईं कीर्तिचन्द्र बड़बड़ुवा प्रभृति मन्त्रियोंने भी परामर्श कर एक दल सैन्य भेजा था। युद्धमें राजसैन्य हार गया। मोयामरियाके सैन्यदलने नगर पर अधिकार कर राजा, सेनापति और बड़बड़ुवा प्रभृति मन्त्रियोंको बांध लिया। राजा जयसागरके निकट बन्दी रहे और गोसाईं, बूढ़े गोसाईं प्रभृति प्रधान प्रधान लोग मारे गये। फिर मोयामरियावालोंने कीर्तिचन्द्रको सूली दे उनके पुत्रोंको वध किया। खोरामरानके पुत्र रमाकान्त राजा हुये। उक्त घटना अग्रहायणकी थी। किन्तु चैत्र मासमें लक्ष्मीकान्तके पक्षसे कुंये, गर्या, घनश्याम प्रभृति कई लोगोंने साजिश कर रमाकान्तका दासत्व स्वीकार किया। उनके कौशलसे रमाकान्त- मोयामरीयाके सेनापति प्रभृतिने अपने प्राण गंवाये। उसके पीछे लक्ष्मीसिंह राजा बने। लक्ष्मी-

कि इसी समय रामकान्तको बूढ़ागोसाईंके पद पर बैठाया था। इसीलिए इसी पीछे लोचनाथ गोसाईं सेनी गौरीनाथ नामसे राजा हुये। इन्होंने राज्यभरका समस्त मोया-मरीयाके लोगोंको मार डालना चाहा। इससे उन लोगोंने शाक्रिय कर १७८२ ई०को शिवसागरमें आग लगा सिङ्गरीघर नामक राजप्रासाद जला डाला। प्रधान सेनापति उस कार्यमें बाधा न पहुंचा सकनेके कारण गौहाटी भाग गये। बूढ़े गोसाईंने मोयामरीयावालोंको पकड़ मंगाया था। फिर इन्होंने दोषी निर्दोष न देख सबको मरवा डाला। सुतरां मोयामरीयाके दूसरे सब आदमी उत्तेजित हो गये। वह गुरुपाक और गुरु कार्यको साक्षात् ईश्वरका आदेश तथा कार्य समझते थे। इसीसे इन्होंने उस विद्रोहको धर्मविद्रोह मान लिया। चुपके चुपके मोयामरीया महन्तके प्रत्येक शिष्यको संवाद दिया गया था। फिर सभी लोग युद्ध करनेको उद्यमित हुये।

इसी बीच रामकान्त मर गये। उनके सुयोग्य पुत्र पूर्णानन्द बूढ़ा गोसाईं बने। इन्होंने विद्रोह-व्यापार देख सोचा कि सामान्य शास्ति देनेसे ही वह दब सकता था। फिर इन्होंने मोयमरीयाके कई लोगोंको पकड़ मृदु शास्ति दे कठिन आदेश कर मुक्त किया। किन्तु उससे फल विपरीत निकला। विद्रोहियोंने राजाको दुर्बल समझ पूर्व उत्साहसे दश सहस्र सैन्य एकत्र किया। एक दल नगराभिमुख चला था। बूढ़ा गोसाईंने ८५ बाधा देनेको सैन्य भेजा, किन्तु परास्त होना पड़ा। राज्यके मध्य हलचल मच गयी। प्रजा हताश हुयी। राजा नगर छोड़ भागे थे। किन्तु सेनापति चारो ओर किलेबन्दी कर नगरमें ही रहे। अन्तको जयसागरके निकट विषम युद्ध हुआ। उस युद्धमें भी राजकीय सैन्य हार गया। भरतसिंह नामक विपक्षके सेनापति राजा बने। राजा गौरीनाथ कछार और जयन्ती राजसे साहाय्य ले उक्त विद्रोह दबाना चाहते थे। किन्तु उन्होंने कहला भेजा कि अपनेको रक्षाके लिये आवश्यकसे अधिक सैन्य उनके पास न था। गौरीनाथ विद्रोहदलके भयसे गौहाटी भाग गये। वहां उन्होंने कलकत्तेसे परामर्श ले जितना हो सैन्य संग्रहपूर्वक बूढ़ा गोसाईंके सहायतार्थ भेजा था। किन्तु पथमें विद्रोहियोंने बाधा डाल उसे मार डाला।

उसी समय ग्वालपाड़ेमें रस नामक कोई अंगरेज लवणका व्यवसाय करते थे। गौरीनाथ निरुपाय हो साहबको विशेष पुरस्कार देनेकी आशा दे उनके द्वारा ब्रिटिश गवर्नमेण्टका साहाय्य पानेके लिये आयोजन करने लगे। साहबने ७०० बरकन्दाज दिये थे। बरकन्दाजोंकी फौजने मोमांयके विद्रोहियोंको हरा भगाया किन्तु उत्तराभिमुख जाते समय गौहाटीके निकट प्रायः वे सब बरकन्दाज मारे गये। कुछ दिन पीछे मणिपुरराज ५०० अश्वारोही और ४०० पदाति ले गौरीनाथके साहाय्यार्थ उपस्थित हुये। वह सैन्यदल भी युद्धमें हारा था। प्रायः १५०० योद्धा रणक्षेत्रमें पड़नेसे मणिपुरीसैन्य स्वदेश लौट गया। विपद् अकेले नहीं आती। उधर कृष्णनारायणने अपने भ्राता हरेन्द्रराज विष्णुनारायणको निकाल राज्य अधिकार लिया था। फिर उन्होंने गौरीनाथकी दुर्दशा देख हिन्दुस्तानी डाकू व व्याधियोंसे सैन्यदल खड़ा कर कामरूप पर चढ़ाई की। पुनः पुनः पराजित होते देख कामरूपके लोग अहोमोंसे घृणा करने लगे। फिर गौहाटी नगरसे उनका राज भी लोगोंने उठा दिया। इसी सूत्रसे उनके मध्य कोई कोई कृष्णनारायणका पक्षपाती बना था।

गौरीनाथने चारो दिक् विपद् देख गौहाटीसे चिठी मजुमदार, हरराम आनन्द और दरङ्गके निर्वासित राजा विष्णुनारायणको ब्रिटिश गवर्नमेण्टसे साहाय्य मांगनेके लिये कलकत्ते भेजा। ग्वालपाड़ेके अंगरेज वणिक् रस साहबने ईष्ट इण्डिया कम्पनीके नाम एक चिट्ठी दी थी। उस समय कलकत्तेमें गवर्नर जनरल लार्ड कार्नवालिस थे। वे राजा गौरीनाथका आवेदनपत्र पाते भी प्रथमतः साहाय्य करने पर पश्चात्पद हुये। कारण आत्मविच्छेदसे एक पक्षका साहाय्य करना दूसरे राजाके पक्षमें राजनीतिविरुद्ध है। किन्तु अन्तमें उन्होंने राजा कृष्णनारायणको हिन्दुस्तानी सेनाके साथ कामरूप लूटते पीछेमें देखा।

वह हिन्दुस्थानी अंगरेजोंकी प्रजा थे। सुतरां उनको दवाना लाट साहबने अपना कर्तव्य समझा। उसीसे १७९२ ई०को कप्तान वेल्स साहब मर्से नर भेजे गये। उन्होंने वहां पहुंचते ही हिन्दुस्थानियोंको दवाना चाहा था।

उधर भरतसिंह राजा हो निठुर भावसे शासन करते थे। सिपाहियोंको आदेश रहा,—"तुम जिस प्रकार हो, अहोमप्रजाको लूटो मारो।" रस साहबके वरकन्दाज और मणिपुरके सिपाही विनष्ट होनेसे उन्होंने अपना राज्य निष्कण्टक समझ लिया। उन्होंने गौहाटीके निकटस्थ कई स्थान अधिकार किये थे। राजा गौरीनाथ उक्त संवाद पा कुछ सैन्य ले उसी ओर चल पड़े। फिर कप्तान वेल्स साहब भी जा पहुंचे। राजाके मुखसे देशकी अवस्था सुन १७९२ई०की २५वीं नवम्बरको उन्होंने गौहाटी प्रदेश उद्धार किया। मोयामरीया दल छिन्न भिन्न हो गया। गौरीनाथ गौहाटीमें ही रहे। कप्तान वेल्स ६ठीं दिसम्बरको लौहित्यके उत्तर कूल गये थे। मोयामरीयावालोंका पराजय सुन कृष्णनारायणका भी सैन्य भागा। कृष्णनारायणने कहा,—"हम गौरीनाथके विपक्षमें नहीं थे। मोयामरीया-विद्रोह निवारण करना हमारा भी उद्देश्य था। किन्तु गौरीनाथ यह बात समझ न सके। इसीसे उन्होंने हमें भी विद्रोही मान रखा है।" फिर कप्तान वेल्सने गौरीनाथ और कृष्णनारायणके मध्य सन्धि करा दी। सन्धिमें शर्त थी कृष्णनारायणको दरङ्ग, कुटिया तथा चाय-दोआवको आदमी देनेके बदले ५५०००) और भोट राज्यमें व्यवसाय करनेके लिये महसूलके हिसाबमें ३०००) रु० देना पड़ेंगे। कप्तान वेल्सने गौहाटीमें रह देखा कि गौरीनाथकी बुद्धि विवेचना बड़ी न थी। फिर निष्कण्टक होते भी उनके द्वारा राज्य स्थापित होनेमें बड़ा सन्देह रहा। उन्होंने निम्नलिखित मर्मका पत्र कलकत्ता भेजा था,—"हम वह काम करके आना चाहते हैं, जिसमें राज्यका सुबन्ध रहे। हमें बोध होता कि राजाके अन्याय्य आचरणसे ही कृष्णनारायण प्रभृति विद्रोही हुये थे।"

१७९३ ई०के माघ मास कप्तान वेल्सने प्रधान नगर आक्रमण करनेको पैर बढ़ाया। गौरीनाथ भी साथ थे। जिस दिन वह नगरके निकट पहुंचे, उसी दिन नगरकी अवस्था ज्ञात हो दूसरे दिन प्रातःकाल १२ सिपाही, १ जमादार, १ नायक और १ हवलदार कुल १५ आदमी नगरके निकट भेजे गये। राजा गौरीनाथ वह व्यापार देख विषण्ण हुये। उन्होंने यह सोच जयकी आशा छोड़ी थी कि ५००० मोयामरीयावालोंके साथ उन मुष्टिमय सिपाहियोंका युद्ध होगा। मोयामरीयावाले चारो ओर घेर कर खड़े हो गये। उन्होंने सोचा कि उन्हीं कई सिपाहियोंके मारनेसे जय होगा। अन्तको सिपाही वीरभावसे गोली छोड़ने लगे। यथेष्ट मोयामरोयाके लोग मरे थे। उन्हीं कई सिपाहियोंने शत्रुपक्ष प्रायः निःशेष कर डाला। फिर कुछ अंगरेज सिपाहियोंने जा नगर अधिकार किया। उसके दूसरे दिन बूढ़ा गोसाईं गौरीनाथको नगरमें ले गये। १७८५ ई०के चैत्र मास कप्तान वेल्स नगरमें घुसे थे।

गौरीनाथ फिर जा कर सिंहासन पर बैठे। कप्तान साहबने बूढ़ा गोसाईं प्रभृति प्रधान कर्मचारियोंको बहुत उपदेश दिया और गवरनर जनरलका अभिप्राय समझा कर कहा,—"देशमें सुशासन रखनेके लिये कुछ ब्रुटिश सैन्य यहां रहेगा और कामरूपकी आमदनीसे उस सैन्यदलका खर्च चलेगा।"

उधर लर्ड कारनवालिस स्वदेश गये। १७९४ ई०को सर जान शोर गवरनर हो कर आये थे। उन्होंने कप्तानको लौटनेका आदेश किया।

फिर १८१७ ई०को पुरन्दर सिंहने चन्द्रकान्तसिंह स्वर्गदेवको बन्दी बना कर राज्य लिया था। उसी समय बड़फुकनके लोगोंने ब्रह्मदेशके अधीश्वर आलुङ्ग मिङ्गि या किंवया मिङ्गिसे जा कर उक्त विषयकी सूचना की। उन्होंने साहाय्यार्थ ३०००० सैन्य भेजा था। ब्रह्म-सेनापतिके राज्यमें प्रवेश करने पर पुरन्दर सिंहने सैन्य भेज कर बाधा दी। युद्धमें पुरन्दर सिंहका सैन्य परास्त हुवा। पुरन्दर डर कर गौहाटी भाग गये। ब्रह्मसेनापतिने चन्द्रकान्तको राजा बना पुरन्दरको पकड़नेके लिये सैन्य भेजा था। पुरन्दरको

और बड़फूकनने युद्ध किया। किन्तु उनके भी हारने पर पुरन्दर भाग कर विलमारीमें जा रहे। ब्रह्मसेनापति चन्द्रकान्तकी रक्षार्थ २००० सैन्य छोड़ स्वदेश लौट गये। पुरन्दरने निरुपाय हो कलकत्ते जा १८१८ ई०के मितम्बर मास हटिश गवरनमेण्टके निकट निम्न लिखित आवेदन किया था,—"यदि हटिश गवरनमेण्ट सैन्य भेज कर हमारा राज्य उद्धार कर दे तो हम उसके लिये व्यय देंगे और अधीनको हटिश गवरनमेण्टके अधीन करद राजा बननेके लिये प्रस्तुत है।" किन्तु हटिश गवरनमेण्टने उक्त आवेदन न सुना।

उस समय कोचविहारमें मिष्टर स्काट कमिश्नर थे। वह प्रतिपक्षमें गवरनमेण्टको सैन्यकी अवस्था देखते रहे। फिर ब्रह्मसेना रीतिके अनुसार देशमें लूट पड़ी। चन्द्रकान्तका नाममात्र राजा रह ब्रह्मसेनापति सर्वेसर्वा बन बैठे। चन्द्रकान्त भी अपनेको उनके हाथसे छुटकारा पानेकी चेष्टामें लगे। १८२० ई०का ब्रह्मसेनापति मिङ्गिमाहा देशको अवस्था देखने गये थे। जयपुरके निकट एक गढ़ बनते देख उन्होंने गोपनमें वहांके बड़फूकनको मार डाला। चन्द्रकान्तने उससे भीत हो सोचा कि उस बार ब्रह्मसेनापतिने मनुरूपसे राज्यमें प्रवेश किया था। उसी विवेचनामें वह बूढ़ा गोसाईं को नगरकी रक्षाका भार सौंप गोहाटी भाग गये। मिङ्गिमाहाने वहां पहुंच कर चन्द्रकान्तको अभय दिया था। किन्तु उनके उसमें विश्वास न कर सकनेसे नगरको सैन्यके साथ ब्रह्मसेनापतिका युद्ध हुआ। बूढ़ा गोसाईं हार गये। चन्द्रकान्त गोहाटीको और भागे थे।

मिङ्गिमाहा योगेश्वर नामक किसी कुमारको कहनेके लिये राजा बना आप राज्यशासन करने लगे। उस समय राज्यमें प्रायः दश हजार ब्रह्मसेना उपस्थित थी। दरङ्गराज भी उसी समय ब्रह्मको अधीनता स्वीकार करने पर बाध्य हुये। उसके पीछे ब्रह्मसेनापतिके साथ चन्द्रकान्त और पुरन्दरका नाना स्थानोंमें युद्ध हुआ। उसी अवस्थामें ब्रह्मसेनापतिने हटिश गवरनमेण्टको पत्र लिखा था कि वह किसी आसामी राजाका पक्ष ग्रहण न करे। किन्तु हटिश गवरनमेण्टने उक्त आवेदन सुना न था। अथच उसने किसीको सहायता न की।

उसी समय गारो प्रभृति असभ्य जातियोंका सभ्यता सिखाने और उनके देशमें हटिश अधिकार फैलानेके लिये १८२२ ई०को १०वीं व्यवस्था निकली थी। कोचविहारके कमिश्नर स्काट साहब उक्त आइन (व्यवस्था) का कार्य करनेका उत्तरदायित्वके एजण्ट हुये। उसी समय रङ्गपुरसे विच्छिन्न हो ग्वालपाड़ा एक स्वतन्त्र जिला बन गया। आसाममें उस समय ब्रह्म अधिकार होनेसे ग्वालपाड़ेमें एकदल अंगरेजी सैन्य रहा। लेफटेनेण्ट डेविडसन साहब उस सैन्यदलके नायक थे। मिष्टर डेविडसन और मिष्टर स्काट आसामियोंसे बहुत स्नेह रखते थे।

उधर मछगड़के युद्धमें सम्पूर्ण पराभूत हो चन्द्रकान्तने ग्वालपाड़े जा अंगरेजोंका आश्रय लिया। लेफटेनेण्ट डेविडसनको भय देखा ब्रह्मसेनापतिने निम्नलिखित पत्र भेजा था,—'ब्रह्मराज चाहते हैं कि अंगरेजोंके साथ मित्रता रहे और ब्रह्मसेना किसी प्रकार अंगरेजी सीमा अतिक्रम न करे। किन्तु चन्द्रकान्तने अंगरेजोंके अधिकारमें आश्रय लिया है। अतएव उन्हें पकड़नेके लिये आदेश देना आवश्यक है।" मिष्टर डेविडसनने उक्त पत्र मिष्टर स्काटके पास पहुंचा दिया। फिर स्काटने वही पत्र गवरनर जनरलके पास भेजा था। गवरनर जनरलने ढाकेके अंगरेजी सेनापतिको आदेश दिया कि मिष्टर स्काटको आवश्यक सैन्य मिल सकता है। ब्रह्मसेना यदि अंगरेजी सीमामें घुस आवे, तो वह बलपूर्वक भगायी जावे।

१८१० ई०को कछारके राजा गोविन्दचन्द्रने गवरनमेण्टसे आवेदन किया कि मणिपुरको सीमा पर ब्रह्मसैन्यका आगमन हो सकता है। १८२० ई०के मणिपुरके चौरजित् सिंह, मारजित् सिंह और गम्भीर सिंह नामक तीन राजकुमारोंने ब्रह्मके अत्याचारसे उत्पीड़ित हो कछार जा कर आश्रय लिया था। उसके पीछे गोविन्दचन्द्रके गृहविवादसे राज्यच्युत होने पर उक्त तीनों भ्राताओंमें कछारके सिंहासनके लिये बड़ी खटपट पड़ी। १८२१ ई०के चौरजित्

सिंहने ब्रटिश गवरनमेण्टको एक पत्र लिखा,—"मालूम पड़ता है कि ब्रह्मराज शीघ्र ही इस अञ्चल पर आक्रमण करनेवाले हैं। अतएव हम कछार राज्य अंगरेजोंको सौंपना चाहते हैं।" ब्रटिश गवरनमेण्ट उक्त प्रस्ताव पर सम्मत हो गयो। मारजित्‌सिंह पहले ही ब्रह्मके साहाय्यसे मणिपुर अधिकार कर वहां ब्रह्मके करद राजा बन बैठे थे।

ब्रटिश गवरनमेण्टको कछार राज्य हाथमें लेने पर संवाद मिला कि ब्रह्मवाले आसामसे कछार आक्रमणके उद्योगमें थे। मिष्टर स्काटने ब्रह्मसेनापतिको एक पत्र लिखा,—"कछारके साथ ब्रटिश गवरनमेण्टका सम्बन्ध है। आप इस प्रदेश पर आक्रमण न कीजिये।"

आसाम और कछारके मध्य क्षुद्र जयन्ती राज्य है। ब्रह्मसेनापतिने उक्त देशके राजाको भय देखा वशीभूत करना चाहा था। किन्तु जयन्तीराजने वश्यता न मानी। ब्रह्मसेनापति भी कछारकी अंगरेजी सेनाके भयसे हठात् उक्त राज्यको आक्रमण कर न सके।

उसके पीछे एक ही साथ आसाम और मणिपुर दोनों दिक्‌से आक्रमण करनेके लिये जयन्ती एवं कछारके प्रान्त तथा श्रीहट्टकी सीमा पर ब्रह्मसेना पहुंची थी। अंगरेजाधिकृत आराकान ब्रह्मवालोंने जीत लिया। १८२३ ई०को उन्होंने चट्टग्रामके निकटवर्ती शाहपुर नामक एक क्षुद्र द्वीप पर अधिकार किया था। लार्ड आमहर्ष्ट उस समय गवरनर जनरल थे। उन्होंने देखा कि ब्रह्मका अधिकार बङ्गालकी सीमा तक फैला था। फिर स्थिर रहनेसे बङ्गालके सीमान्त-प्रदेशमें मग अत्याचार करेंगे। १८२४ ई०को ब्रह्मसे युद्ध करना ठहर गया। गवरनर जनरलने ढाकासे ब्रिगेडियर मेकमरिनको ग्वालपाड़े जानेका आदेश दिया था। उधर लेफटिनेण्ट डेविडसनको आसाम प्रवेश करनेकी भी अनुमति मिली। मिष्टर स्काटने समस्त प्रबन्धका भार पाया था। १८२४ ई० की २८ वीं मार्चको ब्रिगेडियर मेकमरिनने विना युद्ध गौहाटी अधिकार कर लिया। ब्रह्मवाले अंगरेजोंका आगमन सुनते ही नगर छोड़ भाग गये। फिर ब्रिगेडियर मेकमरिन, कप्तान हरसवरा, लेफटिनेण्ट रिचार्डसन, करनल रिचार्डस प्रभृतिसे कलियाबर, नौगांव, रहा, मरामुख आदि स्थानोंपर कई बार युद्धमें ब्रह्मसेना परास्त हुयी। युद्धमें ब्रिगेडियरके मरनेसे करनल रिचार्डस प्रधान सेनापति बने थे। अन्तमें १८२४ ई०के मई मास आसाम प्रदेशमें अंगरेजोंका अधिकार हो गया। उसके पीछे जोड़हाट, जयन्ती, कछार, गौरीसागर प्रभृति स्थानोंमें शान्तिके रक्षार्थ क्षुद्र क्षुद्र युद्ध हुये। ब्रह्मके अधीनस्थ श्यामफूकन और बगली फूकनने ७०० सेनाके साथ आत्मसमर्पण किया था। योगेश्वरसिंह योगीघोपामें १८२५ ई०को परलोक गये। उनके वंशीय ब्रटिश गवरनमेण्टके वृत्तिभोगी बने।

१८२६ ई० की २४ वीं फरवरीको यण्डाबू शहरमें अंगरेजों और ब्रह्मवासियोंसे एक सन्धि हुयी। उसके अनुसार आराकान, मार्ताबान, तेनासरीम और आसाम अंगरेजोंको मिला था। स्काट साहब उक्त नवजित राज्यके कमिश्नर हुये। किन्तु वह उत्तरपूर्वाञ्चलमें गवरनर जनरलके एजण्ट एवं कमिश्नर तथा कोच-विहार, रङ्गपुर, मणिपुर एवं कछारके कमिश्नर और श्रीहट्टके जज थे। सुतरां एक आदमीके हाथमें उतने कार्योंकी सुविधा न पड़नेसे समस्त पूर्व-भारत निम्न और श्रेष्ठ खण्डमें विभक्त हुवा। उक्त खण्ड द्वयकी उत्तरसीमा भरली और दक्षिणसीमा धनशिरी नदी थी। सीनियर वा श्रेष्ठ खण्डके मिष्टर स्काट और जूनियर वा निम्नखण्डके करनल रिचार्डस कमिश्नर हुये। किन्तु प्रधान कर्तृत्व स्काट साहबको ही मिला था। गौहाटी आसामकी राजधानी हुयी।

१८२५ ई० के अक्तोबर मास करनल रिचार्डसके पीछे करनल कूपर कमिश्नर बने थे। श्रेष्ठ विभागमें अकेले कार्य चला न सकनेसे स्काट साहबने कप्तान एडम ह्वाइटको सहकारीरूपमें ग्रहण किया। स्काटसे आसाम प्रदेशकी यथेष्ट उन्नति हुयी। १८३१ ई०को चोरापूञ्जीमें वह मर गये। उनके पीछे टि, सि, रवार्टसन प्रधान कमिश्नर हुये।

उत्तरांशमें पुरन्दर सिंह राजा माने गये थे। उन्होंने वार्षिक ५००००) रु० कर देना स्वीकार किया। विश्वनाथ नामक स्थानमें एक पोलिटिकल एजण्ट रखे गये। १८३३।३४ ई०को कामरूप प्रदेश दरङ्ग, कामरूप और नौगांव तीन जिलोंमें विभक्त हुआ। उसमें एक स्वतन्त्र कलक्टर और मजिष्ट्रेटकी क्षमताके साथ एक प्रधान सहकारी कमिश्नर (Chief Assistant Commissioner) रखा गया। राबर्टसनके पीछे १८३४ ई०को जेनकिन्स साहब कमिश्नर हुये। उन्होंने सिलहट और भोटकी सीमा विभाग ठीक किया था। १८३५ ई० को उक्त प्रदेश भी सब् दिविजनके अधीन गया। १८३६ ई० को अपस्त्रोराजने कम्पनीसे सन्धि कर अधीनता मानी थी। किन्तु १८३९ ई० में राजाको मासिक ५००) रु० वृत्ति दे अपस्त्रो प्रदेश कम्पनीके अधिकारमें लाया गया। १८३८ ई० को पुरन्दर सिंह नियमित कर दे न सके थे। उसीसे उन्हें राज्यच्युत कर तत्प्रदेश शिवसागर और लखीमपुर दो जिलोंमें बांटा गया। चन्द्रकान्त सिंह गौहाटीमें ५००) रु० वृत्ति पाते थे। किन्तु उस साल ही उन्होंने परलोक गमन किया। पुरन्दर सिंहको भी वृत्ति दे जोड़हाटमें रखनेकी बात उठी थी। किन्तु गर्वित पुरन्दरने रुचि न की। उसी काल पर पुष्याम-वंशके राजासे आसामका राज्य अपहृत हुआ और आसाम वा प्राचीन कामरूप राज्य सहज सद्भावसे अंगरेजोंके अधिकारमें गया।

उसके कुछ दिन पीछे १८३८ ई०को एक कमिश्नरके हाथ शासन और विचारका भार रखनेसे कार्यमें सुगमता न देख पड़ी। उसीसे एक सहकारी नियुक्त हुआ। उक्त सहकारी नियुक्त होनेसे एक पदका नाम जुडिशल कमिश्नर और दूसरेका नाम डिपुटी कमिश्नर रखा गया।

१८६० ई० को इनकमटैक्स प्रचलित होनेसे फुलगुड़ीके लोग भड़क उठे थे। असिष्टण्ट कमिश्नर लेफटनण्ट सिंगर गड़बड़ मिटाने गये किन्तु निहत हुये। अन्तमें बड़े कौशलसे गड़बड़ थमने पर दोषियोंको उचित शास्ति मिली।

१८६१ ई० को कमिश्नर जेनकिन्सने अपदसे अवसर लिया था। फिर उसी पद पर कप्तान हपकिन्सन नियुक्त हुये। १८६६ ई० को गौहाटीमें जेनकिन्स मर गये।

१८६२ ई०को जयिया और जयन्ती पर्वतमें भयानक विद्रोह उठा था। फिर १८६४ ई०में भूटानका युद्ध चला। अंगरेज जीत गये। १८६५ ई० को सिंचोला नामक स्थानमें सन्धि हुयी। उक्त सन्धिके अनुसार भूटानके दक्षिण कई स्थान अंगरेजोंको मिले थे। गारो और नागाओंके कई सरदारोंने अधीनता स्वीकार की। उनमें सभ्यता फैलानेके लिये उक्त प्रदेश दो जिलोंमें बांटा गया। १८६६ ई०को गारो पर्वतमें तुरा और नागा पर्वतमें सामागुटिंग राजधानी हुआ। उसी वर्ष कोचबिहार और ग्वाल-पाड़ा आसामवाले कमिश्नरके हाथसे निकाल स्वतन्त्र कर दिया। १८७१ ई० को लेफटेनण्ट गवरनर सर जर्ज कम्बेल उक्त देश देखने पहुंचे थे। उन्होंने यहांके विचारालयों और विद्यालयोंमें आसामी भाषा व्यवहार करनेका आदेश दिया।

१८७४ ई०को कर्नेल हपकिन्सनने अवसर लिया था। फिर आसाम देश बङ्गालके लेफटेनण्ट गवरनरके हाथसे निकल एक प्रधान कमिश्नरको मिला। कर्नेल किटिंग प्रथम चीफ कमिश्नर हुये। चीफ कमिश्नर बनने पर शिलङ्ग नगर राजधानी हुआ और ग्वालपाड़ा तथा गारो पर्वत फिर आसाममें चला गया। उसके पीछे कछार और श्रीहट्ट बङ्गदेशसे स्वतन्त्र हो चीफ कमिश्नरके अधीन हुआ।

उसी वर्ष असिष्टण्ट कमिश्नर लेफटेनण्ट कम्बने नागापर्वतकी पैमाइश शुरू की थी। मोजगांवमें पहुंचने पर कई नागाओंने विश्वासघातकतापूर्वक शिविरमें घुस उन्हें मार डाला। उनके कम्प प्रभृति १८७ आदमियोंमें उसी दिन ८० लोग मारे गये। ५१ लोग आहत हुये थे। कुछ दिन पीछे उन नागाओंको उपयुक्त शास्ति मिली। कर्नेल किटिंगके पीछे सर इष्टुअर्ट बेली और उनके पीछे मिष्टर एलियट आसामके चीफ कमिश्नर हुये। पर एलियटके

सब लोग खाते हैं। उत्सवादिमें उसीको भोजन बनाना पड़ता है। अन्य स्थल पर बोका और सुलायम दो प्रकारका चावल जलमें भिगा दधि, गुड़, कदली प्रभृति मिला साधारणतः निमन्त्रणादिमें खाया जाता है। पान खानेकी चाल बहुत है।

चैत्र, आश्विन और पौषकी संक्रान्ति कामरूपियोंके प्रधान उत्सवका दिन है। उक्त तीनों पर्वोंको बिहु कहते हैं। उक्त पर्वोंमें पिताको प्रणाम करते और आत्मीय कुटुम्बादिसे मिलते हैं। फिर महा आडम्बरके साथ पानभोजनादि होता है। चैत्रकी संक्रान्तिको सात दिन किसी प्रकाश्य स्थल पर स्त्रीपुरुष मिल नाचते-गाते हैं। उक्त नृत्यगीतमें अश्राव्य अवाच्य अश्लील गीत और अङ्गभङ्गी प्रदर्शित की जाती है। दुर्गोत्सव, होलिका, जन्माष्टमी और शङ्कर-माधवके मृताहकी तिथिको साधारण पर्व मानते हैं।

कामरूप जिलेके दक्षिण प्रान्तमें किसी स्थान पर प्रस्तरनिर्मित एक गृह है। प्रवादानुसार चांद सौदागरने उसे अपने लक्ष्मीन्द्र पुत्रके रहनेके लिये लोहेसे बनाया था। यह बात बहुत लोगोंको मालूम है बेहुलाके कौशल और नेता धोपानीकी कृपासे लक्ष्मीन्द्र कैसे जी उठे थे। भुवहीके निकट "नेता धोपानीका घाट" नामक एक घाट अभी वर्तमान है। किन्तु आज कल उसकी भग्नावस्था है। चांद सौदागर एक विख्यात वणिक् थे।

तेजपुरके निकट दूसरे भी कई प्रस्तर-गृहोंके भग्नावशेष हैं। प्रवादानुसार वह वाणराजकी कन्या उषाके प्रासाद हैं। फिर नौगांवके चंपानला पर्वतपर कई प्रस्तर-प्रासादोंका भग्नावशेष है। कहते हैं वह महाभारतोक्त हंसध्वजके प्रासादका भग्नावशेष है। डीमापुरमें वैसे ही भग्नावशेष महाभारतोक्त हिडिम्बा नन्दन घटोत्कचकी राजधानीका भग्नावशेष माने जाते हैं। ग्वालपाड़ेके हबड़ाघाट परगनेमें "श्रीसूर्यपर्वत" नामका एक पहाड़ है। वहां एक गोलाकार वृहत् प्रस्तरखण्ड पर घड़ीके निशानकी तरह कई रेखा हैं। किसी किसीके अनुमानसे एक समय वहां मानमन्दिर रहा।

किसी समय कामरूप प्रदेश इन्द्रजालकी विद्याके लिये प्रसिद्ध था। अनेक स्त्रियां इन्द्रजाल सीखती थीं। किन्तु आज कल अंगरेजी सभ्यतामें कामरूपकी वह प्राचीन विद्या विलुप्त है।

प्राचीन कामरूप वा वर्तमान आसामराज्यके अन्यान्य ज्ञातव्य विवरणोंके सम्बन्धमें Hunter's Statistical Account of Assam, 2 vols ; Dalton's Ethnology of Bengal, M'cosh's Topography of Assam, Robinson's Assam, M Martin's Eastern India, vol. III, Journal of the Asiatic Society of Bengal, vol XLI., XLII, Gait's Assam प्रभृति पुस्तक देखो।

कामरूपत्व (सं॰ क्लो॰) सिद्धिविशेष, एक करामत। जैनशास्त्रके अनुसार यह कामादिसे निरपेक्ष रहने, मन्त्रसिद्धि करने पर या किसी देवके प्रसन्न होने पर मिलता है। इससे साधक मनमाना रूप बना सकता है।

कामरूपधर (सं॰ त्रि॰) कामं यथेच्छं रूपं धरति धारयति, काम-रूप-धृ-अच्। इच्छानुसार विविधरूप-धारक, मनमानी सूरत बना लेनेवाला।

कामरूपपति (सं॰ पु॰) 'शारदातिलक' नामक तंत्रके टीकाकार।

कामरूपिणी (सं॰ स्त्री॰) कामं मनाज्ञं रूपं अस्त्यस्याः, काम-रूप-इनि-ङीप्। १ अश्वगन्धा, असगंध। २ सुन्दरी, खूबसूरत औरत। ३ इच्छानुसार विविधरूप धारण करनेवाली, जो मनमानी सूरत बना लेती हो।

कामरूपी (सं॰ पु॰) कामं कमनीयं रूपं अस्यास्ति, काम-रूप-इनि। १ विद्याधर। २ जाहक जन्तु, खेखर, एक जानवर। ३ शूकर, सूवर। (त्रि) ४ इच्छानुसार विविधरूपधारी, मनमानी सूरत बना लेनेवाला।

"सर्वमाय विषितश्च हरिभिः कामरूपिभिः।" (रामायण)

कामरूपोद्भवा (सं॰ स्त्री॰) कृष्णकस्तूरी, काला मुश्क।

कामरेखा (सं॰ स्त्री॰) कामानां कामव्यापाराणां रेखा चिह्नं लक्षणं वा यत्र, बहुव्री॰। वेश्या, रण्डी, छिनाल।

कामल (सं॰ पु॰) कम्-णिच्-कलच्। १ रोगविशेष, कंवलबाई। कामला देखो।

२ वसन्तकाल, मौसम-बहार। ३ मरुदेश, रेगस्तान। (त्रि॰) ४ कामुक, चाहनेवाला।

कामलकोरक (सं० त्रि०) कामलकोरकस्य इदम् कामल कोरक-अण्। ...
कामलकोरक नामक कोटसम्बन्धीय एक कीड़ेसे सुशोभित।

कामलता (सं० स्त्री०) कामस्य लता इव उपमित समा०। उपस्थ, शिश्न। २ लताविशेष, एक बेल।

कामला (सं० स्त्री०) कामल टाप्। रोगविशेष, कँवल वाई। (A form of Jaundice) पाण्डुरोग अधिक विकसित रहने या पाण्डुरोगमें पित्तकर वस्तु आहारादि करनेसे विकृतपित्त रोगीका रक्त मांस बिगाड़ कर कामला रोग उत्पादन करता है। फिर प्रथमसे भी कामला रोग हुआ करता है। इस रोगमें चक्षु चर्म नख और मुखदेश हरिद्रावर्ण देख पड़ता है। मलमूत्र रक्त वा पीतवर्ण लगता है। सर्वशरीर भेकवर्ण बन जाता है। इन्द्रिय शक्तिहीन रहती हैं। दाह, अजीर्ण, दुर्बलता, अवसन्नता और अरुचिका वेग बढ़ता है। यह दो प्रकारकी होती है—कोष्ठाश्रया और शाखाश्रया। आमाशयादि आभ्यन्तरिक कोष्ठ समूहमें उत्पन्न होनेसे कोष्ठकामला या कुम्भकामला और हस्त पादादि स्थानमें निकलनेसे शाखाकामला कहलाती है। कुम्भकामलामें वमन, अरुचि, उत्क्लेश, ज्वर, क्लान्ति, श्वास और कास उपजता और मलभेद होनेसे रोगी मरता है। फिर कमवक्रि कामलामें मल-मूत्र कृष्ण एवं पीतवर्ण लगने अथवा मल, मूत्र तथा वमनमें रक्त पड़ने, शरीर शोथविशिष्ट एवं अवसन्न रहने और दाह अरुचि, पिपासा आनाह तन्द्रा, मोह, दृष्टिनाश प्रभृति पड़नेसे भी रोगी बहुत दिन तक नहीं जीता।

वैद्यशास्त्रके मतसे इस रोगमें त्रिफला, गुलञ्च, दारुहरिद्रा वा निम्बका क्वाथ मधुके साथ पीना चाहिये। द्रोणपुष्पपत्रके पत्रका रस आंखमें लगाते हैं। गुड़चीकी पत्ती पीस कर तक्रके साथ खानेसे भी काम होता है। आमलकी, लोहचूर्ण, सौंठी, पिप्पली मरिच तथा हरिद्राचूर्ण, इन सब मधु और शर्करा मिला चाटना चाहिये। कुम्भकामलामें भी यह सकल औषध उपयोगी है। गोमूत्रके साथ शिलाजतु सेवन करनेसे पथिक काम होता है। विभीतक काठके मण्डूर अथवा आठ बार गोमूत्रमें डालने और मधुके साथ उसका चूर्ण चाटनेसे कुम्भकामला अच्छी हो जाती है। (भावप्रकाश)

गरुड़पुराणके मतानुसार इस रोगके निवारणार्थ मरिच और तिलपुष्प एकत्र पीस आंखमें लगाते हैं। फिर कुम्भके साथ अपामार्ग और गोक्षुरमूल पीनेसे भी कामलादि रोग अच्छे हो जाते हैं। इस औषधसे मुखरोग भी नहीं रहते।

कामलाली (सं०स्त्री०) कामसे अधिको नज्ञा:, काम-का अन्यत् ङीप्। ... हेवीमूर्तिविशेष।

"... " (तन्त्रसार)

कामलायन (सं० पु०) कमलस्य अपत्य पुमान् कमल अण् फक्। कमलके पुत्र, एक मुनि। इनका नाम उपकोशल था।

कामलायनि, कामलायन देखो।

कामलाव्याधिहन्त्री (सं० स्त्री०) नागदन्ती, नागोद क।

कामलि (स पु) वैशम्पायनके एक शिष्य।

कामलिका (सं० स्त्री०) मद्य, शराब, एक पान।

कामली (सं० त्रि०) कामलो रोगविशेषो इस्यास्ति, कामल इनि। १ कामलारोगपीड़ित, कँवल वाईकी बीमारीसे तकलीफ उठानेवाला। (पु०) कमलेन वैशम्पायनस्य अन्तेवासिविशेषेण प्रोक्त अधीयते। ...। वैशम्पायनके शिष्यका बनाया हुआ शास्त्र पढ़नेवाला।

कामली (हि० स्त्री०) क्षुद्र कम्बल कमरी।

कामलेखा (सं०स्त्री०) कामानां कामव्यापाराणां लेखा चिह्न यस्य यत्र, बहुव्री०। वेश्या, रण्डी।

कामलोक (सं० पु०) लोकविशेष, एक दुनिया। बौद्ध मतानुसार यह एकादश प्रकारका होता है,—नाम्य, तुषित, नरक निर्माणरति तिर्यग्लोक, प्रेतलोक असुरलोक, यमलोक चातुर्महाराजिक, परनिर्मित-वशवर्ती और मनुष्यलोक।

कामलोल (सं० त्रि०) कामेन कन्दर्पेणोद्भवा लोल चपल:, ३ तत्। कामसे मोहके आकुल मनवाला शीघ्र बहकाया हुआ।

कामवती (सं० स्त्री०) काम अस्मीयता अस्त्यस्या:,

काम-मतुप्-ङीप् मस्य वः। १ दारुहरिद्रा। कामः कन्दर्पभावः अस्त्यस्याः। २ मैथुनका अभिलाष रखने-वाली, जिस औरतको शहवत चढ़ी हो।

कामवर (सं० त्रि०) कामादपि सौन्दर्येण वरः श्रेष्ठः १ अतिसुन्दर, निहायत खूबसूरत। (पु०) २ यथेच्छ वर, मनमानी बख्शिश।

कामवल्लभ (सं० पु०) कामः कमनीयः अतएव वल्लभः प्रियः, कर्मधा०। यद्वा कामस्य कन्दर्पस्य वल्लभः, ६-तत्। १ आम्रवृक्ष, आमका पेड़। आम्रका मुकुल कन्दर्पको बहुत प्यारा है। इसीसे कन्दर्पकी पूजामें आम्रमुकुल अवश्य लगता है। २ वसन्त, बहार। ३ सारस पक्षी।

कामवल्लभा (सं० स्त्री०) कामस्य कन्दर्पस्य वल्लभा प्रिया। १ रति। २ ज्योत्स्ना, चांदनी।

कामवश (सं० त्रि०) कामस्य वशः वशीभूतः, ६-तत्। कामरिपुके वशीभूत, जो शहवतके तावेमें रहता हो।

कामवश्य (सं० त्रि०) कामस्य वश्यः वश्यतामापन्नः, काम-वश-यक्। कन्दर्पपीड़ाके वशीभूत, जो शहवतके तावेमें हो।

कामवाण (सं० पु०) कामस्य कन्दर्पस्य वाणः शरः, ६-तत्। कन्दर्पका वाण, कामदेवका तीर। कामदेव पुष्पके पांच वाण रखते हैं।

"अरविन्दमशोकञ्च शिरीष चूतमुत्पलम्।
पञ्चैतानि प्रकीर्त्तन्ते पञ्चवाणस्य सायकाः॥"

पद्म, अशोक, शिरीष, आम्र और उत्पल पांचों पुष्प कन्दर्पके पञ्चवाण हैं।

पांच प्रकारके कर्मानुसार कन्दर्पवाण अन्य नामों-से भी अभिहित हैं,—

"सम्मोहनोन्मादनौ च शोषणस्तापनस्तथा।
स्तम्भनश्चेति कामस्य पञ्चवाणाः प्रकीर्त्तिताः॥"

सम्मोहन, उन्मादन, शोषण, तापन, और स्तम्भन पांच कामवाणोंके नाम हैं।

कामवाद (सं० पु०) कामं यथेच्छं वादः। यथेच्छ-प्रवाद, मनमानी बात।

कामवान् (सं० पु०) कामः अस्यास्ति, काम-मतुप् मस्य वः। १ अभिलाषयुक्त, ख्वाहिशमन्द। २ मैथु-नेच्छायुक्त, शहवतकी ख्वाहिश रखनेवाला।

कामवासी (सं० त्रि०) कामं यथेच्छं वसति, काम-वस्-णिनि। इच्छानुसार नानास्थानमें अस्थिरभावसे वास करनेवाला, जो ख्वाहिशके मुवाफ़िक़ रहता हो।

कामविद्ध (सं० त्रि०) कामवाणेन विद्धः, ३-तत्। कन्दर्पवाणविद्ध, मैथुनकी इच्छासे आकुल।

कामविहन्ता (सं० पु०) कामस्य कन्दर्पस्य विशेषेण हन्ता नाशयिता, काम-वि-हन् तृच्। १ महादेव। (त्रि०) २ कामरिपु जयकारी, कामदेवको जीत लेने-वाला।

कामवीर्य (सं० त्रि०) कामं पर्याप्तं वीर्यं यस्य, बहुव्री०। १ अपरिमित वीर्यशाली, खूब ताक़त रखनेवाला। (क्ली०) कामस्य वीर्यम्, ६-तत्। २ कन्दर्पकी शक्ति, कामदेवका बल।

कामवृक्ष (सं० पु०) कामं यथेच्छं जातो वृक्षः, मध्य-पदलो०। वन्दाक, बांदा।

कामवृत्त (सं० त्रि०) कामं यथेच्छं निरङ्कुशं वृत्तमस्य, बहुव्री०। यथेच्छाचारी, मनमानी चाल चलनेवाला।

कामवृत्ति (सं० स्त्री०) कामेन स्वेच्छया वृत्तिः, ३-तत्। १ स्वेच्छाचार, मनमानी चाल। २ कामरिपुका कार्य, कामदेवका काम। (त्रि०) कामतो वृत्तिरस्य, बहुव्री०। ३ यथेच्छाचारयुक्त, मनमौजी।

कामवृद्धि (सं० पु०-स्त्री०) कामस्य वृद्धिर्यस्मात्, बहुव्री० १ कामज नामक महाक्षुप, एक बड़ा झाड़। कर्णाटक देशमें इसे 'कामज' कहते हैं। कारण कामवृद्धि सेवन करनेसे बलवीर्य बढ़ता है। इसका संस्कृत पर्याय—स्मरवृद्धिसंज्ञ, मनोजवृद्धि, मदनायुः, कन्दर्पजीव, जितेन्द्रियाह्व, कामेकजीव और जीवसंज्ञ है। राजनिघण्टुके मतसे यह मधुररस और बल, रुचि, कामशक्ति तथा इन्द्रियकी शक्ति बढ़ानेवाली है। २ कामरिपुकी वृद्धि, कामदेवकी बढ़ती।

कामवृन्ता (सं० स्त्री०) कामं कमनीयं वृन्तं यस्याः, बहुव्री०। पाटलावृक्ष, एक पेड़।

कामशक्ति (सं० स्त्री०) कामस्य शक्तिर्नायिकाभेदः, ६-तत्। कामदेवकी एक पत्नी। राघवभट्टने इस कामशक्तिके पचास विभाग किये हैं,—१ रति, २ प्रीति, ३ कामिनी, ४ मोहिनी, ५ कमलप्रिया, ६ विलासिनी,

७ कालकता, ८ श्यामला, ९ सुविकसिता १० विजि ताची ११ विगालाची, १२ सेवितामा १३ दिगम्बरा, १४ कामा, १५ कुमा, १६ वरा, १७ निस्या १८ कल्याणी, १९ मोहिनी, २० सुनीवना, २१ सुनावस्या, २२ विमर्दिनी, २३ कलाधिपा, २४ पवाची, २५ कमुखी, २६ नलिनी, २७ चरिका २८ पापिनी, २९ गिरा, ३० सुभ्रा, ३१ रसा ३२ भ्रमा, ३३ चारुमोला, ३४ चपला ३५ दीर्घजिह्वा ३६ रतिप्रिया ३७ कोकाची, ३८ वह्निची ३९ पाटला, ४० मालिनी, ४१ माला, ४२ रंगिनी, ४३ विशालोमुखी, ४४ नन्दिनी, ४५ रञ्जिनी, ४६ कान्ति ४७ कलकण्ठी, ४८ कठोरा ४९ मिवधामा, और ५० कपोलता।

ध्यानके मन्त्रमें कामपत्नि इस प्रकार वर्णित है —

"मदक्ष इह नमितः पञ्चोपरच्युतितः।
योनीपचक्रा नैवा त्रिविक्रमर्त्य नवामः॥"

कामको पत्नि कुसुमकी भांति वर्णवाली, सर्वाङ्गमें अलङ्कार पहने हाथमें नीलोत्पल लिये और तिरछी चक्षो भौंह चलनेवाली हैं।

कामघर (सं० पु०) १ कन्दर्पवाण, कामदेवका तीर। कामस्य कन्दर्पस्य शर इव कामोद्दीपकत्वात्। २ आम्र वृक्ष आमका पेड़।

कामशास्त्र (सं० क्ली०) कामस्य कर्मादेः प्रतिपादकं शास्त्रम् मध्यपदलो०। १ अभीष्टसम्पादक शास्त्र, मुराद पूरा करनेवाला ग्रन्थ।

"यत् कामविदं शीक्ष कस्मामविदं मतम्।
कामशास्त्रविदं शीक्ष सर्वेर्मिश्चुविकं॥"

(महाभारत, शान्ति, १११)

२ रतिशास्त्र। रतिशास्त्र देखो।

कामसंयोग (सं० पु०) अभिलषित विषयकी प्राप्ति, मुरादको तहसील।

कामसख (सं० पु०) कामस्य सखा काम सखि-टच्। १ वसन्तकाल, मौसम बहार। २ आम्रवृक्ष, आमका पेड़।

कामसखा (हि) कामसख देखो।

कामसुत (सं० पु०) कामस्य सुत पुत्र, ६ तत्। कन्दर्पपुत्र अनिरुद्ध।

कामसू (सं० त्रि०) कामं अभीष्टं सूते, काम-सू-क्विप्। १ अभीष्टप्रद, मुराद पूरी करनेवाला। (पु०) २ कोकण। (स्त्री०) कामं प्रसूते सूते। ३ कामधेनु।

कामसूत्र (सं० क्ली०) कामस्य तद्व्यापारस्य प्रति पादकं सूत्रम् मध्यपदलो०। कामव्यापारबोधक एक शास्त्र। इसे वात्स्यायनने बनाया है।

कामसेन (सं० पु०) कामवतीके एक राजा।

कामवतीका देखो

कामसेना (सं० स्त्री०) निविग्रतिकी पत्नी।

कामस्तुति (सं० स्त्री०) कामस्य स्तुतिः ६ तत्। प्रतिपदकी शान्तिके लिये कामदेवकी स्तुतिका एक मन्त्र। यह मन्त्र प्रतिपदीताको पढ़ना पड़ता है —

"कोऽसत् कन्त चरत् कामीसत् कमलकान्त् कामी सना
कान्त इन्धिनीका कामीनं॥" (तत्वब्र॰ १०८)

कृतिशास्त्रमें भी प्रतिपदकी दोषशान्तिके लिये निम्नलिखित मन्त्र पढ़नेको कहा है —

"अभिमतमभिष्ट कामो कामसूति नहेत्॥"

कामहा (सं० पु०) कामं कंदर्पं हतवान् काम हन् क्विप्। १ महादेव। २ विष्णु।

कामहेतुक (सं० त्रि०) कामः हेतुर्यस्य कामहेतु कप्। १ केवल अभिलाषजात, सिर्फ ख्वाहिशसे पैदा। २ कामरिपुसे उत्पन्न, कामदेवसे निकला हुआ।

कामा (हि० स्त्री०) सुन्दरी, खूबसूरत औरत।

कामा (अ० पु० Comma) १ विराम ठहराव। २ विरामका एक चिह्न ठहरनेका एक निशान्। यह समान अर्थवाचक दो शब्दों या वाक्योंके बीच आता है। कामा चिह्नका रूप यह , है।

कामाङ्ग (सं० पु०) कुमारिकाखण्ड अम्बसुनिकृतजात महार राजाके पुत्र। इनके पुत्रका नाम पारिजात था। (कुमारिका० १।३१।५६)

कामाची (सं० स्त्री०) काम रमणीये अचि यस्याः, काम अचि षच् ङीप्। १ देवमूर्तिविशेष, एक देवता। २ तन्त्रोक्त कोई योग।

कामाख्या (सं० स्त्री०) कामयते मह्यातां कामं पूर यतीति कामा आख्या यस्याः। १ देवीविशेष, एक देवता। इनके इस नाम सम्बन्ध पर यों लिखा है —

कालिकापुराण—

"कामार्थमागता यस्मान्मया सार्धं महागिरौ।
कामाख्या प्रोच्यते देवी नीलकूटे रहोगता॥"

कामदा कामिनी कामा कान्ता कामाङ्गदायिनी ।
कामाङ्गनाशिनी यस्मात् कामाख्या तेन चोच्यते ॥"
(कालिकापुराण)

भगवान्‌ने कहा—महादेवी कामाख्या अभिलाष पूरण करनेके लिये हमारे साथ नीलकूट गयी थीं। इसीसे कामाख्या नाम प्राप्त हुआ। वह कामदा, कामिनी, कामा, कान्ता, कामाङ्गदायिनी और कामाङ्ग नाशिनी होनेसे "कामाख्या" कहायी हैं।

२ पीठस्थान विशेष। कामाख्यादेवी ही इस स्थानकी अधिष्ठात्री-देवता हैं। कालिका-पुराणमें इस पीठस्थानके सम्बन्ध पर लिखा है,—"दक्षके यज्ञमें सतीने प्राण छोड़ा था। महादेव उनका मृतदेह स्कन्ध पर रख बहुत दिन पर्यन्त इतस्ततः घूमते रहे। क्रमशः उस देहसे स्थान स्थान पर अवयव विशेष गिरा था। इसीसे इन सकल स्थानों पर एक एक पवित्र पीठ बन गया। परिशेषको कुब्जिका नामक पीठ-स्थानमें देवीका योनिमण्डल गिरा। उस समय महामाया योगनिद्रा भी महादेवसे लीन थीं। उन्होंने फिर अति उच्च पर्वतका रूप धारण कर पातालमें प्रवेश किया। यह व्यापार देख ब्रह्माने पर्वतरूपसे उन्हें पकड़ा था। विष्णु भी पृथिवी आक्रमण कर उनके निकट उपस्थित हुये। उक्त पर्वतत्रय शत शत योजन उन्नत थे, किन्तु देवीके आक्रमणसे अधो-गत हो एक कोस परिमित उच्च रह गये। उनमें पूर्व दिक्‌का पर्वत ब्रह्मशैल है। उसे 'श्वेत' कहते हैं। वह सर्वापेक्षा अधिक उच्च है। पश्चिम दिक्‌का पर्वत वाराह नामक विष्णुशैल है। फिर उभयके मध्यदेशस्थित त्रिकोण उदूखलाकृति शैलका नाम नील है। वही महादेवका रूपान्तर है। एतद्भिन्न ईशान-दिक्‌के दीप्तिशाली पर्वतरूपी कूर्मका नाम 'मणि-कर्ण' है। वायुकोणस्थित पर्वत 'मणिपर्वत' कहलाता है। उक्त पर्वत चीक्षण्याका अति प्रियस्थान है। नैर्ऋतकोणस्थ पर्वतका नाम 'गन्धमादन' है। वह महादेवका प्रियस्थान है। ब्रह्मशक्ति-शिलाका पूर्व-भागस्थित पर्वत भी महादेवका रूपान्तर है। उसे 'भस्माचल' कहते हैं।

इसी प्रकार पवित्र नीलकूट पर्वतस्थ कुब्जिकापीठमें देवी महेश्वरीने महादेवके साथ अवस्थान किया। उनका योनिमण्डल ही गिर कर प्रस्तर बन गया था। वही कामाख्यादेवीके नामसे विख्यात हुआ। मनुष्य उक्त शिलाके स्पर्शसे देवत्व पाते और देह ब्रह्मलोक जाते हैं। उक्त स्थानका माहात्म्य अति अद्भुत है। उसमें लौह डाल देनेसे उसी समय भस्म हो जाता है।

उक्त योनिमण्डल २१ अङ्गुलि दीर्घ और १ वितस्ति (बालिश्त) वि त है। फिर वह सिन्दूर और कुङ्कुमादिसे लेपित है। देवी महामाया वहां प्रत्यह पञ्चकामिनीमूर्तिसे अवस्थान करती हैं। पञ्चमूर्तिके नाम—कामाख्या, त्रिपुरा, कामेश्वरी, सारदा और महोत्साहा हैं। देवीकी चारो ओर अष्ट योगिनी रहती हैं। उनके नाम—गुप्तकामा, श्रीकामा, विन्ध्य-वासिनी, कटीश्वरी, वनस्था, पाददुर्गा, दीर्घेश्वरी और प्रकटा हैं। अपरापर तीर्थ भी वहां जलरूपसे अव-स्थित हैं। विष्णु उसके तीर कमल नामसे अवस्थान करते हैं। देवीके अङ्गमें लक्ष्मी ललिता नामसे और सरस्वती मातङ्गी नामसे अवस्थित हैं। देवीके प्रिय-पुत्र गणदेव पर्वतके पूर्वभागमें द्वारदेश पर सिद्ध नामसे रहते हैं। कल्पवृक्ष और कल्पलता तिन्तिड़ी तथा अपराजिता रूपसे वहां अवस्थित हैं। वाराह-मूर्ति हरि पाण्डुनाथ नामसे परिचित हो रहे हैं। उन्होंने जहां मधु और कैटभासुरको मार गिराया, वहां निकट ही ब्रह्माने ब्रह्मकुण्ड बनाया है। उक्त ब्रह्मकुण्डके निकट गया और वाराणसीचैव योनिमण्डलतुल्य कुण्डरूपसे अवस्थित है। उसीके पास इन्द्र एवं अन्यान्य देवने महादेवकी सन्तुष्टिके लिये अमृतपूर्ण अमृतकुण्ड स्थापित किया था। उसके निकट कामे-श्वर नामक महापुण्यतीर्थ कामकुण्ड है। सिद्धकुण्ड और कामकुण्डके मध्यभागमें केदार नामक क्षेत्र है। वह दैर्घ्यमें १४ व्याम बैठता है। उसे छायाछत्र भी कहते हैं। गुप्तकुण्डके मध्यदेशमें कामेश्वर पर्वतसे सलग्न शैलपुत्रीका नाम 'कामाख्या' है। कामेश्वर और कामाख्याके मध्यदेशमें कालरात्रि हैं। पीठ-स्थानमें दीर्घेश्वरी, सोमाभागमें प्रचण्डिका और

कामाख्याप्रस्तरके अन्तर्देशमें कुमाख्यो नाम्नी योगिनी रहती हैं। दक्षिण पीठमें कामेश्वरके अघोर नामक शिखरको परमात्मा, भैरव नामसे अभिहित करते हैं। इन्हीं भैरवके निकट चामुण्डा भैरवीका अवस्थान है। कामेश्वर और भैरवके मध्यवर्ती स्थानमें गुप्तापगा देवी हैं। सद्योजात नामक शिखरदेशमें आम्रातकेश्वर हैं। इसी स्थानमें योगरूपिणी दुर्गा नाम्नी नायिका हैं। फिर उस स्थानका अपर पश्चिमांश जलावेष्टित आम्रातक वृक्ष भी कल्पलतावेष्टित अवस्थित है। इसी आम्रातक वृक्षके निकट स्वयं गङ्गा शिवगङ्गा नामसे अवस्थित हैं। उसके समीप आम्रातकेश्वर नामक पुष्करदेश है। ईशान शिव तत्पुरुष नामक शिखरके उपरिभागमें भुवनेश्वर देवका पीठ है। उसके निकट कामधेनु नामसे सुरभिकी शिलामूर्ति है। मध्यदेशमें कोटिलिङ्ग नामक महाभैरवकी मूर्ति है। यह पांच मूर्ति द्वारा पांच भागमें विभक्त है। ब्रह्मपर्वतके ऊर्ध्वदेशमें भुवनेश्वरीके नाम पर महागौरीकी शिलामूर्ति है। यहां ब्रह्मा पर्वतरूपसे पर्वतरूपी महादेवके साथ मिलित हुए, यहां अपराजिता नामकी कल्पलता अवस्थित है। कामधेनुके निकट पश्चिमकोणमें योनिरूपा कामाख्याका पीठ है। उसी स्थान पर विन्ध्यवासिनी नामसे पञ्चवक्त्र वनवासिनी नामसे स्कन्दमाता और कामायनी नामसे पाददुर्गा योगिनीका अवस्थान है। उस प्रकार योगिनी नीलशैलके नैऋत दिक् अवस्थित है। पश्चिम द्वार पर हनुमान्पीठमें पाषाणरूपी नन्दीका अवस्थान है।

(कालिकापुराण ८१ अ॰)

देवीगीतामें भी कामाख्या-पीठस्थान सर्वोत्कृष्ट माना और लिखा गया है—

देवी कामाख्या प्रतिमास इस स्थानमें रजस्वला होती हैं।

(योगिनीतन्त्र, ८८ पटल और कामरूप तन्त्र द्रष्टव्य है।)

कामाख्याकी कुमारी पूजा भगवतीपूजाका विशेष अङ्ग है। कामाख्यामें अनेक ब्राह्मण-कुमारीका पूजा ग्रहण एक व्यवसाय स्वरूप है। पूजा हो या न हो कामाख्यादर्शनके लिये पहुंचते ही कुमारी यात्रीको घेर कर पकड़ेंगी और दक्षिणा मांगने लगेंगी। अनुमानिक १०० कुमारी सर्वदा कामाख्यामें रहती हैं। अनेक समय यह यात्रियोंको दक्षिणाके लिये व्यतिव्यस्त कर डालती हैं।

कामाख्याके भीतर न्यूनाधिक १२ तीर्थस्थान अद्यापि वर्तमान हैं। किन्तु दुःख है कि उनमें अनेक दुर्गम अरण्यसे समावृत हैं। उन समस्त तीर्थोंके मध्य भगवती भुवनेश्वरी और दश महाविद्याका पीठस्थान ही समधिक प्रसिद्ध है।

कामाख्याके पूजादि निर्वाहको अहोम राजाओंने अनेक ग्राम (पायक) और निष्कर भूमिका दान किया है। पायक कार्य विशेष पर भगवतीकी सेवामें लगे रहते हैं। फिर अंगरेज गवरमेण्टने भी पूर्व नियमसे भगवतीकी पूजाके लिये प्रबन्ध बांध दिया है। प्राय अनेक देवालयोंने पायक निष्कर भूमि पायी है जो कामाख्या, केदार और माधवमें सर्वापेक्षा अधिक है।

कामाग्नि (सं॰ पु॰) काम अग्निरिव, उपमितसमा॰। १ कामरूप अग्नि आशिकको ताप। २ कामरिपुका अनल।

कामाग्निसन्दीपन (सं॰ क्ली॰) कामाग्नीनां सन्दीपनम् ६ तत्। कामोद्दीपक रसविशेष, ताकतकी एक दवा। यह एक प्रकार मोदक है। पारा २ तोला, गन्धक २ तोला अभ्र २ तोला यवक्षार, सज्जिक्षार, त्रिफला, पञ्चलवण, यष्टी, यमानी अजयमानी, कोठमारी तथा तालीशपत्र प्रत्येक १ तोला, जीरा, तेजपत्र, दारचीनी बड़ी इलायची छोटी इलायची प्रत्येक ८ जातीफल प्रत्येक ४ तोला हरदार, मुण्डी, मरिच तथा पिप्पली प्रत्येक ८ तोला, अभ्रक, यष्टीमधु, एवं कार्पास प्रत्येक सो-सो तोला, शतावरी, भूमिकुष्माण्ड, गजपिप्पली, वचा, वृश्चिकपर्णपलाश, गोक्षुरबीज, बीजपत्रपूरक इन्द्रयव बराबर-बराबर और सबके समान चीनी, घी तथा शहद डाल इस औषधका पाक करते हैं। पाक उतरने पर २ तोला कपूर डाल देते हैं। मात्रा १ तो॰। यह औषध खानेसे भी हृष्ट है। इसे सेवन करनेसे मनुष्य सहस्र प्रमदाओंको रिझा और उसकी प्रमत्त कामाग्निका हरा सकता है। (भैषज्यरत्नावली।)

कामाङ्कुश (सं० पु०) कामे कामोद्दीपने अङ्कुश इव। १ नख, नाखून। २ शिश्न, उपस्थ। (वि०) ३ कामशान्तिकारक, खाहिशको ठण्ढा करनेवाला।

कामाङ्ग (सं० पु०) कामं कामोद्दीपकं अङ्गं मुकुलं यस्य, बहुव्री०। १ महाराजचूत, एक बड़ा आम। २ आम्रवृक्ष, आमका पेड़। ३ श्येनपक्षी, बाज चिड़िया।

कामाङ्गनायकरस (सं० पु०) वाजीकरणौषध विशेष, ताक़तकी एक दवा। शुद्ध पारेके बराबर गन्धक डाल रक्त उत्पलके द्रवसे एक प्रहर घोंटते हैं। फिर पश्चात्से आधा गन्धक मिलाने पर यह तैयार होता है। मात्रा ढाई रत्ती है। समूल इन्द्रयव, मुषली तथा शर्करा बराबर कूट पीस चूर्ण बनाते और इस रसको आधे पल गोदुग्ध एवं उक्त चूर्णके साथ खाते हैं। इसके सेवनसे मदनोदय होता है। (रसरत्नाकर)

कामाक्षी (सं० स्त्री०) लघुकाकमाची, छोटी कौवाटोंटी।

कामाता (सं० स्त्री०) १ बन्दा, बांदा। २ काकमाची, कौवाटोंटी।

कामातुर (सं० वि०) कामेन आतुरः, ३-तत्। कामपीडित, चाहका मारा हुवा।

कामात्मज (सं० पु०) कामस्य आत्मजः पुत्रः, ६-तत्। कन्दर्पके आत्मज, अनिरुद्ध।

कामात्मता (सं० स्त्री०) कामप्रधानः आत्मा यस्य तस्य भावः, कामात्मन्-तल्। १ अनुरागप्रधानचित्तता, जोशदार तबीयत। २ कामाकुलचित्तता, चाहकी मारी हुयी तबीयत।

कामात्मा (सं० पु०) कामप्रधानः आत्मा यस्य, बहुव्री०। १ अनुरागी, चाहनेवाला। कामवशीभूत, प्यारमें पड़ा हुवा। ३ काममय, चाहसे भरा हुवा। ४ फलाभिलाषी, नतीजेका खाहिशमन्द।

कामाधिकार (सं० पु०) कामस्य अधिकारः, ६-तत्। १ कामरिपुका अधिकार, खाहिशका दौरदौरा। २ मानदाभिलाष-सम्बन्धीय शास्त्रका एक भाग।

कामाधिष्ठान (सं० क्ली०) कामस्य अधिष्ठानं स्थानम्, ६-तत्। कामका स्थान अर्थात् मन, खाहिशके रहनेकी जगह यानी दिल।

कामाधिष्ठित (सं० त्रि०) कामेन अधिष्ठितम्, ३-तत्। १ कन्दर्प द्वारा अधिकृत, प्यारसे जीता हुवा। (क्ली०) भावे क्त। २ कामाधिष्ठान, खाहिश या प्यारकी जगह।

कामानल (सं० पु०) काम एव अनलः, काम अनल इव वा। १ कामरूप अग्नि, खाहिशकी आग। २ कामकी तीव्र यातना, प्यारका गहरा दर्द।

कामानशन (सं० क्ली०) कामं अनशनं यत्र, बहुव्री०। १ इच्छापूर्वक अनाहार तपस्या। २ रागद्वेषादिरहित इन्द्रियगण द्वारा विषयका त्याग।

कामानुज (सं० पु०) कामका अनुज, क्रोध, गुस्सा, खाहिशका छोटा भाई।

कामान्ध (सं० पु०) कामेन कामोद्दीपनेन अन्धयति ज्ञानशून्यं करोति काम-अन्ध-णिच्-अच्। १ कोकिल, कोयल। (वि०) कामेन अन्धः। २ कामके वेगमें हिताहितका ज्ञान न रखनेवाला, जो खाहिशके जोशमें भलाबुरा समझता न हो।

कामान्धा (सं० स्त्री०) कामं यथेष्टं अन्धयति, कामान्ध-टाप्। १ कस्तूरी, मुश्क। (कामेन अन्धा) २ कामके वेगसे हिताहितका ज्ञान न रखनेवाली स्त्री, जो औरत खाहिशके जोशमें अन्धी पड़ गयी हो।

कामाभी (सं० त्रि०) १ इच्छाभागी, खाहिशके मुताबिक खानेवाला। २ आहार लाभकर्ता, खाना पानेवाला।

कामाभिकाम (सं० वि०) कामस्य अभिकामो यस्य, बहुव्री०। कामभोगेच्छु, शहवतपरस्त।

कामायु (सं० पु०) कामं यथेष्टं आयुर्यस्य, बहुव्री०। १ गृध्र, गीध। २ गरुड़।

कामायुध (सं० पु०) कामस्य आयुधमिव। १ महाराजचूत वृक्ष, बड़े आमका एक पेड़। (क्ली०) २ शिश्न, उपस्थ।

कामारण्य (सं० क्ली०) कामं शोभन अरण्यम्, कर्मधा०। मनोहर वन, खूबसूरत जङ्गल। २ कन्दर्पवन, कामदेवका बाग़।

कामरथी (हिं०) कामार्थी देखो।

कामारि (सं० पु०) कामस्य अरिः शत्रुः, ६-तत्।

२ महादेव। ३ विद्माधोक धातु जिसो किसका चचमक पत्थर।

कामार्त (सं॰ त्रि॰) कामेन आर्त्तः पीड़ितः, ३ तत्। कामपीड़ित, मदनका मारा हुआ।

कामार्थी (सं॰ त्रि॰) काम अर्थयति प्रार्थयते, काम अर्थ णिच् णिनि। १ कामप्रार्थी, मदन चाहनेवाला। २ अभीष्टप्रार्थी, मुरादमांगनेवाला।

कामालिका (सं॰ स्त्री॰) कामं अलति भूषयति, काम अल्-ण्वुल् टाप् अत इत्वम्। मद्य, शराब।

कामाङ्ग (सं॰ पु॰) कामं यथेष्ट अङ्गति पुष्पादिका हीन वर्ष्माप्नोति, काम अङ्ग-अच्। रसाल, आम अचमार। (त्रि॰) २ अत्यन्त कामुक जो मदनके लिये बड़ो खाहिश रखता हो।

कामाचर (सं॰ त्रि॰) कामं यथेच्छं आचरति काम आ-चर-अच्। १ स्वेच्छाचारी, मनमौजी। (पु॰) २ बौद्धोंके एक देव।

कामावतार (सं॰ पु॰) कामस्य अवतार, ६ तत्। १ कामके अवतार, प्रद्युम्न। श्रीकृष्णके औरस और रुक्मिणीके गर्भसे इन्होंने जन्म लिया था। २ एक छन्द। इसमें छह छह मात्राके चार पाद होते हैं।

कामावमायिता (सं॰ स्त्री॰) कामेन स्वेच्छया अवसाय-यति, अचित्ते पदार्थान् स्थिरीकरोति तस्य भाव काम अव-सो-णिच् णिनि तल्। सत्यसङ्कल्पता, खाहिशका दबाव।

कामावसाय (सं॰ पु॰) कामेन स्वेच्छया अवसाय अचित्ते पदार्थानां स्थिरीकरणम्। इच्छानुसार अपने चित्तमें पदार्थसमूहका स्थिरीकरण, खाहिशका दबाव या सुधार।

कामावसायिता (सं॰ स्त्री॰) कामावसायिन् एक सत्यसङ्कल्पिनो भावः, कामावसायिन् तल्। १ सत्य सङ्कल्पता, खाहिशका दबाव। अणिमादि आठमें यह भी योगीका एक ऐश्वर्य है,—

"अणिमा लघिमा प्राप्तिः प्राकाम्यं महिमा तथा।
ईशित्वञ्च वशित्वञ्च तथा कामावसायिता॥"

कामावसायित्व (सं॰ क्ली॰) कामावसायिनो भावः, कामावसायिन् त्व। सत्यसङ्कल्पता, खाहिशका दबाव।

कामावसायी (सं॰ त्रि॰) कामान् स्वेच्छया अवसाययितुं शीलमस्य काम अव सो णिच् णिनि। सत्यसङ्कल्प, खाहिशको दबानेवाला।

कामाशन (सं॰ क्ली॰) कामं यथेष्टं अशनं वा अशनं भोजनम् कर्मधा॰। १ इच्छानुसार भोजन, मनमांगा खाना। २ पर्याप्त भोजन खाने खुराक।

कामाश्रम (सं॰ पु॰) कामं रमणीयं आश्रमः, कर्मधा॰। रमणीय आश्रम अच्छा ठिकाना या मुकाम।

कामाश्रमपद (सं॰ क्ली॰) कामं मनोज्ञं आश्रमपदम् कर्मधा॰। रमणीय आश्रमस्थान, अच्छो जगह।

कामासक्त (सं॰ त्रि॰) कामेन आसक्तः, ३-तत्। १ कामरिपुके वशीभूत, मदनका ताबेदार। २ अभिलाषमात्रके वशीभूत, खाहिशका ताबेदार।

कामासक्ति (सं॰ स्त्री॰) कामे आसक्तिर्लिप्सा ७ तत्। कामरिपुके कार्यमात्रको इच्छा मदनको खाहिश।

कामासन (सं॰ क्ली॰) काममस्यति क्षिपति अनेन, काम अस्-ल्युट्। आसनविशेष, एक बैठक। गरुड़ासन कर अतिशाङ्कित भूमिमें लगानेसे यह आसन बन जाता है।

"अथ कामासनं वक्ष्ये कामसर्वार्थसिद्धिदम्।
गरुड़ासनमभ्यस्य अतिशाङ्कित भूमौ तु॥" (रुद्रयामल)

कामाह्न (सं॰ पु॰) राजाम्र, बड़ा आम।

कामि (सं॰ पु॰) कामयते, कम णिङ्-इन्। १ कामुक, मदनवती। (स्त्री॰) २ कन्दर्पपत्नी, रति।

कामिक (सं॰ पु॰) काम अस्त्यस्य काम ठन्। १ कारण्डव पक्षी, एक दरयाको चिड़िया। (कामादि कारेव इतो पक्ष॰।) २ हिमाद्रि-प्रणीत एक ग्रन्थ। (त्रि॰) ३ अभिलषित, चाहा हुआ। ४ अभिप्रायपात, मुराद पाये हुआ।

कामिका (सं॰ स्त्री॰) १ तन्त्रका एक पौराणिक नाम। २ श्रावण कृष्णा एकादशी, सावन बदी ग्यारस।

कामिकी (सं॰ स्त्री॰) कामिक-ङीप्। १ कारण्डव पक्षिणी, एक दरयाकी चिड़िया। २ कामनाका कार्यादि, खाहिशका काम।

"अथ रात्रिं चकार्षि तव वै पुत्रपत्तिनीम्।" (महाभारत, अनुशासन)

कामित (सं० त्रि०) कम-णिच्-क्त। १ अभिलषित, चाहा हुआ। २ प्रार्थित, मांगा हुआ। (क्ली०) ३ अभिलाष, ख्वाहिश।

कामिता (सं० स्त्री०) कामोऽस्त्यस्य तस्य भावः, काम-इनि-तल्-टाप्। १ कामुकता, मस्ती। २ अभिलाष, ख्वाहिश।

कामिनियां (हिं० स्त्री०) १ स्त्री, औरत। २ वृक्षविशेष, एक पेड़। यह सुमात्रा यव प्रभृति द्वीपमें उत्पन्न होती है। कामिनिया बहुत नहीं बढ़ती। इसकी डालसे छोवान बनाते हैं।

कामिनी (सं० स्त्री०) कामः अतिशयेन अस्त्यस्याः, काम-इनि-ङीप्। १ अतिशय कामयुक्ता स्त्री। २ स्त्रीमात्र, कोई औरत। ३ सुन्दरी, खूबसूरत औरत। ४ भीरु स्त्री, डरपोक औरत। ५ वन्दाक, बांदा। ६ दारुहरिद्रा। ७ मद्य, शराब। ८ कामदेवकी एक शक्ति। ९ एक रागिणी। १० वृक्षविशेष, एक पेड़। इसके काठसे सुन्दर सुन्दर वस्तु बनते हैं। कामिनी पर नक्काशी अच्छी आती है।

कामिनीकान्त (सं० पु०) एक छन्द। इसमें छह छह मात्राके चार पाद होते हैं।

कामिनीदर्पघ्न (सं० पु०) ध्वजभङ्गका रसविशेष, नामर्दीकी एक दवा। पारद १ तोला और गन्धक १ तोला तथा धुस्तूरबीजका चूर्ण १ तोला मिलाते तथा धुस्तूरतैलसे सबको घोंट डालते हैं। इस औषधके सेवनसे ध्वजभङ्ग (नामर्दी) मिट जाता है। (भैषज्यरत्नावली)

कामिनीपुष्प (सं० पु०) वृक्षविशेष, एक पेड़।

कामिनीप्रिया (सं० स्त्री०) मद्यसामान्य, मामूली शराब।

कामिनीमोहन (सं० पु०) एक छन्द। इसका अपर नाम स्रग्विणी है।

कामिनीश (सं० पु०) कामिन्याः [कामिनीप्रियाख्यस्य] ईशः साधकः। शोभाञ्जनवृक्ष, सजना। [illegible]

कामिल (अ० वि०) १ पूर्ण, समूचा। २ योग्य, लायक।

कामी (सं० पु०) अतिशयेन कामयते, कम-णिङ्-णिनि। १ चक्रवाक, चकवा। २ कपोत, कबूतर। ३ चिड़ा। ४ चन्द्र, चांद। ५ ऋषभ नामक एक औषधि। ६ सारस पक्षी। ७ विष्णु।

"कामदेव कामपाल कामी कान्त, कृतागम।" (महाभारत १३।१४९)

८ कामुक, प्यार करनेवाला। (त्रि०) ९ अभिलाषी, ख्वाहिश करनेवाला। १० प्रेमी, मुश्ताक।

कामी (हिं० स्त्री०) १ कमानी। २ कांसेकी ठसी हुयी छड़। इससे मुठिया बनती है।

कामीक्षजीव (सं० पु०) कामजवृक्ष, एक पेड़।

कामीन (सं० पु०) कामं अनुगच्छति पृषोदरादित्वात् साधु; काम-ख। १ रामपूग, रामसुपारी। २ कामदेवका अनुगत। ३ कामुक, आशिक।

कामील, कामीन देखो।

कामुक (सं० त्रि०) कामयते कम-उकञ्। लषपतपद-स्थाभूवृषहनकमगमशॄभ्य उकञ्। पा ३।२।१५४। १ कामी, मुश्ताक। इसका संस्कृत पर्याय—कमिता, अनुक, कम्र, कामयिता, अभीक, कमन, कामन और अभिक है। २ अभिलाषी, ख्वाहिशमन्द। (पु०) ३ अशोक-वृक्ष। ४ पुन्नागवृक्ष। ५ माधवीलता। ६ चटक। ७ चक्रवाक, चकवा। ८ कपोत, कबूतर।

कामुककान्ता (सं० स्त्री०) कामुकानां कान्ता प्रिया, ६-तत्। अतिमुक्तलता, माधवीलता।

कामुकता (सं० स्त्री०) कामुकस्य भावः, कामुक-तल्। अत्यन्त कामयुक्तका कार्यादि, आशिकी।

कामुकत्व (सं० क्ली०) कामुक-त्व। कामुकता देखो।

कामुका (सं० स्त्री०) कम-उकञ् टाप्। १ इच्छावती, ख्वाहिश रखनेवाली। २ भोगाभिलाषविशिष्टा, आरामकी ख्वाहिश रखनेवाली। ३ रमणेच्छायुक्ता, शहवतकी ख्वाहिश रखनेवाली। ४ रक्तमञ्जरी, अतिमुक्तकलता। ५ बक, बगला। ६ एक मातृकादोष। यह रोग बालकको जन्मके पीछे बारहवें दिन, मास या वर्ष उठ खड़ा होता है। इसमें ज्वर चढ़नेसे रोगी हंसता, वस्त्रादि फेंकने लगता और वृथा बकवाद करता है। फिर श्वासप्रश्वासका वेग भी बढ़ जाता है।

कामुकायन (सं० पु०) कामुकस्य अपत्यं पुमान्, कामुक-फक्। नडादिभ्यः फक्। पा ४।१।९९। कामुकके पुत्र।

कामुकी (सं० स्त्री०) कामुक ङीप्। कामयितुं शीलमस्या इति। सं कामुक। इच्छावती, छिनाल। कामका रोगी।

कामुदा (सं० स्त्री०) सुवर्णो, सोंठ।

कामेप्सु (सं० त्रि०) अभिलाषके पूरणार्थ उद्योग करनेवाला जो व्यक्ति पूरी करनेमें लगा हो।

कामेश्वर (सं० पु०) कामानां ईश्वरः, ६ तत्। १ परमेश्वर। २ कुबेर।

कामेश्वरमोदक (सं० पु०) औषधविशेष, एक दवा। आमलकी, केसर, कुठ, कट्फल पिप्पली, सफेद अजवायन, अजमोदा, यष्टिमधु, जीरक, धान्यक, कृष्ण जीरक, शठी, कर्कटशृङ्गी, वचा, नागेश्वर, तालीस, एला, तालीसपत्र, गुडत्वक्, मरिच, हरीतकी तथा विभीतकका चूर्ण समभाग और सबके भूनी हुई भांगका चूर्ण सबके बराबर डालते हैं। फिर उस सर्वचूर्णके समान चीनी छोड़ पाकयोग्य जलमें चासनी बनाना चाहिये। पाक शेष होने पर किञ्चित् घृत एवं मधु और सुगन्धके लिये भूना तिल तथा कर्पूर पड़ता है। मोदक पाव तोलेका बांधते हैं। इस औषधके सेवनसे संग्रहणी रोग शीघ्र आरोग्य होता है।

(रसरत्नाकर)

कामोद्दरस (ताकत बढ़ाने) का कामेश्वर मोदक इस प्रकार बनता है—कुठ, गुड़ूची, मेथी, मोचरस, विदारी, मुषली, गोक्षुरबीज, इक्षुर, शतावरी, कौञ्चबीज, अजमोदा, तालमखाना, धान्यक, यष्टिमधु, नागबाला, तिलका मङ्गरिका, जातीफल, सैन्धव, भार्गी, कर्कटशृङ्गी, शुण्ठी, मरिच, पिप्पली, जीरक, कृष्णजीरक, चित्रक, गुडत्वक, तालीसपत्र, एला, नागकेशर, पुनर्नवा, गजपिप्पली, द्राक्षा, कट्फल, शुण्ठी माषकी शिम्बिका और कपिकच्छू चूर्ण समभाग, सर्वचूर्णका चतुर्थांश अभ्र, और अभ्रसे आधा गन्धक पड़ता है। फिर इस चूर्णसमष्टिसे आधी भांग और सबसे दूनी चीनी डाल यह मोदक बनाया जाता है। मोदककी मात्रा १ तोला है। इसके सेवनसे बलवीर्य बढ़ता है। (भैषज्यरत्नावली)

कामेश्वररस (सं० पु०) औषधविशेष, एक दवा। पारा १ पल, गन्धक १ पल, हरीतकी तथा त्रिफला १ पल, सुहागा डेढ़ पल एला डेढ़ पल, गन्धक डेढ़ पल त्रिकटु १ पल, पिप्पलीमूल १ पल, विष १ पल, नागकेशर १ कर्ष, दारक १ पल और सबके बराबर गुड़ डाल मुसलके रससे या घीसे एक प्रहर खरलमें घर यह रस तैयार होता है। गोली मैरको गुठलीके बराबर बनती है। रातको इसे सेवन करनेसे पाण्डु और मोक्षरोग आरोग्य होता है। (रसेन्द्रसारसंग्रह)

कामेश्वरी (सं० स्त्री०) कामानां भोगविषयाणां प्रदायित्वेन ईश्वरी, ६-तत्। १ कोई भैरवी। २ कामाख्याकी पांच मूर्तिमें एक मूर्ति।

"कामाख्या त्रिपुरा चैव तथा कामेश्वरी शिवा।
शारदाच महोत्साहा कामरूपगुणैर्युता॥" (कालिकापुराण ६१ अ०)

कालिकापुराणमें कामेश्वरी मूर्तिको वर्णना इस प्रकार है—तप्तकाञ्चन, कुचिन्त कृष्णकेश, षड्भुज, द्वादश चक्षु, षडानन, प्रत्येक मस्तकमें अर्धचन्द्र, कमोदेशपर मणिमुक्तादि निर्मित माला और दक्षिण-हस्त समूहमें पुस्तक, सिद्धसूत्र, पञ्चबाण, खड्ग, शक्ति तथा शूल है। वाम-हस्तसमूहमें अक्षमाला, अभयपद्म कोदण्ड, अभय, चर्म और पिनाक है। ईशान, पूर्व, दक्षिण पश्चिम, उत्तर और मध्य छवो ओर षण्मुख उपस्थित हैं। उनके मुख यथाक्रम श्वेत, रक्त, पीत, हरित, कृष्ण और विचित्र वर्णविशिष्ट हैं। यह मुख पृथक् पृथक् देवीसे युक्त कहे गये हैं। यथा माहेश्वरीका, रक्त कामाख्याका पीत त्रिपुराका, हरित शारदाका, कृष्ण कालेश्वरीका और विचित्र मुख चण्डी देवीका है। प्रति मस्तक पर वेश संयत है। परिधान विचित्रवर्ण अथवा व्याघ्रचर्म है। सिंह पर श्वेत पद्म, श्वेतपद्म पर रक्तपद्म और रक्तपद्म पर देवी बैठे हैं। धर्म, अर्थ और कामसिद्धिके लिये इसी प्रकार कामे श्वरी मूर्तिका ध्यान करना चाहिये।"

(कालिकापुराण ६१ अ०)

कामेष्ट (सं० पु०) राजाम्रवृक्ष, एक बड़े आमका पेड़।

कामोद (सं० पु०) एक रागिणी। केदारकी और कोड़के संयोगसे यह बनता है। नि स ग म प आरोह है। धैवत इसका वादी और पञ्चम संवादी है। करुण और हास्य रसके समय यह गाया जाता है। रात्रिका प्रथम अर्धप्रहर इसके गानेका समय है। यह

कई प्रकारका होता है, जैसे—सामन्त-कामोद, कल्याण-कामोद और तिलक-कामोद। कोई कोई इसे मालकोसका पुत्र भी मानते हैं।

कामोदक (सं० क्ली०) कामेन स्वेच्छया दत्तं उदकम्, मध्यपदलो०। मृतव्यक्तिके लिये इच्छानुसार दिया जानेवाला जल। चूडाकरणके पीछे मरनेवालोंको ही उदकक्रिया होती है। जो चूडाकरण होनेसे पहले मर जाते हैं, वह कभी जल नहीं पाते। किन्तु उनके लिये कामोदक छोड़ दिया जाता है। (मीताक्ष)

कामोदकल्याण (सं० पु०) कामोद और कल्याणके संयोगसे बनी एक रागिणी। इसमें शुद्ध स्वर ही लगते हैं।

कामोदतिलक (सं० पु०) एक रागिणी। यह कामोद और तिलकके संयोगसे बनता है। धैवत स्वर इसमें नहीं लगता।

कामोदनट (सं० पु०) एक रागिणी। यह कामोद और नटके संयोगसे बनता है। कोई कोई इसे नट-नारायणका पुत्र बताते और दिनके दूसरे प्रहर भी गाते हैं।

कामोदसामन्त (सं० पु०) एक रागिणी। यह कामोद और सामन्त मिलनेसे बनता है। इसमें धैवत नहीं लगाते और रातके तीसरे प्रहर गाते हैं।

कामोदा (सं० स्त्री०) कुत्सितो मोदो यस्याः, बहुव्री०। एक रागिणी। यह कामोदकी स्त्री है। रात्रिके द्वितीय प्रहरकी द्वितीय घटिका इसके गानेका समय है। यह सुघराई और सोरठ मिलनेसे बनती है। इसका स्वरग्राम—स ऋ ग म प ध है।

कामोदी, कामोदा देखो।

कामोद्दीपक (सं० त्रि०) कामदेवको भड़कानेवाला, जो शहवतका बढ़ाता हो।

कामोद्दीपन (सं० क्ली०) कामदेवका उभार, शहवतका जोश।

कामोपजीव (सं० पु०) कामवृद्धि नामक महाक्षुप, एक झाड़।

कामोपहत (सं० त्रि०) कन्दर्पके बाणोंसे व्याकुल, शहवतका मारा हुवा, जो मुहब्बतमें फंसा हो।

कामोपहतचित्ताङ्ग (सं० त्रि०) कामातुर, शहवती।

काम्पिल (सं० पु०) कम्पिलः नदीविशेषः तस्य अदूरे भवः, कम्पिल-अण्। काम्पिल्य नामक एक देश। हरिवंशके वर्णनानुसार यह देश पञ्चालका दक्षिणांश है।

काम्पिला (सं० स्त्री०) काम्पिल्य देशकी राजधानी।

काम्पिल्य (सं० पु०) काम्पिले जातः, कम्पिल-ष्यञ्। १ गुण्डारोचनी नामक सुगन्धद्रव्य, एक खुशबूदार चीज़। हिन्दीमें इसे कबीला या कमीला कहते हैं। यह रेचक, कटु, उष्ण वीर्य और कफ, पित्त, रक्तदोष, क्रमि, गुल्म, उदर, व्रण, प्रमेह, आनाह, विष तथा अश्मरी-रोगनाशक है। (भावप्रकाश) (कम्पिलाया अदूरे भवः, कम्पिला-ण्य) २ जनपद विशेष, एक मुल्क। वर्तमान नाम कम्पिल है।

"माकन्दीमथ गङ्गायास्तीरे जनपदायुताम्।
सोऽध्यवात्सीत् दीनमना काम्पिल्यञ्च पुरोत्तमम्॥" (महाभारत ।१।१३८)

काम्पिल्यक (सं० त्रि०) काम्पिल्ये जातः, काम्पिल्य-वुञ्। १ काम्पिल्यदेशजात, कम्पिल मुल्कका पैदा। (पु०) २ गुण्डारोचनी, कमीला।

काम्पिल्ल (सं० पु०) काम्पिल-अरम् निपातनात् साधुः। गुण्डारोचनी, कमीला। इसका संस्कृत पर्याय—कम्पिल्ल, कम्पील, कम्पिल और काम्पिल्य है।

काम्पिल्लक (सं० क्ली०) काम्पिल्ल-स्वार्थे-कन्। १ गुण्डारोचनिका, कमीला। २ काकमाची, कौवाटोंटी।

काम्पिल्लिका (सं० स्त्री०) काम्पिल्लक-टाप्। गुण्डारोचनिका, कमीला।

काम्पील (सं० पु०) काम्पिल-अण् निपातनात् साधुः। १ गुण्डारोचनिका, कमीला। २ काम्पिल्य नगर, एक शहर। ३ पलाशवृक्ष, ढाकका पेड़।

काम्पीलक (सं० पु०) काम्पील स्वार्थे कन्। काम्पील देखो।

काम्पीलवासी (सं० पु०) काम्पीले काम्पिल्यदेशे वासोऽस्यास्ति, काम्पीलवास-इनि। काम्पिल्यदेशवासी।

काम्बल (सं० पु०) कम्बलेन आवृतः, कम्बल-अण्। १ कम्बल द्वारा आवृत रथ, ऊनी कपड़ेसे लिपटी हुयी गाड़ी। (त्रि०) २ कम्बलसे आवृत, ऊनी कपड़ेसे घिरा हुवा।

काम्बलिक (सं० पु०) वैद्यशास्त्रोक्त यूषविशेष, किसी

शिल्पका कारक। शङ्खोंको काट और घटाईसे घुस घिसकर वलय आदि बनाया जाता, वही 'काम्बविक' कहलाता है। यह विशेष व्यवसायी होता है।

"शङ्खकार शिल्पतुल्य काम्बविक कारः।" (सुश्रुत)

काम्बविक (सं॰ पु॰) कम्बु शङ्ख पण्यमस्य कम्बु-ठक्। शङ्खकार, सीपोंके बने जेवर बेचनेवाला।

काम्बुका (सं॰ स्त्री॰) कुत्सितं अम्बु यस्याः, कु-अम्बु कप् टाप् कोः कादेशः। अश्वगन्धा, असगन्ध।

काम्बे—१ गुजरातके पश्चिमभागका एक देशी राज्य। यह अक्षा॰ २२ ८´ एवं २२ ३१´ उ॰ और देशा॰ ७२ २०´ तथा ७२ ५´ पू॰के मध्य अवस्थित है। इसके पूर्व बड़ोदा राज्यका बड़ताद एवं पितलाद प्रदेश दक्षिण काम्बे उपसागर और पश्चिम साबरमती नदीके पारी हो अहमदाबादकी सीमा है। काम्बेकी सीमाके मध्य अंगरेज और बड़ोदाराजके मातको भाड़के अधिकृत कई ग्राम हैं। इस प्रदेशको पूर्वदिक् मही और पश्चिम दिक् साबरमती नदी बहती है। दोनों नदीयोंमें ज्वारभाटा आनेसे पानी कुछ खारा रहता है। काम्बेकी जमीन् भी खोनी है। नूतन कूप खोदनेसे अल्प दिनमें ही पानी खारा हो जाता है। इस कारण सावधानसे व्यवहार करना पड़ता, नहीं तो नासूर निकलता है। काम्बेकी भूमि समतल है। बीच बीचमें घास, इमली नीम, वट प्रभृति वृक्षोंको भी देख पड़ती है। भूमिका परिमाण ३५० वर्गमील है। देशमें गुजराती और हिन्दी भाषा चलती है। हिन्दोंमें इसे अम्बात् कहते हैं। कारण स्तम्भतीर्थ नामक महादेवका एक स्थान है। उसीसे खम्भात् नाम बना है।

लोगोंके कथनानुसार ई॰ ८वीं शताब्दीके शेषभागमें पारस्य देशसे पारसिक लोग कुछ जहाजोंपर आते थे। तूफानसे उनमें कई जहाज् डूब गये। कुछ जहाज चलते चलते साञ्जिम प्रदेश पहुंचे थे। साञ्जिम प्रदेश सूरतसे ३५ कोस दक्षिण है। पारसियोंने वहां उतरनेको राजासे अनुमति मांगी। राजाने कहा—यदि वह गुजराती भाषामें बात करना सीख लेते और गोमांस न खाते, तो उतरनेको अनुमति पा जाते। इस बात पर सीकृत हो पारसिक वहां बहुत दिन रहे थे। फिर वह वहांसे उपकूलमें वाणिज्य करने लगे। क्रमसे पारसिक चारो ओर फैल काम्बे पहुंच गये। काम्बे स्थान उन्हें बहुत अच्छा लगा था। सुतरां वह इसके इस जगह आ कर उपस्थित हुये। उनकी संख्या क्रमसे बढ़ने लगी। शिवको यहांके अधिवासियोंकी अपेक्षा संख्या अधिक होनेसे उन्होंका कर्तृत्व आरम्भ हुआ। कुछ काल पीछे हिन्दुओंने उन्हें युद्धमें परास्त कर देशसे निकाल दिया। युद्धमें अनेक पारसी मरे थे। ८८० ई॰ को काम्बे ब्राह्मणोंके अधिकारमें पड़ा। उसी समयसे क्रमिक उन्नति होने लगी। १२८० ई॰को मुसलमानोंने काम्बे अधिकार किया। उस समय काम्बे भारतका एक समृद्धिशाली नगर समझा जाता था। मुसलमानोंके शासनमें काम्बे गुजरातके अन्तर्गत हुआ। ई॰ १५वें शताब्दमें काम्बेकी अधिक उन्नति देख पड़ी। ई॰ १६वें शताब्दसे इस प्रदेश वाणिज्यका प्रधान स्थान माना जाने लगा। महाराष्ट्रोंके राज्य बढ़ाते समय मुसलमानोंने प्राणपणसे अपने अधिकार बचाये थे। लेकिनको सन्धिसे पीछे काम्बे अंगरेजोंके हाथ लगा। आज कल अंगरेजोंके अधीन एक नवाब शासन करते हैं। उनको अंगरेजोंसे राज्य करनेके लिये सनद मिली है। प्रबन्धानुसार राज्यका भार उन्होंके वंशधरोंमें रहेगा। वह अंगरेज सरकार मिष्टको कर देते हैं।

काम्बेमें कोई १० विद्यालय हैं। अफीम, गेहूं, चावल, रूई, तम्बाकू और नील खूब उपजता है। नीलमाख जंगली सूअर और हिरन बहुत हैं। काम्बे उपसागरमें वर्षा ऋतुके सिवा अन्य समय मही भांति जल नहीं रहता। काम्बे उपसागर देखो। वाणिज्यमें अधिक सुविधा इसी कारण नहीं रहती। मही और साबरमती जल उपसागरमें ही गिरती है। किन्तु उनका प्रवाह बराबर एक रासे नहीं चलता। उसीसे नदीके मुखमें बड़े बड़े जहाजोंके आनेमें अड़चन पड़ती है। फिर भी वाणिज्य बुरा नहीं। अतरंजी, गलीचा, नमक, नील और खोदनेका पत्थर तैयार होता है। काम्बेमें कोई अच्छी राह नहीं। पैदमाड़ी,

ऊंट, घोड़ा वगैरहके जरिये माल-असबाब आता जाता है।

२ काम्बे राज्यका प्रधान नगर। वह मही नदीके सङ्गमस्थान पर अक्षा० २२° १८´२०´´ उ० और देशा० ७२° ४´ पू० में अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः ३६००० है। नगर अति प्राचीन है। पहले इस नगरके चारो ओर प्राचीर वेष्टित था। फिर लड़े पर तोप भी लगी रहती थी। किन्तु आज कल उसका भग्नावशेष मात्र लक्षित होता है। कथानुसार जारमनाप्यने वहां जन्म लिया था। वह प्राचीन द्राविड़के पाण्ड्य राजके दौत्यकार्यको रोम-सम्राट् अगस्तसके निकट भेजे गये। वहां आथेन्स नगरमें उन्होंने आग लगायी थी। फिर स्वेच्छाक्रमसे जारमनाप्य उसीमें जल मरे। प्रसिद्ध राजा विक्रमादित्यके भी उक्त स्थानमें जन्म लेनेका प्रवाद है। १२८३ ई० को मार्को पोलो नामक वेनिसके परिव्राजक उक्त नगर देखने गये थे। उन्होंने उसे भारतका एक बड़ा बन्दर और वाणिज्य-स्थान बताया है। उनके विवरणमें काम्बेथ नामसे काम्बे नगरका उल्लेख है। वास्तविक वह भारतका प्रधान वाणिज्यस्थान था। किन्तु उपसागरका जल घट जानेसे अब वह समृद्धि देख नहीं पड़ती।

काम्बे उपसागर देखो।

काम्बेमें जैनोंके प्रकाण्ड मन्दिर थे। उन्हीं मन्दिरोंके स्तम्भ निकाल १३२५ ई० को मुहम्मद शाहने जामा मसजिद बनवायी। काम्बेकी प्राचीन कीर्तियोंका भग्नावशेष आज भी अनेक स्थलोंमें देख पड़ता है। एक मुसलमान नवाब वहां राजत्व करते हैं। वह अंगरेजोंके अधीन करद राजा हैं।

काम्बे उपसागर—खम्भातकी खाड़ी। उसके पश्चिम गुजरात और पूर्व बम्बई-प्रान्त है। समुद्रके मुहानेमें उसका परिसर केवल डेढ़ कोस है। किन्तु मुखसे उत्तर कांबे प्रदेश तक प्रायः ४० कोस निकलेगा। पूर्व दिक्से नर्मदा तथा ताप्ती, उत्तरसे साबरमती एवं मही और पश्चिम काठियावाड़से दो नदी जा उसमें गिरी हैं। उपसागरके मुखसे पश्चिम दिक् पोर्त-गीजोंका अधिकृत दीउ नामक द्वीप और पूर्व दिक् सूरत नगर अवस्थित है। सूरत, काम्बे वगैरह बन्दर उसीके उपकूल पर हैं। फिर भी उसमें वाणिज्यका विषम अन्तराय उपस्थित है। प्रायः दो सौ वर्षमें जल क्रमशः घट रहा है। इसी कारण भाटेके समय उसमें जल कम पड़ जाता है। फिर ज्वारके समय विषम स्रोतका वेग बढ़ता है। काम्बेके निकट प्रायः ८ कोस तक भाटाके समय बिलकुल जल नहीं रहता। उस समय पार जाते ज्वार उठनेसे जीवनकी आशा छोड़ना पड़ती है। ज्वारके वेगसे जहाज तक टूट जाता है। जो नौका या जहाज किसी ज्वारके उठते आ लगता, वह फिर ज्वार न चढ़नेसे कहां जा सकता है।

काम्बोज (सं० पु०) कम्बोजदेशे भवः, कम्बोज-अण्। १ कम्बोजदेशजात घोटक, एक घोड़ा। २ श्वेत खदिर, सफेद कत्था। ३ पुन्नागवृक्ष, एक पेड़। ४ कट्फल, कायफल। ५ वरुणवृक्ष, एक पेड़। (स्त्री०) ६ पद्मकाष्ठ, एक लकड़ी। (त्रि०) ७ कम्बोजदेश-जात, कम्बोज मुल्कका पैदा। कम्बोज देखो।

काम्बोज—यवनतुल्य एक म्लेच्छजाति। सगर राजाने इन्हें मस्तक मुण्डित करा देशसे निकाल दिया था। (हरिवंश)

काम्बोजक (सं० क्ली०) कम्बोजे भवः, कम्बोज-वुञ्। मनुष्यतत्स्थयोर्वुञ्। पा ४।२।१३४। कम्बोजदेशवासीका हास्यादि। (त्रि०) २ कम्बोजजात।

काम्बोजि, काम्बोजी देखो।

काम्बोजिका (सं० स्त्री०) श्वेतगुञ्जा, सफेद घुंघची।

काम्बोजी (सं० स्त्री०) काम्बोज-ङीप्। १ रक्तगुञ्जा-लता, लाल घुंघची। २ वल्कल खदिर, पापरी कत्था।

काम्बोजी (सं० स्त्री०) १ श्वेतगुञ्जा, सफेद घुंघची। २ वाकुची। ३ विट्खदिर। ४ माषपर्णी। ५ गन्धगुञ्जा।

काम्य (सं० त्रि०) काम्यते, कम-णिच्-यत्। १ कमनीय, चाहने लायक। २ सुन्दर, खूबसूरत। ३ कामनायुक्त, ख्वाहिशमन्द। ४ कर्तव्य, करने-लायक।

"यत् किञ्चित् फलमुद्दिश्य यज्ञदानजपादिकम्।
क्रियते कायिकं यच्च तत्काम्यं परिकीर्तितम्॥" (मुग्ध० रा० टी०)

३ भोग्य, पहने या चढ़ाया जानेवाला। (क्लो०) ४ अभीष्टकर्म, चाहा हुआ काम। (पु०) ७ धवल वृक्ष, एक पेड़।

काम्यक (सं० क्लो०) १ वनविशेष, एक जङ्गल। २ सरोवरविशेष, एक तालाब। ३ काष्ठविशेष, एक काठ।

काम्यकर्म (सं० क्लो०) काम्यञ्च तत् कर्म चेति, कर्मधा०। धर्मादि अभीष्टकामनासे किया जाने वाला एक कर्म, ज्योतिष्टोमादि, जो काम किसी मतलबसे किया जाता हो।

काम्यकवन (सं० क्लो०) वनविशेष एक जङ्गल। यह सरस्वती नदीके तीर अवस्थित था। पाण्डव बहुत दिन इस वनमें रहे।

काम्यगिर् (सं० स्त्री०) मधुर शब्द, एक खुशगवार गीत।

काम्यता (सं० स्त्री०) काम्यस्य भाव, काम्य-तल्। १ कमनीयता, खूबसूरती। २ सौम्यता, दिल-आराम। ३ काम्यनीयता, चाह।

काम्यदान (सं० क्लो०) काम्यञ्च तत् दानञ्चेति, कर्मधा०। १ गौरव प्रभृति कमनीय वस्तुका दान चीतल दीवान वगैरह पसन्द आनेवाली चीजोंकी बखशिश। २ पुत्र, ऐश्वर्य, वध प्रभृति मिलनेकी कामनासे किया जानेवाला दान।

"[illegible]
[illegible]" ([illegible])

काम्यफल (सं० क्लो०) काम्यस्य फलं ६-तत्। काम्य कर्मका काम्यनीय फल चाहा जानेवाला नतीजा।

काम्यमरण (सं० क्लो०) काम्यं काम्यनीय मरणम् कर्मधा०। काम्यनीय मरण, आत्महत्या।

काम्यव्रत (सं० क्लो०) काम्यं काम्यफलप्रदं व्रतम् मध्यपदलो०। अभीष्टफलप्रद व्रत।

काम्या (सं० स्त्री०) काम जिसके मारे आप टाप। १ प्रियव्रतकी पत्नी। यह कर्दमकी कन्या रहीं। विवरण देखो। २ कामना, खाहिश।

"[illegible]
[illegible]" ([illegible])

काम्याभिप्राय (सं० पु०) काम्यः काम्यनीयः अभिप्रायः, कर्मधा०। काम्यनीय अभिप्राय, मतलबकी बात।

काम्येष्टि (सं० स्त्री०) कामनाविशेषार्थं अनुष्ठित यज्ञ, जो यज्ञ किसी मतलबसे किया जाता हो।

काम्योपासना (सं० स्त्री०) काम्यया कामनासिद्धोच्छया उपासना, ३ तत्। कामनासिद्धिके अभिप्रायसे की जानेवाली उपासना जो पूजा अपने मतलबसे की जाती हो।

काय (सं० पु० क्लो०) कु कुत्सित ईषत् वा अम्ल का, कादेश। १ कुत्सित अम्लरस, खराब खटाई। २ ईषत् अम्लरस, थोड़ी खटाई। (त्रि०) ३ कुत्सित वा ईषत् अम्लरस युक्त कम खट्टा।

काय (सं० क्लो०) क प्रजापतिर्देवता अस्य, क अण् इकारादेशश्च [illegible]। १ प्राजापत्यतीर्थ। कनिष्ठा अङ्गुलिके अधोभागका नाम प्राजापत्यतीर्थ है—

"अङ्गुष्ठमूलस्य तले ब्राह्मं तीर्थं प्रचक्षते।
कायमङ्गुलिमूलेऽग्रे दैवं पित्र्यं तयोरधः॥" (मनु २।५९)

२ मनुष्यतीर्थ। ३ ब्रह्मतीर्थ। (चीयते अस्मिन्, चि-घञ्) ४ मूर्ति, शरीर, जिस्म। शरीर देखो। ५ समूह ढेर। ६ लक्ष्य निशाना। ७ स्वभाव, आदत। ८ प्राजापत्य विवाह। ९ मूलधन, जमा। १० घर, वर। ११ ब्रह्मा। १२ तरुस्कन्ध, तना। (त्रि०) १३ प्रजापति सम्बन्धीय।

कायक (सं० त्रि०) शारीरिक, जिस्मानी, बदनसे मुताल्लिक।

कायकारणकर्त्तृत्व (सं० क्लो०) कायस्य शरीरस्य कारणे उत्पत्तिकारणे कर्त्तृत्वम्। शरीरोत्पत्तिकारक कारणकी सृष्टिके विषयका कर्तृत्व जिस्मानी कामोंको करना।

कायक्लेश (सं० पु०) कायस्य क्लेशः, ६ तत्। शारीरिक परिश्रम, जिस्मानी मेहनत वा तकलीफ।

कायचिकित्सा (सं० स्त्री०) कायस्य चिकित्सा ६ तत्। आयुर्वेदीय अष्टाङ्ग चिकित्साका एक अङ्ग, तमाम जिस्म पर असर डालनेवाली बीमारियोंका इलाज। इसमें ज्वर उन्माद, कुष्ठ प्रभृति शरीरव्यापी रोगोंकी चिकित्सा है।

कायजा (फा० पु०) बदनामक लगामकी डोरी।

कायथ (हिं०) कायस्थ देखो।

कायदा (अ० पु०) १ नियम, तरीका। २ रीति, दस्तूर। ३ व्यवस्था, कानून।

कायफर (हिं०) कायफल देखो।

कायफल (सं० क्ली०) कट्फल, एक पेड़। इसकी छाल औषधमें पड़ती है। हिमालयके उष्णप्रधान स्थानमें यह उत्पन्न होता है। आसामके खासिया पर्वत और ब्रह्मदेशमें भी इसकी उपज है।

कायबन्धन (सं० क्ली०) कायं बध्नाति, काय-बन्ध ल्यु। परिकर, कमरबन्द।

कायम (अ० वि०) १ स्थित, ठहरा हुवा। २ स्थापित, रखा हुवा। ३ निश्चित, ठहराया हुवा। ४ समान, बराबर।

कायम—कायम खान्‌का उपनाम। टोंकवाले नवाब वज़ीर मुहम्मद खान्‌के अधीन यह सेनानीके पद पर प्रतिष्ठित रहे। १८५३ ई० को इन्होंने उर्दूमें एक दीवान् बनाया था।

कायमजङ्ग—फ़रुख़ाबादवाले नवाब मुहम्मद खान् बङ्गशके पुत्र। १७४३ ई० के जून मासमें इन्हें अपने पिताका उत्तराधिकार मिला था। इन्होंने वज़ीर नवाब सफ़दर जङ्गकी प्रेरणा पर रुहेलोंसे युद्ध ठाना। किन्तु पराजय होनेपर १७४८ ई० के नवम्बर मासमें उन्होंने इन्हें मार डाला था। फिर वज़ीर इनका राज्य दबा बैठे। इनके प्रधान कर्मचारी इलाहाबादको बन्दी बनाकर भेजे गये। किन्तु इनकी माताको १२ छोटे जिलोंके साथ फरुखाबाद नगर वंशके भरणपोषणके लिये मिला था। विजित देश वज़ीरके प्रतिनिधि राजा नवल रायके संरक्षणमें रहा। थोड़े दिन पीछे ही इनके भ्राता अहमद खान्‌ने युद्धमें राजा नवल रायको मार, देश पर अपना अधिकार जमा लिया था।

कायमनोवाक्य (सं० त्रि०) कायः मनः वाक्यञ्च यत्र, बहुव्री०। शरीर, मन और वाक्यसे होनेवाला, जो दिलोजान्‌से लगने पर बनता हो।

कायममुकाम (अ० वि०) स्थानापन्न, एवज़ी, जगह पर रहनेवाला।

कायमान (सं० क्ली०) कायस्य मानमिव मानमस्य, मध्यपदलो०। १ तृणकुटीर, फूसका झोपड़ा। २ देहपरिमाण, जिस्मकी नाप।

कायर (हिं०) कातर देखो।

कायरता (हिं०) कातरता देखो।

कायरूपसंयम (सं० पु०) पातञ्जल-कथित एक ध्यान। इसमें अपने रूपका संयम करते हैं।

कायल (अ० वि०) यथार्थताका स्वीकार करनेवाला, जो झूठ निकलने पर अपनी बात पकड़ता न हो।

कायली (हिं० स्त्री०) १ ग्लानि, शर्म। २ मथानी।

कायवलन (सं० क्ली०) कायो वल्यते आच्छाद्यते अनेन, काय-वल-ल्युट्। कवच, बख्तर।

कायव्य (सं० क्ली०) महाभारतोक्त एक दस्युराज। इनके जन्मका विवरण इस प्रकार दिया है, किसी निषादीके गर्भ और क्षत्रियके औरससे कायव्यका जन्म हुवा। यह दस्युदलाधिप बनते भी सर्वदा धर्म-कर्ममें लगे रहते थे। अनुचरोंके प्रति इनका आदेश रहा—तुम लोग ब्राह्मण, तपस्वी, भीरु, शिशु, स्त्री और युद्धसे भागे व्यक्तिको कभी मत मारो। यह स्वयं वनवासी, तपस्वी तथा ब्राह्मणको पूजते और मृगादि मार उन्हें पर्याप्त आहार देते थे। इसी प्रकार दस्युवृत्ति रखते भी कायव्यने सिद्धि पायी। (महाभारत शान्ति, १३५ अ०)

कायव्यूह (सं० पु०) काये शरीरे व्यूहः वातादीना त्वगादीनां सप्तधातूनाञ्च व्यूहनम्, ७ तत्। शरीरके वात, पित्त, श्लेष्मा, त्वक् प्रभृति सप्तधातुका विन्यास, बाह्यदिक्‌से आरम्भ करने पर यथाक्रम त्वक्, रक्त, मांस, स्नायु, अस्थि, मज्जा और शुक्र आते हैं। वात, पित्त और श्लेष्मा शरीरके अभ्यन्तरमें पृथक् पृथक् स्थानपर अवस्थित हैं।

इन तीनों दोषोंसे अविकृत अवस्थाका स्थान इस प्रकार निर्दिष्ट है,—नितम्ब एवं गुह्यदेश वायुका, पक्वाशय (नितम्ब एवं गुह्यदेशके ऊपर और नाभिके नीचे पक्वाशय पड़ता है) तथा आमाशयके मध्य पित्तका और आमाशय श्लेष्माका स्थान है। संक्षेपमें प्राधान्यके अनुसार उक्त तीनों स्थान तीनों दोषोंके समझे गये हैं। (सुश्रुत)

प्रत्येक दोष पांच पांच भागोंमें विभक्त है। उक्त

स्थानोंको छोड़ तीनों दोष दूसरी जगह भी रहते हैं।

वायु, कफ और पित्त तीन दोष।

२ कर्मभोगके लिये योगियों द्वारा कल्पित कायसमूह। योगी कर्मनाशके लिये कायव्यूह बनाते हैं।

"नाभिचक्रे कायव्यूहज्ञानम्।" (पातञ्जल)

नाभिचक्रमें संयम करनेसे योगी कायव्यूह समझ सकते हैं। फिर 'सहस्रादेव तत्क्षणे' श्रुतिवाक्यके अनुसार योगी बहुविध फल भोगनेके लिये जो शरीर बनाते, उनमें चित्तमें प्रत्येक इन्द्रिय और भावकी कल्पना करते हैं।

कायसम्पद् (सं० स्त्री०) कायस्य सम्पद्, ६-तत्। शरीरकी सम्पत्ति, जिस्मकी दौलत। रूप, लावण्य, बल और सुगठन प्रभृतिको 'कायसम्पद्' कहते हैं।

कायसौख्य (सं० क्ली०) शरीरसुख, जिस्मका आराम।

कायस्थ (सं० पुं०) कायेषु सर्वभूतदेहेषु तिष्ठति, काय-स्था-क। १ परमात्मा, परमेश्वर।

"कायस्थोऽपि न कायस्थः कायस्थोऽपि न जायते।
कायस्थोऽपि न भुञ्जानः कायस्थोऽपि न बध्यते॥" (उत्तरगीता [illegible])

२ जातिविशेष। भारतवर्षके प्रधान प्रधान स्थानोंमें जो कायस्थ वास करते हैं, उनमेंसे सामाजिक और विशुद्ध कायस्थ मात्र अपनेको चित्रगुप्तके वंशधर बतलाते हैं। इनके सिवा और एक श्रेणीके सम्भ्रान्त और सम्मानित कायस्थ हैं, जो चान्द्रसेनीय प्रभु कहलाते हैं। जिन क्षत्रिय वंशधरोंने युद्धवृत्ति त्याग कर उक्त प्रभु कायस्थकी वृत्ति ग्रहण की या उनके साथ सम्बन्ध जोड़ा है वे भी प्रभु कहलाते हैं। चित्रगुप्त ही कायस्थ जातिके आदिपुरुष हैं। ऐसी दशामें सबसे पहिले चित्रगुप्तके विषयकी ही आलोचना करनी चाहिये।

चित्रगुप्तका परिचय।

हस्तलिखित भविष्यपुराणमें* लिखा है —

"[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]

पुरुष उवाच।

[illegible]
[illegible]
[illegible]

पुनरुवाच।

[illegible]
[illegible]
[illegible]

ब्रह्मोवाच।

[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]" ([illegible])

ब्रह्माने जगत्की सृष्टि करनेके बाद स्थिरचित्तसे इन्द्रियोंको संयम कर ११००० वर्ष तपस्या की। उसी अवस्थामें ब्रह्माके शरीरसे श्यामवर्ण, पद्मलोचन, कम्बुग्रीव, गूढ़शिरा और परमसुन्दर एक पुरुष उत्पन्न हुआ। वह दावात कलम ले कर ब्रह्माके सामने आ खड़ा हुआ। तब ब्रह्माने समाधि भङ्ग कर उसे आँखें ऊपर तक देख कर पूछा, तुम कौन हो? और मेरे सामने क्यों खड़े हो? उससे उस पुरुषने कहा,— "हे तात! मैं आपके शरीरसे ही उत्पन्न हुआ हूँ।

* [illegible]

आप मेरा नामकरण कीजिये ; और मेरे लिए कार्य दीजिये।"

भगवान् ब्रह्माने उसके मधुर वाक्योंको सुन कर बड़ी प्रसन्नतासे कहा ;—"हे वत्स ! मैंने स्थिरचित्त हो कर समाधि लगाई थी, उसी अवस्थामें तुम मेरे कायसे पैदा हुए, इसलिए तुम संसारमें कायस्थ नामसे प्रसिद्ध होगे और तुम्हारा नाम चित्रगुप्त हुआ। धर्माधर्मके विचार करनेके लिए यमराजके न्यायालयमें तुम्हारा स्थान निर्दिष्ट हुआ। तुम वहां क्षत्रिय धर्म पालन करना और पृथिवीमें बलिष्ठ प्रजा उत्पन्न करो।" ऐसा वर दे कर ब्रह्मा वहांसे अन्तर्धान हो गये। कमलाकर-भट्टाकृत बृहत्ब्रह्मखण्डमें भी लिखा है,—

"भवान् क्षत्रियवर्णश्च समस्थान समुद्भवात्।
कायस्थः क्षत्रियः ख्याता भवान् भुवि विराजते ॥
तव वंशभवा ये वै तेऽपि त्वत् समतां गताः।
तेषां लेखादिकं नित्यं क्षत्रिया रतत्परा ॥
संस्कारादीनि कर्माणि यानि क्षत्रियजातिषु।
तानि सर्वाणि कार्याणि मदाज्ञावशवर्तिना ॥
उक्त्वा प्रजापतिरिदं तत्रैवान्तर्दधे विभुः।
एवमुक्तश्चित्रगुप्तः प्रमुदितोऽभवत् ॥"

(Vyavasthá Darpana by Syámácharan Sarkar, 3rd. Ed Part I, p 604)

ब्रह्माने कहा था कि, हे चित्रगुप्त ! समस्थान अर्थात् कायसे पैदा हुए हो ; इसलिए तुम भी क्षत्रियवर्ण हो। तुम पृथिवीमें कायस्थ-क्षत्रिय नामसे प्रसिद्ध होगे। तुम्हारे वंशधर कायस्थ भी तुम्हारे समान कायस्थ-क्षत्रिय गिने जायगे। उनकी लेख्यादि वृत्ति होगी और क्षत्रियकन्याके साथ उनका विवाह होगा। क्षत्रियोंमें जो जो संस्कार होते हैं, हमारी आज्ञानुसार उनको भी वे ही संस्कार करने होंगे।" इतना कह कर ब्रह्मा वहांसे अन्तर्धान हो गये ; और चित्रगुप्त उनके वचन सुन कर प्रसन्न हुए।

गरुडपुराणमें और एक जगह लिखा है—

"प्रयाति चित्रनगरं वीचित्रो यत्र पार्थिव।
यमस्यैवानुजः सौरिस्तत्र राज्यं प्रशास्ति हि ॥" (उत्तरखण्ड १० अ०)

फिर वह ऋषि चित्रनगरमें पहुंचे, जहां वीचित्र,—यमके छोटे भाई—सौरि अर्थात् सूर्यके पुत्र राज्यशासन करते थे। उक्त गरुडपुराणसे यह भी ज्ञात होता है कि, यही चित्रनगर पीछे 'चित्रगुप्तपुर' नामसे विख्यात हुआ है।

"चित्रगुप्तपुरं तत्र योजनानां तु विंशति।
कायस्थास्तत्र पश्यन्ति पापपुण्यानि सर्वशः ॥" (उत्तरखण्ड १४ अ०)

उस यमलोकमें (२० योजनमें विस्तृत) चित्रगुप्तपुर है। वहांके कायस्थ सबके पाप-पुण्यका विचार करते हैं।

देवीभागवतमें लिखा है,—

"याम्यायां यमपुरी तत्र दक्षिणस्यां महान्।
सभटैश्च स्थितो राजन् चित्रगुप्तपुरःसरैः।
निज शक्तियुतो भास्वत्तनयोऽस्ति यमो महान् ॥" (१२ स्क० १० अ०)

हे राजन् ! दक्षिण दिशामें यमपुरी है, जहां चित्रगुप्त आदि अपने सुभटों सहित और अपनी समस्त शक्तियों सहित सूर्यके पुत्र यम विराजमान हैं।

गरुडपुराणमें भी लिखा है,—

"वायुं सर्वगतः सृष्ट्वा सूर्यं तेजोविवर्द्धनम्।
धर्मराजं ततः सृष्ट्वा चित्रगुप्तेन संयुतं ॥
सृष्ट्वेवमादिकं सर्वं तपस्येव तु तत्परः ॥"

(गरुडपुराण, प्रेतखण्ड, १ अ०)

ब्रह्माने सबसे पहिले सर्वव्यापी वायुको ; फिर तेजोमय सूर्यको सृष्टि की थी। उसके बाद सूर्यमेंसे चित्रगुप्त सहित धर्मराज (यमराज) की सृष्टि की। इस तरह आदि जगत्की सृष्टि करके ब्रह्मा तपस्यामें रत हुए।

स्कन्दपुराणके प्रभास-खण्डमें चित्रगुप्तको कायस्थ कहा गया है। और उनकी उत्पत्तिकी कथा इस प्रकार है,—

"मित्रा नाम पुरा देवि धर्मात्माऽभूदरातिहा ॥ २
कायस्थः सर्वभूतानां नित्यं प्रियहिते रतः।
तस्यानस्य स्थर्दः यत्रे समुद्रास्थाभिगामिन ॥ ३
पुत्र परमधर्मज्ञो चित्रो नाम सुनामतः।
तथा चित्रामतम् कन्या रूपाद्यागीष्यसन्नता ॥ ४
भार्या तु ललनासाध्या मित्रः परमसाद्भवान्।
अथ तस्य च सा भार्या सह तेनाधिमाविमत् ॥ ५
अथ तौ बालकौ दीनावपि परिपालितौ।
इति गतौ महारण्ये बाल्यवित्र स्थितौ सतैः ॥ ६
प्रभासक्षेत्रमासाद्य तप परममाश्रितौ।
प्रतिष्ठाप्य महादेवं भास्करं वारितस्करम् ॥ ७

[illegible]

([illegible] ११२ अ)

हे देवि! पहिले इसी भूमण्डलमें, सर्वभूतोंके प्रिय और सबके हितैषी 'मित्र' नामक एक कायस्थ थे। वसुधामें कौन साथ सम्भोग करके उन्होंने चित्र नामका एक तेजस्वी पुत्र पैदा किया। जिसके रूपवती एक कन्या भी हुई थी। पुत्र पुत्रीके होते ही मित्र परलोक सिधारे, साथमें उनकी स्त्री भी चितामें जल कर मर गई। उनकी मृत्युके बाद असहाय पुत्र-पुत्री दोनोंका ऋषियोंके आश्रममें लालन-पालन होने लगा; और वे दिन दूने रात चौगुने बढ़ने लगे। इन दोनोंने बाल्यपनमें ही व्रत आरम्भ किये, और प्रभासदेशमें गमन किया। वहां इन लोगोंने महादेव तथा सूर्यकी मूर्त्ति स्थापित की, और भूषणादिसे उनकी पूजा कर तपस्या करनी प्रारम्भ कर दी। इनकी तपस्यासे संतुष्ट हो कर सूर्य देव वहां गये और चित्रसे कहने लगे,—

"हे सुव्रत! तुम्हारा मंगल हो; तुम हमसे वर मांगो।"

चित्रने कहा,—"हे भगवन्! आप अगर मुझसे सन्तुष्ट हुए हैं; तो मुझे यह वर दीजिये कि, मैं सब काममें दक्षता प्राप्त करूं।"

सूर्यदेवने "तथास्तु" कह कर उनको वर दिया और चित्रने सर्वज्ञता प्राप्त कर ली। चित्रको अपने समान क्षमतापन्न देख कर धर्मराज मन ही मन विचारने लगे—"यदि यह बुद्धिमान् मेरा लेखक बन जाता तो मेरे सब काम सिद्ध हो जाते। हे भामिनि! एक दिन धर्मराजने, लवणसमुद्रमें नहाते हुए चित्रको अनुचरों द्वारा अपनी पुरीमें बुला लिया और अपनी इच्छाकी पूर्त्ति की। यह चित्र ही "संसार चरित्र"के लेखक हैं, और बादमें चित्रगुप्त नामसे प्रसिद्ध हुए हैं।

देवीपुराण (१८ अध्याय)-से मालूम होता है,—

[illegible]

महाबली घनासुर विष्णुके कोपसे मारा गया था। इसलिये उसके पुत्र वृत्रकासुरने क्रोधान्ध हो कर देवों पर आक्रमण किया। उस समय दानवगणके साथ देवोंका तुमुल युद्ध होने लगा। देवराज इन्द्र देवगणोंको हारते देख उदयाचल पर्वतके समान ऊँचे ऐरावत हाथी पर सवार हुए। इसके बाद पुरन्दरको ऐरावत पर सवार देख कर महामतिमान् अग्निदेवने छागराज पर सवार हो कर प्रदीप्त शक्ति धारण की। उनको देखते ही महाबली यमराजने और कृतान्तके समान कठोर वज्रदण्डधारी महाबल पराक्रान्त चित्रगुप्तने कालकेतुके साथ महिष पर

आरोहण किया। इस प्रकार यमराजने अपने सुभटों और बहुतसी सेनाओंको साथ ले कर इन्द्रको युद्धमें सहायता की। पाशपाणि वरुणदेव भी मत्स्यपर सवार हो अपनी सेनाओंको साथ ले कर आ पहुंचे। इत्यादि।

श्रीहर्षके "नैषधचरित"में पाया जाता है,—दमयन्तीकी स्वयम्बर-सभामें इन्द्रादि देवोंके साथ चित्रगुप्तदेव क्षत्रिय रूपमें आये थे। नैषधकारने उनका परिचय इस प्रकार दिया है,—

"इत्योऽपरोऽमुद्दत चित्रगुप्तः कायस्थ उच्चैर्न च पत्रमीक्ष।
कार्य्येनु यस्य महोद पत्रो मसीर्लेखयोरपि पदमस्य।" (१४ सर्ग)

चित्रगुप्तके प्रार्थनामन्त्रमें यह भी मिलता है—

"मसी सह समुत्पन्न लक्ष्म-पद्मनीरज।
चित्रगुप्त महाबाहो नमस्ते वरदो भव॥"

उपर्युक्त भिन्न भिन्न पुराणोंसे यह प्रमाणित होता है कि, ब्रह्माके शरीरसे चित्रगुप्तकी उत्पत्ति है; और फिर कल्पभेदसे चन्द्र सूर्यादि देव जिस प्रकार नाना भाव और नाना रूपसे अवतीर्ण हुये हैं, वैसे ही चित्रगुप्त भी विभिन्न कल्पोंमें कभी सूर्यदेवके पुत्ररूपसे और कभी मित्रके पुत्ररूपसे अवतीर्ण हुए हैं। इन्द्र, चन्द्र, वायु और वरुणकी भांति वह भी देवक्षत्रिय-रूपसे देव-सैन्यमें रहते थे।

विरुद्धवादियोंका मत।

उपर्युक्त प्रमाणोंके रहते हुये भी विरुद्धवादी यह कहा करते हैं कि, चित्रगुप्तदेव चार वर्णोंकी सृष्टिके पीछे हुए हैं, इसलिये वे चार वर्णोंमें नहीं गिने जा सकते।

कमलाकरके—"इत ध्यानस्थितस्याद्य सर्वकायादविनिर्गत।" इत्यादि वचनके अनुसार चित्रगुप्त ब्रह्माके समस्त शरीरसे उत्पन्न हुए हैं और ब्रह्माकी "चतुर्वर्णोचित धर्मं पालनीया यथाविधि—"इस उक्तिसे चित्रगुप्तका क्षत्रिय होना सिद्ध नहीं होता। "मत्कायोत्पन्नो यस्मात् कायस्थवर्ण उच्यते" इस युक्तिसे कायस्थ एक स्वतन्त्र वर्ण ही प्रतीत होते हैं।

इसके अतिरिक्त मन्वादि धर्मशास्त्रमें चित्रगुप्त अथवा कायस्थ जातिका तत्त्व निर्णीत नहीं हुवा है। किसी किसी स्मृति शास्त्रमें चित्रगुप्त और कायस्थ नाम पाया जाता है। परन्तु इससे यह नहीं समझा जा सकता कायस्थ कौन जाति हैं?

पुराणकी—"धर्मराजस्याधिकारी चित्रगुप्तो बभूव ह।" इस उक्ति द्वारा यही सिद्ध होता है कि, चित्रगुप्त यमराजके लेखक थे। विष्णु, याज्ञवल्क्य, वृहत्पराशर इत्यादि स्मृति-शास्त्रोंसे और कायस्थोंके धर्माधिकरणमें भी उनके लेखक रहनेका प्रमाण मिलता है। गौतम धर्मशास्त्र, ब्रह्मवैवर्त्तपुराण, अग्निपुराण, याज्ञवल्क्यस्मृति और राजतरङ्गिणीमें जगह जगह कायस्थोंके प्रति कठोर उक्तियोंका प्रयोग पाया जाता है। विशेषतः अहल्या-कामधेनुके नवम वर्णोद्धृत भविष्यपुराणान्तर्गत कार्तिक-शुक्ल-द्वितीया-व्रत-कथा-सन्दर्भमें कहा है,—

"एकस्मिन् च द्विजे तु धर्मशर्म्मा द्विजोत्तम।
पत्न्यादौ च चातायस्या॰॰॰समन्वया॥
परमेष्ठिप्रसादेन लब्धा कन्याविरावतीम्।
चित्रगुप्त च तां दत्वा विवाहमकरोत्तदा॥"

उपर्युक्त प्रमाणसे यही मालूम होता है कि, चित्रगुप्तका विवाह ब्राह्मण धर्मशर्माकी पुत्री इरावतीसे हुआ था। इसलिये प्रतिलोम विवाहसे उत्पन्न हुये कायस्थ कदापि श्रेष्ठवर्ण हो नहीं सकते। इसके अतिरिक्त शब्दकल्पद्रुमाहृत आचार-निर्णय-तन्त्रमें कहा है,—

"आदौ प्रजापतेर्जाता सुधासिता महात्मा।' इत्यादि उपक्रम्य
मासाष्ट इव समुद्भिन्नवर्ण च लेखकः।
सोमस्य सा सुतस्य मदोत्पन्नस्य पुत्रक।
कायस्थस्य पुत्रोऽभूत् यमस्य लिपिकारक।
कायस्थस्य त्रयः पुत्रा विख्याता जगतीतले।
चित्रगुप्तविचित्रौ चित्रसेन तथैव च।
चित्रगुप्तो गत स्वर्गं विचित्रो नागसन्निधौ।
चित्रसेनः पृथिव्यां वै इति सूद्रः प्रपद्यते॥
चतुर्थांशो हरो नित्यो दत्त करण एव च।
अमुखपद मतं ते चित्रसेनस्तुता भुवि॥"

इत्यादि वचनोंसे और अग्निपुराणमें कही गई जाति-मालासे, चित्रगुप्त और उनके वंशधरोंको श्रेष्ठ वर्ण नहीं कह सकते। फिर कमलाकरके

ग्रहयामलतन्त्रमें एक कायस्थकी उत्पत्ति इस प्रकार बतलाई गई है,—

> "[illegible]
> [illegible]
> [illegible]
> [illegible]
> [illegible]
> [illegible]
> [illegible]
> [illegible]"

'वैदेह औरससे और माहिष्यस्त्रीके गर्भसे जो उत्पन्न हुये हैं, वे कायस्थ हैं। देवोंके लिपिका लिखना गणना करना, शिल्प कार्य करना, वैद्य आदिका होना, चार वर्णोंकी सेवा करना इत्यादि उनका कार्य बतलाया गया है। यह पांचों संस्कार प्रथम शूद्रजातिके करनेसे हैं, इसलिये इनको चोटी यज्ञोपवीत, वैदिकमन्त्र और देवताका स्पर्श न रखना चाहिये।'

इसके अतिरिक्त शब्दकल्पद्रुमोद्धृत देवीवरकी "[illegible]" इस वचनसे यही प्रमाणित होता है कि आदिशूरकी सभामें पञ्च ब्राह्मणोंके साथ आये हुये पञ्चकायस्थ आदि शूद्र ही ठहराये गये थे।

इसके सिवा बृहद्धर्मपुराणमें भी लिखा है —

"[illegible]" (उत्तर १३ अ)

इत्यादि प्रमाणसे किसी लोगोंका मत है कि बंगालके उत्पन्न वर्णसङ्कर करण भी कायस्थ थे।

विरुद्धमत-खण्डन।

विरुद्धवादी जैसे चित्रगुप्तके वर्ण और उन सम्बन्धमें जिन युक्तियोंको दिखलाते हैं उनके उत्तरमें हम पहिलेसे ही कमलाकरभट्ट वृहद्ब्रह्मखण्डका प्रमाण उद्धृत कर चुके हैं कि, ब्रह्माने उत्पत्ति कालमें ही चित्रगुप्तसे कहा था—"तुम कायस्थ' क्षत्रिय ध्यानसे क्षत्रिय उत्पन्न हुए हो उसी ध्यानसे उत्पन्न होनेके कारण क्षत्रिय नाममें प्रसिद्ध होगे। तुम्हारे वंशके लोग भी तुम्हारे ही समान अर्थात् कायस्थ नामसे पुकारे जायेंगे। उन लोगोंका विवाह क्षत्रिय कन्याओंके साथ होगा। क्षत्रियवर्णके लिये जो संस्कारादि कर्म बतलाये हैं, उन सबको वे मेरे आज्ञाके अनुसार करेंगे।"

ब्रह्माके इस वचनसे चित्रगुप्त और उनके वंशधर कायस्थ क्षत्रिय हैं इसमें कुछ भी सन्देह उपस्थित नहीं होता।

मिताक्षरामें कायस्थोंको राजवल्लभ, शूलपाणिकृत दीपकलिकामें राजसम्बन्धहेतु प्रभावशाली और अपरार्क विरचित याज्ञवल्क्यनिबन्धमें लेखकविहीन या कराधिकारी कहा गया है। कायस्थ सदासे राजाओंके प्रिय होते आये हैं। यह राजकार्यमें निपुण होते हैं और कर वसूल करनेमें इनका मुख्यतः हाथ रहता है, इस लिये इन लोगोंके द्वारा प्रजाको अधिक पीड़ा पहुंच सकती है। अतः याज्ञवल्क्य और अग्निपुराणकार राजाओंको इन (कायस्थ) लोगोंके प्रति विशेष ध्यान रखनेका आदेश दे गये हैं।

कायस्थोंके हाथसे किसी किसी जगह प्रजा अधिक पीड़ित होती रही, इसी लिये औशनस धर्मशास्त्रमें, ब्रह्मवैवर्तपुराणके जन्मखण्डमें और राजतरङ्गिणी ग्रन्थमें कायस्थोंकी निन्दा की गई है। लेकिन किसी भी ग्रन्थमें कायस्थोंको हीनवर्ण नहीं कहा गया है। कमलाकरने जिस प्रतिलोमजात कायस्थोंका उल्लेख किया है वह चित्रगुप्तके वंशधर कायस्थ नहीं हैं और न उनसे उस समय किसी नई जाति ही सङ्घटित होती है। ऐसा मालूम पड़ता है कि मेदिनीपुरवालोंकी पाहुलिक 'कायस्थ-जातिका नाम संस्कृत भाषामें उन्हीं (कमलाकर)ने कायस्थ' रख दिया है। किन्तु चित्रगुप्तके वंशधर कायस्थोंको पहलेसे भी कायस्थ-क्षत्रिय कह कर परिचय दिया है। चित्रगुप्तने देवकन्या इरावतीके साथ विवाह किया था। "[illegible]" इत्यादि पद्मपुराणके वचनानुसार ब्राह्मण जब चित्रगुप्तको देव मान कर पूजते थे, तब धर्मसभाने अपनी कन्या उनसे पाणिग्रहण कर दिया, तो इसमें दोष कौनसा हो गया? इसके सिवा उस समय अनुलोमज या प्रतिलोमोत्पत्तिकी कोई चर्चा ही न थी; नहीं तो ब्राह्मण

ऋषिकन्या शर्मिष्ठाका विवाह क्षत्रिय राजा ययातिके साथ कभी नहीं हो सकता था। शब्दकल्पद्रुममें "आचारनिर्णयतन्त्र" और "अग्निपुराणीय जातिमाला" से जो प्रमाण लिये गये हैं, वह आधुनिक रचना है, इसमें कुछ भी सन्देह नहीं। तन्त्रसार, महासिद्धि सारस्वत, आगमतत्त्वविलास, वाराहीतन्त्र और रुद्रयामलतन्त्रमें भिन्न भिन्न ५०। ६० तन्त्रोंका उल्लेख है। परन्तु उपर्युक्त किसी भी तन्त्रमें "आचारनिर्णयतन्त्र"का नाम तक नहीं आया है। भारतके नाना स्थानोंमें सैकड़ों तन्त्र ग्रन्थोंका पता लगा है, परन्तु दूसरी जगह कहीं "आचारनिर्णयतन्त्र" की एक भी पोथी नहीं मिली। सिर्फ शब्दकल्पद्रुमके सङ्कलयिता राजा राधाकान्त देवके पुस्तकालयमें ही एक प्रति मिलती है। इस पुस्तकमें ७० श्लोक हैं। इसकी लिपि देखनेसे ही स्पष्ट मालूम हो जाता है कि, यह किसी आधुनिक लेखककी लिखी हुई है। यह पुस्तक किसी उद्देश्यसिद्धिके लिये ही लिखी गई है ;—इस बातको वे ही हृदयङ्गम कर सकेंगे, जो इस पुस्तक को देख चुके हैं। अग्निपुराणीय जातिमालाके विषयमें भी ऐसा ही है। कलकत्तेकी एशियाटिक सोसाइटी और बम्बई आदि नाना स्थानोंसे मूल अग्निपुराण प्रकाशित हुये हैं, पर उनमेंसे किसीमें शब्दकल्पद्रुममें कही गई अग्निपुराणीय जातिमालाका एक भी श्लोक नहीं मिलता। और की तो क्या, भारतसे जितने हस्तलिखित ग्रन्थ प्राप्त हुये हैं, उनकी विवरण-पुस्तिकामें भी इस जातिमालाका उल्लेख नहीं। बङ्गालके बाहर जो चित्रगुप्तके वंशके कायस्थ रहते हैं, उन्हें भी इस जातिमालाका पता न था। बङ्गालमें सिर्फ वसु, घोष आदि उपाधि धारियोंका वास है और इसके उल्लेखसे यह जातिमाला किसी बङ्गालीकी बनाई हुई और आधुनिक ही प्रतीत होती है। इसलिये 'आचारनिर्णय तन्त्र'की तरह यह जातिमाला भी किसी विशेष उद्देश्यसिद्धिके लिये हालमें बनाई गई है इसमें सन्देह नहीं। इसी तरह शब्दकल्पद्रुमोक्त 'कुलप्रदीप'के वचन भी प्राचीन-शास्त्र-सम्मत न होनेके कारण आधुनिक हैं ; और वह किसी विशेष उद्देश्यसिद्धिके लिए लिखे गये हैं, इस लिए वह भी त्याग करने योग्य हैं। 'शब्दकल्पद्रुम'में कही गई देवीवरकी उक्ति भी काल्पनिक है, क्योंकि देवीवरके मूल कुलग्रन्थमें कहीं भी ऐसे वचन नहीं हैं। उपरोक्त प्रमाणोंकी भांति "वृहद्धर्मपुराण"के वचन भी कायस्थोंके विषयमें ठीक नहीं जंचते। शब्दरत्नाकर अभिधानमें—

"करण [illegible] गणे [illegible] [illegible], पुंसि।
[illegible] कायस्थे [illegible] [illegible]॥"

इत्यादि प्रमाणसे करण कायस्थ और शूद्र-वैश्यासे उत्पन्न करण, सम्पूर्ण भिन्न प्रतीत होते हैं।

सान्धि विग्रहिक।

कायस्थका अर्थ लेखक या राजाका लेखक है—इस बातको सब ही स्वीकार करते हैं। विष्णुस्मृति और वृहत्पराशरस्मृतिमें राजसभाके लेखकको ही कायस्थ कहा है। उक्त स्मृति और शुक्रनीतिसे यह स्पष्ट प्रतीत होता है कि, पहिले कायस्थ लोग ही हिन्दूराजाओंके समयमें सेना-विभागका हिसाब रखनेके लिए, कर वसूल करनेके लिए और विचारालयके कागजात लिखनेके लिए राजलेखक रूपसे रखे जाते थे। अर्थात् लिखनेका काम एकमात्र कायस्थोंके ही हाथमें था। पहिले हिन्दू-राजसभामें लिखनेके काममें कायस्थोंके सिवा दूसरे नहीं रखे जाते थे। इसी लिए कायस्थ या राजसभाके लेखक राज्यका साधनाङ्ग समझे जाते थे। मनुसंहिताके ८वें श्लोकके भाष्यमें मेधातिथिने ऐसा लिखा है :—

"राजप्रदत्तग्रामक्षेत्रादिकायस्थ-हस्तलिखितान्येव प्रमाणी भवन्ति।"

अर्थात्—राजदत्त ब्रह्मोत्तर भूमि आदिका शासन, जो एक कायस्थके हाथका लिखा हुआ है, वही प्रमाणित है। मिताक्षरामें लिखा है,—

"सन्धिविग्रहकारी तु भवेद्यस्तस्य लेखकः।
स्वयं राज्ञा समादिष्टः स लिखेद्राजशासनम्॥"

(आचाराध्याय, ३१८ श्लोक)

जो व्यक्ति राजाका सन्धि-विग्रहकारी लेखक होगा, वह ही राजाके आदेशानुसार राजशासन लिखेगा।

अपरार्कके याज्ञवल्क्यनिबन्धमें भी व्यासके वचन ऐसे उद्धृत हैं,—

"राज्ञा तु स्वयमादिष्ट-सन्धिविग्रहलेखकः।
ताम्रपट्टे पटे वापि प्रलिखेद्राजशासनम्॥"

सन्धि विग्रह-लेखक, कार्य राजाओंको आज्ञासे ताम्र पट्ट या कपासके कागज पर राजशासन लिखेंगे। भारतवर्षके नाना स्थानोंमें ताम्रपत्रों पर लिखे हुए जितने शासन मिलते हैं, उनके सन्धिविग्रहकारी लेखक "सान्धिविग्रहिक" नामसे प्रसिद्ध हुए हैं। पहिले सान्धिविग्रहिकका पद एकमात्र कायस्थोंको ही मिलता था। प्राचीन संस्कृत ग्रन्थोंमें सान्धिविग्रहिक, "सन्धिविग्रह-लेखक" (अवन्ती शब्द नीतिवाक्यामृत और वैजयन्ती नामसे इसी पद०) "सन्धिविग्रहकायस्थ" (गौड़लेखमाला-ताम्रपट्टिका १५८१) और "सन्धिविग्रहाधिकाराधिकृत" (Ind. Ant. VI p.10) नामसे प्रसिद्ध थे।

अग्निपुराणमें लिखा है —

"सान्धिविग्रहिकः कार्यः षाड्गुण्यादि विशारदः।" (२२ अ०)

सान्धिविग्रहिक छह गुणोंमें विशारद होना चाहिये। ये षड्गुण कौन कौनसे हैं? मनुसंहिताके मतसे—

"सन्धिञ्च विग्रहञ्चैव यानमासनमेव च।
द्वैधीभावं संश्रयञ्च षड्गुणांश्चिन्तयेत् सदा॥"

सन्धि, विग्रह यान, आसन द्वैधीभाव और संश्रय इन छह गुणोंकी चिन्ता मनोयोगपूर्वक करना चाहिये। मनुसंहितामें और भी है,—

"मौलान् शास्त्रविदः शूरान् लब्धलक्षान् कुलोद्गतान्।
सचिवान् सप्त चाष्टौ वा प्रकुर्वीत परीक्षितान्॥
तैः सार्धं चिन्तयेन्नित्यं सामान्यं सन्धिविग्रहम्।" (७। ५४ ५६।)

सुप्रतिष्ठित वेदादि शास्त्रोंमें पारदर्शी, शूर और युद्धविद्यामें निपुण और कुलीन—ऐसे सात आठ मन्त्री, प्रत्येक राजाके पास रहने चाहिये [illegible] सन्धिविग्रह आदिकी सलाह उन्हीं बुद्धिमान् सचिवोंसे लेनी चाहिये।

मिताक्षरामें विज्ञानेश्वरने लिखा है,—

"अत्र सचिवान् [illegible] सन्धिविग्रहादिकार्यं चिन्तयेत्। [illegible] [illegible] पुरोहितेन [illegible] [illegible] चिन्तयेत्।"

मिताक्षराके उपर्युक्त वचनसे यह मालूम होता है कि राजाके जो ७-८ मंत्री रहते थे, वे सब ही ब्राह्मण नहीं थे। वहीं कि उनके बाद ब्राह्मणके साथ क्या क्या परामर्श करेंगे—यह भी लिखा है।

(याज्ञवल्क्य, १म अध्याय, ३१९वां श्लोक)

शुक्रनीतिमें यह लिखा हुआ है —

"पुरोधा च प्रतिनिधिः प्रधानसचिवस्तथा॥ ६९॥
मन्त्री च प्राड्विवाकश्च पण्डितश्च सुमन्त्रकः।
अमात्यो दूतश्चेत्येता राज्ञः प्रकृतयो दश॥ ७०॥
दश प्रोक्ता पुरोधाद्या ब्राह्मणाः सर्व एव ते।
अभावे क्षत्रियास्तेषां तदभावे तथोरुजाः॥ ४२०॥
नैव शूद्रास्तु संयोज्या गुणवन्तोऽपि पार्थिवैः।" (२य अध्याय)

पुरोहित, प्रतिनिधि, प्रधान, सचिव, मन्त्री, प्राड्विवाक, पण्डित सुमन्त्र अमात्य और दूत ये दस व्यक्ति राजाकी प्रकृति हैं। उक्त पुरोहित आदि दसो लोग ब्राह्मण होने चाहिये, ब्राह्मणके अभावमें क्षत्रिय और क्षत्रियके अभावमें वैश्य भी नियुक्त हो सकेंगे। शूद्र गुणवान् होने पर भी राजा उक्त कार्योंके लिए नियुक्त न कर सकेंगे। उपरोक्त सात-आठ सचिवोंमें एक सान्धिविग्रहिक भी थे। शुक्रनीतिमें इन्हीं सान्धिविग्रहिकका "सचिव" नामसे उल्लेख किया गया है। वह सान्धिविग्रहिक सचिव शूद्र नहीं हो सकते—इस बातका भी शुक्रनीतिमें यह प्रमाण मिलता है। हारीतस्मृतिसे यह साफ जाहिर होता है कि, सन्धि विग्रह आदि क्षत्रियोंका ही काम है।

"[illegible] क्षत्रियस्य तथा वर्णं च [illegible]।
दुर्गादिरक्षणं [illegible]।
[illegible] सन्धिविग्रहसाधनम्।
[illegible]॥
[illegible]।
[illegible]॥"

(हारीतस्मृति २ अ०)

इन प्रमाणोंसे जब यह सिद्ध हो गया कि सन्धि विग्रह आदि कार्य क्षत्रियोंका ही था, तब जातिमें गिने गये सन्धिविग्रहकार कायस्थ या सान्धिविग्रहिक, क्षत्रियके सिवा दूसरी जाति नहीं हो सकती। ब्राह्मणोंके धर्मप्रतिष्ठापक गुप्तवंशीय सम्राटोंसे ले कर गौड़ब्राह्मण-भक्त बङ्गालके सेनवंशीय राजाओंके समय तक जितने राजा हुए हैं, उनके समयोंमें

कायस्थ ही सान्धिविग्रहिकके पद पर नियुक्त रहे हैं। इस विषयमें एक पुरातत्त्वविद् ब्राह्मणने लिखा है,—

"It is a noticeable fact that the सन्धि-विग्रही or minister of war and peace and the secretary, were always Kâyasthas or men of the writer-caste. This not only occurs in the Kataka plates, but in grants or inscriptions found in Ceylon and Central India." (Indian Antiquary, Vol. V. p. 57.)

संस्कृतज्ञ अंग्रेज विद्वानोंने सान्धिविग्रहिक शब्दका इस प्रकार अर्थ किया है,—

"A great officer for making treaties and declaring war. This officer or a subordinate, is deputed at the end of the grant, to give effect to it." (Journal of the Asiatic Society of Bengal, 1875. pt. I. p. 5)

"Secretary for foreign affairs."—(Tawney's Kathâsarit Sâgar. Vol. IV. p. 383.)

कायस्थ या लेखक।

यदि कोई कहे, जो कायस्थ सान्धिविग्रहिक जैसे ऊंचे पद पर नियुक्त थे, वे या उनके वंशधर क्षत्रिय हो भी सकते हैं; परन्तु जो कायस्थ पटवारी मुहरिर आदिका काम करते थे, वे तो कमलाकरद्वारा कहे गये माहिष्या और वैदेहसे उत्पन्न हुए अधम शूद्र ही हैं। प्रकृत शास्त्रमें सामान्य पटवारी और मुहरिरोंके लिए कैसा स्थान था, इसमें इस बातकी जांच करना जरूरी है।

शुक्रनीतिमें लिखा है—

"आग्नेयादूर गतिष्ठेदस्त्रपाताबहिः सदा॥
अस्त्री दशकरं तु यथादिष्टं नृपप्रियाः।
पञ्चहस्ते समीपस्थं मन्त्रिणो लेखकाः सदा॥" (२।२६६—७)

राजाको आग्नेय-अस्त्रसे और जहां अस्त्र गिरते हैं—ऐसे स्थानसे सदा दूर ही रहना चाहिये। राजासे दश हाथकी दूरी पर उनके प्रिय शस्त्रधारी, पांच हाथकी दूरी पर मन्त्री और उनके पास एक बगलमें लेखक रहेंगे।

शुक्रनीतिमें और एक जगह लिखा है—

"नृपोऽधिकृतसभ्याश्च स्मृतिर्गणकलेखकौ।
हेमाग्न्यम्बुस्वपुरुषाः साधनाङ्गानि वै दश॥
एतद्दशाङ्गकरणं यस्यामध्यास्य पार्थिवः।
न्यायान् पश्येत् कृतमतिः सा सभाध्वरसन्निभा॥" (४।५५०—८)

राजा, अध्यक्ष, सभ्य, स्मृति, गणक, लेखक, हेम, अग्नि, जल और सत्पुरुष—ये दश साधनाङ्ग हैं।

उपर्युक्त प्रमाणसे यह स्पष्ट विदित हो जाता है कि, जो लेखक राजाके ब्राह्मण-मन्त्रीके पास बैठते थे, और जो राजाके अङ्ग गिने जाते थे, वे कदापि शूद्र नहीं हो सकते।

अङ्गिरः स्मृतिमें कहा है,—

"शूद्रेण सह सम्पर्कं शूद्रेण च सहासनम्।
शूद्राज्ज्ञानागमं चापि ज्वलन्तमपि पातयेत्" ॥ ६८ ॥

इस स्मृतिवचनके अनुसार जब शूद्रके साथ बैठना भी ब्राह्मणके लिये निषिद्ध है, तब हिन्दू-राज-सभामें ब्राह्मण-मन्त्रीके पास जो लेखक या कायस्थ बैठते थे, वे अवश्य ही द्विजाति होने चाहिये।

अमरकोषमें भी लेखक शब्दका वर्ग क्षत्रिय बतलाया गया है और शुक्रनीतिमें भी स्पष्ट लिखा हुआ है,—

"ग्रामपो ब्राह्मणो योग्यः, कायस्थो लेखकस्तथा।
शुल्कग्राही तु वैश्यो हि प्रतिहारश्च पादजः॥" (२।४३०)

अर्थात् हिन्दू राजाओंके समयमें ग्रामोंका शासन ब्राह्मण करते थे, कायस्थ उनके सहकारी (लेखक, मुहरिर या पटवारी) रहते थे, वैश्य कर वसूल करते थे और शूद्र नौकर (सेवक)का काम करते थे। शुक्रनीतिके उक्त वचनसे साफ जाहिर है कि, लेखक-कायस्थ ब्राह्मण नहीं, वैश्य नहीं और न शूद्र हैं। जब शास्त्रमें चार वर्णके सिवा पांचवां वर्ण ही नहीं माना गया, तब ब्राह्मण, वैश्य और शूद्र वर्णके सिवा क्षत्रियवर्ण ही बच रहता है, इस लिए कायस्थ क्षत्रियवर्ण ही प्रमाणित होते हैं। कोई कोई कायस्थोंके लिए पांचवें वर्णकी कल्पना करता है। परन्तु मनु ही जब पांचवां वर्ण नहीं है ऐसा कह गये हैं, तब पांचवें वर्णकी कल्पना अग्राह्य और अशास्त्रीय है। दाक्षिणात्यमें जो जाति अस्पृश्य

और समाजसे बहिष्कृत न होती है, वह 'पञ्चम' कहलाती है। कायस्थोंको ऐसा मानना बिलकुल अनुचित है। कोई कोई छपी हुई व्यासमंहिताके "वणिक्किरातकायस्थ-मालाकारकुटुम्बिनः।" इस वचनसे कायस्थोंको अन्त्यज कहता है। परन्तु यह श्लोक वास्तविक नहीं, बल्कि "वर्णिक किरात-कायस्थ मालाकार-कुटुम्बिनः।" इत्यादि श्लोकका विकृत पाठ है, इस बातका यथार्थ प्रमाण मिलेगा।
(कलकत्ता एसियाटिक [illegible])

अब पहिले कहे हुए पुराण और स्मृतिके प्रमाणों द्वारा कायस्थ क्षत्रियत्व ही ठहरते हैं। कोई कोई कहा करता है कि, स्कन्दपुराणमें रेणुकाके माहात्म्यमें दाल्भ्याश्रममें चान्द्रसेनी कायस्थोंकी उत्पत्तिकी कथामें—

"कायस्थ एष उत्पन्नः क्षत्रियायां क्षत्रियात् ततः।
रामाज्ञया च दाल्भ्येन क्षात्रधर्माद्बहिष्कृतः॥११॥
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]॥१३॥"

इन श्लोकोंके आधार पर कोई कोई कहता है कि विशुद्ध क्षत्रिय चन्द्रसेन राजाके औरससे उत्पन्न होने पर भी जब उनके पुत्रको "क्षात्रधर्माद्बहिष्कृतः" कहा है तब कायस्थ और क्षत्रिय एक नहीं हो सकते। इस विषय पर महापण्डित गागाभट्टने अपने "कायस्थ धर्मप्रदीप"में ऐसा मत प्रकट किया है—

"रामाज्ञया च दाल्भ्येन क्षात्रधर्माद्बहिष्कृतः" इति वचनविरोधः [illegible]"

(गागाभट्ट कायस्थधर्मप्रदीप)

महामहोपाध्याय गोकुल वासुदेव शास्त्रीजी और महामहोपाध्याय कैलासचन्द्र शिरोमणिजी जैसे प्रमुख विद्वान् भी गागाभट्ट का वचनका समर्थन कर गये हैं।

सह्याद्रिखण्डके [illegible] माहात्म्यमें [illegible] ६६वें अध्यायमें लिखा है,—

"[illegible]॥६॥
[illegible]
[illegible]॥६॥
[illegible]
[illegible]॥६॥
[illegible]
[illegible]
[illegible]॥७॥
[illegible]
[illegible]" ॥८॥

अर्थात्—'उस समय राजर्षि चन्द्रसेनकी भार्या दुःखित हो कर राम और दाल्भ्यको नमस्कार करके पूछने लगी, 'आपके वचनानुसार मेरा यह शिशु (पुत्र) कायस्थ नामसे प्रसिद्ध होगा यह ठीक है; परन्तु हे प्रभो! यह पुत्र जब क्षात्रधर्मसे बहिष्कृत न कर दिया गया है, तब इसका कौनसा धर्म होगा?

महामुनि परशुराम उनके इस प्रश्नको सुन कर फिर कहने लगे,—'तुम्हारा पुत्र प्रजापालनमें रत रहेगा। क्षत्रियोंका जैसा संस्कार है वैसा अध्ययन है और जैसा यजन है, तुम्हारे पुत्रका भी वही होगा। अर्थात् चित्रगुप्तके समान हो रहेगा। हे भद्रे! राजाओंके पास रह कर लेखनकार्यमें ही इसकी उपजीविका होगी। इसके बाद उस पुराणमें आगे भी लिखा है,—

"कायस्थ एष उत्पन्नः क्षत्रियायां क्षत्रियात्
रामाज्ञया च दाल्भ्येन क्षात्रधर्माद्बहिष्कृतः॥१०॥
[illegible]
[illegible]॥११॥
[illegible]
[illegible]॥१२॥
[illegible]।"

कायस्थ ऐसे ही क्षत्रियों द्वारा क्षत्रियाणियोंके गर्भसे उत्पन्न हुए हैं। परशुरामके आदेशानुसार यद्यपि कायस्थ क्षात्रधर्मसे बहिष्कृत न होने पर भी दाल्भ्य मुनिने उन्हें क्षत्रिय संस्कारोंसे संस्कृत करके वेद अध्ययन कराया फिर उन्हें स्वधर्मनिष्ठ कायस्थों को गार्हस्थ्य धर्म बतलाया। चित्रगुप्तकी उपजीविका ही उनकी उपजीविका हुई। दाल्भ्यमुनिने आशीर्वाद

दिया कि, जब तक चन्द्र और सूर्य रहेंगे, तब तक तुम्हारे वंशीय और तुम सुख भोग करते रहोगे।

उपर्युक्त प्रमाणोंसे यह स्पष्ट विदित होता है कि, चित्रगुप्तके वंशीय और चन्द्रसेनके वंशीय कायस्थ क्षत्रिय हैं।

चित्रगुप्तका वंश।

चित्रगुप्तकी उत्पत्तिके विषयमें सबसे पहिले जो पुराणके वचन उद्धृत किये गये हैं, उन वचनोंके साथ चित्रगुप्तके वंशका ऐसा परिचय मिलता है ;—

"चित्रगुप्तान्वये जाताः शृणु तान् कथयामि ते।
गौडाख्या माथुराश्चैव भटनागरसेनकाः॥
अहिष्ठाना, श्रीवास्तव्या शकसेनास्तथैव च।
कुलश्रेष्ठाः, सर्वशास्त्रेषु अम्बष्ठाश्च नराधिप॥
पुत्रान् वै स्थापयामास चित्रगुप्तो महीतले।
धर्माधर्मविवेकज्ञ, चित्रगुप्तो महामति॥
भूपज्ञान् बोधयामास सर्वसाधनमुत्तमम्।
पूजनं देवतानाञ्च पितृणां यज्ञसाधनम्॥
वर्णानां ब्राह्मणानां च सर्वं दातिपिलिखनम्।
प्रजास्थः करमादाय धर्माधर्मविलोकनम्।
कर्तव्यं हि प्रयत्नेन पुत्रा, स्वर्गस्य काम्यया॥"

अहल्याकामधेनुसे उद्धृत भविष्यपुराणमें भी लिखा है :—

"चित्रगुप्तस्य या कन्या याष्टौ पुत्रानजीजनत्।
चारुःसुचारुश्चित्राख्यो मतिमान् हिमवांस्तथा।
चित्रचारुश्चारुणश्च अष्टमोऽतीन्द्रियस्तथा॥
द्वितीया देवकन्या च दक्षिणा या विवाहिता।
तस्यां पुत्राश्च चत्वारस्तेषां नामानि वै शृणु॥
भानुश्चैव विभानुश्च विश्वभानुश्च वीर्यवान्।
पुत्रा द्वादश विख्याता विचेरुस्ते महीतले॥
मथुरायां गतश्चारु माथुरस्तस्मितो गतः।
सुचारु गौडदेशे तु तेन गौडोऽभवत् स॥
भट्टनदीं गतश्चित्रो भट्टनागरिकः स्मृतः।
श्रीवासनगरे भानुस्तस्माच्छ्रीवास्तवं स्मृतः॥
अम्बामाराध्य हिमवान् तेनाम्बष्ठ इति स्मृतः।
सभार्यो मतिमान् गत्वा सखसेनात्वमागतः॥
शूरसेनं विभानुश्च तेन सूर्यध्वजः स्मृतः।"

युक्तप्रदेशके कायस्थोंके "कुलग्रन्थ"में, वहांके समाजमें प्रचलित "पातालखण्ड"के कथनमें और चित्रगुप्तकी पूजापद्धतिमें गौड़, माथुर, भटनागर, सैनिक या शकसेन, अम्बष्ठ, श्रीवास्तव, अष्टान, करण, सूर्यध्वज, वाल्मीक, कुलश्रेष्ठ और निगम—ऐसे बारह भेद चित्रगुप्तज कायस्थोंके पाये जाते हैं। इन्हीं बारह श्रेणियोंके कायस्थोंसे इक्कीस प्रकारके कायस्थ हुए हैं—ऐसा उक्त "पातालखण्ड"में लिखा है। उनके भेद इस प्रकार किये गये हैं :—

१ सूर्यध्वज, २ चन्द्रहास, ३ गुरिचन्द्राह, ४ चन्द्रदेव, ५ रविदास, ६ रविरत्न, ७ रविधीर, ८ रविपूजक, ९ गम्भीर, १० प्रभु, ११ वल्लभ, १२ उदारदास रवि, १३ मधुमान्, १४ भद्र, १५ सुभद्र, १६ श्रीगौड़, १७ राजधाना, १८ धनिन्द, १९ सम्भ्रम, २० विश्वास, और २१ धवलतत्त्व। इन इक्कीस श्रेणियोंमें भी हर एकके बीस बीस भेद हैं। पश्चिमाञ्चलके कायस्थोंके कुलग्रन्थकी भांति बङ्गालके उत्तरराढीय कायस्थोंके कुलग्रन्थमें भी लिखा है :—

"चित्रगुप्त, किशोदितः सर्वशास्त्रे षु पूज्यते ॥१॥
सेनोपुत्राष्टका, पृथ्वी सर्वसम्पत्तिसंयुता,।
गौडाख्यो माथुरश्चैव भट्टसेन, भट्टनागरः॥
अम्बष्ठ श्रीवास्तव्यः कर्णीचकचं उच्यते।"

कुलाचार्य पञ्चाननने अपनी "कुलकारिका"में ऐसा लिखा है :—

"वेदोपराष्टशताब्दे मासि कुम्भस्थभास्करे।
वाल्म, सौकालीनश्चैव तथा मौद्गल्य एव च॥
काश्यपविश्वामित्रौ च दशगोत्रक्रमेण वै।
अनादिवरसिंहश्च सोमघोषश्च सुधीरः॥
पुरुषोत्तमदासश्च देवदत्तो महामतिः।
सुधीराघरदश्च मित्रकुले सुदर्शन,॥
अयोध्यानिवासी सिंहो घोषश्चैव तथा पुनः।
मथुरानिवासी दास, कोलघटमागत॥
मायापुरीनिवासिनो दत्तमित्रौ तथा गतौ।"
"गम्भं दायामोरे पुरीं कर्णालीति मनोहरम्॥
महैश्वर्यमय सौर विश्वकर्मेण निर्मितम्॥
तथा श्रीकर्ण सश्रीकमभवत् ततपुरीश्वरः।
ततसुतेन पुरीं दत्ता धर्मराजपुरं ययौ॥
तद्वंशो वसुमतोसि हाथाश्च नरेश्वर।
तद्वंशजाः क्रमेणैव नानादेशान्तर गताः॥
राधामूपालपुत्रश्च राधागोपालस्य मक।
तस्यात्मजोऽनादिवरसिंह, ख्यातो महाबलो॥

[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]

इस विषयमें कुलानन्दने अपने उत्तरराढ़ीय कायस्थकारिका' नामके बङ्गला कुलग्रन्थमें जो कुछ लिखा है, उसका अक्षरशः अनुवाद नीचे दिया जाता है—

"विधिने किया एक मन, सृष्टि लिखनेके लिए।
चित्रगुप्त नाम उसका, कृपा फिर बहु दस लिए॥
कायस्थकी उत्पत्ति हुई यमके समान।
आयपुरुष चित्रगुप्तके, हेतु कृपा फिर निधान॥
बादमें फिर हुए, उनके तीन जो कहते।
चित्रसेन चित्ररथ, नाम विदित उनके॥
चित्रसेन स्वर्गमें सदा विचित्र पातालमें।
चित्ररथ मर्त्यमें आया, ऐसो जो कहाता।
अमृता विना करमें जरिवके अन्तरमें।
दृष्टि मित्रके देव-यज्ञोंके मन्दिरमें॥
अमृताके गर्भसे हुए पैदा बहुत जन।
जो गौड़, माथुर, भट, वल्मीक श्रीवास्तव॥
श्रीवास्तव, अष्ठिहान अम्बष्ट निगम।
कुलिको पूजन सभामें गोलका विज्ञान॥
तपोबलसे गौड़ सबो श्रीवास्तव भवन।
उनमें अनेक गोत्र घोषके बहुमान्य॥

• • • •

गौड़ (देश) के महाराज आदित्यशूर नाम।
गङ्गाके समीप बाद सिंहेश्वर धाम॥
आदरसे बुलाये उन्हें, विप्र पञ्चजन।
साथ उनके पञ्चगोत्र आये कायस्थ।"

कुलानन्दमिश्रको "बङ्गजकायस्थकारिका"में जो ऐसा ही लिखा है—

"[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]"

इसके अतिरिक्त वंगालके दक्षिणराढ़ीय कुलग्रन्थमें भी वसु वंशको मौद्गल्य और दत्त वंशको भरद्वाज कुलोद्भव कहा है। अतएव उपरोक्त कुलग्रन्थोंके प्रमाणोंसे यह निश्चय किया जाता है कि उत्तरराढ़ीय दक्षिणराढ़ीय और वङ्गज—क्या कुलीन और क्या मौलिक सब ही—कायस्थ चित्रगुप्तके वंशधर हैं; भारतके भिन्न भिन्न देशोंके भिन्न भिन्न श्रेणीके कायस्थोंके "दायाद" हैं। अब यह देखना चाहिये कि उक्त भिन्न-भिन्न श्रेणीके कायस्थोंका पूर्व परिचय कैसा और क्या है।

प्राचीन शिलालेख और ताम्रलिपियोंमें, श्रीवास्तव्योंको कायस्थ वंशका बतलाया है। मध्य प्रदेशके सहवार नामक एक स्थानमें चेदिराज कालके देवकी एक प्रशस्ति मिली है। उसमें श्रीवास्तव्य रत्नसिंहका ऐसा परिचय दिया है—

"[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]"

चेदिराजके शिलालेखमें उक्त रत्नसिंहके पूर्वोंका परिचय "नि.शेषागमयहमोधविमल:" ऐसा मिलता है। मध्यप्रदेशके खलरि ग्रामसे मिले हुए, राजा हरिब्रह्मदेवके १४१० संवत्‌के शिलालेखमें यों लिखा है—

"श्रीवास्तव्यान्वयेदेषा मनधिरमहाचरा।
लिखिता रामदासेन पण्डितावीश्वरेच च॥"

अजयगढ़ दुर्गमें राजा भोजवर्म्माके समयकी (ई० बारहवीं शताब्दीके नागराक्षरोंमें लिखी हुई) दो बड़ी बड़ी शिला-लिपियां हैं, इन्हीं शिलालिपियोंमें श्रीवास्तव वंशका विस्तृत परिचय मिला है। इसमें सब ही 'ठक्कुर' उपाधिधारी थे। कोई सर्वाधिकारी था, कोई दुर्गाधिप था, कोई कोषाध्यक्ष था, और कोई प्रधानमन्त्रीके पद पर नियुक्त था। श्रावस्तीसे मिले हुए १२०६ संवत्‌के शिलालेखसे मालूम होता है कि, श्रावास्तव वंश कर्कोटनागका रचा किया हुआ वंश है (Indian Antiquary, vol. XVII. p. 62)।

काश्मीरके श्रीनगरमें श्रीवास्तवोंका आदिस्थान है—ऐसा भी इतिहास पाया जाता है। राजतरङ्गिणीसे यह मालूम होता है कि, वहांके सब अधिकारोंमें कायस्थोंका हाथ था। इसके सिवा कर्कोटवंशीय कायस्थ राजाओंने काश्मीरमें २६० वर्षसे ज्यादा राज्य किया—इसका खासा प्रमाण मिलता है। इसी वंशके राजा जयादित्यके साथ गौड़के राजा जयन्तने (कुलग्रन्थमें जिनका आदिशूर नामसे उल्लेख है) अपनी लड़की कन्यापदेशी व्याही थी। तब ही से गौड़ोंका श्रीवास्तवोंसे वैवाहिक सम्बन्ध चला जाता है। इन ही जयादित्यने पाणिनीय व्याकरणकी काशिकावृत्ति बनाई थी। इसमें उनके वेदपाठ करनेका भी पता लगता है। उस समय वे ही वेदपाठ करनेके अधिकारी होते थे, जिनके संस्कारादि द्विजोंके सदृश थे। ऐसी अवस्थामें जयादित्यके संस्कारादि द्विजोंकी भांति थे—इसमें सन्देह नहीं। श्रीवास्तव कायस्थोंके सिवा माथुर, भटनागर, शकसेन, निगम, गौड़ आदि विभिन्न श्रेणियोंके कायस्थ भी, ई० ४ थी शताब्दीसे लेकर १४वीं शताब्दी तक हिन्दू राजाओंके मन्त्री, सेनापति, कराधिकारी, प्रतिनिधि, राजपण्डित आदि ऊँचे पदों पर नियुक्त थे—इसका वर्णन शिलालिपि तथा ताम्रलिपियोंमें पाया जाता है। पहले शास्त्रीय प्रमाणोंसे यह बता चुके हैं कि, गौड़देशमें रहनेवाले कायस्थ गौड़-कायस्थ कहलाते हैं। सम्वत् ११६१ के शिलालेखमें मिला हुआ माथुर-कायस्थोंके उच्च राजकीय पद और विद्वत्ताका परिचय (Indian Antiquary, vol. XV. p. 201), १८१८ संवत्‌की मडवाकी शिलालिपिमें मिला हुआ भट्टग्रामके वैदिक धर्मनिष्ठ शकसेन कायस्थ महीधर (उक्त शिलालेखके अनुवादकने इन्हीं महीधरको anointed sacrificer या अभिषिक्तयाज्ञिक कह कर परिचय दिया है), (Cunningham's Arch. Sur. Reports, vol. III p. 59), राजचक्रवर्ती यशोधर्मांके मालवीय संवत् ५८९में लिखित मन्दशोरसे पाये गये शिलालेखसे 'राजस्थानीय' तथा महापण्डित नैगम या निगम कायस्थ वंश (Fleet's Corpus Inscriptionum Indicurum, vol. III. p. 152), ग्वालियरसे मिला हुई ११५० संवत्‌की, राजा महीपाल देवकी शिलालिपिमें भट्टकायस्थ या भटनागर वंशीय कायस्थ सूरि सोढ़ और "यान्त्रिक मदन" सूर्य्यध्वज श्रीभट्टका नाम—ये सब विशेष उल्लेखयोग्य हैं।

(Cordier—Catalogue du fonds Tibetan deb Bibliotheque Nationale, p. 67)

ई० पहिली शताब्दीसे लेकर चौथी शताब्दी तक भारतके शासनकर्त्ता शकसेन वंशीय क्षत्रिय, गुप्त वंशीय सम्राटोंका आधिपत्य नष्ट हो जानेके बाद क्षत्रिय-कायस्थके नामसे प्रसिद्ध हुए—भट्टभट्टके "देववंश" नामक संस्कृत-ग्रन्थसे इस बातका पता लगा है। श्रीकरण कायस्थोंमें, "शार्ङ्गधर-पद्धति" और "सङ्गीतरत्नाकर"के बनानेवाले शार्ङ्गदेवके पिता सोढ़लका नाम प्रसिद्ध है। ये देवगिरि-यादवराजके महासान्धिविग्रहिक थे। इनकी मृत्युके बाद इनके पद पर अद्वितीय शास्त्रविशारद, "चतुर्वर्गचिन्तामणि"के प्रणेता हिमाद्रि नियुक्त हुए। गौड़-

देशमें कायस्थोंको उच्च पदाधिकार मिले थे। ई० ९वीं शताब्दीसे ले कर १२वीं शताब्दी तक गौड़देशके नाना स्थानोंमें ये जो कायस्थ राज्य कर गये हैं। इसके सिवा भारतके अन्यान्य देशोंमें भी गौड़ कायस्थ हिन्दू राज सभाओंमें ऊँचे ऊँचे पदों पर नियुक्त थे; और "महाकवी" "अनमयाघाशारदमति" "विद्वद्वन्दित" "साहित्याम्बुधिमनु" इत्यादि इत्यादि पाण्डित्यसूचक विशेषणोंसे विभूषित किये जाते थे। यहां तक कि, बंगालके घोष, दत्त, नाग, पालित आदि उपाधिधारी कायस्थ ई० १० वीं और ११ वीं शताब्दीमें ¹कलिङ्ग और दक्षिण कोशलके सोमवंशीय राजाओंकी सभाओंमें "राणक", "महासान्धिविग्रहिक" "महाक्षपटलिक" जैसे ऊँचे ऊँचे पदोंके अधिकारी थे। यदि इनका संस्कार क्षत्रियोंके सदृश न होता तो क्षत्रिय हिन्दू राजाओंकी सभाओंमें इनका स्थान कदापि इतना ऊँचा नहीं हो सकता था। त्रिकलिङ्गके अधिपति महाशिव ययातिराजकी ताम्रलिपिके उद्धारकर्त्ताने उस ताम्रलिपिके लेखक सान्धिविग्रहिक रुद्रदत्तके विषयमें ऐसा लिखा है —

"It is also to be noted that Rudra Datta who was Bengali Kayastha calls himself a Rānaka, which indicates a Kshatriya origin." (Journal of Behar & Orissa Research Society, 1917, March, p. 2)

यह पहिले ही कहा जा चुका है कि, गौड़ कायस्थोंके सिवा श्रीवास्तव, अम्बष्ठ, सूर्यध्वज, माथुर इत्यादि विभिन्न श्रेणियोंके कायस्थ भिन्न भिन्न समयमें युक्तप्रदेश आदि भारतके नाना स्थानोंसे आकर गौड़देशमें रहने लगे थे। उनमें सोमवंशके सूर्यध्वज, यदुवंशके श्रीवास्तव, मित्रवंशके माथुर, और इसके सिवा अम्बष्ठ, तथा सिंह, नाग, नाथ दास आदि श्रीकरण श्रेणीके कायस्थ हैं। ये सब चित्रगुप्तके वंशके कायस्थ क्षत्रिय हैं और द्विजोंकी भांति माने जाते हैं।

गौड़ीय कायस्थका यज्ञोपवीतत्यागका कारण।

ऊपर कहे हुए चित्रगुप्त वंशके कायस्थ जब द्विजोंकी भांति माने जाते थे तब गौड़ीय कायस्थोंके यज्ञोपवीतके नष्ट होनेका कारण क्या है? गौड़ीय कायस्थकुलदर्पणमें लिखा है—

"[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]"

भारतमें बौद्ध पालराजके शासनकालमें गौड़के राजपरक कायस्थ वैदिकाचार छोड़ कर बौद्ध तान्त्रिक हुए थे। वैदिकाचारके त्यागके साथ साथ उन्होंने वैदिक यज्ञोपवीत संस्कार भी छोड़ दिया था। वे कैसे तान्त्रिक थे या तन्त्रशास्त्रमें कैसे व्युत्पन्न थे, उसका यथेष्ट प्रमाण मौजूद है। बङ्गीय साहित्य परिषद्‌ने महामहोपाध्याय पं० हरप्रसाद शास्त्री महोदयके "हजार वर्षके पुराने बङ्गलाभाषाके बौद्ध गान और दोहे" प्रकाशित किये हैं। शास्त्री महाशयके लिखे हुए उस ग्रन्थके अन्तमें जो "बौद्धतान्त्रिक ग्रन्थकारसूची" प्रकाशित हुई है, उससे जाना जाता है कि पाल राजाओंके समयमें कायस्थोंने सैकड़ों तान्त्रिक ग्रन्थोंकी रचना की थी। इन ग्रन्थकारोंमें बहुतसे उपाध्याय और महोपाध्याय उपाधिके धारक थे। कर्डियर सूचीसे यह भी जाना गया है कि, उनमें अट्ठारह ग्रन्थकार महोपाध्याय उपाधिके धारी थे। इनमेंसे प्रभाकर, जिनकर घोष, तथागत रक्षित और कमलरक्षित—ये चार कायस्थ महोपाध्याय उपाधिसे विभूषित थे। इनके और अन्यान्य बहुतसे कायस्थपण्डितोंके बनाये हुए सैकड़ों तान्त्रिक ग्रन्थोंका पता लगता है। केवल बौद्ध तान्त्रिक कायस्थाचार्योंकी बात नहीं, बल्कि उस समय गौड़के हिन्दू समाजमें भी बहुतसे प्रसिद्ध प्रसिद्ध पण्डित मौजूद थे। उनमें गौड़ाधिप गुप्त रसायन आयुर्वेदग्रन्थोंके कर्त्ता श्रीधरके आश्रयदाता पाण्डुदास, गौड़के राजा रामपालके मन्त्री "तत्त्वबोध भूति" बोधिदेव और उनके पुत्र "प्रज्ञानपारमिति", कामरूपके राजा जयदेव, गौड़ाधिप मदनपालके

सान्धिविग्रहिक वारेन्द्र कायस्थ प्रजापति नन्दी और उनके पुत्र 'रामचरित'-रचयिता 'कलिकालवाल्मीकि' सन्ध्याकर नन्दीका नाम विशेष उल्लेखयोग्य है। पाल राजाओंके समयमें बहुतसे कायस्थ बौद्ध-सङ्घके विहारमें प्रधान आचार्य भी हो गये थे।

ब्राह्मणोंके समान अधिकार होनेसे ही ये कायस्थ—ब्राह्मणोंके अभ्युदयके समयमें भी—ऐसे ऐसे ऊंचे पदोंके अधिकारी बने; और इसी लिए ही ये वङ्गीय ब्राह्मणसमाजके विद्वेषभाजन हुए थे। वैदिक ब्राह्मणोंने इन सद्धर्मियों पर कैसे कैसे अत्याचार किये हैं, इसका पता 'शून्यपुराण'के अन्तर्गत 'निरञ्जनकी रुष्मा'से खूब अच्छा लगता है। इसके फलस्वरूप वङ्गालमें बौद्धोंका प्रभाव नष्ट हो गया और ब्राह्मणोंके प्रभावसे कायस्थोंको सच्छूद्रवत् बनना पड़ा। इससे कायस्थोंको समाज-सम्बन्धी कोई हानि नहीं उठानी पड़ी, यही कुशल है। ब्राह्मणों नीचे कायस्थोंका ही स्थान था। और तो क्या; अकबर बादशाहके समयमें वङ्गालमें अधिकतर कायस्थ ही राजा थे। लाखों सैनिक, हजारों घुड़सवार और सैकड़ों तोपें उनके आधिपत्यमें रक्षाके लिए रहा करती थीं। "आइन-इ-अकबरी"में इसका स्पष्ट प्रमाण मिलता है। अकबर बादशाहके दरबारमें कायस्थोंके क्षत्रियत्वके विषयमें बड़ा भारी आन्दोलन हुआ था। उस दरबारमें मधुसूदन सरस्वती जैसे प्रमुख विद्वानोंने भी कायस्थोंके क्षत्रियत्वके अनुकूलमें अपना मत प्रकट किया था। जहांगीर बादशाहके समयमें प्रकाशित "बयान ए कायस्थ" नामक पारसी ग्रन्थमें उनके मतोंका उल्लेख ही नहीं, वरन् उद्धृत किया गया है। किसी किसी पण्डितका यह कहना है कि, बङ्गालके प्रातःस्मरणीय श्रीरघुनन्दन ही जब वसु, घोष आदिको शूद्र निर्देश गये हैं; तब बङ्गालके कायस्थ शूद्र ही समझे जावेंगे। परन्तु निरपेक्ष हो कर यदि रघुनन्दनके ग्रन्थ देखे जांय तो उनमें कहीं भी "कायस्थ" शब्द तक न मिलेगा। ऐसी दशामें उनके मतसे कायस्थ शूद्र हैं—यह कहना बिलकुल हास्यास्पद है। वसु और घोष उपाधि ब्राह्मणोंसे लेकर बङ्गालकी बहुतसी जातियोंमें पाया जाता है। ऐसी दशामें केवल रघुनन्दनोक्त वसु, घोष आदि शब्दोंसे बङ्गालके कोई कायस्थ शूद्र नहीं माने जा सकते। ई० १४वीं शताब्दीमें गौड़से कुछ कायस्थ-पण्डित राजा दुर्लभनारायणकी ओरसे कामता (कोचविहार) में बुलाये गये थे। ये वहां "बारभुंइया" कहलाये और पीछे इन्होंने वहां अपना आधिपत्य जमा लिया। इनके आचार-व्यवहार ब्राह्मणोंकी भांति ही थे। इन्हीं भुंइयाओंके अग्रणी शिरोमणि भुंइया कायस्थ चण्डीवरके वंशमें (महाप्रभु चैतन्यदेवके पहिले) ई० १५वीं शताब्दीको महापुरुष और अद्वितीय पण्डित श्रीशङ्करदेव आविर्भूत हुए। आसामके सब लोग हिन्दू इनको भगवान्‌का अवतार मान कर पूजते थे और अब भी ऐसा ही है। कायस्थ-अवतार शङ्करदेवके प्रधान कायस्थ शिष्य माधवदेव भी उनकी तरह प्रचार कार्यमें दक्ष थे और इन्होंने "महापुरुषीय" सम्प्रदाय भी चलाया था। आसामके प्रधान प्रधान स्थानोंमें महापुरुषियोंके शताधिक सत्र (पुण्यस्थान) वर्तमान हैं। उनमें कायस्थ सत्राधिकारी अब भी ब्राह्मण आदि सब वर्णोंके दीक्षागुरु और ब्राह्मणोंके सदृश संस्कारवाले देखनेमें आते हैं। उनके पूर्वज लोग गौड़वङ्गसे जा कर आसामवासी हुए थे। वङ्गीय कायस्थ पहिले द्विज कहलाते थे—इसका प्रमाण भी यही है। कृष्णदास कविराजके "श्रीचैतन्यचरितामृत"में गौड़के राजाके अमात्य केशव वसुका (ई० १५वीं शताब्दीमें) 'केशवछत्री' नामसे उल्लेख किया गया है। उत्तरराढ़ीय नन्दराम सिंह स्वयं (४०० वर्ष पहले) गोपीनाथकी पूजा करते थे। यह प्रथा ग्यारह पीढ़ियों तक चली आयी। इस वंशमें सर्वदा यज्ञकी प्रथा और प्रणवोच्चारणकी प्रथा प्रचलित रही है। शिष्य रखनेकी प्रथा और पूजाकी प्रथा भी बराबर बनी रही है। बरिशालकी तरफ "त्रैलोक्यनारायणकी पञ्चाली" नामक पुस्तकका बहुत ही प्रचार है। इस पुस्तकमें लिखा है कि, चार सौ वर्ष पहिले जब चन्द्रद्वीपके राजाका बरिशालमें आधिपत्य था, तब वहांके चांदसी ग्रामके निवासी बङ्गाली

कायस्थ हरिनारायण दास 'विद्यासागर' उपाधिसे विभूषित थे। दक्षिणराढ़ीय कायस्थ समाजमें सुप्रसिद्ध चिकित्साके व्यवहारमें अद्वितीय आयुर्वेदके सिद्धि प्राप्त बङ्गदेशीय चिन्तामणि राय 'वैद्यराज' और रत्नमणि राय 'धन्वन्तरि' उपाधिसे अलङ्कृत थे। पीछे इसी वंशमें 'तपस्वी' 'सार्वभौम' 'वाचस्पति' 'वैद्यशेखर' 'कण्ठहार' 'वैद्यतिलक' 'वैद्यविशारद' 'वैद्यचूड़ामणि' 'सर्वतोभद्र' 'वैद्यरत्न' इत्यादि इत्यादि उपाधियोंके अधिकारी हो गये हैं। इनके रचे हुए बहुतसे वैद्यक ग्रन्थ भी मिले हैं।

दिनाजपुरके वर्तमान कायस्थ महाराजके समयसे १०० वर्ष पहिले तक ब्राह्मोत्तरके दान-पत्रमें 'वर्मा' उपाधि देखनेमें आता है। इस वंशमें विवाहादि उत्सवोंके दिन त्रिगुणितका नमस्कार-मन्त्र पढ़ कर पुरोहित जब इनके हाथमें तलवार देते हैं, तब ये उसे ग्रहण करते हैं, और फिर उसी तलवारसे केलेके पेड़को काटते हैं। यह प्रथा राजपूतोंके क्षत्रियोंकी जनवाया अनुरूप है। बङ्गालके कायस्थ समाजने तान्त्रिकताके प्रभावसे वैदिक मार्गको यद्यपि त्यागने पर भी अन्नप्राशन, कर्णवेध और चूड़ाकरण आदि द्विजोचित संस्कार पाये हैं, ऐसी हालतमें यथार्थ कायस्थ कभी शूद्रोंमें नहीं गिने जा सकते।

बङ्गालके अधिवास सामाजिक कायस्थ त्रिगुणके सन्तान हैं, उनमें बराबर ये संस्कार चले आये हैं। और उनमें बहुतोंने तान्त्रिक आचारको ग्रहण नहीं किया है। ये बराबर वैदिक आचार पालन करते आये हैं—इसका प्रमाण भी ग्रन्थोंमें मिलता है। इनके सन्तान बङ्गाल और युक्तप्रदेशमें अब भी रहते हैं और ये अब भी द्विजों जैसे संस्कारवाले हैं। शकेन्द्र १२११ संवत्‌के छपे हुए "कायस्थ-धर्म निर्णय" नामक प्राचीन बङ्गला ग्रन्थमें ऐसा लिखा है कि,—'गौड़ और बङ्गराज्यवासी दक्षिणराढ़ी, उत्तरराढ़ी और बङ्गज कायस्थ समाजोंके आचारमें हिन्दुस्तानी कायस्थोंके आचरण व्यवहारमें दूषित होता चला है। क्योंकि हिन्दुस्तानी कायस्थ मांसका अधिक आहार नहीं करते, द्वादशाह अशौच, इत्यादि देख कर सन्—१२११ सालकी बर्षको महाराज गोपीमोहन देव बहादुरकी सम्मतिसे तारिणीचरण मित्र महाशयने यह विचारका आमूल सन्धान करके चित्रगुप्तवंशधर कायस्थ शूद्र नहीं, इस प्रकार प्रमाण संग्रह करके पर समाचारपत्रमें प्रचार किया था। उस समय गोस्तवानिवासी रतन महाशय और बैकुण्ठवासी तारिणीचरण बसु महाशयने यह विचारका आमूल सन्धान करके केवल पौराणिक प्रमाणसे व्यवहार किया, निश्चय न समझ सुपथ रहे। पीछे उस बैकुण्ठवासी रतन महाशयके पुत्र गुणाकर श्रीयुत विश्वेश्वर रतन महाशय इलाहाबादमें पारसी अक्षरोंमें लिखा एक पुस्तक ले आये। जिसमें उस पुराणोक्त चित्रगुप्त सन्तान कायस्थ न खाकर द्वादशाह अशौच और क्षत्रिय धर्म इष्ट होता है।' कहना वृथा है कि उस पारसी अक्षरोंमें लिखित कायस्थधर्म नामक हस्तलिखित ग्रन्थ महाराज गोपीमोहन देवके पुत्र राजा राधाकान्त देवके पुस्तकालयमें अद्यापि विद्यमान है। राजा गोपीमोहन देव और राजा राजकृष्णदेव बहादुरके भ्रातृ महाराज नवकृष्णकी विपुल सम्पत्तिके उत्तराधिकार पर कलकत्तेकी सुप्रीम कोर्टमें जो मुकदमा चला, उसमें भी दोनोंने अपनेको शूद्र और वैश्यसे भिन्न उच्च वर्णकी भांति घोषणा की है। मेकनटन साहब द्वारा १८२९ ई० को प्रकाशित उस मुकदमेकी कैफियत पढ़नेसे यह जान सकेंगे।* अब बात आती है—राजा राधाकान्त देव बहादुरके पिता और पितृव्य अपनेको शूद्र वैश्यसे भिन्न उच्च वर्णकी भांति परिचित करते भी राजा राधाकान्त देवने अपने शब्दकल्पद्रुममें कायस्थोंके विषय पर अप्रासङ्गिक कथा क्यों लिखी है? जिस समय शब्द-कल्पद्रुम प्रकाशित होता था उसी समय आन्दुलके राजा राजनारायण प्रधान प्रधान पण्डितोंका मत ले कर कायस्थ समाजमें उपनयन संस्कार प्रवर्तन पर तत्पर हुये थे। राजा राधाकान्तके पिता राजा

* Consideration on the Hindu Law as it is current in Bengal, by Hon'ble Sir Francis W. Maghnaten, 1824.

गोपीमोहन १२१९ सालको कायस्थोंका क्षत्रियत्व संवादपत्रमें घोषणा करते भी प्रकृत कोई कार्य कर न सके। उनके साथ आन्दुल-राजवंशको बराबर सामाजिक प्रतिद्वन्द्विता रही। कहना हुआ है कि उस काल कलकत्तेके दक्षिणराढीय कायस्थोंके मध्य १२ दल थे। दूसरे स्थानकी और क्या बात कहेंगे। राजा राधाकान्त देवके सुयोग्य दौहित्र स्वर्गीय आनन्दकृष्ण वसु महाशयसे सुना है कि उस सामाजिक प्रतिद्वन्द्विताके समय राजा राधाकान्त देवने आन्दुलके राजा राजनारायणका विरुद्ध पक्ष अवलम्बन किया था। उसी सुयोगमें उनके शब्दकल्पद्रुमके संश्लिष्ट पण्डितने 'आचारनिर्णयतन्त्र' और 'अग्नि-पुराणीय जातिमाला'को रचना कर कौशलसे शब्दकल्प-द्रुमके मध्य प्रक्षिप्त किया, यह विचित्र नहीं। जो हो, राजा राधाकान्त देव बहादुर वृद्ध वयसमें अपना भ्रम समझ सके थे। शब्दकल्पद्रुमका वही भ्रम संशोधन करनेके लिये वह अपने सुयोग्य और सुपण्डित जामाता अमृतलाल मित्र और प्रिय दौहित्र पण्डितवर आनन्दकृष्ण वसु महोदय पर भार अर्पण कर गये। वह केवल मुखसे ही कह कर शान्त न हुये, अपने वृद्ध वयसवाले निज पौत्रके विवाहमें द्विजोचित कुशण्डिका करके पितृपुरुषोंका मुखोज्ज्वल कर गये हैं। यह बात उनके आत्मीय स्वजन सब जानते हैं। इतिहासमें भी यह बात लिखी है। *

राजा राधाकान्त देव थोड़े दिन अधिक जीनेसे क्षत्रियाचार प्रवर्तनमें उद्योगी बनते, सन्देह नहीं। जो हो, आन्दुलके राजा राजनारायणकी भांति स्वर्गीय राय मोहनलाल मित्र महाशय क्षत्रिय आचारके प्रचलनमें उद्योगी हुये थे। किन्तु उस समय संस्कृत भाषामें अशिक्षित शास्त्रज्ञानहीन स्वजातीयोंके निकट उपयुक्त सहानुभूति न मिलनेसे उनका महत् उद्देश्य सुसिद्ध हो न सका। जो हो, आन्दुलके राजा राज-नारायण जो बीज बो गये हैं, वर्तमान कायस्थ-समाजमें संस्कृत शिक्षा-प्रसारके साथ क्रमसे वह फलफूलसे सुशोभित महीरुहमें परिणत होते जाता है। आजकल बङ्गके उत्तरराढीय, दक्षिणराढीय, वङ्गज और वारेन्द्र इन चार श्रेणीके कायस्थोंके मध्य प्रायः सहस्राधिक कायस्थ-सन्तान द्विजोचित उपनयन-सम्पन्न हैं। उक्त चारों समाजोंके बहुकुलीन और मौलिक कायस्थ सन्तानोंने व्रात्य प्रायश्चित्तके अन्तमें उपवीत ग्रहण किया है एवं उनके मध्य बयोदशाहमें श्राद्धादि क्षत्रवर्णोचित आचार प्रचलित हुवा है। विशेषभावसे बङ्गके प्रधान प्रधान पण्डित भी इस स्थानके चित्रगुप्तवंशीय कायस्थोंको क्षत्रियवर्ण-सम्भूत समझते हैं। जब संस्कृत कालेजमें कायस्थ छात्र लिये जायेंगे या नहीं—बात उठी, उस समय संस्कृत कालेजके अध्यक्षरूप प्रातःस्मरणीय स्वर्गीय ईश्वरचन्द्र विद्यासागर महाशयने शिक्षा-विभागके डिरेक्टर महोदयको १८५१ ई० को २० वीं मार्चको लिखा था—"जब वैद्य कालेजमें पढ़ सकते हैं, तब कायस्थ क्यों न पढ़ सकेंगे? जब शूद्रजाति वैद्य और जब शोभाबाजारके राजा राधाकान्त देवके जामाता हिन्दू-स्कूलके छात्र अमृतलाल मित्रने संस्कृत कालेजमें पढ़नेका अधिकार पाया है, तब अन्यान्य कायस्थ क्यों पढ न सकेंगे? कायस्थ क्षत्रिय आन्दूलके राजा राजनारायण बहादुरने इसे प्रमाण करनेको प्रयास उठाया। कि कायस्थोंको संस्कृत कालेजमें लेना उचित है।" उसके पीछे संस्कृत कालेजके अध्यक्ष स्वर्गीय महामहोपाध्याय महेशचन्द्र न्यायरत्न महाशय बङ्गला विश्वकोषमें कायस्थ शब्द पढ़ तत्-कालीन संस्कृत कालेजके स्मृति-अध्यापक स्वर्गीय मधुसूदन स्मृतिरत्न महाशयको कहा था—'कायस्थ-जाति क्षत्रियवर्ण है, यह हम अच्छी तरह समझ सके हैं।' उनके परवर्ती अध्यक्ष महामहोपाध्याय नीलमणि न्यायालङ्कार महाशयने कायस्थोंको क्षत्रियकी भांति स्वीकार किया है। (उनका बङ्गला इतिहास द्रष्टव्य) अतःपर महामहोपाध्याय हरप्रसाद शास्त्री महाशय लिख गये हैं—बङ्गमें ब्राह्मण्य धर्मप्रतिष्ठाके लिये ही ब्राह्मणोंकी भांति कायस्थके प्रधान इस

* Ghose's Indian Chiefs, Rajas and Zamindars, 1881, Vol. II. p. 30.

देशमें पाये थे। अतएव बङ्गीय कायस्थसमाजका हिसाबार स्थिर कर गत १३३३ सालके १८ आषाढ़को संस्कृत कालेजके अध्यक्ष महामहोपाध्याय डा॰ सतीशचन्द्र विद्याभूषणके सभापतित्वमें उसका व्यवस्था-पत्रोंकी एक विचारसभा हुयी। इस सभामें संस्कृत कालेजके टोल विभागमें बङ्गीय कायस्थ छात्रोंके वेद अध्ययनका अधिकारसूचक व्यवस्थापत्र प्रदत्त और वेदान्त पढ़नेके लिये कायस्थ छात्र ग्रहीत हुये। बङ्गदेशीय दूसरे जो सकल प्रधान प्रधान अध्यापक हैं, उन्होंने इदानीन्तनकाल बङ्गदेशीय कायस्थोंके क्षत्रियत्व और उपनयन सम्बन्धमें व्यवस्था दी है। बङ्गदेशीय कायस्थ-सभाके प्रकाशित व्यवस्थापत्रमें उन सकल अध्यापकोंके नाम मुद्रित हुये हैं। केवल व्यवस्थापक पण्डित ही नहीं, परमहंसकल्प साधु महात्मा भी इस बातको कायस्थ जातिका क्षत्रियत्व मानते हैं। जैसे—भद्रेश्वरके उत्तरप्रान्तवासी भोलानाथ बाबा रामानन्द स्वामी महाराज बङ्गके कायस्थजातिको आह्वान कर उनका क्षत्रियत्व और उपनीत ग्रहणकी आवश्यकता घोषणा कर गये हैं। ११ वर्ष हुये उन्होंने स्वयं दक्षिणराढ़ीय कुलीन कायस्थ हरगोकुल मित्रके बाबू ... महाशयको उपवीत दान कर बहुतसे कायस्थोंको उपनीत किया है। कुछ दिन हुये वारेन्द्र कायस्थ अध्यापक हेमचन्द्र सरकार महाशय और बङ्गज कायस्थ हेमचन्द्र चौधरी पुरीके शङ्कर मठके प्रधान आचार्यके निकटसे उपवीत-संस्कार पाया था। स्वामी विवेकानन्द कायस्थ थे। वह अपनी जातिको विशुद्ध क्षत्रियकी भांति प्रचार कर गये हैं। सुतरां सामाजिक बङ्गीय चित्रगुप्तवंशीय कायस्थ निःसन्देह क्षत्रियवर्ण हैं, यह कहना ही होता है।

युक्तप्रदेश।

पञ्जाबके पश्चिमप्रान्तसे बिहारके पूर्वप्रान्त पर्यन्त वंशज कायस्थ रहते हैं। वह सभी अपनेको चित्रगुप्तका वंशधर बताते और अपनी उत्पत्तिके सम्बन्धमें भविष्य पुराण तथा पद्मपुराणके उपाख्यान सुनाते हैं। इसको छोड़ उनके उत्पत्ति सम्बन्ध पर युक्तप्रदेशमें निम्नलिखित प्रवाद भी प्रचलित है —

पहले पहले यमपुरमें १२ यम राजत्व करते थे। उन १२ लोगोंमें ठीक यमका नाम चित्र रहा। उस समय किसी ग्राममें रहनेवाले तीन व्यक्ति थे। उनमें एक राजा, एक ब्राह्मण और एक नापित था। राजाका काल पूरा होने पर ले जानेके लिये यमदूत आ पहुंचा। दूतने भ्रमक्रमसे राजाको छोड़ ब्राह्मण और नापितको ले जा कर वहां उपस्थित कर दिया। यम ठीक हो यह भ्रम समझ सके थे। ब्रह्मा भी यह संवाद सुन कर बहुत ही दुःखित हुये। ब्रह्मा इस लिये चिन्तित हो ध्यानस्थ हो गये, जिसमें ऐसा फिर न हो सके। उस समय भी योन सम्बन्धसे जीवकी उत्पत्ति होती न थी। देवताके दुःखसे जीव बनते रहे। ब्रह्माके ध्यानस्थ होनेसे दशसहस्र वत्सर ध्यानमें बीत गये। पीछे ब्रह्माने देखा कि उनके निकट एक श्यामवर्ण पुरुष उपस्थित था। उसके हाथमें मसि पात्र और लेखनी थी। ब्रह्माने कहा—'तुम हमारे कायासे उत्पन्न और हमारी कायामें स्थित हो। इस लिये तुम्हारा नाम 'कायस्थ' है। उसके पीछे भी ब्रह्मा बोल उठे—'तुम गुप्तभावसे हमारे शरीरमें रहे हो। इस लिये हमने तुम्हारा नाम चित्रगुप्त रखा है।' चित्रगुप्त कोटनगर जा कर देवी चण्डिकाकी पूजा करने लगे। चण्डीने सन्तुष्ट हो उन्हें तीन वर दिये थे—१ तुम दूसरेके उपकारको तत्पर रहोगे, २ तुम अपने कार्यमें हद्वेत्ता होगे और ३ तुम बहुत दिन जीओगे। वह वर प्रदान कर देवी अन्तर्हित हुयीं। फिर ब्रह्माने चित्रगुप्तको यमपुरीका भार सौंपा और जीव सृष्टि आरम्भ करनेको आदेश दिया था। सूर्य, विष्णु, देवी भगवती, शिव तथा गणेश उनके उपास्य और ब्रह्मा इष्टदेव हुये। देवताओंने जब सुना—यह मानवी सृष्टि न होगी, तब धर्मशर्मा ऋषिने अपनी कन्या इरावतीके साथ चित्रगुप्तका विवाह कर देना चाहा। सूर्यके पुत्र मनुने भी अपनी सुन्दरी कन्या सुदक्षिणाके साथ चित्रगुप्तका विवाह करनेको प्रस्ताव किया था। ब्रह्माने दोनो की प्रार्थना मान ली। इसी प्रकार चित्रगुप्तने दो कन्याओंका पाणिग्रहण किया। इरावतीके गर्भसे चित्रगुप्तके ८ पुत्र

उत्पन्न हुये—चारु, सुचारु, चित्राख्य, मतिमान्, चित्रचारु, अरुण और अतीन्द्रिय। फिर सुदक्षिणाके गर्भसे भानु, विभानु, विश्वभानु और वीर्यभानु चार पुत्रने जन्म लिया। ब्रह्माने चित्रगुप्तके वंशकी वृद्धि होते देख एक दिन आनन्दसे कहा था—'हमने अपने बाहुसे मृत्युलोकके अधीश्वर रूपमें क्षत्रियोंकी सृष्टि की है। हमारी इच्छा है कि तुम्हारे पुत्र भी क्षत्रिय हों।' उस समय चित्रगुप्त बोल उठे—'अधिकांश राजा नरकगामी होंगे। हम नहीं चाहते कि हमारे पुत्रोंके अदृष्टमें भी वही दुर्घटना आ पड़े। हमारी प्रार्थना है कि आप उनके लिये कोई दूसरी व्यवस्था कर दीजिये।' ब्रह्माने हंस कर उत्तर दिया—'अच्छा, आपके पुत्र असिके बदले लेखनी धारण करेंगे। चार जन्म वह इसी यमलोकमें रहेंगे। उसके पीछे इच्छा करनेसे वह देवलोकमें वास कर सकेंगे।' अनन्तर चित्रगुप्तके सन्तान इहलोक आ गये। उक्त बारह लोगोंमें चारु मथुरा गये और 'माथुर' नामसे गण्य हुये। सुचारु गौड़में जा कर रहने लगे और उसीसे 'गौड़' कहे गये। चित्र भट्ट नदीके कूल पर जा कर रहनेसे 'भट्टनागरिक' नामसे गण्य हुये। भानु 'श्रीवास' नामक स्थानमें जा कर रहे और 'श्रीवास्तव' नामसे ख्यात हुये। हिमवान् देवी अम्बाकी आराधना करनेसे 'अम्बष्ठ', मतिमान् अपनी सखी अर्थात् भार्याके साथ चलनेसे 'सखिसेन' और विभानु 'सूरसेन' देशमें जाकर रहनेसे 'सूर्यध्वज'* कहे गये। यहां नरलोक विस्तार कर उन्होंने स्वर्गलोकको गमन किया।

यह समझ नहीं पड़ता कि ऐतिहासिकोंकी दृष्टिमें उक्त उपाख्यानका विशेष मूल्य है। फिर भी चित्रगुप्तके पुत्रोंकी भांति जिन कई लोगोंका नाम लिखा गया है, पश्चिमाञ्चलस्थ कायस्थोंके मध्य कोई कोई श्रेणी अपनेको उक्त किसी न किसी व्यक्तिका वंशधर बताती है।

आजकल युक्तप्रदेशके कायस्थ प्रधानतः १२ श्रेणीमें विभक्त हैं—१ श्रीवास्तव्य वा श्रीवास्तव, २ भटनागर, ३ सक्सेन, ४ अम्बष्ठ वा अमष्ठ, ५ ऐठान वा अष्ठान, ६ वाल्मीक, ७ माथुर, ८ सूर्यध्वज, ९ कुलश्रेष्ठ, १० करण, ११ गौड़ और १२ निगम। सिवा इसके उन्नाव जिलेके नामसे 'उनाई' एक पृथक् शाखा है।

श्रीवास्तव्य वा श्रीवास्तव कायस्थ—अपनेको चित्रगुप्तके पुत्र भानुका वंशधर बताते हैं। उनके पूर्वपुरुष काश्मीरके श्रीनगरमें राजत्व करते थे। उसीसे 'श्रीवास्तव्य' आख्या हो गयी। उक्त कथा भी श्रीवास्तव कहा करते हैं। फिर किसीके मतमें श्रीवत्स विष्णुके उपासकोंको श्रीवास्तव कहते हैं। किन्तु कोई कोई युरोपीय पुराविद् अवध प्रदेशस्थ गोंडा जिलेकी श्रावस्ती नगरीसे श्रीवास्तव नामकी उत्पत्ति बताता है। किन्तु शेष दोनों मत कल्पनामूलक समझ पड़ते हैं।*

श्रीवास्तवोंमें दो शाखायें हैं—खर और दूसर। खर शाखा ही सत् वा श्रेष्ठ मानी जाती है। दूसर सम्मानमें बहुत छोटे हैं। एक प्रवाद है—अयोध्यामें जाकर जो बसे, वही 'खर' वा श्रेष्ठ और जो अन्य स्थानमें जा कर रहे, वह 'दूसर' हैं। फिर किसी किसीके कथनानुसार पहले इस प्रकार दो शाखायें न थीं। सम्राट् अकबरके ही समयमें उन दोनोंकी सृष्टि हुयी है। उस समय एक व्यक्तिने अति घृणाके साथ राजप्रदत्त उपहार त्याग किया था। उनका नाम 'अखोरी' अर्थात् धर्मपरायण हुआ। मांसस्पर्श न करनेसे ही अखोरी नाम हो सकता है।

इलाहाबादी और फतेहपुरी श्रीवास्तवोंमें निपले-सवान और और बुद्धि सवान नामक दो कुल देख पड़ते हैं। युक्तप्रदेशमें श्रीवास्तवोंकी ही संख्या अधिक

---

* युक्तप्रदेशके कायस्थोंका च- विवरण अहल्या-कामधेनु प्रत समस'हितामें मिलता है। See Origin and Status of the Kayasthas, published by Hargovinda Sahaya, M.A., p. 13.

* कारण युक्तप्रदेशके नाना स्थानोंसे जो सकल प्राचीन शिलालिपि आविष्कृत हुयी हैं, उनमें 'श्रीवास्तव्य' नाम ही मिलता है। 'श्रीवत्स' अथवा 'श्रावस्ती'से कभी यह शब्द निष्पन्न हो नहीं सकता। कल्हणकी राजतरङ्गिणीसे इस बातका प्रमाण मिलता कि काश्मीरमें बहुकाल पूर्व कायस्थोंका यथेष्ट प्रभाव रहा। राजतरङ्गिणीमें श्रीवास्तव्यका भी उल्लेख है।

है। इनके अयोध्या, काशी, इलाहाबाद, मिर्जापुर, गोरखपुर, प्रभृति स्थानोंमें भी लोग बहुत रहते हैं।

भटनागर—अपनेको चित्रगुप्तके पुत्र चित्रचारुका सन्तान बताते हैं। इनमें कोई कहता कि पूर्वकाल भट नदीके तीर रहनेसे ही उक्त नाम पड़ा है। फिर किसीके मतमें महमूद-गजनवी, तैमूर और हुमायूंके पुत्र कामरानने दुर्ग अधिकार करनेके लिये भटनगरमें आक्रमणके युद्ध किया था। उसी इतिहास प्रसिद्ध भटनगरमें जो लोग रहे वह भटनागर नामसे विख्यात हुये। इनमें दो श्रेणी हैं—भटनागर कदीम या पुराने और गौड़कायस्थोंमें मिल जानेवाले भटनागरी।

सक्सेन—हविर्मनाके ही अपने नामकी उत्पत्ति बताते हैं। इनके पूर्वपुरुषोंने कौशल दिखा श्रीनगरके श्रीवास्तव्य राजाओंसे उक्त उपाधि पाया था। प्रकृत प्रस्तावसे जिन्होंने सब राजाओंके सेनाविभागमें कौशल दिखाया, उन्हींका वंश 'सक्सेन' कहाया। प्राचीन शिलालिपिमें 'सक्सेनजातीय कायस्थ ठक्कुर' नाम लिखा है।

सक्सेनोंमें भी 'खरे' और 'दूसरे' दो दल हैं। प्रवादानुसार उक्त श्रेणीके सोमदत्त नामक कोई व्यक्ति कुलके कीयावर थे। सक्सेन कहते कि उन्हीं कुलमें प्रीत हो सोमदत्तका घर पश्चात् सत् सम्बोधन किया था। उनके वंशधर इसीसे 'खरे' कहे जाते हैं। दूसरा गल्प भी है—अकबरके पिता हुमायू जब ईरान भाग गये तब उनके साथ कितने ही सक्सेन भी रहे। ईरानमें उन्होंने १६ वर्ष व्यतीत किये। लौटने पर भारत वर्षके सक्सेन उनके साथ भोजन करनेको सम्मत न हुये। इसी प्रकार ईरानसे प्रत्यागत सक्सेन और उनके वंशधर 'दूसरे' अर्थात् हेय समझे गये।

श्रीवास्तव—अपनेको चित्रगुप्त-पुत्र मतिमान्का वंशधर बताते हैं। उनका आदिम वास इटावा जिलेमें है। कन्नौजके राजा जयचन्द्रके मरने पर श्रीवास्तव अमरसिंह अधीन इटावेमें जा कर बसे थे। उनके आदि पुरुष पुष्करदास और निमचन्दने अमरसिंहके निकट कानोंरमें कई गांव घार चौधरी पदको ग्रहण किया। उनके वंशधर अमरसिंहके समयसे अंगरेजोंके अधिकार पर्यन्त पुरुषानुक्रमसे इटावेकी कानूनगोई करते रहे।* इटावेके उक्त श्रीवास्तव कायस्थ वंशमें ही प्रसिद्ध वीर राजा नवलरायने जन्म लिया था। वह अयोध्यावासी अवध-नवाबके वजीर और प्रधान सेनापति रहे। उन्होंने अनेक स्थानमें युद्ध कर जो कौशल दिखाया, वह वर्णनीय बनाया है।† इटावेके भाट आज भी राजा नवलरायकी वीरगाथा गाया करते हैं।

अस्थाना—अपना परिचय चित्रगुप्तपुत्र चित्र भानुके नामसे दिया करते हैं। अस्थिठान नाम कैसे पड़ा है? उसके सम्बन्धमें एक गल्प सुनते हैं—नारायणोंमें कमार नामक एक विख्यात राजा रहे। उन्हें उक्त श्रेणीके पूर्वपुरुषोंने अष्टप्रकार सुखका उपहार दिया था। उसीसे अष्टान (अस्थिठान) नाम चल पड़ा। इनमें पूर्वी और पश्चिमी दो भेद हैं। पूर्वी जौनपुर तथा उसके निकटवर्ती स्थान और पश्चिमी लखनऊ एवं उसके आसपास वास करते हैं। उभय श्रेणीमें पान भोजन प्रचलित नहीं।

अम्बष्ठ—अपनेको चित्रगुप्तके पुत्र हिमवान्का वंशधर बताते हैं। प्रवाद है—उनके पूर्वपुरुष गिरनार पर्वत पर जा कर रहे और वहां अम्बादेवीकी पूजा करने पर 'अम्बष्ठ' नामसे परिचित हुये। स्कन्द पुराणीय सह्याद्रिखण्ड और विष्णुपुराणसे समझ पड़ता कि भारतके पश्चिमांशमें अम्बष्ठ नामक एक जनपद रहा। बहुत सम्भव है कि उसी स्थानके अधिवासी कायस्थ अम्बष्ठ नामसे ख्यात हुये। ग्रीक (यूनानी) ऐतिहासिक आरियानने उनका नाम अम्बष्ठो (Ambastae) लिखा है। अम्बष्ठ बहुतसे बङ्गालमें भी जा कर रहने लगे हैं। उस प्रदेशके अम्बष्ठ कायस्थोंका आचार-व्यवहार ब्राह्मणोंसे मिलता है।

---

* Hume's Memorandum on the Castes of Etawa p. 8

† Journ. As. Soc. Bengal Vol. XLVIII, pt. I, p. 50—66 नवलरायका विस्तृत विवरण द्रष्टव्य है।

वाल्मीक कायस्थ—चित्रगुप्तपुत्र विभानु वा वीर्यभानुके सन्तान कहाते हैं। विभानुके तपस्याकाल शरीरमें वल्मीक उत्पन्न हुवा था। उसीसे उन्हों और उनके वंशधरोंने 'वाल्मीक' नाम पाया।

उनमें तीन श्रेणी हैं। बम्बईसे आनेवाले 'बम्बेया', कच्छसे आनेवाले 'कच्छी', और सुराष्ट्रसे आनेवाले 'सौरठी' कहाते हैं। वाल्मीकोंमें कुछ कुछ दाक्षिणात्यका आचार-व्यवहार भी प्रचलित है।

माथुर—कायस्थोंका नाम मथुराके वाससे पड़ा है। वह अपनेको चित्रगुप्तके पुत्र चारुका वंशधर बताते हैं। उनमें भी तीन श्रेणियां देख पड़ती हैं—देहलवी, कच्छी और लचौली। दिल्लीमें रहनेवाले 'देहलवी', कच्छमें रहनेवाले 'कच्छी' और योधपुरमें रहनेवाले 'लचौली' नामसे परिचित हैं। लचौलियोंको पञ्चौली भी कहते हैं। उनके कथनानुसार योधपुर वा मरुदेशमें पूर्वकालकी पञ्चनामक एक राजा थे। उन्हींसे पञ्चोली नाम निकला है। फिर किसीके मतमें पञ्चाल देशसे 'पञ्चाली' बना है।

सूर्य्यध्वज—अपना परिचय चित्रगुप्तपुत्र विभानुके नामसे देते हैं। उनका कहना है कि इक्ष्वाकुवंशीय राजा सूरसेनने यज्ञकाल विभानुको साहाय्य करनेसे 'सूर्यध्वज' उपाधि दिया था। उनका आचार-व्यवहार कुछ कुछ ब्राह्मणोंसे मिलता है।

कुलश्रेष्ठ—कायस्थ चित्रगुप्तपुत्र अतीन्द्रियके सन्तान है। उक्त श्रेणीके कायस्थ कहा करते कि जितेन्द्रिय (अतीन्द्रिय) परमधार्मिक रहे। वह प्रति वर्ष अपनी भार्याको बुलाकर उनके पैर धो देते थे। उनका काल पूरा होने पर यमदूतोंने जा कर पूछा—'क्या आप अब स्वर्ग जाना चाहते हैं।' जितेन्द्रियने उत्तर दिया कि वह अविलम्ब स्वर्ग जाना चाहते थे। उसी समय स्वर्गसे विमान उतर पड़ा। जितेन्द्रिय विमान पर चढ़ कर अग्निलोक पहुंचे। अग्निलोकसे प्रजापतिलोक होते हुए ब्रह्मलोकमें जाकर उन्होंने अनन्त सुखभोग किया। अपना कुल उज्ज्वल करनेसे ही उनके वंशधरोंने 'कुलश्रेष्ठ' उपाधि पाया है। उनमें 'बरखेरा' और 'चखेरा' दो श्रेणियां हैं। उक्त दोनो श्रेणियोंमें पानाहार प्रचलित नहीं।

करण—कहते कि नर्मदातीर कर्णालि नामक एक ग्राम है। उसी ग्राममें उनके पूर्वपुरुषोंके वास करनेसे 'करण' नाम पड़ा है। उनमें भी दो श्रेणियां हैं—गयावाल और तिरहुतिया। गयासे गयावाल और त्रिहुतसे तिरहुतिया शाखाका नामकरण हुवा है। करण कायस्थ प्रायः उड़ीसामें ही रहते हैं।

गौड़—कायस्थ नाम गौड़देशकी प्राचीन राजधानी गौड़से निकला है। वह कहते कि उनके पूर्वपुरुष भगदत्त कुरुक्षेत्रके महासमरमें निहत हुए थे। गौडकायस्थोंमें ही कालसेन वा कामसेन नामक एक राजकुमार रहे। कायस्थोंमें आज भी उनकी पूजा होती है। कायस्थ-कन्याके विवाह-काल प्रदीपके कज्जलसे एक मूर्ति अङ्कित की जाती है। उसीको कालसेनकी मूर्ति मान लोग पूजा करते हैं। गौडकायस्थ कहते और उनके कुरसीनामेमें भी पढते कि गौडाधिप सेनराज उक्त कायस्थवंशीय ही थे। मुहम्मद-बख्तियार तुर्कने कौशलक्रमसे लक्ष्मणियाके निकट बङ्गराज्य अधिकार किया था। उसीसे अनेक गौड-कायस्थ युक्तप्रदेश भाग गये। हिमालयस्थ सुखेत, मन्दी प्रभृति स्थानके राजा आज भी अपनेको गौड़-राजवंशीय बताते हैं। प्रकृत प्रस्तावमें गौडकायस्थवंशीय होते भी आजकल वह अपना परिचय गौडराजपूतके नामसे देते हैं।* बलबन जब बङ्गाल पहुंचे, तब वहाके कायस्थ-राजा और जमीन्दार उनके अच्छे सहायक हुवे। उनके पुत्र नसीर-उद्-दीनने गौड़से बहुसंख्यक कायस्थोंको बुलाकर इलाहाबाद सूबेके अन्तर्गत निजामाबाद, भदोई, कोली, वार्षी और विरियाकोट प्रभृति स्थानोंमें कानूनगोईका पद प्रदान किया था। उनके सभी वंशधर गौडकायस्थ कहलाते हैं।

* Elliot's Races of the N. W. P. ed. by Beames, vol II p 107; Sir Lepen Griffin's Panjab Rajahs, and Crook's Tribes and Castes of the N. W. P. Vol. III. p 192.

यहांके भटनागरोंने गौड़ोंके पहले ही मुसलमानी सरकारके अधीन कार्यको स्वीकार किया था। फिर मुसलमानोंके संसर्गसे गौड़कायस्थ भी उनमें मिल गये। भटनागर वाममार्गी रहे। उस समय उनके साथ सम्मिलित होने पर गौड़कायस्थ भी वाममार्गी बन गए और भैरवीचक्रमें पूजा करने लगे।

गौड़कायस्थोंने जब भटनागरोंको आहार करनेके लिये निमन्त्रण दिया तब भटनागरोंने तो उनके घर जा कर खा लिया किन्तु पीछे जब भटनागरोंने गौड़कायस्थोंको अपने घर खाने पीनेके लिए बुलाया, तब बहुत थोड़े लोगोंको छोड़ कर अधिकांश गौड़ोंने निमन्त्रणमें जानेसे अपना मुंह छिपाया। फिर जिन गौड़ोंने भटनागरोंके घरमें जा कर खाया था, उन्हें समाजच्युत भी ठहराया। इससे भटनागर बहुत चिढ़ थे। उस समय दिल्लीमें नसीर उद्-दीन् सम्राट् रहे। गौड़ और भटनागर उभय श्रेणीके कायस्थ उनके अधीन काम करते थे। दिल्लीके भटनागरोंने जब सुना कि उनके जातिकुटुम्बके घर गौड़कायस्थोंने आहार किया न था, तब उन्होंने गौड़ोंके घर खाने वाले सकल भटनागरोंको समाजच्युत कर दिया। बात ठहर गयी—गौड़ जितने दिन उनके घरमें न खायेंगे उतने दिन तक भी समाजमें मिलाये न जायेंगे। इस पर समाजच्युत भटनागरोंने मुसलमान-सम्राट्के निकट नालिश की थी। सम्राट्को गौड़कायस्थोंके अन्याय आचरणका परिचय मिला। उन्होंने दिल्लीमें रहने वाले गौड़ों और भटनागरोंको एकत्र आहार करनेके लिये आदेश दिया था। उस समय बाध्य हो दिल्लीवासी अनेक गौड़ोंने भटनागरोंके घर जा कर खा लिया। किन्तु कई गौड़ भटनागरोंके घर जा कर खानेके भयसे दिल्ली छोड़ कर चले गए। उनमें एक पूर्णगर्भा रमणी रहीं। किसी ब्राह्मणके घर आश्रय लेने पर उनके एक पुत्र उत्पन्न हुआ। बड़ा होने पर उसके साथ ब्राह्मणने अपनी कन्याका विवाह कर दिया था। अनन्तर गौड़ बदायू जिलेमें जा कर रहने लगे।

भटनागरोंके घरमें भोजन करनेवाले गौड़कायस्थ गौड़भटनागरोंके नामसे ख्यात हुवे। जो बदायू भाग गये थे दिल्लीके भटनागरोंने उनके भी वृत्तान्त सम्राट्से कह दिये। बादशाहने उन्हें पकड़ बुलानेके लिये आदमी भेजे थे। उस समय उन्होंने ब्राह्मणोंका आश्रय लिया। राजपुरुष जब पकड़नेके लिये पहुंचे, तब ब्राह्मणोंने उन्हें अपना आत्मीय बताया था। किन्तु उससे राजपुरुषोंको विश्वास न हुआ। उस समय ब्राह्मणोंका गौड़कायस्थोंके साथ एक पात्रमें खाना पड़ा। इसी प्रकार गौड़कायस्थ वहां बच गये। अभियुक्तोंका निशान न लगने पर बादशाहने जिन भटनागरोंका आवेदन अग्राह्य किया था। उन्होंके साथ दूसरे भटनागरोंने भी उन्हें समाजच्युत कर दिया। उक्त समाजच्युत भटनागर गौड़भटनागर और दूसरे (गौड़ोंका अन्न ग्रहण न करनेवाले) विशुद्ध भटनागर समझे गये। इसी प्रकार गौड़कायस्थ चार श्रेणियोंमें बंटे थे—१म आदि[1] गौड़ है। यह महाराजके सोमान्तर निजामाबाद जौनपुर प्रदेशमें स्थानोंमें कानूनगोईका पद प्राप्त करते थे। २य भटनागरोंके घर खानेवाले ३य ब्राह्मणोंके घर आश्रय लेनेवाले और स्वयं ब्राह्मणत्वमें पुरस्कृत जातियों इनकी समाजमें मिला लेनेवाले हैं। उक्त चारो श्रेणियोंमें पहले आदानप्रदान बन्द रहा। फिर बदायूके गौड़ निजामाबादसे जा कर रहे और बदायूके ब्राह्मण उनके पुरोहित बने। ४र्थ श्रेणीके गौड़ोंने २य श्रेणीवालोंके साथ मिलनेकी चेष्टा की थी। पहले कोई फल न निकला। अन्तिमको बदायूके ब्राह्मणोंकी चेष्टासे झगड़ाझंझट मिट गई। यहां तक कि उभय श्रेणियोंमें विवाहके समय आदान प्रदान चलने लगा। किन्तु ३य श्रेणी बहुदिन आदान प्रदान करनेका अवसर न हुई। अन्तिमको ३य श्रेणीकी चेष्टासे ३य श्रेणी भी इनमें मिल गयी। १म श्रेणी उक्त तीनों श्रेणियोंका जुननेसे दोन प्रथक् उतने दिन अलग रही थी। अन्ततः जब उसने देखा कि तीन श्रेणियां परस्पर मिली हैं, तब वह भी क्रम क्रम सबमें मिलकर एक हो गयी। आज कल चारो श्रेणियोंमें आदान प्रदान चलता है। गौड़

कायस्थोंको शाखावोंका नाम खरे, दूसरे, बङ्गाली, दिल्लीसीमाली और वदायूंनी है।

क्या हिन्दू-राजत्व क्या मुसलमान-सरकार दोनों समय कायस्थ सान्धिविग्रहिक वा राजसभास्थ लेखकका पदभोग करते थे। उनमें अनेक संस्कृत ग्रन्थकार और सुपण्डित आविर्भूत हुवे। मुसलमानोंके अधिकारमें पश्चिमके बहुतसे कायस्थोंने सैनिक-विभागका भी उच्च पद पाया था। उनमें अकबरके राजस्व-सचिव टोडरमल, महाराज नवलराय, पटनाके शासनकर्ता राजा रामनारायण प्रभृतिका नाम उल्लेखयोग्य है। आजकल भी कायस्थ वृटिश गवर्नमेण्टके अधीन क्या शिक्षा-विभाग क्या न्याय-विभाग (कचहरी-अदालत) सर्वत्र उच्च आसन और सम्मान लाभ करते आते हैं। आजकल युक्तप्रदेशके समस्त कायस्थ एकताके सूत्रमें आबद्ध होनेको चेष्टा करते हैं। युक्तप्रदेशमें प्रायः साढे पांच लाख कायस्थोंका वास है।

राजपूताना।

राजपूतानेके कायस्थ प्रायः अपनेको राजधाना कहते हैं। बूंदीमें माथुर और भटनागर कायस्थोंका वास है। मारवाड़में कायस्थोंको 'पञ्चोली ठाकुर' कहा जाता है। राजपूतानेमें अजमेरी, रामसरी और केकरी तीन श्रेणियां मिलती हैं। उनमें सभी यज्ञसूत्र धारण करते हैं। फिर अखाद्य भोजन करनेवालोंका यज्ञसूत्र उतार डाला जाता है। वहां सभी कायस्थ अपनेको क्षत्रिय बतानेके लिये तैयार हैं।* उनका आचार-व्यवहार अधिकांश युक्तप्रदेशके कायस्थों-जैसा है। राजपूतानेके कायस्थोंमें बहुतोंने राजद्वारमें सैनिकवृत्तिको भी अवलम्बन किया है।

विहार।

विहारके कायस्थ अपनेको चित्रगुप्तका प्रकृत वंशधर बताते हैं। उनमें प्रवाद है—सत्ययुगमें जब सब देवता यज्ञ करने लगे, तब यम ब्रह्मासे बोल उठे—'पितामह! इन्द्रादि सकल दिक्पाल हैं। अथच उन्हें यज्ञादि करनेका समय मिल जाता है। किन्तु हमने ऐसा क्या अपराध किया है कि हम अपने कार्यभारको एक मुहूर्तके लिये भी छोड़ नहीं सकते। आप हमें यज्ञ करनेका उपाय बता दीजिये।' ब्रह्माने यमकी उक्त प्रार्थनाके अनुसार अपने शरीरसे चित्रगुप्तको उत्पन्न करके कहा था—'यह महाभाग साहाय्य करके तुम्हारे कर्मका अवसरकाल ठहरा देंगे और सबके कर्माकर्मको वर्णना करेंगे। उसके अनुसार तुम स्वर्ग-नरकादिको व्यवस्था कर सकोगे।'

पश्चिमी कायस्थोंको भांति विहारो कायस्थोंमें भी द्वादश शाखा हैं। उक्त द्वादश शाखावोंके आदि पुरुष चित्रगुप्तके वंशधर थे। विहारी कायस्थ आज भी उपवीत धारण करते हैं। कारण उनके कथनानुसार चित्रगुप्तने सोपवीत जन्म लिया था। उनको द्वादश शाखाका नाम है—अहिठाना, अम्बष्ठ, वाल्मीक, गौड़, कुलश्रेष्ट, माथुर, निगम, शकसेन, श्रीवास्तव, सूर्यध्वज और करण। उक्त द्वादश शाखावोंमें अहिठानोंका आदिनिवास जौनपुर है। पटना और तिरहुत अञ्चलमें अम्बष्ठ शाखाके लोग ही अधिक देख पड़ते हैं। वाल्मीक शाखाका आदि वास स्थान गुजरात है। अम्बष्ठ, श्रीवास्तव और करण एक ही हुक्केसे तम्बाकू पिया करते हैं। करण और अम्बष्ठ ब्राह्मणप्रस्तुत अन्न एक जगह बैठकर खा सकते हैं।

निगम शाखाके कायस्थ विहारमें अधिक देख नहीं पड़ते। सूर्यध्वजोंके अधिदेवता सूर्य माने जाते हैं। माथुर, शकसेन, श्रीवास्तव और भटनागर अपनेको चित्रगुप्तको प्रथमा पत्नीका गर्भजात वंश बताते हैं। विहारके गौड कायस्थोंको विश्वास है कि बङ्गालके सेन राजा उन्हींको श्रेणीके अन्तर्गत रहे। श्रीवास्तव शाखाके दो श्रेणो विभाग हैं—खरे और दूसरे। खरे श्रेणीके लोग अन्यान्य श्रीवास्तवोंमें श्रेष्ठ होते हैं। वह अपनेका 'पाडे' बताते हैं। खरे और दूसरे लोगोंमें पानाहार तथा आदान-प्रदान नहीं चलता। शकसेन शाखामें भी उसी तरह श्रेणी विभाग है। माथुर, भटनागर और शकसेन परस्पर एक दूसरेका अन्नव्यञ्जनादि ग्रहण करते हैं।

* Rajputana Gazetteer

पूर्वोक्त द्वादश शाखाके लाला कायस्थोंको छोड़ दूसरे कई प्रकारके गौड़ कायस्थ भी होते हैं। किन्तु वह आप ही अपनेको कायस्थ बताते, अपर जातीय वा पूर्वोक्त द्वादश शाखाके कायस्थ उन्हें कायस्थ कहना नहीं चाहते। कारण सिवान नगरमें कितने ही दरजी और कितने ही ठेकेदार भी कायस्थ-नामसे अपना परिचय देते हैं। किन्तु उनके साथ लाला कायस्थोंका कोई संस्रव नहीं। बहुतसे लोग अनुमान करते कि वह असल कायस्थ हैं, फिर भी गौड़ कहते अपर जातियोंसे समाच्युत हो एकबारगी ही भिन्न श्रेणीमें समझे जाते हैं। कारण आज भी जो लाला कायस्थ वंशानुक्रमसे गांवके पटवारी होते आते हैं, बहुतसे लोग उनके घर आदान-प्रदान करना नहीं चाहते। पटवारी कानूनगो, चौधरी, पांडे वा बख्शी उपाधिकारी कायस्थ यद्यपि कभी वा अच्छे कर्मचारी होते भी सामाजिक मर्यादामें हीन समझे जाते हैं।

कुमाउं प्रदेश और बिहारके कायस्थोंका धर्मकर्म प्रायः मिलता जुलता है। किन्तु देशभेदसे आचारमें भी कुछ प्रभेद पड़ गया है।

बिहारी कायस्थोंमें वैष्णव शैव, शाक्त, कबीरपन्थी, नानकपन्थी प्रभृति हुआ करते हैं। उनमें शाक्तों की ही संख्या अधिक है। यमद्वितीयाके दिन वह चित्रगुप्तकी पूजा करते हैं। श्रीपञ्चमी अर्थात् बसन्त पञ्चमीको दावात कलम पूजते हैं।

बङ्गाल।

बङ्गालमें प्रधानतः चार श्रेणीके कायस्थोंका वास है। वह स्थानभेदसे उत्तरराढ़ीय, दक्षिण-राढ़ीय, बङ्गज और वारेन्द्र कहलाते हैं। उक्त चारो श्रेणी अपना परिचय चित्रगुप्त सन्तानके नामसे दिया करती हैं। उत्तरराढ़ीय कुलग्रन्थमें लिखा है—

"चित्रगुप्तः [illegible] ।
[illegible] ॥१॥
[illegible] ।
[illegible] ॥८
[illegible] ।
[illegible] ॥१०
[illegible] ।
[illegible] ॥१४
[illegible] ।
[illegible] ॥"१८
([illegible] उत्तरराढ़ीय कुलदीपिका)

अर्थात् चित्रयायाम् चित्रगुप्त सर्वभावसे पूजित हुये थे। उनके वंशधर वैसे रहे। इस पृथिवी पर वैश्योंके सर्व प्रथम चित्रगुप्तको आठ सन्तान हुये। उनका नाम गौड़, माथुर, [illegible], भटनागर, अम्बष्ठ श्रीवास्तव्य, कर्ण और उपकर्ण था। आठोंमें कर्ण श्रेष्ठ रहे। उन्हीके वंश इस पृथिवी पर कोकर्ण नामसे विख्यात हुये। उनके वंशमें पांच प्रसिद्ध महात्माओंने जन्मग्रहण किया था। पांचो का नाम वात्स्यगोत्र चक्रादित्य सौकालिन सोम, मौद्गल्य पुरुषोत्तम, विश्वामित्र सुदर्शन और काश्यप देव रहा।

उत्तरराढ़ीय-कुलाचार्य पञ्चाननकी कारिकामें कहा है—

"[illegible] ।
[illegible] ॥
पुरुषोत्तमो [illegible] सुदर्शनः ।
[illegible] ॥
[illegible] ।
[illegible] सुदर्शनः ॥"

कोकर्ण व [illegible] श्रेणिके पांच महाजन आविर्भूत हुये। उनमें वात्स्यगोत्र चक्रादित्य (सिंह), सौकालिन गोत्र सोम (घोष), मौद्गल्य गोत्र पुरुषोत्तम (दास), विश्वामित्र गोत्र सुदर्शन (मित्र), और काश्यप गोत्र देव (दत्त) थे। दत्त तथा दास सूर्यघोष और मित्रकुलमें सुदर्शन चन्द्र व घोष भी कहलाते हैं।

बङ्गजकायस्थकारिकामें लिखते हैं—

"[illegible] ।
[illegible] ॥
[illegible] ।
[illegible] ॥
[illegible] ।
[illegible] ॥

इति चाष्टसुता ख्याता कुलानां पतयोऽभवन्।
एतेषाञ्च सुता सर्वे देशाख्यायाञ्च संज्ञिताः॥
घोष सूर्य्यध्वजाज्जातश्चन्द्रहासाद्वसुस्तथा।
रविरवात् गुहश्चैव चन्द्रदेहात्तु मित्रकः॥
चन्द्रार्धात् करणो जात रविदासाञ्च दत्तकः।
मृत्युञ्जयस्तु गौड़ाञ्च कथ्यन्ते ग्रन्थकारकैः॥
दासको नागनाथौ च करणाञ्च समुद्भवाः।
मृत्युञ्जयसुतो जातः देवसेनश्च पालित॥
सिंहश्चैव तथा ख्याता. एते पद्धतिकारकाः।
मृत्युञ्जय-कुलोद्भूतो नित्यानन्दो नृपेश्वरः॥
तस्यापि वंशे सञ्जाताः सप्ताशीतिः प्रकीर्तिता।
कुलाचारप्रभेदेन द्विसप्तत्यचलाभवन्॥"

चित्रगुप्तदेवके आठ महाशय पुत्र हुवे थे। कश्यपने उनका जातकर्म किया। उनमें एक एकसे फिर बहुवंश (गोत्र) उत्पन्न हुवे। उनके मध्य २१ वंश ही प्रधान माने जाते हैं। उक्त एकविंशति वंशोंमें सूर्यध्वज, चन्द्रहास, चन्द्रार्ध, चन्द्रदेहक, रविदास, रविरत्न, रविधीर और गौडक कुलपति गिने गए। उनका सन्ततिवर्ग देशनामसे भी आख्यात है। सूर्यध्वजसे घोष, चन्द्रहाससे वसु, रविरत्नसे गुह, चन्द्रदेहसे मित्र, चन्द्रार्धसे करण, रविदाससे दत्त और गौड़से मृत्युञ्जयकी उत्पत्ति है। फिर करणसे नाग, नाथ एवं दास और मृत्युञ्जयसे देव, सेन, पालित तथा सिंह नामक प्रसिद्ध पद्धतिकारकोंने जन्मलाभ किया। मृत्युञ्जयके वंशमें नित्यानन्द नामक एक नृपेश्वर आविर्भूत हुवे थे। उन्हींके वंशसे ८७ घर कायस्थ निकले। उनमें ७२ घर कुलाचारके प्रभेदसे 'अचल' कहलाते हैं।

उत्तरराढीय कायस्थकारिकामें जिस प्रकार चित्रगुप्तसे विभिन्न शाखाके कायस्थोंकी उत्पत्ति वर्णित हुयी है, चित्रगुप्तकी पूजा और व्रतकथाके मध्य भी उसी प्रकार श्लोकांश देख पड़ी है—

"चित्रगुप्तान्वये जाताः शृणु तान् कथयामि ते।
गौड़ाख्या माथुराश्चैव भट्टकरणसेनकाः॥
अहिष्ठानाः श्रीवास्तवा शकसेनाम्बष्ठ एव च।
कुलश्चाः सर्वशास्त्रेषु धर्मज्ञाता नराधिप॥"

उक्त श्लोक कुलग्रन्थके अनुरूप होते भी इस विषयमें घोरतर मतभेद विद्यमान है। बङ्गालके किसी किसी कुलग्रन्थमें सेनक वा सेनीको चित्रगुप्तका भ्राता और चित्रगुप्तव्रतकथा तथा पश्चिमाञ्चलके कायस्थकुल-परिचय-ग्रन्थसमूहमें उनको चित्रगुप्तका पुत्र बताया है। प्राचीन पुराणमें चित्रगुप्तका भ्रातृ-परिचय न रहने और पद्मख्याकामधेनुधृत यमसंहिता तथा युक्त-प्रदेशीय कायस्थोंके कुलग्रन्थसमूहमें चित्रगुप्तसे विभिन्न श्रेणीके कायस्थोंकी उत्पत्ति विवृत होने पर हमने प्राचीन मतके अनुसार सेनी वा सेनकको चित्र-गुप्तका पुत्र ही माना है। युक्तप्रदेशमें विभिन्न श्रेणीके जो सकल कायस्थ मिलते, उनके मध्य श्रीवास्तव, शकसेन, करण, सूर्यध्वज, अम्बष्ठ, राजधाना और गौड़ कई श्रेणीके कायस्थ बङ्गाल पहुंचे थे। इनके वंशधर विभिन्न स्थानमें इस समय विभिन्न श्रेणीभुक्त हो गये हैं। सुतरां कुलग्रन्थके अनुसार वसु, घोष, मित्र, दत्त, सिंह प्रभृति उपाधिधारी कायस्थ भी युक्तप्रदेशीय श्रीवास्तव प्रभृति विभिन्न शाखाके ज्ञाति होते और युक्तप्रदेशके कायस्थोंकी भांति बङ्गालके घोष, वसु, मित्र प्रभृति विशुद्ध कायस्थवंशधर क्षत्रियवर्णके अन्तर्गत ठहरते हैं।*

मिथिला।

कर्णाटकवंशीय महाराज नान्यदेव ई० ११शताब्दको मिथिला पदार्पण करते हुवे अपने साथ निज अमात्य कायस्थकुलभूषण श्रीधर तथा उनके १२ सम्बन्धियोंको लाये थे। वह जब समस्त मिथिलाके अधिपति हुये, तब उनके सचिव श्रीधर और उक्त १२ कुटुम्बी अन्य उच्च पद पर नियुक्त किये गये और उन्हें खानेपीनेके लिये बहुतसे गांव मिले। उस समयसे उक्त कायस्थ मिथिलामें ही रहने लगे। उसके पीछे मन्त्रिवर श्रीधर महोदयने अपने बहुतेरे बन्धु-बान्धवोंको धीरे धीरे मिथिला बुलाया और उन्हें जीविका दिला करके मिथिलामें ही बसाया था। कायस्थ चार बारको जा कर मिथिलामें बसे। प्रथम बार (जैसा पहले लिख चुके हैं) श्रीधर और

---

* बङ्गके जातीय इतिहास "राजन्यकाण्ड' में बङ्गदेशीय कायस्थोंका आदिपरिचय और इतिहास द्रष्टव्य है।

उनके १२ कुटुम्ब पहुंचे थे। फिर दूसरी बार बीस, तीसरी बार तीस और चौथी बार पचास कायस्थोंकी मध्यको मिथिला गये। तात्पर्य—कुल ११२ कायस्थ नान्यदेवको समय मिथिलामें आकर रहे। अपने देशको न लौटके और मिथिलामें ही निवास पसन्द करनेसे वह 'कर्णकायस्थ' नामसे परिचित हुये। राजा नान्यदेवके प्रधान राजा हरिसिंह देवने जब मिथिलामें पञ्जी बर्षोंकी प्रथा चलायी, तब कायस्थोंके वंशकी विवेचना करके गुणागुण और उच्च पदानुसारके क्रमसे उन्हें ३ श्रेणियोंमें विभक्त किया। नान्यदेवके साथ गये १२ कायस्थोंके वंशधरोंने पञ्जीप्रबन्धके मध्य प्रथम श्रेणीमें स्थान पाया था। द्वितीय श्रेणीमें उन २० कायस्थोंके वंशज रहे जो त्रिहुत राज्य मिलने पर बुलाये गये। फिर तीसरी बारको गये ३० कायस्थोंके वंशज तृतीय श्रेणी और चौथी बारको पहुंचे अवशिष्ट कायस्थसन्तान चतुर्थ श्रेणीभुक्त हुये।

उक्त कायस्थ मिथिलामें बस जाने पीछे अपने दूसरे भाइयोंकी भांति स्थानान्तरको नहीं गये। इसी लिये वह पुराने मिथिलाकी सीमाके बाहर नहीं मिलते अर्थात् उसीके भीतर रहते हैं।

महाराज नान्यदेवके समयसे लेकर मोसलमान समयके मध्य समय तक मिथिलाके कायस्थ 'ठाकुर' कहलाते रहे। फिर किसी मोसलमान सूबेदार-बंगाल तक महानुभावको कायस्थों और ब्राह्मणोंकी पदवीका पार्थक्य पसन्द लगा। इस लिये उन्होंने अपने विचाराधीन हो कर कायस्थोंकी 'ठाकुर' पदवीको अनेकानेक पदवियोंमें विभक्त किया। जो जिस विषयमें निपुण देख पड़ा वह उसी पदवीसे विभूषित हुआ। कायस्थोंने राजोपजीवी होनेसे सहर्ष नाना प्रकारकी उक्त पदवियोंको स्वीकार कर लिया।

आजकलके मैथिल पण्डितगण कहा करते हैं कि कर्णाटकसे मिथिलागत होनेसे कारण मिथिलाके कायस्थ कर्णकायस्थ कहलाते हैं। परन्तु हमें उस सामयिक शिलालिपि या अन्यसे इसके समर्थनका कोई प्रमाण नहीं मिला। उलटे, कर्णाटक नान्यदेवके वंशधरों और प्रधान मन्त्री श्रीधर ठाकुर, जो वंशपञ्जी अनुसार कुलीन कर्णकायस्थोंके मध्य सबसे बड़े समझे गये हैं अपनी शिलालिपिमें 'क्षत्रकुलसमाट्' नामसे परिचित हुये हैं। दरभंगा जिलेके कमदी परगनेके और अन्धराठाढ़ी नामक एक ग्राम है। उसमें कमलादित्य मन्दिरके भग्नावशेषमें एक टूटी हुई विष्णुकी मूर्तिके पादपीठ पर निम्नलिखित शिलालेख उत्कीर्ण है—

"ओं श्रीमन्नान्यपतिर्जेता गुणरत्नमहार्णवः।
यत् कीर्त्त्याजनितं विश्वे द्वितीयक्षीरसागरं॥
मन्त्रिणा तस्य नान्यस्य क्षत्रवंशाब्जभानुना।
तेनायं कारितः श्रीमान् श्रीधरः श्रीधरेण च॥"

'जिनकी कीर्तिसे विश्व उद्भासित अर्थात् व्याप्त है जो दूसरे बृहस्पतिके बराबर अर्चन करनेयोग्य हैं और जो गुणरूप रत्नके समुद्र हैं, वही श्रीमान् नान्य पति विजयी हों। उन्हीं नान्यदेवके मन्त्री क्षत्रपका क्षत्रिय सूर्यस्वरूप श्रीधरने यह श्रीधर नामक श्रीमान् देवमूर्ति प्रतिष्ठित की है।

समसामयिक शिलालिपिमें श्रीधर ठाकुर 'क्षत्र महाबलमाट्' लिखे गये हैं। ऐसी अवस्थामें निःसन्देह वह कायस्थ क्षत्रिय और बङ्गवासी रहे। गौड़के सिंहवंशीय कर्णाट-क्षत्रिय थे और नान्यदेव उन्होंके ज्ञाति थे। राढ़देशमें बहुतेरे कर्णाटोंका एक प्रधान उपनिवेश रहा। सम्भवतः वहीं स्थानसे नान्यदेव और श्रीधर ठाकुर अपने आत्मीय स्वजन ले करके मिथिला जीतनेको आगे बढ़े। बङ्गालके उत्तरराढ़ीय कायस्थोंके प्राचीन कुलग्रन्थमें उत्तरराढ़ीय कायस्थोंके पूर्वपुरुष 'श्रीधर महाप्रभु', 'श्रीधर मन्त्रीश्वर' और 'श्रीधरके कुलानुज' कहलाये हैं। राढ़देशके प्रसङ्गमें उक्त प्राचीन कुलपञ्जीका प्रमाण उद्धृत हो चुका है। मालूम पड़ता कि राढ़ीय कायस्थोंके आदिपुरुषोंकी भांति श्रीधरदास और उनके कुटुम्ब 'कर्णकायस्थ' नामसे मैथिल समाजमें परिचित हुये हैं। बङ्गालके कायस्थोंकी भांति मैथिल कायस्थ समाजमें भी दास दत्त, देव, कण्ठ, सिंह, मल्लिक, लाभ, चौधरी, राय इत्यादि पदवी

प्रचलित हैं। उनका कर्मकाण्ड मैथिल ब्राह्मणोंके ही सदृश होता है। किन्तु विवाह, श्राद्धादिकमें भिन्नता देख पड़ती है। मिथिल कायस्थोंमें प्राजापत्य-विवाह करते हैं।

उड़ीसा।

उड़ीसाके करण अपनेको विशुद्ध कायस्थ और चित्रगुप्तके वंशधर बताते हैं। इस बातके समझनेका कोई प्रकृष्ट उपाय नहीं—वह किस समय और किस प्रकार जा कर उड़ीसामें रहे। पुरीके श्रीमन्दिरस्थ मादलापञ्जी और अन्यान्य विवरणसे समझ पड़ता कि उन्होंने मगधसे गङ्गवंशीय राजावोंके अभ्युदयसे बहुपूर्व उड़ीसा जा कर पूर्वतन राजावोंके अधीन कर्म स्वीकार किया था। गङ्गवंशीय राजावोंके पूर्ववर्ती कटक, सम्बलपुर प्रभृति स्थानोंसे आविष्कृत सोमवंशीय राजावोंके समय उत्कीर्ण ताम्रशासनसे समझते कि कलिङ्गाधिपति जनमेजय, ययाति, महाभवगुप्त प्रभृति राजावोंके अधीन कायस्थ महासान्धिविग्रहिकका कार्य करते थे। उनका 'घोष' 'दत्त' इत्यादि उपाधि था।* उक्त सकल उपाधि मागध वा विहारी कायस्थोंमें नहीं मिलती। किन्तु वङ्गीय कायस्थोंके मध्य वह सकल उपाधि प्रचलित हैं। इससे समझ सकते कि वङ्गदेशसे ही जा कर करणिक कायस्थ उड़ीसामें बसे थे। आजकल विशुद्ध करण भी अपनेको बङ्गालका ही कायस्थ बताते हैं। बल्लालसेनके समय कौलीन्य-प्रथा ग्रहण न करनेसे उन्हें देश छोड़ उड़ीसा जाना पड़ा। किन्तु हम पहले ही लिख चुके हैं कि बल्लालसेनसे बहु पूर्व उड़ीसामें 'घोष' और 'दत्त' उपाधिधारी कायस्थ विद्यमान थे।

करण कहते कि सबसे पहले उनके ढाई घर रहे। सम्भवतः उनके कथनका उद्देश यह है कि सर्वप्रथम उनकी संख्या अति अल्पमात्र रही। उक्त ढाई घरोंमें एकने 'आठगड़'का वर्तमान राजवंश स्थापन किया था। वह पूर्वतन उत्कलराजके 'बिवर्ता' (व्यवहर्ता-मन्त्री) रहे। दूसरा घर पुरी जिलामें खुर्दाके राजाका दीवान है। अन्यान्य करण अवशिष्ट आधे घरमें समझे जाते हैं। इस समय तक आठगड़के राजाका 'बेवर्तापट्टनायक' उपाधि विद्यमान है। करण खर, पुर और व्याज भेदसे अपनेको तीन श्रेणीयोंमें विभक्त करते हैं। उपर्युक्त आठगड़-राजवंशीय 'खर' खुर्दाके दीवान्‌वंशीय 'पुर' और अन्यान्य अपनेको 'व्याज' श्रेणीका कायस्थ कहते हैं। प्रथमोक्त दो श्रेणी तृतीय श्रेणीसे अपनेको विशेष कुलीन प्रकाश करती हैं। उन्हें उत्कल-प्रचलित सामाजिक रीतिके अनुसार ब्राह्मणोंसे नीचे और खण्डायतोंसे ऊपर मर्यादा मिलती है।

सम्प्रति करण कायस्थ कटक, पुरी एवं बालेश्वर तीन जिलों, समस्त गड़जात महालों और गञ्जाम तथा सम्बलपुर प्रभृति स्थानोंमें वास करते हैं। भिन्न भिन्न स्थानोंमें अवस्थिति करनेसे उनका आचार-व्यवहार तथा रीति-नीति भी बदल गई है। पुरी तथा कटक अञ्चलके करणोंसे भद्रख एवं बालेश्वर अञ्चलके करणोंका विवाह-सम्बन्ध नहीं होता। पुरी और खुर्दा अञ्चलके करण अपनेको सर्वश्रेष्ठ मानते हैं। उत्कलीय करण महान्ति, दास, नायक, मल्ल, पट्टनायक, कानूनगो और सेनापति प्रभृति उपाधि-भूषित हैं। उनमें कानूनगो और पट्टनायक उपाधि विशेष-सम्मानसूचक होते हैं।

उत्कलीय करणोंमें कोई चैतन्यभक्त और कोई जगन्नाथके अतिवड़ी सम्प्रदाय-भुक्त हैं। चैतन्यदेवके उड़ीसा जानेसे आज तक उनमें अनेक वैष्णव कवियोंने जन्मग्रहण किया है। उनके मध्य कविवर 'बलराम दास' देशविख्यात हैं। उन्होंने उत्कल पद्यसमन्वित अनेक पौराणिक ग्रन्थ प्रणयन किये हैं। उड़ीसेके बहुतसे स्थानोंमें रटही करण वैष्णवोंका एक सम्प्रदाय है। उनमें कोई गौड़ीय, कोई अतिवड़ी और कोई रामानन्दी श्रेणीके अन्तर्गत है। उनका विवाह उसी श्रेणी किंवा कभी कभी करणोंके साथ हुआ करता है। वह मत्स्यमांस नहीं खाते।

* Journal Asiatic Society of Bengal, Vol. XLVI. pt. I. p. 177.

मध्यभारत।

मध्यप्रदेशके पूर्वतन अधिवासी कायस्थ अपनेको 'माथुर कायस्थ' और चित्रगुप्तके सन्तान बताते हैं। मुसलमान नवाबोंके आक्रमणकाल मध्यप्रदेशके अधिकांश ब्राह्मणोंने देश छोड़ दिया था। उस समय मुसलमानोंने कायस्थोंको फारसी भाषामें पारदर्शी, कार्यकुशल और चतुर देख नाना स्थानों पर कानूनगोईका पद प्रदान किया। उनमें आत्माभिमान वा कुसंस्कार नहीं, प्रायः सब लोग लिख पढ़ सकते हैं। वह कहा करते हैं—'ब्रह्माकी सृष्टिके साथ साथ कायस्थोंकी भी सृष्टि हुई है। विधाताने लिखने पढ़नेके लिये ही कायस्थोंको बनाया है।' इसीसे मध्यप्रदेशमें अति सामान्य कायस्थ भी किसीके परिचारक रूपमें नहीं रहते। दासत्व उनमें अति हेय कार्य समझा जाता है। यह अपना परिचय [illegible] क्षत्रियके नामसे दिया करते हैं। १०म वा ११श वर्षके मध्य ही इनका मौञ्जी सम्पन्न होता है। उसके पहले यह द्वादश दिन मात्र अशौच ग्रहण करते हैं। उनकी एक शाखा निजामके राज्यमें जाकर रहने लगी है। वहां उन्होंने हिन्दू और मुसलमान राजाओंके अधिकारमें अपनी कार्यदक्षताके गुणसे कितनी ही जागीर और इनाम पाया है।

मन्द्राज प्रेसिडेन्सी।

मन्द्राज प्रान्तमें भी चित्रगुप्त और चान्द्रसेनीय प्रभु उभय श्रेणीके कायस्थोंका वास है। उनका आचार-व्यवहार और अनुष्ठानादि अधिकतर महाराष्ट्रीय कायस्थों-जैसा है। महाराष्ट्रकी भांति मन्द्राजके ब्राह्मणोंने भी अनेक बार कायस्थोंके साथ छेड़छाड़ की है। किन्तु महाराष्ट्र देशमें ब्राह्मणोंके अधिकारसे कोङ्कणस्थ ब्राह्मणोंको जो सुविधा हुई थी, तैलङ्ग ब्राह्मणोंको वह सुविधा लग न सकी। जहां वेदभाष्यकार सायनाचार्य प्रभृतिका जन्मस्थान है, वहां राजन्यवर्गमें कायस्थोंको द्विजातिके मध्य गिना। वैदिक द्राविड़ ब्राह्मण उनका पौरोहित्य करते हैं। द्वादश वर्षके पूर्व ही सूत्रानुसार कायस्थोंका उपनयन सम्पन्न होता है। पितामाता अथवा निकट आत्मीयके मरनेसे १२ दिन मात्र अशौच ग्रहण करते हैं।

पाण्ड्य राजाओंके समय मन्द्राजके कायस्थ सिंहलद्वीप गये और सिंहलराज पराक्रम बाहु प्रभृतिसे उन्हें महासान्धिविग्रहिक पद मिले थे।

मन्द्राजके कायस्थ 'कणक्कन्' नामसे परिचित हैं। आज भी यह नाना स्थानोंमें कुलकर्णी वा कानूनगोईके पद पर प्रतिष्ठित हैं। यह अपनेको क्षत्रिय वर्णान्तर्गत बताया करते हैं।* कुम्भकोणम् प्रभृति कई स्थानोंमें कायस्थ मठाध्यक्ष भी हैं।† यहां तक कि अंगरेजी अधिकारके राजत्वमें यह ब्राह्मणोंके महाप्रतिहस्तो बन गये हैं।‡

गुजरात।

कायस्थोंकी १२ श्रेणियोंसे केवल तीन वाल्मीक, माथुर और भटनागर गुजरातमें मिलते हैं। गुजरातके दूसरे हिन्दुओंसे अपना समाज पृथक् रखते भी उनमें परस्पर आदान प्रदान और पानाहार प्रचलित नहीं।§

वाल्मीक कायस्थ प्रधानतः सूरतमें पाये जाते हैं। कहते हैं—काठियावाड़के वाला नगरमें प्राय ई० १०म शताब्दको कायस्थ जाकर बसे थे। (रासमाला, १।११५) किन्तु दक्षिण गुजरातमें उन्होंने प्राय ई० १६श शताब्दका अतिक्रम किया जब गुजरात मुगलसाम्राज्यमें मिल गया।¶ सम्राट अकबरके अवस्थानुसार सूरतको प्रतिष्ठा

"It is not irrelevant, however to state here that the whole of th third lass that of the writers, have a distinct strain of Kshatriya blood, not only in this (Madras) Presidency but in Upper India, where they are stronger in number as well as in influence." Census Report of British India, 1891 Vol. III, p. xxix.

* Wilson's Mackenzie Collections, p. 615.

‡ Wilson's Carter Vol I. p 64

§ [illegible] व्यवहार रखते हैं।

¶ कहते हैं—[illegible] (Malcolm's Central India Vol. II p. 165.

बढ़ी थी। राजकीय लेखक (मुतसद्दी) नगर और निकटस्थ जिलोंके शासक रहे। वह गुजरातवाले सुबेदारके अधीन न थे, दिल्लीको राजसभासे सीधा सम्बन्ध रखते थे। सूरतके अट्ठाईस विभागोंकी मालगुजारी वही वसूल करते थे। १८८६ ई० तक अंगरेजी गांवोंमें और १८८५ ई० तक बड़ोदाके २८ गांवोंमें प्रधानतः कायस्थ ही मजुमदार रहे। उनका आकार-प्रकार ब्राह्मणोंसे मिलता है।

गुजराती कायस्थोंकी निराली बैठक मेलकशाला मकान (गृह) है। वहां समवयस्क लोग सन्ध्याको जा कर मिलते, हुक्का पीते, धार्मिक गीत सुनते या सुनाते और आमोद-प्रमोद करते हैं। उन्हें गानेका बड़ा शौक है और उनमें कुछ अच्छे अभिनेता भी हैं। प्रत्येक कुटुम्बकी एक अधिष्ठात्री देवी होती है। औदीच्य ब्राह्मण पौरोहित्य करते हैं। अपने धार्मिक प्रधानों महाराष्ट्रोंके अतिरिक्त, जिन्हें विवाहके समय बुलाते हैं, वाल्मीक कायस्थ ब्राह्मणोंके प्रति विशेष सम्मान प्रदर्शन नहीं करते। दूसरे वैष्णवोंकी अपेक्षा महाराष्ट्रोंसे भी वह न्यून भेदभाव रखते हैं।

माथुर कायस्थ अहमदाबाद, बड़ोदा, दभोई, सूरत, राधनपुर और नडिआदमें होते हैं। १५७३-१७५० ई० को मुगल-सूबेदारोंके साथ वह लेखक और दुभाषियेकी भांति गुजरात गये थे।

५० वा ६० वर्ष हुवे माथुर मांस भोजन करते थे। किन्तु अब वह निरामिषभोजी हैं। चैत्र और आश्विन मास पूजाके समय माथुर मांस और देशी सुरा देवीको समर्पण किया करते थे। किन्तु गुजरातके ब्राह्मणों और वैश्योंसे घनिष्ठ सम्बन्ध होने पर उन्होंने अपनी वह रीति छोड़ दी है। अब मांसके बदले श्वेत कुष्माण्ड और सुराके स्थानमें शरबत चढ़ाते हैं।

माथुरोंमें कोई रामानुजी, कोई वल्लभाचारी और कोई शैव हैं। प्रत्येक भवनमें एक कुलदेवी काली, दुर्गा वा अम्बा रहती हैं। माथुरोंके पूज्यदेव लालजी (बालरूप कृष्ण), गणपति वा महादेव हैं। स्त्री-पुरुष दोनों शिव, विष्णु और माताके मन्दिर दर्शन करनेको जाते हैं। संस्कारादिके समय कुलगुरु पौरोहित्य करते, जो औदीच्य, श्रीमाली वा पाराशर ब्राह्मण रहते हैं।

साधारण हिन्दू पर्वोंके अतिरिक्त माथुरोंमें दूसरे भी कई पुण्यदिन होते हैं। वह कार्तिक शुक्ला और चैत्र शुक्ला द्वितीयाके दिन चित्रगुप्त पूजन और भगिनी-कर्तृक प्रस्तुत खाद्य भोजन करते हैं।

भटनागर कायस्थ अहमदाबाद, बड़ोदा और अल्प-संख्यक सूरतमें देख पड़ते हैं। वाल्मीक और माथुर कायस्थोंकी भांति वह भी गुजरातको उत्तर-भारतसे गये, जहां आज भी उनकी संख्या अधिक है। भटनागर दूसरे कायस्थोंकी भांति अपनेको चित्रगुप्तका वंशधर बताते हैं। पद्मपुराणमें लिखा है कि चित्रगुप्तके १२ पुत्रोंमें एक पुत्र भट नामक साधुके साथ श्रीनगर संस्थापन करने भेजे गये थे, पीछे वही श्रीनगरके शासक हुवे। उन्हींसे भटनागर नाम निकला है। उनमें व्यास और दास दो श्रेणी हैं। इन दोनो श्रेणियोंमें व्यास ऊंचे समझे जाते हैं। पहले वह दासोंके हाथका बना भोजन ग्रहण न करते थे। व्यास दासोंकी कन्या ले लेते, परन्तु अपनी कन्या उन्हें कभी नहीं देते। आकृति, परिच्छद (पोशाक), भाषा, खाद्य, गृह और उपजीविकामें भटनागर, वाल्मीकों और माथुरोंसे मिलते हैं। वह वल्लभाचार्य सम्प्रदायभुक्त हैं। दशहरा और कार्तिक शुक्ला द्वितीया उनका विशेष पुण्याह है। उस दिन चित्रगुप्तके सम्मानार्थ एक गूढ़ छन्द लिखा और तलवारके साथ पूजा जाता है। उनका आचार-व्यवहार वाल्मीकोंकी अपेक्षा माथुरोंसे अधिक मिलता है। भटनागरोंका पौरोहित्य श्रीगौड़ ब्राह्मण करते हैं। उनमें कोई चौधरी या मुखिया नहीं होता।

बम्बई-प्रान्त।

बम्बई प्रदेशमें चान्द्रसेनी प्रभु, ध्रुव प्रभु, दमन प्रभु और ब्रह्मक्षत्रिय श्रेणीके कायस्थ रहते हैं।

दाक्षिणात्यमें बीस हजारके अधिक चान्द्रसेनी प्रभुओंका वास है। उनके मध्य बम्बई-प्रान्तके

अन्तर्गत कोङ्कण प्रदेशमें जो तीन अधिक देख पड़ते हैं। फिर थाना और कुलावा जिलामें भी अधिकांश चान्द्रसेनी प्रभु पाये जाते हैं। केवल उन दोनों जिलोंमें ही वह चारसे हजारसे कम न होंगे। प्राय बम्बई, बंडीरा, पूना, सितारा और अन्यान्य स्थानमें भी उनका वास है।

चान्द्रसेनी प्रभु कायस्थ अपनेको क्षत्रियराजा चन्द्रसेनकी सन्तति होनेका दावा करते हैं। स्कन्द पुराणके रेणुकामाहात्म्यमें लिखा है—"परशुरामने क्षत्रिय-संहार की अपनी प्रतिज्ञा पूरण करनेके लिये सहस्रार्जुन और राजा चन्द्रसेनको मार डाला। परन्तु उन्होंने सुना, चन्द्रसेनकी महिषीने दाल्भ्य ऋषिका आश्रय लिया था और वह गर्भवती रहीं। परशुराम अपनी प्रतिज्ञा पालन करनेको उक्त ऋषिके निकट जा कर उपस्थित हुये। ऋषिने परशुरामको आदर सत्कार कर कहा था—'आप अपने आगमनका अभिप्राय बतलाइये। आपका अभिप्राय निश्चय पूर्ण किया जायेगा।' परशुरामने उत्तर दिया कि वह चन्द्रसेनकी महिषीको खोजमें थे। ऋषि अविलम्ब उक्त महिलाको ले आये। परशुरामने अपनी इच्छाको अवगतमें प्रसन्न हो ऋषिको कुछ मांगा वर देने कहा था। ऋषिने आसन्न बालक मांगा। परशुराम उन्हें इस शर्त पर उक्त पुत्र देनेको प्रस्तुत हुये कि वह और उसके सन्तानको केवल बनाया जाता लेनिक नहीं। बालकका नाम सोम राज रखा गया। उन्हीं सोमराजके पुत्र विश्वनाथ महादेव मातृ तथा जयेश्वर और उनके वंशज 'कायस्थ-प्रभु' नामसे परिचित हुये।"

पहले मुसलमानोंने कायस्थोंको कर्ममें लगाया था। पूनामें मुसलमानी नगर सुधारके निकट, बंबोराको राजपुरी, थाना जिलेकी उत्तरसीमा पर, दामन, बड़ोदा और बसाइमें कायस्थोंके उपनिवेश स्थापित हुये। दामनवासी उनको राजाने एक कायस्थ प्रभु प्रधान मन्त्री रहे। माधवरावके प्रधान मन्त्री रावजी अपाजी भी कायस्थोंके एक शुभचिन्तक थे। बसाइसे हो कायस्थ थाना जिलेमें जाकर बस पड़े हैं। शिवाजी (१६२७-१६८० ई०) कायस्थ प्रभुओंके बहुत भक्त रहते थे। समय समय पर सतारा, कोल्हापुर, नागपुर और बड़ोदाकी अदालतोंमें कायस्थोंने बड़ा प्राधान्य पाया। पूनाके राव बहादुर रामचन्द्र सखाराम गुप्तके कथनानुसार शिवाजीने एक बार राजस्व विभागके अपने समस्त ब्राह्मण निकाल करके उनके स्थान पर कायस्थ प्रभुओंको रखा था। मोरपन्त पिङ्गले और नीलपन्त अपने दो ब्राह्मण अमात्यद्वारा आपत्ति करने पर शिवाजीने कहा—'स्मरण रखिये कि बिना विचार समस्त मुसलमानी स्थान, जो ब्राह्मणोंके अधिकारमें थे छोड़ दिये गये हैं। परन्तु प्रभुओंके अधिकृत स्थान देनेमें बड़ी मुश्किल पड़ी थी। उनमें एक राजपुरी आज भी नहीं ली जा सकी है।'

बम्बई प्रान्तके चान्द्रसेनी प्रभु ब्राह्मणोंके पीछे ही सामाजिक आसन पाते और अपनेको क्षत्रिय बताते हैं। उनमें २१ गोत्र और ३२ उपाधि हैं।

उक्त कायस्थ-प्रभुओंका आचार व्यवहार, भावगठन और परिच्छदादि सम्पूर्ण कोङ्कणस्थ ब्राह्मणों जैसा होता है। वह देखनेमें सुन्दर एवं परिच्छन्न रहते और मस्तक पर चूड़ा तथा स्कन्ध पर यज्ञोपवीत रखते हैं। सकल कायस्थ प्रभु यजन, अध्ययन और दान त्रिविध वैदिक कर्मके अधिकारी हैं।* दशम वर्षके पूर्व वह पुत्रादिको उपनयन दिया करते हैं। उपनयनके समय यथाविधि ब्रह्मचर्य पालित होता है। एतद्भिन्न जातकर्म, नामकरण, कर्णवेध, दन्तोद्गम, चूड़ाकरण, निष्क्रमण, सीमन्तोन्नयन, विवाह, गर्भाधान, अन्त्येष्टि प्रभृति सकल संस्कार यथाविधि किये जाते हैं। विधवा विवाह उनमें प्रचलित नहीं। विवाह और श्राद्ध पर वह अमलाके भी अधिक व्यय करनेमें कुण्ठित नहीं होते। उनके मध्य भागवत और वैष्णव मांस भोजनसे दूर रहते हैं। प्रायः अपनेको 'दैवीपुत्र' कहते और मद्यमांस ग्रहण करते हैं। देशस्थ ब्राह्मण ही उनके गुरु-पुरोहित हैं।

* Sherring's Tribes and Castes, Vol. II p. 182 and Arthur Steel's Law and Custom of Hindu Castes, p. 84.

कायस्थप्रभुवोंमें जाताशौच और मृताशौच १२ दिन रहता है। त्रयोदश दिवस मृतोद्देशसे श्राद्ध किया जाता है। पेशवावोंके प्राधान्यकाल उनके जातिकुटुम्बवाले कोङ्कणस्थ ब्राह्मणोंने कायस्थ प्रभुवों पर यथेष्ट अत्याचार किया। उस समय वैदिक कर्म सम्पादनको ब्राह्मण पुरोहित न मिलनेसे कोई कोई अपने आप पौरोहित्य और होमादि वैदिक कर्म कर लेते थे। आज भी किसी किसीने उक्त वृत्ति नहीं छोडी।* यहां तक कि ब्राह्मणोंके उक्त प्रभावकाल जिन्होंने स्वधर्मरक्षाके लिये गुजरात, कच्छ प्रभृति दूर देशोंमें जा कर आश्रय लिया और उपयुक्त पुरोहितके अभावमें बाध्य हो अशास्त्रीय याजनकार्य ग्रहण किया था, आज भी उनके वंशधर पुरोहित, लेखक और शस्त्रजीवी बने हैं।† इसमें सन्देह नहीं कि ब्राह्मणोंके पीडनसे व्यथित और हताश हो कर ही कायस्थ प्रभु वैसा कार्य करने पर बाध्य हुये थे। फिर उनके किसी किसी वंशधरने उक्त उच्च अधिकार परित्याग करना उचित न समझा।

दाक्षिणात्यके प्रभुवोंमें किसीकी अवस्था मन्द नहीं। दाक्षिणात्यमें वह आज भी देशपाण्डेय तथा कुलकरणी बने हैं और महाराष्ट्रनृप-प्रदत्त जागीर भोग करते हैं।

कोङ्कणके अन्तर्गत दमन नामक स्थानमें जो चान्द्रसेनीय प्रभु रहते, उन्हें और पत्तनप्रभुवाले चन्द्रवंशीय क्षामपतिके दमन नामक सन्तानके वंशधरोंको 'दमनप्रभु' कहते हैं। उनका आचार व्यवहार और संस्कारादि समस्त चान्द्रसेनीय प्रभुवोंसे मिलता है। दमनश्रेणीमें चान्द्रसेनीय और पाठारीय उभय श्रेणीका मिलन देख पडता है।

चेउल, वसई, कुलावा, बम्बई, थाना, पूना प्रभृति जिलावोंमें पत्तन-प्रभुवोंका वास है। वह संख्यामें अति अल्प हैं। उनकी अल्प संख्याका कारण क्या है? कोई कोई समझता कि मुसलमानोंके आधिपत्यकाल उनमें अनेक चान्द्रसेनीय प्रभुवोंके साथ मिल गये थे। किन्तु आजकल पत्तनप्रभु चान्द्रसेनीय प्रभुवोंका कोई सम्बन्ध स्वीकार नहीं करते। वह अपनेको विशुद्ध क्षत्रिय और चान्द्रसेनीयोंकी अपेक्षा श्रेष्ठ बतलाते हैं। पेशवा अथवा कोङ्कणस्थ ब्राह्मणवंशीय प्रतिनिधियोंसे सतारेमें जिस समय चिटनवीसोंका दारुण विवाद चलता था, उसी समय अधिकांश पत्तनप्रभु ब्राह्मणोंके अत्याचारसे बचनेको स्वतन्त्र हो गये। फिर भी जो चान्द्रसेनीयोंके साथ गाढ मित्रता और कुटुम्बिताके सूत्रमें आबद्ध रहे, वह स्वतन्त्र हो न सके। उनके वंशधर आज भी चान्द्रसेनीयोंके मध्य 'पाटने' उपाधि भोग करते हैं। यहां तक कि वह पत्तन श्रेणीसे पृथक् हो गये हैं।

पत्तनप्रभुवोंकी मातृभाषा अनहलवाड़ा पत्तन (पाटन) के राजपूतोंकी भाषासे मिलती है। इस लिये बहुतसे लोगोंका विश्वास है कि उक्त राजपूतोंसे ही पत्तनप्रभुवोंका उद्भव और पाटन नगरसे उनका नामकरण हुवा होगा।*

कोङ्कणस्थ ब्राह्मणों द्वारा प्रकृत क्षत्रिय स्वीकार न किये जाते भी वह बराबर यजन, अध्ययन एवं दान विविध द्विजोचित कर्म सम्पादन और चान्द्रसेनीय कायस्थोंकी भांति सकल संस्कार पालन करते हैं। पत्तनप्रभु दशम वर्ष पुत्रको उपनयन देते और अशौचमें १२ दिन मात्र लेते हैं। आज भी कोङ्कणके नाना स्थानोंमें प्रभुलोग बहुतसी जागीर रखते और बड़े बड़े पद भोग करते हैं।†

महाराष्ट्रदेशमें ध्रुवप्रभु नामक एक श्रेणीके कायस्थ देख पडते हैं। वह अपनेको पुराणवर्णित उत्तानपादराजपुत्र ध्रुवका वंशधर कहते और पत्तनप्रभुवोंका एकश्रेणीभुक्त समझते हैं। उनके प्रधान

---

* "It is certain that some have aspired to the priesthood, an office everywhere carefully retained by the Brahmans, and so to whisper the sacred formula, perform sacrificial rites, and to officiate at the Homa, or burn-offering." (Sherring's Tribes and Castes, Vol II)

† Indian Antiquary, Vol V, p 171

* Bombay Gazetteer, Vol XVIII Pt I p 185.

† पत्तनप्रभुवोंके वर्तमान आचार-व्यवहार सम्बन्धका विस्तृत विवरण Bombay Gazetteer, Vol. XVIII, pt. I (Poona), p. 193-255 और हिन्दी विश्वकोषके 'पत्तनप्रभु' शब्दमें द्रष्टव्य है।

ख्याति कहा करते हैं—'पहले हम लोगोंके साथ पत्तनीप्रभुओंका विवाह सम्बन्ध प्रचलित था।' सम्भवतः उन्होंने पत्तनीप्रभुओंमें मिलनेकी चेष्टा की। पत्तनप्रभुओंने इन्हें सजातीयकी भांति स्वीकार करते भी समाजमें ग्रहण किया न था। इनका आचार व्यवहार और गठनादि पत्तनप्रभुओंकी ही भांति लगता है। इनकी स्थिति भी मन्द नहीं। यह क्षत्रियोचित संस्कारादि सम्पादन करते और ब्राह्मण व्यतीत अपर सकल जातिकी अपेक्षा अपनेको श्रेष्ठ समझते हैं। ब्राह्मणको छोड़ दूसरी किसी जातिके हाथ कुछ भी आहार नहीं करते। अष्टमसे दशम वर्षके मध्य यह पुत्रको उपनयन देते हैं। दाहके दिन अशौच ग्रहण किया जाता है। फिर त्रयोदश दिवस आदके उद्देश श्राद्ध क्रिया सम्पन्न होती है। उपनयन, विवाह और श्राद्ध तीनों संस्कार महा समारोह और बहु व्ययसे किये जाते हैं। विधवा-विवाह वा बहुविवाह इनके मध्य प्रचलित नहीं।*

सिन्धु, गुजरात और महाराष्ट्रमें ब्रह्मक्षत्रिय नामक कायस्थ रहते हैं। सह्याद्रिखण्डमें सूर्यवंशीय और चन्द्रवंशीय प्रभु ही ब्रह्मक्षत्रिय नामसे वर्णित हुये हैं। अधिक सम्भव है कि ग्रामपति एवं ग्रामपतिके सन्तानोंमें जो पैठणपत्तन अथवा अपरान्त बाइयापटनमें रहते उन्हें "पत्तनप्रभु" और गुजरात, सिन्धु तथा कर्णाट प्रभृति स्थानमें जो रहते उन्हें "ब्रह्मक्षत्रिय" कहते हैं। कर्णाट और सिन्धु प्रदेशमें यह ब्रह्मक्षत्रिय किसी समय अति प्रबल पड़ गये थे। सिन्धु और कच्छ प्रदेशमें इन्होंने बहुकाल राजत्व किया। कच्छमें बहुसंख्यक ब्रह्मक्षत्रियोंका वास है। यहां ब्रह्मक्षत्रिय कहा करते हैं—"परशुरामकी परशु धारसे जो क्षत्रिय आत्मरक्षा कर सके थे, हम उन्हींके वंशधर हैं। सिन्धुप्रदेशमें हमारे पूर्वपुरुषोंने बहु काल राजत्व किया। विदेशी बर्बर लोगोंके हाथ राज्यच्युत और निताड़ित हो उन्होंने हिङ्गुलाज देवीका आश्रय लिया था। उन्हीं देवीने दया करके उनको कितने ही अधिकार प्रदान किये।"* गवर्नमेण्टने स्वीकार किया है कि काठियावाड़ और कच्छ-प्रदेशमें शान्तिस्थापन तथा इङ्गलिश शासनके प्रचारकाल उक्त ब्रह्मक्षत्रियवंशीय सुन्दरजी शिवाजीने कर्नल वाकर प्रभृतिको यथेष्ट साहाय्य दिया था। पेशवाओंके समय कोई कोई प्रभु आ कर उनसे मिल गये। जहां प्रभु कायस्थोंका वास अधिक और ब्रह्मक्षत्रियोंकी संख्या अल्प है, वहां उभयश्रेणीके मध्य विवाह-सम्बन्ध हो जाता है।

अष्टसे दशमवर्षके मध्य यह पुत्रका उपनयन करते हैं। उनके विवाहका आचारादि दाक्षिणात्यके ब्राह्मणोंकी भांति है। आत्मीय और उपस्थितके मरने पर दश दिनमात्र अशौच ग्रहण करते पीछे श्राद्ध-भोजादि करते हैं। अधिकांश कार्योंमें ब्रह्मक्षत्रिय शक्तियोंकी और शिवका धर्म चलाते हैं। कहीं कहीं उन्हें पौरोहित्य करते भी देखा जाता है।

ब्रह्मक्षत्रिय देखनेमें अधिकांश गुजराती ब्राह्मणों-जैसे होते हैं। सकल ही सुखी, परिष्कृत और शिक्षित हैं।

उपसंहार।

भारतवर्षमें सर्वत्र कितने ही उपकायस्थ मिलते हैं। कायस्थोंसे शूद्रकन्याके गर्भ संयोगमें उन सकल उपकायस्थोंकी उत्पत्ति है। उनके साथ प्रकृत कायस्थोंका कोई सामाजिक संश्रव नहीं। फिर भी अनेक उपकायस्थ कायस्थोंके निन्दावाद और नीच जातित्व प्रतिपादन करनेकी चेष्टामें लगे रहते हैं। उनकी अवस्था देख कर ही सम्भवतः पौराणिक धर्म-शास्त्रका वचन गठित और कमलाकर द्वारा शूद्र कायस्थोंकी व्यवस्था लिपिबद्ध हुयी है। थोड़ीसी आलोचना करनेसे समझ पड़ेगा—भारतवर्षीय प्रकृत कायस्थ-समाजके साथ उनका कोई सम्बन्ध नहीं।

* [illegible] आचार-व्यवहारादिका विवरण Bombay Gazetteer Vol. XVIII, pt. I. p. 185-192 में लिखा है।

* Indian Antiquary, Vol. V p. 171.

कायस्था (सं० स्त्री०) कायः तिष्ठति अनया, काय-स्था-क। १ हरीतकी, हड़। २ आमलकी, आँवला। ३ काकोली। ४ स्थूलैला, बड़ी इलायची। ५ सूक्ष्मैला, छोटी इलायची। ६ तुलसीवृक्ष। ७ सिन्दुवारवृक्ष, संभालूका पेड़। ८ कायस्थ-स्त्रीजाति।

कायस्थादिधूपन (सं० क्ली०) धूपनविशेष, एक बफारा। हरीतकी, रास्ना, कटुकी, गुड़ूची, गुग्गुलु, चोरक नामक गन्धद्रव्य, वाव्याक्तक, वचा तथा कुष्ठ बराबर बराबर डाल बफारा लेनेसे शीतज्वर छूट जाता है। फिर उक्त कल्कको यवक्षार, लवण तथा काञ्जिकके साथ यथाविधि पकाने और शरीरमें लगानेसे भी शीतज्वर शान्त होता है। (भावप्रकाश)

कायस्थाली (सं० स्त्री०) रक्तपाटल वृक्ष, लाल फूलका एक पेड़।

कायस्थिका (सं० स्त्री०) काकोली।

कायस्थैर्य (सं० क्ली०) कायस्य स्थैर्यम्, ६-तत्। १ रसायन औषधादि द्वारा शरीरको स्थिरता, मुकव्वी दवा खानेसे जिस्मकी मजबूती।

काया (हिं० स्त्री०) शरीर, जिस्म।

कायाकल्प (हिं० पु०) कायस्थैर्य, दवाके जोरसे पुराने जिस्मको नया बनानेकी तरकीब।

कायाकाशसम्बन्धसंयम (सं० पु०) काय और आकाशके सम्बन्धका संयम, जिस्म और आसमान्के लगावका जब्त। इससे आकाशमें लोग उड़ सकते हैं।

"कायाकाशयोः सम्बन्धसंयमात्
लघुतूलसमापत्तेश्चाकाशगमनम्।" (पातञ्जलसूत्र)

कायाग्नि (सं० पु०) कायस्थितो अग्निः, मध्यपदलो०। पाचकाग्नि, हजम करनेकी ताकत।

कायापलट (हिं० स्त्री०) १ कायपरिवर्तन, जिस्मकी तबदीली। २ घोर परिवर्तन, बड़ा हेरफेर।

कायिक (सं० त्रि०) कायेन निष्पादितः निर्वृत्तो वा, काय-ठक्। १ शरीर द्वारा निष्पादित, जिस्मसे किया हुआ। २ शरीर द्वारा उत्पन्न, जिस्मसे निकला हुआ। ३ शरीर सम्बन्धीय, जिसमानी।

कायिका (सं० स्त्री०) कायेन कायिकव्यापारेण निर्वृत्ता, काय-ठक्। ऋषभ प्रभृतिके कायिक परिश्रमसे निष्पादित वृद्धि, बैल वगैरहकी मेहनतसे पैदा किया जानेवाला सूद।

"दोहवाहाकर्मयुक्ता कायिका समुदाहृता।" (व्यास)

कायोढज (सं० पु०) पुत्रविशेष, एक बेटा। प्राजापत्य विवाहसे उत्पन्न होनेवाले पुत्रको कायोढज कहते हैं।

कायोत्सर्ग (सं० पु०) जैन अर्हत्‌की एक मूर्ति। यह वीतरागावस्थामें खड़ा रहता है।

कार (सं० पु०) कृ-घञ्। १ वध, कत्ल। २ निश्चय, यकीन। (कं सुखं ऋच्छति अनेन, क-ऋ-घञ्) ३ स्वामी, मालिक। ४ तुषारपर्वत, बरफका पहाड़। ५ करने या बनानेवाला। कोई कर्मपद पूर्व रहनेसे 'कार' शब्द कर्ता अर्थमें आता है, जैसे—स्वर्णकार, कुम्भकार, कर्मकार इत्यादि। ६ क्रिया, काम। यौगिक अर्थमें ही इसका प्रयोग पड़ता है, जैसे—उपकार, चमत्कार। ७ अक्षरको बतानेवाला। यह भी यौगिक अर्थमें ही प्रयुक्त होता है, जैसे—अकार, ककार इत्यादि। ८ पूजाका उपकरण, बलि।

कार (फ़ा० पु०) कार्य, काम।

कारक (सं० क्ली०) क्रियाभिरन्वितं भाव्यमते करोति क्रियां निर्वर्तयति, कृ कर्तरि ण्वुल्। १ यमानी, कटैया। २ बदर, बेर। ३ वर्षोपलोद्भव जल, ओलेका पानी। ४ अवस्थाविशेष, हालत (Case)। क्रियाके साथ सम्बन्धविशिष्ट अथवा क्रिया निष्पादकको कारक कहते हैं। वैयाकरणभूषणके मतमें क्रियाजनक शक्तिविशिष्टमात्र कारकपदवाच्य है। द्रव्यादिमें उक्त शक्ति रहना असम्भव है। फिर भी शक्ति और शक्तिमान्‌का अभेद मानके द्रव्यादिमें कारकत्वका व्यवहार होता है। कारक शब्दका क्रियानिष्पादक अर्थ लगानेसे सकल कारक कर्तृकारक हो जाते हैं। किन्तु व्यापारके भेदानुसार उनका करणादि भेद मान लेना पड़ता है। मञ्जूषामें कारकका भेद लिखा है,—

"कर्तुः कारकान्तरप्रवर्तनव्यापारः। करणस्य क्रियाजनकाव्यवहित-व्यापारः। क्रियाफलीभूतोद्देश्यत्वरूपव्यापारस्य कर्मणः; कर्तृकर्मव्यवहित-क्रियाधारणव्यापारो अधिकरणस्य। मेघाद्युत्पत्त्यादि व्यापारः सम्प्रदानस्य। अवधिभावोपगमव्यापारो ऽपादानस्येति।"

अन्य कारकके प्रवर्तनकारीको कर्तृकारक, क्रिया निष्पादनके विषयमें अति निकटवर्ती कारणको करण, क्रियाके द्वारा व्यापारविशिष्टको कर्म, कर्तृकर्म अतीत अपर क्रियाधारत्वयोग्य कारक (क्रियाके आधार) को अधिकरण प्रेरक अनुमति प्रभृति व्यापारविशिष्टको सम्प्रदान और अवधि भावग्राम विशिष्टको अपादान कहते हैं।

कारक छः प्रकारका है—कर्त्ता, कर्म, करण, सम्प्रदान, अपादान और अधिकरण। पाणिनिके मतमें कर्त्ता कारकका लक्षण है,—स्वतन्त्रः कर्ता। पा १।४।५४। अर्थात् क्रियामें स्वतन्त्रताकी अपेक्षापर विवक्षित कारक कर्त्ता कहाता है। उक्त होनेसे कर्त्तामें प्रथमा और अनुक्त रहनेसे तृतीया विभक्ति लगती है। उसको छोड़ अन्यत्र प्रथमा विभक्ति आती है। यथा,—प्रातिपदिकार्थलिङ्गपरिमाणवचनमात्रे प्रथमा। पा २।३।४६। प्रातिपदिक अर्थमात्र, लिङ्गमात्र, परिमाणमात्र और संख्यामात्रमें प्रथमा विभक्ति होती है। दूसरे—सम्बोधने च। पा २।३।४७। अन्यको जिस शब्दसे अपने सम्मुखीन बनाया जाता, वह सम्बोधन कहाता है। उसमें भी प्रथमा विभक्ति हो जाती है। कर्तृकरणयोस्तृतीया। पा २।३।१८। अनुक्त कर्तृकारक और करणकारकमें तृतीया विभक्ति आती है।

कर्मका लक्षण है,—कर्तुरीप्सिततमं कर्म। पा १।४।४९। अर्थात् कर्त्ता क्रियासे जिस ईप्सिततम पदार्थको लेना चाहता, उसीका नाम कर्म है। तथायुक्तं चानीप्सितम्। पा १।४।५०। फिर क्रिया द्वारा ईप्सित पदार्थकी भांति कोई अनीप्सित पदार्थ निष्पन्न होते भी उसकी कर्मसंज्ञा पड़ती है। अकथितं च। पा १।४।५१। अपादानादि द्वारा अविवक्षित कारक कर्मसंज्ञक होता है। गतिबुद्धिप्रत्यवसानार्थशब्दकर्माकर्मकाणामणि कर्ता स णौ। पा १।४।५२। गति बुद्धि और प्रत्यवसान अर्थमें अणिजन्त धातुका कर्त्ता णिजन्तधातुमें कर्म कहाता है। हृक्रोरन्यतरस्याम्। पा १।४।५३। हृ और कृ धातुके अणिजन्तधातुका कर्त्ता णिजन्तधातुमें विकल्पसे कर्मसंज्ञक होता है। अधिशीङ्स्थासां कर्म। पा १।४।४६। अधि पूर्वक शी, स्था और आस धातुके योगमें अधिकरणकी कर्मसंज्ञा होती है। अभिनिविशश्च। पा १।४।४७। अभि और नि पूर्वक विश धातुके योगमें भी अधिकरणको कर्म कहते हैं। किसी किसी जगहमें व्यभिचार देखनेसे उक्त विधि विकल्प माना गया है। यथा—"अभिनिविशः। उपान्वध्याङ्वसः।" पा १।४।४८। उप, अनु, अधि और आङ् पूर्वक वस धातुको कर्मसंज्ञा है। क्रुधद्रुहोरुपसृष्टयोः कर्म। पा १।४।३८। उपसर्गविशिष्ट क्रुध और द्रुह धातुके प्रयोगमें जिसके प्रति कोप आता, वह कर्म कहाता है।

कर्म तीन प्रकारका है—निर्वर्त्य, विकार्य और प्राप्य। कर्मकारक उक्त होनेसे प्रथमा और अनुक्त कर्ममें द्वितीया विभक्ति लगती है। कर्मणि द्वितीया। पा २।३।२। अनुक्त कर्ममें द्वितीया विभक्ति आती है। उसको छोड़ अन्यान्य स्थलोंमें भी द्वितीया विभक्ति पड़ती है। यथा—अन्तरान्तरेण युक्ते। पा २।३।४। अन्तरा और अन्तरेण शब्दके योगमें द्वितीया विभक्ति लगती है। कर्मप्रवचनीययुक्ते द्वितीया। पा २।३।८। कर्म और प्रवचनीय संज्ञाविशिष्ट शब्दके योगमें द्वितीया विभक्ति लगाते हैं। एनपा द्वितीया। कालाध्वनोरत्यन्तसंयोगे। पा २।३।५। कालवाचक एवं पथवाचक शब्दके साथ गुण, क्रिया और द्रव्यका निरन्तर सम्बन्ध समझ पड़नेसे भी द्वितीया आती है।

करणका लक्षण है—साधकतमं करणम्। पा १।४।४२। क्रियासिद्धिके विषयमें जो प्रधान उपकारक होता, उसीको करण कहते हैं। दिवः कर्म च। पा १।४।४३। दिव धातुके साधक कारकको कर्म और करण उभय संज्ञा होती है। कर्तृकरणयोस्तृतीया। पा २।३।१८। अनुक्त कर्तृ कारक और करणमें तृतीया विभक्ति लगती है। उससे छोड़ अन्य स्थलोंमें भी तृतीया विभक्ति आती है। यथा,—अपवर्गे तृतीया। पा २।३।६। फलप्राप्तिकी अवधारणासे काल और पथवाचक शब्दका निरन्तर सम्बन्ध होने पर तृतीया विभक्ति लगती है। सहयुक्तेऽप्रधाने। पा २।३।१९। सहार्थ शब्दके योगसे अप्रधान पदार्थमें तृतीया विभक्ति होती है। सहार्थ शब्दको विवक्षा रहते भी तृतीया विभक्ति लगाते हैं। सह, साकं, सार्धं और समं सहार्थ शब्द हैं। येनाङ्गविकारः।

पा २।३।२०। जिस विकृत अङ्ग द्वारा शरीरीका विकार देख पड़ता, उसी अङ्गविशेषमें तृतीयाका प्रयोग चलता है। इत्थंभूतलक्षणे। पा २।३।२१। जिस चिह्न द्वारा कोई रूपान्तर लक्षित होता, उसमें तृतीया विभक्तिका प्रयोग पड़ता है। संज्ञोऽन्यतरस्यां कर्मणि। पा २।३।२२। संपूर्वक ज्ञा धातुके योगमें विकल्पसे तृतीया होती है। हेतौ। पा २।३।२३। फलसाधनयोग्य पदार्थमें तृतीया आती है।

सम्प्रदानका लक्षण है—कर्मणा यमभिप्रैति स सम्प्रदानम्। पा १।४।३२। जिसके उद्देश्यसे दानकार्य सम्पादित होता, उसीकी सम्प्रदान संज्ञा है। रुच्यर्थानां प्रीयमाणः। पा १।४।३३। रुचि अर्थबोधक धातुके प्रयोगमें प्रीयमाण अर्थात् प्रीतिवालेकी सम्प्रदान संज्ञा होती है। श्लाघह्नुङ्स्थाशपां ज्ञीप्स्यमानः। पा १।४।३४। श्लाघ, ह्नु, स्था और शप् धातुके प्रयोगमें उनके अर्थ अनुभवकारककी सम्प्रदान संज्ञा पड़ती है। धारेरुत्तमर्णः। पा १।४।३५। णिजन्त धृ धातुके प्रयोगमें उत्तमर्णकी सम्प्रदान संज्ञा होती है। स्पृहेरीप्सितः। पा १।४।३६। स्पृह धातुके प्रयोगमें अभीष्ट पदार्थकी सम्प्रदान संज्ञा है। क्रुधद्रुहेर्ष्यासूयार्थानां यं प्रति कोपः। पा १।४।३७। क्रोध, अपकार, ईर्ष्या और असूया अर्थके प्रयोगमें जिसके प्रति क्रोध आता, वही सम्प्रदान कहाता है। किन्तु उपसर्गविशिष्ट होनेसे उसे कर्म कहते हैं। राधीक्ष्योर्यस्य विप्रश्नः। पा १।४।३९। राध और ईक्ष धातुके प्रयोगमें जिसके सम्बन्ध पर शुभाशुभ प्रश्न किया जाता, वही सम्प्रदान कहाता है। प्रत्याङ्भ्यां श्रुवः पूर्वस्य कर्ता। पा १।४।४०। प्रति और आङ् पूर्वक श्रु धातुके प्रयोगमें पूर्ववर्ती प्रवर्तन व्यापारका जो कर्ता रहता, उसका नाम सम्प्रदान पड़ता है। अनुप्रतिगृणश्च। पा १।४।४१। अनु और प्रति पूर्वक गॄ धातुके प्रयोगमें प्रवर्तन-व्यापारके कर्ताकी सम्प्रदान संज्ञा होती है। परिक्रयणे सम्प्रदानमन्यतरस्याम्। पा १।४।४४। जिसके द्वारा नियत कालके लिये अधिकार रखता, विकल्पसे उसका सम्प्रदान नाम पड़ता है। चतुर्थी सम्प्रदाने। पा २।३।१३। सम्प्रदान अर्थमें चतुर्थी विभक्ति होती है। अन्यान्य स्थलमें भी चतुर्थी विभक्तिका विधान है, यथा—क्रियार्थोपपदस्य च कर्मणि स्थानिनः। पा २।३।१४। क्रिया-वाचक उपपदविशिष्ट अप्रयुक्त तुमन् अर्थके कर्ममें चतुर्थी चलती है। तुमर्थाच्च भाववचनात्। पा २।३।१५। तुमर्थ प्रयोगमें और भाववचनार्थमें विहित प्रत्ययके प्रयोगमें चतुर्थी आती है। नमःस्वस्तिस्वाहास्वधालंवषड्योगाच्च। पा २।३।१६। स्वस्ति, स्वाहा, स्वधा, अलं और वषट् शब्दके योगमें चतुर्थी लगती है। मन्यकर्मण्यनादरे विभाषाऽप्राणिषु। पा २।३।१७। मन धातुके अनादर अर्थ गम्यमानमें प्राणिव्यतीत अन्य कर्म पद पर विकल्पसे चतुर्थी विभक्ति लगाते हैं। फिर विकल्प पक्षमें द्वितीया विभक्ति आती है। गत्यर्थकर्मणि द्वितीयाचतुर्थ्यौ चेष्टायामनध्वनि। पा २।३।१२। गत्यर्थ धातुके कायकृत व्यापार अर्थमें अध्व भिन्न कर्मस्थल पर द्वितीया और चतुर्थी विभक्ति होती हैं। उसको छोड़ तादर्थ्य अर्थ, क्लृप धातुके अर्थ, सम्प्रदान अर्थ, उत्पातके द्वारा ज्ञापित विषय और हित शब्दके योगमें भी चतुर्थी विभक्ति लगती है।

अपादानका लक्षण है,—ध्रुवमपायेऽपादानम्। पा १।४।२४। विश्लेष विषयमें अवधीभूत कारककी अपादान संज्ञा होती है। भीत्रार्थानां भयहेतुः। पा १।४।२५। भयार्थ और रक्षार्थ धातुके प्रयोगमें भयहेतुकी अपादान संज्ञा ठहरती है। पराजेरसोढः। पा १।४।२६। परा पूर्वक जि धातुके प्रयोगमें असह्य अर्थकी अपादान संज्ञा है। वारणार्थानामीप्सितः। पा १।४।२७। वारणार्थ धातुके प्रयोगमें ईप्सित विषयकी अपादान संज्ञा लगाते हैं। अन्तर्धौ येनादर्शनमिच्छति। पा १।४।२८। व्यवधान रहते जिसके द्वारा अपने अदर्शनकी इच्छा की जाती, उसकी अपादान संज्ञा आती है। आख्यातोपयोगे। पा १।४।२९। यथारीति अध्ययन अर्थमें जो वक्ता रहता, उसका नाम अपादान पड़ता है। जनिकर्तुः प्रकृतिः। पा १।४।३०। जन धातुके प्रयोगमें उत्पत्तिकारणकी अपादान संज्ञा होती है। भुवः प्रभवः। पा १।४।३१। प्रपूर्वक भू धातुके प्रयोगमें उत्पत्ति कारणकी अपादान संज्ञा है। अपादाने पञ्चमी। पा २।३।२८। अपादान कारकमें पञ्चमी विभक्ति लगती है। उसको छोड़ अन्य स्थलोंमें भी पञ्चमी विभक्ति होती है। यथा—अन्यारादितरर्ते दिक्शब्दाञ्चूत्तरपदाजाहियुक्ते। पा २।३।२९। अन्य, आरात्, इतर, ऋते, दिक्, अञ्चूत्तर, आच्

और आदि शब्दके योगमें पञ्चमी लगती है। अन्यारात् ...। पा २।३।२९। अप, आङ् और परि शब्दके योगमें पञ्चमी आती है। पञ्चम्यपाङ्परिभिः। पा २।३।१०। प्रतिनिधि और प्रतिदान अर्थमें प्रति शब्दके प्रयोगसे पञ्चमी पड़ती है। प्रतिनिधिप्रतिदाने च यस्मात्। पा २।३।११। कर्तृभिन्न ऋण हेतुका कारण होनेसे पञ्चमी आती है। अकर्त्तर्यृणे पञ्चमी। पा २।३।२४। अस्त्रीलिङ्ग गुणवाचक शब्द हेतुस्वरूप रहनेसे विकल्पमें पञ्चमी होती है। पृथग्विनानानाभिस्तृतीयाऽन्यतरस्याम्। पा २।३।३२। पृथक्, विना और नाना शब्दके योगमें तृतीया, द्वितीया एवं पञ्चमी विभक्ति लगती है। करणे च स्तोकाल्पकृच्छ्रकतिपयस्यासत्त्ववचनस्य। पा २।३।३३। असत्त्ववाची स्तोक, अल्प, कृच्छ्र और कतिपय शब्दके उत्तर करणमें तृतीया तथा पञ्चमी विभक्ति पड़ती है। दूरान्तिकार्थेभ्यो द्वितीया च। पा २।३।३५। दूर एवं समीपार्थ शब्दके उत्तर द्वितीया और पञ्चमी विभक्ति रहती है। पञ्चमी विभक्ते। पा २।३।४२। जिससे कुछ विभाग किया जाता, उसमें पञ्चमी विभक्तिका प्रयोग आता है।

अधिकरणका लक्षण है,—आधारोऽधिकरणम्। पा १।४।४५। क्रियाके आधारस्वरूप कर्त्ता कर्मके आधारको अधिकरण संज्ञा है। उसमें सप्तमी विभक्ति होती है। सप्तम्यधिकरणे च। पा २।३।३६। अधिकरण और दूर तथा निकटार्थ शब्दके योगमें सप्तमी लगती है। यस्य च भावेन भावलक्षणम्। पा २।३।३७। जिसकी क्रिया द्वारा क्रियान्तर लक्षित होता, उसमें सप्तमी आती है। षष्ठी चानादरे। पा २।३।३८। अनादर अर्थमें षष्ठी और सप्तमी विभक्ति होती है। स्वामीश्वराधिपतिदायादसाक्षिप्रतिभूप्रसूतैश्च। पा २।३।३९। स्वामी, ईश्वर, अधिपति, दायाद, साक्षी प्रतिभू एवं प्रसूत शब्दके योगमें षष्ठी और सप्तमी विभक्ति लगती है। आयुक्तकुशलाभ्यां चासेवायाम्। पा २।३।४०। आयुक्त और कुशल शब्दके योगमें तात्पर्य अर्थमें षष्ठी तथा सप्तमी विभक्ति होती है। यतश्च निर्धारणम्। पा २।३।४१। जाति, गुण, क्रिया और संज्ञा द्वारा एकदेश मात्र जिससे पृथक् किया जाता, उसमें सप्तमी विभक्तिका प्रयोग आता है। साधुनिपुणाभ्यामर्चायां सप्तम्यप्रतेः। पा २।३।४३। साधु और निपुण शब्दके योगमें पूजा अर्थमें सप्तमी विभक्ति लगती है। किन्तु उसमें प्रति शब्दका प्रयोग नहीं होता। प्रसितोत्सुकाभ्यां तृतीया च। पा २।३।४४। प्रसित एवं उत्सुक शब्दयोगमें तृतीया तथा सप्तमी विभक्ति रहती है। नक्षत्रे च लुपि। पा २।३।४५। लुबन्त नक्षत्र शब्दमें अधिकरण अर्थ पर तृतीया और सप्तमी विभक्ति लगायी जाती है। सप्तमीपञ्चम्यौ कारकमध्ये। पा २।३।७। कारकद्वयका मध्यवर्ती जो कालवाचक एवं अध्ववाचक शब्द रहता, उसमें पञ्चमी और सप्तमीका प्रयोग पड़ता है। यस्मादधिकं यस्य चेश्वरवचनं तत्र सप्तमी। पा २।३।९। जो जिससे अधिक अथवा ईश्वर ठहरता, उसमें सप्तमीका प्रयोग लगता है। उपको और अधि वा अधिक शब्दके प्रयोग और कर्मपदयोगमें निमित्तवाचक शब्दमें भी सप्तमी विभक्ति होती है। यथा—

"चर्मणि द्वीपिनं हन्ति दन्तयोर्हन्ति कुञ्जरम्
केशेषु चमरीं हन्ति सीम्नि पुष्कलको हतः॥"

अब अन्य कारकोंमें मध्य समयकी प्राप्ति सम्भावना रहनेसे परवर्ती कारक ही लगता है। यथा—

"[illegible]।
[illegible]॥"

सम्बन्धको कारकता नहीं होती। इसीसे वह कारकोंमें गिना भी नहीं जाता। सम्बन्ध अर्थमें और कारक अतीत अन्य अर्थमें षष्ठी विभक्ति होती है। षष्ठी शेषे। पा २।३।५०। कारक और प्रातिपदिक अर्थ व्यतिरिक्त स्वस्वामिभावादि सम्बन्धका नाम शेष है। उसीमें षष्ठी विभक्ति होती है। अब कारक विभक्ति-समूहकी भांति अर्थ विशेषमें भी षष्ठी विभक्तिका विधान है। यथा—षष्ठी हेतुप्रयोगे। पा २।३।२६। हेतु शब्दके प्रयोगमें हेतुवाचक और हेतु शब्द उभय स्थल पर षष्ठी विभक्ति होती है। सर्वनाम्नस्तृतीया च। पा २।३।२७। हेतु शब्दके प्रयोगमें सर्वनाम शब्द और हेतु शब्दमें षष्ठी विभक्ति लगती है। षष्ठ्यतसर्थप्रत्ययेन। पा २।३।३०। अतसुच् अर्थमें तत्प्रत्ययान्त शब्दके योगमें षष्ठी विभक्ति आती है। एनपा द्वितीया। पा २।३।३१। एनप् प्रत्ययान्त शब्दके योगमें द्वितीया और षष्ठी आती है। दूरान्तिकार्थैः षष्ठ्यन्यतरस्याम्।

पातञ्जल-दर्शनमें कारण नौ प्रकारसे विभक्त है,—

"उत्पत्तिस्थित्यभिव्यक्तिविकारप्रत्ययाप्तयः ।
वियोगान्यत्वधृतयः कारणं नवधा स्मृतम् ॥"
(पातञ्जल २।२८ सूत्रभाष्य)

कारण नौ प्रकारका है—उत्पत्ति, स्थिति, अभिव्यक्ति (प्रकाश), विकार, ज्ञान, प्राप्ति, विच्छेद, अन्यत्व और धारण। कार्यके भेदसे उक्त नवविध कारणकी विभिन्नता देख पड़ती है। यथा—उत्पत्ति ज्ञानका कारण मन, शरीरकी स्थितिका कारण आहार, रूपकी अभिव्यक्तिका कारण आलोक, पचनीय वस्तुके विकारका कारण अग्नि, अग्निके प्रत्यय (ज्ञान) का कारण धूमज्ञान और विकारकी प्राप्तिका कारण योगाङ्गानुष्ठान है।

योगाङ्गका अनुष्ठान ही अशुद्धिके वियोगका कारण, वलयकारी सुवर्णकार कुण्डलरूप सुवर्णका अन्यत्व कारण और ईश्वर इस जगत् तथा इन्द्रियसमूह शरीरकी धृतिका कारण है।

चार्वाकोंके कथनानुसार कारण नामका कोई पदार्थ नहीं होता। कारणके सम्बन्ध व्यतिरेक ही सब पदार्थ उत्पन्न होते हैं। वस्तुतः उनकी बात असङ्गत है। यदि कारणका अस्तित्व न रहते भी कार्यकी उत्पत्ति चलती, तो कार्यकी सर्वदा विद्यमानता उपलब्धि हो सकती है। जिस प्रकार मृत्तिकादि समुदय मिलनेसे घट बनता, उसी प्रकार उसके पूर्व भी घट बन सकता है। फिर कारणका अस्तित्व न माननेसे परचित्त-गत संशयादि दूर करनेके मनसे शब्दका प्रयोगादि भी निष्फल हो जायेगा। जिस वस्तुके न रहनेसे जिस वस्तुकी विद्यमानता लाभ करनेमें कठिनता उठाते किंवा जिस वस्तुके रहनेसे जिस वस्तुकी विद्यमानता पाते, पण्डित उस वस्तुको उसी वस्तुका कारण बताते हैं। मृत्तिकाका अभाव होनेसे घटकी विद्यमानता नहीं और मृत्तिका रहनेसे घटकी विद्यमानता होती है। उसीसे मृत्तिका घटका कारण ठहरती है। कारण न रहनेसे सब वस्तु नित्य हो सकते हैं। उसीसे चार्वाकोंको भी कारण नामक पदार्थ अवश्य मानना चाहिये। कणाद प्रभृति दार्शनिक परमाणुको सावयव जगत्का उपादान (समवायि-कारण) बताते हैं। उनके मतमें परमाणु सकल परस्पर संयुक्त होनेसे एक एक महदवयवी उत्पन्न होता है। किन्तु वैदान्तिक उसे नहीं मानते और कणादके मत पर दोष लगाते हैं—निरवयव परमाणुमें कभी ऐकदेशिक संयोग नहीं हो सकता। जिस वस्तुका कोई अवयव नहीं, उसका एकदेश होना असम्भव है। सुतरां उसमें आरोप्यावृत्ति (ऐकदेशिक) संयोग कैसे लग सकता है। उक्त सिद्धान्त ठहर जानेसे परमाणुके संयोगका होना असम्भव है। फिर परस्पर संयुक्त परमाणुसे महदवयवी कार्यकी उत्पत्ति भी नहीं हो सकती। सुतरां कार्य समुदय अज्ञान द्वारा परब्रह्ममें कल्पित-जैसा मानना पड़ेगा। रज्जुमें सर्पकी भांति ब्रह्ममें भी अज्ञान द्वारा कार्यसमूहकी कल्पना की जाती है। रज्जुविषयक ज्ञान द्वारा अज्ञानकी निवृत्ति होनेसे जैसे कल्पित सर्प देख नहीं पड़ता, वैसे ही ब्रह्मज्ञानसे तदीय अज्ञानकी निवृत्ति होनेसे समुदय जगत्का प्रपञ्च मिटा करता है। जगत्की कल्पनामें ब्रह्म अधिष्ठान है। उसीसे वैदान्तिक ब्रह्मको जगत्का उपादान (समवायी) बताते हैं।

सांख्यके मतमें सत्त्व-रजः-तमोगुणात्मिका प्रकृति ही मूल कारण है। उसमें भी वैदान्तिकोंके कथनानुसार चेतनका साहाय्य न मिलने पर अचेतन प्रकृतिसे कैसे कार्यकी उत्पत्ति हो सकती है। सुतरां सांख्यवादियोंका प्रकृति-कारणवाद भ्रममूलक अनुभूत होता है।

नैयायिक पारिमाण्डल्य (अणुपरिमाण) को कारण नहीं मानते। उनके मतानुसार परिमाणमात्र समान जातीय उत्कृष्ट परिमाणका कारण है। अर्थात् जिस परिमाणसे जो परिमाण उपजेगा, वही उत्पन्न परिमाण कारणीभूत परिमाणसे उत्कृष्टतर निकलेगा। जैसे तन्तुपरिमाणसे समुत्पन्न वस्त्रपरिमाण तन्तुपरिमाणकी अपेक्षा उत्कृष्टतर होता है। अणुपरिमाणको किसी परिमाणका कारण मानने पर

अणुपरिमाणसे उत्पन्न परिमाण अणुपरिमाणकी अपेक्षा छोटा बन सकता है। जैसे महत् परिमाण जन्य परिमाणकारणीभूत परिमाणकी अपेक्षा महत्तर रहता, वैसे ही अणुपरिमाणजन्य परिमाण भी अणुतर ठहरता है।

साधारण और असाधारण भेदसे कारण दो प्रकारका होता है। ईश्वरेच्छा, काल, अदृष्ट, उद्योग और प्रागभाव सर्व साधारण अर्थात् समुदय कार्यके कारण हैं। इसीसे इन्हें साधारण कारण कहते हैं। फिर जो विशेष कार्यों के कारण हैं, वह असाधारण कारण कहाते हैं। जैसे आम्रवृक्षके प्रति आम्रबीज है। आम्रबीज केवल आम्रवृक्षको उत्पत्तिके ही कारण है, कण्टकवृक्षको उत्पत्तिके नहीं। सुतरां उक्त बीज उक्त वृक्षके असाधारण कारण सिद्ध हुये।

२ साधन, तरीका। यह नैयायिकोंका मत है। ३ अर्थ, काम। ४ करण, कारगुजारी। ५ वध, कतल। ६ आदि, मूल, उत्स, जड़। ७ प्रमाण सबूत। ८ इन्द्रिय। ९ शरीर, जिस्म। १० हेतु, सबब। ११ उद्देश, मतलब। १२ उत्सवविशेष, कोई जलसा। १३ मद्यपानविशेष, एक मद्यपर्व। तान्त्रिक तन्त्रानुसार पूजादि कर मद्यपान करते हैं। उसीका नाम कारण है। १४ यातना, यातन। १५ वाद्यविशेष, कोई बाजा। १६ गानविशेष, किसी किस्मका गाना। १७ विष्णु। १८ शिव।

कारणक (सं० स्त्री०) कारणमेव, कारण स्वार्थे कन्। कारण देखो। यह शब्द यौगिक पदके अन्तमें आता है।

कारणकारण (सं० क्ली०) कारणस्य कारणम् ६ तत्। १ कारणका कारण, सबब दर सबब। यह भी पांच प्रकारसे अन्यथासिद्धमें पड़ता है। जैसे पुत्रके जन्म विषयमें उसका पितामह है। पुत्रके जन्मका कारण पिता और पिताके जन्मका कारण पितामह होता है। सुतरां पितामह कारणका कारण ठहरते भी पुत्रके प्रति अन्यथासिद्ध है। २ परमेश्वर। ३ प्रयोजक, संचालनेवाला।

“[illegible]” (महा०)

कारणगत (सं० त्रि०) कारणं अपकृति प्राप्नोति, कारण-गम-ड। कारणगत, सबब पर मुनहसिर या मौकूफ।

कारणगुण (सं० पु०) कारणस्य गुणः, ६ तत्। उपादान कारणका गुण, जड़का ख़ासा। यही कार्यके गुणका उत्पादक है,—

“कारणगुणाः कार्यगुणमारभन्ते।” (न्याय)

कारणका गुण ही कार्यके गुणको उत्पन्न करता है। जैसे रूप कारणका शुक्ल रूप प्रभृति वर्ण अवयव-रूप कार्यका भी शुक्ल रूपादि वर्ण उत्पादन करता है।

कारणगुणपूर्वकत्व (सं० क्ली०) कारणगुणः पूर्वं यस्य तस्य भावः, त्व। कारणको गुणविशिष्टता, सबबके वस्फ रखनेकी हालत।

कारणगुणोत्पन्नगुणत्व (सं० क्ली०) कारणगुणेन उत्पन्नो यो गुणः तस्य भावः, त्व। कारणके गुणसे निकले गुणका धर्म, सबबके वस्फसे पैदा वस्फका काम। न्यायशास्त्रमें इसका लक्षण इस प्रकार निर्दिष्ट है,—

“[illegible]”

कारणगुणोत्थ (सं० पु०) कारणगुणेन उत्थो यस्य, बहुव्री०। उपादान कारणके गुणसे उत्पन्न एक गुण।

कारणगुणोद्भवगुण (सं० पु०) कारणगुणोद्भवश्चासौ गुणश्चेति, कर्मधा०। कारणगुणजात गुण, सबबके वस्फसे निकला वस्फ। भाषापरिच्छेदमें कारणके गुणसे निकले गुण लिखे हैं—रूप, रस, गन्ध, अपाकज स्पर्श, द्रवत्व, स्नेह, वेग, गुरुत्व, एकत्व, पृथक्त्व, परिमाण और स्थितिस्थापक संस्कार।

कारणजल (सं० क्ली०) कारणरूपं जलम्। ब्रह्माण्डकी सृष्टिका कारणस्वरूप जल, दुनियाको पैदा करनेवाला पानी। भगवान्ने ब्रह्माण्डकी सृष्टिसे पूर्व केवल जल बनाया था। फिर उसमें बीज डालके ब्रह्माण्डको सृष्टि की।

“अप एव ससर्जादौ तासु बीजमवासृजत्।” (मनु १।८)

कारणता (सं० स्त्री०) कारणस्य भावः, कारण तल्। हेतुता, सबबीयत, कारणका धर्म। [illegible]

कारणत्व (सं० क्लो०) कारण-त्व। हेतुता, तत्त्वीय, कारणका धर्म।

"कारणत्वं मवेत्तस्य।" (भाषापरिच्छेद)

कारणध्वंस (सं० पु०) कारणस्य ध्वंसः, ६-तत्। कारणका नाश, सबबका जुवाल। समवायी और असमवायी कारणका ध्वंस होनेसे कार्य भी मिट जाता है, परन्तु निमित्त कारणके ध्वंससे कार्यध्वंस नहीं आता।

कारणध्वंसक (सं० त्रि०) कारणं ध्वंसते नाशयति, कारण-ध्वंस-ण्वुल्। कारणध्वंसकारक, सबबको मिटानेवाला।

कारणध्वंसी (सं० त्रि०) कारणं ध्वंसते नाशयति, कारण-ध्वंस-णिनि। कारणनाशक, सबबको बरबाद करनेवाला।

कारणनाश (सं० पु०) कारणस्य नाशः, ६-तत्। कारणका विनाश, सबबकी बरबादी।

कारणनाशक (सं० त्रि०) कारणस्य नाशकः, कारण-नश्-णिच्-ण्वुल्। कारणको नाश करनेवाला, जो सबबको मिटाता हो।

कारणभूत (सं० त्रि०) कारणं भूयते येन, कारण-भू-क्त। कारणस्वरूप, बायस बना हुवा।

कारणमाला (सं० स्त्री०) अलङ्कारशास्त्रोक्त एक अर्थालङ्कार।

"परं परं प्रति यदा पूर्वपूर्वस्य हेतुता।
तदाकारणमाला स्यात्—॥" (साहित्यदर्पण)
'पर पर के प्रति होत जहं पूर्व पूर्व को हेत।
कारणमाला नाम तहं चतुर सुपण्डित देत॥'

पूर्व पूर्व वाक्य अपने पर परवर्ती वाक्यका हेतु होनेसे कारणमाला अलङ्कार लगता है। जैसे—

"श्रुतं कृतधियां सङ्गात् जायते विनयः श्रुतात्।
लोकानुरागो विनयात्र किं लोकानुरागतः॥"
'पण्डितको सत्सङ्ग किये श्रु तिज्ञानको होत प्रकाश अपारा।
ज्ञानसों त्यों अभिमान मिटे उर आवति शान्ति अनेक प्रकारा॥
शान्त भयेते सुशान्तिके आवत लोगनको अनुराग अपारा।
लोगनके अनुरागसों होत कहा न कहो मनचिन्तु संसारा॥१६'

यहां पण्डितोंका सङ्ग, शास्त्रज्ञान, विनय और लोकानुराग यथाक्रम अपने पर पर वाक्यका कारण रहनेसे कारणमाला अलङ्कार होता है।

कारणवादी (सं० पु०) कारणं वदति, कारण-वद्-णिनि। १ सकल विषयमें कारणको स्वीकार करनेवाला, जो सब बातोंमें सबबका मानता हो। २ मुद्दई, शिकायत करनेवाला।

कारणवारि (सं० क्लो०) कारणस्वरूपं वारि, मध्यपदलो०। ब्रह्माण्डकी सृष्टिका कारणस्वरूप एकार्णव जल, असली पानी।

कारणविहीन (सं० त्रि०) कारणरहित, बेसबब।

कारणशरीर (सं० क्लो०) कारणं अविद्या सैव शरीरम्, कर्मधा०। सत्वप्रधान अज्ञान, रूहके रहनेकी जगह। सुषुप्तिकाल पर जो जीवगत अज्ञान अहङ्कारादि शरीरोत्पादक पदार्थके संस्कारमात्रमें अवशिष्ट रहता, वेदान्तमतसे उसीका नाम 'कारणशरीर' पड़ता है। इसका संस्कृत पर्याय—आनन्दमय कोष और सुषुप्ति है।

कारणा (सं० स्त्री०) कारयति हिंसयति, कृ-णिच्-युच्-टाप्। ण्यासश्रन्थो युच्। पा ३।३।१०७। १ यातना, तकलीफ। २ गाढ़ वेदना, गहरा दर्द। ३ नरकयन्त्रणा, दोज़खकी तकलीफ।

कारणान्वित (सं० त्रि०) हेतुयुक्त, सबब रखनेवाला।

कारणाभाव (सं० पु०) कारणस्य अभावः, ६-तत्। कारणका अभाव, सबबकी अदममौजूदगी।

कारणिक (सं० त्रि०) करणैः कारणैर्वा चरति, करण वा कारण-ठक्। चरति। पा ४।४।८। १ परीक्षक, जांच करनेवाला। (करणस्य इदम्, करण-ठञ् जिठ् वा) २ करणसम्बन्धीय।

कारणोत्तर (सं० क्लो०) कारणेन उत्तरम्, ३ तत्। असामान्य उत्तर, ख़ास जवाब। विचारस्थलमें वादीकी बात सत्य मानते भी जो उत्तर प्रतिकूल कारण देखा कर दिया जाता, वही 'कारणोत्तर' कहाता है। इसका संस्कृत नामान्तर प्रत्यवस्कन्दन है। कारणोत्तर तीन प्रकारका होता है—बलवत्, तुल्यबल और दुर्बल। बलवत् यथा,—'वास्तविक मैंने आपसे सौ रुपये कर्ज लिये थे, किन्तु आपको वह दे

दिये।' तुल्यत्व यथा,—वादीने कहा—मैं युष्मात्-क्रमसे इस जमीनको दखल करते आया हूं, इस लिये यह मेरी है।' प्रतिवादीने उत्तर दिया,—मैं भी युष्मात्क्रमसे इस जमीनको दखल करते आया हूं इस लिये यह मेरी है। दुर्बल यथा,—वादीने कहा—मैं यह जमीन् युष्मात्क्रमसे दखल करते आया हूं इस लिये यह मेरी है। प्रतिवादीने उत्तर दिया,—मैं दश बर्षसे यह जमीन् दखल करते आया हूं, इस लिये यह मेरी है।' (व्यवहारतत्त्व)

कारणोपाधि (सं० पु०) ईश्वर।

कारण्डव (सं० पु०) कारण्डं वाति अथवा कारण्डक इव कारण्डं तदाकारं वाति, कारण्ड-वा-क। आतोऽनुपसर्गे कः। पा ३।२।३। १ हंसविशेष, कोई बतक। २ लम्ब चरण कृष्णवर्ण पक्षी, उसके पैरोंको काली हरतालो चिड़िया।

कारण्डववती (सं० स्त्री०) कारण्डव हंसविशेषः अस्ति अस्याम्, कारण्डव मतुप्-ङीप् मस्य वः। नदीविशेष एक दरया। इसमें हंस बहुत रहते हैं।

कारण्डव्यूह (सं० पु०) १ कोई योग। २ बौद्धोंका कोई ग्रन्थ।

कारतूस (हिं० पु०) टोटा, एक बन्दूकी नली (Cartridge)। इसमें गोली बारूद और मसाला भरते हैं। कारतूसकी एक ओर टोपी लगती है।

कारन (हिं० पु०) १ कारण, सबब। (स्त्री०) २ करुणा, रहम।

कारनिस (अं० स्त्री० Cornice) प्राकारशीर्ष, छीका, कंगनी कगर।

कारनी (हिं० पु०) १ ईश्वर, प्रेरक। २ भेदक, भेदिया।

कारन्धम (सं० पु०) करन्धमस्य अपत्यम्, करन्धम अण्। १ करन्धम राजाके पुत्र अवीक्षित् (करन्धमस्य पौत्रापत्यम्) २ करन्धमके पौत्र मरुत्त। (क्ली०) ३ नारीतीर्थ विशेष दक्षिणका कोई तीर्थ। महाभारतमें इस तीर्थकी उत्पत्ति कथा लिखी है,—अर्जुनको तीर्थ-भ्रमणके समय तपस्वियोंने अगस्त्य, सौभद्र, पौलोम, कारन्धम और भारद्वाज पांच तीर्थ दिखाये थे। अर्जुनने उन तीर्थोंको जनशून्य देख ऋषियोंसे इसका कारण पूछा। उन्होंने कहा कि उन पांचों तीर्थोंमें बड़ा जन्तुका आतङ्क रहा था, उसीसे कोई जलमें उतरता न रहा। अर्जुन यह बात सुनके एक तीर्थमें उतर पड़े। उसी समय जलजन्तुने उनका पादरेश पकड़ा था। किन्तु वह उससे न डरे। फिर उन्होंने बलप्रयोगसे कुम्भीरको तीरमें उत्तोलन किया। वह कुम्भीर तीरमें उठते ही एक सुन्दरी नारीकी मूर्ति बन गया। अर्जुनने यह देख नितान्त विस्मयापन्न हो उससे पूछा—यह कौन था, क्यों इस प्रकार कुम्भीरमूर्तिमें जलके मध्य रहता था। नारी उन्हें उत्तर देने लगी कि वह अप्सरा थीं। किसी समय वह अपनी चार सखियोंके साथ इन्द्रालय जाती थीं। राहमें उन्होंने एक रूपवान् ब्राह्मण युवकको तपस्या करते देखा। फिर वह उनकी तपस्या भङ्ग करनेको नाचने-गाने लगीं। ब्राह्मणने उससे क्रुद्ध हो अभिशाप दिया था—'तुम पांचों जलजन्तु बन चिरकाल जलमें विचरण करो।' उन्होंने उस अभिशाप सुनके रोते रोते उनसे क्षमा मांगी। उन्होंने कहा जब यह कुम्भीररूपसे किसी पुरुषको पकड़ेंगी, तभी शापमुक्त हो अपना पूर्व रूपको पहुंचेंगी। फिर यह जिन जलाशयोंमें जलजन्तुरूपसे रहेंगी, वह नारीतीर्थ नामसे पवित्र तीर्थको ख्याति-लाभ करेंगे। ब्राह्मणके उस बातसे कथञ्चित् आश्वस्त हो वह चिन्ता करती थीं—हमें कुम्भीररूप धारण कर कहां अवस्थान करना पड़ेगा, कहां मुक्तिकारक पुरुषका दर्शन मिलेगा। उसी समय देवर्षि नारदने वहां पहुंच उन पांचों ख्याम उनको बताके कहा था कि अल्प दिनमें ही अर्जुन यहां पहुंच उनको मुक्त कर देंगे। उसी आशासे वह उन पांच जलाशयमें रहती थीं। फिर नारीने कहा, जैसे अर्जुनके अनुग्रहसे उन्होंने मुक्ति पायी, वैसे ही वह उनकी चारो सखियोंको भी अनुग्रहपूर्वक मुक्त करके उपकार करें। अर्जुनने तदनुसार क्रम क्रम दूसरे चार तीर्थोंमें सखियोंको मुक्त किया।

(भारत, आदि २१७ अ०)

कारन्धमी (सं० पु०) कर एव धातुः तं धमति,

कारष्णा-इति पृषोदरादित्वात् साधुः। १ कांस्यकार, कसेरा। २ धातुपरीक्षक, मादनयात जाननेवाला।

कारपचन (सं० पु०) देशविशेष, एक मुल्क। यह यमुनाके निकट अवस्थित है।

कारपरदाज़ (फ़ा० वि०) कर्मचारी, कारगुज़ार।

कारपरदाज़ी (फ़ा० स्त्री०) कार्यकी सम्पादना, कारगुज़ारी।

कारबन (अ० पु० Carbon) अङ्गार, कोयला। यह एक भौतिक पदार्थ है। प्रकृतपक्षमें कारबन कोई धातु नहीं। सम्पूर्ण सकरण मिश्रणमें यह अधिकांश पाया जाता है। कारबन दहनशील है। यह दग्ध काष्ठका अधोभाग बनाता और खनिज अङ्गारमें बहुत लग जाता है। अपनी विशुद्ध स्फटिकरूप घनीभूत स्थितिमें कारबन हीरा होता है। एक परिमाणशील स्फटिकमें यह समग्र विदित पदार्थसे कठिन है। कारबन सीसेमें अधिक पहुंच जाता, मृदु देखाता और पत्राकार पाता है। आक्सिजेनके साथ मिलने पर यह कारबोनिक एसिड '(कोयलेका तेज़ाब) और कारबोनिक ओक्साइड (कोयलेका लुब्बलुबाब) बनाता है। हाइड्रोजेन (पानीकी हवा) के साथ इसका संयोग लगने पर कई पानीकी हवायें तैयार होती हैं। उनमें प्रकाश करनेको एक असाधारण गेस (वायु) है।

कारबोनिक (अं० वि० Carbonic) अङ्गारसम्बन्धीय, कोयलेके मुताल्लिक़। कोयलेके तेज़ाबको कारबोनिक एसिड (Carbonic-acid) और कोयलेके तेज़ाबकी हवाको कारबोनिक एसिड गेस (Carbonic-acid-gas) कहते हैं।

कारबोलिक (अं० वि० Carbolic) १ अङ्गारके सर्जरससे सम्बन्ध रखनेवाला, जो अलकतरेसे सरोकार रखता हो। (पु०) २ पदार्थविशेष, एक चीज़। यह अलकतरेसे निकलता है। कारबोलिक फोड़ा फुनसी और खुजलीके कीडे मार देता है। इससे तेल और साबुन भी बनाते हैं।

कारबोलिक एसिड (अ० पु० Carbolic acid) तैलमय द्रवविशेष, एक तेलिया अर्क। यह वर्णविहीन रहता और खाया जानेसे मुखमें जलन उत्पन्न करता है। कारबोलिक एसिड अलकतरेसे बनाया जाता है।

कारभ (सं० त्रि०) करभस्य इदम्, करभ-अण्। १ हस्तिशावक-सम्बन्धीय, हाथीके बच्चेके मुताल्लिक़। २ उष्ट्रसम्बन्धीय, ऊंटसे सरोकार रखनेवाला।

कारभ (ऊंटका) दुग्ध रुक्ष, उष्णवीर्य, किञ्चित् लवण एवं स्वादुरस, लघु और शोथ, गुल्म, उदर, अर्श, कुष्ठ, क्रमि तथा विषरोगनाशक है। ऊंटके दूधका दही ईषत् क्षाररस, गुरु, भेदकारक, पाकमें कटुरस और वायु, अर्श, क्रमि तथा उदररोग पर हितकारक होता है। कारभ घृत पाकमें कटुरस, अग्निदीपक और कफ, वायु, कुष्ठ, गुल्म, उदर, शोथ, क्रमि तथा विषरोगनाशक है। उष्ट्रका मूत्र शोथ, कुष्ठ, उदर, उन्माद, वायु, क्रमि और अर्शोनाशक होता है। (सुश्रुत)

कारभू (सं० स्त्री०) कर एव कारः तस्य भूः, ६-तत्। करकी भूमि, लगानकी जमीन्। जिस भूमि पर राजकर लगता, उसका नाम 'कारभू' पड़ता है।

कारमिहिका (सं० स्त्री०) कारं जलसम्बन्धं मेहति, कार-मिह-क स्वार्थे कन्-टाप् अत इत्वं यद्वा कारस्य तुषारशैलस्य मिहिका नीहार इव, उपमि०। कर्पूर, कपूर।

कारम्भा (सं० स्त्री०) कु ईषत् रम्भा इव, कोः कादेशः। प्रियङ्गु, एक खुशबूदार बेल।

कारयत् (सं० त्रि०) करनेको शक्ति वा अधिकार देनेवाला, जो कराता हो।

कारयमाण (सं० त्रि०) नियत कार्य करनेवाला, हुक्म बजानेवाला।

कारयितव्य (सं० त्रि०) कृ-णिच्-तव्य। करानेके उपयुक्त, जो कराने लायक़ हो।

कारयितव्यदक्ष (सं० त्रि०) किया जाने लायक़, काम करनेमें होशियार।

कारयिता (सं० त्रि०) कारयति, कृ-णिच्-तृच्। करानेवाला, दूसरेको काममें लगानेवाला।

कारयिष्णु (सं० त्रि०) कृ-णिच्-इष्णुच्। कारयिता, करानेवाला।

कारवाई (फा॰ स्त्री॰) १ काम, काज। २ कार्यदक्षता, कामका बनाव। ३ प्रबन्ध, तदबीर।

कारव (सं॰ पु॰) का इति रवो यस्य कुत्सितो रवो यस्य वा, बहुव्री॰। काक कौआ।

कारवी (सं॰ स्त्री॰) कारा गतस्याने विविधा यस्याः, बहुव्री॰। १ क्षुद्र कारवेल्ल करेली। यह तिक्त उष्ण, दीपन, और कफ, वात अरोचक तथा रक्तदोष नाशक है। (राजनिघण्टु) इसका पत्र हिम, भेदी, लघु तिक्त, वातघ्न और पित्त रक्त नाशक, पाण्डु कफ, मेह तथा कृमिको दूर करने- वाला होता है। (भावप्र॰) २ कटुजीरा, करेला।

कारवाँ (फा॰ पु॰) यात्रियोंका समूह, मुसाफिरोंका झुण्ड। यह एक देशसे दूसरे देशको जाता है। इसके ठहरनेको जगह 'कारवाँ सराय' कहलाती है।

कारवाड़—बम्बई प्रान्तके अन्तर्गत उत्तर कनाड़ेका प्रधान नगर। यह अक्षा॰ १४ ५॰ उ॰ और देशा॰ ७४ १४ पू॰ पर अवस्थित है। लोकसंख्या साढ़े तेरह हजारसे अधिक होगी। कारवाड़ एक बन्दर है। इस बन्दरके सामने उपसागरमें अनेक छोटे छोटे द्वीप हैं। उन्हें कारवाड़को दीपावली कहते हैं। उनमें एकका नाम देवगड़ है। देवगड़में एक आलोक स्तम्भ बना है। समुद्रसे १८० हाथ ऊँचे उसकी अग्निशिखा प्रकाशित होती है। यह आलोक १२ कोससे देख पड़ता है। जहांसे दूर जहाज उस आलोक देख समझते कि बन्दर दूर नहीं। तदनुसार वही ओर जहाज परिचालित होते हैं।

कारवाड़के उपकूलसे ढाई कोस दक्षिण पश्चिम समुद्रके गर्भमें अञ्जदीव नामक एक छोटा द्वीप है। उसमें पोर्तगीजोंका उपनिवेश है। अति अल्प दिन हुवे यह नगर बसा था। पहले यहां धीवरमात्र रहे। १८६२ ई॰ को कनाड़ेका उत्तरभाग बम्बई प्रान्तके अन्तर्गत हुआ। उसी समयसे कारवाड़की उन्नतिका आरम्भ है। आजकल उसकी म्युनिसि- पलिटीके अधीन ८ ग्राम हैं।

पुराना कारवाड़ नये कारवाड़से ३॥ कोस पूर्व काली नदीके तीर अवस्थित था। पहले यहां वाणिज्यका विलक्षण प्रादुर्भाव रहा और यह स्थान बिजयपुरके अन्तर्गत था। कारवाड़के देसाई अर्थात् भूस्वामीके तत्त्वावधायक बिजयपुरके प्रधान कर्मचारी माने जाते थे। १६३८ ई॰ को यहां अंगरेजोंको कोर्टेन कम्पनीने वाणिज्य आरम्भ किया। उसके तीन बरसों पश्चात् प्रायः ५० हजार रुपयेके मालके अच्छे अच्छे मुसलमानी कपड़े जमा रहते थे। इलायची, दालचीनी, सोंठ और दहाड़ी नामक नीले रंगका वस्त्र यहांसे बाहर भेजा जाता था। १६६५ ई॰ को महाराष्ट्राधिपति शिवाजीने यहांके अंगरेज वणिकोंसे ११२०) रु॰ दण्ड वसूल किया। फिर १६७१ ई॰ को कारवाड़के देसाईने अंगरेजोंकी कोठी पर धावा मारा। दूसरे बरस उन्होंने नगर जलाया था, किन्तु अंगरेजोंके कारखानेको हाथ न लगाया। वहां अंगरेज अधिवासियोंके प्रति यत्न भी किया गया। उसके पीछे शिवाजीने भी अंगरेजोंको सताया न था। किन्तु स्थानीय प्रभुवोंके अत्याचारसे १६७६ ई॰ को अंगरेज अपनी कोठी उठा ले गये। तीन बरस पीछे फिर अंगरेजोंने कोठी खोल कार्य आरम्भ किया। दो वर्ष पीछे १६८३ ई॰ को एक विषम काण्ड हुआ। विलायती जहाजके विलायती नाविक हिन्दुवोंके मवेशी मारने लगे। यह हिन्दुवोंसे सहा न गया। अंगरेजोंको कोठी उठानेको हिन्दुवोंने घेरा डाल दी। सत्रहवीं शताब्दीके शेष भाग तक अंगरेजी व्यवसाय कारवाड़से उठानेके लिये कोकन्स्थान विशेष चेष्टित हुये किन्तु कृतकार्य हो न सके। १६८० ई॰ को महाराष्ट्रोंने कारवाड़में लूट- मार करके अंगरेजोंका विशेष अनिष्ट किया था। १७१५ ई॰ को नगरका पुरातन दुर्ग गिरा सोन्दाधि पतिने सदाशिवगड़ नामक एक दुर्ग बनाया। फिर वह अंगरेजों पर अत्याचार करने लगे। उससे बराबर १७२० ई॰ को अंगरेजोंने अपनी कोठी उठा डाली। १७५० ई॰ को वह फिर आ पहुंचे। किन्तु दो वर्ष पीछे पोर्तगीजोंने [illegible] सदाशिवगड़ दखल किया था। उसके पीछे कारवाड़का वाणिज्य पूर्वरीतिसे उनके हाथसे चला गया। इसीसे अंगरेजोंने अपना कारबार उठा दिया था।

कारवारि (सं० क्लो०) करकाजल, ओलेका पानी। यह विशद, गुरु, रूक्ष, स्थिर, घन, कफकारक, वातघ्न, अतिशीत और पित्तविनाशक होता है। (वैद्यकनिघण्टु)

कारवी (सं० स्त्री०) कारं श्रवति, श्रु हिंसायां स्वार्थे णिच्-क्विप्-पृष-अण्-ङीप्। १ मधुरिका, सौंफ। २ कृष्णजीरक, कालाजीरा। ३ तेजपत्र। ४ गुडत्वक्। ५ शताह्वा, सतावर। ६ अजमोदा। ७ चन्द्रशूर। ८ मेथिका, मेथी। ९ सूक्ष्म कृष्णजीरक, पतला काला जीरा। १० हिङ्गुपत्री। ११ क्षुद्रकारवेल्ली, छोटी करेली। १२ स्त्रीजाति काक, मादा कौवा।

कारवीरेय (सं० त्रि०) कारवीरेण निर्वृत्तः, करवीर-ढञ् संख्यादित्वात्। करवीरसे उत्पन्न, कनेरसे निकला हुवा।

कारवेल्ल (सं० पु०-क्ली०) कारेण वातगमनेन वेल्लति चलति, कार-वेल्ल अच्। १ स्वनामख्यात फलशाकलता, करेलेकी बेल। इसका संस्कृत पर्याय—कठिल्ल है। भावप्रकाशके मतसे यह शीतल, भेदक, लघु, तिक्तरस, और ज्वर, पित्त, कफ, रक्त, पाण्डु, मेह तथा कृमिरोग-नाशक होता है। २ क्षुद्र कारवेल्ल, छोटा करेला। इसका संस्कृत पर्याय—कठिल्लक, सुषवी, सुषवी, काण्डुर, काण्डकटुक, सुकाण्ड, उग्रकाण्ड, कठिल्ल, नामासंवेदन और पटु है। राजवल्लभके मतानुसार इसका पुष्प धारक और कृमि तथा पित्तरोगमें हित-कारक है। फल रुचिकर और शुक्र, कफ तथा पित्त-नाशक है। करेला देखो।

कारवेल्लक (सं० पु०-क्ली०) कारवेल्ल एव स्वार्थे कन्। करेला।

कारवेल्लिका (सं० स्त्री०) कारवेल्लक-टाप् अत इत्वम्। क्षुद्र कारवेल्ल, छोटा करेला।

कारवेल्ली (सं० स्त्री०) कारवेल्ल अल्पार्थे ङीप्। क्षुद्र कारवेल्ल, करेली।

कारव्य (वै० त्रि०) कारु (गायक) सम्बन्धीय अथर्व-वेदका एक मन्त्र। कषायभेद, एक काढ़ा। कृष्णजीरक, कुष्ठ, एरण्डमूल, जयन्ती, शुण्ठी, गुडूची, दशमूल, शटी, कर्कटशृङ्गी, दुरालभा, भार्गी तथा पुनर्णवा आठ आठ रत्ति ३२ तोले गोमूत्रमें पकाने और ८ तोले शेष रहते उतारनेसे यह तैयार होता है। इसका सेवन अभिन्यासज्वरमें रोगोंको लाभ-दायक है। (भैषज्यरत्नावली)

कारसाज़ (फ़ा० वि०) कार्य संभालनेवाला, जो बिगड़ा काम बनाता हो।

कारसाज़ी (फ़ा० स्त्री०) १ कार्यसम्पादन, कामका संभाल। २ छल, फ़रेब, धोका।

कारस्कर (सं० पु०) कारं वधं करोति, कृ-ट। हेतु ताच्छील्यानुलोम्येषु। पा ३।२।२०। १ कुपीलुवृक्ष, इसका संस्कृत पर्याय—किम्पाक, विषतिन्दु, कारद्रुम, रम्यफल, कुपीलु और कालकूट है। राजनिघण्टुके मतसे यह कटु, तिक्तरस, उष्णवीर्य और कुष्ठ, वायु, रक्त, कण्ड, कफ, अर्श तथा व्रणनाशक है। २ वृक्षसामान्य।

कारस्कराटिका (सं० स्त्री०) कारस्कर इव अटति, कारस्कर-अट्-ण्वुल् टाप् अत इत्वम्। कर्णजलौका, कानसलाई।

कारस्तानी (फ़ा० स्त्री०) १ प्रयत्न, तदबीर। २ छल, धोका।

कारा (सं० स्त्री०) कीर्यते क्षिप्यते दण्डार्थी यस्याम्। कृ-अङ्, गुणः दीर्घत्वं निपातनात्। षिद्भिदादिभ्योऽङ्। पा ३।३।१०४। १ कारागार, कैदखाना। इसका संस्कृत पर्याय—बन्धनालय और बधाङ्क है। २ दूती। ३ वीणाका अधःस्थित वक्र काष्ठ सितारके नीचेकी टेढ़ी लकड़ी। ४ सुवर्णकारिका, सोनारिन। ५ बन्धन, कैद। ७ पीड़ा, तकलीफ़। ८ शब्द, आवाज़। ९ दुःख, दर्द।

कारा (हिं० वि०) कृष्णवर्ण, काला।

कारा—युक्तप्रान्तके इलाहाबाद जिलेकी सिराथू तह-सीलका एक नगर। यह अक्षा० २५° ४१' ५५" तथा देशा० ८१° २४' २१" पू० पर इलाहाबाद नगरसे २० कोस उत्तरपश्चिम गङ्गाकी दक्षिण दिक् अवस्थित है। लोकसंख्या कुछ हजारसे अधिक है। युक्तप्रदेशके ९ प्रधान तीर्थोंमें एक यह भी है। वहां कालेश्वरका मन्दिर बना है। उसीसे उसका एक नाम काल नगर है। पुरातन ताम्रशासनमें कालखल नामसे

उसका उल्लेख है। फिर उसको कर्कोटक नागको कहते हैं। कथनानुसार विष्णुचक्रसे खण्डित हो सतीदेवीके करका एक अंश यहां गिरा था। मुसलमान परिव्राजक इब्न बतूताके ग्रन्थमें उस तीर्थको बात लिखी गयी है। आषाढ़ मासके कृष्ण पक्षमें प्राय लक्षाधिक लोग कारा जा गङ्गास्नान करते हैं।

यहां एक अति पुरातन दुर्ग है। वह ठीक गङ्गा पर अवस्थित है। आजकल उसका भग्नदशा है। दुर्ग दैर्घ्य एक पक्षमें प्राय ५०० और ६६० हाथ होगा। संवत् १०८१ विक्रमाब्दके (१०२५ ई०) राजा यशोपालकी कितनी ही मुद्रा मिली है। सुतरां निर्देश करना दुःसाध्य है कि—दुर्ग ठीक भी कितने दिनका पुराना है। किसी किसीके कथनानुसार कन्नौजके राजा जयचन्द्रने उसे बनाया था।

दुर्गके निम्नभागके बाजार घाट पर एक मन्दिर देख पड़ता है। उसके चारो ओर चबूतरा या दालान है। उसमें दुर्गाकी मस्तकशून्य एक मूर्ति पड़ी है। किसी स्थान पर एक शिवलिङ्ग और स्थानान्तरमें नन्दीकी मूर्ति है। सम्भवतः मुसलमानोंने ही उस मन्दिरको यह दशा की होगी। घाटके निकट एक स्तूप है। उसके चारो ओर स्तम्भाकृति मीनार खड़े हैं।

मुसलमानोंकी भी बहुतसी इमारतें यहां देख पड़ती हैं। उनमें ख्वाजाका कबरस्थान, जामा मसजिद, शेख सुलतानका रोजा वगैरह प्रधान हैं। निकट ही दानानगरकी एक मसजिद और दो कबर स्थान कबदरिया गांवके कुतुब आलमका रोजा और शाहजादपुरके अहादाद खांकी मसजिद भी देखने योग्य है।

पहले यह नगर बहुत समृद्धिशाली और विस्तृत था। गङ्गाकी पश्चिम दिक् इसकी लंबाई एक कोस और चौड़ाई आध कोस रही। पुरातन नगरका भग्नावशेष आज भी देख पड़ता है। पूर्व इस स्थान पर युक्तप्रदेशका प्रधान नगर था। किन्तु सम्राट् अकबर इलाहाबादको प्रधान नगर उठा ले गये। उसीसे काराकी मर्यादा नष्ट हुई।

कारा नगर मुसलमानोंकी अनेक ऐतिहासिक घटनाओंके लिये भी प्रसिद्ध है। अवधके नवाब आसफ उद्-दौलाने काराके अच्छे अच्छे भवन तोड़े थे। फिर उन्हींका सामान ले जाकर नवाबने लखनऊमें अपनी इमारतें बनवायीं।

काराके बढ़िया कंबल बनता है। यहां नाना विध शस्यादि भी उत्पन्न होता है। कारेका कागज भी खराब नहीं। चमड़ेका और पत्थरकुलके साथ कपड़े बासन और और अनाजका कारबार चलता है।

कारागार (सं० क्लो०) कारा एव आगार कारायै बन्धनाय वा आगारम्। बन्धनगृह, कैदखाना।

कारागुप्त (सं० त्रि०) कारायां बन्धनागारे गुप्तः रक्षः, ७-तत्। कारावद्ध कैदी।

कारागृह (सं० क्लो०) कारा एव गृहं कारायै बन्धनाय वा गृहम्। कारागार, कैदखाना, जेल।

कारागोला—बिहार प्रान्तके पुरनिया जिलेका एक गांव। यह अक्षा० २५ २६´ ६″ उ० और देशा० ८७ १०´ ११″ पू० पर अवस्थित है। उत्तरपश्चिम रेल निकलनेसे पहले लोग कारागोलको राह हो दार्जिलिङ्ग जाते थे। आजकल भी साहबगञ्ज और कारागोलके बीच जहाज (स्टीमर) चलता है। किन्तु कारागोलके सामने रेत पड़ जानेसे वर्षाकाल व्यतीत यात्रियोंको एक कोस दूर ही उतार देते हैं। यहां एक बड़ा मेला लगता है। पहले यही मेला मालदह जिलेके नोरवेली स्थानमें होता था। फिर कुछ समय तक मेला पुरनियामें रहा, १८५१ ई० से कारागोलेमें लगने लगा। यहां दरभङ्गाके महाराजकी कुछ बालुकामय भूमि पड़ी, जो मेलाका स्थान बनी है। १० दिन धूमधाम रहती है। कितनी ही दुकानें लगती हैं। नाना प्रकारके रेशमी कपड़े तथा सूती वस्त्र, लौहद्रव्य और प्रयोजनीय वस्तु बिकती हैं। नेपाली घोड़े, मुगालो, कुत्ते, बैल, चंवर आदि और टट्टू आते हैं। मेलेमें कोई तीस चालीस हजार लोग आते होंगे।

काराधुनी (सं० स्त्री०) कारायाः मन्दस्य पाहनी

उत्पादिका, ६-तत्। शब्दोत्पादक शङ्ख प्रभृति, एक बाजा।

कारापथ (सं० पु०) देशविशेष, एक मुल्क। इस देशके शासनकर्ता लक्ष्मणपुत्र अङ्गद और चन्द्रकेतु थे।

"अङ्गदं चन्द्रकेतुञ्च लक्ष्मणोऽप्यात्मसम्भवम्।
शासनात् रघुनाथस्य चक्रे कारापथेश्वरौ॥" (रघुवंश १५।९०)

कारापाल (सं० पु०) कारां कारागारं पालयति रक्षति, कारा-पाल-अच्। कारागार-रक्षक, कैद-खानेका मुहाफिज।

काराभू (सं० स्त्री०) काराये बन्धनाय भूः स्थानम्। बन्धनस्थान, कैदकी जगह।

कारायिका (सं० स्त्री०) कं जलं आराति विचरण-स्थानत्वेन गृह्णाति, क-आ-रा-ण्वुल्-टाप् इत्वञ्च। १ सारसी, मादा सारस। २ बलाका, मादा बगला।

कारावर (सं० पु०) चर्मकार जातिविशेष, एक चमार निषादके औरस और वैदेही स्त्रीके गर्भसे यह जाति उत्पन्न है।

"कारावरो निषादात्तु चर्मकारः प्रसूयते।" (मनु १०।३६)

कारावास (सं० पु०) कारायां वासः, ७-तत्। कारा-गृहमें रुद्ध रहनेकी स्थिति, कैद।

कारावेश्म (सं० क्ली०) कारा एव काराय वा वेश्म गृहम्। कारागार, कैदखाना, जेल।

काराष्ट्र (सं० पु०) १ कराष्ट्रदेशीय ब्राह्मण। २ कराष्ट्र देश। महाभारतमें यह करहाटक नामसे उक्त है। वर्तमान नाम कराड़ है। कराड़ देखो।

कारि (सं० स्त्री०) क्रियते असौ, कृ इञ्। विभाषाख्यान-परिप्रश्नयोरिञ्च। पा ३।३।११०। १ क्रिया, फेल, काम। (त्रि०) करोति, कृ-इञ्। कृञुण्दीर्घा कारुषु। उण् ४।१२८। २ शिल्पी, कारीगर।

कारिक (सं० क्ली०) कारि स्वार्थे कन्। क्रिया, काम।

कारिक (हिं० स्त्री०) खरकुत, करघेकी एक चिकनी लकड़ी। यह तानेको ठीक करती है।

क़ारिक़ (अ० पु०) क़ुरकी करनेवाला।

कारिकर (सं० त्रि०) कारिं क्रियां शिल्पकर्म इति यावत् करोति, कारि-कृ ट। शिल्पकारक, कारीगर।

कारिकरी (सं० स्त्री०) कारिकर-ङीप्। शिल्प-कारिणी, कारीगर औरत।

कारिका (सं० स्त्री०) करोतीति, कृ-ण्वुल्-टाप् अत इत्वम्। १ अभिनेत्री, नटिनी। २ क्रिया, काम। ३ विवरण, तफसील। ४ श्लोक, शेर। ५ शिल्प, कारीगरी। ६ यातना, तकलीफ। ७ वृद्धि, सूद। ८ काष्ठकारी, कटैया। ९ बहु अर्थबोधक अल्प अक्षर, विशिष्ट कविता, एक शायरी। इसमें थोड़ेसे बड़ा मतलब निकालते हैं। १० कर्त्री, करनेवाली। ११ मर्यादा, हद। १२ एक सङ्कीर्ण रागिणी।

कारिकाल—करमण्डल उपकूलका फरासीसी उपनिवेश और नगर। तामिल भाषामें उसे 'कारिखाल' अर्थात् मछलीका नाला कहते हैं। उसके उत्तरपश्चिम एवं दक्षिण तञ्जोर राज्य और पूर्व बङ्गोपसागर है। कारिकाल प्रदेशमें कोई ११० ग्राम विद्यमान हैं। लोकसंख्या ८१ हजारसे अधिक है। कावेरी नदी पांच मुख हो कर वहांसे सागरमें जा गिरी है। उक्त प्रदेशके प्रधान नगरका भी नाम कारिकाल है। वह अक्षा० १०° ५५′ १०″ उ० और देशा० ७९° ५२′ २०″ पू० पर समुद्रसे कोई पौन कोस दूर अवस्थित है। सिंहलद्वीपके साथ कारिकालका बारहो मास चावलका वाणिज्य चलता है। उसको छोड़ आण्डा-मान द्वीप और फरासीके साथ भी वाणिज्य होता है। वहांसे नाना स्थानोंको भारतीय कुली भेजे जाते हैं। कारिकाल बन्दरमें एक आलोकगृह है। वह समुद्रसे २२ हाथ ऊपर स्थापित है।

१७३९ ई० को फरासीसियोंने कारिकाल जा एक दुर्ग निर्माण किया था। अल्पकाल पीछे ही राजासे फरासीसियोंका विवाद उपस्थित हुवा। १७४४ ई० को ५ वीं अपरेलको तञ्जोरराजने ससैन्य कारिकाल पर आक्रमण किया था। किन्तु १७४९ ई० को २१ वीं दिसम्बरको उन्होंने कारिकाल और तत्-संलग्न ८१ ग्राम फरासीसियोंको दे डाले। १७६० ई० को अंगरेज-सेनाने कारिकाल घेरा था। फरासी-सियोंने दश दिन अनवरत युद्ध किया अंतमें ५ वीं अपरेलको अंगरेजोंके हाथ आत्मसमर्पण किया। उसके पीछे फिर कारिकाल तीन बार अंगरेजोंके हाथ लगा। १८१७ ई० को १४ वीं जनवरीको उक्त स्थान सर्वदाके

किये फरासीसियोंको सौंप दिया गया। आज भी वहां फरासीसियोंका अधिकार है। भारतमें उनका प्रधान स्थान पुदिचेरी है। वहीके गवर्नरको गेज भारतमें अधिकारका शासनकार्य निर्वाहित होता है। आज भी वहां फरासीसियोंके साधारण तन्त्र प्रथा प्रचलित है। म्युनिसिपाल कौन्सिलको छोड़ वहां एक दूसरी सभा भी है। उसे लोकल कौन्सिल कहते हैं। उसमें भारतके स्वत्वाधिकारियोंके अधिकार व्यतीत दूसरे विषयोंकी भी आलोचना होती है। उनको छोड़ दूसरी भी एक सभा है। उसका नाम कौंसल जनरल (Consul General) है। पुदिचेरीमें उसका अधिवेशन होता है। उसमें भारतके प्रत्येक फरासीसी अधिकृत स्थानसे प्रतिनिधि भेजे जाते हैं। प्रतिनिधि जनसाधारण द्वारा निर्वाचित होते हैं। उसको छोड़ फरासीसको सिनेट और डिपुटी सभामें एक एक भारतीय प्रतिनिधि रहता है। वह प्रतिनिधि भारतकी प्रजा द्वारा निर्वाचित होते हैं। कार्य्यालयके सम-विभाग, पूर्त विभाग और शासनकार्यके विभागमें एक एक कर्ता (Chief) रहता है। भारतीय फरासीस गवरनमेण्टका भी एक फरासीस प्रतिनिधि कारिकालमें निवास करता है।

कारिख (हिं० स्त्री०) १ कालिमा स्याही, कालापन। २ कलङ्क लाञ्छन। ३ कज्जल काजल।

कारिणी (सं० स्त्री०) करोति, कृ णिनि-ङीप्। अपना कार्य निष्पादन करनेवाली स्त्री, जो औरत अपना काम कर डालती हो।

कारित (सं० त्रि०) कृ णिच् कर्मणि क्त। १ अन्य द्वारा सम्पादित कराया हुआ। (क्ली०) २ क्रिया विशेष, सुतारी अनु-सुतारी।

कारिन (हिं० पु०) काठबेल।

कारिता (सं० स्त्री०) कारित टाप्। अधिक वृद्धि, ज्यादा सूद।

"[illegible]
[illegible]" (विवा०चि०)

आपद् कालमें ऋणी वृद्धि जो अधिक सूद देना स्वीकार करता, उसीका नाम कारिता है।

कारितास्त्र (सं० त्रि०) अन्तमें कारित, जिसका स्पर्श बाना, जिसके अन्तोंमें सुतारी-अनु-सुतारी रही।

कारी (सं० पु०) करोति कृ-णिनि। कारक, कर्ता, करनेवाला। यह यौगिक शब्दके अन्तमें आता है।

कारी (सं० स्त्री०) कृणाति विक्षिप्त बाहुल्येनेति (?) कृ इण् ङीप्। वनाश्रयप्रसिद्ध क्षुपविशेष, एक पेड़। यह स्वल्पकारी और बाहुल्यकारी भेदसे दो प्रकारकी होती है। इसका संस्कृत पर्याय—कारिका, कार्या, गिरिका और करवल्लिका है। राजनिघण्टुके मतसे यह कड़वी एवं मीठी, पित्तनाशक, अग्निवर्धक, मलरोधक, रुचिकारक कफशोधक और भारी होती है।

कारी (फा० वि०) कारक, गहरा मर्मभेदी।

कारी (हिं०) काली देखो।

कारीगर (फा० पु०) १ शिल्पी, कारीगरी करनेवाला, जो हाथसे काम बनाता हो। (वि०) २ निपुण, हुनरमन्द।

कारीगरी (फा० स्त्री०) १ शिल्प, हाथका काम। २ रचना, बनावट।

कारीझारी (हिं० स्त्री०) कृष्णजीरक, काली जीरी।

कारीर (सं० क्ली०) करीरस्य अवयवः, करीर अण्। पलाशादिभ्यो वा। पा ४।३।१४१। १ करीर फल, करीलका फल। २ करीरपुष्प, करीलका फूल। करीलका फल कटु, भारी, उष्ण, रुचिप्रद, कफनिःसारक, किञ्चित् कषाय तथा वातनाशक है और पुष्प भेदी, कटुक, कफनाशक, पित्तकर, कषाय, रुचिकर, मल एवं आनाह होता है। (वैद्यकनिघण्टु) (त्रि०) २ बंधा हुआ २ निर्मित, बांसको बाड़का बना हुआ। ३ करीरजातसम्बन्धीय, करीलके जालसे सरोकार रखनेवाला।

कारीरी (सं० स्त्री०) कार् (कं जलं आकृति, क ईर् णिच्) घञर्थेक ईरयति, कार ईर् अण्-ङीप्। वृष्टिके लिये किया जानेवाला एक यज्ञ।

कारीरी (सं० स्त्री०) करीरस्य अवयवः, करीर अण्। १ कारीर, बांसकी डाल या बाल। (त्रि०) २ करीरजातसम्बन्धीय, करीलके जालसे सरोकार रखनेवाला।

कारीष (सं० क्ली०) करीषाणां समूहः, करीष अण्।

१ करीषसमूह, कण्डे या गोबरका ढेर। (त्रि०) २ करीषसे उत्पन्न होनेवाला जो गोबरसे निकला हो।

कारीषि (सं० पु०) १ व्यक्तिविशेष, कोई शख्स। २ वंशविशेष, एक खान्दान या घराना।

कारु (सं० पु०) करोति, कृ-उण्। (कृवापाजिमिस्वदिसाध्यशूभ्य उण्। उण् १।१।) १ विश्वकर्मा, (भावे उण्) २ शिल्प, कारीगरी। ३ शिल्पी, दस्तकार। ४ कवि, शायर, बड़ाई करनेवाला (त्रि०) ५ बनानेवाला। ६ भयावह, खौफनाक।

कारुक (सं० त्रि०) कारु स्वार्थे कन्। १ शिल्पी, काम बनानेवाला। (पु०) २ कर्मरङ्ग वृक्ष, कमरखका पेड़।

कारुककर्म (सं० क्ली०) सूपकार मर्म, बवर्चीपन।

कारुचौर (सं० पु०) कारुणा शिल्पेन चोरयति, कारु-चुर-अच्। सन्धिचौर, सेंध लगानेवाला चोर।

कारुज (सं० पु०) कं जलं आरुजति, का-आ-रुज क। १ करभ, हाथीका बच्चा। २ फेन, झाग। ३ वल्मीक, चीटीका टीला। ४ नागकेशर। ५ गैरिक, गेरू। (कारुतो जायते, कारु-जन-ड) ६ शिल्पिनिर्मित चित्र, कारीगरकी बनायी तसवीर। ७ शरीरमें स्वतः तिलकी भांति काला काला निकलनेवाला चिह्न।

तिलकालक देखो।

कारुणिक (सं० त्रि०) करुणायां शीलमस्य, करुणा-ठक्। दयालु, मेहरबान्।

कारुण्डिका (सं० स्त्री०) कारुण्डी स्वार्थे कन्-टाप्, ह्रस्वश्च। जलौका, जोंक।

कारुण्डी (सं० स्त्री०) कुत्सिता ईषत् वा रुण्डी मूर्ध्वहीन इव कोः कादेशः। जलौका जोंक।

कारुण्य (सं० क्ली०) कारुणस्य भावः करुणा एव वा, करुणा-ष्यञ्। करुणा, मेहरबानी। स्वार्थ छोड़ दूसरेके दुःख निवारणकी इच्छाका नाम कारुण्य है।

कारुण्यसागर (सं० पु०) ज्वरातिसारका एक रस, बोखारके दस्तोंकी एक दवा। पारेका भस्म (भस्म न मिलनेसे शुद्ध पारा) १ तोला, गन्धक २ तोला तथा अभ्र २ तोला सर्षपतैलमें घोंट और भृङ्गराजके रसमें पीस प्रहर काल वालुका यन्त्र वा मृत्कर्पटमें पकाते हैं। फिर यवक्षार, सर्जिक्षार, सोहागा, विट, सेन्धव, सौवर, सांभर, काचकलवण, त्रिकटु (सोंठ, मिर्च, पीपल), चीतेकी जड़, विष, जीरा और विडङ्ग सबका ५ तोला काल्क डालनेसे यह औषध बनता है।

(रसेन्द्रसारसंग्रह)

कारूष (सं० पु०) करूषस्य राजा। १ करूष देशके अधिपति, दन्तवक्र। (करूषोऽभिजन एषाम्) करूष-देशवासी। इस अर्थमें यह शब्द नित्य बहुवचनान्त रहता है। ३ मनुके पुत्र।

कारूषक (सं० त्रि०) कारूष-स्वार्थे कन्। १ करूष-देशवासी। (पु०) २ करूषदेशके राजा। सर कनिङ्गाम-के मतसे वर्तमान शाहाबाद जिला ही प्राचीन करूष-देश है।

कारून् (अ० पु०) १ हजरत मूसाके चचेरे भ्राता। यह बड़े धनी थे, परन्तु कभी खैरात न करते थे। इनके खजानेकी चाबियां चालीस खच्चरों पर चलती थीं। (वि०) २ कृपण, बखील अपार धनराशिको 'कारूनका खजाना' कहते हैं।

कारूनी (हिं० पु०) अश्वविशेष, किसी किस्मका घोड़ा।

कारूरा (अ० पु०) १ फुंकनी शीशी। इसमें रोगीका मूत्र रख वैद्य देखते हैं। २ मूत्र, पेशाब। ३ बारूदकी कुप्पी। यह जलाकर शत्रुपर चलायी जाती है।

कारूष (सं०पु०) करूषस्य राजा, कारूष-अण्। १ करूष देशके राजा। २ करूषदेशवासी। ३ एक जाति। व्रात्य वैश्यकी सवर्ण स्त्रीसे यह जाति उत्पन्न हुयी है।

"वैश्यात् तु जायते व्रात्यात् सुधन्वाचार्य एव च।
कारूषश्च विजन्मा च मैत्रः सात्वत एव च॥" (मनु १०।२३)

कारूष्य (सं०पु०) करूषस्य राजा, करूष ष्यञ्। १ करूषके राजा दन्तवक्र। (क्ली०) २ नेत्रमल, आंखका मैल।

कारेणव (सं० त्रि०) करेणोरिदम्, करेणु-अण्। हस्ति-सम्बन्धीय, हाथीसे सरोकार रखनेवाला। हथिनीका दूध ईषत् कषाययुक्त मधुर रस, बलकारक और गुरुपाक है। हाथीका दधि—कषाययुक्त मधुर रस और मलबद्धकारक होता है। कारेणव-घृत मलमूत्ररोधक, तिक्तरस, अग्निकर, मधु और कफ, कुष्ठ, विषरोग तथा कृमिनाशक है। मूत्र ईषत् तिक्तयुक्त लवणरस, मादक, वायुनाशक, पित्तवर्द्धक और तीक्ष्ण है।

कारीषपाकि (सं॰ पु॰) करीषपाकस्य अपत्यम्, करीषपाक इञ्। करीषपाकका पुत्र, करीषपाकका लड़का।

कारो, कारा देखो।

कारौंछ (हिं॰ स्त्री॰) १ कालिमा, स्याही। २ धूमकी कालिमा, धूयेंकी कालिख। ३ काला धब्बा।

कारोतर (सं॰ पु॰) १ सुरा छाननेको छलनी। २ सुरा मण्ड, शराबका झाग।

कारोत्तम (सं॰ पु॰) कारेषु सुरापात्रेषु उत्तम। सुरामण्ड शराबका झाग।

कारोतर (सं॰ पु॰) कारेषु सुरापात्रेषु उत्तरति, कार-उत्-तृ अच्। १ सुरामण्ड, शराबका झाग। २ कूप, कूवा। ३ चर्मादि निर्मित पात्र विशेष।

कारोबार (फा॰ पु॰) कामकाज, लेन देन।

कार्क (अं॰ पु॰ Cork) एक वृक्षकी छाल, किसी पेड़की छाल। इसका काठ अत्यन्त लघु होता है। इसकी काट बनाकर बोतलमें लगाते हैं। यह स्पेन और पोर्तगालमें अधिक उत्पन्न होता है। वृक्ष ३०-४० फीट तक बढ़ता है। छालकी मुटाई २ इंच पर्यन्त रहती है। छाल उतार लेनेसे बाद कई वर्ष पीछे फिर निकल आती है। एक कार्क पेड़ सौ वर्ष जीता है।

कार्कड (सं॰ पु॰) कर्कटक, केकड़ा।

कार्कटक, कार्कट देखो।

कार्कटेयक (सं॰ स्त्री॰) कर्कटूना निवासोऽस्य, कर्कटु-ढकञ्। [illegible] कर्कटु पक्षीका निवास स्थल, एक चिड़ियोंके रहनेकी जगह।

कार्कण (सं॰ त्रि॰) कृकणस्य इदम्, कृकण अण्। १ कृकणपक्षि सम्बन्धीय, एक चिड़ियोंसे सरोकार रखनेवाला। २ कृमिकणसम्बन्धीय, कीड़ेसे तालुक रखने वाला। ३ देशविशेष सम्बन्धीय, किसी खास जगहसे सरोकार रखनेवाला। (पु॰) ४ कम कुछ ढ, कंगनो सुरमा।

कार्कन्धव (सं॰ त्रि॰) कर्कन्धूनां विकारः अवयवो वा, कर्कन्धु अण्। [illegible] कर्कन्धु सम्बन्धीय, झड़बेरीसे सरोकार रखनेवाला।

कार्कवाकव (सं॰ त्रि॰) कृकवाकोरिदम्, कृकवाकु अण्। [illegible] कृकवाकु सम्बन्धीय, मुरगीसे सरोकार रखनेवाला।

कार्कवाकव (सं॰ त्रि॰) कृकवाकोरिदम्, कृकवाकु अण्। कुक्कुट सम्बन्धीय, मुरगीसे सरोकार रखनेवाला।

कार्कश्य (सं॰ क्ली॰) कर्कशस्य भावः, कर्कश-ष्यञ्। १ कर्कशता, कड़ाईको। २ कठिनता, सख्ती। ३ निर्दयता, बेरहमी।

कार्कव (सं॰ पु॰) ऋषिविशेष, एक ऋषि।

कार्कवायणि (सं॰ पु॰) कार्कवस्य अपत्यं पुमान्, कार्कव फिञ्। कार्कवके पुत्र।

कार्कवि (सं॰ पु॰) कर्कव किसी विशेषविभागात् [illegible]। कार्कवके पुत्र।

कार्कोरी (वै॰ त्रि॰) निकटा भावाक्तर।

"[illegible]"

कार्कोत (सं॰ त्रि॰) कर्क शकीडम स कर कर्क इत्यक। श्वेत अश्वयुक्त, सफेद घोड़ेके मालिक।

कार्ड (अं॰ पु॰ Card) १ कार्डपत्र, मोटा कागज़। २ खुली चिट्ठी। यह लिखा जाता है। ३ ताश, पत्ता।

कार्द (सं॰ पु॰) कर्दमस्य अपत्यं पुमान्, कर्द अण्। १ कर्दमके पुत्र, प्रवर्तक। (स्त्री॰) २ कर्दमकी, कालका मेल। (त्रि॰) ३ कर्दमिक सम्बन्धी, कालसे तालुक रखनेवाला।

कार्दमायनि (सं॰ पु॰) कर्दमायस्य अपत्यं पुमान्, कर्दमायन ठक्। [illegible] कर्दमिक पुत्र, कर्दमका लड़का।

कार्दमिक (सं॰ त्रि॰) कर्दमिकस्य इदम् कर्द मिक अण् कार्दि अण्। कर्दमिकसम्बन्धीय, कालमें लिपटी सरोकार रखनेवाला।

कार्दवैहविक (सं॰ त्रि॰) कर्दवैहविकाभ्यां समपादि कर्दवैहविकाभ्यां प्रवर्तते धर्मः, कर्दवैहविक-ठञ्। [illegible] कर्दवैहविक व्यवहार द्वारा सीमित होनेवाला, जो वास्तो मनुष्य उपजे हो।

कार्परास (वै॰ स्त्री॰) कालभर।

कार्णाटक (सं॰ पु॰) कर्णाटः अभिजनोऽस्य, कर्णाट

अण्, स्वार्थे कन्। १ कर्णाट देशवासी। (वि०) २ कर्णाट देशसम्बन्धीय।

कार्णाटभाषा (सं० स्त्री०) कार्णाटानां कर्णाट-देशीयानां भाषा, ६-तत्। कर्णाटदेशीयोंकी भाषा, एक बोली।

कार्णायनि (सं० वि०) कर्णेन निर्वृत्तम्, कर्ण-फिञ्।

कार्णि (सं० वि०) कर्ण-फिञ् विधानस्य विकल्पत्वात् इञ्। १ कर्ण द्वारा निष्पादित। २ कर्ण सम्बन्धीय।

कार्णिक (सं० वि०) कर्णस्य इदम्, कर्ण-ठञ्। कर्णसम्बन्धीय।

कार्त (सं० वि०) कृतस्य इदम्। १ कृत्प्रत्ययसे सम्बन्ध रखनेवाला। (क्ली०) कृतमेव स्वार्थे अण्। २ सत्ययुग। कृतः कृत्प्रत्ययस्य व्याख्यानो ग्रन्थः, कृत्-अण्। ३ कृत् प्रत्ययकी व्याख्याका एक ग्रन्थ। (पु०) ४ धर्मनेत्रके पुत्र।

कार्तकौजपादि (सं० पु०) पाणिनि व्याकरणोक्त एक गण। द्वन्द्व समासयुक्त इस गणके सकल शब्दके पूर्व-पदमें प्रकृतिस्वर लगता है। कार्तकौजपादयश्च। पा ६।२।३७। गण यथा—कार्तकौजपौ, सावर्णिमाण्डूकेयौ, अवन्त्यश्मकाः, पैलश्यापर्णेयाः, कपिश्यापर्णेयाः, शैतिकाक्ष-पाञ्चालेयाः, कटुकवार्चलेयाः, शाकलशुनकाः, शाकल-शणकाः, शणकबाभ्रवाः, आर्चाभिमौद्गलाः, कुन्ति-सुराष्ट्राः, तण्डवतण्डाः, अविमत्तकामविद्धाः, बाभ्रव-शालङ्कायनाः, बाभ्रवदानच्युताः, कठकालापाः, कठ-कौथुमाः, कौथुमलौकाक्षाः, स्त्रीकुमारम्, सौश्रुत-पार्थवाः, जरामृत्यू, याज्यानुवाक्ये।

कार्तयश (वै० क्ली०) सामभेद।

कार्तयुग (सं० पु) कृतमेव कार्तः कार्तश्चासौ युगश्चेति कर्मधा०। सत्ययुग।

कार्तवीर्य (सं० पु०) कृतवीर्यस्य अपत्यं पुमान्, कृत-वीर्य अण्। १ चन्द्रवंशीय कृतवीर्य राजाके पुत्र। उनका नामान्तर हैहय, दोःसहस्रभृत् और अर्जुन है। माहिष्मतीपुरी कार्तवीर्यकी राजधानी थी। इन्होंने दत्तात्रेयके आराधनसे युद्ध समय सहस्र हस्त प्राप्ति। वर पा कर भुजबलसे सप्तद्वीपा पृथ्वी पर अधिकार किया था। लङ्कापति रावण दिग्विजयके समय इन्होंसे हार निगड़बद्ध हुये। पीछे रावणके पितामह पुलस्त्य मुनिने आकर छुड़ा दिया। कार्तवीर्य जम-दग्निके आश्रममें सवत्सा धेनु चुरा लाये थे। इसीसे जमदग्निके पुत्र परशुरामने इन्हें मार डाला। (भारत, अनु० ११२ अ०) २ कोई चन्द्रवंशी राजा। इनका दूसरा नाम दुर्भीम था।

कार्तवीर्यदीप (सं० पु०) कार्तवीर्योद्देशेन दीयमानो दीपः, मध्यपदलोपी कर्मधा०। कार्तवीर्यके उद्देशसे प्रदत्त दीप, जो दीया कार्तवीर्यके लिये दिया जाता हो। उड्डामरेश्वरतन्त्रमें इस दीप देनेकी विधि लिखी है। यथा—किसी शुद्ध स्थानको गोमयसे लीप उसके मध्य-स्थलमें बिन्दुयुक्त त्रिकोणमण्डल बनाना चाहिये। मण्डलकी बहिर्दिक् कुङ्कुम एवं रक्तचन्दन मिश्रित तण्डुल द्वारा षट्कोण और मण्डलके मध्यदेशमें मूल-मन्त्र लिखते हैं। मन्त्रके ऊपर घृतपूर्ण प्रदीप रख सहस्र जपनेकी विधि है। सङ्कल्पका मन्त्र यह है—

"कार्तवीर्य महाबाहो सर्वाभीष्टप्रद।
गृहाण दीपं भद्रं ते रक्ष रक्ष सर्वदा॥
अनेन दीपदानेन कार्तवीर्यः प्रीयताम्॥"

शुभफलकी कामनासे दीपदानकाल एक प्रदीप पश्चिममुख स्थापन करना चाहिये। फिर अभिचार कार्यमें तीन प्रदीप दक्षिण, उत्तर एवं पश्चिममुख और नष्ट वस्तु प्राप्तिकी कामना पर पांचसे ततोधिक विषम संख्यक प्रदीप रखते हैं। चतुर्वर्गका फल पानेको एक शत दीप और मारणके कार्यमें एक सहस्र वा दश सहस्र दीपका दान विधेय है। चांदी, तांबा, लोहा, मट्टी, गेहूं, उड़द और मूंगके चूर्णसे सब दीप बनाना पड़ते हैं। स्वर्ण द्वारा प्रस्तुत करने पर कार्य सिद्धि होती है। रौप्यका दीप देनेसे जगत् वशीभूत हो जाता है। ताम्रके दीपसे शत्रुका भय छूटता है। कांस्य द्वारा निर्मित दीपसे हिंसाकार्य सम्पादित होता है। मारणके कार्यमें लौह द्वारा दीपनिर्माण करते हैं। उच्चाटनमें मृत्तिकाका दीप बनता है। गोधूम चूर्णका दीप देनेसे युद्धमें जयलाभ होता है। यव-चूर्ण स्तम्भनके लिये माषका दीप दिया जाता है। सन्धि कार्यमें नदीके उभयकूलकी मृत्तिकाका दीप

जमता है। अथवा अन्य वस्तुका अभाव होनेसे अधम कार्योंमें केवल ताम्र द्वारा दीपपात्र निर्माण करते हैं। उक्त दीपमें कार्यानुसार एक, तीन पांच या सात बत्तियां जलती हैं। अल्प कार्यमें अल्प और महत् कार्यमें अधिक व अल्प बत्तियां जलानेकी विधि है। कार्यविशेषमें सफेद, पीली, लाल, कुसुम्भी, काली और रंग रंगकी बत्तियां बनायी जाती हैं। अभावमें केवल सफेद सूतकी बत्तियोंसे काम चलाते हैं।

कार्तवीर्यके लिये इस प्रकार दीपदानकी विधि देख कर सन्देह हो सकता है—वे इस प्रकार क्यों उपास्य हैं। कार्तवीर्य दत्तात्रेयसे योग लाभ कर अथवा चक्रावतार रूपसे [illegible] कर वैसी उपासनाके योग्य हुये हैं। इनके ध्यानमें चक्रावतारत्वका उल्लेख मिलता है। यथा—

"उद्यदर्कसहस्रकान्तिरखिलक्षोणीधवैर्वन्दितो
हस्तानां शतपञ्चकेन च दधच्चापानिषूंस्तावतः।
कण्ठे हाटकमालया परिवृतश्चक्रावतारो हरेः
पायात् स्यन्दनगोऽरुणाभवसनः श्रीकार्तवीर्यो नृपः॥"

कार्तवीर्यारि (सं० पु०) कार्तवीर्यस्य अरि, ६-तत्। कार्तवीर्यके शत्रु परशुराम। कार्तवीर्यने जमदग्निके आश्रमसे होमधेनुको चुराया था। इसीसे जमदग्निके पुत्र परशुरामने इनको मार डाला।

कार्तवेश (सं० त्रि०) कृतवेशस्य इदम्, कृतवेश-अण्। कृतवेशसम्बन्धीय।

कार्तस्वर (सं० क्ली०) कृतस्वरे तदाख्य आकरविशेषे भवं अथवा कृता पठिता स्वरा येन स कृतस्वरः आम्नायस्तस्मै हितत्वेन देयम् कृतस्वर-अण्। [illegible]। १ स्वर्ण, सोना। "[illegible]" (भाग [illegible]) २ धुस्तूर, धतूरा।

कार्तान्तिक (सं० पु०) कृतान्तं वेत्ति, कृतान्त-ठक्। [illegible]। ज्योतिर्विद्, नजूमी, होनहार बता देनेवाला।

कार्तावधि (सं० पु०) [illegible]। [illegible]। [illegible]।

कार्ति (सं० पु०) कृतके गोत्रापत्य।

कार्तिक (सं० पु०) कृत्तिका नक्षत्रयुक्ता पौर्णमासी यत्र मासे, कृत्तिका अण्। १ वैशाखादि द्वादशमासके मध्य सप्तम मास, कार्तिक, इसका संस्कृत पर्याय—बाहुल, ऊर्ज, कार्तिकिक और कौमुद है। यह चान्द्र और सौर भेदसे दो प्रकारका होता है। फिर चान्द्र कार्तिक भी मुख्य और गौण भेदसे द्विविध है। सूर्यके तुलाराशि पर आनेसे शुक्ल प्रतिपद्से आरम्भ कर अमावस्या पर्यन्त जितने दिन मुख्य चान्द्रकार्तिक और पूर्व कृष्ण प्रतिपद्से पूर्णिमा पर्यन्त गौण चान्द्रकार्तिक होता है। फिर सूर्यके तुला राशि पर अवस्थान करते सौर कार्तिक मास लिया जाता है।

"[illegible]।
[illegible]॥" ([illegible])

पूर्णिमा कृत्तिकानक्षत्रसे मिलनेके कारण ही इसका नाम कार्तिकमास पड़ा है। शास्त्रमें यह पुण्यमास माना गया है। इसीसे इस मासमें धार्मिक धर्म पिपासु व्यक्तियोंका कर्तव्य पुराणमें इस प्रकार कहा गया है—

कार्तिकमें प्रत्यह अति प्रत्यूष गात्रोत्थान कर प्रातः स्नान करना विधेय है। जिस शरीरको किसी प्रकार अपवित्र करनेकी इच्छा न रखनेवाले लोगोंको कार्तिकमें अवश्य प्रातःस्नान करना चाहिये। अथवा इस मास उक्त समय पर स्नान करनेसे सबको आरोग्य लाभ होता है। धर्मपिपासाके नहानेवालोंको निम्न लिखित सङ्कल्प और मन्त्र पढ़ स्नान करना चाहिये।

सङ्कल्प—

ओं अद्य अमुक कार्तिकमासि अमुकपक्षे अमुकतिथावारभ्य तुला-राशिस्थिते भास्करे [illegible] प्रातःस्नानमहं करिष्ये।

स्नान मन्त्र—

"ओं कार्तिकेऽहं करिष्यामि प्रातःस्नानं जनार्दन।
प्रीत्यर्थं तव देवेश दामोदर मया सह॥"

इस मास प्रत्यह निशामुखको विष्णुके वा आकाशादिमें घृत तैलादि द्वारा प्रदीप देना कहा है। प्रदीप देते समय निम्नलिखित मन्त्र पढ़ना पड़ता है—

"ओं दामोदराय नभसि तुलायां लोलया सह।
प्रदीपं ते प्रयच्छामि नमोऽनन्ताय वेधसे॥"

प्रदीप प्रदानसे विशेष फल कामना करनेवालोंको दीप दानके पूर्व स्नानवत् सङ्कल्प कर और तदनन्तर मन्त्र पढ़ दीप देना चाहिये।

कार्तिक मासमें कृष्णपक्षकी चतुर्दशी अर्थात् भूतचतुर्दशीके दिन स्नानान्तर यमतर्पण कर निम्नलिखित मन्त्र पाठपूर्वक मस्तकोपरि अपामार्ग घुमाना पड़ता है,—

"शीतलोष्टसमायुक्तसकण्टकदलान्वितः।
हर पापमपामार्ग भ्राम्यमाणः पुनः पुनः॥"

उस दिन लोकाचारके हेतु चतुर्दश शाक भोजन करना विधेय है। शास्त्रोक्त शाकोंके नाम हैं—ओल, केमुक, वास्तुक, सर्षप, काल, निम्ब, जयन्ती, शालिञ्चो, हिलमोचिका, पटोल, पितपापरा, गुडूची, भण्टाकी और सुषिनु। किन्तु लोग उक्त शाक संग्रह न कर जो पाते वही खा जाते हैं।

अनन्तर अमावस्याके दिन बालक, आतुर और वृद्ध व्यतिरेक सबको दिवाभोजन निषिद्ध है। उस दिन पार्वण श्राद्ध कर प्रदोषकालमें पितृगणके उद्देश उल्कादान करना चाहिये। किसी कारण श्राद्ध न करते भी उल्कादान देना पड़ता है। फिर प्रदोषकालमें लक्ष्मी, नारायण और कुवेरको पूजा करना आस्तिक धार्मिकोंका कर्तव्य है।

अनन्तर प्रभात अर्थात्, प्रतिपत् तिथिको द्यूतक्रीड़ादि करना चाहिये। द्यूतक्रीडा शास्त्रनिषिद्ध होते भी उस दिन समस्त वर्षका शुभाशुभ जाननेको बहुत आवश्यक है। उस क्रीडामें जीतनेवालेका संवत्सर शुभ और हारनेवालेका संवत्सर अशुभ होता है। केवल उसी दिन क्रीड़ा करनेका कारण है—

"यो यो याद्दृशभावेन तिष्ठत्यस्यां युधिष्ठिर।
हर्षदैन्यादिरूपेण तस्य वर्षं प्रयाति हि॥"

जो व्यक्ति जिस भाव अर्थात् आनन्द वा असुखसे उस दिन काल बिताता, उसका संवत्सर उसी भावसे चला जाता है। अतएव उस विषयमें सबको सचेष्ट रहना आवश्यक है, जिसमें उक्त दिवस मनोसुखसे अतिवाहित किया जा सके।

अनन्तर द्वितीया तिथि अर्थात् भ्रातृद्वितीयाके दिन दीर्घजीवनकी कामनासे भगिनीके हाथका भोजन करना विधेय है। उस दिन स्व स्व भगिनीको वस्त्रालङ्कारादि द्वारा सम्मान कर और उसके हाथका बना सादर एवं आनन्दपूर्वक भोजन करना बहुत आवश्यक है। भोजनके समय यमराज, चित्रगुप्त, यमदूत और यमुनाकी पूजा कर निम्नलिखित मन्त्रपाठ पर गण्डूष ग्रहण कर खाना चाहिये। कनिष्ठ भगिनी होनेसे इस प्रकार मन्त्र पढ़ती है,—

"भ्रातस्तवानुजाताहं भुङ्क्ष्व भक्तमिदं शुभम्।
प्रीतये यमराजस्य यमुनाया विशेषतः॥"

भगिनी ज्येष्ठा रहनेसे "भ्रातस्तवानुजाताहं"के स्थानमें "भ्रातस्तवाग्रजाताहं" कह कर गण्डूष प्रदान करना चाहिये।

एतद्व्यतीत कार्तिक मासमें शुक्लपक्षकी नवमी तिथिको सोमवारके दिन त्रेतायुगकी उत्पत्ति होती है। इसीसे यह दिन अतिशय पुण्याह माना गया है। फिर कार्तिक मासके शुक्लपक्षकी एकादशीसे पूर्णिमा पर्यन्त पञ्चतिथिको वकपञ्चक कहते हैं। शास्त्रके कथनानुसार उन तिथियोंमें वक भी मत्स्य भक्षण नहीं करते। अतएव वकपञ्चकमें किसीको मांसादि खाना विधेय नहीं। एतद्व्यतीत भूतचतुर्दशीके पीछे अमावस्याको कालीपूजा, शुक्ल नवमीको जगद्धात्री पूजा और सङ्क्रान्तिके दिन कार्तिक पूजा होती है। पूजाकी पद्धति नानाविध है। इसीसे यहां उसका कोई उल्लेख नहीं किया गया।

कोष्ठीप्रदीपके मतसे कार्तिक मासमें जन्मलेनेवाले युद्धविशारद, व्यवसायपटु, नानाविध शिल्पशास्त्रवित्, सुवक्ता और अतिशय सुन्दराकृति होते हैं।

गरुड़पुराणके मतानुसार कार्तिक मासमें विष्णुके लिये तुलसीदान कर्तव्य है। उससे अयुत गोदानका फल मिलता है। ब्रह्मपुराणके मतसे देवगृह, आकाश और मण्डपमें घृतादि द्वारा दीपदान करना चाहिये। उससे अक्षयपुण्य होता है। ब्रह्मपुराणके मतानुसार उस मासमें हविष्यान्न खानेसे विष्णुका पद मिलता है। हविष्य द्रव्य यह है,—अस्विन्न हैमन्तिक धान्य,

गुड़, तिल, मधु, कषाय, कटुद्रव्य, नीवारधान्य, वास्तुक, हिमलोचिका शाक, श्यामाक, मूलक, केमुक एवं मसूरतण्डुल, गव्यादि मधुसूत, मक्खन न निकाला हुआ दुग्ध, पनस, आम्र, हरीतकी, पिप्पली, जीरक, नारङ्ग, पिप्पली, कदली, लवली, आंवला इत्यादि और गुड़। पहले कहे हुए द्रव्य हविष्यान्नको अवश्य है। पद्मपुराणके मतसे मद्य, कुंभ और पयान्न मद्य मांस वस्तुका मांस खाना निषिद्ध है। क्योंकि ऐसा करनेसे चाण्डालत्व लगता पड़ता है। महाभारतमें भी सर्वमांस परित्यागका विधान है। ब्रह्मपुराणके मतसे तैल, पटोल, मत्स्य और मधुका भोजन करना निषिद्ध है। फिर कांस्यपात्रमें भी खाना न चाहिये। कार्त्तिक मासमें जो उत्थान एकादशी होती है। उस दिन हरि शय्या त्याग करते हैं। मनुष्योंको यथानियम उपवास कर भी हरिको दर्शन करना पड़ता है। पुराणके मतानुसार कार्त्तिक मासमें उक्त सब कार्य करनेसे पुण्य मिलता है। फिर उक्त कार्य प्रतिपालन न करनेसे नरकादि विविध यातनायें उठाना पड़ती हैं।

२ वर्ष विशेष कोई साल। कृत्तिका या रोहिणी नक्षत्रमें वृहस्पतिका उदय या अस्त होनेसे कार्त्तिक वर्ष कहाता है। ३ कार्त्तिकेय।

"[illegible] [illegible] कार्त्तिकमाख्यातम्।
कार्त्तिकं [illegible]" (वृहत्संहिता ८)

४ नरकादि चिकित्साशास्त्रके कोई ग्रन्थकार। ५ बम्बई प्रदेशकी एक जाति। यह जाति हरिण, भेड़ आदि पशुओंको मार कर उनका मांस बेचती है। कसाईका काम करनेसे ये गांवके बाहर रहते हैं और हिन्दू इस जातिके लोगोंको नहीं छूते।

कार्त्तिकमहिमा (सं० पु०) कार्त्तिकस्य महिमा माहात्म्यम् ६-तत्। १ कार्त्तिक मासका माहात्म्य। २ कार्त्तिकेय देवका माहात्म्य।

कार्त्तिकमाहात्म्य (सं० क्ली०) पद्मपुराणका एक अध्याय।

कार्त्तिकव्रत (सं० क्ली०) कार्त्तिके कर्त्तव्यं व्रतम्, मध्यपदलो०। कार्त्तिक मासमें किया जानेवाला स्नानदानादि नियम।

कार्त्तिकशालि (सं० पु०) कार्त्तिके परिपक्वः शालिः, मध्यपदलो०। कार्त्तिक मासमें पकनेवाला धान्य, अगहनका धान।

कार्त्तिकिकाब्द (सं० पु०) कार्त्तिकी पौर्णमासी अस्मिन् अस्ति, कार्त्तिक-ठञ्। १ कार्त्तिक मास कातिकका महीना। २ कार्त्तिकीयुक्त वर्ष, जिस वर्षमें कार्त्तिकी पड़े। ३ कार्त्तिक नामक एक वर्ष।

कार्त्तिकी (सं० स्त्री०) कार्त्तिकस्य इदम् कार्त्तिक अण् ङीप्। १ देवताविशेष। कौमारी देवी। २ नवरात्रिकाकी अवस्थोक्त एक देवी। ३ कृत्तिका नक्षत्रयुक्त पूर्णिमा, कतकी। कार्त्तिकीको ब्रह्मावर्त (विठूर)में गङ्गास्नानका बड़ा मेला लगता है।

कार्त्तिकेय (सं० पु०) कृत्तिकानामपत्यं पुमान् ढक् इति ढेय्, कृत्तिका-ढक्। [illegible] पा ४।१।१२०। शिवपुत्र। पार्वतीके साथ विहारके समय शिवका वीर्य भूमि पर गिरा था। भूमिने अग्निमें और अग्निने फिर शरवनमें उसे निक्षेप किया। वहांसे कृत्तिका गणने उसे उठा लाकर पाला। (ब्रह्मवैवर्त्तपु०)

कल्पविशेषमें कार्त्तिकेयने पुनर्वार अग्निपुत्ररूपसे जन्मग्रहण किया था। उसी समय अग्निके वीर्य और गङ्गाके गर्भसे उनका जन्म हुआ। उसके पीछे कृत्तिका गणने उन्हें प्रतिपालन किया। कृत्तिकागणके स्तनपान करनेसे उनके छः मुख उत्पन्न हुये थे। फिर कृत्तिका गणके प्रतिपालित होनेसे ही यह कार्त्तिकेय नामसे विख्यात हुये हैं। (रामायण)

उभय कथाओंका एक ही कारण समझा जाता है। दुर्दान्त तारकासुरके उत्पीड़नसे देव बहुत व्यतिव्यस्त हो गये थे। वह चेष्टासे भी उस असुरको मार न सके। फिर उन्होंने ब्रह्माके पास जाकर उसके निधनका उपाय पूछा। ब्रह्माने उनसे महादेवका ध्यान तोड़नेको कहा था। तदनुसार उन्होंने कन्दर्पकी सहायतासे महादेवका ध्यान भङ्ग किया। कन्दर्पबाण विद्ध महादेवने पार्श्वस्थ पार्वतीके प्रति साभिलाष दृष्टि

डाली थी। उससे प्रथम कार्तिकेयका जन्म हुवा। फिर उन्होंने देवोंके सेनापति बन तारकासुरको मार डाला। दूसरे कल्पमें भी उसी प्रकार तारकासुरका उत्पीडन बढने पर ब्रह्माने देवोंसे अग्निकी आराधना करनेको कहा था। तदनुसार उन्होंने अग्निको सन्तुष्ट किया। अग्नि शुकरूप धारण कर अतिगःपनसे महादेवके समीप पहुंचे थे। किन्तु महादेव सब भेद समझ गये। उसीसे सुरत विघ्न समझ क्रुद्ध हो उन्होंने स्खलितवीर्य अग्नि पर फेंका था। अग्नि महाका तेज धारण कर न सके। फिर उन्होंने उसे गङ्गामें डाल दिया। उसीसे कार्तिकेयने द्वितीय बार जन्म लिया था। उनका नामान्तर—महासेन, शरजन्मा, षडानन, पार्वतीनन्दन, स्कन्द, सेनानी, अग्निभू, गुह, बाहुलेय, तारकजित्, विशाख, शिखिवाहन, षाण्मातुर शक्तिधर, कुमार, क्रौञ्चदारण, आग्नेय, दंसकीर्ति, अनमेय, मयूरकेतु, धर्मात्मा, भूतेश, महिषार्दन, कामजित्, कामद, कान्त, सत्यवाक, भुवनेश्वर, शिशु, शीघ्र, शुचि, चण्ड, दीप्तवर्ण, शुभानन, अमोघ, अनघ, रौद्र, प्रिय, चन्द्रानन, दीप्तशक्ति, प्रशान्तात्मा, भद्रकृत्, कूटमोहन, षष्ठीप्रिय, पवित्र, मातृवत्सल, कन्याभर्ता, विभक्त, स्वाहेय, रेवतीसुत, प्रभु, नेता, नैगमेय, सुदुश्चर, सुव्रत, ललित, बालक्रीडनप्रिय, खचारी, ब्रह्मचारी, शूर, शरवणोद्भव, विश्वामित्रप्रिय, प्रियक, गाङ्ग, स्वामी, द्वादशलोचन, देवसेनाप्रिय, वासुदेवप्रिय, देवसेनापति, बालचय, कुक्कवाकुध्वज, महाबाहु, गुहरत्न, शिखिध्वज, पावकात्मज, रुद्रसुनु, षट्शिरा और दितिजान्तक है।

कार्तिकेयदेवका ध्यान इस प्रकार है,—

> "कार्तिकेयं महाभागं मयूरोपरि संस्थितम्।
> तप्तकाञ्चनवर्णाभं शक्तिहस्तं वरप्रदम्॥
> द्विभुजं शत्रुहन्तारं नानालङ्कारभूषितम्।
> प्रसन्नवदनं देवं सर्वसेनासमावृतम्॥"

महाभाग कार्तिकेय मयूर पर अवस्थित हैं। उनका वर्ण तप्त स्वर्णको भांति चमकता है। शक्ति हाथमें लिये हैं। वह वर देनेवाले हैं। मूर्ति द्विभुज है। शत्रुका नाश करते हैं। नाना अलङ्कार विभूषित हैं। मुख प्रसन्न है। समुदाय सेना चारो ओर खड़ी है। (कार्तिकपूजापद्धति)

अनेकोंके विश्वासानुसार कार्तिकेयका विवाह नहीं हुवा। वह चिरकाल अविवाहित अवस्थामें हैं। किन्तु वह भ्रममात्र है। उनकी पत्नी देवसेना हैं। देवसेनाको ही हम षष्ठी कहते हैं। सम्भवतः षष्ठीको पत्नी माननेसे ही अनेक हिन्दू पुत्रकी कामनासे कार्तिकेयका व्रत किया करते हैं। देवसेनाके अस्त्र और वाहनादि कार्तिकेयके समान हैं। मार्कण्डेयपुराणमें वर्णित है,—

> "कौमारी शक्तिहस्ता च मयूरोपरि संस्थिता।
> योद्धुमभ्याययौ तत्र अम्बिका गुहरूपिणी॥"

कुमारशक्ति कार्तिकेय सदृश मूर्ति धारण और शक्ति ग्रहण कर मयूरवाहनोपरि आरोहणपूर्वक दैत्योंसे युद्ध करने आयी।

कार्तिकेयपुर—युक्त प्रदेशमें कुमायूं जिलेके मध्य दानपुर परगनेकी हुजूर नामक तहसीलका एक नगर। आजकल उसे वैद्यनाथ वा वैजनाथ कहते हैं। वह अक्षा॰ २९° ५४′ २४″ उ॰ और देशा॰ ७९° ३९′ ३८″ पू॰ पर अवस्थित है। वहां रांघुना नामक एक पुरातन दुर्ग है। उसमें एक कालीमन्दिर बना है। दूसरे भी कई पुरातन मन्दिर पडे हैं। किन्तु उनमें कोई मूर्ति नहीं, उनमें आजकल शस्यादि रखा जाता है। चीन-परिव्राजक युएनचुयाङ्गको वर्णनाके अनुसार ई॰ ७वें शताब्दमें वहां बौद्ध धर्म प्रचलित था। मन्दिरकी दीवारमें एक स्थानपर बुद्धदेवकी मूर्ति आज भी देख पडती है। उदयपाल देवकी खोदित प्रस्तरलिपिके दो खण्ड वहां वर्तमान हैं। उस पर क्रमागत जल पडनेसे अक्षर मिट गये हैं। वहां ११२४ शकमें इन्द्रदेवद्वारा प्रदत्त एकखण्ड ताम्रलिपि आज भी पडी है। उसमें नीचे १४२१ शक लिखा है और गणेशकी एक मूर्ति है। उस मूर्तिके नीचे ११२५ और १२४४ शक भी बना है।

कार्तिकेयप्रसू (सं॰ स्त्री॰) कार्तिकेयं प्रसूते या, कार्तिकेय-प्र सू-क्विप्। दुर्गा, पार्वती। पार्वतीमें शिववीर्य पडते देवोंने विघ्न डाला था। उसीसे वह

भूमिमें गिर गया। फिर वह शरवनमें पहुंच गया, जिससे कार्त्तिकेयका जन्म हुआ। किन्तु वीर्यके पतन विषयमें पार्वती ही मुख्य कारण थीं। इसीसे इन्होंने कार्त्तिकेयप्रसू नामसे प्रसिद्धि पाई है।

कार्त्तिकोत्सव (सं॰ पु॰) कार्त्तिक्यां कार्त्तिकी पौर्ण-मास्यां भव उत्सवः। कार्त्तिकी पूर्णिमाको होनेवाला उत्सव, कतकीका उत्सव।

कार्त्स्न्य (स॰ पु॰) कृत्स्नस्य भावः, कृत्स्न-ष्यञ्। समस्त पूर्णता।

कार्दम (स॰ त्रि॰) कर्दमस्य भावः, ष्यञ्। १ समुदाय, सम्पूर्णता। २ सम्पूर्णता, समस्तता।

कारस्न्य (स॰ क्लो॰) कृत्स्न-ष्यञ्। १ समस्त पूर्णता। २ सम्पूर्णता।

कार्दम (स॰ त्रि॰) कर्दमेन रक्तम्, कर्दम-अण्। १ कर्दमयुक्त, कीचड़से भरा हुआ। २ प्रजापति कर्दम सम्बन्धीय।

कार्दमिक (स॰ त्रि॰) कर्दम-ठक्। कार्दम, कीचड़से भरा हुआ।

कार्पट (स॰ पु॰) कर्पट इव आकारो इत्यादिः कर्पट-अण्। १ जतु, लाह। २ कार्यार्थी, उम्मेदवार। (कर्पट एव स्वार्थे अण्) ३ जीर्णवस्त्रखण्ड, चिथड़ा।

कार्पटमुखिका (स॰ स्त्री॰) कार्पटेन पट्टवस्त्रेण मुखं, कार्पटमुखा स्वार्थे कन्-टाप् अत इत्वम्। १ बटवा। २ मोरी।

कार्पटिक (स॰ पु॰) कार्पटं कर्पटवस्त्रं वेत्ति कर्पटेन चरति वा, कार्पट-ठक्। १ मर्मवेदी, मतलबकी बात समझनेवाला। २ तीर्थयात्रायिक।

कार्पण्य (स॰ क्ली॰) कृपणस्य भावः, कृपण-ष्यञ्। १ कृपणता, कंजूसी। २ दीनता, दुर्दशाग्रो।

कार्पाथ (सं॰ क्लो॰) तुष, कड़ाई।

कार्पास (स॰ पु॰ क्ली॰) कर्पास एव स्वार्थे अण्। १ कार्पास वृक्ष कपासका पेड़। वैद्यकके मतमें इसके पत्तादिसे सर्वविध विकारादि दूर होता है। चिकित्साका क्रम है—दंशन मात्र पर ही रोगीको कपासकी पत्तीका काढ़ा तोले रस पिलाना और वह स्थानको उससे परिष्कार कर वही पत्तीका रस उस पर लगाना चाहिये। फिर उसी समय प्रलेपका कोई काम पूरा जाय तो भी उस पर कपासकी पत्तीका रस ही लगाया जाता है।

कार्पास या रुई सूक्ष्म विशद् धवल नर्म एक पदार्थ है। यह कार्पास नामक वृक्षके फलमें होती है। कपास इस देशमें बहुत होती है। यह जातीय वृक्ष पृथिवीके सब प्रदेशमें ही प्राय देख पड़ता है। अंगरेज उद्भिदतत्त्वविदोंने कार्पास वृक्षको Malvaceae श्रेणीके अन्तर्गत रखा है। उसका अंगरेजी वैज्ञानिक नाम Gossypium है। कार्पासके कई प्रकार भेद हैं। यथा—

१ Gossypium arboreum—हिन्दीमें इसको देवकपास या नरमा कहते। बंगालमें नोगहकपास या बुढ़ी कपास, बंदेलखण्डमें बोनको या नरमा, मुख प्रदेशोंमें नरमा रधिया या नरमा, पंजाबमें कपास मध्यप्रदेशमें मनवा या देव कपास देवकपास, मराठीमें देवकपास, मन्द्राजमें देवकपास तामिलमें शिमपार्त्ती तेलगूमें पत्ती और आन्ध्र भाषामें इसको रु वा कहते हैं।

२ Gossypium herbaceum—हिन्दुस्तानमें रुई या कपास, बंगालमें तुला या कापास, पञ्जाबमें रुई, सिन्धुमें कोम बम्बईमें कपास वा रुई, गुजरातमें रु या कपास दक्षिणमें कपास तामिलमें परत्ती या पारुत्ती तेलगूमें पात्ती, पदुदा, परत्ती या परित्त, ब्रह्मदेशमें वा वा वा बरबमें कुतन वा कतन और फारसमें पम्बा कहते हैं।

३ भारतमें एक दूसरी कपास भी होती है। उसका अंगरेजी वैज्ञानिक नाम Gossypium barbadense है। भारतमें कहीं इसको कोई रुई कहते हैं।

कार्पासका वृक्ष परीक्षामें गुड़ होता है। यह झाड़ाकार वा वृक्षाकार रहते हैं। इसके देखनेसे मालूम पड़ता है मानो तीन पत्ते एकत्र संलग्न हुए हैं। अच्छा वृक्ष पत्तीपर बड़ा होता है। कपासके समय बोड़ी निकलने पर बोवा पक जाता है। बोंड़ोंके फटने पर भीतर रुई निकलती है। बोंड़िया पत्तोंसे

ढकी रहती है। फूटनेके समय ढका अंश फैल जाता है। इसमें स्वतन्त्र फूल फूटते ही, कपास बीना जाता है। नहीं तो धूप या ओसमें वह बिगड़ जाता है। कार्पासके पुटसे बीज निकाल लेना पड़ता है।

स्थानभेदसे कार्पास बीजके बोनेका समय निर्दिष्ट है। प्रायः आश्विन और कार्तिक मास ही वपनका उत्तम समय है। राख गोबर या गोरे अथवा तीनोंको एकत्र जलमें गला उसमें बीज भिगो देते हैं। एक दिन भिगोनेके पीछे बीज जलसे निकाल कर कुछ देर धूपमें सुखाते हैं। अधिक शुष्क करना भी निषिद्ध है। उसके पीछे अच्छी जोती जमीनमें एक या डेढ़ हाथके अन्तर ४।५ अंगुलि परिमाण गर्त खोद ३।४ बीज डाल ऊपरसे कुछ मट्टी चढ़ा देते हैं। अल्प दिनमें ही अङ्कुर फूट आता है। अङ्कुरोंमें जो उत्कृष्ट होते, उनसे केवल दो उसी स्थान पर रख दूसरे निकाल कर स्थानान्तरमें लगाये जाते हैं। पौदा निकलने पर निरर्थक वृन्त नष्ट करना पड़ता है। कार्पासका बीज फेंक देनेकी चीज नहीं। उसकी खलीसे अच्छी खाद बनती है। फिर बिनौला खिलानेसे गाय-भैंस दूध भी बहुत देती है। किसी जमीनमें बराबर २।३ वर्ष कार्पास उपजनेसे फिर उसमें अच्छी उपज नहीं होती। किन्तु बिनौलेकी खली खाद की तरह डालनेसे जमीनकी उर्वरताशक्ति कुछ बनी रहती है। कपासकी जमीनमें सब तरहकी अच्छी खादकी भांति पड़ती है। खलीको अच्छी तरह चूर कर उसमें दूनी मट्टी बराबर मिला एक सप्ताह रख छोड़ना चाहिये। फिर उसे खेतमें डालनेसे अच्छा काम होता है। प्रायः प्रति बीघे मन या आधमन रूई उपजती है। किन्तु विशेष यत्न करने पर एक बीघेमें छह मन तक कपास निकल सकती है।

हिन्दुस्तानमें चाली बीघे कपास बोयी जाती है। प्रति वर्ष उसकी बढ़ती होती है। नर्म और मनुआ दो तरहकी कपास यहां उपजती है। इलाहाबादकी राविया कुछ अच्छी होती है। कुमायूं और गढ़वालमें पहाड़ी कपास लगायी जाती है। कानपुरके सरकारी खेतोंमें १८८१-८२ ई० को अमेरिकाकी कपास बोयी गयी थी। फल अच्छा निकला। ध्यानसे खेती करने पर हिन्दुस्थानमें अमेरिकाकी कपास खूब उपज सकती है।

कपास खरीफकी फसल है। वर्षा आरम्भ होनेसे पहले ही जमीनको सींच कर कपास बो देते हैं। अक्तोबरसे जनवरी मास तक फसल तैयार होती है। किन्तु नर्म और रविया कपास अप्रेल और मई तक कोई ग्यारह महीने खड़ी रहती है। जमीनमें खाद देना पड़ती है।

प्रायः कपासके साथ अड़हर बो देते हैं। इससे कपासको धूप और ओस नहीं सताती। फिर कपासमें तिल, उड़द और मूंग भी डाल देते हैं। कपासके किनारे किनारे एरण्ड और पटसनकी गोट रहती है।

कपास बोनेके ६ मास बाद ही फलने लगती है। जनवरी मासतक उसे बीना करते हैं। पाला पड़नेसे कपास मारी जाती है। अच्छे खेत तीन या चार दिन पीछे बीने जाते हैं। बिनाई सवेरेसे दोपहर तक होती है। कारण उस समय ओसकी तरी रहनेसे कपास निकालनेमें असुविधा नहीं पड़ती। जोरसे कपास निकालनेपर रूई खराब हो जाती है। प्रायः स्त्रियां कपास बीनती हैं, उन्हें अपनी अपनी बिनी कपासका ८ वां भाग या कुछ दैनिक मजदूरीको तौर पर मिलता है।

चरखीमें कपास ओट कर रूईसे बिनौलेको अलग करते हैं। अमेरिकाके दक्षिण राज्योंमें भी ऐसी ही चरखियां चलती हैं। परन्तु आजकल कलोंसे भी बिनौले निकाले जाते है।

पानी भरा रहनेसे कपासको बड़ी हानि पहुंचती है। इसी लिये कपासके खेतमें पानी ठहरने नहीं देते। फलियां खुल जाने पर भी वृष्टिसे अपार क्षति होती है। क्योंकि पानीमें भीग जानेसे रंग बिगड़ जाता है। और सूत सड़ने लगता है। कपासके पालेके पड़नेसे भी हानि पहुंचती है। कीड़ा और सूंडी लगनेसे भी कपासका सत्तानाश हो जाता है। प्रायः हिन्दुस्तानके खेतोंमें कपास बहुत कम उपजती है।

कभी कभी तो लागतका खर्च भी वसूल नहीं होता। लेकिन अवध और बनारसकी तरफ उपज अच्छी रहती है।

बङ्ग तथा बिहार देशके निम्नलिखित स्थानोंमें जिस जिस समय बीज बोया जाता और जिस जिस समय कपास बीनते हैं उसकी तालिका नीचे लिखे प्रकार है—

	बोनेका समय	चुननेका समय
पटना	ज्येष्ठ, कार्तिक	आश्विन चैत्र
चट्टग्राम	वैशाख, ज्येष्ठ	अग्रहायण पौष
हरमड़ा	कार्तिक, ज्येष्ठ	भाद्र
	आषाढ़	चैत्र, वैशाख
मानभूम	ज्येष्ठ, आषाढ़,	अग्रहायण, पौष
	अग्रहायण, पौष	चैत्र, वैशाख
मेदिनीपुर	ज्येष्ठ, आषाढ़,	आश्विन चैत्र
	कार्तिक	वैशाख, ज्येष्ठ
छोटारडामा	कार्तिक	वैशाख, ज्येष्ठ
	आषाढ़	अग्रहायण, पौष
सारन	आषाढ़	वैशाख ज्येष्ठ
	माघ	भाद्र, आश्विन

बङ्गदेश और बिहारके मध्य पटना, चट्टग्राम, हरमड़ा, मेदिनीपुर, मानभूम छोटारडांगा, सारन त्रिपुरा, जलपाईगोड़ी प्रभृति स्थानोंमें ही अधिक परिमाणसे कपास उपजती है। पटना अञ्चलमें सिर्फ खाकी रंगकी कपास होती है। चट्टग्राम देशमें कोन तरहका कपास जन्मते हैं। और सफेद कपासको कहता। सारनमें भागला, मोथरी, मतुआ, कोकटा प्रभृति नामोंकी कपास उपजती है। यहांके अञ्चलमें बङ्गोल, राढ़ी तोपार इन तीन प्रकारकी कपास, हरमड़ा अञ्चलमें कोकटी मेरा और भागला यह तीन प्रकारकी कपास प्रचलित है। पटनाकी और मतुआ और हरसिंग प्रसिद्ध है।

भारतमें कपासकी अपनी पहले किस्म थी। आजकल उत्पन्न कार्पासका अधिकांश बाहर भेज दिया जाता है। बाहर भेजी जानेवाली कपासके अनेक नाम हैं। नीचे उनमें कुछ संक्षिप्त विवरण दिया गया है। अंगरेज महाजनोंके हाथ ही कपासकी रफ्तनी होती है। अतः किसीमें ही अंगरेजी नाम लिखे हैं।

धोलेरा—बड़ौदा, कच्छ और काठियावाड़से रफ्तनी होती है। यह भावनगरी, मौवाई, बाहमावरी, वीरमगांववाली, वैरावली, कच्छी आदि कई प्रकारकी रहती है।

बङ्गाली—पञ्जाब, बङ्गाल, युक्तप्रदेश, राजपूताना और मध्यभारतमें उपजती है।

अमरावती—के भी कई भेद हैं।

खानदेशी—खानदेशसे आती है।

अमरा—बरार प्रदेशमें होती है।

निम्नावती खानदेशी—अमरावती प्रभृति स्थानोंसे आती है।

वेस्टर्नस—मन्द्राज, निजामराज्य और पश्चिम भारतकी कपास है।

धारवाड़ी—धारवाड़, विजयपुर और दक्षिण महाराष्ट्रमें उपजती है।

कुमटा—विजयपुर, बेलगांव, कोल्हापुर और दक्षिण महाराष्ट्र प्रदेशकी कपास है।

भड़ौंची—बड़ौदा, भड़ौंच और सूरत प्रदेशसे प्राप्त होती है।

कोकनदी—लाल रङ्गकी होती है। यह मन्द्राजके अन्तर्गत कृष्णा जिले, मैसूर और गोदावरी प्रदेशमें उत्पन्न होती है।

तिनवली—तिनवली, कोयम्बतूर, तञ्जोर प्रभृति स्थानोंसे आती है।

हींगनघाटी—मध्यप्रदेशमें उपजती और बम्बईसे रफ्तनी होती है।

सिन्धी—सिन्धुप्रदेशमें पैदा होती है।

आसामी—आसाममें उत्पन्न होती है।

कार्पासके असंख्य प्रकार भेद हैं। फिर भिन्न भिन्न स्थानोंमें भिन्न भिन्न प्रकारसे उत्पादन करनेकी रीति और प्रथाकी कथित होती है।

कार्पासका धागा जितना ही बड़ा रहेगा, उतना

हो टट निकलेगा। फिर वह जितना ही परिष्कृत होगा, उतना ही उत्कृष्ट ठहरेगा।

इस बातका निर्णय करना सरल नहीं—भारतवासी कबसे रूईका व्यवहार करते हैं। क्योंकि वेदमें भी उसका विवरण है,—

"मूषो न शिश्ना व्यदन्ति माध्य', स्तोतारं ते शतक्रतो वित्तं मे अस्य रोदसी।" (ऋक्संहिता १।१०५।८)

मूषिक जिस प्रकार सूत काट बिगाड़ता है, हे शतक्रतो! आपके स्तोता हम लोगोंको दुःख भी उसी प्रकार दंशन कर सताता है।

सायणने अपने भाष्यमें लिखा है कि भातका माड़ रहनेसे तन्तुवायके सूतको मूषा प्रीतिपूर्वक खाता है। सुतरां यह स्वच्छन्द अनुमान कर सकते हैं कि उस समय कार्पाससे वस्त्रवयनकी प्रणाली आविष्कृत हुई थी। वयन देखो।

सूतको मांड़ लगा कठिन करनेकी व्यवस्था भी उस समय प्रचलित थी। वैसा न होनेसे मूषिकका उसके ऊपर इतना लाभ कैसे होता।

आश्वलायन-श्रौतसूत्र, ८।४ और लाट्यायन-श्रौत सूत्र १।६।१ प्रभृति वैदिक सूत्रमें कार्पास शब्दका स्पष्ट उल्लेख है।

कार्पासके व्यवहारकी कथा मनुसंहितामें भी देख पड़ती है,—

"कार्पासमुपवीतं स्याद्विप्रस्योर्द्धवृतं त्रिवृत्।" (मनु, २।४४)

ब्राह्मणका उपवीतसूत्र कार्पासके सूतसे प्रस्तुत होना आवश्यक है। इसीसे सम्भवतः मन्दिर और मठके निकट कार्पास वृक्ष रहता है।

"न कार्पासास्थि न तुषान् दीर्घं मायुर्जिजीविषुः।" (मनु, ४।७८)

मनुके मतमें मूलाके बीज, तुष प्रभृति द्रव्योंपर आरोहण करना न चाहिये।

"कार्पासकीटजोर्णानां द्विशफैकशफस्य च।
पक्षिगन्धौषधीनाञ्च रज्ज्वाश्चैव त्र्यहं पयः॥" (मनु, ११।१६९)

याज्ञवल्क्यसंहितामें इसप्रकार विधि है

[illegible] तीयं कार्पासमौविकम्।
[illegible] मूर्ध्नो तु त्रिपणा मता॥" (१। १८१)

[illegible] कड़े पीछे १०
[illegible] लि कपड़ेमें
[illegible] ड़ता है।

"तन्तुवायो दशपलं दद्यादेकपलाधिकम्।
अतोऽन्यथा वर्त्तमानो दाप्यो द्वादशकं दमम्॥" (मनु ८।३९७)

तन्तुवाय गृहस्थसे बुननेको १० पल सूत लेकर उसे मांड़ देनेके कारण ११ पल सूत देगा। यदि उससे न्यून देगा, तो (राजकर्त्तृक) द्वादश पण दण्ड होगा।

भारतमें बहुकालसे प्रचलित होते भी पाश्चात्य देशमें कार्पासका व्यवहार वैसा न था। अच्छी प्रकार समझा जाता है कि भारतसे पश्चिममें क्रमशः फैल कर कार्पास व्यवहृत हुआ है।

सम्भवतः अरबी भाषाके "कतान" शब्दसे ही युरोपके इतालियोंने "कतोन" फरांसीसियोंने "कोतान" और अंगरेजोंने "काटन" शब्द पाया होगा। किन्तु यह निःसन्देह है कि फारसीका "कुरपाश" शब्द संस्कृतके कार्पास शब्दका अपभ्रंश है। ग्रीक "कारपसस्" शब्दसे पाट या सनका बोध होता है। ग्रीक भौगोलिक हिरोदोतासने भारतके कार्पासविषय पर अपनी पुस्तकमें इसप्रकार लिखा है,—"वहां वन्य वृक्षके फलसे एक प्रकारका रूयां निकलता है। सौन्दर्यमें वह मेषके लोमसे भी उत्कृष्ट होता है। भारतवासी उससे परिधेय वस्त्र बनाते हैं"। थिओफ्राष्टस नामक किसी दूसरे भौगोलिकने भी इस देश कार्पासकी वर्णना लिखी है। अलिकसेन्द्रकी नौसेनाके अध्यक्ष नियार्कासने भारतवासियोंके परिधेयका उल्लेख इसप्रकार किया है,—"वह पेड़के रूयेंका वस्त्र बनाकर पहनते हैं। उससे पदका मध्यदेश पर्यन्त आवृत रहता है। फिर स्कन्धदेशमें एक चद्दर और मस्तकपर एक उष्णीष रखते हैं। यही उनका समस्त परिधेय है।" दो सहस्र वर्ष अतीत हो गये, किन्तु भारतवासियोंका परिधेय आज भी वही है। ई० प्रथम शताब्दमें कोई ग्रीक भ्रमणकारी अरबउपसागरसे भारतवर्षके भड़ोंच नगरमें वाणिज्य करने गये थे। वह अपनी पुस्तकमें लिखते हैं कि अरब भारतवर्षसे कार्पास ले जाकर लोहित सागरके उपकूल पर अदूली नामक स्थानमें व्यवसाय करते थे। क्रमशः वहांसे भारतके पातिपाक, अरियक और बारिगाजा (आधुनिक भड़ोंच) नगरके साथ वाणिज्य स्थापित हुआ।

मद्दीवसे यहां कार्पासवस्त्र भेजा जाता था। पहले भारतके मसुलिया (आधुनिक मसलीपत्तन) नामक स्थानमें उत्कृष्ट कार्पासवस्त्र प्रस्तुत होता था। इसीसे मसलिन शब्द बना है। ढाकेका शबनम् उस समय भी सर्वापेक्षा उत्कृष्ट गिना जाता था। ढाकेके सूक्ष्म प्रस्तुत कोमिकाके वस्त्रको देख यात्रिक चकते थे। चारो दिक भारतके कार्पासवस्त्रका आदर देख पड़ता था। क्रमशः अरबसे पूर्वदिक् पारस्य और पश्चिमदिक् ग्रीस तथा रोमका कार्पासवस्त्र भेजा जाने लगा। पर इस ओर किसीने लक्ष्य न किया—क्या पदार्थ है। वस्त्र पहन कर ही लोग रहे। किन्तु क्रम क्रमसे तूलकी कृषि पर भी लक्ष्य पड़ा था। तूलकी कृषि धीरे धीरे भारतसे पारस्य, पारस्यसे अरब, अरबसे मिसर और मिसरसे अफरीकाके मध्यभाग तथा पश्चिम भागमें फैलने लगी। पारस्यसे तुरस्क और वहांसे यूरोपके दक्षिण विभागमें कार्पासकी तूलकी कृषि चली थी। फिर यूरोपीय कार्पासजात तूलसे कागज तक बनाने लगे।

चीनके साथ भारतका बहु कालसे वाणिज्य चलता है। किन्तु चीनमें उस समय भी कार्पासतूलको कृषिकी ओर पैदा न की गयी थी। ई० ६ठे शताब्दको थोड़ी नामक सम्राट्ने कार्पासवस्त्रका एक परिच्छद उपढौकनमें पाया था। वह उसका बड़ा आदर करते थे। ११वें शताब्दमें चीनावोंने सुना—किसी प्रकारसे तूलसे कार्पास निकलता है। बहुत लोगोंने चीनके चौका कार्पासके वृक्षको उद्यानमें रखने लगे। किन्तु किसीने नियमानुसार कृषि न की। वह जाति रक्षणशील होती है, अपना किसी प्रकारका परिवर्तन करना या नूतन सामग्री लेना नहीं चाहती, सुतरां चीनमें रुईका बहुत समय तक आदर न हुआ। क्रमशः वहां भी उसकी कृषि बढ़ने लगी। आज कल चीना कार्पासका आदर समझ गये हैं। क्या छोटे क्या बड़े सभी चीना कार्पासके वस्त्रका व्यवहार करते हैं। अब समझा जाता है कि कार्पास भारतसे मिसर यूरोप और अफरीका पहुंचा है। किन्तु अमेरिकामें भी कार्पास हम देख पड़ता है। कोलम्बसके आविष्कार करते समय अमेरिकामें कार्पासका व्यवहार पाया था। कौन कह सकता है—भारतसे वह अमेरिका गया या अमेरिकामें अनायत उसका यत्न अमेरिकाके लोगोंने स्वतः उसका गुण समझ लिया था। सम्भवत पश्चिम अनुमान ही ठीक है।

पहले मध्यकालके समय मुसलमानोंने कार्पासके व्यवहार प्रथाओंके सम्बन्धमें चारो दिक् प्राण फैलाया था। वही प्राण स्पेनमें और क्रमसे फैल गया। क्रमशः ओलन्दाज प्रभृति कार्पासके वस्त्र प्रस्तुत करने लगे। अब इङ्गलैण्ड देश उनसे इन द्रव्योंका आदर करना सीखा था; फिर यह ओलन्दाजोंके अनुकरणसे कार्पासके वस्त्रादि बनाने लगे। ई० १६वें शताब्दके शेष भागमें अंगरेजोंने तुर्किस्तानसे कार्पास मंगाना आरम्भ किया।

१६०० ई०में ईष्ट इण्डिया कम्पनीने रानी एलिजावेथसे भारतमें वाणिज्य करनेकी अनुमति पायी थी। भारतसे अन्यान्य द्रव्योंके साथ इङ्गलैण्डको कार्पास और कार्पासनिर्मित वस्त्र भेजा जाने लगा।

कालिकाटसे कार्पास वस्त्र जानेसे कारण उस वस्त्रका नाम कैलिको पड़ गया। कार्पासवस्त्रपर लगायी जाने-वाली छाप छीटको पिण्टिङ्ग कहाती थी।

कार्पासवस्त्रको छीटका विलायतमें उस समय बड़ा समादर रहा। समादर देख कहा कि विलायतके लोगोंमें इङ्गलैण्डका वस्त्र छोड़ कार्पासके वस्त्रका ही व्यवहार आरम्भ किया था।

विलायतके अन्य व्यक्ति ऊन और सूतका प्रभेद समझते न थे। उनके निकट सभी ऊर्ण थी। अतएव वह कहने लगे,—"क्या कहीं पेड़ पर ऊन होते है। इसीको लेकर हमारे देशको ऊन बिगाड़ जाती।" १६७६ ई० में प्रथम इङ्गलैण्डमें कार्पासका वस्त्र बना था। १६७८ ई० में विलायतके व्यवसायियोंने देशके लोगोंके निकट कुछ प्रकाश करनेके लिये एक पुस्तक निकाला। पुस्तकका नाम "The ancient Trades decayed and repaired again" था। असन्तोष क्रमशः बढ़ने लगा। अवशेषको फिर फिर रह न सके, १७०० ई० में एक कानून बना था। उसके आदेशानुसार अपने गार्हस्थ्य प्रयोजनके लिये अर्थात्

अ/मोदूपोशाक या स्टहखित द्रव्यादिके लिये कपासको छोटका कपड़ा खरीदनेसे क्रेता या विक्रेताको २०० पाउण्ड या २०००) रु० जुर्माना देना पड़ता था। किन्तु कार्पासके ऊपर लोगोंका इतना प्रेम रहा कि गोपनमें उसका व्यवहार चलने लगा। क्रमशः इङ्ग-लैण्डमें भारतीय वस्त्रपर छोंटको मोहर लगी और भारतके बने दोनों वस्त्रोंके प्रचारसे उनका आदर घटा था। फिर बत्ती बनानेके लिये कार्पासको भांति दूसरी सामग्री नहीं मिलती। उसका साधारणको प्रयोजन भी पड़ता है। अन्ततः उसके लिये भी कार्पासका प्रयोजन हुवा। कानूनने उसे रोकना चाहा न था। पार्लियामेण्टमें इस सम्बन्ध पर बहुत तर्क चला कि भारतीय कार्पास इङ्गलैण्डके जनका अनिष्टसाधन करता है। १६२३ ई०की ८ वीं मार्चको पार्लियामेण्टने घोर-तर तर्क वितर्क कर स्थिर किया कि प्रति वर्ष अकेले कार्पासके लिये ही ८ लाख रुपया विलायतसे बाहर जाता है। वैसा अर्थनाश जातीय स्वार्थके लिये विशेष अनिष्टकर है। इतिहासकी वही कथा आजकल भारतमें प्रतिफलित है। मन साहब ईष्ट इण्डिया कम्पनीके एक डिरेक्टर थे। उन्होंने १६२१ ई० को हिसाब लगा कर देखा कि उस वर्ष ५०००० खण्ड कार्पास वस्त्र विलायत गया था। एक खण्ड खरीद जहाजसे लेजाने पर साढे तीन रुपया खर्च पड़ता, जो विलायतमें १०) रु० को बिकता था। उससे लाभ यथेष्ट रहा, कम्पनी उतना लाभ छोड़नेको प्रस्तुत न थी। आमदनीके साथ २ लाभका भाग भी बढ़ने लगा। १७०८ ई० को प्रसिद्ध पण्डित डिफो साहबने वीकली रिव्यू (Weekly Review) नामक पत्रमें लिखा था,—"भारतके साथ यह वाणिज्य बढनेसे जनका कारबार आधा बिगड़ गया। इङ्गलैण्डके अधिवासियोंका अर्धांश जन्मको भांति बलहीन हुवा"

१७२० ई० में दूसरा कानून निकला। उससे क्या इङ्गलैण्ड, क्या स्काटलैण्ड क्या आयरलैण्ड कहीं भी कोई व्यक्ति किसी प्रकारका कार्पासवस्त्र अङ्गपर परि-धान कर न सकता था। कार्पासवस्त्र पहननेसे ५०) रु० जुरमानेकी सजा थी। फिर बिछौना, तकिया परदा या किसी दूसरे काममें सूती कपड़ा लगानेसे २००) रु० जुरमाना देना पड़ता था। किन्तु कानून बननेसे ही क्या हुवा, इङ्गलैण्डीय महिलाओंकी दृष्टि कार्पासकी ओर जा चुकी थी वेशभूषाका कानून उनके हाथमें था। १७३६ ई०में कानूनकी कठोरता लोगोंको घटाना पड़ी। पीछे कानून निकला था—"कपासके कपड़ेका ताना पाट (लिनेन) के सूतका रहनेसे इङ्गलैण्डमें कोई भी इच्छा करनेसे उसे बना सकेगा।" उसके पीछे ३५ वर्षके बीचमें वाट आर्कराइट प्रभृति साहबोंने तरह तरहकी कलें निकालीं उनमें बहुविध सुलभ मूल्यसे उक्त वस्त्र बनने लगा। १७७४ ई० में इङ्गलैण्डमें कार्पासवस्त्र प्रस्तुत करनेके लिये व्यवस्था भी हुयी थी। फिर कलके कारखानोंमें वस्त्रवयनको कपासकी रुईका प्रयोजन पड़ा। उसीसे भारतके सर्वनाशका सूत्रपात हुवा था। भारतसे कार्पास वस्त्रके बदले कपासको रुई इङ्गलैण्ड जाने लगी। कलके कारखानोंमें अधिक रुईकी जरूरत थी। भारतकी रुईके साथ साथ अमेरिकाकी रुई भी वहां पहुंचने लगी। १८ वें शताब्दके शेष और १९वें शता-ब्दके आदिमें अमेरिकाको रुई मंगायी गयी। उससे पहले अमेरिकाकी रुई इङ्गलैण्ड जाती न थी। क्रमशः वह अधिक परिमाणमें वहां पहुंचने लगी।

ईष्ट इण्डिया कम्पनी भारतसे अधिक परिमा-णमें रुई भेजना चाहती थी। किन्तु अमेरिकाकी रुई अपेक्षाकृत उत्कृष्ट थी। उसीसे उसका आदर भी अधिक रहा। १७८८ ई० को कोर्ट आफ डिरे-क्टरने भारतके गवरनर-जेनरलको उत्कृष्ट रुई भेजनेके लिये पत्र लिखा था। उससे समझ पड़ा कि इङ्गलैण्डके बाजारमें अमेरिकाकी रुईके साथ भारतीय रुईकी विलक्षण प्रतिद्वन्द्विता लगी थी। उस द्वन्द्वमें कभी भारत और कभी अमेरिकाने जय लाभ किया। किन्तु अमेरिकाकी लंबे धागेवाली रुईका आदर और भारतकी छोटे धागेवाली रुईका अना-दर क्रमशः होने लगा। फिर भारतीय रुईमें मिला-वट रहनेसे अनादर अधिक बढ़ गया। किन्तु अङ्गरेज भारतमें अमेरिकाकी भांति अच्छी रुई

पैदा करनेको विशेष चेष्टित हुये। भारतमें कृषि एवं पुष्प समितिके मन्त्री और बहुतसे दूसरे लोगोंने इसके लिये बड़ी चेष्टा की थी। १८३० ई०में कलकत्तेके निकट आकड़ा नामक स्थानमें ५०० बीघे जमीनमें कपासकी खेती करायी गयी। तीन वर्ष पीछे देखनेपर कोई विशेष फल न निकला। इसीसे वह परित्यक्त हुयी। १८३८ ई० में अमेरिकासे बीज और नये नये उसीके साथ दस पारदर्शी लोग भारत बुलाये गये। उनसे तीन बम्बई, तीन मद्रास और चार आदमी बङ्गालमें रहे। बहुत चेष्टा करने भी इसको कोई अच्छा फल न मिला। फिर अमेरिकाकी रुईका बीज भारतके कृषकोंको दिया गया। १८६१ ई० को अमेरिकामें युद्ध लगा था। उससे वहांसे रुई बाहर जा न सकी। अंगरेज भारतमें अमेरिकाकी भांति रुई पैदा करनेको विशेष चेष्टा करने लगे। भारतकी रुई भी खूब जाने लगी। १८६० ई० में यहांसे सिर्फ तीन करोड़की कपास विलायत जाती थी। किन्तु १८६६ ई० को ३० करोड़की रुई भारतसे विलायत भेजी गयी। १८६५ ई० को अमेरिकाका विवाद मिटा था। उसीसे साथ भारतीय रुईकी रफ्तनी भी घट गयी। ११ वर्ष ८ करोड़ रुपयेसे भी कमकी रुई की रफ्तनी हुयी।

१८६९ ई० में एक बम्बई प्रदेश और एक मध्य प्रदेशमें काटन कमिश्नर नियुक्त हुआ था। उसी वर्ष बम्बईमें रुईकी मिलावट निवारण करनेको कानून बना। फिरको विदेशीय बीज बोने पर द्वारा देशीय कार्पासकी उन्नति करनेकी चेष्टा हुयी। वह चेष्टा कुछ कुछ फलवती हुई थी। आज भी विलायतमें भारतकी रुईका अधिक आदर है। नीचे तालिका दी जाती है कि १८७० ई० को इङ्गलैण्डमें किस किस देशसे कितनी रुईकी गांठ पहुंची।

अमेरिकासे १६६४०१० भारतसे १०६२२६०, ब्रेजिलसे ४०२०६० मिसरसे २१८८२०, और वेष्ट इण्डीज द्वीपपुञ्जसे ११६१०० गांठ। भारतकी रुईका सेर पीछे ३½ आना मूल्य पड़ा था।

घट जाने भी आजकल इङ्गलैण्डमें भारतकी रुईका बहुत आदर है। इङ्गलैण्डको छोड़ भारतका रुई अन्यान्य देशोंमें भी भेजी जाती है। १८८८-८९ ई०को इङ्गलैण्ड १० लाख, इटाली ७ लाख अष्ट्रिया ७ लाख, बेलजियम ८ लाख फ्रान्स ६ लाख, चीन १ लाख, जर्मनी १ लाख ८० हजार और रूस डेढ़ लाखकी रुई भारतसे पहुंची थी। एतद्व्यतीत इङ्गलैण्डसे अन्यान्य देशोंमें रुई भेजी जाती है। चीनमें सर्वत्र कार्पास उपजता है। फिर भी वहां भारतीय रुईको जरूरत पड़ती है। किन्तु युरोपमें महासमर हो जानेसे भारतको रुईकी कम रफ्तनी होती है। दूसरे महात्मा गांधीने भारतमें बीस लाख चरखे चलानेका आदेश दिया है, उसीसे रुईका बाहर निकलना अब लोग अच्छा नहीं समझते।

बाहर भेजनेके लिये रुईकी गांठ बांधना पड़ती है। फिर आगे जानेमें जहाजको सुविधा असुविधा भी देखते हैं। नियत चेष्टा होती रहती है—जहाजको थोड़ी जगहमें कैसे ज्यादा माल भर दिया जाय। जहाजमें स्थानानुसार किराया भी ठहरता है। महाजनोंको किराया देना पड़ता है। सुतरां महाजनोंको चेष्टा की जाती है—अल्प स्थानमें कितना अधिक माल भर सकेगा। उसी उद्देश्यसे रुईकी गांठ बढ़ाने और उसमें ज्यादा माल समानेकी चेष्टा हुआ करती है।

रुईके परिमाणानुसार गांठ बढ़ती पड़ती है। फिर जहाजके लिये रुईकी गांठ बहुत घटा दी जाती है। इससे भारतमें विलायती वाष्पीययन्त्र प्रस्तुत हुये हैं। उस यन्त्रकी संख्या दिन दिन बढ़ रही है। १८७८ ई० को भारतमें कोई डाई सौ पेचे चले थे।

भारतकी रुई इङ्गलैण्ड जाती है उससे बहुतसी कलोंमें उस देशका प्रयोजन साधित होता है। फिर इङ्गलैण्ड देशके प्रयोजनसे अधिक कार्पासवस्त्र प्रस्तुत कर सकता है। फिरको अच्छा कपड़ा भारत भी भेजा जाता है। वह भारतमें आकर बिकता है। आजकल मैनचेष्टरकी कलोंमें भारतीय लोगोंके परिधेय कपड़ेका अनुकरण करने लगा है। वह इङ्गलैण्डसे भारतको भेजा जाता है। सामान्य लोग अल्प मूल्यमें उसे खरीद व्यवहार करते हैं। इसीसे भारतीय तन्तुवायोंका व्यवसाय लोप होनेकी अवस्थामें आ पड़ा है। व्यवसाय

मालमें प्रतिद्वन्द्विता रहती है। विलायतमें मजदूरी ज्यादा और भारतमें कम पड़ती है। फिर भारतसे रुई विलायत ले जाने और वहां कपड़ा बनाकर भारत पहुंचानेमें भी खर्च लगता है। भारतमें वस्त्र बुननेकी कल खड़ी करनेसे यह व्यय निवारित हो सकता है। इसी विवेचनासे इङ्गलेण्डके लोगोंने यहां कल खोलनेकी व्यवस्था की है। इससे समझ पड़ा कि इङ्गलेण्डसे कल लाने और उसके चलानेमें प्रथमतः इङ्गलेण्डकी कलसे भारतकी चालमें बहुत अधिक व्यय लगा था, किन्तु उसके पीछे दूसरी सब सुविधा रही। १८५१ को एक समिति बनी थी। १८५४ ई० को प्रथमतः बम्बईमें कपड़ेकी कल खुली। उस समयसे अंगरेज व्यवसायी क्रमशः कलोंकी संख्या बढ़ा रहे हैं। आजकल बम्बई, इन्दोर, जबलपुर, हींगनघाट, नागपुर, औरङ्गाबाद, हैदराबाद, कुलबर्गा, कानपुर, आगरा, कलकत्ता, मन्द्राज, बेलारी, कालिकट, कोयम्बतूर, तूतकूडी, तिनवली, त्रिवांद्रुर, मङ्गलोर और पुंदि-चेरीमें कपड़ेकी कलें चलती हैं। उनमें कहीं सूत काता और कहीं कपड़ा बुना जाता है। प्रतिवर्ष लाखों मन रुई खर्च होती है। हजारों पुरुष, स्त्रियां, बालक और बालिकायें कामपर नियुक्त हैं।

कार्पास तूमने रुई संग्रह कर परिष्कार की जाती है। रुईमें बीच बीच बहुतसे बीज लगे रहते हैं। उन्हें निकाल डालना आवश्यक है। इसीसे किसी समतल प्रस्तर खण्ड वा समतल स्थान पर रुई फैला देते हैं। उसपर एक हाथ लंबा लौहदण्ड रखा जाता है। फिर उसपर खड़े हो कर पैरसे मांडते हैं। उससे बीज नीचे गिरने पर ऊपर साफ रुई रह जाती है। रुई साफ करनेकी चरखी भी होती है। उसमें लोहे या लकड़ीके दो गोल डण्डे बराबर बराबर लगे रहते हैं। फिर घुमानेसे वह दोनों संलग्न भावमें घूमने लगते हैं। दाहने हाथसे मुठिया पकड़ चरखी चलायी और बायें हाथसे उन्हीं मिले हुए डण्डोंमें रुई लगायी जाती है। ऐसा करनेसे नीचेकी ओर बीज गिरते और आगे साफ रुईके गाले पड़ते हैं। अमेरि-कामें इसके लिए सजिन नामक एक प्रकारकी कल भी बनी है। फिर किसी यन्त्रमें भरनेके लिए उक्त रुई पिञ्जारीसे साफ की जाती है। उसका नाम धुनकी और कमान भी है। इसमें तांतका एक छिला रोदा चढ़ा रहता है। सामने रुई रख कमानको बायें हाथसे पकड़ते हैं। फिर रोदा रुई पर जमाया और उसपर एक छोटे मोटे डण्डेसे आघात लगाया जाता है। इससे रुई खूब साफ होती है।

पहले हिन्दुस्तानमें रुई हाथसे साफ की जाती थी। यह काम प्रायः स्त्रियां ही करती थीं। रुई साफ होनेपर चरखेसे सूत कातते थे। पहले हिन्दु-स्थानमें घर घर चरखा चलता था। गृहस्थ-रमणी गृहस्थालीका सब निबटा अवकाशके समय चरखे पर बैठ सूत कातती थीं। तकुवे पर सूतकी पाढ़ी या पोनी लगी रहती थी। वस्त्रवयन तन्तुवाय लोगोंका कार्य था। यह गृहस्थोंके घरसे पोढ़ी खरीद ले जाते थे। तन्तुवायकी स्त्रियां चावलका मांड़ लगा सूतको दृढ़ बनाती थीं। उसका नाम पोर है। तन्तुवाय उस सूतको तांतपर चढ़ा वस्त्रवयन करते थे। आज भी वैसा ही होता है। पहले ढंगके सब लोगोंका वस्त्र ऐसे ही बनता था। हिन्दु-स्थानमें स्थान स्थानपर सुन्दर सुन्दर कार्पास वस्त्र बनते थे, जिन्हें विदेशीय वणिक् समादरसे मोल ले धनोपार्जन करते थे। ढाकेमें सर्वापेक्षा उत्कृष्ट वस्त्र प्रस्तुत होता था। ऐसा सूक्ष्म वस्त्र कहीं देख पड़ता न था। नीचे उनके कुछ नाम लिखते हैं,—

१ मलमल—आबरोयान्, तनजे़ब, मलमल—सर्वापेक्षा उत्कृष्ट है। शबनम, खासा, झीना, सरकार आली, गङ्गाजल और तेरिन्दस द्वितीय श्रेणीमें परिगणित है। बाफता,—यथा हम्माम, डिमटी, जाम, जङ्गलखास और गुलबदन तृतीय श्रेणीमें है।

२ डोरिया—डोराकाट, मसलिन (बारिक वस्त्र) राजकोट डाकाम, पादशाहदार, कुम्दोदार, कागजी, कलापात।

३ चारखाना—छोट मसलिन छह प्रकारकी थी।

यथा—नन्दनशाही, अनारदाना, कबूतरखोप, मकूल, बकाहार और बुंदिदार।

४ जामदानी—पहले इसको बेलबूटा कहते थे। साधारण यह बूटेदार होती थी। यथा—तुरंज बूटी, कनाल दुबलीजाल मिल, तिरछा। आजकल भी ढाकेकी धोती, ओढ़नी और साड़ी फिर प्रसिद्ध है।

ढाकेके तन्तुवायोंमें दिखावा और दिखाते भी हैं—देखा, धागा कितना बारीक कत सकता और कम धागेसे कैसा उमदा कपड़ा बुना जा सकता है। इसके सम्बन्धमें एक गल्प है। यह बात ऊपर लिखे नामोंको पढ़नेसे ही समझ पड़ती है कि मुसलमान बादशाहोंके समय इन वस्त्रोंका विशेष आदर रहा। कहते हैं कि औरङ्गजेबकी एक कन्या उनके निकट उक्त ढाकेके वस्त्र पहनकर गई थी। पिताने इसे भर्त्सना की कि वह अल्पाङ्गीन है। उत्तरमें कन्याने कहा कि उसने आठ तहका कपड़ा पहना था। नवाब अलीवर्दी खांके समय किसी जुलाहेने एक ढोटा कपड़ा घासपर सुखानेको डाला था। उसको गाय वहां घास चरने गयी। गायने कपड़ेको घास समझ खा लिया। सूक्ष्मताका इससे अधिक परिचय दूसरा क्या हो सकता है। ऐसा सूक्ष्म वस्त्र प्रस्तुत करनेमें बड़ा समय लगता है। १० हाथ लम्बा और २ हाथ चौड़ा ऐसा कपड़ा बुननेमें ५।६ मास बीत जाते हैं। तिसपर भी चौमासे समय बुननेका ठीक नहीं बैठता। वर्षाकाल ही ऐसे कार्पासवस्त्र बुननेका उत्तम समय है। उसका मूल्य तीन चार सौ रुपयेसे कम नहीं लगता। जो किसी ऐसा सूक्ष्म वस्त्र चाहते थे उनमें अनेक न रहे हो एक बात भी कमी है। आज उन वस्त्रोंका बिलकुल आदर नहीं होता। फिर आगा भी नहीं कभी उनका आदर होगा। आजकल विलायती कलके कपड़ेसे देश भर गया है। सौभाग्य क्रमसे आज भी देशके कुछ लोग देशीय कार्पास वस्त्र पहनते हैं। इसीसे हिन्दुस्तानमें स्थान स्थान पर देशी कपड़ा थोड़ा बहुत बनता जाता है। किन्तु सूत इङ्गलैण्डसे आता है। यहांसे इस देशमें वस्त्र बनाकर विदेश भेजते हैं। आजकल सिर्फ कोटेकी रफ्तनी होती है। दूसरे बलावन करनेवालोंमें अधिक अवहेलन और बाध्यव्यवसाय चालित है।

आसाममें आज भी देशी कार्पासके देशी वस्त्र प्रस्तुत होता है। स्त्रियां ही सूत कातती और कपड़ा बुनती हैं। किन्तु वहां भी विलायती कलका आदर जमता जा रहा है। आसामियोंके बहुतसे कपड़े कपाससे बनते हैं।

युक्तप्रदेशके सिकन्दराबाद और मुहम्मदाबादमें बहुत बारीक कपड़ा तैयार होता है। उसके किनारे जरीकी गोट लगती है। दुपट्टे और धोतियोंमें जरीकी गोटका अधिक व्यवहार है। सिकन्दराबादके दुपट्टे बहुत अच्छे होते हैं। आजमगढ़का बना बारीक कपड़ा नेपालमें बहुत खपता है। वहांका मलमल, मलमल, गजी और तनजेब सूक्ष्म वस्त्र प्रसिद्ध है। रायबरेलीके पास जायस आदि, काशी और फैजाबादके ढाकेमें अनिर्वचनीय सूक्ष्म वस्त्र प्रस्तुत होता है। किन्तु आजकल अवनतिसे उस कारबारमें भी बिगड़ गया है। रामपुरका कार्पासनिर्मित खेसा कलकत्तेकी प्रदर्शनीमें पुरस्कृत हुआ था। मुरादाबाद, प्रतापगढ़, कानपुर, ललितपुर, मानपुर, सिरोंजी, चन्देरी, झांसीके अन्तर्गत मऊ, आजमगढ़के अन्तर्गत मऊ, सहारनपुर, मेरठ और आगरा अञ्चलमें नानाविध कार्पासवस्त्र बनता है। उसमें कितना ही आज भी विदेश भेजा जाता है। अलबत्ता गाढ़ा, गजी और धोती जोड़ा युक्तप्रदेशके प्रायः सकल स्थानोंमें प्रस्तुत होता है। देशके सामान्य लोग अधिकांश यही वस्त्र व्यवहार करते हैं।

पञ्जाबप्रदेशमें पूर्व एक प्रकारके मखमलके सुन्दर पगड़ी बनती थी। वह वस्त्र आजकल देख नहीं पड़ता। होशियारपुर, सिरसा, जालन्धर, लोधियाना, गुरदासपुर और पटियालेमें पगड़ीका कपड़ा बनता है किन्तु वह पूर्वकी भांति उत्कृष्ट नहीं होता। रोहतकमें तनजेब नामक एक प्रकारका अपेक्षाकृत उत्कृष्ट मलमल बनाया जाता है। जालन्धरमें खाद्दर नामक मारकीनकी भांति मोटा कपड़ा होता है।

इसपर एक प्रकारका कारुकार्य रहता है। यह बुलबुल पक्षीकी आंखके आदर्श पर बुना जाता है, इसे "बुलबुल-चश्म" कहते हैं। आजकल इस शिल्पका लोप हो रहा है।

अब तो केवल खेस, लुंगी एवं सूसी नामक बारीक वस्त्र और दुसूती, गाढा तथा गजी नामक मोटा कपड़ा ही देख पड़ता है। राजपूतानेमें भी शेषोक्त चार प्रकारका वस्त्र बनता है। ग्वालियरके चांदेरी नामक स्थानमें उत्कृष्ट मसलिन तैयार होता है। इन्दोरका मसलिन भी बहुत खराब नहीं रहता। देवास राज्यके अन्तर्गत सारंगपुरमें धोती, साडी और पगडी प्रस्तुत होती है।

मध्यप्रदेशके नागपुर, भण्डारा और चांदा जिलेमें आज भी सूक्ष्म सूत कतता और उससे वस्त्र बनता है। १८६७ ई० को चांदा प्रदेशमें एक प्रदर्शनी हुयी। उसमें हाथका बना सूत देखाया गया था। वह सूत इतना बारीक रहा कि सिर्फ आध सेर सूत ५८ कोस लंबा निकला। नागपुरमें रुईका पेंच खुल जानेसे उक्त शिल्पका बहुत गौरव घट गया है। किन्तु पेंचका सूत आज भी उतना उत्कृष्ट नहीं होता। उससे कुछ कुछ गौरव हुवा है। देशी वस्त्र अधिक दिन टिकता है। इसीसे वहांके गरीब लोग विलायतीसे देशी वस्त्रका आदर अधिक करते हैं। होशङ्गाबादमें देशी वस्त्रका व्यवसाय बढ़ रहा है।

दाक्षिणात्यके हैदराबाद अञ्चल पर रायचूर जिलेमें खाकी रंगका मोटा कपड़ा और नन्देर जिलेमें बारीक मसलिन तैयार होता है। मन्द्राज प्रान्तके अरनी नामक स्थानका बारीक मसलिन अति उत्कृष्ट रहता है।

बम्बई प्रदेशमें विलायती वस्त्रका विशेष आदर बढ़ते भी गांव गांवमें रुईका देशी मोटा कपड़ा बनता है। सामान्य लोग मोटी साड़ी और पगड़ीका विशेष आदर करते हैं।

अनेक स्थानमें रुईके सूतमें रेशम या ऊन मिला तरह तरहका कपड़ा बनाते हैं। कहीं कहीं रुईके कपड़ेमें रेशमी किनारा लगाया जाता है। फिर कहीं रेशमी बेल बूटे, जरीके बेलबूटे और सूईका काम बनाते हैं। उसके अनेक नाम हैं—कारचोबी, कलाबत्तू, चिकन, कामदानी और जामदानी। जामदानी—करेला, गोलेदार, बूटीदार, और तिरछा आदि कई प्रकारकी होती है।

फूलदार रुईके नानाविध वस्त्र कलकत्तेके निकट बनाये जाते हैं। उनकी बिक्री सबसे बाजारमें अधिक होती है।

रुईके वस्त्रपर तरह तरहका रंग चढ़ाया जाता है। उसपर छाप भी कई प्रकारकी लगती है।

रुईका कपड़ा पहले अंगरेज कालीकटसे ले जाते थे। इसीसे उन्होंने उसको केलिको (Calico) नामसे अभिहित किया है। रंग देनेको केलिको-डाइङ्ग (Calico-dying) और छाप मार छींट बनानेको केलिको-प्रिंटिङ्ग (Calico-printing) कहते हैं। किसी किसी कपड़ेपर सुनहली छाप पड़ती है। छाप लगानेसे तरह तरहकी छींट बनती है। छींटके कपड़ेसे रजाई, तकियेका गिलाफ, तोसक, पलंगपोश, जाजिम, शामियाना वगैरह तैयार होते हैं। रंगदार कपड़ेमें लाल बहुत अच्छी रहती है। फिर छापदार कपड़ेमें सुनहरीका प्रचार अधिक है। इस देशमें रजक ही रुईका कपड़ा धोते हैं।

विलायती पेंचके प्रभावसे देशस्थ कार्पास-शिल्प क्रमशः लुप्त हो रहा है। सम्भावना ऐसी होने लगी है—जो शिल्प है वह भी काम पाकर न रहेगा। पहले कार्पासवस्त्र देशके प्रयोजनसे लग उद्वृत्त होनेपर विदेश भेजा जाता था। अब वह समय नहीं रहा। आजकल शिल्पी अन्नहीन हो गये हैं।

भावप्रकाशके मतमें कार्पासवृक्ष—लघु, ईषत् उष्णवीर्य्य, मधुररस और वायुनाशक है। उसका पत्र—वायुनाशक, रक्तकारक और मूत्रवर्धक होता है। बीज—स्तन्य-दुग्धवर्धक, शुक्रवर्धक, स्निग्ध कफकारक और गुरु है।

(त्रि०) कर्पासस्य विकारः अवयवो वा, कर्पासी-अण्। बिल्वादिभ्योऽण्। पा ४।३।१३६। २ कार्पासजात, कपासी, कपासका बना हुआ। इसका संस्कृत पर्याय—फाल और बादर है।

"एकं वसनकार्पासमाविकं तद्भु चाजिनं।" (भारत १२।०।२७)

कार्पासक (सं० पु० क्ली०) कार्पास स्वार्थे कन्। कार्पास वृक्ष, कपासका पेड़। इसका संस्कृत पर्याय— कार्पास, कार्पासी, तुण्डकेरी और समुद्रान्ता है।

कार्पासको (सं० स्त्री०) कार्पासी, कपास।

कार्पासतैल (सं० क्ली०) नाडीव्रणका तैलविशेष कपासका तैल। इसका तैल ४ सराबक, जल १६ सराबक और कार्पासमूल तथा हरिद्राका कल्क १ सराबक यथाविधि पकानेसे यह तैल बनता है। (रत्नाकर)

कार्पासधेनु (सं० स्त्री०) कार्पासवस्त्रनिर्मिता धेनुः, मध्यपदलोपी कर्मधा०। दानके लिये कार्पासनिर्मित धेनु, कपासकी गाय। वराहपुराणमें इसके दानका विधि कही है। यथा,—"विषुवसंक्रान्तिको, पुण्यकाले दिन और चन्द्रपीड़ा, दुःस्वप्नदर्शन एवं अरिष्ट दर्शनादि समागम पड़नेसे पवित्र देवालय अथवा तिर्थक गोचारण स्थलपर गोमय द्वारा दानस्थान लीपना चाहिये। फिर उसके ऊपर कुश तिल फैला देते हैं। उसके पीछे उस स्थानके मध्यस्थलमें धेनु स्थापनकर गन्ध, माल्य, चन्दनलेपन, नैवेद्य और धूप दीपादिसे पूजा करना चाहिये। अनन्तर कुमकुम दानमन्त्र पढ़ कर उसके पास कार्पासधेनु द्विजातिको देनी पड़ती है। दश ४ भार वस्त्र द्वारा निर्मित धेनुसे उत्तम, २ भार वस्त्र द्वारा निर्मित धेनुसे मध्यम, और १ भार वस्त्र द्वारा निर्मित धेनुसे अधम गिनी जाती है। इस परिमाणके चतुर्थांश द्वारा वत्स बनाना पड़ता है। फिर कार्पास धेनुके मस्तक दन्त नानाविध फल द्वारा, खुर रौप्य द्वारा और शृङ्ग स्वर्णद्वारा निर्माण करते हैं। इसका सर्वाङ्ग विविध रत्नसे पूर्ण किया जाता है। इस प्रकार यथाविधि धेनु दान करनेसे अन्तिम समय इन्द्रलोक मिलता है।"

कार्पासनासिका (सं० स्त्री०) कार्पासस्य नासिका इव, उपमि०। तकुं, तकला, तकवा।

कार्पासपर्वत (सं० पु०) कार्पासवस्त्रनिर्मित पर्वत, मध्यप०। दानके निमित्त कार्पासवस्त्रनिर्मित पर्वत करीब अपढ़ेका पहाड़। मत्स्यपुराणमें उसके दानका विधानादि इस प्रकार लिखा है,—देवालय प्रभृति पवित्र स्थानका विमर्द्द गोमयसे लीप उसपर कुश और तिल फैला देना चाहिये। फिर उसके मध्य देशमें कार्पासवस्त्रनिर्मित पर्वत स्थापना कर यथाविधि पूजा समापनान्त कुमकुम मन्त्रपाठपूर्वक द्विजातिको दान करते हैं। इस कार्पासवस्त्रराशि विंशति भार होनेसे उत्तम, दश भार होनेसे मध्यम और पञ्च भार होनेसे अधम गिना जाता है। इसमें विविध धान्य प्रभृति और नानाविध औषधि तथा रस सन्निविष्ट करते हैं। कार्पासपर्वत चारो दिक् कर्पूर विविध रत्न और नानाप्रकार अन्नभोज्ययुक्त चार कुम्भाचल स्थापन कर दान करनेका विधि है। इस प्रकार दान करनेसे जीव वंश उद्धार होता है।"

कार्पाससौत्रिक (सं० त्रि०) कार्पाससूत्रेण निर्वृत्तः, कार्पाससूत्र ठञ् तिष्यततिः। कार्पासके सूत्र द्वारा निर्मित, कपासके सूतका बना हुआ।

कार्पासास्थि (सं० क्ली०) कार्पासानां अस्थि, ६ तत्। कार्पासबीज बिनौला।

कार्पासिक (सं० त्रि०) कार्पासस्यायतम्, कार्पास-ठक्। कार्पास द्वारा निर्मित, कपासका बना हुआ।

कार्पासिका (सं० स्त्री०) कार्पासी स्वार्थ कन् टाप् पूर्वेह्रस्व। कार्पासी, कपास।

कार्पासी (सं० स्त्री०) कार्पास जातित्वात् ङीष्। एक कार्पासवृक्ष, साथ कपास। इसका संस्कृत पर्याय— बदरा, तुण्डिकेरी, समुद्रान्ता, कार्पासी, पव्या, तुला, गुड़ तुण्डकेरिका मरुद्भवा, पिचु और बादर है।

कार्म (सं० त्रि०) कर्मन् शीलं यस्य छत्रादित्वात् णः, निपातनात् साधु। १ अपनी चालाका कार्य करनेवाला, जो मतौआ मिलनेकी चाहिये न रख काम करता हो। २ कर्मशील, काममाजी।

कार्मक, कार्मुक देखो।

कार्मण (सं० क्ली) कर्म एव, कर्म स्वार्थे-अण्। मड़कन्य कर्मणि। पा ५।४।३६ १ मूलकर्म, जादू, टोना। औषधादिके मूलसे जो मोहन, उच्चाटन, मारण, वशीकरण प्रभृति कार्य किया जाता, वही कार्मण कहलाता है। २ मन्त्रतन्त्रादि योग। (त्रि०) कर्मसाधकत्वेन सम्पन्न, कर्मन् अण्। १ कर्मदक्ष, काममें होशियार।

कार्मणत्व (सं॰ क्ली॰) जादू, टोना, मोहिनी।

कार्मणेयक (सं॰ पु॰-क्ली॰) जनपद विशेष, एक बस्ती।

कार्मणोन्माद (सं॰ पु॰) उन्माद विशेष, एक पागलपन। यह रोग मन्त्रौषधिके प्रयोगसे हो जाता है। इसमें स्कन्ध एवं मस्तक गुरु लगता, नासिका, चक्षु, हस्त तथा पदमें दुःख उठता, वीर्य घटता और रोगी दुर्बल पड़ता है। फिर शरीरमें कोई सूई जैसी चुभाया करता है।

कार्मना (हि॰) कामद देवी।

कार्मरी (सं॰ स्त्री॰) वंशरोचना, वंशलोचन।

कार्मार (सं॰ पु॰) कर्मार एव, कर्मार स्वार्थे अण्। १ कर्मकार, लोहार। (कार्मारस्य अपत्यम्) २ कर्मकारका पुत्र, लोहारका लड़का।

कार्मारक (सं॰ क्ली॰) कर्मारेण कृतम्, कार्मार-वुञ्। कुलालादिभ्यो वुञ्। पा ४।३।११८। कर्मकारकृत कार्य, लोहारका बनाया काम।

कार्मार्य (सं॰ पु॰) कार्मारस्य अपत्यम्, कर्मार-ष्यञ्। १ कर्मकारका पुत्र, लोहारका लड़का। (वि॰) कर्मकारस्य इदम्। २ कर्मकारसम्बन्धीय, लोहारसे सरोकार रखनेवाला।

कार्मार्यायणि (सं॰ पु॰) कर्मारस्य अपत्यम्, कर्मार-फिञ् निपातनात् कार्मार्यादेशः। कौरव्य कार्मार्याय च। पा ४।१।१९। कर्मकारका पुत्र, लोहारका लड़का।

कार्मिक (सं॰ वि॰) कर्मणा चित्रकर्मणा निर्वृत्तः। १ कर्ममें नियुक्त, काममें लगा हुआ। २ निर्मित, बनाया हुआ। ३ नाना वर्णके सूत्र द्वारा चित्रित किया हुआ, जिसमें रङ्ग रङ्गका सूत लगी। (क्ली॰) ४ वस्त्र विशेष, एक कपड़ा। इसमें नानावर्णके सूत्रसे चक्र स्वस्तिकादि चिह्न बनाये जाते हैं। (मिताक्षरा)

"कार्मिके रोमवद्धे च त्रिंशद्भागक्षयो मतः।" (याज्ञवल्क्य २।१८०)

कार्मिक्य (सं॰ क्ली॰) कार्मिकस्य भावः, कार्मिक-ष्यञ्। वर्णदृढादिभ्यः ष्यञ्। पा ५।१।१२३। कर्मशीलता, परिश्रम, दौड़ धूप, मेहनत।

कार्मुक (सं॰ क्ली॰) कर्मणे प्रभवति, कर्मन्-उकञ्। कर्मण उकञ्। पा ५।१।१०३। १ धनुः, कमान। २ एक औज़ार। यह धनुषके आकारका होता है। (पु॰) कार्मुक धनुः साध्यत्वेन अस्त्यस्य, कार्मुक-अच्। ३ वंश, बांस। ४ श्वेत खदिर, सफेद खैर। ५ हिज्जलवृक्ष, एक पेड़। ६ महानिम्ब, बकायन। ७ चोरचोनी। ८ माधवीलता। ९ मेष प्रभृतिके मध्य नवम राशि। १० रुई धुननेका यन्त्र। (वि॰) ११ कार्यक्षम, कामकाजी। १२ श्वेतखदिरसम्बन्धीय, सफेद खैरसे सरोकार रखनेवाला।

कार्मुकभृत् (सं॰ वि॰) कार्मुकं बिभर्ति, कार्मुक-भृ-क्विप्। धनुर्धारी, कमान् बांधनेवाला।

कार्मुकासन (सं॰ क्ली॰) आसन विशेष, एक बैठक। पद्मासन लगा दक्षिण हस्त द्वारा वामपदको और वाम हस्त द्वारा दक्षिण पदको दो अङ्गुलि पकड़े रहनेसे कार्मुकासन होता है। (रुद्रयामल)

कार्मुकी (सं॰ त्रि॰) कार्मुकं अस्यास्ति, कार्मुक-इनि। धनुर्धारी, कमान् बांधनेवाला।

कार्य (सं॰ क्ली॰) क्रियते यद् तत्, कृ-ण्यत् ततो वृद्धिः। १ कर्म, काम। इसीसे मनुष्य कर्ता प्रवर्तित होता है। २ कर्तव्य, फ़र्ज़। ३ हेतु, सबब। ४ प्रयोजन, मतलब। ५ ऋणादिका विवाद, कर्ज़ वगैरहका झगड़ा।

"नोत्पादयेत् स्वयं कार्यं राजा नाप्यस्य पूरुषः।" (मनु ८।४३)
'कार्यं ऋणादिविवादम्।' (कुल्लूक)

६ अपूर्व। ७ उद्देश्य। ८ व्याकरणोक्त आदेशप्रत्यय। ९ आरोग्य, तनदुरुस्ती। १० व्यापार, धन्धा। ११ ज्योतिषशास्त्रोक्त लग्न लग्नसे दशम स्थान। (वि॰) ११ करने योग्य, किया जानेवाला। १२ लगाया या चढ़ाया जानेवाला।

कार्यकर (सं॰ वि॰) कार्यं करोति, कार्य-कृ-ट। कार्य निर्वाह करनेवाला, जो काम चलाता हो।

कार्यकर्ता (सं॰ पु॰) कार्यं करोति, कार्य-कृ-तृच्। कार्यकारक, काम करनेवाला शख्स।

कार्यकारक (सं॰ पु॰) कार्य-कृ-ण्वुल्। कार्यकर्ता, काम करनेवाला शख्स।

कार्यकारण (सं॰ क्ली॰) कार्यञ्च कारणञ्च द्वयोः समाहारः। मिलित कार्य और कारण, नतीजा और सबब।

कार्यकारणता (सं० स्त्री०) कार्यकारणयोर्भावः, कार्यकारण-तल्। कार्य और कारण उभयका परस्परापेक्षी धर्म, नतीजे और सबब दोनोंकी हालत। जैसे घट दण्डका कार्य और दण्ड घटका कारण है। सुतरां घट और दण्डमें परस्परको कार्यकारणताका धर्म अवस्थित है।

कार्यकारणभाव (सं० पु०) कार्यञ्च कारणञ्च तयोर्भावः, ६ तत्। कार्यकारणता, नतीजे और सबबको मिली हुई हालत।

कार्यकारी (सं० पु०) कार्यं कृ णिनि। कार्यकारक, काम करनेवाला।

कार्यकाल (सं० पु०) कार्यस्य उपयुक्त कालः, मध्यपदलो०। कार्यका उपयुक्त समय, कामका ठीक मौका।

कार्यकुशल (सं० त्रि०) कार्येषु कुशलः दक्षः ७-तत्। कार्यदक्ष, काममें होशियार।

कार्यक्षम (सं० त्रि०) कार्येषु क्षमः समर्थः, ७-तत्। कार्यसम्पादनमें क्षमतायुक्त काम करनेमें होशियार।

कार्यगुरुता (सं० स्त्री०) कार्यस्य गुरुता गौरवम्, ६ तत्। कार्यका गुरुत्व, कामकी बड़ी ज़रूरत।

कार्यगौरव (सं० क्लो०) कार्यस्य गौरवम् ६ तत्। कार्यगुरुता, कामकी ज़रूरत।

कार्यचिन्तक (सं० त्रि०) कार्यं चिन्तयति, कार्य चिन्ति ण्वुल्। १ कर्तव्य विषयकी चिन्ता करनेवाला जो कामकी खबर रखता हो। २ दक्ष, होशियार।

कार्यचिन्ता (सं० स्त्री०) कार्यस्य कार्येषु वा चिन्ता, ६ वा ७-तत्। १ कार्यकी चिन्ता, कामका फ़िक्र। २ कर्तव्य विषयकी चिन्ता, किये जानेवाले कामकी फ़िक्र।

कार्यच्युत (सं० त्रि०) कार्यात् च्युतः भ्रष्टः, ५-तत्। कार्यभ्रष्ट, जो कामसे अलग हो।

कार्यत्व (सं० क्लो०) कार्यस्य भावः, कार्य त्व। कर्तव्यता, नतीजेकी हालत।

कार्यदर्शक (सं० त्रि०) कार्याणां दर्शकः, ६ तत्। १ कार्यका तत्त्वावधायक, कामका इन्तिज़ाम करनेवाला। २ कार्यका परीक्षक, काम देखनेवाला।

कार्यदर्शन (सं० क्लो०) कार्याणां दर्शनम्, ६-तत्। १ कार्यका तत्त्वावधान, काम-काज इन्तिज़ाम। २ कार्य परीक्षा कामकी जांच।

कार्यदर्शी (सं० त्रि०) कार्यं पश्यति इदं अवश्यं कर्तव्यमिदमस्मिति विवेचयति, कार्य दृश णिनि। तत्त्वावधायक, काम देखनेवाला।

कार्यद्वेष (सं० पु०) कार्ये कर्तव्यविषये द्वेष अनिच्छा ७-तत्। १ आलस्य, सुस्ती। २ काम करनेकी अनिच्छा, काममें जी न लगनेकी हालत।

कार्यध्वनि, कार्यकूट देखो।

कार्यनिर्णय (सं० पु०) कार्यस्य निर्णय स्थिरीकरणम्, ६ तत्। निश्चयरूपसे कामका स्थिरीकरण किसी कामका फैसला।

कार्यनिर्वाहक (सं० त्रि०) कार्यं निर्वाहयति सम्पादयति, कार्य निर् वह-णिच् ण्वुल्। कार्यसम्पादक, काम चलानेवाला।

कार्यनिष्पत्ति (सं० स्त्री०) कार्यस्य निष्पत्तिः समापनम् ६ तत्। कार्यको संपूर्णता, कामका खातिमा।

कार्यपञ्चक (सं० पु०) पञ्चकार्य, पांच काम। यह पञ्च तिरोभाव, आदान, स्थिति और उद्भवको कार्यपञ्चक कहते हैं।

कार्यपटु (सं० त्रि०) कार्ये कार्यकरणे पटु निपुणः, ७ तत्। कार्यकुशल, बड़ी होशियारीसे काम करनेवाला।

कार्यपुट (सं० पु०) कार्य-पुट क। १ अपव्ययक, एक खोटसंन्यासी। २ उन्मत्त पुरुष, पागल आदमी। ३ अनर्थकारक, बेफ़ायदे काम करनेवाला।

कार्यप्रद्वेष (सं० पु०) कार्ये प्रद्वेष अनिच्छ, कार्य-प्र द्विष भावे घञ्। १ आलस्य सुस्ती। २ कार्य करनेमें अत्यन्त अनिच्छा। काममें दिल न लगनेकी हालत।

कार्यपात्र (सं० क्लो०) कार्येषु उपयोगि पात्रम् मध्यपदलो०। कार्यमें आवश्यक पात्र।

कार्यप्रेष्य (सं० त्रि०) कार्येषु प्रेष्यः, ७ तत्। १ कार्य सम्पादनमें नियुक्त करने योग्य, काममें लगाये लायक। (पु०) २ दूत, हरकारा।

कार्यभाजन (सं० क्लो०) कार्येषु उपयोगि भाजनम्, मध्यपदलो०। कार्यपात्र, जो बरतन काममें लगा रहता हो।

कार्यभ्रष्ट (सं० वि०) कार्यात् भ्रष्टः, ५-तत्। कार्यच्युत, कामसे छूटा हुआ।

कार्यवत्ता (सं० स्त्री०) कार्यवतो भावः, कार्यवत्-तल। कार्यविशिष्टता, काममें लगी रहनेकी हालत।

कार्यवत्त्व (सं० क्लो०) कार्यवत्-त्व। कार्यवत्ता, कामकाजीपन।

कार्यवश (सं० पु०) कार्यस्य वशः दग्रता। १ कार्यका अनुरोध, कामकी मातहती। (वि०) २ कार्यके वशीभूत, कामके मातहत।

कार्यवस्तु (सं० क्लो०) कार्यार्थं वस्तु, मध्यपदलो०। कार्यनिष्पादनके लिये आवश्यक द्रव्य, काम करनेकी जरूरी चीज।

कार्यवान् (सं० पु०) कार्यमस्यास्ति, कार्य-मतुप् मस्य वः। कार्यविशिष्ट, काममें लगा हुआ।

कार्यविपत्ति (सं० स्त्री०) कार्येषु विपत्तिः, ७-तत्। कार्यके सम्पादनमें उपस्थित होनेवाली विपद्, जो आफत काम करनेमें पड़ जाती हो।

कार्यशब्दिक (सं० वि०) कार्यः शब्द इत्याह, कार्य-शब्द-ठक्। नैयायिक विशेष, एक मन्तिकी। यह शब्दको कार्य अर्थात् अनित्य मानते हैं। इसीसे इनका यह नाम पड़ा है।

कार्यशेष (सं० पु०) कार्यस्य शेषः, ६-तत्। १ आरब्ध कार्यको निष्पत्ति, शुरू किये हुये कामका खातिमा। २ कार्यका अवशिष्ट अंश, कामका बाकी हिस्सा।

कार्यसन्देह (सं० पु०) कार्ये कार्यस्य निष्पत्तिविषये सन्देहः, ७-तत्। कार्यको निष्पत्तिमें अनिश्चयता, कामके पूरा होनेमें शक।

कार्यसम (सं० पु०) न्यायके मतानुसार चतुर्विंशति जातिके अन्तर्गत एक जाति। लक्षण इस प्रकार है,—

"प्रयत्नकार्यानेकत्वात् कार्यसमः।" (न्यायसूत्र, ५।१।३७)

प्रयत्न सम्पादनीय वस्तु अनेक हैं। उसीसे कार्यसम नामक कार्य विशेष जाति होती है। जैसे—

"शब्दोऽनित्यः प्रयत्नानन्तरीयकत्वात् इत्यादि।"

मीमांसक शब्दको नित्य मानते हैं। उसीसे उनके मतमें शब्दकी उत्पत्ति नहीं होती। किन्तु किसी वस्तुमें आघात लगने पर उस आघातसे शब्द प्रकाश पाता है। नैयायिक उस बातको स्वीकार नहीं करते। उनके कथनानुसार अनित्य होनेसे शब्दकी उत्पत्ति होती है। अनित्यताके सम्बन्धमें वह उक्त 'शब्दोऽनित्यः प्रयत्नानन्तरीयकत्वात्' अनुमान वाक्यको ही प्रमाण समझते हैं। मीमांसक उक्त अनुमान वाक्यमें यों आपत्ति लगाते हैं,—'इस अनुमानसे शब्दकी अनित्यता सिद्ध हो नहीं सकती। क्यों कि प्रयत्नसम्पादनाय वस्तु अनेक हैं। अर्थात् नित्य और अन्य सकल वस्तु प्रयत्न द्वारा आत्मलाभ करते हैं। सर्वदा एक भावमें अवस्थित रहते भी प्रयत्नद्वारा नित्य वस्तुको उपलब्धि हो सकती है। जैसे यत्नपूर्वक वस्त्र उठा कर फेंक देनेसे वस्त्रद्वारा अनित्यताकी स्थिति स्थिर होना कठिन है। उसी दोषको वह "कार्यासम" वा "कार्यविशेष" जाति कहते हैं।

कार्यसम प्रभृति जातिसमूह दोषदाताके स्वपक्षको क्षतिकारक हैं। उसीसे वह "असदुत्तर" और "स्वव्याघातक" उत्तर नामसे अभिहित होते हैं। जाति देखो।

कार्यसागर (सं० पु०) गुरु कार्य, बड़ा काम।

कार्यसाधक (सं० वि०) कार्यं साधयति, कार्य-साधि-णिच्-ण्वुल्। कार्यसम्पादक, काम पूरा करनेवाला।

कार्यसाधन (सं० क्लो०) कार्यस्य साधनं निष्पादनम्, ६-तत्। कार्यसिद्धि, कामयाबी। २ कार्यनिष्पादन करनेका उपाय, काम पूरा करनेकी तरकीब।

कार्यसिद्धि (सं० स्त्री०) कार्यस्य सिद्धिः ६-तत्। १ कर्तव्य कामको निष्पत्ति, कामयाबी। २ अभीष्टसिद्धि।

"चित्तं प्रसादपि कार्यसिद्धिरतुला जक्षे तु लग्नं भयम्।" (तिथितत्त्व)

३ ज्योतिषोक्त एक सहम।

कार्यस्थान (सं० क्लो०) कार्यस्य स्थानम् ६-तत्। १ कार्य निष्पादन करनेका स्थान, कामकी जगह।

कार्या (सं० स्त्री०) कृ-ण्यत् टाप्। कारीतृण, एकापेड़।

कार्यहन्ता (सं० वि०) कार्यं विनाश करनेवाला, जो काम बिगाड़ता हो।

कार्याकार्यविचार (सं० पु०) कार्यञ्च अकार्यञ्च तयोः विचारः ६-तत्। कर्तव्य और अकर्तव्यका विचार, करने और न करने लायक कामका ख्याल।

कार्याक्षम (सं० त्रि०) कार्ये कार्यकरणे अक्षमः असमर्थः ७ तत्। कार्य करनेमें अपारग, जो काम करनेके लायक न हो।

कार्याधिकारी (सं० पु०) पदाधिकारी, अफसर, कामका इख्तियार रखनेवाला।

कार्याधिप (सं० पु०) कार्यस्य अधिपः, ६ तत्। १ कार्याध्यक्ष, कामका मालिक। २ ज्योतिषोक्त कार्य (दशम) स्थानका अधीश्वर।

कार्याधीश (सं० पु०) कार्यस्य अधीशः अधिपतिः, ६ तत्। कार्याधिप, कामका मालिक।

कार्याध्यक्ष (सं० पु०) कार्यस्य अध्यक्षः, ६ तत्। तत्त्वावधायक, अफसर, कामका मालिक।

कार्यानुरोध (सं० पु०) कार्यस्य अनुरोधः ६ तत्। कार्यको अवश्य कर्तव्यताका बन्धन, कामका तकाजा।

कार्यान्त (सं० पु०) कार्यस्य अन्तः, ६ तत्। कार्यका शेष, कामका खातिमा।

कार्यान्तर (सं० क्ली०) अन्यत् कार्यम् मयूरव्यंसकादि-वत् समास। अन्य कार्य, दूसरा काम।

कार्यान्वित (सं० त्रि०) कार्येण कर्तव्येन अन्वितः युक्तः ३-तत्। १ कार्ययुक्त, काममें लगा हुआ। २ कार्यबोधक पदका प्रतिपाद्य अर्थ रखनेवाला।

कार्याब्धि (सं० पु०) कार्यसागर, कामका ढेर।

कार्यारम्भ (सं० पु०) कार्यस्य आरम्भः, ६ तत्। कार्यका प्रथम अनुष्ठान, कामका आगाज।

कार्यार्थ (सं० पु०) १ कार्यका प्रयोजन, कामका मतलब। २ प्रयोजन, मतलब। ३ कार्यप्राप्ति होनेका आवेदन कामपानेकी अर्जी। (अव्य०) ४ कार्यके लिये, कामके वास्ते।

कार्यार्थसिद्धि (सं० स्त्री०) कार्यार्थस्य कार्यप्रयोजनस्य सिद्धिः, ६ तत्। उद्देश्यसिद्धि, मतलब पर आनेकी हालत।

कार्यार्थी (सं० त्रि०) कार्यस्य अर्थी प्रार्थी ६ तत्। १ कार्य करनेको प्रार्थनाकारी, उम्मेदवार। पैरोकार, मुकदमेकी पैरवी करनेवाला।

कार्यालय (सं० पु०) कार्यका स्थान, कारखाना, कामकी जगह।

कार्यिक (सं० त्रि०) कार्य युक्। १ कार्यविशिष्ट, काम काजी। २ मुकदमा लड़नेवाला।

कार्यी (सं० त्रि) कार्यं इत्यस्य अस्ति कार्य-इनि। १ कार्ययुक्त, कामकाजी। २ कार्यप्रार्थी, उम्मेदवार। ३ धर्म युक्त सपक्ष रखनेवाला। ४ मुकदमा लड़नेवाला।

कार्येक्षण (सं० क्ली०) कार्यदर्शन, कामको देखभाल।

कार्येश (सं० पु) कार्यस्य ईशः तत्त्वावधारणेन सम्पादकः ६ तत्। कार्याध्यक्ष, कामका मालिक।

कार्येश्वर, कार्येश देखो।

कार्यैक्य (सं० क्ली०) कार्याणां ऐक्यम् ६ तत्। एक कार्योपयुक्तता, कामको बराबरी। न्यायमतसे इस प्रकारकी समानतामें यह भी एक युक्ति मानी गयी है।

कार्योद्युक्त (सं० त्रि०) कार्ये कार्यसम्पादने उद्युक्तः ७ तत्। कार्यनिर्वाहमें व्यस्त, मुस्तैदीसे काम करनेवाला।

कार्योद्धार (सं० पु०) कार्यसम्पादन कामका अमल।

कार्योद्यम (सं० पु०) कार्ये उद्यमः चेष्टा, ७ तत्। कार्यसम्पादनको चेष्टा कामको कोशिश।

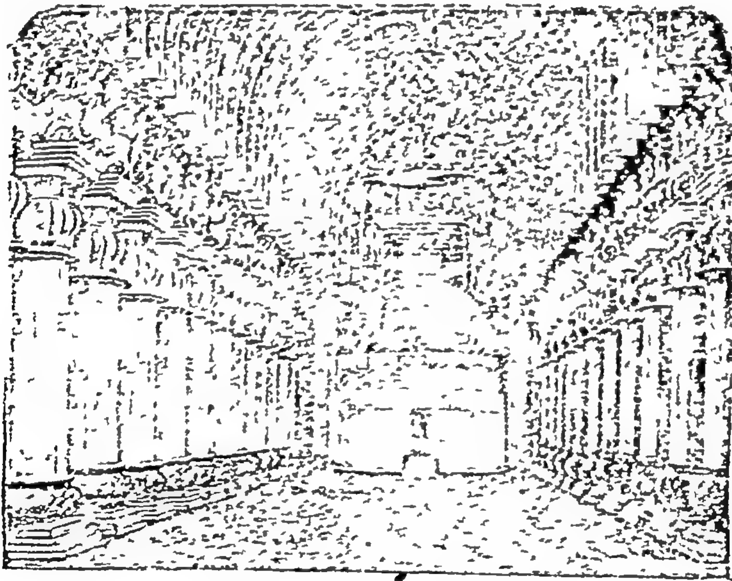
कार्योद्यत (सं० त्रि०) कार्येषु उद्यतः उद्यमशील ७-तत्। कार्यके साधनमें उद्यमविशिष्ट, काममें लगा हुआ।

कार्योद्योग (सं० पु०) कार्यस्य उद्योगः, ६ तत्। कार्यके आरम्भकी चेष्टा, काम शुरू करनेकी कोशिश।

कार्लि—पूनाकी एक गुहा। यह अक्षा० १८° ४६´ २०″ उ० और देशा० ७३° २९´ १५″ पू०पर अवस्थित है। पूनासे बम्बई जानेमें अन्दाज बाईस मील दूर पहुंचनेसे दक्षिण भागको समुद्रको ओर छोटा पत्थर पर्वतकी उपत्यकामें कार्लि गुहा देख पड़ती है। महाद्रिपर्वतके कार्लि पहाड़ अत्यन्त भागमें अवस्थित है। यह वालीको ष्टेशन-से अतिनिकट है।

इस गुहामें एक सुन्दर मन्दिर खोदित है। भारतमें पर्वतके भीतर खोदित नाना स्थानोंपर नाना प्रकारके मन्दिर विद्यमान हैं। किन्तु कार्लिको भांति गठन अन्यत्र किसीमें देख नहीं पड़ता। स्वभावतः यह बौद्धों का बनाया है। निर्जनमें उपासना करनेके लिये बौद्धों ने पर्वतको गुहाके भीतर इस चैत्यको बनाया था। इसको गठनप्रणाली कुछ कुछ पाश्चात्यके गिरजेसे

मिलती है। गुहाके सम्मुख (आगे) सिंहद्वार है। सिंहद्वारकी दोनों दिक् दो स्तम्भोंके होनेका अनुमान किया जाता है। किन्तु आजकल उनमें एकमात्र वर्तमान है। इसके निर्णय करनेका उपाय नहीं—दूसरे स्तम्भके स्थानमें एक छोटा प्रस्तर-मन्दिर बना था अथवा एक ही स्तम्भ बराबर रहा। स्तम्भ गोलाकार है। उस पर ३२ ढालू पल बने हैं। वह भूमिसे समभावसे ऊपर उठा है। स्तम्भके उपरि भागमें कारनिस या कगार है। कगारके ऊपर चारों ओर चार सिंहमूर्ति खोदित हैं। किसी किसीके अनुमानसे उक्त चारों मूर्तियां एक चक्र धारण करती थीं। सिंहद्वार पार होते ही दूसरा एक द्वार मिलता है। उसका विस्तार प्रायः २४ हाथ होगा। उसके दोनों पार्श्व दो स्तम्भ हैं। दोनों स्तम्भ षट्कोण वा अष्टपलविशिष्ट हैं। उनमें नीचे या ऊपर कोई कारुकार्य देख नहीं पड़ता। फिर भी उपरिभागपर दोनों स्तम्भोंमें दो प्रशस्त प्रस्तरफलक लगे हैं। उसके पीछे फिर कुछ ऊपरकी ओर एक अंगनो है। उससे पार स्तम्भाकृति कुछ नीचे उतर गये हैं। उसके अनन्तर कुछ आगे बढ़ने पर मन्दिरमें प्रवेश करनेको तीन द्वार हैं। उनमें सभी उन्मुक्त हैं, किसी प्रकारके कपाट नहीं लगे। तीनों द्वार एक कतारमें प्राचीरवत् प्रस्तर-खण्डसे संलग्न हैं। उक्त प्राचीर द्वारके मस्तक पर्यन्त समतल भावमें अवस्थित है। उसके उपरिभागमें शून्य है। उसी स्थानसे आलोक (रोशनी) मन्दिरमें पहुंचता है। शून्यके ऊपर बड़ी मेहराब है। मेहराब मन्दिरके प्रवेशद्वारसे शेष पर्यन्त विस्तृत है। उस



कार्लि।

द्वार पार होनेसे अभ्यन्तरकी अपूर्व शोभा देख कर मनमें एक अपूर्व भावका उदय होता है। कैसी शिल्प चातुरी! क्या असम्भव परिश्रम! दोनों पार्श्वपर दो बरामदे दोनों ओर चले गये हैं। मध्यस्थलमें नाट्य-मन्दिरका मण्डप है। प्रवेशद्वारकी अपरदिक् गुम्बज-जैसा चैत्यका स्थान है। द्वारमें प्रवेशकर देखते हैं कि कतार बकतार स्तम्भश्रेणी दोनों पार्श्व दण्डायमान है। दोनों पार्श्वके स्तम्भोंके पीछे दोनों ओर बरामदा है, बरामदेसे मध्यस्थलको मन्दिरमें आनेके लिये दोनों पार्श्वके स्तम्भोंके मध्य स्थान विद्यमान है। भूमिके मध्यस्थलसे मेहराबके मध्य स्थान तक नापने पर सम्भवतः तीस हाथ अन्तर निकलेगा। एक ही स्तम्भकी

दर्शन करना असम्भव है। सबको दर्शन कौन कर सकता है। क्या ही कारीगरी है। सभामण्डपके सामने भी चार स्तम्भ हैं। उनको सब है और और खरता गये हैं। उनमें कुछ योगाकृति है। उनके ऊपर चार एक है। दक्षिणपर स्तम्भोंके मस्तक है। उनपर कंगनी बनी है। कंगनी पर दोनों दिक् अस्थिमूल है। उपरि पृष्ठपर कहीं दो मानव कहीं दो मानवी कहीं एक मानव और कहीं एक मानवीकी मूर्ति है। स्तम्भश्रेणी पार होने पर एक गुम्बज उसी भावमें देख पड़ेगी। उसके ऊर्ध्वभागमें "+" इस चिह्नकी भांति एक पदार्थ और उसपर एक कलस है। आजकल उस कलसका कुछ अंश टूट गया है। गुम्बजके पश्चाद्भागमें पश्चिमदिक् दूसरे भाग स्तम्भ हैं उनकी बनावट वैसी नहीं है विशेष किसी अंशमें हीन नहीं। मन्दिरके द्वारदेशमें उन स्तम्भोंके मूलदेश पर्यन्त एक भाव अमर होगा। उसमें दोनों दिक्के स्तम्भोंका समभाग चाहे जोकर देखा। बरामदोंका परिसर अधिवासयुत छोटा है। ६ हाथसे अधिक नहीं। उस कोठी मिहराबके पीछे जो झांकी खिड़कियां मिहराबके समान हैं। खिड़कियोंको सजा रखी है। उस मिहराबको एक चौखट दूसरी ओर लग चली गयी है। खिड़कियां हमारे यहांकी तरह बराबर भावसे अवस्थित नहीं। एक एक भावपर मेह रहके भिन्न भिन्न भावपर शून्यमें अवस्थित है। उसका कोई आधार देख नहीं पड़ता। आजकल कोई निर्णय कर नहीं सकता—देखें वह किस प्रकार सम्पन्न हुई है। न देखने पर वर्णनासे इस मन्दिरका सौन्दर्य कैसे अनुमान हो सकता है। कौन कह सकता—यह मन्दिर कितने दिनका पुराना है। आकारसे भि अक्षराकार कोई अनुदित अक्षर देख पड़ते है। लोगोंके कथनानुसार महाराज भूति या देवमूर्तिने यह मन्दिर बनाया है। आपने सनमें भूति राजा ई० शताब्दमें ७८ वर्ष पूर्व राजत्व करते थे। उसके भी पूर्व मन्दिरका बनना असम्भव नहीं।

कार्दमेय (स० पु०) कर्दमस्य अपत्यम्, कर्दम ढक्। कर्दम मुनिके पुत्र।

कार्दमेयीपुत्र (स० पु०) कार्दमेय्याः पुत्रः, ६ तत्। कर्दम ऋषिके दौहित्र एक आचार्य थे।

कार्मण (वै० त्रि०) कुशलविशिष्ट, मोहितकारक।

कार्मीण (स० त्रि०) कर्मणे हितम् कर्मानु खञ्। कर्मानुसम्बन्धीय, कामकाजी, कर्मी।

कार्मिक (स० त्रि०) कर्मणा निर्वृत्तम्, कर्मात् ठञ्। कर्माद्वारा निष्पन्न।

कार्मरी (स० स्त्री०) कारम राति कृष्ण शाकादि निष्पत्ति। १ कारमानी। २ काफरी। ३ काकेमा।

कार्मर्य (स० पु०) गाम्भारीवृक्ष, एक पेड़।

कार्श्य (सं० पु०) कृश भावे ष्यञ्। १ कर्चूरक, कचूर। २ गाम्भारीवृक्ष। ३ लकुचवृक्ष, बड़हलका पेड़। ४ शालवृक्ष। ५ मालवृक्ष। ६ मालवृक्ष। (क्ली०) कृशत्व भाव, कृश भाव। अर्थशास्त्र चक्र। ७ कृशता, कमजोरी, दुबलापन। ८ शरीर ताराय कमजोरीकी बीमारी। इस रोगका कारण—वात, रूक्षान्नपान, लंघन, अतिमात्रा, शोक रोग, निद्रा विनिग्रह, निरन्तर परिश्रम, नित्य व्यायाम, भोजन की अल्पता, भीत और कामादिका चक्र है। (भावप्रकाश)

कार्श्यहरणीय (स० पु०) कृशताका एक औषध, कमजोरीकी कोई दवा। असगन्धा, दन्तोमूल, अश्वगन्धामूल विदारी, विजय, विमद एवं मूली तथा शतावरीका बराबर बराबर और सबसे बराबर कोई भीमसेनी रसमें घोटनेसे यह औषध बनता है। (चक्रदत्त)

कार्ष (स० त्रि०) कृषि सम्बन्धीय कर्षक। ऋक् १०।११।१६। कृषिकसंबन्धक, काश्तकार, किसान।

कार्षक (स० पु०) कर्षं कार्षं वा पचति कर्षति कृष् ण्वुल्। उषे३ क्रिविरीतिम्। पा ५।१।४८। कृषक किसान।

कार्षापण (स० पु० क्ली०) कार्षस्य कर्षस्य वा आपण व्यवहारो यत्र कार्षापण पण्। १ षोडश पण, १६ कौड़ी या रत्ती। २ कर्षपरिमाण १६ माशा। यह सोना तौलनेको १६ माशे चांदी तौलनेको १६ पल और तांबा तौलनेको ८० रत्तीका रहता है। ३ धन दौलत, सोना चांदी। ४ कनक, विद्यान।

कार्षापणक (सं० पु० क्ली०) कार्षापण स्वार्थे कन्। कार्षापण, एक तोल।

कार्षापणावर (सं० त्रि०) एक कार्षापणके मूल्यवाला, जिसमें कमसे कम १६ कौड़ियां लगें।

कार्षापणिक (सं० त्रि०) कार्षापणेन आहार्यम्, कार्षापण टिठन्। कार्षापणाद्वा प्रतिश्च। पा ५।१।२५ (वार्तिक) कार्षापण द्वारा ग्राहरणयोग्य, १६ कौड़ीमें आनेवाला।

कार्षि (सं० पु०) कर्षति, कर्ष-स्वार्थे इञ्। १ अग्नि, आग। (स्त्री) २ आकर्षण, कशिश। ३ कर्षण, जोताई। (त्रि०) ३ कृषक, खेत जोतनेवाला। ४ मल्लगीत मल्लनायक, भीतरी मैल छुड़ानेवाला।

कार्षिक (सं० पु०) कर्ष स्वार्थे ठक्। १ कार्षापण, १६ कौड़ीका एक सिक्का। (कर्षः शीलमस्य) २ कृषक, किसान। (त्रि०) कर्षस्य अयम्। ३ कर्षपरिमित, सोलह मासेवाला। ४ कर्ष परिमित मूल्य द्वारा क्रय किया हुआ, जो १६ कौड़ीमें खरीदा गया हो।

कार्षिवण (वै० त्रि०) कृषक, किसान।

कार्ष्ट्य (सं० त्रि०) कृष्टस्य भावः कृष्ट-ष्यञ्। कृष्टता, जोताई।

कार्ष्ण (सं० त्रि०) कृष्णस्य इदम् कृष्ण-अण्। १ कृष्णमृग सम्बन्धीय, काले हिरनवाला। २ कृष्णद्वैपायन सम्बन्धीय। (कृष्णो देवता अस्य) ३ कृष्णभक्त। (क्ली०) ४ कृष्णमृगचर्म, काले हिरनका चमड़ा। (पु०) ५ कृष्णसार मृग, काला हिरन।

कार्ष्णा (सं० स्त्री०) क्षुद्र शतावरी, छोटी सतावर।

कार्ष्णाजिनि (सं० पु०) कृष्णाजिनस्य ऋषेरपत्यम् कृष्णाजिन-इञ्। १ कृष्णाजिन मुनिके पुत्र। २ आचार्यविशेष, एक उस्ताद। ३ अनेक विद्यानविद्, कोई मुहक्किक, मीमांसासूत्र, ब्रह्मसूत्र और कात्यायनश्रौतसूत्रमें इनका नाम मिलता है। ४ कोई स्मृतिशास्त्रप्रणेता; टोडरमल, हेमाद्रि, माधवाचार्य रघुनन्दन प्रभृति स्मार्त पण्डितोंने इनका मत उद्धृत किया है।

कार्ष्णायन (सं० पु०) कृष्णस्य आसस्य गोत्रापत्यम् कृष्णफक्। १ आसवंशके ब्राह्मण। २ वाशिष्ठ, वशिष्ठवंशी।

कार्ष्णायस (सं० क्ली०) कृष्णस्य अयसो विकारः कृष्णायस्-अण्। १ कृष्ण लौहनिर्मित द्रव्य, काले लोहेकी बनी हुयी चीज। २ लौह, लोहा। (त्रि०) ३ कृष्ण लौह निर्मित, काले लोहेका बना हुआ।

कार्ष्णि (सं० पु०) कृष्णस्य अपत्यम् कृष्ण-इञ्। १ कामदेव। २ गन्धर्वविशेष। ३ व्यासके पुत्र शुकदेव। ४ प्रद्युम्न।

कार्ष्णी (सं० स्त्री०) कार्ष्ण-ङीप्। शतावरी, सतावर।

कार्ष्ण्य (सं० क्ली०) कृष्णस्य भावः कृष्ण-ष्यञ्। कृष्णवर्णता, स्याही कालापन।

कार्ष्णायस (सं० त्रि०) १ कृष्णायसनिर्मित, काले लोहेका बना। लोह, लोहा।

कार्म (सं० क्ली०) कर्षति अत्र, कृष स्वार्थे णिच आधारे मनिन्। १ युद्ध, लड़ाई। भावे मनिन्। २ कर्षण, जोताई।

कार्मरी (सं० स्त्री०) कार्म कर्षणं राति ददाति, कार्म-रा-ङीप्। श्रीपर्णी वृक्ष।

कार्मर्य (सं० पु०) कार्मर्या विकारः, कार्मरी-यत्। श्रीपर्णीवृक्षका अवयव।

कार्मर्यमय (सं० त्रि०) श्रीपर्णी वृक्ष द्वारा निर्मित। कार्ष्मर्य कार्ष्मर्य देखो।

कार्ष्य (सं० पु०) कृष-क स्वार्थे ष्यञ्। शालवृक्ष।

कार्ष्यवन (सं० क्ली०) शाल वृक्षका वन।

कार्ष्ठ (सं० पु०) १ सर्जतरु, धूनेका पेड़। २ कृष्णसार मृग, काला हिरन।

काल (सं० क्ली०) कु ईषत् कृष्णत्वं लाति गृह्णाति, कु-ला-क, कोः कादेशः यद्वा धातुपु कुत्सितरूपतया कलति, कु-अल्-अच् कोः कादेशः। १ लौह, लोहा। २ कक्कोल, शीतलचीनी। ३ कालीयक नामक गन्धद्रव्य विशेष, एक खुशबूदार चीज। (त्रि०) कृष्ण वर्णविशिष्ट, काला। (पु०) ५ कृष्णवर्ण, काला रंग। ६ मृत्यु, मौत। ७ महाकाल। ८ शनिग्रह। ९ कासमर्द वृक्ष, कसौंदीका पेड़। १० रक्तचित्रक, लाल चीता। ११ धूना, राल, लोबान। १२ कोकिल, कोयल। १३ शिव। १४ विष्णु। १५ पर्वतविशेष, कोई पहाड़। कलयति आयुः कल-णिच् पचाद्यच् ततोऽण् यद्वा कलयति सर्वाणि भूतानि, कल-णिच् अच्-अण्। १६ समय, वक्त। इसका अपर संस्कृत नाम दिष्ट और अनेहा है।

कालमें संख्या, परिमाण, पृथक्त्व, संयोग और विभाग पांच गुण रहते हैं। काल एक विभाग तीन प्रकार है,— भूत, भविष्यत् और वर्तमान। बीतजानेवालेको भूत, चलन वालेको वर्तमान और आनेवाले समयको भवि-ष्यत् कहते हैं। किसी किसी शास्त्रमें कालके कई प्रकारके विभाग हैं। वहां ज्योतिषशास्त्र के विभागोंको ही हम उद्धृत किया करते हैं। एतद्भिन्न आयुर्वेदादि शास्त्रमें भी कालका विभाग निर्दिष्ट है। सुश्रुतसंहिता में कहा है, कि काल स्वयम्भू है। उसका आदि मध्य और विनाश नहीं होता। सूर्यको गतिके अनु-सार कालको निमेष, काष्ठा, कला, मुहूर्त, अहोरात्र, पक्ष, मास, ऋतु, अयन, संवत्सर और युगमें बांटते हैं। लघु अक्षर उच्चारणमें जो समय लगता उसका नाम निमेष पड़ता है। १५ निमेषको काष्ठा, ३० काष्ठाको कला, २० कलाका मुहूर्त, ३० मुहूर्तका अहोरात्र, १५ अहोरात्रका पक्ष, २ पक्षका मास, २ मासका ऋतु, ३ ऋतुका अयन, २ अयनका वत्सर और १२ वत्सरका युग मानते हैं।

न्यायके मतमें काल विभु, अर्थात् अपरिच्छिन्न परिमाणविशिष्ट और अपेक्षत्व रूप व महत्व ज्ञानका कारण एक पदार्थ है। वह अनुमान द्वारा सिद्ध होता है। अतीतादि प्रभृति व्यवहारोंमें कालही एकमात्र हेतु होता है। काल न रहनेसे कभी व्यवहार किया जा सकता कि यह अतीत, यह वर्तमान और यह भवि-ष्यत् था। कोई कोई नैयायिक काल और दिक्को ईश्वरसे अभिन्न बताते हैं। न्यायके मतमें खण्डकाल और महाकाल भेदसे काल दो प्रकारका है। खण्ड रूपी कालका नाम खण्डकाल है, फिर विभु और प्रलयकालमें भी विनष्ट न होनेवाले कालको महाकाल कहते हैं। क्षण, दण्ड पल, दिवस, दिन, मास और वत्सर प्रभृति व्यवहारमें खण्डकाल ही कारण होता है। क्योंकि सूर्यके परिस्पन्द अर्थात् गमन द्वारा हम मास और दिन प्रभृति व्यवहार करते हैं। महाकाल में संख्या परिमाण पृथक्त्व संयोग और विभाग पांच गुण हैं। कोई कोई नैयायिक अन्य पदार्थ मानकर खण्डकाल बताते हैं। खण्डकालका अपर नाम कालोपाधि है। कालोपाधि चार प्रकारका होता है। १म कालोपाधि क्रियाजनित विभागका प्रागभाव विशिष्ट क्रिया है। जैसे दो संयुक्त द्रव्यमें क्रियाजन्य उत्पन्न होनेसे परस्पर हो कर दोनों बंट जाते और विभागके प्रागभावका विनाश होते हैं। उसके पीछे अन्य किसी देशादिके साथ उसके संयोग और प्राग भावका नाश होता है। पीछे क्रिया भी नष्ट हो जाती है। इस स्थल पर यही देखाते हैं—जिस समय क्रिया उत्पन्न हुयी उसी समय वह विभाग प्रागभावविशिष्ट बन गयी। सुतरां उत्पत्तिकाल वह क्रिया प्रथम कालोपाधि है। पूर्वसंयोगविशिष्ट विभाग २य कालो-पाधि कहलाता है। जैसे पूर्वोक्त स्थलपर क्रिया उत्पन्न होनेसे परस्पर विभागकी उत्पत्ति हुयी। किन्तु उस समय संयोग बना रहा। उसके दूसरे क्षण वह विनष्ट हो गया। सुतरां विभागकी उत्पत्तिके समय विभाग पूर्वसंयोगविशिष्ट रहा है। पूर्वसंयोग नाश विशिष्ट परवर्ती संयोगका प्रागभाव ३य कालोपाधि होता है। पूर्वोक्त स्थलपर पूर्वसंयोगके नाश समय परवर्ती संयोगका प्रागभाव है, सुतरां पूर्ववर्ती संयोगके नाशविशिष्ट परवर्ती संयोगका प्रागभाव उस समय ३य कालोपाधि कहलाता है। उत्तर संयोगविशिष्ट क्रिया ४र्थ कालोपाधि है। पूर्वोक्त स्थलपर जब उत्तर संयोग होगा, तब क्रिया उत्तर संयोगविशिष्ट होनेसे ४र्थ कालोपाधि बनेगा।

अथर्ववेदमें काल ही सर्वश्रेष्ठ कहा गया है,—

"कालो अश्वो वहति सप्तरश्मिः सहस्राक्षो अजरो भूरिरेताः।
तमा रोहन्ति कवयो विपश्चितस्तस्य चक्रा भुवनानि विश्वा ॥१॥
कालो भूतिमसृजत काले तपति सूर्यः।
काले ह विश्वा भूतानि काले चक्षुर्वि पश्यति ॥२॥
काले मनः काले प्राणः काले नाम समाहितम्।
कालेन सर्वा नन्दन्त्यागतेन प्रजा इमाः ॥३॥

(अथर्व संहिता, १९ काण्ड, ५३ सू०)

"कालो यज्ञं समैरयद् देवेभ्यो भागमक्षितम्।
काले गन्धर्वाप्सरसः काले लोकाः प्रतिष्ठिताः ॥४॥
कालेऽयमङ्गिरा देवोऽथर्वा चाधि तिष्ठतः।
इमं च लोकं परमं च लोकं पुण्यांश्च लोकान् विधृतीश्च पुण्याः।
सर्वांल्लोकानभिजित्य ब्रह्मणा कालः स ईयते परमो नु देवः ॥६॥"

(१९।५४ सू०)

ब्रह्माण्डपुराणमें भी लिखा है,—

"सत्य, त्रेता, द्वापर और कलि चारो कालके मुख हैं। सत्ययुग चार जिह्वाविशिष्ट श्वेतवर्ण, त्रेता त्रिजिह्वाविशिष्ट रक्तवर्ण, द्वापर युग द्विजिह्वा विशिष्ट रक्त पिङ्गलवर्ण एवं भयङ्कर; और कलि—पुनः पुनः लिह्यमान एकजिह्वायुक्त रक्तचक्षुविशिष्ट कृष्णवर्ण होता है। ब्रह्मा, विष्णु और यम तीनों कालके कलास्वरूप हैं। समुदाय चराचरमें कालके लिये असाध्य कुछ भी नहीं। काल ही सर्वभूत सृष्ट कर फिर क्रमशः संहार करता है।"

(ब्रह्माण्डपु० अनुषा, ११ अ०)

कालक (सं० क्ली०) काल स्वार्थे कन् यद्वा कलयति नोदयति रक्तताम्, कल-णिच्-ण्वुल्। १ कालशाक, नारी। कालशाक देखो। २ यकृत, गुरदा। (पु०) ३ जतुक, हंसली। ४ जलगर्द सर्प, पानीका एक साँप। ५ राक्षसविशेष, एक आदमखोर। ६ चक्षुका कृष्ण अंश, आँखकी पुतली। ७ बीजगणितोक्त अव्यक्त राशिकी एक संज्ञा। ८ जनपदविशेष, एक बस्ती। पतञ्जलिके महाभाष्य मतसे उक्त स्थान प्राचीन आर्यावर्तकी पूर्वसीमा था। (पा २।४।१० महाभाष्य) ९ कोई प्रसिद्ध जैनसूरि। वह महावीरनिर्वाणके ४३५ वर्ष पीछे जीवित थे। किसीके मतानुसार उन्होंने पर्युषणापर्व बदला था। कालक ही गर्दभिल्लके ध्वंसके कारण थे। १० कोई जैनसिद्ध। पहले भाद्रपदकी शुक्लपञ्चमीको पर्युषणापर्व होता था। अनेक लोगोंके मतमें उन्होंने महावीर-निर्वाणके ९९३ वर्ष पीछे अर्थात् ५२३ विक्रम संवत्को पञ्चमीसे चतुर्थी-तिथिमें पर्वदिन स्थिर किया था। इनकेही मतानुसार श्वेताम्बर जैन पर्युषण पर्व मानते हैं। परन्तु दिगम्बर जैन अब भी वही महावीर स्वामी द्वारा उपदिष्ट शुक्ल पञ्चमीको ही पर्व प्रारंभ करते हैं। (त्रि०) ११ काल-वर्णयुक्त, काला। १२ अनित्य वर्णविशिष्ट, कच्चे रंगवाला। १३ रक्तवर्ण, सुर्ख, लाल।

कालकक्षट (सं० पु०) गिरीश फलसस, गिडोटका पेड़।

कालकङ्गु (सं० स्त्री०) काला कृष्णवर्णा कङ्गुः कर्मधा०। कङ्गुभेद, काली घुरया।

कालकचूर्ण (सं० क्ली०) चूर्ण विशेष, एक बुकनी। गृहधूम, यवक्षार, पाठा, व्योष, रसाञ्जन, तेजोह्वा, त्रिफला, चित्रक और शुद्ध लौह बराबर बराबर कूट पीस शहदके साथ मुखमें रखनेसे दन्त, मुख तथा गलरोग विनष्ट होता है। (चक्रपाणिदत्त)

कालकञ्ज (सं० क्ली०) कालं कृष्णवर्णं कञ्जम्, कर्मधा०। १ नीलपद्म, काला कमल। (पु०) २ कोई दानव।

कालकटङ्कट (सं० पु०) कालरूपः कटङ्कटः, मध्य-पदलोपी कर्मधा०। शिव, महादेव।

"स्थवो दहनो ताप्नो धनी कालकटङ्कट।" (भारत, अनुशासन १७ अ०)

कालकण्टक (सं० त्रि०) कालः कृष्णवर्णः कण्टको ऽस्य, बहुव्री०। कृष्णवर्ण कण्टकयुक्त, काले-काँटे-वाला। (पु०) कालकण्ठ देखो।

कालकण्टकरस (सं० पु०) रसविशेष, एक दवा। हीरकभस्म १ भाग, पारद २ भाग, अभ्र ३ भाग, स्वर्ण ४ भाग, ताम्र ५ भाग, और तीक्ष्ण लौहकिट्ट ६ भाग कश्मरगमें ३ दिन मर्दन करते हैं। फिर यवक्षार, सर्जिक्षार, सोहागा, और पञ्च लवण उक्त मर्दित द्रव्यके समान डाल ३ तीन दिन निर्गुण्डीकाके रसमें रगड़ा जाता है। सूखने पर चूर्ण बना अष्टमांश विषचूर्ण एवं सोहागेका फूला मिला कर १ दिन निबूके रसमें घोटनेसे यह औषध प्रस्तुत होता है। मात्रा २ गुञ्जा है। आर्द्रकके रसमें यह खाया जाता है। इसके सेवनसे वातरोग आरोग्य होता है।

(रसेन्द्रचिन्तामणि ८ अ०)

कालकण्ठ (सं० पु०) कालः कृष्णवर्णः कण्ठो यस्य, बहुव्री०। १ शिव, महादेव। २ पीतशाल वृक्ष, असने-का पेड़। ३ मयूर, मोर। ४ खञ्जनपक्षी, खड़रेचा। ५ कलविङ्क, चिड़ा। ६ जल-कुक्कुट, मुरगाबी। ७ कासमर्दवृक्ष, कसौंदी। ८ अन्धकाक, अंधा कौवा।

कालकण्ठक (सं० पु०) कालः कृष्णः कण्ठोऽस्य काल-कण्ठ कप् कालकण्ठ स्वार्थे कन् वा। १ दात्यूह

पक्षी, एक चिड़िया। २ पौनकालवृक्ष, पलाशीका पेड़।

कालकन्द (स० पु०) महाकन्द, बड़ा कन्द।

कालकन्दक (स० पु०) काल कन्द इव कायति प्रकाशते, काल कन्द कै क वा। काल कन्दस्य कन्द इव सदृशतया प्रकाशते, काल कदि-मत् स्वार्थे कन्। जलव्याल, पनियाँ सांप।

कालकञ्ज (स० पु०) तमालका पेड़।

कालकथा (स० स्त्री०) काल मुहूर्त।

कालककुभ (स० पु०) कृष्णकुष्म, कपालपाटलिका कालि कनक का कनक सम।

कालकण्ठ (स० पु०) काला कछुवा।

कालकरण (स० स्त्री०) समयका स्थिरीकरण, वक्तका ठहराव।

कालकर्णिका (स० स्त्री०) कालस्य कर्णिका इव, उप मित समा०। पनकी, दरिद्रता।

कालकर्णी (स० स्त्री०) काल कर्णोस्याः, काल इव कर्ण यस्य ङीप्। पनको, दरिद्रता। लक्ष्मी देखो।

कालकर्म (स० स्त्री०) काल मनिष्टकारि कर्म कर्मधा०। १ अनिष्टकारक कार्य बुराई पैदा करने वाला काम।

"तेन कौन्तितन कृतं कालकर्मेदं।" भारत १।८०

२ मृत्यु मौत।

कालकलाप (स० पु०) काल इव कृष्णवर्ण कलापः, कर्मधा०। १ कृष्णकलाप, काला मटर। २ काला उड़द।

कालकल्प (स० त्रि०) ईषद् समाप्त काल कालकल्प। यमतुल्य, मौतको बराबरी करनेवाला।

कालकवि (स० पु०) अग्नि आग।

कालकण्ठीय (स० पु०) कालकी कण्ठी एक ईशी तरह मत, कालक कण्ठ। कालविषयक एक सर्प।

कालकण्ठी (स० स्त्री०) कफको हरनेवाली एक पेड़। इसका बीज समझकर सुवर्णकी कण्ठी को तरह रखता है।

कालका (स० स्त्री०) काल एव स्वार्थे कन् टाप्। १ कालकेयनामक असुरोंकी माता। २ पक्षिविशेष, एक चिड़िया। ३ दक्षमाता। ४ वैश्वानरकी कन्या।

कालकाल (स० पु०) असुरविशेष एक राक्षस।

कालकाप (स० पु०) १ वैदोक्त कापथिकमुख पथभेद, जो सोम मूखा एक कामवर। २ यामिभेद।

कालकार (स० त्रि०) समय बनानेवाला, जो वक्त पैदा करता हो।

कालकारित (स० त्रि०) समयपर किया हुआ, जो वक्तसे बना हो।

कालिकार्जुन (स० पु०) धृष्टद्युम्नको सेनाका एक सैनिक। इसे रामने मारा था। (भारत)

कालञ्जर (स० पु०) कालं जरयति मोहयति, काल जि-णिच् अच्। १ शिव। २ मन्द्राज प्रदेशके टाइट्टरके निकटवर्ती एक प्राचीन तीर्थस्थान।

कालकीर्ति (स० पु०) एक राजा, यह असुर सुपर्वाके समान थे।

कालकील (स० पु) काले प्रहारकालोपयुक्त युद्ध महारम्भे कोलयति आह्वयति, काल-कील-अच्। कोलाहल, हल्ला। किसी प्रहारके समय कोलाहल उठनेसे वह प्रहर टल जाता और 'कालकील' कहलाता है।

कालकुष्ठ (स० पु०) कालेन कालवर्णेन पत्रभेदेन कुष्ठानि यस्य, काल कुष्ठ कर्मधा समा। यम।

कालकूट (स० स्त्री०) कालात् कृष्णवर्णात् कूटयति, काल कूट कर्मधा न। पार्वतीय वृक्षविशेष, कहूर पहाड़को सड़ी। कहुर देखो।

कालकूट (स० पु० स्त्री०) कालस्य मृत्योः कूटं कूट इव उपमि० यहा काले निमित्तपि कूटयति दहति, कालकूट अच्। १ विषसामान्य, मामूली जहर। २ कीट, भुन काटो। ३ वत्सनाभ, वच्छनाग। ४ काक, कौवा। ५ गिरिविशेष, एक पहाड़। यह वर्तमान कालीनदीके नदीके निकट अवस्थित है।

"कृतवान् शक्तिपर्वं तु पर्वेन हरनायम्।
एवं यावदी कला कालकूटमीन न ते॥" (भारत २९ २६)

६ स्थावर विषविशेष काला वत्सनाग। देवासुर युद्धके समय पृथुमाली नामक कोई असुर देवगण द्वारा मारा गया था। उसके रक्तसे अश्वत्थ वृक्षकी भांति एक वृक्ष उत्पन्न हुआ। उसी वृक्षके निर्यासका नाम काल

कूट विष है। यह विष शृङ्गवेर, कोङ्कण और मलय पर्वतमें होता है। कालकूटको शोधित करनेके लिये प्रथम ३ दिन गोमूत्रमें भिगोकर रखते हैं। फिर सर्षपतैलमें लोग वस्त्रखण्ड भिगो कुछ दिन बांधकर रखनेपर यह शुद्ध होता है। कालकूट प्राणनाशक, सर्वशरीरव्यापी, अग्निगुणबहुल, ओजः, रुक्षता, सन्धिबन्धका शैथिल्यकारक, संयुक्त द्रव्यका गुणग्राहक और बुद्धिनाशक है। किन्तु विशुद्ध होनेसे कालकूटके उक्त सकल गुण घट जाते हैं। ऐसे भयङ्कर गुण रखते भी युक्तियुक्त रूपसे प्रयोग करनेपर यह रसायन और वायु, श्लेष्मा तथा सन्निपात दोषनाशक है। (भावप्रकाश)
७ मूषिक, एक जड़। इसका वृक्ष शोंगियाकी तरह रहता और सिकिम तथा भोटदेशमें मिलता है। इस पर क्षुद्र क्षुद्र गोलाकार चिह्न होते हैं।

कालकूटक (सं० पु० क्लो०) कालस्य कूटमिव कायति प्रकाशते, काल-कूट कै-क। १ कारस्कर वृक्ष, कुचिलेका पेड़। २ कारस्कर फल, कुचिला। ३ शिव, महादेव।

"ततो दुर्योधनः पापस्तद्भक्षे कालकूटकम्।
विषं प्रक्षेपयामास भीमसेनजिघांसया ॥" महाभारत १। १२८ अ०

कालकूटदृट (सं० पु०) कालः कालसर्पः कूटदृटः कर्मधा०। कालकटदृट, महादेव।

कालकूटरजोद्भव (सं० पु०) राल।

कालकूटि (सं० त्रि०) कालकूटे भवः, कालकूट-इञ्। साल्वावयवप्रत्यग्रथकलकूटाश्मकादिञ्। पा ४।१।१७३। कालकूटजात, कालकूट मुल्कमें पैदा होनेवाला।

कालकृत् (सं० पु०) कालं करोति उदयास्ताभ्यां कालस्य दण्डादि परिमाणं करोति इत्यर्थः, काल कृ-क्विप् तुगागमः। १ सूर्य, आफताब। २ परमेश्वर।

कालकृत (सं० पु०) कालेन परमेश्वरेण कृतः सृष्टः यद्वा कालं कालपरिमाणं कृतः कर्ता काल-कृ कर्तरि क्त। १ सूर्य, सूरज। २ पापविशेष, एक गुनाह। इसके मिटानेका काल निर्दिष्ट होता है। (त्रि०) ३ कालजात, वक्तसे पैदा। ४ निर्दिष्ट, मुकरर। ५ कुछ समयके लिये रखा हुआ।

कालकेतु (सं० पु०) एक देवीभक्त। इन्द्रपुत्र नीलाम्बर महादेवके अभिशापसे धर्मकेतु नामक व्याधके पुत्र हुये थे। उस समय उनका नाम कालकेतु पड़ा था। (कविकङ्कणचण्डी)

कालकेय (सं० पु०) कालकाया अपत्यम्, कालका-ढक्। एक दानव। वृत्रासुरके मरनेपर कालकेय समुद्रमें रहते और रात्रिकालको गुप्तभावसे देवगणका अनिष्ट साधन करते। फिर देवगणने उनमें कितनोंहीको मार डाला। अवशिष्ट कालकेय हिरण्यपुरमें आकर ठहरे। पीछे अर्जुनने उन्हें भी निहत किया।
(हरिवंश १०१-१०४ अ०)

कालकेशी (सं० स्त्री०) कालः केश इव पत्रादिर्यस्याः कालकेश ङीष्। १ नीली, छोटानील। २ कालकेशयुक्त स्त्री, काले बालोंवाली औरत। ३ काल देवी।

कालकोटि (सं० स्त्री०) देशविशेष, एक मुल्क।

कालकोठ (सं० पु०) कन्दशाक विशेष, तरकारीका एक डला, इसे प्रायः लोग मलमाद्ध कहते हैं।

कालकोठरी (हि० स्त्री०) कारागारका स्थान विशेष, कैदखानेकी एक जगह। यह सङ्कीर्ण और अन्धकारमय होती है। इसमें अलग रहनेवाले कैदी रखे जाते हैं। २ कलकत्तेके फोर्टविलियमकी एक जगह। इसमें सिराजुद्दौलाने कितने ही अंगरेजोंको कैद किया था।

कालक्रम (सं० पु०) समयका प्रवाह, वक्तकी चाल।

कालक्रिया (सं० स्त्री०) काले यथाकाले निष्पन्ना अनुष्ठिता वा क्रिया, मध्यपदलो०। १ यथाकाल सम्पादित कार्य, वक्तसे किया हुआ काम। २ ऊर्ध्वदैहिक कार्य। ३ कालनिर्देश, वक्तका ठहराव। ४ सूर्यसिद्धान्तका एक अध्याय।

कालक्लीतक (सं० क्लो०) नालीहद, नीलका पेड़।

कालक्षेप (सं० पु०) कालस्य क्षेपः ६-तत्। १ समयका अतिपाहन, वक्तकी बरबादी। २ कर्तव्य कार्यके समयका लङ्घन, देर।

"उत्पश्यामि द्रुतमपि सखे मत्प्रियार्थं यियासोः।
कालक्षेपं ककुभसुरभौ पर्वते पर्वते ते ॥" (मेघदूत २२)

कालक्षेपण (सं० क्लो०) कालस्य क्षेपणं अतिवाहनम्, ६-तत्। कालक्षेप, वक्तका गुज़ार।

कालखञ्ज (सं० पु०) १ दानवविशेष। २ यकृत्, कलेजा।

कालपृष्ठ (सं॰ क्ली॰) कालीन कालात्मीय धनुरिति विस्तृति गच्छति काल पश्चि-न्तु। धनुष् कर्णिका।

कालपृष्ठ (सं॰ क्ली॰) कालं कृष्णवर्णं पृष्ठं यस्य, बहुव्री॰। १ धनुष् कर्णिका। २ कालप्रति-पालक एक मृग। ३ मृगरोगभेद कर्णीकी एक बीमारी।

कालयमुना (सं॰ स्त्री॰) काली कृष्णवर्णा गङ्गा महानद् पवित्रकारिणी कर्मधा॰। १ यमुना नदी। २ विदर्भ की एक नदी।

कालनिर्यासा (सं॰ स्त्री॰) नदीविशेष, एक दरया। आजकल इसे कालीनिर्यास कहते हैं।

कालगण्डैत (हिं॰ पु॰) सर्पविशेष, काले गण्डेवाला सांप।

कालगन्ध (सं॰ पु॰) काल कृष्णवर्णं गन्धं यस्य, बहुव्री॰। १ काला अगुरु नामक औषध। २ कालशिम्बी कोड़ा कालायन। ३ काला चन्दन। ४ सर्पविशेष, किसी किस्मका सांप।

कालगति (सं॰ स्त्री॰) समयका प्रवाह, वक्तकी चाल।

कालग्रन्थि (सं॰ पु॰) कालस्य ग्रन्थिरिव, उपमित समा॰। वत्सर, साल, वक्तकी गांठ।

कालग्रास (सं॰ पु॰) कालस्य ग्रासः, ६ तत्। मृत्यु, मौत, यमका कौर।

कालघट (सं॰ पु॰) एक ब्राह्मण। जनमेजयके सर्पसत्रमें यह भी पौरोहित्य कार्य पर नियुक्त थे। (भारत, आदि ५३ अ॰)

कालघाती (सं॰ त्रि॰) कालेन यथाकाले हन्ति घात-यति, णिनि। यथाक्रम विनाशकारक, धीरे मारने वाला।

कालङ्कत (सं॰ पु॰) कुत्सितोऽपि अलङ्कृतः, कोः कादेश। १ स्वर्णसुखी, आनासुखी। २ कासमर्द, कसौंदी।

कालचक्र (सं॰ क्ली॰) कालस्य कालमयीयस्त्रमिव, ६ तत्। १ कालरूप चक्र, चक्रका पहिया या फेर। चक्रकी भांति इसमें भी नेमि नाभि और अरादि प्रभृति कल्पित हैं। मत्स्यपुराणके मतानुसार दिवा भागका पूर्वाङ्ग, मध्याङ्ग एवं अपराङ्ग तीन अंश तीनों नाभि, संवत्सर परिवत्सर प्रभृति पांच अर अर्थात् धमाका और छही ऋतु कालचक्रके नेमि अर्थात् प्रान्तभाग हैं। दिवादि कालावयव नियत चक्रकी भांति घूमता है। इसीसे कालचक्रके साथ उपमित हुआ है। पुराणमें लिखते हैं कि निमेषादि युग पर्यन्त कालावयव नियत घूमनेसे सुख और कालचक्र कहा जाते हैं। २ ज्योतिषचक्र विशेष। ३ राजा सोमोके विजयपद ८३ वर्षोंमें एक चक्र। अ॰ १६०। ४ दानके लिये रौप्यनिर्मित एक चक्र। यह चक्र दान करनेसे अपमृत्युका भय नहीं रहता। ५ दण्ड विशेष। ६ मोटपरिमित एक कालज्ञापक यन्त्र। (पु॰) ७ पक्ष विशेष, एक दर्विकार।

कालचिन्तक (सं॰ पु॰) कालं चिन्तयति विचारयति, कालचिन्ति अण्। ज्योतिर्विद्, नजूमी, समयको विचारनेवाला।

कालचिह्न (सं॰ क्ली॰) कालस्य मृत्योश्चिह्नं, ६ तत्। मृत्युज्ञापक लक्षण विशेष, मौतकी अलामत। कालोत्तरमें इसके कई लक्षण लिखे हैं,—"जिसके दक्षिण नासापुटसे एक अहोरात्रकाल निश्वास चलता, वह तीन वर्षमें अवश्य मरता है। ऐसे ही दो अहोरात्र या तीन अहोरात्र चलनेसे डेढ़ वर्ष तक आयु काल रहता है। नासापुटद्वय परित्याग कर वायु यदि मुखसे आता जाता, तो मनुष्य तीन दिनमात्र जीवित रहता है। इसी प्रकार सूर्य चन्द्र दक्षिण और वाम नासापुटको छोड़के अकस्मात् मुखसे आता है। अकस्मात् किसी व्यक्तिको जो वर्ण श्वेत या पिङ्गलवर्णकी भांति समझता, वह दो वर्षमें मरता है। मल मूत्र और शुक्र अथवा मल मूत्र और छींक (अपान) एक साथ निकलनेसे एक वत्सरमात्र आयु काल रहता है। जो व्यक्ति आकाशमें इन्द्रनीलवर्ण सर्प सकल उपस्थित नहीं देखता, वह छह मास जीता जागता है। फिर परिष्कार दिवसको सूर्यको विपरीत दिक् कुम्भार द्वारा कोड़ने पर यदि जलमें इन्द्रधनु दिख पड़ता, तो भी मनुष्य छह मासमें मरता है। अपनी जिह्वा, नासिकाका अग्रभाग, भ्रूयुगका

मध्यमम और नेत्रज्योतिः देख न पड़नेसे अल्प दिनमें ही मृत्यु होता है। नीलादि वर्ण वा कट्वादि रस अन्यथाभावमें अनुभव करने अर्थात् वस्तुका प्रकृत वर्ण छोड़ अन्यवर्ण देख पड़ने और वस्तुका प्रकृत आस्वादन या अन्य आस्वाद मिलनेसे ६ मासके मध्य मृत्यु आ जाता है। कण्ठ, ओंठ, जिह्वा और तालु प्रभृति स्थान निरन्तर सूखनेसे ६ मासमें मनुष्य मरता है। जिसका दन्त, नख और नेत्रकोण नीलवर्ण लगता, उसका भी आयुःकाल ६ माससे अधिक नहीं चलता। मैथुनकालमें मध्य और शेष समय छींक आनेसे ५ मासमें मृत्यु होता है। स्नानके पीछे प्रथम ही जिसका वक्षःस्थल और हस्तपद सूख जाता, वह व्यक्ति ३ मास मात्र जीवित रहता है। धूलि और कर्दमके मध्य जिसका पदचिह्न खण्डरूपसे उभरता, वह ५ मासके मध्य मरता है। देह निश्चल रहते भी जिसकी छाया हिलती डुलती, उसकी जीवितावस्था ४ मास तक चलती है। जिस व्यक्तिको प्रतिबिम्बमें अपना मुकुट और मस्तकादि देख नहीं पड़ता, वह उसी मास चल बसता है। बुद्धि भ्रान्त होने, वाक्य गिर जाना और रातको इन्द्रधनु, दो चन्द्र अथवा आकाश नक्षत्रशून्य, दिवाभागमें दो सूर्य, आकाशमें नक्षत्रसमूह, चारोंदिक् एक ही समय इन्द्रधनु, पिशाच-नृत्य, एवं वृक्ष वा पर्वत पर गन्धर्व देखना सब आशु मृत्युके लक्षण हैं। इनमें एक भी उपस्थित होनेसे एक मासके मध्य मृत्यु आता है। हस्त द्वारा कर्ण आवरित कर जो व्यक्ति किसी प्रकार शब्द सुन नहीं सकता, उसका जीवन जैसे-तैसे चलता है। स्थूल व्यक्ति हठात् कृश अथवा कृश व्यक्ति हठात् स्थूल हो जानेसे एक मासके मध्य मृत्यु आता है। अर्द्ध छाया दक्षिणादिक् अवस्थित होनेसे पांच दिनमें पञ्चत्व मिलता है। जो व्यक्ति स्वप्नमें अपनेको पिशाच, असुर, काक, भूत, प्रेत, कुक्कुर, गृध्र, शृगाल, गर्दभ, शूकर, श्वान, उष्ट्र, वानर, श्येनपक्षी, अश्वतर वा वृक प्रभृति जन्तु द्वारा भक्षण वा आकर्षण किये जाते देख पाता, वह एक वर्ष पीछे मर जाता है। स्वप्नमें अपना शरीर गन्ध पुष्प और रक्तवस्त्र द्वारा भूषित देखनेसे ८ मासके मध्य मृत्यु होता है। धूलिराशि, वल्मीक, यूप अथवा दण्ड पर आरोहण करते देख ६ मासमें मनुष्य प्राण छोड़ता है। फिर स्वप्नमें गर्दभ आरोहण कर भूषित शरीर दक्षिणादिक् जाने अथवा अपना मस्तक किंवा शरीर शुष्क काष्ठ एवं तृणयुक्त देख पानेसे भी आयुःकाल ६ मास रहता है। स्वप्नमें कृष्णवस्त्र पहने और लौह-दण्ड लिये कृष्णपुरुषको सम्मुख खड़ा देखनेसे ३ मासके मध्य मनुष्य मर जाता है। स्वप्नमें अतिकृष्ण-वर्ण कुमारी आलिङ्गन करनेसे एक मासके मध्य मृत्यु आता है। स्वप्नमें वानर पर चढ़ पूर्वदिक् गमन करते देखनेसे ५ दिनमें यमलोक यात्रा होती है। कृपण व्यक्तिका हठात् दाता और दाता व्यक्तिका हठात् कृपण हो जाना भी मृत्युका एक लक्षण है।"

(कालीखण्ड, ८१ अ०)

आयुर्वेदशास्त्रमें भी मृत्युके नानाप्रकार लक्षण निर्दिष्ट हैं। जैसे सुश्रुतमें—शरीरका आचार व्यवहार स्वाभाविक अपेक्षा अकारण विकृत हो जाना संक्षेपमें मृत्युका लक्षण कहा जाता है। जो व्यक्ति किसी प्रकारका शब्द न होते भी दिव्य शब्द सुनता और इसीप्रकार जिसे समुद्र मेघ प्रभृतिका शब्द न निकलते भी दिव्य शब्दसमूह सुन पड़ता एवं शब्द होते जो नहीं सुनता अथवा अन्य शब्दकी भांति उसे समझता अर्थात् विरक्तिकारक शब्दसे सन्तुष्ट तथा सुशब्दसे असन्तुष्ट रहता; उसका मृत्यु अतिशय निकट आ पहुंचता है। शीतल द्रव्य उष्ण एवं उष्ण द्रव्य शीतल लगने, शीतपीड़ित होते समय अङ्गमें कष्ट पड़ने अथवा अत्यन्त उष्ण-गात्र रहते शीतसे कंपने, प्रहार वा अङ्गच्छेदन करनेसे किसी प्रकार वेदना न मालूम पड़ने, शरीरपर धूलि रहने, शरीरका वर्ण बदलने, या सर्व शरीरमें सूत्र जैसा पदार्थ निकलने, स्नानके पीछे अनुलेपनादि गात्रमें लगाते, नील मक्षिका आ जुटने और अकस्मात् सुगन्धि वातका निकल चलनेसे भी मनुष्य मृत्युग्रासग्रस्त माना जाता है। रससमूह जो व्यक्ति विपरीत भावसे आस्वादन करता और यथा-युक्त रससमूह जिसके लिये दोषवृद्धिकारक तथा

अवयवाकृत रससमूह लोपाविकारक एवं अभि- हविकारक रहता वह अल्प दिन पीछे ही मर जाता है। सुगन्धि द्रव्य दुर्गन्ध जैसा लगने अथवा बिलकुल किसी वस्तुका गन्ध मालूम न पड़नेसे मृत्यु आसन्न समझा जायेगा। शीत, उष्ण आदिको उलटा एवं दिक् प्रभृति विपरीत भावमें अनुभव करने, दिवाभागमें अचल ज्योतिष पदार्थ प्रज्वलित तथा रात्रिको सूर्यकिरण दिनको चन्द्रकिरण, मेघ शून्य समयमें विद्युत्, विद्युत्के वज्रपात, निर्मल आकाश अथवा प्रासाद प्रभृति स्थानमें मेघ, वायु एवं आकाशको मूर्ति पृथिवीको धूम, नीहार अथवा वस्त्रादि द्वारा अपनेको आवरित, लोकसमू- हको प्रज्वलित अथवा जलप्लावित देखेगा, वह बहुत दिन नहीं जीवेगा। फिर आकाशमें जल भीति नाव अरुन्धती, ध्रुव एवं आकाशगङ्गा, और ज्योत्स्ना, दर्पण तथा उष्ण जलमें अपना प्रतिबिम्ब न देख सकनेवाला अथवा विकृत अवाङ्गहीन अन्य प्राणी किंवा कुक्कुर, काक, कङ्क, गृध्र, प्रेत, यक्ष राक्षस पिशाच, सर्प, वृक्षों वा भूतके प्रतिबिम्बकी भांति देखनेवाला भी शीघ्र ही मरता है। प्रज्व- लितका वर्ण मयूरकण्ठकी भांति देखने अथवा अग्नि में वह न देख पड़नेसे मृत्युका लक्षण समझा जाता है। एतद्भिन्न शरीरके अवयवका प्रकृति स्थवर्ण, अन्यान्य अवयवमें रक्तवर्णकी अन्तर वैता, स्थिर पदार्थको अस्थिरता, अस्थिर पदा- र्थकी स्थिरता, हलकी वस्तुकी गुरुता, गुरु वस्तुका हलकापन, दीर्घ ह्रस्व, ह्रस्व दीर्घ, निःसारमें सारयुक्त वस्तुका निःसारत्व निःसारमें सारयुक्त वस्तुका अभि- ज्ञान, अकस्मात् शरीरकी शीतलता उष्णता स्निग्धता, रूक्षता मृदुता विवर्णता, वा अवसन्नता, अङ्ग विशेषका स्थानसे पतन, उत्क्षेप, चक्कर खाना, निर्मल होना, मलिन होना, गुल्म वा रक्तमेहकी उत्पत्ति, अकस्मात् रक्तवर्णका बिगाड़, शिरासमूहका प्रकाश, ललाट वा नासिकापर पिड़का की उत्पत्ति प्रातःकाल ललाटमें घर्म, शिथिलता, नेत्ररोग व्यतीत चक्षुसे सर्वदा अश्रु निर्गत होना,

मस्तकमें गोमय चूर्णकी भांति चूर्णपदार्थकी उत्पत्ति, भोजन न करनेपर भी मलमूत्रादिकी वृद्धि, भोजन करनेपर भी मलमूत्रका विनाश और दन्त, मुख, नख तथा अन्यान्य अवयवोंमें विवर्ण पुष्पका प्रादु- र्भाव मालूम पड़नेसे शीघ्र मृत्यु आता है।"

कथित लक्षण नीरोग वा रोगी सभीके अनु- लक्षण माने गये हैं। निम्नलिखित लक्षण केवल रोगीके हैं—"स्तनमूल, हृदय एवं वक्षो- देशमें शूल उठने, शरीरका मध्यस्थल अर्थात् छाती पीठ और कमर सूखने, हस्तपद सूखने, अथवा मध्यदेश सूखने और हाथ पाव सूजने, किंवा अर्धांश सूखने और अर्धांश सूजने और स्वर नष्ट, क्षीण, विकृत वा विकृत पड़नेसे अविलम्ब मृत्यु होता है। मल, कफ एवं शुक्रका जलमें डूबना, चक्षुसे भिन्न वा विकृतरूप देख पड़ना, केशोंका तेलयुक्त मालूम होना दुर्बल व्यक्तिकी अरुचि तथा अतिसार रोग अथवा कासरोगीका तृष्णातुर होना और अधिक वमन एवं अरुचिरोगयुक्त होना और फेन, पूय तथा रक्तमिश्रित वमन करना सभी मृत्युलक्षण है। एक ही समय शूल एवं स्वरभङ्ग रोगसे पीड़ित होने वक्ष, पद तथा मुखदेशमें शोथ उठने, और रहते आहारमें रुचि न लगने, पिपासा, स्कन्ध ग्रीवा तथा पद शिथिल पड़ने ज्वरयुक्त कास रोग लगने ज्वरकासरोग रहते पूर्वाह्नका भुक्तद्रव्य अपराह्नमें वमन करने और अपक्व अवस्थामें विरेचन होनेपर श्वासरोग उत्पन्न होकर रोगीको मार डालता है। छागलकी भांति आर्तनादकर भूमितल पर गिरनेवाले, शिथिल अण्ड कोष तथा स्तब्ध वा भङ्ग लिङ्ग रखनेवाले मात्र भोजन करनेपर हृदयस्थ अन्नको प्रथम सुखानेकी भांति रखनेवाले, कोड़ाका कोड़ा काठसे काठपर आघात लगानेवाले अथवा नखद्वारा तृण छेदन कर- नेवाले अधरोष्ठ काटनेवाले, उत्तरोष्ठ चाटनेवाले, कर्ण वा केश पकड़ खींचनेवाले और देवता, ब्राह्मण, गुरु, सुहृद् एवं चिकित्सकसे द्वेष रखनेवालेका भी मृत्यु अति आसन्न होता है। जिसके जन्मकालीन

यह वक्रगामी वा मन्दस्थानगत हो जन्मनक्षत्र को सताने, जिसको होरा, उल्का तथा अशनि-द्वारा अभिभूत होती, जिसके गृह, दार, शय्या, आसन, यान, वाहन, मणि, रत्न प्रभृति सकल उप-करण कुलक्षणयुक्त होते, उसे अचिरात् मरते देखते हैं। शरीरकी प्रभा श्याम, लोहित, नील वा पीत वर्ण पड़ते मृत्यु निकटवर्ती समझा जाता है। जिसकी कान्ति और लज्जा विनष्ट देख पड़ती, अकस्मात् जिसके शरीरमें तेजः, ओजः, स्मृति तथा प्रभा उपस्थित होती, जिसका ओष्ठ लटकने लगता, जिसका उत्तरोष्ठ ऊर्ध्वगत होता अथवा जिसके उभय ओष्ठ जामनकी भांति काले पड़ जाते, उसका जीवन अतिदुर्लभ है। सकल दन्त रक्तवर्ण श्यामवर्ण वा खञ्जनवर्ण होने, जिह्वा कृष्णवर्ण, स्तब्ध, अव-लिप्त, शोथयुक्त वा कर्कश लगने, नासिका कुटिल फटीफटी तथा शुष्क पड़ने, स्वर अधिक प्रकाशित अथवा बद्ध हो जाने, चक्षुर्द्वय सङ्कुचित, स्तब्ध, रक्तवर्ण अथवा अश्रुयुक्त रहने, केश अपने आप उलझने, भ्रू द्वय झुकने और सकल अक्षिपक्ष्म गिरनेसे अविलम्ब मृत्यु होता है। जो मुखमें खाद्यवस्तु डालनेसे निगल नहीं सकता, जो अपना मस्तक धारण करनेमें असमर्थ रहता, जो एकाग्र दृष्टिकी भांति एक विषयमें चक्षु सन्निवेश करता अथवा मुग्धचित्त बनता, वह अवश्य मरता है। बलवान् वा दुर्बल व्यक्तिका बारबार मोहमें पड़ना भी मृत्यु लक्षण समझा जाता है। जो व्यक्ति सर्वदा उत्तान होकर सोता, पदद्वय विक्षेप वा प्रसारण करता, जिसका हस्त, पद एवं निश्वास शीतल पड़ जाता, जिसका श्वास छिन्न रहता और निःश्वास काकोच्छ्वा-सकी भांति लगता, वह अधिक दिन नहीं चलता। अविरत सोने, एकबारभी निद्रा भङ्ग न होने अथवा एकबारगीही निद्रा न पड़ने, बोलनेकी चेष्टा करनेमें मूर्छा आने, सर्वदा उद्गार देखाने, प्रेतके साथ बतलाने, विषाक्त न होते भी रोमकूपद्वारा रक्त निकलने और वाताष्ठीला हृदयमें चढ़नेसे मृत्यु निकट आ पहुंचता है। किसी रोगके उपद्रव व्यतीत केवल शोथरोग (पुरुषके पदद्वयमें, स्त्रीके मुखदेशमें और पुरुष-स्त्री दोनोंके गुह्यदेशमें) लगनेसे ही प्राय विनिष्ट हो जाता है। श्वास अथवा कास रोगमें अतिसार, ज्वर, हिक्का, वमन, अण्डकोष एवं लिङ्गमें शोथ प्रभृति उपद्रव उठनेसे मृत्यु आता है। बलवान् रोगी भी खेद, दाह, हिक्का और श्वास प्रभृति उपद्रव-युक्त होनेसे नहीं बच सकता। जिस व्यक्तिकी जिह्वा श्यामवर्ण बन जाती, वामचक्षु कोटरगत होता, मुखसे पूतिगन्ध निकलता, अश्रुसे मुखमण्डल भर जाता, पदद्वयमें घर्म (पसीना) आता, चक्षु आकुल पड़ता शरीरके सकल गुरु अवयव हठात् पतले पड़ जाते, जो पङ्क, मत्स्य, वसा, तैल और घृतका गन्ध अनुभव कर नहीं सकता, मस्तकके जूंआ जिसके ललाटपर विचरण करते, जिसके हाथसे प्रदान करनेपर काक खाद्य नहीं खाते, जिसको किसी विषयमें सन्तुष्टि नहीं आती, उसका मृत्यु अति आसन्न है। क्षीण व्यक्तिको क्षुधा तृष्णा रुचिकारक एवं हितजनक मिष्टान्न पान-द्वारा निवारित न होने और एक ही काल आमाशय रोगमें शिरःशूल तथा दारुण कोष्ठशूल उठनेसे लोगोंका अचिरात् मृत्यु होता है।"

(सुश्रुत सूत्रस्थान १०, ११, १२ अ०)

कालचोदित (सं॰ वि॰) कालेन चोदितः प्रेरितः ३-तत्। यथाकाल बिना चेष्टाके उपस्थित, मौतका भेजा हुवा, जिसे समय या मृत्यु भेजे।

कालचोदितकर्मा (सं॰ त्रि॰) भाग्यके प्रभावसे कर्म-करनेवाला, जो किस्मतके जोरसे काम करता हो।

कालजानि (सं॰ स्त्री॰) नदी विशेष, एक दरया। अलाईकुरी और दीमा नामक दो नदियां भूटानके पर्वतसे निकल जलपाईगोड़ी जिलेमें अलीपुर नामक स्थान पर आ मिली हैं। इसी सङ्गमपर उक्त दोनों नदियोंका नाम 'कालजानि' पड़ा है। यह नदी आगे चल कोचविहार राज्यकी पूर्व और पहुंची और रङ्ग-पुरके निकट रधक नामक नदीमें जा गिरी है।

कालजुवारी (हिं॰ पु॰) प्रसिद्ध द्यूतकार, नामी जूवा-बाज, जो खूब जूवा खेलता हो।

कालजोषक (सं॰ त्रि॰) काले यथाकाले जुषते भोजनादि इति शेषः, काल-जुष्-ण्वुल्। १ यथा समय

यस्य प्राकारादि द्वारा कलुष, जो बल पर घोड़ा पाला पानिसे खुम रखता हो। (पु०) २ गोपविशेष।

कालज्ञ (सं० पु०) कालं समादिसमय जानाति, काल ज्ञा-क। कुक्कुट, मुरगा। (त्रि०) २ उचित समयवेत्ता ठीक वक्त समझनेवाला। ३ ज्योतिषी, नजूमी।

कालज्ञान (स० क्लो०) कालो ज्ञायते अनेन काल-ज्ञा करणे ल्युट्। १ ज्योतिषशास्त्र, नजूमा। (भावे ल्युट्) २ उपयुक्त समयका ज्ञान, ठीक वक्तको पहचान। (कालो ज्ञायते अनेन) ३ मृत्युबोधक चिह्न, मौतको बतानेवाला निशान। ४ चिकित्साशास्त्रविशेष। इससे काल समझ पड़ता है। ५ वस्तुविषय-शास्त्रविशेष, बीमारो पहचाननेको एक किताब, इसे मत्स्यनाथने बनाया था।

कालञ्जर (स० पु०) कालं जरयति काल जृ-णिच्-खच् पाठुकस्वाद् मुम्। १ योगिचक्रमेलक। २ भैरव विशेष। (कालेन जीर्यति) ३ निकटी जरता एक पर्वत। (चिन्तामणि रघुप्रकर) ४ नगर विशेष, एक शहर। काशि का देवी। ५ शिव। (त्रि०) ६ बन्धुनिवारक, मौतको हटानेवाला। ७ सहस्र क्रोड तक गुप्तमाली मनोनिशियदायक।

" कालञ्जरं समासाद्य तत्रो निभ निर्जनेत्।
तत्रो भिक तत्रो यत्र नर कालजरो भवेत्॥ (महा शांति १८ अ)

कालञ्जरक (स० त्रि०) कालञ्जर बुञ्। कालञ्जरवास्तव्य निवास। पा ४।२।१२५। कालञ्जर नामक जनपद सम्बन्धीय।

कालञ्जरा (स० स्त्री०) कालं जरयति, कालम्-जृ णिच् खच् टाप्, मुम्। चण्डिका, दुर्गा देवी।

कालञ्जरी (सं० स्त्री०)कालञ्जर ङीप्। शिवपत्नी, पार्वती।

कालतम (स० त्रि०) बहूनामतिशयेन काल तमप् । अतिशय कृष्णवर्ण, निहायत काला।

कालतर (स० त्रि०) कालो अतिशयेन कालोस् कालो तरप्। द्विवचनविभज्योपपदे (पा ५।३।५७) कालोसे अपेक्षा भी अधिक कृष्णवर्ण, ज्यादा काला।

कालता (स० स्त्री०) कालस्य भावः काल तल् । कालका भाव, बदरङ्गी।

कालताल (स० पु०) कालताय कृष्णतात् अलति पर्याप्नोति, कालता-अल-अच्। तमाल वृक्ष।

कालतिन्दुक (स० पु०) कालवर्णो तिन्दुक इति, कर्मधा०। कुपीलु वृक्ष, किसी किस्मका आबनूस।

कालतिल (स० स्त्री०) कालवर्णो तिलस्, कर्मधा०। कृष्ण तिल, काला तिल।

कालतीर्थ (स० क्लो०) कोशलाश्रित एक तीर्थ। इस तीर्थका जल स्पर्श करनेसे एकादश वृषके दानका फल मिलता है।

"कोशलायां समासाद्य कालतीर्थमुपस्पृशेत्।
वृषैकादशफलं लभते नात्र संशयः॥" (महा वन ८५ अ)

कालतुण्ड (स० क्लो०) कृष्णागुरु, काला अगर।

कालतुलसी (स० स्त्री०) काली तुलसी।

कालतुल्य (स० त्रि०) मृत्युके समान, मौतके बराबर, मार डालनेवाला।

कालतुष्टि (स० स्त्री०) समयापेक्षी सन्तोष, वक्तकी कमात। सांख्यमें समय आनेसे स्वत' कार्यकी सिद्धि हो जानेका विश्वास "कालतुष्टि" कहाता है।

कालतोयक (स० पु०) प्राचीन जनपद विशेष, एक पुरानी बसती। महाभारत और ब्रह्माण्ड प्रभृति पुराणोंमें यह स्थान आभीर तथा अपरान्तादि जनपदके साथ उक्त हुआ है। टोलेमिने भी कोलक और परियाम् कोलक नामक जनपदको बात लिखी है। (Ptolemy, Geog VII. ch. I. p. 58, Arrian, Indika Sec. 31) उस समय नाम कालक या कालतोयक शब्दके रूपान्तर समझ पड़ते हैं। कराची उपसागरके उपकूलमें कालबल या कालेल नामक एक जिला है। इसी स्थानको पुरातोल कालतोयक जनपदका अंश मान सकते हैं।

कालत्रय (स० क्लो०) कालस्य त्रितयम्, काल त्रि-अयच्। त्रिविज्ञातालम्बने। वर्तमान, भूत एवं भविष्य तीनों काल, हालिया, माजी और आइन्दा जमाना।

कालत्रयज्ञ (स० त्रि०) कालत्रयं जानाति कालत्रय-ज्ञा क। वर्तमान भूत एव भविष्य तीनों कालका विषय जाननेवाला, जो हालिया, माज़ी और आइन्दा तीनों जमानेसे वाकिफ़ हो।

कालत्रयदर्शन (स० क्लो०) कालत्रयस्य दर्शनं प्रमाद वत् अवलोकनम्, ६-तत्। प्रमादकी भांति कालत्रयके विषयका अवलोकन, तीनों जमानेका देखाव।

कालत्रयदर्शी (सं॰ पु॰) कालत्रयं पश्यति प्रत्यक्षवत् अवलोकयति, कालत्रय-दृश-णिनि। प्रत्यक्षकी भांति कालत्रयके विषयको अवलोकन करनेवाला, जो तीनों ज़मानेका हाल देखता हो।

कालत्रयवेदी (सं॰ त्रि॰) कालत्रयं वेत्ति, कालत्रय-विद-णिनि। त्रिकालका विषय जाननेवाला, जो तीनों ज़मानेके हालसे वाक़िफ़ हो।

कालदण्ड (सं॰ पु॰) कालप्रापको दण्डः, मध्य-पदलो॰। १ ज्योतिषोक्त वारादि योगविशेष। (काले यथाकाले प्राप्तो दण्डः, ७ तत्) २ यथासमय प्राप्त-दण्ड, वक़्तसे मिली हुई सज़ा। (कालस्य दण्डः, ६ तत्।) ३ मृत्युदण्ड, मौतका चपेटा।

कालदन्तक (सं॰ पु॰) कालो दन्तोऽस्य, काल-दन्त-कप्। १ सर्पविशेष, एक सांप। यह सर्प वासुकि वंशजात रहा और जनमेजयके यज्ञमें मारा गया। (त्रि॰) २ कृष्णवर्ण दन्तयुक्त, काले दांतवाला।

कालदमनी (सं॰ स्त्री॰) कालं मृत्युं दमयति नाशयति काल दम-ल्यु-ङीप्। मृत्यु निवारिणी दुर्गा।

कालदानी—कुर्दिस्थानके हक्करी जिलेका एक ईसायी सम्प्रदाय। इन्हीं लोगोंके मुंहसे सुना जाता है कि सेण्ट टामस और उनके ७० शिष्योंमें २ लोगोंने मिलकर कालदानियोंको ईसायी बनाया था। यह अपर जातिसे पृथक् रह आज भी स्वाधीन भावमें वास करते हैं। कालदानी प्रजातन्त्रप्रिय हैं। पूर्वे यह लोग कालदी (Kaldı or Chaldæan) कहाते हैं। ईसायी होते समय इन्होंने जिस भावमें नूतन धर्म ग्रहण किया, आज भी उसी प्रकार उसे मानते हैं। कालदानियोंके प्रत्येक ग्राममें एक सामान्य गिरजा रहता है। प्रति रविवारको स्त्री पुरुष एकत्र हो उपासना और उपहारादि दान करते हैं। यह लोग प्रायः उपवासी रहते हैं। इनके याजक निरामिषाशी होते हैं। यह सदा युद्धके लिये प्रस्तुत रहते हैं। केवल शत्रु ही नहीं—निरीह आगन्तुकके ऊपर भी अत्याचार किया जाता है। वाम और टसर फ्राटके मध्य पूर्वमें आमदिया जिलेतक कालदानी प्रदेश विस्तृत है। इस प्रदेशमें धान्यचणकादि अल्प है। किन्तु पार्वत्य भूमिकी कमी नहीं है।

कालदोला (सं॰ स्त्री॰) नीली वृक्ष, नीलका पेड़।

कालधर्म (सं॰ पु॰) कालस्य धर्मः, ६-तत्। १ मृत्यु, मौत, समयका काम। २ समयका स्वभाव, वक़्तकी चाल। शीत ग्रीष्मादि ऋतुके अनुसार शीतलता और उत्तापादि जो उपजता, उसीका नाम कालधर्म पड़ता है। ३ समयानुसार व्यवहार, वक़्तका चलन।

कालधर्मा (सं॰ पु॰) कालस्य धर्म इव धर्मोऽस्य, काल-धर्म-अनिच्। मृत्यु, मौत।

कालधारणा (सं॰ स्त्री॰) कालस्य धारणा नियमावगतिः ६-तत्। १ समयनिर्धारण, वक़्तका ठहराव। २ कालको अवस्थाका ज्ञान, वक़्तकी हालतका इल्म।

कालनगर—युक्तप्रान्तके इलाहाबाद जिलेका एक नगर, यह इलाहाबाद शहरसे २०कोस उत्तर-पश्चिम, गङ्गाके दक्षिणतीर अक्षा॰ २५° ४१′ ५५″ उ॰ और देशा॰ ८१° २४′ २१″ पू॰ पर अवस्थित है। आजकल इसे कारा कहते हैं। यहां कालेश्वरका एक मन्दिर है। इसीसे इसको कालनगर कहते हैं।

कालनर (सं॰ पु॰) १ अनुवंशीय एक राजा।

"अनोः सभानरश्चक्षुः परेष्णुश्च त्रयः सुताः।
सभानरात् कालनर. सृञ्जयस्तत्सुतः गत." (भागवत ९।२३)

(कालः कालचक्रं राशिचक्रमित्यर्थः नर इव मेषादि) २ द्वादश राशिका मस्तकादि अवयवयुक्त पुरुष।

कालना—बङ्गालके वर्धमान जिलेका एक महकुमा। यह अक्षा॰ २३° ७′ एवं २३° २५′ ४५″ उ॰ और देशा॰ ८७° ५८′ तथा ८८° २७′ ४५″ पू॰ के मध्य अवस्थित है। लोकसंख्या कोई ढाई लाख होगी। कालना महकुमामें ७०१ ग्राम विद्यमान हैं। पहले कालना पूर्वस्थली और मन्तेश्वर तीन स्वतन्त्र थाने थे। १८६१ ई॰को वह तीनों कालना महकुमामें मिला दिये गये। इस विभागके लिये एक दीवानी और दो फौजदारी अदालतें हैं। इस विभागका प्रधान नगर भी कालना है। वह गङ्गाके दक्षिणकूल अक्षा॰ २३° १३′ २०″ उ॰ और देशा॰ ८८° २४′ ३०″ पू॰ पर अवस्थित है। लोक संख्या प्रायः डेढ़ हजार है। पहले लोग अधिक रहते थे। किन्तु स्वभावतः मलेरिया ज्वरसे आबादी घट गयी है। कालना एक प्रधान वाणिज्यस्थान है। वहांसे रेल-

को राह द्रव्यादि कलकत्ते भेजनेमें जितना व्यय पड़ता उतनेकी राह इससे अल्प लगता है। इसीसे नावपर लदकर जो यहांसे द्रव्यादि कलकत्ते जाते हैं। उसको यद्यपि आज भी काम न होनेका यही कारण है। दीनाजपुर और रङ्गपुरसे यहां चावल आता है। १८११ ई० को बर्दवानके महाराज तेजचन्द्र बहादुरने कालनासे बर्दवान पर्यन्त एक पक्की सड़क बनवा दी थी। उसमें ४ कोसके अन्तर पर एक एक तालाब और डाकबंगला बना है। उक्त महाराजके गङ्गास्नानकी सुविधाके लिये तैयार किया गया था। मुसलमानोंके शासनकाल यहां एक दुर्ग रहा। उसका भग्नावशेष आज भी ग्रामीणोंके और देखपड़ता है। दो पुरानी टूटी मसजिदें भी यहां मिलती और बर्दमानराजके भवनमें १०८ शिवमन्दिर अन्यान्य देवदेवीके मन्दिर, अतिथिशाला और समाधिस्थान है। समाधिस्थानमें मृतक राजाओंका अस्थिपञ्जर रक्षित है। राजभवन अति मनोरम स्थान है। यहांका बाजार बहुत बड़ा है। सब स्थानमें रत्ननिर्मित द्रव्य देख पड़ते हैं।

कालनाग (सं० पु०) कालरूपको नागः, मध्यपदलो०। १ नियत मृत्युकर सर्पविशेष, काला सांप। इसके काटनेसे निश्चय मृत्यु होता है। २ नाग जातिकी एक श्रेणी।

कालनागिनी (सं० स्त्री०) नियत मृत्युकारिणी सर्पिणी, काली नागिन।

कालनाथ (सं० पु०) कालस्य कालभैरवस्य नाथः, ६ तत्। १ महादेव।

"[illegible]" ([illegible])

२ कालीय यजुर्वेदभाष्यके नामक ग्रन्थकार। ३ काल भैरव।

कालनाभ (सं० पु०) काला कृष्णा नाभिरस्य, काल नाभि संज्ञायां अच्। १ हिरण्याक्ष असुरका कोई पुत्र। (हरिवंश ३४) २ हिरण्यकशिपुका एक लड़का।

कालनिधि (सं० पु०) शिव महादेव।

कालनियोग (सं० पु०) कालेन कृतो नियोगः, कालस्य नियोगो वा। १ दैवकी आज्ञा। २ कालकृत नियम, वक्तका कायदा।

कालनिरूपण (सं० पु०) कालस्य निरूपणं निर्धारणम्, ६-तत्। समयका निश्चयकरण, वक्तका ठहराव।

कालनिर्णय (सं० पु०) कालस्य निर्णयः निरूपणम् ६ तत्। १ समयका निर्धारण वक्तका ठहराव। २ माधवाचार्यप्रणीत कालमाधवीय नामक एक ग्रन्थ।

कालनिर्यास (सं० पु०) कालः कृष्णवर्णो निर्यासः कर्मधा०। गुग्गुल गूगुल।

कालनिर्वाह (सं० पु०) कालस्य निर्वाहः अतिवाहनं। समयका अतिवाहन, वक्तका निबाह।

कालनिशा (सं० स्त्री०) १ दीपमालिकाकी रात्रि, दीवालीकी रात। २ भयङ्कर रात्रि अंधेरी रात।

कालनील (सं० त्रि०) कालः मृत्युदायकः कृष्णवर्णो वा नीलः यस्य बहुव्री०। १ यमदूतवत् नीलपिशित, आंखोंमें मौतकी अलामत रखनेवाला। २ कृष्णवर्ण वस्तुविशिष्ट, काली आंखवाला।

कालनेमि (सं० पु०) कालस्य मृत्योर्नेमिरिव उपमि०। १ राक्षस विशेष, लङ्काधिपति रावणका मातुल। शक्तिसे लक्ष्मण आहत हुए थे। हनूमान् उनके लिये औषध लाने गन्धमादन गये, उधर कालनेमि रावणसे अर्धराज्य मिलनेका प्रलोभन पा छद्मवेशसे हनूमान्को विनष्ट करने बढ़ा था। वहां कुम्भीर द्वारा विनाश करनेके उद्देश्यसे उसने हनूमान्को औषध लानेसे पहले सरोवरमें नहाने भेज दिया। उसमें प्रवेश करते ही कुम्भीने हनूमान् पर आक्रमण किया, किन्तु उन्होंने उसे मार डाला। हनूमान्के हाथ मारे जाने पर वह अभिशापसे छूट गयी। उसी समय उसने प्रकट हृदयसे हनूमान्को कालनेमिकी कपटताकी बात बताई थी। फिर उन्होंने अनायास आप ही कालनेमिको मार डाला। (अध्यात्म रामायण)

२ दानवविशेष, कोई राक्षस। हरिवंशमें इसका इत्यादि इस प्रकार वर्णित है,—यह दानव हिरण्यकशिपुका पुत्र था। शरीर मन्दारपर्वतकी भांति प्रकाण्ड मालूम पड़ता। शत हस्त और शत मुख थे। शिर धूम्रवर्ण रहे। श्मश्रु हरित्‌वर्ण था। दन्त यदि भीम पर्यन्त विस्तृत थे। कालनेमिने अपने प्रतापसे

वल देवगणको हरा स्वर्ग अधिकार किया। फिर कालनेमिने स्वीय देह चार भागमें बांट देवगणकी भांति कार्य समुदाय चलाया था। विष्णुके हाथ मारे जाने पर कालनेमि परजन्ममें कंस रूपसे प्रादुर्भूत हुवा" ।
(हरिवंश ४८—५१ अ०)

३ मालव देशीय कोई ब्राह्मण कुमार। इनके पिताका नाम यज्ञसोम था। पिताके मरने पर इन्होंने स्वीय भ्राताके साथ पाटलिपुत्र पहुंच देवशर्मा नामक किसी ब्राह्मणसे विद्या पढ़ी। ब्राह्मणने उक्त दोनों भ्राताओंको अपनी दो कन्यायें दी थीं। किसी समय कालनेमिने प्रतिवेशियोंको धनाढ्य देख ईर्षापरायण चित्तसे लक्ष्मीकी आराधना की। लक्ष्मीने आराधनासे सन्तुष्ट हो इन्हें विपुल धन और चक्रवर्ती पुत्र लाभका वर दिया था। किन्तु ईर्षापरवश हो आराधना करनेके कारण उन्होंने अभिशाप देकर कहा था,—'तुम चोरकी भांति मरोगे।' कालक्रमसे ब्राह्मणको धन पुत्रादि प्राप्त हो गया। किन्तु पुत्रशत्रु राजाने इन्हें चोरकी भांत मार डाला। (कथासरित्सागर)

कालनेमिरिपु (सं० पु०) कालनेमेः रिपुः, ६-तत्। १ कालनेमिके शत्रु विष्णु। २ हनूमान्।

कालनेमिहा (सं० पु०) कालनेमिं हतवान्, कालनेमि हन्-क्विप्। १ विष्णु। २ हनूमान्।

कालनेमी (सं० पु०) कालस्येव नेमिरस्यास्य, कालनेमि-ङिन। कालनेमि, एक असुर।

कालनेम्यरि (सं० पु०) कालनेमेः अरिः शत्रु, ६-तत्। १ विष्णु। २ हनूमान।

कालपक्व (सं० त्रि०) काले यथाकाले पक्वः, ७-तत्। यथासमय पक्व अपने आप वक्त पर पकनेवाला।

कालपट्टी (हिं० स्त्री०) भराव, ठूंसठांस। जहाजकी दरजोंमें सन वगैरह भरनेको 'कालपट्टी' कहते हैं। यह शब्द पर्तगोज 'कालाफटो'का अपभ्रंश है।

कालपत्री (सं० स्त्री०) तालीशपत्र।

कालपथ (सं० पु०) विश्वामित्रके एक पुत्र।
(भारत, अनु० ४० अ०)

कालपरिवास (सं० पु०) ईषत् कालका ठहराव, थोड़े वक्तके लिये ठहरनेका काम।

कालपर्ण (सं० पु०) कालं कृष्णं पर्णं पत्रं यस्य, बहुव्री। तगरवृक्ष।

कालपर्णिका, कालपर्णी देखो।

कालपर्णी (सं० स्त्री) कालं कृष्णं पर्णमस्याः। १ कृष्ण तुलसी वृक्ष, काली तुलसी। २ श्यामालता, काली बेल।

कालपर्यय (सं० पु०) कालस्य पर्ययः वैपरीत्यम्, ६-तत्। कालकी विपरीत गति, वक्तका उलटफेर। शुभदायक कालकी अशुभदायकता और अशुभदायक कालकी शुभदायकता 'कालपर्यय' कहलाती है।

"मित्रतेका यथा राजन् सोपमासाद्य निर्गताः।
भवन्ति पुरुषव्याघ्र नाविकाः कालपर्यये॥" (महाभारत विराट ७०अ०)

कालपर्वत (सं० पु०) त्रिकूटके निकटका एक पर्वत।

"त्रिकूटं समतिक्रम्य कालपर्वतमेव च।
ददर्श मकरावासं गम्भीरोदं महोदधिम्"॥ (महाभारत,वन २७६अ०)

कालपात्रिक (सं० पु०) भिक्षुभेद, किसी किस्मके फकीर। यह कृष्ण वर्ण पात्र हाथमें ले भिक्षा मांगते हैं।

कालपालक (सं० क्ली०) कालं कृष्णवर्णं पालयति धारयति, काल-पाल-ण्वुल्। कंकुष्ठमृत्तिका, एक मट्टी।
कंकुष्ठ देखो।

कालपाश (सं० पु०) कालस्य पाशः रज्जुरिव कालस्य मृत्योर्यमस्य वा पाशः। १ समयका बन्धन रज्जुवत् आवद्धकारक अपरिवर्तनीय नियम, वक्तकी कैद। समयके इस नियम द्वारा भूत आवद्ध हो किसी प्रकार अन्यथा कर नहीं सकते। २ यमपाश, मौतका फन्दा। यथा समय इसी पाशरूप नियमसे आवद्ध हो लोगोंको यमालय जाना पड़ता है। ३ मृत्युपाश, फांसी।

कालपाशिक (सं० पु०) कालपाशस्य नेता, कालपाशठक्। हाथसे मारनेवाला, जल्लाद, फांसी देनेवाला।

कालपीलु (सं० पु०) कालः कृष्णवर्णः पीलुः, कर्मधा०। कृष्णवर्ण पीलु, स्याह आवनूस, काला तेंदू।

कालपीलुक (सं० पु०) कालपीलु स्वार्थे कन्।
कालपीलु देखो।

कालपुच्छ (सं० पु०) कालः पुच्छोऽस्य, बहुव्री०। १ मृगविशेष, एक जानवर। सुश्रुतने इस मृगको कूलचर जन्तुके अन्तर्भूत कहा है। कूलचर देखो
२ कृष्णचटक, काला चिड़ा।

कालपुष्पक, कलापक देखो।

कालपुरुष (सं० पु०) कालः कालरूपः पुरुष इव उपमि०। १ यमसखाय। रामचन्द्रको लोकाके पर-धाममें देवगणके आदेशसे यह उनको सभामें पहुंचे थे। फिर इन्होंने रामचन्द्रको निर्जन स्थानपर अपनो यमधर्ममें नियुक्त किया। उसी समय द्वारपर दुर्वासाके अनुरोधसे लक्ष्मण वहां गये थे। रामचन्द्रने अपनी प्रतिज्ञाके अनुसार लक्ष्मणका परित्याग किया। उसी शोकसे लक्ष्मणने सरयूजलमें अपना प्राण छोड़ा था। फिर रामादि अपर तीन भ्राताओंने भी उसीप्रकार लीला परित्याग कर दी। (रामायण)

२ पुरुषकी भांति आकार विशिष्ट, ज्योतिषोक्त एक चक्र। यह मनुष्यका शुभाशुभ गणना करनेके लिये अश्विन्यादि प्रभृति द्वादश राशि द्वारा कल्पित पुरुषकी भांति बनाया जाता है। इस आकृतिमें मस्तक आदि समुदाय अङ्ग प्रत्यङ्ग चिह्नित कर शुभाशुभ निर्दिष्ट होता है। इसके अनुसार जन्म पुरुषके भी उसी उसी अङ्गमें शुभाशुभ पड़ा करता है।

(ज्योतिष)

३ कालरूपीश्वरकी एक मूर्ति। यह दान करनेके लिये सुवर्णसे बनाया जाता है। भविष्यपुराणमें लिखा है कि उत्तम, मध्यम एवं अधम नियमके अनुसार उस मूर्तिं एक सत, पञ्चाशत् वा पञ्चविंशति निष्क सुवर्णसे बनानेकी विधि है। उसके दक्षिण हस्तमें खड्ग, वाम हस्तमें मांसपिण्ड, कुण्डलमें जवाकुसुम, परिधानमें रक्तवस्त्र और कण्ठदेशमें पुष्पमाला तथा अस्थिमाला रहती है। फिर चतुर्दशी वा चतुर्थी तिथिको पवित्र दिन स्थिर कर यथाविधान पूजापूर्वक दक्षिणा एवं अलङ्कारादिके साथ वह ब्राह्मणको दिया जाता है। इस दानसे पापी व्याधिमय मृत्युभय छूटता है। फिर दानकारी विपुल ऐश्वर्यका अधिकारी और समुदाय विघ्नशून्य हो सकता है। अन्तको यथासमय देह त्याग करनेपर सूर्यको भेदपूर्वक परम पद मिलता है। पुण्यक्षयसे पीछे वह व्यक्ति धार्मिक और राजा हो जन्म लेता है। ४ कृष्णवर्ण पुरुष, काला आदमी।

कालपुष्प (सं० स्त्री०) कालं कृष्णं पुष्पं यस्य, बहुव्री०। कलायवृक्ष मटरका पेड़। कलाय देखो।

कालपूग (सं० पु०) कालः कृष्णवर्णः पूगः गुवाकः, कर्मधा०। १ कृष्णवर्ण गुवाक, काली सुपारी। २ साधारण जन, मामूली चीज।

कालपृष्ठ (सं० क्ली०) कालं कृष्णं पृष्ठं यस्य बहुव्री०। १ कर्णका धनु। २ धनुमात्र, कोई कमान। (पु०) ३ मृगविशेष, एक हिरन। ४ कङ्कपक्षी, बुड़ोमार।

कालपेशिका (सं० स्त्री०) १ मञ्जिष्ठा, मजीठ। २ श्यामलोध्र काला लोध। ३ श्यामालता, काली बेल।

कालपेषी (सं० स्त्री०) श्यामालता, काली बेल।

कालपेषी (सं० स्त्री०) पिष्यते इति, पिष् कर्मणि घञ्, कालवर्णो पेषो यस्याः, कालपेष-ङीष्। श्यामालता, काली बेल। इसका संस्कृत पर्याय—कालपेषी, श्यामा समङ्गा, उत्पलशारिवा, दीर्घमूला, पालिन्दी और मसूरविदला है। श्यामलता देखो।

कालप्रभा—जातिविशेष, एक कौम। कई कृष्णवर्ण जाति इसी नामसे पुकारी जाती है। भारतवर्षके पश्चिमघाट नामक पर्वतके निम्नप्रदेशमें इसका वास था। आजकल इस जातिके लोग अधिकांश सूरतमें रहते हैं। यह कृष्णवर्ण खर्व अथच दृढ़काय और चतुरोंके व्यवहारमें विलक्षण होते हैं। इनमें अब भारतका इनका प्रभाव व्याप है। कृषि करना यह नहीं जानते और सामान्य अन्नसे ही अपनेको परितृप्त मानते हैं। इनके मन्दिर या पुरोहित कोई नहीं। यह किसी वृक्ष वा प्रस्तरखण्डको पूजते हैं। इनको भूतेका बड़ा भय रहता है। किसी सन्तान, बैल वा कुक्कुटके मरने पर यह भयसे देश छोड़ भग जाते हैं।

कालप्रभात (सं० क्ली०) कालं कृष्णं प्रभातं यत्र, बहुव्री०। १ शरद् ऋतु। २ अनिष्टकारक प्रभात, बुरा दिन।

कालप्रमेह (सं० पु०) प्रमेहभेद, पेशाबकी एक बीमारी। इसमें कृष्णवर्ण मूत्र उतरता है।

कालपक्व (सं० त्रि०) कालेन प्रक्वः परिपक्वः। यथाकाल पक्व, वक्तसे पका हुआ।

कालप्रवृत्ति (सं० स्त्री०) कालस्य प्रवृत्तिः आरम्भः, ६-तत्। प्रथम कालसे व्यवहारका आरम्भ। उदा-

नगरोमें चैत्र मासको शुक्ल-प्रतिपत् तिथि तथा रवि वारको सूर्य उदयके पीछे दिन, मास, वर्ष प्रभृति खण्डको प्रवृत्ति पड़ी है। (सिद्धान्तशिरोमणि।)

कालप्रियनाथ—एक देवमूर्ति। वराहपुराणमें सूर्यको एक मूर्तिका नाम 'कालप्रिय' लिखा है। यमुनाके दक्षिणस्थ प्रदेशमें सूर्यदेवकी यह मूर्ति पूजी जाती है। कालप्रियरूपसे सूर्यदेवका स्थापित किया हुवा शिवलिङ्ग 'कालप्रियनाथ' कहाता है। भवभूतिके 'मालतीमाधवका' प्रारम्भ पढ़नेसे समझ पड़ता है, कि कालप्रियनाथके उत्सव उपलक्षमें प्रथम मालतीमाधव अभिनीत हुवा। मालतीमाधवकी दुर्गमार्थबोधिनी नाम्नी टीकामें मानाङ्कने इनके सम्बन्धपर कोई बात नहीं लिखी। किन्तु जगद्धरने 'मालतीमाधव-टीका'में इन्हें तद्देशका प्रतिष्ठित और प्रसिद्ध देव माना है। नहीं कह सकते—आजकल कालप्रियनाथ कहां है?

कालप्रिया (सं० स्त्री०) अश्वगन्धा, असगन्ध।

कालवाल्लन (सं० क्लो०) कवच, बखतर।

कालबलप्रवृत्त (सं० स्त्री०) आधिदैविक रोगभाव, वक्तके ज़ोरसे होनेवाली बीमारी। शीत, उष्ण, वात, वर्षा आदिके कारण लगनेवाले रोग भी दो प्रकारके होते हैं—व्यापन्नर्तुकृत और अव्यापन्नर्तुकृत। (सुश्रुत २४ अ०)

कालबंजर (हिं० पु०) पुरानी परती, बहुत दिन जोती-बोयी न जानेवाली ज़मीन्।

कालमाल (सं० पु०) कंकुष्ठ, एक मट्टी।

कालबालक, कालवाल देखो।

कालबूत (हिं० पु०) १ ढेना, कच्चा भराव। इससे मेहराब बनाते हैं। २ काठका एक सांचा। इस पर चमार जूता सीते हैं। ३ यन्त्र विशेष, एक औज़ार। इससे रस्सी बटते हैं। यह काठका फंदा होता है। इसमें रस्सी डालनेके कई छेद रहते हैं। छेदमें डालकर बटनेसे रस्सी बराबर उतरती, मोटी या पतली नहीं पड़ती।

कालबेलिये (हिं० पु०) एक जाति। इसे सपेरी भी कहते हैं। सांप आदि विषैले जन्तुओंको पकड़कर यह खेल दिखलाती है। यही इसकी जीविका है।

कालभक्ष (सं० पु०) महादेव, शिव।

कालभण्डी (सं० स्त्री०) श्वेतगुञ्जा, सफेद घुंघची।

कालभाण्डिका (सं० स्त्री०) कालभार्ये कृष्णप्रभायै भण्डति, काल-भा-भण्डि-ण्वुल्-टाप् इत्वञ्च। मञ्जिष्ठा, मंजीठ। इसका क्वाथ और निर्यास प्रभृति रक्तवर्ण आते भी प्रथमतः कृष्णवर्ण देखाता है। मञ्जिष्ठा देखो।

कालभृत् (सं० पु०) कालं बिभर्ति धारयति, काल-भृ क्विप्। सूर्य, आफ़ताब, समयको धारण करनेवाला सूरज।

कालभैरव (सं० पु०) कालस्य भैरवं भयं यस्मात् काल-भीरु-अण्। काशीस्थ शिवके अंगजात एक भैरव। शिवतत्त्व न समझनेवाले ब्रह्माका पञ्चम मस्तक काटनेको महादेवद्वारा यह आविर्भूत हुये। काशीमें रहनेवाले दुष्कर्मकारीको दण्ड देना ही इनका प्रधान कार्य है। ब्रह्मा भी कन्यागमनका पाप कर काशी पहुंचे थे। इसीसे शिवकी आज्ञा पाकर कालभैरवने उनका पञ्चम मस्तक काट डाला। (काशीखण्ड।) भारतके नाना स्थानोंमें कालभैरवकी मूर्ति पूजी जाती है।

कालम (अं० पु०—Column) १ पत्रभाग, कोठा। २ सैन्यभाग, पांत। ३ स्तम्भ, खम्भा।

कालमरिच (सं० क्लो०) कालं मरिचम्। कृष्णवर्ण मरिच, काली मिर्च।

कालमल्लिका (सं० स्त्री०) कृष्णार्जक, काली तुलसी।

कालमल्ली, कालमल्लिका देखो।

कालमसी (सं० स्त्री०) काली मसीव, पुंवद्भावः। काली नदी, एक दरया।

कालमहिमा (सं० पु०) कालस्य महिमा माहात्म्यम्, ६ तत्। १ समयका माहात्म्य, वक्तकी शान्। २ समयकी शक्ति, वक्तकी ताक़त।

कालमाधवीय (सं० पु०) माधवस्य माधवाचार्यस्य प्रथम, माधव-छ, कालप्रतिपादको माधवीयः माधवकृतो ग्रंथः, मध्यपदलो०। माधवाचार्यप्रणीत कालज्ञान-बोधक एक स्मृतिग्रन्थ।

कालमान (सं० पु०) कालो मन्यते जनैरिति शेषः, काल-मन-घञ्। १ कृष्णपत्र क्षुद्र तुलसी। २ कृष्ण-

मञ्जिष्ठा, बकाइन। (स्त्री०) कालस्य मानं परिमाणम्। ६ तत्। कालका परिमाण, वक्तको तौल।

कालमामक, कालमाल देखो।

कालमार कालमाल देखो।

कालमारिष (सं० पु०) कृष्णवर्ण तण्डुलीय शाक, बड़ीपत्तोंकी चौराई।

कालमाल (सं० पु०) कालेन कृष्णवर्णेन माला यस्य, बहुव्री०। कृष्णतुलसी, काली तुलसी।

कालमालक कालमाल देखो।

कालमाला (सं० स्त्री०) कृष्णार्जक, काली तुलसी।

कालमुख (सं० पु०) कालं मुखं यस्य, बहुव्री०। कृष्णमुख वानर विशेष, काले मुंहका एक बन्दर। (भारत वन ५८।८)। (त्रि०) २ कृष्णवर्ण मुख वा श्यामानमुख, कलमुंहा।

कालमुष्क कालमुष्कक देखो।

कालमुष्कक (सं० पु०) कालो मुष्कः यस्य कायति प्रकाशते, काल-मुष्क कै क। १ घण्टापाटलवृक्ष, मोखा। २ श्यामपुष्पवृक्ष, काले फूलका मोखा।

कालमूर्ति (सं० स्त्री०) कालस्य मूर्तिः, ६ तत्। १ यम मूर्ति। २ वस्तुधारक वस्तुकी मूर्ति। ३ कालयम।

कालमूल (सं० पु०) कालं मूलं यस्य बहुव्री०। रक्त चित्रक, लाल चीता। चित्रक देखो।

कालमेघ (सं० पु०) १ क्षुद्र वृक्षविशेष, एक छोटा पेड़। यह बङ्गालमें पैदा होता है। इसे महातीता और महाभाङ्ग भी कहते हैं। यह चिरायतेसे बहुत मिलती है। इसके शीर्षमें चपटा फल लगता है। देशी वैद्य इसको ज्वरनाशक बताते हैं।

२ कोई विख्यात तामिल कवि। द्राविड़के लोग इन्हें 'कालमेघम्' कहते हैं। कविता निपुणता एवं रससे परिपूर्ण है। अधिकांश श्लोक द्व्यर्थमूलक हैं। यह दो दिनमें एक काव्य लिख सकते थे। कालमेघ अनुमान ई० के पञ्चदश शताब्दमें जीवित थे। ठीक नहीं कहा जा सकता—इनका असल नाम क्या रहा।

कालमेषिका (सं० स्त्री०) कालो मिषति कालोऽर्थं इति अच् कर्मेरिति ङीपः काल मिष ङीप् अज् टाप् ह्रस्वश्च। मञ्जिष्ठा, मंजीठ।

कालमेषी कालमेषिका देखो।

कालमेषिका (सं० स्त्री०) कालं मिषति स्पर्धते अचा- येन, काल मिष अच् ङीप् स्वार्थे कन् टाप् ह्रस्वश्च। १ श्यामा त्रिवृता, काली कटेया। २ मञ्जिष्ठा, मंजीठ। ३ कृष्णजीरक, काला जीरा। ४ त्रिवृता कटेया। ५ बाकुची। ६ वृश्चिका, हबदी। ७ श्वेतजीरक, सफेद जीरा। ८ श्यामालता।

कालमेषी कालमेषिका देखो।

कालमेही (सं० पु०) मेहरोग विशेष, प्रमेहियोंकी एक बीमारी।

कालयवन (सं० पु०) यवनोंका एक अधिपति। महादेवके नियमानुसार गार्ग्य ऋषिकी भार्याके गर्भमें इसका जन्म हुआ। उस ऋषिने मथुरावासियोंके प्रति कालक्रोध वो वैरनिर्यातनके निमित्त अतिशय नामक स्थानमें द्वादश वत्सर लौहचूर्ण मात्र भक्षण और नियम अवलम्बनपूर्वक महादेवको प्रीतिके लिये तपस्या की थी। गार्ग्यके औरस और गोपालीके गर्भसे यवनराजके घरमें कालयवनने जन्म लिया। यह राजधर्मज्ञ, राजोचित षड्गुणसे अलङ्कृत विद्वान्, सत्यवादी जितेन्द्रिय, रणकुशल शूर और सुमन्त्रिसहाय थे। मगधराज जरासन्धसे इनकी मैत्री रही। यह जरासन्धके साथ मथुरा आक्रमण करने गये। उससे पहले श्रीकृष्णने सब रानियोंको द्वारका भेज दिया था। यह जानते थे कि कालयवन मथुरावासियोंद्वारा मारे जाने योग्य न थे। दूसरे श्रीकृष्ण कालयवनके आगे भागे साथ किसी पर्वतकी गुहामें घुसकर छिप रहे। उस गुहामें सूर्यवंशीय महाराज मुचुकुन्द रणके परिश्रमसे बहुत क्लान्त हो सोते थे। कालयवनने उनसे युद्ध लाभ समझ कर उनको लात मार दी। मुचुकुन्दकी क्रोध दृष्टिसे फिर यह विनष्ट हो गये। (हरिवंश ११२ अ)

कालयाप (सं० पु०) कालस्य यापः अतियापनम् ६-तत्। काल अतियापन, समयका गुजारा, टालमटोल।

कालयापन (सं० क्ली०) कालस्य यापनं अतियापनम् ६-तत्। १ समयका बिताव, वक्त का कटाव। २ नाश यात्राका निर्वाह, गुजारा।

कालयुक्त (सं० पु०) कालेन युक्तः, ३-तत्। १ प्रभवादि षष्टि संवत्सरोंके अन्तर्गत ५२वां संवत्सर। (त्रि०) २ अपरिवर्तनीय कालनियमयुक्त, वक्तके दायरेसे मिला हुवा। ३ मृत्युयुक्त, मौतसे मिला हुवा।

कालयोग (सं० पु०) कालस्य योगः संयोगः, ६-तत्। १ समयका सम्बन्ध, वक्तका सिलसिला।

"महता कालयोगेन प्रहृति याम्यतीदृशः।" (भारत, वन, १० अ०)

२ ज्योतिष-शास्त्रोक्त कालरूप एक योग।

कालयोगी (सं० पु०) काल एव योगः यस्यास्ति, कालयोग-इनि। शिव।

"कालयोगी महानादः सर्वकामचतुष्पथः।" (भारत, अनु०, १० अ०)

(त्रि०) २ कालसम्बन्धीय, वक्तके मुताल्लिक।

कालयोधी (सं० पु०) काले यथाकाले योधः युद्धं कर्तव्यत्वेन अस्यास्ति, काल-योध-इनि। यथासमय युद्ध करनेवाला व्यक्ति, जो शत्रुसे वक्त पर लड़ता हो।

कालर (अं० पु० Collar) ग्रैवेय, पट्टा, कुरते वा कमीचमें गलेकी चारो ओर लगनेवाली उठी हुयी पट्टी।

कालराति (हिं०) कालरात्रि देखो।

कालरात्रि (सं० स्त्री०) कालरूपा सृष्टिसंहारभूता रात्रिः, मध्यप०। १ प्रलयरात्रि, कयामतकी रात। ब्रह्माको रात्रिको कालरात्रि कहते हैं। उस समय समुदय संसार विनष्ट हो जाता है। केवलमात्र नारायण एकार्णवमें सोया करते हैं। इसीसे उस समयका नाम कालरात्रि है। २ मृत्यु सूचक रात्रि, मौतकी रात। अपने वा आत्मीय व्यक्तिके मृत्युकी रात्रि कालरात्रि कहाती है। ३ भयानक रात्रि, खौफ़नाक रात। ४ ज्योतिषशास्त्रसे क्रियाके अयोग्य रात्रि विशेष, खराब रात। उसमें समस्त रात्रिको ८ भाग करनेका नियम है। फिर वारके अनुसार प्रतिदिन आठ भागोंमें एक भाग कालरात्रि माना जाता है। यथा—रविवारको रात्रिका षष्ठ भाग अर्थात् २० दण्डके पीछे ४ दण्ड, सोमवारको चतुर्थ-भाग अर्थात् १२ दण्डके पीछे ४ दण्ड, मङ्गलवारको द्वितीय भाग अर्थात् ४ दण्ड, बुधवारको सप्तम भाग अर्थात् २४ दण्डके पीछे ४ दण्ड, वृहस्पतिवारको पञ्चम भाग अर्थात् १६ दण्डके पीछे ४ दण्ड, शुक्रवारको तृतीय भाग अर्थात् ८ दण्डके पीछे ४ दण्ड और शनिवारको प्रथम एवं शेष भाग अर्थात् प्रथम ४ दण्ड और शेषको ४ दण्ड कालरात्रि होती है। वह समुदाय कार्यारम्भमें परित्याज्य है। साधारणतः रात्रिपरिमाण ३२ दण्ड लगा यह हिसाब लिखा गया है। किन्तु रात्रिपरिमाण घटने बढ़नेसे भी ८से भाग कर उक्त नियमानुसार कालरात्रि मानी जाती है।

"रवौ षष्ठं विधौ वेद कुजवारे द्वितीयकम्।
बुधे सप्त गुरौ पञ्च भृगुवारे तृतीयकम्।
शनावाद्यं तथा चान्त्यं रात्रौ काल विवर्जयेत्॥" (दीपिका)

५ दुर्गा देवीकी एक मूर्ति।

"कालरात्रिर्महारात्रिर्मोहरात्रिश्च दारुणा।" (मार्कण्डेयपु०, ८२ अ०)

६ दुर्गाकी कालरात्रि मूर्तिका प्रतिपादक एक मन्त्र। ७ दीपान्विता अमावस्या, दिवाली।

"दीपावली तु या प्रोक्ता कालरात्रिस्तु सा मता।" (आगम)

८ यमकी भगिनी। वही सर्वप्राणीका विनाश करती हैं। ९ भीमरथी, अत्यन्त वृद्धावस्था। मनुष्यके आयुमें ७७वें वर्ष पर ७वें मासके ७वें दिन पड़नेवाली रात कालरात्रि कहलाती है। उसके पीछे मनुष्य नित्य-नैमित्तिक कर्मसे छुटकारा पाता है।

कालरुद्र (सं० पु०) कालः कालरूपः सर्वसंहारको रुद्रः, कर्मधा०। कालाग्निरूप एक रुद्र।

"येषु न कालरुद्रस्य नानास्त्रीगतसङ्गम।
विविधद्रव्यविन्यासा कुरुते भैरवृत्त॥" (देवीपु०)

कालरूप (सं० त्रि०) प्रशस्तः कालः, काल-रूपप्। प्रशंसायां रूपप्। पा ५।३।६६। १ अत्यन्त कृष्णवर्ण, निहायत काला। २ कालसदृश, मौत-जैसा। ३ कृष्णवर्ण, काला।

कालरूपधृक् (सं० पु०) कालरूपं धृपति धारयति, कालरूप-धृष्-क्विप्। १ यम। २ मृत्यु, मौत।

कालल (सं० त्रि०) कालः कालकं चिह्नभेदः अस्त्यस्य, काल-लच्। सिध्मादिभ्यश्च। पा ५।२।९७। कालचिह्नयुक्त, काले दागवाला।

काललवण (सं० क्ली०) कालं कृष्णवर्णं लवणम्, कर्मधा०। १ विट्‌लवण, कालानमक। भावप्रकाशके मतमें वह अग्निदीप्तिकारक, लघु, तीक्ष्ण, उष्णवीर्य,

स्त्य, सविकारक अपायो और विकम्प, आनाह विष्टम्भ, हृदयवेदना शरीरकी रूक्षता तथा शूल नाशक है। २ कालकवच, लौहलोन।

काललोचन (सं० पु०) एक दानव।

"कल्पो वरवो भयो कवचः काललोचनः।" (हरिवंश, २० अ)

काललोह (सं० क्ली०) कालम् तत् लोहञ्चेति, कर्मधा०। तीक्ष्ण लोह, तीखा लोहा। इसका संस्कृत पर्याय तीक्ष्ण, अयस्, शस्त्र, तीक्ष्ण और कालायस है। लौह देखो।

कालवङ्ग (सं० पु०) क्षुपविशेष, एक झाड़। कोई इसे कालियाकड़ा कहते है।

कालवदन (सं० पु०) १ दैत्यविशेष। (त्रि०) २ कृष्ण वर्ण मुखयुक्त, काले मुहवाला।

कालवलन (सं० क्ली०) कलयति उपसृजति विषयम् कल क्विप्-कल्, कालस्य कालस्य वलनं आवरणं वा ६ तत्। वर्म कवच, ज़िरह, बख़्तर।

कालवस्ति (सं० पु०) वर्षोंके आदिमें सात प्रकृतिके उपशमनार्थ वस्ति, यह बरसातमें दवाईसे आच्छे समायो जानेवाली पिचकारी। यह पञ्चदशविध होता है। पहले एक स्नेहवस्ति लगता है। उसके पीछे एक निरूहवस्ति लगाते हैं। पुनः स्नेहवस्ति लगाया जाता है। उसके पीछे निरूहवस्ति चलता है। इसी प्रकार द्वादश वस्ति पश्चात् क्रमसे तथा अन्तमें तीन स्नेहवस्ति देते हैं। (चरक)

कालबाग—पञ्जाब प्रदेशके बन्नू जिलेका एक नगर। यह अक्षा० ३२° ५७' ३०" उ० और देशा० ७१° ३३' ३०" पू० पर अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः ६ हज़ारसे कुछ अधिक है। यह अटकसे ९६ कोस दूर सिन्धु नदीके कूल पर एक नमकका पर्वत है। कालबाग नगर इसी पर्वतके मार्गसे संलग्न है। यह पर्वत लवणमय है। पत्थर पत्थर काट कर तुरन्त पीस लेनेसे ही उत्तम लवण बन जाता है। यहां खारीनामक स्थानमें लवण खोद कर निकाला जाता है। यद्यपि लवण कट जाते भी पर्वत कुछ घटता मालूम नहीं पड़ता। सिन्धुनदको लूना नाला एक नामक नदी है। इसके पश्चिमभागमें एक स्थानपर यह लवणखात है। उसकी बाईं ओर नमकका गुदाम है। यहां लवण बिकता है। पर्वतमें लवणका एक एक पत्थर कहीं सैकड़ और कहीं १२ हाथ तक प्रशस्त है। यहां ११ मन लवण काट लेनेमें सिर्फ एक रुपया देना पड़ता है। गुदाममें जानेसे मूल्य अधिक लगता है। निकट ही दूसरा पहाड़ भी है। उसमें फिटकरी भरी है। यहां फिटकरी साढ़े तीन रुपये मन बिकती है। कालबाग नगरमें लोहेकी अच्छी चीजें बनती हैं। यहां म्युनिसिपालिटी, डाकघर, औषधालय, सराय और विद्यालय वर्तमान है।

कालबोधक (सं० त्रि०) कालप्रबोधक, वक्त बतानेवाला।

कालवाची (सं० त्रि०) समय बतानेवाला, जो वक्त भी बताता हो।

कालवान् (सं० त्रि०) काल कृष्णवर्ण अस्त्यस्य काल मतुप् मस्य व। कृष्णवर्णविशिष्ट, काले रंगवाला।

कालवानर (सं० पु०) कृष्णमुख वानर, काले मुंह वाला बन्दर।

कालवार—बम्बई प्रेसिडेन्सीके अन्तर्गत काठियावाड़ प्रदेशका एक नगर। यह नवनगरसे १३ कोस दक्षिण पूर्व अवस्थित है। कालवार नामक राजस्वविभागका एक सदर भी है। कालवार नगर उसीका प्रधान स्थान है। नगर प्राचीर वेष्टित है। लोकसंख्या ढाई हज़ारसे कम है। १८७८ ई० को दुर्भिक्षके समय यहां कोई १०० लोग मरे थे। काला काठी जातिको बसती पास ही है। प्रवादानुसार काला नामक किसी राजपूतने यहां का काठी जातिकी किसी रमणीका पाणिग्रहण किया था। उसी परिणयके फलसे काला काठी लोग उत्पन्न हुवे। शतवर्षपूर्व कालवारमें एक प्रकारका खड्डी नामक कार्पासवस्त्र बनता था। देशके राजा उसका बड़ा आदर करते थे। किन्तु आजकल वह देख नहीं पड़ता।

कालवाहन (सं० पु०) महिष, भैंसा।

कालविक्रम (सं० पु०) कालस्य समयस्य यमस्य वा विक्रमः, ६ तत्। १ यमका विक्रम। २ मृत्युका विक्रम, मौतकी ताकत। ३ समयका विक्रम, वक्तकी ताकत।

कालविध्वंसन (सं० पु०) १ वैद्यक रसविशेष, एक दवा

शुद्ध पारद, स्वर्ण, रौप्य, ताम्र और हरिताल, समभाग मर्दनकर पाण्डु और आमय रोग नष्ट हो जाता है।
(रसरत्नाकर)

(क्ली०) कालस्य विध्वंसनम्। २ समयनाश, वक्तकी बरबादी।

कालविध्वंसनरस, कालविध्वंस देखो।

कालविध्वंसी (सं० त्री) कालं विध्वंसयति नाशयति, काल-वि-ध्वंस-णिच्-णिनि। समयनाशक, वक्त बरबाद करनेवाला।

कालविपाक (सं० पु०) समयकी परिपक्वता, वक्त पूरा होनेकी मियाद।

कालविप्रकर्ष (सं० पु०) कालस्य विप्रकर्षः दूरत्वम्, ६-तत्। समयकी दूरता, वक्तका बढ़ाव।

कालविषाणिका (सं० स्त्री०) काकोली और चीर काकोली।

कालवीजक (सं० पु०) महानिम्ब, बड़ी नीम।

कालवृन्त, कालवृन्त देखो।

कालवृद्धि (सं० स्त्री) वृद्धिविशेष, एक सूद। प्रति-दिवस या प्रति मासके हिसाबसे जो वृद्धि बढ़कर द्विगुण हो जाती, वही कालवृद्धि कहाती है।

"चक्रवृद्धिः कालवृद्धिः कारिता कायिका च या।" (मनु, ८। १५३)

कालवृन्त (सं० पु०) कालं वृन्तं यस्य, बहुव्री०। कुलत्थ, कुलथी।

कालवृन्ता, कालवृन्तिका देखो।

कालवृन्ताक (सं० पु०) पेटिका, एक पेड़।

कालवृन्तिका (सं० स्त्री०) कालं वृन्तं यस्याः काल-वृन्त-ङीप् स्वार्थे कन्-टाप्, ईकारस्य ह्रस्वत्वम्। रक्तपाटल-वृक्ष। २ पेटिका पिटारी।

कालवृन्ती (सं० स्त्री०) कालवृन्त-ङीप्। पाटलावृक्ष, एक पेड़।

कालवेग (सं० पु०) नागविशेष, कोई नाग। यह वासुकिके पुत्र थे।

कालवेला (सं० स्त्री०) कालस्य वेला, ६-तत्। १ समस्त दिवारात्रिके मध्य क्रियाका अयोग्य समयविशेष, तमाम दिन और रातके बीच काम न करने लायक वक्त। दिनमान और रात्रिकाल उभयमें प्रत्येकको ८ आठ भागमें बांट वारके अनुसार एक या दो भाग काल-वेला मानते हैं। रविवारको दिनका पञ्चम एवं रात्रिका षष्ठ, सोमवारको दिनका द्वितीय तथा रात्रिका चतुर्थ, मङ्गलवारको दिनका षष्ठ एवं रात्रिको सप्तम, बुधवारको दिनका तृतीय तथा रात्रिका सप्तम, वृहस्पतिवारको दिनका सप्तम एवं रात्रिका पञ्चम, शुक्रको दिनका चतुर्थ तथा रात्रिका तृतीय और शनिवारको दिनरात्रि उभयका प्रथम एवं अष्टम भाग कालवेला है। (ज्योतिषदीपिका)

कालव्यापी (सं० त्रि०) कालं व्याप्नोति काल-वि-आप-णिनि। एकरूप बहुदिन स्थायी, एक ही तरह बहुत दिन चलनेवाला।

कालशम्बर (सं० पु०) एक दानव।

कालशाक (सं० क्ली) कालं कृष्णं शाकम्, कर्मधा०। १ शाकविशेष, करेमू, पटुवा। उसका संस्कृत पर्याय—नाड़िक, श्राद्धशाक और कालक है। भावप्रकाशके मतसे वह सारक, रुचिकारक, शीतल, पवित्र, वायु एवं बलवर्धक और कफ, शोथ तथा रक्त-पित्तनाशक है। २ तिक्तपूतिका। ३ कुलत्थ, कुलथी। ४ शर-पुङ्खा, सरफोंका। ५ तुलसी वृक्ष।

कालशालि (सं० पु०) कालः कृष्णः शालिः धान्य-विशेषः,कर्मधा०। कृष्णशालि, काला धान, उस धान्यका चावल और भूसी दोनों काले होते हैं। सुश्रुतके मतानुसार वह कषाय, मधुररस, मधुरपाक, शीतवीर्य अल्प अभिष्यन्दी, मलवद्धकारक, लघु और षष्टिक धान्यके तुल्य गुणयुक्त है।

कालशिरा (सं० स्त्री०) काला कृष्णवर्णा शिरा, कर्मधा०। कृष्णवर्ण शिरा, काली रग।

कालशुद्धि (सं० स्त्री०) कालस्य शुद्धिः ६-तत्। शुद्धकाल, पाक वक्त। जिस समय समुदाय शुभ कर्म सम्पादन कर सकते, उसे कालशुद्धि कहते हैं।

कालशेय (सं० क्ली०) कलश्यां भवम्, कलशी-ढक्। १ पादजलसे विभाग दधिजात तक्र, एक हिस्से पानी और तीन हिस्से दहीका बना मट्ठा। २ आल, हरताल।

कालशैल (सं० पु०) कालः कृष्णवर्णः शैलः, कर्मधा०। पर्वतविशेष, एक पहाड़।

कन्यीयसीं नैकर्मं क्रियै न तथ कारय।
कन्योऽपि वीर्यं च सहवे यान यातिं च" (भारत, अन, १९८७)

कालसंरोध (सं॰ पु॰) कालस्य संरोधः, ६ तत्। १ चिर काल अवस्थान, हमेशा मौजूदगी। २ दीर्घ समयका अतिवाहन, बहुत वक्तका गुजारा।

कालसङ्कर्षा (स॰ स्त्री॰) काठिन सङ्कर्षी पत्नी काल-सम-क्षय-कर्मांचि यस। नववर्षीय कन्या, नौ सालकी लड़की।

"वर्षकन्यां भवेत् सन्ध्या द्विवर्षा च सरस्वती।
त्रिवर्षा च त्रिधा च चतुर्वर्षा तु कालिका॥
सुभगापञ्चवर्षा च षड् वर्षा च उमा भवेत्।
सप्तभिर्मालिनी साक्षात् अष्टवर्षा च कुब्जिका॥
नवभिः कालसङ्कर्षा दशभिश्चापराजिता।
एकादशे तु रुद्राणी द्वादशाब्दे तु भैरवी॥
त्रयोदशे महालक्ष्मी द्विसप्ता पीठनायिका।
क्षेत्रज्ञा पञ्चदशभिः षोडशे चाम्बिका मता॥" (तन्त्रसार)

तन्त्रशास्त्रमें कुमारीके वयःक्रम अनुसार नामका निर्देश है। यथा एक वर्षं वयस्का सन्ध्या, दो वर्षकी सरस्वती तीन वर्षकी त्रिमूर्ति चार वर्षकी कालिका, पांच वर्षकी सुभगा, छह वर्षकी उमा, सात वर्षकी मालिनी, आठ वर्षकी कुब्जिका, नौ वर्षकी कालसङ्कर्षा, दश वर्षकी अपरा, ग्यारह वर्षकी रुद्राणी, बारह वर्षकी भैरवी, तेरह वर्षकी महालक्ष्मी, चौदह वर्षकी पीठनायिका, पन्द्रह वर्षकी क्षेत्रज्ञा, और सोलह वर्षकी कुमारी अम्बा नामसे अभिहित होती है।

कालसदृश (सं॰ त्रि॰) १ समयानुरूप कालके तुल्यादिक। २ मृत्यु तुल्य मौतके बराबर।

कालसम्पन्न (सं॰ त्रि॰) कालेन कालेन वा सम्पन्नम्। १ काल गर्भमें सम्पादित वक्तका किया हुआ। २ यथाकाल निष्पन्न, जो वक्त पर बना हो।

कालसर्प (सं॰ पु॰) कालः कृष्णः सर्पः, कर्मधा॰। कृष्णसर्प, काला सांप। (Coluber naga) इसका संस्कृत पर्याय—अलगर्द और महाविष है। यह अन्यान्य सर्पोंसे भयङ्कर है। इसका दंश अतिशय विषाक्त समझा जाता है। ग्रीष्मकालमें अधिक दिखाई देता है। लोगोंका विश्वास है कि यह काटा नहीं करता है। किन्तु कहीं कहीं कालसर्प भी कालमें भी रहता देख पड़ता है। अन्यान्य सर्पोंकी अपेक्षा इसमें क्रोध अतिशय अधिक होता है। यदि कोई अत्याचार करता, तो कालसर्प बहुत दूरतक दौड़कर डसे डसता है। हिन्दुस्तानमें इसका बहुत प्रादुर्भाव है। वर्षाके समय राह चलनेमें विशेष सावधान रहना पड़ता है। किन्तु सौभाग्यकी बात है किसी प्रकारका अत्याचार न करनेसे यह कम काटता है। पदका शब्द सुनते ही कालसर्प दूर हट जाता है। किन्तु जब दैवयोगसे उसपर किसीका पैर पड़ जाता तो वह क्रुद्ध हो डसे काट खाता है।

कालसार (सं॰ क्ली॰) कालः सारो यस्य, बहुव्री॰। १ पीत चन्दन। (शब्दार्थ चिन्तामणि) २ कृष्णसार नामक मृगविशेष, काला हिरन। ३ कृष्णागुरु, काला अगर। ४ तिन्दुक। ५ हरिताल। ६ काली तुलसी। (शब्दरत्नावली)

कालसूत्र (सं॰ क्ली॰) कालेन समानं यातकी यस्य, बहुव्री॰। १ नरकविशेष कोई दोजख। पुत्र विक्रय या कन्यापण ग्रहण करनेसे उस नरकमें पड़ते हैं।

"यो वा पुत्र वर्षं वा विक्रीय धनमिच्छति।
कन्यां वा जीविकार्थाय च यः स्वयम्भोति।
सप्तमे नरकेऽरि तिष्ठे कालसूत्रके।
स्वेद मूत्र पुरीषं च भक्षयत् स मन्दधीः॥" (भारत, अनु, ४२०)

कालसि—युक्त प्रदेशकी कालसि तहसीलकी प्रधान नगरी। यह अक्षा॰ ३० ३२´ ३०˝ उ॰ और देशा॰ ७७ ५१´ ३१˝ पू॰ पर अवस्थित है। देहरादूनके पास जहां यमुना और तमसा नदी मिली है उसीके अति निकट कालसि नगरी बसी है। नगरी अति पुरातन है। यहां एक प्रस्तर खण्ड पर अशोक राजाकी शिलालिपि खोदित है।

कालसिर (हिं॰ पु॰) नौके पुछल्लकी मिथा, कड़ाककी मस्तूलका सिरा।

कालसूक्त (सं॰ क्ली॰) वैदिक सूक्तविशेष वेदका एक सूक्त। उसमें कालकी अर्चना की गयी है।

कालसूत्र (सं॰ क्ली॰) कालस्य यमस्य सूत्रमिव बन्धन हेतुत्वात् उपमि॰। १ नरकविशेष, कोई दोजख। उक्त नरक अतप्त ताम्रमय है। महत पितामें वह एक

विंशति महानरकोंके अन्तर्निविष्ट लिखा है। ब्रह्महत्या, शास्त्रके आचारका त्याग, कृपण राजाका दानग्रहण, श्राद्धमें भोजन कर शूद्रको उच्छिष्ट दान प्रभृति पाप करनेसे उक्त महानरक भोगना पड़ते हैं। २ मृत्युकारक सूत्र, मार डालनेवाला डोरा।

"वद्धिनोऽयं तथा यमः कालसूत्रेण बध्यते।" (भारत, वनपर्व)

३ फांसीको रस्सी।

कालसूत्रक, कालसूत्र देखो।

कालसूर्य (सं० क्ली०) मृत्युकारक सूर्य, मौतका सूरज। वह कल्पान्तके समय निकलता है।

कालसेन (सं० पु०) एक डोम। इसने राजा हरिश्चन्द्रको क्रय किया था।

कालस्कन्ध (सं० पु०) कालः कृष्णः स्कन्धो यस्य, बहुव्री०। १ तिन्दुक वृक्ष, तेंदूका पेड़। वह मधुर, बल्य, वृष्य, गुरु, धातुवृद्धिकर, शीत और श्रम, दाह, कफ, पित्तशोष, विस्फोट एवं पित्तनाशक है। (वैद्यकनिघण्टु) २ विट्खदिर। ३ उदुम्बर वृक्ष, गूलरका पेड़। ४ जीवन्द्रुम, दुपहरियाका पेड़। ५ तमालपत्रवृक्ष, तेजपातका पेड़। ६ कालताल, काला ताड़। ७ समयका अंश विशेष, वक्तका एक टुकड़ा।

कालस्कार (सं० पु०) १ तिन्दुक वृक्ष, तेंदूका पेड़। २ तमालवृक्ष, तमालका पेड़।

कालस्थानी (सं० स्त्री०) पाटल वृक्ष, एक पेड़।

कालस्वरूप (सं० त्रि०) कालेन मृत्युना स्वरूपः सदृशः, ३-तत्। मृत्युतुल्य, मौतके बराबर।

कालहर (सं० पु०) कालं मृत्युं हरति, काल-हृ-ट्च्। १ शिव, महादेव। २ कामरूपान्तर्गत शिवलिङ्ग विशेष, कामरूपका एक शिवलिङ्ग।

"तस्मात् पूर्वे महाकाम पर्वतस्य विकोणके।
यत्र कालहरो नाम शिवलिङ्गं व्यवस्थितम्॥" (कालिकापु०, ७८ अ०)

(त्रि०) ३ समयघातक, वक्त बिगाड़नेवाला।

कालहन्दी (करोंद)—मध्यप्रदेशके सम्बलपुर जिलेको एक जमीन्दारी। वह अक्षा० १९° ५′ उ० और देशा० २०° ३०′ पू०में अवस्थित है। उससे उत्तर पाटना विभाग, पूर्व एवं दक्षिणभागमें जयपुर जमीन्दारी तथा मन्द्राजका विशाखपत्तन जिला, पश्चिम विन्द्रा नयागढ़ और खरियार प्रदेश है। लोकसंख्या प्रायः साढ़े तीन हजार है। कालहन्दी प्रदेश पश्चिमघाटसे अध्यवहित पश्चिम दिक् पड़ता है।

कालहन्दीमें इन्द्रावती नदी उद्भूत हो गोदावरीसे जा मिली है। हुत्ती और तेल नाम्नी दूसरी भी दो स्रोतस्वती उक्त प्रदेशमें निकल तेल नदमें गिरी हैं। फिर तेल, सान और रावल तीन नदी एकत्र हो उत्तरको बहती हुयी उड़ीसाकी महानदीमें पतित होती हैं। चारो ओर इसी प्रकार नदी और घाट पर्वत निकट रहनेसे कालहन्दीमें पानी बहुत पड़ता है। इसीसे उक्त स्थानकी भूमि विशेष उर्वरा है। उत्तर-पश्चिम भागमें सालवनको लकड़ी उपजती है। चावल, दाल, अलसी, ऊख, रूई, ज्वार और गेहूं बहुत होता है। स्थान स्थान पर सप्ताहमें एक बार बाजार लगता है। प्रधान नगर भवानीपत्तनका बाजार हो सर्वापेक्षा बड़ा है। कालहन्दीका जलवायु अति उत्तम है।

कालहन्दीमें एक राजाका अधिकार है। वह अंगरेजोंको कर देते हैं। राजा प्रतापदेवको दिल्लीके दरबारमें "राजा बहादुर" उपाधि और अपने सम्मानार्थ ८ तोपोंकी सलामी मिली थी। १८८१ ई० को उनका मृत्यु हुआ। १८८४ ई० को उनके दत्तकपुत्र राजा रघुकिशोर देव राज्यके अधिपति बने थे। किन्तु उनके अप्राप्तवयस्क होनेसे राज्यका भार रानी पर पड़ा था। बालक राजा जबलपुरके राजकुमार कालेजमें पढ़नेको बैठाये गये। उक्त घटनाके पीछे ही कन्ध लोगोंने विद्रोही हो कुलता नामक ७०।८० हिन्दुओंको मार कर उनके ग्राम लूटे थे। व्यापार गुरुतर देख अंगरेजोंने अपनी पुलिससेना भेज विद्रोहको दमन किया। बलवा करनेवाले लोगोंके सरदारोंको फांसी दी गयी। उसी दिनसे उक्त प्रदेशका शासनकार्य गवरनमेण्टने अपने हाथमें ले रखा है।

कालहस्ती—मन्द्राज प्रेसिडेन्सीको एक जमीन्दारी। उसका कुछ अंश आर्काट और कुछ अंश नेल्लोर जिलेमें अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः डेढ़ लाख है।

ई० १५वें शताब्दको वेलमजातीय किसी पालिगारने

विजयनगरके राजासे कर पाया था। पहले कालहस्ती पूर्वमें मन्द्राज एवं कालीपुर और दक्षिणमें मन्दीवास तक विस्तृत थी। औरंगजेबकी दी हुई सनदमें देखते हैं कि कालहस्तीके जमिन्दार उस समय ५ हजार सवारके अधिनायक थे। १७९२ ई० को यह अंगरेजोंके हाथ लगी। १८०२ ई०को गवरमेण्टने इसका चिरस्थायी प्रबन्ध किया था। जमीन्दारके वंशवाले एक व्यक्तिको अंगरेजोंने राजा और सी० एस० आई० (C. S. I.) का उपाधि दिया है। देशको प्रचलित भाषा तेलगु यहां जमीन्दारको देती है। कालहस्तीके दक्षिण स्वर्ण और ताम्रका निश्चित है। ताम्र और सीसा यहां मिलता है। शोरेका कारखाना भी खुला है।

उक्त जमीन्दारीका प्रधान नगर कालहस्ती वा श्रीकालहस्ती है। यह अक्षा० १३° ४५´ २´ उ० और देशा० ७९° ४४´ २९´´ पू० पर सुवर्णमुखी नदीके तीर मन्द्राज रेलकी उत्तर पश्चिम शाखाके तिरुपति ष्टेशनके अतिनिकट अवस्थित है। लोकसंख्या प्राय दश हजार है। नगरमें जमीन्दारका वासभवन बना है। वहां एक मजिष्ट्रेट भी रहता है। बाजार बहुत बड़ा है। निकटस्थ ग्राममें उत्तम वस्त्र प्रस्तुत होता है।

कालहस्ती एक तीर्थस्थान है। यहां अनेक देवमन्दिर विद्यमान हैं। उनमें शिवमन्दिर ही प्रधान है। दक्षिणके ब्राह्मण कालहस्तीको द्वितीय वाराणसी बताते हैं। उक्त मन्दिर विशाल नगरके नैऋत कोणमें पर्वतके निम्नभाग पर अवस्थित है। कालहस्तीके माहात्म्यमें लिखा है,—"ब्रह्माने तपस्या करनेको कैलास पर्वतके शृङ्गका एकांश यहां लाकर रखा था। इसीसे उसका नाम दक्षिणकैलास है। ब्रह्माने स्वयं इस मन्दिरका मूल स्थापन किया है।" चोल राजा और विजयनगरके अच्युतरायने इसका अपरापर अंश बनवा दिया। महादेवकी वायुमूर्ति यहां विराजित है। कथनानुसार एक सर्प और एक हस्ती समय महादेवकी पूजा करते थे। सर्प अपने मस्तकका मणि महादेव पर चढ़ाता और हस्ती जलाभिषेक कराता था। किसी दिन हस्तीके अभिषेकजलका जल सर्पसे छू गया। इससे क्रुद्ध हो हस्तीके शुण्डमें दांत मारा था। हस्तीने भी विषकी ज्वालासे अस्थिर हो सर्पको आघात किया। शेषको दोनोंने पञ्चत्व पाया था। दो परमभक्तोंकी ऐसी अवस्था देख महादेवने उन्हें फिर जीवन प्रदान किया। फिर उन्होंने उनको चिरस्मरणीय बनानेके लिये उनके नाम पर अपने मन्दिरका भी नाम "कालहस्ती" रख दिया। (काल अर्थात् सर्प और हस्ती अर्थात् हाथी दोनों मिलकर कालहस्ती शब्द बना है।) तीर्थमाहात्म्यके मतसे कणप्प नामक किसी व्याधने महादेवका अनुग्रह लाभ किया। वह पर्वतके ऊपर रहता था। किन्तु आहार करनेके पूर्व व्याध पर्वतसे उतरता और आहार्य द्रव्य महादेवको अर्पणकर उसे प्रसाद ग्रहण करता था। कुछ दिन पीछे उसने समझ पाया कि महादेवका एक चक्षु नष्ट हो गया। इसी कारण उसने अपना एक चक्षु निकाल महादेवके नष्ट चक्षुपर लगा दिया। फिर कुछ बाद उसे देख पड़ा कि देवदेवका दूसरा चक्षु भी बिगड़ा था। इसीसे उसने अपना दूसरा चक्षु भी निकाल महादेवके चक्षुपर लगा दिया। उस समय व्याधने अपना एक पैर महादेवके चक्षुके निकट रखा था। इसीसे आज भी महादेवके चक्षुमें उसका पदचिह्न देख पड़ता है। देवादिदेवने उसे सायोज्यमुक्ति प्रदान की। महादेवके निकट उसका एक स्वतन्त्र लिङ्ग विद्यमान है। महादेवके साथ उसकी भी पूजा होती है। मन्दिरके प्रवेशस्थान पर हस्ती, सर्प और ऊर्णनाभिकी मूर्ति बनी है। दूसरे स्थानमें महादेवकी जो मूर्ति देख पड़ती, उससे कालहस्तिकी मूर्ति स्वतन्त्र रहती है। कालहस्तीकी मूर्तिका नाम वायुमूर्ति है। साधारणतः गोलाकार दर्पणके तुल्य होती है। किन्तु उक्त वायुमूर्ति चतुष्कोण है। मन्दिरमें किसी ओर वायुके प्रवेशका पथ नहीं, किन्तु लिङ्गके मस्तकपर जो दीप जलता, वह सर्वदा चञ्चल हिला करता है। पहले अन्धकारमें अध्यात्म प्रदीप दीप है। किन्तु दूसरा कोई इस प्रकार नहीं हिलता। सम्भवतः इसीसे उक्त लिङ्ग "वायुलिङ्ग" कहलाता है। महादेवके साथ पार्वती देवी भी है।

कालहस्तीमें उन्हें ध्यानप्रसन्ना कहते हैं। कथनानुसार भगवान्‌ने उन्हें किसी समय अभिशाप दिया था। उसीसे उन्होंने नरयोनि पायी। उन्होंने तपस्याके बल मानवदेहमें महादेवको रिझाया था। महादेवने उन्हें मुक्ति दे ध्यानप्रसन्ना नामसे अभिहित किया। तपस्याके समय दुर्गा नाम्नी कोई नारी पार्वतीकी सहगामिनी बनी थीं। महादेवके प्रसादसे उन्होंने भी देवत्वलाभ किया; उसीसे स्वतन्त्र मन्दिरमें दुर्गा देवी पूजी जाती हैं। भूत लगने या अपुत्रक रहनेसे ध्यानप्रसन्ना देवीके सम्मुख भीगे कपड़ों अधोमुख लेट स्त्रियां देवीका ध्यान करती हैं, उसका नाम प्राणाचारव्रत है। जो जितनी देर ध्यान कर सकती, उसकी वासना भी उसी प्रकार फलवती होती है।

शिवमन्दिरसे दक्षिण पर्वतके पार्श्वमें भगवान् मणिकुण्डेश्वर स्वामीका मन्दिर है। किसी नारीने उक्त स्थान पर महादेवको तपस्या की थी। महादेवने प्रसन्न हो उसके कर्णमें तारक मन्त्र प्रदान किया। उससे उसकी मुक्ति हो गयी उसीसे मुमुर्षु लोगोंको ले जाकर वहां दक्षिण पार्श्वपर सुला देते हैं। कालहस्तीके लोगोंको विश्वास है कि मृत्युकालमें पार्श्व बदल ऊपर कर्ण रख वामपार्श्व लेटनेसे दक्षिण कर्णसे आत्मा निकलता और मृत व्यक्ति चिरानन्द भोग करता है। मणिकुण्डेश्वरमन्दिरसे दक्षिण पर्वतके पाददेशमें ब्रह्माका मन्दिर है। उसके ऊपर नानाविध मूर्ति खोदित हैं। स्थानीय तीर्थमाहात्म्यके मतानुसार ब्रह्माने वहीं बैठकर तपस्या की थी। उक्त मन्दिरसे दक्षिण पर्वतको उपत्यकामें एक प्रशस्त पुष्करिणी है। उसके चारो ओर पत्थरसे घाट बंधे हैं। पुष्करणीके निकट भरद्वाज स्वामीकी मूर्ति है। उसीसे उक्त स्थान भरद्वाज मुनिका आश्रम कहाता है। माघमासको वहां १० दिन महोत्सव होता है। उसमें बहुतसे लोग इकट्ठा हो जाते हैं।

कालहानि (सं० स्त्री०) कालस्य हानिः, ६-तत्। १ समयहानि, बेफायदा वक्तकी बरबादी। २ समयका अभाव, वक्तकी तङ्गी।

कालहीन (सं० पु०) कालेन कृष्णवर्णेन हीनः, ३-तत्। लोध्रवृक्ष, लोधका पेड़। लोध्र देखो।

कालहोरा (सं० स्त्री०) काले कालभेदे होरा, ७-तत्। एक दिवारात्रिमें उदित द्वादश लग्नका अर्धांश। २ ढाई दण्ड परिमित काल, एक घंटे समय।

३ सिन्धुप्रदेशका एक मुसलमान राजवंश। १७४० ई०को उक्त वंशका राजत्व आरम्भ हुआ था। कालहोरा और तालपुरवंश ही सिन्धुका शेष स्वाधीन वंश रहा। उनमें प्रथमवंशीय अपनेको पारस्यके अब्बासियोंका वंशीय और शेषोक्त धर्मप्रचारक मुहम्मदका वंशोद्भव बताते हैं। किन्तु वस्तुतः वंशवाले बालूचिस्तानके लोग हैं।

मुहम्मद कालहोराने रिन्द नामक किसी बालूचिके साहाय्यसे पंवारवंशीय राजपूत राजाको मार सिंहासन पर अधिकार किया था। खोदाबादमें उनको कबर है। कबरके सामने कई गदा लटका करती हैं। लोगोंके कथनानुसार उन्होंने मृत्युकालको उस प्रकार गदा लटकानेका आदेश इसलिये दिया, जिससे लोग देखते रहें कि उन्होंने कैसी सुगमतासे सिन्धु जीता था।

काला (सं० स्त्री०) कालः वर्णः अस्त्यस्याः, कालशब्द आदित्वात् अच्-टाप्। १ नीलिनी, नीलिका पेड़। २ कालनिवृत्। ३ त्रिवृत्। ४ पिप्पली, पीपल। ५ नागवल्ला। ६ मञ्जिष्ठा, मंजीठ। ७ क्षुद्र कृष्णजीरक, काली जीरी। ८ अहिंसा। ९ अश्वगन्धा, असगंध। १० पाटला। ११ दक्षको एक कन्या।

"अदितिर्दितिर्दनु' काला दनायु. सिंहिका तथा।" (भारत ।।६५ अ)

काला (हिं० वि०) १ कृष्ण, स्याह, काजल या कोयलेके रंग जैसा। २ कलुषित, बुरा, खराब। ३ प्रचण्ड, जोरदार। (पु०) कालसर्प, काला सांप।

कालांश (सं० पु०) कालरूपी अंशः। ग्रहणका दर्शनोपयोगी अंशविशेष, ग्रहण देखने लायक एक हिस्सा।

कालाकान्द (हिं० पु०) धान्य विशेष, किसी किस्मका धान। यह अग्रहायण मासमें काटा जाता है। इसका चावल सैकड़ों वर्ष रखते भी नहीं बिगड़ता।

कालाकलूटा (हिं० वि०) अत्यन्त कृष्णवर्ण, निहायत

स्वाद, बहुत काला। प्रायः यह शब्द सामान्य व्यवहारमें प्रयुक्त होता है।

कालाक्रान्त (सं० त्रि०) कालेन मृत्युना आक्रान्तः, ३-तत्। १ मृत्युकर्तृक आक्रान्त, मौतके पंजेमें पड़ा हुआ। २ समय द्वारा आक्रान्त, वक्तसे निकला हुआ।

कालाक्षरिक (सं० पु०) काले यथायोग्यकाले अक्षरं वेत्ति, काल अक्षर ठक्। विद्यार्थी, तालिब इल्म, ठीक वक्त पर पढ़नेवाला।

कालाखरी, कालाक्षरिक देखो।

कालागरु, कालागुरु देखो।

कालाचोंचा (हिं० पु०) काली और मोटी चोंच

कालागुरु (सं० क्ली०) कालं कृष्णं अगुरु, कर्मधा०। कृष्ण अगुरु, काला अगर। अगुरु देखो।

"[illegible]
[illegible]" (रघु० ४।८१)

कालागेंडा, कालाभांडा देखो।

कालाग्नि (सं० पु०) 'काल' सर्वसंहारक अग्नि, कर्मधा०। १ प्रलयाग्नि, कयामतकी आग। २ प्रलयाग्निके अधिष्ठाता रुद्र। ३ पञ्चमुख रुद्राक्ष। एक रुद्राक्ष कालाग्निरुद्रको प्रतिमय है। इसीसे इसे भी कालाग्नि कहते हैं। स्कन्दपुराणमें इसे सर्वपाप नाशक बताया है,—

"[illegible]
[illegible]
[illegible]"

पञ्चमुख रुद्राक्ष साक्षात् रुद्रदेवस्वरूप है। इसे कालाग्नि भी कहते हैं। इस रुद्राक्ष धारण करनेसे अगम्यागमन या अभक्ष्य भक्षणके पापसे मुक्ति मिलती है।

कालाग्निभैरव (सं० पु०) ज्वरका एक रस, बुखार की कोई दवा। १ भाग पारद और १ भाग गन्धकको कज्जल बना गोक्षुरके क्वाथसे भावना देना चाहिये। सूख जाने पर उसे पीस कर चूर्णके बराबर ताम्रचूर्ण, ताम्रचूर्णका अर्धांश विष, १ भाग हिङ्गुल २ भाग कुसुम्भबीज, ५ भाग हरिताल ३ भाग मनःशिला, १ भाग टङ्कण, १ भाग खदिर, १ भाग जैपाल, १ भाग स्वर्णमाक्षिक १ भाग लौह और १ भाग वङ्ग इन सबको पञ्चकोलसे मर्दन करते हैं। फिर दशमूल और पञ्चमूलके क्वाथसे यथाक्रम एक प्रहर घोंटकर चनेके बराबर वटिका बनायी जाती है। (भैषज्यरत्नावली)

कालाग्निरस (सं० पु०) भगन्दरका रस विशेष, पीबीदार नासूरके आरोग्यकी एक दवा। शुद्ध सूत गन्धक, तालक तुत्थ, सीसक और सैन्धव बराबर लेकर तथा चौलाईके दूधमें पीस कर खाने या लगानेसे भगन्दर रोग नष्ट हो जाता है। (रसरत्नाकर)

कालाग्निरुद्र (सं० पु०) कालाग्नेः प्रलयाग्नेः अधिष्ठाता रुद्रः मध्यप०, कालाग्निरिव रुद्रो वा, उपमि०। १ प्रलयाग्निके अधिष्ठाता-देवता रुद्र। २ एक रुद्रके उपासक एक ऋषि। ३ यजुर्वेदीय एक उपनिषद्।

कालाग्निरुद्ररस (सं० पु०) १ कुष्ठाधिकारका एक रस, कोढ़की एक दवा। मरिच, भस्म एवं तीक्ष्ण भस्म माक्षिक और गन्धकको कर्कोटकीके कन्दमें डाल मट्टीसे ऊपर लेप देते हैं; फिर भूधराख्य पुटमें एक दिन पका उसका चूर्ण बना लिया जाता है। इस चूर्णमें दशमांश विष मिलानेसे उक्त औषध प्रस्तुत होता है। मात्रा १ माषमात्र है। यह कालाग्निरुद्र रस दश दिनमें श्वित्रको नाश करता है। अनुपानमें त्रिफला और मधु मिलाना चाहिये। २ ज्वररोगका रसविशेष, बुखारकी एक दवा। मरिच और गन्धक तुल्य भाग ले चित्रसे भावना देना चाहिये। फिर मातुल, मलय, मापाल, जाम और माक्षिकको एकदिन भावना लगती है। उक्त मातुलादि द्रव्योंको समस्त अथवा व्यस्तरूपसे भी ग्रहण कर सकते हैं। पीछे २ रत्ति मरिच डालनेसे कालाग्निरुद्ररस प्रस्तुत होता है। मात्रा दो गुञ्जाके बराबर रखी है। आम पथ्य है। (रसरत्नाकर)

कालाङ्ग (सं० क्ली०) कालं कृष्णवर्णं अङ्गम् कर्मधा०। १ कृष्णवर्ण देह, काला जिस्म। कालस्य कालपुरुषस्य अङ्ग ६-तत्। २ कालपुरुषका अङ्ग। (त्रि०) बहुव्री०। ३ कृष्णवर्ण देहविशिष्ट, काले जिस्मवाला।

कालाचोर (हिं० पु०) १ चतुर चोर, हुशियार चोर। २ कापुरुष, खराब आदमी।

कालाजाजी (सं० स्त्री०) कृष्णजीरक, काला जीरा।

कालाजिन (सं० क्ली०) कालस्य कृष्णमृगस्य अजिनम्,

६-तत्। १ कृष्णसार मृगका चर्म, काले हिरनका चमड़ा। कालं अजिनं यत्र, बहुव्री०। २ कृष्णाजिन-प्रधान देशविशेष, काले हिरनके रहनेका मुल्क। कूर्म प्रभृति पुराणके मतमें उक्त जनपद दक्षिण दिक्‌में अवस्थित है।

कालाजीरा (हिं० पु०) १ काला जीरा, मीठा जीरा। २ धान्यविशेष, एक धान। कालाकन्द देखो।

कालाञ्जन (सं० क्ली०) कालञ्च तत् अञ्जनश्चेति, कर्मधा०। गाढ़ कृष्णवर्ण अञ्जन, खूब काला काजल।

"न चक्षुषी कान्तिविशेषबुद्ध्या
कालाञ्जनं मङ्गलमित्युपात्तम्।" (कुमार ७।२०)

कालाञ्जनी (सं० स्त्री०) अज्यते अनया अञ्जनी, अञ्ज-करणे ल्युट्-ङीप्। काली कृष्णवर्णा अञ्जनी पुंवद्भावः, १ कृष्णकार्पासक्षुप, नरमा, वन कपास। उसका संस्कृत पर्याय—अञ्जनी, रेचनी, शिलाञ्जनी, नीला-ञ्जनी, कृष्णाभा, काली और कृष्णाञ्जनी है। वह कटु, उष्ण, अम्ल, आमकफमिश्र, अपानावर्तशमन और जठरा-मयघ्न होती है। (राजनिघण्टु)

२ नीली, नील।

कालाढोकरा (हिं० पु०) वृक्षविशेष, एक पेड़। उसकी शाखाप्रशाखा नीचेको झुक जाती हैं। शीत-कालको पत्र ताम्रवर्ण धारण करते हैं। काठ सुदृढ़ और ईषत् कृष्णवर्णविशिष्ट रक्तवर्ण होता है। कालाढोकरा मालव, मध्यप्रदेश और राजपूतानेमें अधिक उपजता है।

कालाण्डज (सं० पु०) कालः कृष्णवर्णः अण्डजः पक्षी। कोकिल, कोयल, काली चिड़िया।

कालातिक्रम (सं० पु०) कालस्य अतिक्रमः लङ्घनम्, ६-तत्। समयलङ्घन, वक्त निकाल देनेका काम।

कालातिपात (सं० पु०) कालस्य अतिपातः अतिवाह-नम्, ६-तत्। समयक्षेपण, वक्तका निकाल।

कालातिरेक (सं० पु०) कालस्य अतिरेकः अतिक्रमः ६-तत्। १ निर्दिष्ट समयका अतिक्रम, मुकर्रर किये हुये वक्तका टालमटोल। २ संवत्सरका अतिक्रम।

"कालातिरेके त्रिगुणं प्रायश्चित्तं समाचरेत्।" (प्रायश्चित्ततत्त्व)

कालातिल (हिं० पु०) कृष्णतिल, स्याह तिल।

कालातीत (सं० क्ली०) कालस्य अतीतं अत्ययः, अति-इण् भावे क्त। १ कालातिक्रम, वक्तका टल जाना।

"कालातीतं तथा सन्ध्या यथाशक्तिं यथ....... यथा॥" (कालीतन्त्र)

(त्रि०) अतीतः कालोऽस्य, निष्ठान्तत्वात् परनिपातः। २ विगत, गुजरा हुवा, जो अपना समय बिता चुका हो। (पु०) ३ न्यायशास्त्रके मतानुसार पञ्चविध हेत्वा-भासके अन्तर्गत हेत्वाभास विशेष, मुगालता, एक झूठी दलील। अतीतकाल शब्द द्वारा भी वह अभिहित होता है उसका न्यायसूत्रोक्त लक्षण इस प्रकार है,—

"कालात्ययापदिष्टः कालातीतः।" १ अ० २ आ० ९० सूत्र।

साधनकालके अभाव समय जो हेतु लगाया जाता, वह कालातीत कहाता है। अर्थात् जिसस्थानमें किसी पक्ष* पर साध्यको† अभावविषयक निश्चय ठहरता, उसी स्थानका हेतु कालातीत रहता है। यथा—"जलं वह्निमत् जलत्वात्।" अर्थात् जलमें आग है, क्योंकि वह जल है। यहां जलमें वह्निके अभाव विषयका निश्चयज्ञान है। सुतरां 'जलत्व' हेतु काला-तीत नामसे निर्दिष्ट होगा।

कालातीत शब्दके बदले बाधित शब्दका प्रयोग भी न्यायशास्त्रके अनेक स्थलोंमें देख पड़ता है।

कालात्मक (सं० क्ली०) कालेन कालस्वभावेन कृत आत्मा यस्य, काल आत्मा-कन्। १ कालस्वभावजात, वक्त या किस्मत पर मुनहसिर।

"आत्मना व्यापराधे न दिवि वा यदि वा भुवि।
सर्वे कालात्मकाः सर्वे। कालात्मकमिदं जगत्॥" (भारत, अनु० १अ०)

काल आत्मा अस्य। २ कालस्वरूप परमेश्वर।

कालात्यय (सं० पु०) कालस्य अत्ययः अतिक्रमणम्, ६-तत्। कालक्षेपण, वक्तकी बरबादी।

कालात्ययापदिष्ट (सं० पु०) कालात्ययेन अपदिष्टः। गौतम-सूत्रोक्त हेत्वाभासविशेष, एक झूठी दलील। कालातीत देखो।

---

* जिसके उपयोगी साध्यका आधार पक्ष कहाता है। जैसे—"पर्वतो वह्निमान् धूमात्" अर्थात् पर्वत धूमसे वह्निमान् है। इस स्थानपर पर्वत पक्ष, वह्नि साध्य और धूम हेतु है।

† हेतु प्रभृति द्वारा जिसे प्रतिपादन करते, उसे साध्य कहते हैं।

काकादर्श (सं॰ पु॰) काक' शममर्मस्पादकत्वात् विशेष' आदर्श इव काक-आदर्श इव आकारि यत्। १ मलयका दर्पण, मलका आईना। २ स्मृतिग्रन्थविशेष।

काकाटोला (हिं॰ पु॰) १ लताविशेष, एक बेल। यह अति मनोहर होती है। पुष्प मौसममें रहते हैं। पुष्प पतित होनेपर गुच्छ आता जिसमें काकवर्ण बीज निकलता है। निर्यास मौसममें पड़ता है। किन्तु बीज और निर्यास बहुत थोड़ी मात्रामें सेवन करते हैं। २ उक्त लताका बीज। यह बहुत रेचक होता है।

काकाण्ड (सं॰ पु॰) वैयाघ्र माष।

काकाध्यक्ष (सं॰ पु॰) काकानां चक्षुषामां अध्यक्ष: प्रवर्तक:, ६-तत्। १ सूर्य, सूरज। "[illegible]" ([illegible]) २ समुदायकाकप्रवर्तक पक्षीराज, कौआका मालिक।

काकागर (सं॰ पु॰) यमालयके एक पुत्र। [illegible] देखो।

काकानल (सं॰ पु॰) काक' नयति कारक' [illegible] असंज्ञा॰। १ प्रलयाग्नि, प्रलयकालकी आग। २ राजविशेष, एक राजा। उसके पिताका नाम समागर था। (हरिवंश ११ अ॰)

काकानाग (हिं॰ पु॰) १ काला सर्प, काला सांप। २ कुटिल पुरुष, टेढ़ा आदमी।

काकानुसारि (सं॰ पु॰) काक एव काक' [illegible] तत् अनुसरति काक-अनु-सृ-णिनि। १ भ्रमर, भौंरा। २ चटक चिरौटा। ३ चातक पपीहा। ४ वन-कुक्कुट, जंगली मुरगा।

काकानुभावकता (सं॰ स्त्री॰) कालं अनुभवति, काल अनु-भू-ण्वुल् कालानुभावकस्य भाव:, तल्-टाप्। समय अनुभव करनेकी शक्ति, जिस ताकतसे वक्त मालूम पड़े।

काकानुमारिषा (सं॰ स्त्री॰) कायेन कृष्णवर्णेन अनु [illegible] मारिषा, मध्यप॰। १ कृष्ण मारिषा, काली चलाई। २ तगरपादिक, तगरमूल। ३ सौंफकी जड़।

काकानुसारक (सं॰ पु॰) काकं कृष्णवर्णं मृगमदं अनुसरति गन्धेन इति शेष:, काक अनु-सृ-ण्वुल्। १ तगर। २ पीतचन्दन। (त्रि॰) काकानुसारी, कउवे अनुयायि।

काकानुसारि (सं॰ पु॰) काकं कृष्णवर्णं मृगमदं अनुसरति, काक अनु-सृ इन्। १ शिंशपा वृक्ष। २ मूषिक, चूहा। ३ गंठवन एक खुशबूदार चीज। ४ अगुरु, अगर।

काकानुमारिषा (सं॰ स्त्री॰) १ निष्कीतगर। २ श्वेत मारिषा, सफेद चलाई। ३ कृष्णमारिषा, काली चलाई।

काकानुमारिका, काकानुमारिषा देखो।

काकानुसारी, काकानुसारि देखो।

काकानुसार्य (सं॰ स्त्री॰) काकेन मृगमदेन अनुस्रियते, काक अनु-सृ यत्। [illegible] ५।१।१२४ १ गंठवन कोई खुशबूदार चीज। २ शिंशपा वृक्ष। ३ रक्तचन्दन। ४ पीतचन्दन। ५ तगरपादिका। ६ तगर।

काकानुसार्यक (सं॰ स्त्री॰) काकानुसार्य स्वार्थे कन्। गंठवन, एक खुशबूदार चीज।

काकानुसार्या (सं॰ स्त्री॰) तगर।

काकालोन (हिं॰ पु॰) काललवण काला नमक।

काकान्तक (सं॰ पु॰) काकस्य आशु कालस्य अन्तक' नाशक: ६-तत्। यम।

काकान्तकयम (सं॰ पु॰) काकान्तककालो यमयति असंज्ञा॰। १ आशु कालविनाशक यम। २ प्रलयकारक यम।

काकान्तकरस (सं॰ पु॰) १ कासाधिकारका रस विशेष, खांसीकी एक दवा। हिङ्गुल, मरीच, त्रिकटु, टङ्कण और गन्धक समभाग जम्बीरका रस डाल याम मात्र मर्दन करनेसे उक्त औषध प्रस्तुत होता है। गुञ्जामात्र काकान्तकरस खिलानेसे कासरोग दब जाता है। २ यक्ष्माधिकारका रसविशेष तपेदिककी एक दवा। सीसेकी मूषा अदरकी रसमें पाक बनाते हैं। फिर पञ्चक्षारादिके सम [illegible] रसमें मर्दन कर याममात्र [illegible] गोला बनाकर रख देना चाहिये। उसके पीछे पूर्वोक्त मूषामें चौथाई पारा और गन्धक मिलाकर रखते पीस कर डालते हैं। फिर मूषाको औषधसे आच्छादन कर बालुका-में उसको पकाना चाहिये। इसीप्रकार षट्पुट दीजे

होनेसे औषधको उतार पीस लेते हैं। पश्च गुञ्जा-परिमित कालान्तकरस खानेसे राजयक्ष्मा विनष्ट हो जाती है। अनुपान मृगाद्यवत् है। (रसरत्नाकर)

कालान्तर (सं० क्लो०) अन्यः कालः (मयूं निं० सं०)। १ अन्य समय, दूसरा वक्त। २ उत्पत्तिका परवर्ती काल, पैदायशके पीछेका वक्त। (त्रि०) ३ समयान्तर-स्थायी, दूसरे वक्तमें पड़नेवाला।

कालान्तरक्षम (सं० त्रि०) कालान्तरको वहन कर सकनेवाला, जो देरका वक्त बरदाश्त कर सकता हो।

कालान्तरप्राणहरमर्म्म (सं० क्लो०) १ मर्म्मस्थानविशेष, जिस्मको एक नाजुक जगह। जहां आघात लगनेसे पक्षान्त वा मासान्तमें प्राण निकलते, उसे कालान्तर प्राणहरमर्म्म कहते हैं। वह तेंतीस होते हैं। यथा—आठ वक्षमें (दो स्तनमूलमें, दो स्तनरोहितमें, दो अपलापमें और दो अपस्तम्भमें), पांच सीमन्तमें, चार तलहृदयमें, चार क्षिप्रमें, चार इन्द्रवस्तिमें, दो कटि-तरुणमें, दो पार्श्वमें, दो वृहतीमें और दो नितम्बमें। (सुश्रुत)

कालान्तरविष (सं० पु०) कालान्तरे दंशनात् अन्य-स्मिन् काले विषं यस्य, बहुव्रो०। १ मूषिकादि जन्तु, चूहा वगैरह। २ लूतादि, मकड़ी वगैरह, जिन जन्तुवोंका विष पहले दष्ट स्थान पर मालूम न पड़ते भी पीछे देखा जाता, उन्हींका नाम कालान्तरविष आता है।

कालान्तरावृत्त (सं० त्रि०) कालान्तरे दीर्घसमयान्तरे आवृत्तं परावृत्तम्, ७-तत्। बहुकाल प्रत्यावृत्त, वक्तसे छिपाया गया।

कालान्तरावृत्ति (सं० स्त्री०) कालान्तरे आवृत्तिः प्रत्यावर्त्तनम्, ७-तत्। समयान्तरमें प्रत्यावर्त्तन, दूसरे वक्तकी वापसी।

कालाप (सं० पु०) कालः मृत्युः आप्यते यस्मात्, काल-आप्-घञ्। १ सर्प-फण, सांपका फन। २ राक्षस। कलापं तन्नामकं व्याकरणं वेत्ति अधीते वा, कलाप-अण्। ३ कलापव्याकरणवेत्ता। ४ कलापव्याकरण अध्ययनकारी। ५ एक ऋषि, उनका नाम अराड़ था। वह शाक्यमुनिके अध्यापक रहे।

"कुमुदो मे वसतीव कालापः कट एव च।" (भारत २।१०)

कालापक (सं० क्लो०) कालापस्य कलापिना प्रोक्तस्य शाखाभेदस्य धर्म्मः आम्नायो वा, ६-तत्। १ कलापि-शाखानुसारी एक शास्त्र। २ कलाप-व्याकरणवेत्ता।

"कालापककालापक-दुर्विदः।" (विदग्धमोदतरङ्गिणी)

कालापहाड़ (हिं० पु०) अत्यन्त भयानक वस्तु, निहा-यत डरावनी चीज।

कालापहाड़—१ जौनपुरवाले नवाब बहलोल लोदीके भागिनेय और उनके पुत्र बारबक्क शाहके सेनापति। वह एक विख्यात वीर थे। कहते हैं किसी समय बारबक्क शाहने दिल्लीके सुलतान सिकन्दर लोदीके विपक्ष युद्धयात्रा की थी। युद्ध घोरतर हुवा। घटनाक्रमसे उस युद्धमें कालापहाड़ कैद किये और दिल्लीको भेजे गये। सिकन्दरने देखा कि कालापहाड़ म्लान-मुख पदव्रजसे उनके सम्मुख जा रहे थे। उन्होंने अविलम्ब अश्वसे उतर कालापहाड़को आलिङ्गन किया और कहा,—'आप हमारे पितृतुल्य हैं, हमें भी पुत्रतुल्य समझते रहिये। कालापहाड़ इस असम्भा-वित समादरको देख विस्मित हुये। उन्होंने सुलतानसे कहा, कि वह सुलतानके लिये जीवन पर्यन्त उत्सर्ग करनेको प्रस्तुत थे। फिर वह पहले जिनकी ओरसे लड़ने चले थे, उनके ही विरुद्ध हो गये। बारबक शाहके सिपाही कालापहाड़को आते देख भाग खड़े हुये।

'तारीख-जहान-लोदी' नामक फारसी इतिहासमें लिखा है कि ४८८ हिजरीको (१४८३ ई०) सिक-न्दरशाहने बारबकशाहको पकड़नेको लिये काला-पहाड़को अवधके अभिमुख भेजा था।

"तारीख शेरशाही" नामक मुसलमान इतिहास-के मतानुसार कालापहाड़को सुलतान बहलोलने अवध सरकार और दूसरे भी कई परगने जागीर दिये थे। मरनेके समय वह ३०० मन पक्का सोना और विस्तर कल्लार सम्पत्ति छोड़ गये। उनकी एक-मात्र कन्या फातिमा उत्तराधिकारिणी हुयी।

सुलतान इब्राहिमलोदीके राजत्वकी शेषावस्थामें वह मर गये। युक्त प्रदेशमें कालापहाड़का नाम विख्यात है। वह बड़े हिन्दूविद्वेषी और देवमूर्त्ति-चूर्णकारी थे।

२ मुर्शिदाबादके नवाब दाऊदके एक सेनापति। उनका असल नाम 'राजू' था। कामरूप अञ्चलमें वह पोराकुठार, पोराकुठार, कालाकुठाम या कालयवन नामसे विख्यात है। बङ्गाल और उड़ीसेके जनप्रवादानुसार कालापहाड़ पहले ब्राह्मण थे। उन्होंने किसी नवाब कन्याके प्रेममें पड़ मुसलमान धर्म ग्रहण किया। किन्तु अकबरनामे, तारीख दाऊदी प्रभृति मुसलमान इतिहासोंमें वह 'अफगान' बताये गये हैं।

कालापहाड़ पहले बङ्गालके नवाब सुलेमान करानी और पीछे दाऊदके सेनापति बने। उनकी भांति हिन्दूद्वेषी मुसलमान बङ्गालमें कभी देख न पड़ा था। देवमन्दिर भङ्ग, देवमूर्ति चूर्ण और अनेक प्रकार हिन्दुओंको लाञ्छना करना ही उनके जीवनका प्रधान लक्ष्य रहा।

पूर्व आसाम, पश्चिम काशी और दक्षिण उड़ीसेकी मध्य उस समय हिन्दुओंके जो विख्यात देवालय थे, वह कालापहाड़के हाथसे बच न सके। उनमें कोई भग्न, कोई अङ्गहीन और कोई भूमिसात् हो गये। अद्यापि कालापहाड़का दारुण अत्याचार लोगोंका स्मरण करता है। प्रवादानुसार कालापहाड़का नक्कारा बजते ही सकल देवमूर्ति कांप उठती थीं।

उड़ीसेकी मादली पञ्जीमें लिखा है (१४८८ शक),—"मुकुन्ददेवके राजत्वमें अफगान कालापहाड़ उड़ीसेमें घुसा था। मुकुन्ददेव उससे पराजित हुये। उसके पीछे मुकुन्ददेवके पुत्र गौड़िआ-गोविन्दके राजा होनेपर कालापहाड़ पुरी लूटने गया था। पण्डोंने जगन्नाथ देवकी मूर्ति उठा कर पारीकूदमें छिपा रखी। कालापहाड़को यह संवाद मिल गया। उसने पारीकूदसे जगन्नाथदेवको मंगा और जलाके समुद्रमें फेंक दिया। (जगन्नाथ, उसका इतिहास देखो।) उसी पापसे कालापहाड़के हाथ पैर गले, जिससे वह मरे थे।" अकबरनामेके मतानुसार मुगल सेनापति मुनीमखान्‌के दाऊदको पकड़में लाने पहुंचने पर कालापहाड़ और कई अफगान सरदारोंने [illegible] अधिकार किया था। किन्तु अफगानोंके मध्य जो कालापहाड़ मासूमकाबुली और मुगल विपक्षियोंके साथ मारे गये। तारीख-दाऊदीमें देखते ९८८ हिजरीको (१५८० ई०) यह घटना हुयी थी।

कालापान (हिं० पु०) तासका हुकुम रंग।

कालापानी (हिं० पु०) १ निर्वासन, जलावतनी, देशनिकाला। २ आन्दामन निकोबार प्रभृति द्वीप। ३ मद्य, शराब।

कालापोश (हिं० वि०) कृष्णवर्णवस्त्राच्छादित, काले कपड़े पहने हुआ।

कालाबाल (हिं० पु०) बोलिवियाका मेष, पशम, लांट।

कालामुख (हिं० वि०) अत्यन्त कृष्णवर्ण, निहायत काला।

कालाभ्र (सं० पु०) कालं कृष्णवर्णं अभ्रः, कर्मधा०। १ जलपूर्ण कालमेघ, बरसनेवाला काला बादल। २ कृष्णाभ्र, काला बादल।

कालाम (सं० पु०) अराड़ ऋषि। यह शाक्य मुनिके अध्यापक रहे।

कालामुख (सं० पु०) शैव सम्प्रदायविशेष।

कालामोहरा (हिं० पु०) विषवृक्ष विशेष, एक बछ-नागका पौदा। यह सींगियासे मिलता अपनी जड़में विष रखता है।

कालाम्र (सं० पु०) काल आम्रो यत्र, बहुव्री०। द्वीप-विशेष, एक टापू।

"[illegible] कालाम्रीयश्च।" (पाणिनि [illegible])

कालाया (सं० स्त्री०) धनु, धनू।

कालायन (सं० त्रि०) कालेन निर्वृत्तम्, काल अञ्। समयजात, वक्तपर पैदा।

कालायनि (सं० पु०) शाक्यसिंहके एक शिष्य।

कालायनी (सं० स्त्री०) दुर्गा।

कालायस (सं० क्ली०) कालञ्च तत् अयश्चेति, काल-अयस् टच्। "अयोऽश्मनः [illegible]" पा ५।४।९४। १ काला लोह, कोई लोहा। २ लोह, लोहा। लौह देखो।

कालायसमय (सं० त्रि०) कालायस मयट्। काल लौह निर्मित, लोहेका बना हुआ।

कालावडक (सं॰ पु॰) वृक्षविशेष, एक पेड़।

कालावधि (सं॰ पु॰) नियत समय, मुकरर वक्त।

कालाव्यवाय (सं॰ पु॰) समयके अन्तरालका अभाव, वक्तके वक्फ़ेकी अदम मौजूदगी।

कालाशुद्धि (सं॰ स्त्री॰) कालस्य कर्मयोग्यसमयस्य अशुद्धिः, ६-तत्। ज्योतिषशास्त्रोक्त शुभकर्मका बाधक समय विशेष, रद्दी या नापाक रखका वक्त।

अकाल देखो।

कालाशोक (सं॰ पु॰) बौद्धराज विशेष, बौद्धोंके एक राजा।

कालाशौच (सं॰ क्ली॰) कालव्यापि अशौचम् मध्यप॰। पितामाता प्रभृति महागुरुका मृत्यु होनेसे एक वत्सर पर्यन्त अशौच रहनेका विषय स्मृतिशास्त्रमें कथित है। उसीको 'कालाशौच' कहते हैं। कालाशौचके समय कई कर्तव्योंके पालनका नियम निर्दिष्ट है।

कालासुखदास (हिं॰ पु॰) अग्रहायण मासमें उत्पन्न होनेवाला धान्यविशेष, अगहनका एक धान।

कालासुहृत् (सं॰ पु॰) असून् प्राणान् हरति, असु-हृ-क्विप असुहृत् प्राणनाशकः, कालश्चासौ असुहृत् चेति, कर्मधा॰। १ प्राणनाशक, जान लेनेवाला। कालः भयानकः असुहृत् शत्रुः। २ भयङ्कर शत्रु, खतरनाक दुश्मन। कालस्य मृत्योः असुहृत् विनाशकः। ३ महादेव, शिव।

कालास्त्र (सं॰ क्ली॰) सद्यातक वाणविशेष, जानसे मार डालनेवाला तीर।

कालास्थाली (सं॰ स्त्री॰) १ पाटला वृक्ष। २ मुष्कक, मोखा।

कालाह्व (सं॰ पु॰) १ काकतुण्डी, घुंघची। २ काकतिन्दुक, कुचलेका पेड़।

कालि (हिं॰ क्रि॰ वि॰) १ कल्य, गये दिन। २ आगामी दिवस, आनेवाले दिन। ३ शीघ्र, जल्द।

कालिक (सं॰ पु॰) काले वर्षाकाले चरति, काल-ठञ्, के जले अलति पर्याप्नोति वा, क-अल् बाहुलकात् इकन्। १ क्रौञ्चपक्षी, किसी क़िस्मका बगला। २ नागराज विशेष, नागोंके एक राजा। (स्त्री॰) ३ कृष्ण चन्दन। (त्रि॰) ४ समयोचित, वक्तके मुवाफ़िक़। ५ कालसम्बन्धीय, वक्तके मुताल्लिक। ६ दीर्घकालस्थायी, बहुत दिन चलनेवाला। इस अर्थमें 'कालिक' शब्द प्रायः समाससे लगता है। यथा मासकालिक, अकालिक इत्यादि।

कालिकता (सं॰ स्त्री॰) समय, तिथि, ऋतु, वक्त, तारीख, मौसम।

कालिकसम्बन्ध (सं॰ पु॰) कालिकविशेषणता नामस्वरूप सम्बन्धविशेष, कालानुयोगिक विभु भिन्न वस्तु प्रतियोगिक सम्बन्ध, वक्तका जोड़। भिन्न कालस्थित वस्तुद्वयके साथ उक्त सम्बन्ध नहीं लगता। किसी किसी नैयायिकने कालिकसम्बन्धको विभुप्रातियोगिक सम्बन्ध कहा है। विभु पदार्थ भी कालिकसम्बन्धसे कालमें ही रहता है। महाकाल और कालोपाधि समुदाय कालिकसम्बन्धमें वस्तुका अधिकरण होता है।

कालिका (सं॰ स्त्री॰) कालो वर्णोऽस्त्यस्याः, काल-ठन् टाप्, यद्वा काल-ङीप् स्वार्थे कन्-टाप् ह्रस्वत्वञ्च। १ चण्डिका, काली। उनके नामकरण सम्बन्ध पर कालिकापुराणमें लिखा है,—"शुम्भ और निशुम्भ दैत्यके उत्पीड़नसे अत्यन्त पीड़ित हो इन्द्रादि देव हिमालय पर्वतमें गङ्गातीर्थके निकट पहुंच महामायाका स्तव करने लगे। महामायाने उनके स्तवसे सन्तुष्ट हो मातङ्गस्त्रीरूपमें वहां पहुंच कर पूछा—"तुम लोग किसकी आराधनाके लिये इस मातङ्ग आश्रममें आये हो?" देवीके पूछते ही उनके अङ्गसे एक देवीमूर्तिने आविर्भूत हो कहा कि 'देव शुम्भ और निशुम्भ दैत्यके अत्याचारसे उत्पीड़ित हो उनके निधनके उद्देशसे महामायाकी आराधना करने आये हैं' वह आविर्भूता देवी प्रथम कृष्णवर्णा रहीं। क्षण कालके पीछे उन्होंने फिर गौरवर्ण धारण किया। किन्तु कृष्णवर्णा प्रादुर्भूत होनेसे ही वह कालिका नामसे विख्यात हुयीं। वह उग्र भयसे रक्षा करती हैं, उसीसे पण्डित उन्हें उग्रतारा भी कहते हैं। उन्हींके प्रथम बीजका नाम तन्त्र है। मस्तकमें एकमात्र जटा रहनेसे उनका नाम एकजटा भी है। कालिकामूर्तिका ध्यान निम्नलिखित रीतिसे किया जाता है,—

"चतुर्भुजां कृष्णवर्णां मुण्डमालाविभूषिताम्।
खड्गं दक्षिणपाणिभ्यां बिभ्रतीन्दीवरं तथा॥
कर्त्रीं च खर्परं चैव क्रमाद्वामेन बिभ्रतीम्।
द्यां लिखन्तीं जटामेकां बिभ्रतीं शिरसा स्वयम्॥
मुण्डमालाधरां शीर्षे ग्रीवायामपि सर्वदा।
वक्षसा नागहारन्तु बिभ्रतीं रक्तलोचनाम्।
कृष्णवस्त्रधरां कट्यां व्याघ्राजिनसमन्विताम्॥
वामपादं शवहृदि संस्थाप्य दक्षिणं पदम्।
विन्यस्य सिंहपृष्ठे तु लेलिहानां शवं स्वयम्॥
साट्टहासां महाघोररावयुक्तां सुभीषणाम्।
चिन्तयेत्तां सदा देवीं कालिकां धृतिपूर्वकम्॥"

मतिमान् और सुविज्ञ लोगों द्वारा ध्यानके, चतुर्भुजा, दक्षिण ऊपरके हाथमें खड्ग एवं नीचेके हाथमें पद्म तथा वाम ऊपरके हाथमें कर्त्री (दाता) एवं नीचेके हाथमें खर्परधारिणी गगनस्पर्शी एक जटायुक्ता, मस्तक तथा कण्ठदेशमें मुण्डमाला एवं वक्षःस्थलमें सर्पहारभूषिता आरक्त नयना कृष्णवस्त्रपरिहिता कटिदेशमें व्याघ्रचर्मयुक्ता शवके हृदयपर वाम पद एवं सिंहपृष्ठपर दक्षिण पद विन्यासपूर्वक अवस्थिता चर्वणकार्यमें आसक्त, अट्टहासकारिणी और अतिभयङ्करा उग्रतारा सतत चिन्त्य है।

कालिका देवीकी आठ योगिनी होती हैं। उनके नाम हैं,—महाकाली रुद्राणी, उग्रा, भीमा, घोरा, भ्रामरी महारात्रि और भैरवी। कालिकाकी पूजाकाल उक्त अष्टयोगिनीयोंकी भी पूजा करना पड़ती है।

(कालिकापुराण)

२ कृष्णता, कालो आभापन। ३ वृश्चिकपत्र, बिछुआकी पत्ती। ४ क्रमश देयवस्तुका मूल्य, किश्तबन्दी। ५ धूमरी, कुहरी। ६ नूतनमेघ, बादल। ७ पटोलमाता, परवलकी लता। ८ रोमावली, रुआं। ९ जटामांसी। १० कोकजाति काक, मादा कौआ। ११ शृगालकी मादा गीदड़। १२ मेघश्रेणी, बादलकी कतार। १३ स्वर्णदोष सोनेका ऐब। १४ पुष्पकीट टपका कीड़ा। १५ मसी, स्याही। १६ काकोली नामक औषधविशेष। १७ श्यामापक्षी। १८ मद्य शराब। १९ कृष्णभटिका, कुबरा। २० कीटविशेष, एक कीड़ा। यह हिमालय पर्वत पर उपजती और लोम भिरा रखती है। सम्भयोग्य कार्यमें उक्त कीटको ही प्रशस्त है। २१ मांसिक वृद्धि, माहवार सूद। २२ पयोनिद एक वाणिज्यस्नाय रेखाविशेष जन्म बतलानेवाली चोड़की हाथकी चमकी रेखा। यह मध्य और कृष्ण होती है। क्रमानुसार आठ, सात या पञ्चम वर्षमें उक्त रेखा निकलती है। २३ कर्कटशृङ्गी, ककड़ासींगी। २४ वत्सवृष्ण, गुरचेका टुकड़ा। २५ कृष्णजीरक, काला जीरा। २६ वृश्चिकपत्र वृक्ष, बिछुआका पौधा। २७ पत्रा इलायची। २८ क्षीरकाकोलिका। २९ कवंडो लता, ककड़ीकी बेल। ३० कालाधार, एक काली कन्धी। ३१ मोलोकच मोलका पेड़। ३२ कर्णस्रोत विशेष, कानकी एक नस। ३३ आंखकी पुतली। ३४ दक्ष कन्या। ३५ मद, शुल्क। ३६ वृश्चिक, बिच्छू। ३७ चारवर्षकी कुमारी। ३८ योगिनीविशेष। ३९ वैश्वानरकी एक कन्या। ४० जैनमतानुसार चौथे पर्वतकी एक दासी। ४१ नदीविशेष एक दरया। त्रिरात्रि उपवासपूर्वक उक्त नदीमें स्नान करनेसे समुदाय पाप विनष्ट होते हैं,—

"कालिकायाश्च स्नात्वा कौशिक्यारुण्योस्तटे।
त्रिरात्रोपोषितो विद्वान् सर्वपापैः प्रमुच्यते॥" (भारत, वन, ८४ अ)

कालिकाख्य (सं० पु०) १ दानवविशेष, एक राक्षस। २ कृष्णचञ्चुविशेष काली चोंचवाला।

कालिकापुराण (सं० क्ली०) कालिकाया माहात्म्यादि-प्रतिपादकं पुराणम्, मध्यप०। एक उपपुराण। उसमें कालिका देवीका माहात्म्यादि वर्णित है।

कालिकाल (सं० क्ली०) पर्वतविशेष एक पहाड़।

कालिकाव्रत (सं० क्ली०) कालिकायाः प्रीत्यर्थं व्रतम्, मध्यप०। एक व्रत। अमावस्या तिथिको इसका अनुष्ठान करना पड़ता है। स्त्रियां इसको पालन करती हैं। भविष्योत्तरपुराणमें उक्त व्रतकी उत्पत्ति कथा और अनुष्ठान प्रणाली लिखी है। यथा—"किसी समय देवराज इन्द्र सभाभवनमें अप्सरोंका नृत्य देखते थे। उसी समय अध्यात्म देव दुर्वासा मुनि समुद्रको पुष्पाञ्जलि करने गये। इन्द्रने अपने मुकुटका एक पारिजात पुष्प उठा लिया और सूंघ कर किसी

ब्राह्मणको दे दिया। इसप्रकार इन्द्रके निकट अवस्थान हो ब्राह्मणने इन्हें अभिशाप किया था,—'तुम विडाल-रूप ग्रहणकर अन्त्यज जातिके गृहमें रहोगे।' तदनुसार इन्द्र मार्जाररूपसे किसी व्याधके घरमें रहने लगे। उधर शचीने इन्द्रका कोई अनुसन्धान न पा आहार निद्राको छोड़ा था। उन्होंने देवीसे उनका पता पूछा। देवीने ध्यानके बल इन्द्रको मार्जाररूप अवस्थित देख शचीसे उनकी मुक्तिके लिये उक्त शापदाता ब्राह्मणकी सेवा करनेको कहा था। शचीने यथाशक्ति परिचर्या द्वारा ब्राह्मणको परितुष्ट किया। उन्होंने इन्द्रका अप-राध मांगना कर उनकी मुक्तिके लिये शचीसे कालिका-व्रतका अनुष्ठान करनेको कहा। इसी प्रकार कालिका-व्रतकी उत्पत्ति हुयी। उसके अनुष्ठानकी प्रणाली नीचे लिखी है—शुद्ध कालकी किसी कृष्ण-चतुर्दशीको सङ्कल्प कर दूसरे दिन अमावस्याका स्वयं रात्रिभोजन, वाम हस्त द्वारा भोजन एवं मत्स्य, पिष्टक, रक्तशाक और अन्न भोजन परित्याग कर ६२ सधवा स्त्रियोंको खिलाना चाहिये। इसीप्रकार कुछ दिन व्रत आचरण पीछे किसी शुद्ध मङ्गलवारयुक्त अमावस्याको गृहके प्राङ्गणमें कदलीकाण्डसे गृह बना उसमें कालिका-मूर्ति स्थापन की जाती है। फिर अपराह्न, सन्ध्या अथवा रात्रिकालको यथाविधि पाद्य, अर्घ्य आचमनीय, गन्धपुष्प, धूप, दीप, तथा विविध नैवेद्य प्रभृति उप-करणसे देवीकी पूजा होती है। पूजा समाप्त होनेपर पिष्टक, मिष्टान्न, व्यञ्जन प्रभृति बलि किसी वनके मध्य देना चाहिये। इसप्रकार कालिकाव्रत करनेसे सत्वर कार्य सिद्धि होती है।"

कालिकामुख (सं० पु०) कालिकाया मुखमिव मुखं यस्य, बहुव्री०। एक राक्षस। (रामायण ३।२८ अ०)

कालिकाशाक (सं० पु०) कालशाक, नाड़ी।

कालिकाश्रम (सं० क्ली०) कालिकाया आश्रमम्, ६-तत्। विपाशा नदीतीरस्थ एक तीर्थ। महाभारतमें लिखा है कि उक्त तीर्थमें तीन रात्रि ब्रह्मचारी और जितक्रोध रहने पर भवयन्त्रणासे मुक्ति मिलती है—

"कालिकाश्रममासाद्य विपाशायां कृतोदकः।
ब्रह्मचारी जितक्रोधस्त्रिरात्रं मुच्यते भवात्॥" (भारत, अनु० २५ अ०)

कालिकास्थि (सं० क्ली०) नेत्रास्थिविशेष, आंखकी एक हड्डी।

कालिकेय (सं० पु०) कोई असुर जाति। वह दक्षकी कन्या कालिकासे उत्पन्न है।

कालिख (हिं० स्त्री०) कालिका, स्याही, कालौंछ। वह एक प्रकारकी बारीक बुकनी रहती है, जो धूयेंके जमनेसे वस्तुओंमें लगती है।

कालिगञ्ज—१ बङ्गदेशीय यशोहर अञ्चलके खुलने विभागका एक गण्ड ग्राम। वह अक्षा० २२°२७'१५" उ० और देशा० ८९° ४' पू०में यमुना एवं काकसियाली नदीके सङ्गमस्थल पर अवस्थित है। लोकसंख्या साढ़े पांच हजारसे अधिक है। वहां अच्छा बाजार लगता और खूब वाणिज्य चलता है। जानवरोंके सींगसे छड़ी बनानेका एक कारखाना भी है। २ बङ्गालके रंगपुर जिलेका एक ग्राम। वह ब्रह्मपुत्रके तीर अवस्थित है। आसाम आने जानेवालोंके ष्टीमर वहीं लगते हैं।

कालिङ्ग (सं० क्ली०) केन जलेन आलिङ्गतेऽसौ, क-आलिङ्गि कर्मणि घञ्। १ तरम्बुजविशेष, किसी किस्मका तरबूज। उसका संस्कृत पर्याय—कालिन्दक, कृष्णबीज और फलवर्तुल है। वह शीतल, मलरोधक, मधुररस, पाकमें मधुर, गुरु, विष्टम्भि, अभिष्यन्दकारक, कफ एवं वायुवर्धक और दृष्टिशक्ति, शुक्र तथा पित्त-नाशक होता है। पक्कफल पित्तवृद्धिकारक, उष्ण, क्षार और कफ एवं वायुनाशक है। पत्र तिक्त और रक्तस्थापक होता है। (भावप्रकाश) (पु०) २ भूमि-कर्कोद, एक कुम्हड़ा। ३ हस्ती, हाथी। ४ सर्प, सांप। ५ कीटविशेष, एक कीड़ा। ६ कुटज, एक पेड़। ७ इन्द्रयव। (त्रि०) ८ कलिङ्गदेशजात, कलिङ्ग मुल्कमें पैदा हुआ। ९ कलिङ्गदेशके राजा।

"प्रतिजग्राह कालिङ्गः तमस्त्रैर्गजसाधनः।
पक्षच्छेदोद्यतं शक्रं शिलावर्षीव पर्वतः॥" (रघु ४।४०)

कालिङ्गक, कालिङ्ग देखो।

कालिङ्गमान (सं० क्ली०) कालिङ्गदेशप्रचलित मान-भेद, कलिङ्ग मुल्ककी तौल। यथा—१२ सर्षपका यव, २ यवकी गुञ्जा, ६ गुञ्जाका वल्ल। ८ या ७ गुञ्जाका माष, और ४ माषका शाण होता है। (भावप्रकाश)

कालिङ्गिका (स० स्त्री०) कालिङ्ग-ङीप् स्वार्थे कन् टाप् अत इत्वम्। त्रिवृत्, निसोत।

कालिङ्गी (स० स्त्री०) कालिङ्ग-ङीष्। १ राजकर्कटी, किसी प्रकारकी ककड़ी। २ कलिङ्गदेशोद्भवा स्त्री, कलिङ्ग मुल्ककी औरत। ३ एक नदी।

कालिज (अं० पु० College) १ विद्यालय पाठशाला, बड़ा मदरसा। इसमें उच्च शिक्षा दी जाती है।

कालिज (हिं० पु०) पक्षिभेद, एक चकोर। यह हिमालयमें होता है।

कालिञ्जर (कालञ्जर)—युक्तप्रदेशके बांदा जिलेका (बुन्देलखण्डके अन्तर्गत) एक नगर। यह अक्षा० २५° १' उ० तथा देशा० ८०° ३२' ४५" पू० में बांदा नगरसे १६ कोस दक्षिण विन्ध्याचलके अन्तर्गत एक शाखा पर्वत पर अवस्थित है। पर्वतका [illegible] है। निम्नस्तरमें आज नगर स्थापित है। कालिञ्जर आध कोस विस्तृत और ऊंचे और प्राचीर वेष्टित है। नगर भूमिसे ११० हाथ ऊंचा होगा। लोकसंख्या ४ हजारसे कम है। तथापि [illegible] पवित्र हैं [illegible] भी कम नहीं दीख पड़ती। यहां पुलिसका थाना, डाक बंगला बाजार विद्यालय और औषधालय विद्यमान है।

कालिञ्जर अति पुराकालसे महातीर्थ माना जाता है। रामायण (उत्तरका० ५८ स०), महाभारत (वन० ८५ अ०) हरिवंश (२१ अ०) और गरुड़, ब्रह्माण्ड, स्कन्द पद्म प्रभृति पुराणोंमें इस महातीर्थका उल्लेख मिलता है।

पद्मपुराणीय कालञ्जर माहात्म्यमें लिखा है—

"[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]" (१५ अ०)

दो कोस विस्तृत इस शैल पर [illegible] (शिवका) मन्दिर है। शिवलिङ्गविशिष्ट यही कालञ्जर मूर्ति दर्शन कराता है। गुहाके दक्षिण भागमें कालञ्जर क्षेत्र अवस्थित है। [illegible] भूमण्डलमें दूसरा नहीं। यहां सेवन तीर्थका फल और पुण्य मिलता है।

मुसलमान इतिहास लेखक फरिश्तेके मतानुसार ई० ७वीं शताब्दको केदार नामक किसी व्यक्तिने कालिञ्जर स्थापन किया था। मुसलमानोंके इतिहासमें लिखा है कि गजनी आक्रमण करनेको जाते समय कालिञ्जरके राजाने लाहोरके राजा जयपालको साहाय्य दिया। १००८ ई० को सुलतान महमूदने जब दूसरी बार भारत आक्रमण किया, तब आनन्दपालके साथ पिशावरमें एक युद्ध हुआ। उसमें कालिञ्जरके राजा आनन्दपालको छोड़ कर चले गये। १०२१ ई०को कालिञ्जरराजने कन्नौजके राजाको पराजित किया। १०२३ ई०को महमूद गजनवी कालिञ्जर पर चढ़े थे, किन्तु अन्तको सन्धि करके लौट गये। १२०२ ई०को महम्मदगोरीके प्रतिनिधि कुतुबउद्दीनने कालिञ्जर जीत यहां मसजिद आदिको निर्माण कराया। कुछ दिनके मध्य ही यह फिर हिन्दुओंके अधिकारमें चला गया। १२५१ ई०को नासिर नसरत-उद्दीन् महम्मदने इसे जय किया था। किन्तु प्रस्तरलिपिके प्रमाणसे मालूम पड़ता है कि उसके पीछे फिर कालिञ्जर हिन्दुओंके हाथ लगा। १५३० ई० को सम्राट् हुमायूंने कालिञ्जर आक्रमण कर १२ बरस तक घेरा डाला था। हुमायूंके भारतसे चले जाने पर १५४५ ई० को सम्राट् शेरशाहने फिर कालिञ्जर अवरोध किया। २२वीं मईको शेरशाहको तोपका गोला पहाड़से लग वापस आ उनके बारूदखानेमें गिरा था। उससे एक अग्निकाण्ड उपस्थित हुआ। शेरशाह पास ही थे। वह उसी अग्निकाण्डमें जल गये। उसीसे उनका मृत्यु भी हुआ। मृत्युयन्त्रणा भोग करते ही उनको संवाद मिला कि दुर्ग मुसलमानोंके हाथ लगा था। उन्होंने ईश्वरको धन्यवाद दिया और उसी समय उनका प्राणवायु निकल गया। २४वीं मईको शेरशाहके पुत्र जलालखान् [illegible] कालिञ्जरमें सिंहासन पर अभिषिक्त हुये। १५७० ई० को यह [illegible] सरकारके अधीन किया गया। उसके पीछे कालिञ्जर बीरबल राजाको जागीरकी भांति अर्पित हुआ। कुछ दिन पीछे [illegible] बुन्देलोंके हाथ आया था। [illegible] बुन्देलोंका यहां अधिकार रहा।

बुन्देला वीर छत्रशालके मरने पर पन्नाके अधिपति हरदेवने उसे अधिकार किया।

पन्नाके राजवंशका बहुत दिन तक कालिञ्जर पर अधिकार रहा था। फिर कायमजी नामक किसी राजवंशीय अनुचरने कालिञ्जरको अपने अधिकारमें कर लिया। महाराष्ट्रोंके प्राधान्य समय बांदेके नवाब अली बहादुरने दो वत्सर काल कालिञ्जर अवरोध किया था। किन्तु उन्हें जयलाभ न हुआ। उसके पीछे वह अंगरेजोंके अधिकारमें पहुंचा था। अङ्गरेजोंने कायमजोके वंशके किसी व्यक्ति पर उक्त स्थानका कर्त्तृत्वभार डाल दिया। उनका नाम दरयाव सिंह था। उन्होंने अङ्गरेजोंकी अधीनता न मानी। १८१२ ई०को अङ्गरेजोंने उन्हें दबानेके लिये सेना सह करनल मार्टिण्डेलको भेजा था। उन्होंने नगर आक्रमण किया, किन्तु अधिकार न मिला। अवशेष दरयावसिंहने आत्मसमर्पण कर दिया। अङ्गरेजोंने उन्हें स्थानान्तरमें भूमि दे कालिंजरको अपने अधिकारमें रखा। सिपाही विद्रोहके समय अल्पसंख्यक अङ्गरेज सेनाने दुर्गकी रक्षा की थी। १८६६ ई० को उक्त दुर्ग तोड़ डाला गया। कालिंजरका दुर्ग बहुत प्रसिद्ध था। आल्हामें लोग गाया करते हैं,—

"किला कालिंजरका मालत है, बैठक सोहै ग्वालियर द्वार।"

पहले कालिञ्जर चारो ओर प्राचीर-वेष्टित था। प्रवेशके लिये चार द्वार रहे। उनमें आजकल केवल तीन देख पड़ते हैं। उनके नाम कामता फाटक, पन्नाफाटक और रेवाफाटक हैं। पहले वहां एक सुदृढ़ दुर्ग था। आज भी उसका कुछ कुछ ध्वंसावशेष देख पड़ता है। उक्त दुर्ग बनानेके लिये पहाड़ खोद कर टेढ़ी राह निकाली गयी थी। दुर्गमें प्रवेशके लिये सात द्वार हैं। उनमें आलम दरवाजा प्रथम है। उसे औरङ्गजेब बादशाहने बनवाया था। द्वारके ऊपर मुहम्मद मुराद द्वारा प्रदत्त १०८४ हिजरी (१६७३ ई०) को उत्कीर्ण शिलालिपि है। उससमय औरंगजेबने दुर्गकी मरम्मत करायी थी। उक्त द्वारसे काफिर-घाटकी राह द्वितीय द्वार गणेश फाटकमें जाना पड़ता है। उसके आगे चण्डी दरवाजा नामक तृतीय द्वार है। वहां दो द्वार एकत्र लगे हैं। उसकी चारो ओर चार बुर्ज हैं। इसीसे उसको चौबुर्ज दरवाजा कहते हैं। यहां ११८८, १३०२, १५८० और १६०० संवत्‌की खोदित शिलालिपि मिलती है। उक्त द्वारके पार्श्वमें प्रस्तरखण्ड है। उस पर एक शिलालिपि उत्कीर्ण है। आज भी समझ नहीं पड़ता यह किस अक्षरमें लिखी है। सुतरां यह भी किसीको मालूम नहीं उसमें क्या लिखा है? बुध नामक किसी व्यक्तिने वहां एक मठ बनाया था। उक्त प्रस्तर उसी मठका अंशमात्र है। चतुर्थ द्वारका नाम बुधभद्र है। उसे स्वर्गारोहण भी कहते हैं। वह बहुत ही दुरारोह है। यहां १५८८ विक्रम संवत्‌की (१५३१ ई०) एक शिलालिपि है। निकट ही भैरवकुण्ड* है। पर ऊंची राहसे उस कुण्ड पर जाना पड़ता है। कुण्ड प्रायः ८० हाथ लंबा और ३० हाथ चौड़ा है। पहाड़के पत्थर काट यह कुण्ड बनाया गया है। उक्त स्थानसे प्रायः २० हाथ ऊंचे भैरवकी प्रकाण्ड मूर्ति है। मूर्तिके अधोभागमें पहाड़ काटकर एक गुहा बनायी गयी है। गुहाका तलभाग कुण्डके साथ समतल पड़ता है; सुतरां कुण्डका जल ग्रीष्म व्यतीत सकल समय गुहाके अभ्यन्तर पर्यन्त फैल जाता है। ग्रीष्मके समय गुहाका अभ्यन्तर बहुत शीतल रहता है। गुहाके भीतर खोदितलिपि देख पड़ती है। उसमें वासिवर्मदेव, योगामदेव, सहिला, यशोधन प्रभृति नाम उत्कीर्ण हैं। यशोधन नामके नीचे ११८२ संवत् लिखा है। गुहायों पर पर्वतमें अमणकी मूर्ति देख पड़ती है। भैरवकुण्डसे नीचे उतर कुछ दूर जाते ही हनूमान्-दरवाजा मिलता है। उसी स्थानपर हनुमान् कुण्ड है फिर पर्वतके गात्रमें हनू-मानकी मूर्ति भी खोदित है। वहां अनेक प्रस्तरमूर्ति देख पड़ती हैं। किन्तु अधिकांश कालके प्रभावसे बिगड़ गयी हैं। उक्त स्थानसे अल्प कुछ ऊपर चढ़ने पर काली, चण्डिका, शिव, पार्वती, गणेश, नन्दी और शिवलिंग की मूर्ति मिलती हैं।

---

* कालञ्जरमाहात्म्यमें भवषि उक्त कुण्डका नाम सोमकुण्ड है—
"माण्डव्य भैरवं द्वारा कृता चैव प्रदक्षिणम्।
गोपाकदम्बजी बाला पुनर्जन्म न विद्यते॥" (११९९)

इसी स्थान पर कीर्तिवर्मा और मदनवर्माका नाम खोदित है। इसके आगे थोड़ी दूर चलने पर पाँचवाँ द्वार लाल दरवाजा है। इसी स्थान पर चंदेलोंके समयकी दीर्घ शिलालिपि लगी है। द्वारकी पश्चिम दिक् की ओर कुण्डके उपरि भागमें भैरवकी प्रकाण्ड मूर्ति है। दो हाथों दूसरी मूर्ति है—दो भारवाहियोंके स्कन्ध पर भार है—सम्पूर्ण दो कलश हैं। फिर उसके आगे को सप्तम द्वार बड़ा-दरवाजा है। इसे बड़ा दरवाजा भी कहते हैं। इस स्थान छोड़नेसे सीतारामकी शय्या मिलती है। पर्वत काट कर एक छोटा घर बनाया गया है। उस घरके अभ्यन्तरमें एक चारपाई और तकिया पत्थर पर खुदा है। प्रवादानुसार रामने सीता को यहाँसे गुफा यहीं ला कर क्लान्ति मिटायी थी। इस घरकी अभ्यन्तरस्थ शिलालिपि पढ़नेसे मालूम पड़ता कि यह ई० चतुर्थ शताब्दीको बनाया गया। पाण्डुकुण्ड गोलाकार जलाशय है उसका व्यास ८ हस्तमात्र है। ऊपर पहाड़से सर्वदा जल टपका करता है। सीताशय्या पार होनेसे पातालगङ्गा को पथ है। कार्लाइलसाहबने उसका पातालगङ्गा नाम लिया है। पातालगङ्गा एक गुफा है। इसमें जल रहता है। यह २६ हस्त दीर्घ और १२ हस्त प्रशस्त है। इसमें उतरना कुछ कठिन है। यहाँ भी स्थान स्थान पर खोदितलिपि विद्यमान है। इसमें कहीं ११६८, कहीं ११६६ और कहीं ११८० संवत् लिखा है। पातालगङ्गाके आगे पाण्डुकुण्ड मिलता है। फिर सीतारामके निकट सीताकुण्ड है।* दूर्णाकारसे इसमें उतरते हैं। इस कुण्डके उपरिभागमें एक मूर्ति है। वह स्कन्ध पर भार धारण कर बैठी है। सामने जो एक टीकरी है। इसमें ११८० संवत् खोदित है। पाण्डुकुण्डके उत्तरपूर्व दिक् एक निम्नभूमि है। उसमें एक जलाशय भी बनाया गया है। जलाशयको चारों ओर सोपानावली है। इसको "बुढ़िया तलाव" कहते हैं। इसके जलसे अनेक रोग अच्छे हो जाते हैं। कामन्दकमाहात्म्यमें यही उपदेश कहा गया है। दुर्गकी दक्षिणपूर्व दिक् एक फाटक है। उसका नाम पन्नादरवाजा या बंधकदरवाजा है। आज कल वह बन्द है। उसके पास कामता और रेवा नामक दूसरे दो फाटक हैं। पर्वतके निम्नभागमें भी कालिञ्जर नगर विस्तृत है। इस द्वारसे उस भागमें प्रवेश करते हैं। पन्नाफाटकको उत्तर और प्राकारके नीचे एक कुण्ड है। इसे भैरवकुण्ड कहते हैं। कुण्डके ऊपर भैरवकी प्रकाण्ड मूर्ति है। उस स्थानमें ११८६ संवत्‌की शिलालिपि देख पड़ती है। पाण्डुकुण्डके उत्तर पूर्व दिक् पथ है। इसमें बुढ़ियातालाबको जाते हैं। कुछ आगे बढ़नेपर 'सिद्धकी गुफा' 'भगवान्‌शय्या' और 'पानीका अमान' स्थान मिलते हैं।

वास्तविक या 'सिद्धकी गुफा' एक स्थानविशेष है। यहाँ लोग श्राद्धपिण्डादि करते हैं। राजा नटिहासिंहकी एक संस्कृत शिलालिपि इस स्थानमें मिलती है। यहाँ भगवान् रामचन्द्र और सीताकी प्रस्तरनिर्मित शय्या है। 'पानीका अमान' भी एक स्थान है। पेटके बल छोटे द्वारसे इसमें प्रवेश करना पड़ता है। चार स्तम्भके ऊपर इसकी छत पड़ी है। यहाँ मृगधार नामक दूसरा स्थान भी है। पहाड़में पत्थर काट कर सात मृगकी आकृति बनायी गयी है। इसीसे उसको मृगधार कहते हैं। कहते हैं कि किसी समय सात ऋषिपुत्र गुरुकी आज्ञा न माननेसे मृगपक्ष हुए थे। प्रथम उन्होंने दशार्ण वनमें व्याध हो जन्म लिया। फिर परजन्ममें वह कालिञ्जरके मृग बने। मृगजन्मके पीछे उन्होंने क्रमान्वयसे शरद्वीपमें राज हंस, मानसरोवरमें हंस और कुरुक्षेत्रमें ब्राह्मण हो जन्मग्रहण किया। उसीसे वह मुक्त हुए। कालिञ्जरको मृगमूर्ति उन्हींको प्रतिकृति है। मृगधारमें भी एक

* "[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]"
([illegible])

* "कालञ्जर" [illegible]
[illegible]
[illegible]"
([illegible])

सरोवर खोदा गया है। पहाड़से उसमें दिनरात बूंद बूंद पानी टपका करता है। कोटतीर्थसे उसमें जल जाता है।

दुर्गके मध्य कोटतीर्थ नामक एक सरोवर है। कालञ्जरमाहात्म्यमें यही कोटीतीर्थ नामसे वर्णित है। कोटीतीर्थमें स्नान करनेसे कोटि जन्मका पाप छूटता है।* सरोवरमें उतरनेके लिये प्रशस्त सोपानावली है। किन्तु उसमें सकल समय जल नहीं रहता। कोई बड़ी भारी वृष्टि हो जानेसे कुछ दिन जल देख पड़ता है। सरोवरको चारो ओर नानाविध प्रस्तरखण्ड पतित हैं। उनमें अनेक शिलालिपि उत्कीर्ण देख पड़ती हैं। लेख अनेक स्थानोंमें मिट गये। सुतरां आजतक उनका उद्धार नहीं हुआ। सरोवरके पार्श्वमें उपरिभागपर प्रस्तरभवन और अन्यान्य गृह बने हैं, वह अत्यन्त पुरातन समझ पड़ते हैं। स्थान स्थानपर संस्कार भी किया गया है। वहां भी बहुविध पुरातन खोदित लिपि देख पड़ती हैं। कोटीतीर्थसे पश्चिमकी बैठक और अमानसिंहका महल छोड़ दक्षिणपश्चिम नीलकण्ठ जानेका पथ है। पथमें एक फाटक लगा है। फाटक पार होनेसे प्रकृतिकी अपूर्व शोभा देख पड़ती है। पर्वत उधरसे असमतल हो बिलकुल नीचेको झुक गया है। जहांतक दृष्टि जाती, वहांतक अपूर्व शोभा देखाती है। पहाड़के नीचेसे बांदा नौगांवकी राह देखने पर मनमें आता, मानो उपवीतका गुच्छ पड़ा देखाता है। अदूर ही श्यामल शस्यपूर्ण प्रशस्त भूखण्ड नील नभस्थलमें जाकर मिल गया है। बीच बीच छोटे छोटे पहाड़ हैं। कहीं निर्झरिणी और कहीं स्रोतस्वती सूर्यातपमें रौप्यमय हो झरझरा रही है। क्या ही सुन्दर प्रकृतिकी अपूर्व शोभा है। उपरि उक्त फाटक पार होनेसे उस पथमें दूसरा फाटक मिलता है। उससे आगे बढ़नेपर कवि तुलसीदास और जैन तीर्थंकरकी प्रस्तरमूर्ति देख पड़ती है। वाम ओर पहाड़में दूसरी कई मूर्ति हैं। स्थान स्थानपर शिलालिपि उत्कीर्ण है। मुसलमानोंके शासनसमय वहां एक गृह बना था। कमईका काम होनेसे अनेक लेख अदृश्य हो गये हैं। कुछ दूर आगे जानेसे जटाशङ्कर, शिवसागर और तुङ्गभैरवकी मूर्ति है। वहां कई गुहा भी हैं। कई स्थानमें प्रस्तर पर कितना ही लिखा है। किन्तु उसका अल्प मात्र पढ़ा गया है। कहीं "चैत सुदी ८, सन् ११८२ संवत् नरसिंह ब्रह्मनके पुत्रने वामदेवकी मूर्ति प्रतिष्ठित की है," कहीं "जेठ सुदी ८, ११८२ संवत् दीक्षित पृथ्वीधर" और कहीं "श्रीकीर्तिवर्मा देव और सोमेश्वर देवगणको प्रणाम करते हैं" लिखा है। तुङ्गभैरवके एक स्थान पर "मदनवर्माके अनुचर सोढ़ल, सोढ़लके पुत्र महायाणिक, उनके पुत्र वत्सराजने लक्ष्मीदेवीकी मूर्ति स्थापन की, कार्तिक सुदी सनीचर संवत् ११८८" लिखित है। इसीप्रकार दूसरा भी कितना ही लेख है। निकट ही नीलकण्ठका मन्दिर है। पहाड़के नीचेसे उस मन्दिरकी अपूर्व शोभा देख पड़ती है। वहां एक गुहा है। गुहाके सम्मुख अष्टकोण प्राङ्गणकी चारो ओर प्रस्तरके स्तम्भ हैं। स्तम्भोंके निर्माण-कौशलमें अति चमत्कार दिखलाया गया है। उनके उपरिभागमें विष्णुकी एक चतुर्भुज मूर्ति स्थापित है। स्तम्भ अष्टकोण मण्डपकी अष्ट दिक् अवस्थित हैं। लोगोंके कथनानुसार उपरि उपरि स्तम्भोंकी सात श्रेणी रहीं, किन्तु आजकल एक मात्र देख पड़ती है। उक्त गुहाके अभ्यन्तरमें नीलकण्ठ महादेवकी मूर्ति है। गुहाके बाहर बहुविध शिल्पकार्य होनेका प्रमाण मिलता है। किन्तु वह समस्त चूनेके काममें छिप गया है। प्रवेशद्वारके पार्श्वमें हरपार्वती और गङ्गायमुनाकी मूर्ति है। शिवलिङ्ग गाढ़ नीलवर्णके प्रस्तरसे निर्मित है। उसकी उच्चता तीन हस्त होगी। नीलकण्ठदेवके तीन चक्षु हैं। स्थान देखनेसे युगपत् भय और भक्तिरसका उद्रेक हो उठता है। उक्त नीलकण्ठ देव ही कालिञ्जरके अधिष्ठात्री देवता हैं। कहनेकी आवश्यकता

---

* "नीलकण्ठो यत्र देवो भैरवश्चैव नायकः।
कोटीतीर्थं यत्र तीर्थं सुनिर्मलं न संशयः॥
कोटीतीर्थे नरो स्नात्वा पूजयित्वा महाशिवम्।
कोटीजन्मार्जितात् पापान्मुच्यते नात्र संशयः॥
कोटीतीर्थं च संस्नाय अश्वमेधाद्भवेत् फलम्।"

(कालञ्जरमा० ११०—१२)

नहीं—जिनमें दूरसे कमानों तीर चला चला कर उनकी पूजा करते हैं। नीलकण्ठ मन्दिरके वाम ओर एक प्रशस्त पथ है। उसमें बहुसंख्यक लिङ्गमूर्ति प्रतिष्ठित है। यह पथ नीलकण्ठका मन्दिर घेर ऊपर दिक्‌को चला गया है। मन्दिरके स्तम्भोंके मध्य मध्य भूमिमें प्रस्तरखण्ड पर खिलन-की चिह्न देख पड़ता है। फिर उसमें बहुत कुछ यात्रियों द्वारा खोदित है। बाहर स्थान स्थान पर भगवान्‌के दश अवतार, ब्रह्मा, कन्दर्पको प्रभृतिकी अनेक मूर्ति भग्नावस्थामें इधर उधर पड़ी हैं। नीलकण्ठका मण्डप छोड़नेसे एक कुण्ड मिलता है। यह भी पहाड़ खोद कर बनाया गया है। इसका नाम स्वर्गारोहणकुण्ड* है। उसके दक्षिण पार्श्व पर्वतके कोनेमें प्रकाण्ड कालभैरवकी मूर्ति है। यह कुण्डके पास पर खड़ी है। मूर्ति प्राय १६ हस्त उच्च और ११ हस्त प्रशस्त है। नरमुण्डकी माला गलदेशमें जानुलम्बमान है। उसके कुण्डल है। उसकी कर्णमें सर्पके वलय पड़े हैं। गलेमें सर्पका हार है। अष्टादश हस्तमें अष्टादश अस्त्र हैं। उक्त महाकाल मूर्तिके पार्श्वमें स्तम्भ पर कालीकी एक मूर्ति खड़ी है। वन पर इस पर्वतके पदप्रान्तमें इन दोनों मूर्तियोंको देखनेसे मनमें युगपत् भक्ति और भयका सञ्चार होता है। उक्त मूर्तिके आगे ही दूसरी गुहा है। वहां जाना दुःसाध्य है। पहले इस मूर्तिके निम्नभागमें एक द्वार था। उसके भिन्नदुर्गमें लोग जाते थे। उस स्थानसे किसी सुरङ्गकी राह देवीके राज्यके भीतर पहुंचते थे। अंगरेज राजपुरुषोंने वह राह बन्द कर दी है। दुर्गके उत्तरदिक भागमें बाहर पर्वतके मध्यदेशमें १० हस्त दीर्घ और ६ हस्त उच्च एक क्षुद्र पार्श्वभित्ति है। उसमें भी लिङ्गमूर्ति वर्तमान है। उसका नाम वाणकाण्डेश्वर है। उसके पार्श्वमें एक सारङ्गकी मूर्ति है। वह भार लिये खड़ी रहती है। गंगीकी दोनों ओर दो कलसी सुहाती है। उक्त सारङ्गकको जिसपर गुप्तवंशीय राजप्रदत्त शिलालिपि लगी है। पर्वतके पार्श्वमें समतल भूमि पर भी एक जगह बैलों की मूर्ति और वैसी ही शिलालिपि है। इस स्थानका नाम सरभग है। कालिञ्जर पर्वतकी उत्तर ओर भूमिसे ३०-३५ हस्त ऊपर गङ्गासागर नामक एक सरोवर विद्यमान है। यह प्राय १०० हस्त दीर्घ और ८० हस्त प्रशस्त है। इसकी तीन ओर सोपान सीढ़ी समान बनी गयी है। एक ओर उतरनेको छोटी सिढ़ी और चारों ओर ऊंचा किनारा है। किनारे पर चक्रीकी भी सोपान बना है। वहां ८ हस्त उच्च अनन्तदेवकी मूर्ति देख पड़ती है।

यहां दूसरी भी देखनेकी बहुत चीजें हैं। उनमें चण्डीमण्डप शिवचौक रविचौक मातृकापिका शारदाकुण्ड, चन्द्रस्नान और सौमित्रचौक प्रसिद्ध है।

पर्वतके पश्चिमकोणमें अद्यापि गोरानाथका स्तम्भ चिह्न बना है।

"[illegible]" (कालञ्जरमाहात्म्य ८१)

कालिदास (सं० पु०) काल्या दास संज्ञायां कप्। भारतके अति प्रसिद्ध महाकवि। लोगोंको विश्वास है कि विक्रमादित्यकी सभाके नवरत्नमें कालिदास भी एकतम रहे। उनके सम्बन्धपर नाना स्थानोंमें नाना प्रकार प्रवाद प्रचलित हैं। उनमें केवल एक प्रवाद हम नीचे लिखेंगे।*

किसी विदुषी कन्याने विद्याबलसे बहु पण्डितोंको हरा प्रतिज्ञा की थी—'जिस पण्डितसे हम शास्त्रार्थमें हार जायेंगे, उसीको अपना पति बनायेंगी।' उनके पिता प्रतिज्ञाकी सुन एक एक कर बहु पण्डित लाये थे। किन्तु कोई कन्याको पराजय कर न सका। इस प्रकार बार बार पण्डित पराजय

---

* कालञ्जरमाहात्म्यमें इस कुण्डका नाम स्वर्गारोहण लिखा है। यथा—
"नीलकण्ठसमीपे तु स्वर्गं साक्षात् वरानने।
[illegible]" ([illegible])

* लिपिमें अक्षरानुसार [illegible] लिपि है। (Journal Asiatic Society of Bengal, Vol. XLVII. 1878 pt. I, p [illegible]) इसी प्रकार [illegible] भी कहे जाते हैं। (See Indian Antiquary 1878) नाना स्थानोंके प्रवाद पढ़नेसे जान न पड़ता है—जहां किसी समय विक्रम प्रचलित रहे, वहां कौन महाकवि कालिदासको अद्वितीय और उस राजाकी सभामें [illegible] (Martin's Eastern India, III p. 543.)

अनुसन्धान लगा उनके पिता बहुत विरक्त हो गये। सुतरां किसी गोमूर्खके साथ उस कन्याका विवाह करना एकान्त अभिप्रेत ठहरा। फिर वह चतुर्दिक् वैसे मूर्खको ढूंढने लगे। किसी स्थान पर उन्होंने देखा एक व्यक्ति वृक्षमें आरोहण कर जिस शाखा पर स्वयं बैठा, उसीका मूलदेश काटता था। वह उस पर बहुत सन्तुष्ट हुये और सोच गये,—'जो यह भी विवेचना नहीं कर सकता कि डाल कट जानेसे वह भी उसके साथ गिर पड़ेगा, उससे अधिक मूर्ख जगतमें कहां मिलेगा। अतएव यह उपयुक्त पात्र है।' सुतरां उन्होंने उसे कन्याके निकट ले जा कर उपस्थित किया। कन्याने उससे मौखिक प्रश्न न कर एक अङ्गुलिका संकेत दिखाया। वरने सम्भवतः उसकी अपेक्षा वीरता प्रदर्शन करनेको दो अङ्गुलि दिखा दीं। कन्याने फिर तीन अङ्गुलि देखायीं। उसके उत्तरमें वरने भी चार अङ्गुलि देखायी थीं। तब कन्याने उसे पांच अङ्गुलि देखायीं। वरने उन्हें प्रहारका सङ्केत समझ कन्याको मुष्टिका संकेत किया था। वरका उद्देश्य कुछ भी हो सकता था। किन्तु कन्याने वह सङ्केत देख अपनेको पराजित मान लिया ; फिर अति आनन्दसे पिताने उसको कन्या सौंप दी। विवाहके पीछे वासर-गृहमें स्वामी और स्त्रीने आलाप आरम्भ किया। स्वामीके मुखसे ग्राम्यशब्द सुन वह चमत्कृत हुयीं। फिर उन्होंने उसे अत्यन्त तिरस्कारके साथ गृहसे निकाला था। मूर्ख कालिदास स्त्रीके निकट उस प्रकार तिरस्कृत हो प्राणत्यागकी इच्छासे सरस्वतीकुण्डमें कूद पड़े। किन्तु उनका प्राण छूटा न था। मूर्ख कालिदास कवि कालिदास बन गये। सरस्वतीकुण्डके माहात्म्य अनुसार अवगाहन मात्रसे ही सरस्वतीने समीपस्थ हो वर दिया था। कालिदास वर पाते ही फिर स्त्रीके निकट जा पहुंचे। उन्होंने स्त्रीको गृहका अर्गल बन्द करते देख द्वार खोलनेके लिये अनुरोध किया। स्त्री स्वर सुनते ही स्वामीका प्रत्यागमन समझ गयी थीं। सुतरां उसने सहज ही द्वार न खोल प्रत्यागमनका कारण पूछा। कालिदासने [illegible] वाग्विशेषः" अर्थात् उन्हें कुछ खास तौर पर कहना है। स्त्रीने फिर पूछा—'क्या विशेष कथन है'। कालिदासने द्वारदेश पर खड़े ही खड़े अस्ति, कश्चित् और वागविशेषः तीनों पदोंमेंसे एक एक पद पहले बोल तीन काव्य श्लोको सुना दिये। 'अस्ति' पदके अनुसार 'अस्त्युत्तरस्यां दिशि देवतात्मा' प्रथम श्लोकसे आरम्भ कर सप्तदश सर्ग कुमारसम्भव, 'कश्चित्' पदके अनुसार 'कश्चित् कान्ता-विरहगुरुणा स्वाधिकारप्रमत्तः' प्रथम श्लोकसे आरम्भ कर मेघदूत और 'वागविशेषः' पदका वाक् शब्द ग्रहण पूर्वक 'वागर्थाविव सम्पृक्तौ' प्रथम श्लोकसे आरम्भ कर रघुवंश उन्होंने प्रणयन किया। उन्होंने रघुवंश और कुमारसम्भव दो महाकाव्य, मेघदूत नाम खण्ड काव्य, अभिज्ञान शकुन्तला, विक्रमोर्वशी, मालविकाग्निमित्र तीन नाटक और शृङ्गारतिलक, श्रुतबोध, पुष्पबाण-विलास, ऋतुसंहार प्रभृति ग्रन्थ बनाये हैं।

आजकल विशेष प्रमाण द्वारा प्रतिपन्न हुआ है—विक्रमादित्यके सभासद जिन नवरत्नोंका नामोल्लेख मिलता, वह सब एक ही समयमें न रहे। शिलालिपि और प्राचीन ग्रन्थसे भी एकाधिक विक्रमादित्यका नाम निकला है। किन्तु यह निश्चय नहीं—कौनसे विक्रमादित्यको सभामें कालिदास थे? फिर उक्त ग्रन्थोंका छन्दवन्धन, भाषा और कवितानैपुण्य देखते भी प्रथम छह ग्रन्थोंको छोड़ अपर पुस्तक महाकवि कालिदासके हस्तप्रसूत मालूम नहीं पड़ते। इनहीं कारणोंसे केवल प्रवाद पर निर्भर कर कालिदासकी जीवनी लिखी जा नहीं सकती।

कालिदासकी जीवनी लिखना और अन्धकार समुद्रमें कूद पड़ना एक बात है। उनके सम्बन्धमें विभिन्न लोगोंका विभिन्न मत मिलता है।

वल्लालविरचित भोजप्रबन्धके प्रमाणानुसार कालिदास उज्जयिनीनिवासी भोजराजके सभासद थे। उक्त भोजराजका राजत्वकाल ११०० ई० ठहरा है। (Journal Asiatique, Sept. 1844. p 250.)

भोजप्रबन्धमें कालिदासके समसामयिक कई पण्डितोंका नाम मिलता है। यथा—कर्पूर, कलिङ्ग, कामदेव, कोकिल, गोपालदेव, तारेन्द्र, दामोदर,

धनपाल प्रसन्नराघव-ग्रन्थकार, जयदेव बाणभट्ट, भवभूति भास्कर मयूर, मल्लिनाथ, महीश्वर, माघ, मुचुकुन्द, रामेश्वर प्रभृति। वेदान्ताचार्यकृत विक्रमगुणार्णव पढ़नेसे समझते हैं—किसी समय कालिदास, श्रीहर्ष और भवभूति भोजराजको सभामें वर्तमान थे। किन्तु विशेष प्रमाण मिले हैं कि उक्त समस्त पण्डित कालिदासके समकालीन न थे।

भारवि, माघ, भवभूति प्रभृति देखो।

बाणभट्टका हर्षचरित पढ़नेसे जो समझ सकते हैं कि कालिदास बाण और श्रीहर्षके बहुपूर्व विद्यमान थे। ज्योतिर्विदाभरण नामक एक ज्योतिषग्रन्थ कालिदासका रचित माना जाता है। उसमें लिखा है,—"धन्वन्तरि, क्षपणक, अमरसिंह शङ्कु वेतालभट्ट, घटकर्पर कालिदास, सुविख्यात वराहमिहिर और वररुचि विक्रमके नवरत्नोंमें हैं।* विक्रमने ८५ शक नृपतियोंको मार कलियुगमें अपना अब्द चलाया। हमने (कालिदास) ३०६८ कलि शताब्दके वैशाख मासमें इस ग्रन्थको रचना आरम्भ कर कार्तिकमासमें सम्पूर्ण किया।" फिर २०वें अध्यायके ११वें श्लोकमें कहा है,—"आज भी काम्बोज, गौड़, आन्ध्र, मालव और सौराष्ट्र देशमें लोग विख्यात महाम्बर विक्रमका गुण गाते हैं।"

पूर्वकथित भोजप्रबन्ध और ज्योतिर्विदाभरणको हमलोग प्रामाणिक ग्रन्थ मान नहीं सकते। कारण १, इतिपूर्व लिख चुके हैं कि नवरत्न विभिन्न समयके लोग थे। २ रचनाप्रणाली आलोचना करनेसे ज्योतिर्विदाभरण कालिदासका करनिष्पन्न समझ नहीं पड़ता। ३ ज्योतिर्विदाभरणका शेषोक्त वर्णना पढ़नेसे अनुमान करते हैं कि उसके रचित होनेसे बहु पूर्व विक्रमादित्य विद्यमान थे। फिर ज्योतिर्विदाभरणके समय विक्रमाब्द और विक्रमशकाब्दोंका प्रचार भी चारो ओर फैला था।

* विक्रम नवरत्नोंके [illegible] ज्योतिर्विदाभरण [illegible] का [illegible] वर्णन है।

जर्मन पण्डित लासनके मतानुसार कालिदास ई० द्वितीय शताब्दको समुद्रगुप्तको सभामें विद्यमान थे।* विलफोर्ड और विल्सन साहबने लिखा है कि कालिदास प्रायः १८०० वर्ष पूर्व वर्तमान रहे। जर्मन पण्डित वेबरने ई० २यसे ३यें शताब्दके मध्य कालिदासका आविर्भावकाल निर्णय किया है।† पीछे याकोबी साहबने कालिदासका ज्योतिषग्रन्थ पकड़ ठहराया है कि कालिदासको ग्रीक ज्योतिषशास्त्रका ज्ञान था। उनके अनुसार वह ३५० ई० से पहलेके‡ लोग हो नहीं सकते। ज्योतिषी केर्ण, भाऊदाजी, मोक्षमूलर प्रभृतिके मतमें—कालिदासके आविर्भावका काल ई० षष्ठ शताब्द था¶।

हमारे बङ्गदेशीय पुरातत्त्वानुसन्धित्सुगणमें अक्षय कुमार दत्तके मतानुसार ई० ३य शताब्दके मध्यभागके पीछे षष्ठ शताब्दके शेषभागके पहले और ऐतिहासिक [illegible]के मतमें ई० षष्ठ शताब्दको कालिदास विद्यमान थे। प्रधानतः देखते हैं कि पाश्चात्य पुराविदोंके मतमें कालिदास ई० षष्ठ शताब्दके लोग रहे। उनकी युक्ति यह है,—

उज्जयिनीराज हर्ष विक्रमादित्यने कवि मातृगुप्तके प्रति सन्तुष्ट हो उन्हें काश्मीर राज्य प्रदान किया था। फिर राजा विक्रमादित्य द्वारा कालिदासको अर्ध राज्य दिया जानेका भी प्रवाद है। अधिकन्तु पण्डितने राजतरङ्गिणीमें राजा मातृगुप्तको कवि बताया है। हर्षचरितके आरम्भमें प्रवरसेन और कालिदासका उल्लेख है। *प्रवरसेनने वितस्ता नदी पर एक वृहत्* सेतु निर्माण कराया था। कालिदासने उसी सेतुके उपलक्षमें "सेतुकाव्य" रचना किया। सेतुकाव्यके टीकाकार रामदासके भी मतमें कालिदासने सेतुबन्ध

* *Indische Alterthumskunde, II, p. 457, 1158-60.*

† Weber's Sanskrit Literature, p. 204

‡ Monatsberichte der Koniglick Preussischen Akademie der Wissenchaften zu Berlin, 1873 p. 554-556

¶ Kern's Brihat Samhitâ, p. 20 Bhâu Dâji in the Journal of the Bombay Branch Roy As. Soc, 1861, p. 19-20 207-200; Max Müller's India what can it teach us, p. 320

लिखा था। राजतरङ्गिणीके मतानुसार मातृगुप्त और प्रवरसेन समकालीन थे। मातृगुप्त प्रवरसेनको काश्मीर राज्य दे काशीवासी हुये। राघवभट्टने शकुन्तलाकी टीकामें मातृगुप्ताचार्यके कतिपय अलङ्कार श्लोक उद्धृत किये हैं। वह पढ़नेसे प्रधान कविके बनाये समझ पड़ते और कालिदासके लेखनी-प्रसूत कहनेसे भी अच्छे लगते हैं। प्रवरसेन तोरमाणके पुत्र थे। वज्रेन्द्रकी कन्या अञ्जनाके गर्भसे उनका जन्म हुवा। पहले तोरमाणके भ्राता काश्मीरमें राजत्व करते थे। (उन्होंने तोरमाणको बन्दी बना दिया।) हिरण्य और तोरमाणके मरने पीछे प्रवरसेनको प्रथम अधिकार मिला न था। इस बात पर झगड़ा लगा—कौन राज्यका प्रकृत उत्तराधिकारी हो। उस समय उज्जयिनीनाथ विक्रमादित्य (अपर नाम हर्ष) भारतवर्षके एकच्छत्र चक्रवर्ती थे। उन्होंने मातृगुप्तको काश्मीरका राज्य प्रदान किया। उक्त मातृगुप्त ही कालिदास थे। * मोक्षमूलरके मतमें तोरमाण ५०० ई० और प्रवरसेन ५५० ई० को विद्यमान रहे। † सुतरां कालिदास और विक्रमादित्यका विद्यमान रहना उसी समयके मध्य सम्भव था।

नहीं समझते उक्त मतोंमें कौन समीचीन है। मातृगुप्त और कालिदास दोनोंको एक ही व्यक्ति मान नहीं सकते। प्रथमतः किसी प्राचीन पुस्तकमें मातृगुप्त और कालिदास अभिन्न व्यक्ति नहीं लिखे गये हैं। राजतरङ्गिणीमें कवि मातृगुप्तके सम्बन्ध पर अनेक कथा लिखी हैं। किन्तु कल्हण पण्डितने उन्हें एकबार भी कालिदास नहीं लिखा। क्षेमेन्द्र-विरचित औचित्यविचारचर्चा, सुभाषितावली और सूक्तिकर्णामृत ग्रन्थमें कालिदास तथा मातृगुप्तके भिन्न भिन्न श्लोक उद्धृत हुये हैं। उक्त पुस्तकसमूहसे भी मातृगुप्त और कालिदास परस्पर भिन्न व्यक्ति समझ पड़ते हैं।

कर्पूरमञ्जरीप्रणेता वासुदेवने अपने ग्रन्थमें मातृगुप्तको अलङ्कार-रचयिता बताया है। सुन्दर मिश्रका नाट्यप्रदीप पढ़नेसे समझ सकते हैं कि मातृगुप्तने भरत-प्रणीत नाट्यशास्त्रकी विवृति बनायी थी। उक्त प्रमाणोंसे मातृगुप्त नामक एक स्वतन्त्र कविका होना स्पष्ट ही मालूम पड़ता है। अब देखना चाहिये—कालिदास, प्रवरसेन और हर्षविक्रमादित्यके समसामयिक थे या नहीं।

डाक्टर भाऊदाजी प्रभृति पुराविदोंने प्रधानतः हर्षचरितमें प्रवरसेन और कालिदासका उल्लेख देख उभयको समसामयिक ठहराया है। श्लोक यही हैं,—

> “कीर्तिः प्रवरसेनस्य प्रयाता कुमुदोज्ज्वला।
> सागरस्य परं पारं कपिसेनेव सेतुना॥ १४
> सूत्रधारकृतारम्भैर्नाटकैर्बहुभूमिकैः।
> सपताकैर्यशो लेभे भासो देवकुलैरिव॥ १५
> निर्गतासु न वा कस्य कालिदासस्य सूक्तिषु।
> प्रीतिर्मधुरसार्द्रासु मञ्जरीष्विव जायते॥ १६॥”

(किसी किसी मुद्रित पुस्तकमें “निर्गतासुरसंतस्य कालिदासस्य सूक्तिषु” पाठ है।)

उपरि उक्त श्लोक द्वारा इसी विषयका परिचय मिलता कि प्रवरसेन और कालिदास दोनों प्रसिद्ध कवि थे। किन्तु स्पष्ट मालूम नहीं पड़ता—उभय समकालीन थे या नहीं। राजा रामदास विरचित रामसेतुप्रदीप नामक “सेतुबन्ध” की व्याख्याकी प्रस्तावनामें लिखा है—

“इह तावन्महाराजप्रवरसेननिमित्तं महाराजाधिराजविक्रमादित्येनाज्ञप्तो निखिलकविचक्रचूडामणिः कालिदासमहाशयः सेतुबन्धप्रबन्धं चिकीर्षुः।”

राजा प्रवरसेनके निमित्त विक्रमादित्यकी आज्ञासे कालिदासने सेतुबन्ध नामक प्रबन्ध रचना किया।

राजतरङ्गिणीमें लिखा है कि प्रवरसेनको काश्मीरका राज्य मिलनेसे पहले ही हर्षविक्रमादित्यका मृत्यु हुवा था। † (राजतरङ्गिणी ३। २८८—२९०)

सुतरां विक्रमादित्यके आदेशसे प्रवरसेनके निमित्त कालिदास द्वारा प्राकृतभाषामें “सेतुबन्ध” का लिखा

---

* Dr Bhau Daji, Journal of the Royal Asiatic Society of Bombay, Vol VIII. p 244 50.

† Max Müller's India, what can it teach us, p. 316 किन्तु शिलालिपि द्वारा तोरमाण ५०० ई० के कुछ पूर्ववर्ती और उनके पुत्र मिहिरकुल ५१५-५३४ ई० के पूर्ववर्ती समझ पड़ते हैं। (Fleet's Inscriptionum Indicarum, Vol. III. p 10-11.)

* भाऊदाजी, मोक्षमूलर प्रभृति इस श्लोकको देख गये हैं।

† “विक्रान्तो स॰ दिवसाद मन्दद भूपति।
विक्रमादित्यमप्यौत्र कालधर्ममुपागतम्॥”
(राजतरङ्गिणी ३। २९०)

जाना सम्भवपर नहीं। रायदास ई० षोडश शताब्द के लोग थे। रामदास देखो। उनसे पूर्ववर्ती कृष्णनायने अपने विरचित राघवपाण्डवीय* टीकामें सूचनासे लिखा है,—

"श्रीमद्भवप्रवरसेनमुपेत्य नूतम्, देवी प्रसाद च चिरं कृष्णपार्थसंज्ञा।
व्याख्यामहे तदनुसार एवं सर्वे सर्गैस्तथामनवकवक्ष्यम्॥"

इस स्थानमें कृष्णनाथने राजा प्रवरसेनको ही 'सेतुबन्ध' रचयिता लिखा है।

औचित्यविचारचर्चा, सुवृत्ततिलक प्रभृति ग्रन्थ पढ़नेसे समझते हैं कि प्रवरसेन एक प्रसिद्ध कवि थे। क्षेमेन्द्रके दो श्लोक मनोनिवेशपूर्वक आलोचना करनेसे बोध होता कि बाणभट्टसे पूर्व राजा प्रवरसेन 'सेतुकाव्य' और कालिदासने काव्य तथा नाटककी रचनासे प्रसिद्धि पायी थी।

अब स्थिर हो गया कि मातृगुप्त और कालिदास विभिन्न व्यक्ति थे। कालिदासने सेतुबन्ध बनाया न था। इस पक्षमें भी कोई विशेष प्रमाण नहीं कि वह प्रवरसेन अथवा उपविक्रमादित्यके समकालीन थे। प्रवरसेन और विक्रमादित्य देखो।

फिर कालिदास किस समय विद्यमान थे? बाणभट्ट वाक्पति, सद्धर्मपुण्डरीकप्रणेता श्रीहर्ष, क्षेमेन्द्र वामन, जयदेव प्रभृति अनेक प्राचीन कवियोंने कालिदासका नामोल्लेख किया है। ५५६ शकको प्रदत्त चौलुक्यराज पुलिकेशीकी ताम्रशासनमें भी कालिदास और भारविका नाम मिलता है—

"येनायोजि नवेऽश्मस्थिरमर्थविधौ विवेकिना जिनवेश्म।
स विजयतां रविकीर्तिः कविताश्रितकालिदासभारविकीर्तिः॥"

सुप्रसिद्ध कुमारिलभट्टने तन्त्रवार्तिकमें कालिदासके शकुन्तलावर्णित "सतां हि सन्देहपदेषु" वचनको उद्धृत किया है।

एतद्भिन्न मोटम्यीय "सेंगुर" ग्रन्थमें कालिदासका नाम और उन तथा चालुक्योंको कविताओंमें रघुवंश तथा कुमारसम्भवका अनुवाद देख पड़ता है। पाश्चात्य पण्डितोंके मतमें हिन्दुओंने ३०० ई० कोई ग्रन्थेप का अवलम्बन किया था। अतएव यह असम्भव नहीं मालूम पड़ता कि हिन्दुओंके ग्रन्थोप जानेसे पहले कालिदास विद्यमान थे।

किसी किसी पाश्चात्य और देशीय पुराविद्के मतसे कालिदासके ग्रन्थमें होराशास्त्रीय कथा और उस शास्त्रके 'ग्रीक शब्द'का उल्लेख है। ग्रीकोंका होराशास्त्र ई० तृतीय शताब्दको सम्पूर्ण हुआ। अतएव उस शताब्दके पीछे भारतवासियोंने उस शास्त्र ग्रहण किया होगा।

जिस शास्त्रमें जातक यात्रिक और विवाह प्रभृति निरूपित हुआ, वराहमिहिरने उसको ही 'होराशास्त्र' कहा है। प्राचीन ग्रन्थसे 'होरा' शब्द न देख पड़ने भी उस शास्त्रका प्रतिपाद्य जितना ही मूल विषय रामायण, महाभारतादि अति-प्राचीन ग्रन्थमें लिखत है। ज्योतिष, होरा, जातक प्रभृति शब्द देखो। सुतरां यह स्वीकार किया जा नहीं सकता कि होराशास्त्रका प्रतिपाद्य मूल तत्त्व ग्रीक होराशास्त्र बननेसे बहुत पहले भारतवासी समझते हैं।

वराहमिहिरने यवनाचार्यों के ग्रन्थसे होराशास्त्रीय जितना ही विषय संग्रह किया था। वराहमिहिर देखो। इसमें यवनाचार्य वा यवनेश्वरप्रणीत 'षट्पञ्चाशिका' 'ताजिक शास्त्र', 'नयनचूडामणि' 'मीनराज जातक', 'यवनसार यवनहोरा' 'रमलामृत', 'रमल चन्द्रिका' 'वृद्धयवनजातक' 'होराजातक' प्रभृति कई संस्कृत ग्रन्थ लिखे हैं। वराहमिहिरने (बृहज्जातकमें) महोत्पल केशवार्क एवं मार्तण्डचिन्तामणिटीकामें विश्वनाथने यवनाचार्यके संस्कृत वचन उद्धृत किये हैं। एतद्भिन्न 'रोमकसिद्धान्त' नामक ज्योतिःशास्त्र संस्कृत भाषामें रचित प्राप्त होता है। ब्राह्मस्फुटसंहिता वायनराज भास्कराचार्य प्रभृति ग्रन्थमें और वराहमिहिर प्रभृति ज्योतिर्विदोंके बनाये पुस्तकमें रोमकाचार्यके संस्कृत वचन उद्धृत हुये हैं।

ऊपरि उक्त प्रमाण द्वारा बोध होता भारतवर्षीय ज्योतिर्विदोंने ताराशास्त्रके किसी किसी विषयमें संस्कृत भाषामें लिखित यवन एवं रोमकाचार्यके ग्रन्थसे

---

* सेतुबन्धका अपर नाम रावणवध वा दशमुखवध है।

† Weber's Sanskrit Literature p. 203

कालिदास नामके हिन्दीमें भी कई कवि हो गये हैं। उनकी कविता हृदयग्राही और मनोरञ्जक है।

कालिदासकी समालोचना।

युवा कवि कालिदासको अपनी उम्मेदवारी एक ऐसा देशमें करना पडी थी, जो सुन्दर और पर्वत, खाडी, मैदान तथा छोटी नदियोंसे परिपूर्ण था। कालिदास ब्राह्मण थे। इसी कारण वह युद्ध और राजनीतिसे अपनेको अलग रखते थे। हां, देशके साहित्यसे सम्बन्ध रखनेवाले युद्धविग्रहमें वह सम्मिलित थे। उन्हें क्या लिखना था? पूर्वावस्था और प्रकृति दोनों ही सुन्दर होती हैं। प्रकृति पदार्थोंका वर्णन करना युवा कविके लिये सबसे अच्छी चीज है। कालिदासने अपनी उम्मेदवारी ऋतुसंहार लिखनेमें बितायी। वास्तवमें उन्हें ऋतुवर्णन लिखनेका प्रलोभन शिलाफलकोंने दिया था। कारण देशमें चारो ओर जो शिलाफलक मिलते थे, उनसे प्रत्येकमें ऋतुवर्णन वर्तमान था। उन्होंने अपने मनमें विचारा—यदि वह सम्पूर्ण ऋतुवोंका वर्णन एक साथ लिख सकते, तो देशका बडा उपकार करते। इसीसे कालिदासने ऋतुसंहार लिखनेका काम अपने हाथमें ले लिया। भाषा परिमार्जित नहीं है। उसमें पुनरुक्ति, व्याकरण-लिखन प्रणाली और भाव सम्बन्धी त्रुटियां बहुत हैं। अंगरेजी कवि टामसनने "सिजन्स" नामक ऋतुवर्णनका एक ग्रन्थ लिखा है। उक्त ग्रन्थ ऐतिहासिक घटनावोंसे परिपूर्ण हैं। फिर स्थान स्थान पर टामसनने विभिन्न ऋतुवोंमें प्राचीन समयके दृश्य दिखानेकी चेष्टा की है। किन्तु कालिदासने अपने ग्रन्थ ऋतुसंहारमें कहीं इतिहासकी ओर ध्यान नहीं दिया है। उन्होंने ग्रीष्म ऋतुसे आरम्भ किया है। कारण उत्तरभारतमें ज्योतिषी वर्षाऋतुसे ही वर्षारम्भ करते है। यद्यपि उनकी प्रतिभा कवित्वपूर्ण और कुशाग्र थी, तथापि पूर्णरीतिसे परिमार्जित न थी, स्त्रीत्व वा प्रकृतिका सौन्दर्य उन्होंने भली भांति नहीं बताया। परन्तु उनका हृदय बहुत खुलखुला था। जहां दूसरे कुछ नहीं देखते, वहां उन्हें सुषमा देख पडती है। गहरी दृष्टिका पहला झड़ कीडा, घास और धूल सबको वहा ले जाता है। कालिदासने उस घासको कविकी दृष्टिसे देखा है। नाले घूम घूम कर बहते हैं। कालिदासने उनकी सांप जैसा चाल बड़े ध्यानसे देखी है, जो मेढ़कोंको डरा देता है। एक बात यही है। कालिदासकी आदि कविताका मनोंज्ञापन यह है कि उन्होंने स्त्रीसे अधिक प्रकृतिकी प्रशंसा की है।

फिर उन्होंने अपने देशके पुराण पढ़े, शिक्षा समाप्त की और अपना ध्यान रङ्गमञ्चपर लगा दिया। उनका दूसरा ग्रन्थ देशहितैषितापूर्ण एक नाटक है। विदिशा मालवका एक भाग है। कालिदासके प्रथम ऐतिहासिक ग्रन्थमें विदिशाका इतिहास परिपूर्ण है। मालवसे आगे वह भ्रमणको न गये थे। उन्होंने अग्निमित्रका इतिहास लिखा और नायिकाका नाम मालविका रखा है। उस समय मौर्यवंश पतित हो गया था। मालवदेश मगधमें मिला लिया गया था। उसी समय अग्निमित्र ब्राह्मणके आधीन विदिशा राज्य स्थापनका वर्णन कर उन्होंने मालवके लोगोंको प्रसन्न करनेकी चेष्टा की हैं। वास्तवमें अशोकके बौद्धराज्यका पतन और ब्राह्मणसाम्राज्यका अभ्युदय युवा कवि कालिदासके लिये एक अच्छा विषय बन गया। इस ग्रंथमें भी कालिदासने प्रकृतिके सौन्दर्यको अधिक अपनाया है। उन्होंने प्रायः इसप्रकारके वाक्य लिखे हैं। 'फूलदार पेड़ोंकी डालियोंका हिलना झूलना देख नाचनेवाली लड़कियां लज्जामें आ जाती हैं।' अनन्तर उनके भ्रमणकी परिसीमा बढती और "मेघदूत" में वह मालवसे आगे निकलते हैं। मालवकी पूर्व सीमासे वह उसकी चारो ओर घूमते, कई आवश्यक स्थान देख भाल पूर्वमें वह फिर उसमें पहुंचते और उत्तरमें उससे बहुत आगे निकल चलते है। किन्तु उनकी प्रीति अभी मानसिक है, वह अभी प्रकृतिकी बहुत प्रशंसा करते है। किन्तु उनकी भाषा बहुत परिमार्जित हो गयी है। और उनकी लेखनप्रणाली बहुत अधिक चित्तको आकर्षण कर लेती है।

उनकी कविताका भाव बदल जाता है। वस्तुओं और मानुषिक लालसावोंका वह अधिक विचार करते और मनुष्यके दुःखोंपर ध्यान नहीं देते। वह

अपने नायकोंके लिये केवल इतनी और किसी दिव्य या अर्धदिव्य पुरुषको अपने नाटकका नायक चुनते हैं। उनका दूसरा नाटक विक्रमोर्वशी है। इसमें हम पृथिवीसे बढ़कर आकाश पर पहुंच गये हैं। किन्तु उनका प्यार अभी स्वभाव है और प्रकृतिको प्रेमसा करना उनमें अभी कम नहीं हुआ है।

उनकी कविता पर दूसरा परिवर्तन पड़ता है। वेदोंसे वह प्रसन्न नहीं होती। वह अधिक उच्च और अधिक कल्पनाशील थे। इसलिये वह वेदोंको छोड़ देना चाहते हैं। वह अपनी उपासनामें प्रकाश खोजते और केवल अवलम्बन करते हैं। अब वह चाहते हैं कि अपने देवकी उचित प्रशंसा करें। उन्होंने पृथिवी और वायुके प्रत्येक दृश्यको अपनी भांति समझ बूझ लिया है। अब उन्हें आकाशकी ओर ध्यान देना है। मेघदूतमें जहां उन्होंने अपनी कविता समाप्त की थी, वहींसे वह प्रारम्भ करते हैं। हम इन्द्रपुरीसे ब्रह्मलोक और ब्रह्मलोकसे शिवलोक को पहुंच जाते हैं। उन्होंने कामदेवके भस्म होनेके बाद शिव सौन्दर्यका अच्छा वर्णन किया है। उसके पीछे उनकी प्रीति पारलौकिक हो गयी है।

पार्वती शिवसे मिलना चाहती है, शरीरसे नहीं—आत्मासे। देशके इतिहासमें ऐसी प्रीतिका भाव अज्ञात था। इसी अलौकिक प्रीतिसे उतारे कालिदासने अपने इष्टदेवका गुणगान किया है।

अबकी उन्होंने ऐहिक और पीछे पारलौकिक विषय लिखे हैं। पहली बात तो साधारण थी। उसका नैतिक उद्देश्य सन्देहपूर्ण था। फिर उनकी दूसरी बात लोगोंकी समझमें आती न थी। इसलिये उन्होंने अपनी शकुन्तलामें मानुषिक और दैवी भावोंके मिलानेकी चेष्टा कर दो पत्र लिखे, "जिनकी प्रशंसा समग्र जगत् मुक्त-कण्ठसे करता है। उनका शकुन्तला नाटक ऐहिक और पारलौकिक भावोंका मिश्रण है। शकुन्तला पृथिवी और स्वर्ग दोनोंसे सम्बन्ध रखती है। कुमारसम्भव और शकुन्तलामें उनका जो सौन्दर्य विचार बहुत बदल गया है। कुमारसम्भवमें कामदेव महादेवका ध्यान डिगा न सके और पार्वतीसे पीछे जाकर छिप रहे। इससे यही भाव निकलता है कि भौतिक सौन्दर्य दिव्य भावोंके सामने तुच्छ है। शकुन्तलामें भी वह उसकी उस कालमें पहुंच गये हैं, जहां पृथिवीकी कामिनी जा नहीं सकती।

परन्तु उनका अन्तिम और विशाल ग्रन्थ रघुवंश है। उसमें उन्होंने ईश्वरके अवतारोंका वर्णन किया है। इसमें कालिदासने वाल्मीकिसे सामना किया है। किन्तु कालिदास उनसे बहुत आगे निकल गये हैं। वाल्मीकिने केवल रामका ही वर्णन किया है। परन्तु कालिदासने उनके पूर्वपुरुषोंका भी वर्णन कर कई दिव्य गुणोंका परिचय दिया है। दलीपमें अधीनता, रघुमें शक्ति, अजमें प्रेम, दशरथमें राजोचित गुण और राममें इन समस्त दिव्य गुणोंका पूरा आभास पाया जाता है। इसी क्रमसे कालिदासके समस्त ग्रन्थ लिखे गये हैं। उनके देखनेसे मालूम होता है कि, कालिदासने अपने विचार धीरे धीरे बढ़ाये हैं। प्रकृत पदार्थोंके वर्णनसे आरम्भ कर उन्होंने अवतारोंका स्वरूप और ईश्वर तथा मनुष्यका सम्बन्ध दिखा दिया है।

अब यह विषय विचारणीय है—क्या उक्त सातों पुस्तक एकही मनुष्यके लिखे हैं। इसमें सन्देह नहीं कि—रघुवंश और कुमारसम्भव एक ही कविके बनाये हैं। कारण उक्त दोनों पुस्तकोंकी रचना मिलती जुलती है। फिर शकुन्तला भी उक्त दोनों पुस्तकोंके रचयिताकी ही लिखी है। कारण एकका सूक्ष्म भाव दूसरेमें बढ़ा दिया गया है। विक्रमोर्वशीके भी चौथे अध्यायका भाव मेघदूत और कुमारसम्भवमें विद्यमान है। ऋतुसंहार और मालविकाग्निमित्रके सम्बन्धमें समालोचकोंका मत नहीं मिलता। परन्तु ध्यानपूर्वक विक्रमोर्वशी, शकुन्तला और मालविकाग्निमित्र पढ़नेसे तीनों ग्रन्थोंके भाव मिलते और तीनों ग्रन्थ एक ही व्यक्तिके लिखे मालूम पड़ते हैं। लोगोंका यह कहना कि मालविकाग्निमित्र किसी दूसरे कविका लिखा है, बिलकुल झूठ है। कारण कालिदासके भावोंका ऐसा अनुकरण दूसरा उस समय कर न सकता था।

जिन्हें लोग कालिदासका अनुकरण समझते, वह

उनकी युवावस्थाके लिखे ग्रन्थ हैं। पीछे कालिदासने अपने भावों और विचारोंको अधिक सुधारा है। ऋतुसंहारकी भी बहुतसी बातें कालिदासके दूसरे ग्रन्थोंमें मिलती है। ऋतुसंहारमें उन्होंने कविने भारतके एक एक भागका वर्णन किया है। दूसरे ग्रन्थमें वह उससे बहुत आगे बढ़ गये हैं। परन्तु ऋतुसंहारमें उन्होंने जिस भावका बीज डाला, वही दूसरे ग्रन्थोंमें वृक्ष बन गया है। इस बातका ध्यान रखना चाहिये कि कालिदास ऋतुवर्णन करने पर बड़ा प्रेम रखते थे।

मेघदूतमें वर्षा, शकुन्तलामें ग्रीष्म, विक्रमोर्वशीमें शीत, कुमारसम्भवमें वसन्त, मालविकाग्निमित्रमें राजाद्यानको वसंत और रघुवंशमें षट्ऋतुवर्णन विद्यमान हैं। किन्तु ऋतुसंहारमें अवशिष्ट समग्र ग्रंथोंके वर्णनका बीज विद्यमान है। इससे यह विषय असन्दिग्ध है कि उक्त सातों ग्रंथ कालिदासके ही बनाये हैं।

कालिदासक (सं० पु०) कालिदास स्वार्थे कन्। कालिदास, भारतके महाकवि।

कालिदास त्रिवेदी—एक विख्यात हिन्दुस्थानी कवि। दाक्षिणात्यके गोलकुण्डमें अवस्थिति करते समय कालिदास त्रिवेदी औरंगजेब बादशाहके पास रहते थे उसके पीछे वह जम्बू प्रदेशमें रघुवंशीय योगजित्सिंह नामक राजाके निकट चले गये। उनके पास रह उन्होंने 'वधूविनोद' बनाया था। १४२३ से १७१८ ई० तक जिन कवियोंने जन्म लिया, उनमें २१२ कवियोंके १००० छन्द एकत्र कर कालिदासने एक कविता-संग्रह प्रणयन किया। उक्त पुस्तकका नाम 'कालिदासहजारा' है। कालिदासहजारा पुस्तकको विशेष सुख्याति है। उनके पुत्र उदयनाथ त्रिवेदी और पौत्र दूलह त्रिवेदी दोनोंही ग्रंथकार रहे।

कालिनी (सं० स्त्री०) कालः शिवः अर्धाङ्गतया अथवा कालः आकाशस्थः पुरुषाकारो लुब्धकः संयुक्तत्वेन अस्त्यस्याः, काल-इन ङीप्। १ आर्द्रा नक्षत्र। कालयति प्रेरयति, काल-णिच्-णिनि। २ प्रेरणकारिणी, भेजनेवाली।

कालिन्द (सं० क्ली०) कालिं कृष्णराशिं ददाति, कालि दा-क पृषोदरादित्वात् मुम्। कालिन्द, तरबूज, कलींदा।

कालिन्दक (सं० क्ली०) कालिन्द स्वार्थे कन्। तरबूज, कलींदा।

कालिन्दिका, कालिन्दी देखो।

कालिन्दी (सं० स्त्री०) कालिन्दात् कालिन्दाख्य-पर्वतात् तत्सन्निकृष्टदेशाद्वा जाता निःसृता वा, कालिन्द-अण् ङीप्। १ यमुना नदी। २ श्रीकृष्णकी एक स्त्री। ३ असितकी स्त्री और सगरकी माता। ४ अरुण त्रिवृत्, निसोत। ५ श्वेतकिणोही, एक ओषधी। ६ कोई असुरकन्या। ७ एक रागिणी।

कालिन्दी—उदासीका एक वैष्णव सम्प्रदाय। कालिन्दी प्रायः कोरी-चमार नीच जाति होते हैं। यह कौपीन बगोट पहने घरमें भी रहते हैं। विवाह आदि स्वजातिमें ही होता है। उक्त सम्प्रदाय कोरीचमार प्रभृति नीच जातिका गुरु है। वह शवको न जला मृत्तिकामें गाड़ देते हैं। फिर जो दिन अशौच मान दशम दिवस श्राद्ध कर शुद्ध होते हैं। कालिन्दियोंके मठ पृथक् पृथक् हैं, महन्तोंके शिष्य अपने अपने मठमें अलग रहा करते हैं।

कालिन्दी—एक शाखा नदी। बङ्गदेशके खुलना जिलेमें यमुना नाम्नी नदी प्रवाहित है। कालीन्दी उसीकी शाखा नदी है। यह वसन्तपुरके निकट यमुनासे अलग हो सुन्दरवनमें रायमङ्गल नामक स्थान पर जा गिरी है। कालिन्दी सुगम्भीर है। कलकत्तेसे बड़ी बड़ी नौकायें उक्त नदीपथसे पूर्वाभिमुख गमन करती हैं।

कालिन्दीकर्षण (सं० पु०) कालिन्दीं कर्षति कालिन्दी-कृष कर्तरि ल्यु यद्वा कर्षतीति कर्षणः, कालिन्द्याः कर्षणः, ६-तत्। बलदेव। बलदेवके कालिन्दीकर्षणकी कथा हरिवंशमें इस प्रकार लिखी है,—किसी समय बलदेवने स्नान करनेके लिये यमुना नदीको बुलाया था। किन्तु वह स्त्रीस्वभावसुलभ भीरुतावशतः उनके समीप उपस्थित न हुयीं। बलदेव यमुनाके उस व्यवहार पर बहुत बिगड़े थे। फिर वह अपने अस्त्र हलसे उन्हें आकर्षण कर वृन्दावन लेगये। (हरिवंश, १०२ अ०)

कालिन्दीभेदन (सं० पु०) कालिन्दीं भिनत्ति, कालिन्दी-भिद् कर्तरि ल्यु, कालिन्द्या भेदनो वा। बलराम।

कालिन्दीसू (सं० पु०) कालिन्दीं यमुनां सूते। सूर्य, आफताब।

कालिन्दीसू (सं० स्त्री०) कालिन्दीं यमुनां सूते, कालिन्दी-सू क्विप्। यमुनाकी माता सूर्यकी पत्नी। संज्ञा।

कालिन्दीसोदर (सं० पु०) कालिन्द्याः यमुनायाः सोदरः सहोदरः, ६ तत्। यम। यम और यमुनाने सूर्यकी पत्नी संज्ञाके गर्भसे जन्म ग्रहण किया था।

कालिम (सं० पु०) १ स्वनाम विशेष एक ढांचा। यह पिचट वा काठसे बनता और गोलाकार रहता है। कालिमपर कुछ टोपियोंको मिलाकर चढ़ाते हैं। उसके सूखने पर वह कड़ी पड़ जाती है। २ मनोर, जिला।

कालिमा (सं० पु०) कालस्य भावः, काल इमनिच्। १ कृष्णवर्ण, कालापन, कालापन। २ मलिनता, मैल।

कालिमन्या (सं० स्त्री०) कालं मन्यं कालीं मन्यते, काली मन्-खश्-मुम् ह्रस्वश्च। १ अपनेको कृष्णवर्ण विवेचना करनेवाली स्त्री जो औरत अपनेको काला खयाल करती हो। २ अपनेको कालीदेवी माननेवाली स्त्री।

कालिय (सं० पु०) के जले आलेयते, क आ-ली क। १ सर्पविशेष एक सांप। गरुड़का भक्ष्य वस्तु हरण करनेसे गरुड़के साथ उसका युद्ध हुआ था। कालिय उसमें हार गया फिर वह गरुड़के भयसे यमुनाह्रद स्थित जलमें छिपकर रहने लगा। इसीसे उसको कालिय कहते हैं। २ कलियुग। (त्रि०) ३ काल सम्बन्धीय, कालके मुताबिक।

कालियक (सं० स्त्री०) १ कृष्ण अगुरु, काला अगर। २ पीतचन्दन। ३ दारु हरिद्रा। ४ महेन्द्रीकाष्ठ, किसी किस्मका देवदार। ५ शिलाजतु।

कालियदमन (सं० पु०) कालियं दमयति, कालिय दम णिच्-ल्यु। १ श्रीकृष्ण। भागवतमें कालियदमनकी कथा इसप्रकार वर्णित है—कालियसर्प यमुना नदीके किसी ह्रदमें रहा। उसका जल बहुत विषाक्त हो गया। किसी दिन श्रीकृष्ण गोपोंके साथ उसी ह्रदके निकट गोचारण करते थे। गोप और गोधनगण प्यासा लगे। किन्तु उस ह्रदका जल पीनेसे सबका जीवन विनाश हो गया। तब श्रीकृष्ण देख तीरस्थ कदम्ब पर चढ़े और ह्रदमें कूद पड़े। क्योंकि पूर्व वह कालियको दर्प तोड़ डालना था। किन्तु उसका जीवन बच गया। फिर श्रीकृष्णने उसे समुद्रमें रहनेके लिये यमुनासे निर्वासित किया। (भागवत १०।१६) किन्तु कोई कोई कहता है कि राजा कंसने श्रीकृष्णसे कालिय ह्रदके फूल मंगाये थे। श्रीकृष्ण यमुनामें कूद और उस नागको नाथ फूल लिये। (स्त्री०) कालियस्य दमनम् ६ तत्। २ कालिय सर्पके दौरात्म्यका निवारण। ३ श्रीकृष्ण लीलाका एक अभिनय।

कालियह्रद (सं० पु०) कालियेन अधिष्ठित ह्रद, मध्यप०। कालिय सर्पके रहनेका ह्रद।

कालिया—बङ्गदेशके यशोहर जिलेके कालिया परगने का एक गांव। यहां अनेक ब्राह्मण और वैद्य रहते हैं। पूजाके समय नौ-बाइचोंमें लोगोंकी धूम पड़ जाती है।

कालियाचक—बङ्गालके मालदह जिलेका एक कसबा। यह अक्षा० २४° ५१' १५" उ० और देशा० ८८° ११' पू० में गङ्गाके तीर अवस्थित है। पहले यहां नीलकी एक बड़ी कोठी थी।

कालियाबर—आसाम प्रान्तके नौगांव जिलेका एक ग्राम। यह ब्रह्मपुत्र नदी पर जिलेकी पूर्व ओर पड़ता है। ब्रह्मपुत्रमें चलने वाले जहाज कालियाबरमें ठहरते और यात्रियोंको ग्रहण करते हैं।

कालिल (सं० त्रि०) कालं कृष्णवर्णं अस्त्यस्य, काल इलच्। 'शीलिकामिभक्ष्याचरिभ्यो णः'। पा ५।२।। कृष्णवर्णयुक्त, काले रंगवाला।

कालिष्ठ (सं० त्रि०) अयमनयोरतिशयेन कालः, काल-इष्ठन्। उभयके मध्य अतिशय कृष्णवर्ण, दोमें ज्यादा काला।

काली (सं० पु०) कालं कालरूपं पापं पश्यन्, काल इनि। १ परमानन्दमय शिव परमेश्वर।

"कालिन् कं वमनमीक्षिन् न कथय मनारा।"

(परमानन्द नन्दो देवनाम न)

(त्रि०) कालयति प्रेरयति, कल णिच् णिनि। २ प्रेरक तहरीक देनेवाला, जो चलाता हो। (स्त्री०) कालः कृष्णवर्णो अस्त्यस्याः काल ङीप्। जानपदकुण्डगोणस्थलभाजनागकालनील। पा ४।१।४२।

२ शान्तनु राजाकी स्त्री। ४ भीमसेनकी एक पत्नी। ५ अग्निशिखा विशेष, आगकी एक लौ। ६ रात्रि, रात। ७ त्रिवृत्, निसोत। ८ निन्दा, बदनामी। ९ नूतन मेघसमूह, घटा। १० मसी, स्याही। ११ कृष्ण-वर्ण स्त्री, काली औरत। १२ कृष्णवर्ण, काला रंग। १३ चीरकीट, मट्ठेका कीड़ा। १४ नीली, नील। १५ पाटल। १६ मञ्जिष्ठा, मजीठ। १७ कृष्णवेत्र, काला बेंत। १८ कृष्ण कार्पास, काली कपास। १९ कृष्णजीरक, काला जीरा। २० पृथ्वीका। २१ कृष्ण त्रिवृत्, काला निसोत। २२ हरिकाली, हिगुवा। २३ कण्टकारी।

काली (सं० स्त्री०) कालस्य शिवस्य पत्नी-ङीप्। कालिका देवीके ललाटसे आविर्भूता एक देवी। चण्ड वधके समय असुरोंसे लड़ते लड़ते क्रोध भरसे भगवती-मुख कृष्णवर्ण हो गया था। फिर उनके ललाट देशसे करालवदना असिपाश प्रभृति अस्त्रपाणि कालिका देवीका आविर्भाव हुआ। (मार्कण्डेयपु०, ८७।१)

कालिकापुराणमें उनका रूपादि इस प्रकार वर्णित है,—"नीलोत्पलकी भांति श्यामवर्ण है। चार हस्त हैं। दक्षिण हस्तद्वयमें खट्वाङ्ग एवं चन्द्रहास और वाम हस्तद्वयमें चर्म तथा पाश है। गलेमें मुण्डमाला पडी है। परिधानमें व्याघ्रचर्म विराजित है। अङ्ग क्षाम है। दन्त दीर्घ है। लोलजिह्वा अति भयङ्कर देख पडती है। चक्षु आरक्त हैं। काली भीम नाद कर रही हैं। वाहन कबन्ध है। मुख विस्तृत और कर्ण स्थूल हैं। उक्त देवी तारा और चामुण्डा नामसे भी अभिहित होती हैं। उनकी आठ योगिनियोंके नाम हैं,—त्रिपुरा, भीषणा, चण्डी, कर्त्री, हन्त्री, विधात्रिका, कराला, और शूलिनी। उक्त योगिनी भी देवीके साथ पूजित और अनुध्यात होती हैं। यावतीय देवीगणमें उन्हींकी पूजा करनेसे सर्व कामना सिद्धि मिलती है।" (कालिकापु० ६० अ०) काली दश महा-विद्याओंके मध्य प्रथम महाविद्या है। यथा —

"काली तारा महाविद्या षोडशी भुवनेश्वरी।
भैरवी छिन्नमस्ता च विद्या धूमावती तथा॥
बगला सिद्धविद्या च मातङ्गी कमलात्मिका।
एता दशमहाविद्याः सिद्धविद्याः प्रकीर्तिताः॥" (तन्त्रसार)

काली, तारा, षोड़शी, भुवनेश्वरी, भैरवी, छिन्नमस्ता, धूमावती, बगला, मातङ्गी और कमला दश मूर्तिका नाम महाविद्या है। इन्हें सिद्धविद्या भी कहते हैं। सतीने दक्षयज्ञमें जाते समय बार बार शिवसे अनुमति मांगी थी। किन्तु महादेवने इन्हें किसी प्रकार अनुमति न दी। इसीसे सतीने उक्त दशमूर्ति बना और शिवको डरा अनुमति ग्रहण की। दशमहाविद्या देखो।

काली मूर्तिका ध्यान इस प्रकार है,—

"करालवदनां घोरां मुक्तकेशीं चतुर्भुजाम्।
कालिकां दक्षिणां दिव्यां मुण्डमालाविभूषिताम्॥
सद्यश्छिन्नशिरःखड्गवामाधोर्ध्वकराम्बुजाम्।
अभयं वरदञ्चैव दक्षिणोर्ध्वाधःपाणिकाम्॥
महामेघप्रभां श्यामां तथा चैव दिगम्बरीम्।
कण्ठावसक्तमुण्डालीगलद्रुधिरचर्चिताम्॥
कर्णावतंसतानीतशवयुग्मभयानकाम्।
घोरदंष्ट्रां करालास्यां पीनोन्नतपयोधराम्॥
शवानां करसंघातैः कृतकाञ्चीं हसन्मुखीम्।
सृक्कद्वयगलद्रक्तधाराविस्फुरिताननाम्॥
घोररावां महारौद्रीं श्मशानालयवासिनीम्।
बालार्कमण्डलाकारलोचनत्रितयान्विताम्॥
दन्तुरां दक्षिणव्यापिमुक्तालम्बिकचोच्चयाम्।
शवरूपमहादेवहृदयोपरि संस्थिताम्॥
शिवाभिर्घोररावाभिश्चतुर्दिक्षु समन्विताम्।
महाकालेन च समं विपरीतरतातुराम्॥
सुखप्रसन्नवदनां स्मेराननसरोरुहाम्।
एवं सञ्चिन्तयेत् कालीं सर्वकामसमृद्धिदाम्॥" (तन्त्रसार)

काली करालवदना, भयङ्करी, मुक्तकेशी, चतुर्भुज-विशिष्टा और मुण्डमालाभूषिता है। उनके अधोवाम हस्तमें सद्यः कर्तित मुण्ड एवं ऊर्ध्व वाम हस्तमें खड्ग और ऊर्ध्व दक्षिण हस्तमें अभय चिह्न तथा अधो दक्षिण हस्तमें वरदान मुद्रिका है। वह महामेघकी भांति श्यामवर्णा उलङ्गिनी हैं। इनके कण्ठदेशमें मुण्डमाला है। उससे रक्तधारा विगलित हो रही है। कर्णद्वयमें कर्णभूषणके स्थल पर दो शव लम्बित हैं। वह भीमदशना, करालमुखी, पीनोन्नतस्तनी, शवगण-हस्तसमूहनिर्मित मेखलाधारिणी और हास्यमुखी है। उभय ओष्ठप्रान्तसे रक्तधारा गलित होती है। इसीसे उन्हें स्फुरितमुखी भी कहते हैं। काली भयङ्कर

गन्धकारिणी, भयङ्करमूर्त्ति, श्मशानवासिनी, नवघन सुन्दरीयौवनसमविनिमिता करालवदना दक्षिणाद्याधि मुक्तकेशपाशयुक्ता, मदघूर्णितनयनसे हृदयस्थिता भय हरणास्त्रादिविविधायुधपरिवेष्टिता महाकालके साथ विपरीत रतक्रियामें आसक्ता और सुखप्रसन्नवदना है। इसीप्रकार सर्वकामार्थसिद्धिदायिनी कालीका चिन्ता करना चाहिये।

महाकाली, दक्षिणाकाली भद्रकाली, श्मशान काली, गुह्यकाली और रक्षाकाली प्रभृति नामानुसार कालीमूर्त्तिके विविध भेद हैं। देवी मूलप्रकृति हैं। अल्पबुद्धि और दुर्बल मानवोंके उपासना कार्यमें सुविधा करनेके लिये तन्त्रादि शास्त्रोंमें उक्त प्रकृतिके काली, तारा प्रभृति नाम और रूप कल्पित हुये हैं। महानिर्वाणतन्त्रमें भी ऐसा ही लिखा है,—

"उपासकानां कार्याय पुरैव कथितं प्रिये।
गुणक्रियानुसारेण रूपं देव्याः प्रकल्पितम्॥"
(महानिर्वाण १३ उल्लास)

उपासकोंके कार्यके लिये ही गुणक्रियानुसार देवीका रूप कल्पित होता है।

आद्य शक्तिकी प्रधान मूर्त्ति काली है। शाक्तोंमें प्राय सब कोई इसी मूर्त्तिके उपासक हैं। भगवतीकी जितनी मूर्त्तियाँ हैं उनमें दुर्गा और काली मूर्त्तिका बहुत प्रचार है। इसका भी निर्णय करना दुःसाध्य है—किस समयसे इस मूर्त्तिकी कल्पना की गयी है। अनेक पाश्चात्य पण्डितों और तत्मतावलम्बी प्राच्य विद्वानोंके कथनानुसार कालीकी मूर्त्ति हिन्दुओं की मौलिक न थी, वह भारतके आदिम अधिवासी अनार्योंकी देवदेवीसे अनुकृत हुयी। यहीं उनका कहना देखो कल्पनामें कोई तत्त्व है वा नहीं। कारण सर्वप्राचीन प्राचीन पुराणोंमें भगवतीकी उक्त मूर्त्तिका वर्णन मिलता है। फिर भी इतना मानना पड़ेगा कि तान्त्रिक युगमें ही उक्त मूर्त्तिकी उपासनाका नानाविध विधि नियम बना और चला है। तब तो बात छोड़ जाती वह इतना कहिये—पुराणादि में भगवतीका कालीमूर्त्तिकी उत्पत्ति, पूजा, ध्यान इत्यादिके सम्बन्धमें सब विवरण मिलता है।

पुराणोंमें मार्कण्डेय पुराण अपेक्षाकृत प्राचीन गिना जाता है। जिस देवीमाहात्म्यके पढ़ने या सुनने से मनुष्य ऐश्वर्य सुख ऐश्वर्य लाभ किया जाता वह चण्डी नामक अपूर्व पुस्तक भी मार्कण्डेयपुराणके ही अन्तर्गत आता है। कालिका मूर्त्तिकी उत्पत्ति कथा चण्डीमें दो स्थान पर कही है। प्रथम,— महिषासुरके वध पीछे देवता शुम्भ—निशुम्भसे अपना राज्य अपहृत हो देवीका स्तव करते थे। उसी समय भगवतीने जाह्नवीजलमें स्नानार्थ जानेके समय उनके निकट उपस्थित हो पूछा था—'तुम यहां क्यों आये हो, देवताओंके इस प्रश्नका उत्तर देनेसे पहले ही भगवतीके शरीरसे शिवा अम्बिकाने निकल कर कहा 'दैत्यपतिशुम्भसे निराकृत और समीप आता निशुम्भसे पराजित हो देवता हमारा स्तव करते हैं।' अम्बिका भगवतीके शरीरकोषसे निकली थीं। इसीसे वह कौशिकी नामसे विख्यात हुयीं और हिमाचलपर रहने लगीं। कौशिकीकी उत्पत्तिके पीछे भगवतीने भी स्वीय गौरवर्ण छोड़ कृष्णवर्ण धारण किया था। इसीसे वह भी 'कालिका' * कहायीं और हिमाचलपर ही रहने लगीं। उक्त स्थान पर चण्डीमें कहीं लिखा उन कालिकाका क्या रूप था? फिर द्वितीय स्थान पर चण्डीमें कालीमूर्त्तिकी कथा इस प्रकार लिखी है—कौशिकीके हुङ्कारसे असुरके सेनापति धूम्रलोचन भस्मीभूत हुये। फिर शुम्भने चण्डमुण्ड नामक दो प्रचण्ड सेनापति बहु सैन्य दे कौशिकीको पकड़नेके लिये भेजे। चण्डमुण्ड दैत्यदल परिवृत हो सहास्यमुख देवीके निकट हिमाचल पर उपस्थित हुये। देवीने उनका दर्प देख ईषत् हास्य किया था। चण्डमुण्ड पहुंचते ही उन्हें पकड़ने को आगे बढ़े। पास आने पर देवीने भयानकोंके उनकी ओर देखा था। क्रोधसे उनका मुखमण्डल काला पड़ गया। फिर उनके भ्रुकुटिकुटिल * ललाट से अति भीम एक देवी निकली थीं। फिर वह अपूर्व

* मार्कण्डेय चण्डी—पञ्चमाध्याय, ८८—८९ श्लोक।

पर टूट प्रहार करने लगीं। यही देवी काली* हैं। उनका रूप चण्डीमें इस प्रकार बताया है,—

"काली करालवदना विनिष्क्रान्तासिपाशिनी।
विचित्रखट्वाङ्गधरा नरमालाविभूषणा।
द्वीपिचर्मपरीधाना शुष्कमांसातिभैरवा।
अतिविस्तारवदना जिह्वाललनभीषणा।
निमग्ना रक्तनयना नादापूरितदिङ्मुखा॥"

काली—करालवदना (नक्षिप्तमुण्डहस्ता), असिपाशधारिणी विचित्रखट्वाङ्गधरा, नरमुण्डमाला शोभिता, व्याघ्रचर्मपरिधाना, शुष्कमांसा, अतिभयानक मूर्ति, अतिविस्तृतमुखमण्डला, लोलरसना, भीषणा, गाढरक्तनयना और हुङ्कार शब्दसे दिङ्मण्डल-परिपूर्णकारिणी हैं। कालीने युद्धमें चण्ड-मुण्डको मार कौषिकीको उनके दोनों मुण्ड उपहार दे कहा था—'हमने चण्डमुण्ड नामक दो महापशु मारे हैं, अब युद्ध यज्ञमें शुम्भ-निशुम्भको तुम संहार करो।' कौषिकीने हंस कर कहा,-'चण्डमुण्डको तुमने मारा है। इसीसे तुम्हारा नाम चामुण्डा विख्यात होगा।'

प्रायः जो काली वा श्यामा मूर्ति देख पड़ती उसके साथ उक्त मूर्तिकी सम्पूर्ण एकता नहीं लगती। फिर भी कुछ सादृश्य देख पड़ता है।

रक्तबीजके बधसमय उन्हीं कालीने जिह्वा निकाल और तदुपरि रक्तबीजका शरीर विनिर्गत समस्त रक्त लाभ, पान किया था। कौषिकीके अस्त्रप्रहारसे रक्तबीज विनष्ट हुआ।

चण्डीमें कालीपूजाका कोई विधान नहीं मिलता शुम्भनिशुम्भके बध पीछे देवीने देवतावोंसे जो पूजा-पद्धति कही वह शारदीय महापूजाकी कथा थी।

देवीभागवतके ५म स्कन्धमें २३ अध्याय पर कौषिकी की उत्पत्तिके पीछे पार्वतीका शरीर कृष्णवर्ण पड़ने पर कालिका नामसे प्रसिद्ध होनेकी कथा लिखी है। किन्तु उनका नाम कालरात्रि बताया गया है। चण्डीकथित उक्त कालिकाका कोई कार्य नहीं मिलता, किन्तु देवी भागवतमें लिखा कि शुम्भनिशुम्भसे उनका घोर संग्राम हुआ था। फिर युद्धके पीछे उन्हींके हुङ्कारसे वह विनष्ट हो गया। वह बराबर कौषिकीके पार्श्वमें उपस्थित रहीं। देवीभागवतमें भी चण्डमुण्ड-वधके समय कौषिकीके कपालसे व्याघ्रचर्माम्बरा, क्रूरा, गजचर्मोत्तरीया, मुण्डमालाधरा, घोरा, शुष्काषाढीसमोदरा, खड्गपाशधरा, अतिभीषणा, खट्वाङ्गधारिणी, विस्तीर्णवदना और लोलजिह्वा कालीकी उत्पत्ति कही है। वही काली चामुण्डा नामसे विख्यात हुयीं। उन्होंने रक्तबीजका रुधिर पीया था। एतद्भिन्न अन्यान्य पुराणोंमें भी काली, भद्रकाली, महाकाली, इत्यादि नाम आये हैं। किन्तु उत्पत्तिके सम्बन्धमें कोई विशेष विवरण नहीं मिलता।

शक्तिप्रधान कालीकी पूजा, ध्यान, कवचादि एवं तान्त्रिक रहस्यादि "श्यामा" शब्दमें और अन्यान्य विषय "दुर्गा" शब्दमें देखो।

कालीमूर्तिका रूप विचार कर देखनेसे समझ सकते कि वह महाकालका प्रयायिनी हैं, अनन्तकाल-रूपी शिव पदतलमें दलित हो रहे हैं। सर्वध्वंसकारिणी शक्तिज्ञापक असि हाथमें है। भूत, वर्तमान और भविष्यत् कालवाचक त्रिनयन हैं। इत्यादि।

(शवासनकी कथा श्यामा शब्दमें देखो।)

कालीअंकोड़ (हिं० स्त्री०) बृहत् क्षुपविशेष, एक बड़ी झाड़ी। उसके वृन्तसे मरल कण्टक निकलते हैं। पत्र प्रायः १२। १३ अङ्गुलि दीर्घ लगते हैं। उनका प्रान्तभाग दन्तुर रहता है। पुष्प पाटलवर्ण होते हैं। कालीअंकोड़के रक्तवर्ण फल पकनेसे काले पड़ जाते हैं, सिवा पंजाब और गुजरातके भारतवर्षमें समग्र स्थानोंपर उक्त वृक्ष मिलता है। उसे पुष्पके लिये लगाते हैं।

कालीक (सं० पु०) के जले अलति पर्याप्नोति प्रभवति इत्यर्थः, क-अल-इकन् पृषोदरादित्वात् दीर्घः। क्रौञ्च, बक, किसी किस्मका बगला।

कालीघटा (हिं० स्त्री०) कृष्णवर्ण नूतन मेघश्रेणी, उठता हुवा काला बादल।

कालीघाट—एक पीठस्थान। यह कलकत्तेके दक्षिण-प्रान्तमें प्राचीन गङ्गाके कछार पर अक्षा० २२° ३१´ १०´´ उ० और देशा० ८८° २१´ पू० पर अवस्थित है।

* मार्कण्डेयचण्डी—चण्डमुण्डवध, ५—८ श्लोक

कुब्जिकातन्त्र और निर्वाणतन्त्रमें, इस स्थान कालो नामसे उक्त हुआ है। कथानुसार यहाँ सतीका पद गिरा था। इसी कारण बहु दिनसे यह पीठस्थानके नामपर प्रसिद्ध है। भविष्य ब्रह्मखण्डमें लिखा है—

"गोविन्दपुरप्रान्ते च काली सुरधुनीतटे।"

पहले गङ्गाके पर कालीदेवी विराजती थीं। पुरा-कालको सावरकारो हिन्दू यात्री उनके निकट घाट पर उतर कालीपूजा करते थे। इस कारणसे इस स्थान कालीघाटके नामसे विख्यात हुआ है। निगमकल्पकी पीठमालामें कालीघाटकी सीमा इस प्रकार निर्दिष्ट है—

"[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]"

दक्षिणेश्वरसे बहुला पर्यन्त दो योजन परिमित धनुराकार स्थान कालीक्षेत्र है, उसके मध्य एक कोण त्रिकोणाकार स्थानमें त्रिगुणात्मक ब्रह्मा, विष्णु, और महेश्वर एवं मध्यस्थलमें महाकाली माया काली रहती हैं।

पहले कालीघाटको चारों ओर घना जङ्गल था। लोगोंकी बसती न रही। वहाँ उनके मध्य काली देवी सामान्य पर्णकुटीमें वास करती थीं। कापालिक और संन्यासी उन्हें पूजते थे। प्रथम कालीदेवी गुप्त भावसे रहती थीं। इसीसे कुब्जिकातन्त्रमें यह गुप्तकालीके नामसे उक्त हुयी है।

चतुर्दश षोडश शताब्दीके लिखित (मानसिंहके बङ्गाल आनेसे पहले) कविरामके दिग्विजयप्रकाशमें कहा है—

"[illegible]
[illegible] ॥ ६६ ॥
[illegible]
[illegible] ॥ ६७ ॥
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible] ॥ ६८ ॥"

पीठमालातन्त्रके मतानुसार यहाँ भगवतीके दाहिने पदकी अङ्गुलि गिरी थी। कालीदेवीके प्रसादसे विक्रमादित्यवंशी चिरकाल धन भाग्यवान् रहेंगे। भागवत सामोरयोंके और यशोरराज प्रतापादित्यका राज्यशासन है। गोविन्दपुरादि ग्राम, सहपत्री, और कालीदेवीके निकटस्थ गङ्गासागर (सिद्धान्तद) साबर्णोंके शासनमें है।

बोध होता कि उस समय इस सकल स्थान यशोर राज प्रतापादित्यके अधिकारभुक्त थे। जनश्रुति इस प्रकार है—प्रतापादित्यके चचा वसन्तराय कालीदेवीके तत्कालीन पुजारी भुवनेश्वर ब्रह्मचारीके मित्र थे। उन्हींके यत्नसे एक छोटा मन्दिर निर्मित हुआ।

उसी समयसे कालीघाटका पुण्यपीठ माहात्म्यके प्रमाण फैल गया। इस विषय कविकङ्कणका चण्डी और मधुसूदनकी पद्धतिके समसामयिक विप्रदासकी मनसामंगल या चण्डीमाहात्म्य पढ़नेसे विदित होता है।

मालूम पड़ता है कि यशोरराजके कायस्थ राजाओंके समय यह स्थान देवोत्तर या ब्रह्मोत्तर प्रदान किया गया था। कारण उनके परवर्ती कालमें इस स्थान बड़िशा सुवर्णचौधरीके सावर्णगोत्रीय जमींदार बराबर देवोत्तरस्वरूप भोग करते आते हैं। कालीघाटका वर्तमान कालीमन्दिर बड़िशाके सावर्ण चौधरी वंशीय सन्तोषरायके यत्नसे १८०८ ई० (उनकी मरनेसे ११ वर्ष पीछे) बन गया था।

कालीघाटका नकुलेश्वर शिव प्रसिद्ध है। निगमकल्प प्रभृति दो एक आधुनिक तन्त्रोंमें इसका उल्लेख मिलता है। पहले यह सामान्य कुटीमें नकुलेश्वर लिङ्ग स्थापित था। १८५४ ई० में तारासिंह नामक किसी पंजाबीने इसका पक्का मठ निर्माण करा दिया।

कालीघाटमें काली एवं नकुलेश्वरको छोड़ श्याम राय तथा गोविन्दजीकी प्रतिमूर्ति भी सामान्य समझना न चाहिये। यह मूर्ति पहले गोविन्दपुरमें रही।

चाहे मन रखता जाली ऊपरसे गोटेको काटता है। रंग बिरंगके तागे जालमें जोड़ दिये जाते हैं। तागोंके दिखाई पड़ जानेसे कालीन रुयेंदार मालूम पड़ता है। इसका कालीन प्रसिद्ध है। भारतवर्षके झांसी नगर में भी अच्छे अच्छे कालीन बनते हैं। बादशाह अकबरने उत्तर भारतमें इसके व्यवसायको उत्तेजना दी थी।

कालीनत्व (सं० क्ली०) कालीनस्य भावः, कालीन-त्व। कालहारित्व, वक्त पर हाज़िरी।

काली नदी—युक्त प्रान्तकी एक नदी। यह मुज़फ्फर नगरस शहरकी नहरसे पूर्वभाग सराय नामक स्थान-के बालुका स्तूपके निकट निकली है। उत्पत्तिस्थानसे कुछ दूर तक उसे नागन कहते हैं। नागन अवस्थित भावसे यह बुलन्दशहरके पास आ बड़ी नदी बन गयी है। फिर काली नदी सूरजके निकट दक्षिण-पूर्वमें मुड़ कनौजमें गङ्गासे आ मिली है। बुलन्दशहरमें इस पर एक पक्का पुल बना है। सिवा उसके गढ़ मुक्तेश्वर जानेकी राह एक खुलावटीमें और तीन अन्य गढ़ जिलेमें भी उसके पुल देख पड़ते हैं। उसे पूर्व काली नदी कहते हैं। यह दैर्घ्यमें १५५ कोस है। उसको छोड़ एक पश्चिम काली नदी भी है। यह शिवालिक पर्वतसे निकल सहारनपुर और मुज़फ्फर नगरसे बहती हुयी हिन्डन नदीमें आ गिरी है। सङ्गमका स्थान अक्षा० २८° १९' उ० और देशा० ७७° ३' पू० पर अवस्थित है। पश्चिम काली नदीका दैर्घ्य १५ कोस होगा।

कालीपुराण (सं० क्ली०) एक उपपुराण। इसमें काली-विषयक विवरणादि वर्णित है।

कालीप्रसन्न—कलकत्ता-जोड़ासांकोके एक विख्यात ज़मींदार। उनका जन्म सिंहवंशमें हुआ था। उनके प्रपितामह शान्तिराम मुर्शिदाबाद और पटनाके दीवान थे। कालीप्रसन्नके पिताका नाम प्राणकृष्ण था।

वह संस्कृत, बंगला और अंगरेजी भाषामें बहुत निपुण थे। उन्होंने मूल संस्कृत महाभारतको बंगलामें अनुवाद करा बिनामूल्य वितरण किया, जिससे बड़ा नाम हुआ। इसमें अपरिमित अर्थ लगा और ऋण पड़ा था। उनमें दानशीलताका भी बड़ा गुण रहा।

कालीप्रसाद—१ कोई ग्रन्थकार। उन्होंने कालीतत्त्वसुधासिन्धु और भक्तिदूती नामक दो संस्कृत ग्रन्थ बनाये थे। २ सार्वभौम नामक वैद्यक ग्रन्थकार।

कालीप्रक्रिया—पक्षिविशेष, किसी किस्मका बगुला।

कालीबावड़ी—मध्यभारतके धारप्रदेशका एक क्षुद्र राज्य। कोई भूम्या उसके अधिकारी हैं। धर्मपुर पर गवर्नमेण्टकी रक्षाधिकारको उन्हें धारा दरबारसे १५०) रु० मिलता है। उस परगनेमें ५ गांव मौजूद हैं। राजस्व भांति उन्हें प्रति वर्ष १०) रु० देना पड़ता है। दोबाभिरके भी १० ग्राम उनके तत्त्वावधानमें हैं। उसके लिये उन्हें सेंधिया महाराजसे १५८) रु० मिलता है। सुरपोंके साथ उन सकल विषयोंकी जो लिखा पढ़ी हुयी, उसमें अंगरेज़ ज़ामिन हैं।

कालीबेल (हिं० स्त्री०) लताविशेष एक बेल। यह एक हलत् लता है। उसके पत्र २।३ इञ्च दीर्घ होते हैं। फाल्गुन-चैत्र मास पत्रोंमें ईषत् हरिद्वर्ण छह छह पुष्प निकलते हैं। वैशाख ज्येष्ठ मास फल पकनेका समय है। कालीबेल उत्तर-भारत, मध्य भारत और आसाम प्रभृति देशमें उत्पन्न होती है।

कालीमिट्टी (हिं० स्त्री०) चिक्कणमृत्तिका विशेष, चिकनी मट्टी। यह बाल धोनेके काम आती है।

कालीमिर्च (हिं० स्त्री०) मरिच गोलमिर्च। यह चाहे मीठे दोनों प्रकारसे मसालेमें पड़ती है। मरिच देखो।

कालीमिर्जा—एक हिन्दुस्थानी वैष्णव कवि। कृष्णानन्द व्यासके बनाये रागसागरोद्भव रागकल्पद्रुम नामक ग्रन्थमें उनकी कविता उद्धृत हुयी है।

कालीसुता—दाक्षिणात्यवासी अहमदाबाद जिलेके आम्रपर्णदेशीय शिव राजा। ११२० ई० को उनके मन्त्री अमीर बरोदेने उन्हें दूरीभूत कर स्वयं राज्य अधिकार किया था।

कालीय (सं० क्ली०) कालेन कृष्णवर्णेन ईयते, काल छाने अर्थ वा काल-छ। पाणिनि ४।२।११६। १ कृष्ण चन्दन। २ नागविशेष, एक सर्प। कालिय देखो।

कालीयक (सं० क्ली०) कालीय स्वार्थे-कन्, कालीयमिव कायति वा कालीय-कै-क। १ पीतवर्ण सुगन्धि काष्ठ विशेष, किसी किस्मकी खुशबूदार पीली लकड़ी।

इसका संस्कृत पर्याय—जायक, कान्तानुसार्य, कालेय, वर्णक और कान्तिदायक है। २ कृष्णचन्दन, काला चन्दन। उसे संस्कृतमें कालीय, कालिक और हरिप्रिय भी कहते हैं। (पु०) ३ दारुहरिद्राविशेष, एक दारुहलदी। ४ शैलज नामक गन्धद्रव्य। ५ कालिय नाग।

कालीयका (सं० स्त्री०) दारु हरिद्रा, दार हलदी।

कालीयकचोद (सं० पु०) कुङ्कुम, रोरी।

कालीयागुरु (सं० क्ली०) कृष्णागुरु-काला अगर।

कालीरसा (सं० स्त्री०) कदली वृक्ष, केलेका पेड़।

कालीसर (हिं० स्त्री०) लताविशेष, एक बेल। यह सिक्किम, आसाम, ब्रह्म आदि देशोंमें उत्पन्न होती है। पत्रकसे नीलवर्णक निकलता है।

कालीशङ्कर भट्टाचार्य—एक प्रसिद्ध नैयायिक। उन्होंने जगदीश एवं मथुरानाथविरचित नव्य न्यायग्रन्थसमूह पर क्रोडपत्र तथा टीकाको लिखा है। आजकल कालीशङ्करके निम्नलिखित ग्रंथ मिलते हैं, -अनुमानजागदीशीक्रोड, अनुमितिक्रोड, अनुमानमाथुरीक्रोड, अवच्छेदकत्वनिरुक्तिक्रोड, असिद्धसिद्धान्तग्रन्थक्रोड़, असिद्धपूर्वपक्षक्रोड, उदाहरणलक्षणक्रोड, उपनयनक्रोड उपाधिपूर्वक्रोड, उपाधिसिद्धान्तग्रथक्रोड़, कूटघटितलक्षणक्रोड, कूटाघटितलक्षणक्रोड़, तृतीयमिश्रलक्षणक्रोड, पक्षतापूर्वपक्षग्रन्थक्रोड, पक्षतासिद्धान्तग्रन्थक्रोड, पक्षलक्षणीक्रोड, परामर्शपूर्वपक्षग्रंथक्रोड, पुच्छलक्षणक्रोड़, परामर्शसिद्धान्तग्रंथक्रोड़, प्रतिज्ञालक्षणक्रोड, प्रथमचक्रवर्तिलक्षणक्रोड, प्रथमनिरयलक्षणक्रोड, बादसिद्धान्तग्रंथक्रोड, विशेषनिरुक्तिक्रोड, सत्प्रतिपक्षसिद्धान्तक्रोड, सव्यभिचारपूर्वपक्षग्रंथक्रोड, सामान्यनिरुक्तिक्रोड, सिंहव्याघ्रक्रोड़, जागदीशीक्रोडटीका, तर्कग्रंथटीका, माथुरीटीका।

कालीशीतला (हिं० स्त्री०) शीतला रोगविशेष, किसी किस्मकी चेचक। उसमें कृष्णवर्ण व्रण निकलते, जो रोगीको बहुत खुजलाते हैं।

कालीसिन्धु—मध्यप्रदेशको एक नदी। यह विन्ध्य पर्वतसे निकल कादगांवके निकट चम्बलमें गिरी है।

कालीहर्र (हिं० स्त्री०) क्षुद्र हरीतकी, छोटी हर्र।

कालुघोष—एक बङ्गाली वीर, उन्होंने भरतपुर अवरोधके समय अंगरेजोंकी फौज बहुत मारी जाने पर जेनरलकी पोशाक पहन युद्ध किया था। समरमें विजयी होनेपर सरकारने उन्हें २०००) रु० पुरस्कार दिया। वह अति धार्मिक, दयालु, उदार और वीर थे।

कालुराय—बङ्गालके एक ग्राम्य देवता। बङ्गालमें कालुराय और दक्षिणराय दो ग्राम्यदेवता पूजे जाते हैं। यह वनदेवता हैं। वनके निकट राह किनारे पेड़की जड़में मृण्मय देहशून्य मनुष्य मस्तक प्रतिष्ठित कर उनकी प्रतिमा कल्पना की जाती है। उस प्रतिमाके निकट मृण्मय व्याघ्र और कुम्भीरकी मूर्ति भी रहती है। पूजामें छाग और हंस बलि देते हैं।

रायमङ्गल और दक्षिणराय देखो।

कालुष्य (सं० क्ली०) कलुषस्य भावः, कलुष-ष्यञ्। १ कलुषता, मैल। २ असम्मति, निफाक।

कालू (हिं० स्त्री०) मत्स्यविशेष, सीपकी मछली, नोना कीड़ा।

कालुहु—बङ्गालकी तेली जाति। इस जातिमें कुछ लोग विद्वान भी हैं। साधु, सेठ आदि जातिके उपाधि होते हैं। कोई इन्हें क्षत्रिय, कोई वैश्य और कोई हीन शूद्र कहता है। आचार विचार अच्छा है।

कालूतर (सं० त्रि०) कलूतरे तन्नामकदेशविशेषे भवः, कलूतर-अण्। पाणिनि कच्छादिभ्य। पा ४।२।१३३। कलूतर देश जात, कलूतरके मुताल्लिक।

कालूपन्थी—एक धार्मिक सम्प्रदाय। एक समय काल नामक कोई कहार रहा। उसने अपना पन्थ चलाया था, जिसका नाम कालूपंथ पड़ा। कालूपंथके अनुयायी ही कालूपंथी कहाते हैं। इस पंथमें प्रायः चमार, सैनी, गडरिये आदि पाये जाते हैं। युक्त प्रदेशके मेरठ जिलेमें ३ लाख कालूपंथी रहते हैं।

कालेज (सं० त्रि०) नियत समय पर उत्पन्न वा उत्पादित, ठीक वक्त पर पैदा होने या किया जानेवाला।

कालेज (अं० पु०) कालिज देखो।

कालेय (सं० क्ली०) कं सुखं आलेयं आदेयं यस्मात्, बहुव्री०। १ कालीयक काष्ठ, एक पीली खुशबूदार लकड़ी। २ कुङ्कुम, रोरी। तन्नाये रक्षाधारिख्ये हितम्

ठक्। ३ यकृत् दिव। ४ कृष्णचन्दन, काला सन्दल। ५ हरिचन्दन। (पु०) कालाया अपत्यम्। ६ दैत्यविशेष एक दानव। ७ दारुहरिद्रा, दारुहलदी। ८ कुक्कुर, कुत्ता। ९ कामका रोगविद पांवकी एक बीमारी। १० नीलकमल। ११ शिलाजतु।

कालेयक, कालेय देखो।

कालेश (सं० पु०) कालस्य ईशः प्रवर्तकः, ६तत्। १ सूर्य, सूरज। २ शिव। ३ महाकाल। ४ अनेक पहनिहार।

कालेश्वर (सं० पु०) कालस्य ईश्वरः ६तत्। १ सूर्य, आफताब। २ शिव। ३ महादेव। ४ वनभूमि विशेष, एक जंगली जमीन्। यह अल्मोड़ेके पूर्वांशमें हिमालय पर अवस्थित है। इसीके मध्य अल्मोड़ा मानसरोवर और यमुनाके दो बड़े नालोंका मूल विद्यमान है।

कालोच (सं० स्त्री०) कलमसौद्य।

कालोत्तर (सं० स्त्री०) सुराभाण्ड शराबका भाग।

कालोत्पादित (सं० त्रि०) यथासमयजात, वक्तपर पैदा किया जानेवाला।

कालोदक (सं० क्ली०) एक तीर्थ।

"कालोदकं नन्दिकुण्डं तथा चोत्तरमानसम्।" (महाभा अनु १६६)

कालोदायी (सं० पु०) अनेक बौद्ध। यह शाक्यमुनिके शिष्य थे।

कालोपयुक्त (सं० त्रि०) काले यथाकाले उपयुक्तः, ७तत्। यथासमय आवश्यक, वक्तके लायक।

कालोपाधि (सं० पु०) निमित्त उपमा। सूर्यकी गति प्रभृति कालज्ञानको कालोपाधि कहते हैं। काल देखो।

कालोप्त (सं० त्रि०) काले यथाकाले उप्तः, ७तत्। उपयुक्त समयमें वपन किया हुआ, ठीक वक्त पर बोया गया जो।

कालोल (सं० पु०) १ द्रोणकाक, बड़ा कौआ। २ तिब्बतका एक शहर।

कालोल— बम्बई प्रान्तके सीमास्थित पांचमहल जिलेका एक विभाग। इसके उत्तर गोधरा, पूर्व बारिया और दक्षिण तथा पश्चिम बड़ोदा है। इस विभागके उत्तर हिस्से मध्य गोमा और दक्षिण करद् नामी नदी प्रवाहित है। हालोल नामक दूसरा विभाग भी इसके साथ एकत्र अवस्थित है। दोनों विभागोंके लिये चार फौजदारी अदालतें और दो थाने हैं। एजाफिया नामक एक जातीय कर्मचारी मालगुजारी लेता और पुलिसका कार्य कर लेता है।

२ उक्त कालोल विभागका प्रधान नगर। यह अक्षा० २२ ३६´ उ० और देशा० ७३ ३१ पू० पर अवस्थित है। इस स्थानके अधिवासी अधिकांश कृषक हैं। लोकसंख्या प्रायः चार हजार है।

३ बम्बई प्रेसिडेन्सीके सीमास्थित बड़ोदा राज्यका एक उपविभाग। लोकसंख्या ८९ हजारसे अधिक है। राजपूताना मालवा रेलवे इसके भीतर चला गया है।

४ बड़ोदा राज्यके कालोल उपविभागका प्रधान नगर। यह अक्षा० २३ १५´ ३१´´ उ० और देशा० ७२ ३१´ पू० पर अवस्थित है। लोकसंख्या पांच हजारसे कुछ कम है। यहां एक डाकबंगला, एक स्कूल और एक डाकघर बना है। राजपूताना मालवा रेलवेका एक ष्टेशन भी विद्यमान है।

कालोल (हिं० स्त्री०) १ कल्पवर्ष, ज्यादती, आमायन। २ सूर्यको आविष्य। ३ काला जाना।

काल्य (सं० पु०) कल्पे विधो भवः, कल्प यत्। इत्यमर। १ हरिद्राविशेष किसी किस्मकी हलदी। २ मध्यपठी। ३ प्रातःकाल, वाचका नजून। (त्रि०) ४ कालसम्बन्धीय।

काल्पक, कल्प देखो।

काल्पनिक (सं० त्रि०) कल्पनाया आगतः, कल्पना ठञ्। कल्पनाजात, कल्पनासे निकला हुआ। २ कल्पित, माना हुआ। किसी वस्तुमें अन्य वस्तुके आरोपको कल्पना कहते हैं। उसी प्रकारसे आरोपित वस्तुका नाम काल्पनिक या कल्पित है।

काल्पनिकता (सं० स्त्री०) काल्पनिकस्य भावः, काल्पनिक-तल् टाप्। १ कल्पनाजातत्व। २ कल्पितत्व।

काल्पनिकी (सं० स्त्री०) काल्पनिक ङीप्। १ कल्पना जाता। २ कल्पिता।

काल्पसूत्र (सं० त्रि०) कल्पसूत्रं वेत्ति अधीते वा, कल्पसूत्र ढक्‌ निपेधे अण्। १ कल्पसूत्रवेत्ता। २ कल्पसूत्र अध्ययनकारी।

कालिप—बंङ्गालके चौवीस परगनेका एक ग्राम। वह कलकत्तेसे २४ कोस दक्षिण गङ्गाके दाहने कूल पर अवस्थित है। वहां वाणिज्य बहुत होता है। समुद्रसे कलकत्ते जाते समय जहाज वहीं लङ्गड डालते हैं।

कालिक (सं० त्रि०) कल्पग्रन्थं वक्ति, कल्प-ठञ्। वेदाङ्ग कल्पग्रन्थोक्त विधानादि।

कालपी (काल्पी) युक्तप्रदेशके जालौन जिलेकी कालपी तहसीलका प्रधान नगर। यह अक्षा० २६° ७´ ४९´´ उ० और देशा० ७९° ४७´ २२´´ पू० पर जालौन नगरसे १३ कोस पूर्व अवस्थित है। पुरानी कालपीके अग्निकोणमें नयी कालपी बनी है। नगर यमुना नदीके तीर पर्वतके मध्य बसा है। ऐतिहासिक फरिश्ताके मतानुसार खृष्टीय ३३०—४०० शताब्दके मध्य कन्नौजके वासुदेवने कालपीको स्थापन किया था। किन्तु स्थानीय लोग कहते कि कालियदेव राजा उसके स्थापयिता थे। ११९६ ई० को मुहम्मद घोरीके प्रतिनिधि कुतुबउद्-दीनने उसे जय किया। १४००ई० को कालपी मुहम्मदखान्को दी गयी। जौनपुरके शरकीवंशीय मुसलमान नवाबोंमें इब्राहिम नामक किसी नृपतिने अधिकार करनेको अतिमात्र उत्सुक हो पञ्चादश शताब्दके प्रारम्भमें दो बार कालपी नगर आक्रमण किया था। किन्तु वह दोनोबार व्यर्थ मनोरथ हो लौट गये। १४३५ ई० को मालवराज होशङ्गने आक्रमण कर कालपीको अधिकार किया। १४४२ ई० को शरकी वंशीय महमूद राजाने होशङ्गसे कहला भेजा कि उन्होंने कालपीमें जिस प्रतिनिधिको रखा, वह मुसलमान धर्मके निषिद्ध आचरणमें लगा था। महमूदने उस प्रतिनिधिको शास्ति देनेके लिये होशङ्गसे अनुमति ली। तदनुसार महमूद शास्ति देनेके बहाने स्वयं कालपी अधिकार कर बैठे। शरकी वंशीय शेष राजा सुलतान हुसेनके साथ १४७७ ई० को दिल्लीके सम्राट्का एक युद्ध हुवा था। उसमें हुसनके हार जाने पर कालपी नगर शरकी वंशके हाथसे निकल दिल्ली सम्राट्के अधिकारमें गया। फिर सम्राट् इब्राहीमके समय १५१८ ई० को जलाल खान् जौनपुरके शासनकर्ता बनकर और कुछ दिन पीछे कालपीमें स्वयं स्वाधीन राजा हो ससैन्य आगरे सम्राट्का आक्रमण करने चले। अन्तको यह हार कर लौट भागे। किन्तु गोंडजातीय राजाने उन्हें पकड़ इब्राहीमको सौंपा था। उसके पीछे मुगल सम्राटोंके शासनकाल कालपीमें अनेक घटनायें हुई। अकबर शाहकी टकसाल कालपीमें ही थी। वहां ताम्रमुद्रा (पैसे) प्रस्तुत होती थी। महाराष्ट्रोंने कालपीको अपना अड्डा बनाया। १८०३ ई० को नाना गोविन्द रावने कालपीको अधिकार किया था। किन्तु उसी वर्ष दिसम्बर मास वह अंगरेजोंके हाथमें चली गयी। फिर कम्पनीने राजा हिम्मत बहादुरको जो राज्य दिया, कालपी नगर उसीके मध्य पड़ा था। किन्तु अल्प दिनोंमें ही उक्त राजाके मर जानेसे १८०४ ई० को कालपीमें फिर अङ्गरेजोंका अधिकार हो गया। उसके पीछे एक बार गोविन्दरावको अङ्गरेजोंने कालपी सौंप दी। किन्तु उन्होंने उसके बदले दूसरे दो स्थान ले लिये, जिससे कालपी अङ्गरेजोंके ही हाथ रह गयी। बलवेके समय झांसीकी रानी, रायसाहब और बांदेके नवाबने वहां प्रायः १२००० विद्रोही सेनादल समवेत किया था। अङ्गरेज सेनापति सर ह्यूरोजने ससैन्य प्रतिकूल यात्रा कर कालपीमें उन्हें हरा दिया।

यमुना नदी पर कालपीके पुरातन दुर्गका भग्नावशेष देख पड़ता है। दुर्गका अधिकांश यमुनाके गर्भमें है। नदीसे दुर्गमें जानेका पथ नहीं। दुर्गमें महाराष्ट्रोंके शासन कालकी कई इमारतें देखनेको मिलती हैं। पश्चिममें बहुतसी कबरों और मसजिदोंके चिह्न विद्यमान हैं। उसके वायुकोणमें प्रभावतीका मन्दिर है। वहां एक बड़ा बाजार लगता है। वर्षाकालको उस बाजारमें बौद्ध और हिन्दुवोंके शासनकालकी मुद्रा बिकती है। पुरातन हर्म्यादिके मध्य मदार साहबकी कब्र, गफूरकी कब्र, चोरबीबीकी कब्र, बहादुर शहीदकी कब्र, और चौरासी गुम्बज देखने लायक हैं। फिर दूसरी एक कब्र पर प्रकाण्ड सिंहमूर्ति है। उपरि उक्त स्थानोंमें चौरासी गुम्बज नामक हर्म्य सर्वापेक्षा प्रधान है। उस गुम्बजमें पत्थर और चूनेका बहुत अच्छा काम बना है। उसमें अनेक प्रकारके बेलबूटे

चढ़े हैं। भीतरी गोलोंमें मानव चित्रकारकी दक्षता-प्रभाको प्रदर्शित थी, उसी ढंगकी चाल बाजारोंकी इमारतकी भी बराबरी देख पड़ती है। गुम्बज समचतुष्कोण है। उसकी एक दिक, बाहरी भीतरी नापसे पर ८३ हाथ दीर्घ और ११ हाथ उच्च होगी। भीतरका स्थान भस्तरकी विसात जैसा है। एक एक और आठ आठके हिसाबसे सब ६० खम्भ हैं। खम्भोंपर दोनों ओर १८ १८ कर ८८ मेहराबें लगी हैं। छत चारों ओर समतल है। मध्यस्थलमें गुम्बज बना है। चारों कोण पर चार छोटे छोटे दूसरे गुम्बज देखनेमें बहुत सुन्दर हैं। उनको और हटियाल करनेसे मनमें एक प्रकारका अपूर्व भाव उदय होता है। ठीक निर्णय किया जा नहीं सकता—उसका चौरासी गुम्बज नाम क्यों पड़ा? सम्भवतः चालीस गुम्बजसे चौरासी गुम्बज नाम पड़ गया होगा। यह चाबुलिय नगरको पश्चिमदिक है। नूतन नगरकी पश्चिमदिक गणेशगञ्ज और तार-नागञ्ज है। यहां विस्तृत व्यवसाय होता है। ड्योढ़ाबार नामक स्थानमें सन् ८११ हिजरीको एक शिलालिपि देख पड़ती है। फिर यहीं मसजिदके प्रवेश द्वार पर सन् १०८१ हिजरीकी और शेख अबदुल मजुरकी कूपपर सम्राट् औरङ्गजेबके राजत्वके १८वें वर्षकी एक लिपि अद्यापि विद्यमान है।

राजा बीरबलने काल्पी नगरमें ही जन्म लिया था। वह जातिके ब्राह्मण थे। पहले उनका नाम महेश दास था। वीरबल सम्राट् अकबरके दक्षिण हस्त थे।

काल्पीकी लोकसंख्या आजकल प्रायः साढ़े चौदह हजार होगी। वर्षाकालको झांसी और कानपुर जानेके लिये यहांसे यमुना पर नौका या सेतु बनता था। यमुनामें स्टेमरके घाट भी है। यहां हमीरपुर बांदा, जालौन और झांसी जानेके लिये कई उत्तम पथ काल्पीसे निकले हैं। यहांसे रुई, और अनाज कानपुर मिर्जापुर और कलकत्ते भेजा जाता है। नदीसे राह भी अधिक पण्य द्रव्य आते जाते हैं। काल्पीमें बढ़िया मिसरी बनती है। कागजका कारखाना भी है। काल्पीका कागज बहुत अच्छा होता है। पहले काल्पीका कागज सुप्रसिद्ध था।

कानपुरसे बम्बईको ग्रेट इण्डियन पेनिनसुला रेलवे काल्पी होकर गयी है। काल्पी ष्टेशन भी है। यमुनापर पक्का पुल बना है।

काल्पीमें एक अतिरिक्त असिष्टाण्ट कमिश्नर रहता है। यहां अदालतें, पुलिसके थाने, औषधालय और विद्यालय भी है।

कासक—चीनतातारवासी रुसियोंकी एक शाखा कासक अपनेको कज़ाक कहते हैं। यह समर, तार्मन, पेग्रद और तारचिन चार जातियोंमें सब बस्तीमें पाये हैं। १६०१ ई० को इन्होंने यहांपर राज्य स्थापन किया था। प्रायः एक शताब्द काल उनका राजत्व रहा। ग्रीकके कास्मक चीनाओंके अधीन हो गये। तुर्की अमीसक (अर्थात् पश्चात् परिव्राट) या महाम्नोय कोमरीमक (अश्विरात्रि) अथवा महोमोय कास्मक (अर्थात् दुर्दान्त वीर) शब्दसे इनके नामकी उत्पत्ति है। सुवेन अंचका अधःपतन होनेसे एक दल गोबी मरुसे दक्षिण गया और बीकानर ह्रद पर्यन्त पैठ पड़ा। उसी अंचके कुछ अंचर १६७१ ई० को महाकरूसे चीन देशको छोड़े थे। कास्मक और उन सब लोग एक मूल जातिसे उत्पन्न हैं। वासपरिवर्तन करनेसे यह कास्मक बवार और पारसिक जातिके साथ एक प्रकार मिल गये हैं। यह चार प्रधान शाखामें विभक्त हैं। यथा—१ खासकोट या पेग्रद—यह युद्ध व्यवसायी हैं। उनको संख्या प्रायः ६०००० है। यह बीकानर ह्रदके निकट रहते हैं। फिर उनमें कुछ लोग अधिवास करको रहिष नदीके तीर आकर बसे हैं। ग्रीकके उनको विशेष शाखा बाहरीमें मिल गयी है। इस जातीय दूसरा दल युरोपीय रूसके अधस्थान किर्गिसमें रहता है। २ जहर—चीन राज्यके पश्चिम सुङ्गरिया राज्यमें उनका वासस्थान है। उसीके नामसे यह ख्यात भी हो गये हैं। उनकी संख्या प्रायः १००० है। ३ टर्ढ तामस या ठोमद। यह सुङ्गरिया छोड़ युरोपीय रूसकी डन और टर्लि नदीके तीर जा बस रहे हैं। उनको संख्या प्रायः १३००० है। यह आजकल उन जनताओंके साथ प्रायः मिल गये हैं। ४ तार्मन—यह १६६० ई० को सुङ्गरिया छोड़ गया

नदी तीर रहने लगे। इन्हें आज भी लोग "वल्गावासी" काल्मक कहते हैं।

काल्मक भिन्न दूसरी किसी मङ्गोलीय वा तुर्क जातिके तुर्कस्थानवासियोंकी आकृति प्रकृतिसे उनका पूर्ण सौसादृश्य नहीं पड़ता। त्रयोदश शताब्दके पूर्व जरनाण्डिसने हूण जातिकी वर्णना की थी। इसके साथ काल्मकोंका ही सम्पूर्ण सादृश्य देखा जाता है। किसी समय हूण दक्षिण युरोपमें फैल गये थे।

काल्मक—खर्वकाय, विस्तृत स्कन्ध, दीर्घ मस्तक, रक्ताभ गात्रवर्ण (नातिकृष्णवर्ण), अर्धमुद्रितनेत्र, सरल निम्नसुख-नासिक, प्रशस्तनासारन्ध्र और कुञ्चित एवं ऊर्ध्वकेश होते हैं। वह मुगल और मञ्चु लोगोंकी मूल जाति गिने जाते हैं। काल्मक भ्रमणशील, अश्वपृष्ठवासी और बहुत ही युद्धप्रिय हैं। वह साधारणतः यवके सत्तू पानीमें घोल कर खाते और कुमिश नामक एक प्रकार पानीय (घोटकीके मट्ठे दुग्धसे प्रस्तुत) पीते हैं। १८२८ ई० को कमस्क काल्मकोंकी शिक्षाके लिये विद्यालय प्रतिष्ठित हुये थे। उन विद्यालयोंकी शिक्षासे वह सभ्य और शिक्षित और ईसाई बन रहे हैं। किन्तु अनेक काल्मक आज भी बौद्ध ही हैं।

काल्य (सं० क्ली०) कल्यमेव स्वार्थे अण्, कलयति चेष्टां वा, कलि-यक् प्रज्ञादित्वात् अण्। १ प्रत्यूष, सवेरा। (त्रि०) २ प्रातःकाल कर्तव्य, सवेरे किया जानेवाला।

"प्रभाते काल्यमुत्थाय चक्रे शौचादनुत्तमम्।" (रामायण, ९।३३)

काल्यक (सं० पु०) काले साधुः काल-यत् स्वार्थे कन्। आमहरिद्रा, कच्ची हलदी।

काल्या (सं० स्त्री०) कालः प्राप्तो ऽस्याः, काल-यत् टाप्। १ गर्भग्रहणप्राप्तकाल रजस्वला गौ, उठी हुयी गाय, इसका अपर संस्कृत नाम उपसर्या है। २ प्रतिवत्सर प्रसवशीला गौ, हर साल ब्यानेवाली गाय।

काल्याणक (सं० क्ली०) कल्याणस्य भावः, कल्याण वुञ्। इद्वन्तोपधाद्विभ्यः। पा ५।१।१३१। कल्याणता, भलाईका भाव।

काल्याणिनेय (सं० पु०) कल्याण्या अपत्यं कल्याणी ढक् दुनङादेशश्च। कल्याण्यादीनामिनङ्। पा। ४।१।१२६। १ कल्याणीके पुत्र। (त्रि०) २ कल्याणीसे उत्पन्न।

काल्याणीकृत (वै० त्रि०) मंगल किया हुवा।

"काल्याणीकृता देव सर्ह पविमाप सीवरद काम्यं कल्यत।"

(ऋक्० १।२)

काव्हि (हिं०) कल देखो।

काव (सं० क्ली०) कविर्देवता ऽस्य, कवि-अण्। साम-विशेष। इसके देवता कवि हैं।

कावचिक (सं० क्ली०) कवचिनां समूहः, कवचिन्-ठञ्। ठञ् कवचिनश्च। पा ४।२।४१। १ वर्मधारी योद्धगण, जिरह बखतर पहने हुये लोगोंका गिरोह। (त्रि०) २ कवच-सम्बन्धीय, बखतरके मुताल्लिक।

कावट (सं० पु०) कर्वट, १०० गावोंका परगना या जिला।

कावड़ा—बङ्गालमें रहनेवाली एक जाति। कावड़ा चोरी करनेवाले कहाते हैं। परन्तु उनमें बहुतसे लोग खेती आदिके सहारे भी जीविका उपार्जन करते हैं।

कावर (हिं० पु०) १ मत्स्यविशेष, एक छोटा बरछा। वह जहाजकी गलहीमें बांध कर रखा जाता है। कावरसे ह्वेल आदिको मारते हैं।

कावरी (हिं० स्त्री०) मुद्दी, रस्सीका फंदा। वह दो ढोनी रस्सियां बंटनेसे बनती हैं। जहाजमें उससे चीजें बांधी जाती हैं।

कावलक (सं० पु०) १ पेचक, उल्लू। (त्रि०) २ भयानक, खौफनाक। ३ श्लोभक, जौदका गुनाम।

कावली (हिं० स्त्री०) मत्स्यविशेष, किसी किस्मकी मछली यह दाक्षिणात्यकी नदीमें देख पड़ती है।

कावष (सं० क्ली०) सामविशेष।

कावषेय (सं० पु०) यजुर्वेदके एक ऋषि।

कावा (फा० पु०) चक्राकार भ्रमण, चक्कर, भांवर। घोड़ेके गलेकी रस्सी पकड़ एक आदमी खड़ा हो जाता और उसे काटनेके लिये अपनी चारो ओर घुमाता है। उसीको प्रायः कावा कहते हैं।

कावाद (सं० पु०) कु कुत्सितः ईषत् वा वादः, कोः कादेशः। वाक्यके द्वारा कलह, जबानी झगड़ा, किचकिच।

कावार (सं॰ क्लो॰) कं जलं वारयतीति, क वा-ण अण्। शैवाल, सेवार।

कावारी (सं॰ स्त्री॰) कावार ङीष्। छत्रादिविहीन, जिसको बनी छतरी। उसका संस्कृत पर्याय—अङ्गम कुटी थी। अमत्कुटी है।

काविराज् (सं॰ स्त्री॰) छन्दो विशेष एक अक्षर। इसमें ८+१२+८ अक्षर होते हैं।

कावी (सं॰ स्त्री॰) कवेरियम् कवि-अण्-ङीप्-यो"। (आश्वलायनश्रौत॰ ५।१।१।७१) अविवाहितयोषा, प्रथमही ऋतु न होनेवाली।

कावृक (सं॰ पु॰) कुत्सितो वृक यस्य, ईषत् वृक इव वा, को वादेशः। १ कुक्कुट, मुरगा। २ चक्रवाक चकवा। ३ पीतमस्तक पक्षी, पीले माथेवाली चिड़िया।

कावेर (सं॰ क्ली॰) कस्य सूर्यस्य वा ईषत् वेरं अङ्ग यस्य ज्योतिर्मयत्वात्। कुङ्कुम रोरी।

कावेरक (सं॰ पु॰) उक्त नामके गोत्रापत्य।

कावेरिका (सं॰ स्त्री॰) कावेरी स्वार्थे कन्-टाप् ह्रस्वश्च कुत्सितम्। कावेरी नदी।

कावेरी (सं॰ स्त्री॰) कं जलमेव वेरं शरीरमस्याः, कवेर अण्। (ऋग्वेद। ५।१।१।१९) १ दक्षिणापथकी एक महानदी दक्षिणका एक बड़ा दरया। यह अक्षा॰ १२ २५´ उ॰ तथा देशा॰ ७५ ३४´ पू॰ पर कुरग राज्यमें पश्चिमघाटके ब्रह्मगिरिसे निकल दक्षिण पूर्वाभिमुख महिसुर पश्चिमका अतिक्रम कर मन्द्राज प्रदेशके मध्यसे बङ्गोपसागरमें जा गिरी है। कुरग राज्यमें कावेरीकी गति अति वक्रभावापन्न है। गर्भ प्रस्तरमय है। उभय तीर नाना उपवनाकीर्ण है। बरगूर, कुम्बकोण, कनार्क, सुन्तीकुप्प शिवकोन और सुवर्णवती नामी कई छोटी शाखानदी हैं।

कावेरी नदी महिसुर राज्यमें प्रवेश परिसरकी प्रवेश कर एकबारगी ही १०० गजसे ४०० गज तक फैल गयी है। वहां छोटी बारीमें सिवे उसमें कई नाले हैं। नालोंके बीच बीच बांध भी बनी है। उनमें बड़ा नाला प्रायः १६ कोस विस्तृत है।

कावेरीके मध्य पुण्यतीर्थ शिवसमुद्र, श्रीरङ्गपत्तन और श्रीरङ्गम् द्वीप विद्यमान है। शिवसमुद्रके समीप कावेरी प्रपात है। प्रायः १५० हाथ ऊंचेसे जल नीचे को उतरता है। वहां दृश्य मनोमुग्धकर है। शिव समुद्रमें कावेरीके ऊपर पार पक्का हिन्दू राजाओंके बनाये दो उत्कृष्ट प्रस्तरसेतु हैं। यात्री इन्हीं सेतुसे शिवसमुद्रके दर्शनको जाते हैं।

महिसुरमें कावेरीकी कई शाखा हैं। यथा—हेमवती लक्ष्मणतीर्थ, कोबिनावती, शिंशा अर्कवती, सुवर्णवती या होन्‌होला। वहां तञ्जोर और त्रिचना-पल्लीमें पश्चिमाभिमुख कई नाले निकल गये हैं। उनमें कालिदम (कोलरून) नामक शाखा ही प्रधान है।

मन्द्राज विभागमें कावेरीकी निम्नलिखित कई शाखा हैं—भवानी, नोयेल, अमरावती।

रामायण, महाभारत प्रभृति प्राचीन ग्रन्थोंमें कावेरी पुण्यतोया मानी गयी है। हरिवंशके मतानुसार युवनाश्वके शापसे गङ्गाने अर्धाङ्गसे युवनाश्वकी कन्या बन जन्मग्रहण किया था। उन्हींका नाम कावेरी है। जह्नु मुनिने उनका पाणि-ग्रहण किया। कावेरीसे जो गर्भ उत्पन्न हुआ, सुनह नामक एक पार्थिव पुत्रने जन्म लिया। (हरिवं॰ २७) गङ्गाका अर्धांश होनेसे कावेरी 'अर्धगङ्गा' नामसे ख्यात हुयी है। स्कन्दपुराणीय कावेरीमाहात्म्यमें लिखा है—

"ब्रह्माकी कन्या विष्णु माया या लोपामुद्राने पिताके आदेशसे कावेरी नामक किसी मुनिकी कन्या हो जन्म ग्रहण किया था। फिर कावेरी मुनिके आनन्दवर्धन और मानवगणके पापमोचनको वह नदीरूपसे प्रवाहित हुयी।"

तलकावेरी और भागमण्डल नामक प्रथम सङ्गम स्थान पर अति प्राचीन शिवमन्दिर है। कार्तिक मास सहस्र सहस्र तीर्थयात्री उक्त मन्दिर दर्शन और कावेरी सलिलमें स्नान करनेको जाते हैं। दक्षिणा पथके लोग कावेरीको "दक्षिणगङ्गा" कहते हैं।

हिन्दुस्थानमें जिस प्रकार निष्ठावान् हिन्दू गङ्गा स्नान काल महाष्टक पाठ करते वैसे ही दाक्षिणात्यके लोग कावेरी नहाने "कावेरीस्तोत्र" पढ़ते हैं।

कावेरी-प्रवाहित प्रदेशमें 'पञ्चाकोशम' या कावेरी

वाले ब्राह्मणोंका वास है। वही ब्राह्मण अथवा या कावेरीदेवीका पौरोहित्य करते हैं। वह सकल भागानभोजी है। अपरापर कोडग ब्राह्मणोंके साथ उनसे विवाहका आदान प्रदान नहीं होता।

कावेरीके प्रबल तरङ्गसे देश और शस्यको बचानेके लिये नाना स्थानोंमें हिन्दू राजावोंके बनाये पत्थरके बांध मौजूद है। उनमें श्रीरङ्गके निकट प्रधान बांध है। वह एक पत्थरसे बनाया गया है। दीर्घ १०४० फीट दीर्घ और ४० से ६० फीट तक विस्तृत है। खृष्टीय ४ र्थ शताब्दसे पहले वह प्रस्तुत हुआ था। किन्तु आज भी उसे पुराना कह नहीं सकते।

पूजा कालको गङ्गा प्रभृति तीर्थ आवाहन करनेके मन्त्रमें कावेरी नदीका नाम अन्तर्निविष्ट है,—

"गङ्गे च यमुने चैव गोदावरि सरस्वति।
नर्मदे सिन्धु कावेरि जलेऽस्मिन् सन्निधिं कुरु॥" (तीर्थावाहन मन्त्र)

कावेरीका जल स्वादु, शमकर, लघु, दीपन, दद्रु, कुष्ठघ्न और मेधा बुद्धि एवं रुचिप्रद है। (राजनिघण्टु)

कुत्सितं अपवित्रं नीरं यस्याः। २ वेश्या, रण्डी। ३ हरिद्रा हल्दी।

काव्य (सं० क्लो०) कवेरिदम्, कवेः कर्म भावो वा, कवि-ष्यञ्। १ कविताग्रन्थ, शायरीकी किताब। २ कुशल, चैन, खुशहाली। ३ बुद्धिमत्ता, अक्लमन्दी। ४ रसयुक्त वाक्य, मीठी बोली।

"काव्यं यशसेऽर्थकृते व्यवहारविदे शिवेतरक्षतये।
सद्यःपरनिर्वृतये कान्तासम्मिततयोपदेशयुजे॥" (काव्यप्रकाश)

यशः, अर्थ, व्यवहारज्ञान, अमङ्गलविनाश, सद्यः परम निर्वृत्ति और कान्ता सकलके उपयुक्त उपदेश प्रयोगके निमित्त ही काव्य है।

"चतुर्वर्गफलप्राप्तिः सुखादल्पधियामपि।
काव्यादेव यतस्तेन तत्स्वरूपं निरूप्यते॥" (साहित्यदर्पण)

काव्यसे अल्प बुद्धि व्यक्ति भी अनायास धर्म, अर्थ, काम और मोक्षरूप चतुर्वर्ग फल पाते हैं। अत एव काव्यका स्वरूप निरूपण करते हैं।

"वाक्यं रसात्मकं काव्यं दोषास्तस्यापकर्षकाः।
उत्कर्षहेतवः प्रोक्ता गुणालङ्काररीतयः॥" (साहित्यदर्पण)

रसात्मक वाक्य ही काव्य है। दोष उसका अपकर्षक होता है गुण, अलङ्कार और रीतिसे काव्यका उत्कर्ष बढ़ता है।

"आनन्दविशेषजनकवाक्यं काव्यम्।" (रसगङ्गाधर)

जिस वाक्यद्वारा मनमें विशेष आनन्द आता, वही काव्य कहाता है।

"कविवाङ्निर्मितिः काव्यम्। सा च मनोहरचमत्कारकारिणी रचना।" (कौमुदी)

मनोहर एवं चमत्कारकारिणी रचनाविशिष्ट कविवाक्य द्वारा जो बनता, उसे ही विद्वान् काव्य कहते हैं।

प्रथमतः वह उत्तम, मध्यम और अधम भेदसे तीन प्रकारका होता है। यथा—ध्वनि, गुणीभूतव्यङ्ग और चित्रकाव्य।

अतिशय व्यङ्गार्थ एवं वाच्यार्थ अपेक्षा ध्वनि अधिक रहनेसे उत्तम, गुणीभूत व्यङ्ग लगनेसे मध्यम और शब्दचित्र तथा वाच्यचित्र पड़ने एवं व्यंग्यार्थ-शून्य पड़नेसे अधम काव्य कहाता है।

उक्त काव्य प्रकारान्तरसे द्विविध है—महाकाव्य और खण्डकाव्य। महाकाव्यमें सर्गबन्धन आयेगा और एक देवता अथवा सद्वंशजात धीरोदात्त गुण-युक्त एक क्षत्रिय किंवा एकवंशीय सत्कुलजात बहुतर राजाको नायक बनाया जायेगा। शृङ्गार, वीर और शान्तके मध्य एक रस उसका अङ्गीभूत होगा। समस्त रस एवं समस्त नाटकसन्धि, इतिवृत्त अथवा अन्य सज्जनाश्रित चरित्र उसके अङ्ग हैं। महाकाव्यके वर्ग चार हैं। उनमें एक फल है। प्रथम नमस्कार, आशीर्वाद, वस्तुनिर्देश, खलनिन्दा अथवा सज्जन गुणानुकीर्तन करेंगे। सर्गके प्रथम एकविध वृत्तछन्दः द्वारा और सर्गके शेषभागमें अन्यविध वृत्त द्वारा रचना की जायगी। इस प्रकारके आठ सर्ग लग सकेंगे, जो न बहुत अल्प और न बहुत दीर्घ रहें। किसी किसी-के कथनानुसार नाना वृत्तछन्दः द्वारा सर्गरचना भी हो सकती है। उनमें प्रति सर्गके अन्तपर भावी सर्गकी कथा-सूचना रहेगी। सन्ध्या, सूर्य, चन्द्र, रात्रि, प्रदोष, अन्धकार, दिवस, प्रातः, मध्याह्न मृगया, पर्वत,

ऋतु, वन, सागर, सम्भोग, विप्रलम्भ, मुनि, स्वर्ग, पुर, यज्ञ, रणप्रयाण, विवाह, मन्त्र, पुत्रजन्मादि महाकाव्य-का वर्णनीय विषय है। उन सबको यथायोग्य स्थानमें सन्निवेशित करना पड़ेगा।

साधारणतः काव्यमें दो प्रकारके भेद होते हैं। दृश्य और श्रव्य। जो काव्य अभिनयके उपयोगी रहते, उन्हें दृश्यकाव्य कहते हैं। यथा—नाटकादि। फिर जो काव्य केवल श्रवणके उपयोगी पाये जाते, वह श्रव्य कहाते हैं। दृश्यकाव्य—नाटक, प्रकरण, भाण, व्यायोग, समवकार, डिम, ईहामृग, अङ्क, वीथी और प्रहसन भेदसे दश प्रकार है। श्रव्यकाव्य पद्यगद्यभेदसे द्विविध होता है। पद्यकाव्यके दो भेद हैं—महाकाव्य और खण्डकाव्य। गद्यकाव्य भी कथा और आख्या-यिका भेदसे दो प्रकारका होता है। इसको छोड़ चम्पू, विरुद और करम्भक नामक तीन प्रकारका अन्यकाव्य मिलता है। (अलङ्कार देखो)

काव्य समुदाय काव्य अतिशय चमत्कार, अति सुन्दर और रसप्रधान होते हैं, इसीसे काव्य का कोमल कल्पनापर अन्य किसी शास्त्रकी आलोचनाकी इच्छा नहीं चलती। किसी उद्भट कविने कहा है—

"अर्थेन रहितो नाम काव्यं जीवेन रक्षितं।
जीवन्त्वं जीवितेन जीविनापि गुणस्य॥"

काव्यके नीतशास्त्र कहोंसे काव्य, औचित्यादिसे वक्रोक्ति और गुणादि कोविदाय विषय हो जाता है। काव्यप्रकाश, अमरचन्द्रकृत काव्यकल्पलता, काव्यकाम-धेनु, गीतमल्लविरचित काव्यकौतुक, काव्यकौमुदी, काव्य कौस्तुभ, कविचन्द्र एवं विद्यानिधिपुत्र न्यायवागीश विरचित काव्यचन्द्रिका, रत्नपाणि, राजचूड़ामणि दीक्षित, और श्रीनिवास दीक्षितकृत काव्यदर्पण कान्तिचन्द्र और गोविन्दरचित काव्यदीपिका, अनिल विरचित काव्यनिर्णय काव्यपरिच्छेद भारतीकवि, विश्वनाथ महापात्र और मम्मट भट्टकृत काव्यप्रकाश, रामानन्द आनन्दकविकृत काव्यप्रकाशनिदर्शन, गोविन्द भट्टकृत काव्यप्रदीप, योगिनाथरचित काव्य सारसंग्रह दण्डी तथा सोमेश्वररचित काव्यादर्श वाग्भटका काव्यानुशासन और काव्यालङ्कार, जिन-हेमाचार्यको अलङ्कारचिन्तामणि, रुद्रटका काव्या-लङ्कार, कुवलयानन्द, साहित्यदर्पण प्रभृति अलङ्कार-ग्रन्थमें काव्यका लक्षणादि और विस्तृत विवरण लिपिबद्ध हुआ है।

(पु०) कवे रपत्यम् पुमान्, कवि-ष्यञ् यञ् वा। १ शुक्राचार्य उशना। पारसियोंके प्राचीन अवस्ता ग्रन्थमें शुक्राचार्य 'कवउस' नामसे वर्णित हुये हैं। ४ नामसमग्ररथीय एक ऋषि।

"कोशिस्तोमान् काव्यं वीर्याभिस्तव्यत्।
वीरस्य कथा यजत एन अवस वीतमयत्॥ (ऋग्वेद ४१। १८)

(त्रि०) १ कवि या ऋषिके गुण रखनेवाला जिसमें शायरको सिफत रहे। २ कविता सम्बन्धीय, शायरीसे मुताल्लिक।

काव्यचौर (सं० पु०) काव्यस्य चौर इव। १ अन्य रचित काव्य, अथवा बनानेवाला जो दूसरेकी बनायी शायरी अपनी बताता हो। २ बन्दूरेणु।

काव्यता (सं० स्त्री०) काव्यस्य भावः काव्य-तल्। काव्यका लक्षणादि, शायरी बनानेको मर्म।

काव्यदेवी (सं० स्त्री०) काश्मीरराजकी विमेय, काश्मीरको एक रानी। उन्होंने काव्यदेवीश्वर नामक शिवलिङ्ग स्थापन किया था। (राजतरङ्गिणी २।३१)

काव्यमीमांसक (सं० पु०) काव्यस्य काव्यशास्त्रस्य मीमांसकः, १ तत्। काव्यशास्त्रका मीमांसाकारक, इल्म फसाहतका उस्ताद।

काव्यरसिक (सं० त्रि०) काव्यस्य रसं वेत्ति, काव्य-रस ठन्। काव्यवर्णित रसका अनुभवकारी, शायरीका शौकीन।

काव्यलिङ्ग (सं० क्लो०) अर्थालङ्कारविशेष। इसका साहित्यदर्पणोक्त लक्षण इस प्रकार है,—

"हेतोर्वाक्यपदार्थत्वे काव्यलिङ्गं निगद्यते।"

हेतुका वाक्य और पदार्थत्व अर्थात् वाक्य या पदार्थका हेतु रहनेसे काव्यलिङ्ग अलङ्कार होता है। यथा—

"यत्त्वन्नेत्रसमानकान्ति सलिले मग्नं तदिन्दीवरं
मेघैरन्तरितः प्रिये तव मुखच्छायानुकारी शशी।
येऽपि त्वद्गमनानुकारिगतयस्ते राजहंसा गता-
स्त्वत्सादृश्यविनोदमात्रमपि मे दैवेन न क्षम्यते॥"

हे प्रिये! तुम्हारे चक्षुकी कान्तिके सदृश कान्तियुत पद्म जलमग्न हुआ है। तुम्हारे मुखके तुल्य चन्द्र मेघ द्वारा आवरित हुवा है एवं तुम्हारे गमनके अनुकारी गतिविशिष्ट राजहंस भी देशत्यागी हुये हैं। सुतरां वस्तु विशेषमें तुम्हारा सादृश्य देख कर जो हम सन्तुष्ट होंगे, विधाता उसे भी सह नहीं सकते।

इस स्थलपर शेष वाक्यके प्रतिपूर्व तीनों वाक्य हेतु हुये हैं। इसीसे वह काव्यलिङ्ग अलङ्कार है।

पदार्थगत काव्यलिङ्ग इस प्रकार होता है,—

"त्वद्वाजिराजिनिर्धूतधूलीपटलपङ्किलाम्।
न धत्ते शिरसा गङ्गां भूरिभारभिया हरः॥"

कोई किसी राजाको लक्ष्य कर कहता है, हे राजन्! तुम्हारे घोटकसमूहकर्तृक उत्थित धूलिराशि द्वारा गङ्गा पङ्किल हो गयी हैं। इसीसे महादेव उन्हें अधिक भार वहनके भयसे मस्तकपर धारण नहीं करते।

यहां परार्धश्लोकके प्रति पूर्वार्ध श्लोकका पद कारण है। इसीसे वह भी काव्यलिङ्ग अलङ्कार होता है।

काव्यशास्त्र (सं० क्ली०) काव्यं शास्त्रमिव उपदेशकत्वात् काव्यरूप शास्त्र, काव्यसे बहुविध हितोपदेश मिलता है। इसीसे काव्यको भी शास्त्र कहा करते हैं,—

"काव्यशास्त्रविनोदेन कालो गच्छति धीमताम्।" (उद्भट)

काव्यसुधा (सं० स्त्री०) काव्यं सुधा अमृतमिव, उपमि०। काव्यरूप अमृत। काव्य श्रवणसुखकर होता है। इसीसे उसकी तुलना अमृतसे करते हैं।

काव्यहास्य (सं० क्ली०) काव्येन काव्यश्रवणेन दर्शनेन वा हास्यं यत्र, बहुव्री०। प्रहसन, नकल। अधिकांश स्थलपर हास्यरसका वर्णन रहनेसे उसे सुन या उसका अभिनय देख अतिरिक्त हास्य करना पड़ता है। प्रहसन देखो।

काव्या (सं० स्त्री०) कव स्तुतिगाने बाहुलकात् ण्यत्-टाप्। १ बुद्धि, अक्ल। २ पूतना। वह मायाविनी विविध स्तुतिवाक्य एवं वेशविन्यास द्वारा नारियोंको मुग्ध कर उनसे शिशुग्रहणपूर्वक मार डालती थी। अन्तको कृष्णने उसका विनाश साधन किया। पूतना देखो।

काव्यायन (सं० पु०) काव्यस्य शुक्राचार्यस्य गोत्रापत्यम् काव्य-फक्। शुक्राचार्यके पुत्र प्रभृति वंशधर।

काव्यार्थापत्ति (सं० स्त्री०) अर्थापत्ति नामक अलङ्कार।

काश (सं० पु०-क्ली०) काशते दीप्यते, काश-पचाद्यच्। १ तृणविशेष, कास। (Saccharum spontaueum) उसका संस्कृत पर्याय-इक्षुगन्धा, पोटगल, काश, काशी, काशा, वायसेक्षु, काण्डेक्षु, अमरपुष्पक, काशक, वनहासक इक्ष्वारि, काकेक्षु, इक्षुर, इक्षुकाण्ड, शारद, सितपुष्पक, नादेय, दर्भपत्र, लेखन, काण्डकाण्डक, और कच्छूलकारक है। भावप्रकाशके मतमें काश मधुर एवं तिक्तरस, पाकमें मधुर, शीतल और भेदकारक है। उससे मूत्रकृच्छ्र, अश्मरी, दाह, रक्तदोष, क्षय और पित्तसे उत्पन्न रोग नष्ट हो जाता है। राजनिघण्टु और शब्दरत्नावली ने उसे रुचि, तृप्ति, बल एवं शुक्रकारक और श्रान्ति तथा कफनाशक एवं कण्ठकण्डुकारी लिखा है।

हिन्दुस्थानमें काशको कांस, कगर, कोध, कुस या कास, बङ्गालमें खागरा, युक्तप्रदेशमें कांसी, अवधमें दर, कुमायूंमें झांस, पंजाबमें सरकर, राजपूतानामें काशी, सिन्धुमें खान, मध्यप्रदेशमें पदर, मारवाड़में कगर, तैलङ्गमें रेल्लुगद्दि, और ब्रह्ममें येतकियाक्रिन कहते हैं। वह मोटी और बारहो महीने रहनेव ली घास है। काशकी जड़ें दूरतक रेंगते चली जाती है। भारतमें वह बहुत मिलता है। फिर हिमालयमें काश ६००० फीट ऊपर तक पाया जाता है। भूमिकी प्रकृतिके अनुसार उसकी उच्चतामें भी भेद पड़ता है। भीगी नीची जमीन् काशका घर है। वहां उसकी फूलती हुयी डालियां १२ फीट तक बढ़ती हैं। वर्षा ऋतु समाप्त होते ही काश फूलता है। हिन्दीके महाकवि तुलसीदासजीने लिखा है,—

"फूले काश सकल महि छायो। जनु वर्षा कृत प्रकट बुढ़ायो॥"

काशकी जड़ बहुत सुदृढ लगती है। उसे खेतोंसे निकालना कुछ सरल नहीं। कहते हैं कुछ दिनोंमें वह आप ही आप नष्ट हो जाता है।

काश अधिकतर छानी छप्परके काम आता है। उससे रस्सियां और चटाइयां भी तैयार होती हैं।

काशको भैंस बड़े चावसे खाती है। नया काश हाथियोंको भी खिलाया जाता है। झंग जिलेमें वह बहुत होता है। रोहतक जिलेमें घोड़ोंको काश

बिकाते हैं। बड़ा कट और बकरे भी उससे सन्तुष्ट रहते हैं। किन्तु हिन्दुस्तानका काश इतना बड़ा होता है कि उसे पशु कभी नहीं खाता। काश अति पवित्र तृण है।

(पु०) केन शब्देन कफाकारेण [illegible] व्याप्नोति इव [illegible]। १ शब्द, कफम, खांस। कासयति शब्दं करोति, कस णिच् पचाद्यच्। २ रोगविशेष, खांसीकी बीमारी।

“[illegible] ।
[illegible] ॥” (सुश्रुत)

मुख नासिकादि द्वारा अतिरिक्त धूम वा धूलि प्रभृतिके प्रवेश, अपरिपक्व रसके ऊर्ध्व गमन, व्यायाम, रूक्ष द्रव्यसेवन, दुष्ट भोजनादि दोषसे मुखद्रव्यके विपथ पर गमन, मलमूत्रादिके वेगधारण और छिंकाके वेगरोधादि सकल कारणसे वायु कुपित हो अन्यान्य समुदाय दोष कुपित कर देता है। इसीसे कास रोगकी उत्पत्ति होती है।

“पूर्वरूपं भवेत्तेषां शूकपूर्णगलास्यता।
कण्ठे कण्डूश्च भोज्यानामवरोधश्च जायते॥” (चरक चि०)

कास रोग उत्पन्न होनेसे पहले बोध होता मानो गल और मुखके मध्य कोई शूक (धानका रेशा) परिपूर्ण है। गलेमें खरखर होने लगता है। फिर भोजन करते समय ऐसी यातना मालूम पड़ती मानो भुक्तद्रव्य अटका हुआ है।

अधः प्रतिहतो वायुरूर्ध्वस्रोतःसमाश्रितः।
उदानभावमापन्नः कण्ठे सक्तस्तथोरसि॥
आविश्य शिरसः खानि सर्वाणि प्रतिपूरयन्।
आभञ्जन्नाक्षिपन् देहं हनुमन्ये तथाक्षिणी॥
नेत्रे पृष्ठमुरः पार्श्वे निर्भुज्य स्तम्भयंस्ततः।
शुष्को वा सकफो वापि कसनात् कास उच्यते॥
प्रतिघातविशेषेण तस्य वायोः स्वरस्य च।
वेदनाशब्दवैशिष्ट्यं कासानामुपजायते॥” (चरक)

निःश्वास समूहद्वारा वायु अधोदिक् जा न सकनेसे ऊर्ध्व दिक गमन करता है। दूसरे उदानको पाकर वह कण्ठ और वक्षःस्थलमें आबद्ध हो जाता है। फिर वायु ऊर्ध्वगमनस्थ मुख नासिका, कर्ण और चक्षु इन छिद्र समूहमें पुन [illegible] छिद्र पूर्ण करता है। इसीसे वायु मुख द्वारसे विविध शब्दके साथ निर्गत होता है। उस समय रोगीका देह कुब्ज, मस्तक, हृदय, वक्षःस्थल, पार्श्व, हनु एवं नेत्रद्वय आकुंचित और स्तम्भ पदादि आक्षिप्त हो जाता है। कासरोगमें कभी केवल वायुमात्र और कभी कफादि दोष भी उसके साथ निकलता है। वेगवान् वायु विविध भावसे प्रतिहत होनेसे नानाविध शब्द और वेदना हुआ करती है।

कासरोग कई प्रकारका है—वातज, पित्तज, श्लेष्मज, सन्निपातज, क्षतज और क्षयज।

“रूक्षशीतकषायाल्पप्रमितानशनं स्त्रियः।
वेगधारणमायासो वातकासप्रवर्तकाः॥
हृत्पार्श्वोरःशिरःशूलस्वरभेदकरो भृशम्।
शुष्कोरःकण्ठवक्त्रस्य हृष्टलोम्नः प्रताम्यतः॥
[illegible]।
[illegible]।
[illegible]।
[illegible]॥” (चरक)

रूक्ष, शीतल एवं कषाय द्रव्य भोजन, अल्पपरिमाण भोजन, उपवास, अतिरिक्त स्त्रीप्रसङ्ग मलमूत्रादिके वेगधारण और परिश्रमजनक कार्यसमूह द्वारा वायु कुपित होता है। उससे अन्यान्य दोष भी कुपित हो वातज कास उत्पादन करते हैं। इस कासमें हृदय, पार्श्वदेश, वक्षःस्थल और मस्तकमें वेदना होती है। स्वरभेद पड़ता है। बार बार वक्षः कण्ठ और मुख सूख जाता है। रोमहर्ष होता है। मूर्च्छा आती है। कासका अत्यन्त शब्द उठता है। शरीरको ग्लानि लगती है। मुख शुष्क रहता है। दुर्बलता आती है। बल घटता है। मोह पड़ता है। फिर शुष्क कास प्रभृतिका अपच भासता है। खांसते खांसते अति अल्प परिमाणमें शुष्क कफ निकलनेसे कुछ उपशम समझ पड़ता है। किन्तु स्निग्ध द्रव्य लवण अम्ल और उष्ण द्रव्य खानेसे उसका प्रकृत उपशम होता है। आहार जीर्ण होनेसे वातज कासका वेग बहुत बढ़ जाता है।

“[illegible]।
[illegible]॥

पीतनिष्ठीवनाक्षित्वं तिक्तास्यत्वं स्वरामयः ।
उरो धूमायनं तृष्णादाहमोहारुचिभ्रमाः ॥
प्रततं कासमानश्च ज्योतींषीव च पश्यति ।
श्लेष्माणं पित्तसंसृष्टं निष्ठीवति च पैत्तिके ॥" (चरक)

कटुरस, उष्णद्रव्य, अम्लपाकद्रव्य, अम्लरस एवं चार द्रव्य भोजन और क्रोध, अग्नि वा रौद्रताप प्रभृति कारणसे पित्त कुपित हो अन्यान्य दोषको भी कुपित कर देनेसे पित्तजकासकी उत्पत्ति होती है । उसमें दोनों चक्षु पीतवर्ण पड जाते हैं । मुखका आस्वाद तिक्त रहता है । स्वर भङ्ग होता है । वक्षःस्थलसे धूम निर्गमकी भांति यातना उठती है । तृष्णा लगती है । दाह बढ़ता है । अरुचि मालूम पडती है । भ्रम हो जाता है । खासनेके समय मानो चक्षुसे ज्योतिः निकलता है । फिर पित्तमिश्रित पीतवर्ण श्लेष्मा गिरता है ।

"गुर्वभिष्यन्दिमधुरस्निग्धस्वप्नविचेष्टितैः ।
वृद्धः श्लेष्मानिलं रुद्ध्वा कफकासमुदीरयेत् ॥
मन्दाग्निवारुचिच्छर्दिपीनसोत्क्लेशगौरवैः ।
लोमहर्षास्यमाधुर्यक्लेदसंसदनैर्युतम् ।
बहुलं मधुरं स्निग्धं घनं ष्ठीवन् कफं तदा ।
कासमानो ह्यरुग्वक्षः सम्पूर्णमिव मन्यते ॥ (चरक)

गुरुपाक द्रव्य, क्लेदकर द्रव्य, स्निग्ध एवं मधुर भोजन तथा दिवानिद्रा, अव्यायाम प्रभृति कारणसे श्लेष्मा बढ वायुका पथ रोकता है । उसीसे श्लेष्मज कासकी उत्पत्ति होती है । कफज कासमें अग्निमान्द्य, अरुचि, वमन, पीनस रोग और उत्क्लेश बढता है । शरीरमें भार बोध होता है । रोम हर्षित रहते हैं । मुखमें मिष्ट आस्वाद मालूम पडता है । शरीर अवसन्न हो जाता है । फिर कासके साथ मधुर रसयुक्त, स्निग्ध और घन कफ बहु परिमाणमें निकलता है । वक्षःस्थल कफसे पूर्ण समझ पडता है । खासनेमें कोई वेदना मालूम नहीं पडती ।

"अतिव्यवायभाराध्वयुद्धाश्वगजनिग्रहैः ।
रूक्षस्योरः क्षतं वायुर्गृहीत्वा कासमावहेत् ॥
स पूर्वं कासते शुष्कं ततः ष्ठीवेत् सशोणितम् ।
कण्ठेन रुजतात्यर्थं विरुग्णेनेव चोरसा ॥
सूचीभिरिव तीक्ष्णाभिस्तुद्यमानेन शूलिना ।
दुःखस्पर्शेन शूलेन भेदपीडाभितापिना ॥
पर्वभेदज्वरश्वासतृष्णावैस्वर्यपीडितः ।
पारावत इवाकूजन् कासवेगात् क्षतोद्भवम् ॥" (चरक)

अतिरिक्त मैथुन, भारवहन, पथपर्यटन, युद्ध, वेगवान् अश्व वा हस्तीको पकड उसके वेगरोध प्रभृति कार्यद्वारा रूक्ष भोजनकारी व्यक्तिका वक्षःस्थल आहत होनेसे वायु कुपित हो क्षतज काम उत्पादन करता है । उक्त रोगमें प्रथमतः रोगीको सूखी खांसी आती है । पीछे कासके साथ रक्त निकलता है । तद्भिन्न कण्ठ और वक्षःस्थलमें वेदना उठती है । विशेषतः वक्षःस्थलमें सूचीवेधकी भांति यातना होती है । शूल, सन्ताप, सन्धिस्थानमें वेदना, ज्वर, श्वास, तृष्णा, स्वरभेद और पारावतके कूजनकी भांति शब्द प्रकाश पाता है ।

"विषमासात्म्यभोज्यातिव्यवायाद्वेगनिग्रहात् ।
घृणिनां शोचतां नृणां व्यापन्नेऽग्नौ त्रयो मलाः ॥
कुपिताः क्षयजं कासं कुर्युर्देहक्षयप्रदम् ।
दुर्गन्धं हरितं रक्तं ष्ठीवेत् पूयोपमं कफम् ॥
कासमानश्च हृदयं स्थानाच्च्युतमिव मन्यते ।
अकस्मादुष्णशीतार्तो बह्वाशी दुर्बलः कृशः ॥
प्रसन्नस्निग्धवदनः श्रीमद्दर्शनलोचनः ।
पाणिपादतलश्लक्ष्णः सततासूयको घृणी ॥
ज्वरो मिश्राकृतिस्तस्य पार्श्वरुक् पीनसोऽरुचिः ।
भिन्नसंघातवर्चस्त्वं स्वरभेदोऽनिमित्ततः ॥
इत्येष क्षयजः कासः क्षीणानां देहनाशनः ।
साध्यो बलवतां वा स्याद्याप्यस्त्वेवं क्षतोत्थितः ॥
नवौ कदाचित् सिध्येतामेतौ पादगुणान्वितौ ।
स्थविराणां जराकासः सर्वो याप्यः प्रकीर्तितः ॥" (चरक)

विषमभाव अर्थात् न्यूनाधिकरूप भोजन, अनभ्यस्त द्रव्य भोजन, अत्यन्त मैथुन, वेगवान् अश्व प्रभृतिके वेग संरोध आदि दुष्कर कार्य और घृणा तथा शोकवशतः अग्नि दूषित होनेसे वात, पित्त एवं कफ तीनों दोष कुपित हो क्षयज कास उत्पादन करते हैं । उक्त रोगमें देह क्षीण हो जाता है । हरित्वर्ण वा रक्तवर्ण दुर्गन्धयुक्त और पूयकी भांति कफ निकलता है । खासनेके समय बोध होता, मानो हृदयस्थान गिर पडता है । समय समय अकस्मात् उष्णस्पर्श वा शीत

करनेंसे यातना भी कम होती है। वह भोजन करते भी होती दुर्बल और कृश रहता है। मुख मलयुक्त और स्निग्ध तथा चक्षु प्रियदर्शन लगता है। रस्त एवं पदतल मसृण पड़ जाता है। क्षुधा और पिपासा अधिक परिमाणमें आती है। त्रिदोष वा त्रिदोषसे कारण ज्वर, पार्श्ववेदना पीनस और अरुचिका प्रारम्भ होता है। कभी पतला और कभी कठिन मल निकलता है। कासमें द पचार्य हुआ करता है।

उक्त पांच प्रकारके कासमें वातज, पित्तज और कफज साध्य है। क्षतकास यत्नसाध्य होता है। किन्तु क्षयज कास बहुत दुर्बल और क्षीण व्यक्तिके लिये प्राणघातक है। फिर बलवान् व्यक्तिके क्षयज कास उत्पन्न होवे तो चिकित्सा करनेसे साध्य भी हुआ करता है।

पतञ्जिक जराकास नामक एक प्रकार कास होता है। वह असाध्य ही याप्य है।

रूक्ष व्यक्तिके वातजन्य कासमें प्रथमतः वातनाशक द्रव्य समूह द्वारा सिद्ध यवक्षार और, यूष एवं मांस रसादिके साथ स्निग्ध पेय द्रव्य दिन जु मूत्र विनाश अवलेह, स्नेहाम्बलू, स्नेह वस्ति और स्निग्ध स्वेद प्रदान करना चाहिये। उसके पीछे पथ्यान्न और आदि व्यवहार करना पड़ता है। अम्लवर रसमेंसे वस्तिकर्म, ऊर्ध्ववात होनेसे भोजनके पूर्व घृतपान, पित्त एवं कफसंयुक्त वातज कासमें स्नेह विरेचन देना पड़ता है।

पित्तजन्य कासमें साथ कफका विशेष अनुबन्ध रहनेसे वमनकारक घृतपान द्वारा, किंवा मदनफल मधुरोषध एवं यष्टिमधुके क्वाथ द्वारा अथवा भूमिकुष्माण्डरस तथा इक्षुरसके साथ यष्टिमधु और मदनफलके कल्कपान द्वारा प्रथमतः वमन कराते हैं। वमनद्वारा दोष निःसारित होनेपर शीतल और मधुर रसयुक्त पेयादि पिलाना चाहिये। उसके पीछे पथ्यान्न औषधका व्यवहार कर्तव्य है। किन्तु कफका अनुबन्ध न रहनेसे वमन न करा मधुररसके साथ त्रिवृत् चूर्ण द्वारा विरेचन कराना चाहिये। कफ रहनेसे तिक्त रसविशिष्ट द्रव्यके साथ त्रिवृत् चूर्णका प्रयोग आव-श्यक है। कफ पतला रहनेसे स्निग्ध एवं शीतल भोज्यादि और कफ घन रहनेसे रूक्ष तथा शीतल भोज्यादि व्यवहार कराना चाहिये।

कफज कासमें रोगीको बलवान् रहनेसे प्रथमतः वमन करा शुद्ध करना उचित है। उसके पीछे कटुरस युक्त, रूक्ष और उष्ण यवागु प्रति दिवस करा पथ्यान्न औषध व्यवहार कराना चाहिये।

क्षयज कासमें प्रथमतः शरीर पुष्टिकारक और अग्निदीप्तिकारक दुग्धादि मिलाती है। दोष अधिक रहनेसे स्नेह द्रव्यके साथ मृदु विरेचन देना उचित है। उसके पीछे पथ्यान्न औषध व्यवहार कराना चाहिये।

बिल्व श्योनाक गाम्भारी, पाटला एवं गणिकारी पञ्चमूल, अथवा शालपर्णी पृश्निपर्णी, बृहती, कण्टकारी तथा गोक्षुर पञ्चमूलका क्वाथ प्रस्तुत करा पिप्पलिचूर्ण प्रक्षेपके साथ पान करनेसे वातज कासका उपशम होता है॥१॥

पद्मकाष्ठ, बृहती, कण्टकारी वासकमूल और द्राक्षा समुदायका क्वाथ शर्करा तथा मधु मिलाकर पीनेसे पित्तज कास प्रशमित होता है॥२॥

कुष्ठ, कटुफल आम्रत्वगादिका, भार्गी और शिग्रु होनेका क्वाथ पान करनेसे श्लेष्मज कास दब जाता है। तद्भिन्न श्वास और वक्षोवेदना भी निराकृत होती है॥३॥

श्लेष्मज कासके साथ पार्श्ववेदना ज्वर और श्वास रहनेसे बिल्व श्योनाक, गाम्भारी, पाटला, गणि-कारी, शालपर्णी, पृश्निपर्णी, बृहती, कण्टकारी, तथा गोक्षुर दशमूलका क्वाथ पिप्पली चूर्णके साथ पान करना चाहिये॥४॥

कटफल, गन्धतृण आम्रत्वगादिका शुण्ठी वचा, तथा हरीतकी काकड़ाशृङ्गी, पित्तपापड़ा, भार्गी और देवदारु समान द्रव्यका क्वाथ मधु एवं हिङ्गुके साथ पीनेसे वातश्लेष्मजन्य कास निवारित होता है। तद्भिन्न कण्ठरोग मुखरोग, शूल श्वास, हिक्का और ज्वरादि उपद्रवको भी शान्ति देख पड़ती है॥५॥

कण्टकारिका क्वाथ पिप्पलीचूर्णके साथ पान करनेसे सर्वविध कासका उपशम होता है॥६॥

तालीशादि चूर्ण मरिचादि समशर्करचूर्ण

प्रभृति चूर्ण औषधसमूह सर्वविध कासरोगनिवारक है। (चक्रदत्त)

बृहत् रसेन्द्रगुड़िका, अमृतार्णवरस, पित्तकासान्तकरस, कासंसंहारभैरव, लक्ष्मीविलासरस, सर्वेश्वररस, मृगाङ्करस, सार्वभौम, तरुणानन्दरस, महोदधिरस, जयागुडिका, विजयगुडिका, स्वच्छन्दभैरव, रसगुडिका, रसेन्द्रगुड़िका, पुरन्दरवटी, कासान्तकरस, कासकुठार, चन्द्रामृतलौह, चन्द्रामृतरस, अमृतमञ्जरी, कासान्तक, वृहन्मृगाङ्काभ्र और नित्योदयरस प्रभृति औषध समूह कासरोगीकी विविध अवस्था विवेचना कर प्रयोग करना पड़ता है। (रसेन्द्रसारसंग्रह)

अशोकवीज, अपामार्ग, विडङ्ग, सौवीराञ्जन, अग्निकाष्ठ और विट् लवणका चूर्ण घृतमें मिला रोगीके बलानुसार यथामात्रा लेहन करनेसे कासरोग प्रशमित होता है। उक्त अवलेह खानेके पीछे किञ्चित् छागदुग्ध पीना चाहिये। १।

विडङ्ग, शुण्ठी, रास्ना, पिप्पली, हिङ्गु, सैन्धव लवण, ब्राह्मणयष्टिका और यवक्षार समुदायका चूर्ण घृतके साथ यथामात्रा अवलेहन करनेसे कफसंयुक्त वात कास एवं श्वास, हिक्का तथा अग्निमान्द्य रोग अच्छा हो जाता है॥ २॥

दुरालभा, शुण्ठी, शठी, द्राक्षा, शर्करा और कर्कटशृङ्गीचूर्ण तैलके साथ अवलेहन करनेसे वातज कास चला जाता है॥ ३॥

दुरालभा, पिप्पली, मुस्ता, ब्राह्मणयष्टिका, कर्कटशृङ्गी और शुण्ठीका चूर्ण, अथवा पिप्पली तथा शुण्ठीका चूर्ण; किंवा ब्राह्मणयष्टिका एवं शुण्ठीका चूर्ण पुरातन गुड़ और तैलके साथ अवलेहन करनेसे वातज कास छूट जाता है॥ ४॥

चोपचीनी, आमलकी, मधु, द्राक्षा, चन्दन और नील सन्धुक पुष्प सकल द्रव्यका अवलेह कफसंयुक्त पित्तकासमें हितकर है॥ ५॥

उक्त अवलेह घृतके साथ चाटनेसे वायुसंयुक्त पित्तकास निवारित होता है॥ ६॥

५० किशमिस, ३० पिप्पली और आध पाव शर्करा सकल द्रव्यका अवलेह बना मधुके साथ लेहन करनेसे वायुसंयुक्त कासरोग अच्छा हो जाता है॥ ७॥

दालचीनी, इलायची, सोंठ, पीपल, मिर्च, किशमिश, पिपरामूल, कुठ, जीरा, मोथा, शठी, रास्ना, आमलकी एवं हरीतकीका चूर्ण घीनी और मधुके साथ लेहन करनेसे कास तथा हृद्रोग प्रशमित होता है॥ ८॥

पीपल, पिपरामूल, सोंठ और बहेड़ा; अथवा मयूर एवं कुक्कुटपुच्छकी भूषा तथा यवक्षार, किंवा महाकाल (इन्द्रवारुणी) पिप्पलीमूल और त्रिपुटा चूर्ण मधुके साथ लेहन करनेसे कफज कास दब जाता है॥ ९॥

देवदारु, शठी, रास्ना, कर्कटशृङ्गी एवं दुरालभा, अथवा पिप्पली, शुण्ठी, मुस्ता, हरीतकी, आमलकी तथा शर्करा, किंवा खदिरा (खैर), शर्करा, घृत, कर्कटशृङ्गी और आमलकी मधु एवं तेलके साथ लेहन करनेसे वायुसंयुक्त कफज कास निवारित होता है॥ १०॥ (वाग्भट० चिकित्सा ३० अ०)

चित्रकमूल, पिप्पलीमूल, शुण्ठी, पिप्पली, मरिच, मुस्ता, दुरालभा, शठी, कुठ, विहकर्णी, तुलसी, वचा, ब्राह्मणयष्टिका, गुलेचीन, रास्ना और कर्कटशृङ्गी प्रत्येकका चूर्ण २ तोला, कण्टकारी ६। सेर ३२ सेर जलमें क्वाथ कर ८ सेर रहने पर छान कर क्वाथमें गुड़ ३॥ सेर तथा घृत २ सेर एकत्र पाक करना चाहिये। गाढ़ा पड़ जाने पर उसमें वंशलोचनचूर्ण आध सेर एवं पिप्पलीचूर्ण आध सेर डालते हैं। यह अवलेह व्यवहार करनेसे कास, हृद्रोग और गुल्मरोग अच्छा हो जाता है। (चरक चिकित्सा० १८ अ०)

सैन्धवलवण एवं पिप्पलीचूर्ण ईषदुष्ण जलके साथ किंवा शुण्ठीचूर्ण तथा शर्करा दधिकी मलाईके साथ सेवन करनेसे कासरोग आरोग्य होता है॥१-२

बेरकी गुठलीकी मींगी दहीकी मलाईके पिप्पलका कल्क घृतमें तल कर सैन्धव लवणके साथ सेवन करनेसे भी कासरोग छूट जाता है। ३-४।

अदरकका रस २ तोला किञ्चित् मधुके साथ पानी करनेसे श्लेष्मजकास, श्वास, प्रतिश्याय और कफकी शान्ति होती है॥ ५॥

क्षयकासमें पित्त, कफ और धातु सकल क्षीण होनेसे कर्कटशृङ्गी, वाच्यालका एवं चक्रमर्दके कल्क और दुग्धके साथ यथानियम घृत पाक कर सेवन कराना चाहिये। कासरोगमें मूत्रकी विवर्णता रहने अथवा कष्टसे मूत्र निकलनेपर भूमिकुष्माण्ड वा दाडिम्ब और तालमस्यके साथ घृत वा दुग्धपाक कर पिलाते हैं।

लिङ्ग, गुह्य, कटी एवं वंक्षण (कूलेके जोड) में सूलन और वेदना रहनेसे लघु घृतमण्ड अथवा मिश्रित घृत तथा तैलकी पिचकारी लगाना चाहिये।

इलायची, दालचीनी और तेजपातका चूर्ण एक एक तोला, पपीलका चूर्ण ४ तोला तथा शक्कर, किशमिश, माजूफल और पिण्डखजूर आठ आठ तोला सकल द्रव्यसे मधुके साथ वटिका बना सेवन करनेसे रक्तपित्त श्वास कास प्रभृति निवारित होता है।

(वाग्भट॰ चि॰ ३ अ॰)

कासरोगके कारण मस्तकमें वेदना, नासा एवं मुखसे जलस्राव, हृदयमें भारबोध प्रभृति उपद्रव रहने पर धूमपान कराना पडता है। उक्त धूम मुखसे खींच फिर मुख द्वारा ही निकालते हैं। इस रोगमें शिरोविरेचक धूमपान कराने पर एक शराव (कटाहाकार पात्र) में औषध रख उसमें आग लगा दूसरे छेदवाले शरावसे ढाक सन्धिस्थल लेपन कर देना चाहिये। फिर एक छिद्रसे नल द्वारा धूमपान किया जाता है।

मनःशिला, हरिताल, यष्टिमधु, जटामांसी, मुस्ता और इङ्गुदीफल सकल द्रव्यका धूमपान करनेसे वक्षःस्थित श्लेष्म विच्छिन्न हो जाते सर्वविधि कासरोग छूटता है। इस धूमपानके पीछे ईषदुष्ण दुग्ध गुडके साथ पीना चाहिये।

पुण्डरीयक, यष्टिमधु, घण्टारवा, मनःशिला, मरीच, पिप्पली, द्राक्षा, एला, और तुलसीमञ्जरी पीस एक टुकडे पटवस्त्रमें लगा उसको घृताक्त करते हैं। इस वस्त्रखण्डसे बत्ती बना उसका धूमपान करनेसे भी कासरोगमें विशेष उपकार होता है। इस धूमपानके पीछे दुग्ध वा गुडका शरबत पीते हैं। मनःशिला, इलायची, मरीच, यवक्षार, रसाञ्जन, नागरमोथा, वंशका नील, वेणामूल, हरिताल, भतसीबीज, लाक्षा और गन्धतृण सकल द्रव्य पूर्वकी भांति पटवस्त्रमें लगा उक्त नियमसे ही धूमपान करना चाहिये।

इङ्गुदीत्वक्, कण्टकारी, वृहती, तालमूली, मनःशिला, कार्पासबीज और अश्वगन्धा सकल द्रव्य पूर्वकी भांति नियमसे पटवस्त्रमें लगा धूमपान करना पडता है।

कासरोगीका क्षतदोष मिटने किन्तु कफ बढनेसे यदि वक्षःस्थल और मस्तकमें कुठाराघातकी भांति वेदना रहे, तो निम्न लिखित धूमपान कर्तव्य है,—

अश्वगन्धा, अनन्तमूल, वाच्यालका और चक्रमर्द सकल द्रव्य पेषण कर पटवस्त्रमें लेपन करना चाहिये, फिर इस वस्त्रसे बत्ती बना उसका धूमपान करना पडता है, इस धूमपानके पीछे जीवनीयघृत पीते हैं।

मनःशिला, पलाश, वनयमानी, वंशलोचन और शुण्ठीकी पूर्ववत् बत्ती बना धूमपान करना चाहिये। इस धूमपानके पीछे शक्करका पना, गुडका शरबत या जम्बका रस पीते हैं।

मनःशिला और वटकी कच्ची जटा पेषण कर पूर्वकी भांति पटवस्त्रमें लेपन करना चाहिये। फिर उसमें घृत डाल उसकी बत्तीका धूमपान करते हैं। इस धूमपानके पीछे तित्तिरिमांसका रस (शोरवा) पीना चाहिये। स्वेद, विरेचन, वमन, धूमपान, समभाव भोजन, शालितण्डुल, गेहूं, श्यामाद्रव्यका चावल, यव, कोदोधान कोंच (आत्मगुप्ता), माषकलाय, मुद्ग एवं कुलत्थ कलायका यूष; ग्राम्य, जलचर, अनूप तथा धन्व देश जात मांस, मद्य, पुरातन घृत, छागदुग्ध, छागघृत, वथुवाका शाक, काकमाची शाक, बैंगन, कच्चीमूली, कण्टकारी, कच्ची कसौंदी, जीवन्ती तथा सुषेणाशाक, द्राक्षा, कुन्दरु, मातुलुङ्ग, पद्ममूल, वासक, छोटी इलाइची, गोमूत्र, लहसुन, हरीतकी, सोंठ, पीपल, मरीच, उष्ण जल, मधु, खील, दिवानिद्रा और लघु अन्नपान कासरोगमें हितकर है।

तैलादि स्नेह द्रव्य, दुग्ध इक्षुरस, तथा गुडजात

करता है। इसका मूलदेश कठोर पड़ता है। शिखा अंशुयुक्त रहती हैं। पत्र क्षुद्र और सङ्कीर्ण होते हैं। फलियां छोटी, चौड़ी और अधिक फली लगती है। काशमर्दको एक झाड़ी समझना चाहिये। वर्षा-कालको यह घासफूसमें स्वयं उपजता और अग्रहायण मास पुष्प निकलता है।

वैद्यक मतसे काशमर्द, रोचक, बलकारक, विषघ्न, रक्तदोष निवारक, मधुर, वातश्लेष्मनाशक, पाचक, कुष्ठविशोधक, पित्तघ्न, ग्राहक, लघु और उत्कृष्ट कासघ्न है।

हकीमोंके मतानुसार मिर्चके साथ उसकी शिखा पीस कर खिलानेसे सर्पदष्ट व्यक्ति आरोग्य होता है। चन्दनके साथ काशमर्द बांट कर लगानेसे दाद मिट जाता है।

कोई कोई उसका पत्र अञ्जनके साथ व्यवहार करते हैं। काशमर्दका पत्र सुखा उसकी बुकनी मधुमें मिला कर दाद वा अन्यान्य क्षत पर लगायी जाती है। बहुमूत्ररोगमें उसकी क्काथ जलमें पका पिलाते हैं। कसौंदीकी पत्तियां पशु और मनुष्य दोनों खाते हैं। उबालनेसे उनका दुर्गन्ध निकल जाता है।

काशमर्दन (सं० पु०) काशं मृद्नाति, काश-मृद कर्तरि ल्यु। काशमर्द, कसौंदी।

काशय (सं० पु०) काशिराजके पुत्र।

"काशेस्तु काशयो राजन्।" (हरिवंश, ३२ अ०)

काशा (सं० स्त्री०) काशते इति, काश-अच्-टाप्। काश तृण, कांस। काश देखो।

काशाल्मलि (सं० स्त्री०) कुत्सिता शाल्मलिः, कोः का-देशः। कूटशाल्मली, एक रेशमी रुईका पेड़।

काशि (सं० स्त्री०) काश-इन्। १ काशी, बनारस। (पु०) २ काशीनगरोपलक्षित देशविशेष।

"अत ऊर्ध्वं जनपदान्निबोध गदतो मम।

बोधा मद्रा' कलिङ्गाश्च काशयोऽपरकाशयः॥" (भारत, ६।९।४१)

३ मुष्टि, मूंठ। ४ सूर्य। सुहोत्रके एक पुत्र। यह धन्वन्तरिके पितामह थे। (त्रि०) ५ प्रकाशित, जाहिर।

काशिक (सं० त्रि०) काशेरिदं, काशिषु भवो वा, काशि-ठञ् जिठ् वा। १ काशिसम्बन्धीय, बनारसके मुताल्लिक। २ काशिजात, बनारसका पैदा।

काशिकन्या (सं० स्त्री०) काशिवासिनी कन्या मध्यप०। १ काशिवासिनी कुमारी, काशीमें रहनेवाली लड़की। काशीतीर्थमें काशीकन्याओंको पूजने और खिलानेका विधि है। २ काशिराजकन्या, काशीके राजाकी लड़की।

काशिकसूक्ष्म (सं० क्लो०) काशीका उत्तम तूल, काशीकी बढ़िया रुई।

काशिका (सं० स्त्री०) काशि स्वार्थे कन्-टाप्, यद्वा काशयति प्रकाशयति ज्ञानं भक्तानाम् काश-णिच्-ण्वुल्-टाप्। इत्वम्। १ काशी, बनारस। २ मनको निवृत्ति देनेवाली परमशान्ति लाभकारिणी तीर्थ-श्रेष्ठ मणिकर्णिका और ज्ञानप्रवाह रूप निर्मल गङ्गा-विशिष्ट अपनी बुद्धि।

"मनोनिवृत्तिः परमोपशान्तिः सा तीर्थवर्या मणिकर्णिका च।

ज्ञानप्रवाहा विमला हि गङ्गा सा काशिकाऽहं निजबोधरूपः॥"

३ जयादित्य और वामनकृत पाणिनिकी एक वृत्ति।

काशिकाप्रिय (सं० पु०) काशिका प्रिया यस्य, काशि-कायाः प्रियो वा। काशिराज दिवोदास।

काशिकावृत्ति (सं० स्त्री०) पाणिनि-व्याकरणकी व्याख्याका एक ग्रन्थ। किसीके मतानुसार जयादित्यने प्रथम ४ अध्याय और वामनने शेष ४ अध्याय बनाये हैं। फिर किसी किसी प्राचीन हस्तलिपिपर प्रथम ४ अध्यायकी पुष्पिकामें 'वामन-काशिका' लिखा है। किसी किसी हस्तलिपिकी समाप्ति-पुष्पिकामें "परमोपाध्यायवामनकृतायां काशिकायां वृत्तौ" लिखा देख पड़ता है।

भट्टोजिदीक्षित, रायमुकुट, माधवाचार्य प्रभृति वैयाकरणोंने काशिकासे जो विस्तर प्रमाण उठाये उनमें भी वही गड़बड़ है। अमरकोशमें 'शर्करा' शब्द साधनेके समय रायमुकुटने जयादित्यके नामसे (५।२।१०५ सूत्रकी) काशिकावृत्ति उद्धृत की है। फिर 'पाण्डुर' शब्द साधते समय 'नागाञ्च' वार्तिक-सूत्रमें (पा ५।२।१०७) भाषावृत्तिकारके प्रवादसे उन्होंने जयादित्यका पक्ष समर्थन किया है।

भट्टोजिदीक्षितने पा ५।४।४२ सूत्रके वृत्तिकार

जयादित्यका और पा ७।१।९० सूत्रके इतिकार वामनका मत ग्रहण किया है। इसीप्रकार रायमुकुटने 'पद्यरत्' शब्द बनाने वाले पा ८।४।१८ सूत्र का वामनकाशिका उद्धृत की है। माधवाचार्यने धातुवृत्तिमें जयादित्य और वामनका मत ग्रहण किया है। तदुपरान्त उक्त जयादित्यका मत पा १।२।१८ सूत्रकी और वामनका मत पा ८।१।१० सूत्रकी काशिकामें देख पड़ता है।

इसलिये महोजिदीक्षित, रायमुकुट एवं माधवाचार्यके मतमें १ से ५ अध्याय पर्यन्त जयादित्य और ६ से ८ अध्याय पर्यन्त वामनकर्तृक विरचित है।

राजतरङ्गिणीमें जयादित्य काश्मीरके एक विख्यात राजा और वामन उन्हींके मन्त्री बताये गये हैं।

"[illegible]।
[illegible] ॥ ४८८ ॥
[illegible]।
[illegible] ॥ ४९८ ॥
[illegible]।
[illegible] ॥ ४८५ ॥
[illegible] ॥ ४८८ ॥
[illegible]।
[illegible] ॥ ४९६ ॥"

(४र्थ तरङ्ग)

राजा जयादित्यने नाना देशसे लोकर पण्डितोंको महाभाष्यके संग्रहमें लगाया। उन्होंने शब्दशास्त्रविद् क्षीरस्वामीसे लिखट* व्याकरण पढ़ा था। कविगण प्रधान पण्डित और उद्भट्ट उनके सभापण्डित रहे। उन्होंने 'कुट्टनीमत'-प्रणेता दामोदरगुप्तको प्रधान मन्त्रित्व प्रदान किया। मनोरथ, शङ्खदत्त, चटक, सन्धिमान् प्रभृति कवि उनकी सभा उज्ज्वल करते थे। वामन प्रभृति पण्डित उनके अमात्य रहे।

काश्मीरराज जयापीडने ६६० शकको सिंहासन रोहण किया था। जयापीड और वामन एक देखो।

अध्यापक मोक्षमूलरके मतमें—"काशिकाकार जयादित्य एक स्वतन्त्र व्यक्ति रहे, जो काश्मीरराज जयादित्यसे पूर्व विद्यमान थे। चीनपरिव्राजक इत्सिङ्गने ६९० ई० (६१२ शक) को चीन भाषामें 'दक्षिणसमुद्रयात्रा' पुस्तकमें जयादित्य विरचित 'वृत्ति सूत्र' का उल्लेख किया है। यदि इत्सिङ्गका विवरण प्रकृत निकले तो ६६० ई० से पूर्व पाणिनि-वृत्तिकार जयादित्य मरे थे।"*

जिस ग्रन्थमें विश्वास नहीं आता उस स्थल पर चीन-परिव्राजकका विवरण कल्पित समझ और उनका प्रकृत आविर्भावकाल क्या था। इसप्रकारसे अन्तमें राज-तरङ्गिणी वर्णित घटना पर निर्भर करनेसे नितान्त अन्याय समझ पड़ता है। फिर भी यदि काश्मीरराज जयापीडने काशिकावृत्तिको लिखा था, तो अवश्य पण्डितमें उनका कोई उल्लेख क्यों नहीं किया? सम्भवत राज्याभिषिक्त होनेसे पहले यौवनकालको जयादित्यने काशिकावृत्ति बनायी होगी। कारण राजा होनेसे पूर्व जयादित्यके सम्बन्धमें कहने कोई बात नहीं मिली। जयादित्य स्वयं एक वैयाकरण और महा पण्डित थे। उन्हींके समय महाभाष्यका पुनरुद्धार साधित हुआ। वामन उनके एक सचिव थे। उसी समय ललितादित्य पमास्य कल्याणके पुत्र चैत्ररायने वाक्य-पदीयवृत्ति बनायी। जयादित्यके समयका काश्मीर इति-हास पढ़नेसे समझ पड़ता कि वास्तविक उनके राजत्वकाल पाणिनिव्याकरण विशेष आदृत हुआ था।

जयादित्यने काशिकावृत्तिके प्रथम ५ अध्याय लिखे थे। पीछे उनके मन्त्री वामनने अवशिष्ट ३ अध्याय लिख ग्रन्थ सम्पूर्ण किया।

काशिकावृत्तिव्यापक पण्डित बालशास्त्रीने लिखा है—"काशिकाके रचयिता जैन या बौद्ध थे। इसीसे अमरकोषकी भांति काशिकाके प्रारम्भमें मङ्गलाचरण किया नहीं गया। काशिकाकारने अनेक स्थलमें पाणिनिसूत्रका परिवर्तन किया है। यदि वह ब्राह्मण रहते तो कभी ऐसा कर न सकते। पा १।३।१६। सूत्रके जैसे धातुका आत्मनेपदपर अभाव अर्थमें काशिकाकारने 'चार्वाकग्रन्थमार्ग' अर्थात् लोकायत

* क्षीरस्वामी अमरकोषके एक प्रधान टीकाकार थे।

* Max Müller's India what can it teach us. 342—346

कर्तृक सम्मानित' अर्थ लगाया है। इस स्थानपर (वाल्मीकि मतमें) चार्व (चार्वाक ?) लोकायत कर्तृक सम्मानित बुद्ध हैं। धर्मानुरागी स्वधर्म-प्रतिपाद्य ग्रन्थमें प्रमाण उद्धृत करते हैं, वह कभी चार्वाकमतपर नहीं चलते।"

काशिकाप्रकाशकका मत युक्तिसङ्गत समझ नहीं पड़ता। काशिकाकारने अनेक स्थलमें ब्राह्मण-शास्त्रसे प्रमाण उद्धृत किया है। केवल एक स्थानपर 'चर्व' और 'लोकायत' शब्दका उल्लेख देख सुतिवार को जैन वा बौद्ध कैसे कह सकते हैं। चार्वाक, लौकायत्य, चार्वाक और लोकायत शब्द देखो। इत्यादित्य एक परम धार्मिक हिन्दू रहे। राजतरङ्गिणीमें लिखा है कि उन्होंने विपुलकेशव नामक एक विष्णुमूर्तिको प्रतिष्ठित किया था।* जयन्त देखो। काशिकावृत्तिकी विभिन्न समयमें रचित बहुत टीका मिलती हैं उनमें निम्नलिखित टीका प्रसिद्ध हैं—उपमन्युविरचित 'तत्त्वविमर्शिनी', जिनेन्द्र-बुद्धिविरचित 'काशिकावृत्तिविवरणपञ्जिका', मैत्रेय-रक्षितकृत 'तन्त्रप्रदीप', हरदत्तरचित 'पदमञ्जरी' इत्यादि।

काशिखण्ड (सं० क्ली०) स्कन्दपुराणका एक भाग।

काशिनगर (सं० क्ली०) काशिरेव नगरम्। काशी, बनारस सिटी।

काशिनाथ (सं० पु०) काशिः काशीतीर्थस्य नगरस्य वा नाथः, ६-तत्। १ महादेव। २ काशीके राजा दिवोदास प्रभृति।

काशिप (सं० पु०) काशि काशीपुरीं काशिदेशं वा पाति रक्षति, काशि-पा-क। १ महादेव। २ काशीके राजा।

काशिपति (सं० पु०) काशेः पतिः, ६-तत्। १ महादेव। २ काशीके राजा। दिवोदास, धन्वन्तरि प्रभृति काशीके राजा। धन्वन्तरिने कई वैद्यकग्रन्थ बनाये हैं। वह आयुर्वेदकी शिक्षा भी देते थे।

* "ततो नन्दे इत्यादीत्र, प्रख्यातय लिखी विलम्।
तथा ईश्या मूर्त्तं कतेन न स्वर्गा समः ॥
राजा सद्‌राज्यहृदक विपुलकेशवम्।"
(राजतरङ्गिणी, ४। ४८३,४८४)

काशिपुर (काशीपुर)—युक्तप्रदेशका एक नगर। यह अक्षा० २९° १३' उ० और देशा० ७८° ५८' ५८" पू० पर मुरादाबाद नगरसे १५ कोस दूर अवस्थित है। काशिपुरमें तहसील भी है, जो नैनीताल जिलेमें लगती है। इसकी पार्वत्यभूमि भाड़ और अधिकांश जङ्गलसे भरी है। मध्य मध्य उर्वरा प्रशस्त भूखण्ड हैं। स्थान स्थान पर शस्यादि भी उत्पन्न होता है। तहसीलका परिमाण १८८ वर्गमील है। किन्तु उसमें ८८ मील परिमितभूखण्डपर शस्य उपजता है। लोक-संख्या प्रायः ७५ हजार है। तहसीलमें १ फौजदारी अदालत और २ थाने हैं। काशिपुर नगर प्राचीन कालसे प्रसिद्ध है। उसका भग्नावशेष स्थान स्थान पर निकला है। लोकसंख्या प्रायः १५ हजार है। नैनी-तालसे काशिपुर २२ कोस पड़ता है। वह एक महा-तीर्थ माना जाता है। १६१८ और १६३८ ई०के बीच काशीनाथ अधिकारी नामक किसी व्यक्तिने उक्त नगर स्थापन किया था। उन्हींके नामसे नगर भी काशिपुर कहाता है। पहले यहां ४ ग्राम रहे। उन्हींसे एकमें उज्जयिनी देवीका मन्दिर है। वर्तमान काशिपुरसे आध कोस पूर्व उज्जयिनीका पुरातन दुर्ग था। चीन-परि-व्राजकके भ्रमण-वृत्तान्तमें गोविषण नगरकी कथाका उल्लेख है। प्रत्नतत्त्ववित् कनिङ्गम साहबके अनुमानसे वह काशिपुरमें ही अवस्थित था। आज भी वहां स्थान स्थान पर उपवन और सरोवर देख पड़ते हैं। एक सरोवरका नाम द्रोणसागर है। सम्भव है कि उसे द्रोणाचार्यके लिये पाण्डवने खोदा होगा। वह समचतुष्कोण है। एक एक ओर ४ सौ हाथ होंगे निकलेगा। बदरिकाश्रम तीर्थको जानेवाले उक्त सरो-वरमें स्नान कर आगे बढ़ते हैं। सरोवरके कूल पर अनेक सतीस्तम्भ देख पड़ते हैं। फिर उसके पश्चिम कूल पर कई छोटे छोटे मन्दिर हैं। दुर्ग बहुत बड़ी बड़ी ईंटोंका बना है। ईंटें १५ इञ्च लम्बी, १० इञ्च चौड़ी और २१ इञ्च मोटी हैं। अति प्राचीन कालमें वैसी ईंटें बनती थीं, आजकल कहीं देख नहीं पड़तीं। दुर्ग पार्श्वस्थ भूमिसे प्रायः २० हाथ ऊंचे प्राचीर द्वारा वेष्टित है। आजकल

दुर्गका भग्नावशेष अंगतक पड़ा है। पूर्व दिक् आलीत तोन तरफ खाई है। उत्तरपश्चिम और दक्षिणपश्चिम दोनों दिक्‌को ग्रामतक दो धर्मशालाका चिह्न वर्तमान है। दुर्गसे ६०० हाथ पूर्व ज्वालादेवी वा उज्ज यिनी देवीका मन्दिर है। छोटे छोटे मन्दिरमें नाग नाथ भूतेश्वर, मुक्तेश्वर, और जागेश्वरकी मूर्ति हैं। यह आधुनिक समझ पड़ती हैं। पुरातन मन्दिर प्रायः मृत्तिकास्तूप पर निर्मित है। उस प्रकारके अनेक स्तूप हैं। उनमें दुर्गको उत्तर दिक् प्राचीरके भीतर एक प्रकाण्ड स्तूप देख पड़ता है। उसे लोग 'भीमको गदा' कहते हैं। ज्वालादेवीके मन्दिरको पूर्वदिकका स्तूप 'रामगिर गोसाईं का टीला' कहलाता है।

अष्टादश शताब्दीके शेष भाग नन्दराम नामक एक व्यक्ति काशिपुरके शासनकर्ता रहे। उसी समय उन्होंने स्वाधीनताका अवलम्बन किया। उनके पुत्र शिवलालके राजत्वकाल काशिपुर अंगरेजोंके अधिकारमें गया। अंगरेजोंने काशिपुरके राजाको मजिष्ट्रेटकी क्षमता प्रदान कर रखी है।

काशिपुरमें एक दातव्य चिकित्सालय है। यह सूतका मोटा कपड़ा बनता है, जो आसपासमें जाकर बिकता है।

काशिपुर—बङ्गालके २४ परगनेका एक बड़ा ग्राम। यह भागीरथीके तीर कलकत्तेसे निकट अवस्थित है। काशिपुरमें गोलागोली बनानेका एक सरकारी कारखाना है। भगवती सर्वमङ्गला तथा चित्तेश्वरीका मन्दिर भी यहां बना है।

काशिपुरी (सं॰ स्त्री॰) काशिरेवीश्वरपुरी मध्यप॰ काशी वाराणसी। (शब्द रत्ना॰ १६८५)

काशिप्रसाद घोष—कलकत्तेके एक विख्यात ग्रन्थकार। उनके पिताका शिवप्रसाद और पितामहका नाम तुलसीराम था। ईष्टइण्डिया कम्पनीके अधीन कर्मचारी रह तुलसीरामने प्रचुर अर्थ उपार्जन किया।

१८०८ ई॰ को ५ वीं अगस्तको उन्होंने जन्म लिया था। १४ वर्षके वयसमें उनको पाश्चात्यविद्या प्राप्त हुई। १८२१ ई॰ को वह हिन्दू कालेजमें पढ़ने बैठे। किन्तु ३ वर्षके मध्य ही उन्होंने अच्छी योग्यता प्राप्त की थी। १८२० ई॰को उन्होंने एक अंगरेजी पद्य लिखा "The young poet's first attempt" फिर भारत-इतिहास (History of British India.) की उन्होंने बहुत अच्छी समालोचना अङ्गरेजीमें बनायी थी। वह गवरनमेण्ट गजट और एशियाटिक जरनलमें प्रकाशित हुयी।

कालेज छोड़ समसामयिक पत्रमें अङ्गरेजीमें पद्य लिखने लगे। उनको देख अङ्गरेज लोग भी मुग्ध हो जाते थे। १८२८ और १८३० ई॰ के मध्य ही उन्होंने अधिकांश पद्य बनाये। उनके "Hindu Festivals" नामक अङ्गरेजी काव्यमें दशहरा, जन्मोको झांकी, जन्माष्टमी दुर्गापूजा, कोजागर-पूर्णिमा, श्यामापूजा, कार्तिकपूजा रामयात्रा, घोषणमो होलयात्रा और चड़कपूजाका इतिहास तथा उत्सव वर्णित है। कप्तान रिचार्डसनने उनकी बहुत प्रशंसा की है। एसेम्बल एशियाट नामक किसी अङ्गरेजने "Views from India and China." नामक पुस्तकमें काशिप्रसादको अङ्गरेजीके भी बढ़ कर कवि बताया है।

उन्होंने उन्होंने निम्नलिखित पुस्तक बनायी थी,—

1 Memory of Indian Dynasties containing (a) The Scindiah of Gwalior (b) King of Lucknow (c) The Holkar of Indore. (d) The Nawab of Hyrabad (e) The Guikwar of Baroda (f) The Bhonslah of Nagpore. (g) The Nawab of Bhopal.

2. Sketches of Runjeet Singh.

3 " of King of Oudh.

4. On Bengali poetry

5 On Bengali works and writers.

6. The Vision—a tale (अप्रकाश)

१८४६। ४६ ई॰ को उन्होंने " The Hindu Intelligencer " नामक एक बड़ा साप्ताहिक पत्र प्रकाशित किया था। वह स्वयं उसके स्वत्वाधिकारी और सम्पादक रहे। १२ वर्ष तक उक्त पत्र निकलता रहा किन्तु १८५८ ई॰ को बलवेके कारण संवादपत्रोंके विरुद्ध कानून बननेसे बन्द हो गया।

काशिप्रसाद साधारण हितकर कार्यमें भी सम्मिलित होते थे। वह आनरेरी मजिष्ट्रेट और म्युनिसपालिटीके "जष्टिस अव दी पीस" रहे। १८०३ ई० की ११वीं नवम्बरको काशिप्रसादका मृत्यु हुवा।

काशिराज (सं० पु०) १ काशीके राजा। २ धन्वन्तरि।

काशिरामदेव—एक बङ्गाली ग्रन्थकार। उन्होंने बङ्गला पद्यमें महाभारत बनाया है। वह देव वा दास उपाधिधारी कायस्थ थे। उनके पिताका नाम कमलाकान्त रहा। वह इन्द्राणी प्रान्तके सिङ्गग्राममें रहते थे। उनके ग्रंथकी रचना-प्रणालीसे समझ पड़ता कि उन्होंने किसी पण्डित या कथकसे पूछ पूछ महाभारत लिखा है। कहते हैं १०७५ सनमें वह जीवित थे। उनकी जीवनीका विशेष विवरण विदित नहीं।

२ तिथितत्त्वके एक टीकाकार।

काशिल (सं० त्रि०) १ कासदृणमय, कांससे भरा हुवा। २ कासनिर्मित, कांसका बना हुवा।

काशिष्णु (सं० त्रि०) काश बाहुलकात् इष्णुच्। प्रकाशशील। (भागवत, ४।१०।६०)

काशी (सं० स्त्री०) भारतवर्षके मध्य हिन्दुवोंका सर्वप्रधान तीर्थ। उसका संस्कृत पर्याय—वाराणसी, तीर्थराजी, तपस्थली, काशिका, काशि, अविमुक्त, आनन्दवन, आनन्दकानन, अपुनर्भवभूमि, रुद्रावास, महाश्मशान और स्वर्गपुरी है। उक्त नामोंके मध्य काशी, अविमुक्त और वाराणसी ही समधिक प्राचीन है। हिन्दीमें प्रायः बनारस कहते हैं।

व्युत्पत्ति—शिवपुराणोंके मतानुसार—

"कर्षणं कर्मपाशानां सा वै काशीति परिकथ्यते।" (ज्ञानसंहिता, ४८।४६)

यहां जीव शुभाशुभ कर्मसमुदाय क्षयकर मुक्ति पानेमें समर्थ होते हैं, इसीसे उसका नाम काशी है।

स्कन्दपुराणीय काशीखंडके मतमें—

"काशतेऽत्र यतो ज्योतिस्तदनाख्येयमीश्वर।
अतो नामापरं चास्तु काशीति प्रथितं विभो॥" (२६।६७)

उसी वाक्यका अगोचर परम ज्योतिः उक्त क्षेत्रमें प्रकाशमान होनेसे काशी नाम विख्यात हुवा है।

लिङ्गपुराणमें लिखा है,—

"विमुक्तं न मया यस्मान्मोक्ष्यते वा कदाचन।
मम क्षेत्रमिदं तस्मादविमुक्तमिति स्मृतम्॥" (९२।४५)

वह स्थानसे हमसे कभी विमुक्त नहीं अर्थात् हमने उसे न कभी छोड़ा न छोड़ते और न छोड़ेंगे। इसीसे वह अविमुक्त नामसे विख्यात है।

मत्स्यपुराणके मतमें—

"यत्र सन्निहितो नित्यमविमुक्ते निरन्तरम्।
तत्क्षेत्रं न मया मुक्तमविमुक्तं ततः स्मृतम्॥" (१८१।१५)

अविमुक्तक्षेत्रमें हमारा निरन्तर सान्निध्य है। उस क्षेत्रको हम कभी परित्याग नहीं करते। इसी हेतु वह अविमुक्त नामसे विख्यात हुवा है।

कूर्मपुराणमें कहा है,—

"भूर्लोके नैव संलग्नमन्तरीक्षे ममालयम्।
अनिमुक्ता न पश्यन्ति मुक्ताः पश्यन्ति चेतसा।
श्मशानमेतद्विख्यातमविमुक्तमिति स्मृतम्॥" (१०।२६-२७)

अन्तरीक्षमें अवस्थित हमारा आलय स्वरूप वह क्षेत्र भूर्लोकके साथ कभी संलग्न नहीं। इसीसे वह अविमुक्त है अर्थात् संसार मायाबद्ध जीव उसे कभी देख नहीं सकते। किन्तु संसारके बन्धनसे विमुक्त महात्मा केवल मानस-चक्षुसे उसे देख सकते हैं। इसीसे वह अविमुक्तनामसे प्रसिद्ध है।

काशीमें प्रवाद है कि वरणार नामक कोई राजा वहां राजत्व करते थे। उन्हींके नामानुसार काशीका नाम वाराणसी पड़ा है।*

प्रमाण—शुक्लयजुर्वेदीय शतपथब्राह्मण और कौषीतकी-ब्राह्मणोपनिषद्में सर्व प्रथम 'काशी' शब्दका उल्लेख देख पड़ता है। (१) अति प्राचीन समयमें काशी एक विस्तृत जनपद और पवित्र यज्ञभूमि कहकर परिचित थी। कौषीतकी उप०, २।१।१।१ देखो।

रामायणके समय भी काशी एक विस्तीर्ण जनपद थी। (किष्किन्धा०, ४०।२२) उस समय रमणीय तोरण और प्राकारपरिशोभित प्रधान नगरी वाराणसी

* भविष्यपुराणीय ब्रह्मखण्ड नामक अनतिप्राचीन ग्रन्थमें भी काशीपति वरनारका विवरण मिलता है। (भविष्यब्रह्मखण्ड ११।१०६—१२६ श्लोक) किन्तु उस ग्रन्थमें वरनासे वाराणसी होनेकी कथा नहीं लिखी। उन्होंने काशीपुरीमें 'वाराणसी नाम्नी एक देवीमूर्ति' प्रतिष्ठा की थी, अद्यापि वह मूर्ति काशीमें विराज करती है।

(१) "अस. काश्यो ज्योतिं दसम।" १३।५।४।१९।
"अश्वं काशीनां भरत सात्वतामिव।" शतपथब्राह्मण, १३।५।४।२१

काशीराज्यकी राजधानी थी। (१) प्रतिष्ठान (प्रयाग) पर्यन्त काशी जनपदके अन्तर्भुक्त था। (२)

आजकल काशी कहनेसे जो वर्तमान वाराणसी या बनारस नामक नगरका बोध होता है। किन्तु पूर्वोक्त प्राचीन शास्त्रादि द्वारा प्रमाणित होता कि पहले वह नगर हृदयायतन था। चीनपरिव्राजक फाहियानके भ्रमणपाठसे समझ पड़ता कि ई० पञ्चम शताब्दको काशी एक विस्तीर्ण जनपद और वाराणसी उसका प्रधान नगर कहलाता था।*

किन्तु अधिकांश प्राचीन पुराणमें वर्तमान काशी "काशीपुरी" और "वाराणसी" नामसे परिचित हुयी है। (लिङ्ग पुराण १।९२।[illegible])

पुराणादिमें काशीपुरीकी सीमा और परिमाण इसप्रकार निरूपित हुआ है—

"द्वियोजनन्तु तत्क्षेत्रं पूर्वपश्चिमतः स्मृतम्।
अर्धयोजनविस्तीर्णं तत्क्षेत्रं दक्षिणोत्तरम्॥
वरणा सि नदी यावत् यावच्छुष्कनदी तु वै।
भीष्मचण्डिकमारभ्य पर्वतेश्वरमन्तिके॥"

(मत्स्यपुराण १८५।६१—६२)

यह क्षेत्र पूर्वपश्चिम दो योजन आयत और उत्तर दक्षिण अर्ध योजन विस्तृत है। यह वरणा नदीसे शुष्क नदी पर्यन्त और भीमचण्डिकासे आरम्भ कर पर्वतेश्वरके निकट पर्यन्त अवस्थित है।

फिर उसके आगे—

"द्वियोजनमथार्धं च प्रसृतं पूर्वपश्चिमम्।
अर्धयोजनविस्तीर्णं दक्षिणोत्तरतः स्मृतम्।
वाराणसी नदी यावत् यावच्छुष्कनदी तु वै॥"

(१८५।६९—७०)

शिवपुराणकी सनत्कुमारसंहितामें कहा है—

"[illegible] च [illegible]।
वरणा च [illegible] परिरभ्य [illegible]॥" (४१।१११)

वरणा और असानि (असि) नामकी दो नदी इस क्षेत्रको पकड़ कर जाह्नवीसे मिल गयी हैं।

शिवपुराणकी ज्ञानसंहितामें लिखा है—

"[illegible]।" (४९।८)

वामनपुराणमें बताया है—

"[illegible]
[illegible]
[illegible] परिरभ्य।
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible] वाराणसी शुभा॥"

(३।२४—३५)

इस पवित्र ब्रह्माण्डके मध्य प्रयागमें हमारे (विष्णुके) अंशजात माधव पुरुष योगशायी नामसे निरन्तर वास करते हैं। उन्होंके दक्षिण चरणसे सर्व पाप प्रणाशिनी लोकहरी वरणा और वाम चरणसे असि नामकी विख्यात विशेष नदी निःसृत हुयी है। यह उभय नदी लोकपूज्य पूजनीया है। उनके मध्यस्थलमें योगशायी महादेवका सर्व पापनाशन त्रिलोकके मध्य सर्वश्रेष्ठ तीर्थस्वरूप क्षेत्र है। त्रिविख्यात मोक्षदायिनी पुण्यमयी वाराणसी नगरी उसी स्थानमें विराजित है। ऐसा स्थान आकाश, पाताल या भूमण्डल कहीं मिल नहीं सकता।

---

(१) "[illegible]।
[illegible]॥
[illegible]॥
[illegible] काशिपुरी वाराणसी [illegible]।
[illegible]॥"

(हरिवंश ०।१९—१०)

(२) "[illegible]।
[illegible]॥
[illegible]।
[illegible]॥"

(हरिवंश ९९।१५—१८)

— महाभारत, अनुशासनपर्व, ११६ अ और ३० अ देखो।

* Fo-Kwo-Ki, Ch. XXXIV., translated by Laidlay, p. 310.

काशीखण्डमें कहा है—

"असिश्च वरणा यत्र क्षेत्ररक्षाकृतौ कृते॥
वाराणसीति विख्याता तदारभ्य महामुने।
असेश्च वरणायाश्च सङ्गमं प्राप्य काशिका॥" (३०।६९-७०)

सत्ययुगमें जिस दिन काशीक्षेत्र रक्षा करनेके लिये असि और वरणा नदी निकली, हे मुनि! उसी दिनसे काशिका वरणा और असि नदीका सङ्गम लाभ कर 'वाराणसी' नामसे विख्यात हुयी है।

किसी किसी पाश्चात्य पुराविद्के मतमें वरणा और असिके मध्य रहनेसे ही काशीपुरी वाराणसी नामसे प्रथित हुयी है। किन्तु यह मत नितान्त आधुनिक है*। किन्तु हमारी विवेचनामें काशी नितान्त आधुनिक नहीं ठहरती। पुराणकी कथा छोड़ उपनिषद्‌की बात मानते भी उक्त पौराणिक मत समधिक प्राचीन समझ पड़ता है। यथा,—

"अत्र हि जन्तोः प्राणेषूत्क्रममाणेषु रुद्रस्तारकं ब्रह्म व्याचष्टे, येनासावमृती भूत्वा मोक्षी भवति, तस्मादविमुक्तमेव निषेवेत; अविमुक्तं न विमुञ्चेत् एवमेवैतद्, याज्ञवल्क्य। सोऽविमुक्तः कस्मिन् प्रतिष्ठित इति। वरणायां नाश्याञ्च मध्ये प्रतिष्ठित इति। का वै वरणा का च नाशीति। सर्वानिन्द्रियकृतान् दोषान् वारयतीति तेन वरणा भवतीति। सर्वानिन्द्रियकृतान् पापान् नाशयतीति तेन नाशी भवतीति।" (जाबालोपनिषद् १—२)

इस स्थानपर जन्तुके मरण काल रुद्र "तारकब्रह्म" नाम कीर्तन करते हैं। जिस हेतु उसके द्वारा जीव अमृतत्व लाभकर मोक्ष प्राप्त होता है। अतएव इस अविमुक्तक्षेत्रमें वास करना एकान्त कर्तव्य है; अविमुक्तको कभी छोड़ना न चाहिये। हे याज्ञवल्क्य! हमने जो कहा, उसे सत्य समझियेगा। वह अविमुक्त क्षेत्र कहां प्रतिष्ठित है? वह वरणा और नाशी दो नदीके मध्य अवस्थित है। किसीको वरणा और किसीको नाशी कहते हैं? समस्त इन्द्रियकृत दोषराशि निवारण करनेवालीको "वरणा" और समस्त इन्द्रियकृत पाप नाशकरनेवालीको "नाशी" कहते हैं।

[जाबालदीपिकामें नारायणने लिखा है—

"इतः वरणायां नाश्यां चेति यथा स्कान्दे—

'असीवरणयोर्मध्ये पञ्चक्रोशं महत्तरम्।
अमरा मरणमिच्छन्ति का कथा इतरे जनाः।'
वरणानाशीमध्यवर्ती, महतिनिमित्त' पृच्छति।"

बौद्धोंके आधिपत्यकाल शाक्यसिंहने उक्त वाराणसी प्रदेशके अन्तर्गत ऋषिपत्तन मृगदाव नामक स्थानमें जाकर धर्मोपदेश प्रदान किया था। (ललितविस्तर २५ अ०) यहां तक कि खृष्टीय षष्ठ शताब्दके शेष भाग चीन-परिव्राजक युयनचुयाङ्ग जब वाराणसीस्थ बौद्ध तीर्थ दर्शनको गये, तब वाराणसी-राज्य प्रायः ३७३ कोस (४००० लि) और वाराणसी नगरी डेढ़ कोस (१८-१९ लि) दीर्घ तथा प्रायः आधकोस (५। ६ लि) विस्तृत थी।

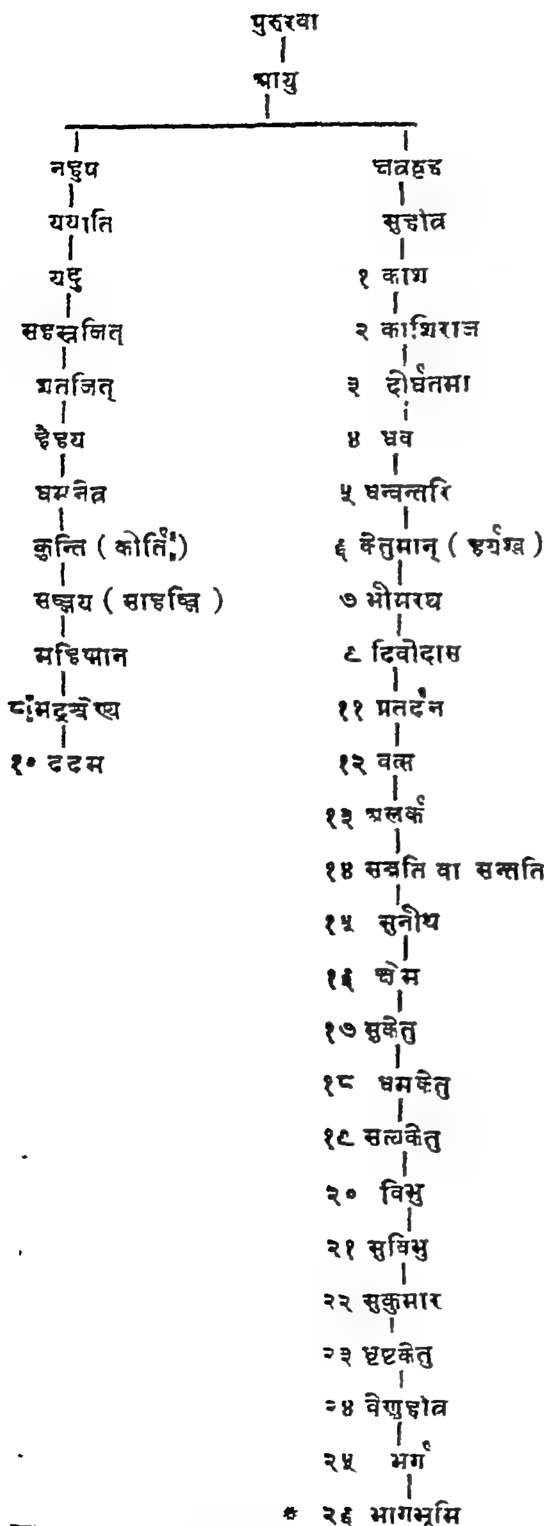
अकबर बादशाहके समय बनारस एक स्वतन्त्र सरकार रहा। आईनअकबरीमें लिखा है—"बनारस सरकारका परिमाण ३१६८६८ बीघा है। ८ महल इस सरकारके अधीन हैं। प्रधान स्थान अफराद, बनारस नगर और उसका सन्निहित स्थान बियालिसी, पन्दरहा, कसवार, कतेहर, हरहुया हैं।"

आजकल भी बनारस एक स्वतन्त्र विभाग है। यह युक्तप्रदेशवाले लाटके अधीन है। एक कमिशनर उसपर तत्त्वावधान रखते हैं। भूमिका परिमाण १८३३० वर्ग-मील है। आजमगढ़, मिर्जापुर, बनारस, गाजीपुर, गोरखपुर, बसती और बलिया जिला उस विभागके अन्तर्गत है। उनमें बनारस जिला ९९८ वर्गमील विस्तृत है। उक्त जिलेकी उत्तरसीमा गाजीपुर तथा जौनपुर, पूर्व शाहाबाद और दक्षिण एवं पश्चिम मिर्जापुर है। प्रधान नगर बनारस (काशीपुरी) है। आजकल उसका आयतन ३४४८ एकर मात्र है। वह अक्षा० २५° १८' ३१" उ० और देशा० ८३° १' ४" पू० पर अवस्थित है। उक्त नगर हिन्दू जातिके निकट सुपवित्र महापुण्य-प्रद काशीतीर्थ नामसे परिचित है। युक्तप्रदेशमें बनारस सबसे बड़ा शहर है। अवध-रुहेलखण्ड रेलवेका ष्टेशन बना है।

---

* Rev. Starling's Sacred City of the Hindus, intro by F. Hall, p XVIII; Fürher's Archæological Survey Repts; N. W. P. Vol. II, p 156.

* चीन परिव्राजकोक्त पो-लो-नि-स=वाराणसी है।
See Beal's Records of the Western Countries, Vol. II. p. 44 n.



* काशीमें राजत्व करनेवाले राजाओंके पूर्व १।२ इत्यादि संख्या दी गयी है।

ब्रह्माण्डपुराणमें लिखा है कि काशवंशीय २४ राजाओंने राजत्व किया था * किन्तु इसका कोई विवरण नहीं मिलता भार्गभूमिके पीछे कौन राजा हुवा।

बुद्धदेवके समय वाराणसीमें देवदत्त नामक एक राजा रहे।

सम्भवतः बौद्धधर्म बढ़ने पर काशीराज्य मगध-राजके हाथ लगा।

ब्रह्माण्डपुराणमें भी बताया है—

> "अष्टात्रिंशच्छतं भाव्याः प्रद्योताः पञ्च ते सुताः।
> हत्वा तेषां यशः कृत्स्नं शिशुनागो भविष्यति।
> वाराणस्यां सुतं स्थाप्य श्रयिष्यति गिरिव्रजम्।"
>
> (उपोद्घातपाद ७४ अ०)

अनन्तर प्रद्योतवंशीय पञ्चपुत्र एक सौ अड़तीस वर्ष राजत्व करेंगे। उसके पीछे शिशुनाग उनका निखिल यशः हरण पूर्वक राजा होंगे। वह वाराणसी राज्यमें स्वीय पुत्रको संस्थापित कर (मगध-राज्यस्थित) गिरिव्रजको चले जायेंगे।

बौद्ध ग्रन्थमें काशीराज ब्रह्मदत्तका नाम मिलता है। किन्तु यह मालूम करनेका उपाय नहीं किस समय उन्होंने राजत्व किया था। मगधराजगणके अधःपतनकाल काशीराज्य गुप्तराजगणके अधीन हुवा। उस राजवंशके मध्य केवल बालादित्यके पुत्र प्रकटादित्यका नाम मिलता है।† अनुमान ई० सप्तम शताब्दको वह काशीके राजासन पर आरूढ़ थे। उसके पीछे काशी सम्भवतः कन्नौजराजके शासनाधीन हुयी। ई० दशम शताब्दको कलचुरि और पाल-वंशीयोंने मिल कर कन्नौजराज्य आक्रमण किया था। उस समय काशीराज्य गौड़वाले पालवंशीय राजावोंके अधिकारभुक्त हुवा। काशीके पालवंशीय राजा सभी बौद्धधर्मावलम्बी थे। उनमें गौड़ाधिप महीपाल हो काशीके प्रथम पालवंशीय राजा रहे होंगे। वाराणसीके निकटवर्ती सारनाथमें महीपाल

* "काशेयास्तु चतुर्विंशदष्टाविंशत्तु हैहयाः।"

(मत्स्य २७२।१८)

† Fleet's Inscriptions of the Early Gupta Kings, p 246.

राजको १०१३ विक्रम संवत् (१०२६ ई०)-की प्रदत्त एक शिलालिपि मिली है।* महीपालके पीछे उनके पुत्र स्थिरपाल और वसन्तपालके (१०८३ ई० तक) राजत्वकाल भी काशी बौद्ध पालोंके अधिकारमें रही। ११९४ ई० को कनौजराज जयचन्द्रके पराभूत होने पर महम्मद गोरीने वाराणसीके अभिमुख यात्रा की। उन्होंने प्रायः सहस्राधिक हिन्दूमन्दिर तोड़ डाले।

अकबर बादशाहके समय मिर्जा चीन किलीच बनारसके फौजदार थे। उस समय काशी इलाहाबाद सूबेके अधीन थी। औरङ्गजेबने वाराणसीका बदल कर "मुहम्मदाबाद" नाम रखा था। उनके परवर्ती मुगल राज अर्थात् और अवधके नवाबको सनदोंमें वाराणसी का नाम मुहम्मदाबाद मिलता है।

ई० अष्टादश शताब्दके शेष भाग अवधके सूबेदारके अधीन रहते भी वाराणसी एक स्वतन्त्र राज्य समझा जाता था।

दिल्लीके बादशाह मुहम्मद शाहने हिन्दुओंके अधिष्ठान वाराणसीको हिन्दू राजाओंके ही अधीन रखना चाहा था। उसीके अनुसार उन्होंने १७३० ई० को वाराणसीसे पांच कोस दक्षिण अवस्थित गङ्गापुर ग्राम के जमींदार मनसारामको 'राजा' उपाधि प्रदान किया। उनके पुत्र बलवन्त सिंह १७३८ ई० को पितृ राज्यके अधिकारी और पुण्यभूमि वाराणसीके सिंहासन पर बैठे थे। १७४८ ई० को मुहम्मद शाह मर गये। उनके पुत्र अहमदशाहने सफदर जङ्गको वजीरका पद और अवध प्रदेश दिया था। उसी समय वाराणसी अवध सूबेके अन्तर्गत हुयी। बलवन्त पर सफदर जङ्गकी दृष्टि पड़ी थी। उन्होंने बलवन्तका परिचय अवधके अधीन किसी सामान्य जमींदारकी भांति देनेकी चेष्टा की। उस समय बलवन्तने अपनी स्वाधीनता बचानेके लिये यथेष्ट क्षमताके साथ साहस दिखाया था। १७५४ ई० का सफदरजङ्गके मरने पर उनके पुत्र शुजा-उद्दौला सूबेदार हुये। उन्होंने भी पिताके अनुवर्ती बन बलवन्तकी पदमर्यादा नष्ट करने की विशेष चेष्टा चलायी थी। उसी समय बलवन्तने नवाबके आक्रमणसे राज्य रक्षा करनेके लिये राम नगरमें एक सुदृढ़ दुर्ग बनाया। उसके पीछे आलम गीर बादशाहके राजत्व काल उनके पुत्र मुहम्मदअली विद्रोही हो अवधके सूबेदारसे मिल गये। उस समय मीरजाफर बङ्गालके नवाब थे। मुहम्मदअली और शुजा उद्दौलाने मीरजाफरको पदच्युत कर बङ्गाल अधिकार करनेके लिये पटनाके अभिमुख यात्रा की। १७५९ ई० को मीरजाफर अङ्गरेजोंकी सहायतासे पटनाके पास उपस्थित हुये। दूसरे पक्ष शुजाउद्दौलाने फिर बड़ा विरुद्ध उद्योग लगाया था। उस समय मीरजाफरने बलवन्तसिंहसे सहायता मांगी। राजा बलवन्तसिंहने सैन्य द्वारा उन्हें यथेष्ट सहायता दी थी। फिर बङ्गालके नवाब और बलवन्तसिंहको सन्धि हो गयी। उसी सन्धिके अनुसार अङ्गरेज बलवन्त सिंहकी स्वाधीनता बचानेको विपद्काल मदद करने पर प्रतिश्रुत हुये। १७६४ ई० को २६ वीं दिसम्बरको दिल्लीके बादशाह शाह आलमने ईष्ट इण्डिया कम्पनीको वाराणसी राज्य प्रदान किया था।* शुजा-उद्दौलाके सन्धि होने पर १७६६ ई० का ईष्ट इण्डिया कम्पनीने वाराणसी राज्य अवधके नवाब को सौंप दिया। उसी समय बलवन्तसिंह व ब्रिटिश गवर्नमेण्टके मित्रराजा कहलाने लगे। बीचमें शुजाउद्दौलाने बलवन्तसिंह को हस्तगत करनेकी चेष्टा की थी। किन्तु ईष्ट इण्डिया कम्पनीके बलवन्तसिंहका पक्ष लेने पर उनकी आशा पूर्ण न हुयी। १७७० ई० की २२ वीं अगस्तको बलवन्तसिंहका स्वर्गवास हुआ। उसके पीछे उनकी एक उपपत्नी रमणी के गर्भजात चेतसिंहने राजसिंहासन अधिकार किया। १७७३ ई० को ६ठीं सितम्बरको अवधके नवाबने चेतसिंहको एक सनद दी थी। १७७५ ई० को २१वीं मईको वाराणसी ब्रिटिश गवर्नमेण्टके अधीन हुयी। उसके अनुसार १७७६ ई० को १५ वीं मार्चको चेतसिंहने ब्रिटिश गवर्नमेण्टसे फिर एक सनद पायी। उसी समय युरोपमें अराजकोंसे विग्रह हो गया। उनके

---

* Indian Antiquary, Vol. XIV p. 140.

* Aitchison's Treaties etc. vol p. 6

अनुसार युद्धव्ययनिर्वाहार्थ गवरनर जनरल वारन हेष्टिङ्गसने चेतसिंहसे उनके देय वार्षिक करको छोड़ ५ लाख रुपया अधिक मांगा । प्रथम चेतसिंहने ५ लाख रुपया दिया था। द्वितीय वर्ष इसी प्रकार ५ लाख देनेका समय आने पर चेतसिंहने वृटिश गवर्नमेण्टसे कुछ मोहलत मांगी। उससे वारन हेष्टिङ्गस उनसे क्रुद्ध हो ससैन्य काशी आ पहुंचे । चेतसिंह निरुपाय हो आत्मरक्षार्थ राजधानी छोड़ भाग गये । (१८१० ई० को ग्वालियरमें उनकी मृत्यु हुवा ।) चेतसिंहके भाग जाने पर बलवन्तसिंहकी कन्याने वारन हेष्टिङ्गसको कहला भेजा कि वह बलवन्तसिंहकी एक मात्र कन्या हैं और उनका पुत्र (बलवन्तका दौहित्र) महीपनारायण ही राज्यका प्रकृत उत्तराधिकारी है। हेष्टिङ्गसने महीपनारायणको वाराणसीका प्रकृत राजा बना दिया। १७८१ ई० को १४वीं सितम्बरको महीपनारायणने वृटिश गवर्नमेण्टसे वाराणसी जमीन्दारीकी सनद पायी थी। राजा महीपनारायणके स्वर्गवासी होने पर महाराज उदितनारायणने पितृसिंहासन लाभ किया। १८३५ ई०को उदितनारायण भी स्वर्गगामी हुवे । उनके भ्रातुष्पुत्र ईश्वरीप्रसादनारायण राजा बने थे। वह एक कवि और शिल्पी रहे। उनके स्वहस्तनिर्मित विविध हस्तिदन्तके कारुकार्य रामनगरके राजभवनमें विद्यमान हैं। १८८९ ई० को उन्होंने परलोक गमन किया । आजकल उनके पुत्र राजा प्रभुनारायण सिंह वाराणसीकी जमीन्दारीका स्वत्व भोग करते हैं।

तीर्थविवरण।

काशी वा वाराणसी नगरी बहुत प्राचीन कालसे हिन्दुवोंका अतिपवित्र तीर्थ कही जाती है। महाभारतमें लिखा है,—

"वाराणसी जा वृषभवाहन महादेवका अर्चन और कपिलाह्रदमें स्नान करनेसे राजसूय यज्ञका फल मिलता है। उसके पीछे अविमुक्ततीर्थ पहुंच देवादिदेव महादेवका दर्शन करनेसे ब्रह्महत्याजनित पाप छूट जाता और वहां प्राणत्याग करनेसे मोक्ष पाता है।" (वनपर्व, ८४ अ०।) महाभारतके उक्त विवरण पाठसे वाराणसी और अविमुक्त दो स्वतन्त्र परस्पर निकटवर्ती तीर्थ समझ पड़ते हैं। शिव, मत्स्य, कूर्म गरुड़ और लिङ्ग प्रभृति पुराणोंके मतमें काशीका ही अपर नाम अविमुक्त है। किन्तु महाभारतमें दो स्वतंत्र तीर्थ कहनेका कारण क्या है? काशीखण्डमें विश्वेश्वर और अविमुक्तेश्वर नामक स्वतन्त्र शिवलिङ्गका विवरण दिया है । सम्भवतः अविमुक्तेश्वर लिङ्गके विराज करनेका स्थान ही अविमुक्ततीर्थ नामसे ख्यात था। वस्तुतः अविमुक्ततीर्थ वाराणसीके ही अन्तर्गत है।

हरिवंशमें महादेवके वाराणसीगमनका विषय इस प्रकार लिखा गया है—

"राजर्षि दिवोदास महासमृद्धिशाली वाराणसी नगरी पाकर सुखसे वहां रहने लगे। उस समय देवादिदेव दारपरिग्रह कर श्वशुरालयमें वास करते थे । महादेवके आज्ञानुसार उनके पारिषद नाना उपायसे भगवती पार्वतीको रिझाने लगे। देवी पार्वती बहुत ही सुखी हुयीं। किन्तु उनकी जननी मेनकाको अच्छा न लगा। वह अनेक समय उभयकी निन्दा कर कहती थीं—'पार्वति ! तुम्हारे स्वामी पारिषदगणके सहित विचार-आचार-भ्रष्ट और दरिद्र हैं । उनमें कुछ भी शीलता देख नहीं पड़ती।' एक दिन स्वामीकी निन्दा सुन देवी पार्वती स्त्रीस्वभाववशतः क्रुद्ध हो गयीं। किन्तु उस समय मातासे मनका भाव छिपा ईषत् हंस पड़ीं। फिर उन्होंने महादेवके पास जाकर विषण्ण वदनसे कहा था—'देव! अब हम यहां न रहेंगी। हमें अपने भवन ले चलिये।' उस समय महादेवने एक बारी सकल लोकको निरीक्षण किया। अवशेषको पृथिवी पर ही वासस्थान निर्णय कर सिद्धक्षेत्र वाराणसी नगरीको चुना था। किन्तु उसे दिवोदास द्वारा अधिकृत देख उन्होंने स्वीय पारिषद निकुम्भसे कहा—'वत्स! वाराणसीपुरी जाकर कौशल क्रमसे जनशून्य करो। किन्तु सावधान! महाराज दिवोदास अति पराक्रान्त हैं।'

"निकुम्भने वाराणसी नगर जा कण्डुक नामक किसी नापितको स्वप्नमें दर्शन दे कहा था—'देखो! तुम इस नगरीके प्रान्त भागमें कोई स्थान निर्दिष्ट कर हमारी प्रतिमूर्ति स्थापन करो । हम तुम्हारा भला

करेंगे।' शास्त्रियोंमें ऐसा भी देख उसने दूसरे दिन महाराज दिवोदासको यह वृत्तान्त जा सुनाया। फिर उसने नगरके द्वारपर निकुम्भकी मूर्ति स्थापन कर उस विषय नगरको चारोदिक घोषणा किया। फिर महासमारोहसे गणपति निकुम्भकी पूजा होने लगी। गृहिस्थ पुत्रार्थीको पुत्र, धनार्थीको धन आयुष्कामीको आयु, यहां तक कि लोगोंको सुख मांगा पदार्थ देते थे। किसी समय दिवोदासकी प्रधाना महिषी सुयशाने विविध उपचारसे गणपतिकी पूजा और अन्तमें पुत्र कामना कर मांगा। उनके बार बार आकर यथाविधि अर्चना पूर्वक पुत्र कामना करते भी निकुम्भने कोई अभिष्ट सिद्धिके निमित्त वरदान न दिया। इसी प्रकार दीर्घकाल निकल गया। निकुम्भके अपरपक्ष दिवोदास बिगड़े और कहने लगे—'यह भूत हमारे ही सिंहद्वारपर रहता है। नागरिकोंपर सन्तुष्ट हो मनमाना वर देता, किन्तु किसलिये हमसे मुख फेर लेता है? हमने आप भी महिषीद्वारा पुत्र प्रार्थना किया, किन्तु, आश्चर्य! इसने उसको वर प्रदान न किया। अतएव अब इसकी पूजा विधेय नहीं। निश्चित हमारे अधिकारमें फिर यह किसी प्रकार पूजा न पायगा। हम दुरात्माको स्थानभ्रष्ट कर देंगे।' ऐसा ही स्थिर कर राजा दिवोदासने गणपतिका वह स्थान तोड़ डाला। निकुम्भने आयतन टूटा देख राजाको अभिशाप दिया—'तुमने निरपराध हमारा स्थान नष्ट किया है। इसलिये तुम्हारी यह पुरी निश्चय अभी शून्य हो जायेगी।' निकुम्भ इस प्रकार अभिशाप दे महादेवके निकट पहुंच गये। उधर निकुम्भके अभिशापसे वाराणसी जनशून्य हुयी। दिवोदासने गोमती तीर राजधानी बनायी थी। फिर महादेव उसी शून्य वाराणसी नगरीमें वासस्थान निर्माण कर देवोंके साथ परम सुखसे विहार करने लगे। किन्तु वह स्थान देवोंको प्रीतिकर न हुआ। भवानीपतिको उमाने महादेवसे कहा 'हम (जनशून्य) पुरीमें हम रह नहीं सकतीं। महादेवने उत्तर दिया—इस स्थानको हम नहीं छोड़ेंगे। यह हमारा अविमुक्तपद है। हम कहीं दूसरी जगह नहीं जायेंगे। तुम्हारी इच्छा हो, चली जाओ।' त्रिपुरान्तक महादेवने स्वयं वाराणसीको अविमुक्त कहा है। इसीसे यह अविमुक्त नामसे विख्यात हुयी है। वाराणसी इसी प्रकार अभिगम्य हो अविमुक्त कहलायी। यहां सर्वदेवनमस्कृत महेश्वर सत्य, त्रेता और द्वापर तीन युगमें देवोंके साथ परम सुखसे वास करते हैं। कलियुग आनेसे यह अन्तर्हित हो जाती है। किन्तु महादेव उसको परित्याग नहीं करते।'*

काशीखण्डमें लिखा है—''देवदेव महादेव ब्रह्माके आज्ञ प्रतिपालनको काशी छोड़ मन्दरपर्वत पर जा कर रहे थे। महादेवके गमन करने पर समस्त देव भी मन्दर पर्वत पर उपस्थित हुये। महादेव वहां जाकर स्वस्थ हो न सके, उनके मनमें काशीका विरह भड़क उठा। उस समय वाराणसी महाराज दिवोदास की राजधानी थी। तपस्याके बलसे उन्होंने समस्त देवगणका रूप धारण किया था। इसलिये देव उनको स्तुति और भजना करते थे। असुर भी सर्वदा उनके वशमें रहते थे। उनके समान धार्मिक भूप उस समय कोई न था। दिवोदासका ही अपर नाम रिपुञ्जय था।'†

'मन्दरपर्वतपर महादेवने काशीका विरह उपस्थित होनेपर देखा कि राजा दिवोदासको किसी प्रकार निकाल न सकनेसे वाराणसी लाभ होता नहीं। प्रथम उन्होंने ६४ योगिनियोंको काशी भेजा था। योगिनी काशी जाकर परमधार्मिक दिवोदासको धर्मच्युत कर न सकीं। सुतरां उनके काशी जानेका उद्देश्य व्यर्थ हुआ। वह मणिकर्णिकाकी सम्मुख रह काशीमें रहने लगीं ‡। कुछ दिन बीतने पर महादेवने देखा कि योगिनी लौटी न थीं। फिर उन्होंने अत्यन्त उत्कण्ठित हो सूर्यको भेजा। सूर्य काशी जाकर धार्मिक

* ब्रह्माण्डपुराणके उपोद्घातपादमें [illegible] वाराणसी [illegible] निकाल ऐसे ही प्रकार लिखा है किन्तु पुराणकारने [illegible] लिया है) [illegible] निकाल निरस्त [illegible]।

† काशीखण्डमें [illegible] दिवोदास रिपुञ्जयकी वर्णन कथा लिखी है।

‡ यह स्थान आजकल चौंसठ योगिनीका घाट कहलाता है।

दिवोदासका कोई छिद्र निकाल न सके। वहां वह काशीकी मायामें विमुग्ध हो रहने लगे। योगिनीगणकी भांति सूर्य भी लौटे न थे। उस समय महादेवने अपने गणवरको पूर्वकी भांति उपदेश देकर काशी भेजा। वह भी वहां जाकर काशीकी विमोहिनी शक्तिसे विमुग्ध हो गये और योगिनीगणकी भांति दिवोदासका अनिष्ट साधन कर न सके। इधर महादेवने उनका कोई संवाद न पा विशेषतः काशीके विरहमें अस्थिर हो गणेशको प्रेरण किया। गणपतिने काशी जा वृद्ध दैवज्ञका वेश बनाया था। फिर वह काशीवासीकी भाग्यलिपि गणनाकर सबको विस्मयाभिभूत करने और यह कहते घूमने लगे कि काशीमें रहनेसे लोगोंको घोर अनिष्ट झेलना पड़ेगा। वृद्ध दैवज्ञकी बातसे काशीवासियोंको भय हुआ। फिर बहुतसे लोग काशी छोड़ने लगे। क्रमशः वृद्ध दैवज्ञकी अद्भुत गणना कथा दिवोदासके अन्तःपुरमें पहुंची थी। इसी प्रकार गणपतिने राजाके अन्तःपुरमें प्रवेश लाभ किया। फिर वह भाग्यगणना द्वारा राजमहिलाके हृदयमें विश्वास उपजाने लगे। कपटी दैवज्ञने रानीगणके मध्य क्रमशः महासम्मान लाभ किया था। राजमहिला अपनी बातमें राजासे उनके गुणकी बहुविध प्रशंसा करने लगीं। किसी दिन राजाने वृद्ध दैवज्ञको बीना बहुतसी बातें पूछी थीं। दैवज्ञरूपी गणपतिने नानाप्रकारसे राजाको मनोमुग्ध कर कहा—'महाराज! उत्तर देशसे एक ब्राह्मण आपके निकट आवेंगे। वह जो कहें, आप उसे सर्वतोभावसे पालन करें। इससे आपके सकल विषय सिद्ध होंगे।'

"इधर मंदरासीन महादेवने गणनाथका विलम्ब देख विष्णुके प्रति साग्रह दृष्टिनिक्षेप किया था। फिर उन्होंने अनेक कथा उपदेश कर उनसे कहा—'हे विष्णो! देखो अन्यान्य व्यक्तिकी भांति तुम भी काशीमें आचरण न करना।' विष्णु यथोचित उत्तर दे हृष्ट मनसे काशीको चलते हुये।

विष्णुने लक्ष्मीके साथ काशी जा काशिवासियोंको मायासे विमुग्ध किया था। उससे अधिकांश लोग स्वधर्मच्युत होने लगे। दूसरे दैवज्ञके उपदेशसे रिपुञ्जय दिवोदासको संसार-वैराग्य उपस्थित हुवा। वह उस ब्राह्मणकी प्रतीक्षा करने लगे। अष्टादश दिवस विष्णु ब्राह्मणके वेशमें दिवोदासके समीप उपस्थित हुये। महाराज दिवोदासने अभिप्रेत ब्राह्मणके दर्शनसे परम आनन्द लाभ किया था। उन्होंने ब्राह्मणवरको सम्बोधन कर कहा—'हे द्विजोत्तम! बहुदिन राज्यभारके वहनसे हम क्लान्त हो गये हैं। हमारे मनमें संसारवैराग्य उपस्थित हुवा है। आज आप हमसे जो कहेंगे, हम वही करेंगे।' ब्राह्मणरूपी विष्णुने राजाको नाना प्रकार उपदेश दे कहा—'महाराज! यही एक बड़ा दोष है कि आपने विश्वनाथको काशीसे दूर कर दिया है। यदि इस महापापकी शान्ति चाहें, तो आप काशीमें शिवलिङ्ग प्रतिष्ठा करें। एक शिवलिङ्गकी प्रतिष्ठासे सहस्र अपराध विनष्ट होते हैं।' महाराज दिवोदासने ज्येष्ठ पुत्र समरञ्जयको राज्यमें अभिषिक्त कर संसारका संस्रव छोड़ा था। उन्होंने विष्णुके आदेशानुसार गङ्गाके पश्चिम तटपर एक शिवालय बनवा उसमें दिवोदासेश्वर नामक शिवलिङ्ग प्रतिष्ठा किया। सप्तम दिवस शिवदूतपरिवेष्टित ज्योतिर्मय रथ आकर उपस्थित हुवा। महाराज रिपुञ्जय उस पर बैठ स्वर्गको चले गये। इसी प्रकार महात्मा दिवोदासका निर्वाण हुवा। उसके पीछे महादेव देवी पार्वतीके साथ फिर अपने प्रियक्षेत्र काशीधाममें पहुंच गये।"

काशीखण्डके विवरण पाठसे ऐसा अनुमान किया जाता है कि प्रथमतः वहां ब्राह्मण्यधर्म प्रबल था। उसके पीछे बुद्धदेवके अभ्युदय और बौद्ध राजाओंके आधिपत्यप्रभावसे वाराणसीसे हिन्दूधर्म एक बारगी ही विलुप्त हो गया, यहां तक कि वाराणसी धाम बौद्धतीर्थ कहलाने लगा। अवशेषको राजा रिपुञ्जयके राजत्वकाल शाक्त, शैव, सौर, गाणपत्य और वैष्णव क्रमशः प्रबल पड़ गये। वैष्णव द्वारा काशीसे बौद्धधर्म अथवा बौद्ध-आधिपत्य तिरोहित हुआ था। यह विषय प्रसङ्ग क्रमसे काशीखण्डमें लिखा कि काशिराज रिपुञ्जय दिवोदासके * समय काशीमें बौद्धधर्म प्रबल है। यथा—

* यह दिवोदास महाभारत और पुराणोक्त प्रतर्दनके पिता दिवोदास भिन्न द

"[illegible] सर्वं [illegible] ।
[illegible] ॥ ८५ ॥
[illegible] ।
[illegible] ।
[illegible] ॥ ८६ ॥
[illegible] ।
[illegible] ॥ ८७ ॥
[illegible] ।
[illegible] ॥ ८८ ॥
[illegible] ।
[illegible] ॥ ८९ ॥
[illegible] ।
[illegible] ॥ ९१ ॥
[illegible] ।
[illegible] ॥ ९२ ॥
[illegible] ॥ ९३ ॥
[illegible] ।
[illegible] ॥ ९७ ॥
[illegible]
[illegible] ॥ ९० ॥
[illegible] ॥ ९८ ॥
[illegible] ।
[illegible] ॥ १०६ ॥
[illegible] ।
[illegible] ॥ १०७ ॥
[illegible] ।
[illegible] ॥ १०८ ॥
[illegible] ।
[illegible] ॥ १०८ ॥"
(काशीखण्ड ५८ अ०)

भगवान् श्रीपतिने परमशोभन सौगत (बौद्ध) रूप और कमला देवीने भी उसी समय परम मनोहर परिव्राजिका रूप धारण किया। पुण्यकीर्ति नामक बौद्ध परिव्राजकरूपधारी भगवान् अपने प्रिय शिष्य विनयभूषण विज्ञकीर्तिको सम्बोधन कर इस प्रकार निज धर्म व्याख्या करने लगे—हे विज्ञकीर्ते! तुमने सनातन धर्म विषयक जो सकल प्रश्न किये, हम अभिप्र प्रकार उनका उत्तर देते है। तुम सुनो। यह संसार अनादि है। इसका कोई कर्ता नहीं। यह कर्म उत्पन्न और विलीन होता है। ब्रह्मादि स्तम्ब पर्यन्त जितनी देही है, एक परितोष पाना ही उन सबका ध्येय है। उससे स्वतन्त्र अन्य किसी पदार्थका अस्तित्व समझ नहीं पड़ता। हमारा यह देह जैसे कालवश विलीन होगा, वैसे ही ब्रह्मादि भगवती मशक पर्यन्त सकल प्राणियोंका देह काल निर्दिष्ट क्रमके अनुसार विलय पाता है। विचारपूर्वक देखनेसे कीटमक्षी देहमें परस्पर किसी प्रकार न्यूनाधिक्य नहीं पाता। कारण सकल जन्तुओंमें आहार निद्रा और भय सम भावसे विद्यमान है। हम जिस प्रकार मरण भय रखता, उसी प्रकार ब्रह्मादि कीट पर्यन्त सकल देह धारीको मरना पड़ता है। बुद्धिपूर्वक विचार करनेसे यह स्थिर होता, कि सकल-प्राणी समान है। दूसरा वही करना चाहिये जिसमें किसी प्रकार प्राणिहिंसा न हो। पूर्वतन पण्डितोंने कहा है—"अहिंसा परम धर्म है।" इसी कारण नरकभीत पुरुषोंको कभी प्राणिहिंसा करना न चाहिये। हिंसाकारी जीव नरकमें गमन करते है। अहिंसक व्यक्ति स्वर्ग पाते है। कुछ लोग कहते कहते देह विनाशका नाम ही परम मोक्ष है। एतद्भिन्न अन्य कोई मोक्ष नहीं होता। वासनाके साथ अविद्या ज्ञानका समुच्छेद होने पर विज्ञानका नाम ही यथार्थ मोक्ष है। तत्त्वज्ञानी व्यक्ति ऐसा ही निश्चय करते है। वेदवादी यह प्रामाणिक श्रुति कीर्तन करते है—समस्त भूतगणकी हिंसा करना न चाहिये हिंसाप्रवर्तक कोई श्रुति प्रामाणिक नहीं। अग्निकी सोममें अवतरता करना चाहिये' इत्यादि जो श्रुति है, वह केवल अमानुषोंको भ्रान्ति बढ़ानेकी है। विद्वान् पण्डित उसका प्रमाणको भांति स्वीकार नहीं करते।" इत्यादि।

काशीखण्डमें काशीवासियोंको मोहित करनेके लिये विष्णुके बौद्धरूप परिग्रहका कथा लिखी रहते अमूल इसमें कोई सन्देह नहीं कि वह रूप न वर्णना मात्र है। उस अध्यायके पढ़ना जो अनुमित होता किसी समयमें काशीमें बौद्धधर्मावलम्बियोंने प्रबल हो हिन्दूधर्मकी अवमानना की थी। सम्भवतः रिपुञ्जय दिवोदास भी प्रथम बौद्ध रहे। काशीखण्डमें लिखा है,—

"संविविध्यामहे राजन्नराज्ञो स्वकर्मभिः ॥ १० ॥
वर्द्धमानस्तदिपवी सुराणामपि दुर्लभ ।"

असुर यह कह कर उनका (राजा रिपुञ्जय दिवोदासका) स्तव करते थे, 'आपके राज्यमें देव लोग रह नहीं सकते। सुतरां हम स्व स्वविभवके अनुसार आपकी सेवा करेंगे।'

उक्त श्लोकसे यही अनुमित होता कि असुर अर्थात् देवविद्वेषी सर्वदा रिपुञ्जयके निकट रहते और देव अर्थात् देवभक्त ब्राह्मणादि उनके राज्यमें कम देख पडते थे। सम्भवतः हिन्दू धर्मके पुनरुत्थान समय काशीमें उक्त बौद्धराजा ही राजत्व करते थे और पीछे वही ब्राह्मणकर्त्तृक हिन्दूधर्ममें दीक्षित हुये। उन्हींके समयमें पवित्र वाराणसी धाममें फिर देवमन्दिर और देवमूर्तिकी स्थापना होने लगी। विष्णुपुराणमें भी एक स्थल पर लिखा है कि विष्णुने एक बार चक्र द्वारा वाराणसीको दग्ध किया था।

(विष्णुपुराण ५ अंश, ३४ अ०)

वाराणसीमें एक काल बौद्धधर्म प्रबल होनेके अद्यापि अनेक निदर्शन मिलते हैं। वाराणसीका पार्श्ववर्ती सारनाथ बौद्धोंका एक पवित्र तीर्थस्थान कहलाता है। ई० चतुर्थ शताब्दकी चीन-परिव्राजक फा-हि-यान और षष्ठ शताब्दके शेष भाग युअन चुयाङ्ग उक्त सारनाथ गये थे। उस समय भी वहां अनेक बौद्धकीर्तियां थीं। उनका ध्वंसावशेष अद्यापि वर्तमान है। सारनाथ देखो। काशीपुरीमें भी बौद्ध-कीर्तियोंका यत्सामान्य ध्वंसावशेष देख पडता है।

यह निर्णय करना कठिन है—किसी समय काशीमें हिन्दूधर्मका पुनरभ्युदय हुआ। ई० षष्ठ शताब्दके शेष भाग चीन-परिव्राजक युअन चुयाङ्गके आते समय काशीमें हिन्दूधर्म प्रबल था। उन्होंने वाराणसीधाममें शताधिक देवमन्दिर और प्रायः दश सहस्र देव उपासक देखे थे।* उड़ीसेकी मादलापञ्जीके मत में उत्कलराज ययातिकेशरीने ८८६ शकको भुवनेश्वरका विख्यात शिवमन्दिर निर्माण कराया था। भुवनेश्वर वाराणसीके अनुकरण पर बना है। उत्कल देखो। सुतरां यह अवश्य ही स्वीकार करना पडेगा कि उससे भी पहले काशीमें हिन्दूधर्मका पुनरुत्थान हुआ।

पतञ्जलिके महाभाष्यमें वाराणसीका उल्लेख है और इसका भी प्रमाण मिलता कि उस समय वहां शिवोपासना भी प्रचलित थी। पतञ्जलि देखो। सम्भवतः बौद्धराज अशोकके मरने पर और महाभाष्य बनते समय वाराणसीमें हिन्दूधर्म फिर बढने लगा था।

हिन्दूओंके निकट काशीकी अपेक्षा पवित्र तीर्थ जगत्‌में दूसरा नहीं। प्राचीन मुनि ऋषि उक्त मुक्तिधाम काशीका माहात्म्य मुक्तकण्ठसे कीर्तन कर गये हैं।

मत्स्यपुराण निर्देश करता है—

"इदं गुह्यतमं क्षेत्रं सदा वाराणसी मम।
सर्वेषामेव भूतानां हेतुर्मोक्षस्य सर्वदा ॥" (१८०।४०)

हमारा यह वाराणसी क्षेत्र सर्वदा गुह्यतम है। यह नियत ही समस्त जीवगणके मोक्ष लाभका हेतु है।

"विषयासक्तचित्तोऽपि त्यक्तधर्मरतिर्नरः ॥ ७१ ॥
इह क्षेत्रे मृतः सोऽपि संसारं न पुनर्विशेत् ॥"

धर्मके प्रति अनुराग परित्याग कर इन्द्रियभोग्य विषय एकान्त आसक्त चित्त होते भी यदि कोई वाराणसी क्षेत्रमें मरता, तो उसे संसारमें प्रवेश करना नहीं पडता और अवश्य मोक्ष मिलता है।

"अविमुक्तस्य कथितं मया ते गुह्यमुत्तमम् । ७५ ॥
अतः परतरं नास्ति सिद्धिगुह्यं महेश्वरि ॥"

हे देवि! महेश्वरी! हमने तुमसे अविमुक्तक्षेत्रका अतिशय गुह्य विषय कीर्तन किया है। फलतः इसको अपेक्षा सिद्धि विषयमें उत्कृष्टतर विषय संसारमें दूसरा नहीं।

"अकामो वा सकामो वा ह्यपि तिर्यग्गतोऽपि वा।
अविमुक्ते त्यजन् प्राणान् मम लोके महीयते ॥" (१८१।२२)

अकाम हो या सकाम हो अथवा तिर्यग्योनिजात हो हो, अविमुक्तक्षेत्रमें प्राणत्याग करनेसे वह निश्चय हमारे लोकमें (शिवलोकमें) पूजा पाता है।

* उस समय वाराणसीमें ३००० मात्र बौद्ध थे।

शिवपुराणको ज्ञानसंहितामें लिखा है—

"[illegible]" (४९।६९)

त्रिभुवनके मध्य पञ्चक्रोशी (वाराणसी)-की अपेक्षा अन्य उत्तर दिव्य जगतमें अन्य कोई नहीं।

"[illegible]
[illegible]" (१।११)

जल जो वेद कर्मको उपनिषद् अर्थात् अन्य उत्तम रहस्य और शान्ति जो वेद मोक्षका गुह्यतम विषय है वैसे ही अविमुक्त शिवको कुछ काम देव आर तीर्थका सर्वोत्तम रहस्य समझती है।

लिङ्गपुराणमें लिखा है—

"[illegible] ॥ ७६ ॥
[illegible]
[illegible] ॥ ७७ ॥
[illegible]
[illegible] ॥ ७८ ॥
[illegible]
[illegible] ॥ ७९ ॥
[illegible]
[illegible] ॥ ८० ॥
[illegible]
[illegible] ॥ ८१ ॥
[illegible]
[illegible] ॥ ८२ ॥" (९२ अ०)

हे पार्वति! नैमिषक्षेत्र, कुरुक्षेत्र, गङ्गाद्वार और पुष्कर समस्त तीर्थमें स्नान अथवा अवस्थानपूर्वक सेवा करनेसे जीव मोक्ष नहीं पाते किन्तु अविमुक्तक्षेत्रमें अवश्य पा जाते हैं। दूसरे इसमें सन्देह नहीं कि अविमुक्त क्षेत्र श्रेष्ठतम है। हमारे अधिष्ठानके कारण प्रयाग और काशीमें मोक्ष लाभ होता है। काशी तीर्थश्रेष्ठ प्रयागसे भी श्रेष्ठतर है। कृतिमें समस्त क्रिया समर्पणपूर्वक हमारे वाराणसी क्षेत्रको सेवा करनेसे नवीनता पाया है। हमारे भक्त पराशरके पुत्र योगिप्रवर महातपा ऋषिवर व्यासदेव वेदविभाग कर्ता और वेदमर्यादाके प्रवर्त्तक होंगे। वह मुनिवर भी वाराणसीमें ही परमानन्दसे अवस्थान करेंगे। अधिक क्या कहें—देवलिङ्गगणके साथ ब्रह्मा, विष्णु, दिवाकर देवराज इन्द्र और अन्यान्य महात्मा देव सभी काशीमें हमारी उपासना किया करते हैं।

कूर्मपुराणमें कहा है,—

"[illegible]
[illegible] ॥ १८ ॥
[illegible]
[illegible] ॥ १९ ॥
[illegible]
[illegible] ॥ ६ ॥
[illegible]
[illegible] ॥ ९९ ॥
[illegible]
[illegible] ॥ ६० ॥

हे मुनीवर्ग! परमानन्द काम की वासना कर ज्ञान और ध्यानमें निविष्टचित्त जो गति पाते, अविमुक्तमें उन व्यक्ति भी वही गति पा जाते हैं। देव जिन समस्त आत्मदर्शित स्थानोंकी कथा कहा करते, उन समस्त स्थानोंकी अपेक्षा वाराणसी श्रेष्ठतमा और गुह्यतमा है। काशीमें प्राण परित्यागसे स्वयं साक्षात् ईश्वर महादेव अन्त, नाभि और हृदयमें तारक ब्रह्म नाम जोतन करते हैं। पाटिकाके मध्यकी भांति वाराणसीमें भी अविमुक्तक्षेत्र अवस्थित है। वरणा और असि दो नदियोंके मध्यस्थानमें वाराणसी पुरी प्रतिष्ठित है। वाराणसीसे उत्तम स्थान भावका न है, न हुई और न होगी।

काशीखण्डमें कथित हुआ है—

"[illegible]
[illegible] ॥ ८३ ॥
[illegible] ॥ ८४ ॥
[illegible]
[illegible] ॥ ८५ ॥
[illegible]
[illegible] ॥ ८६ ॥" (२६ अ०)

जहां विश्वेश्वर वास करते वह महादेव अविमुक्तकी अपेक्षा मनोरम और महावदावन वस्तु इस ब्रह्माण्डमें अब कहीं नहीं। वह शिव पञ्चक्रोश परिमित है। प्रलय कालको एकार्णवता वह

अवस्थित है। वह चूड़ा समेत ३४ हस्त उच्च है।

ठीक समझ नहीं पड़ता—किस महात्माने उक्त मन्दिर बनवाया है। महाराज रणजीत् सिंहने मन्दिर की मेहराब, चूड़ा और समुदाय कलसके तांबेपर सोना मढ़वा दिया है। सूर्यालोकमें दूरसे दर्शनकरने पर उसकी अपूर्व शोभासे नयन जल उठते हैं। स्वर्णोज्ज्वल चूड़ा पर त्रिशूल है। उसीके पार्श्वमें पताका उड़ती है।

विश्वेश्वर मन्दिरकी मेहराबके नीचे ८ बड़े घण्टे लटकते हैं। उनमें बड़ा घण्टा नेपालके राजाका दिया है। मन्दिरके उत्तर विश्वेश्वरकी सभा है। उस स्थान पर अनेक देवमूर्ति विराज करती हैं। उक्त पवित्र देवालयमें प्रवेश करनेसे मनमें अद्भुत रसका आविर्भाव होता है। आप देखेंगे कि भारतवर्षके सकल स्थानीय एवं सर्व जातीय हिन्दू भक्तिभावसे विश्वेश्वरके पवित्र लिङ्गदर्शनको उपस्थित हैं। भक्तोंके मुखसे निःसृत 'हर हर हर वंबम विश्वेश्वर' के रवसे मन्दिर प्रतिध्वनित होते है। कोई हाथ जोड़ देवादिदेव महादेवकी पूजा करता, कोई उदात्तादि स्वरसे वेद पढ़ता और कोई सुमधुर स्वरसे शिवस्तोत्र गान कर भक्तके हृदयमें विशुद्ध आनन्द भरता है। धन्य! भारतवर्षके नाना स्थानोंकी आबाल-वृद्ध-वनिताका समावेश! वैसा दृश्य किसी दूसरे स्थानपर देख नहीं पड़ता! भक्त हिन्दुओं की प्रकृत छवि अद्यापि विश्वेश्वरस्थलमें प्रकाशमान है! जिस समय विश्वेश्वर की सन्ध्या आरती होती और जिस समय वेदध्वनिसे हृदय हिलने लगता, उस समयका दृश्य कैसा अपार्थिव रहता है।

विश्वेश्वर मन्दिरसे अनतिदूर 'ज्ञानवापी' नामक पवित्र कूप है। शिवपुराणमें उक्त कूप "वापीजल" नामसे वर्णित हुवा है।* काशीखण्डमें लिखा है—

"रुद्ररूपी ईशानने त्रिशूल द्वारा स्थानीय भूमि खनन कर एक कूप निर्माण किया था। उस कुण्डमे पृथिवी अपेक्षा दशगुण जल निकला और उस जलसे भूमण्डल आप्लुत हुवा। उस समय रुद्रमूर्ति ईशानदेवने सहस्र कलस जल भर ज्योतिर्मय विश्वेश्वररूपी महालिङ्ग को स्नान कराया था। भगवान् विश्वेश्वरने रुद्रके प्रति प्रसन्न हो निम्नलिखित वर दिया—जो शिव शब्दका अर्थ विचारसे, वह उसका अर्थ "ज्ञान" बतलाते हैं। वही ज्ञान हमारी महिमासे यहां जलरूपमें द्रवीभूत हुवा है। इसलिये यह तीर्थ "ज्ञानोद" नामसे विख्यात होगा"।* इस तीर्थ स्पर्श करनेसे सब्पाप दूरीभूत होते हैं। फिर इसके स्पर्श और आचमनसे अश्वमेध तथा राजसूय यज्ञका फल मिलता है। इसका नाम शिवतीर्थ है। फिर वही तीर्थ शुभज्ञानतीर्थ तारकतीर्थ और प्रकृत मोक्षतीर्थ भी कहाता है। इस तीर्थके जलसे शिवलिङ्गको स्नान कराने पर सर्वतीर्थका फल लाभ होता है। ज्ञानस्वरूप हमीं यहां द्रवमूर्ति बन जीवगणकी जड़ता विनाश और ज्ञान उपदेश करते हैं।"

(काशीखण्ड, ३३ अ०)

काशीखण्डके अन्यस्थलमें कहा है—"दण्डनायक उस ज्ञानवापीका जल दुर्वृत्तगणसे बचाते और सुभ्रम तथा विभ्रम नामक गणद्वय दुर्वृत्तगणको भ्रान्ति उपजाते हैं। महादेवकी अष्ट मूर्तिका जो विषय कहा, उक्त ज्ञानदायिनी ज्ञानवापी उन्हीं अष्ट मूर्तिमें अन्यतम जलमयी मूर्ति है। (३३ अ०)

प्रवादानुसार कालापहाड़के काशीको सकल देवमन्दिर तोड़ने जाते समय विश्वेश्वर उक्त ज्ञानवापीके मध्य छिपे थे। आज भी सहस्र सहस्र यात्री वहां देवको पूजा करने जाते हैं।

ज्ञानवापी पर एक कुछ ऊंची छत है। वह छत पत्थरके ४० खंभों पर खड़ी है। उसका गठन अति सुन्दर है। १८२८ ई० को ग्वालियर महाराज दौलत

---

* "अविमुक्ते स्वयं लिङ्गं संस्थाप्य परमेश्वरम्।
वापीजलेन तस्यैव देवदेवस्य सन्निधौ॥
स्पर्शमात्राद्दर्शनात् तस्य ज्ञानार्थी मानवा भुवि।
दुर्लभन्तु कली दिव्यं जलं तस्य हि वनमीपमम्॥
तारयं सर्वभूतानां मानाभवस्य नाशनम्।"

(शिवपुराण, सनत्कुमारसंहिता, ३१। २८—३८)

* "शिव आत्मनि शुचुः शिवशब्दार्थचिन्तका।
तच्च ज्ञानं द्रवीभूतमिह मे महिमोदयात्॥
अतो ज्ञानोदमाख्येत्तीर्थं त्रैलोक्यविश्रुतम्।"

(काशीखण्ड, ३०-३२-३३)

साथ भैंसियाको चित्रसा यहीं कलाकारोंने तभी बनवा दिया था।

ज्ञानवापीके पूर्वमें पाल-राजघटक्त पीतलका एक वृषभमूर्ति है। उसी स्थानपर है दण्डपाणिको शाबोका मन्दिर बना है। निकट ही बहुतसे पवित्र स्थान भी हैं।

यहां खड़े होकर उत्तर-पश्चिमदिक दृष्टिपात करनेसे प्रथम ही ४० फुट ऊंचा आदिविश्वेश्वरका मन्दिर नयनगोचर होता है। उसके अदूर 'काशीकरवट' नामक पवित्र कूप है। पण्डा लोगोंके विश्वासानुसार जो कूद कर उस करवट कूपमें जो मरता, उसको पुनर्जन्म नहीं मिलता। इसी कहे उसमें मध्यमें दो एक व्यक्ति कूद मरते थे। इसीसे गवर्नमेण्टने कूपका मुख बन्द कर दिया है। उसके पीछे काशीकरवटके पण्डोंका विस्तर आवेदन होता है। आज तक प्रति सोमवारको एक बार उसका मुख खोल दिया जाता है।

विश्वेश्वरके निकट अन्नपूर्णा देवीका मन्दिर है। हिन्दुओंके विश्वासानुसार काशीमें कोई अनाहार नहीं रहता। यह अन्नदायिनीदेवी अन्न दे दीन दरिद्र सब का दुःख दूर करती हैं। अन्नपूर्णा मन्दिर काशीके वक्ष में असंख्य दीन दरिद्र भिक्षार्थ बैठे रहते हैं। मन्दिर से भिक्षा स्वरूप एक मुट्ठी चावल देनेकी प्रथा है। यहां सबको भिक्षा मिलती है। अन्नपूर्णाका मन्दिर प्राय २०० वर्ष पहले पूनाके महाराष्ट्रराजने बनवाया था। मन्दिरस्थ नाना रत्नविभूषिता स्वर्णोज्ज्वलशोभिनी अन्नपूर्णाकी पवित्र मूर्ति देख दर्शकका मन प्रसन्न मोहित होता है। मन्दिरकी एक ओर समायोजित स्थलोपरि सूर्यदेवकी मूर्ति विराज करती है। एतद्भिन्न गौरी शङ्कर, गणेश और हनुमान्‌की मूर्ति पृथक् पृथक् स्थानमें प्रतिष्ठित है।

अन्नपूर्णामन्दिरके दक्षिण शुक्रेश्वरका क्षुद्र मन्दिर है। काशीखण्डके मतसे— पुराकालमें प्रद्युम्न पुत्रने इसी स्थान पर शिवलिङ्ग प्रतिष्ठा कर शिवकी आराधना की थी। इस शुक्रप्रतिष्ठित शुक्रेश्वरको पूजा करनेसे मानव पुत्रवान्, सौभाग्यवान् और परम सुखी होता है। शुक्रेश्वरका भक्त शुक्रलोकमें वास करता है" * (१८ अ)

विश्वेश्वर मन्दिरसे प्राय आध क्रोश उत्तर काल-भैरवका मन्दिर है। काशीखण्डमें लिखा है—"महादेव-ने ब्रह्माका गर्व खर्व करनेके लिये अपने क्रोधसे एक भैरवपुरुष बनाया था। वही पुरुष कालभैरव है। पूर्व को ब्रह्माके पञ्चमुख रहे। कालभैरवने उनका पञ्चम मस्तक छेदन किया। कालभैरव इस ब्रह्महत्याके पाप मोचनको कापालिकव्रत अवलम्बन कर ब्रह्माका वही कपाल हाथमें ले पृथिवी पर घूमने लगे। उन्होंने बहु तीर्थ पर्यटन किये थे। किन्तु वह कपाल कहीं विमुक्त न हुआ। क्या आश्चर्य! काशीमें प्रवेश करते ही कालभैरवके हाथसे वह कपाल गिर पड़ा। ब्रह्महत्या भी उसके साथ विनष्ट हुयी। जिस स्थान पर कपाल गिरा था वही स्थान कपालमोचन तीर्थके नामसे विख्यात हुआ (इन्दुपाल ३०।१०) उसके पीछे कालभैरवने कपालमोचन तीर्थको बन्धुच रख ब्रह्महत्याका पाप दूर करनेके लिये वहां स्थान पर अवस्थान किया। अग्रहायण मासकी कृष्णाष्टमीको उपवास कर कालभैरवके निकट रातको जागनेसे महापाप दूर होता है। कालभैरवकी पूजा करनेसे मनस्कामना सिद्ध होती है।"

(काशीखण्ड ३१ अ०)

कालभैरव वा भैरवनाथकी वर्तमान मूर्ति प्रस्तरमें गठित कृष्णाभ और भीषण है। उसके दोनों चक्षु रौप्यमय तथा परिधान वस्त्रमय है। पार्श्वमें उनके कुक्कुर की मूर्ति है। भैरवनाथका मंदिर देखने योग्य है। मंदिरगात्र विविध वर्णसे अलङ्कृत एवं देवमूर्तिसे चित्रित है। विशेषतः प्रवेशद्वारके वामपार्श्व दयावतार की अतिसुन्दरमूर्ति अङ्कित है। मन्दिरको चौखटमें दोनों पार्श्व द्वारपालेश्वरकी मूर्ति दण्डायमान है।

कालभैरवका वर्तमान मन्दिर प्रायः १२५ वर्ष पूर्व पूनाके बाजीरावने बनवाया था। मन्दिरके बहिर्भागमें भैरवनाथकी पुरातन मूर्ति रखी है। मन्दिरमें महादेव, गणेश और लक्ष्मीनारायणकी मूर्ति विराज करती है। काशीमें चौसठ देवीके ४ मन्दिर हैं। उनमें एक भैरव-

* लिङ्गपुराणकी सप्तविंशति (३०।१२) व अनुसार ... दीक्षित (अ०।१२) और इन्दुपाल (३०।१०)-में ... लिखा गया है।

-नाथ मन्दिरके निकट है। उक्त शीतला मन्दिरमें सप्त-भगिनीकी मूर्ति है।

कालभैरवसे अनतिदूर दण्डपाणिका मन्दिर है। काशीखण्डके मतमें—"हरिकेश नामक एक यक्ष थे बाल्यकालसे ही उनके हृदयमें शिवभक्ति उद्दीपित हुयी। वह सोते समय सर्वदा महादेवकी विभूति देखते थे। बालककाल ही वह गृह परित्याग कर वाराणसी गये और शि तपस्यामें प्रवृत्त हुये। बहु काल पीछे महादेवने सन्तुष्ट हो उन्हें यह वर दिया था—'हे यक्ष! तुम हमारे अत्यन्त प्रिय हो। तुम इस क्षेत्रके दण्ड-धर हो। आजसे तुम इस काशीके दुष्टशासक और शिष्टपालक बन कर अवस्थान करो। तुम दण्डपाणिके नामसे प्रसिद्ध होगे। हमारे संभ्रम और उद्भ्रम नामक गणद्वय सर्वदा तुम्हारे अनुगामी होकर रहेंगे। काशीवासियोंका अन्तिमकाल उपस्थित होनेसे तुम उनके गलेमें सुनील रेखा, हस्तमें सर्प वलय, भालमें लोचन, परिधानमें कृत्तिवास, मस्तकमें पिङ्गलवर्ण जटा, सर्वाङ्गमें विभूति, कपालमें चन्द्रकला और वाहनार्थ वृषभ प्रदान करोगे। तुम्हीं काशीवासियोंके अन्नदाता, प्राणदाता, ज्ञानदाता और मोक्षदाता होगे।' तदवधि दण्डपाणि महादेवके आदेशसे सम्यक्‌रूप वाराणसी शासन करते हैं।* काशीमें दण्डपाणिकी पूजा न करनेसे किसीको कैसे सुख मिलता है?"

(काशीखण्ड ३२ अ०)

दण्डपाणिकी मूर्ति प्रायः ३ हस्त उच्च है। प्रति रवि और मङ्गलवारको यात्री दण्डपाणिकी पूजा करते हैं।

दण्डपाणि और भैरवनाथ मन्दिरके बीचोबीच नवग्रहका मन्दिर है। यहां रवि, सोम, मङ्गल, बुध, बृहस्पति, शुक्र, शनि, राहु और केतुकी मूर्ति पूजी जाती है।

कालभैरवसे अनतिदूर कालोदक वा कालकूप है। उस तीर्थमें स्नान करनेसे पितृगणका उद्धार होता है। (काशीखण्ड ३३।१८) उक्त कूप इस भावसे अव-स्थित है कि मध्याह्नके समय सूर्यरश्मि ठीक उसके जल पर पड़ता है उस समय अनेक लोग अदृष्ट परीक्षार्थ कालकूप दर्शन करने जाते हैं। काशीवासियोंके विश्वासानुसार मध्याह्नकाल जो व्यक्ति कूपके जलमें अपनी प्रतिमूर्ति देख नहीं सकता, वह ६ मासके मध्य निश्चय मरता है। कालोदकके निकट ही महा-काल और पञ्च पाण्डवकी मूर्ति है।

कालोदकसे अनतिदूर वृद्धकालेश्वरका वर्तमान मन्दिर है। काशीखण्डके मतानुसार—"दक्षिण देशके नन्दिवर्धन नामक ग्राममें वृद्धकाल राजा रहे। उन्होंने सहधर्मिणीके साथ काशी जा एक प्रासाद बनाया और उसमें शिवलिङ्ग स्थापन कराया। वही अनादि शिवलिङ्ग वृद्धकालेश्वर नामसे ख्यात है। वृद्धकाले-श्वर महादेवकी सेवा करनेसे दरिद्रता, उपसर्ग, रोग पाप किंवा पापजनित फलभोग निवारित होता है।

(काशीखण्ड ३४ अ०)

वृद्धकालेश्वरका मन्दिर अति प्राचीन है।* अनेकोंके मतानुसार काशीमें आजकल जितने शिवा-लय देख पड़ते, उन सबसे उक्त मन्दिर पुरातन मन्दिर है।

वृद्धकालेश्वरके मन्दिर मध्य दक्षेश्वर नामक स्व-तन्त्र शिवलिङ्ग विद्यमान है। उक्त मन्दिरका क्रोड दक्षिणभागमें 'अल्पमृत्येश्वर' शिवलिङ्ग है। भक्तके विश्वासानुसार अल्पमृत्येश्वरलिङ्ग अल्पायु मानवको दीर्घायु प्रदान करता है। इसीसे विस्तर तीर्थयात्री उक्त लिङ्ग दर्शन और अर्चन करने जाते हैं।

किसी समय वृद्धकालेश्वरके दक्षिण पुराण-प्रसिद्ध कृत्तिवासेश्वरका मन्दिर था। काशीखण्डमें लिखा है—"महादेव द्वारा निहत होनेपर गजासुरका शरीर उक्त स्थानपर शिवलिङ्ग रूपमें परिणत हुवा। शिवके गजा-सुरकी कृत्ति अर्थात् चर्म परिधान करनेसे ही उक्त लिङ्ग कृत्तिवासेश्वर कहाता है। वह लिङ्ग काशीस्थ सकल लिङ्गसे श्रेष्ठ है। उत्तमरूपसे सप्त कोटि महारुद्रो जप करनेसे जो फल मिलता, काशीमें कृत्तिवासेश्वरको पूजा करनेसे वही प्राप्त हो सकता है।" (काशीखण्ड ६८ अ०)

* काशीवासियोंके विश्वासानुसार कालभैरव ही पञ्चक्रोशी वाराणसीके शासनकर्ता वा कोतवाल हैं।

* शिवपुराणमें भी वृद्धकालेश्वरका नाम मिलता है। (शिवपुराण, ज्ञानसंहिता ५०। ४१)

उन्होंने शिरःकम्पन किया था। उससे उनके कर्णसे मणिभूषण प्रभुके आगे गिर पड़ा। मणि पतित होनेके स्थान पर ही मणिकर्णिका है।

"नास्ति गङ्गासमं तीर्थं वाराणस्यां विशेषतः।
तत्रापि मणिकर्णाख्यं तीर्थं विश्वेश्वरप्रियम्॥" (सौरपुराण ४। ८)

गङ्गासम तीर्थ नहीं। विशेषतः वाराणसीमें विश्वेश्वरप्रिय मणिकर्णिकाके तुल्य तीर्थ दूसरे स्थान पर देख नहीं पड़ता।

"संसारिचिन्तामणिरत्र यस्मात् तं तारकं सज्जनकर्णिकायाम्।
शिवोऽभिधत्ते सहसान्तकाले तद्गीयतेऽसौ मणिकर्णिकेति॥
मुक्तिलक्ष्मीमहापीठमणिस्तच्चरणाब्जयोः।
कर्णिकेयं ततः प्राहुर्यां जना मणिकर्णिकाम्॥"

(काशीखण्ड ७। ७९—८०)

संसारी जीवोंके चिन्तामणि विश्वनाथ अन्तिमकाल साधुवोंके कर्णमें तारकब्रह्म उपदेश किया करते हैं। इसीसे उसका नाम मणिकर्णिका है। अथवा वह स्थान मुक्तिलक्ष्मीके महापीठका मणिस्वरूप और उनके चरणकमलका कर्णिका स्वरूप है। इसीसे मानव उसे 'मणिकर्णिका' कहते हैं।

"त्वदीयस्यास्य तपसो महोपचयदर्शनात्।
यन्मयान्दोलितो मौलिरद्भुतस्वनभूषणः॥
तदान्दोलनतः कर्णात् पपात मणिकर्णिका।
मणिभिः खचिता रम्या ततोऽस्तु मणिकर्णिका॥
चक्रपुष्करिणी तीर्थं पुराख्यातमिदं शुभम्।
त्वया चक्रेण खननाच्छङ्खचक्रगदाधर॥
मम कर्णात् पपातेदं यदा च मणिकर्णिका।
तदा प्रभृति लोकेऽत्र ख्यातास्तु मणिकर्णिका॥"

(काशीखण्ड २६। ६२—६५)

महादेवने कहा है—'हे विष्णो! तुम्हारी महातपस्या देख हमने विस्मयसे मस्तक हिलाया था। उससे हमारे कर्णसे विचित्र मणिसमूहखचित मणिकर्णिका नामक कर्णभूषण यहां गिर पड़ा इसीसे इस स्थानका नाम मणिकर्णिका है। तुम्हारे चक्रद्वारा खनन करनेसे यह पवित्र तीर्थ पहले चक्रपुष्करिणी कहाता था। पीछे हमारी मणिकर्णिका गिरनेसे यह मणिकर्णिका नामसे ख्यात हुआ।

काशीमाहात्म्यमें लिखा है—कापिल वा सांख्ययोग अथवा बहुतर व्रतद्वारा जो गति नहीं मिलती, मोक्षभूमि मणिकर्णिका मानवगणको अनायास वही गति प्रदान करती है। ब्रह्मचारी भी अन्तिम काल मुक्तिके लिये मणिकर्णिकाका आश्रय ग्रहण करते हैं। वास्तविक सहस्र सहस्र यात्री मणिकर्णिकाका वारि स्पर्श करने आते हैं।

मणिकर्णिकाके घाट पर विष्णुकी 'चरणपादुका' है। प्रवाद है—यहां भगवान् विष्णुने महादेवका आराधन किया था। एक विस्तृत मर्मर पत्थर पर पदतलकी भांति दो चिह्न हैं। वह प्राय डेढ़ हाथ विस्तृत हैं। कार्तिक मास नाना स्थानोंसे यात्री उस चरणपादुकाकी पूजा करने जाते हैं। वरणासङ्गमके निकट भी उसी प्रकार पादुकाके चिह्न है। मणिकर्णिका घाट पर अनतिदूर सिद्धविनायकका प्राचीन मन्दिर है। उस मन्दिरमें सिद्धविनायक व्यतीत सिद्धि और बुद्धि देवीकी भी मूर्ति है।

सिद्धविनायकके निकट अमेठीके राजा द्वारा प्रतिष्ठित एक सुन्दर देवालय है। मणिकर्णिकाके समीप सेंधिया और नागपुरके राजाका बंधाया मनोहर घाट वर्तमान है।

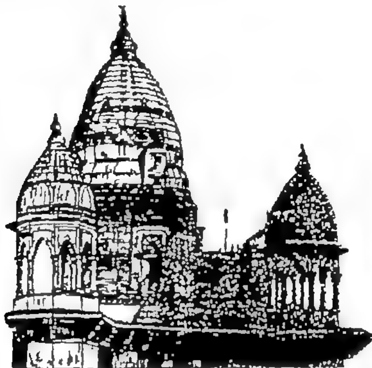
मणिकर्णिकाके बिलकुल सामने तारकेश्वरका मन्दिर है। सौरपुराणमें लिखा है—

"अन्तिमकाल तारकेश्वर काशीवासियोंको तारक ब्रह्मका ज्ञान प्रदान करते हैं।" (६।८) गङ्गाके पश्चिम घाटपर दिवोदासेश्वरका मन्दिर है। काशीखण्डके मतसे काशीपति रिपुञ्जय दिवोदासने वहां एक शिवालय बनाया और उसमें दिवोदासेश्वर नाम शिवलिङ्ग प्रतिष्ठा कराया था। वह स्थान 'भूपालश्री' तीर्थ नामसे विख्यात है (५८।११-१२)। वर्तमान मन्दिर बहुत अधिक दिनका प्राचीन समझ नहीं पड़ता। मन्दिरमें दिवोदासेश्वर लिङ्ग व्यतीत 'विंशबाहुक' नाम्नी एक देवमूर्ति है, उसके २० हाथ है। मन्दिरकी प्रदक्षिणाके मध्य धर्मकूप नामका एक पवित्र तीर्थ है। किसी किसी पुराविद्के मतानुसार पहले वह बौद्धोंका तीर्थ था, पीछे हिन्दुवोंका बन गया। काशीखण्डके मतमें

उस स्थान पर पिण्डदान करनेसे पितृगणको अक्षयपद मिलता है। (काशीखण्ड ११ अ०) त्रिलोचनेश्वरमन्दिरको छोड़ कुछ आगे बढ़ने पर पार्श्वमें पिशाचमोचनी देवीका मन्दिर नयनगोचर होता है। (काशीखण्ड ११।१०४)

पिशाचमोचनी मन्दिरके पीछे मोरघाट पर शिव सिढ़ि पार अनेक मन्दिर देख पड़ते हैं। यहीं ललिता देवीके मन्दिर निकट नेपाली विष्णुमन्दिर और राज-वल्लभ देवालय है। महाराष्ट्रके उस नक्श मन्दिरका दृश्य अति सुन्दर लगता है।

वाराणसीके उत्तर-पश्चिम कोणमें नागकूप नामक



नेपाली विष्णुमन्दिर।

तीर्थ है। आजकल यह स्थान नागकुआं कहला कर जाता है। यह अंश वाराणसीका प्राचीन भाग समझ पड़ता है। प्राय १९५ वर्ष पूर्व किसी राजाने इस कूपको विस्तार करके पुनः संस्कार करा पत्थरसे बंधा दिया था। इसको सिढ़ी पर एक स्थानमें १ नागमूर्ति और अपर स्थानमें एक शिवलिङ्ग देखते हैं। यहां नाग और नागेश्वरशिवको पूजा होती है।

नागकूपसे थोड़ी दूर कामेश्वरी देवीका मन्दिर है। इसको देवी मूर्ति अष्टधातुनिर्मित है। शिर पर रजत मुकुट शोभित है। वागीश्वरी देवी सिंहोपरि अवस्थित है। मन्दिर भी देखने योग्य है। इसके बरामदेमें नानावर्ण देवदेवीकी मूर्ति मिलती है। मन्दिरके एक कोणमें अतिवे राजवसन पत्थरकी एक सिंहमूर्ति है। अतद्भिन्न राम, लक्ष्मण, सीता प्रभृति और नवग्रहकी मूर्ति भी है।

वागीश्वरीमन्दिरके निकट ही ज्वरहरेश्वरका और सिद्धेश्वरका मन्दिर है। अनेक लोगोंके विश्वासानुसार ज्वरहरेश्वर महादेवकी पूजा करनेसे सर्वप्रकार ज्वर निवारित होता है। इसी प्रकार सिद्धेश्वर मानवकी मनस्कामना सिद्ध करते हैं।

इन मन्दिरोंमें शिल्पनैपुण्य तथा कारुकार्य अच्छा है।

वाराणसीमें दशाश्वमेधघाट भी एक महातीर्थ है। यहां शत शत मन्दिर बने हैं।

"साहाय्यं प्राप्य राजर्षेर्दिवोदासस्य पद्मभूः।
इयाज दशभिः काश्यामश्वमेधैर्महामखैः॥
तीर्थं दशाश्वमेधाख्यं प्रथितं जगतीतले।
पुरा रुद्रसरो नाम तत्तीर्थं कलशोद्भव।
दशाश्वमेधिकं पश्चाज्जातं विधिपरिग्रहात्॥"

(काशीखण्ड ५२। ६६—६८)

ब्रह्माने राजर्षि दिवोदासके सहायसे काशीमें दश अश्वमेध यज्ञ किये थे। तदवधि उनके यज्ञ करनेका स्थान दशाश्वमेधतीर्थ नामसे जगत्में विख्यात हुआ। पुराकालको उक्त तीर्थ रुद्रसरोवर कहाता था। ब्रह्माके यज्ञावधि उसका नाम दशाश्वमेध पड़ गया।

दशाश्वमेधमें ब्रह्माने दशाश्वमेधेश्वर नामक शिवलिङ्ग स्थापन किया था।

"तत्र स्नात्वा महाभागे भवन्ति नीरुजा नराः।
दशाश्वमेधानां फलं तत्र प्राप्नोति मानवः॥"

(मत्स्यपुराण, १८३। ७१)

उस (दशाश्वमेध) तीर्थमें स्नान करनेसे मानव रोगशून्य होते और दश अश्वमेधका फल भोगते हैं।

काशीखण्डमें लिखा है कि दशाश्वमेधतीर्थमें केवल मात्र तीन आहुति प्रदान करनेसे अग्निहोत्रयागका फल मिलता है। (काशीखण्ड ३३। १०८)

अद्यापि दशाश्वमेधेश्वर और ब्रह्मेश्वर नामक शिवमन्दिर बना है। काशीखण्डके मतमें उक्त उभय लिङ्ग ब्रह्माने प्रतिष्ठित किये थे। प्रथम लिङ्ग कृष्णपाषाणमय और प्रायः ४ हाथ उच्च है। सम्मुख एक वृहदाकार वृषभ मूर्ति है। काशीमाहात्म्यके मतानुसार दशाश्वमेधमें स्नान कर दशाश्वमेधेश्वरके दर्शन करने पर मानव समस्त पातकसे मुक्ति पाता है। ज्येष्ठ मासकी प्रतिपद और दशहराको विस्तर तीर्थयात्री एकत्र होते हैं। काशीखण्डके मतानुसार उक्त उभय दिन दशाश्वमेधमें स्नान करनेसे बाल्यकृत अथवा दशजन्मार्जित पाप कट जाता है। ब्रह्मेश्वरलिङ्ग दर्शन करनेसे भी मानव ब्रह्मलोक पाता है।

दशाश्वमेध-मन्दिरके निकट ही 'रुद्रसर' नामक तीर्थ है। काशीखण्डके कथनानुसार उक्त तीर्थमें स्नान करनेसे जन्मद्वयकृत पाप विनष्ट होता है।

दशाश्वमेध-घाटमें दशहरेश्वर प्रभृति अनेक देवमन्दिर हैं। एक ही साथ कतार कतार इतने अधिक मन्दिर काशीमें अन्य किसी स्थान पर देख नहीं पड़ते।

दशाश्वमेधघाटके उत्तर मानमन्दिरघाटके निकट दाल्भ्येश्वर, सोमेश्वर, विष्णु, शीतला, वाराही देवी प्रभृतिके मन्दिर बने हैं।

वाराणसीसे पश्चिम नगरसीमाके बाहर पिशाचमोचन तीर्थ है। वह एक प्राचीन स्थान है। कूर्मपुराणमें भी उसका उल्लेख है। (पूर्वभाग, ३१। २) प्रायः काशीयात्री मात्र उक्त तीर्थके दर्शनको जाते हैं।

काशीमाहात्म्यमें कहा है:—किसी समय एक पिशाच बलपूर्वक काशी पहुंचा था। अपरापर देवता उसकी गति रोक न सके। शेषको कालभैरवने युद्ध कर पिशाचका मस्तक छिन्नखण्ड कर डाला। फिर भैरवनाथ पिशाचका मुण्ड ले विश्वेश्वरके निकट उपस्थित हुये। देहहान होते भी पिशाचकी जीवनशक्ति वा वाक्शक्ति गयी न थी। उसने विश्वेश्वरसे प्रार्थना की कि वह काशीसे हटाया न जाय। आशुतोषने उसकी प्रार्थना ग्राह्य की। पिशाचने अवशेषको फिर कहा 'हे विश्वेश्वर! आप अनुमति दें जिसमें गयायात्री बिना मुझे प्रथम दर्शन किये गया यात्रा न कर सकें।' विश्वेश्वरने वही अनुमति दे डाली। तदनुसार अनेक यात्री प्रथम पिशाचमोचनका दर्शन कर पश्चात् गया जाते हैं। कालभैरवने उस तीर्थमें पिशाचका मुण्ड फेंका था। इसीसे उसका नाम पिशाचमोचन पड़ गया। वहां प्रतिवर्ष कई मेले होते हैं। उनमें 'लोटामण्टा' मेला प्रधान है।

पिशाचमोचन घाट कुछ मीराबाई और कुछ गोपालदास साधुके द्वारा पत्थरसे बंधाया गया। घाटका दक्षिण प्रायः तीन शत वर्ष पूर्व राजा शिवशम्भु और उत्तर अंश प्रायः शताधिक वर्ष पूर्व राजा मुरलीधरने बनवाया था।

पिशाचमोचनको पूर्व ओर दो मन्दिर हैं। उनमें एक मीराबाईका प्रतिष्ठित है। मन्दिरकी चारो दिक् अनेक देवमूर्ति हैं। कहीं शिव, कहीं उन्हींके पार्श्वमें पिशाचका छिन्न मुण्ड, कहीं विष्णु, लक्ष्मी, सूर्य, गणेश, हनुमान् प्रभृतिकी मूर्ति शोभा पाती हैं।

इसके आगे सूर्यकुण्ड वा साम्बादित्य है। काशी-खण्डमें वर्णित है—विश्वेश्वरकी पश्चिमदिक् जाम्ब-वती-नन्दन साम्बने आदित्य देवकी उपासना की थी। वह रूपके अभिमानसे कुष्ठरोगाक्रान्त हुये। उस दारुण व्याधिसे मुक्ति लाभके लिये वह काशीमें आ एक कुण्ड निर्माण पूर्वक सूर्यकी आराधना कर व्याधिसे छूटे। साम्बप्रतिष्ठित साम्बादित्य नामक सूर्य-विग्रह मनुष्यको सर्वप्रकार सम्पद् प्रदान करता है। साम्बादित्यकी पूजा करनेसे स्त्री कभी विधवा नहीं होती। माघ मासमें रविवार पर शुक्लसप्तमीको साम्ब कुण्डकी वार्षिक यात्रा पड़ती है। उसदिन साम्बकुण्डमें स्नान कर साम्बादित्यकी पूजासे उत्कट रोगसे मुक्त होता है।"

काशीखण्डोक्त साम्बकुण्डका ही वर्तमान नाम सूर्यकुण्ड है। सूर्यकुण्डके सम्मुख एक क्षुद्र मन्दिरमें महाभैरवकी मूर्ति है।—सिन्दूरलिप्त घोरकृष्णवर्ण यह मूर्ति प्राचीन कही जाती थी।

उसी पल्लीमें शुक्रेश्वरका मन्दिर है। काशीखण्डके मतमें शुक्रने यह शिवलिङ्ग प्रतिष्ठा किया था।

भारतके [illegible] विख्यात यामी-श्वरका मन्दिर है। उस मन्दिरको चारों ओर प्राचीर है। मन्दिरमें अनेक देवमूर्त्ति प्रतिष्ठित हुयी हैं। मन्दिरकी कारीगरी अच्छी और देखने योग्य है।

[illegible] महल्लेके सुपरिचित काशीपुरा महल्लेमें काशी देवीका मन्दिर बना है। यही काशीकी अधि-ष्ठात्री देवी हैं। काशी देवीके मन्दिरसे थोड़ी दूर कर्णघण्टा तालाब है। काशीखण्डके मतमें इसे 'घण्टाकर्णह्रद' कहते हैं। इस ह्रदके निकट [illegible] विराज करती हैं। ह्रदके तीर घण्टाकर्ण नामक गणनायकके प्रतिष्ठित घण्टाकर्णेश्वर नामक शिवलिङ्ग है।

(काशीखण्ड ११। १९—१०)

घण्टाकर्ण ह्रदके तीर वेदव्यासेश्वरका मन्दिर है। उस मन्दिरमें वेदव्यासकी मूर्ति और तत्प्रतिष्ठित वेदव्यासेश्वरलिङ्ग विद्यमान है। श्रावण मासमें घण्टा-कर्णेश्वर और नलिकण्ठके मन्दिरके दर्शनको विस्तर तीर्थयात्री आते हैं।

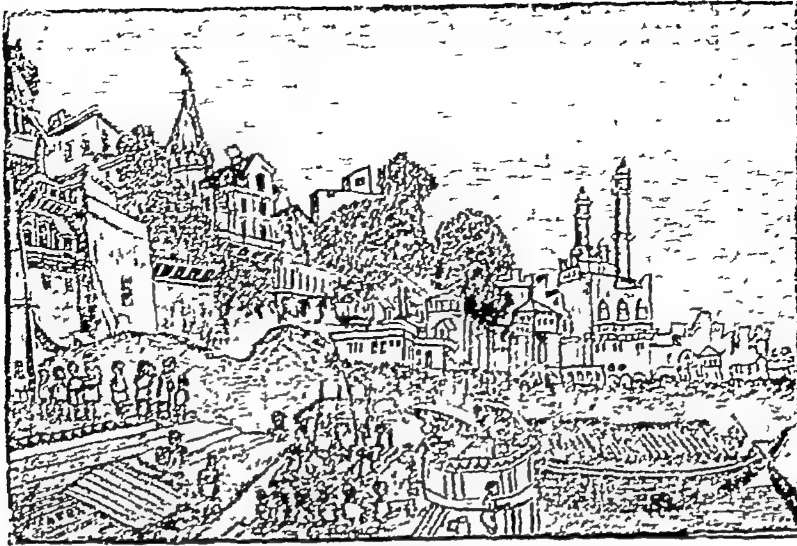
काशीदेवीके मन्दिरसे कुछ उत्तर भूतभैरव वा विकट भैरवका मन्दिर है। भूतभैरवकी मूर्ति अद्भुत है। यहां अपरापर देवमूर्त्ति भी हैं। उनमें अष्टदल पद्मके प्रकाण्डसे लक्षित बृहत् शिवलिङ्ग ही प्रधान है।

उसी महल्लेमें मार्कण्डेय और जगन्नाथदेवका मन्दिर है। एक स्थानमें दो सतीकी प्रस्तरमूर्त्ति है। उभयने पतिका सहमरण किया था। अबतक स्त्री आ कर उन दो सतीमूर्त्तिकी पूजा करती हैं। यहां दूसरे भी अनेक प्राचीन पाषाणमूर्त्ति हैं। कालवश अथवा मुसलमान उत्पातसे उन सकल देवमूर्त्तियोंकी ऐसी दुर्दशा हुयी है। यहां प्राचीन शिल्पनैपुण्य देख चमत्कृत होना पड़ता है।

वाराणसीके मध्यस्थलमें त्रिलोचनका प्राचीन मन्दिर है। काशीमाहात्म्यमें लिखा है—"जिस समय शिव ध्यानमें निमग्न हुए, विष्णु प्रत्यह सहस्र पुष्पसे उनकी पूजा करते थे। एक दिन विष्णु शिवपूजामें निरत रहे। उसी समय शिवने उनका एक फूल उठा रखा। उसके पीछे विष्णुने पुष्पाञ्जलि देनेके समय एक एक कर ९९९ फूल देवोद्देशसे अर्पण किये। शिवको उन्होंने देखा कि एक फूल न था। किंकर्तव्यविमूढ़ होकर अरविन्दको भ्रमसे अपना एक नेत्रकमल उसमें दिया। व्यापार देखकर वह भीत पड़ते ही शिवके तीन नेत्र हो गये और वह त्रिलोचन-नामसे विख्यात हुये।"

त्रिलोचनका वर्त्तमान मन्दिर पूनाके नाबूबाबाने बनवाया था। मन्दिर बहुत प्राचीन नहीं। किन्तु तत्-स्थानीय सकल देवमूर्त्तिके पारिपाट्यसे यह अतिश प्राचीन—ऐसा समझ पड़ता है। काशीखण्डके मता-नुसार—"त्रिभुवनके मध्य वाराणसी पुरी ही सर्वापेक्षा श्रेष्ठ है। उस वाराणसीमें [illegible] लिङ्ग और उसमें भी एक त्रिलोचन लिङ्ग श्रेष्ठ है। महेश्वरने कलिकालमें त्रि-लोचनकी महिमा छिपा रखी है।" (काशीखण्ड ७५।११९

मन्दिरकी सीमामें प्रवेश करने पर विविध देव-देवी मूर्त्ति दर्शनसे नयन और मन आह्लाद होता है। यहां दूसरे भी कई क्षुद्र मन्दिर हैं। प्रत्येक प्राय ५। १० वा २० कि पवित्र शिव और निकटकी नन्दिमूर्त्ति



अग्नितीर्थ—अग्नीश्वर घाट।

देखते हैं। दक्षिणभागमें देवसभा है वहीं विख्यात कोटिलिङ्गेश्वरमूर्ति वर्तमान है। वह लिङ्ग २ हस्त उच्च है। लिङ्गका अङ्ग इस प्रकार गठित है कि देखते ही शत शत शिवलिङ्गका एकत्र अधिष्ठान समझ पड़ता है। मन्दिरके दक्षिण भागमें राजा अमार प्रतिष्ठित वाराणसी देवीकी मूर्ति है। एतद्भिन्न इधर उधर गणेश, सूर्य, शीतला, हनूमान् प्रभृतिकी मूर्ति भी दृष्टिगोचर होती हैं।

त्रिलोचन मन्दिरके द्वार सम्मुख युग्ममन्दिर है। वहां बाहरसे भीतर तक असंख्य देवमूर्ति विराज करती हैं। उनका दृश्य देखते ही विस्मित होना पड़ता है।

त्रिलोचन मन्दिरका बरामदा लाल रंगके आठ खंभोंपर स्थापित है। उसका पटल (छत) विविध चित्रसे चित्रित है। बरामदामें बड़ी घण्टा लटकती है। प्रवेशद्वारके पार्श्ववदेशमें वृहत् श्वेत प्रस्तरकी एक वृषभमूर्ति है। वहां गणेशादि देवमूर्ति व्यतीत सिख गुरु नानकशाहकी प्रतिमा अङ्कित है। वहां नरक और मृत्यु नदीका दृश्य बहुत अनोखा है। वहां इस बातका सुन्दर चित्र देख पड़ता—पापी मानवगण किस प्रकार दण्ड पाता और काल नदीके पारपार जानेको कैसे व्याकुल होता है। उक्त मन्दिरको छोड़

कुछ दूर पर त्रिलोचनघाट है। वहां भी शिल्प और कारुकार्यशोभित सुन्दर देवालय बना है। उक्त सकल देवालयके बाहर भीतर चारोदिक् अनेक शिवलिङ्ग रखे हैं।

त्रिलोचनघाटका प्राचीन नाम पिलपिलातीर्थ है। काशीखण्डमें कहा है—गङ्गाके सहित मिलित हो सरस्वती, यमुना और नर्मदा वहां हास्य करती हैं। उसी पिलपिला तीर्थमें जो व्यक्ति स्नानकर पितृश्राद्धादि करता, उसको फिर गयामें जानेका क्या प्रयोजन पड़ता है? पिलपिलातीर्थमें स्नानान्त पिण्डप्रदान कर त्रिविष्टपलिङ्ग दर्शन करनेसे कोटितीर्थ दर्शनका फल लाभ होता है। सरस्वती, यमुना और नर्मदा तीन पापविनाशिनी त्रिलोचनको दक्षिणदिक् त्रिविष्टप लिङ्गको स्नान करानेके लिये समवेत हुयी हैं। उक्त नदीत्रयने अपने अपने नामसे एक शिवलिङ्ग प्रतिष्ठा किया है। त्रिविष्टपको दक्षिणदिक् सारस्वतीश्वर, पश्चिमदिक् यमुनेश्वर और पूर्वदिक् सुखप्रद नर्मदेश्वर हैं। उक्त तीन लिङ्गके दर्शनसे महापुण्य मिलते हैं। (काशीखण्ड ५०।५—११)

अद्यापि त्रिलोचनके निकट त्रिलोचनघाटमें उक्त सकल प्रतिमा विराज करती हैं।

मङ्गलागौरीके दक्षिण चारघाट है। उसके आगे

रामघाट पड़ता है। यहां भी जिसका देवालय है। राम घाटके दक्षिण जैनमन्दिरघाट है। यहां जैनमन्दिरमें पार्श्वनाथ प्रभृति जिनमूर्त्ति है। उसके दक्षिण प्राचीन अग्नितीर्थ (वर्त्तमान अग्नीश्वरघाट) है। अग्नितीर्थ के तीर अग्नीश्वर मन्दिर अतीत हुआ था अनेक देवालय है।

त्रिलोचनघाटके निकट आदि महादेवका एक सामान्य मन्दिर है। उस मन्दिरमें प्राचीन व्यासासन देख पड़ता है। प्रवादानुसार उस आसन पर बैठ वेद व्यास वेदपाठ करते थे। यहां पाषाणकी पार्श्वतीर्थकी प्रतिमा है। पूर्वतन पार्श्वेश्वरोका मन्दिर विनिष्ट हो गया था। मोरजी नामक एक विद्वान् गुजराती ब्राह्मणने काशीखण्ड आनुपूर्विक पढ़ प्राचीन देवमूर्त्ति और तीर्थ समस्तको उद्धार करनेकी चेष्टा लगायी। उन्होंने प्राचीन पार्श्वेश्वरोकी प्रतिमाका अनुसन्धान न पा उसके स्थानमें वर्त्तमान प्रतिमा प्रतिष्ठा की है।

पञ्चगङ्गाघाटका अपर नाम पञ्चनद या धर्मनद तीर्थ है। काशीखण्डके मतमें—"धर्मनदमें धूतपापा किरणा, सरस्वती, गङ्गा और यमुना पांच नदी आकर मिली है। इसीसे इसका नाम पञ्चनद है। राजसूय और अश्वमेधके फलकी अपेक्षा पञ्चनदतीर्थमें स्नान करनेसे शतगुण अधिक फल लाभ होता है।"
(काशीखण्ड ५९।११३—११५)

आजकल केवल गङ्गानदी देख पड़ती है। आख्या-नके विश्वासके अनुसार दूसरी चारो नदी भूमिके मध्य अन्तर्वाहिता बहती है।

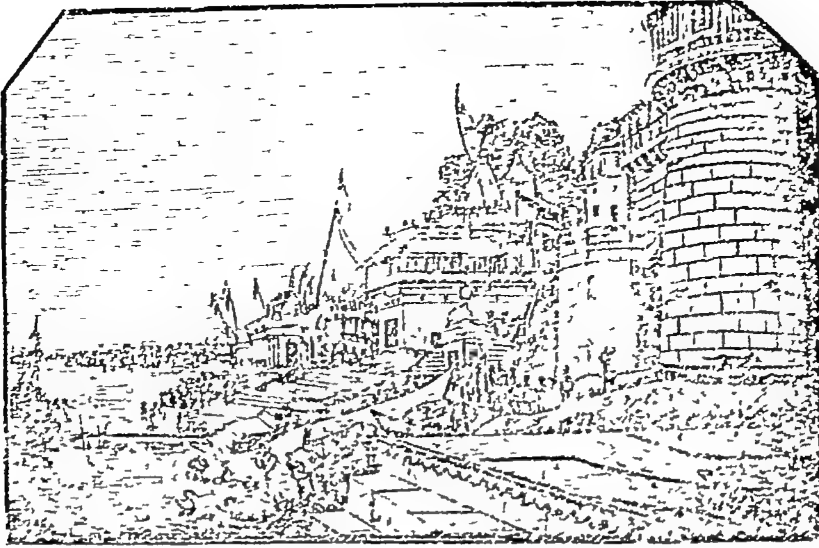
यहां गङ्गाकेशीरो और बिन्दुमाधवका मन्दिर है। काशीखण्डके कथनानुसार—पञ्चनदतीर्थमें स्नान कर बिन्दुमाधवको दर्शन न करनेसे मनुष्य फिर कभी गर्भ यातनाका भोग नहीं करता। इसी प्रकार मङ्गला गौरीकी अर्चना करनेसे वन्ध्या भी पुत्र लाभ कर सकती है। (काशीखण्ड ६०।१२०—१२८)

इसी स्थान पर हिन्दूविद्वेषी औरङ्गजेबने पुरातन बिन्दुमाधवका मन्दिर चूर्ण करा हिन्दूदेवालयकी उच्चता खर्व करनेके लिये बहुत ऊंची मीनारसे सजी एक बड़ी मसजिद बनायी थी।

त्रिलोचनघाटके पश्चिम कामेश्वर प्रभृति प्राचीन शिवलिङ्गके अनेक मन्दिर है। उस प्रायः सकल मंदिर का वर्ण मलिन और कुछ कुछ टूटा है। काशीखण्ड-के मतमें—देव कामेश्वर मानुषको कामना पूर्ण करते हैं। मनःकामना पूर्ण करनेके लिये भगवान् लिङ्गमें लीन हुए हैं। इसीसे कामेश नाम पड़ा है।"
(काशीखण्ड ८५।१११—११९)

उसीके निकट प्राचीन महाशोणरी तीर्थ था। लिङ्ग-पुराणादिमें उस प्राचीन तीर्थका उल्लेख है। काशीखण्ड के मतानुसार महाशादरी तीर्थमें स्नान करनेसे मानव फिर गर्भयन्त्रणा भोग नहीं करता। उस तीर्थका आज कल चिह्नमात्र नहीं मिलता। प्रायः ८० वर्ष पूर्व किसी साहबने उसका लोप कर दिया था। पहले यहां अनेक तीर्थयात्री स्नान करने आते थे। किन्तु तीर्थ लोपके साथ यात्रियोंकी संख्या भी घट गयी है।

काशीमें बङ्गाली-टोलामें केदारेश्वरका मन्दिर है। काशीखण्डमें केदारेश्वरकी उत्पत्तिके सम्बन्ध पर लिखा है—"उज्जयिनीमें वशिष्ठ नामक एक ब्राह्मणतनय रहे। वह हिमालयस्थ केदारेश्वरके उद्देशसे यात्रा कर काशी पहुंचे। यहां उन्होंने प्रतिज्ञा की थी—हम जब तक जीते रहेंगे प्रति चैत्रमास केदारेश्वरके दर्शनको यात्रा करेंगे। फिर उन्होंने ६१ बार केदारेश्वर दर्शन किया। वृद्धकाल पर वशिष्ठने पूर्ववत् केदारेश्वरके दर्शनार्थ गमन किया, किन्तु पति पथ देख सहचर मध्य ही वापिस लौटा दिया। तथापि इनका उत्साह टूटा न था। उन्होंने स्थिर किया कि राहमें मरना भी अच्छा परन्तु केदारेश्वरके दर्शनको अवश्य जावेंगे। इसी वाक्य-चयके केदारेश्वरने स्वप्नमें दर्शन दे कहा था—'हम तुम्हारे ऊपर सन्तुष्ट हुये हैं। वर मांगो।' ब्राह्मण कहने लगा—'यदि आप हमारे ऊपर प्रसन्न हुये हैं, तो हिमालयसे आकर यहां अवस्थान कीजिये।' भगवान्ने भक्तके प्रति सन्तुष्ट हो अपनी कलामात्र हिमश्रेणीमें रख उस स्थान पर आकर सम्पूर्ण भावसे चरणापङ्कजमें अवस्थान किया। हिमालयकी अपेक्षा काशीमें केदारेश्वरका दर्शन करनेसे सात गुना अधिक फल मिलता है। हिमालयकी भांति काशीमें भी गौरी



घोपला घाट।

कुण्ड, हंसतीर्थ और गङ्गा आदि वर्तमान हैं। पुराकाल गौरीने उक्त महाह्रदमें स्नान किया था। इसी से "गौरीकुण्ड" नाम विख्यात हुआ। उसका अपर नाम मानसतीर्थ है। केदारकुण्डमें स्नान करनेवाले को केदारेश्वर मुक्ति प्रदान करते हैं।

(काशीखण्ड, ७० अ०)

चार छोटे छोटे मन्दिरोंके मध्यस्थलमें गङ्गातीर पर केदारेश्वरका वृहत्‌मन्दिर अवस्थित है। मन्दिरका बरामदा लाल और सफेद है। अनेक देवमूर्ति शोभा पा रही हैं। अनेक मूर्ति ऐसे सुन्दर भावसे बनी, कि देखनेमें जाती जैसी मालूम पड़ती हैं। केदारेश्वरकी मूर्ति व्यतीत वहां अन्नपूर्णा, लक्ष्मीनारायण, गणेश, भैरवनाथ प्रभृतिकी प्रतिमा भी हैं। मन्दिरके पूर्व प्राचीरसे गङ्गातीर अवधि पत्थरका घाट बंधा है। घाटकी सिढ़ीके एकपार्श्वमें एक वृहत्‌ कूप है। काशीखण्डमें उसका नाम हरपापह्रद वा गौरीकुण्ड लिखा है

केदारेश्वर मन्दिरसे उत्तर-पश्चिम थोड़ी दूर मानसिंहउत्खात मानसरोवर नामक गभीर जलाशय है। उसकी चारो ओर प्रायः ५० मठ बने हैं। वहां रामलक्ष्मणका मन्दिर ही प्रधान है। उस मन्दिरकी सीमामें एक स्थान पर दत्तात्रेयकी प्रतिमा है। एतद्भिन्न उक्त स्थान पर प्रायः सहस्राधिक देवप्रतिमा देख पड़ती हैं। अनतिदूर मानसिंह-प्रतिष्ठित मानेश्वर नामक शिवलिङ्गका मन्दिर भी है।

मानेश्वरके पश्चिम तिलभाण्डेश्वरका मन्दिर बना है। तिलभाण्डेश्वरकी प्रतिमा ३ हाथ ऊंची किन्तु १० हाथ चौड़ी है। साधारणके विश्वासानुसार उक्त प्रतिमा प्रत्यह तिल परिमाण बढ़ती है। इसीसे उसको तिलभाण्डेश्वर कहते हैं। वह मन्दिर भी देखनेकी चीज है। मन्दिरका कोई कोई अंश अति प्राचीन है। सुना जाता है कि चार सौ वर्ष पूर्व किसी राजाने उसे निर्माण कराया था। मन्दिरके निकट इधर उधर असंख्य देवप्रतिमा हैं। एक स्थान पर हस्तपद एवं शिरः शोभित एक वृहत्‌ कृष्णवर्ण शिवप्रतिमा है। काशीमें सर्वत्र शिवलिङ्ग विद्यमान हैं। किन्तु वैसी बड़ी प्रतिमा एक भी देख नहीं पड़ती। एक समय उसके मन्दिर और बरामदेमें अच्छा शिल्पकार्य था छत और कारनिससे भी अनेक प्रतिमा अङ्कित थीं। आजकल कालवश वैसा दृश्य नहीं रहा।

तिलभाण्डेश्वरके निकट एक स्थानमें अश्वत्थ वृक्षके मूल पर एक भग्न प्रस्तरप्रतिमा रखी है। अनेक लोग उसे बौद्ध प्रतिमा अनुमान करते हैं। उसका नाम वीरभद्र है। उस प्रतिमामें शिल्पनपुण्यका जैसा परिचय मिलता, वैसा दूसरीमें देख नहीं पड़ता।

हनुमत्‌घाट और केदारनाथके मध्य अनेक घाटों पर कई देवताओंकी चोटें हैं उनमें आधुनिक होते भी अर्वाचीन प्राचीन देवप्रतिष्ठित वृहत् कुमारेश्वर नामक शिवलिङ्ग और उनका मन्दिर उल्लेखयोग्य है।

संख्या कर नहीं सकते काशीमें कितनी छोटी देव प्रतिमायें हैं। गङ्गाके तीर प्रति घाटमें देवालय देख पड़ते हैं। उनमें कामेश्वरके दक्षिण एवं उत्तर पुष्करिणीके ऊपर सहदाघाट, हनुमत्घाट, चौसठ्ठा घाट और चौमठ उल्लेख योग्य है।

गङ्गाके तीर चौकीघाट पर रामेश्वरका मन्दिर है। उसके निकट विस्तार नागप्रतिमा विराज करती है।

गलीमें घूमते जो दूरसे एक दोना देख पड़ती है। दोनाके पास दशभुजा दुर्गाको मूर्ति है। वह बड़ी ही सुन्दर और वैसी सुसज्जित है।

काशीकी दुर्गावाड़ी अति प्रसिद्ध है। काशीखण्ड पढ़नेसे समझते कि यहां दुर्गामूर्ति बहुत दिनसे प्रतिष्ठित है। वर्तमान दुर्गामन्दिर रानी भवानीने बनवा दिया था। मन्दिरका बरामदा उस समयमें पूर्वहारका बनाया है।

दुर्गाबाड़ीको बनता देख आश्चर्यमें आना पड़ता है। इसकी कोई संख्या नहीं देख विदेशसे कितने तीर्थयात्री आते हैं। समस्त मानो देवीके मन्दिरमें महोत्सव है। प्रत्येक देवी पार्वतीको दीप्तिमें निमित्त [illegible] होता है। प्रति मङ्गलवारको देवीके दर्शनके लिये मेला लगता है। प्रतिवर्ष श्रावण मासमें मङ्गलवारको बड़ा मेला होता है। इसकी संख्या नहीं—उस समय कितने तीर्थयात्री वहां आते हैं?

मन्दिरका कारुकार्य और शिल्पनैपुण्य प्रशंसाके योग्य है। यहां [illegible] एक बड़ी घण्टा लटकती है। दुर्गाबाड़ीको प्राचीरसीमाके मध्य पवित्र दुर्गाकुण्ड है। दुर्गाकुण्डसे पूर्व थोड़ी दूर कुरुक्षेत्रतालाब है। उक्त जलाशय भी रानी भवानीकी कीर्ति है।

उसी महल्लेमें प्रसिद्ध लोलार्ककुण्ड है। मत्स्यपुराण (१८३।६५), कूर्मपुराण (३३।१०) और काशीखण्डमें उक्त पवित्र तीर्थका माहात्म्य कीर्तित हुआ है। काशीखण्डमें कहा है—

"काशीमें स्पर्शसे सूर्यका मन अतिशय लोल हुआ था। इसीसे सूर्यका नाम लोलार्क पड़ गया। असिवरदिक् पश्चिमकूलके निकट लोलार्क (सूर्यमूर्ति) अवस्थित हैं। वह सर्वदा काशीवासीका मङ्गल किया करते हैं। अग्रहायण मासके रविवारको लोलार्कको षष्ठीको यात्रा करनेसे मानव पापमुक्त होता है। लोलार्कसङ्गममें स्नान करनेसे अनन्तकालके लिये सत् कर्म सिद्ध हो जाता है।" (काशीखण्ड ४६।६८)

रानी अहल्याबाई, अमृतराव और मिथिलाधिपने लोलार्क कुण्डका उद्धार कराया था।

लोलार्ककुण्डके चारों ओर गणेशादि नानाविध देवमूर्ति हैं। कुण्डके दक्षिण तीर महेश्वरका मन्दिर बना है। महेश्वरका लिङ्ग भी अति वृहत् है।

पुण्यधाम वाराणसीमें बहुत प्राचीन और अप्राचीन देवमूर्ति एवं पवित्र तीर्थ हैं। काशीखण्डमें नामोक्त प्राचीन तीर्थका विवरण इस प्रकार दिया है—

"समस्त जगत्‌के मध्य वाराणसी पुरी अति पवित्र स्थान है। उसमें भी मध्य गङ्गा और असिसङ्गम अतिशय पवित्रतर है। असिसङ्गमसे हयग्रीवतीर्थ पवित्रतर पुण्यप्रद है। यहां विष्णु हयग्रीव रूपमें अवस्थान करते हैं। उक्त हयग्रीवतीर्थसे भी गजतीर्थ पवित्र पुण्यप्रद है। यहां स्नान करनेसे गजदानका फल मिलता है। गजतीर्थसे कोकावराहतीर्थ पुण्यदायक है। यहां कोकावराह देवको पूजा करनेसे फिर जन्म लेना नहीं पड़ता।

"दिलीपेश्वर महादेवके निकट दिलीपतीर्थ* है। वह कोकावराह तीर्थसे श्रेष्ठतर है। उसीके निकट सगरतीर्थ है। वह दिलीपतीर्थसे भी श्रेष्ठतर है। सप्तसागर तीर्थ, महोदधितीर्थ, कपिलेश्वरके चौरतीर्थ, केदारकुण्डके निकट हंसतीर्थ, त्रिभुवनकेशवतीर्थ, गोव्याघ्रेश्वर तीर्थ, मान्धातृतीर्थ, मुचुकुन्दतीर्थ, पृथ्वीश्वरके निकट पृथुतीर्थ, परशुरामतीर्थ, बलभद्रतीर्थ, उसके निकट दिवोदासतीर्थ, भागीरथीतीर्थ साथ ही तटपर निष्पापेश्वर लिङ्गके निकट 'हरपापतीर्थ' उसीके पास दशाश्व-

*गङ्गायां [illegible] च [illegible] अविमुक्ते।
[illegible] विराजते हैं" (काशीखण्ड [illegible])

तीर्थ, बन्दीतीर्थ (यहां देवोंने दैत्यगणकर्तृक बन्दी होने पर भगवतीका स्तव किया था), प्रयागतीर्थ, शोणीवराहतीर्थ, कालेश्वरतीर्थ, अशोकतीर्थ, शुक्रतीर्थ, भवानीतीर्थ, सोमेश्वरके पुरोभागमें अवस्थित प्रभासतीर्थ, गरुड़तीर्थ, ब्रह्मेश्वरके पुरोभागमें ब्रह्मतीर्थ, वृषाकतीर्थ, विधितीर्थ, नृसिंहतीर्थ चित्रघेश्वरतीर्थ, धर्मेश्वरके निकट धर्मतीर्थ, विशालाक्षी देवीके निकट विशालतीर्थ, जरासन्धेश्वरके निकट जारासिन्धेश्वरतीर्थ, ललितादेवीके निकट ललितातीर्थ गौतमतीर्थ, गङ्गाकेशवतीर्थ, अगस्त्यतीर्थ, योगिनीतीर्थ, त्रिसन्ध्यातीर्थ, नर्मदातीर्थ, अरुन्धतीतीर्थ, वशिष्ठतीर्थ, मार्कण्डेयतीर्थ, खुरकर्तरितीर्थ, भागीरथतीर्थ और वीरेश्वरके निकट वीरतीर्थ, उत्तरोत्तर श्रेष्ठ और अति पुण्यप्रद है।" (काशीखण्ड ८३ अध्याय)

"एतद्भिन्न पादोदकतीर्थ, क्षीराब्धितीर्थ, शङ्खतीर्थ, चक्रतीर्थ, गदातीर्थ, पद्मतीर्थ, महालक्ष्मीतीर्थ, गारुत्मततीर्थ, नारदतीर्थ, प्रह्लादतीर्थ, अम्बरीषतीर्थ, आदित्यकेशवतीर्थ, दत्तात्रेयतीर्थ, भार्गवतीर्थ, वामनतीर्थ, नरनारायणतीर्थ, विदारनरसिंहतीर्थ, यज्ञवराहतीर्थ, गोपीगोविन्दतीर्थ, शेषतीर्थ, शङ्खमाधवतीर्थ, नीलग्रीवतीर्थ, उद्दालकतीर्थ, सांख्यतीर्थ, स्वर्लीनतीर्थ, महिषासुरतीर्थ, बाणतीर्थ, गोपतारेश्वर तीर्थ, हिरण्यगर्भतीर्थ, प्रणवतीर्थ, पिशाङ्गिलातीर्थ, नागेश्वरतीर्थ, कर्णादित्यतीर्थ, भैरवतीर्थ, खर्वनृसिंहतीर्थ, ज्ञानतीर्थ, मङ्गलतीर्थ, मयूखमालितीर्थ, मखतीर्थ, बिन्दुतीर्थ, पिप्पलादतीर्थ, ताम्रवाराहतीर्थ, कालगङ्गातीर्थ, इन्द्रद्युम्नतीर्थ, रामतीर्थ, ऐक्ष्वाकतीर्थ मरुतीर्थ, मैत्रावरुणतीर्थ, अग्नितीर्थ, अङ्गारतीर्थ, कलसतीर्थ, चन्द्रतीर्थ, विघ्नेशतीर्थ, हरिश्चन्द्रतीर्थ, पर्वततीर्थ, कम्बलाश्वतरतीर्थ, सारस्वततीर्थ, उमातीर्थ, रुद्रावासतारकतीर्थ, ढुण्ढितीर्थ, ईशानतीर्थ, नन्दितीर्थ, (काशीखण्ड ८४ अ०) मन्दाकिनीतीर्थ, दुर्वासातीर्थ, ऋणमोचनतीर्थ, वैतरणीतीर्थ, पृथूदक तीर्थ, मेनकाकुण्ड, उर्वशीकुण्ड, ऐरावतकुण्ड, गन्धर्व-कुण्ड, अप्सराकुण्ड, वृषेशतीर्थ, यक्षिणीकुण्ड, लक्ष्मीतीर्थ, पितृकुण्ड, ध्रुवतीर्थ, मानससरोवर, वासुकीह्रद, जानकीकुण्ड, प्रभृतितीर्थ पुण्यप्रद हैं।(काशीखण्ड ९४ अ०)

उक्त तीर्थमें कई आजकल विलुप्त हो गये हैं।

आजकल काशीमें जितने देवालय देख पड़ते, उनमें निम्नलिखित स्थान प्रधान ठहरते हैं—विश्वेश्वर, अन्नपूर्णा, शनैश्चरेश्वर, आदिविश्वेश्वर, कोटीश्वर, ब्रह्मेश्वर, अगस्त्येश्वर, तिलभाण्डेश्वर, कुक्कुटेश्वर, सङ्गमेश्वर, स्वप्नेश्वर, हनुमतेश्वर, केदारेश्वर, श्मशानेश्वर, पावकेश्वर, मध्यमेश्वर, रत्नेश्वर, मातृकेश्वर, वृद्धकालेश्वर, अल्पमृत्युहरेश्वर, याज्ञेश्वर, सिद्धेश्वर, जम्बुकेश्वर, कण्डुकेश्वर, जैगीषव्येश्वर, व्याघ्रेश्वर, ज्येष्ठेश्वर, व्यासेश्वर, ओंकारेश्वर, कपर्दीश्वर, वैद्यनाथ, द्वारकानाधीश्वर, त्रिलोचनेश्वर, कामेश्वर, प्रह्लादेश्वर, वरणासङ्गमेश्वर, आदिकेशव, शूलटङ्केश्वर, तारकेश्वर, मणिकर्णिकेश्वर, आत्मवीरेश्वर, वृषभध्वजेश्वर, वासुकीश्वर, हरिश्चन्द्रेश्वर, नागेश्वर, अग्नीश्वर, उपशान्तीश्वर, व्यङ्कटेश, गभस्तीश्वर, अमृतेश्वर, दुर्गा, सिद्धेश्वरी, सङ्कटादेवी, विन्ध्यवासिनी, राजराजेश्वरी, धूपचण्डी, कल्याणी, पुष्कर, जगन्नाथ, विन्दुमाधव, लक्ष्मी, वाराही, ललिता, शीतला, वागीश्वरी, ढुण्ढिराज, वृद्धगणेश, कालभैरव, वटुकभैरव, दण्डपाणि, साक्षि-विनायक, दुर्गविनायक, अर्कविनायक, चिन्तामणि-विनायक, सप्तवर्णविनायक, सिद्धविनायक, दुग्धविनायक, धर्मविनायक, रेणुकादेवी, चौसठयोगिनी, हनूमान्, वशिष्ठ और वामदेव।

उक्त देव और देवालय व्यतीत दूसरे भी शत शत लिङ्ग एवं देवमूर्तिका विवरण काशीखण्डमें वर्णित हुआ है। किन्तु आजकल उसके अधिकांशका सन्धान नहीं मिलता। मालूम पड़ता है कि मुसलमान उत्पीड़नसे अनेक देवालय और लिङ्ग विलुप्त हो गये हैं।

काशीस्थ तीर्थविवरणके सम्बन्धमें अविमुक्तोपनिषत्, मत्स्यपुराण (१८०—१८६ अ०), कूर्मपुराण (३०—३३ अ०), अग्निपुराण (११२ अ०), लिङ्गपुराण (९२ अ०), शिवपुराणमें ज्ञानसंहिता (४८-५१ अ०), विद्येश्वरसंहिता (१० अ०), सनत्कुमारसंहिता (४१ ४५ अ०) विष्णुपुराण (५।३४ अ०) सौरपुराण (३-८ अ०), पद्मपुराणमें काशी-माहात्म्य, वायुपुराणमें आनन्दकाननमाहात्म्य, स्कान्दमें शिवपुरीमाहात्म्य एवं काशीखण्ड, ब्रह्मवैवर्तमें काशीरहस्य, नारायण भट्टकृत त्रिस्थलीसेतु, महीधरविरचित त्रिस्थलीसेतुसारसंग्रह, रघुधरकृत काशीमाहात्म्य, रघुनाथदास विरचित काशीमाहात्म्यकौमुदी, नन्दपण्डितविरचित काशीप्रकाश और कृपारामका काशीमाहात्म्यसंग्रह द्रष्टव्य है।

काशीसे अदूर वर्त्तमान रामनगरमें व्यासकाशी है। हिन्दूओंके विश्वासानुसार जैसे काशीमें मरनेसे मानव शिवत्व पाता वैसे ही व्यासकाशीमें शरीर छोड़नेसे गर्दभ बन जाता है। इसीसे अनेक लोग व्यासकाशीमें मरना नहीं चाहते।

काशीखण्डमें लिखा है—"वेदव्यास विश्वेश्वरको अपार महिमा सुन काशीमें वास करने लगे। वहां वह व्यासासन पर बैठ प्रत्यह शिष्यवर्गको काशीमहिमा सुनाते थे। किसी दिन महादेवने वेदव्यासकी परीक्षा लेनेके लिये भवानीको बुलाकर आदेश दिया—'भद्रे! आज ऐसा कीजिये जिसमें वेदव्यासको कोई भिक्षा न दे।' सुतरां उस दिन वेदव्यासको किसीसे भिक्षा मिली न थी। जब नाना स्थान घूम वेदव्यासने देखा किसीने भिक्षा दी न थी तब उन्होंने अतिशय क्रुद्ध हो काशीवासीको अभिशाप दिया—'यहांके अधिवासी मुक्तिके गर्वसे भिक्षा नहीं देते अतएव इस काशीमें न पुरुषों विद्या, न पुरुष धन और न पुरुषों मुक्ति न होगी।' इसप्रकार अभिशाप दे उन्होंने आकाशकी ओर मनोदुःखसे आंख उठाकर देखा कि सूर्यदेव अस्ताचलको जाते थे। उससमय क्या करते! क्रोधसे भिक्षापात्र दूर फेंक व्यासदेव आश्रमकी ओर अग्रसर हुये। वह गृह जाते जाते पथके सम्मुख खड़े हो थे कि भवानीने प्राकृत स्त्रीवेषसे द्वारपर खड़े होकर कहा—'हे भगवन्! हमारे पति बिना अतिथि-सत्कार किये भोजन करना अनुचित समझते हैं। अब तक हमें कोई नहीं मिला। इसलिये आप अतिथि हों।' वेदव्यास उनके घरमें अतिथि हुये। उस समय भवानीने नाना प्रश्नमें उनसे पूछा था—'जो व्यक्ति अपने दुर्भाग्यवशसे कार्यलाभ कर न सकने पर क्रोधमें शाप देता, वह शाप किसको लगता है?' वेदव्यासने उत्तर दिया—'वह शाप उस अविवेचक शापदाताके ही प्रति होता है।' फिर गृहस्वामी भगवान् विश्वेश्वरने कहा—'जो व्यक्ति काशीकी समृद्धि देख नहीं सकता, वही इस स्थानमें पाप लगाता है। तुम अब इस स्थानमें रहनेके योग्य नहीं। शीघ्र ही सीमासे बाहर निकल जाओ।' वह बात सुन व्यासने कांपते कांपते गौरीका शरण ले कहा था कि 'प्रति अष्टमी और चतुर्दशी तिथिको उन्हें इस क्षेत्रमें प्रवेश करनेकी अनुमति मिले।' देवीके अनुरोधसे महादेवने यही स्वीकार कर लिया। उसी समयसे व्यास क्षेत्रसे बाहर रह दिवारात्रि काशीको निरीक्षण और प्रति अष्टमी तथा चतुर्दशी तिथिको क्षेत्रमें प्रवेश करते हैं।" साधारण लोगोंके विश्वासानुसार रामनगरमें आज भी व्यासदेव अपेक्षा करते हैं। उन्होंने लोगोंकी मुक्तिके लिये वहां एक तीर्थ बनाया था। माघ मास उस तीर्थमें स्नान करनेसे मानव कभी गर्दभ जन्म नहीं पाता। नाना स्थानसे यात्री उस तीर्थमें स्नान करने आते हैं।

रामनगरके दुर्गमध्य नदीकी ओर काशिराजप्रतिष्ठित वेदव्यासका मन्दिर बना है।

व्यासकाशीमें काशिराज-प्रतिष्ठित अन्य भी अनेक देवालय और देवप्रतिमा हैं। उनकी गठन प्रणाली हिन्दू शिल्पकी परिचायक है।

मानमन्दिर—पुण्यधाम वाराणसी हिन्दूओंका प्रधान तीर्थ है सही, किन्तु उसमें साधारण ज्ञानपिपासुके भी देखने योग्य अनेक वस्तु हैं। उनमें अम्बरपति मानसिंह प्रतिष्ठित मानमन्दिर स्वदेशी क्या विदेशी प्रधान २ ज्योतिर्विद्गणको अवलोकन करना चाहिये। यह मानमन्दिर भी इस बातका एक परिचायक है। किसी काल हिन्दूओंने ज्योतिर्विद्यामें कहां तक उन्नति लाभ किया था। अम्बरराजवंशीय सवाई जयसिंहने मानमन्दिरमें ग्रह नक्षत्रादिको गति ठहरानेके को सकल यन्त्र प्रस्तुत कराये उन्हें देख आश्चर्यान्वित होना पड़ता है। दिल्लीश्वर मुहम्मद शाहकी अनुमतिसे नाक्षत्रिक गति अनुसन्धान करनेके लिये जयसिंहने प्राचीन आर्य ज्योतिषके आधारसे 'जयप्रकाश' 'रामयन्त्र' और 'सम्राट्यन्त्र' नामके तीन यन्त्र स्थापन किये थे। शेषोक्त यन्त्रका व्यासार्द्ध प्रायः १२ हाथ होगा। राजा उक्त यन्त्रके बल पाश्चात्य-ज्योतिर्विद् हिपार्कास, टलमि प्रभृति प्रदर्शित युक्तियोंमें भ्रम प्रदर्शन कर सके थे। एतद्भिन्न जयसिंहके चालित भित्तियन्त्र, चक्रयन्त्र प्रभृति दूसरे भी कई यन्त्र मानमन्दिरके मध्य विद्यमान हैं। (ज्योतिष देखो।)

१६०० ई० को मानमन्दिर मानसिंह कर्तृक निर्मित हुआ था। किन्तु उसमें स्थान स्थान पर प्रस्तरकी भग्नावस्था देख शिल्पशास्त्रविद् स्वीकार करते हैं कि उसका कोई कोई अंश अधिक प्राचीन है। मानमंदिरका शिल्पनैपुण्य उल्लेखयोग्य है। उसके सुन्दर वातायनकी गठणप्रणाली पर्यवेक्षण करनेसे निर्माताकी सुख्याति बिना किये कैसे रह सकते हैं? आजकल वैसा बड़ा वातायन बहुत कम देख पड़ता है।

प्राचीन ध्वंसावशेष—उत्तर-पश्चिम कोण पर अलीपुर महल्लेमें बकरियाकुण्ड है। काशीखण्डमें वह बर्करी वा छागकुण्ड नामसे वर्णित हुवा है। कुण्ड दैर्घ्यमें ३६६ हाथ और प्रस्थमें १८३ हाथ है। कुण्डके उत्तरपार्श्व एक ऊंचा टीला पड़ा है। उस पर प्रस्तरका भग्न प्रतिमा और मठके कलस प्रभृति मिलते हैं। वह सब बौद्ध मठके ध्वंसावशेष समझ पड़ते हैं। कुण्डको पूर्व ओर भी इष्टकका एक बृहत् स्तूप है। स्तूपके पूरब योगिवीर नामक स्थान है। वहां किसी योगीने सशरीर समाधि लाभ किया है। कुण्डके दक्षिण-पश्चिम एक दरगाह या मुसलमानोंका भजनालय है। वह भी किसी प्राचीन गृहकी भित्ति पर स्थापित है। दरगाहके पूरब (२५×१३ हाथ) तीन पङ्क्ति पाषाणस्तम्भ पर स्थापित एक क्षुद्र मसजिद है। वह मसजिद भी बहुत पुरानी है। उसकी गठनप्रणाली देख अनेक लोगोंने स्थिर किया है कि पीछे वह बौद्धोंकी रही। आधुनिक समयमें उसे मुसलमानोंने अपनी मसजिद बना लिया है। उसमें ७०७ हिजरी (१३०५ ई०) की खोदित फिरोजशाहकी शिलालिपि है। उसके निकट बौद्ध चैत्य भी दृष्ट होता है। अनेक लोग स्वीकार करते कि एक काल बकरियाकुण्डके पार्श्वमें बौद्धदेवालय था।*

राजघाटके दुर्गमें भी बौद्ध-विहारका निदर्शन मिलता है। उस भग्नावशेष विहारका शिल्पनैपुण्य प्रशंसनीय है। उसका कारुकार्य और भास्करकार्य सांचीके बौद्ध स्तूपसे मिलता है। वह विहार भी मुसलमानोंके हाथसे बचा न था।

राजघाट दुर्गके उत्तर कबरस्थान, बरणासङ्गमके प्रथमपुर महल्ले, वाराणसीके तेलियाने, लाटभैरव नामके रास्ते, बत्तीस खंभे, अटाई कंगूरेकी मसजिद और बरणाके पूर्व पार्श्व पंचक्रोसी राहके पास सोना तलावके निकट आज भी बौद्ध-चैत्य, विहार, स्तूप एवं प्रतिमाका भग्नावशेष देख पड़ता है।

अनेक लोग अनुमान करते कि भैरवकी लाट बौद्धराज अशोकने प्रतिष्ठित की थी।

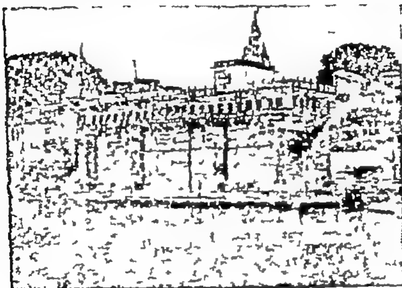
व्यवसाय—ऐसा नहीं कि काशी केवल पुण्यक्षेत्र ही है। वहां नानादेशीय लोगोंका समागम रहनेसे व्यवसाय भी अच्छा चलता है। काशीमें चीनी, नील और गोरेका व्यवसाय प्रधान है। जौनपुर, बस्ती, गोरखपुर प्रभृति स्थानोंका सकल प्रकार उत्पन्न पण्यादि वहां आनीत और विक्रीत होता है। काशीके रेशमी कपड़े, शाल, जरदोजी, हीरा जवाहरात, और खिलौने प्रसिद्ध हैं। प्रधान प्रधान सभी हिन्दूराजाओंके वहां भवन अथवा छत्र हैं। हिन्दूराजा काशीमें भवन बना सकनेसे अपनेको धन्य समझते और समय समय पर वह वहां सपरिवार जा अवस्थिति करते हैं। सुतरां काशीमें राजभोगका भी अभाव नहीं। वहां दुर्ग, बारीक, विश्वविद्यालय, अनेक अन्यान्य विद्यालय, रेलवे स्टेशन, डाकघर, अदालत और विस्तर चतुष्पाठी विद्यमान हैं। पहले नाना स्थानसे द्विज काशी वेद पढ़ने जाते थे। आज कल भी लोग जाते हैं सही, किन्तु पूर्वकी भांति यत्न अब देख नहीं पड़ता। फिर भी अद्यापि वाराणसीधाम शास्त्रचर्चाके लिये प्रसिद्ध है। कुछ दिन हुये हिन्दुओंने काशीमें अपना बनारस विश्वविद्यालय खोला है। फिर काशीका "आज" नामक दैनिक समाचार-पत्र हिन्दीमें बहुत अच्छा निकलता है। बनारस देखो।

काशी जैनियोंका भी पवित्र तीर्थ है। चौथे कालकी आदिमें भगवान् ऋषभदेवने यह नगर बसाया था। सर्वप्रथम यहांके राजा अकंपन हुये। इनने अपनी पुत्री सुलोचनाका स्वयंवर कर बड़ा यश प्राप्त किया था। यहां सातवें तीर्थंकर सुपार्श्वनाथ और तेईसवें तीर्थ-

* Sherring's Sacred City of the Hindus, p 273-287, J A S Bengal, XXXV. p 59 87, Furher's Archaeological Survey Lists N W P. Vol. 1 p 199-202

ग्र श्रीपार्श्वनाथका जन्म हुआ था। भदैनीघाट और सिंहपुरीमें दोनों तीर्थंकरोंकी चरणपादुका तथा विशाल मंदिर है। भदैनीघाटका मन्दिर आरा-निवासी जमींदार प्रभुदासजीका बनवाया हुआ है। गंगाजीके किनारे यह विशाल मन्दिर अति मनोहर और सुदृढ़ है। नीचे पक्का घाट बंधा है, यह प्रभुघाट के नामसे बोला जाता है। यहां दिगंबर जैनोंकी तरफ से 'स्याद्वाद जैन महाविद्यालय' नामक एक उच्चश्रेणीका संस्कृत विद्यालय है। इसमें बिना मूल्य शिक्षा दी जाती है। जैन भाइयोंकी सहायतासे ही इसका सब काम चलता है।

इसके समीपही बाबू छेदीलालजीका बनाया हुआ



श्रीस्याद्वाद दि० जैन महाविद्यालय।

दूसरा जैन-मंदिर है। यह भी गंगा किनारे अति दृढ़ और विशाल है। यहांसे 'चर्चिता' नामक एक साप्ताहिक पत्र निकलता है। इसके सिवा सिंहपुरीमें भी और मैदागिन पर एक जैन मंदिर तथा विशाल धर्मशाला है। जैनियोंकी संख्या अल्प रहते भी यहां मंदिर काफी हैं। सुनते इसकी सड़कोंमें एक जैन मंदिरमें स्फटिककी मूर्ति है। प्रायः धरमात्मा यात्री दर्शनके लिये आया करते हैं। इसी प्रकार श्वेताम्बर जैनोंके मंदिर और धर्मशाला भी अनेक हैं।

२ चित्शक्ति। ३ सुषुम्ना नाड़ी। (काशीखण्डटीका।)

४ काशी देवीकी मूर्ति।

"विश्वेशं माधवं ढुण्ढिं दण्डपाणिञ्च भैरवम्।

वन्दे काशीं गुहां गङ्गां भवानीं मणिकर्णिकाम्॥"

मत्स्यार्थ कोष। ५ एक प्रकारका छोटा काश। ६ खुजली। (लिङ्ग)(त्रि०) ७ कासरोगी, खांसीका बीमार।

काशीकरवट (हिं० पु०) काशीका करवट तीर्थ। यहां पुराने समय लोग आरेसे चीर जाने पर अपनी मुक्ति समझते थे। आज कल सरकारने इसे बंद कर दिया है।

काशीकापड़ी—बम्बईके थाना और शोलापुरकी एक जाति। काशीकापड़ी लोग भीख मांगते घूमा करते और पता नहीं चलता—इनका आदि निवास-स्थान कहां था। यह आपसमें तेलगु और दूसरोंके साथ टूटी फूटी मराठी बोलते हैं। भीख मांगनेके अतिरिक्त काशीकापड़ी यज्ञोपवीत, रुद्राक्षकी माला, दर्पण आदि छोटे मोटे वस्तु भी बेंच लेते हैं। हिन्दू देवदेवी इनको मान्य हैं।

काशीदास—सम्यक्त्वकौमुदी छंदोबद्धके रचयिता जैनकवि।

काशीनाथ (सं० पु०) काश्याः नाथः, ६-तत्। १ शिव।

"कालं निकटतो ज्ञात्वा काशीनाथं समाश्रयेत् ।" (काशीखण्ड)

२ काशीके राजा। ३ एक वैद्यक ग्रंथकार। किसी किसी हस्तलिपिमें काशोराम, तथा काशीराज नामान्तर देख पड़ता है। उन्होंने अजीर्णमञ्जरी, 'काशीनाथी' रसकल्पलता और शार्ङ्गधर-संहिताकी 'गूढ़ार्थदीपिका'-नाम्नी टीका प्रणयन की है। ४ तैलङ्गदेशीय यज्ञमूर्त्त-वंशोद्भव एक नैयायिक। उन्होंने 'प्रसिद्धयथात्मिका' नाम्नी तत्त्वचिन्तामणिदीधितिकी व्याख्या प्रभृति को रचना किया है। ५ अमरकोषकी 'काशिका' नाम्नी टीकाके कर्त्ता। ६ सारस्वत-व्याकरणभाष्यकार और किरातार्जुनीय टोकाकार। ७ ज्योतिःसंग्रह नामका ग्रंथकार। ८ प्रक्रियासार और शिशुबोधव्याकरण-रचयिता। ९ शीघ्रबोध, लग्नचन्द्रिका, प्रश्नदीपिका प्रभृति ग्रंथकार। १० यदुवंश-काव्यप्रणेता। ११ रामचरित-महाकाव्यरचयिता। १२ वेदान्त-परिभाषारचयिता। १३ वैराग्यपञ्चाशीति नामक वेदान्तिक ग्रंथकार। १४ शिवभक्तिसुधार्णव प्रणेता। १५ न्यासकल्पग्रन्थकार। १६ संवत्सर-प्रकरण नामक ज्योतिषग्रन्थकार। १७ संक्षिप्तकादम्बरी-रचयिता। १८ सूत्रपादवेदान्त-रचयिता। १९ अनन्तकेपुत्र और यज्ञेश्वरके भ्रातुष्पुत्र, उन्होंने धर्मसिन्धुसार, प्रायश्चित्तेन्दुशेखर, और वेदस्तुतिटोकाको रचना किया है। १७९१ ई० को उक्त काशीनाथ वर्त्तमान थे।

काशीनाथ—नैनीताल जिलेके काशीपुर परगनेके एक भूतपूर्व शासक। ई० १६ वीं या १७ वीं शताब्दोमें वह विद्यमान थे। काशीनाथके ही नाम पर काशीपुर परगनेका नामकरण हुवा है।

काशीनाथ दीक्षित—१ सदाशिव दीक्षितके पुत्र। उन्होंने प्रयोगरत्न, रुद्रपद्धति, लक्षहोमपद्धति, श्राद्धप्रयोगपद्धति एवं कात्यायनीय ज्योतिष्टोमपद्धति की टीकाका प्रणयन किया है। २ षट्पञ्चाशिका नाम्नी ज्योतिर्ग्रन्थकार।

काशीनाथभट्ट—जयराम भट्टके पुत्र और अनन्तभट्टके शिष्य। उन्होंने अनेक संस्कृत ग्रन्थ रचना किये हैं। उनमें निम्नलिखित ग्रन्थ मिलते हैं—कौलगजमर्दन, गुरुपूजाक्रम, चण्डीपूजारसायन, मन्त्रचन्द्रिका, मन्त्रप्रदीप, गणेशार्चनदीपिका, ज्ञानार्णवतन्त्रकी गूढार्थादर्श नामका टोका, चण्डीमाहात्म्य टीका, त्रिकूटारहस्यटीका, दक्षिणाचारदीपिका, पदार्थादर्श-कविचन्द्रोदयटीका, पुरश्चरणदीपिका, षट्कार्च्चनदीपिका, मन्त्रमहोदधिकी 'मन्त्रमहोदधि-पदार्थादर्श' टीका और शारदातिलक-टीका। २ मुहूर्त्तमुक्तावली ज्योतिग्रन्थरचयिता। ३ मर-विनियम जोन्सके एक शास्त्रविद् प्रसिद्ध पण्डित और शब्द-सन्दर्भसिन्धु नामक संस्कृत ग्रंथकार

काशीनाथ मिश्र—वैदेही-परिणय नामक संस्कृत काव्य-रचयिता।

काशीयात्रा (सं० स्त्री०) काश्यां काशीस्थतीर्थसमूहे यात्रा ७-तत्। काशीस्थ तीर्थसमूह दर्शनार्थं गमन यात्री जिस प्रकार काशीयात्रा करते उसके नियम काशीखण्डमें निर्दिष्ट है। प्रथम यात्रीयोंको चक्र-पुष्करिणीके जलमें स्नान कर देव, पितृ, ब्राह्मण और ऋषिगणको तृप्त करना चाहिये। पीछे आदित्य, द्रौपदी, दण्डपाणि और महेश्वरको प्रणाम कर ढुंढिराज जाते हैं। फिर ज्ञानवापीके जलसे आचमन कर नन्दिकेश्वरको पूजन करते हैं। उसके पीछे तारकेश्वर और महाकालेश्वरकी पूजा कर फिर दण्डपाणिको पूजते हैं। उक्तप्रकारका यात्राका नाम पञ्चतीर्थ-यात्रा है। उसके पोछे वैश्वेश्वरी यात्रा करना चाहिये। यात्री प्रतिपत्से चतुर्दशी अथवा प्रति चतुर्दशीको हिमस-आयतनी यात्रा करते हैं। मत्स्योदरीमें स्नान कर प्रथम प्रणवेश्वर, तत्पर त्रिविष्टप, फिर महादेव, उसके पीछे यथाक्रम कृत्तिवास, रत्नेश्वर, चन्द्रेश्वर, केदारेश्वर, धर्मेश्वर, वीरेश्वर, कामेश्वर, विश्वकर्मेश्वर, मणिकर्णिकेश्वर, अविमुक्तेश्वर और शेषको विश्वेश्वर दर्शन कर पूजादि करना चाहिये। जो व्यक्ति काशीमें रह इसप्रकार यात्रा नहीं करता, उसको नाना विघ्न लगता है। विघ्नशान्तिके लिये अष्टायतनी नाम्नी दूसरी यात्रा करना चाहिये। उसमें यथाक्रम दक्षेश्वर, पार्वतीश्वर, पशुपतीश्वर, गङ्गेश्वर, नर्मदेश्वर, गभस्तीश्वर, सतीश्वर, और तारकेश्वर दर्शन करते हैं। यह यात्रा अष्टमी तिथिको कर्त्तव्य है। काशीवासियोंको एक दूसरी भी यात्रा करना चाहिये। प्रथम वरणामें नहा शैलेश्वर दर्शन करते हैं। फिर वरणासङ्गममें नहा सङ्गमेश्वरको

दर्शन कर कापिलीन तीर्थमें नहा स्वर्लीनेश्वर दर्शन करते हैं। तदनन्तर मन्दाकिनी-तीर्थमें नहा मध्यमेश्वर दर्शन करना चाहिये। फिर हिरण्यगर्भतीर्थमें स्नान कर हिरण्यगर्भेश्वर दर्शन करते हैं। फिर मणिकर्णिकामें स्नान कर ईशानेश्वर दर्शन करना चाहिये। अनन्तर यथाक्रम गोप्रेक्ष-तीर्थमें नहा गोप्रेक्षेश्वर, कपिलह्रदमें स्नानकर वृषभध्वज, उपशान्त-कूपमें नहा उपशान्त शिव, पञ्चचूड़ा ह्रदमें स्नान कर ज्येष्ठेश्वर, चतुःसमुद्र कूपमें नहा महादेव, देवीश्वर वर्ग एवं शुक्रकूपमें स्नान कर शुक्रेश्वर, दण्डखाततीर्थमें स्नानकर व्याघ्रेश्वर और शौनककुण्डमें नहा शौनकेश्वर तथा जम्बुकेश्वर लिङ्गकी पूजा करते हैं।

दूसरी एकादशायतनकी नामकी यात्रा भी है। उसके लिये प्रथम अग्नीध्रकुण्डमें स्नान कर अग्नीध्रेश्वर दर्शन फिर यथाक्रम उर्वशीश्वर, नकुलीश्वर, आषाढ़ीश्वर, भारभूतेश्वर, लाङ्गलीश्वर, त्रिपुरान्तक, मनःप्रकामेश्वर, प्रीतिकेश्वर, मदालसेश्वर, और तिलपर्णेश्वर दर्शन करते हैं। यह यात्रा कर मानव सफल पाता है।

शुक्लपक्षकी तृतीयाको गौरीयात्रा करना चाहिये। प्रथम गोप्रेक्षतीर्थमें स्नानकर मुखनिर्मालिकामें जाते हैं। उसके पीछे यथाक्रम ज्येष्ठावापीमें स्नान एवं ज्येष्ठा-गौरी पूजा, ज्ञानवापीमें स्नान तथा सौभाग्य गौरीकी पूजा, शृङ्गारतीर्थमें स्नानकर शृङ्गारगौरीकी पूजा, विशालगङ्गामें स्नान तथा विशालाक्षीकी पूजा, ललितातीर्थमें स्नान कर ललितादेवीकी पूजा, भवानीतीर्थमें स्नान तथा भवानीदेवीकी पूजा, और बिन्दुतीर्थमें स्नान एवं मङ्गला-गौरीकी पूजा करते हैं। फिर महालक्ष्मीको जाना चाहिये। इसीका नाम गौरी यात्रा है। प्रति चतुर्थीको गणेशयात्रा, मङ्गलवारको भैरवयात्रा, रविवार अथवा षष्ठी वा सप्तमीयुक्त रविवारको सूर्ययात्रा, अष्टमी वा नवमीको चण्डीयात्रा और प्रतिदिन अन्तर्गृहयात्रा करना चाहिये। अन्तर्गृहयात्रा इस प्रकार होती है—मणिकर्णिकामें स्नान कर मणिकर्णीश्वरको पूजते हैं। उसके पीछे यथाक्रम कम्बलेश्वर, अश्वतरेश्वर वासुकीश्वर, पर्वतेश्वर, गङ्गाकेशव, ललितादेवी, जरासन्धेश्वर सोमनाथ वाराहेश्वर ब्रह्मेश्वर, अगस्त्येश्वर, कश्यपेश्वर, हरिकेशवनेश्वर, वैद्यनाथ, ध्रुवेश्वर, गोकर्णेश्वर, हाटकेश्वर, अस्थिक्षेप तड़ागमें कीकसेश्वर, भारभूतेश्वर, चित्रगुप्तेश्वर, चित्रघण्ट, पशुपतीश्वर, पितामहेश्वर, कलशेश्वर, चन्द्रेश्वर, वीरेश्वर, विद्येश्वर, अग्नीश्वर, नागेश्वर, हरिश्चन्द्रेश्वर, चिन्तामणिविनायक, सर्वविघ्नहारी सेनाविनायक, वशिष्ठ, वामदेव, सीमाविनायक करुणेश्वर, त्रिसन्ध्येश्वर, विशालाक्षी, धर्मेश्वर, विश्वबाहुक, आशाविनायक, वृद्धादित्य, चतुर्वक्त्रेश्वर, ब्राह्मीश्वर, मनःप्रकामेश्वर, ईशानेश्वर, चण्डी चण्डीश्वर, भवानी शङ्कर, ढुण्ढिराज, राजराजेश्वर, लाङ्गलीश्वर, नकुलीश्वर, परान्नेश्वर, परद्रव्येश्वर, प्रतिग्रहेश्वर, निष्कलङ्केश्वर मार्कण्डेयेश्वर, अप्सरेश्वर और गङ्गेश्वरकी पूजा कर ज्ञानवापीमें नहाना चाहिये। उसके पीछे नन्दिकेश्वर, तारकेश्वर, महाकालेश्वर, दण्डपाणि महेश्वर, मोक्षेश्वर, वीरभद्रेश्वर अविमुक्तेश्वर, और पञ्चविनायकको प्रणाम कर विश्वेश्वरको गमन करते हैं। वहां निम्नलिखित मन्त्र उच्चारण किया जाता है—

"अन्तर्गृहस्य यात्रेयं यथावद्या मया कृता।
न्यूनातिरिक्तया शम्भुः प्रीयतामनया विभुः॥" (१ । ५८)

थोड़ी या बहुत जितनी बनी मैंने यह अन्तर्गृह यात्राकी है। एतद्द्वारा महेश्वर मेरे प्रति प्रीत हों।

मन्त्रके पाठान्त कुछ काल मुक्तिमण्डपमें विश्राम कर निष्पाप हो घर जाना चाहिये।

(काशीखण्ड, १ अ)

काशीरहस्य (सं० क्लो०) काश्याः रहस्यम्, ६-तत्। १ काशीवासियोंका कर्तव्य आचारविशेष। २ काशी-माहात्म्य।

काशीराज (सं० पु०) काश्याः काशीप्रदेशस्य राजा, काशी राजन् टच्। (राजाहःसखिभ्यष्टच्। पा ५।४।९१।) १ दिवो-दास। २ काशीका कोई अधिपति। ३ चिकित्साकौमुदी-प्रणेता। (भावप्रकाश) ४ वीरसिंहके पिता [illegible] नामक ज्योतिर्ग्रन्थकार।

काशीराम—[illegible]पनिषद् नामक वेदान्त ग्रन्थकार। २ (वाचस्पति)—राधावल्लभके पुत्र और रामचन्द्रके पौत्र। इन्होंने रघुनन्दनके स्मृतितत्त्वकी टीका बनाई

हैं। इसमें उद्वाहतत्त्व, एकादशीतत्त्व, तिथितत्त्व, दायतत्त्व, प्रायश्चित्ततत्त्व, मलमासतत्त्व, शुद्धितत्त्व, और श्राद्धतत्त्वकी टीका भी मिलती हैं।

काशीराव—तुकाजीराव होलकरके एक लड़के। यह दुर्बलहृदयके मनुष्य थे। इनके भाई मल्हाररावने १७९७ ई० को पिताके मरनेपर इन्दौरके सिंहासन पर अधिकार करना चाहा था। काशीरावने दौलतराव सेंधियासे निवेदन किया। उन्होंने मल्हाररावको आक्रमण कर मार डाला। परन्तु यशवन्तराव इस विपद्से निकल भागे। १७९८ ई०को उन्होंने अमीर खान्के साहाय्यसे काशीरावकी सेनाको पराजय किया।

काशीश (सं० क्लो०) कुत्सितं ईषत् काशीशमिव, कोः कादेशः। १ उपधातुविशेष, कसीस (Sulphate of iron.) इसका संस्कृत पर्याय धातुकाशीश, कासीस, धातुकासीस, खेचर, धातुशेखर, केसर, हंसलोमश, शोधन, पांशुकाशीश और शुभ्र। यह धातुकाशीश और पुष्पकाशीशके भेदसे दो प्रकारका होता है। फिर इनमें भी धातुकाशीश हरित् और लोहित भेदसे और पुष्पकाशीश श्वेत और कृष्ण भेदसे दो दो प्रकारका होता है। भावप्रकाशके मतमें यह अम्ल, तिक्त, कषायरसविशिष्ट, उष्णवीर्य, वातश्लेष्मनाशक, केशका उपकारक, आंखोंकी खुजली, विषदोष, मूत्रकृच्छ्र, अश्मरी और श्वित्ररोगनाशक है। यह भृंगराजके रसमें भिगोकर शोधा जाता है। (हिराकस् देखो) २ (पु०) काश्याः ईशः, ६-तत्। महादेव। ३ काशीदेशके राजा।

काशीशत्रितय (सं० क्लो०) काशीशधातु, काशीशपुष्प और काशीश।

काशीशाद्यतैल (सं० क्लो०) तैलविशेष, एक तैल। काशीश, अश्वगन्धा, लोध्र और गजपिप्पलीको तैलमें पाक करनेसे उक्त औषध प्रस्तुत होता है। इसके लगानेसे स्त्रीरोग निरोग हो जाता है। इसमें कल्कका पादांश तैल पड़ता है। (चक्रपाणिदत्त)

काशीश्वर (सं० पु०) काश्या ईश्वरः, ६-तत्। १ महादेव। २ काशीदेशके राजा। ३ अर्थमञ्जरी नामक न्याय-ग्रन्थकार। ४ (भट्टाचार्य)—सुपद्मव्याकरणानुसार धातुपाठ, भूरिप्रयोगगणटीका, मुग्धबोधटीका और मुग्धबोधपरिशिष्ट प्रभृति ग्रन्थकार। ५ (शर्मा) वनग्रामके पुत्र और राघव पण्डितके पौत्र। इन्होंने १७३८ ई०को ज्ञानामृत नामक एक संस्कृत व्याकरणकी रचना की थी।

काशीसम्भूत (सं० पु०) पारद, पारा।

काशू (सं० स्त्री०) कश-णिच्-ऊ। १ शक्तिनामक अस्त्र, बरछी, भाला। २ विफलवाक्य, बेफायदा बात। ३ दीप्ति, अस्त्र। ४ रोग, बीमारी।

काशूकार (सं० पु०) काशूं विफलवाचं करोति, काशू-कृ-अण्। गुवाकवृक्ष, सुपारीका पेड़।

काशूतरी (सं० स्त्री०) काशूनामक क्षुद्र अस्त्र, छोटी बरछी।

काशेय (सं० पु०) काश्यां भवः, काशी-ढक्; काशेः काशिनृपतेः गोत्रापत्यं वा। १ काशीराजवंशीय। काशीके प्रथम राजा काशवंशोद्भव। (त्रि०) २ काशीदेशजात।

काशेयी (सं० स्त्री०) काशेय-ङीप्। काशीराजकन्या।

"भरत खलु काशेयीमुपयेमे सार्वसेनीम्" (भारत आदि ९५ अ०)

काश्त (फा० स्त्री०) कृषि, खेतीका एक हक। उसके अनुसार जमींदारको कुछ वार्षिक लगान देकर किसान उसकी जमीन जोत बो सकता है।

काश्तकार (फा० पु०) कृषक, किसान, खेतिहर। २ कृषकविशेष, किसी किस्मका किसान। वह जमींदारको कुछ वार्षिक कर दे उसकी जमीन पर कृषि करनेका स्वत्व पाता है।

काश्तकार पांच प्रकारके हैं—शरहमुऐयन, दखीलकार, गैर दखीलकार, साकितुल मालकियत और शिकमी। शरहमुऐयन सदा एक ही समान कर देते हैं। उनकी भूमिपर कर नहीं बढ़ सकता। फिर उनकी भूमि बेदखल भी नहीं होती। १२ वर्ष तक लगातार वही जमीन जोतनेसे काश्तकारको दखीलकारी स्वत्व मिल जाता है। फिर उसे कोई बेदखल कर नहीं सकता। गैर दखीलकार १० वर्ष तक कोई जमीन् जोत बो नहीं सकते। किसी जमीन पर पहले जमींदारकी भांति सीर करनेवाले किसान साकितुल

मायश्चित कहा है। जिसको दूसरे काश्मकारसे जमीन् हो कुछ समय तक जोतनी होती है।

काश्मकारी (फा॰ स्त्री॰) १ कृषि, खेती किसानी। २ कृषकमात्र, काश्तकारका स्वत्व। ३ भूमिविशेष, एक जमीन्। इस पर कृषकको कृषि करनेका स्वत्व रहता है।

काश्मरी (सं॰ स्त्री॰) काशते काश वनिप् रकारादेश डीप् पृषोदरादित्वात् वस्य मत्वम्। १ गम्भारी वृक्ष, गंभारका पेड़ (Gmelina arborea) इसका संस्कृत पर्याय—गाम्भारी, भद्रपर्णी, श्रीपर्णी, मधुपर्णिका, काश्मीरी, हीरा, काश्मर्य पीतरोहिणी, कृष्णवृन्ता, मधुरसा, और महाकुसुमिका है। आयुर्वेदके मतमें यह मधुर, कषाय एवं तिक्त रस उष्णवीर्य, गुरु, अग्नि दीप्तिकारक परिपाचक भेदक और भ्रम, शोष तृष्णा आमशूल, अर्श., विषदोष, दाह तथा ज्वरना शक है। काश्मरीका फल शरीरवर्धक मूत्रवर्धक, गुरु केशोपकारक, रसायन, कषाय एवं मधुरस, शीतल, स्निग्ध और वायु, पित्त, तृष्णा, रक्तदोष, क्षयरोग, मूत्राघात, दाह तथा वातरक्तरोगनाशक होता है।

हिन्दीमें इसे कुम्हार गुम्हार, कमहार, गंभार खम्भर, कंभार, कूमार, गंभारी, सेवन, शिवन, गमारी या खंमारी, बंगलामें गुमारी, उड़ियामें गंभारी, कोलमें कसमर, सन्थालोमें कसमार, आसामीमें गोमारी, नेपालोमें खंबरि, लिपचोमें मंलोम, कछारोमें गुमारी, नागोमें वोलको बक, गोंडोंमें कुरुरु पंजाबीमें गु. हार, कनारीमें सेवन, कुरकूमें काससर, मध्यप्रदेशीयोंमें गुंभर, बम्बे-यामें सिवन, तामिलमें गुमदेकु, तैलङ्गमें गुमटेक, कनाडीमें कुलि, मलयमें कुमलु, मघोमें रमनी, ब्रह्मीमें यमनी और सिंहलीमें अतदेमात कहते हैं।

काश्मरीका वृक्ष हठत् चार पाचगोल होता है कभी कभी यह ६० फीट तक ऊंचा हो जाता है। काश्मरी भारतवर्ष, ब्रह्मदेश तथा आन्दामान दोपमें सब जगह होती है। माघ फागुन माह फूल निकलता है। काठका वर्ण मन्द पीताभ रहता है। यह बहुत हलका और कड़ा होता है; इसोसे सभी नानाकार्योंमें व्यवहार करते हैं। इससे तख्तोंसे तलवोरका बोखठ, नावको छत, पालकीका डण्डा आदि बनता है। वैमाषपत्तनमें मान्तोरको भित्ति और बम्बई प्रदेशमें इस कार्य, शकट, यान तथा पालकीमें लगता है। इस पर रङ्ग अच्छा आता और तरह तरहका असबाब बनाया जाता है।

सन्थाल काश्मरी काठकी भस्म और फलको वमन की भांति व्यवहार करते हैं।

काश्मरीका फल गोंड और दूसरे पहाड़ी लोग खाते हैं। पत्तियां पशुओंको खिलायी जाती हैं। हिरन और दूसरे जंगली जानवर उन्हें बड़े चावसे खाते हैं।

काश्मरीका मूल औषधमें पड़ता है। दशमूलमें इसका भी प्रयोग होता है। काश्मरीके पेड़में रेशमके कीड़े पाले जाते हैं।

२ कपिलद्राक्षा, काला दाख। ३ कणगाति, कटूरी। ४ पुष्करमूल। ५ गांभारी फल।

काश्मरीफल (सं॰ क्लो॰) गाम्भारीफल गम्भा गंभा रीके फलका गूदा।

काश्मर्य (सं॰ पु॰ क्लो॰) काश्मरीति मस्तोऽस्त्यस्य, का श्मरी-यत्, यद्वा काश्मरो भवे यत्। गाम्भारी, गंभारी।

काश्मर्यफलकषाय (सं॰ पु॰) गांभीरोफलकषाय गंभारी फलका काढ़ा।

काश्मर्या (सं॰ स्त्री॰) क्षुद्रगाम्भारी वृक्ष, छोटी गंभारीका पेड़।

काश्मर्यौद्भपर्णिका, काश्मर्या देखो।

काश्मीर (सं॰ क्लो॰) कश्मीरे काश्मीरे वा भवम् कश्मीर वा काश्मीर अण्। कच्छादिभ्य। ४।२।१३३। १ कुष्ठ मेद, पुष्करमूल। २ कुङ्कुम, केसर। ३ टङ्कुरी मुस्ता। ४ सोहागा। ५ कश्मीरका निवासी। (त्रि॰) ६ काश्मीरजात, काश्मीरमें उपजने या होनेवाला। (पु॰) ७ गाम्भारीवृक्ष, गंभारीका पेड़।

काश्मीर—भारतवर्षके उत्तर-पश्चिम कोणका पर्वतीय देश, एक मुल्क। वर्तमान काश्मीरराज्य अक्षा॰ ३२ १० से ३६ ५८´ ३०˝ और देशा॰ ७३ २६´ से ८० ३०´ पू॰ पर अवस्थित है। इसका वर्तमान भूमिका परिमाण प्रायः ८०९०० वर्गमील है। लोकसंख्या लगभग २९ लाख होगी। जिसमें पुरुष साढ़े पंद्रह लाख और स्त्रियां साढ़े तेरह लाख होंगी।

वर्तमान सीमा—उत्तर सीमा हिमालय पर्वतके अन्तर्गत काराकोरम श्रेणी और काश्मीरके ही अधीनस्थ कई अर्ध स्वाधीन क्षुद्र राज्य हैं। दक्षिणकी ओर पंजाबके अन्तर्गत झेलम, गुजरात और स्यालकोट प्रभृति हैं। पश्चिम सीमा पर हजारा प्रदेश और रावलपिण्डी है। पूर्वमें तिब्बतका राज्य लगा है।

प्रदेश विभाग—काश्मीर राज्यमें आजकल जम्बू, काश्मीर उपत्यका, लदाख, बलतीस्तान, भद्रवार, कष्टवार, दर्दीस्तान, ले, तिलैल, सुरु, जास्कार, रूपस, पुञ्छ और दूसरे भी कई क्षुद्र क्षुद्र विभाग हैं।

भूमिभाग—साधारणतः देखनेपर काश्मीर राज्य पर्वतवेष्टित वितस्ताकी अववाहिका समझ पड़ता है। मध्य स्थलमें वितस्ता नदी शाखा प्रशाखा फैला वराहमूल गिरिवर्त्मसे पंजाब प्रदेशमें प्रवेश करती है। वितस्ता तीरवर्ती निम्न उपजाऊ भूमिको छोड़ एक उत्तम भूमि पर्वतमूलसे समतल भूमिकी ओर विस्तृत है। उसे करेवास या उदारस कहते हैं। उक्त सकल भूमिका मैदान प्रायः उद्भिद्प्राणी-शरीर जात और बालुका तथा कर्दम मिश्रित है। उक्त सकल उपजाऊ भूमिखण्डके मध्य प्रायः १०० से ३०० फीट गभीर नदीपथ है। साधारणतः उपजाऊ भूमिका एक ओर पर्वतमाला रहते भी किसी किसी स्थलपर चारो ओर निम्नभूमि ही है। उक्त सकल भूखण्डमें कृषि होती है। किन्तु जलकी सुविधा अधिक नहीं। वृष्टि न होनेसे नाली बना नदीसे जल लाना पड़ता है। पर्वतमूलकी ढालू भूमिमें चारणस्थान और देवदारुवन इत्यादि वर्तमान हैं। काश्मीरके दक्षिणांशमें ही लोग अधिक रहते हैं। कृष्णगङ्गा उपत्यकाके निम्नांश और सिन्धु अववाहिकासे वितस्ता तथा चन्द्रभागाकी अववाहिकाको स्वतन्त्र करनेवाली तुषारावृत पर्वतमालाको चतुःपार्श्वस्थ भूमिमें भी लोगोंका अधिकतर वास है। उक्त प्रदेशकी पर्वतमाला देवदारुके वनसे आच्छादित है। मध्य मध्य कृषिके लिये उपयुक्त भूमि भी है। नदीतीर श्यामल शस्यक्षेत्रसे परिपूर्ण है। प्रत्येक ग्राममें सुन्दर सुन्दर पथ विद्यमान हैं।

पर्वतमाला—काश्मीरकी चतुर्दिकस्थ पर्वतमालाके शिखरका उपरिभाग तुषारमण्डित देख पड़ता है। वत्सरके मध्य प्रायः ८ मास काल बरफ चढ़ा रहता है। उत्तर पश्चिम प्रान्तमें बियाकी नामक तुषारावृत क्षेत्र प्रायः ७५ मील विस्तृत है। पञ्जाल पर्वतमालाके मध्य सर्वोच्च शिखरका नाम सूर्जी है। यह १४८५२ फीट उच्च है। माहेरटाटोपा शिखरकी उच्चता १३०४२ फीट है। उत्तर दिक् हरमुख पर्वत १६०१५ फीट ऊंचा है। काश्मीर उपत्यकाके प्रान्तमें नङ्ग पर्वत वा दयरमूर समुद्रपृष्ठसे २६६२८ फीट उच्च उठा है। उक्त पर्वत काश्मीर उपत्यका और सिन्धु नदीके मध्य अवस्थित है। उसीके निकट नेर और सेर नामक दूसरे दो शिखर हैं। इनमें प्रथम २३४१० और द्वितीय २३२५० फीट उच्च है। दिक्के अनुसार उनके भिन्न भिन्न नाम हैं। पूर्वमें तुषारावृत पञ्जाल पर्वत, दक्षिणमें फतेपञ्जाल एवं बनिहाल प्रदेशका पञ्जाल पश्चिममें पीरपञ्जाल और उत्तर-पश्चिममें हरमुख तथा सोनामार्ग पर्वत कहते हैं।

दक्षिणदिक्‌में पर्वतमाला निम्न होनेसे शोभा इस ओर अति सुन्दर है। उत्तरदिक् अपेक्षाकृत वन्य होते भी सौन्दर्यपूर्ण है। इधर अत्युच्च पर्वतमाला, विस्तृत तुषारक्षेत्र, पर्वतावरोही क्षुद्र तथा वृहत् नदी स्रोत और मध्य मध्य जलप्रपात दृष्टिगोचर होते हैं। इस अञ्चलमें कोई शिखर २००० फाटसे कम ऊंचा नहीं। काराकोरम पर्वतमालामें एक शिखर प्रायः २८२५० फीट उच्च है।

युरोपके भ्रमणकारी काश्मीरके उक्त सकल पर्वतोंमें भ्रमण कर शोभाका वर्णन कर गये हैं। उन्होंने लिखा है कि वैसी शोभाधार प्राकृतिक छवि जगत्‌के दूसरे किसी स्थानमें सम्भवतः देख नहीं पड़ती। उक्त शैलशिखरके तलसे जितने ही ऊर्ध्व गमन करते, उतने ही कुसुमित तथा तदुपयोगी उद्भिज्ज, शस्य और फलमूल आदि देख पड़ते हैं। फिर कहीं उक्त सकलका एकत्र समावेश है। उन पर्वतोंमें निरीह पार्वत्य लोग रहते हैं।

मार्ग वा सेत—पीरपञ्जालको अपेक्षा निम्नतर पर्वतके कई शिखरदेश अधिक विस्तृत हैं। उन सकल स्थानोंमें

सुन्दर एवं मनोहर नानावर्णके पुष्प और सुगन्ध द्रव्य उत्पन्न होते हैं। इन्हीं समस्त स्थानोंको मार्ग वा पथ कहते हैं। गुलमर्ग और सोनामर्ग प्रभृति बड़े ही अति सुन्दर हैं। उक्त समस्त स्थानोंमें मेषपालकोंके झुण्डके झुण्ड रह रहते चरा करते हैं। सोनामर्ग नामक स्थानमें श्रावण तथा भाद्र मास देशके बड़े आदमियों और युरोपियोंको जाकर रहना बहुत अच्छा लगता है।

नदी—काश्मीर राज्यकी प्रधान नदी वितस्ता है। काश्मीर उपत्यकाके पूर्व-दक्षिण सीमामें यह उत्पन्न हुई है। (वितस्ता देखो।)

अनेकोंके मतमें वितस्ताका उत्पत्तिस्थान आजतक स्थिर नहीं हुआ। अंगरेज कहते हैं कि अर्पत, ब्रिङ्ग और सन्द्रन् नामके तीन भिन्न भिन्न क्षुद्र नदोंके सम्मिलनसे वितस्ता उत्पन्न हुई है। इसकी अनेक शाखा और उपनदी हैं। मुसलमान भौगोलिक कहते हैं कि काश्मीर उपत्यकाकी पूर्व दिक् सुप्रसिद्ध वीरनाग ग्राम से प्रायः अर्धक्रोश दूर तीन उत्स विद्यमान हैं। उन तीनों उत्स परस्पर इतना पास कि छूसकते हैं। सुतरां मानो उक्त परिमिति अर्थात् अङ्गुठेके अग्रभागसे तर्जनीके अग्रभाग पर्यन्त स्थानको वालिश्त वा बित्ता कहते हैं। इसीसे उसका नाम भी वालिश्त या बित्ता है। फिर उससे निर्गत जलस्रोत वितस्ता कहलाता है। उक्त तीनों उत्सोंको जलधारा क्रमशः मिलने हो नीचे उतरी वीरनाग अनन्तनाग, अच्छाबल कुकुरनाग, वावननाग प्रभृति उत्स समूहका जलप्रवाह मिलकर मिलनेसे उसकी अवयववृद्धि हुयी है।

वितस्ताने क्रमशः उत्तर पूर्वमुख फिरके एक उलर ह्रदमें प्रवेश किया है। उसके पीछे उसमें दक्षिण वाहिनी हो पश्चिम प्रान्तमें बरामूला नामक जनपदके मध्य भीषण वेगसे उपत्यकाको छोड़ा है। उपत्यकाके मध्य वितस्ताका अधिक प्रशान्त भाव है। किन्तु उपत्यकाके बाहर उसका ऐसा भीषण वेग बेसो ही भयङ्करी मूर्ति है। उत्तर पूर्वसे इसलामाबादके निकट लिदार, पूर्वसे गान्दरबलके सम्मुख सिन्धुनदी और श्रीपुर नगरके निकट पोहरूनदी वितस्ताके पश्चिम तीर मिली है। फिर पूर्व तीर सुरमानके निकट नरामनिवाका एक रामबुचार (रामच्यू त) और सोपोरके निकट पुष नदी वितस्तासे मिल गयी है। तिनेव उपत्यकामें शिपर नामक स्थानपर कृष्णगङ्गा नामको एक सम्भावित नदी निकली है। कृष्णगङ्गा अधिकतर उत्तर मुख पश्चिम दिक्‌को जाकर हठात् दक्षिणको घूम मुज़फ्फराबादके बिलकुल नीचे वितस्तामें मिल गयी है। बर्दान उपत्यकासे बर्दान नदी प्रवाहित हो दक्षिणमुख कश्तवार (कष्टवाड़) नामक स्थानपर चन्द्रभागामें जा गिरी है। बर्दान, कश्तवार और मड़वार नामक स्थानके मध्य में जा चन्द्रभागासे मिली है। उक्त समस्त नदियोंके मध्य एकमात्र वितस्तामें ही नौकादिका यातायात होता है। उसमें भी ६० मीलसे अधिक दूर तक नौका चल नहीं सकती।

सेतु—उपत्यकाके मध्य वितस्ता पर १३ सेतु हैं। सेतुको लोग 'कदल' कहते हैं। समस्त सेतु देवदारु काठ से बने हैं।

अनेक स्थलमें फिर छोटेसे सेतु भी हैं। जिस स्थान में बहुदूर विस्तृत सेतुका प्रयोजन पड़ा वहीं झोलाका सेतु बना है। वह दो प्रकारका होता है—छिका और झूला। सोचने वा देखनेमें झूला बहुत भयानक मालूम पड़ता है। किन्तु वास्तविक भयका कोई कारण नहीं बड़ी सरलतासे निरापद उसके ऊपर यातायात होता है। माल असबाब भी उस पारसे इस पार, इस पारसे उस पार पहुंचाया जाता है।

झील—श्रीनगर और तन्निकटवर्ती प्रदेशमें बड़े झीलें हैं। उसी झील पर उलोलका ह्रद है। उन्हीके मध्यसे वितस्ता प्रवाहित है। उस ह्रदको पार करना कोई सोजी बात नहीं। इसीसे सोपुर और श्रीनगरके मध्य एक नहर निकाल गमनागमनकी सुविधा की गयी है। खेतोंके सुभीतेके लिये भी अनेक नाले निकाले गये हैं। उनमें श्रीरपुर त्रिशिका मार्तण्ड और इसलामाबादका मेम्बो तथा निकर नाला प्रधान है।

ह्रद—काश्मीरमें ह्रद अनेक हैं। उपत्यका और पार्श्ववर्ती प्रदेशमें नाना स्थानमें ह्रद दिख पड़ते हैं। उप-

त्यकामें निम्नलिखित ४ ह्रद प्रधान हैं—१म डल वा नागरिक ह्रद। यह भी श्रीनगरके उत्तरपूर्व कोणमें अर्धकोश दूर अवस्थित है। उसका दैर्घ्य ५ मील है। सूंट कोल नामक नाले द्वारा वह वितस्तासे मिला है। श्रीनगर राजभवनके बिलकुल सामने वह नाला जा ह्रदमें मिल गया है।

२रा अञ्चार ह्रद है। वह श्रीनगरके उत्तर अवस्थित है। नालमर खालसे वह जलके साथ संयुक्त है। नालमर नाला शादीपुरके पास सिन्धुनदसे जा मिला है।

३रा मानसबल ह्रद है। स्थलपथमें वह श्रीनगरसे ५ कोस और जलपथमें ८ कोस दूर वितस्ताके दक्षिण तीर अवस्थित है। काश्मीरमें उसके तुल्य रमणीय ह्रद दूसरा नहीं। उसका दैर्घ्य तीन मील और विस्तार डेढ़ मील है। मानसबल बहुत गभीर है। कह्लण और विह्लणने पवित्र मानसह्रदके नामसे उसका उल्लेख किया है।

४र्थ उल्लार ह्रद है। वह श्रीनगरके उत्तर पश्चिम स्थलपथसे ११ कोस और जलपथसे १५कोस दूर अवस्थित है। काश्मीर राज्यमें वही सर्वापेक्षा वृहत् ह्रद है। उत्तर दक्षिण दलदलको छोड़ उसका दैर्घ्य डेढ़ मील और दलदल समेत १० मील है। परिधि ३०मील पड़ता है। गभीरता १६हाथ और स्थान स्थान पर ११हाथ भी है। पूर्वदिक्‌को वितस्ता नदी उक्त ह्रदके मध्य प्रवाहित है। पार्वत्य ह्रदोंकी भांति उसमें भी हठात् भीषण बाढ़ चढ़ जाती है। राजतरङ्गिणीमें उसका नाम "महापद्म" लिखा है। वहां महापद्मनागका वास था। पार्वत्य ह्रदके मध्य पीरपञ्जालका कैसनाग, सिदार उपत्यकाका शेषनाग और हरमुखका गङ्गाबलनाग तथा सर्वन्ननाग प्रधान है।

उत्स—काश्मीरकी पर्वतमालामें उत्सका अभाव नहीं। प्रायः सकल स्थानमें पर्वतगात्र भेदकर उत्स निकल पड़ा है। उक्त सकल उत्स अनेक अलौकिक घटनाओंसे परिपूर्ण है। उनमें वारनाग, अनन्तनाग, वायन, अच्छावल, कुक्‌टनाग और वितविस्तर अति रमणीय तथा कौतूहलजनक है।

खनिज—काश्मीरमें प्रायः सर्वस्थान पर लौह मिलता है। किन्तु उत्कृष्ट न होनेसे उसकी तोपें कम बनती हैं। कुटिहर जिलेमें हरपतनार ग्रामके निकट ताम्र पाया जाता है। प्राचीन काल उक्त स्थान पर खनिका कार्य चलता था, किन्तु बहु दिनसे बन्द हो गया। पीरपञ्जालमें काला सीसा (जिस धातुसे पेन्सिल बनती है) मिलता है। जम्बूपर्वतमें पत्थरका कोयला तथा सुर्गा और ट्राम नदीकी एक उपनदीसे गिगर वा गिल्गी नामक स्वर्णरेणु पाते हैं। वितस्ता नदीतीर टङ्गट नामक स्थानके अधिवासी स्वर्णरेणु उद्धार करते हैं। चन्द्रभागाके तीर स्वर्ण एवं रौप्यमिश्रित उपल खण्ड मिलते हैं। गंधकका उत्स यथेष्ट है। कठिन गंधक भी स्थान स्थानपर पाया जाता है। काश्मीरकी उपत्यका गंधकप्रधान उत्सपूर्ण है। इसीसे यहां मध्य मध्य भूमिकम्पका भीषण उत्पात हो जाता है। १८८५ ई० को भूमिकम्पसे काश्मीर राज्यके अनेक मनुष्य मरे और गृहादि गिरे थे।

पशुपक्षी—काश्मीरमें भल्लूक की संख्या बहुत है। पिङ्गल और रक्तवर्णके भल्लूक ही वहां अधिक हैं। वह उद्भिद्‌भोजी हैं, मांस अल्प परिमाणमें खाते और हिंस्रस्वभाव नहीं देखते। काला भल्लूक अन्य भल्लूकसे आकारमें क्षुद्र होते भी अपेक्षाकृत हिंस्र है। चीते सर्वत्र हैं। तिब्बत प्रदेशमें श्वेतव्याघ्र देख पड़ते हैं। बारहसिंगा हिरन पञ्जाल पर्वतमालाके उच्च अंगमें मिलता है। हिन्दू और मुसलमान दोनों उसका मांस खाते हैं। हिमालयका सांवर हरिण कृष्णवार प्रदेशस्थ पञ्जाल गिरिमें रहता है। चौसिंगा हरिण पञ्जाल पर्वत मालाके दक्षिण और पश्चिम ढालू प्रदेशमें होता है। कृष्णगङ्गा तथा वितस्ताकी मध्यवर्ती गिरिश्रेणीसे बरामूला पथके बाहर पीर पञ्जाल पर्यन्त एक प्रकार वृहत्‌काय छागल मिलता है; उसे मारखार (सर्पभुक्) कहते हैं कस्तूरी मृग काश्मीरमें सर्वत्र है। बुसेकोइ और थर नामक दो जातीय पार्वत्य छागल पञ्जाल पर्वतमें देख पड़ता है। भेड़िया, लोमड़ी, गीदड़ और बन्दर यथेष्ट है। द्रुम नामक एक जातीय वानर कृष्णगङ्गा उपत्यकासे अधिक मिलता है। वह प्रधा-

अतः विहङ्ग पक्षीका विहार है। कदिहाल प्रभृति नदी-में होते हैं। उनका चर्म बहुमूल्य बिकता है। अप्प चार प्रदेशमें साही (शल्लकी, खार पुश्त) रहती है। सरीसृप बहुत देख नहीं पड़ता। विषाक्त सर्प बहुत कम हैं। केवल मध्य मध्य दो एक गोह देखनेमें आ जाती है।

चिड़िया, बाज़, चील, शकुनि प्रभृति मांसाशी पक्षी यथेष्ट हैं। सुनाप, कठिन कोकिला, कोयल, मैना प्रभृति सकल प्रकारके तोते, और कठफोड़ काश्मीरमें बहुत हैं। जलचर पक्षी नाना प्रकार हैं। वह अति शीघ्र शरत् और शीतकालको उत्तरसे काश्मीर आते और वसन्तके पूर्व लौट जाते हैं। बुलबुल, सारस और बगले (बक) सर्वदा देख पड़ते हैं। काश्मीरके गाय कुछ श्वेतवर्ण हैं। उनका आकार बहुत बड़ा नहीं होता। मेषका अधिकांश और कृष्णवर्ण है। उनका दुग्ध अति सुस्वादु होता है। काश्मीरमें मच्छर, मक्खी और पिस्सूका बड़ा उपद्रव है। फिर श्रावण और भाद्र मासमें वह बहुत बढ़ जाता है।

पेड़ और पौधे—काश्मीरकी भूमि अति उर्वरा है। जिस जिस स्थानमें बरफ नहीं गिरता, वहां भी समान भाव शहतूत अखरोट और बादाम आदि उपजता है। दारु (देवदारु, चीड़) वृक्ष इसकी भांति उतना बड़ नहीं होता। किन्तु काश्मीरी उसीसे गृह और नौकादि प्रस्तुत करते हैं। उसका काठ तेजाल होनेसे काम ही आगमें व्यवहृत होता है। अधिक रालको उसकी छोटी छोटी काठियां अपना पार्वत्य प्रदेशमें मशालका काम निकालते हैं। देवदारु साल प्रभृति बहुमूल्य काठके पेड़ यथेष्ट हैं। काश्मीरके बाहर उक्त काठ भेजनेका निषेध है। धान्य प्रधान खाद्य है। काश्मीरमें भारतवर्षका सकल प्रकार शस्य और शाक उत्पन्न होता है। बेगम खान और सुगन्धि उतरता है। यहांमें सेब, नासपाती, बिही बिलास कोकिलनक, गोसा, अमृ, शहतूत, अंगूर, अखरोट, बादाम आड़ू प्रभृति कई प्रकारके सुस्वादु फल उत्पन्न होते हैं। बादाम चार प्रकारका होता है। उनमें एकका छिलका कागजकी भांति पतला रहता है इसीसे उसे कागजी बादाम कहते हैं। वह खानेमें अति सुस्वादु लगता है। अंगूर १८ प्रकारका होता है। उनमें साहबी और हुसैनी अति उत्कृष्ट निकलता है। अपने देशके खरबूजे और कद्दूकी तरह काश्मीरमें अति होना सब लोगोंके भी भाग्यमें अंगूरकी माफिक रखी है। अंगूर अधिकतर मधुर और सुस्वादु होनेसे काश्मीरी गर्व कर कहते हैं—"यदि ईश्वरके मुख होता तो हम उसे आशीष रोटी* और अंगूर खिला तुष्ट कर सकते।" अधिकांश द्रव्यके मध्य काश्मीरका कुङ्कुम (केसर जाफरान) अति उत्कृष्ट होता है। यहां अधिक उत्पन्न होनेसे कुङ्कुमका नाम ही 'काश्मीर' है।

ऋतुपरिवर्तन—काश्मीरका ऋतुपरिवर्तन बहुत सुन्दर है। जलवायु प्राकृतिक शोभा और दृष्टि एवं हरित वृक्षादिके लिये काश्मीर भूस्वर्ग कहाता है। वसन्तागममें जब बरफ गलने लगता तब शोभाका पार नहीं पड़ता। शीतके तुषारमण्डित वृक्षादि तुषार बरफ छोड़ पत्रपुष्पसे भूषित हो जाते हैं। जिस ओर चक्षु घुमाइये उसी ओर देखिये कि पत्रशून्य तरुवर पुष्पपरिच्छदसे आवृत हैं। (काश्मीरमें पहले फूल खिलता, फूल सूख जानेसे पत्ता निकलता है।) फिर जितने दिन शिशिर नहीं पड़ता उतने दिन नवकुसुमित अथवा नवपल्लवित वृक्षलतामें वसन्त विराज करता अर्थात् वैशाखसे कार्तिक पर्यन्त सात मास वसन्तका अधिकार रहता है। शीतकालमें जिस परिमाणसे बरफ गिर जाता, उसीके अनुसार शीघ्र वा विलम्बसे वसन्त आता है। शीतमें अल्प बरफ गिरनेसे चैत्रमासके पूर्व ही वह गल चुकता और वसन्तका समागम लगता है। फिर यदि अधिक बरफ पड़ता तो समस्त चैत्रमास लगा करता है। सुतरां वैशाख मास वसन्तागम होता है। कहते हैं कि एक समय जहांगीर बादशाह कार्यानुरोधसे वसन्तके प्रारम्भमें काश्मीर जा न सके। सुतरां उन्होंने काश्मीरके कर्मचारियोंको लिख दिया—"ऐसा कीजिये जिसमें वसन्त

* काश्मीरी रोटीकी जितनी प्रशंसा करते आशीष उसकी अच्छी तरह नहीं करते। किन्तु लोगोंके अन्य दिन भोजन करनेमें उसके तुल्य स्वादमें कोई नहीं होता।

राज हमारे आगमनकी प्रतीक्षा करते रहें और हमारे पहुंचनेसे पहिले देख न पड़ें।" सुचतुर कर्मचारियोंने उनका उद्देश्य समझ चारो पार्श्वके पर्वतोंसे बरफ मंगा बादशाहकी क्रीडाका कानन ढांक रखा था। सुतरां अन्यत्र वसन्तका कार्य आरम्भ होते भी बादशाहके काननमें उसका प्रभाव न पड़ा। अन्तको जहांगीरके पहुंचने पर बरफ हटानेसे क्रीडाकाननमें वसन्त झलक उठा था।

काश्मीरमें नाना वर्णके मनोरम सुगन्ध पुष्प यथेष्ट हैं। सर्व प्रथम हरिद्राभ शुक्लवर्णका वेदमुश्क फूल खिलता है। जिस ओर देखिये, उसी ओर पुष्पका आस्तरण लगा हुवा मालूम पड़ेगा। काश्मीरमें फूलके गुलदस्तेके लिये विविध प्रकार पुष्प आहरणका कष्ट नहीं उठाते। सम्मुख जहां चाहते वहींसे दो एक हाथ जमीनके बीच प्रायः ७। ८ प्रकारके फूल पा जाते हैं। वैसाखमासके मध्यकाल बादाम फूलनेसे फिर एक नयी शोभा उमड़ पड़ती है। वह काश्मीरयोंके बड़े आनन्दका समय है। धनी, निर्धन, युवा, वृद्ध, सब लोग हजार दास्तान्‌का पिंजड़ा हाथमें उठा हरि-पर्वत नामक स्थानको जाते और बादाम पेड़की शाखामें पिंजड़ेको लटका उष्णीष (तहो) खोल देते हैं। हजारदास्तान् वसन्तवायु लगनेसे नाचते नाचते सुललित स्वरमें गाता रहता है। काश्मीरी भी भक्तिसूचक विमुग्ध गान कर इतस्ततः घूमते हैं। ज्येष्ठ मासमें चमेली फूलती है। उसका वर्ण आकाशकी भांति होता है। सुतरां काश्मीरी उसे "हि आसमान्" कहते हैं उक्त पुष्प वसन्तकी विदाईका फूल है। उसके खिलनेसे ही वसन्तको शोभा समाप्त हो जाती है। वैशाख बीतने पर चमेली खिलनेसे पहले पीछे कालानुसार क्रमशः फूल झरने और नवपल्लव निकलने लगते हैं। आषाढ मास फल आता है। शस्य परिपूर्ण हो जाता है। काश्मीरमें ग्रीष्मका लेश नहीं। जब ग्रीष्मके प्रभावसे हिन्दुस्थानमें जी घबराने लगता, तब वहां गात्र पर एक परिवेश वस्त्र रखना और रातको रजाई ओढ़ना पड़ता है।

श्रावणमें प्रथम रौद्र कुछ बढ़ता है। किन्तु उसमें कभी लोग विवश नहीं होते। वही गर्मी पड़नेसे शीघ्र स्वल्प वृष्टि हो जाती है। फिर पर्वतादि शीतलता धारण करते हैं। आश्चर्य नियम! वहां श्रावणमें मूषलधार वृष्टि नहीं होती। शीतकालमें बरफ गिरनेके समय झड़ लगती है। उसी समय शिलावृष्टि भी होती है। संवत्सरमें १८। २० इञ्चसे अधिक पानी नहीं बरसता। आश्विनमें फल काम पकता है। कार्तिकमें शीत आरम्भ होता है। वृक्ष सकल पत्रहीन हो जाते हैं। उसी समय श्रीनगरसे ६ कोस दूर पादपुर क्षेत्रमें जाफरान (केसर) उत्पन्न होती है। वही काश्मीरके प्रति वत्सरकी शेष शोभा है। किसी फारसी कवितामें उक्त विषय भली भांति वर्णित हुवा है। यथा जाफरान खिलकर सबसे कहती है कि तुम काश्मीरका पथ छोड़ हिन्दुस्थानका पथ पकड़ो, यहांकी शोभा पूरी हो गयी। शीतकालको आते देख काश्मीरी आहारीय संग्रह करते हैं। उस समय वह समुदाय शाक (कद्दू तक) सुखाकर रख छोड़ते हैं। किसीके बरामदे किसीके जंगले और किसीकी नावमें सूत्र ग्रथित मिर्चोंकी बड़ी बड़ी माला सूखा करती हैं। उन्हें देखकर समझते कि दुःसह ऋतुको आते विचार काश्मीरी भी उपयुक्त आयोजन लगा रखते हैं। २०००० फीट ऊंचे काश्मीरमें चिरतुषार विराजित है। कार्तिक मास आते ही नीचे पार्वत्य स्थानमें बरफ गिरने लगती है। किन्तु वह कार्तिकमें जमती नहीं, गल जाती है। पौष माससे नियमानुसार बरफका जमना शुरू होता है। बरफसे चतुर्दिक् रौप्यमण्डित हो जाती हैं। उक्त दृश्य देखनेमें भी बहुत रमणीय लगता है। किन्तु उस समय काश्मीरमें रहना बहु कष्टसाध्य हो जाता है। काश्मीरपति महाराज रणवीरसिंहके सुविज्ञ मन्त्री (१८८५ ई०) दिवान् कृपारामने स्वप्रणीत काश्मीर-इतिहासमें उक्त तुषारपातके सम्बन्धपर लिखा है—'पीरपर्वतपर जो क्षुद्र क्षुद्र श्वेतवर्ण कर्पिका पड़ी हैं, वह बरफ नहीं, आकाशने काश्मीरके मुखमें अमृतमात्र दान किया है।'

वास्तविक यहां तुषारपातसे जीवन संशय होता है। उसमें विधाताकी असीम करुणासे जिस प्रकार लोग

असह्य रहता, वह अधुनके शीतलता हो जाता ठहरता है। शीतकालमें एकदण्डके लिये भी तुषारपात विश्राम नहीं लेता। उस पर सब समय झड़ और प्रबल वृष्टि पड़ती है। फिर भयङ्कर हिमपात भी होता है। कभी कभी पहाड़ि क्रमसे एक मासके मध्य सूर्यका दर्शन नहीं मिलता। नदी हृदादि जम जाते हैं। कभी कभी कलसी वा अन्य पात्रादिका जल जम जानेसे पानी या जल पीनेको नहीं मिलता। काश्मीर वासी विलक्षण समझ सकते और सतर्क हो कुछ पूर्वसे गृहादिके मध्य दिवारात्रि अग्नि प्रज्वलित रख किसी प्रकार जनरक्षा और क्लेशादि निवारण करते हैं। शीत काल पड़नेसे आबाल वृद्ध-वनिता सबकोई कालोपर अंगरखेके नीचे एक कांगड़ीको व्यवहार करते हैं। कांगड़ी मसालेकी इंडी जैसा अग्नि रखनेको मृण्मय पात्र है। वह चारो ओर बांसकी कमाचसे बुनी रहती है। उसमें अग्निदाह कालोपर कपड़ेके भीतर लटका देते हैं। इसीसे काश्मीरियोंके वक्ष-स्थलमें अग्निके दाग देख पड़ते हैं। वर्फ गिरनेसे कुछ दिन पहले शिशिर पड़ता है। उस समय प्रातःकाल बोध होता मानो रातको किसीने चारो ओर चूना छिड़क दिया है। वर्फ गिरनेसे पहले शीत अति असह्य हो जाता है। किन्तु जब पड़ जानेसे उस शीतके मध्य भी कुछ कम बोलता मालूम पड़ता है। जब अधिक वर्फ गिरती तब तब प्रातःकाल उठ कर देखनेसे चारो ओर चांदी जैसी झलक पड़ती है। पर्वत, निम्नस्थ लता, गुल्म, वृक्ष, घर, नौका, उपत्यका भूमि, पथ प्रभृति सभी मानो रौप्यमण्डित हो जाता है। बच्चे बलसे ओले का मन बैठे वर्फके गोल बटवा करते हैं।

शीतकालमें भात और मांस ही काश्मीरवासियोंका प्रधान खाद्य है। शीतकालमें ही केवल कई प्रकारके जलचर पक्षी मिलते हैं। किसी किसी दिन कुछ अति प्रकार होनेसे काश्मीरी जलाशय पर जा पक्षी मार लाते हैं। उस समय मृणाल भिन्न कोई शाक नहीं मिलता। काश्मीरी उसे 'नदरू' कहते और शीतकालमें रांध कर खाते हैं।

वसन्त—प्रायः यदि केवल स्वास्थ्यकर कोई स्थान है तो काश्मीर ही है। नदीका जल, हृदका जल इतना स्वच्छ रहता कि दश हाथ नीचे मछलीका खेल स्पष्ट देख पड़ता है। जल जैसा स्वच्छ वैसा ही सुस्वादु भी है। झरनोंका जल तो भैषज्यगुणविशिष्ट है। किसी किसी झरनेमें केवल स्नान करनेसे ही कुछ पर्यन्त आरोग्य हो जाता है। जल इतना शीतल है कि ज्येष्ठ आषाढ़ मास पीते भी दांत हिल उठता है। काश्मीरके ग्रीष्म ऋतुमें भी समझ नहीं सकते ग्रीष्म का कृति किसे कहते हैं? वायु अति निर्मल, शीतल और स्वास्थ्यकर है। किसी कविने कहा है—यदि कोई दग्ध जीव भी काश्मीर आवे, तो वह जीवित हो जावे, यहां तक कि अग्निदग्ध पक्षी भी अपने पर पावे और आकाशमें उड़ता देखावे। वास्तविक एक मुखसे कह नहीं सकते काश्मीरके जलवायुमें कितने गुण हैं। काश्मीरीके रहनेके गृहादि काठसे निर्मित होते हैं। काश्मीरी भाषामें उन्हें "लड़ी" कहते हैं। यहां प्रायः भूमिकम्प होते हैं। इसीसे सब लोग काठहीके घर बनाते हैं।

किसी किसी घरकी भित्ति प्रस्तर वा इष्टक निर्मित होती है। किन्तु अधिकांशमें नींव रहती है। वर्फके लिये सब मकानोंकी छत ढालू रहती है। छत पर पहले तख्ते और पीछे भूर्जपत्र बिछा मट्टीसे लीप देते हैं। वसन्तकाल उस मट्टी पर सब घास जमनेसे छत पूरी हो जाती है। उस प्रकारकी छत देखनेमें बहुत सुन्दर होती है। घर तिनतले पांच-तले पर्यन्त बनता है, वह पहाड़की भांति देख पड़ता है। खिड़कीके किवाड़ दो पल्ले (दुतरफा) होते हैं। खिड़कियोंके किवाड़में नाना प्रकार काटकाम और सूक्ष्म छिद्र रहते हैं। शीतके समय उन छिद्र कागजसे बन्द कर दिये जाते हैं। उससे हिम रुकता, किन्तु आलोक पहुंचा करता है। प्रत्येक घरमें एक 'सोपारी' (सुर्खाखाना) रहती है। बिना उसके शीत कालमें काम करना असाध्य है। किसी किसी घर विशेषतः धनियोंकी अट्टालिकाके मध्य निम्न तलमें हम्माम अर्थात् उष्ण स्नानागार होता है। उसमें किसी दिक्से वायु घुसने नहीं पाता। यहां उष्णताका तार

करते भी देशाधिकार कर न सकते थे। शिवको पक्ष-वालोंके अधिकार करने पर अङ्गरेजोंने परामर्शकर मुस-लमानोंको बलपूर्वक कोतिंस धारण कराया। प्रथम प्रथम वह उक्त वेश बिना युद्ध धारण करने पर कोतस पूर्ण न थे। किन्तु शिवको उन्होंने उसे स्वीकार किया। अत एव पुरुष परिच्छेदके साथ उन्होंने पुरुषोचित साहस भी खो दिया है।

चाचार-व्यवहार-काश्मीरी बहुत अपरिष्कार रहते हैं। उनका वस्त्रादि पात्र और बासन व आवास् बराब मैला देख पड़ता है। शीतको छोड़ देने भी अन्य किसी समय वह वस्त्रादि नहीं धोते। क्या स्त्री क्या पुरुष सभी प्रकाश्य स्थानमें नग्न हो स्नान करते हैं। सुतरां स्नानके समय भी गात्रावरणको अलग नहीं कराते। क्योंकि उसपर इतना मैल जम जाता कि यथार्थ रुईको जैसे मैल निकलना और झाड़नेके पिस्सू तथा चिलरका ढेर लगता है। वह एक न का-श्मतर और ग्रीष्ममें नग्नस्नान करते हैं। शीत कालमें घरसे बाहर निकलना दुःसाध्य होने पर वह ऐसा करते हैं। किन्तु अभ्यासवशसे अन्य समय भी वह उक्त व्यवहार छोड़ नहीं सकते। भोजनालय उन्होंके नरक बन जाता है। श्रीनगर, जम्मू प्रभृति राजधानी में भी ऐसा ही हाल था। फिर भी आजकल राज-नियमसे बहुत कुछ परिष्कृत हुआ है। राजकर्मचारी, विदेशी और पर्यटक (अर्थात् काश्मीरी भिन्न दूसरे सभी) इसीसे भोजनालय छोड़ नहीं और वस्त्रादिको रखते हैं।

काश्मीरी बड़े झगड़ालू होते हैं। किसीके साथ किसीका विवाद उपस्थित होनेपर समस्त दिन अपि-शान्त रूपसे बकबक करते हैं। फिर सन्ध्या पहननेके समय एक अपने अपने अङ्गूरे पर टोकरी औंधा रख देते हैं। दूसरे दिन प्रत्यूषके समय वही टोकरी खोल नये सिरेसे झगड़ा किया करते हैं। इसी प्रकार एक दिन नहीं कई दिन झगड़ा चलता है। श्रीनगरके लोगोंमें कितना कुछ अभ्यास है। जिस समय इस पार के लोग उस पारके लोगोंसे झगड़ते, उस समय बड़ा कौतूहल मालूम होता है। इस प्रकारका झगड़ा लगनेसे समय एक एक दूसरेके उद्देश नानाविध कुत्सित बोल बोलते हैं। वह भले आदमियोंके सुनने योग्य नहीं होता। झगड़ेको कथा या अश्लीलता भी कोई भला आदमी देख या सुन नहीं सकता। साधारणतः काश्मीरी विनयी, मिष्टभाषी और परोपकारी होते हैं।

वह दोनों बेला आहार करते हैं। अन्न और मत्स्य उनका नित्य खाद्य है। उत्तम अन्नको अपेक्षा बड़ा सूखा भात, नमक मिर्च मिला चरपरा अदम शाक, कुछ मछली और एक प्याला चाय काश्मीरियोंके लिये अति उत्तम भोजन है। इसलिये जो महीनेमें दो रुपये कमाता उसका भी समय सुखसे कट जाता है।

चाय वह नित्य पीते हैं। मद्य और चाय आमन्त्र-णके लिये अभ्यर्थनाकी सामग्री है। चाय बनानेके यन्त्रको "समावार" कहते हैं। वह देखनेमें ढोलके जैसा होता है। समावारकी उच्चता १५ इञ्च होती है उसका व्यास ढाई इञ्च बैठता है। अभ्यन्तर खोखरा होता है। मध्यस्थलमें अग्नि जलाना पड़ता है। उसके बाहर चाय डालनेके लिये ढोल-जैसा नल लगा रहता है। अग्निको चारो और खाली जगह में पानी भर देते हैं। पानी गर्म होनेसे चाय डाली जाती है। वह मीठी और नमकीन चाय पीते हैं। पञ्जाबसे तिब्बतीय चाय लवणमिश्रित व्यवहार करते हैं। उन्हें दो प्रकारकी चाय अच्छी है—पञ्जाब को "सुरती" और लासाकी "खम"। सभी कामपर वह समावार कभी नहीं छोड़ते।

शिल्प—काश्मीरी शिल्पविद्यामें निपुण हैं। काश्मी-रका दुशाला जगत् विख्यात है। श्रीनगरके निकट कोनिरा नामक स्थानमें कागज बनता है। वह शुचि वस्त्र भार पार्चमेण्टकी भांति दृढ़ होता है। रावकोट व्यवहारके लिये सुवर्णमण्डित कारुकार्यविशिष्ट एक प्रकारका अति मनोहर कागज तैयार होता है। काश्मीरके रंगमा हुवे कागजके कारुकार्यविशिष्ट कलमदान, सन्दूक, पिटारा, रकाबी प्रभृति सुवन विख्यात हैं। सोने चांदीका काम भी वह खूब करते हैं। गहनेका जैसा पैचदार नमूना दिया जाता, वह वैसाही (उससे कमी न बनाते भी या बनानेका

कौशल न जानते भी) अविकल काश्मीरियोंके हाथसे बनकर निकल जाता है।

भाषा—काश्मीरकी प्रकृत भाषाका नाम "कासुर" है। वह संस्कृतका कुछ कुछ अपभ्रंश है। उस भाषामें अक्षर नहीं। सुतरां उसमें लिखित पुस्तकादिका भी अभाव है। देवनागरके टूटे फूटे शारदा अक्षर संस्कृत पुस्तकादि लिखनेमें व्यवहृत होते हैं उनमें कासुर भाषाके उच्चारणानुसार सकल कथा लिखी नहीं जा सकती। उनका "बूझव" (बूझा) और "बूझकिथा" (बूझ लि कि ना) प्रयोग देख कासुर भाषा हठात् हिन्दो जैसी समझ पडती है। वह प्रत्येक कथामें "दापाह" (कहते हैं) शब्द व्यवहार करते हैं। फिर प्रत्येक क्रियाके अन्तमें "च" लगा देते हैं। कासुर भाषामें सैकडे पीछे २५ संस्कृत, ४० फारसी, १५ हिन्दी, १० अरबी और कई पहाडी वा तिब्बती शब्द रहते हैं।

काश्मीरके नाना स्थानोंमें प्रायः १२ विभिन्न भाषा प्रचलित हैं। पुञ्च और जम्बू जिलेमें डोग्र तथा चिब्बली भाषा व्यवहृत होती है। वह हिन्दी भाषासे अधिक पृथक् नहीं। पार्वत्य प्रदेशमें ५ विभिन्न भाषा चलती हैं। काश्मीर उपत्यकामें कासुर भाषाका प्रचार है। लदाख, बलतीस्तान, चम्बा प्रभृति स्थानोंमें दो प्रकारकी तिब्बतीय भाषा और उत्तर-पश्चिममें चार प्रकारकी दरद भाषा बोली जाती है। अलबेरुनीको वर्णनासे समझ पडता कि ई० एकादश शताब्दको काश्मीरमें "सिद्धमातृका" नामक अक्षरोंका प्रचार था।

शिक्षा—राजकीय और वैषयिक समुदाय कार्य फारसी भाषामें सम्पन्न होते हैं। इससे प्रायः अनेक लोग फारसी पढ़ते हैं। काश्मीरी पण्डित संस्कृतकी शिक्षा ग्रहण करते हैं उसमें अनेक पण्डित विशेष व्युत्पन्न हैं। ज्योतिषशास्त्रमें भी बहुतसे लोगोंकी अधिक अभिज्ञता है। काश्मीर महाराजके यत्नसे अनेक संस्कृत पाठशाला स्थापित है।

धर्म—काश्मीरके प्रायः सकल हिन्दू शाक्त हैं। सब लोग रीतके अनुसार पूजा और स्तवादि पाठ करते हैं। जो स्नान वा पूजादि नहीं करते, वह भी (हिन्दू बालक, स्त्री सब) प्रातःकाल उठते ही कपालसे पूर्व दिनका तिलक छोडा केसरका दीर्घ और स्थूल नया तिलक लगा लेते हैं। प्रतिदिन प्रातःकाल केवल एकबार तिलक धारण करते हैं। तिलक लगानेसे उनके कपालमें एक चिह्न पड जाता है। ब्राह्मण रीत्यनुसार वेदपाठ करते हैं।

किसी समय काश्मीरमें भी बौद्धधर्म विशेष प्रबल था। आज भी नाना स्थानोंमें बौद्ध-मठ और विहारादिका भग्नावशेष दृष्ट होता है। काश्मीरमें अनेक बौद्ध पण्डितोंने जन्म ग्रहण किया है। स्थान स्थानमें आज भी बौद्धधर्म प्रबल है।

मुसलमानोंमें सुन्नी और शीया दो विभाग हैं। सुन्नियोंकी संख्या अधिक है। १८७२ ई० के शेषको एकबार किसी मसजिदके प्राचीर पर दोनों दलोंमें विवाद बढा था। सुन्नियोंने शियाओंका गृहादि जला, द्रव्यादि लूट और रमणीकुलका सतीत्व मिटा राज्यके मध्य महाविप्लव मचा दिया। शेषको महाराजके कौशलसे सब शान्त हो गया।

पुरातत्त्व—पाश्चात्य पुराविद्के मतमें "कश्यपमीर"-से 'कश्मीर' नाम बना है। राजतरङ्गिणीमें लिखा है—

> "पुरा सतीसरः कल्पारम्भात् प्रभृति भूरभूत्।
> कुक्षौ हिमाद्रेरर्णोभिः पूर्णं मन्वन्तराणि षट्॥
> अथ वैवस्वतीयेऽस्मिन् प्राप्ते मन्वन्तरे सुरान्।
> द्रुहिणोपेन्द्ररुद्रादीनवतार्य प्रजासृजा॥
> कश्यपेन तदन्तःस्थं घातयित्वा जलोद्भवम्।
> निर्ममे तत् सरो भूमौ कश्मीरा इति मण्डलम्॥" (१।२५—२०)

पुराकाल सतीसरः कल्पारम्भसे भूमिमें परिणत हुवा। हिमाद्रिगर्भमें छह मन्वन्तर पर्यन्त जलपूर्ण रहा [उसी सतीसरमें जलोद्भवका (असुरका) वास था।] वैवस्वत मन्वन्तर उपस्थित होने पर प्रजापतिने कश्यप, द्रुहिण, उपेन्द्र और रुद्र प्रभृति देवगण अवतारित कर उनके द्वारा जलोद्भवको विनाश किया था। उसी सरोवर भूमिमें कश्मीर मण्डल स्थापित हुवा।

नीलमतपुराणके मतमें प्रजापति कश्यप ही ब्रह्मा थे। उन्होंने विष्णु और शिवके सहायतासे जलोद्भवको मार सतीसरमें काश्मीर राज्य स्थापन किया। प्रथम नागराज नील काश्मीरका पालन करते थे।

काश्मीर अति पुरातनकाले आर्य जातिका लीलाक्षेत्र है। आर्य देवी। शाङ्खायन-ब्राह्मणमें लिखा है।

'पथ्यास्वस्तिको ही उत्तरदिक् समझिये। पथ्या स्वस्ति ही वाक् है। उत्तरदिक्में जो वाक्य प्रचार जैसा कीर्तित है। लोग भी उत्तरदिकमें भाषा सीखने जाते हैं। ऐसा प्रवाद है—जो लोग उत्तरदिक्से आते हैं, सब लोग यह कह उनका (उपदेश) सुननेको इच्छा करते हैं कि यह बोल रहे हैं। कारण उत्तर दिक वाक्यकी दिकको भांति ख्यात है।'*

विनायकभट्टने शाङ्खायनभाष्यमें लिखा है—

'काश्मीरमें सरस्वती कीर्तित हुआ करती है। (वाक्यही ही वाक् है) सरस्वतीके प्रसादकामको लोग उत्तरदिक् जाते हैं।'†

विनायकभट्टकी उक्तिसे समझ पाते कि अति पुरा काल लोग उत्तरदिक् भाषा सीखने जाते थे। सम्भवतः इसीसे काश्मीरका अपर नाम सरस्वती वा शारदा देश है।‡

महाभारतके समय भी काश्मीर एक तीर्थके समान प्रसिद्ध था। यथा—

"काश्मीरेष्व [illegible] [illegible]।
[illegible] ॥ ८
[illegible]।
[illegible]॥" ४१ (वन [illegible])

काश्मीर देशमें तक्षकनागका भवन है। वहां वितस्ता नामक सर्वपापनाशन एक तीर्थ है। उसमें स्नान करनेसे नर वाजपेययज्ञका फल पाते और सर्वपापसे छूट जाते हैं। दूसरा विशुद्ध हो जानेसे उन्हें परमगति मिलती है।

उस समय काश्मीर कोटक* गिरि प्रसिद्ध था। आजकल यह कोटक 'गुढ़' कहाता है।

वर्तमान काश्मीर राज्यका "जम्बू" भी महाभारतके समय पवित्र तीर्थ जैसा विख्यात था।

"[illegible]।
[illegible]॥" ३ (वन, ८२ अ)।

देवता, ऋषि और पितृगणके निषेवित जम्बूमार्ग नामक तीर्थमें जानेसे अश्वमेधका फल मिलता और समस्त कामना परिपूर्ण हुआ करती है।

काश्मीरका इतिहास

हरिवंशमें काश्मीरपति गोनर्दका नाम मिलता है। राजतरङ्गिणीमें कल्हणने उन्होंको प्रथम राजा जैसा लिखा है। राजतरङ्गिणीमें स्थान स्थान पर "गोनन्द" और "गोनर्द" नाम आया है। काश्मीरके राजाओंमें तीन गोनन्दका नाम मिलनेसे प्रथम गोनन्द 'गोनन्द प्रथम' जैसे अभिहित हुये हैं।

राजतरङ्गिणीके मतमें प्रथम गोनन्द कलियुगके पहले काश्मीरके सिंहासन पर अधिष्ठित थे। इसीसे वह युधिष्ठिरादिके समसामयिक ठहरते हैं। कारण कलियुगके होनेसे युधिष्ठिरादिने अभिषेचन किया था। गोनन्द मगधराज जरासन्धके बन्धु रहे। उनका राज्य गङ्गाके उत्पत्तिस्थान कैलास पर्वतके मूल देश पर्यन्त विस्तृत था। जरासन्धने जब मथुराके यदुवंशीयों को भगाया, तब आप ही गोनन्दने एक बृहत् सैन्यके साथ जरासन्धको साहाय्य पहुंचाया था। फिर उन्होंने यमुनातीर शिविर स्थापन कर पश्चिमदिककी यदुवंशीयोंका पलायनपथ रोक दिया। युद्धकाल उभयपक्ष जरासन्ध हारे थे। किन्तु गोनन्दने बलराम-से युद्ध कर विपक्ष सैन्यका विध्वंस करते भी बहुक्षण पर्यन्त जय पराजय स्थिर न हुआ। अन्तमें वह बलरामके अस्त्राघातसे मारे गये।§

---

* 'पथ्यास्वस्तिरुदीची दिक् प्रजानात्। वाग् वै पथ्यास्वस्तिः। तस्मादुदीच्यां दिशि प्रज्ञाततरा वागुद्यते। उदञ्च उ एव यन्ति वाचं शिक्षितुम्। यो वा तत आगच्छति तस्य वा शुश्रूषन्ते इति स्माह। एषा हि वाचो दिक् प्रज्ञाता।" (७।६)

† "काश्मीरे सरस्वती कीर्त्यते। बदरिकाश्रमे वेदघोषः श्रूयते। अतो निमित्त उत्तरदिग्गमनं वाचे।"

‡ काश्मीरमें शारदा नाम लिपिसे काश्मीरका अपर नाम शारदा देश है।

* काश्मीरेषु [illegible]" (महाभारत, [illegible])

§ हरिवंशमें लिखा है कि काश्मीरराज गोनर्दने जरासन्धको साहाय्य किया और अन्तमें गोनर्दने जरासन्धको घरोंमें जाकर मारा था। यथा— "[illegible] [illegible] ८।
[illegible]॥"

प्रथम गोनन्दके मरने पर तत्पुत्र दामोदर काश्मीरके राजा हुये। वह बहुत अहङ्कारी थे। सुतरां पिताके मरनेमें राज्य पाकर भी दामोदर सुखी न हुये। राजतरङ्गिणीके मतमें उनके राजत्वकाल किसी गांधार राजकुमारीके स्वयम्बरोपलक्ष कृष्ण-बलराम बुलाये गये थे। दामोदरने यह बात सुन स्थिर किया कि पितृहन्ताके प्राणवधका वह सुयोग था, वैसा सुयोग त्याग करना उचित न रहा। इसी विवेचनामें उन्होंने वृहत् सैन्यदलके साथ पथिमध्य कृष्ण-बलरामका आक्रमण किया। युद्धमें कृष्णके चक्राघातसे दामोदर मारे गये।

महाभारतके पाठसे समझ पड़ता कि राजसूय-यज्ञकाल अर्जुनने काश्मीर जय किया था।*

दामोदरके मृत्युकाल उनकी महिषी यशोमती गर्भिणी थीं। श्रीकृष्णके आदेशानुसार वही सिंहासन पर बैठ गयीं। स्त्रीके राजा होनेकी बात सुन प्रधान अमात्यने आपत्ति डाली थी। श्रीकृष्णने उन्हें उत्तर दिया—

"काश्मीराः पार्वती तत्र राजा ज्ञेयो हरांशजः।
नावज्ञेयो स दुष्टोऽपि विदुषा भूतिमिच्छता॥" (राजतरङ्गिणी)

काश्मीरकी रमणी पार्वती और काश्मीरके राजा महादेवका अंश हैं। दुःशील राजावोंसे भी पुण्यला-भेच्छु पण्डितोंको घृणा करना न चाहिये।

यथाकाल यशोमतीके गर्भसे सुलक्षणाक्रान्त बालकने जन्म लिया था। उसका नाम २य गोनर्द पड़ा। राजतरङ्गिणीके मतसे उन्हींके समय भारतयुद्ध हुवा था। वह शिशु थे। इसीसे कौरव पाण्डवमें किसीने उनको नहीं बुलाया।*

उनके पीछे ३५ राजा हुये। किन्तु वह सभी अधर्मी और दुर्दान्त थे। इसीसे किसी इतिहास वा शास्त्रादि में उनका नाम या बिन्दुमात्र भी विवरण नहीं मिलता।

फिर लव नामक एक राजा हुये। कहना कठिन है—वह प्रथम गोनन्दके वंशजात थे या नहीं। वह अनेक पार्श्ववर्ती राजावोंको स्ववशमें लाये। उन्होंने "लोलोर" नामसे एक नगर स्थापन किया था, किम्बदन्तीके अनुसार उसमें ८४ लाख पत्थरके मकान रहे। उन्होंने लोलारके अन्तर्गत लेवार नामक ग्राम ब्राह्मणोंको दिया था।

लवके पीछे उनके पुत्र कुशेशय राजा बने। उन्होंने ब्राह्मणोंको कुरुहार नामक ग्राम दान किया था।

कुशेशयके पीछे उनके पुत्र खगेन्द्र नरपति हुये। वह अतिसाहसी, नागद्वेषी और धीरबुद्धि थे। उन्होंने खागिपुर और खुनमुष ‡ नामक दो ग्राम संस्थापन किये।

एते चान्ये च राजानो बलवन्तो महारथाः।
समन्युर्बलरामश्च विद्दिषो जनार्दनम्॥" (हरिवंश ९१ अ०)

जरासन्धके प्रथमवार मथुराक्रमणकी वर्णनामें उक्त श्लोक मिलते हैं। उसके पीछे जिस समय कृष्ण बलराम गोमन्त पर्वत पर रहे, उस समय भी जरासन्ध सकल मित्रराजके साथ उन्हें वध करने गये थे। जरासन्धके उक्त मित्रराजोंमें भी गोनर्दका नाम मिलता है। यथा—

"मद्रः कलिङ्गाधिपतिश्चेकितानः सबाह्लिकः।
काश्मीरराजो गोनर्दः करूषाधिपतिस्तथा॥
द्रुमः किम्पुरुषश्चैव पार्वतीयाश्च सान्वयाः।
पर्वतस्यापरं पार्श्वं क्षिप्रमारोहयन्त्वमी॥" (हरिवंश, ९९ अ०)

हरिवंशमें इतना ही लिखा है किन्तु बलरामके हाथ गोनर्दके मारे जानेकी कथा उसमें नहीं आयी।

* "ततः काश्मीरकान् वीरान् क्षत्रियान् क्षत्रियर्षभः।
व्यजयल्लोहितञ्चैव मण्डलैर्दशभिः सह॥ १७॥
ततस्त्रिगर्तान् कौन्तेयो दार्वान् कोकनदांस्तथा।
क्षत्रिया बहवो राजन् उपावर्तन्त सर्वशः॥ १८॥
अभिसारीं ततो रम्यां विजिग्ये कुरुनन्दनः।
उरगावासिनञ्चैव रोचमानं रणेऽजयत्॥" १९॥
(महाभारत, सभापर्व २७ अ०)

* नीलमतपुराणमें भी इसी प्रकार लिखा है—
"दामोदराभिधस्तस्य सूनू राजाभवत् सुधीः॥......
कन्योपनिम्नगान्धारविषयेऽभूत् स्वयम्बरः॥
तत्राहूता समाजग्मू राजानो वीर्यशालिनः।
तत्रागतं समाकर्ण्य वासुदेवं सदस्युवै।
जगाम माधवं योद्धुं चतुरङ्गसमन्वितः॥
यादवश्च वासुदेवस्य सर्वेऽपि सहायवत्।
ततः स वासुदेवेन युद्धे चक्रनिपातितः।
कश्मीरयो तस्य पत्नीं वासुदेवोऽभ्यषेचयत्।
भविष्यत्पुत्ररक्षार्थं तस्य देशस्य गौरवात्।
ततः सा सुषुवे पुत्रं बालं गोनन्दसंज्ञितम्।
बालभावात् पाण्डुसुतैर्नाहूतः कौरवैर्न वा॥"

† वर्तमान नाम मुदरी या दक्षुभंकरीपाल है।

‡ खागिपुर वा खगेन्द्रपुरका वर्तमान नाम काकपुर है। वह वेहत

नरेन्द्रके पीछे तत्पुत्र सुरेन्द्रने सिंहासनारोहण किया। सुरेन्द्र साधुसे, निर्मलचरित्र और विनयी थे। उन्होंने दरद देशके निकट सौरक नामक नगर स्थापन और उसमें "नरेन्द्रभवन" नामक एक सुन्दर प्रासाद निर्माण किया। उनके कोई सन्तान न था।

महाराज सुरेन्द्रके परलोक जानेसे गोधर नामक और किसी वंशीय राजा बने। उन्होंने ब्राह्मणोंको हस्तिशाला नामक ग्राम दिया था।

गोधरके पीछे तत्पुत्र सुवर्ण राज्याभिषिक्त हुवे। वह बड़े दानशील रहे। उन्होंने कराल नामक स्थानमें सुवर्णमणि नामक खाल बनाया था।

सुवर्णके पीछे तत्पुत्र जनकने राज्य पाया। उन्होंने विहार और जालोर नामक अग्रहार स्थापन किया था।

जनकके पीछे उनके पुत्र शचीनर पर राज्यभार पड़ा। वह क्षमाशील और क्षमावान् नरपति थे। उन्होंने शमाङ्गासा और शनार नामके दो अग्रहार स्थापन किये। वह निःसन्तान रहे।

शचीनरके पीछे उनके पितृव्यपुत्र शकुनिप्रपौत्र अशोक राजा हुवे। वह बौद्धधर्मावलम्बी थे। उन्होंने शुष्कलेत्र और वितस्तात्र नामक स्थानमें अनेक स्तूप निर्माण किये। वितस्तात्रपुरके धर्मारण्य विहारमें अशोकने एक अति उच्च चैत्य बनाया था। उसको चूड़ा किसीको देख न पड़ती थी। प्राचीन श्रीनगरी* अशोक कर्तृक स्थापित है। कहते हैं कि उनके समय प्राचीन श्रीनगरमें ९६ लाख मकान थे। उन्होंने श्रीविजयेश्वरदेवके * मन्दिरकी चतुर्दिकका भग्नप्राय वहिःप्राकार तोड़कर नूतन निर्माण करा दिया। फिर अशोकने श्रीविजयेश देवके मन्दिर-प्राङ्गणमें "अशोकेश्वर" नामक एक प्रासाद भी बनाया था। उनके इस समयमें म्लेच्छों (शकों या यवनों)-ने काश्मीर राज्य अधिकार किया। महाराज अशोकने शेष दशापर ईश्वरकी सेवामें अपना काल बिताया।

अशोकके पीछे तत्पुत्र जलौक राजा बने। वह बड़े शिवभक्त थे। उन्होंने पिता सुगतोक्त बौद्धमत ग्रहण नहीं किया। जलौकने समुद्रतट पर्यन्त पीछे पड़ कोसल म्लेच्छोंको देशसे निकाला था। म्लेच्छोंका पराजय कर उन्होंने एक स्थान पर सिंहासनस्थान किया। वह स्थान "उज्जटडिम्ब" नामसे प्रसिद्ध है। जलौकने वर्णाश्रमाचारको पुनः चलाया था। उनके समय काश्मीर राज्य जनाकीर्णमानों हो गया। उन्होंने राजकार्यको सुव्यवस्था स्थापन कर कोषाध्यक्ष, प्रधान सेनापति, दूत प्रभृति कर्मचारियोंका पद संस्थापन किया। जलौकने वारवल नामक ग्राम और उनकी पत्नी ईशानदेवीने द्वारपाल तथा अन्यान्य स्थानमें माताका मूर्तिको प्रतिष्ठा कर बड़ा पुण्य पाया था। महाराज जलौकसे सोदरतीर्थ भी प्रचारित हुवा। तीर्थयात्री वहां और अन्यान्य जगह जाते रहे। सोदरतीर्थकी नन्दीशमूर्तिकी भांति उन्होंने प्राचीन श्रीनगरमें ज्येष्ठरुद्र नामक शिवलिङ्ग प्रतिष्ठा किया और तत्सन्निहित स्थानका नाम सोदरतीर्थ रख लिया।† नन्दीक्षेत्रको चतुर्दिकका प्रस्तर प्राचीर उन्होंने निर्माण कराया था। फिर जलौक द्वारा ही नन्दीक्षेत्रमें शिवभूतेश लिङ्ग स्थापित हुवा। भूतेश मन्दिरको देवसेवाके लिये उन्होंने यथेष्ट अर्थ दिया था। कहा जाता है कि उन्होंने प्रथम एक बौद्धमठ नष्ट किया था। उसके पीछे जलौकने

---

* वर्तमान श्रीनगरसे [illegible] मील दक्षिण अवस्थित है। यहां आज भी प्राचीन देवमन्दिर और पूर्व भग्नावशेष देख पड़ता है।

शुष्कलेत्र (राजतरङ्गिणी १।१८)—वितस्ताके [illegible] [illegible] 'शीर्ष[illegible]' नामसे उक्त हुआ है। (वितस्तासङ्गम [illegible]) [illegible] [illegible] है। यह श्रीनगरसे १ मील [illegible] अवस्थित है। उसके निकट [illegible] और [illegible] विद्यमान है।

[illegible] निकट [illegible] [illegible] है। [illegible] नाम 'अशवर' लिखा है।

* विजयेश्वर—यह स्थान [illegible] [illegible] [illegible] था। वर्तमान [illegible] नामक स्थानमें ही प्राचीन श्रीनगरी रही थी, [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] मील दूर था।

जिस स्थानपर विजयेश्वरमन्दिर था, [illegible] [illegible] [illegible] है। वह देखने से काश्मीर के [illegible] [illegible] और [illegible] अवस्थित है।

† आज भी [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] नामक शिवलिङ्ग और [illegible] है [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] देख पड़ता है।

एक बौद्धविहार निर्माण करा उसमें छत्यादेवीकी मूर्तिकी प्रतिष्ठा किया और विहारका "छत्याश्रम" नाम रख दिया। चीरमोचनतीर्थमें महाराज जलौक और महिषी ईशानदेवीका मृत्यु हुवा।

महाराज जलौकके पश्चात् दामोदर (२य) राजा हुये। समझना कठिन है—वह अशोक वा गोधर-वंशसम्भूत थे या नहीं। दामोदर यथेष्ट धर्मगामी और शिवभक्तिपरायण थे। उन्होंने दामोदरसूद नामक पुर स्थापन कर उसमें यक्षगण द्वारा गुरुसेतु नामक सेतु निर्माण कराया था। वितस्ताके जलप्लावनसे देशरक्षा-के लिये दामोदरने (यक्षोंकी सहायतासे) पत्थरका बांध बंधाया। एक दिन वह श्राद्धके उपलक्ष स्नान करने जाते थे। उसी समय कई क्षुधार्त ब्राह्मणोंने मार्गमें उनसे अन्न मांगा। किन्तु दामोदर (२य) ने उनको प्रत्याख्यान किया था। इससे ब्राह्मणोंने उन्हें सर्प होनेको शाप दिया। किम्वदन्ती है कि गुरुसेतुके निकटस्थ जलाशयमें आज भी एक सर्प इतस्ततः घूमता फिरता है।

फिर काश्मीरके सिंहासन पर तीन तुरुष्क (तुर्क) नृपति बैठे थे। नहीं मालूम पड़ता उन्होंने कैसे राज्य लाभ किया। उनका नाम हुष्क (हुविष्क), जुष्क और कनिष्क थे। कनिष्क देखो। तीनोंने अपने अपने नाम पर तीन स्वतन्त्र नगर स्थापित किये—हुष्कपुर, जुष्क पुर और कनिष्कपुर।* जुष्कने जयस्वामीपुर नामक दूसरा नगर भी स्थापन किया था। शुष्कलेत्र नामक स्थानमें उन्होंने अनेक मठ निर्माण कराये। उनके समय बौद्धधर्म अतिशय विस्तृत था। राजतरङ्गिणीके मतमें बुद्ध शाक्यसिंहके समयसे उस काल पर्यन्त १५० वत्सर अतीत हुये थे। बोधिसत्व नागार्जुन उस समय ६ दिन काश्मीरमें उपस्थित रहे।

उसके पीछे अभिमन्युने राज्य पाया। राजतर-ङ्गिणीमें इस बातका कुछ भी उल्लेख नहीं—वह कौन थे या कैसे राजा हुये। अभिमन्यु अजातशत्रु नृपति थे। कणककौस (कणटकौस) नामक ग्राम उन्होंने ब्राह्मणोंको दान किया। अभिमन्युने एक शिव-मन्दिर प्रतिष्ठा कर उसके गात्र पर अपना नाम खुदा दिया था। उन्होंने स्वनामसे अभिमन्युपुर स्थापन किया। उन्होंके समय चन्द्राचार्य प्रमुख वैयाकरणिकने प्रतिपत्ति पायी थी। उन्होंने अभिमन्यु के आदेशानु-सार उनके समयका इतिहास लिखा। उसी समय नागार्जुनके अधीन बौद्धोंने प्रबल हो शिवोपासना और नीलपुराणोक्त नागनियमादि बिगाड़ अपना मत प्रचार किया था। नाग लोग उससे विद्रोही हो काश्मीर ध्वंस करनेके उद्देश पर्वतसे असंख्य तुषार-शिला डालने लगे और अनेक अस्त्र ले बौद्धोंको मारने पर नियुक्त हुये। महाराज अभिमन्यु उसके निवा-रणका कोई उपाय न कर सकने पर "दार्वाभिसार" नामक स्थानको चले गये। शेषको कश्यपवंशीय चन्द्र-देव नामक एक ब्राह्मणने दैवसहायतासे नाग और यक्ष विद्रोह मिटाया। महाराज अभिमन्युने ही पतञ्जलिका महाभाष्य प्रथम काश्मीरमें प्रचार किया था।

उसके पीछे गोनन्द (३य) सिंहासन पर बैठे। उल्लेख नहीं—वह कौन थे या किस प्रकार राज्याधि-कारी हुये। उन्होंने नीलपुराणानुसार नियमादि स्थापन और दुष्ट बौद्धोंके अत्याचार निवारण किये। गोनन्द (३य)-ने राज्यमें सुखशान्ति और प्रजाके धनधान्य की वृद्धि की थी। राजतरङ्गिणीके मतसे उन्होंने ३५ वर्ष राजत्व किया।

उसके पीछे तत्पुत्र विभीषण (१म) ५३ वर्ष ६ मास काल राजा रहे। फिर इन्द्रजित् राजा हुये और उनके बाद उनके पुत्र रावणने राजा हो वटेश्वर शिव-लिङ्ग स्थापन किया था। वह शिवलिङ्ग कल्हण पण्डित-के समय पर्यन्त विद्यमान था। उस लिङ्गके गात्रमें बिन्दु तथा सूत्रके समान चिह्न बने थे। महाराज वटे-श्वर देवके उद्देश अपना समस्त राज्य लगा दिया था।

---

* हुष्कपुर, जुष्कपुर और कनिष्कपुरका वर्तमान नाम यथाक्रम 'उष्कर' 'जुकर' और 'कम्पुर' है। उष्कर—चीनपरिव्राजकोक्त 'हु-षी-कि-लो' है। वह वर्तमान वरामूलके पश्चात् वितस्ताके दक्षिणतीर अवस्थित है। काश्मीरी पण्डितोंको विश्वास है कि पूर्व काल हुष्कपुर और वराहमूल एकत्र एक ही नगर था। हुष्कपुरमें काशिकाअलिटोकाकार जिनेन्द्रबुद्धि रहते थे। जुष्कपुर वा जुकर वर्तमान राजधानीसे ९ कोस उत्तर अवस्थित है।

इन्द्रजित् और रावण क्रमशः ३५ वर्ष ६ मास राजत्व किया। रावणके पीछे तत्पुत्र (२य) विभीषणने ३५ वर्ष ६ मास राज्य चलाया था।

विभीषण (२य) के पीछे उनके पुत्र नर वा किन्नर राजा हुये। वह बड़े अविवेचक राजा थे। विभीषण प्रजाके लिये जो करते, उसीसे उनके काम बिगड़ते थे। कोई बौद्ध उनकी महिषीको भगा ले गया। अतः राज किन्नरने उसी क्रोधमें सहस्र सहस्र बौद्ध मठ ध्वंस किये और वह समस्त स्थान ब्राह्मणोंको दे दिये। उन्होंने वितस्तातीर किन्नरपुर नामक एक नगर स्थापन किया था। महा शोभा और जनसाम्यसे परिपूर्ण होनेके कारण अनेक लोग उस नूतन नगरमें वास कर रहने लगे।

किन्नरराजके पुत्र महाराज सिद्ध थे। उन्होंने ६० वर्ष राजत्व किया। फिर उनके पुत्र उत्पलाक्ष राजा हुये। उत्पलाक्षके पीछे उनके पुत्र हिरण्याक्ष सिंहासन पर बैठे। उन्होंने अपने नाम पर "हिरण्यपुर" नगर स्थापित किया था। फिर यथाक्रम हिरण्यकुल और उनके पुत्र वसुकुलने काश्मीरका आधिपत्य पाया। वसुकुलके पुत्र मिहिरकुल रहे। वह अतिशय निर्दय और प्रजापीड़क थे। उन्होंने अपने नाम पर होला नामक स्थानपर 'मिहिरपुर' नगर पत्तन किया। सिवा इसके मिहिरकुलने ब्राह्मणोंको सहस्र ग्राम अग्रहार दे श्रीनगरमें मिहिरेश्वर नामक मन्दिर बनाया और चन्द्रकुल्या नदीकी गतिको भी घुमाया था। वह असभ्य दारद और म्लेच्छ (निम्नतोय) लोगों पर बड़ा ही अनुग्रह रखते थे। मिहिरकुलके पीछे उनके पुत्र बकने सिंहासन लाभ किया। उनके द्वारा लवणोत्स नगर स्थापित हुआ। उन्होंने बकेश मन्दिर भी प्रतिष्ठा किया था। बकके पीछे क्रमान्वयसे क्षितिनन्द, वसुनन्द, नर और अक्ष राजा हुये। अक्षने विमुग्राम और अक्षवाल नामक विहार (?) बनवाया था। अक्षके पीछे उनके पुत्र गोपादित्यको सिंहासन मिला। उन्होंने सखोल, धानि, खासाकिग्राम, स्कन्दपुर शमाङ्ग और काङ्गि ग्राम ब्राह्मणोंको दिया था। फिर गोपादित्यने आर्य-देशसे ब्राह्मण बुला उनको गोपाग्रहार गोअग्राम दान किया। उन्होंने ज्येष्ठेश्वर शिवको प्रतिष्ठा भी की थी।* उनके सुशासनमें काश्मीरमें मानो सत्ययुगका आविर्भाव हुआ।

गोपादित्यके पीछे उनके पुत्र गोकर्णने राज्य पाया। उन्होंने गोकर्णेश्वर मन्दिर प्रतिष्ठा किया था। गोकर्णके पीछे उनके पुत्र नरेन्द्रादित्य (अपर नाम खिङ्खिल) को पितृराज्य प्राप्त हुआ। उन्होंने कई मन्दिरों भूतेश्वर नामक शिवलिङ्ग और अन्यान्य देवमूर्तिको स्थापन किया। उनके गुरु उग्रने उग्रेश नामक शिव मन्दिर और मातृचक्रको प्रतिष्ठा की थी। नरेन्द्रादित्यके पीछे उनके पुत्र युधिष्ठिर राजा हुये। उस समय मंत्रियोंने विद्रोही हो युधिष्ठिरको अगत्या दुर्गमें कैद कर रखा था। युधिष्ठिरके कैद होने पर मन्त्रियोंने प्रतापादित्य नामक शकारि विक्रमादित्यके ज्ञातिको अभिषिक्त किया। उनके मरने पर जलौक और जलौकके पीछे तुञ्जीनने पितृसिंहासन पाया। तुञ्जीन और उनकी विज्ञतमा महिषी द्वारा अनेक सत्कार्य हुये। उनमें तुङ्गेश्वर नामक शिवमन्दिर और कतिक नगर स्थापन किया था। रानी वाक्पुष्टाने कतीमुष और रामुष नामक दो अग्रहार दानमें दिये और एक बड़ा भारी अन्नसत्र खुलवाया। उस समय काश्मीरमें भयानक दुर्भिक्ष पड़ गया। दुर्भिक्षपीड़ित मनुष्य अन्नसत्रमें आश्रय और आहार पाते थे। अन्तकालमें रानी वाक्पुष्टा पतिके साथ मर गयीं। उन्हीं सती मन्दिरमें बहुतके समय तक साधारणको अन्नदान मिलता रहा। तुञ्जीनके राजत्वकाल चन्द्रक नामक नाटककार विद्यमान थे।

इसके पीछे विजय नामक अन्यवंशीय एक राजा हुये। उन्होंने विजयेश्वर नामक शिवमन्दिरको चारो ओर नगर स्थापन किया था।

विजयके पीछे उनके पुत्र जयेन्द्र नरपति बने। उनके सन्धिमति नामक एक महाधैर्य मन्त्री थे। दैवज्ञ

* ज्येष्ठेश्वरका वर्तमान नाम 'जेठर' है। तख्तके पास पाण्डार और भ्रैठिर नामक स्थान है। यह दोनों स्थान यथाक्रम 'थार' और 'भ्रैठार' कहलाते हैं।

और विद्याबुद्धि दर्शनसे भीत हो काश्मीरराजने उन्हें कैद किया। मन्त्री कैद किये जाते भी दुःखी न हुये वह सर्वदा शिवके प्रेममें आनन्दित रहते थे। १० वर्ष इसी प्रकार बीत गये। अपुत्रक अवस्थामें जयेन्द्रका मृत्यु हुवा।

कुछदिन अराजकता रहने पीछे सन्धिमतिने आर्य राज नामग्रहण पूर्वक काश्मीरवासियोंके यत्नसे सिंहासन पाया था। उन्होंने अनेक सत्कार्य किये प्रवाद है कि वह प्रत्यह सहस्र शिवलिङ्ग प्रतिष्ठा करते थे। ऐतिहासिक कल्हणके समय तक उक्त सकल पाषाणमय शिवलिङ्ग विद्यमान रहे। (राजतरङ्गिणी। २।१२३) राजा सन्धिमतिने शिवलिङ्गकी पूजाके व्ययनिर्वाहार्थ अनेक ग्राम दान किये थे। उन्होंने अपने नामपर सन्धीश्वर*, गुरुके नामपर ईशेश्वर और खेड़ा एवं भीमादि† नामसे दूसरे भी कई सुवृहत् देवालयोंकी प्रतिष्ठा की। उनके समय समस्त काश्मीर राज्य देवमन्दिर और प्रासादमण्डित हो गया। उन्होंने कुछदिन राज्यकर इष्टदेवकी सेवामें समय अतिवाहित करनेके लिये राजसिंहासन छोड़ दिया।

इधर राजा युधिष्ठिरके प्रपौत्रने गान्धारराज गोपादित्यका आश्रय लिया था। उनके मेघवाहन नामक एक पुत्र हुवा। उसने प्राग्ज्योतिषकी राजकन्याको स्वयम्वरमें पाया था। कामरूपकी राजकुमारीको लेकर लौटनेपर काश्मीरके मन्त्रियोंने उन्हें आह्वान किया। मन्त्रियोंके यत्नसे युधिष्ठिरका वंश फिर काश्मीरके राजासन पर अभिषिक्त हुवा। मेघवाहनने अभिषेक-दिवससे प्राणिहिंसारोध करनेको आदेश निकाला था। उन्होंने अपने नामपर मेघमठ, युष्टग्राम और मेघवाहन नामक अग्रहार स्थापन किया। उनकी रानियोंने अपने अपने नामपर भिक्षुकोंके रहनेको 'विहार' बनाये थे। उक्त विहारोंके नाम रहे—अमृतभवन, खादना, नम्रा और (यूकदेवी-प्रतिष्ठित) नड़वन विहार। रानी अमृतप्रभाके पिताके गुरुने लुनपा* नामक नगरसे गमन कर लोस्तुनपा* नामक एक स्वतन्त्र स्तूप बनाया था। मेघवाहनके मरनेपर उनके पुत्र श्रेष्ठसेन (अपर नाम प्रवरसेन १म) राजा हुये। पितामाताके बहुत कुछ बौद्धमतावलम्बी होते भी उन्होंने अपने नामपर प्रवरेश्वर नामक देवमन्दिर प्रतिष्ठाकर देवसेवाके लिये त्रिगर्त राज्य दान किया था।

श्रेष्ठसेनके मरनेपर उनके पुत्र हिरण्यने, कनिष्ठ सहोदर तोरमाणके साहाय्यसे राज्य चलाया। पहले काश्मीरमें जो मुद्रा प्रचलित रही, तोरमाणने उसके बदले (किसीका अनिष्ट न कर) स्वनामाङ्कित स्वर्णमुद्रा (असर्फी) प्रचार की। उक्त कार्यसे क्रुद्ध हो हिरण्यने उन्हें सस्त्रीक कारारुद्ध किया था। कारागारमें तोरमाणकी पत्नी गर्भवती हुयी और दशमास पूर्ण होने पर किसी उपायसे भाग गयी। उन्होंने एक कुम्भकारके गृहमें आश्रय लिया और वहां एक पुत्रका प्रसव किया। शेषको वह पुत्र बड़ा हुवा। उसके मातुल (इक्ष्वाकुवंशीय) जयेन्द्र किसी प्रकार मस्थान पा भगिनी और भागिनेयको स्वराज्यमें ले गये। हिरण्यकुल ३२ वर्ष २ मास राजत्व कर निःसन्तान अवस्था पर कालग्रासमें पतित हुये।

उस समय उज्जयिनीमें हर्षविक्रमादित्य राजत्व करते थे। राजतरङ्गिणीके मतसे उन्होंने शकों और म्लेच्छोंको हराया रहा। उनकी सभामें कविवर मातृगुप्त रहते थे। हर्षविक्रमने प्रथमतः कवि मातृगुप्तका कोई सम्मान नहीं किया। मातृगुप्त शयन स्वपन जागरणमें अनुचरकी भांति राजाके अनुगामी रहे। उनके रात्रिको निद्रित होनेपर रक्षिवर्गकी भांति कवि मातृगुप्त भी शयनागारके द्वारपर जगा करते थे। यथाकाल राजाने समझा कि वैसे असामान्य प्रतिभाशाली पण्डितकी उपेक्षा करना अच्छा न था। उसी समय

*सहरमें सुलेमान पर्वतपर सन्धीश्वर मन्दिरका भग्नावशेष विद्यमान है। सन्धिमतिके नामानुसार उक्त पर्वतका नाम 'सन्धिमान्' था। मुसलमानोंने उसके बदले 'सुलेमान' नाम रख लिया है।

† वर्तमान इसलामाबादके उत्तर-पूर्व २ कोस दूर भवनग्रामके पास भीमादेवीका गुहामन्दिर दृष्ट होता है।

* मुद्रित राजतरङ्गिणीमें 'लोलाना' पाठ है। यह अमपाठ समझकर छोड़ दिया गया है। (राजतरङ्गिणी ३।१०)

लो नगरका वर्तमान नाम 'नि' है। वह लादक या मध्य तिब्बतमें अवस्थित है। लुनपा तिब्बतीय शब्द है।

उन्हें स्मरण आया कि काश्मीर राज्य अराजक रहा। उन्होंने मातृगुप्तको बुलाकर कहा था—"यह पत्र लेकर आप काश्मीरके शासनकर्ताओंके निकट चले जाइये। पत्रिकामें इसे जानकर आगे न पढ़ियेगा।" मातृगुप्त यथासमय काश्मीर पहुँचे। मन्त्रियोंने हर्षविक्रमादित्यका पत्र पा मातृगुप्तको काश्मीर राज्य पर अभिषिक्त किया था। उस समय उन्होंने विक्रमादित्यको गुणग्राहिताको समझा और मानाधिक उपजीवन तथा प्रतिष्ठादि उज्जयिनीको भेज दिया।

राजा मातृगुप्तने स्वराज्यमें पशुवध रोका था। उनकी सभामें 'हयग्रीववध' नामक काव्यप्रणेता कवि-वर मातृमेण्ठका अवस्थान रहा। राजा मातृगुप्तने "मातृगुप्तस्वामी" नामक विष्णुमूर्ति प्रतिष्ठाकर देवसेवाके लिये विस्तर अर्थ व्यय किया था। उनका राजत्व ४ वर्ष ९ मास १ दिन रहा।

इधर तोरमाणके पुत्र प्रवरसेन (२य) ने सुना कि उनके पितृ पितामहके सिंहासनको किसी दूसरे व्यक्तिने अधिकार किया था। कुमार इस बातको सह न सके और काश्मीरको चल दिये। मंत्री उनके साहाय्यार्थ उपस्थित हुये थे। प्रवरसेन काश्मीरकी अवस्था देख कहने लगे—"निरपराधी मातृगुप्तका क्या दोष है? वर्तमान व्यवस्था करनेवाले विक्रमादित्यको ही हम इसका प्रतिफल देंगे।" इसके पीछे सैन्यसंग्रह कर प्रवरसेनने त्रिगर्त जीता था। फिर उन्होंने हर्षविक्रमके विरुद्ध उज्जयिनीके अभिमुख गमन किया। पथिमध्य समाचार मिला कि हर्षविक्रमादित्यका मृत्यु हुआ था। इससे बड़ी आशा जाती रही। कुमार प्रवरसेनने खानापान छोड़ दिया। दिवारात्रि शोकमें रोते थे।

कह मातृगुप्तको कवि कालिदास और हर्षविक्रम को संवताब्दप्रतिष्ठाता शकारि विक्रमादित्य मान अनेक लोग भ्रममें पड़ गये हैं। मातृगुप्तके सम्बन्धपर जितनी जो कथा राजतरङ्गिणीमें मिलती है। उनकी कविता, धार्मिकता और महानुभवताको कल्हणने मुक्तकण्ठसे सराहा भी है। किन्तु उन्होंने मातृगुप्तको कहीं कालिदासकी भांति नहीं लिखा। यदि मातृगुप्त कालिदास होते तो प्रशंसा करते भी कल्हण कहीं एक बार कालिदास न लिख देते? कल्पित है।

राजतरङ्गिणीमें हर्षविक्रमादित्यके शकदेश जय करनेकी बात मिलती है। किन्तु क्या निश्चयता है कि उस शकदेशका जय संवताब्दप्रतिष्ठाताके ही समय हुआ था?

कुमार प्रवरसेन काश्मीर लौटकर राज्य करने लगे। उन्होंने काश्मीरके चतुःपार्श्वस्थ राज्य जीत लिये थे।

हर्षविक्रमादित्यके पुत्र उज्जयिनीराज प्रतापशील व शिलादित्यने प्रवरसेनसे क्रमान्वय ७ बार हारके भी काश्मीरकी अधीनता न मानी। शेषको चरम बार युद्धमें जीवनसङ्कट देख सर्व पराभूत हो गये। कल्हणके कथनानुसार प्रतापशील मायद मयूरकी भांति नाच और शोक करते थे। फिर प्रवरसेनने आदर उन्होंको देख उनका जीवन रखा और उन्हें स्वाधीन बना दिया। इसी प्रकार समस्त प्रतापान्वित राज्य जीत द्वितीय प्रवरसेन पितामहपुरमें रहने लगे। उन्होंने वितस्तातीर अपने नामपर मनोहर प्रवरपुर नामक नगर स्थापन और "प्रवरस्वामी" नामसे शिवलिङ्ग तथा देवीमूर्तिकी प्रतिष्ठा किया था। प्रवरसेन पुर* के निकट विनायक भीमस्वामीका मन्दिर रहा। उन्होंने वितस्तापर सर्वप्रथम नौसेतु प्रस्तुत कराया था। उनसे पूर्व किसीने काश्मीरमें नौसेतु नहीं बनाया। उस नौसेतुके उद्देश उन्होंने प्रसिद्ध सेतु काव्य वा 'दशमुखवधकाव्य' प्रणयन किया था। उनके मातुल जयेन्द्र ने 'जयेन्द्रविहार' नामसे बौद्धविहार बनाया। उनके मन्त्री और सिंहलके शासनकर्ता मोरकने 'मोरकभवन' नामक एक उत्तम प्रासाद निर्माण कराया था। महाराज प्रवरसेनके नगरमें स्वमातृ' सूर्यबिम्ब अङ्कित रहा। उनकी महिषीका नाम रत्नप्रभा था।

प्रवरसेनके पीछे उनके पुत्र युधिष्ठिर (२य) राजा हुये। उन्होंने २१ वर्ष ९ मास राजत्व किया। उनके मन्त्री सर्वरत्नपुत्र वज्रेन्द्रने भट्टारक नामक चैत्यादि समन्वित बौद्धधाम स्थापन किया था। कुमारसेन

*प्रवरसेनपुर—वर्तमान श्रीनगर राजधानी है।

युधिष्ठिरके प्रधान मन्त्री रहे। उनकी महिषीका नाम पद्मावती था।

युधिष्ठिर (२य)-के मरने पर उनके पुत्र लक्ष्मण या नरेन्द्रादित्य सिंहासन पर बैठे। उनकी महिषीका नाम विमलप्रभा था। वज्रेन्द्रके दो पुत्र वज्र और कनक राजमन्त्री रहे। नरेन्द्रादित्यने नरेन्द्रस्वामी* नामक शिवमन्दिर प्रतिष्ठा किया। उनका राज्यकाल १३ वत्सर था। उनने पुस्तकादि रक्षा करनेके लिये अपने नामपर एक भवन बना दिया।

नरेन्द्रादित्यके मरनेपर उनके कनिष्ठ भ्राता रणादित्य या तुञ्जीनको राज्य मिला। उनके कपाल पर शङ्खचिह्न रहा। रणादित्यकी पटरानीका नाम रणरम्भा था। कह्लणने लिखा है—देवी भ्रमरवासिनी मनुष्यदेह धारण कर महारानी रणरम्भा बनी थीं। महाराजने दो मन्दिरोंमें हरि और हर मूर्तिकी स्थापन किया। एतद्भिन्न उनने "रणस्वामी" और प्रद्युम्न पर्वत एवं सिंहरोत्सिका नामक स्थान पर पाशुपतमठ, रणपुरस्वामी नामक सूर्यमूर्ति तथा सेनमुखी देवीमूर्त्ति और उनकी पत्नी रणरम्भाने रणरम्भदेव नामक शिवलिङ्गकी प्रतिष्ठा की।† उनकी दूसरी महिषी अमृतप्रभाने रणेशके पार्श्वमें अमृतेश्वर नामक शिवलिङ्ग और मेघवाहन-पत्नीके नामानुसार निर्मित विहारमें बुद्धमूर्त्तिको स्थापन किया। महिषी रणरम्भाने रणादित्यको हाटकेश्वर शिवका मन्त्र सिखाया था।

रणादित्यके समय ब्रह्म नामक किसी सिद्धपुरुषने रणरम्भादेवीके नियोगानुसार "ब्रह्मसत्तम" नामक देवताको स्थापन किया।

रणादित्यके पीछे उनके पुत्र विक्रमादित्यको राज्य मिला। उन्होंने विक्रमेश्वर नामक शिवको स्थापन किया था। उनके दो मन्त्री रहे—ब्रह्मा और गलून। ब्रह्माने ब्रह्ममठ स्थापन और गुलूनकी पत्नी रत्नावलीने एक विहार निर्माण किया। विक्रमादित्यका राजत्वकाल ४२ वर्ष रहा।

विक्रमादित्यके पीछे उनके कनिष्ठ भ्राता बालादित्य राजा बने। उन्होंने पूर्वसागर पर्यन्त राज्य फैलाया और वहां जयस्तम्भ जमाया था। फिर उन्होंने वङ्गाला (बङ्गाला?) प्रदेश जीत वहां काश्मीरियोंके रहनेको कालम्ब्य नगर स्थापन किया। बालादित्यने मडव राज्यमें वदर नामक ग्राम बसाया ब्राह्मणोंको रहनेके लिये दिया था। उनकी प्रियतमा महिषीने सर्व-अमङ्गलहर बिम्बेश्वर नामक शिवको स्थापन किया। बालादित्यके खङ्ग, शत्रुघ्न और मालव नामक तीन मन्त्री रहे। उन्होंने भी अनेक प्रासाद, मन्दिर और सेतु निर्माण कराये थे।

बालादित्यके अनङ्गलेखा नाम्नी एक कन्या थी। बालादित्यने उसे अश्वघोषवंशीय दुर्लभवर्धन नामक एक सुपुरुष कायस्थ युवाके हाथ सम्प्रदान किया।*

दुर्लभवर्धन स्वीय बुद्धिमत्ता और नम्रतासे अल्पदिन मध्य ही राज्यमें सब लोगोंके प्रिय बन गये। बुद्धिका प्राखर्य देख बालादित्यने उनका नाम 'प्रज्ञादित्य' रखा था। अनङ्गलेखा किन्तु मातापिताके आदरसे गर्वित हो स्वामीको अनादर करती।

३७ वर्ष ४ मास राजत्व कर बालादित्यके स्वर्गलाभ करने पर तृतीय गोनन्दका वंश भी लोप हो गया। मन्त्री खङ्गने उस समय सुविद्वान् देख कायस्थ दुर्लभवर्धनको राज्याभिषिक्त किया।

अनङ्गलेखाने अनङ्गभवन नामक एक विहार बनाया था। किसी ज्योतिषने मल्हण नामक राजकुमारको अल्पायु बताया। उसीसे महाराज दुर्लभवर्धनने विशोककोट पर्वत पर पुत्रके कल्याण उद्देश चन्द्रग्राम नामक गांव ब्राह्मणोंको दान कर पुत्र द्वारा मल्हणस्वामी नामक शिवको स्थापन कराया था। फिर उन्होंने श्रीनगरमें दुर्लभस्वामी नामक विष्णुमूर्तिकी प्रतिष्ठा किया। ३६ वत्सर राजत्वके पीछे दुर्लभवर्धनको स्वर्ग लाभ हुवा।

* वर्तमान पायच्छ ग्राममें नरेन्द्रस्वामीका सुन्दर मन्दिर देख पड़ता है।

† वर्तमान इसलामाबादके पूर्व ३ कोस दूर मातम नामक स्थानके ऊपर प्रान्तमें मार्त्तण्ड नामक सूर्य-मन्दिर है। इसी रणादित्यने ही प्रतिष्ठा किया था। उक्त सूर्य मन्दिरके दोनो पार्श्व रणस्वामी और अमृतेश्वर शिवलिङ्ग आज भी विद्यमान है।

* कह्लणने दुर्लभवर्धन और उनके उत्तर पुरुषको कर्कोटनागवंशीय लिखा है। कायस्थ देखो।

दुर्लभवर्द्धनके राजत्वकाल चीन परिव्राजक युएन-चुयाङ्ग काश्मीर गये थे। उनको वर्णनासे समझ पड़ता कि उस समय काश्मीरराज्य ६०० कोस (७००० लि)-से भी अधिक विस्तृत था।* वह जयेन्द्रविहारमें राजमातुल गृहमें आहूत हुये थे।†

दुर्लभवर्द्धनके पीछे उनके पुत्र दुर्लभकने काश्मीरका राजत्व पाया। उन्होंने मातामहके नामानुसार प्रतापादित्य नाम ग्रहण किया था।

प्रतापादित्यके प्रतापपुर स्थापन करने पर अनेक धनी वणिक् आकर वहां रहने लगे। उनमें रोहितक-वासी नोण नामक वणिकने नोणमठस्थापन कर रौहितक प्रदेशवासी ब्राह्मणोंको आश्रय दान किया था। उस दानसे सन्तुष्ट हो महाराज प्रतापादित्यने वणिक्को निमन्त्रण दे अपने घर बुलाया। आमोद आह्लादसे वणिक् एक रात राजभवनमें रहे। प्रातःकाल महाराजने पूछा—'क्यों, रात सुखसे तो कटी?' वणिकने उत्तर दिया—"दीपालोक जलता था, उसने माथा पकड़ लिया।" फिर प्रतापादित्य भी निमन्त्रित हुये। उन्होंने वणिकके घर जाकर देखा कि एक मणि-के आलोकसे वणिकका भवन आलोकित था। महाराज वह देख विस्मित हो गये और वणिकके आग्रहसे २।३ दिन वहां रहे।

इधर वणिककी एक पत्नी नरेन्द्रप्रभाको देख राजा मोहित हुये। नरेन्द्रप्रभा भी राजा पर मुग्ध हुयी थी। प्रतापादित्य घर गये, किन्तु नर्तकीको भूल न सके। परम्परामें वणिकने उसका वृत्तान्त सुन वणिक्ने नरेन्द्रप्रभाको राजाके निकट भेजा और उन्होंने भी उसे रख लिया। उसके गर्भसे चन्द्रापीड़, तारापीड़ और अविमुक्तापीड़ नामक तीन महानुभव मनु-सुधमाके पुत्रोंने जन्म ग्रहण किया था। वह पितृ मातामह वंशकी रीतिके अनुसार यथाक्रम वज्रादित्य, उदयादित्य और ललितादित्य नामसे विख्यात हुये। ५० वर्ष राजत्व कर प्रतापादित्यने स्वर्गको गमन किया।

प्रतापादित्यके मरने पर उनके पुत्र वज्रादित्य (चन्द्रापीड़) राजा हुये। उन्होंने त्रिभुवनस्वामी नामसे नारायणमूर्तिको स्थापन किया। उनकी पत्नी प्रकाशाने 'प्रकाशिका' विहार, राजगुरु मिहिरदत्तने गम्भीरस्वामी नामक विष्णु और नगराध्यक्ष छलितकने 'छलितस्वामी' नामक देवताकी प्रतिष्ठा की। वज्रादित्य तारापीड़के षड़यन्त्र नियुक्त किसी ब्राह्मणके अभिचार व्यवहारसे मृत्युमुखमें पतित हुये। इन महानुभव नृपतिने ८ वर्ष ८ मास राजत्व किया।

उनके पीछे कनिष्ठ भ्राता तारापीड़ (उदयादित्य) सिंहासन पर बैठे। वह सब दमन कर इतने गर्वित हुये कि अपनेको देवताओंके साथ भी स्पर्धा करने लगे। देवमन्दिरमें प्रचार करनेवाले ब्राह्मणोंको राजा शास्ति देते थे। वह ४ वत्सर २४ दिन राजत्व कर किसी ब्राह्मणकी अभिचारक्रिया द्वारा पञ्चत्वको प्राप्त हुये।

तारापीड़के पीछे उनका कनिष्ठ सहोदर अविमुक्तापीड़ (ललितादित्य) राजा हुये। वह अतिपराक्रान्त नरपति रहे। उनका राजत्वकाल अनेक देश जीतनेमें ही बीत गया।

पहले १८ मन्त्री राज्यके प्रधान प्रधान कार्य चलाते थे। ललितादित्यने उक्त १८ पदोंको बढ़ा कर ५ पद और जोड़े—प्रधान शान्तिरक्षक, प्रधान सेनाध्यक्ष, प्रधान अश्वाध्यक्ष, प्रधान कोषाध्यक्ष और प्रधान विचारपति। उनसे ललितादित्यने कनौजके राजाको हराया था। (कान्यकुब्ज राज्य उस समय यमुनातीरसे कालिका नदी तक विस्तृत था।) उस समय यशोवर्माकी सभामें कविवर वाक्पति और भवभूति विद्यमान थे। वह ललितादित्यके साथ काश्मीर चले गये। उसके पीछे ललितादित्यने कलिङ्ग, गौड़, दक्षिणाभिमुख कर्णाट प्रभृति स्थान जय किये। रट्टा नाम्नी एक कर्णाटी सुन्दरी उस समय दाक्षिणात्यमें साम्राज्य चलाती थीं। वह भी वशीभूत हो गयीं। भारतके समस्त प्रधान स्थान जीत ललितादित्यने काम्बोज अश्वबहुला रमणीयमालाकुल तुखार, भोट और दरद प्रभृति देश जय किये। फिर काश्मीरमें पहुंच

* Beal's Records of Western Countries, Vol. I 148.

† La Vie de Hiouen Thsang par Stanislas Julien, p. 92.

कामन्दर और लोहर प्रदेश सैन्यको पुरस्कारमें दिया। उनने जितने देश जीते थे, उनके प्रत्येक राज्यमें जय स्तम्भ स्थापित किया। उनने सुनिश्चितपुर, दर्पितपुर, परिहासपुर और फलपुर नगर निर्माण करा नाना प्रकार वासभवन और प्रमोदभवन सजाये थे। दिग्विजयकाल राजप्रतिनिधिने ललितादित्यके नामानुसार 'ललितादित्यपुर'* नगर स्थापन कराया। किन्तु उससे ललितादित्य उन पर अप्रसन्न हुवे। ललितादित्यने अनेक देवमन्दिर, देवमूर्ति और बौद्धस्तूप बनाये थे। उनने ललितापुरमें सूर्यमूर्ति, हुष्कपुरमें मुक्तास्वामी, परिहासपुरमें परिहासकेशव नाम्नी (८४ तोले) सोनेकी विष्णुमूर्ति, पाषाणमय स्वर्णनखशोभित महावाराहमूर्ति, गोवर्धनधर और बुद्धमूर्ति की प्रतिष्ठा किया। उनकी महिषी कमलावतीने कमलाकेशव, प्रधान मन्त्री मित्रशर्माने मित्रेश्वर नामक शिवलिङ्ग और सामन्तराज कय्यने श्रीकय्यस्वामी नाम्नी विष्णुमूर्ति तथा 'कय्यविहार' नामक एक विहारकी स्थापना की। उसी विहारमें रह सर्वज्ञमित्र नामक किसी बौद्धने योगबलसे बुद्धपद पाया था। उनके चङ्कुन नामक किसी दूसरे मन्त्रीने चङ्कुनविहार तथा स्तूप और सोनेकी बौद्ध प्रतिमाकी प्रतिष्ठा किया। चक्रमर्दिका नाम्नी ललितादित्यकी एक प्रियतमाने चक्रपुर नामक नगर बसाया था।

ललितादित्य परिहासपुरमें अनाथाश्रम स्थापन कर नित्य लाख लोगोंके भोजनोपयोगी पात्र और खाद्यका संस्थान कर देते थे। फिर उनने मरुभूमिमें एक नगर बना श्रान्त पिपासितोंके जलपानकी सुविधा लगायी।

ललितादित्यने परिहासकेशव मन्दिरके पार्श्व पर स्वतन्त्र रौप्यमन्दिरमें रामस्वामी नामक विष्णुमूर्ति और महिषी चक्रमर्दिकाने चक्रेश्वरके पार्श्व पर लक्ष्मणस्वामी नामक दूसरी विष्णुमूर्तिको स्थापित किया। कह्लणने लिखा है—किसी समय गौडराज ललितादित्यके निकट उपस्थित हुये थे। ललितादित्यने उनसे कहा कि श्रीपरिहासकेशवके अनुग्रहसे उनने उनका प्राणमात्र बचा दिया था। उसके पीछे त्रिगामी नामक स्थानपर किसी नरहन्ता द्वारा उनने उनको मरवा डाला। उस समय गौडराज अति पराक्रान्त था। गौडके कितने ही राजभक्त वीर काश्मीरराजके उक्त दुष्कार्यका प्रतिशोध लेनेकी आशामें सरस्वती दर्शनके छलसे काश्मीर पहुंच किसी दिन श्रीपरिहासकेशवका मन्दिर लूटनेको अग्रसर हुवे। ललितादित्य उस समय वहां न रहे। गौडवीरोंके मन्दिर आक्रमण करनेका सन्धान पा ब्राह्मणोंने भीम कवाट बन्द कर दिये। विदेशियोंने पार्श्ववर्ती रामस्वामीके रौप्यमय मन्दिरको ही श्रीपरिहासकेशवका मन्दिर समझ ध्वंस और देवमूर्तिको विचूर्ण किया था। उसी समय काश्मीरी सैन्य पहुंच गया और उस मुष्टिमेय गौडीय सेनासे युद्ध होने लगा। सभी राजभक्त गौडवासियोंने एक एक कर प्राणदान किया। धन्य राजभक्ति! गौडीयोंका किसी समय उतना साहस, उतना अध्यवसाय था! रामस्वामीके मन्दिरका भग्नावशेष भूमण्डलमें गौडवासियोंकी विपुल यशोराशिकी घोषणा करता है।*

ललितादित्यने शेष अवस्थामें फिर उत्तरापथको युद्धयात्रा की थी। उसी युद्धयात्रामें उनका मृत्यु हुवा।

ललितादित्यके दो पुत्र थे—कुवलयापीड (कुवलयादित्य) और वज्रापीड (वज्रादित्य), महिषी कमलादेवीके गर्भजात ज्येष्ठ कुवलयादित्यको राज्य मिला। वह अतिशय दानशील थे। कुछदिन भ्रातृविद्रोहसे उनके राज्यमें महा विशृङ्खला रही। शेषको कुवलयापीडका जय हुवा और वज्रापीडको ज्येष्ठका अधीनत्व स्वीकार करना पड़ा। कुछ दिन पीछे कोई मन्त्री विद्रोही हो उनके प्राण लेने पर उद्यत हुये। महाराज कुवलयादित्यने उक्त विषयका संवाद पा मंत्रीको दलबलके साथ मारनेके लिये संकल्प किया था। किन्तु शेषको वह यह सोच राज्य परित्याग कर प्रव्रज्या अवलम्बनपूर्वक प्लक्षप्रस्रवण नामक स्थानमें रहने

* ललितादित्यपुरका वर्तमान नाम लतापुर है। आजकल वह सामान्य ग्राममात्र है। लतापुर सुदर्शासे डेढ़ कोस दक्षिण-पूर्व अवस्थित है।

* "अद्यापि दृश्यते शून्यं रामस्वामिपुरास्पदम्।
ब्रह्माण्डं गौडवीराणां सनाथं यशसा पुनः॥" (राजतरङ्गिणी, ४। ३३५)

करी कि मनुष्यका जीवन जलविम्बकी और राज्यश्री मायाका कल्लोलमात्र ही है। उसने केवल १ वर्ष १५ दिन राजत्व किया। उनके वानप्रस्थ अवलम्बन करने पर चिरकालको विनयमतिने प्रशोक जनमें कुछ राज्य छोड़ दिया था।

कुवलयापीडके पीछे वज्रादित्य सिंहासन पर बैठे। उन्होंने मन्त्रीको ललितादित्यके नाममें बन्ध किया था। लोग उन्हें वप्पियक वा ललितादित्य भी कहते थे। यह निष्ठुर देवस्थापकको (परिहासपुरादिकी अनेक देवोत्तर सम्पत्ति उन्होंने छीन ली थी), अतिशय स्त्री-प्रिय, अविचारी और म्लेच्छाचारी थे। अतिमात्र स्त्रीभोगके फल यक्ष्मारोगसे उनका मृत्यु हुआ। उसने ७ वर्ष राजत्व किया था।

वज्रादित्यके पीछे उनके पुत्र पृथिव्यापीड राजा हुये। उनकी माताका नाम मञ्जरिका था। उन्होंने ४ वर्ष १ मास राजत्व किया।

पृथिव्यापीडके पीछे उनकी विमाता मम्माके गर्भजात संग्रामापीडने राज्य पाया। उनका राजत्वकाल ७ वर्ष रहा।

संग्रामापीडके मरने पर वज्रादित्य वा द्वितीय ललितादित्य (वप्पियक)के कनिष्ठ पुत्र जयापीड सिंहासन पर बैठे। उनने प्रयागमें जा ९९९९९ अश्व ब्राह्मणको दान किये थे। इस दानके पीछे जयापीडने प्रयागमें गङ्गाके एक स्तम्भ बनाया और उसपर निम्नलिखित विषय खोदाया—"जो हमारी भाँति ब्राह्मणोंको लक्ष अश्व इस स्थान पर दे सकेगा वह हमारे इस स्तम्भको मानो तोड़ डालेगा। राजतरङ्गिणी देखो।

फिर जयापीड गौड़के अन्तर्गत पौण्ड्रवर्धनमें उपस्थित हुये। वहां उन्होंने गौड़राज जयन्तकी कन्या कल्याणदेवी और देवदासी कमलाका पाणिग्रहण किया। प्रत्यागमनकाल राहमें वह कान्यकुब्ज जीत वहांका अतिमनोहर सिंहासन उठा ले गये। काश्मीर पहुंचने पर जयापीडने सुना कि उनके पूर्व श्यालक जज्जने राज्य पर अधिकार किया था। उन्हें राज्यपानेके लिये युद्ध छेड़ना भी। पुष्कलेत्र नामक स्थानमें युद्ध हुआ। उसमें जज्ज मारे गये। जज्ज देखो।

जयापीडने राज्योद्धार कर शान्तिको स्थापन किया। मन्त्रीको कल्याणदेवीने पुष्कलेत्रको युद्धभूमिमें कल्याणपुर नामक नगर बसाया था। जयापीडने स्वयं मल्हणपुर नामक नगर और उसमें केशवमूर्तिको स्थापन किया। कमलाने भी कमला नामक नगर बसाया। उस समय काश्मीरमें विद्याचर्चा बहुत थी। राजा जयापीडने पतञ्जलिके महाभाष्य और काशिका वृत्तिका प्रचार किया। (उसमें क्षीर और वामन पण्डितके नाम उल्लेख पड़ा था।) भट्टोद्भट, दामोदरगुप्त मनोरथ, शङ्खदत्त चटक और सन्धिमान नामक कवि उनकी सभामें विद्यमान थे। उद्भट सभापण्डित रहे। उन्हें प्रतिदिन लक्ष स्वर्णमुद्रा (अशर्फी) मिलती थीं। दामोदरगुप्त प्रधानमन्त्री और कवि एवं वैयाकरण वामन उनके अध्यापक मन्त्री रहे।

जयापीडने पीछे जयपुर प्रभृति दूसरे भी कई नगर बसाये। उनके मामाने देवीप्रतिमा, राम लक्ष्मण आदिकी मूर्ति और अनन्तशायी विष्णुमूर्तिको प्रतिष्ठा किया। कहा जाता है कि विभीषणने समुद्रमें अवस्थित राक्षसोंको निर्माण करनेको आदेश दिया था। जयापीडने देखा जो एक नगर निर्माण कराया। वह कल्हणके समय अभ्यन्तर जयपुरके नामसे विख्यात था।

उस स्थानमें भी जयदत्त नामक किसी कर्मचारीने एक वीरमठ और महासरोवर बनाकर कामाना आचमें आदिभार नामक एक शिवलिङ्ग स्थापन किया।

उसके बाद जयापीड दिग्विजयार्थ हिमालय पर चढ़े थे। वहां उन्होंने विनयादित्य नाम ग्रहणपूर्वक पूर्वदिकको विनयादित्यपुर नामक नगर स्थापित किया। उसके बाद भ्रमणमें पूर्वदिक भीमसेनराज्य और नेपालराज्य नामा कोशमें जीत लिया।

उसके बाद जयापीडने स्त्रीराज्य जीत कन्नौज मिला अधिकार किया। उन्होंने पुण्ड्रादि प्रदेश जुड़वाये "कलस" नामसे मेघवर्णमिश्रणकारी कोषागार मिला था। जयापीडने कर्मस्थान पर एक नगर पत्तन अधिकार कर नाना प्रकारसे उनके मुख्य अभयन न मयर पञ्चकोटि स्वर्णमुद्रा। प्रसन्न

कराया। शेष दशामें वह कायस्थ मन्त्रियोंके परामर्शसे युद्धव्यवसाय छोड़ रमणी-विलासमें मग्न हो गये और ब्रह्मशापसे मृत्युमुखमें पतित हुये। उनकी जननी अमृतप्रभाने पुत्रकी सद्गतिके लिये अमृतकेशव नामसे हरिमूर्तिकी प्रतिष्ठा किया।

जयापीड़के पीछे उनके पुत्र ललितापीड़ महिषी दुर्गाके गर्भसे राजा हुये। वह बहुत कामासक्त रहे। उनने ब्राह्मणोंसे सुवर्णपार्श्व, फलपुर और सोणमोल नामक तीन स्थान छीन लिये। उनका राजत्वकाल द्वादश वर्ष मात्र था।

ललितापीड़के पीछे उनके वैमात्रेय (गौड़राजकुमारी कल्याणदेवीके गर्भजात) संग्रामपीड़ (२य) ने पृथिव्यापीड़ नाम ग्रहण कर सात वर्ष राजत्व किया।

संग्रामपीड़के पीछे ललितापीड़के शिशुपुत्र बृहस्पति वा चिप्पटजयापीड़ राजा हुये। उनने ललितापीड़के औरस और जयादेवी नाम्नी रमणीके गर्भसे जन्म लिया था। जयादेवी अस्तुवयानी कल्यपालकी कन्या रहीं। रूप देख ललितापीड़ उन्हें हरण कर ले गये थे। राजा बालक होनेसे पद्म, उत्पलक, कल्याण, मम्म और धर्म नामक मातुल राज्यका रक्षणावेक्षण करने लगे। वह भी सब अल्पवयस्क थे। सर्वज्येष्ठने पद्म प्रधान कर्मचारीका पद ग्रहण किया और सबने जयादेवीके आदेशानुसार काम लिया। जयादेवीने जयेश्वर देवताकी प्रतिष्ठा किया था। बालक बृहस्पति वा चिप्पट जयापीड़ १२ वर्ष राजत्व कर मातुलोंके अकालमें अभिचार क्रिया पर मृत्युके मुखमें पतित हुये।

उसी समय राज्यमें विशृङ्खला पड़ गयी। जयादेवीके भ्रातृपञ्चकने अपना प्रताप अक्षुण्ण रखनेके लिये भागिनेयको मार डाला। फिर किसीको नाममात्रका राजा बनानेके लिये वह घूमने लगे। किन्तु भाइयोंमें इस बात पर मतभेद हो गया,—किसको राजा बनाना चाहिये। उसी समय जयापीड़के दूसरे वैमात्रेय भ्राता (रानी मेघावलीके गर्भजात) त्रिभुवनापीड़के वंशीयोंमें सर्वापेक्षा वयोज्येष्ठ होनेसे उत्तराधिकार-सूत्रसे राज्य पानेके अधिकारी थे। किन्तु पञ्चभ्राताके एकमत न होनेसे जयादेवीके साहाय्य उत्पलने उक्त त्रिभुवनापीड़के पुत्र अजितापीड़को राज्य सौंप दिया।

अजितापीड़ राजा होनेपर भ्रातृपञ्चकका सतत भावसे अतिक्रम कर न सके थे। उससे बड़ा गड़बड़ पड़ गया। उनके आश्रय करने पर चार भाई लड़ने लगे। जो हुआ हो, उक्त पांचों लोगोंने देशमें अनेक सत्कार्य किये थे। उत्पलने उत्पलपुर नामक नगर तथा उत्पलस्वामी नामक देवता, पद्मने पद्मपुर* नामक नगर एवं पद्मस्वामी देवता, पद्मकी रानी गुणदेवीने विजेश्वर नामक स्थान तथा श्रीनगरमें एक एक देवता, धर्मने धर्मस्वामी नामक देवता, कल्याणवर्माने कल्याणस्वामी नामक विष्णुमूर्ति और मम्मने मम्मस्वामी नामक देवताको स्थापन किया। काश्मीरीय ८८ लौकिकाब्दको राजा बृहस्पतिका मृत्यु हुआ। बृहस्पतिके पीछे उनके मातुलोंने १२ वर्ष अक्षुण्ण प्रतापसे राज्य चलाया था। उनके पीछे उत्पलसे मम्मका विषम युद्ध हुआ। उस भयानक युद्धमें वितस्ताका जलप्रवाह रुक गया था। कवि शङ्कुकने अपने "भुवनाभ्युदय" काव्यमें उक्त युद्धका विशेष विवरण लिखा है। युद्धमें मम्मके पुत्र यशोवर्माने जय पाकर अजितापीड़को राज्यच्युत और संग्रामापीड़के पुत्र अनङ्गापीड़को राज्यस्थ किया।

अनङ्गापीड़ राजा तो हुये, किन्तु उत्पलके मरने पर उनके पुत्र सुखवर्माने प्रतिशोध ले यशोवर्माको हराया और अनङ्गापीड़को राज्यच्युत कर अजितापीड़के पुत्र उत्पलापीड़को राज्यका अधिपति बनाया।

उत्पलापीड़के राजत्वकाल सान्धिविग्रहिक रत्नने पवित्र अश्मार्णी श्रीरत्नस्वामी नामक देवताको स्थापन किया और विसमाग नामक स्थानके जालन्धर, लोग और दार्वाभिसारके विषयपति राजाओंकी भांति स्वाधीन बन गये।

उसी समयमें कायस्थ दुर्लभवर्धनका वंश लोप होने लगा। सुखवर्मा जिस समय सिंहासन पर बैठनेका आयोजन करते थे, उसी समय उनके बन्धु गुप्तने उन्हें मार डाला। शूर नामक प्रधान मन्त्रीने काश्मीरीय ११ लौकिकाब्दको उत्पलापीड़को राज्यच्युत कर

* पद्मपुरका वर्तमान नाम पाम्पुर है। वह राजधानी श्रीनगरसे ३ कोस उत्तर पूर्व वितस्ता नदीके दक्षिण ओर अवस्थित है।

नामानुसार गोपालपुर नामक नगर, गोपालमठ नामक मठ और गोपालकेशव देवताको स्थापन किया। फिर महिषी सुगन्धाके एक सन्तान हुआ। किन्तु भूमिष्ठ होते ही वह मर गया। सुगन्धाने एकाङ्गोंकी सहायता से दो वर्ष तक राज्य किया था। एकाङ्गजातीय सेना-पति और तन्त्री जातीय सभी रहे। सुगन्धाने मन बद-ला कर किसी उपयुक्त व्यक्तिके हाथ राज्यभार सौंपने के लिये तन्त्रियोंको आत्मनिर्वाचनार्थ आदेश दिया था। पीछे पार्थिववर्माका वंश लोप होनेसे वर्गोंमें जात शूरवर्माके पुत्र निर्जितवर्माको रानी सुगन्धाने मनोनीत किया। निर्जितवर्मा दिनको सोते और रात को जागते थे। तंत्रियोंने इसीसे उनका पक्ष न लिया। कोपाकुल प्रभाकरके दुर्व्यवहारसे भी राजकर्मचारी विरक्त एवं पीड़ित रहे, इनने उस समय सुयोग देख रानी सुगन्धाको राज्यसे निकाल बाहर किया। वह हुष्कपुरमें जा कर रहने लगीं। किन्तु एकाङ्ग कुछ दिनके पीछे ही उन्हें फिर राज्य देनेके लिये बुलाने गये थे। काश्मीरीय ८४ लौकिक अब्दको उक्त घटना हुई। तन्त्रियोंने सुगन्धाके आगमनकी वार्ता सुन निर्जितवर्माके दशम वर्षीय पुत्र पार्थको राजा बनाने के अभिप्रायसे पतिमन्त्र रानी सुगन्धाके सैन्यदलको हरा किसी पुरातन बौद्ध विहारमें ९० लौकि अब्दको रानीको मार डाला। फिर पार्थ राजा हुए। अवश यथेच्छाचारी पिता उनके रक्षक बने थे। तंत्रियों के मध्य भी क्रमशः आत्मविच्छेद पड़ गया। अपरापर अधीन राजा स्वाधीन होने लगे। शेष नामक मंत्री-के कन्याओंने ज्येष्ठ महरवर्द्धनके अधीन रह सुगन्धा-दित्यके सहायता और भीतर ही भीतर राज्यके कोषा-गारको लूटा था। इन्होंने योगेशवर्धन नामक विष्णुकी मूर्तिका स्थापन किया।

इसके पीछे ९१ लौकिक अब्दको राज्यमें भीषण दुर्भिक्ष पड़ा था। एक तो अराजक राज्य और दूसरे दुर्भिक्ष। सुतरां राज्य सम्पूर्ण विशृङ्खल हो गया। तंत्री राज्यके मध्य सबके ऊपर रहे। वह निर्जितवर्मा और पार्थ उभयके मध्य अपनी सुविधाके अनुसार कभी इसको और कभी उसको सिंहासन पर बैठा कर राजत्व करने लगे। सुगन्धादित्य निर्जितवर्माकी पत्नियोंमें रानियोंका खेलते थे। वह सभी अपने अपने पुत्रको राजा बनानेके लिये सुगन्धादित्यको प्रचुर धन रत्न देने और अपना अपना देह बेचने लगीं। मंत्री मेरुके पुत्रोंने राज्यमें प्राधान्य लाभकी आशासे भगिनी मृगावतीके साथ निर्जितवर्माका विवाह कर दिया। किन्तु कमलावती भी अन्तःपुरमें पहुंच उपपत्नियों का पदानुसरण कर सुगन्धादित्यकी अधीन बन गयीं। ९७ लौकिक अब्दको निर्जितवर्माका मृत्यु हुआ। एकाङ्गोंने उस समय बल प्रकाश कर निर्जितवर्माकी बप्पटदेवीनाम्नी पत्नीके गर्भजात चक्रवर्माको राजा बना दिया। बप्पट राजाका रक्षणावेक्षण करने लगे। १० वर्ष इसी प्रकार बीते थे। ९८ लौकिक अब्दमें मंत्रियोंने चक्रवर्माको हटा मृगावतीके गर्भजात शूरवर्माको राज्य सौंपा। किन्तु उनके मातुल उनके अनुकूल न रहे। उनने अपहाय तंत्रियोंके मित्र और पार्थसे बहु अर्थ उत्कोच ले भागिनेयको राज्यच्युत कर पार्थको राजा बनाया। उस समय पार्थ मालवती नाम्नी किसी वेश्याको प्रणयिनी होनेसे सर्वदा अपने निकट रखते थे। उन्होंने मालवतीने मालवेश्वरी नामक देवीमूर्तिको प्रतिष्ठा किया। ११४ लौकिकाब्दको चक्रवर्माने उस समयकी रीतिके अनुसार तंत्रियोंको उत्कोच (घूस रिशवत) दे राज्य पाया था। किन्तु निर्दिष्ट धन उनसे मिलनेके पूर्व ही वह पथिक बनता दे डाली। इसीसे उनने अपने १ मास पर नाना स्थान अधिकार किये। उनके राजत्वमें मेरुवर्माके ज्येष्ठपुत्र महरवर्द्धन प्रधान माड़विवाद् और शम्भुवर्द्धन प्रधान मंत्री थे। उसी वर्ष तन्त्रियोंको प्रतिश्रुत उत्कोचका रुपया चुका न सकने पर चक्रवर्माने भयसे मड़र नामक स्थानको पलायन किया। उस समय मड़र वर्धनने राजा होनेकी आशासे शम्भुवर्द्धनको पदच्युत करनेके लिये तन्त्रियोंके निकट भेजा था। शम्भुने जाकर उन्हें आज्ञाकी बात न कह अपने ही लिये प्रबन्ध कर लिया। इधर चक्रवर्माने श्रीठक्क नामक डामरजातीय सरदार संग्रामसे मिल उन्हें सहायता करनेके लिये प्रतिश्रुत कराया था। संग्राममें

नामानुसार गोपालपुर नामक नगर, गोपालमठ नामक मठ और गोपालकेशव देवताको स्थापन किया। फिर सङ्कटके नन्दामें एक पुत्र उत्पन्न हुआ। किन्तु भूमिष्ठ होते ही वह मर गया। सुगन्धाने एकाङ्गोंकी सहायता से दो वर्ष तक राज्य किया था। एकाङ्गजातीय सेनापति और तन्त्री जातीय मन्त्री रहे। सुगन्धाने मन कष्ट पा कर किसी उपयुक्त व्यक्तिके हाथ राज्यभार छोड़नेके लिये मन्त्रियोंको पात्रनिर्वाचनार्थ आदेश दिया था। पीछे पार्थिववर्माका वंश लोप होनेसे सर्वोसम्मत जात सुवर्माके पुत्र निर्जितवर्माको रानी सुगन्धाने मनोनीत किया। निर्जितवर्मा दिनको सोते और रातको जागते थे। तंत्रियोंने इसीसे उनका पक्ष न लिया। गोपालवर्म प्रभाकरके दुष्कर्मसे भी राजकर्मचारी विरक्त एवं पीड़ित रहे, उनने उस समय सुयोग देख रानी सुगन्धाको राज्यसे निकाल बाहर किया। वह हुष्कपुरमें जा कर रहने लगीं। किन्तु एकाङ्ग भक्त दिनके पीछे हो उन्हें फिर राज्य देनेके लिये बुलाने लगे थे। काश्मीरमें ९४ खोटिक अब्दको यह घटना हुई। तन्त्रियोंने सुगन्धाके आगमनकी वार्ता सुन निर्जितवर्माके दशम वर्षीय पुत्र पार्थको राजा बनानेके अभिप्रायसे पतिमध्य रानी सुगन्धाको सैन्यदलके साथ किसी पुरातन जनशून्य विहारमें ९० खोटिक अब्दको रानीको मार डाला। फिर पार्थ राजा हुए। पङ्गु अर्थात् खञ्जाकारी पिता उनके रक्षक बने थे। तंत्रियोंके मध्य भी क्रमशः आत्मविच्छेद पड़ गया। अपरापर अधीन राजा आधीन होने लगे। मेरु नामक मंत्रीके लड़कोंने ज्येष्ठ शङ्करवर्द्धनके अधीन रह सुगन्धा दिकसे अन्यता और भीतर ही भीतर राज्यके कोषागारको लूटा था। उन्होंने शङ्करवर्द्धन नामक विष्णुकी मूर्तिका स्थापन किया।

इसके पीछे ८१ खोटिक अब्दको राज्यमें भीषण दुर्भिक्ष पड़ा था। एक तो अराजक राज्य और दूसरे दुर्भिक्ष। सुतरां राज्य सम्पूर्ण विशृङ्खल हो गया। तंत्री राज्यके मध्य सबके ऊपर रहे। वह निर्जितवर्मा और पार्थ उभयके मध्य अपनी सुविधाके अनुसार कभी इसको और कभी उसको सिंहासन पर बैठा कर राजत्व करने लगे। सुगन्धादित्य निर्जितवर्माको पंक्तियोंमें राजवीका दिखते थे। वह सभी अपने अपने पुत्रको राजा बनानेके लिये सुगन्धादित्यको प्रचुर धन रत्न देने और अपना अपना देह बेचने लगीं। मंत्री मेरुके पुत्रोंने राज्यमें प्राधान्य लाभकी आशासे भगिनी मृगावतीके साथ निर्जितवर्माका विवाह कर दिया। किन्तु मृगावती भी अन्तःपुरमें पहुंच सपत्नियोंका पदानुसरण कर सुगन्धादित्यकी अधीन बन गयीं। ८० खोटिक अब्दको निर्जितवर्माका मृत्यु हुआ। एकाङ्गोंने उस समय बल प्रकाश कर निर्जितवर्माकी वप्पटदेवीनाम्नी पत्नीके गर्भजात चक्रवर्माको राजा बना दिया। बालक राजाका रक्षणाबेक्षण करने लगी। १० वर्ष इसी प्रकार बीते थे। ९म खोटिक अब्दमें तंत्रियोंने चक्रवर्माको छुड़ा मृगावतीके गर्भजात शूरवर्माको राज्य सौंपा। किन्तु उनसे भी मांगने उनके अनुकूल न रहे। उनके पश्चात् तंत्रियोंके मित्र और पार्थके बहु अर्थ उत्कोच दे मामिलेकको राज्यच्युत कर पार्थको राजा बनाया। उस समय पार्थ मात्रपतिके गायकी किसी वेश्याको प्रणयिनी होनेसे सर्वदा अपने निकट रखते थे। उन्होंने मात्रयतोने पार्थेश्वर नामक देवीमूर्तिको प्रतिष्ठा किया। ११य खोटिकाब्दको चक्रवर्माने उस समयकी रीतिके अनुसार तंत्रियोंको उत्कोच (घूस रिशवत) दे राज्य पाया था। किन्तु निर्दिष्ट धन उनसे मिलवर्माके पुत्रोंको अधिक जमा दे डाला। इसीसे उन्होंने अपने ६ मास पर नाना स्थान अधिकार किये। उनके राजत्वमें मेरुवर्माके ज्येष्ठपुत्र शङ्करवर्द्धन प्रधान माड़ विचार् और शम्भुवर्द्धन प्रधान मंत्री थे। दूसरे वर्ष तन्त्रियोंको प्रतिश्रुत उत्कोचका रुपया चुका न सकने पर चक्रवर्माने भयसे मद्र नामक स्थानको पलायन किया। उस समय मद्र देशमें राजा होनेको आशासे शम्भुवर्द्धनको प्रधानादि करनेके लिये तन्त्रियोंके निकट भेजा था। शम्भुने बाहर जा कर आज्ञाकी बात न कह अपने हो लिये प्रबन्ध कर लिया। इधर चक्रवर्माने श्रीदक्ष नामक डामरजातीय सरदार संग्रामसे मिल उन्हें सहायता करनेके लिये प्रतिश्रुत कराया था। संग्रामने

'वियोंका पद्मपुर नामक स्थान पर भीषण युद्धमें हरा चक्रवर्माको राज्य सौंपा। युद्धमें चक्रवर्माके हाथ शङ्करवर्मा मारे गये। फिर शम्भुवर्धन सैन्य संग्रह करने लगे। किन्तु एकाङ्गोंके युद्धमें योग देनेसे चक्रवर्मा अनायास सिंहासन पर बैठे थे। भूभट नामक किसी सेनानीने शम्भुवर्धनको पकड़ राजाके समक्ष काट डाला।

चक्रवर्माने राजा हो बहुत कुछ शान्ति स्थापन की थी। उसी समय रङ्ग नामक कोई विदेशी डोम्ब गायक तिलोत्तमा जैसी सुन्दरी हंसी और नागलता नाम्नी दो कन्या ले राजसभामें गाने गया। दोनों सुन्दरियोंके रूपमें मोहित हो राजाने उन्हें ग्रहण किया था। हंसी प्रधान राज्ञी हुईं। उसी सम्पर्कसे शिक्षित हो डोम्ब राज्यमें प्रधान बन गये। फिर डोम्बों के कारण राज्यमें भयानक अत्याचार होने लगा। चक्रवर्माने शेष लोगोंके लिये चक्रमठ प्रतिष्ठा किया था। उसका निर्माण शेष होते न होते अन्तःपुरमें १६ लौकिकाब्दको समय डामरोंने राजाको मार डाला।

उसके पीछे शर्वट और अन्यान्य मंत्रीने पार्थपुत्र उन्मत्तावन्तिको राजा बनाया था। वह अत्यन्त अत्याचारी रहे। उन्होंने पितामाता एवं शिशु भ्राता भगिनी आदिको कई दिन अनाहार रख नाना यंत्रणा प्रदानपूर्वक काट डाला। प्रभागुप्त, शर्वट, छोज, कुमुद चमृताकर और प्रभागुप्तके पुत्र देवगुप्त उन्मत्तावन्तिके प्रिय और समधर्मा मंत्री थे। रक्क नामक कोई अतिशय साहसी वीरपुरुष सेनापति रहे। उनने डामर सरदारके घरके पास पद्मवनमें रक्कश्रीदेवीको अधिष्ठित देख बिलकुल उसी आदर्श पर रक्कजाया नाम्नी देवीकी प्रतिष्ठा किया। काश्मीरीय १५श लौकिकाब्दको उन्मत्तावन्तिने पञ्चत्व पाया।

उसके पीछे राजान्तःपुरकी रमणियोंके चक्रान्तसे अज्ञातकुलशील कोई शिशु राजा हुवे। लोग उन्हें राजपुत्र शूरवर्मा कहते थे। कम्पनराज कमलवर्धन उस समय उच्छृङ्खल डामरोंको शासन कर मडव नामक स्थानमें रहते थे। उनने यह सुनते ही ससैन्य राजधानीको आक्रमण किया कि शिशुराज जयस्वामी-के दर्शनको गये थे। तंत्री, एकाङ्ग प्रभृति सकल सैन्य दैववश हार गया। उसके पीछे उनने ब्राह्मणोंको बुला उपयुक्त राजनिर्वाचनका आदेश दिया था। उनने सोचा कि वही राजा बनाये जायंगे। किन्तु ब्राह्मणों ने लोकनिर्वाचनमें प्रवृत्त हो देखा कि उत्पलका वंशीय कोई न था। विशाचकपुरके वीरदेव-पुत्र कामदेव मेरुवर्धनके घरमें शिक्षकता करते थे। उनके पुत्र प्रभाकर शङ्करवर्माके कोषाध्यक्ष रहे। उनने सुगन्धाके साथ तंत्रियोंके युद्धमें प्राणत्याग किया। प्रभाकरके पुत्र यशस्कर राज्यकी दुरवस्था देख स्वीय बन्धु फाल्गुनकके राज्यमें जा पहुंचे। वह किसी दिन स्वप्न देख स्वराज्यको लौटे थे। ब्राह्मणोंने उन्हें देखते ही राजपदमें वरण किया।

उत्पलके वंशमें स्त्रियों, मंत्रियों और अज्ञात-कुलशील बालकोंको छोड़ ८ राजा हुवे। काश्मीर राज्य उक्त वंशके हस्त ८४ वर्ष ४ मास रहा।

यशस्कर राजा हो कर सुख-शान्तिसे सुविचार-पूर्वक राजत्व करने लगे। उनमें भी एक दोष था। वह लल्ला नाम्नी किसी नीचजातीय भ्रष्टा रमणीको प्राणकी अपेक्षा भी अधिक चाहते थे। उन्होंने उसीको पत्नियों प्रधानमें बनाया। यशस्करसे स्वपुत्र संग्रामदेवको छोड़ दिया था। अवशेषको वह उदरपीडासे आक्रान्त हुवे और स्वीय पितृव्यपुत्र रामदेवके बेटे वर्णटको राज्यमें अभिषिक्त कर चल बसे। किन्तु वर्णटने पीड़ित पितृव्यका कोई संवाद न लिया और अपना समय नवराज्यके आमोदमें लगा दिया था। यशस्कर भ्रातृष्पुत्रके उस व्यवहारसे मर्माहत हुवे। उनने मृत्युकाल संग्रामदेवको राज्य दे स्वप्रतिष्ठित यशस्कार स्वामी नामक अर्धनिर्मित देवालयमें कालयापन किया था। उसी मन्दिरमें पर्वगुप्त प्रभृति कई लोगोंने धनरत्न दास दासी हरण कर उन्हें एकाकी छोड़ दिया। २४ लौकिकाब्दकी भाद्रकृष्णतृतीयाको राजा तीन दिन अचिकित्सा और असहाय रह मृत्युके मुखमें पड़े। महिषी त्रैलोक्यदेवीने सहगमन किया था।

उसके पीछे पर्वगुप्त, भूभट प्रभृतिने शिशु संग्रामको

राजा बन उनको पितामहीको अभिभाविका बनाया। (बेर पीछे रहनेसे क्रोध उन्हें संग्रामदेव कहते थे) अवसर पाकर पर्वगुप्तने इस राजमाता तथा अन्य पांच सहकारियोंका वध किया था। फिर वह राज्यके प्रधान बन बैठे, किन्तु राजा सिंह संग्राम ही रहे। एकाएकी भयसे सहसा वह उन्हें मार न सके थे। किसी दिन हस्तदत्तके साथ रातके समय राजधानी पर आक्रमण किया। राजभक्त मंत्री नागवर्धन निहत हो गये। पर्वगुप्त विलम्ब न कर उसी समय सिंहासन पर बैठे थे। दैवाधिक्त व्यक्तिने मन्त्रीको माथा पकड़ उन्हें भूमिपर निक्षेप किया। पर्वगुप्तने उठ किसी दूसरे स्थानमें जा संग्रामदेवको मार डाला।

२४ लौकिकाब्दके फाल्गुन मासकी कृष्णदशमीको पर्वगुप्त राजा हुये। वह वियोकपर्णके पार्श्ववर्ती अग्रहार दिविर अभिनवके पौत्र संग्रामगुप्तके पुत्र थे। पर्वगुप्तने स्कन्द मन्दिरके निकट पर्वगुप्तेश्वर नामसे देवताको प्रतिष्ठा किया। फिर यशस्करको किसी पत्नीके रूपमें मुग्ध हो उन्होंने यशस्कर स्वामीका मन्दिर सम्पूर्ण करा दिया। मन्दिर शेष होने पर राजमहिषी पापोंके हाथमें न आनेसे व्याकुलिता पड़ीं। पर्वगुप्त भी जलोदर रोगसे पीड़ित हो सुरेश्वरीके मन्दिरमें २५ लौकिकाब्दके भाद्रमासकी कृष्णत्रयोदशीको मर गये।

पर्वगुप्तके पीछे उनके पुत्र क्षेमगुप्तको राज्य मिला। वह भी अतिशय दुराचारी और सामान्य अत्याचारी थे। खश और विम्ब डामरादि उन्हें सर्वदा पापमें प्रवृत्त देते थे। द्यूतक्रीड़ा, रमणी और मद्य को कभी छोड़ते न थे। उसी समय यशस्करके मंत्री फाल्गुनमहने फाल्गुनस्वामी नामक देवताको प्रतिष्ठा किया। कम्पनराज इस वर्ष फिर डामर सरदारको मार डालनेके लिये जयेन्द्रविहारमें अग्नि लगाया था। डामर सरदार उसमें छिपे थे। राजने जलनेसे उस विहारके बुद्धमूर्तिको निकाल लिया और उसके प्रस्तरादिसे अपने पार्श्व राजाके नामसे क्षेमगौरीश्वर देवताको प्रतिष्ठित किया। लोहरदुर्गके शासनकर्ता सिंहराजकी कन्या दिद्दाको क्षेमगुप्तके साथ ब्याहा था। दिद्दाके मातामह भाही थे। उन्होंने क्षेमगुप्तके नामसे भीमकेशव देवताको प्रतिष्ठा किया। द्वारपति फाल्गुनकन्या चन्द्रलेखा क्षेमगुप्तकी दूसरी महिषी थीं।

क्षेमगुप्त मृगयाप्रिय थे। वह शिकारके लिये डामरोदरवन, ... और विभिन्न पर्वत स्थानमें सर्वदा घूमा करते थे। उल्कामुखी-मृगयामें उनको बड़ा आमोद मिलता था। ३४ लौकिकाब्दके पौषमासकी कृष्णचतुर्दशीको रात्रिके समय वह शिकार करने गये थे। वहां किसी उल्कामुखीके मुखमें प्रज्वलित उल्का देख भयसे उनको लूतामय ज्वर चढ़ा और उसी ज्वरमें उनका प्राण छूटा। वह हुष्कपुरके निकट वराहमन्दिरमें रहने लगे थे। उस स्थानमें उन्होंने क्षेममठ और [illegible] नामसे २ मन्दिर बनाये। फिर उसी मासके शुक्लपक्षको उनका मृत्यु हुआ। उन्होंने ८ वत्सर राजत्व किया था।

क्षेमगुप्तके पीछे उनके शिशुपुत्र द्वितीय अभिमन्यु महिषी दिद्दाके तत्त्वावधानमें राजा हुये। उसी समय तरुणमार बाजारके निकट भयानक अग्निदाह आरम्भ होनेपर वर्धनस्वामीके मन्दिरसे भिक्षुकीके पार्श्वपर्यन्त समस्त स्थान जल गया। क्षेमगुप्तके मरनेपर अन्यान्य रानी उनके साथ मर मिटीं। केवल दिद्दा नरवाहनके अनुरोध और रानीके पदसे वञ्चिता न हुयीं। वह अत्यनुचितमती रहीं। उन्होंने राजाको अन्यदेशिका भिन्न होते न होते फाल्गुनादि मंत्रियोंने विद्रोहिता करनेकी चेष्टा लगायी। किन्तु शीघ्र ही विद्रोह आप ही बन्द हो गया। फाल्गुन राजधानी छोड़ पर्णोत्स नामक स्थानमें जा रहे। पर्वगुप्तने राजा होते समय भूमट और शोभ नामक मंत्रीको के साथ अपनी दो कन्याओंका विवाह कर दिया था। उनके महिमा और पाटल नामक २ पुत्र हुये। उस समय उन्होंने भी राज्यलोभसे हिमकादि मंत्रियोंके साथ योगदान किया था। महिषी दिद्दाने यह बात सुन उनको राजप्रासादसे निकाल दिया। महिमाने क्रोध खाकर शक्तिसेनका आश्रय लिया था। परिहासपुरके विमल सुक्ख एवं पराक्रम और ललितादित्यपुरके यशस्करके पुत्र उदयगुप्त तथा

यशोधर उनमें जा मिले। एकमात्र मंत्री नरवाहन महिषी दिद्दाके पक्षमें रहे। महिषीने शेषको ललितादित्यपुरके ब्राह्मणोंके साहाय्यसे सन्धिकर और यशोधरका कम्पन प्रदेश दे आशुविपद्से मुक्ति पायी थी। अवशेषको महिमा अभिचारक्रियासे मारे गये। उसके पीछे कम्पनराज यशोधरसे साहीराज थक्कनका युद्ध हुवा। रक्कादिके परामर्शसे दिद्दाने दोष विवेचना पूर्वक यशोधरको कम्पनसे निकालना चाहा था। इरामत्त, शुभधर प्रभृतिने पूर्व सन्धिको कथा स्मरण कर ससैन्य शूरमठके निकट राजसैन्यपर आक्रमण किया। सिंहद्वारपर एकाङ्ग सैन्यदल दुर्भेद्य प्राचीरकी भांति खड़ा हो लड़ने लगा, किन्तु पराजित होते होते राजकुलभट्टके ससैन्य युद्धमें पहुंच योग देनेसे राजसैन्य जीत गया। युद्धमें हिम्मक मरे और शुभधर, मुकुल, उदयगुप्त तथा यशोधर बन्दी हुवे। इरामत्तने गयायात्री काश्मीरीयोंसे गयाली जो कर लेते थे उसे निवारण किया। रानीने उनको गलेसे पत्थर बांध वितस्तामें डुबा दिया। अवशेषको वह मंत्री नरवाहन के परामर्शसे निरापद राजशासन करने लगे। नरवाहन राजानक पद पर अधिष्ठित हुवे। रानी नरवाहनको सम्पूर्ण हिताकाङ्क्षी समझ सर्वापेक्षा आदर करती थीं। किसी धूर्त कोषाध्यक्षने उसे सह न सकने पर कौशलसे उभयके मध्य मनोमालिन्य बढ़ा दिया। क्रमशः दिन दिन महिषी नरवाहनको प्राकाश्य रूपसे अपमान और घृणा करने लगीं। नरवाहनने शेषको घबड़ा कर आत्महत्या कर डाली। उसी समयसे रानी की निष्ठुरता बढ़ी थी। वह डामर मरटारको सपरिवार मार डालने पर प्रवृत्त हुयीं। मंत्री फाल्गुनको फिर कार्यभार मिला था। इधर कार्तिक मासकी शुक्ल तृतीयाको (४८ लौकिकाब्दे) महाराज अभिमन्युने यक्ष्मारोगसे परलोक गमन किया।

उसके पीछे दिद्दाके अधीन उनके शिशु पौत्र (अभिमन्युके पुत्र) नन्दिगुप्त राजा हुवे। उसबार पुत्रशोकसे रानी चेती थीं। वह फिर प्रजाके हितकर कार्यमें रत हुयीं। उन्होंने अभिमन्युपुर नगर, अभिमन्युस्वामी देवता, अपने नामसे दिद्दापुर नगर और दिद्दास्वामी देवताको स्थापन किया था। उसके बाद दिद्दाने स्वामीकी स्वर्गकामनासे कङ्कणपुर नगर और "दिद्दास्वामी" नामक श्वेतप्रस्तरको विष्णुमूर्तिको प्रतिष्ठा की। उन्होंने लोहरवासियों और काश्मीरियोंके सुविधार्थ एक पान्थनिवास और सिंहनामसे एक ब्राह्मणावास एवं सिंहस्वामी नामक देवताको स्थापन किया। वितस्ता और सिन्धुके सङ्गमस्थल पर दिद्दाने दूसरे भी कई देवता स्थापन किये थे। उन्होंने सब मिलाकर ६४ देवमूर्ति स्थापन की थीं। उनको वल्ला नाम्नी वैवधिकजातीय किसी दासीने वल्लामठ नामक मठ स्थापन किया। एक वर्ष पीछे रानी दिद्दाका शोक दूर हुवा। वह फिर कुकर्ममें लग गयीं। उस बार उनने अग्रहायण मास (४९ लौकिकाब्द) अभिचारक्रियाके साहाय्यसे अपने शिशुपौत्र नन्दिगुप्तको मार उसके सहोदर त्रिभुवनगुप्तको राजा बनाया था। किन्तु २ वर्ष पीछे अग्रहायण मास को दिद्दाने उनको भी मार डाला। त्रिभुवनगुप्तके पीछे उनके दूसरे सहोदर भीमगुप्त राजा हुवे। किन्तु वह भी रानसी पितामहीके हाथ (५६ लौकिकाब्दको) मारे गये। उसी बीच मंत्रिवर फाल्गुन भी विनष्ट हुवे।

भीमगुप्तके बाद दिद्दा प्रकाश्य रूपसे सिंहासन पर बैठ गयीं। उनकी कुप्रवृत्तिके साधनमें सम्मत न होनेसे अनेक व्यक्ति विनष्ट हुवे। शेषको उनके प्रिय उपपति तुङ्ग मंत्री बने थे। तुङ्ग स्वीय भ्रातृपञ्चकसे मिल राज्य हरणकी चेष्टामें घूमने लगे। रानी दिद्दाके भ्रातुष्पुत्र विग्रहराज तुङ्गको मार डालना चाहते थे। दिद्दाने वह बात समझ अर्थबलसे विग्रहराजको देशसे निकाला, कर्दमराजको मारा और तुङ्गके इच्छानुसार रक्कके पुत्र सुलक्षणादि मंत्रियोंको भी राजसभासे दूरीभूत किया। मंत्री फाल्गुनके मरनेपर राजपुरीराजविद्रोही हो गये। तुङ्गने उनको भी जीत 'राजपुरीराज' और डामरराज्य तथा कम्पन जयकर 'कम्पनराज' उपाधि ग्रहण किया था। उसके बाद दिद्दाने स्वीय भ्राता उदयराजके पुत्र संग्रामराजको युवराज बनाया। शेषको (७९ अब्द) भाद्रकी शुक्लाष्टमीके दिन दिद्दा मर गयीं।

इसप्रकार अष्टवर्षको इस बाक्रियों ने राजा बन १४ वर्ष और २१ दिन राज्य किया।

संग्रामराज क्षमापतिके नामसे सिंहासन पर बैठे थे। वह गम्भीर और प्रतापशाली राजा थे। उनके समय भी तुरुष्क महाप्रतापशाली थे। तुरुष्क राज्यके अमात्यप्रधान प्रधान मंत्री और कर्त्ताधर्त्ता तुङ्गका प्रताप खर्व करनेके लिये विद्रोही हो गये किन्तु विद्रोहियोंमें अनेक व्यक्ति निहत हुये। तुङ्ग सैन्यको भद्रेश्वर नामक किसी कायस्थका साहाय्य ले विपद्में पड़े थे। उसी समय तुरुष्कराज हमीरने शाही राज्य आक्रमण किया। त्रिलोचनपाल शाहीने काश्मीरराजसे साहाय्य मांगा था। तुङ्ग ससैन्य शाही राज्य आ पहुंचे। तुङ्गने विपक्ष पराजितको भगा था। किन्तु तुङ्गने त्रिलोचनके कथनानुसार पर्वतप्रान्तमें शिविर स्थापन न किया। इसीसे सूतन तुरुष्कसैन्यने आ पर्वतप्रान्तसे काश्मीरी सैन्यको छिन्न भिन्न कर दिया। तुङ्ग भाग कर राजाके लौटे थे। त्रिलोचनने उच्छिन्न नामक स्थानमें आश्रय लिया। शाही राज्य चिरदिनके लिये हमीरके अधिकारमें चला गया। तुङ्गके पुत्र कन्दर्पसिंह गर्वित और विलासी थे। उसी समय विग्रहराज गोपनीय पत्र द्वारा तुङ्गवधके लिये भ्राताको पुनः २ अनुरोध करने लगे। राजा क्षमापति किन्तु हठात् वह कार्य कर न सके। अवशेषमें दबाव पड़नेसे किसी दिन मन्त्रणा का परामर्श करनेके बहाने उन्होंने सभामण्डपमें तुङ्गको बुलाया था। उसमें प्रवेश करते ही गर्जक और अन्यान्य अनुचर तुङ्गपर टूट पड़े। तुङ्गके निकट होने पर उनके पुत्र भी पकड़ कर मार डाले गये। इस घटनाके पीछे तुङ्गके भ्राता नाग कम्पनराज बने थे। कन्दर्पको नागके साथ अत्याचारमें रत हुये। सिंहिमसिंह और आदसिंह नामक कन्दर्पके दो पुत्रोंने भी माताके साथ राजपुरीको पलायन किया था। तुङ्गके मरनेके पीछे दरद, डामर और दिविर विद्रोही हो गये। क्षमापतिने सर्व कोई प्रासाद वा मन्दिरादि बनाया न था। उनकी कन्या लोठिकाने एक अपनी और एक माता तिलोत्तमाके नामसे मन्दिर प्रतिष्ठा किया। भद्रेश्वरने भी एक मठ बनाया था। श्रीलेखा नाम्नी महिषी जयाकर नामक (सुगन्धिसिंहके औरस और जयलक्ष्मीके गर्भसे उत्पन्न) तुङ्गके किसी भ्रातुष्पुत्रके साथ आसक्त हो गयीं। ४ लौकिकाब्दको १ को आषाढ़को राजा क्षमापतिने परलोक गमन किया।

क्षमापतिके पीछे उनके पुत्र श्रीलेखाके गर्भजात हरिराज राजा हुये। वह अति सुशील प्रजारञ्जक राजा थे। हरिराज २२ दिन मात्र राजत्व कर अकाल मृत्युके कालके गालमें पड़े। कहते हैं कि श्रीलेखा पुत्रके निकट अपने आचारके लिये तिरस्कृत हुयी थी। इसीसे अभिचारद्वारा उन्होंने उनको मार डाला।

उनके पीछे श्रीलेखाने स्वयं राजत्व करनेको अभिलाषसे आयोजन लगाया था। उसी समय हरिराजके धात्रीपुत्र सागरने एकाङ्गोंसे मिल हरिराजके कनिष्ठ अनन्तदेवको राजा बना दिया। इस विग्रहराज निज भ्रातुष्पुत्रका राज्य हरण करनेके लिये लोहरसे द्रुत सैन्य ले काश्मीरमें प्रवेश कर लोठिकामन्दिरमें रहने लगे। श्रीलेखाने संवाद पानेपर एक दल सैन्य भेज मठमें विद्रोहियों का विनाश किया था। उसके पीछे वय प्राप्त होनेसे अनन्तदेवके शाहीराजपुत्र मित्र पात्र बन गये। ज्येष्ठ रुद्रपाल रम्युदय तथा कायक गणको प्रतिपालन करते और राजाको आपातसुखकर मन्त्रणा देते थे। उन्होंने जालन्धरराज इन्दुचन्द्रकी अतिरूपवती ज्येष्ठा कन्या आशामतीके साथ अपना और उसकी कनिष्ठा सूर्यमतीके साथ अनन्तदेवका विवाह किया। श्रीलेखाने उसी समय अपने स्वामी और पुत्र (हरिराज) को अपकालमृतके दो मन्दिर बनाये थे। कम्पनराज त्रिभुवन डामरोंसे मिल विद्रोही हुये। फिर उन्होंने काश्मीर आक्रमण किया। एकाङ्गोंके साहाय्यसे अनन्तदेवने वह विद्रोह दबाया और त्रिभुवनको भगाया था। उसके पीछे अनन्तदेवने क्षेम सिंहपाल महाराजको कोषाध्यक्ष बनाया। किन्तु उन्होंने रुद्रपालकी प्रतिपत्ति देख हिंसासे पदत्याग-पूर्वक पांच लोहरराज, दरद और डामर लोगोंसे मिल दरदराजके सेनापतित्वमें काश्मीर आक्रमण किया था। रुद्रपाल और अनन्तदेव एकाङ्ग सैन्य ले वीरदर्प

नामक स्थानपर युद्धार्थ उपस्थित हुवे। दूसरे दिन प्रातःकाल युद्धारम्भ होना ठहर गया। इसी बीच दरद-राजने क्रीडापिण्डारक नामक नागके आश्रयमें उत्पात मचाया था। इसीसे नागोंने समझा कि युद्ध आरम्भ हो गया। फिर नाग भी आ पहुंचे थे। शेषको वास्तविक काश्मीरके सैन्यसे युद्ध होने लगा। युद्धमें म्लेच्छराज और दरदराज मारे गये। रुद्रपालने मुकुट-मण्डित दरदराजका मस्तक अनन्तदेवको उपहार दिया था। उदयनवत्स नामक दरदराजके भ्राताने फिर अभिचारक्रियाके साहाय्यसे रुद्रपाल और उनके भ्राताओंको विनष्ट किया। इसके पीछे रानी सूर्यमती या सुभटाने वितस्तातीर सुभटामठ नामक शिवमन्दिर बनाया। उसी मन्दिरके निकट रानीने अपने कनिष्ठ सहोदर भागाचन्द्र या कल्लनके नामसे एक ग्राम भी स्थापन किया था। एतद्भिन्न उन्होंने स्वामीके नामसे अमरेश्वर, ज्येष्ठभ्राता सिल्लनके नामसे विजयेश्वर और त्रिशूल, बाणलिङ्ग प्रभृति शिव एवं मन्दिरकी प्रतिष्ठा की। कुछदिन पीछे उनके गर्भजात शिशुसन्तान राज-राजका मृत्यु हुवा। फिर राजा और रानी दोनों राजभवन छोड़ सदाशिव-मन्दिरके निकट रहने लगे। इसी समयसे चिर दिनके लिये काश्मीरका पुरातन राजप्रासाद परित्यक्त हुवा। कारण तत्परवर्ती राजा भी उक्त मन्दिरके निकट ही जाकर रहे थे। उसी समय डक्क नामक एक दैशिक भांड़ने राजाका बड़ा प्रियपात्र होनेसे यथेष्ट धनरत्न लाभ किया। यहांतक कि उससे राजकोष शून्य प्रायः हो गया। रानी सूर्यमतीने यह बात देख राजकोषको अपने हाथमें ले अपरिमित व्यय निवारण किया था। त्रिगर्तदेशीय केशव ब्राह्मण उस समय प्रधान मन्त्री रहे। गौरीश-विद्यालय नामक स्थानमें भूति नामक एक वैश्य थे। उनके तीन पुत्र रहे—हलधर, वज्र और वराह। हलधर रानी सूर्यमतीके अनुग्रहसे प्रधान मन्त्री बन गये। उन्होंने मन्त्री हो राज्यमें अनेक शुभ अनुष्ठान किये। हलधरने वितस्ता और सिन्धुके सङ्गम-स्थल पर एक स्वर्ण-मन्दिर भी निर्माण कराया था। उनके कनिष्ठ भ्राता वराहके पुत्र बिम्ब अतिशय वीर थे। उन्होंने डामरों और खशोंको वशीभूत किया, किन्तु खशयुद्धमें अपना प्राण दे दिया। कुछ दिन पीछे लोगोंके कहनेसे अनन्तदेवने अपने सिंहासन छोड़ स्वपुत्र कलश या द्वितीय रणादित्यको राजा बनाया। मन्त्री हलधरने उस प्रस्तावमें बाधा डाली थी, किन्तु राजाने उनकी न सुनी। शेषमें उद्धत युवा रणादित्य पिताको और उनकी स्त्री रानी सूर्यमतीकी मर्यादा भी अग्राह्य करने लगे। रणादित्य अधीन राजाओंसे जैसा सम्मान पाते, पिताको भी वैसा ही करनेका आदेश सुनाते थे। उस समय राजा और रानी उभयको चैतन्य हुवा। हलधरने कौशलपूर्वक फिर राज्य-भार वृद्ध राजाको सौंपा था। कलश रणादित्य नाम-मात्रको राजा रह गये। उसी समय त्रिगर्तराजके पुत्र क्षितिराजने राजा अनन्तके निकट जाकर कहा था—"हमारे निजपुत्र भुवनराज और पौत्र भीमने हमें राज्यसे निकाल दिया है। विषयराज जिन ब्राह्मणोंका समादर करते थे, उन्होंने उनके नामसे कुक्कुर पाल उनके गलेमें यज्ञोपवीत डाला है। अतएव हम उनका मुख न देखेंगे। हम आपके सिद्ध पौत्रको अपने राज्यका उत्तराधिकारी बनाते हैं। आप इस राज्यका भार ग्रहण कीजिये।" यह कथा कह क्षिति-राजने चक्रधरमें रह विष्णुसेवामें जीवनयापन किया। राजा अनन्तने तन्वङ्गराज नामक अपने विदग्धपुत्रको क्षितिराजके राज्यमें पौत्रके पक्ष पर शासनकर्ता बनाया। उसी समय जिन्दुराज नामक किसी व्यक्तिने उच्छृङ्खल डामर और दरद लोगोंको दमन किया था। राजाने उसे कम्पनराज्यका राजा बना दिया। उसके बाद हलधर मर गये। उन्होंने मरते समय कहा था—"महा-राज! कम्पनापति जिन्दुराज और कोषाध्यक्ष नागके पुत्र जयानन्दसे सावधान रहियेगा। हठात् परराज्यपर आक्रमण करना भी अच्छा नहीं।" उक्त परामर्शके अनुसार अनन्तने सुविधा देख जिन्दुराजको कारावद्ध किया। काल पाकर जयानन्द और शाहीराजपुत्र विज्ञापित्यराज तथा आज नाममात्र राजा रणादित्य-को केवल कुपथमें लगाने लगे। उसी समय उनके देवो-पम गुरु अमरकण्ठके मर जानेसे उनके हतभाग्य पुत्र

प्रमोदकण्ठ गुरु हुये। मंत्री वकवर्त्ते एक कुन्तल पुत्र कमल निपुरोंके शिरोमणि थे। वह बलपूर्वक प्रजाकी रमणियोंको पकड़के अपने दलमें पकड़ ही लाते थे। इसी प्रकार उक्त दोनों पापियोंका साथ पाकर रणादित्य प्रमाराशि नरकके पथ पर अग्रसर हुये। उन्होंने भी गुरु प्रमोदकण्ठकी भांति प्रायः अपनी कन्या और कन्या नामाका सतीत्व हरण किया था। इस राजा और रानीने यह संवाद सुन कपाल पर करावात कर राज्य परित्यागपूर्वक निर्जनमें रहने लगी। क्रमशः प्रजाको स्त्रीपुरुषके साथ घरमें रहना असम्भव हो गया। किसी दिन रणादित्य सिन्धुराजका पुत्रकपुर नामक ग्राम को रात्रिके समय उसके घरमें घुस गये। शेषको वस्त्र को दे शाप प्रकाशित हो मृत्युघाट पकड़ाई अपना परिचय दे वह भाग गये थे। हरराज अनन्तदेव उस समय पुत्रको ले राज्य परमधाम उपस्थित देख ११ लौकिकाब्दको विजयेश नामक स्थानमें देवसेवामें कालयापन करने लगे। तत्पुत्रराज सूर्यवर्मा और कामरराज औरसे उनका अनुगमन किया। उसके बाद रणादित्य स्वाधीन हो गये। फिर उन्होंने सिन्धु राजको स्वाधीनता दे विजयेश पर वृद्ध पिताके पास भेजा था। रानी सूर्यमतीने पुत्रकी दुर्बुद्धि की भर्त्सना किया। माध्यस्थ्यमसे रणादित्य उस मार्गसे निरस्त हुये किन्तु उनके दुर्व्यवहार न गये। अनन्तदेव को वृद्धराज अनन्तदेवने पीड़ित करा और अनुरागके वर्धन कालमें उत्तेजित हो पुत्रके रास्ते राज्यभार निकालनेका आयोजन लगाया था। उधर रानी सूर्यमतीने बीच बीच अर्थको बुला भेजा। अर्थने जाकर पितामह पितामहीके चरणमें प्रणिपात किया। इस संवाद पा कलश और रणादित्य भीत हुये। उनने पिता माताके निकट दूत भेज कुछ पश्चिम भूमि प्रार्थना की थी। रानीके अनुरोधसे वृद्ध अनन्त राज्यको लौटे किन्तु दो मास राज्यमें रह उन्होंने देखा कि गुणवर पुत्र उन्हें कभी चलायेंगे। वह अभिमान राज्य छोड़ विजयेश्वर मन्दिरमें रहने लगी। रणादित्यने रात्रिकाल अग्नि लगा वह देवालय जला डाला। अग्निदाहमें वृद्धराज रानी और अनुचरवर्गके परिरक्षित धन मात्र व्यतीत सब कुछ जल गया। रानी अग्निमें जलने जाती थीं। किन्तु तत्कालके पुत्रोंने उन्हें निवारण किया। शेषको वृद्ध राजा और रानी दोनो अनुचरोंके साथ अनावृत देह नदी पार हो विजयेश और चल दिये। उन्होंने एक अग्निमयशिख तक्षराजके हाथ वैसे सुन्दर नया स्तूप संपाद किया। और वनमें कुटीर बना अपना डेरा डाल दिया। देवमन्दिरको जल जानेपर महाराजने फिर बनवाना चाहा था। किन्तु रणादित्यने लिपिकार भेजा और उन्हें अर्णोक्ष नामक स्थान चलेजानेको कहा। रानी सूर्यमतीने भी स्वामीसे वही करनेको अनुरोध किया था। किन्तु हरराज हरकाकके देवस्थान छोड़नेसे कातर हुये। इसी बात पर स्त्रीपुरुषमें कलह पड़ गया। हरराजने क्रोधसे कलंक बातसे और क्रोधमय द्यूतारोहणकी भांति शोणमें अपने तलवार भोक दी। उसके उस को धारा बही थी। राजाने कहा कि उन्हें रक्तातिसार हुआ था। बाहरी लोगोंने उसीपर विश्वास किया। शेषको विजयेश्वरके सम्मुख काश्मीरीय ५७ लौकिकाब्दमें कार्तिकी पूर्णिमाके दिन महाराज अनन्तदेवने इहलोक छोड़ दिया। रानीने चितारोहणका उद्योग लगाया था। कलश संवाद मिलने पर अवश्य जाकर उपस्थित हुये। किन्तु कई अनुचरोंकी मिथ्या प्रलोभनामें माताके न मिले। रानी उन्हीं अनुचरोंको शाप दे चिता पर चढ़ गयीं।

पितामहीका अनादर मिलनेसे अर्थने पिताके विवाद जमाया था। रणादित्यका कलश उस समय निर्जन रहे। फलतः अकस्मात् पुत्रको वह शीघ्रमर्थ अपने वशमें लाये। विधाताकी महिमा मानवसे भरी है। उसी समयसे महाराज अर्थने सत्पथ अवलम्बन किया, किन्तु पापाचारको वह अपना स्वभाव छोड़ न सके थे। उन्होंने क्रमशः त्रिपुरेश्वरका अयमन्दिर बनाया और कलशेश्वर एवं अनन्तेश्वर नामक देवताको स्थापन किया। वह तुरुष्कदेशीय कई युवती क्रय कर लाये थे। इस अवस्थामें भी उनके ७० रानियों रहीं। जिन विजयेश्वर मन्दिरको उन्होंने जलाया, उसे फिर न बनवाया था। किन्तु देवमूर्तिके ऊपर आवरण चढाया गया।

उसके पीछे राजपुरीके राजा सङ्गपाल मर गये। उनके पुत्र संग्रामपाल राजा बने थे। किन्तु उनके पितृव्य मदनपालने राज्य आक्रमण करनेकी चेष्टा लगायी। संग्रामने स्वीय कनिष्ठा भगिनी और यश-राजको काश्मीर भेज साहाय्य मांगा था। जयानन्द हठात् मर गये। मृत्यु काल जयानन्दने बिज्जुके सम्बन्धमें राजाको सतर्क किया था। राजाने बिज्जुको धनी और क्षमताशाली देख कुछ न कहा। बिज्जु राजाके मनोभङ्गका कारण देख सतर्क होनेके लिये विदेशको चलते हुवे, किन्तु अल्प दिनके ही मध्य मर गये। जयानन्दके मरने पर जिन्दुराज भी चलते बने। उसी प्रकार सती सूर्यमतीका शाप फला था। जयानन्दके पीछे उनके वंशीय वामन प्रधान मन्त्री हुवे। राजा कलसने उस समय अवन्तिस्वामी देवताके कई देवोत्तर ग्राम छीन कलसगंज नामक धनागार स्थापन किया था। उसके पीछे मदनपालने द्वितीय वार राजपुरीमें विद्रोह उपस्थित किया। काश्मीरराजने वप्पट नामक सेनापतिसे उन्हें पकड़ मंगाया था। उसी समय वाराहदेवके भ्राता कन्दर्प द्वारपति हुवे और मदनपाल कम्पनापति बने। फिर राजा कलसने नील पुर-नरेश्वर कीर्तिराजकी कन्या भुवनमतीसे विवाह किया था। ६३ लौकिकाब्दको वव्वपुरके राजा कीर्ति, चम्पाके राजा आसट, वल्लापुरके राजा कलस, राजपुरीके राजा संग्राम, लोहरराज उत्कर्ष, उरशाराज सङ्गट, कान्दके राजा गम्भीरसिंह और काष्ठवाटके राजा उत्तमराज काश्मीरमें जा उपस्थित हुवे। कन्दर्पने उसके पीछे स्थापिक नामक दुर्ग जीता था। राजा कलस नृत्यगीतके बड़े मस्त रहे। उन्होंने जयवनके निकट तीन पंक्ति देवमन्दिर और कलसपुर नामक नगरको स्थापन किया था। उसी समय युवराज हर्षने नाना देशकी भाषा और सर्वशास्त्रकी शिक्षा पायी। वह महापण्डित और कवित्वसम्पन्न होनेसे सबके अत्यन्त प्रियपात्र बन गये। वह बड़े दानशील रहे। धर्म और विज्जावट्ट नामक दो मन्त्रियोंने अनेक दिन चेष्टा करने पर उक्त हर्षको भी पिताके विरुद्ध उत्तेजित किया था। उन्होंने विज्जावट्टके परामर्शानुसार किसी दिन पिताको विनाश करनेके अभिप्रायसे अपने आलयमें बुलाया। शेषको विज्जवट्टने ही राजा कलससे सब भेद बताया था। युवराज उक्त वृत्तान्त सुन उस दिन पिताके पास न गये। उसके पीछे हर्ष भी नम्र पड़े थे। किन्तु उभय पक्षके दूतोंकी गड़बड़में सदाशिव एवं सूर्यमती गौरीश-मन्दिरके निकट ६४ लौकिकाब्दकी पौष मासकी शुक्ल षष्ठीके दिन पितापुत्रका एक युद्ध हो गया। युद्धमें हर्ष बन्दी हुवे। हर्षको बन्दी होते सुन रानी भुवनमतीने आत्महत्या की थी। हर्ष बंधे पड़े रहे। उनके प्रिय भ्राता प्रयाग साथ ही थे। तुक्ककी पौत्री सुगला हर्षकी एक पत्नी रहीं। उनके रूपमें वृद्ध राजा कलस मोहित हो गये। दुष्टा सुगलाने भी श्वशुरकी प्रेमार्थिनी हो स्वामीको मन्त्री नोनकके साहाय्यसे विष दिलवा दिया, किन्तु प्रयागने भेद भाव समझ हर्षको वह खिलाया न था।

पापीकी पापेच्छा न घटी। राजा कलसने फिर दुष्कार्य आरम्भ किया था। उन्होंने सूर्यदेवकी ताम्र-मूर्ति मन्दिरसे निकाल कर फेंक दी। सन्तानहीनका विषयादि राजाको प्राप्य मान वह अनेकोंके सन्तान मारने लगे। क्रमशः उनको भीषण प्रमेह रोग हुवा और नाकसे रक्त बह चला। उस समय पुत्रके हाथ राज्य दान करनेके लिये उन्होंने लोहरसे उत्कर्षको बुलाया था। शेषको मृत्यु काल समस्त धनरत्न वितरण कर मार्तण्डके सूर्यमन्दिरमें रहनेको वह चले गये। मरनेके समय उन्होंने हर्षको देखना चाहा था। किन्तु उत्कर्षके लोगोंने उन्हें जाने न दिया। वह बांधकर अलग रखे गये थे। उत्कर्षको बुलाकर कलसने कहा "दोनों भाई राज्य दो भागमें बांट लो" किन्तु समस्त कथा स्पष्ट कहते न कहते उनका वाक्य रुका था। ४८ वर्षके वयसमें ६५ लौकिकाब्दको अग्रहायण मासकी शुक्ल-षष्ठीके दिन महाराज कलसने पञ्चत्व पाया। मम्मनिका प्रभृति ६ रानी और जयामती नाम्नी कोई प्रेयसी सहमृता हुयीं।

उत्कर्ष राजसिंहासन पर बैठे थे। हर्ष बन्दी ही रहे। पद्मश्री नाम्नी रानीके गर्भजात विजयमल्ल प्रभृति भ्राताओंके साथ उसी समय उत्कर्षका मनोविवाद

उपस्थित हुआ। जिस दिन महाराज कलसने राज कार्यका त्याग किया उसी दिन उच्चलने लोगोंसे हर्ष देवको किसी स्वतन्त्र स्थानमें बांध दिया था। दूसरे दिन उन्होंने पिताके मरने और उच्चलके राजा बनने का संवाद सुना। पिताके मरनेसे उनका हृदय बहुत घबराया और अधीर हो उन्होंने रोना मचाया था। उसी समय उच्चलने वाद्यभाण्ड सह नगरमें प्रवेश कर उनके निकट लोगोंको भेज उन्हें त्याग करनेका अनुरोध किया। हर्षदेवने सोचा अभ्यर्थन उच्चल उन्हें राजा बनानेवाले थे। किन्तु अधिक काल बीत गया उसका कोई उत्तर तक न पड़ा। अन्तको उन्होंने अर्थ आदमी भेज कहलाया था—"यदि आप चाहें तो हमें राज्यसे निकाल छोड़ दें और नहीं तो यदि हमें राज्यमें ही रखना चाहें तो हमारा प्राप्य राज्य हमें दे दें।" उच्चल भी उन्हें राज्य सौंपनेकी आशा दे वृथा कालक्षय करने लगे।

उच्चलने राजा हो राजाके आसनादिका कोई प्रबन्ध बांधा न था। वह केवल इसी चेष्टामें लग गये कि किस कौशलसे बल बढ़ेगा। उसमें उन पर सब लोग विरक्त हुये। सुबुद्धि मन्त्री हर्षदेवको राजा देखनेका परामर्श करते थे। उधर जयराज और विजयमल्लको उनका माफिक भाग्य होनेके अनुसार न मिला। विजयमल्लने क्रोध राजाको कोटमेंका उद्योग लगाया था। उसी समय हर्षदेवने विजयमल्लसे अपनी मुक्ति की बात बताई। विजयमल्ल और जयराजने ज्येष्ठ भ्राताके लिये दुःखित हो सेना ले बलपूर्वक राजधानी को आक्रमण किया था। उधर लोहक प्रभृति कुमन्त्रियोंके परामर्शसे उच्चलने हर्षदेवको मारनेके लिये कारागारमें कई सैनिक भेजे थे। उन्होंने वहां पहुंच हर्षदेवके सौजन्यमें मुग्ध हो पथावलम्बन किया। उसके पीछे उच्चलने मूर नामक मन्त्रीके साथ राज देवको प्रतिभू स्वरूप अवशस्त्र पहुँचे न भेज क्रम क्रमसे मुक्तिप्रापक पहुंचे भेज दो थी। हर्षदेव मुक्त होनेपर उच्चलसे आ कर मिले। उस समय भी विजयमल्लसे नगरके बाहर युद्ध हो रहा था। उच्चलके अनुरोधसे हर्षदेव युद्ध निवारण करने गये। विजयमल्लने ज्येष्ठको मुक्त देख आनन्दसे तत्क्षण ही युद्ध रोक दिया। हर्षने फिर उच्चलके निकट जानेको प्रासादमें प्रवेश किया था। किन्तु मन्त्री विजयसिंहने उन्हें रोककर कहा—"क्या जान बूझ कर बैरी बैरीके हाथमें जाते हैं? राजप्रासादमें जाकर पद आपसे हो सिंहासन अधिकार कीजिए।" यह कह कर विजयसिंह उन्हें लेकर राजप्रासादके मध्य सिंहासनगृहमें उपस्थित हुये। फिर उन्होंने हर्ष देवको सिंहासन पर बैठा अन्यान्य सुबुद्धि मन्त्रियोंको संवाद दिया था। उन्होंने आकर हर्षदेवके अभिषेक-का आयोजन किया। उधर विजयसिंहने सर्व जा उच्चलको बहिर्वेष्टित किसी घरमें रख छोड़ा। विजय-मल्ल संवाद पाकर पहुंचे थे। तब भूपति हर्षदेव अपने कहने लगे "भाई! तुम्हारे उद्योगसे ही हमने प्राण पाया और राज्य भी पाया है!" विजयमल्ल स्नातके हर्षसे मुग्ध हो गये।

कारागारमें लोहकने उच्चलके मित्र उन्हें छोड़ परा-मर्शसे कार्यकारीको अनुरोध किया था। उच्चल-ने अनुरोधसे सम्मुखद्वार अन्य किसी स्थानमें प्रवेश कर आत्मरक्षा की। सुस्सल और अन्य नामको दो ब्राह्मणोंने उनके साथ गमन किया था। बाहर पर्वतमें उनको दूसरी आ कई विपत्ति उस संवाद सुनकर चितापर चढ़ गयीं। पर दिनमें गड़बड़ हुआ। विक्रि-दून ११ मास वयसमें २२ दिन राजत्व कर उच्चल पर लोकको चले गये।

दूसरे दिन हर्षदेवने लोहक, मिल्लार, मह प्रभृति-जनक प्रभृतिको पुनः कारागारमें डाला था। उनको अपने करनेके पीछे राज्यमें उसी दिन मानो शान्ति स्थापित हो गयी। विजयमल्ल हर्षदेवके दक्षिणहस्त हुये। कन्दर्प द्वारपति, मदन कम्पनपति, वज्रपुत्र रत्न प्रधानमन्त्री और उनके कनिष्ठभ्राता जयराज राजानुचराध्यक्ष बने थे। प्रयस्त और जनकादि अमा प्रार्थना करनेसे पूर्वपदपर नियुक्त हुये। केवल लोहक को सकल दुर्घटनाका मूल समझ फांसी दे गयी। कुछ दिन पीछे दुष्टके परामर्शमें पड़ विजयमल्लने राज्य हरण करनेकी आशासे दरद देशके डामरो का

साहाय्य लिया और शीत बीतते ही युद्धको गमन किया था। किन्तु पथिमध्य गलित तुषारसे आच्छन्न हो स्वयं उन्होंने अपना प्राण छोडा।

हर्षने फिर सकल बाधा विपद्से मुक्त हो राज्यकी उन्नतिमें मन लगाया था। उन्होंने काश्मीरमें परिच्छदादिका-उत्कर्ष साधन और कर्णाटी मुद्राके आकारमें मुद्राका प्रचार किया। वह पण्डित-प्रतिपालक रहे। कलसके राजत्वकाल विल्हण नामक किसी पण्डितने काश्मीर छोड कर्णाट राज्यमें आकर महा सम्मान और विद्यापति उपाधि पाया था। वह हर्षको गुणावली सुन शेषको सदालुब्ध हुवे। हर्षने काश्मीरकी राजधानी सुदृश्य वस्तुसमूहसे सजायी थी। उन्होंने एक प्रमोद उद्यान निर्माण करा उसमें पम्पा नामक सरोवर खुदाया और नाना देशविदेशके पक्षी संग्रह कर उसमें प्रतिपालनका प्रबन्ध लगाया। उनकी पत्नी साध्वी राजकुमारी वसन्तलेखाने राजधानी और त्रिपुरेश्वरमें मठादि बनाये थे।

हर्षके समय भुवनराजने लोहर अधिकार करनेकी चेष्टा लगायी। वह सैन्य ले कोटा पहुंचे थे। किन्तु द्वारपति कन्दर्पके आगमनकी वार्ता सुन भुवनराज युद्धसे विरत हो गये। उसीसमय राजपुरीके राजा संग्राम बिगडे थे। कन्दर्प उस समय भी कोटामें ससैन्य उपस्थित थे। हर्षदेवने उसीसे दण्डनायकको सैन्य दे भेजा था, किन्तु वह भी लोहरके पथसे जाते जाते कोटामें सरोवरकी शोभा देख कुछ दिन वहां ठहर गये। कन्दर्प अपने विलम्बके लिये हर्षदेवके कोपभाजन हुवे। पीछे हर्षका अभिप्राय समझ उन्होंने प्रतिज्ञा की थी—"हम राजपुरी जीतकर ही अन्न ग्रहण करेंगे।" दण्डनायकके सैन्यदलसे कुलराज नामक किसी सेनानीने उनका अनुगमन किया। ३०० मात्र सैन्य ले कन्दर्प विपक्षके ३० हजार सैन्य से युद्धमें प्रवृत्त हुवे। ३ प्रहर युद्ध होने पीछे राजपुरी हारि थे। कन्दर्पने उस युद्धमें अग्निमय नाराचास्त्र व्यवहार किया। उसके पीछे दण्डनायक युद्धस्थलपर जा विपक्ष पक्षका हतसैन्य देख भयभीत हो गये। उसी कन्दर्पने हँसकर उन्हें अभय दान दिया था। एक मासके मध्य कन्दर्प काश्मीरको लौटे। हर्षदेवने आनन्दमें सिंहासनसे उठ कन्दर्पकी सम्वर्धना की थी। दुष्ट मन्त्री कन्दर्पका वह सम्मान देख सिंहासनसे जल उठे। कन्दर्प उसके पीछे परिहासपुरके शासनकर्ता हुवे। कुपरामर्शसे हर्षदेवने उसी समय कन्दर्पको द्वारपतिके पदसे हटा लोहरराज पदपर बैठाया था। कन्दर्प सन्तुष्टचित्त वहां चले गये। मन्त्रियोंने देखा कि कन्दर्पने राजाके विरुद्ध कुछ कहा न था। उसीसे उन्होंने राजाको बताया कि कन्दर्प जाते समय उत्कर्षके पुत्रद्वयको अपने साथ ले गये थे। वह उनको ले कर स्वाधीन हो जाना चाहते थे हर्षदेवने हठात् उस मिथ्यावाक्य पर विश्वासकर असिधर और पट्टकी भेज दिया। कन्दर्प उक्त संवाद सुनकर मर्माहत हुवे। किसी दिन वह चौपर खेल रहे थे। उसी समय असिधर पहुंच उन्हें बांधनेपर उद्यत हुवे। किन्तु वीर कन्दर्पके दृढ रूपसे पकडते ही उनका हाथ टूट गया असिधरने पलायन किया था। पट्ट फिर अग्रसर हुवे। कन्दर्पने कहा—"आप राजाके आत्मीय हैं। हम आपके विरुद्ध कुछ करना नहीं चाहते। आप दुर्ग अधिकार कीजिये। हम चलते हैं।" कन्दर्प काशी चले गये। कन्दर्पके चले जाने पर अन्यान्य मन्त्रियोंमें गडबड पड गया। राज्यमें विशृङ्खला लगी थी। धम्मट जयराजको उत्तेजित कर स्वयं राज्याधिकारको चेष्टा करने लगे। जयराज कलसके औरसजात तो थे, किन्तु वेश्यागर्भजात होनेसे धम्मटके परामर्शमें हर्षदेवको मारडालने पर स्वीकृत हो गये। प्रयाग नामक भृत्यके नाना कौशलसे राजाको सब बात मालूम हो गयी। वह जयराजको मार धम्मटके उच्छेदका उपाय ढूंढने लगे। शेषमें उन्होंने कलसराजके द्वारा उन्हें द्वन्द्वयुद्धमें विनाशकर उनके विल्हण और मल्लण नामक पुत्रद्वयको अपने अधीन रखा। इस प्रमृति धम्मटके भ्रातुष्पुत्र और उत्कर्ष एवं विजयमल्लके पुत्र हर्षदेवकर्तृक शासनमें निहत हुवे।

इलधरके पौत्र लोट्टधरके परामर्शसे हर्षदेवका मस्तिष्क बिगडा था। वह एक एक कर देवमन्दिर लूटने लगे। केवल राजधानी, श्रीरणस्वामी और

मार्त्तण्ड मन्दिरमें हर्षदेव कुछ कर न सके ।

किसी दिन हर्षदेव कर्णाटराजकी परमासुन्दरी पत्नी चन्दलाकी छवि देख उनको प्राप्त करनेके लिये आकुल हो गये और राजसभामें कर्णाटराज्य ध्वंस करनेकी प्रतिज्ञा कर बैठे । कम्पनापति मदन उस कार्यमें राजाको साहाय्य करने पर उद्यत हुये । कारण उन्होंने वह तसवीर ला दी थी । परन्तु वह कर्णाट जा न सके । उसके बाद वह विद्वज्जनानुसार विजय पाने और विजय-अभ्यागतका सत्कार करने पर प्रवृत्त हुये ।

कुछदिन बाद राजपुरीके राजा संग्रामपालने जितना ही स्वाधीन भाव अवलम्बन किया था उतनेसे राजा हर्षदेवने अपने चम्पक सैन्य भी राजपुरीको आ घेरा था । थोड़े दिन बाद दुर्गमें खाद्यका अभाव हुआ । संग्रामपालने सन्धिका प्रस्ताव किया था किन्तु हर्षदेव सम्मत न हुये । शेषको संग्रामपालने दण्डनायकको उत्कोच दे अपना मान निकाल लिया । दण्डनायकने तुरुष्क सैन्यके आगमनका भय दिखा, काश्मीर लौट गये ।

उसके बाद हर्षदेव दरदोंके हाथसे दुग्धघात दुर्ग उद्धार करनेके लिये दारपतिके साथ सिन्धुपर दरदराजके विरुद्ध चढ़ बढ़े थे । पञ्चमश्र उन्होंने मंत्री चम्पकको सकलाधिपकी आख्या प्रदान की । दुग्धघातदुर्गमें प्रथम युद्ध हुआ था । उस समय तन्मल्लके कनिष्ठ भ्राता मल्लके पौत्र उच्चल और सुस्सलने अति अद्भुत विक्रम प्रकाश किया । जो हो उस युद्धमें काश्मीरराज हारे और सैन्य सामन्त छोड़ कई अनुचरोंके साथ ही भागे थे । उच्चल और सुस्सल अपने कौशलसे डामर सैन्यको विपन्मुक्त करा ही गये । इसीसे उक्त दोनों भाइयों के प्रति काश्मीरकी प्रजाओंकी भी भक्ति आकर्षित हुयी ।

इसके पीछे हर्षदेवके कोपसे कनकराज ठक्कुर, उदय और कम्पनापति मदन निहत हुये ।

उस समय (७६ लौकिकाब्द) काश्मीरमें महान् दुर्भिक्ष पड़ा था । अन्न और अर्थशून्यताका मूल्य बढ़ गया प्रतिदिन सैकड़ों लोग अनाहार मरने लगे । राजाने प्रजाका कष्ट देखा न था । फिर उसकी ऊपर कायस्थ भी अत्याचार करने लगे । डामर विद्रोही हुये । हर्षदेवने उन्हें समूल उच्छेद करनेके लिये मण्डलाधिप चम्पकको भेजा था । चम्पक लोहरसे ले कर समस्त डामर राज्य लोकशून्य करने लगे । डामरवासी ब्राह्मण भी बचे न थे । शेषको जब वह क्रमराज्य (कामराज) पहुंचे, तब वहांके डामर दलाय हो खड्ग छोड़ युद्धमें प्रवृत्त हुये । उस युद्धमें चार मण्डलाधिप कुछ कुछ दब गये ।

उधर लक्ष्मीधर नामक किसी व्यक्तिके घरके निकट मल्लपुत्र उच्चल रहते थे । लक्ष्मीधरकी आकृति किन्तु कुछ बानरकी सदृश रही । इसीसे उनकी स्त्री उन्हें देख न सकती थी । सुस्सलका आलिंक निन्दितरूप देख वह उसको आसक्त हो गयी । लक्ष्मीधर इन्हीं राजाको पुनः पुनः अनुरोध करने लगी—"आपने अपने बल अन्याय अनेकोंकी आत्मीयोंको मार डाला है तब किसी दिन सिंहासन से हटानेवाले उच्चल और सुस्सल को क्यों बचा रखा है ?" उसका नाम्नी किसी वेश्याको उक्त संवाद मिला था । उसने सब वृत्तान्त उच्चल और सुस्सलसे जाकर कहा । दर्शनपाल नामक उनके किसी बन्धुने भी उक्त विषय समर्थन किया था । उन्होंने रात को दो तीन अनुचर ले केवल भ्राता काश्मीर छोड़ गये । (७६ लौकिकाब्द, अग्रहायण)

उच्चलने* संग्रामपालका आश्रय लिया था उन्होंने ही स्नेहवश उन्हें पकड़नेकी चेष्टा लगायी । उच्चलको उक्त संवाद मिल गया । उन्होंने राजपुरी छोड़ पलायन किया था । संग्राममें सुना कि यह भारी आशा था । वह उसी समय नरेन्द्र उनके अनुसरणको चलते दिये । शेषको किसी स्थान पर उच्चलके युद्ध करनेकी ठानी थी । उस समय गर्गराजने उन्हें सन्धिको कलमा कर बुला लिया । उच्चल भी लोहरवंशके संग्राममें युक्त था कहा था—"अब लोग देखें किस वंशकी एक शाखा लोहर अनुग्रहसे काश्मीर आज भी राजत्व रखती, उस वंशको दूसरी शाखाको साधुवृत्ति राज्य मिलता है या नहीं ?"

* उच्चलने व कलशके उस व अपना वंशका पद ... परिचय दिया था

उसके पीछे उच्चलके राजपुरी परित्याग करनेसे युद्ध हुवा। उस युद्धमें वाट्टदेव प्रभृति डामरोंने उनका पक्ष लिया था। युद्धमें लोठावट्ट प्रभृति मारे गये। उच्चल हारे थे। किन्तु ५।६ मास बीतते न बीतते फिर बृहत् सैन्यदल संग्रह कर वह क्रमराज्यके पथसे काश्मीरको अग्रसर हुवे। लोहरराज कपिल उच्चलके भयसे भागे थे। पर्णोत्स नामक स्थानमें लड़ाई हुई। राजसैन्य हार कर भगा था। उसके पीछे उच्चलने द्वारपति सुज्जकको बांध लिया। हर्षदेव भीत हो गये। उधर सुस्सलने मण्डलराज चम्पकको मार क्रमराज्य अधिकार किया था। हर्षदेवने पट्टको बृहत् सैन्यदलके साथ भेज दिया। किन्तु पट्ट पथमें विलम्ब लगाने लगे। हर्षदेवने फिर तिलकराजको भेजा था। उन्होंने भी पट्टके साथ योग दिया। पीछे दण्डनायक भेजे गये। उन्होंने भी वैसा ही किया था।

- नर (दार्वाभिसार-राज, मरदामराज)
  - नरवाहन
    - फुल्ल
      - सालवाहन
        - चन्दु
          - चन्द्रराज
            - गोपाल
            - सिंहराज (क्षेमगुप्तके समय लोहर शासन करते थे)
              - कान्तिराज
                - जस्सराज
                  - तन्वङ्ग
                    - यशक
                    - धर्मट
                      - रिह्लन
                      - मद्दन
                    - कन्दर्प
                      - गुग्ग*
                  - गुङ्ग
                    - मल्ल
                      - उच्चल
                      - सुस्सल
              - उदयराज
                - संग्रामराज (दिद्दाके पीछे राजा हुये)
                  - अनन्त (काश्मीरराज)
                    - कलस वा द्वितीय रणादित्य (काश्मीरराज)
                      - हर्षदेव (काश्मीरराज)
                      - उत्कर्ष (काश्मीरराज)
                      - जयराज
              - दिद्दा (काश्मीरराज क्षेमगुप्तकी महिषी)

* विजयराज सुस्सल और गुग्ग नामक सुतके दूसरे भ्राता थे। वह सब हर्षराजके समय विप्लवमें निहत हुये।

उच्चलने वराहमूल हुष्कपुरका पथ छोड़ क्रमराज्यमें प्रवेश किया। मण्डलराज लड़ाईमें पराजित होने पर बांध लिये गये। किन्तु उन्होंने प्रलोभन दिखा उच्चलको परिहासपुर ले जाकर हर्षदेवके नाम ससैन्य वहां पहुंचनेका पत्र भेजा था। हर्षदेव भी संवाद पा ससैन्य वहां पहुंच गये। युद्ध होने लगा था। मण्डलराजने ससैन्य राजाको ओर योग दिया। उच्चलका सैन्य प्रायः विनष्ट हो गया। मिल्लसेन नामक किसी डामर-सेनापतिने भाग कर राजविहारमें आश्रय लिया था। राजसैन्यने सोचा—"सम्भवतः उच्चलने ही विहारमें आकर आश्रय लिया है।" सिपाहियोंने मठमें अग्नि लगाया था। किन्तु उच्चल और सोमपाल अपर दिक् लड़ते रहे। शेषको वह प्रतिद्वन्द्वियोंकी संख्या अधिक देख युद्धसे अलग हो गये। फिर उन्होंने सैन्य ले ज्येष्ठ मासको परिहासपुर अधिकार किया था। किन्तु उनने परिहासकेशवमूर्तिको बचा दिया।

उधर अवमाहसे सैन्यसंग्रह कर सुस्सलने शूरपुर नामक स्थानमें काश्मीर-सेनापति माणिकको पराजय किया था। हर्षदेवने उस समय उच्चलको छोड़ पट्ट, मण्डलाधिप प्रभृति सुस्सलको ओर भेज दिये। दर्शनपाल युद्धमें पराजित हो भगे थे। कायस्थ-सेनापति सहेलने डर कर काश्मीरमें ही आश्रय लिया। इधर तारमूलमें उच्चल भी क्षमताशाली होने लगे।

उसके बाद उच्चल लोहरके पार्वत्य पथसे आगे बढ़े थे। हर्षदेवने उदयराजको द्वारपति और चन्द्रराजको कम्पनापतिके पदपर अभिषिक्त कर उच्चलके विरुद्ध प्रेरण किया इसी बीच उच्चलके मातुल कम्पनराज्य अधिकार कर बैठे थे। चन्द्रराजने अवन्तिपुरके युद्धमें उनको मार डाला। उसके बाद चन्द्रराज सैन्यको १२।१३ दलोंमें विभक्त कर धीरे धीरे विजयक्षेत्रके अभिमुख चले थे। उसीबीच लोहरके युद्धमें मण्डलाधिपका सैन्य हार गया। उनने उच्चलके निकट आश्रय लिया था। किन्तु अवशेषको वह हर्षदेवके विद्रोही सेनापति गणकचन्द्रके हाथ मारे गये। उसके बाद हिरण्यपुरके ब्राह्मणोंने उच्चलको राजा मान अभिषिक्त किया था। हर्षदेव उक्त संवाद पा मन्त्रिवर्गके साथ

स्वयं युद्ध करनेको चल दिए। मन्त्रियोंने परामर्श दिया कि आनेसे पहले भोजदेव (हर्षदेवके ज्येष्ठपुत्र) को दुर्गमें उपयुक्त रक्षियोंके साथ भेज देना उचित था। वही किया भी गया। यद्यपि युद्ध राजाको विपक्षता रखते थे, तथापि उच्चलके पिता मल्ल राजा हर्षदेवके वशीभूत रहे। किन्तु हर्षदेवने उनका कुलसमेत घर सर्वोच्च उनका भवन आक्रमण किया था। मल्लने वीर अपर सन्तान सेत्र राजाकी चम्पकमन्त्रणा की। किन्तु राजाने शांत न हो उनको सुरांग बुलाया था। मल्लदेव उस समय देवशीर्षमें रहे। वह उसी वेशमें पत्नि ले कर निकल पड़े। उस युद्धमें भट्ट उदयराज, यशोराज तथा विजय नामक ब्राह्मणद्वय पोत्मक जोहक चार सज्जन निहत हुये। अन्तःपुरमें रानी कुसुमलिका, राजवधू आसमती तथा सरला (उच्चल और सुस्सलकी पत्नी), रानी नन्दा (उच्चल और सुस्सलकी माता) और अन्य रानियोंने चितापर चढ़ जीवन विसर्जन किया।

पिता मरनेके दूसरे दिन उच्चलने वह्निपुरमें विजयक्षेत्र पर्यन्त अधिकार किया था। युद्धमें कम्पनापति चक्रराज, यशोधर और काकलमल्ल मारे गये। उसके बाद उच्चल क्रमशः हुष्कपुर और सूरपुर होते राजधानी आ पहुंचे। हर्षदेव उस समय राजधानी छोड़ रणमें चले गये थे। पीछे उच्चलने अनायास राजधानीको अधिकृत किया। भोजदेव राजधानी आक्रान्त होनेका समाचार सुन स्वयं सैन्य ले लड़ाईमें प्रवृत्त हुये। उस लड़ाईमें भोजकी जय पर उच्चलको राजधानीसे निकाल दिया था। कुछदिन बाद ही भोजदेवने सुना कि उच्चल सर्वत्र उपस्थित हुए हैं।

इधर राजा हर्षदेवने कटाक्षका गंवाके और जाकर देखा कि उनका निमित्त मीरेतु लेकर विपक्षी आक्रमण रचा जाती है। उधर उच्चलने राजधानीको अधिकार किया था। हर्षदेव कोठरमें अभिषिक्त रहे। उसमें अनुचर उनको छोड़ कर चम्पत हो गये। शीघ्रही कोई एक दो आत्मीय सज्जन और दो एक अनुचर साथ ले हर्षदेव भीतर पहुंचे थे। अधिपने आश्रय देना चाहा किन्तु राजाने स्वीकार न किया। उसी समय राजाके अपर पुत्र भी विद्रोही हो गये और उनको छोड़ इधर उधर चल दिए। जब हर्षदेव ओकिलदेवके मन्दिरके निकट पहुंचे, तब उनका कनिष्ठ साला मल्लराज आनेको कह भाग गये। इस समय भी राजाका साथ छोड़ा था। उनके साथ अभी थोड़ा प्रयाग रहे। हर्षदेव फिर क्या करते। जीवनरक्षाके लिये निकटवर्ती श्मशान अरण्यके मध्य सोमेश्वर मन्दिरके निकट मिस नामक किसी तपस्वीकी कुटीमें उन्होंने आश्रय लिया था।

उधर भोजदेव राज्यके भागी थे। हस्तिकर्ण नामक स्थानमें वह २।३ आत्मीयों अनुचरोंके साथ पहुंचे। वहां वह विद्रोही सैन्यदल आक्रान्त हुये और युद्धमें अपने मातुलपुत्र उल्लके साथ मारे गये।

यथाक्रम उच्चलके साथ सुस्सल मिले थे। उच्चलने सुना कि हर्षदेवने विहारमें वास किया था। उनने हर्षदेवको कैद करनेके लिये डामरोंको भेजा था। उन्होंने वह अनुसन्धानसे राजाको पकड़ लिया। छुरिकी साथ अवस्थाके हर्षने अनेकोंको मारा था। शिव की कई लोगोंने मिल कर उन पर आघात किया। वह सामान्य भुजाके कुक्कुरकी भांति धराधाममें पतित हुये। यथासमय हर्षदेवका मुण्ड उच्चलके निकट लाया गया था। उच्चल घूम कर रुष्ट और देख न सके उनाने अन्त्येष्टिक्रिया करनेका आदेश भी दिया न था। किसी काठुरियाने उनके देहका सत्कार किया।

हर्षदेवके अधीन वेतनभोगी १०० तुरुष्क योद्धा रहे। उनके समय तुरुष्क बड़ा प्रतापशाली और विस्तृत राज्यके अधीश्वर हो गये थे। यहां तक कि इन्हीं के अत्याचारसे काश्मीरको बहुतसी प्रजा अन्यदेशमें जाकर रहने लगी।

उदयराजके वंशमें ६ राजाओंने ८० वर्ष ११ मास २७ दिन राजत्व किया था।

महाराज हर्षदेवके पीछे उच्चल राजा हुये। सुस्सलने लोहरपति राज्यके मध्य अत्याचार आरम्भ किया था। डामरराज्यमें उनका अत्याचार अधिक न चला। उसीसे उन्होंने उच्चलको डामर राज्य जमानेका परामर्श दिया था। उनने उनका कार्यमें परिवर्तन न किया सही किन्तु आत्मीय अत्याचारसे राज्य पीड़ित देख उनको

लोहर राज्य देकर वहाँ पहुंचाया था। सुस्सल धनरत्न हय हस्ती, अस्त्र-शस्त्र और उत्कर्षके पुत्र प्रतापको साथ ले चल दिये। कनक उसी स्थलमें वन्दी थे। पथिमध्य वह भाग खड़े हुवे और काशी जाकर गङ्गा जलमें डूब मरे। उधर जनकचन्द्र राज्यमें ऐसा कार्य करने लगे, कि वही सबके ऊपर समझ पड़े उच्चल नाममात्रको राजा रह गये।

शरणागत अभयकी कन्या विजयमती हर्षदेवके पुत्र भोजदेवकी पत्नी थीं। भोजदेवके अनेक सन्तान होकर मर गये, केवल २ वर्षके कोई पुत्र जीवित रहे उनका नाम भिक्षाचार था। जनकचन्द्रके अनुरोध और कुछ कुछ दयाके परवश उच्चलने उस शिशुको विनाश न किया। उस समय समझ पड़ा जनकचन्द्र जिस भावसे कार्य करते, उससे वह स्वयं राजा होनेकी आशा रखते या उक्त शिशुको राजा बनाना चाहते थे। उच्चलने शेषमें जनकचन्द्रको भी द्वारपतिके पदपर अभिषिक्त कर राज्यसे दूर भेज दिया। भीमदेव उससे चिढ़े थे। शेषको जनकचन्द्रने भीमदेवका युद्ध होने लगा। संग्राममें कालपाश नामक भीमदेवके किसी सेनानीके हाथ जनकचन्द्र आहत और भीमदेवके हाथ निहत हुवे। गर्ग और सड्ड नामक जनकके दो भ्राता भी आहत हो लोहरको भगे थे। संग्रामस्थलमें उच्चल ससैन्य उपस्थित रहे। उनने कोई पक्ष लिया न था। कारण जनककी क्षमताको खर्व करना उनको भी ईप्सित रहा। शेषको उच्चल क्रमशः राज्यमें शान्ति स्थापन कर मडरराज्य चले गये। वहां उनने विद्रोही डामरोंके प्रधान कालिय प्रभृति और इलाराजको मारा था। फिर देशको शासन कर उच्चलने प्रस्थान किया। गर्ग उसी समयसे उनके प्रियपात्र बन गये।

उच्चलने दग्धावशिष्ट नन्दीक्षेत्र नगरके चक्रधर, योगेश और स्वयम्भु मन्दिरको पुनर्निर्माण कराया। हर्षदेव कर्तृक ज्योतिर्विशारदेशवसूर्ति विनष्ट हुयी थी। उच्चलने उसे फिर प्रतिष्ठा किया। त्रिभुवनस्वामी-के मन्दिर और तत्संलग्न शुकावली प्रासादको भी हर्षदेवने छतसी कर डाला था। उच्चलने उसे फिर पूर्वकी भांति धनशाली और सौन्दर्यपूर्ण कर दिया। जयापीड कन्नौजसे जो सिंहासन लाये थे, उच्चलके राजधानी अधिकार करते समय वह कुछ कुछ जल गया। उनने फिर उसे नूतन निर्माण कराया था।

उच्चलने कायस्थोंका अत्याचार देख सर्वथा समस्त कायस्थोंको राजकाजसे अलग कर दिया। भोटधरादि दुष्ट कायस्थोंको यथारीति शास्ति मिली थी। कम्पनापतिके दंशक महाप्रतापशाली होनेसे उच्चलके क्रोधभाजन बने और विपनाटाको भाग जाते भी खशों द्वारा विनष्ट हुवे। द्वारपति रक्षक उसी दोषसे विजयक्षेत्रको निकाले गये और उच्चलको दो हुयी सामान्य संख्यक मुद्रासे जीविका चलाने लगे। माणिक्य, तिलक, जनक प्रभृति वीर भी उसी प्रकार देशसे निकाले गये थे। फिर सड्डके पुत्र रड्ड, छुड्ड और व्यड्ड मन्त्री हुवे। यम, ऐल, अभय और बाण प्रभृति अपरिचित व्यक्तियोंने द्वारपति आदि उच्चपद पाये थे। इस कन्दर्प भी कार्यग्रहणार्थ आहूत हुवे। किन्तु उच्चलको मति बिगड़ी देख वह न गये।

उधर सुस्सलने लोहरमें रह राज्य लोभसे उच्चलके विरुद्ध अस्त्रधारण किया था। वराहवर्त नामक स्थानमें दोनों भ्राताओंमें प्रथम लड़ाई हुई। सुस्सल पराजित हो लोहरको भगे थे। उच्चलको किन्तु संवाद मिला कि सुस्सल दूसरे दिन लौटनेवाले रहे। उसीसे गर्गचन्द्रके साथ एक दल सैन्य भेजा गया। पथिमध्य सुस्सलसे लड़ाई होने लगी। लड़ाईमें सुस्सलके अच्छे अच्छे योद्धा निहत हुवे। शेषको उच्चलने भी क्रमराज्य पर्यन्त भ्राताका अनुसरण किया था। सेल्यपुरकी लड़ाई-में हार सुस्सल लोहरके पार्वत्य पथसे स्वराज्यको लौट गये। उच्चलने सेल्यपुरके डामरराज लोष्ट्रकको मार डाला। कारण उसने स्वराज्यसे सुस्सलको भागने में सहायता की थी। उच्चल आलस्यवशमें पड़ लोहर पर्यन्त सुस्सलके पीछे न गये।

उधर भीमदेव राजाने कलशके एक सन्तान भोजको सिंहासन पर बैठा दरदराज जगद्दलको साहाय्यार्थ बुलाया था। दर्शनपालके भ्राता सहपालभी हर्षदेव-पुत्र सल्हणसे मिल गये। दरदराज राहमें उच्चलसे लड़नेके लिये उनकी ओर बढ़े थे। किन्तु उच्चलने उन्हें

मम्मुमाववे प्रबन्ध कर सिंह क्षयामें भ्रातृव्यको मोटा दिया। मम्मुकको दरदराजके साथ चली गयी। भोज राज्य छोड़ भाग गया था। किन्तु उच्चिमण्ड वह पकड़े गये उन्हें दण्डकी भांति शास्ति मिली थी। नैनीमर्के पुत्र पिहुकने कामरौज मारात्मके राज्यमामको पैदा लगाया, किन्तु उसमें कुछ बन न पड़ा। सामन्त नामक किसी ब्राह्मणने अपनेको मदका पुत्र बता राज्य पानेकी चेष्टा की थी। पर्वत निर्जीव भगाराजमें भी उसको आश्रय करना चाहा। किन्तु राजकर्मीने मोगममें पकड़ उसकी नाक काट डाली।

उस समय भिक्षाचार (भोजदेवके पुत्र) किशोर अवस्थापन्न थे। उच्चलने सुना कि वह राज्ञी जयमती पर आसक्त थे। उसीसे उसको विनाश करनेको आज्ञा निकली। घातकोंने उसको जिन्दा ही चाक्रोंमें फेंक दिया। मान्य इससे वह किसी ब्राह्मण द्वारा रक्षित हुवे। मालवराजकन्या देहा नाम ... पा मिला उसके पाले कर भी गयी। फिर उनके निरापद रहनेके लिये उनको मालवराज्य भेज दिया। मालवराजने वशिष्ठ था भिक्षाचारको पढ़ना लिखना और चलना फिरना सिखाया था।

उसी समय उच्चलने पिता और भगिनीके नाम पर एक एक मठ स्थापन किया। राज्ञी जयमतीने भी एक मठ और एक विहार बनवाया था। उसके बाद उच्चल अमरनाथके दर्शन मार्ग नामक तीर्थको दर्शन करने गये। उलिमण्ड चण्डाल दस्युओंने उनको आक्रमण किया था। साथमें पर्वतके अनुचर न रहनेसे वह भागने पर बाध्य हुवे। शेषको गगमक्ष दिन् ... होनेसे उनने वने जंगलमें प्रवेश किया। उधर नगरमें संवाद पहुंचा कि उच्चलको चण्डालोंने मार डाला था। कामदेव इंद्रदेवके भ्राता गगराजक शुक्ल नगरमें शान्ति स्थापन कर राज्यकार्य परामर्श करने लगे। कायस्थोंके परामर्शसे कुड्डल को राजा बनानेकी चेष्टा चलायी थी। किन्तु उच्चलके जीवित रहनेका संवाद सुन वह उनको मार डालनेकी चिन्तामें पड़ गये। उधर उच्चलने किसी कारण जयमती पर विरक्त हो नर्तकी राजकन्या बिज्जलासे विवाह कर लिया था।

उसी समय राजपुरीके राजा संग्रामपाल मर गये। उनके पुत्र सोमपाल ज्येष्ठको बन्दी बना राजा हुये। इसलिये उच्चल क्रुद्ध हो लड़ने चले थे। किन्तु सोमपालका राज्यशासन और प्रजाप्रियता देख उनने उनके साथ अपनी कन्याका विवाह कर दिया। फिर उच्चलने भोगसेन पर विरक्त हो उसको पदच्युत किया था। उसके बाद भोगसेन एवं रड्ड और व्यड्ड नामक बहुत लोगोंने मिलकर उच्चलको मार डालनेके लिये षड्यन्त्र कर लिया। राजा किसी रातको नियतमा विज्जलाके घर जाते थे। उसी समय सशस्त्र षड्यंत्रोंने मिलकर उनपर आक्रमण किया और उन खड्ग चला भूमिपर उनको गिरा दिया। शेषको ठाकुरके पत्रकालमें कल्मीलीय ८७ लौकिकाब्द पौष मासकी शुक्लपक्षीके दिन ४१ वर्षके वयसमें महाराज उच्चल इहलोकसे चल बसे।

रड्ड राजाका वेश कर उसी रातको सिंहासन पर बैठे थे। उसीमें उनके बन्धु उनसे लड़ पड़े। बहु घण्टे युद्ध होने पर रड्ड मारे गये। रड्डने महाराज उपाधि धारणकर रातको एक पहर और एक दिन राजत्व किया था। उसके बाद गर्गचन्द्रने विद्रोहियोंमें किसीको मार किसीको पकड़ और किसीको देशसे निकाल उपद्रव मिटाया। राज्ञी विज्जला चिता पर चढ़ गयीं।

सबने गर्गको राजा बनाना चाहा था। किन्तु गर्गने अपनी ओरसे उच्चलके शिशु पुत्रको राज्य देनेका प्रस्ताव किया। महाराजके औरस और राज्ञी श्वेताके गर्भसे सल्हण लोठन एवं रड्डण नामक तीन पुत्रोंने जन्म लिया था। उनमें सल्हण पहले ही मर गये। महाराज (उच्चल) के भयसे लोठन और सल्हणने मठमठमें आश्रय लिया था। विद्रोह मिटने पर मन्त्रियोंने उन्हें गर्गके निकट ले जाकर उपस्थित किया। गर्गने सल्हणको राजा बनाया था। उसके बाद गर्गने सुस्सलके निकट दूत भेजा। वह काश्मीरके अभिमुख चले थे। किन्तु उच्चिमण्ड सल्हणके राजा होनेका संवाद मिला। सुस्सल उस समय राजधानीसे कामराट पहुंचे थे। गर्ग भी दल और सैन्य लेकर अग्रसर हुये। भोगसेन और पद्मपाल ने सुस्सलके साथ योग दिया था। किन्तु भोगसेन पथमें

इसके बाद सन्धि हुयी। किसी दिन राजा स्नानागारमें उनको जाते देख बिगड़े थे। उसमें उनको तत्क्षण गिरफ्तार कर बन्दी बनाया। कल्याण, विद्रिङ्ग प्रभृति मम्मके पुत्र और उनके पक्षके सहायक सब लोग पकड़े गये। ६ मास पीछे (८४ लौकिकाब्दको मार्गादि राजाके आदेशसे निहत हुये।

फिर सल्लकोट, हमीरड़, विजय प्रभृति सबने मिल कर भिक्षाचारका पक्ष अवलम्बन पूर्वक सुस्सलके साथ विरञ्चपुर और महासरित् स्थान पर चढ़ कर राजधानीमें प्रवेश किया। राज्य भिक्षाचारके अधिकारमें गया था। राजा सुस्सलने अवरोध (८६ लौकिकाब्द) को आषाढ़ मास कल्याणराज्यमें आश्रय लिया। तिलकसिंहने समस्त अश्वशाला लूट उनके रक्खा था। तिलक सैन्य संग्रह कर फिर युद्धका उद्योग करने लगे। उधर नगराध्यक्षकी कन्याके साथ भिक्षाचारका विवाह हो गया। उसके बाद भिक्षाचार राजसिंहासन पर बैठे।

कुछ दिन बाद भिक्षुने दो सुस्सलके विरुद्ध सैन्यको भेजा था। पर्णोत्स, चिडोका और सहाविश नामक स्थानमें युद्ध हुआ। जिसके पराजित होने पर सुस्सलने सम्पूर्ण जयलाभ किया था। भिक्षाचार भाग गये। किन्तु अल्प दिन बाद हमीरड़ और भिक्षाचार मिल विजयक्षेत्रमें जय पा राजधानीके अभिमुख अग्रसर हुये।

उसके बाद नाना स्थानोंमें युद्ध हुआ। भिक्षाचार या सुस्सल कोई सम्पूर्ण जय पा न सका। सुस्सलकी अनुपस्थिति काल डामर राजधानीमें नाना स्थानों पर आग लगाने लगे। विलासके समय चार दिनमें आठ निर्मित घर रहे, प्राय सभी जल गये। निरीह प्रजा राजधानी छोड़ भगने लगी। सुस्सल राजधानीको लौटे। उसी समय उत्पल व्याघ्र प्रभृति साजिश कर राजाके मारनेकी चेष्टा करने लगे। सुस्सलने इसका आभास पाया किन्तु विश्वास पाया न था। किसी दिन वह स्नानागारमें नहा रहे थे। उसी समय उत्पल और व्याघ्रने आकर देखा कि राजाका कोई रक्षक न था। उन्होंने द्वार बन्द कर दिया। सुस्सल उनका आशय देख "राजद्रोह" शब्द कर चिल्ला उठे। किन्तु उनके लौहक आघातसे महाराज चिरदिनके लिये निद्रित हुये। उनका छिन्नमस्तक भिक्षाचारके पास भेजा गया। राजपुत्र सिंहदेवको अब कुछ पता मिला था। सिंहदेव राजा बने। उन्होंने मन्त्रियोंके परामर्शसे राजधानी सुरक्षित रखनेको चारो ओर पहरे बैठाये थे। दूसरे दिन मध्याह्न काल भिक्षाचारने श्रीनगर नगरमें प्रवेश किया। उसी समय सर्वपुत्र पद्मचन्द्र विस्तर सैन्य ले राजासे आ मिले। घोरतर युद्ध हुआ था। भिक्षाचारने गड़बड़ देख राजधानीको परित्याग किया। इसके बाद विजयक्षेत्र प्रभृति कई स्थानों पर घोरतर लड़ाई हुई। किन्तु भिक्षाचारकी मनस्कामना सिद्ध न हुई।

सुस्सलके पुत्र जयसिंह राजा हो राज्योन्नतिकी ओर हस्तिपात भी किया किन्तु प्रतीहार पर राज्यका सकल भार छोड़ दिया। प्रतीहारने शान्ति स्थापनके लिये राजविद्रोहियोंसे सन्धि की थी। जयसिंह सर्वाङ्गीण कीर्ति कर गये। उनके समय कल्हण पण्डितने राजतरङ्गिणी नामक प्रकृत इतिहास प्रणयन किया।

जयसिंह राजा हो २२ वर्ष राजत्वके बाद १० लौकिकाब्दको फाल्गुनकी कृष्ण द्वादशीके दिन परलोक गमन किया। वह नियत प्रजागणके हितसाधनमें तत्पर रहे। उसके बाद जयसिंहके पुत्र परमाणुक काश्मीरके सिंहासन पर बैठे। उन्होंने पहले प्रजा रक्षणादि न्याय परित्याग पूर्वक किसी न किसी प्रकार लोग धनशोषण करनेकी चेष्टा की थी। अवशेष को उनके पुत्र मन्त्रियोंने बालककी भांति उन्हें फुसला और भय दिखा समस्त धन अपहरण किया। वह ८ वर्ष ६ मास १० दिन राजत्व कर ४० लौकिकाब्दको कालग्रासमें पतित हुये। परमाणुकके बाद उनके पुत्र वन्तिदेवने राजा हो १ वत्सर राजत्व किया। वन्तिदेवके मरने पर वोप्पदेवको राजसिंहासन मिला था। उन्होंने ८ वर्ष ४ मास २१ दिन राजत्व किया। वह मूर्खोंसे विरामचित रहे। फिर उनके कनिष्ठ भ्राता जस्सदेव राजा हुये। उन्होंने १८ वर्ष १९ दिन

राजत्व किया था। वह भी अतिशय मूर्ख रहे। बुध और भीम नामक २ धूर्त ब्राह्मण उनको बहुत प्रिय थे। फिर उनके पुत्र जयदेवने राज्य पा १४ वर्ष ३ दिन राजत्व किया। वह विनयी और प्रजाप्रिय थे उनने स्वीय राज्यके मध्य सुव्यवस्थाका स्थापन और राज्यका समस्त शल्य उद्धार किया। राद्म नामक उनके सर्वगुणाकर मन्त्री रहे। उनके मन्त्रवलसे राजाने समस्त शत्रुवर्गका विनाश किया महाराज जगदेवने स्नानपर्में हर्षेश्वरका प्रासाद बनाया था। द्वारपति पद्मने इनको गुप्त भावसे विष दे कर मार डाला। जगदेवके मरनेके पीछे उनके पुत्र राजदेवने राजा हो २३ वर्ष ३ मास २७ दिन राज्य शासन किया। उनने पितृघातक पद्मके भयसे काष्ठवाट नामक स्थान पर स्कन्ध दुर्गमें आश्रय लिया था। द्वारपतिने जाकर उन्हें चारो ओरसे वेष्टित किया। द्वारपति प्रमत्त हो लड़ रहे थे। उसी समय किसी चण्डालने उन्हें मार डाला। राजदेवने शत्रुको विनाश कर स्वीय प्रजापुञ्जको 'वशेष निष्कण्टक किया।

उनके पीछे उनके पुत्र संग्रामदेव सिंहासन पर बैठे थे। उन्होंने १६ वर्ष १० दिन राजत्व किया। संग्रामदेवने विजयेश्वर नामक स्थानमें गोब्राह्मणगणके निमित्त २१ उत्तम छत्रशाला बनायी। वह सर्वदा प्रजागणके मङ्गल साधनको व्यस्त रहते थे। कल्हण वंशीय राजाओंने उन्हें मार डाला।

संग्रामदेवके मरनेके पीछे उनके पुत्र रामदेव राजा हुवे। उन्होंने स्वीय प्रभूत शौर्यवलसे समस्त पितृशत्रुओंको विनाश किया। रामदेवने लेदरीके दक्षिण पार सक्षर नामक स्थानमें स्वनामचिह्नित दुर्ग बनाया और उत्पलपुरके विष्णुका जीर्ण एवं भग्नदशापन्न प्रासाद उत्तमरूपसे सुधरवाया था। उन्होंने २१ वर्ष १ मास १३ दिन राजत्व किया। चन्दनहृदपर पुष्पकी भांति विधाताने उन्हें पुत्र दिया न था। उनने भिषायकपुरस्थित किसी ब्राह्मणके लक्ष्मण नामक पुत्रको गोद ले काश्मीर राज्यपर अभिषिक्त किया। उनकी समुद्रानाम्नी महिषीने वितस्ताके नदीके तीरदेश पर समुद्रामठ बनाया था।

रामदेवके पीछे लक्ष्मणदेव राजा हुवे। उनके राजत्व काल शत्रुओंने राज्यमें विषम उत्पात आरम्भ किया था। महिलानाम्नी उनकी पापपरिशून्या महिषीने स्वीय श्वशुरनिर्मित मठके पार्श्वदेशमें एक नूतन मठ बनवाया। लक्ष्मणदेव १३ वत्सर ३ मास १२ दिन राजत्व कर तुरुष्कराज काज्जलके हाथ मारे गये।

लक्ष्मणदेवके परलोक गमन करने पर अन्य वंशजात नीतिविशारद लेदरीनायक सिंहदेवने काश्मीर राज्यके राजा हो १४ वत्सर ५ मास २७ दिन राजत्व किया। उनने गुरुके साथ मिल ध्यानोद्धार नामक स्थानोंमें नृसिंहदेवका मन्दिर बनाया था। उनके मन्त्रोपदेष्टा गुरुका नाम गङ्गरस्वामी रहा। राजाने उनको अष्टादश मठका ऐश्वर्य दक्षिणास्वरूप देकर पूजा था। किन्तु शेषको सिंहदेव आस्तिक्यबुद्धि और विनयादि विसर्जन कर भगिनीके साथ आसक्त हुवे। उनके भगिनीपतिने छलपूर्वक उनको मार डाला।

अनन्तर उनके भ्राता सुहदेव राजा हुवे। उनके निकट वृत्तिलाभ करनेको दिग दिगन्तरसे अनेक ब्राह्मणादि प्रजाने जाकर आश्रय लिया था। वह पञ्चगह्वर देशमें पार्थकी भांति पूजित हुवे। उनके पुत्र वस्त्रवाहनने गर्भरपुर स्थापन किया था। उनका राज्य १९ वर्ष ३ मास २५ दिन रहा।

सुहदेवके मरने पर म्लेच्छराज डलचने जाकर उनका राज्य नाश किया था। दानशील भोटवंशोद्भव (तिब्बत देशवासी) रिञ्चण काश्मीरराज्यके सिंहासन पर बैठ गये। वह इन्द्रतुल्य पराक्रमशाली रहे। उनके शासनकाल प्रजाकुलकी सन्तोषवृद्धि और उन्नति साधित हुयी। उनने ३ वर्ष २ मास १९ दिन राजत्व कर ९९ लौकिकाब्दको परलोक गमन किया था। फिर उनकी पत्नीने ४ मास तक मन्त्रीके साथ राज्य किया। उनने काश्मीरमण्डलमें कोटा खनन किया था। उसी समय सिंहदेवके ज्ञाति उद्यानदेवने राज्यपद आकाङ्क्षा कर राज्य पा १५ वर्ष १ मास १० दिन शासन किया था। उनके गतासु होनेपर कोटादेवी ६ मास १५ दिन रानी रहीं।

उसके बाद शाहमीर नामक मन्त्रीने अन्यान्य मन्त्रियों और विप्रोंके साहाय्यसे सपुत्रा रानीको मार स्वयं

राज्यशासन किया। उसी समयसे काश्मीर राज्य मुसलमान शासकोंके अधीन हो गया। काश्मीरप्रथम शम्सुद्दीन नामसे विख्यात रहे। अवनगुप्त देशवाले १८ मुसलमान काश्मीर देशके सिंहासन पर बैठे। उनमें शाहराज सुलतान शम्स उद् दीन काश्मीरके प्रथम मुसलमान राजा थे वह अतिशय बलशाली रहे। उन्होंने जिनपमहीको मार बलपूर्वक राज्य लिया था। शम्स उद् दीनके मरनेपर उनके पुत्र जमशेदने राज्य पाया। उन्होंने १वर्ष १० मास राजत्व किया। अनन्तर उनके कनिष्ठ भ्राता अला उद् दीन राजा हुये उन्होंने १२ वत्सर ११ मास १३ दिन सुनियमसे प्रजा पालन किया अनन्तर उनके पुत्र शहाब उद् दीन दिग्विजयी राजा हुये। उन्होंने २० वर्ष राज्यशासनपूर्वक बहुत राजाओंके साथ प्रतिद्वन्द्वीको प्रकाश किया था। फिर उनके कनिष्ठ भ्राता कुतुब उद् दीन १५ वर्ष ५ मास २ दिन तक राजा रहे। कुतुब उद् दीनके बाद उनके पुत्र सिकन्दरने २२ वर्ष ८ मास ६ दिन राजत्व किया। उन्होंने बहुतर संस्कृत पुस्तक अग्निमें फेंक जला डाले थे। सिकन्दरके मरने पर उनके पुत्र अली शाहने राजा हो ६ वर्ष ८ मास राजत्व किया। अली शाहके बाद प्रजावर्गके पुरस्कारसे उनके सहोदर शाहि-खान जिन उल् अब-दीनको राज्य मिल गया।

वह अतिशय विद्योत्साही रहे। अपने निकट विद्वोंके हृदयग्राहिणी कविता अथवा कोई ग्रन्थ ले मिलने उपस्थित करनेसे वह यथायोग्य पुरस्कार देते थे। सिन्धु और विन्दुसारादि देश अवसर नदीमें विविध शिल्पसमन्वित एक यन्त्रागार निर्माण कराया। उनके आदम खान्, हाजीखान् और बहरमखान् नामक तीन पुत्र हुये। हाजीखान्से बहरमखान् छोट थे। उसमें हाजीखान् श्रेष्ठ रही। जिन उल-अब-दीनने राज्यका बहुविध मङ्गलकर कार्यसाधनकर ५२ वर्ष राज्य शासनपूर्वक शरीर छोड़ा था। उनके बाद हाजी खान् राजा हुये। उन्होंने मुद्रापर "हैदरशाही" नाम अङ्कित कराया था। रिलैतर नामक कोई नापित राजा को अत्यन्त प्रिय रहा। वह मन्त्री हो प्रजाको अतिशय कष्ट देता और राजाका कुकार्यमें फांस होन दु खी प्रजाके सन्तोष देता था। हाजी खान्ने धोप कर्मचारी और शुभी महन्तिको प्रवर्तनाके द्विजोंको सताया और अपने पितामहत्तसम्पत्तिके ब्राह्मणोंको दूर भगाया। उन्होंने १ वर्ष २ मास राजत्व किया।

बाद उनके पुत्र हसनशाह राजा हुये। उन्होंने विहारमठके निकट मनोहर राजधानी बनायी थी। वहीं उनकी माताने एक धर्मशाला भी निर्माण करायी। राजा हसन शाहने अनेक मसजिद धर्मशाला प्रभृति बनाये थे। अपरन्तु नदीमें मठ, अग्रहार दान देव मन्दिरनिर्माण प्रतिमापूजा आदि सत्कार्य द्वारा अपनी राजसम्पत्तिका साफल्य सम्पादन किया। वह अनेक दैशज पट समझते थे। वह सङ्गीतशास्त्रज्ञ भी रहे। वह स्वर्ण उत्तम रूपसे राग आलाप कर सकते थे। उनके समय प्रजाने सुखसे कालातिपात किया। पितृव्य बहरामखान् राजत्वलाभको आशामें ज्वलन्त बहुबार हारे थे। उन्होंने ६० लौकिकाब्दको चैत्रमास १२ वर्ष ५ दिन राज्य भोगके बाद प्राण त्याग किया।

इसनके बाद उनके पुत्र मुहम्मद शाह काश्मीरका राज्यलाभ कर २ वर्ष ७ मास राजा रहे। उनका राज्य मन्त्रियोंकी कुछ अभिसन्धिसे डोल उठा था। वह सेवकयोगोंके वीक्षित रहे। उन्हींके सैयदोंने उनके राज्यमें प्राधान्य पाया था। मुहम्मदके समय मल्लों और सैयदोंका महाविप्लव उपस्थित हुआ। बाद उनके पितृव्य फतेहशाहने काश्मीरका सिंहासन आरोहण किया। उनके समय प्रजाने स्वधर्मनिरत और उत्साहादिगुणादि विभूषित हो सुखसे समय बिताया था। वह ८ वर्ष १ मास शासन कर राज्यच्युत हुये। उनके कोई चन्द्रवंशीय ब्राह्मणपुत्र सोमराजानक नामक विनयी मंत्री रहे। किन्तु उनके और शिवके आदिमें ब्राह्मणोंके पूर्वप्रदत्त अवश भूमि छीन दिया उपस्थित सत्रोंको प्रधान बनाया था।

अनन्तर मुहम्मदशाहने पुनर्वार काश्मीरके राजा हो ११ वर्ष १० मास १० दिन शासन चलाया। उनके समय बहुमहादि मन्त्रियोंने सोमराजानकसे वैदिक विस्तृत सिन्धू निवीका पुनरुद्धार किया था। किन्तु प्राणा शोर अपसहने घर बल कर निर्मलादि ब्राह्म-

थोंको मरवा डाला—"हे विप्र लोगो! इस कलियुग में तुम्हारा ब्रह्मतेज कहां है? या आचार हो कहां है?" उसी समय मुहम्मद शाहको फतेहशाहका मृत्युसंवाद मिला था। उनके समय अन्य किसी चक्रवर्ती राजा गजपति सिकन्दरने काश्मीरराज्य आक्रमण किया, किन्तु मुहम्मदने उनको हरा दिया। फिर फतेहशाहके पुत्र खान् पिलप्य राजा पुनः पानेकी आशासे काश्मीर पहुंचे। उनने मुहम्मदको राज्यभ्रष्ट किया था। उसके काचनचकने इब्राहीमको काश्मीरका राजा बनाया। उसी समय काश्मीरराज्यमें तुरुष्क राजका विषम उपद्रव उठा था। प्रथम मार्गेश्वर अब्दलने मुगलराज बाबरके निकट गमनपूर्वक काश्मीर राज्य जीतनेके लिये सैन्य मांगा। बाबरने उनको एक सहस्र सैनिक दिये थे। अब्दलने फतेहशाहके पुत्र नाजुकखान्को आगे रख गिरिपथसे काश्मीर राज्यमें प्रवेश किया। उनने तुरुष्क सैन्य द्वारा काश्मीर जीत नाजुकशाहको राजा बना दिया।

फिर मुहम्मद शाहके लोहरका राजा होने पर तुरुष्क-सैन्य अपने स्थानको चला गया। नाजुक शाहने १ वर्ष राजत्व कर मुहम्मदसे यौवराज्य पाया था। ५ वर्ष पीछे पुनर्वार मुहम्मद राज्यपर अभिषिक्त हुवे, उसके पीछे बाबर मर गये। उनके कामरान् और हुमायूं नामक पुत्रद्वयने काश्मीरराज्य लाभ किया। कुछ दिन पीछे महरम नामक सेनापति बहुतर सैन्य ले काश्मीर जीतने गये थे। पौरगणने भयसे पार्वत्य प्रदेशको पलायनपूर्वक गुहादिमें आश्रय लिया। उस समय पुरीको शून्य देख मुगलोंने राजधानीके मकान गृहादि जला दिये और सहस्र सहस्र व्यक्तियोंके प्राण विनाश किये। फिर काश्मीरमें काशगरोंका उपद्रव उठा था। उससे तुरकोंने बहु ग्राम नगरादि जला डाले और धन रत्न एवं रमणीय रत्न ग्रहणपूर्वक स्वदेशको चले गये। उसके पीछे काश्मीरराज्यमें भयानक दुर्भिक्ष पड़ा था। मुहम्मदशाहने फिर ५ वर्ष राजत्व कर कलेवर परित्याग किया।

अनन्तर उनके पुत्र शमसशाह राजा हुवे। उनके समय काचचक्रपति काश्मीर आक्रमण करने जैन-पुरसे चल पड़े। बाद सन्धिसूत्रसे युद्ध बन्द हो गया। शमशशाहके बाद उनके भ्राता इस्मा इल शाह राजा हुवे। उधर मुगल सेनानी नाजुकशाह पापण्ड देश जीतने सैन्य सह चले गये। नाजुकशाहके राजत्वकाल काश्मीरकी प्रजाने सुख स्वच्छन्दसे दिन यापन और समस्त वैदिक क्रिया कलाप निर्विघ्न निर्वाह किया था। उनके समय ग्राम विभाग पर कर्मचारियोंमें विरोध हो गया। उसी विरोधसे मिर्जा हैदर और दौलतखान् लड़ने लगे। एक मास लड़ाई होनेके पीछे दौलत (गाजीखान्) जीते थे। उसके पीछे इन्होंने राज्यशासन किया। उनके समय काश्मीरमें भयङ्कर भूमिकम्प हुवा था। उससे अनेक स्थान विपर्यस्त हो गये। किसी दिन दौलतखान्ने तुलमुल स्थान पर अभिमन्यु नामक महात्मा साधुके निकट जाकर पूछा था—"हमारा राज्य किस प्रकार विस्तृत होगा।" उस पर साधुने उत्तर दिया—"ब्राह्मणोंसे वार्षिक कर न लेने पर तुम्हारी अभीष्ट सिद्धि होगी।" यह सुनकर दौलतने कहा था—"हम म्लेच्छ हो कर आपकी आज्ञासे किस प्रकार ब्राह्मणोंका कर निवारण करेंगे?" उस पर साधुने क्रोधाविष्ट हो शाप दिया—"अल्पदिनके मध्य ही तुम्हारी राजश्री बिगड़ जायेगी।" उसीसे दौलतकी राजसम्पत्ति विनष्ट हो गयी। उसके पीछे इब्राहीम नामक किसी व्यक्तिके एक मास राजत्व करने पर गाजीखान्ने राज्य ग्रहण किया था। किसी दिन उनने गणकोंसे पूछा—"हमारे राज्यमें भूमिकम्पादि दुर्निमित्त क्यों होते हैं?" उनने उत्तर दिया—"आपके राज्यमें कोई घोरतर लड़ाई होगी।" कुछ दिन पीछे मिर्जाहैदरके सेनानी हस्तत् सैन्यदल ले काश्मीर जा पहुंचे। गाजीशाहने ससैन्य राजविर नामक स्थानमें जा युद्ध घोषणा की थी। उस लड़ाईमें हैदरके सेनानी गाजीशाहका सागरसदृश सैन्यसमूह देख भयसे भाग गये। उसके पीछे गाजीशाहसे चक लोगोंका युद्ध हुवा। उसमें उनने हुसैनचकको मार जय पाया था।

मुगलराज शाह अब्दल मालीके बहुतर सैन्यके साथ काश्मीर जय करनेका उपस्थित होने पर दौलत

सबको मिलाके मसऊदअब्बार परिहासपुरके निकट लड़ाई करनेको अग्रसर हुवे। घोरतर लड़ाई हुई थी। उसमें मुजफ्फराबादको बहुतसी सेना मारी गयी। यह अपने स्थानको भगे थे। दौलत अतिशय निष्ठुर रहे। किसी दिन एक चोराके अपराधमें उनने एक बालकके दोनों हाथ काट डाले थे। फिर उनके प्रतापशाली पुत्रने मातुलके प्रति कोई अत्याचार किया था। दौलतने उसे भी मार डाला। उनके राज्यमें १८ मन्त्री रहे। अवशेषको वह गलित कुष्ठरोगसे आक्रान्त हुवे। उनने दरबारोंमें नरकयन्त्रणा भोग फल पाया था।

दौलतके बाद उनके भ्राता हुसैनखान्ने राज्यभार लिया। वह दाता और प्रजारञ्जक थे। खान् अमान् नामक मन्त्रीने उन्हें हटा कुछ थोड़े दिन राज्य किया। वह प्रति दिन सौ लोगोंको वध करता था। यहां तक कि दिलावरखान् द्वारा उनने अपने पुत्रको भी मरवा डाला। हुसैनखान्ने फिर आकर मल्लिकको मारा था। पीछे अपस्मार रोगसे हुसैनखान्का मृत्यु हुवा। उनने ५ वर्ष राजत्व किया था।

फिर उनके भ्राता अलीखान् राजा हुवे। वह प्रजाको सुखी करने पर तत्पर रहे। उसी समय घोर दुर्भिक्ष पड़ गया। ८ वर्षके राजत्व बाद अलीखान् मरे थे।

अलीखान्के बाद उनके पुत्र यूसुफशाहने राजत्व ग्रहण किया। किन्तु उनके पितृव्य अब्दलखान्ने किसी दूतके हाथ कहला भेजा था—"भ्राताके मरने पर भ्राता ही राज्यपद पाता है। आप क्यों राजसम्मानकी आशा करते हैं।" सिकन्दरपुरमें अब्दुल और यूसुफकी लड़ाई हुई। अब्दुलने प्राणत्याग किया था। उसके बाद सुगारखान् यूसुफसे लड़ने चले। यूसुफके सेनापति मुहम्मदखान् उस लड़ाईमें मारे गये। उसके बाद सुवारखखान् काश्मीरके राजा हुवे। यूसुफने अकबर बादशाहके निकट दिल्ली जा साहाय्य मांगा था। उसी समय अलीने मुहम्मदखान्को धरा और उनको काश्मीरका राज्य दे डाला। यूसुफने अकबरके निकटसे लौट किलफाविहित कायपुर ग्राममें अवस्थान किया था। सोरखाब उनसे लड़ने लगे। उस लड़ाईमें आकर अबके मन्त्री अब्दुलकमीर मारे गये। फिर यूसुफने काश्मीरका सिंहासन पाया था। उस समय लोहरखान्ने याकूबका पक्ष लिया। किन्तु याकूबने सुविधा देख उनकी और उनके भाईके नेत्र फोड़ डाले। फिर हैदर चकके साथ याकूबका युद्ध हुवा। उसमें हार हैदर अकबर बादशाहके पास भाग गये। यूसुफने काश्मीर छीन बहुत उपढौकनसह अपने पुत्रको सम्राट् अकबरके निकट भेजा था। अकबरने यूसुफके भेजे उपढौकन पाके भी काश्मीरके लेनेका अभिलाष न छोड़ा। उन्होंने भगवान्दास सेनापतिको काश्मीर भेजा था। यूसुफ भगवान्दासको बहुतर धनरत्न उपहार दे अकबरके शरणागत हुवे। कुछ दिन राज्य कर वह अन्त पर सम्राट्के सेनाध्यक्ष बने रहे। फिर उनके पुत्र याकूबने काश्मीरका राजत्व किया। उस समय मन्सबदार [illegible] जो याकूबसे लड़े थे किन्तु शीघ्रको हार गये।

फिर सम्राट् अकबरको काश्मीर विजयकी धुन चढ़ी थी। उन्होंने बहुतर सैन्यके साथ कासिमखान्के अधीन २२ सिपाहसालार काश्मीर भेजे। कासिमखान्के आगमनकी बात सुन याकूबने पलायन किया था। उनका सैन्य सकल छिन्न भिन्न हो गया। फिर उनमें अल्प संख्यक सैन्य ही कासिमसे लड़ाई की। किन्तु सुगम होते थे। हैदरचक कासिमखान्की शरण दिये गये। उन्होंने लोगोंसे उनका पक्ष अवलम्बन किया। कासिमखान्ने हैदरचकके साथ अनेक व्यक्तियोंको देख कर पकड़ा था। उससे काश्मीरके बहुतसे प्रजा भयसे उनको मान गये। उनमें सब लोग मिले थे। लड़ाई करनेको असमर्थ हो प्रजा याकूबखान्को ले गये। कासिमने लोमारखान्को याकूबके विरुद्ध भेजा था। याकूबने शहाबिपुरमें लोमारखान्की सेना पर आक्रमण किया। कासिमखान्ने काश्मीरका बहुतर सैन्य देख आत्मरक्षा किंतु हैदरचकको मार डाला। उसके बाद कासिम और याकूबकी लड़ाई हुई। किन्तु जय पराजय समझ न पड़ा। याकूब काठवार चले गये। उस समय याकूबके पिता यूसुफ और अन्यान्य प्रधान व्यक्तिने सन्धिके लिये प्रार्थना की। कासिमने यूसुफ प्रभृति व्यक्तिको अकबरके पास भेजा था। अकबरने उन्हें नजरबन्द किया।

उसी समय काश्मीरमें तुषारपात आरम्भ हुआ। याकूबने ससैन्य काठवाटसे निकल मुगलसेनाको आक्रमण किया था। ३ मास तक लड़ाई चली। कासिमखान्‌को पराजितप्राय सुन अकबरने युसुफखान्‌को काश्मीर जीतनेके लिये आदेश किया था। यूसुफ खान्‌ने जाकर याकूबका पराजय किया। वह फिर अकबरके निकट लौट गये। १८५६ ई० को काश्मीर अकबरके हाथ लगा। उस समय अकबर काश्मीर देखने लाहोरसे चले थे। काश्मीरमें उपस्थित होने पर याकूब उनके शरणागत हुवे। अकबरने उन्हें राजा मानसिंहके अधीन सेनाध्यक्ष बनाया था। फिर वह युसुफखान्‌को काश्मीरका शासनकार्य सौंप देशान्तर को चले गये। यूसुफ काश्मीरराज्यका शासन करने लगे। किसी कारण यूसुफ अकबरके विरागभाजन हुवे थे। अकबरने यूसुफके प्रति क्रुद्ध हो काजी अलीको काश्मीरके शासन कार्यमें नियुक्त किया। काजी अलीके काश्मीरकोषका समस्त धन व्यय कर डालने से मुगलोंमें परस्पर विरोध उपस्थित हुवा। उसमें मिर्जा यादगारने काश्मीरियोंसे मिल काजी अलीके साथ लड़ाई की। काजी अली हार कर पर्वत पर भाग गये और वहीं जल बसे।

अनन्तर मिर्जा यादगारने काश्मीरके शासनकर्ता हो अकबरकी अधीनता मानी न थी। अकबरने शेख फरीदको ससैन्य काश्मीर भेज दिया। सूरपुरमें मिर्जा यादगार अपने अनुचरोंके ही हाथों मारे गये। शेख फरीदके शासनकाल अकबर फिर काश्मीर पहुंचे थे। उस बार उन्होंने अनेक सत्कार्य किये। उन्होंने सुना कि ब्राह्मण म्लेच्छराजसे देशान्तरको जाते थे। उसीसे प्रथम अकबरने चकवंशियोंसे वार्षिक कर लेना निषेध किया। फिर उन्होंने ढिंढोरा पिटाया था—"काश्मीरका जो व्यक्ति ब्राह्मणोंकी पूजा करेगा उसको तत्क्षण पारितोषिक मिलेगा। यहां जो ब्राह्मणोंसे कर लेगा, उसका घर उसी समय गिरा दिया जावेगा। फिर ब्राह्मण उन्हें आशीर्वाद देने लगे। अकबरके कोई रामदास धर्मचारी काश्मीरवासी ब्राह्मणोंका नियत उपकार करते थे। वह ब्राह्मणोंको देखते ही स्वर्णरौप्य दे देते रहे। उन्हें कुछ भी अभिमान न था। प्रवाद है कि उन्होंने प्रत्येक ब्राह्मणके घर सौ सौ रुपये और एक एक अशरफी बांटी थी। अकबर भी काश्मीरी ब्राह्मणोंको विशेष रूपसे परितुष्ट रखते थे। किसी दिन उन्होंने सहस्र स्वर्णमुद्रा दरिद्र ब्राह्मणोंको दे डालीं।

अकबरने यूसुफखान्‌को पुनर्वार काश्मीरका शासनकर्तृत्वभार सौंप लौटाया था। वह प्रजाका कोई अनिष्ट न कर राज्यशासन चलाने लगे। कुछ दिन पीछे यूसुफखान्‌के अकबरके काम साधनार्थ चले जानेसे उनके पुत्र मिर्जालश्कर काश्मीरके शासनकर्ता हुवे। उन्होंने निम्नलिखित आदेश निकाला था—"जो व्यक्ति काश्मीर-निवासियोंको सतावेगा, वह तत्क्षण अपने अपराधका फल पावेगा।" मिर्जालश्करके ८ वर्ष शासन करने पर अकबरने पहले अयाजखान् और उसके पीछे अहमदखान् तथा सुलतान मुहम्मद कुली खान्‌को काश्मीरका शासनभार प्रदान किया। उनने काश्मीर जा दुर्नीतिको पकड़ा था। उसी समय अकबरके आदेशसे उक्त दोनो शासनकर्ताओंने प्रवरपुरके निकट एक नगनामका दुर्ग और शारिका पर्वतके पास नग नामक नगर निर्माण कराया। वर्तमान श्रीनगर जैन-उल्-आब्दीन निर्मित पुरातन नगरीके सन्निधानमें ही बसा था। किसी दिन मध्याह्न कालको पुरातन नगरी अकस्मात् जलने लगी। दो सहस्र गृहसम्बलित उक्त नगरी अल्प क्षणके मध्य ही भस्मावशेष हुयी। उस समय नवीन नगरी सपत्नी विनाशसे प्रियतमा रमणीकी भांति फूल कर आनन्द प्रकाश करने लगी।

काश्मीर अकबरके पुत्र जहांगीरका अतिप्रिय स्थान था। वह प्रियतमा नूरजहान्‌के साथ सर्वदा वहां वसन्तलीला करते थे। काश्मीरमें अद्यापि नूरजहान्‌के लीला-उद्यान और मनोरम प्रासादका भग्नावशेष देख पड़ता है।

जबतक दिल्लीके मुगल बादशाहोंका प्रभाव अक्षुण्ण था, तबतक काश्मीरराज उनके अधीन रहा। उस समय कोई शासनकर्ता दिल्लीके अधीन राजकार्य

निर्वाह करता था। १८१९ ई० को पठान और पञ्जाब साह दुर्रानीने काश्मीर राज्य जीता था। फिर कुछ कालतक पठानोंका प्रभाव रहा। १८१९ ई०को महाराज रणजीत् सिंहने काश्मीर अधिकार किया। उस समय सिखराजके अधीन कोई शासनकर्ता भेजा जाता और काश्मीरका शासनकार्य चलाता था। १८४६ ई०को जम्मू, लादख और बल्तिस्थानके साथ काश्मीरभूमि गुलाबसिंहको मिल गयी। १८४६ ई० को सोब्रांवके युद्धके बाद गुलाबसिंहने ७५ लाख रुपये दे अंगरेजोंसे काश्मीरराज्य क्रय किया था। गुलाबसिंह अंगरेज गवरनमेण्टके एक मित्र राजा बने। युद्धकाल वह अंगरेज गवरनमेण्टको साहाय्य करने पर बाध्य थे। किन्तु वह स्वाधीन भावसे हिन्दू राजनीतिके अनुसार राज्य करते थे। (गुलाब सिंह देखो।) १८५७ ई० को गुलाब सिंह के मरने पर उनके पुत्र रणवीर सिंह राजा हुये। उन्होंने १८६२ ई०को अंगरेज सरकारसे २१ तोपोंकी सलामी, 'इण्डियनैम्पायरिका' और 'महारानीका मन्त्रिल' पाया था। १८८५ ई०को जम्मू नगरमें रणवीरसिंह मर गये। फिर उनके ज्येष्ठपुत्र प्रतापसिंहने सिंहासन लाभ किया। उनकी सभामें वृटिश रेसीडेण्ट युक्त हुये।

प्रतापसिंहको वृटिश गवर्नमेण्टसे जी० सी० एस० आई० उपाधि, परंपराके लिये 'महाराज' पद और वेद सम्मानको सूचक २१ तोपोंकी सलामी प्रदान की है।

काश्मीरराज महारानी भारतेश्वरीको प्रतिवर्ष एक घोड़ा, १२ सेर पशम और और पश्मीना ३ काश्मीरी दुशाले कर स्वरूप देते थे। अब काश्मीरराज सम्पूर्ण रूपसे वृटिश सरकारके अधीन है।

कह्लणने लौकिक संवत् ६९८से लौकिक संवत् ४२१ तक अर्थात् प्रथम गोनन्दसे लेकर कलादित्य तक जिन राजाओंके नामका उल्लेख किया है। उन्होंने अवश्य काश्मीरके सिंहासनपर आरोहण कर राज्य किया था। ऐसा निःसन्देह उन नामों की कीर्ति सूचक चिह्न और किंवदन्तियोंसे ज्ञात होता है। परन्तु उनके नामोंको सूची जिस क्रमसे लिखित है वह ठीक वैसी ही है इसमें पूरा पूरा सन्देह है और इतनी बात मह तो निश्चय है कि—उन नामों का शासनकाल अवश्य ही कुछ लगता है। [illegible] । अर्थात् संवत्के पाती बढ़ाने को कुछ किया है वह अवश्य ठीक है और इसलिये इतिहासवेत्ता उस समयकी वास्तविक कालानुसार इतिहास प्रकट करते हैं।

काश्मीरके राजाओंकी तालिका।

राजाका नाम	अभिषेककाल	राज्यकाल
गोनन्द १म (कलिके गते ६५३ वत्सर तथा १९८ बौद्धिक	वत्सर)	
दामोदर १म		
यशोवती		
गोनन्द २य		
(३५ राजाओंका विवरण लुप्त है)		
लव	—	
कुश		
खगेन्द्र	—	
सुरेन्द्र	—	
गोधर		
सुवर्ण		
जनक		
शचीनर		
अशोक		
जलौक		
दामोदर २य		
हुष्क, जुष्क कनिष्क *		
अभिमन्यु १म		

(उपर्युक्त राजाओंके लिये: ११८८ वर्ष ६ (११८०-१८२०))

गोनन्दवंश।

राजाका नाम		अभिषेककाल		राज्यकाल
गोनन्द ३य	—	१९८२-०-० खृ०पू०		३५ वर्ष
विभीषण १म	—	१९४७-०-०	,,	५३ ,, ६ मास
इन्द्रजित्	—	१८९३-६-०	,,	३५ ,,
रावण	—	१८५८-६-०	,,	३० वर्ष ६ मास
विभीषण २य	—	१८२८-०-०		३५ वर्ष ६ मास
नर (किन्नर) वा किन्नर		१७९२-६-०	,,	३९ वर्ष ९ मास
सिद्ध	—	१७५२-९-०	,,	६० वर्ष
उत्पलाक्ष	—	१६९२-९-०	,,	३० वर्ष ६ मास
हिरण्याक्ष	—	१६६२-३-०	,,	३७ वर्ष ७ मास
हिरण्यकुल	—	१६२४-८-०	,,	६० ,,
वसुकुल वा मुकुल	—	१५६४-८-०	,,	६० ,,

* ये दोनों राजा ई० सन् प्रथम शताब्दी विख्यात हैं। (कनिष्क देखो।) विद्वानोंके और बौद्धिक विवरणके अनुसार यह है, इस कारण लिखा गया है।

राजा	आरम्भ		राजत्वकाल
मिहिरकुल* वा विशोटिहा	२२०२-६-०	,,	... वर्ष
वक ...	२४५२-६-०	,,	६३ ,, १३ दिन
क्षितिनन्द ..	२५१५-४-१३	,,	३० ,,
वसुनन्द ...	२५४५-४-१३	,,	५२ वर्ष २ मास
नर २य ..	२५८८-६-१३	,,	६० ,,
अक्ष ...	२६४८-६-१३	,,	६० ,,
गोपादित्य .	२७०८-६-१३	,,	६० वर्ष ६ दिन
गोकर्ण	२७६८-६-१९	,,	५७ वर्ष ११ मास
नरेन्द्र वा खिङ्खिल* ...	२८२५-५-१९	,,	३६ ,, ३ मास १० दिन
युधिष्ठिर ..	२८६१-८-२९	,,	३४ वर्ष ५ मास १ दिन

विक्रमादित्य-शकारिवंश ।

राजा	आरम्भ		राजत्वकाल
प्रतापादित्य† (प्रथम) ...	२८९६-०-०	लौ० सं०	३२ वर्ष
जलौक ..	२९२८-०-०	,,	३२ ,,
तुञ्जीन (प्रथम) .	२९६०-०-०	,,	३६ ,,
विजय (अन्य वंश) ...	२९९६-०-०	,,	८ ,,
जयेन्द्र .	३००४-०-०	,,	३७ ,,
सन्धिमति वा आर्यराज	३०४१-०-०	,,	४७ ,,

गोनन्दवंश (२य बार)

राजा	आरम्भ		राजत्वकाल
मेघवाहन ..	३०८८-०-०	लौ० सं०	३४ वर्ष
प्रवरसेन प्रथम वा तुञ्जीन २य	३१२२-०-०	,,	३० वर्ष
हिरण्य और तोरमाण*	३१५२-०-०	,,	३० वर्ष २ मास
मातृगुप्त (अन्य वंश)	३१८२-२-०	,,	४ ,, ९ मास १ दिन
प्रवरसेन २य ...	३१८६-११-१	,,	६० ,,
युधिष्ठिर २य ...	३२४६-११-१	,,	३९ वर्ष ३ मास
नरेन्द्र वा लक्ष्मण ..	३२८६-२-१	,,	१३ ,,
रणादित्य वा तुञ्जीन ३य,‡	३२९९-२-१	,,	३०० ,,
विक्रमादित्य	३५९९-२-१	,,	४२ वर्ष
बालादित्य	३६४१-२-१	,,	३६ ,, ८ मास

कायस्थ वा कार्कोट वंश ।

राजा	आरम्भ		राजत्वकाल
दुर्लभवर्धन वा प्रज्ञादित्य	३६७७-१०-११	लौ० सं०	३६ वर्ष
दुर्लभक वा प्रतापादित्य २य*	३७१३-१०-१	,,	५० ,,
चन्द्रापीड वा वज्रादित्य†	३७६३-१०-१	,,	८ ,, ८ मास
तारापीड वा उदयादित्य	३७७२-६-१	,,	४ ,, २४ दिन
मुक्तापीड वा ललितादित्य‡	३७७६-१-२५	,,	३६ ,, ७ मास ११ दिन
कुवलयापीड	३८१३-९-६	,,	१ वर्ष १५ दिन
वज्रादित्य वा ललितादित्य २य	३८१४-९-२१	,,	७ ,,
पृथिव्यापीड	३८२१-९-२१	,,	४ ,, १ मास
संग्रामापीड (प्रथम)	३८२५-१०-२१	,,	७ दिन

* ई० ६ठ शतकमें विद्यमान थे।

† राजतरङ्गिणीमें लिखा है—

"अथ प्रतापादित्याख्यस्तैरानीय दिगन्तरात् ।
विक्रमादित्यभूभर्तुर्ज्ञातिराज्येऽभिषिच्यत ।
शकारिविक्रमादित्य इति स भ्रममाश्रितैः ॥" (२ । ५—६)

उक्त श्लोक द्वारा संवत्प्रतिष्ठाता शकारि विक्रमादित्यके पीछे प्रतापादित्यका राज्यारम्भ अवश्य मानना पड़ता है। किन्तु कल्हणने काश्मीरके राजाओंका राजत्वकाल जिस प्रकार स्थिर किया है, उससे प्रतापादित्य १६८ खृ० पूर्वाब्द अर्थात् संवत् प्रतिष्ठातासे ११२ वर्ष पूर्वके लोग समझ पड़ते हैं।

‡ राजतरङ्गिणीमें लिखा है कि रणादित्यने ३०० वर्ष राजत्व किया था। यथा— "एवं स भूपतिर्भुक्त्वा भूवं वर्षशतत्रयम् ।
निर्वाधश्चार्यविम्यं उपासाद्विश्वमासदत् ॥" (३ । ४०२)

किन्तु एक व्यक्तिके लिये इतने दीर्घकालपर्यन्त राजत्व करना क्या सम्भव है? मालूम नहीं। ऐसा कल्हणने रणादित्यके परवर्ती राजगणके राजत्वकाल समयमें यथेष्ट और प्रकृत प्रमाण दिया था। उनके पूर्ववर्ती राजगणका यथार्थ विवरण प्राप्त होने। प्रकृत समयके निरूपण सम्बन्धमें वह कोई विशेष प्रमाण न दे सके। क्योंकि सम्भवतः विक्रमादित्य शकारिके साथ प्रतापादित्यसे पूर्ववर्ती राजा युधिष्ठिरका राज्यकाल बिलकुल निरूपण किया न गया। फिर प्रतापादित्य शकारि विक्रमादित्यके परवर्ती होने भी उनको गणनामें पूर्ववर्ती लिखते हैं। उक्त कारणसे कल्हणने जो ३०० वर्ष रणादित्यके शासनकाल मान लिये हैं, हमारी विवेचनासे वह प्रतापादित्य पूर्ववर्ती राजगणके राजत्वमें जोड़ जायेंगे। इस रीतिसे गणना करने पर शकारि विक्रमादित्य और उनके ज्ञातिवंशीय प्रतापादित्यका प्रकृत समय निर्दिष्ट हो सकता है। राजतरङ्गिणीके मतसे रणादित्यके पीछे उनके पुत्र विक्रमादित्यने ४२ वर्ष राज्य किया था। किन्तु उक्त दीर्घकालके राज्यका विवरण कल्हणने कुछ भी नहीं लिख दिया है। उसमें पहले भिन्न भिन्न राजाओंने दीर्घकाल राजत्व किया कल्हणने उनके समयमें बहुत कुछ लिखा है। किन्तु उनके सम्बन्धमें वह नहीं मालूम पड़े? अधिक यही सम्भवपर है कि पितापुत्र उभयने ४२ वर्ष राजत्व किया था।

* चीन इतिहासमें इनका समय ई० ६२७ से लेकर ६४९के बीच बताया गया है। इनका परिचय सुयेन-चुयङमें लिया गया है।

† चीन इतिहासमें इनका नाम चेन्-तो-लो-पि-लि लिखा है। और उन्होंने सन् ७१३ ई० में चीन-सम्राट्के पास अरब लोगोंके विरुद्ध युद्ध करनेमें सहायता मांगनेके लिये दूत भेजा था।

‡ चीन इतिहासमें 'मु-तो-पि' नामसे इनका उल्लेख है। ई० सन ७३६से ७४७के बीच जब अरबलोगोंके साथ युद्ध करनेके लिये चीनी सेना भेजी गई थी, उसी समय मुक्तापीडने चीन-सम्राट्के पास दूत भेजा था।
Vide Kalhan's Chronicle of the Kings of Kasmir, by M. A. Stein, Vol. 1 (intro. p. 67.)

सुलतान नाजुकशाह (द्वितीयबार)		१६ वर्ष ८ मास
इब्राहिम (द्वितीयबार)		१ वर्ष ४ मास
मिर्जा हैदरखान्	१५४१ ई०	१० वर्ष
सुलतान नाजुक शाह (तृतीयबार)		१० मास
इस्माईल इस माइल हबीब गाजीखान्		१० वर्ष ६ मास
हुसेन चक	१५६३ ई०	७ वर्ष
अलीशाह चक		८ वर्ष
युसुफ शाह	१५८० ,,	१ वर्ष १० दिन
सैयद मुबारक		१ मास २५ दिन
लोहर चक		१ वर्ष ७ मास
युसुफ शाह (द्वितीयबार)		४ वर्ष ३ मास
याकुबखान्		१ वर्ष
दिल्लीश्वर मुगलसम्राट्के अधीन १५८६ ई० से १७५२ ई०		
अहमदशाह दुरानी	१७५२ ,,	
पठानोंके अधीन	१७५२ ,, से १८१९ ई०	
रणजीतसिंह	१८१९ ,,	
गुलाबसिंह	१८४६ ,,	१५ वर्ष
रणवीरसिंह	१८५८	२८ वर्ष
प्रतापसिंह	१८८५ ,,	

प्राचीन मन्दिर और भग्नावशेष—तुषारमय शैलश्रेणिवेष्टित काश्मीरमें भी बहुतसी पुरानी चीजें देखने लायक हैं। इतिहास पढ़नेसे समझते हैं कि काश्मीरके प्रायः सकल हिन्दूराजाओंके द्वारा अथवा उनके राजत्वमें अपर व्यक्तिवर्ग कर्तृक नाना स्थानोंमें सहस्र सहस्र देव-मूर्ति एवं देवमन्दिर प्रतिष्ठित हुवे थे। कालवश उनमें अधिकांश बिगड़ गये। फिर भी उनकी संख्या बहुत कम नहीं। आज भी श्रीनगर, पाण्डुवन, अवन्तिपुर, तख्त सुलेमान, पामपुर, पत्तन, लिदरी, काकपुर, वराहमूल, यमपुर, भवानीयर, वर्णकोटरी, भीमज, पायच, मार्त्तण्ड, मतापुर, मानसबल, नारायणस्थान, फतेहगढ़, तैरम, दुधनमा, वङ्गासके निकट, नौसेहरा, तथा इरीका मध्यवर्ती दिमस नामक स्थान और खुनमोके अनेक प्राचीन देवालय भग्न या अभग्न अवस्थामें पड़े हैं। उन प्राचीन मन्दिरोंका शिल्पनैपुण्य देखनेसे चमत्कृत होना पड़ता है। हिमानीमण्डलके मध्य स्थल पर पाषाणमय देवमन्दिर दर्शन करनेसे किसी अद्भुत रसका आविर्भाव होता और निर्माताको सहस्र धन्यवाद देनेके लिये जी चाहता है। प्राचीन भारतवासियोंकी शिल्पविद्याका परिचय काश्मीरमें यथेष्ट मिलता है।* अनेक प्राचीन देवस्थान पुण्यतीर्थकी भांति प्रसिद्ध हैं। वरफके ढेरको काटकर असंख्य तीर्थयात्री उक्त सकल प्राचीन पुण्यतीर्थ दर्शन करने जाते हैं। अमरनाथ देखो।

एतद्भिन्न काश्मीरके अनेक तीर्थोंमें आज भी अद्भुत नैसर्गिक व्यापार सङ्घटित हुआ करता है। उनको दर्शन करनेसे जगत्स्रष्टाकी अपार महिमा हृदयङ्गम होती है। भारतके प्रायः सभी देशोंमें तीर्थ हैं। उनमें जो अद्भुत व्यापार देखा जाता, उसमें अधिकांश अनेकोंकी धारणामें कृत्रिम कहाता है। किन्तु काश्मीरमें ऐसे अनेक तीर्थ हैं, जिनके नैसर्गिक व्यापारको देखकर कभी कृत्रिम कह नहीं सकते। यहां हम दो एक तीर्थकी बात कहेंगे।

क्षीरभवानी—श्रीनगरसे उत्तर ७ घण्टे नावकी राह पर एक क्षुद्र द्वीप है। उसमें एक कुण्ड विद्यमान है। इसीको क्षीरभवानी कहते हैं। वहां लोग क्षीर या पायसान्नसे देवी भवानीकी पूजा करते हैं। उक्त कुण्डका जल कभी लाल, कभी हरा, कभी गुलाबी नाना वर्णका आकार धारण करता है। वैसा क्यों होता है? कोई वैज्ञानिक उसका प्रकृत कारण ठहरा नहीं सकता है।

चलद्द्वीप—श्रीनगरके दक्षिण माछिहामा नामका परगना है। उस परगनेमें कोई अतिवृहत् जलाशय है उसके जलपर बड़े बड़े भूमिखण्ड पड़े हैं। उन भूखण्डों पर पेड़ पत्ते लगे हैं। पशु भी चरनेके लिये उनपर घूमा करते हैं। बड़ा ही आश्चर्य है! अधिक वायु चलनेसे उक्त भूखण्ड वृक्षादिके साथ घूमने लग जाते हैं।

---

* Asiatic Journal Vol XVII pt. II p 241-327, Vol. XXV. pt. 1 (1866) p. 91—123, Bühler's Sanskrit Mss in Kashmir (1877) p. 4—16 प्रभृति ग्रन्थोंमें काश्मीरके प्राचीन देवमन्दिरका विवरण मिलता है।

इच्छाबल—काश्मीरके दक्षिण भागमें देवसर पर गनेके बीच वासुकिनागकुण्ड है। उससे प्रायः १० कोस दूर बोरदेभ्रामके दूसरे पार्श्वपर गुनागनकुण्ड पड़ता है। आश्चर्यका विषय है कि इन दोनों कुण्डों से एकमें जल रहने पर दूसरा सूख जाता है। इसी प्रकार प्रत्येकमें छह छह मास जल रहता है।

सन्ध्या—सोनमरके दक्षिण ब्रेङ्ग परगनामें सन्ध्या नाम ग्राम है। उस ग्राममें ज्वालागङ्गा नामक कोई कुण्ड है। वह संवत्सर शुष्क रहता है। केवल ज्येष्ठमासकी शुक्लाष्टमी तिथिको उस भूमिमें जल आ अकस्मात् उसको परिपूर्ण कर देता है। इसीप्रकार काश्मीरमें जिस कई बहुत नैसर्गिक आश्चर्य होते हैं। सामान्य मानव उनके प्रकृत तत्त्वके निर्णयमें अक्षम है।

जाति—काश्मीरमें नाना जातिका वास है। इनमें प्राचीन अधिवासी ब्राह्मण है। जिनमें से अनेकोंने मुसलमान धर्म ग्रहण कर लिया है। काश्मीरका वर्तमान राजपरिवार डोगरा राजपूत जातिभुक्त है। डोगरा लोग जम्बू उपत्यकामें अधिक देख पड़ते हैं। इस जाति के सब लोग कट्टर हिन्दू होते हैं।

पश्चिमांशमें सिन्धुप्रवाहित गिरिप्रदेश अधित्यका सुमा तथा खखा जाति और दक्षिणांश एवं चिनाबके पश्चिम गक्खर, डुम्बर, चतोर, चिभ, बम्बू प्रभृति लोगोंका वास है। पूर्वांशमें लादख और बलतिस्तान प्रधानतः भोट जाति रहती है। जम्बूमें लोग सिख, हिन्दूपहाड़ी, गद्दी, बाटाल प्रभृति मिलते हैं। उत्तरांशमें प्रायः सर्वत्र चम्पा और दरद जाति देख पड़ती है।

काश्मीरके सम्बन्धमें विस्तृत विवरण जाननेको लिये निम्नलिखित पुस्तक देखें—कल्हण 'पण्डित राजतरङ्गिणी, जोनराजकृत राजावली, श्रीवरकृत जैनराजतरङ्गिणी, [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible], Malleson's Native States; Moorcroft's Travels, Forster's Journal, Vol II; Baron Hugel's Travels in Kashmir; Vigne's Travels; Cunningham's Ancient Geography of India; Drew's Jummoo and Kashmir; Schonberg's Travels in Kashmir; Bellew's Kashmir etc.

(त्रि०) १ काश्मीरदेशवासी, काश्मीरका रहनेवाला।

काश्मीरक (सं० त्रि०) काश्मीरे भव:, कश्मीर वुञ्। १ काश्मीरदेशीय, काश्मीरमें पैदा होनेवाला। (पु०) २ काश्मीरदेशवासी, काश्मीरका वाशिन्दा। ३ काश्मीर देशका राजा।

काश्मीरज (सं० क्ली०) काश्मीरे जायते काश्मीर जन-ड। पा ३।२।१०१। १ कुङ्कुम, जाफरान, केसर। २ कुष्ठभेद, एक दवा। ३ पुष्करमूल। ४ अतिविषा।

काश्मीरजन्म (सं० क्ली०) काश्मीरे जन्म यस्य, बहुव्री। कुङ्कुम जाफरान केसर।

काश्मीरजा (सं० स्त्री०) अतिविषा, अतीस।

काश्मीरजीरक (सं० क्ली०) शुक्लजीरक, सफेद जीरा।

काश्मीरपुष्प (सं० क्ली०) माधवी इव गम्भारीका पेड़।

काश्मीरा (सं० स्त्री०) काश्मीरे भवा काश्मीर-अण्-टाप्। पा ४।१।४१। १ अतिविषा अतीस। २ कपिल द्राक्षा, काला दाख। ३ रक्त पद्मिनी।

काश्मीरा (हिं० पु०) १ वस्त्रविशेष, कोई कपड़ा। यह मोटे ऊनसे तैयार होता है। २ किसी किस्मका अंगूर।

काश्मीरिक (सं० त्रि०) काश्मीरे भव:, काश्मीर-ठक्। काश्मीरदेशीय, काश्मीरमें पैदा होनेवाला।

काश्मीरी—काश्मीर देशकी भाषा। यह किसी अप-भ्रंश भाषासे उत्पन्न हुई है। इसके पहले पिशाची प्राकृत भाषा थी। वर्तमानकी काश्मीरी भाषा उसका दूसरा रूपान्तर है। इसको बोलनेवाले इसपरके ऊपर मुग्ध हैं।

काश्मीरी (सं० स्त्री०) काश्मीर-ङीष्। गम्भारी वृक्ष, गम्भारीका पेड़। २ [illegible]।

काश्मीरी (हिं० वि०) १ काश्मीरदेशसम्बन्धीय, काश्मीरसे ताल्लुक रखनेवाला। २ काश्मीरदेशवासी, काश्मीरका वाशिन्दा। (पु०) १ रसका पेड़। ३ काश्मीरका ब्राह्मण। काश्मीरमें नाना स्थानों पर विशेष विशेष लोग देख पड़ते भी पुरातन हिन्दू अधिवासीमात्र [illegible] नामसे अभिहित हैं। भारतवर्षमें नाना स्थानो [illegible] भेद रहता है, पर काश्मीरियोंमें देख नहीं [illegible] अपनेको 'काश्मीरिक' वा 'कारकुन' [illegible] है। अति पूर्वकालसे कश्मीर

आम्नायभूमि होते भी प्राचीन ग्रन्थमें इसका उल्लेख मिलता कि भारतके नाना स्थानोंसे जा कर ब्राह्मण काश्मीरमें बसे थे। कल्हनकी राजतरङ्गिणीमें गान्धार, कान्यकुब्ज, तैलङ्ग, गौड प्रभृति स्थानोंसे ब्राह्मणोंके जानेकी कथा कही है।

आजकल सब काश्मीरी ब्राह्मण एक समाजभुक्त है। सभी परस्पर अन्न ग्रहण और अध्यापनादि क्रिया करते हैं। किन्तु उनके समाजमें सबके साथ योनि सम्बन्ध नहीं चलता। आचार-व्यवहार भारतके अपर ब्राह्मणोंकी भांति है। फिर भी देशभेदसे कुछ पार्थक्य पड़ गया है। वह यथाकाल उपनयन ग्रहण करते हैं। समय उत्तीर्ण होने पर यथानियम प्रायश्चित्त भी किया जाता है। प्रायश्चित्त न करनेसे राजद्वारमें दण्डनीय होते है। हिन्दुस्थानमें ब्राह्मणसन्तान जैसे उपनयनके ५।७ दिन पीछे मेखला खोल रखते, काश्मीरमें वैसे नहीं करते। वह दीक्षाके पीछे आजीवन वामस्कन्ध पर यज्ञोपवीत और दक्षिणहस्तमें कुशकी मेखला रखते है। उनके द्वारा वेदोक्त कर्मकाण्ड तथा नियम पालन किये जाते है। फिर भी बहुतोंने शास्त्रचर्चा छोड़ दी है। कितने ही अंगरेजी फारसी पढ़ नाना उपायोंसे जीविका चलाते हैं। काश्मीरी ब्राह्मणोंमें कुछ व्यतिक्रम देख पड़ता है।

वह प्रायः सभी शैव हैं। वामाचार शाक्त बहुत अल्प दृष्ट होते हैं। पहले अनेक शैव, बौद्ध और भागवत वैष्णव थे। आजकल प्रायः तीन प्रकारके काश्मीरी ब्राह्मण देख पड़ते हैं—१म श्रेणीके ब्राह्मण 'पण्डित' नामसे प्रसिद्ध हैं। वह केवल शास्त्रचर्चामें अग्निष्टोम याग तथा श्राद्धादि कर्मकाण्ड द्वारा एवं राजवृत्ति-भोगसे कालको निकालते हैं। २य 'राजधान' हैं। वही प्रधान राजकर्मचारी और व्यवसायी होते हैं। वे संस्कृत भाषा छोड फारसी पढते हैं। ३य वाच-भट्ट होते हैं। वह लेखक, पुजारी और तीर्थस्थानमें पण्डेका काम करते हैं। १म श्रेणीके ब्राह्मण २य श्रेणी धानोंसे मन ही मन घृणा करते और कन्यादान करना ठीक नहीं समझते। पण्डित और वाचभट्ट ही ... तादि पालन करते हैं। १म श्रेणीके ब्राह्मण ... काश्मीरमें पञ्च धर्माधिकार पर नियुक्त होते हैं।

काश्मीरी ब्राह्मण सभी वेद पाठ किया करते हैं। कोई कोई अपनेको चतुर्वेदी बतलाते हैं। किन्तु वह काठकशाखाभुक्त हैं।

गोत्र—१म पण्डितश्रेणीके मध्य १ कापिष्ठल, २ कौशिक, ३ भारद्वाज, ४ उपमन्यु, ५ दत्तात्रेय, ६ गार्ग्य और ७ भार्गव गोत्र है।

२य-राजधानोंमें गौतम, लौगाक्षि और दत्तात्रेय गोत्र होता है।

३य-वाचभट्टोंमें विश्वामित्र और काश्यपगोत्र प्रचलित है।

शेष प्रत्यह वेदोक्त विधि और समय समय पर सोमशम्भुके क्रियाकाण्डानुसार तान्त्रिक पूजादि सम्पन्न करते हैं।

काश्मीर्य (सं० त्रि०) काश्मीर-ष्य। १ काश्मीरदेशीय, काश्मीरवाला। (क्ली०) २ कुङ्कुम, जाफरान्, केसर।

काश्य (सं० क्ली) कुत्सितं अश्यं यस्मात्, बहुव्री०। १ मद्य शराब। (पु०) २ काशिराजविशेष, काशीका कोई राजा। (भारत १।१०१।४८।)

काश्यक (सं० पु०) काश्य स्वार्थे संज्ञायां वा कन्। राजविशेष, कोई राजा।

काश्यप (सं० पु०) कश्यपस्य गोत्रापत्यम्, कश्यप-अण्। १ कणाद मुनि, २ मृगविशेष, कोई हिरन। ३ मत्स्य विशेष, एक मछली। ४ गोत्रविशेष। ५ काश्यप प्रवरान्तर्गत एक मुनि। ६ अरुणका नामान्तर। ७ ब्राह्मण-विशेष। काश्यप ब्राह्मण विषविद्यामें पारदर्शी रहे। महाभारतमें उनका विवरण इस प्रकार लिखा गया है—"जिस समय राजा परीक्षित सप्ताह मध्य सर्पदष्ट होनेको ऋषिपुत्रके अभिशप्त हुवे, उसी समय काश्यप ब्राह्मण उनको बचानेके लिये गये। पथिमध्य तक्षककी वह मिले थे। तक्षकने चिकित्साशक्ति देखनेको सम्मुखस्थ कोई वटवृक्ष दंशन द्वारा भस्मीभूत कर उन्हें जीवित करनेको कहा। उन्होंने स्वीय विद्याबलसे तत्क्षण वह वृक्ष पुनर्जीवित कर दिया। उसको देख तक्षकने सोचा, वह लोग अवश्य परीक्षितको फिर जिला सकेंगे। सुतरां उन्होंने ब्राह्मणोंको प्रचुर धनादि दे राजाके पास जानेसे रोक लिया।" (भारत आदि ४३ अध्याय)

(स्त्री०) ८ मांस गोश्त। (त्रि०) ९ काश्यप प्रजापतिसंबंधीय या गोत्रसम्बन्धीय।

काश्यपायन (सं० पु०) काश्यपस्य गोत्रापत्यम् काश्यप फक्। (पा ४।१।९९) काश्यपके गोत्रापत्य या वंशधर।

काश्यपि (सं० पु०) काश्यपस्य अपत्यम्, काश्यप बाहु- (ल) इञ्। १ अरुण, सूर्यके सारथी। २ गरुड़।

काश्यपिन् (सं० पु०) काश्यपेन प्रोक्तं अधीयते इनि, काश्यप णिनि। (शौनकादिभ्यश्छन्दसि। पा ४।३।१०६।) काश्यप प्रोक्त शाखाविशेषके अध्ययनकर्ता।

काश्यपी (सं० स्त्री०) काश्यपस्य इयम् काश्यप-अण् ङीप्। (अमर २।१।२) १ पृथिवी, जमीन। २ प्रजा रैयत।

काश्यपीबालाक्यामाठरीपुत्र (सं० पु०) वेदशाखा प्रवर्तक एक ऋषि।

काश्यपेय (सं० पु०) काश्यपी अदितिः तस्या अपत्यं, काश्यपी-ढक्। १ सर्व सूर्य।

'[illegible]।
[illegible]" ([illegible])

२ दिवाकर। ३ वरुणमात्र। ४ गरुड़।

काश्यायन (सं० पु०) काश्यस्य [illegible] गोत्रा पत्यम् काश्य फक्। [illegible]।

काश्या (सं० स्त्री०) काश [illegible] टाप्। [illegible]। [illegible] [illegible] [illegible] पेड़।

काष (सं० पु०) कषति हिनस्ति, कष कर्मणि घञ्। १ ऋषि प्रकार [illegible]। २ ऋषिविशेष।

काषाय (सं० त्रि०) कषायेण रक्तम्, कषाय अण्। कषायद्रव्य द्वारा रंजित, गेरुआ रंग।

'[illegible]' (रामायण २। [illegible])

काषायवस्त्र (सं० पु०) काषायं वस्त्रं यस्य, बहुव्री०। कषाय द्रव्य द्वारा रञ्जित वस्त्रवाला भिक्षुकविशेष।

काषायण (सं० पु०) काषस्य ऋषेः गोत्रापत्यम्, काष फक्। काषर्षिगोत्रीय कोई ऋषि। यह वामन लिङ्ग [illegible] है।

काषायवसन (सं० त्रि०) काषायं वसनं यस्य बहुव्री०। काषायवस्त्र परिधान किये हुए [illegible] हुआ।

काषायशामिक (सं० पु०) काषाये काषायरञ्जनकर्मणि शाम्यति [illegible] शम-ठञ्। कीटविशेष, एक कीड़ा। यह सौम्य और सविष होता है। इसके काटनेसे देहमध्य रोग हो जाता है।

काषायी (सं० पु०) काषायेण गोत्रमनपोते काषाय गोत्र- [illegible] इनि। १ काषाय [illegible] [illegible]। (स्त्री०) २ [illegible] [illegible] कोई [illegible] मक्खी।

काष्ठ (सं० क्ली०) काशते दीप्यते इनेन, काश क्थन्। [illegible] [illegible] दारु लकड़ी, काठ। काठका लक्षण इस प्रकार कहा गया है—

"[illegible]।
[illegible]।"

अर्थात् [illegible] [illegible] जो [illegible] [illegible], [illegible] [illegible] और [illegible] द्वारा [illegible] [illegible] [illegible] होता वही काठ कहलाता है।

काष्ठक (सं० क्ली०) काष्ठ इव कायति, काष्ठ कै क। [illegible] काष्ठ [illegible], काठ [illegible] [illegible] [illegible]। १ अगुरु। २ काष्ठागुरु। ३ [illegible]। (त्रि०) ४ काष्ठयुक्त।

काष्ठकदली (सं० स्त्री०) काष्ठवत् काठना कदली, मध्यपदलो०। वन्य कदलीविशेष, कठकेला। इसका [illegible] पर्याय सुकाष्ठा, वनकदली, [illegible], [illegible] तथा दारुकदली [illegible], इसमें [illegible] और [illegible] [illegible] है। [illegible] के मतानुसार यह [illegible] [illegible], शीतल, गुरु [illegible] [illegible] और [illegible] होती है। इसके [illegible] [illegible] [illegible], [illegible] [illegible], [illegible] और [illegible] दूर [illegible]। ([illegible])

काष्ठकीट (सं० पु०) काष्ठे जात: कीट: काष्ठच्छेदकी कीटो वा, मध्यपदलो०। काठको काटनेवाला [illegible] घुन।

काष्ठकीय (सं० त्रि०) काष्ठस्य इदम् काष्ठ छ। अगुरु काष्ठसम्बन्धीय।

* [illegible] [illegible] देखो।

काष्ठकुट्ट (सं० पु०) काष्ठं कुट्टन काष्ठ कुट्ट अण्। [illegible] [illegible], कठफोड़वा। [illegible] [illegible] [illegible] [illegible], पक्षि

कास (सं० पु०) कासते शब्दायते अनेन, कास-घञ्। रघु: ८।२।१।११ १ रोगविशेष, खांसी। कास देखो। २ शोभाञ्जनवृक्ष। ३ कासतृण, एक घास। ४ कफ। (वि०) ५ हिंसक, खूंखार।

कासकन्द (सं० पु०) कासहेतुः कन्दः, मध्यपदलो०। कसालुक, कसेरू।

कासकर (सं० वि०) कासं करोति, कास-कृ अच्। कासरोगोत्पादक, खांसी पैदा करनेवाला।

कासघ्न (सं० वि०) कास-हन् टक्। १ कासरोगनाशक, खांसी मिटानेवाला। (पु०) २ विभीतकवृक्ष, बहेड़ेका पेड़। ३ कासमर्द, कसौंदी। ४ कण्टकारी, कटैया। ५ मोदकविशेष, एक लड्डू। वह हरीतकी, पिप्पली, सुण्ठी, मरिच और गुड़के योगसे बनता और कासरोगको नाश करता है।

कासघ्नधूम (सं० पु०) पञ्चविध धूमगणान्यतम धूम, पीनेसे खांसीको मिटानेवाला एक धुवां। वह बृहती, कण्टकारी, त्रिकटु, कासमर्द, हिङ्गु, इङ्गुदीत्वक् और मनःशिला जलानेसे निकलता है। उक्त सकल द्रव्योंका वर्त्ति बना लेना चाहिये। (सुश्रुत)

कासघ्नी (सं० स्त्री०) कासघ्न ङीप्। १ कण्टकारी, कटैया। २ भार्गी।

कासजित् (सं० स्त्री०) कासं जयति, कास जि-क्विप् तुगागमश्च। १ भार्गी, ब्राह्मणयष्टिका। (वि०) २ कासरोगनाशक, खांसी मिटानेवाला।

कासनाशिका (सं० स्त्री०) १ अश्वविवृत्। २ कर्कटशृङ्गी, ककड़ासींगी।

कासनाशिनी (सं० स्त्री०) कासं नाशयति, कास-नश्-णिच्-णिनि-ङीप्। कर्कटशृङ्गी, ककड़ासींगी।

कासनी (फा० स्त्री०) क्षुपविशेष, एक पौदा। (Cichorium Intybus) वह भारतके उत्तरांश, चीन, पारस्य और इजिप्तमें उपजती है। कासनी खास केवल भारतवर्षके अंग भी नहीं, वरन् बहुत दिन यूरोपमें भी लगती है। प्लोनि, प्लिनि प्रभृति प्राचीन पण्डितोंके ग्रन्थमें उसका विवरण लिखा हुआ है।

मुसलमान हकीमोंके मतानुसार वह ग्राहक, शीतल और पित्तनाशक है। उसका मूल उष्ण, बलकर और ज्वरहर होता है।

पश्चिमकी कासनीका ही आदर विशेष है। वह पञ्जाब तथा काश्मीरसे उत्तर साइबेरिया, समस्त युरोप और अफरीकामें भी बहुत उत्पन्न होती है। युरोपीय उसका शाक बड़े आदरसे खाते और मूलको भुनकर बना कहवाके साथ पी जाते हैं। भारतवर्षमें उसका वैसा प्रचार नहीं। युरोपकी भांति भारतमें उसकी कृषिमें यत्न भी कम करते हैं। पञ्जाबकी काङ्गड़ा उपत्यकामें उसके बीजका सामान्य यत्न देख पड़ता है। उक्त सामान्य कृषसे जिस विशेष लाभकी सम्भावना है, उसे बहुतसे लोग नहीं समझते। अकेले इङ्गलेण्डमें ही प्रति वर्ष लाखों रुपयेकी कासनी बिकती है। वह बलकारक, स्निग्धकर और शीतल होती है। कासनी-का बीज रक्तानिःसारक है। बीजका चूर्ण पैत्तिक-वमननिवारक और सर्वज्वरहर होता है। कासनी-का मूल खानेमें कटु लगता है। औषधादिमें वही व्यवहार किया जाता है। युरोपमें कहवाके बदले, कुछ लोग कासनीके मूलका चूर्ण सिद्ध कर सेवन करते हैं। मूलमें प्रायः चौथाई भाग शर्करा डाल जलमें सड़ा यथानियम निचोड़ लेनेसे उत्कृष्ट तीव्र सुरा बन जाती है। कासनी अल्प परिश्रम करनेसे बहुत उत्पन्न हो सकती है। उसमें लाभकी भी अधिक सम्भावना है।

वह हाथ डेढ़ हाथ ऊंची होती है। कासनी देखने-में बहुत हरीभरी मालूम पड़ती है। पत्तियां छोटी छोटी रहती और पालकीसे मिलती जुलती हैं। डण्ठ-लमें तीन तीन चार चार अङ्गुलीके अंतर पर ग्रंथियां होती हैं। उसीमें नीलवर्ण पुष्पके गुच्छ निकलते हैं। फूल गिर जानेसे बीज आते हैं। कासनीका मूल डण्ठल और बीज समस्त अंग औषधमें व्यवहृत होता है। हिन्दुस्थानमें कासनी ठण्डाईमें डालकर पी जाती है। २ कासनीका बीज। ३ वर्णकविशेष, एक रंग। वह नीला और कासनीके फूल जैसा होता है। ४ नीलवर्ण-कपोत, नीला कबूतर।

कासन्दी (सं० स्त्री०) कासं द्यति नाशयति कास-दो-क ङीप्। आमका एक अचार।

कासन्दीवटिका (सं० स्त्री०) १ कासघ्न औषध, खांसी मिटानेवाली दवा। २ एक प्रकार कसौंदी। राजवल्लभके मतानुसार यह रुचिकारक, अग्निवर्धक, वायु एवं मल अनुलोमक और वातश्लेष्म रोगनाशक होती है।

कासनीडित (सं० त्रि०) कासेन कासरोगेण पीड़ित, ३ तत्। कासरोगी खांसीका बीमार, जिसको खांसी आती हो।

कासभञ्जन (सं० पु०) पटोल, परवल।

कासमर्द (सं० पु०) कास मर्द्दयति कास मृद् अण्। कर्मण्य ३।२।१। अनामक्षात वक्ष्यमाणविशेष, कसौंदा।

कासमर्दका पत्तव्यञ्जनमें प्रयोग करते हैं यह अग्नि दीपन और स्वादु होता है। (सुश्रुत) कासमर्द तिक्त, उष्ण मधुर कफवातघ्न अजीर्णघ्न, कासपित्तघ्न और कण्ठशोधन है। (राजनिघण्टु) कासमर्दका पत्र-शाक कटु, उष्ण, रुच्य लघु और श्वास, कास तथा अरुचिघ्न है। पुष्प श्वास-कासघ्न तथा वातविनाशक होता है। (वैद्यनिघण्टु)

२ वैद्यकविशेष, कसौंदी। ३ पटोल, परवल। ४ कासघ्न औषध, खांसीको मिटानेवाली दवा।

कासमर्दक, कासमर्द देखो।

कासमर्दपत्र (सं० क्ली०) कासमर्दकदल, कसौंदेका पत्ता।

कासमर्दन, कासमर्दक देखो।

कासमर्दन (सं० पु०) कास मर्द्दयति कास मृद् णिच् कर्तरि ल्यु। पटोल परवल।

कासमर्दिका (सं० स्त्री०) कासमर्द, कसौंदा।

कासर (सं० पु०) के जले आसरति, क आ सृ अच्। महिष, भैंसा इसे अधिक समय तक जलमें रहना अच्छा लगता है। (हिं० स्त्री०) २ कासीमेढ़। इसके पीठपर रोयें आम होते हैं।

कासरोग (सं० पु०) रोगविशेष, खांसीकी बीमारी। कास देखो।

कासलक्ष्मीविलास—वैद्यकोक्त औषधविशेष खांसीकी कोई दवा। शुद्ध गन्धक पल, ताम्र भस्म पारद भस्म, हरिताल सब मिला और अपर प्रत्येक एक एक पलके हिसाबसे एकत्र मिलाना चाहिये। फिर भैंगराजके रस तथा कुलत्थ कषायके क्वाथमें तीन दिन भावना दे उसमें रुद्रजटा, जायफल, लौंग, मोथ, पद्मपत्र, जीरा, त्रिकटु, त्रिफला तगरपादुका गुडूचीका शाक और वंशलोचन प्रत्येक दो दो तोला डालते हैं। पीछे भैंगराजके रस और कुलत्थ कषायके क्वाथमें मर्दन कर चनेके प्रमाण वटिका बना ली जाती है। अनुपान शीतल जल है। मकर मांस दुग्ध और स्निग्ध आहार पथ्य होता है। शाकाम्लको छोड़ देना चाहिये। यह औषध सेवन करनेसे कास यक्ष्मा, श्वास ज्वर, पाण्डुरोग शोथ, शूल, अर्श प्रभृति रोग शान्त होते हैं। फिर कास लक्ष्मीविलास बलवर्धक और वृष्य तथा अरुचि नाशक भी है। (भैषज्यरत्नावली)

कासलनाड़—तैलङ्ग ब्राह्मण जातिका ६ ठा भेद। ऐसे पुरोहिताध्यायमें यह भेद रहते थे।

कासलक्षारभैरव (सं० पु०) वैद्यकोक्त कासरोगका औषधविशेष, खांसीकी एक दवा। पारद, गन्धक, ताम्र, अभ्रभस्म, सोहागेकी फूली, सोंठ मरिच, कुठ, तालीशपत्र कालीमिर्च सबका समभाग चूर्ण दो दो तोले एकत्र मिला भैंगरेकी, भैंगराज, निर्गुण्डी, काकमाचिका, द्रोणपुष्पी, बाकची, पीतसुन्दर, भार्गी, हरीतकी तथा बासाके रससे घोटना चाहिये। पश्चात् गुञ्जाके प्रमाण वटिका सेवन करनेसे कासरोग दूर होता है। (रसरत्नाकर)

कासहरवर्ग (सं० पु०) कासरोगनाशक दश द्रव्य समूह, खांसीकी बीमारी दूर करनेवाली दस चीजोंका मजमूआ। इसमें द्राक्षा, अभया, आमलक, पिप्पली, दुरालभा, शृङ्गी कण्टकारी, वृश्चीर, पुनर्नवा और तमालकी डालते हैं। (चरक)

कासहाकाय (सं० पु०) १ कण्टकारीसम पिप्पलीचूर्ण युक्त कासहर क्वाथ खांसीका कोई काढ़ा। यह कण्टकारीसे बनता और उसमें पिप्पलीचूर्ण पड़ता है। २ धूमपान विशेष। उसमें धूमकी नाली १६ अङ्गुली रखते हैं। धूम द्रव्यको गुडूचीके रसमें बनाना चाहिये।

कासान्तकरस (सं० पु०) कासविकारका रसविशेष खांसीकी एक दवा। पारद, गन्धक, शुद्धविष शाम-

पर्णी और धान्यक प्रत्येकका चूर्ण समभाग तथा सर्वचूर्ण सम मरीचचूर्ण डाल चार गुञ्जाके तुल्य मधुके साथ सेवन करनेसे कासरोग आरोग्य होता है।
(रसेन्द्रसारसंग्रह)

कासार (सं॰ पु॰) कास-आरन्, कस्य जलस्य आसारो यत्र। (उणादयः। उण् ३। ११९।) १ वृहत् सरोवर, बड़ा तालाव। २ दण्डकजातीय छन्दोविशेष। उक्त छन्दमें २० रगण रहते हैं। ३ स्वनामख्यात पक्वान्नविशेष, एक मिठाई। माषकल्याणी (उड़द), शृङ्गाटक (सिंघाड़ा), कंसर, शालूक प्रभृति द्रव्य पेषण कर चतुष्कोण खण्ड बनाना पड़ते हैं। उसके पीछे उक्त खण्डोंको तप्त घृतमें भून चीनीको चाशनीमें डालते हैं। कासार—रुचिकारक और अधिक रूक्ष तथा पिच्छिल न होनेवाला है। वह वमनेच्छा, कफ और पित्तको नाश करता है। (भावप्रकाश)

कासारि (सं॰ पु॰) कासस्य अरिः नाशकः, ६-तत्। कासमर्द, कसौंदा।

कासालु (सं॰ पु॰) कासजनक आलुः, मध्यपदलो॰। कोङ्कणदेशप्रसिद्ध आलुविशेष। उसका संस्कृत पर्याय—कासकन्द, कन्दालु, आलुक, आलु, विशालपत्र और प्रवालु है। राजनिघण्टुके मतसे वह मधुररस, उष्णवीर्य, शिरासंशोधक, अग्निकारक और कण्डु, वायु, श्लेष्मरोग तथा मलविनाशक होता है।

कासिका (सं॰ स्त्री॰) १ कफ, खांसी। २ वनमुद्ग, जङ्गली मोठ।

कासिद (अ॰ पु॰) पत्रवाहक, हरकारा।

कासिप—राजपूतोंकी एक जाति। कासिप लोग युक्तप्रदेशमें रहते हैं। अपने गोत्रसे वह काश्यपवंशीय क्षत्रिय हैं। परन्तु बहुतसे लोग उन्हें क्षत्रिय नहीं मानते।

कासिम—बसराके शासनकर्ता हजाजके भ्रातुष्पुत्र। खृष्टीय अष्टम शताब्दको भारतललनाके रूपकी कथा तुरुष्कराज खलीफाके अन्तःपुरमें निकली थी। खलीफाको लोभ लग गया। शस्त्रधारी अरब उनको मनस्तुष्टिके लिये अर्णवपातमें चल दिये। सिन्धुप्रदेशके देवल नामक वन्दरमें भारतवासियोंने अरबी पोतको आक्रमण किया था। उक्त घटनाका समाचार खलीफाको मिला। आरबोंकी मानरक्षाके लिये विंशतिवर्षीय मुहम्मद कासिम ६०० अश्वारोही और १००० पदातिके साथ भेजे गये। युवकने विपुल साहससे देवलवन्दर आक्रमण किया। उस समय समस्त सिन्धुप्रदेश मुलतान सह हिन्दू राजा डाहिरके अधीन था। महाराज डाहिर राज्यकी रक्षाके लिये कासिमसे बहुत लड़े। वह स्वयं हाथी पर चढ़ रणमें गये थे। घटनाक्रमसे मुसलमानोंके फेंके अग्निगोलक द्वारा उनका हस्ती आहत हुआ और प्रबल वेगसे सवारोहीके साथ नदीके खरस्रोतमें गिर पड़ा। हिन्दुओंका सैन्य राजाकी वह अवस्था देख भागा था। वीर कासिम उस समय सुविधा देख अपने मुष्टिमेय सैन्यसे डाहिरकी सागर सदृश विपुल वाहिनीको विदलित करने लगे। शत शत ब्राह्मण और राजपूत मुसलमानोंके हाथ निहत हुवे। दुर्भाग्य क्रमसे हिन्दूराजने वाहनसह कालका आतिथ्य स्वीकार किया था।

कासिम देवलचेत्र परित्याग कर ब्राह्मणावादके अभिमुख अग्रसर हुवे। राजभक्त ब्राह्मण और राजपूत डाहिरकी आकस्मिक विपद् देख घबरा गये थे। सुतरां सामर्थ्य रहते भी किसीने राजधानीको रक्षाके लिये विशेष यत्न न किया।

मुहम्मद कासिमने ब्राह्मणावाद नगरमें जाकर देखा कि एक ओर गगनस्पर्शी प्रज्वलित चिता सज्जित रही और दूसरी ओर महाराज डाहिरकी वीर महिषी ससैन्य विपक्षके गतिरोधार्थ उपस्थित थीं। हिन्दू वीरबाला अनेक चेष्टा करने पर भी राज्य बचा न सकीं। उन्होंने देखा कि भीरु ब्राह्मणोंकी देखा देखी उनका राजपूत सैन्य भी पृष्ठ प्रदर्शन करता था। उस समय पतिसे मानकी रक्षाको सतीने सपत्नी और पुरमहिलावर्गके साथ उसी ज्वलत् चितापर आरोहण किया। कासिम अनेक उपायोंके पीछे दो राजकन्याओंको बन्दी बना स्वदेश लौट गये। तुरुष्कराज खलीफाने डामसकासकी सभामें उक्त दोनों राजकन्याओंको बुलाया था। ज्येष्ठा कन्या सभामें आकर रोने लगी। खलीफाने रोनेका कारण पूछा था। राजबालाने उत्तर दिया—

"मैं पापके अयोग्य हूं। कासिमने मेरा धर्म बिगाड़ डाला है।" यह बात सुनते ही खलीफाने आदेश निकाला था,—"फौज जो इस दुर्दान्त कासिमको खाल खींच कर यहां ले आवो।" आदेश पालित हुआ। कासिमका देह राजसभामें लाया गया था। राजकन्याने हंसकर कहा—"मेरी मनस्कामना सिद्ध हुयी। मैंने जो दाव लगाया, प्रकृत पक्षमें कासिम उसका पात्र न था। जिसने मेरा पितृवंश नाश किया, उसीसे मैंने बदला चुका लिया।"

७१४ ई० को मुहम्मद कासिम मर गये।

कासिम—१ जफरनामा नामक पारसी ग्रन्थके रचयिता। इस पुस्तकमें दोस्त मुहम्मद खान्के पुत्र अकबर खान्के विक्रमका वर्णन है। इसे कासिमने १८४४ ई० को सम्पूर्ण किया था। पुस्तक पद्यात्मक है। अंगरेजोंके काबुल युद्धका विषय भी इसमें सन्निविष्ट है। भारतमें इसीसे लोग इन्हें कासिम अकबरनामाको कहते हैं। २ हकीम और सुदरत शाहका उपनाम। इन्होंने एक तज़किरा (कवियोंका जीवनवृत्तान्त) लिखा था।

कासिम अलीखान् (मीर)—बङ्गालके नवाब मीर जाफर अलीखान्के जामाता। साधारणतः इन्हें लोग मीरकासिम कहते थे। १७६० ई० को अंगरेजोंने इन्हें मसनदके ऊपर प्रतिष्ठित किया। कारण इन्होंने बङ्गालको आर्थिक अवस्था भली भांति विदित रही। किन्तु थोड़े दिन पीछे ही इन्होंने मुङ्गेरमें जा निवास किया और अंगरेजोंको बङ्गालसे निकालनेका बीड़ा उठा लिया। मीरकासिमको अंगरेजोंके राजनैतिक अधिकार और व्यवसायिक प्रचारको दृष्टि अच्छी लगती थी। १७६३ ई० को इसी अवस्थाको कटवामें घर युद्ध हुआ। उसमें इनको सेना हारी थी। फिर यह बङ्गालके सिंहासनसे उतारे गये। नवाब जाफर अलीको पुनः अपना पद प्राप्त हुआ। मीरकासिम यह हाल देख पागल बन गये थे। इन्होंने मुङ्गेरसे भाग पटनेमें जा आश्रय लिया और वहांके समस्त अंगरेजोंका वध करनेका आदेश दिया। उस समय साठे बड़े

सब मिलाकर १५० अंगरेज रहे। इन्हीं अलीवर्दीको सोमरू नामक किसी जर्मनको आज्ञासे सबके सब मारे गये। अलीवर नाममें दो अंगरेजोंने सुङ्गेर अधिकार किया था। फिर ६ठीं नवम्बरको पटनेमें पर आक्रमण पड़ा। मीरकासिम अपनी फौज और दौलत ले अयोध्याको भागे थे। १७६४ ई० को २३वीं अक्टोबरको बक्सरमें जो युद्ध हुआ, उसमें सुजा उद-दौला को फौजको मेजर मनरोने पूर्णरूपसे हरा दिया। दूसरे ही दिन मुगल बादशाह शाह आलम अंगरेजोंसे जा मिले। फिर अंगरेजोंने बीच पक्षको आक्रमण करनेके लिये चले थे। मीरकासिमको गूढ़ पीछे भी अवधनवाबके नवाबने अंगरेजोंके हाथ सौंपना न चाहा। मीरकासिम फिर रुहेलखण्ड भगे और वहां आनन्दसे रहने लगे। इनके पास कुछ बहुमूल्य रत्न और मित्र बच गये थे। किन्तु अपने कपट प्रबन्धके कारण इन्हें वहांसे भी भाग गोहदके राणाके पास जाकर रहना पड़ा। कुछ वर्ष पीछे फिर यह जोधपुर गये और वहांसे दिल्ली पहुंच १७७६ ई०को शाह आलमके नौकर बने। १७७७ ई० का इनका मृत्यु हुआ। इनके साथ बङ्गालको सूबेदारी मिटी थी।

कासिम अलीखान् नवाब—रामपुरवाले नवाबके चाचा। १८५८ ई० को यह बरेलीमें रहते थे। १८५८ ई० को २२वीं दिसम्बरको ही इनको दुर्भिताका वध हुआ।

कासिम कादिरी शेख—एक मुसलमान साधु। इन्हें लोग शाह कासिम सुलेमानी भी कहते थे। चार चुनारमें बनी है। इनके पुत्र शेख कबीर १५३३ ई० को चुनारमें मरे और गड़े थे। साधारणतः लोग इन्हें बाबापीर कहते रहे। शाह कासिम सुलेमानीके मकबरेका व्यय अरक्षित भूमि और लाख रोजीना पेन्शनसे चलता है।

कासिम काही मौलाना—एक लेखक। इनका यथार्थित नाम नजम उद-दीन् और उपाधि अबुल कासिम रहा। यह अबदुल रहमान् जामीके मित्र थे। इन्होंने हिरातके बादशाह हुमायूंके ख्याता मिर्ज़ा कामरान्‌के पास

मक्केको यात्रा की। फिर १५५७ ई० को उनके मरने पर यह बादशाह अकबरके समय भारत आये थे। इन्होंने बहुत समय तक अलीकुली खान्‌के भ्राता बहादुर खान्‌के साथ काशीमें निवास किया और उनके मरने पर वहांसे लौट आगरेमें डेरा डाल दिया। १५८० ई० को १७ वीं अप्रेलको आगरेमें ही इनका मृत्यु हुवा।

कासिम खान्–१ बङ्गालके कोई नवाब। इसलामखान् के मरने पर जहांगीरने कासिमखान्‌को बङ्गालका सूबेदार बनाकर भेजा था। उस समय निम्नबङ्गमें मग लोगोंका उत्पात रहा। वह दौरात्म्य निवारण कर न सके। उसीसे पदच्युत होने पर १६१८ ई० को दिल्ली-को भेजे गये।

२ मीरजाफरके भाई। शीराज-उद्-दौलाके समय कासिमखान् राजमहलके एक सेनाध्यक्ष रहे। शीराज् उद्-दौलाने अंगरेजोंके भयसे जब राजधानी छोड़ दाना-शाह नामक मुसलमान फकीरका आश्रय लिया, तब कासिमखान्‌ने खबर पाते ही गुप्तभावसे जाकर नवाबको बांध लिया और मीरजाफरके पास भेज दिया। शीराज-उद्-दौला और मीरजाफर देखो।

कासिम खान् जवीनी–बङ्गालके कोई मुसलमान नवाब नवाब फिदाखान्‌के मरने पर दिल्लीश्वर शाहजहान्‌ने १६२७ ई० कासिमको बङ्गालकी सूबेदारी दी थी। वह धर्मभीरु, साहसी, वीर और सुकवि रहे। उनके समय पोर्तगीज बङ्गालमें प्राधान्य लाभ करते थे। कासिमने शाहजहान्‌की अनुमति ले १६३२ ई० को हुगलीमें उन्हें आक्रमण किया। ३ मास अवरोधके पीछे पोर्तगीजोंने हुगली छोड़ी थी। प्रायः सहस्राधिक पोर्तगीज मारे और चार हजार पकड़े गये थे। उस समय अनेक पोर्तगीज-रमणी शाहजहान्‌के अन्तःपुर-शोभार्थ दिल्लीको प्रेरित हुयीं। पोर्तगीज देखो। हुगली जयके अल्पकाल पीछे ढाकानगरमें कासिम मर गये।

कासिम खान् जवीनी नवाब—बादशाह जहांगीर और शाह-जहांकी सभाके एक सभासद। इनके अधि-कारमें ५,००० सवार रहे। यह सज्जावारके अधिवासी थे। मनीजा बेगमसे इनका विवाह हुवा। वह नूरज हांकी भगिनी रहीं। इसीसे कभी कभी सभासद इन्हें हंसीमें कासीम खान् मनीजा कहते थे। यह एक दीवान्‌के ग्रन्थकार रहे। उपनाम कासिम था। १६२८ ई० को इन्हें शाहजहांके समय फिदाई खान्‌के स्थान पर बङ्गालको सूबेदारी मिली। इन्होंने कोई १०००० पोर्तगीजोंको मार और बाकीको भगा हुगली अधिकार किया। इस घटनाके ३ दीन पीछे १६३१ ई० को इनका मृत्यु हुवा। इन्होंने आगरेमें २० बीघे भूमि पर एक बृहत् भवन बनाया और १० बीघे भूमि पर एक उद्यान लगाया था। किन्तु अब उनका कोई चिह्न देख नहीं पड़ता।

कासीम खान् शेख—इसलाम खान्‌के भ्राता। इनका निवासस्थान फतेपुर सीकरी और उपाधि मुहतशिम खान् रहा। बादशाह जहांगीरके समय इन्हें ४०००० सवारोंपर अधिकार मिला था। १६१३ ई० को भाईके मरने पर जहांगीरने इन्हें बङ्गालका सूबेदार बनाया। इन्होंने आसाम आक्रमण किया था। किन्तु आसामि-योंने रातको धावा कर इनकी बहुतसी फौज मार डाली थी। इसीसे यह दिल्ली वापस बुलाये गये। फिर इनका मृत्यु हुवा।

कासिम बरीद शाह १—दक्षिणमें बरीदशाहीवंश-के प्रतिष्ठाता। यह एक तुर्की या जार्जीय गुलाम रहे। धीरे धीरे ये दक्षिणके २य [illegible] नवाबके वजीर हुवे और अपने प्रभावसे राज्यके प्रभु बन गये। फिर १४९२ ई० को इन्होंने आदिल शाह, निजाम शाह और इमाद शाहके परामर्शानुसार अपने-को स्वतन्त्र बनाया तथा अपने नामका सिक्का चलाया। नवाबको केवल अहमदाबाद बीदरका नगर और दुर्ग मिला था। १२ वर्ष राज्य करनेके पीछे इनका १५०४ ई० को मृत्यु हुवा। फिर इनके पुत्र अमीर बरीदने राज्य-का उत्तराधिकार पाया था। इन्होंने अपना वैभव खूब बढ़ाया और महम्मद शाहको अपने पितासे भी अधिक नीचा देखाया। इस वंशके जिन सात पुरुषोंने अहमदाबाद बीदरका राज्य चलाया, उनका नाम नीचे लिखे अनुसार है —

कासिम बरीद १म	१४९२ ई०
अमीर बरीद	१५०४ "
अली बरीद (प्रथम नवाब)	१५४१ "
इब्राहीम बरीदशाह	१५६२ "
कासिम बरीद शाह २य	१५६९ "
अली बरीद शाह २य	१५७२ "
अमीर बरीद शाह ३य	१६०९ "

कासिम बरीद शाह २य—अहमदाबाद बीदरके एक नवाब। १५६९ ई० को इन्होंने अपने भ्राता इब्राहीम बरीदशाहका उत्तराधिकार लिया था। किन्तु १५७२ ई०को ३ वर्ष राज्य करनेके पीछे इनका मृत्यु हुआ। फिर इनके पुत्र २य मीर्जा अली बरीदने राज्य पाया था। उन्होंने २७ वर्ष राज्य चलाया। १६०९ ई०को ३य अमीर बरीदने इन्हें मार राज्य अधिकार किया। यह अपने वंशके अन्तिम नवाब थे।

कासिमबाजार—बङ्गालके मुर्शिदाबाद जिलेका एक पुराना शहर। यह अक्षा० २४° ८´ १०″ उ० और देशा० ८८° १७´ पू० भागीके तट पर अवस्थित है। ई० १८ श शताब्दको यहां पोर्तगीजों, फरासीसियों और अंगरेजों की कोठी थी। रेशमका बड़ा व्यापार होता था। आज कल वह बात नहीं। कासिमबाजारमें कई बड़े बड़े जमींदार रहते हैं।

कासियारि—बङ्गालका एक प्राचीन ग्राम। यह मेदनी पुरसे प्रायः ३०० कोस दूर दक्षिण-पश्चिम अवस्थित है। यहां अनेक प्राचीन कीर्तियोंके भग्नावशेष पड़े हैं। उनमें कुरुम्बार दुर्गका परिमाणादि आज भी बहुत कम बिगड़ा है। यह रक्तवर्ण बालुका प्रस्तरसे बना है। कुरुम्बार दुर्ग प्रायः १० फीट ऊंचा है। प्राचीरके अभ्यन्तरमें चार मिहराबोंवाला बरामदा है। अभ्यन्तर की पूर्वदिक्‌के प्रान्तभागमें शिवमन्दिर बना है। उस मन्दिरके अभ्यन्तरवर्ती किसी कूपमें शिवलिङ्ग प्रतिष्ठित है। ठीक मन्दिरके सामने पश्चिम प्रान्तमें एक मसजिद है। यहां उड़ीया भाषामें खोदित शिलालिपि लगी है। इसके पाठसे समझ पड़ता है कि गौड़पतिके राजत्व काल सुलतान शाहने यह मसजिद बनवायी थी, ११०२ हिजरीको इसका निर्माणकार्य शेष हुआ।

पूर्वदिक्‌ एक गभीर दीर्घिका (तालाब) है। उसे योगियाकुण्ड कहते हैं। वह स्वच्छ कुमुदोंसे परिपूर्ण है। यहां मुगलपाड़ा नामको एक पल्ली (गांव) है। उसमें मुगलों द्वारा निर्मित अनेक मसजिदें और इमारतें खड़ी हैं। मुगलोंके शासनकाल कासियारि ग्राम इधर वाणिज्यका केन्द्रस्थान और तहसीलदारोंका शहर माना था। किसी मसजिदमें फारसी भाषामें खोदित एक प्रस्तरलिपि है। उससे भी मालूम पड़ता है कि वह औरङ्गजेबके समय बनी थी। ग्रामके मध्य किसी स्थान पर एक मुसलमान फकीरको प्रस्तर मूर्तिका भग्नावशेष पड़ा है। उसके गात्रमें फारसी भाषामें खोदित एक शिलालिपि है। उसमें भी औरङ्गजेबका ही समय मिलता है।

कासियारिसे कुछ दक्षिण मुगलमारी ग्राम है। मुसलमानोंने सर्वप्रथम कुरुम्बारके हिन्दुओंका बड़ा मन्दिर आदि ध्वंसकर उसके स्थानमें मसजिद बनायी थी। फिर मराठोंने मुगलमारीमें ही मुसलमानोंको पराजय किया। सम्भवतः उस पराजयके पीछे ही मुगलमारी नाम पड़ गया।

कुरुम्बारके सम्बन्धमें स्थानीय प्रवाद इस प्रकार है—उड़ीसाके देवराजवंशीय महाराज कपिलेन्द्रने यह मन्दिर बनवाया था। फिर उन्होंने इसमें गगनेश्वर नामक शिवलिङ्ग स्थापन किया। कहते हैं वह स्थान पहले जनपद्विरल था। सुवर्णरेखा बहती थी। उस समय यहां बाबराज नामक कोई राजा रहे। बाबराज नामसे ही सम्भवतः बाबभूमि परगना कहाता है। उनके अनेक पुष्करिणी थीं। उनको देखकर कोई रक्षक प्रतिदिन सुवर्णरेखाके पश्चिम ओर चराने जाता था। कुछ दिन पीछे एक गायका दुग्ध प्रभाव घटने लगा। राजाने इसपर सोचा अवश्य रक्षक दुहा हुए दोनेपर वनमें दुहकर पी जाता होगा। उन्होंने किसी दिन रक्षकोंको बुला विस्तर तिरस्कार किया था। रक्षक इस तिरस्कारसे दूसरे दिन दूध घटनेका पता लगानेके लिये उसी गायके पीछे पीछे फिरता रहा। गायने वनमें जाकर प्रथम पीठ पर वाम पैरो फिर

वह नदी पार हो पूर्वमुख एक वनमें चली गयी। रक्षकने पहुंच उसका अनुसरण किया था। कुछ दूर जाकर उसने देखा कि गाय शिवलिङ्ग पर दुग्धधारा छोड़ती थी। उसने उसी दिन घर जा राजासे उक्त घटना बता दी। बाबराजने फिर वह बात महाराज कपिलेश्वरसे कही। कपिलेश्वरने उस शिवलिङ्ग पर कुकस्वरका मन्दिर बनवाया और गगनेश्वर लिङ्गका नाम रखाया। उन्होंने योगेश्वकुण्ड भी खनन कराया था। मुसलमानोंके समय अब्दुल असद नामक किसी प्रसिद्ध मुसलमान फकीरने बलपूर्वक उक्त मन्दिर अधिकार और उसमें गोहत्या कर मन्दिरकी पवित्रता बिगाड़ डाली थी। फिर उन्होंने शिवलिङ्गको स्थानान्तरित कर पत्थरके मध्य तीन मसजिदें बनायीं। कहते हैं कि गोरक्तसे मन्दिर कलङ्कित होने पर महादेवको लिङ्गमूर्ति अन्तर्हित हो एगरा नामक स्थानमें प्रकाशित हुयी थी। फकीरके पहुंचनेसे पहले 'गाजिया महाराज' नामक कोई महन्त महादेवके पूजक रहे। 'बेथियाबुड़ी' नाम्नी उनकी कोई भैरवी थी। लोगोंके कथनानुसार महादेवके अन्तर्हित होने पर महन्त और उनकी भैरवी दोनों ऐशीशक्तिके बल सूपमें बैठ आकाशपथसे पूर्वमुख उड़े चले जाते थे। किन्तु पथिमध्य भैरवी किसी जलपूर्ण स्थान पर गिर पड़ी। उसीसे गाजिया महाराजको भी उतरना पड़ा। उनके उतरनेका स्थान "कुलासनि" ग्राम कहाता है। उस ग्राममें आज भी महन्त और भैरवीकी मूर्ति स्थापित है। महन्तमूर्तिकी पूजा होती है। कालक्रमसे उक्त स्थान घने जंगलसे भर गया है। वहां कोई सहज ही घुस नहीं सकता। बंगाली सन् १२३१ को वनमाली पण्डा नामक किसी व्यक्तिने मेदिनीपुर कलक्टरके आदेशसे जंगल कटाया और कूपके मध्य दो खण्ड महादेवकी भग्न लिङ्गमूर्तिको पाया था।

कुकस्वरमन्दिरमें आज भी अनेक मूर्तियां अक्षुस्स भावसे दण्डायमान हैं। उक्त प्रस्तरमन्दिर देखनेमें अतिमनोरम है। वह २०० हाथ लम्बा और १५० हाथ चौड़ा है। मन्दिरकी पश्चिम दीवारमें उड़िया भाषाकी एक शिलालिपि विद्यमान है। किन्तु उसके प्रायः समस्त अक्षर बिगड़ गये हैं। सुतरां इस समय तक उसका पाठोद्धार नहीं हुआ। प्रवाद है कि मुसलमानोंने वह शिलालिपि बिगाड़ डाली है।

काशी (सं० त्रि०) कासो ऽस्यास्ति, कास-इनि। कासरोगविशिष्ट, खांसीका बीमार। (हिं०) काशी देखो।

कासीसमृत्तिका (सं० स्त्री०) सौराष्ट्रमृत्तिका, एक मट्टी।

कासीस (सं० क्ली०) कासीं क्षुद्रकासं स्यति नाशयति, कासी-सो-क। १ उपधातुविशेष, कासीस। २ माक्षिक सुराविशेष, एक शराब। ३ तुत्थक, तूतिया। कासीस भस्मवर्ण, किञ्चित् अम्ल और लवणरस होता है। (वैद्यक)

कासीसद्वय (सं० क्ली०) धातु कासीस और पुष्पकासीस। पुष्प कासीस किञ्चित् पीत और तुवर रस होता है। (वैद्यक)

कासुन्द (सं० पु०) कासमर्द, कसौंदा।

कासुम्भो (सं० पु०) कौसुम्भी शालि, एक धान।

कासुर (सं० पु०) महिष, भैंसा।

कासू (सं० स्त्री०) कशति कुत्सित शब्दं गच्छति, कश-ऊ, पृषोदरादित्वात् शस्य सत्वम्। विजुकगिरयतं। उद्। १। ८०। १ एक विकलवाक्य, उलटी बात। २ शक्ति-अस्त्र, बरछी भाला। ३ दीप्ति, चमक। ४ भाषा, जबान्। ५ रोग, बीमारी। ६ बुद्धि, समझ।

कासूतरी (सं० स्त्री०) ह्रस्वा कासूः, कासू-ष्टरच्। कासूगोणीभ्यां ष्टरच्। पा ५। ३। ९०। क्षुद्र प्रभृति अस्त्र, छोटी बरछी।

कासृति (सं० स्त्री०) कुत्सिता सृतिः सरणम्, कोः कादेशः। कुत्सित गमन, खराब चाल।

कासेक्षु (सं० पु०) ह्रस्व काशतृण, छोटा कास।

कासाली (सं० स्त्री०) अतिबला, एक बूटी।

कास्कन्द, कासमर्द देखो।

कास्टिक (अं० पु० Caustic) जारक, तेजाब। इसके पड़नेसे चर्म जल जाता या आबला उभर आता है।

कास्त—महाराष्ट्रकी एक ब्राह्मण जाति। कास्त लोग खेतीबारीका काम करते और अधिकतर पूना तथा खानदेशमें रहते हैं। दूसरे ब्राह्मणोंमें उनका पद

सामान्य समझा जाता है। यह बहुत काम जिन्हें पढ़ते और वैष्णव धर्म पर चलते हैं। कहते हैं उनको उत्पत्तिका कुछ ठिकाना नहीं। दूसरे पूनाके ब्राह्मण कास्तोंको शूद्र समझते हैं। पेशवा सरकारको आज्ञासे इन्हें आज तक दानपुण्य नहीं मिलता।

कास्तीर (स० क्ली०) ईषत्तीरं यस्यास्ति कोः कादेश निपातनात् सुट् च। 'कास्तीराजस्तुन्दे नगरे।' पा ६।१।१५५। १ ईषत्तीरयुक्त नगरविशेष। २ सीसकलोह, सीसा लोहा।

काहय (स० पु०) कासमर्दं पृषोदरादित्वात् साधु। गाभागी, मचारी।

काह कहं देखो।

काह (हिं० क्रि० वि०) क्या, कौन चीज।

काहला (स० स्त्री०) काहला पृषोदरादित्वात् साधु। काहला वाद्य, एक बाजा।

काहल (सं० क्ली०) कुत्सितं यथार्थं वर्णं यस्य अति मौं बहुव्री०। १ अस्पष्ट वाक्य, समझमें न आने वाली बात। (पु०) २ कुक्कुट, मुरगा। ३ बिडाल बिलाव। ४ शब्दमात्र, कोई आवाज। ५ बृहत् ढक्का, बड़ा ढोल। इसका अपर संस्कृत नाम महानाद है। (त्रि०) ६ शुष्क सूखा। ७ विशाल, बड़ा। ८ बूढ़ा।

काहला (स० स्त्री०) कुत्सितं हलति शब्दं करोति, कु हल अच्-टाप्, को कादेश। १ वाद्ययन्त्रविशेष, एक बाजा। २ अप्सरोविशेष, कोई परी।

काहलापुष्प (स० पु०) काहलाकृतिरिव पुष्पमस्य। मेतहस्तूर वृक्ष, धतूर धतूरेका पेड़।

काहिल (स० पु०) कं सुखं आहलति ददाति, क आ हल्-इन्। महादेव।

"[illegible] ।" (भारत, अनु० १७ अ०)

काहली (स० स्त्री०) कं सुखं आहलति ददाति, क आ हल्-अच् ङीप्। १ युवती, जवान औरत। (पु०) २ किसी ऋषिका नाम। ३ एक छोटी जाति। यह उड़ीसाकी तरफ पाई जाती है।

काहाबाहू (स० क्ली०) पातोंमें [illegible] गड़बड़ शब्द।

काहार (कहार) जातिविशेष, एक कौम। [illegible] पिताके औरस और भिन्न जातीय माताके गर्भसे कहारोंकी उत्पत्ति है। इनकी प्रधान उपजीविका खेती करने, पालकी ढोने, बहंगी ले जाने, मछली पकड़ने और नौकरी करनेसे चलती है। कहारका भाषा लिख व्यवहारादि साधारण हिन्दुओं की भांति है। यह अपनेको जरासन्धका वंशोद्भव मानते हैं। उनमें एक प्रवाद प्रचलित है। कहार कहते हैं कि गिरिव्रज पहाड़में मगधराजका एक उपवन रहा। किन्तु अतिवृष्टिसे वह नष्ट हो गया। कुछ काल पीछे मगधराजने फिर उपवन लगाना चाहा था। उन्होंने घोषणा की 'जो व्यक्ति एक रात्रिके मध्य हमारा उपवन गढ़ा जलसे पूर्ण कर देगा उसे हम अपनी कन्या और आधा राज्य दान करेंगे।' कहारोंमें उस समय चन्द्रावत् नामक कोई प्रधान व्यक्ति रहा। वह राजकन्या और राज्यके लोभसे उक्त कार्य करने पर उद्यत हुआ। उसने पसुरबांध नामक एक बड़ा बांध बांधा था। फिर चन्द्रावत्ने वावनगंगाका जल ले जाकर अपने अधीनस्थ कहारोंके साहाय्यसे उक्त जलद्वारा पर्वतका उपवन पूर्ण कर दिया। उधर मगधराजने देखा कि चन्द्रावत् शीघ्र ही उपवनको जलसे भर उनको कन्या और अर्ध राज्य ले लेनेवाला था। उस समय उन्होंने चन्द्रावत्को कन्या देना अनुचित समझ एक कौशल उद्भावन किया था। उनको आज्ञासे प्रभात होनेसे पूर्व ही काक बोलने लगा। कहारोंने देखा कि प्रभात हुआ था, किन्तु उनका कार्य अधूरा रहा। फिर मगधराजके भयसे व्यस्त हो भागने लगे। जिसके हाथमें बांस रहा, वह कहार हो गया। फिर इन्होंके रहनेवाले मगहिया ब्राह्मण बने थे। किन्तु अन्तमें यह बात नहीं मिलती, कहारोंकी वास्तव और राजवार भाषा कहीं मिलती है। अधीनको मगधराजने सन्तुष्ट हो उन्हें प्रायः साढ़े तीन सेर चावल अर्थात् धान्य दिया था।

कहार जाति विभिन्न शाखामें विभक्त है—रवानी सुडिया धीमर ममधार मलहुक, तुरहा मगहिया प्रभृति। कहारोंके कथनानुसार प्रथम कोई श्रेणी विभाग न रहा। पीछे वह सब जिलेके रमनपुर नामक स्थानमें बसते थे। कहारोंकी जातिके प्रधान

व्यक्तिने दो विवाह किये। किन्तु पत्नीद्वयके मध्य नित्य विवाद होता था। उसीसे उन्होंने दोमें एक पत्नीको यशपुर भेज दिया। यशपुर जानेवाली पत्नीसे यशवार और दूसरीसे रवानी हुवे हैं। मस्तान परगनेके रवानियोंमें नाग और कश्यप नामसे दो श्रेणी देख पड़ती हैं। कहार ऊर्ध्वतन सात पुरुषोंका सम्पर्क देख विवाह करते हैं। विवाहप्रथा साधारण हिन्दुवोंके समान है। कहारोंकी स्त्रियां विशेष अपराध होनेसे पञ्चायतके अनुमतिक्रमसे पतिको छोड़ फिर विवाह कर सकती है। इनकी पञ्चायत अधिक क्षमता रखती है। उसे कोई अमान्य समझ नहीं सकता। धर्म सम्बन्धमें कहार शैव, शाक्त और गाणपत्य है। इनमें वैष्णव बहुत अल्प होते हैं। वह अन्यान्य देवतावोंकी भी उपासना करते हैं। कहारोंमें नौकरी करनेवाले अन्यान्य श्रेणीकी अपेक्षा सामाजिक सम्मानमें श्रेष्ठ हैं।

युक्तप्रदेशके कहार द्विजातिके घर पानी भरते विवाहादि अवसरोंमें अन्यान्य कार्य भी यथायोग्य करते हैं। वृष्टि होने पर वह तालावोंमें वेल डाल देते हैं। शरत्‌ऋतुमें सिंघाड़ा लगनेसे उसे कच्चा-पक्का बेच अपनी जीविका चलाते हैं। डोली ले जानेका कार्य भी इन्हींके जिम्मे है।

काहारक (सं० पु०) कुत्सितं शिविकादिवहनरूपनीचवृत्तिमवलम्ब्य आहरति जीवनयात्रां निर्वाहयति, कु आ-हृ-खुल्, कोः कादेशः। शिविकादि वाहक जातिविशेष, कहार।

"तथा गारुडिका वीरा, क्षुरकर्मोपजीविका।
आद्याः काहारका पुत्रा अष्ट स वाद्यन्ति वै॥"
(जैमिनिभारत आश्व० १० अ०)

काहि (हिं० सर्व) किसको, किसे।

काहिल (अ० वि०) १ अलस, सुस्त। २ रुग्न, बीमार। ३ दुर्बल, कमजोर। ४ कृश, दुबला।

काहिली (अ० स्त्री०) आलस्य, सुस्ती।

काही (सं० स्त्री०) केन वायुना आहन्यते क-आ-हन-ड-ङीप्। कुटज वृक्ष, कुटकीका पेड़।

काही (हिं० वि०) १ नील हरित्, काला-हरा घासके रंगवाला। (पु०) २ वर्णकविशेष, कोई रंग। यह नील-हरित् रहता और नील, हलदी तथा फिटकरी मिलानेसे बनता है।

काहु, काहू देखो।

काहू (हिं० सर्व०) किसी।

काहू (फा० पु०) सलाद, स्नुस। काहूको बङ्गलामें काहू, सलाद, तामिलमें शल्लातु, तेलगुमें काहु और सिंहलीमें सलट कहते हैं। (Lactuca Scariola) काहू पश्चिम हिमालयमें मरीसे कुनावर तक सात हजारसे दश हजार फीट ऊंचे उत्पन्न होता है। वह पश्चिम तिब्बतमें भी मिलता है। इसमें कुछ कुछ कांटे रहते हैं। फिर साइबेरियासे काहू अङ्गरेजो द्वीपों और कनारीज तक चला गया है।

यह गोभीको भांतिका पौदा है। पत्र दीर्घ और कोमल होते हैं। शीतकालको भारतके उद्यानोंमें उसे शाककी भांति बोते हैं।

काहूके बीजसे स्वच्छ, मधुर और स्फटिकप्रभ तैल निकलता है। गत १८६४ ई० को पञ्जाबप्रदर्शिनीके समय लाहोरमें उसका नमूना दिखाया गया था।

काहू शीतल और क्लान्तिनाशक है। भारतका काहू ईरानके काहूसे अच्छा होता है। किन्तु भारतके औषधालयोंमें उसका व्यवहार कम है। काहू युरोपीयोंके काम आता है। खृष्टीय संवत्‌से प्रायः ४०० वर्ष पूर्व वह ईरानके बादशाहोंके भोजनमें व्यवहृत होता था। भारतीय काहू नहीं खाते।

अक्टोबरसे फरवरी मासतक काहू उत्पन्न होता है। गोभीको भांति उसमें भी एक डण्ठल निकलता, जो ऊपरको रहता है। उसीमें फूल और बीज आते हैं। काहूकी अफीम अच्छी नहीं होती।

काह्नजी (सं० पु०) ज्योतिषग्रन्थ-रचयिता महादेवके पिता

काह्नल—झिलम प्रदेशकी एक कृषक-जाति। इसकी संख्या दश हजारके करीब है।

काह्नय (सं० पु०) कह्नयस्य अपत्यम्, कह्नय-अण्। शिवादिभ्योऽण्। पा ४।१।११२। कह्नयके पुत्र।

काहे (हिं० क्रि०) क्यों, क्या बात है।

काकोड़ (सं० पु०) काकोड्म्ब पापलम्, काकोड़ पत्र। काकोडुम्बरोव।

कि (हिं० क्रि० वि०) १ कैसे, किस प्रकार, क्या। (अव्य) २ संयोजक शब्द। ३ अथवा, या।

कि (सं० अव्य०) १ क्या प्रश्नबोधक शब्द। २ आश्चर्य वा विस्मयबोधक शब्द। ३ निषेधवाचक शब्द। ४ वितर्क। ५ निन्दा।

किंगरई (हिं० स्त्री०) वृक्षविशेष, एक पौदा। यह भारतवर्षमें मिलती और कंठीमें रहती है। किंगरईके नीचे ७।८ हाथ ऊँचे होते हैं। पत्तोंका देख चौथाई हाथ है। आषाढ़ श्रावण मास इसमें फूल आते हैं। पुष्प प्रथम रक्तवर्ण रहते, किन्तु पश्चात् श्वेतवर्ण धारण करते हैं। यह और बीज औषधमें व्यवहृत होता है। लकड़ीसे औषधिमें काजल बनती है। किंगरई भारतवर्षमें सर्वत्र मिलती है।

किंगरिया—एक नीच जाति। इसका पेशा भीख माँगना है। युक्तप्रदेशके पूर्वीय भागमें इस जातिके लोग विशेष तथा पाये जाते हैं।

किंगिरी (हिं० स्त्री०) वाद्यविशेष एक बाजा। यह छोटे सितारे या सारंगी—जैसी होती है। नट और जोगी किंगरी बजा कर भीख माँगा करते हैं।

किंगोरा (हिं० पु०) क्षुपविशेष, एक झाड़ी। यह ३।४ हाथ ऊँचा और कड़ीका होता है। किंगोरा भूमि पर दूर तक नहीं फैलता, सीधा ऊपर बढ़ता है। पत्र ३।४ अंगुलि दीर्घ रहते हैं। उनके प्रान्त भागमें दूर दूर दांत होते हैं। किंगोरेमें छोटे छोटे पुष्प और लाल या काली काली फलियां आती हैं। फलियोंको लोग खाया करते हैं। किंगोरामें दारुहल्दीकी भांति गुण होता है। इसे किलमोरा और किल्मा भी कहते हैं।

किंडरगार्टन (अं० पु०) शिक्षा-प्रणालीविशेष, तालीम की एक तरकीब। इसे किसी जर्मन विद्वान्ने निकाला था। इसमें बालकोंके लिये उद्यानमें एक पाठशाला होती। उसमें अनेक प्रकारकी ऐसी सामग्री एकत्र रहती, जिसमें वह वहीं अपनी चाहसे अध्यासमें साथ साथ अपने मनको भी बढ़ा सकें। किंडरगार्टन अब अनेक देशोंमें चल गया है। उसके द्वारा बाल बच्चोंको चित्रविचित्र खिलौनोंसे शिक्षा दी जाती है। कानपुर जिलेके सचेन्दीपुरनिवासी पण्डित गौरीशङ्कर भट्टने हिन्दीका बहुत अच्छा किंडरगार्टन बनाया है।

किंतु (सं० अव्य०) किं तु इत्यादि, किं चेदित्यस्मात् अव्य च। किन्तु, मगर, लेकिन।

किंराजन् (सं० पु०) कु कुत्सितो राजा किम्-राजन् निन्दार्थत्वात् न टच्। १ कुत्सित राजा, खराब बादशाह। (त्रि) २ निन्दित राजयुक्त, बुरे बादशाहवाला।

किंशारु (सं० पु०) किं किञ्चित् कुत्सितं वा शृणाति, किम्-शृ-उण्। (किंशारोः सिन्। उण् १।४।) १ शस्यशूक, अनाजका रेशा। २ बाण, तीर। ३ कङ्कपक्षी एक चिड़िया। ४ रोहक, रोहे।

किंशुक (सं० पु०) किं किञ्चित् शुक इव, उपमि०। पलाशवृक्ष, ढाक या टेसूका पेड़। किंशुकका पुष्प आकृति और वर्णविषयमें शुकपक्षीके चञ्चु जैसा होता है। इसी हेतु किंशुक नाम पड़ा। इसका संस्कृत पर्याय—पलाश पर्ण, याज्ञिक, रक्तपुष्प, क्षारश्रेष्ठ, वातहर, ब्रह्मवृक्ष और समिद्वर है। (शब्दरत्ना) ढाक देखो। २ नन्दीवृक्ष। ३ मुराबीज वनतिक्त।

"पूर्वे किंशुकस्ये च्वा रक्तस्य च।" (शिशुपाल ८।१९)

किंशुकक्षार (सं० पु०) पलाशक्षार, ढाकका नमक।

किंशुकतैल (सं० क्ली०) पलाशबीजतैल, ढाकका तेल। यह पित्तविनाशक होता है।

किंशुका (सं० स्त्री०) १ पलाशवृक्ष, ढाकका पेड़। २ ज्योतिष्मती, रतनजोत। ३ नन्दीवृक्ष।

किंशुकादिगण (सं० पु०) किंशुक प्रभृति वृक्षसमूह, ढाक वगैरह पेड़ोंका बखेरा। इसमें निम्नलिखित वृक्ष अभिहित हैं—किंशुक, आम्रजी, बिल्व, पवित्र मञ्ज, किंशुकदल, श्योनाक, शालपर्णी, सिंहपुच्छिद्वय, खिरा, पाटला, कण्टकारी, बृहती और बिल्व।

(रसेन्द्रसार-संग्रह)

किंशुलुक (सं० पु०) किंशुक निपातनात् साधुः। १ पर्वतकर्णजात बड़ा वृक्ष। २ लोधवृक्ष पेड़।

किंशुलुकागिरि (सं० पु०) किंशुलुकप्रधानो गिरिः अकारस्य दीर्घत्वम्। "वनगिर्यो संज्ञायां कोटरकिंशुलुकादीनाम्।" पा ६।३।११७। बहुसंख्यक पलाशवृक्षविशिष्ट पर्वत, ढाकके बहुतसे पेड़ रखनेवाला पहाड़।

किंशुलुकादि (सं० पु०) पाणिनि व्याकरणोक्त शब्दगण विशेष, लफ्जोंका एक जखीरा। इसमें निम्नलिखित शब्द आते हैं— किंशुलुक, शाल्व, नड, अञ्जन, भञ्जन, लोहित और कुक्कुट।

किंस (सं० त्रि०) किं कुत्सितं स्यति छिनत्ति, किम् सो-क। कुत्सित छेदनकारी, खराब काटनेवाला।

किंसखि (सं० पु०) कः कुत्सितः सखा। कुत्सित सखा, बुरा दोस्त।

"स किंसखा साधु न शास्ति योऽधिपम्।" (किरातार्जुनीय)

किंसाद, किंशाद देखो।

किंस्वित् (सं० अव्य०) १ प्रश्नार्थबोधक शब्द। २ सन्देहवाचक शब्द।

किक (अं० स्त्री० =Kick) पदाघात, पैरकी ठोकर, लात।

किआरी—एक शूद्र जाति। इस जातिके लोग डलिया टोकरी आदि बनाकर आजीविका चलाते हैं।

किकि (सं० पु०) कक-इन् पृषोदरादित्वात् अदेरित्वम्। १ चाषपक्षी २ नीलकण्ठ। ३ नारिकेल, नारियल।

किकिदिव (सं० पु०) किकि इति अव्यक्तशब्देन दीव्यति क्रीडति, किकि-दिव्-क। चाषपक्षी, नीलकण्ठ। इसका पर्याय—स्वर्णचातक, चाष, चाम, किकिदिवि, किकीदिवि, किकीदिव, किकिदीव, किकिदिव और स्वर्णचूड़ है।

किकिदीधिति (सं० पु०) कुक्कुट, मुरगा।

किकियाना (हिं० क्रि०) १ कोलाहल करना, शोर मचाना, चिल्लाना। २ रोदन करना, रोना। ३ कें कें करना, दबना।

किकिर (सं० पु०) १ कोकिल, कोयल। २ पक्षी, चिड़िया। ३ अश्व, घोड़ा।

किकिरा (वै० अव्य०) कृ भावार्थे कर्मणि क पृषोदरादित्वात् साधुः। खण्ड खण्ड करके, टुकड़े टुकड़े उड़ा कर।

किकी, किकि देखो।

किकीदिव, किकिदिव देखो।

किकीदिवि, किकिदिव देखो।

किकीटीवि, किकिदिव देखो।

किकोरी (हिं० स्त्री०) क्षुपविशेष, एक पौदा।

किक्किट (वै० त्रि०) कुत्सित, खराब।

"किक्किटाकारेण वै ग्राम्या पशवो रमन्ते।"

(तैत्तिरीयसंहिता, ३।४।२।१।)

किक्किश (सं० पु०) १ केशादिघ्न कीटविशेष, बाल वगैरह उड़ानेवाला एक कीड़ा। केश, रोम, नख, दन्त आदि खानेवाले कीड़ेको किक्किश कहते हैं। (सुश्रुत) २ मांसदारण रोग, चमड़ा उड़ानेवाली बीमारी। उक्त रोगमें वरुण-पत्र जलसे पीस घृत मिला मलते और लगाते हैं। फिर गोमय रगड़नेसे भी उपकार होता है। (भैषज्यरत्नावली)

किक्किस, किक्किश देखो।

किक्किसाद (सं० पु०) राजिमत् सर्पविशेष, एक सांप। किक्किसाद राजिमान् सर्पोंके अन्तर्भूत है। मध्यवयसको उसका विष अति प्रखर रहता है। किक्किसादके दंशनसे त्वगादिकी शुक्लता, शीतज्वर, रोमहर्ष, स्तब्धता, दष्टस्थानमें शोथ, मुख नासिका द्वारा कफस्राव, वमन, चक्षुद्वयमें निरन्तर कण्डु, कण्ठदेशमें सूजन, घुर्घुरशब्द, निःश्वास अवरोध, अन्धकारमें प्रवेश करनेकी भांति अनुभव और अन्यान्य कफजन्य वेदना होती है। विषरोग शब्दमें चिकित्सादि देखो।

किक्कस (सं० पु०) दले हुये अनाजका दाना।

किखि (सं० स्त्री०) खदति हिनस्ति, निपातनात् साधुः। १ लघुशृगाल, लोमड़ी। (पु०) २ वानर, बन्दर।

किङ्कणी (सं० स्त्री०) किञ्चित् कणति, किम्-कण-इन्-ङीप्। छोटे छोटे घुंघरू।

किङ्कर (सं० त्रि०) किञ्चित् करोति, किम्-कृ-ट। दास, नौकर।

किङ्करगोविन्द—बुन्देलखण्डके अधिवासी एक कवि। इनका जन्म १७५३ ई०में हुआ था और शान्तिरसमें कविता करते थे।

किङ्करसेन—एक बंगाली कायस्थ। दिल्लीके मुगल सम्राट् बहादुर शाहके समय उनके पुत्र आजिम् उश् शान् बङ्गाल बिहार उड़ीसाके नाजिम और दीवान रहे। उसी समय हुगलीमें एक जेन-उद्-दीन फौजदार थे। आजिमके साथ जेन-उद्-दीनकी बनती न रही उसीसे उन्हें पदच्युत होना पड़ा। आजिमने अपने प्रियपात्र वालीबेगको हुगलीका फौजदार बनाया था। पदच्युत फौजदार जैन-उद्-दीनके अधीन किङ्करसेन पेशकार रहे। वह अति चतुर और कार्यदक्ष थे। जेन-उद्-दीनको उन पर प्रीति भी रही किन्तु वह किङ्करसेन पर पूर्ण विश्वास न रखते थे। कारण किङ्करसेनकी बुद्धि और क्षमताको उस समय कोई राजपुरुष पाता न था। जेन-उद्-दीनने निश्चय किया कि वालीबेगके पहुंचते ही वह उन्हें फौजदारीका कागजपत्र समझा दिये चले जायेंगे। किन्तु आनेमें विलम्ब देख जैन-उद्-दीनने उन्हें अपना उद्देश्य बता शीघ्र चलनेको अनुरोध किया था। वालीबेग भी किङ्करसेनको जानते और उनपर विश्वास भी रखते थे। क्योंकि जैन-उद्-दीनको कहला भेजा कि किङ्करसेनको कागजपत्र बता कर दिये जा सकते थे। जैन-उद्-दीनने अपने मनमें सोचा—'किङ्करसेन किसी समय हमारे ही अधीनस्थ कर्मचारी रहे। उनको कागजपत्र समझा देनेकी बात कह वालीबेगने हमारा अपमान किया है।' वह विवेचनाके उसीसे कागज पत्र छोड़े न थे। वालीबेगने उसी सूत्रपर जैन-उद्-दीनसे युद्ध छेड़ दिया। फरासडांगेके निकट युद्ध हुआ। फरासीसियों और ओलन्दाजोंने जैन-उद्-दीनका पक्ष लिया था। वालीबेगने हिमायत् नामक किसी व्यक्तिके अधीन नवाबका सैन्य भेजा था। किन्तु जैन उद् दीनने सन्धिका प्रस्ताव कर हिमायत्‌के पास आदमी पहुंचाया। उसके पहुंचते ही अचानक था पूर्वके किसी पड़ावका बुर्ज पर फरासीसी तोपका एक गोला हिमायत्‌के सर्वाङ्ग आकर लगा था। सेनाध्यक्षकी हानिसे नवाबकी फौजमें गड़बड़ पड़ गयी। जैन-उद्-दीन इसी सुयोगमें किङ्करसेनको भी साथ ले दिल्ली चले गये। वहां पहुंचते ही वह मर गये। किङ्करसेन अपनेको बांटे और निर्भीक-चित्त मुर्शिदाबाद जाकर नवाबसे मिले। नवाब उन्हें जैन-उद्-दीनका आदमी समझ क्रुद्ध हो गये किन्तु उस क्रोधको छिपा मुखसे मीठी मीठी बातें करने लगे। फिर उन्होंने किङ्करसेनको ही हुगलीके कर संग्राहकपद पर बैठाया था। एक वर्ष पीछे नवाबने उनसे हिसाब तलब किया। किङ्करसेन हिसाब समझाने मुर्शिदाबाद गये थे। कागजपत्रोंको झूठ बता नवाबने उन्हें कैद किया था। कैदखानेमें उन्हें भैंसका दूध अमल डालकर खानेको दिया जाता था। १७०८ ई० के पीछे किसी समय किङ्करसेनने परलोक गमन किया। उनका घर सम्भवतः फरासडांगेमें रहा। फरासडांगेका एक स्थान आज भी 'किङ्करसेनका गड़' कहाता है।

किङ्करी (सं० स्त्री०) किङ्कर-ङीष्। दासी, टहलनी।

किङ्कर्तव्य (सं० त्रि०) क्या करना उचित कौन कर्म चाहिये।

किङ्कर्तव्यता (सं० स्त्री०) किङ्कर्तव्यका भाव किङ्कर्तव्य-तल्। क्या करना पड़ेगा जैसी चिन्ता।

किङ्कर्तव्यविमूढ़ (सं० त्रि०) किङ्कर्तव्ये कर्तव्यतानिश्चये विमूढ़ः, ७-तत्। कर्तव्य निश्चय करनेको असमर्थ जो अपना कर्म ठहरा न सकता हो।

किङ्किण (सं० पु०) भारतवर्षीय कोई राजा।

"[illegible] किङ्किण[illegible] च।" ([illegible])

किङ्किणी (सं० स्त्री०) किमपि किञ्चित् कणति किम्-कण्-अच्-ङीष् पृषोदरादित्वात् साधु। १ कटिदेशका आभरणविशेष कमरका एक गहना, करधनी। उसका संस्कृत पर्याय—क्षुद्रघण्टिका, घण्टी, किङ्किणिका, किङ्किणि, क्षुद्रघण्टी प्रतिसरा, किङ्किणीका, कटिघण्टिका, क्षुद्रिका और कांची है। २ पद्मरसयुक्त द्राक्षाविशेष, एक खट्टा अंगूर। ३ वृक्षविशेष एक पेड़। ४ देवीमूर्तिविशेष। ५ विकङ्कत वृक्ष, बैंची। ६ बुभुक्षु विशेष, कहारोंका एक हथियार। (रामायण ५। २० सर्ग)

किङ्किणीका (सं० स्त्री०) किङ्किणी स्वार्थे कन् टाप्। क्षुद्रघण्टिका, करधनी।

किङ्किणीकाश्रम (सं० पु० क्ली०) एक तीर्थ। इस तीर्थमें रहनेसे परमश्च अप्सरोगणका मिलता है।

(भारत, अनु २५ अ)

किङ्किणीका (सं० वि०) किङ्किणीति कृत्वा कायति शब्दायते, किङ्किणी-कै-कः, किङ्किणीकः क्षुद्रघण्टिका स अस्यास्ति, किङ्किणीक-इनि। क्षुद्रघण्टिकायुक्त, करधनीवाला।

किङ्किणीतैल (वृहत्)—वैद्यकोक्त किसी किस्मका तैल। उक्त तैलके व्यवहारसे कानमें सन सन शब्द-का होना, कान बहना, बधिरता, शिरारोग, चक्षुरोग, गलरोध और मन्यास्तम्भादि मिट जाता है। प्रस्तुत करनेका नियम यह है—क्वाथके लिये आदित्यभक्ता मूली २ सेर चार उसे १६ सेर एकत्र पका ४ सेर रहने-से उतार लेना चाहिये। भंटि, कान्तपुस्तूर और निर्गुण्डी प्रत्येक २ सेर परिमाण और समनियममें फिर तीन प्रकारका क्वाथ बनाते हैं। कल्कार्थं ४ सेर सर्षपतैल, यष्टिमधु, पिप्पली, मुस्ता, गन्धक, कुष्ठ दुरालभा, कर्कटशृङ्गी, आदित्यभक्ताबीज, धुस्तूरबीज, रास्ना, मधुरिका, स्फटिकामूल, देवदारु नकी मूल, विषमाधुक, मञ्जिष्ठा और सहोञ्जनकी छाल प्रत्येक ४ तोला डाल कर पकाना चाहिये।

किङ्किनि (सं० पु०) किङ्किणी देखो।

किङ्किनी (सं० स्त्री०) १ विकङ्कतवृक्ष, बैंची। २ अम्ल-द्राक्षा, खट्टा अंगूर।

किङ्किर (सं० क्ली०) किं कुत्सितं मदवारि किरति विक्षि-पति, किम्-कृ-क। १ हस्तिकुम्भ, हाथीका मत्था। (पु०) २ वृहत् कृष्णमक्षिका, भौंरा। ३ कोकिल, कोयल। ४ घोटक, घोड़ा। ५ कामदेव। ६ रक्तवर्ण, लालरंग। (वि०) ७ रक्तवर्णविशिष्ट, सुर्ख लाल।

किङ्किरा (सं० स्त्री०) किं कुत्सितं यथा तथा किरति शरी-रात् निःसरति, किम्-कृ-क-टाप्। १ रक्त, खून, लहू। २ विकङ्कतवृक्ष, बैंचोका पेड़।

किङ्किराट (सं० पु०) १ बबूरक वृक्ष, बबूलका पेड़ किङ्किराट शीत, भेदक, ग्राहक और कफ, कुष्ठ, कृमि एवं विषनाशक होता है। (वैद्यकनिघण्टु)

किङ्किरात (सं० पु०) किङ्किरं रक्तवर्णत्वं अतति पुष्प-काले विस्तारयति, किङ्किर-अत-अण्। १ अशोक वृक्ष। २ कन्दर्प। ३ शुकपक्षी, तोता। ४ कोकिल, कोयल। ५ सकण्टकपीतपुष्पारख्य भण्टीक्षुप, एक जाम झाड़ी कटसैया। ६ पुष्पविशेष, एक फूल। उसका संस्कृत पर्याय—हेमगौर, पीतक, पीतभद्रक, विप्रलोभी, रामस्लान और षट्पदानन्द है। राजनिघण्टके मतमें किङ्किरात कषाय एवं तिक्तरस, उष्णवीर्य, अग्निदीपक और कफ, वायु, कण्डू, शोथ, रक्त तथा त्वक्‌दोषनाशक है। फिर भावप्रकाशमें उसे पिपासा, दाह, शोथ, वमि और कृमिनाशक भी कहा है।

किङ्किराल (सं० पु०) किङ्किराय रक्तत्वाय अलति पर्याप्नोति, किङ्किर-अल्-अच्। बर्बूर वृक्ष, बबूलका पेड़।

किङ्किरी (सं० पु०) किङ्किरं रक्तवर्णफलं अस्त्यस्मिन्, किङ्किर-इनि। विकङ्कतवृक्ष, बैंची।

किङ्किल (सं० अव्य०) किं च किल च, द्वन्द्वः। १ क्रोध में। २ अप्रह्लादमें।

किङ्किनाम (सं० पु०) अशोकवृक्ष।

किङ्क्षण (सं० वि०) किं कियत्परिमाणं क्षणभव, बहुव्रो०। कितने समयजात, कितने क्षणमें सम्पन्न, कितनी देरमें बना हुवा।

किङ्गोत्र (सं० वि०) किं किन्नामधेयं गोत्रमस्य, बहुव्री०। कौन गोत्रीय, किस वंशजात, किस गोत्र या वंशवाला।

किचकिच (हिं० स्त्री०) १ निरर्थक वादविवाद, झूठा झगड़ा। २ वाक् युद्ध, तकरार।

किचकिचाना (हिं० क्रि०) १ क्रोधके कारण दन्तघर्षण करना, दांत पीसना। २ पूर्ण बलप्रयोग करना, पूरी ताकत लगाना। ३ क्रुद्ध होना, गुस्सा खाना।

किचकिचाहट (हिं० स्त्री०) क्रोध, गुस्सा, दांत पिसाई।

किचकिची (हिं० स्त्री०) क्रोध, गुस्सा, किचकिचाहट।

किचपिच (हिं० वि०) १ क्रमरहित, बेसिलसिला। २ अस्पष्ट, जो साफ न हो।

किचड़ाना (हिं० क्रि०) आंखमें कीचड़ आना, आंख उठना।

किचरपिचर, किचरकिचर, किचपिच देखो।

किञ्च (सं० अव्य०) किम् च च च द्वयोर्द्वन्द्वः। १ आर-म्भमें, शुरूमें। २ समुच्चय पर, जखीरेमें। ३ साकल्यमें। ४ सम्भवतः, गालिबन्। ५ भेदपूर्वक, बंटवारेसे।

किञ्चन (सं० पु०) किम-चन्-अच्। १ हस्तिलयं

अधम, बड़ा खराब। (अव्य०) २ कोई अनिर्दिष्ट वस्तु या चीज। ३ अल्प, थोड़ा। ४ असाकल्य।

किञ्चनक (सं० पु०) नागराजविशेष, नागोंके एक राजा।

किञ्चिच्चोरितचरिका (सं० स्त्री०) व्याकरणविशेष, पताकी।

किञ्चित् (सं० अव्य०) किम् च चित् च द्वयोर्द्वन्द्व। १ अल्प, कम, थोड़ा। इसका संस्कृत पर्याय—ईषत् मनाक् और अल्पार्थक है।

"कर्पूरिका किञ्चिदिव स्थानम्।" (कुमारसम्भव)

२ कोई अनिर्दिष्ट वस्तु। (त्रि०) ३ चतुर्थांश, चौथाई।

किञ्चित्कर (सं० त्रि०) किञ्चिदपि करोति किञ्चित्-कृ ट। अल्पकार्यकारक थोड़ा काम करनेवाला।

किञ्चित्पाणि (सं० पु०) परिमितमान, दो तोलेकी तौल।

किञ्चिदुष्ण (सं० त्रि०) किञ्चित् ईषत् उष्णम् कर्मधा०। ईषत् उष्ण थोड़ा गर्म। उसका संस्कृत पर्याय—कोष्ण और कवोष्ण है।

किञ्चिन्न्यून (सं० त्रि०) किञ्चित् अल्पपरिमाणं ऊनं न्यूनं यस्य बहुव्री०। अल्प न्यून, कुछ कम।

किञ्चिन्मात्र (सं० त्रि०) किञ्चित् अल्पा मात्रा यस्य, बहुव्री०। अल्पपरिमित थोड़ासा।

किञ्चिलिक (सं० पु०) किञ्चित् चुलुम्पति, किम् चुलुम्प (लोपयात्) ड ऊ डायां कन् पृषोदरादित्वात् साधु। गण्डूपद, केंचुआ।

किञ्चुलुक (सं० पु०) किञ्चित् चुलुम्पति, किम्-चुलुम्प ड ईषार्थे कन्। गण्डूपद, केंचुआ। उसका संस्कृत पर्याय—महीलता, गण्डूपद, गण्डूपदी भूलता और कुण्ड है।

किञ्चुलुक, किञ्चिलिक देखो।

किम्पन्दम् (सं० त्रि०) किस चीजका अवलम्बन करने वाला।

किञ्ज (सं० स्त्री०) किञ्चित् जलं यत्र, पृषोदरादित्वात् च लोप। १ किञ्जल्क कमलका रेशा। २ मृणाल, कमलकी डण्डी। ३ नागकेशरपुष्प।

किञ्जप्य (सं० स्त्री०) किञ्चित् जप्यं यत्र, बहुव्री०। तीर्थविशेष। इस तीर्थमें स्नान करनेसे अपरिमित जपका फल मिलता है। (भारत वन ८३ अ०)

किञ्जल (सं० पु०) किञ्चित् जलं यत्र, बहुव्री०। १ पद्मकेशर कमलका रेशा। २ किञ्जल्कमात्र।

किञ्जल्क (सं० पु० क्ली०) किञ्चित् जलति अपवारयति, किम्-जल बाहुलकात् क। १ नागकेशरपुष्प। २ नागकेशरवृक्ष। ३ पद्मकेशर, कमलका रेशा। यह चीज कोषकी जाती और वेष्टित रहता है। उसका संस्कृत पर्याय—मकरन्द, केशर पद्मकेशर, किञ्ज पीतपराग, तुङ्ग और काम्बोजक है। राजनिघण्टुके मतमें यह मधुर एवं कटुरस रुच शीतल कफविकारक और पित्त तृष्णा दाह तथा मुखव्रणनाशक है। फिर भावप्रकाशमें किञ्जल्कको कषाय, रुक्ष, पित्त और शोथशोषनाशक कहा है।

किञ्जल्की (सं० त्रि०) किञ्जल्कोऽस्त्यस्य किञ्जल्क इनि केशरयुक्त, रेशेदार।

"किञ्जल्किनी रतौ ..." (ऋतुसंहार ३। ११)

किञ्जपालुक (सं० स्त्री०) कंकुड एक पहाड़ी नदी।

किटकिट (हिं० पु०) वादविवाद, झगड़ा झंझट।

किटकिटाना (हिं० क्रि०) १ दन्तघर्षण करना, दांत पीसना किचकिचाना। २ दांतों के नीचे कड़क पड़ना।

किटकिना (हिं० पु०) १ कोई दस्तावेज। उससे द्वारा ठीकेदार अपना ठेका अपनी ओरसे दूसरे आदमियोंके नाम कर देता है। २ यन्त्रविशेष एक ठप्पा। किट किने पर सोनार सोना चांदीके पत्रों या तारोंको चोट कर बेलबूटे बनाते हैं।

किटकिनादार (हिं० पु०) ठेकेदारसे ठेके पर कोई चीज लेनेवाला आदमी।

किटकिरा किटकिना देखो।

किटि (सं० पु०) केटति गच्छति प्रतिवेगेन गच्छति, अथवा ... गच्छति वा किट् गतौ इन् उगुणत्वात् किच। १ वनशूकर, जङ्गली सूअर। २ वाराही-कन्द।

किटिदंष्ट्रा (सं० स्त्री०) शूकरदंष्ट्रा, सूअरकी डाढ़।

किटिभ (सं० पु०) किटिरिव भाति, किटि-भा-क। १ केशकीट, जूं। २ कुष्ठरोगभेद, किसी किस्मका कोढ। (क्ली०) ३ तुत्थक, तूतिया।

किटिभकुष्ठ (सं० पु०) कुष्ठरोगभेद, किसी किस्मका कोढ़। उसमें चर्म शुष्क व्रणकी भांति कृष्णवर्ण और कठोर पड़ जाता है।

किटिभ (सं० क्लो०) १ क्षुद्रकुष्ठभेद, किसी किस्मका हलका कोढ। अत्यन्त कण्डुविशिष्ट एवं स्रावयुक्त स्निग्ध कृष्णवर्ण गोलाकार घनमविशिष्ट पिडका विशेषको किटिभकुष्ठ कहते हैं। कुष्ठ देखो। काञ्जिकके साथ कृष्ण सन्मुक्की शिखा पीस कर लगानेसे उक्त रोग अच्छा हो जाता है।

किटिमूलक (सं० पु०) वाराहीकन्द, शूकरकन्द।

किटिनाम, किटिमूलक देखो।

किटी, किटि देखो।

किट्ट (सं० क्ली०) केटति लोहादि धात्वत्ययात् निर्गच्छति किट्-क्त आगमशास्त्रस्य अनित्यत्वात् नेट्। १ लौह आदि धातुका मैल, लोहे आदिका मोरचा। शतवर्ष-का उत्तम, अशीति वर्षका मध्यम और षष्टि वर्षका अधम होता है। उससे हीन किट्ट विषतुल्य है। उस-में लौहका ही गुण रहता है। (भावप्रकाश) किट्टका शोधन इस प्रकार है—किट्टको विभीतक काष्ठके अग्निसे जला जब अग्निवर्ण हो जाये, तब गोमूत्रमें बुझा लेना चाहिये। इसी प्रकार उसे ७ बार शोधन करते हैं। फिर किट्टको चूर्ण कर त्रिफलाके द्विगुण क्वाथमें पकाते हैं। उसे मधुके साथ सेवन करने पर पाण्डुरोग आरोग्य होता है। किट्ट मधुर, कटु, उष्ण, और क्रमि, वात, शूल, मेह, गुल्म, एवं शोफघ्न है। (राजनिघण्टु) २ पुरीष, मैला। ३ कर्णमल, खूंट। ४ शुक्र, वीर्य। ५ तैलमल, काट, कीट।

किट्टक, किट्ट देखो।

किट्टवर्जित (सं० क्लो०) किट्टेन मलेन वर्जितम्, ३-तत्। १ शुक्रधातु। शुक्र देखो। (त्रि०) २ मलशून्य, निर्मल, साफ, जो मैला न हो।

किट्टाल (सं० पु०) किट्टेन मलेन अलति पर्याप्नोति, किट्ट-अल्-अच्। १ लौहगूथ, लोहेका मोरचा। २ ताम्रकलश, तांबेका घड़ा। (क्ली०) ३ ताम्र, तांबा। ४ मंडूर।

किट्टिम (सं० क्लो०) द्रवद्रव्यविशेष, एक रकीक चीज।

किड़कना (हिं० क्रि०) चम्प देना, खिसकना।

किड़किड़ाना (हिं० क्रि०) किटकिटाना, दांत पीसना।

किण (सं० पु०) कण शब्दे अच् पृषोदरादित्वात् अत इत्वम्। १ मांसग्रन्थि, गोश्तकी गांठ। २ घुण, घुन।

"घर्मोद्भूतं दर्शोद्धर्कैरपि सदा दृष्टे न जात: किण:।"

(मृच्छकटिक नाटक)

३ दृश्य, जख्म। ४ करोर, करोन। ५ कीगाढ़। ६ मथितो-परिस्थ फेनाभ वस्तु, मथी हुई चीज पर झाग जैसी चीज। ७ योनिकन्दरोग, एक बीमारी। ८ व्रणज चिह्न, रगड़का निशान्। ९ शुष्क व्रणचिन्ह, सूखे जखम-का निशान।

किणवान् (सं० पु०) किणोऽस्यास्ति, किण-मतुप् मस्य व:। किणविशिष्ट, मस्त, कड़ा।

किणालात (सं० पु०) इन्द्रका नामान्तर।

किणि (सं० स्त्री०) किणाय तन्निवृत्तये प्रभवति, किण बाहुलकात् इन्। अपामार्ग, लटजीरा। अपामार्ग देखो।

किणिहि, किणिही देखो।

किणिही (सं० स्त्री०) किणः अस्त्यस्य, किण इनि: किणिनो व्रणान् हन्ति, किणिन्-हन्-ड-ङीप्। १ अपा-मार्ग, लटजीरा। २ कृष्णकटभीवृक्ष, एक पेड़। ३ श्वेतगोकर्णी।

किण्व (सं० पु०-क्ली०) कण-क्वन् बहुलवचनात् इत्वम्। अशूप्रुषिलटिकणिखटिविशिभ्यः क्वन्। उण् १।१५१। १ सुराबीज, शराबका नशा बढ़ानेवाली एक चीज। २ पाप, गुनाह।

किण्वक, किण्व देखो।

किण्वमूलक (सं० पु०) बकुलवृक्ष, मौलसिरीका पेड़।

किण्वी (सं० पु०) १ अश्व, घोड़ा। (वि०) २ पापयुक्त, गुनाहगार।

कित (सं० पु०) मुनिविशेष।

कित (हिं० क्रि० वि०) १ कुत्र, कहां। २ किस ओर, किधर।

कितक (हिं० क्रि० वि०) कियत्, कितना।

कितना (हिं॰ वि॰) कियत, किस कदर। २ अधिक जैसा। यह शब्द क्रियाविशेषणकी भांति भी व्यवहृत होता है।

कितव (सं॰ पु॰) कितं वायति किरति व्याप्ति वा कित-वा-क। १ पाशाक्रीड़क, जिसका काम जुआ हो। २ धुस्तूरक धतूरेका पेड़। ३ मत्त, मतवाला आदमी। ४ खल, धोखेबाज। ५ धूर्त ठग। ६ पागल, मायामुग्ध। ७ गोरोचना नामक गन्धद्रव्य। ८ माणवक गन्ध बन यु बूदार चीज।

कितवाज (सं॰ पु॰) कृष्ण धतूरा, धतूरेका पेड़।

किता (अ॰ पु॰) १ काट छाँट करनेका ढंग। २ ढंग, चाल। ३ संख्या, अदद। ४ विस्तारमान, मकानका हिस्सा। ५ प्राकृत भूभाग, जमीनका टुकड़ा।

किताब (अ॰ स्त्री॰) १ पुस्तक, ग्रन्थ। २ बहीखाता रजिष्टर।

किताबी (अ॰ वि॰) पुस्तकाकार, किताब जैसा। सदा पुस्तक पाठ करनेवालेको 'किताबी कीड़ा' कहते हैं।

कितिक कितना देखो।

कितेक, कितना देखो।

कितो, कितना देखो।

कित्ता, कितना देखो।

कित्ति (हिं॰ स्त्री॰) कीर्ति, नामवरी।

कित्तूर—बेलगाम जिलेका पुराना शहर। यह अक्षा॰ १५° ३६' उ॰ देशा॰ ७४° ४८' पू॰ पर बेलगामसे दक्षिण १८ कोस फासले पर अवस्थित है। लोकसंख्या ७५०० लग भग है। यहाँ स्कूल, डाक आफिस और साप्ताहिक तथा पुरुषातिमारकी बाजार लगता है।

किदारा, केदारा देखो।

किधर (हिं॰ क्रि॰ वि॰) कुछ कहाँ, किस ओर।

किधौं (हिं॰ अव्य॰) अथवा या तो।

किन (हिं॰ सर्व॰) १ 'किस' का बहुवचन। (क्रि॰ वि॰) २ क्या नहीं। ३ अथवा वैकल्प। (पु॰) ४ घर्षणचिह्न रगड़का दाग।

किनका (हिं॰ पु॰) कणिका, अनाजका टुकड़ा।

किनहा (हिं॰ वि॰) कृमियुक्त, किरहा।

किनवर—एक जाति। युक्तप्रदेशमें इस जातिके लोगोंकी संख्या अधिक पाई जाती है। ये अपनेको क्षत्रिय बतलाते हैं परंतु और लोग इन्हें क्षत्रिय नहीं मानते।

किनाट (सं॰ क्ली॰) वृक्षका अभ्यन्तरस्थ वल्कल, पेड़की भीतरी छाल।

किनाबी (हिं॰ स्त्री॰) पक्षीविशेष एक चिड़िया। यह पक्षी जलाशयके निकट रहता है। इसका पर हरित् और सिर तथा कण्ठ श्वेतवर्ण होता है। अण्डा देनेका समय मई और सितम्बर मासका मध्य भाग है।

किनार किनारा देखो।

किनारदार (हिं॰ वि॰) किनारेदार, जिसमें कोर रहे।

किनारबंद (हिं॰ पु॰) एक कोर। यह दरीके तानकी तरह बनता है। किनारबंद दरीके ताने-बानेसे कुछ ज्यादा मोटा रहता और तानको बचानेके लिये लगता है।

किनारा (फा॰ पु॰) तीर, कूल, प्रान्तभाग।

किनारी (हिं॰ स्त्री॰) १ गोट, हाशिया। २ सुनहला या रुपहला गोटा।

किनी (सं॰ स्त्री॰) क्षुद्र बकरी, छोटी बटेवा।

किन्तु (सं॰ पु॰) कि कुत्सिता तनुरस्य, बहुव्री॰। सर्वनाम मकड़ा।

किन्नमाम् (सं॰ अव्य॰) इदमेवाम्नतिमयेन किं कुत्सित इत्यर्थे, किम् नमस् आह्ह। दो कुत्सित द्रव्योंके मध्य परिमाण कुत्सित करनेवाला।

किन्तु (सं॰ अव्य॰) किम् तु च इत्येकम्। परन्तु, लेकिन, पुनरर्थका सहोद्बोधक। २ पूर्ववाक्यका विरुद्ध लेख, वरन्, बल्कि। ३ फिर क्या।

किन्तुघ्न (सं॰ पु॰) ज्योतिषशास्त्रोक्त ववादि एकादश करणके अन्तर्गत एक करण। किन्तुघ्न करणमें जन्म लेनेसे मनुष्यका मित्र, शत्रु, अमित्र और अस्त तथा पक्षमें कोई भेदभाव नहीं रहता। फिर वह सत्य और विचारकार्य प्रिय होता है। (कोष्ठीप्रदीप)

किन्दम (सं॰ पु॰) महाभारतोक्त तापसविशेष। किन्दम तपोबल तिरस्कृत पदाघात करनेसे मनुष्य समस्त सब

से छूट परम गति पाता है । (भारत, वन० ८३ अ०)

किन्दम (सं० पु०) ऋषिविशेष। किन्दम ऋषि मृगरूप धारणकर मृगरूपधारिणी स्त्रीके साथ किसी काल विहार करते थे। उसी समय महाराज पाण्डुने उन्हें मार डाला। इसीसे किन्दमने पाण्डुको अभिशाप दिया था—'तुम भी सङ्गमकालमें मरोगे।' (भारत, आदि० ११८ अ०)।

किन्दर्भ (सं० पु०) कोई ऋषि।

किन्दान (सं० क्ली०) किञ्चिदपि दानं आवश्यकं यत्र, बहुव्री०। कुरुक्षेत्रस्थ तीर्थविशेष। किन्दान तीर्थमें स्नान करनेसे अपरिमित दानका फल मिलता है। (भारत, वन ८३ अ०)।

किन्दास (सं० पु०) कः कुत्सितो दासः, कर्मधा०। निन्दित दास, खराब नौकर।

किन्दी (सं० पु०) घोटक, घोड़ा।

किन्दुबिल्व (सं० पु० क्ली०) राढ़देशीय एक ग्राम। किन्दुबिल्व अजयनदीके तीर अवस्थित है। उसे केन्दुबिल्व, केन्दुबिल्ल और केन्दुबिल भी कहते हैं। प्रसिद्ध वैष्णव कवि जयदेव गोस्वामीने उक्त ग्राममें जन्मग्रहण किया था। वहां प्रति वर्ष माघ मासको 'जयदेवका मेला' लगता है। आजकल इसे केन्दुली कहते हैं। जयदेव देखो।

किन्दैवत (सं० त्रि०) का देवताऽस्य, किम्-देवता-अच्। १ किस देवताका उपासक, किस देवताकी पूजा करनेवाला। २ किस देवतासम्बन्धीय।

किन्दैवत्य (सं० क्ली०) किन्दैवतस्य भावः, किन्दैवत ष्यञ्। किन्दैवतका धर्म।

किन्धी (सं० पु०) किं कुत्सिता धीः बुद्धिरस्यस्य, किम्-धी इनि। अश्व, घोड़ा।

किन्नर (सं० पु०) किं कुत्सितो नरः, कर्मधा०। १ देवयोनिविशेष, एक प्रकारके देव। किन्नरका मुख अश्वकी भांति रहता, किन्तु अन्यान्य समस्त अवयव मनुष्यतुल्य देख पड़ता है। उसका संस्कृत पर्याय—किम्पुरुष, तुरङ्गवदन, मयु, अश्वमुख, गीतमोदी और हरिणनर्तक है। किन्नर अतिशय सङ्गीतपटु होता है। तुम्बुरु प्रभृति स्वर्गगायक भी उक्त-जातिके ही हैं। २ वर्षविशेष। ३ कोई बौद्ध-उपासक।

किन्नर (हिं० पु०) १ वादविवाद, झगड़ा। २ नखरा। ३ बहाना।

किन्नरकल्पद्रुम—वैद्यकोक्त औषधविशेष, एक दवा। पारद, गन्धक, अभ्र, स्वर्णमाक्षिक एवं लौह प्रत्येक २ तोला, वैक्रान्त ४ माषा, स्वर्ण २ माषा तथा रौप्य १ तोला स्वच्छ यामक, माञ्जल्यष्टिका, मुसली, कण्टकारी, आर्द्रक और ब्राह्मीके रसमें मिला पृथक् पृथक् भावना देना चाहिये। फिर २ रत्तो की बराबर बटिका बना छायामें सुखा लेनेसे उक्त औषध प्रस्तुत होता है। किन्नरकल्पद्रुम थोड़े दिन नियमित व्यवहार करनेसे किन्नरकी भांति कण्ठस्वर बनता और स्वरभङ्ग, काम, श्वास, एवं कफज तथा वातश्लेष्मज रोग मिटता है।

किन्नरवर्ष (सं० पु०) वर्षविशेष, एक मुल्क। किन्नरवर्ष हिमालय पर्वतके उत्तरभागमें अवस्थित है।

किन्नरी (सं० स्त्री०) किन्नर-ङीप्। किन्नर जातीय स्त्री।

"ऐरावतशिरोधार्ये ... किन्नरीणां ... ॥"
(रामायण, ५।१९।४८)

किन्नरीवीणा (सं० स्त्री०) किसी प्रकारका वीणायन्त्र। पूर्वकालको उक्त यन्त्र नारियलके खोपड़ेसे बनता था। आज कल उसे पक्षिविशेषके अण्डे या रजतादि धातु द्वारा भी प्रस्तुत करते हैं। वह कच्छपीवीणाकी अपेक्षा आकारमें क्षुद्र होती है। किन्नरी-जातीय वीणा ही पहले यहूदियोंमें 'किन्नर' और यूनानियोंमें 'शम्बुका' नामसे विख्यात थी। वह दो प्रकारकी होती है—लघ्वी और बृहती। बृहतीमें तीन तुम्बी लगती हैं।

किन्नरेश (सं० पु०) किन्नराणां ईशो राजा। किन्नरराज कुबेर। काशीखण्डमें लिखा है—कुबेरने महातपस्याके बल महादेवके निकट गुह्यक, यक्ष, किन्नर प्रभृतिके आधिपत्य और धनेश्वरत्वका वर पाया था। (काशीखण्ड, १२ अ०)

किन्नरेश्वर (सं० पु०) किन्नराणां ईश्वरः, ६-तत्। कुबेर। किन्नरेश देखो।

किन्नामधेय (सं० त्रि०) किं नामधेयमस्य, बहुव्री०। किन्नामविशिष्ट, किस नामवाला।

किन्नामा (सं० त्रि०) किं नाम यस्य, बहुव्री०। किन्नामन् देखो।

किन्निमित्त (सं० त्रि०) किं निमित्तं कारणं यस्य बहुव्री०। किस कारण, किस लिये।

किमु (सं० अव्य०) किञ्च तु च द्वन्द्व। १ प्रश्न, क्यों, क्या। २ वितर्क, शायद। ३ सादृश्य, जैसे। ४ स्थान कहां कहां। ५ कारण, क्योंकर कैसे।

किम्य (सं० पु०) सजल कृमिविशेष, मेंढकी एक कीड़ा। क्रिमि देखो।

किफायत (अ० स्त्री०) १ यथेष्ट होनेका भाव, काफी होनेकी हालत। २ मितव्ययिता, कमखर्ची।

किफायती (अ० वि०) मितव्ययी, कमखर्च, संभल कर खर्चनेवाला।

किबलई (हिं० स्त्री०) पश्चिमदिक्, मगरिबकी दिशा।

किबला (अ० पु०) १ पश्चिमदिक् मगरिबकी दिशा। मुसलमान उसी ओर मुंह कर नमाज पढ़ते हैं। २ मक्का।

किबला आलम (अ० पु०) १ ईश्वर, सबका मालिक। २ सम्राट् बादशाह।

किबलागाह (अ० पु०) पिता, वालिद, बाप।

किबलानामा, किबलानुमा देखो।

किबलानुमा (अ० पु०) यन्त्रविशेष, एक औजार। किबलानुमा पश्चिमदिक्को बताता है। अरब नाविक उस यन्त्रको व्यवहार करते थे। उसमें एक सुई ऐसी लगती जो पश्चिम ओरको ही अपना मुख रखती है।

किम् (सं० अव्य०) कु बाहुलकात् डिमु। १ कुत्सा, निन्दा, छी छी। २ वितर्क, सोचना। ३ निषेध, नहीं। ४ प्रश्न क्यों क्या।

किम् (सं० त्रि०) १ क्षेप। २ वितर्क। ३ निन्दा। ४ प्रश्न।

किमपि (सं० अव्य०) किं च अपि च द्वन्द्व। १ कोई भी। २ अनिर्वचनीय जो कह कर बताया न जाने वाला।

"[illegible] किमपि [illegible]"। ([illegible], ३ अ)

किमरिख (हिं० पु०) वस्त्रविशेष, किसी किस्मका कपड़ा। किमरिख चिकन, क्षौम तथा सूक्ष्म रहता और उसीसे बनता है। किन्तु आज कल नाम उसे रुई से भी बना लेते हैं। यह शब्द अंगरेजीके केम्ब्रिक (Cambrick) का अपभ्रंश है।

किमर्थं (सं० अव्य०) किं अर्थं प्रयोजनं यस्य, बहुव्री०। किस कारण, किस लिये क्यों।

किमाकार (सं० त्रि०) किं कीदृशः आकारोऽस्य, बहुव्री०। किस प्रकार आकारविशिष्ट कैसी सूरत शकलवाला।

किमाख्य (सं० त्रि०) का आख्या यस्य, बहुव्री०। क्या नामविशिष्ट, किस नामवाला।

किमाच (हिं० पु०) केवांच।

किमाम (हिं० पु०) किवाम खमीर एक प्रकार। किमाम शहदकी तरह गाढ़ा बनाया जाता है।

किमारखाना (फा० पु०) द्यूतक्रीडास्थान, जुआ खेलनेकी जगह।

किमारबाज (फा० वि०) द्यूतक्रीडक जुआरी जुआ खेलनेवाला।

किमारबाजी (फा० स्त्री०) द्यूतक्रीड़ा, जुवेका खेल।

किमाश (अ० पु०) १ रीति, ढंग। २ गञ्जीफेका ताशका रंग।

किमि (हिं० क्रि० वि०) किस रीतिसे, क्योंकर, कैसे।

"किमि [illegible]" (तुलसीदास)

किमिच्छक (सं० पु०) किमिच्छसीति प्रश्नेन दानार्थं कायति शब्दायते कै-क पृषोदरादित्वात् साधुः। १ व्रतविशेष। इस व्रत करनेके समय प्रार्थियोंसे पूछना पड़ता है कि तुम क्या चाहते हो। फिर वह जो मांगते, व्रती उन्हें देते हैं। मार्कण्डेयपुराणमें लिखा है—महाराज करन्धमके पुत्र अवीक्षित् किसी स्वयम्वरमें उपस्थित हो राजकन्याको बलपूर्वक ग्रहण करने पर उद्यत हुए। उस समय सभाके समस्त राजाओंने उनके विरुद्ध युद्ध आरम्भ किया। महावीर अवीक्षित्ने अपने बाहुबलसे अकेले ही उन समस्त राजाओंको हरा दिया था। परन्तु राजाओंने निरस्त्र न हो युद्धमें अन्याय ग्रहण कर अवीक्षित्को पराजित कर दिया। अवीक्षित्ने इस प्रकार अपमानित हो अपना विवाह न करने का

प्रतिज्ञा की। और अपने पिताके बहुत समझाने पर भी उस प्रतिज्ञाको तोड़ा न था। किन्तु उपोषित माता के आदेशानुसार किम्पिच्छक व्रतके समय अवोचितने उच्चैःस्वरसे घोषणा की था—"हमारा धन पर अधिकार नहीं है, अतएव यदि हमारे शरीर द्वारा कोई प्रयोजन सिद्ध करना चाहता हो तो हम उसकी इच्छा पूर्ण कर देंगे।" इस समय पिता करन्धमने उनके निकट उपस्थित हो कहा "वत्स! हमें पौत्रके मुखका दर्शन करा दो।" अवोचितने अपने पिताकी उक्त प्रार्थना परिवर्तन करनेकी बहुतसी चेष्टा की, परन्तु कृतकार्य न हो सके। सुतरां विवाह करनेके लिये वाध्य हो इन्होंने उसी राजकन्याका पाणिग्रहण किया था।" (वि०) २ क्या चाहनेवाला।

"इति मोमेरल्दाशेरभ्येयेव किमिच्छिके'।

सदा पुन्या समस्कारैः स्वस्यार विभक्तप ।" (भारत, अनु० १२ अ०)

किमीढी (दे० पु०) किमिदानीमिति चरति, किम-इदानीम्-इति पृषोदरादित्वात् साधुः। १ अब क्या करेंगे सोचते विचरण करनेवाला खल व्यक्ति, अब क्या करेंगे खयाल कर घूमनेवाला बदमाश। २ प्रेत योनिविशेष।

"हंपो धत्तमन्वदां किमोडिमे।" (ऋक्, ७।१००।२)

'किमोदिने किमिदानीमिति चरते पिशुनाय।' (सायण)

किमु (सं० अव्य०) किम् च उ च, द्वन्द्वः। १ कदाचित्, शायद, सम्भावना। २ क्यों, किसलिये, वितर्क। ३ विमर्ष। ४ क्या, क्यों, प्रश्न। ५ नहीं, निषेध। ६ छी छी, निन्दा।

किमुत (सं० अव्य०) किम् च उत् च, द्वन्द्वः। १ क्यों, क्या, प्रश्न। २ यद्यपि, क्योंकि, वितर्क। ३ अथवा, या, विकल्प। ४ अतिशय, बहुत, ज्यादा।

किमेदि—मन्द्राजप्रदेशके गंजाम जिलेकी पश्चिम भागस्थ एक जमीन्दारी। उक्त जमीन्दारी तीन भागमें विभक्त है—परलाकिमेदि, पेदाकिमेदि वा विजयनगरम और चिन्नकिमेदि वा प्रतापगिरि। किमेदि एक छोटा सा पार्वतीय राज्य है। उसके चारो ओर पर्वत विस्तृत तथा उर्वर उपत्यका और नदी, नाला एवं झरने हैं। प्रचुर शस्य उत्पन्न होने भी उक्त स्थान स्वास्थ्यकर नहीं।

किमेदि जमीन्दारी पहले जगन्नाथवाले राजाओंके अधीन थी। उन्हींके वंशीय राजपुत्रोंमेंसे उत्तराधिकार न पाने पर किसीने किमेदि और किसीने इच्छापुर राज्यका विजयनगर अधिकार किया। आज भी किमेदिराज्य उक्त वंशोद्भव नारायणदासके सन्तर-पुरुषके अधीन है। प्रजा यहांके राजाको देवतुल्य भक्ति करती है।

किम्पच (सं० त्रि०) किं कुत्सितं केवलं स्वोदरपूरणायैव पचति, किम्-पच्-अच्। कृपण, कंजूस, अपने भी लिये पकाने और दूसरेको न खिलानेवाला।

किम्पचान (सं० वि०) किं कुत्सितं कस्मैचिदपि न दत्वा केवलं स्वोदरपूरणायैव पचति, किम्-पच्-चानक किम्पच देखो।

किम्पराक्रम (सं० त्रि०) किं कीदृशः पराक्रमोऽस्य, बहुव्री० १ किस प्रकारका विक्रमशाली, कैसा ताकतवर। किं कुत्सितः पराक्रमोऽस्य। २ निन्दित पराक्रमशाली, खराब ताकत रखनेवाला। ३ हीनबल, कमजोर।

किम्परिमाण (सं० वि०) किं परिमाणमस्य, बहुव्री०। कितना परिमाणविशिष्ट, कितनी मिकदारवाला।

किम्पर्यन्त (सं० क्रि० वि०) कितनी दूर पर्यन्त, कहां तक।

किम्पाक (सं० वि०) किं कथमपि पाकः शिक्षाप्रकारो यस्य, बहुव्री०। १ माल्यशालित, मांके दूध पर चलनेवाला। (पु०) किं कुत्सितः पाकः परिणामो यस्य, बहुव्री०। २ महाकालतता, लाल इन्द्रायण।

महाकाल देखो

"न लुब्धा बुध्यते दोषान् किम्पाकमिव भक्षयन्।"

(रामायण, २।६६।६)

३ विषतिन्दुकवृक्ष, कुचिलेका पेड़। ४ रोग, बीमारी। ५ ज्वर, बुखार। ६ मसादिनिर्गम। (क्ली०) ७ महाकाल फल।

किम्पुना (सं० स्त्री०) नदीविशेष, एक दरया।

(भारत, २।३०१)

किम्पुरुष (सं० पु०) किं कुत्सितः पुरुष कर्मधा० १ किन्नर। किन्नर देखो। २ लोकविशेष, कोई लोग। किम्पुरुष और किम्पुरुषी पर्वतके निकट वनमें घर

बनाकर रहती और कन्द मूल तथा फल खाकर जीविका निर्वाह करती है। (रामायण, किष्कि० ४४ सर्ग)

३ जम्बुद्वीपाधिपति अग्नीध्रके एक पुत्र। (विष्णुपु० २।१।१८) ४ जम्बुद्वीपके अन्तर्गत मध्य हिमालय और हेमकूटके बीचका एक देश या देश।

"न ये स्वर्गं तीर वर्षविशत धीयताम्।
इदं किम्पुरुषं वर्षं हुपदुःखेन वर्जितम्॥"
(भारत, भीष्म, ८८।१)

५ कुत्सितपुरुष, खराब आदमी।

किम्पुरुषाधिप (सं० पु०) किम्पुरुषान् अधिपाति रक्षति, किम्पुरुष अधि-पा क। कुबेर, किन्नरों या किम्पुरुषोंके राजा।

"कनक कमानलौ चर्च किम्पुरुषाधिपः।" (हरिवंश)

किम्पुरुषेश्वर (सं० पु०) किम्पुरुषस्य किम्पुरुषाणां वा ईश्वरः, ६ तत्। १ किम्पुरुषवर्षके राजा। २ कुबेर।

किम्पुरुष (सं० स्त्री०) किम्पुरुषनामक वर्षविशेष, एक मुल्क।

किम्प्रकार (सं० अव्य०) किं कीदृश प्रकारोऽस्मिन् बहुव्रि०। १ किस प्रकार, कैसे। २ किस उपायसे, किस तरहसे।

किम्प्रमाण (सं० त्रि०) किं कीदृशं प्रमाणोऽस्य, बहुव्री०। किस प्रकार प्रमाणविशिष्ट, कैसे मापवाला।

किम्बल (सं० त्रि०) किं कीदृशं बलं अस्य, बहुव्री०। किस प्रकार सैन्यविशिष्ट कैसी फौज या ताकत रखनेवाला।

किम्बरा (सं० स्त्री०) किञ्चित् विगति, किम्-व्र अच्-टाप्। नली नामक गन्धद्रव्य, एक खुशबूदार चीज।

किम्भूत (सं० त्रि०) किं कीदृशं भूतम् कर्मधा०। किस प्रकारका, कैसा।

किम्मय (सं० त्रि०) किं स्वरूपम्, किम-मयट्। किसात्मक, किस तरहका।

किम्वान् (सं० त्रि०) किमस्ति अस्यास्ति किम्-मतुप मस्य वः। १ किञ्चित् विशिष्ट, कुछ रखनेवाला। २ किंविशिष्ट, क्या रखनेवाला।

किम्वदन्ति (सं० स्त्री०) किम् वद-क्तिच्। जनश्रुति, प्रवाद, अफवाह।

किम्वदन्ती (सं० स्त्री०) किम्-वद् क्तिच्-ङीप्। जनश्रुति, अफवाह। सत्य हो या असत्य बहुतसे लोग जो बात विश्वासपूर्वक बताते रहते, उसीको किम्वदन्ती कहते हैं।

"यदि किंचित् किम्वदन्ती श्रूयते ... गाथा बहुपथे।" (मार्कण्डेय)

किम्वा (सं० अव्य०) किं च वा च, द्वन्द्व। अथवा, या तो विकल्प। किम्वाका संस्कृत पर्याय—उताहो, यदि वा, यद्वा और किंतु है।

किम्विद (सं० त्रि०) किं वेत्ति किम्-विद् क्विप्। किस विषयमें पण्डित, क्या जाननेवाला।

किम्वीर्य (सं० त्रि०) किं कीदृशं वीर्यमस्य, बहुव्री०। किस प्रकारका बलवाला, कैसा ताकतवर।

किम्व्यापार (सं० त्रि०) किं कीदृशो व्यापारोऽस्य बहुव्री०। १ किस प्रकारका व्यापारविशिष्ट कैसे काममें लगा हुआ। (पु०) कीदृशो व्यापारः, कर्मधा०। २ किस प्रकारका कार्य कैसा काम।

कियत् (सं० त्रि०) किं परिमाणमस्य किम् वतुप् वस्य घ 'किम' कि आदेश। (किमिदंभ्यां वो घः। पा ५।२।४०) क्या परिमाणविशिष्ट, किस मिकदारवाला, कितना।

"कियन्मात्र वियद्दिवसकम् ...।" (काशीखण्ड)

कियती (सं० स्त्री०) कियत्-ङीप्। कितनी।

"निशिथिनी ... ...।"
(नैषध, ४ सर्ग)

कियत्काल (सं० पु०) कियान् किम्परिमितः कालः, कर्मधा०। १ क्या परिमित काल, कितना वक्त। २ किञ्चित् काल, थोड़ा समय।

कियदेहिका (सं० स्त्री०) उद्योग कोशिश।

कियद्दूर (सं० त्रि०) किं परिमितं दूरं व्यवधानम् कर्मधा०। कितनी दूर।

कियन्मात्र (सं० त्रि०) किं परिमिता मात्रा यस्य बहुव्री०। क्या मात्राविशिष्ट किस मिकदारवाला।

कियन्मूल्य (सं० त्रि०) किं परिमितं मूल्यमस्य बहुव्री०। क्या मूल्यविशिष्ट, किस कीमतवाला।

कियारी (हिं० स्त्री०) १ खेत या उद्यानमें अलग अलग

अन्तर पर दो सूक्ष्म मोड़ोंके मध्यकी भूमि। कियारीमें बीज बोते या पौदे लगाते हैं। २ क्षेत्रविभागविशेष, खेतका एक हिस्सा। ३ क्षेत्रका वह भाग जो जल सिञ्चनके निमित्त बरहों या नालियोंके मध्य फावड़ेसे मेंड़ लगाकर बनाते हैं। ४ हृहत् कटाहविशेष, कोई बड़ा कड़ाह। उसमें समुद्रका खारजल लवण नीचे बैठानेको भरा जाता है। ५ चारपाई, खाट। उक्त अर्थमें कियारी शब्द स्वर्णकार व्यवहार करते हैं। ६ चौका, भोजनका विभिन्न स्थान।

क्रियाह (सं० पु०) क्रियान् रक्तवर्णो हयः, पृषोदरादित्वात् साधुः। १ रक्तवर्णाश्व, सुर्ख या लाल घोड़ा। २ शृगाल, गीदड़।

कियूल—१ जनपदविशेष, एक बसती। लक्खीसराय रेलवेके ठीक दक्षिण या केवल नदीतीर कियूल एक क्षुद्र ग्राम है। किसी समय वह समृद्ध बौद्धनगर था। किन्हींके मतमें कियूल ही युएन-चुयाङ्के उल्लिखित 'लो-इन्-नि-लो'का अंश है। उक्त ग्रामके पश्चिमदिशामें 'संसारपुष्कर' नामक एक बावड़ी है और इस बावड़ीकी उत्तरदिशामें फिर एक बावड़ी है। इस द्वितीय पुष्करिणीके तीर पर किसी बौद्ध-मन्दिरका भित्तिभाग और कुछ बौद्ध युगावोंकी प्रतिकृति पड़ी है। ग्रामके मध्य एक स्थान पर पद्मपाणि बोधिसत्वकी पाषाणमूर्ति है। फिर स्थानीय जमींदारोंके उद्यानमें भी उन्हींकी एक क्षुद्रकाय प्रतिमा विद्यमान है। कियूलसे ईषत् दक्षिण 'कोवय' नामक ग्राम है। उक्त ग्रामकी वसति आधुनिक होते भी स्थान बहुत प्राचीन है। वहां प्राचीन कीर्तिका भग्नावशेष यथेष्ट देख पड़ता है। ग्रामके मध्य बालकक्रीड़ा पट्टो वा भवानीकी मूर्ति और मन्दिर है। कोवयमें पञ्चध्यानी बुद्धकी एक मूर्ति मिली है। कियूल ग्रामके अपर पार कियूल नदीके पूर्वतीर ३० फीटका एक भग्न इष्टकस्तूप है। उसे 'विदोवन स्तूप' कहते हैं। गंवार लोग स्तूपको सामान्यतः 'गड़' कहते हैं। उक्त स्तूपके पश्चिम १५० से १६० फीट पर्यन्त विस्तृत किसी मठका भग्नावशेष देख पड़ता है। प्रत्नतत्ववित् कनिंगहाम साहबको उक्त स्तूपके शीर्षदेशपर ६ फीट गभीर गह्वरके मध्य प्रस्तरका एक भग्नप्राय खोल और बुद्धमूर्ति मिली। बुद्धमूर्तिका मस्तक टूट गया था। कनिंगहामने खोलने पर उक्त खोलके भीतर एक सुवर्णका डिब्बा और उसके भीतर एक चांदीका डिब्बा पाया। उक्त डिब्बेके मध्य एक हरिद्वर्ण स्फटिकमाला, एकखण्ड अस्थि और एक मनुष्यदन्त था। स्तूपके गात्रमें द्रव्य रखनेके कई खाने बने हैं। उक्त खानोंसे प्रायः २००, ३०० छाप मरी लाखके चक्र मिले हैं। उक्त छापें चार प्रकारकी हैं। बड़ी छापें २ इञ्च लंबी हैं। उनमेंसे कईमें बुद्धमूर्ति, स्तूपकी आकृति और नानाविध विषय मुद्रित था। किन्तु प्रायः ३ भाग छापें ग्रीष्मकालमें गलकर अस्पष्ट हो गयी हैं। कई छापोंसे स्थिर हुवा है कि उक्त स्तूप ईशवीय ८म।१०म शताब्दके मध्यकाल बना था। यहां किसी मट्टीके कलशमें पित्तलनिर्मित ४ बुद्धमूर्ति रहीं। उनका कुछ भी नहीं बिगड़ा है। २ ईष्ट इण्डियन रेलवेका एक जंकशन ष्टेशन।

क्रिर (सं० पु०) किरति विक्षिपति मलोपलिप्तस्थलं इति शेषः, कृ-क। १ शूकर, सूअर। २ प्रान्तभाग, सहन। (त्रि०) ३ क्षेपणकारी, फेंकनेवाला

किरंटा (हिं० पु०) निम्नश्रेणीका ईसाई, केरानी, छोटा किरष्टान। किरंटा अंगरेजीके क्रिश्चियन (Christian) शब्दका अपभ्रंश है।

किरक (सं० पु०) किरति लिखति, कृ-क्वुन्। १ लेखक, कातिब, लिखनेवाला। किर क्षुद्रार्थे कन्। २ शूकरशावक, सूअरका बच्चा या छौना।

किरका (हिं० पु०) क्षुद्र खण्ड, कंकड़, किरकिरी, छोटा टुकड़ा।

किरकिटी (हिं० स्त्री०) धूलि या तृणका कण, गर्द या तिनकेका छोटा टुकड़ा। किरकिटी चक्षुमें पड़नेसे पीड़ा उत्पन्न करती है।

किरकिन (हिं० पु०) चर्मविशेष, किसी किस्मका चमड़ा। किरकिन घोड़े या गधेके दानादार चमड़ेको कहते हैं।

किरकिरा (हिं० वि०) १ कंकरीला, जिसमें छोटे छोटे कंकड़ रहें। २ बुरा, खराब।

किरकिराना (हिं० क्रि०) १ पीड़ा करना, दुखाना। २ अच्छा न लगना, बुरा मालूम पड़ना। ३ किर-किराना दांत पीसना।

किरकिराहट (हिं० स्त्री०) १ चक्षुपीड़ाविशेष, आंख का दर्द। किरकिराहट आंखमें गर्द या तिनकेका छोटा टुकड़ा पड़ जानेसे होती है। २ दांतके नीचे कंकड़ पड़नेकी आवाज। ३ कंकरीलापन।

किरकिरी (हिं० स्त्री०) किरकिटी, गर्द या तिनके-का छोटा टुकड़ा। २ अपमान, बेइज्जती, हेठी।

किरकिल (हिं० पु०) १ कृकलास गिरगान् गिरगिट। (स्त्री०) २ शरीरस्थ वायुविशेष, एक हवा। जिस छींक आती है।

किरकिला (हिं० पु०) पक्षिविशेष एक चिड़िया। किरकिला आकाशसे टूट मछलीको आक्रमण करता है।

किरकी (हिं० स्त्री०) अलङ्कार-विशेष एक गहना।

किरकी (खड़की) पूना जिलेकी हवेली तहसीलका एक कसबा। यह अक्षा० १८° ३३´ उ० और देशा० ७३° ५५´ पू० पर अवस्थित है। बंबईसे ११९ मील दक्षिणपूर्व और पूनेसे ४ मील उत्तर पश्चिम पड़ता है। लोकसंख्या प्रायः दश हजारके करीब है। तुफङ्ग तयार करनेका यहां बहुत बड़ा कारखाना है।

किरच (हिं० स्त्री०) १ अस्त्रविशेष, एक हथियार। किरच सीधी तलवार जैसी रहती है। इसे अग्रभागकी ओर सीधे भोंक देते हैं। २ पत्थरविशेष नोकदार टुकड़ा।

किरचिया (हिं० पु०) पक्षिविशेष, एक चिड़िया। किरचिया ममोलेसे छोटा होता है। इसके पंखकी छिटी सुनहली रहती है।

किरची (हिं० स्त्री०) १ किसी चिकनेका मुलायम रेशम। किरची कंधारमें उपजती है। २ रेशमकी लच्छी।

किरटा (स० स्त्री०) कुसुम्भबीज कुसुमका बीज।

किरण (स० पु०) कीर्यते विक्षिप्यते रश्मीऽस्मात्, कृ-क्यु। 'कॄपृवृजिमन्दिनिधाञः क्युः' उण् २।८१। १ सूर्य, सूरज। कीर्यते परितः क्षिप्यते असौ। २ सूर्यरश्मि, सूरजकी किरण। ३ चन्द्ररश्मि चांदकी किरण। ४ रश्मि, अग्न्यादिकी किरण। किरणका संस्कृत पर्याय—अंशु मयूख अंशु गभस्ति, घृणि, धृष्णि भानु, कर, मरीचि, दीधितिस्त्रिय, द्युति आभा, विभा, प्रभा, रुच्, रुचि, भा, छवि दीप्ति रश्मि, अभीशु महः, ज्योतिः महः रोचिः, शोचिः, त्विषा, घृष्टि, प्रकाश, आतप द्योत पाद आलोक वसु, कान्ति, भास धर्म शोक अर्चि, वीचि दीति, धाम, वर्च, गुप्त, शिव और ओज है।

" [illegible]
[illegible] ।" (रघु २। [illegible])

किरणतत्त्व—माधवाचार्यने अपने सर्वदर्शनसंग्रह ग्रन्थमें इस नामके एक शैवतन्त्रका उल्लेख किया है।

किरणमय (स० त्रि०) किरण सदृश। १ किरणस्वरूप। २ किरणविशिष्ट।

किरणमाली (स० पु०) किरणानां माला अस्त्यस्य, किरणमाला इनि। सूर्य, आफताब।

किरणावली (स० स्त्री०) किरणानां आवली श्रेणी। किरण श्रेणी, किरणोंकी कतार। २ किरणावली नामके संस्कृत भाषामें बहुतसे ग्रन्थ हैं। उनमें उदयनाचार्य-विरचित वैशेषिकसूत्रके प्रशस्तपादको व्याख्या मुख्य है। फिर इसके ऊपर भी बहुतसी टीका हैं। जैसे—पद्मनाभ कृत किरणावलीभास्कर, वर्धमानकृत द्रव्यकिरणा-वलीप्रकाश वंदूर्मविरमारतीकृत द्रव्यकिरणावली ग्रन्थविवरण मथुरानाथकृत गुणकिरणावलीरहस्य रामभद्रकृत गुणरहस्य, बादराव और [illegible] कृत टीका आदि। किरणावलीको उन टीकाओं पर भी और बहुतसे विवरण उपलब्ध होते हैं। उनमेंसे कुछके नाम ये हैं—मिश्रभगीरथकृत किरणावलीप्रकाशप्रका-शिका, रुद्रन्यायवाचस्पतिकृत रघुनाथीय द्रव्यकिरणावली परीक्षा, माधवदेवकृत गुणरहस्यप्रकाश, रघुनाथकृत गुण प्रकाशविवृति, मथुरानाथकृत गुणप्रकाशदीधिति और गुणप्रकाशदीधितिसंक्षेप नामकी विवृतिटीका। इनके सिवा वल्लभभट्टाचार्यकृत गुणप्रकाशविवृति भावप्रकाशिका, रामकृष्णभट्टाचार्यविरचित गुणप्रकाशविवृतिप्रकाशिका और जयरामभट्टाचार्यविरचित दीधितिप्रकाशिका भी प्रचलित है।

३ दादाभाई विरचित सूर्यसिद्धान्तटीका। ४ पद्मधर कृत एक अलंकार निरूपक ग्रन्थ।

किरातादि (सं० पु०) वातपित्तज्वरका कषायविशेष, बुखारका एक काढ़ा। किराततिक्त, अमृता, द्राक्षा, आमलकी और शटीका क्वाथ बना गुड़के साथ पीने पर वातपित्तज्वर छूट जाता है। इसको चतुर्भद्रक भी कहते हैं। (भावप्रकाश) फिर किरातादि—किरातक, महानिम्ब, कुस्तुम्बुरु, शतावरी, पटोल, चन्दन, पद्म, शाल्मली और उदुम्बरीजटासे भी बनता है। (रसेन्द्रचिन्तामणि) अन्य किरातादि—किरात, नागर, मुस्ता और गुड़ूचीके योगसे बनाया जाता है। वातज्वरमें किरात, मुस्ता, गुलेचीन, वाला, बृहती, कण्टकारी, गोक्षुर, शालपर्णी, पृश्निपर्णी और शुण्ठी प्रत्येक १६ रत्ती ३२ तोले जलमें पकाकर ८ तोले रहनेसे पीते हैं। कण्ठकुब्ज सन्निपातमें चिरायिता, कटुकी, पिप्पली, कुटज, कण्टकारी, शटी, विभीतक, देवदारु, हरीतकी, मरिच, मुस्ता, कट्फल, अतिविषा, आमलकी, पुष्करमूल, चित्रक, कर्कटशृङ्गी, और वासकका २ तोले क्वाथ बना आध तोला शुण्ठीचूर्ण डालकर पीनेसे लाभ पहुंचता है।

किरातादिचूर्ण (सं० क्ली०) चूर्णविशेष, एक सफूफ। चिरायिता, त्रिवृता, वाय्यालक, पिप्पली, विडङ्ग, कटुकी और शुण्ठी सबका सम भागसे चूर्ण बना मधुके साथ सेवन करने पर दुर्जलदोषज्वर शान्त हो जाता है। (भावप्रकाश)

किरातादितैल (सं० क्ली०) तैलविशेष, एक तेल। मूर्च्छित कटुतैल ४ शरावक, दहीकी मलाई ४ शरावक, काञ्जिक ४ शरावक तथा किराततिक्त क्वाथ ४ शरावक एक साथ पकाने और उसमें मूर्वामूल, लाक्षा, हरिद्रा, दारुहरिद्रा, मञ्जिष्ठा, इन्द्रवारुणी, कुष्ठ, वालक, रास्ना, गजपिप्पली, त्रिकटु पाठा, इन्द्रयव, सैन्धव, सचललवण, विट्लवण, वासालक, श्वेतार्कमूलक, अम्लामलसा, देवदारु और महाकालफलका मिलित १ शरावक कल्क मिला पकानेसे उक्त तैल प्रस्तुत होता है। किरातादितैल लगानेसे नाना ज्वर आरोग्य होते हैं।

बृहत् किरातादितैल इस प्रकार बनाया जाता है—कटुतैल ८ सेर, चिरायतेका क्वाथ १२॥ सेर, मूर्वामूलका क्वाथ ८ सेर, लाक्षाका क्वाथ ८ सेर, काञ्जिक ८ सेर और दहीकी मलाई ८ सेर ३४ सेर जलमें पका १६ सेर अवशिष्ट रखना चाहिये। फिर चिरायता, गजपिप्पली, रास्ना, कुष्ठ लाक्षा, इन्द्रवारुणीमूल, मञ्जिष्ठा, हरिद्रा, दारुहरिद्रा, मूर्वामूल, यष्टीमधु, मुस्ता, पुनर्नवा, सैन्धव, जटामांसी, बृहती, विट्लवण, वालक, शतमूली, रक्तचन्दन, कटुकी, अश्वगन्धा, शतपुष्पा, रेणुक, देवदारु, वेणामूल, पद्मकाष्ठ, धान्यक, पिप्पली, वचा, शटी, त्रिफला, यमानी, वनयमानी, कर्कटशृङ्गी, गोक्षुर, शालपर्णी, चक्रमर्द, दन्तीमूल, विडङ्ग, जीरक, कालजीरक, महानिम्बत्वक्, हवुषा, यवक्षार और शुण्ठी प्रत्येक ४ तोला परिमाणसे कल्कार्थ डाल तैल प्रस्तुत करते हैं। उक्त तैल लगानेसे सकल प्रकार विषमज्वर, प्लीहाज्वर, शोथयुक्त ज्वर एवं प्रमेहज्वर मिटता और अग्नि, बल एवं वीर्य बढ़ता है।

किरातार्जुनीय (सं० क्ली०) किरातश्च अर्जुनश्च तयो र्हं समधिकृत्य कृतम्, किरात-अर्जुन छ। भारविकवि प्रणीत एक महाकाव्य। साधारणतः लोग उक्त काव्यको 'भारवि' कहा करते हैं। दुर्योधनके साथ द्यूतक्रीड़ामें पराजित हो युधिष्ठिर प्रभृति पञ्चभ्राता वनमें रहते थे। उसी समय व्यासदेव उनके निकट जाकर उपस्थित हुये। पाण्डवको दुर्योधनके पक्षको अपेक्षा अधिक बलशाली बनानेके लिये उन्होंने अर्जुनको परामर्श दिया—'तुम तपस्या द्वारा देवगणके निकट अस्त्र ग्रहण करो।' तदनुसार अर्जुन हिमालयपर्वतके निकट प्रथम इन्द्रकी तपस्या की थी। इन्द्रने उनसे परितुष्ट हो अर्जुनको शिवकी तपस्या करनेके लिये उपदेश दिया। फिर वह महादेवकी ही तपस्या करने लगे। महादेव उनकी तपस्यासे सन्तुष्ट हुवे थे। किन्तु वे अर्जुनकी वीरताकी परीक्षाके लिये किरातके वेशमें एक प्रकाण्ड वराहके पीछे पीछे वहां जाकर उपस्थित हुवे। वराहने निकट पहुंचते ही अर्जुनको आक्रमण किया था। सुतरां उन्हें भी उसके प्रति वाण चलाना पड़ा। किरातवेशी महादेवने भी अर्जुनके वाणपातके साथ अपर वाण निक्षेप किया था। उभयके

बाणसे किर जो वराह मर गया। किन्तु निश्चय न हुआ किसके बाणसे वराह मरा था। फिर दोनों 'हमने मारा है' कहते वादानुवाद करने लगे। क्रमशः उसी पर दोनोंमें युद्ध चलने लगा। उस युद्धमें महादेव अर्जुनका वीरत्व देख सन्तुष्ट हुये। फिर उन्होंने अर्जुनको पाशुपत अस्त्र प्रदान किया। किरातार्जुनीयमें यह समस्त विषय विस्तृतभावसे वर्णित है। काव्यकी रचनाप्रणाली अति निगूढ भावविशिष्ट है। कोई कहा करते हैं—

"उपमा कालिदासस्य भारवेरर्थगौरवम्।
दण्डिनः पदलालित्यं माघे सन्ति त्रयो गुणाः॥"

किरातार्जुनीय काव्य १८ सर्गमें समाप्त हुआ है।
भारवि देखो।

किराताशी (सं० पु०) किरातान् निषादान् अश्नाति, किरात-अश णिनि। गरुड। महाभारतमें लिखा है—किसी समय गरुड माता विनताका दासीत्व छुड़ानेके लिये अमृत लाने जाते थे। उस समय उन्होंने क्षुधार्त हो मातासे खाद्य मांगा। माताने कह दिया—'समुद्र और एक निषाददेश है। वहां सहस्र सहस्र निषाद रहते हैं। तुम उन्हें भक्षण कर क्षुधा निवारणपूर्वक अमृत ले आओ। गरुड़ने भी माताकी आज्ञाके अनुसार किरातोंको खाया था।

किराति (सं० स्त्री०) किरेण समन्तात् जलविक्षेपेण अतति गच्छति, किर-अत-इन्। गङ्गा।

किरातिनी (सं० स्त्री०) किरातदेशे उत्पत्तिस्थानमस्त्यस्याः, किरात-इनि-ङीप्। १ जटामांसी। २ किरात जातिकी स्त्री।

किराती (सं० स्त्री०) किरात किराति वा ङीष्। १ दुर्गा। जिस समय महादेव अर्जुनकी परीक्षाके लिये किरातवेश धारण कर उनके निकट जाते थे, दुर्गाने भी उसी समय किरातीवेश बना उनका अनुगमन किया। २ किरातस्त्री। ३ स्वर्गङ्गा। ४ कुट्टनी, कुटनी। ५ चामरधारिणी, चंवर डुलानेवाली।

किराब (अ० क्रि० वि०) निकट, नज़दीक, पास।

किराना (हिं० पु०) लवण हरिद्रादि नित्यव्यवहार्य द्रव्य, नमक हलदी वगैरह रोज काममें आनेवाली चीज। किराना पंसारियोंके पास मिलता है। (क्रि०) २ पछोरना, साफ करना, सूपसे बनाना।

किरानी (हिं० पु०) १ युरेशियन, कटंटा, दोगला युरोपियन। किरानी अंगरेजोंके क्रिश्चियन (Christian) शब्दका अपभ्रंश है। २ क्लर्क मुन्शी।

किराया (अ० पु०) भाटक, भाड़ा। जो मूल्य अन्यको वस्तु वा कार्यमें व्यवहारके परिवर्त उस वस्तुके स्वामीको दिया जाता, वह किराया कहलाता है।

किरायादार (फा० पु०) भड़ेतिया, किसीकी चीज भाड़े पर लेनेवाला।

किरार (हिं० पु०) जातिविशेष, एक कौम।

किरारि (सं० पु०) कलिङ्गनिवासी कोई व्यक्ति। किरारि पाठ भी मिलता है।

किराव (हिं० पु०) कलाय, मटर।

किरावल (हिं० पु०) १ युद्धके ठीक करनेके लिये अग्रगामी सैन्य, लड़ाईका मैदान दुरुस्त करनेके लिये आगे जानेवाली फौज। २ बन्दूकसे शिकार खेलनेवाला मनुष्य। किरावल तुर्कीके 'क़रावल' शब्दका अपभ्रंश है।

किरासन (हिं० पु०) केरोसीन, मट्टीका तेल। किरासन अंगरेजीके केरोसीन। (*Kerosene*) शब्दका अपभ्रंश है।

किरि (सं० पु०) किरति धनमभिमिति शेषः, कृ-इ। 'कृगृशॄपृकुटिभिदिच्छिदिभ्यश्च' उण् ४। १४३। १ शूकर, सूअर। २ वाराहीकन्द। किरति विक्षिपति जलम्। ३ मेघ, मेह बादल।

किरिक (सं० पु०) किरिरिव कायति प्रकाशते, किरि-कै-क। वृक्षविशेष। किरिक अग्नि वायु और सूर्य मूर्तिधर वृक्ष है। वह दृष्टि द्वारा जगत् पालन करती है।

"नमो व: किरिकेभ्यो देवानां हृदयेभ्यः।" (यजुः १६। ४६)
"[illegible]"

(महीधरभाष्य)

किरिकिरिका (सं० स्त्री०) वड़ीतविद्याविषयक ग्रन्थविशेष, आर्य्य मङ्गलीका एक अलङ्कार।

किरिच (हिं० स्त्री०) कठोर वस्तुका छुद्र खण्ड, बड़ा

किल (सं० अव्य०) किल क। १ वार्तामें, इतिहासोक्त प्रसङ्गमें। २ अर्थात्, यानी। ३ सम्भवतः शायद।

"इदं किलाव्याजमनोहरं वपुस्तपःक्षमं साधयितुं य इच्छति।"

(शकुन्तला, १ अ)

किलक (हिं० स्त्री०) १ हर्षध्वनि, खुशीकी आवाज। २ प्रसन्नता खुशी। (फा०) ३ नलविशेष, किसी किस्मका नरकट। किलकका कलम बनता है।

किलकना (हिं० क्रि०) हर्षध्वनि करना, खुशीकी आवाज निकालना किलकारना।

किलकार (हिं० स्त्री०) हर्षध्वनि, खुशीकी आवाज। किलकार गम्भीर तथा अस्फुट रहती और आनन्द एवं उत्साहके समय मुखसे निकलती है।

किलकारना, किलकना देखो।

किलकारी, किलकार देखो।

किलकिञ्चित (सं० क्ली०) किल अलीकेन कि ईषत् चित रचितम्, ३ तत्। शृङ्गारभावजन्य क्रियाविशेष, एक अदा। "स्मितशुष्करुदितहसितत्रासक्रोधश्रमादीनाम्।

साङ्कर्यं किलकिञ्चितमभीष्टतमसङ्गमादिजाद्धर्षात्॥"

(साहित्यदर्पण, ३।१०८)

प्रियनायकके समागमसे अभिमान छूट जो कभी नायकसे भी मुस्कराना, रोदन, भय, क्रोध और ग्लानि प्रभृति मिश्ररूपसे भी भावप्रकाश करती है, उसीको किलकिञ्चित् कहते हैं।

"[illegible]

[illegible]॥"

(नैषध, १५ सर्ग)

किलकिल (सं० पु०) १ महादेव। २ नगरविशेष कोई नगर।

किलकिला (सं स्त्री०) किल् क प्रकारे वीप्सायां वा द्वित्वम् टाप्। १ हर्षध्वनि, किलकार। २ वीरोंका सिंहनाद, ललकार। ३ दिग्विजयप्रकाशोक्त मध्यदेशके अन्तर्गत सरस्वती और कालिन्दी नदीका मध्यवर्ती कोई जनपद, बंगालकी एक बस्ती। जनपद देखो।

किलकिला (हिं० स्त्री०) १ पक्षिविशेष, एक चिड़िया। किलकिला छोटी रहती और मछली खाकर अपना पेट भरती है। यह मछलियोंको देख पानीके ऊपर १० हाथ अंचे खड़ा करती है। घात लगने ही किलकिला मछली पर एकाएक टूट कर पकड़ कर ही जाती है। (पु०) २ समुद्रका एक भाग। किलकिलाकी लहरें भयानक शब्द करती हैं।

किलकिलाना (हिं० क्रि०) १ हर्षध्वनि करना, किलकना। २ कोलाहल करना, शोर मचाना। ३ वादविवाद मचाना, झगड़ा उठाना। ४ चुलबुलाना। ५ क्रोध करना।

किलकिलाहट (हिं० स्त्री०) १ हर्षध्वनि, किलकार। २ कच्छू, खुजली। ३ क्रोध, गुस्सा। ४ वादविवाद, झगड़ा।

किलकी (हिं० स्त्री०) अस्त्रविशेष, एक औज़ार। बढ़ई किलकीसे नापके मुताबिक लकड़ीपर चिह्न लगाते हैं।

किलखेवा (हिं० पु०) १ रोगविशेष, एक बीमारी। किलखेवेसे पशुओंके खुरोंमें कीड़े पड़ जाते हैं। २ हर्षध्वनिकारी, किलकार लगानेवाला।

किलटा (हिं० पु०) करण्डविशेष किसी किस्मका टोकरा। किलटा ऐसी युक्तिसे बनाया जाता है कि उसमें रखी हुयी चीजका भार ढोनेवालेके कंधों पर आ जाता है।

किलना (हिं० क्रि०) १ कीला जाना, अभिमन्त्रित होना। २ वशमें लाया जाना तावेदारीमें आना।

किलनी (हिं० स्त्री०) कीटविशेष, एक कीड़ा। किलनी गाय, बैल, भैंस, कुत्ते बिल्ली वगैरह जानवरों से चिपटी रहती और उनका रक्त पान कर अपना शरीर पोषण करती है। इसे किल्ली और किलौनी भी कहते हैं।

किलपादिका (सं० स्त्री०) क्षुद्रजन्तुका, छोटी खाल मक्खी।

किलबिलाना (हिं क्रि०) कुलबुलाना, धीरे धीरे चलना फिरना।

किलमी (हिं० पु०) नौकाका पश्चाद्भाग, जहाजका पिछला हिस्सा। २ ईरानकी किस्मके मस्तूलका बादबान।

किलमोरा (हिं० पु०) दारुहरिद्राविशेष, किसी

किसको दारुहल्दी। किलमोराकी झाड़ियां हिमालय पर काफी फेल जाती है।

किलवांक (हिं० पु०) अश्वविशेष, एक काबुली घोडा।

किलवा (हिं० पु०) बडा फावड़ा। छोटे किलवेको किलैया कहते हैं।

किलवाई (हिं० स्त्री०) पांचा, लकडीकी फरुई। किलवाईसे सूखी घास या पयाल बटोरते हैं।

किलवान (हिं० क्रि०) १ कील लगवाना। २ अभिमन्त्रित कराना, जादूसे बंधाना।

किलवारी (हिं० स्त्री०) कन्ना, पतवार।

किल्विष (हिं० पु०) किल्विष, पाप, दुराव।

किलहा (हिं० पु०) फांक, आमका तेलमें रखा हुवा अचार।

किला (अ० पु०) दुर्ग, गड, बचावकी जगह।

किलाट (सं० पु०) शोषित क्षीरपिण्ड, छेना। किलाट गुरु, तृप्तिकारक, शुक्रवर्धक, पुष्टिकारक, वायुनाशक और दीप्ताग्नि एवं निद्राशून्य व्यक्तिके लिये हितकारक है। फिर यह श्लेष्मजनक, रुचिकारक और पित्त, विद्रधि, मुखशोष, तृष्णा, दाह, रक्तपित्त तथा ज्वरनाशक भी होता है। (चरक) उसके बनानेकी प्रणाली इसप्रकार कही है—दधि वा घानके संयोगसे दुग्धको विकृतकर गर्म करते हैं। फिर वस्त्रसे निचोड़ उसका पानी निकालना पडता है। किलाट कई प्रकारका होता है—पीयूष, मोरट और क्षीरशाक।

किलाटक (सं० पु०) किलाट एव स्वार्थे कन्। छेना, फटे हुये दूधका माथा। नष्ट पक्वदुग्धके पिण्डको किलाटक कहते हैं। जो दुग्ध अपक्व रहते ही फट जाता, वही क्षीरशाक कहाता है। (भावप्रकाश)

किलाटी (सं० पु०) किलयासी आटी चेति, कर्मधा०। यद्वा किलं अटति, किल-अट्-णिनि। १ वंश, बांस। २ नागरङ्ग, नेटका पेड़।

किलाटी (सं० स्त्री०) किलाट टाप्। दुग्धविकृति, कूर्चिका, छेना।

किलात (सं० पु०) किलं अलति, किल-अल् अण्। १ ऋषिविशेष। २ राक्षसविशेष। (त्रि०) ३ वामन, क्षुद्र, बौना, छोटा।

किलाना, किलवाना देखो।

किलाबन्दी (फा० स्त्री०) १ दुर्गनिर्माण, किलेकी बधाई। २ व्यूहरचना, फौजको तरतीबसे खड़ा करनेका काम। ३ शतरंजमें बादशाहको किला बांधकर उसके भीतर रखनेकी चाल।

किलाल (सं० क्ली०) गोमूत्र, गायका पेशाब।

किलावा (हिं० पु०) १ यन्त्रविशेष, एक औजार। किलावा सोनारोंके काम आता है। २ हाथीके गलेका एक रस्सा। किलावेमें पैर डाल महावत हाथीको हांकता है।

किलास (सं० क्ली०) किलं वर्णं अस्यति क्षिपति विकृतिं करोति इति यावत्, किल-अस-अण्। क्षुद्रकुष्ठरोगभेद, किसी किस्मका हलका कोढ़। मिथ्या वचन, कृतघ्नता, देवनिन्दा, गुरुजनके अपमान, पापकार्य, पूर्वजन्मके कर्मफल और विरुद्ध अन्नपानादिके सेवनसे उक्त रोग उत्पन्न होता है। (चरक)

वात, पित्त और श्लेष्मभेदसे किलास रोग भी तीन प्रकारका होता है। उसमें वायुजन्य किलास अरुणवर्ण, कर्कश और स्थान स्थान पर गोलाकार होता है। पित्तजन्य किलास ताम्रवर्ण, पद्मपत्र तुल्य और दाहविशिष्ट होता है। श्लेष्मज किलास श्वेतवर्ण, स्निग्ध, घन और कण्डूयुक्त रहता है। उक्त त्रिदोषजन्य किलास यथाक्रम रक्त, मांस और मेदमें उत्पन्न होता है। किन्तु सुश्रुत ऋषिने उसे केवलमात्र त्वग्गत बताया है। वायुजन्य किलासकी अपेक्षा श्लेष्मजन्य किलास कष्टसाध्य है। उसके ऊपरिस्थ लोम रक्तवर्ण वा श्वेतवर्ण न होने, परस्पर पृथक् रहने, अल्पादिनजात ठहरने और अग्निमें न जलनेसे किलास आरोग्य हो जाता, नतुवा असाध्य देखाता है। (वाग्भट)

चिकित्सा—कुष्ठ, तमालपत्र, मरिच, मनःशिला और हरिकाशीशको समभाग तैलके साथ ताम्रपात्रमें ७ दिन धूपसे उत्तप्त करते हैं। फिर उक्त तैल किलासके स्थान पर लगानेसे आरोग्यलाभ होता है।

मूलीके बीज, सोमराजीबीज, लाक्षा, गोरोचना, सौवीराञ्जन, रसाञ्जन, पिप्पली और काललौहचूर्ण एकत्र पीसकर प्रलेप चढ़ानेसे किलास रोग दूर हो जाता है।

हरीतकीको एक सेरी बना आध्मानमें पका और बबूलके रसकी भावना देते हैं। फिर उसके द्वारा दूसरी भावना दे उसे ताम्रपात्रोंमें बनाना पड़ता है। उसको गोलीको सुखा कर पुनर्वार हरीतकीके क्वाथकी भावना लगाते हैं। अन्तको उस गोली खाने नहीं मिलता अधिकतर मर्दन करनेसे किलास रोग आरोग्य होता है। (वृन्द)

किलासघ्न (सं० पु०) किलासं हन्ति किलास-हन् टक्। कर्कोटक, खेखसा। किलासघ्नका संस्कृत पर्याय-कर्कोट, तिक्तपत्र और सुगन्धक है। कर्कोटक देखो।

किलासनाशन (सं० त्रि०) किलासं नाशयति किलास नश् णिच् ल्यु। किलासरोगनाशक।

किलासी (सं० त्रि०) किलासं अस्त्यस्य किलास इनि। किलासरोगयुक्त, कोढ़ी।

किलि (सं० अव्य०) कलहसूचित, किलकार।

किलिक (फा० स्त्री०) किलक देखो।

किलिञ्ज (सं० स्त्री०) किलति श्वेतेन किल इनि, किलिं जिनोति, किलि जि-ड पृषोदरादित्वात् साधुः। सूक्ष्म काष्ठ, पतला तख्ता।

किलिञ्जन (सं० पु०) १ राल, धूना। २ मोमजेद, एक मसाला।

किलिञ्ज (सं० पु०) किलिनं जायते किलि जन् ड पृषोदरादित्वात् साधुः। १ सूक्ष्मकाष्ठ, पतला तख्ता। २ वीरणादि कट, चटाई। ३ परदा। किसी किसी स्थान पर किलिञ्ज स्त्रीलिङ्ग भी देख पड़ता है।

किलिञ्जक (सं० पु०) किलिञ्ज स्वार्थे कन्। १ कट, चटाई। २ काष्ठादि निर्मित रज्जु, एक रस्सी। किलि-ञ्जकसे काष्ठादि रखनेके मचान (कोठी) को वैद्यक कहते हैं।

किलिम (हि० पु०) लोणामविशेष, मैदानकी मोड़, सतारेको एक जगह। किलिम सतारेका वह विभाग लिखा है, जहां बाहरसे तबाह होकर मिलती है।

किलिमलिम (सं० पु० स्त्री०) नगरविशेष, किसी नगरका नाम।

किलिम (सं० स्त्री०) किल इमन्। १ देवदारु वृक्ष। २ धूनक।

किलांचा (हिं० पु०) वंशविशेष किसी किस्मका बांस। ब्रह्मदेशमें पेगू और मर्तबानके जङ्गलमें उत्पन्न होता है। वह ६० से १२० फीट तक लम्बा और ३ से ८ इंच तक मोटा रहता है। उसका वर्ण धूसर होता है। उससे नावके मस्तूल बनाये जाते हैं।

किलोल (हिं०) कलोल देखो।

किलौनी, किलनी देखो।

किल्लो (अ० पु०) कीटक, कीड़ा।

किरवी—खानदेश जिलेका एक गांव। यहांके राजा भील हैं, जिन्हें दत्तकपुत्र लेनेका अधिकार नहीं।

किल्लत (अ० स्त्री०) १ न्यूनता, कमी। २ संकोच, तङ्गी। ३ अड़चन।

किल्ला (हिं० पु०) १ मेख, खूंटा, कील। २ जांतेकी मेख। किल्ला जांतेके बीचमें गाड़ा जाता है। ३ नवीन शाखा, अङ्कुर।

किल्लाना किलकिलाना देखो।

किल्ली (हिं० स्त्री०) १ कील, मेख, खूंटी। २ सिट्टी, सिटकिनी। ३ मुठिया या दस्ता। किल्ली घुमानेसे कल या पेंच चलने लगता है। ४ कुंजी।

किल्लिकेतर (जाति) वैष्णवविशेषको पट रखने और चित्र दिखानेवाली जाति। यह सांवगांव, चिकोड़ी पारस गड़, गोकाक और अथनीमें मिलती है। किल्लिकेतर मराठी जैसी ही बोली बोलते और कोल्हापुर या सतारेसे आये समझ पड़ते हैं। प्रत्येक परिवारमें १ कुत्ता २ या ३ भेड़ २ या ३ गाय और ३ या ५ बकरे रहते हैं। पुरुष स्वच्छ, सुघर, मद्यसेवी, मितव्ययी और शान्त होते हैं। यह भ्रमणकालावर बने शास्त्रों और वीरोंके चित्र रातको दिखा जीविका निर्वाह करते हैं। एक मनुष्य चित्रके पीछे दीपक लेकर बैठता और दूसरा भाषामें उसकी कथा समझाता है। स्त्रियां वाद्य बजाया करती हैं। यह प्रदर्शन रातको ८ या १० बजेसे आरम्भ हो ५ या ७ बजे थमता है। स्त्रियां गोदनेका काम अच्छा करती हैं। कन्याओंका विवाह ४ या ५ और बालकोंका १० और १२ वर्षके बीच होता है। इनमें विधवा-विवाह प्रचलित है। शवको समाधि दिया जाता है। निधन होते भी यह विशेष [illegible] नहीं।

किशोरसिंह—कोटाराज माधवसिंहके कनिष्ठ पुत्र। १६५८ ई०को सम्मेलनके पास औरङ्गजेबके विरुद्ध युद्ध करनेमें यह वीरतापूर्वक घायल हुए थे, परन्तु पीछे अच्छे हो गये। इन्होंने १६७०से १६८६ ई० तक राजत्व किया। यह औरङ्गजेबके बहुत चतुर सेनापति थे और आरकाटके अवरोधमें मारे गये।

किशोरदास—हिन्दीके एक कवि। इनका जन्म १७०४ई० को हुआ। इन्होंने बहुतसे छप्पय बनाये हैं। सरदार कवि और हरिश्चन्द्रने इनकी कविता उद्धृत की है।

किशोरिका (सं० स्त्री०) किशोरी स्वार्थे कन् टाप् ह्रस्व इत्वञ्च। किशोरी, ग्यारहसे १५ वर्ष तककी स्त्री।

किशोरी (सं० स्त्री०) किशोर ङीप्। किशोरिका देखो।

किश्त (फा० स्त्री०) १ शतरञ्जके खेलमें बादशाहका किसी मोहरेकी मारमें आनेकी चाल।

किश्तवार (हिं० पु०) पटवारीका एक कागज। किश्तवार में खेतका नम्बर रकबा वगैरह लिखा रहता है।

किश्ती (फा० स्त्री०) १ नौका, नाव। २ पात्रविशेष, किसी किस्मकी थाली या तश्तरी। किश्तीमें कोई चीज रख कर दिया जाता है। ३ शतरंजका हाथी, मोहरा।

किश्तीनुमा (फा० वि०) नौकाके आकार जैसा।

किष्किन्ध (सं० पु०) कि किं दधाति, किम् धा क पृषो किमो मलोपः सुट् च। १ महिसूरदेशीय एक पर्वत। २ उक्त पर्वतकी गुहा।

किष्किन्धा (सं० स्त्री०) किष्किन्ध्या देखो।

किष्किन्धाकाण्ड (सं० क्लो०) रामायणका एक काण्ड। किष्किन्धाकाण्डमें सुग्रीवादिके साथ मिलना और बालिवध प्रभृति विषय वर्णित हैं।

किष्किन्धी (सं० स्त्री०) किष्किन्ध ङीप्। किष्किन्ध पर्वतकी गुहा।

किष्किन्ध्य (सं० पु०) किष्किन्ध स्वार्थे यत्। किष्किन्ध पर्वत।

किष्किन्ध्या (सं० स्त्री०) किष्किन्ध्य-टाप्। किष्किन्ध्य पर्वतकी गुहा। किष्किन्ध्यामें ही बालि राजाकी राजधानी रही। पीछे रामने बालिको मार यह स्थान सुग्रीवको प्रदान किया।

किष्किन्ध्याकाण्ड, किष्किन्धाकाण्ड देखो।

किष्किन्ध्याधिप (सं० पु०) किष्किन्ध्याया अधिपः, ६-तत्। १ किष्किन्ध्याके राजा बालि। २ सुग्रीव।

किष्कु (सं० पु०-स्त्री०) कै कु पारस्करादित्वात् सुट् षत्वञ्च निपातनात् साधु। १ द्वादशाङ्गुल परिमाण, १८ अङ्गुलकी नाप। २ हस्त, हाथ। ३ वितस्ति, बित्ता। ४ प्रकोष्ठ। ५ आघ्रण। ६ वंश, बांस। ७ परिमेय किसी विषयका अंश। (त्रि०) ८ कुत्सित, खराब।

किष्कुपर्वा (सं० पु०) किष्कु मितं पर्व यस्य, बहुव्री०। १ इक्षु, ऊख। २ वंश, बांस। ३ नल, एक घास।

किस् (व० वाच्य) कर्त्ता, करनेवाला।

"[illegible]"

(ऋक् १।१२१।१)

किस (हिं० सर्व०) "कौन" का रूपान्तर। विभक्ति लगनेसे 'कौन'-का 'किस' हो जाता है। 'किस' में ही अगार्मिक दोनोंको मिलाकर 'किसे' हो जाता है।

किस (सं० पु०) सूर्यके एक अनुचर।

किसनई (हिं० स्त्री०) कृषि, खेती, किसानका काम।

किसबत (अ० पु०) थैली, चर्मविशेष नाईका एक थैला। किसबतमें उस्तरा, कैंची आदि रखते हैं।

किसबी (हिं० पु०) कसबी, धनकोने, मजदूर।

किसर (सं० पु० क्लो०) किंचित् श्यति, किम् सो कम् पृषोदरादित्वात् साधु। सुगन्धिद्रव्यविशेष एक खुशबूदार चीज।

किसरिक (सं० त्रि०) किसरं पण्यं यस्य, बहुव्री०, किसर ठन्। किसर नामक सुगन्धि द्रव्य बेचनेवाला।

किसल किसलय देखो।

किसलय किसलय देखो।

किसलयित (सं० त्रि०) किसलय सञ्जातमस्य किसलय-इतच्। नूतनपल्लवविशिष्ट, नये पत्तोंवाला।

किसान (हिं० पु०) १ कृषक खेतिहर। २ नाई बारी वगैरहको कमानेवाला।

किसानी (हिं० स्त्री०) १ कृषिकर्म, खेतीका काम। (हिं०) २ कृषकसम्बन्धीय, खेतीका मुनाफा।

किसी (हिं० सर्व० वि०) 'कोई' का रूपान्तर। विभक्ति लगनेसे 'कोई' का 'किसी' हो जाता है।

किसू किसी देखो।

किस्त (अ० स्त्री०) १ ऋण चुकानेकी एक रीति, कर्ज देनेका कोई तरीका। किस्तमें एक साथ न दे ऋण नियत समय थोड़ा थोड़ा चुकाया जाता है। २ निश्चित समय पर दिया जानेवाला ऋणका एक अंश, मुकर्रर वक्त पर अदा होनेवाला कर्जका हिस्सा। ३ ऋण प्रतिशोधका, निश्चित समय, कर्ज अदा करनेका मुकर्रर वक्त।

किस्तबन्दी (फा० स्त्री०) अंशशः ऋण प्रतिशोध करनेका नियम, थोड़ा थोड़ा कर्ज अदा करनेका कायदा।

किस्तवार (फा० क्रि० वि०) १ किस्तके नियमानुसार, किस्तके तौर पर। २ प्रत्येक किस्त पर, हरेक किस्तके वक्त।

किस्म (अ० स्त्री०) १ प्रकार, तरह। २ रीति, चाल।

किस्मत (अ० स्त्री०) १ भाग्य, नसीब, तकदीर। २ कमिश्नरी, प्रान्तका बड़ा विभाग। किस्मतमें कई जिले लगते, जो कमिश्नरके अधीन रहते हैं।

किस्मतवर (फा० वि०) भाग्यवान्, तकदीरी।

किस्सा (अ० पु०) १ कथा, कहानी। २ समाचार, हाल। ३ विषम काण्ड, झगड़ा।

किहकना (हि० पु०) पक्षिविशेष, एक चिड़िया।

की (हिं० प्रत्यय) १ 'का'का स्त्रीलिङ्ग। यथा—उसकी भाषा। 'की' सम्बन्ध कारकका चिह्न है। (क्रि०) २ 'किया'का स्त्रीलिङ्ग। यथा—रामने रणमें बड़ी वीरता की। (अव्य०) ३ क्या। ४ अथवा, या तो।

कीक (हिं० स्त्री०) १ चीत्कार, शोर, हल्ला। २ वानररव, बन्दरकी आवाज।

कीकट (सं० पु०) की शनैर्द्रुतं वा कटति गच्छति, की-कट-अच्। १ घोटक, घोड़ा। २ देशविशेष, कोई मुल्क। कीकट मगधका वेदोक्त नाम है।

"चरणाद्रिं समारभ्य गृध्रकूटान्तकं शिवे।
तावत् कीकटदेशः स्यात् तदन्तर्मगधो भवेत्॥" (शक्तिसङ्गमतन्त्र)

चरणाद्रि (चुनार)से गृध्रकूट (गिद्धोर) पर्वत पर्यन्त कीकटदेश है। मगधदेश उसीके अन्तर्भूत है। ३ कीकटदेशज अश्व, मगधका घोड़ा। ४ ऋषभ-पुत्र-विशेष। (भागवत, ५।४।१०) ५ अनार्य जातिविशेष, एक कौम। ६ ऋषभके एक पुत्र। (त्रि०) ७ निर्धन, गरीब। ८ कृपण, बखील, कंजूस।

कीकटक, कीकट देखो।

कीकटी (सं० पु०) वन्यवराह, जंगली सूअर।

कीकना (हि० क्रि०) चीत्कार करना, किकियाना।

कीकर (सं० पु०-क्ली०) ग्रामविशेष, एक गांव।

कीकर (हिं० पु०) वर्बूरवृक्ष, बबूलका पेड़।

कीकरी (हिं०स्त्री०) १ वर्बूरभेद, किसी किस्मका बबूल। कीकरीके पत्रक बहुत सूक्ष्म होते हैं। २ किसी किस्मकी दस्तकारी। कीकरीमें कपड़ा कतरकर लहरदार या कंगूरेदार बनाते हैं।

कीकश (सं० पु०-क्ली०) कीति कायति शब्दायते, की-कश-अच्। १ चण्डाल, हत्यारा। (शब्दनिर्णयतन्त्र, ३।१०) २ कृमिजाति, कीड़ा मकोड़ा। ३ अस्थि, हड्डी।

कीकस (सं० पु०-क्ली०) की कुत्सितं यथास्यात्तथा कसति गच्छति, की-कस-अच्। १ कीटजाति, कीड़ा मकोड़ा। की कुत्सितेन रक्तादिना कसति उत्पद्यते। २ अस्थि, हड्डी। (त्रि०) ३ कर्कश, कड़ा।

कीकसमुख (सं० पु०) कीकसं चञ्चुरूपं अस्थि मुखे ऽस्य, बहुव्री०। पक्षी, चिड़िया।

कीकसास्य, कीकसमुख देखो।

कीकसेश्वर (सं० पु०) कीकसाया ईश्वरः, ६-तत्। शिव।

कीका (हिं० पु०) कीकट, घोड़ा।

कीकि (सं० पु०) कीति शब्दं कायति, की-कै बाहुल-कात् डि। चाषपक्षी, नीलकण्ठ।

कीच (हिं० स्त्री०) कर्दम, कीचड़।

कीचक (सं० पु०) चीकयति शब्दायते चीक-वुन्। बाद्यन्तविपर्ययश्च उण् ५।३६। १ वंशभेद, किसी किस्मका बांस, वायुस्पर्शसे कीचक शब्द करता है। २ रन्ध्रवंश, छेददार बांस। ३ राक्षसविशेष। ४ दैत्यविशेष। ५ नल, एक घास। ६ वृक्षविशेष, कोई पेड़। ७ विराट-राजाके श्यालक और सेनापति। कीचकके पिताका नाम केकयराज था। द्रौपदीके प्रति अत्याचार करनेकी इच्छा रखनेसे भीमसेनने उन्हें मार डाला। महाभारतमें उनकी मृत्यु कथा इसप्रकार लिखी है—"पाण्डवोंके अज्ञात-वासका समय उपस्थित होनेपर वह छद्मवेशसे विराट-राज्य पहुंचे और छद्मवेशसे ही विविध कार्यमें नियुक्त

हो रहने लगी। उसी समय कीचक सैरिन्ध्री-रूपिणी द्रौपदीको देख अत्यन्त कामार्त हुए और अन्य किसी प्रकार अभीष्ट सिद्ध न होनेपर बलात्कार करने पर तुल गये। फिर उन्होंने भगिनीसे अनुरोध किया कि वह द्रौपदीको उनके घर भेज दे। भगिनीने सुरा लेने मिष से द्रौपदीको कीचकके यहां भेजा था। उनके उपस्थित होते ही कीचक उनको आक्रमण करनेके लिये उद्यत हुए। किन्तु वह कौशलपूर्वक वहांसे दौड़ कर राजसभाको भाग गयीं और उनके हाथ न लगीं। पीछे भीमसेनकी परामर्शसे द्रौपदीने कीचकको सङ्केतस्थान नाट्यशालामें बुलाया था। उन्होंके अनुसार वह वहां जाकर उपस्थित हुए। परन्तु भीमसेन उस स्थानपर पहलेहीसे नारीवेशमें बैठे थे। कीचकको देखते ही मार डाला। (भारत, विराट, १४ अ०) जैन हरिवंशपुराणमें इसकी कथा इस भांति लिखी है—जिस समय कीचक द्रौपदी पर आसक्त हो इंगित करने पर [illegible] था तो उसे पाण्डवोंमें भीमसेनने बहुत मारा और क्षमा याचना करने पर छोड़ दिया। इसके बाद विषयोंसे विरक्त हो उसने एक दिगम्बर जैन मुनिसे दीक्षा ले तप किया एवं घोर तपश्चरण द्वारा कर्म नष्टकर मुक्ति पाई।

कीचकजित् (सं० पु०) कीचकं जितवान्, कीचक-जि अतीते क्विप्। भीमसेन।

कीचकनिसूदन, कीचकजित् देखो।

कीचकभित्, कीचकजित् देखो।

कीचकवध (सं० पु०) कीचकस्य वधः मारणम्, ६-तत्। १ कीचकका वध। कीचकस्य वधः विद्यतेऽत्र, बहुव्री०। २ कीचकवधके विवरणका पुस्तक।

कीचकाह्वय (सं० पु०) १ रन्ध्रवंश छिद्रदार बांस। २ मन्थ, एक बांस।

कीचड़ (हिं० पु०) कर्दम, कीच। २ अश्रुमल, आंखका मैल।

कीज (दे० पु०) कर्षं याता: पृषोदरादित्वात् साधु। अङ्कुश, अनीषा। "[illegible]" (ऋक् ४।३१।३) 'कीज [illegible]' (सायण)

कीट (सं० पु०) कीट-अच्। १ क्षुद्रजीवभेद, कीड़ा, मकोड़ा। कीट बहुविध और नाना प्रकार होता है। सुतरां उसे निर्देश कर नहीं सकते। सुश्रुतने कई कीटोंके दंशनसे उत्पन्न रोगोंको चिकित्साके लिये सर्प समूहके मल मूत्र, मूत्र एवं शव पूति तथा अण्ड जात कई कीटोंकी प्रकृति, दंशनजन्य रोग और उनकी चिकित्साका निर्देश किया है। उक्त प्रकार कीटोंके मध्य कुछ वायुप्रकृति, कुछ पित्तप्रकृति, कुछ श्लेष्म प्रकृति और कुछ त्रिदोषप्रकृति होते हैं। सर्वापेक्षा त्रिदोषप्रकृति कीट ही भयङ्कर होता है।

कुम्भीनस तुण्डिकेरी, शृङ्गी, शतकुलीरक उच्चिटिङ्ग, अग्निनामा, चिच्चिटिङ्ग मयूरिका, आवर्तक, उरभ्र, सारिका, मुखवेदन, शरावकुर्द अभीराजी, परुष, चित्रशीर्षक, शतबाहु और रक्तराजि—१८ प्रकारके कीट वायुप्रकृति होते हैं। उनके दंशन करनेसे वायुजन्य रोग उत्पन्न होता है।

कौण्डिन्यक, कणभक, वरटी, पत्रवृश्चिक, विनासिका ब्रह्मणिका, बिन्दुल, भ्रमर, बाह्यकी पिच्चिट, कुम्भी, वर्चःकीट अरिमेदक पद्मकीट, दुन्दुभिक, मकर, शतपादक, पञ्चालक, गर्दभी, क्लीत कृमिसरारि और उत्क्लेशक—२४ प्रकारके कीट पित्तप्रकृति होते हैं। उनके दंशनसे पित्तजन्य रोग उठता है।

विश्वम्भर, पञ्चशुक्ल, पञ्चकृष्ण कोकिल, सैरेयक, प्रचलाक वलभ, किटिभ सूचीमुख, कृष्णगोधा काषाय वासिक कीटगर्दभक और त्रोटक—१३ प्रकारके कीट श्लेष्मप्रकृति हैं। उनके दंशनसे श्लेष्मजन्य रोग लग जाता है।

तुङ्गीनास, विचिलक तालक वाहक, कोष्ठागारी, क्रिमिकर, मण्डलपुच्छक तुङ्गनाभ, सर्षपिक अवल्गुली शम्बूक और अग्निकीट—१२ प्रकारके कीट सान्निपात प्रकृति हैं। उनके दंशन करनेसे सर्प दंशनकी भांति तीव्र यातना उठती और सान्निपातिक रोग समूहकी उत्पत्ति होती है। उक्त कीटोंके काटनेसे दष्टस्थान क्षार वा अग्निदग्धकी भांति विवर्णयुक्त बन जाता और रक्त पीत, श्वेत वा अरुणवर्ण दिखाता है।

ज्वर, अङ्गमर्द, रोमाञ्च, वमन, अतीसार, तृष्णा, दाह, मोह, जृम्भा, कम्प, श्वास, हिक्का, शीत, पिडकानिर्गम, शोथ, ग्रन्थि, चकत्ता, दद्रु, कर्णिका, वीसर्प, किटिम प्रभृति रोग भी उनके काटनेसे होते हैं। एतद्व्यतीत दूसरे भी कई कीट और उनके दंशनके चिन्हादि सुश्रुतमें उपदिष्ट हैं। यथा—

त्रिकण्टक, कुणी, हस्तिकक्ष और अपराजित—चार प्रकारके कीटोंका नाम कणभ है। उनके काटनेसे तीव्रवेदना, शोथ, अङ्गमर्द एवं गात्रगौरव आता और दष्टस्थान काला पड जाता है। प्रतिसूर्य, पिङ्गभास, बहुवर्ण, महाशिरा और निरुपम—पांच प्रकारके कीट गोधेरक कहाते हैं। उनके दंशनसे यातना आवेग, विविधरोग और भयङ्कर ग्रन्थि निकलती है। गलगोली, श्वेतकृष्ण, रक्तराजी, रक्तमण्डला, सर्वश्वेता और सर्षपिका छह प्रकारके कीडोंमें सर्षपिका व्यतीत अन्य पांच प्रकारके कीटोंके दंशनसे दाह, शोथ और क्लेद आता है। फिर सर्षपिकाके काटनेसे हृदयपीडा और अतिसार रोग उपजता है। कर्कशस्पर्श, विचित्रवर्ण और कृष्ण, पीत, श्वेत, कपिल तथा अग्निवर्ण भेदसे शतपदी कीट ८ प्रकारका होता है। उसके दंशनसे दष्ट स्थान पर शोथ एवं वेदना और हृदयमें दाह उठता है। विशेषतः श्वेतवर्ण और अग्निवर्ण शतपदी के काटनेसे दाह, मूर्च्छा और श्वेतवर्ण पिडका उत्पन्न होती है। कृष्णसार, कुहक, हरित, रक्त एवं यववर्ण और भ्रुकुटी तथा कोटिक नाम भेदसे मण्डूक (मेंडक) ८ प्रकारका है। उसमें विष रहता है। दंशन करनेसे दष्ट स्थान खुजलाने लगता और मुख निकल पडता है। विशेषतः भ्रुकुटी और कोटिक मण्डूकके काटनेसे हाफिका भिन्न दाह, वमन और अत्यन्त मूर्च्छा आया करती है।

विश्वम्भर नामक कीटके दंशनसे दष्ट स्थान पर सर्षपकी भांति छुद्र छुद्र पिडका पडती और शीतज्वर आता है।

अहिण्डुक नामक कीटके काटनेसे सूई चुभनेकी भांति पीडा, दाह, कण्डू, शोथ और मोह होता है।

कण्डूमक नामक कीटके काटनेसे अङ्ग पीतवर्ण पड जाता और वमन, अतीसार तथा ज्वररोगसे मृत्यु आता है।

शूकवृन्त प्रभृति कीटके काटनेसे कण्डू होती शरीर में चकत्ते और दष्ट स्थानमें शूक भी दिखाई देता है।

पिपीलिका छह प्रकारकी होती है। यथा—स्थूलशीर्षा, संवाहिका, ब्राह्मणिका, अंगुलिका, कपिलिका और चित्रवर्णा। उनके काटनेसे दष्टस्थान पर शोथ और अग्निस्पर्शको भांति दाह हुवा करता है।

कान्तारिका, कृष्णा, पिङ्गलिका, मधुलिका, काषायी और स्थलिका नामभेदसे मक्षिका भी छह प्रकारकी होती है। उसके काटनेसे दष्ट स्थान पर दाह और शोथ उठता है। स्थलिका और कषायीके काटनेसे उक्त उपद्रवके साथ साथ पिडका भी पड जाती हैं।

मशक पांच प्रकार है—सामुद्र, परिमण्डली, हस्तिमशक, कृष्ण और पार्वतीय। उसके काटनेसे दष्ट स्थान पर शोथ और अत्यन्त कण्डू होती है। किन्तु पार्वतीय मशकके काटनेसे प्राणनाशक कीटदंशनसे जो समस्त लक्षण कहे गये हैं, वह समस्त देख पडते हैं। उक्त स्थान पर नख द्वारा छिन्न होनेसे अत्यन्त पिडका पड जाती और वह पक आती हैं।

वृश्चिक कीट मन्द, मध्य और महाविष भेदसे तीन प्रकारका होता है। पूति गोमयसे जो सकल वृश्चिक उपजते, वह मन्दविष रहते हैं। काष्ठ और इष्टकसे जन्म लेनेवाले मध्यविष होते हैं। फिर पूतिसर्पदेह और विषसे जो उपजते, उन्हें महाविष कहते हैं।

कृष्ण, श्याव, चित्र, पाण्डु, गोमूत्र, कर्कश, स्निग्ध, कृष्ण, श्वेत, रक्त एवं हरितवर्ण और रक्तलोमयुक्त वृश्चिक मन्दविष होता है। उसके काटनेसे वेदना, कम्प, गात्रस्तम्भ, दष्ट स्थानमें कृष्णवर्ण, रक्तस्राव तथा शोथ, ज्वर एवं हस्तपादादिमें दंशन करनेसे यातना और वेगकी क्रमशः ऊर्ध्वगति देख पडती है।

रक्तवर्ण एवं पीतवर्ण, किन्तु उदरदेश कपिलवर्ण और सर्व शरीर धूम्रवर्ण वृश्चिक मध्यविष है। उसके शरीरका परिमाण ३ पर्व होता है। उसकी उत्पत्ति सर्पकी पूति, मल मूत्र और अण्डसे है। उसके काटनेसे जिह्वा पर शोथ, कण्ठनालीमें भुक्त द्रव्यका अवरोध और अत्यन्त मूर्च्छा आती है।

श्वेतवर्ण, चित्रवर्ण, श्यामवर्ण, रक्ताभ, रक्तपीत, रक्तोदर, कृष्णोदर, पीतरक्त, नीलपीत, रक्तनील, नीलरक्त एवं रक्ताग्निवर्ण प्रभृति वर्णयुक्त और परिमाणमें एक पर्व, एक पर्वकी अपेक्षा भी कुछ अथवा दो पर्व अधिक समस्त महाविष तथा प्राणनाशक है। पूतिसर्पदेह वा सर्पदष्ट व्यक्तिके देहसे इसका जन्म है। इसके काटनेसे मनुष्यकी भांति विषवेगकी प्रकृति स्वाद, भ्रम, दाह ज्वर और शरीरसे छिद्रपथसे रक्तस्राव होनेपर प्राण छूट जाता है।

लूताकी उत्पत्ति—किसी समय राजा विश्वामित्रने वशिष्ठको आश्रममें उपद्रव की थी। उससे वह महात्मा कुपित हुये। उसी समय उनके ललाटदेशसे पसी-नेकी स्वेदबिन्दु निकला था। वह विष तृणमें गिर पड़ा। उससे लूता (मकड़ी) नामक कीट उत्पन्न हुआ। आकार, वर्ण और प्रकृतिभेदसे नानाविध लूता षोडश प्रकारमें विभक्त किया गया है। सब प्रकारकी लूताका विष भयानक है। उसमें आठ प्रकारकी लूता कष्टसाध्य और आठ प्रकारकी एकबारगी ही असाध्य निर्दिष्ट हुयी है। त्रिमण्डला, श्वेता, कपिला, पीतिका, आलविषा, मूत्रविषा, रक्ता और कसना लूताका विष कष्टसाध्य है। उनके दंशन करनेसे शिरोरोग, कण्डू, दष्टस्थान पर वेदना और वातश्लेष्मज रोगसमूहकी उत्पत्ति होती है। सौवर्णिका, लाजवर्णा, जालिनी, एणीपदी, कृष्णा, अग्निवर्णा, काकाण्डा और माला गुणा—आठ प्रकारकी लूताका विष असाध्य है। उनके दंशन पर दष्टस्थानसे रक्त निकलता, दष्टस्थान सड़ता और ज्वर, दाह, अतिसार प्रभृति त्रिदोषजात रोग, विविध पिड़का, मांसमें बड़ा बड़ा चकता और रक्तवर्ण अथवा श्यामवर्ण एवं मृदु चलन शोथ हुआ करता है। दंशनस्थानमें भी उक्त प्रकारकी लूताकी लाला, नख, आत, दन्ताघात, मूत्र, रक्त, मल और शुक्रसंसर्ग भी विष पीड़ित होना पड़ता है। लालासे विषसे कण्डू, दष्टस्थानमें, पक्वमूलकोष और अल्प वेदना होती है। नखाघातसे विषसे शोथ एवं कण्डूका वेग बढ़ता और मनुष्य धबड़ा रहता है। दन्ताघातसे विषसे दष्ट स्थान कठिन एवं विवर्ण पड़ जाता और शरीरमें एकस्थानस्थायी मण्डल निकला आता है। मूत्र अथवा मलसे दष्टस्थान मध्यमें भनता और उसका मध्यदेश कृष्णवर्ण तथा प्रान्तभाग रक्तवर्ण देख पड़ता है। रक्त, मल एवं इन्द्रियकी स्पर्शसे पक्व बिल्व फलकी भांति पाण्डुवर्ण स्फोटक उठता है। लूताका किसी प्रकार विष-लक्षण एक ही बारमें समस्त प्रकाशित नहीं होता। दंशनके पीछे पहले दिन अप्रकाशित और कण्डू विशिष्ट लक्षण अल्पही उभर आते हैं। दूसरे दिन उन लक्षणोंका सम्यक्भाव मिलता और चतुर्दिक्का प्रान्त भाग फूल उठता है। तीसरे दिन विषका लक्षण देख पड़ता है। चतुर्थ दिन शरीरका विष कुपित होता है। पञ्चम दिन विषकोपसे रोगसमूह उभर आता है। षष्ठ दिन विष सर्वशरीरमें फैल विशेषरूपसे मर्मस्थान समूहको आक्रमण करता है। सप्तम दिन विषप्रकोप बहुत बढ़ जाता है। तीक्ष्ण वा प्रबल विष होनेसे उसी दिन रोगीका प्राण विनष्ट होता है। मध्यम विषविशिष्ट लूताके दंशनसे सप्तम दिवससे पीछे और मन्द विषयुक्त लूताके दंशनसे एक पक्षकाल मध्य मृत्यु आ सकता है।

चिकित्सा—उपविष कीटोंके काटनेसे सर्पदंशनकी भांति ही चिकित्सा करना पड़ती है। स्वेद, प्रलेप और अवसेकादि उष्ण कर व्यवहार करना चाहिये। दष्टस्थान पक वा सड़ जाने और मूर्च्छादि उपद्रव बढ़ जानेसे वमन विरेचनादि संशोधन कार्य और विनाशक क्रिया बहुदायसे काम होता है। उक्त सकल उपद्रवमें शिरीष, कुटकी, कुष्ठ, वचा, हरिद्रा, सैन्धवलवण, पयदुग्ध, सद्यो वसा, मधुघृत, सोंठ, पिप्पली और देवदारुका प्रलेप लगाना चाहिये। अथवा प्रथम आमपत्तोंपूर्व कर उसका लेप लगाना उचित है। किन्तु दष्टिक दंशनमें स्वेद अहितकर है। चिचिण्टकके विषमें गुड़, अपाङ्ग सिन्धुवार, वचा, बिल्वमूल, नीलवल्ली, गुड़ूचिका, अञ्जन, हरिद्रा और दारुहरिद्राका प्रयोगादि हितकर है। गलगोली (सर्पविशेष)-के विषमें अञ्जन, हरिद्रा, अपाङ्ग सिन्धुवार, कुष्ठ और अम्लपत्रीसे उपकार होता है। शतपदी (कानखजूरा) के विष पर कुङ्कुम, तगर, पादुका, शोभाञ्जन, पद्मकाष्ठ, हरिद्रा और दारुहरिद्रा

पानीमें पीस कर प्रलेप लगाना चाहिये। सकल प्रकार मण्डूक-विष, सेपश्रृङ्गी, वचा, विड़कर्णी, स्वनवेतस, मञ्जिष्ठा और वालकके प्रयोगसे नष्ट हो जाता है। विश्वम्भर कीटके काटनेसे वचा, अश्वगन्धा, पीतश्याव्या-लता, श्वेताव्याखिका, क्षुद्रचक्रमर्द और शालपर्णी प्रयोग करना चाहिये। अहिण्डुका कीटके दंशन करनेसे शिरीष, तगरपादुका, कुष्ठ, हरिद्रा, दारु-हरिद्रा, शालपर्णी, मुद्गपर्णी और माषपर्णी हितकर है। हरमवाके काट खानेसे रात्रिकालको शीतल क्रियासमूह करना पड़ता है। कारण दिनको सूर्यरश्मि द्वारा विष अधिक प्रकुपित होनेसे शीतल क्रियासे कोई फल नहीं मिलता। शूकहन्त (भांभा) के विषमें कक्षा सिन्धुवार, कुष्ठ और अपामार्ग प्रयोग करते हैं। अथवा कृष्णवल्मीककी मट्टी भृङ्गराजके रसमें पीस कर प्रलेप चढाना चाहिये। पिपीलिका, मक्षिका और मशक दंशन पर कृष्णवल्मीककी मट्टी गोमूत्रके साथ पीस कर प्रलेप देते हैं। प्रतिसूर्यक (गुडेरा)-के दंशन करने पर सर्पदंशनकी भांति चिकित्सा करना पड़ती है।

उग्रविष और मध्यविष वृश्चिकके दंशनमें सर्पदंशन की भांति चिकित्सा कर्तव्य है। मन्दविष वृश्चिकके काट खानेसे चक्रतैल अथवा विदार्यादि गणोक्त द्रव्य समूहके साथ सुसिद्ध उष्ण जलका सेक देना चाहिये। अथवा विपन्न द्रव्यसमूहके पुलटिससे स्वेद लगा दष्टस्थान पर हरिद्रा, सैन्धव, त्रिकटु, शिरीषबीज और शिरीष पुष्पके चूर्ण द्वारा घर्षण करते है। तुलसीकी मञ्जरी, विजोरा और गोमूत्रके साथ पीसकर प्रलेप करनेसे भी वृश्चिकके विषकी शान्ति होती है। उक्त विषमें ईष-दुष्ण गोमयका प्रलेप और स्वेद हितकर है।

कुसुमपुष्प तथा कोद्रव प्रत्येक १ भाग और हरिद्रा २ भाग घृतमें मिला गुह्यदेशमें धूप प्रदान करनेसे वृश्चिकविष सत्वर निवारित होता है।

लूता (मकड़ी)-के विभागानुसार प्रत्येक जातीय लूताविषमें पूर्वोक्त साधारण लक्षणकी अपेक्षा अनेक विभिन्न लक्षण देख पड़ते हैं।

त्रिमण्डला लूताके दंशनादिसे दष्टस्थान विदीर्ण हो जाता है। उससे कृष्णवर्ण रक्त बहता है। फिर वधिरता, चक्षुकी आविलता और चक्षुद्वयका दाह होता है। उसमें अर्कमूल, हरिद्रा, नाकुली और चक्र-मर्दको अभ्यङ्ग, पान, अञ्जन और नस्यरूपसे प्रयोग करना चाहिये।

श्वेतालूताके दंशन करनेसे श्वेतवर्ण और कण्डू-युक्त पिड़का उत्पन्न होती है। दाह, मूर्च्छा, ज्वर, विसर्प, क्लेद और वेदना भी उठती है। उसपर चन्दन, रास्ना, एला, रेणुका, नल, अशोकत्वक्, कुष्ठ और चक्रमर्द—सकल द्रव्य प्रत्येक १ भाग एवं वेणामूल २ भाग एकत्र प्रलेपादिमें व्यवहार करना चाहिये।

कपिला लूताके काटनेसे ताम्रवर्ण एवं एकस्थान स्थायी पिड़का, मस्तक भार, दाह, अन्धकार दर्शन और भ्रम होता है। उसमें पद्मकाष्ठ, कुष्ठ, एला, करञ्ज त्वक्, अर्जुनत्वक्, शालपर्णी, अर्क, अपामार्ग, दूर्वा और ब्राह्मी—सकल द्रव्य हितकर हैं।

पीतिकाके काटनेसे पिड़का, वमि, ज्वर एवं शूल आता और चक्षु रक्तवर्ण पड़ जाता है। उसपर कुटज-त्वक्, वेणामूल, पद्मकेशर, पद्मकाष्ठ, अशोक, शिरीष, अपामार्ग, लहसोड़ा, कदम्ब और अर्जुनत्वक् उप-कारक है।

आलविषाके दंशनसे दष्टस्थान पर रक्तवर्ण मण्डल (चकत्ता), सर्षपकी भांति पिड़का, तालुशोष और दाह होता है। उसपर प्रियंगु, वालक, कुष्ठ, वेणा-मूल एवं अशोक अथवा शतपुष्पा और अश्वत्थ तथा वट-का अङ्कुर एकत्र प्रयोग करनेसे उपकार पहुंचता है।

मूत्रविषके स्पर्शसे दष्टस्थान सड़ जाता कृष्ण एवं रक्तवर्ण पिड़का पड़ती और कास, श्वास, वमन, मूर्च्छा, ज्वर तथा दाह होता है। उसपर मनःशिला, हरिताल, यष्टिमधु, कुष्ठ, चन्दन, पद्मकाष्ठ और वेणामूल पीसकर मधुके साथ प्रलेप चढाना चाहिये।

रक्तलूता काट खानेसे दष्टस्थानको चतुर्दिक् रक्तवर्ण हो जाती हैं और पाण्डुरङ्गकी पिड़का उठ आती है। फिर क्लेद और दाह भी होता है। उस पर रास्ना, चन्दन, वेणामूल एवं पद्मकाष्ठ अथवा अर्जुन, लहसोड़ा तथा आम्रातकको त्वक्का प्रलेप लगाया जाता है।

कणभाके दंशनपर दष्टस्थानमें विच्छिन्न एवं शीतल रक्त गिरता और कास तथा श्वासरोग उपजता है। उसमें रक्तमूत्रकी भांति ही चिकित्सा करना चाहिये।

त्वचाके दंशनपर दष्टस्थानसे जिह्वाकी भांति गन्धयुक्त रक्तस्राव होता और ज्वर, मूर्च्छा वमि, दाह, काम तथा श्वासरोग उठा करता है। उस पर एला, वक्रमर्द तथा चन्दन प्रत्येक १ भाग और शतधातुको २ भाग एकत्र पीस कर प्रलेप चढ़ाते हैं।

अग्निवर्णोंके दंशनसे अत्यन्त रक्तस्राव होता और ज्वर, यातना, कण्डु, रोमहर्ष, दाह तथा स्फोट उपजता है। उसपर कृष्णाविषाकी भांति चिकित्सा करना पड़ती है।

अनन्तमूल, वैशालक, यष्टिमधु, रक्तचन्दन, शीत स्निग्धपुष्प पद्मकाष्ठ ऐलावलुक और पद्मकसंज्ञक पूर्वोक्त समुदाय लूताविषपर प्रयोग करते हैं।

कौषिकाके काटनेसे नकुलकी भांति गन्धयुक्त और विभिन्न रक्तादिस्राव होता है। फिर कास श्वास, ज्वर तृष्णा और मूर्च्छारोग भी उठा बैठता है।

कामवर्णोंके दंशनसे अण्ड अथवा पूति रक्तस्राव होता और दाह, मूर्च्छा, अतिसार, तथा शिरोरोग उपजता है।

लालिनीके काटने पर दष्टस्थान सूक्ष्म सूक्ष्म शिरा उठ आनेसे बढ़ जाता और तृषा, श्वास, अत्यधिक कम्पन तथा लालस्राव हुआ करता है।

पयोपदोंके दंशनसे कृष्णनिषकी भांति चिह्न पड़ता और तृष्णा, मूर्च्छा ज्वर, वमि कास तथा श्वासरोग उपजता है।

काकाण्डाके काटनेसे दष्टस्थान पाण्डु वा रक्तवर्ण पड़ जाता और उसमें अत्यन्त वेदना होती है।

मालामुखाके दंशनसे दष्टस्थानसे धूमकी भांति गन्ध निकलता अत्यन्त वेदना जाती, अनुलक्षा स्थान फट जाता और दाह मूर्च्छा तथा ज्वर आता है।

यह समस्त लूताओंके काटने वो दष्टस्थान वृश्चिक शस्त्र द्वारा एकबारगी ही काट कर अग्नितप्त शलाकासे जलाना पड़ता है। किन्तु मर्मस्थानमें काट पाने अथवा स्फाटि उपजने पड़ जानेसे और फाड़ करना न चाहिये। उस पर प्रियंगु हरिद्रा कुष्ठ, मञ्जिष्ठा और यष्टिमधु पीसकर मधु तथा मैनफलकके साथ प्रलेप चढ़ाते हैं। घटादि शीतोदकका लाय बना शीतल होनेपर दष्टस्थान सेचन किया जाता है। फिर वमन विरेचन द्वारा मर्दन और जलौका द्वारा रक्तमोचन कर अन्यान्य विषघ्न प्रयोग करना चाहिये।

सकलप्रकार कीट दंशनमें लघु तथा शीघ्र आरोग्य करने पर निम्नवत त्रिकटु दन्ती, कुसुमरांज्ञ हरिद्रा, मधु गुग्गुल सैन्धव, कराचीन और अपीनको पिष्ट द्वारा ८६ (६४) निकाल डालते हैं। (सुश्रुत)

युरोपीय प्राणितत्त्वविदोंके मतमें—कीट अस्थिपञ्जर विहीन षट्पदयुक्त क्षुद्र जीव (Insecta) है। उनके मस्तक वक्षः, उदर, मस्तक पर दो कर्णेन्द्रिय और वक्षकोटरमें छः पैर होते हैं। अधिकांश बालमें वाके कीटके पंख रहते, किन्तु अति अल्पके ही देख पड़ते हैं।

अब प्रायतः कीटजातिको १ श्रेणीमें भाग करते हैं। १म श्रेणीके अनुसार कीट जन्मसे मृत्यु पर्यन्त रूपान्तर ग्रहण नहीं करते। छोटे बड़े सबका गठन एक प्रकार होता है। केवल वयोवृद्धिके अनुसार देह बड़ा हुआ रहता है। पंख नहीं होते। वह अति सामान्य नहीं। कोई कोट पक्षहीन भी होता है। (Ametabola)


१ शूक (कड़ाजाम)
२, कीटकी शेष अवस्था।


१ मस्तक, २ वक्षकोटर (Thorax), ३ उदर, ४ पक्षमूल ५ पक्ष ६ कर्णेन्द्रिय वा कीटको शूक।

२य श्रेणीके अनुसार बड़े होने पर भी सम्पूर्ण रूपान्तर नहीं पाते। पर प्रथम शूक (कड़ैजाम) की भांति देख पड़ते हैं। आकारमें भी कुछ परिवर्तन

रहता है। प्रायः पक्षमूल नहीं होते। अवशेषको वह कीपको भांति हो जाते अथवा तृतीय अवस्था (Pupa) पाते हैं। उक्त अवस्थामें गति रहते भी कीट नहीं चलते फिरते। (Hemimetabola)

३य श्रेणीके कीट सम्पूर्ण रूपान्तर प्राप्त होते हैं। भ्रूण, तृतीयावस्था और आयतन क्रमशः परिवर्तित हो नूतन आकार बन जाता है। (Holometabola)

मत्कुण (जूं), पक्षीके गावका कृमि, शतपदी (कानखजूरा) प्रभृति कीट प्रथम श्रेणीके अन्तर्गत है।

इन्द्रगोप (वीरबहूटी), घासकृमि (घासका कीड़ा), भित्तिकृमि (दीवारका कीड़ा, बिनोहरी) खारकोट (खटमल), घुघुर (भींगर), तिलचट, पिपीलिका, शलभ (टिड्डी) प्रभृति द्वितीय श्रेणीमें आते हैं।

मशक, मक्षिका, पिङ्गकपिशा (गुबुवा) प्रभृति तृतीय श्रेणीके कीट हैं।

प्राणितत्त्वविदने उक्त तीन श्रेणियोंको फिर नाना शाखा प्रशाखावोंमें विभक्त किया है। उन्होंने आजतक १२५६ प्रकारके कीटोंका सन्धान पाया है।

भारतवर्ष एवं पूर्व उपद्वीपादिकी भूमि जिस प्रकार उच्च तथा निम्न है और प्रत्येक स्थानमें शीतातपका जैसा तारतम्य देख पड़ता, उससे उक्त सकल देशमें कीटोंकी नानाविध श्रेणी, जाति और प्रभेद मिलता है।

भारतीय कीटसमूहका जो विवरण देखनेमें आता, वह प्रायः एकरूप पाया जाता है। शीतमण्डल और समसण्डलमें समस्त कीटोंकी जो विभिन्न जाति और श्रेणी देख पड़ती, उसका गठन प्रभेद इतना मिश्रित रहता कि उनका प्रभेद निर्णय करना दुःसाध्य ठहरता है। हिमालयके स्थान स्थान, भारतके दक्षिणप्रान्त और भारतमहासागरीय कई द्वीपोंमें ग्रीष्ममण्डलके कीटोंकी ही श्रेणी अधिक मिलती है। फिर नेपाल, दक्षिण महिसुर, सिंहल, बम्बई प्रदेश, मन्द्राज, कलकत्ता, दक्षिणवङ्ग, सिंगापुर, जापान और यवद्वीपमें भी उक्त श्रेणीके कीटोंके अधिक रहनेकी ही बात है। इसी प्रकार एशियाके कीटसंस्थानमें अफरीकाका कीटसंस्थान मिलता है।

एशिया और अफरीकामें एक जातीय पिङ्गकपिशा (गुबुवा) होती है। (Ateuchus sanctus)। इसे मिसर देशीय अति पवित्र और सुलक्षण समझते हैं। (The sacred beetle of the Egyptions.) वह कहते कि उक्त कीट भूमिकी उर्वरताका चिह्न स्वरूप है।

हिमालयके कीटराज्यमें युरोप और एशियाका कीटगठन देख पड़ता है। फिर उसके उपत्यका प्रदेशमें दक्षिणाञ्चलकी श्रेणी ही अधिक मिलती है। वहां ग्रीष्ममण्डलकी भांति बहुतसे हिंस्र (मांस खानेवाले) कीट भी होते हैं।

कीटोंके मध्य बहुतोंसे मनुष्यका जो उपकार होता, वह कहनेमें नहीं आता। कितने ही इसी प्रकार अनिष्टकारी भी हैं। फिर बहुतसे कीट सर्वस्व नाश कर देते हैं। कितने ही देखनेमें अति सुन्दर और कितने ही कौतूहलजनक हैं। फिर बहुतसे कीड़ोंका आचार-व्यवहार और वासस्थानके निर्माणकी प्रणाली आश्चर्यजनक होती है।

कीटके भी इन्द्रिय रहते हैं। कीटकी गर्भिणी होनेसे पुंकीट मर जाता और वह डिम्बप्रसव कर मरती है। कीटोंके असंख्य सन्तान उत्पन्न होते हैं। जगदीश्वरके राज्यमें यदि सब कीटोंके लिये जीनेका नियम रहता, तो अकेली कीट श्रेणीका स्थान भरनेमें ही समग्र पृथिवीका प्रयोजन पड़ता। वर्षमें जिस प्रकार कीट संख्या बढ़ती, वह यदि कीटभुक् पक्षी, पशु वा वृक्षलतादि द्वारा विनष्ट न होती तो अनुमान किया जा नहीं सकता क्या हो जाता। यही नहीं कि केवल कीटभुक् पशुपक्षी ही विद्यमान हैं। अनेक कीट मनुष्यभोज्य भी हैं। यूनानी पहले टिड्डी खाते, जिसे न्यू साउथ वेल्सके आदिम असभ्य आज भी खा जाते हैं। इलियास नामक कोई ग्रन्थकार कहते हैं कि-सम्भवतः भारतमें भी कुछ लोग किसी किसी कीटसे डिम्बसे सद्यप्रसूत शावक निकाल खा डालते हैं।

जामैकाद्वीपके काफिर बुगङ्ग (Bugong Butt-

erflies) नामक एक चित्रपतङ्ग (तीतली) आहार करते हैं। चीनदेशके बड़े आदरसे रेशमका कीड़ा (रेशम निकाल लेने पर गुटीके मध्य निर्जीवावस्था परिप्राप्तका मृतकीट) खाते हैं। कपोतारिपतङ्ग (बाजकी आंखो) (Hawk moth) का अण्डजात शावक भी चीनावोंको अतिप्रिय है।

कोई कोई असभ्य जङ्गली जातियोंमें कीटका शावक खाते हैं। अष्ट्रेलीय इसे अति उपादेय खाद्य समझते हैं। कोई लोग आम्रकीटकी भांति एक जातीय कीड़ामात्र आहार करते, जिसे मट्ठेके गर्त्तमें भर कर रखते हैं।

मारकिन्स और मारकीटार लोग पिपीलिका भक्षण करते हैं। हटेण्ट दीमक खा जाते हैं। ब्राउन साहबने लिखा है कि महाराष्ट्रयुद्धके समय सेरिंगाके सुरक्षोपार दुर्भिक्षकालमें दीमक रोटीके साथ मिला कर आहार करते थे।

आफ्रिकामें हबश एक प्रकारके कीटको देवताकी भांति मान्य करते और उसे प्रेगा-डिओरी (Prega Deori) कहते हैं। हिन्दुस्थानी लोग इसके कीटकी भक्ति करते और विश्वास रखते कि इसे स्वर्ण रक्षाकरण्ड (सोनेके ताबीज)-में धारण करनेसे श्वास, यक्ष्मा, रक्तवमन प्रभृति दुःसाध्य रोग आरोग्य होते हैं। माजू (Galls) नामक कीटसे औषध, वर्णक (रंग) और मसी (स्याही) बनती है। किरमिदाना (Cochineal) कीड़ेको सुखा लेनेसे अच्छा लाल रंग तैयार हो जाता है। यह जब नागफनीमें रहते, तब फलादिके मध्य एक गांठमें परस्पर चिपट बैठते हैं। एक किरमिदानेमें १०० शावक होते हैं। मध्यअमेरिकामें उनको सर्वाङ्गसह कोषो बहुमील भेजी गयी है। इसीप्रकार लाक्षा कीटसे लाहलाख, चटनलाख, छिलालाख और शलाखादि प्रभृति लाख बनती है।

कान्थरिस प्रभृति जातीय कीटसे प्रलेप और औषध आदि प्रस्तुत होते हैं।

क्रिसोक्रोआ (Chrysochroa) नामक कीटके पक्षमूलकी आभासे भारतवर्षमें एक प्रकार बढ़िया हरा रंग बनाया जाता है। इसे यहांसे युरोप भेजते हैं।

एक जातीय एक प्रकार कीटके पक्षमूलकी आभा रखनेसे अष्ट्रेलीय लोग हार, कण्ठी और भुजबन्द बनाते हैं। यह लाल हरी धूपछांहका रंग रखता है। फिर मालो उस पर सोनेका पानी चढ़ा रखता है। आभरणो देखनेमें सम्पूर्ण उज्ज्वल मणिकी भांति चमकती है।

पृथिवीके मध्य सर्वापेक्षा वृहदाकार कीट यवद्वीपका पिहलपिया (Scarabaeus Atlas, गुबरा) है।

मकड़ीके बड़े बड़े जालेसे आजकल बहुतसे लोग सूत और रेशम बनानेकी चेष्टा करते हैं। मुंगेरमें गहरा और लाल और काले रंगकी मकड़ियोंके बड़े बड़े जाले देखनेमें आते हैं।

पिहलपियाके पक्षमूलकी आवरणोंके काट छांट कर स्त्रियां टिकलियां तैयार करती हैं। प्रवाद है कि यह कीट तिलचट्टेको पकड़ कर गुबरा बना डालता है। वस्तुतः तिलचट्टा गुबरैला बन जाता है।

काला कीड़ा गेहूंकी बालका बिगाड़ देता है।

गिराया धानका रस चूस कर भूमिमें गिराता है।

गिरफ्तार नामक कीट ज्वारका विषम शत्रु है।

कपासको और भीमा कीट धानको काट डालता है।

मिलेग तीन प्रकार कीट पश्चिममें अधिक पाये जाते हैं।

घुघर नानाविध इख नष्ट करता है और खानकर दानापुरमें अफीमकी गोलोंको नष्ट करता है। इससे लोकका बिगाड़ता है।

नानाविध फलोंमें भी नानाविध कीट होते हैं।

आम अमरुद बैगन करेला, ककड़ी प्रभृति फलोंमें कई तरहके कीड़े देख पड़ते हैं।

गूलरमें प्रायः भुनगे भरे रहते हैं। कहते हैं उनको खानेसे आदमीको आंख नहीं आती।

२ मानवजाति। ३ कीटकिट कीड़ेका अंग। ४ विष्ठा, मलिन। (त्रि०) ५ निठुर बेरहम, भयान।

मगुटके पीछे उनके कनिष्ठ उकिमाई राजा हुवे। उनके साथ चीनराजाका युद्ध छिड़ गया। युद्धसे उत्तर चीन उकिमाईके अधिकारमें चला गया और अपराधके लिये शुङ्ग सम्राट्को वार्षिक २५०००० चीनी रौप्य-मुद्रा कर देना पड़ा। उसी समय होयाई नदी उभय राज्यकी सीमा ठहरायी गयी। कौनराजधानी येन-किङ्ग नगर (वर्तमान पिकिं)-में स्थापित हुयी। चीनकी राजधानी चिकियाङ्ग प्रदेशमें हङ्गचाउ नगरको बदल गयी। किन्तु उसी समय कौनसाम्राज्यके उत्तरांशमें मुगलतातारोंने अपना अधिकार जमा लिया था।

शेषको मुगलोंके हाथसे १२३४ ई० को उक्त बलशाली राजवंश नष्ट हो गया।

कौना (फा० पु०) द्वेष, बुग़ज़, दुश्मनी।

कौनार (वै० पु०) १ कृषक, किसान। २ श्रमजीवी, मजदूर। "कीनारेव स्वेदमासिष्विदाना।" (ऋक् १०। १०६। १०)

कौनाश (सं० पु०) क्लिश्नाति हिनस्ति क्लिश-कन् उपधाया ईत्वं लकारस्य लोपः नामागमश्च। क्लिशेरीचोप-धायाः कन् लोपश्च लो नामच्। उण् ५। ५६। १ यम। २ वानर-विशेष, किसी किस्मका बन्दर। ३ राक्षसविशेष। (त्रि०) ४ कृषक, किसान। ५ क्षुद्र, छोटा। ६ पशु-घातक, जानवरोंको कत्ल करनेवाला। ७ लोभी, लालची। ८ गुप्तहत्याकारी, छिपकर मार डालनेवाला।

कीप (हिं० स्त्री०) कीफ कुप्पी, एक चोंगी। वह छोटे मुंहके पात्रमें तेल आदि बाहर न गिरनेके लिये लगायी जाती है।

कीमत (अ० पु०) मूल्य, दाम, किसी चीजके बदले बिकने पर मिलनेवाला रुपया पैसा।

कीमती (अ० वि०) बहुमूल्य, महंगा।

कीमा (अ० पु०) मांसविशेष, किसी किस्मका गोश्त। कीमा मांसको बारीक काटनेसे बनता है।

कीमिया (फा० स्त्री०) रसायन, रासायनिक क्रिया।

कीमियागर (फा० पु०) रसायन बनानेवाला, जो आदमी कीमियागारीमें होशियार हो।

कीमियागरी (फा० स्त्री०) रसायन प्रस्तुत करनेकी विद्या।

कीमुख्त (अ० पु०) गर्दभ या अश्वचर्म, गधे या घोड़ेका चमड़ा। कीमुख्त पुरा और दानेदार होता है। उसके जूते बम्बासमें पहने जाते हैं।

कीर (सं० क्लो०) कीलति बध्नाति शरीरम्, कील-बन्ध नस्य रः। १ मांस, गोश्त। (पु०) कीति अव्यक्त शब्दं ईरयति, की-ईर णिच्-अच्। २ शुकपक्षी, तोता, सुवा।

"उमगादिर्गमिषतोऽपि किं न मुक्त पाशानि कीरगीरिव" (नैषध, २।११)

३ काश्मीरदेश और काश्मीरवासी।

कीर—कादर देखो।

कीरक (सं० पु०) कीर संज्ञायां कन्। १ वृक्षविशेष, एक पेड़। २ बौद्धसंन्यासी। ३ शुकपक्षी, तोता। ४ प्राप्ति, याफ्त।

कीरग्राम—कोट-कांगड़ाके निकट एक प्राचीन ग्राम। आजकल उसे वैद्यनाथ कहते हैं। वहां वैद्यनाथ और सिद्धनाथका मन्दिर बना है। ८०४ ई०को उक्त मन्दिर बनाया गया था। अनेकांश नष्ट हो जानेसे १०८६ ई०को राजा संसारचांदने उसे परवर्तित और परिवर्धित कर दिया।

कीरट (सं० पु०) वङ्गधातु, रांगा।

कीरटा (सं० स्त्री०) कीरट देखो।

कीरतनूफला (सं० स्त्री०) तूलवृक्ष, कपासका पेड़।

कीरति, (हिं०) कीर्ति देखो।

कीरनासा (सं० पु०) शुकनासा, तोतेकी नाक।

कीरमणि (सं० पु०) धूम्याटपक्षी, एक चिड़िया।

कीरवर्णक (सं० क्लो०) कीरस्येव वर्णो यस्य, कीर-वर्ण-कप्। स्थौणेयक नामक सुगन्धि द्रव्यविशेष, एक खुशबूदार चीज। स्थौणेयक देखो।

कीरशब्दा (सं० स्त्री०) तालभेद। उसमें तीन भरे, एक खाली और फिर तीन भरे ताल आते हैं।

कीराः (सं० पु०) क-ईर-णिच् पृषोदरादित्वात् साधुः। १ काश्मीरदेश। २ काश्मीरदेशीय व्यक्ति। उक्त शब्द नित्यबहुवचनान्त है।

कीरि (सं० पु०) कीर्यते विक्षिप्यते, कृ बाहुलकात् कि। १ स्तव, तारीफ।

"कीरिणा दैत्यकीरविम्। (ऋक् [illegible])
कीरिणा कीर्तेन च।" (सायण)

(त्रि०) २ स्तवादिमें चालक, तारीफ करनेमें लगा हुआ।

"[illegible] कीरिणा [illegible]।" (ऋक् [illegible])
कीरिणा [illegible] न [illegible]।" (सायण)

३ स्तोता, तारीफ करनेवाला।

कीरिचोदन (सं० त्रि०) कीरीन् चोदयति प्रेरयति, कीरि चुद णिच्-ल्यु। स्तवकारकोंका प्रेरक।

"[illegible] कीरिचोदनम्।" (ऋक् [illegible])
"कीरीणां स्तोतॄणां चोदनं प्रेरयितारम्।" (सायण)

कीरे (हिं० स्त्री०) १ कीटविशेष, एक सफेद कीड़ा। कीरा गेहूं, जो खरीफको कामनें धुन हुए पो जाते हैं। २ पिपीलिका, चींटी। ३ रेशमके कीड़ेको कहते हैं। ४ सूक्ष्म कीट, बहुत बारीक कीड़ा।

कीरेष्ट (सं० पु०) कीरस्य शुकस्य इष्टः, ६ तत्। १ आम्रवृक्ष, आमका पेड़। २ आक्षोटवृक्ष, अखरोटका दरख्त। ३ जलमधूक। ४ निम्बवृक्ष, नीमका पेड़।

कीर्ण (सं० त्रि०) कीर्यते स्म, कॄ कर्मणि क्त। १ आच्छन्न, ढका हुआ। २ विक्षिप्त, फैला हुआ। ३ निहित, छिपा हुआ। ४ हिंसित, मारा हुआ। ५ पूर्ण, भरा हुआ

कीर्णपुष्प (सं० पु०) चोरमोरट, एक लता।

कीर्णि (सं० स्त्री०) कॄ भावे क्तिन् निपातनात् साधुः। १ आच्छादन, ढकन, चोढ़ना। २ विक्षेप, फैलाव। ३ हिंसाकार्य, मार पीट। ४ व्याप्ति, भराव।

कीर्तक (सं० त्रि०) कीर्तयति, कृत् णिच्-ण्वुल्। कीर्तन कारक, बयान करनेवाला।

कीर्तन (सं० क्लो०) कृत् भावे ल्युट्। १ वर्णन, बयान।
"एवं बहुविधा पृथिवी कथिता कीर्तनं मया।" (ब्रह्मवैवर्तपुराण, [illegible])
२ यशःप्रकाश, गौरवका इजहार। ३ गुणकथन, तारीफका बयान। ४ कथकोंका विषयक महोत्सविशेष। कीर्तन देखो।

कीर्तनिया (हिं० पु०) कीर्तनकारक अध्यापकका समस्यो सबक मानेवाला।

कीर्तनी (स० स्त्री०) नीलोवृक्ष, नीलका पेड़।

कीर्तनीय (स० त्रि०) कृत् णिच् अनीयर् यद्वा कीर्तने गुणकथने साधुः, कीर्तन छ। १ वर्णनीय बयानके काबिल। २ गणनीय, गिना जानेवाला।

कीर्तन्य (दे० क्रि०) कीर्तनाय साधुः, कीर्तन-यत्। कीर्तनके उपयुक्त जो गाये जानेके काबिल हो।

कीर्ति (सं० स्त्री०) कृत् इन् इत्यादिर। [illegible]। १ पुण्य, सवाब। २ यशः, गौरव। कीर्तिका संस्कृत पर्याय—यशः, समज्ञा, समाख्या, समाज्ञा, समज्या, अभिख्या और वर्ण और कोर्तना है। कोई कोई यश और कोर्तिमें यह भेद बताते हैं—"[illegible] कीर्ति [illegible] यशः।"

दानादि कार्यसे जो सुख्याति होती वह कीर्ति कहाती है। फिर वीरत्वादिके प्रभावसे होनेवालो सुख्यातिको यशः कहते हैं।

किसीके मतमें कोवित व्यक्तिको प्रशंसाका नाम यश और मृत व्यक्तिको प्रशंसाका नाम कीर्ति है।

किन्तु उक्त मत ठीक समझ नहीं पड़ता। अनेक अवसर जीवित व्यक्तिको भी कीर्तिका वर्णन मिलता है— "[illegible]" (मनु [illegible])

३ प्रसाद, खुशी। ४ शब्द, भावाज। ५ दीप्ति, चमक। ६ मातृकाविशेष। ७ विस्तार, फैलाव। ८ कर्दम कीचड़। ९ पीतालो सखीविशेष, जानकीका एक सहेली। १० आर्याछन्दभेद। इसमें १३ गुरु और १८ लघुवर्ण लगते हैं। ११ दशाक्षरी हत्तविशेष। इसके प्रत्येक चरणमें ३ सगण और १ गुरु वर्ण रहते हैं। १२ एकादशाक्षरी हत्तविशेष। यह इन्द्रवज्राके संयोगसे उत्पन्न होता है। इसके प्रथम चरणका पहला अक्षर लघु रहता है। शेष तीन चरणोंमें पहले गुरु अक्षर जो लगाते हैं। १३ तालविशेष। १४ दशकका विशेष। यह वर्णको पश्चो रखें।

कीर्तिकार (सं० त्रि०) कीर्ति करोति जनयति, कीर्ति कृ ट। कीर्तिकारक, गौरव पैदा करनेवाला, जिसके नामवरी रहे।

कीर्तिकूट—किसी पर्वतका नाम, एक पहाड़।

([illegible], १२। [illegible])

कीर्तिचन्द्र—१ वर्धमानके कोई राजा। ([illegible]

२ कुमायूंके २ राजावोंका नाम। ताम्रशासन द्वारा समझते कि उक्त २ राजावोंमें एक १४२२ शक और दूसरा १७२७ शकको राजत्व करते थे।

कीर्तित (सं० वि०) कृत्-क्त। १ कथित, कहा हुवा। २ ख्यात, मशहूर। ३ निर्दिष्ट, ठहरा।

कीर्तितव्य (सं० वि०) कृ-णिच्-तव्य। कर्तन करनेके उपयुक्त, जिसकी तारीफ गायी जा सके।

कीर्तिदेव—१म वाराणसीके कोई चाटम्बराजा, उनका अपर नाम कीर्तिवर्मा (२य)था। तैलके पुत्र। शिलालिपिमें समझ पड़ता कि उन्होंने १०६८से १०७७ ई० तक राजत्व किया था। वह चौलुक्यराज (षष्ठ) विक्रमादित्यके मित्रराज रहे।

२य कीर्तिदेव चामलादेवीके गर्भजात तथा तैलके पुत्र और दिग्विजयी कामदेवके भ्राता थे।

कीर्तिधर (सं० वि०) कीर्तिं धरति धारयति वा, कीर्ति-धृ-अच्। १ कीर्तिमान्, मशहूर। (पु०) २ कोई सङ्गीत-शास्त्ररचयिता। शार्ङ्गधरने उनके श्लोक उद्धृत किये हैं।

कीर्तिपाल—राजपूतानेके नाडोलवाले एक चौहानराव। गत १२ वीं शताब्दीके अन्तमें इन्होंने योधपुरके जालोर नगरको, परमारोंसे जीत अपनी राजधानी बनाया था।

कीर्तिपुर—पार्वतीय प्राचीन नगरविशेष, एक पुराना पहाड़ी शहर। कीर्तिपुर नेपालके अन्तर्गत पाटनसे डेढ़ कोस पश्चिम क्षुद्र गोलाकार पर्वत पर अवस्थित है। वह चतुःपार्श्वस्थ समतल भूमिसे २०० फीट ऊंचा है। कीर्तिपुर प्राचीर द्वारा इस प्रकार दुर्भेद्यभावसे वेष्टित है, कि सहसा शत्रु आक्रमण कर नहीं सकता।

आज कल वह सामान्य नगर होते भी पूर्वकालको एक स्वाधीन राज्यकी राजधानी गिना जाता था। उसके पीछे कीर्तिपुर पाटन राज्यके अधिकारमें आया था। पाटन राज्याधिकारसे पहले ही वह चारो ओर दुर्गादि द्वारा सुरक्षित था। भग्न नगर-प्राचीरके स्थान स्थान पर उक्त प्राचीन दुर्गका भग्नावशेष देख पड़ता है।

१७६५ ई० को राजा पृथ्वीनारायण प्रबल हो गये थे। उन्होंने अनेक कष्ट और परिश्रमसे ३ वर्ष पीछे कीर्तिपुरवासी दुर्धर्ष नेवार लोगोंको हरा नगर अधिकार किया। तदवधि कीर्तिपुर उक्त राजवंशके ही अधिकारमें चला आता है।

कीर्तिपुर अधिकृत होनेके पीछे पृथ्वीनारायणके अधीनस्थ गोर्खा सिपाहियोंने माटकोडस्थ शिशु और वाद्यकर व्यतीत नेवार जातीय बालक, युवक, वृद्ध प्रभृति सबकी नाक काट डाली थी। उसी दिनसे कीर्तिपुरका दूसरा नाम 'नकटापुर' पड़ गया है।

कीर्तिपुरमें अब वह पूर्वश्री नहीं चमकती। किन्तु आज भी उस पूर्व गौरवका ह्रास नहीं हुवा है। उक्त वीरजन्मभूमिमें देखने योग्य अनेक प्राचीन मन्दिर हैं। उनमें कई भग्न और कई सम्पूर्ण हैं। नगरके उत्तरांशमें बाघभैरवका चौतल्ला मन्दिर प्रधान है। १५१३ ई० को कीर्तिपुरके किसी राजकुमारने उसे बनाया था। मन्दिरके मध्य बाघकी एक रक्ती हुयी मूर्ति है। प्रदक्षिणाके निकट भैरवका एक स्वतन्त्र मन्दिर भी बना है। नेपालके अनेक तीर्थ बाघ भैरव दर्शन करने जाते हैं। नगरके उत्तर प्रान्तमें एक बृहद्‌ गणेश-मन्दिर है। कोपीयवंशीय गोरक्षा नेवारने १६६५ ई० को बना उसे प्रतिष्ठित किया था। उसके सम्मुख तोरण और मध्यस्थल गणनायका आराम है। उसकी दक्षिणदिक् मयूरोपरि कुमारी और वाम दिक् गरुडोपरि वैष्णवी हैं। कुमारीके पीछे बराह पर वाराही, वाराहीके पीछे शवोपरि चामुण्डा, वैष्णवीके पार्श्वमें ऐरावत पर इन्द्राणी और इन्द्राणीके पीछे सिंह पर महालक्ष्मी विराजमान हैं। उक्त अष्ट नायिकाकी मूर्ति शोभा दे रही है। एतद्भिन्न सर्वोपरि भैरवनाथ और कार्तिकेयकी मूर्ति है। नगरके दक्षिण पूर्वांशमें 'चिलनदेव' नामक एक बौद्ध मन्दिर विद्यमान है। यह भी देखनेयोग्य समझा जाता है। वहां प्रायः सकल बौद्ध देवमूर्ति, बौद्धधर्मके सकल चिह्न और यन्त्रादिकी प्रतिकृति देखनेमें आती है। कीर्तिपुरमें पहले जो प्रसिद्ध राजसभाभवन था। आज कल उसका ध्वंसावशेष पड़ा है। उससे थोड़ी दूर पर १५५५ ई० को इष्टक द्वारा निर्मित किसी मन्दिरका भी ध्वंसा-

करीब मिलता है। पहाड़ पर वैसा बड़ा मन्दिर दिखाई नहीं पड़ता।

२ प्राचीन ग्रामविशेष एक पुराना गांव। यह मगधदेशके अन्तर्गत करहसि ग्रामसे उत्तर पाकालोथ पर अवस्थित है। इसके पार्श्वमें उष्णि और गङ्गा नदीका सङ्गम है। चन्द्रवंशीय कीर्तिचन्द्र नामक किसी मण्डलेश्वरने प्रतिष्ठानसे आकर अपने नाम पर यह ग्राम स्थापन किया था। (ब्रह्म खण्ड १४।१८८)

कीर्तिभाज् (सं० पु०) कीर्ति भजते, कीर्ति-भज क्वि। १ द्रोणाचार्य। (त्रि०) २ कीर्तियुक्त, यशस्कर।

कीर्तिमय (सं० त्रि०) कीर्ति-मयट्। कीर्तियुक्त यशस्कर।

कीर्तिमान् (सं० त्रि०) कीर्तिरस्यास्ति कीर्ति मतुप। १ कीर्तियुक्त यशस्कर। (पु०) २ विश्वेदेवान्तर्गत व्याहविशेष। (भारत, अनुशासन, ११९ अ) विश्वेदेवो। ३ वसुदेवके ज्येष्ठपुत्र। (भागवत ९।२४।५१)

कीर्तिरथ (सं० पु०) विदेहराज जनकवंशीय प्रतो-न्धकराजाके पुत्र। (रामायण, १।७१।८)

कीर्तिराज (सं० पु०) कोल्हापुरके शिलाहारवंशीय एक राजा। यह १०१८ ई० से पहले राजत्व करते थे।

कीर्तिरात (सं० पु०) मिथिलाराज महीध्रकके पुत्र। (रामायण १।७१।११)

कीर्तिवर्धन (सं० पु०) कुमोत्तुङ्गवंशीय एक चोलराज। यह कार्तिकेयदेवके उपासक थे। (चोलवंशावली)

कीर्तिवर्मा— १ तीन चौलुक्य राजाओंका नाम। १म कीर्तिवर्माका उपाधि पृथिवीवल्लभ था। यह पुलि-केशि-वल्लभके पुत्र रहे। इन्होंने वङ्गदेशमें नल, मौर्य और कदम्बराजगणको पराजय किया था। राज्य-काल ४८९ शक रहा। २य कीर्तिवर्मा विक्रमा-दित्यके पुत्र थे। कीलमहादेवीके गर्भसे इनका जन्म हुआ। इन्होंने पल्लवराजगणको जीता था। राज्यकाल ६९१ ६९८ शक रहा। ३य कीर्तिवर्मा भीमराजके पुत्र थे।

२ कर्णाटके दो कदम्बराजाओंका नाम। इनमें प्रथम शान्तिवर्माके पुत्र एवं महामण्डलेश्वर रहे। द्वितीय तैलपके पुत्र थे। चक्रुन्दला देवीके गर्भसे इनका जन्म हुआ। राज्यकाल १०६८ १०७० ई० था।

कीर्तिदेव देखो।

३ चन्द्रात्रेय (चंदेल)-वंशीय राजा देवपालदेव विजयपालके पुत्र। इन्होंने अपने प्रधान सेनापति गोपालके साहाय्यसे चेदिराज कर्णको परास्त किया था। समस्त बुन्देलखण्ड और उसका चतुःपार्श्वस्थ स्थान इनके अधिकारभुक्त रहा। चंदेलराजाओंको शिला-लिपि पढ़नेसे समझ पड़ता कि कीर्तिवर्माने ११२० संवत् (१०६३ ई०) से ११५४ संवत् (१०९८ ई०) पर्यन्त राजत्व किया था। इनके भ्राताका नाम देववर्मा रहा। कीर्तिवर्माको सभामें प्रबोधचन्द्रोदय प्रणेता विख्यात पण्डित कृष्णमिश्र रहते थे। सेनापति गोपाल के आदेशसे इन्होंने प्रबोधचन्द्रोदय नाटक बनाया। उक्त ग्रन्थ पढ़नेसे ही मालूम पड़ता कि यह राजा कीर्ति-वर्माके समक्ष अभिनीत हुआ था। राजा कीर्तिवर्माने महोबामें कीर्तिसागर नामक एक वृहत् जलाशय खुदाया था। इनके पुत्र वीरवर सल्लक्षणवर्मा रहे। पिता और पुत्रके समयकी अनेक शिलालिपि आवि-ष्कृत हुयी हैं।

कीर्तिशेष (सं० पु०) कीर्ति शेषो यस्य, बहुव्री०। मरण मौत।

कीर्तिशाह—टेहरी राज्यके एक राजा। १८९२ ई० को सिंहासन पर बैठे थे। इन्होंने नेपालके महाराज जङ्ग बहादुरको एक पौत्रीका पाणिग्रहण किया।

कीर्तिसेन (सं० पु०) कीर्ति सेनेव यस्य, बहुव्री०। वासुकिके भ्रातुष्पुत्र।

कीर्तिस्तम्भ (सं० पु०) कीर्तिस्थापकः स्तम्भः, मध्यप-दलो०। कीर्तिविशेषके ख्यापनार्थ निर्मित स्तम्भ।

कीर्या (देश० स्त्री) पक्षिविशेष, एक चिड़िया।

कील (सं० पु०) कीलति बध्नाति इति। कील बन्धने अच्। किल कर्मणि वा घञ्। १ वह्निशिखा, लपट। २ शङ्कु, मेख खूटी पोग। ३ स्तम्भ विशेष, खंभा। ४ मेष अधम कारीकर टकडा। ५ कफोणि कुहनी। ६ कफोणिका निम्नदेश, कुहनीका निचला हिस्सा। ७ मृदगर्भविशेष, पटका रहनेवाला बच्चा।

जो मूढगर्भ हस्त, पद और मस्तक ऊर्ध्व दिक् उठा शङ्कुकी भांति योनिमुखको निरोधमें लाता, वह कील कहाता है। (सुश्रुत) ८ काष्ठफलक, लकड़ीका पट्टा। ९ मुखामाकी दर्द करनेवाली कील। १० रति-बन्धविशेष, एक डौला। ११ कुम्हारके चाकको खूंटो। १२ जांतेके बीचकी खूंटो। १३ भाला। १४ कुहनीकी मार। १५ शिव।

कील (हिं॰ स्त्री॰) कार्पासभेद, किसी किस्मकी कपास कीलखुंगी या देवकपास कहाती और गारोकी पहा-ड़ियोंमें अधिक बोयी जाती है।

कीलक (सं॰ पु॰) कीलति बध्नाति अनेन, कील करणे घञ् स्वार्थे कन्। १ स्तम्भविशेष, किसी किस्मकी मेख। २ पशुवोंके बांधनेका खूंटा। ३ तन्त्रोक्त देवताविशेष। (क्लो॰) ४ मन्त्रविशेष। ५ ज्योतिषशास्त्रोक्त प्रभवादि ६० वर्षोंके अन्तर्गत एक वर्ष। उक्त वर्षमें यावतीय शस्य उपजता और देशसमूहमें दुर्भिक्ष, अनावृष्टि तथा उपद्रवादि नष्ट हो मङ्गल हुवा करता है। ६ स्तव-विशेष। सप्तशतीके पाठकाल कीलकस्तव पढ़ना पड़ता है। ७ केतुविशेष।

कीलकाख्य कील देखो।

कीलन (सं॰ क्लो॰) कील-ल्युट्। १ बन्धन, बन्दिश। २ तन्त्रमन्त्रविशेष।

"तत् सम्पुटं भवेत्तस्य कीलने परिमापितम्।" (मेरुकारिदीतन्त्र)

कीलना (हिं॰ क्रि॰) १ कील लगाना, मेख ठोंकना। २ कील देना, अभिमन्त्रित करना। ३ सर्पको वशमें करना। ४ वशीभूत करना, ताबेदार बना लेना।

कीलपादिका (सं॰ स्त्री॰) हंसपादीक्षुप, एक भाड़ी।

कीलमुद्रा (सं॰ स्त्री॰) लिपिभेद, एक प्रकारके अक्षर। उसके अक्षर कील-जैसे होते थे। उक्त लिपिके कई लेख ई॰ से कतिपय शताब्द पूर्व पारसिक देशमें मिले थे।

कीलशायी (सं॰ पु॰) कुक्कुर, कुत्ता।

कीलसंस्पर्श (सं॰ पु॰) कीलं संस्पृशति, कील-सं-स्पृश् अच्। तिन्दुकवृक्ष, तेंदूका पेड़।

कीला (सं॰ स्त्री॰) कील टाप्। १ कील, मेख। २ रति-प्रहारविशेष। ३ रतिबन्धविशेष।

कीलाक्षर (सं॰ पु॰) कीलमुद्रा देखो।

कीलाट (सं॰ पु॰) गोवित्तकोरविकृत।

कीलाल (सं॰ क्लो॰) कीलं अग्निशिखां अलति वारयति, कील-अल्-अण्। १ जल, पानी। २ रक्त, खून। ३ अमृत। ४ मधु, शहद। ५ पशु, बांधा जानेवाला जानवर। ६ बन्धमनिवारक, बन्दिश छोड़ानेवाला।

"ऊर्जं वहन्तीरमृतं घृतं पयः कीलालं परिस्रुतम्।" (शुक्लयजुः, २।३४)

'कीलो बन्ध' तमलति वारयति, कीलालं सर्वबन्धनिवारकम्।' (महीधर)

७ शक्तिरस,।

कीलालज (सं॰ क्लो॰) कीलालात् जायते, कीलाल-जन-ड। मांस, गोश्त।

"पादो न यावदीक्षावत् यावन्न निष्ठतीक्षुन।

कीलालजं न यादृश कश्चिद्रे वागुपनतम्॥" (भारत, वन)

कीलालधि (सं॰ पु॰) कीलालं जलं धीयतेऽस्मिन् कीलाल-धा-कि। समुद्र, बहर।

कीलालप (सं॰ पु॰) कीलालं रुधिरं पिबति, कीलाल पा-क। १ राक्षस। २ जलौका, जोंक।

कीलालपा (वै॰ पु॰) कीलाल-पा-विच्। 'आदवा अग्नि-रुणिग्धिपदय। पा १।१।१। १ अग्नि। २ यम।

कीलिका (सं॰ स्त्री॰) नाराचभेद, किसी किस्मका तीर। २ अस्थिभेद, किसी किस्मकी हड्डी। कीलिका ऋषभ एवं नाराच व्यतीत अन्य स्नायु द्वारा आवद्ध रहती है।

कीलित (सं॰ त्रि॰) कील्यते स्मेति, कील कर्मणि क्त। १ बद्ध, बंधा हुवा।

"इमि कामशरोन्मदुलमकृत् पञ्च न कीलितम्।"

(गीतगोविन्द, १२।१२)

२ कीलरूपमें परिणत, मेख बना हुवा। (क्लो॰) भावे क्त। ३ बन्धन, कैद।

कीलिया (हिं॰ पु॰) परहा, पुरवोला, जो मोटके बैलोंको हांकता हो।

कीली (हिं॰ स्त्री॰) कीलविशेष, एक खूंटो। वह किसी चक्रके मध्य लगायी जाति है। किली पर ही चक्र घूमता है।

कीवत् (वै॰ त्रि॰) कियत्, पृषोदरादित्वात् साधुः। कुछ, थोड़ा।

कीश (सं० पु०) को इति शब्दं ईष्टे को-ईश्-क यद्वा कस्य वायोरपत्यम्, क अत-इञ् नि० हनुमान् स ईशो यस्य। वानर, बन्दर। कि आकाशे ईष्टे प्रभवति, क ईश क। २ सूर्य, सूरज। ३ पक्षी, चिड़िया। (त्रि०) ४ नग्न, नंगा।

कीशपर्ण (सं० पु०) कीशं वानरं तस्य लोमेव पर्णं पत्रमस्य बहुव्री०। अपामार्ग, लटजीरेका पेड़।

कीशपर्णी (सं० स्त्री०) कीशपर्ण जातौ ङीष्।

कीशपर्ण देखो।

कीशफल (सं० क्ली०) अक्षोट, मोलक पौधा।

कीशरोमा (सं० स्त्री०) कपिकच्छु, केवांच।

कीसाद—जातिविशेष एक कौम। कीसादको लोग नागीसार भी कहते हैं। यह लोहारडागा, पलामू, जशपुर और सरगुजा प्रभृति स्थानोंमें रहते हैं। इनके मध्य इनका वास और कृषि ही इनकी उपजीविका है। कीसाद भवानीकी उपासना करते हैं। यह सभी उनके राजाकी भांति पूजते हैं। इनके सिवा सूर्य, महादेव, महोतुनिया, चिकरिया और भूत पिशाचके उद्देश भी पूजा की जाती है। चिकरिया देवताको काली छाग और सूर्य देवताके उद्देश श्वेत छाग बलि देते हैं। इनके ग्रामदेवताका नाम दारहा है। उस ग्रामदेवके स्थानमें 'बामनी पाट' 'चन्द्रीपाट' इत्यादि नामधेय कई पाट हैं। कीसाद कोलजातिकी भांति नाचते गाते हैं। इनकी स्त्रियां गोदना गोदानेसे अपने समाज में हेय और समाजच्युत समझी जाती हैं।

कीस (हिं० पु०) १ कोष, जरायुज, गर्भकी थैली। २ कीश बन्दर।

कीसा (फा० पु०) थैली, जेब।

कीस्त (कै० पु०) स्तव, स्तुति।

"किती बड़ी कीरतकी कीरतनी गावत।" (व्रज १ १९०।०)

कु (सं० अव्य०) कु डु। १ पाप प्रभाव, राम राम। २ निन्दा, छी छी। ३ ईषत् थोड़ा। ४ निवारण, दूर दूर। ५ मन्द और खोटे। (त्रि०) ६ निन्दनीय, बुरा काम।

कु (सं० स्त्री०) कु डु। पृथिवी, जमीन।

कुआसा (हिं० स्त्री०) कुहासा या कुहेरा।

कुअर (हिं०) कुंवर देखो।

कुअरपुरिया (हिं० पु०) हरिद्राभेद, किसी किस्मकी हलदी। यह पटनेके निकट कुंअरपुर ग्राममें उत्पन्न होता है। ५ वर्ष पीछे इसे खेतसे खोदते हैं। मूल और पत्र उच्च तथा दीर्घ होता है। मेंढके गोबरकी खाद देनेसे कुअरपुरिया बहुत पनपता है।

कुअरविलास (हिं० पु०) धान्यविशेष, किसी किस्मका चावल।

कुअरेटा (हिं० पु०) कुमार, छोटा कुंवर।

कुआं (हिं० पु०) कूप, चाह, कुवां।

कुआरा (हिं० वि०) अविवाहित, बेब्याहा जिसकी शादी न हुई हो।

कुइयां (हिं० स्त्री०) क्षुद्र कूप, छोटा कुआं।

कुई (हिं० स्त्री०) १ क्षुद्र कूप छोटा कुआं। २ कुमुदिनी।

कुकुमफूल (हिं० पु०) पुष्पविशेष दुपहरियाका फूल।

कुकुमा (हिं० पु०) लाखका एक पोला गोला। लोगोंको उसमें गुलाल डाल कर मारते हैं।

कुकौ (हिं०) कुंकुम देखो।

कुंज (हिं० पु०) १ वृक्ष लतादि द्वारा आच्छादित स्थान, पेड़ों और बेलोंसे ढकी हुई जगह। २ हाथी दांत। ३ दुशालेके कोनेका बूटा। ४ कोनिया, कड़ियोंके कोने पर मिलनेवाले कपोत या पत्थरकी दावनकी एक लकड़ी।

कुंजगली (हिं० स्त्री०) १ वृक्षलतादि द्वारा आच्छादित पथ पेड़ों और बेलोंसे ढकी हुई राह। २ पथ मध्यभाग, तङ्गकूचा।

कुंजड़ (हिं० पु०) कुंदुर, चिड़ियोंका झोंद। यह चीज कभी पकना और कभीमस्तमो— ऐसा रहता है।

कुंजड़ा (हिं० पु०) जातिविशेष, एक कौम। कुंजड़ा तरकारी और फल बेचते हैं। यह प्रायः मुसलमान हैं।

कुंजा (हिं० पु०) कूजा, पुरवा निकोरा।

कुंझ (हिं० पु०) एक जलमें पड़नेवाली चीलकी जातका चकोर।

कुंडपुजी (हिं॰ स्त्री॰) कुंडमुदनी, कुंडकी पूजा। यह सपकोंका एक वार्षिकोत्सव है। रबी बोयी जा चुकने पर कुंडपुजी होती है।

कुंडबुजी, कुंडपुजी देखो।

कुंडमुदनी, कुंडपुजी देखो।

कुंडरा (हिं॰ पु॰) १ कुण्डल, मण्डलाकार रेखा। २ गेंडुरी।

कुंडरा (हिं॰ पु॰) कुंडा, मटका।

कुंडलिया (हिं॰ स्त्री॰) छन्दोविशेष, एक बहर। यह दोहा और रोला छन्दके योगसे बनती है। दोहेका प्रथम शब्द रोलाके अन्तमें और दोहाका अन्तिम शब्द रोलाके आदिमें आता है। गिरिधरदासकी कुण्डलियां प्रसिद्ध हैं।

कुंडा (हिं॰ पु॰) १ पात्रविशेष, एक बरतन। यह मिट्टीका बनता और चौड़े मुंह गहरा रहता है। २ कोंटा। उसमें सांकल लगा ताला डाला जाता है। ३ हस्त लाघवविशेष, कुश्तीका एक पेंच। नीचे गये हुवे पहलवान्के दाहने खड़े हो अपनी दाहनी टांग उसकी गरदनमें बायीं ओरसे डाल उसकी दाहनी बगलसे निकाली जाती है। फिर अपने बायें पैरके घुटनेके भीतर मोनेको दबा उसके शिर पर बैठते और बायें हाथसे उसका जांघिया खींच उसे चित करते हैं। ४ निरकट, तावर डोल, जहाजके अगले मस्तूलका चौथा हिस्सा।

कुंडला (हिं॰ पु॰) पात्रविशेष, मट्टीकी कुंडी या पथरी। उसमें कलाबत्तू बनानेवाले टिकुरियों पर कलाबत्तू लपेट कर रखते हैं।

कुंडिया (हिं॰ स्त्री॰) १ गर्तविशेष, एक चौखूंटा गड्ढा। वह शोरेके कारखानोंमें रहती है। कुंडिया २ हाथ चौड़ी, ५ हाथ लंबी और १ हाथ गहरी होती है। शोरा बनानेको उसमें नोना मिट्टी पानीके साथ डालते हैं। २ पात्रविशेष, एक बरतन। उसमें घोटनेके लिये बादला रखा जाता है। ३ पथरी, पत्थरका कटोरी-जैसा छोटा बर्तन। ४ कठोली, काठका बरतन।

कुंडी (हिं॰ स्त्री॰) पात्रविशेष, पत्थर या लकड़ीका एक छोटा बरतन। वह कटोरा-जैसी बनती और प्रायः खट्टी चीजें रखनेके काममें लगती है। २ जञ्जीरकी कड़ी। ३ सांकल। ४ लंगरका बड़ा कुण्डा। ५ मुर्रा भैंसा। उसके शृङ्ग वेष्टित रहते हैं।

कुंडू (हिं॰ पु॰) पक्षिविशेष, एक चिड़िया। उसका रंग काला होता है। किन्तु कण्ठ तथा मुख श्वेत और पुच्छ पीतवर्ण रहता है। उसका दैर्घ्य प्रायः ११ इञ्च है। काश्मीरसे आसाम तक कुंडू पाया जाता है। उसे कस्तूरा भी कहते हैं।

कुंढवा (हिं॰ पु॰) पात्रविशेष, मट्टीका सिकोरा या पुरवा।

कुंतली (हिं॰ स्त्री॰) मक्षिका भेद, एक छोटी मक्खी। उसके छत्ते में 'डामर' नामका मोम होता है। कुंतलीके डंक नहीं रहता। भारतमें कई स्थानोंमें वह पायी जाती हैं।

कुंदन (हिं॰ पु॰) १ स्वर्णपत्रविशेष, सोनेका एक पत्तर। वह बहुत अच्छे और साफ सोनेसे बनता है। कुंदन रख कर नगीना जड़ा जाता है। २ स्वर्ण, खालिस सोना। (वि॰) ३ स्वच्छ, खालिस, चोखा।

कुंदनसाज (हिं॰ पु॰) १ स्वर्णपत्र प्रस्तुतकारक, सोनेका बारीक पत्थर बनानेवाला। २ जड़िया, नगीना जड़नेवाला।

कुंदना (हिं॰ पु॰) बाजरेकी एक बीमारी।

कुंदरू (हिं॰ स्त्री॰) रक्तफला, एक बेल। उसे हिन्दुस्थानमें बिम्ब या कुंदरूकी बेल, पंजाबमें घोल, बंगालमें तेलाकूचा, सिन्धुमें गोलारू, गुजरातमें गलेट्टू, बम्बईमें तेंदुली, मारवाड़में जिटदी, तामिलमें कोवई, तेलगुमें दोंद, मलयमें कवेल, कनाड़ामें तोंदेबलि, अरबमें कबार हिन्दी, ब्रह्ममें केनबंग और सिंहलमें कोवका कहते हैं। (Cephalandra indica)

कुंदरू भारतवर्षमें साधारणतः पायी जाती है। फल चार-पांच अङ्गुलि प्रमाण दीर्घ होते हैं। कुंदरूको तरकारी बनाकर खाते हैं। फल पकने पर अधिक रक्तवर्ण हो जाता है। उसीसे कवि कुंदरूसे ओष्ठकी उपमा देते हैं। पत्र चार-पांच अङ्गुलिप्रमाण दीर्घ और पञ्चकोणविशिष्ट रहते हैं। पुष्प श्वेत आते हैं।

करते या तांबेकी थालीको भीतर कुंदरुकी बेल लगाते हैं। कहते हैं कुंदरु खानेसे बुद्धि मारी जाती है। मधुमेह रोगमें इसके मूलको कूट कर पीनेसे लाभ होता है। कुंदरुके मूलका रस जमकर गोंद बन जाता है।

कुंदला (हिं० पु०) शिविरविशेष, किसी किस्मका खेमा या तंबू।

कुंदा (हिं० पु०) १ लक्कड़, लकड़ीका मोटा टुकड़ा। २ निहटा, लकड़ीका एक टुकड़ा। इसपर गढ़ाई पिटाई वगैरह होती है। ३ बंदूकका पिछला हिस्सा। यह त्रिकोणाकार रहता है। कुंदामें ही घोड़ा और नली लगाते हैं। ४ अपराधीके पैर ठोकनेकी एक लकड़ी, काठ। ५ मुष्टि, मूठ, बेंट। ६ लकड़ीकी बड़ी मोगरी। इससे कपड़ों पर कुंदी की जाती है। (पु०) ७ पक्षमूल, डैना। ८ कुश्तीका कोई पेंच। [illegible] ९ दस्ता, वस्ता, एक भार। १० मावा खोआ।

कुंदी (हिं० स्त्री०) १ कपड़े की कुटाई। यह धुले और रंगे हुये कपड़ों पर तह करके की जाती है। कुंदीसे कपड़ेकी सिकुड़न और रुखाई मिटती है। २ कड़ी मार।

कुंदीगर (हिं० पु०) कुंदी करनेवाला।

कुंदुर (फा० पु०) निर्यासविशेष, किसी किस्मका गोंद। यह सुगन्धि और पीतवर्ण होता है। कुन्दुर किसी वृक्षसे पोंछसे निकाला जाता है। यह पेड़ २ हाथ ऊंचा रहता और अरबके यमन आदि पार्वत्य प्रदेशमें मिलता है। इसका पत्ता तथा छाल कट जाता है। बूंदें वर्णराशि पर रहते गोंद निकलते हैं। यूनानियोंके मतानुसार यह वलवीर्यवर्धक, रूक्ष और रक्तस्रावनाशक है।

कुंदेरना (हिं० क्रि०) खरोंचना, खोलना।

कुंदेरा (हिं० पु०) कुनेरा, खरादी।

कुंवो (हिं०) कूआं देखो।

कुंभनदास—व्रजके एक कवि। यह अष्ट छापके कवियोंमें एक कवि रहे। कुंभनदास वल्लभाचार्यके कृष्णकी उपासना करते थे।

कुंभिलाना (हिं० क्रि०) म्लान पड़ना, मुरझाना।

कुंवर (हिं०) कुमार देखो।

कुंवरि (हिं० स्त्री०) राजकुमारी, बादशाहकी बेटी।

> "कुंवरि मनोहर विजयकी कीरति अति कमनीय।
> पावनहार विरंचि जनु, रचेउ न धनु दमनीय।" (तुलसी)

कुकड़ूकूं (हिं० पु०) कदम, कायरता, कैमर।

कुकरी (हिं०) कुकर देखो।

कुकाड़ी (हिं० स्त्री०) कपासकी एक जाति। इसमें बराबर और थोड़ी दोनों जात रहती है।

कुआर (हिं० पु०) आश्विन मास।

कुआरा (हिं० वि०) आश्विनसम्बन्धीय।

कुआदर (हिं० पु०) मत्स्यविशेष, एक मछली। यह कुएँके पेठ जातिसे बनता है।

कुइयां, कुआं देखो।

कुएनलुन—तिब्बतकी एक पर्वतमाला। यह उच्च उपत्यका भूमिकी उत्तर ओर अवस्थित है। निकट वर्ती अधिवासी इसे विभिन्न नामसे अभिहित करते हैं। यथा—बैहुर ताग, (तुषार पर्वत), मुजुर ताग (हिमपवन) मुसताग, कराकार कोरम (कृष्णपर्वत) टसुन शुन (पवनारूढ़ पर्वत) और तियानशान (स्वर्गीय पर्वत)। यह समुद्रतलसे १११११ फीट ऊंचा है। अन्द्र चनका ग्रन्थमें उक्त पर्वतका नाम ह्लो-चैरकरति लिखा है। यह प्रायः १६६० कोस विस्तृत और मध्य एशियाकी उत्तर तथा दक्षिण अधित्यकाके मध्यस्थानमें दण्डायमान है। दक्षिणको अववाहिका सिन्धुनदादि एवं सान्पु (ब्रह्मपुत्र) और उत्तर अववाहिका गोबीमरुकी ओर प्रवाहित है। इस पर्वतके गिरिसंकटमें हो तिब्बतकी उत्तरसीमा अतिक्रम करना पड़ता है। इसके मध्यस्थानमें खोट—श्वेत प्रस्तरस्तर है। मरमर और पुखराज होनेकी भांति एक प्रकारका कठिन एवं स्वच्छ पत्थर भी मिलता है।

कुक (सं० त्रि०) कुक-क। १ समर्थ, ताकतवर। २ अदा करनेवाला, जो देता हो। ३ स्वीकार करनेवाला, जो मानता हो। (पु०) ४ [illegible]।

कुकटी (हिं० स्त्री०) कार्पासभेद, किसी किस्मकी कपास। उसकी रुई लाली लिये सफेद होती है। यह गोरखपुर, बस्ती प्रभृति जिलोंमें होती है।

कुकड़ना (हिं० क्रि०) सङ्कुचित होना, सिकुड़ना।

कुकड़बेल (हिं० स्त्री०) देंडाल।

कुकड़ी (हिं० स्त्री०) १ मुट्ठा, अंटी, तकलेसे कात कर उतारा हुवा कच्चे सूतका लपेटा हुवा लच्छा। २ मदारका फल, अकौड़ेकी बोंडी। ३ खुखड़ी।

कुकथा (सं० स्त्री०) कु निन्दिता कथा, कर्मधा०। १ खराब बात।

कुकनू (यू० पु०) पक्षिविशेष, एक चिड़िया। कहते हैं कि वह अकेले ही उपजता और अपना जोड़ा नहीं रखता। कुकनू गानेमें बहुत निपुण होता है। उसके चंचुमें अनेक छिद्र रहते जिनसे विभिन्न स्वर निकलते हैं। उसके विलक्षण गानेसे अग्नि निर्गत होता है। पूर्ण युवा होनेपर कुकनू वर्षाऋतुमें लकड़ियां एकत्र कर उनपर बैठता और गाया करता है। फारसीमें उसे "आतशजन" कहते हैं।

कुकभ (सं० क्लो०) कुकेन आदानेन पानेन दत्वर्थः भाति, कुक-भा क। मद्य, शराब।

कुकर (सं० त्रि०) कुत्सितः करो यस्य, बहुव्री०। कुत्सित हस्तविशिष्ट, खराब हाथोंवाला। उसका संस्कृत पर्याय—कुणि, कूणि और कोणि है।

कुकर—औघड़ नामक शिवसम्प्रदाकी एक शाखा। गुजरातमें कोई दशनामी संन्यासी रहे। उन्हें गोरक्षनाथके अनुग्रहसे ब्रह्मगिरि नाम मिला। वही ब्रह्मगिरि औघड़ सम्प्रदायके प्रवर्तक थे। औघड़ शैव कहते कि गोरक्षनाथने ब्रह्मगिरिको कानके मुंदरे (अलङ्कार) और कई चिह्न प्रदान किये। पीछे ब्रह्मगिरिने फिर वह गुदर, सुखर, रुखर, भूखर और कुकरको पांच शिष्योंको दे डाले। तदनन्तर उन पांचों लोगोंने स्व स्व नाम पर एक एक दल बनाया था। उनके मध्य गुदर एक कानमें मुंदरा और दूसरे कानमें गोरक्षनाथका पदचिह्नित एकखण्ड ताम्र पहनते हैं। सुखर और रुखर दोनों कानोंमें पीतलका मुंदरा धारण करते हैं। कानका मुंदरा देखनेसे ही औघड़के सम्प्रदायका पता लग जाता है। भूखर और कुकर दलकी संख्या अल्प है। प्रथम ३ दल अपने अपने भिक्षापात्रमें धूप नहीं सुलगाते। किन्तु शेषोक्त २ दल उसे करते हैं। कुकर कालीहांडी नामक नूतन मृण्मय पात्रमें भिक्षा मांगते और उसीमें पकाते खाते हैं। उक्खर नामक दलका भी नाम सुन पड़ता है। उक्त सब लोग शैव हैं। वह कभी अपना धर्म नहीं छोड़ते। प्रत्येक दलपति मठाध्यक्ष होता है।

कुकरी (हिं० स्त्री०) १ मुरगी, जंगली मुरगी। २ पीड़ा, दर्द। ३ झिल्ली। ४ करोटि, खोपड़ी।

कुकरौंधा (हिं० पु०) कुक्कुरद्रु, एक छोटा पौंदा। (Blumea Lacera) उसे हिन्दीमें ककरौंदा, कुक्कुरबन्दा या जंगली मूली, बंगलामें कुकुरशुंगा, बम्बैयामें निम्बुर्टि, दक्षिणीमें जंगली कासनी, तामिलमें कत्तुमुल्लांगि, तैलगुमें कारुपोगाकु, संस्कृतमें कुक्कुरद्रु, अरबीमें कमाफितूस, और भाषामें मैयगान कहते हैं।

कुकरौंधा साधारणतः भारतके मैदानोंमें होता है। वह उत्तर-पश्चिम (हिमालय पर २००० फीट ऊंचे तक)-से त्रिवाङ्कुर, सिंगापुर और सिंहल तक पाया जाता है। पत्र बड़े होते हैं। उनसे एक प्रकारका गन्ध छूटता है। वर्षाऋतु बीतने पर आर्द्र स्थानोंमें अथवा नालियोंके निकट कुकरौंधा उगता है। उसके सुदीर्घ पत्रशाखा निकलनेसे छोटे पड़ जाते हैं। शाखापत्र क्षुद्र क्षुद्र रोम द्वारा आच्छादित रहते हैं। हाथ डेढ़ हाथ बढ़ने पर मञ्जरी आती है, उसमें जो बीज होते, वह जलमें डालनेसे फूलते हैं। कुकरौंधा रक्तस्राव रोकनेके लिये व्यवहार किया जाता है। ईसीमें काली मीर्च मिलाकर उसे पिलाने पर उपकार पहुंचता है। उसकी आंख धोनेका अच्छा पानी तैयार होता है। कोङ्कनके लोग उसे मक्खियों और कीड़ोंके भगानेमें व्यवहार करते हैं। कुकरौंधेकी पत्तियोंसे तेल भी निकाल सकते हैं। कृमिरोगमें उसके पत्रका रस निकाल कर पिलाया जाता है। नवीन मूलको मुखमें डाल लेनेसे खुश्की दूर होती है। उसे कुक्कुरमुत्ता भी कहते हैं।

कुकर्म (सं० क्लो०) कुत्सितं कर्म, कर्मधा०। १ लोकनिन्दित और शास्त्रनिन्दित कर्म, बुरा काम। (त्रि०) २ कुकर्मयुक्त, बुरा काम करनेवाला।

कुकर्मकारो (सं० त्रि०) कुकर्म करोति, कु-कर्मन्-

रू विनि। कुकर्म करनेवाला, जो बुरा काम करता हो।

कुकर्मशाली (सं॰ त्रि॰) कु कर्मणा शालते, कु कर्मन् शाल-णिनि। कुकर्मयुक्त जो बुरा काम करता हो।

कुकर्मा (सं॰ पु॰) कुत्सित कर्म यस्य बहुव्री॰। कुत्सित कार्यकारी बुरा काम करनेवाला आदमी।

कुकर्मी (सं॰ पु॰) कु कुत्सित कर्म कार्यमस्य अस्त्यर्थे कु कर्मन्-इनि। कुत्सित कार्यकारी, बुरा काम करनेवाला।

कुकाचन (सं॰ क्ली॰) पित्तल पीतल।

कुकापन्थी—एक सिखसम्प्रदाय। लुधियानेसे साढ़े तीन कोस दक्षिण-पूर्व भैनी नामक एक क्षुद्र ग्राम है। वहां रामसिंह नामक किसी बढ़ईने जन्म लिया था। वही रामसिंह उक्त सम्प्रदायके प्रवर्तक हुवे। १८४५ ई॰ को रामसिंह सिख सेनामें काम करते थे। अंगरेजोंके कोयलके सिखोंका प्रभाव नष्ट होने पर उन्होंने कुवृत्ति परित्याग कर सिखधर्मके पुनः संस्कार पर मन लगाया। थोड़े दिनके मध्य ही धर्मोपदेशके गुणसे सहस्र सहस्र व्यक्ति उनके शिष्य बनने लगे। यहां तक कि १८६७ ई॰ तक लगभग लाख लोग उनके अनुवर्ती हो गये थे। मन्त्रोच्चारणके समय उक्त सम्प्रदायवालोंके मुखसे 'कुक' 'कुक' शब्द निकलता है। इसीसे उनका नाम 'कुकापन्थी' है।

अपर सिखसम्प्रदायकी भांति कुका-गुरुके भी १० आदेश हैं। उनमें पांच पालनीय और पांच निषिद्ध हैं। पालनीय आदेशोंको 'क' विधि कहते हैं। यथा—कड़ा, काछ, कपान, कंघी और केश अर्थात् लोहभूषण, छोटा जांघिया, लोहास्त्र, कंघी और केश। शेष पांचको नरमार (नरहत्या करनेवाले), कुड़िमार (भ्रूणघात करनेवाले), सिरगुम (मुण्डन करानेवाले), सुन्नत बड़ा (मुण्डितमस्तक रखनेवाले) और धीरमालिया (कर्तारपुरवाले गुरुके शिष्य) कहते हैं। प्रथम दो कार्य हैं और शेषोक्त तीन प्रकारके व्यक्तियोंके कन्यादान निषिद्ध है।

नानकशाहियोंकी भांति कुकापन्थी भी कठिन नियमसे बद्ध हैं। सभी एकप्रकार सिंह चिह्न व्यवहार करते हैं। वह गुरुदेवका कोई ग्रन्थ नहीं मानते। उनके धर्म शास्त्रानुसार लोकान्तरमें जब देह छोड़ दिया तब प्रथम आठ रोज तक ग्रन्थदेवको चतुर्दिक् पहरा रखना होता है। जिसे कोई दिक्कत न आवे।

उनमें विवाहका आडम्बर कवलित होनेसे बड़ी धूम पड़ती है। वह बड़े उत्साहसे विवाह करते और अपने धर्मका अनिवार्य अंग बताते हैं। मृत्यु होनेसे किसीके लिये शोक नहीं करते। उस समय ११ दिन दिवारात्र ग्रन्थ पाठ होता है। उसके पीछे ज्ञाति कुटुम्ब सब मिलकर एक दिन खानपान और आमोद प्रमोद करते हैं।

१८७१ ई॰ को किरणसिंह नामक किसी कुका दलपतिने वध प्रचार करके आ लोगोंको उत्तेजित किया था। उसीसे उन्हें फांसी हुयी। पीछे उनके देह का सत्कार किया गया। उनके पुत्रने अध्यात्मविद्या देवका एक वृत्ति परिहार ले आकर समाहित किया।

कुकार्य (सं॰ क्ली॰) कु कुत्सित कार्यम् कर्मधा॰। मन्दकार्य, बुरा काम।

कुकि—भारतकी पूर्वप्रान्तवासी एक जाति। आसामके मणिपुर और चटग्रामके त्रिपुराके मध्य पर्वत और जङ्गलमें कुकिलोग रहते हैं। साधारणतः उन्हें खेड़ुआ कहते हैं। कुकि अनेक श्रेणियोंमें विभक्त हैं पुरातन कुकि, नूतन कुकि और अन्य ये कोभूत कुकि। पुरातन अब छोटी भी दूसरी कई शाखा हैं। उनके प्रकारमें रङ्कूल खेलमा तथा बेत और अन्यान्य श्रेणीमें छोटी आठमोल रङ्गखल, पुरूम मन्तक, कोम कोइरेंग और चरम प्रधान हैं। नूतन कुकि त्रिपुरा और चटग्रामके आर पत्ताङ्गलमें वास करते हैं। वहां ठदन चङ्गसेन सिंहसन और लुसेम शाखा मिलती हैं। त्रिपुराके पहाड़ी अञ्चलमें आमरई, गुलुङ्ग, सलम् कापई और कोचक कुकि पाये जाते हैं।

कछाड़के दक्षिण आगत दुर्दान्त लोहङ्गर कुकि आकर रहे हैं। उसके दक्षिण उक्त कुकियोंसे भिन्न तथा एक श्रेणीय अपर भिन्न भाषाभाषी ५८ गणि, गोति एवं लुसाई प्रभृति पार्वत्य मुख्योंका वास है। मणिपुर और उत्तर तथा दक्षिण कछारको बारा और भी कोई कई कुकियोंका रहना होता है। आज कल वह उक्त भाषाके भिन्न हो गये हैं। मणिपुरके

अतिनिकट अनल लम्फू नामक कुकियोंका एक दल रहता है। सिन्दु, शक्ति और लुसाई कुकि अति प्रबल और दुर्धर्ष है। उनमें कोई लिखना पढना न जानते भी सब लोग बन्दूक प्रभृति नानाप्रकार अस्त्रशस्त्र चला सकते हैं। निविड़ अरण्यवासी कुकि आज भी विवस्त्र रहते हैं। किन्तु आसाम, श्रीहट्ट प्रभृति कई स्थानों में अंगरेज गवर्नमेण्टके शासनसे उन्होंने कपड़ा पहनाना सीख लिया है।

कुकि लोग स्वभावतः बलशाली हैं। देखनेमें वह मणिपुरवासी खसिया लोगोंसे मिलते जुलते हैं।

कुकि प्रति पल्लीमें प्रायः डेढ सौ दो सौके हिसाबमें रहते हैं। उनका घर ३।४ हाथ मट्टी छोड़ माचे पर बांससे बनाया जाता है। पर्वतके उच्चस्थान पर तथा जलके निकट वह पल्ली निर्वाचन करते हैं।

नूतन कुकियोंके प्रत्येक दलमें राजा, मन्त्री प्रभृति पद विद्यमान है। दलपतिको वह 'लाल' कहते है। सकल दलों पर फिर एक अधिपति रहते हैं। उन्हें कुकि 'प्रथम' कह कर पुकारते हैं। नूतन कुकि कहते हैं कि उन्हों और मर्गोंने एक पिताके औरससे जन्म लिया है। उनके आदिपुरुषके २ स्त्री रहीं। प्रथमाके गर्भसे मर्गो और द्वितीयाके गर्भसे कुकियोंका जन्म हुवा। जन्म होनेके अल्प दिन पीछे ही कुकियोंकी माता मर गयीं। विमाता उन्हें देख न सकती थीं। वह अपने पुत्रको कपड़े पहनातीं, किन्तु कुकिको नंगा ही रखती थीं। इसीसे कुकि वनमें जाकर रहने लगी।

कुकियोंमें प्रत्येक गृहस्थ अपने परिवारको ले स्वतन्त्र गृहमें वास करता है। उनकी विधवाके लिये अलग घर रहता है। सब लोग मिल कर विधवाके रहनेको अलग घर बना देते हैं। आजकल उनमें पुरुष बड़े बड़े कपड़े पहनते हैं। कोई एक वस्त्र पहन दूसरेको कमरमें बांधता, जिसका कुछ अंश लटका रहता है। स्त्रियोंने अब कुरतीसे वक्ष ढाकना सीखा है। विवाहित रमणी वक्ष खुला रखती, किन्तु अविवाहिता उसे ढांक लेती हैं। स्त्रियोंकी केशोंकी चूड़ा बांधती हैं दूसरे पहाड़ियोंकी भांति कुकि भी गात्र नहीं धोती। १२।१३ वर्ष वयस होते ही वह रात्रिकालको गृहमें नहीं रहते, प्रहरीगृहमें रात्रियापन करते हैं। उसके पीछे वयस होने पर विवाह किया जाता है। फिर कुकि घरमें रातको रह सकते हैं। विवाहित व्यक्तिका मृत्यु, होनेसे उसके आत्मीय कुटुम्बी सब एकत्र हो दुःख प्रकाश करते हैं। मृतदेहके वाम पार्श्व तरकारी, भात और उसके साथ एक कटहर या मट्टीका बरतन रख दिया जाता है।

कुकियोंको धनस्पृहा नहीं होती। धनके लिये वह कभी लूटमार करना नहीं चाहते। फिर भी वह जो बीच बीच दलबद्ध हो निकटस्थ स्थान आक्रमण करते उसका अभिप्राय भिन्न रखते है। कुकियोंका कोई राजा वा दलपति मरनेसे उसके प्रेतात्माकी तुष्टिके लिये नरबलि आवश्यक होता है। उसीसे वह मध्य मध्य किसी स्थानको आक्रमण कर वहांसे कई अधिवासियोंको पकड लाते और उन्हें दुर्गम स्थानमें छिपाते हैं। प्रयोजन पड़नेसे उनमें एकको बलि दे अभीष्ट सिद्धि करते हैं। किसी अपर असभ्य जातिके साथ विवाद बढ़ने पर यदि शत्रु गुप्तभावसे राजाको मार जाते, तो सब पार्वतीय कुकि एकत्र हो उसका प्रतिशोध लेनेकी चेष्टा करते हैं। वह आयोजन बहुत भयानक होता है। शत शत व्यक्तियोंके कार्यसाधन करने जा कालग्रासमें पड़ते भी कुकि पीछे नहीं हटते। यदि वह एक शत्रुको मार आते, तो फिर फूले नहीं समाते। उक्त मृतव्यक्तिका मुण्ड सम्मुख रख सब लोग पान भोजन और उल्लाससे नृत्य गीत किया करते हैं। पीछे वही मुण्ड खण्ड विखण्ड कर पर्वतोपर दलपतियोंके निकट भेजा जाता है।

कुकि भ्रमणशील लोग हैं। वह अधिक काल एक स्थानमें वास नहीं करते। विजन कानन और दुर्गम पर्वतकी उपत्यकाभूमि उनका रम्यस्थान और कृषिकार्य उपजीविका है।

कुकियोंमें किसी किसीने हिन्दुधर्म ग्रहण किया है। अधिकांश लोग जड़ोपासक हैं।



चतुर्थ भाग सम्पूर्ण।